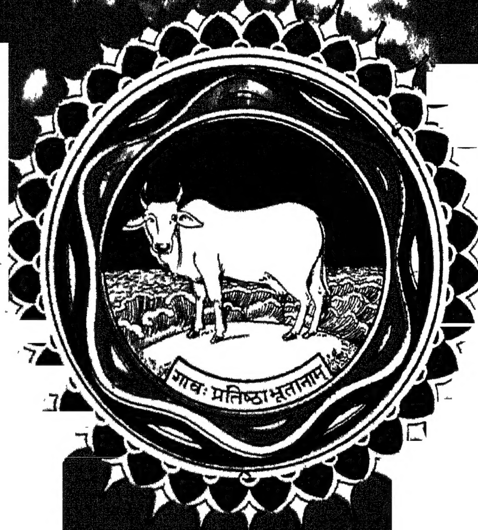
कल्याण

गो-अंक



वर्ष २०

अङ्क १



दुर्गति-नाशिनि दुर्गा जय जय, काल-विनाशिनि काली जय जय ।
उमा रमा ब्रह्माणी जय जय, राधा सीता रुक्मिणि जय जय ॥
साम्ब सदाशिव साम्ब सदाशिव साम्ब सदाशिव जय शंकर ।
हर हर शंकर दुखहर सुखकर अघ-तम-हर हर हर शंकर ॥
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥
जय जय दुर्गा जय मा तारा । जय गणेश जय शुभ-आगारा ॥
जयति शिवा-शिव जानकि-राम । गौरीशंकर सीताराम ॥
जय रघुनन्दन जय सियाराम । व्रज-गोपी-प्रिय राधेश्याम ॥
रघुपति राघव राजा राम । पतितपावन सीताराम ॥

कोई सज्जन विज्ञापन भेजनेका कष्ट न उठावें ।

कल्याणमें बाहरके विज्ञापन नहीं छपते ।

समालोचनार्थ पुस्तकें कृपया न भेजें ।

कल्याणमें समालोचनाका स्तम्भ नहीं है ।

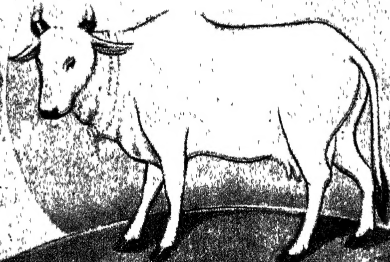
वार्षिक मूल्य भारतमें ५≤) विदेशमें ७॥≤) (११½ शिलिङ्ग)

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय । सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय । जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट जय जगत्पते । गौरीपति जय रमापते ॥

इस अङ्कका मूल्य ४) विदेशमें ६॥≤) (१० शिलिङ्ग)

Edited by Hanumanprasad Poddar and C. L. Goswami, M. A., Shastri.
Printed and Published by Ghanshyamdas Jalan at the Gita Press, Gorakhpur, U. P. (India)

मातरः सर्वभूतानां
गावः सर्वसुखप्रदाः







श्रीहरिः

कल्याण-प्रेमियों तथा ग्राहकोंसे निवेदन

(१) इस गो-अङ्कमें प्रायः सभी आवश्यक विषयोंपर न्यूनाधिकरूपसे विचार किया गया है तथापि कई विषय छूट गये हैं। 'कागज-नियन्त्रण' के अनुसार जितने पृष्ठ अधिक-से-अधिक दिये जा सकते थे, दिये गये हैं। चित्र भी यथासम्भव अधिक-से-अधिक देनेकी और उन्हें अच्छे कागजोंपर छापनेकी चेष्टा की गयी है। वर्तमान परिस्थितिमें जो कुछ किया जा सकता था वह किया गया है।

(२) वर्तमान महँगीके कारण इस अङ्कके प्रकाशनमें घाटा होनेपर भी वार्षिक मूल्य ५≈) ही रक्खा गया है। केवल 'गो-अङ्क' का मूल्य ४) है। गौके सम्बन्धमें एक साथ इतनी अधिक सामग्री देखकर कई सज्जनोंने वितरणार्थ गो-अङ्क खरीदे हैं। जिन लोगोंको इस प्रकार अधिक अङ्क खरीदने हों, वे तुरंत सूचित करनेकी कृपा करें।

(३) गताङ्ककी सूचनाके अनुसार, जिन सज्जनोंके रुपये मनीआर्डरद्वारा आ गये होंगे, उनके अङ्क चले जानेके बाद शेष ग्राहकोंके नाम वी० पी० भेजी जायगी। अतः जिन सज्जनोंको ग्राहक न रहना हो, वे कृपा करके मनाहीका एक कार्ड तुरंत डाल दें। ताकि वी० पी० भेजकर 'कल्याण' को नुकसान न उठाना पड़े।

(४) मनीआर्डर-कूपनमें अपना ग्राहक-नंबर जरूर लिखें, ग्राहक-नंबर याद न हो तो कम-से-कम पुराना ग्राहक अवश्य लिख दें। नये ग्राहक हों तो 'नया ग्राहक' लिखनेकी कृपा करें।

(५) 'ग्राहक-नंबर' न लिखनेसे आपका नाम 'नये ग्राहकोंमें' दर्ज हो जायगा। इससे आपकी सेवामें 'गो-अङ्क' नये नंबरोंसे पहुँच जायगा। और पुराने नंबरकी वी० पी० दुबारा जायगी। ऐसा भी हो सकता है कि उधरसे आपने रुपये भेजे हों, और उनके हमारे पास पहुँचनेके पहले ही आपके नाम वी० पी० चली जाय। दोनों ही सूरतोंमें आपसे यह प्रार्थना है कि आप कृपापूर्वक वी० पी० लौटावें नहीं। चेष्टा करके कृपया नया ग्राहक बनाकर उनके नाम-पते साफ-साफ हमें लिखनेकी कृपा करें। आप ऐसा करेंगे तो आपका 'कल्याण' नुकसानसे बचेगा और आप 'कल्याण'के प्रचारमें सहायता करके पुण्यके भागी होंगे।

(६) नाम, पता, पोस्ट-आफिस और जिला—मनीआर्डरके कूपनमें नागरी या अंग्रेजीमें साफ-साफ लिखनेकी कृपा करें।

(७) 'गो-अङ्क' सब ग्राहकोंके पास रजिस्टर्ड पोस्टसे जायगा। सब अङ्कोंके जानेमें कई महीने लग जाते हैं क्योंकि पोस्ट-आफिसवाले प्रतिदिन बहुत अधिक संख्यामें रजिस्टर्ड पैकेट नहीं ले पाते। इसलिये ग्राहक महोदयोंकी सेवामें 'गो-अङ्क' नम्बरवार जायगा। परिस्थिति समझकर कृपालु ग्राहकोंको हमें क्षमा करनी चाहिये और धैर्य रखना चाहिये।

(८) सजिल्द अङ्क बनानेकी व्यवस्था इस समय नहीं है। इसलिये सजिल्दके लिये कोई सज्जन चंदा न भेजें।

व्यवस्थापक—कल्याण, गोरखपुर

श्रीहरिः

गो-अङ्ककी विषय-सूची

पद्य

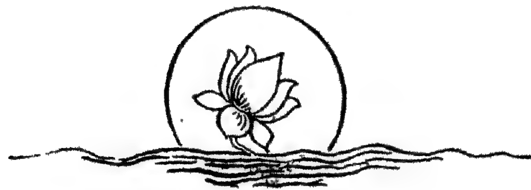
संकलित

विवरण-पत्रों (Tables) की सूची

(कुछ विवरण-पत्र तो 'गो-अङ्क'में अलग संख्या देकर छापे गये हैं। शेष बिना संख्या दिये लेखोंमें आये हैं। यहाँ उन सबकी सूची क्रमसे दे दी गयी है)

चित्र-सूची

रंगीन



श्रीहरि:

गीताप्रेस, गोरखपुरकी सुन्दर, सस्ती, धार्मिक पुस्तकें

*श्रीमद्भगवद्गीता–[श्रीशांकरभाष्यका सरल हिन्दी-अनुवाद] इसमें मूल भाष्य तथा भाष्यके सामने ही अर्थ लिखकर पढ़ने और समझनेमें सुगमता कर दी गयी है। पृष्ठ ५२०, चित्र ३, मूल्य साधारण जिल्द २॥), बढ़िया कपड़ेकी जिल्द २॥।)

श्रीमद्भगवद्गीता–मूल, पदच्छेद, अन्वय, साधारण भाषाटीका, टिप्पणी, प्रधान और सूक्ष्म विषय एवं 'त्यागसे भगवत्प्राप्ति' लेखसहित, मोटा टाइप, कपड़ेकी जिल्द, पृष्ठ ५७६, चित्र ४, मूल्य ··· १।)

श्रीमद्भगवद्गीता–[मझली] प्रायः सभी विषय १।) वाली नं० २ के समान, विशेषता यह है कि श्लोकोंके सिरेपर भावार्थ छपा हुआ है, साइज और टाइप कुछ छोटे, पृष्ठ ४६८, मूल्य अजिल्द ॥≥), सजिल्द ··· ॥।=)

श्रीमद्भगवद्गीता–(गुटका) १।) वाली गीताकी ठीक नकल, साइज २२×२९=३२ पेजी, पृष्ठ ५८४, सजिल्द मूल्य ··· ॥)

श्रीमद्भगवद्गीता–श्लोक, साधारण भाषाटीका, टिप्पणी, प्रधान विषय, मोटा टाइप, पृष्ठ ३१६, मूल्य ॥), सजिल्द ॥≥)

श्रीमद्भगवद्गीता–मूल, मोटे अक्षरवाली, सचित्र, मूल्य अजिल्द ।–), सजिल्द ··· ··· ।≥)

श्रीमद्भगवद्गीता–केवल भाषा, अक्षर मोटे हैं, १ चित्र, पृष्ठ १९२, मूल्य अजिल्द ।), सजिल्द ··· ।=)

*श्रीमद्भगवद्गीता–पञ्चरत्न, मूल, सचित्र, मोटे टाइप, पृष्ठ ३२८, सजिल्द मूल्य ··· ··· ।)

*श्रीमद्भगवद्गीता–विष्णुसहस्रनामसहित, मूल, छोटा टाइप, साइज २॥×३। इंच, सजिल्द मूल्य ··· ≥)

श्रीमद्भगवद्गीता–साधारण भाषाटीका, पाकेट साइज, सचित्र, पृष्ठ ३५२, मूल्य अजिल्द =)॥, सजिल्द ··· ≥)॥

गीता–मूल ताबीजी, साइज २×२॥ इंच, पृष्ठ २९६, सजिल्द मूल्य ··· ··· =)

*गीता–विष्णुसहस्रनामसहित, पृष्ठ १२८, सचित्र, सजिल्द, मूल्य ··· ··· –)॥

*गीता–मूल, महीन अक्षरोंमें, पृष्ठ-संख्या ६४, मूल्य ··· ··· ···)॥

श्रीरामचरितमानस–मूल, गुटका, पृष्ठ ६८८, चित्र २ रंगीन और ७ लाइन ब्लाक, सजिल्द मूल्य ··· ॥)

मानस-रहस्य–चित्र रंगीन १, पृष्ठ-संख्या ५१२, मूल्य ··· ··· ··· १।)

मानस-शंका-समाधान–चित्र रंगीन १, पृष्ठ १९८, मूल्य ··· ··· ··· ॥)

ईशावास्योपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ ५२, मूल्य ··· ··· ≥)

केनोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ १४६, मूल्य ··· ··· ॥)

कठोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ १७८, मूल्य ··· ··· ॥–)

मुण्डकोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ १२२, मूल्य ··· ··· ।≥)

प्रश्नोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ १२८, मूल्य ··· ··· ।≥)

उपर्युक्त पाँचों उपनिषद् एक जिल्दमें सजिल्द (उपनिषद्-भाष्य खण्ड १) हिन्दी-अनुवाद और शांकरभाष्यसहित, मूल्य ··· ··· ··· ··· २।–)

माण्डूक्योपनिषद्–श्रीगौडपादीय कारिकासहित, सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ २८४, मूल्य ··· १)

*तैत्तिरीयोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ २५२, मूल्य ··· ··· ॥।–)

*ऐतरेयोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ १०४, मूल्य ··· ··· ।=)

* उपर्युक्त तीनों उपनिषद् एक जिल्दमें सजिल्द (उपनिषद्-भाष्य खण्ड २), मूल्य ··· ··· २।=)

श्वेताश्वतरोपनिषद्–सानुवाद, शांकरभाष्यसहित, सचित्र, पृष्ठ २६८, मूल्य ··· ··· ॥।=)

श्रीमद्भागवत-महापुराण–मूल-गुटका, कपड़ेकी जिल्द, मूल्य ··· ··· ··· १॥)

---

* संस्करण समाप्त हो गया है, पुनर्मुद्रण होनेपर मिल सकेगा।

*अध्यात्मरामायण–सानुवाद, १ चित्र, एक तरफ श्लोक और उनके सामने ही अर्थ है, पृष्ठ ४०२, मूल्य १।।।), सजिल्द २)
विनय-पत्रिका–गो० श्रीतुलसीदासकृत, सरल हिन्दी-भावार्थसहित, १ चित्र, अनु०—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, पृष्ठ ४७२, मूल्य अजिल्द १), सजिल्द ... ... १।)
गीतावली–गो० श्रीतुलसीदासकृत, अनुवादक–श्रीमुनिलालजी, पृष्ठ ४४४, मूल्य अजिल्द १), सजिल्द ... १।)
श्रीश्रीचैतन्य-चरितावली–(खण्ड२) पृष्ठ ३७६, ९ चित्र, मूल्य अजिल्द १=), सजिल्द ... १।=)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग १)–सचित्र, लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ३५२, मूल्य ।।=), सजिल्द ... ।।।–)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग २)–सचित्र, लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ६३२, मूल्य ।।।=), सजिल्द ... १=)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ३) सचित्र, लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ४२४, मूल्य ।।≤), सजिल्द ... ।।।=)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ४) सचित्र, लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ५७६, मूल्य ।।।–), सजिल्द ... १)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ५) सचित्र, लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ५०४, मूल्य ।।।–), सजिल्द ... १)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग १)–(छोटे आकारका गुटका संस्करण) सचित्र, पृष्ठ ४४८, मूल्य ।–), सजिल्द ... ।=)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग २)–(छोटे आकारका गुटका संस्करण) सचित्र, पृष्ठ ७५०, मूल्य ।=), सजिल्द ... ।।)
*तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ३)–(छोटे आकारका गुटका संस्करण) सचित्र, पृष्ठ ५५६, मूल्य ।–), सजिल्द ... ।=)
*तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ४)–(छोटे आकारका गुटका संस्करण) सचित्र, पृष्ठ ६९६, मूल्य ।=), सजिल्द ... ।।)
तत्त्व-चिन्तामणि–(भाग ५)–(छोटे आकारका गुटका संस्करण) सचित्र, पृष्ठ ६२४, मूल्य ।=), सजिल्द ... ।।)
विष्णुसहस्रनाम–शांकरभाष्य हिन्दी-टीकासहित, सचित्र, भाष्यके सामने ही उसका अर्थ छापा गया है। पृष्ठ २८४, मूल्य ।।=)
ढाई हजार अनमोल बोल (संत-वाणी)–सम्पादक–श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, पृष्ठ ३८४, मूल्य ... ।।=)
सूक्ति-सुधाकर–सुन्दर श्लोकसंग्रह, सानुवाद, पृष्ठ २६६, मूल्य ... ... ।।=)
*कवितावली–गोस्वामी श्रीतुलसीदासकृत, सटीक, १ चित्र, पृष्ठ २२४, मूल्य ... ... ।।–)
*दोहावली–सानुवाद, अनुवादक–श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, १ रंगीन चित्र, पृष्ठ १९६, मूल्य ... ।।)
*स्तोत्ररत्नावली–चुने हुए स्तोत्र, हिन्दी-अनुवादसहित, पृष्ठ ३१६, मूल्य ... ... ।।)
तुलसीदल–लेखक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, सचित्र, पृष्ठ २८४, मूल्य अजिल्द ।।) सजिल्द ... ।।≤)
*सुखी जीवन–लेखिका—श्रीमैत्रीदेवी, पृष्ठ २१६, मूल्य ... ... ।।)
नैवेद्य–श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके २८ लेख और ६ कविताओंका संग्रह, सचित्र, पृष्ठ २६२, मूल्य ।।), सजिल्द ... ।।≤)
*तत्त्व-विचार–लेखक–श्रीज्वालाप्रसादजी कानोडिया, तात्त्विक लेखोंका संग्रह, सचित्र पृष्ठ २०४, मूल्य ... ।=)
उपनिषदोंके चौदह रत्न–पृष्ठ ९२, चित्र १, मूल्य ... ... ।≈)
*लघुसिद्धान्तकौमुदी–परीक्षोपयोगी सटिप्पण, पृष्ठ ३६४, मूल्य ... ... ।=)
*भक्त नरसिंह मेहता–सचित्र, पृष्ठ १६०, मूल्य ... ... ।≈)
लोक-परलोकका सुधार–प्रथम भाग, पृष्ठ-संख्या २२०, मूल्य ... ... ।≈)
लोक-परलोकका सुधार–द्वितीय भाग, पृष्ठ-संख्या २४४, मूल्य ... ... ।=)
रामायण प्रथमा-परीक्षा-पाठ्य-पुस्तक–पृष्ठ १७४, मूल्य ... ... ।=)
विवेक-चूडामणि—सानुवाद, सचित्र, पृष्ठ १८४, मूल्य अजिल्द ।–), सजिल्द ... ... ।।)
प्रेम-दर्शन–नारदरचित भक्तिसूत्रोंकी विस्तृत टीका, टीकाकार–श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, सचित्र, पृष्ठ १८८, मूल्य ।–)
भवरोगकी रामबाण दवा–लेखक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, पृष्ठ १७२, मूल्य ... ... ।–)

*संस्करण समाप्त हो गया है, पुनर्मुद्रण होनेपर मिल सकेगा।

भक्त बालक-गोविन्द, मोहन आदि बालक भक्तोंकी ५ कथाएँ हैं, पृष्ठ ८०, चित्र ४ रंगीन, १ सादा, मूल्य ... ।-)
भक्त नारी-स्त्रियोंमें धार्मिक भाव बढ़ानेके लिये बहुत उपयोगी मीरा, शबरी आदिकी कथाएँ हैं, पृष्ठ ६८, १ रंगीन, ५ सादा चित्र, मूल्य ... ... ।-)
भक्त-पञ्चरत्न-यह रघुनाथ, दामोदर आदि पाँच भक्तोंकी कथाओंकी पुस्तक सद्गृहस्थोंके लिये बड़े कामकी है, पृष्ठ ८८, मूल्य ... ... ।-)
***आदर्श भक्त**-शिबि, रन्तिदेव आदिकी ७ कथाएँ, पृष्ठ ९८, १ रंगीन, ११ लाइन-चित्र, मूल्य ... ।-)
भक्त-सप्तरत्न-दामा, रघु आदिकी गाथाएँ, पृष्ठ ८६, चित्र १, मूल्य ... ... ।-)
***भक्त-चन्द्रिका**-सखू, विट्ठल आदि ६ भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ७८, चित्र १, मूल्य ... ... ।-)
भक्त-कुसुम-जगन्नाथ, हिम्मतदास आदिकी ६ कथाएँ, पृष्ठ ८४, चित्र २, मूल्य ... ... ।-)
प्रेमी भक्त-बिल्वमंगल, जयदेव आदिकी ५ कथाएँ, पृष्ठ ९०, ५ चित्र, मूल्य ... ... ।-)
प्राचीन भक्त-मार्कण्डेय, कण्डु, उतङ्क आदिकी १५ कथाएँ, पृष्ठ १५२, चित्र बहुरंगे ४, मूल्य ... ॥)
भक्त-सरोज-गङ्गाधरदास, श्रीधर आदिकी १० कथाएँ, पृष्ठ १०४, चित्र बहुरंगे ३, मूल्य ... ।=)
भक्त-सुमन-नामदेव, राँका-बाँका आदिकी १० कथाएँ, पृष्ठ ११२, चित्र बहुरंगे २, सादे २, मूल्य ... ।=)
***भक्त-सौरभ**-व्यासदासजी, प्रयागदासजी आदिकी ५ कथाएँ, पृष्ठ ११०, चित्र बहुरंगे १, मूल्य ... ।-)
***भक्तराज हनुमान्**-सचित्र, पृष्ठ ७२, मूल्य ... ... ।-)
सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र-पृष्ठ ५२, चित्र रंगीन ४, मूल्य ... ... ।-)
प्रेमी भक्त उद्धव-पृष्ठ-संख्या ५२, रंगीन चित्र १, मूल्य ... ... ≈)
महात्मा विदुर-पृष्ठ-संख्या ६०, १ सादा चित्र, मूल्य ... ... =)॥
***भक्तराज ध्रुव**-पृष्ठ-संख्या ४६, २ रंगीन चित्र, मूल्य ... ... ≈)
परमार्थ-पत्रावली (भाग १)-श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके ५१ पत्रोंका संग्रह, पृष्ठ १२४, सचित्र, मूल्य ... ।)
परमार्थ-पत्रावली (भाग २)- ,, ,, ८० पत्रोंका संग्रह, सचित्र, पृष्ठ २००, मूल्य ... ।)
कल्याणकुञ्ज-मननीय तरंगोंका संग्रह, सचित्र, पृष्ठ १३६, मूल्य ... ... ।)
महाभारतके कुछ आदर्श पात्र-पृष्ठ १२४, मूल्य ... ... ।)
मानवधर्म-लेखक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, पृष्ठ ९८, मूल्य ... ... ≈)
आदर्श भ्रातृ-प्रेम-लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ १०४, मूल्य ... ... ≈)
गीता-निबन्धावली-गीताकी अनेक बातें समझनेके लिये बहुत उपयोगी हैं, पृष्ठ ८०, मूल्य ... ... =)॥
साधन-पथ-लेखक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, सचित्र, पृष्ठ ६८, मूल्य ... ... =)॥
अपरोक्षानुभूति-शंकरस्वामिकृत, सानुवाद, पृष्ठ ४०, सचित्र, मूल्य ... ... =)॥
***मनन-माला**-यह भावुक भक्तोंके बड़े कामकी चीज है, पृष्ठ ५४, सचित्र, मूल्य ... ... =)॥
नवधा भक्ति-लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ६०, सचित्र, मूल्य ... ... =)
बालशिक्षा-लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ६८, सचित्र, मूल्य ... ... =)
रामायण शिशु-परीक्षा-पाठ्य पुस्तक—पृष्ठ ४६, मूल्य ... ... =)
भजन-संग्रह-प्रथम भाग, पृष्ठ-संख्या १८०, मूल्य =)
भजन-संग्रह-द्वितीय भाग, पृष्ठ-संख्या १६८, मूल्य =)
भजन-संग्रह-तृतीय भाग, पृष्ठ-संख्या २२८, मूल्य =)
भजन-संग्रह-चतुर्थ भाग, पृष्ठ-संख्या १६०, मूल्य =)
भजन-संग्रह-पञ्चम भाग, पृष्ठ-संख्या १४०, मूल्य =)
स्त्रीधर्मप्रश्नोत्तरी-पृष्ठ ५६, मूल्य ... -)॥
नारीधर्म-पृष्ठ ४८, मूल्य ... -)॥

---

* संस्करण समाप्त हो गया है, पुनर्मुद्रण होनेपर मिल सकेगा।

*गोपीप्रेम—पृष्ठ ५२, मूल्य ... -)॥
मनुस्मृति—द्वितीय अध्याय सार्थ, पृष्ठ ५६, मूल्य -)॥
हनुमानबाहुक—सचित्र, सानुवाद, पृष्ठ ४०, मूल्य -)॥
ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप—पृष्ठ ३८, मूल्य -)॥
श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्—सटीक, पृष्ठ ९६,
मूल्य अजिल्द -)॥, सजिल्द ... =)॥
मनको वश करनेके कुछ उपाय—पृष्ठ २४, मूल्य -)।
*श्रीसीताके चरित्रसे आदर्श शिक्षा—पृष्ठ ४०, मूल्य -)।
*गीताका प्रधान विषय और सूक्ष्म विषय—पृष्ठ ८०, -)।
ईश्वर—पृष्ठ ३२, मूल्य ... -)।
*मूलरामायण—पृष्ठ ३२, मूल्य ... -)।
रामायण मध्यमा-परीक्षा-पाठ्य पुस्तक—मूल्य ... -)।
सामयिक चेतावनी—मूल्य ... -)
*रामायण सुन्दरकाण्ड—पृष्ठ ६४, मूल्य ... -)
*आनन्दकी लहरें—पृष्ठ २८, मूल्य ... -)
सन्ध्योपासनविधि—सटीक मूल्य ... -)
*गोविन्द-दामोदर-स्तोत्र—सार्थ, पृष्ठ ३२, मूल्य -)
श्रीप्रेमभक्ति-प्रकाश—पृष्ठ १६, मूल्य ... -)
ब्रह्मचर्य—पृष्ठ ३२, मूल्य ... -)
समाज-सुधार—पृष्ठ ४० मूल्य ... -)
एक संतका अनुभव—पृष्ठ ३२, मूल्य ... -)
आचार्यके सदुपदेश—पृष्ठ २८, मूल्य ... -)
*सप्त-महाव्रत—पृष्ठ ४०, मूल्य ... -)
*वर्तमान शिक्षा—पृष्ठ ४०, मूल्य ... -)
सच्चा सुख और उसकी प्राप्तिके उपाय—पृष्ठ ३२, -)
श्रीभगवन्नाम—पृष्ठ ८४, मूल्य ... -)
श्रीमद्भगवद्गीताका तात्त्विक विवेचन—पृष्ठ ६४, मू० -)
भगवत्तत्त्व—पृष्ठ ६४, मूल्य ... -)
संत-महिमा—पृष्ठ ४८, मूल्य ...)॥।
शारीरकमीमांसा-दर्शन—मूल, पृष्ठ ४८, मूल्य)॥।
*रामगीता—सटीक, पृष्ठ ४८, मूल्य ...)॥।
विष्णुसहस्रनाम—मूल, पृष्ठ ४४, अजिल्द)॥।, स० -)॥
वैराग्य—पृष्ठ ४८, मूल्य ...)॥।
हरेरामभजन—२ माला, मूल्य ...)॥।
,, १४ माला, मूल्य ... ।-)
,, ६४ माला, मूल्य ... १)
विनय-पत्रिकाके पंद्रह पद—सार्थ, पृष्ठ १६, मूल्य)॥
सीतारामभजन—मूल्य ...)॥
भगवान् क्या हैं ?—पृष्ठ ४८, मूल्य ...)॥
भगवान्‌की दया—पृष्ठ ४०, मूल्य ...)॥
गीतोक्त सांख्ययोग और निष्कामकर्मयोग—पृष्ठ४८,)॥
सेवाके मन्त्र—पृष्ठ ३२, मूल्य ...)॥
*प्रश्नोत्तरी—सटीक, पृष्ठ ३२, मूल्य ...)॥
सन्ध्या—हिन्दीविधिसहित, पृष्ठ १६, मूल्य ...)॥
बलिवैश्वदेवविधि—मूल्य ...)॥
सत्यकी शरणसे मुक्ति—पृष्ठ ३६, मूल्य ...)॥
भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय—पृष्ठ ४८, मूल्य ...)॥
व्यापारसुधारकी आवश्यकता और व्यापारसे
मुक्ति—पृष्ठ ३२, मूल्य ...)॥
*गीताके श्लोकोंकी वर्णानुक्रम-सूची—पृष्ठ ४०, मूल्य)॥
ज्ञानयोगके अनुसार विविध साधन—पृष्ठ ३६, मूल्य)॥
परलोक और पुनर्जन्म—पृष्ठ ४०, मूल्य ...)॥
अवतारका सिद्धान्त—पृष्ठ ३२, मूल्य ...)॥
स्त्रियोंके कल्याणके कुछ घरेलू प्रयोग—मूल्य ...)॥
पातञ्जलयोगदर्शन—मूल, पृष्ठ २८, मूल्य ...)।
धर्म क्या है ?—पृष्ठ २०, मूल्य ...)।
दिव्य सन्देश—पृष्ठ १६, मूल्य ...)।
श्रीहरिसंकीर्तनधुन—पृष्ठ ८, मूल्य ...)।
नारद-भक्ति-सूत्र—(सार्थ गुटका), पृष्ठ २८, मूल्य)।
*त्यागसे भगवत्प्राप्ति—पृष्ठ २४, मूल्य ...)।
महात्मा किसे कहते हैं ?—पृष्ठ २४, मूल्य ...)।
ईश्वर दयालु और न्यायकारी है—पृष्ठ २४, मूल्य)।
प्रेमका सच्चा स्वरूप—पृष्ठ २४, मूल्य ...)।
हमारा कर्तव्य—पृष्ठ २४, मूल्य ...)।
ईश्वरसाक्षात्कारके लिये नाम-जप सर्वोपरि
साधन है—पृष्ठ २८, मूल्य ...)।
चेतावनी—पृष्ठ २६, मूल्य ...)।
कल्याणप्राप्तिकी कई युक्तियाँ—पृष्ठ ३६, मूल्य ...)।
श्रीमद्भगवद्गीताका प्रभाव—पृष्ठ २४, मूल्य ...)।
शोकनाशके उपाय—पृष्ठ २८, मूल्य ...)।
लोभमें पाप—पृष्ठ ८, मूल्य आधा पैसा
गजलगीता—पृष्ठ ८, मूल्य आधा पैसा
सप्तश्लोकी गीता—पृष्ठ ८, मूल्य आधा पैसा

* संस्करण समाप्त हो गया है। पुनर्मुद्रण होनेपर मिल सकेगा।

Our English Publications

*The Philosophy of Love—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 1-0-0
The Story of Mira Bai—(*By Bankey Behari*) ...	... 0-13-0
Gems of Truth (First Series)—(*By Jayadayal Goyandka*)	... 0-12-0
Gems of Truth (Second Series)—(*By Jayadayal Goyandka*)	... 0-12-0
*Songs From Bhartrihari—(*By Lal Gopal Mukerji and Bankey Behari*)	... 0-8-0
*Way to God-Realization—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 0-4-0
*Gopis' Love for Sri Krishna—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 0-4-0
The Bhagavadgita—(*With Sanskrit text and an English translation*) 0-4-0 *Bound*	... 0-6-0
The Divine Name and Its Practice—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 0-3-0
The Immanence of God—(*By Madan Mohan Malaviya*)	... 0-2-0
Wavelets of Bliss—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 0-2-0
What is God—(*By Jayadayal Goyandka*)	... 0-2-0
What is Dharma—(*By Jayadayal Goyandka*)	... 0-0-9
The Divine Message—(*By Hanumanprasad Poddar*)	... 0-0-9

कुछ ध्यान देने योग्य बातें—

(१) हर एक पत्रमें नाम, पता, डाकघर, जिला बहुत साफ देवनागरी या अंग्रेजी अक्षरोंमें लिखें। साथ ही उत्तरके लिये जवाबी कार्ड या टिकट आना चाहिये।

(२) स्टेशनका नाम जरूर लिखना चाहिये। पुस्तकोंका वजन देखकर सुविधानुसार माल डाकसे या मालगाड़ीसे अथवा पारसलसे भेजा जा सकता है। आर्डरके साथ कुछ दाम पेशगी भेजने चाहिये।

(३) थोड़ी पुस्तकोंपर डाकखर्च अधिक पड़ जानेके कारण एक रुपयेसे कमकी वी० पी० प्रायः नहीं भेजी जाती, इससे कमकी किताबोंकी कीमत, डाकमहसूल और रजिस्ट्रीखर्च जोड़कर दाम भेजें।

(४) पुस्तकका दाम, ၂१ एक सेरका ॥) के हिसाबसे डाकमहसूल, ≥) रजिस्ट्रीखर्च तथा १) की पुस्तकपर)॥ पैकिंगखर्च जोड़कर दाम आर्डरके साथ ही भेज देना चाहिये ताकि ग्राहकोंको वी० पी० का अलग खर्च न देना पड़े एवं पुस्तकें भी शीघ्र मिल सकें। रेलसे मँगानेवाले सज्जन पुस्तकके दाम, ।)॥ रजिस्ट्रीखर्च तथा १) की पुस्तकपर)॥ पैकिंगखर्च जोड़कर दाम भेजें।

(५) ५०) की पुस्तकें लेनेसे ग्राहकोंके रेलवे स्टेशनपर मालगाड़ीसे फ्री-डिलेवरी तथा रेलपारसलसे आधा महसूल बाद दिया जायगा। फ्री-डिलेवरीमें बिल्टी भेजनेमें लगनेवाला डाकखर्च, रजिस्ट्रीखर्च या मनीआर्डरकी फीस या बैंक-चार्ज आदि शामिल नहीं हैं।

(६) आर्डर आनेपर भी उसका माल भेजनेके लिये हम बाध्य नहीं हैं।

(७) 'कल्याण' रजिस्टर्ड होनेसे उसका महसूल कम लगता है और वह 'कल्याण'के ग्राहकोंको नहीं देना पड़ता, पर प्रेसकी पुस्तकों और चित्रोंपर ॥) सेर डाकमहसूल लगता है, जो कि ग्राहकोंके जिम्मे होता है। इसलिये 'कल्याण'के साथ किताबें और चित्र नहीं भेजे जा सकते। अतः गीताप्रेसकी पुस्तक आदिके लिये अलग आर्डर देना चाहिये।

व्यवस्थापक—गीताप्रेस, गोरखपुर

*The edition has been exhausted, may be had on being reprinted.

☛ गोरखपुरसे मँगवानेके पहले अपने गाँवके पुस्तक-विक्रेतासे अवश्य पूछ लें। इससे आप भारी डाकखर्च और रेलपारसलखर्चसे बच सकते हैं।

श्रीहरिः

चित्र-सूची

गीताप्रेस, गोरखपुरके सुन्दर, सस्ते, धार्मिक दर्शनीय चित्र

फुटकर एवं 'कल्याण-कल्पतरु' के बचे हुए कुछ चित्र

रंगीन चित्र, नेट दाम)॥$\frac{1}{2}$ प्रतिचित्र

अश्व-परिचर्या
शिबिका आत्मत्याग
भीमसेन और द्रौपदी; कीचक-वध
जमदग्नि-परशुराम
गुरुभक्त एकलव्यका आदर्श त्याग
सुदामाके तन्दुल
द्रौपदीको सान्त्वना

कल्याण वर्ष १५ अङ्क एकका टाइटल
श्रीरामका राज्याभिषेक
श्रीसनत्सुजात और महाराजा धृतराष्ट्र
श्रीकृष्णार्जुन मयदानव
तन्मयता
दुर्योधनने भीमसेनको जलमें फेंक दिया
पाण्डवोंका वन-गमन

श्रीरामाश्वमेध यज्ञके अश्वका पूजन
राजा दिलीपके द्वारा नन्दिनी गौकी रक्षा
भगवान्के सगुण स्वरूपका ध्यान
महादेवजीके द्वारा पार्वतीको श्रीविष्णु-सहस्रनामका उपदेश
श्रीविष्णुदासको भगवान्का दर्शन
खम्भसे भगवान् नृसिंहका प्रादुर्भाव

आवश्यक सूचनाएँ

(१) चित्रका नाम जिस साइजमें दिया हुआ है वह उसी साइजमें मिलेगा।
(२) ≤१ एक सेरमें ७॥×१० के १२० चित्र चढ़ते हैं। इस हिसाबसे फी आधा सेरका ।) डाकमहसूल, ≡) रजिस्ट्री-खर्च, प्रतिरुपया -) पैकिंगखर्च तथा चित्रोंका दाम जोड़कर रकम पेशगी भेज देनी चाहिये।
(३) केवल २ या ४ चित्र पुस्तकोंके साथ या अकेले नहीं भेजे जाते, क्योंकि रास्तेमें टूट जाते हैं।
(४) जिन चित्रोंके नंबर और नाम उठा दिये गये हैं वे चित्र अब स्टाकमें समाप्त हो गये हैं।

व्यवस्थापक—**गीताप्रेस, गोरखपुर**

गीता और रामायणकी परीक्षा

सद्विचारवान् सज्जनोंको श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीरामचरितमानस (रामायण) का महत्त्व समझाना नहीं होगा। हर्षकी बात है, इनके प्रचारके लिये कई वर्षोंसे दो परीक्षा-समितियाँ अपना कार्य कर रही हैं। प्रतिवर्ष हजारों परीक्षार्थी परीक्षामें बैठते हैं। अतएव सब सज्जनोंसे प्रार्थना है कि वे अपने-अपने स्थानोंकी हिन्दी-संस्कृत-पाठशालाओंमें तथा स्कूल-कालेजोंमें गीता और रामायणकी पढ़ाईकी व्यवस्था करायें और यथासाध्य अधिक-से-अधिक विद्यार्थियोंको परीक्षामें बैठनेके लिये उत्साहित करें। आशा है कि सभी बुद्धिमान् सज्जन इस कार्यमें हमारी सहायता करेंगे। नियमावलीके लिये नीचे लिखे पतेपर पत्र लिखनेकी कृपा करें।

संयोजक—
श्रीगीता-रामायण-परीक्षा-समिति,
गीताप्रेस, गोरखपुर



गौका ज़ुलूस

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

वर्ष २० | गोरखपुर, सौर आश्विन २००२, अक्टूबर १९४५ | संख्या १ पूर्ण संख्या २२९

नमस्कार

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च ।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः ॥

श्रीमती गौओंको नमस्कार ! कामधेनुकी संतानोंको नमस्कार । ब्रह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार ! पावन करनेवाली गौओंको बार-बार नमस्कार ।

गो-सूक्त

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥

गाय रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, अदितिपुत्रोंकी बहिन और घृतरूप अमृतका खजाना है; प्रत्येक विचारशील पुरुषको मैंने यही समझाकर कहा है कि निरपराध एवं अवध्य गौका वध न करो।

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः ॥

गौओंने हमारे यहाँ आकर हमारा कल्याण किया है । वे हमारी गोशालामें सुखसे बैठें और उसे अपने सुन्दर शब्दोंसे गुँजा दें । ये विविध रंगोंकी गौएँ अनेक प्रकारके बछड़े-बछड़ियाँ जनें और इन्द्र (परमात्मा) के यजनके लिये उषःकालसे पहले दूध देनेवाली हों ।

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासाममित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह ॥

वे गौएँ न तो नष्ट हों न उन्हें चोर चुरा ले जाय, और न शत्रु ही कष्ट पहुँचावें । जिन गौओंकी सहायतासे उनका स्वामी देवताओंका यजन करने तथा दान देनेमें समर्थ होता है, उनके साथ वह चिरकालतक संयुक्त रहे ।

गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छाद् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः ।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम् ॥

गौएँ हमारा मुख्य धन हों, इन्द्र हमें गोधन प्रदान करें तथा यज्ञोंकी प्रधान वस्तु सोमरसके साथ मिलकर गौओंका दूध ही उनका नैवेद्य बने । जिसके पास ये गौएँ हैं, वह तो एक प्रकारसे इन्द्र ही है । मैं अपने श्रद्धायुक्त मनसे गव्य पदार्थोंके द्वारा इन्द्र (भगवान्) का यजन करना चाहता हूँ ।

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु ॥

गौओ ! तुम कृश शरीरवाले व्यक्तिको हृष्ट-पुष्ट कर देती हो, एवं तेजोहीनको देखनेमें सुन्दर बना देती हो । इतना ही नहीं, तुम अपने मङ्गलमय शब्दसे हमारे घरोंको मङ्गलमय बना देती हो । इसीसे सभाओंमें तुम्हारे ही महान् यशका गान होता है ।

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु ॥

गौओ ! तुम बहुत-से बच्चे जनो, चरनेके लिये तुम्हें सुन्दर चारा प्राप्त हो तथा सुन्दर जलाशयमें तुम शुद्ध जल पीती रहो । तुम चोरों तथा दुष्ट हिंसक जीवोंके चंगुलमें न फँसो और रुद्रका शस्त्र तुम्हारी सब ओरसे रक्षा करे ।

(अथर्व० ४ । २१)

गोधन

(भगवत्पूज्यपाद अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर श्रीब्रह्मानन्द सरस्वतीजी महाराजका उपदेश)

धर्मशास्त्रमें गोधनका विशेष माहात्म्य बतलाया गया है । लिखा है—

सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम् ।

हिंदू-संस्कृति इस भावनासे परिपूर्ण है कि—

यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरके नरः ।

किन्तु जबसे पाश्चात्योंकी सभ्यता-संस्कृतिका हमारी सभ्यता-संस्कृतिके साथ सम्मिश्रण हुआ है, तबसे भारतीय शिक्षा-विधानके लोप होनेसे अधिकांशतः शास्त्र-पुराणादिकी अनभिज्ञताके कारण गो-ब्राह्मणादिके प्रति शास्त्रीय धार्मिक बुद्धिका लोप-सा हो गया है ।

गोवंश आज व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे भौतिक तुलापर तौला जा रहा है; किन्तु स्मरण रहे कि आजका भौतिक विज्ञान गोवंशकी उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता ही नहीं लगा सकता, जिसे भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्यदृष्टिसे प्रत्यक्ष कर लिया था । गोवंशकी धार्मिक महानता उसमें जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म कारण-रूप तत्त्वोंकी प्रखरताके कारण है, उनकी खोज और जानकारीके लिये आधुनिक वैज्ञानिकोंके भौतिक यन्त्र सदैव स्थूल ही रहेंगे । यही कारण है कि बीसवीं सदीका प्रौढ़ विज्ञानवेत्ता भी गोमाताके लोम-लोममें देवताओंके निवासका रहस्य और प्रातः गोदर्शन, गोपूजन, गोसेवा आदिका वास्तविक तथ्य समझनेमें असफल रहता है । गोधनका धार्मिक महत्त्व भाव-जगत्से सम्बन्ध रखता है और वह या तो ऋतम्भरा प्रज्ञाद्वारा अनुभवगम्य है अथवा शास्त्रप्रमाणद्वारा जाना जा सकता है, भौतिक यन्त्रोंद्वारा नहीं ।

धर्मशास्त्र तो गोधनकी महानता और पवित्रताका वर्णन करता ही है, किन्तु भारतीय अर्थशास्त्रमें भी गोपालनका विशेष महत्त्व है । कौटिलीय अर्थशास्त्रमें गो-पालन और गो-रक्षणका विस्तृत विवरण मिलता है । जिस भूमिमें खेती न होती हो, उसे गोचर बनानेका आदेश अर्थशास्त्रका ही है । इस प्रकार गोधन 'अर्थ' और 'धर्म' दोनोंका प्रबल पोषक है । अर्थसे ही काम (कामनाओं) की सिद्धि होती है और धर्मसे ही मोक्षकी । अतएव गोधनसे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—चारोंकी प्राप्ति होती है । इसीलिये भारतीय जीवनमें गोधनका इतना ऊँचा माहात्म्य है । जो हिंदू धर्मशास्त्रपर विश्वास रखते हैं, उन्हें चाहिये कि चतुर्वर्ग-फल-सिद्ध्यर्थ शास्त्रविधानके अनुसार गोसेवा करते हुए गोधनकी वृद्धि करें और जो धर्म-शास्त्रपर आस्था नहीं रखते, उन्हें चाहिये कि 'अर्थ' और 'काम' की सिद्धिके लिये अर्थशास्त्रके नियमोंके अनुसार गो-पालन करते हुए गोवंशकी वृद्धि करनेका प्रयत्न करें ।

प्रत्यक्षवादियोंके लिये इससे अधिक गोमाताकी दयालुता हो ही क्या सकती है कि वह सूखे तृण भक्षण करके जन्मभर उन्हें दुग्ध-घृत-जैसे पौष्टिक द्रव्य प्रदान करे । इतनेपर भी यदि वे गोमाताके कृतज्ञ न हुए, तब तो उनमें मानवताका लेश भी नहीं माना जा सकता । गोमाताके द्वारा मानवसमाजको जो लाभ है, उसे पूर्णतया व्यक्त करनेके लिये सहस्रों पृष्ठोंकी कई पुस्तकें लिखनी होंगी । संक्षेपमें यही कहा जा सकता है कि गोमातासे मानवसमाजको जो लाभ है, उससे मानवजाति गोमाताकी सदा ऋणी रहेगी ।

वध आदि हिंसक उपायोंद्वारा गोवंशका ह्रास करना धार्मिक और आर्थिक दोनों दृष्टियोंसे राजा-प्रजा दोनोंके लिये हानिकर है । अतएव ऐसी भयंकर प्रथाओंको सर्वथा रोकनेका प्रयत्न सभीको करना चाहिये । कई देशी रजवाड़ोंने इस सम्बन्धमें प्रशंसनीय कार्य किया है; किन्तु जबतक केन्द्रीय सरकारको इसके लिये बाध्य नहीं किया जायगा, तबतक सन्तोष-जनक परिणाम असम्भव-सा प्रतीत होता है । इसके लिये देशव्यापी यथेष्ट प्रयत्न होना चाहिये ।

साथ-ही-साथ प्रत्येक गृहमें गोपालनकी प्राचीन प्रथाको बढ़ानेका प्रयत्न भी सभी सद्गृहस्थोंको करना चाहिये । तालुकेदारों, जमींदारों, सेठ-साहूकारों आदिको चाहिये कि गोशालाओंकी वृद्धि करें, जहाँसे आदर्श हृष्ट-पुष्ट गौओं और बैलोंकी प्राप्ति हो सके । गोचरभूमिके सम्बन्धमें आजकलकी व्यवस्था अत्यन्त शोचनीय है । इस सम्बन्धमें मनुजीने लिखा है—'प्रत्येक गाँव और शहरके चारों ओर काफी गोचरभूमि छोड़नी चाहिये ।' सभी समर्थ किसानों, जमींदारों और सेठ-साहूकारोंको अपने-अपने केन्द्रोंमें गोचरभूमियोंका यथोचित प्रबन्ध करना चाहिये । और गोधनकी वृद्धिका सदैव ध्यान रखना चाहिये । इसीमें भारत और भारतीय सभ्यताका गौरव तथा सच्चा स्वार्थ निहित है ।



गोरक्षा ही प्रपञ्च-रक्षा है

(अनन्तश्रीविभूषित कामकोटिपीठाधिपति जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्यजी महाराजका उपदेश)

श्रीकृष्णरूपमें अवतार ग्रहण करनेकी प्रार्थना करनेके लिये जब श्रीभूदेवी श्रीभगवान्‌के पास गयीं, तब वे गो-रूप धारण करके ही गयी थीं। वे श्रीभूदेवी और गौ—दोनों ही हमारी माताएँ हैं। महाकवि कालिदास कहते हैं—'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्', 'यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सं पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम्।' इत्यादि।

श्रीभगवान्‌ने लोक-संरक्षणार्थ श्रीकृष्णावतार ग्रहण किया और गौओंके साथ क्रीड़ा की। 'नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।' श्रीभगवान्‌ने कहा है—देवलोक और भूलोक दोनों प्रेमपूर्वक परस्पर उपकार करते हुए एक दूसरेका श्रेयःसाधन करें—

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः। परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥

उनका और भी उपदेश है कि इस परस्पर-भावनाकी जड़ यज्ञ ही है।

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥

भगवान्‌ने अपने अवतारका यही कर्तव्य समझा कि ऐसे यज्ञोंकी वृद्धिके द्वारा गो-ब्राह्मणका रक्षण करना। यज्ञके लिये द्रव्यशुद्धि और मन्त्रशुद्धिकी आवश्यकता होती है। यज्ञोंमें जिन पदार्थोंका व्यवहार होता है, उनमें गायका पवित्र घी सर्वप्रधान है। मन्त्रसिद्धिका संरक्षण करना ब्राह्मणका कर्तव्य है। इसीलिये गो-रक्षा यज्ञ-रक्षाका प्रधान साधन है। यज्ञ-रक्षासे प्रपञ्च-रक्षा होती है। अतएव आस्तिक पुरुषोंके द्वारा किया जानेवाला गोरक्षण ही लोकरक्षण है।

लौकिक दृष्टिसे विचार करनेपर भी यही सिद्ध होता है कि सब लोगोंको बड़ी सावधानीके साथ गो-संरक्षण करना चाहिये।

इस महान् युद्धके परिणामस्वरूप प्राप्त हुए समस्त क्लेशोंको दूर करनेके लिये तो गोरक्षापर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। कहना न होगा कि संसारभरके भावी संतानोंकी रक्षाके लिये गौओंकी और खाद्य द्रव्य—अनाज आदिके उत्पादनकी वृद्धिके लिये बैलोंकी अनिवार्य आवश्यकता है। हम देखते हैं कि इस संग्रामकालमें मनुष्योंके शरीर-निर्वाह और खाद्य पदार्थोंकी प्राप्तिमें बड़ी कठिनाई आ गयी है। इसका परिहार गो-संरक्षणसे ही होगा। आधुनिक लौकिक नेताओंने भी इस बातको स्वीकार किया है और संसारभरको यह संदेश दिया है कि गायका दूध ही जगत्‌के अनिवार्य महारोगोंकी अक्सीर दवा है। उनकी इस उक्तिसे शास्त्रोंपर विश्वास न करनेवालोंको भी गौकी महत्तापर विश्वास होना चाहिये। हमारे लिये यह कोई नयी बात नहीं है। हजारों वर्षोंसे हमारे शास्त्रोंमें पञ्चगव्य प्राशन करनेके समय इस मन्त्रपाठका नियम चला आता है—

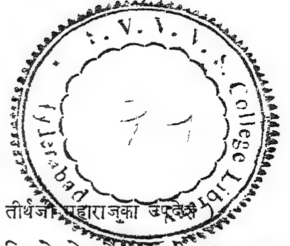
यत् त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके। प्राशनं पञ्चगव्यस्य दहत्यग्निरिवेन्धनम्॥

अर्थात् मेरे अस्थि-चर्ममें जो पाप वर्तमान हैं, वे पञ्चगव्य-प्राशनसे वैसे ही भस्म हो जाते हैं, जैसे अग्निसे ईंधन।

'कोढ़ आदि महारोगोंके लिये गायका दूध एकमात्र अनुभवसिद्ध औषध है।' इस नवीन तत्त्वको एक राष्ट्रीय नेताने और दूसरे एक अंग्रेजी डाक्टरने बतलाया है। इससे भी उपर्युक्त पञ्चगव्य-प्राशनके श्लोककी पुष्टि होती है। क्योंकि कुष्ठरोग चर्म और अस्थिका ही प्रधान बाधक है। गोबर सारी दुर्गन्धको दूर करता है और रोगकीटाणुओंका नाश करता है। गोमाता सिर्फ अपनी संतानको ही नहीं, संसारभरकी समस्त जातियों और समूहोंको पवित्र एवं अमृतोपम दूध देती है। यदि संसार गोमाताको प्रत्यक्ष लक्ष्मी मानकर उसका पूजन-सत्कार करे तो संसारके पाप नष्ट हो जायँ और युद्धकी ढिंढोरेबाजी भी रुक जाय!

युद्धकी परिस्थितिके कारण इस समय हमारे देशमें बहुसंख्यक विदेशी आये हुए हैं। लोगोंको ऐसा भ्रम हो सकता है कि इस समय पशुहिंसा करनेसे अधिक रुपये मिलेंगे। ऐसा माननेवाले लोग धोखा खाकर स्वयं तो नरकोंमें पड़ते ही हैं, दुनियामें पाप बढ़ाकर उस पापके परिणामस्वरूप जगत्‌पर महान् विपत्तियोंकी वृद्धिमें भी कारण बनते हैं। अब, जब कि लड़ाई बंद हो गयी है, दुनियाके सुधारके लिये जैसे भी हो अधिक-से-अधिक गायोंकी आवश्यकता होगी। यह बात सुशिक्षित पुरुषोंके द्वारा प्रत्येक किसानकी झोंपड़ीतक पहुँचनी चाहिये और उन्हें पशु-रक्षणके लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।

जिन्होंने जगत्‌के हितकी जिम्मेवारी अपने ऊपर ले रक्खी है, उन देशके शासकोंको इन सब बातोंपर खूब विचार करके तुरंत गोहिंसा-निवारण और गो-संरक्षणके कार्यमें लग जाना चाहिये। और सर्वसाधारणको भी सावधानीके साथ गौओंकी रक्षा करनी चाहिये।



गौसे ऐहिक-आमुष्मिक कल्याण

(अनन्तश्रीविभूषित द्वारकापीठाधीश्वर जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य स्वामी श्रीअभिनव सच्चिदानन्द तीर्थजी महाराजका उपदेश)

हमें हर्ष होता है कि 'कल्याण'का इस सालका विशेषाङ्क 'गो-अङ्क' है । दुनियामें जितने लोग हैं, वे सभी गायका दूध पीनेवाले हैं । जिसने गायका दूध न पिया हो, ऐसा कोई आदमी नहीं होगा ।

अपनी मातासे भी गोमाता श्रेष्ठ है । क्योंकि अपनी माता ज्यादा-से-ज्यादा दो सालतक बच्चेको दूध पिलाती है । गोमाता तो आजीवन दूध देकर पालती है । अतः गोमाताकी महिमा अपार है ।

गोमाताके प्रत्यङ्गमें देव रहते हैं । इसलिये श्रुति-स्मृति-पुराण कहते हैं कि मनुष्योंके उद्धारके लिये आयी हुई यह प्रत्यक्ष देवता है । अतएव केवल व्यवहार-दृष्टिसे नहीं, धार्मिक एवं पारमार्थिक दृष्टिसे भी प्रति घरमें गाय अवश्य रखनी ही चाहिये, उसका पालन-अर्चन होना ही चाहिये ।

गीतामें भगवान्‌ने कहा है—

> यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः । स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥
> न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन । नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥

इस वचनके अनुसार गोपालन मनुष्योंका कर्तव्य है—यह बात सिखानेके लिये ही स्वयं भगवान् श्रीकृष्णरूपमें गोपालना करके 'गोपाल' और 'गोविन्द' नामसे विख्यात हुए । गायोंके नाशके लिये जितने राक्षस आये, उन सबको मारकर भगवान्‌ने दुनियाको स्पष्टरूपसे गो-रक्षणका आदर्श बतलाया ।

भारतवर्षमें अनादिकालसे ही हिंदुओंका मुख्य कर्तव्य गोपालन रहा है ।

प्राचीन कालमें जिसके पास ज्यादा गायें होतीं, वही सम्पत्तिशाली माना जाता था । यज्ञमें दक्षिणारूपमें भी गायोंको ही देते थे ।

जबतक ऐसी गो-सम्पद् पूर्णरूपसे थी, भारतवर्ष तबतक जगत्‌का आदर्श था । जबसे गो-सम्पत् कम होने लगी, तभीसे भारतवर्षका गौरव भी दिनोंदिन कम होने लगा ।

हम आशा रखते हैं कि उपर्युक्त बात ध्यानमें रखकर सभी हिंदू अपनी गो-सम्पत्‌को पुनः बढ़ानेकी कोशिश करेंगे तथा तद्द्वारा अपना ऐहिक-आमुष्मिक श्रेय भी प्राप्त करेंगे ।

हमारा शुभाशीर्वाद है—

> स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ।
> गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥

गो-गीत

(रचयिता—राष्ट्रकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्त)

गाय कहूँ वा तुझको माय ?
अयि आबाल-वृद्ध हम सबकी जीवन भरकी धाय !
तेरा मूत्र और गोबर भी पावे, सो तर जाय,
घर ही नहीं, खेतकी भी तू सबकी एक सहाय ।
न्योछावर है उस पशुतापर यह नरता निरुपाय;
आ, हम दोनों आज पुकारें—कहाँ कन्हैया हाय !

गौ ही देशका परम मङ्गलायन है

(अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्यजी श्रीशिरोलकरस्वामि महाराज संकेश्वरमठ, करवीरका उपदेश)

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत् । गावो भूतं च भव्यं च गावः पुष्टिः सनातनी ॥

'गौ मनुष्योंके जीवनका अवलम्ब है, गौ कल्याणका परम निधान है; पहलेके लोगोंका ऐश्वर्य गौपर अवलम्बित था, आगेकी उन्नति भी गौपर अवलम्बित है, गौ ही सब समय पुष्टिका साधन है ।'

भारतवर्षका एक नाम 'पुण्यभूमि' है । यह नाम इस देशके अधिवासियोंका विशेष उद्देश्य प्रकट करता है । प्राणिमात्र जिस वस्तुकी स्वाभाविकी इच्छा रखते हैं, उसीको शास्त्रकार सुख कहते हैं । ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है, जो सुखकी इच्छा न रखता हो । द्वन्द्वातीत परमात्माने सुख-दुःखादि द्वन्द्वोंके साथ ही उनके कारण भी सुव्यवस्थित-रूपसे निर्मित किये हैं और ऐसे कार्य-कारणादि सर्वार्थद्योतक, प्रदीपतुल्य वेदादिकोंका उद्भव निःश्वासवत् लीलामात्र-से उन जगदीश्वरने ही किया है । एवंभूत कार्य-कारणभावापन्न प्रपञ्चके निर्माणकर्त्ता उसकी सुस्थितिकी इच्छा करें, यह स्वाभाविक ही है । इस ईश्वरेच्छामें बाधक होनेवालोंको दण्ड देनेवाली और जगत्-स्थितिका परिपालन करनेवाली ईश्वरीय शक्ति कितनी महान् है, इसकी कल्पना पुराणादिकोंमें वर्णित अवतार-कथाओंसे की जा सकती है । जगत्-स्थितिकी कारणस्वरूपा सत्ताओंमें एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सत्ता गोमाताकी है, यह बात ऊपर उद्धृत किये हुए भगवान् वसिष्ठके वचनसे स्पष्ट है । श्रुति-स्मृति-पुराणादि ग्रन्थोंमें प्रतिपादित अलौकिक सुखके साधक कर्मोंके साथ-साथ लौकिक सुखके साधक कर्मोंके लिये भी गौकी अत्यन्त आवश्यकता है, इस विषयमें किसी भी विचारशील पुरुषका मतभेद नहीं हो सकता । किसी भी लौकिक या अलौकिक कार्यकी सिद्धिके लिये सुदृढ शरीरका होना आवश्यक है । श्रुति बतलाती है कि बलहीन मनुष्य कभी आराम-लाभ नहीं कर सकता । सारे लौकिक व्यवहार भी बलायत्त ही होते हैं । अतः सब कार्योंकी सिद्धि जिस बलपर अवलम्बित है, उस बलकी प्रतिष्ठा गोमाता ही अपने दूध, घी, मक्खन आदिके द्वारा कराती है ।

बल भी शारीरिक और मानसिक—दो प्रकारका होता है । शारीरबलकी अपेक्षा मानसबल अधिक श्रेष्ठ माना जाता है । प्राचीन ऋषि-महर्षियोंने मानसबलको ही बढ़ाकर सकल-दुःखविनिर्मुक्त होनेकी ओर उसका उपयोग किया है । वैदिकधर्ममें आहार-विहारादिकोंके सम्बन्धमें जो निर्बन्ध हैं, वे इसी बलकी वृद्धिके लिये हैं । 'बलं बलवतां चाहं काम-रागविवर्जितम्' इस भगवद्वचनका भी यही अभिप्राय है । अतः शारीरबल-संवर्द्धनके अन्य साधनोंके रहते हुए भी, शरीर और मन दोनोंके दोष हरण कर मनोबलको बढ़ानेमें गोदुग्ध ही सर्वोत्तम आहार्य होनेसे गोमाताकी श्रेष्ठता सहज ही आकर्षक है । नन्दिनीके पावन संसर्गसे संवर्द्धित महर्षि वसिष्ठके ब्रह्मतेजसे चकाचौंध होकर सम्पूर्ण मानुषानन्दके भोक्ता राजा विश्वामित्रको 'धिग्बलं क्षत्रियबलम्' कहकर अपना ही बल धिक्कारना पड़ा और ब्रह्मतेजकी खोजमें राजपाट त्यागकर तपका आश्रय लेना पड़ा । भगवान् वसिष्ठकी होमधेनुको सिंहका ग्रास होनेसे बचानेके लिये महाप्रतापी राजा दिलीप अपने सार्वभौम ऐश्वर्य, यौवन-अवस्था और सुन्दर शरीरकी कोई परवा न कर अपने प्राण होमनेको तैयार हो गये । गौओंकी रक्षाके लिये ही भगवान् गोपालकृष्णने गोवर्धन पर्वत उठा लिया । समर्थ गुरु रामदास स्वामीकी आज्ञासे छत्रपति महाराज शिवाजीने गो-ब्राह्मण-प्रतिपालनमें ही अपनी सारी सामर्थ्य लगा दी । इन सब बातोंसे गोमाताकी महत्ताका किंचित् परिचय मिलता है ।

पहलेके लोग गोमाताकी इस महत्ताको समझते थे और गोरक्षामें विशेष यत्नवान् होकर अपना ऐहिक और पारमार्थिक कल्याण साधन करते थे । विराट एक माण्डलिक राजा थे, उनके पास लाखों गौएँ थीं; उन सबकी देख भाल करनेका काम उन्होंने एक समय पाण्डुसुत सहदेवको सौंपा था । पर अब ऐसी गोशालाएँ रखनेवाले कितने राजा हैं । महाभारतमें राजा युधिष्ठिरको उपदेश करते हुए भीष्माचार्य बतलाते हैं—

अटवीपर्वताश्चैव नद्यस्तीर्थानि यानि च । सर्वाण्यस्वामिकान्याहुर्न हि तत्र परिग्रहः ॥

'वन, पर्वत, नदी और तीर्थोंपर किसीका स्वामित्व नहीं होता; सबके लिये ये खुले रहते हैं । कोई इन्हें अपना ही स्वत्व मानकर इनका परिग्रह न कर बैठे ।'

यदि इस नीतिके अनुसार वन, पर्वत, नदी और तीर्थ गौओंके लिये खुले रक्खे जायँ तो करोड़ों गौओंका पालन-पोषण हो सकता है और उससे भूमिकी शस्योत्पादन-शक्ति भी कई गुना बढ़ सकती है । पर हम सरकारको क्या कहें, जब कि हिंदुस्थानके वैदिकधर्माभिमानी लोग ही अपने कर्तव्यसे च्युत हो गये हैं । यदि ये लोग घर-घर गौ रखनेका निश्चय कर लें तो उनके उतने ही पवित्र संकल्पबलके फलस्वरूप सरकार भी वन-पर्वतादि स्थानोंसे अपना स्वामित्व हटा ले

सकती है। प्रत्येक मनुष्यके लिये गौ रखना चाहे सम्भव न हो, पर गौका एक चम्मच दूध सेवन करनेका व्रत तो प्रत्येक मनुष्य ले सकता है और यदि सब हिंदू ऐसा व्रत ले लें तो इससे भी गौकी रक्षा होगी। सच्ची गोरक्षा ऐसे ही व्रतसे हो सकती है।

महर्षि वसिष्ठने इक्ष्वाकुवंशके सौदास राजाको इस सम्बन्धमें बड़े ही महत्त्वका उपदेश किया है। महर्षि वसिष्ठ कहते हैं—

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृङ्ग्यः पयोमुचः। सुरभ्यः सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥

गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा। गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

'नदियाँ जिस प्रकार समुद्रसे जा मिलती हैं, उसी प्रकार सुवर्ण शृङ्गवाली और दूध देनेवाली गौएँ मुझे प्राप्त हों। ऐसा हो कि नित्य मैं गौओंको देखूँ और गौएँ मेरी ओर देखें; कारण, गौएँ हमारी हैं और हम गौओंके हैं; गौएँ हैं, इसीसे हमलोग भी हैं।'

महर्षि आगे कहते हैं—

एवं रात्रौ दिवा चापि समेषु विषमेषु च। महाभयेषु च नरः कीर्तयन् मुच्यते भयात्॥

'जो इस प्रकार गौकी महिमाका दिन-रात, सम्पद्-विपद्‌में तथा महाभयके उपस्थित होनेपर भी ध्यान रखता और तदनुसार स्वयं आचरण कर उसका प्रचार करता है, वह सब भयोंसे मुक्त हो जाता है।'

'यतो गावस्ततो वयम्' (गौएँ हैं, इसीसे हमलोग हैं)—यह बात सबको ध्यानमें रखनी चाहिये। गौएँ न हों तो हमलोग भी नहीं हैं—यह बात हिंदुस्थानकी वर्तमान आर्थिक, राजनीतिक, आयु-आरोग्य-बल-तेज-सम्बन्धी सर्वविध दुःस्थितिसे सबके सामने स्पष्ट होती ही जा रही है। 'गौएँ हमारी और हम गौओंके' यह भाव नष्ट हो जानेसे ही आज हमलोगोंकी ऐसी दुर्दशा हो रही है। हमारा अस्तित्व ही जब गौपर अवलम्बित है, तब खली-कराई या घास-भूसा महँगा होनेके कारण गौको घरसे विदा करने या घरमें गौ न रखनेकी अपेक्षा परिवारके ही किसी व्यक्तिको निर्वाहके लिये बाहर भेजकर गोमाताकी सेवामें दक्ष रहनेवाले धीर पुरुष आज बहुत ही दुर्लभ हो गये हैं।

'गावः स्वस्त्ययनं महत्' (गौ मङ्गलका परम निधान है), यह महर्षि वसिष्ठका वचन है। पहले गौओंका इस देशमें पालन-पोषण बहुत अच्छी तरहसे होता था, इसीसे यह देश सब मङ्गलोंका निवासस्थान बन गया था। परन्तु इस समय गोपालनके अभावसे यह अमङ्गल-दशाको प्राप्त हुआ है। वैधृति, व्यतीपात एवं अमावस्या-जैसे कुयोगपर जन्मनेवाले संतान गोप्रसव-शान्तिके द्वारा निर्दोष हो जाते हैं—यह धर्मशास्त्रका विधान है। अतः अमङ्गल जन्म भी जिस गौकी संनिधिसे मङ्गलकारक हो जाते हैं, उस गौकी अपेक्षा अधिक मङ्गलकारक प्राणी जगत्‌में और कौन हो सकता है। श्रौत-स्मार्त्त कर्मोंमें गो-दुग्धादि अति पवित्र हवि-द्रव्य हैं। पञ्चगव्य त्वगस्थिगत पापका नाश करनेमें भी समर्थ होता है। इस प्रकार गोमाताके सब प्रकारसे मङ्गलमय होनेके कारण पूर्वकालके राजा सब धनोंमें गोधनको ही सर्वश्रेष्ठ जानते थे। उत्तर गोग्रहण-प्रकरणसे यह बात स्पष्ट हो जाती है। कौरव जिस गोधनको हर ले जा रहे थे, उसे छुड़ानेके लिये अज्ञातवाससे पाण्डव निकल पड़े और गौओंको फिरा लाये। देशकी उन्नतिका विचार करनेमें लगे हुए लोगोंकी संख्या कम नहीं है; पर बड़े आश्चर्यकी बात यह है कि गोरक्षा ही देशोन्नतिका मूल साधन है, यह अभीतक इन लोगोंके ध्यानमें नहीं आ रहा है!

तात्पर्य, सर्वविध ऐहिक और पारलौकिक सुखका मूल साधन गोरक्षण है। प्रत्येक वैदिकधर्माभिमानी पुरुषका यह कर्तव्य है कि इस मूलसाधन कार्यमें तत्पर हो। हिंदुस्थानके सब राजा-महाराजा, ग्रन्थकार, पत्रकार और सामाजिक, धार्मिक तथा अन्य देशकार्यकर्त्ता गोमाताके प्रतिपालनमें लग जायँ।

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः। अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही॥

'गौ, ब्राह्मण, वेद, पतिव्रता स्त्री, सत्यवादी, निर्लोभी पुरुष तथा दानशील धनी—इन सातोंने पृथ्वीको धारण कर रक्खा है।'

पृथ्वीको धारण करनेवाले इन सातोंमें प्रथम स्थान गौका है और वह ठीक ही है। गोरक्षाके कारण भारतवर्षका पुण्यभूमि नाम चरितार्थ होता है और जो सुख सबको अभीष्ट है, वह इसी पुण्यबलसे प्राप्त होनेवाला है। जगदीश्वरद्वारा निर्मित सर्वार्थ-प्रकाशक वेदोंके विचारमन्थनसे निष्पन्न गोसेवन-स्वरूप जगत्स्थिति-साधनका जिसने अवलम्ब किया, उसपर जगत्स्थितिपालनदक्ष परमेश्वरकी पूर्ण कृपावर्षा होगी—इसमें संदेह ही क्या है।

सर्वान्तर्यामी निखिलजगत्पालककी कृपासे उपरिनिर्दिष्ट गोसेवा-व्रत सब लोग ग्रहण करें, उससे सब लोग पूर्ण सुखी और समृद्ध हों, सर्वदेवमयी गोमाताके वंशका सर्वत्र सुखविस्तार हो और गोकुल-वृन्दावन पुनः अपनी पूर्वस्थितिमें सबको दर्शन दें—यही श्रीशैलजा-चन्द्रमौलीश्वर-चरणारविन्दोंमें नित्य प्रार्थना है।



गोरक्षाके उपाय

(पूज्यपाद श्री १००८ श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजका उपदेश)

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च। जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥

वैदिक आर्य सनातन संस्कृतिमें गोजातिका बहुत बड़ा सम्मान है। प्रतिदिनके धार्मिक व्यावहारिक जीवनमें उसकी अपेक्षा बनी रहती है। दुग्ध, दधि, घृतके अतिरिक्त गोमय, गोमूत्र आदि भी धार्मिक कृत्योंमें पद-पदपर अपेक्षित होते हैं। केवल अदृष्ट पारलौकिक अशुद्धिक्षय तथा पवित्रता-प्राप्ति ही नहीं, अपितु शारीरिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी उपर्युक्त सभी वस्तुओंका बहुत बड़ा उपयोग होता है। शास्त्रविश्वासी लोग गौके रोम-रोममें देवताओंका वास और शृङ्ग, पुच्छ, पद आदिमें तत्तत्तीर्थोंका निवास मानते हैं। अतएव गौके दर्शन-स्पर्शसे रोग, दोष, पाप, तापकी प्रशान्ति होती है। जहाँ प्रसन्नताके साथ गौएँ भ्रमण करती हैं, श्वास लेती हैं, मूत्र-पुरीष-विसर्जन करती हैं, वहाँसे विविध उपद्रव, बाधा, दारिद्र्य दूर हो जाते हैं और सुख, शान्ति तथा लक्ष्मी वहाँ आ जाते हैं। कृषिप्रधान लौकिक व्यवहारोंमें गो-संतानों एवं शुद्ध खाद आदिके द्वारा निर्विशेष रूपसे गौएँ सबका उपकार करती हैं। अतः गोरक्षा धार्मिक, आर्थिक, व्यावहारिक—प्रत्येक दृष्टिसे परमावश्यक है। शास्त्रोंमे गोजातिकी महिमा, गोसेवाका माहात्म्य विस्तृत रूपसे वर्णित है; उसका संग्रह आवश्यक है। यदि प्रत्येक कुटुम्ब अपने शास्त्रानुसार भोजननिर्माण और बलिवैश्वदेव तथा गोग्रास निकालनेका नियम बना लें, गोदर्शन, गोपूजा प्रारम्भ कर दें, तो बहुत अंशोंमें गोरक्षाका प्रश्न समाप्त हो सकता है। जब छल-छद्मसे हिंदू-नामधारी लोग भी गौओंको खरीदकर गोहिंसकोंको प्रदान करते हैं, तब ऐसी स्थितिमें गोविक्रय मांसविक्रयके समान ही अत्यन्त पापाधायक सिद्ध होता है। वैसे भी जब गोमाता माता है, तब माताका विक्रय कितना उद्वेजक हो सकता है—इसका अधिक विवरण सर्वथा ही अनावश्यक है। नवीन गोशालाओंकी स्थापना, प्राचीन गोशालाओंका सुप्रबन्ध, तथा केवल द्रव्य-दान ही नहीं किन्तु उधर दृष्टि और समय भी देना चाहिये। बड़े कहे जानेवाले लोग अगर स्वयं गोग्रास देनेका, गोपूजाका नियम बनायें, गोचरणमें कभी स्वयं प्रवृत्त हों, तो दूसरे लोग अनायास ही गोरक्षामें लग सकते हैं। जब चक्रवर्ती नरेन्द्र दिलीप स्वयं सपत्नीक नन्दिनी गौकी सेवामें छायाके समान तल्लीन हुए थे, जब आनन्दकन्द व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णचन्द्र वृन्दावनधाममें निरावरण—पादत्राणविहीन चरणोंसे गोचारणोंमें प्रवृत्त हुए, तब दूसरोंकी वैसी उत्सुकता होनी स्वाभाविक थी। आजकल गृहस्थोंने गाय रखना बंद कर दिया है। मोटर पचीसों हैं, पर गाय एक भी नहीं। प्रत्येक कुटुम्बी यदि एक-एक गाय रख लें तो करोड़ों गायोंका पालन हो सकता है। प्रचलित विभिन्न यन्त्रोंमें जीवित पशुको मारकर विशिष्ट प्रकारसे उत्पादित चमड़ोंका उपयोग होता है। बढ़िया जूते आदिकोंमें भी उपयुक्त ढंगके ही चमड़ेका प्रयोग किया जाता है। अतः हृदयसे गोरक्षा चाहनेवालोंको उपर्युक्त उपयोगोंके बहिष्कारका भी प्रयत्न करना परमावश्यक है। गोचरभूमिकी रक्षा और नवीन गोचरभूमि निर्माणका प्रयत्न भी आवश्यक है। पहले सभी जगह सैकड़ों बीघा जमीन गोचरके लिये पड़ी रहती थी, जिससे गोपालन अल्पव्ययसाध्य था; अब उनके न होनेसे साधारण गृहस्थके लिये गोपालन कठिन हो गया है। फलतः गृहस्थोंकी गायें बिकने लगी हैं। गोचरभूमिको जप्त करके जमींदार राजाओंने बड़ा अपकार ही नहीं, पाप किया है। उसपर खेती करना स्वीकार करके किसान भी उनके पापमें सहायक हुए हैं। अब इसके प्रायश्चित्तमें कुछ भूमि उन्हें गोचरके लिये अवश्य छोड़नी चाहिये। इससे सुवृष्टि और सुभिक्ष होनेसे अन्नकी उपजमें किसी तरह कभी कमी नहीं हो सकती। म्युनिसिपलिटियोंसे तो कुछ कहना ही व्यर्थ है; जहाँ गायोंके लिये 'कानीहौस' बने हुए हैं, गधे अदण्ड फिरते हैं। नगरोंमें गायोंकी उचित व्यवस्था करना म्युनिसिपलिटियोंका कर्तव्य होना चाहिये। इस तरह गो-माहात्म्य-पठन-पाठनादिका विस्तार, गोपूजा, गोदर्शन, गोग्रास निकालने आदिका नियम हो। गोदुग्ध, गोदधि, गोघृतके ही ग्रहण, धार्मिक, व्यावहारिक कृत्योंमें गोमय-गोमूत्रके सेवन, नवीन ढंगके चमड़ोंका उपयोग बंद करने, गौके न बेचने आदिका नियम बनानेसे गो-रक्षामें सुविधा हो सकती है।

नवीन दृष्टिके लोग भी गोरक्षाका प्रचार बतलाते हैं, परन्तु शास्त्र-विरुद्ध प्रचार ही ग्रहण करना समुचित है। गोमय-गोमूत्रसे खादका निर्माण अविरुद्ध ही है। गोचर्म, गो-अस्थि आदिका लौकिक उपयोग उतना रम्य नहीं है। कम दूध देनेवाली गौओंकी नस्लको नष्ट करनेके लिये उन्हें संतानोत्पादनके अयोग्य बना देना या उनके जोड़ोंको मिलने

न देना आदि पद्धतियाँ शास्त्रविरुद्ध हैं। हमारे यहाँ केवल लौकिक लाभकी दृष्टिसे ही गोसेवा नहीं होती, किन्तु अदृष्ट बुद्धिसे उसकी सेवा होती है। अच्छे खान-पानका प्रबन्ध होनेसे कम दूध देनेवाली गौओंसे भी कुछ पीढ़ियोंमें उत्तम श्रेणीकी गौएँ बन सकती हैं। जहाँ बूढ़े, बेकार माता-पिताको भी अन्न-जल क्यों दिया जाय—यह प्रश्न हो सकता है, वहाँ लौकिक हानि-लाभकी अन्वेषणा हो सकती है और वहाँ ऐसे प्रश्नोंका उठना आश्चर्यजनक नहीं है। परन्तु हमारे यहाँ तो भगवान् मनुने कुटुम्बके माता, पिता, पत्नी, पुत्र, भगिनी, दुहिता, बन्धु, पितृव्य, कुटुम्बी तथा भृत्यों, रोगियोंकी सहायता और सेवा करनेका प्रजापत्यादि तत्तल्लोकोंकी प्राप्ति फल बतलाया है। भले ही यहाँ उनसे कुछ लाभ होता हो या न होता हो, सहिष्णु होकर उनकी बातोंको सहते हुए उनकी सेवा करनी ही चाहिये। इसी न्यायसे गौओंसे भले ही कोई लौकिक लाभ हो चाहे न हो, उनकी सेवा और रक्षासे परम पुण्य होता है—यह समझकर ही निष्कामभावसे उनकी सेवा करनी चाहिये। अतएव कितने धर्मात्मा लोग गोरक्षापर अपने प्राणोंकी भी बलि चढ़ा चुके हैं। उत्तम अदृष्ट बनना सबसे बड़ा पुरुषार्थ है; कारण, उसीसे दुनियाकी सब अच्छाई प्रकट होती है। अदृष्टके निकृष्ट होनेपर अच्छाई भी बुराईके रूपमें परिणत हो जाती है। **इसलिये बूढ़ी, लूली-लँगड़ी, रोगिणी, दूध न देनेवाली—चाहे किसी भी प्रकारकी गौ हो, उसको बेचना या उसकी उपेक्षा करना महापाप है। हर तरहसे आदरपूर्वक उनकी रक्षा, सेवा, पूजा कुटुम्ब, समाज तथा राष्ट्रका मङ्गल करनेवाली होती है।**

गो-गरिमा

(स्वामीजी श्रीहरिनामदासजी उदासीनका संदेश)

आजका मानव-संसार भौतिक विज्ञान और रसायन-विज्ञानकी ओर प्रगतिशील है। इस विज्ञान-द्वयीके चक्करमें फँसे हुए मानवके सम्मुख यदि धर्मकी चर्चा की जाय, तो यह कहकर टाल दिया जाता है कि मनुष्यकी सब आवश्यकताओंको विज्ञान पूरी कर रहा है; फिर यह धर्मकी दुहाई क्यों?

यदि विज्ञान-भक्तिका चश्मा उतारकर शुद्ध दृष्टिसे देखा जाय, तो मालूम होगा विज्ञान और धर्मका चोली-दामनका सम्बन्ध है, ये दोनों परस्पर-सापेक्ष हैं। हिंदू-संस्कृतिमें जहाँ धर्मको प्रधानता दी गयी है, वहाँ विज्ञानकी भी उपेक्षा नहीं की गयी।

हिंदू-संस्कृतिमें गो-सेवाको प्रधान धर्म माना गया है। वैदिक कालसे लेकर आजतक गो-गरिमाके गीत गाये गये हैं, तो क्या इसमें भी वैज्ञानिक सिद्धान्तोंको स्थान दिया गया है? इसी प्रश्नको हल करनेका प्रयास इन पंक्तियोंमें किया गया है।

मानवशरीर पञ्चभूतोंके सामञ्जस्यसे बना है; अतः इसको बहुत दिनतक सुरक्षित रखनेके लिये पञ्चमहाभूतोंका शुद्धरूपमें उपयोग आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। इस बातको सभी देशी-विदेशी विद्वानोंने एक स्वरसे स्वीकार किया है कि यज्ञ करनेसे पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और आकाश—पञ्चमहाभूतोंकी शुद्धि होती है, तथा यज्ञसे ही वर्षा भी होती है। जैसा कि गीतामें कहा है—

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः। यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥

अतः इस यज्ञ-कर्ममें गौका पर्याप्त हाथ है, इस बातके बतानेकी आवश्यकता नहीं। दूसरे, सूखे हुए गोमयमें इस प्रकारका तेजाब पाया गया है कि जिसके परमाणुओंसे हजारों विषैले कीट तत्क्षण ही नष्ट हो जाते हैं। गौके दुग्ध, दधि और घृतादिमें वे सब विटामिन मौजूद हैं, जो अन्य किसी दुग्धादिमें नहीं पाये जाते और जो मनुष्य-जीवनके लिये आवश्यक हैं। गोमूत्रमें कितने ही छोटे तथा बड़े रोगोंको दूर करनेकी शक्ति है; तभी तो 'गावः प्रतिष्ठा भूतानाम्' कहकर इसकी महत्ताको शास्त्रने स्वीकार किया है।

लेखका कलेवर बढ़नेका भय न होता तो इन सब बातोंपर विस्तारसे प्रकाश डाला जाता। किन्तु इतना अवश्य है कि धार्मिक, आर्थिक और वैज्ञानिक—सभी दृष्टियोंसे ईश्वरकी सृष्टिमें गौका प्रमुख स्थान है, विशेषकर भारत-जैसे कृषिप्रधान देशमें।

अतः ऐसे परमोपकारी जीवकी रक्षाके लिये हमें कटिबद्ध होकर धार्मिक तथा नैतिक ग्रन्थोंके आधारपर गो-रक्षा-विधान बनाना चाहिये। धार्मिक संस्थाओंके साथ-साथ नैतिक संस्थाओंको भी गो-रक्षा-कार्यको अपने हाथमें लेना चाहिये।

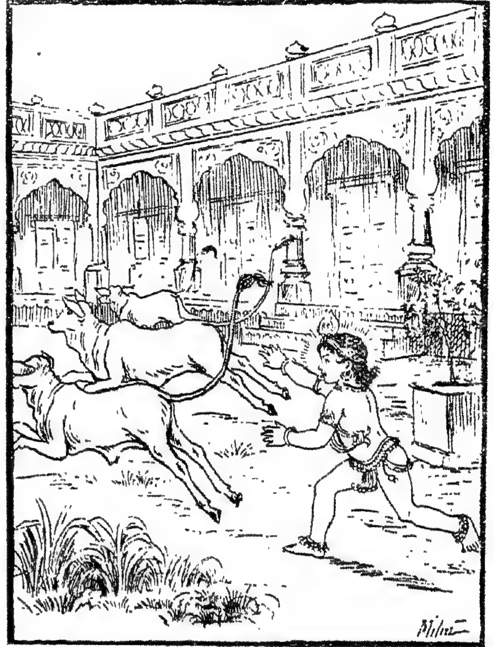
भगवान् श्रीराम और गौ

(श्रीमद्‌जगद्गुरु श्रीरामानुजसम्प्रदायाचार्य आचार्यपीठाधिपति श्रीराघवाचार्यस्वामीजी महाराजका उपदेश)

गोस्वामी तुलसीदासजीने बताया है कि 'गोद्विजहितकारी' प्रभुके मर्यादा-पुरुषोत्तम रूपमें प्रकट होनेके प्रमुख कारणोंमें एक 'गोहित' भी था—'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।' अतः आपके अवतार लेनेयोग्य वंश महाराज दिलीपका ही था, जिन्होंने नन्दिनीकी परिचर्या और आराधना कर सच्चा गोभक्त कहलानेका गौरव प्राप्त किया। परम्परागत धर्मके अनुयायी दिलीपवंशियोंमें गोभक्तिका होना स्वाभाविक था। अतएव महाराज दशरथमें गोसेवाकी भावनाका अस्तित्व कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। यही कारण था कि जहाँ महाराज दशरथके महलमें सारे बहुमूल्य पदार्थ थे, वहाँ अमूल्य गौएँ भी थीं। कहना न होगा कि श्रीरामका बाल्यजीवन गौओं और गोवत्सोंके संसर्गमें बीता। इसीलिये मर्यादापुरुषोत्तमके रूपमें ही आपको उन क्रीडाओंसे अनुराग हो गया, जो आपने आगे चलकर लीला-पुरुषोत्तमके रूपमें कीं। अध्यात्मरामायणमें बताया गया है—

अङ्गणे रिङ्गमाणं तं तर्णकाननु सर्वतः॥
दृष्ट्वा दशरथो राजा कौसल्या मुमुदे तदा। ··· ··· ··· ··· ॥
शिक्यस्थं पातयामास गव्यं च नवनीतकम्। (बाल० ३। ४६-४७,५४)





आशय यह है कि भगवान् आँगनमें गोवत्सोंके पीछे-पीछे सब ओर घूमते थे। यह देखकर राजा दशरथ और कौसल्या प्रसन्न होते थे। एक बार श्रीरामने छींकेंपर रक्खे हुए दूध, दही, मक्खनको नीचे गिराकर अपने भाइयोंको बाँटा था। पायसावतार श्रीरामके लिये यह उचित ही था।

नरमांसभोजी राक्षसोंके नष्ट करनेमें भी 'गोहित' निहित था। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि रामराज्यमें गोमाताका कितना आदर था। महर्षि नारदने बताया है कि भगवान् रामने दस सहस्र करोड़ गौओंका दान किया—'गवां कोट्ययुतं दत्त्वा···।' (वा०रा०१।१।९५)। इससे गौओंकी प्रतिष्ठाकी पूर्ण अभिव्यक्ति हो जाती है। इस प्रकार भगवान् श्रीरामके गोहितका अनुभव करते हुए रामभक्त सदा गोहितका ध्यान रखते आये हैं। रामभक्त बननेके लिये हमें भी गोसेवा करनी चाहिये।

गो-धन ही भारतका जीवन है

(पूज्यपाद श्री १००८ श्रीमद्गोस्वामी श्रीगोकुलनाथजी महाराजका उपदेश)

परम पूजनीया श्रीमती गौ, जिससे जीवजातमात्र उपकृत हैं, हम लौकिक दृष्टिसे देखें, चाहे अलौकिक दृष्टिसे—उभय दृष्टिसे ही संसेवनीय है। गौके आधिदैविक स्वरूपपर शास्त्रदृष्टिसे विचार किया जाय तो पता लगता है कि उसके प्रत्यङ्गमें, किंबहुना रोम-रोममें देवताओंका निवासस्थान है। इसीलिये कहा गया है—

सर्वदेवमये देवि सर्वदेवैरलंकृते । मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि ॥

श्रीमती गौ शास्त्रदृष्टया पशु नहीं है। शास्त्रमें लिखा है—'तिलं न धान्यं पशवो न गावः'। दूधको भी अमृत कहा है। अधिक क्या, गौका मूत्र और गोबर अपवित्र देहको पवित्र बनाते हैं; अपवित्र स्थानको पवित्र बनानेके लिये भी गोमूत्र और गोबरका प्रोक्षण और लेपन किया जाता है। अथवा गौको वहाँ लाकर—बाँधकर उस स्थानको पवित्र बनाया जाता है। गो-दान करनेसे पापनिष्कृति तो साहजिक है ही, परन्तु पुण्यकी भी सीमा नहीं है। जिन्हें मोक्ष देनेका सामर्थ्य है, उन साक्षात् त्रैलोक्यनाथ श्रीकृष्णकी श्रीयशोदा माताने गोमूत्र, गोबर और गोधूलिको उनके दिव्य मङ्गलविग्रहमें लगाकर और उनपर गो-पुच्छ फिराकर रक्षा की। इतना महत्त्व किसी भी जीवको प्राप्त नहीं है।

जिस गौका दुग्ध जन्मते हुए बच्चेसे लेकर मरणपर्यन्त—वार्द्धक्यमें भी और रुग्णावस्थामें भी परमोपयोगी है, जिसके दूधकी उत्तमताके विषयमें इस देशके वैद्य और देशान्तरके वैद्योंका कोई मतभेद नहीं है, जिसका मक्खन और घी सर्वथा निर्दोष और जीवन-तत्त्वसे भरपूर है—जिन गव्योंके सेवनसे मानसिक वृत्तियाँ सत्त्वमयी बनकर भगवत्-सम्बन्धी सम्पूर्ण बातोंमें अभिनिविष्ट हो सकती हैं, जिसका दुग्ध और घृत हविष्य है और यज्ञ-यागादिमें उपयुक्त होता है, उस श्रीमती गौकी महिमा कहाँतक गायी जाय। ये बातें धार्मिक और अलौकिक दृष्टिसे कही गयी हैं। यदि लौकिक और आर्थिक दृष्टिसे विचार किया जाय तो भी श्रीमती गौकी अन्य प्राणियोंकी अपेक्षा कम उपयोगिता नहीं है, बल्कि बहुत अधिक है। केवल घास खाकर, चाहे वह सूखा हो या हरा, वह अमृतमय दूध देती है और प्रसव होने समयतक भी देती ही रहती है।

जिन दिनों भारतमें गोचरभूमियोंकी प्रचुरता थी, उन दिनों गरीब-से-गरीब आदमी भी गो-पालन कर सकता था। जो गायें गोचरभूमिमें मनके अनुकूल घास या वनस्पति चरती थीं, वे नीरोग और हृष्ट-पुष्ट बनी रहती थीं। उनका दूध सुपाच्य एवं पुष्टिकर होता था। वनमें चरनेवाली गायका गोमूत्र सम्पूर्ण प्रकारके उदररोग, नेत्ररोग और कर्णरोग आदि सब रोगोंको मिटा सकता है। आयुर्वेदकी दृष्टिसे गोमूत्रकी उपयोगिताके सम्बन्धमें जो उन ग्रन्थोंके अनेक पृष्ठोंमें लिखा गया है, उसका यहाँ संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

यहाँ इतना कहना अनुचित न होगा कि साक्षात् जगन्नियन्ता परमात्मा श्रीकृष्णने गो-पालन और गो-संरक्षणका माहात्म्य स्वयं अपने आचरणोंसे सब लोगोंको दिखलाया और सिखलाया है; इतना ही नहीं, आधुनिक विज्ञानके अनुसार भी गायोंका रक्षण और पालन जन-हितकारी है। कई संक्रामक रोग तो गायोंको स्पर्श की हुई वायु लगनेसे ही निवृत्त हो जाते हैं। कतिपय रोग गो-शरीरके स्पर्शसे निवृत्त हो जाते हैं। कहाँतक कहें, यह विषय अनुभवैकवेद्य है।

गो-संवर्धन और गोरक्षणके लिये उल्लेखनीय बातें निम्नलिखित हैं—

१. गो-पालन किस तरह करना चाहिये ?

२. किस जातिकी गायोंकी वृद्धि करनी चाहिये ?

३. उनके बच्चोंका किस प्रकार संवर्धन करना चाहिये, जो भविष्यमें लोकोपयोगी हों ?

४. उनके खाद्य पदार्थ कैसे होने चाहिये ?

५. किन पदार्थोंसे दूध बढ़ सकता है और वे किस प्रकार नीरोग—हृष्ट-पुष्ट बन सकती हैं ? इन बातोंको समझकर ही गो-पालन करनेवाला सच्ची सेवा कर सकता है।

भारतीयोंने जबसे गो-सेवाकी उपेक्षा की, तभीसे भारतकी दुर्दशाका प्रारम्भ हुआ है। परम कृपालु भगवान् श्री-गोपालकृष्ण भारतीयोंके हृदयमें सद्बुद्धि प्रेरित करें।

यह निश्चित है कि यदि सभी भारतीय गो-रक्षा करनेके लिये कटिबद्ध हो जायँ, तो भारत पूर्ववत् सुखी हो सकता है।

गौकी महिमा

(श्री १००८ श्रीउत्तरादि श्रीवैष्णवमठाधीश श्रीदेवनायकाचार्यजी महाराजके दयैकपात्र स्वामीजी श्रीमाधवाचार्यजी महाराजका उपदेश)

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च । जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

भगवान् श्रीकृष्णमें विश्वकल्याणकारित्वका निर्देश 'जगद्धिताय' पदसे किया गया है । यह केवल उनकी अचिन्त्य अलौकिक शक्तिके आधारपर ही नहीं, किन्तु इसके लौकिक हेतु भी हैं—यह 'गोब्राह्मणहिताय च' इस पदसे अभिव्यक्त होता है । अन्यथा 'जगदन्तःपातित्वेन' जब गो-ब्राह्मणका भी संग्रह सम्भव था, फिर उनका पृथक् निर्देश करनेकी आवश्यकता क्या थी । गो-ब्राह्मणहितत्व और जगद्धितत्वमें प्रयोज्य-प्रयोजकभावकी अभिव्यञ्जनाके लिये ही यत्नपूर्वक दोनों विशेषणोंका निवेश किया गया है, जिसकी स्पष्टतः पुष्टि 'गोविन्दाय' पदके विशेष्यतया उपादानसे हो जाती है । साथ ही ब्राह्मणापेक्षया गो-प्राधान्यकी सूचना भी मिलती है । 'गो' पदके प्रथमोपादानमें भी तत्प्राधान्य ही हेतु है । अब यह सुस्पष्ट हो जाना चाहिये कि गो-ब्राह्मणकी रक्षासे ही विश्वका वास्तविक ऐहिक तथा आमुष्मिक कल्याण है ।

शास्त्रीय दृष्टिसे ननु-नच है ही नहीं, तर्कोपजीव्य लौकिक दृष्टि शास्त्रप्रामाण्यकी उपेक्षा करती है; अतएव यहाँ वैज्ञानिक सम्भावनाओंका सूक्ष्मतम सङ्केत कर देना उचित होगा। सूर्यकी किरणोंके द्वारा जलकण आकृष्ट होकर षाण्मासिक अवधिमें गगनमण्डलमें विशोधित और विद्युच्छक्तिसे अनुप्राणित किये जाते हैं । विशुद्धि और विद्युच्छक्तिकी काया धूम और ज्योतिके साहाय्यसे उत्पन्न होती है । ज्योति और धूम जितने पवित्र और रासायनिक होंगे, उतनी ही समुन्नत शक्ति जलकणोंमें ओतप्रोत होती रहेगी । यही कारण है कि धूम-ज्योतिका संमिश्रण पा जानेपर ही जलकण नीचे आते हैं । अतएव कविमूर्द्धन्य कालिदासने लिखा है—

धूमज्योतिःसलिलमरुतां संनिपातः क्व मेघः ।

ये जलकण सम्पूर्ण जगत्को अमृतमय रस और विद्युच्छक्ति देते हैं, इनके बिना जगत् एक क्षण भी नहीं टिक सकता । इस दृष्टिसे धूम-ज्योति वैज्ञानिक संमिश्रणोंसे आधारित तथा पवित्र होनी चाहिये, जो 'यज्ञमात्र'से साध्य है । अतएव 'यज्ञाधीनं जगत्सर्वम्' ऐसा ऋषियोंने कहा है ।

जगत् यज्ञाधीन है, इस विषयमें आध्यात्मिक दृष्टिसे कोई संदेह ही नहीं उठता । यही कारण है कि मैंने आध्यात्मिक दृष्टिसे चर्चा नहीं की है ।

वैदिक और पौराणिक युगोंमें यज्ञ अनिवार्य और राष्ट्रीय कार्य था । जगत्को स्वस्थ तथा सुव्यवस्थित रखनेके लिये यज्ञकी अनिवार्यता थी । चरु-घृतके संमिश्रित पदार्थोंसे अग्निके द्वारा पृथक्कृत होकर जो रस-परमाणु बनते हैं (यहाँ यह ध्यानमें रखना चाहिये कि आर्षसिद्धान्त अग्निमात्रसे विभाजनशक्ति मानता है), वे अग्निकिरणोंके साहाय्यसे सूर्यकी आकर्षक किरणोंमें मिलते हैं तथा वह्नि और सूर्यकी रश्मियोंकी परस्पर सहायतासे तत्तद्देवतात्मक सूक्ष्मतम भौतिक तत्त्वोंको मिलते हैं । अग्निकी गति ऊर्ध्वमुख है और सूर्यकी तिरश्चीन—

गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः प्रसिद्धमूर्ध्वज्वलनं हविर्भुजः ।

वह्निकी रश्मियोंमें ऊर्ध्वमुखता है, अतएव वे सरलतासे शुद्ध अणुओंको ऊपर ले जाती हैं । साथ ही सूर्यकी किरणोंमें तिरश्चीनगतिता है; अतएव वहाँसे कोई परमाणु नीचे नहीं आता, जबतक प्रकृतिकी कोई विशेष प्रेरणा नहीं होती ।

तत्तद्देवतात्मक सूक्ष्मतम तत्त्व जब नवीन रस-परमाणु पाते हैं, तब जगत्को परिपुष्ट करनेसे प्रणोदित और सबल होते रहते हैं । इन दोनों भौतिक दृष्टियोंसे विमर्श करनेपर यह कहना पड़ेगा कि 'यज्ञाधीनं जगत् सर्वम्' । यहाँ यह जान लेना है कि यज्ञ होता और हुतद्रव्योंके अधीन है । होताके रूपमें ब्राह्मण तथा हुतके रूपमें गोघृतकी अनिवार्यतासे ही विश्वकल्याण-प्रयोजकता गो-ब्राह्मणमें सिद्ध होती है । मानव आध्यात्मिक होनेके कारण ज्ञानके एकमात्र साधन ब्राह्मणको तथा भौतिक होनेके कारण घृत-दुग्ध आदि अमृतरसके एकमात्र साधन गौको महत्त्व देता है । इन द्विविध प्राणियों (गो-ब्राह्मण) से आत्मतृष्णा और शरीरतृष्णाकी शान्ति होती है । इन दृष्टिकोणोंसे विचार करनेपर 'गौकी महिमा कैसी है' यह कहनेकी आवश्यकता नहीं रह जाती ।

गोविज्ञानाष्टक

(लेखक—काशी-ज्ञानसिंहासनाधीश्वर श्रीजगद्गुरु वीरभद्रशिवाचार्यमहास्वामि महाराज)

सुनो, अहिंसा परम धर्म है, इससे जगका है कल्याण,
जानो, अपने-जैसे ही हैं सब जीवोंके प्यारे प्राण।
मानो, पर-पीडनसे होती पाप-राशि अतिशय विकराल,
गिनो सदा, उपकार जनोंके कितने तुमने किये विशाल॥ १॥

चींटी भी यदि तुझे काट ले तो मिलता है चैन नहीं,
खटमल, मच्छर, मक्खीसे भी लग पाते हैं नैन नहीं।
तिनका भी यदि पड़ा आँखमें आँसू अरे! निकलता है,
गोमाताकी व्यथा-कथा सुन मानव! क्यों न पिघलता है?॥ २॥

घास-फूस खा अमृत-सदृश जो मधुमय दूध पिलाती है,
दही, मलाई, मक्खन, मट्ठा सुखसे सदा खिलाती है।
उस करुणामय गोमाताका कहाँ विश्वमें है उपमान,
श्रुति देवोंने जिसे किया है 'कामधेनु' सा नाम प्रदान॥ ३॥

महादेव भी जिस नन्दीपर बैठ सदा सुख पाते हैं,
महाविष्णु भी जिस गोधनके लिये कृष्ण बन आते हैं।
जिसके पैदा किये अन्नसे होता जग-जीवन-निर्वाह,
ध्वंस उसी गो-वृषभ-वंशका चुप सहता भारत क्यों आह!॥ ४॥

हैं गोमय-गोमूत्र शुद्धतम इनके पावन और पवित्र,
जिनके सेवनसे होते हैं दूर भूरि भव-रोग विचित्र।
पञ्चामृतका, पञ्चगव्यका गौओंसे ही हुआ प्रचार,
गोरसहीन हुआ यदि भोजन तो लगता रसहीन असार॥ ५॥

गोवधके भयसे गौतमने किया घोर तप तीव्र महान,
ज्ञानी भृगुने सदा द्विजोंको किये सहस्रों गोधन-दान।
ऋषि वसिष्ठका गोरक्षाहित कौशिकसे संग्राम हुआ,
गोसेवाका मिला सुअवसर जिसे पुण्य अभिराम हुआ॥ ६॥

यदि चाहो, संतत क्षुधासे हों भारतके लोग नहीं,
यदि चाहो, सब स्वस्थ सुखी हों, रहे किसीको रोग नहीं।
तो गोधनकी वृद्धि करो तुम, मिट जायँगे सारे क्लेश,
गोरक्षासे ही हो सकता फिर समृद्धिशाली यह देश॥ ७॥

हिंदू अथवा मुसलमान हो या कोई हो ईसाई,
गोसेवा जो करे निरन्तर, वही निरापद हो भाई!
गोपालनसे स्वार्थ और परमार्थ सिद्ध होता भारी,
भारत ही क्या, सकल विश्व यह हो गोसेवा-व्रतधारी॥ ८॥

गोमाता और हिंदुत्व

(पूज्यपाद श्री १००८ श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराजका संदेश)

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च । गावश्च सर्वगात्रेषु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥* (पद्मपुराण)

इसी ग्रीष्म-ऋतुमें देहरादूनके समीप 'सहस्रधारा' नामक परम रमणीय पर्वतीय प्रदेशमें कुछ दिनके लिये मैं ठहरा हुआ था। एक दिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक-संघके कुछ उत्साही नवयुवक मेरे समीप आये। हिंदुत्वकी रक्षाके लिये बिना किसी प्रकारके बाह्य प्रदर्शनके 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक-संघ' जितना रचनात्मक कार्य कर रहा है, उतना कार्य दूसरी कोई संस्था कदाचित् ही करती हो। स्वयंसेवकोंमेंसे एकने मुझसे प्रश्न किया—'हिंदू' की परिभाषा क्या है ? मैंने बिना संकोच उत्तर दिया—'जो गौको माता माने, वही हिंदू है।' स्वयंसेवकने कहा—'यह तो अधूरी परिभाषा हुई।' मैंने कहा—'अधूरी नहीं, 'हिंदू'शब्दकी इससे बढ़कर सर्वाङ्गसुन्दर दूसरी कोई परिभाषा हो ही नहीं सकती।' अब आइये, अत्यन्त संक्षेपमें इसी बातपर आज विचार करें कि गोमाताके साथ हिंदुत्वका क्या सम्बन्ध है।

यदि हम कहें कि वेदोंको जो माने वह हिंदू है, तो हिंदुओंमें बहुत-से ऐसे वर्ग हैं जो वेदोंको अपौरुषेय नहीं मानते—जैसे जैनी, सिक्ख आदि। यदि वर्णाश्रमको माननेवालेको हिंदू कहें तो भी यह सर्वाङ्गपूर्ण व्याख्या नहीं; क्योंकि वर्णाश्रमको न माननेवाले भी हिंदुओंमें हैं। वीर सावरकरने 'हिंदू' की परिभाषा यह की है कि सिंधुसे लेकर समुद्रतक, हिमालयसे लेकर कन्याकुमारीतक इस हिंदुस्थानको जो अपनी मातृभूमि-पितृभूमि मानें, वे हिंदू हैं। यह तो ठीक ही है; किन्तु जिनके पूर्वज यहाँ उत्पन्न हुए हैं और जिनका शरीर इसी भूमिके कणोंसे बना है, वे मानें न मानें—उनकी मातृ-भू, पितृ-भू तो यह भारतभूमि है ही। किन्तु गौको जो उपयोगी पशु न मानकर उसमें पूज्यभाव—मातृभाव रखता है, वह कहीं भी हो, हिंदू है। हमारी संस्कृतिके दो ही प्रतीक हैं—भाषा और गौमें मातृभाव। भाषा सदा हमारे पूर्वजोंकी गुण-गरिमाकी स्मृति दिलाती है। यदि हम संस्कृतसे उद्भूत भाषाओंको भूलकर विदेशी भाषाओंको ग्रहण करने लग जायँ और गौको एक दूध देनेवाला उपयोगी पशु ही मानने लगें, तो हम 'हिंदू' नहीं रह सकते।

आज इस घोर अवनतिकी दशामें भी किसी भी हिंदूराज्यको ले लीजिये, प्रायः सभीमें गोवध-निषेध है। नेपालमें तो विदेशी फौजोंके ऊपर भी पहरा रहता है कि वे गो-हत्या न कर सकें। किन्तु समीपमें ही विदेशी, विधर्मी शासन होनेसे अधिक गो-हत्या इन देशी राज्योंके ही द्वारा होती है—यह विषयान्तर हो गया।

हमारे यहाँ शास्त्रोंमें गौकी अनन्त महिमा है। वेदोंमें, पुराणोंमें, इतिहासमें—जहाँ भी देखिये, गौसे बढ़कर कोई द्रव्य नहीं। त्रिवेणीमें जलमें डूबकर महर्षि तप कर रहे थे। मल्लाहोंकी मछलियोंके साथ जालमें वे भी फँस गये। मल्लाह छोड़ना चाहते थे; ऋषि कहते थे—मुझे भी मछलियोंके साथ बेच दो। झगड़ा बढ़ा और राजाके यहाँ गया। राजाने ऋषि-का मूल्य देना चाहा। लाख, दो लाख, आधा राज्य, पूरा राज्य—जो भी मूल्य वे देते, ऋषि क्रुद्ध होते जाते। क्या मेरा मूल्य एक देशका राज्य ही है ? राजा घबराये। अन्तमें एक गौ सामने खड़ी की। ऋषि हँस पड़े और बोले—'मैं हार गया, तुम जीते; गौके एक रोमके बराबर भी मेरा मूल्य नहीं। त्रैलोक्यमें गौसे बढ़कर कोई मूल्यवान् चीज नहीं।'

हमारे यहाँ ब्राह्मण, पञ्चभूत, अतिथि, आत्मा, देवप्रतिमा तथा गौ—इन सबमें भगवद्-बुद्धिसे पूजा करनेका विधान है। हमारा ऐसा कोई भी धार्मिक कृत्य न होगा, जिसमें पञ्चगव्य-पञ्चामृतकी आवश्यकता न हो। कोई ऐसा मङ्गलमय कार्य न होगा, जिसमें गोदान न होता हो। बात-बातमें गोदान। त्रिवेणीमें घुसते ही पंडा कहेगा—पहले गोदान कराइये। वर द्वारपर पहुँचा कि पहले गोदान। अतिथि आते ही गौ और अर्घ्य उसको निवेदन करना पड़ता है। क्यों ? इसलिये कि गौके शरीरमें समस्त देवताओंका निवास है। गौकी प्रदक्षिणा करनेसे पृथ्वी-प्रदक्षिणाके समान फल होता है। गौके दर्शनसे समस्त देवताओंके दर्शनका फल होता है। उसके रोम-रोममें ऋषियोंका निवास। मूत्रमें साक्षात् गङ्गाजी। यहाँतक कि गोबरमें लक्ष्मीजी रहती हैं। उस गौकी सनातनसे हम प्राणपणसे रक्षा करते थे। महाभारतमें जब मैंने राजाओंकी गौओंकी संख्याओं-को पढ़ा तो मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा। ऋषियोंका परमधन गौएँ ही थीं। एक-एक ऋषिके आश्रमपर लाखों गौएँ।

---

* मेरे आगे गौएँ रहें, पीछे गौएँ रहें, सम्पूर्ण शरीर गौओंसे व्याप्त हो, मैं सदा गौओंमें ही रहूँ।

एक-एक राजाके करोड़ों गौएँ । जितनी ही अधिक गौएँ हों, उतना ही गौरव था । श्रीरामजी वन जाने लगे तब अपनी सब चीजें बाँटने लगे; यहाँतक कि अपना पलंग और गद्दा भी गुरुपुत्रको दे डाला । इतनेमें ही एक गरीब दुबला-पतला ब्राह्मण आकर याचना करने लगा । रामजीने कहा—'ब्रह्मन् ! आप पिछड़ गये, मैं तो सब बाँट चुका ।' ब्राह्मण उदास हुआ । तब रघुनन्दनको एक विनोद सूझा । बोले—'हाँ, हाँ, मैंने अपनी गौएँ अभी नहीं बाँटीं । तुम इस लाठीको लेकर जोरसे मारो; जहाँ यह डंडा गिरेगा, वहाँतककी सब गौएँ तुम्हारी हुईं ।' ब्राह्मणने पैरसे चोटीतकका जोर लगाकर डंडा फेंका । डंडा सरयूजीके उस पार जा गिरा । रामजी जोरसे हँस पड़े और बोले—'मैं समझता था इन सूखी हड्डियोंमें बल न होगा । आपने तो लाखोंपर हाथ मारा ।' वे सब गौएँ उन्हें दे दी गयीं । दुर्योधनके गोष्ठका महाभारतमें कैसा जीता-जागता वर्णन है । लाखों गौएँ उसके गोष्ठमें थीं । गायें दूध और घृतकी भंडार थीं—बहती सरिता थीं ।

घृतक्षीरप्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः । घृतनद्यो घृतावर्तास्ता मे सन्तु सदा गृहे ॥

इतनी गौएँ होनेपर भी कोई द्विजाति घी, दूध कभी भूलकर भी नहीं बेच सकता था । घी-दूध बेचना द्विजातियोंके लिये घोर पाप बताया गया है । उस समयकी बात तो दूर रही, मेरे बाल्यकालमें ही गाँवोंमें कोई दूध नहीं बेचता था । सब तो नहीं, बहुतसे ऐसे घर थे, जो घी भी नहीं बेचते थे । उन दिनों कनस्तरोंका प्रचार नहीं था । बड़े-बड़े कुप्पे होते थे, उनमें घी जमा रहता था । सम्बन्धियोंके यहाँ विवाह, यज्ञ, उत्सव हुआ तो उनके यहाँ पहुँचा दिया । अपने यहाँ हुआ तो सम्बन्धियोंके यहाँसे आ गया । यह मैं ३०-४० वर्ष पूर्वकी बात बता रहा हूँ ।

गौके मारनेके बराबर कोई भी अपराध नहीं था । महापातकोंसे भी बढ़कर यह अपराध है । चक्रवर्ती राजा वैवस्वत मनुके पुत्र पृषध्रको वसिष्ठजीने अपनी गौओंकी रक्षाका काम दिया । सम्राट्का पुत्र लाखों गौओंके झुंडकी धनुष-बाण लेकर तत्परतासे दिन-रात रक्षा करता रहता था । एक दिन वर्षा-ऋतु थी, अँधेरी रात्रि थी, गौओंके गोष्ठमें कोई व्याघ्र आ गया । गौएँ विदुकने लगीं । राजपुत्र समझ गया, व्याघ्र आ गया है । हाथमें खड्ग लेकर दौड़ा । व्याघ्र गौको लिये जा रहा था । राजपुत्रने सिंहपर प्रहार किया, उसका कान कट गया । गौको छोड़कर भागने लगा । दैवगतिसे अँधेरेमें भ्रमवश, भूलमें, जिस गौकी रक्षा वह प्राणपणसे कर रहा था, उसी गौके खड्ग लग गया । उसका सिर कट गया । राजपुत्र यह समझकर प्रसन्न हुआ, मैंने व्याघ्रको मार डाला । जब प्रकाशमें देखा तो पता लगा कि व्याघ्रके भ्रमसे गौ मारी गयी । डरते-डरते उसने गुरुदेवसे निवेदन किया । गुरुने उसे राज्यच्युत ही नहीं किया, क्षत्रियत्वसे गिराया ही नहीं, उसे वर्णाश्रम-धर्मसे बहिष्कृत कर दिया । आप सोचें—उस राजपुत्रका दोष क्या था ? उसने तो गौकी रक्षाके ही लिये प्रयत्न किया था । यह ठीक है उसने जानकर पाप नहीं किया । किन्तु जानकर करे या अनजानमें, पाप तो पाप ही है । जानकर करनेसे वह घोर हो जाता है, अनजानमें करनेसे कुछ कम । फिर भी दोष तो है ही, हत्या तो लगती ही है । यह तो बहुत पुरानी बात है । मैंने अपने बाल्यकालमें ये दृश्य देखे हैं । अब तो वे देखनेमें नहीं आते । जब उन दृश्योंको याद करता हूँ तो अब भी मेरी आँखोंमें आँसू भर आते हैं । कभी किसीसे भूलमें गौकी बछिया मर जाती तो गाँवके पंच मिलकर उसे सजा देते । 'सौ गाँव या हजार गाँवोंमें भीख माँगते हुए गङ्गास्नान करो ।' घरवाले उसे घरसे बाहर कर देते । वह अपने मुँहको ढक लेता । जो बछिया उसके हाथों मरती, उसकी पूँछ लाठीमें बाँध लेता । एक फूटा बर्तन साथ लेता । वह न तो गाँवमें घुसता न कभी किसीको अपना मुँह दिखाता था । गाँवके बाहर वह बड़े जोरसे करुणाके स्वरमें पुकारता था—गाँवके बाहर कलङ्की ठाढ़ो है.................कोई भीख दे जाओ.................. हमलोग छोटे-छोटे बच्चे दौड़कर उसके पास जाते । वह मुँह नहीं दिखाता था । हमलोग दूरसे उसके पात्रमें जल डाल देते, उसे आटा देते । हृदयमें उसके प्रति कैसी करुणा उत्पन्न होती । उससे पूछते—'भैया ! तुम्हें हत्या कैसे लगी ?' वह बताता 'इस तरह मैं खेतपर गया । बछिया थी, उसे भगाया, गिर पड़ी, चार दिनोंमें मर गयी ।' अब आप इसीसे अनुमान कीजिये, गौका हमारे समाजमें कितना महत्त्व था । अभी मैं व्रजमण्डलकी ८४ कोसकी यात्रामें गया । भरतपुर राज्यमें आदिबद्रीके पास खान ठाकुरोंके सैकड़ों गाँव हैं । वे मुसल्मान कहाते हैं । उन्होंने बताया कि हमारे पूर्वज धौलपुर राणाके खानदानके बड़े भारी सरदार थे । उनके दो पुत्र थे । एक पुत्रसे भूलमें गौ मर गयी । वह घरकी गौ नहीं, 'बनगाय' थी । (वास्तवमें 'वनगौ' हिरनकी जाति है ।) इसपर पञ्चायतने उन्हें ४०० गाँवोंमें भीख माँगकर गङ्गास्नानका दण्ड दिया । वह बड़ा मानी था, फिर भी वह मुँह ढक गाँव-गाँव चिल्लाता फिर रहा था । एक मुसल्मान मौलवीने

उसे फुसलाया कि तुम्हारा धर्म कैसा है, तुम मुसल्मान हो जाओ। इतने पराक्रमी होकर तुम ऐसे क्यों मारे-मारे घूम रहे हो? उसकी समझमें बात आ गयी और वह मुसल्मान हो गया। उसका परिवार भी उसके साथ ही रहा। अब भी उनके रीति-रिवाज हिंदुओंके-से हैं। पण्डित-पुरोहित विवाहोंमें आते हैं। कहनेका अभिप्राय इतना ही है कि गौका हिंदूसमाजमें इतना गौरव था। गौके लिये प्राण देनेवाला स्वर्ग जाता था।

पहले तो भूलसे गौ मरनेपर कोई हत्यारा होता था। आज तो प्रायः हम सभी प्रत्यक्ष हत्यारे बने हैं। बूढ़े गौ-बैलको हम अपने-आप कटवानेके लिये हाटोंमें कसाइयोंके हाथ बेच आते हैं। हिंदू कहाकर भी हम कसाईखानोंमें गौएँ मरवानेमें सहायता देते हैं। विदेशियोंको गोमांस कुछ चाँदीके ठीकरों—नहीं-नहीं, कागजके टुकड़ोंके लालचसे हम ही पहुँचाते हैं। फिर भी हम समाजके सरदार बने रहते हैं। आज गौकी हत्या हम सबके सिरपर व्याप्त हो रही है। हिंदुत्वके ह्रासले गोवंशका ह्रास अवश्यम्भावी है। जब मुसल्मान हिंदू वीरोंको लड़ाईमें नहीं जीत पाते थे, तब वे गौओंको आगे करके लड़ने चलते। हिंदू वीर गौओंको देखकर अपने हथियार डाल देते थे। इससे मुसल्मान जीत जाते थे। लोगोंका कथन है 'हिंदुओंने बड़ी भूल की। ऐसे समय गौओंको मारकर उन्हें राज्यकी रक्षा करनी चाहिये थी।' मैं कहता हूँ हिंदुओंके गौरवकी रक्षा इसीमें रही कि उन्होंने गौओंसे बढ़कर इस पृथ्वीके राज्यको नहीं समझा। हमारा अतीत गौरव धर्ममें है, वैभवमें नहीं। राज्यशासनकी परतन्त्रता हमारे लिये अवश्य ही लाञ्छनकी बात है; किन्तु धर्मको छोड़कर हम स्वशासन स्थापित करें तो इससे तो मर जाना ही श्रेष्ठ है। पहले गौकी रक्षाके लिये हम हँसते-हँसते प्राण दे देते थे। आज इस विदेशी सभ्यताने हमारे हिंदुत्वका नाश कर दिया। हमारे पश्चिमीय सभ्यतामें पले हुए बच्चे गोमांसकी चीजें खानेमें भी नहीं हिचकते। मेरठमें कारतूसोंको मुँहसे दबानेके प्रश्नपर इतना बड़ा गदर हो गया था। आज हमारे वकील, बैरिष्टर आदि सभ्य विदेशियोंके साथ गोमांसतक खा जाते हैं। मैं जोरोंसे इसका प्रमाण दे सकता हूँ। हाय रे हमारी संस्कृति! अब हम कितने पतनकी ओर अग्रसर हो रहे हैं! जहाँ लोग गौओंको कसाइयोंके हाथोंमें देखते थे, वहाँ उनका खून खौल उठता था। आज हम पैसा लेकर स्वयं गौओंको कटवाने ले जाते हैं। उस दिन मैं बनैली (पूर्निया) जा रहा था। रास्तेमें एक जंक्शन स्टेशनपर बहुत लंबी मालगाड़ी खड़ी थी। उसमें मैंने देखा, निरीह मोटी-ताजी भूखी बहुत-सी गौएँ भर रही थीं। उन्हें चोटीवाले हिंदू सिपाही लिये जा रहे थे। मेरा हृदय रोने लगा। बार-बार मनमें आया—इस रेलकी पटरीपर लेटकर प्राण दे दूँ, करूँ क्या। किन्तु शरीरका मोह प्राण न दे सका। आज मंसूरी आदि अनेक स्थानोंमें प्रति आठवें दिन तुलकर हजारों गौएँ कटने जाती हैं और हम हिंदू कहलानेवाले उन जीते हुए मूक पूज्य प्राणियोंको तराजूमें तोलकर दे देते हैं। हमारे पतनकी यह चरम सीमा है! जब जन्मसे ही हमें विदेशी शिक्षा-दीक्षा दी जाती है, तब हम फिर उन्हींकी नकल करेंगे!

यदि हम संसारमें हिंदू कहलाकर जीवित रहना चाहते हैं तो हमें प्राणपणसे सर्वप्रथम गोरक्षा करनी पड़ेगी। जबतक हम और कुछ नहीं कर सकते, तबतक हिंदुत्वके नाते इतना तो करें ही—

१. किसी प्रकार भी सामर्थ्य होनेपर जितनी रख सकें, गौएँ रक्खें। चाहे घोड़े-मोटर कम कर दें।
२. गोभक्षकोंसे खान-पान, रोटी-बेटी आदिका किसी भी दशामें सम्बन्ध न करें।
३. किसी भी मूल्यपर किसी भी दशामें गोवंशको कसाइयोंके हाथों न बेचें।
४. गो-ग्रास जो घर-घर अबतक निकलता था, उसे फिरसे निकलवाना आरम्भ करें।
५. गौओंको अपने परिजनकी भाँति समझकर उनकी सेवा करें। गौके आशीर्वादसे सभी समृद्धियाँ स्वतः प्राप्त हो सकती हैं।
६. जहाँतक हो, ताजा शुद्ध गो-घृत, गो-दुग्धका व्यवहार करें और उसकी वृद्धिके लिये प्रयत्न करें।
७. गोवध बंद करानेकी जो प्रतिज्ञा करें, उन्हें ही शासनकार्योंमें निर्वाचित करें।
८. गोरक्षामें प्राचीन पद्धतिका ही अनुसरण किया जाय, कृत्रिम उपायोंसे दुग्धवृद्धि, सम्पूर्ण दुग्धको चूस लेना आदि व्यवहारोंको न बरतें।
९. बैलोंकी वृद्धिके लिये उन्हें आरम्भमें यथेष्ट दूध दें और उनसे आवश्यकतासे अधिक काम न लें। वृद्ध बैलोंकी स्वयं सेवा न कर सकें तो उन्हें कसाइयोंको न दें, उनकी रक्षाके लिये बैल-गो-रक्षण-संघ बनावें।
१०. गोशालाओंकी दशा सुधारें।

यही सच्चा हिंदुत्व है। गोरक्षा और हिंदुत्वमें अन्योन्याश्रय-सम्बन्ध है। गोरक्षाके बिना हिंदुत्व नहीं और हिंदुत्वके बिना जैसी हम चाहते हैं, वैसी गोरक्षा हो नहीं सकती। स्थल-संकोचसे आज इतना ही। समय आनेपर फिर कभी देखा जायगा।

भारतकी सुख-समृद्धि

(महात्मा गाँधीजीका संदेश)

भारतकी सुख-समृद्धि गौ और उसकी संतानकी समृद्धिके साथ जुड़ी हुई है ।

गोरक्षाके लिये क्या करना चाहिये ?

(महामना पण्डित मदनमोहनजी मालवीयका संदेश)

गोरक्षाके विषयमें आजतक जो कुछ जानकारी प्राप्त हुई है, उसके प्रसारके लिये आपका प्रयास अभिनन्दनीय है । भगवान् आपको उसमें सफलता दें । यदि हम गौओंकी रक्षा करेंगे तो गौएँ भी हमारी रक्षा करेंगी । गाँवकी आवश्यकताके अनुसार प्रत्येक घरमें तथा घरोंके प्रत्येक समूहमें एक गोशाला होनी चाहिये । दूध गरीब-अमीर सबको मिलना चाहिये । गृहस्थोंको पर्याप्त गोचरभूमि मिलनी चाहिये । गौओंको बिक्रीके लिये मेलोंमें भेजना बिल्कुल बंद कर देना चाहिये, क्योंकि इससे कसाइयोंको गायें खरीदनेमें सुविधा होती है । किसानोंकी स्थितिके सुधारके लिये दिये जानेवाले इन सुझावों तथा अन्य ऐसे सुझावोंको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये ग्राम-पंचायतोंका निर्माण होना चाहिये ।

जगत्में गौ गौरवके साथ जीती रहे

(गो-जीवन श्रीश्रीबालकृष्ण मार्तण्ड चौंडेजी महाराजका संदेश)

गावस्तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान् । गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु दत्तं न नश्यति ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंके साधनका मूल गो-देवता ही है । वेद, शास्त्र, पुराण और साधु-संतोंने इस देवताकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है । हिंदूधर्मका तो सौभाग्य और वैभव गोमाता ही है । हिंदूधर्ममें अनेकों पंथ, अनेकों विचार और अनेकों देवता हैं; परन्तु गोमाता सभीके लिये वन्दनीय और पूजनीय है । हमारे राष्ट्रका जीवन गोमातापर ही अवलम्बित है । गोमाता सुखी तो राष्ट्र सुखी । गौकी हत्या तो राष्ट्रकी भी हत्या । आज राष्ट्रमें अपरिमित प्रमाणमें गोहत्या हो रही है । फलस्वरूप हमारे घर और खेत—सभी सूने, अनाथ और बिना नाविककी नौकाके सदृश असहाय हो गये हैं । बैलके अतिरिक्त खेतीका काम करनेवाला दूसरा साधन न होनेसे खेतोंके काम रुक गये हैं । दूध और घीके अभावसे भारत-संतान अल्पायु हो गयी, सबका स्वास्थ्य नष्ट हो गया और इस प्रकार राष्ट्र मृत्युपथकी ओर अग्रसर होने लगा है ।

देशको इस राष्ट्रघात और धर्मघातसे बचानेके लिये निमिषमात्र भी विलम्ब न करके तत्काल गो-सेवामें लग जाना चाहिये । आज केवल गोपूजा और गो-प्रदक्षिणासे ही गोसेवा नहीं हो सकती । प्रत्येक आर्य स्त्री-पुरुष जबतक गो-दुग्ध और गो-दुग्धान्नका सेवन करनेकी प्रतिज्ञा न करेंगे, तबतक गो-सेवा पूरी नहीं होगी । अतएव 'कल्याण'के लाखों पाठकोंसे मेरी नम्र विनती है कि आप सब लोग गव्य पदार्थके ही उपयोग करनेका व्रत ले लें और सभी गोव्रतधारी बन जावें । ऐसा करनेसे गोहत्या रुकेगी, गायें पुष्ट होंगी, गायोंके संवर्द्धनकी ओर ध्यान दिया जायगा, गोहत्यासे द्वेष उत्पन्न होगा, सरकारको भी इस सम्बन्धमें अधिक सोचना पड़ेगा, कानूनके द्वारा गोहत्या बंद करानेकी कोशिश होगी, गाय सुखी होगी और गायके साथ-साथ राष्ट्र भी सुखी हो जायगा ।

गोविषयक ज्ञानके अभावसे अज्ञानान्धकार रहा और उससे राष्ट्रकी बड़ी हानि हुई । गो-वर्धन-संस्थाने ५००० पृष्ठका सर्वाङ्गपूर्ण गो-ज्ञान-कोश प्रकाशित करना निश्चय किया है । इसमें गोविषयक वाङ्मयका प्रचुर संग्रह होगा । 'कल्याण'का यह 'गो-अङ्क' गो-ज्ञान-सूर्यका अरुणोदय है । अब थोड़ी देरमें ही (कुछ समयके बाद ही) प्रभु-कृपासे गोज्ञान-कोशरूपी दिवाकर प्रकट होगा । इस ओर सब भारतवासी ध्यान दें, यही अभिलाषा है । 'कल्याण'का 'गो-अङ्क' निकाला गया, इसके लिये बधाई ।

गोरक्षाके विषयमें युक्तप्रदेशके गवर्नर महोदयका संदेश

I was very interested to hear that the monthly 'Kalyan' of Gorakhpur intends to bring out a special number devoted to articles dealing with the cow. If the condition of the vast population of this agricultural province is to be improved, attention must be devoted by all to the problems of animal husbandry and in particular to the improvement of cattle. Unless there is this improvement, it may be difficult for the cultivator to get bullocks to carry out agricultural for operations; it will be impossible to increase the supply of milk, which is essential for the well-being of women and children. It is very necessary to increase the yield of milk and to arrange for an adequate supply of good nourishing milk to women and young children if the general standard of living is to be raised. Again, there is a lack of wholesome and pure ghee and butter in the country, which can only be improved by increasing the milk-giving qualities of our cattle. A big effort will be needed to achieve this end: in each part of the province we must have cattle best suited to the locality, herbs that will serve the dual purpose of providing good plough cattle and good milch cows. One essential problem is the provision of adequate fodder for these herds; there must be adequate pasturage and good fodder crops must be produced and this, though difficult under present conditions, should be possible if irrigation facilities are improved. We have in recent years carried on a "Grow-More-Food" campaign; but that must be combined with a "Grow-More-Fodder" campaign, so that the best use can be made of our cattle population. It is no easy task; but if all co-operate, success is possible.

I trust that this special number of the "Kalyan", with its articles on various aspects of cow-keeping will create an intelligent interest in the subject and will induce all readers to co-operate in this very important work.

M. Hallet
Governor,
United Provinces.

अधिक चारा उपजाओ

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि गोरखपुरका 'कल्याण' मासिक गो-विषयक निबन्धोंका एक विशेष अङ्क प्रकाशित करना चाहता है। इस कृषिप्रधान प्रान्तके विराट् जनसमाजकी आर्थिक स्थिति तभी सुधर सकती है, जब सब लोग पशु-प्रबन्धकी ओर, विशेषतः गाय-बैलोंके सुधारकी ओर ध्यान दें। इस सुधारके बिना किसानको अपनी खेतीके लिये बैलोंका मिलना कठिन और स्त्रियों और बच्चोंके स्वास्थ्यके लिये दूधका उत्पादन बढ़ाना असम्भव हो जायगा। अभी जो हालत है, उससे अच्छी हालतमें स्त्रियों और बच्चोंको रखनेके लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि दूध अधिक हो और स्त्रियों और बच्चोंको अच्छा और पुष्टिकर दूध पर्याप्त मात्रामें दिया जाय। इस समय देशमें अच्छे और शुद्ध घी और मक्खनका भी बहुत अभाव हो गया है। यह अभाव गाय-भैंसोंकी दूध देनेकी सामर्थ्य बढ़ानेसे ही पूरा किया जा सकता है। इसके लिये बड़ा प्रयास करना होगा। प्रान्तके प्रत्येक भागमें ऐसे चौपाये रखने होंगे, जो उस स्थानके लिये सबसे अधिक उपयुक्त हों, ऐसी जातियोंकी गायें रखनी होंगी, जिनसे दोनों काम चलें—हल चलानेके लिये बैल मिलें और अच्छा दूध देनेवाली गौएँ भी मिलें। इन

गाय-बैलोंके लिये पर्याप्त घास-चारा मिलना चाहिये, इसके लिये पर्याप्त गोचरभूमि होनी चाहिये और चारेकी फसलें तैयार करनी होंगी । यह काम इस समय कठिन हो गया है, पर आबपाशीकी सुविधाएँ बढ़नेसे सरल हो जायगा । कुछ वर्षोंसे हमलोग 'अधिक अन्न उपजाओ' का आन्दोलन कर रहे हैं; पर इसके साथ ही 'अधिक चारा उपजाओ'का भी प्रचार करना होगा, इसीसे पशुओंका पूरा उपयोग किया जा सकेगा । काम आसान नहीं है, पर सब सहयोग दें तो बन सकता है ।

मुझे विश्वास है कि 'कल्याण'का यह विशेषाङ्क गोरक्षा-सम्बन्धी अपने विविध निबन्धोंके द्वारा इस विषयमें जानकारी और उत्साह उत्पन्न कर अपने सब पाठकोंको इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्यमें सहयोग देनेमें प्रवृत्त करेगा ।

एम्. हैलेट

गवर्नर युक्तप्रदेश

गौका पालन—मुख्य कार्य

(माननीय सर जोगेन्द्रसिंहजी, भारत-सरकारके शिक्षा, स्वास्थ्य और भूमि-सदस्य महोदयका संदेश)

मेरा विश्वास है 'कल्याण' बहुत ही उपादेय कार्य कर रहा है । मेरे विचारमें गोरक्षाका अर्थ है—गौओंको अच्छी तरहसे खिलाना, उनकी पूरी सँभाल रखना और पशुप्रबन्धके नियमोंका पालन करना । जिस रक्षाका अभिप्राय केवल भूखों मरते हुए जानवरोंको पाल रखनेसे है, उससे कोई काम नहीं निकलता । यदि हम सर्व-साधारण जनताको पोषक आहार दिलाना चाहते हैं तो दूधका होना जरूरी है । जितना दूध होना चाहिये, उतना तभी हो सकता है जब हम गौओंको अच्छी तरह खिलावें और अच्छी जातिकी गौओंको चुनकर उनका वंश-विस्तार करें । जहाँतक दुग्धोत्पादनका सम्बन्ध है, भैंसका भी कम महत्त्व नहीं है । मैं इस समस्यापर भी भलीभाँति ध्यान दे रहा हूँ । मैं आपके 'गो-अङ्क'की पूरी सफलता चाहता हूँ ।

अब तो चेतें

(श्रीविनोबाजी भावेका संदेश)

हिंदुस्थान किसानोंका मुल्क है । खेतीका शोध भी हिंदुस्थानमें ही हुआ है । गाय-बैलोंकी अच्छी हिफाजतपर हिंदुस्थानकी खेती निर्भर है । हिंदुस्थानी सभ्यताका नाम ही 'गोसेवा' है । लेकिन आज गायकी हालत हिंदुस्थानमें उन देशोंसे कहीं अधिक खराब है, जिन्होंने गोसेवाका नाम नहीं लिया था । हमने नाम तो लिया, पर काम नहीं किया । जो हुआ, सो हुआ । लेकिन अब तो चेतें ।

तीन माताएँ

(डा० श्री बी० पट्टाभि सीतारामैय्याका संदेश)

हिंदुस्थानमें तीन माताएँ मानी जाती हैं, उनमेंसे एक गौ है । ये तीन माताएँ हैं—गोमाता, भूमाता और गङ्गामाता । ये तीनों हिंदुस्थानके लोगोंको पोसती हैं—गोमाता बच्चोंको दूध पिलाती और उन्हें पाल-पोसकर बड़ा करती है, भूमाता और गङ्गामाता परस्पर मिलकर फसल खड़ी करती और मनुष्योंको अन्न तथा पशुओंको चारा देती हैं । इसलिये तीनों पूजी जाती हैं ।

भारतवर्षमें गोशालाओं और पिंजरापोलोंका सुधार

(सरदार बहादुर सर दातारसिंहजी, एडवाइजर, कैटल युटिलिजेशन, गवर्नमेंट आफ इंडियाका संदेश)

१. पिछले तीस वर्षोंसे भारतीय गो-सुधारके कार्यसे मेरा सम्बन्ध रहा है। इस कालमें मैं सदा इस बातपर जोर देता रहा हूँ कि भारतमें गो-सुधारके लिये जो-जो चेष्टाएँ की जा सकती हैं, उनमें गोशालाओं और पिंजरापोलोंके सुसंगठन और सुधारपर हमारा ध्यान सबसे पहले जाना चाहिये। गोशाला और पिंजरापोल आदि संस्थाएँ भारतवर्षकी एक परम्परागत सम्पत्ति हैं। पशुओंके प्रति भारतवासियोंके प्यार और श्रद्धाके ये जीते-जागते उदाहरण हैं। इन संस्थाओंमेंसे अधिकांशको पर्याप्त आर्थिक साधन प्राप्त हैं। साथ-ही-साथ जनताकी सहानुभूति भी इन्हें प्राप्त है। इसलिये मेरी सम्मतिमें, भारतीय नस्लकी गायोंका दुग्ध-परिमाण बढ़ानेमें इन संस्थाओंसे काफी सहायता मिल सकती है।

२. मार्च १९४४ में भारतसरकारके शिक्षा, स्वास्थ्य और भूमि-सचिव माननीय सरदार सर जोगेन्द्रसिंहके सभापतित्वमें गोशालाओंके प्रतिनिधियोंकी पहली सभा हुई। उस सभामें जो विचार-विनिमय हुआ, उससे यह बात निर्विवाद सिद्ध हो गयी कि इन संस्थाओंमें विस्तारकी बहुत गुंजायश है, आवश्यकता केवल इस बातकी है कि उनका आधुनिक ढंगपर संगठन किया जाय, जिससे उनका द्रव्य अधिक उपादेय और रचनात्मक कार्योंमें लग सके। अगस्त १९४४ में भारत-सरकारके पशु-उपयोगके सलाहकार (Cattle Utilization Adviser) के रूपमें मुझे यह भार लेनेको कहा गया; परन्तु अपने अन्य बहुमुखी कार्यभारके कारण मैं चौबीसों घंटे इसी कामका होकर नहीं रह सकता था, इसलिये मैंने केवल अवैतनिक सलाहकार (Honorary Adviser) बनना स्वीकार किया।

३. आर्थिक दृष्टिसे भारतवर्षमें गोवंशकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। भारतमें संसारके अन्य किसी भी देशकी अपेक्षा गायोंकी संख्या अधिक है। संसारके ६९ करोड़ गो-जातिके (दूधवाले) पशुओंमेंसे २१ करोड़ ५० लाख केवल भारतवर्षमें ही हैं। इस प्रकार संसारकी समग्र गो-जातिका करीब एक तिहाई भाग अकेले भारतवर्षमें ही है। पर भारतवर्षमें तथा अन्य देशोंमें प्रतिमनुष्य दूधकी खपत कितनी है, इस हिसाबको यदि देखा जाय तो भारतवर्षमें कुल दूधकी उपज अन्य देशोंकी तुलनामें बहुत ही कम है। आनुमानिक गणनाओंसे प्रकट होता है कि यहाँ प्रतिदिन मनुष्यके हिस्सेमें लगभग सात औंस (३ छटाँक) से अधिक दूध नहीं पड़ता, जब कि न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया प्रभृति दूसरे देशोंमें यह संख्या क्रमशः ५६ और ४५ औंस है। आजकलके भोजनके निर्धारित आदर्शोंके अनुसार शरीरकी संतोष-जनक वृद्धि और स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये प्रत्येक व्यक्तिको प्रतिदिन १५ से ३० औंसके बीच दूध मिलना चाहिये। ऐसी असंतोष-जनक अवस्थामें कोई आश्चर्य नहीं, यदि हमारे कुछ बड़े शहरोंमें १००० के पीछे ६६६ बच्चे एक वर्षकी अवस्थाके भीतर ही मर जाते हों। कम-से-कम आवश्यकताको पूरा करनेके लिये भारतमें दुग्धोत्पादनका परिमाण अन्ततः दूना तो होना ही चाहिये।

आजकल हमारे यहाँकी एक गाय सालभरमें औसत ७५० पौंड दूध देती है। दो ब्यानोंके बीचका अन्तर अधिकांश अन्य देशोंकी अपेक्षा बहुत लंबा होता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अपने यहाँके गोवंशके सुधारमें वास्तविक उन्नति उच्चजातीय साँड़ोंद्वारा ही हो सकती है। इस समय संतान उत्पन्न करने योग्य उत्तम साँड़ अपेक्षाकृत बहुत ही थोड़े हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि जहाँ हमको २५० अच्छे सांतानिक साँड़ोंकी आवश्यकता है, वहाँ हमारे पास केवल एक ही ऐसा साँड़ है। लोगोंमें बाँटनेके लिये ऐसे साँड़ोंके उत्पादनसे गो-जातिके नस्ल-सुधारके कामको बहुमूल्य उत्तेजना प्राप्त होगी। उस दिशामें गोशालाएँ भी अपनी शक्तिभर काम कर सकती हैं।

मैं यह पूरी तौरसे समझता हूँ कि गोशाला-सुधारकी जितनी बातें सुझायी गयी हैं, वे यदि सब-की-सब काममें लायी जायँ तो सम्पूर्ण गो-जातिके सुधारकी एक भूमिकामात्र होगी, पर मेरा यह विश्वास है कि यह उन्नतिकी ओर एक पग आगे बढ़ना होगा। इसलिये मैं सरकारी कर्मचारियों एवं अन्य लोगोंसे प्रार्थना करता हूँ कि अभीष्ट उद्देश्यकी सिद्धिमें गोशालाओंकी सहायता करें।

४. सरकारी कर्मचारियों एवं अन्य लोगोंमें एक यह विचार फैला हुआ-सा प्रतीत होता है कि गोशालाएँ, बुड्ढे, रोगी, पङ्गु और आर्थिक दृष्टिसे बेकाम पशुओंके लिये एक शरणस्थान भर हैं। पर मेरे अनुभवने मुझे बताया है कि इन स्थानोंसे गो-जातिका सुधार और जनताको उन्नत वैज्ञानिक ढंगसे गो-सेवाकी शिक्षा देनेका काम बहुत अच्छी तरह हो सकता है। अधिकांश गोशालाओंमें हम आसानीसे २०-२५ प्रतिशत ऐसी गौओंको चुन सकते हैं, जो कई ब्यान ब्या सकती हैं और जो प्रयत्न करनेपर अच्छी मात्रामें दूध भी दे सकती हैं। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये प्रत्येक गोशालामें एक डेयरी और एक उच्चजातीय साँड़ोंका विभाग होना चाहिये। हालमें जब मैं सिंध गया था, तब मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कराचीके पिंजरापोलकी १६०० गौओंमें आधी गायें ऐसी थीं, जिनको हम आसानीसे आदर्श सिंधी गौ कह सकते हैं और जो अभी कई ब्यान ब्या सकती हैं।

५. आजकल गोशालाओंकी निम्नलिखित अवस्था है—

१. यद्यपि अबतक कोई ठीक-ठीक गणना नहीं हुई है, फिर भी अनुमान किया जाता है कि देशी राज्योंको मिलाकर सारे भारतवर्षमें इस समय ३००० गोशालाएँ हैं, जिनमें ६० लाखसे ऊपर पशु रह रहे हैं और जिनपर सालाना ३ करोड़से ऊपर रुपया खर्च होता है।

२. अधिकांश गोशालाएँ बड़े-बड़े शहरोंके बीचमें या उनके बिल्कुल पास हैं, जिससे पशुओंके रखने और खिलानेका खर्च बहुत पड़ता है।

३. इनमेंसे अधिकांश संस्थाओंमें बहुत अधिक पशुओंके भर देनेकी प्रवृत्ति रहती है, जिसका परिणाम यह होता है कि उन्हें भरपेट खानेको नहीं मिलता और उनकी देख-भाल भी ठीक नहीं हो पाती। इससे पशुओंको बहुत कष्ट और दुःख उठाना पड़ता है।

४. उपयोगी गौओंको, जो अभी कई ब्यान ब्या सकती हैं और दूध दे सकती हैं, बूढ़ी और आर्थिकदृष्टिसे निरर्थक गौओंसे अलग रखनेका कोई प्रबन्ध नहीं होता। अतः अच्छी और बुरी गायोंके खिलानेमें अन्तर नहीं रक्खा जाता, जिससे थोड़े ही दिनोंके बाद अच्छे पशु भी बेकाम हो जाते हैं।

५. साधारणतया गोशालाओंके साथ पशुओंके चरनेके लिये या चारा उपजानेके लिये बहुत कम जमीन होती है।

६. गायोंका निकम्मे साँड़ोंसे संयोग होने दिया जाता है और उनके नस्ल-सुधारकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता।

७. इन संस्थाओंकी स्वच्छताकी ओर अत्यधिक ध्यान और सुधारकी आवश्यकता है।

८. अधिकांश गोशालाओंमें कोई उल्लेखनीय पशु-चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता नहीं प्राप्त होती।

९. ये संस्थाएँ बहुधा ऐसे व्यक्तियोंके प्रबन्धमें रहती हैं, जिन्हें पशु-पालन-सम्बन्धी ज्ञान नहीं होता। इसलिये सारा कारबार प्रबन्धकी किसी सुनिश्चित योजनाके अधीन नहीं चलता। वैज्ञानिक ढंगपर भिन्न-भिन्न जातिकी गौओंको खिलाने और उनकी नस्ल सुधारनेकी कोई पहलेसे नीति सोची हुई नहीं होती।

६. देशमें गोशालाओं और पिंजरापोलोंके सुधारके लिये निम्नलिखित ढंगपर एक योजना चलानेकी मेरी चेष्टा है—

१. प्रत्येक प्रान्त और बड़ी रियासतको एक ऐसा प्रान्तीय अफसर रखना चाहिये, जो गोशालाओंके सुधारके काममें विशेष रुचि रखता हो और इन संस्थाओंका समुन्नत ढंगसे प्रबन्ध करनेमें पूर्णरूपसे योग्य हो और उसके अधीन उपयुक्त कर्मचारी भी होने चाहिये। संक्षेपसे उसके कर्तव्य इस प्रकार होंगे—

(क) इन संस्थाओंके प्रबन्धकोंको गोपालनविद्या-सम्बन्धी सम्मति देना।

(ख) अपने अधीन इलाकेकी जाँच करना और जनताको उत्साहित करना कि वे इस प्रकारकी संस्थाएँ ऐसे केन्द्रोंमें स्थापित करें, जो इस कामके लिये अधिक उपयुक्त स्थानपर स्थित हो।

(ग) गोशालाओंको पशुओंके चरनेके लिये अथवा चारा उपजानेके लिये भूमि प्राप्त करनेमें सहायता देना।

(घ) गोवंशकी वृद्धिके लिये अच्छी जातिके साँड़ोंको प्राप्त करानेकी व्यवस्था करना।

(ङ) यथासम्भव प्रत्येक गोशालाका समुन्नत ढंगपर डेयरी और सांतानिक साँड़ोंका विभाग स्थापित करनेके लिये उत्साहित करना। इससे संस्थाओंकी आयमें भी बहुत कुछ वृद्धि हो सकती है।

(च) संतानोत्पादनके लिये अस्वीकृत साँड़ोंको बधिया कर देने और उन्हें केवल वहन-कार्यके लिये पालनेके लिये उत्साहित करना।

(छ) यथासम्भव पशुओंकी समुचित चिकित्साका प्रबन्ध करना।

२. प्रत्येक प्रान्त और बड़ी रियासतमें गोशालाके कार्यकर्त्ताओंके लिये शिक्षा-केन्द्र स्थापित करनेका प्रबन्ध होना चाहिये। यदि पृथक् केन्द्र स्थापित करनेके लिये पर्याप्त संख्या न हो तो पड़ोसके अधिकारियोंसे मिलकर एक केन्द्र स्थापित किया जा सकता है। ऐसे केन्द्रोंके पाठ्यक्रममें पशु-प्रबन्ध, उनकी वंश-वृद्धि और खिलाने-पिलानेकी व्यवस्था और आधुनिक ढंगपर दूध तथा उससे उत्पन्न पदार्थोंकी व्यवस्था—इतने विषय होने चाहिये। प्रत्येक क्षेत्रकी स्थानीय आवश्यकताओंपर विशेष ध्यान देना चाहिये। शिक्षाकाल छः महीनेका होना चाहिये।

७. यदि योजनाको उचित ढंगसे काममें लाया जाय तो आशा की जाती है कि प्रतिवर्ष कम-से-कम २५००० साँड़ ऐसे प्राप्त हो सकते हैं, जो संतानोत्पादनके लिये गोशालाओंमें स्थान पा सकते हैं और पास-पड़ोसके स्थानोंमें गाँवोंके गोवंशका सुधार करनेके लिये निःशुल्क वितीर्ण किये जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त हलों तथा बैलगाड़ियोंमें जोतनेके लिये बधिया करनेके बाद लगभग २५००० बैल और ५०००० सुधरी हुई नस्लकी बछड़ियाँ प्रतिवर्ष मिल सकेंगी। यह भी अनुमान किया जाता है कि खिलाने-पिलानेकी उचित व्यवस्था और प्रबन्धसे शीघ्र ही गोशालाओंकी यह अवस्था हो जायगी कि प्रतिदिन वे कम-से-कम १२००० मन दूध दे सकें।

८. इस बातका खेद है कि मुझे 'भारतीय औद्योगिक प्रतिनिधि-मण्डल'का अग्रणी होकर आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड जाना पड़ा और इस प्रकार भारतवर्षसे दूर रहना पड़ा। इसलिये मेरे उपर्युक्त प्रस्तावोंको जल्दी कार्यरूपमें परिणत नहीं किया जा सका। फिर भी सिंध, मध्यप्रान्त, पंजाब और पटियाला रियासतके लिये उपर्युक्त ढंगपर मैंने चार विस्तृत योजनाएँ तैयार की हैं। मुझे आशा है कि इनपर जल्दी ही काम होना प्रारम्भ हो जायगा। दूसरे प्रान्तों और रियासतोंमें जाकर वहाँकी गोशालाओंके प्रतिनिधियों एवं इस कार्यसे सम्बन्ध रखनेवाले अफसरोंसे बात करनेका अवसर ज्यों ही मुझे प्राप्त होगा, त्यों ही वहाँके लिये भी योजनाएँ बन जायँगी। यह भी आशा की जाती है कि शीघ्र ही प्रत्येक जिले, प्रान्त और रियासतके लिये गोशाला-समितियाँ भी बन जायँगी। भिन्न-भिन्न स्थानोंके हितोंका प्रतिनिधित्व करनेवाली एक केन्द्रीय समिति भी बनेगी, जिससे कि सारा कार्य एक सुव्यवस्थित और सुसंगठित रूपसे चल सके।

९. अन्तमें मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि इस सारी योजनाके सफल होनेके लिये सरकार और जनताके परस्पर सहयोगकी महान् आवश्यकतापर जितना भी जोर दिया जाय, उतना थोड़ा है। मेरी योजनाके अनुसार सरकारसे सुविधाएँ और सहायता मिलनी चाहिये और जनताको यह समझ लेना चाहिये कि इन संस्थाओंका उद्धार करनेमें मुख्यतः उनका ही भला है। इनको केवल शरणस्थानके रूपमें न रखकर अधिक दूध और अच्छे गोवंशकी सृष्टिके लिये आधुनिक वैज्ञानिक ढंगपर चलाना चाहिये। दुग्धोत्पादन और वहनकार्य दोनोंमें उनकी क्षमताको बढ़ाकर उन्हें अपने पैरोंपर खड़ा होने लायक बना देना ही गौओंकी सबसे बड़ी सेवा है। गोशालाएँ यह काम आसानीसे कर सकती हैं। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि इन संस्थाओंको अधिक कार्यक्षम और आधुनिक ढंगपर सुसंगठित करनेके लिये जनता और अधिकारिवर्गमें सहयोग हो। मुझे विश्वास है कि इन संस्थाओंके ट्रस्टीगण विशेषरूपसे और साधारण रूपसे जनता अपने उत्तरदायित्वको समझेगी।

गो-गौरव

छप्पै

(रचयिता—कविसम्राट् पं० श्रीअयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध')

भारत-अवनी अन्न बहुत-सा है उपजाती। इसीलिये है कनक-प्रसविनी मानी जाती।
इसी अन्नसे तीस कोटि मानव पलते हैं। दीन तम भरे सदन मध्य दीपक बलते हैं।
गोसुत-गात-विभूतिसे अन्नराशि उद्भूत है। भारतीय गौरव सकल गो-गौरव-संभूत है॥ १॥

गोसेवा राष्ट्रीय धर्म है

(श्रीमती जानकीदेवीजी बजाजका संदेश)

'कल्याण'ने रामायण, गीता इत्यादिपर जो विशेषाङ्क निकाले, उन्हींके मुताबिक गोसेवा-विशेषाङ्क निकालकर गोसेवाको जो प्राधान्य दिया है, उसका मैं स्वागत करती हूँ। गोसेवा हिंदूधर्मका एक विशेष अङ्ग है, ऐसा माना गया है। आज जब कि महायुद्धमें सैनिकोंके लिये गायोंकी जो बेछूट कत्ल हुई है, उसके कारण भारतवर्षमें पिछले बीस-पचीस वर्षोंमें जो थोड़ा दूध था, वह भी कम हो गया है, और बैलोंके अभावमें कई जगह खेती बिना बोये पड़ी रही। ऐसी अवस्थामें हिंदू, मुसल्मान, ईसाई इत्यादि सभी भारतवासियोंके लिये गोसेवा एक राष्ट्रधर्म हो गया है। आजके समान कठिन समयमें यदि हम सब भारतवासी एक होकर गोसेवाके राष्ट्रीय धर्मका पालन न करेंगे तो मुझे डर है कि गाय हिंदुस्थानसे मिट जायगी। ऐसे समयपर गोरक्षिणी सभाओंका कर्तव्य है कि वे आज अपनी पूरी ताकत गोवंशके नस्ल-सुधार और गायोंका दूध बढ़ानेमें लगा दें।

'कल्याण' गोसेवाका खास अङ्क निकालकर इस राष्ट्रधर्मको समाजके सामने रखनेकी जो कोशिश कर रहा है, उसके लिये मैं 'कल्याण'को गोसेवा-सङ्घकी ओरसे बधाई देती हूँ। और समाज उसका ठीक स्वागत करेगा, ऐसी आशा करती हूँ।

गोरक्षा मुख्य कर्तव्य है

(पं० श्रीगोविन्दवल्लभजी पंतका संदेश)

गोसेवा और गोवंशकी उन्नति भारतीय संस्कृतिके अभिन्न अङ्ग हैं। वेद, पुराण, धर्मशास्त्र, इतिहास आदि सभी ग्रन्थोंमें गोमाताकी महिमा गायी गयी है। भारतजनित सभी अन्य धर्मोंका इस विषयमें हिंदुओंके साथ एक ही मत है। हिंदू, बौद्ध, जैन, सिख—सभी धर्मावलम्बियोंके लिये गोरक्षा धार्मिक दृष्टिसे मुख्य कर्तव्य है। हिंदू-समाजमें हजारों वर्षोंसे गौका स्थान जननी—माताके तुल्य माना गया है। गायको कामधेनु और सुरभिकी पदवी प्राप्त है। केवल सांसारिक दृष्टिसे ही देखा जाय, तो भी हमारे ऐहिक जीवनके लिये गोवंशकी उन्नतिकी परम आवश्यकता है। जन्मसे लेकर अन्तिम समयतक प्रत्येक पदमें हमें गोवंशकी सहायता चाहिये। गायके दूधके बराबर बलदायी और हितकारी कोई अन्य खाद्य पदार्थ संसारमें नहीं है। पाश्चात्त्य सभी वैज्ञानिकोंका भी अब तो यह निश्चित मत है कि गायके दूधके प्रयोगसे मनुष्य जितना हृष्ट-पुष्ट और दीर्घजीवी हो सकता है, उतना और किसी प्रकारके भोजनसे नहीं हो सकता। हमारे देशमें हमारे दैनिक जीवनकी अत्यावश्यक सामग्री भी गाय और बैलके श्रम और देनके बिना प्राप्त नहीं हो सकती। दूध, दही, घी, मक्खनके अतिरिक्त गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा आदि—जिनके बिना धनी और निर्धन कोई भी जीवित नहीं रह सकते—बिना गोवंशके परिश्रमके उपलब्ध नहीं हो सकते। इसी तरह कपास, जूट वगैरह—जिनसे हम सबके वस्त्र बनते हैं—उनकी मेहनतके बिना नहीं मिल सकते। हमारा देश कृषिप्रधान है और जमीन तोड़ने और हल जोतनेसे लेकर बाजारमें बैलगाड़ियोंद्वारा नाज पहुँचानेतकका कोई भी खेतीका काम और किसी ढंगसे चल नहीं सकता। इस युगमें भी सब तरहके वैज्ञानिक आविष्कारोंके होनेपर भी हमारे देशमें सभी धर्मावलम्बियोंके सामाजिक और आर्थिक जीवनका प्रधान आधार गोवंश ही है। ऐसी अवस्थामें सभी भारतवासियोंको गोवंशके ह्रास और अवनतिको रोकने और उसकी वृद्धि और उन्नतिके उपायोंको कार्यान्वित करनेमें सहयोग देना चाहिये। हमारी तो प्रत्येक धार्मिक और आर्थिक, इहलौकिक और पारलौकिक उद्देश्यकी सिद्धिके लिये यह नितान्त परमावश्यक है।

गोबरसे चौका लगाना चाहिये

लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमङ्गला। गोमयालेपनं तस्मात् कर्तव्यं पाण्डुनन्दन॥

(स्कन्द० अ० रे० ८३। १०८)

गोबरमें परमपवित्र सर्वमङ्गलमयी श्रीलक्ष्मीजी नित्य निवास करती हैं। इसलिये गोबरसे लेपन करना चाहिये।

गोपालन सनातन धर्म है

(देशरत्न बाबू श्रीराजेन्द्रप्रसादजीका संदेश)

भारतवर्षमें गोपालन सनातन धर्म है । आज भी हिंदू, सिख, जैन इत्यादि सभी गोपालनको अपना धर्म समझते हैं । इसके लिये मुसल्मानोंके साथ समय-समयपर झगड़े हो जाया करते हैं, यहाँतक कि खून-खराबी भी हो जाती है । पर गौको किस तरह स्वस्थ और सुखी रक्खा जा सकता है, यह हम भूल गये हैं । आज संसारभरमें सबसे अधिक गो-वंशकी संख्या इसी देशमें है । पर अधिकांश स्थानोंमें गोवंशकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय और हृदयविदारक है । इसका मूल कारण देशकी गरीबी है । जो किसान अपना पेट नहीं भर सकता, वह अपनी गायों और बैलोंका पेट कहाँतक और कैसे भर सकता है । आजकलके वैज्ञानिक विचारवाले अक्सर कह दिया करते हैं कि इतने जानवरोंका रहना अर्थ-शास्त्र-विरुद्ध (uneconomic) है; इसलिये जबतक ऐसा प्रबन्ध न हो जाय कि केवल काम देनेवाले जानवरोंको ही खिलानेका भार हमपर रह जाय, तबतक न तो जानवरोंकी नस्ल सुधर सकती है और न उनको पेट भर खाना ही मिल सकता है । सभी समाजोंमें—चाहे वह मनुष्योंका हो, चाहे जानवरोंका समूह हो—कुछ ऐसे व्यक्ति अवश्य होते हैं, जो जन्मसे ही बेकार होते हैं और एक बड़ी संख्या ऐसे व्यक्तियोंकी होती है, जो बुढ़ापेके कारण अथवा बीमारीके कारण बेकार हो जाते हैं । मनुष्य-समाजमें भी ऐसे बेकार लोगोंकी जितनी देख-भाल होनी चाहिये, आजकल नहीं होती और संसारकी राजशक्तियाँ इस प्रयत्नमें लगी हैं कि ऐसे लोगोंके लिये क्या प्रबन्ध किया जाय । अभीतक किसीने यह सुझाव नहीं पेश किया है कि उनको जीवित रखना अनावश्यक बोझ ढोना है और इसलिये औरोंके हितके लिये कोई ऐसा सुख-पूर्ण साधन निकाला जाय, जो उनका अन्त कर दे । पर जानवरोंके सम्बन्धमें यह बात बहुधा सुननेमें आती है कि ऐसे जानवरोंको समाप्त कर देनेसे ही दूसरोंको आराम मिल सकता है । इसी नीतिके अनुसार अनेक देशोंमें जरूरतसे ज्यादा जानवर नहीं रहने दिये जाते । भारतवर्ष इस नीतिका अवलम्बन नहीं कर सकता; इसलिये यह आवश्यक है कि कोई ऐसा उपाय सोच निकाला जाय, जिससे सच्ची गोरक्षा हो सके और अपंग तथा बेकार हुए जानवरोंकी हत्या भी न होवे और अच्छे जानवर भी सुखी हो सकें । मैं समझता हूँ कि यह काम आसानीसे हो सकता है । केवल अन्ध-विश्वाससे काम नहीं चलेगा, बुद्धि और विवेकसे काम लेना चाहिये ।

जिस प्रकार मनुष्य-समाजमें एक या दो व्यक्ति परिश्रम करके इतना पैदा कर सकते हैं कि केवल अपना ही नहीं बल्कि अपने आश्रितजनोंका भी भरण-पोषण कर सकें, उसी तरह जानवरोंसे भी इस तरह काम कराया जा सकता है कि वे अपने और दूसरे कई जानवरोंके लिये भी काफी पैदा कर सकें । इसका अर्थ है कि खेतीका काम बुद्धिमानीसे किया जाय, जिसमें पैदावार बढ़ जाय । जानवरोंके लिये भी जमीन रक्खी जाय, जिसमें चारा पैदा किया जाय और कुछ अंश चरागाह यानी गोचरका काम दे । गोवंशकी नस्ल सुधारी जाय, जिससे दूध भी अधिक मात्रामें मिले और बछड़े ज्यादा मजबूत और मेहनती निकलें । साँड़ यों ही छोड़ देना अब बुद्धिमानी नहीं है । गायोंके अनुपातसे अच्छी नस्लके साँड़ रक्खे जायँ, जो उस नस्लसे मिलती-जुलती गायोंकी सेवा कर सकें और गायोंको ऐसे-वैसे भटकते-फिरते साँड़ोंसे योग न करने दिया जाय । पर यह भी आवश्यक है कि मरे हुए पशुओंसे जो कुछ मिल सकता है, वह काममें लाया जाय । सबसे अधिक बाधक अन्धविश्वास इसी बातमें होता है । मरे हुए पशुओंके चाम, मांस, हड्डी, चर्बी, सींग, केश इत्यादिसे जो कुछ लाभ उठाया जा सकता है, उठाना चाहिये । ये सब चीजें काममें आ सकती हैं और खेतीकी पैदावार बढ़ानेमें भी बड़ी सहायक हो सकती हैं । यदि ऐसा प्रबन्ध किया जाय कि गोवंशके मूत्र और गोबरसे लेकर मर जानेपर शरीरके प्रत्येक अंशको काममें लगा दिया जाय तो इसमें संदेह नहीं कि अच्छे जानवर अपने परिश्रमके अलावा इन सब चीजोंसे बहुत सहायता दे सकते हैं । और कमजोर और बूढ़े जानवर केवल अपने मल-मूत्र और शरीरके अंशोंसे बड़ी सहायता पहुँचा सकते हैं । इसको सफलीभूत बनानेके लिये रूढ़ियोंको छोड़ना होगा और मरे पशुके मांस और हड्डीको इस योग्य बना लेना होगा कि वह खादका काम दे सके । और दूसरे-दूसरे अंशोंका भी योग्य उपयोग किया जा सकेगा । चमड़ेका उपयोग सभी लोग बिना हिचक करते हैं । दूसरे अंशोंका भी क्यों न किया जाय ? जबतक इस रीतिसे इस समस्यापर विचार करके योजना तैयार न की जायगी, गोवंशकी रक्षा दिन-प्रति-दिन कठिन होती जायगी । अभी समय है, सच्ची सेवा और गो-पालनका उपाय सोच निकालना चाहिये ।

गोरक्षा—अपनी जीवन-रक्षा

(हुजूर श्रीगुरुचरणदासजी मेहता साहबका संदेश)

गौ इस देशमें निरा एक पशु नहीं है। यह एक आर्थिक और सामाजिक संस्था है। हमारा शाकाहारप्रधान देश अपने आहारके आवश्यक तत्त्वोंके लिये मुख्यतः दूधपर निर्भर है। अतः ऐसे देशकी सरकार और समाज दोनोंके लिये गौकी रक्षा और उसकी नस्लका सुधार अपनी जीवन-रक्षाका प्रश्न है। 'कल्याण'के विशेषाङ्कका स्थान इस बार गौको देकर उसके सम्पादकने इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी ओर सबका ध्यान केन्द्रीभूत करनेका अवसर उपस्थित करके देशकी महत् सेवा की है।

वर्तमान भारतमें गौकी दशा

(सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, के० बी० ई०, सी० आई० ई०, डी० लिट्०, जे० पी०)

जो लोग इस देशकी आर्थिक अवस्था या देशके लोगोंकी स्वास्थ्यसम्बन्धी दशाका कुछ भी विचार करते होंगे, वे भलीभाँति जानते हैं कि हिंदुस्थानमें गौकी अवस्था केवल शोचनीय ही नहीं, प्रत्युत ऐसी है कि वह देशको एक महान् संकटकी ओर ले जा रही है। गौ इस देशके कृषिजीवनका एक महत्त्वपूर्ण अङ्ग है; प्राचीन समयमें इसका इतना आदर था कि हिंदूधर्मशास्त्रोंने इसे हिंदूधर्मका अभिन्न अङ्ग माना है। विगत ४०-४२ वर्षोंसे मैं इस देशके आर्थिक प्रश्नोंपर विचार करता रहा हूँ और मैंने जो कुछ देखा-सुना है, उससे मेरा यह विश्वास अधिकाधिक दृढ़ होता जा रहा है कि हिंदुस्थानके लोगोंने, विशेषतः हम हिंदुओंने गौकी बहुत बुरी तरहसे अवहेलना की है। पाश्चात्त्य देशोंमें गौकी जो सँभाल की जाती है, उसकी यहाँ कोई तुलना ही नहीं है।

जब पहली बार मैं इंग्लैंड गया तो वहाँकी डेयरियाँ और पशुओंके बाड़े देखनेके लिये खास तौरपर गया था। मैं तो सदासे कट्टर शाकाहारी रहा हूँ और मैं देखना यह चाहता था कि यहाँके ये मांसाहारी लोग गौओंका किस तरह पालन करते हैं। गौका मांस तो ये लोग खाते हैं, पर गौओंका पालन विशेषरूपसे दूधके लिये करते हैं; क्योंकि दूधहीपर इंग्लैंडके बच्चोंका स्वास्थ्य और संवर्द्धन निर्भर है। हिंदुस्थानमें यह निर्भरता और भी अधिक है। अस्तु, इंग्लैंडकी इन डेयरियोंमें पहुँचते ही जो गौएँ मैंने देखीं, वे इतनी हृष्ट-पुष्ट और लंबी-चौड़ी थीं कि उन्हें यदि छोटी हथिनियाँ कहूँ तो कुछ अत्युक्ति तो अवश्य होगी पर वैसी बेहिसाब नहीं। उन दिनों पशु-प्रबन्धके विषयमें भारत-सरकारके सलाहकार थे स्मिथ साहब। उनके पिता मि० जान स्मिथ मुझे इंग्लैंडके विभिन्न भागोंमें डेयरियाँ और पशु-शालाएँ दिखानेके लिये ले गये थे। ये वहाँकी सर्वोत्तम डेयरियाँ और पशुशालाएँ नहीं थीं, बल्कि ऐसी थीं जिन्हें उनका औसत समझना चाहिये। मैंने जो कुछ वहाँ देखा, उससे मैंने यह समझ लिया कि हिंदुस्थानकी अपेक्षा वहाँके लोग बहुत अधिक उत्साह और सचाईके साथ गौओंकी सँभाल रखते हैं।

हिंदुस्थानको वहाँकी-सी स्थितिमें पहुँचनेके लिये बहुत बड़ा फासला तै करना होगा। सरकारी नीतिकी बदौलत देशके विभिन्न भागोंमें गोचरभूमियोंका* अन्त हो गया है। और भी बहुत-सी बातें हैं, जो सरकारको करनी चाहिये थीं

* कृषिविषयक रायल कमीशन (१९२६) ने (अपनी रिपोर्टके १६४ वें पैराग्राफमें) कहा है कि 'हिंदुस्थानमें पाले जानेवाले पशुओंकी संख्या अत्यधिक है। जिस प्रकारका चारा इन्हें खानेको मिलता है, वह बहुत ही कनिष्ठ कोटिका है और खेतोंमें जो चरी उगायी जाती है, वह जिस मौसिममें बहुत ही कम होती है उस मौसिममें यह चारा पशुओंका निर्वाह पूरे तौरपर नहीं कर सकता; इन बातोंको सोचते हुए हमलोगोंकी यह राय है कि इतने पशुओंको पालना इस देशकी भूमिपर बहुत बड़ा भार है। यदि पशुओंसे इतना लाभ उठाना अभीष्ट हो जितना कि पूर्ण आर्थिक दृष्टिसे पशु-पालन करनेवाले देशोंमें सन्तोषजनक समझा जाता है, तो बैलोंसे पूरा काम लेना होगा, गौओंसे अधिक-से-अधिक दूध प्राप्त करनेका उपाय करना होगा और खाद सावधानीसे जमा करके खेतोंमें डलवानेकी व्यवस्था करनी होगी।

पर सरकारने नहीं की हैं। उन बातोंको कई बार इससे पहले विस्तारसे प्रकट किया जा चुका है, इसलिये यहाँ गिनाना आवश्यक नहीं। जो दो बातें मैं लोगोंके दिलोंमें जमाना चाहता हूँ, वे ये हैं—१. गोरक्षाके लिये केवल जबानी जमा-खर्चका समय अब नहीं रहा; भावी पीढ़ियोंकी रक्षाके लिये यह आवश्यक है कि कुछ रचनात्मक कार्य किया जाय; होना तो चाहिये था इससे बहुत पहले ही; पर तब न हुआ, अब सही। गोरक्षापर व्याख्यानोंकी तो अब बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है इस बातकी कि जिन लोगोंके दिलोंमें गौके लिये दर्द है, वे ऐसा काम करें जिसका कुछ फल हो। २. जो लोग गौको देवता न मानते हों, वे आर्थिक दृष्टिसे ही गौकी आवश्यकता और उपयोगिता समझें, जैसा कि पाश्चात्त्य देशोंके लोग समझते हैं। जबतक इस देशमें लोकनिर्वाचित मन्त्रिमण्डल स्थापित होकर कोई सर्वाङ्गीण योजना और नीति स्थिर नहीं कर लेता, कम-से-कम तबतकके लिये मेरे विचारमें इस महत्कार्यको आरम्भ करनेका सर्वोत्तम उपाय यही है कि प्रत्येक खुशहाल हिंदू बाजारसे दूध खरीदनेके बदले अपनी ही एक अथवा अनेक गौएँ रक्खे, चाहे इसमें कुछ अधिक खर्च ही क्यों न पड़े। धनी-मानी लोग गोरक्षा-सभाओंके संरक्षकोंमें अपने नाम दे करके ही जो यह समझ लेते हैं कि हमारे करनेका काम पूरा हो गया, यह अच्छा नहीं है। उनका यह कर्तव्य है कि आज जो गौएँ हैं, उन्हें खिलानेका समुचित प्रबन्ध करें और ऐसा उपाय करें जिससे भविष्यमें गोवंशका ह्रास न हो, गौओंकी नस्ल न बिगड़े और सब जातियोंकी गौओंकी नस्ल सुधरे। इस विषयमें सनातनी हिंदुओंके लिये तो कहना ही क्या है, प्रत्येक आस्तिक एवं खुशहाल हिंदूको अपने कर्तव्य-पालनके द्वारा सबके लिये उदाहरण बनना चाहिये।

गौओंकी हत्या बंद करनेका प्रश्न साम्प्रदायिक विद्वेषके कारण बहुत ही कठिन हो गया है। तीस वर्ष पहले बम्बई-कारपोरेशनके पास कई लोगोंके हस्ताक्षरोंके साथ मैंने एक प्रार्थना भेजी थी, पर संकुचित साम्प्रदायिक विचारोंके ही कारण वह स्वीकृत नहीं हुई। यद्यपि मेरी उस प्रार्थनाका आशय इतना ही था कि अमुक निश्चित वयस्से कम वयस्-वाली गाय-भैंसें कारपोरेशनके कत्लखानेमें न काटी जायँ। सन् १९४२ से आर्थिक स्थिति जिस तरहसे बिगड़ी है, उससे भारतसरकार भी कुछ जागी है और यह समझ रही है कि गाय-भैंसोंकी इस बेरोक हत्यासे देशकी कितनी भयानक हानि हो रही है। इसे रोकनेके लिये भारतसरकारकी ओरसे प्रान्तिक सरकारोंके पास एक सर्क्यूलर भेजा गया है। यद्यपि यह चेष्टा आग लग जानेपर कुआँ खुदवानेके समान है, फिर भी इन मामलोंमें अन्तिम समयमें भी चेत जाना लाभदायक ही है। केवल आर्थिक दृष्टिसे विचार किया जाय तो सभी शिक्षित और समझदार भारतीयोंका यह कर्तव्य है कि वे कम-से-कम दूध देनेवाली जवान गौओंकी हत्या बंद करानेका पूरा यत्न करें।

पिछली पीढ़ियोंके सनातनी हिंदुओंने देशके कृषि-उपयोगी पशुओं तथा गौओंकी भी रक्षाके लिये बहुत-सी धर्मादेकी संस्थाओंकी योजना की थी। इनमेंसे अधिक प्रसिद्ध संस्थाएँ पिंजरापोल तथा गोशालाएँ हैं। भारतके प्रत्येक बड़े शहरमें एक-न-एक ऐसी संस्था अवश्य है। सच पूछिये तो हिंदुओंके प्रत्येक मन्दिरके साथ अपनी एक छोटी-सी गोशाला जुड़ी हुई है। समग्र भारतमें सनातनी हिंदुओंके धर्मादेसे स्थापित एवं संचालित इस प्रकारकी संस्थाओंकी पूरी सूची कभी तैयार भी की गयी हो, इसका मुझे पता नहीं है। यह कहना कि इनमेंसे अधिकांश संस्थाओंका प्रबन्ध अच्छा नहीं है और इनकी देखभाल करनेवाले लोग अधिकतर उनसे अपना निजी स्वार्थ सिद्ध करते हैं, इन संस्थाओंकी बहुत ही मृदु समालोचना होगी। धर्मादेकी कितनी बड़ी रकमका इस प्रकार दुरुपयोग किया गया है, इसका हिसाब लगाना कठिन होगा। यदि हिंदुओंकी अन्तरात्माको समुचित रीतिसे जगाया जाय तो इन रुपयोंको—जो करोड़ोंकी संख्यामें अबतक व्यय हो चुके हैं और अब भी वर्ष-प्रतिवर्ष हो रहे हैं—ठीक मार्गमें लगाकर आर्थिक समस्याको सुलझाया जा सकता है। परन्तु इन तथाकथित धर्मादेकी संस्थाओंके साथ प्रचलित परिपाटीके अनुसार बहुत लोगोंका स्वार्थका सम्बन्ध हो गया है और भारतभरमें बिखरी हुई इन बहुत बड़ी रकमोंके समुचित उपयोगके लिये कोई दृढ़ एवं निश्चित व्यवस्था सोचनी होगी। पिंजरापोलों एवं गोशालाओंके द्वारा पशुओंकी रक्षाके अतिरिक्त देशकी गौओंकी नस्ल सुधारनेका अत्यन्त उपयोगी कार्य हो सकता है। अहिंसा अथवा धार्मिक जोशकी भित्तिपर स्थित भावनामात्र सनातन हिंदुओंके लिये घातक है; इस भावनाको निर्मूल करनेकी आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता है उसे ठीक मार्गपर लगानेकी।



गौके प्रति हमारा कर्तव्य

(डा० श्रीश्यामाप्रसाद मुकर्जीका संदेश)

दैवकी कैसी विचित्र गति है कि जिस देशका तीन-चौथाई जनसमाज गौको माता कहकर पूजता है, वहाँ तो गोवंशका दिन-दिन ह्रास हो और जहाँ लोग गौका मांस खाते हैं, वहाँ वह फले-फूले ! यह बहुत प्रसिद्ध बात है कि इंग्लैंड, हालैंड तथा जर्मनी-जैसे देशोंमें गौएँ हिंदुस्थानकी सर्वश्रेष्ठ गौओंकी अपेक्षा औसत हिसाबसे तिगुना-चौगुना दूध देती हैं ।

गोवंशकी इस दशाका सुधार केवल बच्चों, बीमारों और बूढ़ोंके लिये दूधकी व्यवस्था करनेके निमित्त ही नहीं, प्रत्युत कृषिकर्मके लिये भी अत्यन्त आवश्यक है । नीरोग गौ बलवान् बछड़ा-बछिया पैदा करेगी और इससे दूधका उत्पादन तो होता ही रहेगा, साथ ही खेतीको भी मदद मिलेगी, जिसपर हिंदुस्थानके प्रतिसैकड़े ७५ लोग जीते हैं । अतः गौके हित और सुखमें ही हिंदुस्थानकी इस महान् जनताका हित, सुख, आरोग्य और समृद्धि है ।

हमारे पूर्वपुरुष सदासे ही गोरक्षाका महत्त्व जानते थे । वेदोंसे लेकर पुराणोंतक सर्वत्र शास्त्रोंके ये ही विधान हैं कि गौकी रक्षा करो, गौका पूजन करो । मानव-जीवनके सभी अङ्गोंका अपने अंदर समावेश करनेवाले हिंदूधर्मने गौके प्रति मनुष्योंके कर्तव्यका विधान विशेष आग्रहके साथ किया है । शास्त्र इसकी रक्षा और पूजा करनेको कहते हैं और संस्कृतका काव्य-नाटक-इतिहासादि सारा साहित्य उसे 'माता' कहकर पुकारता है—माताके प्रति वत्सका जो आत्यन्तिक स्नेह होता है, वही उसके प्रति होना चाहिये । पर शास्त्रोंने केवल भावनावश ही नहीं, प्रत्युत भारतीय जीवनकी आवश्यकताओंको वास्तविक रूपमें समझकर ही मनुष्योंके साथ गौका यह नाता जोड़ा है ।

हिंदुओंके पतनके साथ गौके लिये भी बुरे दिन आये । गौके लिये जो प्रगाढ़ आदर और स्नेह हिंदुओंका अपना विशेष गुण था, वह नष्टप्राय हो गया । हम हिंदुओंके पूर्वपुरुषोंका गौके प्रति कैसा भाव था, यह महाराजा दिलीप और उनकी महारानीकी प्रगाढ़ गोभक्ति तथा आदर एवं प्रेमयुक्त सेवा देखनेसे पता लगता है । पर जो आदर्श हमारे पूर्वपुरुष हमारे सामने रख गये, उसका हमने क्या आदर किया !

गौके प्रश्नका सर्वाङ्गीण विचार करनेके लिये 'कल्याण' का विशेषाङ्क प्रकाशित करना ठीक ही है । इससे बहुत लोग गौके प्रति अपना कर्तव्य विचारने लगेंगे और हममेंसे कुछ तो अपने उस कर्तव्यका पालन करनेमें भी प्रवृत्त होंगे; जो हमारे धर्मने हमारे लिये नियत किया है और देशकी आर्थिक दुरवस्था जिसका तकाजा कर रही है । 'कल्याण' का यह कल्याणमय उद्देश्य सफल हो ।

गौके लिये सच्चा यज्ञ

(सर चुन्नीलाल वी० मेहता, के० सी० एस० आई० का संदेश)

मैं यहाँ इस विषयके कोई आँकड़े उपस्थित नहीं करना चाहता, न गौकी कृषि-विषयक उपयोगिता और मनुष्यके लिये उसके दूधकी आवश्यकताके सम्बन्धमें ही कुछ कहना चाहता हूँ । इसके बारेमें पर्याप्त साहित्यका निर्माण हो चुका है । इस साहित्यमें नयी चीज डा० राइटकी रिपोर्ट है, जो कुछ वर्ष पहले प्रकाशित हुई थी । डा० राइटको भारत-सरकारने यहाँ बुलाया था, इसलिये कि वे देशमें दौरा करें और भिन्न-भिन्न संस्थाओं और सब प्रान्तोंके कृषि-विभागोंसे जो कुछ बातें मालूम हो सकें, उनका संग्रह करें और ऐसे काम सुझावें, जो उनके विचारमें करनेयोग्य हों । कृषि-विषयक अनुसंधान करनेवाली इम्पीरियल कौंसिलके 'इंडियन फार्मिंग' नामक पत्रके ५ मई १९४५के अङ्कमें जो नवीनतम बातें प्रकाशित की गयी हैं, उनसे यह प्रमाणित होता है कि गौओंकी नस्ल सुधारी जा सकती है और सुधार एकाध पीढ़ीके अंदर ही किया जा सकता है । उसमें यह कहा गया है—

'साहीवाल गौओंका यहाँतक सुधार हुआ है कि औसतके हिसाबसे इस जातिकी प्रत्येक गौ सन् १९१४में जहाँ प्रतिदिन ६ रतल दूध देती थी, वहाँ सन् १९४४ में प्रतिदिन २१ रतलसे अधिक देने लग गयी । थार्परकर जातिकी गौओंका दूध भी लगभग १० वर्षोंमें इसी सीमातक बढ़ाया जा सका है । दोनों ही जातियोंकी गौओंके दूधमें घृतांश

सैकड़े पीछे ५ से अधिक होता है। ऐसी गौएँ यहाँ नहीं रक्खी जातीं, जो ब्यानेके बाद दूध देनेकी ३०६ दिनकी अवधिमें ६००० पौंडसे कम दूध देती हों और इन दोनों ही जातियोंमें ऐसी बहुत-सी गौएँ हैं, जिन्होंने इस अवधिमें ९००० रतलसे अधिक और कुछने तो १२००० रतलसे भी अधिक दूध दिया है।'

मुख्य बात यह है कि गौकी दुर्दशाके लिये हम हिंदू स्वयं ही जिम्मेदार हैं। इस समय हमलोगोंकी जो दुर्दशा हो रही है, वह इसी पापका प्रायश्चित्त हो रहा है। जगत्‌का सारा व्यवहार इसी नियमपर चलता है कि जहाँ जिस चीजकी माँग होगी, वहीं उसकी पूर्ति भी होगी। हमलोग भैंसका दूध अधिक पसंद करते हैं और यह नहीं जानते कि भैंस गौका काल है। गांधीजी चिल्ला-चिल्लाकर लोगोंसे यह कह चुके हैं कि केवल गौका दूध सेवन करो। यदि हमलोग हिंदू होकर गौका इतना आदर और उसके लिये इतना त्याग न कर सकें कि अधिक दाम देकर भी गौका ही दूध लें और भैंसके दूधके स्वादकी इच्छा न करें तो हमलोग गौको गोमाता कहकर पूजनेके अधिकारी नहीं हैं। इसमें स्वादकी इच्छाका त्याग भी नहीं है। वैज्ञानिक रीतिसे यह बात साबित हो चुकी है कि गौका दूध भैंसके दूधसे कहीं अच्छा होता है। और गौके दूधका घृतांश भी बढ़ाकर भैंसके दूधके घृतांशके बराबर किया जा सकता है, यह ऊपरके अवतरणसे स्पष्ट हो ही गया होगा।

प्रत्येक हिंदू, जहाँतक सम्भव हो, कम-से-कम एक गौ अपने यहाँ रखने और उसका अच्छी तरह पालन करनेका व्रत ले ले। लाचारी हालतमें केवल गौके ही दूधका, और गौके ही दूधके बने पदार्थोंका सेवन करनेका प्रण कर ले। इससे गौका आर्थिक महत्त्व स्थापित होगा। गौओंकी हत्या आप ही बंद हो जायगी और वह अपने उस महान् गौरवको पुनः प्राप्त करेगी, जिसका शास्त्रोंमें इतना वर्णन किया गया है। जबतक कोई चीज कीमती नहीं होती, तबतक उसकी बर्बादी नहीं रोकी जा सकती। गौओंको हमलोग बचा सकते हैं, यदि हम गौके ही दूधका और गौके ही दूधके बने पदार्थोंका सेवन करनेकी प्रतिज्ञा कर लें। यही सच्चा यज्ञ है।

गौओंको कामधेनु बनाना है

(दयालङ्कार सेठ श्रीलल्लूभाई दीपचन्दजी झवेरीका संदेश)

अपने सम्मान्य पत्र 'कल्याण' और 'कल्याण-कल्पतरु'के द्वारा गोरक्षाके अनुकूल लोकमत बनानेका जो पुण्य-कार्य आप कर रहे हैं, उसे देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है। मैं हिंदुस्थानमें गौओंको हत्यासे पूर्ण सुरक्षित देखना चाहता हूँ। इस दिशामें आप-जैसे सुसंस्कृत अग्रगण्य लोग जो प्रयत्न कर रहे हैं, उससे मेरी लालसाको प्रोत्साहन मिलता है। अतः गौके सम्बन्धमें जाननेकी बातें और आँकड़े तथा शास्त्रग्रन्थोंसे अच्छे हवाले देकर आप 'कल्याण'का जो विशेषाङ्क प्रकाशित कर रहे हैं, उसका मैं स्वागत करता हूँ। मुझे पूरा भरोसा है कि देशकी गोभक्त जनताको इसमें सोचने-समझने और करने-करानेकी यथेष्ट सामग्री मिलेगी।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जबतक गौएँ फिरसे अपने प्राचीन पदगौरवको प्राप्त होकर कामधेनु नहीं बन जायँगी और अपनी परमायुपर्यन्त जीनेका अवसर उन्हें नहीं दिया जायगा, तबतक हिंदुस्थानका कोई प्रयत्न स्थायी उन्नति, सुख-समृद्धि और शान्ति नहीं ला सकता। आर्थिक दृष्टिसे भी देखें तो जिस हिंदुस्थानका बहुजनसमाज दुग्धाहारी एवं शाका-हारी है, उसकी अर्थव्यवस्थामें गौका प्रमुख स्थान होना ही चाहिये। इसलिये सभी राष्ट्रवादियों तथा अन्य भारतीयोंका और सरकारका भी यह कर्तव्य है कि गौओंको उनकी वर्तमान दुर्दशासे बचावें।

इस विषयमें जिस आवश्यक ज्ञानका प्रचार करना आपने आरम्भ किया है, उससे मुझे विश्वास है कि क्या नेता और क्या साधारण जनता—सब लोग मिलकर गोरक्षाके इस कार्यमें पूर्ण यत्नवान् होंगे और गौओंकी रक्षा होगी। इसी बीचमें हम उस दिनकी प्रतीक्षा करते हैं, जब इस देशकी राष्ट्रीय सरकार बनेगी और इस प्रश्नको हाथमें लेकर तुरंत वह काम करेगी, जिससे गौओंकी पूर्ण रक्षा हो।

गो-महिमा और गोरक्षाकी आवश्यकता

(लेखक—श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

गोरक्षा हिंदूधर्मका एक प्रधान अङ्ग माना गया है। प्रायः प्रत्येक हिंदू गौको माता कहकर पुकारता है और माताके समान ही उसका आदर करता है। जिस प्रकार कोई भी पुत्र अपनी माताके प्रति किये गये अत्याचारको सहन नहीं करेगा, उसी प्रकार एक आस्तिक और सच्चा हिंदू गोमाताके प्रति निर्दयताके व्यवहारको नहीं सहेगा; गोहिंसाकी तो वह कल्पना भी नहीं सह सकता। गौके प्राण बचानेके लिये वह अपने प्राणोंकी आहुति दे देगा, किन्तु उसका बाल भी बाँका न होने देगा। मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामके पूर्वज महाराज दिलीपके चरित्रसे सभी लोग परिचित हैं। उन्होंने अपने कुलगुरु महर्षि वसिष्ठकी बछिया नन्दिनीकी रक्षाके लिये सिंहको अपना शरीर अर्पण कर दिया, किन्तु जीते-जी उसकी हिंसा न होने दी। पाण्डवशिरोमणि अर्जुनने गोरक्षाके लिये बारह वर्षोंतक वनवासकी कठोर यातना स्वीकार की।

परन्तु हाय! वे दिन अब चले गये। हिंदूजाति आज दुर्बल हो गयी है। हम अपनी स्वतन्त्रता, अपना पुरुषत्व, अपनी धर्मप्राणता, ईश्वर और ईश्वरीय कानूनमें विश्वास, शास्त्रोंके प्रति आदरबुद्धि, विचार-स्वातन्त्र्य, अपनी संस्कृति एवं मर्यादाके प्रति आस्था—सब कुछ खो बैठे हैं। आज हम आपसकी फूट एवं कलहके कारण छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। हम अपनी संस्कृति एवं धर्मपर किये गये प्रहारों एवं आक्रमणोंको व्यर्थ करनेके लिये संघटित नहीं हो सकते। हम अपनी जीवनी-शक्ति खो बैठे हैं। मूक पशुओंकी भाँति दूसरोंके द्वारा हाँके जा रहे हैं। राजनीतिक गुलामी ही नहीं, अपितु मानसिक गुलामीके भी शिकार हो रहे हैं। आज हम सभी बातोंपर पाश्चात्त्य दृष्टिकोणसे ही विचार करने लगे हैं। यही कारण है कि हमारी इस पवित्र भूमिमें प्रतिवर्ष लाखों-करोड़ोंकी संख्यामें गाय और बैल काटे जाते हैं और हम इसके विरोधमें अँगुलीतक नहीं उठाते। आज हम दिलीप और अर्जुनके इतिहास केवल पढ़ते और सुनते हैं, उनसे हमारी नसोंमें जोश नहीं भरता। हमारी नपुंसकता सचमुच दयनीय है!

हम सरकारके मत्थे अपनी धार्मिक भावनाओंको कुचलनेका दोष मँढ़ते हैं, हम अपने मुसल्मान भाइयोंपर गायके प्रति निर्दयताका अभियोग लगाते हैं, किन्तु अपने दोष नहीं देखते। गौओंके प्रति हमारी आदरबुद्धि केवल कहनेभरके लिये रह गयी है। हम केवल वाणीसे ही उसकी पूजा करते हैं। हमीं तो अपनी गौओं और बैलोंको कसाइयोंके हाथ बेचते हैं। हमीं उनके साथ दुष्टता एवं क्रूरताका बर्ताव करते हैं—उन्हें भूखों मारते हैं, उनका सारा दूध दुह लेते हैं, बछड़ेका हिस्सा भी छीन लेते हैं, बैलोंपर बेहद बोझा लाद देते हैं, न चलनेपर उन्हें बुरी तरहसे पीटते हैं, गोचरभूमियोंका सफाया करते जा रहे हैं और फिर भी अपनेको गो-रक्षक कहते हैं और विधर्मियोंको गोघातक कहकर कोसते हैं। हमारी वैश्य-जातिके लिये कृषि और वाणिज्यके साथ-साथ शास्त्रोंने गोरक्षाको भी प्रधान धर्म माना है, परन्तु आज हमारे वैश्य भाइयोंने गोरक्षाको अनावश्यक मानकर छोड़ रक्खा है। हमारी गोशालाओंका बुरा हाल है और उनके द्रव्यका ठीक-ठीक उपयोग नहीं होता। उनमें परस्पर सहयोगका अभाव है। सारांश, सब कुछ विपरीत हो गया है।

दूसरी जातियाँ अपने गोधनकी वृद्धिमें बड़ी तेजीके साथ अग्रसर हो रही हैं। दूसरे देशोंमें क्षेत्रफलके हिसाबसे गौओंकी संख्या भारतकी अपेक्षा कहीं अधिक है और प्रतिमनुष्य दूधकी खपत भी अधिक है। वहाँकी गौएँ हमारी गौओंकी अपेक्षा दूध भी अधिक देती हैं। कारण यही है कि वे गौओंको भर-पेट भोजन देते हैं, अधिक आरामसे रखते हैं, उनकी अधिक सँभाल करते हैं और उनके साथ अधिक प्रेम और कोमलताका बर्ताव करते हैं। अन्य देशोंमें गोचरभूमियोंका अनुपात भी खेतीके उपयोगमें आनेवाली भूमिकी तुलनामें कहीं अधिक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि हम अपनेको गो-पूजक और गोरक्षक कहते हैं, वस्तुतः आज हम गोरक्षामें बहुत पिछड़े हुए हैं। गोजातिके प्रति हमारे इस अनादर एवं उपेक्षाका परिणाम भी प्रत्यक्ष ही है। अन्य देशोंकी अपेक्षा हम भारतीयोंकी औसत आयु बहुत ही कम है और अन्य देशोंकी तुलनामें हमारे यहाँके बच्चे बहुत अधिक संख्यामें मरते हैं। यही नहीं, अन्य लोगोंकी अपेक्षा हमलोगोंमें जीवट भी बहुत कम है। कहना न होगा कि दूध और दूधसे बने हुए पदार्थोंकी कमी ही हमारी इस शोचनीय अवस्थाका मुख्य हेतु है। इससे यह बात प्रत्यक्ष हो जाती है कि किसी

जातिके स्वास्थ्य एवं आयु-मानके साथ गोधनका कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है । अस्तु,

हमारे शास्त्र कहते हैं कि गायसे अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंकी सिद्धि होती है । दूसरे शब्दोंमें धार्मिक, आर्थिक, सांसारिक एवं आध्यात्मिक—सभी दृष्टियोंसे गाय हमारे लिये अत्यन्त उपयोगी है । पुराणोंमें लिखा है कि जगत्‌में सर्वप्रथम वेद, अग्नि, गौ एवं ब्राह्मणोंकी सृष्टि हुई । वेदोंसे हमें अपने कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है, वे हमारे ज्ञानके आदिस्रोत हैं । वे हमें देवताओंको प्रसन्न करनेकी विद्या—यज्ञानुष्ठानका पाठ पढ़ाते हैं । गीतामें भी कहा है—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥
इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥
एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥
(३ । १०-१६)

"प्रजापति ब्रह्माजीने कल्पके आदिमें यज्ञसहित प्रजाओंको रचकर उनसे कहा कि 'तुमलोग यज्ञके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुमलोगोंको इच्छित भोग प्रदान करनेवाला हो । तुमलोग इस यज्ञके द्वारा देवताओंको उन्नत करो और वे देवता तुमलोगोंको उन्नत करें । इस प्रकार निःस्वार्थभावसे एक दूसरेको उन्नत करते हुए तुमलोग परम कल्याणको प्राप्त हो जाओगे । यज्ञके द्वारा बढ़ाये हुए देवता तुमलोगोंको बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे ।' इस प्रकार उन देवताओंके द्वारा दिये हुए भोगोंको जो पुरुष उनको बिना दिये स्वयं भोगता है, वह चोर ही है । यज्ञसे बचे हुए अन्नको खानेवाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापोंसे मुक्त हो जाते हैं और जो पापीलोग अपना शरीर पोषण करनेके लिये ही अन्न पकाते हैं, वे तो पापको ही खाते हैं । सम्पूर्ण प्राणी अन्नसे उत्पन्न होते हैं, अन्नकी उत्पत्ति वृष्टिसे होती है, वृष्टि यज्ञसे होती है और यज्ञ विहित कर्मोंसे उत्पन्न होनेवाला है । कर्मसमुदायको तू वेदसे उत्पन्न और वेदको अविनाशी परमात्मासे उत्पन्न हुआ जान । इससे सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञमें प्रतिष्ठित है । हे पार्थ ! जो पुरुष इस लोकमें इस प्रकार परम्परासे प्रचलित सृष्टिचक्रके अनुकूल नहीं बरतता अर्थात् अपने कर्तव्यका पालन नहीं करता, वह इन्द्रियोंके द्वारा भोगोंमें रमण करनेवाला पापायु पुरुष व्यर्थ ही जीता है ।"

ऊपरके वचनोंसे यह प्रकट होता है कि (१) यज्ञकी उत्पत्ति सृष्टिके प्रारम्भमें हुई और (२) यज्ञ हमारे अभ्युदय (लौकिक उन्नति) एवं निःश्रेयस (परम कल्याण) दोनोंका साधन है । यज्ञसे हम जो कुछ चाहें प्राप्त कर सकते हैं । लौकिक सुख-समृद्धि तथा ऐहिक एवं पारलौकिक भोग हमें देवताओंसे प्राप्त होते हैं । देवता भगवान्‌की ही कलाएँ—भगवान्‌की ही दिव्य चेतन विभूतियाँ हैं, जो मनुष्यों एवं मनुष्योंसे निम्न स्तरके जीवोंकी लौकिक आवश्यकताओंको पूर्ण करते हैं—हमारे लिये समयानुसार घाम, चाँदनी, वर्षा आदिकी व्यवस्था करके हमारे वनस्पतिवर्गका और उनके द्वारा हमारे जीवनका पोषण करते हैं । वे ही हमें रहनेके लिये पृथ्वी, हमारी प्यास बुझानेके लिये जल, हमारे भोजनको पकाने तथा हमारा शीतसे त्राण करनेके लिये अग्नि, साँस लेनेके लिये वायु तथा इधर-उधर घूमनेके लिये अवकाश प्रदान करते हैं । सारांश वे ही इस संसारचक्रकी व्यवस्था करते हैं, जीवोंके कर्मोंकी देख-रेख तथा उनके अनुसार शुभाशुभ फलभोगका विधान करते हैं तथा हमारे जीवन-मरणका नियमन करते हैं । इन भगवत्कलाओंको प्रसन्न रखने—इनका आशीर्वाद, सहानुभूति एवं सद्भाव प्राप्त करनेके लिये और आदान-प्रदानके सिद्धान्तको चालू रखनेके लिये - जो जगच्चक्रके परिचालनके लिये आवश्यक एवं अनिवार्य है—यज्ञानुष्ठानके द्वारा इनकी आराधना करना मनुष्यमात्रका परम कर्तव्य है । जबतक भारतमें यज्ञ-यागादिके द्वारा देवताओंकी आराधना होती थी, तबतक यह देश सुखी एवं समृद्ध था, समयपर यथेष्ट मात्रामें वर्षा होती थी तथा बाढ़, भूकम्प, दुष्काल एवं महामारी आदि दैवी संकटोंसे यह प्रायः मुक्त था । जबसे यज्ञ-यागादिकी प्रथा लुप्तप्राय हो गयी, तभीसे यह देश अधिकाधिक दैवी प्रकोपोंका शिकार होने लगा है ।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यज्ञसे अभ्युदय एवं निःश्रेयस दोनों सिद्ध होते हैं। संसार-चक्रका परिचालन करनेवाले भगवत्कलारूप देवताओंकी प्रसन्नताद्वारा वह हमारी सुख-समृद्धिका साधन बनता है और निष्कामभावसे केवल कर्तव्यबुद्धिपूर्वक किये जानेपर वह भगवत्प्रीतिका सम्पादन कर भगवत्प्राप्ति अथवा मोक्षरूप जीवनके परम लक्ष्यकी प्राप्तिमें सहायक होता है। यही नहीं, यज्ञ-दान-तपरूप कर्मको भगवान्‌ने अवश्यकर्तव्य, अनिवार्य बताया है—'यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्' और यज्ञादिकी परम्पराका विच्छेद करनेवालेको पापी—अघायु कहकर उसकी गर्हणा की है। इस यज्ञचक्रको चलानेके लिये ही वेद, अग्नि, गौ एवं ब्राह्मणोंकी सृष्टि हुई है। वेदोंमें यज्ञानुष्ठानकी विधि बतायी गयी है—'कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि' एवं ब्राह्मणोंके द्वारा वह विधि सम्पन्न होती है। अग्निके द्वारा आहुतियाँ देवताओंको पहुँचायी जाती हैं—'अग्निमुखा हि देवा भवन्ति' और गौसे हमें देवताओंको अर्पण करने योग्य हवि प्राप्त होता है। इसीलिये हमारे शास्त्रोंमें गौको 'हविर्दुघा' (हवि देनेवाली) कहा गया है। गोघृत देवताओंका परम प्रिय हवि है और यज्ञके लिये भूमिको जोतकर तैयार करने एवं गेहूँ, चावल, जौ, तिल आदि हविष्यान्न पैदा करनेके लिये गो-संतति—बैलोंकी परम आवश्यकता है। यही नहीं, यज्ञभूमिको परिष्कृति एवं शुद्ध करनेके लिये उसे गोमूत्रसे छिड़का जाता है और गोबरसे लीपा जाता है तथा गोबरके कंडोंसे यज्ञाग्निको प्रज्वलित किया जाता है। यज्ञानुष्ठानके पूर्व प्रत्येक यजमानको देहशुद्धिके लिये पञ्चगव्यका प्राशन करना होता है और यह गायके दूध, गायके दही, गायके घी, गोमूत्र एवं गायके ही गोबरसे तैयार किया जाता है—इसीलिये इसे 'पञ्चगव्य' कहते हैं। इसके अतिरिक्त गायका दूध और उससे तैयार होनेवाले पदार्थ सबके स्वादिष्ट एवं पोषक आहार हैं। दूधमें पकाये हुए चावलको—जिसे आधुनिक भाषामें खीर कहते हैं—संस्कृतमें परमान्न (सर्वश्रेष्ठ भोजन) कहा गया है और घीको हमारे यहाँ सर्वश्रेष्ठ रसायन माना गया है—'आयुर्वै घृतम्।' इतना ही नहीं, घृतरहित अन्नको हमारे शास्त्रोंमें अपवित्र कहा गया है। घी और चीनीसे युक्त खीरका भोजन ब्राह्मणोंके लिये विशेष तृप्तिकारक होता है और देवताओंको आहुति पहुँचानेके लिये हमारे यहाँ दो ही मार्ग माने गये हैं—अग्नि और ब्राह्मणोंका मुख। बल्कि भगवान्‌ने तो कहा है कि मैं अग्निके द्वारा यज्ञमें घीसे चूती हुई आहुतियोंका भक्षण करके उतना प्रसन्न नहीं होता जितना ब्राह्मणोंके मुखमें पड़ी हुई आहुतियोंसे संतुष्ट होता हूँ—

नाहं तथाद्मि यजमानहविर्वितानेश्च्योतद्घृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन।
यद् ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोऽनुघासं तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः॥

(श्रीमद्भा० ३। १६। ८)

तात्पर्य यह कि दोनों प्रकारसे देवताओंकी तृप्तिके लिये तथा सर्वोपरि भगवत्प्रीतिके लिये भी गौकी परमोपयोगिता सिद्ध होती है।

भारत-जैसे कृषिप्रधान देशमें आर्थिक दृष्टिसे भी गायका महत्त्व स्पष्ट ही है। जिन लोगोंने हमारे ग्रामीण जीवनका विशेष मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया है, उन सबने एक स्वरसे हमारे जीवनके लिये गौकी परमावश्यकता बतायी है। गोधन ही हमारा प्रधान बल है। गोधनकी उपेक्षा करके हम जीवित नहीं रह सकते। अतः हमारे गोवंशका संख्या एवं गुणोंकी दृष्टिसे जो भयानक ह्रास हो रहा है, उसका बहुत शीघ्र प्रतीकार करना चाहिये और हमारी गौओंकी दशाको सुधारने, उनकी नस्लकी उन्नति करने और उनका दूध बढ़ाने तथा इस प्रकार देशके दुग्धोत्पादनमें वृद्धि करनेका भी पूरा प्रयत्न करना चाहिये। गायों, बछड़ों एवं बैलोंका वध रोकने तथा उनपर किये जानेवाले अत्याचारोंको बंद करनेके लिये कानून बनाने होंगे और विधर्मियोंको भी गौकी परमोपयोगिता बतलाकर गोजातिके प्रति उनकी सहानुभूति एवं सद्भावका अर्जन करना चाहिये। जिस देशमें कभी दूध और दहीकी एक प्रकारसे नदियाँ बहती थीं; उस देशमें असली दूध मिलनेमें कठिनता हो रही है—यह कैसी विडम्बना है!

आध्यात्मिक दृष्टिसे भी गायका महत्त्व कम नहीं है। गायके दर्शन एवं स्पर्शसे पवित्रता आती है, पापोंका नाश होता है, गायके शरीरमें तैंतीस करोड़ देवताओंका निवास माना गया है। गायके खुरोंसे उड़नेवाली धूलि भी पवित्र मानी गयी है। महाभारतमें महर्षि च्यवन राजा नहुषसे कहते हैं—

'मैं इस संसारमें गौओंके समान दूसरा कोई धन नहीं समझता। गौओंके नाम और गुणोंका कीर्तन करना-सुनना, गौओंका दान देना और उनका दर्शन करना—इनकी शास्त्रोंमें

बड़ी प्रशंसा की गयी है। ये सब कार्य सम्पूर्ण पापोंको दूर करके परमकल्याण देनेवाले हैं। गौएँ लक्ष्मीकी जड़ हैं, उनमें पापका लेश भी नहीं है; गौएँ ही मनुष्यको अन्न और देवताओं-को हविष्य देनेवाली हैं। स्वाहा और वषट्कार सदा गौओंमें ही प्रतिष्ठित होते हैं। गौएँ ही यज्ञका संचालन करनेवाली और उसका मुख हैं। वे विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती और दुहनेपर अमृत ही देती हैं। वे अमृतका आधार होती हैं। और सारा संसार उनके सामने मस्तक झुकाता है। इस पृथ्वीपर गौएँ अपने तेज और शरीरमें अग्निके समान हैं। वे महान् तेजकी राशि और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं। गौओंका समुदाय जहाँ निर्भयतापूर्वक बैठकर साँस लेता है, उस स्थानकी श्री बढ़ जाती है और वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, वे स्वर्गमें भी पूजी जाती हैं। गौएँ समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं, उनसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है। राजन्! यह मैंने गौ-का माहात्म्य बतलाया है, इसमें उनके गुणोंके एक अंशका दिग्दर्शन कराया गया है। गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता।'*

ब्रह्माजी भी इन्द्रसे कहते हैं—

'गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञरूप बतलाया गया है। इनके बिना यज्ञ किसी तरह नहीं हो सकता। ये अपने दूध और घीसे प्रजाका पालन-पोषण करती हैं तथा इनके पुत्र (बैल) खेतीके काम आते और तरह-तरहके अन्न एवं बीज पैदा करते हैं, जिनसे यज्ञ सम्पन्न होते और हव्य-कव्य-का भी काम चलता है; इन्हींसे दूध, दही और घी प्राप्त होते हैं। ये गौएँ बड़ी पवित्र होती हैं और बैल भूख-प्यासका कष्ट सहकर अनेक प्रकारके बोझ ढोते रहते हैं। इस प्रकार गोजाति अपने कर्मसे ऋषियों तथा प्रजाओंका पालन करती रहती है। उसके व्यवहारमें शठता या माया नहीं होती, वह सदा पवित्र कर्ममें लगी रहती है।'†

इस प्रकार सभी दृष्टियोंसे गाय हमारे लिये बड़े ही आदर और प्रेमकी वस्तु है, हमें सब प्रकारसे उसकी रक्षा एवं उन्नतिके लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये।

हरिः ॐ तत्सत्।

* गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत ॥
कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव । गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम् ॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते ।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ । गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम् ॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च । अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः ॥
तेजसा वपुषा चैव गावो वह्निसमा भुवि । गावो हि सुमहत्तेजः प्राणिनां च सुखप्रदाः ॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम् । विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति ॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः । गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम् ॥
इत्येतत् गोषु मे प्रोक्तं माहात्म्यं भरतर्षभ । गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु ॥
(अनुशासन० ५१ । २६—३४)

† यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव । एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथंचन ॥
धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा । एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते ॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च । ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः ॥
पयो दधि घृतं चैव पुण्याश्चैताः सुराधिप । वहन्ति विविधान् भारान् क्षुत्तृष्णापरिपीडिताः ॥
मुनींश्च धारयन्तीह प्रजाश्चैवापि कर्मणा । वासवाकूटवाहिन्यः कर्मणा सुकृतेन च ॥
(अनुशासन० ८३ । १७—२१)

वेदोंमें गो-महिमा

(लेखक—पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर)

गो-जीवन श्रीश्रीचौंडेजी महाराजके उद्योगसे रचे जानेवाले महान् ग्रन्थ 'गोज्ञानकोष'के तीन विभाग होंगे—

(१) वैदिक विभाग, (२) मध्ययुगीन विभाग, और (३) अर्वाचीन विभाग।

प्रथम वैदिक विभागके दो भाग होंगे। एकमें वेदोंमें जो गो-विषयक ज्ञान है, वह संगृहीत होगा। दूसरे भागमें स्मृति और पुराणोंमें जो इस विषयका ज्ञान है, वह प्रकाशित होगा।

इस प्रथम विभागमें आनेवाले वेदके नाना विषयोंमेंसे चुनकर थोड़े-से विषय यहाँ दिये जाते हैं।

सभी लोग जानते हैं कि वेद यज्ञके लिये प्रकट हुए हैं। अतः यज्ञका वर्णन करते-करते वेदमन्त्रोंमें गौके सम्बन्धका जो-जो ज्ञान आया है, उसे संगृहीत करना आवश्यक है। चारों वेदोंमें मिलाकर गो-देवतापरक स्वतन्त्र दस-बारह सूक्त हैं; इनके अतिरिक्त अन्यान्य देवताओंके सूक्तोंमें भी सहस्रों मन्त्र ऐसे हैं, जिनमें गो-विषयक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण वर्णन है। यह सब वर्णन इस वैदिक विभागमें संगृहीत है और वही संक्षेपसे इस लेखमें भी दिया गया है।*

इस लेखमें वर्णित विषयोंमें सर्वप्रथम विषय है—'गायका वध न कर।' इसमें ऐसे अनेकों वचन आये हैं, जिनमें गौकी अवध्यता सिद्ध होती है। सबसे विशेष बात तो यह है कि वेदोंमें गौका नाम ही 'अघ्न्या' है, जिसका अर्थ है—अवध्य। इसके आगे एक मन्त्रद्वारा 'मूढ़ोंके यज्ञ'का उल्लेख किया गया है। इस मन्त्रमें स्पष्टरूपसे यह बताया गया है कि मूढ़ोंके यज्ञमें ही गो-वध होता है। अर्थात् जो मूढ़ नहीं हैं, वे यज्ञमें गो-मांसका हवन कदापि नहीं करेंगे।

जिनके मनमें यह शङ्का है कि वैदिक यज्ञोंमें गो-वध होता था, उन्हें इस मन्त्रका विशेषरूपसे मनन करना चाहिये। आगे गौका विश्वरूप बताया गया है। इसमें पृथ्वीसे लेकर द्युलोकपर्यन्त जितने पदार्थ हैं, उनकी 'गौ' संज्ञा बतायी गयी है। सम्पूर्ण विश्व गो-रूप ही है। गौका वैदिक कालमें इतना माहात्म्य सिद्ध हो चुका था।

आगे बताया गया है कि तपसे और यज्ञसे साधककी उन्नति होती है। अन्तमें वह 'गो-रूप' बनता है। स्वर्गसे यह स्थान बहुत ऊँचा है, इस विषयमें ताण्ड्य-महाब्राह्मणका वचन देखना चाहिये।

इसके आगे यूरोपकी सभी भाषाओंमें 'गो' शब्दका समावेश है और किस भाषामें वह किस रूपमें है—यह बताया गया है। इससे 'गो' शब्दने सभी भाषाओंके पहनाव पहने हैं, यह सिद्ध होता है। आगे वेदकी 'कृत-तद्धित-प्रक्रिया' का महत्त्वपूर्ण विषय है। वैदिक भाषाके विलक्षण प्रयोग हैं और उनको यथावत् जानना चाहिये, यह बात इससे सिद्ध होती है। सरल शब्दार्थ भिन्न दीखता है और उसका वास्तविक अर्थ कुछ और ही होता है।

आगे क्रमशः अनेक विषय संक्षेपसे दिये गये हैं, उनका विवरण विषय-सूचीसे समझमें आ जायगा।

विषय-सूची

* 'गोज्ञानकोष'के लिये जो बड़ा लेख लिखा गया था, यह उसीका संक्षेप है। पूरा लेख 'गोज्ञानकोष'में प्रकाशित होगा।

—सम्पादक

'गो' शब्दके अन्यान्य भाषाओंमें प्रयोग ।
(२) वेदकी लुप्त-तद्धित-प्रक्रिया ।
(३) कल्याण करनेवाली गौ ।
दस धेनुओंसे इन्द्रको मोल लेना ।
गाय सम्पत्तिका घर है ।
साठ हजार गायोंके झुंडरूप धन ।
दहीके घड़े घरमें हों ।
घीसे भरा घड़ा लाओ और अतिथिको घी परोसो ।
हृदयरोग और पाण्डुरोगको गौके दूधसे दूर करो ।
(४) वशा गौ ।
गौका दान कौन ले ?
गौका महोत्सव ।
वसु, रुद्र एवं आदित्य गौका दूध पीते हैं ।
गौका दान ।
गौको कष्ट देना उचित नहीं है ।
क्या वशा गौ वन्ध्या है ?
किस गौका दान हो ?
गौका दान न करनेसे हानि ।
ब्राह्मणकी गौ ।
(५) गौको दुधारू बनाना ।
वन्ध्या गौको बच्चा देनेवाली बनाना ।
(६) गौका दान ।
गौओंका दाता इन्द्र ।
२० से लेकर ६०००० तक गायोंका दान ।
गायोंके झुंडोंका दान ।
गायोंके दानकी प्रथा ।
God = गो+द (गो-दाता) ।
(७) गौके दूधके साथ सोमरस मिलाना ।
गौके दहीके साथ सोमरस मिलाना ।
सोम गौओंके पास दौड़ता है ।
सोम गौका रूप धारण करता है ।
सोमरसमें अनेक गौओंके दूधका मिश्रण ।
(८) गौ वीरोंकी माता है ।
उत्तम वीर-संतान देनेवाली गौ ।
गौको न बेचो ।
गौके हितार्थ लड़नेवाले वीरोंकी कभी निन्दा नहीं होती ।
गायें चुरानेवाला पणि और छुड़ानेवाला इन्द्र ।
गायें चुरानेवाला बल नामक असुर ।
पद-चिह्नोंसे गौओंकी खोज ।
मातृभूमिमें गौओंका निवास ।
गौएँ जौकी घास पाकर प्रसन्न होती हैं ।
(९) गोचरभूमि ।
गौओंको पर्वतपर चराना ।
गौओंको पानी पिलाना ।
गौको घास और पानी शुद्ध मिले ।
नदियोंका पानी पीनेवाली गौएँ ।
गौओंके लिये जलपानका सुन्दर स्थान ।
(१०) गौको नमस्कार ।
गौकी सेवा करो ।
किसान गाय-बैलको गायनसे सन्तुष्ट करता है ।
गौओंको सन्तुष्ट करो ।
कुशल हाथसे गौओंका दोहन हो ।
बहुत दूध देनेवाली गौ ।
सुखसे दुहनेयोग्य नित्यवत्सा धेनु ।
दिनमें तीन बार दोहन ।
उत्तरोत्तर गायका दूध बढ़े ।
गौएँ नीरोग हों ।
पर्वतपर गौओंका चरना ।
गौओंको उत्तम वायु, घास और जल मिले ।
(११) घृतका हवन—रोग-जन्तुओंका नाश ।
तीन वर्षोंतक गायके घीका हवन ।
घीमें डुबोयी हुई लाजाओंका हवन ।
घीमें भिगोये हवनीय द्रव्य ।
(१२) अमृतके समान दूध देनेवाली गाय ।
भूमि और ओषधियोंका रस ही दूध है ।
गोस्वामी, ग्वाले और गौओंका परस्पर प्रेम ।
गौके दूधका भरपूर उपयोग करो ।
साँड़के वीर्यका प्रभाव ।
दूधसे बढ़ो ।
गौ प्रेमका प्रतीक है ।
गौओंका सामर्थ्य स्वराज्यके अनुकूल है ।
घीका काजल स्त्रियाँ आँखोंमें आँजती हैं ।
गायका दूध दुष्ट न पीये ।

उपर्युक्त विषयोंमेंसे कुछ विषयोंपर वैदिक मन्त्र अर्थ-सहित नीचे दिये जाते हैं—

गायका वध न करु

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय
मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥

(ऋग्वेद ८ । १०१ । १५)

गौ शत्रुओंको रुलानेवाले वीर मरुतोंकी माता, वसुओंकी कन्या, अदितिके पुत्रोंकी बहिन और अमृतका तो मानो केन्द्र ही है । इसलिये मैं विवेकी मनुष्योंसे घोषणापूर्वक कहता हूँ कि निरपराध तथा अवध्य गौका वध न करो ।

गो-माताओंकी सेवा

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमूतये
मारुतं शर्धो अदितिं हवामहे ।
रथं न दुर्गाद् वसवः सुदानवो
विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन ॥

(ऋग्वेद १ । १०६ । १)

अपनी रक्षाके लिये हम इन्द्र, मित्र, वरुण एवं अग्निको, मरुतोंके बलको और अवध्य गौको बुलाते हैं; बुरे मार्गसे लोग जिस प्रकार रथको सुरक्षित रखते हैं, उसी प्रकार अच्छे दानी और सुखपूर्वक बसानेवाले ये सभी देवतागण हमें सब प्रकारके पापोंसे सुरक्षित रखें ।

इस मन्त्रमें अन्य देवताओंके साथ गौकी भी देवतारूपसे प्रार्थना की गयी है ।

गोवध-कर्ताको वध-दण्ड

(१) यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम् ।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा ॥

(अथर्व० १ । १६ । ४)

यदि तू हमारी गौ, घोड़े तथा पुरुषकी हत्या करता है तो हम सीसेकी गोलीसे तुझे बींध देंगे, जिससे तू हमारे वीरोंका वध न कर सके ।

(२) क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं भिक्षमाण उपतिष्ठति तम् ।

(काण्व० ३४ । १८)

जो गाय काटनेवालेके पास भीख माँगनेके लिये उपस्थित होता है, उसे भूखके अर्पण करो अर्थात् भूखों मरने दो। दूसरे शब्दोंमें गोवध करनेवालेसे जो भीख माँगता है, वह भी भूखों मरे । भीख माँगनेवाला भी गोघातकके घर भीख माँगने न जाय, भले ही वह भूखों मर जाय । गोवध-कर्ताके ऊपर वैदिक कालमें इतना कड़ा सामाजिक दण्ड रक्खा गया था ।

गायको लात मारना दण्डनीय है

यश्च गां पदा स्फुरति प्रत्यङ् सूर्यं च मेहति ।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां करवोऽपरम् ॥

(अथर्व० १३ । १ । ५६)

जो गायको पैरसे ठुकराता है तथा सूर्यके सम्मुख मूत्रोत्सर्ग करता है, उस पुरुषको मैं जड़मूलसे काट गिराता हूँ । उसके पश्चात् तू अपनी छाया यहाँ नहीं करेगा ।

अघ्न्या गौ

वैदिक वाङ्मयमें १३७ बार 'अघ्न्या' पदका प्रयोग हुआ है । तैत्तिरीयोंके पाठमें 'अघ्नियाः' पद है । यह केवल बोलनेका ढंग है । अर्थकी दृष्टिसे दोनों पदोंका भाव एक ही है । जब गौका नाम ही 'अघ्न्या' है, तब गौका वध सर्वथा निषिद्ध है—यह बात वैदिक वाङ्मयसे निश्चित होती है ।

मूढ़ोंका यज्ञ

मुग्धा देवा उत शुनायजन्तोत गोरङ्गैः पुरुधायजन्त ।
य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्रणो वोचस्तमिहेह ब्रवः ॥

(अथर्व० ७ । ५ । ५)

मूढ़ याजक कुत्तेके मांससे यजन करते हैं तथा गौके अवयवोंसे भी यजन करते हैं ।·····················

इस मन्त्रके द्वारा गो-मांसका हवन करनेवालोंको मूढ—अज्ञानी बताया गया है ।

गौका विश्वरूप

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः ।
विश्वेदेवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥

(ऋग्वेद १ । ८९ । १०)

अदिति ही द्युलोक है, अदिति ही अन्तरिक्ष है, अदिति ही माता है, अदिति ही पिता है, अदिति ही पुत्र है, अदिति

---

* 'अदिति' पदके दो अर्थ हैं—(१) 'दिति'का अर्थ है टुकड़े-टुकड़े करना, काटना; अतः 'अदिति' वह है, जो टुकड़े करने योग्य अर्थात् हिंसनीय न हो । 'अदिति'का दूसरा अर्थ (अदनात् अदितिः) है—भक्षण करनेयोग्य दूध, दही, मक्खन, घी आदि देनेवाली तथा बैलको जन्म देकर उसके द्वारा कृषिसे धान्य आदि उत्पन्न करानेवाली । ये दोनों ही अर्थ यहाँ लिये जा सकते हैं ।

ही सारे देवता हैं,……'अदिति ही अतीतकालीन वस्तुसमूह है और भविष्यमें होनेवाला सब कुछ भी अदिति ही है।

गौकी जातियाँ

त्रीणि वै वशाजातानि विलिप्ती सूतवशा वशा।
ताः प्र यच्छेद् ब्रह्मभ्यः सोऽनाव्रस्कः प्रजापतौ॥

(अथर्व० १२। ४। ४७)

गौओंकी तीन जातियाँ हैं—(१) विलिप्ती (जिसका शरीर ऐसा चिकना रहता है मानो उसे घी लगाया गया हो), (२) सूतवशा (सेवकके सामने रहनेपर ही जो वशमें रहती है) और (३) वशा (जो सबके वशमें रहती है)।

ये तीनों प्रकारकी गायें ब्राह्मणको देनेयोग्य हैं।

इसी (अथर्व० १२। ४) सूक्तमें गौके तीन नाम और आये हैं। वे इस प्रकार हैं—

(४) अ-वशा=जो कभी वशमें नहीं रहती, सदा उछल-कूद मचाती रहती है, न किसीको दूध निकालने देती है (अ० १२। ४। ४२)।

(५) भीमा, भीमतमा=जो देखनेमें तथा बर्तावमें भी भयानक हो (अ० १२। ४। ४१, ४८)।

(६) वशानां वशतमा=सीधी गायोंमें भी सबसे सीधी। यह गौ बहुत दूध देती है, दिनमें अनेक बार दूध देती है (अ० १२। ४। ४२)। कामधेनु भी इसीका नाम है; जो इच्छानुसार दूध दे, वही कामधेनु है। इनमें (४) और (५) दानके अयोग्य हैं और शेष दानके योग्य हैं।

'गो'का यौगिक अर्थ

'गच्छति इति गौः'=जो चलती है, गतिशील है, वही गौ है। सम्पूर्ण विश्व गतिशील है, इसीलिये संसारको संसारचक्र कहते हैं। इस अर्थमें सम्पूर्ण विश्व ही गौ है। इस प्रकार ऊपरके मन्त्रोंमें जो गौकी विश्वरूपता बतायी गयी थी, वही इस यौगिक अर्थमें भी सिद्ध होती है। अब विश्वके अन्तर्गत पदार्थोंका वाचक 'गो' शब्द है, इस विषयमें कुछ प्रमाण दिये जाते हैं।

निघण्टु नामक वैदिक कोषमें स्वर्ग, द्युलोक तथा आदित्यके जो ६ नाम दिये हैं, उनमें एक 'गौः' भी है—

स्वः। पृश्निः। नाकः। गौः। विष्टप्। नभः।

ये छः पद द्युलोकके तथा सूर्यके वाचक हैं। इस प्रकार 'गो'का अर्थ स्वर्गलोक, द्युलोक और सूर्य हुआ।

सूर्यकी किरणें तथा अन्य सभी प्रकाशोंकी किरणें भी गो-पदवाच्य हैं। निघण्टु १। ५ में किरण-वाचक पंद्रह शब्द दिये हैं, जिनमें 'गो' भी है। इस प्रकार गौका अर्थ किरण भी होता है। प्रकाशकी किरणें सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त हैं, इसलिये भी गौ सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त है—ऐसा कहा जा सकता है। इसी प्रकार नक्षत्रोंका नाम भी गौ है, क्योंकि उनमें गति है और उनकी किरणें भी चारों ओर फैलती हैं। इस तरह 'गो' शब्द द्युलोक एवं उसके अन्तर्गत सम्पूर्ण पदार्थोंका वाचक है।

अन्तरिक्षलोकवाची गौ

अन्तरिक्षलोकका नाम भी गौ है। (ऋग्वेद १। ८९। १०) तथा अन्तरिक्षलोकमें रहनेवाले पदार्थोंको भी 'गो' कहते हैं।

'गो (चन्द्रमा)ऽपि गौरुच्यते। सुषुम्नः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः'। (निरुक्त २। ५। ६; ४। ४। २४)। चन्द्रमाका नाम गौ है। 'सर्वेऽपि रश्मयो गाव उच्यन्ते' (निरुक्त २। १। ७)—सब प्रकारकी किरणें 'गो' शब्दसे बोधित होती हैं। चन्द्रमाकी किरणोंको भी 'गौ' कहते हैं। बिजली भी गो-पदसे बोधित होती है।

भूलोकवाची गौ

निघण्टु १। १ में प्रारम्भमें ही पृथ्वीवाचक २१ वैदिक नाम दिये हैं, इनमें एक 'गो' भी है। पृथ्वीवाचक 'गो' शब्द प्रसिद्ध ही है—

'गौरिति पृथिव्या नामधेयं यदस्यां भूतानि गच्छन्ति।'

(निरुक्त २। १। १)

अर्थात् 'गो' शब्द पृथ्वीका वाचक है, क्योंकि पृथ्वी स्वयं गतियुक्त है और सब प्राणी इस पृथ्वीपर चलते हैं। इस कारण भूमिको 'गो' कहते हैं। इन्द्रियोंका नाम भी 'गो' है। शरीरके बाल भी 'गो' कहे जाते हैं। वाणी, शब्द, वाक्य एवं वक्तृत्व भी 'गो' पदसे बोधित होते हैं (निघण्टु १। ११)। हीरा, रत्न, सुवर्ण आदि खनिज पदार्थोंको भी 'गो' कहते हैं, क्योंकि वे 'गो' नामक पृथ्वीसे ही उत्पन्न होते हैं। इसी तरह भूमिसे उत्पन्न होनेके कारण धान्य, वृक्ष, वनस्पति आदि भी 'गो' कहे जाते हैं। दिशासूचक यन्त्र भी इसी सम्बन्धसे 'गो' कहा जाता है। जिस तरह 'गो'से उत्पन्न दूध, दही, छाछ, मक्खन आदि

सभी पदार्थ 'गो' ही कहे जाते हैं, उसी तरह भूमिरूपी गौमें उत्पन्न सभी पदार्थ भी 'गो' कहलाते हैं।

निघण्टु ३। १६ में कवि, स्तोता, गायक आदिके तेरह नाम दिये हैं। इनमें 'गो' भी एक है। भूमिसे उत्पन्न होनेके कारण सोम, ऋषभ, ओषधि, रोहिणी, चण्डिका—ये सब वनस्पतियाँ भी 'गो' नामसे पुकारी गयी हैं। 'गोपीथ' का अर्थ सोमरस-पान है (ऋग्वेद १। १९। १)। 'गो' शब्दसे महापद्म संख्याका भी बोध होता है। इस विषयमें ताण्ड्य-महाब्राह्मणका वचन (अ० १७, खण्ड १४, व० २) देखिये।

'गो' शब्दके अन्यान्य भाषाओंमें रूप

(१) प्राचीन इँग्लिश (Anglo-Saxon) Cu कू
(२) प्राचीन फ्रीजियन Ku कू
(३) प्राचीन सैक्सन Co को
(४) मध्यकालीन डच Koe कोए
(५) डच Koe कोए
(६) निम्न जर्मन Ko को
(७) प्राचीन उच्च जर्मन Chuo चूओ, कुओ
(८) मध्यकालीन उच्च जर्मन Kuo कुओ
(९) जर्मन Kuh कुः
(१०) आइसलैंडियन Kyr क्यर (द्वितीया कु)
(११) स्वेडिश Ko को
(१२) डैनिश Koe को
(१३) मूलट्युटॅनिक Kowz, Koz, काउज़, कोज़
(१४) आर्यन Gwous गौः (द्वि० Gwom गाम्)
(१५) संस्कृत गौः, गां, गो
(१६) जर्मन Bous, Bof, Bo बौस्, बोफ, बो

उपर्युक्त तालिकासे स्पष्ट हो जाता है कि 'गो' शब्द ही संस्कृत अथवा वैदिक भाषासे अन्यान्य भाषाओंमें गया और उन लोगोंके भ्रष्ट उच्चारण तथा लिपिकी अशुद्धताके कारण उसके ये बिगड़े रूप अब भी उन भाषाओंमें मिलते हैं।

वेदकी लुप्त-तद्धित-प्रक्रिया

वेदोंमें तद्धित प्रत्ययके न होनेपर भी तद्धित प्रत्ययका अर्थ केवल मूल पदसे व्यक्त होता है। इसका अनुसन्धान न रहनेसे अर्थका अनर्थ प्रतीत होने लगता है। इसलिये इस प्रक्रियाका विचार करना यहाँ आवश्यक है। प्रथमतः तद्धित प्रत्ययका स्वरूप देखिये—

गो=गाय (मूल शब्द)
गव्य (तद्धित प्रत्ययसे बना शब्द)
=गायसे उत्पन्न होनेवाले पदार्थ

—जैसे दूध, दही, छाछ, मक्खन, घी, गोबर, गोमूत्र, गोचर्म आदि।

परन्तु वेदोंमें केवल 'गो' शब्दसे ही गव्यका अर्थ व्यक्त होता है, इसलिये वेदोंमें 'गो' शब्दका प्रयोग गव्य पदार्थोंके अर्थमें भी होता है। केवल 'गो' शब्दका ही क्यों—अन्य सभी शब्दोंका इस प्रकार लाक्षणिक अर्थमें प्रयोग होता है। इस विषयमें निरुक्तकार श्रीयास्काचार्य कहते हैं—

'अथाप्यस्यां तद्धितेन कृत्स्नवन्निगमा भवन्ति।'

यथा—

'गोभिः श्रीणीत मत्सरम्।' (ऋग्वेद ९। ४६। ४)

'गो-दुग्धके साथ (गोभिः) मत्सरनामक सोमरसको पकाये।'

वृक्षे वृक्षे नियता मीमयद् गौस्ततो वयः प्र पतान् पूरुषादः।
(ऋग्वेद १०। २७। २२)

'प्रत्येक धनुषपर तनी हुई डोरी (गौः) रहती है, जो शब्द करती है। उससे मानवोंके जीवनको खानेवाले पङ्ख लगे हुए बाण (वयः प्रपतान्) फेंके जाते हैं।'

इस मन्त्रमें लुप्त-तद्धित-प्रक्रियाके तीन उदाहरण हैं—

(१) गौः= ज्या,धनुषकी डोरी, जो गो-चर्मकी ताँतकी बनती है।

(२) वृक्ष=धनुष, जो किसी वृक्षकी लकड़ीका बनता है।

(३) वयः=पक्षीके पङ्ख।

निरुक्तकारने लुप्त-तद्धित-प्रक्रियाके इस प्रकारके और भी कई उदाहरण दिये हैं।

कल्याण करनेवाली गौएँ

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः॥
(ऋग्वेद ६। २८। १; अथर्व० ४। २१। १)

गौएँ आ गयी हैं और उन्होंने हमारा कल्याण किया है। वे गौएँ गोशालाओंमें बैठें तथा हमें सुख दें; यहाँ उत्तम

बच्चोंसे युक्त एवं अनेक रूपवाली हों। वे इन्द्रके लिये उषःकालके पूर्व दूध देनेवाली बनें।'

उपर्युक्त मन्त्रसे सिद्ध होता है कि गौएँ मनुष्योंका सब प्रकारसे कल्याण करती हैं।

दहीके घड़े घरमें हों

एमां कुमारस्तरुण आ वत्सो जगता सह।
एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः॥
(अथर्व० ३। १२। ७)

'इस घरके समीप बालक आवे, युवक आवे, चलनेवालोंके साथ बछड़ा भी आवे। इसके पास मीठे रससे भरा घड़ा दहीके घड़ोंके साथ आ जाय।'

उपर्युक्त मन्त्रसे सिद्ध होता है कि वैदिककालीन गृहस्थोंके यहाँ इतना दूध-दही होता था कि वह बड़े-बड़े मटकोंमें भरकर रक्खा जाता था।

घीसे भरा घड़ा लाओ और उसीसे घी परोसो

पूर्णं नारि प्र भर कुम्भमेतं घृतस्य धाराममृतेन सम्भृताम्।
इमां पातॄनमृतेना समङ्ग्धीष्टापूर्तमभि रक्षात्येनाम्॥
(अथर्व ०३। १२। ८)

'हे ललने! इस भरे हुए घड़ेको और अमृतसे पूर्ण घीकी धाराको अच्छी तरह भरकर ला और पीनेवालोंको अमृतसे अच्छी प्रकार भर दे। यज्ञ तथा अन्नदान इस घरकी रक्षा करते हैं।'

ऊपरके मन्त्रमें घीको घड़ोंसे परोसनेका वर्णन है। इससे उस समय घीकी प्रचुरता सिद्ध होती है।

हृदयरोग और पाण्डुरोग लाल रंगकी गौके दूधसे दूर करो

अनु सूर्यमुदयतां हृद्द्योतो हरिमा च ते।
गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परि दध्मसि॥
(अथर्व० १। २२। १)

'सूर्योदयके होते ही तेरा हृदयदाही रोग और पाण्डुरोग दूर हो जायँ; लाल वर्णकी गौके रंगसे तुझे हम घेरे रखते हैं।'

उपर्युक्त मन्त्रसे यह सिद्ध होता है कि लाल रंगकी धेनुके दूध, दही और घी आदिके सेवनसे हृद्रोग तथा पाण्डुरोग दूर होते हैं।

वशा गौ

शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः।
ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधा॥
(अथर्व० १०। १०। ५)

'इस गौके पीछे सौ ग्वाले, सौ दुहनेवाले तथा सौ मनुष्य दुग्ध-पात्र लिये खड़े हैं। जो देवता गौके द्वारा जीवन धारण करते हैं, उनमेंसे प्रत्येक इस वशा गौको जानता है।'

वैदिक कालमें बड़े-बड़े गो-महोत्सव होते थे, जिनमें श्रेष्ठ गौके पीछे सौ ग्वाले, सौ दुहनेवाले एवं सौ मनुष्य दुग्धपात्र लिये चलते थे। प्रचुर दूध देनेवाली गौओंका उस समय इस रूपमें सम्मान होता था।

उपर्युक्त मन्त्रसे यह सिद्ध होता है कि वशा गौका अर्थ वन्ध्या गौ नहीं है। यदि 'वशा'का प्रयोग वन्ध्याके अर्थमें होता तो उसके साथ सौ दुहनेवालोंके चलनेका कोई अर्थ न होता।

वशाया दुग्धं पीत्वा साध्या वसवश्च ये।
ते वै ब्रध्नस्य विष्टपि पयो अस्या उपासते॥
(अथर्व० १०। १०। ३१)

'जो साध्य और वसु नामके देवता हैं, वे वशा गौका दूध पीकर स्वर्गधामके परमोच्च स्थानमें उसके दूधकी पूजा करते हैं। गौके दूधकी स्वर्गमें भी प्रतिष्ठा होती है। स्वर्गधाममें सब देवता बैठकर जब बातें करते हैं, तब वे गौके दूधका ही वर्णन करते हैं।'

इस मन्त्रमें भी वशाका अर्थ दुधारू गाय ही होता है, वन्ध्या नहीं।

ब्राह्मणेभ्यो वशां दत्त्वा सर्वाँल्लोकान्त्समश्नुते।
ऋतं ह्यस्यामार्पितमपि ब्रह्माऽथो तपः॥
(अथर्व० १०। १०। ३३)

'ब्रह्मज्ञानियोंको वशा गाय देनेसे सम्पूर्ण श्रेष्ठ लोकोंकी प्राप्ति होती है; क्योंकि सत्य, यज्ञ, ज्ञान, वेद और तप—ये सब इस गौमें रहते हैं अर्थात् इस गौके दानसे दाताको इन सबकी प्राप्ति होती है।'

वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवद् यावत् सूर्यो विपश्यति॥
(अथर्व० १०। १०। ३४)

'वशा गौके आश्रयसे देव और मानव भी उदर-पोषण

करते हैं। जहाँतक सूर्य प्रकाशित होता है, वहाँतकके क्षेत्रमें जो कुछ भी है, वह सब वशा गौ ही बनी है अर्थात् वशा गौके आधार ही सब कुछ चल रहा है।'

यो अस्याः कर्णावास्कुनोत्या स देवेषु वृश्चते।
लक्ष्म कुर्व इति मन्यते कनीयः कृणुते स्वम्॥

(अथर्व० १२। ४। ६)

'जो गौके दोनों कानोंको चिह्न करनेके लिये खोदता है, ऐसा समझो कि वह देवताओंके शरीरको ही खोदता है। जो चिह्न करनेके विचारसे ऐसा करता है, वह अपने धनको क्षीण करता है।'

इससे यह सिद्ध होता है कि जिससे गौको कष्ट हो, ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिये। गौको सर्वदा आनन्दमग्न और प्रसन्न रखना चाहिये।

यदस्या गोपतौ सत्या लोम ध्वाङ्क्षो अजीहिडत्।
ततः कुमारा म्रियन्ते यक्ष्मो विन्दत्यनामनात्॥

(अथर्व० १२। ४। ८)

'जब इस गौके ग्वालेके साथ रहते हुए कौआ उसके रोओंको नोंचता है, तो उसकी इस बेपरवाहीके कारण उसके लड़के मर जाते हैं और उसे क्षयरोग घेर लेता है।'

ऊपरके मन्त्रसे स्पष्ट है कि गौका पालन बड़ी दक्षतासे करना चाहिये। गौको किसी तरहका भी कष्ट न पहुँचे, इसका ध्यान गोपालको सदा रखना चाहिये।

यदस्याः पल्पूलनं शकृद् दासी समस्यति।
ततोऽपरूपं जायते तस्मादव्येष्यदेनसः॥

(अथर्व० १२। ४। ९)

'जब दासी इस गौके मूत्र और गोबरको बेपरवाहीसे इधर-उधर बिखेर देती है तो इसके दण्डरूपमें उसे विरूप सन्तान उत्पन्न होती है; क्योंकि उस पापसे छुटकारा नहीं है।'

वैदिक कालसे ही गोबर और गोमूत्र इतने पवित्र और उपयोगी माने जाते हैं कि उन्हें बेपरवाहीसे फेंक देना—उचित काममें न लेना पाप माना गया है।

किस गौका दान नहीं करना चाहिये ?

जो गौ बहुत दूध न देती हो, वृद्ध हो गयी हो अथवा कष्ट देनेवाली हो, ऐसी गौका दान नहीं देना चाहिये।

(अथर्व० १२। ४। ३)

बिना सींगकी बूढ़ी गायको दानमें देनेसे दाताके सम्पूर्ण भोग नष्ट हो जाते हैं। लँगड़ी-लूली गौका दान करनेसे दाताका अधःपतन होता है।

अत्यन्त कृश गौका दान देनेसे घर-बार नष्ट होते हैं तथा कानी गौका दान देनेसे बड़ी हानि होती है। कठोपनिषद्में भी कहा है—

पीतोदका जग्धतृणा दुग्धदोहा निरिन्द्रियाः।
अनन्दा नाम ते लोकास्तान् स गच्छति ता ददत्॥

(१। १। ३)

'जो गौएँ पानी नहीं पी सकतीं, घास नहीं चबा सकतीं, जिनकी इन्द्रियाँ क्षीण हो गयी हैं (जो दूध नहीं देतीं)—ऐसी गौका दान करनेवाला सुखहीन लोकोंको प्राप्त करता है।'

गोदानकी वेदोंमें बड़ी महिमा गायी गयी है और दान न करनेसे हानि बतायी गयी है।

ब्राह्मणकी गौ

ब्राह्मणकी गौके विषयमें अथर्ववेदके कुछ सूक्तोंमें ऐसे वचन मिलते हैं, जो संदेह उत्पन्न करनेवाले हैं। अतः उनके सम्बन्धमें विशेष विचार करना आवश्यक है। उन वचनोंमें गौको काटने, पकाने और खानेका भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

उदाहरणके लिये—

हे नृपते देवास्तुभ्यमेताम् अत्तवे न अददुः।
हे राजन्य ब्राह्मणस्य गां मा जिघित्सः॥

(अथर्व० ५। १८। १)

हे राजन्! देवताओंने तुम्हें ये गायें खानेको नहीं दी हैं। हे क्षत्रियशिरोमणे! ब्राह्मणकी गौको खा जानेकी इच्छा न करो।'

वेदोंमें केवल गौके ही सम्बन्धमें नहीं ब्राह्मणोंके सम्बन्धमें भी ऐसे वचन मिलते हैं, जिनसे भाव न समझनेपर सहज ही यह अनुमान किया जा सकता है कि क्षत्रियलोग ब्राह्मणोंको ही काटकर उनका मांस पकाकर खा जाते थे।

उदाहरणके लिये देखिये—

'यो ब्राह्मणमन्नं मन्यते' (५। १८। ४)

'जो ब्राह्मणको खानेयोग्य मानता है।'

परन्तु ऐसा अनुमान करना सर्वथा असंगत है, अतः यहाँ आलङ्कारिक भाव स्वीकार करना चाहिये। ब्राह्मणको लूटकर

उसके धनका उपभोग अन्यायी क्षत्रिय सहज ही कर सकता है; यही ब्राह्मणको खा जाना है ।

'ब्राह्मणं हिनस्ति', ब्राह्मणं जिघित्सति' आदि प्रयोग भी इसी अर्थके द्योतक हैं । क्षत्रियके लिये यह कदापि उचित नहीं कि वह ब्राह्मणको लूटे और उसके धनका स्वयं उपभोग करे ।

राजा विश्वामित्रने वसिष्ठका आश्रम लूटनेका प्रयत्न किया था । कार्तवीर्यने जमदग्निका आश्रम लूटा था । इसी तरह अन्यान्य राजाओंने भी किया था । यही ब्राह्मणोंकी हिंसा है । ब्राह्मणोंके आश्रम बड़े समृद्ध—धन-धान्यैश्वर्यपूर्ण होते थे । इसलिये उन्मत्त क्षत्रिय उन आश्रमोंको लूट लिया करते थे और उस धनका उपभोग स्वयं करते थे । परन्तु ऐसा करनेवाले क्षत्रियोंका नाश होता था ।

अथर्ववेदमें आता है—

'ब्राह्मणस्य गौरनाद्या'　　(५ । १८ । ३)

'ब्राह्मणकी गौ भक्षणके अयोग्य है ।'

यहाँ यह प्रश्न होता है कि गोमात्रकी अवध्यता 'अघ्न्या' शब्दसे सिद्ध हो चुकी है । फिर यहाँ केवल ब्राह्मणकी गौको भक्षणके अयोग्य क्यों कहा ? इस शङ्काका उत्तर यह है कि 'अघ्न्या' शब्दसे गौके वधका निषेध होनेपर भी ब्राह्मणकी गौको पकड़कर उसका पालन करते हुए उसका दूध-दही आदि खानेका निषेध 'अघ्न्या' शब्दसे नहीं होता । इसीलिये ब्राह्मणकी गौके दूध आदिको काममें लेनेका भी निषेध 'अनाद्या' शब्दसे किया गया है । क्षत्रिय अपने बलसे ब्राह्मणकी गौको न छीनें, न उसका वध करें, न उसके दूध आदिका उपभोग करें । इस तरह क्षत्रियादि अन्य वर्णोंके लिये ब्राह्मणकी गौका किसी भी प्रकारसे उपभोग वर्जित है—यही बात उपर्युक्त वचनद्वारा कही गयी है ।

अस्तु, यहाँ 'ब्राह्मणस्य गौरनाद्या' इस वचनका तात्पर्य यही समझना चाहिये कि ब्राह्मणकी गौका कोई भी पदार्थ अन्य वर्णोंद्वारा उपभोगके योग्य नहीं होता । इस प्रकार 'गो' शब्दके साथ भक्षण आदि क्रियाओंका जहाँ-जहाँ इन सूक्तोंमें प्रयोग हुआ है, वहाँ-वहाँ भक्षण आदि क्रियाओंका कर्म गौ न मानकर गो-सम्बन्धी पदार्थोंको मानना चाहिये । वास्तवमें यही सत्य है—ऐसा भाव मान लेनेपर गौकी अवध्यता सर्वदा सुरक्षित रह जाती है और 'वदतो व्याघात' दोष भी कहीं नहीं आता । इन सब सूक्तोंमें ब्राह्मण और गौका वध करने, उसको काटने, पकाने, खाने आदिके जो-जो पद आये हैं, उन सबका प्रयोग आलङ्कारिक अर्थमें हुआ है—ऐसा जानना चाहिये । आजकल भी आलङ्कारिक भाषामें कहते हैं 'रूस जर्मनीको खा गया ।' वैसे ही इन पदोंके सम्बन्धमें भी जानना चाहिये । गौ सर्वथा अवध्य है—यह समझकर ही उन पदोंका अर्थ करना चाहिये ।

गौको दुधारू बनाना

तक्षन्नासत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथम् ।
तक्षन्धेनुं सबर्दुघाम् ॥　　(ऋग्वेद १ । २० । ३)

'देवताओंने अश्विनीकुमारोंके लिये वेगवान् तथा सुखकारक रथ तैयार किया और बहुत दूध देनेवाली गौका भी निर्माण किया ।'

ऊपर 'सबर्दुघा' अर्थात् पर्याप्त, उत्तम और पुष्टिकारक दूध देनेवाली गौको तैयार किया—इस वाक्यसे यह सिद्ध होता है कि दुधारूपन, पुष्टिकारकता आदि गुण कुछ विशेष प्रयोगोंसे बढ़ाये जा सकते हैं । 'तक्षन्' पदसे यह सूचित किया गया है कि गौमें जिन गुणोंका अभाव था, उन सभीका विशेष प्रयोगोंद्वारा निर्माण किया गया ।

वन्ध्या गौको बच्चा देनेवाली बनाना

युवं तासां दिव्यस्य प्रशासने विशां क्षयथो अमृतस्य मज्मना ।
याभिर्धेनुमस्वं पिन्वथो नरा ताभिरू षु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥
(ऋग्वेद १ । ११२ । ३)

'हे नेता अश्विनीकुमारो ! तुम दिव्य अमृतके प्रभावसे उन सब प्रजाओंके लिये उत्तम राज्य-शासन प्रस्थापित करनेको निवास करते हो; जिन शक्तियोंसे बच्चा न देनेवाली गौको भी तुम दूधसे भर देते हो, उन्हीं शक्तियोंके साथ तुम हमारे यहाँ भलीभाँति पधारो; तुम्हारा स्वागत है ।'

ऊपरके मन्त्रसे प्रकट होता है कि वन्ध्या गौको भी वैदिक कालमें अश्विनीकुमारोंकी सहायतासे दुधारू बनाया जा सकता था ।

गौओंका दान

वेदोंमें ऐसे भी मन्त्र मिलते हैं, जिनमें दससे लेकर साठ हजारतक गौओंके दानका वर्णन है । कुछ मन्त्रोंमें तो गौओंके झुंडोंके दानका भी वर्णन मिलता है, यथा—

त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान् दयन्त गोनाम् ॥
(ऋग्वेद ७ । १६ । ७)

'हे भलीभाँति हवन किये हुए अग्ने! विद्वान्‌लोग तेरे प्यारे हों; उसी प्रकार जो धनवान् दानी जनताको गायोंके विशाल झुंड देते हैं, वे भी तेरे प्रिय बनें।'

गौओंके दानकी प्रथा

गायोंके दानकी प्रथा वैदिक समयसे चली आ रही है। वैदिक कालमें गायका दान करनेवालेको कोई रोक नहीं सकता था। दानका समय आनेपर धनिकोंको आनन्द होता था। मैं गायका दान करूँगा—इस प्रकार बोलना ही शिष्ट पुरुषोंकी परिपाटी थी। मैं गायका दान नहीं करूँगा—इस प्रकार कोई नहीं बोलता था। गायका दान करनेवालेको उस कार्यसे रोकना बड़ा भारी पाप समझा जाता था।

राजा गौका दान करता है; इन्द्र, अग्नि, सोम, विश्वेदेव, भूमि आदि देवता भी गौओंका दान करते हैं। इसलिये मनुष्यको भी उचित है कि वह भी गौओंका दान करे। घरपर आये हुए अतिथिको गौका दान करना आवश्यक समझा जाता था; और नहीं तो गौका दूध उसे पीनेको अवश्य दिया जाता था। यज्ञ आदिके अन्तमें ब्राह्मणोंको दक्षिणाके रूपमें भी गौएँ दी जाती थीं।

रोगीके उपयोगके लिये भी गायका दान करनेकी प्रथा थी; जिससे वह गायका दूध पीकर रोगमुक्त हो जाय। वैदिक कालमें आशीर्वादके रूपमें भी 'तुझे उत्तम गौ प्राप्त हो,' यह कहनेकी प्रथा थी। दानमें उत्तम दुधारू तरुण गौके ही देनेका विधान है। दाताको चाहिये कि वह दानमें दी हुई गौके चरनेके लिये गोचरभूमिका भी प्रबन्ध करे। राजालोग गौओंपर कर भी इसीलिये लेते थे, जिससे वे अपने राष्ट्रमें गोधनकी अभिवृद्धि कर सकें। कीकट (मगध) देशकी गौएँ आज भी निर्बल होती हैं, इसीलिये यज्ञमें दूध देनेके कार्यमें भी उनका उपयोग नहीं होता था। ईश्वरका अंग्रेजीमें 'God' नाम मिलता है, जो गो+द (गो-दाता) का ही बिगड़ा हुआ रूप है। गौओंके साथ उत्तम बछड़ोंके दानका भी विधान पाया जाता है। जिस देशमें हजारोंकी संख्यामें गौओंके दानका उल्लेख मिलता हो, उस देशमें गोधनकी कितनी प्रचुरता थी—इसका अनुमान सहजमें ही लगाया जा सकता है।

मातृभूमिमें गौओंका निवास

यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन्।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु॥
(अथर्व० १२। १। ५)

'पुराने समयके हमारे पूर्वज जिस भूमिमें पराक्रम दिखा चुके हैं, जिस भूमिमें ऊँचे पदपर अधिष्ठित लोगोंने शत्रुओंको जीता था तथा जो गौओं, घोड़ों एवं पक्षियोंको विशेष सुखदायक स्थान देनेवाली है, वह हमारी मातृभूमि ऐश्वर्य एवं तेज प्रदान करे।'

ऊपरके मन्त्रमें भारतभूमिको गौओंके लिये विशेष सुखदायक बताया गया है। इसीलिये इस देशमें गौएँ इतनी प्रचुर संख्यामें पायी जाती थीं। प्रचुर संख्यामें ही नहीं, यहाँकी गौएँ प्रचुर मात्रामें दूध देनेवाली भी होती थीं। (अथर्व० १२। १। ९)

गोचर-भूमि

परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु।
इच्छन्तीरुरुचक्षसम्॥ (ऋग्वेद १। २५। १६)

'गौएँ जिस प्रकार गोचर-भूमिकी ओर जाती हैं, उसी प्रकार मेरी बुद्धि भी उस महान् तेजस्वी परमात्माको चाहती हुई उसीकी ओर दौड़ती है।'

यहाँ बुद्धिके ईश्वरकी ओर दौड़नेको गौओंके गोचर-भूमिकी ओर जानेकी उपमा दी गयी है।

उपमा सदा प्रसिद्ध वस्तु अथवा घटनाकी दी जाती है। अतः ऊपरके मन्त्रसे यह स्पष्ट लक्षित होता है कि गोचर-भूमि वैदिक सभ्यतामें एक प्रसिद्ध वस्तु थी।

गौओंको पर्वतपर चराना

इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यं रोहयद्दिवि।
वि गोभिरद्रिमैरयत्॥ (ऋग्वेद १। ७। ३)

'इन्द्रने दूरसे प्रकाश दीख पड़े—इसलिये सूर्यको द्युलोकमें स्थापित किया और स्वयं गौओंके साथ पहाड़की ओर विशेषरूपसे प्रस्थान किया।

इस मन्त्रके द्वारा यह सूचना दी गयी है कि गौओंको चरनेके लिये पहाड़ोंपर भेजा जाय। पर्वत गोचर-भूमि हैं, इसीलिये पर्वतको 'गोत्र' (गायोंको त्राण देनेवाला) नाम दिया गया है। पर्वतोंपर घास और जलकी सुविधा होनेके साथ-साथ गौओंको शुद्ध वायु और व्यायाम भी प्राप्त होता है।

गायको घास और पानी शुद्ध मिले

प्रजावतीः सूयवसे रुशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः परि वो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु॥
(अथर्व० ४। २१। ७)

'उत्तम बच्चोंवाली, उत्तम जौकी घासके लिये भ्रमण करनेवाली तथा उत्तम जलाशयमें शुद्ध जल पीनेवाली गौओ! चोर और पापी तुमपर अधिकार न करें तथा चारों ओरसे रुद्रके शस्त्रसे तुम्हारी रक्षा हो।'

नदियोंका पानी पीनेवाली गौएँ

अपो देवी रुपह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः।
सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः॥ (ऋग्वेद १।२३।१८)

'हमारी गौएँ जहाँका पानी पीती हैं, उन दिव्य गुणयुक्त जलस्थानोंसे मैं प्रार्थना करता हूँ कि वे समीप आ जायँ। उन नदियोंको मैं हविर्भाग देता हूँ।'

ऊपर उन नदियोंकी स्तुति की गयी है, जहाँ वैदिक कालकी गौएँ जल पीती थीं।

गौओंके लिये जलपानकी सुन्दर व्यवस्था करनेकी प्रार्थना

महान्तं कोशमुदचा निषिञ्च स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात्।
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः॥
(ऋग्वेद ५।८३।८)

'बड़े भारी जलके भंडारको ऊपर उठाकर नीचे उँडेल दो, हमारे सामने जलसे भरी हुई छोटी-छोटी नदियाँ बहने लगें। आकाश और भूलोकको जलके द्वारा विशेषरूपसे आर्द्र कर दो, जिससे गौओंके लिये सुन्दर पीनेकी जगह बन जाय।'

ऊपरकी प्रार्थनासे यह सिद्ध होता है कि हमारे यहाँके लोगोंको गौओंके आरामकी कितनी चिन्ता रहती थी।

गौओंके लिये नमस्कार

नमस्ते जायमानायै जाताया उत ते नमः
बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः॥
यया द्यौर्यया पृथिवी ययाऽऽपो गुपिता इमाः।
वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि॥
(अथर्व० १०।१०।१, ४)

'हे अवध्य गौ! उत्पन्न होते समय तुम्हें नमस्कार और उत्पन्न होनेपर भी तुम्हें प्रणाम। तुम्हारे रूप (शरीर), रोम और खुरोंको भी प्रणाम। जिसने द्युलोक, भूमण्डल एवं इन जलोंको भी सुरक्षित रक्खा है, उस सहस्रों धाराओंसे दूध देनेवाली गौको लक्ष्यमें रख हम स्तोत्रका पाठ करते हैं।'

प्रत्येक गौ, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, अवध्य एवं वन्दनीय है तथा उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग, यहाँतक कि उसकी रोमावली तथा खुर, सींग आदि भी पवित्र एवं सेवाके योग्य हैं—यही इस मन्त्रसे सूचित होता है।

गौकी सेवा करो

अनडुद्भ्यस्त्वं प्रथमं धेनुभ्यस्त्वमरुन्धति।
अधेनवे वयसे शर्म यच्छ चतुष्पदे॥
(अथर्व० ६।५९।१)

'हे अरुन्धती ओषधि! तू बैलोंको, गौओंको तथा गौसे भिन्न पशुओं एवं पक्षियोंको पहले सुख दे।'

अरुन्धतीनामक वनस्पतिसे गौ आदि पशुओं एवं पक्षियोंको सब प्रकारका सुख मिलता है। अरुन्धती वनस्पतिके सेवनसे गौका पोषण होता है और वह बहुत दूध देने लगती है। गौकी सेवाकी भावनासे ही अरुन्धतीसे उक्त प्रार्थना की गयी है।

उत्तरोत्तर गायका दूध बढ़े

प्रथमा ह व्युवास सा धेनुरभवद् यमे।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्॥
(अथर्व० ३।१०।१)

'पहली उषाकी वेला उदयको प्राप्त हुई, तब वह नियममें रहनेवाली गौ प्रकट हुई—बाहर आयी; वह दूध देनेवाली गौ हमारे लिये उत्तरोत्तर अर्थात् आनेवाले वर्षोंमें अधिकाधिक दूध देती रहे।'

प्रत्येक प्रसूतिमें गौका दूध बढ़ता जाय—यही इस मन्त्रमें प्रार्थना की गयी है।

मया गावो गोपतिना सचध्वमयं वो गोष्ठ इह पोषयिष्णुः।
रायस्पोषेण बहुला भवन्तीर्जीवा जीवन्तीरुप वः सदेम॥
(अथर्व० ३।१४।६)

'हे गौओ! मुझ गोपालके साथ मिली रहो, यहाँ यह तुम्हारा पोषण करनेवाला बाड़ा है। शोभाकी वृद्धिके साथ संख्यामें बढ़ती हुई तथा जीवित रहनेवाली तुम्हें हम सभी जीवित रहते हुए प्राप्त करते हैं।'

गायोंको उत्तम वायु, घास और जल मिले

मयोभूर्वातो अभि वातूस्रा ऊर्जस्वतीरोषधीरा रिशन्ताम्।
पीवस्वतीर्जीवधन्याः पिबन्त्ववसाय पद्वते रुद्र मृळ॥
(ऋग्वेद १०।१६९।१)

'वायु सुखकारक होकर गायोंके समीप बहता रहे और वे बलयुक्त वनस्पतियोंका भक्षण चारों ओरसे करती रहें तथा पुष्टिकारक एवं जीवोंको धन्य करनेवाले जल-प्रवाहोंका पान करें। हे रुद्र! पैरोंसे युक्त इस गो-रूप अन्नको सुख दो।'

घीमें भिगोये हवनीय द्रव्य

यो वो देवा घृतस्नुना हव्येन प्रतिभूषति।
तं विश्व उप गच्छथ॥ (ऋग्वेद ६।५२।८)

'हे देवताओ! जो घी टपकानेवाले हविर्भागसे तुम्हारा सत्कार करता है, उसके समीप जाओ।'

त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्याँ उत।
यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम्॥
(ऋग्वेद १।४५।१)

'हे अग्ने! तू इस यज्ञमें वसु, रुद्र, आदित्य और घीसे प्लुत आहुतियाँ देनेवाले तथा उत्तम यज्ञ करनेवाले मानवका सत्कार कर।'

उपर्युक्त मन्त्रोंसे पता चलता है कि अग्निमें आहुतियाँ घीमें डुबोकर ही डाली जाती थीं।

अमृत-जैसा दूध देनेवाली गाय

पिता वत्सानां पतिरघ्न्यानामथो पिता महतां गर्गराणाम्।
वत्सो जरायु प्रतिधुक्पीयूष आमिक्षा घृतं तद्वस्य रेतः॥
(अथर्व० ९।४।४)

'बछड़ोंका पिता गौओंका पति और बड़े प्रवाहोंका पालक बछड़ा जन्मते ही प्रतिदिन अमृतका दोहन करता हुआ दही और घी देता है। वही सचमुच इसका वीर्य है।'

गौओंका पति साँड़ है; उसके वीर्यसे उत्पन्न होनेवाली गौमें दूध, दही और घीकी मात्रा न्यूनाधिक रहती है। अर्थात् इनकी मात्राका न्यूनाधिक होना सर्वथा साँड़के वीर्यपर अवलम्बित है।

गायोंमें भोजनके लिये आवश्यक दुग्ध आदि सभी पदार्थ हैं

महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः।
विश्वं स्वाद्म सम्भृतमुस्रियायां यत्सीमिन्द्रो अदधाद् भोजनाय॥
(ऋग्वेद ३।३०।१४)

'नदियोंमें बड़ा भारी तेज छिपा हुआ है, उन नदियोंके समीप ही अभी हालकी ब्यायी हुई गौ पक्व (सुमधुर) दूध धारण करती हुई घूमती है। जब इस इन्द्रने ये सारे दूध आदि सुस्वादु पदार्थ गौओंमें इकट्ठे किये, तब इसने उन्हें भोजनके लिये वहाँ रक्खा था।'

साँड़के वीर्यका प्रभाव

उपेदमुपपर्चनमासु गोषूप पृच्यताम्।
उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये॥
(ऋग्वेद ६।२८।८)

'यह पुष्टिकारक अन्न इन गौओंमें परिपूर्ण होकर रहे, हे इन्द्र! तेरे पराक्रममें तथा बैलके वीर्यमें यह सब है।'

नस्लका सुधार ही गोवंशकी उन्नतिका साधन है, हमारे ऋषि इस बातसे भलीभाँति परिचित थे।

गौ प्रेमका प्रतीक है

नीचावया अभवद् वृत्रपुत्रेन्द्रो अस्या अव वधर्जभार।
उत्तरा सूरधरः पुत्र आसीद् दानुः शये सहवत्सा न धेनुः॥
(ऋग्वेद १।३२।९)

'वृत्रकी माता वृत्रके शरीरपर गिर पड़ी, तब इन्द्रने उसके शरीरके नीचे हथियार मारा। उस समय माता ऊपर और पुत्र नीचे पड़ा था। गौ जिस प्रकार अपने बछड़ेके समीप ही रहती है, उसी प्रकार यह दानवी माता भी अपने लड़केके समीप ही पड़ी थी।'

इन्द्र और वृत्रासुरके युद्धमें वज्रके आघातसे वृत्रको बचानेके लिये वृत्रकी माताने अपने शरीरसे पुत्रको ढक दिया था; उस समय वृत्र नीचे और उसकी माता ऊपर पड़ी थी। इन्द्रने नीचेसे प्रहार किया और उसकी माताको क्षति न पहुँचाकर केवल वृत्रका वध कर डाला।

यहाँ वृत्रकी माताने पुत्रके प्रति जो प्यार दरसाया, उसे गायके बछड़ेके प्रति प्रेमकी उपमा दी गयी है।

गौके अपने बछड़ेके प्रति प्रेमको इस प्रकार आदर्श रूपमें स्वीकार किया गया है। संस्कृतमें पुत्रप्रेमके लिये 'वात्सल्य' शब्दका प्रयोग भी इसी बातको सूचित करता है।

घीका काजल स्त्रियाँ आँखोंमें आँजती हैं

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं विशन्तु।
अनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे॥
(ऋग्वेद १०।१८।७)

'ये श्रेष्ठ पत्नियाँ वैधव्य-दोषसे रहित होकर घीका काजल आँखोंमें आँजकर एकत्र बैठ जायँ। पुत्रोंको जन्म देनेवाली ये नारियाँ अश्रुहीन एवं नीरोग होकर अच्छे रत्न धारण किये यज्ञमें पहले ही बैठ जायँ।'

घीका काजल सौभाग्यवती स्त्रियाँ अब भी आँजती हैं। इसके आयुर्वेदमें बहुत गुण लिखे हैं तथा यह सौभाग्यका चिह्न भी माना जाता है। (गोज्ञानकोष प्राचीन विभाग)

गौकी स्तुति

रात हो या दिन, अच्छा समय हो या बुरा, कितना ही बड़ा भय क्यों न उपस्थित हुआ हो, यदि मनुष्य निम्नाङ्कित श्लोकोंका कीर्तन करता है तो वह सब प्रकारके भयसे मुक्त हो जाता है—

गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृङ्ग्यः पयोमुचः। सुरभ्यः सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥
गा वै पश्याम्यहं नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा। गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्॥

(महा० अनु० ७८। २३-२४)

'जैसे नदियाँ समुद्रके पास जाती हैं, उसी तरह सोनेसे मढ़े हुए सींगोंवाली, दुग्धवती, सुरभि और सौरभेयी गौएँ मेरे निकट आवें। मैं सदा गौओंका दर्शन करूँ और गौएँ मुझपर कृपादृष्टि करें। गौएँ मेरी हैं और मैं गौओंका हूँ; जहाँ गौएँ रहें, वहाँ मैं भी रहूँ।'

यया सर्वमिदं व्याप्तं जगत् स्थावरजङ्गमम्। तां धेनुं शिरसा वन्दे भूतभव्यस्य मातरम्॥

(महा० अनु० ८०। १५)

'जिस गौसे यह स्थावर-जंगम अखिल विश्व व्याप्त है, उस भूत और भविष्यकी जननी गौको मैं सिर नवाकर प्रणाम करता हूँ।'

गो-पूजन

जो मनुष्य प्रतिदिन जौ आदिके द्वारा गौकी पूजा करता है, उसके पितृगण और देवता सदा तृप्त होते हैं। जो सदाचारी पुरुष नियमपूर्वक प्रतिदिन गायोंको खिलाता है, वह सच्चे धर्मके बलसे सारे मनोरथोंको प्राप्त करता है। जो व्यक्ति गौओंके शरीरसे गंदगी, मच्छर आदिको हटा देता है, उसके पूर्वज लोग कृतार्थ होते हैं। यहाँतक कि, 'यह भाग्यवान् सन्तान हमारा उद्धार कर देगा' यह सोचकर वे उस अत्यन्त उत्सवमय कार्यके लिये आनन्दसे नाचने लगते हैं।

(पद्म० पाताल० अ० १८)

जो मनुष्य सबेरे उठकर हाथमें जलका पात्र लेकर गौओंमें जाता है, उनके सींगोंको सींचता है और फिर उस जलको अपने मस्तकपर धारण करके उस दिन उपवास करता है, उसको बहुत पुण्य होता है। तीनों लोकोंमें सिद्ध, चारण और महर्षियोंके द्वारा सेवित जितने तीर्थ हैं, गौओंके सींग-जलका अभिषेक उन सब तीर्थोंमें स्नान करनेके समान है।

(पद्म० सृष्टि० अ० ४८)

गो-पूजाका विधान

सबसे पहले—

'अद्य पूर्वोच्चरितकालविभागे तथानेकगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ मम आत्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं यथाज्ञानं यथामिलितोपचारैः गोः पूजनमहं करिष्ये।'

'आज पूर्वकर्मोंके समय उच्चारित काल-विभागमें तथा अनेक गुणगणोंसे विशिष्ट इस शुभ एवं पवित्र तिथिमें स्वयं श्रुति, स्मृति एवं पुराणोंमें वर्णित फलकी प्राप्ति करानेके लिये जैसा मुझे ज्ञान है, उसके अनुसार तथा जो कुछ पूजाकी सामग्री मुझे प्राप्त हुई है, उसीसे मैं गोमाताका पूजन करूँगा।' यह संकल्प पढ़कर कलश आदि पूजाकी सामग्रीका जलसे प्रोक्षण करे। इसके अनन्तर निम्नलिखित मन्त्रोंका उच्चारण करते हुए उन्हींके भावानुसार गो-माताका ध्यान करे—

ध्यान-मन्त्र

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥
गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश।
यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्र च॥

श्रीमती गौओंको नमस्कार। कामधेनुकी सन्तानोंको नमस्कार। ब्रह्माजीकी पुत्रियोंको नमस्कार। पावन करनेवाली गौओंको नमस्कार। गौओंके अङ्गोंमें चौदहों भुवन स्थित हैं; अतः मेरा इस लोकमें एवं परलोकमें भी कल्याण हो।

फिर नीचेके मन्त्रसे आवाहन करे—

आवाहन-मन्त्र

आगच्छ देवि कल्याणि शुभां पूजां गृहाण च।
वत्सेन सहितां त्वाहं देवीमावाहयाम्यहम्॥

हे कल्याणमयी देवी! तुम आकर मेरी शुभ पूजाको ग्रहण करो। बछड़ेके सहित देवीस्वरूपा तुम्हारा मैं आवाहन करता हूँ।

आसन-मन्त्र

नानारत्नसमायुक्तं कार्तस्वरविभूषितम्।
आसनं ते मया दत्तं गृहाण जगदम्बिके॥
श्रीरुद्ररूपिण्यै गवे नम आसनम्।

हे जगज्जननी! नाना रत्नोंसे जटित एवं स्वर्णसे विभूषित यह आसन मैं तुम्हें अर्पित करता हूँ, इसे स्वीकार करो। श्रीरुद्ररूपिणी गौको नमस्कारपूर्वक यह आसन समर्पित है।

पाद्य-मन्त्र

सौरभेयि सर्वहिते पवित्रे पापनाशिनि।
गृह्णीष्वैतन्मया दत्तं पाद्यं त्रैलोक्यवन्दिते॥

हे सर्वहितकारिणी पापनाशिनी पावनकारिणी त्रैलोक्य-वन्दित कामधेनुपुत्री! मेरेद्वारा अर्पित इस पाद्यको ग्रहण करो।

अर्घ्य-मन्त्र

सर्वदेवमये देवि सर्वतीर्थमये शुभे।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं सौरभेयि नमोऽस्तु ते॥

हे देवि! तुम सर्वदेवमयी हो—समस्त देवताओंका तुम्हारे शरीरमें निवास है। हे शुभे! तुम सर्वतीर्थमयी हो—सारे तीर्थ तुम्हारे अंदर निवास करते हैं। हे सुरभिपुत्री! मेरे दिये हुए इस अर्घ्यको स्वीकार करो। तुम्हें नमस्कार है।

आचमन-मन्त्र

देहस्थितासि रुद्राणि शङ्करस्य सदा प्रिया।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

हे रुद्राणी! तुम भगवान् शङ्करको सदा प्यारी हो तथा उनकी आधी देहमें स्थित रहती हो। वही देवी गौके रूपमें मेरे पापका नाश करे।

स्नान-मन्त्र

या लक्ष्मीः सर्वलोकेषु या च देवेष्ववस्थिता।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

जो लक्ष्मीदेवी समस्त लोकोंमें व्याप्त हैं और जिनका देवताओंमें निवास है, वही देवी गौके रूपमें मेरे पापको नष्ट करें।

इसके अनन्तर सम्भव होनेपर पञ्चामृत आदिसे स्नान कराकर 'आ गावो अग्मन्' इत्यादि सूक्तसे अथवा श्री-सूक्त या पुरुषसूक्तसे महाभिषेक करे।

वस्त्र-मन्त्र

आच्छादनं गवे दद्यां सम्यक् शुद्धं सुशोभनम्।
सुरभिर्वस्त्रदानेन प्रीयतां परमेश्वरी॥

मैं गोमाताको अत्यन्त शुद्ध एवं सुन्दर वस्त्र अर्पित करता हूँ। इस वस्त्र-दानसे परमेश्वरी सुरभि देवी प्रसन्न हों।

चन्दन-मन्त्र

सर्वदेवमये देवि चन्दनं चन्द्रसन्निभम्।
कस्तूरीकुङ्कुमाढ्यञ्च सुगन्धि प्रतिगृह्यताम्॥

हे सर्वदेवमयी देवी! कस्तूरी और केशर मिला हुआ और चन्द्रमाके समान सफेद रंगका यह सुगन्धित चन्दन स्वीकार करो।

इसके अनन्तर गो-माताको अक्षत (साबित चावल), आभूषण, रोली आदि सौभाग्यसूचक द्रव्य, इत्र आदि सुगन्धित पदार्थ एवं सुगन्धित पुष्पोंसहित पुष्पमाला अर्पित करे।

न्यास

निम्नलिखित मन्त्रोंसे गोमाताके विभिन्न अङ्गोंमें विभिन्न देवताओंका न्यास करे।

शृङ्गमूलयोर्ब्रह्मविष्णू न्यसामि—दोनों सींगोंकी जड़में क्रमशः ब्रह्माजी एवं भगवान् विष्णुको स्थापित करता हूँ।

शृङ्गाग्रयोः सर्वतीर्थानि०—दोनों सींगोंके अग्रभागमें समस्त तीर्थोंको स्थापित करता हूँ।

ललाटे महादेवं०—ललाटमें भगवान् शङ्करको स्थापित करता हूँ।

ललाटाग्रे महादेवीं०—ललाटके अग्रभागमें महादेवी पार्वतीको स्थापित करता हूँ।

नासावंशे षण्मुखं०—नासिकाकी डाँडीमें श्रीस्वामि-कार्तिकको······।

कर्णयोरश्विनौ०—दोनों कानोंमें अश्विनीकुमारोंको······।

चक्षुषोः शशिभास्करौ०—दोनों नेत्रोंमें क्रमशः चन्द्र और सूर्यको......।

दन्तेषु वायुं०—दाँतोंमें वायुदेवताको......।

जिह्वायां वरुणं०—जीभमें वरुणदेवताको......।

हुंकारे सरस्वतीं०—हुंकारमें देवी सरस्वतीको......।

गण्डयोर्यमधर्मौ०—दोनों कनपटियोंमें क्रमशः यमराज एवं धर्मको......।

ओष्ठयोः सन्ध्याद्वयं०—दोनों ओठोंमें क्रमशः प्रातः-सन्ध्या एवं सायंसन्ध्याको......।

ग्रीवायामिन्द्रं०—गर्दनमें देवराज इन्द्रको......।

कुक्षिदेशे रक्षांसि०—पेटके ऊपरी भागमें राक्षसोंको...।

उरसि साध्यान्०—छातीमें साध्य नामक देवताओंको...।

चतुष्पादेषु धर्मं०—चारों चरणोंमें धर्म देवताको...।

खुरमध्ये गन्धर्वान्०—खुरोंके मध्यभागमें गन्धर्वोंको...।

खुराग्रे पन्नगान्०—खुरोंके अग्रभागमें नागोंको......।

खुरपार्श्वेष्वप्सरसः०—खुरोंके पार्श्वभागमें अप्सराओंको।

पृष्ठे एकादशरुद्रान्०—पीठमें ग्यारह रुद्रोंको......।

सर्वसन्धिषु वसून्०—समस्त जोड़ोंमें वसुनामक देवताओंको......।

श्रोणीतटे पितॄन्०—पीछेके भागमें पितरोंको......।

लाङ्गूले सोमं०—पूँछमें चन्द्रदेवताको......।

बालेषु आदित्यरश्मीन्०—पूँछके बालोंमें सूर्यकी किरणोंको।

गोमूत्रे गङ्गां०—गोमूत्रमें भगवती गङ्गाको......।

क्षीरे सरस्वतीं०—दूधमें सरस्वती देवीको......।

दधिन नर्मदां०—दहीमें नर्मदा नदीको......।

सर्पिषि हुताशनं०—घीमें अग्निदेवको......।

रोमसु त्रयस्त्रिंशत्कोटिदेवान्०—रोमोंमें तैंतीस करोड़ देवताओंको......।

उदरे पृथिवीं०—पेटके अंदर पृथिवीदेवीको......।

पयोधरेषु सागरान्०—चारों थनोंमें क्रमशः चारों समुद्रोंको......।

धूप-मन्त्र

देवद्रुमरसोद्भूतो गोघृतेन समन्वितः।
प्रयच्छामि महाभागे धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

हे महाभाग्यवती गो-माता! कल्पवृक्षकी गोंदसे बनी हुई तथा गौके घीसे मिश्रित यह धूप मैं तुम्हें अर्पण करता हूँ, इसे स्वीकार करो।

दीप-मन्त्र

आनन्दकृत् सर्वलोके देवानाञ्च सदा प्रियः।
गौस्त्वमादि जगन्नाथे दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

जगत्की आदि स्वामिनी गो-माता! यह दीपक समस्त लोकोंको आनन्द देनेवाला और देवताओंको सदा ही प्यारा है, इसे स्वीकार करो।

गोग्रास-नैवेद्य-मन्त्र

सुरभिस्त्वं जगन्मातर्देवि विष्णुपदे स्थिता।
सर्वदेवमये ग्रासं मया दत्तमिमं ग्रस॥

हे जगदम्बा! तुम्हीं स्वर्गमें रहनेवाली कामधेनु हो। हे सर्वदेवमयी देवी! मेरेद्वारा अर्पित इस ग्रासको मुँहमें ले लो।

इसके अनन्तर हाथोंमें मलनेके लिये चन्दन, मुखशुद्धिके लिये पान तथा फल एवं दक्षिणा अर्पण करे और कपूरकी आरती करके निम्नलिखित मन्त्रसे नमस्कार करे—

नमस्कार-मन्त्र

पञ्च गावः समुत्पन्ना मथ्यमाने महोदधौ।
तासां मध्ये तु या नन्दा तस्यै देव्यै नमो नमः॥
सर्वकामदुघे देवि सर्वतीर्थाभिषेचिनि।
पावनि सुरभिश्रेष्ठे देवि तुभ्यं नमो नमः॥

क्षीरसमुद्रके मथे जानेपर उसमेंसे पाँच गौएँ प्रकट हुईं; उनमेंसे जो नन्दा नामकी श्रेष्ठ गौ है, उस देवीको बारंबार नमस्कार है। हे सुरभि देवी! तुम समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली तथा समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेवाली हो। अतः हे पवित्र करनेवाली देवी! तुम्हें बार-बार नमस्कार है।

प्रदक्षिणा-मन्त्र

गवां दृष्ट्वा नमस्कृत्य कुर्याच्चैव प्रदक्षिणम्।
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा॥
मातरस्सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
वृद्धिमाकाङ्क्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥

गो-माताका दर्शन एवं उन्हें नमस्कार करके उनकी परिक्रमा करे। ऐसा करनेसे सातों द्वीपोंसहित भूमण्डलकी प्रदक्षिणा हो जाती है। गौएँ समस्त प्राणियोंकी माताएँ एवं सारे सुख देनेवाली हैं। वृद्धिकी आकाङ्क्षा करनेवाले मनुष्यको नित्य गौओंकी प्रदक्षिणा करनी चाहिये।

पुष्पाञ्जलि-मन्त्र

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च ।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः ॥

फिर निम्नलिखित मन्त्रोंसे गो-माताकी प्रार्थना करे—

गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
गावो मे हृदये नित्यं गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥
सर्वदेवमये देवि सर्वदेवैरलंकृते ।
मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि ॥

गौएँ मेरे आगे रहें, गौएँ मेरे पीछे भी रहें। गौएँ मेरे हृदयमें निवास करें और मैं सदा गौओंके बीचमें निवास करूँ। हे देवी! तुम सर्वदेवमयी हो, समस्त देवताओंद्वारा पूजित एवं अलंकृत हो । हे माता! हे नन्दिनि! मेरी अभिलाषाको पूर्ण करो।

पुष्पाञ्जलिके बाद ताँबेके अर्घ्यपात्रमें चन्दन, पुष्प एवं अक्षतसे युक्त जल लेकर गो-माताके चरणतलमें निम्नलिखित मन्त्रसे अर्घ्य दे—

अर्घ्य-मन्त्र

सूयवसा भगवती भूयादथो वयं भगवन्तः स्याम ।
अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥
क्षीरोदार्णवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते ।
सर्वदेवमये मातर्गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥

हे गो-माता! तुम जंगलोंमें घूमती हुई सदा घास चरती रहो और शुद्ध जल पीती रहो। सुन्दर घास चरनेसे तुम ऐश्वर्यवती बनो और हम भी तुम्हारी कृपासे ऐश्वर्यवान् हों। हे माता! तुम क्षीरसमुद्रसे प्रकट हुई हो, समस्त देवता और दानव तुम्हारी वन्दना करते हैं। हे सर्वदेवमयी! मेरे अर्घ्यको ग्रहण करो, तुम्हें नमस्कार है।

अर्घ्य देनेके बाद उस जलको अक्षतोंसहित अपने मस्तकपर छोड़कर उड़दकी दालके बड़ोंका गो-ग्रास अर्पण करे। (गोज्ञानकोष प्राचीन विभाग)

मांसाहारसे हानि

(१)

एक मांसाहारी यदि प्रतिदिन आधसेर मांस खाता है तो इस हिसाबसे वह अपनी जिंदगीमें लगभग सौ बड़े पशुओंकी हिंसा करवाकर उनका मांस पेटमें डालता है। यह तो बड़े पशुओंकी बात हुई; बेचारी मछली, मुर्गे आदिकी तो गिनती ही कौन करे? पर यदि इस बातको समझकर वह मांस खाना छोड़ दे तो सौ बड़े प्राणियोंको और हजारों छोटे-छोटे प्राणियोंको अभय-दान मिलता है । इससे समझ लेना चाहिये कि सच्ची अहिंसाके प्रचारके लिये मांसाहार-निषेध ही सर्वोत्तम साधन है।

(२)

अहिंसा परम धर्म है और हिंसा महापाप है। हिंसा करना, कराना और हिंसाका अनुमोदन करना—तीनों ही हिंसा है। इसलिये तन, मन, वचनसे हिंसाका त्याग करना चाहिये । हिंसाका प्रधान कारण तो अहिंसाकी महत्ताका अज्ञान है। एक बड़ा कारण है—मांस-भक्षण। मांसके लिये बहुत बड़ी प्राणिहिंसा होती है। और मनुष्य महापापी बनकर मरनेके बाद नरकोंमें जाता है और फिर बुरी योनियोंमें पैदा होकर भाँति-भाँतिके भीषण दुःख भोगता है।

हिंसासे प्राप्त हुए आहारसे मनमें क्रूरता आती है। हृदय कठोर बनता है और बर्तावमें हिंसा आ जाती है। खून और मांसके अपवित्र भोजनसे कलुषित हुए आत्माके मन्दिररूप शरीरमें दिव्य लक्षण—दैवीगुण कैसे रहें? पशुओंका मांस खानेवालेमें मानवता मिटकर पशुताका सञ्चार और प्रसार हो जाता है—वह मनुष्यत्वके आदर्शसे गिरकर पशु या राक्षस-सा बन जाता है। इस प्रकार उसका नैतिक पतन होता है।

विज्ञानकी दृष्टिसे मनुष्य-शरीरकी रचनापर विचार करनेसे पता लगता है कि मांस मनुष्यके लिये अप्राकृत भोजन है। यह अनेकों रोगोंकी खान है। शरीरकी तन्दुरुस्ती और आयुका नाश करनेवाला है। शरीर रोगग्रस्त हो गया तो फिर उसमें मन नीरोग कैसे रहे?

आर्थिक दृष्टिसे भी प्रत्यक्ष और परोक्षरूपसे मांसाहारसे करोड़ों जीवोंकी हिंसा होनेके कारण बहुत अधिक अर्थनाश होता है। अतः प्रत्येक दृष्टिसे ही मांसाहारका त्याग करना चाहिये। (संकलित)

ब्रह्मा-विष्णु-महेशद्वारा कामधेनुकी स्तुति

त्वं माता सर्वदेवानां त्वं च यज्ञस्य कारणम् । त्वं तीर्थं सर्वतीर्थानां नमस्तेऽस्तु सदानघे ॥
शशिसूर्यारुणा यस्या ललाटे वृषभध्वजः । सरस्वती च हुङ्कारे सर्वे नागाश्च कम्बले ॥
क्षुरपृष्ठे च गन्धर्वा वेदाश्चत्वार एव च । मुखाग्रे सर्वतीर्थानि स्थावराणि चराणि च ॥

(स्कन्द० ब्रह्म० धर्मारण्य० १० । १८ । २०)

हे निष्पापे ! तुम सब देवताओंकी माता, यज्ञकी कारणरूपा और सम्पूर्ण तीर्थोंकी तीर्थरूपा हो । हम तुम्हें सदा नमस्कार करते हैं । तुम्हारे ललाटमें चन्द्रमा, सूर्य, अरुण और वृषभध्वज शङ्कर हैं; हुङ्कारमें सरस्वती, गलकम्बलमें नाग-गण, खुरोंमें गन्धर्व और चारों वेद और मुखाग्रमें चर और अचर सम्पूर्ण तीर्थ विराजमान हैं ।

गो-शान्ति

गावः पवित्रा माङ्गल्या गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः ।

(अग्निपुराण २९२)

गौएँ पवित्र और मङ्गलदायिनी हैं । समस्त लोक गौमें ही प्रतिष्ठित हैं । गायोंका गोबर और गोमूत्र परम श्रेष्ठ हैं । उससे अलक्ष्मी (दरिद्रता) का नाश होता है । गौओंके सींगोंसे खुजलाया हुआ जल सारे पापोंका नाश करता है । गोबर, गोमूत्र, गो-दुग्ध, गो-दधि, गो-घृत और गो-रोचन— इस षडङ्गका पान श्रेष्ठ है और दुःस्वप्नादि दोषोंका नाशक है । गोरोचन राक्षसों और विषका नाश करनेवाला है । गौको ग्रास देनेसे मनुष्य स्वर्गमें जाता है । जिसके घरमें गायें दुखी रहती हैं, वह मनुष्य नरकोंमें जाता है—

'यद्गृहे दुःखिता गावः स याति नरकं नरः ।'

जो मनुष्य दूसरेकी गौको ग्रास देता है, वह स्वर्गको प्राप्त होता है तथा जो नित्य गायोंके हितमें लगा रहता है, वह ब्रह्मलोकमें जाता है । गोदान करके, गौकी महिमाका कीर्तन करके और गौओंकी रक्षा करके मनुष्य अपने कुलका उद्धार कर सकते हैं । गायोंके श्वाससे पृथ्वी पवित्र होती है और उनके स्पर्शसे पापोंका नाश होता है—

'गवां श्वासात् पवित्रा भूः स्पर्शनात् किल्बिषक्षयः ।'

एक रात्रि उपवास करके गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घृत और कुशोदकका भोजन करनेसे चाण्डाल भी शुद्ध हो जाता है । प्राचीन कालमें लोकपालोंने समस्त अशुभका नाश करनेके लिये उपर्युक्त गोबर आदिका व्यवहार किया था । इन गोमूत्र आदिमेंसे किसी एकका भी तीन दिन सेवन करनेसे महान् शान्ति होती है । यह सारी कामनाओंका पूर्ण करनेवाला और सम्पूर्ण अशुभोंका नाश करनेवाला है । इक्कीस दिनोंतक केवल दूधपर रहनेसे 'कृच्छ्रातिकृच्छ्र-व्रत' होता है और उससे उत्तम पुरुष निर्मल होता है और सारी कामनाओंको प्राप्त करके स्वर्गमें गमन करता है । तीन दिन गरम गोमूत्र, तीन दिन गरम गोघृत, तीन दिन गरम गोदुग्ध और तीन दिन वायु भक्षण करनेपर मनुष्य 'तप्तकृच्छ्र-व्रत'का कर्त्ता होता है और वह सारे पापोंसे छूटकर ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है । ब्रह्माजीने कहा है कि इन्हीं सब पदार्थोंको ठंडा सेवन करनेसे 'शीतकृच्छ्र-व्रत' होता है और उससे भी ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है । गोमूत्रसे स्नान, गो-रस (गायके दूध, दही, घृत आदि) से ही जीवन-निर्वाह, गौओंके पीछे-पीछे गमन और गौओंके खानेके बाद भोजन करनेसे 'गोव्रत' होता है ।* इस प्रकार महीनेभरतक गोव्रत करनेसे मनुष्य निष्पाप होकर गोलोकीय स्वर्गको प्राप्त होता है और इसके साथ ही 'गोमतीविद्या'का जप करनेसे परम श्रेष्ठ गोलोकमें जाता है, जहाँ वह विमानोंपर चढ़कर अप्सराओंके साथ नृत्य-गीतादिमें आनन्द प्राप्त करता है ।

गायें नित्य सुरभि हैं । उनके अङ्गसे गुग्गुलकी सुगन्ध निकला करती है । गायें ही समस्त जीवोंकी प्रतिष्ठा हैं और गायें ही परम स्वस्त्ययन हैं । गायें ही श्रेष्ठ अन्न देती हैं और गायें ही देवताओंको परम उत्कृष्ट हवि प्रदान करती हैं । गायोंसे ही समस्त जीवोंको पवित्र करनेवाले पदार्थ निकला करते हैं । अनुभवी विद्वान् ऐसा ही कहते हैं । गोघृतादि हवि मन्त्रपूत होकर स्वर्गमें देवताओंको तृप्त करते हैं और ऋषियोंके अग्नि-

---

* गोमूत्रेणाचरेत् स्नानं वृत्तिं कुर्याच्च गोरसैः । गोभिर्व्रजेच्च भुक्तासु भुञ्जीताथ च गोव्रती ॥

होत्र और होममें गायोंसे ही सहायता मिलती है। अभिप्राय यह कि गायें सम्पूर्ण प्राणियोंके लिये सर्वश्रेष्ठ आश्रय हैं। गौएँ स्वर्गकी सीढ़ी हैं, वे सनातन और धन्य हैं। मैं श्रीमती और सुरभिसे उत्पन्न गौओंको प्रणाम करता हूँ। ब्रह्मपुत्री और पवित्रा गौओंको बार-बार नमस्कार करता हूँ।

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

(अग्निपुराण, अध्याय २९२)

गौका विश्वरूप

वेदोंमें

प्रजापतिश्च परमेष्ठी च शृङ्गे इन्द्रः शिरो अग्निर्ललाटं यमः कृकाटम् ॥ १ ॥ सोमो राजा मस्तिष्को द्यौरुत्तरहनुः पृथिव्यधरहनुः ॥ २ ॥ विद्युज्जिह्वा मरुतो दन्ता रेवतीर्ग्रीवाः कृत्तिका स्कन्धा घर्मो वहः ॥ ३ ॥ विश्वं वायुः स्वर्गो लोकः कृष्णद्रं विधरणी निवेष्यः ॥ ४ ॥ श्येनः क्रोडोऽन्तरिक्षं पाजस्यं बृहस्पतिः ककुद् बृहतीः कीकसाः ॥५॥ देवानां पत्नीः पृष्टय उपसदः पर्शवः ॥ ६ ॥ मित्रश्च वरुणश्चांसौ त्वष्टा चार्यमा च दोषणी महादेवो बाहू ॥ ७ ॥ इन्द्राणी भसद् वायुः पुच्छं पवमानो बालाः ॥ ८ ॥ ब्रह्म च क्षत्रं च श्रोणी बलमूरू ॥ ९ ॥

प्रजापति और परमेष्ठी इसके सींग, इन्द्र सिर, अग्नि ललाट और यम गलेकी सन्धि है ॥ १ ॥ नक्षत्रोंके राजा चन्द्रमा मस्तिष्क, द्युलोक ऊपरका जबड़ा और पृथ्वी नीचेका जबड़ा है ॥ २ ॥ बिजली जीभ, मरुत् देवता दाँत, रेवती नक्षत्र गला, कृत्तिका कंधे और ग्रीष्म ऋतु कंधेकी हड्डी है ॥ ३ ॥ वायु देवता इसके समस्त अङ्ग हैं, इसका लोक स्वर्ग है और पृष्ठवंशकी हड्डी रुद्र है ॥ ४ ॥ श्येन पक्षी (बाज) इसकी छाती, अन्तरिक्ष इसका बल, बृहस्पति इसका कूबड़ और बृहती नामके छन्द इसकी छातीकी हड्डियाँ हैं ॥ ५ ॥ देवाङ्गनाएँ इसकी पीठ और उनकी परिचारिकाएँ पसलीकी हड्डियाँ हैं ॥ ६ ॥ मित्र और वरुण नामके देवता कंधे हैं, त्वष्टा और अर्यमा हाथ हैं और महादेव इसकी भुजाएँ हैं ॥ ७ ॥ इन्द्रपत्नी इसका पिछला भाग है, वायु देवता इसकी पूँछ और पवमान इसके रोयें हैं ॥ ८ ॥ ब्राह्मण और क्षत्रिय इसके चूतर और बल जाँघें हैं ॥ ९ ॥

धाता च सविता चाष्ठीवन्तौ जङ्घा गन्धर्वा अप्सरसः कुष्ठिका अदितिः शफाः ॥ १० ॥ चेतो हृदयं यकृन्मेधा व्रतं पुरीतत् ॥११॥ क्षुत् कुक्षिरिरा वनिष्ठुः पर्वताः प्लाशयः ॥१२॥

विधाता और सविता घुटनेकी हड्डियाँ हैं, गन्धर्व पिंडलियाँ, अप्सराएँ छोटी हड्डियाँ और देवमाता अदिति खुर हैं ॥ १० ॥ चित्त हृदय, बुद्धि यकृत् और व्रत ही पुरीतत् नामकी नाड़ी है ॥११॥ भूख ही पेट, देवी सरस्वती आँतें और पर्वत भीतरी भाग हैं ॥ १२ ॥

क्रोधो वृक्कौ मन्युराण्डौ प्रजा शेपः ॥ १३ ॥
नदी सूत्री वर्षस्य पतयः स्तना: स्तनयित्नुरूधः ॥ १४ ॥
विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो लोमानि नक्षत्राणि रूपम्॥ १५ ॥
देवजना गुदा मनुष्या आन्त्राण्यत्रा उदरम् ॥ १६ ॥
रक्षांसि लोहितमितरजना ऊबध्यम् ॥ १७ ॥
अभ्रं पीवो मज्जा निधनम् ॥ १८ ॥
अग्निरासीन उत्थितोऽश्विना ॥ १९ ॥
इन्द्रः प्राङ् तिष्ठन् दक्षिणा तिष्ठन् यमः ॥ २० ॥

क्रोध गुर्दे, मन्यु (शोक) अण्डकोश और प्रजा जननेन्द्रिय है ॥ १३ ॥ नदी गर्भाशय, वर्षाके अधिकारी देव स्तन हैं, तथा गड़गड़ाहट करनेवाले बादल ही दुग्धकोष हैं ॥ १४ ॥ विश्वव्यापिनी शक्ति चमड़ी, ओषधियाँ रोयें और नक्षत्र इसके रूप हैं ॥ १५ ॥ देवगण गुदा, मनुष्य आँतें एवं यक्ष पेट हैं ॥ १६ ॥ राक्षस रुधिर एवं दूसरे प्राणी आमाशय हैं ॥ १७ ॥ आकाश स्थूलता और मृत्यु मज्जा है ॥ १८ ॥ बैठनेके समय यह अग्निरूप है और उठते समय अश्विनीकुमार ॥ १९ ॥ पूर्वकी ओर खड़े होते समय इन्द्र और दक्षिणकी ओर खड़े होनेपर यमराज है ॥ २० ॥

प्रत्यङ् तिष्ठन् धातोदङ् तिष्ठन् सविता ॥ २१ ॥
तृणानि प्राप्तः सोमो राजा ॥ २२ ॥

पश्चिमकी ओर खड़े होते समय विधाता और उत्तरकी ओर खड़े होते समय यही सविता देवता है ॥ २१ ॥ घास चरते समय यही नक्षत्रोंका राजा चन्द्रमा है ॥ २२ ॥

मित्र ईक्षमाण आवृत्त आनन्दः ॥ २३ ॥
युज्यमानो वैश्वदेवो युक्तः प्रजापतिर्विमुक्तः सर्वम् ॥ २४ ॥
एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम् ॥ २५ ॥
उपैनं विश्वरूपाः सर्वरूपाः पशवस्तिष्ठन्ति य एवं वेद ॥ २६ ॥

देखते समय यह मित्र देवता है और पीठ फेरते समय आनन्द है ॥ २३ ॥ हल अथवा गाड़ीमें जोतनेके समय यह (बैल) विश्वेदेव, जोत दिये जानेपर प्रजापति और जब खुला हुआ रहता है, उस समय यह सब कुछ बन जाता है ॥ २४ ॥ यही विश्वरूप अथवा सर्वरूप है और यही गोरूप भी है ॥ २५ ॥ जिसको इस विश्वरूपका यथार्थ ज्ञान होता है, उसके पास विविध आकारके अनेक पशु रहते हैं ॥ २६ ॥ (अथर्व० ९ । ४ । १)

इस सूक्तमें गौका तथा बैलका विश्वरूप बताया गया है। भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने अपने विश्वरूपका वर्णन किया है, गौके भी उसी प्रकारके विश्वरूपका इस सूक्तमें वर्णन है। संस्कृतके प्रसिद्ध पाश्चात्त्य विद्वान् ग्रिफिथ महोदय कहते हैं कि इस सूक्तमें आदर्श बैल और गायकी प्रशंसा की गयी है।*

इस सूक्तपर कई दृष्टियोंसे विचार किया जा सकता है; परन्तु यहाँ केवल एक-दो मुख्य बातें बतलानी हैं। सम्पूर्ण सूक्तके सभी अंशोंपर विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इस सूक्तके विचारणीय अंश नीचे दिये जाते हैं—

(१) ब्राह्मण और क्षत्रिय विश्वरूपिणी गौके चूतर हैं। (मन्त्र ९)

(२) गन्धर्व पिंडलियाँ और अप्सराएँ छोटी हड्डियाँ हैं। (मन्त्र १०)

(३) देवता इसकी गुदा हैं, मनुष्य आँतें और अन्य प्राणी आमाशय हैं। (मन्त्र १६)

(४) राक्षस रक्त एवं इतर मनुष्य पेट हैं। (मन्त्र १७)

उपर्युक्त मन्त्रोंमें यह भाव दिखलाया गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, इतर लोग अर्थात् वैश्य, शूद्र, निषाद, गन्धर्व, देवता, अप्सराएँ मनुष्यमात्र, राक्षस एवं अन्य सब प्राणी गो-रूप ही हैं। सम्पूर्ण जनता हृदयसे समझे कि हम सब मनुष्य गो-माताके ही अङ्ग हैं—इसीलिये इन मन्त्रोंकी अवतारणा की गयी है। इस प्रकार हमलोग गो-माताके शरीरके साथ अपनी एकरूपता देखना सीखें। गौके शरीरको कष्ट होनेपर वह कष्ट हमींको होगा—यह भाव मनमें धारण करें। यदि कोई मनुष्य गौको कष्ट देता है या उसे काटता है या और तरहसे दुःख देता है तो वह केवल गौको ही दुःख देता है तथा गौके दुखी रहनेपर भी हम सब सुखी रह सकते हैं—यह हीन भाव मनसे हटा दें। गौका हमारे साथ अवयवी और अवयवका सम्बन्ध है। हम गौके ही अङ्ग हैं; इसलिये जो दुःख गौको मिलता है, वह हमींको मिलता है—ऐसा मानना चाहिये और इसी भावनासे गौका पालन और रक्षण करना चाहिये। दूसरे शब्दोंमें स्वयं अपने ऊपर दुःख आनेपर जिस लगनके साथ उसका प्रतिकार किया जाता है, उसी तीव्रताके साथ गौके कष्टोंको दूर करनेकी चेष्टा होनी चाहिये।

गौ एक निरा दूध देनेवाला पशु ही नहीं है, प्रत्युत वह अपने कुटुम्बका हकदार है, या यों कहिये कि मालिक है और हम उसके परिवारके लोग हैं—यह भाव सदा मनमें जीवित और जाग्रत् रहना चाहिये।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद, राक्षस आदि सभी जातिके लोगोंमें यह विचार जाग्रत् रहना चाहिये। ऐसा होनेसे सम्पूर्ण जगतीतलपर गो-माताकी पूजा होने लगेगी।

यह सम्पूर्ण जगत् ही गोरूप अर्थात् गायका ही रूप है, इसलिये गौके साथ किसी एक पदार्थकी तुलना हो ही नहीं सकती। अन्य सभी पदार्थोंको विविध उपमाएँ दी जा सकती हैं; केवल गौ ही ऐसा प्राणी है, जो अनुपम है; क्योंकि वह प्राणीमात्रकी निरुपम माता है, मानव-वंशोंका पालन करनेवाली है और मानवमात्र उसके अवयव हैं। पाठक यदि विचार करेंगे और गौके उपकारोंका मनन करेंगे तो वेदका यह कथन ठीक तरहसे उनकी समझमें आ सकता है।

यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि उपर्युक्त वर्णनसे वेदने किस बातकी शिक्षा दी है। इस प्रश्नके उत्तरमें निवेदन है कि वेदने इस सूक्तके द्वारा अहिंसाका उत्तमोत्तम उपदेश दिया है। मनुष्य तो क्या, कोई भी प्राणी अपने-आपकी हिंसा कदापि न करेगा। सिंह या अन्य हिंसक जन्तु दूसरे जीवोंको मारकर खा जाते हैं। राक्षस भी मनुष्यादि प्राणियोंको खा जाते हैं। परन्तु दूसरेके मांसपर निर्वाह करनेवाले ये क्रूर प्राणी अत्यधिक भूख लगनेपर भी अपनी ही देहके अवयवोंको कभी काटकर नहीं खाते।

*The hymn is a glorification of the typical Bull and Cow.

अतः इस स्वाभाविक प्रवृत्तिको लेकर ही वेद मनुष्योंको इस सूक्तके द्वारा गाय और बैलके मांससे पूर्णतया निवृत्त करना चाहता है। यह बात उपर्युक्त वर्णनसे स्पष्ट हो जाती है।

जब सम्पूर्ण हृदयसे मनुष्य अपने-आपको गौके शरीरके अवयव मानने लगेंगे, तब वे लोग गौ या बैलका मांस किस तरह खा सकेंगे; क्योंकि कोई भी जीव अपने शरीरका मांस नहीं खाता। औरोंकी तो बात ही क्या, निरे आमिष-भोजी अथवा नरमांसभोजी मनुष्य भी अपने शरीरका मांस नहीं खाते। इसलिये जो मनुष्य अपने-आपको गौके शरीरका अवयव मानेगा, वह गोमांस-भक्षणसे पूर्णतया निवृत्त होगा ही।

देखिये, कितनी प्रबल युक्तिसे वेदने लोगोंको—मांस-भोजी राक्षस-श्रेणीके लोगोंको भी निरामिषभोजी बनानेका यत्न किया है। यह इतनी प्रबल युक्ति है कि यदि इस प्रकारका विचार मनमें सदाके लिये स्थिर हो जाय तो कभी कोई गोमांस खाये ही नहीं। इतनी प्रबल युक्ति देनेपर भी कई पाश्चात्त्य विद्वान् यह मानते हैं कि वैदिककालमें गो-मांस खानेकी प्रथा थी और बैलका भी मांस खाया जाता था। उन लोगोंसे हमारी प्रार्थना है कि वे इस प्रबल युक्तिका अधिक विचारपूर्वक मनन करें और इसके बाद अपना मत स्थिर करें।

गौ मुझसे भिन्न नहीं, मैं उसके शरीरका एक भाग हूँ; इसलिये मुझे जिस प्रकार अपनी रक्षा करनी चाहिये, उसी प्रकार गौकी भी रक्षा अवश्य करनी चाहिये—यह कितना उच्चतम उपदेश है! पाठक इस उपदेशका महत्त्व समझें।

दुराचारी मनुष्य भी जिस समय किसी स्त्रीको 'मा' कहता है, उस समय उसकी दृष्टिमें तत्काल पवित्रता आ जाती है। किसीको माता कहनेका तात्पर्य ही यह है कि उसे पवित्रताकी दृष्टिसे देखा जाय।

गौको माता कहनेका अर्थ यही है कि उसे हम पवित्र एवं पूज्य दृष्टिसे देखें। गौ हमारी परम पूजनीय, वन्दनीय एवं पालनीय माता है—यह भाव हमें हर समय जाग्रत् रखना चाहिये। पाठक इस सूक्तका मनन इसी दृष्टिसे करें। इन्द्रादि देवगण जीवित और जाग्रत् गो-माताके देहमें हैं। जहाँ इन्द्रादि देव रहते हैं, वही स्वर्ग है अर्थात् गौ ही स्वर्गलोक है—यही भाव पूर्वोक्त सूक्तके चतुर्थ मन्त्रमें कहा गया है।

ये सब भाव इस समय हिंदुओंके मनमें बीजरूपसे देखे जा सकते हैं। यद्यपि इस समय पुराने अथवा नये विचारके हिंदू इस अथर्ववेदके सूक्तको जानते भी नहीं हैं, तथापि उनके अंदर प्राचीन कालसे वैदिक धर्मके संस्कार रहनेके कारण उनके मनमें ये वैदिक संस्कार भी लुप्त अवस्थामें इस समय दिखायी देते हैं। वे गौको माता कहते हैं, गौके शरीरमें नाना देवताओंका निवास मानते हैं; किन्तु यह सब मानते हुए भी उनका आचरण ऐसा होता है मानो वे यह कुछ भी नहीं मानते। इसका कारण उनका धर्मविषयक अज्ञान ही है। यदि वेदका यह उपदेश उनके मनमें जाग्रत् रहेगा तो वे गौकी रक्षा भलीभाँति कर सकेंगे। गौके जिस गौरवका वर्णन इस सूक्तमें हुआ है, वह गौरव जिस कालमें जनताके मनोंमें रहा होगा, उस कालमें गौका वध असम्भव था—इस बातको अब अधिक विस्तारसे कहनेकी आवश्यकता नहीं है। (गो० को० भा० वि०)

इसी प्रकार विभिन्न इतिहास-पुराणोंमें भी गौके विश्वरूपके अलग-अलग वर्णन मिलते हैं। उनमेंसे कुछका भावार्थ नीचे दिया जाता है।

(१)

ब्रह्माण्डपुराण

(गो-सावित्री स्तोत्र)

अखिल विश्वके पालक देवाधिदेव नारायण! आपके चरणोंमें मेरा प्रणाम है। पूर्वकालमें भगवान् व्यासदेवने जिस गो-सावित्री स्तोत्रको कहा था, उसीको मैं सुनाता हूँ॥ १॥ यह गौओंका स्तोत्र समस्त पापोंका नाश करने-वाला, सम्पूर्ण अभिलषित पदार्थोंको देनेवाला, दिव्य एवं समस्त कल्याणोंका करनेवाला है॥ २॥ गौके सींगोंके अग्रभागमें साक्षात् जनार्दन विष्णुस्वरूप भगवान् वेदव्यास रमण करते हैं। उसके सींगोंकी जड़में देवी पार्वती और सींगोंके मध्यभागमें भगवान् सदाशिव विराजमान रहते हैं॥३॥ उसके मस्तकमें ब्रह्मा, कंधेमें बृहस्पति, ललाटमें वृषभारूढ़ भगवान् शङ्कर, कानोंमें अश्विनीकुमार तथा नेत्रोंमें सूर्य और चन्द्रमा रहते हैं॥ ४॥ दाँतोंमें समस्त ऋषिगण, जीभमें देवी सरस्वती तथा वक्षःस्थलमें एवं पिंडलियोंमें सारे देवता निवास करते हैं॥ ५॥ उसके खुरोंके मध्यभागमें गन्धर्व, अग्रभागमें चन्द्रमा एवं भगवान् अनन्त तथा पिछले भागमें मुख्य-मुख्य अप्सराओंका स्थान है॥ ६॥ उसके पीछेके

भाग (चूतर) में पितृगणोंका तथा भ्रुकुटिमूलमें तीनों गुणोंका निवास बताया गया है। उसके रोमकूपोंमें ऋषिगण तथा चमड़ीमें प्रजापति निवास करते हैं॥ ७॥ उसके थूहेमें नक्षत्रोंसहित द्युलोक, पीठमें सूर्यतनय यमराज, अपान वायुमें सम्पूर्ण तीर्थ एवं गोमूत्रमें साक्षात् गङ्गाजी विराजती हैं॥ ८॥ उसकी दृष्टि, पीठ एवं गोबरमें स्वयं लक्ष्मीजी निवास करती हैं; नथुनोंमें अश्विनीकुमारोंका एवं होठोंमें भगवती चण्डिकाका वास है॥ ९॥ गौओंके जो स्तन हैं, वे जलसे पूर्ण चारों समुद्र हैं; उनके रँभानेमें देवी सावित्री तथा हुंकारमें प्रजापतिका वास है॥१०॥ इतना ही नहीं, समस्त गौएँ साक्षात् विष्णुरूप हैं; उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें भगवान् केशव विराजमान रहते हैं॥ ११॥

(२)

महाभारत

कपिला गौके सींगोंके ऊपरके भागमें विष्णु और इन्द्र तथा सींगोंकी जड़में चन्द्रमा और वज्रधारी देवता रहते हैं। सींगोंके बीचमें ब्रह्माजी और ललाटमें वृषभध्वज भगवान् शङ्कर विराजते हैं। दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, दाँतोंमें मरुत् देवता, जीभमें सरस्वती, रोमकूपोंमें मुनिगण, चमड़ेमें प्रजापति, श्वासोंमें षडङ्ग तथा पद-क्रमसहित चारों वेद, नासापुटोंमें गन्ध और सुगन्धित पुष्प, नीचेके ओठमें सारे वसुगण, मुखमें अग्नि, काँखमें साध्य देवता, गलेमें भगवती पार्वती, पीठमें नक्षत्रगण, ककुद् (थूहे) में आकाश, अपानमें सम्पूर्ण तीर्थ, गो-मूत्रमें स्वयं श्रीगङ्गाजी और गोबरमें इष्ट-तुष्टमयी लक्ष्मीजी सदा निवास करती हैं। नासिकामें ज्येष्ठादेवी, नितम्बोंमें पितर, पूँछमें रमादेवी, दोनों ओरकी पँसलियोंमें विश्वेदेवता, छातीमें शक्तिधारी कार्तिकेय, घुटनों, पिंडलियों और जाँघोंमें पाँचों वायु, खुरोंके मध्यमें गन्धर्वगण और खुरोंके अग्रभागमें सर्प बसते हैं। चारों समुद्र उसके चारों स्तन हैं। रति, मेधा, क्षमा, स्वाहा, श्रद्धा, शान्ति, धृति, स्मृति, कीर्ति, दीप्ति, क्रिया, कान्ति, तुष्टि, पुष्टि, सन्तति, दिशा और प्रदिशा (दिशाओंके कोने) सभी सदा कपिलाकी सेवा करती हैं। देवता, पितर, गन्धर्व, अप्सराएँ, समस्त लोक, द्वीप, समुद्र, गङ्गा आदि नदियाँ तथा अङ्गों और यज्ञोंसहित समस्त वेद हर्षित होकर नाना प्रकारके मन्त्रोंसे गौकी स्तुति किया करते हैं।

(आश्वमेधिक० १०३। ४५ से ५९)

(३)

स्कन्दपुराण

गौ सर्वदेवमयी और वेद सर्वगोमय हैं। गायके सींगोंके अग्रभागमें नित्य इन्द्र निवास करते हैं। हृदयमें कार्तिकेय, सिरमें ब्रह्मा और ललाटमें वृषभध्वज शङ्कर, दोनों नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, जीभमें सरस्वती, दाँतोंमें मरुद्गण और साध्य देवता, हुंकारमें अङ्ग-पद-क्रमसहित चारों वेद, रोमकूपोंमें असंख्य तपस्वी और ऋषिगण, पीठमें दण्डधारी महाकाय महिषवाहन यमराज, स्तनोंमें चारों पवित्र समुद्र, गो-मूत्रमें विष्णु-चरणसे निकली हुई दर्शन मात्रसे पाप नाश करनेवाली श्रीगङ्गाजी, गोबरमें पवित्र सर्वकल्याणमयी लक्ष्मीजी, खुरोंके अग्रभागमें गन्धर्व, अप्सराएँ और नाग निवास करते हैं। इसके सिवा सागरान्त पृथ्वीमें जितने भी पवित्र तीर्थ हैं, सभी गायोंके देहमें रहते हैं। विष्णु सर्वदेवमय हैं, गाय इन विष्णुके शरीरसे उत्पन्न हुई है, विष्णु और गाय— दोनोंके ही शरीरमें देवता निवास करते हैं। इसीलिये मनुष्य गायोंको सर्वदेवमयी मानते हैं।

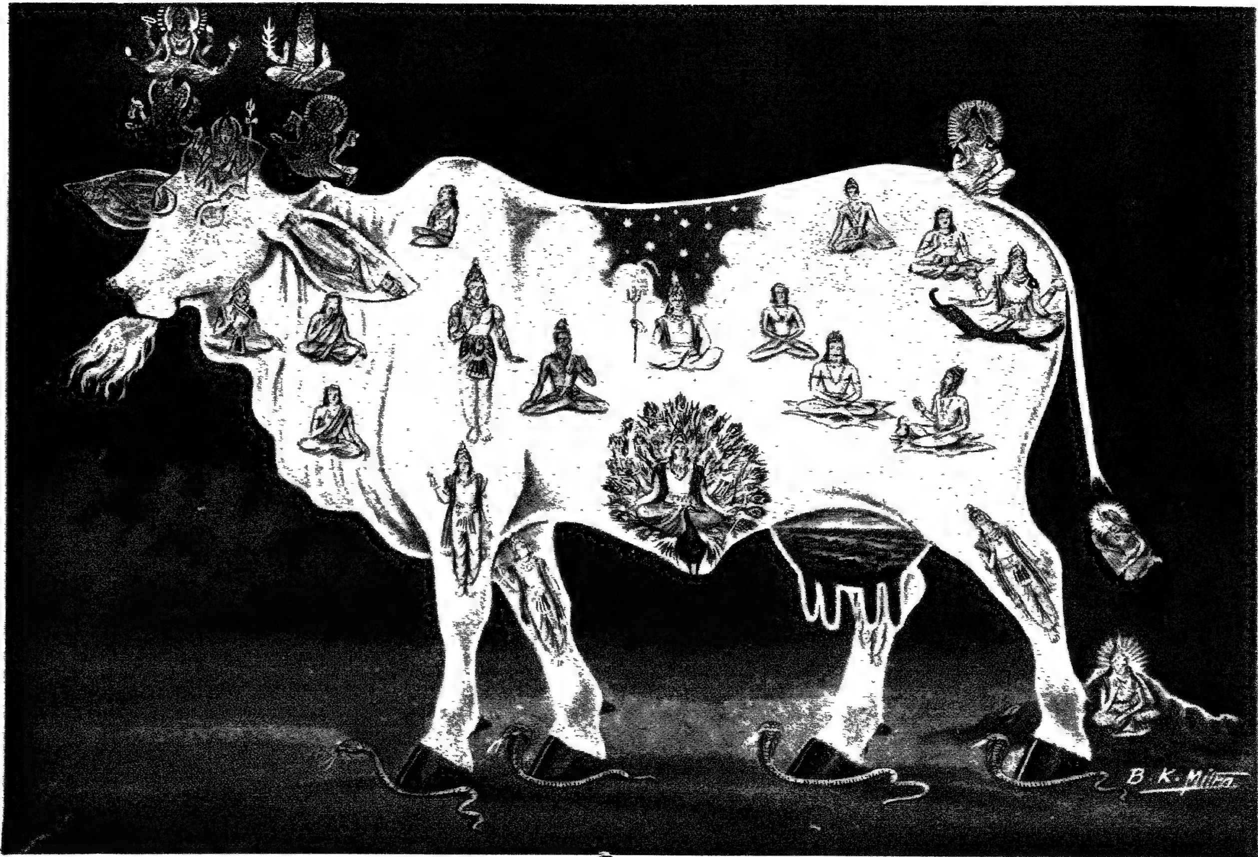
(आवन्त्यखण्ड रेवाखण्ड अ० ८३ श्लोक १०४ से ११०, ११२)

(४)

पद्मपुराण

गौके मुखमें षडङ्ग और पद-क्रमसहित चारों वेद रहते हैं। सींगोंके अग्रभागमें इन्द्र और दोनों सींगोंमें भगवान् शङ्कर और भगवान् केशव हैं। उदरमें स्कन्द, सिरमें ब्रह्मा, ललाटमें वृषभध्वज, दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, दोनों नेत्रोंमें चन्द्रमा और सूर्य, दाँतोंमें गरुड़, जीभमें सरस्वती, अपानमें सारे तीर्थ, गो-मूत्रमें जाह्नवी गङ्गाजी, रोमकूप-समूहमें ऋषिगण, मुखके ऊपरकी ओर यम, दाहिनी ओर कुबेर तथा गरुड़, बायीं ओर तेजस्वी बलवान् यक्षगण, मुखके अंदर गन्धर्व, नासिकामें नाग, चारों खुरोंके पीछेकी ओर अप्सराएँ, गोबरमें लक्ष्मी, गोमूत्रमें सर्वमङ्गलादेवी, पैरोंके अगले भागमें सिद्धादि खेचर, रँभानेमें प्रजापति और गायोंके चारों थनोंमें चारों समुद्र रहते हैं। जो प्रतिदिन गायका स्पर्श करता है, वह इन समुद्रोंमें स्नान कर लेता है।

अतो मर्त्यः प्रपुष्टैस्तु सर्वपापैः प्रमुच्यते।
गवां रजः खुरोद्धूतं शिरसा यस्तु धारयेत्॥
सर्वतीर्थजले स्नातः सर्वपापैः प्रमुच्यते।



सर्वदेवमयी गोमाता

[पृष्ठ ५२

अतएव मनुष्यको सर्वोत्तम पुष्टिके लिये गायका स्पर्श करना चाहिये। इससे वह सारे पापोंसे छूट जाता है। गायके खुरसे उड़ी हुई धूलिको मस्तकपर धारण करनेवाला मनुष्य भी सारे तीर्थोंके जलमें स्नान करनेवाला समझा जाता है और वह भी समस्त पापोंसे छूट जाता है। (सृष्टिखण्ड अ० ४८)

(५)

भविष्यपुराण

गायके दोनों नेत्रोंमें सूर्य और चन्द्रमा, जीभमें सरस्वती, दाँतोंमें मरुत् देवता, दोनों कानोंमें अश्विनीकुमार, सींगोंके अग्रभागमें भगवान् शङ्कर और ब्रह्माजी, ककुद् (थूहे) में गन्धर्व और अप्सरागण, कुक्षिमें चारों समुद्र, योनिमें गङ्गाजी, रोमकूपमें ऋषिगण, अपानमें पृथ्वी, आँतोंमें नागगण हड्डियोंमें पर्वत, पैरोंमें धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष—ये चारों पुरुषार्थ हुंकारमें चारों वेद, कण्ठमें रुद्रगण, पृष्ठभागमें सुमेरु, समस्त शरीरमें व्यापक भगवान् विष्णु रहते हैं। इस प्रकार गाय सर्वमयी, पवित्र, विश्वरूपिणी देवी है। (उत्तर० अ० १५६। १६–२०)

कपिला गौ

(१)

कपिलाकी महिमा

पूर्वकालमें स्वयम्भू ब्रह्माजीने अग्निहोत्र तथा ब्राह्मणोंके लिये सम्पूर्ण तेजोंका संग्रह करके कपिला गौको उत्पन्न किया था। कपिला गौ पवित्र वस्तुओंमें सबसे बढ़कर पवित्र, मङ्गलजनक पदार्थोंमें सबसे अधिक मङ्गलकारिणी तथा पुण्योंमें परम पुण्यस्वरूपा है। वह तपस्याओंमें श्रेष्ठ तपस्या, व्रतोंमें उत्तम व्रत, दानोंमें श्रेष्ठ दान और सबका अक्षय कारण है। पृथ्वीपर जितने पवित्र तीर्थ और मन्दिर हैं तथा संसारमें जो कुछ पवित्र और रमणीय वस्तुएँ हैं, उन सबका तेज निकालकर विश्वविधाता ब्रह्माजीने जगत्को तारनेके लिये कपिला गौकी सृष्टि की है। कपिला सम्पूर्ण तेजोंका पुञ्ज है। वह अमृतस्वरूप, मेध्य, शुद्ध, पवित्र करनेवाली और उत्तम है। (महा० अश्वमेध० १०२। २२–२७)

(२)

कपिलाकी उत्पत्ति

सृष्टिके प्रारम्भमें ब्रह्माजीने दक्षप्रजापतिको आज्ञा दी कि 'तुम प्रजाको उत्पन्न करो।' किन्तु दक्षप्रजापतिने प्रजाओंकी भलाईके लिये सबसे पहले उनकी आजीविकाका उपाय निर्धारित किया। उसके बाद उन्होंने प्रजाको उत्पन्न किया। उत्पन्न होते ही समस्त जीव जीविकाके लिये कोलाहल करने लगे। जैसे भूखे-प्यासे बालक अपने मा-बापके पास दौड़ जाते हैं, उसी प्रकार समस्त प्रजा जीविकादाता दक्षके पास गयी। प्रजाजनोंकी इस स्थितिपर मन-ही-मन विचार करके प्रजापतिने उनकी रक्षाके लिये अमृतका पान किया। अमृत पीकर जब वे पूर्ण तृप्त हो गये तब उनके मुखसे सुरभित (मनोहर) सुगन्धि निकलने लगी। उस सुरभि गन्धसे सुरभि (गौ) प्रकट हुई, जिसे प्रजापतिने अपने मुखसे उत्पन्न होनेवाली पुत्रीके रूपमें देखा। सुरभिने भी बहुत-सी कपिला गौएँ उत्पन्न कीं, जो प्रजापतिकी माताके समान थीं और जिनका रंग कुन्दनकी भाँति दमक रहा था। वे सब गौएँ प्रजाकी आजीविका थीं। (महा० अनु० ७७। ११–१८)

(३)

कपिलाके भेद

ब्रह्माजीने कपिला गौके दस भेद बतलाये हैं—पहली सुवर्णकपिला (सुवर्णके समान पीले रंगवाली), दूसरी गौरपिंगला (गौर तथा पीले रंगवाली), तीसरी आरक्तपिङ्गाक्षी (कुछ लालिमा लिये हुए पीले नेत्रोंवाली), चौथी गलपिङ्गला (जिसके गरदनके बाल कुछ पीले हों), पाँचवीं बभ्रुवर्णाभा (जिसका सारा शरीर पीले रंगका हो), छठी श्वेतपिंगला (कुछ सफेदी लिये हुए पीले रोमवाली), सातवीं रक्तपिङ्गाक्षी (सुर्ख और पीली आँखोंवाली), आठवीं खुरपिंगला (जिसके खुर पीले रंगके हों), नवीं पाटला (जिसका हल्का लाल रंग हो) और दसवीं पुच्छ-पिंगला (जिसकी पूँछके बाल पीले रंगके हों)—ये दस प्रकारकी कपिला गौएँ बतलायी गयी हैं, जो सदा मनुष्योंका उद्धार करती हैं। वे मङ्गलमयी, पवित्र और सब पापोंको नष्ट करनेवाली हैं। (महा० अश्वमेध० १०२। ७-८)

(४)

कपिला गौके दानका फल

दानमें दी हुई गौ अपने कर्मोंसे बँधकर घोर अन्धकार-

पूर्ण नरकमें गिरते हुए मनुष्यका उसी प्रकार उद्धार कर देती है, जैसे वायुके सहारेसे चलती हुई नाव मनुष्यको महासागरमें डूबनेसे बचाती है। पुत्र, पौत्र आदि सात पीढ़ियोंतकके समस्त कुलको वह गौ तार देती है। जबतक पृथ्वी मनुष्योंको धारण करती है, तबतक दानमें दी हुई गौ परलोकमें दाताको धारण किये रहती है। जैसे मन्त्रके साथ दी हुई ओषधि प्रयोग करते ही मनुष्यके रोगोंका नाश कर देती है, उसी प्रकार सुपात्रको दी हुई कपिला गौ मनुष्यके सब पापोंको तत्काल नष्ट कर डालती है। जैसे साँप केंचुल छोड़कर नये स्वरूपको धारण करता है, वैसे ही पुरुष कपिला गौके दानसे पापमुक्त होकर अत्यन्त शोभाको प्राप्त होता है। जैसे प्रज्वलित दीपक घरमें फैले हुए अन्धकारको दूर कर देता है, उसी प्रकार मनुष्य कपिला गौका दान करके अपने भीतर छिपे हुए पापको भी निकाल फेंकता है। बछड़ेसहित कपिला गौके शरीरमें जितने रोम होते हैं, उतने करोड़ युगोंतक दाता मनुष्य ब्रह्मलोकमें आनन्दका अनुभव करता है।

(महा० अश्वमेध० अ० १०२। ७६--८२)

(५)

कपिला गौके दर्शनसे शापमुक्ति

प्राचीन कालकी बात है। सुप्रभ नामक एक राजा था; उसे शिकारका बहुत शौक था। एक दिन राजा वनमें शिकारके लिये गया। उसने देखा, एक सुन्दर हरिनी अपने नन्हे-से बच्चेको स्तन पिला रही है। शिकारके नशेमें राजाने उसके बाण मार दिया। मरते समय उसने गुस्सेमें आकर कहा—'राजा! तुमने बड़ा पाप किया है। यह क्षात्रधर्म नहीं है। मैं अपने बच्चेके साथ मर रही हूँ। तुमने अधर्मसे मेरा नाश किया है; इसलिये जाओ—तुम भयानक सिंह बन जाओ।' राजाने अपनी मूर्खतापर पश्चात्ताप करते हुए मरती हुई मृगीसे शापमोचनके लिये प्रार्थना की। दयामयी हरिनीने कहा—'तुम्हें कपिला गाय मिलेगी और उससे तुम्हारी बातचीत होगी, तब तुम शापसे छूट जाओगे।' इतना कहकर हरिनी अपने बच्चेसहित मर गयी। राजा भयानक सिंह होकर अपने ही सिपाहियोंको खाने लगा। बचे-खुचोंने भागकर प्राण बचाये।

एक दिन राजा प्याससे व्याकुल होकर गोकुलमें पहुँचा। वहाँ एक कपिला गौ अपने दलसे बिछुड़कर उसके सामने पड़ गयी और उसकी भयावनी मूर्तिको देखकर काँप गयी। उसे अपने नन्हे-से बच्चेकी याद आयी और वह रो पड़ी। सिंहने कहा—'गैया! रोती क्यों हो, मेरे सामने आकर कोई बच नहीं सकता। अपने इष्टदेवताको याद करो।' कपिला बोली—'सिंह! मैं अपने प्राणोंके लिये नहीं रोती। मेरा दुधमुँहा बछड़ा मेरी बाट देख रहा होगा, इससे रो रही हूँ। मैं शपथ खाकर कहती हूँ, तुम मुझे अभी मत खाओ। मैं बछड़ेको दूध पिलाकर और अपने स्वजनोंसे मिलकर तुम्हारे पास लौट आऊँगी।' सिंहने पहले तो विश्वास नहीं किया; फिर जब कपिलाने भाँति-भाँतिसे शपथें कीं, तब वह मान गया। कपिला वचन देकर घर लौटी। बछड़ा उसे देखते ही पूँछ उठाकर दौड़ा, पर आज मा उदास थी। बछड़ेने कारण पूछा। माने पहले उसे दूध पिलाकर फिर कारण बता दिया। बछड़ेने माके बदलेमें, नहीं तो, उसके साथ ही जानेके लिये हठ किया। गायने उसे समझाकर, अच्छी सीख देकर कहा—

न च शोकस्त्वया कार्यः सर्वेषां मरणं ध्रुवम्।
अस्माकं प्रतिवाचं च शृणु शोकविनाशिनीम्॥
यथा हि पथिकः कश्चिच्छायार्थी वृक्षमाश्रितः।
विश्रान्तश्च पुनर्याति तद्वद्भूतसमागमः॥

'बेटा! तू मेरा शोक न करना। मरना सभीका निश्चित है। मेरी शोकनाशिनी वाणी सुन—इस संसारमें प्राणियोंका समागम वैसा ही है, जैसा छाया चाहनेवाले मुसाफिरोंका किसी वृक्षकी छायामें आकर इकट्ठे होना।' इसके बाद कपिला अपनी सखियोंसे मिली। सबने वापस न जानेकी सलाह दी, पर सत्यनिष्ठ कपिलाने उनकी बात नहीं मानकर कहा—

प्राणिनां प्राणरक्षार्थं वदाम्येवानृतं वचः।
नात्मार्थमुपयुञ्जामि स्वल्पमप्यनृतं क्वचित्॥

'मैं दूसरे निर्दोष प्राणियोंके प्राण बचानेके लिये झूठ बोल सकती हूँ; परन्तु अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये जरा-सा भी झूठ कभी नहीं बोल सकती।' अन्तमें सबकी अनुमति लेकर वह सिंहके पास लौट आयी। कपिलाको देखकर सिंहने आश्चर्यचकित नेत्रोंसे उसकी ओर देखकर कहा—'कल्याणी! सत्यवादिनी कपिले! तुम्हारा स्वागत है। सत्यनिष्ठ प्राणियोंका कुछ भी अशुभ नहीं होता। तुमने जब लौटनेके लिये शपथ ली थी, तब मुझे बड़ा कौतुक हुआ था। मैंने समझा था अब क्या लौटकर आवेगी। पर तुम आ गयी।



जाओ, मैं तुम्हें छोड़ता हूँ—तुम अपने बछड़ेके पास लौट जाओ। वह दुधमुँहा बछड़ा बड़ा दुखी होगा। कहते ही राजाने सिंह-शरीरसे छूटकर दिव्य देह ली और कहा—

प्रसादात्तव मुक्तोऽहं शापादस्मात् सुदारुणात्।
किं ते प्रियं करोम्यद्य धेनुके ब्रूहि सत्वरम्॥

'गोमाता! तुम्हारी कृपासे आज मैं दारुण शापसे मुक्त हो गया। तुम्हारी क्या प्रिय सेवा करूँ—जल्दी बोलो।' कपिलाने कहा—'राजेन्द्र! तुम शापमुक्त हो गये, मैं तो इसीसे कृतकृत्य हो गयी। मुझे प्यास लगी है, हो सके तो थोड़ा-सा जल कहींसे लाओ।' राजाने वहाँ बाणसे धरती फोड़कर सुन्दर सुशीतल जल निकाला। इसी समय वहाँ साक्षात् 'धर्म'ने आकर कपिलासे कहा—'शोभने! मैं तुम्हारे सत्यसे बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। त्रिलोकीमें तुम्हारी बराबरी कोई नहीं कर सकता।' तदनन्तर कपिला परमपदको प्राप्त हुई और राजाके बनाये हुए जिस जलाशयमें उसने जल पिया था, वह 'कपिलातीर्थ'के नामसे प्रख्यात हो गया।

(स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड)

गो-महिमा

गौएँ प्राणियोंका आधार तथा कल्याणकी निधि हैं। भूत और भविष्य गौओंके ही हाथमें है। वे ही सदा रहनेवाली पुष्टिका कारण तथा लक्ष्मीकी जड़ हैं। गौओंकी सेवामें जो कुछ दिया जाता है, उसका फल अक्षय होता है। अन्न गौओंसे उत्पन्न होता है, देवताओंको उत्तम हविष्य (घृत) गौएँ देती हैं तथा स्वाहाकार (देवयज्ञ) और वषट्कार (इन्द्रयाग) भी सदा गौओंपर ही अवलम्बित हैं। गौएँ ही यज्ञका फल देनेवाली हैं। उन्हींमें यज्ञोंकी प्रतिष्ठा है। ऋषियोंको प्रातःकाल और सायंकालमें होमके समय गौएँ ही हवनके योग्य घृत आदि पदार्थ देती हैं। जो लोग दूध देनेवाली गौका दान करते हैं, वे अपने समस्त संकटों और पापोंसे पार हो जाते हैं। जिसके पास दस गौएँ हों, वह एक गौ दान करे, जो सौ गायें रखता हो, वह दस गायें दान करे और जिसके पास हजार गौएँ मौजूद हों, वह सौ गायें दान करे तो इन सबको बराबर ही फल मिलता है। जो सौ गौओंका स्वामी होकर भी अग्निहोत्र नहीं करता, जो हजार गौएँ रखकर भी यज्ञ नहीं करता तथा जो धनी होकर भी कंजूसी नहीं छोड़ता—ये तीनों मनुष्य अर्घ्य (सम्मान) पानेके अधिकारी नहीं हैं।

प्रातःकाल और सायंकालमें प्रतिदिन गौओंको प्रणाम करना चाहिये। इससे मनुष्यके शरीर और बलकी पुष्टि होती है। गोमूत्र और गोबर देखकर कभी घृणा न करे। गौओंके गुणोंका कीर्तन करे। कभी उनका अपमान न करे। यदि बुरे स्वप्न दिखायी दें तो गोमाताका नाम ले। प्रतिदिन शरीरमें गोबर लगाकर स्नान करे। सूखे हुए गोबरपर बैठे। उसपर थूक न फेंके। मल-मूत्र न त्यागे। गौओंके तिरस्कारसे बचता रहे। अग्निमें गायके घृतका हवन करे, उसीसे स्वस्तिवाचन करावे। गो-घृतका दान और स्वयं भी उसका भक्षण करे तो गौओंकी वृद्धि होती है। (महा० अनु० ७८। ५—२१)

× × ×

गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञरूप बतलाया गया है। इनके बिना यज्ञ किसी तरह नहीं हो सकता। ये अपने दूध और घीसे प्रजाका पालन-पोषण करती हैं तथा इनके पुत्र (बैल) खेतीके काम आते और तरह-तरहके

अन्न एवं बीज पैदा करते हैं, जिनसे यज्ञ सम्पन्न होते हैं और हव्य-कव्यका भी काम चलता है। इन्हींसे दूध, दही और घी प्राप्त होते हैं। ये गौएँ बड़ी पवित्र होती हैं और बैल भूख-प्यासका कष्ट सहकर अनेकों प्रकारके बोझ ढोते रहते हैं। इस प्रकार गो-जाति अपने कामसे ऋषियों तथा प्रजाओंका पालन करती रहती है। उसके व्यवहारमें शठता या माया नहीं होती। वह सदा पवित्र कर्ममें लगी रहती है। इसीसे ये गौएँ हम सब लोगोंके ऊपर निवास करती हैं। इसके सिवा गौएँ वरदान भी प्राप्त कर चुकी हैं तथा प्रसन्न होनेपर वे दूसरोंको भी वरदान देती हैं। (महा० अनु० ८३। १७—२१)

गौएँ सम्पूर्ण तपस्वियोंसे बढ़कर हैं। इसलिये भगवान् शङ्करने गौओंके साथ रहकर तप किया था। जिस ब्रह्मलोकमें सिद्ध ब्रह्मर्षि भी जानेकी इच्छा करते हैं, वहीं ये गौएँ चन्द्रमाके साथ निवास करती हैं। ये अपने दूध, दही, घी, गोबर, चमड़ा, हड्डी, सींग और बालोंसे भी जगत्का उपकार करती रहती हैं। इन्हें सर्दी, गर्मी और वर्षाका कष्ट विचलित नहीं करता। ये गौएँ सदा ही अपना काम किया करती हैं। इसलिये ये ब्राह्मणोंके साथ ब्रह्मलोकमें जाकर निवास करती हैं। इसीसे गौ और ब्राह्मणको विद्वान् पुरुष एक बताते हैं। (महा० अनु० ६६। ३७—४२)

गौएँ परम पावन और पुण्यस्वरूपा हैं। इन्हें ब्राह्मणोंको दान करनेसे मनुष्य स्वर्गका सुख भोगता है। पवित्र जलसे आचमन करके पवित्र होकर गौओंके बीचमें गोमती-मन्त्र 'गोमा अग्ने विमाँ अश्वी' का जप करनेसे मनुष्य अत्यन्त शुद्ध एवं निर्मल (पापमुक्त) हो जाता है। विद्या और वेदव्रतमें निष्णात पुण्यात्मा ब्राह्मणोंको चाहिये कि वे अग्नि, गौ और ब्राह्मणोंके बीच अपने शिष्योंको यज्ञतुल्य गोमती-मन्त्रकी शिक्षा दें। जो तीन राततक उपवास करके गोमती-मन्त्रका जप करता है, उसे गौओंका वरदान प्राप्त होता है। पुत्रकी इच्छावालेको पुत्र, धन चाहनेवालेको धन और पतिकी इच्छा रखनेवाली स्त्रीको पति मिलता है। इस प्रकार गौएँ मनुष्यकी सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण करती हैं, वे यज्ञका प्रधान अङ्ग हैं, उनसे बढ़कर दूसरा कुछ नहीं है। (महा० अनु० ८१)

श्रीशङ्करजीद्वारा सुरभि-स्तवन

साक्षात् शङ्कर ही नीलवृष हैं

एक बार भगवान् शङ्करसे ब्रह्मतेजसम्पन्न ऋषियोंका कुछ अपराध हो गया, ऋषियोंने घोर शाप दे दिया। जिसके भयसे त्रस्त होकर शङ्करजी गोलोक पहुँचे और पवित्र



ब्राह्मणोंके ही दूसरे रूप सुरभि माताका स्तवन करने लगे। उन्होंने कहा—

× × ×

सृष्टिस्थितिविनाशानां कर्त्र्यै मात्रे नमो नमः ॥
या त्वं रसमयैर्भावैराप्याययसि भूतलम्।
देवानाञ्च तथा संघान् पितॄणामपि वै गणान् ॥
सर्वैर्ज्ञात्वा रसाभिज्ञैर्मधुरास्वाददायिनी।
त्वया विश्वमिदं सर्वं बलस्नेहसमन्वितम् ॥
त्वं माता सर्वरुद्राणां वसूनां दुहिता तथा।
आदित्यानां स्वसा चैव तुष्टा वाञ्छितसिद्धिदा ॥
त्वं धृतिस्त्वं तथा तुष्टिस्त्वं स्वाहा त्वं स्वधा तथा।
ऋद्धिः सिद्धिस्तथा लक्ष्मीर्धृतिः कीर्तिस्तथा मतिः ॥
कान्तिर्लज्जा महामाया श्रद्धा सर्वार्थसाधिनी।

× × ×

(स्कन्द० नागर० २५८। ३०—३४)

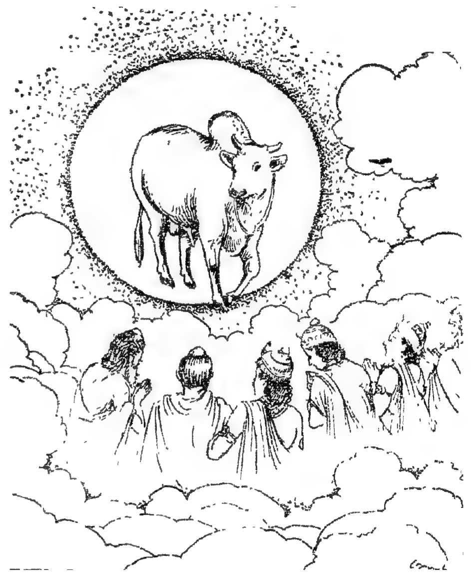
'सृष्टि, स्थिति और विनाश करनेवाली माता! तुम्हें बार-बार नमस्कार है। तुम रसमय भावोंसे समस्त पृथ्वीतल, देवता और पितरोंको तृप्त करती हो। रसाभिज्ञ सभीसे तुम परिचित हो और मधुर स्वाद देनेवाली हो। सम्पूर्ण चराचर विश्वको तुम्हींने बल और स्नेहका दान दिया है। देवि! तुम रुद्रोंकी माँ, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी

स्वसा और सन्तोषमयी वाञ्छित देनेवाली हो। तुम्हीं धृति, पुष्टि, स्वाहा, स्वधा, ऋद्धि, सिद्धि, लक्ष्मी, धारणा, कीर्ति, मति, कान्ति, लज्जा, महामाया, श्रद्धा और सर्वार्थ-साधिनी हो।'

'तुम्हारे सिवा त्रिभुवनमें कुछ भी नहीं है। तुम अग्नि और देवताओंको तृप्त करनेवाली हो और इस स्थावर-जंगम सम्पूर्ण जगत्‌में व्याप्त हो। चारों वेद तुम्हारे चार पैर हैं। समुद्र स्तन है। चन्द्र-सूर्य लोचन हैं। तुम्हारे रोम-रोममें देवताओंका निवास है। देवि! तुम्हारे दोनों सींगोंमें समस्त पर्वत, कानोंमें वायु, नाभिमें अमृत, खुरोंमें सारे पाताल, स्कन्धोंमें भगवान् ब्रह्मा, मस्तकमें सदाशिव और हृदयमें श्रीविष्णु, पूँछमें पन्नग, गोबरमें वसु, गोमूत्रमें साध्य, अस्थियोंमें समस्त यज्ञ, गुह्यमें किन्नर, सामनेके भागमें पितृगण, भालमें यक्ष और दोनों कपोलोंमें किन्नरोंका निवास है। देवि! तुम सर्वदेवमयी, सर्वभूतसमृद्धिदायिनी और सर्वलोकहितैषिणी हो, अतएव मेरे शरीरका भी हित करो। अनघे! मैं प्रणत होकर तुम्हारी पूजा करता हूँ। तुम विश्व-दुःखहारिणी हो, मेरे प्रति प्रसन्न हो। हे अमृत-सम्भवे! ब्राह्मणोंके शापानलसे मेरा शरीर दग्ध हुआ जा रहा है, तुम उसे शीतल करो।'

इतना कहकर शङ्करजी परिक्रमा करके सुरभिके देहमें प्रवेश कर गये। सुरभि माताने उन्हें अपने गर्भमें धारण कर लिया। इधर शिवजीके न होनेसे सारे जगत्‌में हाहाकार मच गया। तब देवताओंने स्तवन करके ब्राह्मणोंको प्रसन्न किया और उनसे पता लगाकर वे उस गोलोकमें पहुँचे, जहाँ पायसका कीचड़, घीकी नदी, मधुके सरोवर विद्यमान हैं। वहाँके सिद्ध और सनातन देवता हाथोंमें दही और पीयूष लिये रहते हैं।

गोलोकमें उन्होंने सूर्यके समान तेजस्वी 'नील' नामक सुरभि-सुतको देखा। भगवान् शङ्कर ही इस वृषभके रूपमें सुरभिसे अवतीर्ण हुए थे। देवता और मुनियोंने देखा—गोलोककी नन्दा, सुमनसा, स्वरूपा, सुशीलका, कामिनी, नन्दिनी, मेध्या, हिरण्यदा, धनदा, धर्मदा, नर्मदा, सकलप्रिया, वामनलम्बिका, कृष्णा, दीर्घश्रृंगा, सुपिच्छिका, तारा, तोयिका, शान्ता, दुर्विषह्या, मनोरमा, सुनासा, गौरा, गौरमुखी, हरिद्रावर्णा, नीला, शङ्खिनी, पञ्चवर्णिका, विनता, अभिनता, भिन्नवर्णा, सुपत्रिका, जया, अरुणा, कुण्डोध्नी, सुदती और चारुचम्पका—इन गौओंके बीचमें नील वृषभ स्वच्छन्द क्रीड़ा कर रहा है। उसके सारे अङ्ग लाल वर्णके थे। मुख और पूँछ पीले तथा खुर और सींग सफेद थे। वह नील वृष ही महादेव थे। वही चतुष्पाद धर्म थे और वही पञ्चमुख हर थे। उनके दर्शनमात्रसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है। नीलकी पूजासे सारे जगत्‌की पूजा होती है। नीलको चिकना ग्रास देनेसे जगत् तृप्त होता है। नीलकी देहमें विश्वव्यापी जनार्दन नित्य निवास करते हैं। देवता और ऋषियोंने विविध प्रकारसे नीलकी स्तुति करते हुए कहा—



× × ×

वृषस्त्वं भगवान् देव यस्तुभ्यं कुरुते त्वघम्॥
वृषलः स तु विज्ञेयो रौरवादिषु पच्यते।
पदा स्पृष्टः स तु नरो नरकादिषु यातनाः॥
सेवते पापनिचयैर्निगाढप्रायबन्धनैः।
क्षुत्क्षामञ्च तृषाक्रान्तं महाभारसमन्वितम्॥
निर्दया ये प्रशोष्यन्ति मतिस्तेषां न शाश्वती।

× × ×

(स्कन्द० नागर० २५९। ५८—६१)

देव! तुम वृषरूपी भगवान् हो। जो मनुष्य तुम्हारे

साथ पापका व्यवहार करता है, वह निश्चय ही वृषल होता है और उसे रौरवादि नरकोंकी यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। जो मनुष्य तुम्हें पैरोंसे छूता है, वह गाढ़े बन्धनोंमें बँधकर, भूख-प्याससे पीड़ित होकर नरक-यातना भोगता है और जो निर्दय होकर तुम्हें पीड़ा पहुँचाता है, वह शाश्वती गति—मुक्तिको नहीं पा सकता।

ऋषियोंद्वारा स्तवन करनेपर नीलने प्रसन्न होकर उनको प्रणाम किया। फिर ब्राह्मणोंने नील वृषरूप महेश्वरको वरदान दिया कि मृत प्राणीके एकादशाहके दिन सुन्दर सुदृढ़ शक्तिसम्पन्न नील वृषको, उसके वाम भागमें चक्र और दक्षिण भागमें शूल अङ्कित करके गायोंके समूहमें छोड़ दिया जायगा तो वह जगत्का कल्याण करता रहेगा। इस अवस्थामें देवता उसकी रक्षा करेंगे।

(स्कन्द० नागर० २५८। ५९)

दिलीपकी गो-सेवा

रघुवंश महाकाव्यकी उज्ज्वल कथाओंमें नन्दिनी गायके द्वारा दिये गये वरदानकी कथा जितनी मनोहर है उतनी ही जीवनको पवित्र करनेवाली है। महाराजा दिलीपको वृद्धावस्थातक सन्तान नहीं होती है, इसलिये वे रानीको साथ लेकर गुरु वसिष्ठके आश्रममें उनसे सलाह पूछने जाते हैं। गुरु वसिष्ठ राजाको याद दिलाते हैं कि एक बार अनजानमें उन्होंने कामधेनु गौका अनादर कर दिया था और इसी कारणसे उसके दिये हुए शापका फल वे भोग रहे हैं। वह शाप कामधेनुकी पुत्री नन्दिनीकी सेवासे मार्जित हो सकता है।

राजा सेवापरायण होनेकी प्रतिज्ञा करते हैं, और सबेरेसे नन्दिनीकी सेवामें लग जाते हैं। अपने व्रतके अनुसार अनुचरोंको वे छुट्टी दे देते हैं, और स्वयं पत्नीके साथ वनवासके संयमी जीवनको ग्रहण कर गोसेवापरायण हो जाते हैं। इस सेवाका वर्णन महाकविने इस प्रकार किया है—

आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च।
अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्॥

(रघुवंश २। ५)

उसे मीठी घासके कौर खिलाते हुए, उसके शरीरको सुहलाते, डाँस वगैरहको दूर करते, वह जहाँ जाना चाहती वहीं जाने देते; उसकी गतिका अनुसरण करते, 'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्' उसकी छायाके समान उसके पीछे-पीछे रहते हुए उसकी आराधना करने लगे। राजाके तपका प्रभाव ऐसा था, और उनका दया-भाव इतना विश्वविजयी था कि, वनके समस्त स्थावर-जंगम जीव मन्त्रमुग्ध हो गये, और 'ऊनं न सत्त्वेष्वधिको बबाधे तस्मिन् वनं गोप्तरि गाहमाने।' इस रक्षा करनेवाले राजाके वनमें पैर रखते ही बलवान् प्राणियोंने अपनेसे कम बलवालोंको तंग करना छोड़ दिया।

राजा प्रतिदिन प्रातःकाल गायको चरानेके लिये निकलते; उनकी रानी पहुँचाने जाती; और सायंकाल जब राजा गायको लेकर लौटते तब रानी दोनोंको लेने जाती। दोनों गोसेवापरायण पति-पत्नी और उस धन्य गोमाताके सायंकालके मिलनका वर्णन करता हुआ कवि कहता है—

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या॥

(रघुवंश २। २०)

राजाके आगे चलती हुई वह गाय, उसके सामने मिलनेके लिये आयी हुई राजाकी धर्मपत्नी और राजाके बीचमें ऐसी सुशोभित हो रही थी मानो दिन और रातके बीचमें आयी हुई सन्ध्या हो।

सन्ध्याकालमें उसकी पूजा-अर्चा करके, उसे दुहकर उसके सोनेके पीछे राजा सोते और उठनेके पहले उठते। इस प्रकार इक्कीस दिन बीत गये।

तदनन्तर राजाकी भक्तिभावनाकी परीक्षा करनेके लिये, मुनिकी होमधेनु, गङ्गाके एक प्रपातके समीप, एक हिमालयकी गुफामें, जिसमें कोमल घास उग रही थी, घुस गयी। गाय हिंस्र पशुओंसे सुरक्षित है ऐसा समझकर राजा पर्वतकी शोभा देखनेमें तल्लीन थे, इसी बीच एक सिंह आकर गायके ऊपर झपटा, इसकी खबर राजाको न लगी। जब गायकी आर्त्तध्वनि सुनायी पड़ी, तब राजाकी नजर पीछे पड़ी और वे देखते क्या हैं कि लाल गायके ऊपर पंजा रक्खे केसरी खड़ा है। राजा लज्जित हो गये और तरकसमेंसे बाण निकालकर ज्यों ही सिंहपर छोड़ने लगे कि उनका दाहिना हाथ जहाँ-का-तहाँ रह गया। ऐसा जान पड़ा मानो मन्त्रौषधिके द्वारा उनका सारा बाहुबल नष्ट कर दिया गया हो। उनकी यह लाचारी देखकर सिंह ठहाका मारकर हँसा और बोला, 'राजा! यह वृथा श्रम क्यों करते हो? मैं सामान्य सिंह नहीं हूँ, बल्कि महादेवका किंकर कुम्भोदर हूँ। शिवजीके चरणस्पर्शसे पवित्र हुए मेरे शरीरपर तुम्हारे अस्त्र काम नहीं कर सकते। इसलिये यह व्यर्थ प्रयत्न छोड़ दो और घर लौट जाओ। तुम्हें जो

काम सौंपा गया था, उसे तुम कर चुके। तुम्हारी गुरुभक्ति सिद्ध हो चुकी है। जिसकी रक्षा शस्त्रसे नहीं हो सकती उसके बचानेमें शस्त्रधारी क्षत्रिय निष्फल हो जाय तो इसमें लज्जाकी कोई बात नहीं।' इसके बाद सुन्दर छटाभरे शब्दचित्रोंद्वारा एक-एक पंक्तिमें कविने राजाके अन्तःकरणमें चलते हुए संशय और श्रद्धाके, आशा और निराशाके तुमुल युद्धका वर्णन किया है। गायके बचानेके पहले ही प्रयत्नमें असफल हुए राजा दीनतापूर्वक जवाब देते हैं; 'मृगेन्द्र! मैं हिल-डुल भी नहीं सकता। इसलिये मेरा कहना तुम्हें हँसने योग्य भले ही लगे, परन्तु-

गुरोरपीदं धनमाहिताग्नेर्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम्।

(रघुवंश २।४४)

अग्निहोत्री गुरुकी कामधेनु—उनका धन—मेरी आँखोंके सामने नष्ट हो, यह मुझसे नहीं देखा जाता। इसलिये तुम मुझपर कृपा करके मेरा शरीर ले लो, इससे अपनी भूख मिटाओ, और महर्षिकी इस गायको छोड़ दो। साँझ पड़नेपर इसका छोटा बछवा इसकी राह देखेगा।'

सिंह राजाके निश्चयको बदलनेके लिये अनेकों प्रकारसे समझाता है। सार्वभौम राज्य, जवानी, सुन्दर शरीर इन सबका विचार करनेके लिये कहता है।

भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजाः प्रजानाथ पितेव पासि॥

(रघुवंश २।४८)

'यदि तुम भूतदयाके वशीभूत हो तो अपना शरीर प्रदान करके तुम इस एक ही गायकी रक्षा कर सकोगे। लेकिन यदि तुम जीते रहोगे तो हे प्रजानाथ! तुम अपनी प्रजाको पिताके समान सदा संकटोंसे उबार सकोगे।' आगे चलकर कहता है कि, 'परन्तु यदि तुम्हें अपने अपराधसे क्रुद्ध अग्निरूप अपने गुरुका डर लगता हो तो उसको तुम घड़े-जैसे थनवाली करोड़ों गायोंको देकर शान्त कर सकते हो।' यह दलील भी काम न कर सकी।

इस प्रकार सिंह मानता न था, और गायकी करुणापूर्ण आँखें राजाके दयाभाव और सेवाभावको बढ़ाती जाती थीं। सिंहको राजा बहुत समझाते हैं; हमारा क्षत्रियत्व निष्फल हो रहा है, ऐसा कहकर उससे विनती करते हैं; इसके बाद एक मीठी दलील पेश करते हैं। कहते हैं कि, 'जिस प्रकार तुम देवदारु वृक्षकी रक्षा शिवजीकी आज्ञासे करते हो उसी प्रकार मैं अपने गुरुकी आज्ञासे इस गायकी रक्षा करता हूँ। इस प्रकार सेवाकार्य करनेवाले तुम मेरी सेवाकी भावनाको क्यों नहीं समझते!' इसके अनन्तर फिर एक सुन्दर दलील देते हैं—

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं यशःशरीरे भव मे दयालुः।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु॥

(रघुवंश २।५७)

यदि तुम्हें ऐसा लगता है कि मेरी हिंसा नहीं हो सकती। मेरे ऊपर दया आती हो, तो (मैं कहता हूँ कि मेरे) इस नश्वर शरीरपर क्यों दया करते हो! मेरा जो यशःशरीर—अमर यशरूपी शरीर—है उसके ऊपर दया करो और इस नश्वर शरीरको तुम खा डालो। इस नश्वर पिण्डपर मेरे-जैसे मनुष्यको कोई आस्था या स्पृहा नहीं होती।

इस दलीलसे सिंह मात खा जाता है और कहता है, 'तथेति'—वैसा ही हो। इस प्रकार राजा सिंहकी भूख मिटानेके लिये उसके चरणोंपर अपने शरीरको 'मांसके पिंडके समान' अर्पण करते हैं। परन्तु आश्चर्यकी बात यह होती है कि सिंहकी उग्र गरजके स्थानमें आकाशसे, औंधे मुँह पड़े हुए राजाके सिरपर, पुष्पवृष्टि होती है, और एक धीमी अमृत-जैसी मधुर ध्वनि सुनायी पड़ती है—'वत्स उठ।' राजा उठते हैं और सामने देखते हैं कि अपनी जननीके समान वह गोमाता दूधकी धार छोड़ती हुई खड़ी है और सिंह अदृश्य हो गया है!

राजाके सत्त्वकी परीक्षा पूरी होती है। उनके प्रचण्ड आत्मबलिदानकी विजय हो गयी। नन्दिनी उनसे कहती है 'यह सिंह तो मेरी ही माया थी। इस मायाके द्वारा मैंने तेरी परीक्षा ली। ऋषिके प्रभावसे स्वयं काल भी मेरे ऊपर प्रहार करनेमें असमर्थ है'—'मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि।' राजाकी गुरुभक्तिसे, सेवासे और दयासे प्रसन्न हुई गाय सन्तानप्राप्तिके लिये उत्सुक राजाको उनका माँगा हुआ वर प्रदान करती है, और कहती है—

भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च प्रीतास्मि ते पुत्र वरं वृणीष्व।
न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्॥

(रघुवंश २।६३)

'तुम्हारी गुरुभक्ति और मेरे ऊपर दयासे मैं प्रसन्न हो गयी हूँ। पुत्र! तू वर माँग। मैं केवल दूध ही देती हूँ, ऐसा न समझ। मैं कामधेनु हूँ। प्रसन्न होनेपर जो चाहे सो दे सकती हूँ।'

कविने यहाँ दिलीपकी साक्षात् प्रेममूर्ति चित्रित की है। गायको बचानेमें प्राण अर्पण किया जाय या करोड़ों गायोंके दानका पुण्य प्राप्त किया जाय, इस धर्मसंकटमें एकको चुननेमें राजाको देर नहीं लगी। निःशंक होकर वे प्राण अर्पण करना ही पसंद करते हैं, और इस प्रकार अद्भुत रीतिसे दैवी सत्त्वको प्रसन्न करते हैं। उनकी सत्यकी अविरत खोज करनेके फलमें उन्हें गोरक्षाका सच्चा मार्ग—अहिंसाका—सम्पूर्ण प्रेमका मार्ग—मिल गया है और उस मार्गपर चलनेसे उन्हें समस्त ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त हो गयीं।* (गोसेवा)

* इस कथाका मूल वर्णन पद्मपुराण उत्तरखण्डमें है। शायद कविश्रेष्ठ कालिदासने वहींसे इसको लिया है

गोभावनाष्टकम्

(सव्यसाची)

भूमिं भावयते धेनुः खादैश्च हलवाहनैः ।
धेनुं भावयते भूमिः खलिधान्यतृणाङ्कुरैः ॥ १ ॥
इष्टं मिष्टं च शिष्टं च देव्योः सख्यमिदं शुभम् ।
श्रेयः प्रेयश्च तावद् वै यावदेतद् दृढं द्वयोः ॥ २ ॥
भूगोदेवीप्रसादेन श्रीः शक्तिः शारदा सदा ।
विलसन्ति ध्रुवं देशे सुरक्षन्त्यः स्वतन्त्रताम् ॥ ३ ॥
शोकहीनो भवेल्लोकोऽकुण्ठवैकुण्ठवैभवः ।
स्वराज्यसुखशान्त्याढ्यो भूगोसेवाप्रभावतः ॥ ४ ॥
खादहीना क्षुधाक्षीणा भारते भूरि भूरियम् ।
तृणहीना क्षुधाक्षीणा गोमाता क्लिद्यतेऽनिशम् ॥ ५ ॥
भूगोदेव्योर्भवेद् भूयः साहाय्यं चेत् परस्परम् ।
कृष्यदुग्धान्नवैपुल्याद् भारतं स्यात् प्रभारतम् ॥ ६ ॥
चतुष्पाद् गौः कृतेऽन्येषु त्वेकैकोनपदा क्रमात् ।
पदैकेन कलौ माता कथं चलतु तिष्ठतु ॥ ७ ॥
अन्नं वीर्यं च रक्षां च सेवां पादचतुष्टयम् ।
सत्वरं प्रतिसन्धाय कार्यं कृतयुगं कलौ ॥

मानव-हृदयकी हिंसा

मनुष्यके आहारके लिये जो आज प्राणियोंका वध होता है, उसे रोका जाय तो बड़ा अच्छा हो। परन्तु इसके लिये एक ही मार्ग है और वह यह है कि मनुष्य-हृदयको जाग्रत् किया जाय। इसके सिवा दूसरा कोई उपाय ही नहीं है। जहाँ भक्ष्य-भक्षक-भाव पक्का हो गया है, वहाँ दया-बुद्धिको उत्पन्न करना बहुत ही कठिन है। पशु-पक्षी, मत्स्य आदिका वध करनेके लिये जो पालन-पोषण किया जाता है, वह शिकारकी अपेक्षा भी अधिक निन्दनीय है। जिनका पालन करना उन्हींका वध करना, जिन्हें खाना देना उन्हींको खा डालना—इसमें उन जीवोंकी हिंसा तो होती ही है, परन्तु उससे भी अधिक भयानक मनुष्य-हृदयकी हिंसा हो जाती है। (श्रीकालेलकर)

गो-सेवा-व्रतसे पुत्रप्राप्ति और रामनाम-स्मरणसे गोहत्या-पापका नाश

ऋतम्भर नामके एक राजा थे। उनके कई स्त्रियाँ थीं, पर उनके कोई सन्तान नहीं थी। एक दिन अकस्मात् जाबालि मुनि आ पहुँचे। राजाने स्वागत-सत्कारके बाद सन्तानके लिये उपाय पूछा। मुनिने गायोंकी महिमाका गान करते हुए कहा—

'विष्णोः प्रसादो गोश्चापि शिवस्याप्यथवा पुनः।'

भगवान् विष्णु, गौ और भगवान् शङ्करकी कृपासे पुत्रकी प्राप्ति हो सकती है।

राजाने आदरपूर्वक मुनिसे पूछा—'मुने! गौकी कब पूजा किस प्रकार की जानी चाहिये और उससे क्या फल होगा।' मुनिने कहा—'महाराज! गो-सेवाका व्रत लेनेवाले पुरुषको गाय चरानेके लिये स्वयं प्रतिदिन जंगलमें जाना चाहिये। गायको जौ खिलाकर उसके गोबरमें जितने जौ निकलें उनको चुनकर संग्रह करना चाहिये और पुत्रकी इच्छा करनेवाले पुरुषको वही जौ खाने चाहिये। जब गौ जल पी चुके तभी उसको भी पवित्र जल पीना चाहिये। गौ जब ऊँची जगहपर रहे तब उसको नीची जगहमें रहना चाहिये। निरन्तर गौके शरीरसे मच्छर और डाँसोंको हटाना चाहिये और उसके खानेके लिये अपने हाथों घास लाना चाहिये। इस प्रकार यदि तुम गो-सेवा-व्रतका पालन करोगे तो गो-माता तुम्हें निश्चय ही धर्मपरायण पुत्र देगी।'

पुत्रकामी धर्मात्मा राजा ऋतम्भरने मुनिके आज्ञानुसार गो-सेवा-व्रत ग्रहण कर लिया। एक दिन वनमें राजा प्रकृतिकी शोभा देख रहे थे कि इसी बीचमें दूसरे वनसे आकर एक सिंहने गौको मार डाला। उस समय गौने बड़े कातर-स्वरसे डकारनेकी ऊँची आवाज की। राजाने दौड़कर देखा और अपनी गो-माताको सिंहके द्वारा निहत जानकर वे विकल होकर रोने लगे। तदनन्तर धैर्य धारण करके वे जाबालि मुनिके पास आये और सारी घटना सुनाकर उनसे इस पापसे छूटनेका और पुत्रप्रद व्रतकी पूर्तिका उपाय पूछा। मुनिने कहा—'पापोंके नाश करनेके लिये शास्त्रोंने भाँति-भाँतिके प्रायश्चित्त बतलाये हैं। नियमानुसार उनका अनुष्ठान करनेसे पाप नष्ट हो जाते हैं। परन्तु—



द्वयोर्वै निष्कृतिर्नास्ति पापपुञ्जकृतोस्तयोः।
मत्या गोवधकर्तुश्च नारायणविनिन्दितुः॥
गवां यो मनसा दुःखं वाञ्छत्यधमसत्तमः।
स याति निरयस्थानं यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥
योऽपि देवं हरिं निन्देत् सकृद्दुर्भाग्यवान्नरः।
स चापि नरकं गच्छेत् पुत्रपौत्रपरीवृतः॥
तस्माज्ज्ञात्वा हरिं निन्दन् गोषु दुःखं समाचरन्।
कदापि नरकान्मुक्तिं न प्राप्नोति नरेश्वर॥

(पद्म० पाताल० १९। ३३—३६)

जान-बूझकर गो-वध और भगवान् नारायणकी निन्दा करनेवाले—इन दोनों महान् पापियोंका निस्तार नहीं हो सकता। जो नराधम मनमें भी गायोंके दुःख होनेकी इच्छा कर लेता है, उसे चौदह इन्द्रोंके कालतक नरकमें रहना पड़ता है। जो अभागा मनुष्य एक बार भी भगवान् हरिकी निन्दा करता है, वह अपने पुत्र-पौत्रोंके साथ नरकमें जाता है। इसलिये राजन्! जो मनुष्य जान-बूझकर भगवान्की निन्दा और गायोंको दुःख देता है, उसका नरकसे छुटकारा कभी नहीं हो सकता।

परन्तु अज्ञानसे किये हुए गो-वधका प्रायश्चित्त है। तुम राजा ऋतुपर्णके पास जाओ, वे तुम्हें उचित परामर्श देंगे।'

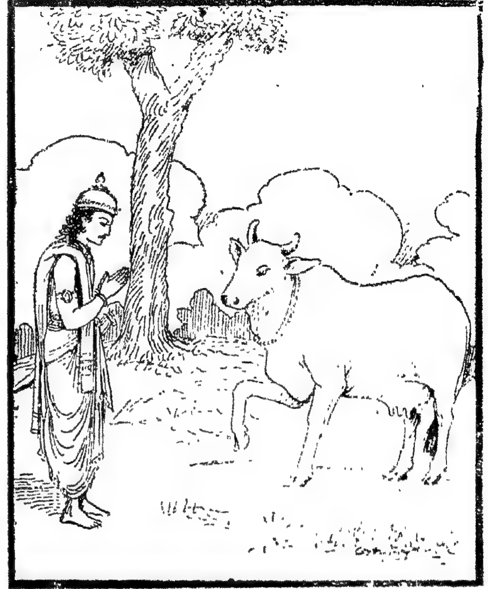
जाबालि मुनिके आज्ञानुसार राजा ऋतम्भर समदृष्टि-सम्पन्न श्रीराम-भक्त राजा ऋतुपर्णके पास गये और सारी कथा सुनाकर उन्होंने उपाय पूछा। प्रतापवान् धर्मविद् बुद्धिमान् ऋतुपर्णने हँसते हुए कहा--'महाराज! कहाँ शास्त्रवेत्ता मुनि और कहाँ मैं। आप उन्हें छोड़कर मुझ पण्डिताभिमानी मूर्खके पास क्यों आये? परन्तु यदि मेरे ही प्रति आपकी श्रद्धा है तो मैं निवेदन करता हूँ, आप आदर-पूर्वक सुनिये---

भज श्रीरघुनाथं त्वं कर्मणा मनसा गिरा।
नैष्कापट्येन लोकेशं तोषयस्व महामते॥
सन्तुष्टो दास्यते सर्वं तव हृत्स्थं मनोरथम्।
अज्ञानकृतगोहत्यापापनाशं करिष्यति॥

(पद्म० पाताल० १९। ४६-४७)

महामते! अब आप कपट छोड़कर तन, मन, वचनसे सर्वलोकेश्वर भगवान् श्रीरामका भजन कीजिये और उनको सन्तुष्ट करनेमें लगिये। वे सन्तुष्ट होकर आपके हृदयकी समस्त कामनाओंको पूर्ण कर देंगे और आपके इस अज्ञानकृत गो-हत्या-पापको भी नष्ट कर देंगे।'

महाराज ऋतुपर्णसे आदेश प्राप्त करके गो-सेवाव्रती राजा ऋतम्भर भगवान् श्रीरामके भजन-स्मरणसे पवित्रात्मा होकर पुनः व्रतपालनमें लग गये। वे प्राणीमात्रके हित-साधनमें लगकर निरन्तर भगवान् श्रीरामचन्द्रके नामका स्मरण करते हुए गो-सेवाके लिये महान् वनमें चले गये। कुछ दिनोंके बाद उनकी सेवासे सन्तुष्ट होकर कृपामयी देवी कामधेनुने प्रकट होकर उन्हें अभीष्ट वर दिया और फिर वे अन्तर्धान हो गयीं। उसी वरके फलस्वरूप नरेन्द्र ऋतम्भरके घर परम भक्त सत्यवान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। (पद्म० पाताल० १८। १९)



मांस-भक्षणके दोष

१-मांसभक्षण भगवत्प्राप्तिमें बाधक है।
२-मांसभक्षणसे ईश्वरकी अप्रसन्नता होती है।
३-मांसभक्षण महापाप है।
४-मांसभक्षणसे परलोकमें दुःख प्राप्त होता है।
५-मांसभक्षण मनुष्यके लिये प्रकृतिविरुद्ध है।
६-मांसभक्षणसे मनुष्य पशुत्वको प्राप्त होता है।
७-मांसभक्षण मनुष्यकी अनधिकार चेष्टा है।
८-मांसभक्षण घोर निर्दयता है।
९-मांसभक्षणसे स्वास्थ्यका नाश होता है।
१०-मांसभक्षण शास्त्र-निन्दित है। (श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

महर्षिका मूल्य—गौ

महर्षि च्यवन अभिमान, क्रोध, हर्ष और शोकका त्याग करके महान् व्रतका दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए एक बार बारह वर्षतक जलके अंदर रहे। जल-जन्तुओंसे उनका बड़ा प्रेम हो गया था और वे उनके आसपास बड़े सुखसे रहते थे। एक बार कुछ मल्लाहोंने गङ्गाजी और यमुनाजीके जलमें जाल बिछाया। जब जाल खींचा गया, तब उसमें जल-जन्तुओंसे घिरे हुए महर्षि च्यवन भी खिंच आये। जालमें महर्षिको देखकर मल्लाह डर गये और उनके चरणोंमें सिर रखकर प्रणाम करने लगे। जालके बाहर खींचनेसे, स्थलका स्पर्श होनेसे और त्रास पहुँचनेसे बहुत-से मत्स्य कलपने और मरने लगे। इस प्रकार मत्स्योंका बुरा हाल देखकर ऋषिको बड़ी दया आयी और वे बारंबार लंबी साँस लेने लगे। मल्लाहोंके पूछनेपर मुनिने कहा, 'देखो, ये मत्स्य जीवित रहेंगे, तो मैं भी रहूँगा, अन्यथा इनके साथ ही मर जाऊँगा। मैं इन्हें त्याग नहीं सकता।' मुनिकी बात सुनकर मल्लाह डर गये और उन्होंने काँपते हुए जाकर सारा समाचार महाराज नहुषको सुनाया।

मुनिकी सङ्कटमय स्थिति जानकर राजा नहुष अपने मन्त्री और पुरोहितको साथ लेकर तुरंत वहाँ गये। पवित्र भावसे हाथ जोड़कर उन्होंने मुनिको अपना परिचय दिया और उनकी विधिवत् पूजा करके कहा—'द्विजोत्तम! आज्ञा कीजिये, मैं आपका कौन-सा प्रिय कार्य करूँ?'

महर्षि च्यवनने कहा—'राजन्! इन मल्लाहोंने आज बड़ा भारी परिश्रम किया है। अतः आप इनको मेरा और मछलियोंका मूल्य चुका दीजिये।' राजा नहुषने तुरंत ही मल्लाहोंको एक हजार स्वर्ण-मुद्रा देनेके लिये पुरोहितजीसे कहा। इसपर महर्षि च्यवन बोले—'एक हजार स्वर्णमुद्रा मेरा उचित मूल्य नहीं है। आप सोचकर इन्हें उचित मूल्य दीजिये।'

इसपर राजाने एक लाख स्वर्णमुद्रासे बढ़ते हुए एक करोड़, अपना आधा राज्य और अन्तमें समूचा राज्य देनेकी बात कह दी; परन्तु च्यवन ऋषि राजी नहीं हुए। उन्होंने कहा—'आपका आधा या समूचा राज्य मेरा उचित मूल्य है, ऐसा मैं नहीं समझता। आप ऋषियोंके साथ विचार कीजिये और फिर जो मेरे योग्य हो, वही मूल्य दीजिये।'

महर्षिका वचन सुनकर राजा नहुषको बड़ा खेद हुआ। वे अपने मन्त्री और पुरोहितसे सलाह करने लगे। इतनेहीमें गायके पेटसे जन्मे हुए एक फलाहारी वनवासी मुनिने राजाके समीप आकर उनसे कहा—'महाराज! ये ऋषि जिस उपायसे सन्तुष्ट होंगे, वह मुझे मालूम है।'

नहुषने कहा—'ऋषिवर! आप महर्षि च्यवनका उचित मूल्य बतलाकर मेरे राज्य और कुलकी रक्षा कीजिये। मैं अगाध दुःखके समुद्रमें डूबा जा रहा हूँ। आप नौका बनकर मुझे बचाइये।'

नहुषकी बात सुनकर मुनिने उन लोगोंको प्रसन्न करते हुए कहा—'महाराज! ब्राह्मण सब वर्णोंमें उत्तम हैं। अतः इनका कोई मूल्य नहीं आँका जा सकता। ठीक इसी प्रकार गौओंका भी कोई मूल्य नहीं लगाया जा सकता। अतएव इनकी कीमतमें आप एक गौ दे दीजिये।'

महर्षिकी बात सुनकर राजाको बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महर्षि च्यवनके पास जाकर कहा—'महर्षे! मैंने एक गौ देकर आपको खरीद लिया है। अब आप उठनेकी कृपा कीजिये। मैंने आपका यही उचित मूल्य समझा है।'

च्यवनने कहा—'राजेन्द्र! अब मैं उठता हूँ। आपने मुझे उचित मूल्य देकर खरीद लिया है। मैं इस संसारमें गायोंके समान दूसरा कोई धन नहीं समझता।'

कीर्तनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्वपापहरं शिवम्॥
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते।
अन्नमेव सदा गावो देवानां परमं हविः॥
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ।
गावो यज्ञस्य नेत्र्यो वै तथा यज्ञस्य ता मुखम्॥
अमृतं ह्यव्ययं दिव्यं क्षरन्ति च वहन्ति च।
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः॥
तेजसा वपुषा चैव गावो वह्निसमा भुवि।
गावो हि सुमहत्तेजः प्राणिनां च सुखप्रदाः॥
निविष्टं गोकुलं यत्र श्वासं मुञ्चति निर्भयम्।
विराजयति तं देशं पापं चास्यापकर्षति॥
गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किञ्चित् परं स्मृतम्॥
इत्येतद् गोषु मे प्रोक्तं माहात्म्यं भरतर्षभ।
गुणैकदेशवचनं शक्यं पारायणं न तु॥

वीरवर ! गायोंके नाम और गुणोंका कीर्तन करना, सुनना, गायोंका दान देना और उनके दर्शन करना बहुत प्रशंसनीय समझा जाता है । ऐसा करनेसे पापोंका नाश और परम कल्याणकी प्राप्ति होती है । गायें लक्ष्मीकी जड़ हैं, उनमें पापका लेश भी नहीं है । वे मनुष्योंको अन्न और देवताओंको उत्तम हविष्य देती हैं । स्वाहा और वषट्कार नित्य गायोंमें ही प्रतिष्ठित हैं । गायें ही यज्ञका सञ्चालन करनेवाली और उसकी मुखरूपा हैं । गायें विकाररहित दिव्य अमृत धारण करती और दुहनेपर अमृत ही प्रदान करती हैं । वे अमृतकी आधार हैं । समस्त लोक उनको नमस्कार करते हैं । इस पृथ्वीपर गायें अपने तेज और शरीरमें अग्निके समान हैं । वे महान् तेजोमयी और समस्त प्राणियोंको सुख देनेवाली हैं । गौओंका समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतासे साँस लेता है वह स्थान चमक उठता है और वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है । गायें स्वर्गकी सीढ़ी हैं और स्वर्गमें भी उनका पूजन होता है । वे समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली देवियाँ हैं । उनसे बढ़कर और कोई भी नहीं है । राजन् ! ये जो मैंने गायोंका माहात्म्य कहा है सो केवल उनके गुणोंके एक अंशका दिग्दर्शनमात्र है । गौओंके सम्पूर्ण गुणोंका वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता ।

तदनन्तर मल्लाहोंने मुनिसे उनकी दी हुई गौको स्वीकार करनेके लिये कातर प्रार्थना की । मुनिने उनकी दी हुई गाय लेकर कहा - 'मल्लाहो ! इस गोदानके प्रभावसे तुम्हारे सारे पाप नष्ट हो गये । अब तुम इस जलमें उत्पन्न हुई मछलियोंके साथ स्वर्गको जाओ ।'

देखते-ही-देखते महर्षि च्यवनके आशीर्वादसे वे मल्लाह तुरंत मछलियोंके साथ स्वर्गको चले गये । उनको इस प्रकार स्वर्गको जाते देख राजा नहुषको बड़ा आश्चर्य हुआ । तदनन्तर राजा नहुषने महर्षिकी और गोजातिकी पूजा की और उनसे धर्ममें स्थित रहनेका वरदान प्राप्त करके वे अपने नगरको लौट आये और महर्षि अपने आश्रमको चले गये । (महा० अनु० ५० । ५१)

चरती गायको रोकनेसे नरक-दर्शन

प्राचीन कालकी बात है । राजा जनकने ज्यों ही योगबलसे शरीरका त्याग किया, त्यों ही एक सुन्दर सजा हुआ विमान आ गया और राजा दिव्य-देहधारी सेवकोंके साथ उसपर चढ़कर चले । विमान यमराजकी संयमनीपुरीके निकटवर्ती मार्गसे जा रहा था । ज्यों ही विमान वहाँसे आगे बढ़ने लगा, त्यों ही बड़े ऊँचे स्वरसे राजाको हजारों मुखोंसे निकली हुई करुण ध्वनि सुनायी पड़ी - 'पुण्यात्मा राजन् ! आप यहाँसे जाइये नहीं; आपके शरीरको छूकर आनेवाली वायुका स्पर्श पाकर हम यातनाओंसे पीड़ित नरकके प्राणियोंको बड़ा ही सुख मिल रहा है ।' धार्मिक और दयालु राजाने दुःखी जीवोंकी करुण पुकार सुनकर दयार्द्र होकर निश्चय किया कि 'जब मेरे यहाँ रहनेसे इन्हें सुख मिलता है, तो बस, मैं यहीं रहूँगा । मेरे लिये यही सुन्दर स्वर्ग है ।' राजा वहीं ठहर गये । तब यमराजने उनसे कहा - 'यह स्थान तो दुष्ट, हत्यारे पापियोंके लिये है । हिंसक, दूसरोंपर कलङ्क लगानेवाले, लुटेरे, पतिपरायणा पत्नीका त्याग करनेवाले, मित्रोंको धोखा देनेवाले, दम्भी, द्वेष और उपहास करके, मन-वाणी-शरीरसे कभी भगवान्का स्मरण न करनेवाले जीव यहाँ आते हैं और उन्हें नरकोंमें डालकर मैं भयङ्कर यातना दिया करता हूँ । तुम तो पुण्यात्मा हो, यहाँसे अपने प्राप्य दिव्यलोकमें जाओ ।' जनकने कहा - 'मेरे शरीरसे स्पर्श की हुई वायु इन्हें सुख पहुँचा रही है, तब मैं कैसे जाऊँ ? आप इन्हें इस दुःखसे मुक्त कर दें तो मैं भी सुखपूर्वक स्वर्गमें चला जाऊँगा ।'

यमराजने (पापियोंकी ओर इशारा करके) कहा - 'ये कैसे मुक्त हो सकते हैं ? इन्होंने बड़े-बड़े पाप किये हैं । इस पापीने अपनेपर विश्वास करनेवाली मित्रपत्नीपर बलात्कार किया था, इसलिये इसको मैंने लोहशङ्कु नामक नरकमें डालकर दस हजार वर्षोंतक पकाया है । अब इसे पहले सूअरकी और फिर मनुष्यकी योनि प्राप्त होगी और वहाँ यह नपुंसक होगा । यह दूसरा बलपूर्वक व्यभिचारमें प्रवृत्त था । सौ वर्षोंतक रौरवनरकमें पीड़ा भोगेगा । इस तीसरेने पराया धन चुराकर भोगा था, इसलिये दोनों हाथ काटकर इसे पूय-शोणित नामक नरकमें डाला जायगा । इस प्रकार ये सभी पापी नरकके अधिकारी हैं । तुम यदि इन्हें छुड़ाना चाहते हो तो अपना पुण्य अर्पण करो । एक दिन प्रातःकाल शुद्ध मनसे तुमने मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरघुनाथजीका ध्यान किया था और अकस्मात् राम-

नामका उच्चारण किया था, बस, वही पुण्य इन्हें दे दो। उससे इनका उद्धार हो जायगा।'

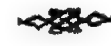
राजाने तुरंत अपने जीवनभरका पुण्य दे दिया और इसके प्रभावसे नरकके सारे प्राणी नरक-यन्त्रणासे तत्काल छूट गये तथा दयाके समुद्र महाराज जनकका गुण गाते हुए दिव्य लोकको चले गये।

तब राजाने धर्मराजसे पूछा कि 'जब धार्मिक पुरुषोंका यहाँ आना ही नहीं होता, तब फिर मुझे यहाँ क्यों लाया गया।' इसपर धर्मराजने कहा, 'राजन्! तुम्हारा जीवन तो पुण्योंसे भरा है। पर एक दिन तुमने छोटा-सा पाप किया था।

एकदा तु चरन्तीं गां वारयामास वै भवान्।
तेन पापविपाकेन निरयद्वारदर्शनम्॥

तुमने चरती हुई गायको रोक दिया था। उसी पापके कारण तुम्हें नरकका दरवाजा देखना पड़ा। अब तुम उस पापसे मुक्त हो गये और इस पुण्यदानसे तुम्हारा पुण्य और भी बढ़ गया। तुम यदि इस मार्गसे न आते तो इन बेचारोंका यन्त्रणामय नरकसे कैसे उद्धार होता? तुम-जैसे दूसरोंके दुःखसे दुखी होनेवाले दया-धाम महात्मा दुखी प्राणियोंका दुःख हरनेमें ही लगे रहते हैं। भगवान् कृपासागर हैं। पापका फल भुगतानेके बहाने इन दुखी जीवोंका दुःख दूर करनेके लिये ही इस संयमनीके मार्गसे उन्होंने तुमको यहाँ भेज दिया है।' तदनन्तर राजा धर्मराजको प्रणाम करके परम धामको चले गये।

(पद्म० पाताल० अध्याय १८। १९)



गोबरमें लक्ष्मीजीका निवास

एक बार मनोहर रूपधारिणी लक्ष्मीजीने गौओंके समूहमें प्रवेश किया। उनके सौन्दर्यको देखकर गौओंको बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने उनका परिचय पूछा, लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम्हारा कल्याण हो। इस जगत्में सब लोग मुझे लक्ष्मी कहते हैं। सारा जगत् मुझे चाहता है। मैंने दैत्योंको छोड़ दिया, इससे वे नष्ट हो गये। इन्द्र आदि देवताओंको आश्रय दिया, तो वे सुख भोग रहे हैं। देवताओं और ऋषियोंको मेरी ही शरणमें आनेसे सिद्धि मिलती है। जिसके शरीरमें मैं प्रवेश नहीं करती, उसका नाश हो जाता है। धर्म, अर्थ और काम मेरे ही सहयोगसे सुख देनेवाले हो सकते हैं। मेरा ऐसा प्रभाव है। अब मैं तुम्हारे शरीरमें सदा निवास करना चाहती हूँ। इसके लिये स्वयं तुम्हारे पास आकर प्रार्थना करती हूँ। तुमलोग मेरा आश्रय ग्रहण करो और श्रीसम्पन्न हो जाओ।'

गौओंने कहा—'देवि! बात तो ठीक है, पर तुम बड़ी चञ्चला हो। कहीं भी जमकर रहती नहीं। फिर तुम्हारा सम्बन्ध भी बहुतोंके साथ है। इसलिये हमको तुम्हारी इच्छा नहीं है। तुम्हारा कल्याण हो। हमारा शरीर तो स्वभावसे ही हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर है। हमें तुमसे कोई काम नहीं है। तुम जहाँ इच्छा हो, जा सकती हो। तुमने हमसे बातचीत की, इसीसे हम अपनेको कृतार्थ मानती हैं।'

लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम यह कह क्या रही हो? मैं बड़ी दुर्लभ हूँ और परम सती हूँ पर तुम मुझे स्वीकार नहीं करतीं! आज मुझे यह पता लगा कि बिना बुलाये किसीके पास जानेसे अनादर होता है—यह कहावत सत्य है। उत्तम व्रतचारिणी धेनुओ! देवता, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग, मनुष्य और राक्षस बड़ी उग्र तपस्या करनेपर कहीं मेरी सेवाका सौभाग्य प्राप्त करते हैं। तुम मेरे इस प्रभावपर ध्यान दो और मुझे स्वीकार करो। देखो, इस चराचर जगत्में मेरा अपमान कोई भी नहीं करता।'

गौओंने कहा—'देवि! हम तुम्हारा अपमान नहीं करतीं। हम तो केवल त्याग कर रही हैं, सो भी इसलिये कि तुम्हारा चित्त चञ्चल है। तुम कहीं स्थिर होकर रहती नहीं। फिर हमलोगोंका शरीर तो स्वभावसे सुन्दर है। अतएव तुम जहाँ जाना चाहो, चली जाओ।'

लक्ष्मीजीने कहा—'गौओ! तुम दूसरोंको आदर देनेवाली हो। मुझको यों त्याग दोगी, तो फिर संसारमें सर्वत्र मेरा अनादर होने लगेगा। मैं तुम्हारी शरणमें आयी हूँ, निर्दोष हूँ और तुम्हारी सेविका हूँ। यह जानकर मेरी रक्षा करो। मुझे अपनाओ। तुम महान् सौभाग्यशालिनी, सदा सबका कल्याण करनेवाली, सबको शरण देनेवाली, पुण्यमयी, पवित्र और सौभाग्यवती हो। मुझे बतलाओ मैं तुम्हारे शरीरके किस भागमें रहूँ?'

गौओंने कहा—'यशस्विनी ! हमें तुम्हारा सम्मान अवश्य करना चाहिये । अच्छा, तुम हमारे गोबर और मूत्रमें निवास करो । हमारी ये दोनों चीज़ें बड़ी पवित्र हैं ।'

लक्ष्मीजीने कहा—'सुखदायिनी गौओ ! तुमलोगोंने मुझपर बड़ा अनुग्रह किया । मेरा मान रख लिया । तुम्हारा कल्याण हो । मैं ऐसा ही करूँगी ।' गौओंके साथ इस प्रकार प्रतिज्ञा करके देखते-ही-देखते लक्ष्मीजी वहाँसे अन्तर्धान हो गयीं । (महा० अनु० अध्याय ८२)



गो-वृषभ-दान

गो-दानका फल

न्यायसे प्राप्त की हुई एक भी कपिला गौका दान देनेसे पुरुष पापोंसे छूट जाता है । (महा० अनु० ७१ । ५१)

गो-दान करनेसे मनुष्य अपनी सात पीढ़ी पहलेके पितरों-का और सात पीढ़ी आनेवाली सन्तानोंका उद्धार करता है । (महा० अनु० ७४ । ८)

जो एक गाय और एक बैल दान करता है, उसे वेदाध्ययनके फलकी प्राप्ति होती है तथा जो विधिपूर्वक गौओंका दान करता है, उसे उत्तम लोक मिलते हैं । (महा० अनु० ७६ । २०)

वात्सल्य-गुणसे युक्त एवं उत्तम लक्षणोंवाली जवान गायको वस्त्र ओढ़ाकर ब्राह्मणको दान करनेसे मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है और उसे असुर्य नामक अन्धकारमय लोकों (नरकों) में नहीं जाना पड़ता । (महा० अनु० ७७ । ४-५)

गौएँ प्राणियों (को दूध पिलानेके कारण) के प्राण कहलाती हैं । इसलिये जो दूध देनेवाली गौका दान देता है, वह मानो प्राण-दान करता है । वेदके विद्वान् कहते हैं कि गौएँ समस्त प्राणियोंको शरण देनेवाली हैं; इसलिये जो धेनु दान करता है, वह सबको शरण देनेवाला है । (महा० अनु० ६६)

दानके योग्य गौ

दुग्धवती, खरीदी हुई, विद्याके प्रभावसे पायी हुई, प्राणोंकी भी अपेक्षा न कर पराक्रमसे पायी हुई, विवाहमें ससुर आदिसे मिली हुई, दुःखसे छुड़ायी हुई और अपने पोषणके लिये आयी हुई गौ प्रशंसनीय मानी जाती है । बलवती, शीलसम्पन्न और तरुण सब सुगन्धित गौएँ प्रशंसनीय मानी जाती हैं, परन्तु जैसे नदियोंमें गङ्गा नदी श्रेष्ठ मानी जाती है इसी प्रकार गौओंमें कपिला गौ उत्तम मानी जाती है । (महा० अनु० ७३ । ४१-४२)

जो गौ सीधी-सूधी हो, दुहते समय तंग न करती हो, जिसका बछड़ा सुन्दर हो, जो बन्धन तोड़कर भागती न हो—ऐसी गौका दान करनेसे उसके शरीरमें जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षोंतक दाता परलोकमें सुख भोगता है । (महा० अनु० ७३ । ४४)

सुन्दर स्वभाववाली, घास आदि चरनेमें अभ्यस्त, जवान, बछड़ेवाली, न्यायसे प्राप्त की हुई, दुधारू गाय ब्राह्मणको देनी चाहिये । (स्कन्दपु० प्रभासखण्ड क्षेत्रमा० २०८)

जिसके बछड़ेका मुख बाहर न आया हो, केवल दो पैर बाहर निकले हों, इस प्रकारकी अवस्थामें गाय पृथ्वीरूपा होती है । ऐसी गायको जो मनुष्य सोनेके सींग, चाँदीके खुर, ताँबेकी पीठ, काँसीका दुहनेका बर्तन और गहने-कपड़ोंसे सजाकर तथा गन्ध-पुष्पादिसे पूजकर वेदज्ञ ब्राह्मणको दान करता है, वह नित्य विष्णुलोकमें निवास करता है । (पद्मपु० सृष्टि० ४८ । १७३–१७५)

(ऐसे ही वचन याज्ञवल्क्यस्मृति, अत्रिस्मृति, संवर्तस्मृति, बृहस्पति-स्मृति, मत्स्यपुराण, स्कन्दपुराण, महाभारत तथा अन्यान्य स्मृतियों और पुराणोंमें बहुत जगह मिलते हैं ।)

दानके अयोग्य गौ

बिना सींगकी बूढ़ी गौका दान करनेसे दाताके भोग नष्ट होते हैं । लँगड़ी, लूली और कानी गौका दान करनेसे दाताका अधःपतन और हानि होती है । अत्यन्त दुबली गौका दान करनेसे घर-बार नष्ट हो जाते हैं । (अथर्ववेद १२ । ४ । ३)

जो गौएँ पानी नहीं पी सकतीं, घास-चारा नहीं खा सकतीं, जिनकी इन्द्रियाँ क्षीण हो चुकी हैं, जो दूध नहीं दे सकतीं, ऐसी गौओंका दान करनेवाला पुरुष सुखहीन लोकों-को प्राप्त होता है । (कठ० १ । १ । ३)

जिसका घास खाना और पानी पीना समाप्त हो चुका हो, जिसका दूध नष्ट हो गया हो, जिसकी इन्द्रियाँ काम न दे

सकती हों, अर्थात् जो बूढ़ी और रोगिणी होनेके कारण जीर्ण-शीर्ण शरीरवाली हो गयी हों, ऐसी गौका दान करनेवाला मनुष्य ब्राह्मणको व्यर्थ कष्टमें डालता है और स्वयं भी घोर नरकमें पड़ता है। क्रोध करनेवाली, मरकही, रुग्णा, दुबली-पतली तथा जिसका दाम न चुकाया गया हो, ऐसी गौका दान करना कदापि उचित नहीं है। (महा० अनु० ७७। ५–७)

बाँझ, बीमार, अङ्गहीन, दुष्ट स्वभाववाली, बूढ़ी, जिसकी सन्तान मर गयी हो, अन्यायसे प्राप्त की हुई और दूर रहनेवाली—ऐसी गायका दान नहीं करना चाहिये। जो मनुष्य देवताके लिये ऐसी गायका दान करता है, वह उलटा बहुत-से क्लेशोंको भोगकर नीची गतिको प्राप्त होता है। भड़की हुई, क्लेश भोगती हुई, कमजोर और रोगिणी तथा जिसका मूल्य नहीं चुकाया गया है, ऐसी गायका दान नहीं करना चाहिये। जिस गायसे लेनेवाले ब्राह्मणको क्लेश हो, वैसी गाय दाताके सभी लोकोंको विफल कर देती है, वह किसी भी उत्तम लोकमें नहीं जा सकता।

(स्कन्द० प्रभासक्षेत्रमा० २७८। २३–२५)

जो दुबली हो, जिसका बछड़ा मर गया हो तथा जो ठाँठ, रोगिणी, अङ्गहीन और बूढ़ी हो, ऐसी गौ ब्राह्मणको नहीं देनी चाहिये। (महा० अनु० ६६)

(इसी प्रकारके वचन अधिकांश पुराणों और स्मृतियोंमें भी मिलते हैं)

गो-दानके पात्र और अपात्र

जिसके बहुत-सी सन्तानें हों ऐसे याचक, श्रोत्रिय तथा अग्निहोत्री ब्राह्मणको दस गौ दान करनेसे दाताको अत्यन्त उत्तम लोकोंकी प्राप्ति होती है। (महा० अनु० ६९। १६)

जो स्वाध्यायसम्पन्न, शुद्धयोनि (कुलीन), शान्तचित्त, यज्ञपरायण, पापसे डरनेवाला, बहुज्ञ, गौओंपर क्षमाका भाव रखनेवाला, मृदुलस्वभाव, शरणागतवत्सल और जीविका-हीन हो, वही ब्राह्मण गो-दानका उत्तम पात्र है। जो जीविका-के बिना बहुत कष्ट पा रहा हो तथा जिसको खेती या यज्ञ-होम करने, प्रसूता स्त्रीको दूध पिलाने तथा गुरु-सेवा अथवा बालकका लालन-पालन करनेके लिये गौकी आवश्यकता हो, उसको साधारण देश-कालमें भी दूध देनेवाली गौका दान करना चाहिये। (महा० अनु० ७३। ३९-४०)

गौ, भूमि, तिल, सोना आदि जो कुछ भी दान देने हो, वह सुपात्र ब्राह्मणको दे, कुपात्रको नहीं। (याज्ञवल्क्य-स्मृति)

पास रहनेवाले मूर्ख ब्राह्मणको छोड़कर दूर रहनेवाले वेदज्ञ ब्राह्मणको बुलाकर दान देना चाहिये। (कात्यायन-स्मृति)

(गोभिल, व्यास, शातातप, बृहस्पति और वसिष्ठादि स्मृतियोंमें भी ऐसे ही वचन मिलते हैं।)

जो ब्राह्मण स्वाध्यायपरायण, कुलीन, प्रशान्त, अग्निहोत्री, पापसे डरनेवाला, बहुत विषयोंका जानकार, स्त्रियोंमें क्षमाशील, धर्मात्मा, गो-सेवामें तत्पर और व्रतोंका पालन करते-करते थक गया है, उसीको सुपात्र कहते हैं।

(वसिष्ठ-स्मृति)

दुराचारी, पापी, लोभी, असत्यवादी तथा देवयज्ञ और श्राद्धकर्म न करनेवाले ब्राह्मणको किसी तरह गौ नहीं देनी चाहिये। (महा० अनु० ६९। १५)

जो मनुष्य वध करनेके लिये गौ माँग रहा हो उसको और नास्तिक, कसाई तथा गौसे जीविका चलानेवालेको भी गौ नहीं देनी चाहिये। वैसे पापियोंको देनेवाला पुरुष अक्षय नरकमें पड़ता है। (महा० अनु० ६६)

जैसे कच्चे मिट्टीके बर्तनमें रखनेसे दूध, दही, घी और मधु पात्रकी दुर्बलतासे नष्ट हो जाते हैं और साथ ही वह पात्र भी नष्ट हो जाता है, वैसे ही गौ, स्वर्ण, वस्त्र, अन्न आदिका दान लेनेसे मूर्ख ब्राह्मण और दानका फल—ये दोनों नष्ट हो जाते हैं। (बृहस्पति-स्मृति)

(ऐसे ही वचन वसिष्ठ-स्मृति, याज्ञवल्क्य-स्मृति, बृहत्-पराशर-स्मृति और मनुस्मृति आदिमें मिलते हैं।)

तप और वेदाध्ययनसे रहित ब्राह्मण दान लेनेपर पत्थरकी नाव जैसे चढ़नेवालेको साथ लेकर डूब जाती है, वैसे ही दाताको साथ लेकर डूब जाता है।

(मनुस्मृति अ० ४। १९०)

गोदान-विधि

गो-दान करनेवाले मनुष्यको चाहिये कि वह व्रतका पालन करे और पहले दिन ब्राह्मणको बुलाकर सत्कारपूर्वक कहे कि 'मैं कल प्रातःकाल आपको गो-दान करूँगा' फिर दूसरे दिन गोदानके लिये रोहिणी गौ मँगावे और दान देते समय 'समंगे' 'बहुले' आदि शब्दोंसे गौको सम्बोधन करे। फिर गौओंके बीचमें जाकर—

'गौर्मे माता वृषभः पिता मे दिवं शर्म जगती मे प्रतिष्ठा।'

'गौ मेरी माता और प्रतिष्ठा हैं। वृषभ मेरा पिता है। वे दोनों मुझे इस लोक और परलोकमें सुख दें।' ऐसा कहे। फिर

उस ब्याती हुई गौको अथवा ब्याई हुई बछड़ेसहित गौको पूर्वमुखी करके स्वयं स्नान और शिखाबन्धन कर गायकी पूँछकी तरफ बैठे और दान लेनेवाले ब्राह्मणको उत्तरमुख बैठाये। तदनन्तर घीसे भरे एक बर्तनमें सोना डालकर उसके साथ गायकी पूँछको पकड़े। फिर—

यज्ञसाधनभूता या विश्वस्याघप्रणाशिनी।
विश्वरूपः परो देवः प्रीयतामनया गवा॥

इस मन्त्रको पढ़कर ब्राह्मणके हाथमें जल अर्पण कर दे। गोदानके पश्चात् इस प्रकार प्रार्थना करे—'गौएँ उत्साह-सम्पन्न, बल और बुद्धिसे युक्त, अमरत्व प्रदान करनेवाली, यज्ञसम्बन्धी हविष्यको पैदा करनेवाली, जगत्की प्रतिष्ठा, पृथ्वीको प्रकट करनेवाली, संसारके अनादिप्रवाहको प्रवृत्त करनेवाली और प्रजापतिकी पुत्री हैं। सूर्य और चन्द्रमाके अंशसे प्रकट ये गौएँ मेरे पापका नाश करें। मुझे उत्तम लोकोंकी प्राप्तिमें सहायता दें। माताकी भाँति शरण प्रदान करें। और जो कुछ मैंने नहीं माँगा है, वे भी उनकी कृपासे मुझे मिल जायँ। गौओ! जो लोग तुम्हारे पञ्चगव्य आदिका सेवन करते हुए तुम्हारी सेवामें लगे हैं, तुम प्रसन्न होकर उन्हें क्षयादि रोगोंसे मुक्त करनेके साथ ही देह-बन्धनसे भी मुक्त कर देती हो। जो मनुष्य तुम्हारी सेवा करते हैं, उनके कल्याणके लिये सरस्वतीजीकी भाँति तुम सदा प्रयत्न करती हो। गो-माताओ! मुझपर प्रसन्न हो जाओ और मुझे सारे पुण्योंके द्वारा प्राप्त होनेवाली अभीष्ट गति प्रदान करो।'

इसके बाद दाता निम्नलिखित आधे श्लोकका उच्चारण करे—

'या वै यूयं सोऽहमद्यैव भावो युष्मान् दत्त्वा चाहमात्मप्रदाता।'

'गौओ! तुम्हारा जो स्वरूप है वही मेरा भी है। तुममें और मुझमें कोई अन्तर नहीं है। इसलिये आज तुम्हें दानमें देकर मैंने अपने आपको ही दान किया है।' दाताके ऐसा कहनेपर दान लेनेवाला ब्राह्मण शेष आधे श्लोकका उच्चारण करे—

मनश्च्युता मन एवोपपन्नाः सन्धुक्षध्वं सौम्यरूपोग्ररूपाः।

'गौओ! तुम सौम्य और उग्र रूप धारण करनेवाली हो! अब तुमपर दाताका ममत्व नहीं रहा, अब तुम मेरी ममताकी वस्तु हो गयी हो। अतः अभीष्ट भोग प्रदान करके तुम मुझको और दाताको प्रसन्न करो।' (महाभारत)

गौ ले जानेके समय निम्नलिखित गोमती-मन्त्र पढ़ना चाहिये—

गावः सुरभयो नित्यं गावो गुग्गुलगन्धिकाः।
गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं महत्॥
अन्नमेव परं गावो देवानां हविरुत्तमम्।
पावनं सर्वभूतानां रक्षन्ति च वहन्ति च॥
हविषा मन्त्रपूतेन तर्पयन्त्यमरान् दिवि।
ऋषीणामग्निहोतृणां गावो होमप्रतिष्ठिकाः॥
सर्वेषामेव भूतानां गावः शरणमुत्तमम्।
गावः पवित्रं परमं गावो मङ्गलमुत्तमम्॥
गावः सर्वस्य लोकस्य गावो धन्याः सुखावहाः।
नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च॥
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः।
ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधाकृतम्॥
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरेकत्र तिष्ठति।*

गौओंके अङ्गोंसे सदा सुगन्ध आती है, उनके शरीरसे गूगलकी-सी गन्ध निकलती है। गौएँ समस्त प्राणियोंका आधार हैं। गौएँ मङ्गलकी बहुत बड़ी खान हैं। गौएँ ही हमारे लिये अन्न उत्पन्न करनेके सर्वश्रेष्ठ साधन हैं तथा गौएँ ही देवताओंके लिये घृतरूप उत्तम हवि उत्पन्न करती हैं। वे समस्त प्राणियोंको पवित्र करनेवाली हैं, वे दूध एवं अन्नके द्वारा हमारी रक्षा करती हैं और अपनी सन्तान—बैलोंके रूपमें हमारा बोझ ढोती हैं। वे मन्त्रोंसे पवित्र किये हुए हविसे स्वर्गके देवताओंको तृप्त करती हैं और अग्निहोत्र करने-वाले ऋषियोंका हवन सिद्ध करती हैं। गौएँ समस्त जीवोंका उत्तम आश्रय हैं। गौएँ परम पावन हैं, गौएँ श्रेष्ठ मङ्गलरूप हैं। गौएँ सम्पूर्ण जगत्को सुख पहुँचाती हैं, अतएव वे धन्य हैं। कामधेनुकी सन्तान श्रीमती गौओंको नमस्कार! ब्रह्माजी-की पुत्रियोंको नमस्कार! परमपावनी गौओंको नमस्कार! ब्राह्मण और गौएँ एक ही कुलकी दो शाखाएँ हैं। ब्राह्मण-रूपी एक शाखामें मन्त्रोंका निवास है और दूसरीमें घृतरूप हवि रहता है।

गोदानके पश्चात् दाताको तीन रात्रितक गोव्रतका पालन करना चाहिये और एक रात गौओंके साथ रहना चाहिये।

---

* महाभारत अनुशासनपर्वके ७८ वें अध्यायमें 'गवोपनिषद्'के नामसे प्रायः इसी प्रकारका वर्णन मिलता है।

गोदानसे कौन-कौन श्रेष्ठ लोकोंको प्राप्त हुए ?

उशीनरो विश्वगश्वो नृगश्च भगीरथो विश्रुतो यौवनाश्वः।
मान्धाता वै मुचुकुन्दश्च राजा भूरिद्युम्नो नैषधः सोमकश्च॥
पुरूरवा भरतश्चक्रवर्ती यस्यान्ववाये भरताः सर्व एव।
तथा वीरो दाशरथिश्च रामो ये चाप्यन्ये विश्रुताः कीर्तिमन्तः॥
तथा राजा पृथुकर्मा दिलीपो दिवं प्राप्तो गोप्रदानैर्विधिज्ञः।

(महा० अनु० ७६। २५-२७)

उशीनर, विश्वगश्व, नृग, भगीरथ, प्रसिद्ध यौवनाश्व, मान्धाता, मुचुकुन्द, भूरिद्युम्न, नैषध, सोमक, पुरूरवा, वह चक्रवर्ती भरत जिसके वंशके सभी भरत कहलाये, शूरवीर दशरथपुत्र रामचन्द्र (लीलासे), प्रसिद्ध कीर्तिवाले अन्य नरेन्द्र और विशालकर्मा राजा दिलीप—ये सभी गोदान करके दिव्य लोकोंको प्राप्त हुए।

वृषभ-दानका फल

बैल पवित्र है, सुन्दर पुण्यका दाता और पवित्र करनेवाला है, इसलिये बैलके दानका फल सुनो! एक ही बैलके दानको दस गायोंके दानके समान समझना चाहिये, अवश्य ही वह बैल—

मेदो मांसविपुष्टाङ्गो नीरोगः कोपवर्जितः।
युवा भद्रः सुशीलश्च सर्वदोषविवर्जितः॥
धुरं धारयति क्षिप्रं ………………॥*

'मेद-मांससे पुष्ट अङ्गोंवाला हो, नीरोग हो, क्रोधरहित-सीधा हो, जवान हो, देखनेमें बड़ा सुन्दर, स्वभावसे सुशील और सारे दोषोंसे रहित हो तथा झट्से धुरेको धारण करनेमें समर्थ हो।' ऐसा बैल ब्राह्मणको देनेसे दाता महातेजस्वी होकर चिरकालतक गोलोकमें पूजा जाता है।

जो पुरुष धुरीको धारण करनेवाले दो बैलोंका वेदज्ञ सदाचारी गरीब ब्राह्मणको दान करता है, उसे एक हजार गायोंके दानका उत्तम फल मिलता है और वह भगवान्‌के लोकोंमें जाता है तथा दोनों बैलोंके शरीरपर जितने रोम हैं उतने हजार वर्षोंतक भगवान्‌के लोकमें पूजित होता है, पर दान करना चाहिये गरीबको ही, धनीको नहीं; क्योंकि वर्षाका फल तालाबोंमें बरसनेसे ही है, समुद्रोंमें बरसनेसे नहीं।

दरिद्रायैव दातव्यं न समृद्धाय पाण्डव।
वर्षाणां हि तडागेषु फलं नैव पयोधिषु॥

(महा० आश्व० १००। १२)

जो पुरुष एक बैल दान करता है, वह देवव्रती (सूर्यमण्डलको भेदन करके जानेवाला ब्रह्मचारी) होता है।

(महा० अनु० ७६। २०)

बैल स्वर्गका मूर्तिमान् स्वरूप है। जो गुणवान् ब्राह्मणको बैल दान करता है, उसका स्वर्गलोकमें सम्मान होता है।

(महा० अनु० ६६। ४८)

धुरीको धारण करनेवाले एक उत्तम बैलके दानमें दस गायोंके दानका और सौ बैलोंके दानमें हजार गायोंके दानका फल होता है। (पद्म० सृष्टि० ४८। १८०-१८१)

बैलकी जोड़ीके दानका फल

यश्च दद्यादनुडुहौ द्वौ युक्तौ च धुरन्धरौ।
सुवृत्ताय दरिद्राय श्रोत्रियाय विशेषतः॥
सहस्रगोप्रदानेन यत्प्रोक्तं फलमुत्तमम्।
तत्पुण्यफलमाप्नोति याति लोकान् स मामकान्॥
यावन्ति चैव रोमाणि तयोरनडुहोर्नृप।
तावद्वर्षसहस्राणि मम लोके महीयते॥

(महा० आश्व० १००। ९-११)

जो मनुष्य जुएको भलीभाँति उठा सकनेवाले दो बैलोंके जोड़ेको सदाचारी श्रोत्रिय गरीब ब्राह्मणको विशेषरूपसे दान देता है, वह एक हजार गोदानके उत्तम फलको प्राप्त होता है और फिर मेरे दिव्य लोकमें जाता है तथा उन दोनों बैलोंके शरीरमें जितने रोम हैं, उतने हजार वर्षोंतक वह मेरे लोकमें पूजित होता है।

बैलकी हत्या नरहत्याके समान है

'एक बैलको मारना, एक मनुष्यके कत्लके बराबर है। एक मेमनेको मारना भी कुत्तेके गले काटनेके समान है।'

—(ईसाइयाह ६६। ३)

* ठीक ऐसे ही श्लोक भविष्यपुराण उत्तर० अध्याय १६० में तथा अन्यान्य पुराणोंमें मिलते हैं।

सिद्धिप्रद सुरभि-मन्त्र और स्तोत्र

देवर्षि नारदके पूछनेपर महर्षि नारायणने बतलाया है कि गौओंकी अधिष्ठात्रीदेवी आदिजननी सुरभि गोलोकमें उत्पन्न हुई थी। एक दिन श्रीराधावल्लभ भगवान् श्रीकृष्णको परम रमणीय दिव्य वृन्दारण्यमें गोपाङ्गनाओंके साथ विहार करते-करते दुग्धपानकी इच्छा हुई, और उसी समय उनकी लीलाशक्तिकी प्रेरणासे उनकी बायीं ओरसे दुग्धवती मनोहारिणी सवत्सा सुरभिदेवी प्रकट हो गयी। श्रीकृष्ण-सखा सुदामाने दिव्य रत्नोंके बर्तनमें उसके सुधासे भी अधिक सुस्वादु जन्म-मरणहारी दूधका दोहन किया। भगवान्‌ने दुग्धपान किया। उनके पीनेसे बचे हुए दुग्धसे एक बहुत बड़ा सरोवर बन गया जो गोलोकधाममें 'दुग्धसरोवर'के नामसे प्रसिद्ध है। इस सुरभिदेवीसे बछड़ोंसहित लक्षकोटि कामधेनु उत्पन्न हुईं। उनकी फिर असंख्य सन्तति हुई। तब सारा जगत् गौओंसे परिपूर्ण हो गया। भगवान्‌ने स्वयं सुरभिकी पूजा की थी; इसलिये तीनों लोकोंके लिये ही सुरभि-पूजन परम कर्तव्य है। दीपावली अमावस्याके दूसरे दिन भगवान् श्रीकृष्णके आदेशसे संसारमें सुरभिपूजन हुआ था। 'ॐ सुरभ्यै नमः' भक्तके द्वारा एक लाख जप किये जानेपर यह षडक्षर मन्त्र सिद्ध होकर कल्पवृक्षके समान मनोवाञ्छित फल देनेवाला होता है। इस मन्त्रके द्वारा वेदविधिसे दीपावलीके दूसरे दिन सुरभिदेवीकी पूजा करनी चाहिये। जिस समृद्धिशालिनीकी कृपासे सब प्रकारकी उन्नति और वृद्धि होती है, वह सर्वकामना सिद्ध करनेवाली सुरभि माता मुक्तिपर्यन्त दे सकती है। जो साक्षात् लक्ष्मीरूपिणी, श्रीराधाजीकी सहचरी, परमेश्वरी, गौओंकी अधिष्ठात्रीदेवी आद्या जननी हैं, जो पवित्ररूपा और जगत्पूज्या हैं, जो भक्तोंकी समस्त कामनाएँ पूर्ण करती हैं और जिनके द्वारा यह सम्पूर्ण विश्व पवित्र होता है, मैं उस सुरभिदेवीकी उपासना करता हूँ।*

वाराह कल्पमें एक बार दूधका सर्वथा अभाव हो गया। तब देवराज इन्द्रने ब्रह्माजीकी आज्ञासे सुरभिका स्तवन किया। उन्होंने कहा—

'हे देवी, महादेवी, सुरभिदेवी! आपको बार-बार प्रणाम है। हे सम्पूर्ण गौओंकी आदि-बीजस्वरूपा जगज्जननी! आपको प्रणाम है। हे राधिकाप्रिये, लक्ष्मीस्वरूपिणी! आपको प्रणाम है। हे कृष्णप्रिये गौओंकी जननी! आपको प्रणाम है। हे कल्पवृक्षस्वरूपा! समस्त सम्पदाओंको प्रदान करनेवाली, श्री—धन और बुद्धि देनेवाली आपको प्रणाम है। हे परम प्रसन्नरूपा समस्त शुभ और गौकी प्रदाता! आपको प्रणाम है। हे यश और सौख्य प्रदान करनेवाली धर्मज्ञादेवी आपको बार-बार प्रणाम है।'†

देवराज इन्द्रके इस स्तवनको सुनकर सनातनी जगज्जननी सुरभिदेवी सन्तुष्ट और हर्षित होकर ब्रह्मलोकमें ही प्रकट हो गयीं और इन्द्रको अति दुर्लभ मनमाना वर देकर गोलोकको लौट गयीं। सारा जगत् दूधसे परिपूर्ण हो गया। दूधसे घृत उत्पन्न होता है, घृतसे यज्ञ होते हैं और यज्ञसे देवताओंकी तृप्ति होती है।‡

जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस महापुण्यस्वरूप स्तोत्रका पाठ करता है, वह गो, धन, कीर्ति और पुण्यको प्राप्त करता है। उसने सम्पूर्ण तीर्थोंमें भलीभाँति स्नान कर लिया और सम्पूर्ण यज्ञकी दीक्षा ले ली। अर्थात् उसे समस्त तीर्थस्नान और यज्ञानुष्ठानका फल मिलता है। फिर, इस लोकमें वह सुखपूर्वक जीवन बिताकर अन्तमें भगवान् श्रीकृष्णके निजधाममें जा पहुँचता है और वहाँ चिरकाल-तक निवास करके भगवान् श्रीकृष्णकी सेवा करता है। नारदजी! उसका फिर संसारमें पुनर्जन्म नहीं होता।§

---

* लक्ष्मीस्वरूपां परमां राधासहचरीं पराम्। गवामधिष्ठातृदेवीं गवामाद्यां गवां प्रसूम्॥
पवित्ररूपां पूज्यां च भक्तानां सर्वकामदाम्। यया पूतं सर्वविश्वं तां देवीं सुरभिं भजे॥
(ब्र० वै० पु० प्रकृति० ४७। १८-१९)

† नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमो नमः। गवां बीजस्वरूपायै नमस्ते जगदम्बिके॥
नमो राधाप्रियायै च पद्मांशायै नमो नमः। नमः कृष्णप्रियायै च गवां मात्रे नमो नमः॥
कल्पवृक्षस्वरूपायै प्रदात्र्यै सर्वसम्पदाम्। श्रीदायै धनदायै च बुद्धिदायै नमो नमः॥
शुभदायै प्रसन्नायै गोप्रदायै नमो नमः। यशोदायै सौख्यदायै धर्मज्ञायै नमो नमः॥
(ब्र० वै० पु० प्रकृति० ४७। २४—२७)

‡ दुग्धाद् घृतं ततो यज्ञस्ततः प्रीतिः सुरस्य च। (ब्र० वै० पु० प्रकृति० ४७—२९)

§ इदं स्तोत्रं महापुण्यं भक्तियुक्तश्च यः पठेत्। स गोमान्धनवांश्चैव कीर्तिमान्पुण्यवान् भवेत्॥
सुस्नातः सर्वतीर्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः। इहलोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते कृष्णमन्दिरम्॥
सुचिरं निवसेत्तत्र कुरुते कृष्णसेवनम्। न पुनर्भवनं तस्य ब्रह्मपुत्र भवे भवेत्॥
(ब्र० वै० पु० प्रकृति० ४७।३०—३२)

गौ सब लोकोंसे ऊपर क्यों रहती हैं ?

इन्द्र-ब्रह्मा-संवाद

गौएँ देवता और लोकपालोंके लोकोंसे भी अति उच्चतम गोलोकमें क्यों रहती हैं, देवराज इन्द्रके ऐसा पूछनेपर ब्रह्माजीने कहा—

यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव। एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथञ्चन॥
धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा। एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च। ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥
पयो दधि घृतं चैव पुण्याश्चैता सुराधिप। वहन्ति विविधान् भारान् क्षुत्तृषापरिपीडिताः॥
मुनींश्च धारयन्तीह प्रजाश्चैवापि कर्मणा। वासवाकूटवाहिन्यः कर्मणा सुकृतेन च॥
उपरिष्टात्ततोऽस्माकं वसन्त्येताः सदैव हि। एवं ते कारणं शक्र निवासकृतमद्य वै॥

(महा० अ० ८३। १७—२२)

गौओंको यज्ञका अङ्ग और साक्षात् यज्ञ ही कहा गया है। इनके बिना किसी प्रकार भी यज्ञ नहीं हो सकता। ये अपने दूध और घीसे प्रजाका धारण-पोषण करती हैं और इनके पुत्र बैल खेतीके काममें आते हैं और विविध प्रकारके अन्न और बीज पैदा करते हैं। उनसे यज्ञ होते हैं और हव्य-कव्यका कार्य सम्पादन होता है। इन्हींसे दूध, दही और घी मिलता है। ये गौएँ बड़ी ही पवित्र होती हैं और बैल बेचारे भूख-प्यासका कष्ट सहकर भी भाँति-भाँतिका बोझ ढोते रहते हैं। इस प्रकार गौएँ अपने कर्मसे प्रजाओंका और मुनियोंका धारण-पोषण करती रहती हैं। इनके व्यवहारमें शठता, कपटता नहीं होती, ये सदा पवित्र कर्ममें ही लगी रहती हैं। इसीसे देवराज! ये गौएँ हम सब लोगोंके ऊपर (गोलोकमें) निवास करती हैं।

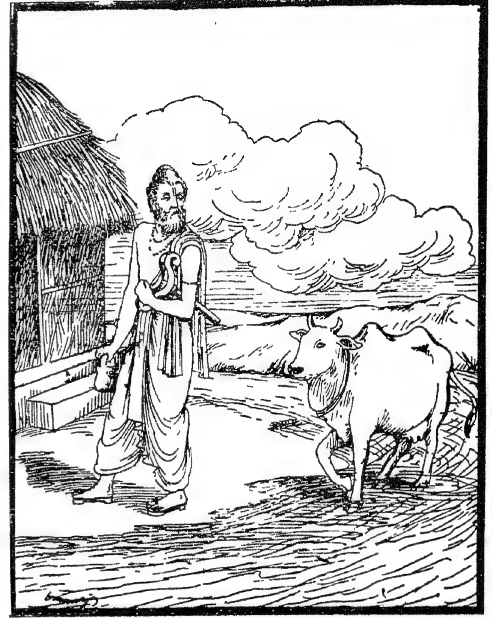
गोदावरीकी उत्पत्ति

उन दिनोंकी बात है, जब महर्षि गौतम ब्रह्मगिरिके आश्रममें रहते थे। अनावृष्टिके कारण घोर अकाल पड़ा। अन्नके बिना चारों ओर हाहाकार मच गया। उस समय मुनिवर श्रीवसिष्ठजी कुछ मुनियोंके साथ गौतमके आश्रमपर पहुँचे। महर्षि गौतमने उनका सादर अभिनन्दन किया और अन्न देकर उनके प्राणोंकी रक्षा की। वे प्रतिदिन प्रातःकाल अन्नके बीज मैदानमें बो देते। बीज उनके तपके प्रभावसे सन्ध्याके पूर्व ही बढ़कर फल दे देते। अन्न एकत्रित कर लिया जाता। वही ऋषियोंके आहारके काम आता।

बारह वर्षके बाद पुनः वृष्टि हुई। तप्त वसुन्धरा शीतल हो गयी। सर्वत्र हरियाली दीखने लगी। उस समय कैलास पर्वतपर महासती श्रीपार्वतीने श्रीशङ्करजीसे कहा—'आप गङ्गाजीको सिरपर और मुझे अपने अङ्कमें रखकर मेरा अपमान करते हैं।' परन्तु श्रीशङ्करजीने उनकी बातपर कोई ध्यान नहीं दिया।

खिन्न होकर श्रीपार्वतीजीने अपने आज्ञाकारी पुत्र श्रीगणेशजीके पास जाकर अपनी व्यथा-कथा कह सुनायी। माताके दुःखसे दुखित होकर श्रीगणेशजी अपने बड़े भाई कार्तिकेयके साथ दीन ब्राह्मणके वेषमें महर्षि गौतमकी कुटियापर पहुँचे। वहाँपर उन्होंने ऋषियोंसे कहा—'ऋषियो! दुर्भिक्ष समाप्त हो गया। पृथ्वी अन्न-जलसे पूरित हो गयी है। अब आप लोगोंका इस आश्रमपर अधिक समयतक ठहरना उचित नहीं है।'

ब्राह्मण-वेषधारी श्रीगणेश और कार्तिकेयकी यह बात ऋषियोंके मनमें बैठ गयी। वे चलनेके लिये तैयार हो गये। उस समय महर्षि गौतमने कहा—'दुष्कालके समय अन्न देकर मैंने आपलोगोंके प्राणोंकी रक्षा की है। अब मेरी इच्छाके विपरीत आपलोगोंका जाना उत्तम नहीं है। यहाँ कुछ समयतक और रहनेके लिये मैं आपलोगोंसे अनुरोध करता हूँ।'



गौतमकी बात सुनकर ऋषियोंने अपने जानेका विचार छोड़ दिया।

तब श्रीगणेशजीने श्रीकार्तिकेयजीसे कहा—'आप गौतम ऋषिके खेतमें गायका रूप धारण करके चले जायँ। ऋषि-की दृष्टि पड़ते ही आप गिर पड़ें, जैसे मृत्यु हो गयी हो।' कार्तिकेयने वैसा ही किया। गायके वेषमें वे गौतम ऋषिके खेतमें जाकर खेती नष्ट करने लगे। गौतमने इन्हें देखा, बस, वे मृत्युतुल्य हो धराशायी हो गये।

यह दृश्य देखते ही ऋषिगण वहाँसे चलनेकी तैयारी करने लगे। गौतमके आग्रह करनेपर ऋषियोंने कहा—'गायकी मृत्युसे यह पापस्थली हो गयी है। अतः नृपश्रेष्ठ भगीरथकी भाँति यदि आप श्रीगङ्गाजीको यहाँ लाकर गायको जीवित और इस स्थानको पवित्र करें तो हमलोग यहाँ रह सकते हैं।'

ऋषियोंकी बात सुनकर महर्षि गौतम श्रीगङ्गाजीको लानेके लिये त्र्यम्बक पर्वतपर जाकर तपस्या करने लगे। अन्तमें प्रसन्न होनेपर श्रीशङ्करजीने उन्हें श्रीगङ्गाजीको देने-का वचन दिया। तब गौतमने पुनः कहा—'भगवन्! ये गङ्गाजी गायका उद्धार करके सागरमें मिलें और मेरे नामको भी प्रसिद्ध करें।' श्रीशङ्करजीने कहा—'यह गङ्गा गौतमी और गोदावरीके नामसे प्रसिद्ध होगी तथा अत्यन्त पुण्य देने-वाली होगी।'

इतना कहकर श्रीशङ्करजीने श्रीगङ्गाजीको महर्षि गौतमके हाथों दे दिया। गौतम प्रसन्नचित्त हो ब्रह्मगिरि लौटे। वहाँपर श्रीगङ्गाजीकी तीन धार हो गयी। एक धार मृत गौको जीवित कर दक्षिणकी ओर सागरमें मिल गयी। दूसरी धार पृथ्वीको वेधकर पातालमें और तीसरी आकाश-मार्गसे स्वर्ग-को चली गयी। दक्षिण सागरमें मिलनेवाली पुण्यतोया—गङ्गा, गोदावरी और गौतमीके नामसे प्रसिद्ध है।

(ब्रह्माण्डपुराणान्तर्गत गौतमी-माहात्म्य)

गो-मन्त्र-जापसे पापनाश

घृतक्षीरप्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः। घृतनद्यो घृतावर्तास्ता मे सन्तु सदा गृहे॥
घृतं मे हृदये नित्यं घृतं नाभ्यां प्रतिष्ठितम्। घृतं सर्वेषु गात्रेषु घृतं मे मनसि स्थितम्॥
गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च। गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥
इत्याचम्य जपेत् सायं प्रातश्च पुरुषः सदा। यदह्ना कुरुते पापं तस्मात् स परिमुच्यते॥

(महा० अनु० ८०। १—४)

'गाय घृत और दूध देनेवाली हैं, घृतकी उत्पत्तिस्थान, घृतको प्रकट करनेवाली, घृतकी नदी और घृतकी भँवररूप हैं। वे सदा मेरे घरमें निवास करें। घृत सदा मेरे हृदयमें रहे, मेरी नाभिमें रहे, मेरे सारे अङ्गोंमें रहे और मेरे मनमें स्थित रहे। गाय सदा मेरे आगे रहें, गाय सदा मेरे पीछे रहें, गाय मेरे चारों ओर रहें और मैं गायोंके बीचमें ही निवास करूँ।'

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल आचमन करके उपर्युक्त मन्त्रका जप करता है, उसके दिनभरके पाप नष्ट हो जाते हैं।

श्रीशिवजी वृषभध्वज और पशुपति कैसे बने ?

एक समय सुरभीका बछड़ा माका दूध पी रहा था । उसके मुखसे दूधका झाग उड़कर समीप ही बैठे हुए श्रीशङ्करजीके मस्तकपर जा गिरा । इससे शिवजीको क्रोध हो गया, तब प्रजापतिने उनसे कहा—'प्रभो ! आपके मस्तकपर यह अमृतका छींटा पड़ा है । बछड़ोंके पीनेसे गायका दूध जूठा नहीं होता । जैसे अमृतका संग्रह करके चन्द्रमा उसे बरसा देता है, वैसे ही रोहिणी गौएँ भी अमृतसे उत्पन्न दूधको बरसाती हैं । जैसे वायु, अग्नि, सुवर्ण, समुद्र और देवताओंका पिया हुआ अमृत, ये कोई जूठे नहीं होते, वैसे ही बछड़ोंको पिलाती हुई गौ भी दूषित नहीं होती । ये गौएँ अपने दूध और घीसे समस्त जगत्का पोषण करेंगी । सभी लोग इन गौओंके अमृतमय पवित्र दूधरूपी ऐश्वर्यकी इच्छा करते हैं ।'

इतना कहकर प्रजापतिने श्रीमहादेवजीको कई गौएँ और एक बैल दिया । तब शिवजीने भी प्रसन्न होकर वृषभको अपना वाहन बनाया और अपनी ध्वजाको उसी वृषभके चिह्नसे सुशोभित किया । इसीसे उनका नाम 'वृषभध्वज' पड़ा । फिर देवताओंने महादेवजीको पशुओंका स्वामी (पशुपति) बना दिया और गौओंके बीचमें उनका नाम 'वृषभाङ्क' रक्खा गया । गौएँ संसारमें सर्वश्रेष्ठ वस्तु हैं । वे सारे जगत्को जीवन देनेवाली हैं । भगवान् शङ्कर सदा उनके साथ रहते हैं । वे चन्द्रमासे निकले हुए अमृतसे उत्पन्न शान्त, पवित्र, समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाली और समस्त प्राणियोंके प्राणोंकी रक्षा करनेवाली हैं । (महा० अनु० ७७)

बैलोंको कब और कैसे हाँके ?

गाड़ीमें जुते हुए बैलोंको हुंकारकी आवाजसे या पत्तेवाली पेड़की डालीसे हाँके । डंडेसे, छड़ीसे अथवा रस्सीसे मारकर न हाँके । भूख-प्यास और परिश्रमसे घबड़ाये हुए बैलोंको गाड़ीमें न जोते । जिनकी इन्द्रियाँ विकल हो रही हों अथवा जो आँख आदि इन्द्रियोंसे हीन हों (अंधे-लँगड़े आदि हों) उनको भी न जोते । जबतक भूखे-प्यासे बैलोंको पूरा खिला-पिला न दिया जाय तबतक मालिक आप न खाय और न जल पीये । दिनके पहले भागमें ही बैलोंको सवारीमें जोतना बतलाया गया है । दुपहरमें उन्हें विश्राम देना चाहिये । सन्ध्याके समय अपनी रुचिके अनुसार यथावश्यक उनसे काम ले । जहाँ जल्दीका काम हो अथवा रास्तेमें जहाँ भय हो वहाँ विश्रामके समयमें जोतनेमें पाप नहीं है । परन्तु बिना काम जो विश्रामके समय बैलोंको गाड़ीमें जोतता है उसे भ्रूण-हत्याके समान पाप लगता है और वह रौरव नरकमें पड़ता है । जो मनुष्य मूर्खतासे बैलोंके शरीरसे खून निकाल देता है, वह पापी इस पापके फलस्वरूप निश्चय ही नरकमें जाता है और वहाँ क्रमसे सौ-सौ वर्ष एक-एक नरकमें रहकर फिर इस मनुष्य-लोकमें बैलका जन्म पाता है ।*

* वाहयेद्धुङ्कृतेनैव शाखया वा सपत्रया । न दण्डेन न वा यष्ट्या न पाशेन न वा पुनः ॥
न क्षुत्तृष्णाश्रमश्रान्तान् वाहयेद्विकलेन्द्रियान् । अतृप्तेषु न भुञ्जीयात्पिबेत्पीतेषु चोदकम् ॥
अह्नां पूर्वत्रभागे च धुर्याणां वाहनं स्मृतम् । विश्रामेन्मध्यमे भागे भागे चान्ते यथासुखम् ॥
यत्र च त्वरया कृत्यं संशयो यत्र वाध्वनि । वाहयेत्तत्र धुर्यास्तु न स पापेन लिप्यते ॥
भ्रूणहत्यासमं पापं तस्य स्यात् पाण्डुनन्दन । अन्यथा वाहयन् राजन् निरयं याति रौरवम् ॥
रुधिरं पातयेत्तेषां यस्तु मोहान्नराधिप । तेन पापेन पापात्मा नरकं यात्यसंशयम् ॥
नरकेषु च सर्वेषु समाः स्थित्वा शतं शतम् । इह मानुष्यके लोके बलीवर्दो भविष्यति ॥
(महा० आ० १०२ । ५४—६०)

गौके साथ व्यवहार और गोपरिचर्या

गौएँ समस्त प्राणियोंकी माता हैं और सारे सुखोंको देनेवाली हैं, इसलिये कल्याण चाहनेवाले मनुष्य सदा गौओंकी प्रदक्षिणा करें। गौओंको लात न मारे। गौओंके बीचसे होकर न निकले। मंगलकी आधारभूता गो-देवियोंकी सदा पूजा करे। (महा० अनु० ६९। ७-८)

जब गौएँ चर रही हों या एकान्तमें बैठी हों, तब उन्हें तंग न करे। प्याससे पीड़ित होकर जब गौ क्रोधसे अपने स्वामीकी ओर देखती है तो उसका बन्धु-बान्धवों-सहित नाश हो जाता है।

राजाओंको चाहिये कि गोपालन और गोरक्षण करें। उतनी ही संख्यामें गाय रक्खे, जितनीका अच्छी तरह भरण-पोषण हो सके। गाय कभी भी भूखसे पीड़ित न रहे, इस बातपर विशेष ध्यान रखना चाहिये। जिसके घरमें गाय भूखसे व्याकुल होकर रोती है, वह निश्चय ही नरकमें जाता है। जो पुरुष गायोंके घरमें सर्दी न पहुँचनेका और जलके बर्तनको शुद्ध जलसे भर रखनेका प्रबन्ध कर देता है, वह ब्रह्मलोकमें आनन्द भोग करता है।

जो मनुष्य सिंह, बाघ अथवा और किसी भयसे डरी हुई, कीचड़में धँसी हुई या जलमें डूबती हुई गायको बचाता है वह एक कल्पतक स्वर्ग-सुखका भोग करता है। गायकी रक्षा, पूजा और पालन अपनी सगी माताके समान करना चाहिये। जो मनुष्य गायोंको ताड़ना देता है, उसे रौरव नरककी प्राप्ति होती है। (हेमाद्रि)

गोबर और गोमूत्रसे अलक्ष्मीका नाश होता है। इसलिये उनसे कभी घृणा न करे।

जिसके घरमें प्यासी गाय बँधी रहती है, रजस्वला कन्या अविवाहिता रहती है और देवता बिना पूजनके रहते हैं, उसके पूर्वकृत सारे पुण्य नष्ट हो जाते हैं। गायें जब इच्छानुसार चरती होती हैं, उस समय जो मनुष्य उन्हें रोकता है, उसके पूर्व-पितृगण पतनोन्मुख होकर काँप उठते हैं। जो मनुष्य मूर्खतावश गायोंको लाठीसे मारते हैं उनको बिना हाथके होकर यमपुरीमें जाना पड़ता है।

(पद्म० पाताल० अ० १८)

गायको यथायोग्य नमक खिलानेसे पवित्र लोककी प्राप्ति होती है और जो अपने भोजनसे पहले गायको घास-चारा खिलाकर तृप्त करता है, उसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (आदित्यपुराण)

अपने पिता-माताकी भाँति श्रद्धापूर्वक गायोंका पालन करना चाहिये। हलचल, दुर्दिन और विप्लवके अवसरपर गायोंको घास और शीतल जल मिलता रहे, इस बातका प्रबन्ध करते रहना चाहिये। (ब्रह्मपुराण)

गौको प्रसवकालसे दो मासतक बछड़ेके लिये छोड़ देना चाहिये। तीसरे महीनेमें दो थन दुहने चाहिये और दो बच्चेके लिये छोड़ देना चाहिये। चौथे महीनेमें तीन थन दुहने चाहिये। दुहते समय गायको कष्ट होता हो तो दुहनेका हठ नहीं करना चाहिये। आषाढ़, आश्विन और पौषकी पूर्णिमाको गाय दुहना निषिद्ध माना गया है।

(ब्रह्मपुराण)

युगके आदि, युगके अन्त, विषुवत्, संक्रान्ति, उत्तरायण और दक्षिणायन लगनेके दिन, चन्द्र और सूर्यग्रहण, पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी, द्वादशी और अष्टमी—इन दिनोंमें गौकी पूजा करनी चाहिये और उसे क्रमसे एकसे दुगुना नमक, घी, दूध और ठण्डा जल पिलाना चाहिये। (ब्रह्मपुराण)

जीवनदान सर्वश्रेष्ठ दान है

जीवितस्य प्रदानाद्धि नान्यद्दानं विशिष्यते। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देयं प्राणाभिरक्षणम्॥
अहिंसा सर्वदेवेभ्यः पवित्रा सर्वदायिनी। दानं हि जीवितस्याहुः प्राणिनां परमं बुधाः॥

(वायुपुराण ८०। १७-१८)

जीवनदानसे बढ़कर और कोई भी उत्तम दान नहीं है, इसलिये सब प्रकारके प्रयत्नोंसे सबको प्राणदान देना चाहिये। अहिंसा सब फल देनेवाली है और परम पवित्र है। प्राणियोंको जीवनदान सर्वश्रेष्ठ दान है।

गोशाला कैसी हो ?

जो लोग गौओंको सर्दी और वर्षासे बचानेके लिये घर बनवाते हैं उनके सात कुल तर जाते हैं। (महा० अनु० अ० ६६)

गोष्ठं च कारयेत्तस्य किञ्चिद् विघ्नविवर्जितम् ।
सदा गोमयमूत्राभ्यां विषसैश्च विवर्जितम् ॥
न मलं निक्षिपेद्गोष्ठे सर्वदेवनिकेतने ।
आत्मनः शयनीयस्य सदृशं कारयेद्बुधः ॥
समं निर्वापयेद् यत्नाच्छीतवातरजस्तथा ।
प्राणस्य सदृशे पश्येद् गां च सामान्यविग्रहम् ॥

(पद्म० सृष्टि० ४८ । १११—११३)

गौओंके लिये एक ऐसा गोष्ठ बनाना चाहिये जिसमें कुत्ते, मक्खी, मच्छर, डाँस, चोर आदिका कोई भी विघ्न न हो। गोबर, गोमूत्र तथा बचे-खुचे घास-चारेका कूड़ा पड़ा न रह जाय। गौओंका गोष्ठ सारे देवताओंका निवास-स्थान है। उसमें मल नहीं डालना चाहिये। समझदार आदमीको चाहिये कि गोष्ठको अपने शयन करनेके कमरेकी तरह साफ-सुथरा रक्खे। इसे सर्दी, वायु और धूलसे समान भावसे प्रयत्नपूर्वक बचाये रखना चाहिये। गौ सामान्य प्राणी होनेपर भी उसे अपने प्राणोंके समान देखना चाहिये।

गोशालामें मक्खी, मच्छर और डाँस इत्यादि न होने पावें, इसलिये रोज सुगन्धित धूनी देनी चाहिये। जो गोपालक गोशालामें इस प्रकार धूनी नहीं देता, वह मक्षिकालीन नरकमें जाता है और नरककी भयानक मक्खियाँ उसके चमड़ेको फाड़कर उसका रक्त पान करती हैं। (देवीपुराण)

गोबर और गोमूत्रसे कभी घृणा न करे। सूखे चूनेसे गोशालाको सदा साफ रक्खे। गर्मियोंमें ठण्डे पेड़ोंकी छायामें, जाड़ेमें गर्म और बिना कीचड़के घरमें, तथा वर्षा और शिशिर-कालमें थोड़े गरम और जोरकी हवा न आनेवाले घरोंमें गायोंको रक्खे। जूठन, कफ, थूक, मूत्र, विष्ठा आदि किसी प्रकारके भी मलको गोशालामें न छोड़े। बछड़ेको कभी लाँघके न जाय। कुलटा स्त्री और नीच मनुष्योंको गोशालामें न जाने दे। जूता पहनकर अथवा हाथी, घोड़ा, गाड़ी या पालकीपर सवार होकर गायोंके बीचमें न जाय।

(ब्रह्मपुराण)

प्रातःकाल नमक, इसके बाद जल और घास खानेको देना चाहिये। रातके समय गोशालामें दीपक जलाना चाहिये और बाजे तथा पौराणिक कथाकी व्यवस्था करनी चाहिये। उठते-बैठते, खाते-पीते सब समय मनमें इस मन्त्रका जाप करना चाहिये। ऐसा विचार करना चाहिये कि गायें ताजे घास-चारे और जलको खा-पीकर अपने बछड़ोंके साथ आनन्द करें। सुखपूर्वक दूध दें। गर्मी-सर्दी-रोगके भयसे छूटकर आरामसे सोयें। (ब्रह्मपुराण)

गोमुख-तीर्थ

प्राचीन कालमें चमत्कारपुरमें एक कोढ़ी ग्वाला रहता था। एक दिन जब कि एकादशी तिथि थी, चन्द्रमा चित्रा नक्षत्रपर और सूर्य वृष राशिमें स्थित थे, वहाँ प्यासी गायोंका एक झुंड आया। उस झुंडमेंसे एक गाय दूरसे हरी घास देखकर प्रसन्न-मनसे दौड़ी और वहाँ पहुँचकर उसने दाँतोंसे ज्यों ही जमीन खोदी त्यों ही अंदरसे एक जलकी धारा निकली। गायने भरपेट विशुद्ध स्वादिष्ट जलका पान किया। वह प्यासी होनेके कारण बहुत जोरसे पी रही थी, इसलिये वहाँ जलका एक गड्ढा-सा हो गया। फिर तो सैकड़ों गायें आयीं और उस सुनिर्मल अमृतके समान स्वादिष्ट जलको पीने लगीं। ज्यों-ज्यों अधिक गायें जल पीने लगीं, त्यों-ही-त्यों वह गड्ढा चौड़ा और गहरा होने लगा। जब सारी गायें खूब जल पीकर प्यास मिटा चुकीं तब वह कोढ़ी ग्वाला वहाँ आया और प्यासके मारे उस गड्ढेमें घुस गया। उसने खूब जल पीया और वह शरीरको खूब मल-मलकर नहाया भी। जब बाहर निकला तो देखता है कि सूर्यके समान तेजस्वी और निर्मल उसका शरीर हो गया है। उसने घर लौटकर प्रसन्न-मनसे यह बतलाया कि गायोंके द्वारा घास उखाड़नेपर जल निकला था और उसमें नहानेसे मेरा सारा रोग जाता रहा।

जब लोगोंने इस बातको सुना तब वे, खास करके रोगपीड़ित लोग वहाँ जाने लगे और स्नान करके व्याधि और पापसे मुक्त होने लगे। गौके मुखसे उत्पत्ति हुई थी इसीलिये इस तीर्थका नाम गोमुख पड़ा। (स्कन्दपुराण नागर० अ० ९३)

गो-सम्बन्धी व्रत

(संकलनकर्ता—पं० श्रीहनूमान्‌जी शर्मा)

(१)

गोपद्म-व्रत

आषाढ़ शुक्ल एकादशीको प्रातःस्नानादिके पश्चात् गौके निवासस्थानको गोबरसे लीपकर उसमें तैंतीस पद्म (कमल) स्थापन करके उनका गन्ध-पुष्पादिसे पूजन करे और तैंतीस अपूप (पूए) भोग लगाकर उतने ही अर्घ्य, प्रदक्षिणा और प्रणाम अर्पण कर व्रत करे। इस प्रकार कार्तिक शुक्ल एकादशीपर्यन्त प्रतिदिन करनेके पश्चात् द्वादशीको पहले वर्षमें पूए, दूसरेमें खीर और पूए, तीसरेमें मँडके, चौथेमें गुड़ और मँडके और पाँचवेंमें घृतपाचित (घीमें पकाये हुए) मँडकोंसे पारण करके उद्यापन करे तो जीवनपर्यन्त सुख-सम्पत्तिसे युक्त रहता है और परलोकमें स्वर्गीय सुख प्राप्त होते हैं। इस व्रतके आचरणसे इस लोकमें राज्य, सौभाग्य, सम्पत्ति तथा पुत्र-पौत्रादिक सुख भोगकर मनुष्य अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता है। (भविष्योत्तरपुराण)

(२)

गोवत्सद्वादशी-व्रत

यह व्रत कार्तिक कृष्ण द्वादशीको किया जाता है। इसमें प्रदोषव्यापिनी तिथि ली जाती है। यदि वह दो दिन हो या न हो तो 'वत्सपूजा वटश्चैव कर्तव्यौ प्रथमेऽहनि' के अनुसार पहले दिन व्रत करना चाहिये। उस दिन सायंकालके समय गायें चरकर वापस आवें तब तुल्यवर्गकी गौ और बछड़ेका गन्धादिसे पूजन करके—

क्षीरोदार्णवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते।
सर्वदेवमये मातर्गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥

—से उसके (आगेके) चरणोंमें अर्घ्य दे और—

सर्वदेवमये देवि सर्वदेवैरलङ्कृते।
मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि॥

—से प्रार्थना करे। इस बातका स्मरण रक्खे कि उस दिनके भोजनके पदार्थोंमें गायका दूध, दही, घी, छाछ और खीर तथा तेलके पके हुए भुजिया, पकौड़ी या अन्य कोई पदार्थ न हों। इस व्रतसे मनोकामनाएँ सफल होती हैं। (मदनरत्नान्तर्गत भविष्योत्तरपुराण)

(३)

गोवर्धनपूजा-व्रत

दीपावलीके दूसरे दिन प्रभातके समय मकानके द्वारदेशमें गौके गोबरका गोवर्धन बनावे। शास्त्रमें उसको शिखरप्रयुक्त, वृक्ष-शाखादिसे संयुक्त और पुष्पादिसे सुशोभित बनानेका विधान है। किन्तु अनेक स्थानोंमें उसे मनुष्यके आकारका बनाकर पुष्पादिसे भूषित करते हैं। चाहे जैसा हो, उसका गन्ध-पुष्पादिसे पूजन करके—

गोवर्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।
विष्णुबाहुकृतोच्छ्राय गवां कोटिप्रदो भव॥

—से प्रार्थना करे। इसके पीछे भूषणीय गौओंका आवाहन करके उनका यथाविधि पूजन करे और—

लक्ष्मीर्या लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।
घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु॥

—से प्रार्थना करके रात्रिमें गौसे गोवर्धनका उपमर्दन कराये। गोवर्धनपूजाव्रतसे मनुष्य इस लोकमें समस्त सुखोंको भोगकर अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता है। (हेमाद्रि)

(४)

गोत्रिरात्र-व्रत

यह व्रत कार्तिक कृष्ण त्रयोदशीसे दीपावलीके दिनतक किया जाता है। इसमें उदयव्यापिनी तिथि ली जाती है। यदि वह दो दिन हो तो पहले दिन व्रत करे। इस व्रतके लिये गोशाला या गायोंके आने-जानेके मार्गमें आठ हाथ लंबी और चार हाथ चौड़ी वेदी बनाकर उसपर सर्वतोभद्र लिखे और उसके ऊपर छत्रके आकारका वृक्ष बनाकर उसमें विविध प्रकारके फल, पुष्प और पक्षी बनावे। वृक्षके नीचे मण्डलके मध्यभागमें गोवर्द्धन भगवान्‌की, उनके वाम-भागमें रुक्मिणी, मित्रवृन्दा, शैव्या और जाम्बवतीकी; दक्षिण भागमें सत्यभामा, लक्ष्मणा, सुदेवा और नाग्नजितीकी; उनके अग्रभागमें नन्दबाबा; पृष्ठभागमें बलभद्र और यशोदा, और श्रीकृष्णके सामने सुरभी, सुनन्दा, सुभद्रा और कामधेनु गौ—इनकी सुवर्णमयी सोलह मूर्तियाँ स्थापित करे। और उन सबका नाममन्त्र (यथा गोवर्द्धनाय नमः आदि)से पूजन करके—

गवामाधार गोविन्द रुक्मिणीवल्लभ प्रभो।
गोपगोपीसमोपेत गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥

—से भगवान्‌को और—

रुद्राणां चैव या माता वसूनां दुहिता च या।
आदित्यानां च भगिनी सा नः शान्ति प्रयच्छतु॥

—से गौको अर्घ्य दे। और—

सुरभी वैष्णवी माता नित्यं विष्णुपदे स्थिता।
प्रतिगृह्णातु मे ग्रासं सुरभी मे प्रसीदतु॥

—से गौको ग्रास दे। विविध भाँतिके फल, पुष्प, पक्वान्न और रसादिसे पूजन करके बाँसके पात्रोंमें सप्तधान्य और सात मिठाई भरकर सौभाग्यवती स्त्रियोंको दे। इस प्रकार तीन दिन व्रत करे और चौथे दिन प्रातःस्नानादि करके गायत्री-मन्त्रसे तिलोंकी १०८ आहुति देकर व्रतका विसर्जन करे तो इससे सुत, सुख और सम्पत्तिका लाभ होता है। (स्कन्दपुराण) भविष्योत्तर-पुराणके अनुसार गोत्रिरात्र-व्रतका फल पुत्र-प्राप्ति, सुखभोग और अन्तमें गोलोककी प्राप्ति बताया गया है।

(५)
गोपाष्टमी-व्रत

कार्तिक शुक्ल अष्टमीको प्रातःकालके समय गौओंको स्नान करावे। गन्ध-पुष्पादिसे उनका पूजन करे और अनेक प्रकारके वस्त्रालङ्कारसे अलङ्कृत करके उनके गोपालों (ग्वालों) का पूजन करे, गायोंको गोग्रास देकर उनकी परिक्रमा करे और थोड़ी दूरतक उनके साथ जाय तो सब प्रकारकी अभीष्ट-सिद्धि होती है। इसी गोपाष्टमीको सायंकाल-के समय गायें चरकर वापस आवें, उस समय भी उनका आतिथ्य, अभिवादन और पञ्चोपचार पूजन करके कुछ भोजन करावे और उनकी चरणरजको मस्तकपर धारण करके ललाटपर लगावे तो उससे सौभाग्यकी वृद्धि होती है।

(निर्णयामृत—कूर्मपुराण)

(६)
पयोव्रत

यह व्रत फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदासे द्वादशीपर्यन्त बारह दिनोंमें पूर्ण होता है। इसके लिये गुरु-शुक्रादिका उदय और उत्तम मुहूर्त देखकर फाल्गुनी अमावास्याको वनमें जाकर—

त्वं देव्यादिवराहेण रसायाः स्थानमिच्छता।
उद्धृतासि नमस्तुभ्यं पाप्मानं मे प्रणाशय॥

—इस मन्त्रसे जंगली सूकरकी खोदी हुई मिट्टीको शरीरमें लगावे और समीपके सरोवरमें जाकर शुद्ध स्नान करे। फिर गौके दूधकी खीर बनाकर दो विद्वान् ब्राह्मणोंको उसका भोजन करावे और स्वयं भी उसीका भोजन करे। दूसरे दिन (फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदाको) भगवान्‌को गौके दूधसे स्नान कराकर हाथमें जल लेकर 'मम सकलगुणगणवरिष्ठ-महत्त्वसम्पन्नायुष्मत्पुत्रप्राप्तिकामनया विष्णुप्रीतये पयोव्रतमहं करिष्ये।' यह संकल्प करे। तदनन्तर सुवर्णके बने हुए हृषीकेश भगवान्‌का 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इस मन्त्रसे आवाहनादि षोडशोपचार पूजन करके—१ महापुरुषाय, २ सूक्ष्माय, ३ द्विशीर्ष्णे, ४ शिवाय, ५ हिरण्यगर्भाय, ६ आदि-देवाय, ७ मरकतश्यामवपुषे, ८ त्रयीविद्यात्मने, ९ योगैश्वर्यशरी-राय नमः—से भगवान्‌को प्रणाम और पुष्पाञ्जलि अर्पण करके परिमित दूध एक बार पीये। इस प्रकार प्रतिपदासे द्वादशी-पर्यन्त बारह दिनतक व्रत करके त्रयोदशीको विष्णुका यथा-विधि पूजन करे। पञ्चामृतसे स्नान करावे और तेरह ब्राह्मणों-को गो-दुग्धकी खीरका भोजन करावे। तदनन्तर सुपूजित मूर्ति भूमिके, सूर्यके, जलके या अग्निके अर्पण करके गुरुको दे और व्रत-विसर्जन करके तेरहवें दिन स्वयं भी स्वल्प मात्रामें खीर-का भोजन करे। यह व्रत पुत्रप्राप्तिकी इच्छा रखनेवाले अपुत्र स्त्री-पुरुषोंके करनेका है। देवमाता अदितिके उदरसे वामन भगवान् इसी व्रतके प्रभावसे प्रकट हुए थे। (श्रीमद्भागवत)

बलिकी अपेक्षा दया महत्त्वपूर्ण है

'मैं यह चाहता हूँ कि लोग बलिकी अपेक्षा दयाको अधिक महत्त्व दें तथा यह समझें कि जोशमें आकर बलिदान समर्पण करनेकी अपेक्षा परमात्माका अधिकाधिक ज्ञान ही प्रथम वाञ्छनीय है।'

—(होसिया ६ । ६)

वैतरणी एकादशी (मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी) के व्रतकी विधि

व्रत करनेवालेको चाहिये कि वह मध्याह्न-कालमें स्नान करके तथा मध्याह्न-कालोचित सभी नित्यक्रिया समाप्त करके पिछली रातको लायी हुई कृष्णा गौकी पूजा करे। गौको पूर्वकी ओर मुख करके पृथ्वीपर खड़ी करे और पितृतर्पणके अनन्तर शास्त्रोक्त विधिसे उसकी पूजा करे। पहले श्रद्धापूर्वक गौके शरीरपर चन्दनका लेप करे और फिर गन्धमिश्रित जलसे उसकी पिछली टाँगों एवं सींगोंको धोकर फिर पौराणिक मन्त्रोंसे विधिपूर्वक चन्दनादिसे सुवासित पुष्पोंद्वारा उसकी भक्तिसहित पूजा करे। पहले गौकी दोनों अगली टाँगोंकी, उसके बाद मुखकी, फिर सींगों एवं कंधोंकी, पूँछकी, पिछली दोनों टाँगोंकी और तब सारे अङ्गोंकी तथा उनमें रहनेवाले देवताओंकी पूजा करनी चाहिये। इन सभी अङ्गोंमें चन्दनके छींटे देकर फिर उसे धूप करे और दीपक दिखलावे। इसके अनन्तर निम्नलिखित मन्त्रका उच्चारण करते हुए गो-माताको नमस्कार करे—

असिपत्रादिकं घोरं नदीं वैतरणीं तथा।
प्रसादात्ते तरिष्यामि गौर्मातस्ते नमो नमः॥

गो-माता! तुम्हारी कृपासे मैं असिपत्रवन आदि घोर नरकोंको तथा वैतरणी नदीको पार कर जाऊँगा। तुम्हें बारंबार नमस्कार है।

इसके बाद सोनेके सींग, चाँदीके खुर, गलेमें बाँधनेके लिये छोटी-छोटी घंटियाँ, वस्त्राभूषण, ताँबेकी पीठ, काँसेकी दोहनी तथा दक्षिणारूपमें सोनेकी मुहरके साथ बछड़ेसहित उस गौको किसी श्रेष्ठ ब्राह्मणके अर्पण कर दे। अन्तमें १२ सौम्य ब्राह्मणोंको बुलाकर पीपलके पत्तोंपर बिठाये और 'ॐ तस्मै नम आयातु' इस मन्त्रके द्वारा सफेद चावलोंसे सबका पृथक्-पृथक् आवाहन करे। फिर पूर्वदिशामें अग्नि स्थापन करके आसन, पाद्य, अर्घ्य, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और वस्त्रोंके द्वारा ब्राह्मणोंकी पूजा करके उनसे होम कराये और अन्तमें आचमन कराके होमसे बची हुई सामग्री उनके अर्पण कर दे। होममें प्रत्येक ब्राह्मण ८-८ समिधाएँ, ८-८ घीकी आहुतियाँ, १-१ जौकी आहुति और ८-८ तिलकी आहुतियाँ दे। पूर्णाहुतिके समय 'तद्विष्णोः परमं पदम्' इस मन्त्रके द्वारा अन्तिम आहुति दे। होमके अन्तमें १२, ८, ६, ४ अथवा १ ही दुधार गाय, सोनेकी मूर्तिसहित, दान करे। वैतरणीके दिन व्रतकी समाप्तिके लिये बहुत-सा लोहा तथा रूई किसी कुटुम्बी ब्राह्मणको देनी चाहिये। इस व्रतके प्रभावसे व्रत करनेवाला पुरुष हो या स्त्री—बहुत दिनोंतक राज्य भोगकर स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। एकादशी-व्रतके उद्यापनके निमित्त ही इस वैतरणी-व्रतका अनुष्ठान किया जाता है। (व्रतराज)

सुरभीको वरदान

पहले सत्ययुगमें जब देवता तीनों लोकोंपर राज्य करते थे, उस समय धर्मपरायणा दक्षकन्या सुरभी बड़े उत्साहके साथ घोर तपस्यामें प्रवृत्त हुई। कैलासके रमणीय शिखरपर जहाँ देवता और गन्धर्व सदा विराजते रहते हैं, वह उत्तम योगका आश्रय ले ग्यारह हजार वर्षोंतक एक पैरसे खड़ी रही। तब ब्रह्माजीने उस तपस्विनी देवीके पास जाकर कहा—'कल्याणी! तुम किसलिये यह घोर तपस्या कर रही हो, तुम्हारे इस तपसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ; तुम कोई वर माँगो, मैं देनेको तैयार हूँ।'

सुरभीने कहा—'भगवन्! मुझे वर लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, मेरे लिये तो सबसे बड़ा वर यही है कि आज आप मुझपर प्रसन्न हो गये।'

ब्रह्माजी बोले—'देवि! तुमने लोभका परित्याग करके निष्काम भावसे तप किया है, इससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है, अतः मैं तुम्हें अमर होनेका वरदान देता हूँ। अब मेरी कृपासे तीनों लोकोंके ऊपर तुम्हारा निवास होगा, तुम जहाँ वास करोगी, उसकी गोलोकके नामसे ख्याति होगी। तुम्हारी सभी शुभ सन्तान मनुष्य-लोकमें प्राणियोंके हितका कार्य करती हुई वहाँ निवास करेंगी। तुम अपने मनसे जिन दिव्य अथवा मानवीय भोगोंका चिन्तन करोगी, वे सब तुम्हें प्राप्त होंगे तथा सब प्रकारका सुख तुम्हारे लिये सदा सुलभ रहेगा।' (महा० अनु० अ० ८३)

खलयज्ञ

खलयज्ञ करनेसे द्विजाति सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करते हैं। यज्ञकी विधि इस प्रकार है—खलिहानमें चारों ओर अत्यन्त सघन बाड़ बनावे, उसे चारों ओरसे बंद रखकर भीतर जानेके लिये एक ही दरवाजा रक्खे। गधे, ऊँट, बकरे अथवा भेंड़को भीतर जानेसे न रोके; यहाँतक कि कुत्ते, सूअर एवं सियार आदि जन्तुओंको तथा कौवे, उल्लू एवं कबूतरोंको भी मना न करे। अपने हाथसे लाये हुए शुद्ध जलसे सुबह-शाम तथा दोपहरमें—तीनों समय खलिहानको छिड़ककर तर रक्खे और भस्म एवं जलधारासे उसकी भूत-प्रेतादिसे रक्षा करे। महर्षि पराशरका स्मरण करते हुए तीनों काल हलके फालकी पूजा करे तथा जबतक खलिहानमें रहे, भूत-प्रेत आदिका नाम भी न ले। प्रसव-गृह (सौरी) की भाँति खलिहानकी चारों ओरसे [मन्त्रोंद्वारा] रक्षा कर देनी चाहिये—उसे कील देना चाहिये, क्योंकि बिना कीले हुए स्थानपर राक्षसलोग पूरा-पूरा अधिकार कर लेते हैं। किसी प्रशस्त दिनके पूर्वभाग अथवा तीसरे पहरमें हलके फालकी पूजा करके अनाजको तौलना चाहिये। फिर रोहिणी नामक कालमें (दोपहरके कुछ ही समय बाद) खलिहानमें भिक्षासे यज्ञ करे। उस यज्ञमें भक्तिपूर्वक जो कुछ भी दिया जाता है वह सब-का-सब अक्षय हो जाता है। इसके अनन्तर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर दक्षिणा दे—

खलयज्ञे दक्षिणैषा ब्रह्मणा निर्मिता पुरा।
भागधेयमयीं कृत्वा तां गृह्णन्त्विह मामिकाम्॥
शतक्रत्वादयो देवाः पितरः सोमपादयः।
सनकादिमनुष्याश्च ये चान्ये दक्षिणाशिनः॥

'इस खलयज्ञमें ब्रह्माजीने सृष्टिके आदिमें इस दक्षिणाका विधान किया था; अतः इन्द्रादि देवगण, सोमप आदि पितृगण तथा सनकादि मनुष्य एवं अन्य जो कोई भी दक्षिणा लेनेवाले हों, वे सब मेरी इस दक्षिणाको सफल करके ग्रहण करें।'

इस प्रकार कहकर इन्हींके निमित्त किसान पहले ब्राह्मणोंको, पीछे अन्य याचकोंको, उसके बाद काम करनेवाले—बढ़ई, नाई, धोबी आदिको दक्षिणा दे। दीन, अनाथ, कोढ़ी, विकृत शरीरवाले, हिंजड़े, अंधे, बहिरे आदि सभी प्रकारके लोगोंको दक्षिणा दी जाती है। तीनों वर्णोंके लोगोंको तथा पतितोंको भी दक्षिणा देकर चाण्डालों, श्वपचों तथा छोटे-बड़े सभी जीवोंको प्रेमसे तृप्त करे। उस समय वहाँ जो कोई भी ब्राह्मण आवें, उनकी अतिथिके समान पूजा करनी चाहिये और मधुर वाणीसे सत्कार करके बड़े-छोटेके क्रमसे उन्हें विदा करना चाहिये। शेष बचे हुए अन्नको घरमें ले जाकर वहाँ आभ्युदयिक श्राद्ध करे।

पराशरस्मृतिके दूसरे अध्यायमें कहा है—

वृक्षं छित्त्वा महीं भित्त्वा हत्वा च कृमिकीटकान्।
कर्षकः खलयज्ञेन सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

'वृक्षोंको काटने, पृथ्वीको जोतने-कोड़ने तथा उसी सम्बन्धमें कृमि-कीटादिके मारनेसे किसानको जो पाप लगता है, वह खलयज्ञ करनेसे छूट जाता है।' (गो० को० प्रा० वि०)

हलका धर्म्याधर्म्य-विचार

* **हलमष्टगवं धर्म्यं षड्गवं वृत्तिलक्षणम्[1]। चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवं गोजिघांसुमत्[2]॥ ७-८॥**

.. । द्विगवं वाहयेत् पादं मध्याह्नन्तु चतुर्गवम्॥ ९॥

षड्गवं तु त्रियामाहेऽष्टभिः पूर्णे तु वाहयेत्। न याति नरकेष्वेवं वर्तमानस्तु वै द्विजः॥ १०॥

(पाराशरस्मृति अ० २)

आठ बैलोंका हल धर्मका, छः बैलोंका हल जीविका करनेवालोंका, चार बैलोंका हल निर्दयीका और दो बैलोंका हल गोहत्यारेका है। दो बैलवाले हलको चौथाई दिन, चार बैलवाले हलको आधा दिन, छः बैलवाले हलको तीन प्रहर और आठ बैलवाले हलको दिनभर जोतनेसे द्विज नरकमें नहीं जाते॥ ७—१०॥ (ध० सं०)



---

*..............(पाठान्तर) अष्टागवं धर्महलम्; १ व्यावहारिकम् (अत्रिस्मृ० २१९); २ गववध्यकृत् (अत्रि० २२०), जीवितार्थिनाम् (आपस्तम्ब० १।२२), अत्रिस्मृति श्लोक २१९—२२१ में ऐसा ही कहा है तथा आपस्तम्बस्मृति १ अध्याय २२-२३ श्लोक इसीके समान हैं।

मल-मास (अधिक-मास) में गो-पूजाका विधान

मल-मास (पुरुषोत्तममास) में गो-दानका बड़ा माहात्म्य कहा गया है। किसी श्रोत्रिय ब्राह्मणको,—जो कुलीन, धर्मका व्याख्याता, शान्त, इन्द्रियजयी एवं निर्लोभ हो,—बुलाकर परमभक्तिके साथ अँगूठी-वस्त्र आदिसे उनकी पूजा करे और फिर सोनेके सींग, चाँदीके खुर, ताँबेकी पीठ एवं काँसेकी दोहनीके साथ गलेमें छोटी-छोटी घंटियाँ पहनाकर लाल वस्त्र एवं मालाओं तथा सोनेसे अलंकृत की हुई सुन्दर गौ उन्हें दान करे। दाताको चाहिये कि किसी ताँबेके बर्त्तनमें घी लेकर गौकी पूँछको उसमें डाल दे और हाथमें तिल एवं कुशसहित जल लेकर दानका संकल्प करे और 'इस दानसे भगवान् वासुदेव प्रसन्न हों, उन्हींके उद्देश्यसे यह दान करता हूँ,' इस प्रकार कहे। दानके समय दाता निम्नलिखित मन्त्रोंको पढ़े—

यज्ञसाधनभूता या विश्वस्याघौघनाशिनी। विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा॥
जलशायी ब्रह्मपिता पद्मनाभः सनातनः। अनन्तभोगशयनः प्रीयतां परमः प्रभुः॥

समस्त यज्ञ गौकी सहायतासे ही सम्पन्न होते हैं और गौ समस्त जगत्की पाप-राशिका नाश करनेवाली है; अतः मेरे द्वारा दी जानेवाली इस गौसे विश्वरूप भगवान् प्रसन्न हों। क्षीरसमुद्रमें शेषकी शय्यापर शयन करनेवाले, ब्रह्माजीके पिता, सनातन परमेश्वर भगवान् पद्मनाभ मेरे इस कर्मसे प्रसन्न हों।

इसके बाद अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणको सुवर्णकी दक्षिणा दे। उपर्युक्त विधिके अनुसार जो ब्राह्मणको गोदान करता है, उसकी सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं और वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

पञ्चगव्यके विषयमें शास्त्रीय विचार

गायके दूध इत्यादि पदार्थोंके जैसे अनेक उपयोग व्यवहारमें होते हैं, वैसे ही धर्मशास्त्रमें भी गायके दूध आदिका शरीर-शुद्धिके लिये उपयोग बताया गया है। व्यवहारमें तो भैंसके दुग्धादि पदार्थ काम देते हैं, परन्तु धर्मशास्त्रमें कहे हुए पदार्थ गायके बिना प्राप्त ही नहीं हो सकते। देहशुद्धिके द्वारा शरीरस्थित सम्पूर्ण पाप-नाशके लिये धर्मशास्त्रकारोंने पञ्चगव्य बनाकर प्राशन करनेकी आज्ञा दी है। पञ्चगव्य बनानेमें अनेक वर्णोंकी गायोंके घृत प्रभृति पदार्थोंको योग्य प्रमाणसे मिलानेकी विधि है। इस प्रकार बनाया हुआ पञ्चगव्य ब्राह्मण प्रभृति तीनों वर्णोंके लोग समन्त्रक सेवन करें तथा स्त्री-शूद्र ब्राह्मणद्वारा बनवाकर अमन्त्रक प्राशन करें। इस विषयमें धर्मशास्त्रमें जो वचन गायके वर्ण तथा दूध इत्यादि द्रव्योंके परिमाणके विषयमें प्राप्त होते हैं, उनमेंसे कुछ मुख्य-मुख्य ग्रन्थोंके वचन लिखकर उनका भाव यहाँ लिखा जाता है तथा उनके मतभेद दिखानेवाला एक नकशा भी दिया जाता है।

धर्मसिन्धुके अनुसार

१ ताम्राया गोमूत्रमष्टमाषं गायत्र्याऽऽदाय, २ श्वेतगोशकृत् षोडशमाषं गन्धद्वाराम्०, ३ पीतगोक्षीरं द्वादशमाषम् आप्याय०, ४ नीलगोदधि दशमाषं दधिक्राव्णो इति० ५ कृष्णगोघृतमष्टमाषं शुक्रमसि०, ६ देवस्य त्वेति चतुर्माषं कुशोदकम्।

—अत्र माषः पञ्चगुञ्जात्मकः।

स्त्रीशूद्रौ विप्रैः पञ्चगव्यं कारयित्वा तूष्णीं पिबत इति स्मृत्यर्थसारे।

धर्मसिन्धुकार कहते हैं कि ताँबे या पलाशके पात्रमें नीचे लिखे पदार्थ एकत्र करके मिलावे।

लाल वर्णकी गायका गोमूत्र 'गायत्री-मन्त्र' से आठ मासा, श्वेत गायका गोबर (गोमय) 'गन्धद्वाराम्' मन्त्रसे सोलह मासा, पीली गायका दूध 'आप्याय' मन्त्रसे बारह मासा, नील वर्णकी गायका दही 'दधिक्राव्णो' मन्त्रसे दस मासा, काली गायका घी 'शुक्रमसि' मन्त्रसे आठ मासा और 'देवस्य त्वा' मन्त्रसे चार मासा कुशाका जल।

यहाँ पाँच रत्तियोंका एक मासा समझना चाहिये। स्त्री-शूद्रोंको ब्राह्मणके द्वारा पञ्चगव्य बनवाकर बिना मन्त्रके (अमन्त्रक) प्राशन करना चाहिये। यह स्मृत्यर्थसार ग्रन्थका वचन है।

प्रायश्चित्तेन्दुशेखरके अनुसार

गोमूत्रं कृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम्।
पयश्च ताम्रवर्णाया रक्ताया गृह्यते दधि॥

कपिलाया घृतं ग्राह्यं सर्वं कापिलमेव वा ।
मूत्रमेकपलं दद्यादङ्गुष्ठार्धं तु गोमयम् ॥
क्षीरं सप्तपलं दद्याद्दधि त्रिपलमुच्यते ।
घृतमेकपलं दद्यात्पलमेकं कुशोदकम् ॥
गोशकृद्द्विगुणं मूत्रं घृतं विद्याच्चतुर्गुणम् ।
क्षीरमष्टगुणं प्रोक्तं पञ्चगव्ये तथा दधि ॥
गोमूत्रं माषका ह्यष्टौ गोमयस्य तु षोडश ।
क्षीरस्य द्वादश प्रोक्ता दध्नः पञ्चदशेति च ॥
मूत्रवद् घृतस्य । कुशोदकसाहित्यं च ।

कृष्णवर्णकी गायका गोमूत्र एक पल या गोमयसे दूना या आठ मासा, सफेद गायका गोमय अङ्गुष्ठके आधे हिस्सेके बराबर या सोलह मासा, ताँबेके समान वर्णवाली गायका दूध सात पल या गोमयसे आठगुणा या बारह मासा, लाल वर्णकी गायका दही तीन पल या दूधके बराबर या पंद्रह मासा, कपिल वर्णकी गायका घी एक पल या गोमयसे चौगुना या आठ मासा लेना चाहिये । अन्य वर्णोंकी गायोंकी ये चीजें न मिलें तो कपिल वर्णकी गायकी ही ये सब चीजें लेनी चाहिये । यह नागोजी भट्टके 'प्रायश्चित्तेन्दु-शेखर' ग्रन्थका भाव है ।

आजकल आठ रत्तियोंका मासा माना जाता है, उस हिसाबसे धर्मसिन्धुका मान इस प्रकार सिद्ध होता है—

द्रव्य	गोमूत्र	गोमय	दूध	दही	घी	कुशोदक
रत्ती	४०	८०	६०	५०	४०	२०

पल चार कर्षका, कर्ष सोलह मासोंका और मासा पाँच रत्तियोंका होता है । कपिल यानी बंदरके समान वर्णकी तथा नील यानी किञ्चित् कम काले वर्णवाली या नीली आभावाली गाय समझनी चाहिये ।

प्रसिद्ध मराठी, 'गुरुचरित्र' ग्रन्थके अट्ठाईसवें अध्यायमें पञ्चगव्यके सम्बन्धमें विस्तृत वर्णन मिलता है, उसका भाव यह है—

अज्ञानकृत दोषोंके नाशके लिये पश्चात्तापपूर्वक उपवास करके पञ्चगव्यका प्राशन करना चाहिये । नील वर्णकी गायका गोमूत्र एक पाव 'इरावती' मन्त्रसे, कृष्ण वर्णकी गायका गोमय आधे अङ्गुष्ठके बराबर 'इदं विष्णु' मन्त्रसे, ताम्र वर्णकी गायका दूध पौने दो सेर 'मानस्तोक' मन्त्रसे, सफेद गायका दही तीन पाव 'प्रजापति' मन्त्रसे, कपिल वर्णकी गायका घी एक पाव 'गायत्री' मन्त्रसे, व्याहृतिसे कुशोदक एक पाव लेकर सब एकमें मिलाकर प्राशन करना चाहिये । यदि सब वर्णोंकी गायोंका मिलना सम्भव न हो तो कपिला गायके ही सब पदार्थ लेने चाहिये । (११६–१२५)

	द्रव्य	गोमूत्र	गोमय	दूध	दही	घी	कुशोदक
धर्मसिन्धु	प्रमाण	आठ मासा	सोलह०	बारह०	दस०	आठ०	चार०
	वर्ण	ताँबेके समान लाल	सफेद	पीत	नील	कृष्ण	
प्रायश्चित्तेन्दु-शेखर	प्रमाण	एक पल या गोमयसे दुगुना या आठ मासा	अर्धाङ्गुष्ठ या सोलह मासा	सप्त पल या गो० आठगुना	तीन पल या दूधके समान या पंद्रह मासा	एक पल या गो० चौगुना या आठ मासा	एक पल
	वर्ण	कृष्ण	सफेद	ताँबेके समान	लाल	कपिल	
ब्रह्मकर्मसमुच्चय	प्रमाण	तीन पल	धर्मसिन्धुवत्	धर्मसिन्धुवत्	सप्तपल	धर्मसिन्धुवत्	धर्मसिन्धुवत्
	वर्ण	ताम्र		कपिल			


गायके साथ गोपाल

श्रीकृष्ण-लीलाके उपकरणोंमें गाय

सुर-वनिताओंकी वीणाविनिन्दित स्वरलहरी अन्तरिक्षको चीरकर नन्दप्राङ्गणके मणिमय स्तम्भोंमें प्रतिध्वनित हो उठी—

रिङ्गणकेलिकुले जननीसुखकारी ।
व्रजदृशि सुकृतस्फुरदवतारी ।
वलयितबाल्यविलास ! जय बलवलित ! हरे !*

नन्दरानी चकित-सी होकर एक क्षणके लिये आकाशकी ओर देखने लगीं, पर उनकी आँखें तो अपने नयनानन्द प्राणाराम हृदयधन नीलमणिकी छबिसे निरन्तर परिव्याप्त थीं। उन्हें वहाँ भी उस नीले गगनके वक्षःस्थलपर भी दीखा—

सोभित कर नवनीत लिये ।
घुटुरुन चलत, रेनु-तन-मंडित, मुख दधि-लेप किये ॥
चारु कपोल, लोल लोचन छबि, गोरोचनको तिलक दिये ।
लटलटकन मनों मत्त मधुपगन मादक मधुहि पिये ॥
कठुला कंठ, बज्र केहरि नख राजत हैं सखि रुचिर हिये ।
धन्य सूर एकौ पल यह सुख कहा भयो सत कल्प जिये ॥

नीलमणि श्यामसुन्दरके अरुण करपल्लवमें उज्ज्वलतम नवनीत है; नवनीरद श्रीअङ्गोंको नचा-नचाकर घुटुरुँअ चलते हुए वे घूम रहे हैं; प्राङ्गणके बड़भागी धूलिकणोंसे श्यामल अङ्ग परिशोभित है; अरुण अधर तथा ओष्ठ धवल दधिसे सने हैं; सुन्दर कपोल एवं चञ्चल नयनोंकी शोभा निराली ही है; उन्नत ललाटपर गोरोचनका तिलक है; मनोहर मुखारविन्दपर घनकृष्ण केशोंकी घुँघराली लटें लहरा रही हैं; लटें ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो भ्रमर हों, श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दका मधुर मधुपान करने आये हों, मधु पीकर मत्त हो गये हों, सुध-बुध भूले हुए, अरविन्दपर अरबरा रहे हों; कमनीय कण्ठमें कठुला शोभा पा रहा है; विशाल हृदयपर व्याघ्रनख आदि टोना-निवारक वस्तुओंसे निर्मित माला झूल रही है। एक ओर इस छबिके क्षणभर दर्शनका

---

* ये नन्दनन्दन बकैयाँ चलते हुए अपनी विविध क्रीडाओंसे माता यशोदाको आनन्दित करते हैं तथा व्रजवासियोंके अपूर्व सौभाग्यसे ही उनके नेत्रोंके सामने स्वयं अवतारी ही स्फुरित हुए हैं। विविध बाल्यविलाससे युक्त बलरामजीसहित श्रीकृष्णकी जय हो ।

आनन्द तथा दूसरी ओर सैकड़ों कल्पोंका समस्त जीवन-सुख, इन दोनोंकी तुलनामें वह एक क्षण ही धन्य है, कल्पोंका जीवन तुच्छातितुच्छ सर्वथा व्यर्थ—अनर्थ है।



नन्दरानीने आकाशसे दृष्टि हटा ली तथा वह आँगनमें किलकते हुए नीलमणिको पुनः देखने लग गयी। आँखोंके कोयोंमें आनन्दाश्रु छलक आये। यही दशा व्रजनरेश नन्दराजकी भी थी, जो कुछ ही दूरपर खड़े हुए अपने पुत्रकी रिङ्गणलीला निर्निमेष नयनोंसे निहार रहे थे।

अग्रज दाऊ पास ही बैठे आनन्दाम्बुधिमें आकण्ठ निमग्न थे। उनके आनन्दकी सीमा नहीं थी। कभी आगे, कभी पीछे रहकर छायाकी तरह वे श्यामसुन्दरका अनुगमन करते थे। दोनों भाई परस्पर अस्पष्ट कुछ बोलते और दोनों ही खिलखिलाकर हँस पड़ते थे। थोड़ी दूर घुटरूँ चलकर अपने ही नूपुरकी रुनझुन ध्वनिसे चकित हो जाते, स्निग्ध गम्भीर मुद्रामें कुछ क्षण सोचने-से लगते, फिर आगे बढ़ते, फिर रुनझुन शब्द होता, फिर ठिठक जाते। ठहरते ही मणिमय आँगनमें मनोहर मुखकमल प्रतिबिम्बित हो जाता और विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखने लगते। कभी उसे पकड़नेके उद्देश्यसे उसके सिरपर हाथ रख देते। हाथका व्यवधान आनेसे प्रतिबिम्ब लुप्त हो जाता, श्यामसुन्दर आश्चर्य-भरी मुद्रामें जननीकी ओर देखने लगते।

इस प्रकार बाललीलाधारी गोलोकविहारीकी अभिनव रिङ्गणलीला प्रारम्भ हुई तथा प्रतिक्षण नयी-नयी होकर बढ़ चली। यह कोई प्राकृत शिशुका स्वभावजात घुटुरुन तो था नहीं कि जिसकी निश्चित सीमा हो। यह तो स्वयं भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दर श्रीकृष्णके चिदानन्दमयस्वरूपभूत रससागरका एक तरङ्ग-विशेष था। चन्द्रकलाकी भाँति जिस अनुपातसे वात्सल्य-स्नेहवती माता यशोदा एवं अन्य व्रजसुन्दरियोंकी भावनाएँ बढ़ रही थीं, उसी अनुपातसे उस अचिन्त्य-अनन्त चिन्मय-रस-सार-सुधा-समुद्रमें सरल वक्र और तीक्ष्ण तरङ्गें उठ रही थीं। बालकृष्णके घुटरूँ चलनेका समाचार विद्युत्-की तरह समस्त गोष्ठमें फैल चुका था। यूथ-की-यूथ भाग्यवती व्रज-वनिताएँ प्रतिदिन नन्दद्वारपर एकत्र हो जातीं तथा उस अनुपम लीलारस-सुधाका अतृप्त पान करके बलिहार जातीं। सबका अलग-अलग हृदय था, सबकी अपनी-अपनी भावनाएँ थीं, सभी अपनी भावनाके अनुरूप लीलाका रस लेती थीं। रस लेती-लेती रसके तीव्र स्रोतमें वे बह जातीं, न जाने किन-किन मधुमय अभिलाषाओंको अन्तस्तलमें छिपाये बहतीं। इन सबका प्रतिबिम्ब श्यामसुन्दरके हृदयपर पड़ता एवं सबकी रुचिके अनुकूल सर्वसुखदायिनी अत्यन्त मनोहारिणी लीलाका प्रकाश होता। श्यामसुन्दरमें कितना ज्ञान हुआ है, इसका रस लेनेवालीके लिये वैसी ही लीला होती। गोपी पूछती—नीलमणि! तेरा मुख कहाँ है? उत्तरमें नीलमणि मनोहर मुखपर अपनी अँगुली रख देते। आँख कहाँ है? नीलमणि काजल लगे हुए नयनकमलोंको दोनों कर-कमलोंकी नन्ही-नन्ही अँगुलियोंसे मूँदकर गोपीकी ओर मुँह करके बैठ जाते। अच्छा लल्ला! नाक क्या वस्तु है? नन्दनन्दन प्राणायामकी मुद्रामें नाकका स्पर्श करते।

वाह वाह! मेरे प्राण-धन! अच्छा इस बार कान और चोटी तो मुझे दिखा दे। श्रीकृष्ण चटपट कानोंको छूकर दोनों हाथोंसे शिखाके स्थानको दबाकर सिर हिलाने लगते। गोपी आनन्दमें डूब जाती—

आननं क नयनं क नासिका
क श्रुतिः क च शिखेति केलितः।
तत्र तत्र निहिताङ्गुलीदलो
वल्लवीकुलमनन्दयत्प्रभुः ॥

कोई गोपी देखना चाहती यशोदानन्दनमें खड़े होनेकी शक्ति आयी है या नहीं। उसके लिये व्रजेन्द्रनन्दन धीरे-धीरे

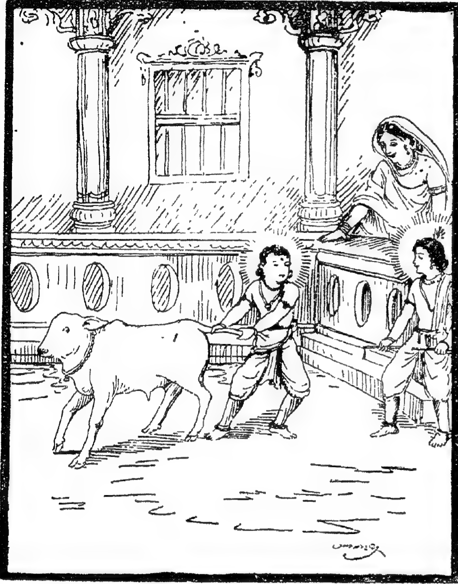
उठ खड़े होते। चार-पाँच पग चलकर गिर पड़ते। किसी व्रजवनिताके मनमें आता, यह सलोना साँवरा बोल सकता है या नहीं? उसके मनोरथकी पूर्तिके लिये दोनों भाई परस्पर अस्फुटस्वरमें कुछ बोल जाते; गोपीका हृदय आनन्दसे उछलने लगता। इस तरह लीलामयके लीलारसप्रवाहसे समस्त व्रज प्लावित हो गया। फिर भी व्रजवनिताओंकी आँखें तृप्त नहीं होतीं। उत्तरोत्तर मधुरातिमधुर लीला देखनेकी चाह बढ़ती ही जाती। अतः एक ही साथ सबको वात्सल्य-रस-सिन्धुमें डुबो देनेके उद्देश्यसे एक अत्यन्त मधुर बाललीलाका आस्वादन करनेकी इच्छा श्यामसुन्दरके मनमें जाग्रत् हुई। इच्छाकी देर थी, अचिन्त्यलीलामहाशक्तिने तत्क्षण व्रजराज-नन्दनको उसी साजसे सजा दिया और लीला प्रारम्भ हो गयी।

व्रजराज गोशालामें बछड़ोंकी सँभाल करने गये हैं और व्रजरानी अपने प्राणधन ललनके लिये भोजन बनानेमें संलग्न हैं। राम-श्याम दोनों भाई आँगनमें खेल रहे हैं। अबतक दोनों भाई मैया एवं बाबाकी गोदमें चढ़कर ही द्वारदेश एवं गोशाला आदिमें जाते थे। आज स्वतन्त्ररूपसे दोनों भाई तोरणद्वारकी ओर चल पड़े। कभी खड़े होकर कुछ डग चलते, कभी घुटनोंके बल। इस तरह बाहर चले आये। आम्रकी शीतल छायामें कुछ गोवत्स विश्राम कर रहे थे। धीरे-धीरे उनके पास जा पहुँचे। बछड़ेकी सुकोमल पूँछको देखकर आश्चर्यचकित-से होकर विचारने लगे, यह क्या है? फिर दोनों भाइयोंने अपने नेत्रकमलोंको किञ्चित् नचाकर मानो कुछ परामर्श-सा किया और धीरेसे एक ही साथ पूँछको दोनों हाथोंसे मुट्ठी बाँधकर पकड़ लिया। अचानक पूँछ खिंच जानेसे बछड़ा उठ खड़ा हुआ तथा भागने लगा। अचिन्त्यलीलामहाशक्तिने इसी क्षण श्यामसुन्दरकी स्वाभाविक अनन्त असीम सर्वज्ञतापर बाललीलोचित मुग्धताकी यवनिका गिरा दी। दोनों भाई बछड़ेसे खिंचे जाते हुए भयभीत हो उठे। जिसके अनन्तानन्त ज्ञानभण्डारके एक क्षुद्रतम कण-ज्ञानसे समस्त विश्वमें कर्तव्याकर्तव्य-ज्ञानका सञ्चार होता है, वे भगवान् श्रीकृष्ण यह ज्ञान भूल गये कि पूँछ छोड़ देनेसे ही बछड़ेका सम्बन्ध छूट जायगा, बल्कि उन्होंने तो अपनी रक्षाके लिये और भी अधिक शक्ति लगाकर पूँछको जकड़ लिया तथा मा-मा! बाबा-बाबा! पुकारकर रोने लगे! उसी क्षण समस्त व्रजवनिताओंकी हृदय-वीणापर मा-मा, बाबा-बाबाकी करुणामिश्रित स्वरलहरी झंकृत हो उठी, क्योंकि



उनके हृत्तन्तु सर्वथा श्याममय होकर निरन्तर श्यामसुन्दरसे ही जुड़े रहते थे। अतः जो जहाँ जिस अवस्थामें थी, चल पड़ी। इतनी शीघ्र कैसे आ पहुँची, यह किसीने नहीं जाना, पर सभी आ पहुँचीं। सबने देखा, भयभीत गोवत्स धीरे-धीरे भाग रहा है तथा उसकी पूँछ पकड़े नीलमणि एवं दाऊ मा-मा, बाबा-बाबाकी पुकार करते हुए खिंचे चले जा रहे हैं। अचिन्त्यलीला-शक्तिके महान् प्रभावसे कुछ क्षण सभी किंकर्तव्यविमूढ़-सी हो गयीं। इसी समय उपनन्द-पत्नीने शीघ्रतासे बछड़ेके आगे जाकर उसे थाम लिया। इतनेमें नन्दरानी एवं नन्दराय भी आ पहुँचे। 'बेटा नीलमणि! दाऊ! पूँछ छोड़ दे, पूँछ छोड़ दे' कहते हुए दोनोंने हाथसे पकड़कर पूँछ छुड़ा दी। नन्दरानीने नीलमणि एवं दाऊको अपनी गोदमें ले लिया, दोनोंका मुख चूमने लगीं। इधर व्रजसुन्दरियोंमें हँसी-का स्रोत उमड़ पड़ा, बाललीलाविहारीकी इस अद्भुत अभूतपूर्व ललित लीलाको देखकर सभी हँसते-हँसते लोट-पोट हो गयीं। एक ग्वालिन बोली—'नीलमणि! अरे दाऊ! तुम दोनों भला इस बछड़ेसे भी दुर्बल हो! अरे, पूँछ पकड़कर बछड़े-को रोक लेते या पूँछ पकड़े-पकड़े सारे व्रजमें घूम आते, यह बछड़ा तुम्हें व्रजमें घुमा लाता। हमलोग अपने-अपने घर-हीपर तुम्हें देखकर निहाल होतीं, बछड़े भी निहाल होते।' यों कहते-कहते ग्वालिनकी आँखोंमें प्रेमके आँसू छलछल करने लगे।

श्यामसुन्दर हँसने लगे, मानो संकेतसे कह रहे हैं—'एवमस्तु।' इसके पश्चात् भक्तवाञ्छाकल्पतरु व्रजराजनन्दनने बछड़ोंको अपने करस्पर्शका योगीन्द्रमुनीन्द्र-दुर्लभ आनन्द देते हुए इस परम सुन्दर लीलाका अनेकों बार प्रकाश किया।



दोनों भाई बछड़ोंकी पूँछ पकड़ लेते; बछड़ा भागता, कुछ दूर पीछे-पीछे खिंचते हुए चले जाते; फिर पूँछ छूट जाती तो किसी दूसरेकी पकड़ लेते; दूसरेकी छूटनेपर तीसरेकी। कभी एक साथ ही तीन-चार बछड़ोंकी पूँछ पकड़ते; बछड़े कूदते और श्यामसुन्दर हँसने लगते। कितने ही बछड़े स्वाभाविक प्यारवश श्यामसुन्दरके इच्छानुसार उन्हें खींच ले जाते। आगे-आगे करस्पर्शके आनन्दसे पुलकित होता हुआ बछड़ा और पीछे-पीछे पूँछमें टँगे हुए व्रजनयनानन्द पुरुषोत्तम स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण एवं दाऊजी। व्रजदेवियाँ इस परम मनोहर लीलाको देखकर आनन्दसे हँसते-हँसते आत्मविस्मृत हो जातीं। उनका गृह, गृह-कार्य, सब कुछ छूट जाता—

यर्ह्यङ्गनादर्शनीयकुमारलीला-
वन्तर्व्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः।
वत्सैरितस्तत उभावनुकृष्यमाणौ
प्रेक्षन्त्य उज्झितगृहा जहृषुर्हसन्त्यः॥*
(श्रीमद्भा० १०।८।२४)

(२)

दही बिलोती हुई एक व्रजसुन्दरी धीमे-धीमे गा रही है—

बलकृष्णौ बलवलितविलासौ
खेलत इह सखि! सखिकृतहासौ॥ ध्रु०॥
तर्णकपुच्छधृतिव्यापृतिनौ
प्रणयकलितकलिकलने कृतिनौ॥
(श्रीगोपालचम्पूः)

'सखि! देख, दाऊको साथ लिये बालकृष्ण खेल रहा है। कुछ सखा भी साथ हैं, सभी उसकी मधुमयी लीला देख-देखकर हँस रहे हैं। अहा! देख बहन! उसी दिनकी तरह आज भी दोनों पुनः बछड़ेकी पूँछ पकड़े हैं। सचमुच बहन! ये दोनों अब बड़े चञ्चल हो गये हैं, लोगोंको खिझाना सीख गये हैं। आह! उस दिन मैयासे कलह करते हुए तुमने इन्हें देखा नहीं? ओह! इनकी प्रेम-कलह अद्भुत ही है, इस कलामें ये दोनों ही बड़े प्रवीण हो गये हैं।'

व्रजसुन्दरियाँ अन्य समस्त कर्म, समस्त उपासनाएँ भूल गयीं। उनके लिये तो अब सम्पूर्ण उपासनाओंका सारसर्वस्व एक यशोदानन्दन ही बन गये हैं। सारा दिन, सारी रात उनकी आँखोंके सामने बाललीला-रसमत्त परमानन्दकन्द नन्दनन्दनकी नयनाभिराम नित्य नयी छटामयी छवि ही नाचती रहती है। दिनका अधिकांश भाग वे नन्दद्वारके समीप खड़ी रहकर बिता देतीं। गुरुजनोंकी बारंबारकी प्रेरणासे घर लौटतीं, पर मन तो नन्दनन्दनके पास ही रह जाता। अन्यमनस्क ही रहकर गृहकार्यमें लगतीं किन्तु ठीकसे कर नहीं पातीं। दूध दुहने बैठतीं तो आँखोंके सामने गायोंके थनकी जगह नन्दनन्दन दीखते; धानका छिलका उतारने बैठतीं तो ऊखलमें, मूसलमें, यहाँतक कि धानके कणोंमें श्यामसुन्दर

* जब राम और श्याम दोनों कुछ और बड़े हुए, तब व्रजमें घरके बाहर ऐसी-ऐसी बाललीलाएँ करने लगे, जिन्हें गोपियाँ देखती ही रह जातीं। जब वे किसी बैठे हुए बछड़ेकी पूँछ पकड़ लेते और बछड़े डरकर इधर-उधर भागते, तब वे दोनों और भी जोरसे पूँछ पकड़ लेते और बछड़े उन्हें घसीटते हुए दौड़ने लगते। गोपियाँ अपने घरका काम-धंधा छोड़कर यही सब देखती रहतीं और हँसते-हँसते लोट-पोट हो जातीं।

दीखते; दही बिलोतीं तो दीखता मनमोहन नीलमणि मथानी-को पकड़े खड़े हैं, घर लीपने बैठतीं तो हाथ चलता नहीं; क्योंकि उन्हें सर्वत्र व्रजेन्द्रनन्दन नाचते-थिरकते दीखते; उनके छोटे बालक रोने लगते, गोपियाँ लोरी देनेका विचार करतीं, पर आँखोंसे बच्चा नहीं दीखता, यशोदानन्दन दीखते; वस्त्र धोने बैठतीं तो जलमें, जलपात्रमें, वस्त्रके धागोंमें, मानो श्याम-सुन्दर समाये हों—यह दीखने लगता और वे चकित-सी, मुग्ध-सी होकर बैठी रह जातीं; झाड़ू देने जातीं तो दीखता, मैं तो नन्दरायजीकी गोशालामें बैठी हूँ, गो-रजमें लिपटे नन्दनन्दन सामने खेल रहे हैं; बस फिर, झाड़ू हाथमें ही रह जाता। इस प्रकार वे अधिकांश समय भावाविष्ट रहतीं। लीलाशक्तिकी प्रेरणासे जब आवेश कुछ शिथिल होता, तो किसी प्रकार गृहकार्यका समाधान कर पातीं। पर उस समय भी उनका मन तो रसराजशिरोमणि यशोदानन्दनके लीला-रस-सुधा-सागरमें ही डूबा रहता तथा वाणी निरन्तर उन्हींका ललित लीलागान करती रहती; ऐसा प्रतीत होता कि मानो उनके अन्तर्हृदयका सरस रस-स्रोत ही सुरीले शब्द बनकर झर रहा हो—

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-
प्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो
धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः ॥

(श्रीमद्भा० १०। ४४। १५)

हरिलीला गावत गोपीजन अति आनँद भरि निसिदिन जाई।
बालचरित्र बिचित्र मनोहर कमलनैन ब्रजजन सुखदाई॥
दोहन मथन खँडन गृहलेपन मंडन सुत-पति-सेवा।
चारि जाम अवकास नहीं पल सुमिरत कृष्ण देवदेवा॥
भवन भवन प्रति दीप बिराजत कर कंकन पग नूपुर बाजे।
परमानंद घोष कौतूहल निरखि भाँति सुरपति जिय लाजे॥

आज वह व्रजसुन्दरी भी इसी तरह विशेषरूपसे भावा-विष्ट होकर गा रही है। उसके मानस-नेत्रोंके सामने कभी गोवत्सपुच्छधारी श्यामसुन्दरकी, और कभी माताके साथ कमनीय कलहमें संलग्न यशोदानन्दनकी छबि आ रही है। गोपी भावनाके स्रोतमें डूब रही है और इधर उसके प्राणधन श्यामसुन्दर सचमुच ही वत्सपुच्छधारणकी लीलामें मत्त हैं—

खेलत मदनसुंदर अंग।
जुबति जन मन निरखि उपजत बिबिध भाँति अनंग।
पकरि बछरा पूँछ ऐंचत अपनि दिसि बरजोर।
कबहुँ बच्छ लै भजत हरि कों जुवति जन की ओर॥
देखि परबस भए प्रीतम भयो मन आनंद।
मनहिं आकुल भई ब्याकुल गई लाज अमंद॥
कोउ देखत गहत कोऊ हँसत छाड़त गेह।
करत भायो अपने मन को प्रगट करि निज नेह॥
अति अलौकिक बाललीला क्योंहुँ जानि न जाय।
मुग्धता सों महारस सुख देत रसिक मिलाय॥

यह नियम है कि मिथ्या प्रापञ्चिक मानसिक कल्पनाएँ भी यदि प्राणशक्तिका पर्याप्त बल पा लें तो मूर्तिमती एवं सत्य बनकर प्रत्यक्ष दीखने लग जाती हैं। फिर गोपीकी कल्पना तो सत्यके भी सत्य परमपरात्पर पुरुषोत्तम साक्षात् भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन परमानन्दघन श्रीकृष्णके सम्बन्धकी है! तथा श्रीकृष्णमय बने हुए प्राणोंके बलपर श्रीकृष्णको गोपीकी ओर खींच लानेके लिये दौड़ रही हैं। अतः विलम्ब ही क्या था, श्यामसुन्दर मधुरातिमधुर आकर्षणसे युक्त उस भावनाके सूत्रमें बँधे हुए, खिंचे हुए-से ग्वालिनके घर आ पहुँचे। ग्वालिनने देखा—श्यामसुन्दर खड़े हैं, पर अकेले हैं। वास्तवमें श्यामसुन्दर अकेले ही आये थे; दादा दाऊ एवं साथियोंसे परामर्श करके सबको द्वारपर ही छोड़ दिया था, अकेले भीतर घुसे थे। अस्तु,

ग्वालिनके आनन्दका पार नहीं। उसने सोचा, स्वप्न तो नहीं देख रही हूँ? निर्णय करनेके उद्देश्यसे उसने बाहरकी ओर झरोखेसे झाँका, कुछ सखाओंके साथ दाऊ अतिशय शान्त मुद्रामें छिपे-से खड़े हैं; स्पष्ट था अपने अनुजके किसी संकेतकी प्रतीक्षामें खड़े हैं। ग्वालिन समझ गयी—स्वप्न नहीं, सत्य है; किसी मधुर गुप्त अभिसन्धिसे मेरे प्राणधन मेरे घर आये हैं। श्यामसुन्दरकी भोली चितवनकी ओर ग्वालिन देखने लगी। अधिक देरतक धैर्य न रख सकी, 'उसी क्षण' दौड़ पड़ी और गोद उठाकर हृदयसे लगा लिया—

बालदसा गोपाल की सब काहू को भावै।
जाके भवन में जात हैं सो लै गोद खिलावै॥
स्यामसुँदर मुख निरखि कै अबला सचु पावै।
लाल लाल कहि ग्वालिनी हँसि कंठ लगावै॥

श्यामसुन्दरका स्पर्श-सुख पाकर ग्वालिनी मानो समाविस्थ-सी हो गयी, सारी सुध-बुध खो बैठी। गोदमें तैरे

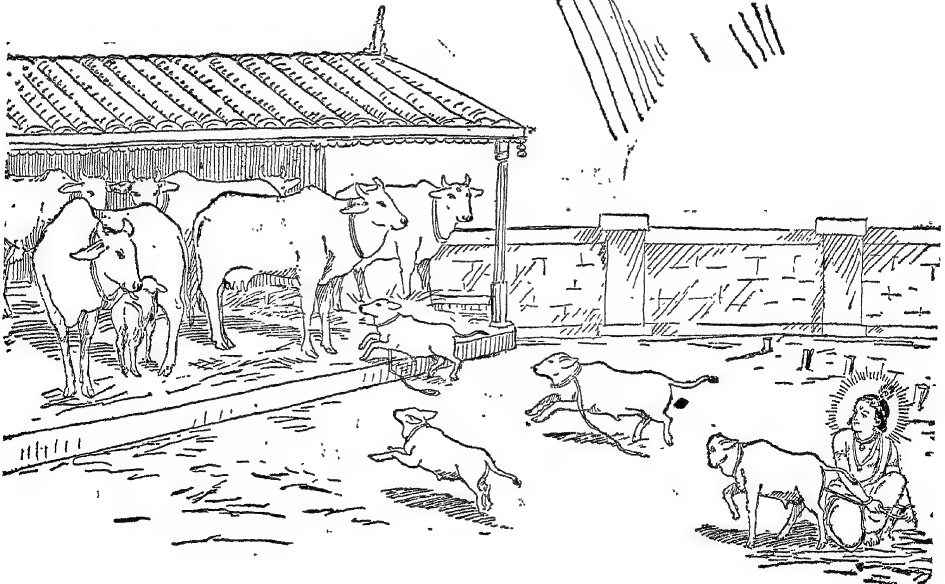
हुए अन्तर्यामीने ग्वालिनके अन्तरमें झाँककर देखा। अन्तर्हृदयके तार झन-झन कर रहे हैं—

प्रणयकलितकलिकलने कृतिनौ।

राम-श्याम प्रणय-कलहमें बड़े ही चतुर हैं, बड़े ही चतुर हैं। उस झनकारकी ओटमें एक लालसा छिपी है— कभी श्यामसुन्दर मुझे खिझाते, मैं रोष करती, ये झगड़ते; ऐसे प्रणय-कलहका सौभाग्य मुझे भी मिलता।

नीलमणि ग्वालिनका यही मनोरथ तो पूर्ण करने आये थे। वे चुपचाप गोदसे उठ खड़े हुए। ग्वालिन प्रस्तर मूर्तिकी तरह निश्चल बैठी थी। श्यामसुन्दर अपने सुकोमलतम करपल्लवोंसे धीरे-धीरे ताली बजाने लगे। ताली बजी कि गोपमण्डलीके सहित दाऊ भीतर आ गये। नीलमणिने माखनगृहकी ओर संकेत कर दिया। वे सब चुपचाप बिना किसी शब्दके भीतर जा पहुँचे। इधर स्वयं नीलमणि गोशालाकी तरफ चल पड़े। गोशालामें बहुत-से बछड़े बँधे थे। गायें रँभा रही थीं। आज अभीतक दुही नहीं गयी थीं। दुहता कौन? ग्वालिन तो आधी रातसे भावाविष्ट थी; तबसे दधि-भाण्डमें मथानी डालकर बिलो रही थी, दो-चार बार मथानी घुमाती, फिर ठहरकर गीत गाती, फिर कुछ देर मथती, फिर गाने लगती; उसे यह ज्ञान ही नहीं था कि कब प्रभात हुआ।

श्यामसुन्दरको देखकर बछड़े अपने सिर हिलाने लगे, गायें हाम्बाराव करने लगीं। श्यामसुन्दरने एक बार चञ्चल दृष्टिसे सब तरफ देखा कि कोई देख तो नहीं रहा है। फिर एक बछड़ेको खोल दिया। बछड़ा जाकर माका दूध पीने लगा। उसके पश्चात् एक-एक करके वहाँ जितने बछड़े थे सबको उन्मुक्त कर दिया; सभी अपनी-अपनी माके थनोंसे हुमक-हुमक कर दूध पीने लगे। यशोदानन्दनके मनोहर मुखारविन्दपर एक अनिर्वचनीय उल्लास छा गया। अपने इस कौतुकको देखकर वे आनन्दमें भर गये और गाय तथा बछड़ोंकी ओर परम आह्लादभरे नेत्रोंसे देखने लगे। गाय एवं बछड़ोंकी दशा भी आज विचित्र ही है। गायोंने दूध पीते हुए बछड़ोंको चाटनेकी बात तो दूर, देखना तक छोड़ दिया। वे एकटक श्यामसुन्दरकी ओर देख रही हैं। बछड़े भी कुछ क्षण तो थनमें मुँह लगाकर दूध पीते, पर फिर पीना छोड़कर श्यामसुन्दरकी ओर देखने लग जाते। श्यामसुन्दर उन्हें पुचकारकर अपने नन्हें-नन्हें हाथोंको उठाकर शैशवोचित सरलतावश संकेत करते कि 'रे वत्सो! पी लो, पी लो, ग्वालिनीके आनेके पहले-पहले ही सारा दूध आज पी डालो।' सचमुच आज श्रीकृष्णकी अचिन्त्यलीला-



महाशक्तिकी प्रेरणासे ही बछड़े दूध पीते रहे, अन्यथा सभी दूध पीना छोड़कर श्रीकृष्णको ही देखते रह जाते।

परमानन्दसुन्दर यशोदानन्दन एक गायके कुछ और निकट जाकर खड़े हो गये। गायने अपनी गर्दन बढ़ायी। यशोदानन्दन एक बार कुछ भयभीत-से हो गये, पर गायकी अतिशय शान्तमुद्रा देखकर उन्हें साहस हो आया। लगे



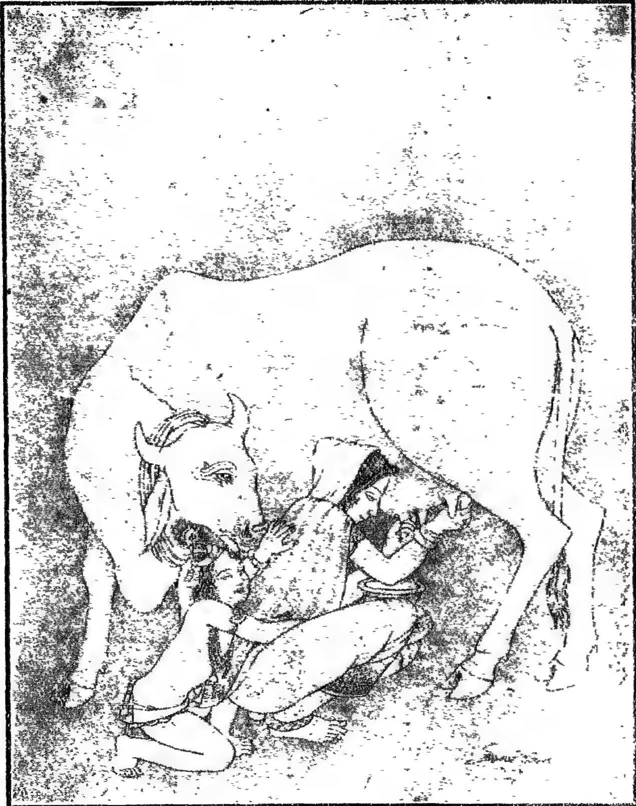
गायकी गर्दनको सहलाने। गायने गर्दन फैला दी। यशोदानन्दनने देखा—गाय बड़ी सूधी है, मारेगी नहीं। यह सोचकर वे धीरेसे उसके थनके पास बैठ गये। बछड़ा पहलेसे ही थन छोड़कर, अलग हटकर श्यामसुन्दरकी ओर देखने लगा था। श्यामसुन्दरने थन दबाकर दूधकी धार निकालनी चाही। धार निकली तथा उससे श्यामसुन्दरका बायाँ कंधा भींग गया। श्यामसुन्दरके आनन्दकी सीमा न थी। दूसरी बार दबाया। इस बार भी धार निकली। श्यामसुन्दरने चाहा था कि मुँहमें ही गिरे, पर धारने चिबुकका ही अभिषेक किया। तीसरी बारकी चेष्टामें यशोदानन्दन सफल हुए; दूधकी उज्ज्वल धार मुँहमें गिरी। दूधकी घूँट पीकर हर्षोत्फुल्ल नेत्रोंसे नन्दनन्दनने पीछे मुँह फिराकर देखा तो दीखा—दाऊ एक स्तम्भकी ओटमें छिपे संकेत कर रहे हैं कि 'कन्हैया! जल्दी भाग जा।' उनसे कुछ ही दूरपर ग्वालिन दिव्य प्रेमसागरमें डूबती-उतराती खड़ी-खड़ी यशोदानन्दनकी ओर देख रही है। उसकी आँखोंसे दर-दर प्रेमाश्रु बहकर उसके वक्षःस्थलको भिगो रहे हैं।

यशोदानन्दन उठकर भागे; पर ग्वालिनी पथ रोके खड़ी थी। बहुत चेष्टा करनेपर भी आखिर, श्यामसुन्दर ग्वालिनीके द्वारा पकड़ ही लिये गये। ग्वालिनीके अन्तर्हृदयमें तो आनन्दकी बाढ़ आ रही थी, पर बाहरसे वह गम्भीर होकर बोली—'अरे नटखट! यह तुमने क्या किया, सारे बछड़ोंको खोलकर सारा दूध पिला दिया। और दाऊ!' कहकर ग्वालिनी लपकी तथा बड़ी तेजीसे उसने दाऊको भी पकड़ लिया। वे पास ही खड़े थे, अनुजके पकड़े जानेसे स्नेह-परवश होकर पास चले आये थे कि देखें ग्वालिनी क्या करती है—उन्हें कल्पना भी नहीं थी कि यह मुझे भी पकड़ लेगी। वे तो समझे हुए थे कि हमलोगोंके माखन खानेकी बात अभी ग्वालिनी जानती ही नहीं। जो हो, ग्वालिनी दोनोंका हाथ पकड़े हुए द्वारपर चली आयी और सब साथी भाग निकले।

अन्यान्य व्रजसुन्दरियाँ यह अनुपम दृश्य देखनेके लिये एकत्र हो गयीं। ग्वालिनी बायें हाथसे यशोदानन्दनको एवं दाहिनेसे दाऊको पकड़े खड़ी है। श्यामसुन्दर तरह-तरहकी



बातें बना रहे हैं। पहले तो अपनेको निर्दोष सिद्ध करने लगे, फिर छोड़ देनेके लिये कातर प्रार्थना की। पर जब ग्वालिनने न छोड़ा तो उसीपर सारा दोष मढ़कर उससे झगड़ा करने लगे। कहने लगे—'इसीने तो मुझे बुलाया था; मैं जब आया तो मुझे गोदमें लेकर सो गयी; इसे सोयी देख मैं इसकी गोशालामें खेलने चला गया। बछड़े दूध पी गये तो मैं क्या करता।' ग्वालिनी छोटे-से यशोदानन्दनमें इतनी बुद्धि देखकर चकित रह गयी। अन्तर्हृदयका प्रेमसागर उमड़ पड़ा; ग्वालिनीके सारे अङ्ग शिथिल हो गये; हाथ ढीले पड़ने



गैया दूहति महतारी ।
ललन कहै मोहि नेंक दूध दै भूँख लगि भारी ॥



माखन तनिक दै री माय ।
बड़ी बेर मोहिं भूँख लगी है अब मति बेर लगाय ॥



गोबिन्द गैयनको अतिप्यारो ।
मुरली मधुर बजावत गावत लीन्हें गाय-सहारो ॥



मुरली गजब ठगौरी डारी ।
गोपी-गोप-गाय सब मोहे तन-मन दसा बिसारी ॥

लगे, पर श्यामसुन्दर उसकी प्रेमभरी मुट्ठीसे बिना उसकी इच्छाके निकल नहीं सकते थे। ग्वालिनीने यशोदानन्दनके मुखारविन्दकी ओर देखा, उसपर प्रस्वेद-कण छा रहे हैं। प्रस्वेद-कणोंपर दृष्टि जाते ही ग्वालिनीने हाथ छोड़ दिया। श्यामसुन्दर एवं दाऊ भाग निकले। ग्वालिनी बावली-सी होकर भीतर चली गयी। लगातार छः पहर बीत गये, ग्वालिनी देख रही है—गायोंके थनसे दूधकी धार निकल रही है और यशोदानन्दन पी रहे हैं।

प्रतिदिनका अभ्यास है कि उषःकालसे कुछ पहले ही वे उठ पड़ती हैं; अपने कोटि-कोटि-प्राणोपम नयनमनोऽभिराम नित्यनवसुन्दर नीलमणिकी ललित लीलाएँ गाती हुई दही मथती हैं। अभ्यासवश ठीक उसी समय उसे बाह्यज्ञान हुआ; नयन-मन-चोर नीलमणिको देखनेके लिये उसके प्राण व्याकुल हो गये। पर अभी तो रात थी। प्रभातमें तीन घड़ीका विलम्ब था। तीन घड़ियाँ तीन कल्प-सी बीतीं। आखिर प्रभात हुआ। पर इस समय जानेपर नन्दरानी पूछेंगी, क्यों आयी है, तो क्या उत्तर दूँगी ? समाधान न पाकर ग्वालिनीके प्राण छटपटा उठे। उसकी व्याकुलतासे द्रवित होकर अन्तर्यामीने तुरंत उपाय बता दिया—'उलाहनेके बहाने चली जा।' फिर देर क्या थी, ग्वालिनी चल पड़ी।

विद्युत्-वेगसे नन्दरानीके घर जा पहुँची। नन्दरानीने पूछा—इतने सवेरे कैसे आयी, बहन ? ग्वालिनी उत्तर देने जा रही थी कि यशोदानन्दन शय्यासे उठकर आँखें मलते हुए वहीं चले आये। आज यह पहला ही अवसर है कि यशोदानन्दन अपने-आप निद्रा त्यागकर शय्यासे उठकर बाहर आये हैं। ग्वालिनीकी दृष्टि श्यामसुन्दरके विधि-हर-मुनि-मोहन वदनारविन्दपर पड़ी। फिर क्या था—

भूली री उराहने को दैबो।
परि गए दृष्टि स्यामघन सुंदर चकित भई चितैबो॥
चित्र लिखी-सी ठाढ़ी ग्वालिन को समुझै समुझैबो।
चत्रभुज प्रभु गिरिधर मुख निरखत कठिन भयो घर जैबो॥

कुछ देर निश्चल खड़ी रहकर विक्षिप्त-सी गाती हुई ग्वालिनी पीछेकी ओर लौट पड़ी। श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दपर मधुर मन्द मुसकान है और मैयाके मुखपर अत्यन्त आश्चर्य ! ग्वालिनी गाती जा रही है—



तव सूनुर्मुहुरनयं कुरुते।
अकुरुत किं वा व्यञ्जितमुरु ते॥
मुञ्चति वत्सान् श्रामं ॰ ाममम्।
साचिव्यं वः कुरुते कामम्॥
असमयमोचनमसुखनिधानम्।
कः किं कुरुते न यदि निदानम्॥
विना निदानं कुरुते स्वामिनि।
क्रोशं न किमिव कुरुषे भामिनि !॥

(श्रीगोपालचम्पूः)

'अरी नन्दरानी ! तुम्हारा यह लाड़िला बार-बार अनीति करता है। इसने क्या किया है ? यह तुम्हें अच्छी तरह मालूम है। यह चलता-फिरता बछड़ोंको खोल देता है और मैं समझती हूँ कि तुमलोगोंकी सलाहसे ही सब कुछ करता है। यदि तुम्हारा संकेत न हो तो और असमयमें ही बछड़ोंको खोल देनेका अप्रिय कार्य कौन कर सकता है ? यदि कहो कि यह तुम्हारी सलाहसे ऐसा नहीं करता तो फिर तुम इसे डाँटती क्यों नहीं।'

(३)

दिन कुछ चढ़ चुका है । यशोदानन्दन व्रजवनिताओंके आँगनमें खेलते हुए घूम रहे हैं—

कण्ठे दधद्व्याघ्रनखमुत्तमहेमनद्धं
श्रोणौ महार्हमणिकिङ्किणिदाम बिभ्रत् ।
मन्दं पुराद्बहिरुपेत्य करोति खेला-
माभीरनीरजदृशां भवनाङ्गनेषु ॥

(श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पूः)

गलेमें उत्कृष्ट सोनेसे मँढा हुआ व्याघ्रनख है, कटिदेशमें अतिशय मूल्यवान् मणियोंसे युक्त करधनी पहने हैं । चुपचाप धीरेसे अपने घरसे बाहर आकर यशोदानन्दन व्रजसुन्दरियोंके भवनोंमें जाकर उनके आँगनोंमें खेलते हैं ।

खेलते-खेलते अपनी गोशालामें चले गये । वहाँ जाकर—

धेनु दुहत देखत हरि ग्वाल ।
आपुन बैठि गए तिन के ढिग, सिखवौ मोहि कहत गोपाल ॥
कालि देहौं गोदोहन सिखवै, आज दुहीं सब गाय ।
भोर दुहौ जिन नंद दुहाई, उन सों कहत सुनाय सुनाय ॥
बड़ो भयो अब दुहत रहौंगो आप आपनी धेनु निबेर ।
सूरदास प्रभु कहत सौंह दै मोहि लीजिए टेर ॥

—अतिशय मनोयोगसे गायोंका दुहा जाना देखने लगे । व्रजनरेश नन्दराय पास ही दोहनीके दूधकी सँभाल कर रहे हैं । चञ्चल नन्दनन्दन पिताकी दृष्टि बचाकर गोशालामें दूर जा निकले । एक बूढ़ा ग्वाला मन्द-मन्द स्वरमें श्यामसुन्दरकी लीला गाता हुआ गाय दुह रहा है । श्यामसुन्दरको देखते ही गाय जोरसे रँभा उठी । ग्वालेने दृष्टि फिराकर देखा । देखते ही उसकी पलकें पड़नी बंद हो गयीं । गोपका रोम-रोम आनन्दसे नाच उठा । यह गोप व्रजनरेश नन्दरायजीको अतिशय प्रिय था; क्योंकि वह उनका बालसखा था । किसी दैवी प्रेरणासे इसने ब्याह नहीं किया था, आजीवन एकाकी नन्दरायजीके पास रहा । नन्दरायजी इसे मित्र ही नहीं, बड़े भाईके रूपमें देखते थे । श्यामसुन्दरके जन्म-दिनके समयसे यह गोप अर्द्धविक्षिप्त-सा रहता; अवश्य ही गायोंकी सेवा जैसे करता था, वैसे ही करता रहा । आज मानो उसके समस्त जीवनकी तपस्याका फल देनेके लिये नन्दनन्दन एकान्तमें उसके सामने चले आये ।

नन्दनन्दन उसके पास बैठ गये । बायें हाथसे उसके दाहिने कंधेको तथा दाहिने हाथसे उसके चिबुकको स्पर्श करके बोले—'ताऊ, मुझे भी दुहना सिखा दो !' इस मधुर कण्ठध्वनिमें न जाने क्या जादू भरा है, वृद्ध गोप रो पड़ा । गोपके हाथसे दोहनी नीचे गिर पड़ी तथा नन्दनन्दनको छातीसे चिपटाकर वह बेसुध हो गया । बाह्यदृष्टिमें तो एक-दो क्षण ही बीते, पर वस्तुतः गोपकी दृष्टिमें अनन्त कल्पों-तक वह नन्दनन्दनको हृदयसे लगाये अनिर्वचनीय परमानन्दका रस लेता रहा । इधर नन्दनन्दन अपनी छोटी-

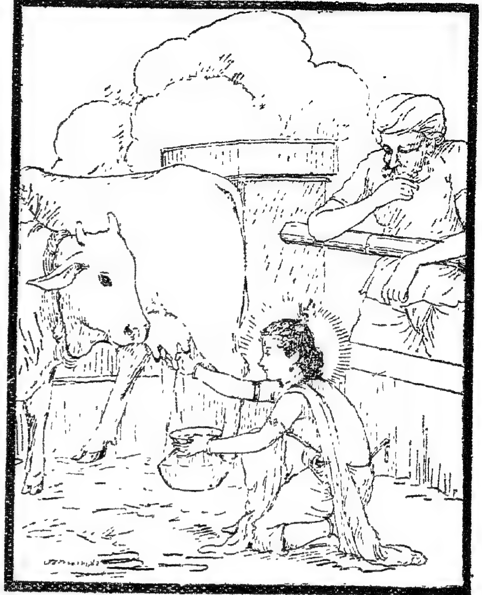


छोटी अँगुलियोंसे उसकी आँखें पोंछ रहे हैं तथा कह रहे हैं—'क्यों ताऊ ! मुझे नहीं सिखा दोगे ?'

गोपकी भावसमाधि शिथिल हुई, पर आज तो सभी गायें दुही जा चुकी हैं। गोप बोला—'मेरे लाल ! कल सिखा दूँगा।' नन्दनन्दनका मुखारविन्द परमोल्लाससे जगमगा उठा। बोले—'ताऊ ! बाबाकी सौंह है; कल अवश्य सिखला देना, भला ! मेरे आनेतक कम-से-कम एक गाय बिना दुहे हुए अवश्य रखना।' गोप एकटक अपने प्राणधनकी ओर देख रहा था। यशोदानन्दन फिर बोले—'ताऊ ! अब तो मैं सयाना हो गया, अपनी गायें अपने-आप दुह लूँगा।' गोप प्रस्तरमूर्तिकी तरह निश्चल था। नन्दनन्दन फिर बोले—'अच्छा ताऊ ! आज सन्ध्याको सिखा दो तो कैसा रहे ?' वृद्ध गोपने कुछ कहना चाहा, पर शब्द कण्ठसे बाहर नहीं निकले। व्रजराजनन्दन चटपट बोल उठे—'नहीं, ताऊ, सायंकाल तो मैया आने नहीं देगी; कल ही सिखा देना, कल तुम गोशाला दुहने जब आओ तो मुझे पुकार लेना।' यह कहकर यशोदानन्दन कुछ सोचने-से लगे। फिर बोले—'नहीं; पुकारनेकी आवश्यकता नहीं, मैं अपने-आप ही आ जाऊँगा; पर तुम भूलना मत, ताऊ !' वृद्ध गोपने कठिनतासे पुचकारका एक शब्द करके यह सूचित कर दिया कि 'मेरे लाल, ऐसा ही करूँगा।' नन्दनन्दन उल्लसित होकर बाबाके पास लौट गये।

दूसरे दिन जितना शीघ्र हो सकता था, यशोदानन्दन गोपके पास पहुँचे। उनकी आँखोंमें उत्कण्ठा भरी थी। आज दाऊ भी साथ हैं। श्यामसुन्दर कुछ परामर्श करके उन्हें साथ ले आये हैं। आते ही गोपकी दोहनी उन्होंने थाम ली तथा अतिशय उत्सुक होकर बोले—'चलो ताऊ, गाय कहाँ है ? सिखा दो।' अग्रज दाऊ भी प्रार्थनामिश्रित स्वरमें बोले—'हाँ-हाँ, ताऊ, इसे आज अवश्य सिखा दो।'

वृद्ध गोपने श्यामसुन्दरका मुख चूमकर उनके हाथोंमें एक छोटी-सी दोहनी दे दी। श्यामसुन्दर दुहनेकी मुद्रामें गायके थनके पास जा बैठे। गोपने श्यामसुन्दरकी अँगुलियों-को अपनी अँगुलियोंमें पकड़कर थनको दबाना सिखाया। ठीक उसके कथनानुसार वे दबाने लगे। दूधकी धारा गिरने लगी, पर वह दोहनीपर न गिरकर कभी श्यामसुन्दरके पेटपर और कभी पृथ्वीपर गिरती। श्यामसुन्दर दोहनीको कभी धरतीपर रख देते, कभी घुटनोंमें दबा लेते। इस



क्रियामें एक-दो धारें दोहनीमें, एक-दो श्यामसुन्दरके श्रीअङ्गपर और एक-दो धरतीपर गिरतीं। फिर भी कुछ दूध दोहनीमें एकत्र हो गया। हर्षोत्फुल्ल मुखसे दोहनी लेकर वे उठ खड़े हुए तथा नाच-नाचकर दाऊको दिखाया कि 'देखो, मैं दुहना सीख गया।' दाऊ एवं वृद्ध गोप दोनों ही यशोदानन्दनके हर्षोत्फुल्ल मुखको देख-देखकर मुग्ध हो गये। इस तरह गो-दोहनकी आधी शिक्षा समाप्त हुई।

तीसरे दिन प्रातःकाल उठते ही श्यामसुन्दर माताका आँचल पकड़कर प्रार्थना करने लगे—

दे मैया री दोहनी, दुहि लाऊँ गैया।
माखन खाय बल भयो, तोहि नंद दुहैया॥
सेंदुर काजरि धूमरी धौरि मेरी गैया।
दुहि लाऊँ तुरतहि तब, मोहि कर दे धैया॥
ग्वालन के सँग दुहत हौं, बूझौ बल मैया।
सूर निरखि जननी हँसी, तब लेत बलैया॥

नन्दरानी समझाने लगी, पर श्यामसुन्दरने एक भी नहीं सुनी। किसी तरह मनुहार कर-करके माताने माखन खिलाया, शृङ्गार किया तथा गोदोहनकी बात भुला देनेकी चेष्टा की। माके अनुरागभरे हृदयमें यह भय था कि मेरा नीलमणि अभी निरा अबोध शिशु है; कहीं दुहते समय कोई गाय लात

न मार दे। पर आज तो हठीले मोहन मचले हुए हैं। नन्दरानी अन्तमें गोद लेकर, कोटि-कोटि प्राणोंका प्यार देकर बोली—'मेरे प्राणधन नीलमणि! पहले अच्छी तरह बाबाके पास जाकर दुहना सीख ले, तब मैं दोहनी दूँगी और तू दूध दुह लाना।' माकी बात सुनकर तत्क्षण नन्द-नन्दन बाबाके पास दौड़ गये। उनकी धोती पकड़कर बार-बार हठ करने लगे—

बाबाजू! मोहि दुहन सिखावो।
गाय एक सूधी-सी मिलवो, हौंहुँ दुहौं बलदाउ दुहाओ॥

व्रजराज अपने हठीले लालकी मुखभंगिमा देखकर मुग्ध हो गये। गोदमें लेकर शुभ मुहूर्तमें सिखा देनेकी बात कहने लगे, पर व्रजदुलारे आज किसीकी बातपर माननेवाले न थे। पास ही उपनन्द खड़े थे। उनके परामर्शसे यह निश्चित हुआ कि नारायणका स्मरण करके नीलमणिकी साध पूरी कर दी जाय। फिर तो श्याम-सुन्दरके उल्लासका कहना ही क्या। वे उसी क्षण बाबा-की गोदसे कूदकर मैयाकी गोदमें जा पहुँचे—

तनक कनक की दोहनी दे री मैया।
तात दुहन सिखवन कह्यौ मोहि धौरी गैया॥

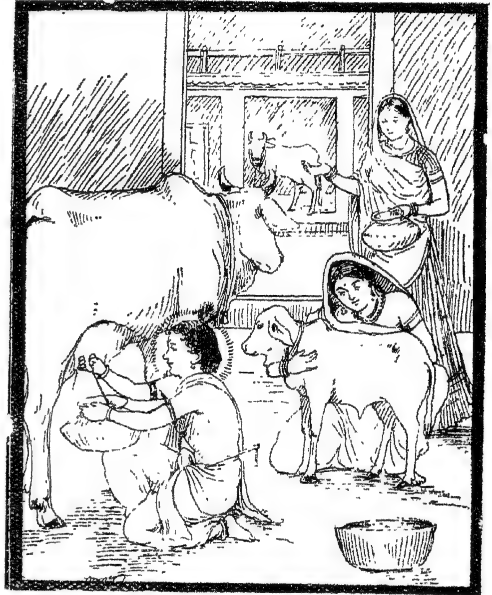
श्यामसुन्दरके मनोहर मुखारविन्दपर प्रस्वेद-कण मोतीकी तरह चमक रहे थे। माने उन्हें अञ्चलसे पोंछकर अपने नीलमणिको हृदयसे लगाया, छोटी-सी सुवर्णकी दोहनी हाथमें दे दी और स्वयं साथ चल पड़ीं। नन्दरानी-के पीछे-पीछे यूथ-की-यूथ व्रजवनिताएँ नीलमणिकी गोदोहन-लीला देखनेको एकत्र हो गयीं। इष्टदेव नारायणका स्मरण करके व्रजराजने अपने प्राणाधार पुत्रका सिर सूँघा तथा गोदोहनशिक्षाका अभिनय सम्पन्न हुआ। गोपनन्दन गौ दुहने बैठे—

हरि बिसमासन बैठि कै मृदु कर थन लीनो।
धार अटपटी देखि कै व्रजपति हँसि दीनो॥
गृह गृह ते आयीं देखन सब व्रजनारी।
सकुचत सब मन हरि लियो हँसि घोषबिहारी॥

व्रजराजके आदेशसे उस दिन नन्दभवन सजाया गया। मंगलगान हुए, मंगलवाद्य बजे। व्रजराजने ब्राह्मणोंको मुक्तहस्त होकर दान दिया—

द्विज बुलाय दछिना दई, बिधि मंगल गावै।
परमानँद प्रभु साँवरो सुख-सिंधु बढ़ावै॥

आगे चलकर यशोदानन्दन गोदोहन-कलामें अत्यन्त कुशल हो गये। सबसे अधिक आश्चर्य यह था कि जो गायें कठिनतासे दुहने देती थीं, वे श्यामसुन्दरके हाथका स्पर्श पाते ही सर्वथा स्थिर खड़ी रहतीं और अपेक्षाकृत बहुत अधिक दूध देतीं। अतः अपने प्राणधन नीलमणिको गौ दुहनेके लिये व्रजवनिताएँ अपने-अपने घर ले जाने लगीं। अवश्य ही गोदोहन बहानामात्र ही था; इस मिससे वे अपने प्राणधनके दर्शनका परम सुख लेतीं। इस गोदोहनको निमित्त बनाकर चिदानन्दरस-घनविग्रह व्रजराजनन्दनने अनेकों



मधुमयी लीलाओंका प्रकाश किया। वह छबि अद्भुत ही होती, व्रजाङ्गनाएँ बछड़ोंके पास खड़ी रहकर निर्निमेष नयनोंसे दिव्य शोभा निहारतीं और लीलारसमत्त स्वयं भगवान् यशोदानन्दन श्रीकृष्णचन्द्र उनकी गायें दुहते। गोदोहनका पारिश्रमिक था श्यामसुन्दरपर बिक जाना—

जा दिन तें गैया दुहि दीनी।
ता दिन ते आप को आपुहि मानहुँ चितै ठगोरी लीनी॥
सहज स्याम कर धरी दोहनी, दूध लोभ मिस बिनती कीनी।
मृदु मुसकाय चितै कछु बोले, ग्वालिनि निरखि प्रेम रस भीनी॥
नितप्रति खिरक सवारें आवत, लोकलाज मनो घृत मो पीनी।
चत्रभुज प्रभु गिरिधर मनमोहन दरसन छल बल सुधि बुधि छीनी॥

चञ्चल यशोदानन्दनके बाललीला-रसका आस्वादन करते हुए सौभाग्यशाली व्रजवासियोंके दिन क्षणके समान बीत रहे थे। अब उलूखल-बन्धनकी परम मनोहारिणी लीलाके पश्चात् उपनन्दके परामर्शसे समस्त नन्दव्रज वृन्दावनमें चला आया। अतः वृन्दावनके अनुरूप ही श्यामसुन्दर नन्दनन्दनके लीलारससिन्धुमें तरङ्गें उठने लगीं और उसमें वृन्दावन प्लावित हो उठा।

श्यामसुन्दर अब वंशी बजाना सीख गये हैं। कब, कैसे, किससे सीखा—यह किसीने नहीं जाना; पर वंशीकी ध्वनिसे समस्त व्रजवासी मोहित हो उठे। श्यामसुन्दर अपनी मैयाकी, बाबाकी गोदमें बैठे रहते। व्रजाङ्गनाएँ आतीं और कहतीं—

हे कृष्ण ! मातृकुचचूचुकचूषणेऽपि
नालं यदेतदधरोष्ठपुटं तवासीत्।
तेनाद्य ते कतिपयेषु दिनेष्वकस्मात्
कस्माद् गुरोरधिगतः कलवेणुपाठः॥

(श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पूः)

'प्यारे कन्हैया ! तुम्हारे ये कोमल अधर तो मातृ-स्तनपानमें भी समर्थ न थे, फिर भला इने-गिने दिनोंमें ही तुमने इतनी मधुर वंशी बजानेकी शिक्षा किस गुरुसे सीख ली!' इस प्रकार व्रजाङ्गनाओंका आग्रह देखकर श्यामसुन्दर वंशी बजाते और वे मुग्ध हो जातीं।



श्यामसुन्दर दिनभर दो कार्योंमें व्यस्त रहते—एक, वंशी बजाना, और दूसरा, सखाओंके साथ विविध क्रीडा करना। अब विशेषतः गाय एवं गोवत्सोंके साथ ही क्रीडा होती थी। कभी दो, चार, छः गोवत्सोंको अथवा गायोंको पकड़ लेते; उनको अपने अधीन करके नचाते तथा स्वयं उनके साथ नाचते। कभी उनके सींगोंको पकड़कर खेलते। कभी गाड़ीमें जुते हुए बैलोंके सींग पकड़कर उनसे विविध क्रीड़ा करते। नन्दरानी, नन्दराय स्नेहवश भयभीत हो जाते। बार-बार मना करते, पर श्रीकृष्ण एक नहीं सुनते। साथमें दाऊका प्रोत्साहन था। दोनों भाई परामर्श करके बहुत दूर निकल जाते। जननी व्याकुल होकर ढूँढ़ने जाती तो दोनों भाई व्रजकी सीमाके बाहर वनके पास बछड़ा चराते हुए गोपशिशुओंके साथ खेलते मिलते। अपने कोटि-कोटि-प्राणप्रतिम नीलमणिको कण्ठसे लगाकर जननी इतनी दूर अकेले आनेके लिये मना करतीं। नीलमणि कहते—

मैया री ! मैं गाय चरावन जैहौं।
तूँ कहि महरि नंदबाबा सों, बड़ो भयो न डरैहौं॥
श्रीदामा लै आदि सखा सब, अरु हलधर सँग लैहौं।
दह्यो भात काँवरि भरि लैहौं, भूख लगै तब खैहौं॥
बंसीबट की सीतल छैयाँ खेलत में सुख पैहौं।
परमानंददास सँग खेलौं आय जमुनतट न्हैहौं॥

लालकी बात सुनकर जननीका हृदय आनन्दसे उछलने लगा। एक दिन था, नन्दरानी अपने प्राणधनको दुलराती हुई नाना मनोरथ करती थीं—कब मेरा नीलमणि बकैयाँ चलेगा, कब डगमग करते हुए धरतीपर पैर रखेगा, कब मुझे माँ-माँ कहकर पुकारेगा, कब माखन माँगेगा, कब गाय दुहने बैठेगा और वह दिन कब होगा, जब मैं माथेपर तिलक करके अपने नीलमणिको गाय चराने वन भेजूँगी। नन्दरानीके ये सभी मनोरथ पूर्ण हुए। गाय चरानेका मनोरथ भी मानो नीलमणिकी इस बातसे ही पूर्ण हो गया। पर अभी नीलमणिके तो दूधके भी दाँत नहीं उतरे हैं, यह भला वनमें गोचारण करने कैसे जायगा—इस भावनासे मैया अपने लालको तरह-तरहसे समझाने लगी कि 'मेरे लाल ! अभी कुछ दिन बाद गाय चराने भेजूँगी।' नन्दराय भी समझाते, पर चञ्चल श्यामसुन्दर भाग ही जाते। इसीलिये इस भयसे कि खेलते-खेलते पता नहीं किसी दिन किधर जा निकले, नन्द-दम्पतिने परस्पर परामर्श करके यह निश्चय किया—

यदि गोसङ्गावस्थानं विना न स्थातुं पारयतस्तर्हि व्रजसदेशदेशे वत्सानेव तावत्सञ्चारयतामिति ।

(श्रीगोपालचम्पूः)

'सचमुच ये राम-कृष्ण दोनों अब बड़े चञ्चल हो गये हैं तथा विशेषतः इन्हें गायोंका सङ्ग बड़ा प्रिय है । यदि गायोंके संग बिना ये नहीं रह सकते तो अच्छा यह है कि व्रजके निकट रहकर ये छोटे बछड़ोंको चराया करें ।

उपनन्दने भी यही सम्मति दी । अतः ज्यौतिषियोंको बुलाकर पुण्यतिथि—पुण्यमुहूर्त निश्चय कर लिया गया । व्रजमें बात फैलते क्या देर लगती ? सुनते ही सबने निश्चय किया कि हम भी अपने-अपने बच्चोंको उसी दिनसे वत्सचारणके लिये भेजेंगे ।

मङ्गलमय प्रभात हुआ । आज यशोदानन्दन वत्सचारण प्रारम्भ करेंगे । नन्दरानीके आनन्दका क्या कहना ? माताने तरह-तरहके वस्त्राभूषणोंसे अपने हाथों लालको सजाया,



पर स्नेहभरे हृदयमें तुरंत ही आशङ्का उठी—इसका सौन्दर्य तो पहलेसे ही भुवन-मन-मोहन है । मैंने इसको सजाकर और भी सुन्दर बना दिया । कहीं नजर न लग जाय ! जननीने उसी क्षण लालके विशाल भालपर काजलकी टेढ़ी रेखा खींच दी । इष्टदेव नारायणको मनाया । ब्राह्मणोंको स्वर्ण-दान किया और श्यामसुन्दरके लिये सबसे आशीर्वाद लिये । बड़ी सुखी है नन्दरानी आज । पर जब श्यामसुन्दर चलनेको तैयार हुए, तब तो वात्सल्य-स्नेहने जननीके मनमें शङ्काओंके पहाड़ खड़े कर दिये । वे डर गयीं—कहीं जंगलमें मेरे कन्हैयाका अनिष्ट न हो जाय । इसे कोई वन्य कीट-पतङ्ग न काट ले । कहीं यह गिर न पड़े । नन्दरानीकी आँखोंमें आँसू छलक आये । उन्होंने दाऊको समीप बुलाकर उनके हाथमें कन्हैयाका हाथ पकड़ाकर कहा—'बेटा ! तुम बड़े हो, यह कन्हैया बड़ा चञ्चल है; अपने इस छोटे भाईकी सँभाल रखना, भला !'

बत्स चरावन जात कन्हैया ।
उबटि अंग अन्हवाय लाल कौं फूली फिरत मगन मन मैया ॥
निज कर करि सिंगार बिबिध बिधि, काजर-रेख भाल पर दीन्हीं ।
दीठि लागिबे के डर जसुमति इष्टदेव सौं बिनती कीन्हीं ॥
बिप्र बुलाय दान करि सुबरन सबकी सुखद असीसें लीन्हीं ।
कर पकराइ नयन भरि अँसुअन सकल सँभार दाउए दीन्हीं ॥

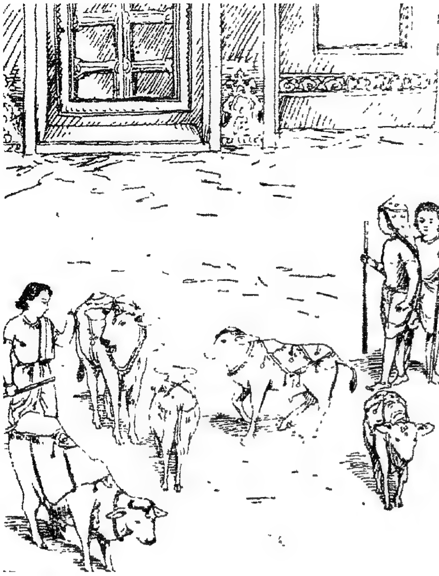
नन्दरायजी निर्निमेष नयनोंसे अपने पुत्रका शृङ्गार और यशोदाकी प्रेमदशा देख रहे हैं । हृदयका आनन्दरस पानी बनकर आँखोंकी राह बाहर आना चाहता है; पर मङ्गल-मुहूर्त्तकी स्मृति बाँध लगा देती है । मन-ही-मन नन्दराय आजके पुण्यप्रभातको धन्यवाद दे रहे हैं । सब ओर आनन्द छाया है ।

आजु ब्रज छायो अति आनंद ।
बत्स चरावन जात प्रथम दिन नंदसुवन सुखकंद ॥

माताके वात्सल्यपूर्ण हाथोंसे सजकर नीलमणि आँगनमें खड़े हुए । नन्दरायने अपने पुत्रके हाथमें एक छोटी-सी लाल छड़ी पकड़ा दी ('तनुतरां लोहितयष्टिकामेकां करे धारयित्वा'—श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पूः)। सब बालगोपाल समीप आकर खड़े हो गये ।

सोहत लाल लकुट कर राती ।
सूथन कटि चोलना अरुन रँग पीतांबर की गाती ।
ऐसेहि गोप सबै बनि आए, जो सब स्याम सँगाती ॥

नन्दरायकी आज्ञासे आज गोवत्सोंका भी सुन्दर शृङ्गार किया गया है । वे तोरणद्वारके बाहर सुन्दर सजे हुए सिर उठाये खड़े हैं, मानो नन्दनन्दनकी प्रतीक्षा कर रहे हों ।



सचमुच नन्दनन्दनके आते ही वे सभी आनन्दमें भरकर कूदने लगे। नन्दनन्दन दौड़कर उनके पास जा पहुँचे। उनके बीच खड़े होनेपर वे पुनः शान्त हो गये। तदनन्तर यशोदानन्दनने सब गुरुजनोंको प्रणाम किया और वत्स-चारणके लिये प्रस्थान किया—

चले हरि बत्स चरावन आज।
मुदित जसोमति करत आरती साजे सब सुभ साज॥
मंगलगान करत ब्रजबनिता, मोतिन पूरे थारु।
हँसत हँसावत बत्स-बाल सँग चले जात गोपाल॥

आज नन्दद्वारसे लेकर वनतक समस्त गोपोंके गृह सजाये गये हैं। सबके द्वारपर मङ्गलकलश हैं। घर-घर मङ्गलगीत गाये जा रहे हैं। अपने गृहके सामने आनेपर सभी व्रजाङ्गनाएँ नन्दनन्दनकी आरती उतार रही हैं। आगे-आगे गोवत्स चल रहे हैं तथा उनके पीछे ग्वालसखाओंके बीचमें कंधेपर छींका रक्खे हुए नन्दनन्दन हैं। उन गोवत्सोंपर, ग्वालसखाओं एवं नन्दनन्दनपर व्रजाङ्गनाएँ पुष्प बरसा रही हैं और उन सबको अपनी प्यारभरी चितवनसे निहाल करते हुए नन्दनन्दन वनकी ओर चले जा रहे हैं—

गोबिंद चलत देखियत नीके।
मध्य गुपाल-मंडली मोहन काँधन धरि लियें छीके॥
बछेरा-बृंद घेरि आगें दै ब्रजजन सृंग बजाए।
मानहुँ कमल-सरोवर तजि कै मधुप उनींदे आए॥

परस्पर हँसते-खेलते एवं गोवत्सोंको उछलाते-कुदाते सबने वनमें प्रवेश किया। तृण-लताङ्कुरोंसे अत्यन्त शोभित हरित वनभूमिपर बछड़ोंको चरनेके लिये छोड़ दिया। एवं परस्पर खेलमें संलग्न हो गये। कुछ देर सखाओंके साथ खेल-कर फिर नन्दनन्दनने गोवत्सोंसे खेलनेका विचार किया। श्यामसुन्दर अपने सुकोमलतम हाथोंसे हरी-हरी दूब तोड़ते तथा बछड़ोंके मुँहमें जाकर देते। बछड़ा अपना मुख श्याम-सुन्दरके हाथोंपर रख देता तथा धीरे-धीरे दूब चरने लग जाता। उसे चरते देखकर सभी गोवत्स श्यामसुन्दरको चारों ओर घेरकर खड़े हो जाते और उनके हाथसे दूब चरनेकी चेष्टा करते। श्यामसुन्दर भी अतिशय प्यारसे क्रमशः सबके मुँहमें हरी-हरी दूब देते। ग्वालसखाओंकी मण्डली श्यामसुन्दरके हाथोंमें तोड़-तोड़कर दूब देती और वे उन्हें खिलाते जाते। उस दिन दोपहरतकका समय श्यामसुन्दरने सखाओंके साथ



दूब तोड़-तोड़कर बछड़ोंको खिलानेमें ही बिताया। जब बछड़े तृणसे तृप्त हो गये तो उन्हें जलाशयके समीप ले जाकर पानी पिलाने लगे। एक बछड़ेने जल-पान नहीं किया। बाललीला-रसमत्त श्यामसुन्दरने सोचा—अच्छा, अपने हाथोंसे इसे जल पिला दूँ; सम्भवतः यह जलाशयमें जानेसे डरता है। यह सोचकर अपने करकमलोंकी छोटी-सी अञ्जलि बनायी

तथा जलाशयमें जल भरकर बछड़ेके मुँहके पास ले गये। छोटी-सी अञ्जलि मुँहतक पहुँचते-पहुँचते खाली हो गयी। श्यामसुन्दर कुछ उदास-से हो गये। दो-चार बार ऐसा करनेपर भी जब सफल नहीं हुए तो अपना पीताम्बर भिगोया। श्यामसुन्दर बछड़ेके सामने अञ्जलि बाँधे रहे एवं दाऊ ऊपरसे भीगे पीताम्बरको निचोड़ने लगे। जल अञ्जलिमें गिरने लगा, पर बछड़ा जलकी धारासे चिहुँककर अलग कूद गया। नन्दनन्दन एवं सभी सखा हँस पड़े।

जलसे तृप्त हुए बछड़ोंको एक वृक्षकी शीतल छायामें बैठाया। फिर उनसे खेलने लगे। एक बछड़ेके पास गये; उसके सारे अङ्गोंको सहलाया; उसके गलेमें अपनी दोनों भुजाएँ डाल दीं; पश्चात् गोवत्सके कपोलपर अपना कपोल रक्खा। फिर कानके पास मुँह लगाकर बोले—'क्यों रे वत्स! मातासे मिलना चाहता है? अच्छी बात है, मिला दूँगा।' इस तरह उससे बहुत देरतक बातें करते रहे; बछड़ा श्रीकृष्ण-के करस्पर्श, कपोलस्पर्शका योगीन्द्र-मुनीन्द्र-दुर्लभ आनन्द पाकर निहाल हो रहा है एवं उसे सुखी देखकर श्रीकृष्ण भी सुखसागरमें निमग्न हो रहे हैं—

××मातरं मिलितुमिच्छसि? मेलयिष्यामीति तत्कर्णे मिथः कपोलमेलनपूर्वकवृथावर्णनेन च तमुपचर्य्य सुख-मुपलब्धवान्। (श्रीगोपालचम्पूः)

ऐसे ही अनेक कौतुकोंसे बछड़े एवं गोपबालकोंको सुखी कर जननीके द्वारा भेजी हुई छाकका सबने मिलकर भोजन किया। भोजनके बाद विश्राम, विश्रामके बाद वंशी-वादन एवं नृत्य आदि हुए। पर अब दिन अधिक ढल चुका था। अतः यशोदानन्दन बछड़ोंको एकत्र कर व्रज लौटे। जननी-जनक एकान्त मनसे वनकी ओर नेत्र लगाये प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने हृदयधनको आते देखकर दोनों ही दौड़ पड़े। मार्गमें ही मिलन हुआ, यशोदाने अपने प्राणधनको हृदयसे लगा लिया; अपनी गोदमें नीलमणिको लिये घर पहुँची। बछड़ोंको नन्दरायजी स्वयं उनकी माताओंके पास पहुँचा आये। वनके विविध दृश्योंका एवं अपने खेलोंका वर्णन राम-श्याम एवं सखा करने लगे। व्रजराज, व्रजरानी एवं व्रजाङ्गनाएँ बड़े चावसे सुनने लगीं। यह प्रथम दिनका वत्सचारण हुआ। (क्रमशः)

स्वप्नमें गोदर्शनका फल

(लेखक—पं० श्रीराजेश्वरजी शास्त्री सिद्धान्ती)

स्वप्नमें गौ अथवा साँड़के दर्शनसे कल्याण-लाभ एवं व्याधि-नाश होता है। इसी प्रकार स्वप्नमें गौके थनको चूसना भी श्रेष्ठ माना गया है। स्वप्नमें गौका घरमें ब्याना, बैल अथवा साँड़की सवारी करना, तालाबके बीचमें घृत-मिश्रित खीरका भोजन भी उत्तम माना गया है। इनमेंसे घीसहित खीरका भोजन तो राज्य-प्राप्तिका सूचक माना गया है। इसी प्रकार स्वप्नमें ताजे दुहे हुए फेनसहित दुग्धका पान करनेवालेको अनेक भोगोंकी तथा दहीके देखनेसे प्रसन्नताकी प्राप्ति होती है। जो बैल अथवा साँड़से युक्त रथपर स्वप्नमें अकेला सवार होता है और उसी अवस्थामें जाग जाता है, उसे शीघ्र धन मिलता है। स्वप्नमें दही मिलनेसे धनकी, घी मिलनेसे यशकी और दही खानेसे यशकी प्राप्ति निश्चित है। इसी प्रकार यात्रा आरम्भ करते समय दही और दूधका दीखना शुभ शकुन माना गया है। स्वप्नमें दही-भातका भोजन करनेसे कार्य-सिद्धि होती है तथा बैलपर चढ़नेसे द्रव्य-लाभ होता है एवं व्याधिसे छुटकारा मिलता है। इसी प्रकार स्वप्नमें साँड़ अथवा गौका दर्शन करनेसे कुटुम्बकी वृद्धि होती है। स्वप्नमें सभी काली वस्तुओंका दर्शन निन्द्य माना गया है, केवल कृष्णा गौका दर्शन शुभ होता है।

न खाओ, न शिकार करो

न तो पशुओंको खाना और न पशुओंका शिकार ही करना। यह हमारा जरथुश्ती नेक धर्म है।

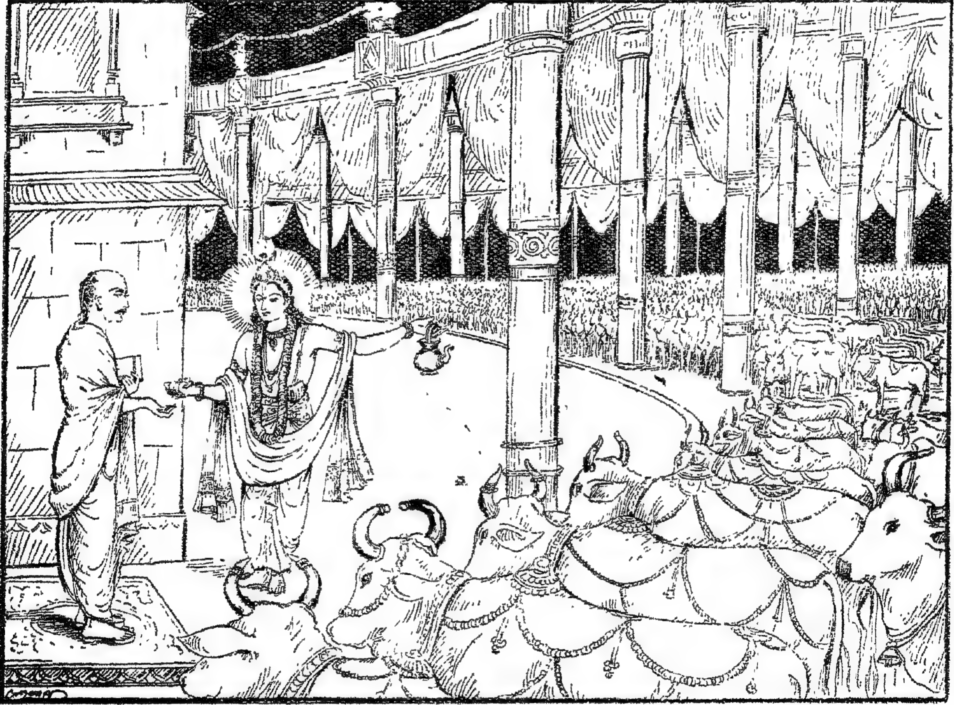
(फिरदौसी)

भारतका गो-धन

प्राचीन कालमें भारतवासी गो-धनको ही मुख्य धन मानते थे और हर प्रकारसे गोरक्षण, गो-संवर्धन और गो-पालन करते थे। वेदोंसे लेकर सभी आर्षग्रन्थोंमें गो-महिमा और गो-पालनके उपदेश और गोपालकोंके इतिहास भरे हैं। वाल्मीकि-रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थोंसे पता लगता है कि एक-एक बारमें एक साथ लाखों गायोंका दान किया जाता था। राजा नृगने कहा है कि 'मैंने न्यायसे प्राप्त बछड़ोंसहित असंख्य गायें दान की थीं। जैसे पृथ्वीके धूलिकण, आकाशके तारे और वर्षाकी जलधाराओंको कोई गिन नहीं सकता, वैसे ही उनकी भी कोई गणना नहीं की जा सकती और वे सभी गायें दुधार, नौजवान, सीधी, सुन्दर, सुलक्षणा, कपिला और वस्त्रालङ्कारोंसे सजी हुई थीं।'* (श्रीमद्भागवत, दशमस्कन्ध, अध्याय ६४ देखिये)

मर्यादापुरुषोत्तम राघवेन्द्र भगवान् श्रीरामचन्द्रकी जीवन-लीलाका वर्णन करते हुए देवर्षि नारदजीने कहा है—भगवान् श्रीरामने दस सहस्र करोड़ (एक खर्व) गौएँ विद्वानोंको विधिपूर्वक दान की थीं। (वाल्मीकिरामायण १ । १ । ९४)†

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्र जब वन जाने लगे, तब उनके पास त्रिजट नामक एक दरिद्र ब्राह्मणने आकर याचना की। भगवान् श्रीरामने विनोदमें उनसे



* यावत्यः सिकता भूमेर्यावत्यो दिवि तारकाः। यावत्यो वर्षधाराश्च तावतीरददां स्म गाः ॥
पयस्विनीस्तरुणीः शीलरूपगुणोपपन्नाः कपिला हेमशृङ्गीः। न्यायार्जिता रूप्यखुराः सवत्सा दुकूलमालाभरणा ददावहम् ॥
(श्रीमद्भा० १० । ६४ । १२-१३)

† गवां कोट्ययुतं दत्त्वा विद्वद्भ्यो विधिपूर्वकम्। (वा० रा०, बालकाण्ड, अ० १ । ९४)

अनुमान निम्नलिखित वर्णनसे लगाया जा सकता है। दस हजार गायोंके समूहको एक 'व्रज' या 'गोकुल' कहते थे। इसी हिसाबसे राजगृहीके महाशतक और वाराणसीके चूलनी-पिताके पास ऐसे आठ-आठ गोकुल अथवा अस्सी-अस्सी हजार गायें थीं। चम्पाके कामदेव, वाराणसीके सुरदेव, काम्पिल्यके कुण्डकौलिक एवं आलम्भियाके चूलशतकके पास साठ-साठ हजार गायें थीं। वाणीयग्रामके आनन्द, श्रावस्तीके नन्दिनीपिता तथा शालिनीपिताके पास चालीस-चालीस हजार गायें थीं और पोलासपुरके शकडाल-पुत्रके पास भी दस हजार गायें थीं। महाशतककी स्त्री रेवतीके दहेजमें अस्सी हजार गायें दी गयी थीं। (उपासक दशाङ्क सुत्त)

धनञ्जय सेठने अपनी पुत्री विशाखाका विवाह श्रावस्तीके मिगारसेठके पुत्र पुण्यवर्धनके साथ किया। मिगारने धनञ्जयसे पहले ही पुछवाया कि 'हमारी बरातमें स्वयं कोसलराज अपनी सेनासहित पधार रहे हैं, आप इनका सेवा-सत्कार तो कर सकेंगे? धनञ्जयने तुरंत उत्तर दिया कि, एक नहीं, दस राजाओंको लेते आइये।' इसपर मिगारसेठको जोश आ गया और उन्होंने श्रावस्तीमें पहरेके लिये जितने आदमियोंकी आवश्यकता थी, उतनोंको छोड़कर शेष सभीको बरातमें ले लिया।

धनञ्जयने बरातका खूब स्वागत-सत्कार किया और बरातको चार महीनेतक रक्खा। स्वागतके देख-भालकी सारी जिम्मेवारी विशाखाने अपने ऊपर ली थी। धनञ्जयने दहेजमें ५०० गाड़ी सुवर्णमुद्रा, ५०० गाड़ी सोनेका सामान, ५०० गाड़ी चाँदीके बर्तन, ५०० गाड़ी ताँबेके बर्तन, ५०० गाड़ी वस्त्र, ५०० गाड़ी घी, ५०० गाड़ी चावल, ५०० गाड़ी गुड़, ५०० गाड़ी हल, कुदाली आदि हथियार, ५०० रथ और १५०० दासियाँ दीं। इसके बाद धनञ्जयकी इच्छा हुई कि कन्याको कुछ गायें दूँ। उन्होंने सेवकोंसे कहा—'जाओ, छोटा गोकुल खोल दो। एक-एक कोसके अन्तरपर एक-एक नगारा लेकर खड़े रहो। १४० हाथकी जगह बीचमें छोड़कर दोनों तरफ आदमी खड़े कर दो, जिसमें गायें इससे आगे न फैल सकें। जब सब लोग ठीक खड़े हो जायँ तो नगारा बजा देना।' सेवकोंने ऐसा ही किया। जब गायें एक कोस पहुँची, तब नगारा बजा; फिर दो कोस पहुँचनेपर बजा, अन्तमें तीन कोस पहुँचनेपर फिर बजा। तीन कोसकी लंबाई और १४० हाथकी चौड़ाईके मैदानमें इतनी गायें भर गयी कि वे एक-दूसरेसे शरीरको रगड़ती हुई चल पाती थीं। धनञ्जयने कहा, 'बस, मेरी बेटीके लिये इतनी गायें पर्याप्त हैं; दरवाजा बंद कर दो।' सेवकोंने दरवाजा बंद कर दिया। परन्तु बंद करते भी ६०,००० गायें, ६०,००० बैल और ६०,००० बछड़े तो और निकल ही गये। अनुमान कीजिये, इनके छोटे गोकुलमें कितनी गायें रही होंगी!

सिकन्दर जब भारतसे लौटकर गये तो एक लाख उत्तम जातिकी गायें साथ ले गये थे। मुसल्मानोंने भी यहाँसे बहुत बड़ी संख्यामें गायोंका अपहरण किया। ईस्ट-इण्डिया-कम्पनीके भारतमें पदार्पण करनेके पहलेतक यहाँ गायोंकी बहुत बड़ी संख्या थी। भगवान् सरकार और जनताको सुबुद्धि दें जिससे भारतमें पुनः गोपालन, गोरक्षण और गो-संवर्धन भलीभाँति होने लगे।

किसीको कष्ट मत दो

'लेकिन यदि तुम अपने इन भाइयोंके प्रति पाप करते हो और उन गरीबोंके हृदयको आघात पहुँचाते हो तो सच मानो, तुम यह पाप स्वयं क्राइस्टके प्रति कर रहे हो। यदि मेरे मांस खानेसे मेरे किसी भाईको कष्ट होता है तो मैं संसारकी अन्तिम स्थितितक केवल मांस खाना ही नहीं छोड़ता, बल्कि यह भी चाहता हूँ कि मुझसे किसी तरह भी किसी भी भाईको कष्ट न पहुँचे।'

(१ कोरिन्थियन्स ८। १२-१३)



गोरक्षाके साधन

(लेखक—पूज्यपाद महामना पं० मदनमोहनजी मालवीय)

दूधके उत्पादनमें वृद्धिकी आवश्यकता

भारत-सरकारद्वारा दूधके व्यवसायपर हालकी प्रकाशित रिपोर्टमें हम यह पढ़ते हैं—

'मनुष्यके भोजनमें दूधका व्यवहार तभीसे चला आता है, जबसे मानव इस जगत्‌में आया है। जितने ऐसे खाद्य पदार्थ हैं, जो अकेले आहारके काममें आ सकते हैं, दूध सबसे अधिक पूर्ण है। इसीलिये वह सदा बड़ा आदरणीय समझा जाता रहा है। इसके अंदर जीवनको स्थिर रखने तथा बढ़ानेके लिये आवश्यक सभी तत्त्व सुपाच्यरूपमें विद्यमान हैं। आजतक किसी ऐसे दूसरे स्वतन्त्र आहारका पता नहीं चला, जिसका प्रयोग दूधके स्थानपर किया जा सके।'

उसी रिपोर्टके अन्तर्गत 'दूधके उत्पादनको बढ़ानेकी सम्भावनाएँ' शीर्षकमें लिखा है—

'उचित भोजन और व्यवस्थाके द्वारा भारतीय पशुओंके दूधका उत्पादन जल्दी ही पचास प्रतिशतके लगभग बढ़ाया जा सकता है। इस कथनकी पुष्टि इस बातसे होती है कि देहाती गायें जब सरकारी फार्मोंमें लायी जाती हैं तो आगेके ब्यानोंमें पहलेकी अपेक्षा साठ प्रतिशत अधिक दूध देती हैं। इन गायोंकी पहली सन्तानोंके दूधमें उनकी माताओंकी अपेक्षा भी दस-से-पंद्रह प्रतिशत तक और अधिक वृद्धि देखी जाती है। गाँवोंमें गौएँ अधिक समयतक दूध नहीं देतीं, छुटी रहती हैं; फार्मोंमें पहुँचे जानेपर उनमें छुटे रहनेका समय भी बहुत घट जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उसी अनुपातमें दूधके उत्पादनकी लागत भी कम हो जाती है। इन आशाजनक लक्षणोंसे तथा इस बातसे कि गौओंके बहुत-से टोलोंके दूधका उत्पादन बीस वर्षसे कममें वस्तुतः तिगुना हो गया है, यह बात सूचित होती है कि भारतीय गौओंको यदि अच्छा भोजन दिया जाय, चुने हुए साँड़ोंसे उन्हें गाभिन कराया जाय तथा उन्हें रखनेका उचित प्रबन्ध हो तो उनका दूध बहुत अधिक बढ़ सकता है।

प्रतिव्यक्ति दूधकी खपत

'किसी समय इस देशमें दूध बहुत अधिक मात्रामें मिलता था। किन्तु अब यह सोचकर बड़ा खेद होता है कि मनुष्यके आहारके ऐसे आवश्यक पदार्थकी खपत प्रतिव्यक्ति इस देशमें शायद अन्य सभी सभ्य देशोंकी अपेक्षा कम है। भारतके पशु-व्यवसायकी वृद्धि तथा भारतमें दूधके व्यवसायके सम्बन्धमें प्रकाशित हुई रिपोर्टोंमें अनेक परामर्श दिये गये हैं, जो विचार करने योग्य हैं तथा जिन्हें ऐसे परिवर्तनोंके साथ जो स्थानीय परिस्थितिके अनुसार आवश्यक हों व्यवहारमें लाना चाहिये।

'भारतके दूध-व्यवसाय' पर जो रिपोर्ट छपी है, उसमें लिखा है—

'व्यवसायकी दृष्टिसे दूध तथा दूधसे बने हुए पदार्थोंकी माँग केवल शहरोंमें ही अधिक है। यद्यपि दूध देनेवाले पशुओंमें पंचानबे प्रतिशतसे अधिक गाँवोंमें ही पाये जाते हैं तथा भारतकी नब्बे प्रतिशतसे अधिक जनता भी गाँवोंमें रहती है, तो भी गाँवोंमें दूधकी माँग अपेक्षाकृत बहुत कम है, अर्थात् गाँवोंमें दूधके ग्राहक अधिक नहीं हैं। इसके कई कारणोंमें एक तो यह है कि दूध खानेवालोंमेंसे बहुतोंके घरमें ही दूध होता है; दूसरे नगरवासियोंकी अपेक्षा गाँवोंके किसानोंमें दूध खरीदनेकी सामर्थ्य कम होती है। उनमेंसे अधिकांश दूध या दूधसे बने हुए पदार्थ खरीदकर नहीं खा सकते। वहाँ बहुत-से लोगोंको तो, जिनमें बच्चे भी सम्मिलित हैं, कभी दूध मिलता ही नहीं। यहाँतक कि ऐसे इलाकोंमें भी जहाँ दूधका व्यवसाय होता है और जहाँ बहुत अधिक मात्रामें दूध होता है, सोलह प्रतिशत परिवार दूध या दूधसे बने पदार्थोंका बिल्कुल उपयोग नहीं करते। ऐसी दशामें जहाँ दूध बहुत कम होता है, ऐसे भारतीय देहातोंमें तो दूध या दूधसे बने पदार्थोंको खरीदकर खानेकी सामर्थ्य और भी कम होनी चाहिये।'

भारतमें पशुओं तथा दूधके व्यवसायकी वृद्धिके सम्बन्धमें जो रिपोर्ट छपी है, उसमें लिखा है—

'यदि भारतीय जनता यह चाहती है कि उसे भोजनमें दूध पर्याप्त मात्रामें मिले तो सबसे पहले यह आवश्यक है कि देशमें दूधका उत्पादन बहुत अधिक मात्रामें बढ़ाया जाय। यह अनुमान किया गया है कि न्यूनतम आवश्यकताकी पूर्तिके लिये भी दूधका उत्पादन कम-से-कम दुगुना करना पड़ेगा। किन्तु उत्पादनकी इस वृद्धिसे तबतक उद्देश्य-सिद्धि न होगी जबतक कि दूधका भाव न घटा दिया जाय अथवा जनताकी औसत आयमें वृद्धि न हो। दूसरा उद्देश्य, जिसे

सदा ध्यानमें रखना होगा, यह है कि दूधका भाव इतना मंदा रहे कि उसे अधिकांश जनता खरीद सके।'

खपतमें वृद्धिकी गुंजायश

पर्याप्त गोचरभूमिकी व्यवस्था, अच्छी नस्ल पैदा करनेके लिये साँड़ोंकी संख्यामें पर्याप्त वृद्धि तथा दूधकी बिक्रीका प्रबन्ध—इन तीनों बातोंकी इस समय सबसे अधिक आवश्यकता है और उत्सुकतापूर्वक यह आशा की जाती है कि यथासम्भव शीघ्र ही इन आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये यथेष्ट प्रयत्न किये जायँगे।

गोचर-भूमि

जैसा कि बार-बार बताया जा चुका है, पशुओंके ह्रास-का एक मुख्य कारण पर्याप्त गोचर-भूमिका न होना है। एक तो गोचरभूमि यों हीं पर्याप्त नहीं है; उसपर भी अधिक शोचनीय बात यह है कि प्रतिदिन जमींदार एवं किसानोंके लोभके कारण इनका क्षेत्रफल लगातार कम होता जा रहा है। कई वर्ष पूर्व लेफ्टिनेंट कर्नल रेमंडने कहा था कि 'बंगालके सभी जिलाधीशोंकी रिपोर्टें बतलाती हैं कि बंगाल प्रान्तके प्रायः सभी जिलोंमें गोचरभूमियोंकी संख्या कम कर दी गयी है, जिसके परिणामस्वरूप पशुओंकी संख्या घट गयी है।' श्रीयुत ब्लैकवुडने भी कहा था कि 'निस्संदेह बंगालमें पशुओंकी वृद्धिमें सबसे मुख्य बाधा गोचरभूमियों-की कमी है।'

ऐसा कहा जाता है कि यूरोपके किसी भी देशकी अपेक्षा भारतमें भूमिका मूल्य सस्ता है। ऐसी दशामें आशा तो यह होनी चाहिये थी कि यहाँ पशुओंके चरनेके लिये और देशोंकी अपेक्षा भूमिका अधिक भाग सुरक्षित रक्खा जाता किन्तु बात ऐसी नहीं है। कुछ वर्ष पूर्व गोचरभूमि तथा जोती हुई भूमिका अनुपात संयुक्तराज्य अमेरिकामें १:१६, जर्मनीमें १:६, इंग्लैंडमें १:३ तथा जापानमें १:६ था, किन्तु भारतमें केवल १:२७ था। भारतमें गोचर-भूमिका क्षेत्रफल बढ़ानेकी आवश्यकतापर जितना अधिक जोर दिया जाय, उतना थोड़ा है।

सन् १९१३ में कृषि-बोर्डके सम्मुख गोचरभूमिकी न्यूनताका प्रश्न विचारके लिये उपस्थित हुआ था। उक्त बोर्डने माननीय श्रीयुत एच्० आर्० सी० हेलीकी अध्यक्षतामें विशेषज्ञोंकी एक समिति नियुक्त की। उस समितिने निम्नाङ्कित परामर्श दिये—

(१) गोचरभूमिके छोड़नेकी व्यवस्था कानूनद्वारा होनी चाहिये। पशु-चारणके अधिकारपर सभी प्रकारके नियन्त्रण अवाञ्छनीय समझे जाने चाहिये। स्थानीय अधिकारियों तथा म्यूनिसिपल एवं जिला-बोर्डोंको चाहिये कि वे गोचरभूमियोंकी सीमा बाँध दें तथा उनपर किसीका अधिकार न होने दें।

(२) अनुपयोगी भूमिको खेतीके योग्य बनाना। यह कार्य कृषि-विभागके निकट सहयोगसे जंगल-विभाग-द्वारा व्यवस्थित रूपमें होना चाहिये। और इस प्रकार खेतीके योग्य बनायी हुई भूमिको गोचरभूमिके रूपमें खुली छोड़ देना चाहिये।

(३) वर्तमान गोचरभूमियोंपर किसीका अधिकार न हो; इसके लिये कानून बनने चाहिये और ऐसे कानूनोंद्वारा म्यूनिसिपल एवं जिला-बोर्डोंको अधिकार दिये जाने चाहिये कि वे अपनी आयका एक भाग गोचरभूमियोंको अधिकृत करनेमें व्यय करें।

(४) सरकार तथा स्थानीय बोर्डोंके खर्चसे गोचर-भूमियोंको अधिकृत करना चाहिये।

कृषिके सम्बन्धमें सम्राट्की ओरसे एक कमीशन (जाँच-समिति) बैठा था, जिसने इस विषयपर विचार करके सन् १९२८ में अपनी रिपोर्ट दी थी। कमीशनने लिखा था—

'पशुओंकी रक्षाके सम्बन्धमें सबसे आवश्यक बात है—उनके भोजनकी व्यवस्था। भारतमें, जहाँ कि पशुओंको बाँध-कर खिलानेकी प्रथा नहीं-सी है, चरानेकी सुविधाओंपर ही मुख्यरूपसे विचार करना चाहिये। ऐसा कहा जा सकता है कि भारतके प्रायः प्रत्येक भागमें गाँवके समीपकी सार्वजनिक गोचरभूमि तथा घासके मैदानोंमें सामान्यतः आवश्यकतासे अधिक पशु चराये जाते हैं।' कमीशनने आगे चलकर लिखा है—

'पशुओंकी उन्नतिके लिये मुख्यतया दो बातोंपर ध्यान देना आवश्यक है—खूराक और नस्ल। इनमें भी हम खूराकको प्रथम स्थान देते हैं; क्योंकि जबतक पशुओंको अच्छी तरह खिलाया-पिलाया नहीं जायगा, तबतक सन्तानोत्पादन-के तरीकेमें कोई विशेष सुधार नहीं हो सकता। यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है कि कमीशनके सामने बयान देनेवालोंमेंसे बहुतोंने गोचरभूमियोंको बढ़ानेकी सम्मति दी है। किन्तु इस सम्बन्धमें जो कुछ हो सकता है, उसकी पूरी

छान-बीन करनेके पश्चात् हमलोगोंने यह मत स्थिर किया है कि वर्तमान गोचरभूमियोंमें अधिक वृद्धिकी गुंजायश नहीं है। अतः हमलोगोंको चाहिये कि जितनी भूमिमें इस समय घास पैदा होती है, उसीकी उत्पादनशक्तिको बढ़ानेमें अपना सारा प्रयत्न लगा दें। ऐसे प्रयत्नोंके लिये बहुत बड़ा क्षेत्र उपस्थित है।'

मुक्तेसरमें स्थित पशु-चिकित्सा-सम्बन्धी राजकीय अनुसन्धानशालाके डाइरेक्टर श्रीयुत एफ० वेयरने भारतकी पशुचारण-समस्यापर एक वक्तव्य तैयार किया था, जिसे उन्होंने 'बोर्ड आफ् ऐग्रिकल्चर ऐंड ऐनिमल हसबंड्री' की 'पशु-प्रबन्ध-शाखा' की द्वितीय वार्षिक बैठकमें उपस्थित किया था। उसमें उन्होंने लिखा है—

'कृषिके सम्बन्धमें बैठाये गये शाही कमीशनकी सन् १९२८ की रिपोर्ट निकलनेके बाद उस रिपोर्टमें विचारित कई बातोंमें अच्छी उन्नति हुई है; किन्तु गो-चारण ही एक ऐसा विषय है, जिसके सम्बन्धमें यह बात लागू नहीं होती। सन् १९२९ में पुराने कृषि-बोर्डकी अन्तिम बैठकमें इस विषयपर संक्षेपमें विचार हुआ था। उसमें दो सामान्य प्रस्ताव ऐसे पास हुए थे, जिनमें वर्तमान गोचर-भूमियोंकी रक्षा एवं उनके समुचित उपयोगपर जोर दिया गया था। किन्तु अबतक बहुत ही कम स्थानोंमें गोचर-भूमियोंके सुधारके लिये कोई स्थायी प्रयत्न किया गया है।'

(पशुओंके व्यवसाय तथा दुग्ध-व्यवसायकी उन्नतिपर सन् १९३७ की रिपोर्ट)

'पशु-चारणके लिये जंगली इलाकोंके समुचित उपयोगके सम्बन्धमें जो 'प्राथमिक परामर्श-सभा' (Preliminary Conference) हुई थी, उसमें इस विषयपर विचार किया गया था। इस सभाकी रिपोर्ट सन् १९३६ में बोर्ड आफ् ऐग्रिकल्चर ऐंड ऐनिमल हसबंड्री'के सम्मुख उपस्थित हुई थी। उसपर बोर्डने अपनी निम्नलिखित सम्मति प्रकट की—

'अनुपयोगी भू-भागोंकी उन्नतिकी सम्भावनाओंपर विश्वास करते हुए हमारा यह निश्चित मत है कि रायल कमीशनकी कल्पनाके अनुसार इन अनुपयोगी भूभागोंका पुनर्वर्गीकरण किसी प्रान्तीय सरकारके किसी एक विभागपर नहीं छोड़ा जा सकता। हम सिफारिश करते हैं कि प्रत्येक प्रान्तमें एक स्थायी 'चारा तथा पशु-चारण-समिति' का निर्माण हो और उसके सदस्य वे अफसर हों, जो जंगल तथा माल (रेवेन्यू) के महकमोंद्वारा इस कामके लिये नियुक्त किये जायँ तथा एक पशु-प्रबन्ध-विभागका अफसर हो। प्रत्येक प्रान्तकी यह स्थायी समिति 'इम्पीरियल कौंसिल आफ ऐग्रिकल्चरल् रिसर्च' की एक नवीन 'पशु-चारण-उपसमिति' की प्रान्तीय समितिके रूपमें काम करेगी। और तब यह उपसमिति सारे भारतवर्षके लिये सुव्यवस्थित रूपमें काम कर सकेगी। यद्यपि यह समस्या भारतभरकी समस्या है तथापि इसे हल करनेका तरीका प्रत्येक प्रान्तके लिये अलग-अलग होगा। प्रान्तीय 'चारा तथा पशु-चारण-समिति' का कर्तव्य है कि वह सरकारी जंगलोंके बाहर अनुपयोगी भूभागोंके पुनर्वर्गीकरणकी जाँच करे तथा ऐसे भूभागोंको चुने, जिनमें चारा उग सकता हो अथवा जिनकी गोचरभूमिके रूपमें व्यवस्था की जा सके। समितिको ऐसे भूभागोंके अधिकार तथा प्रबन्धके विषयमें प्रस्ताव भी उपस्थित करने चाहिये। डाक्टर एन० सी० राइटने भारतमें पशुओंके व्यवसाय तथा दुग्ध-व्यवसायकी उन्नतिपर सन् १९३७ में जो रिपोर्ट उपस्थित की थी, उसमें उन्होंने 'चारा तथा पशु-चारण-समितियों' के निर्माणके प्रस्तावका बड़ा जोरदार समर्थन किया है। यह अत्यधिक वाञ्छनीय है कि ऐसी समितियाँ प्रत्येक जिलेमें बनें, जिनमें कुछ गैरसरकारी स्थानीय कृषिकार, जमींदार तथा आसामी अपने-अपने हल्कोंमें काम करनेके लिये सम्मिलित कर लिये जाया करें। सबसे पहले आवश्यकता इस बातकी है कि भिन्न-भिन्न प्रान्तों तथा राज्योंके सरकारी अफसरों और कृषिसे सम्बन्ध रखनेवाली साधारण जनताके मस्तिष्कमें यह विश्वास बैठा दिया जाय कि कृषिप्रधान भारतकी आर्थिक समस्याका हल 'मिश्रित खेती'की प्रणालीको ग्रहण करनेपर निर्भर करता है। इस प्रणालीके अनुसार किसान अपनी साधारण खेती चालू रखते हुए साथ-साथ गाय-बैल भी पालेंगे तथा इस प्रणालीकी सफलता इस बातपर निर्भर करती है कि देशभरमें गोचरभूमियोंकी पर्याप्त वृद्धि हो और पर्याप्त मात्रामें चारेकी खेती हो।

आशा की जाती है कि भिन्न-भिन्न प्रान्तों तथा राज्योंकी सरकारें शीघ्र इस प्रश्नको हाथमें लेकर इन लाभदायक परामर्शोंको कार्यरूपमें परिणत करेंगी।

नस्ल

अब हमें नस्लके प्रश्नपर विचार करना चाहिये। यह एक सामान्य कहावत है कि भोजनसे अधिक प्रभाव नस्लका

पड़ता है। अच्छी नस्लका मूल्य आँका नहीं जा सकता। श्रीनीलानन्द चटर्जी कहते हैं कि अच्छी जातिके साँड़ोंसे नस्ल पैदा करानेमें दो लाभ हैं। पहला लाभ तो यह है कि हमें बछड़े उत्तम श्रेणीके मिलते हैं। दूसरा लाभ, जो सबसे अधिक महत्त्वका है और जिसका फल तुरंत मिलता है, यह है कि गायका दूध बढ़ जाता है। स्थायी लाभ इसमें है कि नस्लकी उन्नतिके लिये उसी जातिके उत्तम साँड़द्वारा गायको बरधाया जाय। नस्लका वास्तविक सुधार उत्तम-से-उत्तम देशी पशुओंद्वारा स्थानीय नस्लोंकी उन्नति करनेमें है, न कि एक जातिकी गौको दूसरी जातिके साँड़से बरधानेमें अथवा विदेशी रक्तका मिश्रण करानेमें। इंग्लैंड तथा आस्ट्रेलियाके साँड़ोंसे नस्ल उत्पन्न करानेके प्रयत्न अधिकांश असफल ही रहे हैं।

सरकारी फार्मोंसे उत्तम जातिवाले साँड़ोंके वितरणके सम्बन्धमें शाही कमीशनने इस बातकी ओर ध्यान आकर्षित किया है कि देशके पशुओंकी आवश्यकताको देखते हुए सन् १९२६ तक इस दिशामें बहुत ही कम प्रगति हुई है। कमीशनने गणना करके बताया कि प्रतिवर्ष दो लाख साँड़ोंको वितीर्ण करनेकी आवश्यकता थी; किन्तु बड़े-बड़े प्रान्तोंमें वास्तवमें ५०० से कुछ ही अधिक साँड़ प्रतिवर्ष बाँटे गये। यद्यपि प्रतिवर्ष सरकारी फार्मोंसे बाँटे जानेवाले साँड़ोंकी संख्या लगभग दुगुनी कर दी गयी है, फिर भी भारतको जितने साँड़ोंकी आवश्यकता है, कुल मिलाकर उनका एक क्षुद्र अंश ही अबतक बाँटा गया है।

('पशुओंके व्यवसाय तथा दुग्ध-व्यवसायकी उन्नति' पर सन् १९३७ की रिपोर्ट)

सूरज-साँड़

भारतमें गायोंको बरधानेकी कोई व्यवस्थित प्रणाली न होनेके कारण उसके अभावकी पूर्ति अति प्राचीनकालसे सूरज-साँड़ोंसे की जाती रही है। हिंदूलोग इन साँड़ोंको अपने सम्बन्धीकी मृत्युके ग्यारहवें दिन छोड़ा करते हैं। इस प्रकार छोड़े हुए साँड़ोंका कार्य केवल गो-वंशकी वृद्धि करना है। धर्मशास्त्रोंमें यह विधान किया गया है कि ऐसे साँड़ोंको जिस कामके लिये छोड़ा जाता है, उसके अतिरिक्त न तो उनसे हल चलानेका काम लिया जा सकता है, न गाड़ीमें जोतनेका और न कोई अन्य काम ही लिया जा सकता है। उन्हें खूब अच्छी तरह खिला-पिलाकर स्वतन्त्र घूमनेके लिये छोड़ देना चाहिये, जिससे उन्हें पर्याप्त व्यायाम मिले और वे स्वस्थ तथा बलवान् बने रहें। यह प्रथा अबतक कई स्थानोंमें प्रचलित है। किन्तु बंगालके कृषि-विभागके डाइरेक्टर श्री टी० आर० ब्लैकवुड आई० सी० एस० ने यह लिखा है कि प्रान्तभरमें ऐसा एक भी जिला नहीं है, जिसमें गोवंशकी वृद्धिके लिये अच्छे साँड़ पर्याप्त संख्यामें हों। उनका यह विचार ठीक ही है कि पवित्र समझे जानेवाले सूरज-साँड़ोंद्वारा नस्ल पैदा करनेकी हिंदुओंकी पुरानी प्रथा स्वयं पशुओंके दृष्टिकोणसे बहुत अच्छी थी; क्योंकि इसका परिणाम यह होता था कि चुने हुए बछड़े ही इस प्रकार छोड़े जाते थे और उन्हें खुला छोड़ देनेका परिणाम भी यह होता था कि लोग उन्हें अच्छी तरह खिलाते-पिलाते थे तथा उन्हें पर्याप्त व्यायाम भी मिल जाता था।

श्रीनीलानन्द चटर्जीका कहना है—पशुओंके नस्ल-सुधारके विषयपर 'इम्पीरियल बोर्ड आफ़ ऐग्रिकल्चर' द्वारा कई बार, विशेषकर सन् १९१३ तथा १९१७ में विचार हो चुका है तथा भारतके विभिन्न प्रान्तोंके पशु-चिकित्सा-विभागके डाइरेक्टरों तथा सुपरिंटेंडेंटोंने भी इस विषयपर मनन-पूर्वक विचार किया है। संक्षेपमें उन लोगोंके परामर्श निम्नाङ्कित हैं। आशा की जाती है कि सरकार शीघ्र ही इनपर अमल करेगी।

(१) सूरज-साँड़ किसीकी भी सम्पत्ति नहीं है, अदालतोंद्वारा दिये हुए इस प्रकारके निर्णयोंके दुष्परिणामोंको दूर करनेके लिये कानूनद्वारा सूरज-साँड़ोंका अधिकार म्युनिसिपलिटी, डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड तथा स्थानीय सभाओंको सौंपकर उन्हें इस बातके लिये बाध्य करना चाहिये कि वे अपनी-अपनी सीमाके भीतर पशु-संख्या तथा आयके अनुपातसे नस्ल-वृद्धिके लिये कम-से-कम थोड़े-से उत्तम साँड़ोंको अपने खर्चसे रक्खें अथवा एक उचित रकम सहायताके रूपमें देकर किसी सार्वजनिक या व्यक्तिगत संस्थाद्वारा उनके भरण-पोषणकी व्यवस्था करायें।

(२) विशेषकर नस्ल बढ़ानेके उद्देश्यसे साँड़ रखनेके विचारको प्रोत्साहन देनेके लिये पूरा प्रयत्न करना चाहिये तथा डिस्ट्रिक्ट-बोर्डोंको चाहिये कि वे जितने साँड़ रख सकें, अवश्य रक्खें।

(३) इस बातको बार-बार दुहराया जा चुका है कि नस्लमें वास्तविक सुधार उत्तम-से-उत्तम देशी पशुओंद्वारा

स्थानीय नस्लोंके सुधारसे ही सम्भव है, संकर-जातिकी नस्ल उत्पन्न करके या विदेशी रक्तका मिश्रण करनेसे नहीं। इंग्लैंड तथा आस्ट्रेलियाके साँड़ोंसे नस्ल उत्पन्न करनेके प्रयत्न अधिकांश असफल ही रहे हैं। मेजर वाल्डेका कहना है कि मुख्यतया आस-पासकी सभी नस्लोंका ह्रास हुआ है तथा कर्नल एच्० ईवन्सके कथनानुसार बर्मियोंकी संकर-जातिकी सन्तान पैदा न करनेकी नीति ही बर्मी पशुओंके अत्युत्तम गुणोंको बनाये रखनेमें सहायक हुई है।

(४) भारतके कृषि-बोर्डके सन् १९१९ के कार्य-विवरणमें कर्नल जी० के० वाकर तथा सर्वश्री जैकब, वुड, मैकेंजी, नाइट एवं टेलरने कहा है कि पूर्ण शक्तिके साथ पशु-वृद्धिके व्यवसायको प्रोत्साहन देना तथा उसकी वृद्धि करना सरकारका मुख्य कर्तव्य है।

(क) सरकारी पशु-पालन-शालाओंकी संख्यामें वृद्धि करना।

(ख) सरकारको चाहिये कि वह उत्तम-उत्तम नस्लके देशी पशुओंका पालन करे तथा इन नस्लोंकी रक्त-शुद्धि बनाये रक्खे।

(ग) पशु-वृद्धिके लिये भूखण्डोंको निर्धारित करना तथा उनकी रक्षा करना।

(घ) सरकारी या दूसरे प्रमाणित फार्मोंसे उत्तम श्रेणीके पशुओंका वितरण।

गरजसाँड़ किसीकी भी सम्पत्ति नहीं है—हाईकोर्टके द्वारा दिये हुए उस प्रकारके निर्णयोंके दुष्परिणामको रोकनेके लिये अबतक कोई कानून नहीं बना। इस प्रकारका कानून यथासम्भव शीघ्र बन जाना चाहिये। अन्य प्रस्तावित उपायोंको भी समूचे भारतवर्षकी आवश्यकताके अनुसार थोड़े या अधिक पैमानेपर अमलमें लाना चाहिये।

पशु-वधकी रोक

किन्तु सबसे महत्त्वका प्रश्न, सब प्रश्नोंका एक प्रश्न, है—'पशुओंकी निर्बाध हत्या।' ऐसा केवल भारतमें ही सम्भव है। संसारके अन्य किसी सभ्य देशमें इस प्रथाको एक दिनके लिये भी प्रोत्साहन नहीं मिल सकता। श्रीनीलानन्द चटर्जी लिखते हैं—'क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि एक अच्छी स्वस्थ,जवान गायका भी,जो छुटानेके समयतक प्रतिदिन लगभग ढाई सेर दूध देती है, बेखटके वध कर दिया जाता है? कलकत्ते-की एक म्यूनिसिपल पशुवध-शालामें मैंने अपनी आँखों ऐसा होते देखा है। इस प्रकारका केवल यही एक उदाहरण नहीं है। कलकत्तेकी म्यूनिसिपल पशु-वधशालामें ऐसी-ऐसी पाँच सौ गायोंका वध प्रतिदिन होता है। सोचिये, कलकत्तेमें कई पशु-वधशालाएँ हैं तथा भारतमें कई ऐसे नगर और कसबे हैं, जहाँ बारहों महीने गो-वधका कार्य चालू रहता है। खोज करनेमें पता चला है कि मारे जानेवाले पशुओंमेंसे सत्तरसे नब्बे प्रतिशत तक पशु छोटी अवस्थामें ही मार दिये जाते हैं और बजाय इसके कि वे दस या बारह वर्षतक और जीकर मनुष्यको लाभ पहुँचाते, पहले या दूसरे ब्यानके बाद ही मार डाले जाते हैं। इस प्रकार जो थोड़े-से उत्तम श्रेणीके पशु बच रहते हैं, वे भी समयसे पहले ही मार दिये जाते हैं।'

पशुओंके ह्रासके विषयपर लिखनेवाले कई विद्वानोंका कहना है कि दूध देनेवाले पशुओंका वध इस ह्रासका एक मुख्य कारण है। इस विषयपर भी श्रीनीलानन्द चटर्जीके निम्नाङ्कित कथनकी ओर ध्यान देना चाहिये। वे लिखते हैं—

'इस देशमें अंग्रेज़ोंके आनेके पूर्व गो-वध प्रायः नहीं होता था। यह सच है कि मुसल्मानी राज्यमें कुछ मुसल्मान गो-मांस खाते रहे होंगे; किन्तु उनकी संख्या बहुत कम थी तथा वध किये जानेवाले पशुओंकी संख्या तो बिल्कुल नगण्य थी। यहाँतक कि आज भी जो अच्छे और उच्चवर्गके मुसल्मान हैं, वे गो-मांसको छूनेतकमें अपनी हतक तथा अपमान समझते हैं। वे मुख्यतया भेड़े अथवा बकरेका मांस खाते हैं। भारत-का जलवायु गो-मांस-भक्षणके अनुकूल नहीं पड़ता। मुसल्मानोंके गो-मांससे परहेज करनेमें यह एक मुख्य कारण है। दूसरा कारण, जो इससे कम महत्त्वका नहीं है, हिंदुओंकी धार्मिक भावनाओंके प्रति आदरका भाव था। इस भावकी प्रतिध्वनि हमें इस बीसवीं शताब्दीमें भी सुनायी पड़ी थी, जब कि अफगानिस्तानके स्वर्गीय अमीर हबीबुल्लासाहब भारतमें पधारे थे तथा ईदके अवसरपर दिल्लीमें इस विषयपर उन्होंने भाषण दिया था। उन्होंने मुसल्मानोंसे कहा था, 'यद्यपि परम्पराके अनुसार मेरे सत्कारमें आपलोगोंको सौ गायोंकी कुर्बानी करनी चाहिये; किन्तु आपलोग एक भी गायकी कुर्बानी मत कीजिये। आपलोगोंको दिल्ली या भारतके किसी भी भागमें मेरे नामपर गायकी कुर्बानी या और कोई ऐसा धार्मिक कृत्य नहीं करना चाहिये, जिससे सम्राट् एडवर्डके साम्राज्यकी हिंदू प्रजाको पीड़ा या दुःख हो। क्यों? क्या बकरे पर्याप्त नहीं हैं? क्या दिल्लीकी जुमा मस्जिदमें कुर्बानी करनेके लिये पर्याप्त ऊँट नहीं हैं? मैं

आपलोगोंके साथ ईदका महत्त्वपूर्ण त्यौहार मनाने जा रहा हूँ। यदि आपलोगोंकी इच्छा हो तो बकरोंकी कुर्बानी कर सकते हैं। किन्तु यदि एक भी गायका वध हुआ तो मैं सदाके लिये आपलोगोंसे तथा दिल्लीसे मुँह फेर लूँगा। यदि मैं आज्ञा दे सकता हूँ तो मेरी बात मानिये; नहीं तो कम-से-कम मेरी प्रार्थनापर अवश्य ध्यान दीजिये।'

कुछ ही दिनोंसे अंग्रेज सैनिकों तथा अपेक्षाकृत निम्न-वर्गकी यूरोपियन तथा यूरेशियन जनताद्वारा अधिक मात्रामें गो-मांसकी खपत होने लगी। पिछला महायुद्ध छिड़नेके समयतक यह पशु-वध बराबर बढ़ता ही गया। उस समय युद्धके लिये बहुत-से सिपाही भारतसे बुला लिये गये, जिसके परिणामस्वरूप पशु-वधमें थोड़ी-सी कमी आ गयी। किन्तु यह कमी थोड़े ही समयके लिये थी, क्योंकि पशुवधकी संख्या फिर बढ़ती-पर है। (इस युद्धकालमें कितना गो-वध हुआ है, यह बताना बहुत ही कठिन है।)

आगे चलकर चमड़ेके व्यवसाय तथा सूखे मांसके व्यापारके लिये गौओंका वध होने लगा। इन सब कारणोंने मिलकर इस देशमें वध होनेवाले पशुओंकी संख्यामें भीषण वृद्धि कर दी।

गो-वधके विरुद्ध हिंदूमात्रकी प्रबल धार्मिक भावना प्रसिद्ध है। अतः उसके विषयमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। खेदकी बात है कि हिंदुओंकी इस धार्मिक भावना तथा विरोधपर कोई ध्यान न दिया जाकर गो-वध बराबर जारी है। बड़े नगरों तथा कस्बोंमें हिंदुओंको प्रतिदिन प्रातःकाल छातीपर पत्थर रखकर बहुसंख्यक गौओंको वध-शालाकी ओर ले जायी जाती हुई देखना पड़ता है। गायसे मनुष्य-जातिको इतने महान् लाभ होते हैं कि उनकी गणना नहीं हो सकती; उन्हें सभी जानते हैं, अतः उन्हें दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है। गाय हमें वह दूध देती है, जो मनुष्यको प्राप्त होनेवाले आहारोंमें सबसे पूर्ण है—यह बात अधिक वैज्ञानिक खोजोंद्वारा सिद्ध हो चुकी है। ऊपर बतलाया जा चुका है कि दूध मनुष्यके भोजनका एक आवश्यक अङ्ग है। यह दूसरे आहारोंकी त्रुटियोंको पूर्ण कर देता है। दूधके अभावकी पूर्ति करनेवाला कोई दूसरा आहार नहीं है। राष्ट्रके शारीरिक विकासको बनाये रखनेके लिये तथा राष्ट्रके स्वास्थ्यकी उन्नतिके लिये यह आवश्यक है कि धनी-निर्धन सबको पर्याप्त मात्रामें दूध मिले। गाय देशको बैल भी देती है, जो हमारे खेत जोतते और हमारे छकड़े खींचते हैं। भारतकी खेतीमें पशुओंसे जो सहायता मिलती है, उसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अङ्ग उनकी शारीरिक सेवा है। भारतमें कृषिसम्बन्धी जो शाही कमीशन बैठा था, उसके कथनानुसार बिना बैलके खेती नहीं हो सकती। बिना बैलोंके पैदावार एक स्थानसे दूसरे स्थानपर नहीं पहुँचायी जा सकती। बैलोंकी रक्षा इसीलिये की जाती है कि वे कृषिके लिये अनिवार्य हैं। यूरोपके देशोंमें लोग दूध देनेवाले पशुओंके वधकी बात सहन नहीं कर सकते। यदि कोई व्यक्ति ऐसा करता है तो कानूनद्वारा उसे दण्ड दिया जाता है अथवा वह समाजसे बहिष्कृत कर दिया जाता है। किन्तु यहाँ इस प्रकारकी कोई व्यवस्था नहीं है। यहाँके सबसे अधिक दूध देनेवाले पशु नगरोंमें भेजे जा रहे हैं और वहाँ जब उनका दूध कम हो जाता है, तो उनका बड़ी संख्यामें वध कर दिया जाता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि उत्तम गायोंकी संख्या घट रही है।' श्रीनीलानन्द चटर्जीने उपर्युक्त बातें कई वर्ष पूर्व लिखी थीं। तबसे तो आजकी स्थिति और भी अधिक शोचनीय एवं भयानक हो गयी है!

बम्बईकी सरकारने एक 'पशु-विशेषज्ञ-समिति' नियुक्त की थी, जिसने सन् १९३९ में अपनी रिपोर्ट लिखी थी। समितिने लिखा है—

'समितिका यह मत है कि वर्तमान परिस्थितिमें, जिसके कारण दूधके लिये पशु नगरोंकी सीमाके भीतर रक्खे जाते हैं, उपयोगी पशुओंके वधको रोकनेके लिये कानूनका बनना आवश्यक है। किन्तु समिति इस बातपर जोर देती है कि यदि नगरोंकी सीमाके बाहर सरकार या म्युनिसिपलिटी आदिके द्वारा दूधकी पैदावारके हल्कोंकी स्थापनाका उचित प्रबन्ध हो जाय, जहाँ दूधका व्यवसाय करनेवाले दूध इकट्ठा कर सकें, दूध देनेवाले पशुओंका पालन एवं वृद्धि कर सकें तथा छूटे पशुओंका तबतक पालन कर सकें जबतक कि वे फिर दूध न देने लगें, तो उपयोगी पशुओंके वधकी समस्या बहुत कुछ हल्की हो जायगी तथा यह भी सम्भव है कि यथासमय यह समस्या रह ही न जाय। दूसरे शब्दोंमें समितिका यह मत है कि दूध देनेवाले उपयोगी पशुओंका वध नगरके भीतर दूधका व्यवसाय चलानेकी प्रचलित प्रथाका प्रत्यक्ष परिणाम है। समिति बड़े जोरदार शब्दोंमें यह बतलाना चाहती है कि दूध देनेवाले पशुओंकी रक्षा तथा प्रान्तमें सन्तोषजनक स्थानीय दुग्ध-व्यवसायकी वृद्धिके लिये बरती जानेवाली नीतिमें सबसे प्रथम और अत्यन्त आवश्यक बात यह होनी

चाहिये कि प्रचलित प्रणालीमें परिवर्तन करके दूधका व्यवसाय-क्षेत्र नगरकी सीमाके बाहर कर दिया जाय।'

सन् १९१७ में अखिल भारतवर्षीय गो-सम्मेलन-सङ्घ, कलकत्ताके प्रमुख श्री सर जान वुडरफ़की प्रेरणासे कई म्युनिसिपलिटियोंने उपयोगी पशुओंके वधमें नियन्त्रण लगानेका निश्चय किया था। किन्तु सरकारने उनके प्रस्तावोंको इस आधारपर रद्द कर दिया कि वर्तमान कानूनके अनुसार ऐसे प्रस्तावोंको कार्यरूपमें लाना न्याययुक्त नहीं है।'

(श्रीनीलानन्द चटर्जी)

जब कलकत्ता म्युनिसिपलिटीका बिल धारा-सभा (Legislative Council) के सम्मुख उपस्थित हुआ, तब श्रीनीलानन्द चटर्जी तथा कुछ अन्य मित्रोंने उस बिलमें एक धारा बढ़ाकर इस कानूनी त्रुटिको दूर करनेकी चेष्टा की। उस धाराके द्वारा कलकत्तेके कारपोरेशनको यह अधिकार दिया गया था कि आवश्यकतानुसार वह उपयोगी पशुओंके वधपर रोक लगा सके। किन्तु यूरोपियन और मुसल्मान सदस्योंद्वारा उस प्रस्तावका समर्थन न होनेसे वह प्रस्ताव गिर गया। गाय तथा बछड़ोंको उनके जीवनके प्रारम्भमें ही वध कर देनेकी बुरी प्रथा बिना किसी रोक-थामके जारी है।

हिंदुओंकी धार्मिक भावनाको मार्मिक चोट पहुँचानेके साथ-साथ गो-वधकी प्रथाने सारे भारतवर्ष तथा इसमें रहनेवाली सभी जातियोंको अतुल आर्थिक क्षति पहुँचायी है। राष्ट्र-हितके लिये यह आवश्यक है कि समस्याकी गम्भीरताका अच्छी प्रकार अनुभव किया जाय तथा दूध देनेवाली गाय और उसकी सन्तान—बैलों एवं साँड़ोंकी रक्षाके लिये सरकार या उसके द्वारा नियुक्त अन्य कमेटियोंद्वारा आमन्त्रित विशेषज्ञोंके बताये हुए उपायों अथवा अन्य उपयुक्त समझे जानेवाले साधनोंको काममें लाया जाय। अवश्य ही शान्तिपूर्ण शिक्षात्मक प्रचारका कार्य तो प्रचुर मात्रामें बराबर चलता रहना चाहिये। प्रजाके सभी वर्गोंके समर्थनसे जीवदया-सम्बन्धी आवश्यक कानून बन जाय—इसके लिये शान्तिपूर्ण शिक्षात्मक प्रचार-कार्य प्रचुर मात्रामें निरन्तर चालू रखनेकी आवश्यकता है।

जिन तथ्योंकी ओर मैंने पाठकोंका ध्यान आकर्षित किया है, उनको दृष्टिमें रखते हुए मैं निम्नलिखित परामर्श उनके सामने प्रस्तुत करता हूँ—

उपाय

१—सारे देशमें खेती एवं गोपालनकी सम्मिलित प्रणाली (Mixed farming) को प्रचलित करनेके लिये देशव्यापी प्रयत्न होना चाहिये।

२—प्रत्येक किसानको एक या एकसे अधिक गाय अपने घरमें रखने तथा गाय और बैलोंकी नस्ल बढ़ानेके लिये प्रोत्साहन तथा सहायता दी जानी चाहिये। अधिक जन-संख्यावाले नगरोंमें लोगोंको सामुदायिक प्रयत्नसे गोशाला अथवा डेरियाँ स्थापित करनेके लिये उत्साहित करना चाहिये।

३—प्रत्येक जिलेमें 'चारा तथा पशु-चारण-समितियों'की स्थापना होनी चाहिये।

४—गाँवके पशुओंके चरनेके लिये यथेष्ट गोचरभूमि कानूनन अलग छूटी रहनी चाहिये।

५—सूरज-साँड़ किसीकी भी सम्पत्ति नहीं है—इस विषयमें दिये हुए हाईकोर्टके निर्णयोंको व्यर्थ करनेके लिये कानून बनना चाहिये।

६—काफी बड़े परिमाणमें अच्छे साँड़ोंकी नस्ल बढ़ानेके कार्यको प्रोत्साहन देना चाहिये।

७—जवान गायोंके वधको रोकनेके लिये ही नहीं, वरं बूढ़ी गाय, साँड़ और बैलोंके वधको भी रोकनेके लिये कानून बनना चाहिये।

८—बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, लाहौर तथा दूसरे बड़े शहरोंमें रहनेवाले लोगोंकी माँग पूरी करनेके लिये नगरोंकी सीमाके बाहर दूध-व्यवसायके क्षेत्रोंकी स्थापना होनी चाहिये।

९—पशु-चिकित्सा-शाला तथा दातव्य औषधालयोंका प्रबन्ध पर्याप्त संख्यामें होना चाहिये।

१०—'अधिक दूध उत्पन्न करो और खूब पियो' का आन्दोलन सारे देशमें मच जाना चाहिये।

११—अधिक दूध उत्पन्न करने, खपत करने और गो-वधको बंद करनेकी आवश्यकताके विषयमें सरकारी महकमों तथा गैरसरकारी संस्थाओंको परस्पर मिलकर शिक्षात्मक प्रचार करना चाहिये।

१२—सरकार तथा सार्वजनिक संस्थाओंको चाहिये कि वे वर्तमान या भावी गोशालाओंके उपयोगके लिये निःशुल्क गोचरभूमि प्रदान करें।

यदि ये उपाय काममें लाये गये तो राष्ट्रके स्वास्थ्य तथा भारतीय जनताकी आर्थिक उन्नतिके लिये एक नया युग उत्पन्न हो जायगा।

गोरक्षापर महात्माजीके विचार

(महात्मा श्रीगान्धीजीने गो-प्रश्नपर बहुत अधिक विचार किया है और लिखा है। उनके लेखोंमेंसे जहाँ-तहाँसे संग्रह करके उनके कुछ विचार यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। सं०—एकलव्य)

मेरे आँसू

गोरक्षा आज जिस ढंगसे हो रही है, उसे देखकर मेरा हृदय एकान्तमें रोता है। रोना मुझे पसंद नहीं। कोई रुदन करता है तो मुझे दुःख होता है। क्योंकि हमें भारी बलिदान करना है, और भारी बलिदान करनेवाले रोयें क्यों? तो भी मेरा हृदय आजकलकी गोरक्षाके अनर्थसे रोता है।

गोरक्षाका मर्म

चम्पारणमें एक स्थानमें गोरक्षाके विषयमें अपना विचार प्रकट करते समय मैंने कहा था कि जिन्हें गोरक्षा करनी है, वे इस बातको भूल जायँ कि गोरक्षा उन्हें मुसल्मानों या ईसाइयोंसे करानी है। हम आज ऐसा समझने लगे हैं कि दूसरे धर्मके लोग गोमांस अथवा गोवध छोड़ें तो उसमें गोरक्षाकी पूर्ति हो जायगी। मुझे इस बातमें कोई तत्त्व नहीं दिखलायी पड़ता।

परन्तु मेरे ऐसा कहनेसे यह नहीं समझना चाहिये कि कोई गोवध करता है तो वह मुझे पसंद है, अथवा गोवधको मैं सहन कर सकता हूँ। गोवधसे किसीकी आत्माको मुझसे अधिक दुःख होता है, इस बातको मैं स्वीकार नहीं करता। मुझे ऐसा नहीं लगता कि दूसरे किसी भी हिंदूको गोवधसे मेरी अपेक्षा अधिक सख्त चोट पहुँचती हो। लेकिन मैं करूँ क्या? अपने धर्मका पालन मैं स्वयं करूँ या दूसरेसे कराऊँ? मैं दूसरेको ब्रह्मचर्यका उपदेश दूँ और खुद व्यभिचार करूँ तो मेरे उपदेशका क्या अर्थ होगा? मैं गोमांस-भक्षण करूँ और उससे मुसल्मानको रोकूँ तो यह काम कैसे बने? परन्तु मैं गोवध नहीं करता हूँ, तो भी मुसल्मानको गोवधसे जबर्दस्ती रोकना मेरा धर्म नहीं। मुसल्मानोंको जबर्दस्ती गो-वध करनेसे रोकना उन्हें जबर्दस्ती हिंदू बनानेके समान है।

गोरक्षा मेरे मनसे कोई परिमित चीज नहीं। मैं गोरक्षाकी प्रतिज्ञा करता हूँ, इसका अर्थ यह नहीं कि मैं हिंदुस्थानकी ही गायोंको बचाऊँ। मैं तो सारे जगत्‌में गायकी रक्षा करवानेका व्रत करता हूँ। मेरा धर्म यह सिखलाता है कि मैं अपने आचारसे बतला दूँ कि गोवध अथवा गो-भक्षण करना पाप है और इसे छोड़ना ही चाहिये। समूची पृथ्वीके लोग गायकी रक्षा करने लगें, इतनी बड़ी मेरी मनःकामना है; परन्तु इसके लिये तो प्रथम मुझे अपना घर अच्छी तरह साफ करना चाहिये।

दूसरे प्रान्तोंकी बात जाने दीजिये। गुजरातकी ही बात करूँ तो कह सकता हूँ कि गुजरातमें भी हिंदूके हाथसे गो-वध होता है। तुम कदाचित् इसे न मानो; परन्तु तुम्हें खबर न होगी कि गुजरातमें बैलोंको गाड़ीमें जोतकर गाड़ीपर अच्छी तरह बोझ लादकर बैलोंको अङ्कुश मारते हैं और उससे लोहूकी धारा बह निकलती है। तुम कहोगे कि इसे गोवध नहीं कह सकते, बैल-वध कह सकते हैं। मैं तो इसे गोवध ही कहता हूँ, क्योंकि बैल गायकी ही प्रजा है। शायद तुम यह कहोगे कि ताड़नको वध नहीं कहते; परन्तु हिंसाकी व्याख्या दूसरोंको दुःख देना—पीड़ा पहुँचाना है। यदि बैलको वाणी होती तो वह जरूर कहता कि तुम मुझे रोज-रोज अङ्कुश भोंककर पीड़ा देते हो; इससे तो अच्छा होता कि एक बार छूरी चलाकर मुझे कतल कर देते। इसलिये इस प्रकार बैलके ऊपर जुल्म करनेको मैं गायकी हिंसा समझता हूँ। एक सिंधी मुझे कलकत्तेमें मिले थे, वे मुझसे वहाँ हमेशा गायके ऊपर होनेवाली हिंसाकी बातें करते थे। एक बार उन्होंने मुझसे ग्वालेके मकानपर चलकर फूँका देकर दूध निकालनेकी क्रिया देखनेको कहा। यह खूनी दृश्य मैंने स्वयं देखा। यह आज भी चालू है, ऐसा मुझे विश्वास है। ऐसा करनेवाले हिंदू हैं। अपने यहाँ गाय-बैल जैसे बेहाल हैं, वैसे दुनियाके किसी भी स्थानमें नहीं हैं। हमारे बैलोंके ऊपर हाड़-चामके सिवा दूसरा कुछ नहीं होता। फिर भी हम उनके द्वारा बेहद बोझा उठवाते हैं। जबतक यह चल रहा है, तबतक गोवध बंद करनेकी माँग हम किसीसे कैसे कर सकते हैं?

भागवतमें हम पढ़ते हैं कि भारतवर्षका नाश कैसे हुआ। उसमें अनेक कारणोंमें एक कारण यह भी बताया गया है

कि हमने गोरक्षा छोड़ दी। गोरक्षा करनेकी असमर्थताका हिंदुस्थानकी गरीबीके साथ निकट सम्बन्ध है। हम-तुम जो शहरोंके रहनेवाले हैं, उनको गरीबोंकी स्थितिका ख्याल नहीं हो सकता। करोड़ोंको एक वक्त पूरा खाना नहीं मिलता। करोड़ों सड़े चावल, आटा, मिरचा और नमक खाकर गुजर करते हैं। ऐसे आदमी गायकी किस प्रकार रक्षा करें? हिंदुस्थानमें अनेकों पिंजरापोल जैनोंके हाथमें हैं। इन पिंजरापोलोंमें बीमार जानवर रक्खे जाते हैं। वहाँकी व्यवस्था या सुविधा जैसी होनी चाहिये, वैसी नहीं होती। हमारे पास पिंजरापोल ही नहीं, पर सुन्दर डेरी होनी चाहिये। बड़े-बड़े शहरोंमें स्वच्छ दूध बालकोंके लिये भी नहीं मिल सकता। गरीब मजदूरोंकी स्त्रियाँ बालकोंके लिये दूधके बदले आटा और पानी पाती हैं। तेईस करोड़ हिंदुओंकी बस्तीवाले हिंदुस्थानमें स्वच्छ दूध न मिले, इसका यह स्पष्ट अर्थ है कि हमने गोरक्षाका त्याग कर दिया है।

यदि गोरक्षाके विषयमें मुझसे पाठ लेना हो तो मेरा पहला पाठ यह है कि मुसल्मानों और ईसाइयोंको भूल जाओ और अपना धर्म पालन करो। भाई शौकतअलीसे मैं साफ कहता आया हूँ कि खिलाफतकी गाय मैं बचाऊँ, तभी मेरी गाय बचेगी। मैंने मुसल्मानोंके हाथमें अपनी गरदन क्यों दी है? गायकी रक्षाके लिये। मुसल्मानोंसे गायको बचानेकी माँग करता हूँ, इसका अर्थ यह है कि मुसल्मानोंके हृदयपर असर करके मैं उनकी रक्षा करनेकी माँग करता हूँ। हिंदू भाइयोंके लिये उन्हें गो-वध नहीं करना चाहिये—ऐसी समझ जबतक उनमें नहीं आती, तबतक मैं धैर्य रक्खूँगा। अपने कृत्यसे, अपनी गोरक्षासे और गो-भक्तिसे मैं उनके हृदयको बदल सकूँगा।

मेरे विचारसे गोवध और मनुष्यवध दोनों एक ही वस्तु हैं। इन दोनोंको रोकनेके लिये यही उपाय है कि हम अहिंसाकी शिक्षाका प्रचार करें, मारनेवालेको प्रेमसे अपना लें। प्रेमकी परीक्षा तपश्चर्यामें है। तपश्चर्या अर्थात् दुःख सहन करना। मैं मुसल्मानोंके लिये जितने अंशमें दुःख सहन हो, उतने अंशमें दुःख सहन करनेके लिये तैयार हो गया, इसका कारण स्वराज्यकी प्राप्ति—यह छोटी बात तो थी ही, परन्तु गायके बचानेकी बड़ी बात भी उसमें थी। मेरी समझके अनुसार कुरानशरीफमें यह लिखा है कि किसी भी प्राणीका नाहक प्राण लेना पाप है। मुसल्मानोंको यह समझानेकी शक्ति प्राप्त करनेकी मैं इच्छा करता हूँ कि हिंदुस्थानमें हिंदुओंके साथ रहकर गोवध करना हिंदुओंका खून करनेके बराबर है; क्योंकि कुरान कहता है कि खुदाने, निर्दोष पड़ोसीका खून करनेवालेके लिये जन्नत नहीं है—ऐसा निश्चय किया है। इसीलिये आज मैं मुसल्मानोंका साथ देता हूँ, उनको दुःख न हो—ऐसा बर्ताव करता हूँ, उनकी खुशामद करता हूँ और यह इसलिये कि इस उपायसे उनकी धर्मवृत्ति जाग्रत् हो।

आज यहाँसे अंग्रेजों और मुसल्मानोंको मारकर या हटाकर गायको बचानेसे मुझे क्या सन्तोष होगा? मुझे तो तभी सन्तोष हो, जब सारी दुनियामें सभी गायको बचानेवाले बन जायँ, और यह काम शुद्ध अहिंसाके पालनसे हो सकता है।

अब गोरक्षाका मेरा अर्थ समझमें आया होगा। गो-रक्षाका स्थूल अर्थ अपनी स्थूल गायकी रक्षा करना है। सूक्ष्म आध्यात्मिक अर्थ यह है कि प्राणिमात्रकी रक्षा की जाय।

ऋषियोंने कहा है कि गो-रक्षा हिंदूका परम कर्त्तव्य है, क्योंकि उससे मोक्ष मिलता है। मैं नहीं मानता कि केवल स्थूल गायकी रक्षा करनेसे मोक्ष मिल जाता है, क्योंकि मोक्ष पानेके लिये तो राग-द्वेष छोड़ना जरूरी है। इसलिये गोरक्षाका जो हम सामान्य अर्थ करते हैं, उससे विशाल अर्थ होना चाहिये। यदि गोरक्षासे मुक्ति मिलती हो तो गोरक्षा केवल गायकी ही रक्षा नहीं, बल्कि प्राणिमात्रकी रक्षा होनी चाहिये। मतलब यह कि चाहे जिसकी हिंसा—कटुवाक्यसे स्त्री-भाई-बन्धुको मनमाना दुःख देना, जिस किसी प्राणीको दुःख देना—यह गोरक्षा-धर्मका उल्लङ्घन है। हिंदूधर्ममें गायकी रक्षाका उपदेश है, इसका अर्थ क्या यही है कि गायको न मारना और बकरीको मारना? अथवा गायको बचानेमें मुसल्मानको मारना? गायका संकुचित अर्थ करनेसे ऐसे बहुत-से अनर्थ सम्भव हैं। गोरक्षा करनेवाले बहुतेरे हिंदू दूसरे प्राणियोंका मांस खाते हैं। वे गोरक्षाका दावा नहीं कर सकते, यह बात मेरी अल्पमतिमें आती है।

किसका दोष?

हिंदुस्थान-जैसे मुल्कमें जहाँ जीवदया-धर्मका पालन करनेवाले असंख्य मनुष्य बसते हैं, जहाँ करोड़ों मनुष्य गायको माताके समान मानते हैं, वहाँ ही गायकी यह दुर्दशा? वहाँ ही गायके दूधका अभाव? वहाँ ही गायके दूधमें मिलावट? वहाँ ही गरीबोंके लिये दूधका टोटा? इसमें न

तो मुसल्मानोंको दोष दिया जा सकता है और न अंग्रेजी सत्ताको ही। यदि किसीका दोष है तो वह हिंदुओंका है। वह दोष भी नीयतसे—जान-बूझकर नहीं हो रहा है, बल्कि अपने अज्ञानसे हो रहा है।

अच्छी कसौटी

जिस वस्तुसे निरन्तर आर्थिक हानि ही हो उस वस्तुको, इस जगत्‌में कोई भी मनुष्य आजतक निभा नहीं सका। इसी कारण मैंने अनेकों बार बतलाया है कि जहाँ धर्म और अर्थ—ये दोनों साथ नहीं चल सकते, वहाँ या तो धर्ममें कमी है अथवा अर्थ केवल स्वार्थ है—सार्वजनिक नहीं। शुद्ध धर्ममें शुद्ध अर्थ हमेशा समाया रहता है। अपूर्ण मनुष्यके लिये धर्म-परीक्षाकी यह एक सुन्दर कसौटी है। गाय-भैंस बड़े शहरोंमें सार्वजनिक अर्थकी दृष्टिसे बोझरूप हो गयी हैं; इसीसे उनका वध बढ़ता जा रहा है। और यदि बड़े शहरोंमें गाय-भैंसोंका सदुपयोग करना हमें नहीं आया तो किसी भी उपायसे इनका बचाव नहीं हो सकता, इसमें किसीको शङ्का नहीं होनी चाहिये।

गो-संस्थाएँ क्या करें?

१. ऐसी हर-एक संस्था बस्तीसे खूब दूर खुली जगहमें होनी चाहिये, जहाँ घास हो और पशुओंके घूमने लायक हजारों एकड़ जमीन हो। यदि सभी गोशालाएँ मेरे हाथमें हों तो गायोंके आयातके कामके लिये जितनी उपयोगी हों, उनको छोड़कर बाकी सभी गोशालाओंको मैं अच्छी कीमतमें बेच डालूँ और पड़ोसमें ऊपर लिखे अनुसार खुली जमीन मोल ले लूँ।

२. प्रत्येक गोशालाको आदर्श दुग्धालय और आदर्श चर्मालय बना डालना चाहिये। एक-एक मरे पशुको फेंकना नहीं, बल्कि रखना चाहिये, और उसके ऊपर सारी शास्त्रीय क्रिया करके उसके चमड़े, हड्डियाँ, अँतड़ियाँ इत्यादि सभी वस्तुओंको अधिकाधिक उपयोगी बनाना चाहिये। मैं तो वध किये हुए पशुके चमड़ेकी बनी हुई वस्तुओंके मुकाबलेमें मरे पशुके चमड़ेको पवित्र और उम्दा बनाकर उपयोग करने लायक समझता हूँ। वध किये हुए पशुओंके हाड़-चामसे बनी वस्तुओंको तो मनुष्यको, छोटे-से-छोटे हिंदूको भी 'अग्राह्य' ही समझना चाहिये।

३. अनेकों गोशालाओंमें गोबर और गोमूत्र फेंक दिये जाते हैं। इस दुरुपयोगको मैं बड़ा भारी गुनाह समझता हूँ।

४. प्रत्येक गोशालाकी व्यवस्था इस विषयके शास्त्रीय ज्ञान रखनेवाले मनुष्योंकी देख-रेखमें तथा सलाहसे चलानी चाहिये।

५. प्रत्येक गोशाला स्वावलम्बी होनी चाहिये; और अच्छी व्यवस्था हो तो ऐसा हो ही सकता है। दानके पैसोंका उपयोग गोशालाओंके विकासमें करना चाहिये। इन संस्थाओंको कमाई करनेका विभाग कभी नहीं बनने देना चाहिये। बल्कि जो कुछ कमाई हो, वह सब लूले-लँगड़े, अङ्गहीन, बूढ़े इत्यादि पशुओंको खरीदनेमें और कसाईखाने जानेवाले अधिकांश पशुओंको खुले बाजारमें खरीदनेमें खर्च करना चाहिये। यह कल्पना गोरक्षाकी योजनाके मूलमें निहित है।

६. अब जो हमारी गोशालाएँ भैंस, बकरे आदिको पालने लगें तो उपर्युक्त उद्देश्योंका पूरा होना कठिन हो जायगा।

गो-उद्धार कैसे?

१. गायके दूधके उपयोगपर जोर देना और दूसरे प्रकारका दूध बंद करना।

२. गायके मृत शरीरके सभी भाग उपयोगमें आयें, वे बेकार न जायँ—ऐसा प्रयत्न करना तथा इसका प्रचार करना।

३. गायकी औलाद सुधारनेका प्रयत्न करना।

४. गायको अधिक दुधारू बनाना इत्यादि।

गो-सेवक क्या करें?

१. जब-जब दूध और दूधसे बने हुए पदार्थोंके उपयोग करनेका अवसर हो, तब-तब जहाँतक हो सके गायके दूधका ही उपयोग करें।

२. जहाँ-जहाँ अपने शरीरके लिये चमड़ेकी वस्तुओंका उपयोग करना पड़े, वहाँ-वहाँ स्वाभाविक रीतिसे मरे हुए पशुके चमड़ेका ही उपयोग करें, वध किये गये गाय-बैलके चमड़ोंका उपयोग कभी न करें। दूसरे चमड़ेकी चीजोंमें भी, मरे हुए पशुके ही चमड़ेका उपयोग करें।

३. गो-सेवक दूधके लिये पशु पाले तो गायको ही पाले, भैंस कदापि न रक्खे। जहाँ कहीं दूधके लिये भैंस रक्खी जाती हो, वहाँ गाय पालनेकी सिफारिश करे और इसके महत्त्वको समझाये।

४. जहाँ कहीं पिंजरापोल अथवा गोशाला या इसी उद्देश्यसे कोई दूसरी संस्था चलती हो, वहाँ गो-सेवाके सिद्धान्तको समझायें।

५. जो गो-सेवक दुग्धालय चलाकर नफा करता हो, उसे चाहिये कि जबतक हिंदुस्थानमें सन्तोषप्रद गोपालन न हो जाय, तबतक अपनी आजीविकाके उपरान्त बचे हुए नफेको गोरक्षामें ही लगानेका निश्चय करे।

६. जो लोग साधनसम्पन्न हैं, उनको दया-धर्मके निमित्त दुग्धालय और चर्मालयके धंधेको अपनानेकी बात समझाये।

७. चर्मालय और दुग्धालयके उद्योग-धंधेके लिये पूरा ज्ञान मिल सके—इसके लिये प्रयत्न करे, और इस धंधेसे आजीविका चल जाय तो इसके द्वारा गो-सेवाके लिये जीवन अर्पण कर सके तो करे।

गो-रक्षा कैसे हो ?

गाय बारहमासी फूलके समान सदा दूध नहीं दे सकती। वह बिसुक जाती है और कुछ निश्चित आयुमें ही बेकाम हो जाती है। पीछे वह न तो बछड़े दे सकती है और न दूध दे सकती है। ऐसी स्थितिमें गायकी रक्षा करना मनुष्यका धर्म है। यह रक्षा कम-से-कम खर्चमें और अत्यन्त स्वाभाविक रीतिसे कैसे की जाय ? यह मनुष्यकी जानकारीका प्रश्न है। इसके पीछे उसे अपनी तमाम बुद्धि-शक्ति और योजना-शक्ति लगानी चाहिये। गायकी सन्तति पुष्ट हो। उसका दूध बढ़े और वह कसदार हो। उसके बाखड़ी होनेपर कम-से-कम खर्चमें उसका निर्वाह हो; और उसके बेकाम होनेके बाद स्वाभाविक रीतिसे अपनी मौत मरनेके समयतकके बुढ़ापेके कालमें भी गायको किसी धंधेमें लगा रखना चाहिये। गाय जबतक जीये, तबतक इसके मल-मूत्रका भी अधिक-से-अधिक पूरा-पूरा उपयोग किया जाय। यह स्वाभाविक मौतसे मर जाय तब इसके चमड़े, हड्डियाँ, अँतड़ियाँ आदिके द्वारा अधिक-से-अधिक उपज की जाय। और इतना करनेके पश्चात् जिस अंशतक गाय परावलम्बी रहे, उतने अंशतक उसके जिलानेका भार दूसरे दूधके धंधेपर ही पड़े; ऐसी व्यवस्था की जाय तभी गोरक्षा हो सकती है। जो गाय अपना जीवन धारण करती हुई अपने मालिकको भी जिलाती है और पैसेवाला बनाती है, वही गाय अपनी जातिके असहाय, अपंग, बूढ़े प्राणियोंको भी सहज ही जिला सकती है। केवल मनुष्यको अपना लोभ उस दर्जेतक सीमित करना पड़ेगा।

गोरक्षा मुझे अति प्रिय है। यदि कोई मुझसे पूछे कि हिंदू-धर्मका बड़े-से-बड़ा बाह्य स्वरूप क्या है तो मैं 'गोरक्षा' को बतलाऊँ। इस धर्मको हमलोग भूल गये हैं, यह बात वर्षों पहले मेरी दृष्टिमें आयी थी। दुनियाँमें ऐसा देश मैंने नहीं देखा, जहाँ गो-वंश हिंदुस्थानके समान लागर हो। प्रमाणमें, हम हिंदुस्थानमें पशुओंकी हड्डी-पसली जितनी निकली देखते हैं उतनी दूसरी किसी जगह देखनेमें नहीं आती। अंग्रेज लोग गो-मांस खाते हैं फिर भी इंग्लैंडमें लागर पशु मैंने नहीं देखे।

जैसे हमारे पशु दुबले हैं, वैसे ही हम हैं। जहाँ पशु भूखों मरते हैं; वहाँ तीन करोड़ मनुष्य भूखों मरें—इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं।

अपने पिंजरापोलोंकी दशा देखो। व्यवस्थापकोंकी उदारताके लिये मेरे हृदयमें आदर है, परन्तु उनकी व्यवस्थाके लिये बहुत ही कम आदर है। पिंजरापोल गाय और उसके वंशकी रक्षा करते हैं, यह मैं नहीं मानता। पिंजरापोल कुछ लागर पशुओंके रखने और उनको सुख-पूर्वक मरने देनेका स्थान नहीं होना चाहिये। पिंजरापोलमें मैं आदर्श गाय-बैलोंको देखनेकी आशा करता हूँ। पिंजरा-पोल शहरोंके मध्यमें न होकर बड़े-बड़े खेतोंके बीच होने चाहिये; और उनमें बेशुमार पैसा खर्च करनेके बदले बेशुमार पैसा पैदा होना चाहिये।

हिंदुस्थानके पशुओंको हिंदू किस तरह रखते हैं ? उनके बदनमें तीखी बरछी कौन चुभाता है ? उनके ऊपर असह्य भार कौन लादता है ? उनको कम खूराक कौन देता है ? उनके द्वारा जरूरतसे ज्यादे काम कौन लेता है ?

मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हिंदूका पहला काम अपने ही घरको साफ करना है। मुझे शक्ति हो और समय मिले तो मैं पिंजरापोलोंके सुधारनेमें, पशुओंकी देख-रेखका शास्त्रीय ज्ञान प्रजाको प्रदान करनेमें, निर्दय हिंदुओंको अपने पशुओंके ऊपर दया करना सिखानेमें, तथा स्वच्छ दूध गरीब-से-गरीब बालकको और रोगीको पहुँचानेमें गोरक्षा-मण्डलियोंको लगाऊँ। इन मण्डलियोंकी व्यवस्थाका सबसे बड़ा काम मैं प्रथम हिंदुओंके द्वारा ही लूँ।

पीछे अंग्रेजोंसे गोमांसका त्याग करनेकी प्रार्थना करूँ। हमारे हिंदू राजालोग अंग्रेज अतिथियोंकी आवभगत करते समय अपने खास धर्मको भूल जाते हैं और गोमांस देनेसे भी नहीं हिचकिचाते। उनको इस अधर्माचरणसे मुक्त होनेकी प्रार्थना करूँ और शरमाऊँ।

इतना करनेपर ही मुझे अपने मुसल्मान भाइयोंसे गो-वध बंद करनेके लिये कहनेका हक प्राप्त होता है। ऐसा अपना धर्म स्पष्ट दीख पड़ता है। तथापि हम अन्तमें करने योग्य कामको पहले ही करने चले हैं। मुसल्मानके हाथसे भलाईसे या बलात्कारसे ही गायको छुड़वानेमें हमारे मन गोरक्षाकी समाप्ति हो जाती है। परिणाम यह हो रहा है कि हिंदू-मुसल्मानके बीच वैर-भाव बढ़ गया, झगड़ेका कारण खड़ा हो गया, और इस प्रवृत्तिके फल-स्वरूप बहुत-से पशुओंका वध हुआ, क्योंकि मुसल्मान भाई जिद्द चढ़ गये। गायके बचानेमें स्वयं मरना ही परम धर्म है। मेरे अभिप्रायके अनुसार गोरक्षाके प्रश्नका अर्थशास्त्र ठीक-ठीक समझा जाय और पाला जाय तो उसमेंसे धर्मके नाजुक प्रश्नका अपने-आप हल हो जायगा। गोवध आर्थिक रीतिसे अशक्य होना चाहिये, और वह अशक्य बनाया जा सकता है। दुर्भाग्यसे संसारमें हिंदुस्थान ही ऐसा देश है, जहाँ हिंदुओंके पवित्र माने हुए पशुका भी वध सस्ते-से-सस्ता हो गया है; इसलिये मैं नीचे लिखे उपायोंको बतलाता हूँ—

राज्यका कर्तव्य

१. राज्य बाजारमें बिकने आनेवाली तमाम गायोंको अधिक-से-अधिक कीमत देकर खरीद ले।

२. राज्य अपने सभी मुख्य शहरोंमें दुग्धालय चलाकर सस्ता दूध बेचे।

३. राज्य चर्मालयकी स्थापना करे, और वहाँ अपनी मिल्कियतके तमाम पशुओंकी हड्डी और चमड़ेका उपयोग करे, और प्रजाकी मिल्कियतके पशुओंमेंसे भी मरे हुए तमाम पशुओंको खरीद ले।

४. राज्य आदर्श पशुशालाएँ रक्खे तथा पशुओंको पाले, और उनके पालन-पोषणकी कलाका ज्ञान लोगोंको प्रदान करे।

५. सरकार विस्तृत गोचरभूमिकी व्यवस्था करे तथा गोरक्षाका शास्त्र लोगोंको समझानेके लिये श्रेष्ठ विशेषज्ञोंकी सेवा प्राप्त करे।

६. इसके लिये एक खास विभाग खोले, और उसमें नफा करनेका बिल्कुल ही विचार न रखकर यह उद्देश्य रक्खे कि पशुओंकी विभिन्न नस्लोंमें और उनकी रक्षा आदिके हर-एक विषयमें समय-समयपर जो सुधार हों, उनसे लोग पूरा-पूरा लाभ उठा सकें।

इस योजनामें यह बात तो आ ही जाती है कि तमाम बूढ़े, लूले-लँगड़े और रोगी पशुओंकी रक्षा राज्यको ही करनी चाहिये। निश्चय ही इसमें भारी बोझ है; परन्तु यह बोझ ऐसा है कि इसे हर एक राज्यको और खासकर हर-एक हिंदू-राज्यको उठाना ही चाहिये। इस प्रश्नके ऊपर विचार करनेपर मेरी यह दृढ़ धारणा हो गयी है कि शास्त्रीय रीतिसे दुग्धालय और चर्मालय चलाये जायँ तो राज्य उनसे खादकी प्राप्तिके अतिरिक्त, आर्थिक दृष्टिसे जो पशु निकम्मे हो गये हैं उनका निर्वाह भी कर सकता है; यही नहीं बल्कि बाजारभावसे चमड़ा, चमड़ेका सामान, दूध और घी-मक्खन इत्यादि तथा मरे हुए पशुओंसे उत्पन्न होनेवाली खादको भी बेच सकता है। शास्त्रीय ज्ञानके अभाव और झूठी भावनाके कारण ये सभी वस्तुएँ प्रायः व्यर्थ नष्ट हो जाती हैं और इनसे अधिक-से-अधिक लाभ नहीं उठाया जाता।

यह ऐसी हानि है कि इसको कोई व्यक्ति या संस्था नहीं रोक सकती। यह बात मुख्यतः सरकारके ही हाथकी है। इसमें लोगोंको पशु पालना, दुग्धालय चलाना और साँड़ चुननेकी शिक्षा देना जरूरी है। मेरे नम्र विचारके अनुसार सारी प्रजाके साथ दृढ़तासे और ज्ञानपूर्वक काम करते हुए गोधनकी रक्षा करना राज्यका कर्तव्य है। राज्यके बालकों और लोगोंको नीरोग और सस्ता दूध मिल सके—ऐसी व्यवस्था करना राज्यके प्रथम कर्तव्योंमेंसे एक कर्तव्य है, ऐसा मैं मानता हूँ। ब्लेचफर्डका कहना है कि 'जिस प्रकार पोस्टेजके टिकटोंकी कीमत सर्वत्र एक-सी होती है, उसी प्रकार दूधकी कीमत और जातिका प्रमाण सर्वत्र एक-सा चालू करना चाहिये।' इसमें मेरी पूर्ण सम्मति है।

गौ—निष्काम सेवाका प्रतीक

(लेखक—प्रो० श्रीअक्षयकुमार वन्द्योपाध्याय एम्० ए०)

आत्मज्ञान, आत्मोत्सर्ग तथा निष्काम सेवाद्वारा प्राप्त आत्मानुभूति ही भारतीय संस्कृति तथा सभ्यताका आधार है। सबसे पहले भारतीय ऋषियोंने जीवात्मा तथा परमात्माकी अभिन्नता, विश्वके समस्त जीवोंकी आध्यात्मिक एकता तथा सृष्टिके परम कारण ब्रह्मके पूर्ण, सत्य, शिव और सौन्दर्यमय स्वरूपका पता लगाया। उन्होंने मानव-जातिको संसारके प्रत्येक प्राणी तथा व्यापारको आध्यात्मिक दृष्टिसे देखना सिखाया। ज्ञान तथा इच्छाशक्तिसे युक्त होनेके कारण मनुष्य सृष्टिका मुकुट तथा उसकी शोभा है; क्योंकि उसे ऐसे करण प्राप्त हैं, जिनके द्वारा वह आत्माके चिन्मय तथा विश्वव्यापी स्वरूप और समस्त भेदोंके तात्त्विक अभेदकी अपरोक्ष अनुभूति कर सकता है। उसे वह शक्ति प्राप्त है, जिससे वह सारे जगत्में अपनेको तथा अपने भीतर सारे जगत्को देख सकता है तथा अपने भीतर सृष्टिके 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' रूप और भीतरी सामञ्जस्यका आनन्द प्राप्त कर सकता है। मनुष्यके ज्ञानकी पूर्णता इसी सर्वोच्च आध्यात्मिक अनुभूतिको प्राप्त करनेमें है और उसके विचारगत, इच्छागत एवं क्रियागत स्वातन्त्र्यकी सिद्धि शारीरिक अवयवों तथा मानसिक शक्तियोंको समानरूपसे विकसित एवं पुष्ट करनेमें है, जिससे वे उस अनुभवको प्राप्त करनेके योग्य साधन हो सकें, तथा उन प्राकृतिक शक्तियोंपर विजय पानेमें है, जो उस अनुभवकी प्राप्तिमें बाधक हैं। शरीरको स्वस्थ एवं बलवान् बनाना होगा; इन्द्रियोंको उचित रूपसे सधाना होगा; विचार, इच्छा तथा भावनाओंमें परस्पर सामञ्जस्य रखते हुए उन्हें नियमित रखना एवं उदात्त बनाना होगा; बुद्धिको क्रमशः विशुद्धतम करना होगा; क्रिया-शक्तिका अत्यधिक विकास करना होगा तथा इन समस्त करणोंका घनीभूत प्रयोग सृष्टिके सम्पूर्ण भेदोंकी अभिन्नता तथा जीवात्माओंकी आध्यात्मिक एकताका अनुभव करनेमें ही होना चाहिये।

आत्माके इस यथार्थ व्यापक स्वरूपका इस प्रकार अनुभव करनेके लिये जीवात्माके आपाततः संकीर्ण स्वरूपका—मानव-प्रकृतिके उन अङ्गोंका जो जीवात्माका दूसरोंके साथ निरन्तर विरोध दिखलाते हैं—त्याग आवश्यक हो जाता है। जिसे आत्मोत्सर्गके नामसे पुकारा जाता है; उसका अर्थ वास्तविक आत्माका बलिदान नहीं, अपितु वास्तविक आत्माके ज्ञानके लिये प्रातीतिक आत्माका बलिदान, आत्माकी नैसर्गिक समृद्धि, निर्मलता, दिव्यता तथा सर्वव्यापकताके सच्चे ज्ञानकी प्राप्तिके लिये उसकी प्रातीतिक दरिद्रता-मलिनता, क्षुद्रता तथा अल्पताकी मिथ्यानुभूतिका, आत्माकी परमात्माके साथ अभिन्नताके बोधके लिये उसके शरीर तथा शरीरगत सम्बन्धोंसे तादात्म्यका त्याग है।

आत्मोत्सर्गके दो पक्ष हैं—'निवृत्ति' और 'प्रवृत्ति'। निवृत्ति-पक्षमें उसका अर्थ है 'त्याग', तथा प्रवृत्ति-पक्षमें 'सेवा'। शरीरके प्रति उदासीनता, शरीर या रक्तकी दृष्टिसे जो हमारे निकटवर्ती एवं प्रियजन हैं, उनके प्रति आसक्तिका त्याग, धन-मान-ऐश्वर्य तथा इन्द्रिय-सुखकी स्वार्थमयी कामनासे छुटकारा पाना, हम परिवारविशेष एवं जातिविशेषके हैं—इस संकीर्ण भावनाको मनसे निकाल देना, सम्पूर्ण सांसारिक व्यवहारोंसे किसी प्रकारका सम्बन्ध न रखते हुए तथा उनसे बहुत दूर रहकर विशुद्ध चिन्तन तथा ध्यानमय जीवन बिताना—ये सब आत्मोत्सर्गके निवृत्तिपक्षके अङ्ग हैं। आत्मज्ञान, आत्मोद्धार तथा आत्माके आनन्दमय व्यापक स्वरूपके बोधके लिये की जानेवाली आध्यात्मिक साधनामें ये निःसन्देह बड़े सहायक हैं।

परन्तु आत्मोत्सर्गके निवृत्ति-पक्षपर आवश्यकतासे अधिक जोर देनेसे इस संसारमें जीवन-यात्रा उदास, एकाङ्गी तथा निरर्थक हो जाती है। आत्मोत्सर्गका प्रवृत्ति-पक्ष ही मानव-जीवनको जगत्में सार्थक, दिव्य तथा पूर्ण बनाता है और साथ-ही-साथ मनुष्यको सारे बन्धन, सीमा और दुःखोंसे मुक्त करके विश्वात्माके विशुद्ध एवं 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' रूपको अपने भीतर अनुभव करनेमें समर्थ बनाता है। जन्मसिद्ध एवं प्रयत्नसिद्ध सारी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियाँ, समस्त बौद्धिक सिद्धियाँ एवं भौतिक साधन, सामाजिक तथा प्राकृतिक वातावरणोंसे प्राप्त सम्पूर्ण सुविधाएँ—इन सबका, जिन्हें जीव आत्मज्ञानकी ओर अग्रसर होती हुई अपनी संसार-यात्रामें अपनी सम्पत्ति समझता है, विश्वात्माके साकार स्वरूप—समाजकी सेवा तथा पूजामें विनियोग करना चाहिये।

परिवार, जाति, राष्ट्र, मानव-जाति, प्राणि-जगत् तथा

अखिल सृष्टिको क्रमशः विश्वात्माका अधिकाधिक पूर्ण तथा महत्त्वशाली स्वरूप समझना चाहिये तथा व्यक्तिको अपने सच्चे-से-सच्चे आत्मज्ञानके लिये इसी रूपमें इनका आदर करना चाहिये, इनसे प्रेम करना चाहिये और इनकी पूजा करनी चाहिये। आत्माका पूर्ण ज्ञान तभी होता है, जब मनुष्य भीतरसे तो अपनेको सम्पूर्ण विश्वके साथ अभिन्न समझे तथा बाहरसे अपनी सारी सांसारिक सम्पत्तिको विश्वकी सेवामें लगा दे। वास्तवमें मनुष्यमें मनुष्यकी श्रद्धायुक्त सेवाका मुख्य क्षेत्र समाज ही होना चाहिये। परन्तु पूर्ण आत्मज्ञानके लिये सहानुभूति तथा एकताके भावको सम्पूर्ण जगत्में फैलाना होगा। इस प्रकार समाजकी निःस्वार्थ सेवा आत्माके व्यापक चिन्मय स्वरूपका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधना है। सेवाका आरम्भ परिवारकी सेवासे होना चाहिये, फिर क्रमशः इसका क्षेत्र बढ़ाना चाहिये। धीरे-धीरे इसका क्षेत्र-विस्तार मानवमात्र और अन्तमें प्राणीमात्र तक हो जाना चाहिये। किन्तु चाहे किसी भी क्षेत्रमें किसी भी सामुदायिक रूपकी सेवा की जाय, वह इसी भावनासे होनी चाहिये कि हम उस अपरिच्छिन्न नित्य-निर्विशेष आत्माकी, जो व्यष्टि तथा समष्टिके रूपमें व्यक्त है, पूजा कर रहे हैं।

प्रत्येक व्यक्ति तथा समाजके प्रत्येक वर्गको चाहिये कि वह सम्पूर्ण समाजरूपी शरीरको आत्मा अथवा परमात्माका उच्चतर एवं अधिक व्यापक साकार रूप मानकर उसकी श्रद्धायुक्त सेवा करे—इसी सिद्धान्तपर हिंदुओंकी सामाजिक व्यवस्थाका निर्माण हुआ है। हिंदू-समाजमें व्यक्तिवाद तथा समाजवादका सामञ्जस्य हो गया है, जब कि वर्तमान अर्थयुगमें दोनोंमें तीव्र विरोध है। मनुष्य वस्तुतः एक आध्यात्मिक प्राणी है—इस सिद्धान्तसे ही व्यक्ति तथा समाजके हितोंमें और जातियों एवं राष्ट्रोंके हितोंमें—जो देखनेमें परस्परविरुद्ध प्रतीत होते हैं—सच्चा और प्रबल सामञ्जस्य हो सकता है। मनुष्यका सच्चा हित इस बातका अनुभव करनेमें है कि उसका आत्मा और विश्वात्मा एक हैं और यह अनुभव तभी प्राप्त हो सकता है जब वह मानव-समाजकी प्रेमपूर्ण सेवामें अपनी सारी सांसारिक सम्पत्तिका स्वेच्छापूर्वक त्याग कर दे। प्रत्येक व्यक्ति, जो इस प्रकारकी भावनाका अभ्यासी हो गया है, यह अनुभव करता है कि सेवामें जितना वह त्याग करता है उससे कहीं अधिक प्राप्त करता है। वह त्याग करता है, केवल अनित्य एवं अन्तवाले पदार्थोंका, जो उसकी आत्माके लिये बन्धनरूप हैं और बदलेमें पाता है नित्य एवं असीम आनन्द, जो उसकी आत्माका वास्तविक स्वरूप है। यही शिक्षा भारतीय शास्त्र एवं आचार्य हजारों वर्षोंसे सम्पूर्ण मानव-जातिको देते आये हैं। त्याग और सेवाद्वारा आत्मज्ञान प्राप्त करनेका यह सिद्धान्त ही श्रुतियों तथा स्मृतियोंमें विहित सब प्रकारके यज्ञों, तन्त्रों तथा पुराणोंमें बतलायी हुई सब प्रकारकी पूजा-अर्चा तथा समाजमें पवित्र समझे जानेवाले सभी धार्मिक कृत्यों एवं त्यौहारोंका आधार है।

हिंदू-समाजमें गौ निष्काम सेवा-भावका सजीव प्रतीक समझी जाती है तथा उसी रूपमें उसका आदर है। इतिहासकी दृष्टिसे यह निश्चय करना कठिन होगा कि किस प्राचीन युगसे इस श्रेष्ठ पशुको इतना अधिक पवित्र समझा जाने लगा। आर्यजातिका प्राचीनतम साहित्य भी इस बातका साक्षी है कि सदासे गाय आर्यपरिवारका एक प्रधान और आवश्यक अङ्ग रही है। पति, पत्नी और शिशु—केवल तीन प्राणियोंके छोटे-से-छोटे परिवारमें भी गायको परिवारका चौथा प्राणी मानते थे और उसी रूपमें उसकी सेवा भी होती थी। साथ ही वह सुख-समृद्धिका कारण भी मानी जाती थी। बिना गायके परिवार अधूरा समझा जाता था। परिवारकी विशालता एवं समृद्धिशालिता गौओंकी संख्यासे आँकी जाती थी। राजभवन तथा एकान्तवासी मुनिकी कुटिया दोनों स्थानोंपर गायका आदरणीय स्थान था। सभी उम्रके तथा समाजकी सभी श्रेणियोंके मनुष्योंकी बहुमूल्य सेवा करनेके कारण हिंदुओंने गायको एक आदर्शकी प्रतिमूर्ति तथा सेवाका सजीव रूप समझा।

सेवाका अर्थ है—अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये कम-से-कम लेना, तथा दूसरोंके हितके लिये अधिक-से-अधिक देना, अत्यधिक सादा जीवन बिताना और उसे अधिक-से-अधिक उपयोगी बनाना, अपनी व्यक्तिगत उन्नतिके लिये कम-से-कम परिश्रम करना और सारी शक्ति दूसरे जीवोंकी आवश्यकताओं तथा त्रुटियोंको पूरा करनेमें लगा देना। सेवाके साथ नम्रता, मृदुता, सहिष्णुता, धैर्य, प्रेम तथा सहानुभूति आदि गुणोंका भी सम्बन्ध है। हिंदुओंने इन सब गुणोंका सुन्दर एवं समुज्ज्वल समावेश गायके जीवनमें पाया। यह अत्यन्त सादे भोजनसे निर्वाह करती है। खुले मैदानोंमें स्वयं उत्पन्न होनेवाली घास इसके लिये पर्याप्त है। यह अपने जीवन-निर्वाहके लिये मनुष्य

अथवा किन्हीं दूसरे जीवोंको कष्ट देना या उनके साथ क्षुद्र प्रतियोगितामें खड़ा होना नहीं चाहती। गाय अपने लिये संसारसे कम-से-कम ग्रहण करती है; किन्तु इतना थोड़ा लेकर भी उसके बदलेमें वह कितनी-कितनी आश्चर्यजनक वस्तु देती है। जंगली घासको, जो देखनेमें अति तुच्छ प्रतीत होती है, वह अपने रक्त, मांस और जीवनी-शक्तिमें ही नहीं, अपितु जगन्माताके मानव-शिशुओंके लिये अत्यन्त मधुर, पवित्र, अत्यन्त पौष्टिक, आनन्ददायक तथा जीवन-वर्द्धक भोजन (दूध) के रूपमें बदल देती है। मनुष्य-शरीरको पुष्ट करनेवाले अन्य किसी भी खाद्य पदार्थकी तुलना दूधसे नहीं की जा सकती।

ज्यों-ज्यों मनुष्योंको गो-दुग्धके विविध गुणोंका पता लगता गया, त्यों-त्यों वे उसपर अधिक श्रद्धा करने लगे। उन्होंने सजीव पशुके रूपमें गायके भीतर ईश्वरीय दया और प्रेमके दर्शन किये, प्राण-पोषक शक्ति तथा मानसिक शान्ति देनेवालीके रूपमें गायको समझा तथा अपनी सजीव निधिके रूपमें गायको देखा। जब लोग दूधसे मक्खन तथा घी तैयार करनेकी कला जान गये तब तो गायके प्रति उनकी श्रद्धा हजारगुनी बढ़ गयी। उन्होंने दूधके परिवर्तित रूप घी-खोआ आदिसे कई प्रकारके प्रयोग किये और वे प्रसन्नतासे फूले न समाये। कितने आदरपूर्ण शब्दोंमें उन्होंने घी तथा गो-दुग्धके अन्य रूपोंके महान् गुणोंका वर्णन किया है। घी देवताओंके लिये अत्यन्त उपयुक्त और आनन्ददायक भोजन समझा गया तथा सम्पूर्ण धार्मिक कृत्योंमें देवताओंको प्रधान हविके रूपमें अर्पित किया जाने लगा। मन और हृदयके भक्तिपूर्ण भावसे तथा धार्मिक भावनासे अग्निमें छोड़ी हुई घीकी आहुति समस्त भौतिक तथा आध्यात्मिक वातावरणको विशुद्ध एवं श्रेष्ठ बनानेवाली समझी जाने लगी। जब लोगोंने दूधका दही, पनीर, छेना आदि अनेक परिवर्तित रूपोंमें तथा अन्य कई पदार्थोंके साथ मिलाकर अथवा संयुक्त करके परीक्षा की, तब दूधके तत्त्वोंकी पौष्टिकताका अधिकाधिक पता चला। लोगोंको यह निश्चय हो गया कि गायका दूध केवल शारीरिक गठनको स्थिर रखनेमें ही समर्थ नहीं है वरं शरीरके भीतर एक स्वस्थ, सबल, उदात्त एवं शान्त मनके विकासके लिये भी सभी आवश्यक साधन जुटा देता है।

यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि गाय जगज्जननीका अवतार समझी जाने लगी और उसी रूपमें पूजी जाने लगी। किसी समय लोगोंकी ऐसी भावना थी कि समस्त देवी-देवता गायकी देहमें निवास करते हैं और उसीके द्वारा मानव-शिशुओंपर कल्याणकी वर्षा करते हैं। शास्त्रोंमें गायको धरती माताकी उपमा दी गयी है और जिस धरती मातासे हम सबने जीवन प्राप्त किया है तथा जिसके वक्षःस्थलसे हम अपने सुखमय एवं निरन्तर विकासोन्मुख जीवनके लिये सब प्रकारकी आवश्यक सामग्री प्राप्त करते रहे हैं, उसी धरती माताका उसे साकाररूप माना गया है। हिंदू-ऋषियों तथा आचार्योंने नीच-ऊँच सब प्रकारके मनुष्योंको यह शिक्षा दी कि वे जगज्जननी धरती माता तथा प्रकृतिके भिन्न-भिन्न विभागोंकी अधिष्ठात्री देवी-देवताके प्रति कृतज्ञता एवं आदरका भाव रक्खें और उसे गायकी श्रद्धापूर्ण सेवाके द्वारा व्यक्त करें। वस्तुतः गायके रूपमें, जिस गायसे आत्मज्ञानके इच्छुक पुरुष सेवापरायणताकी प्रेरणा खोजते हैं, हम विश्व-सेवाकी भावनाको ही पूजते हैं।

गाय केवल दूध और उसके रूपान्तरोंसे ही मानव-जातिकी सेवा नहीं करती वरं उसका सब कुछ सेवा-कार्यमें विनियुक्त रहता है। गायकी कोई भी वस्तु निरर्थक नहीं प्रतीत होती। उसके गोबर और मूत्रसे भी हमारा बहुत बड़ा काम निकलता है। उसकी मृत्युके पश्चात् भी उसकी सेवाका अन्त नहीं होता। वह अपने चमड़े और खुरोंसे, अपनी हड्डियों तथा सींगोंसे, अपने मांस तथा रगोंसे अपना सेवा-कार्य चालू रखती है। उसके भौतिक शरीरका कोई अंश ऐसा नहीं है जिसे ईश्वरीय सृष्टिके जीवोंकी सेवा करनेका गौरव न प्राप्त हो। कैसी दिव्य प्रेरणा उत्पन्न करनेवाला गायका जीवन है! साथ ही वह सिधाई और नम्रता, प्रेम और स्नेह, धैर्य और सहिष्णुता, गम्भीरता और सादगीका अवतार ही है। क्या एक अध्यात्म-भावना-भावित राष्ट्रके लिये ऐसे श्रेष्ठ जीवको, जो केवल मानव-समाजकी बहुमूल्य सेवा ही नहीं करता वरं जो स्वभावसे ही मनुष्योंकी नैतिक बुद्धिके सम्मुख निःस्वार्थ सेवाका उच्चतम आदर्श उपस्थित करता है, देवरूपसे पूजना अस्वाभाविक है?

यह ध्यान देनेकी बात है कि इस लेखमें एक विशिष्ट दृष्टिकोणसे गायके महत्त्वका वर्णन किया गया है और विशेष-कर दूध देनेवाली गायकी ही ओर संकेत किया गया है, किन्तु यह सबको विदित है कि गो-जातिके सभी प्राणी चाहे

नर हों या मादा—मनुष्य-जातिकी सेवामें लगे हुए हैं तथा आर्थिक दृष्टिसे मानव-समाजके लिये अत्यधिक उपयोगी हैं। भारत-जैसे कृषि-प्रधान देशमें बैलों और साँड़ोंकी सेवाका मूल्य ठीक तरहसे आँका नहीं जा सकता। अतः हिंदुओंने इस जातिके जीवोंको जो पवित्र माना है तथा अत्यन्त प्राचीन कालसे इस जातिके किसी भी प्राणीके जीवन एवं सुख-सुविधाके प्रति की गयी अवहेलनाको घोर अनैतिकता और अधर्म बतलाया है सो ठीक ही है। गौओं तथा बैलोंके प्रति अत्यधिक आदर दिखलाना और उनकी सुख-सुविधाओंका ध्यान रखना हिंदूमात्रके लिये धर्मका एक अङ्ग है। प्राचीन कालमें हिंदुओंने गायोंकी नस्ल-वृद्धि और सेवा एवं चिकित्साके ज्ञानमें बहुत उन्नति की थी तथा उनके सुव्यवस्थित प्रयत्नोंके परिणामस्वरूप भारतमें गौओंकी नस्लमें खासी उन्नति हुई थी। आधुनिक युगके ये अच्छे लक्षण हैं जो फिर गायोंकी ओर लोगोंका विशेष ध्यान आकर्षित हुआ है।

गौ माता क्यों कहलाती है ?

(लेखक—श्रीयुत वसन्तकुमार चटर्जी, एम्० ए०)

यह हिंदुओंकी एक मुख्य विशेषता है कि जब कि सारे संसारके दूसरे लोगोंने गो-मांसको एक खाद्य पदार्थ माना है, इन्होंने गौके शरीरको पवित्र घोषित किया है तथा गोवधको घोर पाप समझकर उसकी निन्दा की है। दूसरे लोगोंने गो-मांसको एक उपयुक्त खाद्य पदार्थ क्यों माना, इसके कई कारण हैं। गौको सहज ही वशमें कर लिया जाता है। इसका आहार सर्वथा निरामिष होता है। इसका मांस स्वादिष्ट और अत्यन्त पौष्टिक होता है। किन्तु हिंदुओंने अधिक गहराईसे विचार किया है। उनकी दृष्टि इस प्रश्नके आध्यात्मिक पहलूकी ओर गयी है। यदि ईश्वरकी यह इच्छा होती कि गाय भोजनका अङ्ग बने तो वह गायके दूधको इतना अमूल्य भोजन—विशेषकर बच्चों, बूढ़ों तथा अशक्तोंके लिये क्यों बनाता। हमारे ऋषियोंने बहुत गम्भीर और लंबे विचारके बाद यह पता लगाया कि ईश्वरकी जो शक्ति माके रूपमें प्रकट होती है, वही गायके रूपमें भी अभिव्यक्त हुई है। माका एकमात्र उद्देश्य बच्चेका हित करना है। वह अपने जीवनके प्रत्येक क्षणमें यही सोचती रहती है—किस प्रकारसे बच्चा स्वस्थ, सुखी और भला बने। ऐसा प्रतीत होता है कि उसका अस्तित्व ही इसी कार्यके लिये है। इसी प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि गायका अस्तित्व भी मानव-जातिके हितके लिये ही है। दूध तथा उसके बने हुए पदार्थोंद्वारा मनुष्य-जातिका अनेक प्रकारसे हित होता है। छोटे-से-छोटे और निर्बल-से-निर्बल रोगीसे लेकर अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट व्यक्तितकको दूधके द्वारा बने हुए पदार्थोंसे सर्वोत्तम पोषण मिल सकता है। गाय अत्यन्त सस्ती-से-सस्ती चीजें—घास-फूस खाकर सर्वोत्तम भोजन प्रदान करती है। उसका शरीर कैसा आश्चर्यजनक यन्त्र है। उस परमपिता परमेश्वरकी शक्ति कितनी महान् तथा कल्याणकारी है जो ऐसे विलक्षण यन्त्रकी रचना कर सकता है। क्या अपनी रसनेन्द्रियकी तृप्तिके लिये ऐसे जीवको मारना अत्यन्त घृणित कृतघ्नता नहीं है? क्या ईश्वरीय व्यवस्थाके प्रति यह अत्यन्त अनुचित विद्रोह नहीं है?

ईश्वरोपासनाके प्रकारके विषयमें भिन्न-भिन्न धर्मोंके भिन्न-भिन्न मत हैं। कुछ धर्मोंने यह माना है कि हमें एकमात्र ईश्वरकी ही उपासना करनी चाहिये, ईश्वरके द्वारा निर्मित किसी वस्तुकी पूजा नहीं करनी चाहिये। उनका यहाँतक कहना है कि ईश्वरके अतिरिक्त किसी वस्तुकी पूजा करनेसे भगवान् अप्रसन्न होते हैं। हिंदू-धर्मकी मान्यता ऐसी नहीं है। हिंदू-धर्मके अनुसार संसारमें ईश्वरसे भिन्न कोई वस्तु हो ही नहीं सकती। सभी वस्तुएँ ईश्वरका अंश हैं। वे ईश्वरसे ही निकलती हैं, ईश्वरमें ही स्थित रहती हैं और अन्तमें ईश्वरमें ही लय हो जाती हैं। (सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलान्) अतः हम किसी भी वस्तुकी पूजा करनेमें उस ईश्वरके एक अंशकी ही पूजा करते हैं। ऐसी दशामें ईश्वरके अप्रसन्न होनेका कोई प्रश्न ही नहीं हो सकता। क्या उन्होंने अपने अमर गीत श्रीमद्भगवद्गीतामें नहीं कहा है कि जो जिस रूपमें मुझे भजता है, मैं उसके सामने उसी रूपमें प्रकट होता हूँ तथा भक्तिके सभी मार्ग अन्तमें मेरी ही प्राप्ति कराते हैं, और किसीकी नहीं।*

* ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥
(गीता ४। ११)

किसी वस्तुविशेषकी भगवद्भावयुक्त पूजासे भगवान् अप्रसन्न तो होते ही नहीं वरं वे यह चाहते हैं—नहीं, नहीं, यह उनकी आज्ञा है—कि हम वस्तुविशेषकी भगवद्भावसे पूजा करें। इसका कारण यह है कि हम ईश्वरको देख या सुन तो सकते ही नहीं, केवल उसके विषयमें एक अधूरी कल्पना कर सकते हैं। अतः यदि हम यह निश्चय कर लें कि ईश्वरकी बनायी हुई किसी वस्तुकी पूजा नहीं करेंगे तो हम उसकी एक अधूरी कल्पनाकी ही उपासनासे सन्तोष कर लेंगे और उसके प्रति हमारे हृदयमें उतनी भक्ति नहीं उपजेगी जो ईश्वरकी प्राप्ति करानेमें समर्थ होती है। इसीलिये भगवान्‌ने अपनी अमरवाणी-स्वरूप वेदोंमें कहा है कि हमें माता, पिता, आचार्य तथा अतिथिको देवता मानकर पूजना चाहिये, क्योंकि ईश्वरकी दयालुता और कृपा ही तो हमारे माता-पिताके द्वारा हमारे ऊपर बरसती है। हमारे आचार्यके शब्दोंमें उन्हींका ज्ञान तो हमें सच्चा मार्ग दिखाता है। वे ही तो अतिथिके रूपमें हमारे द्वारपर पधारते हैं; और हम अतिथिको लौटाकर क्या उन्हींको नहीं लौटा देते? इसलिये भगवान्‌ने आज्ञा दी है—

'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव,
आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव।'

यदि हम उचितरूपसे इनकी पूजा नहीं कर सकते तो फिर हम भगवान्‌की पूजा कैसे कर सकते हैं? यदि हम एंट्रेंसकी परीक्षामें सफल नहीं हो सकते तो एम्० ए० की परीक्षा पास करनेकी आशा कैसे कर सकते हैं? फिर भगवान्‌के अप्रसन्न होनेका तो कोई प्रश्न नहीं उठ सकता, क्योंकि वह मनुष्योंकी भाँति ईर्ष्यालु नहीं है। यदि हम किसी मनुष्यके बच्चों या कर्मचारियोंका आदर करें तो वह भी अप्रसन्न नहीं होता।

माता-पिताके द्वारा ईश्वरकी दया प्राप्त करनेके कारण जिस प्रकार हमें ईश्वरकी भाँति उन्हें पूजना चाहिये, उसी प्रकार हमें गायको भी ईश्वरके रूपमें ही पूजना चाहिये; क्योंकि गायके द्वारा हम ईश्वरकी दयापूर्ण क्रियाका अनुभव कर सकते हैं। गौका दूध हमारा भोजन है। बैल खेत जोतने तथा अन्न उत्पन्न करनेमें हमारी सहायता करते हैं। ये अन्नको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें ले जाते हैं। गाड़ी खींचकर हमें यात्रा कराते हैं। गोबर एक बहुमूल्य खाद है, हमारे शरीर तथा घरोंको साफ रखनेवाला एक सस्ता कीटाणुनाशक तत्त्व है तथा हमारा भोजन बनानेके लिये अत्यन्त उपयोगी ईंधन है। गो-मूत्रमें रोगनाशक असाधारण गुण हैं। मरनेपर गायके मांस और हड्डियोंसे उत्तम खाद तैयार होती है। इसकी खालसे कमाया हुआ अच्छा चमड़ा मिलता है। गायके शरीरका प्रत्येक भाग प्रत्येक स्थितिमें मनुष्यका उपकार करता है। अतः गौको माता कहकर पुकारना तथा जगज्जननी भगवतीके प्रतिनिधि-रूपमें उसे पूजना उचित ही है।

कभी-कभी यह प्रश्न किया जाता है कि भैंस गायकी ही भाँति पवित्र क्यों नहीं मानी जाती। निस्सन्देह गायकी अपेक्षा भैंसके दूधमें अधिक घी रहता है, किन्तु शारीरिक पुष्टि ही सब कुछ नहीं है। गो-दुग्ध तथा गो-घृत केवल शारीरिक शक्ति ही नहीं देते वरं आत्मिक शक्ति भी प्रदान करते हैं। सत्त्व, रज तथा तम—इन तीन गुणोंमें सर्वश्रेष्ठ सत्त्व-गुण गायके दूध और घीमें प्रचुर मात्रामें रहता है। यों तो सभी जीव पवित्र हैं, अतः इस नाते भैंसका भी पालन-पोषण भलीभाँति करना चाहिये। किन्तु भगवान्‌की बहुविध दयालुताका साकार-स्वरूप होनेके कारण गायका स्थान बेजोड़ है।

दूसरी बात यह पूछी जाती है कि प्राचीन कालमें वैदिक यज्ञोंके अवसरपर गायका वध क्यों होता था। इस प्रश्नके दो उत्तर दिये गये हैं। पहला उत्तर तो यह है कि गायका वध कभी नहीं होता था। 'गोमेध' का उल्लेख अवश्य आता है, किन्तु 'गो' शब्दका अर्थ कोई दूसरा हो सकता है। वेदोंमें 'गो' के लिये 'अघ्न्या' शब्दका प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है 'अवध्य'। इस 'अघ्न्या' शब्दके प्रयोगसे सिद्ध होता है कि गायका वध कभी नहीं होता था तथा जहाँ कहीं 'गो'-वधका उल्लेख आता है वहाँ 'गो' शब्दसे किसी दूसरी ही वस्तुका तात्पर्य है। श्रीस्वामी माधवानन्दगिरि मण्डलेश्वरने अपनी बँगला पुस्तक 'वैदिक युग'में इसी मतको माना है तथा उसके समर्थनमें वेद, निरुक्त, पाणिनीय अष्टाध्यायी तथा अन्य प्रामाणिक ग्रन्थोंके उद्धरण दिये हैं।

दूसरा मत, जिसे महाप्रभु श्रीचैतन्यकी जीवनी 'चैतन्य-चरितामृत'में उन्हींका मत बताया गया है, यह है कि गोवध उस अति प्राचीन कालमें होता था जब कि ऋषि लोग अपनी अचिन्त्य शक्तिसे बलि दी जानेवाली बूढ़ी गायको युवा बनाकर तुरंत पुनर्जीवित कर देते थे।

भगवान्‌के सर्वश्रेष्ठ अवतार श्रीकृष्णने हमें गो-पूजाकी शिक्षा दी है। दूसरे ग्वाल-बालोंके साथ वे खेतोंमें तथा

वनमें गायें चराया करते थे । गाय तथा बछड़े उन्हें प्राणोंके समान प्यार करते थे । वास्तवमें वे गौओंके मित्र और गोपालोंके क्रीड़ा-सहचर थे । भारतको श्रीकृष्णकी शिक्षा भुला नहीं देनी चाहिये । उसे गायका पालन-पोषण तथा भगवती जगज्जननीके रूपमें उसकी पूजा करनी चाहिये । उसे विभिन्न शास्त्रोंमें उल्लिखित भगवान्‌के अन्य आदेशोंके भी पालन करनेका प्रयत्न करना चाहिये । तब कहीं भारत अपनी वर्तमान गिरी दशासे उठकर अपनी पूर्व-अवस्थाको पहुँचेगा जब कि वह संसारभरका सबसे महान् एवं सर्वश्रेष्ठ देश था और धन, ज्ञान तथा आध्यात्मिकता सभी बातोंमें समृद्ध था।

गो-महिमा

(लेखक—प्रो० श्रीक्षेत्रलाल साहा एम्० ए०)

गायके प्रति हिंदुओंकी भावना एक ऐसी वस्तु है जिसकी उपेक्षा सहजमें नहीं की जा सकती । यह न तो मनोवैज्ञानिक कौतूहल है और न निराधार विश्वासकी बहक ही । इसका भारतीय आध्यात्मिक सिद्धान्तके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है । यह महान् भारतीय धर्मका एक अङ्ग है । हम यह कह सकते हैं कि भारतमें गौकी उपासना होती है । गौको एक उपकारी देवताके तुल्य माना जाता है और ऐसा समझा जाना बिल्कुल उचित ही है । पालतू तथा उपयोगी पशुओंमें गाय मनुष्यकी सबसे अधिक सेवा करती है और उसकी सेवाका क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत है । दूधसे अधिक पौष्टिक पदार्थ और क्या है ? दूध एक ऐसी पुष्टिकर, गहरा प्रभाव डालनेवाली तथा प्राणधारक शक्ति है जो मानवजीवनको स्थिर रखनेके लिये शरीरके मांस-तन्तुओंको पुष्ट करती है । शिशुके जीवनके लिये तो दूध अनिवार्य है; क्योंकि वह कोमल और स्वादिष्ट पेय भोजन है जो शिशु-शरीरके अङ्गोंमें आश्चर्यजनक वृद्धि करता है ।

मनुष्योंके समझनेके लिये गो-दुग्धकी स्वास्थ्यदायक शक्ति तथा उसमें मिले हुए तत्त्वोंका विचित्र मिश्रण ऐसा है जो साधारण मनुष्यकी बुद्धिमें सहसा नहीं आ सकता । गो-दुग्धमें ४ प्रतिशत नाइट्रोजन-सम्बन्धी तत्त्व, ४ प्रतिशत स्नेह, ५ प्रतिशत शक्कर, १ प्रतिशत नमक तथा ८ प्रतिशत जल रहता है । यह एक प्रकारका अमृत है, देवताओंका पेय है जो मनुष्य-शरीरकी नसों तथा पुट्ठोंको सुदृढ़ बनाता और उन्हें स्फूर्ति देता है । निस्सन्देह गाय मानव-शिशुकी दूसरी मा है और जन्म देनेवाली माताके बाद इसीका स्थान है । स्वाद तथा पुष्टिकारक गुणोंके साथ-साथ दूधमें यह भी विशेषता है कि उसे हम सरलतापूर्वक मावा, मक्खन, घी आदिमें परिणत कर सकते हैं जिनसे अनेक प्रकारके उत्तम तथा रुचिकर व्यञ्जन तैयार होते हैं । इसीलिये दूधकी तुलनामें मांस, मछली, साग आदि अन्य किसी प्रकारका खाद्य पदार्थ नहीं आ सकता । इसके अतिरिक्त दूध स्वयं भी भिन्न-भिन्न कई रूप धारण कर लेता है—जैसे मलाई, दही, मक्खन, पनीर तथा घी; इनमेंसे प्रत्येक उत्तम खाद्य पदार्थ हैं । माता अपनी पाकविद्याका उपयोग करके अपने बच्चोंके खानेके लिये भाँति-भाँतिके सुन्दर व्यञ्जन बनाती है । मनुष्यकी यह दूसरी मा गाय अपने मनुष्य-बच्चोंको आनन्द देनेके लिये नाना प्रकारके अमृतमय खाद्य पदार्थ देती है जिनपर मनुष्य जीता है ।

यदि हम गायकी महान् उपयोगिताका अधिकाधिक व्यापक दृष्टिसे विचार करें तथा साँड़ और बैलको एक ही कोटिके मानें तो हम गोरूपी साकार तत्त्वकी कीर्तिके बाह्य तेजोमण्डलको अधिकाधिक समझनेमें समर्थ होंगे, और तब हम उसी कीर्तिके अन्तर्मण्डलकी झाँकी पानेका प्रयत्न करेंगे। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है कि भारतवर्षमें बैलोंसे हल चलवाते हैं और इस कामके लिये जोड़ीका उपयोग करते हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि बैलोंकी मा गाय भारतकी कृषिका मुख्य अवलम्ब है । अतः गाय भारतके खाद्य पदार्थ, अन्न, तीसी, सन, पाट तथा उद्योगशालाओंमें काम आनेवाले दूसरे कच्चे मालकी उपजका मुख्य आधार और सञ्चालक है । भारतवर्ष एक कृषिप्रधान देश है । यहाँ फसल तैयार करनेका काम कलोंद्वारा नहीं, अपितु बैलोंके द्वारा होता है ।

जहाज और रेलगाड़ीका आविष्कार तो कल हुआ है । भारतमें अनादिकालसे नौका तथा बैलगाड़ी ही यातायातके मुख्य साधन रहे हैं । पिछले दिनोंकी भाँति आज भी बारहों मास यहाँतक कि वर्षामें भी बैलगाड़ी लंबी, धूलभरी तथा कीचड़वाली सड़कोंपर बोरोंमें भरा हुआ सब तरहका माल गट्ठर तथा गाँठोंका भण्डार रात-दिन ढोती हुई ऊपर-नीचे होती हुई तथा चर्र-मर्र करती हुई अपने श्रान्तिकर पथपर चलती रहती है । इस प्रकार भारतमें सामान ढोनेके लिये या

आने-जानेके लिये सदा दो पहियोंवाली और दो बैलोंसे खींची जानेवाली साधारण गाड़ी ही काममें लायी जाती रही है, न कि मोटर-लारी आदि।

सभी प्राणियोंकी विष्ठा अत्यन्त गंदी और घृणित होती है तथा मनुष्यकी बस्तियोंसे शीघ्र ही हटा दी जाती है। किन्तु गायकी विष्ठा—गोबरका क्या होता है? यह कभी फेंका नहीं जाता। यह बड़ी सावधानीसे नाना प्रकारके घरेलू उपयोगोंमें लाया जाता है। यह कोई गंदी वस्तु नहीं है। स्त्रियाँ घरको स्वच्छ तथा पवित्र रखनेके लिये इसका उपयोग करती हैं। गोबर सूखते-सूखते कीटाणुओंको मार देता है। इसके कंडे बना लिये जाते हैं, जिनका प्रयोग उत्तम ईंधनके रूपमें किया जाता है। ध्यान रहे, यह गायकी विष्ठा है। गौ एक रहस्यमय प्राणी है।

आज मनुष्य कितना कृतघ्न हो गया है कि भूख लगनेपर उसी जीवनदाता गायको देखकर उसके मुँहमें पानी आ जाता है! यही सबसे बड़ी बाधा है और इसीसे आर्थिक, नैतिक तथा धार्मिक जटिल समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। मनुष्यका पेट एक सुन्दर भट्ठी है तथा उसकी भूख ऐसी है जो कभी नहीं मिटती। मनुष्य हरे-हरे पत्तीदार पौधोंको भक्षण कर जाता है, फल-मूल खाता है, तैरती हुई सुन्दर मछलियोंको पकड़ता है और बड़े चावसे उन्हें चट कर जाता है; सूअर, भेड़, बकरी, मेढक, कछुआ आदि अनेक जीवोंको भी मनुष्य निगल जाता है। प्रतिदिन जीभके स्वादके लिये हजारों मुर्गे-मुर्गियोंका वध किया जाता है। मनुष्यके क्षुधा-बाण भोले-भाले और चहचहानेवाले आकाशमें उड़ते हुए सुन्दर पक्षियोंको भी नहीं छोड़ते। उनके द्वारा भी मनुष्य अपनी राक्षसी क्षुधा शान्त करनेका प्रयत्न करता है। किन्तु इतनेपर भी उसकी भूख नहीं मिटती। अपने स्वादिष्ट दूधसे बचपनमें उसका पालन करनेवाली तथा दूसरी माके रूपमें उसके जीवनका पोषण करनेवाली गायको मारकर उसका मांस खाये बिना कृतघ्न मनुष्यका काम नहीं चलता! मनुष्यने यह खोज की है कि गो-मांस प्रथम श्रेणीका सारयुक्त भोजन है तथा स्वादमें भी असाधारण है। मनुष्य कहता है कि घोड़े, कुत्ते तथा लोमड़ीका मांस अच्छा नहीं होता, गोमांस पूर्णतया अच्छा होता है, यह प्रधान भोजन है तथा इसकी तुलना मनुष्यके अन्य किसी भोजनसे नहीं हो सकती। अतः हिंदुओंको छोड़कर आज प्रायः संसारभरके मनुष्योंका प्रधान भोजन गोमांस और रोटी हो गया है। गोवध तथा गो-मांस-भक्षण यूरोप, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अमेरिकामें सब स्थानोंपर प्रचलित है। केवल एशियामें इसके अपवाद मिलते हैं। प्रतिदिन लाखों गायों, बछड़ों तथा बैलोंका वध किया जाता है। गाय, जो अपने दूधसे मनुष्यको जीवन धारण करनेकी शक्ति प्रदान करती है, संसारके मनुष्योंकी दूषित क्षुधाको शान्त करनेके लिये अपना रक्त और मांस देती है! मानवजातिको अपने इस महान् पापका प्रायश्चित्त करना चाहिये! संसारके कोने-कोनेमें युद्ध तथा नर-वध होना ठीक ही है। प्रकृतिका प्रतिशोध लेना उचित है। कर्मका फल मिलना ही चाहिये!

गायकी सेवा उसके जीवनके साथ समाप्त नहीं हो जाती। उसका मृतशरीर न तो जलाया जाता है न गाड़ा जाता है। वह अपने पीछे मनुष्योंके लिये अत्यन्त उपयोगी कई वस्तुएँ छोड़ जाती है। शीघ्र ही उसके शरीरका चमड़ा कमा लिया जाता है जो औद्योगिक शालाओंमें जाकर जूते, सूटकेस तथा और भी कितने प्रकारके खोल और ढक्कन आदि व्यवसायकी सैकड़ों वस्तुओंमें परिणत हो जाता है। जूतोंकी उपयोगिताको ठीक-ठीक आँकना सहज नहीं है। ये मनुष्योंके लिये अत्यावश्यक हैं जो सब प्रकारसे पैरोंकी रक्षा करते हैं। निरर्थक समझी हुई गायकी हड्डियाँ बिल्कुल फेंक ही नहीं दी जातीं। उनको एकत्र करके किसी कारखानेमें भेज दिया जाता है। जहाँ पीसकर उनका चूरा बनाया जाता है। हड्डियोंका यह चूरा प्रतिदिन काम आनेवाली अनेक वस्तुओंको साफ करनेके काममें लाया जाता है। हड्डियोंसे कई औजार भी बनते हैं।

मानव-जीवनके लिये गाय बहुत बड़ा महत्त्व रखती है। इस भावका विकास होनेमें बहुत समय, शताब्दियाँ बीत गयी हैं। इसके परिणामस्वरूप उसकी पवित्रता एक गहरी धार्मिक भावनाके रूपमें परिणत हो गयी है तथा गाय एक देवता मानी जाने लगी है। पीछे चलकर इसका रहस्य पूर्णरूपसे प्रकाशित हो गया। गायके प्रति यह बढ़ी हुई महत्त्वबुद्धि अन्धविश्वासके रूपमें नहीं प्रकट हुई। यह एक दृढ़ धार्मिक भावनाके आधारपर बढ़ी है जिसके मूलमें यह आन्तरिक अनुभव था कि गायके जीवनमें एक दैवी-तत्त्व सन्निविष्ट है। भारतके आध्यात्मिक इतिहासमें एक ऐसा समय आया जब कि लोगोंके मनमें यह विवेकपूर्ण भाव उदय हुआ कि चार पैरवाला पशु होनेपर भी गाय पशुवर्गसे उच्चतर श्रेणीका प्राणी है। उसके जीवनमें एक रहस्य भरा है कुछ अलौकिकता है।

मनुष्यको गायसे मिलनेवाली अनेक सेवाओंके अतिरिक्त उसके आकार-प्रकार तथा उसके शान्त और सौम्य-जीवनपर नैतिक दृष्टिसे विचार करना भी आवश्यक है। किसी गायको देखकर यह कहना कि यह पशु है क्या निष्ठुरता बल्कि पशुता नहीं है? गाय सब जीवोंमें श्रेष्ठ है, और कुछ बातोंमें तो जीवश्रेणीसे भी ऊपर उठी हुई है। उसका स्थान अन्य प्राणियोंसे ऊँचा रखिये। यह मनुष्योंका उपकार करनेवाले पशुके रूपमें विचरण करती हुई उपकारकी एक चैतन्यमूर्ति है। इसकी उपेक्षा मत करिये, इसके साथ दुर्व्यवहार मत करिये, इसपर किसी प्रकारसे आघात न करिये। इसकी विशेष रखवाली कीजिये, इससे प्रेम करिये, इसकी पूजा करिये। यह ईश्वरीय कल्याणकी एक किरण है, मनुष्योंके लिये यह स्वर्गसे उतरा हुआ एक आशीर्वाद है। हिंदुओंकी महान् भावना हिंदुओंका गो-विज्ञान शताब्दियोंसे इसी पथसे होता हुआ चला आ रहा है।

भगवान् बुद्धने प्रत्येक जीवको चाहे वह तुच्छातितुच्छ हो—श्रद्धा-प्रेमसे देखनेका महान् नियम संसारको बताया था, किन्तु उनसे भी २५५० वर्ष पूर्व मानव-जगत्में दिव्य-मानवके रूपमें एक सर्वोत्कृष्ट अवतारी पुरुष प्रकट हुए थे। उन्होंने भी मनुष्य तथा अन्य जीवोंके प्रति प्रेमको डंकेकी चोटपर सब धर्मोंसे श्रेष्ठ घोषित किया। किन्तु दोनोंमें अन्तर यह था कि जीवमात्रके हृदय-सम्राट् इस अनुपम व्यक्तिने—जो श्रीकृष्णके नामसे कहे जाते हैं, यद्यपि उनके हजारों नाम हैं—गाय तथा बछड़ेको अन्य सभी पशुओंसे स्पष्टरूपसे पृथक् कर दिया। श्रीकृष्णने गाय तथा उसके बच्चेको अत्यन्त पवित्र भूमिपर खड़ा किया और सदाके लिये यह विधान कर दिया कि गायसे प्रेम करना, उसपर श्रद्धा रखना तथा उसकी पूजा करना अनिवार्य है, क्योंकि गाय एक देवता है जो पशुके रूपमें पृथ्वीपर विचरती है।

श्रीकृष्णके द्वारा घोषित प्रेमके इस नियमका पालन अटूट श्रद्धा-भक्तिके साथ लाखों-करोड़ों मनुष्योंद्वारा हुआ, हो रहा है और सदा होता रहेगा। ऐसा क्यों हुआ? कारण यह है कि उस अद्भुत अवतारी पुरुषने कर्तव्यकी घोषणाके साथ-साथ गौकी महिमाका भी उद्घाटन किया। उन्होंने गायके ऊपरसे पशुत्वका परदा हटा दिया, जिससे मनुष्यकी माके रूपमें गौका रहस्यमय स्वरूप अपने दिव्य प्रकाशसे प्रस्फुटित हो गया। जिन नेत्रोंसे गायका वह वास्तविक रूप देखा जा सकता था, मनुष्यके उन नेत्रोंपर अन्धकारका जाला पड़ा हुआ था। श्रीकृष्णने उस जालेको काटकर अलग कर दिया, तब मनुष्यको गायके प्रकाशमान रूपके दर्शन हुए। गाय अपने दिव्यस्वरूपके प्रकाशसे सर्वदा आलोकित थी। उसके इस स्वरूपपर एक परदा पड़ा हुआ था। श्रीकृष्णने गायके उस आध्यात्मिक स्वरूपको प्रत्यक्ष करानेका कार्य किया।

स्वर्गके अधिपति देवराज इन्द्रके साथ श्रीकृष्णका जो संघर्ष हुआ था, उस समयकी बात है। मथुराके पार्श्ववर्ती वृन्दावनके वनप्रदेशमें प्रतिवर्ष इन्द्रके सम्मानार्थ बड़ी धूम-धामसे उत्सव मनाया जाता था। श्रीकृष्णने इस प्राचीन धार्मिक प्रथाके विरुद्ध अपनी आवाज़ ऊँची की। उन्होंने अपने पिता नन्दजीको, जो उस ग्रामीण प्रदेशके अधिपति तथा वृन्दावनके प्रधान व्यक्ति थे, अनुमति दी कि इन्द्रकी पूजाके लिये नहीं वरं गायकी पूजाके लिये, जो वन-पर्वतोंकी अधिष्ठात्री देवी है, तथा ब्रह्मज्ञानसे युक्त ब्राह्मणोंकी पूजाके लिये, बड़े परिमाणमें तैयारी होनी चाहिये। इन्द्र श्रीकृष्णकी इस विरोधमय चुनौती तथा उनके अनुयायियोंके इस धर्मविरोधी कार्यपर बड़े क्रुद्ध हुए और उनमें प्रतिशोधकी भावना जाग्रत् हुई। उन्होंने बहुसंख्यक मेघोंको आज्ञा दी कि वृन्दावनके ऊपर काली भयंकर घटा बनकर छा जाओ, कड़को, गरजो, बिजली चमकाओ, प्रचण्ड पवनद्वारा उड़ायी हुई पानीकी तीक्ष्ण बौछार फेंको तथा भीषण उत्पात मचाकर श्रीकृष्णके वृन्दावनको मनुष्य तथा पशुओंके सहित नष्ट कर दो। श्रीकृष्णने दया और रक्षासे पूर्ण अपने प्रबल संकल्पसे विनाशकारी दैवी शक्तियोंका विरोध किया तथा इन्द्रके प्रतिहिंसात्मक क्रोधको व्यर्थ करके वृन्दावनकी रक्षा की। लोगोंने देखा कि श्रीकृष्णने अपने एक हाथसे गोवर्धन पर्वतको उठाकर एक विशाल अभेद्य छाता बना लिया और उसके द्वारा पूरे सप्ताहभर भयानक तूफानोंको उसके निकट नहीं आने दिया।

श्रीकृष्णके विषयमें इन्द्र बड़ी भूलमें थे। अन्तमें उनके ज्ञाननेत्र खुल गये। उन्होंने अपने स्वामी तथा सारी सृष्टिके स्वामी श्रीकृष्णको पहचान लिया। वे अपनी सारी शक्तियोंके साथ उनकी शरणमें गये और श्रीकृष्णके अन्यतम नाम 'गोविन्द'को उस दिन नये अर्थमें प्रसिद्ध किया। उस अर्थमें कुछ सम्मानयुक्त विनोदकी भी भावना थी। वह यह थी कि अबसे श्रीकृष्ण गायको इन्द्रसे

भी अधिक सम्मानके योग्य समझेंगे ।* इस प्रकार भगवान्‌ने गायकी पूजा चलायी तथा उसकी महान् पवित्रताकी मान्यताको नैतिक और धार्मिक सिद्धान्तोंका रूप दिया। साथ ही गो-पूजाको भारतीय धर्मका एक व्यावहारिक अङ्ग बना दिया।

श्रीकृष्णके समयसे बहुत पहले ही भारतके मानसिक क्षेत्रमें गायकी बहुमूल्यता और पवित्रताकी भावना धुँधले रूपमें चक्कर काट रही थी । श्रीकृष्णने उन विचारोंको स्पष्ट करके लोगोंको पूर्णरूपसे दर्शन कराया और उन्हें दार्शनिक तथा आध्यात्मिक आधारपर स्थापित किया । उनके समयसे गाय-की पवित्रता और दैवीपनकी भावना उत्तरोत्तर बिना किसी रुकावटके गहरी होती गयी। इस बातके पुष्ट प्रमाण हैं कि भारतीय-धर्मके आन्तरप्रदेशमें गायके प्रति आध्यात्मिक भावना अधिक गहराईसे प्रवेश करती गयी । यह प्रक्रिया शताब्दियोंतक चलती रही। इस बीचमें सामान्य भारतीय जनताके विचार और भावनाएँ गायोंकी दिव्यतासे प्रभावित हो गयीं । ऐसी दशामें स्वाभाविक ही गौके स्वरूपका निर्देश करनेके लिये विविध प्रतीकोंका विस्तृत क्षेत्रमें निर्बाध प्रयोग होने लगा । यह सत्यकी अतीन्द्रिय अनुभूति एवं साक्षात्कारका परिणाम था ।

संस्कृतका 'गो' शब्द बड़े महत्त्वका है । उसका कई अर्थोंमें प्रयोग होता है। पृथ्वीके लिये भी 'गो' शब्द आया है। अतः गाय और पृथ्वीकी एकता सिद्ध होती है। पृथ्वी-की भाँति गाय भी सब प्राणियोंकी माता है। मनुष्योंकी उपकारिका ग्रीसकी 'डिमिटर' देवी और यह एक ही हैं । गौ अपनी कृपापूर्ण देनकी दृष्टिसे स्वर्गीय ही नहीं है, वरं साक्षात् स्वर्ग ही उसके रूपमें उतर आया है । इसका दूध अमृत है, देवताओंको अमर बना देनेवाला पेय है । यह सूर्यकी प्रभा, सूर्यकी नारीरूपा है। सूर्य गरमी देता है और गाय शारीरिक शक्ति बनाये रखनेके लिये प्राणपोषक पेय भोजन प्रदान करती है। इस प्रकार 'गो' के अर्थ हैं सूर्य, प्रकाश तथा जल। यदि गाय दूधमें रहनेवाले प्राणपोषक तत्त्व न दे तो इन्द्रिय-ज्ञानका कहीं पता न रहे । अतः 'गौ' इन्द्रिय-शक्ति है और इसीलिये 'गौ' वाणी है । यह केवल वाणी ही नहीं है, अपितु विद्युत्-शक्तिसे ओतप्रोत एवं विश्वके उत्पादन-में समर्थ विराट् शब्द-शक्तिका भी अक्षय स्रोत है। दूसरे शब्दोंमें 'गौ' वेदोंकी आत्मा और विश्वका मूलकारण गायत्री है ।

इस प्रकार गौके वाच्यस्वरूपका उत्तरोत्तर विकास होता गया जबतक कि वह चरम सीमापर नहीं पहुँच गया । स्वयं पुरुषोत्तम भगवान् 'गोपाल' नामसे विख्यात ही नहीं, अपितु चिन्मय गोप-बालकका रूप धारण करके पृथ्वीपर अवतीर्ण हुए तथा उन्होंने अपने दिव्य नामके साथ प्रेम, भक्ति एवं वात्सल्यकी सहस्रों भावनाएँ संयोजित कर दीं। 'गोपाल' नाममें कितना गूढ़ रहस्य भरा है । भगवान् गोपाल हैं। वे गौकी रक्षा करते हैं; क्योंकि वह मानवजीवनका आधार है । वे सूर्यकी रक्षा करते हैं जिससे जगत्‌की उत्पत्ति हुई और जहाँसे जगत्‌को जीवन मिलता है । उन्होंने आनन्दमय स्वर्ग-की सृष्टि की है । वे इन्द्रियोंका सृजन करके उनमें चेतना भरते हैं और इस प्रकार उन्हें अपने व्यापारमें लगाये रखते हैं । उन्होंने गायत्री-मन्त्र तथा गायत्रीकी उत्पादिका शक्ति-का निर्माण किया है, जिस गायत्रीसे वेद निकले हैं। वे पृथ्वीके स्वामी एवं रक्षक हैं । गोपाल होनेके नाते वे यह सब कुछ हैं। गौकी रक्षा करनेमें वे सम्पूर्ण विश्वका तथा पृथ्वी एवं स्वर्गके स्थूल एवं सूक्ष्म जगत्‌के समस्त जीवोंका पालन, पोषण एवं धारण करते हैं। गौ सर्वत्र हैं । गौ विश्वात्माका मूर्तिमान् रूप है ।

भगवान् जहाँ लीला-पुरुषोत्तमके रूपमें अपनी सौन्दर्य एवं प्रेममयी लीलाएँ करते हैं उस दिव्य चिन्मय लोकमें गौके इस दिव्य आदर्शके व्यष्टि रूप प्रकट रहते हैं। उस सर्वोच्च लोकमें भी वे गोपाल-रूपमें ही रहते हैं । उनके सखा एवं सहचर, जो उनके संकल्पों एवं भावोंके ही व्यष्टि रूप हैं, सब-के-सब गोपबालक ग्वालोंके ही लड़के हैं। उनकी हृदय-वल्लभाएँ तथा मनोमोहक प्रेयसियाँ, जो उनके मधुरातिमधुर मनोभावोंकी ही छायामूर्तियाँ हैं, उन्हीं ग्वालोंकी बहन-बेटियाँ हैं । वे गोप-बालाएँ गोपी कहलाती हैं, वे ही घोष-वासिनी व्रजाङ्गनाएँ हैं । शाश्वत प्रेम एवं सख्यका मूर्तिमान् रूप भी एक गोप-बालक ही है जो दिव्यातिदिव्य तेजसे बना है। वह लीलापुरुषोत्तम सबेरेसे सन्ध्यातक अपनी जादूभरी वंशीमें प्रेम और माधुर्यसे ओतप्रोत अनेकों मधुर तानें छेड़ता रहता है तथा आनन्दमें भरकर अपने सखाओंके साथ, जो सब-के-सब आनन्दकी ही प्रतिमाएँ हैं, गाय-बछड़ोंके झुंडको लिये हुए तथा बड़े प्यारसे उन्हें चराता हुआ इस कुञ्जसे उस कुञ्जमें—इस वनसे उस वनमें विचरता रहता है।

* गाः पशून् वा इन्द्रत्वेन विन्दतीति गोविन्दः।
(श्रीमद्भागवत १० । २७ । २३ पर टीका)

गायें तथा उनके बछड़े सब-के-सब अपने इस रूपमें जीवन और प्रकाशकी किरणें हैं। 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की वे किरणें हैं जिनकी सुदूरवर्ती छायामात्रसे संसारके समस्त प्राणी बने हैं। ग्वाल-बाल विश्वके अन्तर्गत जीवन, प्रकाश, सौन्दर्य तथा शीलके अधिष्ठातृ देवता हैं। परम पुरुष परमात्माकी नित्यलीलाका रूप ऐसा है कि वह विश्वमें होनेवाली तात्त्विक लीलाका एक महान् उज्ज्वल तथा सुन्दर आदर्श होता है। प्रत्येक जीव एक गोपी है जो गौओंकी रक्षा एवं उनपर शासन करती है और गायें पुष्ट शक्तियोंसे जीवनकी रक्षा करनेवाली श्रेष्ठ तथा पवित्रतम शक्तियोंकी किरणें हैं। वास्तवमें यह सत्यकी एक झलक है कि वे भगवान् ही गोपाल हैं तथा उनके आनन्दमय जीवन एवं उनके लीला-जीवनका मुख्य सम्बन्ध गौसे है। इसीलिये वे परमेश्वर गो-गोप-गोपियोंसे घिरे हुए चित्रित किये गये हैं। (गोपगोपीगवावीतं सुरद्रुमतलाश्रितम्)

यह गौकी महिमा है।

गोमेधका सच्चा अर्थ

[श्रीमान् पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर]

वैदिक यज्ञोंमें 'पशु'वाचक शब्द आते हैं, अतः वेदकी वर्णनशैलीसे अनभिज्ञ लोग उससे उक्त पशुका मांस ही समझते हैं। किन्तु यह उनका भ्रम है, क्योंकि—

पुष्टिं पशूनां परिजग्रभाहं चतुष्पदां द्विपदां यच्च धान्यम्।
पयः पशूनां रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नि यच्छात्॥

(अथर्ववेद १९। ३१। ५)

'मैं पशुओंसे पुष्टि लेता हूँ, द्विपाद और चतुष्पादोंसे भी पुष्टि तथा धान्य लेता हूँ। पशुओंसे दूध तथा ओषधियोंसे रस बृहस्पति सवितादेवने मुझे दिया है।' अतः इस मन्त्रके अनुसार पशु-शरीरके रक्त, मांस, हड्डी, चर्बी, दूध आदि पदार्थोंमेंसे 'पशूनां पयः'—केवल पशुओंका ही दूध लेना चाहिये। और मन्त्र देखिये—

(१) **आ हरामि गवां क्षीरमाहार्षं धान्यं रसम्॥**

(अथर्व० २। २६। ५)

(२) **सं सिञ्चामि गवां क्षीरं समाज्येन बलं रसम्॥**

(अथर्व० २। २६। ४)

(३) **इह पुष्टिरिह रसः॥** (अथर्व० ३। २८। ४)

अर्थात्—(१) मैं गौओंसे दूध लेता हूँ, भूमिसे धान्य तथा ओषधियोंसे रस लेता हूँ।

(२) मैं गौओंके दूधसे सिञ्चन करता हूँ तथा घीसे बलवर्द्धक रस लेता हूँ।

(३) यहाँ गौके भीतर पुष्टि और रस है।

वेदोंका यह वास्तविक आशय ध्यानमें रखकर ही मन्त्रोंका अर्थ लगाना चाहिये अन्यथा अर्थका अनर्थ हो सकता है। इस वास्तविक अर्थके विपरीत जो पशुओंके अङ्गोंका हवन करते हैं, उनको वेदने 'मूर्ख' कहा है। यथा—

'मुग्धा देवा उत शुना यजन्तोत गोरङ्गैः पुरुधायजन्त।'

(अथर्व० ७। ५। ५)

अर्थात्—'मूढ़ याजक ही (यहाँ देव शब्द याजकोंका वाचक है) कुत्तेके अङ्गोंसे तथा गौके अङ्गोंसे अनेक प्रकारके यज्ञ करते हैं।'

विचार करनेकी बात है कि गौका वैदिक नाम 'अघ्न्या' (अवध्य) तथा यज्ञका नाम 'अध्वर' (अहिंसामय कर्म) है, तथा इस मन्त्रमें भी मांस हवन करनेवाले याजकोंको 'मुग्ध देव' अर्थात् प्रमादी अथवा मूढ़ याजक कहा है तो गोमेधमें गोहिंसा और गोमांसका हवन किस प्रकार हो सकता है? शास्त्रविहित वैदिक यज्ञोंमें गोमांसका प्रयोग नहीं होता था, इसके अनेकों प्रमाण चारों वेदोंके संहिता-मन्त्रोंमें हैं। स्थानाभावके कारण उन सबका विचार तो यहाँ नहीं हो सकता, हाँ, अथर्ववेदमें गोमेधविषयक दो सूक्त हैं, जिनका अर्थ मांस पक्षवाले गो-मांस-भक्षणके पोषक रूपमें करते हैं, उन्हींका थोड़ा-सा विवरण इस लेखमें दिया जा रहा है।

अथर्ववेदान्तर्गत 'गोमेध' का प्रथम सूक्त

उक्त वेदके दसवें काण्डमें नवें तथा दसवें सूक्त गोमेधविषयक हैं, उनमेंसे पहले नवें सूक्तके मन्त्र अर्थसहित नीचे दिये जा रहे हैं—

अघायतामपि नह्या मुखानि सपत्नेषु वज्रमर्पयैतम् ।
इन्द्रेण दत्ता प्रथमा शतौदना भ्रातृव्यघ्नी यजमानस्य गातुः १

पाप करनेवालोंके मुख बंद करके शत्रुओंपर यह शस्त्र चलाओ । यजमानको यश देनेवाली तथा शत्रुका नाश करनेवाली पहली शतौदना* गौ इन्द्रने दी है ।

वेदिष्टे चर्म भवतु बर्हिर्लोमानि यानि ते ।
एषा त्वा रशनाग्रभीद् ग्रावा त्वैषोऽधि नृत्यतु ॥२॥

हे गौ ! तेरा चर्म वेदी बने, जो लोम हैं वे बर्हिदर्भके स्थानपर हों । यह रस्सी तुझे अच्छी रीतिसे धारण करे और यह यज्ञका ग्रावा तेरे ऊपर नाचता रहे ।

बालास्ते प्रोक्षणीः सन्तु जिह्वा सं माष्ट्‌र्वघ्न्ये ।
शुद्धा त्वं यज्ञिया भूत्वा दिवं प्रेहि शतौदने ॥ ३ ॥

तेरे बाल पवित्र जलके स्थानपर समझे जायँ । हे वध करनेके अयोग्य गौ ! तेरी जीभ तुझे स्वच्छ करे । हे शतौदने ! तू शुद्ध और यज्ञिय होकर स्वर्गको जा ।

यः शतौदनां पचति कामप्रेण स कल्पते ।
प्रीता ह्यस्यर्त्विजः सर्वे यन्ति यथायथम् ॥ ४ ॥

जो शतौदनाको पाल-पोसकर पुष्ट करता है, उसकी इच्छा पूर्ण होती है । उसके सभी ऋत्विज संतुष्ट होकर जहाँ इच्छा होती है, वहाँ जाते हैं ।

स स्वर्गमा रोहति यत्रादस्त्रिदिवं दिवः ।
अपूपनाभिं कृत्वा यो ददाति शतौदनाम् ॥ ५ ॥

जो मीठे पुए बनाकर उनके सहित शतौदनाका दान करता है, वह दिव्य लोकमें जाता है, जहाँ तीसरा स्वर्ग है ।

स ताँल्लोकान्त्समाप्नोति ये दिव्या ये च पार्थिवाः ।
हिरण्यज्योतिषं कृत्वा यो ददाति शतौदनाम् ॥ ६ ॥

जो सोनेके चमकदार आभूषण पहनाकर शतौदना गौका दान करता है, वह यहाँपर श्रेष्ठ स्थान और अन्तमें दिव्यलोकको प्राप्त करता है ।

ये ते देवि शमितारः पक्तारो ये च ते जनाः ।
ते त्वा सर्वे गोप्स्यन्ति मैभ्यो भैषीः शतौदने ॥ ७ ॥

हे देवि ! हे गौ !! जो लोग तुझे पुष्ट करनेवाले एवं शान्ति पहुँचानेवाले हैं, वे सब तेरी रक्षा करेंगे । हे शतौदने ! तू इनसे भय मत कर [क्योंकि इनसे तुझे कोई कष्ट नहीं मिलेगा] ।

वसवस्त्वा दक्षिणत उत्तरान्मरुतस्त्वा ।
आदित्याः पश्चाद्गोप्स्यन्ति साग्निष्टोममति द्रव ॥ ८ ॥

दक्षिणकी ओरसे वसु, उत्तर दिशासे उनचास मरुत्‌देव तथा पीछेसे बारह आदित्यदेव तेरी रक्षा करेंगे । तू अग्निष्टोम नामक यज्ञसे भी आगे बढ़ ।

देवाः पितरो मनुष्या गन्धर्वाप्सरसश्च ये ।
ते त्वा सर्वे गोप्स्यन्ति सातिरात्रमति द्रव ॥ ९ ॥

देव, पितर, मनुष्य, गन्धर्व, अप्सराएँ—ये सब तेरी रक्षा करेंगे । इस प्रकार रक्षित होनेवाली तू अतिरात्र नामक यज्ञसे भी आगे बढ़ जा ।

अन्तरिक्षं दिवं भूमिमादित्यान्मरुतो दिशः ।
लोकान्त्स सर्वानाप्नोति यो ददाति शतौदनाम् ॥१०॥

जो शतौदना गौका दान करता है, वह उन सब लोकोंको प्राप्त करता है, जो अन्तरिक्ष, द्यु, भूमि, आदित्य, मरुत् तथा दिशाओंमें हैं ।

घृतं प्रोक्षन्ती सुभगा देवी देवान् गमिष्यति ।
पक्तारमघ्न्ये मा हिंसीर्दिवं प्रेहि शतौदने ॥११॥

घी देती हुई सौभाग्ययुक्त गौ देवी-देवताओंके समीप पहुँचती है । हे अवध्य माता ! अपने पुष्ट करनेवालेकी हिंसा मत कर और हे शतौदने ! स्वर्गको जा ।

ये देवा दिविषदो अन्तरिक्षसदश्च ये चेमे भूम्यामधि ।
तेभ्यस्त्वं धुक्ष्व सर्वदा क्षीरं सर्पिरथो मधु ॥१२॥

जो देव द्युलोक, अन्तरिक्ष और भूमिपर हैं, उन सबके लिये तू दूध, घी और मधु दे ।

यत्ते शिरो यत्ते मुखं यौ कर्णौ ये च ते हनू ।
आमिक्षां दुह्रतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु ॥ १३ ॥
यौ त ओष्ठौ ये नासिके ये शृङ्गे ये च तेऽक्षिणी ॥आमिक्षां० १४॥
यत्ते क्लोमा यद्धृदयं पुरीतत् सहकण्ठिका ॥आमिक्षां० १५॥
यत्ते यकृद्ये मतस्ने यदान्त्रं याश्च ते गुदाः ॥आमिक्षां० १६॥
यस्ते प्लाशिर्यो वनिष्ठुर्यौ कुक्षी यच्च चर्म ते ॥आमिक्षां० १७॥
यत्ते मज्जा यदस्थि यन्मांसं यच्च लोहितम् ॥आमिक्षां० १८॥
यौ ते बाहू ये दोषणी यावंसौ या च ते ककुत् ॥आमिक्षां० १९॥
यास्ते ग्रीवा ये स्कन्धा याः पृष्टीर्याश्च पर्शवः ॥आमिक्षां० २०॥
यौ त ऊरू अष्ठीवन्तौ ये श्रोणी या च ते भसत् ॥आमिक्षां० २१॥

---

* सौ मनुष्योंके भोजनके लिये पर्याप्त दूध देनेवाली गौको 'शतौदना' गौ कहते हैं ।

यत्ते पुच्छं ये ते बाला यदूधो ये च ते स्तनाः ॥आमिक्षां० २२॥
यास्ते जङ्घाः याः कुष्ठिका ऋच्छरा ये च ते शफाः॥आमिक्षां० २३॥
यत्ते चर्म शतौदने यानि लोमान्यघ्न्ये ॥आमिक्षां० २४॥

हे अवघ्य शतौदने ! जो तेरा दान करे उस यजमानको तेरे शरीरके समस्त अवयव—सिर, मुख, कान, ठोड़ी, ओठ, नाक, सींग, आँख, हृदय, पेट, पुरीतत् नाड़ी, गला, यकृत्, प्लीहा, आँतें, गुदा, बगलें, चर्म, मज्जा, हड्डियाँ, मांस, रक्त, बाहु, कंधा, कूबड़, गर्दन, पीठ, पसलियाँ, जाँघें, घुटने, पुट्ठे, चूतड़, पूँछ, बाल, ऊधस, स्तन, पिंडलियाँ, खुर आदि अङ्ग; दूध, घी, दही तथा मधु आदि पदार्थ देते रहें।

क्रोडौ ते स्तां पुरोडाशावाज्येनाभिघारितौ।
तौ पक्षौ देवि कृत्वा सा पक्तारं दिवं वह ॥२५॥

हे गौ देवी ! तेरे घीसे सिञ्चित दो पुरोडाश मध्यमें हों। जो तुझे पुष्ट करनेवाला हो, उसके उन्हीं दोनों पुरोडाशोंके दो पङ्ख लगाकर उसे स्वर्गको उठा ले जा।

उलूखले मुसले यश्च चर्मणि
यो वा शूर्पे तण्डुलः कणः।
यं वा वातो मातरिश्वा पवमानो
ममाथाग्निष्टद्धोता सुहुतं कृणोतु ॥२६॥

ऊखल, मूसल, चमड़ा, सूप—इनमें जो चावल या कणोंका समुदाय हो, जिसकी शुद्धता वायुने की हो, ऐसे अन्नको होता और अग्नि हवनके द्वारा पवित्र बनाये।

अपो देवीर्मधुमतीर्घृतश्चुतो
ब्रह्मणां हस्तेषु प्रपृथक्सादयामि।
यत्काम इदमभिषिञ्चामि वोऽहं तन्मे
सर्वं सं पद्यतां वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥२७॥

मैं यह दिव्य जल ब्राह्मणोंके हाथोंमें पृथक्-पृथक् छोड़ता हूँ। जिस इच्छासे मैं तुम्हें सिञ्चन करता हूँ, मेरी वह कामना पूर्ण हो और हम सब धनोंके स्वामी बनें।

उपर्युक्त सूक्तकी प्रथम ऋचामें ही गोदानका उल्लेख है—'इन्द्रेण दत्ता प्रथमा शतौदना' अर्थात् पहली शतौदना गौ इन्द्रने दी। आगे मन्त्र-संख्या ५। ६। १० में 'यो ददाति शतौदनाम्' शब्दोंसे शतौदना गौके दानका स्पष्ट निर्देश है। अन्तिम ऋचामें ब्राह्मणोंके हाथोंपर पृथक्-पृथक् जल दाता छोड़ता है और इस गोदानसे अपनी मनःकामना पूर्ण होने तथा धनका स्वामी होनेकी प्रार्थना करता है। इस प्रकार इस पूरे सूक्तमें गोदानके विषयपर ही विचार किया गया है, यह स्पष्ट है। इन २७ ऋचाओंमें 'अघ्न्य' अर्थात् 'अवघ्य' शब्द गौके सम्बोधनके रूपमें तीन बार आया है। (ऋग्वेद ३। ११। २४)

इतना सब होते हुए भी 'दिवं प्रेहि शतौदने' ॥ ३ ॥ 'यः शतौदनां पचति' ॥ ४ ॥ 'पक्तारः शमितारः' ॥ ७ ॥ 'पक्तारम्' ॥११॥ आदि पदोंसे वैदिक-कालमें मांस-भक्षण-प्रथाको माननेवाले लोग यह अर्थ निकालते हैं कि गोमेधमें गौको मारकर उसके अवयवोंका हवन होता था। यह कथन कितना भ्रामक और असत्य है, इसका विचार आगे किया जायगा; पहले गोमेध-सम्बन्धी द्वितीय सूक्तका अर्थ देखिये।

गोमेध-विषयक द्वितीय सूक्त

(अथर्ववेदके दशमकाण्डका दसवाँ सूक्त)

नमस्ते जायमानायै जाताया उत ते नमः।
बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः ॥ १ ॥

हे अघ्न्ये ! जन्मते समय तुझे प्रणाम करता हूँ, उत्पन्न होनेके बाद तुझे प्रणाम करता हूँ। तेरे सम्पूर्ण अवयवों और रूपको यहाँतक कि तेरे बाल और खुरोंको भी मैं नमन करता हूँ।

यो विद्यात् सप्त प्रवतः सप्त विद्यात् परावतः।
शिरो यज्ञस्य यो विद्यात् स वशां प्रति गृह्णीयात् ॥ २ ॥

जो सात प्रवाह जानता है, जो सात अन्तरोंको जानता है तथा जो यज्ञका सिर (मुख्य भाग) जानता है, वही ज्ञानी वशा गौका दान ले।

वेदाहं सप्त प्रवतः सप्त वेद परावतः।
शिरो यज्ञस्याहं वेद सोमं चास्यां विचक्षणम् ॥ ३ ॥

मैं सात प्रवाहोंको जानता हूँ, सात अन्तरोंको जानता हूँ और यज्ञके सिरका भी मुझे ज्ञान है। इतना ही नहीं, मैं यह भी जानता हूँ कि इस गौके भीतर तेजस्विनी सोम-शक्ति रहती है।

यया द्यौर्यया पृथिवी ययाऽऽपो गुपिता इमाः।
वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि ॥ ४ ॥

जिसने अन्तरिक्ष, पृथ्वी और जलका संरक्षण किया है, उस सहस्र धाराओंसे दूध देनेवाली गौको हम प्रार्थनापूर्वक इधर बुलाते हैं।

शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः ।
ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधा ॥ ५ ॥

सौ बर्तन, सौ दूध दुहनेवाले तथा सौ गोपाल गौकी पीठपर हैं । जो देवता इस गौके भीतर जीवन धारण करते हैं, वे ही गौको अद्वितीय रीतिसे जानते हैं ।

यज्ञपदीराक्षीरा स्वधाप्राणा महीलुका ।
वशा पर्जन्यपत्नी देवाँ अप्येति ब्रह्मणा ॥ ६ ॥

वशा गौ पर्जन्यसे उत्पन्न होनेवाली घाससे पलती है । यह गौ यज्ञरूपी पैरोंसे युक्त, दुग्धरूपी अन्न देनेवाली, धारणा-शक्तिमय प्राणवाली तथा भूमिकी तेजोवृद्धि करनेवाली है । यह अपने अन्नसे देवोंके पास जाती है ।

अनु त्वाग्निः प्राविशदनु सोमो वशे त्वा ।
ऊधस्ते भद्रे पर्जन्यो विद्युतस्ते स्तना वशे ॥ ७ ॥

हे कल्याण करनेवाली वशा गौ ! तेरे भीतर अग्नि प्रविष्ट हुआ है, तेरे भीतर सोम प्रविष्ट हुआ है, पर्जन्य तेरा ऊधस् बना है और तेरे स्तनोंमें विद्युत्का प्रवेश है । अर्थात् अग्नि, सोम, पर्जन्य तथा विद्युद्—इन देवोंने तेरे शरीरमें ही आश्रय लिया है ।

अपस्त्वं धुक्षे प्रथमा उर्वरा अपरा वशे ।
तृतीयं राष्ट्रं धुक्षेऽन्नं क्षीरं वशे त्वम् ॥ ८ ॥

हे वशा गौ ! पहले तो तू दूध देती है, दूसरे खेतीका अवलम्ब बनती है और तीसरे दूध और अन्न देनेके अतिरिक्त राष्ट्रको परिपुष्ट बनाती है ।

यदादित्यैर्हूयमानोपातिष्ठ ऋतावरि ।
इन्द्रः सहस्रं पात्रान्त्सोमं त्वापाययद्वशे ॥ ९ ॥

हे सरल स्वभाववाली वशा गौ ! जब आदित्योंद्वारा बुलायी जाकर तू जाती थी, तब इन्द्र हजारों बर्तनोंसे तुझे सोमरस पिलाता था ।

यदनूचीन्द्रमैरात् त्वा ऋषभोऽह्वयत् ।
तस्मात्ते वृत्रहा पयः क्षीरं क्रुद्धोऽहरद्वशे ॥ १० ॥

हे वशे ! जब तू इन्द्रके साथ चली, तब बलवान् वृत्रासुरने तुझे बुलाया, इससे वृत्रको मारनेवाले इन्द्रने क्रुद्ध होकर तेरा अमृत-जैसा दूध लिया ।

यत्ते क्रुद्धो धनपतिरा क्षीरमहरद्वशे ।
इदं तदद्य नाकस्त्रिषु पात्रेषु रक्षति ॥ ११ ॥

हे वशे ! क्रुद्ध हुए इन्द्रने तेरा जो दूध लिया था, वही आज स्वर्गरूपसे तीन पात्रोंमें रक्षित है ।

त्रिषु पात्रेषु तं सोममा देव्यहरद्वशा ।
अथर्वा यत्र दीक्षितो बर्हिष्यास्त हिरण्यये ॥ १२ ॥

दिव्य गौ तीन पात्रोंमें रखकर उस सोमको उस यज्ञमें ले आयी, जहाँ अथर्वा दीक्षित होकर सुवर्णके आसनपर बैठा था ।

सं हि सोमेनागत समु सर्वेण पद्वता ।
वशा समुद्रमध्यष्ठाद्गन्धर्वैः कलिभिः सह ॥ १३ ॥

सोमके साथ, सभी पैरवालोंके साथ तथा युद्धप्रिय वीर गन्धर्वोंके साथ गौ समुद्रपर विजय करनेके लिये चली ।

सं हि वातेनागत समु सर्वैः पतत्रिभिः ।
वशा समुद्रे प्रानृत्यदृचः सामानि बिभ्रती ॥ १४ ॥

वायुके साथ और सब पंखवालोंके साथ होकर ऋचा और सामोंको धारण करती हुई गौ समुद्रपर नाचने लगी ।

सं हि सूर्येणागत समु सर्वेण चक्षुषा ।
वशा समुद्रमत्यख्यद्भद्रा ज्योतींषि बिभ्रती ॥ १५ ॥

सूर्यके साथ और सब आँखवालोंके साथ होकर विविध ज्योतियोंको धारण करती हुई कल्याणकारक गौ समुद्रका निरीक्षण करने लगी ।

अभीवृता हिरण्येन यदतिष्ठ ऋतावरि ।
अश्वः समुद्रो भूत्वाध्यस्कन्दद्वशे त्वा ॥ १६ ॥

हे सीधे आचरणवाली गौ ! जब तू सुवर्णके आभूषणोंसे सुभूषित होकर खड़ी हुई; तब समुद्र घोड़ा बना और उसने अपनी पीठपर तुझे चढ़ाया ।

तद्भद्राः समगच्छन्त वशा देष्ट्र्यथो स्वधा ।
अथर्वा यत्र दीक्षितो बर्हिष्यास्त हिरण्यये ॥ १७ ॥

वहाँ उस यज्ञमें कल्याण करनेवाली—१. वशा, २. देष्ट्री (आदेश करनेवाली), ३. अपनी धारकशक्ति (स्वधा) तीनों एक जगह मिलीं । वहाँ अथर्वा दीक्षित होकर सुवर्णमय आसनपर यज्ञके मध्यमें बैठा ।

वशा माता राजन्यस्य वशा माता स्वधे तव ।
वशाया यज्ञ आयुधं ततश्चित्तमजायत ॥ १८ ॥

वशा (गौ) क्षत्रियोंकी माता है, हे (स्वधे !) आत्मिक शक्तिवाले ! तेरी भी माता यह गौ है । यज्ञ मानो गौका शस्त्र है । इसीसे जनतामें चेतना हुई है ।

ऊर्ध्वो बिन्दुरुदचरद् ब्रह्मणः ककुदादधि ।
ततस्त्वं जज्ञिषे वशे ततो होताजायत ॥ १९ ॥

ब्रह्मकी उच्च शक्तिसे एक बिन्दु ऊपर चढ़ा, हे गौ! उसीसे तू उत्पन्न हो गयी। उसके पश्चात् होता अर्थात् तुझे बुलानेवाला भी उत्पन्न हुआ।

आस्नस्ते गाथा अभवन्नुष्णिहाभ्यो बलं वशे।
पाजस्याज्जज्ञे यज्ञः स्तनेभ्यो रश्मयस्तव॥ २०॥

हे गौ! तेरे मुखसे गाथाएँ उत्पन्न हुईं; तेरे गलेके स्थानसे बल हुआ, पेटके स्थानसे यज्ञ बना और तेरे स्तनोंसे किरणें बनी हैं।

ईर्माभ्यामयनं जातं सक्थिभ्यां च वशे तव।
आन्त्रेभ्यो जज्ञिरे अत्रा उदरादधि वीरुधः॥ २१॥

आगेके पैरों तथा पिछली जाँघोंसे गति उत्पन्न हुई, आँतोंसे भक्षक बने तथा उदरसे वनस्पतियाँ उत्पन्न हुईं।

यदुदरं वरुणस्यानुप्राविशथा वशे।
ततस्त्वा ब्रह्मोदह्वयत् स हि नेत्रमवेत्तव॥ २२॥

हे गौ! जब तूने वरुणके उदरमें प्रवेश किया, तब वहाँ ब्रह्माजीने तुझे बुलाया और वे ही तेरे मार्गदर्शक हो गये।

सर्वे गर्भादवेपन्त जायमानादसूस्वः।
ससूव हि तामाहुर्वशेति ब्रह्मभिः क्लृप्तः स ह्यस्या बन्धुः॥ २३॥

जो जन्म नहीं देता उससे उत्पन्न होनेवाले गर्भको देखकर सब काँपने लगे। जिसने जन्म दिया, उसे वशा कहते हैं। यह मन्त्रोंसे समर्थ हुई है और वही इसका बन्धु या सम्बन्धी है।

युध एकः सं सृजति यो अस्या एक इद्वशी।
तरांसि यज्ञा अभवन् तरसां चक्षुरभवद्वशा॥ २४॥

जो इस गौको अकेला ही वशमें रखनेवाला है, वह अकेला ही युद्ध करता है। यज्ञ वेगसे फैल गये और वेगसे फैलनेवाले यज्ञोंकी आँख (लक्ष्य) वशा गौ ही बनी है।

वशा यज्ञं प्रत्यगृह्णाद् वशा सूर्यमधारयत्।
वशायामन्तरविशदोदनो ब्रह्मणा सह॥ २५॥

गौने यज्ञको स्वीकार किया तथा गौने सूर्यको धारण किया। मन्त्रोंके साथ चावल वशा गौके भीतर प्रविष्ट हुआ।

वशामेवामृतमाहुर्वशां मृत्युमुपासते।
वशेदं सर्वमभवद् देवा मनुष्या असुराः पितर ऋषयः॥ २६॥

गौको ही अमृत कहते हैं तथा गौको मृत्यु समझकर भी उसकी उपासना करते हैं। वशा ही गौ, देव, मनुष्य, असुर, पितर, ऋषि—सब कुछ बनी है।

य एवं विद्यात्स वशां प्रति गृह्णीयात्।
तथा हि यज्ञः सर्वपाद्दुहे दात्रेऽनपस्फुरन्॥ २७॥

जो यह सब जानता हो, वही गौका दान ले। इसी प्रकार सम्पूर्ण यज्ञ अविरोधसे दाताके लिये फलीभूत होते हैं।

तिस्रो जिह्वा वरुणस्यान्तर्दीद्यत्यासनि।
तासां मध्ये या राजति सा वशा दुष्प्रतिग्रहा॥ २८॥

वरुणके मुखमें तीन दीप्त जिह्वाएँ हैं। उन तीनोंके बीचमें जो प्रकाशित होती है, वह वशा गौ ही है। इसलिये इस गौका दान लेना कठिन है।

चतुर्धा रेतो अभवद्वशायाः।
आपस्तुरीयममृतं तुरीयं यज्ञस्तुरीयं पशवस्तुरीयम्॥ २९॥

वशा गौका वीर्य चार प्रकारसे फैला है। एक भाग जल-रूपसे, दूसरा दूधरूपसे, तीसरा यज्ञरूपसे और चौथा पशुरूपसे।

वशा द्यौर्वशा पृथिवी वशा विष्णुः प्रजापतिः।
वशाया दुग्धमपिबन्त्साध्या वसवश्च ये॥ ३०॥

यह वशा गौ द्युलोक, पृथ्वी, विष्णु और प्रजापति परमात्मारूप है। साध्यदेव और वसुनामक देव भी वशा गौ-का दूध पीते हैं।

वशाया दुग्धं पीत्वा साध्या वसवश्च ये।
ते वै ब्रध्नस्य विष्टपि पयो अस्या उपासते॥ ३१॥

साध्य और वसु यहाँ गौका ही दूध पीते हैं, अतः स्वर्गमें भी उन्हें गौका दूध मिलता है।

सोममेनामेके दुह्रे घृतमेक उपासते।
य एवं विदुषे वशां ददुस्ते गतास्त्रिदिवं दिवः॥ ३२॥

कुछ लोग सोमके लिये इस गौको दुहते हैं तथा कुछ घीके लिये इसके पास जाते हैं। जो लोग उत्तम विद्वान् ब्राह्मणको गौका दान करते हैं, वे स्वर्गको जाते हैं।

ब्राह्मणेभ्यो वशां दत्त्वा सर्वांल्लोकान्त्समश्नुते।
ऋतं ह्यस्यामार्पितमपि ब्रह्माथो तपः॥ ३३॥

जो लोग ब्राह्मणोंको गौका दान करते हैं, वे सब लोकोंको प्राप्त करते हैं; क्योंकि इस वशा गौमें ऋत, ब्रह्म और तप रहते हैं।

वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवद् यावत्सूर्यो विपश्यति॥ ३४॥

वशा गौसे देवता जीवन धारण करते हैं और मनुष्य भी इसीसे जीवित हैं। गौ ही यह सम्पूर्ण जगत् बनी है। जहाँतक सूर्यका प्रकाश पहुँचता है, वहाँतक सब कुछ मानो गौ ही है।

अब विचार करके देखिये कि इन ३४ ऋचाओंमें गो-हिंसा अथवा गो-मांसके हवनका उल्लेख कहाँ है ? प्रत्युत गो-प्रदानका स्पष्ट उल्लेख ऋ० २, २७, २८, ३२, ३३ अर्थात् सूक्तमें यत्र-तत्र सर्वत्र है । गो-दानके अतिरिक्त गोदुग्ध-का निर्देश ऋ० ४, ५, ६, ७, ८, १०, ११, २९, ३०, ३१ तथा ३२ में है । ऋ० १०, ११, २९, ३०, ३१, ३२ में गो-दुग्धपानका महत्त्व वर्णन किया गया है । ऋ० १०, ११ में, वृत्रासुर-युद्धके समय क्रुद्ध हुए इन्द्रने वशा गौका दूध लिया था, ऐसा वर्णन है । अतः यह सिद्ध होता है कि जब कोई तेजपूर्ण वीरताका कार्य करना हो, परिश्रमके कारण थकावट आ गयी हो अथवा क्रोध आ गया हो तो उस समय गौका धारोष्ण दूध पीनेसे मन तथा शरीर प्रकृतिस्थ और शान्त होते हैं । ऋ० २९, ३०, ३१, ३२ के अनुसार द्युलोक पृथ्वी, विष्णु एवं प्रजापतिरूपी वशा गौका दूध वसु-साध्यादि देव यहाँ पीते हैं और स्वर्गमें भी उन्हें गो-दुग्ध मिलता है—इस वर्णनसे गो-दुग्धपानकी अत्यन्त श्रेष्ठता सिद्ध होती है । ऋ० ३२ में घीका उल्लेख है । ऋ० ६ में गो-संगोपन एवं गायका अमृतरूपी दूध बढ़ानेकी रीति बतलायी गयी है, जो आजके विद्वानोंको भी मान्य है ।

दूध बढ़ाने तथा गौको पुष्ट रखनेके लिये खली, बोन-मील (हड्डियोंका चूरा) तथा बहुत-से अन्य कृत्रिम पदार्थ आजकल खिलाते हैं । कुछ लोग अनाज या पका हुआ अन्न भी खिलाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप गायके गोबरमें दुर्गन्ध आ जाती है और दूध भी बिगड़ता है । इसीलिये हमारे यहाँ कहा है कि जो गाय 'अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वने वने' वन-वनमें ओषधिमय नयी-नयी घास बराबर चरती रहती है, उसका गोबर भी 'पवित्रं कायशोधनम्' कायाको पवित्र करनेवाला एवं रोग-शोकका नाशक होता है । जिसके गोबरमें यह शक्ति होती है, उसका दूध कितना आरोग्य और पुष्टिदायक होगा । छठी ऋचामें गायको 'पर्जन्यपत्नी' अर्थात् पर्जन्यसे पालित होनेवाली कहा है । पर्जन्यसे घास उत्पन्न होती है और झरनोंमें जल बहता है । वही निर्मल जल और घास गौको मिलना चाहिये । 'पर्जन्यपत्नी' पदका यही आशय है । किन्तु मेघोंका जल सभी स्थानोंपर गिरता है और किसी भी स्थानपर घास उग सकती है तथा जल प्राप्त हो सकता है । जो भी घास-पानी समयपर मिल जाय, उसे बिना विचार किये गौको नहीं देना चाहिये । मलिन स्थानकी घास तथा गंदे स्थानका जल गौके स्वास्थ्यके लिये हानिकर होते हैं । इसीलिये मन्त्रमें वशा गौको 'यज्ञपदी' का विशेषण दिया है, जिसका तात्पर्य यह है कि यज्ञके समान पवित्र भूमिमें, जहाँ उत्तम घास और निर्मल जल मिल सके, गौको घूमना चाहिये । यदि अशुद्ध स्थानकी घास गौ खायेगी तथा अशुद्ध जल पियेगी तो उसका दूध तथा अन्य गव्य पदार्थ रोगकारक बनेंगे, जिनके सेवनसे मनुष्योंके रोग मिटनेके स्थानपर बढ़ेंगे । गायका पालन कितनी पवित्रताके साथ करना चाहिये इसका सूक्ष्म विचार 'पर्जन्यपत्नी' तथा 'यज्ञपदी' इन दो शब्दोंमें पाठक देख सकते हैं । इनसे एक महत्त्वपूर्ण बात और भी सूचित होती है—वह यह कि गौका दूध बढ़ानेके लिये कृत्रिम उपायोंसे काम न लेकर उसे जंगलमें निर्मल तथा हरी-हरी घास खाते हुए विचरण करने दिया जाय तथा पीनेके लिये शुद्ध जल दिया जाय तो उसका अमृततुल्य दूध स्वयं ही बढ़ जायगा ।

यदि कोई यह शङ्का करे कि गोचरभूमि यज्ञभूमिके समान ही पवित्र होनी चाहिये—श्रुतिकी यह आज्ञा ठीक तो है, किन्तु चरते समय गौएँ एक ही दिनमें अपने गोबर-मूत्रसे उस पवित्र भूमिको अपवित्र कर देंगी तो नित्यप्रति नयी पवित्र गोचरभूमि कहाँसे आयेगी, तो उन्हें छठी ऋचाके 'महीलुका' शब्दपर ध्यान देना चाहिये, जिसका अर्थ है—भूमिके तेजको बढ़ाने तथा उसको पवित्र करनेवाली । आगे १९ वीं ऋचामें भी कहा गया है कि गौ तो ब्रह्मकी उच्च शक्तिके एक बिन्दुसे उत्पन्न हुई है, अतः अत्यन्त पवित्र है। वह जिस प्रदेशमें घूमेगी, उस प्रदेशकी पवित्रता उसके स्पर्शसे घटनेके बदले बढ़ जायगी । अन्य जीवोंके समान गौका मल-मूत्र अपवित्र नहीं होता, अपितु रोगहर, कृमिनाशक तथा भूमिको तेजस्वी और उर्वरा बनानेवाला होता है ।

छठी ऋचामें 'इराक्षीरा' पद मांसपक्षका खण्डन करनेमें बड़े महत्त्वका है । 'इराक्षीरा' का अर्थ है दुग्धरूपी अन्न देनेवाली। जो यह मानते हैं कि वैदिक ऋषि गोमांसभक्षक थे, उन्हें इस शब्दका यथार्थ मनन करना चाहिये । यदि हमारे वैदिक पूर्वज गोमांसभोजी होते अथवा वेदोंको गोमांसभोजन अभीष्ट होता तो चारों वेदोंकी संहिताओंमें गौके लिये इरामांसा अर्थात् मांसरूप अन्न देनेवाली अथवा तदर्थक कोई अन्य शब्द अवश्य आता; किन्तु ऐसा एक भी शब्द नहीं आया, जिससे यह सिद्ध हो सके कि वैदिक आर्य गोमांसभोजी थे ।

'इराक्षीरा' वशासे प्राप्त होनेवाले पाँच गव्य पदार्थ—दूध, दही, घृत, गोमय तथा गोमूत्र मनुष्यका अस्थिगत पाप अर्थात् रोग नष्ट करके उसकी प्राणशक्ति एवं धारणाशक्ति बढ़ाते हैं। यह बात 'स्वधा-प्राणा' से दर्शित होती है, जिसका अर्थ है—प्राणियोंके भीतर रहनेवाली धारणा-शक्तिसे युक्त प्राणवाली। मनुष्य-देहके रोग-कीटाणुओंको नष्ट करनेके लिये गोमय तथा गोमूत्र अत्यन्त उपयुक्त हैं और इस प्रकार रोगहीन किन्तु दुर्बल शरीरकी स्वधाशक्ति और प्राणशक्ति बढ़ानेका कार्य गोदुग्ध और गोघृत करते हैं। 'सद्यः शुक्रकरं पयः' तथा 'आयुर्वै घृतम्' आयुर्वेदके ये वचन सुप्रसिद्ध हैं, जिनका अर्थ है—दूध तत्काल वीर्य बनानेवाला होता है और घी ही आयु है। छान्दोग्योपनिषद्में तो घृतको अस्थि, मज्जा तथा वाक् उत्पन्न करनेवाला तेज कहा है (६।५।३)। घी दूधसे प्राप्त होता है, यह सबको विदित है। अतः यह मानना पड़ेगा कि गो-दुग्धमें मनुष्यकी प्राणशक्ति एवं धारणाशक्तिका वास है, ऐसा समझकर गौका पालन-पोषण एवं उसकी रक्षा भलीभाँति करनी चाहिये।

अब छठी ऋचाका चतुर्थ पाद 'देवान् अप्येति ब्रह्मणा' पर विचार करना है, जिसका अर्थ है—जो ब्रह्मके साथ अर्थात् मन्त्रद्वारा उपासना, पूजा या सत्कारके साथ देवोंको प्राप्त होती है। किन्तु मांस-पक्षवाले विद्वान् कहते हैं कि वेदमन्त्रोंका उच्चारण करके गोमांसकी आहुतियाँ देनेका भाव इस पदसे सिद्ध होता है। ऐसा अर्थ माननेपर जो पूर्वापर-विरोध उत्पन्न होता है, उसकी ओर ये विद्वान् ध्यान नहीं देते। इस दशम सूक्तके प्रथम मन्त्रमें ही गौको 'अघ्न्या' अर्थात् अवध्य नामसे सम्बोधित किया है। समस्त ३४ ऋचाओंमें गो-वध अथवा मांस-हवनका उल्लेख एक भी स्थानपर नहीं आया; हाँ, गोप्रदानकी महिमा, गोदुग्धपानकी महिमा एवं गोदान लेनेके अधिकारी आदि विषयोंका वर्णन आया है। इससे मांसके हवनकी कल्पना कैसे हो सकती है? इस सूक्तमें अनेक बार आया हुआ 'वशा' शब्द मांस-पक्षवालोंका एक बड़ा आधार है। ये कहते हैं कि 'वशा' का अर्थ 'वन्ध्या गौ' है; अतः मन्त्रोंमें जहाँ-जहाँ 'वशा' शब्द आया है, वहाँ-वहाँ वन्ध्या गौका वध करके उसके मांससे हवन करनेका भाव समझना चाहिये। किन्तु यह उनकी भूल है—इसके प्रमाणरूपमें आगेकी २३ वीं ऋचा देखनी चाहिये, जिसमें 'ससूव हि तामाहुर्वशेति' अर्थात् (ससूव) जो सन्तान उत्पन्न करनेयोग्य होती है (ताम्) उसको (आहुः वशा इति) वशा कहते हैं। यही 'वशा' शब्दकी व्याख्या है। यहाँ बाँझ गौ या उसके मांसकी आहुतियोंका सम्बन्ध कहाँसे आया?

२३, २४, २५—इन तीन ऋचाओंपर थोड़ा सूक्ष्म विचार किया जाय तो विदित होगा कि गौकी उत्तम सन्तान पैदा करना भी 'गोमेध' का एक भाग है। जो 'असूसु' अर्थात् न ब्यानेवाला है, वह इस वशाका भाई अथवा सम्बन्धी अर्थात् बैल है। वह इतना परिपुष्ट तथा बलवीर्य-सम्पन्न होता है कि उससे उत्पन्न होनेवाले गर्भको देखकर सब काँपने लगते हैं। वह अकेला ही युद्ध करता है और अकेला ही इस गौको वशमें रखता है। ऐसे सुयोग्य बैलका वशा गौसे सम्मेलन कराना एक प्रकारका यज्ञ ही है। इस यज्ञसे उत्तम गो-वंश उत्पन्न हो सकता है; साथ ही घी, दूध आदि पदार्थोंकी भी प्रचुरता होती है। जब पहले-पहल ये यज्ञ आरम्भ हुए, तब (तरांसि अभवन्) बड़े वेगसे फैले, क्योंकि इन यज्ञोंसे जनताका प्रत्यक्ष लाभ होता था। धीरे-धीरे आगे चलकर (तरसां चक्षुः वशा अभवत्) वेगसे फैलनेवाले इन यज्ञोंकी आँख वशा ही बन गयी अर्थात् इन यज्ञोंका एकमात्र उद्देश्य उत्तम-से-उत्तम गौ उत्पन्न करना हो गया।

सप्त प्रवाह, सात प्रकारके अन्तर—यज्ञका सिर, वरुणकी जिह्वा, वशा गौकी राष्ट्र-रक्षण-क्षमता आदि रहस्यमय अनेक महत्त्वपूर्ण विषय इस सूक्तमें हैं। किन्तु इन सब विषयोंका विवेचन इस लेखकी सीमाके बाहर होगा, इस लेखका तो एकमात्र उद्देश्य यह निर्णय करना है कि गोमेध-यज्ञमें गोहिंसा अथवा गोमांसका हवन होता था या नहीं। सब संहिताओंमें गोमेध-विषयक केवल ये ही दो सूक्त हैं। इन दोनों सूक्तोंको अर्थसहित ऊपर देकर यह समझाया जा चुका है कि इनमें गोदान, गोदान लेनेका अधिकारी, गौका राष्ट्रीय महत्त्व, गोदुग्ध-सेवनकी अत्यधिक उपयोगिता, गोपालन तथा गोदानका फल आदि विषयोंका वर्णन है। अतः 'पचति' 'पक्तारः' 'शमितारः' आदि शङ्कास्पद तथा अनेकार्थक शब्दोंका अर्थ प्रकरणके अनुकूल ही लगाना चाहिये।

'पक्तारः' 'पक्तारं' 'पचति'—इन सबमें 'पच्' धातु है, कोषमें जिसके अर्थ हैं—(१) पकाना, (२) सेंकना या भूँजना, (३) पचना-पचाना, (४) पकना या पकाना, (५) (to bring to perfection) परिपूर्ण बनाना, (६) पिघलना या पिघलाना। इनमेंसे 'परिपूर्ण बनाना'—इस

अर्थसे ही पूर्वापर-प्रसङ्गकी संगति ठीक बैठती है। ध्यान देनेकी बात है कि चौथी ऋचामें जो 'यः शतौदनां पचति' वाक्य है, उसका अर्थ 'जो शतौदनाको परिपूर्ण बनाता है।' (उसके मनोरथ पूर्ण होते हैं तथा वह स्वर्गको जाता है)—यह ठीक होगा या 'जो शतौदनाको (मारकर उसका मांस) पकाता है (उसके मनोरथ पूर्ण होते हैं और वह स्वर्गको जाता है)' यह अर्थ प्रकरणके अनुकूल होगा। इसी प्रकार नवें सूक्तकी सातवीं ऋचा 'शतौदने देवि ये ते पक्तारः च शमितारः ते सर्वे जनाः त्वा गोप्स्यन्ति एभ्यो मा भैषीः' का यह अर्थ 'हे शतौदने! जो लोग तुमको परिपूर्ण बनाते हैं, तुमको शान्ति देते हैं (शमितारः में 'शम्' धातु है जिसके 'शान्त करना', 'वध करना', 'देखना,' 'बुझाना', 'प्रकट करना' आदि अनेक अर्थ हैं) वे सब तेरी रक्षा करते हैं; तू उनसे मत डर।' न्यायसङ्गत होगा अथवा 'हे शतौदने! जो तेरा वध करके तेरा मांस पकाते हैं, वे तेरी रक्षा करते हैं, तू उनसे न डर'—यह अर्थ ठीक होगा? यदि गौको काटकर उसका मांस पकानेवाले गोरक्षक कहलायेंगे तो फिर गोघातक किसे कहेंगे? वेदमन्त्रोंके ऐसे ऊटपटाङ्ग अर्थ करनेवाले विद्वानोंकी विद्वत्ताको क्या कहा जाय!

इस पूर्वापर-विषयको ध्यानमें रखकर ही नवें सूक्तकी तीसरी ऋचामें 'दिवं प्रेहि शतौदने' का ध्वनितार्थ ही लेना होगा कि 'हे शतौदने! तू स्वर्गको जा।' यदि इसका वाच्यार्थ लेकर गौको काटकर स्वर्गमें भेजनेकी कल्पना करेंगे तो वह युक्तियुक्त और सन्दर्भानुकूल न होगा। थोड़ी देरके लिये यदि गौको काटकर स्वर्गमें चढ़ाना—यही अर्थ मान लें तो आगेकी पाँचवीं ऋचामें 'स स्वर्गमारोहति······यो ददाति शतौदनाम्' का अर्थ 'जो शतौदना गौका दान करता है वह स्वर्गपर चढ़ता है' न मानकर शतौदनाका दान करनेवाले दाताको मारकर स्वर्गपर चढ़ा देनेकी कल्पना करनी पड़ेगी। तब तो खूब सङ्गति बैठेगी, गौ और दाता दोनोंकी समान गति हो जायगी। इन दो अर्थोंमें कौन युक्तिसंगत है, इसका विचार पाठकोंपर ही छोड़ा जाता है।

'मेधृ मेधाहिंसनयोः संगमे च' यह पाणिनिका धातु-सूत्र है और कोषमें भी 'मेध्' धातुके जानना, निन्दा करना, परस्पर मिलना, वध करना—इतने अर्थ दिये हैं। गोमेधके समान ही पितृमेध तथा गृहमेध आदि यज्ञ भी प्रसिद्ध हैं, किन्तु पितृमेधमें अपने मा-बापको मारकर हवन करने अथवा गृहमेधमें यजमानके घरको तोड़-फोड़कर उसकी लकड़ियों या अन्य वस्तुओंसे हवन करनेका विधान कहीं भी नहीं मिलता। इसपर भी यदि कोई विद्वान् इसी विधानके पक्षमें हो और किसीसे ऐसा यज्ञ करनेको कहे तो उसके हाथ-पैर बचे रहेंगे या नहीं—इसमें सन्देह है।

इस प्रकार इन दोनों सूक्तोंके देखनेसे गोमेधमें गोवधका समर्थन नहीं होता। गौको खूब खिला-पिलाकर शतौदना (सौ मनुष्योंके भोजनके लिये पर्याप्त दूध देनेवाली) बनाना, फिर उसे उत्तम साँड़से गाभिन कराकर तथा हरे-भरे वनमें शुद्ध घास और निर्मल जलका प्रबन्ध करके उसे सरल स्वभाववाली वशा (किसी भी समय मनचाहे परिमाणमें दूध देनेवाली) बनाना तथा ऐसी-ऐसी उत्तमोत्तम गौएँ बनाकर ब्रह्मनिष्ठोंको दान देना ही गोमेध-सूक्तोंका विषय है। इनमें गो-हिंसाका कहीं नाम-निशान भी नहीं है।



मांसका त्याग श्रेयस्कर है

'हमें उन वस्तुओंका अनुसरण करना चाहिये, जिनसे हमें शान्ति मिल सकती हो और जिनसे हम दूसरोंकी उन्नति कर सकते हों।' (१९)

मांसके लिये ईश्वरकी बनायी हुई सृष्टिका संहार नहीं करना चाहिये। (२०)

मांस खाना, मदिरा पीना या अन्य मानवताकी अवनति, अपमान और निर्बलतामें सहायक होनेवाली चीजोंको सर्वथा त्यागना ही श्रेयस्कर है। (रोमान्स १६। १९–२१)



गोविन्द !

एक दिन—वह भी एक दिन था ।

त्रिलोकीके अधिपतिने समझा, उसका अपमान हो गया है । बहुत तुच्छ थे वे अपमान करनेवाले ।

कुछ गोसेवकोंने महेन्द्रको अपने बीचमें देवासनसे फेंक दिया था—फेंक दिया था श्रुतियोंके उस सर्वश्रेष्ठ काम्योपासकोंके आराध्यको ।

उसे पता नहीं था कि त्रिलोकीका एक चतुष्पाद उसकी शासन-सीमासे बाहर होता है और उसके सेवक भी ।

क्रोध आ गया उसे, अन्ततः वह लोकेश था न ।

लेकिन—मुँहकी खा गया । आज उस चतुष्पादके रक्षकों—सेवकोंमें बैठनेमें विश्वेश अपना भाग्य जो मान बैठा था ।

गोविन्द ! स्मरण है तुम्हें वह दिन ?

समस्त गो-समुदायकी आदि-माताने तुम्हें अपना इन्द्र वरण किया और वह भग्न-गर्व महेन्द्र तुम्हारे चरणोंमें बैठकर इसका साक्षी बना ।

तब आज तुम गोविन्द नहीं हो ?

इस गौओंके इन्द्र-पदसे तुमने त्यागपत्र कब दिया ? उसका भी कोई साक्षी है ?

तुम इन्द्र हो और सो भी केवल गौओंके !

जानते हो कि प्रजाकी पीड़ाका उत्तरदायित्व किसपर होता है ?

लोग कहते हैं—तुम प्रमाद नहीं करते ।

किसीका भी दोष हो—गायें दोष नहीं करतीं । ब्रह्माकी सृष्टिमें एक ही निष्पाप प्राणी है—

गौ

उसे दण्ड क्यों ?

भारतीय रक्त हिम बन चुका है । यहाँ कापुरुष ही शेष रह गये हैं ।

गाय गुहार

कोई नहीं सुनता—कोई नहीं समझता !

किन्तु—तुम तो उन्हींके रक्षक हो—तुम्हारा चक्र तो कुण्ठित नहीं हो गया ?

तुमसे भी कुछ कहना है ? क्या तुम्हारे लिये इतना ही पर्याप्त नहीं—

गोविन्द !

—सुदर्शन

मांस मत खा

"Thou shalt not kill, and ye shall be holy man unto me neither shall ye eat any flesh that is torn of beasts in the field." *(J. Christ)*

'तू किसीको मत मार । तू मेरे समीप पवित्र मनुष्य होकर रह । जंगलोंके प्राणियोंका वध करके उनका मांस मत खा ।' (ईसामसीह)

अहिंसा परम धर्म और मांस-भक्षण महापाप

अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परं तपः।
अहिंसा परमं सत्यं यतो धर्मः प्रवर्तते॥
न हि मांसं तृणात् काष्ठादुपलाद्वापि जायते।
हत्वा जन्तुं ततो मांसं तस्माद्दोषस्तु भक्षणे॥

(महा० अनु० ११६। २४-२५)

'अहिंसा परम धर्म है, अहिंसा परम तप है, अहिंसा परम सत्य है, अहिंसासे ही धर्मकी उत्पत्ति होती है। मांस घास, लकड़ी या पत्थरसे नहीं पैदा होता, वह तो जीवोंकी हत्या करनेपर ही मिलता है। इसलिये उसके खानेमें बहुत बड़ा दोष है।'

उपर्युक्त महाभारतके वचनोंके अनुसार ही प्रायः सभी पुराणों और स्मृतियोंमें अहिंसाकी महिमा और हिंसापूर्ण मांस-भक्षणका निषेध मिलता है, परन्तु मनुष्य इतना स्वार्थी और जिह्वालोलुप है कि वह अपने पापी पेटको भरने और घृणित मांसका स्वाद लेने तथा शिकारका शौक पूरा करनेके लिये निर्दोष प्राणियोंकी हत्या करता है! शास्त्रोंमें कहा है—'जो मूर्ख मोहवश मांस भक्षण करता है, वह अत्यन्त नीच है।' जैसे मा-बापके संयोगसे पुत्रकी उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार पशु-हिंसासे अनेकों पाप-योनियोंमें जन्म लेना पड़ता है। मांस खानेवाला निर्दय हो जाता है। उस हिंसा-वृत्तिवाले-पर किसी जीवका विश्वास नहीं रहता। सबको क्लेश पहुँचाने-वाला होनेसे उसे भी जीवनभर क्लेश रहता है और मृत्युके पश्चात् दूसरे जन्ममें वे सभी प्राणी उसे क्लेश पहुँचाते हैं। मांस-भक्षण बहुत बड़ा पाप और अत्यन्त हानिकर कुकर्म है। मांस खानेवाले लोग संसारमें हैं, इसीलिये प्राणियोंकी हत्या होती है। कसाई मांसखोरोंके लिये ही तो पशुओंको मारता है। अतएव सबसे बड़ा दोषी मांस खानेवाला ही है। जो दूसरोंका मांस खाकर अपना मांस बढ़ाना चाहता है, वह किसी भी जन्ममें चैनसे नहीं रहने पाता। जो मनुष्य वध करनेके लिये पशुको लाता है, जो उसे मारनेकी अनुमति देता है, जो उसका वध करता है तथा जो खरीदता, बेचता, पकाता और खाता है, ये सब-के-सब पशुके हत्यारे और मांसखोर ही समझे जाते हैं। मांस-भक्षण बहुत बड़ा अपराध है; क्योंकि इसीके कारण जीवोंको निर्दय कसाइयोंके हाथों मृत्युकी भीषण यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। सभी प्राणी जीवित रहना चाहते हैं। मृत्यु सभीके लिये दुःखदायी होती है। यदि हमें कोई मारना चाहे और मारे तो जितना दुःख होता है, उतना ही दूसरे प्राणीको भी होता है। इसीलिये प्राणदानसे बढ़कर कोई भी दान नहीं है। जिसका वध किया जाता है, वह प्राणी कहता है कि 'मां स भक्षयते यस्माद् भक्षयिष्ये तमप्यहम्।' अर्थात् 'आज मुझे वह खाता है तो कभी मैं भी उसे खाऊँगा।' यही मांसका मांसत्व है। जो मनुष्य मांस, शिकार अथवा यज्ञयाग—किसी हेतुसे भी प्राणियोंकी हिंसा करता है, वह नीच पुरुष नरकगामी होता है और जन्म-जन्ममें दुःख भोगता है।'

शास्त्र कहते हैं—'जो मनुष्य मांस न खाकर जीवोंपर दया करता है, वह दीर्घजीवी और नीरोग होता है। मांस-भक्षण न करनेसे सुवर्ण-दान, गो-दान और भूमिदानसे भी अधिक धर्मकी प्राप्ति होती है। जीवोंपर दया करनेके समान इस लोक और परलोकमें कोई भी पुण्यकार्य नहीं है। जो मनुष्य दयापरायण होकर सब प्राणियोंको अभय प्रदान करता है, उसे वे सब प्राणी भी अभयदान करते हैं। जो मनुष्य सब जीवोंको आत्मभावसे देखकर किसी भी जीवका मांस जीवनभर नहीं खाता, वह बड़ी उत्तम गतिको प्राप्त होता है। समस्त धर्मोंका शिरोमणि अहिंसा धर्म है।'

अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परो दमः।
अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः॥
अहिंसा परमो यज्ञस्तथाहिंसा परं फलम्।
अहिंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम्॥
सर्वयज्ञेषु वा दानं सर्वतीर्थेषु वा प्लुतम्।
सर्वदानफलं वापि नैतत्तुल्यमहिंसया॥
अहिंस्रस्य तपोऽक्षय्यमहिंस्रो यजते सदा।
अहिंस्रः सर्वभूतानां यथा माता यथा पिता॥

(महा० अनु० ११६। ३८—४१)

अहिंसा परम धर्म, अहिंसा परम संयम, अहिंसा परम दान, अहिंसा परम तप, अहिंसा परम यज्ञ, अहिंसा परम फल, अहिंसा परम मित्र और अहिंसा परम सुख है। सब यज्ञोंमें दान किया जाय, सब तीर्थोंमें अवगाहन किया जाय, सब प्रकारके दानोंका फल प्राप्त हो, तो भी उसकी अहिंसाके साथ तुलना नहीं हो सकती। हिंसा न करनेवालेकी तपस्या अक्षय होती है और वह मानो सदा-सर्वदा यज्ञ ही करता है। हिंसा न करनेवाला पुरुष समस्त प्राणियोंका माता-पिता ही है।

भारतके सभी धर्मग्रन्थोंमें मांसकी निन्दा की गयी है, फिर भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं—जिनसे भारतीयोंका प्राचीन कालमें मांस खाना सिद्ध किया जाता है। सम्भव है, कुछ लोग मांस खाते हों, और यह भी सम्भव है कि पीछेसे मांसाहारियोंने ग्रन्थोंमें ऐसी बातें घुसेड़ दी हों। जो कुछ भी हो, मांस-भक्षण प्रत्यक्ष पाप और अत्यन्त घृणित दुष्कर्म है। ऐसा माना जाता है कि इधर भारतीयोंमें मांस-भक्षणकी प्रथा विदेशियोंके खास करके अंग्रेजोंके आनेके बाद ही विशेषरूपसे चली है, पहले इतनी नहीं थी। हमारी सबसे प्रार्थना है कि हम मांस-भक्षणके दोषोंको समझ लें। इसमें आध्यात्मिक, शारीरिक और आर्थिक सभी प्रकारसे हानि है। इसपर विचार करें और जहाँतक बने मांस-भक्षणका प्रचार रोकनेकी सब प्रकारसे चेष्टा करें।

मांस-भक्षणसे हानि और भारतवर्षमें मांसका प्रचार

(श्रीमूलजीभाई बी० बराड बी० ए०, एस० टी० सी०)

अधिकांश भारतीयोंमें मांस-भक्षणकी प्रथा विदेशियोंके विशेषकर अंग्रेजोंके आनेके पूर्व प्रायः नहीं थी, इसके प्रमाणस्वरूप कुछ विदेशी यात्रियोंके लेख

१. फ़ाह्यानने, जिसने ईसवी सन् ३९९ से ४१४ तक उत्तर भारतमें भ्रमण किया था, लिखा है—

'चाण्डालोंके अतिरिक्त कोई भी किसी जीवित प्राणीका वध नहीं करता था, न मादक पेय पीता था और न जीवित पशुओंका व्यापार करता था। वध-शालाएँ और मदिराकी दूकानें नहीं थीं। केवल चाण्डालोंको ही शिकार खेलने या मांस बेचनेकी आज्ञा थी।'

(जे० टी० ह्वीलरद्वारा लिखित 'भारतवर्षका इतिहास' द्वितीय भाग, पृष्ठ २५३)

२. ह्वेनसांगने भी लिखा है कि 'सम्राट् हर्षके प्रयत्नसे भारतवर्षके निकटवर्ती पाँचों द्वीपोंमें पशु-वध तथा मांस-भक्षण बंद हो गया था।'

३. सन् १२६० से १२९५ तक भारतमें भ्रमण करनेवाले रोमनिवासी मार्को पोलो कहते हैं—

'कुमारी अन्तरीपके पूर्वकी ओर कोरोमंडल प्रदेश है, जिसका प्राचीन नाम चोलमंडलम् था। यह तामिल भाषा-भाषियोंका देश है और उत्तरमें बंगालकी खाड़ीके सहारे-सहारे तैलंग अथवा तेलुगू प्रदेशतक फैला है। वहाँके लोग गाय और साँड़की पूजा करते हैं तथा चाण्डालोंको छोड़कर कोई भी गो-मांस नहीं खाता। वे किसी जीवकी हत्या नहीं करते, अतः जिन्हें भेड़े या बकरेके मांसकी आवश्यकता होती है, उन्हें किसी अरब या अन्य विदेशीको कसाईके रूपमें नौकर रखना पड़ता है।'

(देखिये वही ग्रन्थ पृष्ठ ३८६)

सन् १५८५ ई० में उत्तरीय भारतकी यात्रा करनेवाले फिच (Fitch) नामक यात्रीने भी ऐसी ही बात कही है।

४. सन् १६१५ से १६१८ तक भ्रमण करनेवाले श्रीटेरी नामक यात्रीका कथन है—

'मछली बहुत सस्ते भावमें मिल सकती हैं, मानो इनका कोई मूल्य ही नहीं है। इसके दो कारण हैं, एक तो यह कि इस देशमें अन्न बहुतायतसे होता है और दूसरा यह कि यहाँके अधिकांश निवासी मांस-भक्षण नहीं करते।'

(जे० टी० ह्वीलरद्वारा लिखित 'मुसल्मानी शासन-कालमें भारत-वर्षका इतिहास' पृष्ठ ४१८)

५. श्रीडेला वैलेकी साक्षी—

'डेला वैले इकारीसे प्रस्थान करके ओलाजाकी रानीके राज्यकी ओर बढ़े, जो मंगलोरतक फैला हुआ था। उन्होंने देखा कि भोजनकी दृष्टिसे हिंदू-प्रदेशोंमें यात्रा करना बड़ा कठिन है। इन सब बातोंमें हिंदू बड़े कट्टर थे। उनसे मांस या मछली तो मिल ही नहीं सकती थी, चावल, मक्खन या दूध भी वे मोल नहीं देते; हाँ, उनकी विशेष कृपा होनेपर ये वस्तुएँ भले ही किसीको मोल मिल जायँ।' (देखिये वही ग्रन्थ पृष्ठ ४५६)

६. श्रीटैवरनर (१६४१—१६६८) की साक्षी—

'बड़े गाँवोंमें प्रायः मुसल्मान सेनानायक रहते थे, अतः वहाँ भेड़का मांस और मुर्गे या कबूतर मिल सकते

थे। किन्तु जो गाँव हिंदू बनियोंके अधिकारमें होते थे, वहाँ आटा, चावल, साग-पात तथा खोएकी मिठाईके अतिरिक्त कुछ भी नहीं मिल सकता था।'

(देखिये वही ग्रन्थ पृष्ठ ४७०)

७. डाक्टर जान फ्रायर (१६७८—१६८१) की साक्षी—

'वे (हिंदूलोग) कन्द-मूल, साग-पत्ती, चावल तथा सब तरहके फलोंपर ही निर्वाह करते हैं, किन्तु किसी जीवको नहीं खाते और न अंडे-जैसी कोई वस्तु खाते हैं, जिससे जीव उत्पन्न होता है।' (देखिये वही ग्रन्थ पृष्ठ ४८८)

८. सन् १६७४ में इन्हीं डाक्टर फ्रायरने लिखा था—

'सूरत-जैसे घनी बस्तीवाले नगरमें मुसल्मानोंके लिये सालभरमें जितने जानवर काटे जाते हैं, उनसे अधिक यहाँ (बम्बईमें) केवल अंग्रेजोंके लिये एक महीनेभरमें काटे जाते हैं।'

(देखिये जे० टी० ह्वीलरलिखित 'अर्ली रेकर्डस् आफ़ ब्रिटिश इंडिया')

९. अत्यधिक मात्रामें मांस खानेके कारण बम्बईमें रहनेवाले अंग्रेजोंका क्या हाल हुआ, यह बात इतिहासकी निम्नलिखित पंक्तियोंसे ज्ञात होती है—

'समुद्री हवा तथा अक्सर होनेवाली वर्षाके कारण मौसिम ठंडी रहती थी, गरमी बढ़ नहीं पाती थी। इसके पूर्व यहाँकी वायु बड़ी दूषित और खतरनाक थी, किन्तु जबसे अंग्रेजोंने नगर तथा आस-पासके दलदलोंको सुखा दिया तबसे वायु शुद्ध हो गयी थी। इतनेपर भी बम्बईमें कई यूरोपियन अचानक मर गये। उनमेंसे अधिकांश नये आये हुए थे, जिनके रहन-सहनका ढंग यहाँकी जलवायुके अनुकूल न था; जिसके कारण वे जल्दी चल बसे। वे गाय तथा सूअरका मांस अधिक मात्रामें खाते थे, जो भारतीय कानूनके अनुसार निषिद्ध था और घोर ग्रीष्म ऋतुमें भी वे पुर्तगालकी गरम शराब पीते थे।'

(देखिये जे० टी० ह्वीलरका 'मुसलमानी शासनकालमें भारतवर्षका इतिहास')

१०. भारत-सम्राटके द्वारा नियुक्त दुग्ध-व्यवसायके विशेषज्ञ श्रीविलियम स्मिथ कहते हैं—

'भारतके कुछ प्रमुख व्यक्तियोंका कहना है कि गो-रक्षाकी दृष्टिसे यहाँके पशु बाहर न भेजे जायँ। कुछ चाहते हैं कि मांसके लिये पशुओंका वध रोकनेके सम्बन्धमें सरकारकी ओरसे हिदायत होनी चाहिये। इधर ग्रामीण जनताके एक वर्गका मत है कि पशुओंके चरनेके लिये राज्यद्वारा विस्तृत भू-भाग खुले छोड़नेकी व्यवस्थासे ही यह समस्या हल होगी। निस्सन्देह इन सभी प्रस्तावोंका किसी अंशमें समर्थन किया जा सकता है; किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि **गो-रक्षाके लिये मुख्य और सबसे आवश्यक उपाय—जिसे भारतवर्षमें बहुत शीघ्र काममें लानेकी आवश्यकता है, बड़े-बड़े नगरोंमें जवान गायों तथा भैंसोंके वधको रोकना है।'**

('एग्रिकल्चरल जर्नल आफ़ इंडिया' वर्ष १७, भाग १, जनवरी १९२२)

११. १८ सितम्बर १९१९ को पूनासे लिखे हुए डी० ओ० नम्बर ११५९९ में डाक्टर (अब 'सर') एच० एच० मैन 'डाइरेक्टर आफ़ एग्रिकल्चर' बम्बई लिखते हैं—

'मैं सोचता हूँ कि बम्बई तथा अन्य **बड़े नगरोंमें दूध देनेवाले पशुओंके वधको देखकर यह भय होता है कि देशमें दूध देनेवाले उत्तम पशु आगे दिखायी ही नहीं पड़ेंगे। इस सम्बन्धमें शीघ्र ही जोरदार कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है।**

१२. मांस-भक्षणसे कितनी नैतिक हानि होती है—यह बात निम्नाङ्कित कतिपय प्राचीन एवं अर्वाचीन महापुरुषोंके लेख एवं उपदेश पढ़नेसे समझमें आ जायगी।

श्रीपायथैगोरस कहते हैं, 'ऐ मरणधर्मा मनुष्यो! अपनी कलङ्कित तश्तरियोंके लिये प्राणि-शरीरोंका वध करना छोड़ो। क्योंकि जो एक भोले-भाले बछड़ेकी गरदनपर छुरी चलाता है तथा निठुर होकर उसका बँबाना सुनता है अथवा जो बच्चोंकी भाँति मेंमियाते हुए बकरीके बच्चेका वध कर सकता है, अथवा जो अपने ही हाथों खिलायी-पिलायी मुर्गीको खाकर अपनेको पुष्ट कर सकता है, वह अत्यन्त दुष्ट स्वभावको ग्रहण करता है और पशुओंकी भाँति मनुष्योंका रक्त बहानेके लिये भी अपने-आपको तैयार करता है।' (राहा परसा)

१३. श्रीसिडनी एच्. बेअर्ड अपनी पुस्तक 'Is Flesh-eating Morally Defensible' ('क्या मांसाहार समर्थनीय है') में लिखते हैं—'भारत-जैसे देशोंमें ईसाइयोंके उपदेशके ग्रहण करनेमें ईसाई पादरियों तथा उनके

उपदेशोंसे ईसाई बने हुए लोगोंके खान-पानसे अधिक बाधक शायद और कोई नहीं है। ईसाके १००० (हजारों) वर्ष पूर्व ही ब्राह्मणोंने इस नियमकी घोषणा की थी कि अध्यात्म-मार्गपर चलनेवाले लोगोंको मांस नहीं खाना चाहिये, क्योंकि इसमें व्यर्थकी हिंसा और निर्दयताको प्रश्रय देना पड़ता है। बुद्धने भी यही सिखाया था कि जीवोंको मारना और उन्हें खाना दया तथा ईश्वरकी इच्छाके विरुद्ध है। जरथुस्त्रने भी यही कहा। तब हम यह आशा कैसे कर सकते हैं कि हिंदू, बौद्ध अथवा पारसी ईसाईधर्मकी श्रेष्ठता स्वीकार कर लेंगे जब कि अपनी परम्परागत भावना तथा धार्मिक विश्वासोंके कारण वे अपनी अपेक्षा आमिषभोजी ईसाई-धर्मावलम्बियोंको आध्यात्मिक अनुभव तथा बोधमें बहुत नीचा समझते हैं। यदि कुछ मनुष्य-भक्षी हमें नैतिकता सिखाने आवें तो क्या हम उनकी शिक्षा सुनेंगे? इतनेपर भी धर्म-परिवर्तनके द्वारा बने हुए ईसाई तो मुख्यतः मांस खानेके हानिकर स्वभावके द्वारा शराबमें बढ़ती हुई रुचिसे ही पहचाने जाते हैं कि ईसाई हैं। और चूँकि प्राच्य-जातियाँ इस प्रकार इन दुर्गुणोंको ईसाइयोंकी खास विशेषताएँ मान लेती हैं, इसलिये वे ईसाई-धर्मको अस्वीकार करती हैं।' (उक्त पुस्तकका पृष्ठ ६ देखिये)

१४. उसी पुस्तकके १० वें पृष्ठपर लिखा है—

'यह बर्बतापूर्ण प्रथा मनुष्यके शारीरिक, आध्यात्मिक तथा मानसिक स्वास्थ्यमें बाधक है और सदाचार, शान्ति, सुख एवं दयाके युगकी ओर—जिस युगकी भविष्यवाणी महापुरुषोंने की है, जिस युगके गीत कवियोंने गाये हैं, तथा जिस युगकी प्रतीक्षा मानव-जातिके सर्वोच्च तथा सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति धैर्यपूर्ण विश्वास और श्रद्धापूर्ण आशासे कर रहे हैं—मानवजातिको बढ़नेसे रोकती है। यह असंयम, निर्धनता, अपराध तथा दुर्गुणोंका भी—जिनके लिये हमारा तथा अन्य देश भी दुखी हैं—मुख्य कारण है। किसी भी सुधारसे—जिसपर आजकल हमारे सामाजिक राजनीतिज्ञ विचार कर रहे हैं—समाजको वैसा स्थायी तथा प्रति-कारात्मक लाभ न होगा, जैसा लोगोंके अपने प्राकृत आहारको फिरसे अपनानेसे होगा, जो आहार ईश्वरने मनुष्यके लिये पहले ही निर्धारित किया था।'

१५. विशेषज्ञोंद्वारा अनेक प्रयोगोंसे यह सिद्ध हो चुका है कि मांस-भक्षण सर्वथा अनावश्यक है। कुछ प्रयोग निम्नाङ्कित हैं—

'टोकियोके प्रोफेसर बेल्जने जापानके कुछ निरामिष-भोजियोंपर कुछ प्रयोग किये। पहले उन्होंने उनकी श्रम-सहिष्णुताके कुछ कार्योंको जाँचकर लिख लिया, फिर उन्होंने उनको मांस देना आरम्भ किया। उन लोगोंने मांस-भक्षणको एक शौककी चीज समझकर बड़े चावसे खाया, क्योंकि उच्च वर्गोंके लोग मांस खाते थे। किन्तु तीन दिनोंके बाद वे बेल्ज साहबके पास आये और प्रार्थना करने लगे कि हमें मांस देना बंद कर दिया जाय, क्योंकि मांस खानेसे वे थकावटका अनुभव करते थे और पहलेकी भाँति कार्य नहीं कर सकते थे।'

१६. इससे भी अधिक मनोरञ्जक तथा बड़े पैमानेपर एक दूसरा निर्णयात्मक प्रयोग इंग्लैंडमें हुआ था—

'सन् १९०८ में ६ मासतक 'लंदन वेजिटेरियन एसोसियेशन' (लंदनके निरामिषभोजी संघ) की सेक्रेटरी कुमारी एफ. ई. निकल्सनने १०,००० बच्चोंको निरामिष भोजन कराया तथा 'लंदन काउंटी कौंसिल' द्वारा एक दूसरे भोजनालयमें उतने ही बच्चोंको मांससहित भोजन कराया गया। ६ मासके अन्तमें दोनों दलोंके बच्चोंकी परीक्षा डाक्टरोंद्वारा की गयी, जिससे यह सिद्ध हुआ कि मांसभोजी बच्चोंकी अपेक्षा निरामिषभोजी बच्चोंका स्वास्थ्य अधिक अच्छा, वजन अधिक, पुट्ठे अधिक सुदृढ़ तथा चमड़ा अधिक साफ था। अब 'लंदन काउंटी कौंसिल' की प्रार्थनापर और उसीकी देख-रेखमें 'लंदन वेजिटेरियन एसोसियेशन' द्वारा लंदनके गरीब-से-गरीब निवासियोंको हजारोंकी संख्यामें निरामिष भोजन दिया जाता है।'

(११जुलाई सन्१९१० को श्रीलाभशङ्कर लक्ष्मीदास-द्वारा भेजा हुआ एक प्रेस-समाचार)

१७. संसारके दूसरे भाग अमेरिकामें प्रोफेसर शिटेंडन पी-एच्. डी. एस्.-सी. सी., एल्.-डी. डी. द्वारा किया हुआ प्रयोग—जिसका वर्णन नीचे दिया जाता है—उतना ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद सिद्ध होगा—

अमेरिकन सिपाहियोंके साधारण दैनिक आहारमें ७५ औंस ठोस भोजन रहता है, जिसमें २२ औंस कसाइयोंके यहाँका मांस रहता है। इन सिपाहियों तथा व्यायाम करने-वालोंके भी भोजनका परिमाण एक प्रकारसे सारा-का-सारा मांस (२१ औंस) तथा ठोस वस्तुओंका कुछ अंश निकालकर केवल ५१ औंस कर दिया गया। नौ महीनोंतक

उन्हें इस भोजनपर रक्खा गया, जिसका यह परिणाम हुआ कि यद्यपि भोजनमें परिवर्तन करनेके पहले उनके शरीरका पूर्ण विकास हो चुका था और देखनेमें ऐसा मालूम होता था कि अब इससे अधिक शक्ति इनमें न आयेगी। फिर भी नवें महीनेके अन्तमें उनमें पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति आ गयी और उनका स्वास्थ्य भी पहलेसे कहीं अच्छा हो गया। यन्त्रद्वारा ठीक-ठीक नापनेसे पता चला कि उनकी शक्तिमें लगभग ५० प्रतिशत वृद्धि हुई तथा वे अधिक आसानीसे अधिक ठोस काम करने लगे, उनमें अधिक प्रसन्नता आ गयी तथा उनके स्वास्थ्यमें भी उन्नति हुई। और जब उनको इस बातकी स्वतन्त्रता दे दी गयी कि चाहें तो अपना पिछला भोजन फिर शुरू कर सकते हैं तब भी उनमेंसे किसीने ऐसा करना स्वीकार नहीं किया।'

१८. इतनेपर भी मनुष्यने मांस-भक्षण न छोड़ा। डाक्टर हेग अपनी पुस्तक 'डायट ऐंड फूड' (खाद्य पदार्थ और भोजन) के १२९ वें पृष्ठपर लिखते हैं—

मांस-भक्षण सुस्ती लाता है, क्योंकि इसके कारण मस्तिष्क, मांसपेशियों, हड्डियों तथा सारे शरीरमें रक्तका प्रवाह मन्द तथा न्यून हो जाता है। रक्तप्रवाहकी यह मन्दता और न्यूनता यदि जारी रहे तो परिणाममें स्वार्थ-परायणता, लोलुपता, भीरुता, अधःपतन, ह्रास और अन्तमें विनाश निश्चित है। इससे धनके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है, जिससे विलासितापूर्ण आलस्यका जीवन प्राप्त हो सके। क्या किसी स्वस्थ राष्ट्रके अङ्गभूत व्यक्तिका यही आदर्श है कि वह इस प्रकारका आलस्यमय जीवन प्राप्त करके तृप्ति और जीवनके प्रति अरुचिका अनुभव करे—इसका निर्णय स्वयं राष्ट्र ही करे।'

१९. 'इन्द्रियतृप्तिका मार्ग—वह मार्ग जिसे मांसभोजी प्रायः ग्रहण करते हैं—सदा ह्रास और विनाशकी ओर ले गया है, जब कि त्याग तथा आत्मसंयमका मार्ग महान् विकासका द्वार खोलता है। मनुष्य कौन-सा मार्ग ग्रहण करेगा, यह उसके आहारके प्रकारपर बहुत कुछ निर्भर करता है।' ('डायट ऐंड फूड पृष्ठ १३३)

२०. दिन-प्रति-दिन उच्च कोटिके प्रसिद्ध डाक्टर भी अब मांसभक्षणके विरुद्ध अपना मत देने लगे हैं। संक्षेपमें मांस-भक्षणसे इतनी हानियाँ हैं—

१. मांस-भक्षण अनावश्यक, अस्वाभाविक तथा अहितकर है।

२. यह अन्नसे कम पुष्टिकर है।

३. निरामिष आहारकी अपेक्षा यह मनुष्यमें सहिष्णुता, शक्ति, स्फूर्ति तथा सामर्थ्य बहुत ही कम उत्पन्न करता है।

४. दाँतोंकी सफेदीपर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

५. यह आयुको घटानेवाला है।

६. यह आलस्य, भारीपन तथा प्रातःकाल शारीरिक श्रममें अरुचि उत्पन्न करता है।

७. यह सौमें निन्यानबे मनुष्योंका सफाया कर देता है।

८. यह क्षुद्र 'अहम्' के प्रति प्रेमका विस्तार करके जगत्के प्रति हमारे विचारोंको संकीर्ण बना देता है।

९. यह राष्ट्रकी स्वार्थपरायणता, लोलुपता, अवनति, ह्रास तथा विनाशकी जड़ है।

१०. इसके कारण शराब पीनेकी बुरी और विनाशकारी आदतको प्रोत्साहन मिलता है, जिससे देशके लोगोंका जीवन अनावश्यक रूपसे खर्चीला हो जाता है और इस प्रकार अन्तमें यह देशकी सत्ताको संकटमें डाल देता है। क्योंकि श्रीडाक्टर हेगके शब्दोंमें कम-खर्चीले जीवनका प्रश्न ही राष्ट्र तथा प्रत्येक व्यक्तिके अस्तित्वका निर्णय करता है। ('कैटिल प्राब्लेम इन इंडिया')

गो-परिक्रमाका फल

गौओंको एकमात्र परिक्रमा करके प्रणाम करनेसे मनुष्य सारे पापोंसे छूटकर अक्षय स्वर्गका भोग करता है। सात गौओंकी परिक्रमा करनेके कारण बृहस्पति सबके वन्दनीय, माधव सबके पूज्य और इन्द्र ऐश्वर्यवान् हो गये हैं।

(पद्म० सृष्टि० ४८। १४५-१४६)

गायकी हाय !

(स्वर्गीय पं० श्रीसतीप्रसादजी त्रिपाठी 'सिद्ध')

दोहा—डकरति हौं मैं सबहि सन, कहि ख दुसह अपार ।
सुख दैके दुख झेलिबो, हमरे लिखो लिलार ॥

सवैया—मातु समान मैं पालति हौं, निज दूध पियाइके खाइके सानी ।
दूधको पीयो दही रुचिसों, घृतसों करो पाक सबै मनमानी ॥
तापर मो कहँ मारत हैं, जिनके हिये नेक दया न समानी ।
गाय गरीबिनकी अरजी पै, करौ मरजी अब संभु-भवानी ॥ १ ॥
धायके गाय कहैं दुख आपनो, पीर हमारी कोऊ नहिं जानी ।
हैं बछिया अछिया हमरी सबै, बाछनकी सुनौ नेक कहानी ॥
खेतको जोतत, गाड़िहु खैंचत, सींचनके हित ऐंचत पानी ।
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ २ ॥
गोबर शुद्ध करै महिकों, अरु गोत मिटावत रोग निसानी ।
खादतें भूमिकी शक्ति बढ़ै, उपजै बहु अन्न सबै जग जानी ॥
मेटत हैं तनके सब ताप ये, पाँचहु गव्य महा सुखदानी ।
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ ३ ॥
हव्यसे यज्ञ सधैं सिगरे, अरु यज्ञहि तें बरसैं जग पानी ।
पानिहितें उपजैं सब अन्नरु, अन्नहि तें जग जीवत प्रानी ॥
मेरे नसे नसिहै सब लोक, न बूझत बात महा अभिमानी ।
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ ४ ॥
जीवत साज सजौं सुखके, बल बुद्धि बढ़ाय सुनो मम बानी ।
पार लगावत बैतरनी, मरिबेपर वेद पुरान बखानी ॥
सींगपै मेरे धरी धरनी, करनी असि मोरि कुरानहु मानी ।
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ ५ ॥
राखि सकैं गज बाजि जेऊ, तेउ गाय न राखत हैं सनमानी ।
ग्रासको दान, प्रदक्षिण, पूजन, कौन करे ? सब भे अघखानी ॥
रक्षक भक्षक होइ गये तब, म्लेच्छनतें को बचावइ आनी ?
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ ६ ॥
धर्मकी धाक मिटी जबतें, तबतें सब होइ गई मनमानी ।
हिंदुहुके घरमें नहिं ठौर, हमै सुनिये यह दुःख कहानी ॥
गोचर-भूमि बँची न कहूँ, मोहि भारतमें न मिलै तृन-पानी ।
सिद्ध कहैं या गरीबिन गायकी, हाय सुनो अब संभु-भवानी ॥ ७ ॥

कवित्त—मोकों तो समान हिंदू तुरुक ईसाई सबै पालत सभीकों मैं पीयूष-पय प्यायकै ।
मरिबे पै चामहू तो चरन चरनदासी होइ नित्त सेवै नेक सोचो चित्त लायकै ॥
सिद्ध कहैं पाप-परितापके न राह चलौं, जीवन बितावौं नित घास-तृन खायकै ।
मोहि कलपैहै सो तो नाहि कल पैहै, कहो कैसे कल पैहै कोऊ मोहि कलपायकै ॥

गोरक्षा-धर्म

(लेखक—श्रीयुत द० बा० कालेलकर महोदय)

आजतक गायके साथ हमने जो अन्याय किया है, उसका स्मरण करके आदर्श गोपालनके द्वारा यदि कुछ लाभ हो तो वह सभी गाय और उसके वंशके रक्षणमें लगाना चाहिये। खादीके कामका अन्तिम आधार जिस प्रकार संन्यास-वृत्तिसे रहनेवाले परोपकारी, त्यागी, निर्लोभी समाजसेवकोंके ऊपर रहता है, उसी प्रकार गोरक्षाका आधार भी संन्यास-वृत्तिवाले गोभक्त, समाज-सेवक स्त्री-पुरुषोंके ऊपर ही रहेगा। मनुष्यका बोझ गायके ऊपर न पड़े और गायका बोझ मनुष्यके ऊपर न पड़े, ऐसी स्थिति उत्पन्न करानेका पूरा-पूरा प्रयत्न होना चाहिये। लोगोंको गायका दूध-दही वगैरह जहाँतक हो, वहाँतक सस्ता मिले और गायकी उपयोगिता तथा कीमत जितनी बढ़ायी जा सके उतनी बढ़े, तभी गाय निर्भय हो सकती है। यह कितने दुःख और शर्मकी बात है कि आज गायको पालनेकी अपेक्षा उसके मारनेमें अधिक लाभ दीखता है। ऐसी स्थिति नहीं रहनी चाहिये, और गाय-जैसे मूल्यवान् प्राणीके मारनेमें आर्थिक नुकसान ही होता है—यह बात लोगोंके मनमें धँस जानी चाहिये।

गायका बछड़ा उत्तम प्रकारका हो, इसका ख्याल रखना चाहिये। बछड़ा देनेकी गायकी शक्ति अन्ततक टिकी रहे ऐसे उपाय खोज निकालने चाहिये। गायके बिसुक जाने (दूध देना बंद कर देने) के दिन जहाँतक हो सके, कम-से-कम हों, इसका प्रयत्न करना चाहिये। गाय फिरसे गर्भ धारण करने योग्य हो तबतक उसका दूध कम न हो, इसका भी ख्याल रखना चाहिये। और जिन थोड़े-से दिनोंमें गाय दूध नहीं देती, उन दिनों उसका पोषण बहुत अच्छी रीतिसे हो और उसमें कम खर्च पड़े, इसका भी ध्यान रखना चाहिये।

गायके दूधके सिवा उसका गोबर और मूत्र भी अत्यन्त उपयोगी पैदावार है। हम हिंदू गोबर और गोमूत्रको अत्यन्त पवित्र मानते हैं। परन्तु हमने उसकी उपयोगिताको ठीक-ठीक नहीं समझा। गोमूत्रका उपयोग खादके रूपमें हम ठीक-ठीक नहीं करते। गोबर थापकर हम उसे ईंधन बना डालते हैं, अथवा उसका उपयोग केवल लीपनेमें ही करते हैं। यह गोबरका दुरुपयोग और खेतीसे दुश्मनी है। खादके लिये गोबर संग्रह करनेकी कला हमें सीख लेनी चाहिये।

गायकी स्वाभाविक मृत्यु होनेके बाद भी, उसका अधिक-से-अधिक उपयोग कैसे हो यह बात उसके पालनेवालेको जान लेनी चाहिये। गायका वध करना पाप है। परन्तु स्वाभाविक मृत्युसे मरी हुई गायका चमड़ा, उसके खुर, सींग, हड्डियाँ आदिका कुछ-न-कुछ उपयोग करना हमें जानना चाहिये। मरे हुए जानवरका मांस कभी भी खानेके काममें नहीं लेना चाहिये। क्योंकि मुर्दार मांससे शारीरिक तथा मानसिक आरोग्यका नाश होता है और उससे घृणा उत्पन्न होती है। उसमें अनेक जन्तु रहते हैं और वह अनेकों रोगोंका घर होता है। (और जीवित पशुओंको मारकर उनके मांससे अपना पेट भरना तो सर्वथा अनुचित है ही।)

स्वाभाविक मृत्युसे मरी हुई गायका मांस जमीनमें गाड़कर उसका खादके लिये उपयोग किया जा सकता है। सींग और खुरसे सरेस बनता है। सरेस निकाल लेनेके बाद जो कूचा रह जाता है, उससे उत्तम ब्रश तैयार किया जा सकता है। स्वाभाविक मृत्युसे मरी गायके चमड़ेको पवित्र मानकर उसके उपयोगका आग्रह रखना चाहिये। गायकी हड्डी और चमड़ेका व्यापार आज गो-भक्षकोंके हाथमें है, इससे गायका वध बहुत बढ़ गया है। यह व्यापार गो-सेवकोंके हाथमें जानेसे उसी हिसाबसे वधमें कमी हो जायगी, और इस व्यापारमें होनेवाला काफी नफा भी गो-सेवामें लगेगा। हत्याचर्म (हत्या किये हुए पशुके चमड़े) का कमाना सहज है, परन्तु मृतचर्म (मरे हुए पशुके चमड़े) के कमानेमें विशेष कलाकी जरूरत है। सच्चे गो-सेवकोंको वह कला सीखकर उसे बढ़ाना चाहिये। सच्चे गो-सेवकोंको यह व्रत लेना चाहिये कि हम इस 'मृतचर्म' का ही उपयोग करेंगे। 'गो-सेवा'

गायके स्पर्शसे पापनाश

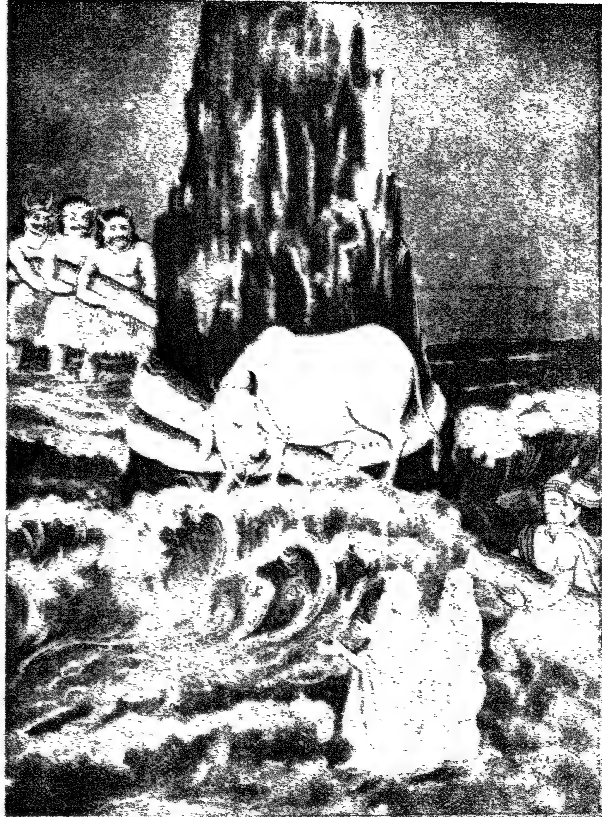
गां स्पृष्ट्वा ब्राह्मणं नत्वा संपूज्य गुरुदेवताः। ·········पातकैः सर्वैं मुच्यन्ते गृहमेधिनः॥

(स्क० प्रभास० व० मा० अध्याय १६)

गौका स्पर्श करने, ब्राह्मणको नमस्कार करने और गुरुदेवताका भलीभाँति पूजन करनेसे गृहस्थ सारे पापोंसे छूट जाते हैं।



महर्षिका मूल्य



कामधेनुकी उत्पत्ति

प्राणी-पूजा

(लेखक—श्रीमान् डॉ० प्रो० मंजुलाल रणछोडलाल मजूमदार एम्० ए०, एल्-एल्० बी०, पी-एच्० डी०)

अमृत पानेकी लालसासे देवता और दानव समुद्र-मन्थनके लिये तैयार हुए। इस कठिन मन्थनके लिये भगवान् श्रीविष्णुने कछुएका रूप धारण किया; मंदराचलको मथानी बनाया और शेषनागरूपी रस्सीसे देवों और दानवोंने क्षीरसागरको मथा। उसके पानीमेंसे प्रथम 'कामधेनु' गाय निकली। यह पवित्र गाय दूध और दहीका अटूट खजाना थी। उसके बाद निकला सप्तमुखी ऊँचे नुकीले कानोंवाला पानीदार पवित्र उच्चैःश्रवा घोड़ा; और पीछे निकला सात सूँड़वाला श्वेत हाथी ऐरावत। इस प्रकार गाय, घोड़ा और हाथी—ये तीन प्राणी; सृष्टिकी श्रेष्ठ वस्तुएँ सागर-मन्थनसे ही निकलीं। चौदह रत्नोंमें इन तीन प्राणी-रत्नोंकी सन्तानको आज मनुष्योंके सुखोपभोगके लिये प्रभुने सहज बना दिया है; इसीसे अतीतकालसे ये हमारे सम्मान्य बन गये हैं।

'ईश्वर एक है' ऐसा माननेवाले हिंदुओंका धर्म इतना अधिक व्यापक और सर्वग्राही है कि विश्वमें अनेक रूपोंमें व्यक्त होनेवाले परमात्माके अनेकानेक स्वरूप भी परमात्माके समान ही पूज्य समझे जाते हैं। भगवद्गीतामें परमात्मशक्तिके इस व्यक्त स्वरूपको ईश्वरकी 'विभूति'के रूपमें समझाया गया है।

ये विभूतियाँ सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, पृथ्वी, सागर, पर्वत, नदी, सरोवर वगैरह जिस प्रकार आकाशकी तथा पृथ्वीकी भव्य और दिव्य सृष्टिमें दिखलायी देती हैं, उसी प्रकार पीपल, वड़, तुलसी, गूलर, शमी आदि-जैसे वनस्पति सृष्टिमें; तथा गाय, घोड़ा, हाथी, सिंह आदि-जैसे प्राणी-सृष्टिमें भी भगवद्विभूतिका ही दर्शन होता है। मानव-सृष्टिमें भी जगत्के अनेक पुरुषोत्तम और महाजन (जिनकी जयन्ती हम मनाते हैं) उसी प्रकारसे ईश्वरीय विभूतिके अंशविशेषके रूपमें प्रकट होनेके कारण पूज्य समझे जाते हैं, ऐसा उनके चरित्रोंसे जाना जाता है।

मनुष्येतर सृष्टिके साथ समभाव, हिंसक प्राणियोंके प्रति दयाभाव और अहिंसाका अभयदान—ये तीन वस्तुएँ प्राणी-पूजाके रहस्यसे हम निकाल सकते हैं। वैरभावके शमनके बाद जो आनन्द चित्तको होता है उसके प्रतीकके रूपमें 'नागपञ्चमी' जैसा त्योहार ऐसी उदात्त भावनासे हम मनाते हैं।

समुद्र-मन्थनसे प्राप्त हुए तीन प्रमुख प्राणियोंकी पूजा तथा उनके सम्बन्धमें होनेवाले व्रतों और उत्सवोंमेंसे हम यहाँ मुख्यतया गायके सम्बन्धमें कुछ विचार करते हैं।

पृथ्वी जिस प्रकार 'वसुन्धरा' कहलाती है और सब प्रकारकी सम्पत्ति उसके पेटसे निकलती है, उसी प्रकार गाय भी मनुष्यको समस्त सम्पत्तियाँ प्रदान करती है। इसलिये पृथ्वी और गायको एक रूप माना गया है, इसी कारण इनका अभेद भी माना जाता है। और दोनोंको जन्म देनेवाली माताके समान पूज्य बतलाया गया है।

गायकी प्रदक्षिणा करनेसे पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करनेका फल मिलता है, ऐसा गणपति और कार्तिकेयकी विवाहसम्बन्धी कथासे ज्ञात होता है। पार्वतीने कहा कि, 'दोनों पुत्रोंमेंसे जो पृथ्वीकी प्रदक्षिणा पहले कर आवेगा उसका विवाह सिद्धि-बुद्धिसे होगा।' कार्तिकेय अपने वाहन मयूरके ऊपर पृथ्वी-परिक्रमाके लिये निकल पड़े। परन्तु बुद्धिमान् गणपतिने इस लंबी खटपटमें न पड़कर चट गायकी प्रदक्षिणा कर ली और इस प्रकार पृथ्वी-परिक्रमाका फल प्राप्त करनेकी बाजी मार ली और सिद्धि-बुद्धिको प्राप्त कर लिया, इस कथाके द्वारा गाय और पृथ्वीका अभेद स्थापन किया गया है। ब्याती गायकी प्रदक्षिणा पृथ्वी-प्रदक्षिणाका पुण्यफल प्रदान करती है ऐसा धर्मशास्त्र कहते हैं। जिस प्रकार गायका पृथ्वीके साथ अभेद दिखलाया है, उसी प्रकार श्रीमद्भागवतमें पृथ्वीका गायके साथ अभेद दिखलानेवाला एक प्रसङ्ग आया है। संस्कृतमें 'गो' शब्दसे पृथ्वी, गाय और किरण आदि अनेक अर्थोंकी व्यञ्जना होती है। इसके सिवा श्रीमद्भागवतमें एक कथा इस अभेदकी बातको और भी पुष्ट करती है। गायके दुहनेसे जैसे दूध मिलता है, उसी प्रकार पृथ्वीमाताके द्वारा नाना प्रकारकी वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं। पृथुराजाने पहले-पहल पृथ्वी (रूप गाय) को दुहा था। इससे यह सूचित होता है कि राजा पृथुके समयमें पृथ्वीके खड्डा-खाईको बराबर करके खेतीके लायक बनाया गया था। इस प्रकार पृथ्वीके द्वारा पहले-पहल उपज लेनेके कारण पृथुराजाके नामपर धरणीका नाम 'पृथ्वी' पड़ा, ऐसा सूचित होता है।

धरती-माताके समान ही गाय पूज्य है; इसी करण

उसके दिये हुए पाँच पदार्थ दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र भी पूज्य और पवित्र करनेवाले हैं; ये पाँच पदार्थ 'पञ्चगव्य' कहलाते हैं।

खेतीके काममें गायका गोबर खादके लिये, गोबरसे बननेवाला कंडा ईंधनके लिये, और गायकी सन्तान (बैल) हल तथा चरस खींचनेके काम आता है। गंदी-से-गंदी जगहको गोबरका चौका शुद्ध कर देता है। कंडेकी राख गंदे पदार्थोंको साफ करती है। इस प्रकार हल जोतने-से लेकर खेतीकी सारी मजदूरीके लिये गायकी सन्तान काम आती है, इतना ही नहीं बल्कि सारी खेतीका आधार ही उसके ऊपर है। अतएव इस प्रकार जिसकी सारी सम्पत्ति उपयोगी है वह इतनी अधिक पूज्य समझी जाय, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

इसी कारण मानवसमाजकी अमूल्य सेवा करनेवाली और पावन करनेवाली इस गायकी हत्याका पाप अत्यन्त घोर और महापातकोंमें गिना जाता है। इसी कारण मनु-भगवान्‌ने लिखा है कि 'गायकी रक्षा करनेवाला धर्मगुरुकी हत्याके पापसे भी मुक्त हो जाता है।' एक जगह आता है कि जहाँ गायका प्राण बचना सम्भव हो वहाँ असत्य बोलनेमें भी पाप नहीं लगता; क्योंकि असत्य बोलनेके पापकी अपेक्षा गायकी प्राणरक्षा करनेका पुण्य अनेकों गुना अधिक होता है।

गायके शरीरमें तैंतीस कोटि देवताका वास बताया जाता है। इसको हम आलङ्कारिक भाषा कह सकते हैं। परन्तु जीवननिर्वाहके सारे साधनोंको पूरा करनेवाली गायका नाम कामधेनु पड़ा है, यह निरर्थक नहीं, बल्कि यथार्थ है।

जननेवाली माताके बाद गायका स्थान आता है, और उसके बाद जन्मभूमिका; क्योंकि नन्हे बच्चेसे लेकर सबका पोषण उसके दूधसे होता है। प्रातःकाल गायका—और उसमें भी बछड़ेसहित गायका दर्शन तथा उसका दाहिने हाथकी ओर जाना अत्यन्त माङ्गलिक और शुभ शकुन समझा जाता है। इन सारी मान्यताओंके मूलमें गायके प्रति पूज्यबुद्धि ही देखनेमें आती है।

गृहस्थाश्रमीके लिये अवश्य करने योग्य पाँच यज्ञोंमें गो-ग्रास निकालनेकी—'गवानेक' देनेकी बात निश्चित कर गायकी घर-घर पूजाकी स्थापना गृह्यसूत्रकारोंने की है। 'घर-घर गाय' पालनेका सिद्धान्त कालके बलसे हम भूलते गये। अपने देशमें प्राचीन कालसे गोधनका विशेष महत्त्व माना गया है। वेदकालमें तो गाय ही सम्पत्ति समझी जाती थी, इसी कारण अनेकों जगह गायकी स्तुति की गयी है और उसकी शत्रुसे रक्षा करनेके लिये अनेकों बार इन्द्रका स्तवन किया गया है।

महाभारतकालमें भी गायोंको धनके रूपमें माना जाता था। गायोंका पालन-पोषण करना अत्यन्त पवित्र और पुण्यका काम समझा जाता था। इसी कारण श्रीकृष्णका 'गोपाल' नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया है।

यादव और दूसरी क्षत्रिय जातिका मुख्य धंधा खेती, गो-रक्षण और व्यापार था। समयकी गतिसे वैश्योंने खेती और गो-रक्षणके धंधेको छोटा समझा। इसीलिये वह चौथे वर्णके हाथोंमें चला गया। जिस जगह हवा, पानी और चारेकी अनुकूलता होती उस जगह क्षत्रियलोग गायोंके समूह-का पालन कर जीवन-यापन करते थे, और ऐसा अहीर-व्यवसाय करनेमें हेठी नहीं समझते थे।

नन्दजीके घर नौ लाख गायोंका गो-धन था। नन्दजीके किशोर श्रीकृष्णने गोवर्द्धनकी तलहटीमें गायोंके लिये भरपूर चारा प्राप्त किया था और इन्द्रके बदले गोवर्धनकी पूजा करानी शुरू कर दी थी। विराटके यहाँ पाण्डव गुप्तवेषमें रहते थे। उसी अवसरपर विराट राजाके गो-धनको कौरवोंने हर लिया था। उन गायोंको लौटा लानेके लिये पाण्डवोंने छिपे रहकर अपना पराक्रम दिखलाया था।

प्रत्येक अवतारका उद्देश्य असुरोंका संहार तथा गो-ब्राह्मणका प्रतिपालन होता है। पुराणकालमें वेदकालकी सीतादेवी (कृषिदेवी) और इन्द्रके माहात्म्यको लोग भूल गये और गोपालक श्रीकृष्णका महत्त्व बढ़ा। विष्णुके अवतार श्रीकृष्ण इन्द्रसे भी श्रेष्ठ हैं, यह बतलानेके लिये उनके द्वारा इन्द्रकी पराजय हुई और श्रीकृष्णने कनिष्ठिका अँगुलीपर गोवर्द्धन (गायोंका संरक्षण और संवर्द्धन करने-वाले) पर्वतको ही उठाकर गायों और गोपियोंकी रक्षा की।

इन सब बातोंको ध्यानमें रखकर हम कह सकते हैं कि आज भी हमारे हिंदू-राजाओंके लिये अत्यन्त सम्मान-सूचक यदि कोई उपाधि हो सकती है तो वह है 'गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक'। आर्यसंस्कृतिके पैतृक धनका पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकास तथा विस्तारसाधन करनेवाला, गरीब होनेपर भी तेजःपुञ्ज और तपोधन (Aristocrat Pruper) ब्राह्मण; तथा दूध-दही देकर सारे जन-समाजका पोषण करनेवाली गोमाता; और खेतीके परिश्रमको अपने ऊपर

लेकर सारे जगत्‌के पेटके गड्ढेको भरनेवाला बैल; ये सदा पूज्य बने रहें, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। इस प्रकारके 'गो और ब्राह्मण' का प्रतिपालन करनेवाले राज्य ही अपनी प्रजाके प्रति सच्चे राज्यधर्मको प्रमाणित करते हैं।

इस प्रकार गायकी रक्षा करनेके लिये शत्रुके ऊपर हथियार चलानेके अनेकों उदाहरण प्राप्त होते हैं। आज भी गो-धनको हर ले जाते हुए बटमार और लुटेरोंका सामना करनेवाले अनेकों ग्राम-स्वामियों, उत्साही नौजवानों और विवाहकी चुनड़ी ओढ़ी हुई सुंदरियोंके बलिदान होनेके प्रमाण भाट-चारणोंकी गाथाओंमें प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार लगभग अधिकांश गाँवोंके चरागाहमें खड़े हुए समाधि-स्मारक और स्तम्भ गोरक्षा करनेवालोंकी कीर्तिगाथाके रूपमें आज भी पूजे जाते हैं।

गायके संरक्षणके पश्चात् गायका पूजन भी इष्ट और फलदायक है। सत्यकाम जाबालकी कथा उपनिषदोंमें आती है। वहाँ बतलाया है कि केवल गाय-पूजासे इस सच्चे भोले-भाले बालकको ज्ञानकी प्राप्ति हुई थी।

सत्यकामकी ज्ञान-जिज्ञासाकी परीक्षा करते हुए गौतम ऋषिने उसे चार सौ दुबली गायें दीं और एक वंश बढ़ानेवाला साँड़ दिया, और कहा कि जब इसके हजार गायें हो जायँ तब फिर आश्रममें लौट आना। सत्यकाम ऐसे कार्यके सौंपे जानेसे कृतकृत्य हुआ, और वहाँसे निकल पड़ा।

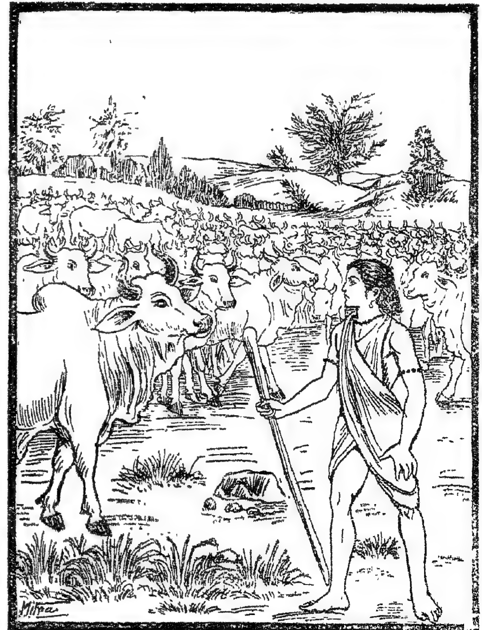
हाथमें एक दण्ड, कंधेपर एक डोरी और कमण्डलु तथा पीछे चार सौ दुबली गायें। कभी आगे चलता, कभी बीचमें, और कभी पीछे। कभी गायोंको डचकारता जाता, कभी गायोंको सुहलाता जाता, कभी कुआँ आनेपर पानी पिलाता जाता और कभी हरी-हरी घास आती तो वहाँ चराता जाता।

गुरुकी गायोंका गोपाल चला, चला और अखीरमें एक हरी-भरी भूमिमें पहुँच गया तभी रुका। गायोंको चरनेके लिये हरी-हरी घास, पीनेके लिये पर्याप्त पानी और आस-पास रमणीय सृष्टि-सौन्दर्य; ऐसे स्थानमें सत्यकामने पड़ाव डाला, और गुरुकी दी हुई उपासना शुरू की।

एक रात बीती, दो रात बीती, सप्ताह बीता, पखवाड़ा बीता, महीना हुआ, एक वर्ष हुआ, और इस प्रकार वर्षों निकल गये। अरण्यमें सत्यकामने एक छोटा-सा गुरुकुल बसा दिया। प्रतिदिन प्रातःकाल आश्रमके वेदमन्त्रोच्चारको भी लज्जित करनेवाला हर्षोच्चार गायें करतीं। प्रतिदिन प्रातःकाल आचार्यके प्रातर्होमकी जगह सत्यकाम विधिपूर्वक गायोंको पानी पिलाता। प्रतिदिन आचार्यपत्नीकी ममतासे सत्यकाम गायोंको चराता और बीमार होतीं तो अपने हाथों उनके मुँहमें ग्रास देता। प्रतिदिन सारी दुनियाके श्रोताओंको लज्जित करनेवाली शान्तिसे गायें निरालेमें बैठकर पागुर करतीं। प्रतिदिन रातको मानो गुरुके अग्निहोत्रकी राक्षसोंसे रक्षा करता हो, सत्यकाम गायोंकी बाघ-सिंहसे रक्षा करता; इस प्रकार वह जो कुछ करता उसके पीछे थी गुरुकी आज्ञा।

सत्यकामके मनमें ये गायें केवल चार पैरवाली और चार थनवाली पशुमात्र नहीं थीं। वह तो इन गायोंमें वेदको देखता था, और कभी-कभी एकाध गायको सुहलाते-सुहलाते या खिलाते-खिलाते ध्यानमें चढ़ जाता तब तो कितनी ही देरतक वह अपनी देहकी सुधि-बुधितक भूल जाता।

इस प्रकार वर्षों बीत गये, तब एक दिन एक बैलकी वाणी निकली। वह बोला, 'सत्यकाम! अब हम हजार हो गये हैं। हमको आचार्यके पास ले जा, तू अब ज्ञानका अधिकारी हो गया।'



बैलने ज्ञानका उपदेश किया और गुरुने भी आश्रममें पहुँचनेके बाद ज्ञान समझाया।

इस प्रकार गायोंकी आराधनासे ज्ञानप्राप्ति भी हो गयी।

दूसरी ऐसी कथा पद्मपुराण और रघुवंशमें राजा दिलीपकी आती है। कुलगुरु वसिष्ठकी दी हुई नन्दिनी गायकी पूजा राजा दिलीप अपनी रानी सुदक्षिणाके साथ-साथ करते हैं, तब उनको पुत्रका वरदान मिलता है।

यह सारी महिमा गो-पूजाकी है। इस प्रकारकी गो-पूजासे प्राचीन कालमें आर्योंके अन्तःकरणकी गोपालनकी श्रद्धाका पता लगता है।

गायकी पूजा कितने ही लोग वर्षभर अथवा कम-से-कम चौमासे भर करते हैं। 'गोत्रिरात्र' (गोतराट) नामका व्रत भादों सुदी तेरससे तीन दिनतक उपवास करके गायकी पूजाद्वारा समाप्त होता है, और चौथे दिन पारण किया जाता है। बहुधा सौभाग्य तथा सन्तानकी प्राप्तिके लिये गायकी पूजा की जाती है।

आश्विन महीनेमें हमारे देशका नैसर्गिक सौन्दर्य खिल उठता है, 'शस्यश्यामलां मातरम्' (शस्यके द्वारा हरी-भरी धरती माता) को उल्लासमें देखकर उसकी सन्तानोंमें भी उल्लास फैल जाता है। इस प्रकार आश्विन महीनेमें कृषि-विषयक उत्सवोंका प्रारम्भ हुआ जान पड़ता है। घरमें नवीन धान्य आनेके बाद उसकी, और उसके प्रदान करनेमें साधनस्वरूप गोकुलकी पूजा करना, यह प्राचीन सात्त्विक आर्योंको अभीष्ट जान पड़ा।

आश्विन शुक्ला पूर्णिमाके दिन नवीन धान्यकी खीर बनानेकी रूढ़ि—नवान्न भोजन बनवाना—नये धानका लावा देवताको चढ़ाना आदि प्रथा, इसी प्रकार ऐसे उत्सवके साथ गो-पूजा और गो-क्रीडन-विधिकी पद्धतिसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि गृह्यसूत्रोंमें कहे हुए गृहस्थाश्रमियोंके करने योग्य पाकयज्ञोंमें 'आश्वयुजी पाकयज्ञ'[1] शरद् ऋतुकी पूर्णिमाको ही होता था। उस दिन वर्षा करानेवाले इन्द्रदेवको खीर चढ़ायी जाती थी। साथ ही इन्द्र, इन्द्राणी, अश्विनीकुमार, आश्वयुजी पौर्णमासी तथा शरद्को आहुति दी जाती थी। और गायोंके प्रीत्यर्थ गाय और बछड़ोंको उस दिन रातको एक जगह रक्खा जाता था।

कार्तिक बदी द्वादशी 'गोवत्सद्वादशी' के नामसे प्रसिद्ध है। उस दिन अथवा धनतेरसको बछड़ेके साथ गोधनकी पूजा की जाती है। कार्तिक शुक्ला अष्टमीको 'गोपाष्टमी' का उत्सव होता है, उस दिन ग्वाले बछड़ोंका श्रृङ्गार करके चराने ले जाते हैं, श्रीकृष्ण-बलदेवने इसी दिन पहले-पहल गोचारण-लीला की थी। उसके संस्मरणके रूपमें यह उत्सव मनाया जाता है। इसके बाद अन्नकूट नामका दूसरा महोत्सव होता है।

द्रविण देशमें मकरसंक्रान्तिके बाद तीन दिनोंका उत्सव मनाया जाता है। पहले दिन इन्द्रपूजा, दूसरे दिन सूर्यपूजा और तीसरे दिन गोपूजा होती है। 'मट्टू पोंगल' नामक गायका 'पोंगल' यानी एक प्रकारका पाकोत्सव होता है। उस समय ढोर—घोड़ा वगैरह पशुओंकी पूजा भी होती है, और उन्हें बाजे-गाजेके साथ गाँवमें घुमाया जाता है।

व्रतके संयमके बाद उत्सवका उल्लास जीवनमें प्रवेश करता है। दक्षिणके देशोंमें आषाढ़के मूल नक्षत्र, भाद्र-अमावस्या या आश्विनकी अमावस्याके दिन किसानलोग 'पोला' नामक त्योहार अथवा वृषभोत्सव मनाते हैं। यह त्योहार बैलोंके लिये होता है। उस दिन उनको रँगकर और फूलोंके हार तथा आभूषणोंसे सुसज्जित करके गाँवमें घुमाते हैं।

'पोला' के दिन किसानलोग अपने-अपने ढोरका प्रदर्शन करनेके लिये आतुर रहते हैं। उस दिन बाजी लगाकर बैल दौड़ाये जाते हैं। इस प्रकार दिनभर किसान आनन्दमें मग्न रहते हैं। रातको बाजे-गाजेके साथ बैलोंका जुलूस निकाला जाता है। यह एक प्रकारका सामाजिक उत्सव जान पड़ता है।

यह प्रसिद्ध कहावत है कि-

'जोत, खाद और पानी, कर्मको लावें तानी॥'

इन तीनों क्रियाओंमें—जोतनेमें, खाद भरनेमें और पानी खींचनेमें बैलकी सहायता बहुत मूल्यवान् है। गायको मातृपद देकर हम जो 'गाय माता गोमती' कहते हैं, उसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं।

ऋषिपञ्चमी (आश्विन सुदी पञ्चमी) उत्सव नहीं बल्कि एक व्रत है। इस व्रतमें बैलके श्रमसे पैदा हुई वस्तुओंका उपयोग न करनेका संयम किया जाता है। जानवरोंके द्वारा हम स्वार्थके लिये मेहनत लेते हैं। परन्तु इसे लेनेका हमको अधिकार नहीं। जिस दर्जेतक हम पशुओंसे सेवा लेते हैं उस दर्जेतक हम दोषी हैं—यह ध्यानमें

१. इसे पृषातक कर्म कहते हैं।

रहे, इसीलिये ऋषिपञ्चमीके दिन पशुओंकी मेहनतके बिना जो खाद्य पदार्थ तैयार हो सके, उसीसे निर्वाह करना पड़ता है।

आजकलके रिवाजके अनुसार यह स्त्रियोंका त्योहार बन गया है, और वह भी अधेड़ स्त्रियोंका। सच पूछिये तो ऋषियोंकी पूजा प्रत्येकके करने योग्य है। ऋषियोंमें स्त्रियाँ भी हैं और पुरुष भी। ऐसा लगता है कि वानप्रस्थ-सेवन करते हुए ऋषियोंके सरल जीवनकी स्मृतिमें ही यह उत्सव मनाया जाता है।

शिववाहन नन्दीके वंशजके रूपमें बैलको पूज्य मानते हैं। खेतीके काममें उनका खूब उपयोग होता है। और इससे उनकी पूज्यता बढ़ गयी है। लिङ्गायत नन्दीको 'बसव' नामसे पुकारते हैं, और खेतीके द्वारा देशकी सम्पत्ति बढ़ानेके कारण उनको पूज्य मानते हैं।

बंगालमें ऋषिपञ्चमीके व्रतके बदले एक दूसरा विचित्र व्रत प्रचलित है। वहाँ ऐसी मान्यता है कि आषाढ़ महीनेमें पृथ्वी तीन दिन रजस्वला रहती है। उन तीन दिनोंमें कोई जमीन नहीं जोतता और बीज नहीं बोता। इन दिनोंको वहाँके लोग 'अम्बुवासी' कहते हैं। उन दिनों बैलके श्रमसे उत्पन्न पदार्थ वर्ज्य समझा जाता है, और दूसरी रीतिसे उगा हुआ धान्य लोग खाते हैं।

इसी प्रकार घोड़े और हाथियोंके भी हमारे यहाँ कई उत्सव और त्योहार हैं।

प्राणी-पूजाके महत्त्वका एक रहस्य यह है कि कितने ही प्राणियोंकी पवित्रता देवता-विशेषका वाहन होनेके कारण विशेषरूपसे स्वीकार की गयी है। इन्द्रका वाहन हाथी, शिवका वाहन वृषभ, यमका भैंसा, दुर्गाका वाहन सिंह और बाघ और गणेशका वाहन मूषक—इसी प्रकार और भी कितने हैं।

प्राणी-पूजा-इतिहास और उससे सम्बन्ध रखनेवाले व्रत तथा उत्सवोंमें आज हमने गौके सम्बन्धमें कुछ परिचय किया है। परन्तु इस पूजाके रहस्यके विषयमें हमें आजके युगमें फिरसे विचार करना है; उसे आजका युगधर्म समझकर व्यवहारमें लाना है। मनुष्य तथा प्राणीके बीच केवल मजदूरीका सम्बन्ध है, ऐसा न मानकर यह समझें कि प्राणी-जगत् मनुष्य-जगत्का कुटुम्बी है और उसकी यथायोग्य पूजासे मानव-जातिका कल्याण ही होगा। हमारे प्राचीन उत्सवोंको आज जीता-जागता त्योहार बनाना आवश्यक है। ऐसा होगा तभी हमारी संस्कृति कुण्ठित होनेसे बचेगी।

(बं० खेडुत पञ्चाङ्ग)

वेदमें गौका जुलूस

यया द्यौर्यया पृथिवी ययापो गुपिता इमाः। वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि॥ ४॥

शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधिपृष्ठे अस्याः। ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधा॥ ५॥

(अथर्ववेद १०। १०)

अर्थात् जिस गौके द्वारा द्यु, पृथिवी एवं जलमय अन्तरिक्ष—ये तीनों लोक सुरक्षित हैं, उस सहस्रधाराओंसे दूध देनेवाली गौकी हम प्रशंसा करते हैं! सौ दोहनपात्र लिये सौ दुहनेवाले तथा सौ संरक्षक इसकी पीठपर सदा खड़े रहते हैं। इस गौसे जो देव जीवित रहते हैं, वे ही सचमुच उस गौका महत्त्व जानते हैं। चित्रमें गायका एक जुलूस दिखाया गया है। ऐसे जुलूस वैदिक समयमें निकला करते थे। इससे विदित होता है कि गायका उस समय कितना आदर-मान था और गायका क्या स्थान था। जुलूसमें दिखायी हुई गायकी तुलना हमारे अज्ञान, अनाचार, दैन्य और दुर्दशाका जीवित विज्ञापन करनेवाली आजकी अस्थि-कंकालसार दुग्धघृत-रहित गायसे करनेपर किसका हृदय न रो देगा!!



पिंजरापोल एक काम यह भी करें

(लेखक—श्रीमाताशरणजी)

बछड़ोंको बधिया बनानेकी जो वर्तमान रीति है, वह बहुत ही क्रूर है। या तो नस्तर लगाते हैं, नहीं तो अधिकांश-में उनके अण्डकोशोंको कूटते हैं। इससे उनको भयानक कष्ट होता है। महीनोंतक अङ्ग सूजा रहता है, खून बहता है, घाव हो जाते हैं और बड़ी वेदना भोगनेके बाद वे कहीं अच्छे हो पाते हैं। इसकी जगह डा० बर्डिजोने एक नये ढंगकी सँड़सी (केस्ट्रेटर) बनायी है, जिससे बछड़ेकी नस दबायी जाती है और सिर्फ दो ही चार मिनटोंमें वह बधिया हो जाता है। न तो उसके बाद कोई तकलीफ होती है, न सूजन होती है और न खून बहता है और न कोई सार-सँभार रखनेकी ही आवश्यकता होती है। पिंजरापोलोंके गो-चिकित्सक इस कार्यको आसानीसे कर सकते हैं। पिंजरापोलोंमें इसकी व्यवस्था रहे और क्रूर पद्धतिसे बधिया बनानेवाले लोगोंको समझाकर उन्हें इससे लाभ उठाने दिया जाय तो बधिया बनानेके समय बछड़ोंको जो असीम कष्ट होता है, उससे तो वे बच ही जायँगे, साथ ही बधिया बनानेकी इस सरल और सुगम रीतिको जान लेनेपर अभी जो बहुत-से लोग बछड़ोंको नाममात्रके साँड़ बनाकर उन्हें भटकने और दुःखपूर्ण जीवन बितानेके लिये असहाय छोड़ देते हैं, वे भी ऐसा करनेसे रुक जायँगे। बधिया बनानेमें बछड़ेको कष्ट होगा, इस भयसे लोग बछड़ोंको बैल न बनाकर साँड़ बनाना चाहते हैं। भविष्यमें उनके खान-पान और भरण-पोषणकी तो कोई नियत व्यवस्था कर नहीं पाते, केवल दागकर असहाय छोड़ देते हैं। ऐसे साँड़ पूरा घास-चारा न मिलनेसे पनपने तो पाते ही नहीं, उल्टे कमजोर हो जाते हैं। उनको कोई खेतोंमें जोतते नहीं। फलतः निकम्मा समझकर खानेको भी नहीं देते। वे जहाँ-तहाँ भटकते हैं। लोगोंके खेतोंमें घुस जाते हैं तो वहाँ उनपर बुरी तरहसे मार पड़ती है। ऐसे कमजोर और भूखे साँड़ोंसे जब गायोंका संयोग होता है तो उनकी सन्तान बहुत ही दुर्बल और सर्वथा हीन-गुणवाली होती है। बछिया बहुत छोटी रासकी और बहुत कम दूध देनेवाली होती है और बछड़े बहुत निकम्मे होते हैं। जिससे गायकी नस्ल बिगड़ जाती है। ऐसे साँड़ बनाना वास्तवमें उनके जीवनको बिगाड़ना और दुखी करना है। साथ ही गो-जातिको भी बड़ी भारी हानि पहुँचाना है। बधिया बनानेकी सरल और बिना तकलीफकी तरकीबका प्रचार होनेपर ऐसे निकम्मे नस्ल बिगाड़नेवाले साँड़ोंका बनना रुक जायगा। वे जब बधिया हो जायँगे, तब उन्हें अच्छा घास-चारा मिलेगा, और तब वे पुष्ट होकर खेतीके कामके लिये अच्छे बैल बन सकेंगे। इससे दुहरा-तिहरा लाभ होगा। गो-वंशकी उन्नति होगी, खेतीमें सुविधा होगी और उनको भूखों मरने-भटकनेके बदले अच्छा घास-चारा मिलने लगेगा। पिंजरापोलोंको इस बधिया-प्रथाका काम हाथमें लेकर पुण्य-सञ्चय करना चाहिये।

गोमन्त्र-जापसे पापनाश

घृतक्षीरप्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः।
घृतनद्यो घृतावर्तास्ता मे सन्तु सदा गृहे। घृतं मे सर्वगात्रेषु घृतं मे मनसि स्थितम्॥
गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च। गावश्च सर्वगात्रेषु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

(पद्म० सृष्टि० ४८)

पवित्र होकर आचमन करके प्रातःकाल और सायंकाल इन मन्त्रोंका जप करनेसे मनुष्यके सारे पापोंका क्षय होता है और वह स्वर्गमें पूजित होता है।



पिंजरापोल और गोशाला

परे वा बन्धुवर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा।
आपन्ने रक्षितव्यं तु दयैषा परिकीर्तिता ॥

(अत्रिसंहिता ४१)

'अपना, पराया, मित्र, द्वेषी और वैरी कोई भी हो, विपत्तिमें पड़े हुएकी सदा रक्षा करनेको ही दया कहा जाता है।

दया उपयोगिताकी अपेक्षा नहीं करती। वह तो मानव-स्वभावका एक सात्त्विक गुण है, जो बिना किसी भेदभावके पीड़ित प्राणीमात्रकी पीड़ा दूर करनेके लिये मानव-हृदयमें सहानुभूति, परदुःखकातरता, सात्त्विक उत्साह और उत्तेजन तथा उत्कृष्ट उत्सर्गकी भावना उत्पन्न करता है, और मनुष्यको दुखियोंके दुःख दूर करनेके पवित्र कार्यमें बरबस लगा देता है। फिर, असहाय और अशक्त गायका पालन-पोषण करने और उसे सुख पहुँचानेकी चेष्टा करनेमें तो दयाका प्रश्न ही नहीं है। इसमें तो कृतज्ञताजनित विशुद्ध कर्तव्यपालन है। जिस गोमाताने अपनी अच्छी हालतमें हमारी अपार सेवा की, जिसका जन्म ही हमारी भलाईके लिये हुआ और जिसकी उदारतापर ही हमारा जीवन निर्भर रहता है। जिसने हमें अमृत-सा दूध दिया, खेतीके लिये बैल दिये, खेतके लिये खाद दी और अब भी दे रही है, उसका दूध सूख जानेपर या उसके लूली-लँगड़ी, बीमार और असहाय हो जानेपर उसका पालन-पोषण करनेसे मुँह मोड़ लेना तो एक प्रकारकी घोर कृतघ्नता और कर्तव्यसे विच्युति है। आजकल उपयोगितावादकी लहर बह रही है, इस कारण महत्त्वपूर्ण दयावृत्ति और कर्तव्य-पालनके प्रति लोगोंकी उपेक्षा होने लगी है। वे कहते हैं—'जो प्राणी हमारे किसी उपयोगमें नहीं आते, जो न दूध दे सकते हैं और न खेती-बारीके ही काम आते हैं, ऐसे निकम्मे पशुओंके पेटका गड्ढा भरते रहना मूर्खता नहीं तो और क्या है। प्रकृति स्वयं निरुपयोगी बनाकर जिनका अन्त कर देना चाहती है, उनको बचानेमें अपनी शक्ति, समय और धनका उपयोग करना उनका दुरुपयोग ही तो है।' मतलब यह कि आजके इस जड़युगमें मनुष्यकी दृष्टि सब ओरसे हटकर केवल अर्थ-पर ही आकर टिक गयी है। इसीसे प्रत्येक काममें उसके सामने केवल उपयोगिताका प्रश्न रहता है; और इसीसे वह आज अपने वृद्ध और बीमार सगे माता-पिता एवं आत्मीय स्वजनोंकी भी उपेक्षा—उनसे घृणा करने लगा है और उनके भरण-पोषणमें समय, शक्ति और अर्थका अपव्यय मानकर उनसे अपनेको बचाने लगा है! अर्थपरायणताने उपयोगिता-के नामपर आज मनुष्यको केवल देवत्वकी ओर जानेसे ही नहीं रोक दिया है, वरं मानवतासे भी उतारकर उसे दया-मायाशून्य असुर बना दिया है! इसीसे आज वह सहानुभूति, सेवा और दूसरोंके सुख-शान्तिकी कुछ भी परवा न करके अपनी पवित्र सात्त्विकी वृत्तियोंको मारकर केवल अर्थके पीछे उन्मत्त हो रहा है और उन्नतिके नामपर दिनोंदिन पतनके गहरे गड्ढेमें गिरता जा रहा है। मनुष्यके जीवनका ध्येय जब एकमात्र धन ही बन जाता है, तब उसमें एक ऐसा मोह पैदा होता है जो उसे अपने सुख-शान्तिके साधनोंसे भी विमुख कर देता है; यहाँतक कि उससे वह ऐसे कर्म करवाता है जिनसे उसके अपने ही इहलौकिक और पारलौकिक जीवनकी सुख-शान्तिका स्रोत भी चिरकालके लिये सूख जाता है। और जब मनुष्य अपने सुख-शान्तिको ही नहीं देखता, तब दूसरेकी सुख-शान्तिकी चिन्ता तो उसे क्यों होने लगी?

यही कारण है कि आजके धनकामी लोग 'व्यर्थ अर्थनाश' बताकर असहाय पशुओंका भरण-पोषण करनेवाली उपयोगी संस्थाओंकी ओरसे उदासीन होते चले जा रहे हैं और उनका विरोध करनेमें ही अपने कर्तव्यका पालन समझते हैं। दुःख तो इस बातका है कि केवल आर्थिक दृष्टिकोणसे गो-पालन करनेवाले पाश्चात्त्य देशोंकी पद्धतिपर मुग्ध होकर हमारे सम्मान्य अर्थशास्त्री विद्वान् भी आज वृद्ध और अपङ्ग पशुओंको पृथ्वीका भार बताकर उन्हें न पालनेकी सलाह देने और प्रकारान्तरसे उनको कत्ल कर डालनेके लिये प्रोत्साहित करने लगे हैं। ऐसी हालतमें इस प्रकारके विचारवाले लोगोंके द्वारा पिंजरापोल और गोशालाओंकी अनुपयोगिता दिखलाया जाना कुछ भी आश्चर्यकी बात नहीं है। अवश्य ही ऐसी संस्थाओंका विरोध मनुष्यकी एक पवित्र, कोमल और मधुर वृत्तिको मारना ही है!

पिंजरापोलोंकी स्थापना वस्तुतः उन सहृदय पुरुषोंकी विशुद्ध धार्मिक भावनासे हुई थी जिनके हृदयमें बड़ी सुकोमल-सुमधुर दयाकी वृत्ति थी और जो वृद्ध मा-बापकी सेवा करनेकी भाँति ही बूढ़ी गो-माताकी सेवाको भी अपना

परम कर्तव्य मानते थे। पिंजरापोल नयी संस्था नहीं है। जैन और बौद्धोंके समय भी ऐसी संस्थाएँ थीं। मुसल्मानी कालमें भी थीं और उनमें केवल गायोंका ही नहीं, बीमार और असहाय अन्यान्य पशु-पक्षियोंका भी इलाज और भरण-पोषण किया जाता था। यह एक ऐसा पवित्र धर्म समझा जाता रहा है कि सारा समाज इसमें हाथ बँटाता है और व्यापारी लोग अपने व्यापारपर 'लाग' लगाकर इस कार्यमें सहायता करते हैं। अपङ्ग प्राणीकी सेवामें एक परम पुण्यकी और पवित्र कर्तव्य-पालनकी श्रद्धा थी और वह सच्ची थी। इसीसे लोग अपने-अपने घरोंमें भी अशक्त प्राणियोंकी सेवा अपने हाथों करते थे। जब कोई गृहस्थ ऐसी परिस्थितिमें पड़ जाता कि खुद तन और धनसे सेवा नहीं कर सकता था तब उसके पशुको सँभालना पिंजरापोल-का काम था। इस प्रकार पिंजरापोल न केवल पशु-पीड़ाका निवारण करता था वरं धार्मिक-भावसम्पन्न असमर्थ गृहस्थ-का बोझ भी हलका करके उसे इस योग्य बना देता था कि वह नया उपयोगी पशु लाकर उससे लाभ उठा सके। आज भी प्रायः ऐसा ही होता है। पिंजरापोलोंमें इस समय सरकारी अनुमानसे लगभग तीन करोड़ रुपये वार्षिक खर्च होते हैं। हिंदुओंकी संख्या २४ करोड़ मानी जाय तो प्रत्येक हिंदूके हिस्सेमें महीनेभरमें सिर्फ दो पाई (एक पैसेका भी दो तिहाई भाग) आती है; बूढ़ी और असहाय गो-माताके लिये हिंदुओंका यह नन्हा-सा दान क्या अनुपयोगी है? क्या हेय और घृणित है?

इसमें कोई सन्देह नहीं कि विभिन्न कारणोंसे आज सभी पिंजरापोलोंकी दशा सन्तोषजनक नहीं है और यह भी सत्य है कि युगपरिवर्तनके साथ-साथ पिंजरापोलोंकी कार्य-पद्धतिमें भी उचित परिवर्तनकी आवश्यकता हो गयी है। पर यह कहना सर्वथा असंगत है कि पिंजरापोल और गोशालाएँ सर्वथा व्यर्थ और हानिकारक संस्थाएँ हैं। हाँ, मूल उद्देश्यकी रक्षा करते हुए उनको आर्थिक दृष्टिसे भी जितना उपयोगी और जितना स्वावलम्बी बनाया जा सके, उतना बनाना चाहिये। सुधारके लिये सदा ही तैयार रहना चाहिये; परन्तु सुधारके नामपर संहार न हो जाय; इसकी सावधानी रखनी चाहिये। अवश्य ही, नवीनताके मोह-मदमें अंधे होकर प्राचीनता मात्रकी जड़ उखाड़ने जाना जैसे बड़ी भूल है, वैसे ही प्राचीनताके नामपर अड़कर धर्मसे अविरुद्ध नवीन उपयोगी पद्धतिको स्वीकार न करना भी कम भूल नहीं है।

कहते हैं भारतवर्षमें छोटे-बड़े सब मिलाकर लगभग २५०० या ३००० पिंजरापोल और गोशालाएँ हैं। इनको मुख्यतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया जा सकता है। १. जिनके पास पर्याप्त संगृहीत धन और काफी आमदनी है, जिनका सञ्चालन नियमितरूपसे सम्भ्रान्त सज्जनोंकी कमेटीद्वारा होता है और जिनमें कुछका रेजिस्ट्रेशन भी हो चुका है; २. जो आरम्भमें कुछ लोगोंके उत्साहसे स्थापित हो चुकी हैं पर जिनके पास न तो धन है, न काफी आय है और न उत्तरदायी कार्यकर्त्ता ही हैं; और ३. जिनकी पेशेवर लोगोंके द्वारा, पैसा कमानेके साधनके रूपमें स्थापना हुई है और इसी उद्देश्यसे जिनका येनकेनप्रकारेण सञ्चालन भी हो रहा है।

इनमें तीसरी श्रेणीकी संस्थाएँ (?) तो सभी दृष्टियोंसे सर्वथा अनुपयोगी और हानिकारक हैं। दूसरी श्रेणीकी संस्थाओंके लिये कहा जा सकता है कि सुयोग्य कार्यकर्ता मिलें और आमदनी हो तो उनका सुधार हो सकता है। वर्तमान स्थितिमें तो वे बहुत उपयोगी नहीं हैं। ऐसी संस्थाओंमें इस प्रकारकी हालत देखी जाती है कि जिस समय किसी अच्छे कार्यकर्त्ताके हाथमें काम हो और व्यापारी वर्गकी स्थिति अच्छी हो, उस समय तो काम ठीक-ठीक चलता है, पर जिन दिनों अच्छे कार्यकर्त्ता नहीं होते या व्यापार मंदा होता है और आवश्यक चंदा नहीं हो पाता, उन दिनों इनके पशु या तो भूखों मरते हैं या आधे पेट रहते हैं। पिछले अकालके समय कितनी ही गोशालाओंकी ऐसी दशा देखनेमें आयी थी। परन्तु पहली श्रेणीकी संस्थाओंके लिये भी यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें सभीका काम सुचारुरूपसे संचालित होता है। लोग पैसा तो दे देते हैं, पर समय नहीं दे पाते। जो सभापति, मन्त्री और कार्यकारिणीके सदस्य होते हैं, वे प्रायः केवल नामके ही होते हैं। समयके अभाव, दिलचस्पी न होने तथा गोपालनकी पद्धतिके अज्ञानसे वे कुछ भी नहीं कर पाते। बहुत-से तो जाते ही नहीं। जिनके जिम्मे प्रबन्धका भार रहता है, वे भी न तो अनुभवी होते हैं न क्रियाशील। इससे प्रबन्धमें त्रुटियाँ बनी ही रहती हैं। नयी उन्नतिकी बात तो सोचे ही कौन। पर्याप्त वेतन देकर सुयोग्य अनुभवी पुरुषोंको प्रायः नियुक्त किया नहीं जाता। कहीं कोई अनुभवी पुरुष रक्खे भी जाते हैं तो एक संस्थामें बीसों मालिक होनेसे उन्हें कार्य करनेका उचित अवसर या पर्याप्त सुभीता नहीं मिलता। नियम तथा प्रणालीमें भी

समय तथा पशुपालन-विज्ञानकी जानकारीके अभावसे कोई खास सुधार नहीं किया जाता। ऐसी और भी कई बातें होती हैं, जिनके कारण व्यवस्था ठीक नहीं हो पाती और जितना लाभ होना चाहिये, उतना नहीं होता।

कसाइयोंके हाथोंसे गाय बचाना, अपङ्ग और असहाय गायोंके जीवन-निर्वाहकी सुन्दर सुव्यवस्था करना और दूधवाली गायोंकी हत्या रोकनेके लिये सब प्रकारके उचित प्रयास करना आदि सभी आवश्यक कार्य हैं और धर्म हैं। परन्तु सार्वजनिक रूपसे सच्ची गोरक्षा तो तभी सम्भव है, जब गौका दूध पर्याप्त मात्रामें बढ़ जायगा और गौमें बहुत मजबूत और बलवान् बछड़ा पैदा करनेकी शक्ति आ जायगी। पिंजरापोल और गोशालाएँ—इस दिशामें भी बहुत कुछ कार्य कर सकती हैं। मेरी समझसे पिंजरापोलों और गोशालाओंको अपनी-अपनी परिस्थितिके अनुसार नीचे लिखे कार्य करनेका प्रयत्न करना चाहिये—

(१) वृद्ध, अपङ्ग, बीमार, दुर्बल और ठाठ गाय, असहाय बैल और ऐसे ही बछड़े-बछड़ी आदिके पालन-पोषणकी पूरी व्यवस्था हो, जिसमें वे जीवनके अन्तिम श्वासतक सुखपूर्वक खा-पीकर रह सकें। गोजातिका ऋण तो उतर ही नहीं सकता, परन्तु सच्ची कृतज्ञता प्रकट करने और मानव-हृदयकी बड़ी कोमल दयावृत्तिकी रक्षा करनेके लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है।

(२) अच्छी जातिकी ऐसी गायोंको, जो चारे-दानेकी कमी और देख-रेखके अभावसे कमजोर होकर बिसुक गयी हों, चुनकर और उन्हें अलग रखकर अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाय और उनकी पूरी-पूरी देख-भाल की जाय, जिससे वे बहुत उपयोगी और बड़े परिमाणमें दूध देनेवाली बन सकें। (राजपूतानेके विगत अकालके समय पाँच-पाँच रुपयोंमें अच्छी जातिकी बिसुकी हुई मरणासन्न गायें बिकी थीं, जो अच्छी तरह खिलाने-पिलानेपर प्रतिदिन १२ से १५ सेर दूध देने लगी थीं। ऐसी कुछ घटनाएँ मैंने स्वयं देखी-सुनी हैं।)

(३) एक अलग दुग्धालय-विभाग हो, जिसमें अच्छी जातिकी दुधार गायोंका—अपनी गायोंमें चुनकर, खरीदकर, बछड़ियोंको उत्तम गाय बनाकर—संग्रह किया जाय। घास-चारे और हवा-पानीके उचित उपयोग तथा अच्छे बलवान् साँड़ोंके संयोगसे उनमें और उनकी सन्ततिमें दूध बढ़ानेका प्रयत्न किया जाय। वैज्ञानिक रीतिसे दूधके दुहनेसे लेकर उसके रूपान्तर करनेतक सावधानी रक्खी जाय। इन गायोंका दूध जनताको—खास करके बीमारों और बच्चोंके लिये उचित मूल्यपर बेचा जाय। जब गौओंकी संख्या अधिक हो जाय तब उन्हें विश्वासी सद्गृहस्थोंको पालन करनेके लिये उचित मूल्यपर बेचा जाय; पर शर्त यह रहे कि जब गाय दूध देना बंद कर देगी तब वे उसका पालन करेंगे, और असमर्थताकी हालतमें हर किसीके हाथ न बेचकर पिंजरापोलको वापस दे देंगे।

(४) विश्वासी सद्गृहस्थोंको बैल बनानेके लिये बछड़े देकर बदलेमें बछड़ियाँ ले ली जायँ और उन्हें अच्छी दुधार गायें बनाया जाय।

(५) पिंजरापोलों और गोशालाओंमें अच्छी-बुरी सभी जातियोंके मजबूत और कमजोर गाय, बछड़े और साँड़ आदि प्रायः साथ-साथ रहा करते हैं। इससे बिल्कुल कमजोर और अनुपयोगी गायें भी बरधायी जाती हैं और बहुत कमजोर निकम्मे साँड़ बरधानेका काम करते हैं। इसका फल यह होता है कि उनके बछड़े और बछड़ी बहुत ही कमजोर पैदा होते हैं। जो अच्छा चारा-दाना मिलनेपर भी रज-वीर्यके दोषके कारण अपनी हालत नहीं सुधार सकते। ऐसी बछड़ियाँ बहुत देरसे गाभिन होती हैं और ब्यानेपर थोड़े-से दिनोंतक बहुत थोड़ा दूध देती हैं; और बछड़े इतने दुर्बल होते हैं कि वे साँड़ बनने योग्य तो रहते ही नहीं—अच्छे बैल भी नहीं बन सकते। इस प्रकार दोनों गृहस्थके लिये भाररूप होकर जीते हैं और दुःख भोगते हैं। ऐसे कमजोर गाय-बैलोंसे दूधके उत्पादनकी शक्ति घटती है और तमाम सन्तति खराब हो जाती है। इसलिये ऐसी गायोंका और साँड़ोंका संयोग कभी हो ही नहीं—इस बातका पूरा ख्याल रखना चाहिये।

(६) देशमें अच्छे साँड़ोंकी बहुत कमी हो गयी है। सरकारी अनुमान है कि जहाँ अच्छे ढाई सौ साँड़ चाहिये वहाँ एक साँड़ है। इसलिये अच्छे-से-अच्छे साँड़ बनाये जायँ और पाले जायँ। उनमेंसे कुछको अपने इलाकेकी अच्छी गायोंके बरधानेके लिये सुरक्षित रक्खा जाय, जिससे उनकी नस्लमें सुधार हो। यदि प्रत्येक पिंजरापोल दस-बीस अच्छे-से-अच्छे साँड़ बनाकर जनताके उपयोगके लिये उन्हें समर्पित कर दे तो गो-जातिकी बहुत बड़ी सेवा हो सकती है।

(७) ऐसे असमर्थ सद्गृहस्थोंकी अच्छी जातिकी गाभिन गायें, जिन्होंने दूध देना बंद कर दिया है, पालन

करनेके लिये कम खर्चपर पिंजरापोलोंमें ले ली जायँ और ब्यानेके बाद उन्हें वापस दे दिया जाय। इसी प्रकार असमर्थ गृहस्थोंके छोटे बछड़े-बछड़ियोंका भी पालन किया जाय। ऐसे गाय-बछड़ोंको कोई मालिक बेचना चाहें तो उन्हें पिंजरापोल अच्छी दुधार गाय और मजबूत बैल बनानेके लिये खरीद ले।

(८) पिंजरापोलोंके पास प्रायः जमीन होती ही है। नहीं तो जमीनका प्रबन्ध किया जाय और उसमें उपयोगी घास-चारेकी खेती की जाय और प्रचुर मात्रामें घास-चारा उपजाया जाय।

(९) प्रतिवर्ष हरे घास-चारेको ठीक पद्धतिके अनुसार गड्ढोंमें दबाकर या कुप्पोंमें भरकर रक्खा जाय—Silage बनाये जायँ, जिनसे सूखी मौसिममें पशुओंको पुष्टिकर चीज खानेको मिल सके।

(१०) सूखे और हरे चारेका स्टाक किया जाय और काफी स्टाक होनेपर कम-से-कम दो वर्षके लिये अपनी आवश्यकताका सामान रखकर शेष उचित मूल्यपर गृहस्थोंको बेचा जाय।

(११) पर्याप्त गोचरभूमि हो, जिसमें संस्थाकी गायें तो चरें ही, उचित कीमतपर दूसरे लोगोंकी भी बिसुकी हुई गायें और बछड़ी-बछड़े वहाँ चर सकें।

(१२) गोबरको जलानेके काममें न लेकर वैज्ञानिक रीतिसे उसकी खाद बनायी जाय। इसी प्रकार गोमूत्रका भी खादके काममें उपयोग किया जाय। पिंजरापोलकी परती जमीनमें इस खादसे बहुमूल्य घास-चारा पैदा हो सकता है।

(१३) कृषि-सुधारके आवश्यक और सुविधासे काममें लेने लायक तरीकोंसे फल-फूल और साग भी उपजाया जाय और उसे बेचा जाय। गोबर गोमूत्रकी खाद से इस खेतीमें भी बहुत लाभ हो सकता है।

(१४) पशुओंकी सफाई तथा स्वास्थ्यका, उनके शरीरपर किलनी—जूँ आदि कीड़े घर न कर सकें, इसका पूरा ध्यान रक्खा जाय। अङ्गहीन, बीमार, निर्बल, बलवान् पशुओंके लिये रहने और चरनेके अलग-अलग स्थान हों। ताकि न तो परस्पर रोग संक्रमण कर सकें, न बलवान् पशुकी मारके डरसे निर्बल पशु भूखा रहकर मृत्युकी ओर अग्रसर हो। उन्हें धोने, नहलाने, पोंछने, उनमें जानवर न पैदा होने देने इत्यादिकी पूरी व्यवस्था रहनी चाहिये। इमारतें, मकान इस ढंगके बनाने चाहिये जिनमें हवा और प्रकाश आता हो तथा जिनकी अच्छी तरह सफाई की जा सकती हो। कुएँ तथा सिंचाई आदिकी व्यवस्था वैज्ञानिक ढंगसे हो।

(१५) अच्छे गोचिकित्सक (Veterinary Doctor) को रक्खा जाय और साथ ही एक अस्पताल या दवाखाना रहे। बीमार पशुओंका सावधानीसे इलाज हो, जिस समय पशुओंमें कोई संक्रामक रोग फैलने लगे, उस समय यदि उन्हें दवाके जलसे नहलाने, प्रतिषेधक दवा या इंजेक्शन देनेकी पूरी व्यवस्था हो तो रोगका विस्तार सहज ही रुक जाय और बहुत-से पशुओंके प्राण अनायास ही बच जायँ।

कोई खास संक्रामक रोगसे पीड़ित गाय पिंजरापोलमें आवे तो उसे अलग रखकर इलाज करना चाहिये, जिससे दूसरी गायोंपर उसका असर न हो। गायोंको भर्ती करते समय यदि गोशालाके डाक्टर गायकी परीक्षा कर लिया करें तो सर्वोत्तम है।

(१६) प्रत्येक संस्थामें एक पशु-पालन-विज्ञानमें पारङ्गत जिम्मेवार वैतनिक पुरुष रहने चाहिये। पशुओंकी पहचान, उनके रखने और खिलाने-पिलानेकी व्यवस्था, सफल खेतीका प्रबन्ध, घास-चारेका संग्रह, हरे चारेके Silage बनानेकी व्यवस्था, स्वच्छता और सफाईका प्रबन्ध, सब चीजोंका अलग-अलग हिसाब और रजिस्टर रखने आदि सारे काम उन्हींके नियन्त्रण और देख-रेखमें होने चाहिये। वे पशु-चिकित्सामें भी दक्ष हों तो सबसे अच्छी बात है। वैसी हालतमें पशुचिकित्साके लिये अलग डाक्टर न रखकर एक सुयोग्य सहकारी रखनेसे भी काम चल सकता है।

(१७) पशु, घास-चारा, दुग्धालय, पशुओंकी जाति और उनके माता-पिता, पशुओंके जन्मपत्र और संस्थाके आय-व्यय आदिका ब्योरेवार विवरण रखना चाहिये।

(१८) नये पिंजरापोल, गोशालाएँ बनाये जायँ तो उनको शहरोंमें न बनाकर ऐसे स्थानोंमें बनाना चाहिये जहाँ खुली जगह हो। चारों ओर विस्तृत खेत हों। नदी-तट हो तो बहुत अच्छा है, नहीं तो, जलका पूरा प्रबन्ध तो अवश्य हो।



गो-सेवाका साक्षात् फल

(लेखक—स्वामीजी श्रीभूमानन्दजी)

बहुत दिनोंकी बात है, एक दिन एक संन्यासी एक ब्राह्मण सद्गृहस्थके घर अतिथिरूपमें पधारे। उस परिवारमें दो ही आदमी थे—पति और पत्नी। परिवारमें कोई कमी न थी। दोनों ही धर्माचरणमें लगे रहते थे। परन्तु सन्तानहीन होनेके कारण उनके मनमें सर्वदा कमी खटकती और अशान्ति बनी रहती थी। ब्राह्मण-दम्पतिने खूब आदर-सत्कार करते हुए संन्यासीको घरमें टिकाया और यथासाध्य उनकी सेवा की। उन दिनों सब लोगोंके मनोंमें साधु-संन्यासीके प्रति विश्वास और भक्तिका भाव था। दूसरी ओर साधुलोगोंमें भी उस समय अपने वेषके अनुसार ही आचार-व्यवहार, बातचीत और विवेक था।

भोजनादिके बाद विश्राम कर लेनेपर संन्यासीके साथ नाना प्रकारकी बातचीत होने लगी। गाँवके दूसरे लोग भी साधुके दर्शनके लिये आये। बातचीतके सिलसिलेमें, ब्राह्मण-की अनुपस्थितिमें एक आदमीने कहा कि 'गाँवमें इस ब्राह्मण-दम्पतिके समान सत्यवादी, नम्रप्रकृति, धार्मिक और अतिथि-सेवा करनेवाला आदमी प्रायः देखनेमें नहीं आता। किन्तु दुःखकी बात यह है कि इनको सन्तान नहीं हुई; न जाने भगवान् इस प्रकारके धर्मात्माके ऊपर क्यों अप्रसन्न हैं।' पीछे सब लोग एक-एक करके अपने घर लौट गये, साधु उस रात ब्राह्मणके घरपर ही रहे।

दूसरे दिन प्रातःकाल साधुने अन्यत्र जानेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु ब्राह्मणने कहा कि 'आप गृहस्थके घर अतिथि हैं, भोजन बिना किये आप कैसे जा सकते हैं। दोपहरको भोजन करके विश्राम करनेके बाद आपको जहाँ जाना हो, वहाँ जाइयेगा।' संन्यासी राजी हो गये। इससे ब्राह्मण-दम्पतिने प्रसन्न होकर उनको प्रणाम किया। साधुने यह कहकर उन्हें आशीर्वाद दिया कि 'तुमलोगोंको पुत्रका मुँह देखनेका सौभाग्य प्राप्त हो।' ब्राह्मणने किञ्चित् आश्चर्यपूर्वक इस प्रकारके आशीर्वादका कारण पूछा। साधुने बतलाया कि 'अतिथिसेवाके द्वारा भगवान् नारायण प्रसन्न होते हैं। तुमलोगोंके इतने दिनोंके अतिथिसत्कारके फलस्वरूप अब स्वयं भगवान् प्रसन्न हो गये हैं, और मुझे निमित्त करके मेरे मुखसे यह वर प्रदान कर रहे हैं। तुमलोग इस विषयमें कोई सन्देह या अविश्वास न करो।'

ब्राह्मणने और भी विस्मित हो हाथ जोड़कर पूछा—'इस समय हमारा कर्तव्य क्या है?' साधुने उत्तर दिया, 'गो-सेवा'। साधु यथासमय ब्राह्मणके घरसे चले गये, ब्राह्मण-दम्पति भी एक ब्यायी हुई गाय लेकर उसकी सेवामें लग गये। गायको प्रातःकाल स्नान कराते। नयी-नयी घास लाकर खिलाते, सुन्दर पकाया हुआ अन्न तथा नाना प्रकार-के शस्योंके द्वारा उसे तृप्त करनेका प्रयास करते। इसी प्रकार गो-सेवा करते उनके दिन बीतने लगे। ब्राह्मणी गौके चरण धोकर उनको अपने केशोंसे पोंछती। चरणोदक मस्तकपर लगाती और पान करती। सन्ध्याके समय गो-गृहमें दीप जलाती और उसके लिये तृणोंकी कोमल शय्या तैयार कर देती। खूब तड़के उठकर गायके घरको साफ करती। इस प्रकारकी सेवासे थोड़े ही दिनोंमें गाय और उसका बछड़ा दोनों सुन्दर हृष्ट-पुष्ट दिखलायी देने लगे। आश्चर्यकी बात यह है कि कुछ ही समयमें ब्राह्मणीको गर्भके लक्षण दिखलायी देने लगे और समय आनेपर उनको एक बालक उत्पन्न हुआ। सारे गाँवमें आनन्दका सोता उमड़ चला। सबको उस साधुके आशीर्वादकी बात याद आ गयी। फल यह हुआ कि बहुत लोग गो-सेवामें लग गये।

इस घटनाके विषयमें मैंने लड़कपनमें ही सुना था। बादको जब कालेजमें पढ़ने गया, तब कालिदासका रघुवंश पढ़ते समय देखा कि सूर्यवंशीय महाराजा दिलीप जब सन्तानहीन होनेके कारण कुलगुरु वसिष्ठके पास अपनी दुःख-गाथा वर्णन करने लगे, तब महर्षिने उनको स्त्रीके साथ गो-माता सुरभिकी कन्याकी सेवा करनेके लिये उपदेश दिया—

सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः।
आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा॥

(रघुवंश १। ८१)

दिलीप तदनुसार रानी सुदक्षिणाके साथ भक्ति-भावसे वसिष्ठजीके बतलाये व्रतको धारण करके तन-मन-धनसे नन्दिनीकी सेवामें लग गये और उसकी रक्षा करनेके उद्देश्यसे उसके साथ वन, पर्वत और झरनोंके तीर भ्रमण करने लगे। इसके बाद मायाके सिंहका नन्दिनीके ऊपर आक्रमण करना आदि कथा सभी जानते हैं। राजा दिलीपकी गो-सेवाकी आन्तरिक परीक्षा करके नन्दिनीने उन्हें आशीर्वाद

दिया । उसके फलस्वरूप सुदक्षिणाके गर्भसे रघुका जन्म हुआ । 'असूत पुत्रं समये शचीसमा त्रिसाधना शक्तिरिवार्थमक्षरम् ।' (३ । १३)

अब भी इस विषयको पढ़ते ही मुझे अपनी बाल्यकालकी सुनी हुई घटना याद आ जाती है, और गो-सेवाके माहात्म्यके विषयमें हृदयमें विश्वास और दृढ़ता उत्पन्न हो जाती है ।

अब वृद्धावस्थामें मैंने भी अपने एक गृहस्थ शिष्यको गो-सेवा करनेका उपदेश दिया है और ढंग बतला दिया है । सुना है कि उसकी पत्नीको गर्भ है । आशा करता हूँ कि यथा-काल भगवान्‌की कृपासे उसे सन्तानकी प्राप्ति होगी ।* गो-सेवाका माहात्म्य प्राचीन कालमें भी था, वर्तमानमें भी है और भविष्यमें भी रहेगा । यह मेरा दृढ़ विश्वास है ।

गो-सेवाके माहात्म्यका वर्णन अनन्तकालतक करनेपर भी समाप्त न होगा । जान पड़ता है कि हृदयसे गो-सेवा करनेके फलस्वरूप ही गोकुलवासियोंको भगवान् श्रीकृष्णकी प्राप्ति हो सकी थी ।

गोविन्दाय नमस्तस्मै गोपालाय नमो नमः ।

गो-सेवासे लक्ष्मी-प्राप्ति आदि अनेक लाभ

(लेखक—स्वामीजी श्रीजगदीश्वरानन्दजी वेदान्तशास्त्री)

श्रेयस्कामी गृहस्थको गो-सेवाका महत्त्व समझानेके लिये हिंदू धर्मग्रन्थका एक सुन्दर श्लोक है—

गवां सेवा तु कर्तव्या गृहस्थैः पुण्यलिप्सुभिः ।
गवां सेवापरो यस्तु तस्य श्रीर्वर्धतेऽचिरात् ॥

पुण्य—स्वकल्याण चाहनेवाले गृहस्थोंको गो-सेवा करनी चाहिये, क्योंकि गो-सेवामें लगे हुए पुरुषकी शीघ्र ही सम्पत्ति-वृद्धि होती है । गो-सेवासे धन-सम्पत्ति, आरोग्यादि मनुष्य-जीवनको सुखकर बनानेवाले सम्पूर्ण साधन सहज ही प्राप्त हो जाते हैं ।

जिस गृहमें गौ पाली जाती है, वहाँ अनेक प्रकारसे स्वाभाविक ही लाभ होते रहते हैं । सामान्यदृष्टिसे ही उस घरके विषयमें विचारें कि किस भाँति वह लाभान्वित होता है—

१—शकुन-शास्त्रमें सवत्सा गौका दर्शन मङ्गलकर माना है, प्रातः उठते ही घरके सभी लोग सहजमें ही गौका माङ्गलिक दर्शन करते हैं ।

२—गौके प्रश्वाससे निकले वायुमें रोग-कृमिनाशक शक्ति मानी गयी है; अतः जिस घरमें गौ रहती है, वहाँ अनेक प्रकारके रोगकीटाणुओंका सहज ही अभाव बना रहता है ।

३—ऐसी ही शक्ति गौके गोबर एवं मूत्रमें मानी गयी है; गोबर तथा गो-मूत्र सहज प्राप्त होनेसे प्रायः समयपर उपयोगमें आते रहते हैं जिसके प्रभावसे संक्रामक रोग आदिसे बहुत कुछ रक्षा होती रहती है ।

४—महाभारतमें एक कथा आयी है कि सभी देवताओंने गौके शरीरमें अपने रहनेका स्थान प्राप्त कर लिया, केवल लक्ष्मीदेवी पीछे रह गयीं, उन्होंने भी स्थान-प्राप्तिकी प्रार्थना की तब गौने कहा—'अब गोबरका स्थान अवशिष्ट है; यदि इच्छा हो तो वहाँ वास कर सकती हो ।' तब लक्ष्मीदेवीने उसे ही सहर्ष स्वीकार कर गोबरको ही अपना वासस्थान बनाया । कथाके इस थोड़ेसे अंशपर हमें विचार करना है । इस बातको युक्तितः समझना है कि किस प्रकार गोबर लक्ष्मीका वासस्थान है ।

ऊपर कहा गया है कि गोबरमें कृमिनाशक शक्ति है । चिकित्सा-ग्रन्थोंमें गोबर तथा उसकी भस्मके प्रयोग मिलते हैं ।

कल्पना करें—एक साधारण गृहस्थ है पर गो-सेवक है, अपने श्रमसे कुछ धन कमाता है पर घरमें गौ रहनेके कारण वह गोबर आदिका यथेच्छ उपयोग करता है जिससे वह सपरिवार सदा नीरोग बना रहता है । कमाये धनको खाता-खर्चता है, कुछ बचनेपर जमा करता जाता है । कुछ समयके बाद ही वह कौड़ी-कौड़ी जोड़कर ही अच्छा धनिक बन जाता है; क्योंकि उसके घर आयी लक्ष्मीके डाक्टर, वैद्य या हकीम ग्राहक नहीं बन पाते । अपने आवश्यक कार्योंसे बची लक्ष्मी उसके घरमें ही वास करने लगती है । उसे बाहर जानेका कोई मार्ग ही नहीं मिलता ।

इसके विपरीत अधिक धन कमानेवाला, परन्तु गो-सेवा-रहित गृहस्थ सपरिवार रोगग्रस्त हो अपनी लक्ष्मीको डाक्टर, वैद्य, हकीमके हाथ लुटाते रहनेके कारण सदा ही ऋणी

* समाचार मिला है कि उनको पुत्रलाभ हो गया है ।

बना रहता है । घरमें लक्ष्मी तो बहुत आयी, पर अपने निवासस्थान गोबरको न पाकर वह पुनः अनेक मार्गोंसे बाहर निकल गयी ।

अनेक रोगियोंको, जिन्हें वर्षोंसे खुजली-दाद-एक्ज़िमा आदि भयङ्कर चर्मरोग कष्ट पहुँचा रहे थे, त्रिफला-चूर्ण गो-मूत्रके साथ पिलाकर तथा गोमूत्र-गोबर मिट्टीका लेप करवाकर शीघ्र ही सहजमें लाभ पहुँचाया गया है । उदर-सम्बन्धी रोगोंके लिये तथा चर्मरोगोंपर लाभके साथ गो-मूत्र या गोबरका उपयोग कर सकते हैं । ऐसे ही कान बहने, कानके दर्द, कान खुजलाने आदि रोगोंमें भी गो-मूत्रको गर्म कर केवल या सेंधा नमक मिला प्रयोग करके कितने रोगियोंको लाभ पहुँचाया गया है ।

इन्हीं सब प्रयोगोंसे अनुमित होता है कि धर्मशास्त्रमें पञ्चगव्यको अति पवित्र पापनाशक क्यों माना है ।

गौसे लक्ष्मी-प्राप्तिकी दूसरी युक्ति धर्मशास्त्रसे मिलती है । जब मनुष्य गो-दुग्ध या गो-घृत या पञ्चगव्यादिका प्रयोग करता है, तब अति सात्त्विक भोजन प्राप्त कर उसका मन भी सत्त्वगुणप्रधान—शान्ति, क्षमा, धैर्यादि दैवी गुणोंसे युक्त हो जाता है । तब इन दैवी गुणोंके प्रभावसे भी उसकी लक्ष्मी सुरक्षित रहती है ।

क्योंकि जब कभी उसे समाजमें लड़ाई-झगड़ेका अवसर प्राप्त होता है, तभी उसका सत्त्वगुणप्रधान शान्ति और धैर्यादि गुणसम्पन्न मन उस अवसरपर उसकी रक्षा करता रहता है । इस प्रकार भयङ्कर-से-भयङ्कर लड़ाई-झगड़ा पैदा करनेवाले तूफान टल जाते हैं, जिनके टलनेसे उसकी लक्ष्मीको बाहर जानेका मार्ग ही नहीं मिलता ।

इसके विपरीत, दूसरा गो-सेवारहित मनुष्य अपने राजसिक मनके कारण छोटे-छोटे कारणोंके उपस्थित होनेपर आपेसे बाहर हो लड़ाई-झगड़ा कर बैठता है, जिसके फलस्वरूप वह वकील-बैरिस्टरोंके पास तथा न्यायालयोंमें जानेके लिये अपनी लक्ष्मीके सहस्रों द्वार खोल देता है ।

इससे सिद्ध होता है कि श्रेयस्कामी प्रत्येक मानव—विशेषतया गृहस्थ गौकी सेवा कर उससे प्राप्त होनेवाले दूध, दही, घी आदिके सेवनसे दैवी-शक्तिसम्पन्न हो सकता है, एवं सदैव राक्षसी तूफ़ानोंसे, भौतिक कष्टोंसे अपनी रक्षा करते हुए सुखी जीवन बिता सकता है । साथ ही गो-मूत्र एवं गोबरको रोगोंके निवारणमें लगाकर अमूल्य एवं अति प्रभावकारी चिकित्साद्वारा सहज ही रोगोंको समूल नष्ट कर सुखी बन सकता है । हरिः ॐ तत्सत् ।

पिंजरापोल क्या करें ?

(लेखक—श्रीप्रागजी मावजी झवेरी, व्यवस्थापक 'नासिक पिंजरापोल')

१—गो-रक्षाके साथ खेती करना बहुत जरूरी है । खेतीके लायक अच्छे बैल तैयार करना, अच्छे बछड़े पालना, अच्छी खाद तैयार करना, पशुके लिये सस्ता और अच्छा चारा उत्पन्न करना भी जरूरी होता है । खेती हो तो गाय थोड़े खर्चमें पाली जा सकती है ।

२—यदि पशुओंको अधिक संख्यामें और कम खर्चमें पालना हो तो जिस स्थानमें नदी, तालाब या पानीकी दूसरी सुविधा हो और कुदरती रीतिसे जंगली घास होती हो, उस स्थानके समीप (पशुओंकी बरसातके पानीसे रक्षा होने लायक छप्पर डालकर) सावनसे लेकर अगहनतक उन्हें चरानेके लिये रक्खा जाय । इससे खिलानेमें खर्च नहीं लगेगा । और शेष बची घासको आश्विन-कार्तिकमें कटवाकर बारह महीनेके लिये संग्रह करके रख लिया जायगा तो फिर घासकी कमी नहीं पड़ेगी और जीवोंकी रक्षा होगी ।

३—भटकनेवाले और हलकी जातिके साँड़ोंको गायोंके टोलमें न रखकर बढ़िया साँड़ पाले और तैयार करे ।

४—मरे हुए पशुओंको ठीकेदारको देनेसे वे लोग मरे पशुका मांस निम्न जातिके लोगोंको बेचते हैं और उनको नुकसान पहुँचाते हैं ।

५—हड्डी विदेश भेजनेसे खादका फास्फोरस चला जाता है । चमड़ेका बाजार तेज होता है । तब ठीकेदार लोग अपने लाभके लिये आदमियोंको फोड़कर अधिक जानवर मरवाते हैं । विश्वासपात्र निरामिषाहारी मनुष्यकी देख-रेखमें मरे हुए जानवरोंको चिरवाकर चमड़ा निकलवावे और उनके हाड़-मांसको खेतमें गाड़ दे, तो उससे अच्छी खाद बन जायगी ।

६—अपढ़ और विद्वान् दोनोंके लिये गोरक्षा और खेतीका काम जीविका प्रदान करता है । गोरक्षकोंकी अपेक्षा इस कामको करनेवाले गो-सेवकोंकी अधिक आवश्यकता है ।

गोरक्षा और हमारा कर्तव्य

(लेखक—डा० श्रीदुर्गाशङ्करजी नागर)

वैदिक संस्कृतिमें आर्यजातिने प्राचीनकालसे ही गायको बड़ी प्रतिष्ठा दी है । वेदोंमें गोपालन, गोसेवा, पशुरक्षाके विषयमें बहुत कुछ कहा गया है; क्योंकि गायसे गृहस्थीके कार्यमें बड़ी सहायता मिलती है । गाय वास्तवमें मानव-समाजका एक अत्यावश्यक अङ्ग है ।

आज हमारे देशमें पशुपालन, गोसेवा आदिके सम्बन्धमें दयनीय स्थिति हो रही है । गो-वंशपर आज भयंकर विपत्ति आयी है । हमलोग क्रियात्मकरूपसे कुछ भी नहीं कर रहे हैं । कर रहे हैं—एकमात्र गोदान, कि जिससे हमें गोमाता मृत्युके पश्चात् वैतरणीसे पार कर दे । हमारी कितनी स्वार्थपूर्ण भावना है !

कठोपनिषद्में वाजश्रवस ऋषिने मोक्षकी अभिलाषासे अपना सर्वस्व—गोपशु-धन आदि दान कर दिया था । ऋषिके पुत्र नचिकेताने देखा कि उनके पिता बूढ़ी गायोंको दानमें दे रहे हैं । यह दान तो धर्मके स्थानमें अधर्म है । दान लेनेवालेको हानिके सिवा कुछ लाभ नहीं देनेका । वह छोटा बालक अपने पिताको यज्ञकी दक्षिणामें बूढ़ी गायें देते हुए देखकर झुँझलाकर पितासे पूछता है—'पिताजी ! मुझे किसको दोगे ?' यहाँ बालक नचिकेताका संकेत है कि गाय दूध देती रही, तबतक तो उसका दूध पीते रहे; अब बूढ़ी होनेपर जब दूध देने योग्य नहीं रही, तब दान करनेकी सूझी है । बालक कहता है—

अनन्दा नाम ते लोकास्तान् स गच्छति ता ददत् ।

(कठ० १ । १ । ३)

अर्थात् जो ऐसी गायोंका दान करता है, वह उन लोकोंको प्राप्त होगा, जो आनन्दसे शून्य हैं ।

यजुर्वेदमें कहा है—'माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।' हमारी गौएँ माध्वी हों—मधुमय होवें ।

गौर्मे माता ऋषभः पिता मे दिवं शर्म जगती मे प्रतिष्ठा ।

(ऋग्वेद)

गाय हमारी माता, साँड़ हमारे पिता—ये दोनों हमें स्वर्ग और ऐहिक सुख प्रदान करें । अथर्ववेदमें और हमारे सब आर्षग्रन्थोंमें गोजातिकी रक्षाका बड़ा महत्त्व है ।

पृष्ठे ब्रह्मा गले विष्णुर्मुखे रुद्रः प्रतिष्ठितः ।
मध्ये देवगणाः सर्वे रोमकूपे महर्षयः ॥

गौकी पीठमें ब्रह्मा वास करते हैं, गलेमें विष्णु, मुखमें रुद्र, पेटमें सब देवता और रोम-रोममें महर्षिगण । इतना महत्त्व हमारे धर्मशास्त्रोंमें गो-जातिको दिया गया है ।

हमारी नित्यकी प्रार्थनामें एक श्लोक आता है, जिसका तीसरा चरण है—'गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यम्', गौ और ब्राह्मणोंका सदा-सर्वदा कल्याण हो । कितनी सुन्दर भावना है ! पर इसको सुनकर एक सज्जन अप्रसन्न होकर कहने लगे कि 'गौ' और 'ब्राह्मण' का ही क्यों कल्याण हो ? 'बकरी' और 'अछूत' का कल्याण क्यों न हो ? उनका कहना था कि स्वार्थी लोगोंने अपने हितके लिये इस श्लोककी रचना कर डाली है । उनको अन्तिम चरण 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु' पर विचार न आया, जिसमें प्राणिमात्रके कल्याणके लिये प्रार्थना की गयी है । और वास्तवमें देखा जाय तो जिस देशको शुद्ध-सात्त्विक दूध मिलेगा और जिस देशकी बुद्धि शुद्ध-सात्त्विक होगी, उसका सदा-सर्वदा ही कल्याण होगा; फलतः उस देशके रहनेवाले 'गौ' और 'ब्राह्मणों' का सदा ही कल्याण मनाया करेंगे । जिसको शुद्ध गौका दूध मिले और जिसकी बुद्धि शुद्ध हो, उसके लिये संसारमें और क्या चाहिये ।

आधुनिक समयमें भारतीय समाजके सामने गोरक्षाका जो प्रश्न उपस्थित हुआ है, इसका बहुत कुछ श्रेय ऋषि दयानन्दजी सरस्वतीको है, जिनके प्रबल प्रयत्नसे देशमें गोशालाएँ स्थापित हुईं । उन्होंने धार्मिक दृष्टिसे ही नहीं, आर्थिक दृष्टिसे भी गोरक्षाका महत्त्व बतलाया है । 'गोकरुणानिधि' ग्रन्थ लिखकर स्वामीजी महाराजने भारतीय जनतापर बड़ा उपकार किया है ।

व्यावसायिक और आर्थिक दृष्टिसे गौ हमारा पशु-धन है । अग्निहोत्रके मन्त्रमें बार-बार 'वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिः' आया है, जिसमें पशुओंकी वृद्धिकी कामना की गयी है । गोधन प्राचीन समयमें एक विशेष सम्पत्ति समझा जाता था । क्या हम आज अपने गोधनकी रक्षा कर रहे हैं ? भारत कृषिप्रधान देश है । केवल किसानोंका ही कर्तव्य नहीं है कि वे गोपालन, पशुपालन करें—प्रत्येक गृहस्थका कर्तव्य है कि वह गोपालनको अपना नित्य-कर्म समझे ।

कई देशोंमें आज वैज्ञानिक प्रयोगों एवं यन्त्रोंसे खेतीका कार्य किया जाता है; किन्तु बिना गाय और बैलोंके हमारा काम ही नहीं चल सकता। नैतिक, आर्थिक और व्यावसायिक—सभी दृष्टियोंसे गोधनकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है। हमपर गौका ऋण है। अर्थकी दृष्टिसे दूध, दही, मट्ठा, घी, मक्खन आदि पदार्थ प्राप्त होते हैं। गोबरसे कीमती खाद तथा कंडे बनाकर लाभ उठाते हैं।

अमेरिका आदि देशोंमें लोग गायकी अच्छी नस्लें बढ़ा रहे हैं। वहाँके डेयरी फार्मोंकी रिपोर्टसे पता चलता है कि एक-एक गाय चालीस सेरतक दूध देती है। हमारे यहाँ भी अच्छी गायोंका अभाव नहीं है। रामगढ़ (शेखावाटी, जयपुर राज्य) में सेठ कन्हैयालालजी मोदी—जो बड़े गोभक्त हैं—बड़े प्रेमसे गोसेवा तथा गोपालन करते हैं। रात्रिके चार बजेसे ही बड़े प्रेमसे गौओंकी सेवामें लग जाते हैं। हमने स्वयं देखा है कि उनकी गायें १५–२० सेरतक दूध देती हैं। और प्रान्तोंमें भी आपको स्वस्थ एवं पुष्ट गौएँ देखनेको मिलेंगी, जो काफी दूध देती हैं।

आज बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि हमें दूध मिलना कठिन हो रहा है। मांसाहारका इतना प्रचार हो रहा है कि दूधकी उत्पत्तिमें बड़ी अड़चन उपस्थित हो रही है। हजारों निर्दोष मूक गायोंका नित्य वध किया जा रहा है। गोमातापर इस समय बड़ा भारी संकट है। हिंदू, मुसल्मान, ईसाई तथा संसारके और सभी मनुष्योंको यह माता समानरूपसे प्यार करती है। कृषि-शास्त्र-विशेषज्ञ राल्फ ए हेन लिखते हैं—

'Where the cow is kept and cared for civilization advances, lands grow richer, homes grow better, debts grow fewer. The cow is one of the greatest blessings to the human race.'

'जहाँ गोपालन होता है, गोसेवा होती है, वहाँ सभ्यताका विकास होता है, पृथ्वी शस्यश्यामला—हरी-भरी और उपजाऊ होती है, घर समृद्ध और सम्पन्न होते हैं तथा कर्ज कम होता है। गाय मानवीय जगत्के लिये ईश्वरकी बड़ी देन है।'

एक गोभक्त मुसल्मान फकीर गोप्यारशाह लिखते हैं कि 'गौ मेरी माता है। हमलोग गौ पालते हैं खुदगर्जीके लिये, दूधके लिये। मगर यह सच्ची मुहब्बत नहीं है। अगर दिलसे गायसे मुहब्बत की जाय तो दुनियाभरके ऐशोआराम घरमें भर जायँगे। मैं जहाँ जाता हूँ, वहाँ हिंदू, मुसल्मान सबको गायकी मुहब्बतका सबक सिखाता हूँ। हिंदुस्थानको फिरसे वाक़ई सोनेकी चिड़िया बनाना चाहते हो तो गौकी हिफ़ाजत करनी होगी। क्या हिंदू, क्या मुसल्मान—हर एक हिंदुस्थानीका फर्ज है कि गौ अम्मासे मुहब्बत करे। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि जो एक गऊकी परवरिश सच्चे दिलसे एतक़ादके साथ करेगा, उसे खुदा दुनियाभरकी नियामत बख्शेगा।'

आयुर्वेद और गायका दूध, गोबर तथा गोमूत्र

आयुर्वेद-चिकित्सामें गायके दूधको स्वास्थ्यके लिये परम हितकर बतलाया है। अमेरिकाके प्रसिद्ध बर्नार मैकफैडनने 'Miracle of milk' (दूधका चमत्कार) नामकी पुस्तक लिखी है। दुग्धचिकित्सा अर्थात् गायका दूध पीनेसे अस्थि-क्षय, पाण्डुरोग, रक्ताल्पता, क्षय एवं अन्य कई प्रकारके रोग दूर किये जाते हैं।

हमारे प्रायश्चित्त-विधानमें पञ्चगव्य-सेवनका बड़ा माहात्म्य बताया गया है। इसका सेवन करनेसे हमारे दुष्ट संस्कार सब नष्ट हो जाते हैं।

पञ्चगव्य-प्राशन मन्त्र—

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात्पञ्चगव्यस्य दहत्वग्निरिवेन्धनम्॥

हमारे शरीरके रोम-रोममें—हड्डियोंतकमें जो पापके दूषित संस्कार प्रविष्ट हो गये हैं, वे सब जैसे अग्निमें ईंधन जल जाता है वैसे ही पञ्चगव्य-प्राशनसे नष्ट हो जायँ।

गायके गोबरको सारे शरीरपर मलकर धूपमें बैठनेसे खाज, खुजली आदि त्वचारोग नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार गो-मूत्रका विधिवत् सेवन करनेसे शरीरकी बढ़ी हुई उष्णता और उदरके कृमि नष्ट हो जाते हैं, यकृत् एवं प्लीहाकी वृद्धि दूर हो जाती है और वे अवयव चैतन्य हो जाते हैं।

अपस्मार रोग

अपस्मार रोग (Epilepsy) पर एक महात्माका अनुभूत प्रयोग एक वैद्यराजने लिखा है। महात्माने लोक-कल्याणके लिये शारीरिक और मानसिक रोगोंके निवारणार्थ एक दिव्य ओषधि बतलायी है। उन महात्माका कहना है कि इस पञ्चामृतके सेवनसे मृगी, हिस्टीरिया आदि ज्ञानतन्तुओंके रोग दूर हो जाते हैं। न्यूरेस्थीनिया,

मज्जातन्तुदोष, चित्तभ्रम तथा वायु-सम्बन्धी विकारोंका भी शमन हो जाता है।

गायका दूध २० तोला, गायका मूत्र ५ तोला, गायका दही सवा तोला, गायका घी १० माशा, शहद (मधु) ४ माशा, गायके गोबरका रस २॥ तोला—इन सबको काँचके या मिट्टीके बरतनमें घोटकर एकरस कर दें। स्नान करके सूर्योदयके समय सूर्यकी ओर मुँह करके परमात्माकी प्रार्थना तथा उनका ध्यान करें। फिर,

अच्युतानन्तगोविन्दनामोच्चारणभेषजात् ।
नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥

—मन्त्रका तीन बार उच्चारण करें तथा अर्थसहित चिन्तन करते हुए ऊपर दिये हुए पञ्चामृतका नित्य पान किया करें। प्रयोगकी अवधि कम-से-कम ४० दिनसे तीन मासतक है।

सज्जनो! गो-माताकी समस्या देशमें बड़ी कठिन हो रही है। गौका ह्रास जोरोंसे हो रहा है। हमलोगोंको केवल धार्मिक ही नहीं, आर्थिक दृष्टिसे भी उपयोगी समझकर स्वयं अपने तथा जनताके कल्याणार्थ गोवंशकी वृद्धि तथा उन्नतिमें सहायक होना चाहिये। और कुछ न बन सके तो कम-से-कम अपने प्राचीन ऋषियोंकी वैदिक प्रार्थनाको नित्य नियमित रूपसे राष्ट्रके कल्याणके लिये अवश्य करना चाहिये। कैसी सुन्दर और सरल प्रार्थना है, जिसे बच्चे, बूढ़े तथा जवान सभी कर सकते हैं। इतना तो हम अवश्य करें।

'आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु । फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् । योगक्षेमो नः कल्पताम् ।' (शुक्लयजुर्वेद २२ । २२)

'हे सर्वेश्वर महान् भगवन्! हमारे राष्ट्रमें ब्रह्म-तेजयुक्त ब्राह्मण सब ओर हों; शूरवीर, शस्त्रास्त्र-सञ्चालनमें चतुर, दुष्टको उद्विग्न करनेवाले महारथी क्षत्रिय हों, दूध देनेवाली गाय हो, बोझ और भार ढोनेवाले पुष्ट बैल हों, शीघ्रवाही घोड़े आदि हों,······यजमानका पुत्र जवान हो, जयशील हो, सभा-कार्यमें निपुण हो, रमणीय साधनसे युक्त और वीर हो। समय-समयपर हमारे लिये बादल बरसते रहें। हमारी ओषधियाँ फलयुक्त रहें तथा हमारा योगक्षेम भली प्रकार चले।'

यह वैदिक प्रार्थना लोकहितकी कामनासे ओतप्रोत है। सच्चे हृदयसे की हुई प्रार्थना प्रभु अवश्य सुनेंगे और हमारे देशका कल्याण होगा।

गाय—मनुष्यकी धाय

(लेखक—श्रीयुत विनयतोष भट्टाचार्य एम्० ए०, पी-एच्० डी०)

जगती-तलपर मनुष्य-जातिकी जीवन-रक्षाके लिये दो वस्तुएँ अत्यावश्यक हैं—अन्न और वस्त्र। दूसरोंकी बात तो अलग रही, संसार और उसके वैभवोंका त्याग कर देनेवाले संन्यासी भी कौपीन एवं भिक्षाकी आवश्यकता तो अनुभव करते ही हैं। दिगम्बर-सम्प्रदायके जैन साधुओं एवं नागे साधुओंने तो कपड़ेको भी मनुष्यकी जीवन-रक्षाके लिये अनावश्यक समझकर त्याग दिया है। परन्तु उनके लिये भी भोजन तो जीवनका प्रथम आवश्यक पदार्थ है ही।

सभी संस्कृतियों एवं सभ्यताओंको राष्ट्रकी रक्षाके लिये प्रथम आवश्यक पदार्थके रूपमें भोजनकी महत्ताको स्वीकार करना ही पड़ेगा। आजकी तरह यदि किसी भी कालमें जगत् इसकी महत्ताको स्वीकार नहीं करेगा तो सबको भूखसे प्राण देकर इस भूलके दुष्परिणामको समानरूपसे भोगना पड़ेगा। दूसरे शब्दोंमें मनुष्यकी भूख ही सब देशों एवं सब कालोंमें सभ्यता—संस्कृतिकी प्रधान शिक्षिका रही है। मनुष्य-जातिके इतिहासमें जब कभी किसी सभ्यता—संस्कृतिका ध्यान मानवके लिये सर्वप्रथम आवश्यक वस्तु—भोजनसे हटकर जीवनकी अनावश्यक वस्तुओंपर ही केन्द्रित हो जाता है, तभी अकाल लाखों-करोड़ों मनुष्योंकी असामयिक मृत्युके द्वारा लोगोंको ठीक राहपर लाता है और उन्हें इस सत्यको समझनेके लिये बाध्य करता है कि जीवनकी सर्वप्रथम आवश्यकता भोजन ही है। यदि यह नहीं होता तो आप निश्चय मानिये—जिस तरह दिनके बाद रात्रिका होना अनिवार्य है, उसी प्रकार राष्ट्र एवं राज्यका मृत्युके पूर्व विनाश अवश्यम्भावी है।

आज हमें यह विचित्र बात देखकर बड़ा भय होता है कि समूचा राष्ट्र ही जीवनकी अनावश्यक वस्तुओंके पीछे पागल होकर भोग-विलासमें लीन हो रहा है और पराश्रमी बनकर जीवन व्यतीत कर रहा है, जो उसके लिये बड़ी जोखिमकी बात है । आज हम सब रेडियो, टेलीफोन, टेलीविज़न (दूरकी वस्तुओंको देखनेका यान्त्रिक साधन), वायुयानकी यात्रा, गाना-बजाना, नाच, सिनेमा, नाटक, होटल, काफीहाउस एवं सर्वोपरि इस सर्वथा निकम्मी 'आधुनिक शिक्षा'पर लट्टू हो रहे हैं, जो हमारी जीवन-रक्षाके लिये बिल्कुल अनावश्यक है । हमारे इस पागलपनका अशुभ परिणाम दृष्टिगोचर होने लगा है । अन्नकी कमी तो है ही, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि देशकी तीन-चौथाई जनता आधा पेट खाकर रहती है। अधिक दूर जानेकी आवश्यकता नहीं, सिराजुद्दौलाके समयमें बंगालमें चावल तीन-चार आने मन बिकता था । पिछले अकालके दिनोंमें वही चावल उसी बंगालमें १२०) मन बिका था । साधारण जनताके लिये इस भावपर उसे खरीदना असम्भव था। आजकल जहाँ-तहाँ यह बात सुननेमें आती है कि भारतीय जनताका रहन-सहन ऊँचा होना चाहिये, जिससे कि वे अनावश्यक वस्तुएँ अधिक मात्रामें खरीद सकें और देशमें लखपतियों तथा करोड़पतियोंकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जाय । रहन-सहन ऊँचा होनेपर वह क्रमशः और भी ऊँचा होता जायगा और उसकी अवधि कहीं आयेगी ही नहीं । पता नहीं किस स्थितिमें पहुँचनेपर हम अपने रहन-सहनको ऊँचा मानकर सन्तोष करेंगे । परन्तु इतनी बात तो प्रत्यक्ष है कि आज भी हम स्थायी दुष्कालके कष्टोंका अनुभव कर रहे हैं; आज भी अन्न और वस्त्र इतना महँगा हो गया है कि उसे खरीदना साधारण जनताकी पहुँचके बाहर है । रहन-सहनको ऊँचा करनेका फल यह होगा कि ये वस्तुएँ और भी महँगी हो जायँगी । भारतकी निरीह जनताका अधिक भाग इतने ऊँचे दाम देकर इन वस्तुओंको नहीं खरीद सकेगा, फलतः उसे भूखों मरना पड़ेगा । हमारे भोले-भाले देशवासी न तो अन्नके लिये दंगा करेंगे, न सामूहिक विरोधकी आवाज बुलंद करेंगे और न भीख ही माँगेंगे । वे तो बेचारे चुपचाप मरकर स्वर्गकी यात्रा करेंगे, क्योंकि भले आदमी मरकर स्वर्गकी ही यात्रा करते हैं ! ऐसी दशामें क्या ही अच्छा होता यदि हम इन थोथी, काल्पनिक एवं अनावश्यक बातों तथा विचारोंको छोड़कर सस्ते गल्ले, सस्ते भोजन, सस्ते कपड़े तथा अधिक परिमाणमें खाद्य पदार्थोंके उत्पादन एवं अधिक उपजाऊ खेतीके पुनरुद्धारके लिये आवाज उठाते, ताकि हमारा जीवन-निर्वाह तो किसी प्रकार चलता । क्या भारतके इस विशाल जन-समुदायके स्वास्थ्यको सुधारनेके लिये विटामिन, दवा, सत, रस, तेल और इंजेक्शन न देकर पूरा भोजन—दोनों समय भोजन देनेके लिये आवाज बुलंद करना अधिक श्रेयस्कर न होगा ? दवाइयों आदिके प्रयोगको बढ़ाकर तो दवाइयोंके उत्पादकोंको असीम धनराशिका स्वामी मात्र बनाना है । तथा अन्नका स्थान—जो भगवान् एवं प्रकृति माताकी ओरसे मनुष्य-जातिके लिये सबसे बड़ी देन है—दवाइयों एवं विटामिनोंको देनेका विचार भी मूर्खता ही है !

इस विषयपर विचार करते समय हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि भारत गेहूँ और चावलका देश है, यहाँ प्रत्येक वस्तुका मूल्य इसी बातपर आँका जाता है कि उसके बदलेमें गेहूँ और चावल कितना मिल सकेगा । इन्हीं दोनों लाभदायक वस्तुओंकी दुर्लभता एवं अभावके कारण आज भारत इतना दरिद्र बना हुआ है । जिस दिन मुगल-शासनकालकी तरह इन वस्तुओंका मूल्य घटकर तीन-चार आने मन हो जायगा, उसी दिन यहाँकी बढ़ती हुई बेकारी, गिरता हुआ स्वास्थ्य एवं आये दिन आनेवाली अन्य आपदाएँ स्वयं विलीन हो जायँगी । यदि भावी कार्यक्रममें इस विषयकी चेष्टाका समावेश न होगा तो सारी पुनर्निर्माणकी योजनाएँ जीवनकी अवस्थाको सुधारने या लोगोंके जीवन-स्तरको उन्नत बनानेमें असफल ही रहेंगी । कहना न होगा कि मनुष्यके कुछ जन्मसिद्ध नैसर्गिक एवं मौलिक अधिकार होते हैं; इनमें ये तीन प्रधान हैं—(१) साँस लेनेका, (२) भरपेट भोजन करनेका एवं (३) जी भर पानी पीनेका । इसलिये फेफड़ेमें पहुँचनेवाली हवाकी तरह, भोजन और पानी भी उसे सुगमतासे प्राप्त होने चाहिये । पानीके लिये 'कर' देना और भोजनके लिये बारहों महीने 'अकालके भावोंमें अन्न खरीदना' क्या अस्वाभाविक नहीं है ?

दूध भोजनका एक प्रधान अङ्ग है । उम्रभर केवल दूधके आधारपर जीवन-निर्वाह किया जा सकता है । शरीरके लिये आवश्यक सारे पदार्थ दूधमें विद्यमान हैं । आज भी भारतमें ऐसे मनुष्य पाये जाते हैं, जिन्होंने अपने जीवनमें दूधके सिवा किसी अन्य वस्तुका स्वाद ही नहीं चखा । यह एक प्राकृतिक विधान ही है कि जीवनका प्रारम्भ माताके

दूधसे होता है; बच्चेके जन्मके पश्चात् पहली वस्तु जो उसे दी जाती है, दूध ही है। दूधसे ही उसका पालन-पोषण होता है। प्रकृतिने भी माताको कैसे अनोखे रूपमें दूध दिया है। ज्यों-ज्यों बालक बड़ा होकर गो-माताका दूध पीने लायक होता जाता है, त्यों-त्यों स्वयमेव प्राकृतिक नियमके अनुसार उसकी माका दूध भी सूखने लगता है। तीन वर्षके पश्चात् तो मनुष्य केवल गायके दूधपर ही आश्रित हो जाता है। इसीलिये यदि हमारे आदि-वैदिककालसे आजतक गो-माताकी, जो मनुष्यमात्रकी सच्ची मा है, प्रशंसाकी झड़ी लगायी गयी है, तो यह सर्वथा ठीक ही है। हमारे प्राचीन ऋषियोंने हमारे स्वास्थ्य, शक्ति, बुद्धि एवं उत्तरोत्तर अभिवृद्धिके लिये प्रत्येक कालमें, ऋतु आदिका कोई ध्यान न रखकर भी, गो-सेवा, गो-पूजाको ही प्रमुख साधन बताया है। वेद हिंदुओंके लिये पूर्ण ज्ञान, निरपेक्ष ज्ञान हैं तथा वे एक ऐसे ज्ञानके अक्षय भण्डार हैं जो त्रिकाल-सत्य है। गत कुछ शताब्दियोंसे, बिना अपवादके, सभी श्रेणीके भारतीयोंने—चाहे वे धनी हों या निर्धन, शिक्षित हों या अशिक्षित, राजनीतिज्ञ हों या समाज-सुधारक—गो-माताकी उपेक्षा की है, उसपर अत्याचार किया है एवं उसके साथ दुर्व्यवहार भी किया है—यहाँतक कि उसे अपनी चेष्टाओंसे हलाल तक किया है, जब कि उन्हें वेदके आज्ञानुसार उसकी सेवा करनी चाहिये थी। हिंदुओंने निर्दयतापूर्वक वेदकी आज्ञाओंका उल्लङ्घन किया है; इसकी सज़ा उन्हें मिलकर ही रहेगी। उनकी श्री आज विदा हो चुकी है—विनाशके काले बादल उनके चारों ओर मँडरा रहे हैं तथा बुभुक्षा एवं सर्वनाश उनकी ओर मुँह बाये खड़े हैं! आजके दुग्धाभावका एकमात्र कारण गो-माताकी बहुकालीन उपेक्षा ही है। बहुत ही कम लोग ऐसे हैं, जो दूधको इस अनुचित मूल्यपर खरीदनेकी क्षमता रखते हों। बच्चोंको तो दूध मिलना असम्भव हो रहा है और गो-माताको घास-चारा एवं अन्य खाद्य-सामग्री नहीं मिल पाती। परिणामस्वरूप वे नष्ट हो रही हैं, मर रही हैं। इतना ही नहीं आज गो-माताको भारतवासियोंके क्षुधा-निवारणार्थ, वधके लिये कसाइयोंके हाथतक बेचा जा रहा है। ओह! कैसा घोर पतन है!!

मैंने लोगोंको यह कहते सुना है कि वे गायोंको पालनेमें असमर्थ हैं, क्योंकि गायें आर्थिक दृष्टिसे हानिकर हैं। मुझे उनका यह कथन सर्वथा असत्य जान पड़ता है। क्या केवल गाय ही आर्थिक हानिका कारण है? क्या हमारे आजके बच्चे और हमारी ये गृहिणियाँ बहुमूल्य विलास-सामग्री एवं आर्थिक अपव्ययकी प्रतिमूर्तियाँ नहीं बन गयी हैं? क्या हम उन्हें भी गो-माताकी तरह उपेक्षाके भावसे देखेंगे? क्या हम उन्हें गो-माताकी-सी हीन दशामें देखना चाहेंगे? ज़रा हृदयपर हाथ रखकर सोचिये कि हम ऐसी शिक्षा देनेके लिये, जिससे अन्ततः हमारे बालक-बालिकाएँ पूरे अपव्ययी एवं मामूली नौकरियोंके लिये दर-दर भटकने लायक होनेके सिवा और कुछ नहीं हो पाते, कितना अधिक खर्च करते हैं। बल्कि सामान्य आयवाले परिवार भी अपने बालकोंकी पढ़ाईपर इस उम्मीदमें दसों हजार रुपये खर्च कर देते हैं कि वे पढ़कर न्यायालयोंमें जज बनेंगे, प्रान्तोंमें मन्त्री बनेंगे या महान् व्यापारी बनकर प्रचुर धन कमायेंगे। पर ऐसा चमत्कार कभी नहीं होता और ये शिक्षित कहलानेवाले अभागे बालक अन्ततः दया और निराशाके ही पात्र बनते हैं। प्रतिवर्ष यहाँके विश्वविद्यालय अपनी प्रवेशिका (मैट्रिकुलेशन) परीक्षामें उत्तीर्ण छात्रोंकी संख्या (३३ प्रतिशत) बड़े गौरवसे घोषित करते हैं; पर क्या कभी किसीने इस संख्याके अङ्कोंके पीछे छिपी हुई महान् आर्थिक विपत्तिपर भी ध्यान दिया है? यदि एक विश्वविद्यालयकी प्रवेशिका परीक्षामें भाग लेनेवाले छात्रोंकी संख्या केवल २१००० ही मानें तो उनमें १४००० छात्र तो असफल ही होंगे तथा एक सालकी एक ही परीक्षामें (१४०००×३०० रुपये—एक छात्र या छात्राका औसत सालाना खर्च) ४२ लाखके मोटे मूलधनकी राष्ट्रीय आर्थिक हानि होगी। और अब यदि भारतमें दस विश्वविद्यालय हों और उनकी प्रवेशिका परीक्षाके साथ-साथ सभी परीक्षाओंके अनुत्तीर्ण विद्यार्थियोंकी वार्षिक अर्थ-हानिका एक जगह हिसाब जोड़ा जाय तो देशकी होनेवाली हानिका अंदाजा लगाना कठिन होगा। क्या हम इस रूपमें होनेवाली बड़ी राष्ट्रीय अर्थ-हानिका दूसरे अच्छे कामोंमें उपयोग नहीं कर सकते? क्यों नहीं इस मूल-धनको गो-माताकी दशा सुधारनेमें हम लगायें, ताकि देशमें गोशालाओं एवं गो-केन्द्रोंका प्रचार-प्रसार बढ़े और देशमें अन्न और दूधकी पर्याप्त मात्रामें अभिवृद्धि हो सके।

केवल मसूर राज्यको छोड़कर देशमें कहीं भी ऐसा अच्छा कालेज नहीं है जहाँ दुग्ध-व्यवसाय, पशु-पालन और पशु-संवर्द्धनपर उपयोगी शिक्षा दी जाती हो। यहाँतक कि यदि हम बड़े पैमानेपर एक नयी गोशाला चलाना चाहें तो

हमें गो-सेवाके लिये शिक्षित युवक ही नहीं मिलेंगे और यदि मिलेंगे भी तो वे इस पदके सर्वथा अयोग्य सिद्ध होंगे। बहुत सम्भव है कि वे गौओंकी खराब मौसिम एवं संक्रामक रोगोंसे रक्षा करने, उनके रहनेकी समुचित व्यवस्था करने, खिलाने-चराने एवं दुहने आदिका प्रबन्ध करनेमें अयोग्य ही प्रमाणित हों। एक ओर तो हमें ऐसे उपयोगी कार्यके लिये उपयुक्त व्यक्ति नहीं मिल रहे हैं, और दूसरी ओर हमारे देशके लाखों बेकार शिक्षित युवक बीस-बीस रुपयेकी तुच्छ क्लर्कीके लिये इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे हैं। यह है हमारे यहाँकी शिक्षाकी दुर्दशा! फिर भी आश्चर्य यह है कि इसका कोई निराकरण नहीं दीख पड़ रहा है। बुराईका बीज पड़ चुका है और हम उसके बुरे फलोंको प्रचुर रूपमें भुगत रहे हैं। ये विश्वविद्यालय हमें तबतक उपयोगी कलाओंकी शिक्षा नहीं देंगे जबतक कि देश उनके सिनेटरोंको जीवनके लिये आवश्यक पदार्थ, उनके मूल्य देनेपर भी, देना बंद न कर देगा। ऐसा करनेपर ही वे अन्न, दूध, मक्खन, घी आदिका महत्त्व जान सकेंगे। जबतक वे हमें इनके उत्पादनकी कला नहीं सिखाते, तबतक इन्हें व्यवहार करनेका उन्हें वस्तुतः कोई अधिकार नहीं है।

विनोदकी बात नहीं, हमारे लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम जागें और अपनी जीवन-रक्षाके निमित्त जीवनके लिये अत्यन्त आवश्यक पदार्थोंकी ओर ध्यान दें। राष्ट्रके जीवनके लिये गो-माताकी प्रधान आवश्यकता है। हमें केवल गायोंके विषयमें उनकी रक्षा एवं वृद्धिके उपायोंकी, पशु-पालनकी, दही एवं घी आदिको सुरक्षित रखनेकी तथा अपव्यय रोकनेकी शिक्षा देनी चाहिये। डेरी-विज्ञानमें उपाधि-परीक्षाओंकी सृष्टि होनी चाहिये तथा हरेक प्रान्तमें डेरी-विज्ञान एवं पशु-पालनसम्बन्धी शिक्षाके कालेज खुलने चाहिये। और यदि हम मनुष्य अथवा अर्द्धमनुष्यरूपमें भी बचे रहना चाहते हैं तो हमें उपर्युक्त कार्योंमें अधिकाधिक राष्ट्रीय पूँजी लगानी चाहिये। अपने निकम्मे बालकोंको पालने एवं उन्हें शिक्षा देनेके बदले यदि हम गायोंको अपनी माताओं एवं लड़कियोंके रूपमें पूरी सँभाल और प्रेमके साथ पालें तो आप देखेंगे कि वे मानव-जातिके लिये अधिक कृतज्ञ, उपयोगी एवं सेवा देने योग्य सिद्ध होंगी, जिसके फलस्वरूप मानव-जाति उन्नति एवं समृद्धिके राजमार्गपर निरन्तर बढ़ती हुई दिखायी पड़ेगी। बैंकोंमें खातेके रूपमें सञ्चित सम्पत्तिको देखकर हम क्षणभरके लिये भले ही खुश हो लें, पर वह मिथ्या एवं चञ्चल है। अकालके समयमें इन नोटोंकी गड्डियोंको खाया एवं पचाया नहीं जा सकता। यदि हम लड़के पैदा करें ही तो आइये, उन्हें गो-पूजनके द्वारा स्वस्थ बनायें। दूधके बिना माता-पिता स्वस्थ बालकोंके माता-पिता नहीं बन सकते। और दूधके बिना बालक भी देशके भावी होनहार एवं स्वस्थ अङ्ग नहीं बन सकते।

इस दुःखद विषयपर लिखते समय मेरे मस्तिष्कमें अनेकों भाव उठ रहे हैं और मैं चाहता हूँ कि लिखता ही जाऊँ, परन्तु औचित्यकी दृष्टिसे मुझे इसे यहीं समाप्त कर देना चाहिये। समाप्त करनेके पहले मैं अपने मित्र श्रीहनुमान-प्रसाद पोद्दारके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन करना अपना आवश्यक कर्त्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने मानवमात्रकी पूज्या गो-माताके सम्बन्धमें विचार प्रकट करनेका अवसर मुझे प्रदान किया।

गौ और ब्राह्मण एक ही हैं

ब्राह्मणानां गवां चैव कुलमेकं द्विधा स्थितम्। एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरेकत्र संस्थितम्॥*

(स्क० नागर० २७८। १०)

ब्राह्मणों और गायोंका एक ही कुल है। केवल दो भागोंमें स्थित है। एक भागमें मन्त्र है और दूसरेमें यज्ञीय हवि प्रतिष्ठित है।

* ठीक ऐसे ही श्लोक कई पुराणोंमें हैं।

प्राच्य गो-विज्ञान

(लेखक—पं० श्रीरामनिवासजी शर्मा)

उस समयको हम कभी नहीं भूल सकते जब कि इस भूगोलपर सबसे पहले भारतवर्षमें पहली बार उषाने क्षितिजको आरंजित किया था, अरुणने दिग्दिगन्तको प्रभावित किया था और लोक-बन्धुने विश्वको आलोकित किया था। यह लगभग वही समय था जब ब्रह्माण्ड प्रस्फुटित हुआ था, नीहारिका-जाल विकसित हुआ था और परमाणु-समूह क्रियान्वित दशामें था, जिसके लिये वेद कहता है—

यद्देवा यतयो यथा भुवनान्यपिन्वत।
अत्रा समुद्र आ गूळ्हमा सूर्यमजभर्तन॥
को ददर्श प्रथमं जायमान-
मस्थन्वन्तं यदनस्था बिभर्ति[1]॥

सृष्टिके इसी प्रारम्भिक कालमें, सरस्वतीके नयनोन्मीलनमें, चतुराननके प्रथम श्वासमें, वेद-त्रयीके प्राकट्यमें, ऋषियोंके आदिम प्रवचनमें और सारस्वतके दिव्य विकासमें सम्पूर्ण विद्याओंकी मूल जो विद्या प्रकाशमें आयी, वह थी—

'मधु-विद्या'

यह विद्या यज्ञमय विश्व-ब्रह्माण्डके ज्ञान-विज्ञान और सम्पूर्ण भौतिक विद्याओंकी मूलभित्ति थी, जिसके विषयमें शास्त्र हमें इस प्रकार उपदेश देते हैं।

इसीको एक आधुनिक विद्वान्ने इस तरह समझाया है—

The great truth is emphasized, viz., there is a reciprocal relation among all the elements of the world, that the world is a whole of interconnected parts and their reciprocal मधुत्व consists in the fact that there is not only intimate relation between phenomenal things but they mutually determine each other.

इसका तात्पर्य यह है कि भौतिक विश्वके प्रत्येक पदार्थके अन्तर्लीन भाग-विभागोंके परमाणु और परमाणु-जालका आपसमें Reciprocal (मधुत्व-युक्त) सम्बन्ध है। इसीलिये इस सम्बन्धके तत्त्व-विज्ञानकी प्रकाशिका वस्तु मधु-विद्या कही जाती है।

१. ऋग्वेद १०।७२।७ तथा १।१६४।४

बस, यही मधु-विद्या शनैः-शनैः सब विज्ञानोंका उद्गम-स्रोत सिद्ध हुई और इसीसे संख्यातीत विज्ञान और विद्याओंका नामकरण-संस्कार और विकास—प्रकाश होने लगा। यह मधु-विद्या वस्तुतः सब विद्या, विज्ञान और सम्पूर्ण विश्व-वाङ्मयकी जीवन-विन्दु (Protoplasm) है। इसीको बृहदारण्यकने—

'सम्पूर्ण विद्याओंका आदिम स्रोत, समस्त आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक तत्त्व-जालका कारण और द्रव्यकी मूल एकताका हेतु बताया है।'

इस तरह मधु-विद्यासे मुख्यतः ज्ञान-काण्डके विकासका प्रश्न हल हो गया; परन्तु इसी मधु-विद्याके साहाय्यसे कर्म-विज्ञानके विकासके प्रश्नको जिसने हल किया, उस व्यक्तित्व—उस वस्तु-तत्त्वका प्राचीन नाम है—

'कामधेनु-विज्ञान[1] और कामदोहन-विज्ञान'

कामधेनु-विज्ञान और कामदोहन-विज्ञान दोनोंमें असलमें उक्त Reciprocal सम्बन्ध है। इसका अभिप्राय वह विद्या अथवा यज्ञात्मक कर्मकाण्ड-विज्ञान है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण जगत्त्रयकी वस्तुओंके काम्य पदार्थोंका यथेच्छ दोहन अर्थात् आविष्कार-परिष्कार हो सकता है। इसीलिये तो इस कामदोहन-शास्त्रके मूर्त प्रतीकका शास्त्रीय नाम 'कामधेनु' और उसके दोहन-संदोहनके विधानका नाम 'कामदोहन-विज्ञान' है।

अब यहाँ प्रश्न यह उपस्थित होता है कि वे कौन-सी वस्तुएँ हैं जो कि दुही जा सकती हैं। इसका उत्तर आचार्योंने अनेक प्रकारसे दिया है; परन्तु सबका सारांश यही है कि जैसे पृथ्वीसे सभी भौतिक पदार्थ दुहे जा सकते हैं वैसे ही धेनुसे भी, प्रत्युत धेनु-विशेष कामधेनुसे तो लोक-लोकान्तरके सभी मनोनीत पदार्थ-विशेष भी।[2] यही कारण है कि गौ शास्त्रमें 'अघ्न्या' और 'जगती' कही जाती है और इसके लिये यह भी कहा जाता है कि—

१. निखिल वस्तु-जनक सूर्य-विज्ञान-सदृश ही कामधेनु-विज्ञान भी है। यही कारण है कि शास्त्रोंमें यह भी सभी वस्तुओं और पदार्थोंका जनक माना गया है।

२. यस्य यस्येक्षितं यथा। रा. बा.

गोभ्योऽधिकं जगति नापरमस्ति किञ्चित् ।

बात यह है कि सम्पूर्ण विश्व-ब्रह्माण्ड और लोक-परलोक यज्ञमय हैं और गौ यज्ञस्वरूप, यज्ञमय तथा यज्ञ-साधक होनेसे त्रैलोक्यकी यज्ञात्मक आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक—सभी सिद्धियोंकी परम्परा है। इसीलिये तो शास्त्र कहते हैं—

१. गावः स्वस्त्ययनं महत् ।

२. गावः शरणमुत्तमम् ।

३. गोप्रदायिनः स्वर्गमाप्नुवन्ति ।

उक्त युक्ति-विमर्शके साथ-साथ यह भी सब कारणोंका एक कारण है कि भगवान् श्रीकृष्णके लिये यह कहा जाता है—

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

फिर भगवान्‌की दृष्टिमें भी गौका ही विशेष स्थान है। इसीलिये तो वे 'गोविन्द' कहे जाते हैं। ऐसा क्यों है ? इसका सदुत्तर है—

बिभ्रति पयसा सुतमिव निखिलं जगदेतदञ्जसा ।

बस, इससे बढ़कर गो-माहात्म्यका हेतु और क्या हो सकता है ? वस्तुतः जो सम्पूर्ण जगत्‌को पुत्रके समान अपने दुग्धसे धारण करती है, वह तो जननी और जन्मभूमिसे भी बढ़कर वस्तु है[1]। यद्यपि महिषी आदि पशु-विशेष भी इस माहात्म्यके किञ्चित् अधिकारी हैं, परन्तु वे याज्ञिक न होनेसे पूर्ण अधिकारी नहीं; क्योंकि यज्ञकी दृष्टिसे गौ और गो-जात पदार्थ ही सात्त्विक हैं।

वैसे भी हिंदू-वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे गो-दुग्ध बालक, वृद्ध और युवा—तीनोंके लिये हितकारी है। मुख्यतः वेदान्त-वन्द्य, सनकादिस्वरूप, सृष्टि-सन्तति-रक्षक बालकके लिये तो वह जीवन ही है। सर्वाधिक बात यह है कि गो-दुग्ध वृद्धावस्थाके समस्त रोगोंका भी नाशक है—

जरासमस्तरोगाणां शान्तिकृत् सेविनां सदा ।

गो-दुग्ध ही क्यों, गो-दधि भी सब प्रकारके दधियोंमें गुणाधिक है। देखिये, भावप्रकाशकार कहते हैं—

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम् ।

१. गौ, धेनु, कामधेनु, सुरभि और नन्दिनी आदि शब्द गौके ही अभिधान और प्रकार-भेद हैं।

यही दशा नवनीतकी भी है। वह भी प्रत्येक अवस्थाके व्यक्तिके लिये सर्वाधिक हितकारी है। बालकोंके लिये तो सुधा-तुल्य ही है। इसीलिये तो बालक श्रीकृष्ण भगवान् नवनीत-प्रिय कहलाते हैं। वैसे भी उद्घोषणा है—

विशेषादमृतं शिशोः ।

गोतक्र भी गुणोंमें महामहिम है। सभीके लिये सुधा-तुल्य है। विशेषतः पथ्यमें सर्वश्रेष्ठ है। देखिये निघण्टुकार कहते हैं—

पथ्ये श्रेष्ठं तदुच्यते ।

गो-घृत तो घृतोंमें सर्वथा अद्वितीय है ही, इसलिये कि वह—

क. अंधा होनेसे बचाता है।

ख. मन्दाग्निका नाशक है।

ग. बलप्रद है।

घ. त्रिदोष-नाशक है।

ङ. मेधा, लावण्य, कान्ति, ओज और तेजको बढ़ाने-वाला है।

निम्नलिखित महिमान्वित विशेषण भी इसकी अद्वितीय विशेषताके परिचायक हैं—

क्ष. १. अलक्ष्मी-नाशक
२. पाप-लोपक
३. कीटाणु-हारक

त्र. १. आयुष्कर
२. आयुः-स्थापक
३. रसायन

ज्ञ. १. सौरभान्वित
२. रोचक
३. चारुतर

इसके इन्हीं गुणोंका 'भावप्रकाश'में इस प्रकार उल्लेख हुआ है—

गव्यं घृतं विशेषेण चाक्षुष्यं वृष्यमग्निकृत् ।
स्वादु पाककरं शीतं वातपित्तकफापहम् ॥
मेधालावण्यकान्त्योजस्तेजोवृद्धिकरं परम् ।
अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं वयसः स्थापकं गुरु ॥
बल्यं पवित्रमायुष्यं सुमङ्गल्यं रसायनम् ।
सुगन्धं रोचनं चारु सर्वाज्येषु गुणाधिकम् ॥

आश्चर्य यह है कि गो-माताके दूध, दही और नवनीतकी तरह ही गो-मूत्र भी समस्त मूत्रोंमें, गुणोंमें अधिक है। इसीलिये शास्त्र कहते हैं—

सर्वेष्वपि च मूत्रेषु गोमूत्रं गुणतोऽधिकम्।

गोमयकी प्रशंसा करना तो शक्तिसे बाहर है। गोमयकी विशेषताका परिचायक स्वयं लोकायत 'गोमय' शब्द ही है। काशीखण्डके शब्दोंमें तो वह यमुना-तुल्य ही है। हमारी भोजनशालाका तो वह अत्यधिक प्रश्रय है। अन्न-परिपाक भी बहुत कुछ उसीपर निर्भर है। घरकी पवित्रताका भी एकमात्र वही कारण है। प्रायश्चित्तकी प्रक्रियामें तो उसका अन्यतम स्थान है। मुख्यतः त्रिगव्य—दूध-दही और घृतकी तरह ही यह सर्वग्राह्य भी है।

यहाँ यह कहते हुए भी प्रसन्नता होती है कि उक्त महनीय लाभोंके साथ-साथ सप्त-गव्य निम्नलिखित भयंकर रोग-दोषसमूहका भी नाशक है—

१. भ्रम-जन्य	२४. अक्षि-जन्य
२. श्रम-जन्य	२५. त्रिदोष
३. पित्त-जन्य	२६. प्लीहा
४. विष-जन्य	२७. अतिसार
५. वात-जन्य	२८. कुवर्ण
६. रक्त-पित्त	२९. क्षय
७. ज्वर	३०. वात-पित्त
८. जरा	३१. रुधिर-जन्य
९. दाह	३२. लकवा
१०. कोष्ठबद्धता	३३. अशुद्धि-जन्य
११. अरुचि	३४. अलक्ष्मी-जन्य
१२. पीनस	३५. गुल्म
१३. खाँसी	३६. आनाह
१४. मूत्र-कृच्छ्र	३७. उन्माद
१५. शीत-ज्वर	३८. विलास
१६. अर्श	३९. शूल
१७. विषम ज्वर	४०. आमवात
१८. संग्रहणी	४१. मूत्ररोध
१९. वात	४२. कुष्ठ
२० पित्त	४३. मुख-जन्य
२१. श्लेष्म	४४. उदर-जन्य
२२. श्रम	४५. गुद-जन्य
२३. विष	४६. कृमि-जन्य

यह भी शास्त्रीय परम्परा सुननेमें आती है कि अभिमन्त्रित पञ्चगव्य नीचे लिखे प्रत्येक मूल-रोगवर्गका अन्तकर है—

१. आदि-बल-जात
२. जन्म-बल-जात
३. दोष-बल-जात
४. संघात-बल-जात
५. काल-बल-जात
६. दैव-बल-जात
७. स्वभाव-बल-जात

यही कारण है कि संसारमें गौ मान्य है न कि महिषी आदि पशु, एवं पञ्चगव्य प्रसिद्ध है न कि पञ्चमाहिष आदि। इसीलिये हिंदू-शास्त्रीय परम्परामें यह कहा जाता है कि—

अतोऽविशेषात् कथने मूत्रं गोमूत्रमुच्यते।
अतोऽविशेषात् कथने दुग्धं गोदुग्धमुच्यते॥
अतोऽविशेषात् कथने तक्रं गोतक्रमुच्यते।[1]

यह बात भी एक सर्वसम्मत है कि यदि गो-सम्बन्धी सम्पूर्ण वस्तुओं और पदार्थोंके गुणोंकी गणना की जाय तो कई 'गो-सहस्र-नाम' बन सकते हैं। वैसे ही गो-सम्बन्धी प्रत्यक्ष-परोक्ष सम्पूर्ण बातों, लाभों और कार्योंके उल्लेखके लिये भी एक विश्व-कोषकी[2] आवश्यकता प्रतीत होती है।

इस तरह हम देखते हैं कि गौ कर्मकाण्डकी दृष्टिसे सर्वोत्तम प्राणी है। परन्तु यह कहना भी सत्यपूर्ण है कि यह उपासना-विज्ञान और आचार-विज्ञानकी दृष्टिसे भी सर्वश्रेष्ठ है; क्योंकि भगवत्पूजामें इसकी प्रायः सभी वस्तुएँ काममें आती हैं और सदाचारकी दृष्टिसे भी इसका सात्त्विक दुग्ध, दही और नवनीत सत्त्व-प्रकृतिका उत्पादक होनेसे सदाचारका भी समानतः संस्थापक है। यही कारण है कि गौके पदार्थोंसे बननेवाले पञ्चामृतपर निम्न-उक्ति[3] पूर्णतः चरितार्थ होती है।

---

१. इसी तरह अन्यान्य पदार्थ भी।

२. गोजीवन श्रीचौंडे महाराजकी अध्यक्षतामें एक 'गोज्ञान-विश्वकोश'का निर्माण हो रहा है।

३. अस्यां हव्यं च कव्यं च प्राणयात्रा तथैव च॥ (वा. रा. बा.)

किन्तु गौ ज्ञान-विज्ञानमें भी मधु-विद्यासे कम उपकारिणी नहीं है और यह इसलिये कि इसके सभी पेय, लेह्य और ग्राह्य पदार्थ सात्त्विक विचार-शक्तिको बढ़ानेवाले होनेसे स्वभावतः मेधा और ऋतम्भराके भी प्रवर्द्धक हैं; इसलिये भी कि मस्तिष्कको नीरोग, शान्त और शीतल रखनेमें ये अद्वितीय हैं। ऐसी दशामें उक्त शास्त्रीय विचार-विमर्शकी दृष्टिसे गौके विषयमें यह निर्भीकतापूर्वक कहा जा सकता है कि—

मनुष्य और गौ
अथवा
ब्राह्मण और गौ
एवं
मानव-समाज और गौ

—सम्पूर्ण जीवन है।

आर्यसाहित्यमें गौका गौरव

(लेखक—देवर्षि भट्ट पं० श्रीमथुरानाथजी शास्त्री)

प्राचीन आर्योंके साहित्यमें गौका महत्त्व असाधारण । उसके शरीरमें यावन्मात्र देवताओंका निवास है, गो-पुच्छका झाड़ा देनेसे बालकोंके सब अरिष्ट दूर होते हैं। उसके दूध-दही-घृतादिके बिना न हमारे दैव और न पित्र्यकार्य ही सम्पन्न होते हैं। और तो क्या, श्रुति और स्मृतियोंके अनुसार उसके गोबर और गो-मूत्रका भी इतना उपयोग है कि उसके बिना हमारी क्या आन्तरिक और क्या बाह्य—किसी भी प्रकार-की शुद्धि नहीं हो सकती। केवल धर्मकी ही बात हो सो नहीं, आयुर्वेदमें भी गो-मूत्रसे 'संजीवनी' सदृश ओषधियाँतक बनती हैं । वेदोंसे लगाकर अर्वाचीन ग्रन्थोंतकमें आर्योंने गौकी असाधारण महिमा गायी है। गौके अनन्त उपकारोंसे आप्यायित हुआ भावुक हर्षगद्गद होकर धर्मशास्त्रोंमें प्रार्थना करता है—

गावो मे पुरतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
गावो मे परितः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥

'गायें मेरे आगे हों, गायें मेरे पीछे हों, गायें मेरे चारों तरफ़ हों, गायोंके बीचमें ही मैं सदा निवास करूँ।'

पुराणोंमें पद-पदपर गौकी अनन्त महिमा गायी गयी है। उसे देखते हुए हर एक अन्वेषणशीलको निश्चय हो जायगा कि न केवल भारतवासी आर्योंके यहाँ ही अपितु प्राच्य जगन्मात्रमें पहले गौका बड़ा सम्मान था। जैसे हम-लोग गो-पूजा करते हैं, उसी प्रकार पारसीलोग साँड़की पूजा किया करते थे। मिश्रमें सुनहले बछड़ेकी पूजा हुआ करती थी। वहाँके प्राचीन सिक्कोंपर बैलोंकी मूर्ति अङ्कित रहती थी। ईसासे कई हजार वर्ष पूर्वके बने हुए पिरामिडोंमें बैलोंकी मूर्तियाँ अङ्कित हैं। आज भी कैल्टिक जातिके लोग जहाँ कहीं हैं, गो-पूजक हैं।

धन-गणनामें गो-धनपर ही पहले नज़र जाती थी। राजपूतानेमें गौका मालिक आज भी 'धणी' (धनी) कहलाता है। धनकी ही क्या बात, एक गौकी कीमत समूचे राज्यसे भी अधिक मानी जाती थी—यह अन्वेषणोंसे प्रमाणित होता है। महाभारतमें आख्यान है कि एक बार च्यवन ऋषि गङ्गा-गर्भमें बैठकर तपस्या कर रहे थे। मछली पकड़नेवालोंके जालमें मुनिजी भी आ गये। वे मछलियोंके साथ बिकते हुए 'नहुष' के दरबारमें पहुँचे। राजा मुनिजीके बदले एक थैली सोना देने लगा; किन्तु मुनिने कहा यह मछुएके साथ अन्याय होता है। मेरा मूल्य इतना-सा नहीं। राजाने और भी बहुत-सा सोना लगा दिया; और तो क्या, अन्तमें अपना समूचा राज्यतक देना चाहा। परन्तु तो भी मुनिजीने कहा—हमारा मूल्य इतना कम नहीं होगा।' अन्तमें राजाने विनय की कि 'महाराज! आप ही बताइये, आपका मूल्य क्या होगा?' मुनिने कहा—'आप इसे एक गौ दे दीजिये; बस, यही बदला ठीक हो जायगा।' कहिये गौकी महिमामें कुछ कमी रही?

धर्मपुस्तकोंकी दृष्टिसे गौका गौरव केवल हम ही गा रहे हों सो नहीं; गवेषणा (रिसर्च) करनेवालोंने स्वयं गवेषणा की है कि बेचारी इस 'गवेषणा' का आरम्भ ही गौसे होता है। पहले यह गौ ही प्रधान धन समझी जाती थी। इस गौकी रक्षाके लिये ही पहले-पहल 'गोत्र' (गोशाला) की सृष्टि हुई। जैसा कि ऋग्वेदमें आता है—'त्वं गोत्रमङ्गिरोभ्यः अवृणोः' (१।५१।३) "हे इन्द्र! तुमने अङ्गिरा ऋषिके वंशजोंके लिये 'गोत्र' खोल दिया।" ऐसे ही 'गवां गोत्रमुदसृजः'। (ऋ० २।२३।१८) "तुमने गो-समूहके लिये 'गोत्र' खोल दिया था" इत्यादि। इन 'गोत्रों'

(गोशालाओं) के रक्षक वसिष्ठ-अत्रि-कश्यप-भरद्वाज आदि आर्योंके दलपति थे। एक-एक दलका एक-एक 'गोत्र' था। गोत्रपतिके नामसे ही 'गोत्र' का नाम चलता था। इसीलिये धीरे-धीरे वसिष्ठ-भरद्वाज-कश्यप आदि गोत्रोंकी सृष्टि हुई, जो अब आर्योंके वंशपरिचयका प्रधान निशान है।

इस गौकी एषणा (प्राप्त करनेकी इच्छा, अथवा खोज) प्राचीन आर्योंको प्रधानतया होती थी। इस 'गवेषणा' से प्रेरित हुए आर्य बहुधा इन्द्रादि देवोंकी प्रार्थना करते थे। इस अर्थके लिये ऋग्वेदमें 'गवेषणा' शब्दका प्रयोग स्थान-स्थानपर मिलता है। जैसे—'स घा विदे अन्विन्द्रो गवेषणो बन्धुक्षिद्भ्यो गवेषणः' (ऋ० १।१३२।३) अर्थात् इन्द्र अपने बन्धुओं (उपासकों) के लिये गौओंका अन्वेषण करता है। कई बार गो-अन्वेषणके लिये रथपर बैठकर जाना जरूरी हो जाता था। इसीलिये रथको 'गवेषणः' कहा जाता था। जैसे—'युजे रथं गवेषणं हरिभ्याम्' (ऋ०७।२३।३) 'गौओं-को खोजनेवाले रथमें घोड़ोंको जोतता हूँ।' इन्द्रको स्पष्ट अक्षरोंमें गो-अन्वेषणकर्ता बतलाया है। जैसे—'गवेषणः स धृष्णुः' (७। २०। ५) 'शत्रु-धर्षणकर्ता इन्द्र गौओंका अन्वेषण करते हैं।' यहाँ सायणने अपने भाष्यमें स्पष्ट अर्थ किया है—'गवेषणः गवाम् अन्वेष्टा।' इस गो-एषणामें कई बार युद्ध करनेका भी प्रसङ्ग आ जाता था, जिसके लिये नगारे आगे लेकर लड़ाईके मैदानमें उतरना पड़ता था। इसीलिये अथर्ववेदमें नगारेको 'गवेषणः' कहा है (४। २०। ११)।

प्राचीन साहित्यमें यह 'गो-एषणा' शब्द ही कुछ नया नहीं। इसके अनुकरणपर 'पुत्रैषणा' (पुत्रकी इच्छा), 'दारैषणा' (स्त्रीकी इच्छा), 'वित्तैषणा' (धनकी इच्छा) आदि अनेक शब्दोंकी सृष्टि हुई है। गायोंके प्रति धन ही क्या, अपने सर्वस्वकी भावना जबतक रही, तबतक यह 'गवेषणा' आर्योंके लिये नित्य-नैमित्तिक व्यापार थी। 'गवेषणा' शब्दके इस मौलिक अर्थसे वर्तमान समयका यह गवेषणा(तत्त्व-निरूपण) अर्थ कैसे बन गया, यह खोज निकालना बहुत कठिन नहीं। प्राचीन कालमें गौ ही प्रधान धन था। इसलिये 'गो-अन्वेषण' का अर्थ हुआ—'धन-अन्वेषण' अथवा 'तत्त्वका अन्वेषण।' धीरे-धीरे गौके प्रति यह धनकी भावना मन्द होती गयी। धनका अर्थ अधिकाधिक व्यापक बनता गया। और भी आवश्यक वस्तुएँ धन समझी जाने लगीं। जो मूल्यवान् है, वही धन है; इसलिये धीरे-धीरे 'गो-अन्वेषण' का सामान्यतः 'मूल्यवान्‌का अन्वेषण' यह अर्थ बनता गया। जैसे-जैसे यह मानव 'जड' से 'अजड' (चेतन आत्मादि) के सम्मुख होता गया, वैसे-वैसे 'तत्त्वज्ञान' को मूल्यवान् मानता गया। अतएव गवेषणाका जो अर्थ पहले था—'गोरूपी धनका अन्वेषण', वह धीरे-धीरे 'तत्त्व-अन्वेषण' पर आ ठहरा। उस ही समय व्याकरणमें 'गवेष' धातुकी सृष्टि हो गयी।

गौ आदि पशुओंको धन मानना केवल हमारे ही यहाँ न था, सभी प्राचीन जातियाँ वैसा मानती थीं। अंग्रेज़ीका Pecuniery शब्द इसमें प्रमाण है। Pecuniary शब्द लैटिनके Pecus से बना है, जिसका अर्थ है पशु। इसलिये इसका वास्तविक अर्थ है पशुसम्बन्धी, किन्तु अब अर्थ हो रहा है 'अर्थसम्बन्धी।' [बङ्गभाषाका मासिक पत्र 'प्रवासी' (त्रयोदशवर्ष, द्वितीय खण्डकी प्रथम संख्या)]।

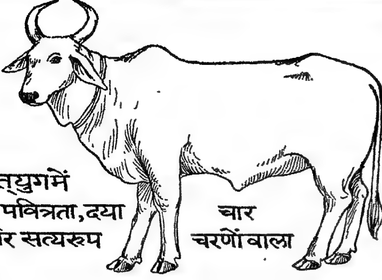
प्राचीन आर्योंकी सर्वस्व, भारतकी गो-माता आज किस दशामें है, इसे अधिक लिखकर समझानेकी जरूरत नहीं। प्रसङ्गागत* 'साहित्यवैभव' का एक संस्कृत 'कवित्त' उद्धृत कर इस लेखको समाप्त करूँगा—

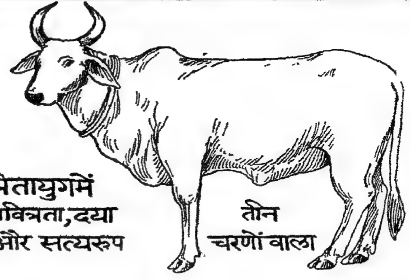
मुञ्चन्ते स्वशत्रुमपि दन्तेष्वावहन्तं तृण-
मेवं प्रागुदन्तेषु हि रीतिरतिख्यातासौ
सैषा पुनः प्राश्य तृणं बाढमृणं धत्ते जने
येन निजवत्सैरपि सूतकृषिखातासौ।
मञ्जुनाथ नित्यं निजस्तन्यदुग्धदानादहो
अन्यमतमानिनामपीह मान्यमातासौ
त्राता मान्यमोगलमहीपैरुपयातार्चनं
गोमाताप्यखण्डखड्गधारामनुयातानौ॥

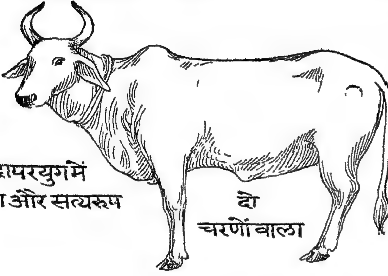
दाँतोंमें तिनका ले लेनेपर अपने वैरीतकको छोड़ देते हैं, यह रीति (मर्यादा) प्राचीन इतिहासोंमें सुप्रसिद्ध है। यह गौ तृण खाकर जनतापर यह बड़ा भारी 'ऋण' (कर्ज़) धरे हुए है कि दूध, दही आदि पैदा करनेके सिवा यह अपने बच्चोंसे खेती भी कराती है—'सूतं (जनितं) कृषेः खननं यया'। यदि स्तनका दुग्ध पिलानेसे माता मानी जाती हो तो न केवल हिंदू ही, अपितु और-और मत (इस्लाम, खीष्ट आदि) माननेवालोंकी भी यह आदरणीय माता है।

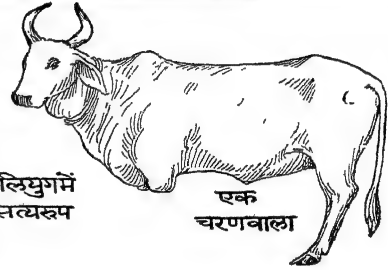
* 'बिहारी सतसई' का संस्कृत दोहोंमें अनुवाद आदिसे युक्त नये प्रकारकी यह सचित्र पुस्तक लेखकके पाससे 'नागरपाड़ा, जयपुर' के पतेपर मिलती है।

धर्मरूप वृषभ



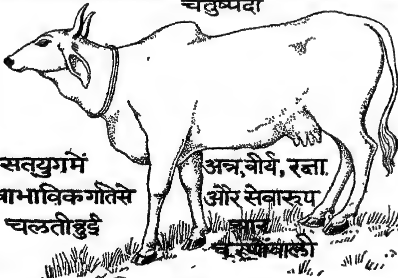


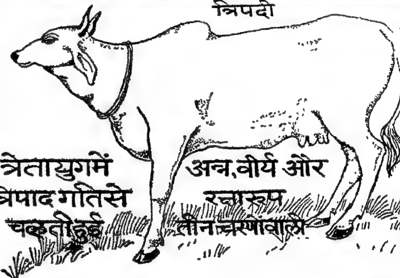


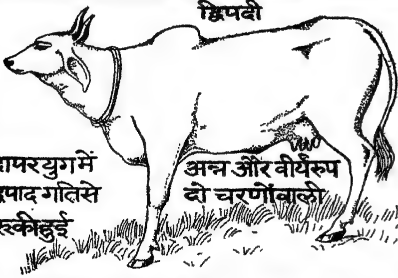


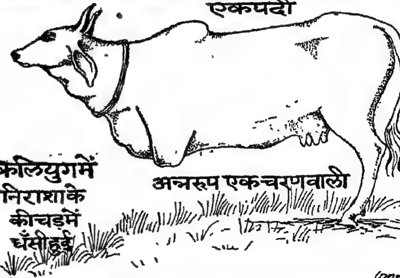
तप, शौच और दया—धर्मके ये तीन पाद नष्ट हो गये, चौथा सत्य भी नष्ट हुआ जा रहा है।

कृते धेनुश्चतुष्पादा साक्षाद्धर्मस्वरूपिणी । पदैकेन कलौ माता कथं चलतु तिष्ठतु ?





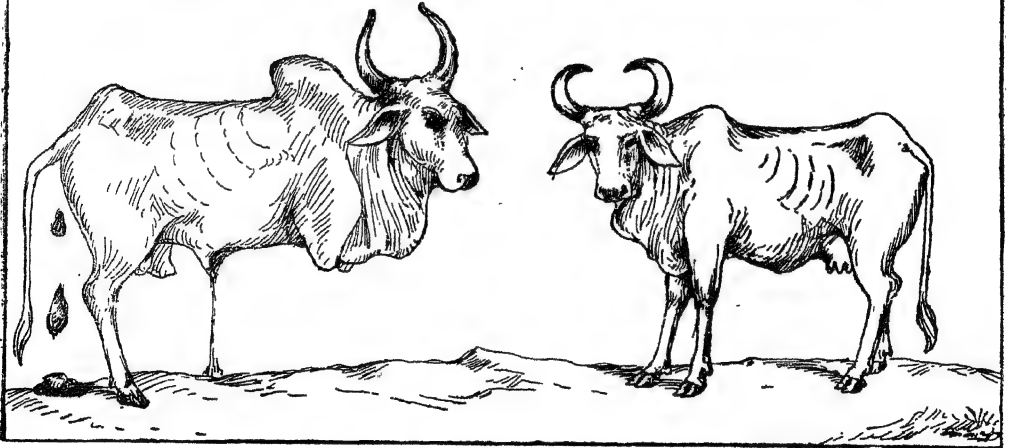




अन्नं वीर्यं च रक्षां च सेवां पादचतुष्टयम् । सत्वरं प्रतिसंधाय कार्यं कृतयुगं कलौ ॥



गो-रूप पृथ्वीकी भगवान्‌से पुकार



गो-रूप पृथ्वी और वृषभरूपी धर्मकी दुर्दशा

[आर्य हिंदुओंकी क्या कथा,] इतिहासप्रशंसित मुगल बादशाहोंने भी इसकी रक्षा की थी। (बादशाह अकबरने अपने राज्यमें गो-वध बिल्कुल बंद करवा दिया था।) [इन सब विशेषताओंसे] देवताकी तरह पूजी जा रही यह गौ माता भी 'अखण्ड' (प्रार्थना करनेपर भी अनिवारित अथवा अधिकताके कारण निरन्तर) खड्गधाराके नीचे आयी हुई है। (इससे बढ़कर और अमङ्गल तथा अन्याय क्या होगा)। कुछ भी विवेक रखनेवाले इसपर विचार करें।

गोधन और पञ्चगव्य

(लेखक—श्रीयुत प्रभुपाद श्रीप्राणकिशोर गोस्वामी एम्० ए०, विद्याभूषण)

प्राथमिक विद्यालय (प्राइमरी स्कूल) में बालकोंको जो लेख पहले लिखनेके लिये दिया जाता है, उसका विषय होता है 'गाय'। इस समय देख रहे हैं भारतवर्षके अन्तिम कल्याण-की कामना करनेवाले 'कल्याण'की विचारशील मण्डली भी इसी विषयपर विचार करनेमें संलग्न है; यह बड़े ही आनन्दकी बात है। वैष्णव आचार्योंने गो-सेवाको नवधा भक्तिके अन्तर्गत हरिपाद-सेवनरूपा भक्तिका एक अङ्ग बतलाया है। जो लोग भक्तिके अनुशीलनमें लगे हैं, उनके लिये मन-वचन-कर्म-से गो-माताकी सेवा विशेष कर्तव्य है।

भागवत-शास्त्र बैलको धर्म और गायको पृथ्वीके रूपमें वर्णन करता है। राजा परीक्षित्‌ने गाय और बैलके ऊपर अत्याचार करनेवाले कुपुरुषके रूपमें ही कलियुगको देखा था। धर्मके रहनेपर ही धरती रह सकती है। धरतीकी रक्षा करनेके लिये ही धर्मको धारण किया जाता है। महादेव शङ्कर वृषभवाहन पशुपति हैं, और गोविन्द-गोपाल वृन्दावन-में गौएँ चराकर पशुपालन-लीला करते हैं। शङ्करके भक्त और श्रीकृष्णकी आराधना करनेवाले इस बातको हृदयमें धारण करनेपर गो-सेवाके महत्त्वको समझ सकेंगे।

मार्क्सवादके अनुयायी डायलेक्टिक जडवादी कहेंगे कि गोपालक और कृषि-प्रधान देश भारतके निवासी यदि गाय-बैलकी प्रशंसा करते हैं तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? इसका उत्तर यह है कि भारतवासी सचमुच वस्तुवादी होकर ही गो-माताकी सेवामें लगे थे। परन्तु उनकी दृष्टिगत शुद्धताके कारण स्वाभाविक ही सर्वत्र पवित्रता और आध्यात्मिकता प्रकट हो जाती है। भारतीय दर्शनकी यही तो विशेषता है। जबतक समस्त मानव-समाज इस अत्यन्त प्राचीन ऋषिप्रवर्तित पंथ—कृषि-गो-रक्षाका अनुसरण नहीं करता, तबतक उत्पादन-सङ्कटकी निवृत्ति, अथवा वर्ग-युद्धके जेहादकी घोषणा-से वास्तविक फलकी प्राप्ति असम्भव है।

पृथु-उपाख्यानमें आता है कि अकालसे पीड़ित प्रजाके दुःखोंका निवारण करनेके लिये स्वयं महाराजा पृथु गोदोहन और भूमि-कर्षणके काममें प्रवृत्त हुए थे। पाण्डवलोग असंख्य गौओंका पालन करते थे। महाभारतसे इसका पता लगता है।

कंसके राजकालमें पृथ्वी पापके भारसे, अत्याचार-अनाचारसे अत्यन्त पीड़ित हो गोमूर्ति धारण करके सब लोकों-के पितामह ब्रह्माकी शरणमें गयी। उसके कातर क्रन्दनको सुनकर भगवान् श्रीगोविन्दको अवतार लेना पड़ा। अत्याचारी लोग जानते थे कि गो-माता भगवान्‌का ही शरीर है—

विप्रा गावश्च वेदाश्च तपः सत्यं दमः शमः।
श्रद्धा दया तितिक्षा च क्रतवश्च हरेस्तनुः॥

जैसे कंसके राज्यमें था, वैसे ही आज भी अत्याचारी लोग जानते हैं कि शुद्ध ब्राह्मण, गाय, वेदज्ञान, तपस्या, सत्यानुशीलन, इन्द्रिय-निग्रह, शान्तभाव, विश्वास, दया, सहिष्णुता और यज्ञ—ये सब सनातन धर्मस्वरूप विष्णु-भगवान्‌के शरीर हैं। इसी कारण इनके ऊपर बराबर आघात-पर-आघात पहुँचाया जाता है।

वेद, उपनिषद्, पुराण तथा सारे स्मृतिशास्त्रोंमें गो-रक्षा, गो-सेवा, गो-दान तथा इनकी उपयोगिताके सम्बन्धमें निर्देश किया गया है। केवल हिंदूके लिये ही नहीं, बल्कि समस्त मानव-जातिके लिये गाय माताका कार्य करती है। श्रीचैतन्य-देव काजी-उद्धारलीलामें कहते हैं—

गो दुग्ध खाओ, गाभी तोमार माता।
वृष अन्न उपजाय, ताते तेहो पिता॥
पिता माता मारि खाओ, एवा कोन धर्म्म।
कोन बले करो तुमि एमत विकर्म्म॥

'तुम गायका दूध पीते हो, गाय तुम्हारी माता है। बैल अन्न उपजाता है, इसलिये तुम्हारा पिता है। माता-पिता-

को तुम मारकर खा जाते हो। यह कौन-सा धर्म है। इस प्रकारका अपकर्म तुम किस बलपर करते हो?'

गायके शरीरकी हवि और ब्राह्मणके मुखका मन्त्र—ये ही दो वैदिक यज्ञानुष्ठानके प्रधान उपकरण हैं। ये अब दुर्लभ हो चले हैं। वैदिक क्रिया और संस्कारादि भी लुप्त-प्राय हैं। भैंससे उत्पन्न हुआ पदार्थ शुद्ध और सात्त्विक न होनेके कारण देव-पितृ-कार्योंमें निषिद्ध माना गया है। मोक्ष-साधनके उपयोगी देहगठनके लिये वैदिक संस्कार करना—यह हिंदू-जातिकी विशेषता है। इन संस्कारोंमें ही हिंदूकी जातीयता प्रतिष्ठित है। विभिन्न जातियोंके मनुष्योंने शरीरको संस्कृत करके हिंदुत्वकी प्राप्ति की है। वेदोक्त गर्भाधान-संस्कारसे लेकर श्राद्ध या और्ध्वदैहिक संस्कारपर्यन्त सर्वत्र गो-माताका सम्बन्ध स्वीकार किया गया है।

दही, दूध, घी, गोबर और गोमूत्र—इस पञ्चगव्यके विना कोई शुद्धि या संस्कार नहीं हो सकता। हिंदू-शास्त्रोंमें पञ्चामृतके नामसे जिन वस्तुओंका निर्देश है, उनमें तीन गव्य हैं। स्वास्थ्य और चिकित्साविज्ञानमें दूध और उससे उत्पन्न नाना प्रकारके पदार्थोंमें रहनेवाली प्राणशक्तिकी जैसी उच्च विवेचना की गयी है, वैसी किसी दूसरे खाद्य पदार्थकी नहीं। आधुनिक वैज्ञानिक भी गोमूत्र और गोबरकी प्रशंसा कर रहे हैं, यह बहुत अच्छी बात है। प्राचीन ऋषियोंने इनके गुण-दोष देखकर ही प्रत्येक संस्कारमें इनके उपयोग करनेका उपदेश दिया है—

स्निग्धं विपाके मधुरं दीपनं बलवर्द्धनम्।
वातापहं पवित्रञ्च दधि गव्यं रुचिप्रदम्॥

(सुश्रुतसंहिता)

दही स्निग्ध, पाक होनेपर मधुर, जठराग्निको तीव्र करनेवाला, बलवर्द्धक और वातनाशक है। गायका दही पवित्र और रुचिकर है।

दही खानेके विषयमें जो विधि-निषेध है, वह भी देखनेयोग्य है—

शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु प्रायशो दधि गर्हितम्।
हेमन्ते शिशिरे चैव वर्षासु दधि शस्यते॥

शरद्, ग्रीष्म और वसन्त ऋतुओंमें दही खाना अच्छा नहीं होता। हेमन्त, शिशिर और वर्षाऋतुमें दही खाना ठीक होता है।

दूधके गुण सभी जानते हैं, इसका सेवन करनेपर कब कैसा फल होता है, यह भावप्रकाश ग्रन्थमें लिखा है—

वृष्यं बृंहणमग्निदीपनकरं पूर्वाह्णकाले पयो
मध्याह्ने तु बलावहं कफहरं पित्तापहं दीपनम्।
बाले वृद्धिकरं क्षयेऽक्षयकरं वृद्धेषु रेतोवहं
रात्रौ पथ्यमनेकदोषशमनं क्षीरं सदा सेव्यते॥

दूध दोपहरके पहले वीर्यवर्द्धक और अग्निदीपक तथा दोपहरको बलकारक, कफका नाश करनेवाला, पित्तको हरनेवाला और मन्दाग्निको नष्ट करनेवाला है। बालकपनमें वृद्धि करनेवाला और बुढ़ापेमें क्षयनाशक तथा वीर्यवर्धक है। रात्रिमें सेवन करनेसे बहुत-से दोषोंको दूर करता है। दूध सदा सेवनीय है।

देवताओंकी तुष्टिके लिये सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घी। घीके बिना भोजन आसुरी हो जाता है। घीके गुण चिकित्सा-शास्त्रमें इस प्रकार लिखे हैं—

विपाके मधुरं शीतं वातपित्तविषापहम्।
चाक्षुष्यमग्र्यं बल्यञ्च गव्यं सर्पिर्गुणोत्तरम्॥

गायका घी गुणोंमें सबसे श्रेष्ठ है, वह शीतल, वात-पित्त और विषका नाश करनेवाला, आँखकी ज्योति और शरीरके सामर्थ्यको बढ़ानेवाला है।

रोगोंके कीटाणु और दूषित गन्धको दूर करनेमें गोबर अद्वितीय है। आज भी हिंदुओंके घरके बच्चोंको संस्पर्शके दोषसे मुक्त करनेके लिये गोबरका तिलक देनेकी प्रथा है। भगवान्‌की मूर्तिकी प्रतिष्ठामें गोबरके भस्मसे मूर्तिका मार्जन किया जाता है। उच्छिष्ट स्थानको शुद्ध करनेके लिये गोबरका नित्य चौका लगाया जाता है। भूमिको शुद्ध करनेवाले पदार्थोंमें इसका मुख्यतः उपयोग है। गोबरको उबालकर लेप करनेसे गँठिया रोग दूर होता है। गोमूत्र भी अनेकों गुणोंसे युक्त होनेके कारण प्रशंसित है।

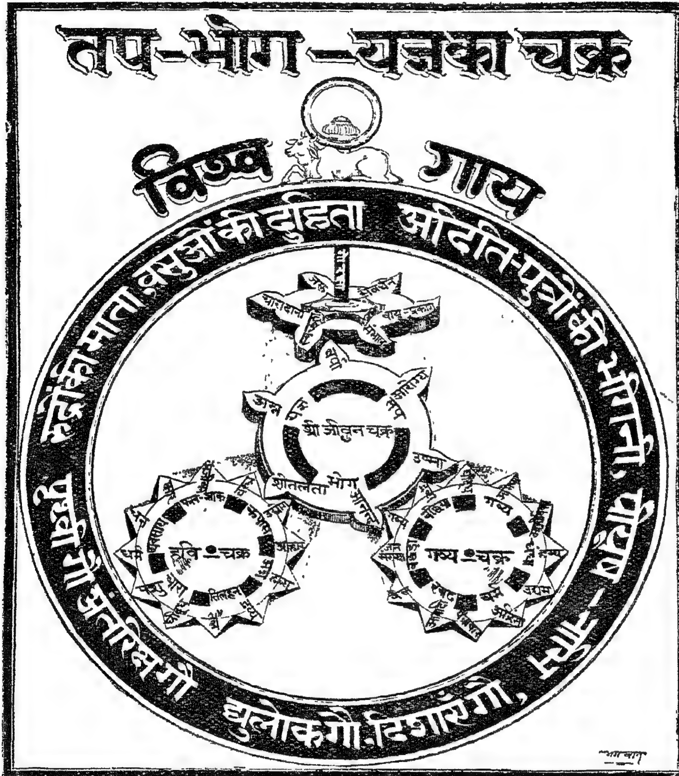
गव्यं सुमधुरं किञ्चिद् दोषघ्नं कृमिकुष्ठनुत्।
कण्डूघ्नं शमयेत् पीतं सम्यग्दोषोदरे हितम्॥

(चरकसंहिता)

कृमिरोग, कुष्ठरोग, खुजली और प्लीहा-रोगमें गोमूत्र सेवन करनेसे रोग दूर हो जाता है।

सब प्रकारकी सम्पत्तिमें गोधन एक प्रधान सम्पत्ति है। साधारण स्त्रीके विधवा होनेपर, प्राचीन समयमें, उसे

त्रिविध चक्रकी चाबी



भोग, यज्ञ और तपकी घड़ी गोरक्षाकी चाबीसे ही ठीक चल सकती है। गोरक्षा हुई तो भोग भी मिलेंगे, यज्ञ भी होंगे और तपस्या भी सिद्ध होगी। जैसे चाबी बंद होते ही घड़ी बंद हो जाती है, वैसे ही गोरक्षा रुकते ही सारे चक्र रुक जायँगे।

गायका सांस्कृतिक महत्व





हे शान्ति एवं समृद्धिकी जननी गाय!
हम नमन करते हैं। तुम्हें प्रणाम करते हैं।
आर्य-संस्कृतिके केन्द्र!
भारतीय जीवनकी सर्व श्रेष्ठ सम्पत्ति!!
हम तुम्हें प्रणाम करते हैं।
मा! तुम्हारी जय हो! जय हो!!
भारतका प्रत्येक परमाणु एवं कोषाणु
तुम्हारे अमृतमय दुग्धका ऋणी है।



एक गाय दे दी जाती थी। उस गायकी सेवा करके दूध बेचकर वह बड़े ही सद्भावसे जीविका-निर्वाह करती थी। उसे अपने प्रेम-व्यवहारके लिये गाय एक आलम्बन मिल जाती थी। वह नियम अब नहीं रहा। इससे हाहाकार, दीनता और दुर्नीति फैल गयी है। उस समय प्रत्येक गाँवके पास ही गोचरभूमि होती थी। वहाँ खुली हवा और प्रकाशमें स्वच्छन्द घूमनेके कारण गाय और बैल स्वस्थ और सबल रहते थे। उनकी वंश-वृद्धि और स्वास्थ्यके विषयमें चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। इस प्रकार स्वाधीनतापूर्वक विचरण करनेके उपयुक्त गोचरभूमि न होनेके कारण आज चारों ओरसे गोवंशका ह्रास हो रहा है।

स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने ब्रह्मा आदि देवताओंको मोहित करके जो गोचारण-लीला की है, उसीमें परमेश्वरके सर्वश्रेष्ठ माधुर्यकी प्रतिष्ठा है। वह निरर्थक नहीं है। उसके द्वारा सब जीवोंके लिये गो-माताकी सेवा करनेका स्पष्ट निर्देश पाया जाता है। इन्द्र-मख-भङ्ग और गो-गोवर्द्धन-पूजाके प्रसङ्गमें श्रीमद्भागवतमें यही बात व्यक्त की गयी है।

आर्य-संस्कृतिका झरना

(लेखक—श्रीयुत आशुकुमार)

पृथ्वीरूपी तवेपर कालरूपी कलछुलके नीचे न जाने कितने देश और संस्कृतियाँ उलट-पुलट कर जल-भुन गयीं। किन्तु अपने भीतर रहनेवाली स्वच्छता तथा निर्भयताके कारण हमारी आर्य-संस्कृतिका शुद्ध और सुन्दर विकास हुआ। हमारी संस्कृति सभी प्राचीन जातियों तथा संस्कृतियोंसे अधिक प्राचीन है। मिस्र, सीरिया, बेबीलन, रोम, स्याम और अरबकी संस्कृतियाँ तो हमारी प्राचीन और उन्नत संस्कृतिके सामने छोटी बच्चियाँ-सी थीं। वे सब संस्कृतियाँ नष्टप्राय हो गयीं, उनका नाममात्र अवशेष रह गया है; किन्तु आज भी आर्यावर्त और वेदकाल-की अपनी वही प्राचीन संस्कृति एक निर्भय और शक्तिमान् योद्धाकी भाँति कराल कालके सामने ज्वलन्त रूपसे खड़ी है।

युग-युगका अभिनन्दन और खण्ड-खण्डका अभिवन्दन प्राप्त करनेवाली हमारी प्राचीन—पर सदा नवीन—यह पुराणपुनीत संस्कृति अन्य संस्कृतियोंके लिये स्पर्शमणि बन चुकी है, अर्थात् इसके स्पर्श-मात्रसे अनेकों संस्कृतियाँ उन्नत हुई हैं। ऐसी अमोघ संस्कृति कहाँ ठहरी है, इसे तनिक सोचिये। आर्य-संस्कृतिका गुरुत्व-मध्यविन्दु केन्द्र है प्रणव (प्र+नव); और यह विन्दु इडा-सरस्वती-महीरूप त्रिकोणकी तीन रेखाओंको समानरूपसे जोड़ता है। यही कारण है कि अनेक बार डावाँडोल होनेपर भी आर्यावर्तकी जड़ नहीं हिली।

आर्य-संस्कृतिकी नवनीतरूपा इडा-सरस्वती-महीकी अनुपम त्रिवेणी आर्यावर्तके किनारेपर आ उतरी है। इसीसे वह अजर और अमर रहा है। इडा-सरस्वती-मही-रूप त्रिमूर्ति वरुणदेवकी मानो तीन जिह्वाएँ हैं और इन जिह्वाओंके साथी हुई होनेसे आर्यावर्त वरुणका करुण भोग न बनकर तरुण-सा खड़ा है। जिस प्रकार बिल्ली अपने बच्चोंको जीभसे चाट-चाटकर स्वच्छ बना देती है, उसी प्रकार वरुणदेवने अपनी इन जिह्वाओंसे चाट-चाटकर हमको स्वच्छ बना दिया है। ऐसी अनुपम, सौम्य और सुदृढ़ संस्कृतिके नीचे हम अपने पुनरुत्थानरूपी प्रासादकी नींव जितनी ही गहरी और पक्की रक्खेंगे, उतना ही हमारा यह अभ्युदय-प्रासाद समुन्नत, सुदृढ़ और चिरस्थायी होगा। संस्कृतिके इस रहस्यको हमें समझ लेना चाहिये।

प्राचीन गोशालाएँ

[एक किताबी कीड़ा]

गोगृह

गोशालाओंकी व्यवस्था कैसी होनी चाहिये, इसका अपने यहाँ प्राचीन ग्रन्थोंमें पूरा विवरण मिलता है। 'स्कन्दपुराण' में बतलाया गया है कि गोगृह सुदृढ़, विस्तीर्ण तथा समान स्थलवाला होना चाहिये। उसमें ठंडी, तेज हवा और धूपकी पूरी रुकावट होनी चाहिये और बालूसे उसकी भूमि कोमल बना देनी चाहिये। शरीरकी खुजलाहट मिटानेके लिये उसमें बहुत-से स्तम्भ होने चाहिये। चारा डालनेके लिये उसमें बड़ी-बड़ी नाँदें होनी चाहिये।* खूँटोंका ऊपरी भाग नुकीला न होना चाहिये, जिसमे उनके स्पर्शसे क्लेश न हो और उनमें मुलायम रस्सियाँ लगी रहनी चाहिये। मच्छर आदि हटानेके लिये धुएँका प्रबन्ध रहना चाहिये और बैठनेके लिये पर्याप्त स्थान होना चाहिये। पानी पीनेके लिये कुएँ, कुण्ड, जलाशय आदि रहने चाहिये। कूड़ा साफ करनेके लिये नौकरोंका प्रबन्ध रहना चाहिये और उनके निर्वाहयोग्य वृत्तिकी भी व्यवस्था होनी चाहिये। पर्दे, छाया, चारा, पानी आदिका प्रबन्ध रहना चाहिये। सुन्दर प्राकार तथा द्वारोंसे वह सुशोभित होना चाहिये। इस तरहके गोगृह बनवाकर जो किसी अच्छे पर्वपर दान करता है वह भाग्यवान्, नीरोग और सम्राट् होता है।

यः कारयित्वा सुदृढं विस्तीर्णं सुसमस्थलम्।
शीतवातातपहरं सिकताभिर्मृदूकृतम्॥
शरीरकण्डूतिहरं स्तम्भसम्भारसङ्कुलम्।
भक्ष्यप्रकल्पितानेकतृणाधारवदण्डकम्॥
अतीक्ष्णाग्रसुखस्पर्शदामनीशङ्कुसङ्कुलम्।
हर्तुं धूमैश्च दंशादीन् प्रकृष्टासनमाश्रयम्॥
कृतकूपनिपानादिजलाशयनिवेशनम्।
अवस्करतिरस्कारकारिकर्मकरान्वितम्॥
तृणोदकादिनिर्वाहक्षमकल्पितवृत्तिकम्।
एवंविधं महारम्यं प्राकारद्वारभूषितम्॥
कृत्वा गृहं गवामर्थे यः पर्वणि निवेदयेत्।
स राजराजो भवति भाग्यारोग्यसमन्वितः॥

महामुनि पराशरकृत 'कृषि-संग्रह' में भी बतलाया गया है कि जिसकी गोशाला सुदृढ़, साफ-सुथरी, गोबरसे रहित होती है, उसके पशु अच्छा भोजन न मिलनेपर भी बढ़ते रहते हैं। जिस स्थानसे प्रतिदिन बैल गोबर और मूत्रसे सने हुए निकलते हैं, वहाँ अच्छा चारा देनेसे भी क्या लाभ?

'वृष-आय[1]' वाली शाला गौको बढ़ानेवाली होती है। 'सिंह-आय' वाले स्थानमें गोनाश अवश्य होता है। चावलका पानी, गरम माँड़, मछलीका पानी, बिनौले, भूसी आदि उस स्थानपर पड़े रहनेसे गोनाश होता है। झाड़, मूसल, जूठन आदि वहाँ इधर-उधर पड़े रखने तथा बकरियोंके बाँधनेसे भी हानि होती है। जहाँ गोमूत्र भरा रहता है और कूड़ा फैला रहता है, वहाँ उनका निवास कैसे हो सकता है? जहाँ थूक, खखार, मूत्र, पुरीष, कीचड़, मिट्टी नहीं गिरते, वहाँ लक्ष्मी स्थिर होती हैं। जिसमें सन्ध्यासमय दीपक नहीं जलाया जाता, उस स्थानको लक्ष्मी-रहित देखकर गोगण रोते हैं---

गोशाला सुदृढा यस्य शुचिर्गोमयवर्जिता।
तस्य वाहा विवर्धन्ते पोषणैरपि वर्जिताः॥
शकृन्मूत्रविलिप्ताङ्गा वाहा यत्र दिने दिने।
निःसरन्ति गवां स्थानात् तत्र किं पोषणादिभिः॥

---

* 'चरही' का परिमाण इस प्रकार बतलाया गया है—

स्वामिहस्तप्रमाणेन दैर्घ्यविस्तारसंयुतौ।
वसुभिश्च हरेद्भागं शेषाङ्के फलमादिशेत्॥
पशुरोगः पशोर्नाशः पशुलाभः पशुक्षयः।
पशुरोगः पशोर्वृद्धिः पशुभेदो बहुप्रदः॥

पशु मालिक के हाथ नपाई। लंबाई चवड़ाइ मिलाई॥
आठ भाग दे जो बचि रहै। भिन्न भिन्न फल ताके कहै॥
एक बचे पशु-हानि करावे। दुइ के बचे नाश फल पावे॥
तीन बचे पशु-लाभ कराई। चारि बचे तो क्षय होइ जाई॥
पाँच बचे पशु रोग बढ़ावै। छः के बचे वृद्धि उपजावै॥
सात बचे पशुभेदै जानौ। आठ बचे बहु वृद्धि बखानौ॥
(वृषकल्पद्रुम)

[1] इष्ट स्थानकी लंबाईको चौड़ाईसे गुणा करके गुणनफलमें आठसे भाग देनेपर एक आदि संख्या शेष रहनेपर क्रमशः १ ध्वज, २ धूम, ३ सिंह, ४ श्वान, ५ वृष, ६ स्वर, ७ गज और ८ उष्ट्र— ये आय होते हैं।

पञ्चपञ्चायताशाला गर्ध्वा वृषकरी मता ।
सिंहस्थाने कृता सैव गोनाशं कुरुते ध्रुवम् ॥
सिंहगेऽहर्पतौ चैव गोशालां कुरुते यदि ।
प्रमादान्मन्दबुद्धित्वाद् गवां नाशो भवेत्तदा ॥
तण्डुलानां जलं चैव तप्तमण्डं झषोदकम् ।
कार्पासास्थितुषं चैव गोस्थाने गोविनाशकृत् ॥
संमार्जनीं च मुसलमुच्छिष्टं गोनिकेतने ।
कृत्वा गोनाशमाप्नोति तथा तत्राजबन्धने ॥
गोमूत्रजालकेनैव यत्रावस्करमोचनम् ।
कुर्वन्ति गृहमेधिनस्तत्र का वाहवासना ॥
श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि पङ्कानि च रजांसि च ।
न पतन्ति गवां यत्र तत्र लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥
संध्याकाले च गोस्थाने दीपो यत्र न दीयते ।
स्थानं तत्कमलाहीनं वीक्ष्य क्रन्दन्ति गोगणाः ॥*

गो-परिचर्या

ऐसे गृहोंमें गायोंको रखकर उनकी बराबर परिचर्या करनी चाहिये । गोष्ठमें रहकर जो गोपाल धुआँ नहीं करता, उसे मक्खियोंसे भरे हुए नरकमें मक्खियाँ खाती हैं—

गोपालको गवां गोष्ठे यस्तु धूमं न कारयेत् ।
मक्षिकालीननरके मक्षिकाभिः स भक्ष्यते ॥

(देवीपुराण)

दुहनेमें भी बड़ी सावधानी रखनी चाहिये । दो मास-तक तो बछड़ेको पिलाना चाहिये । फिर तीसरेमें केवल दो थन और चौथेसे तीन थन दुहने चाहिये ।

द्वौ मासौ पाययेद्वत्सं तृतीये द्विस्तनं दुहेत् ।
चतुर्थे त्रिस्तनं चैव यथान्यायं यथाबलम् ॥

(हारीत)

जो मृतवत्सा गायको उसके बछड़ेकी खालमें भूसा भरकर या गायका ताड़न करके बराबर दुहता है, वह सदा क्षुधार्त रहता है—

मृतवत्सां तु गां यस्तु दमित्वा पिबते नरः ।
वाहिताऽप्यचिरं तिष्ठेत् क्षुधार्तो वै नराधमः ॥

(देवीपुराण)

अनाथ गायोंके लिये शिशिर ऋतुमें यत्नपूर्वक मठ बनवाने चाहिये और उनमें घास, पानी तथा ईंधन देना चाहिये—

अनाथानां गवां यत्नात् कार्यस्तु शिशिरे मठः ।
पुण्यार्थं यत्र दीयन्ते तृणतोयेन्धनानि च ॥

(ब्रह्मपुराण)

क्रमानुसार प्रत्येक मासमें उनका उपचार करना चाहिये । ४ पल लवण, ८ पल घी और दूसरी गायका १६ पल दूध उनको देना चाहिये । ३२ पल शीतल जल और बलानुसार दूधका सेवन कराना चाहिये । प्रतिदिन सबेरे उन्हें लवण और जल देना चाहिये, फिर घास तथा मांसवर्जित भोजन कराना चाहिये । रातमें दीपक अवश्य जलाना चाहिये तथा उन्हें वीणा आदि मधुर वाद्य और पुराणोंकी दिव्य कथा सुनानी चाहिये ।* ऐसा करनेसे पृथ्वीभर रत्न देनेका फल प्राप्त होता है । जो पुण्य गोदानसे होता है, वही गो-संरक्षणसे । तृण और जलसे मनुष्योंको सदा उनका पालन करना चाहिये । वे सदा देने योग्य पूज्या, पोष्या तथा पालनीया हैं—

उपचारो गवां कार्यो मासि मासि यथाक्रमम् ।
लवणस्य तु चत्वारि पलान्यष्टौ घृतस्य च ॥
परकीयस्य दुग्धस्य तथा देयानि षोडश ।
द्वात्रिंशच्छीतलस्यापि जलस्य च पलानि च ।
आदौ विचार्य पयसः परिमाणं बलं रुचिम् ॥

---

* गोगृह कैसा होना चाहिये, इस सम्बन्धमें निम्नलिखित एक हिंदीका पद भी प्रसिद्ध है—

शीत उष्ण अरु वायु बचावै, गृहकी रचना कीजै ।
जामें रोग निकट नहिं आवै सो प्रकार लखि लीजै ॥
चारों दिशा दिवाल अनूपम, खिरकी बहुत रखावै ।
शीतल मन्द समीर वायु जहँ सुख पशुको पहुँचावै ॥
ओस नीर आतपहिं बचावै, छाया पुष्टि करीजै ।
एक झरोखा ऊपर राखै, तेहि दुर्गन्ध हरीजै ॥
मल अरु मूत्र साफ बहु राखै, तहाँ रोग नहिं आवै ।
या विधि पशुकी रक्षा कीजै, सफल सुक्ख उपजावै ॥

(वृषकल्पद्रुम)

* आजकल यह बात खोजकर निकाली गयी है कि दुहते समय गायोंको सङ्गीत सुनानेसे दूध अधिक निकलता है । इसीलिये विदेशोंकी गोशालाओंमें 'रेडियो' लगाये जाते है । परन्तु हमारे यहाँकी यह पुरानी बात है ।

आकस्मिकं तु दातव्यं पुण्यार्थं तु गवाह्निकम् ।
प्रभाते लवणं यत्र दीयते च ततो जलम् ॥
ततस्तृणानि भोज्यं च पोषणं मांसवर्जितम् ।
निशि दीपः सतन्त्रीको दिव्या पौराणिकी कथा ॥
एवं कृते महीं पूर्णां रत्नैर्दत्त्वा भवेत् फलम् ।
गोप्रदानाय यत्पुण्यं गवां संरक्षणाद्भवेत् ॥
मनुष्यैस्तृणतोयाद्यैर्गावः पाल्याः प्रयत्नतः ।
देयाः पूज्याश्च पोष्याश्च प्रतिपाल्याश्च सर्वदा ॥

(ब्रह्मपुराण)

भीतरसे संतुष्ट होकर इनकी परिचर्या करनी चाहिये । स्वप्नमें भी उनके ताड़ने या उनके प्रति क्रोध दिखाने या खेद करनेका भाव न होना चाहिये । उनके मूत्र-पुरीषसे किसी प्रकारका उद्वेग ठीक नहीं है । उनके रहनेके स्थानको शुष्क क्षारसे बराबर साफ करते रहना चाहिये । गर्मियोंमें वृक्षोंकी सघन छाया तथा शीतल जलवाला कीचड़से रहित और वर्षा तथा शिशिरमें वातवर्जित तथा सुख देनेवाला गरम स्थान देना चाहिये । वहाँ कूड़ा फेंकना, थूकना, मूत्र-पुरीष डालना कभी ठीक नहीं । रजस्वला, अन्त्यज या पुंश्चलीका भी प्रवेश उनके पास न होने देना चाहिये । बछियाको लाँघना नहीं चाहिये और न गोष्ठके समीप खेल-कूदकर उनको तंग करना चाहिये । जूता या पादुका पहनकर उनके पास जाना उचित नहीं है । रोगी या दुबली-पतली गायोंका माता-पिताकी तरह पालन करना चाहिये—

अन्तस्तुष्टैर्यथाशक्त्या परिचर्या यथाक्रमम् ।
ताडनाक्रोशखेदाश्च स्वप्नेऽपि न कदाचन ॥
तासां मूत्रपुरीषे तु नोद्वेगः क्रियते क्वचित् ।
शोधनीयश्च गोवाटः शुष्कक्षारादिकैः सदा ॥
ग्रीष्मे वृक्षाकुले वेश्म शीततोये विकर्दमे ।
वर्षासु चाथ शिशिरे सुखोष्णे वातवर्जिते ॥
उच्छिष्टं मूत्रविट्श्लेष्ममलं जह्यान्न तत्र च ।
रजस्वला न प्रवेश्या नान्त्यजातिर्न पुंश्चली ॥
न लङ्घयेद्वत्सतरीं न क्रीडेद्गोष्ठसन्निधौ ।
न गन्तव्यं गवां मध्ये सोपानत्कैः सपादुकैः ॥
हस्त्यश्वरथयानैश्च सवितानैः कदाचन ।
दक्षिणोत्तरगैः प्रह्वैर्गन्तव्यं च पदातिभिः ॥
गावः कृशतराः पाल्याः श्रद्धया पितृमातृवत् ।

(ब्रह्मपुराण)

गोबरको खादके काममें लाना चाहिये । इसके लिये माघमें गोबरका ढेर लगाकर श्रद्धापूर्वक उसका पूजन करना चाहिये और फिर किसी शुभ दिनपर उसको कुदालसे छेड़ना चाहिये । फिर उसको सुखाकर गुण्डक (गोला) बनवाकर फाल्गुनमें गड्ढेमें गाड़ देना चाहिये और बोनेके समय उसकी खाद निकालनी चाहिये । बिना खादका अन्न बढ़कर भी फलता नहीं—

माघे गोमयकूटं तु संपूज्य श्रद्धयान्वितः ।
खादं शुभदिनं प्राप्य कुद्दालैस्तोलयेत्ततः ॥
रौद्रे संशोष्य तत्सर्वं कृत्वा गुण्डकरूपिणम् ।
फाल्गुने प्रतिकेदारे गर्तं कृत्वा विधापयेत् ॥
ततो वपनकाले तु कुर्यात् सारविमोचनम् ।
विना सारेण यद्धान्यं वर्द्धते न फलत्यपि ॥

(कृषिसंग्रह)

जो पुरुष गायोंको शीतसे बचानेके लिये छाया डालता है और पीनेके लिये प्याऊ बनवाता है, वह वरुणलोकमें जाकर अप्सराओंके साथ क्रीड़ा करता है । उन्हें लवण देनेसे बड़ा सौभाग्य एवं रूप-लावण्य प्राप्त होता है । औषध देनेसे रोग नहीं होता । उन्हें औषध, लवण, जल तथा आहार बराबर देना चाहिये । उनको खुजलानेसे 'गोप्रदान' का फल होता है और भय-रोगादिसे रक्षा करनेमें 'गोशत-दान' के समान फल है—

शीतत्राणं गवां कृत्वा गृहे पुरुषसत्तम ॥
वारुणं लोकमाप्नोति क्रीडत्यप्सरसां गणैः ।
गवां पानप्रवृत्तानां यस्तु विघ्नं समाचरेत् ॥
ब्रह्महत्या कृता तेन घोरो भवति भार्गव ।
गवां लवणदानेन रूपवानभिजायते ।
सौभाग्यं महदाप्नोति लावण्यं च द्विजोत्तम ॥
औषधं च तथा दत्त्वा विरोगस्त्वभिजायते ।
औषधं लवणं तोयमाहारं च प्रयच्छति ॥
गवां कण्डूयनं धन्यं गोप्रदानफलप्रदम् ।
तुल्यं गोशतदानस्य भयरोगादिपालनम् ॥

(विष्णुधर्मोत्तर)

आदर्श तो यह है कि तृणोदकसे पूर्ण वनोंमें बछड़ों एवं साँड़ोंसहित मतवाली गायें खेल-कूद रही हों । शीत, धूप, व्याधि, भयसे विमुक्त हों और दूध देती हुई सुखसे सोती रहें—

तृणोदकाद्येषु वनेषु मत्ताः क्रीडन्तु गावः सवृषाः सवत्साः ।
क्षीरं प्रमुञ्चन्तु सुखं स्वपन्तु शीतातपव्याधिभयैर्विमुक्ताः ॥

(ब्रह्मपुराण)

गो-चिकित्सा

अपने यहाँ सभी कार्योंके लिये दो उपाय बतलाये गये हैं—एक दैवी और दूसरा लौकिक । रोगनिवृत्तिमें भी इन दोनोंसे काम लिया जाता है । चिकित्साके साथ ही देव-पूजन, हवन, अनुष्ठानादि भी चलते रहते हैं । गो-चिकित्सामें भी इन दोनों उपायोंका विधान मिलता है । 'गोभिलीय गृह्यसूत्र'में इसके लिये कई कर्म बतलाये गये हैं । गो-पुष्टिके लिये नान्दीमुख श्राद्ध तथा तीन दिनका उपवास करके प्रातः गायको घरसे अरण्यमें जाते तथा आते समय उनका 'अनुमन्त्रण' करना चाहिये । इसमें बड़े भावपूर्ण मन्त्रोंका प्रयोग होता है । अरण्यमें प्रातः गायोंके जाते समय प्रार्थना की जाती है—'हे सबसे अधिक पराक्रमशाली भव और इन्द्र ! आपलोग मेरी इन गायोंकी रक्षा करना । हे पूषा ! आप इन्हें सुखपूर्वक लौटा लाना, बिना किसी क्षतिके ये मेरे घरमें लौट आयें ।'

इमा मे विश्वतोवीर्यौ भव इन्द्रश्च रक्षतम् ।
पूषꣳस्त्वं पर्यावर्त्तयानष्टा आयन्तु नो गृहान् ॥

सन्ध्याको लौटते समय प्रार्थना की जाती है—'मेरे लिये मधुर पदार्थ देनेवाली ये गायें दूधसहित बिना किसी क्षतिके लौट आयें । मेरे यहाँ ये घृतकी माताएँ बहुत हों'—

इमा मे मधुमतीर्मह्यमनष्टाः पयसा सह ।
गाव आज्यस्य मातर इहेमाः सन्तु भूयसीः ॥

प्रसवकी रात्रिमें गोपुष्ट्यर्थ 'विलयनहोम' का विधान है । इसमें जिस मन्त्रसे हवन किया जाता है, उसका भाव है—'हे संग्रहण नामक देव ! मेरे यहाँ जो पशु उत्पन्न हुए हैं, उनकी रक्षाके लिये आप उनको स्वीकार करें । पूषा देवता इन्हें ऐसा कल्याण प्रदान करें, जिससे ये बिना नष्ट हुए जीवित रहें'—

संग्रहण संगृहाण ये जाताः पशवो मम ।
पूषैषाꣳशर्म यच्छत यथा जीवन्तो अप्ययात् स्वाहा ॥

'गो-यज्ञ' का भी एक प्रयोग बतलाया गया है, जिसमें गो-पुष्ट्यर्थ हवन, वृषभ-पूजन, ब्राह्मण-भोजन आदिका विधान है ।* गायको धूप या लू लग जानेसे उसकी शान्तिके लिये लोहचूर्ण, अन्न और घृत मिलाकर 'चीवरहोम' करना चाहिये । 'अग्निपुराण' के गोशान्ति-प्रकरणमें भी ऐसे कई प्रयोग बतलाये गये हैं । लौकिक उपायोंमें सफाई तथा स्वास्थ्यप्रद साधनोंका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है । 'अग्निपुराण' में विभिन्न रोगोंकी भी चिकित्सा बतलायी गयी है ।

गायोंके सींगोंमें रोग होनेसे सेंधा नमक, सोंठ, बला एवं जटामासीके काढ़ेमें पकाया हुआ तेल शहद मिलाकर लगाना चाहिये । सब प्रकारके कर्णशूलोंमें मजीठ, हींग एवं सेंधा नमकके साथ पकाया हुआ तेल अथवा उनके रसका उपयोग करना चाहिये । दाँतोंकी पीड़ामें बेलकी जड़, चिचिड़ा, धव, पाटला और कोरैयाका दाँतोंपर लेप करना चाहिये । 'दन्तशूलहर' पूर्वोक्त दिव्य ओषधियोंके साथ पकाया हुआ घृत भी मुखरोगका नाशक है । जिह्वा-रोगमें सेंधा नमक देना चाहिये । गलेके रोगमें सोंठ, दोनों हल्दी और त्रिफलाका प्रयोग करना चाहिये । हृच्छूल, वस्तिशूल, वातरोग तथा क्षय होनेपर त्रिफला घीमें मिलाकर पिलाना चाहिये । अतीसारमें दोनों हल्दी और सोनापाठा देने चाहिये । सभी प्रकारके उदररोग तथा शाखारोगोंमें और कास-श्वासमें सोंठ एवं भारङ्गी हितकर हैं । टूटे अङ्ग जोड़नेके लिये सेंधा नमक और ककुनी देना चाहिये । मुलेठीके साथ पकाया हुआ तेल पित्तरोगमें तथा अकेला तेल वातरोगमें लाभदायक है । कफरोगमें व्योष (पीपल, मिर्च तथा सोंठ) शहदके साथ देना चाहिये । चोट लगनेपर तेल, घी और हरताल गर्म करके लगाना चाहिये । उर्द, तिल, गेहूँ, दूध और घीके लड्डू खिलानेसे बछड़े पुष्ट होते हैं—

शृङ्गामयेषु धेनूनां तैलं दद्यात् ससैन्धवम् ।
शृङ्गवेरबलामांसाः कल्कसिद्धं समाक्षिकम् ॥
कर्णशूलेषु सर्वेषु मञ्जिष्ठाहिङ्गुसैन्धवैः ।
सिद्धं तैलं प्रदातव्यं रसोऽनेनाथवा पुनः ॥
बिल्वमूलमपामार्गं धातकी च सपाटला ।
कुटजं दन्तमूलेषु लेपात् तच्छूलनाशनम् ॥
दन्तशूलहरैर्दिव्यैर्घृतं राम विपाचितम् ।
मुखरोगहरं ज्ञेयं जिह्वारोगेषु सैन्धवम् ॥
शृङ्गवेरहरिद्रे द्वे त्रिफला च गलग्रहे ।
हृच्छूले वस्तिशूले च वातरोगे क्षये तथा ॥

* कहा जाता है कि गोवर्द्धन-पूजनके अवसरपर भगवान् श्रीकृष्णने यह 'गो-यज्ञ' भी कराया था ।

त्रिफला घृतमिश्रा च गवां पाने प्रशस्यते।
अतीसारे हरिद्रे द्वे पाठां चैव प्रदापयेत्॥
सर्वेषु कोष्ठरोगेषु तथा शाखगदेषु च।
शृङ्गवेरं च भार्ङ्गीञ्च कासे श्वासे प्रदापयेत्॥
दातव्या भग्नसंधाने प्रियङ्गुर्लवणान्विता।
तैलं वातहरं पित्ते मधुयष्टीविपाचितम्॥
कफे व्योषं च समधु सपुष्करजोऽस्त्रजे।
तैलाज्यं हरितालं च भग्नक्षतिश्रुतं ददेत्॥
माषास्तिलाः सगोधूमाः पशुक्षीरं घृतं तथा।
एषां पिण्डी सलवणा वत्सानां पुष्टिदा त्वियम्॥

इसी तरह अन्य पुराणों तथा आयुर्वेद-ग्रन्थोंमें नुस्खे बतलाये गये हैं। गोचिकित्सापर किसी स्वतन्त्र ग्रन्थका जहाँतक हमें ज्ञात है, अभीतक पता नहीं लगा है। पर ऐसे ग्रन्थ रहे अवश्य होंगे। पाण्डुपुत्र नकुल 'गवाश्व-चिकित्सा-शास्त्रप्रणेता' माने गये हैं। 'शालिहोत्र-संहिता' अश्वचिकित्सापर अच्छा ग्रन्थ है। किसी जयदेवका भी इसपर एक ग्रन्थ है। इन्हींके आधारपर श्रीमज्जयदत्त सूरिने 'अश्ववैद्यकम्' ग्रन्थ लिखा है। पाल्काप्य मुनिकृत 'हस्त्यायुर्वेद' प्रसिद्ध है—

शालिहोत्रः सुश्रुतोऽथ हयायुर्वेदमुक्तवान्।
पालकाप्योऽङ्गराजाय गजायुर्वेदमब्रवीत्॥
(अग्निपुराण)

इस तरह हाथी-घोड़ोंकी चिकित्सापर जब स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध हैं, तब गो-चिकित्सापर न रहे हों—ऐसा नहीं हो सकता। आवश्यकता है खोज करनेकी। प्राचीन समयमें पशुओंके चिकित्सालय थे। महाराज अशोकके 'गिरनार-शिलालेख'में कहा गया है कि 'सर्वत्र राज्यमें, सीमाप्रदेशोंमें और पड़ोसके राज्योंमें दो प्रकारकी चिकित्साओं-का प्रबन्ध होना चाहिये—एक तो मनुष्योंकी और दूसरी पशुओंकी। जड़ी-बूटियाँ तथा औषधें जहाँ नहीं होतीं, वहाँ दूसरी जगहोंसे लाकर लगायी जायँ।

अहीरों तथा वृद्धलोगोंको कितने ही नुस्खे मालूम हैं, जो बड़े उपयोगी हैं। यदि उनका संग्रह करके प्रायोगिक अनुसन्धान किया जाय तो उससे बड़ा लाभ हो सकता है।

सरकारी व्यवस्था

'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के 'गोऽध्यक्ष' प्रकरणमें गोपालन तथा गोरक्षाकी सरकारी व्यवस्था बतलायी गयी है। उसके अनुसार आठ उपाय निश्चित किये गये हैं। गोपालक, पिण्डारक (भैंसोंको पालनेवाले), दोहक (दुहनेवाले), मन्थक (दही आदि मथनेवाले) और लुब्धक (जंगलोंमें हिंसक प्राणियोंसे रक्षा करनेवाले)—ये पाँच-पाँच आदमी मिलकर सौ-सौ गायोंका पालन करें। इनका वेतन नकद या अन्नवस्त्रादिके रूपमें दिया जाय। दूध-दही-घृतादिमें इनका कोई हिस्सा न रहे; क्योंकि ऐसा होनेसे लालचमें पड़कर ये लोग बछड़ोंको भूखों मार डालेंगे। इसको 'वेतनोपग्राहिक' कहते हैं, क्योंकि इसमें केवल सूखा वेतन दिया जाता है—

गोपालकपिण्डारकदोहकमन्थकलुब्धकाः शतं शतं धेनूनां हिरण्यभृताः पालयेयुः। क्षीरघृतभृता हि वत्सानुपहन्युरिति वेतनोपग्राहिकम्॥

बूढ़ी, दूध देनेवाली, गाभिन, पठोरी (पहले ब्यानकी), वत्सतरी (जिसने हालमें ही दूध चोखना छोड़ा हो)—इन पाँच प्रकारकी गायोंको बराबर-बराबर मिलाकर अर्थात् प्रत्येक २०-२० लेकर पूरा सौ कर दिया जाय और उनका किसी एकको ठेका दे दिया जाय। वह उनके मालिकको प्रतिवर्ष आठ वारक (प्राचीन तौल) घी, प्रत्येक पशुके लिये एक पण और सरकारी मुद्रासे मुद्रित मरे हुए पशुका चमड़ा देता रहे। (सरकारी मुहर इसलिये कि पशु मरा हुआ है, मारा हुआ नहीं।) यह उपाय 'करप्रतिकर' कहलाता है—

जरद्धुधेनुगर्भिणीप्रष्ठौहीवत्सतरीणां समविभागं रूपशतमेकः पालयेत्। घृतस्याष्टौ वारकान् पणिकं पुच्छमङ्क-चर्म च वार्षिकं दद्यादिति करप्रतिकरः॥

बीमार, अङ्ग-भङ्ग, एक ही आदमीको छोड़कर अन्य किसीसे न दुही जानेवाली, मुश्किलसे दुही जानेवाली और जिनका बछड़ा मर गया हो—ऐसी गायोंका भी पहलेकी तरह प्रबन्ध कर दिया जाय। परन्तु इसमें पूर्वोक्त घीका आधा या तिहाई मालिकको और उतना ही राजकीय अंश देना होता है। इसको 'भग्नोत्सृष्टक' कहते हैं—

व्याधितान्यङ्गानन्यदोहीदुर्दोहापुत्रघ्नीनां च समविभागं रूपशतं पालयन्तस्तज्जातिकं भागं दद्युरिति भग्नोत्सृष्टकम्॥

शत्रुओंके छल या जंगली पुरुषोंके भयसे जब गोपालक अपनी गायोंको सरकारी बाड़ेमें भरती कर दें, तो आयका

दसवाँ हिस्सा सरकारको दिया जाय। इस उपायको 'भागानुप्रविष्टक' कहते हैं—

परचक्राटवीभयादनुप्रविष्टानां पशूनां पालनधर्मेण दशभागं दद्युरिति भागानुप्रविष्टकम् ॥

छोटी तथा बड़ी बछड़ी, पठोरी, गाभिन, दूध देनेवाली, अधेड़ उम्रकी और बाँझ—ये सात प्रकारकी गायें होती हैं। उनके महीने या दो महीनेके बछड़ा-बछड़ी लोहे आदिके छल्लेसे दाग दिये जायँ। जो गायें सरकारी चरागाहोंमें महीने-दो-महीने रहें, उन्हें भी दागा जाय। इनका अङ्कित चिह्न, रङ्ग, सींग आदि पूरा हुलिया सरकारी रजिस्टरोंमें दर्ज रक्खा जाय। यह उपाय 'व्रजपर्यग्र' कहलाता है—

वत्सिकावत्सतरीप्रष्ठौहीगर्भिणीधेनूश्चाप्रजाता वन्ध्याश्च गावो महिष्यश्च, मासद्विमासजातास्तासामुपजा वत्सा वत्सिकाश्च, मासद्विमासजातानङ्कयेत् । मासद्विमासपर्युषितमङ्कयेत्। अङ्कं चिह्नं वर्णं श्रृङ्गान्तरं च लक्षणमेवमुपजा निबन्धयेदिति व्रजपर्यग्रम् ॥

चोरोंसे अपहरण किया हुआ, दूसरे गिरोहमें मिल गया हुआ या जंगलमें अपने गिरोहसे भटका हुआ 'नष्ट' गोधन कहलाता है और कीचड़में फँसने, गड्ढेमें गिरने, बीमारी, बुढ़ापा, जल-प्रवाहमें बह जाने, ऊपर वृक्ष गिर जाने, करारके खिसक जाने, भारी शहतीर—शिला आदिसे दब जाने, बिजली गिरने, हिंसक व्याघ्र, साँप, नाक आदिसे काटे जाने या जंगलकी आगसे गाय नष्ट हो तो उसे 'विनष्ट' कहते हैं। यदि ऐसी हानि ग्वालोंकी असावधानीसे हो तो वे उसको पूरा करें—

चोरहृतमन्ययूथप्रविष्टमवलीनं वा नष्टम् । पङ्कविषमव्याधिजरातोयाधारावसन्नं वृक्षतटकाष्ठशिलाभिहतसीशानव्यालसर्पग्राहदावाग्निविपन्नं विनष्टं प्रमादादभ्यावहेयुः। एवं रूपाग्रं विद्यात् ॥

आठवाँ उपाय 'क्षीरघृतसंजात' है, जिसका निरूपण किसी एक सूत्रमें नहीं किया गया है। परन्तु यह बतलाया गया है कि एक द्रोण गायके दूधमेंसे एक प्रस्थ घी निकलता है। वस्तुतः दहीको मथकर घी निकालनेपर ही घीके ठीक परिमाणका निश्चय होता है। इसलिये यह परिमाण प्रायिक ही समझना चाहिये। विशेष भूमियों, विशेष प्रकारकी घास या पानी खिलाने-पिलानेसे दूध और घीकी वृद्धि होती है—

क्षीरद्रोणे गवां घृतप्रस्थः। मन्थो वा सर्वेषां प्रमाणम्। भूमितृणोदकविशेषाद्धि क्षीरघृतवृद्धिर्भवति ॥

वर्षा, शरत् और हेमन्त ऋतुओंमें गायोंको प्रातः-सायं दोनों समय दुहा जाय और शिशिर, वसन्त और ग्रीष्ममें केवल एक ही समय। इन दिनों जो दो बार दुहे, उसका अँगूठा काट दिया जाय। दुहनेवाला यदि ठीक समयपर न दुहे तो उसे उस दिनका वेतन न दिया जाय—

वर्षाशरद्धेमन्तानुभयतः कालं दुह्युः। शिशिरवसन्तग्रीष्मानेककालम् । द्वितीयकालं दोग्धुरङ्गुष्ठच्छेदो दण्डः। दोहकालमतिक्रामतस्तत्फलहानं दण्डः ॥

जो ग्वाला स्वयं गायको मारे या किसीसे मरवाये, स्वयं हरण करे या किसीसे हरण कराये, उसे प्राणदण्ड दिया जाय। चोरोंसे अपहरण की हुई अपने ही देशकी गाय जो लावे, उसे एक पण इनाम दिया जाय और परदेशके पशुओंको चोरोंसे छुड़ाकर लाने या छुड़ानेवाला आधा हिस्सा ले सकता है। गोपालोंको चाहिये कि छोटे बछड़े, बीमार और बूढ़े पशुओंकी विपत्तिका बराबर प्रतीकार करते रहें अर्थात् उन्हें सब कष्टोंसे बचाते रहें—

स्वयं हन्ता घातयिता हर्ता हारयिता च वध्यः । स्वदेशीयानां चौरहृतं प्रत्यानीय पणिकं रूपं हरेत्। परदेशीयानां मोक्षयितार्धं हरेत् । बालवृद्धव्याधितानां गोपालकाः प्रतिकुर्युः ॥

शिकारियों तथा कुत्तोंको रखनेवाले बहेलियोंद्वारा चोर, हिंसक प्राणी तथा शत्रुकी ओरसे होनेवाली बाधाओंके भयको सर्वथा दूर करके ऋतुके अनुसार सुरक्षित जंगलोंमें ही सब गोपाल अपनी-अपनी गायोंको चरायें। साँप और हिंस्र प्राणियोंको डरानेके लिये, चरनेकी जगह पहचाननेके लिये, शब्द सुनकर घबरा जानेवाले पशुओंके गलेमें एक लोहेका घंट बाँध देना चाहिये। यदि पशुओंको कहीं पानी पीने और नहाने आदिके लिये पानीमें उतारना हो तो ऐसे ही स्थानपर उतारें जहाँ बराबर तथा चौड़े घाट बने हों, दलदल न हो, नाक आदिका भय न हो। जबतक पशु पानी पियें या नहायें, तबतक वहाँपर गोपाल उनकी सावधानतापूर्वक रक्षा करता रहे। चोर, व्याघ्र, साँप, नाक आदिसे पकड़े हुए पशु तथा बीमार और बुढ़ापेके कारण मरे हुए पशुकी तत्काल सूचना देनी चाहिये, नहीं तो गोपालको नष्ट हुए प्रत्येक पशुका पूरा दाम देना होगा। वर्णके अनुसार

दस-दस गाय आदिकी गणनासे सौ गायोंके झुंडकी रक्षा की जाय। सौ गायोंके गोल पीछे चार साँड़ रखने चाहिये। गायोंके जंगलोंमें रहने और चरनेके लिये नियमित स्थानोंकी व्यवस्था उनके चरनेके सुभीते, उनके गोलकी तादाद और उनकी रक्षाके सौकर्यको देखकर ही होनी चाहिये—

लुब्धकश्वगणिभिरपास्तस्तेनव्यालपरबाधभयमृतुविभक्तमरण्यं चारयेयुः। सर्पव्यालत्रासनार्थं गोचरानुपातज्ञानार्थं च त्रस्नूनां घण्टातूर्यं च बध्नीयुः। समव्यूढतीर्थमकर्दमग्राहमुदकमवतारयेयुः पालयेयुश्च। स्तेनव्याघ्रसर्पग्राहगृहीतं व्याधिजरावसन्नं चावेदयेयुरन्यथा रूपमूल्यं भजेरन्। वर्णावरोधेन दशती रक्षा॥ शतं गोयूथं कुर्याच्चतुर्वृषम्। उपनिवेशदिग्विभागे गोप्रचारान् बलान्वयतो वा गवां रक्षासामर्थ्याच्च॥

इन सब नियमोंका यथावत् रीतिसे पालन होता है या नहीं, इसको देखनेके लिये राज्यकी ओरसे एक बड़ा अफसर रहता था, जो 'गोऽध्यक्ष' कहलाता था।

हमारा औदासीन्य

इस तरह प्राचीन गोशाला-व्यवस्थाका सर्वाङ्गीण चित्र हमें अपने यहाँके साहित्यमें मिलता है। खेद है कि हमारे यहाँके नवयुवक 'डेयरी सिस्टम' सीखनेके लिये अमेरिका, डेन्मार्क, इंग्लैंड तथा अन्य देशोंमें भेजे जाते हैं; पर अपने यहाँकी प्राचीन व्यवस्थाकी ओर ध्यान ही नहीं जाता। विदेशी शासकोंको यही अभीष्ट है कि हम अपनी सब बातें भूलकर सर्वथा उनके अधीन बने रहें और अपनी इस गुलामीमें हम स्वयं उनके सहायक बन रहे हैं। हमारे यहाँकी व्यवस्थाएँ देश-कालके अनुरूप, कम खर्चकी, सुगम तथा कहीं अधिक लाभप्रद हैं। जितना धन, जितना समय, जितना परिश्रम हम विदेशी बातोंको सीखनेमें खर्च करते हैं, यदि उतना ही हम अपने यहाँके भूले हुए प्रकारोंको ढूँढ निकालने, उनके अध्ययन करने और उन्हें प्रयोगमें लानेपर खर्च करें तो हम ऐसा 'गोपालन-विज्ञान' प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसको देखकर संसार चकित रह जायगा। भगवान् हमें सुबुद्धि दें।



गो-पर्याय

(लेखक—श्रीयुत आशुकुमार)

'गौर्मे माता वृषभः पिता मे'

'गौ हमारी माता और बैल पिता है।'

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥

(गीता ३। १४)

'संसारके समस्त प्राणी अन्नसे जीते हैं, अन्न वर्षासे होता है, वर्षा यज्ञसे होती है और यज्ञ कर्मसे होता है।'

प्राचीन भारतमें यज्ञकी महिमा अपार थी। किन्तु यज्ञ हविष्यान्न, खास करके पञ्चगव्योंके बिना नहीं हो सकता। इसलिये गायकी महिमा वेदकालमें ही सर्वमान्य थी। वेद-साहित्यके अभ्यासी श्रीमैकडॉनलने गायके विषयमें वेद-साहित्यमें ५००के लगभग उल्लेख बतलाये हैं। वेदका गो-सूक्त प्रसिद्ध ही है। गायके लिये जो-जो महत्त्वसूचक पर्याय मिलते हैं, उनमेंसे कुछ यहाँ इस दृष्टिसे दिये जाते हैं कि जिससे गो-महिमाका कुछ बोध हो।

'गो' का अर्थ गाय, पृथ्वी, इन्द्रिय, किरण, रत्न आदि होता है। गायसे यज्ञ, यज्ञसे वर्षा, वर्षासे खेती और खेतीसे सारे संसारका निर्वाह होता है। इस प्रकार सारी आर्य-संस्कृति गायरूपी नींवपर खड़ी है। इस समय भी देखें तो गायसे खेती और खेतीसे गाय और इन दोनोंसे हम सब पलते हैं। इसीलिये गायको वेदमें 'माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः'—'रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी बहन और पीयूषनाभि' कहा है। अब पर्यायोंपर विचार करें—

अमृतनाभिः (पीयूषनाभिः) } जिसकी नाभिमें अमृत हो, जिससे हमें अमृत मिले।

माता—सारे जगत्का पोषण करनेसे माता कहलाती है। विदेशी भी इसे समृद्धिकी जननी (Cow, the mother of prosperity) अथवा मनुष्य-जातिकी धात्र-माता (Foster-mother of mankind) कहकर इसका

आदर करते हैं। (मीयते अमुना इति माता) जिससे हम मान पाते और मापे जाते हैं, वही माता है। गायोंकी गिरी हुई वर्तमान दशाके कारण ही हम भी गिरे हैं! दूसरोंकी नजरोंमें, पोषणमें, रक्षणमें तथा सभी प्रकारकी सम्पन्नतामें हम गायके गिरनेसे ही गिरे हैं। जब गाय उन्नत थी, तब हम भी उन्नत थे; वह गिरी है तो हम भी गिरे हैं। उसकी उन्नति करके ही हम अपनी उन्नति कर सकते हैं। 'वन्दे मातरम्'का मुख्य आशय जन्मभूमिसे ही लेते हैं। किन्तु 'गो'—'भूमि' और 'गो'—'गौ' दोनों मिलकर ही एक माता होती है, यह जान रखना चाहिये। जैसे अश्विनीकुमार, दम्पति, माँ-बाप आदि द्वन्द्वसूचक हैं, उसी प्रकार भूमि और गाय दोनों (व्याकरणमें नहीं, व्यवहारमें) द्वन्द्व ही हैं। भूमिके बिना गाय कहाँ? गायके बिना भूमि कहाँ? और दोनोंके बिना हम कहाँ? अतः गौके साथ ही भूमिका उत्थान या पतन होगा और उन दोनोंके साथ हमारा।

'वन्दे मातरम्' मन्त्रके उच्चारणके साथ यदि अपनी मातृभूमि तथा गो-माताकी सेवा और उन्नतिका ध्यान न आये तो ऐसा मन्त्र उच्चारण करना निरा थूक उछालना है। सच तो यह है कि 'मातरम्' कहनेके साथ ही सब प्रकारकी माताओंका ध्यान आ जाना चाहिये—जैसे जन्म देनेवाली माता, पशुओंमें गो-माता, स्थूल पदार्थोंमें भू-माता, वनस्पतियोंमें हरीतकी, विद्याओंमें सरस्वती, अपनी संस्कृति आदि। कम-से-कम इडा, सरस्वती, मही—इन तीन माताओंका स्मरण तो हो ही जाना चाहिये। तभी 'वन्दे मातरम्'का अर्थ सार्थक और फलदायी होगा। नीचे गो-माताके कुछ और नाम व्याख्यासहित दिये जाते हैं।

अघ्न्या=न मारने योग्य।

रोहिणी=निरन्तर आगे ही बढ़ती रहनेवाली।

महेन्द्री=इन्द्रियोंको पुष्ट करनेवाली महादेवी।

इज्या-इडा=पूज्या।

कल्याणी=सबका परम कल्याण करनेवाली।

दोग्ध्री=भरपूर दूधवाली।

शतौदना=अकेली सौ मनुष्योंकी खीरके लिये पर्याप्त दूध देनेवाली।

घटोध्नी=घड़ेके समान थनोंवाली।

पावनी=अपनी स्थितिसे तथा पञ्चगव्योंसे सबको पवित्र करनेवाली।

बहुला=पुष्कल दूध देनेवाली।

भद्रा=दर्शन-स्पर्श-पूजन आदिसे सबका मङ्गल करनेवाली।

अदिति=आदिमाता, न मारने योग्य।

जगती=साक्षात् जगत्, प्रगतिमान्।

इन्द्राणी=देवराज इन्द्रकी पत्नीके तुल्य सबकी हितकारिणी।

अर्च्या=पूज्या।

ज्योतिः=तेजस्विनी तथा अपने दुग्धान्नसे मनुष्योंको तेजस्वी बनानेवाली।

कामदुघा=प्रेमोत्पादिका, कामना पूरी करनेवाली।

विश्रुता=विख्यात।

चन्द्रा=सुहावनी।

वशा=दूध देनेको हर समय तैयार रहनेवाली।

पर्जन्यपत्नी=वर्षासे पलनेवाली (पर्जन्य=प्रसन्न, सुखी करनेवाली, न कि खेतीको चौपट करनेवाली वर्षा)।

आतिथेयी=जिसके दूधसे अतिथिका सत्कार हो। अपरिचित अतिथि भी जिसके पास जा सके, ऐसी नम्र। अतिथिके पास भी प्रेमसे चली जानेवाली।

यज्ञपदी=यज्ञमात्रका प्रभवस्थान—आधाररूप।

विश्वायुः=सारे विश्वका जीवन।

सावित्री=सूर्यकी शक्तिसे उत्पन्न, घास-चारेको चबा-चबाकर सूर्यकी शक्तिमेंसे पोषण खींचकर गोरसके रूपमें पैदा करनेवाली सूर्यकी शक्ति—गायत्री (गो-प्राण), प्राणोंको पोसनेवाली, तन-मन और हृदयमें शक्तिको उत्पन्न करनेवाली।

सरस्वती=जिससे दूधका झरना (सरः) बहता ही रहता है, जो कभी सूखती नहीं और जो अपनी पुत्रियोंकी परम्परासे भी दूधका झरना चालू रखती है, साथ ही जो देशकी सरस्वती—बुद्धिको भी पोसती और बढ़ाती है।

भारतका गोधन

एक महान् राष्ट्रीय निधि

(लेखक—श्रीयुत रावबहादुर जयन्तीलाल एन० मानकर)

भारतवर्ष मुख्यतः और स्वभावतः एक धार्मिक देश है। यह अपनी धार्मिक लगन और दार्शनिक प्रवृत्तियोंके कारण सर्वत्र प्रसिद्ध है। प्रो० मैक्समूलरके कथनानुसार, भारतने अपने आपको इतनी अद्भुत रीतिसे धर्ममें अभ्यस्त बना लिया है कि इसका खाना, पीना, सोना, सोचना-विचारना और काम करना सब धर्मका रूप धारण करता है। कहनेका अभिप्राय यह है कि जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें भारतने अपने आपको एकमात्र धर्मसे आबद्ध कर दिया था। वस्तुतः सांसारिक जीवनके समस्त क्रिया-कलाप इतने अधिक धर्मसाधनके अङ्ग बन गये थे कि शताब्दियोंतक देशमें एक छोरसे दूसरे छोरतक सर्वत्र धर्मका ही बोलबाला रहा।

भारतके महात्मा और ऋषि जो धर्मके संरक्षक थे, जीवनकी निःसारताका उपदेश देते थे। पर उन ऋषियोंको पता था कि मनुष्यका काम पशुओं और पौधोंके बिना नहीं चल सकता। इसीका फल था कि धर्म और आध्यात्मिक उन्नतिकी उच्च भावनाएँ तथा जीवनके व्यावहारिक उद्देश्य—दोनोंको सामने रखकर उन्होंने अहिंसाके सुपरिचित सिद्धान्त तथा प्राणिविज्ञानके इस चरम सत्यके उपदेशका प्रचार किया कि मानव-प्राणी और इतर-प्राणिवर्गका जीवन परस्पर एक दूसरेके ऊपर अवलम्बित है।

इसलिये गायको माताके रूपमें जो आदर-भाव दिया जाता है वह प्राचीन आर्यसंस्कृतिसे अत्यन्त मेल खाता है, तथा गाय और दूसरे प्राणियोंके प्रति इस प्रकारकी आदर-श्रद्धाके कारण ही धर्म मानकर उनकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य हो गया है।

वस्तुतः, सुप्रसिद्ध हिंदूधर्मका सार जिन तीन तत्त्वोंमें निहित है, वे हैं—इडा, सरस्वती और मही। कहनेका अभिप्राय यह है कि गोमाता, शारदा और पृथ्वीमातामें भारतीय संस्कृतिकी परिसमाप्ति हो जाती है। ये तीनों हमारे जीवन तथा देशके सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक स्वार्थोंका नियमन कर उच्चतम सफलताकी ओर अग्रसर करती हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, प्राचीन आर्यधर्मका सुदृढ़ निर्माण सृष्टि-विज्ञान अथवा आध्यात्मिक अर्थ-शास्त्रके आधारपर हुआ था, और भारतमें धर्म कृषिके साँचेमें ढाला गया था। अतएव वैदिक साहित्यमें गायको कृषिके रीढ़के रूपमें वर्णन करते हुए अनेक आख्यायिकाओं और रूपकोंकी अवतारणा की गयी है। गायको माताका पद प्रदान किया गया है और बैलको पिताका। इस प्रकार वैदिक तथा तदुत्तरकालीन साहित्यमें गायको देवता-स्वरूप मान लिया गया है, और उसकी रक्षा और सेवा धर्मकृत्य तथा राष्ट्रीय कर्तव्य बन गयी है।

उपयोगिताकी दृष्टिसे देखा जाय तो भारतके कृषिप्रधान देश होनेके कारण जोतके लिये पशुओंका होना अनिवार्य है। बैल इस जलवायुमें इस कामके लिये बहुत ठीक थे और अब भी हैं, तथा गायें दूधके लिये पाली जाती थीं। ऐसे पशुको, जिसके नर खेतमें अन्न उपजानेमें मदद करते हैं तथा मादा दूध-जैसी पौष्टिक खूराक प्रदान करती हैं, तथा जिनका मल-मूत्र (गोबर और गोमूत्र) खेतकी उपज बढ़ाता है, भारतका भक्तिभाव प्रदान करना बहुत ही न्यायसंगत है। इस प्रकार गाय भारतकी कामधेनु है। यह खादके द्वारा भूमिको खूराक देती है, भूमि पौधोंको खूराक देती है और पौधे पशुओं और मनुष्योंको खूराक पहुँचाते हैं। इसके अतिरिक्त गाय मनुष्यको दूधसम्बन्धी पदार्थ भी प्रदान करती है। इसलिये मनुष्यका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह ऐसे पशुकी रक्षा और सेवा करे जो आजीवन उसको खिलाता और सेवा करता है। डा० ए० ए० मैकूडॉनेलके कथनानुसार 'मनुष्य गायके सिवा दूसरे पशुका इतना ऋणी नहीं है। और इस ऋणको भक्तिभावसे सुन्दरतापूर्वक चुकाना भारतके सिवा दूसरे देशको मालूम नहीं। भारतीय जीवन और विचारधारामें गायका अस्तित्व इतना महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो चुका है कि संसारमें अत्यन्त प्राचीन युगसे पड़नेवाले गायके प्रभावका यदि वर्णन किया जाय तो सभ्यताके इतिहासका वह एक उल्लेखनीय अध्याय बन जायगा।'

गायके प्रति हिंदुओंकी भव्य-भावनाका जैसा वर्णन सर मोनियर विलियम्सने किया है, उससे अच्छा और कोई

शायद नहीं कर सकता। वे कहते हैं कि, 'गाय और बैलकी पूजाको प्रमुख स्थान देना होगा; क्योंकि ऐसी जातिके लिये जो खानेके लिये कभी पशु-वध नहीं करती, पोषणके साधनके रूपमें गायकी उपयोगिता स्पष्ट है तथा उन कृषकोंके लिये जिनके पास जोतनेके लिये घोड़े नहीं, बैल और साँड़की उपयोगिता सिद्ध नहीं करनी पड़ेगी। सब पशुओंमें गाय परम पवित्र होती है। उसके शरीरके प्रत्येक अङ्गमें कोई-न-कोई देवता निवास करते हैं।'

भारतवर्षमें गायको देवता मानते थे, और उसके बिना काम नहीं चल सकता था। यही कारण था कि गायका पालना, उसकी पूजा करना और उसकी रक्षा करना भारतीय जीवनका अङ्ग बन गया। बूढ़ी और दुर्बल गायकी सेवा करना उदारता और मानवताका सर्वश्रेष्ठ काम बन गया। वस्तुतः, इस अत्यन्त उपयोगी पशुका मानवजातिके ऊपर जो महान् ऋण है, उसके चुकानेका यही रास्ता था। राजा और प्रजा समानरूपसे आजन्म उसकी रक्षा करते हुए इस कृतज्ञताके ऋणको अदा करते थे। यही मानवता और कृतज्ञताकी भावना है जिसके कारण भारतमें गोशाला और पिंजरापोलकी संस्थाएँ कायम हैं। इन संस्थाओंका अस्तित्व महाराज अशोकके राज्यकालमें भी था, और इनकी स्थापना एक पशु-अस्पतालके रूपमें होती थी जहाँ उन असहाय मूक पशुओंके खाने-पीने और रहनेका प्रबन्ध था जिनको उनके मालिक जीवनभर पाल नहीं सकते थे। ये प्राचीनतम संस्थाओंमेंसे हैं, और श्रेष्ठ भारतीय संस्कृति तथा उसके अहिंसा-सिद्धान्तके उपयुक्त स्मारक हैं।

साम हिग्गिनबटमने ठीक ही कहा है कि, 'यूरोपमें अपना नाम बनाये रखनेके लिये लोग गिर्जाघर बनवाते हैं, आधुनिक अमेरिकामें विश्वविद्यालयका निर्माण करते हैं, किन्तु वर्तमान भारतमें वे गोशाला बनवाते हैं, और चलाते हैं, जहाँ बूढ़ी, लूली-लँगड़ी, बीमार और दुर्बल गायोंकी, जबतक कि वे अपनी मौत न मरें, अच्छी तरह देख-भाल की जाती है।' इन्हीं विचारोंसे प्रभावित होकर खास करके कुछ असहाय पशुओंकी रक्षा करनेके उद्देश्यसे भारतमें चारों ओर गोशाला और पिंजरापोल स्थापित हो गये। यद्यपि उन दिनों पशुओंकी संख्या प्रचुर थी; तथापि आजीवन उनका पालन करनेमें अर्थहानि नहीं होती थी। बड़े-बड़े विस्तृत चरागाह होनेके कारण, पशु बड़ी ही समृद्ध अवस्थामें जीवन-यापन कर सकते थे।

विदेशी शासनके प्रारम्भ होनेके पहले चरागाहके लिये सर्वत्र काफी प्रबन्ध था, और बारहों महीने फसल उपजानेकी प्रथाके कारण पशु पालनेवालोंके पास काफी तादादमें चारा रहता था। देशमें प्रत्येक आदमी अपने पशुओंको, जो उस समय प्रधान सम्पत्ति समझे जाते थे, आजीवन घास-चारा प्रदान कर सकता था। उन दिनों भारतवर्ष अक्षरशः दूध और दूधसे तैयार होनेवाली वस्तुओंका देश था। उस समय राष्ट्र स्वस्थ और वीर्यवान्, पवित्र और शक्तिसम्पन्न था। गाय यथार्थमें उन्नतिकी जननी थी। अतएव केवल थोड़ेसे पशु गोशाला और पिंजरापोलोंमें महाजनोंकी उदारतासे पाले-पोसे जाते थे। कृषि-योग्य भूमिके क्षेत्रफलके साथ उनकी संख्याका समानुपात ठीक था, और इस कारणसे आज एक जोड़े बैलके जोतमें जितनी अधिक जमीन पड़ती है उससे बहुत कम जमीन उस वक्त पड़ती थी, और बैलोंकी दशा आजकल-जैसी दयनीय न थी। विपरीत इसके उनकी संख्या इतनी अधिक थी कि वैदिक युगमें एक हलमें क्रमसे ८, १० या १२ जोड़े बैलोंके जुतते थे। उनके पालकोंके प्रेमपूर्वक देख-भाल करनेके कारण उनके शरीरका ढाँचा बड़ा मजबूत होता था। खेती करनेयोग्य पशुओंकी प्रचुरताके कारण उनसे कभी ज्यादा काम नहीं लिया जाता था—अच्छी नस्लके साँड़ोंकी अधिकता होनेके कारण अच्छे बैल पैदा होते थे, जो जोतनेके कामके लिये बहुत हृष्ट-पुष्ट होते थे। बीमारियोंकी ऐसी अधिकता उस समय नहीं थी, क्योंकि पशुओंका पालन अच्छी तरहसे होता था और उनमें बर्दाश्त करनेकी ताकत पूरी होती थी। खेतोंके लिये खाद-की कमी न थी, और खेती बहुत बढ़िया होती थी। कसाइयों और गोमांस खानेवालोंकी संख्या इतनी अधिक नहीं थी, अतएव वे काफी संख्यामें फल-फूल सकते थे।

भारतमें १५ वीं शताब्दीमें बहुत प्रचुर परिमाणमें घी और दूधकी चीजें बनती थीं, और सुनते हैं कि आदमीकी बात कौन कहे, राजमहलके हाथियोंको भी जो खूराक मिलती थी उसमें चावल, दूध-मक्खन और तरकारियोंकी अधिकता होती थी। एक ही पीढ़ी पहले गुजरातमें एक रुपयेका एक मनसे अधिक दूध तथा पाँच सेर घी बिकता था।

ग्वालोंका धन गोकुलोंके द्वारा लाखों और करोड़ोंकी संख्यामें गिना जाता था। गोतम नामके बड़े-बड़े व्यापारी होते थे जिनके पास लाखोंकी संख्यामें गौओंके विशाल झुंड होते थे। आजकल जब कि भारतमें गौओंकी कमी है, यह

संख्या अलिफलैलाकी कहानी-जैसी मालूम होती है, परन्तु हमें इसकी सचाईमें सन्देह करनेकी आवश्यकता नहीं है। जो बात पहले भारतके विषयमें सच्ची थी, वह आज अमेरिका तथा दूसरे पाश्चात्त्य देशोंके लिये ठीक है, जिन्होंने गो-पालन तथा दुग्धालय चलानेमें अद्भुत उन्नति की है। अभी १८८९ ई० में अमेरिकामें किशोलेम, कर्नल स्टोटर, मार्टिन बर्क, बर्नेट, रेनल्ड ब्रादर्श तथा दूसरोंके पास बीस-बीस हजार गायें थीं।

भारतवर्षमें जिन कारणोंसे पशुओंकी स्थिति अच्छी रही उनका दिग्दर्शन इस प्रकार किया जा सकता है—

जबतक पाश्चात्त्य शक्तियोंका उदय नहीं हुआ था और उसके फलस्वरूप भारतमें ब्रिटिश राज्यकी स्थापना नहीं हुई थी, तबतक भारत ग्रामप्रधान देश था। देहात और शहरके बीच आने-जानेका काम पशुओंसे लिया जाता था। मशीन-की शक्तिका ज्ञान प्रायः उनको नहीं था। केवल पशु ही बोझा ढोने, सवारीका काम देने तथा खेतीके प्रधान साधन थे। भारतके आर्थिक, औद्योगिक तथा राजनीतिक महलके वे ही स्तम्भ थे।

उस समय जमीनकी इतनी क़िल्लत नहीं थी। जीवन बहुत सरल और स्वावलम्बी था। धर्मकी लगनमें ऐसी शिथिलता नहीं आयी थी जैसी कि आजकल आधुनिक शिक्षा और सभ्यताके कारण आ गयी है। पशुओंके लिये चरागाह सुरक्षित रक्खे जाते थे। घास और चारेकी अधिकता थी और वे सस्ते मिलते थे। आजके समान पैसेके लिये फसल उपजानेकी प्रवृत्ति उन दिनों कृषकोंको बेचैन नहीं करती थी। मालगुजारी और दूसरे करोंका बोझ नहीं था।

पोसने-पालने, घास-चारे तथा चरने-फिरनेकी सारी प्राकृतिक सुविधाएँ होनेके कारण पशुओंकी अवस्था उन्नत थी। नस्लकी शुद्धता कायम रक्खी जाती थी; क्योंकि गायों-को देशके बाहर भेजनेकी प्रथा नहीं थी। जंगल-कानून, भैंसोंका पालना, चमड़ेका व्यापार, कसाईखाने, पशुओंका निर्यात, अकाल, बाँझ गायें और ऐसे ही अनेकों दूसरे कारण, जो साधारणतः पशुओंके तथा मुख्यतः गायके विकासमें बाधा पहुँचाते हैं, उस समय प्रायः नहीं थे। अतएव उपयोगिता एवं नस्ल बढ़ानेकी दृष्टिसे उनकी उन्नति सदा बढ़तीपर ही रही।

यद्यपि पशु-पालनका वैज्ञानिक तरीका उनको मालूम न था, तथापि स्वाभाविक प्रवृत्ति और परम्परागत अनुभवके साथ-साथ पशुओंकी नस्ल सुधारने, रक्षा करने और पालनेके विषयमें प्राप्त होनेवाले धर्मशास्त्रोंके विधान वैज्ञानिक तरीकेसे किसी प्रकार न्यून न थे। वास्तवमें, आज जो कुछ विज्ञानके नामपर कहा जाता है, उन दिनों धर्मके नामपर पूरा मौजूद था। मौलिक सिद्धान्त प्रायः एक ही थे। इन्हीं कारणोंसे भारत अति प्राचीन कालसे पशुओंकी अच्छी नस्लके लिये प्रसिद्ध था। वेदों तथा दूसरे धार्मिक ग्रन्थोंमें पशुओंकी महिमा तथा उपयोगिताका उल्लेख मिलता है। वैदेशिक यात्रियों—जैसे मेगास्थनीज, हुएनत्सांग, बर्नियर, मार्कोपोलो आदिके वर्णनोंमें देशके गोधनका विशेष रूपसे उल्लेख मिलता है। साथ ही राजतरंगिणी, शाहनामा तथा 'आईने-अकबरी' जैसे ऐतिहासिक प्रबन्धोंमें इस विषयकी बहुत उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। मार्कोपोलो, जिसने तेरहवीं सदीमें भारतका भ्रमण किया था, लिखता है कि भारतीय बैल हाथी-जैसे दिखलायी देते हैं। आईने-अकबरीमें लिखा है कि उस समय बैल घोड़ेसे अधिक तेज दौड़ते थे और दूध देनेवाली गायें प्रतिदिन बीस सेर दूध देती थीं। अतीत कालमें सावधानीसे गोपालन करनेका यह ज्वलन्त प्रमाण है।

प्रचुरताके उस युगमें अधिकांश लोग अपने उपयोगके लिये पशुओंको रखते थे। पूजाका पात्र होनेके कारण उनको अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाता था और अच्छी तरहसे निगरानी की जाती थी। ब्राह्मणी साँड़ तथा दूसरे साँड़, जो श्राद्धके अवसरपर छोड़े जाते थे और जिनके खिलाने-पिलानेपर विशेष ध्यान रक्खा जाता था, गाँवकी गायोंके लिये बहुत अच्छी नस्लके बैल प्रदान करते थे। शास्त्रोंके विधानके अनुसार ये साँड़ विशेष-विशेष लक्षणवाले ढूँढ़े जाते थे। इसलिये ये निश्चय ही चुने हुए साँड़ होते थे।

इसके बाद अच्छी नस्ल तैयार करनेवालोंके टोले-के-टोले थे, जिनका पेशा ही पशुओंको पालना और उनको जनतामें बेचना था। १९२३ ई० में बम्बई प्रेसिडेंसीके पशुओंके पालन तथा उनकी उन्नतिके प्रश्नोंपर विचार करनेके लिये नियुक्त की गयी कमेटीकी रिपोर्टमें लिखा है कि, 'प्राचीन कालमें पशुओंकी नस्ल सुधारनेवाले अपने पशु लेकर यत्र-तत्र घूमते रहते थे। खानाबदोश और गँड़ेरियोंके समान उनका घूमना-फिरना उन्हीं स्थानोंतक सीमित था, जहाँ पानी और चरागाह मिल सकते थे। साथ ही, अनुभवने उनको बतला दिया था कि ऋतुविशेषमें विशेष स्थानके चरागाह

अधिक उपयोगी होते हैं। इस प्रकार वे जानते थे कि क्या ग्रहण करने योग्य है और क्या त्यागने योग्य। निरन्तर घूमते रहनेसे उनके पशुओंको तरह-तरहके चारे और जल-वायुका परिवर्तन—जो नस्ल सुधारनेमें आवश्यक होते हैं—प्राप्त था। केवल यही नहीं, बल्कि साथ ही एक प्रकारसे इसके द्वारा उनका रोग-निवारण भी हो जाता था। दुर्बल लड़खड़ानेवाले पशु पीछे छोड़ दिये जाते थे और उनकी रक्षा गोशालाओं और पिंजरापोलोंमें होती थी, और इस प्रकारसे प्रकृतिनिर्वाचनका काम चलता रहता था। कुछ दिनोंसे गोवंशका ह्रास होनेका एक कारण यह भी है कि पशु-सुधारकी यह नीति आजकल बड़े पैमानेपर नहीं चलायी जा सकती है।'

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारतीय जीवनमें गायने जो प्रधान स्थान ग्रहण किया है, वह अधिकांशमें उसकी आर्थिक योग्यतापर अवलम्बित है; जिसको बनाये रखनेके लिये बीते हुए युगमें बड़ी सावधानी रक्खी जाती थी। नस्ल सुधारनेके आधुनिक सिद्धान्त प्रायः प्राचीनकालके पशुओंके पालने और नस्ल सुधारनेवाले आर्यसिद्धान्त ही हैं। केवल परिस्थिति बदलनेके कारण अनुकूल सुधार करते हुए विज्ञानके नामपर उनका कुछ रूपान्तर हो गया है। बछड़े कमज़ोर न हों इसलिये बूढ़े और कमजोर साँड़ोंका इस्तेमाल न करना, ह्रासको रोकनेके लिये नस्लका सुधार करना, और बड़ी नस्लकी गायोंको हल्की नस्लके साँड़के पास न ले जाना आदि, प्राचीन सिद्धान्त जो शास्त्रोंमें निहित हैं, सब नस्ल-सुधार-सम्बन्धी आधुनिक विज्ञानके स्वीकृत तथ्य हैं। अतएव गायको जो परम पवित्र स्थान प्रदान किया गया है, उसका कारण केवल धार्मिक भावना या बाह्य आचार ही नहीं वरं उनकी अपेक्षा कहीं अधिक गायकी उपयोगिता है, जो अत्यन्त विचारणीय विषय है।

आर्थिक महत्त्व

मनुष्य-जातिके लिये गायका आर्थिक महत्त्व इस बातसे स्पष्ट हो जाता है कि संसारकी आधुनिक सभ्यता भी, जिसका अत्यन्त उत्कर्ष यूरोप और अमेरिकामें हुआ है, अपनेको गायका ऋणी समझती है। इस तथ्यको स्वीकार करते हुए मि० हेने लिखते हैं कि जहाँ गायका पालन और सेवा होती है वहाँ सभ्यताका विकास होता है, जमीन अधिक उर्वरा बनती है, घरोंकी अवस्था अधिकाधिक सुधरती है, और कर्जेसे पिण्ड छूटता है।' और वर्ड्सवर्थ, टाल्स्टाय तथा मिलो हेस्टिंग्ज-जैसे बहुतेरे दूसरे लेखकोंने अपने लेखोंमें गायको मनुष्य-जातिकी 'गूँगी मा' और 'दूध पिलानेवाली मा' कहकर निर्देश किया है। इसलिये, भारतके आर्थिक जीवनमें, जो मुख्यतः कृषिप्रधान देश है, जिसके निवासी अधिकांशमें दूध और साग-भाजीपर निर्वाह करते हैं, गायका इस प्रकारका अत्यन्त आवश्यकीय स्थान ग्रहण करना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

यह भी एक जानी हुई बात है कि किसी राष्ट्रकी वैयक्तिक क्षमता, जो जीवटके नामसे प्रसिद्ध है, बहुत कुछ उसके भोजनाहारपर अवलम्बित है। इसलिये कोई राष्ट्र तभी सक्षम हो सकता है जब कि उसके हाथमें दूध-सम्बन्धी पौष्टिक आहार तैयार करनेका ठीक प्रबन्ध हो। और गाय ही एक ऐसी पशु है जो अपने गोबर और हाड़-मांसके द्वारा खाद तैयार करके उसकी भूमिको बनाती है, और इस प्रकार अप्रत्यक्षरूपसे पौधोंको तैयार करती है और पौधोंके द्वारा मनुष्यको। यह प्रत्यक्षरूपसे भी दूध, पनीर, क्रीम, मक्खन, घी आदि दुर्बलताको मिटानेवाले स्वादिष्ट पदार्थोंको पैदा करके राष्ट्रको बनाती है। किसी भी विज्ञान, किसी भी राष्ट्रने अबतक इसके स्थानमें कोई दूसरा नया आहार-तत्त्व नहीं तैयार किया, और यदि किया है तो उससे राष्ट्रके स्वास्थ्य और क्षमताको लाभके बदले हानि ही पहुँची है। यही कारण है कि गायका आदर संसारमें सर्वत्र है।

भारतमें पशुओंसे तीन काम निकलते हैं—जोतने और ढोनेका काम, दूधका काम तथा खादका काम। हमें अधिक-से-अधिक लाभ उनसे ही होता है और फिर भी हम उनकी परवा नहीं करते। परन्तु पाश्चात्त्य देशोंमें उनसे केवल दूधका काम निकलता है; फिर भी पाश्चात्त्य लोग उनकी अधिक निगरानी करते हैं, और उनपर अधिक ध्यान देते हैं। वे अजीब तौरपर उनका विकास करते हैं। किसी भी तरहसे वे औसत दर्जेसे नीचे पशुका ह्रास नहीं होने देते। उनकी राष्ट्रीय नीति यह होती है कि, 'जो कुछ करने योग्य है, उसे अच्छी तरह करना चाहिये।' कृषि-सम्बन्धी रॉयल कमीशनकी रिपोर्टमें लिखा है कि, 'गायका प्रश्न प्रत्यक्षतः १५ अरब रुपयेका प्रश्न है, जो वार्षिक दुग्धालयों (डेयरी फार्म) की आमदनी तथा जुताई और पशुके श्रमसे प्राप्त होता है और अप्रत्यक्षरूपसे ८ अरब रुपयोंका प्रश्न है जो खेतीकी उपजकी आमदनी है। भारतमें पशुओंकी लागत १० अरब रुपये हैं जिसमें ७० प्रतिशत आर्थिक हानि प्रदान

करनेवाली बेकाम गौओं तथा बेकार हालतमें पड़े हुए पशुओंके पीछे बर्बाद हो जाता है। केवल ३० प्रतिशत व्यय सुचारु रूपसे होता है। उपर्युक्त ७ अरब रुपये तथा २० करोड़ पिंजरापोलोंके दानखातेकी रकम, जो आजकल भद्दे तरीकेसे बर्बाद की जा रही है, जरूरत है कि इसका अधिक लाभदायक उपयोग किया जाय। जमानेकी चलन तादादके पक्षमें नहीं बल्कि गुणके पक्षमें है। भारतको यह दस अरब रुपयेकी रकम अपने पशु-सम्बन्धी बजटको दुहराकर तथा पुनः-पुनः सुधार करके पशुओंकी विशेषताके बढ़ानेमें लगानी है। भारतवर्षमें कृषिकी उन्नतिका नस्लसुधारमें लगे हुए पशुओंकी उन्नतिसे बहुत गहरा सम्बन्ध है।'

गायकी आर्थिक महत्ताको स्पष्ट करनेके लिये श्रीयुत डी० एच० जानीकृत 'रोमांस आव् दि काउ' नामक पुस्तकका अंश उद्धृत किया जाता है, जिसमें बंगलोरकी 'जिल' नामकी संकर गायके कारनामेका हिसाब दिया गया है—'उसने अपने १९॥ वर्षके जीवनकालमें १५४७७९ पौंड दूध दिया, ७ बछड़े और १० बछड़ी प्रदान की। उसमें ऐर-शायर और हरियानाका मेल था। दस वर्षतक वह प्रतिवर्ष ९५४४ पौंड औसतन दूध देती रही। वह प्रतिवर्ष २९५ दिनतक बिसुकती नहीं थी। एक बियानमें अधिक-से-अधिक उसने १२००२ पौंड दूध दिया। सबके मूल्यका अंदाजा करनेपर उसने ९७३६ रुपयेका दूध, २७०० रुपयेके बछड़े और १३६५ रुपयेकी खाद दी, जिसका जोड़ १३००० रुपयेसे ऊपर होता है। यद्यपि इसकी आमदनीका तखमीना पश्चिमके गौओंके बराबर नहीं, और न पूसा तथा दूसरे फार्मोंकी शुद्ध नस्लसे ज्यादे है, तथापि इससे एक अंदाजा मिल जाता है कि भारतमें सुधरी नस्लकी तथा अच्छी तरह देख-भाल की जानेवाली गाय कितनी लाभदायक हो सकती है। अमेरिकाके माइनियापोलिस माइनेसोटाकी एक होल्स्टाइन नस्लकी लेडी प्राइड पोन्ट्याक ल्यूंकजी नामक गाय, जो सालभरमें ३५६२५ पौंड दूध और १४९३ पौंड मक्खन देती है—की आमदनीका तखमीना देखनेपर यह अच्छी तरह अनुमान किया जा सकता है कि भारतमें इस दिशामें कितना बड़ा क्षेत्र अभी काम करनेके लिये अछूता पड़ा हुआ है।'

आहारके रूपमें दूधका वैज्ञानिक मूल्य सर्वत्र स्वीकार किया जाता है। जिन उपादानोंसे शरीरका यन्त्र चालू रह सकता है वे सब दूधमें पाये जाते हैं। इसमें मुख्यतः पानी, प्रोटीन, चीनी, स्नेह और खनिज पदार्थ होते हैं, जो मानव-शरीरको कायम रखनेवाले प्रधान उपकरण हैं। दूध ही बच्चेके खानेके लिये प्रकृतिकी पहली देन है, अतएव यह विश्वास करना युक्तिसंगत है कि इसमें वे तत्त्व उचित अनुपातमें होंगे, जो जीवनका पोषण करते हैं। महान् वैज्ञानिक टामस एडीशनने सच कहा है कि, 'केवल दूध ही नपा-तुला आहार है, और इसको नपा-तुला बनानेवाला वह महान् रासायनिक है जो दूरसे भी दूर है।' गायका दूध माके दूधसे बहुत कुछ मिलता-जुलता होनेके कारण उसके बदलेमें बिना किसी सन्देहके दिया जा सकता है।

भारतीय ओषधि-विज्ञानके सुप्रसिद्ध संस्थापक चरकने अपने ग्रन्थमें लिखा है—'दूध सामान्यरूपसे मनुष्य तथा समस्त चतुष्पद जानवरोंके स्वास्थ्य और विकासके लिये आवश्यक होता है। गायका दूध सबसे अच्छा होता है। यह बच्चोंको जीवन, जवानोंको स्वास्थ्य और बूढ़ोंको शक्ति प्रदान करता है।' इसी प्रकार ब्रिटिश मेडिकल रिसर्च कौंसिलने घोषित किया है कि 'गायका विशुद्ध और ताजा दूध, सर्वापेक्षा हितकर और विश्वस्त पोषक-तत्त्वोंसे भरा होता है, और उसमें लाभदायक बेक्टेरियाके जीवाणु तथा दूसरे स्वास्थ्यप्रद उपकरण होते हैं।'

गोंडलके ठाकुर साहब स्वर्गीय महाराजा सर भागवतसिंह-ने अपने 'आर्यन मेडिकल सायंसके संक्षिप्त इतिहास'में लिखा है कि 'दूधमें शोधन-शक्ति बहुत होती है। आधुनिक भारतमें विशेष करके जब कि चारों ओर जीवटकी कमी और मौतकी अधिकता विराज रही है, दूधकी उपयोगिताके बारेमें जो कुछ कहा जाय वह कम ही होगा। यह वीर्यका विकास करता है। दहीसे पेचिश बहुत आसानीसे दूर हो जाती है, मट्ठा ठंडा होता है, मक्खन कब्जमें फायदा पहुँचाता है, घी शक्ति प्रदान करता है और शीतल होता है, एवं क्रीम बलदायक होता है। कपड़ेके टुकड़ेको घीमें तर करके यदि घावके ऊपर पट्टी बाँधें तो वह गहरे दर्दको भी आराम पहुँचाता है और अन्तमें अच्छी तरह नीरोग कर देता है।'

इसी प्रकार शास्त्रोंमें वर्णित गोमूत्रकी पवित्रतामें रोग-नाशक गुण हैं, इसे ओषधि-विज्ञान भी समर्थन करता है। इसका बाहरी और भीतरी दोनों प्रकारका प्रयोग होता है। शूलमें तथा दूसरी बीमारियोंमें इसका प्रयोग किया जाता है। धातुओंके शोधनमें भी इसका प्रयोग बहुतायतसे होता है।

बेलफास्टके प्रो० सिमर्स तथा अल्स्टरके प्रो० कर्कने गोमूत्रकी महत्ताके विषयमें क्रमशः अनेकों प्रयोग किये हैं, और उनको पता लगा है कि गोमूत्र रक्तमें रहनेवाले दूषित कीटाणुओंका नाशक होता है, सजीव मांसपेशीके लिये यह हानि नहीं पहुँचाता, घावोंकी विषाक्तताको दूर करता है और पुराने दोषसे रक्तद्वारा संक्रान्त घावमें बढ़ते हुए पीबको रोकता है। मलहम-पट्टीकी प्रारम्भिक चिकित्सामें इसके प्रयोगसे बहुत ही आश्चर्यजनक परिणाम देखनेमें आते हैं। अमेरिकाके डा० क्राफोर्ड हेमिल्टन तथा मैकिन्तोशने दस वर्ष पहले यह सिद्ध कर दिया था कि बढ़ते हुए हृद्रोगमें गोमूत्रके प्रयोगसे मूत्रवृद्धि होती है। मद्रास गवर्नमेंटके स्वास्थ्य-विभागके डाइरेक्टर लेफ्टिनेंट कर्नल वेबके प्रयोगके अनुसार, 'बच्चा जननेके समय सूखे गोबरके चूर्णका प्रयोग लाभदायक होता है और फोड़ेके ऊपर इसकी पुल्टिस बाँधनेसे वह विषाक्त नहीं होने पाता। सूखे गोबरमें दूषित कीटाणुओंके नाश करनेवाले बहुत शक्तिशाली तत्त्व होते हैं। फोड़े, घाव, मोच आदिपर सूखे गोबरकी पुल्टिस बहुत कारगर होती है।' आयुर्वेद-शास्त्रके अग्रणी चरक और सुश्रुतने इसकी बड़ी प्रशंसा की है तथा अनेकों प्रयोगोंमें इसका विधान किया है। इटलीके प्रो० जी० इ० वेग्नर्डने पता लगाया है कि 'यक्ष्मा और मलेरियाके सूक्ष्म रोगाणु सूखे गोबरकी गन्धसे नष्ट हो जाते हैं।' इटलीमें इसका अनेकों प्रकारसे प्रयोग किया जाता है।

सूखे गोबरमें मेन्थल, नौसादर, फीनोल, इंडोल और फार्मेलीन पाये जाते हैं। इन तत्त्वोंकी गन्धमात्र यक्ष्मा आदिके सूक्ष्म रोगाणुओंका नाश करनेमें समर्थ होती है और इसी कारण इसकी महत्ता है।

सब प्रकारकी खाद और खेतकी उर्वराशक्तिको बढ़ानेवाले पदार्थोंमें खलिहानकी खाद श्रेष्ठ होती है। बम्बई प्रेसिडेंसीके कृषि-विभागद्वारा किये जानेवाले प्रयोगोंके द्वारा यह साफ मालूम हो गया है कि खलिहानकी खाद जब चूर्ण कर दी जाती है तो भारतमें प्राप्त होनेवाली खादोंमें सबसे अधिक लाभदायक होती है।

श्रीयुत डी० एच० जानीने अपनी 'रोमांस आव् दि काउ' नामक पुस्तकमें बतलाया है कि 'मान लें कि करीब ५० करोड़ एकड़ जमीनमें खेती होती है और इसका केवल दसवाँ हिस्सा खलिहानकी खाद पाता है, ऐसी अवस्थामें यदि शेष ४५ करोड़ एकड़ जमीन भी खलिहानकी खाद पा सके तो लगभग ४५×५ अर्थात् २२५ करोड़ रुपयेका वार्षिक लाभ होगा। परन्तु इसके लिये पशुओंकी आवश्यकता होगी। प्रत्येक पशु औसतन ५ टन खाद प्रतिवर्ष देता है, ऐसी अवस्थामें लगभग ५० करोड़ पशुओंकी आवश्यकता होगी जो सम्पूर्ण कृषि करनेयोग्य खेतोंको काफी खाद दे सकें। परन्तु भारतमें मुश्किलसे इसकी तिहाई संख्या पशुओंकी होगी, इसलिये श्रीयुत डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर साहबने अपनी 'दि इंडियन एम्पायर' नामक पुस्तकमें ठीक ही लिखा है कि, 'कृषिकी उन्नतिके मार्गमें दूसरी रुकावट है खादकी कमी। यदि पशुओंकी संख्या अधिक हो तो खाद भी अधिक मिल सके।'

गायका अन्तिम और सबसे अधिक आर्थिक उपयोग होता है खेतीके लिये बैलोंको उत्पन्न करनेमें। बैलोंके द्वारा अब भी खेतोंमें तथा सड़कोंपर प्रधान कार्योत्पादक शक्ति प्राप्त होती है। इसलिये भारतमें बैलोंकी आर्थिक महत्ता सर्वश्रेष्ठ है। कृषिसम्बन्धी अनुसन्धानकी इम्पीरियल कौंसिलके मार्च, १९३२ की रिपोर्टमें लिखा है कि 'देशमें पशुके द्वारा किये जानेवाले श्रम तथा उत्पादनके वार्षिक मूल्यका अंदाजा लगाना कठिन है। लेकिन खूब सावधानीसे हिसाब लगानेके बाद कमेटीने इसे १,५४० करोड़ रुपये वार्षिककी प्रचुर संख्यामें उपस्थित किया है।' इससे भारतमें आधुनिक परिस्थितियोंमें भी पशुओंकी आर्थिक महत्ताके विषयमें एक अंदाजा मिल जाता है।

ऐसी अवस्थामें यह आश्चर्यकी बात नहीं है, यदि हम गायको पूजते हैं और पूजनीय समझते हैं; क्योंकि गाय ही प्रधान उत्पादन करनेवाली राष्ट्रीय सम्पत्ति है और उन्नतिकी जननी है, अतएव उसकी रक्षा करना तथा अच्छी तरहसे देखभाल करना जरूरी है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि उसकी रक्षा तथा सुख-चैनके लिये जितना ही प्रयत्न किया जाय थोड़ा है।

(२)
भारतमें पशुओंकी वर्तमान दशा

यहाँतक भारतमें सामान्यरूपसे आर्थिक तथा स्वास्थ्यके विचारसे पशुओंकी अनिवार्य आवश्यकताके विषयमें आलोचना की गयी, और यह बतलाया गया कि गायको जो इतनी बड़ी धार्मिक महत्ता प्रदान की गयी है, इसका प्रधान कारण उसकी उपयोगिता है। अब आइये हम देशमें

पशुओंकी वर्तमान दशाकी आलोचना करें तथा यह देखें कि इनके ह्रासके प्रधान कारण क्या हैं?

बैल और खेती

यह साबित करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि भारतके पशु-धनका अधिक संख्यामें उच्छेद हो गया है तथा गुणकी दृष्टिसे यह हीनताको प्राप्त हो गया है। आज खेतीके लिये जो बैलोंकी सर्वत्र कमी हो रही है उससे यह दुःखद सूचना मिलती है कि देशमें गाय और बछड़ोंकी राशि कम हो गयी है। हमने जैसा कि ऊपर बतलाया है पहले जहाँ एक हलके लिये आठ या दस जोड़े बैल रहते थे वहाँ आज भारतमें १७ एकड़ जमीनके जोतनेके लिये मुश्किलसे एक जोड़ी बैल प्राप्त होते हैं।

इसी कारणसे खेती ठीक नहीं हो रही है, अन्नकी उपज कम हो गयी है, और बैल महँगे हो गये हैं, तथा जो बैल हैं भी, वे अत्यधिक काम करनेके कारण समयसे पहले बेकार हो जाते हैं। बैलोंका दाम बहुत अधिक चढ़ जानेके कारण औसत किसानके लिये उनका मिलना कठिन हो गया है। इस कारणसे बहुत-सी जमीन बिना जोती रह जाती है। ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं कि पुरुष और स्त्री स्वयं हलमें जुत जाते हैं और इस प्रकारसे खेतीका काम चलाते हैं। अच्छे बैलोंका एक जोड़ा, जो पहले दो सौमें मिलता था, अब आज शायद ही हजार रुपयेमें मिल सके।

यदि मान लिया जाय कि लगभग ३८ करोड़ एकड़ जमीन खेती करनेके लिये प्राप्त है और प्रत्येक ५ एकड़ जमीनको जोतनेके लिये एक जोड़े बैलकी जरूरत है, तो भारतवर्षमें इस हिसाबसे ७ करोड़ जोड़े अच्छे काम करनेवाले बैलोंकी जरूरत पड़ेगी, परन्तु यहाँ मुश्किलसे ३ करोड़ अच्छे बैल १८७३९०४६ हलोंके लिये प्राप्त हैं, जिनके साथ ऊँट और दूसरे जानवर भी जोते जाते हैं। इसका असर दूसरे देशोंकी तुलनामें अपने देशकी औसत उपजके ऊपर पड़ता है। हम देखते हैं कि जहाँ प्रति एकड़ डेन्मार्कमें ३६ मन, बेल्जियममें ३८ मन, जर्मनीमें ३३ मन, इंग्लैंडमें ३२ मन, फ्रांसमें २० मन अन्न उपजता है वहाँ भारतमें सिर्फ ८॥ मन प्रति एकड़की पैदावार है। इस प्रकार दूसरे देशोंमें हिंदुस्थानकी अपेक्षा लगभग पाँच गुनी अधिक पैदावार होती है।

हल चलानेवाले बैलोंकी इस प्रकारकी भयानक कमी होनेपर भी जनता और सरकारने बैलोंकी संख्या बढ़ानेके लिये कोई सराहनीय प्रयत्न नहीं किया, बल्कि बीते हुए वर्षोंमें होनेवाले उनके विनाशको चुपचाप बरदाश्त किया है, यद्यपि सरकारी जाँच कमेटियोंने पशुओंकी ह्रासावस्थापर प्रकाश डाला है, और एक दशाब्दीके बाद दूसरी दशाब्दीमें क्रमशः बराबर उनकी संख्या बढ़ानेके उपायोंकी जरूरतपर जोर दिया है। यहाँ उनका क्रमानुसार कुछ दिग्दर्शन किया जाता है—

१८०० ई०—डा० बूचानन हेमिल्टनने इस शिकायतपर जोर दिया कि 'भारतमें पशुओंका ह्रास हो रहा है।'

१८८६ ई०—सर डब्ल्यू० वेडवर्न आई० सी० एस्० ने बतलाया कि, 'हम हिंदुस्थानके ट्रस्टी होनेका दम भरते हैं, परन्तु हमने भारतके पशु-धनकी रक्षाके लिये क्या किया है? बिल्कुल ही कुछ नहीं। मुझे यह स्वीकार करनेमें लज्जा आती है कि हमारे कारण इनके उच्छेदमें सहायता मिली है।'

१९०० ई०—बम्बईके डा० एच० मानने कहा था कि, 'पशु जितना ही कमजोर होंगे, राष्ट्र उतना ही कमजोर हो जायगा।'

१९०३ ई०—लार्डकर्जनने अपने सरकारी कागजातमें लिखा था कि, 'पशुओंकी दृष्टिसे भारत-देश पिछड़ता जा रहा है।'

१९१६ ई०—कर्नल इ० डब्ल्यू ऑलवरने बतलाया कि, 'भविष्यमें हम दूध कहाँसे प्राप्त करेंगे? इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर विचार करनेकी जरूरत है, क्योंकि यह बात अब सबपर विदित हो गयी है कि भारतमें दूध देनेवाले पशुओंका शीघ्रतासे ह्रास होता जा रहा है।'

लेफ्टिनेंट कर्नल जे० मैस्टनने बतलाया कि, 'जब हम पशुओंके दूसरे प्रयोजन—मुख्यतः दूधके उत्पादनकी बातपर विचार करते हैं, तो इसे बहुत ही संगीन हालतमें पाते हैं।'

१९२२ ई०—ब्लू बुकमें लिखा है कि, 'प्रत्येक मिनट एक गाय भारतसे विदेशको भेजी जाती है और अंदाजा लगाया गया है कि भारतमें ५ गाय प्रति मिनट कसाईखानोंमें काटी जाती हैं।'

१९२६-२७ ई०—लार्ड लिनलिथगोने इस शिकायतका

समर्थन किया है कि 'गायोंकी उत्पादन-शक्ति कम हो गयी है और बछड़े डील-डौलमें छोटे हो गये हैं।'

तथापि १९४२ ई० में जनमतके दबावके कारण दस वर्षसे कम उम्रके जोतने लायक बैलोंकी हत्या रोकनेका एक **धोखा-धड़ीवाला कानून पास हुआ। इस कानूनने उलटे बहुत उपयोगी बैलोंकी, जिनकी उम्र १० वर्षसे अधिक थी तथा जिनको खेतीके कामके लिये बचाया जा सकता था, हत्या करनेमें प्रोत्साहन प्रदान किया। इस प्रकार इस कानूनका उपयोग उन बैलोंकी कमीको बढ़ानेमें लगा, जो अभी उपयोगी हो सकते थे तथा यह उपयोगी पशुओंकी रक्षाके उद्देश्यमें असफल रहा।**

उदाहरणके लिये, बाँदराके कसाईखानेमें, जहाँ प्रतिदिन औसतन १८१ बैल और ११५ गायें कटती हैं, जाँचके लिये ३११८ गायें और ४००४ बैल उपस्थित किये गये, जिनमें केवल १८१ गायों और १२ बैलोंको, पशु-हत्या निवारण करनेवाले कानूनके आधारपर, बाद दिया गया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि गोमांस मुहय्या करनेके लिये जितने पशुओंकी जरूरत है गवर्नमेंट बड़ी तनदेहीसे उनकी संख्याको कायम रखना चाहती है। यदि वस्तुतः गवर्नमेंट उपयोगी पशुओंके विनाशको रोकना चाहती, तो वह १५ से १८ वर्षतककी उम्रके अच्छे शरीरवाले तमाम गायों और बैलोंको तथा तमाम बछड़ोंको कसाईखाने भेजनेसे रोकती और ईमानदार पशु-चिकित्सालयके अफसरोंके साथ-साथ कुछ किसानोंको भी अधिकार देती कि वे कसाईखानेमें भेजे गये पशुओंकी जाँच करें, क्योंकि वे ही निश्चयपूर्वक बता सकते थे कि कौन-सा पशु उपयोगी है और कौन-सा नहीं।

गायें और दूधका उत्पादन

भारत-जैसे दूध और शाकाहारी देशमें, जाति-पाँति तथा आहारसम्बन्धी आदतके सम्बन्धमें बिना किसी भेद-भावके करोड़ों मनुष्योंके दैनिक आहारके रूपमें दूधका महत्त्व सबसे बढ़कर है। जैसा कि 'पद्मा पब्लिकेशन्स लिमिटेड्' बम्बईके द्वारा प्रकाशित श्रीयुत साराभाई प्रतापरायकृत, अभी हालहीमें प्रकाशित 'मिल्क ऐंड मिल्च कैटल' नामक पुस्तकमें लिखा है कि, दूध एक अद्भुत द्रव पदार्थ है। इसमें सैकड़ों उपयोगी तत्त्व उचित अनुपातसे मिले हुए हैं। इन तत्त्वोंको एक साथ अलगसे मिलाना असम्भव है। अतएव इसके स्थानपर ऐसा ही पौष्टिक दूसरा कोई पदार्थ नहीं हो सकता, तथा दूधमें प्राप्त होनेवाले कुछ पुष्टिकारक तत्त्वोंका अभीतक निर्णय भी नहीं हो सका है। इसके ८ प्रोटीनमें १९ ऐमिनो-एसिड होते हैं, इसके मक्खनमें ११ चिकने एसिड होते हैं, ६ विटामिन, ८ जीवाणुहीन किण्व, २५ धातुज तत्त्व और १ चीनी (दूध-तत्त्ववाली), ४ फास्फोरस मिश्रण, १४ नत्रजन तत्त्व और कुछ अज्ञात तत्त्व—जिनमें कुछ समझमें आते हैं और कुछ दूधमें ही मिले हुए हैं, जिनका पृथक् विश्लेषण नहीं हो सका है। संसारके प्रत्येक देशमें, बल्कि वहाँ भी जहाँ गोमांसभक्षी रहते हैं, सर्वत्र दूधके गुण और शक्तिको लोग स्वीकार करते हैं, और अपने देशके लोगोंके सामने इसको अधिक जोर देकर कहनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि यहाँ तो दूध और अमृतको एक ही शब्द 'पीयूष' से सम्बोधित किया जाता है।

भारतको आजकल जो दूध प्राप्त होता है वह प्रधानतः गाय और भैंसका होता है, यद्यपि अतीत कालमें जब गायें समृद्ध दशामें थीं और काफी दूध देती थीं तो सीधी खपतके लिये गायका ही दूध काममें लाया जाता था, और भैंसके दूधसे मक्खन-घी आदि तैयार किया जाता था। गायका दूध आहारकी दृष्टिसे मनुष्यके दूधके अधिक अनुरूप होनेके कारण अधिक पुष्टिकारक और पचने योग्य होता है। प्रयोगशालामें किये गये वैज्ञानिक प्रयोगों तथा मनुष्यके जीवनमें प्रत्यक्ष रूपसे आहारके रूपमें किये गये प्रयोगोंसे समानरूपसे सिद्ध हो गया है कि गायका दूध भैंसके दूधकी अपेक्षा प्रधानतः निम्नलिखित बातोंमें अधिक उत्कृष्ट है—

१. गायके दूधमें रहनेवाला प्रोटीन अधिक आसानीसे पच जाता है, क्योंकि वह भैंसके दूधमें रहनेवाले प्रोटीनकी अपेक्षा अधिक मुलायम होता है।

२. गायके दूधमें प्रोटीनको पचानेवाला चर्बीका अंश पर्याप्त मात्रामें होता है और इसी कारणसे बच्चों और दुर्बलोंको विशेषरूपसे तथा जवान आदमियोंके लिये समान रूपसे अधिक लाभदायक होता है।

३. भैंसके दूधकी अपेक्षा गायके दूधमें ऊँचे दर्जेका विटामिन होता है। गायके दूधमें जो स्नेहका अंश होता है उसमें जितने सबसे अधिक पोषक तत्त्व, प्रधानतः ए० बी० डी० विटामिन पाये जाते हैं उतने संसारमें और किसी पदार्थमें नहीं।

४. किण्व यानी खमीर पैदा करनेवाला तत्त्व (Enzymes) जो पाचनमें सहायता प्रदान करता है और मानव-शरीरमें उत्पन्न होनेवाले टाक्सिन तथा टोमेंस नामके विषाक्त तत्त्वोंको अधिकाधिक निवारण करता है, भैंसके दूधकी अपेक्षा गायके प्राकृतिक कच्चे दूधमें अधिक अनुकूल स्थितिमें तथा बहुतायतसे पाया जाता है।

५. गायके दूधमें नमकका तत्त्व भी भैंसके दूधकी अपेक्षा अधिक घुलनशील और पचानेयोग्य रूपमें प्राप्त होता है।

इतना सब होनेपर भी कुछ तो गायोंका दूध कम हो जानेके कारण और कुछ हमारे स्वभावमें परिवर्तन हो जानेके कारण भारतके अधिकांश प्रान्तोंमें गायके स्थानमें भैंसको ही लोग दूधकी गरजसे पालने लगे हैं। यह भारतमें मनुष्यके स्वास्थ्य तथा गौओंकी रक्षा—दोनों ही दृष्टिसे भयावह है। कदाचित् संसारके किसी भी दूसरे देशमें भैंसका दूध इतनी स्वच्छन्दतासे नहीं इस्तेमाल किया जाता जितना भारतमें किया जाता है। देशमें घास-चारेके जरियेको सामने रखते हुए, हम विभिन्न प्रकारके उद्देश्योंके लिये विभिन्न प्रकारके पशुओंके पालनेका समर्थन नहीं कर सकते;—जैसे दूधके लिये भैंस पालना, खेतीके लिये बैलोंको पालना और गायोंको बैलों-के लिये तथा खादके लिये पालना। तथापि दूधकी माँगको लेकर आज गाय और भैंसोंमें बेतरह होड़ लगी हुई है, जो देशकी खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली जरूरतों तथा देशके स्वास्थ्यके विचारसे सर्वथा अवाञ्छनीय हैं; क्योंकि हमारे देशकी ८५ फी सदी आबादी खेतीपर ही जीती है।

दूध देनेवाले पशुओंकी कमी

यहाँतक कि गायके स्थानमें भैंसको रखने तथा इनकी तादाद बढ़ानेपर भी देशमें दूधकी रसद बहुत ही कम है। और प्रतिवर्ष दूधकी रसद और दूध देनेवाले पशुओंकी संख्यामें बराबर कमी होती जा रही है, इसके मुकाबलेमें दूसरे देशोंकी हालत बिल्कुल विपरीत है। नीचे लिखे हुए अंकोंसे यह बात स्पष्ट हो जाती है—

भारतमें—

	१९२०	१९४०	कमी, प्रतिशत	वृद्धि प्रतिशत
गायें	४, ३३, ६००००	३, ९४, ६००००	१०॥	×
जन-संख्या	२७, ४५, ४००००	३३, ३२, २००००	×	२१॥

दूसरे देशोंमें गायें

	१९३५	१९४०	वृद्धि प्रतिशत
द० अफ्रिका	१,०५,५७०००	१, २०, ६०००	१४
इंग्लैंड-	९७,६९०००	१,०५,५४००००	८
जर्मनी	१,८९,३८०००	१, ९९, ०००००	५

इस प्रकार वस्तुतः भारतमें आबादीके बढ़नेके साथ-साथ जहाँ पशुओंकी तादाद बढ़नी चाहिये वहाँ उसमें १३ प्रतिशत कमी हो गयी है, जिससे दूधकी औसत खपतमें और भी कमी आ गयी है, यह नीचे लिखे हुए विभिन्न देशोंमें दूधकी खपतसे सम्बन्ध रखनेवाले तुलनात्मक अङ्कोंसे स्पष्ट हो जायगा—

दूधकी खपत प्रति मनुष्य

न्यूजीलैंड	५६ औंस	जर्मनी	३५ औंस
आस्ट्रेलिया	४५ ,,	हालैंड	३५ ,,
नारवे	४३ ,,	बेल्जियम	३५ ,,
डेन्मार्क	४० ,,	फ्रांस	३० ,,
इंग्लैंड	३९ ,,	स्वीजरलैंड	२९ ,,
कैनेडा	३५ ,,	पोलैंड	२२ ,,
अमेरिका	३३ ,,	हिंदुस्थान	६ ,,

अतएव इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि दूधकी खपतमें कमी आ जानेके कारण दूसरे देशोंकी अपेक्षा भारतमें बच्चों तथा औरोंकी मृत्यु-संख्यामें बेतरह वृद्धि हुई है। भारतकी शारीरिक अवस्थाकी दुःखजनक तालिका इस प्रकार है—

मृत्यु-संख्या प्रति हजार

	बच्चे १ वर्षतककी आयु	दूसरी उम्रके लोग
इंग्लैंड	१७२	१७
डेन्मार्क	१३६	१५
न्यू जीलैंड	३२	२
स्काटलैंड	१४५	१७
हिंदुस्थान	२६०.७	३८.२
नारवे	१९२	१५
स्वीडन	१०२	१६
हालैंड	५०	१७

यहाँ यह ध्यान देनेकी बात है कि एक वर्षसे कम उम्रके बच्चोंकी मृत्यु-संख्यामें २६ प्रतिशत बच्चे ऐसे कारणोंसे मरते

हैं जिनको दूर किया जा सकता है। ये बच्चे अपने तथा अपनी माताओंके अच्छा खाना न मिलनेके कारण काल-कवलित हो जाते हैं। मौतमें वृद्धि होनेके कारण, भारतमें, जिंदगीका औसत, जो सौ वर्ष पहले ४० वर्ष था, आज घट करके २३ वर्ष रह गया है। इसके मुकाबलेमें इंग्लैंडमें औसत जिंदगी ५३ वर्ष, तथा जापानमें ४४ वर्ष है।

तमाम दूध देनेवाले पशुओंका हिसाब लगाया जाय तो इस समय भारतमें ४५५०००००गायें, २०३०००००भैंसें और ८८०००० बकरियाँ हैं, जो सालाना कुल ७४३६०००००० मनके करीब दूध देती हैं। इसमें लगभग १२३८००००० मन दूध बछड़े पी जाते हैं, और इस प्रकार आदमियोंमें खपतके लिये लगभग ६११९८०००००० मन दूध प्रतिवर्ष बच रहता है, जो प्रति मनुष्य औसतन ६ औंस पड़ता है, जहाँ विशेषज्ञोंने प्रतिदिन कम-से-कम १८ औंस दूध साधारण रूपसे हर-आदमीके लिये निर्धारित किया है। अतएव इतना अधिक दूध तैयार करनेके लिये भारतवर्षमें जितनी आज दूध देनेवाली गायें हैं उनसे तिगुनी दूध देनेवाली गायें रखनी पड़ेंगी, अथवा इन्हीं गायोंका दूध उसी हिसाबसे बढ़ाना होगा। जैसे भी हो। देशमें दूध देनेवाले पशुओंकी संख्या बड़ी भयावह है।

खादकी रसद

खाद पहुँचानेका प्रश्न भी बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। अधिकांश जोती जानेवाली जमीनकी खाद खलिहानसे ही मिलती है, अतीतकालमें जब आजकी अपेक्षा ज्यादे चरागाह-के लिये जमीन प्राप्त थी तो पशुओंके पालनेमें लाभ था। परन्तु आज हालत बिल्कुल उलटी हो गयी है। बेकार तथा अच्छे पशुओंकी एक बड़ी संख्या गोमांस, हड्डी और चर्बी आदिके लिये कसाईखानेमें काटी जाती है, इसलिये पशुओंके द्वारा प्राप्त होनेवाली खादकी रसद बहुत ही कम हो गयी है। यह खाद आर्थिक दृष्टिसे कहाँतक लाभदायक है, यह अर्थ-शास्त्रियोंके लिये विचारणीय प्रश्न है। लेकिन जब हम किसानोंकी वर्तमान आर्थिक अवस्थापर दृष्टिपात करते हैं, तो मालूम पड़ता है कि उनके लिये रासायनिक खादका व्यवहार करना असम्भव है। इसलिये यदि पूरी खादकी रसद पशुओंके द्वारा प्राप्त करनी है, तो देशको कम-से-कम ५० करोड़ पशु रखने पड़ेंगे, यदि हम यह हिसाब लगा लें कि एक पशु ५ टन खाद देता है और एक एकड़के लिये ५ टन खादकी जरूरत है। इस प्रकार खादकी रसदके लिये भी पशु बहुत ही लाभदायक हैं।

यह भी ध्यानमें रखनेकी बात है कि देहातोंकी प्राचीन आर्थिक स्थितिमें, भारतीय किसानको, अपनी दैनिक आवश्यकताओं तथा अपनी खेती-बारीका काम चलानेके लिये पूरी आजादी थी। वह अपने घरके पाले हुए बैलोंसे खेत जोतता था, और अपने पशुओंके द्वारा गोठेकी खादसे खेतको जरखेत बनाता था, अपनी गाय-भैंसोंसे दूध और दूधसे तैयार की हुई चीज़ें प्राप्त करता था, अपना अनाज और पशुओंके लिये चारा खुद उपजाता था। सूत कातता था और अपने लिये कपड़े बुन लेता था और इस प्रकार अपने और अपने गाँवमें प्राप्त होनेवाले ज़रियेसे हर-एक चीज हासिल कर लेता था। इस प्रकार यदि मशीन, बनावटी खाद आदिके प्रचारके लिये प्रयत्न किया गया तो खेती करनेमें बहुत खर्चा बढ़ जायगा और साथ ही खेतीके लिये जो स्वतन्त्र साधन थे, उनपर पहले कुठाराघात होगा।

ह्रासके कारण

यह तो स्पष्ट ही है कि ३०० वर्ष पहले भारतके पशु दूध देनेकी दृष्टिसे और जोतनेकी दृष्टिसे बहुत मशहूर थे। 'आईने-अकबरी'के १९९ पृष्ठमें लिखा है कि सम्राट् अकबर-के कालमें गायके दैनिक दूधकी औसत २० सेर थी। और बैल २४ घंटेमें १२० मीलकी रफ्तारसे तेज चलते थे। लेकिन बादको अनेकों कारणोंसे, संख्या और गुण दोनों ही दृष्टिसे गायोंका ह्रास, होते-होते वर्तमान निराशाजनक अवस्थाको पहुँच गया है।

सरकार और जनताकी उदासीनता

जब हम कारणोंके ऊपर विचार करते हैं तो दुःखके साथ कहना पड़ता है कि भारतमें पशुओंकी वर्तमान शोचनीय अवस्थाके लिये खासकर सरकार और जनताकी उदासीनता ही जवाबदेह है। जहाँ विदेशोंमें पशुओंकी उन्नतिके लिये बहुत ध्यान दिया जाता है, वहाँ हिंदुस्थानमें निन्दनीय ढंगसे उनकी अवहेलना की जाती है। पशुओंकी सबसे अच्छी राशि विदेश भेजी जाती है, बहुत बड़ी तादाद कसाईखानोंको भेंट की जा रही है और घास-चारेके जरिये कम किये जा रहे हैं। सरकार इन सब बातोंको बरदाश्त ही नहीं करती, बल्कि इनके ह्रासको प्रोत्साहन भी देती है। जहाँ दूसरे देशोंमें बहुत बड़ी रकम लगाकर पशुओंकी उन्नतिके लिये प्रोत्साहन प्रदान किया जाता है, वहाँ हिंदुस्थानमें क्रमशः पशुओंके नाशको

बढ़ावा देकर और उनके पालनके साधनोंपर कुठाराघात करके उत्साह भङ्ग किया जाता है। उदाहरणके लिये— अमेरिका तथा दूसरे देशोंमें पशुओंकी उन्नतिके लिये प्रतिपशु जहाँ एक रुपया खर्च किया जाता है, वहाँ भारतमें केवल आधा आना प्रतिपशु खर्च किया जाता है। इसी प्रकार विदेशोंमें दूधसे सम्बन्ध रखनेवाले उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेके लिये बचावके कानून बनाये गये हैं, परन्तु भारतमें दूध देनेवाले पशुओंका भयङ्कर विनाश तथा दूधसे बनी हुई चीजोंमें मिलावट-जैसी घृणित आदतोंको बरदाश्त किया जाता है। ये सब बातें जो होती हैं, इनका कारण सिर्फ यही है कि जनता इनको सहन करती है। जैसे सभ्यता बढ़ती जाती है, वैसे ही पशुओंके जीवनके प्रति हमारा ध्यान कम होता जाता है। हिंदुस्थानके लोगोंकी आहार-सम्बन्धी आदतोंमें परिवर्तन होने तथा मांस और गोमांस खानेकी प्रवृत्ति बढ़नेके कारण पशु-हत्याका बन्धन शिथिल हो गया है। गो-हत्याके प्रश्नको लेकर मुसल्मान हिंदुओंके विरुद्ध खड़े कर दिये गये हैं। वस्तुतः हिंदुस्थानमें मुसल्मानी राज्यके इतिहासके पन्नोंको देखनेसे पता चलता है कि उन दिनों गायोंकी अच्छी तरह निगरानी की जाती थी और उस समय आजकलके समान गो-वध व्यापकरूपसे नहीं होता था। वास्तवमें अकबर, बाबर और हुमायूँ आदि मुसल्मान शासकोंने गो-वधको रोक दिया था। यदि मुसल्मान गो-वधके लिये उत्सुक होते तो, जिस समय वे अधिकारारूढ़ थे उस समय उन्होंने ऐसा किया होता; परन्तु जब हम देखते हैं कि हिंदुस्थानका शासन करते समय उन्होंने गायोंकी रक्षा की थी तो वर्तमान शासकोंकी नीतिका पर्दा फाश हो जाता है और यह स्पष्ट हो जाता है कि गौओंके विनाशका कारण इन्होंने स्वयं अपनेको बना रक्खा है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव यह हुआ है कि देश परतन्त्र बना हुआ है। इसकी आर्थिक और शारीरिक शक्ति गिरी हुई है, तथा इस प्रश्नपर राष्ट्रमें फूट पैदा कर दी गयी है। दुर्भाग्यकी बात यह है कि राष्ट्रीय जागृतिके दिनोंमें भी हिंदू-मुस्लिम-एकताकी दलील देकर पशु-वधको बरदाश्त किया जाता है। यदि धर्मका कोई ख्याल किया जाता है तो जिस प्रकार मुसल्मानोंके तथाकथित धार्मिक रिवाजका ख्यालकर कुर्बानीमें गाय दी जाती है, उसी प्रकार हिंदुओंके धर्मको सामने रखकर गोरक्षाका भी ख्याल किया जाना चाहिये था। परन्तु बात तो यह है कि कुर्बानीमें जितनी गायें कटती हैं, उनकी अपेक्षा कई गुना अधिक गायें देशमें मिलिटरी और साधारण लोगोंको मांस और गोमांस पहुँचानेकी गरजसे कटती हैं। इसलिये हिंदुस्थानी जनता, हिंदू और मुसल्मान दोनोंको हानि पहुँचाकर दिन-प्रतिदिन पशुओंकी बहुत बड़ी संख्या गोमांस, मांस-चर्बी, चमड़ा, हड्डी, सूखे रक्त आदिका व्यापार करनेकी गरजसे जो काटी जाती है, उसका धर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

भयानक पशुवध

गवर्नमेंटकी रिपोर्टमें प्रकाशित चमड़ोंके निर्यातके अङ्कोंके देखनेसे पता चलता है कि १९४३ ई० में २००१०००० गायोंके चमड़े तैयार हुए थे, जिनमें ५२७०००० कसाईखानेमें काटी हुई गायोंके थे। साथ ही ५७१०००० भैंसोंके चमड़ेमें, १३३०,००० कसाईखानेमें कटी भैंसोंके थे। सालभरमें तैयार हुए कुल २५७२०००० पशुओंके चमड़ोंका दाम करीब ६ करोड़ रुपये था। इनमें करीब १०३४४००० चमड़े करीब ४ करोड़ २५ लाख रुपयेकी लागतके दूसरे देशोंको भेजे गये। और बचे हुओंका इस्तेमाल हिंदुस्थानमें हुआ। यह अपने देशमें सब जाति और सम्प्रदायके करोड़ों मनुष्योंके लिये अत्यन्त आवश्यक दूध तथा खेतीके सर्वश्रेष्ठ साधनोंके आर्थिक और शारीरिक विनाशकी शोचनीय तालिका है! इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि भोजनकी कमी तथा जनताके शारीरिक और आर्थिक ह्रासका प्रधान कारण पशुओंका विनाश ही है जैसे अप्रत्यक्षरूपसे गवर्नमेंटका प्रोत्साहन मिल रहा है, तथा जिसे जनता सहन कर रही है। यहाँतक कि आज भी, जब ग्राम-सुधारकी बातें की जा रही हैं और इसके लिये एक खासी रकम खर्च की जा रही है, भारतमें पशुओंकी रक्षा तथा उन्नतिको उनके द्वारा कोई महत्त्व नहीं दिया जा रहा है, जिनके ऊपर देशकी आर्थिक स्वतन्त्रता तथा इसकी कोटि-कोटि जनताके स्वास्थ्यकी गारंटी है। भारत-जैसे कृषिप्रधान देशमें, जहाँ कि खासकर अन्न, दाल, तरकारी तथा दूधके पदार्थके ऊपर लोग निर्भर करते हैं। ग्राम-सुधार तथा स्वास्थ्य-सुधारकी योजना, बिना पशुओंका सुधार किये, सफलतापूर्वक नहीं चलायी जा सकती। बुद्धिमानी तो यह है कि तमाम विपत्तियोंके मूलकारणको हम ढूँढें और इलाज करनेकी अपेक्षा ऐसे उपायोंको काममें लानेकी अधिक चेष्टा करें जो रोगको उत्पन्न ही न होने दें। जबतक निवारणशक्ति प्रदान करनेके

लिये पुष्टिकारक भोजनकी व्यवस्था नहीं की जाती तबतक अस्पतालों और जच्चाखानोंकी व्यवस्थाकी चेष्टा करना बेकार है।

घास-चारेके साधनकी कमी

पशुओंके ह्रासका तीसरा कारण घास-चारेकी कमी है। सब देशोंके समान भारतमें भी पशुओंको कुछ तो थानपर घास-चारा दिया जाता है और कुछ बाहर चराया जाता है। उनको काफी चरी न मिले तो अच्छी तरहसे उनकी वृद्धि न हो। यही कारण था, प्राचीनकालमें महान् धर्मशास्त्रके रचयिता मनुने यह नियम बनाया था कि प्रत्येक गाँवमें दसवाँ हिस्सा जमीन चरागाहके लिये सुरक्षित रखनी चाहिये। परन्तु गत ३०० वर्षोंमें वह आर्थिक प्रबन्ध धीरे-धीरे बदल गया है और आज हम चरागाहकी बहुत बड़ी कमी पा रहे हैं। संसारके प्रधान देशोंमें प्रत्येक पशुके पीछे जिस हिसाबसे चरागाहकी जमीन छोड़ी गयी है उसकी तुलना करनेपर हिंदुस्थानको हम सबसे पीछे पाते हैं। यद्यपि समस्त संसारकी पशुसंख्याका तिहाई इसी देशमें पाया जाता है। उदाहरणके लिये, अमेरिकामें प्रत्येक पशुके चरागाहके लिये १२ एकड़ जमीन पायी जाती है, न्यू जीलैंडमें ८ एकड़, जापानमें ७ एकड़ और इंग्लैंडमें प्रत्येक पशुके लिये ३॥ एकड़। परन्तु भारतवर्षमें मुश्किलसे प्रत्येक पशुके लिये एक एकड़ जमीन प्राप्त होती है। इसका कारण कुछ तो आबादीकी वृद्धि और कुछ लोगोंकी धनके लिये अन्न उपजानेकी सनक है। अन्नकी बढ़ी हुई माँगकी पूर्ति तथा धन-प्राप्तिके लिये अन्न उपजानेकी सनककी पूर्तिके लिये चरागाहकी बहुत-सी जमीन जोत ली गयी है। यदि यह जमीन घास-चारे उपजानेके लिये ही लगा दी गयी होती तो आज घास-चारेकी कमी न हुई होती। परन्तु कृषि-सम्बन्धी जो अन्तिम अङ्क आज प्राप्त हैं, उनके अनुसार करीब ३४०२२५४ एकड़ जमीन जूट, ४२५६२ एकड़ अफीम, ९२३४९ एकड़ काफी, ७७४६८३ एकड़ चाय, १११२१८३ एकड़ तम्बाकू तथा २५१८३ एकड़ जमीन विभिन्न प्रकारके रुपये पैदा करनेवाली प्रायः अनावश्यक और हानिकारक फसलोंमें फँसी हुई है।

फिर, सिंचाईकी सुविधाकी प्रधानताके कारण, देशके अधिकांश भागोंमें इसका अभाव होनेसे सिंचाईके द्वारा होनेवाली फसलके लिये कोई मौका ही नहीं रह गया है। अकाल और अन्नका अभाव प्रायः प्रतिवर्ष बना रहता है। मालके यातायातके लिये एक तो सुविधाएँ सर्वत्र प्राप्त नहीं, और जहाँ प्राप्त हैं, वहाँ खर्च बहुत है। चराईके लिये सुरक्षित जंगल नहीं मिलते। तथापि सरकार या जनताके द्वारा चारेके साधनोंको बढ़ानेके लिये कोई ठीक प्रयत्न नहीं किया जाता, जिसका फल यह है कि पशुओंका शारीरिक ह्रास हो गया है और उनका पालना और रक्षा करना बहुत खर्चीला और आर्थिक दृष्टिसे हानिकर हो गया है।

साँड़ोंकी कमी

देशमें साँड़ोंकी संख्यापर विचार करते समय, साँड़ोंकी कमी उतनी खटकती नहीं। परन्तु जब हम देखते हैं कि नस्लको सुधारनेके लिये संख्याकी अपेक्षा गुण अधिक आवश्यक है, तो ऐसे गुणवाले साँड़ोंकी कमी बहुत अखरती है। वस्तुतः, भटकनेवाले साँड़ोंके रखनेका रिवाज तथा खेतीके लिये बधिया न किये गये साँड़ोंको काममें लाना, इन दोनों कारणोंसे देशमें पशुओंके गुणमें भयानक ह्रास हुआ है। साँड़ छोड़नेकी प्राचीन प्रथा हमारे लिये वरदानके जगह अभिशाप बन गयी है, क्योंकि साँड़ छोड़ते समय उनका चुनाव आज न तो शास्त्रोंके विधानके अनुसार किया जाता है, न नस्ल-सुधार-सम्बन्धी वैज्ञानिक बातोंपर ही ध्यान दिया जाता है। जनता अथवा सरकारके द्वारा छोड़े गये चुने साँड़ोंकी संख्या बहुत ही कम है। इसलिये नस्ल-सम्बन्धी बन्दोबस्तमें ठीक उन्नति नहीं हुई है; क्योंकि गो-वधपर कोई रोक-थाम नहीं है इसलिये इसकी गारंटी नहीं हो सकती कि चुने हुए साँड़ोंके द्वारा जो सुधरी हुई नस्ल तैयार होती है उनसे अगली पीढ़ियोंको उन्नत करनेका मौका मिलेगा। अतएव आजकलके तरीकेसे सिर्फ चुने हुए साँड़ोंके द्वारा नस्ल ठीक करनेका कोई अवसर नहीं है। यह एक मानी हुई बात है कि पाँचवीं पीढ़ीमें जाकर नस्ल ठीक होती है। इसलिये जरूरत है कि आगे उन्नतिके लिये सब बछियोंकी रक्षा की जाय, और नस्ल-सुधारके लिये एक-आध चुने बछड़ोंको छोड़कर बाकी सब बछड़ोंको बधिया कर दिया जाय।

अच्छे साँड़ोंको तैयार करना

विभिन्न नस्लोंके चुने हुए साँड़ोंकी जितनी जरूरत है उनको शीघ्र प्राप्त करना असाध्य-सा जान पड़ता है। बड़ी रकमें खर्च करके जो विभिन्न पशुशालाएँ गवर्नमेंटके द्वारा चलायी जा रही हैं वे ठीक लक्षणोंके साँड़ोंको काफी संख्यामें

प्रदान करनेमें सफल नहीं हो रही हैं। पेशेवर लोग जो नस्ल सुधार करके ठीक लक्षणवाले साँड़ोंको प्रदान किया करते थे, गवर्नमेंटने उनकी पूरी उपेक्षा कर दी है, और गाँवोंकी आर्थिक अवस्थामें परिवर्तन हो जानेके कारण इस पेशेमें उनको और गाँववालोंको पोसाता भी नहीं; फिर भी, इनके अभावसे देशमें पशुओंके नस्ल-सुधारके कामको बड़ा धक्का पहुँचेगा।

गोशालाओं और पिंजरापोलोंने युगकी आवश्यकताओं-को अबतक समझा नहीं। और वे पुराने लकीरके फकीर बनकर काफी खर्च करते हुए संस्थाओंको किसी प्रकार चलानेमें ही लगे हुए हैं। यद्यपि बम्बईकी गोरक्षक-मण्डलीने यह सफलतापूर्वक दिखला दिया है कि आधुनिक युगमें युगकी आवश्यकताओंके अनुसार किस प्रकार एक गोशाला गोरक्षाके काममें सहायता पहुँचा सकती है। तथापि यदि इन संस्थाओंने शीघ्र ही प्रभावित होकर अपने काम करनेके ढंगको नहीं बदला, तो इस लाइनपर आनेमें उन्हें अभी वर्षों लग जायँगे।

गाँवोंमें साँड़ रखनेका जो ढंग है उसमें भी सुधार होना चाहिये। किसान अपने खेतोंको बर्बाद होते नहीं देख सकते, और न इन उपयोगी पशुओंके प्रति किसानोंका अमानुषिक बर्ताव ही सह्य हो सकता है। इससे भी काम नहीं चल सकता कि साँड़ोंको छोड़ दिया जाय और वे जो चारा स्वयं प्राप्त कर सकें अथवा गाँववालोंकी बची-खुची सानीपर गुजर करें, क्योंकि चरागाहें नाममात्रके लिये रह गयी हैं, और इस तरह सालभर काफी चरी पाना उनके लिये सम्भव नहीं। इसलिये उनको रखने और पालनेका एक नियमित और निश्चित ढंग होना बहुत जरूरी है।

दुग्धालयके पशुके रूपमें भैंस

भारतवर्षमें गोपालनके मार्गमें सबसे अधिक खतरनाक बात है दुग्धालयोंमें गायके स्थानमें भैंसको रखना। प्राप्त आँकड़ोंके अनुसार ४५५००००० गायोंके मुकाबलेमें भैंसोंकी संख्या २०३००००० है। जहाँतक दूध देनेका सवाल है, ५० फी सदी गायोंका पालना आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक नहीं होता। इसलिये ५० फी सदीसे अधिक दूध भैंसोंके द्वारा ही प्राप्त होता है। भारतमें दूधकी बिक्रीपर जो रिपोर्ट निकली है उससे पता चलता है कि गायोंसे जहाँ कुल २८९१ लाख मन दूधकी आमदनी है, वहाँ भैंसोंसे ३१२७ लाख मन, और बकरियोंसे १८० लाख मन दूधकी प्राप्ति होती है। यदि इनमें ८३९ लाख मन दूध, जो बछड़े पी जाते हैं, जोड़ दिया जाय तो गायोंसे उत्पन्न होनेवाला कुल दूध ३७३० लाख मन हो जाता है। इससे पता चलता है कि दूध देनेवाली गायें धीरे-धीरे कम होती जा रही हैं। यद्यपि बदलेमें भैंसका दूध लेनेसे दूधकी रसदमें कमी नहीं होती, फिर भी गाँवकी अर्थनीतिसे गायोंको हटाया नहीं जा सकता, क्योंकि खेतीके कामके लिये बैलके स्थानमें भैंसा नहीं रक्खा जा सकता। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, घास-चारेके साधनोंकी ओर देखनेसे जान पड़ता है कि देश वर्तमान पशुओंके पालनमें भी असमर्थ हो रहा है। इसलिये विभिन्न प्रकारके पशुओंको विभिन्न प्रयोजनोंके लिये रखनेसे पोसाता नहीं। अतएव एकमात्र उपाय यही रह गया है कि गायके दूधकी पैदावारको बढ़ाया जाय और सीधे-सीधे भैंसके दूधके इस्तेमालको कम किया जाय। भैंसके दूधके रोजगारको प्रोत्साहन देनेमें शहरके लोग ही अधिक जवाबदेह हैं, साथ ही वे मांस, चर्बी और चमड़ा आदिके व्यापारके लिये अच्छी नस्लकी सूखी भैंसोंके कटवानेके लिये भी जवाबदेह हैं। इस अत्याचारपूर्ण प्रथासे गायों और भैंसों दोनोंका नाश हो रहा है।

निर्बल (Scrub) पशु

पशु-विज्ञानके विशेषज्ञों या कुछ सभ्य समाजके लोगोंमें यह कहनेकी प्रथा हो गयी है कि हिंदुस्थानमें अच्छे पशुओंके घास-चारेमें निर्बल पशु बरबस हिस्सा बँटा रहे हैं, और फलस्वरूप दोनों भूखों मर रहे हैं। इससे वास्तविक ग्रामीण आर्थिक स्थितिके विषयमें विशेषज्ञोंकी अज्ञानता ही प्रकट होती है। वे भूल-से जाते हैं कि गाँवोंमें खादका अधिकांश पशुओंके द्वारा प्राप्त होता है। जब हम खादके दामको देखते हैं और खादके द्वारा हुई पैदावारके मूल्यको, तो भारतमें जाहिरा न पोसानेवाले पशुओंके पालनेके खर्चसे इसमें परता अधिक ही पड़ता है। वस्तुतः भारतमें पशु पोसाता नहीं, यह बात गलत है। विशेषज्ञ जिसको न पोसाने-वाला पशु कहता है, किसानके लिये वह ठीक पोसानेवाला है। यदि स्थानीय परिस्थितिको सामने रखकर पशुओंके विषयमें निर्णय किया जाय तो ऐसी दलील नहीं ठहर सकती। यह सच है कि शहरमें थोड़ी-सी बेनस्ल गायोंके लिये कहा जा सकता है कि वे पोसातीं नहीं; परन्तु गाँवके लिये जहाँ अच्छे पशु नहीं मिलते और जहाँ जनताकी गरीबी तथा जलवायुकी

प्रतिकूलताके कारण स्वीकृत नस्लोंकी गायें नहीं पाली जा सकतीं, तो ये निर्बल कही जानेवाली गायें ही, खिलानेमें विशेष खर्च न कराकर, गरीब किसानको वर्तमान आवश्यकताओंकी पूर्ति करती हैं। इसलिये जबतक अच्छी नस्लकी सीधे तौरपर पूर्ति नहीं होती और उनके पालनेके लिये घास-चारेका कोई साधन नहीं निकल आता, तबतक निर्बल गायोंका पालना अनिवार्य है। आवश्यकता है तो यह कि इस प्रकारके बेनस्ल पशुओंके वधपर प्रतिबन्ध लगाकर इनकी सामूहिक उन्नति की जाय। विशेषज्ञोंको याद रखना चाहिये कि जिस प्रकार मनुष्य बुढ़ापेमें आर्थिक दृष्टिसे समाजके लिये हानिप्रद हो जाता है, उसी प्रकार जाँचनेकी कसौटीके अनुसार हर-एक पशु एक-न-एक समय न पोसानेवाला बन जाता है। परन्तु उन सबको जीनेका अधिकार है, और जिन्होंने उनकी मेहनत और दूधके बने पदार्थोंका आस्वादन किया है उनका कर्त्तव्य हो जाता है कि वे उन पशुओंका पालन करें। इसलिये ये निर्बल कहे जानेवाले किसी भी प्रकारसे पशुओंके ह्रासके लिये जवाबदेह नहीं हैं, उन घुमक्कड़ साँड़ोंको छोड़कर जिन्हें बधिया करके खेतीके काममें लगाया जा सकता है। ये साँड़ गो-प्रेमी भारतीय राष्ट्र और सरकारकी उस अक्षम्य उदासीनताके शोचनीय नमूने हैं, जो उन्होंने अपने इन आवश्यकीय उत्पादक धन तथा इनके गरीब पालनेवालोंके प्रति, जो अज्ञान और हद दर्जेकी गरीबीमें लड़खड़ा रहे हैं, प्रदर्शित की है और यह उदासीनता जितनी ही जल्दी दूर हो जाय उतना ही अच्छा है।

महामारी और दूसरे रोग

पशुओंके ह्रास और सर्वनाशके लिये जो दूसरे कारण हैं, उनमें महामारी और स्थानीय रोग तथा पशुचिकित्सा-सम्बन्धी सहायताकी कमीका भी उल्लेख किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि बहुतेरे अच्छे पशु प्रतिवर्ष ऐसी महामारी तथा स्थानीय रोगोंके शिकार हो जाते हैं, जिनका निवारण किया जा सकता था। इससे पशुओंकी उन्नति और रक्षाके लिये किये जानेवाले प्रयत्नोंको बड़ा धक्का लगता है, तथा पशुओंकी चिकित्सा और महामारी तथा दूसरे रोगोंसे उनकी रक्षाके लिये शीघ्र और ठीक-ठीक प्रबन्धकी माँग उपस्थित हो जाती है।

भारतमें गायोंके ह्रासके जो प्रधान कारण हैं उनका दिग्दर्शन करते समय निम्नलिखित बातें उनके स्वास्थ्य-विकासमें बाधक जान पड़ती हैं—

१. जनता और सरकारकी उदासीनता।

२. गोमांस, चर्बी, चमड़े, हड्डियाँ, सूखा खून आदिके लिये बिना विचारे पशुओंका वध।

३. आहारसम्बन्धी आदतों और दूधके इस्तेमालमें परिवर्तन।

४. चरागाहकी भूमिका कम होना और जंगलोंपर प्रतिबन्ध।

५. पैसा पैदा करनेवाली फसलकी ओर विशेष झुकाव।

६. अकाल और अन्नाभावके दुष्परिणाम।

७. सिंचाईकी सुविधाकी कमी।

८. पशुओंकी सर्वश्रेष्ठ नस्लोंका निर्यात।

९. दुग्धालयोंमें भैंसोंके पालनेका श्रीगणेश।

१०. चमड़ेका व्यापार।

११. काफी चुने हुए साँड़ोंकी कमी और नस्ल-सुधारके लिये अच्छे तौर-तरीकेका न होना।

१२. बिना नस्लके न पोसानेवाले पशुओंकी संख्यामें वृद्धि।

१३. महामारी और स्थानीय रोग।

१४. दातव्य संस्थाओंकी और गो-प्रेमी जनताकी उदासीनता।

१५. देहातकी जनतामें अज्ञान और गरीबी।

१६. पेशेवर नस्ल-सुधारनेवालोंका धीरे-धीरे अभाव होते जाना।

१७. यातायातमें कठिनाई।

१८. पशु-सेवामें लगनेवाले सच्चे कार्यकर्त्ताओंकी कमी।

(३)

पशुओंकी उन्नतिके उपाय

जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, बहुत-सी बातें हैं जो पशुओंकी वर्तमान ह्रासावस्थाके कारण हैं। इनका सम्बन्ध परस्पर ऐसा जुड़ा हुआ है कि किसी एकके सुधारसे काम नहीं चल सकता। थोड़े ही दिनोंमें उल्लेखनीय उन्नति प्राप्त करनेके उद्देश्यसे यह आवश्यक है कि (१) योजना और नीतिमें समानता हो, (२) सारे प्रयत्नोंका एक ही केन्द्र हो, (३) राज्यके साथ-साथ सब कार्यकारिणी संस्थाओंमें सहयोग हो, (४) सब प्रकारके साधनोंके कार्यान्वित करनेमें एकता हो, (५) उन साधनोंमें

बराबर लगे रहकर दृढ़ प्रयत्न किया जाय और (६) आर्थिक व्यवस्था ठीक हो । यदि ये सब बातें हों तो देशमें पशुओंकी उन्नति और रक्षाके लिये निम्नलिखित उपाय लाभदायक सिद्ध होंगे ।

जनता क्या करे ?

सबसे पहले गायके प्रति सद्भावना जाग्रत् होनी चाहिये और गायको कामधेनु, समस्त देशके शारीरिक और आर्थिक कल्याणका प्रधान साधन स्वीकार करना चाहिये । आजकल जो लोगोंमें उदासीनताका भाव फैला हुआ है, उसको दूर करना होगा और उसकी जगह गायके प्रति क्रियात्मक सहानुभूति तथा गम्भीर जिज्ञासाकी भावना जाग्रत् करनी पड़ेगी, और गायको सिर्फ धार्मिक सिद्धान्तके रूपमें देखनेके साथ-साथ यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आर्थिक दृष्टिसे वह समाजका एक अनिवार्य अङ्ग है । सब जाति और सम्प्रदायके आबाल-वृद्धको इस प्रश्नके हल करनेमें एक साथ जुट जाना होगा । शहरी और देहाती, दोनों क्षेत्रोंमें जनमतके तैयार करनेकी चेष्टा करनी होगी और लोगोंमें पशुओंकी अद्वितीय आवश्यकताका भाव जाग्रत् करना होगा, उन्हें एक महान् राष्ट्रीय निधि समझना होगा । विभिन्न योजनाओंको कार्यान्वित करनेके लिये गाँव, जिला, प्रान्त और केन्द्रमें संस्थाएँ स्थापित करनी होंगी, और जो संस्थाएँ इस समय काम कर रही हैं इनको उनमें ही मिल जाना होगा । केन्द्रीय संस्था सब उपायोंको कार्यान्वित करनेके लिये धन-सञ्चय करेगी, स्कीमोंके चलानेमें आर्थिक सहायता करेगी, तथा अकाल और महँगी पड़नेपर प्रबन्ध करेगी । सब प्रकारका चन्दा केन्द्रीय कोषमें जमा होगा, और वहाँसे प्रान्तों एवं जिलोंको उनकी आवश्यकताके अनुसार हिस्सा दिया जायगा । सब जिलों और प्रान्तोंमें लग्गा और धर्मादाका पुनरुद्धार करना होगा । सभा-सम्मेलन, पशु-प्रदर्शनी, पशु-दिवस मनाना, तथा ऐसे ही दूसरे, जनतामें जागृति पैदा करनेवाले प्रोग्रामोंका नियमपूर्वक संगठन करना होगा । भारतमें सभी प्राप्त होनेवाले पशुओंकी नस्लकी एक आदर्श पशुशाला चलानी पड़ेगी, जो अनुसन्धान करनेवाली संस्थाके रूपमें होगी, जहाँ नस्ल बनाने, पशुओंके खिलाने, चारा उपजाने, पशुचिकित्सा और दुग्धालय-सम्बन्धी प्रयोग चलाये जायँगे और उससे जो जानकारी प्राप्त होगी उसे विभिन्न प्रान्तोंमें भेजा जायगा । कार्यकर्त्ताओंके लिये पशु-पालन, दुग्धालय तथा पशुचिकित्सासम्बन्धी अल्पकालीन शिक्षण-केन्द्र चलाने पड़ेंगे, जिन्हें फिर सिखाने और रचनात्मक काम करनेके उद्देश्यसे देहाती क्षेत्रोंमें भेजा जायगा । ग्रामीण स्कूलोंमें गोपालनकी शिक्षा कोर्सके रूपमें देनी होगी ।

लोगोंके चित्तको पूर्णरूपसे गोरक्षाके रंगसे रँग देना होगा, और उनमें नीचे लिखी बातोंका प्रचार करना होगा—(१) अपनी गृहस्थीके कामके लिये गाय पालना, (२) सीधी खपतके लिये सिर्फ गायके दूधका इस्तेमाल करना, (३) गोमांस या दूसरे मांसोंका सर्वथा त्याग, (४) वध किये गये पशुओंके चमड़ोंको कभी काममें न लाना, (५) गो-ग्रासके रूपमें कुछ-न-कुछ देते रहना, (६) अपने-अपने इलाकेमें राष्ट्रीय महत्त्वका कार्य समझकर गोरक्षासम्बन्धी कार्यवाहियोंमें हिस्सा लेना ।

गोशालाएँ और पिंजरापोल क्या करें ?

आजकल जितनी संस्थाएँ चल रही हैं सब केन्द्रीय संस्थासे सम्बद्ध हो जायँ और निम्नलिखित कार्यवाहियोंका प्रचार करते हुए अपने काम करनेके ढंगमें नवीनता लावें—

१. वे अपने कार्यको इन भागोंमें बाँट लें ।
   (१) दुग्धालय और नस्ल-सुधार-विभाग ।
   (२) पशु-अस्पताल-विभाग ।
   (३) सार्वजनिक उपयोगिता-विभाग ।

२. वे अपने इलाकेमें व्यावसायिक ढंगसे शुद्ध दूध पहुँचावें ।

३. अपने इलाकेमें इस्तेमाल करनेके लिये वे चुना हुआ साँड़ पालें ।

४. अपने दुग्धालयके पशुओंमें कमी न करते हुए ऐसी अच्छी गायें वे तैयार करें, जिन्हें विशेष गाय पालनेवालोंके हाथ बेचा जाय ।

५. वे अपना पैसा खर्च करके जनताकी सूखी गायों और बछड़ोंका उद्धार करें ।

६. वे अपने इलाकेके तमाम बीमार और कमजोर पशुओंको अपने यहाँ भर्ती करें ।

७. उनको चाहिये कि चर्मशोधनके लिये एक अपना पृथक् विभाग खोलें या इस प्रकारके उद्योगको प्रोत्साहन दें, और अपनी संस्थाके मरे हुए पशुओंके चमड़ोंका इस विभागद्वारा उचित उपयोग करें ।

८. उन्हें अपना निजी घास-चारेका फार्म तथा चरागाह रखना चाहिये।

राज्य क्या करे ?

अपने इलाकेमें राज्य इन सार्वजनिक संस्थाओं यानी गोशालाओं और नन्दीशालाओंके साथ पूर्ण सहयोग प्रदान करे और इनको आर्थिक सहायता दे, चरागाह और पशु-चिकित्सासम्बन्धी सहायताके लिये सुविधा प्रदान करे, और उनके द्वारा पाले गये नस्ल सुधारनेवाले साँड़ोंको खरीदे और उनको गोशालाओं या साँड़-केन्द्रोंके द्वारा गाँवोंमें उपयोगके लिये भेजे। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित काम भी राज्यको अपने हाथमें लेना चाहिये और कानूनी ढंगसे प्रचार कराना चाहिये।

१. लायसेन्स प्राप्त ट्रेंड कर्मचारियोंके द्वारा नरमीसे बधिया करना अनिवार्य कर दिया जाय, साथ ही जो लोग धर्मके नामपर आपत्ति उठानेवाले हों, उनको भी पालतू साँड़ रखनेकी अनुमति प्रदान की जाय, परन्तु इस शर्तपर कि वे खुले भटकने नहीं दिये जायँगे और न उन्हें खेतीके काममें लगाया जायगा, केवल उस विभागके प्रधानकी अनुमति प्राप्त करके उनको पशुओंकी नस्ल बढ़ानेके काममें ही लगाया जायगा।

२. नस्ल बढ़ानेका काम सिर्फ चुनी हुई गायों और इसके लिये खास तौरपर पाले गये साँड़ोंके द्वारा ही हो।

३. बिना सरकारी आज्ञा प्राप्त किये रजिस्ट्री किये हुए पशुओं और उनके बछड़ोंके बेचनेकी मनाही हो।

४. प्रत्येक किसान हल पीछे एक गाय पाले।

५. अपनी हैसियतके अनुसार घास-चारेकी फसल बोवे और चारा पहुँचानेवाले पेड़ रोपे जायँ।

६. गाँवमें चरागाहके लिये भूमि निश्चित की जाय और सुरक्षित रक्खी जाय।

७. दूध और उससे बनी हुई चीज़ोंका दाम और उनके गुणका एक निश्चित हिसाब हो।

८. मिलावटीपनको रोका जाय और विशुद्ध चीजें बेचनेवालोंको सर्टिफिकेट दिया जाय।

९. मलाई उतारे हुए दूधका पाउडर तथा वनस्पति घी आदिके समान मिलावटी चीजोंका आयात बंद कर दिया जाय।

१०. व्यक्तिगतरूपसे अथवा सामूहिकरूपसे घास-चारेका गल्ला इकट्ठा रक्खा जाय।

११. गोशालाओं और पिंजरापोलोंको इस शर्तपर लायसेंस दिया जाय कि वे पशु-नस्ल-सुधार तथा दुग्धालयके विभाग रक्खेंगे तथा उनके यहाँ पशु-चिकित्साका भी प्रबन्ध होगा। और ऐसी संस्थाओंको लाग वसूल करनेका अधिकार राज्य दे।

१२. महामारी फैलनेके दिनोंमें उस क्षेत्रमें पशुओंका घूमना बंद कर दिया जाय।

केन्द्रीय संस्था क्या करे ?

केन्द्रीय संस्था प्रान्तीय संस्थाओंको खोलकर उनको अपनेसे सम्बद्ध करेगी। प्रान्तीय संस्थाएँ जिला-संस्थाओंको खोलेंगी और उनके साथ गोशालाओंको भी सम्बद्ध करेंगी, तथा नीचे लिखे अनुसार नन्दीशाला अथवा साँड़ोंके केन्द्र चलावेंगी।

१. केन्द्रका प्रबन्धक गाँवके सब पशुओंको देखेगा और उनको रजिस्टरमें दर्ज करेगा। २. नस्ल बढ़ानेयोग्य गायोंको चुनेगा, रजिस्टरमें दर्ज करेगा और उनपर चिह्न दागेगा। ३. कमजोर, बूढ़ी, बीमार गायोंको इस कामसे अलग रक्खेगा। ४. इन रजिस्टर्ड गायोंके झुंडमें चुने हुए साँड़ रक्खे जायँगे, और बचे हुए साँड़ोंको बधिया कर दिया जायगा। ५. इन साँड़ोंके कामका ठीक-ठीक हिसाब रक्खा जायगा। ६. शामके वक्त साँड़ नन्दीशालामें बाँधे जायँगे और उनको ठीक तौरपर चारा दिया जायगा। ७. घास-चारेकी उपजके आँकड़े इकट्ठे किये जायँगे। ८. किसानको यह बतलाया जायगा कि एक वर्षका चारा बराबर सुरक्षित रक्खे। ९. चरागाहकी जमीन यदि मिलती हो, तो उसके इस्तेमालकी व्यवस्था रक्खी जाय। १०. नस्ल बढ़ानेके कार्यके परिणामका अध्ययन तथा तुलना की जाय। ११. गाँवके सभी पशुओंकी महामारीसे रक्षा की जाय। १२. पशुचिकित्सा-सम्बन्धी सहायता मुफ्त दी जाय। १३. गायोंके दूधकी पैदावारको पक्षमें एक बार दर्ज किया जाय। १४. गौओंको ठीक तौरपर खिलाने तथा नस्ल बढ़ानेके लिये प्रचार-कार्य किया जाय। १५. दूध, दूधकी बनी चीजें तथा अतिरिक्त पशुओंके क्रय-विक्रयके लिये अच्छी सुविधा होनी चाहिये। १६. रजिस्ट्री की हुई गायोंका स्टाक, उनकी बछिया तथा सबसे

अच्छे बछड़े जो नस्ल बढ़ानेके लिये उपयोगी हों, बेचे न जाने चाहिये। १७. प्रत्येक तीसरे वर्ष साँड़ोंको बदल देना चाहिये। १८. नस्ल बढ़ानेमें तथा बछड़ोंके पालनेमें होड़ पैदा करनेके लिये प्रतिवर्ष समयानुसार बछड़ोंकी प्रदर्शनी की जानी चाहिये। १९. खादकी रक्षाका ठीक प्रबन्ध किया जाय। २०. लोगोंके बैठकखानेमें स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रोत्साहन दिया जाय।

जहाँ राज्य गोशालाओंको सहायता-प्राप्त संस्थाके रूपमें स्वीकार करता है, वहाँ गोशालाओंके द्वारा पाले गये साँड़ोंको राज्य खरीदे और नन्दीशालाओंको प्रदान करे। परन्तु जहाँ ऐसा प्रबन्ध सम्भव नहीं है, वहाँ केन्द्रीय संस्था अपनी आर्थिक स्थितिके अनुसार प्रान्तोंको साँड़ भेजनेका प्रबन्ध करे। प्रान्तीय संस्थाएँ भी अपने यहाँ चंदा इकट्ठा करके गाँवोंमें साँड़ भेजनेके कार्यमें सहायता प्रदान करें। पहली बार अपने स्टाकमेंसे सबसे अच्छे साँड़ भी नन्दीशालाओंके लिये चुने जायँ, और जैसे ही उनसे अच्छे साँड़ मिलें उनकी जगहपर भेज दिये जायँ। परन्तु कुछ ग्रामीण इलाकोंमें शीघ्र ही नन्दीशाला या साँड़ोंके केन्द्र खोल दिये जायँ, जिससे कि दूसरे प्रोग्राम भी चलाये जा सकें। जहाँ गवर्नमेंट, स्थानीय संस्थाओं या लोकल-बोर्डके द्वारा रक्खे गये किस्तोंवाले साँड़ या चुने हुए साँड़ काम कर रहे हों, वहाँ उनका सङ्गठन नन्दीशालामें होना चाहिये।

प्रान्तीय संस्थाएँ अपने प्रान्तोंमें शहरी क्षेत्रोंकी गोशालाओं और पशुशालाओंके विकासमें सहायता प्रदान करें और सूखे पशुओंके उद्धारका कार्य भी अपने हाथमें लें।

केन्द्रीय संस्था प्रत्येक प्रान्तमें पशुरक्षाके पूरे प्रश्नको तथा चरागाह आदिके लिये आवश्यक सुविधाओंके प्रश्नको अपने हाथमें ले। वे उन पेशेवर नस्ल बढ़ानेवालोंका भी, जहाँ वे मिलें, संगठन करें, जहाँ चरागाहकी सुविधा हो वहाँ उनका उपनिवेश बसानेके और उनको आजकलके उन्नत नस्ल-सुधारके सम्बन्धमें शिक्षा दें। उनको प्रान्तीय संस्थाओंके सहयोगसे शहरी क्षेत्रोंके सूखे पशुओंके उद्धारके प्रश्नको भी अपने हाथमें लेना होगा।

यह तो कार्यके संगठनके लिये निर्देशमात्र किया गया। विस्तारकी बातें तै कर ली जा सकती हैं। परन्तु प्रधान विचारणीय बिषय हैं—(१) प्रान्तीय और जिला संस्थाओंसे सम्बद्ध एक केन्द्रीय संस्था आवश्यक है। (२) इस कार्यको व्यापक और संगठित ढंगसे चलानेके लिये एक केन्द्रीय कोषका होना भी आवश्यक है। (३) केन्द्रीय संस्थासे सम्बद्ध एक आदर्श केन्द्रीय पशु-शाला अनुसन्धान और शिक्षण-संस्थाके रूपमें चलायी जानी चाहिये। (४) रचनात्मक कार्यके लिये कुछ चुने हुए ग्रामीण इलाकोंमें नन्दीशालाएँ चलायी जायँ। (५) गोशालाएँ, दुग्धालयके तथा साँड़ों, अच्छी गायों और बैलोंके पैदा करनेके केन्द्र बनायी जायँ और सूखे पशुओंके उद्धारका काम भी उनके हाथमें हो।

इसके अतिरिक्त यदि निम्नलिखित व्यापक उपायोंको भी राज्य अपने हाथमें ले तो ये उपयोगी सिद्ध होंगे—

१. समस्त गायों, चार वर्षसे कम उम्रके बछड़ों तथा १५ वर्षसे कम उम्रके उपयोगी बैलोंका वध गैरकानूनी कर दिया जाय। २. सरकारी परती पड़ी हुई जमीन और जंगलोंमें तादादकी पाबंदी रखते हुए, खूराककी बुनियादपर पशुओंको मुफ्त चरने दिया जाय। ३. जहाँ चरागाहके लिये काफी जमीन न हो, वहाँ लोगोंको अपने पशुओंके चरनेके लिये उनकी जमीनका एक हिस्सा सुरक्षित कराया जाय। ४. विभिन्न गाँवोंकी सार्वजनिक चरागाहकी जमीन, जो पट्टेपर उठ गयी है या किसानोंको बेच दी गयी है, उसे प्राप्त किया जाय और गाँवके पशुओंके चरनेके लिये छोड़ दिया जाय। ५. राज्य सिंचाईकी सुविधा प्रदान करे। ६. व्यवसायके लिये बोयी जानेवाली फसलपर राज्यका नियन्त्रण हो। ७. देहाती क्षेत्रोंमें अधिक पशुचिकित्सा-सम्बन्धी सहायता आसानीसे प्राप्त हो सके, इसके लिये प्रबन्ध किया जाय। ८. केन्द्र-प्रबन्धकोंके लिये थोड़े समयका पढ़ाईका कोर्स रक्खा जाय, और गाँवोंमें जो छोटे-छोटे पशु-चिकित्साके प्रारम्भिक उपचारके अस्पताल खोले जायँ वे उनकी देख-रेखमें चलें।

इस लेखमें पाठकोंके दिलपर गायके आर्थिक महत्त्वको बैठानेके लिये बहुत-कुछ कहा गया है, उसके ह्रासके कारणोंको भी बतलाया गया है, और लाभदायक उपाय भी सुझाये गये हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि 'म्याऊँका मुँह कौन पकड़े और प्रोग्रामको कार्यान्वित कौन करे?' आजकल १५०० गोशालाएँ और पिंजरापोल हैं, और लगभग २०० जीवदयाप्रसारिणी संस्थाएँ पशुओंके हितकी दृष्टिसे काम कर रही हैं। परन्तु गोशालाएँ और पिंजरापोल

लकीरका फकीर बने रहना चाहते हैं, और समयकी आवश्यकताके अनुसार अपने कार्यक्रममें सुधारकी ओर ध्यान नहीं देते। अखिल भारतीय संस्थाके रूपमें अपनेको बतलाती हुई एक या दो प्रचारक गोरक्षिणी सभाएँ भी काम कर रही हैं। परन्तु विभिन्न प्रान्तोंमें इनका जो प्रभाव है, वह सन्देहजनक ही है। 'गोसेवा-सङ्घ' नामकी एक राष्ट्रीय संस्था भी है, जिसका अधिकार-क्षेत्र अखिल भारतीय है। परन्तु इसकी कार्यवाही केवल प्रयोगशालाके रूपमें वर्धामें और शायद एक साबरमती-आश्रममें है। स्वर्गीय श्रीयुत जमनालालजी बजाजने पालतू साँड़ोंके लिये काफी रकम दानमें दी है। परन्तु इनमेंसे कोई भी संस्था अभी अखिल भारतीय रूपमें काम करती हुई नहीं दीखती। जब प्रान्तों या जिलोंमें अकाल या प्राकृतिक विपत्तियाँ अधिकार जमाती हैं, तो उन्हें अकेले भाग्यके भरोसे लड़ना पड़ता है, और कभी-कभी वे अपनेको असहाय पाते हैं। ऐसे समयोंमें बम्बईकी जीवदया-प्रसारिणी सभाने सदा उनको सहायता प्रदान की है। परन्तु उसने भी अखिल भारतीय रूपमें इस प्रश्नके समाधानके लिये कोई रचनात्मक व्यापक कार्य हाथमें नहीं लिया। इस प्रकार इस ढंगपर होनेवाले कार्योंका केन्द्रीकरण या सहकार-जैसी कोई संस्था नहीं, और न कोई केन्द्रीय शक्तिशाली कोष ही है। जब १९३९ के अकालमें महात्मा गांधीने बम्बईकी जीवदया-प्रसारिणी सभाको हिसारकी गायोंको सहायता पहुँचानेके लिये लिखा तो सभाके लिये तमाम विपद्ग्रस्त पशुओंको, जो अकालके प्रारम्भिक दिनोंमें कम खूराक पाने तथा भुखमरीके कारण लड़खड़ा रहे थे, तत्काल सहायता पहुँचाना कठिन हो गया, क्योंकि काम शुरू करनेके लिये उनके पास कोष ही नहीं था। परन्तु यदि केन्द्रीय कोष होता, तो सहायता पहुँचानेकी योजना तुरंत तैयार कर ली जाती और समयसे पहले ही कहीं और अधिक पशु बचा लिये गये होते। इसलिये यदि विस्तृत रूपसे और निश्चित उन्नतिके लिये कोई योजना तैयार करनी है, तो इस कार्यमें दिलचस्पी रखनेवाले सभी संघों और संस्थाओंका सहकार और केन्द्रीकरण एक अखिल भारतीय सम्मेलनके रूपमें करना पड़ेगा और एक केन्द्रीय प्रतिनिधि समिति भी नियुक्त करनी पड़ेगी।

दूसरा महत्त्वपूण विषय है अर्थसम्बन्धी। दुर्भाग्यवश यद्यपि गायके प्रति लोगोंमें बड़ा ही सद्भाव और पूज्यभाव है, तथापि इसके लिये जिस त्यागकी आवश्यकता है, उस आर्थिक और क्रियात्मक सेवाकी ओर लोग ध्यान नहीं दे रहे हैं। पूँजीपति लोग इसे केवल भावकी दृष्टिसे देखते हैं, और अपने दानकी तालिकामें इसको अन्तिम स्थान प्रदान करते हैं। जिस प्रकार युद्धोत्तर-निर्माणके कार्यमें राज्य और पूँजीपति सहयोगसे कार्य कर रहे हैं, उसी प्रकार हमारे पूँजीपति पशुधनके विकासके लिये अथवा तत्सम्बन्धी आर्थिक प्रयत्नके लिये बड़ी रकम लगानेके लिये तैयार नहीं हैं। अरबों और खरबों रुपये अस्पतालों और शिक्षा-संस्थाओंके लिये प्राप्य हैं, परन्तु दूध-जैसे पौष्टिक पदार्थकी व्यवस्थाके लिये जो शारीरिक और मानसिक कल्याणके लिये इतना आवश्यक है, कुछ हजार रुपये ही निकलते हैं।

अन्तमें, यह समझ लेना चाहिये कि गाय भारतके लिये अनिवार्य प्राणी है। यद्यपि आज गायकी हालत बहुत ही दयनीय हो चुकी है तथापि आशा है कि युक्तिपूर्वक पुरुषार्थ किया जाय तो हालत सुधर सकती है। इस समय यदि इस कार्यको नहीं उठाया गया तो आगे चलकर सुधार और रक्षाकी सम्भावना कम हो जायगी और समूचा देश अधिक आर्थिक पराधीनतामें जकड़ जायगा। अतएव देश-प्रेमी महानुभावोंसे प्रार्थना है कि जो गोवंशकी रक्षा चाहते हों वे आजहीसे इस कार्यमें तन, मन, धनसे सहयोग देकर कर्तव्यपरायण बन जायँ। नहीं तो गायके बचनेकी आशा कम ही है। हमारी भगवान् श्रीकृष्णसे विनीत प्रार्थना है कि वे समस्त गोभक्तोंको प्रेरणा करें, जिससे वे कर्तव्यपरायण बनकर श्रीगोपालकृष्णकी प्यारी गोमाताको जीवन प्रदान करें।

गौके लिये प्राण देनेवाले स्वर्गमें जाते हैं

गोकृते स्त्रीकृते चैव गुरुविप्रकृतेऽपि वा। हन्यन्ते ये तु राजेन्द्र शक्रलोकं व्रजन्ति ते॥

(महा० आ० १०० । ११८)

गोरक्षा, अबला स्त्रीकी रक्षा, गुरु और ब्राह्मणकी रक्षाके लिये जो प्राण दे देते हैं, राजेन्द्र युधिष्ठिर! वे मनुष्य इन्द्रलोक (स्वर्ग) में जाते हैं।

उपयोगिताके नामपर पाप

उपयोगिताकी दृष्टिसे आजकल यह कहा जाता है कि 'भारतमें पशुपालनपर इस समय प्रतिवर्ष दस अरब रुपये खर्च होते हैं। इसमें सात अरब रुपये व्यर्थ जाते हैं, क्योंकि ये निकम्मे और अनुपयोगी पशुओंपर लगते हैं।' यद्यपि निश्चयरूपसे यह नहीं कहा जा सकता कि यह संख्या बिल्कुल सही है, तथापि यह तो निर्विबाद है कि भारतमें पशुओंकी दशा बहुत शोचनीय है। इसके कई कारण हैं, परन्तु एक प्रधान कारण है—भारतकी ग़रीबी। हिंदुओंकी श्रद्धाने गायोंकी यह दुर्दशा की है, ऐसी बात नहीं है। पर दुर्दशा किसी भी कारणसे हुई हो, उसका सुधार तो अपेक्षित ही है। अवश्य ही सुधार होना चाहिये धर्म-सम्मत विवेकके साथ। उपयोगिताके नामपर कहीं मूलोच्छेद ही न हो जाय।

कहा जाता है कि बिना दूधकी निकम्मी गायोंको खिलाया-पिलाया जाय तो यह ध्यान रखना चाहिये कि मरनेके बाद उनकी एक-एक चीज़ हड्डी-पसली, मांस-मज्जा, खुर-सींग, चमड़ी-कैश आदि सभी काममें ले लिये जायँ। नहीं तो, उनका पालन करना ही मूर्खता है।

मैं यह नहीं कहता कि गायोंके शरीरकी चीजें, जो आर्थिक दृष्टिसे उपयोगी हों और काममें आ सकती हों, काममें नहीं ली जायँ।* गायके मृत शरीरकी चीज़ोंका उपयोग सर्वांशमें बुरा नहीं है—बुरी तो यह भौतिक दृष्टि है, जो मनुष्यको मनुष्यत्वसे गिरा देती है। इस निरी भौतिक दृष्टिसे तो निश्चय ही यह भी कहा जा सकेगा कि अपने परम आत्मीय-स्वजनोंको भी तभी खाने-पीनेको देना चाहिये, जब कि मरनेपर उनकी हड्डी-चमड़ीसे आर्थिक लाभ उठाया जा सके। कितनी बुरी भावना है! जिन माता-पिताने अपने हृदयका सारा स्नेह उँडेलकर हमको पाला, हर तरहका त्याग करके हमारी सेवा की। जो पति-पत्नी या मित्र-बन्धु परस्पर एक दूसरेको देखकर सुखी होते रहे और सुख पहुँचानेकी चेष्टा करते रहे। जो आदरणीय पुरुष जीवनभर हमें प्रकाश देते रहे। इन लोगोंमें कोई जब बीमार या अपंग हो गया—आर्थिक दृष्टिसे हमारा कोई उपकार न कर सका, तब हम यह सोचने लगे कि या तो इन्हें हटा देना चाहिये या ऐसी तरकीब निकालनी चाहिये जिसमें इनके शरीर और हाड़-चामसे हम अपने परिश्रम और धनको—जो इनकी सेवा-शुश्रूषामें हम लगाना चाहते हैं—वापस वसूल कर सकें!! यह कितनी कृतघ्नता है? भगवान् न करें, आज यदि पूज्यचरण महामना मालवीयजी या महात्मा गांधीजी-सरीखे महापुरुष बीमार हों और कुछ काम न कर सकें तो क्या आर्थिक दृष्टिको लेकर देशवासी यह कह देंगे कि इन्हें या तो हटा दो, या इनके शरीरसे बदलेमें पूरा-पूरा लाभ मिल जाय, ऐसी चेष्टा करो!! गायोंके सम्बन्धमें भी यही बात समझनी चाहिये। वे तो जीवनभर हमारा कल्याण ही करती हैं।

भारतके अर्थशास्त्री विद्वानोंने यह स्पष्ट कहा है कि जो पशु किसी प्रकारका लाभ नहीं पहुँचाते, उन्हें हटा देना चाहिये। इस विषयपर लिखते हुए श्रीमान् सतीशचन्द्र दास गुप्त महोदय अपने हालमें ही प्रकाशित 'The Cows in India' नामक अंग्रेजीके बड़े ही उपयोगी ग्रन्थमें लिखते हैं—

'गोवंशकी अधिक वृद्धिके सिद्धान्तको बतलानेवाले तथा गो-वधके समर्थक अनेकों हो चुके हैं। गो-वधके समर्थक सम्भवतः स्वयं गो-मांसभक्षी नहीं हैं, किन्तु गायकी स्थिति उन्हें प्रचलित धारणाके विरुद्ध प्रतीत होती है, जिससे वे गौओंके आधिक्यकी सरकारी घोषणाको स्वीकार कर लेते हैं और इसके प्रतिकाररूपमें गो-वधका अनुमोदन भी करते हैं। परन्तु यह बात उन्हें खूब अच्छी तरह विदित होनी चाहिये कि जो उपाय वे बता रहे हैं, वह कभी भी सफल नहीं हो सकता; क्योंकि अपने तर्कपूर्ण लेखों एवं दलीलोंसे वे भारतीय किसानको कभी भी गो-वधका समर्थक नहीं बना सकते।

पंजाब पशु-चिकित्सा-कालेज (Punjab Veterinary College) के कैप्टन अग्रवालने अपनी पुस्तक 'A Laboratory Manual of Milk Inspection'

---

* अवश्य ही, ऐसा करनेमें न तो धर्मसे विरोध होना चाहिये और न किसी जातिका काम ही छीना जाना चाहिये। जैसे, चमड़ेका काम चमारोंकी पैतृक आजीविका है। उसको यदि सभी जातियोंके लोग करने लगें तो कर्मसंकरताके साथ-ही-साथ उनकी पैतृक जीविका भी मारी जाती है। इसलिये इस कामको वही करें, और उसमें जहाँ जितना सुधार आवश्यक हो, उसे विशेष यत्न करके करानेकी कोशिश की जाय। इसी प्रकार अन्यान्य कामोंके लिये भी समझना चाहिये।

(1940) (दूधकी जाँचके विषयमें एक प्रयोग-शालोपयोगी प्रारम्भिक पुस्तक) में बिना ही प्रसंगके उस सभ्यताकी जो गो-वधके सन्देहास्पद आर्थिक लाभोंसे फायदा उठाना नहीं चाहती, निन्दा इस प्रकार की है ।

'पश्चिमीय देशोंके अधिक सभ्य मनुष्य इस आर्थिक स्थितिको पहचानते हैं तथा उससे लाभ उठाते हैं । इसके विपरीत भारतमें पशु-व्यवसायकी स्थिति बहुत विचित्र है । भारतकी जनताके अधिकांश लोग परम्परागत भावनाके कारण गायको अत्यधिक श्रद्धा एवं प्रेमकी दृष्टिसे देखते हैं, अतः निरर्थक पशुओंका निराकरण असम्भव हो गया है । परिणामस्वरूप आर्थिक दृष्टिसे कोई लाभ न पहुँचाकर उलटे जनताके भोजन आदिके साधनोंको हड़पनेवाले लाखों पशु जमा हो गये हैं । मोटे रूपसे भारतमें १,५०,००,००० ऐसे पशु हैं जो बिल्कुल निरर्थक हैं तथा किसी भी प्रकारका लाभ नहीं पहुँचाते । यदि मान लिया जाय कि एक पशु ५ वर्ष जीवित रहता है तथा एक वर्षमें १० रुपयेका भोजन खा जाता है, तो यह स्पष्ट विदित हो जायगा कि बिना किसी लाभके पाँच वर्षोंमें ७५,००, ००, ००० रुपये व्यर्थ ही नष्ट हो जाते हैं ।

यद्यपि ये आँकड़े कम-से-कम कूते गये हैं, परन्तु फिर भी भारतीय जनताकी निर्धनताको सिद्ध करनेके लिये पर्याप्त हैं । जो भोजन लाभकारी पशुओंके लिये आवश्यक है, उसको ये निरर्थक पशु खा डालते हैं । भारतवर्षमें गाय मनुष्योंका पोषण नहीं करती, मनुष्य गायका पोषण करते हैं । परन्तु होना चाहिये इससे बिल्कुल उलटा ।'

डॉ० राधाकमल मुकर्जीने भी भारतीय अर्थशास्त्रपर विचार प्रकट करते हुए इसी प्रकारकी टीका-टिप्पणी की है तथा यह सिद्धान्त व्यक्त किया है कि 'गायको बचानेके लिये निरर्थक गायोंका वध कर देना चाहिये ।'

आर्थिक लाभ ही मानव-जीवनका अन्तिम लक्ष्य नहीं है और न खूब ढिंढोरा पीटे जानेवाली पश्चिमीय सभ्यता ही । आर्थिक दृष्टिसे हमारे बूढ़े मा-बाप भारस्वरूप हैं । वे भोजन करते हैं और बदलेमें कोई लाभ नहीं देते । देहाती लोग निर्धन हैं तथा दिन-प्रतिदिन निर्धन होते जा रहे हैं । जो भोजन काम करने योग्य मनुष्योंको मिलना चाहिये, उसे बूढ़े तथा आर्थिक दृष्टिसे निरर्थक मनुष्य खा जाते हैं । उपर्युक्त प्रोफेसर महोदय एवं अन्य विद्वानोंद्वारा उपस्थित किये गये आर्थिक तर्कोंके आधारपर तो यही सिद्ध होता है कि आर्थिक हानि पहुँचानेवाले इन बूढ़े मा-बापोंको चुपचाप खतम कर देना चाहिये । वे हमें आर्थिक हानि पहुँचाते हैं, इस बातको तो निरर्थक गायोंके वधका समर्थक कोई भी अर्थशास्त्री अस्वीकार नहीं कर सकता !

यूरोप-निवासियोंने पशु-सुधारमें बहुत उन्नति की है । निःसन्देह गो-मांस-भक्षणने, वहाँ नस्ल-सुधारके लिये घटिया, बूढ़ी एवं आर्थिक हानि पहुँचानेवाली गायोंके दूरीकरणकी समस्याको बहुत सरल बना दिया है । भारतवर्षमें भी हमें आँख मूँदकर यही करनेको कहा जाता है । जब कभी भारतमें पशुओंकी दशा सुधारनेका प्रश्न उपस्थित होता है, तो हिंदुओंपर यह आक्षेप किया जाता है कि वे गो-वधका विरोध करते हैं । उनका धर्म इसके लिये दोषी ठहराया जाता है । किन्तु यह एक क्षणके लिये भी नहीं पूछा जाता कि हिंदू गायको इतनी श्रद्धा एवं भक्तिसे क्यों देखने लगे ।

गायको श्रद्धा-भक्तिसे देखना तथा उसे पवित्र मानना हिंदूधर्मका एक सिद्धान्त हो गया है । हिंदुओंका यह दृढ़ विश्वास है कि मनुष्य तथा पौधे आदि सभी जीव एक हैं, उन सबमें एक ही आत्म-तत्त्व विद्यमान है। उपयोग और सेवाकी दृष्टिसे गाय ही मनुष्यके सबसे अधिक समीप है । गायकी रक्षा एवं पूजा करके हिंदुओंने समस्त प्राणियोंको प्यार करनेकी अपनी भूखको शान्त किया है । गाय उनके लिये सम्पूर्ण पशुओंका प्रतीक है । इसी भावनाने हिंदुओंको गायके प्रति इतना उच्च भाव बनानेके लिये प्रेरित किया है । हिंदुओंकी इस भावनाका यूरोपनिवासियोंकी दृष्टिसे जहाँ कि इस प्रकारकी भावना व्यक्तिगत रूपसे पर्याप्तरूपमें प्रचलित होते हुए भी भारतकी तरह इतनी नहीं बढ़ पायी कि जिसमें वह समाज-निर्माणके लिये आधार-भित्तिका काम कर सके, मूल्य निर्धारण करना ठीक नहीं है ।

हिंदुओंकी यह भावना निन्दनीय नहीं है, वरं प्रोत्साहित करने योग्य है । हिंदुओंकी वर्तमान संततिका गायके प्रति अपने व्यवहारमें इस भावनाको स्थान न देना ही धिक्कारने योग्य है, घृणाकी दृष्टिसे देखने लायक है । गायोंकी सँभाल न रखना एवं उनको भूखों मारना बड़े दुर्भाग्यकी बात है । हिंदुओंको इसके लिये और भी लज्जित एवं दुखी होना चाहिये । उनको ऐसे साधन खोज निकालने चाहिये जिनसे गायको उपेक्षा एवं भूखों मरनेसे बचाया जा सके । किन्तु यह परामर्श तो समृद्धिके दिनोंका है, पूर्णावस्थाका

है । किसी भूखों मरते हुए मनुष्यको धार्मिक कर्तव्यकी शिक्षा देना निरर्थक है । आज हिंदू भूखों मर रहे हैं और इसलिये उनके साथ उनकी गाय भी । भारतके शुभाकाङ्क्षियोंको चाहिये कि वे इस दोहरी भुखमरीके अन्त करनेका मार्ग बतावें ।

जबतक कि विदेशी शासनने भारतीय जीवनकी प्रायः सभी सर्वोत्तम बातोंको उलट-पुलट नहीं कर दिया था, तबतक भारतीय जनता भूखों नहीं मरती थी, और तबतक न उनकी गायोंकी ही इतनी दुर्दशा थी, जितनी आज है ! इतना तो निश्चित है कि उनकी सँभाल बिल्कुल नहीं की जाती रही हो—यह बात नहीं थी, अन्यथा गौओंकी बढ़िया नस्लें, जो अबतक पायी जाती हैं, किसी भी अवस्थामें नहीं बन सकती थीं ।

अर्थशास्त्रियोंका कहना है कि निरर्थक बूढ़े एवं आवश्यकतासे अधिक पशुओंका वध करके भारतीय किसानको उनसे छुट्टी पा लेनी चाहिये; परन्तु इससे यह सङ्कट दूर न हो सकेगा । मान लें कि इस समय जो आवश्यकतासे अधिक पशु हैं, वे बिक्री, वध या रोगसे समाप्त हो जायँ तो शीघ्र ही फिर इतने ही पशु उत्पन्न हो जायँगे कि इस क्षतिकी पूर्ति हो जायगी तथा देश निरर्थक पशुओंसे भर जायगा । केवल आवश्यकतासे अधिक पशुओंके हटाने मात्रसे ही सङ्कट दूर नहीं होगा, इसके लिये मांस खाने तथा उसके हेतु नियमितरूपसे गो-वध करनेकी आदत बनानी पड़ेगी । अतएव इन अर्थशास्त्रविदोंकी तुष्टिके लिये तो हिंदुओंको गोमांसभक्षक बनना पड़ेगा !!!

किन्तु गो-मांसभक्षण जरा भी अच्छा उपाय नहीं है । (वरं यह तो सर्वथा पाप है) इससे अच्छे उपाय दूसरे हैं । गायको पूरा भोजन दिया जाय तो वह किसानकी अल्प आयके लिये कभी भी बोझ नहीं बनेगी । यदि और खादोंके साथ गोबर और गोमूत्रका भी उचित खाद-गुण समझा जाय तो निरर्थक, बूढ़े और जर्जर पशु भी खेतोंसे अधिक सम्पत्ति प्राप्त करनेके लिये उनकी उर्वराशक्ति बढ़ानेवाली खादके उत्पादकके रूपमें पूरे उपयोगी साबित होंगे। (इन उपायोंको काममें लाना चाहिये ।)

इससे यह सिद्ध है कि इन अर्थशास्त्रियोंकी सलाह ठीक नहीं है, और धर्म तथा कर्तव्यकी दृष्टिसे तो सर्वथा अमान्य है । इनकी सलाहको मानकर असमर्थ गायोंकी उपेक्षा करना तो अपने माता-पिता-जैसे पूज्य पुरुषोंकी उपेक्षा करने-जैसा पाप है और अपनी सर्वभूत-हित या सर्वभूतसेवाकी उदात्त भावनाकी नृशंस हत्या करना है । विशुद्ध और निष्काम सेवा-भावनाकी रक्षा करते हुए यदि असमर्थ समझी जानेवाली गायोंमें जो बीमार हों उनकी अच्छी चिकित्साकी व्यवस्था की जाय, जो पर्याप्त घास-चारा न मिलनेके कारण कमजोर हो गयी हों, उन्हें पर्याप्त अच्छी खूराक देकर उपयोगी बनाया जाय, अच्छी जातिके सुपुष्ट साँड़ोंकी व्यवस्था करके उनकी नस्ल सुधारी जाय और उन्हें अधिक दूध देनेवाली बनाया जाय, और उनके गोबर-गोमूत्रसे अधिक-से-अधिक खाद बनायी जाय तो मेरा अनुमान है कि सब-की-सब गायें अनुपयोगी नहीं रहेंगी और प्रायः अपना खर्च आप ही दे भी देंगी । परन्तु सावधान रहना चाहिये कहीं उपयोगिताकी रक्षामें कर्तव्यभ्रष्ट होकर हम अपनी उदार तथा पवित्र शास्त्रीय नीति-रीतिको नष्ट न कर दें ।

प्रतिदिन घास और गो-ग्रास देनेका फल

जो एक वर्षतक प्रतिदिन भोजनके पहले दूसरेकी गायको एक मुट्ठी घास खिलाता है, उसका वह व्रत समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाला होता है । उसे पुत्र, यश, धन और सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है, तथा उसके सम्पूर्ण अशुभ और दुःस्वप्न नष्ट हो जाते हैं । (महा० अनु० ६९ । १२-१३)

जो गो-सेवाका व्रत लेकर प्रतिदिन भोजनसे पहले गौओंको 'गो-ग्रास' अर्पण करता है तथा शान्त एवं निर्लोभ होकर सदा सत्यका पालन करता रहता है, वह प्रतिवर्ष एक हजार गो-दान करनेके पुण्यका भागी होता है । जो एक वक्त भोजन करके दूसरे वक्तके बचाये हुए भोजनसे गाय खरीदकर दान करता है, वह उस गौके जितने रोएँ होते हैं उतने गौओंके दानका अक्षय फल प्राप्त करता है । (महा० अनु० ७३ । ३०-३१)

भगवान् बुद्ध और गोमाता

मूल वैदिक-समाज मांसभक्षक नहीं था, उसके यज्ञ-कर्म मांसयुक्त नहीं होते थे अर्थात् प्राचीन वैदिक-समाजमें गौकी हिंसा नहीं होती थी। यह बात मन्त्रसंहितासे स्पष्टतया सिद्ध होती है। महाभारत (शान्तिपर्व अ० ३४० श्लो० ८२--९४) में कहा है कि सत्ययुगमें हिंसा नहीं होती थी। महाभारतका प्रमाण कालतः अधिक प्राचीन और परिस्थितितया अधिक निकटस्थ होनेसे यूरोपीय पण्डितोंकी बातोंकी अपेक्षा, प्रामाण्यदृष्टिसे, अधिक प्रबल अतः अधिक स्वीकार्य है। परन्तु परायी संस्कृतिका ऐनक लगाकर ही अपनी ओर देखनेवाले नवीन विद्वानोंकी दृष्टिमें बेचारे पुराने व्यासका महत्त्व ही क्या! फिर यह भी शङ्का उठायी जा सकती है कि व्यास ब्राह्मणत्वके अभिमानी थे, अतः उनके कथनमें पक्षपात हो सकता है। कोई यह भी कह सकते हैं कि शान्ति-अनुशासनादि पर्वोंका बहुत-सा अंश प्रक्षिप्त होनेसे महाभारतका प्रमाण विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। इसलिये थोड़ी देर हम व्यास और भारतको अलग ही रक्खें और भगवान् बुद्धने क्या कहा है देखें। 'ब्राह्मण-धम्मिय सुत्त' में भगवान् बुद्धदेव कहते हैं—

इसयो पुब्बका आसुं, सञ्ञतत्ता तपस्सिनो ॥ १ ॥
ब्रह्मचरियं च सीलं च, अज्जवं मद्दवं तपं।
सोरच अविहिंसं च, खन्तिं चापि अवण्णयुं ॥ ९ ॥
तण्डुलं सयनं वत्थं, सप्पिं तेलं च याचिय।
धम्मेन समोधानेत्वा, ततो यञ्ञमकप्पयुं।
उपट्ठितस्मिं यञ्ञस्मिं, नास्सु गावो हनिंसु ते ॥ १२॥
यथा माता पिता भाता, अञ्ञेवापि च ञातका।
गावो नो परमा मित्ता, यासु जायन्ति ओसधा ॥ १३॥
अन्नदा बलदा चेता, वण्णदा सुखदा तथा।
एतमत्थवसं ञत्वा नास्सु गावो हनिंसु ते ॥ १४॥
सुखुमाला महाकाया, वण्णवन्तो यसस्सिनो।
ब्राह्मणा सेहि धम्मेहि, किच्चा किच्चेसु उस्सुका ॥
याव लोके अवत्तिंसु, सुखमेधित्थयं पजा ॥ १५॥

पूर्वके ऋषि संयमी और तपस्वी थे। ब्रह्मचर्य, शील, सरलता, नम्रता, तप, मृदुता, करुणा और क्षमा— इन गुणोंकी वे प्रशंसा करते थे। चावल, शय्या, वस्त्र, घी, तेलकी याचना करके धर्मके अनुसार उनका विभाग निकालकर वे यज्ञ करते थे। यज्ञके उपस्थित होनेपर वे गौको मारते नहीं थे। माता, पिता, भाई और अन्य बान्धवोंके समान ही गौओंको वे अपना परम मित्र जानते थे, उनसे ओषधि निर्माण होती है, वे अन्न, बल, रूप और सुख देती हैं यह जानकर वे गौओंको मारते नहीं थे। वे सुकुमार, महाकाय, वर्णवान् और यशस्वी ब्राह्मण कर्त्तव्याकर्त्तव्यका विचार रखते हुए धर्मका ही आचरण करते थे। जबतक ऐसे ब्राह्मण संसारमें थे तबतक प्रजा सुखी थी।

अनन्तर ब्राह्मण-धर्मका ह्रास हुआ और निरपराध गौओंकी इस प्रकार हत्या होती देख—

ततो च देवा पितरो, इन्दो ससुररक्खसा।
अधम्मो इति पक्कंदुं, यं सत्थं निपतिं गवे ॥२७॥
तयो रोगा पुरे आसुं, इच्छा अनसनं जरा।
पसूनं च समारम्भा, अट्ठनावुति मागमुं ॥२८॥
एवमेसो अनुधम्मो, पोराणो विञ्ञुगरहितो ॥३०॥

देव, पितर, असुर, राक्षस आदि सभी चिल्ला उठे कि गौपर शस्त्र चला, यह बड़ा भारी अधर्म हुआ। पहले इच्छा, भूख और जरा—ये तीन ही रोग (मनुष्योंमें) थे। पशु-हिंसासे अट्ठानबे हो गये। इस प्रकार पूर्वके ज्ञानियोंने गोहत्याकी निन्दा की है। गोहत्या नीच कर्म है।

'ब्राह्मणधम्मिय सुत्त' के उपर्युक्त वचनोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि पुरातन ब्राह्मण-धर्मके सम्बन्धमें भगवान् बुद्धदेवका क्या मत था। 'नास्सु गावो हनिंसु ते' वे गौओंको नहीं मारते थे। पूर्वकालीन ब्राह्मणोंकी यह प्रशंसा दो-ढाई हजार वर्ष पहले जो भगवान् बुद्धदेवने की, उसे सच माना जाय या पूर्वग्रह-दूषित अर्वाचीन यूरोपीय पण्डितोंने उनपर जो यह दोष आरोपित किया है कि वे गो-मांस-भक्षक थे, उसे सच माना जाय, इस प्रश्नका उत्तर कोई भी दे सकता है।

विदेशोंमें आज जो सर्व-भक्षक बौद्धधर्मावलम्बी लोग देख पड़ते हैं उन्हें देखकर हमलोग यह समझ लेते हैं कि बौद्धधर्मावलम्बी लोग पहलेसे ही गो-मांस-भक्षक रहे होंगे।

परन्तु यह कल्पना सही नहीं है, यह भी उपर्युक्त वचनोंसे ही सिद्ध होता है। इतिहासप्रसिद्ध बौद्धसम्राट् अशोकके शिलालेखोंमें गाय-बैल आदि प्राणियोंकी हत्या न होने देनेकी आज्ञाएँ मिलती हैं। उत्तर ब्रह्मदेश (बर्मा) के अन्तर्गत विजयपुरमें सन् १३५० के लगभग सीहसूर नामक राजा राज्य करते थे। उनके प्रधान मन्त्री महाचतुरंगबलका बनाया हुआ 'लोकनीति' नामक ग्रन्थ है। इसमें कहा है—

गोणाहि सब्ब गिहीनं, पोसका भोगदायका।
तस्मा हि माता पितू व, मानये सक्करेय्य च॥१४॥
ये च खादन्ति गोमंसं, मातुमंसं व खादये॥१५॥
(लोकनीति। ७)

सब गृहस्थोंको भोग (योग्य पदार्थ) देनेवाले और पोसनेवाले गौ-बैल ही हैं। इसलिये माता-पिताके समान उन्हें पूज्य माने और उनका सत्कार करे। जो गोमांस खाते हैं वे अपनी माताका मांस खाते हैं।

तात्पर्य—आजकलके बौद्धोंका आचरण चाहे जैसा हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि भगवान् गौतमबुद्ध और उनके निष्ठावान् अनुयायी गो-हिंसा और गो-मांस-भक्षणके अत्यन्त विरोधी थे, यह उपर्युक्त वचनोंसे सिद्ध है। बौद्ध-कालमें यह देश गोधनसे कितना समृद्ध था यह दरसानेके लिये एक ही दृष्टान्त पर्याप्त होगा।

भगवान् बुद्धके एक शिष्य थे धनंजय सेठ। उन्होंने अपनी कन्याके विवाहोपलक्षमें इतनी गौएँ दहेजमें दीं कि उन गौओंके खड़े होनेके लिये लगभग डेढ़ सौ हाथ चौड़े और तीन कोस लंबे मैदानकी आवश्यकता हुई।

प्रख्यात चीनी यात्री हुएनसांगने, ईसाकी ८ वीं शताब्दीमें होनेवाले सम्राट् हर्षवर्द्धनके सम्बन्धमें लिखा है—

'उनके राज्यमें प्राणिहिंसा करनेवालेके लिये कठोर दण्ड था। उन्होंने अपने राज्यमें मांस-भक्षण ही बंद कर दिया था।' गो-हत्या और गो-मांस-भक्षणकी तो बात ही क्या!
(गो० ज्ञा० को० म० खं०)

बौद्धसाहित्यमें गायका स्थान

(लेखक—श्रीसुमन वात्स्यायन)

अभी कुछ दिन हुए मेरे एक दोस्तने बातचीतके सिलसिलेमें कहा, 'बौद्ध-धर्म यद्यपि भारतमें पैदा हुआ और यहीं फला-फूला और यहींसे जाकर वह संसारके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक फैला, फिर भी उसमें बहुत-सी बातें आर्य-सभ्यता और संस्कृतिके प्रतिकूल मालूम पड़ती हैं।' उनकी 'बहुत-सी बातोंमेंसे मुख्य बात थी गो-मांसभक्षणकी। इस छोटे-से निबन्धमें मैं यह दिखाना चाहता हूँ कि बौद्धसाहित्यमें—विशेषरूपसे बुद्धकी दृष्टिमें गायका क्या स्थान था?

भगवान् बुद्ध करुणाके अवतार थे। उनके हृदयमें संसारके समस्त प्राणियोंके लिये समान दया थी। वे किसी भी प्राणीके कष्टको देखकर चुप नहीं बैठ सकते थे। उनका स्नेह सीमाबद्ध नहीं था। फिर गाय-जैसे उपयोगी और मनुष्यमात्रको बिना किसी भेद-भावके, एक समान सुख देनेवाले प्राणीकी वे कैसे उपेक्षा कर सकते थे। भगवान् बुद्धकी इस सहृदयताको देखकर महाकवि जयदेवने गाया—

निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम्
सदयहृदय दर्शितपशुघातम्
केशव धृतबुद्धशरीर जय जगदीश हरे।

भगवान् बुद्धने यज्ञकी हिंसाकी बड़ी निन्दा की। वे ४५ वर्षतक एक स्थानसे दूसरे स्थानमें घूमते रहे और लोगोंको अन्यान्य बातोंके साथ-साथ गोहत्याके विरुद्ध भी उपदेश देते रहे। उनके समकालीन भगवान् महाबीर भी अहिंसाके प्रबल पक्षपाती थे। इन दोनों प्रचारकोंको अपने उद्देश्यकी सिद्धिमें पूण सफलता मिली; उन्होंने आजकी तरह गोरक्षाके लिये न कहीं साम्प्रदायिक दंगे करवाये और न गोरक्षाको धार्मिक रूप ही दिया। बल्कि उन्होंने जनताको गायकी और गोवंश-की उपयोगिता बतलाकर गोवध न करनेकी शिक्षा दी। कुछ लोगोंने उनका प्रबल विरोध किया, किन्तु उन्होंने धैर्यपूर्वक सब सहन करनेमें ही अपने उद्देश्यकी सफलता देखी।

आज प्रत्येक हिंदू गोसेवा एवं गोरक्षामें अपना गौरव समझता है, किन्तु भगवान् बुद्धकी गोरक्षाकी भावनासे लोग बहुत कम परिचित हैं। भगवान् बुद्धने एक जगह कहा है—

माता यथा नियं पुत्तं आयुसा एक पुत्तमनुरक्खे।
एवम्पि सब्बभूतेसु मानसं भावये अपरिमाणं॥

'माता जिस प्रकार अपने इकलौते बेटेके प्रति

स्नेह रखती है, उसी प्रकार सभी प्राणियोंमें अपरिमित प्रेम रखना चाहिये।' जीवदयाकी यही प्रवृत्ति धर्मराज अशोकके विचारोंमें पूर्णताको प्राप्त हुई। भगवान् बुद्ध गायकी उपयोगिताको सर्वोपरि स्थान देते थे। वे गायकी निर्दोषता-पर मुग्ध थे। इसीलिये उन्होंने कहा है—

न पादा न विसाणेन नास्सु हिस्सन्ति केनचि।
गावो एलक समाना सोरता कुम्भदूहना॥

'गायें न पैरसे, न सींगसे, न किसी अङ्गसे ही मारती हैं। भेड़के समान प्रिय और घड़ेभर दूध देने-वाली हैं।'

मनुष्यको अनेक वस्तुओंपर निर्भर रहना पड़ता है, किन्तु कुछ वस्तुओंकी उपयोगिता इतनी अधिक है कि उनके बिना हमारा जीवन-यापन कठिन हो जाता है। आजके वैज्ञानिक युगमें सम्भव है हम अपनी आवश्यकताकी पूर्ति भिन्न तरीकोंसे कर लें, पर वह तरीका सर्वव्यापी नहीं हो सकता। भारत सदासे कृषिप्रधान देश रहा है। खेतीके लिये यहाँ प्राचीन कालसे आजतक बैलका उपयोग होता है। गाय बचपनमें हमें अपने दूधसे और बड़े होनेपर उसका पुत्र बैल अन्न उपजाकर हमारा भरण-पोषण करता है। भगवान् बुद्ध-जैसे दयालु पुरुष गायकी इस उपयोगिताको कैसे भूल सकते थे? उन्होंने गायको माता-पिताके समान उपकारी बतलाया—

यथा माता पिता भाता अञ्ञे वापि च ञातका।
गावो नो परमा मित्ता यासु जायन्ति ओसधा॥

'जैसे माता, पिता, भाई और दूसरे कुटुम्ब-परिवारके लोग हैं, वैसे ही गायें भी हमारी परम मित्र (हितकारिणी) हैं, जिससे (अर्थात् जिनके दूधसे) दवा बनती है।'

ऊपरकी गाथासे स्पष्ट हो गया होगा कि गायके प्रति भगवान् बुद्धके हृदयमें कितनी करुणा थी। वे गायको सुखका मूलस्रोत समझते थे। इसीलिये तो उन्होंने कहा है—

अन्नदा बलदा चेता वण्णदा सुखदा तथा।
एतमत्थवसं ञत्वा नास्सु गावो हनिंसु ते॥

'गाय इतनी चीजोंको देनेवाली है—अन्न, बल, वर्ण (सौन्दर्य) तथा सुख। इन बातोंको जानकर ही (पहलेके) वे (लोग) गायको नहीं मारते थे।'

सरल और हृदयस्पर्शी भाषामें किसी वस्तुकी उपयोगिता बताकर दूसरोंकी नजरमें भी उस वस्तुके प्रति श्रद्धा और आदर पैदा करना बुद्धका ही काम था। बुद्ध किसीपर अपना विचार बलपूर्वक लादना पसंद नहीं करते थे; क्योंकि बलपूर्वक मनवानेका अर्थ है 'परस्पर द्वेष पैदा करना।' किन्तु बुद्ध तो कहते थे 'वैरसे कभी भी वैर शान्त नहीं हो सकता। मित्रतासे ही वैर मिट सकता है।'

गायके प्रति भगवान् बुद्धकी यह भावना देख उनके अनुयायियोंमें भी गायकी बड़ी कदर रही। बर्मामें विशेष प्रचलित पालीभाषाकी एक छोटी-सी पुस्तक है 'लोकनीति', इसमें लिखा है—

ये च खादन्ति गोमंसं, मातुमंसं व खादये।
मतेसु तेसु गिज्झानं ददे सोते व वाहये॥

'जो गायके मांसको खाते हैं, वे अपनी माताके मांसको खायें। गायके मर जानेपर गृद्धोंको दे दे या नदीमें बहा दे।'

आगे चलकर इसी पुस्तकमें कहा है—

गोणाहि सब्ब गिहीनं पोसका भोगदायका।
तस्मा हि माता पितू व मानये सक्करेय्य च॥

'बैल सब गृहस्थोंके पोषण और भोगदायक हैं। इसलिये उनका माता-पिताकी तरह आदर-सत्कार करे।'

मालूम होता है बुद्धके गो-प्रेमका सबसे अधिक असर बर्मामें पड़ा। जबतक बर्मा स्वतन्त्र था, तबतक वहाँ यह कानून था कि गो-हत्या करनेवालेको प्राणदण्ड मिलेगा और इस नियमका सख्तीसे पालन होता था।

अन्तमें बुद्धके इस वचनके साथ मैं यह लेख समाप्त करता हूँ कि—एवमेसो अनुधम्मो, पोराणो विञ्ञुगरहितो। अर्थात् यह गो-हत्या प्राचीन विद्वानोंद्वारा निन्दित कर्म है।

सभी प्राणी सुखी होवें। 'धर्मदूत'

गो-चोरको दण्ड

ब्राह्मणकी गौ चुरानेवाले, बाँझ गायको हलमें जोतनेके लिये नाथनेवाले और पशुओंका हरण करने-वालेके लिये राजाको चाहिये कि उसका आधा पैर कटवा दे। (मनु० ८। ३२५)

बौद्धधर्म और गोरक्षा

(लेखक—श्री चिं० ग० कर्वे, सम्पादक गोज्ञानकोष—मध्यखण्ड)

बौद्धधर्ममें अहिंसाकी दृष्टिसे गौतमबुद्धने अपने उदाहरणके द्वारा कितने ही आदेश दिये हैं। उन्हें जुगुप्सा (हिंसासे घृणा) थी। सारिपुत्रसे वे कहते हैं—'मैंने चार प्रकारका तपाचरण किया था। मैं तपस्वी हुआ, रूक्ष, जुगुप्सी और प्रविविक्त हुआ। इनमें जुगुप्सा ऐसी होती है—मैं बहुत सावधानीसे चलता-फिरता था। पानीकी बूँदपर भी मुझे बड़ी दया आती थी। विषम परिस्थितिमें पड़े हुए छोटे-से-छोटे प्राणीका भी नाश मेरे द्वारा न हो, इसकी मैं बहुत सावधानी रखता था। जहाँ गौएँ बँधा करतीं और जहाँसे अभी-अभी गौएँ चरनेके लिये गयी हुई होतीं, वहाँ मैं हाथ-पैरोंपर चलकर बछड़ोंका गोबर खाया करता था। जबतक मेरे शरीरसे मल-मूत्र निकलता था तबतक मैं इसीसे निर्वाह करता था।'

(धर्मानन्द कौसुंबीकृत 'भगवान् बुद्ध'—पूर्वार्द्ध)

भगवान् बुद्ध कहते हैं—दूसरे लोग जहाँ हिंसावृत्तिसे काम लेते हैं, वहाँ हमलोग ऐसी सफाई रक्खें कि अहिंसक हो जायँ। दूसरे यदि प्राणिवध करते हैं तो हमलोग ऐसी सफाई रक्खें कि प्राणिवधसे निवृत्त हों।

किसी विषम मार्गमें जा अटके हुए मनुष्यको उसमेंसे बाहर निकलनेका रास्ता जैसे मिल जाय, वैसे ही हिंसक मनुष्यके लिये हिंसासे बाहर निकलनेका रास्ता अहिंसा है; प्राणिवध करनेवालेकी मुक्तिके लिये प्राणिवधसे विरत होना ही······एकमात्र उपाय है।········

भगवान् बुद्धका यह कहना है कि यज्ञमें प्राणिवध करके यजमान तन-मन-वचनसे अकुशल कर्मका आचरण करता है, इसलिये यज्ञ अमङ्गल हैं। जो यज्ञके लिये अग्नि प्रज्वलित करता और यूप खड़ा करता है, वह दुःख उत्पन्न करनेवाले तीन शस्त्र उठाता है—कायशस्त्र, वाक्शस्त्र और चित्तशस्त्र। जो यज्ञारम्भ करता है, उसके मनमें यही अकुशल विचार उठता है कि इतने पशु मारे जायँ। इस प्रकार वह सबसे पहले दुःखोत्पादक अकुशल 'चित्तशस्त्र' उठाता है। इसके अनन्तर वह इन प्राणियोंको मारनेकी आज्ञा अपने मुखसे देता है, यह दुःखोत्पादक अकुशल 'वाक्शस्त्र' उठाता है। इसके अनन्तर इन प्राणियोंको मारनेके लिये स्वयं ही उन्हें मारना आरम्भ करता है और इस तरह अकुशल 'कायशस्त्र' उठाता है।

कामाग्नि, द्वेषाग्नि और मोहाग्नि—ये तीन अग्नि त्याज्य हैं—परिवर्ज्य हैं।

१. आहवनीयाग्नि (आहनेयग्गि—माता-पिताको आहवनीय अग्नि जानकर सत्कारपूर्वक उनकी पूजा), २. गार्हपत्याग्नि (गहपतग्गि—गृहिणी, बच्चे, दास और कर्मकारोंका आदरपूर्वक सन्तोषसाधन), और दक्षिणाग्नि (दक्खिणेयग्गि—श्रवण ब्राह्मणकी सत्कारपूर्वक पूजा)—ये तीन अग्नि सत्कार्य, सम्मान्य और पूज्य हैं। ('भगवान् बुद्ध'—उत्तरार्द्ध, अंगुत्तरनिकायके अन्तर्गत सुत्तकनिपातके एक सुत्तका सारांश')।

कूटदन्तकथा

हृदय-यज्ञ पशु-यज्ञसे श्रेष्ठ है। नैतिक-यज्ञ भौतिक-यज्ञसे श्रेष्ठ है। ऐसे यज्ञ करना बुद्धिसंगत, विचारयुक्त और दयामय है।

(समण्ण फलसुत्त ४३—*सम्युक्तमें बुद्धवचन १७६)

कूटदन्तसुत्तमें यह कथा है कि गौतमबुद्धने कूटदन्त ब्राह्मणका यज्ञमें पशु-बलि देनेका विचार पलट दिया। यह कथा बड़े महत्त्वकी है। कूटदन्तको गौतमने यह जँचा दिया कि घी, तेल, मक्खन, दूध, चीनी और मधुसे यज्ञ करना उत्तम है। पीछे कूटदन्त ब्राह्मण भिक्षु हुआ। इस सुत्तमें राजाओंको बुद्धने यह उपदेश किया है कि जो कोई गौ-बैलों और खेतोंकी रक्षा करनेमें अपने आपको लगा दे, उसे ही राजा अन्न दे, वह चाहे किसी जातिका मनुष्य हो। गोपालनमें विशेष ध्यान होनेसे ही बुद्धने यज्ञके प्रति तिरस्कार प्रकट किया। गो-जीवनकी ओर उच्चदृष्टिसे देखने और सामान्यतः सभी पशुओंके जीवनका आदर करनेके कारण बौद्धधर्मने संसारके धर्मोंमें एक श्रेष्ठ पद प्राप्त किया, इसमें कोई सन्देह नहीं।

जातकमाला (१०) में एक कथा है कि एक बार राजपुरोहित वर्षाके हेतु यज्ञ करानेके विचारसे बुद्ध भगवान्के पास आये। बुद्ध भगवान्ने उनसे पूछा कि यज्ञमें पशुओंको बलि देनेसे यदि वे पशु स्वर्ग सिधारते हैं तो यज्ञ करनेवाले याज्ञिक अपने-आपको ही बलि देकर स्वर्ग क्यों नहीं जाते ?

गो-हिंसाकी बात तो दूर रही, गाय-बैलोंको कुछ भी कष्ट न हो इसपर भगवान् बुद्धकी नजर रहती थी। बौद्ध-

धर्मावलम्बी लोग इसीसे प्रायः पैदल ही चला करते थे। एक बार एक भिक्षु बीमार थे, कहीं जानेका काम पड़ा, गाड़ी तैयार थी, फिर भी बुद्धकी आज्ञाका ध्यान कर उन्होंने गाड़ीपर चढ़ना स्वीकार नहीं किया। यह बात जब बुद्धको मालूम हुई तब उन्होंने भिक्षुओंको उपदेश किया कि 'भिक्षुओ! जब बीमार रहो तब गाड़ीपर चढ़ सकते हो।' एक बार यह प्रश्न उठा कि गाड़ीमें बैल जुते हों या गौएँ भी जोती जा सकती हैं, इसपर बुद्धने कहा, 'बैलोंकी या हाथोंसे खींची जानेवाली गाड़ीका उपयोग करो।' (Sacred Books of the East १७–२६)!

उन दिनों खब्बग्गीय भिक्कु गौएँ जुती हुई गाड़ियोंपर चढ़ते थे। गौओंकी गर्दनोंपर जुआ देखकर लोग बुद्धके पास गये। बुद्धने इस प्रथाका निषेध किया और कहा कि जो कोई ऐसा करेगा वह 'दुक्कत' का दोषी होगा। (किंत्ता पृ० २४)

यात्राकालमें गव्य पदार्थोंका सेवन बुद्ध बतलाते थे। मेंदकने एक बार उनसे पूछा, 'यात्रामें यदि अन्न-जल न मिले तो क्या सेवन करना चाहिये।' बुद्धने कहा, 'दूध, दही, घी, मक्खन और मठा पाँच गोरस ले सकते हैं।' (किंत्ता पृ० १७–१२८) एक बार एक भिक्कुको कँवलकी बीमारी हो गयी। भगवान् बुद्धने उसे गोमूत्रका काढ़ा पीनेको कहा। (किंत्ता १७–६०)

होड़ जीतनेवाला बैल

एक खेतिहर था, उसके पास एक बहुत बड़ा बैल था। उस बैलके बलपर उसे बड़ा गर्व था। हर-किसीसे वह यह कहता फिरता कि मेरे बैल-जैसा दूसरा बैल दुनियामें नहीं है। इसी तरह एक बार पड़ोसके एक गाँवमें उसने अपने बैलकी खूब तारीफ की और यह होड़ बदी कि मेरा बैल अकेला एक साथ सौ गाड़ियोंको खींच न ले जाय तो मैं एक हजार रुपया हार दूँगा। गाँववालोंने भी कहा, अच्छी बात है, आपके बैलका बल हमलोग भी देखें। तब खेतिहर अपना बैल ले आया। गाँववालोंने सौ गाड़ियाँ जुटायीं और एकके बाद एक-एक कतारमें खड़ी कर दीं और सबको एक दूसरीसे बाँध डाला। सारा गाँव बैलकी करामात देखनेके लिये जुट गया। खेतिहरने अपना बैल आगेवाली गाड़ीमें जोत दिया और उसे गाली दे-देकर और मार-मारकर हाँकने लगा। बैलने इससे पहले न कभी गाली सुनी थी, न उसे मार ही सहनी पड़ी थी। वह बिल्कुल हिला-डुला नहीं, जहाँ-का-तहाँ खड़ा रहा, एक कदम भी न चला। खेतिहरने लाख प्रयत्न किया, पर बैल टस-से-मस नहीं हुआ। अन्तमें खेतिहरने हार मानी, गाँववालोंको एक हजार रुपया गिन दिया और सिर नीचा किये, बैलको साथ लिये घर लौट आया और बहुत ही खिन्न मनसे अपनी खटियापर पड़ा-पड़ा सोचने लगा कि यह क्या हुआ, इतना मजबूत बैल ऐन वक्तपर ऐसा निकम्मा कैसे बन गया; सौ-सौ गाड़ियोंको एक साथ इसने कितनी बार खींचा है, आज कोई नयी बात नहीं थी, फिर इसने आज ऐसा क्यों किया कि मुझे हार खानी पड़ी? रातको सानी देनेके लिये जब वह बैलके पास गया तो बैलने उससे कहा, 'भाई साहब! आज आपने मुझे मारा क्यों? और क्यों गालियाँ दीं? ऐसा तो आपने आजतक कभी नहीं किया था?' खेतिहरके ध्यानमें बात आ गयी। उसने कहा, 'मैंने बड़ी भूल की, अब मैं तुम्हें कभी न मारूँगा, कभी गाली भी न दूँगा। एक बार मुझे माफ कर दो।' बैलने उससे कहा 'अच्छा तो तुम उस गाँवमें फिरसे जाओ और होड़ बदो। इस बार मैं सब गाड़ियाँ खींचकर तुम्हारी रकम तुम्हें वापस दिला दूँगा।' दूसरे दिन खेतिहरने बैलको खूब खिलाया-पिलाया, उसके गलेमें फूलोंका हार डाला और उसे संग लेकर उस गाँवमें फिर पहुँचा। उसे देखकर लोग हँसे, कहने लगे, 'मुखियाजी! हजार रुपया और हारनेकी तबीयत हुई है क्या?' खेतिहरने कहा, 'आज दो हजारकी होड़ बदता हूँ। यदि मेरा बैल सौ गाड़ियोंको खींच न ले जाय तो दो हजार दूँगा और यदि खींच ले जाय तो आपलोग मुझे एक ही हजार दें।' गाँववालोंने फिरसे सौ गाड़ियाँ जुटायीं, एकके बाद एक कतार बाँध दी। खेतिहरने आगेवाली गाड़ीमें बैल जोता और कहा, 'बैल दादा! अब चलो, जरा अपना बल दिखा दो।' बैलने अपना बल दिखाया, सब गाड़ियाँ खींच ले गया। पहली गाड़ी जहाँ थी वहाँ अन्तवाली गाड़ी आ गयी। बैलका बल देखकर गाँववाले चकित हुए। खेतिहरके हजार रुपये उन्होंने लौटा दिये और कहा, 'भाई साहब! ऐसा बैल तो सचमुच ही हमलोगोंने आजतक नहीं देखा था।' बैलको लेकर खेतिहर लौट आया। बैलके साथ फिर कभी उसने दुर्व्यवहार नहीं किया।

(दे० ना० तिलक, जातककथा)

बौद्धकालमें प्रत्येक घरके गौ-बैल अलग-अलग होते

थे। पर उनके चरनेके लिये हर किसीकी अपनी गोचरभूमि नहीं थी। फसल कटनेपर सबके गाय-बैल खेतोंमें चरा करते थे। जब फसल खड़ी होती तब सबके गाय-बैलोंको एकत्र कर चरवाहा उन्हें चरानेके लिये नियत गोचरमें ले जाता था। जातक-कथा (१-१९४) में चरवाहोंका वर्णन है। उससे मालूम होता है, उन दिनों चरवाहोंका बड़ा महत्त्व था।

(बुद्धिस्टिक इंडिया झा० को० ४। १७९)

सम्राट् अशोकका समय

चन्द्रगुप्त किस धर्मके अनुयायी थे, ठीक पता नहीं। कोई कहते हैं बौद्ध थे, कोई जैन और कोई यह बतलाते हैं कि यूनानी परिवारवालोंमेंसे थे। उनके पोते अशोक, अवश्य ही सब जानते हैं कि, अहिंसावादी बौद्ध थे। उन्होंने कई 'शासन' (हुक्म) जारी कर प्राणिहत्या एकबारगी ही बंद कर दी। बैलोंको बधिया करनेकी प्रथा भी उन्होंने बंद कर दी। कारण यह काम भी निर्दयताका ही है। प्राणियोंके रोगोंके इलाजके लिये उन्होंने प्राणि-रुग्णालय या पिंजरापोल कायम किये, अहमदाबाद, सूरत और पश्चिम हिंदुस्थानके अनेक नगरोंमें आज भी पिंजरापोल दिखायी देते हैं। कई अंग्रेज यात्रियोंने अपने ग्रन्थोंमें पिंजरापोलोंका वर्णन किया है। जूनागढ़के समीप गिरनार पर्वतपर अशोकके जो 'शासन' खुदे हुए हैं उनमें केवल गोसम्बन्धी भाग नीचे दिया जाता है।

गिरनारके शिलाशासन

शासन पहला

इयं धम्मलिपी देवानं प्रियेन प्रियदसिना राजा लेखापिता।

यह धर्मलिपि देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने लिखायी है।

इध न किंचि जीवं आरभित्पा प्रजूहितव्यं।

यहाँ किसी भी जीवका यज्ञ न होना चाहिये।

न च समाजो कतव्यो।

मेले भी न लगाने चाहिये।

बहुकं हि दोसं समाजम्हि पसति देवानं प्रियो प्रियदसि राजा।

कारण मेलोंमें देवप्रिय राजा प्रियदर्शीको बहुत-से दोष देख पड़ते हैं।

अस्ति पितु एकचा समाजा साधुमता देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो।

तथापि देवप्रिय राजा प्रियदर्शीको कुछ मेले (समाज) अच्छे लगते हैं।

पुरा महानसम्हि देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो अनुदिवसं बहूनि प्राण सत सहस्रानि आरभिसु सूपाथाय।

पहले देवप्रिय राजा प्रियदर्शी राजाकी पाकशालामें बहुत-से सहस्रों प्राणी पाकके लिये मारे जाते थे।

से अजयदा अयं धम्मलिपी लिखिता ती एक प्राणा आरभरे सुपाथाय द्वौ मोरा एको मगो सोपि मगो न ध्रुवो।

पर अब इस धर्मलिपिके लिखे जाते समय पाकके लिये तीन ही प्राणी मारे जाते हैं—दो मोर और एक मृग और वह मृग भी सदा नहीं मारा जाता।

एते पित्री प्राणा पछा न आरभि सरे।

आगे तीनों प्राणी नहीं मारे जायँगे।

शासन दूसरा

सर्वत विजितम्हि देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो एवमपि प्रचंतेसु यथा चोडा पाडा सतिय पुतो केतल पुतो आ तंबपंणी अंतिय कोयोन राजाये वा पितस अंतियकस सामीपं राजानो सर्वत्र देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो द्वे चिकीछकता मनुसचिकीछा च पशुचिकीछा च।

राजा देवप्रिय प्रियदर्शीके राज्यमें सर्वत्र तथा सीमापर जो चोल, पाण्ड्य, सतीय पुत्र, कैतल पुत्र और तो क्या जो ताम्रवर्णी यवन राजा अंतियक हैं तथा उनके पड़ोसमें जो राजा हैं उनके राज्योंमें भी राजा देवप्रिय प्रियदर्शीने दो प्रकारके चिकित्सालय स्थापित किये हैं। एक मनुष्य-चिकित्साके लिये और दूसरे पशुचिकित्साके लिये।

ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च पसोपगानि च यत यत नास्ति सर्वत्रा हारापितानि च रोपापितानि च।

जहाँ जो मनुष्योपयोगी तथा पशु-उपयोगी वनस्पतियाँ नहीं थीं वहाँ वे मँगायी और लगायी गयी हैं।

मूलानि च फलानि च यत यत नास्ति सर्वत्र हारापितानि च रोपापितानि च।

जहाँ जो कन्द-मूल और फल नहीं थे वहाँ वे मँगाये और लगाये गये हैं।

पथेसू कूपा च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसानं।

सड़कोंपर पशुओं और मनुष्योंके लिये कुएँ खनवाये और वृक्ष लगाये गये हैं।

शासन चौथा

अतिकातं अंतरं बहूनि वाससतानि वढितो एव प्राणा रंभो विहिंसा च भूतानं जातिसु असं प्रति पती ब्राह्मण-स्रमणानं असं प्रती पती ।

समय बदला । सैकड़ों वर्षतक प्राणियोंकी हत्या करने और जीवित प्राणियोंको पीड़ा पहुँचानेको बढ़ावा दिया जाता था; और जातिका तथा ब्राह्मणों और श्रमणोंका अनादर होता था ।

त अज देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो धंमचरणेन भेरी घोसो अहो धंम घोसो विमानदर्सणा च हस्तिदसणा च अगिखंधानि च अयानि च दिव्यानि रूपानि दसयित्पा जनं ।

पर अब देवप्रिय राजा प्रियदर्शीके धर्माचरणसे धर्मघोष ही भेरीघोष हुआ है । लोगोंको विमानदर्शन, हस्तिदर्शन, अग्निलोक और दिव्य रूपोंका दर्शन कराया जा रहा है ।

यां रिसे बहू हि वासस तेहि न भूत फवे तारिसे अज वढिते देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो धंमानुस्टिया अनारंभो प्राणानं अवि हीसा भूतानं ञातीनं संपटि पती ब्रह्मणस्रमणानं संपटि पती मातरि पितरि सुस्रुसा थैर सुस्रुसा ।

जो पहले सैकड़ों बरसोंतक नहीं था वह अब देवप्रिय राजा प्रियदर्शीकी धर्मशक्तिसे बढ़ाया जा रहा है । (वह क्या है ?) प्राणि-हिंसा न करना; जीवित प्राणियोंको चोट न पहुँचाना; जाति, ब्राह्मण तथा श्रमणमात्रके साथ सभ्यतापूर्वक व्यवहार करना; और माता-पिता तथा वृद्धोंकी सेवा करना ।

एस अजे च बहुविधे धंमचरणे वढिते ।

इन तथा अन्य अनेक विषयोंमें धर्माचरणकी वृद्धि हो रही है ।

नढयि सति चेव देवानं प्रियो प्रियदसि राञा धंमचरणं इदं ।

देवप्रिय प्रियदर्शी राजा यह धर्माचरण बढ़ा रहा है ।

पुत्रा च पोत्रा च प्रपोत्रा च देवानं प्रिय प्रियदसिनो राञो प्रवधयि संति इदं धंमचरणं आव सवट कपा धंमम्हि सीलम्हि तिस्टंतो धंमं अनुसासिसंति ।

और देवप्रिय प्रियदर्शी राजाके पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र इस धर्माचरणकी वृद्धि करते चलेंगे और लोगोंको धर्मानुरूप अनुशासन करके धर्म और शील सिखायेंगे ।

एस हि सेस्टे कंमे य धंमानुसासनं ।

धर्मानुशासन ही श्रेष्ठ कर्म है ।

धंमचरणे पिनभवति असीलस ।

जिसमें शील नहीं उससे धर्माचरण नहीं होता ।

त इमम्हि अथम्हि वधी च अहीनी च साधु ।

इसलिये धर्मवृत्तिको बढ़ाना, कम न होने देना उत्तम है ।

एताय अथाय इदं लेखापितं इमस अथस वधियुजंतु हानि च मा लोचेतव्या ।

इसी हेतु यह लिखा गया । वृद्धि हो, ह्रास न हो ।

द्वादस वासाभिसितेन देवानं प्रियेन प्रियदसिना राञा इदं लेखापितं ।

यह देवप्रिय प्रियदर्शी राजाके बारहवें वर्षमें लिखा गया । (प्राचीन महाराष्ट्र पृ० ३४४-४५)

शातवाहन

अशोकके समयमें दक्षिणमें शातवाहनोंका राज्य था । कुछ इतिहासकार इन शातवाहन या शालिवाहनको आन्ध्रोंके अन्तर्गत ही मानते हैं । महाराष्ट्रके अन्तर्गत नाणेघाटमें इन शातवाहनोंके शिलालेख मिलते हैं । इनमें उनके धर्मकार्योंका वर्णन है । कम-से-कम १८ यज्ञ-प्रकारोंके उल्लेख हैं । उनमें गवामयन है । इन शिलालेखोंमें गोसम्बन्धी जो उल्लेख हैं, वे ही नीचे दिये जाते हैं ।

रायस—(य) णेहि यिठंवनो अगाधेय यंणो दखिना दिना गावो बारस १२ असोच १ अनारभनियो यंणो दखिना धेनु ।

राजाके……यज्ञसे यहाँ अगाधेय यज्ञ; दक्षिणा दी गौएँ १२, अश्व १ अनालभनीय यज्ञ दक्षिणा धेनु ।

……दखिनायो दिना गावो १७०० हथी १०

दक्षिणाके लिये दी गौएँ १७०० और हाथी १०

गावो…सकटं धणगिरित

(म) समयुतं…………

ओवायो यंणो……….१७ ध

(एनु ? …वाय…सतरस ।

गौएँ……शकट धान्यगिरि

……युक्त

ओवाय (?) यज्ञ……१७ धेनु

?···वाय···सत्रहके

······गावो २०००० (भग)

ल दसरतो यंणोय (इठो दखिना दि) ना (गावो १०००१)

गर्ग तिरतो यंणो यिणे।

दखिना······पसपको पटा ३०१।

गवामयनं यंणो विणे (दखिना दिना) गावो ११०१

गावो ११०० (?) पसपको काहापना पटा १०० अतुयामो यंणो······।

गौएँ २०००० भगल
दशरात्र यज्ञ जहाँ दक्षिणा दी
गौएँ १०००१
गर्गातिरात्र यज्ञ जहाँ
दक्षिणा······प्रसर्पकोंको दिये
वस्त्र ३०१
गवामयन यज्ञ जहाँ दक्षिणा दी
गौएँ ११०१
गौएँ ११००, प्रसर्पक, रुपये और
वस्त्र १०० आतोर्याम यज्ञ

···(ग) वामयन् यण् (ओ) दखिना
दिना ग् आवो ११०१
अंगिरस (आ) मयनं यणो यिठो दखिना
गावो ११०१
त···(दखिना ह्) इना गावो ११०१ (?)
सतातिरतं यंणो १००
—(य) णो दखिना ग् (आ) नो ११००
अंगिरस (ति) रतो यंणो यिठो (दखि) ना
गा (वो)

गवामयन यज्ञ
दक्षिणा दी गौएँ ११०१
अंगिरसामयन यज्ञ जहाँ दक्षिणा
गौएँ ११०१
दक्षिणायन (यज्ञ) गौएँ ११०१
सत्रातिरात्र यज्ञ···१००
यज्ञदक्षिणा गौएँ ११००
अंगिरसातिरात्र यज्ञ जहाँ दक्षिणा
गौएँ।

···गावो १००२,
छंदोमप (व) मा (नतिरतो) दखिना
गावो १००१
अंग (इ) र (सतिर) तोयं
(णो यि) ठोद (खिना)
···रतो यिठो यणो दखिना दिना
तो यंणो यिठो दखिना
यंणो यिठो दखिना दिना गावो
१००१

···गौएँ १००२,
छन्दोमप व मानतिरात्र दक्षिणा
गौएँ १००१
अंगिरसातिरात्र यज्ञ
जहाँ दक्षिणा
···रात्र जहाँ दक्षिणा दी
त्र यज्ञ जहाँ दक्षिणा
···यज्ञ जहाँ दक्षिणा दी गौएँ
१००१

···न···सयं·····
दखिना दिनो गावो···त···
(अं) गि (रसा) मयनं छवस···
(दखि) ना दिनो गावो १०००
·····दखिना दिना गावो
१००१ तेरस ······अ
?

दक्षिणा दी गौएँ
अंगिरसामयन उत्सवकी
दक्षिणा दी गौएँ १०००
दक्षिणा दी गौएँ
१००१ तेरह सौ···अ

···तेरसतोस······आग
दखिना दिना गावो······
दसरतोम···(दि) ना गावो
१००१३
······१००१ द

तेरह सौ स···आग
दक्षिणा दी गौएँ···
दशरात्र म (ख) दी गौएँ
१००१३······
······१००१ द

एक लेख शातवाहन राजा शातकर्णीको जीतनेवाले कलिंग देशके जैनधर्मीय राजा खारवेलका भी है। (इसका समय ईसाके पूर्व २१८ है।) अशोककी तरह यह राजा अहिंसावादी था। जैन-इतिहासमें इसकी बड़ी कीर्त्ति है।

नहपान—ईसाकी प्रथम शताब्दीमें महाराष्ट्र और गुजरातपर विदेशी क्षत्रपोंका राज्य था। इनके प्रसिद्ध राजा नहपानकी नासिकमें गुफाएँ हैं। कुछ गुफाओंके खंभोंपर गौकी प्रतिमाएँ भी हैं (फर्ग्युसन १—१८५)। नहपानके नासिकवाले शिलालेखोंमें गोवर्द्धन प्रदेशका नाम आता है। नहपानके जामाता उषवदात बड़े धार्मिक थे, उनके किये हुए गोदान नीचे दिये हुए लेखमें उल्लिखित हैं—

नासिक लेख अंक १० गुफा अंक १० की पीछेवाली दीवालपर छतके नीचे (लूडर्स नं० ११३१)—

१. सिद्धं राज्ञं क्षहरातस्य क्षत्रपस्य नहपानस्य जामात्रा दीनीकपुत्रेण उषवदातेन त्रिगोशतसहस्रदेन नद्यां वार्णासायां सुवर्णदानतीर्थकरेण देवताभ्यः ब्राह्मणेभ्यश्च षोडशग्राम-देन अनुवर्षं ब्राह्मणशतसाहस्रीभोजापयित्रा

२. प्रभासे पुण्यतीर्थे ब्राह्मणेभ्यः अष्टभार्याप्रदेन भरुकछे दशपुरे गोवर्द्धने शोर्पारगे च चतुशाला वसध प्रतिश्रय-प्रदेन आरामतडागउदपानकरेण इबा-पारदा-दमण-तापी-करबेना दाहनुकानावा पुण्यतरकरेण एतासां च नदीनां उभतो तीरं सभा—

३. प्रपाकरेण पिंडित कानडे गोवर्द्धने सुवर्णमुखे शोर्पारगे च रामतीर्थे चरकपर्षभ्यः ग्रामे नानं गोले द्वात्रीशत-नाळीगेरमूलसहस्रप्रदेन गोवर्द्धने त्रिरश्मिषु पर्वतेषु धर्मात्मना इदं लेणं कारितं इमा च पोटियो भटारका अंञातिया च गतोस्मि वर्षारतुं मालये हि रुधं उतम भाद्रं मोचयितुं

४. च मालय प्रनादेनेव अपयाता उतमभद्रकानं च क्षत्रियानं सर्वे परिग्रहा क्रिता ततोस्मि गतो पोक्षरानि तत्र च मया अभिसेको क्रितो त्रीणि च गोसहस्राणि दतानि ग्रामो च दत चानेन क्षेत्रं ब्राह्मणस वाराहिपुत्रस अश्विभूतिस्य हथे कीणिता मुलेन काहापण सहस्रे हि चतुहि ४००० य

सपितुसतक नगरसीमाय उतरापराय दीसाय एतो मम लेणे वस—

५. तानं चातुदीसस भिखुसघस मुखहारो भविसति।

(१) जय हो! नहपानके जामाता और दिनीकके बेटे उषवदातने धर्मस्फूर्त्तिसे यह गुफा और ये कुण्ड गोवर्द्धनकी पहाड़ियोंमें खुदवाये। उन्होंने तीन लाख गौएँ दान की हैं। वार्णासा नदीमें उन्होंने बहुत-से सुवर्ण-दान करके अपने हाथोंको तीर्थकी भाँति पवित्र बनाया है। देवताओं और ब्राह्मणोंको उन्होंने १६ गाँव दिये हैं। वे प्रतिवर्ष १ लाख ब्राह्मणोंको भोजन कराते हैं।

(२) उन्होंने भरुकच्छ, दशपुर, गोवर्द्धन और शोर्पारग (शूर्पारक) में आश्रयके लिये चतुष्कोण विश्रान्ति-गृह बनवा दिये हैं। उन्होंने कुएँ-तालाब खुदवाये और बाग-बगीचे लगवाये हैं। उन्होंने इबा, पारदा, दमणा, तापी, करबेणा और दाहनुका, इन नदियोंसे आर-पार होनेके लिये बहुत-सी निःशुल्क नौकाएँ रक्खी हैं। जलका उपयोग करने और जल जमा रखनेके लिये उन्होंने इन नदियोंके दोनों किनारोंपर वैसे स्थान बनवा दिये हैं।

(३) पिंडित, कानड़, गोवर्द्धन, सुवर्णमुख और शोर्पारगके अन्तर्गत रामतीर्थके चरकसंघको उन्होंने नानगोल गाँवमें ३२ हजार नारिकेल वृक्षोंकी जड़ें दी हैं। गोवर्द्धनके त्रिरश्मि पर्वतमें धर्मात्माने यह गुफा खुदवायी……। माल्योंने सारे वर्षा ऋतुभर उत्तमभद्रोंके राजापर घेरा डाल रक्खा था और राजाकी आज्ञासे उसे छुड़ानेके लिये मैं वहाँ गया।

(४) केवल गर्जन सुनकर ही माल्य भाग गये और उत्तमभद्रके सैनिकोंने (उनका पीछा कर) उन्हें कैद किया। इसके बाद मैं पुष्कर गया, वहाँ स्नान किया, तीन हजार गौ और एक गाँव दान किया। एक खेत भी दान किया है। वह खेत मैंने वाराहीके पुत्र अधिभूत नामक ब्राह्मणसे ४००० कार्षापण देकर खरीदा था। खेत उसके पिताका उपार्जित था। वह गाँवके दक्षिण-पश्चिम कोनेमें है।

(५) मेरी गुफाओंमें रहनेवाले सब संन्यासियोंको बिना किसी भेद-भावके अन्न मिला करेगा।

नासिकका लेख अंक १४ (लूडर्स नं० ११३५) गुफा अंक १० दाहिनी ओरकी दीवालपर—

(१) ···तस क्षत्तपस नहपानस जामा

(२) ···शाकस उषवदतास नेत्यकेसु

(३) ···चेचिंणे दाहनूका नगर केकापुरे

(४) ···? अनुगामि उजेनिय सारवाया

(५) ···जो ब्राह्मणानं भुजते सतसाह

(६) ···वता ब्राह्मणानं गवा सतस

(७) ···भगवता देवाज ब्राह्मणानं च दता

(८) ···चेत्र सुधे पनरस क्षध्वा···

(९) ···गवां······त सहस्रदेन उस—

(१०) ···नदीये बणासय द···

(११) ···सुवण तियचे णयते तस्–

(१२) ··· ··· ···

तात्पर्य—क्षत्रप राजा नहपानके जामाता शक उषवदातके दिये हुए दानोंसे ही चेचिणी और दाहनूका नगर, कैकापुर, अनुगामि, उजेनी, शाक—इन सब स्थानोंमें (प्रतिदिन) १ लाख ब्राह्मण भोजन करते हैं। (उन्हीं दानोंसे तीन) लाख गौएँ ब्राह्मणोंको दी गयी हैं। (और १६ गाँव) देवों और ब्राह्मणोंको उत्सर्ग किये गये हैं। चैत्र शुक्ल पक्षके १५ वें दिन लाखों गौएँ दान करनेवाले उषवदातने वार्णासा नदीमें सुवर्ण दान किया।

उषवदातके और भी दो लेख हैं। इनमेंसे कार्लाका लेख इस प्रकार है—

[कार्ले लेख अंक १३ (ल्यूडर्स १०९९)]

(१) सिधं रञो खहरातस खतपस नहपानस जामातस दिनिकपुतेन उसभदातेन त्रि (सिद्धम्। राज्ञः क्षहरातस्य क्षत्रपस्य नहपानस्य जामात्रा दिनीकपुत्रेण ऋषभदत्तेन त्रि···)

(२) गोसतसहस्रदेण नदिया वणासयं सुवण (ति) रथकरेण (देवा) ण ब्रह्मणानं च सोलसगा··· (गोशतसहस्रदेन नद्यां वार्णासायां सुवर्णतीर्थकरेण देवेभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च षोडशग्रा···)

(३) मदे (न) पभासे पूततिथे ब्रह्मणाणं अठभायाप (देण) गावसषि त्रिसतसहसं (मदेन प्रभासे पूततीर्थे ब्राह्मणेभ्योऽष्टौ भार्याप्रदेन गवां चापि त्रिशतसहस्रम्)

(४) दापयिता वलूरकेसु लेणवासान पवचितान चातुदिससघस (दापयित्रा वलूरकेषु लयनवासीनां प्रव्रजितानां चातुर्दिश संघाय)

(५) या पणय गामो करजिको दतो सवानं (व) सवासितानं (यापनार्थं ग्रामः करजिको दत्तः सर्वेषां (व) र्षावासिनाम् ॥)

अर्थ—सिद्धम्। राजा क्षहरात नहपानके जामाता दिनीक-पुत्र उषवदातने जिन्होंने एक लाख गौएँ दान कीं, वार्णासा नदीमें सुवर्ण-दान करके जिन्होंने अपने हाथोंको तीर्थतुल्य बना दिया, देवों और ब्राह्मणोंको सोलह गाँव जिन्होंने दान किये, पुण्यतीर्थ प्रभासमें ब्राह्मणोंको जिन्होंने आठ भार्याएँ और तीन लाख गायें दीं, उन्होंने वलूरककी गुफाओंमें रहनेवाले परिव्राजकोंके चातुर्दिश संघको जीवन-यापनार्थ करजिक नामक ग्राम दिया।

(प्राचीन महाराष्ट्र १५५—५६)

सिक्के

इस कालके जो सिक्के मिलते हैं उनमेंसे कुछपर गौकी प्रतिमा बनी हुई है। शातवाहनोंके पुलुमायी महाराजके सिक्कोंपर खड़े बैलकी मूर्त्ति है। महारथी सिक्कोंपर बैलके डीलके ऊपर अर्द्धचन्द्र बना होता है। कुशान वंशके प्रथम वासुदेवके सिक्कोंपर दूसरी तरफ शिव और नन्दी हैं। गुप्तकालके योधेयोंके छोटे सिक्कोंपर दाहिनी तरफ गतिमान् नन्दी बना है और उसके चौतरफा बौद्ध ढंगका चौखटा है। मालवोंके सिक्कोंपर बैठा हुआ नन्दी है, दूसरी तरफ ताल-वृक्ष है और बिन्दियोंका घेरा है। गुप्तसाम्राज्यको जिन हूणोंने तहस-नहस किया उनके मिहिरकुल राजाके सिक्कोंपर गतिमान् वृषभ है और 'जयतु वृषभः' ये अक्षर लिखे हुए हैं।

जैनधर्म और गोरक्षा

जैन और बौद्धधर्मोंने जिस अहिंसाका प्रतिपादन किया वह कोई नयी बात नहीं, पूर्वतन वैदिक धर्मकी ही बात थी। उपनिषदोंमें सर्वत्र ही सामान्यरूपसे अहिंसाका उपदेश किया गया है। परन्तु जैनधर्ममें जैन साधुओंके पञ्च महाव्रतोंमें अहिंसाव्रत आद्य माना गया है और उसका पूर्णरूपसे आचरण करानेके लिये अनेक व्रत और नियम बताये गये हैं। जैनतीर्थङ्कर, सूरी, जैन-मतावलम्बी धनिक और अधिकारी लोग अहिंसा धर्मके पालनमें बहुत ही आगे बढ़े हुए हैं। इनके प्रयत्नोंसे मुसल्मान बादशाहोंने इनके तीर्थ-स्थानोंमें प्राणि-हत्या न होने देनेके हुक्म जारी किये। इन प्रयत्न करनेवालोंमें अकबरकालीन हीरविजय सूरिका नाम बहुत ही विख्यात है। बादशाह अकबरपर इनका बड़ा प्रभाव था। शत्रुञ्जय पर्वतपर आदिनाथके मन्दिरके द्वारपर सन् १५९३ में जो संस्कृत शिलालेख बैठाया गया है, वह इस विषयका साक्षी है। विजयसेनने भी गौ, बैल और भैंसकी हत्याके विरुद्ध अकबरसे हुक्म जारी कराये हैं। इन लोगोंने इस सम्बन्धमें मुगल बादशाहोंसे जो फर्मान प्राप्त किये, उनका विवरण आगे दिया जाता है—

(१) ता० १५ जून १५८४ को हीरविजयजीको दिये हुए अकबरके फर्मानमें यह लिखा है कि गुजरातमें रहनेवाले हीरविजयजी और उनके शिष्योंकी अलौकिक पवित्रता और उग्र तपकी ख्याति सुनकर बादशाहने उन्हें दरबारमें बुलाया था। विदा होते समय उन्होंने बादशाहसे जो विनती की थी, उसके अनुसार यह ताकीद की जाती है कि पर्यूषण-उत्सव (भाद्रपद मासमें होनेवाले) के १२ दिनोंमें जैन आबादीके किसी शहरमें किसी भी पशुकी हत्या न की जाय।

(२) सन् १५९२ में हीरविजयजीको दिये गये दूसरे फर्मानमें यह लिखा है कि आचार्यजीने यह विनती की है कि मुगल साम्राज्यमें श्वेताम्बर-पन्थियोंके जो तीर्थस्थान हैं, वे सब जैनोंके सुपुर्द किये जायँ ताकि वहाँ किसी प्राणीकी हत्या न हो। आचार्यजीकी यह विनती न्याय्य, उचित और इस्लामके अविरुद्ध होनेसे ये सब स्थान हीरविजयजीको दिये जाते हैं।

(३) खास-खास दिनोंमें प्राणि-हत्या न होने देनेके लिये एक फर्मान सन् १६०८ में बादशाह जहाँगीरसे पण्डित विवेकहर्षने प्राप्त किया।

(४) सन् १६१० में पण्डित विवेकहर्षने बादशाह जहाँगीरसे पर्यूषण-उत्सवके दिनोंमें प्राणि-हत्याकी मनाईका फर्मान प्राप्त किया।

शान्तिदासने अहमदाबादमें चिन्तामणि पार्श्वनाथका एक बहुत बड़ा मन्दिर बनवाया था। सन् १६४५ में औरङ्गजेबने उसे तोड़-फोड़कर मसजिद बना लिया। उस समय वहाँ एक गौ मारी गयी, इसलिये कि कोई हिंदू यहाँ पूजा करने न आवें। सन् १६४८में शान्तिदासने शाहजहाँसे प्रार्थना कर वह मन्दिर लौटा लिया। पर भ्रष्ट होनेके कारण वह मन्दिर न रहा।

आये दिन काठियावाड़ और गुजरातके बहुत बड़े हिस्सेमें प्राणिहत्या जो नहीं होती और लोग प्रायः मांसाहार नहीं करते, इसका बहुत कुछ यश जैनोंकी शिक्षाको है। पहलेके पशुयज्ञ बिल्कुल बंद हो गये और 'अहिंसा परमो धर्मः'का व्रत लोग बड़ी निष्ठासे पालन करने लगे। सच्ची गो-पूजा गुजरातमें ही देख पड़ती है।

जैन-गोधन

पहले जैनलोग अपनी सम्पत्तिकी गणना गौओंकी संख्यासे करते थे। 'व्रज' और 'गोकुल' उसके माप थे। एक व्रज या गोकुल १० हजार गौओंका होता था। विपुल गोधनके धनी दस बड़े व्यापारियोंमें राजगृहीके महाशतक और काशीके चूलनिपिता गिने जाते थे। इनमेंसे हर एकके पास आठ-आठ गोकुल अर्थात् अस्सी-अस्सी हजार गौएँ थीं। चम्पाके कामदेव, वाराणसीके सूरदेव, काम्पिल्यके कुण्डकोलिक और आलम्भीयके चूलशतकके पास छः-छः गोकुल अर्थात् साठ-साठ हजार गौएँ थीं। वाजिया ग्रामके आनन्द, श्रावस्तीके नन्दिनीपिता और शालिनीपिताके पास चार-चार गोकुल (चालीस-चालीस हजार गौएँ) थे। इनमें सबसे गरीब पोलासपुरके शकडालपुत्र थे, जिनके पास एक ही गोकुल यानी दस हजार गौएँ थीं।

महाशतककी पत्नी रेवतीके लिये उसके पतिको ८ गोकुल (८० हजार गौएँ) दहेज मिला था। आनन्दने महावीर स्वामीसे जब श्रावक व्रत लिया तब ८ गोकुल पालनेकी

शपथ की थी। गोहत्या और गोमांस-भक्षणसे होनेवाले कुफलके सम्बन्धमें जैन-साहित्यमें एक कथा प्रसिद्ध है।

उज्झियअकी कथा

एक समय वणियग्राममें विजयमित्त नामके कोई व्यापारी अपनी स्त्री सुभद्राके साथ रहते थे। सुभद्राके कई सन्तानें हुईं पर सब जन्मते ही मर गयीं। इसलिये एक बार पुत्रके जन्मते ही उसने उसे कुछ समय बाहर घूरेपर डाल रक्खा और फिर अंदर ले आयी। उन दिनों लोगोंकी यह धारणा थी कि घूरेपर डालकर फिर घरमें ले आनेसे वह सन्तान दीर्घायु होती है। इस लड़केका नाम 'उज्झियअ' रक्खा गया, क्योंकि उसे इस प्रकार घूरेपर डाला गया था (संस्कृतमें 'उज्झितक' 'बाहर डाले हुए' को कहते हैं)। कुछ काल बाद विजयमित्त नौकामें माल लादकर व्यापारके लिये दूर देशको चला तो रास्तेमें उसकी नाव फूटी और वह डूब गया। आस-पासके लोगोंने जब यह जाना तब उसका घर लूट लिया। पतिकी मृत्यु और सम्पत्तिका नाश, इन दो आघातोंसे सुभद्रा मर गयी और उज्झियअ बिल्कुल अनाथ हो गया। सिरपर किसीका हाथ न होनेसे कुसंगमें पड़कर उसे जूआ, शराब और व्यभिचारकी बुरी लतें लग गयीं। राजाकी कामज्झया नामकी एक रखेली थी, उसपर इसका मन आसक्त हुआ, वह लुक-छिपकर उसके पास जाने लगा। एक बार उज्झियअ कामज्झयाके यहाँ ही था जब राजा वहाँ पहुँचा। फिर क्या था, राजाने उसे फाँसीका हुक्म सुना दिया। राजाके जल्लाद उसे वधस्थानकी ओर ले जा रहे थे। तब महावीरके शिष्य इन्द्रभूतिने देखा और गुरुसे प्रश्न किया 'महाराज! इस मनुष्यका ऐसा हाल क्यों हो रहा है? यह पूर्वजन्ममें कौन था?'

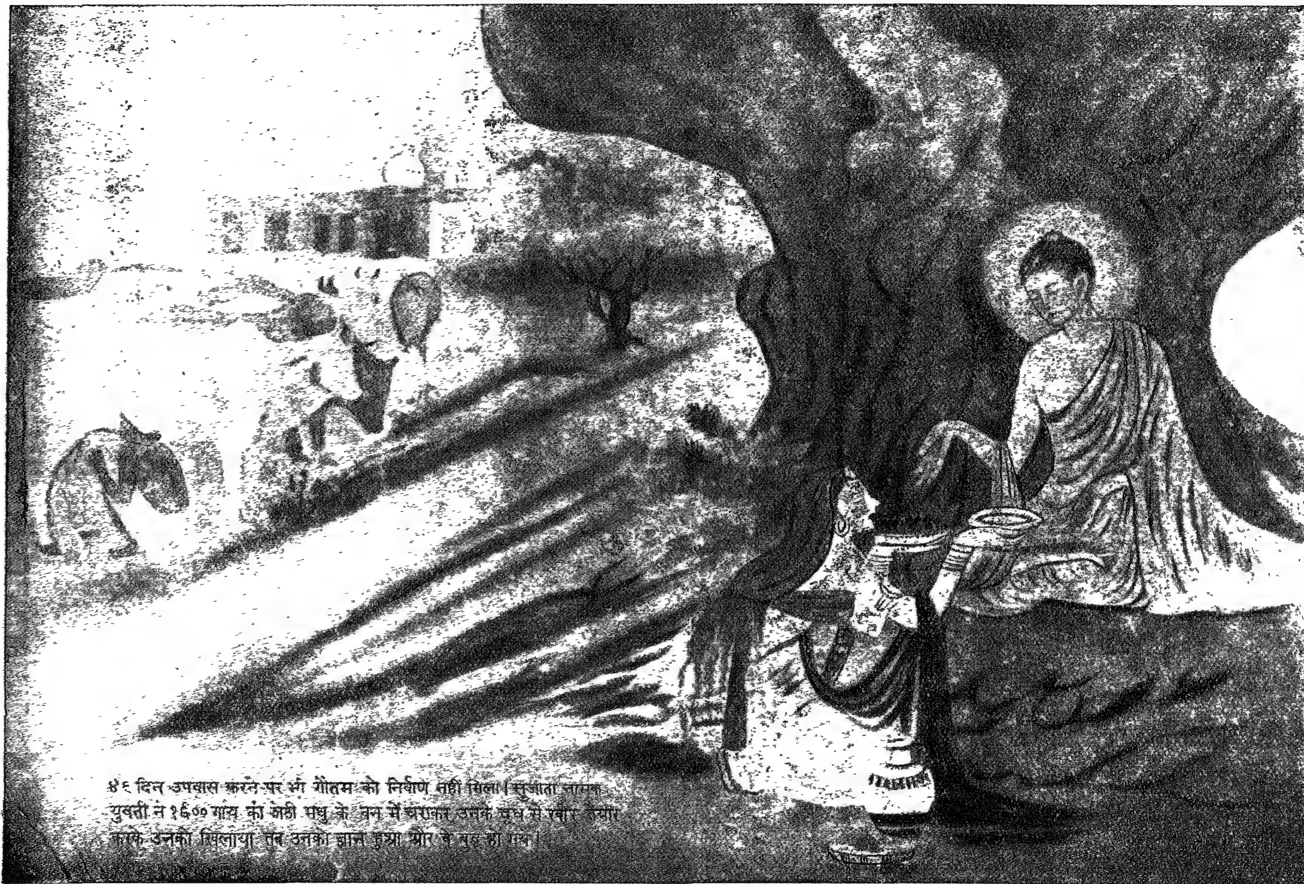
महावीर स्वामीने कहना आरम्भ किया—एक बार हस्तिनापुरमें भीम नामका एक व्याध रहता था; उसकी स्त्रीका नाम उप्पला था। वह गर्भवती हुई, उसे दोहद लगे गाय-बैल-बछड़ोंके मांससे बने हुए पदार्थ खाने और मद्य पीनेके। उसके ये दोहद पूरे नहीं हुए। इससे वह उदास होकर पाण्डु-रोगी बन गयी। उसके पतिने उससे तरह-तरहसे पूछा, तब उसने अपने सूखनेका कारण बताया। अपनी स्त्रीके दोहद पूरे करनेके लिये भीम व्याधने शहरके कितने ही गाय-बैलोंको ढूँढ-ढूँढकर मार डाला और स्त्रीको मांसके पदार्थ बनवा-बनवाकर खिलाये। नौ मास पूरे हुए, उप्पला प्रसूत हुई, लड़का हुआ। जनमते ही लड़का इतने जोरसे क्याँ-क्याँ करने लगा कि नगरके सब प्राणी डर गये। इसीसे उसका नाम गोत्तासअ पड़ गया (संस्कृत गोत्रासक—गौओंको डरानेवाला)। लड़का जब बड़ा हुआ तब बाप मर गया। राजाने उसे व्याधोंका नायक नियुक्त किया। उसे छोटे-बड़े सब प्रकारके पशुओंका मांस खाने और शराब पीनेकी चाट लग गयी। इन पापोंसे वह घोर नरकमें गिरा। यह वही उज्झियअ है जो विजयमित्त और सुभद्राके यहाँ जन्म लेकर आया है।

राजाज्ञासे उज्झियअ सूलीपर चढ़ाया गया। उसके बाद उसने अनेक जन्म लिये। एक जन्ममें वह उस राजवेश्याके यहाँ हिजड़ा होकर रहा था। अनन्तर एक दूसरे जन्ममें वह भैंस हुआ। पीछे एक व्यापारीके यहाँ जन्म लिया। वहाँ उसे सत्यका ज्ञान हुआ, वह स्थविर बना और स्वर्ग पहुँचा। वहाँसे फिर मृत्युलोकमें एक धनी कुलमें उत्पन्न हुआ और अन्तमें मुक्त हो गया। (गो. ज्ञा. को. म. खं.)

गोमाता—विटामिनोंका जीवित कारखाना

एक विज्ञान-शास्त्रीने कहा है कि गौका पेट क्या है विटामिनोंका कारखाना है। अमेरिकाके पेंसी वेनिया कालेजके वैज्ञानिकोंने अनुसन्धान किया है कि 'बी' विटामिन तो गौके पेटमें सतत बनता ही रहता है। गोमूत्रमें भी इस विटामिनका तत्त्व रहता है। (अतएव गौका दूध तथा गोमूत्र सभी गव्य पदार्थ उपकारी हैं।)





भगवान् बुद्ध और सुजाता

[दरभंगा गोशाला सोसायटी



गुरु नानक गायोंमें

[दरभंगा गोशाला सोसायटी

समग्र काश्मीर प्रान्तमें मेघवाहन राजाके राज्यकालके समान ही एक भी प्राणीकी हत्या नहीं हुई।

श्रीमेघवाहनस्येव साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः।
अशेषप्राणिनामासीदमारो दशवत्सरान्॥
(५।६४)

शीतकालमें कछुए नदीसे बाहर निकलकर तटपर धूप खाते हुए पड़े रहते थे (५।६५)।

इन्हीं अवन्तिवर्माने एक गोकुल स्थापित किया था। यह बहुधा श्रीनगरमें रहा होगा। इस गोकुलमें कितने ही गोचर-वन थे। राजा जयसिंहकी रानीने भी ऐसा ही एक गोकुल निर्माण किया था, जिसमें गौओंके चरनेके लिये बहुत-से गोचर-वन थे। वितस्ता नदीसे यहाँ पानी लाया गया था, इससे गौओंके चरने और विचरनेके लिये भूमि बहुत ही मनोहर हो गयी थी। उस गोकुलमें गोवर्धनधारी श्रीविष्णुकी सुन्दर मूर्ति स्थापित की गयी थी। राजतरङ्गिणी-कार बतलाते हैं कि राजा जयसिंहके मन्त्री चित्ररथने प्रजापर बहुत-से कर बढ़ाये और गोचर भी जब्त कर लिये। इससे गौओंको बड़ा कष्ट होने लगा। एक चरवाहेसे उनका यह कष्ट न सहा गया और उसने जीते-जी अग्निमें प्रवेश किया। ललितादित्य राजाने भी गोवर्धनकी रौप्य-मुद्रा निर्माण करायी थी, उसका रंग गौके दूधके समान शुभ्र था।

काश्मीरके राजा अनन्तदेव शूरवीर थे। एक बार जब वे रणभूमिसे लौट आये तो उनके हाथकी तलवार छुड़ाना बहुत कठिन हो गया। बहुत समयसे मुट्ठीमें तलवार थी; इससे मुट्ठी इतनी कसकर बँध गयी कि उसे खोलनेके लिये उसपर बहुत देरतक दूधकी धार छोड़नी पड़ी। (राजतरङ्गिणी) उन दिनों मक्खन और घृत बहुत ही सस्ता था और औषधादिके काममें भी बहुत आता था। न्यायालयमें एक दूकानदारने अपना खर्च पेश किया था, उसमें दासीके पैरोंमें हुए फोड़ोंके लिये घीका खर्च पचास दीनार दिखलाया गया था। काश्मीरमें गो-पालन बहुत ही अच्छे ढंगसे होता था। गोहत्या करनेवालेके लिये फाँसीकी सजा तो वहाँ अभी उस दिनतक थी। (गो. ज्ञा. को. म. ख.)



ईजियन, ग्रीक और रोमन संस्कृतिमें गौका स्थान

ईजियन द्वीपसमूह

ग्रीस (यूनान) के अगल-बगलमें, जो कई टापू हैं उन्हें ईजियन द्वीपसमूह कहते हैं। ईजियन संस्कृतिके अवशेष इनमें मिलते हैं। एक 'मायसिनी' कब्रमें चाँदीके बैलका सिर मिला है। सींग सोनेके हैं और मस्तकपर जो फूल है वह भी सोनेका है। इसका समय ईसासे १८०० से १५०० वर्ष पहलेका है। मायसिनी आभूषणोंमें बैलके चित्र होते हैं। मिनोआन नामके खेलमें वृषभ युद्धके प्रमाण मिलते हैं। साइप्रसके ऐकोमी स्थानमें हाथीदाँतकी एक पेटी मिली है। (ईसाके ११०० वर्ष पूर्वकी), उसपर एक तरफ जो चित्र बने हैं उनमें एक शरविद्ध बैल है। यहाँका हाल बहुत ही कम मालूम होता है।

ग्रीस

ग्रीक, रोमन, नार्डिक आदि सब लोगोंने अपने आर्य-जनकोंकी गोसंवर्धन-परम्पराको अक्षुण्ण रक्खा था। कारण, उनके पास प्रभूत गोधन था और गोदुग्ध ही उनका मुख्य आहार था। गौका दूध उन्हें बहुत ही प्यारा लगता था। परस्पर समझौता करनेके प्रयत्नोंमें प्रायः इसी बातपर झगड़े उठ खड़े होते थे कि किसे कितने गोचर-वन मिलें।

जुपिटरने बैलका रूप धारण कर यूरोपा नामकी सुन्दरी राजकन्याको भगाया और उससे विवाह कर लिया। इओ (मिश्रकी इसिस देवी) ने मिश्रके राजासे विवाह किया। इसे गोरूपमें दिखाते हैं। इसने अपनी मिश्रवासिनी प्रजाको कृषिकर्मका ज्ञान करा दिया।

गाय-बैल पालनेके सम्बन्धमें एक कथा है। आजिआस राजाके गोठमें गाय-बैल और भेड़-बकरियाँ रहा करती थीं। पर राजाने गोठ- झाड़-बुहारकर साफ रखनेकी ओर ध्यान नहीं दिया, इससे वहाँ इतनी गंदगी जमा हुई कि वह कभी साफ भी हो सकेगी या नहीं, इस विषयमें राजाको ही सन्देह होने लगा। हरक्युलिसने जानवरोंका दसवाँ हिस्सा ले लेनेकी शर्तपर गोठ साफ करना स्वीकार किया। सफाईका उपाय हरक्युलिसने यह किया कि आल्फिअस नदीको ही राजाके गोठमें ला छोड़ा। इससे गोठ बिल्कुल साफ हो गया। पर राजा इसका बदला चुकाते समय अगर-मगर करने लगा। तब हरक्युलिसने उसका राज्य

समग्र काश्मीर प्रान्तमें मेघवाहन राजाके राज्यकालके समान ही एक भी प्राणीकी हत्या नहीं हुई।

श्रीमेघवाहनस्येव साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः।
अशेषप्राणिनामासीदमारो दशवत्सरान्॥
(५। ६४)

शीतकालमें कछुए नदीसे बाहर निकलकर तटपर धूप खाते हुए पड़े रहते थे (५। ६५)।

इन्हीं अवन्तिवर्माने एक गोकुल स्थापित किया था। यह बहुधा श्रीनगरमें रहा होगा। इस गोकुलमें कितने ही गोचर-वन थे। राजा जयसिंहकी रानीने भी ऐसा ही एक गोकुल निर्माण किया था, जिसमें गौओंके चरनेके लिये बहुत-से गोचर-वन थे। वितस्ता नदीसे यहाँ पानी लाया गया था, इससे गौओंके चरने और विचरनेके लिये भूमि बहुत ही मनोहर हो गयी थी। उस गोकुलमें गोवर्धनधारी श्रीविष्णुकी सुन्दर मूर्ति स्थापित की गयी थी। राजतरङ्गिणीकार बतलाते हैं कि राजा जयसिंहके मन्त्री चित्ररथने प्रजापर बहुत-से कर बढ़ाये और गोचर भी जब्त कर लिये। इससे गौओंको बड़ा कष्ट होने लगा। एक चरवाहेसे उनका यह कष्ट न सहा गया और उसने जीते-जी अग्निमें प्रवेश किया। ललितादित्य राजाने भी गोवर्धनकी रौप्य-मुद्रा निर्माण करायी थी, उसका रंग गौके दूधके समान शुभ्र था।

काश्मीरके राजा अनन्तदेव शूरवीर थे। एक बार जब वे रणभूमिसे लौट आये तो उनके हाथकी तलवार छुड़ाना बहुत कठिन हो गया। बहुत समयसे मुट्ठीमें तलवार थी; इससे मुट्ठी इतनी कसकर बँध गयी कि उसे खोलनेके लिये उसपर बहुत देरतक दूधकी धार छोड़नी पड़ी। (राजतरङ्गिणी) उन दिनों मक्खन और घृत बहुत ही सस्ता था और औषधादिके काममें भी बहुत आता था। न्यायालयमें एक दूकानदारने अपना खर्च पेश किया था, उसमें दासीके पैरोंमें हुए फोड़ोंके लिये घीका खर्च पचास दीनार दिखलाया गया था। काश्मीरमें गो-पालन बहुत ही अच्छे ढंगसे होता था। गोहत्या करनेवालेके लिये फाँसीकी सजा तो वहाँ अभी उस दिनतक थी। (गो. ज्ञा. को. म. ख.)



ईजियन, ग्रीक और रोमन संस्कृतिमें गौका स्थान

ईजियन द्वीपसमूह

ग्रीस (यूनान) के अगल-बगलमें, जो कई टापू हैं उन्हें ईजियन द्वीपसमूह कहते हैं। ईजियन संस्कृतिके अवशेष इनमें मिलते हैं। एक 'मायसिनी' कब्रमें चाँदीके बैलका सिर मिला है। सींग सोनेके हैं और मस्तकपर जो फूल है वह भी सोनेका है। इसका समय ईसासे १८०० से १५०० वर्ष पहलेका है। मायसिनी आभूषणोंमें बैलके चित्र होते हैं। मिनोआन नामके खेलमें वृषभ युद्धके प्रमाण मिलते हैं। साइप्रसके ऐकोमी स्थानमें हाथीदाँतकी एक पेटी मिली है। (ईसाके ११०० वर्ष पूर्वकी), उसपर एक तरफ जो चित्र बने हैं उनमें एक शरविद्ध बैल है। यहाँका हाल बहुत ही कम मालूम होता है।

ग्रीस

ग्रीक, रोमन, नार्डिक आदि सब लोगोंने अपने आर्यजनकोंकी गोसंवर्धन-परम्पराको अक्षुण्ण रक्खा था। कारण, उनके पास प्रभूत गोधन था और गोदुग्ध ही उनका मुख्य आहार था। गौका दूध उन्हें बहुत ही प्यारा लगता था। परस्पर समझौता करनेके प्रयत्नोंमें प्रायः इसी बातपर झगड़े उठ खड़े होते थे कि किसे कितने गोचर-वन मिलें।

जुपिटरने बैलका रूप धारण कर यूरोपा नामकी सुन्दरी राजकन्याको भगाया और उससे विवाह कर लिया। इओ (मिश्रकी इसिस देवी) ने मिश्रके राजासे विवाह किया। इसे गोरूपमें दिखाते हैं। इसने अपनी मिश्रवासिनी प्रजाको कृषिकर्मका ज्ञान करा दिया।

गाय-बैल पालनेके सम्बन्धमें एक कथा है। आजिआस राजाके गोठमें गाय-बैल और भेड़-बकरियाँ रहा करती थीं। पर राजाने गोठ- झाड़-बुहारकर साफ रखनेकी ओर ध्यान नहीं दिया, इससे वहाँ इतनी गंदगी जमा हुई कि वह कभी साफ भी हो सकेगी या नहीं, इस विषयमें राजाको ही सन्देह होने लगा। हरक्युलिसने जानवरोंका दसवाँ हिस्सा ले लेनेकी शर्तपर गोठ साफ करना स्वीकार किया। सफाईका उपाय हरक्युलिसने यह किया कि आल्फिअस नदीको ही राजाके गोठमें ला छोड़ा। इससे गोठ बिल्कुल साफ हो गया। पर राजा इसका बदला चुकाते समय अगर-मगर करने लगा। तब हरक्युलिसने उसका राज्य

लड़कर जीत लिया। यह कथा होमरके 'इलियड'में है। ग्रीक सिक्कोंपर बैलोंके चित्र हैं।

ग्रीक ग्रन्थकारोंने जानवरोंके कुछ वर्णन लिखे हैं। प्लिनीके 'नैचरल हिष्ट्री'में 'हिंदुस्थानके बैलोंकी प्रशंसा' लिखी हुई है। स्ट्राबोंके भूगोलमें रथोंमें बैलोंकी जोड़ियाँ जोतनेका उल्लेख है। सिकंदरके चरित्र-लेखकोंने लिखा है कि सिकंदरको हिंदुस्थानके महाकाय बलवान् बैल कितने प्यारे लगे थे। एलियनके 'प्राणियोंका इतिहास'में बैलोंकी होड़का वर्णन है। (गोरक्षाकल्पतरु १२६-७)

रोम

रोमनलोग भी चन्द्रके लिये गौका रूपक प्रयुक्त करते थे। उनका धनवाचक शब्द 'पेकस' था। पेकस शब्दका अर्थ है पशु अथवा गौ। पेकस शब्दसे ही अंगरेजीमें 'पेक्युनिअरी' शब्द प्रचलित हुआ। इससे गौ और धनकी समान अर्थवत्ता प्रकट होती है।

सीजरने गाललोगोंसे युद्ध कर जिनीवा सरोवरवाले प्रदेशमें प्रवेश किया। तब वहाँके लोग गो-संवर्द्धनसे ही अपना निर्वाह करते थे। खेती करना ये लोग नहीं जानते थे। रोमन सैनिक जब ब्रिटेनमें आये तब उनकी रसदमें दही और मक्खन ही प्रधान था। उन्होंने इंग्लैंडके लोगोंको भी देखा कि दुग्धाहारी लोग हैं। रोमन-साम्राज्यके दिनोंमें उत्तर यूरोपकी सब जातियाँ पशु-पालनपर ही जीती थीं। कुछ लोगोंमें अब भी यह विचित्र धारणा है कि तामड़ा—लाल रंगकी गौके दूधमें रोग हरनेकी बड़ी अद्भुत शक्ति होती है।

रोमन-साम्राज्यमें कृषिकी उन्नतिका बहुत ध्यान रक्खा जाता था। इससे रोमन साम्राज्य समृद्ध था। ट्यूनिशिया उपनिवेश एक बहुत बड़ा अन्नागार ही था। जमीनपर बना हुआ कृषि-जीवनका एक चित्र (ईसाकी दूसरी शताब्दीका) मिला है। इसके गाय-बैल और हल नजरोंमें भर जाते हैं। एट्रुस्कन शिल्पमें खेतिहरों और उनके बैलोंकी जो प्रतिमाएँ हैं वे इससे पहलेकी हैं। आगष्टसके समयमें १५० एकड़ जमीनकी खेती करके खेतिहर सुखी रहते थे। पर थोड़े बैल रखकर गुलामोंके भरोसे थोड़ी-सी खेती करनेवाले लोग सिसली, सार्डीनिया, अफ्रिकाकी अनाजकी बड़ी-बड़ी मंडियोंके साथ स्पर्द्धा करनेमें असमर्थ थे। बार-बार दूसरे देशोंपर किये जानेवाले आक्रमणोंसे तथा गाँव-देहात छोड़कर शहरकी ओर खेतिहरोंके खींचे जानेसे किसानोंका सामाजिक संघटन विघटित होने लगा और रोमन-साम्राज्यका तेज घटने लगा। आगष्टसके जमानेमें आपसी युद्धके कारण एक मनुष्यकी बहुत बड़ी हानि हुई। फिर भी वह मरे पीछे ३६०० बैलोंकी जोड़ियाँ, २५०००० बछड़ी-बछड़े, भेंड़, बकरियाँ आदि तथा ४११६ दास छोड़ गया था। इससे उस समयके खेतिहरोंकी सम्पन्नताका पता लगता है। इस राजाने 'शान्ति-वेदी'के नामसे एक वेदी बनवायी थी, उसकी दीवारपर पृथ्वी माताका एक चित्र है, पृथ्वी माताके चरणोंके पास गौ बैठी हुई है।

लड़ाइयोंमें जो लूट होती थी उस लूटके मालमें प्रायः गाय-बैल ही अधिक होते थे। एक विजय-स्तम्भपर एक चित्र भी इसी प्रकारका खुदा हुआ है।

त्योहारोंपर रोमन पशु-बलि चढ़ाते थे। ईसाई धर्मशास्त्रकारोंने इसका निषेध किया है। धर्मग्रन्थमें एक जगह प्रभु कहते हैं—'हम तुम्हारे ये यज्ञ नहीं चाहते। अग्निमें पड़ी हुई आहुतियों और पुष्ट-प्राणियोंकी चरबीसे अब हमारा जी ऊब गया है। बकरी, मेमना या बैलका रक्तपान करनेसे मुझे सन्तोष नहीं होता।' (गो. शा. को. म. ख.)

गो-हत्याका परिणाम

जो उच्छृङ्खलतावश मांस बेचनेके लिये गौकी हिंसा करते या गो-मांस खाते हैं तथा जो स्वार्थवश कसाईको गाय मारनेकी सलाह देते हैं, वे सब महान् पापके भागी होते हैं। गौको मारनेवाले, उसका मांस खानेवाले तथा उसकी हत्याका अनुमोदन करनेवाले पुरुष गौके शरीरमें जितने रोएँ होते हैं, उतने वर्षोंतक नरकमें पड़े रहते हैं। (महा० अनु० ७४। ३–४)

यहूदी और ईसाइयोंमें गौका आदर

यहूदी

यहूदी पहले सुमेरियामें और पीछे जेरूसलममें रहते थे। जार्डनकी उत्तर तरफ अच्छे बैल होते थे। सबसे अच्छे बैल बाशानके होते थे। यहूदीलोग इनका बड़ा आदर करते थे। गौएँ और बैल गाड़ियों और हलोंमें जोते जाते थे। इनके द्वारा अनाज दँवाया जाता था। काम करते समय इनके मुँहमें जाली बाँधना मना था। ('दँवाई करते समय बैलके मुँहमें जाली मत लगाओ,' यहूदियोंके धर्म-शास्त्रकी यह आज्ञा थी।) यहूदियोंके आहारमें मुख्यतः दूध और दूधके ही पदार्थ थे। माम्राके देवदूतोंको इब्राहीमने मक्खन दिया और लड़ाईपर जाते हुए दाऊद अपने साथ 'चीज' की बर्फियाँ ले गये थे। फिलस्तीनको फतेह करनेके पहले ये लोग गोपाल-वृत्तिवाले थे और दूधसे ही निर्वाह करते थे। ये अपने जानवर गाँवकी परती जमीन या जंगलोंमें चराते थे और वर्षके अधिकांश दिनोंमें वन्य जीवन ही बिताते थे। जहाँ कहीं गौका दूध और मधुकी विपुलता होती उसीको ये स्वर्ग मानते थे।

यहूदियोंमें पशु-यज्ञका चलन था। इसके विरुद्ध कई सुधारक उठे। यशाया, अमास, होशेय आदि प्रवक्ताओंने अहिंसाका प्रचार किया।

'जो बैलकी हत्या करता है, वह मनुष्यकी हत्या करता है।' (यशया ६५ । ३-४)

'मैं यज्ञका नहीं बल्कि दयाका भूखा हूँ।' (होशेय ६—६)

'सब पदार्थ शुद्ध हैं। पर जो पदार्थ खानेसे मनुष्य लड़खड़ाने लगता है वह पदार्थ खाना उसके लिये पाप है। मांस न खाना, शराब न पीना और जिससे तुम्हारे भाईको ठोकर लगती है, वह न करना अच्छा है।'

(रोमकरोंको चिट्ठी १४—१९-२१)

यहूदी भक्तोंकी यह धारणा है कि याकूबने एक बछड़ेको मारकर उसकी माको कष्ट दिया था, इसीसे उसका बेटा यूसुफ उससे बिछुड़ गया।

ईसाई

बौद्धोंके समान ही ईसाईलोग भी पशुयागका निषेध करते हैं। ईसा कहा करते थे कि, 'मैं यज्ञ बंद करनेके लिये अवतरित हुआ हूँ।' यहूदियोंके 'पास ओवर' त्योहारपर ईसा जेरूसलम गये। वहाँ उन्होंने मन्दिरोंमें गाय-बैल, भेंड़, कबूतर आदिको देखा। उन्होंने रस्सी बटकर एक कोड़ा बनाया और सबको वहाँसे भगा दिया।

(योहान २ । १३-१५)

बाइबलमें वृषभको देवता माना है। फिलस्तीनकी खुदाईमें गौके आकारवाली मिट्टीकी मूर्तियाँ मिली हैं। यहूदियोंका दुग्ध-प्रेम ऊपर उल्लिखित हो चुका है। वे स्वर्गको स्वर्ग न कहकर दुग्ध-भूमि कहा करते थे। 'ओल्ड टेस्टामेंट'में गौ और गौके दूधके सम्बन्धमें कम-से-कम पचास उल्लेख हैं। यहूदी बहुत ही निपुण गोपालक थे। उस समयके प्राचीन ग्रन्थमें एक कथा है—कनान प्रदेशमें एक बार बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। इसलिये वहाँका रहनेवाला याकूब नामका एक गृहस्थ वहाँसे मिश्र देशको चला गया। उसका बड़ा बेटा उससे पहले ही वहाँसे भागकर मिश्र देशके राजाका आश्रय लिये बैठा था। उसे आगे राजगद्दी मिलनेको है। यह खबर पाकर वह राजा फारबके पास गया। राजाने पूछा, 'आप क्या काम करते हैं?' याकूबने उत्तर दिया, 'हमलोग पशु-पालन और पशु-संवर्द्धन करते हैं।' राजाने तुरंत उसे अपने राज्यमें पशु-पालन-शिक्षक नियुक्त किया। यहूदियोंकी इस विद्यामें बड़ी ख्याति थी।

एक किंवदन्ती है कि माम्राकी कन्दरामें रहनेवाले देवदूतोंको इब्राहीमने एक बार मक्खन-भोज दिया था। गोलियथ नामक राक्षसको मारनेके लिये जो सेना गयी थी उसका सेनापति दाऊद था। सेनाके लिये जो रसद जुटायी गयी थी उसमें दहीके दस बड़े-बड़े हंडे थे। दाऊदका सारा जीवन पशु-संवर्द्धनमें बीता था। वह बहुत बलवान्, ऊँचा हट्ठा-कट्ठा, धीर, उदार और मेधावी पुरुष था। कारण, वह गोपालोंका सेनापति था। (गोपति-सम्प्रदाय पृ० ९—११)

हिब्रू वर्णमालाके प्रथम वर्ण 'अलिफ' का अर्थ बैल है। (गो. शा. को. म. ख.)

सुमेरियन और हिराइट संस्कृतिमें गौका स्थान

मेसोपोटामियाके सुमेरियन लोगोंके ही जाति-भाई हिंदुस्थानकी वायव्य दिशामें रहते थे। इस सुमेरियन राष्ट्रसे ही बाबिलोन और असुर राष्ट्र निकले। हमारे वृष या वृषभ शब्दके ही समान बाबिलोनी भाषामें बैल शब्दका अर्थ 'वीर', 'समर्थ' होता था। 'एरिडु' शहरमें इआ और मेरोडश देवता वृषभरूप थे। सूर्य 'प्रकाश-वृषभ' और मेरोडश वृषभदेव 'प्रकाश वृषभ' प्राचीन ज्योतिषमें माने जाते थे।

सुमेरियन लोग पक्ष या पंखवाले बैल चित्रित करते थे। खोरसाबादमें द्वितीय सारगान राजाके प्रासादके आग्नेय द्वारकी दीवालके पास ऐसे बैल हैं। वे इसे दैवी संरक्षणका चिह्न मानते थे। अनिष्ट देवताओंसे रक्षा करनेका काम इन बैलोंके द्वारा होता था। 'असुर नसिरपालके राजप्रासादके प्रवेश-द्वारपर ऐसे बैल देख पड़ेंगे।' (युनि०हिस्ट्री २-१४८) बाबिलोनके इश्तर दरवाजेपर बने हुए इन पावन जीवोंके चित्र देखते ही दृष्टिमें भर जाते हैं। गुम्बजपर एक पंक्ति इन बैलोंकी है और उसके नीचे 'सिरुश' नामक राक्षस जीवोंकी एक कतार है। इसे देखकर इन लोगोंकी धार्मिक वृत्तिके प्रति चित्तमें आदर होता है।

बाबिलोनमें लोगोंके पास गाय-बैलोंके बहुतसे झुंड रहा करते थे। गाय-बैलोंकी अच्छी तरह देख-भाल करना और उन्हें घर छोड़ आना चरवाहोंका काम था। इसके लिये उन्हें नियत वेतन दिया जाता था। उनकी असावधानीसे यदि कोई नुकसान होता था तो वह उन्हें भरना पड़ता था। सुमेरियन अक्षरोंके चिह्नोंके साथ जो चित्र बनाये जाते हैं उनमें गाय-बैलोंके चित्र ही अधिक हैं। कारण, उन दिनों गोधन ही मुख्य धन था। सिक्कोंपर भी गौके ही चिह्न होते थे। गौके लिये सुमेरियन भाषाका शब्द 'गु' है।

सुमेरियामें इन दिनों खोजका काम बहुत हुआ है। 'तेलेल ओबीद' के मन्दिरकी दीवालपर गाय-बैल और ग्वाले चित्रित देख पड़ते हैं। कहीं गौका दोहन हो रहा है और बछड़ा उसके पैरसे बँधा है; कहीं दूध छन रहा है। एक चित्रमें बैलोंका जुलूस है। सीपके टुकड़ोंपर ये सुन्दर चित्र बने हैं और दीवारपर जड़े गये हैं। इनसे सुमेरियन लोगोंके गोपालनका भाव सामने आ जाता है।

असुरी लोगोंमें 'रम्मन' सर्वश्रेष्ठ देव माने जाते हैं। उनके स्तोत्रोंमें उनके लिये 'वैभवशाली वृषभ,' 'स्वर्गपुत्र', 'कर्कराधिपति', 'ऋद्धिनायक' आदि विशेषण आते हैं। इनसे 'वृषभ' का महत्त्व प्रकट होता है।

असुरी, बाबिलोनी अथवा मिश्र देशमें गौकी अपेक्षा बैलकी ही उपासना अधिक होती थी। खेतीके लिये गौकी अपेक्षा बैलका ही महत्त्व अधिक होता है। दूधके लिये गौका रिवाज हिंदुस्थानको छोड़ अन्यत्र बहुत नहीं है।

इस समय सुमेरी, असुरी और बाबिलोन प्रदेशोंपर ईराकका राजत्व है। खलीफा अब्दुल मलिकके समयमें हुज्जाजबिन यूसुफ ईराकके सूबेदार थे। लोगोंने जमीन ऊसर होनेकी शिकायत उनसे की, तब उन्होंने इसके कारणोंकी जाँच करके तुरत गो-हत्याकी मनाईका कानून बना दिया। इस कानूनका प्रजाने कोई विरोध नहीं किया।

एशियामाइनरके हिराइट लोग एक दैवी वृषभकी उपासना करते थे। इस दैवी वृषभकी एक प्रतिमा ईराकमें है। इन लोगोंके एक देवताका वाहन भी बैल ही है। इन्हीं वृषभवाहन देवताको रोमन लोगोंने ग्रहण किया था। मलेशियामें इनकी एक मूर्त्तिके दर्शन होते हैं।



गौको कीचड़से निकालनेसे नरक छूट जाता है

गां पङ्काद् ब्राह्मणीं दास्यात् साधून् स्तेनाद्द्विजं वधात्। मोचयन्ति च ये राजन् न ते नरकगामिनः॥

जो गायको कीचड़से, ब्राह्मणीको दासत्वसे, साधुको चोरसे और ब्राह्मणको वधसे छुड़ाते हैं, वे कभी नरकमें नहीं जाते।



इजिप्ट अथवा प्राचीन मिश्र देशमें गोपूजन

इजिप्टका प्राचीन नाम मिश्र देश है। आद्य महाराष्ट्रीय संशोधक राजाराम शास्त्री भागवत कहते हैं कि इजिप्ट नाम 'गोपथ' नामका ही रूपान्तर है। (विविध ज्ञा० वि० पु० २३) पशुचारण और कृषिकर्म दोनों ही वृत्तियाँ इस देशमें एक साथ थीं। कृषि सर्वत्र नहीं थी, इससे गोचरोंकी बहुलता थी। उत्तरी प्रदेशमें गोचर कम थे। इसलिये ग्रीष्ममें गाय-बैल चरवाहोंके साथ डेल्टा प्रदेशमें भेज दिये जाते थे। पीछे यह सुधार हुआ कि इन्हें बाहर भेजना बंद करके वहीं इनके लिये चारेकी पैदावार की जाने लगी।

गाय-बैलोंका पालन बड़ी सावधानीके साथ किया जाता था। मेहनतके काम गाय-बैलोंसे और गधोंसे भी लिये जाते थे। पर गधे अपवित्र समझे जाते थे, इसलिये गाय-बैलोंके साथ उन्हें नहीं जोतते थे। चीन और हिंदुस्थानकी तरह यहाँके जानवरोंकी उत्पत्ति भी 'झेंबू' नामकी गोजातिसे मानी जाती है। प्राचीन चित्रोंमें लंबे सींगवाले, छोटे सींगवाले तथा बिना सींगवाले गाय-बैल देख पड़ते हैं। गोवंशको विशुद्ध और हट्टा-कट्टा बनाये रखनेके लिये बड़ा यत्न किया जाता था। नैसर्गिक आहार यदि गाय-बैलोंको पूरा न मिला तो उन्हें पिष्टक खिलाया जाता था।

युद्धके रथोंमें बैल जोते जाते थे। तृतीय रामेससकी युद्धयात्राका जो चित्र मिलता है उसमें भारी पहियोंवाले रथोंमें चार-चार बैल जुते हुए देख पड़ते हैं।

ईसाके २००० वर्ष पूर्व एक देवताका मस्तक गोशृङ्गोंसे भूषित किया जाता था। दो शृङ्गोंके बीचमें चन्द्रका आकार बनाया जाता था। इन देवताका नाम हाथोर था और ये धन-धान्यकी समृद्धि करनेवाले माने जाते थे। नील नदीको दुधार गौकी उपमा दी जाती थी। नील नदीके तटपर सात प्रकारके देवताओंकी मूर्तियाँ हैं। जब नदीमें बड़ी बाढ़ आती है तब इन देवताओंका महोत्सव मनाया जाता है, उसमें गौओंके जुलूस निकलते हैं।

हाथोर दैवी गौ है। प्रथम सेतीकी कब्रमें यह दृश्य दिखाया गया है कि शूदेव और उनके अनुयायी इस दैवी गौको पृथ्वीसे ऊपरकी ओर उठा रहे हैं। हाथोर गौके समान ही अपिस वृषभकी उपासना की जाती है।

गोपूजन

पिरामिड्स और खुदाईसे प्राप्त मन्दिरों और शिलालेखोंको देखनेसे पता लगता है कि प्राचीन मिश्रकी संस्कृति ईसाके पाँच हजार वर्ष पूर्व अर्थात् वर्तमानकालसे ७ हजार वर्ष पूर्व भी विद्यमान थी। मिश्रमें गाय-बैलोंकी पूजा होती थी।

हमारे यहाँके वेदवेदान्त-प्रतिपादित 'मूलपुरुष' के समान ही मिश्र देशकी संस्कृतिमें 'डेमिअर्ग' (Demiurge) के नामसे विश्वकर्त्ता, विश्वाधिपति, सब देवोंके मूलदेव सूचित होते थे। उन्हींको पहले 'अ-तम' कहते थे, पीछे 'फ्तः' 'रा' और 'हरख्ति' उनके नाम हुए। 'अ-तम' से सूर्यदेवता दर्शक 'रा' उत्पन्न हुए। (१) 'रा' और (२) शू (वायु) + टेफ्जट, (३) गेब्+नट्, (४) ओसिरिस्+इसिस्, (५) सेथ् + नेफ्थिस्—इन चार जोड़ियोंके साथ एक पञ्चायतन बना। यही प्रथम परमेश्वर-परिवार है। इस पञ्चायतनका अधिकार सारे देशपर तथा अन्य देशोंपर भी है। इनसे जो अन्य देवता निर्माण हुए उनका अधिकार उनके अपने ही क्षेत्रोंतक मर्यादित है। इन देवताओंमें फ्तः—अपिस, (वृष) म्नेन्हिस (वृषभ), बख (वृषभ), नट् (स्वर्धेनु), मेन्तु ये नाम गोवाचक हैं। नट् नभोदेवता है, गौकी देहके साथ एकरूप हो जानेसे उसे 'हथोर' नाम प्राप्त हुआ। नट्की कोखसे नित्य 'शुद्धमुख दुग्धपायी बछड़ा' उत्पन्न होता है। वही 'रा' देव (रवि) है।

पृथ्वीपर देवताओंमें परस्पर बड़ा कलह मचा, तब 'रा' ने देवताओंकी एक सभा निमन्त्रित की। यह तै हुआ कि 'हथोर' इन सबकी व्यवस्था करे। हथोरने सिंहका रूप धारण कर सारी व्यवस्था की। पर 'रा' लड़ाई-झगड़ोंमें ऊबकर स्वर्धेनुकी पीठपर सवार हो पृथ्वीसे दूर निकल गये। उनके पीछे शू और टेफजटकी जोड़ी गद्दीपर बैठी। उनके पीछे ओसिरिस् (नील नद) और इसिस (उपजाऊ भूमि) की जोड़ी आयी। इनका शासन बहुत सुखप्रद हुआ। पर ओसिरिस्को उसके भाई सेथ्ने मार डाला। उसकी देहके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। ओसिरिस्की पत्नी इसिस्ने सब टुकड़ोंको ढूँढ़ा और उन-उन स्थानोंमें ओसिरिस्की समाधियाँ बनायीं और ओसिरिस्की नयी दिव्य-देह उत्पन्न की। इससे इसिस्का जो पुत्र हुआ वही मनुष्योंका पहला राजा 'होरस्' है। पीछे इसिस् हथोर गौका रूप धारण कर होरस्की पत्नी बनी, तब उसे बड़ी मा कहने लगे।

मिश्र देशके उत्तर और दक्षिण दो विभाग थे। उसके विभिन्न प्रदेशोंको 'नोम' कहा करते थे। उत्तर भागमें

बीस और दक्षिण भागमें बाईस 'नोम' थे। प्रत्येक 'नोम' और उसकी राजधानीका एक-एक बोधचिह्न और देवता होता था। जिन स्थानोंके बोधचिह्न और देवताओंके नाम गोवाचक थे, उनकी तालिका नीचे दी जाती है—

	सामान्य चिह्न	'नोम' अनुक्रम और बोधचिह्न	नगरदेवता	राजधानी	ग्रीक, रोमन या अर्वाचीन नाम
दक्षिण मिश्रदेश	समुद्री शशाक	२ होरस्का सिंहासन	समुद्री शशाक { होरस्, हथोर, इहि	झेबेट, बेहेडट, मसेंट }	एडफू
		४ राजदण्ड	समुद्री शशाक और बख बैल } मेन्तु पश्चात्— चन्द्र (खोनसू) [अमन रा और नट् (स्त्री) का पुत्र]	परमेन्तु	हरमाँथिस
				अमान	थीसस
		६ घड़ियाल	गाय { हथोर (स्त्री), होरस बेहेडिटीका पुत्र	देवी स्तम्भ	टेंटिरिस (डेंटेरा)
		७ सिस्ट्रम (एक वाद्य)	गाय नेब्ट-हेर उर्फ नेफ्थिस अनंतर गाय हथोर	हेट	डिओपोलिसपर्व
	वृक्ष	१० बजेट सर्प	गाय हथोर	जेवटी और परवजेट	अक्रोडिटोपोलिस
		१४ अनेफ पीहट	गाय हथोर	गेसा	कुसी
		२२छुरी या तलवार	गाय हथोर इसिस्	मानेन्यु और परहेम् (धेनुनिकेतन)	उत्तर अक्रोडिटोपोलिस
उत्तर मिश्रदेश		१ श्वेत प्राकार	अपिस वृषभरूप, फ्त सिंहिनीरूप, सेखमेट हथोर गोरूप }	इन्वदेज	मेंफिस
	त्रिशृङ्ग पर्वत	६ काखासेट (ऊसर देशका बैल)	'रा' अमान ;'रा'	खासेट	क्जोइस
	बंसी (मछली पकड़नेकी)	७ इमेंटी	ओसिरिस् और इसस् तथा उनका पुत्र होरस्	परहानेब इमेंटी	मेटेलिस
		१०केतऊर अथवा बृहत् कृष्ण वृषभ }	होरस खेंटीखेट	हेत्ताहेर्जिव	आथ्रिबिस
		११काहिसेबहेसेबवृषभ	क्षेरमेर्ती द्विनेत्र होरस्	हेसेबेट शेडन्यू	फारबीथास
	वृषभ	१२ गो-हा	अन्हर्ट(समुद्रीशशाक)	जेबेटनेटर	सेबेन् मिटोस
		१३ हेक्बज	अतम अनन्तर— 'रा' और म्वेह्निस वृषभ	पर रा	

इस प्रकार ४२ प्रान्तोंमेंसे १५ प्रान्त ऐसे हैं जिनके साथ गोवाचक बोधचिह्न और देवता हैं ।

नगरमें जो देवता हो, उसे तथा उसकी कक्षामें आनेवाले सब प्राणियों और पदार्थोंको पवित्र माना जाता था । फिर भी किसी बैल, गाय, भेड़, मगर या अन्य प्राणीको विशिष्ट चिह्नोंसे ढूँढ़ निकालते थे और देवतारूपसे देवालयमें उसे प्रतिष्ठित कर उसका पालन-पोषण और पूजन करते थे । मृत्युके पश्चात् उसकी देहमें मसाला भरकर भव्य-सी कब्र बनवाकर उसमें उसे गाड़ते थे । (अपिस् वृषभकी ऐसी २४ कब्रें मेंफिसमें मिली हैं ।) देवालयमें उसके स्थानपर दूसरेको लाकर रखते थे । इस प्रकार उनकी परम्परा चला करती थी । इन प्राणियोंमेंसे यदि किसी प्राणीकी कोई जान-बूझकर हत्या करता तो उसे देहान्त-दण्ड दिया जाता था । यदि अनजानमें ऐसा अपराध किसीसे हो जाता तो उसे धर्मगुरुकी आज्ञाके अनुसार दण्ड दिया जाता था ।

राजाके मरनेपर उसकी उत्तरक्रियाके समय स्वर्गमें उसके सुखके लिये गोरूपी नेफ्थिस और इसिस्का आवाहन किया जाता था । 'थयनाइट' वंशके राजाओंको शक्तिशाली वृषभसे उपमा दी जाती थी । इस वंशके एक राजाका चित्र मिला है उसमें यह दिखाया गया है कि राजा बैलके रूपमें अपने सींगोंसे शत्रुको नीचे पटक रहा है ।

उस कालके चित्रोंसे जान पड़ता है कि मिश्रदेशके बैल बिना थूहे (डील) के होते थे ।

तृतीय रामेससके राजत्वकालमें देवालयोंकी आयकी एक फेहरिस्त अर्मन नामक ग्रन्थकारने तैयार की है । वह इस प्रकार है—

	थीबस	हेलिओपोलिस	मेंफिस
गाय बैल—	४,२१,३६२	४५,४६४	१०,०४७
बगीचे—	४३३	६४	५
खेतीकी जमीन (एकड़)	५,९१,०७१	१,०८,९२७	६,९१६

मेंफाइट राजवंशीय राजाओंके महलोंपर 'खोनस्' नामक वृषभ देवताके चित्र खींचे जाते थे । हमारे यहाँ जिस प्रकार लोग गौकी शपथ लेते हैं उसी प्रकार प्राचीन मिश्रमें 'सत्यके चित्रगुप्त खोनस् वृषभदेव देख लेंगे' यह कहकर शपथ ली जाती थी ।

हिंदू वैतरणीको पार करनेके लिये गौकी पूँछ पकड़ते हैं, उसी प्रकार मिश्रवासी गौकी पूँछ पकड़कर नील नदी पार करते हैं । मिश्रदेशमें गोहत्या नहीं होती थी । गोहत्या करनेवालेको जानसे मार डालते थे । हीरोडोटसने लिखा है कि मिश्रवासी बैलोंका यज्ञ करते थे पर गौकी हत्या कदापि नहीं करते थे । मरे हुए बैलको गाड़ते थे पर मरी हुई गौको नदीमें बहा देते थे । (हीरोडोटस यूटर्प ४०-४२)

गौ पशु होनेपर भी मुक्तिकी अधिकारिणी है

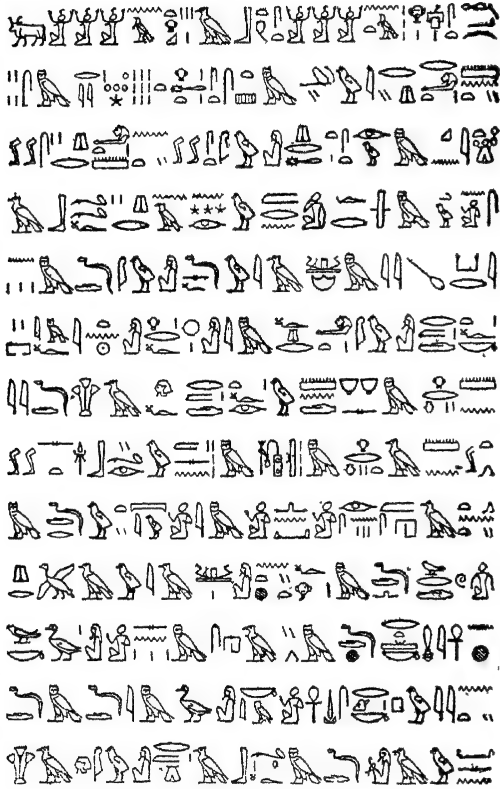
गौका जीवन निष्कामसेवामय है । ब्रह्माजी कहते हैं—गौ सभी कार्योंमें परम उदार और सम्पूर्ण गुणोंकी खान है । वह साक्षात् सर्वदेवमयी है । समस्त प्राणियोंपर सदा दया करती है । मैंने उसे प्राचीन कालमें सबके पोषणके लिये ही उत्पन्न किया था । इसीलिये मैंने उसको परम सुन्दर यह वर दिया था कि एक ही जन्ममें तुम्हें निश्चय ही मोक्षकी प्राप्ति हो जायगी । अतएव यहाँ जो गौएँ मरती हैं वे सभी मेरे ही धाममें आती हैं । उनके शरीरमें पापका कणमात्र भी नहीं रह जाता ।*

* अस्य कायो मया सृष्टः पुरैव पोषणं प्रति ॥
अतएव मया दत्तं वरं चातिसुशोभनम् । एकजन्मनि स मोक्षस्तवास्त्विति विनिश्चितम् ॥
अत्रैव ये मृता गावस्त्वागच्छन्ति ममालयम् । पापस्य कणमात्रस्तु तेषां देहे न तिष्ठति ॥
(पूनाकी प्रति पद्म० सृष्टि० ४५ । १३०–३२)

इजिप्शियन चित्रलेख

[श्रीयुत ई० ए० वालिस बज एम्० ए० लिट्, डी० डी० लिट्, डी० लिट्० द्वारा प्रकाशित इजिप्शियन लिटरेचर भाग १से संगृहीत]

इजिप्ट (मिश्रदेश)के शेटी राजाके समाधि-मन्दिरके सभामण्डपकी एक छोटी-सी कोठरीकी चारों दीवारोंपर लिखे हुए चित्र-लेखका एक अंश इस प्रकार है—



यह समाधि-मन्दिर नील नदीके पश्चिम तटपर थेबीस नामक ग्रामके समीप है। दरवाजेसे भीतर प्रवेश करनेपर सामने दीवारपर लाल रंगमें रँगा हुआ स्वर्धेनुका एक बड़ा-सा चित्र देख पड़ता है। धेनुके पेटके निम्नभागमें एकके बाद एक १३ पञ्चशिख तारे बने हुए हैं और इनके नीचेकी ओर 'रा' देवताकी दो नौकाएँ हैं, जिनके नाम 'सेक्तेंत' और 'मातेंत' हैं। इस स्वर्धेनुके प्रत्येक पैरसे सटे हुए दो-दो देवता हैं और 'शू' नामक देवताने अपने दोनों हाथोंमें इस गौको उठा रक्खा है। 'शू' देवता, प्राचीन मिश्रदेशीय धारणाके अनुसार, मूल देवताकी छायासे उत्पन्न पुत्र है। मिश्रदेशवासी इसीसे सूर्यकी उत्पत्ति मानते हैं।

सूर्य किस प्रकार उत्पन्न हुए और 'रा' देवताने किस प्रकार 'शू' को सूर्यका क्रम बताया इत्यादि विवरण देनेके पश्चात् धेनु-अध्याय आरम्भ होता है। इस अध्यायमें यह बतलाया है कि स्वर्धेनु कैसी होती है, उसका चित्र कैसे बनाना चाहिये, दो नौकाओंका तथा सूर्यका चित्र भी किस प्रकार बनाना चाहिये और फिर स्वर्धेनुके पैरोंके पास खड़े भिन्न-भिन्न देवताओंके नाम बतलाकर उनके स्थान नियत किये गये हैं। यहाँतक सब समझमें आता है। पर इसके अनन्तर कुछ मन्त्र हैं जो पढ़े तो जा सकते हैं पर जिनका अर्थ समझमें नहीं आता। हो सकता है, जादू या तन्त्र-विद्याके मन्त्र हों। यह जो कुछ भी हो, पर गौके चित्रका आशय तो स्पष्ट है। 'रा' देवताकी दो नौकाएँ जहाँ चलती हैं, वह आकाश ही गौ है। उसके चार पैर कभी न बदलनेवाली चार दिशाएँ हैं। उसकी पीठपर स्वर्ग है और वहाँ 'रा'का साम्राज्य है। जो लोग मरकर स्वर्ग जाते हैं, उनपर इन्हींका स्वामित्व है। यही नहीं, बल्कि अन्य देवता और स्वर्गस्थ यक्ष-गन्धर्वादि भी यहीं रहते हुए पृथ्वीपर अपनी-अपनी हुकूमत चलाते हैं।

यह गौ-पुराण पहले-पहल चँपोलियनने प्रकट किया। पर सन् १८७४ तक इसका अर्थ जाननेका कोई साधन ही नहीं था। जर्मन-भाषामें इसका प्रथम अनुवाद प्रकाशित होनेके बाद फ्रेंच-विद्वानोंने इसे समझनेका प्रयत्न आरम्भ किया और सन् १८८५ में इसका पूरा अनुवाद प्रकाशित किया। मूल पुराण-भागका अनुवाद इस प्रकार है—

''इस अध्यायको पढ़ते हुए गौका चित्र अथवा उसकी मूर्ति सामने रहे। 'हेहेन्ती' उसके कंधेके पास रहें और उसे सहारा दें। 'हेहेन्ती' उसकी एक तरफ रहें। उसके शरीरका एक हाथ और चार बित्ता अंश रँग देना चाहिये। उसके उदर-भागपर नौ तारे हों। 'सेत्' उसकी दोनों टाँगोंके पास रहकर यह देखता रहे कि उसके दोनों पैरोंका

काम ठीक तरहसे हो रहा है या नहीं। उसके दोनों पैरोंके सामने 'शू' रहे। इस 'शू'का रंग हरे कनात-जैसा हो। इसके दोनों हाथ उन नौ तारोंके नीचे आ जायँ और उनके बीचोंबीच 'शू'का नाम लिखा जाय। पतवारवाली नाव और दुहरा देवल यहाँ आवे और उसपर 'आतेन' अर्थात् चक्र रहे। देवलमें स्वयं 'रा' विराजेंगे। अर्थात् 'शू'के सामने अथवा उसके हाथके पास 'रा'का स्थान होगा। (अन्यत्र 'रा'का स्थान 'शू'के पीछे पर हाथके पास बताया है।) इस गौकी कोख दोनों पैरोंके बीचमें बायीं ओर बनावे और उसके दोनों पैरोंपर बीचोंबीच (१) 'बाह्य स्वर्ग', (२) 'मेरे अंदर जो है वही मैं हूँ', (३) 'किसीको भी मैं इसे बहकाने न दूँगा'—ये लेख रहें।' 'हे पुत्र! तुम कभी खाली न बैठो।' इसीकी दूसरी तरफ 'तुम्हारा आश्रय तुम्हारा जीवन है।' 'तुम्हारा पुत्र मेरे पास है।' 'प्राण, शक्ति और आरोग्य तुम्हारी नासिकामें उत्पन्न होंगे।' इस प्रकारका लेख भी वहाँ लिखा हुआ है।

'शू'के पीछे उसके कंधेके पास लिखा है, 'वे रक्षा करते हैं।' पीछेकी ओर पैरोंके पास दूसरी ओर लिखा है, (१) 'मात', (२) 'वे प्रवेश करते हैं', (३) 'मैं नित्य रक्षा करता हूँ।' कंधेके नीचे और बायें पैरपर और उसके पीछे यों लिखा है—'जो कोई सारी सृष्टि बंद करता है' और 'शू'के मस्तकपर गौकी जङ्घाओंके नीचे पैरोंके पास लिखा है, 'बहिर्गमनका रक्षक'। उसके पैरोंके पासकी दोनों मूर्तियोंके पीछे अर्थात् उनके सिरपर यों लिखा है—(१) 'वह वयोवृद्ध जिसकी यहाँसे जाते हुए पूजा की जाती है।' 'वह वयोवृद्ध जिसकी अंदर प्रवेश करते हुए स्तुति की जाती है।' दोनों देवताओंके मस्तकपर किन्तु उन देवताओंकी जङ्घाओंके बीचमें लिखा है—'श्रोता,' 'ऊपरके स्वर्गका राजदण्ड' और 'तारका'।

—गोरक्षण अं० ८ (१७।७।३५)

अमेरिका और गो-जाति

रेड-इंडियन (रक्तवर्ण हिंदू) लोगोंके समयमें अमेरिकामें ये गौएँ नहीं थीं, जो आज वहाँ देख पड़ती हैं। 'प्रेरी' नामक तृणावृत प्रदेशमें बायजन जातिके प्राणियोंकी आबादी बहुत थी। पर रेड इंडियन उनका उपयोग दुग्धादिके लिये नहीं करते थे। सन् १४९३ में कोलम्बस अपनी दूसरी यात्राके समय अपने साथ यूरोपसे कुछ गौएँ सानडोमिंगो टापूमें ले गये। एशियामें इन गौओंका जो मूल उत्पत्ति-स्थान रहा, वहाँसे स्थानान्तर करते-करते गौओंकी यह जाति एक लंबी यात्राके बाद अमेरिका पहुँची। सान-डोमिंगोसे इस जातिकी गौएँ सन् १५२५ में मेक्सिको और मेक्सिकोसे सन् १५३८ में फ्लोरिडामें दाखिल हुईं।

इसके बाद सन् १६२० में पहले-पहल अंगरेज अमेरिका पहुँचे। इस बीच पुर्त्तगीज न्यूफाउण्डलैंडमें, फ्रेंच अकेडियामें और अंगरेज वर्जीनियामें अपने साथ गौओंको ले गये। इस प्रकार अमेरिकाके भिन्न-भिन्न स्थानोंमें ये गौएँ सीधे यूरोपसे ही आयीं। चारों ओर घने जंगल थे, इससे एक स्थानसे दूसरे स्थानके लिये रास्ते ही नहीं थे।

गोपति-सम्प्रदाय

अमेरिका आनेवाले ये यात्री अपनी पहली यात्रामें गौओंको साथ नहीं लाये थे। इससे उन्होंने बड़ा दुःख उठाया। मातृ-हृदयसे बिछुड़े हुए बालक दूधके बिना मरने लगे। थोड़े ही दिनों बाद, हालैंडसे एक जहाज आया, उसपर लदकर कुछ गौएँ और भेड़-बकरियाँ नये प्रदेशमें आयीं। ब्राडफोर्डके गवर्नरने अपनी डायरीमें लिखा है कि इस जहाजके आनेपर यहाँ हर छः मनुष्योंके पीछे एक गौ और दो भेड़ें हो गयीं। पहली यात्रामें गौओंके बिना इन्हें जो कष्ट हुआ उससे आगे आनेवाले यात्रियोंने सबक सीखा। दक्षिण और उत्तर अमेरिकाकी मध्य रेखाको लाँघते हुए, अलेघनी और मिसिसिपी नदियोंको पार करते हुए, ये लोग चार पहियोंकी एक बैलगाड़ी अपने साथ रखते थे और इस गाड़ीके पीछे-पीछे दुधारू गौएँ चला करती थीं। इस यात्रामें यात्रियोंके बल-बुद्धिकी पूरी परीक्षा होती थी और इससे उन्हें अपनी सन्ततिको बलवान् और सुदृढ़ बनानेकी आवश्यकताका तीव्र अनुभव होता था। गौके दूधके सिवा और कोई पौष्टिक पदार्थ वहाँ मिलना असम्भव था। इससे दूधका विशेष महत्त्व था। अमेरिकाके ये मूलप्रवासी इस प्रकार 'गोपति' पदवीके अधिकारी हुए। इन्होंने अमेरिकामें गौएँ पालनेकी पद्धति चलायी। प्रत्येक अमेरिकनने स्वानुभवसे यह जान लिया कि दूध ही ऐसा

पदार्थ है, जो सहज सुलभ और चाहे जब सेवन करने योग्य है। दूसरा कोई आहार ऐसा नहीं जो इस तरह यात्राकालमें सदा तैयार रहे। इसलिये ये लोग उपजाऊ और समृद्ध तृणावृत भूमिसे यथेष्ट लाभ उठाते थे। आरम्भमें यह सारा देश अरण्यमय और मनुष्योंके लिये अज्ञात-सा था, पर आज वहाँ जहाँ-तहाँ गोपति-ही-गोपति देख पड़ते हैं। अमेरिकामें जितनी अच्छी गौएँ हैं, उतनी पृथ्वीके अन्य किसी भी देशमें नहीं हैं।

अमेरिकाका गोपति-सम्प्रदाय पहले अतलान्तक उपनिवेशसे आरम्भ हुआ। इसी समय डच औपनिवेशिक हडसनके उस पार घर बनाकर रहने लगे। वहाँसे यह सम्प्रदाय अम्सटर्डम और न्यूयार्कके अंगरेज औपनिवेशिकोंमें पहुँचा। हडसनके पश्चिम तटपर इस समय हर्कीमर, ओनिश और आरेंज कौंटी नामकी रियासतें हैं। वहाँसे आगे बराबर गौओंके राज्य-जैसे ही सब स्थान देख पड़ते हैं। इन स्थानोंके अधिवासी इन गो-राज्योंके अधिपति हैं। सब सुखी, सम्पन्न और सुधारप्रिय हैं। उनका सारा वैभव उन्हें गोरक्षासे ही प्राप्त हुआ है। हर्कीमर रियासत उत्तम चक्का दहीके लिये प्रसिद्ध है। दहीके व्यापारसे वहाँके गोपति करोड़पति हो गये हैं। आदिम औपनिवेशिकोंसे उनका यही व्यापार चला आता है। आरेंज कौंटीका मक्खन जगत्प्रसिद्ध है। वहाँके लोग मक्खनको सोना समझते हैं। वहाँका मक्खन होता भी है सोने-जैसा पीला। वहाँके बैंकोंके नोट भी पहले पीले रंगके होते थे। मक्खनके व्यापारसे ही यहाँ सोना बरसा और लोग इतने सुखी तथा सम्पन्न हुए। पहलेसे ही हडसनका पश्चिम तटवर्ती प्रदेश दूधके व्यापारमें सबसे श्रेष्ठ रहा है।

जिस प्रकार यूरोपके भिन्न-भिन्न देशोंसे आनेवाले ये ग्वाले अपनी-अपनी परम्परा और विशेषता लेकर अमेरिकामें आये उसी प्रकार उनकी गौएँ भी अपनी-अपनी विशेषता लेकर वहाँसे आयी हैं और उस विशेषताको उन्होंने बना रक्खा है।

हडसन नदीके तटपर पहले-पहल डच लोग आकर बसे। वहाँ उन्होंने दहीका व्यवसाय आरम्भ किया। वे हालैंड और फ्रीन्सलैंडकी गौएँ अपने साथ वहाँ ले गये। ये होलस्टीन जातिकी गौएँ कहलाती हैं। स्वीजरलैंडके ऊँचे पर्वतोंपरसे जो गौएँ यहाँ लायी गयीं वे स्विस् जातिकी गौएँ कहलाती हैं। इन गौओंके पैर बहुत मजबूत होते हैं। कारण, ग्रीष्म ऋतुमें इनकी पूर्वजाओंको अच्छे चारेके लिये पर्वतोंपर चढ़ना पड़ता था। जाड़ेके दिनोंमें स्विस् लोग अपनी गौओंको किसी कन्दरामें रखते थे, क्योंकि स्वीजरलैंडके सब पर्वत शीतकालमें हिमाच्छादित रहते हैं।

स्काटलैंडसे जो गौएँ लायी गयीं वे आयर-शायर जातिकी गौएँ कहलाती हैं।

इंग्लैंड और फ्रांसके बीच समुद्रमें जर्सी और गर्नसी नामके जो दो टापू हैं वहाँसे लायी गयी गौएँ अमेरिकामें उन्हीं टापुओंके नामोंसे प्रसिद्ध हैं। ये गौएँ अमेरिकामें सर्वत्र हैं। (गोपति-सम्प्रदाय पृ० २०—२८)

हुमायूँकी गो-मांससे घृणा

मुग़ल बादशाह हुमायूँके खास नौकर 'जौहर'ने हुमायूँकी कुछ स्मरणीय बातें फ़ारसीमें लिखकर रक्खी थीं। उनका अंग्रेजी अनुवाद मेजर चार्ल्स स्टुअर्टने सन् १९०४में करके उन्हें प्रकाशित किया। उस अनुवादित ग्रन्थके ११०वें पृष्ठपर लिखा है—

"एक बार ईरान जाते समय हुमायूँको दिनभरमें एक बार भी खानेका अवसर नहीं मिला। रातके समय पड़ावपर पहुँचने-पर उन्हें बड़े जोरोंकी भूख लग रही थी। उन्हें पता चला कि उनके सौतेले भाई कामरान और मा रायकी बेगमका पड़ाव भी निकट ही है। यह जानकर हुमायूँने अपने नौकरोंको भेजकर कामरानके पाससे कुछ भोजन मँगवाया। भोजनमें थोड़ी साग-तरकारी और कुछ मांसके पदार्थ थे। बादशाह थालपर बैठ तो गये; किन्तु सहसा उन्हें एक शंका हुई कि हो सकता है इस भोजनमें गोमांस हो। उन्होंने बढ़ाया हुआ हाथ खींच लिया और पूछ-ताछ की तो पता चला कि उसमें गोमांस ही है। इसपर हुमायूँ उद्विग्न होकर बोल उठे, 'हाय रे कामरान! पेट भरनेका तेरा यही रास्ता है? अपनी पवित्र माको तू यही गोमांस खिलाता है? उनके लिये तू चार बकरियाँ लेनेमें असमर्थ हो गया? हमारे पिताकी कब्रको झाड़ने-बुहारनेवालोंतकके लिये गोमांस खाना अनुचित है। पिताजीने जिस तरह अपने कुटुम्ब-कबीलेवालोंका गुजर किया; क्या उसी तरह हम चारों पुत्र नहीं कर सकते?' ऐसे खेदपूर्ण उद्गार प्रकट करते हुए बादशाहने उस भोजनके थालको बगलमें सरका दिया और केवल एक गिलास शरबत पीकर ही वह रात काटी। दूसरे दिन उन्हें भोजन मिला।"

उपर्युक्त घटनासे यह भलीभाँति सिद्ध होता है कि भारतसम्राट् मुग़ल बादशाह हुमायूँ गोमांस-भक्षणके कितने विरोधी थे।

गौके सम्बन्धमें ज़रथुश्तीधर्मकी कुछ बातें

(लेखक—श्रीयुत एर्वद के० एस्० दाबू०, एम्० ए०, एफ्० टी० एस्०)

गायके प्रति पारसियोंके धार्मिक कर्तव्यका ज्ञान 'कल्याण' के पाठकोंको शायद रुचिकर लगे । इस लेखमें प्रस्तुत विषयके सविस्तर आलोचनाकी चेष्टा नहीं की गयी है। केवल ज़रथुश्ती-धर्म एवं रिवाजोंसे कुछ बातोंका उल्लेख भर कर दिया गया है । यह बात तो सिद्ध हो चुकी है कि पारसियोंके प्राचीन पूर्वजों और वैदिक हिंदू आर्योंके बहुत-से आचार-विचार जब वे काकेशस पर्वतोंपर एक साथ रहा करते थे, समान थे । निम्नलिखित प्रकरणोंमें हिंदू और पारसी धर्मकी तुलनाके लिये नये मसाले मिलेंगे ।

(१) अवेस्ताकी भाषामें गायके लिये 'गौ' शब्द आता है । इसकी व्युत्पत्ति 'गि' अथवा 'जि'=जीना धातुसे की जाती है । पर 'गौ' शब्दके भी तीन अर्थ हैं—(क) सम्पूर्ण विश्व, (ख) सम्पूर्ण प्राणिवर्ग और (ग) विश्वका प्राण।

(२) गौके दो पक्ष हैं । इसका 'शरीर' और इसका 'आत्मा' और 'जीवनके आत्मा' (गेउस् उरुण) को देवदूत माना जाता है । उत्सवों आदिमें शरीर-पक्षको दूध और मक्खन आदिके प्रतीकद्वारा व्यक्त किया जाता है। आध्यात्मिक पक्ष तो अदृश्य है, धर्मोत्सवोंमें उसका आवाहन किया जाता है और ज़रथुश्ती-धर्मावलम्बीका यह एक कर्तव्य है कि वह इस प्रकार जीवन-यापन करे कि 'जीवनके आत्मा' को संतुष्ट कर सके । (या क्ष्वविषा गेउश्चा उरवानेम्= जिससे मैं जीवनके आत्माको संतुष्ट कर सकूँ ।—गाथा १ । १)

(३) इस 'जीवनके आत्मा' के सम्बन्धमें एक बड़ा ही काव्यमय और अन्योक्तिमय वर्णन आता है । यह गायके रूपमें ज़रथुस्त्रके जन्मके ठीक पहले सर्वशक्तिमान् परमात्माके सिंहासनके पास जाकर अभियोग करती है । उसने अपने संकटोंका वर्णन करके एक रक्षकके लिये प्रार्थना की। त्रिमूर्तियोंकी सभामें उसके अभियोगपर विचार होता है और यह तै किया जाता है कि महान् गुरु ज़रथुस्त्रको ईरानमें जन्म लेकर 'गौ' का आदर करना सिखानेके लिये भेजा जाय । यस्न[1] २९ में गायका यह प्रतिवाद श्रीमद्भागवत-पुराणके उस दृश्यसे बिल्कुल मिलता है, जहाँ भगवान् श्रीकृष्णको उसी प्रकारके अभियोगके निवारणार्थ अवतरित होना पड़ा । इस प्रकार गाय 'जीवनके आत्मा' क्या, सारे विश्वकी प्रतीक बनी थी ।

(४) विकासवादके सिद्धान्तके अनुसार नाना स्तरोंको पार करती हुई ऊर्ध्वगामिनी जैवसृष्टिमें जन्तु-जगत्का आविर्भाव पाँचवें गहाँबार[1]में होता है । इस मंडलका राजा एक सुन्दर बैलके रूप (गेउशहुधाओ) में दिखाया गया है और बादमें यह स्थान 'गाव्योदाद' नामके एक विशेष नमूनेके बैलको दिया गया । यह गाव्योदाद सब जन्तुओंका संरक्षक—पिता था । जब विकासकी छठी (मानवी) सीढ़ी निकट आती है तब यही 'गाव्योदाद' उसके लिये बीज प्रदान करता है और इस प्रकार सर्वप्रथम नरतनधारी जीव इस 'सुन्दर बैल'के संतान थे । इसीलिये उत्सवों आदिमें इस पूर्वजको इतनी श्रद्धाके साथ स्मरण किया गया है । ज़रथुश्ती-धर्मानुसार यह सृष्टिक्रम (बुनदहेश) सामान्यरूपसे मान्य डारविनके सिद्धान्तके विरुद्ध ही नहीं है, वरं वहाँ इस बातका स्पष्ट रूपसे उल्लेख है कि वनमानुष तो मनुष्योंके तथा पशुओंके साथ कुत्सित सहवास करनेके फलस्वरूप पापके सन्तान हैं और एक अप्राकृत संकरजाति हैं ।

(५) सात महादेवदूतों (सप्तर्षि)मेंसे दूसरा, जिसका नाम बहेमन है, जन्तु-जगत्का स्वामी है । और जब कभी मनुष्य 'गाय'के साथ दुर्व्यवहार करते हैं तो लिखा है कि वह अप्रसन्न होता है । वह महादेवदूत भोलेपनका निरूपक है, इसलिये यह एकदम उचित ही है कि अपने सांसारिक शरीरमें गाय भी निर्दोष—भोलेपनकी प्रतिमा बने । इस महादेवदूत (दिव्य त्रिमूर्तिमें दूसरे देवता) का वर्णन गाथाओंमें 'गेउश–तषा' (=गायका आकार-विधायक) कहकर किया गया है ।

(६) ज़रथुश्ती मतावलम्बियोंके यस्न (यज्ञ) में जल ब्रह्माके शुद्ध स्वरूपका द्योतक है; दुग्ध विष्णुके आत्माका द्योतन करता है और अंगूर (या ऐसे ही अन्य फलों) का रस सृष्टिके निधान महेश अर्थात् महेशतत्त्व—मृत्युञ्जयत्व-को निरूपित करता है । इस प्रकार ज़रथुश्ती-धर्मके सभी

१. पारसियोंके धर्मग्रन्थ अवेस्ताका भाग-विशेष जिसमें यज्ञका वर्णन है ।

१. 'युग' की तरह पारसी धर्मग्रन्थोंमें उल्लिखित काल-विभागविशेष ।

उत्सवोंमें दूध और मक्खनका व्यवहार सदैव आवश्यक है। 'गाओमत-ज़स्त'=जिन हाथोंमें गायका दूध-घी है, वे ही सविधि आहुति समर्पण करते हैं। ज़रथुश्ती-धर्मके महोत्सवोंमें दूध-घीका होना आवश्यक है। ये विश्वके जीवनको प्रतिरूपित करते हैं।

(७) ज़रथुश्ती-धर्मोत्सवोंमें और भी कई प्रतीकोंका व्यवहार होता है--(क) सभी प्रमुख मन्दिरोंमें एक शुद्ध शुभ्रवर्ण वृषभ (बिना बधिया किया हुआ और बिल्कुल निर्दोष–बेदाग) को अभिषिक्त करके रखना होता है। यह शायद नंबर (४) में बताये हुए बैलको और नंबर (५) में बताये हुए देवदूत 'बेहमन' को सूचित करता है। एकके मर जानेके बाद एक दूसरेको चुन करके अभिषिक्त करना होता है।

(ख) उसकी पूँछके बालको अभिमन्त्रित करके एक अंगूठी (एक प्रकारकी चुंबकीय संघातक) के ऊपर लपेटकर बाँध लिया जाता है। और इसका सभी क्रियाकांडों—महोत्सवोंमें उपयोग होता है। इसके बिना कोई 'यस्न' कभी पूर्ण नहीं हो सकता। कदाचित् श्वेत बैलका बाल (रंगके रसोंके नष्ट हो जानेके कारण) एक पोली नलीके समान होता होगा और इसको मन्त्रों एवं पवित्र शक्तियोंसे भर लिया जाता रहा होगा; क्योंकि इस मुद्रिका-संघातकको उत्सवोंके पवित्र जलको शक्तिकृत् करनेके ही काममें लाया जाता है।

(ग) ज़रथुश्ती-धर्मका एक अत्यन्त महान् और पवित्र उत्सव 'निरंग-दीन' है। उसमें वृषभ-मूत्रको इकट्ठा किया जाता है और उसको शक्तिकृत् करके बहुत देरतक अभिमन्त्रित करनेके बाद सँभालकर रख छोड़ा जाता है। सारे शुद्धकरणात्मक अवसरोंपर इस शक्तिकृत् माध्यमका उपयोग आवश्यक है। इसका पान भी किया जाता है और इसको शरीरपर भी मला जाता है। पुरोहितोंके प्रत्येक दीक्षाकरण संस्कारमें इस पावनत्वप्रदायक माध्यमका प्रयोग अनिवार्य है। ये बातें यह दृढ़तापूर्वक सिद्ध करती हैं कि जैसे हिंदूधर्ममें स्त्री–गायके प्रति श्रद्धा है, उसके विपरीत पारसीधर्मका श्रद्धा-पात्र नर–बैल है। यह भेद दो राष्ट्रोंकी स्वाभाविक वृत्तियोंकी विलक्षणताके सूचकके रूपमें ध्यान देने योग्य है।

(८) ज़रथुश्ती दण्ड-विधान उपकारी पशुओंको कष्ट पहुँचानेवालोंके प्रति बड़ा कठोर है; और गाथाओंमें ऐसा आदेश है कि हास-परिहास और आकस्मिक घटनाके प्रवाहमें भी प्राणापहरण नहीं किया जा सकता। ईरान प्रधानतः कृषकों और मेषपालकोंका देश था। इसी कारणसे पारसी स्मृतियोंने यह आज्ञा दी है कि पशुओंका पालन और रक्षा होनी चाहिये। अस्वस्थ होनेपर उनकी सेवा-शुश्रूषा और स्वस्थ रहनेपर अच्छी तरहसे पोषण होना चाहिये। उस समय गौ सम्पत्ति समझी जाने लगी थी। इसीसे पारसी धर्मगुरुओं-द्वारा प्राचीन ईरानी पद्धतिके अनुसार धनकी वृद्धिके बजाय 'गायकी वृद्धि'का आशीर्वाद दिया जाता है। यद्यपि आजकल बहुत कम पारसी एक गाय भी रख सकते हैं! इस प्रकारका आशीर्वाद पारसियोंको यह याद दिलाता है कि कैसे उनके प्राचीन गोवृत्तिमूलक जीवनमें एक ऐसा बैंक था जिससे बड़े ऊँचे दरसे व्याज मिलता था और जिसका कभी मुश्किलसे दिवाला निकलता था।

(९) 'अर्दाविराफनामा' नामक पुस्तकमें, जिसमें स्वर्ग और नरकके विभिन्न दृश्योंका वर्णन है, गायके प्रति मनुष्य-की दयालुताके पुण्यके विषयमें एक बड़ा रोचक प्रसंग है। नरकमें एक ऐसा मनुष्य दिखाया गया है; पृथ्वीपर पाप करनेके कारण जिसका शरीर संतप्त हो रहा है, किन्तु उसका दाहिना पैर इस दुःखसे बिल्कुल मुक्त है। पूछनेपर वहाँके अधिष्ठाता यमदूतने यह बताया कि पृथ्वीपर यह मनुष्य पशुओंके प्रति बड़ा निर्दय था, परन्तु एक बार अपने इसी पैरसे घासका गट्ठर एक भूखी गायके आगे कर दिया था। ईश्वरीय न्यायविधानमें इस उपकारका उल्लेख हुआ और उसका पुरस्कार भी दिया गया।

(१०) बादमें पारसीलोग मांसाहारी बन गये हैं। फिर भी विशेष-विशेष अवसरोंपर अपने धर्मकी प्रथाके अनुसार उन्हें इसका परित्याग करना अनिवार्य है, जैसे—किसी सम्बन्धीके मरनेके तीन दिन बादतक, दूसरे देवदूतके लिये पवित्र महीनोंके चार दिन, उसी देवताके लिये पवित्र एक पूरा महीना इत्यादि-इत्यादि। बम्बईमें यह सबकी देखी बात है कि बेहमनके पूरे महीनेभर पारसीलोग घास खरीदकर सड़कोंपर गायों और अन्य गोजातिके मारे-मारे फिरते पशुओंको खिलाते फिरते हैं। ज़रथुश्ती-धर्मके उत्सवोंमें किसी भी पशुकी बलिकी आज्ञा नहीं है।

(११) ज़रथुश्ती-धर्मशास्त्र (वंदिदाद अध्याय ३) में यह वर्णन आता है कि कैसे जहाँ गायें चरती हैं और जहाँ वे सुरक्षित रूपसे रक्खी जाती हैं, वहाँकी पृथ्वी प्रसन्न होती है। 'पृथ्वीका आत्मा' उन लोगोंको शाप देता है, जो गोचर-भूमि और खेतोंको कब्रिस्तान बना देते हैं।

(१२) ज़रथुश्त्रके जीवनमें ईश्वरद्वारा क्षेमवहनका एक उदाहरण मिलता है। जब शैशवावस्थामें अपने शत्रुओंद्वारा वह सड़कपर ऐसी जगह फेंक दिया गया था जहाँसे गायोंका झुंड जाया करता था, तब एक मोटी सुन्दर गाय आगे आयी और बच्चेको अपने पैरोंके बीचमें करके इस प्रकारसे खड़ी हो गयी कि दूसरी गायोंद्वारा वह कुचल न जाय। बताया जाता है कि यह चमत्कार नंबर (३) में बतायी 'गेऊश-उर्वा' का विशेष अनुग्रह था।

(१३) ईरानी शिल्पकला बहुत-से भवनोंपर, जिनमें मन्दिर भी शामिल हैं, असीरिया देशके बैलोंको दिखाती है, जिनका आधा अङ्ग मनुष्य और आधा पशुका-सा होता है। इससे यह प्रकट होता है कि फारसपर यह विदेशी प्रभाव उस समय पड़ा जब कि वह बेबीलोनवालोंके अधीन था, जो 'बाआल'के उपासक थे। इस 'बाआल' की मूर्ति जिस प्रकारके बैलका ऊपर उल्लेख किया गया है—वैसी ही होती थी। इसी प्रकारसे यूनानी मूर्तियोंमें और प्राचीन ईरानी सिक्कोंपर मित्र नामक देवताका भी बैलका साथ दिखाया गया है। ईरानमें रणक्षेत्रमें योद्धालोग जो गदा लेकर चलते थे, उसके ऊपर गायका सिर बना रहता था, वह सिर गदाके उस किनारेपर होता था, जिससे आघात किया जाता है। पारसी पुरोहितोंकी प्रथम और बादकी दीक्षाओंमें भी नवागत दीक्षित व्यक्तिको ऐसी गदा दी जाती है और ज़रथुश्ती-धर्मके मठोंमें भी इनको पवित्र प्रतीकोंके रूपमें रक्खा जाता है।

इस प्रकार ईरानी लोग बैलको प्राण-तत्त्वके पवित्र रूपमें ग्रहण करते थे और उनकी श्रद्धा उन सब जीवोंतक फैली हुई थी, जो मनुष्यको सहायता पहुँचाते थे और जो 'गोस्पंद' (उपादेय जीवधारी) कहे जाते थे। स्थानाभावके कारण ऊपरकी बातोंको अत्यन्त संक्षिप्त कर दिया गया है, अन्यथा इसके विस्तृत विवेचनसे मानव-मनोविज्ञान और पुरातत्त्व-विषयक कुछ रोचक सूचनाएँ प्राप्त होतीं।

ज़रथुश्तीय गाथाएँ और गोरक्षा

(लेखक—श्रीयुत प्रोफेसर श्रीफीरोज़ कावसजी दावर, एम्० ए० एल्-एल्० बी०)

शुद्ध व्यावहारिक दृष्टिकोणसे विचार करनेपर उपयोगिता ही महत्त्वका आधार ठहरती है। जो पुत्र अधिक कमाता है, वही परिवारभरको प्यारा लगता है; और हमारे कृषिप्रधान देशमें जो पशु सबसे अधिक उपयोगी है, स्वभावतः वही अधिक लोकप्रिय होगा। प्राचीन भारतमें, जब कि गायें ही राष्ट्रकी सम्पत्ति समझी जाती थीं और गायोंमें ही मूल्य चुकाया जाता था; क्योंकि सिक्कोंका आविष्कार तबतक नहीं हुआ था—गायोंके बिना जीवन असम्भव था। पशुओंमें गाय ही सबसे शान्त और सीधी, कम उत्पात करनेवाली और कम-से-कम खर्चमें पलनेवाली पायी गयी; इसीलिये भारतवासियोंने इसपर पवित्रताका ही नहीं, बल्कि देवत्वका भाव रक्खा और अब भी वही भाव रखते हैं। भारतवर्षमें सदासे तीन जीव अधिकतासे पाये जाते हैं, वे हैं—हाथी, सर्प और गाय। इस बातका परिचय संस्कृत-कोषमें इनके अनेक पर्यायोंसे तथा संस्कृत साहित्यमें इनके प्रचुर उल्लेखसे भी मिलता है। किन्तु हाथीको तो केवल इने-गिने धनिक ही रख सकते हैं और साँप एक भयानक जीव है—यद्यपि इसकी पूजा होती है। गाय ही एक ऐसा पशु है जो दैनिक उपयोगिताकी दृष्टिसे सब पशुओंसे बढ़ा-चढ़ा है। यही कारण है कि गाय समान-रूपसे धनी-निर्धन, ऊँच-नीच सभीको प्रिय है। हिंदू राजाओंके आवश्यक कर्त्तव्योंमें गोरक्षा एक प्रमुख धर्म था और गोहत्याका पाप ब्रह्महत्याके समान निन्दनीय समझा जाता था। फारसमें घोड़े और अरबमें ऊँट बहुत उपयोगी हैं, अतः प्यारे समझे जाते हैं, किन्तु इन पशुओंके प्रति फारस तथा अरबवालोंकी वह हार्दिक भक्ति एवं आदरका भाव कहाँ, जो कृतज्ञ हिंदू गोमाताके प्रति रखते हैं।

ज़रथुश्त्र ईरानके कयानियन राजा विश्वतास्पके सम-कालीन थे और ऐसे कालमें हुए थे जब वहाँके लोग अधिकांश पशुपालनका व्यवसाय करते थे। अतएव ये गायकी उपयोगितासे पूर्णतया परिचित थे। वे यह भी जानते थे कि गोवध अथवा गायको कष्ट देनेसे समाजको क्या क्षति होगी? गायका महत्त्व यश्न २९। १ की गाथाओंसे स्पष्ट है, जिनमें जगत्के प्रतीकके रूपमें गौकी आत्मा करुणाजनक शब्दोंमें भगवान्से अपने ऊपर किये गये अत्याचारोंकी शिकायत करती है और भूले-भटके मनुष्योंको धर्मके मार्गपर लानेके लिये भगवान्का सन्देश लेकर एक पैगंबर भेजनेकी प्रार्थना करती है। ईश्वरके भेजे हुए पैगंबर यही ज़रथुश्त्र थे। हिंदुओंमें भी 'गो'का एक अर्थ पृथ्वी है। एक मनोरञ्जक पौराणिक कथासे यह विदित होता है कि एक बार सुन्दरी अहल्याको प्राप्त करनेके लिये देवताओंमें परस्पर विवाद छिड़ गया। ब्रह्माजीने अहल्याको उसे सौंपनेका वचन दिया,

जो एक ही दिनमें संसारभरकी प्रदक्षिणा कर सके। अभीष्ट पुरस्कारको प्राप्त करनेके लिये सब देवता दौड़ पड़े और उन्होंने बड़ी-बड़ी चेष्टाएँ कीं। किन्तु गौतम ऋषि यह समझकर कि पृथ्वी और गाय अभिन्न हैं, क्षणभरमें अपनी गायकी तीन परिक्रमा कर गये और उसका पूजन किया। उनकी यह बुद्धिमानी और पवित्र गायके प्रति यह भक्ति देखकर ब्रह्माने अहल्या उन्हींको दे दी।

जो गायके प्रति दयालु होते हैं, ज़रथुस्त्र उनपर दया करते हैं और उन्हें आशीर्वाद देते हैं, किन्तु उन लुटेरोंपर जो गायोंको चुराते हैं अथवा किसी भी प्रकारसे कष्ट पहुँचाते हैं और एक शान्तिप्रिय पशुजीवी राष्ट्रके लिये विपत्तिका कारण बनते हैं—बड़ी कड़ी दृष्टि रखते हैं और उन्हें अभिशाप देते हैं। यश्न ३२। १२ की गाथाके अनुसार दुष्टोंका एक लक्षण यह है कि वे अकारण ही गायोंको सताते हैं। यश्न ४६। ४ में ईश्वरके सभी सच्चे भक्तोंको उन धर्म-विरोधी और गो-द्रोहियोंके प्रयत्नको विफल कर देनेके लिये कहा गया है। यश्न ५१। १४ में ज़रथुस्त्र अपने भक्तोंको बताते हैं कि वे लोग जो गायकी सेवासे जी चुराते हैं, परलोक-गमनपर नरक या असत्यलोकको प्राप्त होंगे। यश्न ४८। ५ में मनुष्योंको यह शिक्षा दी गयी है कि जो गाय मानवको आवश्यक भोजन देती है, उसका हित-साधन करें। यश्न ३३। ४ में ज़रथुस्त्र भगवान्‌से प्रार्थना करते हैं कि प्रभो! हमारे हृदयके अन्य दोषोंके साथ गो-हितके प्रति उदासीनताका भी नाश कर दीजिये। यश्न ४५। ९ में उन्होंने ईश्वरसे विनय की है कि मनुष्य-जातिके अभ्युदय तथा गौओंका हित करनेके लिये आवश्यक बुद्धि, सदाचार और दृढ़ता प्रदान करें।

प्राचीन ईरानके पैगंबर ज़रथुस्त्र उस कालमें हुए थे जब कि कुपित भगवान्‌को प्रसन्न करनेके लिये पशु-बलिकी प्रथा प्रचलित थी। यह कुप्रथा ईरानमें केवल ज़रथुस्त्रके पूर्ववर्ती कालमें ही नहीं थी, वरं सभी कालोंमें थी; जैसा कि उपर्युक्त उद्धरणोंसे ज्ञात होता है। ज़रथुस्त्रने इस निर्दयतापूर्ण प्रथाका डटकर विरोध किया और यह मत स्थिर किया कि अहुर्-मजदा अहिंसा, सदाचार और शुद्ध हृदयकी भक्तिसे ही सन्तुष्ट एवं प्रसन्न किये जा सकते हैं!

मुसल्मान और गोरक्षा

(लेखक—श्रीधर्मलालसिंहजी)

इस सम्बन्धके बहुतेरे छुट-पुट लेख विशेषतः अंग्रेजी पत्रोंमें यदा-कदा प्रकाशित हुए हैं। इन लेखोंका हिंदीमें अभीतक समष्टि—संकलन नहीं हुआ है। बड़े परिश्रम और खोजके बाद जितने विषय उपलब्ध हो सके हैं उनका उल्लेख नीचे है। इन पंक्तियोंमें विशुद्ध ऐतिहासिक विषयका विवेचन है। दुर्भावनासे कोई भी बात नहीं लिखी गयी है। किसी बातकी सत्यतामें सन्देह हो तो सूचना मिलनेपर आगेके अङ्कमें उसका सुधार कर दिया जा सकता है। हम उन लोगोंमेंसे हैं जिनका दृढ़ विश्वास है कि मुसल्मानोंसे लड़ाई-झगड़ेसे नहीं, वरं उनके साथ प्रेम करनेसे ही उनके द्वारा गोरक्षा हो सकती है। सच्चे गो-सेवकोंका यही उद्देश्य होना भी चाहिये।

मुसल्मान-धर्मको आरम्भ हुए १३०० वर्षसे ऊपर हुए। इस सम्प्रदायका सबसे प्राचीन और पवित्र धार्मिक ग्रन्थ 'कुरान' है। इस धर्मके विशाल-अनुयायी समाजका विश्वास है कि 'वेदों' के ही समान इसके भी सारे अवतरण किसीके द्वारा लिखित नहीं वरं श्रुत हैं। कदाचित् पाठकोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि गो-सम्बन्धी समस्याकी महत्ता हिंदू-धर्मके ही समान इसमें भी अपना खास स्थान रखती है। कुरानका प्रथम अध्याय अथवा यों कहिये कि भूमिका अध्याय 'सूर-ए-फातिहा'के बाद ही 'सूर-ए-बक़र' है। इसका हिंदी नाम 'जवान गायोंका अध्याय' है। इस अध्यायमें इस विषयपर भलीभाँति विचार किया गया है।

मुसल्मानोंका विश्वास है कि उनका धर्म सुदूरकालसे प्रचलित है तथा मूसा मुहम्मद साहबसे पहले पैदा हुए थे। कुरानके आयतोंका मुहम्मद साहबके ऊपर उतरना और फिर इस धर्मको उनसे भी पहलेका बताना कदाचित् इतिहास-विरोधी विषय मालूम पड़ता है। जो हो, हम तथा अन्य लोग कुरानको ही मुसल्मान-धर्मकी भित्ति मानते हैं। अतः हम उसीके सहारे अपने विषयका प्रतिपादन करेंगे।

कुरानके पहले समस्त अरब, तुर्की, मिश्र तथा अन्य मुसल्मानी प्रदेश मूर्तिपूजक थे। वहाँ गौकी पूजा सविधि होती थी। ईसासे कई हजार वर्ष पहलेका बना मिश्रका पिरामिड है। यह संसारके आश्चर्योंमें है। उसपर बैलकी मूर्ति अङ्कित है। मिश्रके प्राचीन निवासी गोपूजक थे।

उनके प्राचीन सिक्कोंपर बैलकी मूर्ति है । उनकी सुनहले बछड़ोंकी पूजा संसार-विख्यात है । बछड़े न मिलनेपर मिश्री लोग उनकी प्रतिमा बनाकर पूजा किया करते थे । तात्पर्य, बछड़े एवं बैल मिश्रके राष्ट्रीय शुभ चिह्नोंके प्रतीक थे ।

मुहम्मद साहबके पहले उन प्रदेशोंमें नाना प्रकारके अनाचार होते थे । मानव-जीवनका कुछ भी मूल्य नहीं था । पापका बोलबाला था । मुहम्मद साहबने जनताके दुःखसे द्रवीभूत होकर मुसल्मान-धर्मका प्रचार किया । उस धर्ममें मूर्तिपूजाका खण्डन अपना विशेष स्थान रखता है । पहले तो उन्हें असफलता मिली, पर पीछे अपने बलवान् अनुयायियोंके सहारे उन्होंने समस्त निकटवर्ती प्रदेशोंमें इस धर्मकी स्थापना की । गोपूजा मूर्तिपूजाके अन्तर्गत होनेके कारण सख्तीसे उठायी गयी । आखिरी सख्तीके सिलसिलेमें मिश्र-देशवासी अपने घर-द्वार छोड़कर दूसरे देशोंमें चले गये । इसराइल खानदानके लोग भी भागकर कदाचित् पैलेस्टाइनकी तरफ जा बसे ।

'सूर-ए-बक़र' में एक प्रकरण आया है । वह यों है—खुदाने पैगंबर मूसाको तूर पर्वतपर तौरात लेनेके लिये बुलाया था । वे वहाँ गये और अपनी अनुपस्थितिमें अपने भाई हारूनको पैगंबर बना गये । मूसाके चले जानेपर हारूनके लाख मना करनेपर भी इसराइल खानदानके लोगोंने बछड़े-की प्रतिमाकी पूजा कर ही ली । मूसा लौटकर आये । वृत्तान्त सुनकर उनको बड़ा गुस्सा आया । इसराइल खानदानवाले अनपढ़ और धर्मके अभिघातके ज्ञानसे भी काँप जानेवाले थे । पैगंबरके क्रोधसे उनको बड़ी चिन्ता हुई । वे उनकी शरणमें आये । प्रायश्चित्तके लिये प्रार्थना की । उनकी अनुनय-विनयपर पैगंबर पिघले और बोले कि इतने बड़े घोर पापका प्रायश्चित्त यही है कि 'तुमलोग आपसमें मिलकर एक दूसरेका वध करो ।' बन्धु-बान्धवोंके बीच तुमुल युद्ध होकर शोणित-पङ्क हो गया । फिर बचे बचाये लोग पैगंबरकी शरणमें आये, इतने-पर भी त्राण नहीं हुआ । पैगंबरने उनसे एक गायका वध करनेको कहा । वे बड़े असमंजसमें पड़े । पैगंबरसे पूछा 'क्या तू हँसी करता है ।' पैगंबरने कहा—'मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूँ, खुदाकी ऐसी ही आज्ञा है ।' आगा-पीछा करते हुए उन्होंने फिर पूछा—'पैगंबर ! कैसी गायका वध करना होगा, खुदासे पूछकर बतलाओ ।' कुछ देरके बाद पैगंबरने उत्तर दिया—'अल्लाहकी आज्ञा है कि वह गाय न तो बूढ़ी हो, न बछिया हो, गहरे पीले रंगकी हो, देखनेमें बड़ी सुन्दर हो, न खेत जोतती हो, न पानी खींचती हो, न बोझा ढोती हो, शरीरसे मोटी हो तथा उसकी देहपर किसी तरहका दाग न हो ।' इसपर उन लोगोंने कलेजेपर पत्थर रखकर गोवध किया । इससे पता चलता है कि वहाँ गोवध नहीं होता था तथा गहरे पीले रंगसे मूसा साहबका कदाचित् यही भाव रहा होगा कि सुनहले बछड़ेकी पूजामें सतत तथा अनादिकालसे अभ्यस्त मुसल्मानोंसे यह आदत छुड़ायी जाय । जो हो, गोवधका आरम्भ यहींसे है ।

कुछ मुसल्मान कहा करते हैं कि एक गो-बलिदानसे सात आदमियोंका पुण्य मिलता है । यह 'सात' शब्द मार्केका है । हिंदुओंकी श्राद्धपद्धतिमें वर्णन आया है कि सात व्याधा भाइयोंने रास्तेमें कोई चीज न मिलनेपर एक गायका बलिदान करके श्राद्ध किया । जिसके प्रायश्चित्तमें उनको सात जन्मोंतक चक्रवाक आदि जन्तुओंकी योनिमें जन्म धारण कर विविध दारुण कष्ट भोगना पड़ा !

इस्लाम शब्द अरबीके सलम धातुसे निकला है जिसका अर्थ है 'किसीको दुःख न देना ।' अतएव मुहम्मद साहबने दयाके इतने अधिक कार्य किये जिनका वर्णन इस छोटे-से लेखमें नहीं हो सकता ।

कुरान कहता है—'दया' धर्मका मूल है । जिसको दया नहीं है उसको धर्म नहीं है । सज्जनता और दयालुता ईमानकी दो शाखाएँ हैं । इसका ध्येय साम्य और मैत्री भावका प्रचार करता है । ई० एच० पामर एस० बी० ई० ने कुरानका अंग्रेजी अनुवाद किया है । अधिकतर प्रकरण उसीके सहारे प्रतिपादित किये गये हैं, जो यों हैं—

१. बैलके सींगपर पृथ्वी है । वह जब पृथ्वीको एक सींगसे दूसरेपर लेता है तब वह हिलती है और भूकम्प होता है ।

२. गायका जूँठा पानी पवित्र माना गया है । हिंदूधर्म-में वह अपवित्र है ।

३. खुदाने चौपाया इसलिये उत्पन्न किया है कि वह तुम्हारा बोझा ढोवे और तुम्हारे भोजनके लिये उस परवर-दिगारने विभिन्न अनाज, फल, तरकारियाँ आदि उत्पन्न की हैं ।

४. आदम और हव्वा (ईव) जब स्वर्गसे निकाले गये तो उनको एक मुट्ठी गेहूँ और एक जोड़ी बैल मिले । आदम

बैलोंसे बहुत काम लेने लगे, इसपर बैलोंने काम करनेसे इन्कार कर दिया। आदमने इस बातकी शिकायत खुदाके पास की तो खुदाने बैलोंके मुँहपर मुहर लगा दी और इस तरह उनकी वाक्शक्ति हर ली।

५. मिर्जा अबुल फजलद्वारा सम्पादित 'कुरान' के अध्याय सुराते भाग पहला पृष्ठ ३० में मनुष्योंके भोजनका वर्णन इस प्रकार आया है—'मनुष्यो! अपना भोजन देखो। हम वर्षाद्वारा पानी बरसाते हैं। फिर तुम्हारी जमीन तर होती है। तब उसमें अनाज, लता, गुल्म, फल, पौधे, खजूर आदि लगते हैं। ये ही तुम्हारे तथा तुम्हारे जानवरोंके लिये भोजन हैं।'

६. जानवरके बारेमें तुम खुदासे डरो। उनपर तभी सवारी करो जब वे सवारी करनेके लायक हों और जब थक जायँ तब तुरंत छोड़ दो।

७. जब्बरमें खुदाबन्द फरमाता है (बाब ४६-५०) जो बैलको काटता है वह उस आदमीकी तरह है जो मनुष्यको मारता है। मैं तो घरका बैल न लूँगा और न तेरे बाड़ेका बकरा; क्योंकि जंगलके सभी जानवर मेरे हैं। क्या मैं बैलोंका गोश्त खाता हूँ या बकरेका लहू पीता हूँ ?

८. हरगिज नहीं पहुँचते अल्लाहके पास उसके गोश्त और खून। हाँ, पहुँचती है उसके पास तुम्हारी परहेजगारी।
(कुरान शरीफ सूर ए-हज)

९. तहकीकात अता की हमने तुमको कोशर! पश नमाज पढ़ो अपने परवरदिगारकी, और कुर्बानी करो अपने नफ्सकी
(सूर-ए-कोशर)

१०. बाइबिलमें एक अवतरण आया है—ऐ देखनेवाले! देखते क्या हो? मारे जानेवाले जानवरोंके लिये अपनी जबान खोलो। इसी प्रकार कुरानमें लिखा है—हरा पेड़ काटनेवाले, मनुष्य खरीदनेवाले, जानवरको मारनेवाले तथा दूसरोंकी स्त्रीसे कुकर्म करनेवालेको खुदा मुआफ नहीं कर सकता।

११. खुदा उसीपर दया दिखाते हैं जो उनके बनाये जानवरपर दया दिखाता है।

१२. कुरानमें एक प्रसंग आया है कि एक औरतने बच्चा जना और इंतकाल कर गयी। उसके घरकी गायके दूधसे वह बच्चा पाला गया। पीछे गाय कुर्बानीके लिये लायी गयी तो हुक्म हुआ कि उसकी कुर्बानी नहीं हो सकती।

१३. तुम्हारे लिये हमने जानवरके पेटमें वह चीज (दूध) पैदा कर दी है जो बड़ी मुफीद है। तुम उसे पीओ।

कुरानमें इस प्रकारके अनेकों प्रसंग हैं, जिनका यहाँ उद्धरण करके विचार करना विस्तारभयसे सम्भव नहीं है। इस सम्बन्धमें मुसल्मान-धर्मके आचार्य मुहम्मद साहबके दृष्टिकोणको जान लेना भी अत्यन्त लाभकारी होगा।

पैगंबर अत्यन्त दयालु थे। अपने जीवनमें उन्होंने कभी किसीपर न तो हाथ छोड़ा और न तो कुवचन ही कहा। यहाँतक कि, जब एक बार किसीको शाप देनेके लिये उनसे आग्रह किया गया तो उन्होंने साफ इन्कार कर दिया कि मैं शाप देनेके लिये नहीं, वरं दया दिखानेके लिये पैदा हुआ हूँ। एक दिन पैगंबर गाढ़ी नींदमें सोये हुए थे। उसी अवस्थामें एक बिल्ली आकर उनके अचकनपर सो गयी। नींद टूटनेपर पैगंबरने उसको गाढ़ी नींदमें पाया। उनको बड़ी दया आयी। उस बेचारीकी नींद न टूटे, इसलिये उन्होंने कैंची मँगाकर अपने अचकनके उस भागको कतरवा दिया जिसपर वह सोयी हुई थी। एक औरतको इसलिये सजा दी गयी कि उसने एक बिल्लीको आमरण कालतक बाँध रक्खा था और उसको खाने-पीनेके लिये नहीं दिया और न स्वतन्त्र ही कर दिया। एक युवतीको इसलिये बख्शा गया कि जब वह कहीं जा रही थी तब उसने देखा कि एक कुत्ता प्यासके मारे जीभ निकाले हुए कुएँके चारों ओर परेशान है। मरने-मरनेकी हालतमें है। युवतीने अपने जूतेको कपड़ेकी खूँटसे बाँधकर कुएँसे पानी निकाला और उस कुत्तेकी जान बचायी। यहाँ यह भी बड़े मार्केकी बात है कि मुसल्मान-धर्मके अनुसार कुत्ता नापाक प्राणी है। एक दिन एक आदमी पैगंबरके पास आया और अपनी दूध देनेवाली ऊँटनीकी कुर्बानीके लिये उनका हुक्म माँगने लगा। हजरतने जवाब दिया कि ऊँटनीके बदले माथेके बाल, नाभिके नीचेके केश और दाढ़ी-मूँछोंको कटवा लो। यही तुम्हारी सबसे बड़ी कुर्बानी है। हजरतने घोषणा की है—'खुदाका हुक्म है बहिराह, सैवाह बजिलाह और हामी (ये ऊँटके नाम हैं) को मत मारो। जो इसके विरुद्ध करेंगे वे ईश्वरके कोप-भाजन बनेंगे।' आपने यह भी फरमाया है—'ऐ यात्रियो! हज करने जाते हो तो देखना, रास्तेमें जमीनके जानवरका शिकार मत करना।' हजरत मुहम्मदके कुछ भी आदर्श वचन

अब्दुल रहमान उर्फ मौलाना फारुकी नामक सज्जनने 'वरकत और हरकत' नामक किताबमें संकलित किये हैं। उसी पुस्तकमें मौलाना फारुकी लिखते हैं कि 'अच्छी तरह पली हुई ९० गायसे सोलह वर्षमें केवल ४५० गायें ही पैदा नहीं होतीं, बल्कि हजारों रुपयेके दूध, खाद आदि भी मिलते हैं अतः गाय धनकी रानी है।' हजरतने अपनी प्यारी स्त्री आयशासे कहा था—'गायका दूध शरीरकी शोभा और आरोग्यता बढ़ानेका प्रधान साधन है।' इसी प्रकारका अवतरण बाइबिलमें भी है। दूध और मधु सुन्दरताके मूल हैं। हजरतके चचा तथा उनके साथी जाबीरने भी इस बातकी पुष्टि की है। हजरतके दामाद अली और मुसल्मानधर्मके एक प्रधान संतको गोसी-ए-आजमकी गायके लिये इतना मान था कि उन्होंने अपने जीवनमें कभी गोमांस छुआतक नहीं। यूनानी दवाकी किताबोंमें गायके गोश्तकी बड़ी निन्दा है। लिखा है कि 'गायका गोश्त बड़ा कड़ा होता है। वह जल्दी नहीं पचता। आदमीके पेटके मुआफिक नहीं है। इससे खून मोटा होता है। उन्माद, पिठिया, घाव और कोढ़ आदि बीमारियाँ होती हैं।'

हजरत उस्मान पहला हदीस साइस्तामें लिखते हैं 'गोश्त खानेसे परहेज रक्खो, इसकी आदत शराबके समान हानिकारक है। आदत लग जानेसे छूटती नहीं।' स्वयं पैगंबरने 'नाशियात हादी' नामक किताबमें कहा है कि 'गायके दूध और घी तुम्हारी तन्दुरुस्तीके लिये बहुत जरूरी हैं। उसका गोश्त नुकसानदेह है। गायका गोश्त बीमारी, दूध दवा और घी रसायन है। यह वाक्य हदीसका है। अबू दाऊद गायके गोश्तके बारेमें अपनी किताब मारशीमें यही बात लिखते हैं। हज़रत इब्ने मसऊद सहावी अपनी किताब मस्तदरकमें इस सम्बन्धमें पैगंबरकी कही हुई बातको अक्षरशः इस प्रकार उद्धृत करते हैं—

'अलैकुम् व अल्बानुरु बकरे व अस्मानिहा व इय्याकुम् व लुहूमुहो। लबनुहा शिफ़ाउन् व समिनुहा दवाउन् व लहमुहाद आउन।'

अलमुश्तहर हकीम इब्राहीम जयपुरीने दिल्लीमें एक नोटिस बँटवाया था, जिसका आशय इस प्रकार है—

'अज रूए तिब्ब गायका गोश्त जुकाम, कोढ़, दिमागी अमराज, सौदा जहालत, गजपलिया वगैरह बीमारियाँ पैदा करता है। औरतोंका हैज अजवक्त बंद कर तौलीद औलाद मुनकिता कर देता है और हैज बंद हो जानेपर हजारहाँ मोहलक बीमारियाँ मुहलिक हो जाती हैं और ये बीमारियाँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली जाती हैं। इसलिये गोमांस खाना छोड़कर गो-दुग्ध पीना सर्वोत्तम है।'

अब यह विचारना है कि उन मुसल्मानी देशोंमें—जहाँ सब-के-सब मुसल्मान बसते हैं, गोवधकी तरफ क्या और कैसे खयालात हैं। १९१० ई० में मिश्र-सरकारने फतवा निकाला था कि 'कोई आदमी बकरीदके त्योहारपर एक भेड़से अधिक किसी जानवरका वध नहीं कर सकता।' एक बार मिश्र-सरकारने गाय और भैंसका वध दो वर्षके लिये एकदम रोक दिया था। (प्रताप १९१८ मार्च) मध्यपूर्व एशियामें गौ-हत्या प्रचलित नहीं है। एक अफगान लेखक लिखते हैं कि 'हम नौ वर्ष अरबमें रहे और चार बरसतक दमिश्कमें, वहाँ शाहके कयाल बाजारमें गायके गोश्तकी सिर्फ एक ही दूकान देखी। किसी भी मुसल्मानको कभी भी उस दूकानसे गोश्त खरीदते नहीं देखा। यहूदी और अंगरेज खरीदते थे। वे लिखते हैं कि हम कुस्तुन्तुनियाँ और अन्तोलियामें भी रहे। वहाँ भी मुसल्मानोंको गोमांस छूतेतक नहीं देखा। केवल ईसाई और रोमनलोग उसका व्यवहार करते थे। मिश्रके कैरो शहरमें बारह लाख आदमी हैं। वहाँ गायके गोश्तकी दूकान सिर्फ चार-पाँच हैं और वे सब-की-सब अंगरेजों और यहूदियोंके लिये हैं। ईराकके बादशाह नौशेरवाँके प्रधान मन्त्रीने उनसे कहा था 'गाव अन्द रमर्ज शाहस्तोमाह' भारतमें गायकी प्रतिष्ठा चन्द्रमा और राजाके बराबर है। अफगानिस्तानमें कामके लायक जानवर नहीं मारे जाते हैं। सन् १९११ ई० में अमीर हिंदुस्थान आये थे। दिल्लीके मुसल्मानोंने उनके स्वागतार्थ ईदके अवसरपर गाय मारना चाहा था। अमीर बिगड़ उठे और बोले कि यदि गोवध कीजियेगा तो हम उलटे पैरों वापस चले जायँगे। वहाँके भूतपूर्व अमीर अमानुल्लाखाँने बंबईकी यात्रामें एक बार कहा था—'मुसल्मानोंको मुल्लाओं और पीरोंकी बातोंमें न आकर हिंदुओंके साथ शान्ति रखनी चाहिये। हिंदुस्थानके लिये गाय और बैल बड़े उपकारी जीव हैं। आपको इनके वंशकी वृद्धिकी चेष्टा करनी चाहिये।'

फारसके शाहके चचा बुशायर शहरमें आये थे। उनकी मेहमानदारीमें मुसल्मान गाय मारना चाहते थे। वहाँके स्टेशनमास्टर बंगाली हिंदू थे। उनके हृदयपर आघात पहुँचेगा, ऐसा सोचकर शाहके चचाने गो-वध रोक दिया। दूसरे वर्ष शाह खुद पधारे। एक यहूदीने

उनकी खातिरदारीमें एक गायको कड़ी धूपमें सड़कपर बाँध रक्खा था। शाह बड़े द्रवीभूत हुए और तुरंत उसको छुड़वा दिया। खलीफा मल्लिकके राजकालमें ईराकके शासक हजाजगश्त थे। प्रजाकी प्रार्थनापर उन्होंने राज्यभरमें गोवध बंद कर दिया और इसपर खलीफाने कोई आपत्ति नहीं की।

इतना सब कुछ होनेपर भी कुर्बानीमें गोवधकी प्रथा क्योंकर चल पड़ी, तथा इसके सम्बन्धमें कुरान और मुसल्मान-धर्मके आचार्योंका क्या विचार है—ये सारी बातें नीचेकी पंक्तियोंमें व्यक्त करनेकी चेष्टा की गयी है।

कुर्बानीकी प्रथा उतनी ही पुरानी है जितना पुराना धर्म है। यह उस अवसरकी स्मृतिमें है जब सीरिया पहाड़पर इब्राहीमने अपने प्यारे पुत्र ईसाकको खुदाके नामपर कुर्बान कर दिया था। उसका तात्पर्य था कि अपना सर्वस्व ईश्वरके नामपर न्योछावर कर देना। इससे मिलते-जुलते प्रसंग हिंदूधर्ममें भी आते हैं—जैसे मोरध्वजकी कथा आदि। इब्राहीमने उसके बाद भेड़की कुर्बानीकी प्रथा चलायी। उन्हींके वंशमें आगे चलकर हजरत मुहम्मद साहबने जन्म ग्रहण किया। पैगंबरने कहा है कि 'प्रत्येक जातिके लिये हमने कुर्बानीकी आज्ञा दी है कि उस अवसरपर पवित्र कार्य करे।' पामरने कुरानके अनुवाद भाग ६ पृष्ठ ११२ में लिखा है कि 'इस्लाम ऐसे जानवरोंको मारनेका हुक्म नहीं देता, जो मानव-जातिके रोजमर्राके कामके लिये लाभप्रद हों।' इसलिये घोड़ा हलाल होनेपर भी अरबवाले उसको नहीं मारते। कुरानमें कुर्बानीके लिये किसी जानवरका नाम नहीं लिखा है और न उसके वधका कोई हुक्म है। हाँ, उसपर दया दिखलाने और पाप-प्रक्षालनके लिये पवित्र काम करनेकी आज्ञा है।

'सुरात-ए-हज'में लिखा है कि, 'खुदा तुम्हारी कुर्बानीमें जानवरका मांस और लहू नहीं चाहता। वह सिर्फ तुम्हारी पवित्रता चाहता है।' बकरीदकी प्रथा इसलिये चली कि उस अवसरपर हम परवरदिगारके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाश करें और आशीर्वाद और दयाके लिये उनकी प्रार्थना करें तथा उनके प्रति अपनापन दिखावें। ये ही वाक्य पृष्ठ २८१-८२ भाग ८ जून-जुलाई १९२० के 'इस्लामिक रिव्यू' में प्रकाशित हुए थे।

डाक्टर सुलेमान लखी कुरानका काफी ज्ञान रखते हैं। उन्होंने लिखा है कि—'पहले बकरीदके अवसरपर धूप-दीप देनेकी प्रथा थी। पीछे नैवेद्य-अन्न आदि। फिर पक्षी-आदिका बलिदान। तदनन्तर भेड़-बकरेके रूपमें यह प्रथा बदली, जो आगे चलकर वर्तमान बर्बर प्रथाके रूपमें परिणत हो गयी। हजरतने एक स्थानपर कहा है कि भेड़की कुर्बानी सबसे अच्छी है तथा दूसरे स्थानपर लिखा है कि बकरीदके दिन हजरतने एक भेड़को मारकर उसका मांस बाँटा था। हजरतकी श्रद्धेया पत्नी उम्मनी सलेमाने कहा है कि पैगंबरने जिलहिज्जके दिन एक बकरेकी कुर्बानी की थी।

इंजीलमें एक प्रकरण आया है कि 'मैं कुर्बानी नहीं चाहता हूँ, रहम चाहता हूँ। तू गोश्त न खा, शराब न पी और ऐसा काम न कर जिससे तेरे भाईको ठोकर लगे।'

मि० महम्मद मर्माड्यूक पिक्‌थौलने लिखा है कि 'गोवध प्रतिदिन खानेके लिये भी होता है तथा इतनी बड़ी संख्यामें गाय कटती है कि हमने पहले कभी ऐसी बात नहीं सुनी थी। जब हिंदुस्थानमें आये तब हमने आँखों देखा। जितनी बड़ी संख्यामें गोवध उत्तर भारतमें होता है, उतना संसारके किसी भी भागमें नहीं होता।'

कुर्बानीपर गवेषणा करते हुए डाक्टर लीथरने सन् १८९२ के 'एशियाटिक् रिव्यू' में लिखा है कि बकरेका हिंदुस्थानी नाम बकरा है। यह छोटी काफ है। यदि छोटी काफ है तो बकरीदका अर्थ बकरा मारना हुआ। यदि बड़ी काफ है तो उसका अर्थ गाय हुआ। इसी प्रसंगमें सन् १९२२ ई० में लार्ड मेस्टनने पार्लियामेंटमें ठीक ही कहा था कि हिंदू-धर्ममें यदि ऐसी कोई समस्या है जो लेन-देन एवं विचार-विमर्शसे नहीं सुलझ सकती तो वह है गौओंके प्रति हिंदुओंका धार्मिक भाव। यह भाव हिंदुओंमें उस अनादि-कालसे संस्कृतिके रूपमें चला आता है, जब हमलोगोंके समान पूर्वजोंके लिये गाय पवित्र सुहृद्‌के रूपमें थी। अरबमें पहले ऊँटकी कुर्बानी होती थी। जब उसकी संख्या घटने लगी तब वहाँवालोंने ऊँटको मारना बंद कर दिया। हाजी एम्० एच मसरानीने इसपर विचार किया है और कहा है कि 'ईरान, तुर्की, मिश्र आदि मुसल्मानी देशोंमें केवल भेड़की कुर्बानी होती है वहाँ गोवध कभी कानसे भी नहीं सुना गया। यह कल्पना करनेकी बात है कि यदि नौ करोड़में तीस लाख मुसल्मानके लिये भी भारतमें कुर्बानी की जाती हो तो इसका मतलब यह हुआ कि चार लाख गायें नष्ट हो जाती हैं।'

मुसल्मान इस देशमें आये और शासक बने। उसके पहले गोवधकी चर्चा यहाँ थी या नहीं, यह भी जानना आवश्यक है। बौद्धकालिक इतिहासके अवलोकनसे पता चलता है कि किसी एक राजाने म्लेच्छके हाथसे गोमांस खाया था। पश्चात् मुसल्मानी आक्रमणकालमें इस तरहकी बात कहीं नहीं मिलती। जब पहले-पहल मुसल्मान इस देशमें आये तब तो वे हिंदुओंकी गोभक्ति देखकर अचरज करते थे और उनका मजाक उड़ाया करते थे—

ऐ ब्राह्मण ! आ पजार चूँ लाला परस्त
काबा सर निगार चारदहसाला पनस्त
अगर चश्में खुदा बीं नदारे बारे
खुशीद परस्त शौ न गोशाला परस्त

सर्वप्रथम महावीर सिकन्दरने भारतपर चढ़ाई की। पुरुके द्वारा मानमर्दन होनेपर वह इस देशसे लौट गया और अपने साथ विशिष्ट जातिकी एक लाख गौएँ लेता गया। सिकन्दर लूटका माल लेकर मुसल्मानी देशोंमेंसे होता हुआ अपने देशको गया। भारतकी श्रीको आँखों देखकर मुसल्मानोंका जी ललचाया और क्रमशः उनका इस देशपर आक्रमण हुआ। उन आक्रमणोंमें भारतके सोने, चाँदी तथा जवाहरात ही नहीं गये, वरं आक्रमणकारियोंने बड़ी संख्यामें यहाँसे गोधनका भी अपहरण किया। अन्तिम चढ़ाई दिल्लीपर हुई। उस समय वहाँके सम्राट् पृथ्वीराज थे। जयचन्दके समान देशद्रोही भी उस समय मौजूद था। व्यक्तिगत वैमनस्यके कारण उसने महम्मद गोरीको आमन्त्रित किया। वह ग्यारह बार पृथ्वीराजसे पराजित हुआ और पकड़े जानेपर तथा प्राण-भिक्षाकी याचना करनेपर महाराजके द्वारा छोड़ दिया गया। कहते हैं कि बारहवीं बार जयचन्दके बताये तरीकेसे वह बारह सौ गायें सेनाके आगे रखकर लड़ने आया। महाराजके तीर रुक गये। पराजय गले पड़ी। भारतका भाग्य-सूर्य सदाके लिये अस्त हो गया और इस देशपर मुसल्मानोंका एकमात्र आधिपत्य हो गया। परन्तु उस कालमें भी गोवध होनेका जिक्र कहीं नहीं मिलता। बल्कि जो बादशाह यहाँ आकर बस गये, उन्होंने भारतको अपना घर बना लिया। ऐसे अनेकों उदाहरण भरे पड़े हैं कि जब बाहरी मुसल्मान आक्रमण करनेके लिये यहाँ आये, तब यहाँके हिंदू-मुसल्मान दोनोंने मिलकर उनसे लोहा लिया।

इतना ही नहीं, मुसल्मान शासकोंने हिंदुओंके भावोंका बराबर आदर किया। इतिहासकार 'हंटर' लिखते हैं—'प्रारम्भमें मुसल्मान बादशाहोंने गोवधपर एक प्रकारका विशेष कर लगा दिया था, जिसका नाम 'जज़ारी' था और जो बारह 'जेटल' तक कसाइयोंसे वसूल किया जाता था। यह कर दो सौ वर्षतक जारी रहा और फीरोजशाह तुगलकके शासन-कालमें कसाइयोंके बावेला मचानेपर उठा दिया गया।' मुहम्मदशाह तुगलकके समयमें गायका गोश्त शाही बबरची-खानेमें नहीं जा सकता था। बर्नियर आदि विदेशी यात्री परिस्थिति अध्ययन करनेके विचारसे उस समय भारतमें आये थे। उन्होंने यहाँ ठहरकर लोगोंकी रीति, नीति आदिका अध्ययन किया था। उनके वर्णनमें आता है कि उस समय यहाँ गोवध मनुष्य-वधके समान दण्डनीय था। उन लोगोंने तत्कालीन बादशाहोंकी भोज्य-सामग्रीकी सूची भी दी है। उस सूचीमें कहीं भी गो-मांसका जिक्र नहीं है। नवम्बर १८, सन् १९२२ ई० के 'तौफी-ए-हिंद' नामक पत्रमें इस आशयका एक वक्तव्य निकला था कि लोदी शासकोंके समय यहाँ कहीं गोवध नहीं होता था तथा बादशाह नसीरुद्दीन खुशरूने इसको एकदम उठा दिया था। गयासुद्दीनके राज्य-कालमें फरहत-उल-मुल्क गुजरातके शासक थे। उन्होंने गोवध एकदम बंद कर दिया था।

सतरहवीं शताब्दीमें भारत आनेवाले यात्रियोंने ऐसी घटनाओंका उल्लेख किया है कि गोवध करनेवालेको बादशाहने प्राणदण्डतक दिया था। जब भारतका शासन-सूत्र तैमूर-वंशीय मुगल बादशाहोंके हाथ आया, तब उसका प्रथम शासक बाबर हुआ। मरनेके समय उसने अपने उत्तराधिकारी पुत्र हुमायूँके नाम एक पत्र लिखा था। वह पत्र उसीके हस्ताक्षरमें हूबहू लिखा हुआ भोपाल नवाब साहबके पुस्तकालयमें है। उसका फोटो लेकर छपरेके लब्ध-प्रतिष्ठ कांग्रेस-नेता डा० सैयद महमूदने बीस वर्ष पहले 'माडर्न रिव्यू' में एक विस्तृत लेख निकाला था। उस पत्रका अनुवाद यों है—

१. जमादि-उल-औव्वल ९३० हिजरी।

'ऐ मेरे पुत्र! भारतवर्षमें भिन्न-भिन्न सम्प्रदायके लोग हैं। परमात्माको धन्यवाद है कि उसने तुम्हारे हाथोंमें इस देशका शासन-सूत्र सौंपा है। तुम्हें अपने मनसे धार्मिक पक्षपातको अलग कर देना चाहिये। प्रत्येक धर्मके नियमके अनुसार उनके साथ न्याय करना और विशेषकर गो-हत्यासे परहेज रखना; क्योंकि ऐसा करनेसे ही तुम भारतवासियोंके

हृदयपर विजय पा सकोगे और इस देशकी प्रजा तुम्हारे कृतज्ञताके पाशमें बँधकर तुम्हारी कृपा-पात्र बन सकेगी। तुम्हारे राज्यके भीतर किसी भी जातिके जो मन्दिर या पूजाके स्थान हैं, उन्हें भ्रष्ट मत करना और इस तरह न्याय करना कि प्रजा बादशाहसे और बादशाह प्रजासे प्रसन्न रहे। इस्लामकी भलाई जितनी कृतज्ञताकी तलवारसे हो सकती है, उतनी अन्यायकी तलवारसे नहीं। सुन्नी और सियाके झगड़ोंसे आँख बंद कर लेना अन्यथा ये इस्लामको कमजोर कर देंगे। विभिन्न सम्प्रदायोंकी प्रजामें पाँच तत्त्वकी भाँति संयम उत्पन्न करना ताकि राज्यका शरीर विविध बीमारियोंसे सुरक्षित रहे आदि-आदि।' कहना नहीं होगा कि हुमायूँने अपने पिताके उपदेशका अक्षरशः पालन किया।

हुमायूँके पश्चात् उसका पुत्र अकबर दिल्लीकी गद्दीपर बैठा। इतिहासकारोंका कहना है कि उसकी नीतिने हिंदू-विरोधको बिल्कुल कमज़ोर बना दिया, इसीलिये मुसल्मान-राज्यकी नींव भारतमें जम गयी। अकबरने हिंदुओंको मिलाकर शासन किया। हिंदू शूर-सामन्तोंको उसने राज्यमें उच्च पद दिया। उसके शासनका पूर्ण बिवरण 'आईन-ए-अकबरी' नामक बृहत् पुस्तकमें है। उसका लेखक अकबरका बड़ा प्रियपात्र अबुल फजल था। उस ग्रन्थमें एक विभाग खासतौरपर गोरक्षाके लिये लिखित है। उसका अंग्रेजी अनुवाद श्रीयुत पी० टी० ब्लाकमैनने किया था। आईन २७, पृष्ठ ६३ में लिखा है—'सुन्दर वसुन्धरा भारतमें गाय माङ्गलिक समझी जाती थी। उसकी भक्तिभावसे पूजा होती थी। इस उपकारी जीवके बदौलत विस्तृत भारतकी खेती होती है और उसके द्वारा उत्पन्न अन्न, दूध, मक्खन आदिसे अधिवासियोंका गुजर चलता है। इसके बैल गाड़ी खींचते, बोझा ढोते और पानी निकालते हैं। इस जीवसे राज्यका बहुत बड़ा काम चलता है।' आगे चलकर १८३ वें पृष्ठमें लिखा है कि 'गोमांस निषिद्ध और उसे छूना पाप समझा जाता है।' १४०वें पृष्ठमें लिखा है कि 'बैल २४ घंटेमें अस्सी कोस (१६० मील) चलते हैं। घोड़ेसे तेज दौड़ते हैं। जब चलते रहते हैं तब गोबर नहीं करते।' 'आईन-ए-अकबरी'के भाग १ पृष्ठ ११२–११४ में लिखा है कि—'उस समय गुजरातमें गायकी जोड़ीका दाम ९००) रुपये तक था। लादनेके समय बैल स्वयं बैठकर लदवाते थे। गाय बीस सेरतक दूध देती थी। झुंड-की-झुंड गाय एकत्र कर गोपालकोंको दी जाती थी ताकि इस तरह उनकी रक्षा हो। इस प्रकारके कारखानेका नाम गोशाला था। उसके सञ्चालनके लिये अलग कानून बना था। अकबरकी खास गोशाला थी। उसकी व्यवस्था बहुत अच्छी थी। बादशाहके एक जोड़ी गाय थी जिसका मूल्य पाँच हजार मुहर था।' अबुल फजल कहता है कि 'बादशाह वैष्णव थे। भोजनके प्रारम्भमें घी और अन्तमें दही लेते थे। भोजनके पश्चात् बोल उठते थे 'भगवान् तेरी दया।'

एक बुद्धिमान् आदमीने एक बार बादशाहसे पूछा कि 'क्या वजह है कि गीध बहुत दिन जीता है और बाज कम दिन, गरचे दोनों मांसाहारी हैं?' बादशाहने जवाब दिया—'गीध किसीको दुःख न देकर मरे जानवर खाता है और बाज बेरहमीसे मारकर खाता है।'

गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजीको बादशाह अकबरने बहुत-सी जमीन और गाँव दिये थे, उनकी गायोंको सब जगह चरनेकी सुविधा दी थी और उनके स्थानोंके आसपास मोर आदि पक्षियोंके शिकारकी भी मनाही कर दी थी। इस सम्बन्धमें अकबर और उनके उत्तराधिकारियोंके द्वारा सन् १५७७ से सन् १८०५ ईसवी तक लगभग १६ फरमान जारी किये गये हैं। इन फरमानोंका संकलन करके बम्बईके श्रीकृष्णलाल मोहनलाल झवेरी एम्० ए०, एल्-एल्० बी०, जे० पी० महोदयने मूल फरमानोंके छायाचित्र उनके अंग्रेजी, हिंदी और गुजराती अनुवादसहित Imperial Farmans के नामसे प्रकाशित किया है। यह ग्रन्थ सम्भवतः श्रीनाथ-द्वाराके श्रीश्रीटीकायत महाराजके यहाँ मिल सकता है।

उक्त फरमानोंमेंसे एक छोटे फरमानका तर्जुमा नीचे दिया जाता है—

'तर्जुमा फरमान अतिये जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाज़ी—

करोड़ी व जागीरदारान परगने मथुरा, सहरा, मंगोध व ओड जो हर तरह पुश्त पनाहीमें हैं व उम्मेदवार रहते हैं जानें कि जहानकी तामील करने काबिल हुक्म जारी किया गया कि इसके बाद ऊपर लिखे परगनोंके इर्द-गिर्द मोर ज़िबह न करें, और शिकार न करें, और आदमियोंकी गायोंको चरनेसे न रोकें, इसके लिये जागीरदार व करोड़ी ऊपर लिखे हुएको ठैराव जानकर हुक्म मज़कूरमें पूरा बंदोबस्त रखें कि कोई शख्स इसके खिलाफ करनेकी हिम्मत न कर सके। इस बातको अपना फ़र्ज जानें। तहरीर बतरीख रोज दी महर ११ खुरदाद माह इलाही सन् ३८ जलूसी (५ जून सन् १५९३ ईसवी) दार उल सल्तनत लाहोर।'

बादशाहके दरबारमें बड़े-बड़े विद्वान् रहते थे, जो 'नवरत्न' कहलाते थे। उनमें एक नरहरि कवि भी थे। वे एक दिन नीचे लिखा छप्पय कागजपर लिखकर गायके गलेमें बाँधकर उसे दरबारमें ले गये—

अरिहु दंत तृन धरइ ताहि मारत न सबल कोइ।
हम संतत तृन चरहिं बचन उच्चरहिं दीन होइ॥
हिंदुहि मधुर न देहिं कटुक तुरकहिं न पियावहिं।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं बच्छ महि थंभन जावहिं॥
सुनु शाह अकब्बर! अरज यह करत गऊ जोरे करन।
सो कौन चूक मोहि मारियतु मुयेहु चाम संवत चरन॥

इस कविताके सुननेके बाद बादशाहने मुल्लाओंको एकत्रित कर उनका परामर्श लेकर नीचे लिखा फरमान जारी किया। फरमानकी नकल सिंधिया बहादुरके यहाँ मौजूद है। खास मुहर और दरबारी निशानोंसे विभूषित होकर यह फरमान १३ जिलाहिज्ज सन् ३१ शाहीमें जारी हुआ था। खुलासा इस प्रकार है—

'सल्तनतके प्रबन्धकगण, कर्मचारी, अमीर-उमराव, परगनोंके हाकिम और शाही मुल्कोंके कारबारके जिम्मेदार जान लें कि इस न्यायके युगमें यह फरमान जारी किया गया है। इसका पालन सबके लिये परमावश्यक है। सबको मालूम रहे कि समस्त पशु ईश्वरके बनाये हुए हैं और सबसे एक-न-एक लाभ होता है। इनमें गायकी जाति, चाहे वह मादा हो या नर अत्यन्त लाभ देनेवाली है; क्योंकि मनुष्य और पशु अन्न खाकर जीते हैं। अन्न खेतीके बिना हो नहीं सकता। खेती हल चलानेसे ही हो सकती है और हलोंका चलना बैलोंहीपर निर्भर है। इससे स्पष्ट हुआ कि समस्त संसार और पशुओं तथा मनुष्योंके जीवनका आधार एक गाय-जाति ही है। ऊपर लिखे कारणोंसे हमारी ऊँची हिम्मत और साफ नीयतका यह तकाजा है कि हमारे साम्राज्यमें गोहत्याका रस्म बिल्कुल न रहे। इसलिये इस शाही फरमानको देखते ही समस्त राजकर्मचारियोंको इस विषयमें विशेषरूपसे प्रयत्न करना चाहिये जिससे शाही फरमानके अनुसार अबसे किसी गाँव और शहरमें गोहत्याका नाम और निशानतक बाकी न रहे। यदि कोई आदमी इस आज्ञाका उल्लङ्घन करेगा और वर्जित कामको नहीं छोड़ेगा तो वह समझ ले कि उसको सुलतानी गजबमें, जो ईश्वरीय कोपका एक नमूना है, फँसना पड़ेगा और वह दण्डनीय होगा।'

इसके बाद बादशाहने हुक्म दिया कि 'हमारे ऊपरके फरमानका जो उल्लङ्घन करेगा, उसके हाथ और पाँवकी अँगुलियाँ कटवा ली जायँगी। इस फरमानसे तमाम राज्यमें गोहत्या बंद हो गयी। फिर नरहरि कविने नीचे लिखी कविता रचकर बादशाह अकबरको सुनायी—

नरहरि कविते गऊकी बिनतीकौ सुनि
ह्वै गये अकब्बर सबीह जैसे नकसी।
दीन्हां है हुकुम करवाय आम खास बीच
बंद भयो गोबध खबरि फेरि बकसी॥
फैलि गयो सुजस दिलीप सो जहान बीच
हिंसक समाज बैठि बोले अकबक-सी।
आनँद कसाइनको गाइनको दीन्हो, और
गाइनकी मौत लै कसाइनको बकसी॥

अकबरके लड़के जहाँगीरने पिताके फरमानको सर्वत्र जारी रक्खा। अकबरने जो दिन सप्ताहमें पशुवधके लिये निषेध कर दिये थे, उनमें भी और अधिक दिन जहाँगीरने जोड़ दिये। नेपालकी ही तरह उस समयकी दिल्लीमें एकादशीके दिन ढूँढनेपर भी मांस नहीं मिलता था। फ्रेंच यात्री डा० बर्नियर लिखते हैं कि—'अपने विस्तृत राज्यमें जहाँगीरने गोवध बंद करा दिया था। दीवालीके दिन ब्राह्मण शाही बगीचेमें गाय लाते थे और इनाम पाते थे।'

सर टामस रो लिखते हैं कि 'एक बार उन्होंने एक हिंदू वैरागीको कम्बल ओढ़े बादशाहके बगलमें गद्दीपर बैठे देखा था। बादशाह उससे घुल-घुलकर बातें कर रहे थे तथा बीच-बीचमें 'बाबा' कहकर सम्बोधन करते जाते थे।' सर टामस रो अंग्रेज थे और बादशाहके दरबारी थे। जहाँगीरका पशुओंसे बड़ा प्रेम था। 'तुजक-ए-जहाँगीरी'में लिखा है कि जानवरोंके लिये उसने खास विभाग खोल रक्खा था, जिसमें खास-खास जगहोंसे गाय-बैल मँगवाकर रक्खे गये थे। नस्ल-सुधारके कामके लिये अच्छे-अच्छे जातिवन्त साँड़ थे। गो-प्रदर्शनी होती थी और पुरस्कार दिया जाता था। गोचर-भूमि छोड़नेके लिये भी फरमान जारी किया गया था।

जहाँगीरके पश्चात् उसके पुत्र शाहजहाँके समयमें भी यह प्रथा जारी रही। औरंगजेबके राज्यकालमें भी इस प्रथाको उठानेका कहीं उल्लेख नहीं मिलता है।

बहादुरशाह बादशाहके समय महाराजाधिराज माधवराव

सिंधिया बहादुरने बड़ी प्रार्थना की थी । बादशाह उनको बहुत मानते थे। बादशाहने मुल्लाओंको एकत्र किया और उन लोगोंसे राय ली कि इस्लाम-धर्मके आचार्यलोग बतावें कि इस्लाम-धर्ममें गायके बारेमें हदीसशरीफमें क्या है। उसपर बादशाहके खास पीर मौलवी कुतुबुद्दीन साहबने बतलाया कि हदीसशरीफमें चार चीजें वर्जित हैं।

१. क़ाते-उल-शजर—बड़-पीपल आदि हरे पेड़को काटनेवाला।

२. बाय-उल-बशर—मनुष्यको बेचनेवाला।

३. ज़ाबेह-उल-बक़र—गायको मारनेवाला।

४. तथा किसीकी स्त्रीके साथ कुकर्म करनेवाला।

ये चारों पाप करनेवाले कभी नहीं बख्शे जायँगे। कुरानकी आयत और पूर्वोक्त हदीस भी इस विषयमें मौजूद है। इससे साबित हुआ कि खुदातालाने विशेषरूपसे गोहत्या वर्जित की है। इस फतवेके नीचे निम्नलिखित दस्तखत है।

१. महम्मदशाह गाजी शाह आलम बादशाह

२. सैयद अताउल्ला खां फिदवी

३. दस्तखत दारोगा आतिशखाना हुजुर पुरनूर दरबार। कुस्तंदानी। 'जिबह करदन मादा गावे शीरदार अज़ हदीस हमीं अस्त मुजतन वज़ाते अल्लाह' (दूधवाली गायके मारनेके विषयमें हदीसका ऐसा ही हुक्म है। ईश्वरने इसे वर्जित किया है।) काजी मीयाँ असगर हुसेन दस्तखत खास वल्द मुंशी इलाही खाँ मुहर काजी । मुहम्मदशाह बादशाह गाजी सालार बावफार फिदवी जंगका कुतुबुल-मुल्क अमीनुद्दौला सैयद अताउल्लाह खाँ बहादुर जफर। खादीश सर ए मुहम्मद रफीक गुलाम अहमदउद्दीन।

इस फतवेके बाद नीचे लिखा फरमान जारी हुआ—

'मुलाज़िमाने बारगाहे खिलाफत व कारपरदाजान दरगाहे सल्तनत, उमरायआली, मिकदारते जमीं, उम्मालाने महलान, मुल्लाशायान, महमयाने मुमालिके महरूस, दौलते अब्द मुद्दतको मालूम हो कि उन दिनों फरमान शाही सदर हुआ है कि गाय और बैल बेशुमार फायदा और लाभ रखते हैं। मनुष्य और पशुओंका जीवन अन्न और घासपर निर्भर है और वे दोनों चीजें खेतीके बिना मिल नहीं सकती हैं और खेती गाय और बैलके बिना कठिन है। गाय और बैलपर ही संसारकी जनसंख्या और मनुष्यका जीवन निर्भर है। इस बातको ध्यानमें रखकर फरजंदे अर्जमंद महाराजाधिराज माधवराव सिंधिया बहादुरकी गुजारिशके अनुसार माबदौलतकी इच्छा है कि मेरे अधीन समस्त राज्यमें गोहत्याका रिवाज बिल्कुल न रहे और सर्वथा मिटा दिया जाय। इस फरमानके मिलते ही राज्यके समस्त प्रबन्धकर्ताओंको इस आज्ञाको प्रयोगमें लानेका पूरा प्रबन्ध करना चाहिये और आज्ञानुसार पवित्र व उत्तम स्थान, किसी भी शहर, कस्बे और गाँवमें गोहत्या न की जाय। यदि किसीने इसके विरुद्ध किया तो वह बादशाही कोपका भाजन होगा और सजा पायेगा।'

मौलवी कुतुबुद्दीन पीर बादशाह हैदरअलीको लोग कलियुगी विराट् कहते थे। उसके पास अमृतमहाल जातिके साठ हजार बलवान् बैल थे। उसकी विशाल गोशालाका प्रबन्धकर्ता स्वयं उसका प्यारा पुत्र टीपू सुल्तान था। कहते हैं कि अंग्रेजोंकी लड़ाईमें जब टीपू हार गया तब १८ घंटेमें १५० मीलकी यात्रा रातोंरात उसने बैलगाड़ीपर तय की। उस विपरीत कालमें भी, जब हिंदूजाति सब तरहसे विनाशके मार्गपर पहुँच गयी थी, यहाँका गोधन संसारके लिये आश्चर्य था। इतना ही नहीं, अफगान-युद्धमें कप्तान डैवीसनके साथ तीस हजार बलवान् बैल थे।

मुसल्मानी शासनके अन्त होनेके बाद उस धर्मके नेताओं और आचार्योंने जो फतवे दिये तथा समय-समयपर मत प्रकट किये हैं उसका ब्योरेवार विवरण देना आवश्यक प्रतीत होता है। नीचेके विषय बड़े दिलचस्प और महत्त्वपूर्ण हैं—

१. गायकी कुर्बानी करना इस्लाम-धर्मका नियम नहीं है। (फतवे हुमायूनी भाग १ पृ० ३६०)

२. बकरे और भेड़की कुर्बानी गायकी कुर्बानीसे अच्छी है। (दार-उल मुखतियार भाग ४ पृ० २२८)

३. गायकी कुर्बानीके जायज होनेमें मतभेद है, इसलिये बकरे और भेड़की कुर्बानी ठीक है। (दार-उल-मुखतियारकी लुगत। दार-उल-मुखतियार, भाग ५ पृ० २२८)

४. गायकी कुर्बानीकी अपेक्षा भेड़ और बकरेकी कुर्बानी अच्छी है। (कुस्तुन्तुनियाँके सादिकका फतवा)

५. गरीब मुसल्मानके लिये कुर्बानी जरूरी और नैमित्तिक नहीं है। (मौलाना हसन निजामीका फतवा)

६. गायकी कुर्बानी जरूरी और नैमित्तिक नहीं है। अगर कोई इसे छोड़ देता है तो धर्मविरुद्ध काम नहीं करता। (लखनऊके मौलाना हयीका फतवा, जिसपर अब्दुल हसन, अब्दुल वहीद, अब्दुल अदवली हाजी और काजी हसन मुहम्मदके दस्तखत हैं।)

७. न तो कुरान और न अरबकी प्रथा ही गौकी कुर्बानीका समर्थन करती है। (हकीम अजमल खाँ)

८. गायकी कुर्बानी मुसल्मानी धर्मका नियम नहीं। (मियाँ छोटानी)

९. यह मेरा आम विचार है कि बकरीदके वक्त जो पैसे गायकी कुर्बानीमें खर्च होते हैं वे बाल्कनके युद्धमें भेज दिये जायँ तो अधिक सबाब होगा। (अलीगढ़के मौलाना शिबली)

१०. छः मौलवियोंने मिलकर हदीसके आधारपर बकरीदके अवसरपर गाय नहीं मारनेका फतवा निकाला था और लखनऊकी एक सभामें इसके विरुद्ध भाषण भी दिया था।

११. मुसल्मान गाय नहीं मारे। यह हदीसके खिलाफ काम है। (मौलाना हयात साहब, खानखाना हाली, समद साहब)

१२. गोवधके लिये हिंदुओंसे झगड़ा करना मूर्खता है। हिंदू भाइयोंके साथ सब तरहसे मिलकर रहना श्रेष्ठतम मानव-आदर्श है। जिस गायके साथ वे प्रेम करते हैं उसको मारना अथवा उसका मांस खाना बुरा है। (शम्श-उल-उल्मा मौलवी शफाज अहमद साहब एल्-एल्० डी०) गायकी कुर्बानी कोई जरूरी बात नहीं है। अगर कोई मुसल्मान गायकी कुर्बानी छोड़ देता है तो वह गुनाह नहीं करता। अगर कोई मुसल्मान गाय न काटे और गोमांस न खाय तो उसके मजहबमें फर्क नहीं पड़ता। किसी मजहबी जजबातको चोट पहुँचानेका सबक इस्लाम नहीं सिखाता। (मौलाना अब्दुल हसन, महम्मद अब्दुल अहमद, अब्दुल बहाव, अब्दुल हमीद, काजी मुहम्मद हुसैन आदि)।

१३. मौलाना गनीने भी गोवधके विरुद्ध फतवा दिया है।

१४. मुल्लाओंकी राय लेकर अफगानिस्तानके अमीर साहबने गोवध रोकनेका कानून बनाया था।

१५. लखनऊके फिरंगी महालके मौलाना अब्दुल बारीने गोवधके विरुद्ध एक फतवा निकाला था। जिसका ऐसा असर पड़ा कि दिल्लीमें बकरीदके दिन जो ५०० गायें मारी जाती थीं, उस साल एक ही मारी गयी। एतदर्थ महात्मा गाँधीने उनको धन्यवादका तार भेजा था।

१६. पीर मोटा मीयाँ साहब मांगरोलनिवासी मुसल्मानोंके प्रधान धर्मगुरु थे। ये गोरक्षाके बड़े हिमायती थे। अपनी गद्दी छोड़कर जीवनभर गोरक्षाका काम करते रहे।

१७. सन् १९१२ ई० में कुस्तुन्तुनियाँके सुल्तानने बकरीदके अवसरपर गायकी कुर्बानी करनेसे हिंदुस्थानी मुसल्मानोंको मना किया था।

१८. अली भाइयोंने, मौलाना अबुल कलाम आजाद और डा० सैयद महमूदने बकरीदके दिन गायकी कुर्बानी छोड़ देनेके लिये समस्त मुसल्मानोंसे अपील की थी।

१९. महात्मा गाँधीके इतिहासप्रसिद्ध २१ दिनके उपवासकी समाप्तिके अवसरपर मौलाना महम्मद अलीने उनको एक गाय भेंट की थी।

२०. बैंगलोरके बैरिस्टर-एट-ला अब्दुल हमीद बी० ए० साहबने अपने गोरक्षाके भाषणमें बताया था कि कुरान-शरीफमें गोवधका आदेश नहीं है।

२१. अलीगढ़के मुस्लिम विश्वविद्यालयके छात्र बकरीदके मौकेपर एक बार वध करनेके लिये एक गायको लाये थे। यह समाचार सुनकर उस विश्वविद्यालयके संस्थापक सर सैयद अहमद साहब बड़े व्याकुल हुए और गायको छुड़ा देनेपर ही उनको चैन मिला।

२२. मौलाना शेख शम्शउद्दीन कमरुद्दीनकी गो-भक्ति तो भारत-विख्यात है। उन्होंने कहा है कि 'हिंदुस्थानमें गो-जाति अरबके ऊँटोंसे कहीं अधिक उपयोगी है। गोवधसे दूधका बड़ा अभाव होता जाता है। मुसल्मानोंको चाहिये कि गोवध नहीं करें।'

२३. नवाब साहब राधनपुर, मंगरौल, पातोदी दरजाना तथा मुर्शिदाबादने एक अपील निकाली थी, जिसका आशय इस प्रकार है—'ईश्वर रहीम हैं, सबपर बराबर दया करते हैं इसलिये गोवध नहीं करना चाहिये।'

२४. जबलपुरके खाँ बहादुर जाफर अली साहबने कोशिश करके मध्यप्रान्तकी सरकारसे कानून बनवा दिया है कि नौ वर्षसे कम अवस्थाके जानवर न काटे जायँ।

२५. सहारनपुरके महम्मद उस्मान साहबने 'गावकुशी और इस्लाम' नामक पुस्तक उर्दूमें लिखी है। उसमें कुरान शरीफसे अवतरण देकर गोवधके निषेधकी पुष्टि की गयी है। मैसूर-नरेशसे भी उन्होंने प्रार्थना की थी कि कानून बनाकर अपने राज्यमें गोवध रोक दें।

२६. सीतापुरके आनरेरी मजिस्ट्रेट और वकील गो-भक्त सैयद नजीर अहमद जीवनभर गोरक्षाका प्रचार लगनके साथ करते रहे। सन् १९२५ ई० में उन्होंने 'इस्लामी गोरक्षा' नामक एक खोजपूर्ण पुस्तक उर्दूमें लिखी थी और इस्लामी गोरक्षिणी सीतापुरमें कायम की थी।

२७. एक समझदार मुसल्मान स्टेशनमास्टर महम्मद फीरोजखाँने आजन्म गायका गोश्त नहीं खानेकी प्रतिज्ञा ली थी और एक लंबा-चौड़ा वक्तव्य ९ अप्रैल सन् १९१९ ई० को भटिंडा स्टेशनसे अखबारोंमें प्रकाशित करवाया था।

२८. मुसल्मान पत्र 'वकील'ने आगरा प्रान्तके आतावली-निवासी नवाब हाजी मुहम्मद इस्माइल रईसकी गोरक्षाके सम्बन्धमें एक चिट्ठी प्रकाशित की थी जिसका आशय इस प्रकार है—'यदि गायकी जान बचाना मंजूर है तो ऐसी कोशिश होनी चाहिये कि सालभरमें एक दिन भी गो-कुशी न हो। मुल्ककी जरूरतोंपर लिहाज करके न केवल गाय, बल्कि

भैंसा और भैंस तकका अनायास वध न किया जाय। संभवतः इसकी रोक-थाम कानूनद्वारा हो सकती है। इस कानूनके पक्षमें हिंदू और मुसल्मान दोनोंको यत्न करना चाहिये।'

२९. सन् १९२३ ई०में अमीर अफगानिस्तानके फरमानके पश्चात् उसी तरहका मिलता-जुलता फरमान हैदराबादके निजामने निकाला था तथा अपने राज्यमें गोवध बंद करा दिया था। दरभंगेके तत्कालीन महाराजाधिराज सर रामेश्वरसिंहजी बहादुर हिंदुओंकी ओरसे निजामको इस पुण्यकार्यके लिये धन्यवाद प्रदान करने हैदराबाद गये थे।

३०. पटनेमें अखिल भारतवर्षीय गो-महासम्मेलनका द्वितीय अधिवेशन हुआ था। कलकत्ता हाईकोर्टके जस्टिस क्लीफ उसके सभापति थे। स्वागताध्यक्षकी हैसियतसे स्वर्गीय मौलाना मजहरुल हक साहबने जो भाषण दिया, वह बड़ा महत्त्वपूर्ण है। आपने उसमें कहा है कि 'गाय और घोड़ा दोनों हलाल हैं, फिर घोड़ेको मारकर लोग क्यों नहीं खाते। यद्यपि वह सिर्फ सवारीके काममें आता है।

३१. मौलवी वाहिद हुसैन साहब बी० एल०, आल इंडिया काउ कान्फ्रेंस एसोसियेशनके मानद मन्त्री थे। बड़ी लगनसे उन्होंने गोरक्षाका प्रचार किया था।

मुसल्मानोंमें अनेक ऐसे कवि भी हुए जिन्होंने मुक्त हृदयसे गोरक्षाका समर्थन किया है। रहीम, जायसी, कबीर आदि। कबीरने जहाँ यह लिखा है कि 'मांस-मांस सब एक है, जस खस्सी तस गाय।' वहाँ यह भी लिखा है—

दिन भर रोजा राखते, रात काटते गाय।
एक खून एक बंदगी कैसे खुशी खुदाय॥

अन्तमें, कविवर अकबरके निम्न पदोंका उद्धरण देकर हम इस लेखको समाप्त करते हैं—

बेहतर यही है कि फेर ले आँखोंको गायसे।
क्या फायदा है रोजकी इस हाय हायसे॥
कमजोरियोंको रोक दें जोरोंको क्या करें?
मुस्लिम हटें तो फौजके गोरोंसे क्या करें?
मुँह बंद हो सकेगा. मुसलमां शरीफका।
चस्का मगर न जायगा साहबसे 'बीफ' का॥

गाय और इस्लाम

(लेखक—पं० श्रीविजयानन्दजी त्रिपाठी)

जिस गोमाताके विकारोंका—पञ्चगव्य (शकृत्, मूत्र, दुग्ध, दधि और घृत) का प्राशन करके हम अपने त्वगस्थिगत पापोंको दूर करते हैं, जिसके गोमयके उपलेपन बिना पृथ्वी किसी धार्मिक कृत्यके योग्य नहीं होती, जिससे उद्भूत अमृत (पञ्चामृत) बिना कोई वैदिक कर्म सम्पन्न नहीं होता, किसी औषधका अमृतीकरण नहीं होता, जिसे दान किये बिना हम घोरा वैतरणीके पार नहीं होते, जिसका दुग्ध हमारा जीवन है, जिसके माहात्म्यसे सम्पूर्ण वेद-शास्त्र भरे पड़े हैं, आश्चर्य है कि उस गोमाताकी महिमा इस्लाम (मुसल्मानी) धर्म भी गान करता है।

अधिकतर मुसल्मानोंकी क्या, सवसाधारणकी यही धारणा है कि मुस्लिम धर्ममें गायकी कुर्बानी (गोवध) लाजिमी है, क्योंकि भारतमें बकरीदका कुशलसे बीतना आज भी कठिन हो जाता है, परन्तु वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। मुस्लिम धर्मके संस्थापक स्वयं मुहम्मद साहबने* गायको जानवरोंका सरदार बतलाया है और उसकी इज्जत करनेकी आज्ञा दी है। स्वयं हजरतने कभी गायकी कुर्बानी नहीं की और न आजतक कभी गायकी कुर्बानी मक्के शरीफमें होती है। किसी दारुल-इस्लाममें गायकी कुर्बानीकी चाल नहीं है। मुसल्मानी धर्म-ग्रन्थोंमें गायके दुग्धको अमृत और उसके मांसको विष बार-बार बतलाया गया है, फिर भी भारतके कुछ अदूरदर्शी मुसल्मान, जिस प्रेरणासे पड़ोसियोंके प्रेमको तिलाञ्जलि देकर विष ग्रहण करते हैं, उसे धार्मिक प्रेरणा कैसे कहा जा सकता है?

विचारशील मुस्लिम पण्डितोंने इस बातको समझा और गोवध बंद करनेके लिये कई बार फतवा (व्यवस्था) भी दिया, पर अदृष्ट शक्तिकी बाधासे, उसके प्रचारमें सहायता न हिंदुओंने की और न मुसल्मानोंने!

अरबी कालिज लखनऊके प्रोफेसर जनाब मौलाना सैयद मुहम्मद सादिक साहबने इस खाम-खयालीको दूर करनेके लिये सन् १९३८ में 'गावकुशी और इस्लाम' नामक एक छोटा-सा रिसाला लिखकर मुसल्मानोंसे अपील की कि इस्लाममें गोवध फर्ज नहीं है। अतः मुसल्मान लोग उदारताको स्थान दें और गोवधका परित्याग करें।

* पैगंबर इस्लामका इरशाद (तफसीर दरमनसूर) अर्थ—'गायकी बुजुर्गी व इहतराम किया करो कि वह तमाम चौपायोंकी सरदार है।'

यह रिसाला कुछ थोड़ा-सा छपकर रह गया। आवश्यकता थी कि इस रिसालेकी लाखों प्रतियाँ उर्दू और हिंदीमें छपाकर जनतामें बाँटी जातीं और इसके द्वारा मुसल्मानलोग समझा-बुझाकर रास्तेपर लाये जाते। गोरक्षाके लिये बड़ी-बड़ी योजनाएँ हो रही हैं, पर इस ओर लोगोंका ध्यान कम है। मेरी इतनी ही सामर्थ्य है कि इस रिसालेका सारांश पाठकोंकी जानकारीके लिये भेंट करूँ।

श्रीमौलाना साहब लिखते हैं कि 'आमतौरसे मुसल्मानोंका खयाल है कि कुर्बानीका बहुत बड़ा सम्बन्ध गायसे है, परन्तु पैगंबर साहबके जीवनचरित्रपर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि ऐसी धारणा निर्मूल है।

पैगंबर साहबका व्यवहार

कुर्बानीके सिलसिलेमें हजका मौका एक खास है, यदि गायकी कुर्बानीकी कुछ भी महत्ता होती, तो वह ऐसे समयमें उपेक्षित न होती। पैगंबर साहबका तर्जे अमल (व्यवहार) इस विषयमें प्रमाण है। हदीस-शरीफमें लिखा है—

१. पैगंबर साहबकी आदत थी कि वे दो मेढ़े ज़बह फर्माया करते थे।

२. अबू दाऊद कहते हैं कि पैगंबरने यौमुल आखिरमें दो मेढ़े ज़बह फरमाये।

३. जाबिर कहते हैं कि मुकाम मुसल्लीमें कुर्बानीके वक्त मैं मौजूद था, जब पैगंबर खुतबा पढ़ चुके, तो आपने एक मेढ़ा मँगवाया और उसे अपने हाथसे ज़बह फर्माया।

४. एक बकरी भी उसके तमाम घरवालोंके लिये काफी है, चाहे वे कितने ही हों। यह रसूलकी तालीम है।

५. रसूल इकरामने अपनी तरफसे भेड़ और ऊँटकी कुर्बानी की। (जादुल मआद इब्नकीम सफा ३५३)

इन प्रमाणोंसे स्पष्ट है कि पैगंबर इस्लामकी सुन्नत हजके मौकेपर मेढ़े, बकरी और ऊँटकी कुर्बानी करती थी, चौथी रवायतसे यह भी मालूम होता है कि पशु-धनपर ध्यान देकर एक बकरीकी कुर्बानीसे ही मनुष्यको कर्त्तव्य-ऋणसे विनिर्मुक्त कर दिया है।

पैगंबर साहबका आहार

इल्लामा इब्नकीम अपनी किताब जादुल आदके सफा ३७ में कहते हैं कि रसूल अकरम ग़िज़ा (भोजन) में ऊँट, भेड़, मुर्ग और तादरीका गोश्त इस्तेमाल करते थे। पैगंबरकी ग़िजाके उल्लेखमें ऐतिहासकोंने कहीं नहीं लिखा है कि पैगंबरने और गिजाओंकी तरह कभी गायका गोश्त भी इस्तेमाल फर्माया, इसलिये अहल इस्लामके लिये वाजिब है, कि उनके पैगंबरके आहार-व्यवहारमें जो चीजें दाखिल न हों, उनसे परहेज करें। मुमकिन है कि बहुत खोजके बाद कोई एक-दो अवसर ऐसे जुटा दिये जावें, जिनसे साबित हो कि पैगंबरने गायका गोश्त भी इस्तेमाल किया, लेकिन ऐसी इत्तफाकी और नादिर घटनाएँ पैगंबरके आहार-विहारमें शुमार किये जानेके काबिल नहीं हो सकतीं।

कुर्बानी (बलि) के लिये सबसे बेहतरीन (श्रेष्ठ) चीज कौन है?

एक ही हैसियतकी बहुत-सी चीजोंमेंसे, बेहतर चीजको चुन लेना मनुष्यका स्वभाव है। शरीयतकी तरफसे बेशुमार चीजें खानेके काबिल करार दी गयी हैं, तो क्या इंसानको सब चीजें खा ही लेना चाहिये। अकल किसी वक्त इसकी ताईद नहीं कर सकती। जरूरत है कि मौकेपर इन्तखाबकी ताकतसे काम लिया जाय। हर हलाल चीजको हलाल समझकर खा लेना, और उसके गुण-दोषपर विचार न करना, अकलके खिलाफ नाकाबिल इनकार मोर्चा आराई है। गधेका गोश्त खाना शरअत् जायज है, फिर मुसल्मान क्यों नहीं खाते? घोड़ेका गोश्त खाना हराम नहीं है, फिर मुसल्मान क्यों इसका इस्तेमाल नहीं करते? क्योंकि घोड़ों और गधोंसे दूसरे कामके फायदे हैं। समझमें नहीं आता कि मुसल्मान जो हैवानी मुनाफाका इस हदतक पास व लिहाज करते हैं, वे गायके बारेमें क्यों इस कदर तंग-नजरीका सबूत देते हैं।

हैवानातके चुनावकी जरूरत

कुर्बानीके चुनावका तरीका यही है कि जिन जानवरोंसे जो-जो जरूरतें जुड़ी हुई हों उन्हें उसी कामके लिये रहने देना चाहिये और कुर्बानी सिर्फ उन्हीं जानवरोंकी होनी चाहिये जो इन लाभोंसे असम्बद्ध हों। दूध, दही और घीसे ज्यादा कौन-सी चीजें आदमीके जीवनके लिये आवश्यक हैं। फिर ऐसी सूरतमें बिला शुभा यह नतीजा निकलता है कि जिन पशुओंसे ऐसे लाभ हों, उन्हें उन लाभोंके लिये ही छोड़ देना चाहिये, और कुर्बानीके लिये केवल उन्हीं पशुओंको काममें लाना चाहिये, जिनसे इस प्रकारके लाभ

न होते हों। यदि न्यायकी शक्ति तुम्हारे अन्तःकरणमें काम करती हो तो ज़रा यह बतलाओ कि गायके अतिरिक्त पशुओंमें और कौन है, जिसे जीवनमें, लाभ पहुँचानेके लिये चुना जा सके।

गाय तो बड़ी चीज़ है, यदि पैगंबरके वचनोंपर ध्यान दिया जाय, तो मालूम होता है कि हजरतने दुम्बा तककी हिफाज़त फर्मायी है। क्यों? सिर्फ इसलिये कि भोजन-सम्बन्धी लाभ इससे भी होता है। मेढेको बेहतरीन कुर्बानी बतलाकर, लाभदायक पशुओंकी वृद्धिका रास्ता निकाल दिया।

मेढ़ा बेहतरीन कुर्बानी है (तरदी शरीफ)

पहले तो चुनावकी दृष्टिसे गायकी कुर्बानी नाकाबिल इनकार अक्ली जुर्म करार पाती है, फिर उसकी पुष्टिके लिये रसूल इकरमका यह वचन कि 'कुर्बानीके लिये बेहतरीन जानवर मेढा है' बातको अत्यन्त स्पष्ट किये देता है। यक़ीनन् मुसल्मानोंको अपने रसूलके इन्तखाबका वज़न महसूस करते हुए, मेढ़ेकी ही कुर्बानी करनी चाहिये।

कुर्बानीका प्रारम्भ

कुर्बानीका इतिहास देखनेसे पता चलता है कि इसका प्रारम्भ मनीकी पहाड़ीसे हुआ। वहाँ इब्राहीम खलील अपने ईश्वरकी आज्ञासे अपने बेटेके गर्दनपर छुरी फेर रहे थे, और कुदरतने जबह अज़ीम (महाबलिप्रदान) के मक़सदको पूरा करनेके लिये एक जानवर बतौर फीदिया (अनुकल्प) भेज दिया था। कुराननें कुर्बानीकी इब्तदायी मंजिलमें भी इस बातको फरामोश कर दिया ? नहीं, हरगिज नहीं। दुम्बामें चूँकि दूध-घी वगैरहका फायदा पहुँचानेकी सामर्थ्य थी और गायमें उससे भी ज्यादा लाभ पहुँचानेकी योग्यता थी। अतः हजरत इस्माइलकी जगह मेढ़ेका इन्तखाब करके बतला दिया कि कुर्बानी सिर्फ उस जानवरकी हो, जिससे दूध-घी वगैरहका लाभ न हो। क्या मुसल्मानोंका कुर्बानीके मौकेपर मेढ़ेके बजाय गायकी कुर्बानी करना सुन्नत खुदा और सुन्नत इब्राहीमीकी खुली खिलाफ-वर्जी नहीं है ? जातीय द्वेषको इतना न बढ़ा देना चाहिये कि उपर्युक्त बातोंपर ध्यान भी न जाय !

लोगोंमें मशहूर है कि जनाब इस्माइलकी एवज़में दुम्बा बतौर फीदिया (अनुकल्प) ज़बह हुई थी, लेकिन यह बात ग़लत है। इसका प्रमाण यह है कि दुम्बाके सिरपर सींग नहीं होती, और उक्त कुर्बानीके सींगोंका खानेकाबेके अंदर मौजूद होना, और हेजाबिन यूसुफ़के हाथोंका बाकी बरबादीके वक्त उनका तलफ होना तवारीखसे साबित है।

इसपर यदि कोई यह कहे कि जब दुम्बा और गायसे समान लाभ है तो गायके लिये ही इतना जोर क्यों देते हो ? इसपर मेरा यह कहना है कि दुम्बाके वधसे कोई हानिविशेष नहीं है, देशके सुख-शान्तिमें कोई बाधा नहीं पड़ती, नर-हत्याकी नौबत नहीं आती, गायकी कुर्बानीमें उपर्युक्त सभी उपद्रव होते हैं और शरीयतमें भी गायके गोश्तके इस्तेमाल न करनेपर ज़ोर दिया गया है। इसलिये हम पूरी कूबतके साथ गावकुशी (गोवध) नीज़ उसके मांससे बचनेके लिये ज़ोर देते हैं। वाजिब है कि जिस भाँति पैगंबर इस्लाम-ने गायकी कुर्बानीको बिल्कुल गैरजरूरी और हमेशा कौलन् फेलन् नाकाबिल इल्तफात समझा, उसी भाँति इस्लामपर-वर इफ़राद भी कुर्बानीके मौकेपर कभी इसका नाम न लेते।

गायसे लाभ

गाय ही ऐसा लाभदायक पशु है, जिसके घी और दूधमें परमेश्वरने गन्धककी मात्रा मिला दी है। कमजोर बच्चे जितना उसके दूधसे बलवान् होते हैं, और किसी पशुके दूधसे नहीं होते, और यह भी हकीमोंका अनुभव है कि जिन औरतोंका दूध खराब या किसी बीमारीके कारण कम हो जाता है, उनके बच्चे या वे दुधमुँहे बच्चे जिनकी मा मर जाती है, उनके लिये गायका दूध परम लाभदायक है। शोक है कि ऐसे लाभदायक प्राणीका मुसल्मान कुछ ख्याल नहीं करते और लाखोंकी तादादमें काटकर खा जाते हैं।

गायकी महिमा

मुसल्मानोंके बड़े भारी मार्गप्रदर्शकने गायके लाभपर दृष्टि रखते हुए उसे काबिल ताज़ीम (पूजनीय) जानवर करार दिया है, इसके लिये तफसीर दरमनसूर देखिये— 'गायकी बुजुर्गी व इहतराम किया करो इसलिये कि वह तमाम चौपायोंकी सरदार (सैयदुलवहायम) है।'

गो-विषयक इस्लाम-धर्मके उपदेश

१. उल्लामा जलालुद्दीन सेवती लिखते हैं 'गायका गोश्त मर्ज और उसका दूध और मक्खन शिफा है।'

२. हजरत आयशा फर्माती हैं 'गायका दूध दवा, उसका मक्खन शिफा और उसका गोश्त सरासर मर्ज़ है।'

३. उल्लामा तिबदी जहीरने रवायत की है 'गायका गोश्त बीमारी, उसका मक्खन दवा, उसका दूध शिफा है।'

४. इब्न मसऊद सहावी रसूल अल्लाहसे रवायत की है 'गायका दूध सरासर शिफा है ।'

५. इमाम जाफर साहबने इरशाद फर्माया 'गायका दूध दवा, उसके मक्खनमें शिफ़ा, उसके मांसमें बीमारी है ।' इत्यादि अनेकों वचन हैं ।

जिन बड़े-बड़े बादशाहों और उमराओंने गोवध बंद करनेकी आज्ञाएँ दीं या जिनके राज्यकालमें कारणविशेषसे गो-वध बंद कर दिया गया, उनकी तालिका निम्नलिखित है—

१. अब्दुल-मुल्क इबन मरदानके सूबादार ईराक, हिजाज-विन यूसुफने अपने सूबाके हदूदके अंदर गो-वध रोक दिया था।

२. हिंदोस्तानके प्रसिद्ध शासक शाह बाबरने अपने राज्य-कालमें गो-वध बंद कर दिया था, जिसका सबूत उस वसीयतनामामें मिलता है, जो भोपालके कुतुबनामा खासमें मौजूद है । अखबार तोहफ-ए-हिंद ९ जुलाई १९२३ ।

३. वाली हुकूमत अफगानिस्तानने ११० उलमा अहल-सुन्नतके फतवाके बमूजिब गायकी कुर्बानी बंद की । (तोहफ-ए-हिंद बिजनौर ११-१२ नवम्बर १९२३)

४. हिज एक्साल्टेड् हाईनेस हुजूर निजामने गायकी कुर्बानी बंद करनेका हुकुम सादिर फर्माया । (तोहफ-ए-हिंद १८ नवम्बर १९३७) ।

५. नवाब साहब राधनपुर ६. नवाब साहब मंगरौल ७. नवाब साहब बहादुर दरजाना जिला करनाल ८. नवाब साहब गुड़गाँवा ९. नवाब साहब मुर्शिदाबाद	ये मुल्ककी तमाम नामवर हस्तियाँ गो-वधके विरोधी हैं (हिंदोस्तान अखबार लखनऊ २ नवम्बर १९२४)

१०. शरीफ़-मक्काने गोवध बंद कर दिया (खैरव) बरकत मौलाना फरूँखी लिखित ।

११. शैखुल कुस्तुन्तुनियाँने भी गो-वध बंद कर दिया।

१२. लखनऊके छः उलमाय सुन्नतने गो-वध बंद करनेके लिये फतवा दिया ।

१३. मौलाना अब्दुलबारी साहब मरहूम फिरंगीमहलीने भी गायकी कुर्बानी बंद करनेके लिये फ़तवा शाया किया (तोहफ-ए-हिंद बिजनौर १५ नवम्बर १९२२) । उपर्युक्त उलमाके अलावा तहकीकके बाद मालूम होता है कि अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, मुहम्मदशाह, शाहआलमके राज्य-कालमें भारतमें गो-वध बंद था ।

मैंने यथासम्भव मौलाना साहबके ही शब्दोंको दोहराया है । इसमें सन्देह नहीं कि संक्षिप्त करनेके प्रयत्नमें मूल लेखकी वह शक्ति बहुत कुछ कम हो गयी जो कि मौलाना साहबकी लेखनीसे प्रकट होती थी । फिर भी इस लेखसे स्पष्ट है कि गायकी कुर्बानी मुसल्मानोंका मजहबी फर्ज नहीं है, बल्कि उनके धर्ममें गायकी इज्जत करनेकी आज्ञा है, और गो-मांस-भक्षणकी निन्दा है । इसके विरुद्ध जो कुछ होता है, वह हिंदू-मुस्लिम-विरोध चालू रखनेके लिये ही होता है । ये बातें यदि मुसल्मान मात्रपर किसी भाँति विदित की जा सकें, तो हिंदू-मुस्लिम-प्रेम दृढ़रूपसे स्थापित हो सकता है, हिंदू-मुस्लिम-समस्याके सुलझानेका अन्य उपाय भी नहीं है । हिंदू-मुस्लिम मिलकर ही भारतसे गोवंशके निर्मूल करनेकी आयोजनाको रोककर देशमें सुख-समृद्धिकी स्थापना कर सकते हैं ।

शिवजीके प्रति

कैसे पशुपति कहलावैंगे ? त्रिशूलपाणि ! जब पशुओंका यहाँ नाम मिट जावैगा !
दुग्ध और अक्षतोंसे होगा उपचार कैसे जब उदरस्थ वत्स भी यों कट जावैगा !!
अब 'अवधेश' आप होंगे आशुतोष कैसे ? गोवध निरख भक्त उर फट जावैगा !
शून्य हो मही, क्या आप करेंगे अकेले जब म्लेच्छवृन्द आकर समक्ष डट जावैगा ?
गौएँ हो अनाथा आर्त्तस्वरसे पुकारें नित्य हो कर निराश कोटि कोटि कटती हैं रोज !
पालक त्रिलोकमें रहा है कौन चन्द्रचूड़ ! 'अवधेश' आपका भी जब घटता है ओज !!
भूले ही रहैंगे यदि आप भी भवानीकन्त ! महि पशु खाय फिर नंदीकी करैंगे खोज ।
मूसा मोर खायँगे गणेश औ षडाननके ऐसे दुष्ट म्लेच्छ साँप खा कर करैंगे मौज ॥

—अवधविहारीलाल शर्मा 'अवधेश'

यूरोपियन यात्रियोंके अनुभव

मुगल बादशाहोंके समयमें कितने ही यूरोपियन यात्री इस देशमें आये थे। उन्होंने जो बातें यहाँ देखीं उनको लिख भी दिया। उनमेंसे गोसम्बन्धी कुछ बातें यहाँ देते हैं—

१. पिटर डिलावेल नामक इटालियन यात्रीने— सन् १६२३ ई० में लिखा है—

'सूरतमें सवारीके लिये बैलोंके रथ होते हैं। रथके बैल बड़े और श्वेत वर्णके होते हैं। उनकी पीठपर ऊँटके कूबड़-जैसा डील होता है और वे घोड़ोंकी तरह दौड़ते हैं।'

'खंबातमें गौ, बछड़े, बैल मारनेकी सख्त मनाही थी। यहाँके हिंदुओंने बादशाहको 'कर' रूपसे एक बड़ी रकम देकर यह अधिकार प्राप्त किया था। और कोई मुसल्मान भी यदि गोहत्या करता तो उसे देहान्त दण्ड-सरीखा कठोर दण्ड दिया जाता था।'

'गो-मांस खाना सबके लिये मना है। गौका दूध पीकर ही लोग बढ़ते हैं और बैलोंकी मेहनतसे ही सारी खेती होती है, इसलिये गोमांस खाना जो महापाप समझा जाता है वह ठीक ही है।' (पहला पत्र, सूरत ता० २२। ३। १६२३)

'कर्णाटकके लोग गायके गोबरसे अपने घर और आँगनको लीपते हैं। सब पुर्तगीज लोग भी अपने घरोंको इसी प्रकार लीपते हैं। इटली पहुँचनेपर मैं इसका प्रचार करना चाहता हूँ।'

(चौथा पत्र ता० ३०। १०। १६२३—शिवाजी-निबन्धावली)

'खंबातमें लँगड़े-लूले और बीमार पशुओं और पक्षियोंकी रक्षा और इलाज करनेके लिये एक पिंजरापोल है जिसका खर्च हिंदू बड़ी श्रद्धासे चलाते हैं।' (मूरी ७९३)

२. टेवर्नियर नामक फ्रेंच यात्रीने (१६४१—६८में) लिखा है—

'दूरकी यात्रा भी यहाँ बैलगाड़ीसे की जाती थी। गेहूँके आटेके रोट बैलोंको खिलाते थे।……माल प्रायः बैलोंकी पीठपर लादकर ले जाते थे। प्रायः सब व्यापार बैलोंकी पीठपर होता था। गेहूँ, चावल, दाल, पिसान इत्यादि लादे हुए दस-दस, बारह-बारह हजार बैल एक साथ चलते थे। बैलोंपर व्यापारियोंकी बड़ी ममता होती थी। खासकर जिनके लड़के-बच्चे न होते वे इन्हें अपने लड़कों-जैसे ही समझते थे।' (मूरी ८०१)

३. वेनिसका यात्री मनूची सन् १६५५ से १७१७ तक हिंदुस्थानमें था। औरंगजेब, शिवाजी, संभाजी आदि अनेक महान् पुरुषोंसे इसका परिचय था। मुगल बादशाहके बारेमें उसने खुलासा सब हाल (स्टोरिओ द मोगोल) लिखा है। गौके सम्बन्धमें वह लिखता है—

'हिंदू गो-मूत्र प्राशन करते हैं, सर्वाङ्गमें उसे मलते हैं; बड़े लोग भी सबेरे उठकर गौकी पूँछ पकड़कर सिरमें लगाते हैं और गो-मूत्रसे पवित्र किये हुए स्थानमें बैठकर उपासना करते हैं।'

४. डूबायने हिंदुस्थानमें विशेषरूपसे वृषभ-पूजा देखी। उसने लिखा है—

'उपयोगिताकी दृष्टिसे इस प्राणीकी पूजा सब प्रकारके लोगोंमें रूढ़ थी। रोमन लोग बैलको मारना किसी नागरिकको मारनेके समान ही दण्डार्ह अपराध मानते थे। हिंदुस्थानके प्राचीन मन्दिरोंमें गौ-बैलोंकी मूर्तियाँ देख पड़ती हैं। नन्दीके तीन पैर उसके शरीरके नीचे दबे हुए और एक पैर आगेको खड़ा हुआ होता है।'

'साँड़ स्वच्छन्द विचरनेके लिये छोड़ दिये जाते हैं। उन्हें कोई नहीं मारता। वे कुछ उपाधि करें तो लोग सह लेते हैं। कोई साँड़ मर जाय तो उसे बड़े समारोहके साथ जमीनके अंदर समाधि दी जाती है।'

टेवर्नियर लिखता है—

'व्यापारी मालके अतिरिक्त फौजको रसद पहुँचानेका महत्त्वपूर्ण कार्य बंजारे लोगोंसे कराया जाता था। दक्षिणमें ये लोग पहले-पहल प्रथम निजाम असफशाहके साथ आये। इनके साथ १८०००० बैलोंके झुंड रहते थे। इनके बलपर ही युद्धमें विजय-लाभकी आशा होनेसे सरकारके द्वारा इनकी बड़ी खातिर की जाती थी।'

'एक बार अन्न और पानीका अकाल होनेपर गाय-बैलोंके लिये असफशाहने यह हुक्म दिया था कि गाय-बैलोंको पानी न मिले तो मेरे लश्करके सिपाहियोंके घड़ोंसे लेकर उन्हें पानी पिलाओ, घास न मिले तो उनकी झोपड़ियोंके छप्परोंसे घास लेकर खिलाओ और जहाँ मेरे घोड़े जायँ वहाँ उनके साथ बंजारोंके बैल भी चलें।'

'टीपू सुलताननने भी ६०००० बैलोंके साथ एक बंजारा दल रक्खा था। सन् १७९१-९२ की लड़ाईमें ब्रिटिशोंको

भी बंजारोंने बैलोंकी मददसे रसद पहुँचायी थी। 'आर्मी आफ दि इंडियन मोगल्स' का लेखक आयर्बिन कहता है कि ५००० बैलोंका एक झुंड ले जाते हुए मैंने देखा था।'

'अच्छी जातिके बैल—१. मद्रास और मैसूरमें 'अमृतमहाल', २. बम्बईमें 'जवारी', ३. गुजरात—काठियावाड़में 'तलवड़ा', ४. बुन्देलखंडमें 'गोरना', ५. पंजाबमें 'हरियाना' प्रसिद्ध हैं। बैलोंके मूल्य १५०)से ३००) रुपयेतक होते हैं। १५ से १८ कोसतक रोज चलते हैं, इस तरह बीस वर्षतक बैल काम कर सकते हैं। अमृत-महाल जातिके बैलोंका एक दल तैयार करके हैदरअलीने चिदंबरम् शहरकी मददको जाते हुए लश्करी तोपोंके साथ ढाई दिनमें ५० कोस रास्ता तै किया था। बैलोंके ही बलपर टीपूने बेदनूर फतह करनेका प्रयत्न किया और मेडोजसे पहले मौकेपर पहुँचा। इन्हीं बैलोंकी मददसे ड्यूक आफ वेलिंगटनने बड़ी फुर्तीसे विस्मयजनक सांग्रामिक स्थलान्तर किये थे।' ('भारतीय साम्राज्य' भाग १. पृ० १७८—८०)

अंग्रेजी अमलदारीमें गोरक्षण-आन्दोलनका उद्देश्य और मार्ग

स्थित्यन्तर और उसके कारण

वैदिक कालसे लेकर अंग्रेजी शासनके पहलेतककी देशकी परिस्थितिका केवल गोरक्षण-विषयतक ही मर्यादित विहङ्गम-दृष्टिसे निरीक्षण कर, आजकी परिस्थितिपर दृष्टि डाली जाय, तो देख पड़ेगा कि परिस्थितिमें बहुत ही बड़ा अन्तर हो गया है। पहले ऐसा कोई घर देख पड़ना कठिन था, जिसमें एक भी गाय न हो। 'जो सम्पत् हो थोड़ी, तो पाले गाय और घोड़ी।' इस कहावतके अनुसार उस समयके गरीबलोग भी गायको अपनी सहायिका समझते थे और अपने पास दो-चार गायें अवश्य रखते थे। मोरोपन्त कविने भी कहा है कि, 'घरमें बहुत-सा धन हो या न हो, घर-घर एक तो दुधारू गाय अवश्य होनी चाहिये।' उन गायोंको दुहने, पालनेका काम घरकी बहू-बेटियाँ किया करती थीं। दुहनेका काम कन्याएँ करती थीं; इसीसे कन्या दुहिता (दुहनेवाली) कहाती थी। इस व्यवस्थासे घरके स्त्री-पुरुषोंको गोशुश्रूषाका सब प्रकारका सप्रयोग ज्ञान हो जाता था।

अटवीपर्वताश्चैव नद्यस्तीर्थानि यानि च।
सर्वाण्यस्वामिकान्याहुर्नास्ति तत्र विचारणा॥

(महाभारत)

जंगल, पर्वत, नदियाँ, तीर्थ आदि अस्वामिक होते हैं, अर्थात् इनका कोई मालिक नहीं है। इनसे आवश्यकतानुसार सभी लोग लाभ उठाया करते थे। उस समयकी यही सार्वजनिक नीति होनेके कारण गाय-ढोरोंपर अवर्षा-जैसे प्रसङ्गके सिवा भूखों मरनेका कभी अवसर ही नहीं आता था। देशका गोधन विदेश नहीं भेजा जाता था। बूचड़खाने नहीं थे और मृत्युके दरबारके प्रवेशद्वारस्वरूप जानवरोंके बाजार भी आजकी तरह गाँव-गाँवमें नहीं लगा करते थे। रोग, सूखा, विधर्मियोंके आक्रमण-जैसी कभी-कभी उत्पन्न होनेवाली दैवी बाधाओंके अवसरोंको छोड़कर अन्य सब समयोंमें गायें निर्भय और सुखी रहा करती थीं। खाने-पीने और घूमने-फिरनेकी पर्याप्त सुविधा होनेके कारण गायें अच्छी दुग्धवती (विपुल दूध देनेवाली) हुआ करती थीं। गरीबोंकी झोपड़ियोंमें भी घी-दूधकी विपुलता थी। घी-दूधका सात्त्विक और पौष्टिक आहार मिलनेके कारण जनता बल, आरोग्य और पराक्रमसे सम्पन्न होती थी। आज वह सब परिस्थिति बदल गयी है। सम्प्रति गोधनका जैसा भयंकर ह्रास हो रहा है; प्राचीन इतिहासमें इसकी तुलना नहीं है। पुराने विधर्मी सत्ताधारी अपने आहारके लिये या प्रतिपक्षीको चिढ़ानेके लिये कभी-कभी स्थल-विशेषमें गोहत्या अवश्य करते थे; परन्तु आज देशमें हजारों बूचड़खाने खुल गये हैं और उनकी आवश्यकतापूर्तिके लिये गाँव-गाँवमें चौपायोंके बाजार और मेले लगते हैं। पहले प्रतिपक्षीको चिढ़ानेके लिये गोवध किया जाता था, परन्तु आज मांस, हड्डी, चमड़े आदिके व्यापारके लिये गोसंहार किया जाता है; जिससे देशके करोड़ों गोमांस-भक्षकोंकी क्षुधाका शमन होकर गायका सूखा मांस, हड्डियाँ, चमड़ा जहाजोंमें भरकर विदेश भेजा जा रहा है! मुख्यतः चमड़ेके व्यापारके लिये ही अनिर्बन्ध गोवध हो रहा है। जब चमड़ेका भाव तेज हो जाता है, तब इतने अधिक जानवर मारे जाते हैं कि उनके मांसका ग्राहक नहीं मिलता और वह घूरेपर फेंक दिया जाता है। जंगलखातेकी अदूरदर्शी नीतिके कारण

चौपायोंको चारा नहीं मिलता, वे भूखों मरते हैं और उनकी उपेक्षा की जाती है। इससे उनकी दुर्बलता बढ़कर दूध देनेकी शक्ति घट गयी है। उनमें रोगोंका आक्रमण भी बढ़ रहा है। इसके अतिरिक्त हजारों अच्छी नस्लकी गायें प्रतिवर्ष विदेश भेज दी जाती हैं। सबसे महत्त्वकी बात यह है कि पहलेके गोरक्षकोंके पास तलवार थी और उसे चलानेका उनकी कलाईमें बल था। उनके अन्तःकरणोंमें अपने वंश, धर्म और संस्कृतिके सम्बन्धमें उज्ज्वल अभिमान जाग रहा था। उनके चित्तपर विधर्मी संस्कृतिके पुट नहीं चढ़े थे और वे हतप्रभ भी नहीं हो गये थे। सम्प्रति तलवारकी तो बात ही क्या, साधारण लाठी ताननेकी भी किसीमें शक्ति नहीं रही है। चाय, शराब, नाटक, सिनेमा-जैसे शरीर और धनका नाश करनेवाले दुर्व्यसन सर्वत्र फैल रहे हैं और संसारमें सब देशोंसे अधिक मृत्यु-संख्या इस देशमें बढ़ गयी है। 'शतायुर्वै पुरुषः' यह पहलेका आयुर्मान आज बीस-बाईसकी संख्यापर आ पहुँचा है। प्रतिदिनके अप्रतिहत संहारके कारण गाय-बैलोंकी संख्या घट गयी है, जिससे खेतीके लिये बैल और गोबरकी खाद नहीं मिलती और जो भारतीय किसान संसारके अन्नदाता कहाते थे, उनकी भूखों मरनेकी नौबत आ गयी है। यह परिस्थिति किसी एक ही प्रान्त या प्रदेशकी नहीं, किन्तु आसेतु हिमाचल—सारे देशकी हो गयी है।

इस सार्वत्रिक परिस्थितिके अनेक कारण हैं। पहला कारण पश्चिमी लोगोंकी जिह्वा-लोलुपता है। 'Early Records of British India' नामक ग्रन्थमें डा० फ्रायरने लिखा है—'सूरत-जैसे घनी बस्तीके बड़े नगरमें समस्त मूर (मुसल्मान) लोगोंको एक वर्षमें जितने मांसकी आवश्यकता होती है, बम्बईके अंग्रेज उससे अधिक मांस एक ही महीनेमें खा-पचा जाते हैं।' सन् १६६८ में बम्बई अंग्रेजोंके हाथ आयी। उसके बाद छः वर्षों (१६७४)में ही बम्बईके अंग्रेजोंने मांस-भक्षणमें इतना नाम कमाया था। हिंदुस्थान-जैसे गरम देशमें सूअर और गायका मांस खानेसे स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, यह जानकर भी प्रखर ग्रीष्मकालमें मांस और तीव्र मद्योंका उन्होंने परित्याग नहीं किया। 'हिस्ट्री आफ इंडिया अंडर मॉस्लेम रूल' नामक ग्रन्थमें मि० ह्वीलरने लिखा है कि 'अतिरिक्त मांस-मद्यका सेवन करनेके कारण अनेक यूरोपियन लोग मर गये।' आगे वह लिखता है—'अंग्रेज, पोर्तुगीज, डच आदि सभी यूरोपियन यहाँ मुर्गे, बत्तक, भेड़, बकरे, सूअर आदिका मांस आकण्ठ खाते ही थे; इसके अतिरिक्त जहाजोंमें भर-भरकर अपने-अपने देशोंमें भी ले जाते थे।' इन अंग्रेज ग्रन्थकारोंके प्रमाणोंसे यह तो सिद्ध ही है कि अंग्रेजोंका अधिराज्य स्थापन होनेके पहलेसे ही—अर्थात् पश्चिमी लोगोंका पौरा यहाँ आते ही आहारके लिये इस देशमें मूक जीवोंकी हत्या दिन-दिन बढ़ते हुए परिमाणमें आरम्भ हो गयी थी। टेवर्नियर (सन् १६४१–६८), डा० जान फ्रायर (१६७८–८१) आदि प्रवासियोंने अपने यात्रा-वृत्तान्तमें लिख रक्खा है कि, 'बड़े गाँवोंमें—जहाँ एकाध मुसल्मान अधिकारी होता है, वहाँ तो किसी प्रकार खसी, मुर्गा या कबूतरका मांस मिल जाता; परन्तु हिंदू बनियोंकी बस्तियोंमें आटा, चावल, साग-पात, दूध-घी आदिके अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता। वे अण्डातक नहीं खाते।

दूसरा कारण है अंग्रेजोंकी व्यापारी मनोवृत्ति। व्यापारके बहाने हिंदुस्थानमें अंग्रेज आये और व्यापारी नीतिसे ही अपने पैर जमाकर सारा देश उन्होंने अंकित कर लिया। फिर भी उनकी व्यापारकी प्यास नहीं बुझ रही है! 'मध्ययुगीन भारत' में हर्षकालीन परिस्थितिका वर्णन करते हुए भारताचार्य चि० वि० वैद्य लिखते हैं—'उस समय चौपायोंके चरनेके लिये हर एक गाँवके पास एक सार्वजनिक चरागाह बना दिया जाता था। चारों ओर बाड़से घिरे हुए अच्छा चारा तैयार करनेवाले चरागाहोंका उल्लेख स्मृतिग्रन्थोंमें है। उनको 'विवीत' कहते थे। ऐसे चरागाहोंमें उत्पन्न होनेवाला चारा पशुओंके लिये बिना मूल्य मिलता था; परन्तु यदि कोई उसे काटकर बाजारमें बेचनेके लिये ले जाना चाहता, तो कुछ निश्चित कर देना पड़ता था। स्मृतिग्रन्थोंमें लिखा है कि जंगलोंका कोई स्वामी नहीं होता। हाथियोंके जंगलोंको छोड़कर बाकीके सब जंगलों और ग्रामवनोंका उपयोग सब लोग समान रूपसे किया करते थे।' उक्त जंगलों और चरागाहोंकी व्यवस्थामें मुसल्मानी अमलदारीमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ; परन्तु अंग्रेजी शासनकालकी स्थिति विचार करने योग्य है।

सन् १८८३ में प्रकाशित हुए 'ग्रामरचना, उसकी व्यवस्था और वर्तमान स्थिति' नामक ग्रन्थमें सुप्रसिद्ध ग्रन्थकार 'लोकहितवादी' लिखते हैं—'सरकारने वनों—

जंगलोंमें ताले जड़ दिये, इससे जानवरोंके लिये चारा मिलना कठिन हो गया और पशुपालनमें लोग असमर्थ हो गये। परिणामतः गोरस अप्राप्य होनेके कारण शिशुओंको माताके स्तनके दूधके अतिरिक्त कोई सहारा न रहा। पशुपालनमें लोगोंके असमर्थ हो जानेसे पशुओंकी संख्या भी घटने लगी।' इस प्रकार साठ-सत्तर वर्ष पूर्व ही जंगलखातेके दुष्परिणाम प्रतीत होने लगे थे। तदुपरान्त अबतकके कालमें जंगलखातेकी जबरदस्ती किस प्रकार बढ़ती गयी और गरीब जनता किस प्रकार त्रस्त हो उठी, इसकी कुछ कल्पना निम्नलिखित अवतरणोंसे हो सकेगी।

'वनविभागने वनचराई-सम्बन्धी नाना प्रकारके कर जनतासे लेना आरम्भ कर दिया है, जिससे जनता त्रस्त हो उठी है। घरके गाय-बैल बिला गये और दूध-दहीका अभाव हो गया। इससे खेती-बारीकी उपेक्षा होने लगी है और खेतिहरोंको पेट पालना कठिन हो गया है।'

(केसरी ३०। १०। १८९०)

'मुसल्मानी शासनकालमें भी जिन चरागाहोंसे मुफ्त चारा मिलता था, वे भरपूर लगानपर उठा दिये गये हैं या फारेस्टमें शामिल कर दिये गये हैं।' (केसरी ३१। ५। ९२)

'खानदेश जिलेमें कुछ दिन पूर्व गरीब खेतिहरोंने फारेस्टके अंजन वृक्षोंकी पत्ती पशुओंको खिलानेके लिये काट ली, इसलिये मुकद्दमे चलाकर उन्हें अर्थदण्ड ही नहीं, कारादण्ड भी दिया गया।' (केसरी २६। ६। १९०६)

'बंदीके जंगलोंमें घुसे हुए चौपायोंमेंसे १३४००० चौपाये इस वर्ष कानीहाउस भेजे गये।' (केसरी १८। ५। १९०९)

'पाटन तालुकाके कुम्भार गाँवके आसपास कोई फारेस्ट नहीं था, सब वनचर भूमि थी। वह फारेस्टमें शामिल कर ली गयी। उसमेंसे कुछ भूमि ऐसी रक्खी गयी, जहाँ कुछ फीस देनेपर गाँववाले चौपायोंको चरा सकते थे। सन् १९०८-९में गाँववालोंने ८०) फीस सरकारको दी; परन्तु थोड़े ही दिनोंमें सरकारी हुक्म हुआ कि गाँववाले अपराध बहुत करते हैं, इसलिये चौपायोंके लिये रक्खी हुई वनचर भूमि तीन साल-तक चौपायोंके चरानेके लिये बंद कर दी गयी है। इस विचित्र हुक्मको सुनकर गाँववालोंने अर्जी दी कि कम-से-कम इस वर्ष वह भूमि खुली रक्खी जाय और यह सम्भव न हो, तो हमारे जमा किये हुए फीसके ८०) लौटा दिये जायँ। जनताकी दोनों न्याय्य माँगोंमेंसे सरकारने एक भी मंजूर नहीं की। फारेस्टकी सीमा झोपड़ोंके द्वारोंसे जा भिड़ी है। बाड़ेसे चौपायोंके बाहर आते ही अधिकारी उन्हें पकड़ ले जाकर कानीहाउसमें बंद कर देते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि जिस फारेस्टकी सालाना आमदनी १५०) थी वहाँ केवल दस महीनेमें ४००) ५००) सौ रुपया सरकारी खजानेमें जमा हो गया।' (केसरी १। ६। १९०९)

इस प्रकार अंग्रेज सरकारकी व्यापारी मनोवृत्ति प्रारम्भसे ही राजनीतिक क्षेत्रमें अपना अच्छा प्रभाव दिखा रही है। वास्तवमें गाय-बैल राष्ट्रीय सम्पत्ति होती है। उसकी सब प्रकार रक्षा करना प्रजाका हित चाहनेवाली प्रत्येक सरकारका कर्तव्य ही होता है। परन्तु दुर्भाग्यसे उन गाय-बैलोंके हाड़-मांसका व्यापार जारी रखनेकी बुद्धि हमारी अंग्रेज सरकारको सूझ रही है और 'राजा कालस्य कारणम्' इस न्यायके अनुसार विदेशियोंके आरम्भ किये हुए हड्डी, मांस, चमड़ेके व्यापारके सहायक कसाइयों तथा दलालोंकी संख्या बढ़ रही है। उन्हींका हस्तक 'गो-चोरों'का दल भी १८ वीं सदीमें ही निर्माण हुआ। नामानुसार ही उसकी कृति होती है। चौबीसपरगना (बंगाल) में बहुत वर्षोंतक असिस्टेन्ट जजका काम किये हुए मि० ए० एफ० टिटलर अपने 'कन्सिडरेशन्स ऑन दि प्रेजेन्ट पोलिटिकल स्टेट इन इण्डिया' (हिंदुस्थानकी राजनीतिक वर्तमान परिस्थिति-सम्बन्धी विचार) नामक ग्रन्थमें लिखते हैं—'ये गो-चोर बड़े अपराधी होते हैं और प्रायः मुसल्मान या मोची जातिके हुआ करते हैं। ये ग्वालोंसे मिले रहते हैं। कलकत्ता-जैसे बड़े नगरों और उनके आसपासके गाँवोंमें इनकी भरमार रहती है। उनके चुराये हुए गाय-बैलोंकी बिक्री तुरंत और हाथों-हाथ हो जाती है। जानवरोंको चुरा ले जाकर ये उनके सींग और कान काटकर उनको इतना कुरूप कर डालते हैं, उनके शरीरोंपर ऐसे चिह्न बनाते हैं, भूखे रखकर उनको इतना दुर्बल बना देते हैं और इस धंधेके बिचवयी और दलाल इतने चतुर होते हैं कि चोरी गये हुए पशुका पता लगाना कठिन ही नहीं, असम्भव हो जाता है। चौपायोंको विष खिलानेका अपराध भी पराकाष्ठाको पहुँच गया है। इस एक ही अपराधके डेढ़ हजार अपराधी एक ही समयमें एक ही जेलमें सज़ा भोग रहे थे।' सन् १७८० से १८१० तककी २५–३० सालकी कम्पनी सरकारकी अमलदारीके समयकी यह बात है। इधर भारतीय सरकार बंगालमें गोधनकी इस प्रकार उपेक्षा कर रही थी और उधर महाराष्ट्रमें श्रीमन्त सवाई माधवराव और द्वितीय बाजीराव साहबकी पेशवायी पशुओंको विष

खिलानेवालोंको कठोर दण्ड देकर भारतीय गोधनकी सुरक्षा कर रही थी। इसके प्रमाण मराठोंके इतिहासमें विद्यमान हैं। मराठों और अंग्रेजोंकी राजनीतिका अन्तर इससे स्पष्ट हो जाता है।

तीसरा कारण यह है कि अंग्रेजोंको हिंदुस्थानके प्रति ममत्व उत्पन्न हो नहीं सकता। अंग्रेजोंकी राजसत्ता यहाँ अवश्य स्थापित हो गयी है; परन्तु उनके राजा या राज-प्रतिनिधि यहाँ स्थायीरूपसे नहीं आ बसे हैं और छोटे-बड़े सब अधिकारियोंका ध्यान अपने देश (इंग्लैंड) की ओर बना रहता है। उनके हित-सम्बन्ध भी उसी देशसे विजडित हैं। इस कारण डेढ़-दो सौ वर्षोंसे राज्य करते रहनेपर भी यहाँकी जनताके हिताहितोंसे और धर्म-भावनाओंसे अंग्रेज समरस न हो सके। 'लोक-हित-वादी' अपने ग्राम-रचना-सम्बन्धी प्रबन्धमें लिखते हैं—

'मुसल्मानोंने भारतमें सात सौ वर्ष राज्य किया; परन्तु यहाँकी पुरानी नीति नहीं बदली। भूमिव्यवस्थामें कोई परिवर्तन न कर प्रजाके हितका ध्यान रक्खा। उन्हें छूट-तगायी आदि बराबर मिलती रही। दूसरी ओर, जिनके नयी-पुरानी दुनियाके राजशासन-कौशलका डंका बज रहा है, जो धूर्तता, चातुरी, कार्यसाधुता, सदसद्विचार आदि गुणोंमें प्रसिद्ध हो रहे हैं, वे इस सम्बन्धमें ऐसी निर्दयता और अमानुषता दिखा रहे हैं, जैसी किसीने नहीं दिखायी थी। यह भारतीय प्रजाका दुर्भाग्य है। प्राचीन धर्मनीतिमें जिन बातोंका अत्यन्त निषेध है, वे ही बातें वर्तमान शासक अपना कर्तव्य कहकर नीतिके नामसे बेधड़क करते चले जा रहे हैं। पहले लोगोंको घास, लकड़ी, नमक आदि आवश्यक वस्तुएँ यथेष्ट और बिना मूल्य मिला करती थीं। परन्तु अब बिना पैसेके चारेका एक तिनका, लकड़ीकी एक छिपटी या नमककी एक डली भी नहीं मिलती। घी, दूध, लकड़ी, घास आदि सभी महँगा हो गया है। तीर्थों, देवस्थानोंमें प्रत्यक्ष या परोक्षरूपसे कर लगा दिये गये हैं; अर्थात् उनका स्वामित्व भी शासकोंने हथिया लिया है। जब सब ओरसे प्रजा मूँड़ी जा रही है, तब वह अपना सिर ऊँचा कैसे कर सकती है।'

सन् १९०३ में इंग्लैंडके 'मिड्लैण्ड हैरल्ड' पत्रने लिखा था, 'भारतीयोंका उत्कर्ष भारतीयोंपर ही अवलम्बित है।' इसका उत्तर स्व० दादाभाई नौरोजीने दिया था, 'भारतकी ब्रिटिश राज्यशासन-प्रणाली, उनकी वह लूटकी चढ़ाई कही जा सकती है, जो कभी रुक नहीं सकती।' राजनीति-विशारदोंके इन सब उद्गारोंसे यह बात ध्यानमें आ जाती है कि सुलतान नासिरुद्दीन, बाबर, हुमायूँ, अकबर, शाहआलम, महम्मद आदिलशाह आदि अनेक मुसल्मान शासक यहाँ जिस प्राचीन नीतिको ही बरतते आये, वह नीति अंग्रेज क्यों नहीं बरत सकते? सारांशमें कहा जा सकता है कि हिंदुस्थानका हर-एक अंग्रेज, चाहे वह सरकारी नौकरीमें हो, या अन्य व्यवसाय करता हो, भारतके सम्बन्धमें बोल-बर्तावके द्वारा कितना ही प्रेम क्यों न प्रकट करे, उसके चित्तका खिंचाव अपने देश (इंग्लैंड) की ओर होता है और उसकी वैभव-सम्पन्नताका फल हिंदुस्थानको नहीं, किन्तु उसके देशबन्धुओंको प्राप्त होता है।

अंग्रेज शासक अपने देशके कल्याणमें लगे रहते हैं। इस कारण उनकी शासन-प्रणाली कानून, न्याय, सुधार, शृंखला-बद्धता, आधुनिक सामग्री आदिसे कितनी ही सुसज्जित क्यों न हो, वह बहुत खर्चीली और जनताका द्रव्य शोषण करनेवाली है। प्राचीन और अर्वाचीन देशस्थितिके महान् अन्तरका यही कारण है।

देशस्थिति विपरीत हो जानेके जो कारण ऊपर गिनाये गये हैं, उनसे भी महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि अंग्रेजी शिक्षासे यहाँके लोगोंकी प्रज्ञा मारी गयी है। पुराने कितने ही शासकोंके शासनकालमें यह राष्ट्र 'शस्त्रहत' हुआ था, विदेशियोंके सम्पर्कसे कुछ प्रज्ञाहत भी हुआ था; परन्तु अंग्रेजी शिक्षा और अंग्रेजी संस्कृतिके सर्वगामी और दीर्घकालीन सम्पर्कसे इस समय समाजके सब स्तरोंमें जैसी 'प्रज्ञाहतता' उत्पन्न हो गयी है, वैसी कभी नहीं हुई थी। इस शिक्षाकी विशेषता यह है कि अंग्रेजीका ककहरा जान लेनेसे ही विद्यार्थी अपनेको सर्वज्ञ समझने लगता है और यदि वह कोई डिगरी पा जाय, तो फिर पूछना ही क्या है, छोटे-से जार्ज वाशिंगटनकी तरह आचार-विचारोंके चाहे जिस वृक्षपर वह अपने तर्ककी कुल्हाड़ी चलाने लगता है। धर्म, इतिहास, संस्कृति आदि जो कुछ पुराना हो, उसे वह निकम्मा, गँवारू और त्याज्य समझने लगता है। अंग्रेजी विद्यारूपी 'बाघिनका दूध' पीनेसे 'जैसा अन्न वैसी बुद्धि' इस न्यायके अनुसार उसकी व्याघ्र-बुद्धि हो जाती है। Cow has no soul 'गायके आत्मा नहीं' इस तत्त्वज्ञानकी घूँट उसे पिलायी जाती है। इससे शिक्षित और अग्रगामी कहा जानेवाला अंग्रेजी-शिक्षित संस्कार और भावनाओंके विषयमें सर्वसाधारणसे पृथक् हो जाता है तथा गाय-बैलोंके सम्बन्धमें उदासीन ही नहीं, विरुद्ध उठ खड़ा होता है। अशिक्षित समाज तो स्पष्ट ही अप्रबुद्ध और दरिद्र होता है।

सहायता और मार्गदर्शनके लिये वह सदा ही शिक्षितों और सरकारी अधिकारियोंका मुखापेक्षी होता है। नये-नये कानूनों और करोंसे सारी जनता जर्जर और त्रस्त हो उठी है। इन अनेक कारणोंसे अंग्रेजी राज्यमें गोधन और जनता दोनोंकी परिस्थिति अत्यन्त विकट हो गयी है और राष्ट्र मरणासन्न हो रहा है!

सम्प्रति इस देशमें जो गोरक्षाका आन्दोलन हो रहा है, उसका आरम्भ अंग्रेजी अमलदारीमें ही क्यों हुआ, इसका दिग्दर्शन अबतक किया गया है। अंग्रेजी शासनसे पहले यहाँ गोरक्षाके आन्दोलनकी आवश्यकता ही नहीं थी। उस समय समाजमें दो ही वर्ग थे। एक गायको प्राणसे प्यारी और पवित्र माननेवाला वर्ण-चतुष्टयात्मक आर्योंका वर्ग, और दूसरा प्रतिपक्षीको चिढ़ाकर उसे हानि पहुँचानेवाला, आर्योंकी गायोंका अपहरण कर उनको भक्षण करनेवाला दानव, राक्षस, असुर, म्लेच्छ आदि नामोंसे सम्बोधित होनेवाला गोभक्षकोंका वर्ग। दोनोंमें आत्मरक्षाके लिये झगड़ा चलता रहता था। अंग्रेजी शासनमें उस झगड़ेका बाहरी स्वरूप बदल गया। अंग्रेजोंका हर-एक कार्य स्वार्थपूर्ण होनेपर भी उसको कानूनका आधार होता है। वह सुश्रृङ्खल और देशकालको ताड़कर किया जाता है। इस कारण उसके दूरस्थ परिणाम एकाएक किसीके ध्यानमें नहीं आते। यदि वे कार्य किसीको विरोधी जान पड़ें, तो पहलेकी तरह उसका कोई सशस्त्र प्रतीकार नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त न्यायालयोंका सुलभ राजमार्ग खुला है, तब जान-बूझकर साहसके मार्गका अवलम्बन कर अपनी जान जोखिममें कौन डालेगा? हम विजित और निहत्थे हैं। कानूनकी अनुज्ञाके बिना हमारे हाथमें शस्त्र आ नहीं सकते। इस कारण प्रतीकार-बुद्धि कितनी ही तीव्र क्यों न हो, कानूनके प्रकाशमें जो कुछ हो सके, उतना ही हम कर सकते हैं। हिंदू विश्रृङ्खल हैं, मुसल्मान उद्दण्ड और संघटित हैं, और अंग्रेज धूर्त हैं। अतः प्रतीकार करनेवाला यही नहीं जान पाता कि वास्तवमें प्रतीकार किसका करना चाहिये; जिससे अनेक झगड़े उपस्थित हो जाते हैं। इन्हीं कारणोंसे पहले जो गोरक्षण शस्त्रसे निर्णीत होता था, अंग्रेजी अमलदारीमें उसे गोशाला, गोरक्षिणी सभा, समाचारपत्र, व्याख्यान, अर्जियाँ, आवेदन आदिका रूप प्राप्त हुआ और वह सामुदायिकरूपसे 'गोरक्षाका आन्दोलन' कहा जाने लगा और इसके नेताओंको 'गोरक्षक'की संज्ञा प्राप्त हुई।

अंग्रेजी अमलदारीके आरम्भसे ही हर-एक प्रान्तमें गोरक्षाका आन्दोलन किस प्रकार आरम्भ हुआ? इतना मसाला अबतक उपलब्ध नहीं हुआ है, जिससे इसका सविस्तर वर्णन किया जा सके। फिर भी भातके एक चावलके तौरपर ऐसे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं, जिनसे तत्कालीन परिस्थितिका कुछ अनुमान किया जा सकेगा।

मथुराका बूचड़खाना

मथुरा भगवान् गोपालकृष्णकी जन्मभूमि है। पहले-पहल सन् १८०५ में मथुरामें अंग्रेजी फौजकी छावनी पड़ी। उस समय वहाँके चौबोंने आवाज उठायी कि इस पवित्र क्षेत्रमें गोवध नहीं होना चाहिये। तदनुसार सेनापति लार्ड लेकने निम्नलिखित घोषणा की थी—

(Translation of what is in Persian on a Photograph)

Shah (A) Valiant Shah (A) the devoted servant and the chief of the Armies of the Badshah of England and Company Sapahsalar Fateh Jang, one of the Saheb of the Councils...(A) Khan Douran Khan, the Valiant General Lake Bahadur Samsam-uddoulah (A)

(A) Some portion of the text here at this place is not legible.

Lake

As the land of Baraj, that is to say Mathra, is a great place of worship and devotion of the Hindus in this land, it is necessary and incumbent that no

kind of injury and hurt whatever should be caused to cows by anyone. Nay they ought to be treated with kindness and mercy. Therefore His Excellent Honour, on possessing high titles, Samsam-ud-doulah, Shaikh-ul-mulk, Khan Dourankhan, the valiant General Lord Lake Saheb Bahadur, Fateh Jang Sapahsalar, in whose heart the Great creator has implanted kindness and mercy, was graciously pleased to issue an order as follows:—

"Nobody from the butchers' community etc., whether he be an inhabitant of the city of Mathra, or he be a man belonging to the army, or he be one visiting the said city of Mathra, shall kill cows. Therefore an advertisement is given in this matter that none should kill cows in the above-mentioned land. And should anyone be guilty of this act, he will be visited with adequate punishment. Because his excuse will never be accepted in this matter."

Written on the third of the month of July in the Christian year 1805, corresponding with the fifth of the month of Rabi-us-sani in the Hijri year 1220.

(A true translation)
Rustum Meharban Aga,
Translator, High Court.

इस घोषणाका सारांश यह है कि 'मथुरा हिंदुओंका पूजा-भक्ति करनेका स्थान है। इस कारण इस व्रजभूमिमें गायको किसी प्रकारकी हानि या कष्ट पहुँचानेकी सबको मनाही की जाती है। गायोंके साथ सबको दया और उदारताका व्यवहार करना चाहिये। शूर सेनापति लार्ड लेकके चित्तमें ईश्वरी प्रेरणासे दयाबुद्धि उत्पन्न होकर वे हुक्म देतें हैं कि 'कसाई आदि किसी जमातका व्यक्ति—चाहे वह मथुरा या उसके आसपासका हो अथवा न हो,—वह सैनिक हो या असैनिक हो—व्रजभूमिमें गायका वध नहीं कर सकेगा। इसलिये हुक्म दिया जाता है कि इस भूमिमें कोई गोवध न करे। यदि कोई करेगा, तो उसे उचित दण्ड दिया जायगा और कोई बहाना नहीं सुना जायगा। (३ जुलाई १८०५ ई० रवि-उसूसानी सन् १२२० हिजरी)

सन् १८५६ में मथुरापुरी कम्पनी-सरकारके हाथ आ गयी। तब भी वहाँ गोवध नहीं होता था। उस समय यह भी सरकारी आज्ञा प्रचारित हुई कि इस पवित्र भूमिमें जो गोवध करेगा, उसे अधिक-से-अधिक बीस वर्षकी सजा दी जायगी। परन्तु उसका पालन कभी नहीं हुआ। सब ओर ठीक-ठाक हो जानेपर वह आज्ञा केवल कागजपर ही लिखी रह गयी और मथुरापुरीमें भगवान् श्रीकृष्णके जन्मस्थानसे सटकर ही फौजके लिये एक बूचड़खाना खुल गया। इस समय मथुरा-वृन्दावनकी प्रदक्षिणा करनेवाले भावुक यात्रियोंको उस कसाईखानेके पाससे ही जाना पड़ता है। परमुखापेक्षिता और उदासीनता हिंदुओंकी नस-नसमें समायी हुई होनेके कारण उनकी ओरसे इस कसाईखानेको उठा देनेका कोई प्रयत्न ही नहीं हुआ ! मथुरा-जैसी प्रसिद्ध पुरीकी यह दशा है, तब अन्य नगरों और कसबोंमें क्या हो रहा है, इसको कौन देखता है और कौन पूछता है ! परन्तु भारतीय राष्ट्रपुरुषका अन्तःकरण गो-संहारसे दहल जाता है और साधु-सज्जनोंका संकल्प देशकालकी परिस्थितिके अनुरूप रूप धारणकर गोवधमें यथाशक्ति रोक लगाता ही है। उस समयके आर्यसमाजके संस्थापक स्वामी श्रीदयानन्द सरस्वतीजीके अन्तःकरणमें प्रेरणा हुई और उन्होंने अपने मतप्रसारके कार्यक्रममें गोरक्षाका भी समावेश कर लिया। उन्होंने 'गोकरुणानिधि' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की और पंजाब, राजपूताना, युक्तप्रान्त आदि प्रदेशोंमें अनेक गोशालाएँ स्थापित कीं। रेवाड़ीकी गोशाला उनकी स्थापित की हुई गोशालाओंमेंसे पुरानी गोशाला है। मूर्तिपूजा, पुराण आदि सम्बन्धी स्वामीजीके मत बहुजनमान्य नहीं थे; इस कारण उनके आरम्भ किये हुए गोरक्षणकार्यका प्रसार, उनके विभूतिमत्त्वके विचारसे, जितना होना चाहिये था, उतना न हो सका। फिर भी उनके प्रोत्साहनसे लोगोंके सामने एक उदाहरण उपस्थित हो गया और अनेक कार्यकर्ता तथा गोरक्षोपदेशक निर्माण हो गये। अनेक नयी गोशालाएँ भी स्थापित हुईं। फर्रुखाबादके गोभक्त सेठ मोहनलालजीने 'गोधर्मप्रकाश'

नामक एक समाचारपत्र निकालना आरम्भ किया। हरद्वारमें बाबा भगवानदासने 'गो-हितकारी दफ्तर' खोला। काशीमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने गोरक्षणसम्बन्धी जागृति उत्पन्न करनेके लिये तन-मन-धनसे बहुत प्रयत्न किया। स्वामी मङ्गलदेवने 'गोरक्षाप्रकाशमञ्जरी' 'गोपुकार-चालीसी', 'पाँच पैरकी गाय' आदि पुस्तकें प्रकाशित कर और व्याख्यान देकर गोमाताओंके दुःख सर्वसाधारणको निवेदन किये। स्वामी आलाराम सागर संन्यासीका प्रचार-कार्य तो सागरके समान ही गहरा और व्यापक था। काशीके पं० जगतनारायणने प्रथम कुछ दिन 'गोसेवक' साप्ताहिक और फिर 'जीवदयाधर्मामृत' मासिक आजीवन चलाया और गोरक्षासम्बन्धी २५-३० पुस्तकें भी प्रकाशित कीं। इन और इन-जैसे ही अनेक गोभक्तोंके प्रयत्नोंसे पंजाब, युक्तप्रान्त और बिहारमें गोशालाओंकी संख्या बहुत बढ़ गयी और उन प्रान्तोंकी जनतामें गोरक्षणकी भावना भी अच्छी जाग्रत् हुई। सन् १८८९ के आसपास मथुरामें 'देवप्रतिमार्चकानां गोरक्षिणी सभा' स्थापित हुई। आर्य-समाजसे अपनी पृथकुता दिखानेके लिये ही सनातनियोंने 'देवप्रतिमार्चकानां' यह विशेषण उक्त संस्थाके साथ जोड़ा था। सन् १९०३में इस संस्थाके सूत्र कर्त्तव्यपरायण पं० नटवरलाल चतुर्वेदीके हाथमें आये। उस समय संस्थाका स्थान झगड़ेमें पड़ा था और संस्थामें कुल आठ गायें थीं। पं० नटवरलालजीका वैद्यकका व्यवसाय अच्छा चल रहा था, समाजमें उनका दबदबा भी था और स्वार्थत्यागकी मात्रा भी उनमें कम नहीं थी। इस कारण उनके तत्त्वावधानमें मथुराकी गोरक्षिणी सभा पनपने लगी। संस्थाके पहलेके नाममें विरोधकी कुछ छटा थी; उसे दूर करनेके लिये पहला नाम बदलकर संस्थाका नाम 'श्रीकृष्णगोशाला' रक्खा गया। पण्डितजीके प्रयत्नसे गोशालाकी गायोंकी संख्या ३५०से अधिक हो गयी और उनके संगोपन-संवर्धन-का भी प्रबन्ध होने लगा। इधर वे 'मथुरा-गोरक्षिणी-सभा' को कार्यक्षम बना रहे थे और उधर वाङ्मयद्वारा प्रचार-का कार्य भी किये जाते थे। यह सब कार्य करते हुए सन् १९०५के लगभग एक चौबेके दफ्तरमें उन्हें पूर्वोक्त लार्ड लेकका आज्ञापत्र प्राप्त हुआ। उन्होंने उसके फोटो उतारे और उसकी बहुत-सी प्रतियाँ छपवाकर प्रकाशित कीं। वह आज्ञापत्र जब बम्बईके कुछ भाटियों और गुजरातियोंकी दृष्टिमें आया, तब उन्होंने पण्डितजीको बम्बई बुला लिया। मे० भाईशंकर कांगा और गिरिधरलाल सालिसिटर्स फर्मके श्रीभाईशंकरजीने कानूनी सलाह देना और न्यायालयोंमें निःशुल्क पैरवी करना स्वीकार किया। अन्य खर्चके लिये व्यापारी धर्मादायफण्डसे लगभग दो हजार रुपया मिल गया। एक आवेदनपत्र तैयार किया गया, जिसपर बड़े-बड़े महन्त, राजा, सर, सी० आई० ई० जे० पी० आदि पदवीधर नेताओं और बड़े-बड़े जमींदारोंके हस्ताक्षर हुए। उनमेंसे बम्बई प्रान्तके कुछ सज्जनोंके नाम इस प्रकार हैं—श्री १०८ गोकुलनाथजी महाराज, सर भालचन्द्र कृष्ण भाटवडेकर, गोकुलदास कहानदास पारेख, हरि सीताराम दीक्षित, विट्ठलदास दामोदरदास ठाकरसी, गोपालकृष्ण गोखले सी० आई० ई०, मनमोहनदास रामजी आदि। यह आवेदनपत्र मथुराके कलक्टर, युक्तप्रान्तके छोटे लाट और वायसराय लार्ड मिंटोके पास भेजा गया। वायसरायने इसका उत्तर दिया—'लार्ड लेकका यह हुक्म सेनाविभागके लिये और अस्थायी था। मथुरामें बहुत वर्षोंसे गोवध होता आया है। इस आवेदनको यदि स्वीकार किया जायगा, तो सरकारकी धार्मिक तटस्थताका भंग होना सम्भव है। अतः आवेदनकारियोंकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की जा सकती। यदि खुली जगहमें गोवध होता हो, जिससे हिंदू-भावनाओंमें आघात होना सम्भव हो, तो इसका प्रबन्ध स्थानीय अधिकारी कर सकते हैं।' इसपर स्टेट-सेक्रेटरीके पास अपील की गयी; परन्तु भारतसरकारका हुक्म ही बहाल रहा। इस सम्बन्धमें हिंदुओंकी उदासीनता और दुर्बलताकी निन्दा की जाय, अंग्रेज अधिकारियोंकी चातुरी और धूर्तताकी प्रशंसा की जाय, या कसाईखाना बंद न करनेके लिये सरकारकी धार्मिक तटस्थताका भंग होनेका जो कारण बताया गया है, उसका अभिनन्दन किया जाय, इसका विचार पाठक ही करें। पं० नटवरलालजीने इस सम्बन्धमें अपने प्रयत्न ढीले नहीं होने दिये, उन्हें जारी ही रक्खा।

काशीका पुराना दंगा

काशी सब पन्थों और मतोंके हिंदुओंका अत्यन्त पवित्र और प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। यहाँ अधिकांश हिंदुओंकी बस्ती है। फिर भी यहाँ सन् १८०९में किसीने गोहत्या कर दी। इसपर बड़ा दंगा हो गया और मारपीट, रक्तपात, खून आदि सब कुछ हुआ। दंगेके अपराधमें बहुतसे लोग पकड़े गये। उनमेंसे कुछ छूट गये, कुछ लोगोंको साधारण और कुछ लोगोंको कड़ी सजा हुई। जो दंगेमें पकड़े नहीं

गये थे, उनको सूचना दी गयी कि बिना दंगा-फसाद किये जो अर्जी देंगे, उनकी शान्तिके साथ जाँचकर उन्हें योग्य न्याय प्रदान किया जायगा। पहलेकी अमलदारियोंमें सशस्त्र दंगा करनेवाले अपराधियोंको बे-इन्साफ प्राणदण्ड या कठोर कारादण्ड दिया करते थे; परन्तु अंग्रेजी अमलदारीमें अपराधीकी ठीक जाँचकर जितने अंशमें वह अपराधी पाया जाता है, उतना उसे दण्ड भी मिलता है। उक्त दंगेके अवसरपर यह दृश्य भी देखा गया; परन्तु दंगेका परिणाम क्या हुआ ? हिंदुओंके प्रथम श्रेणीके अतिपुरातन इस पुण्य-क्षेत्रमें इस समय तीन-चार बूचड़खाने चल रहे हैं और इससे भारत सरकारकी धार्मिक तटस्थता भी भंग नहीं होती ! अनेक अंग्रेजी न्यायनिर्णयोंसे लोगोंकी श्रद्धा हो गयी थी कि यदि शिकायत योग्य हो, तो अंग्रेजी राज्यमें न्याय भी योग्य होता है। पर अंग्रेजी राज्य-सम्बन्धी यह श्रद्धा भी ऐसे दंगोंके अवसरोंपर ढीली हो जाती है। यहाँ इसका एक ही उदाहरण दिया जाता है।

हाईकोर्टका एक फैसला

संयुक्तप्रान्तके तिलहर गाँवमें ईदके अवसरपर दो मुसल्मानोंने सार्वजनिक स्थानमें दो गायें मार डालीं। उनपर मुकद्दमा चला और शाहजहाँपुरके मजिस्ट्रेटने हर-एक वधिकपर २५) जुर्माना किया। सेशनकोर्टमें इसकी अपील हुई। सेशन जजने यह कहकर वह मुकद्दमा हाईकोर्टमें फैसलेके लिये भेज दिया कि, 'जहाँ गायोंका वध हुआ, वह स्थान मुसल्मानी मुहल्लेमें है और वहाँ गोवध होता आया है।' चीफ जस्टिस मिलाकर चार यूरोपियन और जस्टिस महम्मद नामक एक मुसल्मान जजकी फुलबेंचमें मुकद्दमा सुना गया। उसका जो फैसला हुआ, वह इस प्रकार है—

'कोई पूजास्थान या पवित्र मानी गयी वस्तु (any place of worship of any object held sacred) कोई नष्ट करे, बिगाड़े या भ्रष्ट करे, ऐसे शब्द इंडियन पिनल कोड दफा २९५ में है। गाय सजीव प्राणी है; उसका समावेश वस्तु (Object) में हो नहीं सकता। इस कारण घातक निरपराध हैं। उनसे यदि दण्डकी रकम वसूल हो चुकी हो, तो वह उन्हें लौटा दी जाय।' इस फैसलेसे हिंदुओंके अन्तःकरणोंको बड़ा धक्का लगा; क्योंकि इसका परिणाम भयानक होनेकी सम्भावना थी। मान लीजिये; कोई अविचारी व्यक्ति मन्दिर या मस्जिदके पासके किसी सार्वजनिक स्थानमें गाय या सूअर मारे और इससे दंगा होकर लोगोंके जीवन और धनका नाश हो, तो उक्त फैसलेके आधारपर अपराधी निर्दोष कहकर छोड़ दिया जायगा और वह फिर वैसे ही अपराध करनेके लिये स्वतन्त्र रहेगा। इस विचित्र फैसलेसे उस समय लोकमत बहुत प्रक्षुब्ध हो उठा। ता० १२–१–१८८८ को प्रयागमें एक प्रचण्ड सार्वजनिक सभा हुई। उसमें चार-पाँच प्रस्ताव स्वीकृत हुए और पाँचवें प्रस्तावानुसार चार हिंदू, दो अंग्रेज और एक मुसल्मानकी 'दि सेन्ट्रल कमेटी ऑफ दि काउ मेमोरियल फंड' नामक एक कमेटी स्थापित हुई। उसके प्रमुख कार्यकर्ता श्रीस्वामीने बड़े-बड़े नगरोंमें जाकर व्याख्यानद्वारा बहुत जागृति की। कलकत्तेके टाउनहालमें ता० १–९–८८ को राजा पूर्णचन्द्रसिंह बहादुरके सभापतित्वमें जो विराट् सभा हुई, उसमें दिया हुआ श्रीस्वामीका व्याख्यान पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ है। उसको पढ़कर यह आश्चर्य होता है कि पचास वर्ष पूर्वके उस धर्म-प्रवणताके कालमें भी श्रीस्वामी-जैसा मेधावी संन्यासी उत्पन्न होकर गोरक्षणके धार्मिक महत्त्वको बनाये रखकर कृषि, व्यापार, राजनीति, अर्थशास्त्र, भौतिकशास्त्र आदिकी दृष्टिसे गोरक्षणकी व्यावहारिक उपयुक्तता केवल हिंदुओंको ही नहीं, किन्तु ईसाई, मुसल्मान आदि अन्य धर्मावलम्बियोंको भी समझा देता है और सभीको गोरक्षणके पवित्र कार्यमें उद्युक्त करता है। यह जगद्धात्री धेनुमाताकी महिमा है। श्रीस्वामीका गोरक्षणसम्बन्धी गहरा और व्यापक अध्ययन भी कौतुकास्पद है। श्रीस्वामीकी 'काउ मेमोरियल फंड'की उक्त कमेटी आगे चलकर अनेक कारणोंसे टूट गयी; परन्तु उनकी उत्पन्न की हुई जागृतिका फल अच्छा हुआ और उसका उपयोग नागपुरके कार्यकर्ताओंने कर लिया।

धार्मिक भावनाकी इष्टानिष्टता

गोमाताके सम्बन्धमें पूज्य भावना हिंदुओंकी नस-नसमें भरी हुई है। उसके विरुद्ध इसी प्रकारकी घटनाएँ देशमें स्थान-स्थानपर बराबर होती गयीं और गोरक्षणका आन्दोलन भी जड़ पकड़ता गया। मुसल्मानी अमलदारीमें विजित हिंदुओंको चिढ़ानेके लिये उन्हींकी आँखोंके सामने जबरदस्ती गोसंहार किया जाता था। इससे हिंदुओंमें त्वेष (ताव) भी उत्पन्न होता था। गोसंहारका परिमाण उस समय अल्प था; परन्तु उससे लोगोंके चित्त अधिक उत्तप्त हो जाते थे। अंग्रेजी प्रणाली उससे भिन्न और परिमार्जित है। कारण

गायका हिंदू-मालिक ही इस धनशोषक राज्य-प्रणालीमें ऐसे संकटमें आ जाता है कि उसे अपनी प्राण-सी प्यारी गाय विवश होकर बेचनी पड़ती है और हिंदू दलालके मार्फत वह कसाईके हाथ चली जाती है। कसाई अपने आर्थिक लाभके लिये उसे मारता है, जिससे पश्चिमी व्यापारियोंका काम बन जाता है और उसे भी लाभ हो जाता है। फिर वह अधिक मुनाफेके लिये अधिक गायें—जबरदस्ती नहीं, व्यापारी पद्धतिसे प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है। गरजू हिंदूमालिक दरिद्रताकी कैंचीमें फँसा होनेके कारण गोविक्रयके भावी परिणामकी ओर ध्यान देनेमें असमर्थ हो जाता है। यह सब काम बिना शोरगुलके सुश्रृंखलरूपसे चलता रहता है। अंग्रेजी अमलदारीका गोवध द्वेष फैलाने या बदला लेनेकी भावनासे अछूता है। वह व्यापारके निमित्तसे परदेमें किया जाता है। चाहे उसका परिमाण कितना ही प्रचण्ड क्यों न हो और उसका प्रसार कितना ही सर्वनाशी और देशव्यापी क्यों न हो, उससे हिंदुओंकी भावनापर आघात नहीं होता। जब कसाईके हाथ गाय बिक जाती है, तभी हिंदू मालिककी आधीसे अधिक भावना मर जाती है। और बची-खुची विश्रृंखलता तथा दरिद्रताकी चक्कीके तले पिस जाती है। यह बात अशिक्षितोंकी है। सुशिक्षितोंकी दृष्टिमें तो गोरक्षणका प्रश्न देशकी प्रगतिके मार्गमें अटकाया हुआ एक बड़ा रोड़ा है! सन् १८८७ में नौसरी प्रान्तके हिंदू प्रतिनिधियोंने गोरक्षणका प्रश्न कांग्रेसके सामने उपस्थित करनेका प्रयत्न किया था; परन्तु मुसल्मान प्रतिनिधियोंने उसका विरोध किया। सरकारके विरोधमें हिंदू-मुसल्मानोंका एक संयुक्त प्रबल पक्ष प्रस्तुत करनेकी आशासे इस प्रश्नकी ओर कांग्रेसने तबसे जो आनाकानी की है, सो अबतक इस ओर ताककर भी नहीं देखा। राष्ट्रीय सभाके विद्वान् नेताओंने एक राजनीतिक विशिष्ट उद्देश्यसे गोरक्षाकी इस प्रकार जब उपेक्षा की, तब अन्य शिक्षित समाजमें भी इस विषयमें गलतफहमी बढ़ने लगी। अंग्रेजी विद्यालयोंकी धर्महीन शिक्षाने भी उस गलतफहमीमें हाथ बँटाया। यों अशिक्षित समाज दरिद्रता और अज्ञानके कारण लाचारीसे गायका त्याग करता है और शिक्षित कहानेवाला समाज 'बाघिनका दूध' पिया हुआ होनेके कारण गायके सम्बन्धमें उदासीन या विरुद्ध हो जाता है। गायका त्राता कोई नहीं बच रहता। कसाइयों और उनके साथियोंका काम अनायास बन जाता है। प्रश्न किया जाता है कि देशमें प्रतिदिन हजारों गायें कट रही हैं; पर हिंदुओंके कानोंपर जूँ नहीं रेंगती और कोई मुसल्मान कभी कदाचित् एकाध गाय मारता है, तो दंगा हो जाता है, इसका कारण क्या है? इसका संक्षिप्त उत्तर यह है कि मुसल्मान इस प्रकार गाय मारते हैं, जिससे हिंदुओंकी भावनापर आघात होता है और अन्यत्र व्यापारी पद्धतिसे परदेकी आड़में गो-वध होता है। परदेकी आड़में होनेवाले गो-वधका परिणाम भी हिंदुओंके चित्तपर होता है; परन्तु उनके चित्तकी वह क्षुब्धता चित्तमें ही दबी रहती है और मुसल्मानोंकी जबरदस्तीका निमित्त पाते ही बाहर फूट निकलती है!

गो-वध चाहे किसी भावना या पद्धतिसे किसीके द्वारा क्यों न हो, उससे राष्ट्रकी हानि समानरूपसे ही होती है। वह हानि भावना, पद्धति या व्यक्तिपर नहीं, किन्तु गायोंके गुणों और संख्यापर अवलम्बित है। अच्छी नस्लके हृष्ट-पुष्ट जितने जानवर अधिक मारे जायँगे, राष्ट्रकी उतनी ही अधिक हानि होगी। ज्यों-ज्यों यह हानि अधिक होने लगी, त्यों-त्यों उसका सार्वत्रिक परिणाम देखकर इस ओर विचारशील पुरुषोंका ध्यान भी अधिक आकृष्ट होने लगा। 'लोकहितवादी' ने अपने ग्रामरचनाके प्रबन्धमें निम्नलिखित रूपसे यह बताया है कि अंग्रेजी राज्यके दुष्परिणाम देशको किस प्रकार भोगने पड़ रहे हैं।

'पेट पालनेकी भयानक चिन्ता, खान-पानकी दुरवस्था और पराकाष्ठाकी परतन्त्रतासे लोग अशक्त और निरुत्साह होते जा रहे हैं। दरिद्रतामें उत्पन्न हुई सन्तति योग्य लालन-पालन न होनेसे कैसे तेजस्वी हो सकती है और उसके द्वारा पुरुषार्थ तथा साहसके कार्य कैसे हो सकते हैं? देशमें गाय-भैंस-जैसे दुधारू जानवर जब बड़ी संख्यामें होते हैं, तब उनका घी-दूध खाकर लोग शक्तिमान् होते हैं। पशुओंको अच्छा और विपुल चारा-पानी मिलनेसे वे पुष्ट होकर अधिक दूध देते हैं। खेतोंको उनके गोबरकी अच्छी खाद मिलती है। उस खादसे जमीन उपजाऊ होती है। जमीनके उपजाऊ होनेसे देशमें धान्यकी विपुलता होती है और देश समृद्ध हो जाता है। यह देशकी समृद्धिकी परम्परा है। पशुओंकी कमीका कारण उनका वध है। प्रजाओंका सुख और कल्याण कानूनोंके पहाड़ उठानेसे नहीं सध सकता। हिंदुस्थानमें इसके लिये सबकी यही माँग है कि सरकार गो-वध बंद करे और उसके लिये कानून बनावे। जिनके द्वारा इस समय नाना प्रकारके शास्त्रीय आविष्कार हो रहे हैं और जिनके यहाँ कृषि-कर्म-विद्या

पूर्णताको प्राप्त हो चुकी है, वे गो-वधसे होनेवाली हानि और गोपालनसे होनेवाले लाभको न जान पावें या जानकर भी उसका प्रबन्ध न करें, यह बड़े ही दुःख और लज्जाकी बात है।'

देशस्थितिका यह निदान राष्ट्रीय सभा स्थापित होनेसे पहले ही ऐसे एक विद्वान्ने किया है, जिसकी यह धारणा थी कि यहाँ अंग्रेजी राज्य ईश्वरीय सङ्केतसे ही हिंदुस्थानके कल्याणके लिये स्थापित हुआ है। आर्योंकी युगोंसे यह दृढ़ भावना रही है कि गाय हमारी मुख्य सम्पत्ति है, हमारे कौटुम्बिक सुख और जीवनका आधार है, आध्यात्मिक अनुभव करा देनेवाली उपास्य देवता है और प्राणों तथा सर्वस्वका मूल्य देकर रक्षण करनेयोग्य पूज्यतम देवी है। कुछ पाश्चात्य संस्कारोंसे विकृतमस्तिष्क हुए लोगोंको—जिनकी संख्या जनसंख्याके अनुपातसे बहुत ही थोड़ी है—छोड़कर बाकी सभी हिंदू गायको पवित्र, पूजनीय और पालनीय मानते हैं। अंग्रेजी अमलदारीके आरम्भमें हिंदुओंके अन्तःकरणोंमें यह भावना जाग रही थी। स्वराज्य खो जानेपर भी जो अन्तःकरण नहीं डिगे, यही नहीं, किन्तु स्वराज्य खो देनेमें जिन्होंने हाथ बँटाया, वे ही अन्तःकरण इस कल्पनासे उबल पड़े कि गायकी चरबी लगे कारतूस दाँतोंसे नोचने पड़ेंगे। 'लोकहितवादी' के पूर्वोक्त अवतरणमें ठीक ही कहा गया है कि, जिन बातोंका धर्मनीतिमें स्पष्ट निषेध किया गया है, वे ही बातें वर्तमान राजशासक कर्तव्य और नीतिके नामसे बेधड़क कर रहे हैं।' लोग भी ऐसी धर्मविरुद्ध बातोंका प्रतीकार जबतक हाथमें शस्त्र थे, तबतक शस्त्रोंद्वारा और निहत्थे होनेपर अन्य रीतिसे करते ही आये हैं। प्रजाके धर्मके विरुद्ध कुछ बातें अपने हाथों हो रही हैं, या विवश होकर करनी पड़ती हैं, इसीसे १८५७ जैसे उपद्रव होते हैं, यह जानकर ही सरकारको महारानी विक्टोरियाकी घोषणाके रूपमें प्रजाको अभिवचन देना पड़ा कि हम अपनी प्रजाके धर्ममें किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं करेंगे। उस समयकी प्रजा भी उस अभिवचनमें विश्वास रखकर शान्त हो गयी; क्योंकि वह कानूनके शब्दोंके बालकी खाल उतारनेमें अभ्यस्त नहीं थी। अपनी सत्ताके चिरस्थायित्वके लिये उचित उपाय करना शासकोंको आवश्यक था और विजित तथा निःशस्त्र लोगोंकी भावनाओंके लिहाजसे उन्हें अपना काम रोक देनेका भी प्रयोजन नहीं था। फिर भी सन् १८५७ की ठोकरको ध्यानमें रखकर आगे उन्होंने अपना राज-काज बड़ी सावधानता और चतुरतासे चलाया। उन्होंने जो कुछ किया और वे जो कुछ करते आये हैं, वह मानवी स्वभावके अनुरूप ही है। उसके लिये उन्हें दोष देना या उनका द्वेष करना वृथा है। उन्होंने जागरूकतासे जैसी अपने हितोंकी रक्षा की, वैसा हमने सावधानीसे अपने हितोंको क्यों नहीं देखा? इसमें दोष हमारा ही है और उसका प्रायश्चित्तपूर्वक पूर्ण परिमार्जन करनेके लिये हमें प्रस्तुत हो जाना चाहिये। वर्तमान गोरक्षण-आन्दोलनको जो एकदेशीय—केवल धार्मिक—स्वरूप प्राप्त हो गया है, वह कार्यकर्ताओंकी अतिरिक्त धर्मप्रियताका नहीं, किन्तु अंग्रेजी राजशासन-प्रणालीका फल है! इसीका दिग्दर्शन करानेके लिये विषयान्तरकी तरह प्रतीत होनेवाली अंग्रेजी राजनीतिका यहाँ थोड़ा-सा स्पष्टीकरण करना पड़ा है।

वर्तमान भारतके किसी गृहस्थके प्रपञ्चको देखनेसे ज्ञात होगा कि उसका जीवन औद्योगिक, शारीरिक, वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, जातीय, स्त्री-पुरुष-पशु-विषयक नाना भेदों-उपभेदोंसे शतधा ही नहीं, सहस्रधा विदीर्ण हो गया है। अंग्रेजी राजसे पहले इन सब भेदों-उपभेदोंका समावेश 'धर्म' में हो जाता था। उस समयका गार्हस्थ्य-जीवन धर्मके बन्धनसे एकरूप हुआ करता था। इससे यह नहीं समझना चाहिये कि तबके लोग केवल पूजा-पाठ ही किया करते थे। नहीं, आजकल अंग्रेजोंकी प्रत्येक बात जिस प्रकार कानून और व्यवस्थाके साँचेमें ढली रहती है, उसी प्रकार तत्कालीन हिंदू-जनताका प्रत्येक व्यवहार धर्मके नियमोंसे आबद्ध था। अंग्रेजी अमलदारीमें यह स्थिति बदलती गयी। कानूनदाँ अंग्रेज विद्वानोंने भारतीय जनताके धर्म-ग्रन्थों और भावनाओं-को ध्यानमें रखकर यहाँके कानून बनाये सही; परन्तु उनकी संस्कृति मूलतः भिन्न होनेके कारण उन्होंने कानूनकी जो चौखट तैयार की, उससे हिंदू-जीवनकी दिशा ही बदल गयी। गायके विषयमें अंग्रेजों और हिंदुओंकी संस्कृतियाँ पूर्व-पश्चिमकी तरह परस्पर विभिन्न हैं। अंग्रेजोंने भारतमें पदार्पण किया, उस समय यदि यहाँ हिंदूधर्म ही प्रचलित होता, तो गायके बारेमें अंग्रेजोंकी मनोवृत्तिका रुख भी कुछ और होता; परन्तु तब यहाँ छोटे-बड़े मुसल्मानी राज्य विद्यमान थे और इस्लामी प्रथा भी सर्वत्र बिखरी हुई थी; इस कारण गायके सम्बन्धकी हिंदुओंकी भावनाको विशेष महत्त्व देना अंग्रेजोंको आवश्यक नहीं प्रतीत हुआ। उन्होंने अपनी राजनीतिका रुख ऐसा रक्खा कि व्यापारके लिये

गो-वध तो दिन-दिन बढ़ती मात्रामें होता रहे; परन्तु उसका दोष शासन-संस्थाके मत्थे न मढ़ा जा सके। गोरे सैनिकों और अन्य यूरोपियनोंके लिये गोमांस निर्बाध मिलता रहे और हड्डी-चमड़ेका व्यापार भी चलता रहे, इसलिये अंग्रेजोंको गोसंहार अभीष्ट और आवश्यक जान पड़ता है। परन्तु इससे हिंदुओंके चित्त प्रक्षुब्ध करनेकी बदनामी वे अपने सिर लेना नहीं चाहते। इसलिये इस काममें उन्होंने मुसल्मानोंको अपना साक्षी बना लिया। इस व्यवस्थासे गो-वधका दोष मुसल्मानोंके सिर मढ़कर उससे होनेवाला आर्थिक लाभ अंग्रेज उठाते रहते हैं। १८८८ की प्रयागकी सभाने एक प्रस्तावके द्वारा निवेदन किया था कि यहाँके सैनिक और असैनिक यूरोपियनोंके लिये गोमांस आस्ट्रेलियासे मँगवा दिया जाया करे। परन्तु कौन सुनता है? सन् १९११ के उपरान्त जबलपुरके मि० करसेटजी सोराबजी जस्सावाला नामक एक पारसी सज्जन केवल गोवध-प्रतिबन्धार्थ प्रयत्न करनेके लिये कुछ वर्षतक इंग्लैंडमें जाकर रहे। मि० जस्सावाला और उनके सहकारियोंने सरकारको यह भी अभिवचन दिया कि यहाँके गोरोंके लिये आस्ट्रेलियासे गो-मांस मँगा देने और यहाँका गो-वध बंद करनेमें जो घाटा लगेगा, वह पूरा कर देनेके लिये हम प्रस्तुत हैं। परन्तु सरकारने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की। इससे दो बातें अनुमित होती हैं। या तो सरकारको भारतीय गोमांस विलक्षण, रुचिकर और गुणदायक जँचता होगा या भारतीय पशुओंके घटानेकी कोई नीति सरकारने निश्चित कर ली होगी। यदि ऐसा न होता, तो करोड़ों हिंदुओंके हृदयोंकी चलनी बनाने और राष्ट्रके आरोग्य तथा कृषिकी भयानक हानि करनेवाले गो-वधको सरकार बराबर जारी क्यों रखती? सरकारकी ओरसे गो-वध-प्रतिबन्धके विरुद्ध यह कारण बताया जाता है कि यदि गो-वध रोका जायगा, तो मुसल्मानोंकी धार्मिक भावनापर आघात होगा और कुर्बानीके उनके धार्मिक अधिकारमें बाधा डाली जायगी। यह काम सरकारकी धार्मिक तटस्थताकी नीतिके विरुद्ध होगा। परन्तु क्या हिंदुओंकी छाती-पर बेरोक-टोक गोवध होने देना धार्मिक तटस्थताका भंग नहीं है? और क्या सरकार यह नहीं समझ सकती कि गोरोंके लिये आस्ट्रेलियासे गोमांस मँगा देने और यहाँका गोवध रोक देनेसे किसीके धर्ममें हस्तक्षेप नहीं होगा? इस विषयमें कोई अन्य कारण न दिखा सकनेपर धार्मिक तटस्थताकी दीवार हमारे सामने सरकार खड़ी करती है! प्रजाके हिताहितों और भावनाओंका विचार न कर किसी विशेष उद्देश्यसे सरकारने गोवधके सम्बन्धमें एक बार जो नीति निश्चित कर ली है, उससे वह टस-से-मस होना नहीं चाहती!

इस प्रकार एक ओर सरकारकी दुराग्रहपूर्ण विरोधी नीति और दूसरी ओर अपनी असहाय स्थिति, इस कैंचीमें फँसे और गोसंहारसे व्याकुल हुए हिंदुओंने आगे बढ़कर गोशाला-स्थापन, प्रचार, दंगा-बखेड़ा आदि जो कुछ कार्य किये, वे सब धार्मिक कर्तव्य समझकर ही किये। उन कार्योंमें लोगोंने धर्मबुद्धिसे प्रेरित होकर ही सहायता दी। उधर मुसल्मानोंका भी एक दल तैयार हो गया, जो स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा करने लगा कि गोवध करनेका मुसल्मानोंको धार्मिक अधिकार है। दोनोंके झगड़ेसे लाभ उठाकर अंग्रेजोंने अपना अभीष्ट व्यापारी गोवध अनिर्बन्धरूपसे जारी रक्खा। शस्त्र-कानून बन जानेपर जबरदस्ती या दंगे-बखेड़ेका मार्ग रुद्ध हो गया; परन्तु गोशाला, गोरक्षक-फंड, लोक-जागृति आदिका कार्य एक धार्मिक कर्त्तव्यके रूपमें चलता रहा और अब भी चल रहा है। यद्यपि गोरक्षणका कार्य राजा-प्रजा दोनोंकी दृष्टिमें धार्मिक ही माना गया है, तथापि उसका सद्यः फलदायी व्यावहारिक स्वरूप गोरक्षा-आन्दोलनके कार्यकर्त्ताओंने आँखोंकी ओट होने नहीं दिया है। यह बात इस आन्दोलनका इतिहास ध्यानसे पढ़नेपर समझमें आ सकती है। जो गोरक्षक यह उपदेश करता है कि गोमाताकी कृपासे परलोककी वैतरणी नदी तरी जा सकती है, या गोमाताकी सेवासे सद्गति प्राप्त होती है, वह गायकी व्यावहारिक उपयोगिताकी उपेक्षा करता है, गोपालन संवर्धनादि कार्योंका निषेध करता है, या दूध, घीका व्यवहार करनेसे रोकता है, यह बात कदापि नहीं है। उसका उद्देश्य यही होता है कि लोग गोशुश्रूषा व्यावहारिक दृष्टिसे अधिक आस्था और प्रेमपूर्वक करें, गो-संगोपन अधिक लगनसे करें और आजकल अमेरिकामें व्यापारी दृष्टिसे जिन गायोंका उपयोग नहीं, उन अतिरिक्त गायोंका जिस प्रकार संहार कर दिया जाता है, उस प्रकारका ऐसा कोई राक्षसी कृतघ्नताका कार्य यहाँ न हो, जिससे मनुष्यत्वमें कलंक लगे। इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये वह यदि गायका धार्मिक महत्त्व कुछ अतिशयोक्तिके साथ प्रतिपादन करता हो, तो हानि क्या है? वह धार्मिक भावना गायसे होनेवाले व्यावहारिक लाभोंमें सहायक ही होगी। इस धार्मिक भावनासे ही हिंदुस्थानकी गाय गोभक्षकोंकी जिह्वा-लोलुपताके जालसे बच रही है; नहीं तो अफ्रिकाकी 'डो डो' नामकी चिड़िया या अमेरिकाकी नील गायकी तरह कभीकी नाम-शेष हो

जाती। यह मत मॉनियर विलियम-जैसे विदेशी इतिहासकारका है। इसके विपरीत हमारे देशहितैषी कहानेवाले हिंदू विद्वान् गोरक्षा-सम्बन्धी धार्मिक भावनाकी खिल्ली उड़ाते हैं; इसे देशका दुर्भाग्य ही कहना चाहिये! गोरक्षण-आन्दोलनका लक्ष्य क्या है? इसकी यहाँ थोड़ी चर्चा करना अप्रासङ्गिक न होगा।

गोरक्षण-आन्दोलनका लक्ष्य

यद्यपि यह निश्चितरूपसे नहीं कहा जा सकता कि यहाँ गोरक्षणका आन्दोलन किस मितीसे आरम्भ हुआ, तथापि इसमें सन्देह नहीं कि इसका आरम्भ हुए सौ-डेढ़ सौ वर्ष बीत गये हैं और अंग्रेजी राजसत्ताके साथ-ही-साथ यह पनपता गया है। प्रतिकूल परिस्थितिमें भी इतने दीर्घकालतक देशभरमें जब यह आन्दोलन चल रहा है, तब यह निश्चित ही है कि इसके कार्यकर्त्ताओंके सामने कोई लक्ष्य अवश्य था और वह 'गोप्राणरक्षण' ही हो सकता है। इसी लक्ष्यके अनुसार कार्यकर्त्ताओंने आन्दोलन किया और उसके सहायकोंने सहायता दी। अब यह प्रश्न उठ रहा है कि भविष्यत्‌में वही गोप्राण-रक्षणका पुराना लक्ष्य स्थिर रक्खा जाय, या कालमानके अनुरूप उसमें कुछ परिवर्तन किया जाय? इसपर भी कुछ विचार कर लेना उचित होगा।

गोरक्षणका अर्थ विभिन्न लोग अपनी-अपनी समझके अनुसार करते हैं। बूचड़खानोंके गोसंहारका चित्र जिनके अन्तश्चक्षुओंके सामने है, उनके मतानुसार 'भयाद् रक्षणम्' इस वचनके अनुसार कसाइयोंकी छुरीसे गाय-बछड़ोंको बचाना ही गोरक्षण है। पिंजरापोलका नमूना जिनके सामने है, वे अनाथ, अपंग गायों और अन्य जीवोंके पालनको ही गोरक्षण समझते हैं, और जिनकी दृष्टिके सामने आधुनिक शास्त्रीय उपकरणों और यन्त्र-सामग्रीसे सुसज्जित पश्चिमी देशोंके दुग्धालय हैं, उनका मत है कि यदि गोशालाओंमें सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट गाय-बछड़े, उत्तम जातिके ऊँचे पूरे साँड़ और आदर्श व्यवस्था-जैसे हृदयाह्लादक दृश्य देख पड़ें, तो वही सच्चा गोरक्षण कहा जायगा।

वास्तवमें उक्त तीनों कार्य गोरक्षण, गोपालन और गोसंवर्धन इन तीन नामोंसे अभिहित होने चाहिये। तीनों कार्योंकी राष्ट्रको आवश्यकता है। इसमें किसीका मतभेद नहीं है कि भूतदयाके धार्मिक सिद्धान्तानुसार अनाथ, अपंग जीवोंकी रक्षा होनी ही चाहिये और ऐसे दुर्बल जीवोंसे दूध-घीकी कोई अपेक्षा नहीं कर सकता। निरे भौतिक जड़वादियोंकी दृष्टिमें ऐसी संस्थाएँ देशके लिये भारभूत ही हैं। परन्तु उन्हें विचार करना चाहिये कि बुड्ढों या बेकारोंको पोसनेके लिये पेंशन या भत्ता देनेकी आवश्यकता जब स्वीकार की जाती है, तब जिन मूक प्राणियोंने अपना सारा जीवन मानवी-जीवनको सुखी करनेमें लगा दिया, उनको वृद्ध या अपंग अवस्थामें दो कौर खिलाना क्या भूतदयाकी दृष्टिसे मनुष्यका न्याय्य और आवश्यक कर्त्तव्य नहीं है?

गो-संवर्धन भी राष्ट्रके लिये अत्यन्त आवश्यक है। हमारे देशके अच्छे गाय-बैल अपने देशमें ले जाकर कनाडा, ब्राजिल, संयुक्त राज्य आदि अमेरिकाके देशोंने अपना गोसंवर्धन पराकाष्ठाको पहुँचा दिया है। वहाँ यह काम शिक्षित और धनिक लोग ही करते हैं। वहाँकी धर्मादायकी संस्थाएँ मूक प्राणियोंको संहारसे बचाती और उनपर आनेवाली विपत्तियोंसे उनकी रक्षा करती हैं। उनकी रचना हमारे यहाँके पिंजरापोलों-जैसी ही है। गोसंवर्धन और दुग्धालयोंका एक संयुक्त धंधा है। उसमें धनिक लोग लाखोंकी पूँजी लगाते और शिक्षित शास्त्रज्ञ लोग शास्त्रीय पद्धतिसे उसका सञ्चालन कर लाखों रुपयोंका मुनाफ़ा कर लेते हैं। भारतीय धनिकों और शिक्षित बेकारोंके लिये गोसंवर्धन और दुग्धालयोंका बहुत बड़ा और उत्तम कार्यक्षेत्र है। पश्चिमी लोग यहाँ आकर यहींके जानवरोंसे अच्छी डेयरियाँ चला रहे हैं; परन्तु हमारे यहाँके धनिकोंकी दृष्टि निश्चित दस-पाँच धंधोंसे आगे बढ़ती ही नहीं। यदि वे दुग्धालय और गोसंवर्धनका कार्य हाथमें लें, तो पाश्चात्त्य देशोंकी तरह यहाँ भी आदर्श व्यवस्था हो सकती है। अपेक्षित पूँजी, विपुल चरागाह, अच्छी जातिके गाय-बैल और शास्त्रीय प्रणालीसे लगनसे काम करनेवाले गोप्रेमी, इन सबके एकत्र होनेपर गोसंवर्धन लाभदायक होगा, इसमें तो कोई संदेह ही नहीं रह जाता। किंबहुना, जो लाभ पश्चिमी लोगोंको नहीं हो रहा है, वह यहाँके गोसंवर्धकोंको हो सकता है। इस देशमें भैंसोंका उपयोग खेतीमें न होनेसे उनका कोई मूल्य ही नहीं है। यही बात विदेशोंमें बैलोंकी है। परन्तु भारतमें खिल्लारी, नागोरी, सोरटी, गीर, हिसारी आदि जातिके बछड़ों और बैलोंका अच्छा मूल्य मिलता है और गोरसकी आमदनी तो होती ही है। यदि कर्त्तव्य-परायण लोग अच्छी पूँजीसे यह धंधा आरम्भ करें, तो वह लाभदायक हुए बिना न रहेगा। श्रीमान् पूँजीपतियों और शिक्षित पुरुषोंके करने योग्य यह व्यवसाय है। धर्मादायकी

भिक्षापर जीनेवाली गोरक्षण-संस्थाएँ यह काम कर नहीं सकतीं। गोसंवर्धनके व्यवसायी गो-प्राणदानका कार्य भी नहीं कर सकते। यदि दोनों एक-दूसरेका काम करने लगें, तो धंधा और धर्मादाय दोनोंकी खिचड़ीसे संस्थाओंकी विडंबना होकर कर्त्तृत्ववान् पुरुषोंकी शक्ति, काल और धनका अपव्यय ही होगा। सरल मार्ग तो यह है कि दोनों कार्य स्वतन्त्र रहें; परन्तु ऐसी पद्धतिसे चलाये जायँ कि दोनों एक-दूसरेके पोषक हों। धनिक लोग दुग्धालयों और गोसंवर्धन-का धंधा हाथमें ले लें, और धर्मादायके भरोसे चलनेवाली गोरक्षण-संस्थाएँ 'गो-प्राण-रक्षण'में प्रवृत्त रहें। इस प्रकार श्रम-विभाग हो जानेपर एक ओरसे गायोंको कसाईखानोंमें न जाने देनेका और दूसरी ओरसे गायोंकी नस्ल सुधारकर उनकी दुग्धोत्पादकता बढ़ानेका यदि प्रयत्न हो, तो गोरक्षणका आन्दोलन सफल होकर देशमें गोधनकी समृद्धि हुए बिना न रहेगी। इसमें संदेह नहीं कि गोशाला, दुग्धालय, गोसंवर्धन अथवा गोरक्षणका आन्दोलन आदि सब कार्य राष्ट्रके गोधनकी समृद्धिके लिये ही करने हैं; परन्तु कौन-सा कार्य किसे करना चाहिये, इसका तारतम्य रक्खा जायगा, तभी वे कार्य सफल हो सकते हैं। अग्नि-शमनके लिये फायर ब्रिगेडके जो लोग जाते हैं, वे बाँटकर काम करते हैं। आग बुझानेवाले आग बुझाते और जान-मालको बचानेवाले अपना काम करते हैं। यदि वे एक-दूसरेका काम या दोनों दोनों काम करने लगें, तो एक भी काम सफल नहीं होगा। इसी तरह राष्ट्रका गोधन जब चारों ओरसे संकटमें है, तब केवल गोसंवर्धनमें ही सारी शक्ति केन्द्रित करनेसे उस धनकी सुरक्षा नहीं हो सकेगी और असंख्य गोसंहारसे जो भयानक हानि हो रही है, उसकी पूर्ति नहीं की जा सकेगी।

गोसंहारके निश्चित आँकड़े जुटाना सर जान वुडरफ़-जैसे हाईकोर्टके चीफ़ जस्टिसके लिये भी असम्भव हो गया, तब प्रजापक्षके साधारण गोरक्षक वे आँकड़े कैसे बता सकते हैं? फिर भी छिन्दवाड़ेके वकील श्रीव्रजमोहनलाल वर्माने विभिन्न सरकारी रिपोर्टों और पत्रव्यवहारके आधारपर सन् १९२९ में यह अनुमान प्रकाशित किया है कि यहाँके कसाईखानोंमें प्रतिवर्ष प्रायः सवा करोड़ गाय-बैलोंकी हत्या की जाती है। रोग, अकाल, बुढ़ापा आदिसे होनेवाली मृत्युसंख्या इसके अतिरिक्त है। सर जान वुडरफ़का सन् १९१७ का अंदाजा एक करोड़का है। कोई आँकड़ा सही क्यों न माना जाय, वह कदापि उपेक्षा करने योग्य नहीं है। वर्तमान युद्धजन्य परिस्थितिके कारण जो भयानक गोहत्या हो रही है उसकी तो कल्पना करनेसे ही हृदय काँप उठता है। हजार-हजार रुपये मूल्यके बैल और ऐसी ही बहुमूल्य गायें जीवित अवस्थामें ही तौल-तौलकर बेच डाली गयीं। राष्ट्रका गोधन हर साल घटता जा रहा है। उसकी कमीका अनुभव किसानों और उनके साथ रहनेवाले कार्यकर्त्ताओंको अच्छी तरह हो रहा है। चौपायोंकी गणनाके पूरे आँकड़े उपलब्ध नहीं होते, इसका कारण यही है कि उनकी संख्या बराबर घट रही है। जब देशमें सर्वत्र गोधनकी भीषण होली दहक रही है, तब वह केवल गोसंवर्धन और दुग्धालयोंके छिड़कावसे कैसे शान्त हो सकती है? उसके शमनके लिये 'गो-प्राण-रक्षण'का कार्य भी जोरोंसे जारी रहना चाहिये। सौ-पचास गायोंको कसाइयोंके हाथोंसे बचाकर उनका पोषण करना ही गोरक्षण नहीं है। कसाइयोंके हाथोंमें गायोंको न जाने देना, इसके लिये किसानोंकी अवस्था सुधारना, सूखे मांस और हड्डी-चमड़ेका जो करोड़ोंका व्यापार बढ़ता जा रहा है, उसे रोकना, गोपालनके लिये लोगोंको प्रवृत्त करना, अच्छी जातिके जो हजारों जानवर विदेश भेजे जाते हैं उनका भेजा जाना बंद करना, चरागाहों और जंगलोंके कानूनी बन्धनोंको शिथिल कराना, गोचरभूमियोंका सुधार करना, गोहत्याप्रतिबन्धक कानून बनवाना, गो-मांस-भक्षकोंके मत-परिवर्तनका प्रयत्न करना, गो-दुग्धपानका प्रचार करना, ये सब और ऐसे ही अन्य कार्य करनेके लिये प्रचारक और वाङ्मय प्रस्तुत करना, इसके लिये आवश्यक धन-बल और जन-बल जुटाना, इन सब शाखा-उपशाखाओंका समावेश गोरक्षणमें हो जाता है।

सारांश, गोसंवर्धन राष्ट्रके लिये हितकारक और आवश्यक होनेपर भी व्यक्ति या व्यक्तिसमूहके करनेयोग्य अपना-अपना खास धंधा है। उससे करोड़ों गायोंके वधसे होनेवाली राष्ट्रकी क्षति पूरी नहीं की जा सकती। अन्ततः हानि-लाभकी दृष्टिसे चलनेवाला यह व्यवसाय व्यक्तियोंके लिये ही सुरक्षित रहे, किंबहुना, पूँजीपतियोंको इस व्यवसायके लिये प्रोत्साहित किया जाय और सार्वजनिक धर्मादायके भरोसे चलनेवाली गोरक्षण-संस्थाएँ 'गो-प्राण-रक्षण' का ही कार्य करती रहें (जो आर्थिक दृष्टिसे घाटेका काम है) और अपने प्रान्तकी सजातीय संस्थाओंसे सहकारिता कर गाय-बैलोंकी राष्ट्रीय सम्पत्ति बढ़ानेकी प्राणपणसे चेष्टा किया करें। गो-धनका अप्रतिहत संहार दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। ऐसे

समयमें गो-प्राण-रक्षणका अपना पुराना लक्ष्य त्याग देना गोरक्षण-संस्थाओंको कदापि उचित नहीं है। उनको तो इसी लक्ष्यकी सिद्धिके लिये विशेष सचेष्ट होना चाहिये। जो संस्थाएँ गो-प्राणदानका कार्य करनेमें असमर्थ हों, उन्हें अवश्य ही गोसंवर्धनके कार्यक्षेत्रमें उतर आना चाहिये। यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि गोरक्षण और गोसंवर्धनका तम और प्रकाशके समान विरोध नहीं है। दोनों कार्य परस्परके पूरक और पोषक हैं। इसमें संदेह नहीं कि साधन-सामग्रीकी बहुत कमी है; परन्तु जहाँसे जितनी शक्ति प्राप्त हो सके, उसको एकत्र कर गो-प्राण-रक्षणके लिये भगीरथ-प्रयत्न करनेका समय आ गया है। इस समय गोरक्षक अपने अंगीकृत कार्यमें पूर्ण मनोयोग न करें, तो बड़ी भारी हानि होनेकी सम्भावना है। अतः पूँजीवाले शिक्षित लोग गोसंवर्धन और दुग्धालयोंका काम करें और स्वार्थत्यागी शिक्षित गो-सेवक गोरक्षणका प्रयत्न करें, यही उचित है।

गोपालसे—

निज-जन-दुख-भंजन विभो, दीनबंधु नँदलाल।
गो-द्विज-सुर-हित-औतरन, चिर-नेही गोपाल॥
सुनौ तनि कान दै॥ १॥

हाड़-मांस-पय-चाम-सों, सेवत सबहिं समान।
सुत हलधर चिरकालसों, पालत सकल जहान॥
अन्न-दाता बने॥ २॥

गोचर-भूमि न घास कहुँ, गौ जर्जर सब गात।
असन-बिना डोलत फिरैं, कबहुँ न पेट अघात॥
कहौ कत पय मिलै॥ ३॥

बहि नाला-नद-सरितसों, अब गौ-लोहू-धार।
लखी न तुम कहुँ जलधिमें, नारायन करतार॥
कहाँ सोये परे॥ ४॥

मन-मलीन तन-छीन गौ, व्याकुल करैं पुकार।
परे कहा गोलोकमें, कहुँ कुब्जाके द्वार॥
जो न बिनती सुनौ॥ ५॥

कान परी नहिं कान्हके, अजहूँ करुना-टेर।
का कारन गोपाल जू, इती लगावत देर॥
यहै विस्मय बड़ो॥ ६॥

कलि महँ गोपालन तजो, रमत गोपिकन संग।
बने बिहारी लाल कहुँ, रचत रास-रस-रंग॥
बिरद तजि आपुनो॥ ७॥

दीन गाय तुम दीन-हितु, बिधि दीनो संजोग।
जो यह औसर चूकिहौ, यहै कहैंगे लोग—
"विरद झूठो परो"॥ ८॥

——रामाधार पाण्डेय

गौसे अनन्त लाभ

(लेखक—स्वामी श्रीदयानन्दजी सरस्वती)

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ (यजु० ३६ । ८)

तनोतु सर्वेश्वर उत्तमं बलं
गवादिरक्षं विविधं दयेरितः ।
अशेषविघ्नानि निहत्य नः प्रभुः
सहायकारी विदधातु गोहितम् ॥
ये गोसुखं सम्यगुशन्ति धीरा-
स्ते धर्मजं सौख्यमथाददन्ते ।
क्रूरा नराः पापरता नमन्ति
प्रज्ञाविहीनाः पशुहिंसकास्तत् ॥

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरने इस सृष्टिमें जो पदार्थ बनाये हैं, वे निष्प्रयोजन नहीं, किन्तु एक-एक वस्तु अनेक-अनेक प्रयोजनोंके लिये रची है । इसलिये उनसे वे ही प्रयोजन लेना न्याय अन्यथा अन्याय है । पक्षपात छोड़कर देखिये, गाय आदि पशु और कृषि आदि कर्मोंसे सब संसारको असंख्य सुख होते हैं या नहीं ?

जो एक गाय न्यून-से-न्यून दो सेर दूध देती हो और दूसरी बीस सेर, तो प्रत्येक गायके ग्यारह सेर दूध होनेमें कुछ भी शंका नहीं । इस हिसाबसे एक मासमें सवा आठ मन दूध होता है । एक गाय कम-से-कम छः महीने और दूसरी अधिक-से-अधिक अठारह महीनेतक दूध देती है; तो दोनोंका मध्यभाग प्रत्येक गायका दूध देनेमें बारह महीने होते हैं । इस हिसाबसे बारह महीनोंका दूध ९९ मन होता है । इतने दूधको औटाकर प्रतिसेरमें एक छटाँक चावल और डेढ़ छटाँक चीनी डालकर खीर बनाकर खावे, तो प्रत्येक पुरुषके लिये दो सेर दूधकी खीर पुष्कल होती है । क्योंकि यह भी एक मध्य भागकी गिनती होती है । अर्थात् कोई भी दो सेर दूधकी खीरसे अधिक खा गया और कोई न्यून, इस हिसाबसे एक प्रसूता गायके दूधसे (१९८०) एक हजार नौ सौ अस्सी मनुष्य एक बार तृप्त होते हैं । गाय न्यून-से-न्यून ८ और अधिक-से-अधिक १८ बार ब्याती है । इसका मध्यभाग १३ बार आया तो (२५७४०) पचीस हजार सात सौ चालीस मनुष्य एक गायके जन्मभरके दूधमात्रसे एक बार तृप्त हो सकते हैं । इस गायकी एक पीढ़ीमें छः बछिया और सात बछड़े हुए, इनमेंसे एककी मृत्यु रोगादिसे होना सम्भव है । तो भी बारह रहे । उन छः बछियोंके दूधमात्रसे उक्त प्रकार (१५४४४०) एक लाख चौवन हजार चार सौ चालीस मनुष्योंका पालन हो सकता है । अब रहे छः बैल, उनमें एक जोड़ी दोनों साखमें २०० मन अन्न उत्पन्न कर सकती है । इस प्रकार तीन जोड़ी ६०० मन अन्न उत्पन्न कर सकती है । और उनके कार्यका मध्य भाग आठ वर्ष है । इस हिसाबसे ४८०० मन अन्न उत्पन्न करनेकी शक्ति एक जन्ममें तीनों जोड़ीकी है । इतने (४८०० मन) अन्नसे प्रत्येक मनुष्यको तीन पाव अन्न भोजनमें मिले तो २५६००० मनुष्योंका एक बारका भोजन होता है । दूध और अन्नको मिलाकर देखनेसे निश्चय है कि ४१०४४० मनुष्योंका पालन एक बारके भोजनसे होता है । अब छः गायकी पीढ़ीपर पीढ़ियोंका हिसाब लगाकर देखा जावे, तो असंख्य मनुष्योंका पालन हो सकता है । और इसके मांससे अनुमान है कि केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक बार तृप्त हो सकते हैं । देखो तुच्छ लाभके लिये लाखों प्राणियोंको मारकर असंख्य मनुष्योंकी हानि करना महापाप क्यों नहीं ? (गो-करुणानिधि)

गौ भगवान्‌के समान ही पापनाशक हैं

यथा गौश्च तथा विप्रो यथा विप्रस्तथा हरिः । हरिर्यथा तथा गङ्गा एते न ह्यवृषाः स्मृताः ॥

(पद्म० सृष्टि० ४८ । १५५)

जैसे गाय है वैसे ही ब्राह्मण है, जैसे ब्राह्मण है वैसे ही भगवान् श्रीहरि हैं, और जैसे हरि हैं वैसे ही गङ्गाजी भी हैं । अतएव ये सब पापनाशक हैं ।

गो-गौरव

(रचयिता—पु० श्रीप्रतापनारायणजी कविरत्न, साहित्यभूषण, विद्याविनोद)

पिता बन कामधेनुका है
सिन्धु रत्नाकर हो जाता—
क्योंकि सब रत्नोंसे ज्यादा
प्रतिष्ठा गो-पद है पाता। १।

प्रेमसे पावन पय-गङ्गा
यहाँ यह समुद बहाती है—
इसलिये शंभु-जटासे भी
अधिक यह महिमा पाती है। २।

नराधम नीच महापापी
वही जगमें कहलाता है।
दुःख देता है जो गौको
नहीं गुण उसके गाता है। ३।

जिन्दगी ही इस भारतकी
इसीकी है सन्तान बली।
इसीसे हरी-भरी खेती
हुई है फूली और फली। ४।

जगतकी जननी ही मानो
रूप यह पशुका धरती है।
और बन जङ्गम कल्पलता
धराको वसुधा करती है। ५।

नहीं है यह श्रीगोमाता
दया यह देहधारिणी है।
शक्तिदा महाशक्ति है यह
भगवती सौख्यकारिणी है। ६।

पालना कर यह स्फूर्त्ति नई
दे रही है जन-जीवनमें—
इसलिये यह है विष्णु स्वयं
श्याम-सुन्दरसे पशु-तनमें। ७।

नहीं यह होती तो होते
यहाँ क्यों रघु दानवहारी—
और फिर कैसे हो पाते
राम भी महाधनुर्धारी। ८।

यशोदा और नन्द बाबा
भक्तवर इसके बननेसे—
अनोखे सुतको पाते हैं
इसीकी सेवा करनेसे। ९।

वही सुत इसकी सेवासे
हुआ है कुटिल कंसहारी—
अलौकिक बल-पौरुषधारी
और श्रीयोगेश्वर भारी।१०।

रमापति विष्णु शेषशायी
कहाँपर जाकरके रहते—
क्षीरसागरको भरनेको
नहीं जो इसके थन बहते।११।

देहको बलदाता क्या है
पेय भी संजीवन क्या है—
सुधा इस वसुधाका क्या है
हमारा पौष्टिक धन क्या है? ।१२।

दूध है गोमाताका ही
यही प्रश्नोंका उत्तर है।
यही तो आदि रसायन है
स्वास्थ्यकर तत्त्वोंका घर है।१३।

जीवको बैतरणीसे है
बचानेवाली एक यही।
स्पर्श कर गो-पदका दिव ही
हो गयी है यह मंजु मही।१४।

स्वार्थके सगे सभी जन हैं
सभी दुनियाँ है मतलबकी।
किन्तु यह बिना स्वार्थके ही
सगी है गो माता सबकी।१५।

धेनुके भक्तोंके भयसे
इन्द्रका आसन हिलता है।
लोकमें गौकी सेवासे
मुक्तिका मेवा मिलता है।१६।

गौकी उपयोगितापर एक मौलवी साहेबका वक्तव्य

कुछ अविचारी हिंदू और मुसल्मानोंमें धर्मान्धताके परिणामस्वरूप परस्पर लड़ाई-झगड़ोंके समाचार संवाद-पत्रोंमें प्रायः पढ़नेको मिलते हैं। कलह देशकी उन्नतिमें एक बड़े-से-बड़ा विघ्न है और यही देशकी अवनतिका भी एक बड़ा कारण है। भारतवर्षकी इन दो बड़ी जातियोंमें इस प्रकार कलह-कडवासका रहना किसी तरह भी वाञ्छनीय नहीं है। मांस-भक्षणके लिये गायोंकी बहुत बड़ी संख्यामें हत्या होती है। गौ मनुष्य-जातिके लिये बहुत ही उपयोगी प्राणी है और मनुष्यजातिमें हिंदू, मुसल्मान, पारसी, ईसाई सबका समावेश होता है। गौ कितना अधिक उपयोगी प्राणी है, इसपर एक मुसल्मान मौलवी श्रीअहमद-मुख्तार साहेबने एक पुस्तक लिखी है; जिसमें कुरानशरीफ और हदीस आदिके प्रमाण देकर गोमांस-भक्षणका निषेध किया गया है और गायका मांस खाना हक नहीं है, यह साबित किया गया है। धर्मकी बातको एक ओर छोड़कर दूसरी तरहसे विचार करनेपर भी गोमांस-भक्षण संसारकी उन्नतिमें तथा अर्थशास्त्रकी पद्धतिसे भी सर्वथा हानिकारक है। मौलवी साहेब निम्नलिखित रूपमें उसका एक सीधा-सादा हिसाब पेश करते हैं—

एक गायका वंश

मान लो कि एक गाय १८ वर्षतक पाली गयी और उस गायके वंशकी गायें जीती रहीं और ब्याती रहीं। मान लो कि उससे जो बड़ा परिवार हुआ, उसमें आधी गायें और आधे बैल हुए, तो १८ वर्षमें मेरे हिसाबसे २४८ गाय और २४८ बैल मिलकर एक गायकी ४९६ औलाद हुई। इनमें हर एक गाय जवानीमें आकर एक बछड़ा उत्पन्न करती है और कम-से-कम मुद्दत यानी छः महीनेतक रोज तीन सेर दूध देती है, इस प्रकार हिसाब लगाया जाय तो १८ वर्षका दूध ६७०९ मन होता है। इस दूधकी कीमत चार रुपया मनके भी हिसाबसे रक्खें तो २६८३६) रुपये होते हैं। इस दूधमेंसे सेरमें एक छटाँक मक्खन निकाला जाय तो १६७७२॥ सेर मक्खन निकलता है, और रुपये सेरके हिसाबसे १६७७२॥) रुपये दाम आते हैं। लेकिन भाव इससे बहुत तेज हो गया है।

यदि एक गायकी कीमत १५) रुपये मान लें तो २४८ गायोंकी कीमत ३७२०) रुपये होते हैं, १८ वर्षमें दूध और गायकी कीमत मिलकर ३०५५६) रुपये आते हैं; और २४८ गायें अपना जो वंश बढ़ाती हैं, वह अलग ही है।

बैलका हिसाब

एक गायसे १८ वर्षमें २४८ बैल हुए। बैलोंकी एक जोड़ीसे ५० बीघा जमीन जोती जाती है और हर-एक बीघेमें ४ मन अनाज होता है। बैलके कामकी आधी उम्र यानी ९ वर्षका हिसाब लगानेसे वार्षिक २४८०० मन अनाज उत्पन्न होता है तो नौ वर्षमें २२३२०० मन अनाज उत्पन्न हुआ। अंदाजसे अनाजका भाव दो रुपया मन रक्खें तो अनाजसे ४४६४००) रुपये आये। एक बैलका मूल्य केवल १५) रुपये रखिये तो ३७२०) रुपये होते हैं।

इस प्रकार २४८ गायका दूध और उसका मूल्य तथा २४८ बैलोंका पैदा किया हुआ अन्न और उस अन्नका मूल्य इकट्ठा किया जाय तो इस एक लक्ष्मी (गाय) के सन्तानकी कमाई ४८०६७६) रुपये होते हैं। और ईश्वरकी कृपासे वह लक्ष्मी अब भी अपने पुत्र-पौत्रादि वंशविस्तारके साथ किसी भाग्यवान्के खेतकी मेंड़पर बैठी प्रसन्नचित्तसे चर रही होगी।

गायके वधका हिसाब

मौलवी साहेब कहते हैं कि समूचे हिंदुस्थानमें कितनी गायोंका वध होता है, इसका हिसाब तो मेरे पास नहीं है, और उस हिसाबको देशाटन करके प्राप्त करनेकी मुझमें शक्ति भी नहीं है। केवल १००० वर्गमील जमीनमें जहाँ छः लाख आदमी बसते हैं, उसका मैंने हिसाब लगाया। हर-एक जगहके कसाईखानोंमें वध होनेवाले पशुओंकी गिनती तथा उनसे होनेवाली आमदनीका हिसाब रक्खा जाता है। इस सम्बन्धमें मैंने बहुत ही विश्वास करने लायक हिसाब लगाया है। इस छः लाखकी आबादीमें १००० वर्गमील भूमिके भीतर प्रतिदिन ५८-५९ के हिसाबसे वार्षिक लगभग २१००० गायोंको क्रूर छूरेसे जबह किया जाता है। गायके मारनेका रिवाज होनेके कारण यह २१००० संख्या गायोंकी ही समझनी चाहिये।

इन मारी गयी २१००० गायोंका यदि १८ वर्षतक पालन किया जाय और इनके वंशको बढ़ने दिया जाय, तो १८ वर्षमें इस पशुवंशकी कुल संख्या १०४१६००० हो

जाती है, और प्रत्येककी कीमत औसत १५) रुपये रक्खें जो सब पशुओंका मूल्य १५६२४००००) रुपये होते हैं। इन गायोंका दूध १८ वर्षमें ६४१६७६०००) रुपयेका होता है। अब बचे बैल। इन बैलों तथा इनके पैदा किये अनाजका मूल्य मिलानेपर ९४५२५२००००) रुपये होते हैं। अब गाय और बैलोंकी सारी कमाई कितने रुपये होंगे? काफी बड़ी रकम होगी यानी १००३२३५३०००) रुपये।

इस रुपयोंके ढेरको छः लाख मनुष्योंमें बाँट दिया जाय तो प्रति मनुष्य लगभग ७९ रु० १ आ० ६ पा० मासिक हिस्सा आवेगा। जिन २१००० गायोंका वध करके छः लाख मनुष्योंकी आबादीवाले प्रदेशमें उनके मांसका उपयोग किया जाता है, उन्हीं २१००० गायोंके द्वारा १८ वर्षोंतक उपर्युक्त रीतिसे पैदा किये रुपयोंको छः लाख मनुष्योंमें बाँट दिया जाय तो प्रत्येक मनुष्यको ७० रु० १ आ० ६ पा० मासिककी आमदनी होती है, और ऐसा करनेमें कोई कष्ट भी नहीं उठाना पड़ता।

यह हिसाब १००० वर्गमील भूमिका है; फिर समूचे हिंदुस्थानका हिसाब कितना बड़ा होगा? मौलवी साहेब फरमाते हैं कि गायकी हिंसा न करके यदि उसका पालन किया जाय तो उससे देश कितना अधिक सम्पन्न हो जाय! यह न समझो कि सभी मुसल्मान गायकी हिंसा करते हैं, बहुतेरे प्रतिष्ठित मुसल्मान भाई कभी भी गोमांस नहीं खाते, गलत रास्तेपर भटकनेवाले हमारे मनुष्य-बन्धुओंको परमेश्वर सद्बुद्धि दे कि जिससे इस हानिकारक और निन्दनीय गोवधका जल्दी अन्त हो जाय।

जरा हिसाब लगाइये

(लेखक—श्रीआशुकुमार)

मान लीजिये कि हम एक गाय पालते हैं, उसके सभी बछड़ी-बछड़े जीवित रहकर ब्याते रहते हैं और उनका परिवार होता है, उसमें आधे बछड़े और आधी बछड़ियाँ होती हैं, और दोनोंको दूध पिलाते हुए प्रतिदिन शाम-सबेरे मिलकर केवल छः सेरके हिसाबसे दूध छः महीनेतक मिलता है। प्रत्येक बैल औसत १५ बीघे जमीन जोतता है, और बीघेमें चार मन अनाज पैदा करता है। इस प्रकार हिसाब लगावें तो दस वर्षमें नीचे लिखे अनुसार एक गायसे कुल आमदनी हो सकेगी। बछड़ा-बछड़ीमेंसे यदि कोई मर जाय तो उससे बहुत अन्तर नहीं पड़ता है, क्योंकि सब औसत आमदनी आधेसे कम लिखी गयी है। अब नीचे लिखी हुई तफसील देखिये।

पहले एक गाय ली, वह ब्यायी, उससे पहले साल २७ मन दूध और एक बछड़ी मिली। दूसरे साल २७ मन दूध और एक बछड़ा हुआ। उसका तीसरे वर्षके बाद खेतीमें उपयोग होने लगा। उससे ६ वर्षमें ३६० मन अनाज प्राप्त हुआ। तीसरे साल गायसे २७ मन दूध और एक बछड़ी हुई। चौथे साल पहले सालवाली बछड़ी भी ब्यायी। अब दो गायोंसे ५४ मन दूध तथा एक बछड़ा और एक बछड़ी होने लगी। यह बछड़ा भी चार वर्षमें २४० मन अनाज पैदा करने लगा। पाँचवें वर्ष दो गायें ब्यायीं। ५४ मन दूध तथा एक बछड़ी और एक बछड़ा दिया। इस बछड़ेसे तीन वर्षमें १८० मन अनाज हुआ। छठे वर्ष तीसरे सालवाली बछड़ी और ब्यायी। इस प्रकार तीन गायोंसे ८१ मन दूध तथा दो बछड़ी और एक बछड़ा हो गया। इस बछड़ेने दो वर्षमें १२० मन अनाज दिया। सातवें सालमें चौथे सालकी बछड़ी और ब्यायी, इस प्रकार चार गायोंका दूध १०८ मन हुआ तथा दो बछड़ी और दो बछड़े हुए। इन बछड़ोंसे एक वर्षमें १२० मन अनाज मिला। आठवें सालमें पाँचवें सालकी बछड़ी और ब्यायी। अब ५ गायोंसे १३५ मन दूध तथा दो बछड़ी और तीन बछड़े हुए। इस बछड़ेके समय इसकी बूढ़ी मा दस वर्षकी होगी। नवें वर्ष छठे सालकी दो बछड़ियाँ भी ब्यायीं। इस प्रकार सात गायोंका १८९ मन दूध तथा चार बछड़ी और तीन बछड़े हुए। दसवें साल सातवें सालकी दो बछड़ियाँ और ब्यायीं। अब नौ गायोंका २४३ मन दूध तथा चार बछड़ियाँ और पाँच बछड़े होने लगे। ग्यारहवें साल आते आठवें सालकी दो बछड़ियाँ और ब्यायीं। इस प्रकार सब मिलकर ग्यारह गायें आठ छोटी बछड़ियाँ, आठ छोटे बछड़े, नौ खेतीके उपयोगमें आनेवाले बैल—१०२० मन अनाज और ९४५ मन दूध हुआ।

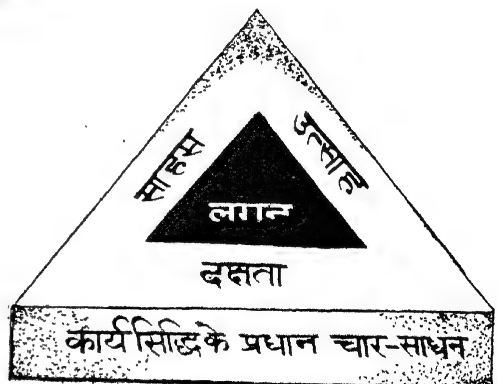
प्रति गाय ४०) के हिसाबसे	११ गायोंके	११×४०=४४०)	
,, बछड़ी १५)	,,	८ बछड़ियोंके	८×१५=१२०)
,, बछड़े २५)	,,	८ बछड़ोंके	८×२५=२००)
,, बैल ७५)	,,	९ बैलोंके	९×७५=६७५)
अनाज १।) मनके हिसाबसे		१०२०×१।)	=१२७५)
दूध १॥) ,, ,,		९४५×१॥)	=१४१७॥)
एक गायके वंशमें दस वर्षमें कुल आय			४१२७॥)

इस आमदनीमेंसे गरीब आदमियोंके एक वर्षके पोषणके लिये प्रत्येकको ३०) के हिसाबसे दें तो लगभग १३९ मनुष्यों-का बारह महीनेतक पोषण हो सकता है । खिलाने-पिलानेका खर्च बाद देकर यह हिसाब लगाया गया है । इसमें इतनी अधिक उत्पादक शक्ति रहती है । अतः तत्परता और लगन-के साथ निश्चय, विश्वास, दृढ़ता, साहस, उत्साह और दक्षता-पूर्वक गोवंशकी उन्नतिमें लग जाना चाहिये ।

गोमाताकी दस वर्षकी लीला

वर्ष	ब्याती गायें	उनके बच्चे		तीन वर्षके बछड़े अपनी माकी दस वर्षकी आयुतक कितने वर्ष सेवा प्रदान करते हैं ।	इस बीच खेत जोतकर कितना अनाज उपजाते हैं ।	गायें कितने मन दूध देती हैं ।
		बछड़ी	बछड़े			
पहले	१	१	...	...	...	२७ मन
दूसरे	१	...	१	६	३६० मन	२७ ,,
तीसरे	१	१	...	...	...	२७ ,,
चौथे	२	१	१	४	२४० ,,	५४ ,,
पाँचवें	२	१	१	३	१८० ,,	५४ ,,
छठे	३	२	१	२	१२० ,,	८१ ,,
सातवें	४	२	२	१	१२० ,,	१०८ ,,
आठवें	५	२	३	...	...	१३५ ,,
नवें	७	४	३	...	...	१८९ ,,
दसवें	९	४	५	...	...	२४३ ,,
कुल	९ गायें	८ छोटी बछड़ी २ ब्यानेवाली	९ बैल ८ छोटे बछड़े		१०२० मन	९४५ मन





आदर्श गोरक्षा

(१)

शोभित था अंशुमाली प्राची दिशा अम्बरमें,
कादम्बिनी-मण्डलमें दौड़-सी मचाता था।
वन उपवन क्या सघन द्रुमावलियोंमें
डालके प्रकाश नव ज्योतिको जगाता था।
छायी थी वसन्त-श्री परम रमणीय जहाँ,
पञ्चस्वरी वीणा राग कोकिलका भाता था।
'प्रणयेश' ऐसेमें न देता ध्यान तन्मय हो—
गौकी भक्तिमें ही गोका भक्त चला जाता था॥

(२)

नाम था दिलीप सूर्यवंशी महाराजा वह,
सेवक असंख्य थे न सोचा कभी मनमें।
जावें ये चरावें कामधेनु नन्दिनीको वहाँ—
साथ नन्दिनीको ले सिधारा स्वयं वनमें।
वस्त्र थे अभेद कवचादिक सुसज्जित थे—
सैनिकका वेष अस्त्र शस्त्र सभी तनमें।
वीर-बाना धारी वीर वीरता पुजारी आज
पाता था अभीष्ट नन्दिनीके रेणु-कणमें॥

(३)

यों ही बड़ी दूर जानेपर महारण्य मध्य,
नन्दिनीने सोचा—है परीक्षा-काल इसका।
देखें कितना है यह निष्ठावान् नृपराज
मेरी बेदनाका कभी तीर इसे कसका?
मायासे प्रकट कर लूँ मैं मृगराज एक
क्योंकि गौकी घातका उसे ही होता चसका!
सोचते ही ऐसा सामनेसे आ दहाड़ा कोई।
जिसकी दहाड़से पहाड़ तक धसका!

(४)

नन्दिनी रँभाने लगी सिंहने दबोचा उसे,
राजाने सुना, जो वहाँसे थे कुछ दूरपर।
दौड़े और आके देखा अति ही करुण दृश्य
सोचा, तीर मारें तरकससे निकालकर।
खाली उसे पाया, तब कर करवाल लेके
वार किया, टूटी तलवार, बोल—'हर हर'।
बोला सिंह—मैं हूँ शंभुगण, चलने न दूँगा
एक, देखता हूँ कितने हो तुम वीरवर!!

× × × ×



अब निरुपाय हुए, रक्षाका उपाय क्या था,
सोचा तत्काल यदि होवे मम बलिदान।
छोड़ बदलेमें कदाचित उसे देवे यह—
कर जोड़कर तब उसके निकट आन।
बोले—रवि-वंशज दिलीप—मुझे खा लो किन्तु,
छोड़ो इसे जो है मम प्राणान्तरगत प्रान।
आँखें मूँद बैठे फिर देखा वहाँ सिंह कहाँ,
नन्दिनी ही कहती है—ले ले वत्स वरदान!

—प्रणयेश शुक्ल

हिंदुओंकी समाज-व्यवस्थामें गायका स्थान

(लेखक—डा० श्रीराधाकुमुद मुकर्जी, एम्० ए०, पी-एच्० डी०)

हिंदू-जातिकी गो-पूजा अहिंसापर आश्रित उसके सामान्य धर्मका एक प्रमुख सिद्धान्त है। हिंदुओंका विश्वास है कि ईश्वरका निवास छोटे-बड़े प्रत्येक प्राणीमें है। प्रत्येक रजकण और अणु-परमाणुसे लेकर वह सारे ब्रह्माण्डमें व्याप्त है, और अपने ही जीवन एवं सनातन अंशद्वारा उसको चेतना प्रदान करता है। वेदोंके अनुसार ब्रह्मकी 'एकोऽहं बहु स्याम्'की रहस्यमयी कल्पना ही सृष्टिका मूल कारण है, पर बिना उपादानकारणके सृष्टिकी रचना सम्भव नहीं थी। अपनी कल्पित सृष्टिके लिये स्रष्टा पुरुषको उपादान भी प्रस्तुत करना था। आत्मविनियोगके द्वारा उसने विराट्देहको प्रकट किया, जिसके द्वारा उसीसे उत्पन्न देवतागण विश्वकी रचना करने बैठे। पर यह तबतक एक मृत, जड और भौतिक सृष्टि थी, जबतक इसका आयोजन करनेवालेने इसको जीवन नहीं प्रदान किया। अपने आत्यन्तिक और संपूर्ण आत्मविनियोग और आत्मोत्सर्गके द्वारा जिस सृष्टिकी उसने रचना की है, उसमें अपनेहीमेंसे जीवन और चेतना भरते रहनेके स्वयंगृहीत कार्यपर निद्रारहित और निरन्तर एकाग्रता रखकर उसकी (सृष्टिकी) रक्षा भी उसीको करनी है। इसीलिये वह 'गुडाकेश' है जो अपनी सृष्टिको छोड़कर एक क्षणके लिये भी नहीं सो सकता, नहीं तो, इसका लय हो जाय। प्रकृतिसे पुरुषका परिवर्तन ही प्रलय है। चूँकि ईश्वर सर्वव्यापक है, कोई ऐसा पदार्थ नहीं जो उससे विरहित या भिन्न हो, इसलिये हिंदुओंके विचारमें ईश्वरके बनाये प्रत्येक प्राणीके प्रति अहिंसा ही उसकी उच्चतम सृष्टिमें स्थान पानेवाले मनुष्योंका अवधारणीय और युक्तियुक्त धर्म हो सकता है। ईश्वरकी सृष्टिके प्रति हिंसा उसमें वसनेवाले स्वयं ईश्वरके प्रति हिंसा है।

पर हिंदुओंकी गायके प्रति पूज्याकी भावना तो अन्य ठोस वैज्ञानिक कारणोंसे और भी दृढ़तर हो गयी है। सबसे प्रमुख कारण तो यह है कि अपने स्वास्थ्य और जीवनके लिये सब जीवोंकी अपेक्षा उसको गायपर ही सबसे अधिक निर्भर रहना पड़ता है। श्रद्धास्पद स्वर्गीय स्वामी अभेदानन्दजीने एक बार मुझसे बताया था कि कैसे अमेरिकामें उनके व्याख्यानको हजारोंकी संख्यामें सुननेवाले तर्कप्रवण श्रोताओंके मनमें उन्होंने यह विश्वास करा दिया कि उन्हें केवल दो सामान्य कारणोंके बलपर गो-हत्या नहीं होने देनी चाहिये। एक तो यह था कि माके दूधके बाद गो-दुग्ध ही मानव-शिशुका पेट भरता और उसका पोषण करता है और कुछ कालके बाद तो माके दूधकी जगह भी वह उसका सर्वोत्तम खाद्य बन जाता है। इसीलिये हिंदू-जाति गायको अपनी धाय मा, मनुष्यमात्रकी माके रूपमें पूजती है। दूसरा कारण यह था कि गाय एक साधारण पशुके समान नहीं है। यह मनुष्यके उपयोगके लिये दिव्य पावनत्वसे परिपूरित है। इसकी दिव्यता इसी विचित्र और अद्भुत बातसे सिद्ध हो जाती है कि गायका मल—गोबर और गोमूत्र भी मनुष्यके लिये इतने अधिक उपयोगी हैं और उसके स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं आर्थिक जीवनसम्बन्धी अनेक आवश्यकताओंकी पूर्ति करते हैं। इस प्रकार स्वामी अभेदानन्द अपने अमेरिकन श्रोताओंको इस मतकी ओर फेरनेमें समर्थ हुए थे कि गाय मानव-जातिकी माता है और अपनी अशेष शुचिताके कारण दिव्य है।

युगोंसे हिंदू-जातिका घर ही गायके चारों ओर खड़ा हुआ है। 'तीन एकड़ भूमि और एक गाय' सर्वदासे भारतके आर्थिक जीवनका यही स्वर्णविधान रहा है। यह कृषिकर्म और आभीर-कर्म (Dairying) जैसे भारतवर्षके दो राष्ट्रीय आधारभूत और केन्द्रिय उद्योगोंकी ओर संकेत करता है। जिनकी आज भी वही महत्ता है। क्योंकि सौ वर्षसे भी अधिक समयसे काम करती हुई पाश्चात्त्य सभ्यताके पूरे प्रभावोंसे आक्रान्त होते हुए भी भारतवर्ष अब भी प्राचीनकालकी तरह नगरोंका नहीं, गाँवोंका देश है; एक महाद्वीप है, जिसमें सात लाख गाँव हैं और पश्चिमीय आदर्शानुकूल शहर जिनकी जनसंख्या एक लाख या इससे कुछ अधिक है, केवल चालीस हैं। भारतका राष्ट्र अब भी गाँवों और झोंपड़ोंमें ही बसता है। इसीलिये उसकी सभ्यता ग्रामीण सभ्यता कही जाती है, नागरिक नहीं। भारतवर्षने अपने सर्वोत्तम और सर्वोच्च विचारोंको जन्म दिया है—वनों और कान्तारोंमें, अटवीके विविक्त और नीरव निकुञ्जोंमें और उन आश्रमोंमें, जो उस एकाग्र ध्यानके प्रवर्द्धक हैं, जो मोक्षप्रद ज्ञान और सत्य-प्राप्तिका एक ही मार्ग है। वेदों और उपनिषदों-जैसी भारतवर्षकी सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक, धार्मिक और साहित्यिक कृतियाँ, जिनमें जैसा कि सारा

संसार मानता है, मानवजातिके सर्वोच्च विचारों और ज्ञानका भण्डार है, इन्हीं आश्रमोंमें तैयार हुई थीं, नगरोंके विक्षेप होहल्ले, और भौतिकतासे दूर। संसारके साहित्यमें केवल भारतवर्षने ही ऐसे ग्रन्थोंकी सृष्टि की है जिनको बड़ा सार्थक नाम दिया गया है। आरण्यक अर्थात् 'वन्य वाङ्मय'में उस ज्ञान और सत्यका सन्देश है जिसको स्थिर शान्ति एवं विश्रान्तिमें ही हो सकनेवाले अखण्ड और अनवरत ध्यान-योगसे अपनाया जा सकता है।

महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरने इस तथ्यको अपने अननुकरणीय शब्दोंमें इस प्रकार व्यक्त किया है—

'भारतवर्षमें एक महान् आश्चर्यकी बात हम यह देखते हैं कि यहाँकी सारी सभ्यताका उद्‌गम-स्थान पत्तन नहीं, वन है, भारतवर्षमें जहाँ कहीं भी इसकी प्राचीनतम और आश्चर्यवत्तम अभिव्यञ्जनाओंका दर्शन होता है, वहाँ हम देखते हैं कि लोग इतने पास-पास नहीं आ गये हैं कि संवेष्टित और संश्लिष्ट होकर एक घन समूह बना दें। वहाँ तरु-लताओं, सरिताओं और कान्तारोंको मनुष्यके साथ निकट सम्बन्धमें रहनेका पूर्ण अवसर प्राप्त है।

'इन वनोंमें यद्यपि मानव-समाज बसता था, फिर भी पर्याप्त खुले स्थान और एकान्तता रहती थी। अभिसंपात नहीं था। तब भी इस एकान्तताने भारतीय मस्तिष्कमें निष्क्रियता नहीं उत्पन्न की, वरं इसने उसको और भी उज्ज्वल बना दिया। वैदिक और बौद्ध भारतके दो प्राचीन और महान् युगोंका पालन-पोषण वनोंमें ही हुआ है।

'वैदिक ऋषियोंकी भाँति भगवान् बुद्धने भी अपने उपदेशोंकी वर्षा भारतके जंगलोंमें ही की।

'सभ्यताकी जो लहर इसके वनोंसे बही, उसने सारे भारतवर्षको परिप्लावित कर दिया।'*

किन्तु वन्य आश्रमों और जंगलके विजन प्रदेशोंमें पायी जानेवाली सादे जीवन और उच्च विचारोंकी यह प्रणाली अपने उपयुक्त उस गृह-व्यवस्थापर ही अवलम्बित थी, जिसका आदर्श इस सिद्धान्त वाक्यमें व्यक्त है कि 'तीन एकड़ पृथ्वी और एक गाय'। उपनिषदोंकी कोटिका साहित्य उत्पन्न करनेवाली शिक्षाप्रणाली, जिसे ब्रह्मचर्यकी प्रणाली कहते हैं और जो केवल पढ़नेकी ही प्रकृति नहीं वरं जीवनयापनकी भी प्रणाली है—सारी शिक्षाका सम्बन्ध जीवन और प्रकृतिकी वास्तविकताओंसे और उन कला-कौशलोंसे जोड़ देना था, जिसमें उसके अनुयायियोंको बढ़ना और पनपना पड़ता था। इस प्रकार उपनिषदोंके अनुसार प्रत्येक ब्रह्मचारीके लिये लकड़ी काटकर, ईंधन लाकर अपने गुरुकुलकी पवित्र अग्निकी देखभाल करके और उनके गोवृन्दकी सेवा करके प्रकृतिसे और घरसे बाहरके उद्योगपूर्ण जीवनसे सम्बन्ध स्थापित करना अनिवार्य था। ये कर्तव्य कृषि और आभीरकर्म (Dairy-farming) रूपी उन आधारभूत उद्योगोंकी ओर संकेत करते हैं, जिनसे शिक्षाका सम्बन्ध था। इस प्रकार शरीर और मस्तिष्क दोनोंका सर्वोत्तम ढंगसे पोषण करनेवाले आहारके साधनके रूपमें गाय राष्ट्रीय आर्थिक-व्यवस्था और शिक्षा-प्रणाली दोनोंका केन्द्र बन गयी। स्वास्थ्य और शिक्षाके लिये आजकलके अत्यन्त लोकप्रिय फुटबाल, हॉकी और क्रिकेट-जैसे निष्फल खेलोंकी अपेक्षा गायकी सेवा करना अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता था। प्राचीन वैदिक पद्धतिके ब्रह्मचारी अपने गोवृन्दके सेवाकार्यको बड़े उत्साह और प्रेमसे करते थे। छान्दोग्योपनिषद्‌में बालक सत्यकाम जाबालको उसके गुरु अपने गोवृन्दके साथ एक दूर देशमें भेज देते हैं। जहाँ वह कुछ समयतक रहता है और इसी बीचमें ४०० गायोंका मूलवृन्द १०००का हो जाता है। इस प्रकार प्रत्येक आश्रम या ऋषिकुलकी अपनी गायें होती थीं, जिनकी वहाँके विद्यार्थी उचित सेवा करते थे और इस प्रकार आभीरकर्ममें सुशिक्षित हो जाते थे। सत्यकामके गुरु गौतमके आश्रमकी भाँति ऋषि याज्ञवल्क्यके आश्रमको भी १००० गायोंकी एक बहुत बड़ी गोशाला प्राप्त हो गयी। बृहदारण्यक और छान्दोग्य-उपनिषदोंमें कथा आती है कि विदेहराज जनकने तत्त्वज्ञानियोंकी एक सभा की। जिसमें

*"A most wonderful thing we notice in India is that here the forest not the town, is the fountain-head of all its civilization.

"Wherever in India its earliest and most wondarful manifestations are noticed, we find that men have not come into such close contact as to be rolled or fused into a compact mass. There, trees and plants, rivers and lakes, have ample opportunity to live in close relationship with men.

"In these forests, though there was human society, there was enough of open space and aloofness; there was no jostling. Still this aloofness did not produce inertia in the Indian mind; rather it rendered it all the brighter. It is the forest that has nurtured the two great ancient ages of India, the Vedic and the Buddhist.

"As did the Vedic Ṛṣis, Lord Buddha also showered his teaching in the many woods of India.

"The current of civilization that flowed from its forests inundated the whole of India."

कुरु, पाञ्चाल तथा अन्य प्रदेशोंके विद्वानोंको बुलाया गया था। इतिहासको विदित संसारकी यह पहली सभा थी। काल-निर्णयके लिये की गयी गणनाओंसे प्रकट होता है कि उपनिषद् ईसाके पूर्व २००० वर्षके बादके नहीं हो सकते। (देखिये मेरा 'Hindu Civilization Longmans, London) उस सभामें राजाने एक प्रकारके नोबल-प्राइज़की घोषणा की, जो सभाद्वारा स्वीकृत उस समयके अग्रगण्य विद्वान्‌को देय थी। ऋषि याज्ञवल्क्य आगे बढ़े और उन्होंने अपनेको ही सर्वश्रेष्ठ विद्वान् घोषित किया। इसके प्रतिरोधके लिये बड़े-बड़े तत्त्वज्ञ उठ खड़े हुए जिनमें एक विदुषी, ब्रह्मवादिनी गार्गी वाचक्नवी भी थीं। उन्होंने याज्ञवल्क्यके ज्ञानकी श्रेष्ठताकी परीक्षा भरी सभामें इस अत्यन्त स्पष्ट किन्तु जटिल प्रश्नसे की कि 'याज्ञवल्क्यजी! क्या आप कह सकते हैं कि आप भगवान्‌को उसी प्रकार देख सकते हैं, जैसे एक कुत्ते या घोड़ेको?' जब सभाने ज्ञानमें याज्ञवल्क्यकी श्रेष्ठताको स्वीकार कर लिया, तब राजा जनकने उनको वह प्रतिश्रुत पुरस्कार दिया; पर इसका कुछ अंश द्रव्यके रूपमें और अधिकांश १००० गायोंके रूपमें दिया गया। गायोंके प्रत्येक सींगपर ५ स्वर्णपादोंकी मात्रा पड़ी हुई थी। इस प्रकार प्रत्येक गायके सींगोंपर १० स्वर्णखण्ड थे। इस प्रकार उन्हें १००० गायोंके साथ १२००० स्वर्णखण्ड प्राप्त हुए, जो प्रचलित स्वर्णमुद्राका चतुर्थांश होनेके कारण ३००० स्वर्णमुद्राओंके बराबर अर्थात् आजकलके नोबल-प्राइज़की तरह लगभग एक लाख रूपयेके बराबर हुए। याज्ञवल्क्यने तुरंत ही इस विशाल गो-समूहको ग्रहण कर लिया और उनके बलवान् शिष्य उसे उसी दम उनके आश्रमको हाँक ले चले, जहाँ उनके रहने और देखभाल करनेकी पूर्ण व्यवस्था थी। १००० गायोंकी एक गोशालाके साथ उसीके अनुरूप कृषिक्षेत्र भी होना चाहिये जिसमें एक ऐसे महान् ऋषिकुलकी भोजन-सामग्री पैदा हो सके, जिसके याज्ञवल्क्य कुलपति (१०००० शिष्योंके गुरु) थे। अन्यथा राजा जनकका याज्ञवल्क्यको इतनी गाएँ देना, जिनका उनके आश्रममें गुजर न हो सके, निरर्थक होता। तत्कालीन आर्थिक व्यवस्थामें, जिसमें धनके प्रयोगकी अपेक्षा वस्तु-विनिमयकी प्रधानता थी, प्रत्येक गुरुकुलको अपने भोजन एवं सञ्चालनके लिये अपनी ही भूमि और पशुवृन्दपर निर्भर रहना पड़ता था। भूमि और गोसमूहके रूपमें राजाओंके और व्यक्तिगत दानोंके द्वारा इन गुरुकुलोंकी सहायता होती रहती थी। कृषिकर्म और आभीरकर्मद्वारा भूमि तथा गौओंका शिक्षाके अभिन्न अङ्गोंके रूपमें उपयोग होता था और इस प्रकार शिक्षाका जीवनके उन तथ्यों एवं प्रश्नोंके साथ सम्बन्ध हो जाता था, जिनके लिये विद्यार्थी-जीवनमें तैयारी होती थी। गुरुकुलोंके निर्वाहका गाय ही मुख्य साधन थी; इसलिये विद्यार्थियोंके स्वास्थ्य, शरीर-संगठन और मस्तिष्कके लिये दूध पीनेके लिये आन्दोलन करनेकी आवश्यकता नहीं थी।

इस प्रकार हिंदुओंके जीवनके साथ गाय ऐसे अच्छेद्य रूपसे बँध गयी है कि उसकी समुचित परिचर्या उनका प्रधान धार्मिक कर्त्तव्य है, और वह उनके आधिभौतिक और आध्यात्मिक कल्याणका साधन हो गया है।







ब्रह्मज्ञानी याज्ञवल्क्यका प्रथम गोदान-ग्रहण

भारतमें गोरक्षा

(लेखक—डा० मुहम्मद हाफिज सैयद एम्० ए०, पी-एच्० डी०, 'विद्याभूषण')

व्यक्तिकी भाँति प्रत्येक राष्ट्रकी भी अपनी एक विशेषता होती है। अति प्राचीनकालसे भारत कृषिप्रधान देश रहा है तथा प्रत्येक प्रकारके धान्योंको प्रचुर मात्रामें उत्पन्न करता रहा है। यह सर्वसम्मत बात है कि बैलोंकी सहायताके बिना मनुष्य न तो खेतोंको ही जोत सकता और न उनकी सिंचाई ही कर सकता है। गो-रक्षा दो प्रधान हेतुओंसे आवश्यक है। पहला हेतु तो यह है कि गायोंके बिना हमें बैल नहीं प्राप्त हो सकते। दूसरा हेतु है दूधकी आवश्यकता। दूध हमारे जीवनका प्रधान आधार है। असंख्य बच्चोंका पालन-पोषण गो-दुग्धसे होता है। यदि दूध न हो तो न हमें मक्खन ही मिल सकता है, न घी और न दही ही। इस आवश्यक पदार्थके बिना हमारे दैनिक भोजनका तमाम स्वाद ही नष्ट हो जायगा। इन्हीं कारणोंसे गायका हमारे आर्थिक जीवनमें प्रमुख स्थान रहा है तथा इन्हीं युक्तियुक्त कारणोंके आधारपर सनातनधर्म यह आदेश करता है कि समस्त संसारमें गायोंकी रक्षा होनी चाहिये तथा जिस प्रकार आज उनका अंधाधुंध वध हो रहा है, वैसा नहीं होना चाहिये।

किसी वस्तु या जीवका मूल्य उसकी उपादेयताके अनुपातसे आँका जाता है। गाय सबसे उपयोगी एवं उपकारी पशु है, अतः यह आवश्यक है कि सम्यक् रीतिसे उसका पालन-पोषण हो। जो व्यक्ति मनुष्य-जातिके लिये सबसे अधिक उपयोगी हैं, संसारमें उन्हींका आदर-सत्कार होता है—यह नियम है। समस्त चौपायोंमें गाय ही सबसे अधिक उपकारी है। वह हमें स्वास्थ्य, सम्पत्ति और समृद्धि प्रदान करती है। गो-दुग्धके बिना छोटे बच्चोंका विकास नहीं हो सकता। यही कारण है कि वह 'माता' नामसे पुकारी जाती है। यद्यपि हिंदूधर्मने गायोंकी रक्षा एवं भलाईके लिये सब प्रकारकी व्यवस्था की है, फिर भी सचमुच यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि भारतके भिन्न-भिन्न भागोंमें रहनेवाले बहुत-से हिंदू, सम्भवतया आर्थिक दुरवस्थाके कारण, गायोंका पालन-पोषण जैसा उन्हें करना चाहिये, नहीं करते। इतना ही नहीं, धार्मिक कृत्योंमें गोदान लेनेवाले कुछ ब्राह्मण पुरोहित भी अवाञ्छनीय पुरुषोंको गाय बेच देते हैं और इसे उन्होंने कमाईका साधन बना रक्खा है!

ग्वाले गायोंको इतना अधिक दुह लेते हैं कि बछड़ोंके लिये दूधकी एक बूँद भी नहीं बच सकती, इससे उनकी वृद्धि रुक जाती है और बैलोंकी नस्ल बिगड़ जाती है। मेरा यह सुझाव है कि भारतवर्षके समस्त हिंदुओंको आपसमें यह समझौता कर लेना चाहिये कि किसी भी कारणसे तथा किसी भी कीमतपर गायें अनधिकारी पुरुषोंको न बेची जायँ। जबसे अंग्रेजोंका भारतमें पदार्पण हुआ है, तभीसे हमारे इस पवित्र देशकी खेतीके प्रधान आधार गायों और बैलोंका गोरे सैनिकोंके भोजनके लिये प्रायः प्रतिदिन एक बड़ी संख्यामें वध किया जाता है!

गायोंके इतनी अधिक संख्यामें नष्ट किये जानेके विरोधमें कभी कोई आवाज उठायी गयी हो, ऐसा स्मरण नहीं होता। इतना ही नहीं, एक बड़े परिमाणमें सूखा गो-मांस डिब्बोंमें बंद करके विदेशोंको भी भेजा जाता है। परन्तु वधके लिये गायोंको बेचनेसे इन्कार करना तो उनके स्वामियोंके हाथकी बात है।

जब मैं इंग्लैंडमें था, मैंने वहाँकी बहुत-सी दुग्ध-शालाओंको देखा था। वहाँके उच्चकोटिके प्रबन्धको देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। लन्दनकी 'युनाइटेड' और 'एक्सप्रेस' नामक दुग्धशालाओंकी गायोंको निश्चित समयके अन्तरसे भोजन दिया जाता है तथा प्रतिदिन स्नान कराया जाता है। गाय दुहनेवाली ग्वालिनोंके नख प्रतिदिन काटे जाते हैं। एक निश्चित समयके अन्तरसे पशु-चिकित्सक सबकी जाँच करता है। यदि चाहते तो हम भी अंग्रेजोंकी-जैसी सावधानीसे गो-माताका पालन-पोषण कर सकते थे। अंग्रेज लोग शुद्ध गोदुग्ध और उसके पोषक तत्त्वोंको बहुत महत्त्व देते हैं; परन्तु हम भारतवासी मूक प्राणियोंके प्रति केवल शाब्दिक सहानुभूति दिखाकर ही पूर्ण सन्तोष कर लेते हैं तथा हमारे धार्मिक भावोंको बहुत कम कार्यरूपमें परिणत करते हैं।

अन्तिम प्रश्न, जिसपर हमें विचार करना है, वह है गायोंके प्रति मुसल्मानोंकी भावना। यह हमें सर्वप्रथम जान लेना चाहिये कि गोमांस-भक्षण इस्लाम धर्मका अङ्ग नहीं है। यदि कोई मुसल्मान गोमांस नहीं खाये तो इससे वह मुसल्मानों-की श्रेणीमें नीचा नहीं हो जाता। वास्तविक बात यह है कि इस्लाम-धर्ममें न तो गो-मांसभक्षण निषिद्ध है और न

धार्मिक-दृष्टिसे विहित ही। केवल निम्न स्तरके मुसल्मान गो-मांसका व्यवहार करते हैं, जब कभी उनके पास इस शौकको पूरा करनेके लिये पैसा होता है। भारतभरमें मध्यम एवं उच्च वर्गके मुसल्मान कभी गो-मांस नहीं खाते। यूनानी हकीम इसे स्वास्थ्यके लिये हानिकर मानते हैं। कुछ मुसल्मान संतोंने इसका विरोध किया है तथा कुछने तो इसे बिल्कुल ही निषिद्ध ठहराया है।

मुस्लिम जनश्रुतिके अनुसार यह प्रसिद्ध है कि एक बार इस्लाम-धर्मके पैगंबर मुहम्मद साहबने हजरत आयशाको कहा था, 'स्वास्थ्य-लाभ एवं आरोग्यके लिये गायका दूध प्रधान साधन है। उसका घी औषध है और उसका मांस रोग। गायका दूध रोगोंको दूर करनेका उपाय है। मक्खन औषध है और मांस व्याधि।' जैसा कि इतिहासज्ञोंका मत है, बाबरने युवराज हुमायूँको अपनी एक अन्तिम गुप्त अभिलाषा (वसीयत) इस प्रकार लिखकर भेजी थी—'प्रत्येक धर्मके सिद्धान्तोंके आधारपर न्याय करना। गायकी कुर्बानीका विशेषतया बहिष्कार करना, क्योंकि इसके बिना तुम भारतीयों-के हृदयोंपर अधिकार नहीं कर सकोगे।' बादशाह अकबर-का समस्त हिंदुओंके प्रति उदारता एवं धार्मिक सहिष्णुताका भाव और हिंदुओंकी धार्मिक भावनाओंके प्रति आदर इतने अधिक प्रसिद्ध हैं कि उन्हें यहाँ दुहरानेकी आवश्यकता नहीं।

बर्नियर अपने 'मुगल साम्राज्यमें भ्रमण' ('Travels in the Moghul Empine') नामक ग्रन्थमें लिखते हैं कि मुहम्मदशाह और शाहआलम आदि पिछले मुगल-सम्राटोंने अपने साम्राज्यमें गो-वधपर प्रतिबन्ध लगा दिया था। हमें इस बातको भी नहीं भूलना चाहिये कि गो-वध, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, इस्लाम-धर्मका प्रधान अङ्ग नहीं है और उसे अपनाये बिना भी अरब, सीरिया, मिश्र, त्रिपोली तथा एशियान्तर्गत टर्कीके मुसल्मान इस्लाम-धर्मके सिद्धान्तोंका उतनी ही दृढ़ता एवं सचाईके साथ पालन करते आये हैं, जितना कि भारतके मुसल्मान। यदि भारतीय मुसल्मान चाहें तो बकरीदके दिन गौकी कुर्बानी किये बिना भी उनका काम चल सकता है। वे गायके बदले ऊँट, भेड़ एवं बकरेका बलिदान कर सकते हैं।

इसके अतिरिक्त भारतीय मुसल्मानोंको भी अपनी खेतीकी उन्नति और जीवननिर्वाहके लिये बैलों और गायोंकी उतनी ही आवश्यकता है, जितनी कि हिंदुओंको है। यदि गायोंकी रक्षा नहीं की जायगी तो उससे मुसल्मानोंकी भी उतनी ही हानि होगी जितनी हिंदुओं तथा भारतकी दूसरी जातियोंकी होगी!

प्राचीन तामिल-साहित्यमें गौ

(लेखक—श्रीयुत के० सी० वरदाचारी, एम्० ए०, पी-एच्० डी०)

यह बिल्कुल समयोचित है कि गाय राष्ट्रीय सम्मानका विषय बनायी जाय। वेदोंमें गायको बहुत पवित्र माना है तथा ऐसे असंख्य उदाहरण हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि हिंदू-सभ्यता एवं संस्कृति सूर्य, मन्त्र एवं गौ—इन तीन प्रधान प्रतीकोंपर ही केन्द्रीभूत रही है। इन तीनोंकी वही संज्ञा है, जो गायकी है। गौ एक देवता है। अधोलिखित तथ्योंसे यह बिल्कुल स्पष्ट हो जायगा कि प्राचीन तामिल-साहित्यमें भी गायको इतना ही सम्मान दिया गया है।

विराट-पर्वमें कौरवोंद्वारा गो-अपहरणकी जो घटना दी गयी है, महाभारतके पाठकगण उसे जानते ही होंगे। इस गो-अपहरणका उद्देश्य अज्ञातवासमें रहते हुए पाण्डवोंको ढूँढ़नेमें सहायता प्राप्त करना बताया गया है। 'तोलका-प्पियम्'में भी यह घटना दी गयी है; परन्तु ठीक इसी रूपमें नहीं। वहाँ तो यह घटना यह बतानेके लिये दी गयी है कि राजाको किसी अन्य राजापर चढ़ाई करनेके पूर्व क्या करना चाहिये। वहाँ इस घटनाको इस ढंगसे दिया गया है मानो वह अध्याय राजनीतिपरक हो। तोलकाप्पियम्के 'पोरुल-अधिकारम्' वेत्ची-तिनाई (गो-हरण) में यह बताया गया है कि किसी शत्रुपर चढ़ाई करनेके पूर्व यह नितान्त आवश्यक है कि उसके देशकी सम्पूर्ण गायोंको गुप्त रीतिसे हरणकर अपने अधिकारमें कर लिया जाय, परन्तु इस प्रकार गुप्त-रीतिसे गायोंको हरनेका यह उद्देश्य कभी नहीं होना चाहिये कि इससे अपनेको या अपनी प्रजाको या अपने साथियोंको अथवा अपने योद्धाओंको धनी बनाया जाय। इसका उद्देश्य होना चाहिये युद्ध-जनित सम्भाव्य विध्वंससे गायोंकी रक्षा करना। इस कर्तव्यका निर्देश इसलिये किया गया है कि कोई भी सैनिक किसी गाय, ब्राह्मण, स्त्री, रोगी अथवा ऐसे

पुरुषको, जिसके कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ है, किसी प्रकारकी हानि न पहुँचावे। पुरनानुरु (९) में यह बताया गया है कि सैनिकको उपर्युक्त पाँच प्रकारके व्यक्तियोंपर कभी बाण नहीं चलाना चाहिये। इन पाँच प्रकारके व्यक्तियोंमेंसे गायको छोड़कर शेष सब ऐसे हैं, जो चेतावनीको समझ सकते हैं तथा अपनेको बचानेके लिये बाणोंकी पहुँचसे बाहर भी जा सकते हैं किन्तु गायोंको किसी युद्धके प्रारम्भ होनेके पूर्व ही अपने हाथमें करके युद्ध-क्षेत्रसे दूर हटा देना चाहिये। तोलकाप्पियम्के उपर्युक्त वचनकी अपनी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण टीकामें नच्चिनारक्किनियरने तो यहाँतक लिखा है कि जिस प्रकार गान्धर्व-विवाह शास्त्रानुमोदित है, उसी प्रकार रक्षाकी दृष्टिसे युद्ध-प्रदेशसे गायोंको हरण करके किसी सुरक्षित स्थानपर ले जाना न्यायसंगत है। इसके अतिरिक्त तोलकाप्पियम्में यह भी निर्देश किया गया है कि जब गायोंको पकड़ा जाय अथवा उन्हें किसी सुरक्षित स्थानपर ले जाया जाय, तब उन्हें किसी प्रकारकी पीड़ा या हानि (नोयनूरू युइथल) नहीं पहुँचनी चाहिये। इस प्रकार गाय प्रधानतः रक्षा एवं सम्मानका पात्र समझी जाती थी। बिना पीड़ा पहुँचाये गायोंको हरण करनेकी यह नीति हरण करनेवाले तथा लौटाकर लानेवाले दोनोंको अपनानी चाहिये।

गाय साक्षात् धन है। पुराने जमानेमें किसी मनुष्यके धन और समृद्धिका अनुमान स्वयं उसकी या उसके द्वारा रक्षित गायोंकी संख्यासे ही लगाया जाता था। गायें उन्हीं व्यक्तियोंको दी जाती थीं, जो बहादुर और बलवान् होते थे। तोलकाप्पियम्में ऐसे कई अध्याय हैं, जिनमें हरण किये हुए अथवा लौटाकर लाये हुए पशुओंके बँटवारेकी व्यवस्थाका वर्णन है। गो-दान सच्चा या सर्वश्रेष्ठ दान माना गया है। विजेताद्वारा अपने समस्त व्यक्तियोंको दान देनेका भी उल्लेख किया गया है।

नच्चिनारक्किनियर गो-हरणके विषयमें वर्णन करते हुए आगे लिखते हैं कि हरणके तीन प्रकार हैं—उत्तम, मध्यम एवं अधम। वह हरण उत्तम है, जिसमें कोई समीपवर्ती राजा या शासक युद्ध प्रारम्भ होनेके पूर्व ही शत्रुके देशसे गायोंको सावधानीपूर्वक किसी सुरक्षित स्थानपर ले जाकर उनकी रक्षा करता है। किसी पड़ोसी राजाको अपनी गायोंकी रक्षामें असमर्थ देखकर अथवा गायोंके प्रति उसका दुर्व्यवहार देखकर जब कोई राजा उसकी गायें हरण कर लेता है और अपने देशमें ले जाकर उनका उचित पालन-पोषण करता है, तब यह हरण मध्यम-श्रेणीका माना जाता है। अधम हरण वह है, जब कोई राजा अपने इच्छानुसार किसीको उपहाररूपमें देनेके लिये दूसरोंकी गायें हरण कर लेता है और इस प्रकार एकको हानि पहुँचाकर दूसरेको लाभ पहुँचाता है।

तोलकाप्पियम्के उस अध्यायमें जिसमें यह बताया गया है कि मङ्गलाचारमें किन-किनके विषयमें शुभाशंसा करनी चाहिये,—ऋषि, ब्राह्मण, वृष्टि, अभिषिक्त राजा एवं महापुरुषोंके साथ-साथ गायकी भी गणना की गयी है। इस प्रकार प्राचीन तामिल देशमें गायकी प्रशंसा की जाती थी, उसकी शुभकामनाएँ मनायी जाती थीं, तथा उसका यशोगान होता था। (देखिये तोलकाप्पियम्, पादन-तिनाइ, अरूसुराइ, वायीजुथु)

इसके अतिरिक्त 'तोलकाप्पियम्'में गोपालक ('आयर') के कर्त्तव्योंका भी निर्देश किया गया है तथा गोपालनको सम्मान्य व्यवसाय माना है। उपर्युक्त वर्णनसे हम इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि गायोंके स्वास्थ्य एवं समृद्धिकी चिन्ता सरकारको करनी चाहिये।

'शिलप्पदिकारम्'में एक चोलवंशीय राजाका वर्णन आता है, जिसने अगले ही दिन यौवराज्यपर अभिषिक्त होनेवाले अपने पुत्रको अपने रथके नीचे एक बछड़ेको कुचल डालनेके अपराधमें मृत्युदेवीके भेंट चढ़ा दिया था। बात यह थी कि बछड़ेकी मा बिलखती हुई राज-द्वारपर आयी और उसके बाहर लटकती हुई न्यायकी घंटीको बजाने लगी। घंटीकी आवाज सुनकर राजा बाहर आये और गायको घंटीसे बँधी हुई रस्सीको खींचते देखकर, क्या बात है, यह जाननेके लिये अपने अधिकारियोंको भेजा। जब राजाको यह ज्ञात हुआ कि मेरे लड़केके द्वारा उस गायके बछड़ेकी मृत्यु हो गयी है, तो उसने अपने मनमें विचारा कि एक बछड़ेके जीवनका भी महत्त्व उतना ही है जितना कि एक मनुष्यका अथवा एक श्रेष्ठतम ब्राह्मणका, और तुरंत आज्ञा दी कि पुत्रको मृत्युकी भेंट चढ़ा दिया जाय। यह घटना तंजोर जिलेके तिरुवारूर मन्दिरमें एक पत्थरके बने हुए रथपर खुदी हुई है। उन्नीसवीं शताब्दीके योगी रामलिङ्ग स्वामीने इस घटनाका उल्लेख किया है तथा राजाको 'मनुस्मृतिकी शिक्षाओंका मर्मज्ञ' (मनु-नीति-काण्ड चोलन) कहकर उसकी प्रशंसा की है।

उपर्युक्त पुस्तकके उस स्थलसे, जहाँ कि नायक अपनी पत्नीके कंगनको बेचनेके लिये मदुरा जाते समय अपनी

स्त्रीको गो-पालकोंके साथ छोड़ जाता है, गो-पालकों और गायोंके मध्यवर्ती जीवनका परिचय मिलता है। गो-पालकोंका जीवन शान्ति एवं सभ्यतासे ओतप्रोत है। गाय शान्ति, प्राचुर्य्य एवं सामञ्जस्यकी प्रतिमूर्त्ति है; अहिंसाका प्रतीक है। इस प्रकार लेखकने बड़ी सूक्ष्मतासे पृथ्वीतलके इस स्वर्गखण्ड और दुःखोंसे परितप्त जगत्का पारस्परिक भेद दिखाया है।

जब नायक मदुराके लिये विदा हो जाता है, तब पीछेसे गायें अपने नेत्रोंसे आँसू गिराने लगती हैं, जिससे गो-पालकोंकी स्त्रियों आदिको यह तुरंत अनुमान हो जाता है कि नायक कोवलनपर कोई भीषण आपत्ति आयी है। इससे प्रकट होता है कि गायका आँसू बहाना अमङ्गल-सूचक है तथा भावी क्लेश या आपत्तिको प्रकट करता है। 'शिलप्पदिकारम्' में ग्वालोंद्वारा गायोंके आँसू बहानेसे सूचित होनेवाली भावी आपत्तिसे त्राण पानेके लिये भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी प्रार्थनाके रूपमें मण्डल-नृत्य (कुरवइ कूट्टु) का वर्णन है। इससे यह बात भी स्पष्ट द्योतित होती है कि श्रीकृष्ण 'गोपाल' गायोंके रक्षक एवं संवर्द्धकके रूपमें उस समय भी पूजे जाते थे।

नायिका कण्णगी अग्नि-देवतासे मदुराको भस्म कर देनेकी प्रार्थना करती हुई भी उससे यह याचना करती है कि आप पशुओं आदिको अपनी भीषण लपटोंका शिकार न बना लेना, क्योंकि इनको कभी भी किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुँचनी चाहिये।

'मणिमेखलाइ' नामक दूसरी प्रसिद्ध पुस्तकमें आपुत्रन्का वर्णन आता है जिसने यज्ञमें गो-बलिका विरोध किया था। उसने यज्ञमें गो-बलिको रोकनेके लिये ही बलि दी जानेवाली मेध्य गौको चुरा लिया था। यह ग्रन्थ एक जैन-लेखकद्वारा प्रणीत है, अतः इसमें पशुओं आदि प्रत्येक प्राणीके प्रति अहिंसापर जोर दिया गया है।

पौराणिक-साहित्यके अनुवादके विपुल भण्डारको छोड़कर बाकीके प्राचीन तामिल-साहित्यमें जो गो-विषयक प्रसङ्ग प्राप्त होते हैं, उनमेंसे कुछका वर्णन ऊपर किया गया है। ऐसे भी कई प्रसङ्ग हैं, जिनमें तामिल-प्रदेशके उन भागोंका वर्णन है, जहाँपर गायें अच्छी संख्यामें पायी जाती हैं, परन्तु स्थानाभावके कारण प्रस्तुत विषयपर और अधिक प्रकाश नहीं डाला जा सकता।

गावो विश्वस्य मातरः

(लेखक—पं० श्रीमाधवाचार्यजी शास्त्री)

'गाय विश्वकी माता है'—यह सर्वतन्त्रसिद्धान्त है। अनादि-अपौरुषेय वेदोंसे लेकर सभी मजहबोंके मान्य ग्रन्थोंमें समानरूपसे गोमाताका महत्त्व वर्णित है। यद्यपि गोरक्षाका प्रश्न मनुष्यमात्रके जीवन-मरणका प्रश्न है अथच अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न है परन्तु दुर्भाग्यवश अहिंदू सम्प्रदायोंद्वारा वर्तमान समयमें यह प्रश्न सर्वांशमें नहीं, तो अधिकांशमें उपेक्षित होनेके कारण केवल हिंदुओंका ही प्रश्न समझा जाने लगा है। हिंदुओंमें भी उन धार्मिक प्रवृत्तिके कट्टर किन्तु अकर्मण्य हिंदुओंसे ही इसका सम्बन्ध जोड़ा जाने लगा है, जो कि संख्याबल, धनबल और विद्याबलमें सर्वाधिक होते हुए भी 'कोउ नृप होउ हमहि का हानी'—की दुर्बल भावनाके लिये काफी बदनाम हैं।

यों तो शताब्दियोंसे गोजातिका उत्तरोत्तर ह्रास होता जा रहा है, यह नग्न सत्य हिंदू इतिहासके पारायणसे भलीभाँति प्रकट हो जाता है परन्तु वर्तमान महायुद्धके कारण साधारणतया समस्त देशोंमें और विशेषतया पराधीन भारतवर्षमें गोधनका जो विनाश हुआ है उसके प्रत्यक्ष फल-स्वरूप यत्र-तत्र सर्वत्र, बड़े नगरोंकी कौन कहे—छोटे-छोटे ग्रामोंतकमें भी घी-दूधका अभाव उग्र रूप धारण कर रहा है।

'नौ लाख गौओंके अधिष्ठाता' एक-एक व्यक्ति 'नन्द' और 'उपनन्द' की कथाएँ तो इस समय केवल इतिवृत्तकी सामग्री शेष रह ही गयी हैं, मुस्लिम-साम्राज्यकालीन तीन शताब्दी पूर्व प्रति रुपया मनों दूध और धड़ियों घृतका भाव भी 'अलफ़लैला'का तिलस्मी वर्णन मालूम पड़ता है।

ऐलब्रूनीके शब्दोंमें—पानी माँगनेपर अतिथिको दूधका कटोरा देनेवाला भारत आज विवशतापूर्ण आँसुओंके अतिरिक्त अतिथि-सत्कारकी अन्य सामग्री अपने घरमें नहीं देख पाता!

जिस देशके तीस लाख व्यक्ति चन्द महीनोंमें अन्नके बिना कीट-पतङ्गोंकी तरह कालके गालमें चले गये हों, उस देशकी दीनता-दरिद्रता एवं दासताका नाप-तोल करनेके लिये कौन तुला काम दे सकती है? ऐसे आड़े वक्तमें बचे-खुचे गोधन-

की सँभालके लिये विश्वविख्यात 'कल्याण' मण्डलका 'गो-अङ्क' प्रकाशित करना न केवल सामयिक आयोजन है अपितु विश्व-निर्माणकी चिन्तामें संलग्न तीन या पाँच बड़ोंको थोथी चाँदमारीके बजाय कुछ ठोस विश्वसेवा कर सकनेके लिये मार्गप्रदर्शन करना भी है।

ऐसे स्तुत्य प्रयत्नमें—'यान्ति न्यायप्रवृत्तस्य तिर्य्यञ्चोऽपि सहायताम्'—न्यायके अनुसार हम भी श्रीगोमाताके पवित्र चरणोंमें यह वाङ्मयी पुष्पाञ्जलि अर्पित करना अपना अहोभाग्य समझते हैं। वेदोंसे लेकर वर्तमान कालके समझदार विदेशियोंतकने किस प्रकार गोजातिका महत्त्व स्वीकार किया है, संक्षेपमें यही प्रकट करना इस लेखका उद्देश्य है।

सर्वदेवमयी गौ अवध्य है।

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥
(ऋग्वेद ८।१०१।१५)

अर्थात् [गौ] (रुद्राणां) दश प्राण और आत्मा–इन ११ रुद्रोंकी (माता) जननी है (वसूनां) पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ, अग्नि, वायु, आदित्य, चन्द्रमा और नक्षत्र–इन आठ वसुओंकी (दुहिता) दोहन करनेवाली पुत्री है, (आदित्यानां) द्वादश मासात्मा विष्णुभगवान्‌की (स्वसा) सहोदरा भगिनी है, (अमृतस्य) जीवमात्रको जीवित रखनेवाली जीवनी शक्ति [आक्सिजन–विटामिन ए.] का (नाभिः) केन्द्र है। (चिकितुषे) 'गायके प्रति मनुष्यका क्या कर्तव्य है'—ऐसा विचार करते हुए (जनाय) मनुष्यके प्रति [भगवान्] (प्र नु वोचं) आज्ञा देते हैं कि–(अनागां) अपराधरहित (अदितिं) अवध्य (गां) गायको (मा वधिष्ट) मत मारो।

गव्य कृशता और मोटापन दोनोंको दूर करता है

यूयं गावो मेदयथा कृशंचिदश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वय उच्यते सभासु॥
(अथर्व० ४।२१।६)

अर्थात्—हे (गावः) गौओ ! (यूयं) तुम (कृशंचित्) पतले-दुबले मनुष्यको (मेदयथा) हृष्ट-पुष्ट करती हो (अश्रीरंचित्) बदशकल=वृथा पुष्टको (सुप्रतीकं) सुडौल (कृणुथा) कर देती हो (भद्रवाचः !) हे मङ्गलमय शब्दमें रँभानेवाली गौओ ! तुम (गृहं) घरको (भद्रं) कल्याणकारी वातावरणयुक्त (कृणुथ) करती हो। (सभासु) सभाओंमें (वः) तुम्हारा (बृहद् वयः) बड़ा वर्णन (उच्यते) बखान किया जाता है।

गौ विश्वका जीवन है

वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवद् यावत् सूर्यो विपश्यति॥
(अथर्व० १०।१०।३४)

अर्थात्—(देवाः) इन्द्रादि देवगण (वशां) गौद्वारा प्राप्त=गव्य हव्यसे (उपजीवन्ति) अनुप्राणित होते हैं (उत) और (मनुष्याः) मनुष्य भी (वशां) गायके दुग्धादिसे जीवन प्राप्त करते हैं (यावत्) जहाँतक (सूर्यः) सूर्य (विपश्यति) देखता है=प्रकाश करता है [वहाँतक] (वशा) गौ ही (इदं सर्वं) यह समस्त ब्रह्माण्ड (अभवत्) बना हुआ है।

वेदमें शतशः मन्त्र गोमहिमाका लोकोत्तर वर्णन करते हैं। अकेले 'अथर्ववेद' में कई पूरे-के-पूरे सूक्त गोमाताकी स्तुति गाते हैं। गायके अङ्गोंमें सब देवताओंकी स्थिति बतानेवाला जो प्रसिद्ध चित्र देखनेमें आता है, वह कल्पित नहीं है, बल्कि अथर्ववेद (९।७।१—२६) के अनुसार है।

सर्वोपकारी गाय

गावः श्रेष्ठाः पवित्राश्च पावना जगदुत्तमाः।
ऋते दधिघृताभ्यां च नेह यज्ञः प्रवर्तते॥
पयसा हविषा दध्ना शकृता मूत्रचर्मणा।
अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति बालैः शृङ्गैश्च भारत॥
गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चिदिहाच्युत।
गावो लक्ष्म्याः सदा मूलं गोषु पाप्मा न विद्यते॥
मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
(महाभारत)

गौएँ सर्वश्रेष्ठ तथा पवित्र, पूजा करने योग्य और संसारभरमें सबसे उत्तम हैं; क्योंकि दही, घृत आदि गव्यके बिना संसारमें कोई यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकता। हे अर्जुन ! गौएँ दूधसे, घृतसे, दहीसे, गोबरसे, मूत्र और चर्मसे तथा हड्डियों, बालों और सींगोंसे भी हमारा उपकार करती हैं। हे पार्थ ! मैं गोधनके समान संसारमें और कोई धन नहीं देखता; क्योंकि गौएँ सदा लक्ष्मीकी मूल हैं। इनमें पापका निवास नहीं है; इसलिये ये प्राणिमात्रके लिये माताके समान समस्त सुख देनेवाली हैं।'

पारसी-मतमें गो-महिमा

'गौओंको नमस्कार, गौओंको नमस्कार ! गौओंके लिये उत्तम शब्द ! गौओंकी उन्नति । गौओंको भोजन और वस्त्रके लिये सेवा । यह सब पशु अपनेको भोजन देते हैं । (यस्न अध्याय १०)

साँड़ श्रद्धालुओंपर कृपा करता है

'पवित्र साँड़ ! तुमको नमस्कार । हे लाभदायक साँड़ ! तुमको नमस्कार । हे वंश बढ़ानेवाले साँड़ ! तुमको नमस्कार ।

श्रद्धा और विश्वास रखनेवालोंपर अपनी कृपा और दया दिखानेवाले साँड़ ! तुझको नमस्कार । और तू ही इन कृपाओंको आगे उत्पन्न होनेवालोंपर भी न्योछावर करेगा ।' (फरगार्ड २१—२२)

ईसाई-मतमें जीव-हिंसा महापाप

'परमेश्वर कहता है, लो मैंने साग-पात जो समस्त पृथ्वीपर हैं और नाना प्रकारके वृक्ष जो फलोंसे लदे हुए हैं, तुम्हारे खानेके लिये पैदा किये हैं न कि मांस ।'

(Genesis, Chapter 1. 29)

गोश्तखोर ईश्वर-दर्शनका अधिकारी नहीं

'जो नेकीसे मुँह मोड़ता है और बदीसे मुहब्बत करता है, जानवरोंका चमड़ा उनपरसे उतारता है, उनका गोश्त उनकी हड्डीपरसे, जो मेरे बन्दोंका गोश्त खाते हैं, जब वे परमेश्वरकी शरण लेंगे तब वह उनकी न सुनेगा और अपना मुँह छुपा लेगा; क्योंकि उन्होंने अपने कामोंको खराब किया है और हुक्म अदूली की है ।'

(मेकाकी पुस्तक अध्याय ३ आ० २—५)

गोरक्षा और इस्लाम

'हरगिज नहीं पहुँचते अल्लाहके पास
कुर्बानियोंके गोश्त और उनके खून ।
अलबत्ता ! पहुँचता है अल्लाके पास
तुम्हारा तकवा और परहेजगारी ॥'

(सुरेज)

घी-दूध दवा है और गोश्त ममतून है

'तुमपर लाज़िम है गायका दूध और घी, खबरदार ! उसके गोश्तसे । उसका दूध शिफा है, घी दवा है और गोश्त बीमारी है ।' (किताब मसतरक)

सौ सयाने एक मत

'गौ सौ फीसदी माता है, उसका मनुष्य-जातिसे यही सम्बन्ध है ।'

(Walter A. Dyer)

इस प्रकार वेदोंसे लेकर आधुनिक विद्वानोंतक सर्व-साधारणकी सम्मतिमें गो-जातिका स्थान बहुत ऊँचा है और गोरक्षाका प्रश्न विश्व-निर्माणका एक महत्त्वपूर्ण बड़ा प्रश्न है । क्या बड़ा कहलानेवाले देश किंवा पुरुष इस बड़े प्रश्नको भी अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिसे कभी अपने प्रोग्राममें स्थान देंगे ? यदि हाँ ! तो वे विश्वका वास्तविक पुनर्निर्माण करनेमें कृतकार्य होंगे । भगवान् वह दिन शीघ्र उपस्थित करे ।

गोपालसे गुहार

आगे चलैं उछरैं बछरा, अरु पीछे सखा करताल बजावैं ।
गाइ हुँकारत संग चलैं, मुख नैन दिये थन धार बहावैं ॥
आजु जनी बछरी लिये गोदमें, धूरि सनी अलकैं गृह आवैं ।
सोई गुपाल गुहार लगैं, अपनो यह गोधन आइ बचावैं ॥

—सुदर्शन

गोलोककी ओर

(लेखक—श्रीयुत पी० एन० शंकरनारायण अय्यर, बी० ए०, बी० एल्०)

अभिमान, छल और स्वार्थके परायण होकर प्रजाका शासन करनेवाले नृपतियोंके भारको सहनेमें असमर्थ एवं अत्यन्त दुखी होकर पृथ्वी माताने गायका रूप धारण करके सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजीसे अपने दुःख निवेदन किये[1] । वह बोली, 'झूठसे बढ़कर कोई पाप नहीं है, और सब कुछ सह लेना मैं एक साधारण बात समझती हूँ, पर एक झूठे और कपटाचारी मनुष्यका बोझ मेरे लिये नितान्त असह्य है[2] ।' किन्तु संसारभरमें झूठ और कपटको ही राजनीतिके सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्तोंका आधार और आश्रयभूमि मान लिया गया है; यद्यपि साथ-साथ यह भी स्वीकार किया गया है कि इनको गुप्त—अत्यन्त गुप्त रखना चाहिये । महर्षि शुक्राचार्यजीने भी जो कि स्वार्थी दैत्य-शासकोंके गुरु थे, एक महान् शासकको वही उपदेश दिया था । परन्तु भगवान्‌की भार्या मा वसुन्धराको, जिसका अपने बच्चोंके प्रति सच्चा अनुराग है और जो उन्हें धर्म, ऋजुता एवं प्रेमके मार्गपर चलकर उन्नत देखना चाहती है, छली नृपतियोंका बोझ असह्य हो गया और उसने अपने स्वामी भगवान्‌से इस पापीसमुदायसे मुक्ति पानेकी प्रार्थना की ।

भगवान्‌ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की । वे एक सरल और लीलामय क्रीड़ाकौतुकी गोपबालकके रूपमें अवतरित हुए और वनों, पर्वतों तथा सरिता-तटोंपर गायें चराते हुए, अपने साथियोंके साथ क्रीड़ा करते हुए और सरल, ग्रामीण और उन्हींका-सा जीवन बिताते हुए गोपोंके साथ रहने लगे । उन्होंने अपने चारों ओर चर-अचर सभी जीवोंको असीम आनन्द एवं निःस्वार्थ प्रेमकी अजस्र सुधा-धारामें नहला दिया। उनके प्रेमपूर्ण साहचर्यमें गोपबालकों और गोपोंको जो अपार और निर्मल आनन्द एवं आह्लाद प्राप्त हो रहा था उसे देखकर जगत्पिता ब्रह्माजी भी आश्चर्यचकित हो गये । देवताओंके निवास स्वर्गलोकमें प्रचुरतासे प्राप्त भोगों और इन्द्रियसुखोंकी बहुलता और टीमटाम यहाँ नहीं थी; न तपोलोक तथा अन्य ऊपरके लोकोंकी तरह बाह्य विषयोंसे विमुख होकर आन्तरिक सुखकी खोजमें यहाँ लोग दिनभर ध्यान-धारणामें ही बैठे रहते थे; और न तो यहाँ भगवान् विष्णुकी वह ईश्वरीय विभूति ही थी, जो वैकुण्ठमें दिखायी देती है, जहाँ कि दास्यभावकी निष्काम सेवा चाहनेवाले भक्तोंपर वे भक्तिपूर्ण आराधनाके सुखकी वर्षा किया करते हैं । यहाँपर प्रकृतिकी गोदमें रहनेवाले गोपोंके स्वाभाविक जीवनकी सरलता और स्वच्छताका साम्राज्य था, जिसमें शहरोंकी तड़क-भड़क तथा 'धन' और 'आराम'की गन्ध-तक भी नहीं थी । सभी ग्वालबाल अपने सखा श्रीकृष्णको चारों ओरसे घेरकर बैठे हुए कलेवेका आनन्द ले रहे थे, तथा सब लोग अपने-अपने घरसे जो कुछ भोजन-सामग्री लाये थे, उसीको बाँटकर खा रहे थे । श्रीकृष्णको अपने जीवन और प्रेमका केन्द्र बनाये हुए उन ग्वालबालोंके अकृत्रिम आनन्दका उल्लास ब्रह्माजीने स्वर्गलोक, ऋषिलोक या स्वयं वैकुण्ठमें भी जो कुछ देखा था, उससे कहीं अधिक था । वे आश्चर्यचकित हो गये । साधारण बालक अपना सादा भोजन करते हुए भला, कैसे इस प्रकारके उल्लासका अनुभव कर सकता है ? उन्होंने एक परीक्षा की और यह देखकर वे चकित हो गये कि तत्काल ही जितने ग्वाल-बाल और बछड़े थे, सब-के-सब उतने ही वैकुण्ठाधिपति भगवान् विष्णुके रूपमें परिवर्तित हो गये । उस समय उन्होंने देखा कि मनुष्यों एवं देवोंपर भी प्राचुर्य समृद्धि और ऐश्वर्यकी वर्षा करनेवाले विबुधगण भगवान्‌की पूजा कर रहे हैं । उन्होंने अपनी आँखें मलकर फिरसे देखा । अब फिर पूर्ववत् वे ही ग्वालबाल दिखायी पड़े । श्रीकृष्णने उनको बताया कि इन सरल, निष्कपट और प्रेमी लोगोंके लिये वैकुण्ठ-जैसे दिव्य लोकोंकी विभूतियाँ नितान्त सुलभ हैं; किन्तु इनको उन ऐश्वर्यपूर्ण तड़क-भड़कवाले तथा समृद्ध जीवनसे घृणा है । इनको तो आवश्यकताओं और अभावोंसे रहित सरल ग्रामीण-जीवन ही अधिक अच्छा लगता है । ब्रह्माजीकी आँखें खुलीं और वे बोल उठे,

---

१. भूमिर्दृप्तनृपव्याजदैत्यानीकशतायुतैः ।
आक्रान्ता भूरिभारेण ब्रह्माणं शरणं ययौ ॥
गौर्भूत्वाश्रुमुखी खिन्ना क्रन्दन्ती करुणं विभोः ।
उपस्थितान्तिके तस्मै व्यसनं स्वमवोचत ॥
(श्रीमद्भा० १० । १ । १७-१८)

२. न ह्यसत्यात् परोऽधर्म इति होवाच भूरियम् ।
सर्वं सोढुमलं मन्ये ऋतेऽलीकपरं नरम् ॥
(श्रीमद्भा० ८ । २० । ४)

'अहो, नन्द आदि व्रजवासी गोपोंके धन्यभाग्य हैं। वास्तवमें उनका अहोभाग्य है, क्योंकि परमानन्दस्वरूप सनातन परिपूर्ण ब्रह्म उनके मित्र हैं।' (श्रीमद्भागवत १० । १४ । ३२) उन्होंने फिर प्रार्थना की, 'प्रभो ! इस व्रजभूमिके किसी वनमें और विशेष करके गोकुलमें किसी भी योनिमें मेरा जन्म हो जाय, यही मेरे लिये बड़े सौभाग्यकी बात होगी; क्योंकि यहाँ जन्म हो जानेपर आपके किसी-न-किसी प्रेमीके चरणोंकी धूलि मेरे ऊपर पड़ ही जायगी। प्रभो ! आपके प्रेमी व्रजवासियोंका जीवन आपका ही जीवन है। आप ही उनके जीवनके एकमात्र सर्वस्व हैं। इसलिये उनके चरणोंकी धूलि मिलना आपके ही चरणोंकी धूलि मिलना है, और आपके ही चरणोंकी धूलिको तो श्रुतियाँ भी अनादि कालसे अबतक ढूँढ़ ही रही हैं।' (श्रीमद्भागवत १० । १४ । ३४)

समीपस्थ मथुरापुरीका शासक कंस इस गोप-बालकको अपना शत्रु मानता था। उसका राज्य तड़क-भड़क तथा बाह्याडम्बरपूर्ण सभ्यता और भौतिक सम्पत्ति एवं इन्द्रिय-सुखोंकी नींवपर खड़ा था। स्वार्थपरता, प्रतिस्पर्धा और परस्वापहरण उस सभ्यताकी जड़ें थीं और उसकी सत्ता तथा रक्षा सैनिक शक्तिद्वारा सम्पन्न होती थी। जरासन्ध आदि ऐसे और भी अनेकों नरेश थे, जो राज्यमदान्ध कंसके घनिष्ठ मित्र थे। गायको समाजकी जननी और जीवनदात्री माननेवाली सरल और नैसर्गिक सभ्यताका यदि विस्तार होगा तो उनकी (कंसादिकी) उच्च रहन-सहनवाली सभ्यताका तो मूलोच्छेद हो जायगा—यही सोचकर कंसने बहुत-से दैत्योंको छलसे और गुप्तरूपसे श्रीकृष्णका वध करनेके लिये भेजा। परन्तु श्रीकृष्णने उन सबका मानो खेल-ही-खेलमें इतनी आसानीसे काम तमाम कर दिया कि सब ग्वाले कहने लगे, 'वे (राक्षस) इस छोटे बच्चेके हाथों नहीं मरे हैं। अरे ! उनको तो उनके पापोंने ही खा डाला। इस निरीह निष्कपट बालकको तो, प्राणिमात्रके प्रति समानरूपसे जो इसका प्रेमभाव है, वह सारी विपत्तियोंसे बचा लेता है।' (श्रीमद्भागवत १० । ७ । ३१) गोपालवृत्तिमूलक सरल वन्य-जीवनकी निश्छल, निर्मल और नैसर्गिक आनन्द-धारामें स्वयं वह शक्ति है कि जो यन्त्र, आडम्बर और भोगोंपर आश्रित नारकीय नागरिक सभ्यताकी सारी बुराइयोंको अनायास ही हटा देती है और अपने पास नहीं फटकने देती।

श्रीकृष्णको कंस एवं उसके अनुयायियोंके समान समस्त दुष्ट राजाओंके भारसे पृथ्वीमाताको मुक्त करनेकी प्रतिज्ञा पूरी करनी थी। देवर्षि नारदने उनको इस बातकी याद दिलायी। गायको समाजकी जननी और जीवनदात्री माननेवाला गोपालवृत्तिमूलक सरल प्रेममय जीवन इतना दिव्य आनन्द और उल्लास प्रदान कर सकता है, जिसके आगे आडम्बर, अधिकार और चमक-दमकसे युक्त दिव्य लोकोंका सुख भी तुच्छ है। यह बात वृन्दावनमें पूर्णरूपसे चरितार्थ हुई थी। नारदजीने आशा की थी कि यह विचार अपने आप सारे संसारमें फैलकर मनुष्योंके अन्तःकरणको सरलता, सत्य, स्वार्थरहित प्रेम और तज्जनित आन्तरिक सुखकी ओर मोड़ देगा।

परन्तु नारदजी संसारकी रीतिको जानते थे; अतः उन्होंने परपीडनपरायण, शस्त्रबलपर निर्भर और आडम्बर-पूर्ण सभ्यताके अधिनायकोंके विनाशके लिये बल-प्रयोगकी भी प्रेरणा की। श्रीकृष्ण नहीं चाहते थे कि गोकुल और वृन्दावनमें शान्त, सरल और गोवृत्तिमूलक आनन्दसे पूर्ण प्रेम-जीवनका जो क्रम चल रहा था, उसमें व्याघात पहुँचे। इसलिये चूँकि वे वहाँ स्वयं उपस्थित थे ही, उन्होंने ऐश्वर्य और विभूतिसे सम्पन्न अपने एक अंशसे ही समस्त पापियोंका युद्धमें दलन करवाकर इस प्रकार झूठे और कपटाचारी मनुष्योंके बोझसे पृथ्वीमाताको मुक्त कर दिया। परन्तु उनके जीवनका मुख्य सन्देश तो गोकुल और वृन्दावनमें ही दिया गया।

गायको अपना मुख्य धन-सम्पत्ति, माता तथा देवता मानते हुए जिस सरल, ग्रामीण और गोपालवृत्तिमूलक जीवन-का उन्होंने हमको दिग्दर्शन कराया, क्या उसको ग्रहण करनेकी बुद्धि हममें आयेगी ? स्वार्थपरता, प्रतिस्पर्धा और सैनिक-बलसे प्रतिस्पर्धियोंका गला घोंटनेपर निर्भर, भौतिक सुखों, सुविधाओं और भोगोंवाली तथा मनुष्योंके हृदयोंमें निरन्तर भेद, सन्देह और शोषणकी वृत्ति बनाये रखनेवाली कंसीय सभ्यताके प्रहारोंसे बचनेके लिये बस, हमें श्रीकृष्ण-प्रदर्शित जीवनको ही अपनाना पड़ेगा। वही, जो कि एक गोपबालकके रूपमें अवतरित हुए थे, हमको दिव्य गोलोक-की उस सरल, सात्त्विक, विशुद्ध प्रेममयी सभ्यताकी ओर वापस ले चलें, जिसका उपदेश इस संसारके मनुष्योंको उन्होंने एक बार स्वयं आचरण करके दिया था।

आधुनिक गो-लोक

यदि गोरक्षाकी दृष्टिसे इस जड़ पृथ्वीपर आज गो-लोक है तो वह अमेरिकामें है—ऐसा उद्गार निकल पड़ता है। मुठ्ठी-सा डेन्मार्क, हथेलीके बराबर न्यूजीलैंड, सूप-सा अर्जेन्टाइन, चलनी-सा न्यूगिनी, रूस, आस्ट्रेलिया तथा केनिया आदि कई देशोंने अद्भुत पशु-प्रगति की है। किन्तु अमेरिका तो चमत्कारोंकी अलका है। सबसे अधिक चित्ताकर्षक चमत्कार वहाँका गो-लोक है। वहाँकी गाय गाय नहीं है, कामधेनु है। वहाँकी गायोंके लिये गंदा, अँधेरा और दुर्गन्धित झोंपड़ा नहीं होता। वहाँ तो बड़े-बड़े भव्य-भवनोंमें गायोंके समूह रहते हैं। खाने-पीने और चरने-फिरने आदि सब प्रकारकी उत्तम सुविधाएँ वहाँ हैं। अमेरिका आज पशुओंका—विशेषकर गायोंका—साक्षात् स्वर्ग है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥

(मनु० ३।५६)

मनुने यह बताया तो किन्तु उन्हें पशु-नारी गायका ध्यान न रहा होगा, उनका आशय मानव-नारीसे ही रहा होगा, किन्तु अमेरिकाने इसका विशाल और व्यापक अर्थ लिया। वहाँ पशु-नारी भी पूजी जाती है, इससे वहाँ पशुदेव-समान लाख-लाख, दो-दो लाख उत्तम साँड़ विचर रहे हैं और किसी प्रकारकी कमी नहीं दिखायी पड़ती।

यों तो हम भी गायको पूजते हैं, किन्तु पूजा-पूजामें अन्तर है। स्यामने गायको पूजा; पर गायका नाम मिट गया। अमेरिकाने गायको पूजा तो गायं भरी-पूरी और निहाल हो गयी। स्याम गायोंसे कुछ लाभ न ले सका, यह इतिहास-प्रसिद्ध बात है। अमेरिकाने गायसे लाभ उठाकर उसकी पूजा की। अतः वहाँ दूध, दही, घीकी नदियाँ बह रही हैं। गायको गायकी रीतिसे पूजना चाहिये न? हमने गायको हार पहनाये; परन्तु उसके शत्रुओंको हार नहीं दी। उनसे गाय हारती रही और आज वह स्वयं हमारी ही हार हो गयी। हमारे सिरपर नालायकी और नादारीका टीका लग गया तथा हमारे पोषण और आरोग्यकी घंटी बज गयी। गायमें तो हम तैंतीस करोड़ देवताओंकी कल्पना करते हैं। परन्तु, उसके दुग्ध-स्तनोंमें विराजित सरस्वती और गोमय तथा गोमूत्रमें रमनेवाली रमा—लक्ष्मीको हमने नहीं देखा। यदि हमने उन्हें पहचानकर उनकी पूजा की होती तो दुग्धान्नोंद्वारा सरस्वती हमारी बुद्धि बढ़ाती तथा कृष्यन्नोंद्वारा लक्ष्मी हमारे शरीरमें श्री और कान्ति बढ़ाती, धनसे हमारा घर भरा रहता और हमारे शरीर और मन सब प्रकारसे सजे रहते।

गायका सच्चा पूजन उसमें रहनेवाली लक्ष्मी, सरस्वती, गङ्गा, कीर्ति, मेधा आदि शक्तियोंको पूजनेमें है; प्रेम, उत्साह और पवित्रतासे, सच्ची नीयतसे, विवेक-विज्ञानयुक्त पुरुषार्थसे एवं सृजनात्मक ढंगसे उनका लाभ उठानेमें है। भारतवर्षकी प्राचीन संस्कृति गोरस-संस्कृति थी। गो-पूजामें जो आनन्द, उत्साह और समादर आज अमेरिका दिखा रहा है, वही उस समय हमारे यहाँ था। यज्ञमण्डपमें गाय बुलायी जाती थी, उसकी पूजा होती थी, सभाके बीच गो-सूक्त पढ़े जाते थे, गोसूक्तके अनुसार ही गोमेध—गोपूजन होता था, गायको सोमपान कराया जाता था तथा कोमल और मृदु तृण दिये जाते थे—यह गायका पूजन था।

पेनल कोड (Penal code)के समान आर्य-संस्कृतिकी धारापोथी कानून-ग्रन्थ और नियमावलीमें भी गायके साथ दुर्व्यवहार करनेवालोंके लिये दण्डोंका विधान था। उस समय हमारा देश आर्यावर्त गो-शास्त्र, गो-कला और गो-विद्यामें निष्णात था। साक्षात् गो-लोक बन गया था। तब यहाँकी कर्म-भूमिमें उतर आनेके लिये देवता भी तरसते थे। उस समय सारी सृष्टिपर आर्यावर्त्तका धर्म-चक्र-प्रवर्त्तन चलता था। यह सबका गुरु था। क्या इसमें गायका हाथ कम था? आज भी अमेरिका आदि देश संसारमें अपनी प्रत्येक विजयका यश अपनी दुग्ध-सम्पत्तिको देते हैं। जहाँ दूध वहाँ बुद्धि, और जहाँ बुद्धि वहीं विजय। दुग्धपर कौन मुग्ध नहीं हुआ?

अमेरिकाकी गायोंपर विद्युत्-प्रकाश, संगीत, चारा, पालन-पोषण तथा अन्य प्रकारकी सुविधाएँ किस प्रकार बरस रही हैं, उसे देखिये। अमेरिकाके एक किसानके पुरस्कार-विजेता साँड़को निमोनिया हो गया। बस, फिर क्या था, शीघ्र ही उसे पेनीसिनल नामकी अमूल्य और दुष्प्राप्य दवा दी गयी। कई बार तो गायको खाँडका भी भोजन (Ration) स्वीकृत हुआ है। पैर और मुँहकी बीमारी (Foot and mouth disease) में तो गायका मनुष्योंका-सा उपचार होता है। पैरमें कुछ होनेसे जूते पहनाते हैं, रूस-वालोंने वोरोशिलोवग्रेडमें गायके दाँत गिर जानेपर

बनावटी दाँतोंका चौघड़ा लगाया है । दृष्टिमें कुछ खराबी आयी तो चश्मा लगा समझिये । पैर कट जायगा तो रबड़का पैर तैयार ही है । वहाँ बच्चे और बछड़े साथ ही पलते हैं । बछड़ोंके क्लब चलते हैं । अभी पाठशालाओंके १०,००० बच्चोंने गाय और बछड़ोंकी सभामें भाग लिया था । किसी नामी गायके जन्मदिनपर ४-५ हजार मेहमान बुलाये जाते हैं और जलसा होता है । जलसेमें उसी गायके दूधकी चाय अथवा मलाई-बरफ सबको मिलती है । अमेरिकाके लोग सयाने नहीं हैं तो पागल भी नहीं हैं । पर गायोंके पीछे पागल जरूर हैं । गायोंकी उन्नतिके लिये वहाँ क्या-क्या साधन करते हैं, कैसी-कैसी साहित्य-संस्थाएँ और प्रयोगशालाएँ वे लोग चलाते हैं—यह पढ़-सुनकर हमें आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है, कहीं आँखोंसे उनकी व्यवस्था देख लें तो दंग रह जायँ । जो गाय ४०-५० पौंड दूधपर उतर आती है, उसको तो वे छूटी हुई मान लेते हैं । गंदा, खारा, रक्तमय दूध वे लोग कभी नहीं निकालते ।

वे लोग मन्दबुद्धि और संकुचित विचारके नहीं हैं—वरं दीर्घदृष्टि और उदार-हृदय हैं, विशेषकर पशुओंपर वे अधिक कृपालु हैं । हमें पश्चिमसे दो बातें तो प्रत्येक दशामें सीखनी ही पड़ेंगी—'स्वच्छता' और 'पशु-विज्ञान' । इन्हीं दोनों पंखोंसे उड़कर हम उन्नतिकी चोटीपर फिर पहुँच सकते हैं । इन दोनोंमें ऐसी एक भी नहीं, जिसमें राष्ट्र-गौरव या पूर्वग्रह बाधा दें अथवा कोई संकट उत्पन्न हो । ये तो क्या, हमारे पास तो इनसे भी कहीं अनोखी-अनोखी चीजें थीं, किन्तु आज हम उन्हें गँवा बैठे हैं । हम उनसे ये बातें सीखकर और बदलेमें अपनी कई अच्छी बातें सिखाकर पृथ्वीपर सहानुभूति, समझ, स्नेह और औदार्यका अमृत सींच सकते हैं, 'परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ' । आ० कु०

जगती

(लेखक—श्रीयुत डाह्यालाल हरगोविन्द जानी)

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥
नवनीतपङ्काः क्षीरोदा दधिशैवलसंकुलाः ।
वहन्तु यत्रैव नद्यस्तत्र यान्तु सहस्रदाः ॥
घृतक्षीरप्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः ।
घृतनद्यो घृतावर्तास्तास्सन्तु भारते पुनः ॥*

जगत्की शक्ति है जगती । जगत् वह है जो गतिमान् (Dynamic) है और जिसका जीवन-धर्म प्रगति है । गायके अनेक पर्यायोंमेंसे 'जगती' पर्याय सर्वोत्तम है, क्योंकि गाय ही जगत्की शक्ति और सर्वोत्तम पोषणदायिनी माता है । जगत्का तेज और शक्ति वही है; साथ ही उसकी गतिमें कहीं पूर्ण विराम नहीं, वह तो बढ़ती ही रहती है । माता उसे कहते हैं, जिससे हम पोषण पायें, विशेषकर जिसके द्वारा हमारी योग्यता, क्षमता तथा समृद्धिशालिता आदि मापी जाय । प्रत्येक देशकी गायोंकी उत्पादक-शक्तिसे—निकम्मे (Scrubs) पशुओंकी संख्यासे नहीं—उस देशकी सर्व-देशीय आबादी ठीक-ठीक मापी जा सकती है । गाय किसी भी देशके आरोग्य और आबादीका सबसे अधिक विश्वसनीय मापक-यन्त्र (बेरोमीटर) है, स्वयं गो-शब्द गतिका सूचक है (गच्छति इति गौः) । किन्तु गति तो दोनों दिशाओंमें हो सकती है—प्रगति (उन्नति) की ओर, अथवा विगति (अवनति) की ओर । तात्पर्य यह कि गायको आप चाहे जिस दशामें चाहे जितना बढ़ा सकते हैं, क्योंकि वह 'जगती' है । सावधानी और प्रेमसे उसकी सेवा कीजिये तो वह प्रगतिकी ओर जायगी, किन्तु यदि उसकी ओरसे असावधान रहिये, उसकी उपेक्षा या अवहेलना कीजिये तो वह गिर भी सकती है । फिर भी सामान्य तौरपर वह प्रत्येक प्रतिकूलताका सामना करती हुई प्रगतिकी ओर ही बढ़ती

---

* अर्थात् जगत्में जो कुछ स्थावर-जंगम संसार है वह सब ईश्वर (ईशा=गाय) के द्वारा आच्छादनीय है । उसके त्यागभावसे तू अपना पालन कर; किसीके धनकी इच्छा न कर ।

जहाँ गायरूपी ऐसी सहस्र धाराओंवाली नदियाँ बहती थीं कि जिनमें मक्खनका कीचड़ था, दूध ही जल था, दही काई-सेंवार था, ऐसी नदियाँ बराबर बहती रहें ।

गाय घी और दूध देनेवाली है, गाय घृतकी योनि है, घृत उत्पन्न करनेवाली है । गाय घीकी नदी है, घीकी लहर है—ऐसी गायें भारतमें फिर हों ।

है। इसीको हम प्रायोगिक परिणामोंसे सिद्ध करके देखनेकी चेष्टा करेंगे।

गायको यदि प्रगति-मार्गसे ले चला जाय तो वह बड़ी प्रसन्नतापूर्वक चलेगी। अमेरिका-डेन्मार्क आदि कई देशोंमें तो कई गायें पहले ही बियानमें लगभग ५०० रतल दूध देकर फिर क्रमशः बढ़ती-बढ़ती ५-६ हजार रतलतक जा पहुँची हैं। उनमें भी २५ प्रतिशत गायें ९००० रतलसे अधिक, १० प्रतिशत २०,००० रतल और ३ प्रतिशत ३०,००० रतलसे अधिक दूरतक पहुँच चुकी हैं। भारतकी श्रेष्ठ गायें २००-५०० रतलके औसतसे १२-१३ हजार रतल दूधतक पहुँच गयी हैं और पाँच वर्षमें साधारण गायोंका औसत ५०० से १००० रतलतक आ गया है। यह सुन्दर सुचिह्न है। ५०० से १००० रतल दूधकी औसत होनेका अर्थ है राष्ट्रीय आयमें दो अरब रुपयोंकी खासी वृद्धि।

पश्चिमकी गो-प्रगतिके आँकड़े देखनेसे पता चलता है कि वहाँकी श्रेष्ठ गायें बड़ी तेजीसे कूदती-फाँदती आगे बढ़ी जा रही हैं। २५ वर्ष पहले जो जगत्प्रसिद्ध गाय २५००० रतल दूध देती थी वह १५ साल पहले ३० हजार, ८ साल पहले ३८ हजार और ४ साल पूर्व ४१००० रतल दूध देने लगी। देखिये—

डचेज स्कामलार्क आर्म्सबी० पहले २७७६८ रतल दूध देती थी, जिसमें ३६७८ रतल ठोस पोषण था। उसकी वृद्धि इस प्रकार हुई। जब वह ६॥ वर्षकी हुई तब उसने ३७३८१ रतल दूध और जब वह ९। वर्षकी हुई तब ३५५५० रतल दूध दिया।

केपर (होल्स्टीन कार्नेशन मडकेप) ४११४३ रतल दूध देती थी, प्रतिदिन १३७॥ रतल, एक बार लगातार २० दिनोंतक १४० रतल और अधिक-से-अधिक उसने १४६॥ रतल दिया।

दूसरी एक शार्ट हार्न (छोटे सींग) वंशकी गायने औसतन ११४ रतल प्रतिदिनके हिसाबसे सालमें ४१६४० रतल दूध दिया।

अपने यहाँकी मामूली गाय जितना सालभरमें न देगी उतना तो उसने एक ही दिनमें दे दिया। अपनी गायके वार्षिक औसतन दूधका तीन-चार गुना तो वह मक्खन दे देती है। इस जगत्सम्राज्ञी केपरका वजन भी १५३७ रतल—अपनी दो गायोंके बराबर—है। प्रति १५ दिनोंमें वह अपने वजनके बराबर दूध लगातार सालभर देती रही। इस प्रकार उसने सालभरमें अपने वजनका २७ गुना अर्थात् २७ तुला दूध दिया। और ५६७० रतल अर्थात् ३॥ तुला ठोस पोषण दिया जो उसके शरीरके ठोस पदार्थ ६७५ रतलका ८। गुना है। इतना तो उसने एक सालमें दिया, इस प्रकार वह कई साल दे सकती है। कौन माता इतना अधिक दूध दे सकती है? इसीलिये तो हम गायको जगन्माता—मातामही कहते हैं।

अचानक एक अप्रसिद्ध गायका पता चला है, उसका उदाहरण देखिये—

जगत्प्रसिद्ध चेरी—रेड हाउस फ़ार्म, आर्म्सबरी, विल्ट्सके मेसर्स वार्ट ऐंड वेकी इस शार्ट हार्न वंशवाली अनभिज्ञात (Non-pedigree) गायने सन् १९३९ में ३६५ दिनोंमें ४१६४४॥ रतल दूध दिया, तो भी छुटाई नहीं। इस गायका कोई नाम-निशान भी नहीं जानता था, किन्तु यह कितनी अच्छी निकली। केवल ३००) रुपयोंमें यह बछिया ली गयी थी जिसका मूल्य आज ३००००) रुपयोंसे भी अधिक कूता जाता है। सालभर लगभग ११० रतल प्रतिदिन दूध देती रही, फिर भी एक वर्षमें उसके शरीरका वजन सवा दो सौ रतल बढ़ गया था। इस प्रकार-की कई अज्ञात श्रेष्ठ गायें हो सकती हैं। सम्भवतः अपने देशमें भी कम संख्यामें ऐसी कई विभूतियाँ गो-सृष्टिमें छिपी पड़ी होंगी।

यह तो अच्छी उम्रकी गायोंकी बात हुई, अब छोटी उम्रकी गायोंके भी उदाहरण देखिये—

मोटोना पाशक्वीन नामक दो सालकी बछियाने पहले बियानके एक सालमें २५००० रतल दूध (४२० रतल मक्खन) दिया। इसका पिता एक अमेरिकन साँड़ था।

पीपेक प्रिंसेज—८७४५ रतल दूध (३६७ रतल मक्खन)।

पोली—७३३२ रतल दूध (२५६ रतल मक्खन)। दोनों २-२ सालकी बछिया थीं।

अपने यहाँ भी लाहुली बछियाने पहले बियानमें ७६४८ रतल, सालगीने ७०१९ रतल दूध नयी दिल्ली १९३२ में दिया है। कमली (साहीवाल) ने ५७५८ रतल दूध दिया है।

अब हम भारतवर्षकी गायोंपर विचार करें तो पता चलेगा कि १००० रतलके वजनकी गायें, जो ४०० दिनोंमें

३०० दिन दूध देती हैं, १०००० रतल दूध (५ प्रतिशत घृतांश) देनेवाली हैं। एक वर्षमें १० तुला दूध और अपने शरीरके ठोस पदार्थका ३ गुना ठोस पोषक पदार्थ देती हैं, जिसमें १४ रतल चूना और ९ रतल फास्फरस होता है। इतना वे अपने जीवनभरमें ८--१० बार देती हैं। साधारण अच्छी गाय अपने जीवनकालमें लगभग १०० तुला दूध और अपने ठोस पदार्थका ३० गुना ठोस पोषक पदार्थ देती है। जील गायके विषयमें किसी लेखमें चर्चा आयी होगी। जील मिश्रवंश (संकर जाति) की थी। किन्तु शुद्ध वंशकी कई श्रेष्ठ गायें जीवनकालमें दस बार हजार रतल दूध (९५४४ रतल) जीलसे भी अधिक दे रही हैं। और प्रतिवर्ष ऐसी गायोंकी संख्या बढ़ रही है।

इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतवर्षकी गायें कुछ कम नहीं हैं और उनमें बहुत अद्‌भुत क्षमता तथा गूढ़शक्ति (Potentiality) भरी पड़ी है। प्रश्न केवल साधारण गायोंको शीघ्र आगे बढ़ानेका है। और यह काम सच्ची राष्ट्रीय सरकार तथा प्रजाके सहयोगसे पलक मारते हो सकता है।

पश्चिमकी गायें चाहे ज्यादा नहीं टिकती हों, परन्तु वे दूध कितना अधिक देती हैं। अपनी लगभग ८२ गायोंके जितना दूध वहाँकी एक कैपर गाय दे देती है। और कम-से-कम दस-बारह वर्षतक देती रहती है। अवश्य ही वहाँ भी अधिक कालतक जीकर काम देनेवाली गायोंके उदाहरण हैं।

बेल नामक होल्स्टीन वंशकी गाय २२॥ वर्षतक जीवित रही। उसने २१ बछड़े दिये। २१ वें वर्ष तो दो मजबूत बछड़ोंको एक साथ जन्म दिया। जीवनपर्यन्त औसतन प्रतिदिन ४० रतल दूध देती रही, कुल २ लाख रतल दूध (२०० तुला) दिया अर्थात् जीवनभरमें २५००० रतल ठोस पोषक पदार्थ (५० तुला) दिया। वह गाय पोशबर्न चील्ड्रेन्स होम —मीनिएपोलिस (मीनिएसोंटा) में थी।

हम गायको इसलिये कामधेनु कहते हैं कि वह हमारा काम (महेच्छा) पूरा करती है। गायमाताके दो अङ्ग हैं— एक गायका और दूसरा माताका। अथवा यों कह सकते हैं कि प्रगति (Efficiency—Progressiveness) का और पोषण (Benehciency—Thrifty, Kindness) का। इन दोनों अङ्गोंमें गायकी अद्भुतता (Romance of the cow) भरी पड़ी है। गायकी प्रगतिक्षमता तथा प्रगतिप्रियता हमने ऊपरकी कुछ बातोंमें देखी। अभी और देखिये। गाय कृतघ्न प्राणी नहीं है। वह 'अघायुरिन्द्रियारामः' और 'मोघजीवी' नहीं है, वह तो जगत्‌के प्रतिपालनके लिये ही जीती है। गायको स्वतन्त्रतापूर्वक थोड़ा अच्छा खिलाइये-पिलाइये तो ४२ प्रतिशत दूधमें ५१ प्रतिशत घृतांश बढ़ा देगी। इसके दो उदाहरण देखिये—

सन् १९०० में अमेरिकाके मेरीलैंड-प्रयोग-क्षेत्रपर बाहरके किसानोंकी गायें लाकर खूराक-सुधारका प्रयोग किया गया था। अमेरिकाके किसान अपने यहाँके ग्वालोंकी भाँति नहीं होते, जिन बेचारोंके पास न जमीन है न चारा है और जो चोरी या बरजोरीसे अपने पशुओंको दूसरेके खेतोंमें चरनेके लिये हाँक देते हैं वहाँ तो प्रति ६ किसान पीछे ५ दुग्धकृषक (Dairyman) और १ अन्न या तुलकृषक है। अतः वहाँका दुग्ध-कृषक भी अपनी गायोंकी ठीक देख-भाल करके उनको भरपूर खिलाता-पिलाता है। ४५ वर्ष पहलेका यह प्रयोग इसलिये चुना गया है, जिससे कि हमारी परिस्थितिके निकटका दिखायी पड़े। फिर भी प्रयोगक्षेत्रपर विज्ञानके सहारेसे बड़ा लाभ होता है। वैसे तो हमारे पशुओंमें और भी अधिक अन्तर दिखायी पड़ेगा। क्योंकि ये अभी बहुत पीछे हैं।

प्रयोगके लिये ८ गायें रक्खी गयी थीं। एक वर्षमें उनके दूधमें क्या अन्तर पड़ा, इसे साथ ही देखते चलें—

संख्या	घरकी खूराकसे	प्रयोगक्षेत्रकी खूराकसे	वृद्धि
१.	४००४ रतल	६०९२ रतल	५२ प्रतिशत
२.	४१२२ ,,	५०५१ ,,	२३ ,,
३.	५१९२ ,,	६१६३ ,,	१८ ,,
४.	४५३७ ,,	६१३४ ,,	३५ ,,
५.	६०९७ ,,	६९९५ ,,	१५ ,,
६.	४४३५ ,,	७९९५ ,,	८३ ,,
७.	६३५७ ,,	६८२८ ,,	८ ,,
८.	४६५३ ,,	५४६५ ,,	१८ ,,
	३९३९७	५०७२३	२८.७

उसी वर्ष न्यूयार्कके प्रयोगक्षेत्रमें १० गायोंपर प्रयोग किया गया था, वह इस प्रकार था—

	औसतन साप्ताहिक दूध (सन् १९००)	औसतन साप्ताहिक दूध (सन् १९०१)	वृद्धि
१.	८९ रतल	११२ रतल	२५ प्रतिशत
२.	८३ ,,	१२७ ,,	४५ ,,
३.	८३ ,,	११९ ,,	४५ ,,
४.	८८ ,,	१२२ ,,	३७ ,,
५.	१०६ ,,	१६२ ,,	५२ ,,
६.	८४ ,,	१२९ ,,	४१ ,,
७.	१२४ ,,	१७५ ,,	४१ ,,
८.	११३ ,,	१४९ ,,	३१ ,,
९.	८५ ,,	१३६ ,,	६० ,,
१०.	१०३ ,,	१८७ ,,	८० ,,
	९५८	१४१८	४८ प्रतिशत

इन दोनों प्रयोगोंसे दिखायी पड़ता है कि गाय अच्छी खूराकका बदला अच्छा देती है, विशेषकर जितनी पिछड़ी हुई गाय होगी, वह उतनी ही अधिक उन्नति करेगी। ये गायें अपनी साधारण गायोंसे ८—१० गुना अच्छी हैं, तब यह अन्तर है; अपने यहाँ ७५ से २०० प्रतिशत तकका अन्तर सरलतापूर्वक हो सकता है। पूना कृषि-पाठशालामें लगभग ५० प्रतिशत अन्तर एक वर्षमें दिखायी पड़ा था; २००० रतल दूधसे ३००० और ३२०० रतलतक हो गया था।

गायोंमें किलनी (Ticks), जूँ, मच्छर, मक्खी आदि बहुत लग जाते हैं और रक्त चूस ले जाते हैं। केवल इस कष्टको मिटा देनेसे १७ से ३३ प्रतिशत तक दूध बढ़ा है। सफाई और खरहरा (Grooming) आदि करनेसे ४ से ८ प्रतिशत तक अपने यहाँ बढ़ सकता है। केवल संगीतके मधुर स्वरोंके प्रभावसे १६ प्रतिशत दूध बढ़ सका है।

गाय कैसी तुरंत बदला देनेवाली (Responsive) और उत्पादनशील प्राणी है, यह देखिये। न्यू जीलैंडके सरकारी प्रयोगक्षेत्रपर धूपकालकी शुष्क और कड़ी ऋतुमें गायोंका दूध ३००० रतलसे घटकर २३६८ रतल हो गया था, किन्तु जब उन्हें मकईका हरा चारा मिलने लगा, तब तीन ही दिनमें दूध १८.३ प्रतिशत बढ़कर २८१९ रतल हो गया। भारतकी भूखी गायें तो इससे भी अच्छा परिणाम दिखा सकती हैं। जो जितने नीचे होती है, वह उतने ही वेगसे ऊपर चढ़ सकती है।

ये प्रयोग तो केवल एक वर्षके थे, किन्तु जन्मसे ही गाय बननेतक यदि बछियाको अच्छा चारा मिले तो उसकी ऊँचाई और वजनमें क्या अन्तर पड़ता है, यह देखिये—

यह प्रयोग पश्चिमका है।

	होलस्टीन-वंश		जर्सी-वंश	
आयु	साधारण खिलाईसे	अच्छी खिलाईसे	साधारण खिलाईसे	अच्छी खिलाईसे
[ऊँचाई सेंटीमीटरमें]				
१ मास	७५.६	७६.७	७०.६	७०.१
६ ,,	९६.७	१०३.४	९०.७	९२.३
१ वर्ष	१०६.३	११७.८	१०२.५	१०८.८
१॥,,	११५.३	१२५.४	११०.६	११६.६
२ ,,	१२१.६	१३०.१	११६.१	१२१.६
३ ,,	१२६.९	१३३.६	१२१.९	१२५.१
४ ,,	१२९.५	१३४.९	१२३.	१२५.७
५ ,,	१३०.३	१३५.९	१२३.	१२५.९
कुलवृद्धि	५४.७	५९.२	५२.४	५५.८
[वजन रतलमें]				
१ मास	१०४	११३	६७	६६
६ ,,	२२२	४१८	२४५	२४८
१२ ,,	४०४	६५९	३६३	४६३
१८ ,,	५३९	८९१	४९५	७०८
२८ ,,	७४५	१०३६	६६४	८४२
४० ,,	८८३	१०७०	७४३	८८४
५४ ,,	९६८	११११	८२२	९०७
६६से७८	१११३	११६५	८५१	९७५
७८से९०	?	११९१	९२२	१००६
कुलवृद्धि	१००९	१०७८	८५५	९४०

अपने यहाँके बछड़े तो जन्मके समय केवल ४५—५० या ६० रतल वजनके ही होते हैं। इसके कई कारण हैं, एक तो मा-बापका दुर्बल होना, दूसरे माके गर्भाशयमें भी कोई पोषण न मिलना। बछड़ोंको पूरा दूध या निर्धृत दूध तथा हरा चारा, दाब घास आदि भी नहीं मिलती। विशेषकर चारा सूखा होनेसे उसमें क्षार और जीवन-तत्त्व (विटामिन) बहुत ही कम मिलता है, इसका परिणाम उनको और आगे चलकर हम सबको सहना पड़ता है। केवल क्षार भी यदि पर्याप्त मात्रामें मिले

तो २० प्रतिशत दूध बढ़ सकता है। अपने यहाँ प्रकाश, रेडियो, संगीत आदिका प्रयोग तो दूर रहा, केवल कीड़े-मकोड़ोंके कष्टसे भी गायोंको बचा लें, खरहरा करें और काफी खिलायें-पिलायें तो भी दुगुना दूध बढ़ सकता है; यदि अच्छे साँड़ोंसे संयोग कराया जाय तो दुगुनेकी और भी वृद्धि हो सकती है। पर्याप्त जल पिलानेसे वहाँ ३.५ प्रतिशत दूध और १०.७ प्रतिशत घृतांश बढ़ा था। हमारे पशुओंको तो पर्याप्त जलतक नहीं मिलता !!

इतनेपर भी गाय कितना उपकारी पशु है। उसे यदि पर्याप्त भोजन-पानी नहीं मिलेगा तो वह यन्त्रकी भाँति रुक नहीं जायगी, न दूध देना बंद करेगी और न काम ही कम देगी। गायमें श्रेष्ठ यन्त्रसे भी बढ़कर कार्य-क्षमता है। यहीं तो इसकी विशेषता है। इसीलिये हम इसे जीवित जादू (Biological Wonderment) कह सकते हैं। किसी भी इंजन-ट्रैक्टर आदिकी कार्यक्षमता—यन्त्रक्षमता (Thermal efficiency) २५ से ३० प्रतिशत है और वह भी जब उसकी खूराक—साफ मिट्टीका तेल, पेट्रोल या क्रूड आयल आदि—बिल्कुल तैयार मिल जाय तब। किन्तु गाय तो एकदम हलकी घास और तिनके खाकर इतनी कार्य-क्षमता दिखाती है। ट्रैक्टर इंजनको तो खूराक पचाकर पोषण तैयार भी नहीं करना पड़ता, और न उसके सामने कामके अतिरिक्त अपने जीनेके लिये प्रयत्नका, गरमीका और शक्तिका प्रश्न है। गायको तो अपनी खूराकमेंसे पोषण भी तैयार करना पड़ता है; और वह खूराक भी कैसी ? जो किसीके काममें न आये। ऐसी खूराकसे अपना निर्वाह करना, बच्चा पैदा करना, इतनेपर भी दूधके उत्पादनमें २५ से ३७ प्रतिशत शक्ति दिखाना गायका ही काम है। यह विशेषता दुग्धार्थ गाय (Dairy-type Cow) की है। इसकी औसत दुग्धोत्पादनशक्ति २९ प्रतिशत है। जो भद्दी और मोटी गायें यूरोप आदिमें मांसके लिये पाली जाती हैं उनकी कार्य-क्षमता केवल १४ प्रतिशत होती है। हमारी गायोंकी औसत कार्य-क्षमता ठीक है। हाँ, मठ-मंदिरों या धनी शौकीनोंके यहाँकी गायोंकी, जो अधिक खूराक मिलनेके कारण फूल जाती हैं, कार्य-क्षमता १४ प्रतिशत हो जाती है। इससे यह पता चला कि गाय दूध देनेमें २९ प्रतिशत और मांसोत्पत्तिमें १४ प्रतिशत उपयोगी होती है। अतः यह सीधी बात है कि गायका असली लाभ मांससे नहीं वरं दूधसे है, और यही प्राकृतिक योजना है।

यदि गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो पता चलेगा कि गायने मनुष्यके जीवनार्थ ही जन्म लिया है। वह मनुष्यकी प्रतिद्वन्द्वी नहीं, वरं उसकी पूरक—सहायक माता है। सूर्यकी गरमीसे भाफ तैयार करके यन्त्रोंको चलानेका सबसे सस्ता शक्ति-साधन गिना जाता है। किन्तु यह साधन हमारे आस-पास तो गायके रूपमें उपस्थित ही है। यह दिखाया जा चुका है कि गाय इंजन अथवा ट्रैक्टरकी अपेक्षा अधिक कार्यक्षम है। गायको हम मिल्क मोनोट्रैक्टर (Milk-monotractor) कहें तो अतिशयोक्ति न होगी, बल्कि हीनोपमा होगी, क्योंकि ट्रैक्टरको तो बनाने, चलाने और निभानेमें खर्च होता है। गाय तो अपने-आप सूर्यकी शक्तिसे जी जाती है। मनुष्य खेती करके सूर्यशक्तिको वनस्पति (धान्य, द्विदल, तिलहन) के रूपमें पैदा करता है। उसका ४० प्रतिशत मनुष्यके काममें आता है। शेष ६० प्रतिशत पुआल, भूसा, डंठल, रहेठा आदि मनुष्यके लिये निकम्मी चीज है। उसी निकम्मी वस्तुको खाकर गाय उसका दूध बना देती है और केवल घासमय धरती, गोचरभूमि, बीड़, ऊसर जमीन आदिसे ७५ प्रतिशत सौर्यशक्ति घास-तिनकेके रूपमें लेकर मधुर तथा पौष्टिक दुग्धान्न पैदा करती है। इस प्रकार गाय पृथ्वीकी सर्वोत्तम और अनुपम सूर्यशक्तिरूप दूध देनेवाली मशीन (Lacto-Haleo-Solar-Motor) सिद्ध होती है।

गाय-जैसी अद्भुत चमत्कार दिखानेवाली और कौन हो सकती है ? घास-पातकी एक टोकरी उसके सामने डाल दीजिये, कुछ ही क्षणोंमें वह दूधकी बाल्टी भर देगी। यह कोई बनावटी दूध नहीं है। जितनी अच्छी घास होगी उतना ही अच्छा दूध होगा। सूर्यको पूषन—पोषक—पिता कहते हैं। तब गाय पोषक माता ठहरी। सूर्य तो पूरा और सीधा लाभ नहीं दे सकता और न हम ले ही सकते हैं, किन्तु गायसे तो जितना चाहिये उतना पूरा और सीधा लाभ ले सकते हैं। इसीलिये गायको कामधेनु कहा गया है।

यह तो कार्य-क्षमता—उत्पादन-क्षमता—की दृष्टिसे हमने देखा, किन्तु गाय तो चेतन प्राणी है, इंजन-मोटर-जैसी जड नहीं। अतः उसका दूसरा पहलू भी है, जो यन्त्रोंमें नहीं है। यन्त्र तो केवल कार्यक्षम ही हो सकते हैं, किन्तु गाय तो किसी भी यन्त्रसे कम-से-कम खर्चमें

और सरल-से-सरल साधनसे अधिक-से-अधिक कार्यक्षम तथा उपकार्यक्षम भी है। यन्त्र तो ऐसा हो ही नहीं सकता, कोई अन्य प्राणी भी इतना उपकार्यक्षम (Beneficient) नहीं हो सकता। गाय भूखी रहेगी, सूख जायगी किन्तु अपने उपकार-मार्गसे नहीं हटेगी। इसीलिये तो जगत्-को मिथ्या समझनेवाले ब्रह्मवादियोंने भी जगती (गौ) को सच्ची समझकर उसकी उपासना की है।

गायकी उपकारिताकी भी परीक्षा की गयी थी, उसके कुछ उदाहरण देखिये—

एक गायको तीन महीनोंतक जो खूराक दी गयी, उसमें किसीमें कुछ भी तैलीय पदार्थ नहीं था। इतना ही नहीं, रासायनिक विधिद्वारा उसके घास-चारेसे भी सब तैल-अंश निकाल लिया गया था। ऐसी तैलरहित खूराक-पर वह तीन महीनेतक बड़ी प्रसन्नतापूर्वक रही और उसने दूधमें ६५ रतल घृतांश दिया। उसने अपने घास-चारेके कार्बोहाइड्रेट्स् अंशमेंसे अपने शरीर और दूधके लिये घी (बसा) बना लिया। (जोर्डन ऐंड जेन्टर, न्यू. यो. जिनेवा सेन्टर)

दूसरा प्रयोगः—

जर्सीवंशकी एक अधेड़ गाय थी। जब वह छुटी थी तब उसे काफी चारा-पानी मिलता था। ब्यानके समय भली-चंगी थी। किन्तु दुग्धावस्थाके समय उसे केवल उतनी ही खूराक दी गयी जितनेमें उसके शरीरका निर्वाहमात्र हो जाय। दूधके लिये कुछ नहीं दिया गया। उस समय गायके सामने दो मार्ग थे—या तो दूध न देकर वह छुटा जाय या अपने शरीरमें पूर्वसञ्चित तत्त्वोंमेंसे दूध निकाले। यह प्रयोग ३० दिन-तक चला। परिणाम यह निकला कि जितना दूध वह देती थी, उससे केवल १ रतल कम दिया। किन्तु क्षीण इतनी हो गयी थी कि बिना सहायताके उठ भी नहीं सकती थी। इस प्रयोग-कालमें अपने शरीरका १५० रतल तत्त्व खर्च करके उसने ९० रतल दुग्ध-पोषणांश (milk solids) प्रदान किया। (एकल्स)

ओहियो स्टेशनपर एक प्रयोगमें ४ गायोंको २० प्रतिशत पाच्य पोषणांश (Digestible Nutrients) पर, और ३ गायोंको ४॥ प्रतिशतपर रक्खा गया था। तात्पर्य यह कि जितना चाहिये उसका क्रमसे केवल पाँचवाँ और बीसवाँ पोषणांश भाग उनको चारेके रूपमें मिला। फलस्वरूप गायोंकी दशा तो बिगड़ी, किन्तु दुग्ध-पोषणांशमें कमी नहीं हुई। गाय भूखों मरेगी, क्षीण हो जायगी; किन्तु अपने जीवनका अन्तिम श्वास तथा अपने रक्तकी अन्तिम बूँद पोषणांश देनेके कार्यमें लगा देगी—इस मार्गसे नहीं हटेगी, क्योंकि वह माता है, और गाय माता है। दूसरी माताएँ तो परिस्थितिवश अपने बच्चेको कुएँमें डालने, बेच देने या छोड़कर भाग जानेपर उतारू हो सकती हैं, किन्तु हमारी यह मूक माता ऐसा कभी नहीं करती।

इसका नाम माता है। वहाँ तो ऐसे प्रयोग केवल वैज्ञानिक जिज्ञासा और अन्वेषणके लिये होते हैं, किन्तु हमारे गोपूजक भारतवर्षमें गाँव-गाँव और घर-घर (दुर्भाग्य-से, किन्तु सौभाग्यसे सब घरमें नहीं) ऐसे प्रयोग एक मास नहीं, वरं पूरे बियान-कालतक और पीढ़ियोंतक चलते हैं। किन्तु हम देखते हैं कि फिर भी हमारी माता ब्राह्मणकी गायके समान हम कंगालोंको खिलाती-पिलाती है।

ऐसे प्रयोगोंमें अपनेको सर पचानेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सामान्यरूपसे सारे भारतवर्षहीको ऐसे प्रयोगोंकी प्रयोगशाला समझना चाहिये। गाय दूध कम देती है—यह बात नहीं है। उसे कम-से-कम चारा मिलता है और वह अधिक-से-अधिक सदासे दे रही है। वंश, आयुष्य, आरोग्य तथा प्राप्त सुविधाएँ—इनमेंसे वह किसीपर भी ध्यान दिये बिना अपनी शक्तिभर दूध दे रही है। यह हुई गायकी उपकारिता-शक्ति (Beneficiency)।

भारतवर्ष गायकी उपकारिता-शक्तिसे पर्याप्त परिचित है। इस समय उसे गायकी कार्य-क्षमताशक्ति (Efficiency) का लाभ लेना चाहिये। यह शक्ति भी उसमें बहुत है। जब कार्यक्षमता-शक्तिका प्रयोग चलेगा, उस समय भी उपकारिताशक्तिका लाभ तो मिलता ही रहेगा; सम्भव है अधिक मिले; क्योंकि तब वह प्रसन्न होगी, सशक्त होगी और सुखी होगी।

गाय जगती है, प्रगतिकी प्रतिमा है। उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करनेसे जगत्में हमारी प्राण-प्रतिष्ठा होगी। आज हम उखड़े हुए हैं। क्योंकि हमारी गाय गिरी हुई है। हमें अब दृढ़ विश्वास करके खड़े हो जाना चाहिये तथा विवेक, विज्ञान और विश्वासके द्वारा गो-उद्धारकी क्रान्ति मचा देनी चाहिये। सुनिये—गोलोकसे क्या प्रतिध्वनि आ रही है—

'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत'

अर्थात् उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषोंके पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो।

ॐ ईशावास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

गोमाताने क्या दिया और क्या पाया

(लेखक—डाक्टर श्रीरामचरणजी महेन्द्र एम्० ए०, डी० लिट्० डी० डी० दर्शनाचार्य)

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमꣳ सरः ।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ॥

(यजुर्वेद २३ । ४८)

यजुर्वेदकालीन उक्त मन्त्र निर्देश करता है कि जिस ब्रह्मविद्याद्वारा मनुष्य परम सुखको प्राप्त करता है, उसकी सूर्यसे उपमा दी जा सकती है । उसी प्रकार द्युलोककी समुद्रसे तथा विस्तीर्ण पृथ्वीकी इन्द्रसे उपमा दी जा सकती है, किन्तु प्राणीमात्रके अनन्त उपकारोंको अकेली सम्पन्न करनेवाली गौकी किसीसे उपमा नहीं दी जा सकती । गौ निरुपमा है । वास्तवमें गौके समान उपकारी जीव मनुष्यके लिये दूसरा कोई भी नहीं है । उसके विभिन्न स्वरूपोंद्वारा प्राणीमात्रका जो हित हो रहा है, वैसा किसी अन्य जीवद्वारा नहीं हो सकता ।

ऋग्वेदकालीन ऋषियोंको गोवंशके उपकारोंका यहाँतक ज्ञान हो चुका था कि वे गौओंको चतुष्पाद प्राणियोंमें श्रेष्ठ ही नहीं, प्रत्युत अपनी समस्त कामनाओंको परिपूर्ण करनेवाली माता मानते थे ।

गौओंके विषयमें महात्मा बुद्धके उद्गार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं । उन्होंने सम्यक् रीतिसे गोमाताके महत्त्वको समझा और उसका पर्याप्त प्रचार किया था । उनके हृदयमें गौओंके प्रति अटूट श्रद्धा थी । गौके विषयमें उनकी भावनाका वर्णन खुद्दक-निकाय-अन्तर्गत सुत्तनिपातके 'ब्राह्मण-धम्मिय सुत्त' तथा 'अट्ठकथा' में विशेषरूपसे पाया जाता है । इससे यह परिलक्षित है कि महात्मा बुद्धने जनतामें गौके प्रति दयाकी भावनाका पर्याप्त प्रचार किया था और गोहिंसाको रोकनेका भगीरथ प्रयत्न किया था ।

मुसल्मानोंके पैगंबर हजरत मुहम्मदने गायके दूध, घी तथा मक्खनके गुणोंको सुविस्तृत ढंगसे अभिहित किया है तथा बड़े मार्मिक शब्दोंमें निर्देश किया है कि गौका मांस स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकर है । वे कहते हैं कि 'खुदाने गायमें बहुत-से गुण इकट्ठे किये हैं और उनका मुकाबला दुनियाका कोई जानवर नहीं कर सकता । गायका दूध दवा है, उसका मक्खन शिफा है, पर उसके गोश्तमें बीमारी मौजूद है ।' रसूल इस्लाम गौका कितना महत्त्व समझते थे, यह हदीसोंके अध्ययनसे स्पष्ट प्रकट होता है ।

अथर्ववेदकालीन एक ऋषि गौके विषयमें बहुत ही यथार्थ कहते हैं—

यज्ञपदीराक्षीरा स्वधाप्राणा महीलुका ।
वशा पर्जन्यपत्नी देवान् अप्येति ब्रह्मणा ॥

(अथर्ववेद १० । १० । ६)

भाव यह कि गौ यज्ञपदी है अर्थात् गो यज्ञशाला-जैसे पवित्र स्थानमें रखने योग्य है । गौ इराक्षीरा है अर्थात् दुग्धरूप सात्त्विक भोजन देनेवाली है । गौ स्वधाप्राणा है अर्थात् प्रत्येक प्राणीको अपना अस्तित्व धारण किये रहनेके लिये यथेष्ट सहायता देनेवाली है । गौ महीलुका है अर्थात् पृथ्वीको उर्वरा बनाये रखनेवाली है । गौ पर्जन्यपत्नी है अर्थात् पर्जन्यकी सहायतासे उत्पन्न होनेवाले तृणादिको खाकर हृष्ट-पुष्ट रहनेवाली है । उक्त सब गुणोंद्वारा गौ जनताका अपार उपकार कर, उन उपकारोंके पुण्य-बलसे, अपने-आपको पशुयोनिद्वारा ही देवलोककी अधिकारिणी बनाती है ।

भगवान् मनुने गोवंशके अनुपम उपकारोंको मुक्त हृदयसे स्वीकार किया है । गोशालाको सुन्दर रूपसे सञ्चालनके लिये उन्हें तीन भागोंमें विभक्त किया है—एकमें बूढ़े अपाहिज, जो कार्य करने योग्य न हों; दूसरेमें दूध देनेवाली गायें तथा हलमें चलने योग्य बैल, तीसरेमें बछड़े-बछियाँ । वैश्यकुलको निर्देश करते हुए आपने लिखा है—

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च ॥

अर्थात् सर्वप्रथम यथाविधि गो-परिपालन कर कृषिका सम्पादन करना चाहिये । कृषिद्वारा उत्पन्न किये हुए भोज्यान्नों आदिका व्यापार कर देशको धन-धान्यसम्पन्न बनाये रखना चाहिये । उक्त साधनोंद्वारा उत्पन्न किये हुए धनको दान तथा विद्या-प्राप्तिमें व्यय करते रहना चाहिये । गोवंशकी उपकार-परम्पराको चिरस्थायी एवं सार्वभौमिक करनेके विचारसे सन्ध्याकी प्रार्थना तथा प्रातःस्मरणतकमें उन्हें सम्मिलित किया गया है ।

पाठकवृन्द ! तनिक गौके उपकारोंपर दृष्टिपात कीजिये । अतिप्राचीन कालसे गौने मनुष्य-जातिको सुखी एवं समृद्ध बनानेमें महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । जिन शुद्ध, पवित्र एवं परम पौष्टिक भोज्यान्नोंको खा-पीकर जनता बलशालिनी बनती है, वे प्रायः गोमाताद्वारा ही प्राप्य हैं । यही कारण है कि भारतवर्षमें सर्वत्र हिंदुओंमें गौ परम-पूज्य मानी जाती है । खेद है कि ऋग्वेदकालीन विद्वान् कृतज्ञतापूर्वक गोवंशका जितनी उत्तमताके साथ परिपालन करते थे, अज्ञानवश आज हम उन्हें अवहेलनाकी दृष्टिसे निहार रहे हैं !

मनुष्यके लिये सर्वोत्तम आहार अर्थात् दूध गौ ही देती है । जिन पौष्टिक तत्त्वोंसे लालित-पालित होकर शिवाजी तथा प्रताप-सरीखे वीर उत्पन्न हुए, वह गौकी ही महिमा है । गौ अन्न, बल, रूप और सुख देनेवाली है—यह जानकर और दैनिक जीवनमें अनुभव करनेके पश्चात् ही पूर्वपुरुषोंने गौकी ऐसी महिमा वर्णन की है । जैसे माता-पिता हमारे हैं, इसी भाँति गौ भी हमारी हितकारिणी है । वास्तवमें गौके समान उपकारी जीव मनुष्यके लिये दूसरा नहीं है ।

गोरक्षा हिंदू-धर्मके अन्तर्गत है । प्राचीन आर्योंने गोवंश-की रक्षाके लिये अमित शक्तिका प्रयोग किया है । राज्य-शक्तियाँ गोरक्षाका कार्य शासनका प्रधान कर्तव्य मानकर करती थीं । उन्हें पग-पगपर गौकी उपयोगिता प्रतीत होती थी । इसी कारण उन्होंने निर्देश किया है—

धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा ।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते ॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च ।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः ॥

(महा० अनु० ८३ । १८-१९)

अर्थात् गौएँ अपने दूध और घीसे जनताका भरण-पोषण करती हैं तथा उनके बच्चे कृषकवर्गकी विशेषरूपसे सहायता करते हैं । उनकी सहायतासे नाना प्रकारके सात्त्विक भोज्यान्न उत्पन्न किये जाते हैं । उन्हींकी सहायतासे जनताके देव तथा पितृकर्म सम्पन्न होते हैं । भावार्थ यह है कि मनुष्य-मात्रका अपना जीवन बनाये रखनेके लिये जिन सात्त्विक भोजनोंकी परम आवश्यकता होती है, उन्हें उत्पन्न करनेमें गोवंश व्यापकरूपसे सहायक होता है । इसी कारण आर्योंने गोरक्षाका आग्रह किया है तथा गोरक्षाको धर्मके अन्तर्गत माना है । प्राचीन भारतके मनीषियोंने गोरक्षा तथा गो-महिमाका इसी कारण इतना समर्थन किया है; क्योंकि उनकी सहायतासे भारतकी जनताको परम पौष्टिक खाद्य सामग्री सहज-हीमें उपलब्ध हो जाया करती थी । गोशालाएँ कैसी हों, उनकी व्यवस्थाका ढंग, चारेका प्रबन्ध, गोवंशके गुणोंकी रक्षा एवं अभिवृद्धिके लिये किस प्रकारके साँड़ोंकी आवश्यकता है—इन तमाम प्रश्नोंपर ऋषियोंने अपने विचार प्रकट किये हैं । एक स्थानपर कहा गया है कि—

तत्र दिव्यान्यरण्यानि दिव्यानि भवनानि च ।
यत्र वृक्षा मधुफला दिव्यपुष्पफलोपगाः ॥
वरुणादित्यसङ्काशैः भान्ति यत्र जलाशयाः ।

अर्थात् गोमाताके निवास करनेके स्थान अत्यन्त दिव्य बनने चाहिये; जिनमें वे सुखसे रह सकें । आस-पास चरनेके लिये पुष्ट चारेका प्रबन्ध हो । गोशालाओंके समीप यत्र-तत्र मीठे फल एवं सुगन्धित पुष्पोंके वृक्ष भी होने उचित हैं । इस अवतरणसे स्पष्ट है कि राजा-महाराजा गोधनकी अभिवृद्धि-में सदैव निरत रहते थे तथा उनके परिपालनार्थ जो कुछ भी उत्तम हो सकता था, उसे अवश्य करते थे ।

आज हम जिधर दृष्टि करते हैं—अशान्ति, दुर्भिक्ष एवं ह्रास ही पाते हैं । हमारे शरीर दुर्बल एवं कृशकाय हो गये हैं । हमारे देशकी मृत्युसंख्या वृद्धिपर है । नाना प्रकारके शारीरिक रोग शरीरमें घर कर गये हैं । हम अस्थिपिञ्जरवत् शेष रह गये हैं । यह बात सर्वविदित है कि बच्चोंके शारीरिक विकासके निमित्त दूध अनिवार्य तत्त्व है । बिना दूधके न उनकी अस्थियाँ बढ़ सकती हैं और न नेत्रोंमें ज्योति ही आ सकती है । हमारे देशमें क्षयरोग नित्यप्रति बढ़ रहा है । औसत आयु निरन्तर घटती ही जा रही है । इसका प्रधान कारण अपवित्र खाद्य सामग्री ही है । जो वस्तुएँ आवश्यक हैं, वे घटती जा रही हैं । जिन व्यक्तियोंने भारतके पुनरुत्थानका बीड़ा उठाया है, उनका कर्त्तव्य यहीं अन्त नहीं हो जाता कि वे किसानकी उपजको ही बढ़ानेके मार्ग दर्शायें । उन्हें उचित है कि वे गो-दुग्धकी महिमा बतायें, उसके द्वारा क्या-क्या उपकार हो सकता है, इस प्रश्नको स्पष्ट करें । साथ ही गोवंश-के भीषण क्षयको रोकनेका आन्दोलन करें । इन दोनों प्रश्नोंपर भी विचार कर लेना चाहिये ।

खेदका विषय है कि देशमें खुल्लमखुल्ला परम हितैषिणी गोमाताकी हत्या होती है । पिछले दिनोंमें गोवंशका बड़ा भीषण ह्रास हुआ है । हमें चाहिये कि इसके विरुद्ध देशमें आवाज ऊँची

करें। देशमें गोपालनके लिये आदर्श गोशालाएँ प्रस्तुत करें। सारे भारतवर्षमें हजारोंकी संख्यामें गोशालाएँ वर्तमान हैं, जिनमें सैकड़ों तो ऐसी हैं, जिनका वार्षिक बजट दस हजारसे एक लाखतक है। यदि प्रयत्न किया जाय तो उन्नतिके लिये पर्याप्त स्थान है। जो भाई इस दिशामें काम करनेके लिये उत्साहपूर्वक अग्रसर होंगे, उन्हें मार्ग मिल ही जायगा।

गोपालनका दोहरा उद्देश्य

आजतक यूरोप और अमेरिकामें गायसे दूध-दही तथा मांस प्राप्त करनेके दोहरे उद्देश्यसे गोपालनके अनेक बार प्रयत्न किये गये हैं, किन्तु इन दोनों उद्देश्योंमें जमीन-आसमानका अन्तर है। जैसे पानी और तेल एक रूप नहीं हो सकते वैसे ही एक ही गायसे पर्याप्त दूध और मनचाहा मांस प्राप्त करना असम्भव है। किसी गायसे दोनोंमेंसे केवल एक ही उद्देश्य सफल हो सकता है। यदि दोनों ही बातें प्राप्त करनेका विचार किया जाय तो एक भी हाथ न लगेगी।

भारतवर्षमें भी गोपालनके मुख्य दो उद्देश्य हैं; किन्तु सौभाग्यसे ये यूरोप और अमेरिकाके समान परस्परविरोधी नहीं। ये दो उद्देश्य हैं—(१) दूध-दही एवं (२) कृषि तथा यातायातके लिये बैल प्राप्त करना—ये दोनों उद्देश्य परस्पर पोषक हैं। गायका दुधारूपन बढ़नेसे बछड़ोंको पर्याप्त दूध मिलता है, जिससे वे बलवान्, हृष्ट-पुष्ट और चपल होते हैं और यदि आप बैल अच्छे चाहते हैं, तो वे गाय दुधारू होनेसे ही प्राप्त हो सकते हैं।

भारतवर्षमें सामान्यतः गो-मांस-भक्षण निषिद्ध माना जाता है। अतः मांसके लिये गाय-बैल पालनेका प्रश्न ही यहाँ उपस्थित नहीं होता। अधिकांश हिंदू शाकाहारी हैं। उन्हें अपने जीवननिर्वाहके लिये दूध-दही और कृषिसे प्राप्त अनाजकी ही आवश्यकता होती है और ये दोनों चीजें जिस एक प्राणीमें प्राप्त हो सकती हैं, उसीकी इस देशको आवश्यकता है। अब देखना चाहिये कि उच्चकोटिकी दुधारू गायके लक्षण क्या हैं? ऐसी गाय स्वभावसे शान्त, सुडौल, हृष्ट-पुष्ट, बलवान् हड्डियोंवाली होती है। उसके पैर अधिक लंबे नहीं होते और वह देखनेमें सुन्दर और चपल होती है। उसकी भूख और पाचन-शक्ति तीव्र होती है। शरीरकी ऊँचाई अधिक नहीं होती, पर शरीर मांसल और दर्शनीय होता है। बड़ा न होनेपर भी उसका वजन भी पूरा होता है, पर शरीरमें चर्बी अधिक नहीं होती। वह चाहे विशालकाय न हो, पर फलने-फूलनेवाली हो। बाह्य सुन्दरताकी अपेक्षा स्वभावमें शान्ति हो। उसका शरीर हाथीके समान भारी बेडौल नहीं, बल्कि सुडौल हो। सामान्यतः अच्छे बैलके भी ये ही लक्षण हैं। अपनी गायको ऐसा बनाना चाहिये। ऐसी गायसे ऐसे ही उत्कृष्ट बैल मिल सकते हैं; फिर भी उसका दुधारूपन बना रह सकता है। माताके गुण बछड़ेमें आ जायँ, इसमें कोई कठिनाई न होगी। इसीलिये भारतवर्षमें गाय-बैल पैदा करनेका व्यवसाय करनेवालोंको सिर्फ अच्छे बैल पैदा करनेका ही ध्यान न रखना चाहिये, किन्तु साथ-साथ दुधारू बछिया भी पैदा करनी चाहिये। सिर्फ बैलोंपर ध्यान देकर गायोंकी उपेक्षा करनेसे व्यवसाय हानिप्रद होता है।

यदि थोड़ी देरके लिये यह कल्पना की जाय कि हमारे देशमें एक ऐसा गोवंश है, जिसके बैल तो उत्कृष्ट कोटिके होते हैं, पर गायें बिल्कुल दूध न देनेवाली या थोड़ा दूध देनेवाली होती हैं, तो ऐसी जातिसे राष्ट्रकी अत्यधिक हानि होगी। गायोंसे यदि दूधकी कोई आमदनी ही न हुई तो सिर्फ बैलोंके लिये उन्हें पालना बहुत ही हानिकर होगा। यदि बछड़ा हुआ तो वह खेतीके काममें आ सकता है। और यदि बछिया हुई तो दूध-दही उत्पन्न करनेके काम आनी चाहिये, अन्यथा गायोंका पालन लाभदायक नहीं हो सकता। बैलके द्वारा होनेवाली आमदनी तो फसलपर होती है किन्तु गायके दूध-दहीसे रोज ही आमदनी होती है। यह कहा जाता है कि किसान अपनी गायोंसे ही बैल पैदा करनेके लिये तैयार नहीं होता। उसे गायें पालनेमें अपने नित्यके कार्यमें विशेष लाभ नहीं प्रतीत होता। अतः वह गायें घर न पालकर दूसरोंको बेच देता है और बैल खरीदकर अपना काम चलाता है। जो व्यवसायी गौएँ खरीदकर पालते हैं, उन्हें संवर्द्धन-शास्त्रका ज्ञान नहीं होता। वे चाहे जिस जातिकी गायको चाहे जैसे साँड़से गाभिन करा लेते हैं और जैसी सन्तति होती है उसीसे संतुष्ट रहते हैं। इससे खेतीके लिये जरूरी अच्छे बैलोंका मिलना कुछ

दिनोंमें असम्भवप्राय हो जायगा। इस दुःस्थितिको सुधारनेके लिये किसानों और जमींदारोंको समझा-बुझाकर कुछ प्रयत्न किया जा सकता है। इसके लिये किसानों और जमींदारोंका ही सहयोग प्राप्त करना होगा।

उत्पत्तिका मुख्य उद्देश्य होना चाहिये पर्याप्त दूध-दही देनेवाली गौएँ तथा खेतीके लिये अच्छे बैल प्राप्त हों, ऐसी गायोंका ही संवर्द्धन करना। एक ही गायसे दुधारू बछिया, तथा मेहनती और हृष्ट-पुष्ट बछड़े दोनों प्राप्त हो सकते हैं और इसीसे कृषि और गो-संवर्द्धन दोनों लाभदायक होंगे। मैं अपने अनुभवसे कह सकता हूँ कि भारतीय गाय प्रत्येक बियानपर साधारणतः पूरा १००० पौंड भी दूध नहीं देती, जब कि एक मध्यम अंग्रेजी गाय करीब ६००० पौंड देती है। अब यदि इस भारतीय गायपर एक भी पैसा अधिक खर्च किये बिना सिर्फ इसके विशिष्ट गुणोंकी वृद्धि करनेका प्रयत्न किया जाय तो थोड़े ही समयमें उसका दूध दूना हो जायगा और साथ ही अच्छे बैल भी मिलने लगेंगे। देखिये इसका देशकी आर्थिक स्थितिपर क्या परिणाम होगा। भारतवर्षमें आजकल करीब ५ करोड़ गायें दूध देनेवाली हैं। ऐसा यदि मान लिया जाय और उनका दूध इसी प्रकारसे बढ़े तो इस बढ़े हुए दूधसे (दो आना सेरके हिसाबसे) एक वर्षमें देशको १५० करोड़ रुपयेका लाभ होगा। गायोंकी उपर्युक्त संख्या बिल्कुल सही नहीं है। केवल गायोंके संवर्द्धन और सुधारका देशपर कितना व्यापक प्रभाव पड़ सकता है, इसकी कल्पना दिलानेके लिये ही मोटे तौरपर मान ली गयी है।

इसी प्रकार भारतीय गायकी जाति सुधारनेके लिये विदेशोंसे अधिक कीमती साँड़ मँगानेकी भी कोई जरूरत नहीं है। यदि अच्छी जातिके चुने हुए साँड़ोंका ही प्रयोग किया जाय तो काम चल जायगा। कुछ दिन पूर्व मैंने एक देशी गायोंका बाड़ा देखा था। वहाँकी किसी गायका उपयोग दूध-दही आदिके लिये नहीं होता था। पर वहाँ मुझे जो अच्छी-अच्छी बछिया दिखायी दीं, वे सब खेतोंमें काम करनेवाले मजबूत बैलोंकी ही सन्तान थीं। जाँच करनेपर मालूम हुआ कि अच्छी दुधारू गायोंके बछड़े भी अच्छे ही होते हैं। सारे देशका अनुभव भी यही है। गायोंका संवर्द्धन करनेका यही एकमात्र लाभदायक मार्ग है और यह अर्थशास्त्रके सिद्धान्तोंपर स्थित है। यदि दूध-दहीसे होनेवाली आमदनीकी उपेक्षा करके केवल गोसंवर्द्धन किया जायगा तो वह किसानको लाभदायक न होगा और दुधारू बछिया और खेतीके लिये मेहनती मजबूत बछड़े पैदा करनेका यह व्यवसाय जबतक किसान स्वयं अपने हाथोंमें न ले लेंगे, तबतक सुधार होनेकी कोई आशा नहीं है।

(डेयरी फार्म्स सदर्न सर्कल (बंगाल) के असिस्टेंट डाइरेक्टर श्रीविलियम स्मिथके 'The dual purpose of Cow for India' लेखका अनुवाद)

स्वर्णभूमि श्मशान बन जायगी

दाँतों तले तृण दाबकर हैं दीन गायें कह रही—
'हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही?
हमने तुम्हें माँकी तरह है दूध पीनेको दिया,
देकर कसाईको हमें तुमने हमारा वध किया।'
'क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं बलहीन हैं,
मारो कि पालो कुछ करो तुम हम सदैव अधीन हैं।
प्रभुके यहाँसे भी कदाचित् आज हम असहाय हैं,
इससे अधिक अब क्या कहें—हा! हम तुम्हारी गाय हैं।'
जारी रहा क्रम यदि यहाँ यों ही हमारे नाशका,
तो अस्त समझो सूर्य भारत-भाग्यके आकाशका।
जो तनिक हरियाली रही, वह भी न रहने पायगी,
यह स्वर्ण-भारतभूमि बस, मरघट-मही बन जायगी।'

—कविवर मैथिलीशरण गुप्त (भारत-भारतीसे)

घर-घर गोपालनकी आवश्यकता

(लेखक—श्रीयुत कृष्णगोपालजी माथुर)

अनन्तकोटि ब्रह्माण्डके नायक श्रीकृष्ण भगवान्‌की अत्यन्त प्यारी गौएँ आज जिस दुर्दशाको प्राप्त हैं, वह किसीसे छिपी नहीं। 'दूध और दहीकी नदियाँ बहती थीं' वह जमाना तो गत युगकी बात हो गयी; परन्तु हमें और हमारे बाल-बच्चोंको औसत आधी छटाँक दूध भी मिलना आज महाकठिन हो रहा है,—धारोष्ण दूधकी बात तो अलग ही है। इसीके अभावसे हमारे शक्ति-सामर्थ्य और धन-धर्मकी जो हानि हो रही है, वह प्रत्यक्ष है; परन्तु यह दोष किसका ?

इस प्रश्नका उत्तर कई प्रकारसे दिया जा सकता है, पर प्रधान बात यह है कि प्रत्येक गृहस्थने गाय पालना छोड़ दिया ! वह भावना ही प्रायः धार्मिक लोगोंके दिलोंसे निकली जा रही है कि सुबह ही उठकर गायके दर्शन करना और हमारे आँगनमें उसका गोबर-मूत्र गिरना बड़ा ही शुभ है।

इधर गोरक्षाकी तरफ ऐसी उदासीनता हुई और उधर गोवंशका लगातार कटना बढ़ता ही गया। परिणाम यह हुआ कि आज दूध शीशियोंमें दवाकी तरह मिलनेकी नौबत आ गयी है। यदि यही हाल रहा तो हमारे स्वास्थ्य, शक्ति, सामर्थ्य, कृषि, वाणिज्य और धन-धर्मकी महान् हानि होते हुए हमारा जीवन भी अकालहीमें कालकवलित हो जायगा। इसे सूक्ष्मरूपसे विचार कर देख लीजिये, नतीजा यही सामने आयगा।

अतः अब प्रत्येक गृहस्थके लिये गौ पालना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। धार्मिक दृष्टिसे भी यह जरूरी और आर्थिक दृष्टिसे भी लाभदायक। यहाँ केवल आर्थिक लाभकी दृष्टिसे ही इसपर विचार कीजिये, तो गोपालन एक रोजी और गृहस्थी-पालनका प्रधान, स्वतन्त्र और आवश्यक जरिया मालूम होगा।

आजकल प्रायः दो प्रकारके भयोंसे लोग गायें नहीं पालते—(१) झंझट, (२) बाजारसे दूध खरीद लेनेकी अपेक्षा गायका पालना महँगा पड़ेगा।

परन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो ये दोनों बातें—निर्मूल हैं। किसी भी प्रान्तके निवासी वहाँकी दरसे चारे-दानेका खर्च लगावें, और उस खर्चके मुकाबलेमें अपने घरकी गायके असली दूधका, उपलोंका, उसके बैल-बछिया बेचनेकी आमदनीका, मक्खन, मठा, घृत आदिका मूल्य जोड़कर हिसाब लगावें, तो व्ययकी अपेक्षा आय ही अधिक बढ़ेगी। इस आयसे गृहस्थीके पालन-पोषणमें एक खास सहायता मिल सकती है। आज भी हम देखते हैं कि कई व्यक्ति, कृषक और खास-खास गोपालक जातियाँ इसीकी आयसे घर-गृहस्थीका काम चलाती, शादियाँ करती और अन्य धंधे भी स्वतन्त्रताके साथ कर रही हैं। हमें तो उनको धन्य मानना चाहिये कि इस भयङ्कर जमानेमें भी उनके द्वारा कुछ तो गो-रक्षा हो ही रही है। इसमें हम सब भी हाथ बटावें, तो क्या ही अच्छा है।

इस प्रकार गोपालनसे खासतौरपर निम्नलिखित लाभ होंगे—

(१) गो-सेवाका अवसर हमें अनायास ही प्राप्त होगा।
(२) गो-रक्षा होगी।
(३) गो-वंशकी वृद्धि होगी।
(४) घर-घर शुद्ध दूध, मक्खन, मठा, घी, कंडे आदिका अभाव जाता रहेगा।
(५) शुद्ध घी, दूध, मक्खन मिलनेसे हम और हमारे बाल-बच्चे स्वस्थ और शक्तिशाली बने रहेंगे। हमारी जीवनी शक्ति बढ़ेगी, जिससे हम विशेषरूपसे देश, समाज और जातिकी सेवा कर सकेंगे।
(६) हमारी भावी संतानमें भी उपर्युक्त गुण आवेंगे।
(७) गोसंतान अर्थात् बैल-बछियाको सच्चे गोभक्तोंके हाथ बेचकर हम आर्थिक लाभ उठावेंगे।
(८) गो-गोबर और गो-मूत्रको अनेक कीटाणुओं, संक्रामक रोगों और अन्य रोगोंका नाशक बताया गया है; यह लाभ भी हमको घर बैठे ही मिलेगा।

इतने लाभोंके सामने यदि हमको कुछ झंझट भी उठाना पड़े तो उसे सहर्ष उठाना चाहिये; क्योंकि कहावत प्रसिद्ध है कि—

'लात खाय पुचकारिये, होय दुधारू गाय'



गोरक्षा

(लेखक—श्रीताराचन्द्रजी पांड्या, बी० ए०)

आहार, पानी और हवाके महत्त्वको बतानेके लिये शास्त्रोंके प्रमाणकी आवश्यकता नहीं है। यही बात गायके भी सम्बन्धमें है। गायसे दूध, घी, दही और छाछ मिलते हैं, जो कि भूलोकके अमृत हैं; गायके बछड़े बैल बनते हैं, जिनसे जीवनस्वरूप अन्नको देनेवाली और नाना प्रकारके उद्योग-व्यवसायकी आधार कृषि होती है। गायके मल-मूत्रसे रोगोत्पादक कृमियोंका निराकरण होता है और कृषिके लिये उत्तम खाद प्राप्त होती है (अतएव गोबरमें लक्ष्मीका निवास बतलाना ठीक ही है।) और अन्तमें गायके चमड़ेसे पैरोंकी रक्षाका भी साधन मिलता है। इससे मालूम होता है कि देववाणी संस्कृतमें गाय (गो) शब्दके जो उत्तमोत्तम अर्थ—स्वर्ग, वाणी, वसुन्धरा आदि हैं, वे अकारण नहीं हैं। परन्तु कितना दुःख है कि सात सौ वर्षव्यापी मुस्लिम बादशाहोंके शासनकालमें भी गोवंशका जैसा नाश और जैसी दुर्गति नहीं हुई, वैसी इधर सौ वर्षोंमें हुई है और कुछ वर्षोंसे तो इस दुर्गतिकी प्रगति और भी भीषण द्रुतगतिसे हो रही मालूम होती है। इसीका परिणाम है कि घी और दूध जिन भावोंमें मुस्लिम युगमें मिलते थे उनसे प्रायः सौगुने भावोंमें आजकल मिलते हैं और उन भावोंमें भी शुद्ध रूपमें तो दुर्लभ ही हैं! तब आर्यजातिके स्वास्थ्यकी, तेजकी तथा शारीरिक और मानसिक बलकी रक्षा किस तरह हो? पर इसके लिये किसे दोष दें। अगर निष्पक्षतासे देखा जाय तो इसके लिये हमारी हिंदू-जातिका कम दोष नहीं है। ये हिंदू ही हैं, जो गायको देवतास्वरूप और सब देवोंका वासस्थान मानते हुए भी उसके मन्दिर (निवासस्थान) को मैला रखते हैं, गायको गंदा और अपर्याप्त खाना-पीना देते हैं और उसके भक्त बननेका स्वाँग रचते हुए भी उसके प्रति नाना प्रकारकी क्रूरताका व्यवहार करते हैं। गायोंके दूध देना बंद कर देनेपर और बैलोंके असमर्थ या वृद्ध हो जानेपर उन्हें कसाइयोंको बेच देनेवाले क्या हिंदू नहीं होते हैं? ये हिंदू ही हैं, जो गोपाल और गोविन्द श्रीकृष्णके उपासक होते हुए भी तथा 'कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्' कहनेवाले शास्त्रोंको मानते हुए भी ग्वालोंको हेय समझते हैं। इसलिये अगर हमको अपनी जाति और संस्कृतिका अस्तित्व रखना है और अपनेको तथा अपनी सन्तानको पुष्ट, मेधावी और सुखी बनाना है तो हमको चाहिये कि उपर्युक्त बुराइयोंको अपनेसे दूर करें और निम्नलिखित उपायोंका अवलम्बन करें—(१) हर-एक हिंदू-कुटुम्ब गाय पाले, यह समझे कि मुख्य और सच्चा धन (Capital) तो गाय (Cattle) ही हैं और जबसे धनका अर्थ रुपया (Money) मान लिया गया, तभीसे अर्थसे अनर्थ होने शुरू हुए हैं। (२) प्रत्येक किसान जितनी गायें पाल सके, पाले। इससे उसके खेतका उपजाऊपन भी बढ़ेगा। (३) स्थान-स्थानपर पशु-चिकित्सालय खोले जावें। (४) उपदेशों, सस्ती पुस्तकों, फिल्मों आदिके द्वारा सरल भाषामें सबको गायोंकी सेवा-टहल, पालन-पोषण तथा दूध और घीको सुरक्षित रखना—आदि सम्बन्धी ऐसी बातें बतायी जावें, जो यहाँ व्यवहार्य हों और उनपर अमल करानेके लिये यथासम्भव कानून भी बनवाये जायँ। (५) गर्मीमें साफ पानी पिलानेके लिये पोखरे आदि बनावें और गायोंकी नस्ल सुधारनेके लिये अच्छे देशी साँड़ छोड़ें, और इन दोनों बातोंका शास्त्रोंमें जो महान् पुण्य बताया है, उसका प्रचार करें। (६) बूढ़ी गायों और बूढ़े बैलोंको कसाइयोंके हाथ बेचना बंद करें और उनकी रक्षाके लिये पिंजरापोल, गोशाला या अन्य ऐसी ही सार्वजनिक संस्थाएँ कायम करें (जाति-पंचायतोंको भी इस ओर विशेष लक्ष्य देना चाहिये)। (७) यथासम्भव, गाँवोंसे शहरोंको पशु न जाने दें, क्योंकि गाँवोंमें पशुओंका स्वास्थ्य और पालन अच्छा हो सकता है और शहरोंमें पशु दूध छूटनेपर प्रायः कसाइयोंको बेच दिये जाते हैं। इसके अलावा गाँवोंसे पशु-धनके निकल जानेसे गाँवोंमें और अन्ततः समग्र देशमें पशुकी नस्लका ह्रास होता है। (८) फैन्सी चमड़ेका और उससे बनी वस्तुओंका उपयोग कभी न करें; क्योंकि ऐसे चमड़ेके लिये कई बार जीवित पशुओंका और उनके कोमल बच्चोंका वध किया जाता है। (९) पवित्र पशु या देवताके तौरसे नहीं किन्तु राष्ट्रकी अमूल्य सम्पत्तिके तौरसे गायकी रक्षाके लिये—उसके वधके परिहारके लिये—गैर-हिंदू भाइयोंसे अनुरोध करें, परन्तु इसके लिये हठ न करें। हठसे तो पक्षपात और दुराग्रह बढ़ता है और गो-हत्याको

प्रोत्साहन मिलता है। (१०) सरकारने पशुवधपर नियन्त्रण करनेके लिये जो कुछ कानून जारी किये हैं (यद्यपि वे अस्थायी और अपर्याप्त हैं) उनका उपर्युक्त दृष्टिसे ही उपयोग करके यथासम्भव गो-वध और पशु-वध रुकावें। यूरोप और अमेरिकामें भी दूधके (Dairy) जानवर मांसके लिये कभी नहीं मारे जाते। वहाँ मांसके लिये पशु विशेषतौरसे पाले जाते हैं, परन्तु कितने परितापकी बात है कि यहाँ इसपर कुछ भी खयाल नहीं किया जाता है और दूध देना बंद कर देनेपर दुधारू पशुओंको भी उनके मांसके लिये वध कर देते हैं। (११) बछड़ों और बछियाओंके लिये पर्याप्त दूध छोड़ें और उनका भी पालन-पोषण ठीक तरहसे करें; क्योंकि वे ही तो बैल और गायें बनते हैं। (१२) प्रत्येक ग्राम और शहरके लिये सुविधाजनक स्थानोंपर पर्याप्त गोचर-भूमि मुफ्त छोड़ी जावे। जंगलोंमें जो घास पैदा होती है और वृथा जाती है, उसे इकट्ठा किया जावे ताकि पशुओंके काममें आ सके। और प्रत्येक किसानके लिये यह अनिवार्य हो कि वह अपनी भूमिके कम-से-कम दसवें हिस्से-में चारा पैदा करे। (१३) वनस्पति घीका उपयोग न किया जाय; वनस्पति घीको इस तरह रँगना अनिवार्य कर दिया जाय कि जिससे उसकी पहचान सुगमतासे हो सके। (१४) क्योंकि मक्खन और पनीर यहाँकी आबहवामें जल्दी बिगड़ जाते हैं और यहाँके लिये उपयुक्त नहीं हैं इसलिये उनके बजाय घी और खोवाको ही बनानेको प्रोत्साहन दिया जाय। (१५) खल और तिलहनोंका निकास बंद किया जाय, क्योंकि तिलहनोंके निकाससे केवल तेल और तेल बनानेका व्यवसाय ही नहीं किन्तु खल (जो कि पशुओंके लिये उत्तम खाद्य-पदार्थ है) भी बाहर चला जाता है। घानियोंसे ही तेल निकाला जाय; क्योंकि इससे मनुष्योंके खानेके लिये अधिक उपयुक्त तेल निकलता है, खातियों और बैलोंको भी काम मिलता है, तथा घानीसे जो खल निकलती है, उसमें मशीनसे निकली खलकी अपेक्षा कुछ ज्यादा तेल होनेसे वह पशुओंके लिये अधिक पुष्टिकर होती है। (१६) पशुओंका चारा बेचकर मुनाफा कमाना अच्छा न समझा जावे; गाँव-की सालभरकी आवश्यकतानुसार चारा मौसमपर खरीदकर उसे बिना मुनाफेके ग्वालोंको देनेका प्रबन्ध किया जाय अथवा ग्वालोंमें पारस्परिक सहयोग कायम किया जाय ताकि उनमेंसे सबकी या अनेककी जमानतपर उनके समाज-को या पृथक्-पृथक् व्यक्तियोंको अपने पशुओंकी सालभरकी आवश्यकताके लायक चारा मौसमपर खरीदनेके लिये रुपया बिना सूद या अत्यल्प सूदपर उधार दिया जा सके। इससे ग्वालोंकी आर्थिक दशा सुधरेगी। उनके विवाह-शादी आदि सामाजिक रीति-सम्बन्धी खर्चे भी कम कराये जायँ। (१७) बहुत दूरके स्थानोंको छोड़कर अन्य स्थानोंके लिये बैलगाड़ियोंके द्वारा ही माल ढोया जाय। इससे गो-वंशकी उपयोगिता बढ़कर उसके अच्छी तरह पालन-पोषणके लिये रुचि और आर्थिक क्षमता बढ़ेगी और साथ ही गाड़ीवालों, किसानों, खातियों, लुहारों, लकड़ी काटनेवालों और बैलोंके लिये घास काटकर लानेवालोंकी आजीविका भी चलेगी या उनकी आयमें वृद्धि होगी, साथ ही मोटर-गाड़ियों और उनके पुर्जे, पेट्रोल वगैरहके लिये जो धन विदेशोंको जाता है, वह बचेगा। बैल-गाड़ियोंके लिये कच्ची सड़क ही पर्याप्त होनेसे पक्की सड़कें बनाने और उनकी मरम्मतमें जो अधिक खर्चा आता है, वह कम होगा और कच्ची सड़कोंके रूपमें अपेक्षाकृत कम खर्चमें ही गाँवोंमें आवागमनके साधन उपलब्ध होकर देशके व्यापार-व्यवसायकी उन्नति होगी।

गायके बिना घर बन्धुशून्य है

गावो बन्धुर्मनुष्याणां मनुष्या बान्धवा गवाम्। गौश्च यस्मिन् गृहे नास्ति तद्बन्धुरहितं गृहम्॥

(पद्म० सृष्टि० ४८ । १५६)

गायें मनुष्योंकी बन्धु हैं और मनुष्य गायोंके बन्धु हैं। जिस घरमें गाय नहीं है, वह घर बन्धुशून्य है।



शापविमोचन

विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः।

'विवेकहीनोंका सब ओरसे पतन होता है।'

"Crime and punishment grow on the same stem."

'अपराध और दण्डविधान दोनों एक ही डालपर पनपते हैं।'

"More population, more the pressure on land;
Scantier the pastures, fewer the cattle;
Poorer the agriculture, weaker the man;
Lower the vitality, lower the efficiency;
And poorer and poorer the country
Poverty cycle spins on and spins on, and spins on
So ziciously, so vexatiously, so vehemently.

'जितनी अधिक जनसंख्या उतना ही अधिक पृथ्वीपर भार; जितनी कम गोचरभूमि, उतने ही कम-पशु; जितनी कम खेती उतना ही मनुष्य दुर्बल; जितना कम बल उतनी ही कम कार्यकुशलता; और फलतः देशकी निर्धनताकी उत्तरोत्तर वृद्धि। दरिद्रताका चक्र चला करता है इतने विषाक्तरूपसे, इतने विकलताप्रद रूपसे, इतने वेगसे।'

'दुबली गायके ज्यादे चींचड़।' यह कहावत अपने कर्मकी और कर्मजनित करम (भाग्य) की कठिनाईसे आज हमारे नित्यके अनुभवकी वस्तु बन गयी है। किन्तु यहाँपर तो हम मानव गायकी नहीं वरं वास्तविक गायकी चर्चा कर रहे हैं। संसारका नियम ही यही है कि जो गिरता है उसीपर लात पड़ती है। जबसे हमारे देशवासी राष्ट्रविवेकसे भ्रष्ट हुए तबसे हमारी जाति और राष्ट्रका विनिपात आरम्भ हुआ। कारणरूप विवेकभ्रष्टता और फलस्वरूप विनिपात जहाँ देखें वहीं साथ-ही-साथ दिखायी पड़ेंगे। 'न कार्यं कारणाद्विना।' लोग कहते हैं—'विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।' विनाश तो आ गया फिर विपरीतबुद्धिसे क्या तात्पर्य? सही बात तो यह होती कि पहले विपरीतबुद्धि फिर विनाशकाल। बिना बुद्धिके विपरीत बने विनाश या विनाशकाल नहीं होगा। प्रकाशसे सूर्य नहीं है वरं सूर्यसे प्रकाश है। धुएँसे अग्नि नहीं होती पर अग्निसे ही धुआँ हो सकता है।

उन्नति और अवनति व्यापक वस्तु हैं। जो एक क्षेत्रमें होती है वही दूसरोंमें भी पहुँच जाती है। अपनी राष्ट्रीय गो-नीतिमें भी जबसे हम विवेक गवाँ बैठे हैं तभीसे हमारी गो-अवनति आरम्भ हुई और हम वेगसे अवनतिके गर्तमें गिर पड़े। चढ़नेकी क्रिया गुरुत्वाकर्षणके विरुद्धकी—प्रति-गुरुत्वाकर्षण (Antigravitation) की होती है। इसीलिये उसमें शक्ति अधिक लगती है और चढ़ाई धीमी होती है। परन्तु विनिपातके विषयमें तो गुरुत्वाकर्षणका बल बढ़ता रहनेसे बिना आयास-प्रयासके पतनका वेग गुणोत्तर-श्रेणी (Geometrical progression) में बढ़ता है। वैज्ञानिक शब्दावलीमें कहें तो जबसे हमने अपना गुरुत्व-मध्यविन्दु—राष्ट्रीय स्वस्थताको खो दिया, तभीसे हम गिरे। यदि अपने गुरुत्व—गौरवकी रक्षा करनी है तो हमको अपने मध्य-विन्दुसे चिपटे रहना चाहिये। हमारे राष्ट्रका मध्यविन्दु था—गौ (गाय, पृथ्वी और इन्द्रिय)। जबसे हम अपनी गो-नीतिसे विचलित हुए तभीसे हम गौरवभ्रष्ट प्रजा बन बैठे हैं। अब जब हम अपने गौरवके मध्य-विन्दु—गौको प्राप्त करेंगे तब फिर स्वस्थ प्रजा बन जायँगे।

इसलिये जब हम शरीरकी आरोग्यतारूपी गौ, खेती और गाय—इन तीनोंकी साम्यस्थिति प्राप्त करेंगे तब हमारा उत्थान निश्चित है। भारतीय प्रजा, भारतीय खेती और भारतीय गाय—ये तीनों 'गो' एक ही साथ जड़ी-जकड़ी हैं। यह भूली हुई राष्ट्रीय त्रिकोणमिति (Trignometry) हमको सीख लेनी चाहिये। इसके सीखते ही हमारी उन्नति होगी, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इस राष्ट्रीय त्रिकोण-का आधार है 'भारतकी गाय'। अन्य दोनों भुजाएँ भारतीय खेती और भारतीय प्रजा हैं। गायसे प्रजा और खेती दोनोंका विकास होगा। गौके बिना कृष्यन्न भी नहीं मिलेंगे। दुग्धान्न भी बिना गौके नहीं प्राप्त होंगे। इसीलिये कहते हैं कि गौकी उपासना करो। खेती बिना गाय जी सकेगी, पर गायके बिना खेती नहीं। प्रजाके बिना गाय जी सकेगी, पर गायके बिना प्रजा नहीं। इसलिये गायकी वृद्धि करो। फिर दोनोंकी वृद्धि होगी। चन्द्रके बिना पृथ्वी रहेगी और पृथ्वीके बिना सूर्य; परन्तु सूर्यके बिना न पृथ्वी रहेगी न चन्द्र। वैसे ही गायके बिना न प्रजा रहेगी न खेती।

जो भवानी, पार्वती, शिवा और कल्याणी है उसको दुःख

पहुँचानेसे वही साक्षात् काली, रुद्राणी, चण्डी और दुर्गा बन जाती है। राष्ट्रकी कामधेनु तो वसिष्ठ और अरुन्धतीके आँगनमें उतरती है न कि किसी दूसरेके। विश्वामित्र भी उसको नहीं छीन सकते। वसिष्ठ-अरुन्धतीकी सुरभि विश्वामित्रकी संहारिणी रुद्रा बन बैठती है, इसको मत भूलिये। कामधेनु तो सात्त्विक ब्राह्मणके यहाँ रहती है, न कि लोभ-तृष्णासे भरे हुए विश्वामित्र-जैसे राजसिकके पास। दुग्धान्न भी तो सात्त्विक ही होते हैं। उनमें मद्यकी-सी राजसिकता और तामसिकता कहाँ ?

विश्वामित्र थे नयी सृष्टिके सृजनकर्ता—लोभ, मोह और तृष्णाके रजसूसे प्रदीप्त। उनको भला कामधेनुका सात्त्विक रस कहाँसे मिले ? हम भी नयी सृष्टि बना रहे हैं जिसमें जड़वाद और जड़ता अधिक है। जहाँ देखो वहीं स्वार्थान्धता, मतान्धता और यथेच्छाचारकी धाँधली है। इसीलिये हमारे यहाँ पहले-जैसी हृष्ट-पुष्ट और तुष्ट कामधेनु नहीं रह गयी है; अब तो वह रुष्ट, दुष्ट और क्रुष्ट वैरिणी बन गयी है। हम विश्वामित्र-पदसे जब वशिष्ठत्व और अरुन्धतीत्व प्राप्त करेंगे तब वह भी फिर कामधेनु बन जायगी। अतः हमको फिर अरुन्धती और वसिष्ठ बनना चाहिये। वशमें—संयममें—नीति-नियममें रहकर वशी—प्रभुमें स्थिर होनेसे हम वशिष्ठ बन सकते हैं। तब वशा (अनुकूल गाय) हममें, हमारे जीवनमें, आँगनमें और नस-नसमें आ बसेगी। तब कामधेनुका कृपाप्रवाह हमारे आँगन, जीवन और रोम-रोममें बहेगा। और तब हमारी गृहिणियाँ भी अरुन्धती बन जायँगी। वे न तो हमारी गो-नीतिके लिये रुकावट बनेंगी और न हमारी कामधेनुके लिये ही। वे तो हम दोनोंके लिये ही अरुन्धती बन जायँगी। परन्तु इसके लिये पहले हमें वशिष्ठ बनना चाहिये। हम वशिष्ठ बनें तो हमारी पत्नी अरुन्धती बने और हमारी गाय कामधेनु। यह है हमारा शाप-विमोचन। क्या हम इसी पथपर अग्रसर होंगे ? (डी० जा०)

गौ और नारी

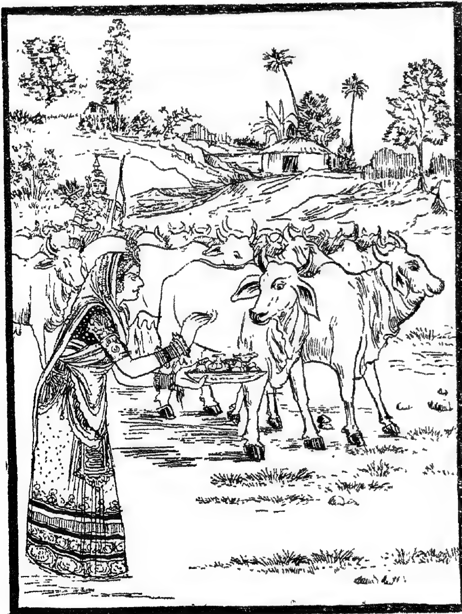
(लेखक—श्रीशान्तिकुमार नानूराम व्यास, एम्० ए०)

मनुष्य अपनी सभ्यता और संस्कृतिके लिये नारीका ऋणी है। नारीके सहज सौन्दर्य, माधुर्य एवं प्रेमने पुरुषको उत्तरोत्तर सभ्य, शिष्ट एवं सुसंस्कृत बननेको प्रेरित किया। पुरुषका नारीके प्रति जो स्वाभाविक आकर्षण और प्रेम है, उसीके सहारे नारीने उसे एक सामाजिक प्राणी बनाया और उस प्रेमको अपने बन्धु-बान्धवोंके प्रति प्रकट कराया। जिस प्रकार पुरुषके निर्माणमें—उसकी सभ्यता एवं संस्कृतिके विकासमें—नारीने योग दिया, उसी प्रकार पुरुषकी ऐहिक संपत्ति और वैभवकी वृद्धिमें गौने अमूल्य सहायता दी है। मानव-जातिकी समुन्नतिके लिये गौने वही सहयोग दिया, जो पतिके लिये उनकी अर्धाङ्गिनी पत्नी अथवा पुत्रके लिये उसकी स्नेहमयी जननी देती है। नारीकी भाँति गौ भी मनुष्योंके सुख-दुःखकी निरन्तर सहचरी रही है। नारी यदि कौटुम्बिक सुख और वंश-वृद्धिकी आधारशिला है, तो गौ न केवल कुटुम्बकी वरं राष्ट्रकी कृषि-सम्पत्तिका एकमात्र स्रोत है। जबसे मनुष्य अपने अस्तित्वका सदुपयोग करनेको उत्सुक हुआ, तभीसे उसने गौ और नारी दोनोंका समादर करना सीखा।

गौकी नारीके रूपमें और नारीकी गौके रूपमें कल्पना करना परम स्वाभाविक है। दोनों एक दूसरेके प्रतीक हैं। मानवीय सभ्यताके अरुणोदयमें गौ या नारीके लिये ही युद्ध हुआ करते थे। दोनों ईश्वरकी मूक, प्रताडित सृष्टिके सच्चे प्रतिनिधि हैं। यदि नारी अबला है तो गौ भी अबला है। लोक-व्यवहारमें दुःखी, निराश्रिता या अत्याचारपीडिता स्त्रीको 'गौ' ही कहा जाता है। जूएमें जीती गयी असहाय द्रौपदीको दुर्योधनने भीष्म और द्रोणके सामने ही बार-बार 'गौ' कहकर पुकारा था (महा० उद्योग० ७३। १९)। एक साध्वी स्त्रीकी भाँति गौमें छल, कपट या वक्रता नहीं होती। गौएँ और स्त्रियाँ दोनों आर्य-गृहकी शोभामें अभिवृद्धि करती हैं। गृहलक्ष्मीकी प्रसन्न-मधुर वाणीके समान ही गौका रँभाना भी माङ्गलिक समझा जाता है—'भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो' (ऋग्वेद ६। १८। ६)। चित्र-विचित्र वर्णवाली ('रुशन्तीः') हृष्ट-पुष्ट गौएँ वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित गृहसुन्दरियोंसे क्या कम शोभावर्धक हैं ?

भारतमें वैदिक-कालसे ही गौका सम्बन्ध मुख्यतः आर्य-परिवारकी महिलाओंसे रहा है। गौएँ पारिवारिक सुख-समृद्धिकी प्रधान कारण थीं। आर्योंकी माताएँ, बहनें और कन्याएँ गौको अपने ही समान परिवारका अभिन्न अङ्ग

समझती थीं। गौओंको दुहनेमें जिस कोमल एवं सहिष्णु व्यवहारकी अपेक्षा होती है, उसकी आशा स्त्रियोंसे ही की जा सकती है। अतएव वैदिक समयमें गौएँ दुहनेका कार्य गृहस्वामीकी कन्याको सौंपा जाता, जिस कारण उसका नाम ही 'दुहिता' (दूध दुहनेवाली) पड़ गया (ऋग्वेद ९। ९७। ४७)। कन्या और गौका यह स्नेह-सम्बन्ध आज भी दृष्टिगोचर होता है। अनेक भारतीय परिवारोंमें घरकी सबसे दुलारी लड़की और सबसे दुलारी गौको 'लक्ष्मी'के नामसे ही पुकारा जाता है। प्राचीन समयमें जामाताका नाम भी 'दुहितृपति' (दूध दुहनेवालीका पति) था। गो-दुग्धका यथोचित विभाजन करना, उसका दही, मट्ठा, मक्खन या घी बनाना—ये कार्य आज भी स्त्रियोंके ही सुपुर्द रहते हैं। गौओं और ग्वालोंके कार्यकी यथोचित देख-भाल करना आर्य-गृहिणीका प्रधान कर्तव्य था। द्रौपदी चरवाहों और सेवकोंसे भी पीछे सोती और सबसे पहले जागती थी (महा० सभा० ६५। २९)। उसने सत्यभामासे कहा था कि अन्तःपुरके ग्वालों और गँड़रियोंसे लेकर सभी सेवकोंके कार्य-व्यवहारका निरीक्षण मैं ही करती हूँ—'अन्तःपुराणां सर्वेषां भृत्यानाञ्चैव सर्वशः। आगोपालाविपालेभ्यः सर्वं वेद कृताकृतम् ॥' (महा० वन० २३२। ५२) गो-पूजाका पुनीत कार्य स्त्रियोंद्वारा ही सम्पन्न होता है। स्त्रियाँ गौको साक्षात् कामधेनुके रूपमें



देखती हैं। महाकवि कालिदासने अपने रघुवंश महाकाव्यका प्रारम्भ राजा दिलीप और उनकी रानी सुदक्षिणाकी गो-पूजासे किया है। जब नन्दिनी गौ सन्ध्यासमय वनसे लौटती तो सुदक्षिणा उसकी पूजा-प्रदक्षिणा करती और फिर प्रणाम करके उसके सींगोंके बीचमें माथेपर चन्दन-अक्षत लगाती, क्योंकि उसका विश्वास था कि वे सींग नहीं वरं मेरी पुत्रकामना पूर्ण करनेके दो द्वार हैं—'प्रणम्य चानर्च विशालमस्याः शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः (रघुवंश २। २१)। किन्तु दूसरी ओर रघुवंशकी समाप्ति कामलोलुप राजा अग्निवर्णके वर्णनसे होती है, जो विषयोंसे अतृप्त रहकर ही इहलोकसे प्रयाण कर जाता है। पर साथ-ही-साथ कवि यह भी संकेत करता है कि अग्निवर्णकी मृत्युके पश्चात् उसकी गर्भवती रानीने राज्यका शासन किया। क्या इसका अर्थ यह है कि पुरुषके उन्मार्गगमनका परिमार्जन नारी ही करेगी और क्या गो-पूजा कृषि-उन्नति, राजनीतिक गौरव और आध्यात्मिक सुख-शान्तिका युग भारतमें पुनः प्रकट होगा ?

अहिंसा, करुणा और सहिष्णुताका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मानव-जगत्में नारी और पशु-जगत्में गौ है। निःस्वार्थ सेवाभावके तो ये चूडान्त आदर्श हैं। अपनी शरीरयात्राके लिये न्यूनतम पदार्थ स्वीकार कर, परोपकारके लिये अधिकतम त्याग करनेके लिये प्रस्तुत रहना सेवाभावका अत्युच्च आदर्श है; विनम्रता, कोमलता, स्नेह और सहानुभूतिका सेवापरायणतासे समवाय-सम्बन्ध है। इस आदर्श सेवाभावका ज्वलन्त उदाहरण सामान्यरूपसे गौ और विशेषरूपसे भारतीय नारी है। भारतीय नारी किसी प्रकारके कष्टसे विचलित न हो, मन-वचन-कर्मसे अपने कुटुम्बियोंकी सुख-शान्तिके लिये ही सतत प्रयत्नशील रहती है। इसीमें वह अपने नारीत्व, पत्नीत्व और मातृत्वकी सफलता मानती है। इसपर भी वह अपने निजी सुखके लिये कुछ नहीं चाहती। अपने कुटुम्बियोंको सुखी देखकर ही वह कृतकृत्य हो जाती है। पशु-जगत्में नारीकी इस अनुपम सेवा-भावनाकी प्रतिकृति गौमें ही देखनेको मिल सकती है। गौ सेवाके आदर्शका परम सुन्दर एवं अनुकरणीय स्वरूप उपस्थित करती है। रूखे-सूखे तृणपर जीवन-यापन करके भी वह बदलेमें संसारका सबसे अधिक शुद्ध, मधुर, रुचिकर और पौष्टिक पेय अपने दुग्धके रूपमें प्रदान करती है। दूध और उससे बननेवाले पदार्थोंसे ही गौ मानव-सेवा नहीं करती, वस्तुतः उसका सम्पूर्ण अस्तित्व, उसका रोम-रोम मनुष्योंके हितार्थ है। उसके गोबर, मूत्र, सींग, त्वचा, हड्डियाँ, खुर, बाल सभी किसी-न-किसी उपयोगमें आते हैं। इसपर भी गौ स्नेह और ममता,

सरलता और सहिष्णुता, नम्रता और निःस्वार्थताकी प्रतिमूर्ति है।

नारीका पवित्रतम स्वरूप उसका मातृत्व है। नारीके इसी मातृ-स्वरूपकी गौ सजीव प्रतिमा है। गौके विशाल दीप्तियुक्त, शान्त एवं स्नेहसिक्त नेत्र जहाँ हमारे हृदयमें उसके प्रति मातृत्वकी भावना जाग्रत् करते हैं, वहाँ उसका शठता या मायासे रहित व्यवहार, निर्मल देह, सुन्दर पूँछ और खुर, कलशतुल्य थन तथा प्रशान्त गम्भीर गति उस भावनाको दृढ़ करते हैं। माताका अपनी सन्तानके प्रति जो निश्छल ममत्व एवं स्नेह है, उसीका मूर्तिमान् प्रतिबिम्ब गौका अपने वत्सके प्रति अनुराग है। माताओं और गौओंका अपने शिशुओंके प्रति जो वात्सल्य-स्नेह है, वही उनके स्तनोंसे निर्मल दुग्धके रूपमें झरा करता है। हमारे ऋषि-मुनि दीर्घचिन्तनके पश्चात् इस निष्कर्षपर पहुँचे कि भगवान्‌की जो कृपा और करुणा माताके रूपमें प्रकट होती है, वही गौके रूपमें प्रस्फुटित हो रही है। माता अक्षरशः अपनी सन्ततिके लिये जीवन धारण करती है। गौका अस्तित्व भी मानवताके कुशलके लिये है। उसमें शत-प्रतिशत मातृत्व-ही-मातृत्व है। जन्म देनेवाली माताके बाद मानव-शिशुकी यदि कोई सच्ची मा है तो वह गौ ही है। आधुनिक नारीके नीरस हृदय और शुष्क स्तनोंसे आकुल सुकुमार शिशुओंके लिये तो गौ साक्षात् प्राण ही है।

गौका अपने वत्सके प्रति जो अपार प्रेम है, वही मानवीय माताओंके लिये मातृत्वका आदर्श है। यदि ऐसा नहीं होता तो हमारे प्राचीन कवि मानवीय मातृस्नेहका वर्णन करते समय गौके वत्स-प्रेमका आदर्श क्यों उपस्थित करते? कुछ उदाहरण देखिये। कुन्तीके बिना बेचारे पाण्डवोंकी दशा बिना गायके बछड़ोंकी-सी हो गयी। पतिके वनगमनके अनन्तर पुत्रका भी वियोग हो जानेसे, देवहूति आत्मज्ञान-सम्पन्न होकर भी, ऐसी व्याकुल हो गयीं, जैसे बछड़ेके बिछुड़ जानेसे उसे प्यार करनेवाली गौ—'ज्ञात-तत्त्वाप्यभून्नष्टे वत्से गौरिव वत्सला' (भागवत ३।३३।२१)। तृणावर्त दैत्यद्वारा फैलाये गये बवंडरमें श्रीकृष्णका पता न पाकर यशोदाकी वही दशा हो गयी, जो बछड़ेके मर जानेपर गायकी हो जाती है—'अतिकरुणमनुस्मरन्त्यशोचद्भुवि पतिता मृतवत्सका यथा गौः' (भागवत १०।२।२४)। रामको वन जाते देख कौसल्या उनका अनुगमन करनेको उसी प्रकार उद्यत हो गयीं, जिस प्रकार अधीर गौ अपने वत्सका 'अनुव्रजिष्यामि वनं त्वयैव गौः सुदुर्बला वत्समिवाभिकाङ्क्षया' (वा० रामायण २।२०।५४)।

कवियोंने भगवान् और भक्तके सम्बन्धका भी गौ और उसके वत्ससे तादात्म्य स्थापित किया है। एक ऋग्वेदीय कवि कहता है कि 'जिस प्रकार गोष्ठके पास आनेपर गौएँ बछड़ोंके प्रति रँभाने लगती हैं, उसी प्रकार हे इन्द्र! हम भी मन्त्रोंद्वारा तेरी स्तुति करेंगे।' ध्रुवने भगवान्‌की स्तुति करते हुए कहा कि 'जैसे गौ अपने सद्योजात वत्सको दूध पिलाती और व्याघ्रादिसे बचाती रहती है, उसी प्रकार आप भी भक्तोंपर कृपा करनेके लिये निरन्तर विकल रहनेके कारण, हम-जैसे सकाम जीवोंकी भी, उनकी कामना पूर्ण करके संसार-भयसे रक्षा करते हैं।' भगवान्‌के दर्शनके लिये व्याकुल भक्तका कैसा मार्मिक उद्गार है—

अजातपक्षा इव मातरं खगाः
स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा
मनोऽरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम्॥

(श्रीमद्भागवत)

'जैसे पक्षियोंके पंखहीन बच्चे अपनी माकी बाट जोहते रहते हैं, जैसे भूखे-भूखे बछड़े अपनी माका दूध पीनेके लिये आतुर रहते हैं, जैसे वियोगिनी पत्नी अपने प्रवासी प्रियतमसे मिलनेके लिये उत्कण्ठित रहती है, वैसे ही हे कमलनयन! आपके दर्शनके लिये मेरा हृदय छटपटा रहा है।'

भक्त और भगवान् अथवा पति और पत्नीके बीच जो मधुर व्याकुलता है, उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति गाय और बछड़ेके सम्बन्धमें देख पड़ती है। स्तनपान करनेकी जितनी तीव्र लालसा बछड़ेके हृदयमें होती है, उतनी ही गायके हृदयमें पिलानेकी भी। बछड़ा पिये बिना नहीं रह सकता, गाय पिलाये बिना। गो-वत्सके इस सम्बन्धमें ब्रह्म और आत्माकी पारस्परिक उत्कण्ठा व्यञ्जित है, 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्' वाला भक्त और भगवान्‌का सम्बन्ध अभिव्यक्त है। पति और पत्नीकी पारस्परिक प्रेम-प्रवणताका भी इससे सुन्दर दृष्टान्त और क्या हो सकता है? निर्गुण संतोंने अपनी बानियोंमें इसी भावनाकी अभिव्यञ्जना की है।

भगवान् श्रीकृष्णने अपनी बाललीलाओंद्वारा गौ और नारीकी एकात्मता बड़े सुन्दर ढंगसे स्थापित की।

उनकी प्रेयसियाँ गौ और बछड़े चरानेवाले ग्वालोंकी कन्याएँ थीं । श्रीकृष्ण गोपों, गोपियों और गौओंसे ही घिरे हुए चित्रित किये जाते हैं—'गोपगोपीगवावीतं सुरद्रुमतलाश्रितम्' । गोपियाँ और गौएँ दोनों भगवान्‌की सच्ची प्रेमिकाएँ हैं, भगवान्‌की लीलाके ही विलास हैं । प्रतीत होता है कि गोपियाँ ही गौओंके रूपमें उल्लसित हो रही हैं । श्रीमद्भागवतमें गौएँ गोपियोंकी भाँति सजीव प्राणी हैं, प्रेमशीला नारियाँ और वात्सल्यमयी माताएँ हैं । नन्दनन्दनके बाद गौएँ ही गोपियोंकी सर्वस्व थीं, उनके सभी माङ्गलिक कृत्योंके लिये अनिवार्य थीं । गोपियाँ अपनी तरह गौओंको भी श्रीकृष्णके विरहसे पीड़ित समझती थीं । जब श्रीकृष्ण प्रतिदिन गौओंको चरानेके लिये वनमें चले जाते तो उनके साथ गोपियोंका चित्त भी चला जाता । गोपियाँ जब भगवान्‌का चिन्तन करतीं, तो उन्हें गौओंसे किसी-न-किसी रूपमें संबद्ध ही देखतीं । उनके हृदय-मन्दिरमें भगवान्‌का वही सौन्दर्य घर किये रहता, जिसमें उनकी काली-काली घुँघराली अलकें और गलेके पुष्पहार गौओंके खुरकी रजसे ढके रहते; वे भगवान्‌के उसी स्वरूपका ध्यान करतीं, जिसमें वे कुन्दकलीका हार पहने ग्वालबाल और गौओंके साथ यमुनातटपर खेलते रहते । अक्रूरजी भगवान्‌के उन्हीं चरणकमलोंका दर्शन करनेको लालायित हैं, जो एक ओर गौओंको चरानेके लिये ग्वाल-बालोंके साथ वन-वनमें विचरण करते हैं और दूसरी ओर जो गोपियोंके वक्षःस्थलपर लगी केसर-रोलीसे चिह्नित हो जाते हैं—'गोचारणायानुचरैश्चरद्वने यद्गोपिकानां कुचकुङ्कुमाङ्कितम्' (भा० १० । ३८ । ८) । कैवल्य आदि मुक्तियोंके दाता भगवान् देवकीनन्दनने व्रजकी गोपियों और गौओंका वह दूध भरपेट पान किया, जो वात्सल्य-स्नेहकी अधिकताके कारण स्वयं ही झरता रहता था। वे गौएँ और गोपियाँ, जो नित्य-निरन्तर भगवान् श्रीकृष्णको अपने पुत्रके ही रूपमें देखती थीं, फिर अज्ञानजन्य संसारचक्रमें कभी नहीं पड़ सकतीं (भा० १० । ६ । ३८–४०)।

संस्कृत काव्यग्रन्थोंमें प्रायः गौकी नारीके रूपमें और वृषभकी पुरुषके रूपमें कल्पना की गयी है । ऋग्वेदमें देवताओंकी बैलोंसे और देवियोंकी गौओंसे तुलना की गयी है । अग्निको वृषभ और उसकी ज्वालाओंको सींग बताया गया है । उषःकालकी सूर्यरश्मियाँ गौएँ हैं । जलमें मिश्रित सोमरसका वर्णन करते हुए एक ऋग्वेदीय कवि कहता है कि सोमरस जलकी गोदमें उसी प्रकार गिर रहा है, जिस प्रकार गौओंके समूहपर मत्त वृषभ । पुराणोंमें पृथ्वी अपने भार-हरणके लिये गौके रूपमें ही भगवान् विष्णुके समीप जाती है । जब सुन्द और उपसुन्द तिलोत्तमाके लिये परस्पर युद्ध कर रहे थे तो प्रतीत होता था, मानो दो वृषभ किसी ऋतुमती गौके लिये लड़ रहे हों । जब शंखचूड़ यक्ष गोपियोंको हरकर भागने लगा तो श्रीकृष्ण और बलरामने देखा कि जैसे कोई डाकू बलात्कारसे गौओंको ले जाय, वैसे ही यह यक्ष हमारी प्रेयसियोंको ले जा रहा है ।

प्रायः यह देखा जाता है कि संस्कृतके इतिहास-पुराणोंमें जहाँ स्त्रियोंके विषयमें कुछ कहा जाता है, वहाँ गौओंके सम्बन्धमें भी तदनुरूप बातें कह दी जाती हैं; स्त्रियों और गौओंका उल्लेख प्रायः साथ-साथ होता है । सत्ययुगमें गौओं और स्त्रियोंके उचित समयपर ही बच्चे हुआ करते थे (महाभारत आदि० ६४ । २३) । शरदृतुमें गौओं और नारियोंके ऋतुमती हो जानेपर वृषभ और पुरुष उनका अनुसरण करने लगते, ठीक वैसे ही जैसे समर्थ पुरुषद्वारा की गयी क्रियाओंका अनुसरण उनके फल करते हैं (भागवत १० । २१ । ४६) । अरिष्टासुरकी निष्ठुर गर्जना सुनकर स्त्रियों और गौओंके तीन-चार महीनेके गर्भ स्रवित हो जाते और पाँच-छः महीनेके गिर जाते थे (भागवत १० । ३६ । ४) । कवच-कुण्डल माँगनेकी इच्छासे आये हुए ब्राह्मण-वेषधारी इन्द्रको कर्णने पूछा—कहिये, मैं आपको सुवर्ण-विभूषित स्त्रियाँ दूँ या बहुत-सी गायोंवाले गाँव अर्पण करूँ ? (महा० वनपर्व ३०९ । २) । महाभारतके उद्योगपर्व (अध्याय ३३—४०) में विदुरने स्त्रियों और गौओंका अनेक बार एक साथ उल्लेख कर धृतराष्ट्रको नीति-उपदेश दिया है । कटु वचन बोलनेवाली स्त्री और गाँवमें रहनेकी इच्छावाले ग्वालोंको त्याग देना चाहिये । क्षणभर भी देख-रेख न करनेसे गौ और स्त्री नष्ट हो जाती हैं । एक गौ और एक स्त्रीको अनेक मनुष्योंके अधिकारमें नहीं देना चाहिये । बारंबार देखभाल करनेसे गौओंकी और मैले वस्त्रसे स्त्रियोंकी रक्षा होती है । गौ और स्त्री दोनों अवध्य हैं । जैसे गौओंमें दूधका होना अधिक सम्भव है, वैसे ही युवती स्त्रियोंमें चञ्चलताका—

संपन्नं गोषु संभाव्यं संभाव्यं ब्राह्मणे तपः ।
संभाव्यं स्त्रीषु चापल्यं संभाव्यं ज्ञातितो भयम् ॥

भारतीय धर्मशास्त्रोंमें गौ और नारीके प्रति किये गये अपराध एक ही कोटिके माने गये हैं । गौ अथवा स्त्रीका

अपहरण करनेवाला समानरूपसे दण्डका अधिकारी गिना जाता है। जहाँ द्यौ वसुको नन्दिनी गायका अपहरण करनेपर मनुष्ययोनिमें जन्म लेनेका शाप मिला, वहाँ जयद्रथको द्रौपदीका अपहरण करनेपर पाण्डवोंद्वारा दण्डित होना पड़ा। गौको बेचना अथवा स्त्री या कन्याको बेचना, दोनों गर्हित कर्म हैं। रामायण-महाभारतमें गौओं और स्त्रियोंको समकक्ष मानकर उनका वध न करनेका विधान किया गया है। द्वारकासे लौटकर आये हुए श्रीहीन अर्जुनको देखकर युधिष्ठिरने पूछा कि कहीं तुमने शरणागत गौ या अबलाका त्याग तो नहीं किया? धर्मशास्त्रोंमें जहाँ कहीं गौको अवध्य सिद्ध किया गया है, वहाँ उसके स्त्रीत्वकी ही दुहाई दी गयी है। ऋग्वेदमें गौको रुद्रोंकी माता, वसुओंकी कन्या और अदितिकी भगिनी बताकर उसका वध न करनेकी प्रार्थना की गयी है—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां
स्वसाऽऽदित्यानामसृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा
गामनागामदितिं वधिष्ट॥

भारतीय आदर्शके अनुसार कन्याके विवाहमें गौका समावेश अभिप्रेत है। जिस प्रकार कन्याके लिये यह कामना की जाती है कि उसे दरिद्र, क्रूर या कुरूप पति न मिले, उसी प्रकार वेदोंमें प्रार्थना की गयी है कि गौका स्वामी कोई चोर या पापी न हो—'मा व स्तेन ईशत माघशंसः' (अथर्ववेद ९। २१। ७)। कन्याके साथ गौ भी दहेजमें दी जाती थी। सुभद्रा और उत्तराके विवाहमें गौएँ दहेजमें दी गयी थीं। महाभारतमें दहेजमें मिली हुई गौको श्रेष्ठ माना गया है। ऋग्वेदके समयमें वधूके पिताको गौएँ देकर विवाह भी किया जा सकता था। महाभारत-कालमें गौओंका जोड़ा लेकर कन्या देनेकी प्रथा कुछ-कुछ प्रचलित थी—'प्रयच्छन्त्यपरे कन्यां मिथुनेन गवामपि' (आदि० १०१। १३)। रावणके पिता पुलस्त्यकी एक स्त्रीका नाम गौ था, जिससे वैश्रवण (कुबेर) का जन्म हुआ (वनपर्व २७३। १३)। स्त्रियोंके लिये ग्वालिनका वेष अधिक चित्ताकर्षक होता था। विवाहके बाद सुभद्रा लाल रंगकी रेशमी साड़ी पहनकर ग्वालिनके वेषमें रनिवासमें गयी थी। इससे उसका सौन्दर्य और भी निखर आया था (आदि० २२३। १६)। श्रीमद्भागवतमें सुन्दर रमणीके लिये 'चारुशृङ्गि' (हे सुन्दर सींगोंवाली) संबोधन प्रयुक्त हुआ है—'मां चारुशृङ्ग्यर्हसि नेतुमनुव्रतं ते' (५। २। १६)। कुचोंको भी सींग कहा गया है। पूर्वचित्ति अप्सराके मनोहर रूप-लावण्यसे मुग्ध राजा आग्नीध्रने उसके कुङ्कुममण्डित कुचोंको देख उससे कहा कि हे द्विज! आपके इन दोनों सुन्दर सींगोंमें क्या भरा हुआ है (किं संभृतं रुचिरयोर्द्विज शृङ्गयोस्ते), और इन सींगोंपर आपने यह लाल-लाल कीचड़-सी क्या लगा रक्खी है, जिससे आप मेरे सम्पूर्ण आश्रमको सुगन्धित कर रहे हैं—

पङ्कोऽरुणः सुरभिरात्मविषाण ईदृग्।
येनाश्रमं सुभग मे सुरभीकरोषि॥
(५। २। ११)

पाश्चात्त्य कवियोंने भी गौको नारीके रूपमें चित्रित किया है। वर्ड्सवर्थ और टॉल्सटायने गौको मानव-जातिकी 'मूकमाता' (dumb mother) और 'मातृस्थानीय' (foster-mother) माना है। स्पेन्सरने उन्मत्त नारीकी उस गौसे तुलना की है, जिसका प्रिय वत्स उससे बलात् छीन लिया गया हो। (That is berobbed of her youngling dere)। शेक्सपियरके 'हेनरी षष्ठ' में नायक अपनी तुलना उस बछड़ेकी मासे करता है, जो दौड़ती-रँभाती हुई उसी मार्गकी ओर देखती जाती है, जिससे उसका प्यारा बछड़ा गया है—

'Runs lowing up and down,
Looking the way her harmless young one went'.

भले ही कुछ कट्टर यथार्थवादी गौ और नारीकी समकक्षताको कल्पनाप्रसूत मानें, किन्तु सांस्कृतिक दृष्टिसे भारतमें गौ और नारी—रूप, स्वभाव और अवस्थामें समान दो सखियोंकी भाँति—सदासे परस्पर संबद्ध और अनुरक्त रही हैं। इन दोनोंके प्रति उपेक्षा अथवा औदासीन्यकी भावना भारतके भव्य भविष्यके लिये कदापि उत्कर्षविधायक नहीं कही जा सकती। नारी-हृदय पुरुषकी अपेक्षा अधिक सभ्य, सुसंस्कृत, कोमल, भाव-प्रवण, संवेदनशील एवं अनुभूतिमूलक होता है। अतएव आशा है कि ज्यों-ज्यों नारी पुरुषको अपने इन गुणोंसे अधिकाधिक प्रभावित करेगी, त्यों-त्यों पुरुषके हृदयमें गौओंके प्रति सम्मान और कृतज्ञताकी नयी भावना जाग्रत् होती रहेगी।

देशी रियासतें और गोरक्षण

(श्रीमंत बाला साहब पंत प्रतिनिधि राजा साहब, संस्थान औंध)

हिंदुस्थानकी सद्यःस्थितिका विचार करते हुए गोरक्षण विषय बहुत महत्त्वपूर्ण और चित्तवेधक प्रतीत होता है। एक समय, यही देश औद्योगिक उन्नतिके शिखरपर पहुँचा था, परन्तु आज वही कालचक्रमें पड़कर औद्योगिक अवनतिके गर्त्तमें गिरकर रसातल पहुँच गया है। तथापि 'नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण' भाग्यचक्रकी गतिके साथ नीचेसे ऊपर भी आना होता ही है, इसी न्यायसे किसी भी राष्ट्रका एक ही हालतमें सतत रहना नितान्त असम्भव है, यह सोचकर राष्ट्रके अनेक साहसी लोग अपने देशकी औद्योगिक उन्नतिके साधनमें भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं। और तो क्या हमारी छोटी-सी रियासत औंधमें महाराष्ट्रके हेनरी फोर्ड हमारे मित्र श्रीलक्ष्मणराव किर्लोस्कर और ओगले-बन्धु दो बहुत अच्छे और आदर्श स्वरूप कारखाने चलाये हुए हैं। तथापि देशी उद्योग-धंधोंको योग्य संरक्षण तथा आर्थिक आश्रय न मिलनेसे पाश्चात्त्य राष्ट्रोंकी यान्त्रिक औद्योगिक प्रतिद्वन्द्विताम‍ें उनका ठहरना और सार्वभौम बनना असम्भव-सा ही है। इसी कारणसे हमारा देश केवल खेतीपर ही निर्भर रहता है, सैकड़ा ८० आदमी खेतीपर ही अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। किसी भी देशमें अब सैकड़े ८० मनुष्योंका केवल खेतीसे अपना गुजर करना असम्भव यदि नहीं तो बहुत ही कठिन है। इसका मतलब यही है कि हमारे देशके कितने ही लोगोंको केवल आधे पेट ही भोजन मिलता है। खेतीपर गुजर करनेवाले किसानोंकी अवस्था अत्यन्त कष्टप्रद होनेके बहुतसे कारण हैं। वर्षाका समयपर न होना, खादका अभाव, उत्पादनके साधनोंकी महँगी, तरह-तरहके टैक्स, आने-जानेके खर्चकी अधिकता, विवाहादि मंगलकार्योंमें अधिक व्यय—आदि प्रधान कारण हैं। यहाँ यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि हमारे देशमें खेतीकी जमीनके बहुत छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं, इससे पाश्चात्त्य यान्त्रिक ढंगसे खेती करना हिंदुस्थानमें अशक्य है। इसी बातका विचार कर कृषि-कमीशनने यह तै किया कि भारतीय खेती बैलोंके द्वारा ही होनी चाहिये। अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं, हमारे पूर्वजोंने बहुत कालसे ही गोमाताका महत्त्व जानकर धार्मिक दृष्टिसे उसे पूज्य माना। उनकी दृष्टिमें गौका जो माहात्म्य था, उसका परिचय अनेक संस्कृत ग्रन्थोंसे मिलता है। आधुनिक संस्कृत ग्रन्थोंमें ही नहीं, बल्कि वेदोंमें भी बड़े मार्मिक उल्लेख हैं। ऋग्वेद-कालमें भी गोवध मनुष्य-वधके तुल्य ही समझा जाता था। पुराणोंमें भी गोमाताके विषयमें आगे दिया हुआ उल्लेख बोधप्रद है—

मनुष्यैः तृणतोयाद्यैः गावः पाल्याः प्रयत्नतः।

देयाः पूज्याश्च पोष्याश्च प्रतिपाद्याश्च सर्वदा॥

'मनुष्योंको चाहिये कि घास, पानी आदिके द्वारा गायोंका प्रयत्नपूर्वक पालन करें, दान करें, उनको पूजें, पोसें और सदा उनकी महिमाका प्रचार करें।' रघुवंशमें सुविख्यात राजा दिलीपने अनन्य भावसे गोमाताकी सेवा की, जिससे उन्हें 'रघु' जैसे कुलदीपक पुत्रका लाभ हुआ, जिसका अति सरस वर्णन कविकुलगुरु कालिदासने 'रघुवंश' काव्यमें किया है। इस दृष्टान्तसे यह मालूम होता है कि प्राचीन कालमें वनवासी ऋषि-मुनियों और सर्वसाधारण लोगोंके समान राजा-महाराजा भी गोमाताकी सेवा किया करते थे। दिलीपके पश्चात् बीचका दीर्घकाल छोड़ दो सौ वर्ष पहलेके ही इतिहासको हम देखें, तो हिंदू-साम्राज्यके संस्थापक छत्रपति श्रीशिवाजी महाराजने बचपनमें ही 'गो-ब्राह्मण-प्रतिपालन' का बीड़ा उठा लिया था और स्वराज्य-स्थापनका अति दुर्घट कार्य पूरा करके उन्होंने गौ और ब्राह्मण दोनोंको म्लेच्छोंके अत्याचारोंसे मुक्त किया। मराठा-साम्राज्यके संस्थापकका जो ध्येय था, वही तो उस साम्राज्यसे उत्पन्न राज्योंके नृपतिगणोंका होना चाहिये, यह बात सूर्यप्रकाशके सदृश सुस्पष्ट है। फिर भी देशी रजवाड़े गो-रक्षाके विषयमें क्या कर सकते हैं, इसका स्वानुभव-पूर्वक सूत्रमय विवेचन आगे किया जाता है।

कृषकलोग प्रायः दूधके लिये गौ न रखकर भैंस पाला करते हैं। मध्यम स्थितिके लोग तो जानवर पालनेके झगड़ेमें ही नहीं पड़ते। चायकी उपाधि भी इतनी बढ़ गयी है कि पनियर दूध भी अनायास मिल जाय तो ये खुश रहते हैं। चायके लिये दूध मिले, चाहे वह कैसा ही हो। चायके शौकीन यह बतलाते हैं कि चायमें भैंसके दूधसे ही लज्जत आती है। चाय पीनेवाले खुद तो चाय पीते ही हैं, अपने बाल-बच्चोंको भी चाय पिला-पिलाकर अपनी समझसे शायद अमर किये डालते हैं। पाश्चात्त्य देशोंमें म्युनिसिपलिटियाँ अपने दुग्धालयों-

से शुद्ध दूध नागरिकोंको दिलानेका पूरा प्रबन्ध करती हैं। पर हमारे यहाँ, उदाहरणार्थ, पूना शहरमें दो पैसे पावसे लेकर दो आने पावतक सब प्रकारका दूध बाजारमें बेरोक बिका करता है।

हमारी औंध रियासत बहुत ही छोटी रियासत है। पर अपने यहाँ प्रबन्ध है कि बाजारमें बिकने या लोगोंके घर बन्धीके तौरपर जो दूध आता है, उसकी यन्त्रद्वारा जाँच कर ली जाती है। मिलावटी दूध ले आनेवालेको दण्ड दिया जाता है और केवल शुद्ध दूध ही लोगोंको मिलता है। ऐसा प्रबन्ध तो हर जगह किया जा सकता है।

इस समय गायोंकी जो दुर्दशा हो रही है, वह सबकी आँखोंके सामने है। उसके सुधारनेके अनेक प्रयत्न भी हो रहे हैं। महाराष्ट्रमें विशेषतः गो-सेवक श्रीचौंडे महाराजके प्रयत्नसे अनेक गोशालाएँ स्थापित हुई हैं, जिनके द्वारा प्रचार-कार्य होता है और कसाइयोंके हाथोंसे गौएँ छुड़ायी जाती हैं, पर 'गोरक्षण' और 'गोभक्षण' दोनोंके तुलनात्मक आँकड़े देखते हैं तो हृदय विदीर्ण हो जाता है और बहुतोंको तब ये प्रयत्न टिट्टिभके अपनी चोंचसे सागर सोखनेके समान मालूम होने लगते हैं; परन्तु 'अकरणान्मन्दकरणं श्रेयः' (कुछ न करनेसे थोड़ा करना अच्छा है)। यह कदापि न भूलना चाहिये। इसी तरह एक-एक व्यक्ति अत्यन्त दृढ़तापूर्वक अव्याहत रूपसे जीवनभर जो काम करते हैं वह देखा जाय तो उसकी प्रचण्डता देखकर आश्चर्य होगा। महाराष्ट्रके समान अन्यत्र भी अनेक महानुभाव अपनी-अपनी सामर्थ्यके अनुसार गो-रक्षाके लिये अविश्रान्त श्रम कर रहे हैं। फिर भी ऐसे महत्कार्य सरकार, राष्ट्रीय नेता और बहुजन-समाज इस त्रयीके सहकार्यके बिना कभी पूर्णतया यशस्वी नहीं होते! जबतक ऐसा सुयोग न हो तबतक जिससे जो बन पड़े वह उसे अवश्य करना चाहिये। इस दृष्टिकोणसे यदि विचारा जाय तो रियासतें गो-रक्षामें बहुत कुछ काम कर दिखा सकती हैं। अवश्य ही उन्हें पहले समझ लेना होगा, पीछे करना होगा। श्रीसमर्थ रामदास महाराज 'दासबोध' में कहते हैं 'समजले आणि वर्तले। तेचि भाग्य पुरुष बोलिले।' (जिन्होंने समझा और फिर वैसा किया वे ही भाग्यवान् कहाते हैं)। रियासतें यदि चाहें तो वे गो-रक्षाके लिये क्या-क्या कर सकती हैं, यह स्वानुभवसे यहाँ बतलाया जा सकता है।

सामान्यतः भारतका एक तृतीयांश रियासतोंके शासनमें है। कुछ रियासतें परधर्मियोंके हाथोंमें हैं। उन्हें यदि विचारमें न लें तो भी शेष रियासतें अपने यहाँ गो-हत्या बंद करनेका आज्ञापत्र निकाल सकती हैं। अथवा उसे नियन्त्रित करनेके नियम बना सकती हैं। कुछ रियासतोंने ऐसा किया भी है। यथार्थमें गो-रक्षाका प्रश्न जितना धार्मिक है, उससे अधिक आर्थिक है और सब जातियों तथा सब धर्मियोंके लिये समान महत्त्वका है। अतः सब धर्मवालों और जातियोंको चाहिये कि इस प्रश्नपर विचार करें। गायें जगत्की माता तथा अन्नदात्री हैं, यह कभी नहीं भूलना चाहिये। गायके दूधसे हमारा पोषण होता है और गोमातासे उत्पन्न बैल अन्न उपजाते हैं। 'गावो विश्वस्य मातरः'—यह कहावत सर्वथा सत्य तथा अन्वर्थक है।

गौके सदृश ही खेती और दूधके लिये उपयोगी जानवरोंकी भी कोई हत्या न करे, न हत्याके लिये उन्हें बेचे ही। यदि कोई ऐसा करे तो उसे कठोर दण्ड दिया जाय। औंधके समान कुछ अन्य रियासतोंने इस तरहके हुक्म निकालकर गो-हत्या बंद की है, जो समाधानका विषय है।

इस प्रकार गौकी हत्या और गौकी रफ्तनी बंद हो जानेसे ही गो-संरक्षणका कार्य पूरा नहीं होता। इसके साथ गो-संगोपन भी करना होगा। मृत्युके मुखसे बची हुई गौओंके लिये अपने यहाँ विस्तृत गोचर-भूमि खुली रक्खें। हमने औंध रियासतमें अपने भरसक गोचर-भूमि छोड़ रक्खी है।

गो-रक्षण और गोसंगोपन होनेके बाद गो-संवर्द्धन भी होना चाहिये। गौओंकी संख्या रेखागणितके हिसाबसे बढ़नी चाहिये। इसके लिये यह उपाय किया जा सकता है कि जिस गाँवके लोग घर-घर गौ पालेंगे, कोई ऐसा न रहने देंगे जहाँ गौ न हो, उस गाँवको एक वर्षके लिये पूरा लगान या उसका कुछ हिसाब कर देनेकी घोषणा की जानी चाहिये। इससे गो-संवर्द्धनका बहुत काम बन सकता है, इसका भी कुछ प्रयत्न औंध-रियासतमें किया गया है, आगे और बहुत कुछ किया जा रहा है। फल भी अच्छा हो रहा है। विगत पाँच वर्षोंमें हमारी रियासतमें गायोंकी संख्यामें ४००० की वृद्धि हुई है।

इस प्रकार गोसंरक्षण, गोसंगोपन और गोसंवर्द्धनके साथ-साथ गाय-बैलोंकी उत्पत्ति भी उत्तम प्रकारकी करनेका प्रयत्न भी होना चाहिये। इसके लिये हर गाँवको अच्छी जातिका कम-से-कम एक साँड़ सरकारी खर्चसे दिया जाना चाहिये। जहाँ एक साँड़ पर्याप्त न हो, वहाँ अधिक साँड़ दिये जाने चाहिये। इस दृष्टिसे हमारे यहाँ प्रयत्न हो रहा है। गाय-बैल खरीदनेके लिये किसानोंको कम व्याजपर कर्ज भी

दिया जाता है। इससे भी गो-संवर्द्धनका कार्य बहुत कुछ होता है।

इस प्रकार किये जानेवाले प्रयत्न कहाँतक सफल हो रहे हैं, यह देखनेके लिये प्रतिवर्ष रियासतके विशेष-विशेष स्थानोंमें यात्रादि अथवा अन्य विशेष अवसरोंपर गाय-बैलोंके बाजार या मेले लगाये जाते, उनमें अच्छे बैल, साँड़, गायें, बछड़ियाँ प्रदर्शित की जातीं और गाय-बैलोंकी अच्छी देख-भाल करनेवालोंको प्रशंसा-पत्र, तमगे, पारितोषिक दिये जाते हैं। इनसे उनका हौसला बढ़ता है। इन विविध उपायोंसे गोरक्षाका कार्य प्रतिवर्ष आगे ही बढ़ता जा रहा है। जो बातें औंधमें हो सकती हैं, वे अन्य रियासतोंमें भी उपयोगी सिद्ध होंगी। पर प्रत्येक रियासत इसके लिये स्वयं तैयार हो, तभी कुछ हो सकता है। इतना लिखनेपर श्रीजगन्माताके चरणोंमें हमारी यही विनती है कि आपकी प्रेरणासे गो-रक्षा करनेकी सद्बुद्धि सब राजा-महाराजाओंको प्राप्त हो। (गो० शा० को० अ०)

यदि भारतीय नरेश चाहें तो ?

(लेखक—श्रीडाह्याभाई इ० जानी, बी० एजी०)

एक बात अब बहुत स्पष्ट हो चली है कि यदि गाय जीती है तो हिंदुस्थान जी सकता है और अगर गाय मरती है तो हिंदुस्थान मर जायगा। इस कलियुगमें बहुतेरी वस्तुएँ नकली बन सकती हैं, लेकिन नकली गाय बनाना मुश्किल ही नहीं, अशक्य है। ऐसी स्थितिमें हिंदुस्थानको गायके बिना पोषण नहीं मिल सकता, खेती नहीं हो सकती, हिंदुस्थान और इसके निवासी जी नहीं सकते, इसे ध्रुव सत्य मान लेना चाहिये। परन्तु हिंदुस्थानमें जंगल, बीड़, परती जमीनका अधिकांश जोत दिया गया है, इससे पशु कमजोर और बोझस्वरूप हो गये हैं और उनका निर्वाह कठिन हो गया है।

जिस आदर्श स्थितिको हम लाना चाहते हैं उस स्थितिके लिये दृढ़तासे और पूरे दिलसे विज्ञान, व्यवस्था और राष्ट्र-हितकी दृष्टिको सामने रखकर प्राणपणसे प्रबल प्रयत्न करना पड़ेगा। और इसका समय अब आ भी गया है। गोपालन तीन प्रकारसे हो सकता है—तामसिक, राजसिक और सात्त्विक। तामसिक गोपालन यह है कि जिसमें पशु हाड़-पिंजरके समान, दयाके पात्र, पराधीन, ज्वार-भाटेके समान उमड़ते हैं और इनको इसी प्रकार बनाये रखनेकी कोशिश होती है। यह एक प्रकारसे पिंजरापोल-पद्धति है और इसमें शीघ्र ही सुधारकी आवश्यकता है। राजसिक गोपालन वह है कि जिसमें पशु अलमस्त, प्यार करनेयोग्य, प्रेम-पात्र, काफी स्वावलम्बी—अपनेसे अपना खर्च चलानेवाला हो। मन्दिर, राज्य, जागीर और एकाध ग्रामीणोंके यहाँ ऐसा होता है। अवश्य ही ऐसे पशु खूबसूरत और मस्त होते हैं, परन्तु बाहरी दिखावेमें ही वे आगे बढ़े होते हैं, उनके उत्पादन, औलाद, पालनसे सम्बन्ध रखनेवाले विषयों (Quality points) की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ऐसे पशुओंको खानेको खीर-लपसी मिलती है। परिश्रम भी नहीं कराया जाता। परन्तु मूल वस्तुकी ओर अधिक लक्ष्य नहीं दिया जाता। प्रगति नहीं होती।

सात्त्विक गोपालन उसे कहते हैं जिसमें गाय सुन्दर और सन्तुष्ट दिखलायी दे। चर्बी बढ़ी हुई भद्दी आलसू नहीं। इसके विपुल उत्पादनसे इसकी उपकारिता प्रकट होती है और इससे यह दयापात्र तो क्या प्रेमपात्र भी नहीं, बल्कि पूजापात्र हो जाती है। इसकी मधुरता, मञ्जुलता और ओजस्विता इसके दुधारूपन, पवित्रता और शीलको देखकर प्रणाम करनेका मन हो जाता है। राष्ट्रीय और राजकीय दृष्टिसे ये गायें और ऐसी गोपूजा—'गोपालन' कहलाता है। ऐसी गायें राज्यकी पूँजी होती हैं, संस्थाओंकी शोभा होती हैं और देशकी विभूति बनती हैं।

शहरोंमें घर-घर या व्यक्तिगतरूपसे गाय पालना, साधन-शक्ति, जानकारी और अनुकूलताकी दृष्टिसे आज सम्भव नहीं। तमाम राज्योंकी ओरसे सार्वजनिक हितके लिये आदर्श गोशालाएँ होनी चाहिये। मैसूर, बड़ौदा, जूनागढ़, भावनगर, गोंडल, जामनगर, मोरवी, पोरबंदर वगैरह राज्योंकी ओरसे राजपरिवारके लिये गोशाला और दुग्धालय चलते हैं। प्रजाके उच्चवर्गके लोगोंके लिये उनमें दूध-मक्खन भी बेचा जाता होगा। परन्तु इतनेसे ही काम नहीं चलता।

राज्य जैसा प्रबन्ध राजपरिवारके लिये करता है, यदि

वह चाहे तो वैसा ही यथाशक्ति प्रबन्ध आम जनताके लिये भी सहज ही कर सकता है। इसमें खर्चका कोई खास सवाल नहीं है। सवाल है व्यवस्था, शक्ति, लगन और प्रजा-वत्सलताका। राज्यको कृषिविभागकी ओरसे दुग्धालय खोलना चाहिये। राज्यकी म्युनिसिपलिटीकी तरफसे तो कम-से-कम इस दिशामें यथासाध्य पूरा काम होना ही चाहिये। अलकतरेकी पक्की सड़कें, बाग-बगीचे, वृक्षोंकी पंक्तियाँ, भव्यभवन, गुलाबकी कलीके समान खिलते हुए बालक, तथा आँख और मुँहपर पोषण, सन्तोष और उल्लासके सुधासरोवरमें विकसित कमलके समान प्रजाजन एवं सर्वतोभावसे गो-संवर्द्धन यह प्रत्येक राजाके प्रजा प्रेम, प्रगति-प्रेम और सहृदयताकी अचूक निशानी है। यह हमारे नरेशोंको स्वीकार करना चाहिये।

हमारी सार्वजनिक संस्थाएँ, पिंजरापोल, महाजन-संस्थाएँ, सेवामण्डल, धनी-व्यापारी, उद्योगपति—इन सबके सहकार और सम्पर्कसे राज्य अपने और इनके साधन, योजना और पुरुषार्थको इकट्ठा करें तो प्रत्येक राज्यमें स्वर्गका सुख दीख पड़े। यह कोई शेखचिल्लीकी बात या स्वप्न नहीं। कई नरेशोंने इस दिशामें सरस और अनुकरणीय शुरुआत की है, फिर दूसरे क्यों न करें? और जिन्होंने शुरुआत कर दी है वे भी शीघ्र और आगे क्यों न बढ़ें?

कहनेका मतलब यह है कि हिंदुस्थानका पोषण-प्रश्न मुख्यतः गायका, पशुका प्रश्न बन जाता है और इस कठिन कलिकालमें, जहाँ पशुओंको बाँधने और चारेका संग्रह कर रखनेके लिये जगहका, और चारा आदि खरीदनेके लिये अर्थका अभाव, और दूध-घी बेचनेकी अड़चनें आदि अनेक मुसीबतें सिरपर आयी हुई हैं, वहाँ ऐसे समयमें तो 'कलौ तु सङ्घशक्तिः' इस न्यायसे सहकारी तौरपर गायका पालन किया जाय तभी तमाम मुसीबतोंको पार करनेका रास्ता मिल सकता है। रक्षा, पालन और सुधार (Protection, Production and Amelioration) इन तीनों भूमिकाओंमें दूसरी और तीसरीमें काम करनेका यही उपयुक्त अवसर है। हम सबको, खास करके जिम्मेवार पुरुषोंको यह बात समझ लेनी चाहिये।

राज्यको जैसे महसूल लेनेका हक है, वैसे ही पशुके लिये घास-चारा और किसानके लिये अन्न सुरक्षित रखने-रखानेका उसका सर्वप्रथम और छोटे-से-छोटा कर्तव्य है; यह समझमें आ जाय तो अकाल कहाँसे रहेगा? किसानके लिये पशु पालना सहज है और राज्यके लिये उसे बचाना सहज है। दोनोंका मेल होना चाहिये। किसानके पास कम-से-कम दस प्रतिशतसे पचास प्रतिशत अधिक चारा बोवाया जाय और काल-दुकालके लिये संग्रह करके रक्खा जाय या उस इकट्ठा किये गये जत्थेको गाँवोंमें बाँटकर रखवा दिया जाय तो अकाल आनेपर भी कुछ कठिनाई नहीं जान पड़ेगी।

राज्यकी ओरसे या सहकारी तौरपर घास संग्रह करनेकी यह योजना सब जगह कार्यान्वित होनी चाहिये। संग्रहमेंसे आवश्यकतानुसार पुराना चारा निकाला और नया रक्खा जाता रहे और इसकी व्यवस्था रक्खी जाय तो यही अकालके समयका बीमा-फंड बन जाय। पैसेकी कीमत तो मालकी तादाद, और वह कैसे संयोगोंमें काम देता है, उसके ऊपर निर्भर है। चारा ही पशु, किसान और राज्यकी एक मुख्य पूँजी है। यह घासका संग्रह अच्छी सालमें दान, भेंट या जरूरतके अनुसार उधार या खरीद करके भी प्राप्त किया जा सकता है। इसे गाँवका धर्मगोला समझा जाय। इस गोलेमें सभी लाकर डालें और सभी बरतें नियम और पद्धतिके अनुसार। इस प्रकारके धर्मगोलोंकी पद्धति बंगाल, मध्यभारत वगैरह प्रान्तोंमें कहीं-कहीं थोड़ी-बहुत है भी।

मुख्य प्रश्न गायको मरनेसे बचानेके लिये पहला कदम धर्मगोले यानी दुष्कालके लिये घासके बीमा-भण्डारका है। इसके बाद गायको एक ही ढंगसे पाला जाय और उसकी देख-भाल की जाय। दुहना, धोना, नहलाना, चारा डालना, बाँधना और खोलना वगैरह सहकारी गोशालाके द्वारा करवाना चाहिये। इसकी आर्थिक और व्यवस्था-सम्बन्धी जिम्मेवारी महाजन, म्युनिसिपलिटी या राज्य या किसी भी जिम्मेवार संस्था अथवा मण्डलके हाथमें रहे। इससे पशुकी हालत सुधरेगी, सस्ता और अधिक उत्पादन होगा। आर्थिक बोझ घटेगा और इसमें अहीर-ग्वालोंका भी अच्छा उपयोग होगा।

'मालके अनुसार मूल्य' इस नीतिके आधारपर ही दूधकी कीमत लेनी चाहिये, जिससे ठगाई और अधर्मसे बचाव हो और सच्चा, अच्छा तथा बढ़िया माल मिल सके। इससे पशुके पोषण, चारा, साँड़का चुनाव आदि विषयोंमें अच्छी प्रगति होगी। निर्घृत (स्किम) दूध, छाछ वगैरह सस्ते या मुफ्त गरीब-गुरबों, बीमारों और बछड़ों आदिको दिया

जा सकेगा । इसका नफा—व्यवस्था और विकासका हिस्सा निकालकर—गाय, बछड़े और साँड़के लिये नये चारेके, विकासके, और काम करनेवाले अहीर-ग्वालोंके बालकों और स्त्रियोंके जीवनविकासके, और उनकी पढ़ायी आदिके साधनोंकी पूर्तिमें लगाया जाय ।

घीके नामपर आज वेजीटेबल (वनस्पति) घी और मिलावटका घी बिक रहा है, उसके ऊपर वैज्ञानिक चौकी-पहरा लगा देना चाहिये । नहीं तो पशुकी रक्षा न होगी, और मनुष्य क्षीण होते चले जायँगे । गाँवोंमें छूटे-छपाटे पशुओंके पालन करनेवाले ग्वाले और किसानोंको दूधकी अच्छी कीमत मिल सके, इसकी खास व्यवस्था होनी चाहिये । अच्छा ताजा दूध पासके गाँवमें, बाजारमें सहकारी ढंगसे इकट्ठा होकर पहुँच जाय और बेचा जाय, इसका भी प्रबन्ध होना चाहिये ।

सहकारी गोशाला और सरकारी दुग्धालयके अधीन उत्तम जातिके साँड़ पालने और उनके निबाहनेका विभाग हो। साथ ही उन्हें नये चारे, नयी पद्धति और नये सुधारकोंको काममें लाने, जन-मतको शिक्षित करने, गायोंके दूधका तत्त्व निकालने और गायोंकी उत्पत्तिके रजिस्टर रखने आदि अनेकों छोटे होते हुए भी अत्यन्त महत्त्वके कामोंपर भी ध्यान रखना चाहिये । इसके सिवा गोचरकी भूमि, बीड़-सुधार आदि कितने ही काम और भी हैं ।

सारांश यह कि राज्य और प्रजाको मिलकर सहकारी ढंगसे गायके प्रश्नको हाथमें लेना चाहिये । तभी किसान, खेती और गायकी रक्षा होगी, तभी बालक और प्रजाकी रक्षा होगी और तभी उनके द्वारा राज्य आबाद होगा । छोटे पायेपर इस दिशामें काम शुरू करनेपर इसके भीतरकी उलझनें समझमें आवेंगी, अनुभव मिलेगा और हम आगे बढ़ सकेंगे ।

प्रजाके कल्याणका, मानव-हितका और पशु-रक्षाका वीरता और मर्दानगीसे भरा हुआ यह महान् और मुख्य कार्य है । ग्रामोद्धारमें जो काम खादीसे नहीं हो सका, वह गोशाला और दुग्धालयसे निश्चय ही हो सकता है । इससे खेती फिर खेती हो जायगी और जमीन तर बनेगी ।

गायकी देख-भाल, चारा, साँड़ और नस्लकी अवनतिके अवरोधद्वारा सहकारी ढंगसे पशुओंका स्वराज्य हासिल करना चाहिये । यह सभीका सवाल है पर मुख्यतः राज्यका है और जो करता है वही धन्यवादका पात्र है । (राष्ट्रशक्ति)

वन्दे गोमातरम्

विश्वकी जननी विभव-विस्तारिणी गोमातरम् ।
शक्ति, सन्तति, सौख्यप्रद दुखदारिणी गोमातरम् ॥
ईशकी तू देन अनुपम, वन्दनीया विश्वकी ।
निस्स्वार्थ निर्मल, लोककी उपकारिणी गोमातरम् ॥
विश्व भी बनता नहीं तब, धेनु जो होती नहीं ।
कह रहे हैं वेद वसुधा-धारिणी गोमातरम् ॥
लोक क्यों परलोकमें भी, तू सहायक बन रही ।
हैं सिद्धियाँ तेरी सदा अनुसारिणी गोमातरम् ॥
चैनसे कैसे रहेंगे, जो सताते मा तुझे ।
हर्षवर्द्धक भक्तकी भयहारिणी गोमातरम् ॥
प्रेमसे पलती जहाँ, श्री फूलती फलती वहाँ ।
निर्बलोंमें बल अतुल संचारिणी गोमातरम् ॥

× × × × ×

—शोभाराम धेनुसेवक (कविरत्न)

पुनरुत्थानका पथ

(श्रीयुत शुक्लश)



चलिये ! हम भारतमें एक अद्भुत गो-लोक बसायें। इससे हमारी गौ कामधेनु बनेगी, वनस्पति कल्पलता बनेगी, भूमि काम-कृषि-कल्परसा बनेगी और हमारा जीवन, हमारी सभ्यता चिन्तामणि बन जायगी।

चारों ओर अँधेरा छाया हुआ है, पर घबराइये नहीं; उषा अभी आ ही रही है, इसी बीच आइये, इस शुक्र-तारकके प्रकाशमें हम अपना रास्ता तय करें, चल पड़ें और बड़ोंसे सहायता लेकर आगे ही बढ़ते जायँ।

पहले आइये, पिंजरापोलोंकी दशा सुधारें; देशके (निम्नकोटिके) पशुओंको सुखपूर्वक रखकर उनका जीवन-निर्वाह करें। चारा अधिक उपजानेकी व्यवस्था करें। साँड़-संवर्धन-विभाग खोलें और देशभरमें उन्हें बाँटनेका आयोजन करें। घास, चारा, चोकर आदि अधिक-से-अधिक सस्ता और आसानीसे सबको देनेका पूरा प्रबन्ध करें। आस-पासके पशुओं-की अच्छी चिकित्साके लिये मुफ्त पशु-चिकित्सालय खोलें और उनका उपयोग करें। खास करके पशुओंको छूतके रोग, संक्रामक महामारी (Epizootics) जैसे शीतला, मुँह और खुरोंकी बीमारियाँ (Foot and mouth diseases);गलसुंडा(Haemorrhagic Septicaemia), गर्भपात रोग (Septic abortion) और थन सूखने-का रोग (Mammitis) आदिसे बचानेकी व्यवस्थित और व्यापक चेष्टा करें। श्रेष्ठ पशुओंकी गोशालाको अलग चलाकर, गरीबों, रोगियों और बच्चोंको असली दूध, अभावमें निर्घृत दूध और छाछ आदि पदार्थ सस्ते भावपर या बिना मूल्य देनेकी व्यवस्था करें।

इस तरह गोभुवन, दुग्ध-भुवन, चिकित्सालय आदिकी स्थापना करके प्रजाको अपोषणसे और पशुओंको मृत्यु तथा अवनतिसे बचाकर, राष्ट्रकी सच्ची और सर्वोच्च सेवा करें। सच्चे स्वराज्यकी नींव रक्खें। दुग्धान्न, दही, मक्खन, घी, केसीन आदि बनानेकी सस्ती और शास्त्रीय विधियोंको अपनायें। उनमें होनेवाले लाभप्रद संशोधनोंमें सहायता दें। और सरकार तथा जनताकी विभिन्न संस्थाओंके साथ सहयोग-का हाथ बढ़ावें।

पिंजरापोल सच्चे अर्थोंमें पशुभवन बन जाने चाहिये। उनमें लाचारोंकी सेवा हो, अशक्तोंका पोषण हो, सशक्तोंका विकास हो तथा जनताको उत्तेजन और सेवाके रूपमें सहायता मिलती रहे।

धनियोंके दान, सेवकोंकी सेवा, वैज्ञानिकोंके ज्ञान, जनताके आकर्षण, सरकार, म्युनिसिपलिटी, पंचायत, सहकारी आदि संस्थाओंकी सलाह, सहायता और सहकारिता-से, सचमुच भारतकी, देशके मनुष्योंकी और पशुओंकी दीन-हीन दशाका अन्त किया जा सकता है।

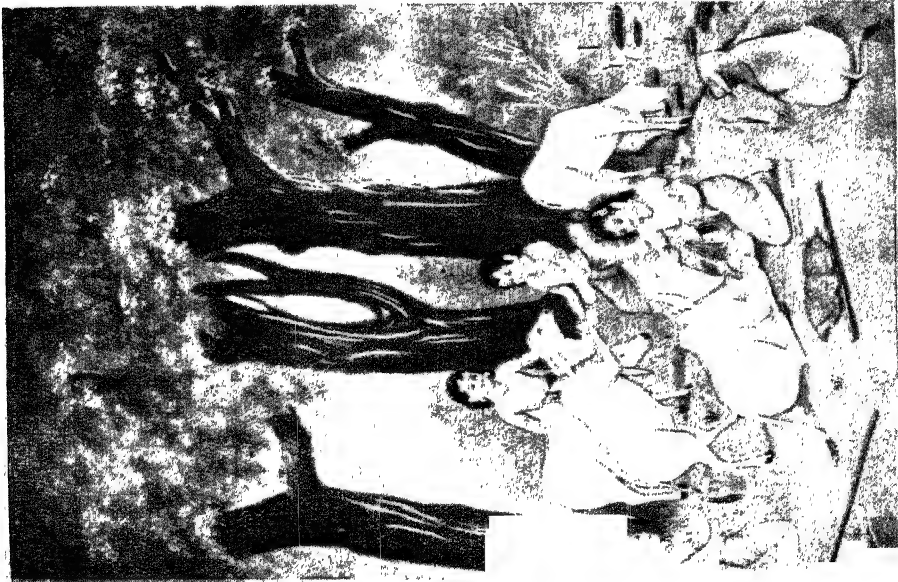
यदि हम भारतमें दो करोड़ उत्तेजनपात्र पशु गिनें और उनके वार्षिक निर्वाहका खर्च प्रतिपशु १००) रु० मानें तो एक वर्षका पूरा खर्च केवल दो अरब रुपये होंगे और यह रकम राष्ट्रीय आर्थिक दृष्टिकोणसे देखें तो नगण्य सिद्ध होगी। दुधारू पशुओंसे, प्रतिपशु यदि हम एक सेर दूधकी आमदनी भी बढ़ा सकें तो दो अरब रुपयोंकी अधिक आमदनी सहज ही हो जाय। यदि इन दो करोड़ गायोंका संयोग अच्छे साँड़ोंसे कराया जाय, तो और भी दो अरब रुपयोंकी प्राप्ति हो जायगी। अर्थात् दुग्धालय, गो-क्षेत्र, चिकित्सा-विभाग, नन्दी-भुवन आदि हरेकसे पाँच सालमें दस अरब रुपयोंकी वार्षिक आय बढ़ सकती है।

चालीस करोड़ मनुष्योंको सब प्रकारके बीस करोड़ पशुओंके हितके लिये प्रतिपशु दो पाई और प्रतिमनुष्य एक पाईका रोजाना खर्च कोई बड़ी बात नहीं है। और यह



बालक शिवाजीका साहस और गो-प्रेम

[पृष्ठ २९१



निज कर बछरनि घास खवावत गोकुलमें गोविंद ।

खर्च तो उत्तरोत्तर घटनेवाला ही है। ऐसा करनेमें पाँच सालमें न केवल यह खर्च ही बिल्कुल मिट जायगा बल्कि दस वर्षमें तो यह खर्च हमारे लिये उलटा उत्पादक बन जायगा। यानी हमारा इन वर्षोंमें लगाया हुआ खर्च ही, इन विभागोंके उत्पादनके माध्यमसे हमारी आयका कारण बन जायगा। पिंजरापोल या गोशाला आदि संस्थाएँ और ऐसी संस्थाओंके संचालनकी प्रथा तो प्रियदर्शी महाराज अशोककी एक श्रेष्ठ और अद्‌भुत देन है। आज उसकी स्थिति अवनत है। फिर भी उसका पुनरुद्धार या जीर्णोद्धार हो सकता है। यह भी सच्चे स्वराज्यकी एक साधना बन सकती है।

सरकारने 'इण्डियन सेण्ट्रल काटन कमेटी' बनायी। तमाखू और नारियलके लिये भी समितियाँ बनायी और उन्हें साधारण कर (Cess) लगानेका भी अधिकार दिया है। तो क्या पशुओं एवं दूधके लिये इस प्रकारकी समिति बनाना उसका सबसे पहला कर्त्तव्य नहीं था? अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। कर (Cess), जकात, लगान और दान आदिसे धन एकत्र करना कोई कठिन बात नहीं है, कठिन तो है इस विचारको स्वीकार करना, समझना, अपनाना एवं इसके अनुसार आचरण करना। इसीके लिये हमें तैयार होना है, कटिबद्ध होना है। आइये, इसे कर दिखायें। इसमें सुख, समृद्धि, शान्ति, जीवन एवं स्वराज्य हैं। यही पुनरुत्थानका पथ है।

बालक शिवाजीकी गो-भक्ति

एक समय शिवाजी, जब वे आठ-दस वर्षके बालक थे, अपने पिता राजा शाहाजीके दर्शनके लिये पूनासे बीजापुर गये थे। वहाँ पहुँचनेपर राजा शाहाजीने अपने पुत्रसे शाही दरबारमें चलनेको कहा। बालक शिवाजी अत्यन्त मातृ-पितृ-भक्त थे। बचपनसे ही उनके अन्तःकरणपर रामायण-महाभारतादि ग्रन्थोंके सुननेसे ऐसे सुसंस्कार जम गये थे कि वे माता-पिताकी आज्ञा अस्वीकार नहीं कर सकते थे, किन्तु यह प्रसंग ऐसा था कि एक ओर शाही दरबारमें जानेके लिये उनकी अन्तरात्मा उनको मना कर रही थी और दूसरी ओर उनके पिता चलनेको आग्रह कर रहे थे। वे धर्मसंकटमें पड़ गये। अन्तमें उस बुद्धिमान् और तेजस्वी बालकने स्पष्ट किन्तु नम्र शब्दोंमें अपनी आन्तरिक व्यथा अपने पितासे निवेदन कर दी। उन्होंने कहा, 'पिताजी! हमलोग हिंदू हैं। रास्तेमें आते-जाते समय हमारी आँखोंके सामने गो-माता कट जाती हैं। गोमांसका विक्रय होता है। यह घृणित तथा दुस्सह दृश्य देखकर मन क्षुब्ध हो जाता है और जी चाहता है कि गो-हत्या करनेवालेकी गर्दन उड़ा दें। हम क्षत्रिय जीते हुए यह गो-हत्याका दृश्य देखते हैं, इससे तो मरना अच्छा! धिक्कार हमारी क्षत्रियताको!! गो-वधिकोंपर तत्काल शासन करना अथवा गोप्राण-रक्षणमें आत्मार्पण करना—इन दोमेंसे एक अवश्य होना चाहिये, किन्तु ऐसा करनेमें मुझे आपकी अप्रसन्नताका डर है, नहीं तो कसाईको देखते ही मैं उसका सिर उड़ा देता।'

बालक शिवाजीके सच्चे हिंदू अन्तःकरणकी यह व्यथा बादशाहके कानोंतक पहुँची। बादशाह उस तेजस्वी बालक-को देखनेके लिये बहुत उत्सुक हुए। इसलिये उन्होंने कसाइयोंको आज्ञा दी कि 'गोहत्या तथा मांस-विक्रीका सब व्यवहार शहरसे दूर एक अलग मुहल्लेमें हो। इसके विरुद्ध बर्ताव करनेवाले अपराधी समझे जायँगे।' इतना हो जानेपर शिवाजी अपने पिताके साथ दरबारमें जाने लगे।

बादशाहने यह हुक्म निकाल तो दिया था, किन्तु कसाइयोंने इसपर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। हुक्म तोड़नेवाले कुछ निकल आये। यह देखकर शिवाजीने दरबार-में आना-जाना फिर बंद कर दिया। पूछताछ होनेपर शाहाजी महाराजने बादशाहसे सब कारण बता दिया। इसपर बादशाहने दूसरा कड़ा हुक्म निकाला कि कसाई और कलालोंकी सब दूकानें शहरके दक्षिण एक कोसकी दूरीपर होनी चाहिये। यदि कोई बेचनेवाला इस हुक्मको तोड़कर शहरमें गो-मांस या दारू बेचने आयेगा और उसे कोई हिंदू मार देगा तो वह हिंदू अपराधी नहीं समझा जायगा और उसे किसी प्रकारका दण्ड नहीं मिलेगा।'

इतनी कड़ी आज्ञा होनेपर भी एक दिन एक कसाई अभिमान और हठवश शहरमें गोमांस बेचनेके लिये ले आया। कहीं शिवाजीकी दृष्टि उसपर पड़ गयी। देखते ही उन्होंने उस कसाईका सर तलवारसे उड़ा दिया। जब मृत कसाईके रिश्तेदारने बादशाहके सामने इस मामलेको पेश किया तब पहले कसाईका ही गुनाह समझकर बादशाहने उसकी फरियाद खारिज कर दी और एक बार फिर कसाइयोंको शहरमें मांस बेचनेसे मना कर दिया गया। (गो० ज्ञा० को०)

(शिवप्रताप तथा चिटणीसकृत शिवचरित्रसे संकलित)

भारतकी कुछ नस्लोंका संक्षिप्त परिचय

सर अर्थर ऑलवर (Sir Arthur Olver) ने भारतवर्षकी गौओंको कई व्यापक वर्गों या जातियोंमें विभक्त किया है। वे इस प्रकार हैं—

(१) मैसूरकी लंबे सींगोंवाली गौ—जो 'अमृतमहाल'के नामसे विख्यात है और जो मैसूर राज्य, मद्रास प्रान्त और बम्बई प्रान्तके दक्षिण भागमें पायी जाती है। उसके सिर और सींगोंकी बनावट एक विशेष प्रकारकी होती है।

(२) काठियावाड़की गीर जातिकी गौ—और उसके अनेक रूपान्तर, जो पश्चिमी भारतके एक बहुत बड़े भूभागमें, कच्छसे लेकर दक्षिणमें निजाम राज्यतक और राजपूतानाके राज्योंमें संयुक्तप्रान्तकी सीमातक पाये जाते हैं।

इनके सिर उभरे हुए, और सींग एक विशेष प्रकारके होते हैं। इनके लंबे लटकते हुए कान अपनी खास विशेषता रखते हैं।

(३) उत्तरकी सफेद रंगकी बड़ी रासकी गौ—इस जातिकी गौएँ प्रायः समस्त भारतमें पायी जाती हैं। इसके भी दो अवान्तर भेद देखनेमें आते हैं, एक चौड़े मुँहकी और दूसरी सँकड़े मुँहकी होती हैं। दूसरे प्रकारकी गौएँ पंजाबसे लेकर संयुक्तप्रान्त एवं सिंधतक फैली हुई हैं।

(३) क—उत्तरकी चौड़े मुँहकी खाकी रंगकी गौ।

(३) ख—उत्तरकी सँकड़े मुँहकी गौ।

सर अर्थर ऑलवरके मतसे इस वर्गके अंदर ओछे सींगोंकी हरियाना, राठ, गावलाव और अंगोल नामकी जातियाँ सम्मिलित हैं। भगनारी जातिकी गौएँ भी इसी वर्गके अन्तर्गत समझनी चाहिये।

(४) पंजाबकी मिले हुए सफेद और लाल रंगकी मंटगुमरी या साहीवाल जातिकी गौ—सर अर्थर ऑलवरके मतसे यह जाति अफगान जातिकी गौओंसे निकली हुई है। इस जातिकी गौएँ खूब दुधारू होती हैं।

(५) धन्नी जातिकी गौ—इस जातिकी गौएँ उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तमें पायी जाती हैं। यह एक स्वतन्त्र जाति है।

(६) छोटी रासकी और छोटे सिरवाली पहाड़ी गौ—इस जातिकी गौएँ समग्र भारतमें पायी जाती हैं।

आजकल भारतमें गौओंकी जितनी नस्लें पायी जाती हैं, वे सब इन्हीं वर्गोंके अंदर आ जाती हैं। इन सबकी तालिका नीचे दी जाती है—

१. लंबे सींगोंकी मैसूरी गौ

(१) मैसूर राज्यकी अमृतमहाल नस्ल।

(२) मैसूरकी हल्लीकर नस्ल (जो मैसूर राज्यके तमकूर, हस्सन एवं मैसूर जिलोंमें पायी जाती है)।

(३) कोयम्बतूर (मद्रास) की कंगायम् नस्ल।

(४) बम्बई प्रान्तके शोलापुर एवं सतारा जिलोंकी खिल्लारी नस्ल।

(५) कृष्णावेली नस्ल।

(६) कोयम्बतूरकी बरगूर नस्ल।

(७) सलेम, कोयम्बतूर एवं हैदराबादकी आलमबादी नस्ल।

२. काठियावाड़के जंगलोंकी गीर जातिकी लंबे कानोंवाली गौ

(१) लंबे कानकी गीर नामक नस्ल (जो पश्चिमी राजपूताना, बड़ौदा राज्य एवं बम्बई प्रान्तके उत्तरी भागमें पायी जाती है)।

(२) देवनी नामकी नस्ल (जो निजाम राज्यके उत्तर-पश्चिमी एवं पश्चिमी भागमें पायी जाती है।)

(३) बम्बईकी डाँगी नस्ल (यह देवनी जातिसे मिलती-जुलती है।)

(४) राजपूतानेके अलवर एवं भरतपुर राज्योंमें पायी जानेवाली मेवाती (कोसी) नस्ल।

(५) नर्मदा-तटकी नीमाड़ी नस्ल।

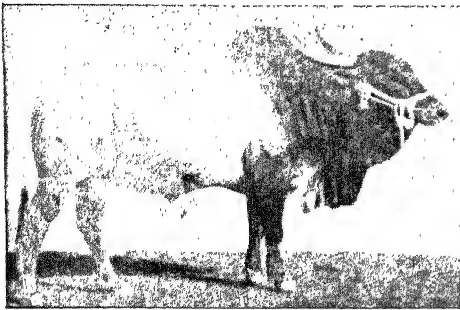
३. (क) उत्तरी भारतकी सफेद एवं खाकी रंगकी चौड़े मुँह एवं मुड़े हुए सींगोंवाली बड़ी रासकी गौ

(१) काँकरेज नामकी नस्ल (जो बम्बई प्रान्तमें थार्पारकरसे अहमदाबादतक और बीसासे राधनपुरतक फैली हुई है), यह गायोंकी एक बहुमूल्य नस्ल मानी जाती है।

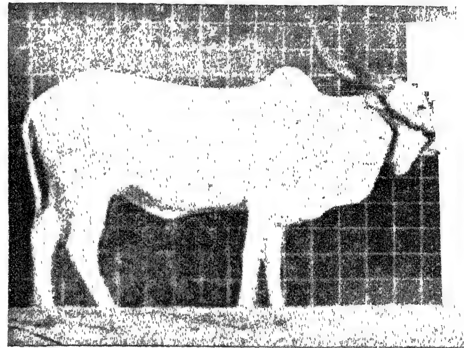
(२) मध्यभारतके अन्तर्गत मालवा प्रान्तकी मालवी



विभिन्न प्रान्तोंमें भिन्न-भिन्न नस्लें



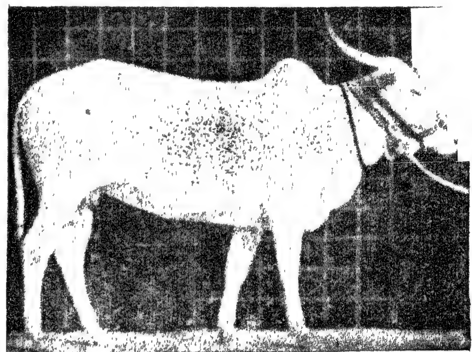
गङ्गा अमृतमहाल साँड़ प्रथम पुरस्कार



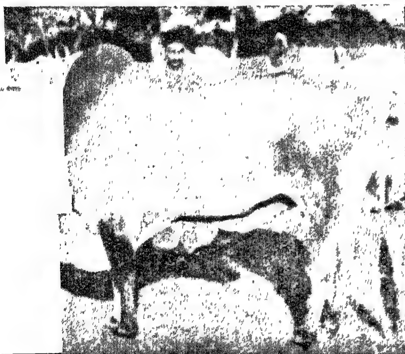
कदमी अमृतमहाल गौ प्रथम पुरस्कार



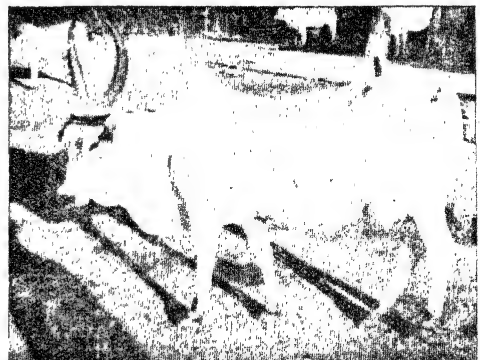
हल्लीकर साँड़



नंदिनी हल्लीकर गौ प्रथम पुरस्कार



कंगायम् साँड़



कंगायम् गौ

(I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)

नस्ल (जो मध्यप्रदेशके उत्तरी भाग तथा निजाम राज्यके उत्तर-पूर्वी भागमें पायी जाती है) ।

(३) नागोरी नस्ल (राजपूतानेके जोधपुर राज्यमें इस नस्लके बैल पाये जाते हैं, जो अपनी तेज चालके लिये प्रसिद्ध हैं) ।

(४) थारपेरकर नस्ल (इस नस्लके पशु, जो मध्यम कदके होते हैं सिंधके दक्षिण-पश्चिमी भागमें पाये जाते हैं) । इस नस्लकी गायें भारतवर्षकी श्रेष्ठ दुधारू गायोंमेंसे हैं ।

(५) सीतामढ़ी (बिहार) की बचौर नस्ल ।

(६) संयुक्तप्रान्तकी पँवार नस्ल ।

३. (ख) उत्तर एवं मध्यभारतकी सँकड़े मुँह एवं छोटे सींगोंवाली सफेद गौ

(१) भगनारी नस्ल (यह नस्ल बलूचिस्तान प्रान्तके जैकोबाबाद जिलेसे लेकर सिंधतक नारी नदीके सहारे-सहारे पायी जाती है) ।

(२) बर्धा (मध्यप्रदेश) की गावलाव नस्ल ।

(३) पंजाबके रोहतक, कर्नाल, हिसार एवं गुड़गाँव जिलों तथा दिल्ली प्रान्तकी हरियाना नस्ल (इस नस्लके पशु संयुक्तप्रान्त एवं राजपूतानाके अलवर तथा भरतपुर राज्योंतक फैले हुए हैं) ।

(४) पंजाबकी हाँसी-हिसार नस्ल ।

(५) नेल्लोरकी अंगोल नस्ल ।

(६) राजपूतानेके अलवर आदि राज्योंकी राठ नस्ल ।

३. क और ख मिश्रित

(१) संयुक्तप्रान्तकी केनवारी नस्ल ।

(२) संयुक्तप्रान्तकी खेरीगढ़ नस्ल ।

४. साहीवाल जातिके पशु

(१) मंटगुमरीकी साहीवाल नस्ल ।

(२) लाल रंगकी सिंधी नस्ल ।

५. सीमाप्रान्तकी धन्नी नस्ल

६. प्राचीन भारतकी पहाड़ी जातिके पशु

(१) दार्जिलिंगकी सीरी नस्ल ।

(२) सिंध और बलूचिस्तानकी लोहानी नस्ल ।

१. मैसूरकी लंबे सींगोंवाली गौ

मैसूरी गौएँ अपनी तेजी और श्रम-सहिष्णुताके लिये विशेष प्रसिद्ध हैं । इस जातिकी गायोंके प्रायः दूध कम होता है । इनका सिर काफी लंबा, मुँह और नथुने कम चौड़े और ललाट काफी उभरा हुआ होता है । इस जातिके पशु प्रायः छोटी रासके होते हैं ।

(१) **अमृतहाल नस्ल**—यह नस्ल मैसूर राज्यमें पायी जाती है । इस जातिके पशुओंका रंग खाकी तथा मस्तक, गला और थूहा काले रंगके होते हैं ।

(२) **हल्लीकर नस्ल**—इस नस्लके पशु मैसूर राज्य-भरमें पाये जाते हैं । यह एक स्वतन्त्र नस्ल है । इनका ललाट उभरा हुआ और बीचमें चिरा हुआ-सा होता है । इस नस्लकी गौएँ अमृतमहाल जातिकी गौओंकी अपेक्षा अधिक दुधारू होती हैं । इनके सींग लंबे और नुकीले तथा कान छोटे होते हैं ।

(३) **कंगायम् नस्ल**—इस नस्लके पशु कोयम्बतूर जिलेके दक्षिणी एवं दक्षिण-पूर्वके ताल्लुकोंमें पाये जाते हैं । इस जातिकी गौएँ अधिक संख्यामें दक्षिणभारत एवं सीलोन भेजी जाती हैं । इनमें बहुधा दूध कम होता है । कहते हैं, इस जातिकी गौएँ १० से १२ सालतक दूध देती रहती हैं । इनके कान छोटे, मस्तक मध्यम परिमाणका, गर्दन ओछी तथा पूँछ काफी लंबी होती है ।

(४) **खिल्लारी नस्ल**—इस नस्लके पशुओंका रंग खाकी, सिर बड़ा, सींग लंबे और पूँछ छोटी होती है । इनका गलकंबल काफी बड़ा होता है ।

(५) **कृष्णातटकी कृष्णावेली गौएँ**—इस जातिके पशु बम्बई प्रान्तके दक्षिणी भाग एवं हैदराबाद राज्यमें कृष्णा नदीके तटपर पाये जाते हैं । इस नस्लकी गौएँ काफी दूध देती हैं । यह नस्ल कई जातियोंके मिश्रणसे बनी है । इनका थूहा काफी बड़ा, सींग और पूँछ छोटे और गलकंबल काफी बड़ा होता है ।

(६) **बरगूर नस्ल**—इस नस्लकी गौएँ मद्रासके कोयम्बतूर जिलेमें बरगूरनामक पहाड़पर बहुतायतसे मिलती हैं । इस नस्लके पशु बड़े दुर्दमनीय होते हैं । सहनशक्ति एवं तेज चालमें, कहते हैं, ये अद्वितीय होते हैं । इन गौओं-के दूध बहुत कम होता है । इनका सिर लंबा, ललाट कुछ उभरा हुआ और पूँछ छोटी होती है ।

(७) **आलमबादी नस्ल**—इस नस्लको मैसूरकी हल्लीकर नस्लकी शाखा मानना चाहिये । इस नस्लके बैल

बड़े परिश्रमी और तेज होते हैं तथा थोड़ी खूराकपर ही निर्वाह कर सकते हैं। गौओंके दूध कम होता है। इनका ललाट उभरा हुआ और मुँह लंबा और सँकड़ा होता है तथा सींग लंबे होते हैं।

२. काठियावाड़के जंगलोंकी लंबे कानों-वाली गीर नस्ल

यह नस्ल काठियावाड़के दक्षिणमें गीर नामक जंगलमें पायी जाती है। इनका ललाट विशेष उभरा हुआ और चौड़ा होता है, कान लंबे और लटके हुए होते हैं तथा सींग छोटे होते हैं। गीर नस्लकी गौओंका रंग विशेष प्रकारका होता है। इनका मूल रंग सफेद होता है और उस-पर विविध रंगोंके धब्बे होते हैं जो सारे शरीरपर फैले रहते हैं। ये धब्बे कई गौओंमें बड़े-बड़े और कई गौओंमें अत्यन्त छोटे होते हैं। इस जातिके पशु मैसूरके पशुओंकी अपेक्षा आकारमें बड़े होते हैं।

(१) गीर नस्ल—इस नस्लके पशुओंकी पीठ मजबूत, सीधी और समचौरस होती है। कूल्हेकी हड्डियाँ प्रायः अधिक उभरी हुई होती हैं। पूँछ लंबी होती है। शुद्ध गीर नस्लकी गायें प्रायः एक रंगकी नहीं होतीं। वे काफी दूध देती हैं। इस जातिके बैल मजबूत होते हैं, यद्यपि ये मैसूरके बैलोंकी अपेक्षा कुछ सुस्त और धीमे होते हैं। उनसे बहुधा गाड़ी खींचनेका काम लिया जाता है। गीर-नस्लकी गायें बच्चे नियत समयपर देती हैं। इनकी दो बियानोंमें औसतन १४ से १६ महीनेका अन्तर रहता है। और अच्छी गायें एक बियानमें औसतन ३५००से४०००रतल-तक दूध देती हैं। इस नस्लकी 'रामों' नामक गौने, जो कांदिवली, बम्बईकी 'गोरक्षा-मण्डली' की थी, साढ़े पाँचसे सात सालतककी अवस्थामें ५५५ दिनोंके एक बियानमें ६००० रतल दूध दिया। इसी मण्डलीकी 'प्राग कबीर' नामक गौने ३९९ दिनके पहिले बियानमें ५२८९ रतल दूध दिया। तथा बँगलोर 'इंस्टीट्यूट' की २८ नं०की गायने २४० दिनोंके पहले बियानमें ४१३२ रतल दूध दिया।

(२) देवनी नस्ल—यह नस्ल बम्बई प्रान्तकी डाँगी नस्लसे मिलती-जुलती है। इसमें गीर नस्लसे भी काफी समानता है। इस नस्लके पशुओंके सिर और सींग गीर नस्लके-से ही होते हैं। ये अनेक रंगके होते हैं, पर मुख्यतः सफेद और काले तथा सफेद और लाल रंगके अधिक होते हैं। इस नस्लके बैल खेतीमें अच्छा काम देते हैं तथा गौएँ निजाम राज्यकी अन्य नस्लोंकी तुलनामें काफी दूध देती हैं। दिल्लीकी प्रथम गो-प्रदर्शनीमें हैदराबाद राज्य तथा हिंगोलके सरकारी फार्मसे देवनी नस्लकी गायें मँगायी गयी थीं। इस नस्लमें अधिक-से-अधिक तीन हजार रतल दूध एक बियानमें देनेवाली गौएँ पायी जाती हैं। हैदराबाद राज्यकी ओरसे इस नस्लकी गौओंका दूध बढ़ानेका प्रयत्न किया जा रहा है।

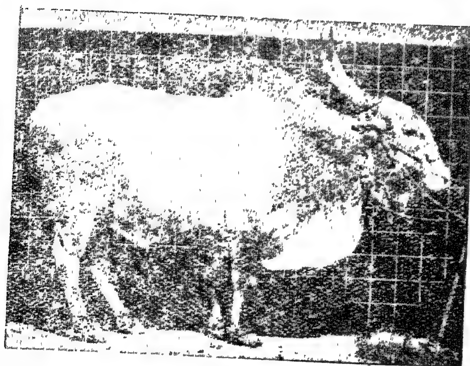
(३) डाँगी नस्ल—इस नस्लके पशु मूलतः बम्बई प्रान्तके अहमदनगर और नासिक जिलों तथा बांसदा, धर्मपुर, जौहर तथा डांग्स राज्योंमें पाये जाते हैं। वे बड़े परिश्रमी होते हैं और धानके खेतोंमें लगातार काम करनेसे इनके स्वास्थ्यपर कोई अवाञ्छनीय प्रभाव नहीं पड़ता। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं। इन गौओंका रंग लाल और सफेद अथवा काला और सफेद होता है। इनकी चमड़ीमें तेलकी बहुत अधिक मात्रा रहती है, जो इनकी वर्षासे रक्षा करती है। इनके खुर विशेषरूपसे कड़े, काले रंगके और चकमक पत्थरकी आकृतिके होते हैं।

(४) मेवाती नस्ल—इस नस्लके पशु बहुत सीधे होते हैं और भारी हलों एवं छकड़ोंमें जोते जाते हैं। गौएँ काफी दुधारू होती हैं। उनमें गीर जातिके लक्षण पाये जाते हैं तथा कुछ बातोंमें ये हरियाना नस्लके पशुओंसे भी मिलते हैं, जिससे यह पता चलता है कि यह एक मिश्रित जाति है। इनका रंग सफेद और मस्तक काले रंगका होता है तथा कुछ पशुओंमें गीर जातिका रंग भी पाया जाता है। इनकी टाँगें कुछ ऊँची होती हैं। इनके कान, ललाट और सँकडा मुँह गीर जातिके द्योतक हैं।

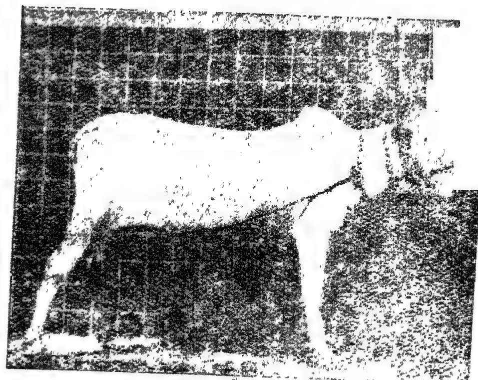
(५) नीमाड़ी नस्ल—इस नस्लके जानवर बहुत फुर्तीले होते हैं। इनका रंग तथा मुँहकी बनावट गीर जातिकी-सी होती है। इनके कान मध्यम परिमाणके होते हैं। सामान्य तौरपर इनका रंग लाल होता है, जिसपर जगह-जगह सफेद धब्बे भी होते हैं। इस जातिकी गौएँ काफी दूध देती हैं।

३. (क) उत्तरीय भारतकी चौड़े मुँह तथा मुड़े हुए सींगोंवाली बड़े रासकी गौ

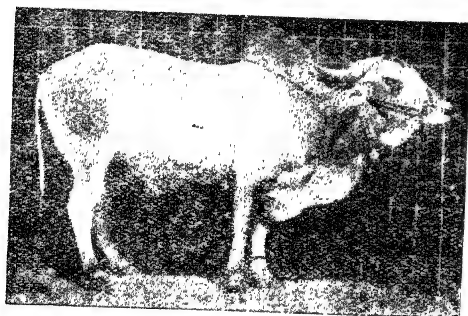
गुजरातकी काँकरेज नस्ल इस जातिकी प्रधान नस्ल है। इस नस्लके पशुओंका मुँह छोटा किन्तु चौड़ा होता है।



शिवाजी खिल्लारी साँड़ प्रथम पुरस्कार



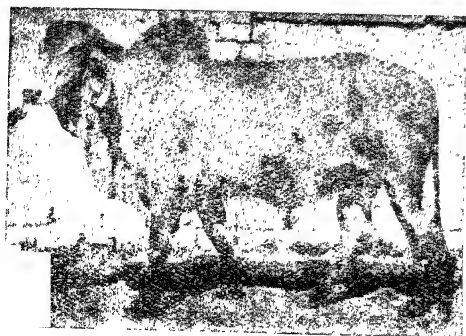
चीमी खिल्लारी गौ प्रथम पुरस्कार



भवानीशंकर कृष्णावेली साँड़ प्रथम पुरस्कार



लानंगी कृष्णावेली गौ प्रथम पुरस्कार



गीर साँड़

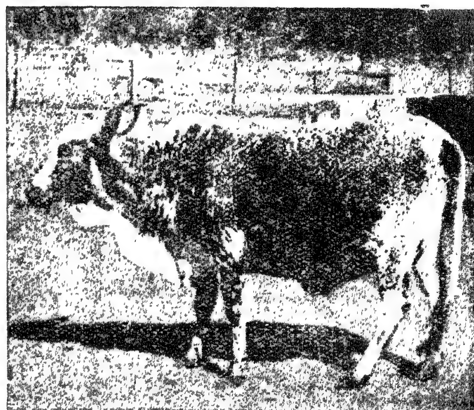


गीर गौ

(I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)



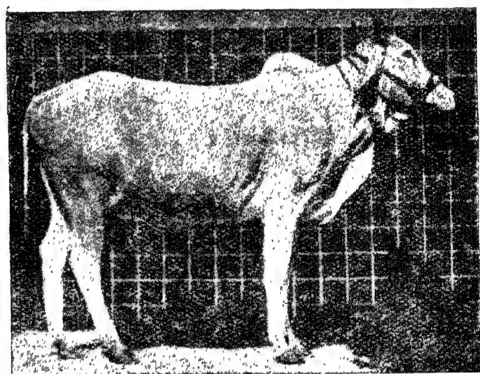
तंजीम देवनी साँड़ प्रथम पुरस्कार



देवनी गौ



कैंची मेवाती साँड़ प्रथम पुरस्कार



सारजित मेवाती गौ प्रथम पुरस्कार



गंगाराम नीमाड़ी साँड़ प्रथम पुरस्कार



नीमाड़ी गौ

(I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)

राजपूतानेकी मालवी नस्ल काँकरेज नस्लसे बहुत मिलती-जुलती है।

(१) काँकरेज नस्ल—इस जातिके पशु भारतभरमें विशेष मूल्यवान् समझे जाते हैं। पालनपुर राज्यमें इसका नाम बढ़ियार नस्ल है। यह नस्ल काठियावाड़, बड़ौदा राज्य एवं सूरततक फैली हुई है। इस नस्लके पशु चलने और गाड़ी आदि खींचनेमें बहुत तेज होते हैं तथा अमेरिका एवं अन्य देशोंमें प्रचुर संख्यामें भेजे जाते रहे हैं।

काँकरेज जातिकी गौओंकी छाती चौड़ी, शरीर सबल, ललाट चौड़ा और सींग मुड़े हुए होते हैं। इनके कान लंबे और झुके हुए होते हैं। इनकी चमड़ी भारी और गलकंबल साधारण परिमाणका होता है। पूँछ अपेक्षाकृत छोटी होती है। इस जातिकी गौओंके दुग्धोत्पादनका विवरण इस प्रकार है—

बम्बईके छारोडी फार्मकी मेवी नामकी गौने ६ से ८ वर्षकी आयुमें अपने तीसरे बियानके ३६२ दिनोंमें ७२५१ रतल दूध दिया। इस प्रकार उसके दूधका दैनिक औसत २० रतल पड़ जाता था। उसी फार्मकी रती नामक गौने ३३५ दिनोंमें ६४२३ रतल दूध दिया; इस हिसाबसे दैनिक औसत १९ रतल होता है। इस देशकी अथवा यूरोपकी किसी भी नस्लके लिये यह संख्या बहुत अच्छी गिनी जायगी। उत्तरी गुजरातके छारोडी फार्ममें शुद्ध काँकरेज नस्लके पशु पाले जाते हैं। वहाँ करीब २०० गौओंको २३०० एकड़ जमीनपर रक्खा जाता है।

दिल्लीकी पशु-प्रदर्शनीमें २२८ संख्याके काँकरेज जातिके बैलको, जिसे बड़ौदा राज्यसे भेजा गया था, उस जातिकी गौओंमें प्रथम पारितोषिक मिला था और छारोडीके नार्थकोट फार्मके द्वारा भेजे हुए एक काँकरेज जातिके साँड़ तथा एक गौको भी इस नस्लके पशुओंमें प्रथम पारितोषिक मिला; बल्कि साँड़ तो प्रदर्शनीभरमें सर्वश्रेष्ठ साँड़ समझा गया।

(२) मालवी नस्ल—इस जातिकी गौओंको प्राकृतिक गोचरभूमियोंमें पाला जाता है और साथ-साथ उन्हें अनाजकी भूसी आदि भी दी जाती है। सड़कोंपर हल्की गाड़ियोंको खींचनेमें तथा खेतीमें इनका विशेष उपयोग होता है। इनका रंग खाकी और गर्दन काले रंगकी होती है परन्तु बुढ़ापेमें इनका रंग बिल्कुल सफेद हो जाता है।

मालवी नस्लके दो अवान्तर भेद होते हैं—(अ) ग्वालियर राज्यके दक्षिण-पश्चिमी भागके बड़ी रासके पशु; (२) इसी भागके दक्षिण-पश्चिममें पाये जानेवाले छोटी रासके पशु। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं।

(३) नागौरी नस्ल—इस नस्लके पशु जोधपुर (मारवाड़) राज्यके उत्तर-पूर्वी भागमें पाये जाते हैं। इस जातिके बैल आकारमें बड़े होते हैं और तेज चालके लिये प्रसिद्ध हैं। पर्वतसरके मेलेमें इनका बाजार लगता है, वहाँ इनकी बड़ी अच्छी कीमत उठती है। इनका मुँह अपेक्षाकृत सँकड़ा एवं लंबा होता है तथा ललाट चपटा। इनकी चमड़ी पतली, गलकंबल छोटा और पूँछ भी छोटी होती है। इस नस्लकी गौएँ दूध कम देती हैं।

(४) थारपरकर नस्ल—कच्छ, जोधपुर एवं जैसलमेर राज्योंमें इस जातिके पशु बड़ी संख्यामें पाले जाते हैं। इस भू-भागमें बालूके ऊँचे-ऊँचे टीले बहुत पाये जाते हैं और वर्षा कम होती है। ये वहाँके अपर्याप्त घास एवं झाड़ियोंपर निर्वाह करते हैं और साथ-साथ इन्हें गवाँर तथा अन्नकी भूसी आदि भी दी जाती है।

इस जातिके पशु बड़े परिश्रमी और खाकी रंगके होते हैं इस नस्लकी गौएँ भारतवर्षकी सर्वश्रेष्ठ दुधारू गायोंमें गिनी जाने लगी हैं। बैल मध्यम परिमाणके होते हैं, अतएव खेती एवं गाड़ियोंमें जुतनेके काम आते हैं। इनमें कई ऐसे गुण हैं, जिनके कारण इनकी बहुत कदर की जाती है। गायें दूध अधिक देती हैं, बैल परिश्रम अधिक कर सकते हैं और थोड़ी खूराकपर निर्वाह कर सकते हैं। भारतके अनेकों भागोंमें सरकारी फार्मोंमें इस जातिके पशु पाले जा रहे हैं। इनका मुँह काफी लंबा, ललाट कुछ उभरा हुआ और थूहा मध्यम परिमाणका होता है।

इस जातिकी गौएँ दूध काफी देती हैं। कर्नाल (पंजाब) के आइ. ए. आर. इन्स्टीट्यूटकी कुमार नामक गौने ३१३ दिनोंमें ८७३४ रतल दूध अर्थात् प्रतिदिन औसतन २८ रतल दूध दिया। गवर्नमेंट एक्सपेरिमेंटल फार्म, कांके, राँची (बिहार) की माधुरी नामक गायने ३०४ दिनोंमें ७११९ रतल अर्थात् प्रतिदिन औसतन २३॥ रतल दूध दिया।

(५) बचौर नस्ल—इस नस्लके पशु बिहार प्रान्तके अन्तर्गत सीतामढ़ी जिलेके बचौर एवं कोइलपुर परगनोंमें पाये जाते हैं। इस जातिके बैल काम करनेमें अच्छे होते हैं। गौओंका दूध २ से ४ रतलके भीतर होता है। इनका रंग खाकी, ललाट चौड़ा, आँखें बड़ी-बड़ी और कान लटकते हुए होते हैं।

(६) **पवाँर नस्ल**—यह संयुक्तप्रान्तके पीलीभीत जिलेकी पटनपुर तहसीलमें और खेरीके उत्तर-पश्चिमी भागमें पायी जाती है। शुद्ध पवाँर नस्लके गाय-बैलोंका मुँह सँकड़ा तथा सींग लंबे और सीधे होते हैं। इनके सींगोंकी लंबाई १२ से १८ इंचतक होती है। इनका रंग प्रायः काला और सफेद होता है। इनकी पूँछ लंबी होती है और ये बड़े फुर्तीले तथा क्रोधी होते हैं। ये मैदानमें स्वच्छन्दरूपसे चरना पसंद करते हैं। गौएँ दूध कम देती हैं।

३ (ख) उत्तर एवं मध्य भारतकी सँकड़े मुँह एवं छोटे सींगवाली सफेद गौ

इस जातिके अन्तर्गत ६ नस्लें हैं—

(१) **भगनारी नस्ल**—नारी नदीके तटवर्ती 'भाग' नामक इलाकेमें पाये जानेके कारण इस नस्लको 'भगनारी' कहते हैं। इस नस्लके पशु अपना निर्वाह नदी-तटपर उगनेवाले घास तथा अनाजकी भूसी आदिपर करते हैं।

इस नस्लमें भी दो प्रकारके पशु होते हैं—(१) छोटी रासके तथा (२) बड़ी रासके। इन पशुओंकी गठन अच्छी तथा कद लंबा होता है। इस जातिकी गौएँ अधिक दूध देनेके कारण प्रसिद्ध हैं।

दज्जल नस्ल—भगनारी नस्लका ही यह दूसरा नाम है, इस नस्लके पशु पंजाबके देरागाजीखाँ जिलेमें बड़ी संख्या-में पाले जाते हैं। कहते हैं कि लगभग सौ वर्ष पूर्व इस जिलेमें कुछ भगनारी साँड़ खास तौरपर नस्लके लिये भेजे गये थे। यही कारण है कि देरागाजीखाँमें इस नस्लके काफी पशु हैं, यहींसे वे पंजाबके अन्य भागोंमें भेजे जाते हैं।

(२) **गावलाव नस्ल**—यह नस्ल मध्यप्रान्तकी सर्वश्रेष्ठ नस्ल है। इस जातिके सर्वोत्तम पशु सतपुड़ाकी तराईके वर्धा जिलेमें, संसार तहसीलमें एवं कुरई परगनेमें, सिबनी तहसीलके दक्षिणी भागमें, नागपुर जिलेके कुछ भागोंमें और बइहर तहसीलमें पाये जाते हैं। ये प्रायः मध्यम कदके होते हैं। गौओंका रंग प्रायः निरा सफेद होता है और बैलोंका सिर खाकी रंगका होता है। इनका सिर काफी लंबा और सँकड़ा, सींग छोटे और गलकंबल बड़ा होता है। खिल्लारी जातिके बैलोंकी भाँति ये भी समान चालसे लंबी यात्रा कर सकते हैं। गावलाव जातिकी गौएँ दुधारू मानी जाती हैं; परन्तु वर्धाके पास बहुत-से गाँव ऐसे हैं, जिनमें इस जातिकी गौएँ बहुत थोड़ा दूध देती हैं। खिलाने-पिलानेकी समुचित व्यवस्था एवं सँभालसे इनका दूध बढ़ाया जा सकता है।

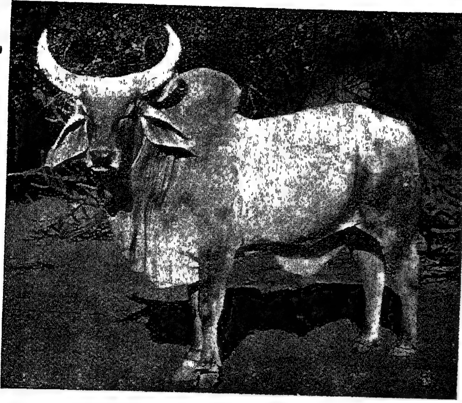
(३) **हरियाना नस्ल**—इस जातिकी गौएँ बड़ी संख्यामें दूध देनेके लिये प्रतिवर्ष कलकत्ते आदि बड़े नगरोंमें भेजी जाती हैं। इस नस्लके पशु एक विशाल भू-भागमें पाये जाते हैं जिसमें संयुक्तप्रान्त एवं राजपूतानेके भरतपुर और अलवर राज्य भी सम्मिलित हैं। हरियाना जातिके बैल सफेद अथवा खाकी रंगके होते हैं। ये तेज चलनेमें और हल जोतनेमें अच्छे होते हैं। कलकत्तेमें बरसातके पूर्व इनका खाकी रंग प्रायः सफेद हो जाता है। बैलोंकी गर्दन और थूहे काले होते हैं। गौओं और साँड़ोंके सींग छोटे और मोटे होते हैं; परन्तु बैलोंके सींग प्रायः मुड़े हुए होते हैं।

दिल्लीके कैटल ब्रीडिंग फार्मकी १८ नंबरकी गौने अपने तीसरे बियानके ३१० दिनोंमें ८,०७९ रतल अर्थात् प्रतिदिन औसतन २६ रतल दूध दिया, जब कि हिसार, पंजाबके 'सरकारी कैटल फार्म' की नं० १९०। २। २२ की गौने २९६ दिनोंमें ७,०६८ रतल अर्थात् प्रतिदिन २१॥ रतल दूध दिया।

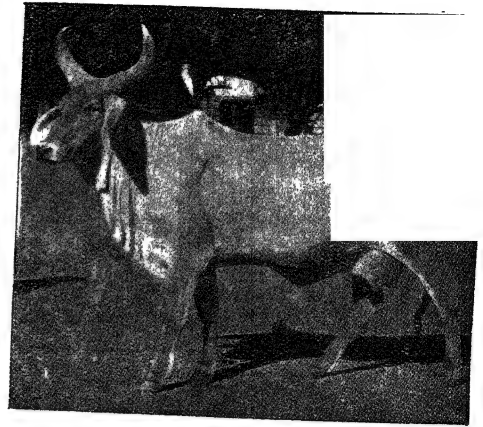
(४) **हाँसी हिसार नस्ल**—पंजाबके हिसार जिलेमें हाँसी नदीके आस-पास यह नस्ल पायी जाती है, इसीसे इसका नाम 'हाँसी-हिसार' पड़ गया। इस नस्लके पशु हरियाना नस्ल-जैसे ही होते हैं, परन्तु उनकी अपेक्षा अधिक मजबूत होते हैं। इनका रंग सफेद और खाकी होता है। इस जातिके बैल यद्यपि परिश्रमी होते हैं, पर गौएँ हरियाना नस्लकी खूबीको नहीं पा सकी हैं।

सन् १९४० की देहली प्रदर्शनीमें सरकारी कैटल फार्मके एक हाँसी-हिसारके बैलको प्रथम पारितोषिक मिला था और उसी फार्मकी एक बछियाने भी प्रथम पारितोषिक प्राप्त किया था।

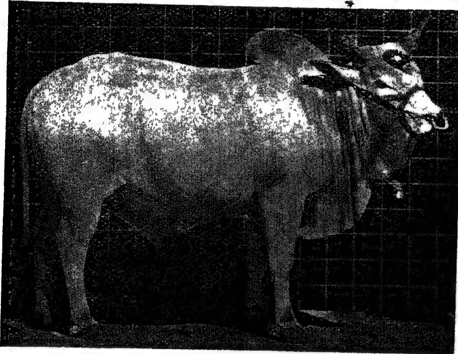
(५) **अंगोल नस्ल**—मद्रास प्रान्तका अंगोल नामका इलाका पशुओंके लिये प्रसिद्ध है। गंतूर जिलेके किसान लोग प्रायः इन पशुओंको पालते हैं। इस जातिके पशु प्रायः सीधे और बैल बड़े बलवान् होते हैं, परन्तु अधिक भारी होनेके कारण वे तेज चलनेमें उपयोगी नहीं होते। इस जातिके पशु बहुत बड़ी संख्यामें अमेरिकन नस्लको सुधारनेके लिये अमेरिका भेजे जाते थे। ये थोड़ा-सा सूखा चारा खाकर निर्वाह कर सकते हैं। इनके शरीर अपेक्षाकृत लंबे



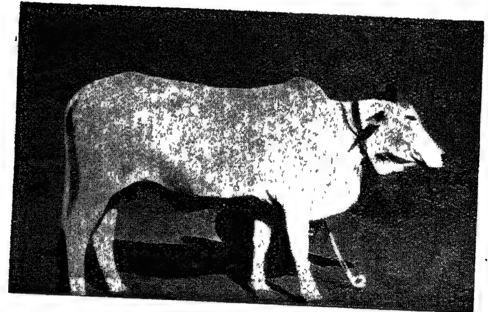
काँकरेज साँड़



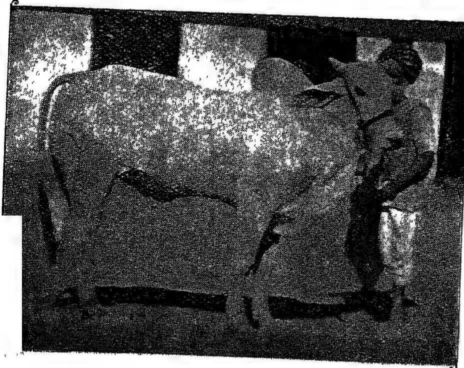
काँकरेज गौ



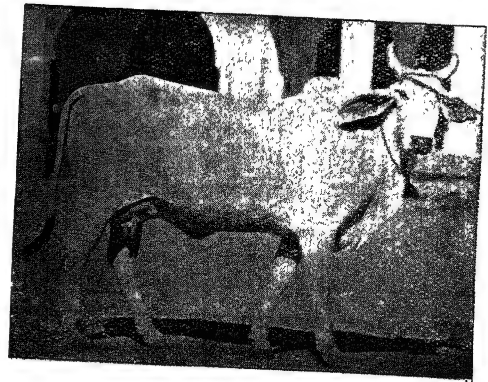
जगराम मालवी साँड़ प्रथम पुरस्कार



मालवी गौ



नागौरी साँड़



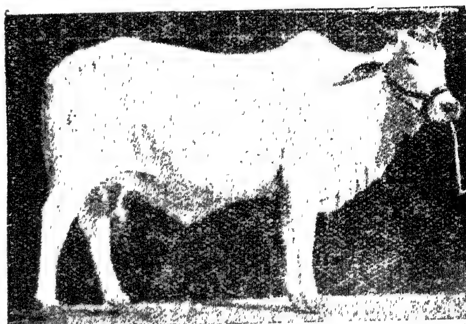
नागौरी गौ

(I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)

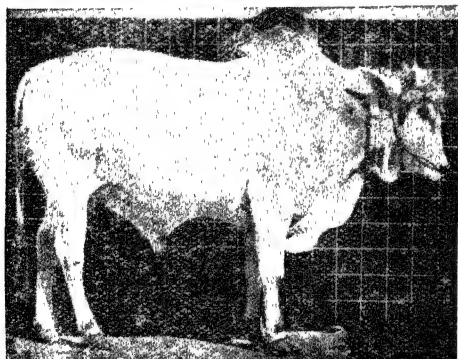
(चार चित्र, I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)



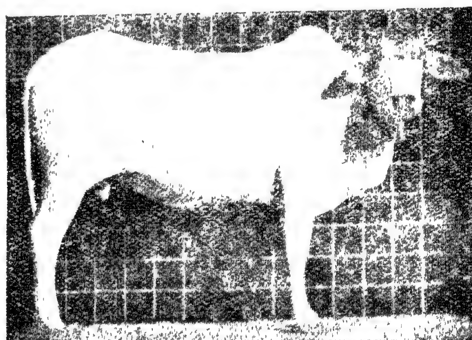
थार्परकर साँड़



फकीरां थार्परकर गौ प्रथम पुरस्कार



कज्जल भगनारी साँड़ प्रथम पुरस्कार



जानू भगनारी गौ प्रथम पुरस्कार



फतेहगढ़ फार्मका हरियाना नस्लका साँड़

(हिसार गवर्नमेंटफार्मकी कृपासे)



हिसार गौ—अखिल भारतीय गौ-प्रदर्शनीमें पाँच हजार पौंडका चेम्पियन कप जीतनेवाली

(हिसार गवर्नमेंटफार्मकी कृपासे)

और गर्दन छोटी होती है। ये अपने डील-डौल तथा शरीरकी गठनके लिये प्रसिद्ध हैं।

(६) राठ नस्ल—ये मध्यम परिमाणके पशु होते हैं। ये बहुत फुर्तीले और मध्यम परिमाणके हल चलाने एवं सड़कपर चलनेमें उपयोगी होते हैं। इनकी गायें भी दुधारू होती हैं। इन तीन गुणोंके कारण ये निर्धन लोगोंके पशु माने जाते हैं, जब कि नागौरी पशु धनवानोंके पशु समझे जाते हैं।

३ (क) और (ख) के मिश्रणसे उत्पन्न हुई जाति

इस जातिके अन्तर्गत दो प्रसिद्ध नस्लें हैं—

(१) केनवारिया नस्ल—यह बुंदेलखण्डकी प्रसिद्ध नस्ल है और संयुक्तप्रान्तके बाँदा जिलेमें केन नदीके तटपर पायी जाती है। इस जातिकी गौएँ दूध कम देती हैं। इनका रंग खाकी होता है।

इनका मस्तक ओछा किन्तु चौड़ा और सींग मजबूत एवं तीखे होते हैं। इनके सींगों तथा शरीरकी बनावटसे ऐसा प्रतीत होता है कि यह जाति (३ क) और (ख) जातियोंके मिश्रणसे बनी है। इनके सींग काँकरेज जातिके पशुओंके-से होते हैं और दूसरे अङ्ग ३ (ख) वाली जातिके-से।

(२) खेरीगढ़ नस्ल—यह नस्ल संयुक्तप्रान्तके खेरी जिलेके खेरीगढ़ परगनेमें पायी जाती है। ये पशु प्रायः सफेद रंगके तथा छोटे, सँकड़े मुँहके होते हैं। इनके सींग बड़े और १२ से १८ इंचतक लंबे होते हैं, वे केनवारिया नस्लके सींगोंसे बहुत मिलते होते हैं। इनके सभी लक्षण प्रायः केनवारिया नस्लसे मिलते हैं। ये क्रोधी और फुर्तीले होते हैं और मैदानोंमें स्वच्छन्दरूपसे चरनेसे स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं। इनकी गायें दूध कम देती हैं। ये तराई प्रदेशके उपयुक्त होते हैं।

४. साहीवाल जाति (जो अफगान-जाति तथा उत्तर भारतकी गौओंके मिश्रणसे बनी है)

इस जातिके पशु अफगानिस्तानके पशुओंसे बहुत मिलते हैं। ये बादामी रंगके अथवा चितकबरे होते हैं। और इनकी गणना भारतकी श्रेष्ठ गायोंमें है। यह प्रसिद्ध है कि किसी समय राजपूतानेसे बहुत-से लोग अपने पशुओंको साथ लेकर मंटगुमरी आये थे और ऐसा माना जाता है कि यह नस्ल गीर नस्लके सम्मिश्रणसे बनी है। इनका रंग अफगान-जातिकी गौओंसे तथा गीर-जातिकी गौओंसे भी मिलता है।

लोगोंका अनुमान है कि लाल रंगकी सिंधी गाय भी इन्हीं दो जातियोंके मिश्रणसे बनी है। इस जातिमें बलूचिस्तानके लास बेला प्रान्तकी नस्लका सम्मिश्रण भी अनुमान किया जाता है।

(१) साहीवाल नस्ल—ये मुख्यतया दूध देनेवाले पशु होते हैं, जो प्राचीन कालमें पंजाबके मध्य एवं दक्षिणी भागोंमें बहुत बड़ी संख्यामें पाले जाते थे। इस जातिके पशु भगनारी, हरियाना, नागौरी एवं धन्नी आदि जातियोंसे सर्वथा भिन्न होते हैं। दुधारू होनेके कारण इस जातिकी गौएँ बड़ी संख्यामें शहरोंमें ले जायी जाती हैं। उनके दुग्धोत्पादनके परिमाणसे पता लगता है कि उचित सँभाल रखनेपर वे कहीं भी रह सकती हैं। नीचे दी हुई तालिकासे भिन्न-भिन्न स्थानोंमें साहीवाल गौओंको पालनेके निम्नलिखित परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं—

स्थान	गौका नाम	दूध देनेकी अवधि दिन	पिछले बियानका दुग्धपरिमाण रतलमें	प्रतिदिनका औसत रतलमें
१. सरकारी मिलिटरीडेयरी फार्म, फिरोजपुर (पंजाब)	बेल्ले k २४१०११	३३१	१००८७	३०.५
२. सी. एल. फार्म, आइ. ए. आर. इन्स्टीट्यूट, नयी दिल्ली	चन्सूरी ६५३	२५५	८६११	३३.८
३. सरकारी डेयरी फार्म, तेलनखेरी, नागपुर	केतकी ५	२८९	७२४९	२५.१

पूसामें इस जातिकी गौ एवं साँड़ दोनोंके गुणोंमें उन्नति करनेकी चेष्टा की जा रही है।

(२) लाल रंगकी सिंधी नस्ल—यह नस्ल मूलतः कराचीके आस-पास और उसके उत्तर-पूर्वके प्रान्तमें

पायी जाती है। बलूचिस्तानके लास बेला इलाकेमें शुद्ध सिंधी जातिके पशु पाले जाते हैं। इस जातिमें अफगान-नस्ल एवं गीर-नस्लका सम्मिश्रण पाया जाता है। लाल सिंधी गौओंकी गणना भारतकी सबसे अधिक दूध देनेवाली गौओंमें है। ये आकारमें छोटी होती हैं किन्तु इनमें दूध देनेकी क्षमता अधिक होती है। ये चाहे जहाँ पल सकती हैं। ये लाल रंगकी होती हैं और मुँहपर एवं गलकंबलमें कुछ सफेद धब्बे बहुधा रहते हैं। इनके कान मध्यम परिमाणके होते हैं।

लाल रंगकी सिंधी गौके दुग्धोत्पादनकी तालिका

स्थान	गौका नाम	दूध देनेकी अवधि दिन	पिछले बियानका दुग्धपरिमाण रतलमें	प्रतिदिनका औसत रतलमें
१. गवर्नमेंट फ्रूट फार्म, मीरपुरखास (सिंध)	सोजी ५०	३७४	७५३३	२०.१
२. सरकारी मिल्क फार्म, जबलपुर	कार्तिक ८६	२८१	६२९८	२२.४
३. सरकारी फौजी डेयरी फार्म, लखनऊ	सैटर्न	४६१	७८२५	१७.०
४. सरकारी मॉडल डेयरी फार्म, सिंकदराबाद	शकुन्तला	३१९	८५७३	२६.७

इस नस्लके पालनेवाले इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं। उनका कहना है—

'छोटे दुग्ध-व्यवसायीके लिये सिंधी गाय सर्वश्रेष्ठ गायोंमेंसे है। इसका आकार बड़ा नहीं होता और यह अंगोल, साहीवाल आदि बड़े आकारकी गौओंकी अपेक्षा कम खाती है; इसकी खूराकमें खर्चा कम पड़ता है और थोड़ी खूराकमें भी यह अपना स्वास्थ्य अच्छा रख लेती है।'

भूतपूर्व 'इम्पीरियल डेयरी एक्सपर्ट' मि० स्मिथ साहबके मतानुसार—

'यह भारतीय गौओंकी अत्यन्त शुद्ध एवं स्वतन्त्र नस्ल है। इस देशमें भैंसोंके बाद पशुओंकी यही एक नस्ल है जो दुग्ध-व्यवसायियोंके लिये व्यापारिक दृष्टिसे लाभकी है।'

'मद्रासकी 'बकिंघम एंड कर्नाटक मिल्स'ने १९२२ में अपने यहाँकी अंगोल जातिकी गौओंको बेचकर अपने दुग्धालयके लिये सिंधी गायोंका एक टोला खरीदा था और आज शुद्ध सिंधी नस्लकी दुधारू गायें बहुत अच्छी संख्यामें उनके यहाँ विद्यमान हैं।

मद्रासके 'होसुर-फार्म' का, जहाँ सिंधी गायें रक्खी जाती हैं, विवरण इस प्रकार है—

दूध देनेकी अवधि—करीब ३१० दिन

ब्याना—हर १६ महीनेके बाद

छुटाना—करीब ५ महीने

दुग्धोत्पादनका परिमाण—५ हजारसे ६ हजार रतलतक

प्रतिदिनकी औसत—१६ रतल,

एक दिनमें सबसे अधिक दूधका परिमाण—३४ रतल।

(मद्रासके 'होसुर कैटल फार्म' के डिपटी डाइरेक्टर ऑव एग्रीकल्चर श्रीयुत आर डबलू लिटलवुडके एक निबन्धसे उद्धृत)

धन्नी नस्ल—सर अर्थर ऑलवरके मतानुसार पंजाबकी धन्नी नस्लको स्वतन्त्र जाति मानना चाहिये। इस जातिके पशु मध्यम परिमाणके तथा बहुत फुर्तीले होते हैं। इनका रंग एक विचित्र प्रकारका होता है और ये पंजाबके अटक, रावलपिंडी एवं झेलम इलाकोंमें तथा उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्तोंमें प्रचुर संख्यामें पाले जाते हैं। इस जातिकी गौएँ दुधारू नहीं होतीं, इसका कारण कदाचित् यह हो सकता है कि लोग इनकी अधिक सँभाल नहीं रखते। बहुधा गौओंको लोग हलमें जोत देते हैं और खूराक भी पूरी नहीं देते। यही कारण है कि उनकी दुग्धोत्पादन-क्षमताको विकासके लिये अवसर ही नहीं मिलता। सामान्य अविकसित गौ प्रति-

(पाँच चित्र I C A R बुलेटिन नं० १७-२४से)



हिसार साँड़ प्रथम पुरस्कार

(हिसार गवर्नमेंटफार्मकी कृपासे)



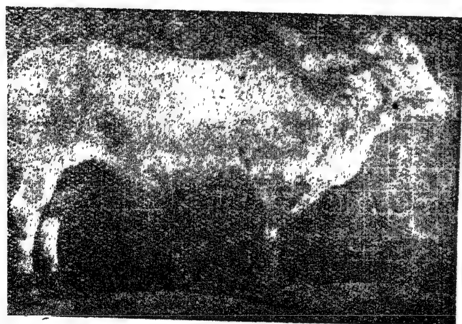
गावलाव गौ



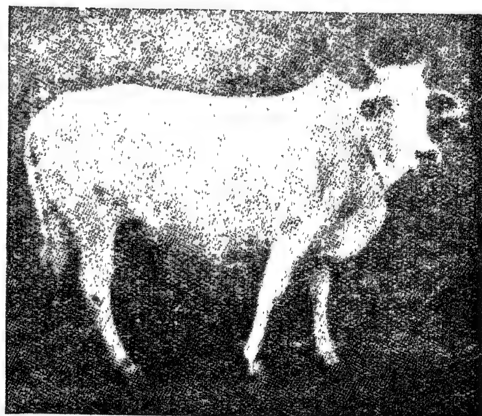
अंगोल साँड़



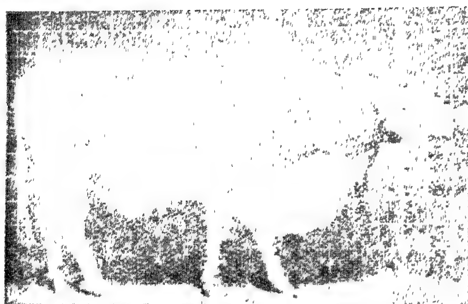
अंगोल गौ



मनमोहन राठ साँड़ प्रथम पुरस्कार



राठ गौ



फिराद साहीवाल साँड़ प्रथम पुरस्कार



शमीम साहीवाल गौ प्रथम पुरस्कार



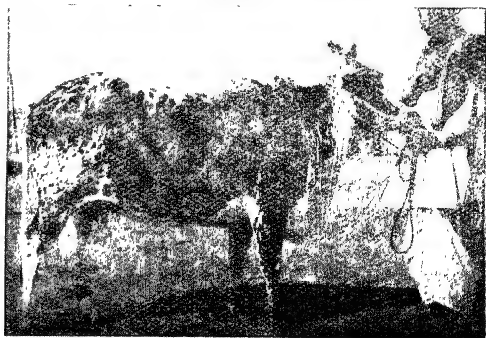
सिन्धी साँड़



सिन्धी गौ



धन्नी साँड़



धन्नी गौ

(I. C. A. R. बुलेटिन नं० १७-२४ से)

दिन ३ से ६ रतलतक दूध देती है। दूध देनेकी अवधि सात महीने होती है। खेतोंपर पटरा चलानेमें इस जातिके बैलोंका अधिक उपयोग किया जाता है। इस जातिके साँड़ और बैल छोटी डग भरते हुए भी तेज चलते हैं, यही इनकी विशेषता है। चार वर्ष पहले इस जातिके बैलोंका मूल्य १००) से १५०) तक था, जब कि गौओंका मूल्य उसका तृतीयांश ही था। खेतोंपर पटरा चलानेके उपयोगमें आनेवाले कुछ अच्छे बैलोंकी तो मुँहमाँगी कीमत उठ जाती है।

प्राचीन भारतकी पहाड़ी गौ—समूचे भारतमें, विशेषकर हिमालय प्रदेश एवं बलूचिस्तानके पर्वतीय प्रदेशमें एक छोटे रासकी गो-जाति पायी जाती है जिसका रंग, बनावट और सामान्य लक्षणोंको देखनेसे इस विषयमें सन्देह नहीं रह जाता कि यह जाति प्राग्-ऐतिहासिक युगसे भारतवर्षमें पायी जाती है। इस जातिके पशुओंके ललाट और गलकंबलमें बहुधा सफेद धब्बा होता है और पूँछका सिरा तथा अन्य अवयवोंके अन्तिम भाग भी सफेद होते हैं। ये छोटे जानवर ऐसे स्थानोंमें भी सुखी और स्वस्थ रहते हैं, जहाँ बड़े और अधिक मूल्यवान् पशु जीवित नहीं रह सकते और दूध देकर तथा पहाड़ोंमें काम करके मनुष्यकी बहुत उपयोगी सेवा कर सकते हैं। इस जातिके पशु उत्तरमें कुंडीकोटल तथा दक्षिणमें कन्याकुमारीतक, पश्चिममें बलूचिस्तान और पूर्वमें आसामतक तथा भारतके विभिन्न भागोंमें स्थित जंगली एवं पहाड़ी प्रदेशोंमें भी पाये जाते हैं। पूर्व एवं पश्चिमके समुद्रतटों, जहाँका गो-धन बहुत ही निम्नश्रेणीका होता है, कुग प्रदेशमें, नीलगिरिके पर्वतोंपर तथा राजपूताना एवं मध्यभारतके जंगलों एवं पहाड़ी प्रदेशोंमें भी इनके दर्शन होते हैं। यदि इन्हें अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाय तो ये पशु वास्तवमें मूल्यवान् सिद्ध होते हैं। ये बहुत परिश्रमी, फुर्तीले एवं कामके होते हैं और अपने आकारके अनुसार दूध भी पर्याप्तमात्रामें देते हैं। इनके शरीरमें कोई ऐसी विशेषता नहीं होती, जिनके द्वारा इनकी जल्दी पहचान हो सके; एक बात अवश्य होती है कि इनका सिर शरीरके अनुपातसे बहुत छोटा होता है। हिमालय पहाड़की बहुत ऊँचाईपर जो बहुत छोटी रासके पशु मिलते हैं, उनके सींग बहुधा बिल्कुल छोटे होते हैं; परन्तु उनसे नीचेके भागोंमें, जहाँ उन्हें अधिक पोषण मिल सकता है, वे काफी लंबे होते हैं। जहाँ उन्हें काफी अच्छा पोषण मिल जाता है, वहाँ इस जातिकी गौएँ अपने आकारके अनुपातसे काफी दूध भी देती हैं।

(१) सीरी नस्ल—इस जातिके पशु दार्जिलिंगके पर्वतीय प्रदेशमें तथा सिक्किम एवं भूटानमें पाये जाते हैं। इनका मूलस्थान भूटान ही माना जाता है और भूटानसे ही इस जातिके सर्वोत्तम पशु दार्जिलिंग लाये जाते हैं। ये प्रायः काले और सफेद अथवा लाल और सफेद रंगके होते हैं। इनके शरीर बारहों महीने घने बालोंसे ढके रहते हैं, जो इन पर्वतीय प्रदेशोंमें उनकी कड़ाकेकी सर्दी एवं मूसलाधार वर्षासे रक्षा करते हैं।

सीरी जातिका पशु देखनेमें भारी होता है। उसका मस्तक चौकोर और छोटा, किन्तु सुडौल होता है। ललाट चौड़ा और चपटा होता है। थूहा काफी आगे निकला हुआ और कान बहुधा छोटे होते हैं। इस जातिके बैलोंकी बड़ी कदर होती है। वे रद्दी पहाड़ी सड़कोंपर आसानीसे १० से १२ मन तकका बोझ खींच सकते हैं।

अच्छी तरह खिलाये-पिलाये जानेवाली गायें १२ रतलतक दूध देती हैं, जिसमें ५ से ६ प्रतिशत तक चिकनाईका भाग होता है। सामान्य गौएँ २ से ४ रतल तक दूध देती हैं।

(२) लोहानी नस्ल—इस नस्लका मूलस्थान बलूचिस्तानकी लोरालाई एजेंसी है। जंगली जातियोंके इलाकोंमें भी ये काफी फैली हुई हैं, वहाँ इन्हें 'अच्छाई' जातिके पशु कहते हैं।

लोहानी जातिके पशु आकारमें बहुत छोटे होते हैं; जवान पशु ४० से ४४ इंचतक ऊँचे होते हैं। इनका रंग लाल होता है, जिसपर सफेद धब्बे होते हैं, यद्यपि ऐसे पशु भी कम नहीं होते जिनका रंग निरा लाल होता है। इस जातिके बैल हल चलाने तथा बोझा ढोनेमें, विशेषकर पर्वतीय प्रदेशोंमें बहुत उपयोगी होते हैं। वे कड़ी सर्दी और गर्मी सह सकते हैं। गौएँ प्रतिदिन १० रतल दूध देती हैं।

गो-रक्षाके लिये शस्त्र धारण करे

गवार्थे ब्राह्मणार्थे वा वर्णानां वापि संकरे। गृह्णीयातां विप्रविशौ शस्त्रं धर्मव्यपेक्षया ॥८०॥

(बौधायनस्मृति २ प्रश्न २ अ०)

गौ और ब्राह्मणकी रक्षाके लिये और वर्णसंकर होनेसे प्रजाके बचानेके लिये ब्राह्मण और वैश्य भी शस्त्र ग्रहण करे।



पाश्चात्य-देशीय गायें

भारतीय गायें मनुष्यकी नित्य और चिर सहचर हैं । जिस समयतकका भारतवासियोंका इतिहास पाया जाता है, उसी समयतक भारतीय गोगणका भी इतिहास पाया जाता है। आरम्भसे ही ये गायें मनुष्योंद्वारा पालित हैं। अन्य देशोंकी गायोंकी भाँति बहुत समयतक जंगलोंमें हिंसक पशुके रूपमें घूमते रहनेके बाद ये मनुष्योंके घरमें आकर नहीं पलीं। भारतीय गायोंका विशिष्ट लक्षण है उनका गलकम्बल और पीठका ककुद् । प्राणितत्त्वविदोंके मतसे ककुद्युक्त गाय जेबू (Zebu) श्रेणीके अन्तर्गत है। यह भारतीय जेबू गाय अफगानिस्तान, फारस तथा अफ्रीकाके किसी-किसी भागमें पायी जाती है । इसके अतिरिक्त और कहीं भी ये गायें नहीं हैं।

यदि भारत तथा फारस, अफगानिस्तान और अफ्रीकाके कुछ स्थानोंको छोड़कर और कहीं गायें नहीं पायी जातीं तो इंग्लैंड, अमेरिका आदिकी २५—३० सेरतक दूध देनेवाली गायें क्या हैं? अवश्य ही वे असली गायें नहीं हैं वरं गायके समान दूध देनेवाले पशु-विशेष हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है उनके गलकम्बलका न होना और ककुद्का भी नहींके बराबर-सा ही होना। उनकी आकृति गायकी आकृतिसे मिलती है, इसीसे वहाँकी काउ (Cow) को भ्रमसे भारतीय गायके तुल्य ही समझते हैं। आकृतिकी सादृश्यतासे जातिकी एकता सिद्ध नहीं होती। कुछ जातिके हिरन, भैंस, गाय और बैलोंमें इतनी सादृश्यता रहती है कि एक जातिको देखकर दूसरी जातिका भ्रम होता है। इलांड हिरन (Eland), नू (Gnu), कुंडू (Koondo) गायके साथ एवं चिलिंघम कैटिल् (Chillingham cattle) गायके साथ बहुत मिलते-जुलते हैं। स्काट्लैंडके हाईलैंड कैटिल् (Highland cattle) और भैंसकी बाहरी आकृति प्रायः एक समान है। एनो (Anoa) नामक हिरन (Antilope) और भैंसमें बहुत थोड़ा अन्तर है। जावा, बालीद्वीप, मलक्का एवं बोर्नियो टापू आदिमें बेंटेंग नामक एक पशु है, जो गायसे विशेष मिलता है। यह बेंटेंग बर्मामें भी है, पर वहाँ इसे सिन (Tsiue) कहते हैं। अपने भारतकी नील गायको ही देखिये, वह गायसे कितनी मिलती-जुलती है, पर गाय नहीं है, एक प्रकारका हिरन है। अतः यह स्पष्ट है कि अन्य देशोंकी गायें असली गोजातिकी नहीं हैं।

पाश्चात्त्य देशोंके दूध देनेवाले इन पशुओंको गाय न कहकर 'गवय' कह सकते हैं, क्योंकि इनकी आकृति बहुत कुछ गायसे मिलती है, 'गोसदृशः गवयः'। वहाँकी गायोंका पूर्वज यूरास् (जर्मनमें यूरच्) नामक जंगली और हिंसक पशु है। यह सिंह, बाघ, गैंडा और भालूकी भाँति जंगलोंमें घूमता था। यह सात फुटसे अधिक ऊँचा होता था एवं इसके सींग तीन फुट लंबे होते थे । जूलियस सीजरने इसका उल्लेख किया है और इसे हाथीसे कुछ छोटा बताया है। इसके शरीरके रोएँ काले अथवा भूरे थे । अब भी इंग्लैंडके किसी-किसी रक्षित बागकी जंगली गायें इसी आकृतिके काले बच्चे उत्पन्न करती हैं। इस यूरास् पशुको लोग जंगलोंसे लाकर—पालने लगे और वहाँके विज्ञानविद् एवं चिर-अध्यवसायी अधिवासियोंके विशेष यत्न और चेष्टासे यह पशु ही धीरे-धीरे ऐसे दूध देनेवाले पशुके रूपमें परिणत हो गया। इस सिद्धान्तकी कुछ पुष्टि इस बातसे भी होती है कि विलायती गायें भारतीय गायोंकी तरह सीधी नहीं होतीं। भूगर्भ-खननसे इस बातका प्रमाण मिलता है कि यूरास् जातीय पशु ही योरोपका गृहपालित पशु हुआ । इंग्लैंडके वारहिल्, न्यूस्टेड आदि रोमन स्टेशनोंमें ऐसी गायोंके कंकाल दिखायी देते हैं। इन सब बातोंसे पता चलता है कि विलायती गाय जंगली, हिंस्र एवं मनुष्योंके भीषण शत्रुरूप पशुसे उत्पन्न होकर केवल मनुष्योंके यत्न और चेष्टासे वर्तमान पालतू और दूध देनेवाला पशु बन गया है। इसके लिये पाश्चात्त्य मनुष्यका अध्यवसाय और यत्न अवश्य ही अभिनन्दनीय है । इसीका फल है कि ये गवय, महिष, बाइसन, चमरी, नीलगाय, गौर बेंटेंग, इलांड, नू, कुंडू और यूरोपीय ब्रोस्टोरस जातीय पशु दूध देते तथा कृषिकार्यमें गाय-बैलकी भाँति व्यवहृत होते हैं।

इंग्लैंडकी गोजाति

इंग्लैंडकी गायें प्रधानतः चार भागोंमें विभक्त की जा सकती हैं—(१) इंग्लैंड और वेल्सकी गायें, (२) स्काट्लैंडकी गायें, (३) आयरलैंडकी गायें और (४) इंग्लैंडके अन्यान्य द्वीपपुञ्जोंकी गायें।

(क) इंग्लैंड तथा वेल्समें दस प्रकारकी गायें हैं— (१) शार्ट हार्न (छोटे सींगवाली), (२) लिंकन शायर (छोटे सींगकी लाल गायें), (३) हेरीफोर्ट शायर

(सफेद मुँह और शरीर लाल), (४) नार्थ डिवन (उज्ज्वल शरीरवाली), (५) साउथ डिवन (उज्ज्वल शरीरवाली किन्तु कुछ बड़ी), (६) लौंग हार्न (लंबे सींगवाली), (७) रेड पोल्ड (लाल रंगकी शृङ्गहीना), (८) डरहम (छोटे सींगवाली), (९) ससेक्स (डिवन जातीय) और (१०) वेल्स (काली गाय) ।

(ख) स्काट्लैंडकी गायें—(१) एवार्डिन एंगास, (२) गैलवे, (३) वेस्टहाईलैंड और (४) आयरशायर।

(ग) आयरलैंडकी गायें—(१) केरी डिक्स्टर, (२) डिक्स्टर ।

(घ) इंग्लिश द्वीपपुंजकी गायें—(१) जर्सी, (२) गर्नसी ।

इंग्लैंडकी दुधारू गायें—(१) जर्सी, (२) गर्नसी } अल्डार्नी

(३) आयरशायर, (४) केरी डिक्स्टर ।

मांस तथा दूध दोनोंके लिये प्रसिद्ध गायें—(१) शार्ट हार्न, (२) लिंकन शायर, (३) रेड पोल्ड, (४) डिक्स्टर ।

केवल मांसके लिये प्रसिद्ध गायें—(१) हेरीफोर्ड, (२) डिवन, (३) ससेक्स, (४) लौंग हार्न, (५) पेनब्रुक तथा मार्टिन, (६) एवार्डिन एंगास, (७) गैलवे, (८) वेस्ट हाईलैंड, (९) डिक्स्टर—इन सब गायोंका थोड़ा-बहुत अपना इतिहास है, अतः प्रत्येकके विषयमें कुछ आवश्यक बातोंका जान लेना ठीक होगा ।

शार्ट हार्न (छोटे सींगवाली)—इस बातका निर्णय करना कठिन है कि यह किस जातिकी है। ईसाकी पहली शताब्दीमें शृङ्गहीना गायें थीं, संभव है यह उन्हींमेंसे हो। अधिकांश लोगोंका मत है कि यह संकर जातिकी गाय है। सिंक्लेयर नामक विद्वान्‌ने स्थिर किया है कि यह सैक्सन लोगोंके द्वारा लायी हुई बोस्टोरस जातिकी गाय है। सत्रहवीं शताब्दीके पहले इन गायोंके विषयमें कुछ मालूम न था। सन् १७९० में टामस बूथ और बेइट् नामक व्यक्तियोंने इस जातिकी गायोंकी उन्नतिका भरपूर प्रयत्न किया। इनकी इतनी उन्नति हुई कि सन् १८७३ में इस जातिकी १५ गायें ५५१६५) रुपये प्रतिगायके हिसाबसे बिकीं।

ये सुन्दर होनेके साथ दुधारू भी होती हैं। इनके दूधमें मक्खन भी अधिक निकलता है। एक गायके एक दिनके दूधमें एक सेर मक्खन होता है। इनके शरीरका रंग सफेद और लाल तथा उज्ज्वल रक्तवर्णका होता है। मस्तक अपेक्षाकृत छोटा, नाक रक्ताभ और उन्नत, आँखें उज्ज्वल कृष्णवर्णकी, सींग छोटे, स्थूल, टेढ़े और झुके हुए होते हैं। गर्दन लंबी, स्थूल और दृढ़ताव्यंजक होती है। वक्षःस्थल प्रशस्त और गंभीर होता है। सामनेके दोनों पैर पीछेके दोनों पैरोंसे छोटे होते हैं। पीठपर गर्दनसे लेकर पूँछतक एक सीधी रेखा-सी दिखायी देती है। गायोंका थन घड़ेकी तरह होता है।

ये गायें सालमें १२३२ गैलनतक दूध देती हैं। कोई-कोई इसी तरह १५ वर्षोंतक दूध देती रहती है और २७ वर्षोंतक जीती है। दूधके अतिरिक्त ये खानेके काममें भी आती हैं। जब ये दूध देना बंद कर देती हैं तब मोटी हो जाती हैं। साधारणतः ये दस मन वजनकी होती हैं। इनमें एक विशेषता यह भी है कि इस जातिका साँड़ जिस किसी जातिकी गायसे संयोग करता है तो उसका बच्चा साँड़की जातिका पैदा होता है।

लिंकन शायर (छोटे सींगकी लाल गाय)—

ये जंगली तथा पहाड़ी गायों और छोटे सींगवाली गायोंके संयोगसे उत्पन्न मालूम होती हैं। छोटे सींगवाली गायोंसे ये इसी बातमें भिन्न होती हैं कि इनका रंग लाल होता है। इस जातिके बैल खेतीके कामके लिये अच्छे होते हैं; क्योंकि ये अल्पाहारी, कष्टसहिष्णु और नीरोग होते हैं। छः वर्षका कोमेट नामका एक बैल १५०००) रुपयेपर बिका था। लेडी और लारा नामकी गायें उच्च श्रेणीकी थीं। आजकल भी इस जातिकी गायें श्रेष्ठ समझी जाती हैं। अच्छी गायें प्रतिदिन लगभग ३७॥ सेर दूध देती हैं। इस जातिकी एक गायने २४ महीनोंमें ४५९ मन ५ सेर दूध दिया था।

हेरीफोर्ड शायर—इनके मुँह, गर्दन और पेटका रंग सफेद किन्तु शेषभागका रंग घोर लाल होता है। बहुत लोगोंका अनुमान है कि मंटगुमरी जातीय गायोंसे इनकी संकर उत्पत्ति हुई है। इसीसे इनका मुँह सफेद हो गया है। ये अन्य बातोंमें छोटे सींगवाली गायोंके समान होती हैं; किन्तु उतनी दुधारू नहीं होतीं। ये मांसके लिये विशेष प्रसिद्ध होती हैं। ये अत्यन्त शान्त और धीर स्वभावकी होती हैं तथा सहजमें ही मोटी हो जाती हैं। इनके रोएँ कोमल, कुंजित और परिमाणके अनुसार लंबे होते हैं। बैलोंके सींग नीचेकी ओर और गायोंके ऊपरकी ओर झुके रहते हैं। दीर्घ-कालके अवर्षणके समय भी यह गोजाति सबल और स्वस्थ बनी रहती है। इसकी विशेषता यह है कि यह घास खाकर ही

जीती और वृद्धि पाती है। सन् १९०२ में इस जातिका ३ वर्षका एक बैल १० हजार डालरमें बिका था। साँड़ २०-२५ मन वजनका होता है।

नार्थ डिवन तथा साउथ डिवन—इन्हें पश्चिमी चुन्नी (The rubies of the west) कहते हैं। उत्तर डिवन-जातीय गायें पहाड़ी देशोंमें और दक्षिण डिवन-जातीय गायें समतल भूमिपर होती हैं। इनके शरीरकी गठन और वर्ण सुन्दर होता है। पेटके नीचेका कुछ स्थान काला या सफेद होता है। सींग सफेद और छोटे होते हैं। गायोंके सींग ऊपरकी ओर और बैलोंके नीचेकी ओर झुके रहते हैं। मुँह छोटा और पतला होता है। आँखें चमकीली, नाक सफेद, कान पतले, गठन मँझोला, ललाट और पश्चात्-देश प्रशस्त होता है। उत्तर डिवनकी अपेक्षा दक्षिणवाली गायें कुछ बड़ी होती हैं।

इनका साधारण वजन १०-१२ मन होता है; किन्तु मोटी हो जानेपर १५-२० मनतक हो जाता है। गायें अधिक दुधारू न होनेपर भी १०-१२ सेर दूध प्रतिदिन दे देती हैं। इनके दूधमें मक्खनका अंश अधिक रहता है। एक गायके प्रतिदिनके दूधमें आधा सेरसे तीन पावतक मक्खन निकल आता है। इस जातिकी गायें जापानमें अधिक लायी गयी हैं। इनके मालिक दूध बढ़ानेकी चेष्टा कर रहे हैं। जलवायु, भूमि तथा घासपर इस जातिकी गायोंका रंग, गठन आदि निर्भर करता है। जो पर्याप्त घास और पुष्टिकर खाद्य पाती हैं उनका आकार साधारणतः बड़ा होता है।

दीर्घशृङ्गी गायें—इस जातिकी गायोंमें छोटी-बड़ी दो प्रकारकी श्रेणियाँ हैं। छोटी श्रेणीकी गायें पहाड़ी तथा जल-प्रधान देशोंमें रहती हैं। दरिद्र किसान भी इनको पालते हैं। ये खूब दूध देती हैं और सहजमें मोटी हो जाती हैं, अतः इनसे मांसका काम भी चलता है। बड़ी श्रेणीकी गायें समतल तथा उर्वरा भूमिमें रहती हैं। पहले इनके दूध बढ़ानेकी ओर लोगोंका ध्यान नहीं गया, केवल मांसके लिये ही ये पाली जाती थीं। किन्तु सन् १८९९ से इनका दूध बढ़ानेकी चेष्टा की गयी और अब ये काफी दूध देने लगी हैं।

इस जातिकी गायोंके दूधमें मक्खन अधिक होता है। छोटे सींगवाली गायें इस विषयमें इनकी बराबरी नहीं कर सकतीं। इनका शरीर लंबा, पैर छोटे, सींग बड़े, पीठ प्रशस्त और समान होती है। शरीरपर घने रोएँ होते हैं, जो शीतसे रक्षा करते हैं। ये प्रतिदिन १२-१३ सेर दूध देती हैं। एक गायके सप्ताहभरके दूधमें ९ सेर मक्खन निकलता है। ये अल्पभोजी होती हैं। इस जातिका सवा तीन वर्षका एक बैल २९ मन ९ सेर था और ६०००) रुपयेमें बिका था।

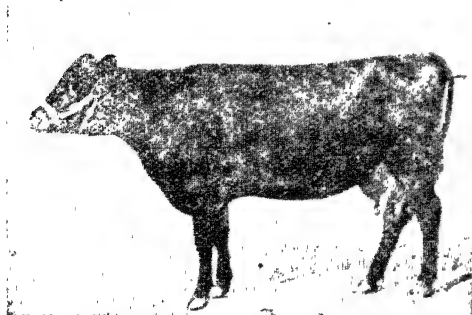
शृङ्गहीना लाल गायें—इनका रंग लाल, पैर छोटे तथा पतले, पूँछ छोटी और दूधकी नली मोटी होती है, इनके सींग नहीं होते। यूरोपमें इस जातिकी गायें कब और कहाँसे आयीं, इसका कुछ पता नहीं है। श्रीपावेल साहबने इस जातिकी विशेष उन्नति की है। ये बड़ी दुधारू होती हैं। इस जातिकी एक गायने ९ वर्ष ४ महीनेमें ६३२ मन १६॥ सेर दूध दिया। १२ वर्षमें इस गायने केवल ५१ दिन दूध नहीं दिया। इस जातिकी यह भी विशेषता है कि प्रसवके थोड़े समय पहलेतक भी दूध दिया करती हैं।

डारहम और यार्कशायरकी गायें—टीम नदीके दोनों किनारोंपर डारहम और यार्कशायर नामक इंग्लैंडके दो प्रदेश हैं। यही दोनों प्रदेश छोटे सींगवाली गायोंकी उत्पत्तिके प्रधान स्थान हैं। इस जातिकी गायें संसारभरमें फैली हैं। इनके विषयकी और बातें छोटे सींगवाली गायोंके समान ही समझनी चाहिये।

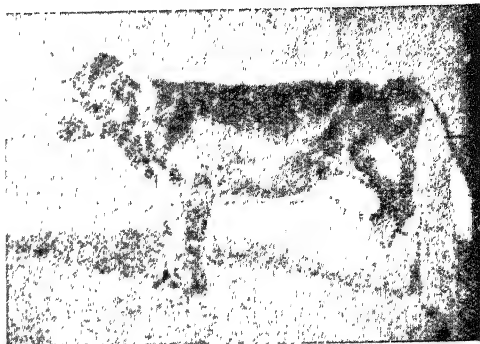
ससेक्सकी गायें—इस जातिकी गायोंका मुँह चिपटा, पेट और पीठ सीधी रेखाकी भाँति तथा हड्डी मोटी और मजबूत होती है। ये बहुत थोड़ी उम्रमें पूर्णता प्राप्त कर लेती हैं। ये दूध इतना कम देती हैं कि इनके बछड़ोंके पीने भरको भी काफी नहीं होता। बंगालकी गायोंकी तरह बछड़ा दिनभर इनके साथ घूमा करता है और रातमें अलग कर दिया जाता है। सबेरे ये बहुत थोड़ा दूध देती हैं। इस जातिके बैल बड़े होते हैं और भारी बोझा लेकर चल सकते हैं। इनके मुँहमें लगाम लगाकर काम लिया जा सकता है। बैल ३ वर्षसे लेकर ७ वर्षतक मेहनतका काम करते हैं। फिर लोग खिला-पिलाकर तगड़ा करके मांसके लिये बेच देते हैं। इंग्लैंडमें इनका विशेष आदर है।

इस जातिमें भी छोटी-बड़ी दो प्रकारकी गायें होती हैं। देखनेसे ऐसा मालूम होता है कि ये और डिवन जातिकी गायें एक हैं। ये ससेक्स, केंट और मरे आदि प्रदेशोंमें पायी जाती हैं। ससेक्सकी उत्कृष्ट गोचरभूमि होनेके कारण ही वहाँकी गायें बड़ी होती हैं।

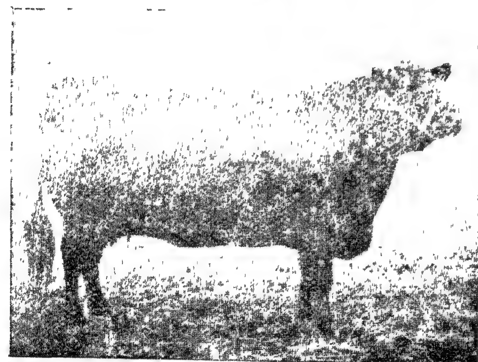
वेल्सकी गायें—यहाँकी गायें काली होती हैं और यही इस देशकी प्राचीन गो-जाति है। सेक्सन और रोमनोंके समयमें



शृङ्गहीना लाल (रेड पोल्ड) गौ



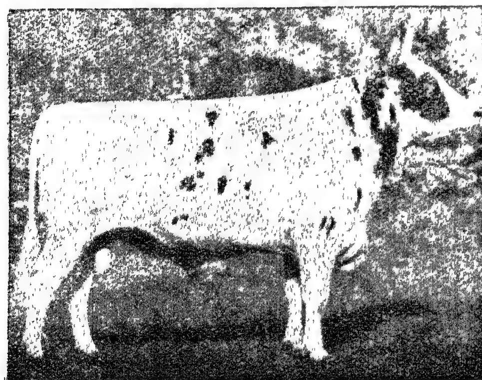
दीर्घशृङ्गी (लॉंगहर्न) गौ



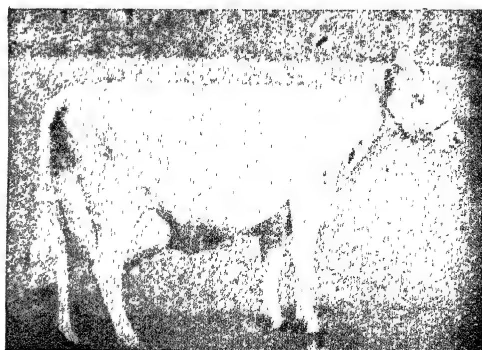
एबार्डिन एंगास गौ



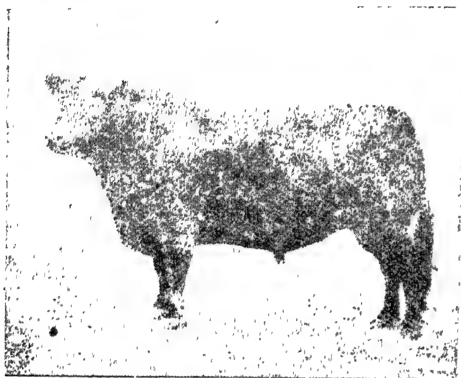
एबार्डिन एंगास साँड़



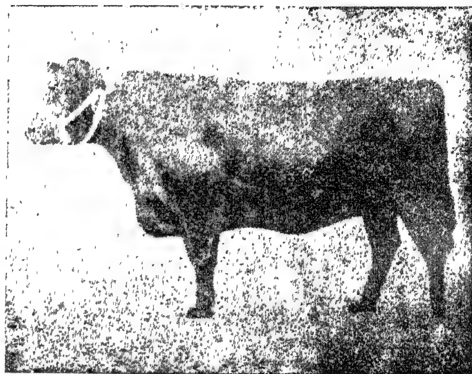
आयरशायर साँड़



आयरशायर गौ



गैलवे बैल



गैलवे गौ



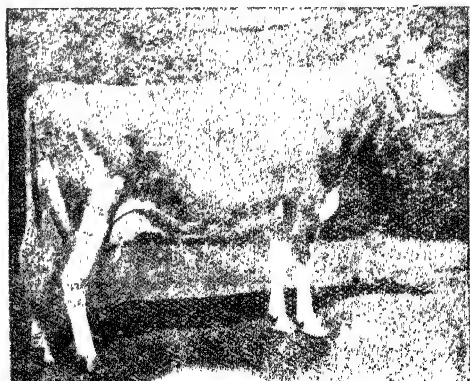
जर्सी साँड़



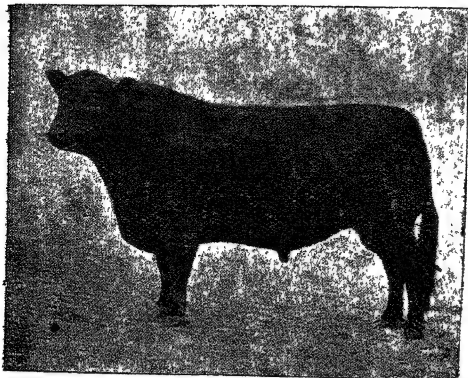
जर्सी गौ



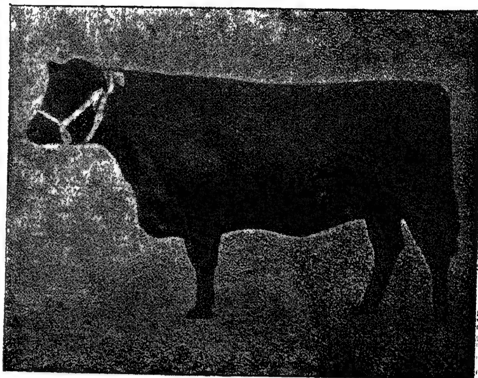
गर्नसी साँड़



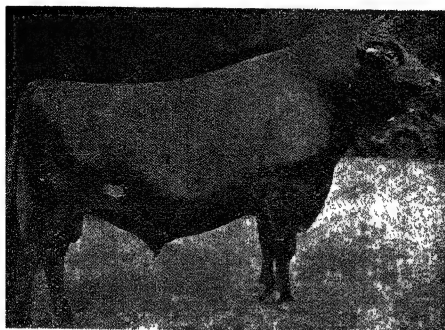
गर्नसी गौ



गैलवे बैल



गैलवे गौ



जर्सी साँड़



जर्सी गौ



गर्नसी साँड़



गर्नसी गौ

सफेद तथा काले रंगकी गायें लायी गयी थीं। ये बहुत थोड़ा खाकर भी परिपुष्ट रहती हैं, इसीसे इनका पालना सहज है। इनके सींग लंबे होते हैं। दक्षिणी वेल्सकी गायें तो दूध देती हैं, किन्तु उत्तरी वेल्सकी गायें अधिक दूध नहीं देतीं।

फाकलैंडकी गायें—इंग्लैंडके बादशाह सातवें हेनरीने अपनी कन्या मारग्रेटका विवाह स्काट्लैंडके राजा चौथे जेम्सके साथ किया था और दहेजमें ३०० गायें दी थीं। स्काट्लैंडके राजपरिवारवाले अधिकतर फाकलैंडके राजभवनमें रहते थे और ये गायें भी वहीं रहती थीं, इसीसे इनकी सन्तानोंको फाकलैंडकी गायें कहते हैं।

एबार्डिन एंगासकी गायें—स्काट्लैंडकी यह गो-जाति बहुत प्रसिद्ध है। इसकी उन्नति सन् १७२९ के बादसे आरम्भ हुई थी, किन्तु इस थोड़े ही समयमें इस जातिने आश्चर्यजनक उन्नति की है। वाटसन एवं मेकम्बी आदि गोपालकोंने इस जातिकी उन्नतिमें बड़ी चेष्टा की। अब ये गायें समस्त संसारकी दुधारू गायोंकी श्रेणीमें आ गयी हैं। इस जातिकी गायोंको कई बार प्रदर्शनीमें सर्वोत्तम पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

दूधके परिमाण और मक्खनकी अधिकताकी दृष्टिसे ये गायें उत्तम हैं। आजकल अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा यूरोपके अन्यान्य देशोंमें ये गायें खूब फैल गयी हैं। ये गायें मांसके लिये भी प्रसिद्ध हैं। तीन वर्षके एक बैलका वजन ३३ मनतक हो चुका है। इन गायोंकी उन्नतिके लिये जो समिति है उसके ५१२ सदस्य हैं और ६७९९८ गायोंकी रजिस्ट्री हो चुकी है। इस जातिकी गायोंकी समिति अमेरिकामें भी है, जिसमें एक हजार सदस्य हैं और लाखों गायोंकी रजिस्ट्री हो चुकी है। गायोंकी वंशावली ही केवल १६ खंडोंमें प्रकाशित है। अमेरिकाने इस क्षेत्रमें बड़ी उन्नति की है।

आयरशायरकी गायें—ये गायें नाटे पैरोंकी, लाल-सफेद रंगकी, चितकबरी अथवा बिल्कुल लाल या सफेद होती हैं। ये अल्पाहारी होनेके कारण पालनेमें सुगम हैं। इनके दूधका गुण भी अच्छा होता है। साधारण भोजन पाकर भी एक गाय सालभरमें ७५ मनके लगभग दूध देती है। एक गायने एक वर्षमें १२५०० पौंड दूध दिया था। ये मझोले आकारकी होती हैं और वजन १२॥ मन लगभग होता है। ये बड़ी कष्टसहिष्णु होती हैं और सभी देशोंका जलवायु इनके अनुकूल पड़ जाता है।

गैलवेकी गायें—स्काट्लैंडके दक्षिण-पश्चिममें गैलवे नामक एक प्राचीन प्रदेश है, वही इस जातिकी गायोंका मुख्य स्थान है। पहले ये बड़े-बड़े सींगोंवाली होती थीं किन्तु आजकल गोपालकोंके प्रयत्नसे बिना सींगकी हो गयी हैं। इनका रंग साधारणतः काला होता है। ये विशेष दुधारू तो नहीं होतीं किन्तु इनके दूधमें मक्खन बहुत निकलता है। एक गायके एक दिनके दूधमें प्रायः सेरभर मक्खन निकलता है। इस जातिके साँड़ दूसरी जातिकी गायोंसे मिलकर अपनी ही जातिकी संतान पैदा करते हैं। इसीसे इस जातिमें अच्छी वृद्धि हुई है। इस जातिकी बहुत-सी गायें उत्तर अमेरिका, कनाडा, ग्रीस, साइप्रस, रूस और मैसोपोटामियामें गयी हैं।

पश्चिम हाईलैंडकी गायें—स्काट्लैंडके पश्चिम हाईलैंडमें समुद्रके किनारे-किनारे और यार्कशायरमें इस जातिकी गायें होती हैं। इनका शरीर लंबे और घने बालोंसे ढका रहता है, जिससे ये कठोर जाड़ा सह सकती हैं। ये साधारणतः काले रंगकी होती हैं। शरीर छोटा और सींग बड़े होते हैं। ये गाय और भैंसके बीचके पशु हैं जो बहुत कुछ जंगली गायेलसे मिलते हैं। बहुत प्राचीन कालमें इनको काइलो (Kyloe) कहते थे। ये दूध तो प्रतिदिन चार ही पाँच सेर देती हैं, किन्तु दूध बहुत उत्तम होता है। उसमें मक्खन बहुत अधिक रहता है। पहले इनका वजन ३-४ मन था, किन्तु चेष्टा करनेसे अब १८-१९ मन हो गया है। काइलो गाय और भैंसोंसे संयोग कर संकर वत्स उत्पन्न करनेमें नार्दबरलैंडके ड्यूकने आशातीत सफलता प्राप्त की है।

आयरलैंडकी केरी तथा डिक्स्टर जातिकी गायें—केरी जातिकी गायें छोटी और अल्पभोजी होती हैं। थोड़ा खाकर भी मोटी-ताजी रहती हैं और दूध अधिक देती हैं। इन्हें गरीब लोग ही अधिक पालते हैं। इनका रंग काला या चितकबरा होता है। सींग बड़े नहीं होते और ऊपरकी ओर टेढ़े होकर उठे रहते हैं। सींगोंका रंग सफेद किन्तु अग्रभाग काला होता है। आँखें उज्ज्वल, गठन सुन्दर और चमड़ा कोमल होता है।

केरी जातिकी पहाड़ी गायोंद्वारा डिक्स्टर साहबने एक स्वतन्त्र जातिकी गायोंका उत्पादन किया है, जो उन्हींके नामपर केरी डिक्स्टर जातिकी गाय कहलाती हैं। इनकी गठन सुगोल और पैर छोटे होते हैं। रंग काला अथवा लाल और सफेद मिला हुआ होता है। ये बलवान् होती हैं और केरी प्रान्तकी तूफानी हवा सह लेती हैं, किन्तु केरी गायोंके समान दुधारू नहीं हैं। इन्हें धनी-दरिद्र सभी पाल सकते हैं।

(जर्सी गाय)

इंग्लिश चैनल द्वीपोंकी गायें—इंग्लिश चैनल द्वीपोंमें जर्सी नामका एक द्वीप है। वहाँकी गायें जर्सी नामसे विख्यात हैं। इस जातिकी गायें दूधके लिये प्रसिद्ध हैं। ये बहुत अधिक दूध देती हैं, और इनके दूधमें इंग्लैंडकी सब जातिकी गायोंसे अधिक मक्खन निकलता है। मांसके लिये ये नहीं पाली जातीं, क्योंकि ये कभी भी मोटी नहीं होतीं। ये दो वर्षकी उम्रमें ही बच्चा दे देती हैं और एक बियानमें ५६ मन दूध देती हैं।

इनका रंग शुभ्र और धूसर होता है। शरीरका संगठन मझोला और सामनेकी अपेक्षा पीछेका भाग प्रशस्त होता है। गर्दन नाटी और पतली होती है। पूँछें लंबी, कान छोटे, आँखें चमकीली, मुख और मस्तक छोटा तथा उन्नत होता है। पीठ धँसी और सींग छोटे होते हैं। समस्त द्वीपमें कुल ११००० गायें हैं। प्रतिवर्ष १००० गायें इंग्लैंड, ९०० डेन्मार्क और १०० फ्रांस जाती हैं।

गर्नसीकी गायें—इस जातिकी गायें नार्मंडीसे गर्नसीमें लायी गयी थीं। सन् १८८९की प्रदर्शनीमें इस जातिकी गायोंको सर्वप्रधान पुरस्कार प्राप्त हुआ था। ये गायें खूब दूध देती हैं। इनका थन बहुत बड़ा होता है। इनका मस्तक दीर्घ, आँखें बड़ी, ललाट प्रशस्त, सींग टेढ़े, गर्दन लंबी और पतली, पीठ धँसी हुई और सीधी, पूँछ लंबी तथा गुच्छेदार, नाक सफेद होती है। कान, पूँछ, अगला हिस्सा, सींगोंकी जड़ें, थन और शरीरका वर्ण कुछ पीला होता है। इनके दूधमें मक्खन बहुत अधिक होता है। ये १५-२० सेर दूध देती हैं। एक गायने २४ घंटोंमें १ मन चार सेर दूध दिया था। इनका तथा जर्सी गायोंका मक्खन पीलापन लिये होता है। ये बलिष्ठ और कष्टसहिष्णु होती हैं। अमेरिकावाले इनको बहुत खरीदते हैं।

ईस्ट-इंडियन गोजाति—समय-समयपर भारतवर्षसे नाना जातिकी गायें इंग्लैंड जाती हैं, उनको वे लोग ईस्ट-इंडियन गाय कहते हैं। उनके विषयमें बतानेकी आवश्यकता नहीं, उन्होंने वहाँ जाकर भारतीय गायोंकी क्षमताका विशेष परिचय दिया।

हालैंडकी गायें—गुजरातकी भाँति हालैंड समुद्रके किनारे-किनारे बसा है। यहाँकी गायोंके बराबर पृथ्वीकी किसी जातिकी गाय दूध नहीं दे सकती। इस देशमें ३ श्रेणीकी गायें हैं। यहाँकी गायें बड़े आकारकी, शान्त, धीर और सुन्दर होती हैं।

(१) होलस्टिन फ्रिजियन, (२) लेकेन फील्ड या डचबेल्ट, (३) उत्तर हालैंडकी गायें।

होलस्टिन फ्रिजियन—फ्रिजिया प्रदेशकी ये गायें जर्मनीके होलस्टिन बंदरगाहसे बाहर जाती हैं, इसीसे अमेरिकावाले इन्हें होलस्टिन फ्रिजियन कहते हैं। फ्रिजियाका अधिकांश भाग नीचा होनेके कारण यहाँ घास खूब होती है। यहाँके गाय-बैल घास खाकर खूब लंबे-चौड़े तथा बलिष्ठ हो जाते हैं। यहाँके गो-स्वामी गो-पालनके सिवा और कोई काम नहीं करते। इसीसे उनका पूरा ध्यान गायोंपर रहता है। इनमें भी छोटी, मँझोली और बड़ी तीन श्रेणियाँ हैं। छोटी कीचड़युक्त भूमिमें, बड़ी स्थलमें और मँझोली रेतीली भूमिपर रहती हैं।

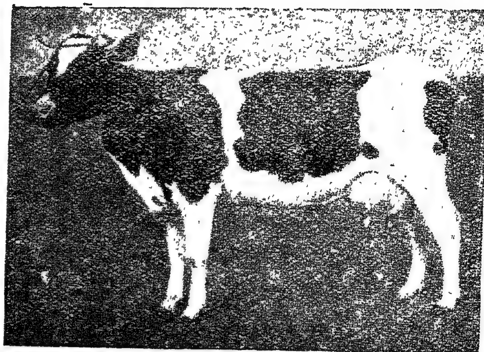
बहुत-से इन्हें इंग्लैंडकी छोटे सींगवाली गायोंकी आदि बीज मानते हैं। ये दूध खूब देती हैं। अच्छा भोजन देनेसे ये सहज ही मोटी-ताजी हो जाती हैं। इनका चमड़ा पतला, आँखें कोमल, मस्तक बृहत्, काले कपालमें सफेद टीका, नाक बड़ी, गला पतला और पूँछ लंबी होती है। एक बियानमें १०० मनके हिसाबसे ये दूध देती हैं। एक गायने ३३६ दिनोंमें २१७ मन दूध दिया था। अधिक दूध और मक्खनके लिये इन्हें सदा प्रथम पुरस्कार मिला करता है।

लेकेन फील्ड या डचबेल्ट—इस जातिकी गायोंका आदि निवासस्थान हालैंड देश है। ये इंग्लैंडकी गैलवे गायकी भाँति होती हैं, पर इनके सींग नहीं होते। यूरोपमें इन्हें डचबेल्ट और हालैंडमें लेकेन फील्ड कहते हैं, जिसका अर्थ है वस्त्रावृत। इनका अगला-पिछला भाग घोर काला और बीचका खूब सफेद होता है, जिससे ऐसा मालूम पड़ता है कि एक सफेद कंबल बीचमें लपेट दिया गया है, इसीसे इसका नाम लेकेन फील्ड पड़ा। ये होलस्टिन गायोंसे छोटी होती हैं। एक गायका वजन १४-१५ मन और साँड़का २०-२२ मन होता है। ये निम्नभूमिकी घास खाकर पुष्ट होती हैं, किन्तु उच्चभूमिमें रहकर उतनी पुष्ट नहीं होतीं। ये गायें केवल दूधके लिये पाली जाती हैं। एक गाय प्रतिदिन एक मनतक दूध देती है। इंग्लैंड, मेक्सिको, कनाडा तथा अमेरिकामें इस जातिकी गायें हैं, किन्तु इनकी संख्या कम है।

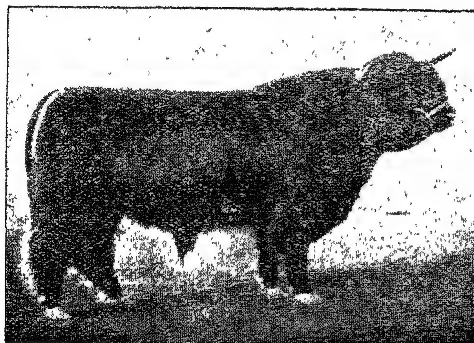
उत्तर हालैंडकी गो-जाति—इनमें कोई विशेषता नहीं होती; इससे इनके विशेष विवरणकी आवश्यकता नहीं है।



होलस्टीन फ्रिजियन बैल



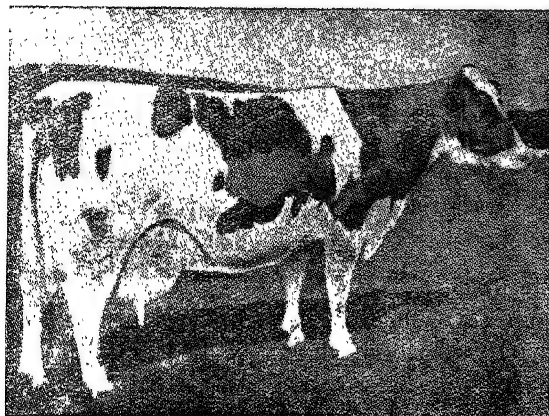
होलस्टीन फ्रिजियन गौ



हाईलेंडर बैल



होल्स्टीन गौ



सर्वोपरि दुग्धवती गौ] [मेडकप फेनी, कोरोनेशन फार्म

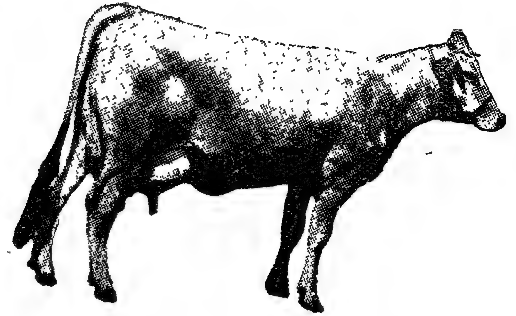
सर्वोपरि दुग्धवती गौ

कोरोनेशन फार्मकी इस 'मेडकप फेनी' गौने २१ मई सन् १९४२ को पूरे होनेवाले ३०० दिनके एक ब्यानमें २१००० सेर दूध दिया। लगभग ६७५ सेर मक्खन दिया। प्रतिदिन १॥। मन दूध और २। सेर मक्खन हुआ। सबसे अधिक दूध देनेवाली गौओंमें यह सर्वोपरि है। इसका जन्म १३।१।१९३३ को हुआ था। इसकी मा और तीन बहिनें अभीतक 'कोरोनेशन फार्म'में वर्त्तमान हैं।

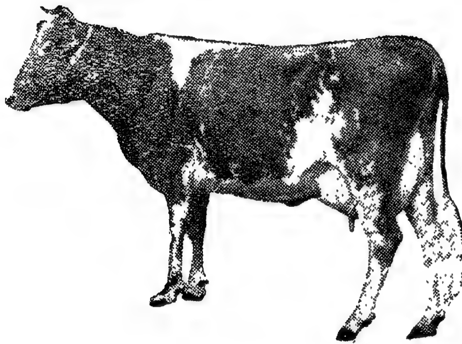
(मेडकप फेनीका चित्र 'दरभंगा गोशाला सोसाइटी'की कृपासे प्राप्त)



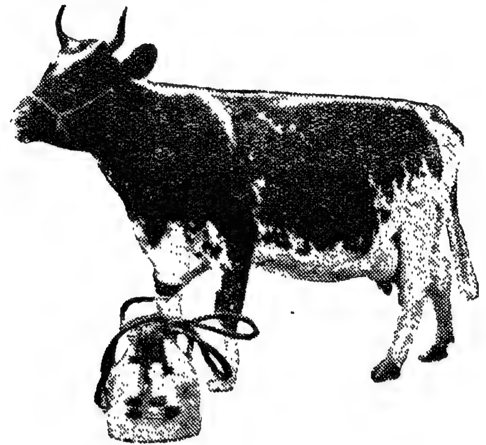
(१)



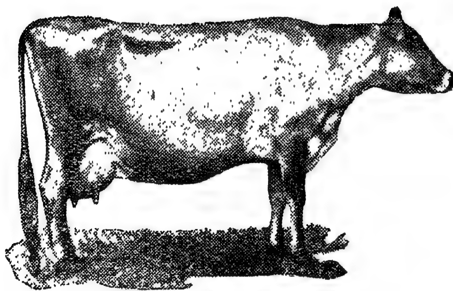
(२)



(३)



(४)



(५)

अमेरिकाकी दुग्धवती गायें

(१) वाटरलूके मि० फ्रेडकी 'पोच सैली आरम्सबी' होलस्टीन गौ। ११ वर्षके आठ बियानोंमें दूध १२७०८०, मक्खन ४२१३ पौंड दिया। (२) ली हिल फार्म, न्यू वर्नन की ब्राउन स्विस गौ। तीसरे वर्ष ३६५ दिनोंमें दूध १८८२४, मक्खन ८६० पौंड, पाँचवें वर्ष दूध २१६७६, मक्खन ९३३ पौंड दिया। (३) टारबेल फार्म न्यूयार्ककी पीयरलेस सिबिल, गर्नसी गौ। ३०५ दिनोंमें दूध ११६९५, मक्खन ५८२ पौंड दिया। (४) मि० हर्मन० सी० क्लिंगेल, ओहियोकी 'स्प्रुशउड लेडी सिबिल द्वितीय' आयरशायर गौ। २३९ दिनोंमें दूध १३२२७, मक्खन ५५८ पौंड दिया। (५) मि० जे० डब्ल्यू० कोप्पिनीके स्टेट, कैलिफोर्नियाकी 'शिल्केन लेडीज रूबी' जर्सी गौ। १२ वर्षमें दूध १२१४३९, मक्खन ६६५४ पौंड दिया। (होर्ड्स डेरीमेन)

(दरभंगा गोशाला सोसाइटीकी कृपासे)

बेल्जियमकी गायें—इस देशकी गायें अनेक अंशोंमें हालैंडकी गायोंकी भाँति होती हैं।

स्वीजरलैंडकी गायें—स्वीजरलैंडमें दूधका खूब विस्तृत व्यवसाय होता है। इस देशको पृथ्वीका 'गो-गृह' कहते हैं। यह राज्य ही एक गोचरभूमि है। सन् १९०१में यहाँ केवल १३४० गायें थीं, किन्तु १९०६ में १४९९८०४ गायें हो गयीं। गर्मीके दिनोंमें ये गायें पहाड़ीपर घास चरती हैं और जाड़ेमें घर रहती हैं। इनमें एक विशेष जातिकी गायें हैं जो अधिक दूध देती हैं। खूब मोटी होनेसे ये नाटी मालूम पड़ती हैं। गायका वजन १६-१७ मन तथा बैलका २०-२२ मन होता है। इनका चमड़ा और रोएँ मुलायम होते हैं। इनका थन सुगठित होता है और दूधकी शिराएँ स्पष्ट दिखायी देती हैं। ये बड़ी आसानीसे पहाड़पर चढ़-उतर सकती हैं।

डेन्मार्ककी गायें—यहाँ आल्डेनवर्ग तथा रेड डेनिस नामक दो जातियोंका उत्कृष्ट गो-परिवार है। एक समय यह समस्त यूरोपका गो-गृह था और यहाँसे खोवा, मक्खन, पनीर और दूध यूरोपमें जाता था। आज भी यह देश दूध-मक्खनके लिये प्रसिद्ध है।

नारवे और स्वीडनकी गायें—डेन्मार्ककी भाँति इन दोनों देशोंमें भी अधिक दूध देनेवाली गायें होती हैं। ये और डेन्मार्ककी गायें एक ही जातिकी हैं। इस देशका अधिक भूभाग शीतकालमें बर्फसे ढका रहनेके कारण यहाँ घास कम होती है किन्तु गो-पालकोंके सुन्दर प्रबन्धके कारण घासका जरा भी अपव्यय नहीं होता, इसीसे विशेष कमी नहीं पड़ने पाती। यहाँवाले गायोंकी सेवा खूब करते हैं। गोशालाओंको खूब साफ-सुथरा रखते हैं और गायोंको अलग-अलग बड़े घरोंमें रखते हैं। एक स्त्री बीस-पचीस गायोंकी सेवा करती है।

इटलीकी गायें—इस देशमें अच्छी गायें नहीं हैं और न गो-जातिकी उन्नतिके लिये कोई चेष्टा ही होती है। यहाँ-की गायोंके सींग बड़े होते हैं। ये दूध देनेवाली नहीं होतीं।

फ्रांसकी गायें—फ्रांसके उत्तर भागमें राइन नदीके किनारेके सिवा सब जगह नार्मेन गो-जाति दिखायी पड़ती है। इनकी देहका रंग लाल और जहाँ-तहाँ सफेद दाग होते हैं। इनके छोटे सींग सिरसे ऊपरकी ओर उठकर झुक जाते हैं और उनका अगला भाग काला होता है। पैर पतले और सुन्दर होते हैं। नार्मेडीमें गोचर-भूमि अधिक है। यहाँकी गायें स्थूलकाय एवं अधिक दूध देनेवाली होती हैं। इंग्लिश चैनलकी गायें उन्हींकी एक जातिमेंसे हैं।

अमेरिकाकी गायें—अमेरिकाकी कोई अपनी गो-जाति नहीं है। उत्तर अमेरिकामें यूरोपसे तथा दक्षिण अमेरिकामें भारतसे गायें आयी हैं। वर्तमान समयमें इंग्लैंड तथा यूरोपकी सभी जातियोंकी गायें अमेरिकामें हैं। इस देशके धनी गोपालक प्रदर्शनीमें पुरस्कृत उत्तम गायों तथा साँड़ोंको बहुत बड़ी रकम देकर खरीद लेते हैं और इस प्रकार अपने देशके गो-समुदाय तथा दुग्ध-व्यवसाय-की उन्नति करते हैं। यहाँ गोचारणके लिये बहुत बड़े-बड़े मैदान हैं। यहाँकी गायें अल्पाहारी तथा अधिक दूध देनेवाली होती हैं।

कनाडाकी गायें—यहाँ घास बहुत होती है, इससे गायोंके पालनेमें सुविधा है। इस द्वीपमें बहुत-सी गायें हैं। प्रतिवर्ष यहाँसे स्थूलकाय बैल विभिन्न देशोंको जाते हैं। यहाँकी गायें इंग्लैंडकी गो-जातिसे उत्पन्न हुई हैं। जर्सी-गर्नसी आदि गायोंका यहाँ विशेष आदर है। सन् १९०७ में यहाँ ७४३९०५१ गायें थीं।

एरीजोनाकी गायें—संयुक्तराज्य अमेरिकाके दक्षिण-पश्चिम भागमें स्थित मेक्सिको और कैलीफोर्नियाके एरीजोना नामक प्रदेशमें उत्तम गोखाद्य तथा गोचारणके लिये बड़े-बड़े अनेक मैदान हैं। यहाँ गोजातिकी उन्नतिका काम जोरोंसे हो रहा है। प्रतिवर्ष ४५ करोड़ रुपयेकी गायें यहाँसे इंग्लैंड जाती हैं।

आर्जेन्टाइनकी गायें—यहाँ गायोंके खाने लायक घास तथा गोचर-भूमि बहुत अधिक है। थोड़े ही दिनोंमें यहाँ गो-जातिकी अच्छी उन्नति हुई है। सन् १८७८ में यहाँ १ करोड़ २० लाख गायें थीं; किन्तु सन् १८९९ में २ करोड़ ५० लाख गायें हो गयीं। पहले यहाँ स्पेन देशकी बड़े सींगोंवाली मामूली गायें थीं; किन्तु क्रमशः डरहम, छोटे सींगोंवाली और हेरीफोर्ड जातिकी गायें आ गयीं। अब तो होलस्टिन फ्रीजियन, जर्सी तथा अन्य जातिकी गायें लाकर इस देशमें मक्खन और पनीरका बड़ा व्यवसाय चल रहा है।

आस्ट्रेलियाकी गायें—गत शताब्दीके आरम्भमें यहाँ एक भी गाय नहीं थी, किन्तु सन् १९०६ में ८१७८०० गायें हो गयीं। भिन्न-भिन्न जातिकी श्रेष्ठ गायें ऊँचे दामों-पर लाकर इतनी उन्नति की गयी है। डचबेल्ट गोजातिके

साथ जर्सी और आयरशायर गोजातिके सम्मिश्रणसे अत्यन्त दुग्धवती संकर जातिकी गायें यहाँ उत्पन्न की गयी हैं। यहाँ गोचर-भूमि यथेष्ट है। आजकल यहाँ जर्सी, आयरशायर, डिवनशायर, ससेक्स, एवार्डिन एंगास आदि गायें पायी जाती हैं।

न्यूजीलैंडकी गायें—यहाँकी नदियों और झरनोंमें सदा पानी भरा रहनेसे घास सदा प्रचुर मात्रामें रहती है। यहाँ बहुत-सी स्थायी गोचर-भूमि है। यहाँ चारेका कभी अभाव नहीं होता। सन् १९०६ में यहाँ १८५१७५३ गायें थीं; जिनमें ५९३९२७ गायें दूध देनेवाली थीं। मांसके लिये शार्ट हार्न, हेरीफोर्ड, एवार्डिन एंगास, रेड पोल्ड, डिवन और हाईलैंड जातीय गायें तथा दूधके लिये शार्ट हार्न, आयरशायर जर्सी, होलस्टिन और केरी डिक्स्टर जातीय गायें पाली जाती हैं। सन् १९०६ में २२८३१६९५) रुपयेका ४१६२४५॥ मन मक्खन तथा ६७४६०४०) रुपयेका २२८०३२॥ मन पनीर यहाँसे विदेशोंमें भेजा गया है। यहाँ दूध, सूखा दूध तथा पनीरके व्यवसायकी बड़ी उन्नति हो रही है।

(अफ्रीकाकी गोजाति)

मिश्रकी गायें—भारतीय गायोंकी भाँति यहाँकी गायोंके ककुद् तथा गजकम्बल होता है। वर्षाकालमें ये घास खाती हैं और जब अधिक वर्षासे घासके स्थान जलमें डूब जाते हैं तब सूखी घास खाकर जीती हैं। अमृतमहाल गायोंके बिकनेके समय इजिप्टके खदीव और पाशा मद्राससे बहुत-सी गायें खरीदकर ले गये थे। इस देशमें गो-जातिकी उन्नतिके लिये कोई विशेष चेष्टा नहीं की जाती।

दक्षिण अफ्रीकाकी गायें—दक्षिण अफ्रीका या केप कालोनी प्रदेशमें हालैंडदेशीय और इंग्लिश चैनलकी जर्सी जातिकी दुधारू गायें हैं। ये गायें बोस्टोरस जातिकी हैं किन्तु केप कालोनी तथा मेडागास्कर द्वीपोंमें जेबू श्रेणीकी गायें होती हैं। कुछ लोगोंके मतसे ये गायें अफ्रीका-प्रवासी भारतीयोंद्वारा लायी गयी हैं।

कबिरेंडोकी गायें—यह अफ्रीकाके पूर्व भागमें है। यहाँके लोग गोपालक हैं। यहाँ साँड़ोंकी दौड़ होती है। जिसके पास दौड़नेवाला साँड़ होता है, वह देशका प्रधान व्यक्ति समझा जाता है। एक दौड़नेवाले साँड़का मूल्य एक हजार गायोंके मूल्यके बराबर होता है।

आइलैंड-गोजाति—अफ्रीकाके जंगलोंमें एक प्रकारकी जंगली गायें या मृग होते हैं। इंग्लैंडमें इन्हें आइलैंड गाय या विदेशी गाय कहते हैं। यद्यपि ये गाय कहलाती हैं किन्तु वास्तवमें गाय नहीं वरं गो-सदृश मृग हैं। जहाँ गर्मी-सर्दी अधिक नहीं पड़ती, वहीं ये रहती हैं। ये कृष्णसार जातिकी हैं और उन्हींकी भाँति होती भी हैं। ये साधारणतः घोड़े-जितनी बड़ी होती हैं। गर्दनके पास इनकी ऊँचाई ५ फीटतक होती है। इनके सींग दृढ़ और पीछेकी ओर झुके होते हैं। ये बड़ी बलिष्ठ होती हैं। २७-२८ मन घासका बोझ सींगोंद्वारा अनायास ही उलट देती हैं। ये आकारमें बड़ी और भयंकर होती हैं। इनकी देहका रंग कुछ पीलेपनके साथ सफेद होता है। ये अधिक दूध नहीं देतीं।

चामरी गो (Yak)—हिमालय पर्वतके उत्तरी भागोंमें चामरी जातिकी गायें होती हैं। ये जंगली और पालतू दोनों होती हैं। इनका शरीर घने और लंबे रोओंसे ढका रहता है। बर्फीले प्रदेशमें रहनेके कारण ही प्रकृतिने शायद इनके शरीरको बालोंसे ढक दिया है। इनकी गर्दन और पीठ बराबर, मुँह नीचे और पैर छोटे-छोटे होते हैं। सींग पीठकी ओर झुके हुए होते हैं।

जंगली गायोंका रंग काला तथा पालतू गायोंका काला एवं सफेद मिला हुआ होता है। सफेद रंगकी चामरी गायकी पूँछका चमर बनता है। फालतू गायोंके सींग नहीं होते। इनका वजन ७ मन और ऊँचाई ३–४ हाथ होती है। ये दस महीनेपर बच्चा देती हैं। इनका शब्द हमारे देशकी गायोंके शब्दकी भाँति नहीं होता। तिब्बती इनका दूध पीते हैं, पीठपर सवारी करते हैं, चमड़ेसे कपड़े तैयार करते हैं और शरीरके रोओंकी उन्हें नाना प्रकारके रंगोंमें रँगकर टोपियाँ बनाते हैं।

बाइसन—बाइसन वंशकी दो जातियाँ हैं। एक यूरोपमें और दूसरी अमेरिकामें। इनका पिछला हिस्सा भारी होता है। सींग और पूँछ छोटी तथा मस्तक विशाल होता है। इनकी गर्दन, कंधे और गलेपर इतने लंबे-लंबे बाल होते हैं कि धरतीतक लटकते रहते हैं। जाड़ेके दिनोंमें ये बाल और भी बढ़ जाते हैं, एवं गर्मीके दिनोंमें झर जाते हैं। ये गायें दलबद्ध होकर रहना पसंद करती हैं। अमेरिकामें अंग्रेज-सरकार तथा यूरोपमें रूस-सरकारने इनका वध निषेध कर दिया है; इसीसे यह जाति अभी पृथ्वीपर दिखायी पड़ती हैं।

ये भारतीय भेड़ोंकी भाँति निर्बुद्ध और जिद्दी होती हैं।

आगे चलनेवाली गाय यदि जलमें डूबकर मर जायगी तो पीछेकी सारी गायें जलमें डूबकर प्राण दे देंगी। चमड़े और मांसके लिये ये मारी जाती हैं। इनके केशोंका सूत बनाकर व्यवसायी लोग मोजा-दस्ताना आदि तैयार करते हैं। इनकी गर्दनपर एक छोटा-सा अयाल होता है किन्तु वह हमारे देशके बैलोंकी तरह नहीं होता।

ये गर्मीके दिनोंमें गर्भ धारण करती हैं और नौ महीनेमें बच्चा देती हैं। इस जातिके बैलोंकी ऊँचाई ६ फीटके लगभग होती है और शरीरका वजन २०-२२ मन होता है। यूरोपका बाइसन-वंश क्रमशः ध्वंस हो रहा है। यूरोपकी बाइसनका आकार अमेरिकाकी बाइसनसे भिन्न होता है, यह देखनेमें उतनी कुरूप नहीं होती। ('गोधन'के आधारपर)



गायोंकी सबसे अच्छी नस्ल और एशिया महाद्वीपकी सबसे बड़ी गोशाला

(लेखक—एक गोसेवक)

हमारे देशके लोगोंको, विशेषकर खेती करनेवालोंको ऐसी गायकी आवश्यकता है जिसके बछड़े अच्छे बैल बन सकें तथा जो दूध भी पर्याप्त देती हो।

हरियाना तथा हिसार नस्लकी गायें दूध तथा बैल दोनोंके लिये तो प्रसिद्ध हैं ही, सुन्दरता तथा शक्तिमें भी वे अनुपम होती हैं। हरियाना नस्लकी गायोंका रंग सफेद वा हल्का नीला, सींग छोटे, पूँछ पतली, शरीर रेशम-जैसा नरम, कान छोटे, चेहरा लंबा और पतला, टाँगें मामूली तौरसे लंबी और पतली, रोन या लेवा बड़ा आगेको फैला हुआ, दूधकी नसें स्पष्ट और विकसित होती हैं। हिसार नस्लके बैलोंके सींग मोटे तथा बड़े, शरीर ढीला, कान बड़े लटकते हुए होते हैं। हिसारकी अपेक्षा हरियाना नस्लको अधिक पसंद किया जाता है। हरियाना नस्लकी गायें हिसार जिलेके हरियाना चकसम्बन्धी हाँसी-हिसार-भिवानी तहसीलोंके अनुमान दो सौ गाँवोंमें, जिला रोहतककी झज्जर तहसीलमें, जींद रियासत तथा कहीं-कहीं करनाल गुड़गाँवके जिलोंमें और पटियाला-नाभा रियासतोंमें तथा दिल्ली प्रान्तमें मिलती हैं। हरियानासे मिलती-जुलती नस्ल, जो कुछ छोटी होती है, अलवर-भरतपुर रियासतों तथा निकटवर्ती युक्तप्रान्त और पंजाबके अन्य कुछ जिलोंमें भी देखी जाती है।

हरियाना नस्लकी गायोंका दूध तौलमें बहुत अधिक नहीं होता, पर स्वादिष्ट तथा स्वास्थ्यप्रद होनेके कारण देशभरमें इनकी बड़ी माँग रहती है।

देशके कितने ही प्रान्तोंमें यहींके साँड़ोंद्वारा नस्ल-सुधारका काम होता है। हर साल इस इलाकेसे हजारों बछड़े साँड़ बनानेके लिये युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बिहार, उड़ीसा तथा कितनी ही रियासतोंको ले जाये जाते हैं।

गायोंकी नस्ल उन्नत करनेके लिये हिसारकी सरकारी पशुशालाके अतिरिक्त 'वैष्णव अग्रसेन गोशाला' अगरोहा, 'वैश्य व्यायाम दुग्धशाला' रोहतक, 'भगवद्भक्ति-आश्रम' रिवाड़ी तथा 'विद्याप्रचारिणी सभा' हिसार और 'हरियाना गोवंश-रक्षक दुग्धशाला' सातरोदके द्वारा कुछ काम हो रहा है।

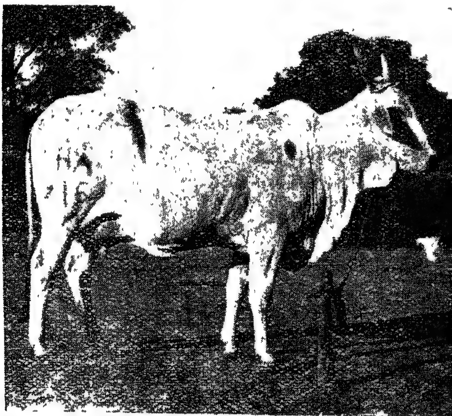
एशिया महाद्वीपकी सबसे बड़ी गोशाला

हिसारकी सरकारी पशुशाला (फार्म) भारतमें ही नहीं, एशिया महाद्वीपमें भी सबसे बड़ी तथा पुरानी है। इसकी सन् १८०९ में स्थापना हुई थी। इस पशुशालाके पास ४०००० एकड़ जमीन है, जिसमेंसे अनुमान पाँच हजार एकड़को नहरका पानी दिया जाता है। कुछमें खेती होती तथा शेष पशुओंके चरनेके लिये छोड़ी हुई है। इस पशुशालामें करीब नौ हजार पशु हैं। जिनमेंसे छः हजारसे अधिक गायें, साँड़, बैल, बछड़े, बछड़ी आदि हैं। सरकारी लगानका अनुमान ११७६४३७) रुपये तथा प्रबन्धका वार्षिक व्यय लगभग तीस लाख रुपये हैं। इस फार्मसे वार्षिक अनुमान छः सौ साँड़-बैल पंजाबके डिस्ट्रिक्ट-बोर्डोंद्वारा गाँववालोंको मुफ्त दिये जाते हैं। गायोंका दूध तथा मक्खन हिसार शहरके लोगोंको उचित मूल्यपर बेच दिया जाता है।

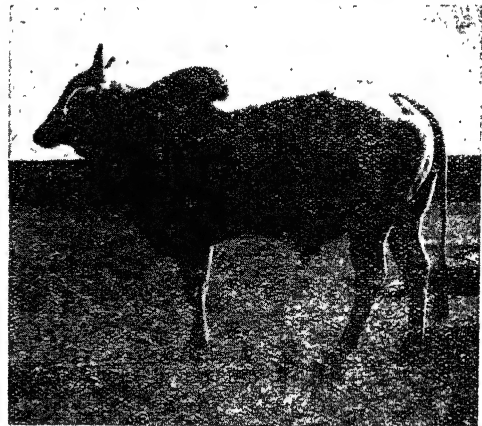
सरकारने सर्वप्रथम इस पशुशालाको फौजोंका बोझा ढोनेवाले ऊँट, बैल तथा खच्चर तैयार करनेके लिये ही स्थापित किया था। इसी लक्ष्यको सामने रखकर साँड़, बैल भी तैयार किये गये। भारी-भारी तोपखाने तथा अन्य फौजी

सामान खैंचनेके लिये नागौर, अंगोल, सिन्ध, गुजरात, मैसूर तथा नीमाड़की गायों और साँड़ोंकी नस्लोंके साथ हरियानाकी गायों और साँड़ोंकी वर्णसंकरता करके बड़े-बड़े तथा मजबूत बैल और साँड़ उत्पन्न किये गये।

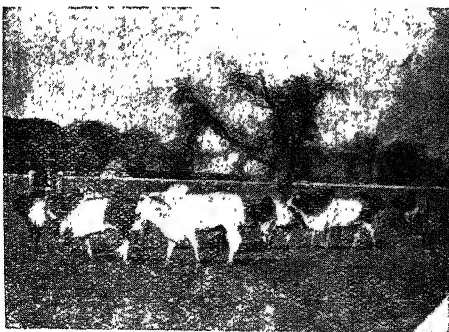
इन साँड़ोंने हिसारकी अधिकांश गायोंकी शुद्ध हरियाना नस्लको वर्णसंकर बना दिया, जिसके कारण अधिक दूध देनेवाली गायोंकी नस्ल तो प्रायः बर्बाद ही हो गयी। बैलोंके आकार आवश्यकतासे अधिक बढ़ गये। पंजाबकी गायोंकी आरम्भिक नस्लोंकी बाबत लिखते हुए मेजर एच० टी० पीज साहबने कहा है इस वर्णसंकरताके कारण हिसारके आस-पास गाँवोंकी गायोंकी नस्लको बहुत नुकसान पहुँचा। अब भी हिसार और रोहतक जिलेके कितने ही गाँवोंमें इस सरकारी पशुशालाके साँड़ोंको पसंद नहीं किया जाता। कितने ही गाँवोंवाले तो सरकारी पशुशालाके मुफ्त मिलनेवाले साँड़ोंको नहीं लेते, परन्तु तीन-तीन, चार-चार सौ रुपये खर्च करके गाँवसे साँड़के योग्य अच्छा बछड़ा खरीदते हैं। पिछले कुछ सालोंसे पंजाबके महकमा वैटिरिनरी सर्विस या पशु-चिकित्सा-विभागने भी इस नस्लकी खराबीका अनुभव किया तथा शुद्ध हरियाना नस्ल ही उत्पन्न करनेका यत्न किया। इस समय रायबहादुर श्री० पी० एन० नन्दा महोदयकी देख-रेखमें शुद्ध हरियाना नस्लके साँड़ उत्पन्न करनेकी प्रशंसनीय चेष्टा की जा रही है। (ये चित्र हिसार सरकारी फार्मसे मिले हैं)



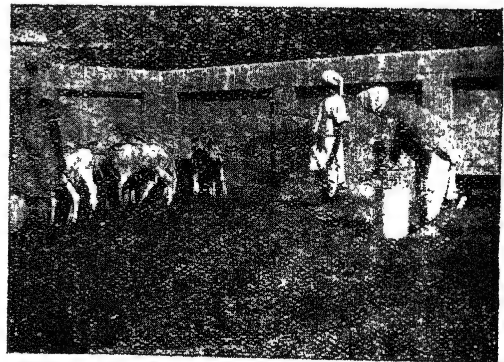
हिसार फार्मकी गौ जिसने ३०० दिनके एक बियानमें ७००० पौंड यानी प्रतिदिन २६ पौंड दूध दिया।



हिसार फार्मका साँड़



हिसार फार्मके कुछ साँड़



हिसार फार्मके बछड़ोंपर जूं आदिके मिटानेके लिये दवाका जल छिड़का जा रहा है।

नस्ल-सुधार

(लेखक—श्रीयुत हरदेवसहायजी)

सारे संसारकी एक तिहाई पशु-संख्या होनेपर भी हमारे देशके लोगोंको न तो पर्याप्त दूध-घी मिलता है और न खेतीके लिये आवश्यक बैल ही। न्यूजीलैंडमें प्रतिदिन प्रतिमनुष्य १२२ छटाँक, डेन्मार्कमें ७४ छटाँक, कनाडामें ३३ छटाँक, अमेरिकामें १८॥ छटाँक और इंग्लैंडमें ७ छटाँक दूध उत्पन्न होता है। इन देशोंकी अधिकांश जनता मांसभोजी है, किन्तु हमारे अभागे देशमें, जहाँ करोड़ों लोगोंके स्वास्थ्य एवं शक्तिका आधार एकमात्र दूध ही है, आज प्रतिदिन प्रतिमनुष्य २ छटाँकसे भी कम दूधका उत्पादन रह गया! करोड़ों मनुष्योंको दूध मिलता ही नहीं; लाखों बच्चे दूधके अभावमें बिलख-बिलखकर मर जाते हैं। यों तो दुधारू पशुओंका वध एवं चारेकी कमी आदि भी दूधकी कमीके बड़े कारण हैं, किन्तु मुख्य कारण है नस्ल-सुधारके प्रति हमारी उपेक्षा। नस्ल-सुधारकी ओर ध्यान देनेवाले देशोंकी गायें बहुत अधिक दूध देने लगी हैं, जैसा कि निम्नलिखित आँकड़ोंसे प्रत्यक्ष है—

देश	वार्षिक प्रतिगाय दूधका उत्पादन
डेन्मार्क	८७ मन २२ सेर ८ छटाँक
इंग्लैंड	६९ मन २८ सेर
जर्मनी	६६ मन १२ सेर ८ छटाँक
भारतवर्ष	६ मन २२ सेर ८ छटाँक

डेन्मार्कमें सन् १९०० में प्रत्येक गाय वार्षिक औसत ४८५० पौंड दूध देती थी; किन्तु नस्ल-सुधारके परिणामस्वरूप सन् १९३४ में प्रत्येक गाय ७०५५ पौंड देने लगी। सन् १९२३ में लार्ड लिन्लिथगो-कमीशनने बतलाया था कि ४० वर्षमें इंग्लैंडके दूधका उत्पादन दुगुना हो गया। लैटविया-जैसे छोटेसे देशमें १९३० से १९३५ तकमें दूधका उत्पादन ३० प्रतिशत बढ़ गया; पर हमारे देशमें सन् १९३५ में दूधका उत्पादन प्रतिमनुष्य ४ छटाँक था जो अब २ छटाँक अर्थात् आधा भी नहीं रहा!

प्राचीन समयमें नस्ल-सुधार—जिन दिनों देशमें अपना राज्य था और लोगोंमें धार्मिक भावना थी, उन दिनों नस्ल-सुधार एक मुख्य कार्य समझा जाता था। बड़े बूढ़ोंके मरनेपर तथा विशेष पर्वोंपर पंचायतकी सम्मति एवं विशेषज्ञोंके परामर्शसे अच्छी नस्ल बनानेके लिये वृषोत्सर्ग अर्थात् साँड़ छोड़नेका विधान था। 'वृषोत्सर्गादृते नान्यं पुण्यमस्ति महीतले'—इस शास्त्रवचनपर श्रद्धा रखते हुए गाँवके लोग अच्छे साँड़ोंकी पूरी तरह देख-रेख करते थे; खाने-पीनेकी तो कोई कमी ही न थी। पारस्कर गृह्यसूत्र तथा अन्य शास्त्रोंमें अच्छे साँड़ोंके लक्षणोंका तथा उनके पालनका विशद वर्णन मिलता है। साँड़ोंके अतिरिक्त घर-घर देई गायें रक्खी जाती थीं, जिनके दूधका मक्खन नहीं बनाया जाता था वरं सारा दूध बालकों एवं बछड़े-बछड़ियोंको पिला दिया जाता था। पर्याप्त दूध पीकर बछड़ी दुधारू गाय और बछड़ा अच्छा बैल या साँड़ बनता था।

मुसल्मानी कालमें नस्ल-सुधार—हिंदूकालमें तो नस्ल-सुधार पुण्यकार्य माना ही जाता था, मुसल्मान बादशाहोंके समयमें भी, जनता ही नहीं, राज्यकी ओरसे भी, नस्ल-सुधारका कार्य जारी था। मैसूरके नवाब टीपू सुल्तानने वहाँकी प्रसिद्ध गायोंकी नस्लको उन्नत करके अमृतमहाल नाम रक्खा, जो आज भी इसी नामसे प्रसिद्ध है। झज्जरके नवाबने विशेष साँड़ मँगवाकर हरियाना नस्लका निर्माण किया था। इस प्रकार मुस्लिम-कालमें राजा तथा प्रजा दोनोंके सहयोगद्वारा नस्ल-सुधारका काम होता रहा।

अंग्रेजी राज्यमें नस्ल-बिगाड़—अंग्रेजी राज्यमें नस्लके सुधरनेको कौन कहे, वह उलटे बिगड़ गयी। पश्चिमी सभ्यताके प्रभावसे तथा राजा-प्रजामें आन्तरिक सहयोग न रहनेके कारण नस्ल-सुधारका स्वाभाविक कार्य बंद हो गया। सरकारने नस्ल-सुधारके कार्यको हाथमें लिया अवश्य, पर उससे लाभके स्थानमें बहुत बड़ी हानि हुई। इसके चार मुख्य कारण हैं—

१. नस्ल-सुधारके फार्मोंमें देश-विदेशकी भिन्न-भिन्न नस्लोंके साँड़ों तथा गायोंको मिलाकर वर्णसंकर नस्ल बनायी गयी। इस वर्णसंकरतासे यहाँकी गायें उन्नत न होकर अवनत ही हुईं। डा० राइट तथा अन्य सरकारी विशेषज्ञोंने वर्णसंकरताकी निन्दा की है और इसे यहाँके लिये हानिकारक बतलाया है। सिविल वैटिरिनरी विभागके इंस्पेक्टर जनरल लेफ्टिनेन्ट कर्नल पीज़ साहबने 'पंजाबमें पशुओंकी असली नस्लें' नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि देशके सबसे बड़े सरकारी साँड़-उत्पादन-फार्म हिसारद्वारा

देशकी भिन्न-भिन्न नस्लोंकी वर्णसंकरताके कारण गायोंके दुग्धोत्पादनमें कमी आ गयी और नस्लकी भी अवनति हुई। सरकारने यहाँकी प्राचीन नस्ल-सुधार-प्रणालीको न अपनाकर देशको हानि पहुँचायी है।

२. वर्णसंकरता दोषके अतिरिक्त नस्ल-सुधारका कार्य हुआ भी समुद्रमें बूँदके समान, नहींके बराबर ही! सन् १९२७ की भारतीय कृषि-कमीशनने अपनी रिपोर्टमें देशके लिये १० लाख अच्छे साँड़ोंकी शीघ्र तथा दो लाख साँड़ोंकी वार्षिक आवश्यकता बतलायी है। किन्तु सन् १९३६ तक केवल १० हजार साँड़ोंका ही प्रबन्ध हो सका। सरकारी फार्मोंमें तो एक हजार भी तैयार नहीं हुए।

३. गाँवके साँड़ोंको अच्छा-बुरा बतलाने तथा रखने या न रखनेके लिये सरकार जिन पशु-डाक्टरोंको नियुक्त करती है, उन्हें केवल पुस्तक-ज्ञान ही होता है, अनुभव कुछ नहीं। सरकारी वैटिरिनरी कालेजोंमें, जहाँसे ये डाक्टर पढ़कर निकलते हैं, अनुभव या वास्तविक ज्ञानके लिये साँड़-गाय आदि रखने चाहिये, पर वहाँ ऐसा नहीं होता। यहाँ बम्बई, लाहौर, मद्रास, कलकत्ता तथा पटना—इन पाँच स्थानोंमें बड़े वैटिरिनरी या पशु-चिकित्सा-शिक्षाके कालेज हैं, किन्तु डा० राइटकी रिपोर्टकी अंक-संख्या ४० के अनुसार कलकत्ता और पटनाको छोड़कर अन्य किसी भी कालेजमें न कोई पशु है और न गोचरभूमि ही। कलकत्तामें भी केवल २० ही पशु हैं और वे भी वर्णसंकर। जिन डाक्टरोंने अपने कालेजकी पढ़ाईमें पशुओंकी शकल तक न देखी हो और न उनके गुण-दोषोंका कोई प्रत्यक्ष अनुभव किया हो, उनके हाथोंमें नस्लसुधारका काम देनेसे तो लाभके स्थानपर हानि ही होगी और साथ ही धनका अपव्यय भी होगा! इन डाक्टरोंकी अपेक्षा तो गाँवके पुराने लोगोंको पशुओंका अधिक ज्ञान है।

४. सरकारकी उपेक्षाके कारण दुधारू तथा अच्छी नस्लकी गायें बड़े शहरोंमें पहुँचती हैं और जब उनका दूध सूख जाता है तब सीधी कसाईखाने भेज दी जाती हैं। सरकारने स्वयं तो नस्ल-सुधारका काम बिगाड़ा ही, किन्तु लोगोंद्वारा उत्तम साँड़ रखकर जो अच्छी नस्लकी गायें तैयार की जाती थीं, उनको भी भविष्यके नस्ल-सुधारके लिये बचने न दिया अर्थात् गो-वधमें किसी प्रकारकी रोक न लगाकर उन्हें भी कट जाने दिया।

श्रीयुत स्मिथ महोदय, कर्नल मैट्सन तथा अन्य कितने ही उच्च सरकारी अधिकारियोंने इस हानि तथा अन्यायकी ओर सरकारका ध्यान दिलाया, पर सरकारके कानपर जूँतक न रेंगी। इससे यह सिद्ध है कि सरकारने नस्ल-सुधारके प्रति केवल उपेक्षा ही नहीं की, वरं प्रकारान्तरसे नस्लको बिगाड़नेका भी प्रयत्न किया तथा अच्छी नस्लके पशुओंको अबाधरूपसे वध करनेकी छूट देकर जनताको दुखी और निरुत्साहित किया!

नस्ल-सुधार कैसे हो?—देशमें दूध तथा बैलोंकी कमी होनेके कारण जनताका कुछ ध्यान इधर गया है। सरकारने भी कुछ करवट बदली, किन्तु जबतक यहाँकी अवस्थाके अनुकूल स्थायी सिद्धान्तोंपर नस्ल-सुधारका कार्य न होगा तबतक कुछ लाभ होनेको कौन कहे, हानि ही होगी। सिद्धान्तोंके अतिरिक्त आरम्भमें आर्थिक लाभकी आशा न रखकर कुछ घाटेकी ही सम्भावना रखनी चाहिये; क्योंकि देशमें अच्छी नस्लके पशु बहुत कम हैं। इस कार्यमें विशेष उद्योग करना पड़ेगा, कुछ समयतक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा भी करनी होगी। नस्ल-सुधारके लिये निम्नलिखित बातोंपर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है:—

१. जिस इलाकेमें नस्ल-सुधार करना हो उसी इलाकेकी अच्छी नस्लवाली गायों और साँड़ोंका उपयोग इस कार्यमें होना चाहिये। भिन्न-भिन्न नस्लोंकी वर्णसंकरता या अन्य इलाकेकी नस्लको अन्य इलाकेमें लाकर व्यर्थ परिश्रम करना ठीक नहीं, जैसा कि सरकार कर रही है। करनाल और दिल्ली हरियाना नस्लके स्थान हैं। यहाँ हरियाना नस्ल बहुत अच्छी उन्नत हो सकती थी, किन्तु सरकार दिल्लीके निकट मंटगुमरीकी साहीवाल तथा करनालमें सिंधकी थार्परकर नस्लको उन्नत करनेका असफल प्रयत्न कर रही है तथा इस काममें बहुत अधिक धन भी व्यय कर रही है जो व्यर्थ ही है। सम्भव है पहले कुछ दिनोंतक इसमें लाभ दिखायी पड़े, किन्तु परिणाम हानिकर होगा। गोपालकोंको तो इससे कोई लाभ ही नहीं। भारत-सरकारने स्कॉट्लैंडके प्रसिद्ध विशेषज्ञ डा० राइटको बुलाया था, उन्होंने अपनी रिपोर्टके पृष्ठ ६६ तथा ६८ पर स्थानीय आवश्यकताको महत्त्व देते हुए हमारी ही जैसी जलवायुके जमैका, ट्रिनीडाड तथा नाइगेरियाका उदाहरण देकर जिस इलाकेमें जो नस्ल है वहाँ उसीको उन्नत करना लाभदायक बतलाया है।

२. सरकार तथा उसके पश्चिमीय ज्ञानकी चकाचौंधमें भटके हुए विशेषज्ञ दूधपर नहीं, वरं अच्छे तगड़े बछड़े उत्पन्न करनेवाली नस्ल तैयार करनेपर ही जोर देते हैं, किन्तु यह उनकी भूल है। असलमें प्रकृतिने जो नस्ल जिस इलाकेमें

जिस कामके लिये बनायी है, उसे उसी अवस्थामें उन्नत करना चाहिये। उदाहरणस्वरूप साहीवाल नस्ल दूधके लिये; नागौर एवं धन्नी बैलोंके लिये, तथा हरियाना और हिसार दूध एवं बैल दोनों उत्पन्न करनेके लिये लाभदायक हैं। हमें दूध और बैल दोनोंकी आवश्यकता है, अतः हरियाना नस्ल ही सबसे अधिक लाभदायक है। उत्तर भारतमें प्रायः यही नस्ल होती है, किन्तु अलग-अलग इलाकोंमें भिन्न-भिन्न आकार-प्रकारकी जहाँ जो नस्ल हो, वहाँ उसीकी उन्नति करना उपयुक्त है। हिसार, रोहतक और गुड़गाँवमें शुद्ध हरियाना, तथा अलवर आदिमें छोटे कदकी हरियाना कोसीकी ही उन्नति होनी चाहिये। यही बात सभी इलाकोंके सम्बन्धमें ठीक पड़ेगी। प्रायः लोग हिसार-रोहतकसे गायें ले जाकर नस्ल-सुधारका प्रयत्न करते हैं। किन्तु इससे गायोंकी आयु कम हो जाती है, वे दूध कम देती हैं, गायोंकी नस्लको हानि पहुँचती है और ले जानेवालेको भी कोई स्थायी लाभ नहीं होता।

३. नस्ल-सुधारके लिये उसी इलाकेकी अच्छी गायें तथा साँड़ रखने चाहिये। गायोंकी तो पूरी देख-रेख हो ही, साथ ही बछड़े-बछड़ियोंको आधा अथवा जितना दूध वे पचा सकें, थनोंसे ही पिलाया जाय तथा साफ रखने, आराम देने और मिट्टी न खाने देने आदिका पूरा-पूरा प्रबन्ध हो। बड़े होनेपर भी उन्हें ठीक रक्खा जाय। यदि आवश्यक दूध पिलाया जाय और ठीक समय आनेपर अच्छे साँड़से संयोग कराया जाय तो ऐसी गाय अपनी मातासे सवाया, उसकी बेटी डेढ़गुनासे अधिक और चौथी पीढ़ीकी गाय लगभग दुगुना दूध देगी। बछड़े भी अच्छे बैल तथा साँड़ बनेंगे।

४. गाँवोंमें जिन लोगोंके यहाँ अच्छी नस्लकी गायें हों, जिन्होंने बछड़ोंको पर्याप्त दूध पिलाया हो तथा जो बछड़े साँड़के योग्य हों, उन्हें खरीदकर साँड़ बनानेके लिये पाला जाय।

५. नस्ल-सुधारके लिये वे ही गायें खरीदी या रक्खी जायँ जो अधिक दिनतक अधिक दूध दें, लंबे और नरम शरीरकी हों, कान-सींग बड़े न हों, थन बड़े और एक-से हों, तवाना लटकता हुआ न हो और जो तीन महीनेके भीतर गाभिन हो जानेवाली हों तथा दूध एक साथ ही उतारती हों। जिनकी दादी और नानीमें भी ये ही गुण हों तथा जो ऐसे साँड़से उत्पन्न हुई हों, जिनकी बछड़ियाँ अधिक दूध देनेवाली होती हों। साँड़के लिये बछड़ा भी अच्छी नस्लवाली गायका तथा अच्छे साँड़से उत्पन्न हुआ होना चाहिये।

६. दूध दुहनेका काम हर किसी व्यक्तिसे नहीं लेना चाहिये, बल्कि उसीको यह काम सौंपना चाहिये जो गायोंसे प्रेम रखता हो, शीघ्रतासे दुह सके और दोहनकलामें निपुण हो। नस्ल-सुधारका काम केवल नौकरोंपर छोड़नेकी चीज नहीं है, वरं स्वयं सावधानीके साथ उसमें लगे रहनेकी आवश्यकता है।

७. नस्ल-सुधारकी गायोंको चारा-पानी ठीक समयपर देना चाहिये। नस्ल-सुधारके लिये गाय-साँड़ोंकी उत्तमताकी आवश्यकता तो है ही, साथ ही चराई और देख-रेखका प्रश्न भी कम आवश्यक नहीं है।

८. देशकी गोशालाएँ भी नस्ल-सुधारका काम हाथमें लें तो अधिक सफलता मिलनेकी आशा है। इस रीतिसे खर्च भी कम पड़ेगा। उनके पास मकान, गोचरभूमि तथा नौकरोंका प्रबन्ध रहता है एवं उनके कार्यकर्ताओंका पहलेका कुछ अनुभव भी होता ही है। अवश्य ही पहले-पहले उन्हें अच्छी गायोंके खरीदनेमें धन लगाना पड़ेगा तथा बछड़े-बछड़ियोंको आवश्यक दूध पिलानेसे दूधकी आयमें भी कमी रहेगी। किन्तु कितनी ही गोशालाओंके पास तो बहुत-सा धन जमा है ही, फिर वे अच्छी तरह कार्य संचालन करेंगी तो उन्हें और भी मिल सकता है। गोशालाएँ इस कामको करेंगी तो नस्ल-सुधारके लिये अच्छे साँड़ और गायें मिलने लगेंगी। जब नस्ल सुधर जायगी तब दूधका उत्पादन और फलस्वरूप आय भी बढ़ ही जायगी। ठीक ढंगसे काम किया जायगा तो कुछ वर्षोंमें गोशालाके ऊपर गायोंका बोझ नहीं रहेगा, वरं अपने चारा-पानीका खर्च निकालती हुई वे ठाठ तथा अशक्त गायोंका भी खर्च पूरा कर देंगी और उनकी रक्षा भी कर लेंगी।

९. जो किसान नस्ल-सुधारका कार्य करें या अच्छी गायें रक्खें उन्हें विशेष सहायता दी जानी चाहिये। हिसार तथा रोहतक डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ऐसी सहायता किसी अंशमें दे रहे हैं।

१०. अच्छी नस्लकी दुधारू गायें कलकत्ता-बम्बई आदि बड़े शहरोंमें भेजी जाती हैं और दूध सूख जानेपर कसाईके हाथों बेच दी जाती हैं। ऐसी गायोंका इन शहरोंमें भेजना कतई बंद कर दिया जाय। गाँव-गाँवमें पंचायतोंद्वारा यह निर्णय कराया जाय कि कोई भी ऐसे ग्राहकके हाथ गाय न बेचे!

सूखी घास

(लेखक—श्रीयुत आर. जी. एलन, कमिश्नर, खेतीविभाग, बड़ौदा)

यहाँ घासशब्दसे हमारा मतलब खास तैयार की गयी और उपजायी हुई या कुदरती रीतिसे उगी हुई अनेकों जातियोंकी घासके मिश्रणसे है। जब कुदरती उगी हुई घास चरानेके लिये नहीं मिलती तब उस वर्षकी सूखी मौसममें कई पीढ़ियोंके लिये चारेकी पूर्ति करनेवाली यह सूखी घास होती है।

आधुनिक अनुसन्धानसे ज्ञात हुआ है कि घास उगनेके उपरान्त जब वह तीन-चार इंच बढ़ी होती है, उसी समय उसमें पोषणतत्त्व अधिक-से-अधिक रहता है। इसी समय काटकर उसे सुखाया जाय तो उसका पोषणतत्त्व खलीके समान संघट्ट आहार-जैसा होता है। घासके उगनेके समयमें तीन-चार इंच बारी-बारीसे काट लेने और उससे सूखी घास बनानेकी व्यवस्था पश्चिमके देशोंमें चालू है।

सामान्य रीतिसे भारतवर्षमें चौमासा बीत जानेपर और करीब-करीब पक जानेपर घासको सुखाया जाता है। दृष्टि रहती है केवल अधिक-से-अधिक परिमाणमें कीमती चारा प्राप्त करनेपर। जब बीड़में खड़ी-खड़ी घासका अधिकांश सूख जाता है तब उसे सूखी घास कहते हैं। परन्तु ऐसी घास जो जंगलमें या खेतमें ही पककर सड़-गल गयी हो, उसे सूखी घासके रूपमें संग्रह करनेके लिये नहीं काटना चाहिये; क्योंकि उस घासका अधिकांश भाग रेशे या तन्तुके रूपमें परिणत हो जाता है। उसका पोषणतत्त्व उड़ गया होता है। प्रतिबीघे अधिक-से-अधिक सरस सूखी घास पैदा करनेके लिये जरूरत यह है कि घासमें हरियाली बनी हो और उसमें फूल लग गया हो, लेकिन बीज अभी नहीं निकला हो। ऐसी ही हालतमें उसे काट लेना चाहिये। इसके बाद उसके भीतरकी नमीको दूर करनेके लिये उसे धूपमें सुखाना चाहिये। पर इतना नहीं सुखाना चाहिये कि बर्बाद हो जाय। वह जैसे ही ठीक-ठीक सूख जाती है—तैयार सूखी घास समझी जाती है। अच्छी रीतिसे बनी हुई घास सूखी तो हो लेकिन पीली या फीकी पड़ी हुई नहीं होनी चाहिये। परन्तु उसमें हरियालीकी झलक नहीं मिलनी चाहिये।

काटने और तैयार करनेका काम हो जानेपर सूखी घासकी बागर बनायी जाती है। सूखी घास प्रायः बड़ी-बड़ी बागरोंके रूपमें संग्रह की जाती है; परन्तु बहुधा इस महत्त्वके कार्यमें बहुत बेपरवाही की जाती है जिससे आस-पासका खुला ढेर बिल्कुल बेकाम हो जाता है। क्योंकि थोड़ी भी बरसातकी बूँदें पड़नेसे इस खुले ढेरमें पानी घुस जाता है, और ध्यानमें आनेके पहले ही भीतरकी घास सड़ जाती है। उसके बगलका ढेर उससे अच्छा होता है; क्योंकि उसमें बरसातके हलके झटकेको अंदर घुसने न देकर बाहर रखनेकी कुछ शक्ति होती है; परन्तु बरसात बिलानी हो तो बागर बनानेमें और बरसातका पानी उसके अंदर न जाय, इसके लिये छप्पर बनानेमें खूब सावधानी रखनी चाहिये।

ऐसी बागरें लगाते समय सूखी घासको समान भावसे और खूब दाब-दाबकर भरना चाहिये। खास करके बागरका बीचका भाग अगल-बगलके किनारोंके भागकी अपेक्षा ठोस और ऊँचा बने, यह ध्यानमें रखना बहुत जरूरी होता है। बागरका एक हिस्सा खूब ठोस दबाकर लगानेके बाद धीरे-धीरे उसका विस्तार घटता जाता है, जिससे अन्तमें जाकर बीचमें नोकके समान ऊपरी भाग बाहर निकल आता है। यह सब हो जानेपर सूखी घासकी तह उसके ऊपर छाकर सावधानीसे छप्पर-जैसा बनाना चाहिये, जिससे अन्तका—ओलतीकी ओरका भाग आगे बढ़कर धरनकी ओर—सिरकी ओर जाकर आस-पासकी घासके छतको ढँकता हुआ जाय कि जिससे बरसातका पानी बागरके अंदर न उतरकर घरके छप्परकी तरह छोर या ओलतीकी ओर बहकर बाहर गिरे। सामान्यतः अच्छे ढंगसे लगायी हुई बागरका ओलतीवाला हिस्सा बागरके निचले भागकी अपेक्षा आगे निकला हुआ रहता है, जिससे बागरकी छाजका पानी बागरके निचले भागको न भिगोकर बागरसे दूर जाकर गिरता है। बागरके भीतरकी अच्छी घासको बिगड़नेसे बचानेके लिये बागरको हलके और बेकार घाससे छाया जाता है। बागरके छप्परका काम ठीक होनेपर बागरके अगल-बगल दँताली लगाते समय बागरसे बाहर लटकती हुई घासको नीचे गिरा दिया जाता है। अधिक नमीवाले प्रदेशोंमें बागर खिड़कोंके ऊपर या कोई दूसरी ऊँची जगहपर लगायी जाती है, जिससे नीचेके भागमें नमी न पहुँचने पावे।

(कृषिसंग्रहस्थान पत्रिका, बड़ौदा)

नस्ल-सुधारपर कुठाराघात या बड़े शहरोंका पाप

गोवंशकी उन्नतिके लिये अधिक दूध तथा अच्छे बैल उत्पन्न करनेवाली गायों और साँड़ोंकी नस्लको तैयार करना आवश्यक है। प्राचीनकालमें अच्छे साँड़ोंका छोड़ना एक धार्मिक कृत्य था। बछड़े-बछड़ियोंको पर्याप्त दूध पिलाकर बढ़िया नस्ल बनानेके लिये घर-घर 'देई गाय' रक्खी जाती थी। आज भी सरकारी तथा गैर-सरकारी ढंगसे नस्ल सुधारनेका कुछ काम यत्र-तत्र हो रहा है। परन्तु उससे कोई विशेष लाभ नहीं होता; क्योंकि जो अच्छी गायें तैयार की जाती हैं उन्हें दूसरे या तीसरे ही बियानमें व्यापारी मुँहमाँगे दाम देकर कलकत्ता-बम्बई आदि बड़े शहरोंमें ले जाते हैं। वहाँ इन गायोंसे केवल एक ही बियान दूधका लाभ उठाया जाता है, बिसुकते ही वह कसाईके हाथ बेच दी जाती है। कलकत्ता अच्छी गायों तथा बम्बई अच्छी भैंसोंकी वधभूमि है। सरकारी तथा गैर-सरकारी जिम्मेवार सज्जनोंके कथनानुसार कलकत्तेमें वार्षिक ८३६२१ गायें, हवड़ामें १३१५४, बम्बईके बाँदरामें ३३७२३ गायें, १३३९६ भैंस, १३०३५ बैल, कुरलामें ७७०५ भैंस और दिल्लीमें २९६५० गायें मारी जाती हैं। (ये आँकड़े युद्धसे पहलेके हैं।)

कलकत्ता कारपोरेशनने दूधके विषयमें खोज करनेके लिये मि० पेइनकी अध्यक्षतामें एक कमेटी नियुक्त की थी। इसके सदस्योंमें तीन यूरोपियन, एक मुसल्मान और एक हिंदू थे। उसने अपनी रिपोर्टमें लिखा है कि, 'कलकत्तेके ग्वाले जो कसाईको गाय बेचते हैं, इसके कई कारण हैं। एक तो उनके पास जगहकी कमी है। इसलिये जितनी गायके लिये जगह होती है वे उतनी ही रखते हैं। बिसुकनेपर गायको कसाईके हाथ बेच देते हैं और उसकी जगह दूसरी दुधारू गाय लाते हैं। इसी कारणसे बछड़ोंको भी नहीं पाल सकते, इसलिये उन्हें भी कसाईके हाथ बेच देते हैं। इस प्रकारकी हत्यासे गायोंकी सन्तान दिनोंदिन छीजती जा रही है और देशमें जो यों ही खराब और कम दूध मिल रहा है, उसपर इसका और भी बुरा असर पड़ता है। उत्तम गायें प्रतिवर्ष शहरोंमें खिंच जाती हैं, इससे देशमें उनकी कमी बढ़ती जाती है!'

कलकत्ता कारपोरेशनके प्रमुख मि० पेइन अपने निबन्धमें लिखते हैं कि 'कलकत्तेके ग्वाले देशकी उत्तम गायोंका सत्यानाश कर रहे हैं। अच्छी गायें दुर्लभ हो रही हैं और उनकी कीमत भी बढ़ती ही जा रही है। गायको जब दूसरा बच्चा होनेवाला होता है, तब वह कलकत्ते भेज दी जाती है। वहाँ उसपर ऐसे जुल्म किये जाते हैं कि वह छः से लेकर आठ महीनेतक दूध देनेके बाद सदाके लिये बाँझ बन जाती है। और यदि इतने जुल्मपर भी कोई सदाके लिये बाँझ नहीं होती, तो वह इतनी दुर्बल हो जाती है कि दो-तीन सालतक गाभिन नहीं होती। इसलिये कसाईके ही घर पहुँचती है। फल यह होता है कि आठ-दस वर्षतक उपकारी जीवन बितानेके स्थानमें ये गायें केवल दो ही वर्ष दुधारू जीवन बिताती हैं और दो ही बछड़े देती हैं, जिनमेंसे एक तो अवश्य कसाईके हाथ लगता है। यह अत्याचार देशकी उत्तम गायोंपर निरन्तर होता रहता है!!'

भारत-सरकारके विशेषज्ञ डा० राइट अपनी रिपोर्टके पृष्ठ १३८ पर लिखते हैं कि, 'बहुतसे शहरोंमें पूरे दूधसे भरे हुए दुधारू पशु खरीदे जाते हैं, लेकिन ज्यों ही कम दूध होनेके कारण घाटा होने लगता है त्यों ही उन्हें आमतौर-पर कसाईखाने भेज दिया जाता है। केवल बम्बईमें करीब १६००० भैंसें वार्षिक मारी जाती हैं। यह स्पष्ट है कि ऐसी हालतोंमें सस्ता दूध उत्पन्न नहीं किया जा सकता।'

पूनाके कृषि-विद्यालयके प्रोफेसर नाइट और मि० हार्न लिखते हैं कि 'बम्बई और कलकत्ते-जैसे बड़े शहरोंमें ग्वाला तुरंतकी ब्यायी हुई गाय या भैंस लाता है और उसके बछड़ेको भूखा रखकर या और किसी तरहसे मार डालता है। जबतक गायको खिलानेका खर्च निकालने लायक दूध होता रहता है, तबतक वह उसे दुहता है। बादमें कसाईके हाथ बेच डालता है, इस प्रकार दुधारू गौकी सन्ततिका असमयमें ही अन्त हो जाता है।'

देशकी सरकारी दुग्धशालाओंके विशेषज्ञ मि० स्मिथ लिखते हैं कि 'बड़े शहरोंमें जवान गाय और भैंसके वधको रोकना सर्वप्रथम और सबसे अधिक आवश्यक काम है।' आप गुजरात तथा दिल्लीकी भैंसका मिलान करते हुए लिखते हैं कि 'गुजराती भैंस बम्बईके ग्वालेके एक काम नहीं आती, वह काम यह है कि कसाईके हाथ बेचते समय उसको दिल्लीकी भैंसके बराबर नफा नहीं होता। इन लोगोंको तो ऐसा पशु चाहिये, जो ठीक दूध देवे और

बिसुकनेपर कसाईके हाथ तो देना ही है, इसलिये शरीरसे भी भारी हो। गुजराती भैंसकी अपेक्षा दिल्लीकी भैंस बहुत अधिक मांसवाली होती है।

भारत-सरकारके पशुविशेषज्ञ लेफ्टिनेंट कर्नल मेट्सन लिखते हैं कि 'हिंदुस्थानके शहरोंमें ढोरोंकी छीछालेदर हो रही है। पशुओंकी ऐसी दुर्दशा संसारके किसी देशमें नहीं है। इस कारण स्थिति गम्भीर हो गयी है।'

सरकार तो सब कुछ जानते हुए भी इस महान् पाप तथा आर्थिक और शारीरिक प्रश्नके प्रति उदासीन बनी हुई है! परन्तु क्या बम्बई, कलकत्ता और बड़े नगरोंके रहनेवाले लोग, जिनकी दूधकी माँग पूरी करनेके लिये ये पशु वहाँ पहुँचाये जाते हैं, और भरी जवानीमें कत्ल कर दिये जाते हैं, इस पाप या अनर्थके लिये जिम्मेवार नहीं हैं? उन्हें चाहिये कि या तो वे स्वयं गायोंको पालनेकी कुछ व्यवस्था करें, या जबतक इन उपयोगी तथा मूक पशुओंके लिये स्थायी रक्षा तथा उन्नतिका प्रबन्ध न हो, तबतक न दूध खरीदें, न पीवें! सार्वजनिक संस्थाओंको भी चुप नहीं रहना चाहिये। यह धार्मिक ही नहीं, बल्कि महत्त्वपूर्ण आर्थिक और शारीरिक प्रश्न है। यदि इसी तरह अच्छे पशुओंका वध होता रहा तो न नस्ल-सुधार होगा, न दूध-घी मिलेगा और न खेतीके लिये अच्छे बैल ही मिलेंगे!!

इसलिये अत्यन्त आवश्यक है कि जबतक इन उपयोगी दुधारू पशुओंसे पूरी आयुतक लाभ उठानेकी सहूलियत न हो, एक भी दुधारू गाय या भैंस इन शहरोंमें न भेजी जाय। इसके लिये गाँव-गाँवमें प्रचार हो। सरकारको भी इस प्रश्नपर विचार करने तथा निश्चयपूर्वक इन पशुओंके प्राण बचानेके लिये बाध्य किया जाय। कुछ प्रान्तीय सरकारोंने बाहर पशु भेजनेपर ढीलेसे प्रतिबन्ध लगाये हैं। फिर भी परमिटद्वारा अच्छे पशु बाहर भेजे जाते हैं। अब समय आ गया है कि यह परमिट भी बंद कर दिया जाय! (ह० स०)

गोचरभूमि

गौओंके चरनेके लिये गोचरभूमि छोड़नेकी सामान्य प्रथा भारतवर्षमें थी। राजालोग तो छोड़ते ही थे। अन्यान्य प्रजाजन भी भूमि खरीदकर गोचरके लिये छोड़ा करते थे। अब भी देशी राज्योंमें ऐसी बहुत-सी गोचरभूमियाँ हैं, जिनके पट्टोंमें यहाँतक लिखा रहता है कि जो 'इस गोचरभूमिको नष्ट करेगा वह यावच्चन्द्रदिवाकर नरकोंमें रहेगा।' पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड अध्याय ५९ श्लोक ३८ से ४० में कहा है—

गोप्रचारं यथाशक्ति यो वै त्यजति हेतुना।
दिने दिने ब्रह्मभोज्यं पुण्यं तस्य शताधिकम्॥
तस्माद्गवां प्रचारं तु मुक्त्वा स्वर्गान्न हीयते।
यश्छिनत्ति द्रुमं पुण्यं गोप्रचारं छिनत्त्यपि॥
तस्यैकविंशपुरुषाः पच्यन्ते रौरवेषु च।
गोचारघ्नं ग्रामगोपः शक्तो ज्ञात्वा तु दण्डयेत्॥

'जो मनुष्य गौओंके लिये यथाशक्ति गोचरभूमि छोड़ता है, उसको प्रतिदिन सौसे अधिक ब्राह्मण-भोजनका पुण्य प्राप्त होता है। गोचरभूमि छोड़नेवाला कोई भी स्वर्गसे नहीं भ्रष्ट होता। जो मनुष्य गोचरभूमिको रोक लेता है और पवित्र वृक्षोंको काट डालता है, उसकी इक्कीस पीढ़ी रौरव नरकमें गिरती है। जो व्यक्ति गौओंके चरनेमें बाधा देता है, समर्थ ग्रामरक्षकको चाहिये कि उसे दण्ड दे।'

मनुमहाराज कहते हैं—

धनुःशतं परीहारो ग्रामस्य स्यात् समन्ततः।
शम्यापातास्त्रयो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु॥
तत्रापरिवृतं धान्यं विहिंस्युः पशवो यदि।
न तत्र प्रणयेद्दण्डं नृपतिः पशुरक्षिणाम्॥

(८। २३७-३८)

'गाँवके आसपास चारों ओर सौ धनुष यानी चार सौ हाथ अथवा तीन बार फेंकनेसे लकड़ी जहाँ जाकर गिरे, वहाँतककी भूमि, और नगरके आसपास चारों ओर इससे तिगुनी यानी बारह सौ हाथ भूमि गौओंके चरनेके लिये छोड़नी चाहिये। यदि उतनी भूमिके भीतरकी किसी ऐसी खेतीको, जिसके चारों ओर बाड़ न लगे हों। ग्राम्य-पशु नष्ट कर दें तो इसके लिये राजा पशु-रक्षकोंको दण्ड न दे।'

महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं—

धनुःशतं परीणाहो ग्रामे क्षेत्रान्तरं भवेत्।
द्वे शते खर्वटस्य स्यान्नगरस्य चतुःशतम्॥

(२। १६७)

'गाँवके आसपास चारों ओर सौ धनुष, पर्वतकी तराईके

गाँवके आसपास दो सौ धनुष और नगरके आस-पास चार सौ धनुष भूमि गोचरके लिये छोड़नी चाहिये।'

ऐसा कहा गया है कि खेत गाँव और नगरसे दूर होना चाहिये। और खेतोंमें इतनी ऊँची और घनी बाड़ लगानी चाहिये कि भीतरकी खेतीको ऊँट भी न देख सके और न कुत्ते, सूअर ही उसके छेदोंसे अंदर मुँह डाल सकें।

नारदस्मृतिमें कहा गया है कि यदि कोई खेतके बाड़ नहीं लगावे और उसके खेतको पशु चर जाय तो राजा पशुपालको दण्ड न दे। हाँ, बाड़वाले खेतमें पशु घुस जाय तो दण्ड दे। मनुमहाराज कहते हैं—

पथि क्षेत्रे परिवृते ग्रामान्तीयेऽथवा पुनः।
स पालः शतदण्डार्हो विपालान् वारयेत्पशून्॥

(८। २४०)

'राहके समीप अथवा गाँवके पड़ोसके बाड़ किये हुए खेतोंमें यदि पशु अनाज खा जाय तो राजा पशुपालपर सौ पण दण्ड करे। परन्तु यदि पशु बिना रखवालेका हो तो उसे हाँककर निकाल दे।'

याज्ञवल्क्यस्मृतिमें भी कहा है—

पथि ग्रामविवीतान्ते क्षेत्रे दोषो न विद्यते।
अकामतः कामचारे चौरवद्दण्डमर्हति॥

(२। १६२)

'राह, गाँव और चरागाहके समीपके खेतको यदि रखवालेकी बिना जानकारीमें पशु नष्ट कर दे तो वह दोषी नहीं है। हाँ, रखवाला जान-बूझकर चरावे तो उसे चोरके समान दण्ड देना चाहिये।'

नारदस्मृति तथा अन्यान्य स्मृति-पुराणोंमें भी ऐसे ही वचन मिलते हैं।

जंगलों और गोचरभूमियोंका प्रबन्ध

(लेखक—डा० श्रीराधाकमल मुकर्जी एम्० ए०, पी-एच्० डी०)

आजकल किसी उपयोगमें न आनेवाले जंगलों, गोचर-भूमियों एवं ऊसर भूमिके एक बड़े भागको मनुष्य और पशुओंके उपयोगके योग्य बना सकनेमें कई वर्ष लग जायँगे। कृषिकी आधुनिक परिपाटीके अनुसार भूमिमें एक निश्चित क्रमसे कई फसलें बोयी जाती हैं। अतः समय-समयपर खेतोंको कुछ सालके लिये न जोतकर ऐसे ही छोड़ देना आवश्यक होता है। जबतक प्रचलित पद्धतिमें सुधार न होगा, तबतक यदि हम खेतोंकी उत्पादन-शक्तिको सर्वथा नष्ट नहीं कर देना चाहते—'अस्थायी बंजड़ भूमिमें' विशेष कमी न होगी। सामान्यतः फसलोंको बार-बार बदलते रहने एवं खेतोंको कुछ कालके लिये खाली छोड़नेके सम्बन्धमें किसानोंको मार्ग-प्रदर्शनकी बुरी तरहसे आवश्यकता है—विशेषकर उन भागोंमें जहाँ गन्ना, पाट या कपासकी खेती होती है, जो पृथ्वीके सम्पूर्ण सत्त्वको खींच लेती है। ज्यों-ज्यों भूमि-विभाजन (Fragmentation) में वृद्धि होती जा रही है त्यों-ही-त्यों खेतोंको खाली छोड़नेकी प्रथाका बहिष्कार हो रहा है। साथ ही गन्ना, पाट और कपासकी खेतीके कारण, बहुमूल्य चारेके रूपमें काम आनेवाले मटर, चना तथा अन्य दाल और तिलहनों आदिकी खेती कम होती जा रही है जिससे किसानोंके भोजनमें बहुमूल्य प्रोटीन एवं चिकनाहटकी कमी हो रही है।

संयुक्तप्रान्त, बिहार, उड़ीसा, पंजाब, सीमान्तप्रदेश एवं सिन्ध प्रान्तोंमें पर्याप्त जंगल नहीं है तथा जो है वह भी भूमिके अनुपातसे ठीक बँटा हुआ नहीं है। उदाहरणके लिये, संयुक्तप्रान्तके जंगलोंका ⅘ भाग हिमालय पहाड़ तथा उसकी शाखाओंपर या इनकी तराईमें है। मैदानमें जो जंगल है वह भी, ५ प्रतिशत भागको छोड़कर बाकी सारा-का-सारा पहाड़ियोंसे ३०-४० मीलके अंदर-अंदर है। इसके अतिरिक्त भारतके बहुतसे जंगल व्यक्तिगत अधिकारमें हैं, जिससे उनका बहुत दुरुपयोग हो रहा है तथा वे नष्ट भी हो रहे हैं। बिहारप्रान्तकी सम्पूर्ण भूमिका ३ प्रतिशतसे कम भाग, पंजाबका ५ प्रतिशत एवं संयुक्तप्रान्त और उड़ीसाका ७ प्रतिशतसे कम भाग जंगल है, जो सरकारके अधिकारमें है। यह अनुमान लगाया जाता है कि भारतवर्षके सम्पूर्ण जंगलोंका ६३ प्रतिशत भाग सरकारके अधिकारमें है एवं ३७ प्रतिशत व्यक्तिगत अधिकारमें, तथा ६० प्रतिशत भाग उपयोगके योग्य है और ४० प्रतिशत या तो अनुपयोगी है या अगम्य। भूमिकी उत्पादन-शक्तिके ह्रास, मिट्टीके कटकर बह जाने

एवं बाढ़को रोकनेके लिये वैज्ञानिक ढंगसे जंगलोंका प्रबन्ध करना आवश्यक है। खेतीके योग्य बंजड़ जमीनपर फलोंके पेड़ एवं चारेके पौधे लगानेके लिये उचित प्रबन्ध होना चाहिये।

संयुक्तप्रान्तमें खेतीके योग्य व्यर्थ पड़ी हुई भूमि १३००० वर्गमील है जिसपर देहाती जंगल लगा देने चाहिये। फलोंके बगीचोंका—विशेषकर अमराइयोंका, जिनका प्रबन्ध बिल्कुल चौपट है—क्षेत्रफल करीब १००० वर्गमील है। संयुक्तप्रान्तकी बहुत बड़ी साँसत यह है कि वहाँकी बोयी हुई प्रति १०० एकड़ भूमिके पीछे ९१ पशु अर्थात् कुल ४,००,००,००० पशु हैं। यदि खेतीके योग्य व्यर्थ पड़ी हुई भूमिमें चारा उत्पन्न किया जा सके तो प्रान्त-भरके चारेका अकाल, जो स्थायीरूपसे यहाँ अपना घर कर बैठा है, बहुत कुछ दूर हो सकता है। यदि प्रति एकड़की वार्षिक अधिक-से-अधिक उपज १० मन मानी जाय तो आजकल प्रान्तभरमें चारेकी कुल पैदावार करीब ६०,००,००० टन होगी। एक पशु सामान्यतौरपर अनुमानतः ५ सेर चारा प्रतिदिन खा लेता है। कम-से-कम इतनी खूराकके हिसाबसे प्रान्तके सम्पूर्ण पशुओंको एक वर्षमें लगभग ५,६०,००,००० टन चारा तथा अन्न चाहिये। इस प्रकार बोयी हुई अन्न एवं चारेकी फसलमेंसे ५,००,००,००० टन पशुओंके लिये चला जाता है। परिणामस्वरूप पशुओंके लिये मनुष्यजातिके भोजनके सीमित साधनोंमेंसे भी हिस्सा बँट जाता है, तथा पशुओंके अधिक चरनेके कारण जंगलोंमें केवल छोटी-छोटी झाड़ियाँ तथा मोटा और निरर्थक घास रह जाता है जिससे पशु पर्याप्त पोषण नहीं प्राप्त कर सकते।

बंगालका प्रधान चारा है—२,३०,००,००० एकड़ भूमिसे उत्पन्न धानका पुआल। यदि यह मान लिया जाय कि कुल पुआल पशुओंके ही काममें आता है, (यद्यपि यह सर्वविदित है कि ऐसा नहीं होता) फिर भी उतने पुआलसे ३,१०,००,००० पशुओंकी अत्यन्त अनिवार्य आवश्यकताकी भी पूर्ति नहीं हो सकती। इस हिसाबसे एक पशुको दैनिक २ सेर चारा मिलता है, जब कि उसे ५ सेर तो मिलना ही चाहिये।

जबतक चारेकी इस बहुकालीन कमीको दूर न किया जायगा तबतक पशुओंकी नस्ल एवं उनकी कार्यक्षमतामें किसी भी प्रकारका सुधार सम्भव नहीं है। दूसरी ओर किसान ज्यों-ज्यों पशुओंकी कार्यक्षमताकी पूर्तिके लिये अधिक-अधिक पशु पालते हैं त्यों-ही-त्यों चारेकी समस्याका समाधान और भी कठिन होता जा रहा है। धीरे-धीरे गायें बाँझ और उनके बच्चे दुर्बल तथा नाटे होते जा रहे हैं एवं किसानोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं कर पाते हैं। इधर किसानलोग योग्य बैल प्राप्त करनेकी धुनमें बैलोंकी संख्या बढ़ाते जा रहे हैं। गाँवोंकी खुली बंजड़ जमीनों, गोचरभूमियों एवं जंगलमें चरनेके स्थानोंका अच्छी प्रकार प्रबन्ध किया जाय तथा उनका ठीक उपयोग किया जाय तो काफी अधिक चारा प्राप्त हो सकता है। सम्पूर्ण संसारमें चारेकी कमीकी पूर्तिके लिये उपयुक्त घास एवं वृक्षोंसे मिलनेवाले चारेकी ओर ध्यान दिया जा रहा है। परन्तु भारतके जंगलोंसे चारेकी पूरी माँगकी पूर्ति नहीं हो सकती और वे प्रायः दुर्गम भी हैं। देहातोंके छोटे-छोटे जंगल, बाड़ोंके रूपमें लगायी हुई झाड़ियाँ तथा सड़कोंके दोनों ओर लगाये हुए वृक्ष चारेके साधनोंको बढ़ाने एवं उपजाऊ मिट्टी तथा नमीको बनाये रखनेमें बहुत सहायक हैं। संयुक्तप्रान्तमें टॉन्ग्या खेती (अन्नकी फसलके साथ-साथ एक जंगली फसलका बोना) बहुत सफल सिद्ध हुई है। देहाती बगीचों एवं जंगलोंसे किसानोंकी ईंधन-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी भी पूर्ति होगी तथा गायके गोबरका जलाना कम होगा। भारतीय भूमिके लिये नाइट्रोजन एवं जैवपदार्थ, जितनी मात्रामें मिल सकें, आवश्यक हैं। अतः गायके गोबरको जलाना पृथ्वीकी उत्पादन-शक्तिको जला डालना है। गाँवोंमें जंगली वृक्ष लगाना, फसलोंको बदलने आदिके द्वारा चारेकी फसलोंकी खेतीमें वृद्धि करना तथा पशुओंकी संख्या एवं गोचरभूमियोंपर नियन्त्रण रखना उपजाऊ मिट्टीके रक्षण एवं पृथ्वीकी उपयोगिताके लिये बहुत आवश्यक हैं। ('दी फूड् सप्लाई')

गायोंके जल पीनेमें विघ्न करनेवाला ब्रह्महत्यारा है

गोकुलस्य तृषार्तस्य जलान्ते वसुधाधिप। उत्पादयति यो विघ्नं तमाहुर्ब्रह्मघातकम्॥ (महा०अ०१०३।५)

जो प्यासके व्याकुल गायोंके झुंडको जल पीनेसे रोकता है, उसे ब्रह्मघातक कहा गया है।

खूराक—गौओंकी प्रथम समस्या

पशुओंकी अवनतिके कारण

भारतीय पशुओंकी अवनति ब्रिटिश शासनके प्रारम्भके बाद शुरू हुई। प्राचीन सभ्यता जो भारतके ग्रामोंमें केन्द्रित थी, उलट-पुलट हो गयी और एक नयी शिक्षाका सूत्रपात हुआ, जिसने जनताके सम्मुख नवीन आदर्श स्थापित किये और प्राचीन जीवन-परिपाटीको नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। गो-जातिकी अवनति इन्हीं कारणोंसे हुई और वह अबतक जारी है। अवनतिके कुछ नवीन कारण और बन गये, जैसे जनसंख्याकी वृद्धि और उसके फलस्वरूप गोचरभूमियोंकी कमी, पैसा पैदा करनेवाली खेतीको अतिरिक्त महत्त्व दिया जाना, ग्रामोद्योगोंकी बर्बादी, रेलके द्वारा कम खर्चेमें यातायातकी सुविधा हो जानेके कारण जिन प्रान्तोंमें अधिक घी होता है, वहाँसे घीके निर्यातकी वृद्धिके फलस्वरूप भैंसके महत्त्वका बढ़ जाना, तथा रेल, मोटर आदि यन्त्रपरिचालित यानोंका प्रचार होनेसे बैलकी उपयोगिताका कम हो जाना इत्यादि-इत्यादि। ये सब कारण मिलकर गो-वंशकी अवनतिमें सहायक हुए और हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त ग्राम्यजीवनके प्रति पक्षपातके अभावने ग्रामीण जीवनको सबसे अधिक धक्का पहुँचाया है और गो-जातिका ह्रास भारतवर्षकी व्यापक दुर्दशा एवं हीनदशाका अन्यतम सूचक है।

मनुष्य-संख्या बढ़ी; किन्तु पशु-संख्या नहीं

गो-जातिकी इस अवनतिको रोकनेके लिये उन बुराइयोंको दूर करना होगा जो अबतक काम करती रही हैं। गोरक्षाके लिये, जिसका अर्थ है राष्ट्रकी रक्षा, इस अत्यन्त कठिन एवं दुरूह कार्यको करना ही होगा।

भारतकी जनसंख्यामें वृद्धि हुई है, परन्तु दुधारू एवं वाहनोपयोगी पशुओंकी संख्या पिछले पचीस वर्षोंसे जहाँ-की-तहाँ टिकी हुई है। यह बात स्वयं चिन्ताका विषय है। यहाँ गौकी औसत आयु केवल ५ या ६ वर्ष कूती गयी है। कोई कारण नहीं है कि वह १० वर्षतक न पहुँच जाय। गो-जातिको उस घातक दुर्दशासे उबारना होगा, जिसके गर्तमें वह गिर पड़ी है। यदि यह न हुआ, तो सारे सामाजिक ढाँचेको खतरा है। गौकी मृत्युके साथ भारतके मनुष्योंकी भी मृत्यु है। दोनोंका अविच्छेद्य सम्बन्ध है। पश्चिमके सम्पर्कसे जीवनके जो नये आदर्श हमारे सामने आये हैं, उनकी चकाचौंधमें हमलोगोंने आवश्यक तत्त्वोंको भुला दिया है एवं उनकी सर्वथा अवहेलना की है। अवनति बहुत अधिक हुई है और अपर्याप्त पोषण, गंदगी, व्याधि और मृत्युके रूपमें उसके परिणाम सबके सामने हैं।

प्राचीन गोपालकोंका गोवंश-सम्बन्धी ज्ञान

इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतवर्षमें गो-संवर्द्धनकी कला बड़ी ही समुन्नत दशामें थी। आधुनिक खोजोंसे यह बात सिद्ध हो चुकी है। गो-संवर्द्धन-विज्ञानसे लोग परिचित नहीं थे; परन्तु भारतमें प्रचलित गो-संवर्द्धनकी परिपाटियाँ वैज्ञानिक थीं। गोपालकोंने अपने संचित व्यावहारिक अनुभवद्वारा उन तत्त्वोंको जान लिया था, जिन्हें गो-संवर्द्धन-विज्ञान आज सिद्ध कर रहा है। वे जातियाँ, जिन्होंने भारतीय गोवंशको इतनी उच्च श्रेणीपर पहुँचाया, बड़ी तेजीसे विलीन हो रही हैं और अधिकांश स्थानोंमें गौके प्रति विशेषकर गौओंकी उत्तम नस्लोंके प्रति जनताका भाव बदल जानेके कारण ये जातियाँ नष्ट हो रही हैं। प्राचीन कालके धनी लोग उत्तमजातिके पशुओंको विशेष सावधानीके साथ पालते थे। उन पशुओंपर उन्हें गर्व था और गो-संवर्द्धनके वैज्ञानिक तरीकोंको वे प्रोत्साहन देते थे। परन्तु जमानेने पलटा खाया। प्राचीन कालके गोपालकोंके सम्बन्धमें लिखते हुए सर अर्थर ऑलवरने निम्नलिखित प्रशंसा की है—

'काँकरेज, कंगायम् और अंगोल-जैसे विशिष्ट गोवंशोंका निर्माण करनेके लिये लोगोंने बड़ी सावधानीसे एवं दीर्घकालतक एक निर्दिष्ट वंशके पशुओंद्वारा ही गो-संततियोंके उत्पादनका काम लिया होगा और इतर जातियोंको कड़ाईके साथ टाला होगा और यह स्पष्ट है कि यह कार्य पीढ़ियोंतक चला होगा।*

गोपालकोंकी ये जातियाँ प्रति १० वर्षोंमें विलीन हो रही हैं और सर अर्थर ऑलवरके उपर्युक्त कथनके बाद पिछले १० वर्षोंमें स्थिति और भी खराब हो गयी है।

इस देशमें प्रत्येक कृषिजीवी गोपालक होता है। उसे

* To have established such well-marked breeds as for instance, the Kankrej, Kangayam, and Ongol breeds, long-continued and careful breeding to a definite type, with rigid elimination of every variation, must, however, have been practised, and it is clear that test work must have been carried on from generation to generation.

आवश्यकतावश गोपालक बनना पड़ता है। इसीलिये गो-संवर्द्धनकी कलाओंके ज्ञानका भारतवर्षमें काफी प्रसार था। यद्यपि व्यवसायी लोग इस कलामें विशेष निपुण होते थे।

गौओंकी उपेक्षा

आज वह बात नहीं है। देशभरमें गौके प्रति उपेक्षाकी दूषित मनोवृत्ति फैल गयी है और दूधके लिये भैंसके प्रति पक्षपातने इस संकटको और भी बढ़ा दिया है। गौकी प्रायः सर्वत्र उपेक्षा की जाती है, जब कि भैंसकी विशेष सँभाल होती है। परन्तु जिन लोगोंका ध्यान अच्छी गो-संतति पैदा करनेकी ओर है, वे लोग सन्तान उत्पन्न करनेवाली गौओंकी पूरी सँभाल रखते हैं। यह बात कंगायम्-वंशकी गौओंके पालनेवालोंके उदाहरणसे स्पष्ट हो जाती है। वे लोग प्रायः गौको बेचते नहीं। नेल्लोरके माला जातिके लोग अंगोल-वंशकी बछड़ियोंकी सँभाल करना जानते हैं, क्योंकि उनका व्यवसाय एवं निर्वाह दूधके लिये अच्छी बछड़ियोंके पालनपर ही निर्भर है। किन्तु सामान्यतौरपर साँड़ और बैलकी जननी गौकी उपेक्षा की जाती है।

समग्र भारतवर्षके जिन सात इलाकोंमें सन् १९३७ ई० में जाँच की गयी थी, वहाँ जाँचके द्वारा यह पाया गया कि सर्वत्र गौओंको बैलोंकी जूठन दी जाती थी। गौ और बछड़ीको इसलिये खुला छोड़ दिया जाता है जिसमें वे गोचरभूमियोंमें जो कुछ भी आहार प्राप्त कर सकें, उसीसे अपना निर्वाह करें। इसके अतिरिक्त कभी-कभी उन्हें अनाज-के डंठल भी डाल दिये जाते हैं। पंजाब, संयुक्तप्रान्त, बम्बई, मद्रास, मध्यप्रान्त तथा उत्तर-पश्चिमीय सीमाप्रान्तकी यही दर्दभरी कहानी है। शाही कमीशन भी इस निष्कर्षपर पहुँचा था कि गौके साथ इसी प्रकारका दुर्व्यवहार किया जाता है। उनका कहना है—

'गौकी दुर्दशाका विस्तारसे वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है। मोटे रूपमें यह कहा जा सकता है कि बैलोंको खिलानेके बाद यदि कुछ चारा बच जाता है तो वही गौको मिलता है अथवा उसके द्वारा वह अपना तथा अपने बछड़े— दोनोंका भी पेट पालती है। इसके बाद उसे अपना आहार स्वयं प्राप्त करनेके लिये छोड़ दिया जाता है। जहाँ गौ मालिकके लिये तथा अपने बछड़ेके लिये कुछ दूध देती है, वहाँ किसान लोग उसके लिये करीब सेर-डेढ़ सेरकी मात्रामें बिनौले और चोकड़ या खली अथवा दाना बचा रखते हैं; परन्तु उसके छुटाते ही यह खूराक बंद कर दी जाती है और उसे अपना आहार स्वयं खोजनेके लिये निराधार छोड़ दिया जाता है.........।

'भारतवर्षमें दूध देनेवाला पशु गाय नहीं, भैंस ही है। अधिकांश स्थानोंमें भैंसके साथ गायकी अपेक्षा दूसरे ही प्रकारका व्यवहार होता है। घरकी स्त्रियाँ उसकी पूरी सँभाल करती हैं और प्रायः उसकी वंशवृद्धि चुने हुए पशुओंद्वारा करायी जाती है।'

(शाही कमीशनकी रिपोर्ट पृष्ठ २९६)

ऐसी स्थितिमें गोजातिका ह्रास होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

स्त्रियोंकी उपेक्षा

गौको पालनेवाले उक्त सात प्रान्तोंमें की गयी जाँचसे एक दुःखद बात और मालूम हुई—वह है स्त्रियोंकी उपेक्षा। स्वास्थ्य-रक्षाके लिये दूध हमारे आहारका एक आवश्यक अङ्ग है; मुख्यतः उसीसे हमें विटामिन (प्राणतत्त्व) प्राप्त होते हैं। दूध हमारे आहारका इतना महत्त्वपूर्ण अङ्ग है, इसीलिये इस बातको देखकर बड़ा दुःख होता है कि आवश्यक वस्तुका उपयोग परिवारके कुछ ही सदस्य कर पाते हैं। शेष उससे वञ्चित रक्खे जाते हैं। परन्तु वस्तुस्थिति है ऐसी ही। उपर्युक्त कमीशनकी रिपोर्टमें लिखा है—

'तरल दूधकी खपतका विश्लेषण करनेपर पता लगता है कि परिवारके पुरुषोंको स्त्रियोंकी अपेक्षा अधिक दूध मिलता है।' किन्तु स्त्रियों और गौओंकी इस विषयमें उपेक्षा वाञ्छनीय नहीं है। दूधके सम्बन्धमें यह भेद स्त्रियों और पुरुषोंके बीचमें ही नहीं, बच्चे-बच्चियोंमें भी देखा जाता है। इस विषयमें पुरुषोंके प्रति पक्षपात और स्त्रीजातिकी अवहेलना की जाती है। मनुष्य-परिवारमें खाद्य-सामग्रीका वितरण माताके हाथोंसे होता है और इसके लिये यह स्वाभाविक है कि वह कमानेवाले पुरुष और काम करनेवाले लड़केको अधिक आहार दे। यहाँतक तो बात समझमें आने लायक है, परन्तु जब शिशुओंतकमें यह भेद देखा जाता है, तब बात कुछ समझमें नहीं आती। यह एक सामाजिक बुराई है, जिसके निवारणकी पुरुषोंद्वारा कोई चेष्टा नहीं होती; परन्तु इस बुराईका सामना करना होगा और स्त्री-जाति एवं गो-माताके प्रति इस अन्यायको दूर करना होगा। इस समय तो उसके प्रति अन्याय है ही और इसका परिणाम अनर्थकारक है। दुर्बल जननी दुर्बल सन्तति-को जन्म देती है और दुर्बल सन्ततिकी सन्तान उससे भी

दुर्बल होती है। इस वस्तुस्थितिको प्रकट एवं इसे निर्मूल करना होगा। परिवारमें यदि किसीकी विशेषरूपसे सँभाल, सेवा एवं पालन होना चाहिये तो वह जननी और भावी जननी—कन्याका ही होना चाहिये। उसके स्वास्थ्यपर समूची भावी सन्ततिका और परिणामतः समग्र जातिका स्वास्थ्य निर्भर करता है।

उत्पादक पशु होनेके कारण भैंसके साथ वही व्यवहार होता है, जो काम करनेवाले पुरुषके साथ होता है। यह बात सहज ही समझमें आ सकती है। परन्तु गौकी नर-सन्ततिकी वृद्धिमें अधिकाधिक रुकावट होनेके कारण भैंस अकेली किसानके कुटुम्बका पालन कर सकेगी। भैंसके पड़वे-का खेतीमें बहुत कम उपयोग होता है और उसके मरनेपर भी भैंसके दुग्धोत्पादनमें कमी नहीं होती। इस बातसे भैंसको दूधके लिये रखनेमें विशेष प्रोत्साहन मिलता है।

भैंस और गौकी समानरूपसे सँभाल करो

गौकी रक्षाके लिये इस अनीतिका निवारण करना होगा। गौको खाने-पीनेकी, अधिक नहीं तो, उतनी सुविधा तो अवश्य ही दी जानी चाहिये, जितनी भैंसको दी जाती है। इसके बदलेमें गौ हमें कई गुना लाभ देगी। गो-जातिके ह्रासको रोकनेमें भी इससे सहायता मिलेगी। इसके उत्तरमें यह कहा जा सकता है कि किसान गरीबीके कारण गायको खिला-पिला नहीं सकता। बात सच है। किसानके पास खिलाने-पिलानेके साधन होने चाहिये। परन्तु सबसे पहले उसकी मनोवृत्ति बदलनी होगी, क्योंकि मनोवृत्तिके न बदलनेपर किसानको यदि थोड़ी-बहुत आर्थिक सुविधा भी दी जायगी तो वर्तमान परिस्थितिमें उसका उपयोग भैंसको खिलानेमें ही होगा और गाय भूखी-की-भूखी रह जायगी। इस मनोवृत्ति-को जाग्रत् करना होगा कि अपनी रक्षाके निमित्त किसानके लिये यह आवश्यक है कि वह गौको अच्छी तरह खिलाये-पिलाये। निस्सन्देह गौके प्रति उपेक्षाके इस वायुमण्डलको भारतवर्षसे निकाल बाहर करना होगा। सरकारके द्वारा समर्थित इस सिद्धान्तका कि बैलको वाहनोपयोगी पशु और भैंसको दुग्धोत्पादक पशु समझना चाहिये, विरोध एवं अन्त करना होगा।

काम करनेवाले और दूध देनेवाले पशुओंका यह विभाग हानिकारक है; इससे सहज ही गौके प्रति उपेक्षाका भाव हो जाता है; क्योंकि बैलकी मादा गौ न तो वाहनोपयोगी पशु है और आधुनिक मनोवृत्तिके अनुसार दुग्धोत्पादक पशु भी नहीं है। अथवा यों कहें कि उसे दुग्धोत्पादक पशु भी नहीं होना चाहिये। मुख्यतः उपेक्षाके कारण वह दूध कम देती है। परन्तु शरीर-रचनाकी दृष्टिसे भी गोदुग्धमें भैंसके दूधकी अपेक्षा घृतका भाग कम होता है। दूधमें घृतकी मात्राको आवश्यकतासे अधिक महत्त्व दिया गया है। जिस दूधमेंसे घी निकाल लिया जाता है, वह तुरंत दूधकी श्रेणीसे नीचे उतर आता है और एक प्रकारसे छूने लायक भी नहीं रहता। मक्खन निकाले हुए दूधका जनता एवं कानून-की दृष्टिमें भी कोई मूल्य नहीं रह जाता। कलकत्तेमें निर्घृत दूधके छानेको निर्घृत दूधका छाना कहकर बेचना अपराध है। निर्घृत दूधकी कोई कानूनी सत्ता नहीं है। यद्यपि उसमें सघृत दूधकी अपेक्षा कम-से-कम पचास प्रतिशत पोषकतत्त्व अवश्य रहते हैं।

भैंसके दूधकी अपेक्षा गोदुग्ध श्रेष्ठ है

अब हम पुनः अपने विषयपर आते हैं। गायके दूधमें भैंसके दूधकी अपेक्षा घृतांश कम होता है। यदि गौमें यह त्रुटि मानी जाय तो इस त्रुटिको सहन करना होगा। परन्तु वास्तवमें यह त्रुटि नहीं है। घृतांश कम होनेपर भी गायका दूध भैंसके दूधकी अपेक्षा श्रेष्ठ होता है। भैंसके सघृत दूधकी अपेक्षा वह बच्चों तथा अशक्तोंके लिये अधिक उपयोगी होता है। परन्तु बाजारमें शुद्ध भैंसका दूध तो शायद ही कहीं मिले। भैंसके सारे दूधको पानी मिलाकर पतला कर दिया जाता है और तब उसे प्रमाणित दूध (Standard Milk) अथवा गाय-भैंसका मिश्रित दूध अथवा गायका दूध—बहुधा गायका दूध कहकर बेचा जाता है।

इस भ्रान्त मूल्यनिर्धारण एवं भैंसके दूधमें पानी मिलानेकी कलाको प्रोत्साहन देनेके कारण गौकी जो उपेक्षा हो रही है, वह हटनी चाहिये। मिलावट तथा पानी मिले हुए भैंसके दूधको गायका दूध कहकर बेचनेकी प्रथाको रोकनेके लिये कानून बनानेसे दुग्धोत्पादक पशुके रूपमें भैंसके प्रति पक्षपात दूर हो जायगा।

बंगालके गाँवोंमें भैंसकी समस्या नहीं है

इसमें सन्देह नहीं कि जहाँ कहीं भैंस और गायमें प्रतिद्वन्द्विता हो, वहाँ-वहाँ इस अन्यायपूर्ण प्रतिद्वन्द्वितासे गायको उबारना होगा; परन्तु बंगाल-जैसे कुछ प्रान्त ऐसे हैं कि जहाँके गाँवोंमें गौ ही एकमात्र दुग्धोत्पादक

पशु है। उन प्रान्तोंकी भाँति, जहाँ भैंस अधिक संख्यामें पायी जाती हैं, बंगालमें भी बैल और गौके बीच भेद-भाव बहुत अधिक पाया जाता है। खेती आदिके काममें आनेवाले बैलकी अपेक्षा गौकी यह निकृष्टता किसान एवं गोपालकके हितकी दृष्टिसे हट जानी चाहिये। यदि गौको अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जायगा तो उससे हमें अच्छे और अधिक मूल्यवान् बैल एवं अधिक दूध प्राप्त होगा।

कहना न होगा कि माताके शरीरकी रचना ही वह मूल भित्ति है, जिसपर पशु-संवर्द्धनका समूचा भवन खड़ा किया जाता है। अतः गौ अधिक बलवान् और उत्तम साँड़ों तथा बैलोंको उत्पन्न कर सके और मालिकको अधिक दूध दे सके, इसके लिये उसे अच्छी तरह खिलाना-पिलाना आवश्यक है।

अच्छे प्रकार रखनेका गौपर अच्छा प्रभाव पड़ेगा

गौ किसी समादृत-वंशकी हो, या साधारण नस्लकी, अच्छी तरह खिलाने-पिलानेपर उसकी दशा सुधरेगी ही; क्योंकि सचमुच गौपर अच्छे और बुरे बर्तावका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी अच्छी खूराक मिलनेपर भी वह स्वयं चाहे अधिक दूध न दे सके। जन्मसे लेकर तथा उसके वृद्धिकालमें उसे यदि कष्टमें रक्खा गया हो तो उसके कारण उसके शरीरकी रचनापर इतना बुरा प्रभाव पड़ सकता है कि फिर अच्छी तरहसे खिलाने-पिलानेपर भी वह अधिक दूध नहीं दे सकती। परन्तु उसे अच्छी तरह खिलाने-पिलानेका परिणाम यह होगा कि उससे उत्पन्न होनेवाले बच्चेके लिये उन्नतिकी अधिक सम्भावना होगी और उस हालतमें वह अच्छी गाय या अच्छा साँड़ या अच्छा बैल बन सकेगा, जो अन्यथा सम्भव न था।

गौसे आर्थिक लाभ

गौ जितनी छोटी अवस्थामें ब्याती है, आर्थिक दृष्टिसे उसका मूल्य उतना ही बढ़ जाता है। और इसके बाद वह जितनी बार ब्याती है, उतना ही अधिक लाभ देती है। यदि किसी गायको अच्छी तरह नहीं खिलाया-पिलाया गया हो तो उससे उसके स्वामीको आर्थिक लाभ बहुत कम होता है। यह एक मानी हुई बात है कि गाय अपनी खूराक प्राप्त कर लेनेके बाद ही आर्थिक लाभ दे सकती है।

(क) छोटी अवस्थामें ब्याना।

(ख) थोड़े-थोड़े समयके अन्तरसे ब्याना।

(ग) पर्याप्त दूध देना।

गौके अंदर ये सब गुण आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक होते हैं। जीवन-निर्वाहके लिये गौ इन सब गुणोंको दबा लेती है। प्रकृति उसे ऐसा करनेके लिये बाध्य करती है। जब उसे खूराक कम मिलेगी, तब वह गाभिन देरसे होगी। उस अवस्थामें यदि वह जल्दी गाभिन हो जाय, तो गर्भिणी अवस्थामें उसपर इतना बोझा पड़ेगा कि उसे वह कदाचित् सह न सके और फलतः उसे अपने प्राणोंसे हाथ धोना पड़े। प्रकृति इस प्रकारकी सम्भावनासे उसकी रक्षा करती है। खूराक खाते-खाते चौथे अथवा पाँचवें सालमें जाकर वह गाभिन होती है। इससे स्वामीको भी कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि वह गाभिन हो या नहीं, स्वामीको उसका निर्वाह तो करना ही पड़ता है। साधारण स्थितिमें बछिया दो वर्ष दो महीनेकी अवस्थामें गाभिन हो सकती है। और जब वह इस अवधिको लाँघकर चौथे वर्षमें गाभिन होती है, तो इसका मतलब यह होता है कि वह व्यर्थमें दो साल अधिक खूराक खाती है। पर, इन दो अतिरिक्त वर्षोंमें जो कुछ वह खाती है, वह शुरूमें ही उसे दे दिया गया होता तो वह जल्दी ब्याती और इस प्रकार जितने भोजनकी किफायत की गयी, उससे कहीं अधिक लाभ वह देती। मालिकके इस व्यवहारसे स्वयं उसकी तथा गौकी—दोनोंकी हानि होती है। गौकी हानिसे उसके मालिकको और भी अधिक हानि अथवा कष्ट होता है। बाँझ गौ गोपालकके लिये एक बोझा होती है। यद्यपि देरसे ब्याकर वह अपना बोझा कम कर देती है और इस प्रकार अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ होती है।

अपर्याप्त खूराक पानेवाली गौओंसे आर्थिक लाभ कम मिलता है

यह एक सामान्य नियम है, इसका गायके वंश अथवा जातिसे कोई सम्बन्ध नहीं है। गौ चाहे उत्तम जातिकी हो अथवा साधारण हो, यह नियम सबपर समान रूपसे लागू होता है। यदि वह सामान्यतः कम दूध देनेवाले वंशकी हो तो कम खिलाने-पिलानेसे उसकी दुग्धोत्पादनक्षमता और भी न्यून हो जायगी और यदि अपनी वंशपरम्परासे वह साधारणतया दो वर्षके अन्तरसे ब्यानेवाली हो, तो इस परिस्थितिमें आत्मरक्षाके लिये वह तीन वर्षके अन्तरसे ब्याने लगेगी। ऐसी दशामें गौको अथवा उसके वंशको दोष देना उचित नहीं।

जिस प्रकार अपनी स्थिति अथवा प्रबन्धकी खराबीके अनुपातसे गाय अपने लाभदायक गुणोंको दबा लेती है,

उसी प्रकार उसकी व्यवस्था एवं परिस्थितिमें परिवर्तन होनेसे उसके ये गुण बढ़ सकते हैं—वह छोटी अवस्थामें गाभिन हो जायगी, थोड़े-थोड़े समयके अन्तरसे ब्याने लगेगी और अधिक मात्रामें दूध देने लगेगी।

केवल खानेके लिये पाले जानेवाले बेकार पशुओंकी उन्नति

देशके कई भागोंमें किसान लोग खादके लिये ही पशुओंके बड़े-बड़े टोले पालते हैं। उन्हें न तो अच्छी तरह खिलाया-पिलाया जाता है और न उनकी सँभाल ही की जाती है। उन्हें बहुधा गाँवके उन खेतोंमें छोड़ दिया जाता है, जिनमें किसी प्रकारकी फसल बोयी हुई नहीं होती और वे गाँवकी खुली हुई बंजड़ भूमिमें घूम-घूमकर, जो कुछ भी उन्हें मिल जाता है, उसीपर निर्वाह करते हैं। उनके सन्तानोत्पादनके विषयमें भी कोई ध्यान नहीं दिया जाता। किसी भी अवस्थाके अयोग्य साँड़के साथ उनका संयोग होने दिया जाता है, जिससे निम्न श्रेणीकी सन्तति उत्पन्न होती है। रात्रिमें गौओंका गोबर इकट्ठा करनेके लिये उन्हें किसी बाड़ेमें बंद कर दिया जाता है। उन्हें कभी-कभी भरपेट खूराक नहीं मिलती और न उन्हें घरपर कोई चीज खानेको दी जाती है। उन्हें सदा भूखों मारा जाता है। बछड़ा जब हल चलानेके लायक हो जाता है, तब उसे बधिया करके खेतीके काममें नियुक्त कर दिया जाता है। बाकी पशु अपना दुखी जीवन यों ही बिताते हैं। संक्रामक रोग अथवा सामान्य व्याधियाँ भी अधिक मृत्युद्वारा उनकी संख्या कम करती रहती हैं। क्या गोरक्षा अथवा गोपालन इसीका नाम है?

इस प्रकार निरन्तर भूखों मरने और कष्टमय जीवन बितानेकी अपेक्षा उनका मरण कहीं अच्छा है। इसके रोकनेके लिये प्रयत्न होना आवश्यक है। गौओंके प्रति किये जानेवाले इस दुर्व्यवहारको कानूनके द्वारा दण्डनीय बनाना चाहिये। जिसके लिये यह सब किया जाता है, उस खादकी भी सँभाल नहीं होती। उसमेंसे गोबरकी तो ढेरी लगा दी जाती है, जो वर्षामें बह जाती है, अथवा तेज धूपमें सूखकर जल जाती है। मूत्र सारा-का-सारा व्यर्थ जाता है, उसे एकत्र करनेका न कोई प्रबन्ध है और न चेष्टा ही होती है। समुचित प्रबन्ध होनेपर निकम्मे माने जानेवाले इन पशुओंमें अधिकांश आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक हो सकते हैं। किसानको चाहिये कि वह उन्हीं पशुओंको पाले, जिनकी सँभाल वह कर सके अथवा अच्छी तरह खिला-पिला सके। पशुओंके प्रत्येक वृन्दके पीछे एक अच्छा साँड़ होना चाहिये। सारी-की-सारी खाद वैज्ञानिक ढंगसे एकत्रित की जानी चाहिये और उसका खेतमें उपयोग होना चाहिये। अच्छी तरहसे खिलायी-पिलायी हुई अथवा सँभालपूर्वक रक्खी हुई गौओंसे मिलनेवाली खादका यदि समुचित उपयोग किया जाय तो वह एक बड़े वृन्दसे प्राप्त होनेवाली खादकी अपेक्षा परिमाणमें अधिक एवं बढ़िया होगी। जो पशु अपना खर्च नहीं निकाल सकते, उन्हें सन्तानोत्पादनसे रोक देना चाहिये। और जबतक वे जीवित रहें, उनका निर्वाह करते रहना चाहिये। इस बातका भी ध्यान रखना चाहिये कि वृन्दमें कोई ऐसा पशु उत्पन्न न हो, जो अपना खर्च न निकाल सके; क्योंकि जो पशु जन्मेगा ही नहीं, वह मारा कैसे जायगा?

ऐसा करनेसे किसानको आवश्यकतानुसार खाद तो मिलेगी ही, उसे खेतके लिये अच्छे और अधिक संख्यामें बैल भी मिलेंगे और घरमें उपयोगके लिये तथा बेचनेके लिये घी-दूध भी मिलेगा। गौएँ जिन बाधाओंसे पीड़ित होती हैं—प्रतिकूल जलवायु, व्याधियोंका प्रसार, परोपजीवी जन्तु कृमि किलनियाँ आदि, अपर्याप्त पोषण, परिमाण एवं गुणकी दृष्टिसे चारेकी न्यूनता इत्यादि; कुशल व्यवस्थासे इन सारी त्रुटियोंको बहुत अंशोंमें दूर किया जा सकता है।

भावी लाभके लिये बछड़ोंका सुप्रबन्ध

बहुधा यह देखा जाता है कि किसी कम लाभ देनेवाले पशुसे लाभ उठानेके लिये पशु-पालक बछड़ोंको कम-से-कम दूध देकर जिलानेकी चेष्टा करता है। नगरोंमें जहाँ पशुओंपर खर्च अधिक पड़ता है, यह प्रवृत्ति अधिक बढ़ी हुई होती है। इसके परिणामस्वरूप बछड़ोंकी मृत्यु-संख्या बहुत बढ़ जाती है। जो बछड़े बच जाते हैं, उनकी बाढ़ रुक जाती है और भविष्यमें उनके लिये कोई आशा नहीं रहती। बछड़ोंके सुप्रबन्धमें उन्हें पर्याप्त आहार, दूध और आगे चलकर निर्घृत दूध देना भी शामिल है। कुछ कालतक बछड़े दूधके सिवा अन्य किसी प्रकारका आहार नहीं पचा सकते और उनके आमाशय जन्मते ही घास पचानेके उपयुक्त नहीं होते। कुछ समयतक उन्हें दूधपर रखना आवश्यक होता है तथा ज्यों-ज्यों उनकी अवस्था बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों उन्हें उसके साथ पतला दलिया भी दिया जा सकता है। किसी बछड़ेको उचित पोषण मिल रहा है कि नहीं, इसकी

जाँचका एक साधन है—उसके वजनमें किस अनुपातसे वृद्धि हो रही है, यह देखना । प्रत्येक जीवके लिये एक अवधि ऐसी होती है, जिसमें जन्मके समयसे उसका वजन दुगुना हो जाता है—

१	२	३
जीव	बच्चोंका वजन दुगुना होनेकी अवधि	दूधमें प्रोटीनका प्रतिशत अंश
मनुष्य	१८० दिन	१.६
घोड़ा	६० ,,	२.०
गाय	४७ ,,	३.५ (बिलाय
बकरी	२२ ,,	४.३
भेड़	१५ ,,	६.५
सूअर	१४ ,,	६.७
कुत्ता	९ ,,	७.१

ऊपरकी तालिकासे हम देख सकते हैं कि माताके दूधमें प्रोटीनका भाग कितना है । बालककी वृद्धि इसीपर निर्भर करती है ।

बिलायती गौके बछड़ोंका वजन ४७ दिनोंमें दूना हो जाता है । दूसरे शब्दोंमें यदि किसी बछड़ेका वजन जन्मके समय ४० रतल हो, तो लगभग ७ सप्ताहके बाद उसका ४० रतल और बढ़ जायगा अर्थात् प्रति सप्ताह सात रतलके करीब उसका वजन बढ़ेगा । हरियाना जातिके बछड़े पहले सालमें प्रति सप्ताह ८ रतल बढ़ते हैं । सम्भवतः इसका कारण यह है कि भारतीय गौओंके दूधमें घीका अंश ५ प्रतिशत होता है, जब कि बिलायती गौओंके दूधमें वह केवल ३.५ प्रतिशत होता है । बछड़ेके जन्मके समय उसका वजन उसकी माकी जाति एवं शरीर-रचनाके अनुसार न्यूनाधिक होता है, किन्तु गोपालकको इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि बछड़ा उपर्युक्त परिमाणके अनुसार बढ़ रहा है कि नहीं । यदि बछड़ा जन्मके समय असाधारण रूपसे दुबला हो तो वृद्धिकी गति मौलिक कमीको पूरा करनेके लिये उतनी ही अधिक तीव्र होगी । ('काउ इन इंडिया' के आधारपर)

साइलेज (दबाकर रक्खी हुई हरी घास)

हम मनुष्योंके लिये तो दैवीप्रकोप अथवा राजप्रकोपसे कभी-कभी अकाल पड़ता है, किन्तु बेचारे पशुओंके लिये प्रतिवर्ष अकाल-सा पड़ा करता है । वर्षा-ऋतुमें हरी घास अथवा चारा प्रचुर मात्रामें रहता है । पशु बड़े आनन्दसे चरते हैं और घरपर भी हरा चारा पाते हैं । इसी समय पशु कुछ तगड़े भी दिखायी पड़ते हैं, किन्तु इस मौसमके बीतते ही उनके बुरे दिन आ जाते हैं । फिर हरी, कोमल तथा मीठी घासके दर्शन कहाँ ? फिर तो उनके भाग्यमें कटा हुआ सूखा पुआल ही लिख जाता है, जो दुबारा वर्षा-ऋतु आनेतक चलता रहता है । कभी-कभी तो वह सूखा पुआल भी भरपेट नहीं मिलता । पहले कुछ दिनोंतक तो प्रकृतिप्रदत्त स्वादिष्ट हरी घासका स्मरण करके पशु सूखे भूसाकी सानीसे मुँह फेर लेते हैं; पर कबतक ऐसा कर सकते हैं ? भूख स्वाद नहीं ढूँढ़ती । विवश होकर सूखा चारा उन्हें चबाना पड़ता है, किन्तु काम उतना ही भरपूर करना पड़ता है । परिश्रम करनेवालेके लिये केवल पेट भर जाना ही आवश्यक नहीं है, उसे उत्तम पोषणतत्त्व भी मिलने चाहिये । फल यह होता है कि कुछ ही दिनोंमें हरी घासकी सारी मोटाई पच जाती है और वर्षा-ऋतु आते-आते वे हड्डीका ढाँचा मात्र लिये अपने मालिकोंके डंडे सहते रहते हैं ।

इसका दोष किसानोंको ही नहीं दिया जा सकता । जबतक हरा चारा मिलता है, वे खूब खिलाते हैं । घास या चारा सूख जाय तो इसके लिये वे क्या करें ? बरसातमें तो घासके बड़े-बड़े जंगल खड़े हो जाते हैं । वह घास इतनी अधिक होती है कि उसका कुछ ही अंश काममें आ पाता है । शेष वहीं सूख जाती है, तब जंगलविभागवाले उसे जला देते हैं, क्योंकि उन्हें इसकी आवश्यकता नहीं है । कैसी विचित्र बात है, एक ओर घासके जंगल-के-जंगल जला दिये जाते हैं और दूसरी ओर गर्मीके दिनोंमें पशु घास बिना मरते हैं । यदि कोई ऐसी प्रणाली हो जिसके द्वारा बरसातकी रक्खी हुई घास जाड़े या गर्मीमें निकाली जाय और वैसी ही निकले तो किसान और पशुओंका बड़ा हित हो । विचार करनेसे पता चलता है कि ऐसा होना कुछ भी कठिन नहीं है । जैसे हम आमकी अमावट या अचार बनाकर वर्षभर आमका स्वाद लेते हैं, तो ऐसा उपाय क्यों नहीं हो सकता कि हरी घासको ऐसे ढंगसे रक्खें कि आवश्यकताके समय निकालनेपर वह वैसी ही रहे । किसानों तथा पशुपालकोंको यह जानकर प्रसन्न होना चाहिये कि ऐसा उपाय सोचना नहीं है, वरं पहलेसे एक ऐसी प्रणाली चली आती है, जिसके द्वारा हरी घासको बड़े-बड़े कोठारों—जिनको 'साइलो' कहते हैं—में दबाकर

रख देते हैं और हरी घासका मौसम समाप्त होनेपर उसे निकालते हैं। ऐसी घासको साइलेज अथवा दाबघास कहते हैं। यूरोप-अमेरिका आदि देशोंके किसान बराबर इसी रीतिसे चारा इकट्ठा कर रखते हैं, और अपने पशुओंको निर्बल होनेसे बचाते हैं।

साइलेजसे लाभ

(क) जिस समय कोई हरा चारा नहीं मिलता, उस समय साइलेजका चारा पशुओंके भोजनकी समस्या हल करके किसानोंको निश्चिन्त करता है।

(ख) हरे चारेके अभावमें पशुओंको सूखा चारा मिलनेके कारण वे दुर्बल हो जाते हैं और दूध देनेवाले पशु या तो छुटा जाते हैं या बहुत थोड़ा देते हैं, किन्तु साइलेज चारा खिलानेसे न पशु दुर्बल होते हैं और न उनका दूध ही कम होता है।

(ग) साइलेज चारा खाकर पशु अधिक समयतक दूध देते हैं।

(घ) साइलेज चारेमें रासायनिक प्रक्रिया होनेके कारण सूखे चारेकी अपेक्षा वह जल्दी पचता है।

(ङ) साइलेज चारेसे पशुओंका स्वास्थ्य ठीक रहता है, जिससे वे हमारा अधिक काम कर सकते हैं।

(च) साइलेज चारेमें पोषण-तत्त्व अधिक रहते हैं।

(छ) साइलेज चारा किसी प्रकारकी घास, पेड़की पत्तियों और अन्नके पौधोंका बन सकता है। अतः बरसात-भरमें न समाप्त होनेवाली घास, पेड़की पत्तियाँ आदि सूखकर व्यर्थ नहीं जा सकतीं—उन सबका उपयोग हो जायगा।

(ज) सबसे बड़ा लाभ यह है कि पशुओंके प्रति मनुष्यके कर्तव्यका पालन होता है।

ऐसे लाभप्रद चारेको बनानेकी विधि कौन न जानना चाहेगा, क्योंकि अपने पशुओंको सूखा चारा देकर उन्हें दुर्बल बनानेका शौक तो किसीको है नहीं। अतः साइलेज बनानेकी विधि नीचे दी जाती है। जैसा कहा जा चुका है, साइलेज (Silage) कोठारों (Silo) में तैयार होता है, इसलिये पहले इन कोठारोंके विषयमें जान लेना चाहिये। इन 'साइलो' में घास रक्खी जाती है इसीलिये उसे साइलेज कहते हैं।

साइलो कहाँ बनाये जायँ ?

साइलो वहीं बनाने चाहिये, जहाँ घास या हरा चारा प्राप्त हो सके। इसको भी ध्यानमें रखना चाहिये कि बादको कहाँ चारा मिलनेमें सुविधा रहेगी। भारतवर्षमें साइलो जमीनके भीतर बनाने ठीक हैं। इसके लिये ऐसी जगह गड्ढे खोदने चाहिये जहाँ पानी फूटकर भीतर न पहुँच सके। गड्ढा बहुधा कच्चा ही होता है। सुविधा हो तो लकड़ी तथा ईंट-सीमेंटका पक्का गड्ढा बनाना उत्तम है। कच्चे गड्ढेकी सतहको कूटकर पक्का कर देना चाहिये और दीवालोंपर चारों ओर मिट्टीकी एक परत चढ़ा देनी चाहिये। चौकोर गड्ढोंकी अपेक्षा दीवारदार कूएँकी तरहके गोल गड्ढे अधिक अच्छे रहेंगे, क्योंकि उनमें चारा अच्छी तरहसे दबाया जा सकता है और वायुसे सुरक्षित रक्खा जा सकता है।

धरतीके ऊपर भी 'साइलो' बनाये जाते हैं। वे नीचे गड्ढा न खोदकर बाँस, लकड़ी या लोहेकी चद्दरोंसे बनाये जाते हैं और उनमें साइलेज तैयार किया जा सकता है। आवश्यकता पड़नेपर किसी कोठरीको ही साइलेज बनानेके काममें ला सकते हैं, किन्तु अपने यहाँ तो गड्ढे खोदनेवाली रीति ही ठीक रहेगी। इंग्लैंडमें तो खुदाईमें अधिक पैसा लग जानेके कारण धरतीके ऊपर बना लेते हैं।

गड्ढा यदि बहुत छोटा होगा तो उसमें चारेके सड़ जानेका भय है और यदि बहुत बड़ा होगा तो उसे भरनेमें देर लगेगी और खोलते समय चारेका अधिक अपव्यय होगा। अतः १०×६ के पैमानेका गड्ढा औसत दर्जेका होगा। गड्ढेके पैमानेका सबसे अच्छा हिसाब यह होगा कि एक गड्ढेमें अपने पशुओंके एक सप्ताहका चारा आ जाय। इस प्रकार तीन महीनेके लिये १२ गड्ढे खोदने पड़ेंगे। चारेकी कमी प्रायः तीन ही चार महीने रहती है। यह तो छोटे साइलोकी बात हुई।

नहीं तो, साइलोकी गहराई १६ फीट और व्यास १० फीटसे कम नहीं होना चाहिये। परन्तु धरतीके नीचे साइलोकी गहराई पानीकी सतह (वाटर-लेवेल) देखकर करनी पड़ती है। कम-से-कम पानीकी सतहसे दो फीट ऊपर साइलोका पैंदा होना चाहिये। जैसे, जिस जमीनमें १६ फीटके नीचे जल हो, वहाँ साइलोको १४ फीट गहरा ही बनाना चाहिये। असलमें साइलो जितना गहरा होता है, उतना ही अच्छा माना जाता है। क्योंकि घासमें ऊपर जितना ही बोझ अधिक पड़ता है, वह उतनी ही अच्छी होती है। गायोंकी संख्याके अनुसार ही

साइलो भी छोटे-बड़े बनाये जाते हैं। सौ गायोंके खाने लायक घास रखनी हो तो साइलोकी गहराई ३२ फीट और व्यास २० फीट होनी चाहिये। १० से ५० तक गायोंके लिये साइलोका व्यास १० से १६ फीटका होना चाहिये।

साइलोको भरना

गड्ढेमें डालनेके पहले चारेकी कुट्टी बना लेनी चाहिये। सबसे पहले गड्ढेमें मोटी घासकी पाँच-छः इंच मोटी तह बिछाकर कुट्टी किया हुआ चारा १ फुट ऊँचा बराबरीसे फैला देना चाहिये। फिर १० फीटमें आधसेरके हिसाबसे नमक डाल देना चाहिये। नमक डालनेसे चारा सड़ता नहीं और उसमें स्वाद आ जाता है। उस तहको खूब दबाना चाहिये। चारेके भीतर तनिक भी हवा न रहने पावे। दाब सब जगह समान पड़ना चाहिये। पहली तह अच्छी तरहसे दब जानेपर दूसरी तह बिछानी चाहिये और फिर वैसे ही दबाना चाहिये। यदि कुट्टी धूपमें कुछ सूख गयी हो तो थोड़ा पानी छिड़क देना चाहिये। गड्ढा पहले धीरे-धीरे भरकर पीछे जल्दी भर डालना चाहिये। २२ फीट व्यासका १५ फीट नीचा गड्ढा, जिसमें प्रायः ४० टन घास आती है, भरनेके लिये प्रतिदिन १ एकड़ जमीनकी घासकी आवश्यकता है। दबाई ठीकसे न होगी तो पोल पड़ जानेके कारण हवा घुस जायगी और बहुत-सा चारा खराब हो जायगा।

हरी घास पकनेके पहले ही काट लेनी चाहिये जिससे अच्छा साइलेज बने। दीपावलीके पहले चारा न काटनेके पुराने विचारको छोड़ देना चाहिये, क्योंकि काटनेका ठीक समय ऋतुके अनुसार बदलता रहता है। गड्ढेके किनारे-किनारे और ऊपरी भागमें बाँसकी टट्टी, ढड्ढा, डंठल या इसी प्रकारकी कोई चीज दे देनी चाहिये, जिससे गड्ढेके बीचमें मिट्टी धँस जानेसे चारा बिगड़ने न पावे।

साइलोके ऊपर २ फीट मोटी मिट्टीकी तह बिछाकर उसे ढलुआ कूट देना चाहिये, जिससे पानी उसपर न ठहरे। अच्छा हो यदि गड्ढेके ऊपर एक छप्पर पड़ जाय। किसी भी प्रकार उसमें हवा-पानी प्रवेश न करने पावे। साइलेजका मूल मन्त्र है चारेको अच्छी तरह दबाना। यदि चारेकी दबाई ठीक न होगी तो परिश्रम व्यर्थ जायगा।

साइलोको खोलना

यदि ऊपर बताये अनुसार गड्ढा भरा जायगा तो उसका चारा आठ महीनेतक अच्छा बना रहेगा। खोलते समय ऊपरकी मिट्टी इस तरह हटायी जानी चाहिये कि चारा आसानीसे निकल सके, साथ ही यह भी ध्यान रहे कि गड्ढेका कम-से-कम मुँह खुले। बहुधा ऊपरवाली परतमें भुंडी-सी लग जाती है, अतः वह पशुओंको खिलाने लायक नहीं रहती। किन्तु जो गड्ढा अच्छी तरहसे दाबकर भरा जाता है और जिसमें हवा-पानीका कुछ भी प्रवेश नहीं होने पाता, उसमें केवल दो ही तीन इंचतक भुंडी पहुँच पाती है। ऊपरका भुंडीवाला भाग फेंक देना चाहिये। प्रतिदिन काममें आने भरका ही चारा निकालना चाहिये। साधारणतया ऊपर और नीचेका चारा सड़ जाता है और उसमें कुछ गन्ध आने लगती है, इसलिये वह भाग पशुओंको नहीं खिलाना चाहिये। साइलेजमें चारा थोड़ा पककर नरम हो जाता है; जिससे पशुओंको चबानेमें आसानी पड़ती है। ठीक बनी हुई घास पके हुए सागकी तरह होती है। इसका रंग पीला और हरा होता है। इससे तमाखूकी-सी गन्ध आती है। अधिक बने हुए साइलेजका रंग काला हो जाता है और वह सड़ा-सा देख पड़ता है।

साइलेज चारा शरद्-ऋतुमें खिलाना चाहिये। जब गड्ढा खोला जाय तो बराबर उसमेंसे निकाल-निकालकर पशुओंको खिलाते रहना चाहिये। नहीं तो, चारा बिगड़ जानेका भय रहता है। पहले तो पशु साइलेजको पसंद नहीं करेंगे और मुँह हटा लेंगे, किन्तु एक बार खा लेनेपर फिर बड़े चावसे खायेंगे।

उच्चकोटिका साइलेज

ऊँचे दर्जेकी दाबघास बनानेके लिये उसमें राबका घोल मिलाया जाता है। ५६ मन घासमें १५ सेर राबका घोल छिड़का जाता है। तीन-चार गुना पानी डालकर राबका घोल बनाया जाता है और उसे घासकी प्रत्येक ६ इंचकी तहपर छिड़का जाता है। इस घासके बनानेके लिये घासको बफाया जाता है। बाफ न आवे तो घास भरनेका काम एक दिन बंद कर दिया जाता है। इस प्रकारकी घास बनानेमें दो बातोंपर ध्यान देना चाहिये—

(१) यदि घाससे लेक्टिक एसिड फर्मेण्टेशनके ढंगकी गन्ध आवे, जो खट्टे मट्ठे-जैसी होती है, तो समझना चाहिये घास अच्छी तैयार हुई है। किन्तु यदि ब्यूट्रिक एसिड फर्मेण्टेशनकी-सी बास आवे, जो बिगड़े हुए मक्खन या घीकी भाँति होती है, तो समझना चाहिये घास खट्टी हो गयी और बिगड़ गयी।

(२) घास भरनेका काम इतने धीरे किया जाय कि उसमें एक खास ढंगकी बाफ पैदा हो ।

यह उच्चकोटिकी घास सूखे चारेके बदलेमें पूरी मात्रामें देनेकी नहीं है, बल्कि उस चारेके साथ इसको नियमित रूपसे थोड़ा-थोड़ा दिया जाता है । इससे पशुका दूध बढ़ता है तथा शरीरवृद्धिके लिये उसे पोषणतत्त्व मिलता है । जब हरा चारा न मिले तब इसको दिया जा सकता है ।

साइलेजकी इस प्रथाके जान लेनेपर भी यदि लोग हरे चारेका संग्रह न करें और अपने मूक तथा बेबस पशुओं-को वही सूखा भूसा खिलावें, तो पशुओंके प्रति यह उनका अन्याय होगा । एक बारके खोदे हुए गड्ढे कई वर्षोंतक काम देते हैं । चारा-संग्रहकी इस प्रणालीमें उन्नति होनेकी अभी बहुत सम्भावना है । आशा है इस पद्धतिको अपनाकर पशुपालक अपने पशुओंकी स्थितिमें सुधार करेंगे ।

खादका निर्माण और उसकी रक्षा

यद्यपि खादका विषय कृषिसे सम्बन्ध रखता है, तथापि गोपालन और कृषिकर्मका इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि एकके बिना दूसरेकी उन्नति असम्भव-सी है । खाद तो कृषि तथा गोपालन—दोनोंके बीचकी वस्तु है, क्योंकि वह पशुओंसे बनती है और खेतमें काम आती है । खादका महत्त्व इतनेसे ही समझ लेना चाहिये कि पूरी तरहसे रक्षाका उपाय न होते हुए भी १००० करोड़ वार्षिक आयमेंसे २७० करोड़ रुपया गाय-बाड़ेकी खादसे आता है । अतः पशु-पालनमें लगे हुए मनुष्योंको अधिक-से-अधिक खाद बनाने और उसकी रक्षा करनेकी पूरी चेष्टा करनी चाहिये ।

खादकी आवश्यकता

जिस प्रकार मनुष्यका जीवन स्थिर रखने तथा उससे काम लेनेके लिये भोजन आवश्यक है, उसी प्रकार पृथ्वीकी उर्वरा-शक्तिको बनाये रखनेके लिये खाद आवश्यक है । भारतमें पृथ्वीकी उर्वरा-शक्ति दिन-पर-दिन क्षीण होती जा रही है । इसका कारण प्रत्यक्ष है । पृथ्वीसे उपज तो लगातार पैदा की जा रही है, किन्तु उसमें पर्याप्त खाद नहीं दी जाती, इससे उपज बराबर घट रही है । किसान लोगोंका यही रोना है कि 'कुछ होता ही नहीं, घता नहीं, वे दिन कहाँ गये जब आठ-आठ मनका बीघा होता था ।' हम धरती माताको कुछ खानेको देते नहीं, फिर भी वह अपना रक्त-मांस दे-देकर हमलोगोंको अन्न देती है, यही बहुत है । पृथ्वीके तत्त्वोंका लगातार अपहरण होते रहनेसे उसकी उत्पादन-क्षमताका सर्वथा नष्ट हो जाना स्वाभाविक था, किन्तु ऐसा हुआ नहीं; क्योंकि कुछ ऐसी प्राकृतिक रीतियाँ हैं, जिनसे पृथ्वी अपना भोजन किसी अंशमें प्राप्त करती रहती है । यदि हम पर्याप्त खाद दें, तब तो अधिक उपज होनेमें कोई संदेह ही नहीं है ।

यों तो आजकल कई प्रकारकी वैज्ञानिक तथा प्राकृतिक खादोंका उपयोग होता है; किन्तु अपने लिये तो प्रकृति-प्रदत्त कूड़ा-कचरा, घास-फूस, मल-मूत्र आदिकी खाद ही उपयुक्त होगी । दुर्भाग्यका विषय है कि भारतीयोंको आज यह भी नसीब नहीं है । संसारके अन्य देशोंने नये-नये तरीके निकालकर और खाद दे-देकर अपनी उपज पूरी कर ली है, किन्तु प्रागैतिहासिक कालसे कृषिमें प्रधान रहनेवाला भारतदेश इस समय प्रतिवर्ष अपनी उपज घटा रहा है !

खाद और ईंधन

खादके लिये सबसे प्रधान और अधिक मूल्यवान् वस्तु गोबर है । प्रतिप्रौढ़ पशुके गोबरका वार्षिक मूल्य १४) कूता गया है । पर आज हम उस गोबरके कंडे बनाकर उसे जला डालते हैं । ईंधनसे बचे हुए गोबरकी ही खाद बनती है । इस प्रकार ईंधनकी आवश्यकता खादसे पूरी की जाती है । किसान गोबरके कंडे जलाकर लगभग एक रुपया रोजका नुकसान करता है, क्योंकि उतना गोबर यदि खेतमें पड़ता तो कम-से-कम एक रुपयेका अन्न अधिक होता । भारतीय कृषक गोबरकी खादका मूल्य न समझता हो—ऐसी बात नहीं है । डा० वोएल्कर (Dr. Voelker) ने बड़े परिश्रमसे यह सिद्ध किया है कि भारतीय किसान खादकी उपयोगिता भलीभाँति जानता है; पर उसने आवश्यकताके कठिन दबावमें पड़कर गोबरका उपयोग ईंधनके रूपमें किया है । डा० साहबने व्यापकरूपसे ईंधन-चारेकी संग्रह-नीतिको ग्रहण करनेका अनुरोध सरकारसे किया था, किन्तु सरकारने उनके अनुरोधपर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया । बड़े दुःखकी बात है कि हमारी सरकार प्रतिवर्ष ३४ करोड़ रुपया मालगुजारीके रूपमें वसूल करती है किन्तु कृषि तथा पशु-चिकित्सामें केवल १॥ करोड़ रुपया खर्च करती है !

गोबर इकट्ठा करना

आजतक जो गोबर ईंधन बनकर राख हो चुका, उसकी चिन्ता छोड़िये और अबसे पूरे गोबरको खाद बनानेके काममें लाइये । गोबरको इकट्ठा करने तथा उसकी रक्षा करनेकी एक अच्छी प्रणाली होनी चाहिये । डेयरीकी भाँति यदि गायोंको बाँधकर खिलाया जाय, तब तो उनका गोबर एकत्र करनेमें विशेष कठिनाई नहीं होती, किन्तु सब ऐसा नहीं कर सकते । दिनको उनके पशु बाहर चरने जाते हैं । ऐसी दशामें एक टोकरीमें रस्सी बाँधकर किसी पशुकी पीठसे अटका देनी चाहिये और छोटे-से टीनके टुकड़ेसे गोबर उठा-उठाकर टोकरीमें छोड़ते रहना चाहिये । रातके समयका गोबर तो घरहीमें रहता है । गाड़ीवान जैसे चारेकी टोकरी गाड़ीके नीचे लटका लेते हैं, इसी प्रकार उन्हें एक टोकरी और लटकानी चाहिये, जिसमें वे बैलोंका गोबर उठाकर रख लिया करें। यदि गाँवमें एक जोड़ी बैल रखनेका वार्षिक खर्च १००) रक्खा जाय तो २५) केवल उनके गोबरसे आ सकता है ।

खादके रूपमें गोबरकी संरक्षा

धूप, हवा और पानीसे गोबरके बहुत-से गुण नष्ट हो जाते हैं, अतः उसे ऐसे रूपमें सुरक्षित रखना चाहिये, जिससे श्रेष्ठ खाद तैयार हो । अभी किसान यह करते हैं कि घर या पशुगृहके पास एक बड़ा-सा गड्ढा खोद देते हैं और उसीमें रोज गोबर डालते जाते हैं । वह गड्ढा खुला रहता है, जिससे धूप, हवा, पानी सब कुछ उसमें पहुँचता रहता है और गोबरके गुण बहुत कुछ नष्ट हो जाते हैं ।

गोबर इकट्ठा करनेकी सबसे अच्छी विधि यह है कि एक पक्का गड्ढा बनाया जाय । गड्ढेकी छोटाई-बड़ाई पशुओंकी संख्यापर निर्भर है, फिर भी बहुत बड़ा गड्ढा नहीं बनाना चाहिये । पशु अधिक हों तो कई गड्ढे बनाये जा सकते हैं । गड्ढे हर तीसरे महीने खाली किये जा सकते हैं और उनकी खाद काममें लायी जा सकती है । जब गड्ढेकी ऊपरी परत पुरानी पड़ जाय तब उसको खाली कर देना चाहिये । एक गड्ढा भर जानेके बाद दूसरेको भरना चाहिये ।

जहाँ गड्ढा पक्का न बन सके वहाँ लसदार मिट्टीका बनाना चाहिये । जहाँ पानीका तल पृथ्वीसे थोड़ी ही दूरपर हो वहाँ गाढ़े कीचड़की दीवालोंसे घेरकर बना लेना चाहिये । गोबरमें पानी न पहुँच जाय, इसके लिये छाजनका होना आवश्यक है । गोबरको धूपसे भी बचाना अच्छा है । गड्ढेकी भीतरी दीवालोंपर मिट्टी चढ़ा देनेसे गोबरकी अच्छी रक्षा होगी । ऐसे स्थानोंपर जितनी भूमिमें गड्ढा बनाना हो उतनी भूमिको पृथ्वीके धरातलसे १२ इंच ऊँची कर देना चाहिये, फिर उसपर ६ इंच मोटी गोल दीवार उठा देनी चाहिये । दीवालके बाहरी भागकी रक्षा एक मोटे पुश्तेसे होनी चाहिये । जितनी ऊँची दीवाल होगी उतने ही मोटे और पक्के पुश्तेकी आवश्यकता होगी । अतः दीवालकी ऊँचाई या गड्ढेकी गहराई ४-५ फीटसे अधिक न होनी चाहिये ।

गोबर इकट्ठा करनेका एक दूसरा अच्छा उपाय यह है कि ३ फीट गहरी और ५ फीट चौड़ी खाइयाँ खोदी जायँ । एक ओरसे गोबर डालकर ढकते रहना चाहिये । जब पिछले भागकी खाद तैयार हो जाय तो उसे काममें लेता रहे और आगे गोबर डालता रहे ।

गोमूत्रकी रक्षा

खादकी दृष्टिसे गोमूत्र कम महत्त्वका नहीं है । यह पृथ्वीकी उर्वरा-शक्ति बढ़ानेमें बहुत सहायक है । अतः इसकी भी रक्षा उसी सावधानीसे करनी चाहिये । एक प्रौढ़ पशुके मूत्रका वार्षिक मूल्य लगभग १२) रुपये अनुमान किया गया है । फिर, इसमें ईंधनका भी कोई प्रश्न नहीं है । तथापि मूत्रका बहुत ही थोड़ा अंश खादके रूपमें काम आता है, बाकी सब व्यर्थ चला जाता है । जहाँ खेतोंमें थोड़े-थोड़े दिनोंके लिये स्थान बदलकर बाड़ा बनानेकी प्रथा है, वहाँ तो मूत्रका लाभ मिल जाता है, क्योंकि धरती उसे सोख लेती है और कुछ दिन बाद उसीपर खेती होती है । किन्तु ऐसी प्रणालीका कुछ ही जिलोंमें और विशिष्ट ऋतुओंमें ही प्रयोग होता है ।

प्रायः यही होता है कि दिनमें पशु बाहर रहनेके कारण दिनका गोबर-मूत्र नहीं मिलता और रातमें घरपर छप्परके नीचे रहनेसे गोबर तो मिल जाता है, किन्तु मूत्रको कच्ची मिट्टी सोख लेती है, वह कुछ भी हाथ नहीं आता । चतुर किसान फर्शको ऐसा ढालू बनाता है कि मूत्र एक नालीसे बहकर गड्ढेमें इकट्ठा होता है । या वह नाली सीधे खादके गड्ढेमें जा सकती है या किसी दूसरे ऐसे गड्ढेमें, जिसमें एक बर्तन रक्खा हो । यदि पशुशालाकी भूमि खूब कुटी हुई हो तो भी मूत्र व्यर्थ नहीं जाता ।

गोमूत्रको मिट्टीमें सोखानेकी रीति

यदि पशुओंके नीचे फर्शपर सूखी मिट्टीकी परत बिछा दी जाय तो सब मूत्र उस मिट्टीमें सोख जायगा और फिर उस मिट्टीको खादके ढेरमें फेंक दिया जा सकता है। इस प्रकार मूत्र व्यर्थ न जाने पायेगा। ऊपरकी मिट्टी मूत्रसे भीग जानेपर उलट-पुलट कर देनी चाहिये। इस प्रकार मूत्रमय मिट्टी मिलाकर खाद बनानेकी रीतिको 'मूत्र-मृत्तिका-प्रणाली' कहें तो उचित होगा। इस प्रणालीसे छाजनके नीचे गड्ढेमें इकट्ठी की हुई खाद और खुले गड्ढेमें बिना मूत्र-मृत्तिकाके तैयार की हुई खादका प्रयोग परीक्षाकी दृष्टिसे किया गया तो 'मूत्र-मृत्तिका'वाली खादद्वारा दूनी उपज हुई।

उपर्युक्त प्रयोग लायलपुरमें किया गया था। बैलके दो जोड़े रक्खे गये थे। एक जोड़े बैलका गोबर छाये हुए गड्ढेमें रक्खा गया और बैलोंके नीचे ६ इंच मोटी मिट्टीकी तह बिछा दी गयी और उनका मूत्र सोखा लिया गया। आवश्यकता पड़नेपर मिट्टीको उलट-पुलट दिया जाता था। वह मिट्टी भी उसी गड्ढेमें डाल दी गयी। दूसरे जोड़े बैलका गोबर एक खुले गड्ढेमें डाल दिया गया और उसमें 'मूत्र-मृत्तिका-प्रणाली'का प्रयोग नहीं किया गया। आधे समयके बाद बैलके जोड़े बदल दिये गये, जिसमें गोबरकी मात्रामें अन्तर न पड़े। सब बैलोंको समान आहार दिया जाता था।

प्रयोगके अन्तमें दोनों खादोंकी तुलना की गयी तो 'मूत्र-मृत्तिका-प्रणाली' वाली खादमें खुले गड्ढेवाली खादसे दूना नाइट्रोजन था, जो खादका एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। खुले गड्ढेके स्थानपर केवल गड्ढा ढकनेसे खादके गुणमें ३० प्रतिशत वृद्धि हुई और मूत्रद्वारा ७० प्रतिशत। इस प्रकार 'मूत्र-मृत्तिका-प्रणाली' से १०० प्रतिशतसे कुछ अधिक वृद्धि हुई।

समुन्नत रीतिसे खाद तैयार करनेमें जो अधिक श्रम पड़ा, उसका ब्योरा इस प्रकार है—

काम	मनुष्यके कामके घंटे	बैलोंके काम-के घंटे
१. खेतसे मिट्टी लाना, फिर ले जाना और आवश्यकता पड़नेपर फर्शकी खुदाई करना।	८८	१६
२. गड्ढेमें गोबर भरना, उसपर पानी छिड़कना और मिट्टीसे ढकना।	४८	...
३. गड्ढेकी खादके लिये गाड़ी-द्वारा अतिरिक्त जल और मिट्टी ले आना	८	४

बादको हिसाब करनेपर पता चला था कि एक जोड़े बैलके गोबरके साथ प्रयोग करनेके लिये ५ गाड़ी मिट्टी ले आनी पड़ी थी। किन्तु अधिक पशु रहनेसे यह मात्रा कम हो जायगी, क्योंकि गोबर चाहे जितना हो, प्रति सप्ताह मिट्टी-की ३ इंच मोटी तह बिछानी पड़ेगी। फिर भी मिट्टी अधिक लगती है। यह सोचना है कि इसे किस प्रकार कम किया जाय। अतः उसके साथ यदि घरकी राख मिला दी जाय तो कम मिट्टीकी आवश्यकता होगी, क्योंकि राखमें सोखनेकी शक्ति अधिक होती है।

लायलपुरमें बहुत कम वर्षा होती है, किन्तु अधिक वर्षाके स्थानोंपर अथवा नदीके मुहानेके स्थानोंपर सालभर चलनेके लिये सूखे दिनोंमें मिट्टी खोद कर लानी होगी। सालभरके लिये मिट्टी छप्परके नीचे इकट्ठी करनी होगी। इसमें अधिक स्थानकी आवश्यकताके अतिरिक्त और भी कई कठिनाइयाँ हैं, किन्तु इस प्रकार करनेपर उपज इतनी अधिक होगी कि उसके सामने ये सारी कठिनाइयाँ कुछ न समझ पड़ेंगी।

विभिन्न प्रकारकी खाद

गोबरके अतिरिक्त और भी कई चीजोंसे खाद बनती है। घरका कूड़ा-कचरा, अनाजकी फटकन, खलिहान-का कूड़ा, भूसी, राख, खेतकी खूँटी, अनावश्यक और सड़ी हुई पत्तियोंसे मिली मिट्टी, गाँवका कूड़ा-कचरा, सड़कका झाड़न-बुहारन, खली, मल, मरे पशुओंकी हड्डी आदि और मरे छोटे जानवर तथा कीड़े-मकोड़े—ये सब खाद बनाते हैं। यदि उचित कार्यवाही और संरक्षणके बाद ये धरतीको सौंप दिये जायँ तो उसकी उत्पादिका शक्ति बहुत कुछ बढ़ जायगी और भूखे मरनेवाले मनुष्यों तथा पशुओंका प्रश्न किसी अंशतक हल हो जायगा।

खेत निरानेसे जो घास निकलती है, उसको लोग मेंड़पर फेंक देते हैं; किन्तु उसीको सड़ाकर यदि खाद बना लिया जाय तो बहुत उत्तम खाद बन सकती है। आधारताल फार्ममें प्रतिवर्ष ३८०० मन खाद खेतीकी निरायी हुई घाससे ही बनती है। यह खाद सब फलोंमें डालने योग्य और सस्ती होती है। इससे दो लाभ होते हैं, एक तो पृथ्वीको फसलके लिये

अधिक पोषणीय तत्त्व मिल जाते हैं, दूसरे पृथ्वीमें आर्द्रता इकट्ठी कर रखनेकी अधिक शक्ति आ जाती है।

खादका पूरा-पूरा उपयोग

गोबर इकट्ठा करते रहनेसे उसका कुछ गुण नष्ट हो जाता है, अतः खादका प्रतिदिन उपयोग कर लेनेका उपाय सोचा गया है, किन्तु यह उपाय घास-चारेकी फसलमें ही काम आ सकता है, अन्नकी फसलमें नहीं। इस विधिमें लंबी-लंबी खाइयाँ खोदनी पड़ती हैं और नित्य उन्हींमें गोबर गिराना होता है। जैसे-जैसे खाद पक्की होती जाती है, वैसे-वैसे खाईके अगल-बगलवाले पौधे उसको खींचते जाते हैं। दुग्धशालाओंके आसपासकी गिनी घास (Cuinea grass) को सफलतापूर्वक खाद दी जा सकती है। इस प्रकार खादका कोई भाग व्यर्थ नहीं जाता। घास भी खूब अच्छी होती है। गायबाड़े और घरका कूड़ा कचरा भी गोबर-मूत्रके साथ मिलाया जा सकता है। पर यह प्रणाली खेतमें लाभप्रद नहीं होती, क्योंकि एक तो ताजा गोबर सब पौधोंको हितकर नहीं होता, दूसरे सारे खेतको थोड़े ही दिनोंमें खाद देकर, जोतकर तथा पटरा चलाकर बीज बोनेके लिये तैयार करना पड़ता है। इसके लिये गोबरको इकट्ठा करके रखने और उसको पुष्ट खाद बनानेकी आवश्यकता पड़ती है।

चारेको खादमें परिणत करना

पशु जंगलके चारा चरते हैं और फिर उसको गोबर अर्थात् खादके रूपमें बदल देते हैं। इससे यह सोचा गया कि उनके पेटके भीतर जिस पाचन-क्रियासे पत्ती खाद बन जाती है, उसी क्रियासे पत्तीको बिना उनके पेटमें पहुँचाये खादके रूपमें बदला जा सकता है। पशुओंके पेटमें चारेको पचानेवाले जीवाणु होते हैं, जिनमेंसे कुछ जीवित या मृत गोबरके साथ बाहर निकल आते हैं। इन्हींसे बाहरकी पत्तियोंको पचाकर खाद बनानेका काम लिया जा सकता है। यदि ताजे गोबरको पानीमें घोलकर पत्तियों या वृक्षकी कोमल टहनियोंपर छिड़क दिया जाय तो किंचित् दशाओंके अन्तर्गत उन जीवाणुओंकी क्रिया आरम्भ हो जाती है और वे पत्तियाँ या टहनियाँ खाद बन जाती हैं। इस प्रकार खाद बनानेको अंग्रेजीमें कम्पोस्टिंग (Composting) कहते हैं।

कम्पोस्टिंगकी क्रिया

पहले कहा जा चुका है कि गोबर अथवा मनुष्य-मलके जीवाणुओंद्वारा कोमल पत्ती अथवा टहनियोंकी खाद बनायी जा सकती है। इससे प्रचुर मात्रामें खाद बनाना सरल है। इस रीतिमें हवा और नमी आवश्यक है तथा यह गड्ढेवाली रीतिसे बिल्कुल उलटी है, जिसमें हवा-पानीका प्रवेश निषिद्ध है।

कम्पोस्टिंगके लिये ऐसा स्थान चाहिये जहाँ भूमि ऊँची हो, पानीके इकट्ठा होनेका भय न हो, जहाँ वर्षामें पानीके भर जानेकी सम्भावना न हो और जहाँ पानी जल्दी सूख भी न जाय। ऊपर एक छाया भी होनी चाहिये। वर्षाकालमें यह ध्यान रखना चाहिये कि बहुत जल गिरनेसे ढेरके भीतर बनी हुई खाद बह न जाय। इसलिये अधिक वर्षावाले स्थानोंमें काफी पक्का छप्पर डालना चाहिये। इसके लिये गायबाड़ेके पासकी और जलाशयकी भूमि ठीक होती है, क्योंकि यहाँकी चीजें कम्पोस्टिंग स्थानको ले जानी पड़ती हैं।

चुने हुए स्थानपर कूड़े-कचरेकी १ फुट मोटी तह बिछाकर कम्पोस्टिंग की जाती है। कम्पोस्ट किये जाने-वाले सामानके अनुसार कम्पोस्ट राशिकी लंबाई होनी चाहिये; किन्तु १६ फीटसे अधिक लंबी न हो तो ठीक है। पूरी राशि एक-एक फुटकी तह करके ४फीट ऊँची होनी चाहिये।

कम्पोस्टिंगके लिये हरी या गीली वस्तुओंका प्रयोग होना चाहिये। सूखी वस्तुओंको पानीसे तर कर लेना चाहिये। सबसे अच्छा ढंग यह होगा कि पत्तियोंको पशुओंके नीचे बिछा दिया जाय जिससे वे मूत्रसे तर हो जायँ। पदार्थोंके अनुसार नमीकी आवश्यकता होती है। जलकेवड़ेके साथ सूखे पदार्थ बिना तर किये ही कम्पोस्ट किये जा सकते हैं। इसमें जलवायुका भी विचार होता है। सूखी जलवायुमें अधिक तरी देनी पड़ती है।

इसके लिये निश्चित स्थानपर कम्पोस्ट की जानेवाली सामग्रीकी १ फुट ऊँची तह फुलफुले ढंगसे बिछा देनी चाहिये। यदि झाड़-झंखाड़ बहुत हों तो उन्हें काट डालना ठीक होगा। फिर उसपर २ इंच मोटी गोबरकी परत बिछानी पड़ती है। अच्छा तो यह होता है कि सारी सामग्रीके बराबर ही गोबर लेकर पानीसे सान दिया जाय और हो सके तो ढेर बनाकर ऊपर मिट्टीकी एक पतली तह चढ़ा दी जाय और गोमूत्र तथा गायबाड़ेका धोवन अथवा गोबरसे १५ गुने पानीमें उसे घोलकर उसपर छिड़क दिया जाय। ऐसा न हो सके तो ऊपर बताये अनुसार एकके बाद दूसरी तह जमाता जाय और ढेर लगा दे। यह ध्यान रक्खे कि ढेरके किसी भागपर चले नहीं, नहीं तो वहाँ दब जायगा। फुलफुल होनेके कारण तहों तथा वस्तुओंके बीचमें

हवा भरी रहती है, जो कम्पोस्टिंग-क्रियाके लिये आवश्यक है। दाबने-कूटनेसे यह हवा बाहर निकल आती है। सारी सामग्री लग जानेपर ऊपरके भागको ढालू बना देना चाहिये।

समय-समयपर देखते रहना चाहिये कि ढेरमें नमी है कि नहीं। यदि सूख रहा हो तो पानी छिड़क देना चाहिये। जब यह पता चले कि आधी सामग्रीकी खाद बन चुकी है। तो ढेरको तोड़कर उसीके पास दुबारा ढेर लगाना चाहिये। जलीय पदार्थोंके लिये ३ और सूखे पदार्थोंके लिये ६ सप्ताहमें ऐसी स्थिति आ जाती है। इस समयतक कठोर टहनियों तथा लकड़ियोंकी छाल और कोमल भाग अलग हो गये रहते हैं, अतः इन लकड़ियोंको निकालकर और सुखाकर ईंधनके काममें ले लेना चाहिये। दुबारा ढेर लगाते समय तहोंका क्रम उलट जाता है अर्थात् ऊपरवाली तह नीचे और नीचेवाली ऊपर आ जाती है। अधिक कठिनाईसे गलनेवाली वस्तुओंको बीचमें रखना चाहिये। ढेर सूखता दिखायी पड़े तो फिर पानी और गोबरका घोल छिड़कना चाहिये। इस बार ३ से ६ सप्ताहके भीतर कम्पोस्टिंग-क्रिया पूरी होकर खेतके लिये खाद तैयार हो जायगी।

जाड़े-गर्मीकी अपेक्षा वर्षामें कम्पोस्टिंग-क्रिया जल्दी होती है। साधारणतः ३ या ३॥ महीने लगते हैं। बहुत कड़े पदार्थोंको कूटकर चूर कर देना चाहिये, भूसी आदिको पत्तियोंकी तरह तहपर धीमेसे भुरभुरा देना चाहिये। कम्पोस्टिंग करनेके पहले सूखी वस्तुओंको गोमूत्रसे तर करनेका ढंग बड़ा अच्छा है।

यदि कोई खादके पीछे पड़ जाय और पृथ्वीकी उपज बढ़ाना चाहे, जैसा कि गायकी रक्षाके लिये करना ही होगा, तो और भी कई साधनोंसे खाद प्राप्त हो सकती है।

खलीकी खाद

अब पता चला है कि कुछ फसलोंके लिये खलीकी खाद बड़ी लाभदायक होती है। कुछ स्थानोंमें इसका उपयोग होने भी लगा है। खाद चाहे किसी नामकी हो, कैसी भी हो, खेतमें जाकर गायकी रक्षा करेगी, क्योंकि उर्वरा-शक्ति बढ़ाकर अधिक चारा होना सम्भव कर देगी।

खेतोंमें खाद देनेकी विधि

आजकल प्रायः ऐसा होता है कि लोग खादको अपने घरके पास गड्ढेमें तैयार करते हैं और आवश्यकताके समय गाड़ीमें भरकर खेतपर ले जाते हैं। वहाँ टोकरीमें भर-भरकर खेतभरमें थोड़ी-थोड़ी दूरपर खादके छोटे-छोटे ढेर लगा देते हैं। वर्षा होनेसे खाद बह-बहकर सारे खेतमें फैल जाती है। परन्तु यह अच्छा ढंग नहीं है। खाद देनेकी सबसे अच्छी विधि यह है कि जिसके पास खेत छोटा हो और पशु कम हों, उसे खेतके एक कोनेपर मेंड़से १ फुट दूर ५ फीट लंबा ५ फीट चौड़ा और एक फुट गहरा गड्ढा खोदना चाहिये। खोदे हुए गड्ढेकी मिट्टी मेंड़पर डाल देनी चाहिये। इसी गड्ढेमें रोज गोबर, घरका कूड़ा-कचरा और घास-पात डालना चाहिये। एक गड्ढा भर जानेपर दूसरा खोदे और इस गड्ढेकी मिट्टी पहले गड्ढेपर डाल दे। इस प्रकार सारे खेतमें इसी नापके गड्ढे खोदकर उनको खादसे भर दे। गड्ढेका नाप ऐसा हो कि एक आदमी आसानीसे एक गड्ढा रोज खोद सके।

जिनके पास पशु और खेत अधिक हों, उन्हें मेंड़से १ फुट छोड़कर खेतमें ५ फीट चौड़ी और १ फुट गहरी खाई खेतके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक खोदनी चाहिये। एकके भरनेपर दूसरी और उसके बाद तीसरी खाई खोदनी चाहिये। इस गड्ढे तथा खाईकी रीतिसे खाद देनेमें कई लाभ हैं। घरमें या आस-पास कूड़ा-कचरा या गोबर इकट्ठा नहीं होता। खादको दुबारा ढोकर ले नहीं जाना पड़ता। यदि जाड़ेमें वर्षा हो गयी तो सिंचाईकी आवश्यकता नहीं पड़ती। खेत १ फुट गहरा खुद जाता है, जिससे गहरी जुताई हो जाती है। काँसा तथा बेकार घासके बीज खेतसे सदाके लिये निकल जाते हैं। इस प्रकार दी हुई खादका असर १० वर्षसे भी अधिक रहता है।

गोबरके अतिरिक्त घास-पत्ती आदि बेकार वस्तुओंकी खाद बनाकर खादका परिमाण बढ़ाना तथा अच्छे ढंगसे खेतमें खाद देना आजकलकी अत्यन्त आवश्यक तथा प्रमुख समस्या है। इसीके द्वारा हम धरती माताकी उर्वरा-शक्ति बढ़ाकर गोमाताकी रक्षा कर सकते हैं। पशुओंकी कमीसे खाद कम होती है और खाद कम होनेसे पशुओंमें कमी एवं उनमें कृशता आती है, अतः खादके प्रश्नपर विशेष ध्यान देना चाहिये। ('काउ इन इंडिया'के आधारपर)

सुरभि-संगोपन

गोबरकी महत्ता

(लेखक—श्रीसंगोप)

सुरभिका अर्थ है गाय और गोबर। गोबर क्यों? दूध इत्यादि क्यों नहीं? इसका भी कुछ रहस्य है। सुरभि नाम है दिव्य गायका, जो प्रजापतिके मुँहमेंसे डकार (Eruetation) के साथ प्रकट हुई थी। प्रजापतिकी डकार तो सर्वदा मधुर एवं सुगन्धित ही होती है, अतः उस दिव्य गायका नाम हुआ 'सुरभि'—सुगन्धयुक्त—सौरभ—खुशबूवाली! वह सुगन्धसे इतनी पूर्ण है कि दूध, दही, घी, मक्खन आदिकी तो क्या कहें, उसके गोबर तकमें भी एक प्रकारकी खुशबू आती है। इस प्रकार गोबर भी सुरभिके सौरभसे सम्पन्न है, इसीलिये उसको 'सुरभि' नाम दिया गया है। गोबरको 'गोमय' भी कहते हैं; क्योंकि उसमें गौकी विशिष्टता—'गोमयता'—भरी हुई है। आरोग्य और आयुर्वेदकी दृष्टिसे देखें तो भी गोमयमें—सुरभिमें—सौरभके साथ अनेक औषध-सम्बन्धी रासायनिक तत्त्व भरे पड़े हैं।

प्रजापतिकी तो डकारमें सौरभ थी, परन्तु सुरभिके—साक्षात् सुगन्धिके तो अपामार्ग (गोमय) तकमें सौरभ भरी है। 'इष्टं धर्मेण योजयेत्' न्यायसे हम सौरभका (गोमयका) इष्टतम उपयोग करें तभी वह सच्चा एवं श्रेष्ठ धर्म-प्रयोग है। वही सुरभिका संगोपन है, सेवा है और रक्षा-पूजा है। इसके दो मार्ग हैं—प्रथम, आरोग्यके लिये गोमयका पूरा उपयोग करें—जैसे, घरके आँगन आदिमें उसका लेपन करें, पानीमें घोलकर घरमें जहाँ-तहाँ उसको छिड़कें, स्नानके समय शरीरपर उसका लेपन करें, फोड़े आदिपर उसकी पुलटिसका प्रयोग करें, उसके प्रवाही—सफेद—जलरसको पागलपनमें घी-तेलके साथ पिलायें, व्रणरोपणमें गोमय तथा गोमूत्र बरतें। प्रसूतिमें गोमूत्र पिलावें, यकृत्‌में गोमूत्र पिलावें तथा गोमूत्रसे सेंक करें। बवासीरके रोगीको गोमूत्रकी बस्ती देवें। इस प्रकार उससे शारीरिक लाभ उठावें। गोबर एवं गोमूत्रमें मेंथल (Menthol), अमोनिया (Ammonia), फिनोल (Phenol), इंडोल (Indol) और फॉर्मेलिन (Formalin) भरे पड़े हैं तथा खास करके उसके अणूद्भिज्ज (Bacteriophages) रोगाणूद्भिज्जों (Pathogenesis) को नष्ट कर देते हैं। इसलिये इनसे रोगनाशमें बड़ी सहायता मिलती है।

द्वितीय, बचे हुए गोबरके उपले (कंडे) बनाकर जला डालना तो आजकी परिस्थितिमें बहुत बड़े पापके समान है, क्योंकि इस अपव्ययसे गोबर, गोमूत्रकी खादके न मिलनेके कारण पृथ्वी माता गायोंको काफी चारा और हमलोगोंको पुष्टिकर धान्य नहीं दे सकती। गाय माताकी इस देनसे पृथ्वी माता नित नवीन बनी रहती है। पृथ्वीकी 'गन्धवती' संज्ञा सुरभि–गोमयके बिना कैसे सार्थक हो सकती है। जो जमीन गोमयसे वञ्चित रहती है, वह मुर्दार, फीकी तथा अपकर्षक हो जाती है। उसमें उत्पन्न होनेवाले धान्य-तृणादिमें न सौरभ होता है, न सत्त्व, न जीवन-तत्त्व और न स्वाद ही। परन्तु जहाँ सुरभि—गोमय सञ्चित तथा सिञ्चित होता है, वहाँ पृथ्वीकी ताजगी, प्रसन्नता एवं उत्पादन-शक्ति पूर्णरूपसे बढ़ती रहती है और उसमें उत्पन्न होनेवाले धान्य-तृणादिमें उपर्युक्त सब सुतत्त्व विद्यमान रहते हैं।

पृथ्वी तथा उसमें उत्पन्न धान्य-तृणादिमें जो सौरभ है, वह सुरभि (गोमय) के ही कारण है। गोमयका स्वाभाविक स्थान है पृथ्वीमें खाद बन जाना। इस रीतिसे गोमयका खादसे और गायका चारेसे संगोपन हो सकता है।

और भी ध्यान दें, महाभारतमें कथा है कि लक्ष्मीने गायसे उसके शरीरमें स्थान पानेकी विनती की। सब देवताओंको योग्यतानुसार गो-विराट्‌में स्थान मिल गया था, लक्ष्मीको कहाँ स्थान दे? गौने कहा—'तुम तो अति चञ्चल और चपला हो, तुम्हें कौन-सा स्थान दूँ? तुम मेरे गोमय और मूत्र-स्थानमें निवास करो'—

अवश्यं मानना कार्या तवास्माभिर्यशस्विनि।
शकृन्मूत्रे निवस त्वं पुण्यमेतद्धि नः शुभे॥

(महा० अनु० ८२। २४)

इस प्रकार लक्ष्मीजीने गोमय एवं गोमूत्रमें स्थान प्राप्त किया। लक्ष्मीका सदुपयोग शीघ्र कर लेना चाहिये, नहीं तो वह चपला—न जाने कहाँ-की-कहाँ चली जायगी। खाद बनानेमें भी इसी सत्यका पूरा उपयोग करना पड़ता है। गोमय और गोमूत्रके वायवीय (Gaseous) भागमें अधिक-

तम लक्ष्मीतत्त्व—लाभदायी पोषणतत्त्व रहता है, द्रवभागमें इससे कम और ठोस भागमें बिल्कुल कम। इसलिये लक्ष्मी-का लाभ लेना हो तो जल्दी-से-जल्दी इन वायवीय और द्रवभागको हस्तगत कर लेना चाहिये। भूदेवी और श्रीदेवी—भगवान् विष्णुकी दो पत्नियाँ हैं। अतः भूदेवीके साथ लक्ष्मी-सी सपत्नीका मेल करा दें तो साक्षात् नारायण (दरिद्ररूपमें प्रकट नारायण)—की प्रसन्नता और कृपा प्राप्त हो जाती है। इसलिये लक्ष्मीरूप गोमय और गोमूत्रका अच्छे ढंगसे, युक्ति-प्रयुक्तिसे मिश्र-खाद (Compost) और मूत्र-मिट्टी (Urine-earth) के रूपमें सावधानी और शीघ्रतासे भूदेवीके साथ मेल करा देना (Incorporate) चाहिये। सपत्नियोंमें मेल करानेका विशेष ढंग होता है। इस ढंगको खादकी कला और कृषि-विज्ञानमें आजमाना चाहिये।

गोमयके लक्ष्मीतत्त्वको गँवाना सरासर आत्मघात है और देवापराध है। उपला बनाकर उसे जलाना तो लक्ष्मीकी—राष्ट्रीय सम्पत्तिकी गायमाताकी और पृथ्वीकी कृपाका तिरस्कार करना है। कालविपर्यासके तथा लाचारीसे आवश्यकता होनेपर भी उपलेके रूपमें गोबरका उपयोग कम-से-कम करना चाहिये और अबतक हमने जो गोमयका खादके रूपमें उपयोग नहीं किया, इस भूलके प्रायश्चित्तके लिये अब गोमूत्रका भी पूर्णरूपसे उपयोग करना चाहिये। गोमूत्रका तो हमने खादके रूपमें कभी उपयोग किया ही नहीं। गोमय और गोमूत्रकी खादसे गायके खर्चका चतुर्थांश प्राप्त हो जाता है तथा खेतीमें भी दो-चार गुना अधिक लाभ मिल जाता है।

साथ-ही-साथ गाँवकी सीमामें, आँगनमें, खेतोंके चारों ओर—जहाँ सुविधा मिल सके, वहीं, किसी भी प्रकारके पेड़ ईंधनके लिये लगानेका सामूहिक प्रयत्न प्रारम्भ कर देना चाहिये। साथ ही, सरकारी जंगलविभाग, कुछ जंगलातको छोड़ दे और उसमेंसे ईंधन लेने तथा गायोंके चरानेका प्रजाको हक रहे, इसके लिये सुव्यवस्थित एवं जोरदार आन्दोलन करना चाहिये, जिससे भूदेवीको अधिकतम गोबर तथा गौदेवीको अधिकतम चारा मिल सके।

अब जरा दूसरी दृष्टिसे देखें—'सुरभि'का एक अर्थ है सुर=(देवता), उससे भी=डरी हुई—गाय। भगवान् श्री-कृष्णचन्द्रजीने अभय वचन देकर देवोंके डरसे उसको छुड़ाया था। इसी सेवाके उपलक्ष्यमें देवराज इन्द्रने श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्‌को 'गोविन्द' का भव्य—दिव्य पद प्रदान किया था। कृष्णका एक अर्थ कृषि करनेवाला भी होता है। सुरभिके—गायके गोबरको जो जल, वायु, तेज, आकाश आदि दिव्यतत्त्वों—देवोंके द्वारा नष्ट-भ्रष्ट किया जाता था, उनसे बचाकर पृथ्वीमें उसे कर्षित(Trenching)कर दिया। इसीलिये श्रीकृष्णजी 'गोविन्द—गोपाल' कहलाये, न कि 'धेनुपाल'! 'गो' का अर्थ होता है 'गाय' और 'पृथ्वी', दोनोंका पालन एक साथ कर दिया और मिश्र-खेती (Agricology) की नींव भी डाल दी। इसलिये वे दुहरे 'गोपाल' बने। अग्निको हम देवता कहते हैं। भगवान् श्रीकृष्णने गोमयको—उपला और खुली सड़नके रूपमें अग्नि और धूपसे बचा लिया। इस प्रकार आधिदैविक और आधि-भौतिक दृष्टिसे सुरभि-गोमयका सच्चा तथा पूरा उपयोग, रक्षा एवं संगोपन करनेसे सुरभि-गाय यशस्विनी, पयस्विनी और वर्चस्विनी बनी रही और अब भी बनी रहेगी।

'बाह्वोर्म्यां यशोबलम्' हम प्रतिदिन ऐसी प्रार्थना करते हैं। यशस्वी एवं बलवान् बननेका अवसर हमको सुरभिके इस संगोपनसे, इस दैवी गो-पथसे मिल गया है, इसे गँवा नहीं देना चाहिये और तीनों सुरभियों—'पृथ्वी, गाय और गोमय'के संगोपनसे यज्ञनारायणकी कृपा प्राप्त करनी चाहिये। यह हमारा उज्ज्वलपथ—दक्षिणमार्ग (बलप्रद मार्ग) है। उपला जलानेके वाममार्ग—कलङ्कपथ—धूम्रमार्गको छोड़कर हम यशःप्रयाण प्रारम्भ करें—यही हमारी उत्तरापथकी यात्रा है।

बच्चे कैसे जीयेंगे

"···गोरक्षा इस देशके नर-नारी, सबके लिये बड़ा भारी कर्त्तव्य है। दूध-घीपर ही भारतवासियोंका जीवन निर्भर है। जबसे गाय-बैल बड़ी निष्ठुरतासे मारे जाने लगे हैं, तबसे हमें चिन्ता हुई है कि हमारे बच्चे कैसे जीयेंगे ?"

—लाला लाजपतराय

खादका खजाना

हिंदुस्थानकी जमीनमेंसे धुलकर या खेतीके रूपमें जो तत्त्व चला जाता है, उससे वनस्पतिका पोषण (प्लैंट फूड) घट जाता है। बँधी मेंड़, दंताली और मोरी आदिके द्वारा धुलकर जानेवाला जो तत्त्व रुकता है, बस, वही एक मुख्य खाद बनता है। यदि खूराककी अपेक्षा खून अधिक कीमती है, तो ऐसा ही समझकर इस तत्त्वको भी बरसातके द्वारा धुल जाने और वायुके द्वारा उड़ जानेसे बचाना चाहिये। प्रतिवर्ष जमीनमेंसे केवल पाव इंच मिट्टी ही धुलती है, ऐसा मानें तो भी प्रतिएकड़ २५ से ३० टन यानी ५० से ६० गाड़ी जमीनका कस—वनस्पतिकी खूराक चली जाती है, ऐसा समझ लेना चाहिये। हम प्रतिएकड़ प्रतिवर्ष उसके दसवें भागके बराबर भी खाद नहीं दे सकते। इसके अतिरिक्त अतिवृष्टि, तीव्र बाढ़ आदिसे तो इससे भी कई गुना अधिक तत्त्व निकल जाता है, यह क्या हम नहीं देखते? इसीलिये सबसे पहले मिट्टीका धुलना रोकना चाहिये। खादके लिये यही राजमार्ग है।

गहरी, ठीक समयपर, ठीक पैमानेपर सुधरे तरीकोंसे खेती करना ही खाद बनानेका एक प्राकृतिक दूसरा राजमार्ग है (Tillage is manure)। खाद खोकर हम हिंदुस्थानकी जमीनकी जो हत्या और हानि कर रहे हैं, इसकी कल्पना सामान्य मनुष्यको नहीं हो सकती। हम जो गोबरको जला देते हैं; विष्ठासे धरतीमें दुर्गन्ध फैलाकर बीमारीका विस्तार करते हैं; गोबर, गोमूत्र और कीचड़से मच्छड़, मक्खी, डाँस वगैरहकी बला बटोरते हैं, इससे यह प्रमाणित होता है कि हम मृत्युकला और अलस-शास्त्र (Science of Illth and Art of Death)में आगे बढ़े हुए हैं।

गोबर, गोमूत्र और कीचड़ आदि तत्त्व एक प्रकारसे देशके कीमती धन और सम्पत्तिके रूपमें हैं, इनका अपव्यय करके हम अनारोग्य, भुखमरी और तरह-तरहकी अपमृत्युओंको बुलाते हैं। इन सबका ठीक और यथार्थ उपयोग किया जा सके तो अरबों रुपयेकी खादका अपव्यय रुककर अनेकों अरबोंकी खेतीकी उपज बढ़ायी जा सकती है। जलानेके लिये गोबरके बदले लकड़ी, ढट्ठा और डंठल काममें लाया जाय तो वृक्षारोपण भी बढ़े और खेतीका लाभ तो असलमें मिले ही। असलमें गोबर खादके रूपमें ही अच्छा और अधिक फायदा पहुँचा सकता है। यदि गोबर जलाना ही पड़े तो उसे किसी खाँची या टोकरीमें रखकर पहले उसका पानी चुवा लेना चाहिये जिससे खादका कुछ हिस्सा पानीके रूपमें अलग निकल जाय, फिर जलानेवाला हिस्सा जलानेके लिये काममें लाया जा सकता है।

परन्तु हमलोग खादका ठीक-ठिकानेसे संग्रह करना और उसका उपयोग करना जानते ही कहाँ हैं? खादका कितना ही वायवीय-भाग (Gaseous)तथा द्रव-भाग तो उड़ जाता है। फिर जिसे खाद मिलती है, वह मूर्खताके कारण उसका दुरुपयोग करता है। इस प्रकार जब भारतवर्षमें दो प्रतिशत जमीनको भी ठीक-ठिकानेसे खाद नहीं मिल सकती, तब अधिक जमीनके लिये तो अधिक खाद कहाँसे पूरी की जाय! भारतकी २२ करोड़ एकड़ जोती जानेवाली जमीनके लिये कम-से-कम एक अरब गाड़ी खाद प्रतिवर्ष मिल सके, ऐसा पुरुषार्थ करनेकी आवश्यकता है। ढेर-की-ढेर खाद उत्पन्न करना खादकी कलाका मुख्य भाग है। ऐसी कूड़े-कचरेकी खाद (Synthetic Manure) भारतकी खेतीकी मुख्य आवश्यकता है। पत्ते, छिलके, छाल आदि हर प्रकारके कूड़े-कचरेके साथ गोबर, गोमूत्र और कीचड़ आदिका उसके प्रेरक—(Starter)—जाँवनके रूपमें उपयोग करनेसे किस प्रकार अच्छी खाद बन सकती है इसकी रीति लेखके अन्तमें दी जायगी।

हिंदुस्थानमें पशुओंकी खादकी कीमत पौने तीन अरब रुपये कूती जाती है। इस खादके साथ मल, कादा, कीचड़, मोरीका पानी, सफाईके कूड़े-कचरे आदिसे बनी हुई व्यवस्थित खादकी कीमत भी जोड़ दी जाय तो खासी दुगुनी यानी छः अरब रुपयेकी खाद हो जाती है, और यदि इस खादका ठीक-ठीक वैज्ञानिक उपयोग हो तो उसकी कीमत इससे भी दुगुनी-तिगुनी बढ़नेकी सम्भावना है।

गोबर और गोमूत्रको जैसे-तैसे हवामें पड़ा रहने देनेसे केवल साढ़े तीन महीनेमें उसका आधा तत्त्व निकल जाता है, ऐसा प्रयोगसे मालूम हुआ है। इस प्रकार प्रत्येक पशुके पीछे हम कम-से-कम १२ से १५ रुपयेकी खाद नष्ट कर देते हैं। इसका हिसाब हिंदुस्थानके करोड़ों पशुओंके

साथ किया जाय तो अरब-सवा अरब रुपयेका अपव्यय हम कर डालते हैं, ऐसा कहा जा सकता है। इस अपव्ययको कम करनेके लिये इस लेखके अन्तमें दो पद्धतियाँ दी गयी हैं।

हिंदुस्थानके पशुओंके घास-चारेका कुल खर्च दस अरब रुपया होता है, उसमें दो-अरब रुपयेका दाना खरीदना पड़ता है और आठ अरब रुपयेका घास-चारा होता है। इस दस अरब रुपयेकी लंबी रकममें सात अरब रुपये बेकाम पशुओंके पीछे चले जाते हैं, ऐसा हिसाबसे मालूम होता है। ये सब पशु काम या दूधके रूपमें चाहे अपनी सेवा न भी दें पर प्रत्येक पशु खादके लिये गोबर और मूत्र तो देता ही है, परन्तु उसका पूरा-पूरा और ठीक उपयोग होना चाहिये। पशु पीछे प्रतिवर्ष ६००० से ८००० रतल मूत्र और १५००० से १८००० रतल गोबर—कुल मिलाकर २१०००से २६००० रतल खाद आती है। उसमेंसे क्रमशः ४२०से ५६० रतल, और ३००० से ३६०० रतल मिलकर—कुल ३४२० से ४१६० रतल सूखा तत्त्व मिल जाता है। मूत्रमें ४८ से ६४, और गोबरमें ५२ से ६५, कुल मिलकर १०० से १२९ रतल नाइट्रोजन, गोबरमें ४० रतल फास्फोरिक एसिड, और मूत्रमें ६० से ८० रतल तथा गोबरमें ३७ से ४५ रतल, कुल मिलाकर ९७ से १२५ रतल पोटाश मिलता है। मतलब यह कि गोमूत्र और गोबरमें वनस्पतिके लिये एक-सरीखी पोषक खाद मिलती है। मूत्रकी खादकी कीमत गोबरकी अपेक्षा ड्योढ़ी होती है।

पशुको जो घास-चारा दिया जाता है, उसका ३३ प्रतिशत नाइट्रोजन, ७५ प्रतिशत फास्फोरिक एसिड, और १५ प्रतिशत पोटाश गोबरमें होता है। और ५० प्रतिशत नाइट्रोजन तथा ७५ प्रतिशत पोटाश मूत्रमें होता है। खूराकका १७ प्रतिशत नाइट्रोजन, २५ प्रतिशत फास्फोरिक एसिड और १० प्रतिशत पोटाश केवल दूधमें जाता है। शेष सब-का-सब गोबर और गोमूत्रमेंसे वापस मिल जाता है। घास-चारेकी खाद बनानेसे जमीनको इतना सीधा लाभ कभी नहीं हो सकता। उसकी अपेक्षा गोबर और गोमूत्रके रूपमें खादके कहीं बढ़िया तत्त्व सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। उन्हींका हमें उपयोग करना चाहिये। सच पूछिये तो प्रत्येक पशु बढ़िया खादके लिये छोटा-सा जीता-जागता कारखाना है। पूरी कल्पनाके लिये नीचे एक उदाहरण दिया जाता है—

बंगलोरमें 'जील' नामक एक गाय* हो गयी है। उसने १९॥ वर्षकी अपनी जिंदगीमें २६८ टन यानी ५३६ गाड़ी (६०१६९२ रतल) खाद प्रदान की थी। यह खाद उसके अपने ८०० रतल वजनसे ७५२ गुना हो गयी। ७५२ तुला खादमें उसने १५० तुला ठोस पदार्थ (११४,४६५ रतल), दिया था। जिसमें सवा चार तुला नाइट्रोजन (३४३२ रतल), पौने दो तुला (१४४३ रतल) फास्फोरस, पौने पाँच तुला (३७०० रतल) पोटाश और १३२ तुला (१०५६९२ रतल) कैल्शियम कार्बोनेट दिया था। इसी प्रकार भारतके करोड़ों पशु भारतकी खेतीको सफल और सबल बनानेके लिये और रखनेके लिये जो करोड़ों मन खाद देते ही जा रहे हैं, उसका वास्तविक और वैज्ञानिक उपयोग करना हमारा कर्त्तव्य है! इसका उपयोग नीचे लिखी दो रीतियोंसे करनेपर खूब ही लाभ होता है। बड़ोदा राज्यके सरकारी खेती-बारी-विभागकी ओरसे इस पद्धतिकी सिफारिश की जाती है! यही नहीं, बल्कि इसका प्रयोग खेती-प्रचार शाखाके द्वारा किसानोंके आँगनमें या उनके खेतमें करके बताया जाता है तथा प्रयोगक्षेत्र और खेतीशिक्षणकी संस्थाओंमें भी बताया जाता है। इन दो पद्धतियोंका किसान-बैंकके रूपमें परिचय दिया जा सकता है, क्योंकि ये धोखा न देकर असीम लाभ पहुँचाती हैं।

१. मूत्र-मिट्टीका नकद बैंक

वार्षिक आमदनी वीस अरब रुपये

महाभारतमें लिखा है 'लक्ष्मी मूत्रे पुरीषे तथा'। सो ठीक ही है, गौके गोबर-मूत्रमें साक्षात् लक्ष्मी बसती हैं। लक्ष्मी न बसती होतीं तो इस खादसे होनेवाला असीम लाभ कहाँसे दिखायी देता! गायके थनमें सरस्वती और गोबर-मूत्रमें लक्ष्मी बसती हैं, यह बात आलङ्कारिक अर्थमें नहीं, यथार्थ रूपमें ही दिखायी देती है। इस अपव्यय होती हुई गोबर-मूत्ररूपी लक्ष्मीको ठीक तौरपर धरती माताके चरणोंमें रखनेके लिये इन्हें नकद बैंकमें जमा करना चाहिये।

लक्ष्मी और भूमि (धन और खेती Capital and Labcur) में राष्ट्रकी सम्पत्तिरूप विष्णुकी दो धर्म-पत्नियाँ हैं। दक्षिणके मन्दिरोंमें आज भी इनकी मूर्तियाँ दीख पड़ती हैं। गोबर-मूत्ररूपी लक्ष्मी श्रीदेवी और धरतीरूपी (भूदेवी)—इन दो बहनोंका सहयोग होगा, तभी भारतके वैभवरूपी विष्णुभगवान् फिर प्रसन्न होंगे

* इस जील गायने अपनी उम्रमें १५४७७९ रतल दूध, २२४७५ रतल क्रीम, ८०६० रतल मक्खन दिया था।

और हिंदुस्थानकी दरिद्रता—कर्जदारी वगैरह सारी बलायें टल जायँगी।

मूत्र-मिट्टीके नकद बैंककी पद्धति

१. प्रतिपशु ६ फीट लंबाईमें और चार फीट चौड़ाईमें चारसे पाँच इंच मिट्टी खोद निकालो।

२. हो सके तो वहाँ प्रतिदिन, नहीं तो, प्रतिसप्ताह आवश्यकतानुसार नयी मिट्टी डालते रहो, यह मिट्टी पशुके मूत्रको चूस लेगी।

३. गोबर और छाँटी (रद्दी बचे घास-चारे) को कूड़े-कचरेकी पेटी (Compost Bank) में जमा करते जाओ।

४. मूत्र-मिट्टीको वहीं ही रहने दो। पखवाड़ेमें या महीनेमें मिट्टी खोदकर उलट-फेर कर दो और नयी तह जोड़ते रहो।

५. पाँच-छः महीनेमें डेढ़-दो फीट तह हो जाय तो उसे खेतमें नकद रकमके रूपमें जमा करा दो।

२. हिंदुस्थानी किसानका अमानती बैंक

वार्षिक आय बीस अरब रुपये

इस बैंकमें गोबर, घास, पत्ती, कूड़ा-कचरा आदि हर-एक छोटी-बड़ी रकम जमा होती है। यह बैंक अनन्त और अक्षय है। यह बैंक हमेशा चक्रवृद्धि व्याज देता है। इस बैंकका नाम कम्पोस्ट-बैंक (Compost Bank) है।

यह बैंक जोरोंसे चलेगा तो देशके तमाम बैंक जोरोंसे चलेंगे। यह बैंक धरती माताको खादका तैयार थाल भेंट करता है। तृप्त हुई धरती पशु, प्राणी, वनस्पति और मनुष्यके लिये अपने बढ़िया पकवान इसी बैंकमेंसे तैयार करती है। हिंदुस्थानके किसानोंके लिये तो आज यही सच्चा औद्योगिक कारोबार (Industrial Bank) बन सकती है; क्योंकि इसमेंसे प्रतिवर्ष दो अरबकी कूड़े-कचरेकी अमानत लेकर दस अरब रुपयेकी कीमतका तैयार खादरूपी माल बनता है। इसलिये यह अमानती बैंक ही नहीं, बल्कि साथ ही औद्योगिक कारोबार भी है।

इस बैंकमें अमानत कैसे जमा करनी चाहिये

१. किसी भी तरहका कूड़ा-कचरा, घास-पात इकट्ठा करके तीन-चार इंचकी तहके लायक लंबाई-चौड़ाईमें डाल रक्खो।

२. उसके ऊपर गोबर, कीचड़ आदि पानीमें घोलकर डाल दो।

३. थोड़ी पुरानी खाद, राख, फालतू गोबर और सादी मिट्टी यदि मिले तो उसके ऊपर बिछा दो।

४. इस प्रकार रोज-रोजकी तह एक सप्ताहतक एकपर एक लगाकर उसके ऊपर चार इंच मिट्टीकी तहको पानीसे भिगो दो। उसके ऊपर दूसरी चार इंच मिट्टीकी तह डालकर गोबर-पानीसे खूब लीपकर बंद कर दो।

इससे दो-तीन महीनेमें खाद तैयार हो जायगी। दूसरे सप्ताहमें इसी प्रकार गड्ढा बनाकर आगे बढ़ो। प्रत्येक सप्ताह गड्ढेके ऊपर दो-ढाई फीट ऊँची तह लग जायगी। जो पीछे बैठकर बराबर हो जायगी। इसको मिश्रित खादकी निर्वात पद्धति (Anaerobic metbod by Dr. Acharya) कहते हैं। इस मिट्टीकी तहसे मक्खियोंका उपद्रव भी दूर हो जायगा। इसमें डाले हुए अंडेसे कीड़ा बाहर ही नहीं निकल सकता। यह भी एक बड़ा लाभ है। फिर इसमें उथल-पुथल करनेके लिये भी सिर नहीं खपाना पड़ता, अतएव इसको किसान आसानीसे कर सकते हैं।

५. इसको गर्मी, धूप और हवासे बचाना अच्छा है।

६. इसपर चूना बिखेरना, थोड़ा-सा तूतिया डालना और दो प्रतिशत अनुमान रासायनिक खाद भी डाली जाय तो बहुत उत्तम है। अन्तमें मिट्टीसे ढककर उसपर सन, घींचा आदि बो दिया जाय, तो बहुत अच्छा है। (डा० ह०)

यह आश्चर्य है ?

"....गोमांसाहारियोंके स्वार्थके लिये गाय और बैलोंपर आक्रमण किया जाता है। परन्तु एकके स्वार्थके लिये दूसरोंका स्वार्थ क्यों नष्ट किया जाय ? थोड़ेसे गोमांसाहारियोंके लिये गोहत्या जारी रहे और जिनका दूधका स्वार्थ है वे सच्ची चिल्लाहट मचाकर ही रह जायें ? यह आश्चर्य है ?"

—सर जान वुडरफ (कलकत्ता हाईकोर्टके माननीय विचारपति)

गोविन्दकी गायें

(लेखक—पाण्डेय पं० श्रीरामनारायणदत्तजी शास्त्री 'राम')

(१)

सुन्दर वैभव हैं और भूति हैं प्यारी।
सुर-वन्द्य सुरभिकी ये प्रसूति हैं प्यारी॥
इनको पाकर है धन्य विश्व यह सारा,
ये विश्व रूप विभुकी विभूति हैं प्यारी॥

(२)

गौओंकी महिमा कौन भला बतलाये?
जिनके गुण-गौरव वेदोंने भी गाये॥
जिनकी सेवाके हेतु अरे! इस जगमें—
भगवान् स्वयं मानव बन कर थे आये॥

(३)

इनके भीतर धन-धान हमारे सोये।
इनके भीतर अरमान हमारे सोये॥
ये कामधेनु हैं क्षीर-समुद्र धराका,
इनके भीतर भगवान् हमारे सोये॥

(४)

वैभवसे भरतीं जगका कोना-कोना।
होना संभव करती हैं ये अनहोना॥
इनका गोबर-गोमूत्र प्राप्त कर पावन—
पैदा करती यह धरा धूलसे सोना॥

(५)

सस्योंका सुन्दर दृश्य इन्हींके करमें।
यज्ञोंका पूत हविष्य इन्हींके करमें॥
ये करती रहतीं सुधा-दान वसुधाको,
भूतलका भूत-भविष्य इन्हींके करमें॥

(६)

ये दूध दहीसे घीसे लालन करतीं।
ये अन्नदान दे सबका पालन करतीं॥
तन-मनसे कर सहयोग सर्वथा सब दिन—
जग-जीवनके रथका संचालन करतीं॥

(७)

ये पंच-गव्यसे पाप शमन करतीं हैं।
ये पञ्चामृतसे ताप शमन करती हैं॥
ये रोम-रोमसे कर उपकार निरन्तर—
जीवनका सब अभिशाप शमन करती हैं॥

(८)

हारा करतीं ये नहीं, सहारा करतीं।
भव-सागरसे उद्धार हमारा करतीं॥
निज त्याग-तपस्यामय जीवनसे जगका—
ये लोक और परलोक सुधारा करतीं॥

(९)

हलका इनका भारी आभार न होगा।
जगका इनके ऋणसे उद्धार न होगा॥
उपकार किये गोमाताने जो हमपर—
सौ जन्मोंमें उनका प्रतिकार न होगा॥

(१०)

भूखे रह हमें खिलानेवाली गौएँ,
विष पीकर अमृत पिलानेवाली गौएँ;
मिट रहीं हमारी ही आँखोंके आगे,
मरकर भी हमें जिलानेवाली गौएँ॥

(११)

हा ! पौरुष भी भरपूर न हमसे होता।
अत्याचारी मजबूर न हमसे होता॥
हम कायर या निर्जीव कहें अपनेको,
माताका भी दुख दूर न हमसे होता॥

(१२)

रे मानव ! अपनी रक्त-प्यास तू रोके।
मानवताका यह सर्वनाश तू रोके॥
अपराधहीन गोमाताकी छातीपर—
यों दानवताका अट्टहास तू रोके॥

(१३)

तू भिक्षु अकिञ्चन, दाता तेरी गौएँ।
तू शरणागत है, त्राता तेरी गौएँ॥
कर गौओंका मत रक्त-पान रे पामर !
तू पुत्र और ये माता तेरी गौएँ॥

(१४)

कौशिक-मुनिका अभिमान न रहने पाया।
नृप कार्तवीर्यका प्रान न रहने पाया॥
इन गायोंका अपमान बुरा होता है,
रे ! देवराजका मान न रहने पाया॥

(१५)

इनकी आहोंमें अरे ! धधकती ज्वाला।
उच्छ्वासोंमें झंझा प्रचण्ड विकराला॥
इनकी आँखोंका एक बूँद भी पानी—
है अखिल विश्वमें प्रलय मचानेवाला॥

(१६)

इनमें है सत्त्व महान, न ये निर्बल हैं।
इनमें तप-तेज-निधान, न ये निर्बल हैं॥
मत छेड़ इन्हें मत छेड़ इन्हें रे मानव !
इनके बल हैं भगवान्, न ये निर्बल हैं॥

(१७)

जो दीनों असहायोंका संरक्षक है।
जो गोभक्षी दैत्योंका भी भक्षक है॥
जो गिरा नक्र पर चक्र चालसे चलकर,
वह चक्र आज भी गौओंका रक्षक है॥

(१८)

पापाचारी संसार टिका जो अबतक।
अत्याचारी संसार टिका जो अबतक॥
गौओंके ही यह क्षमादानका फल है,
हत्याकारी संसार टिका जो अबतक॥

(१९)

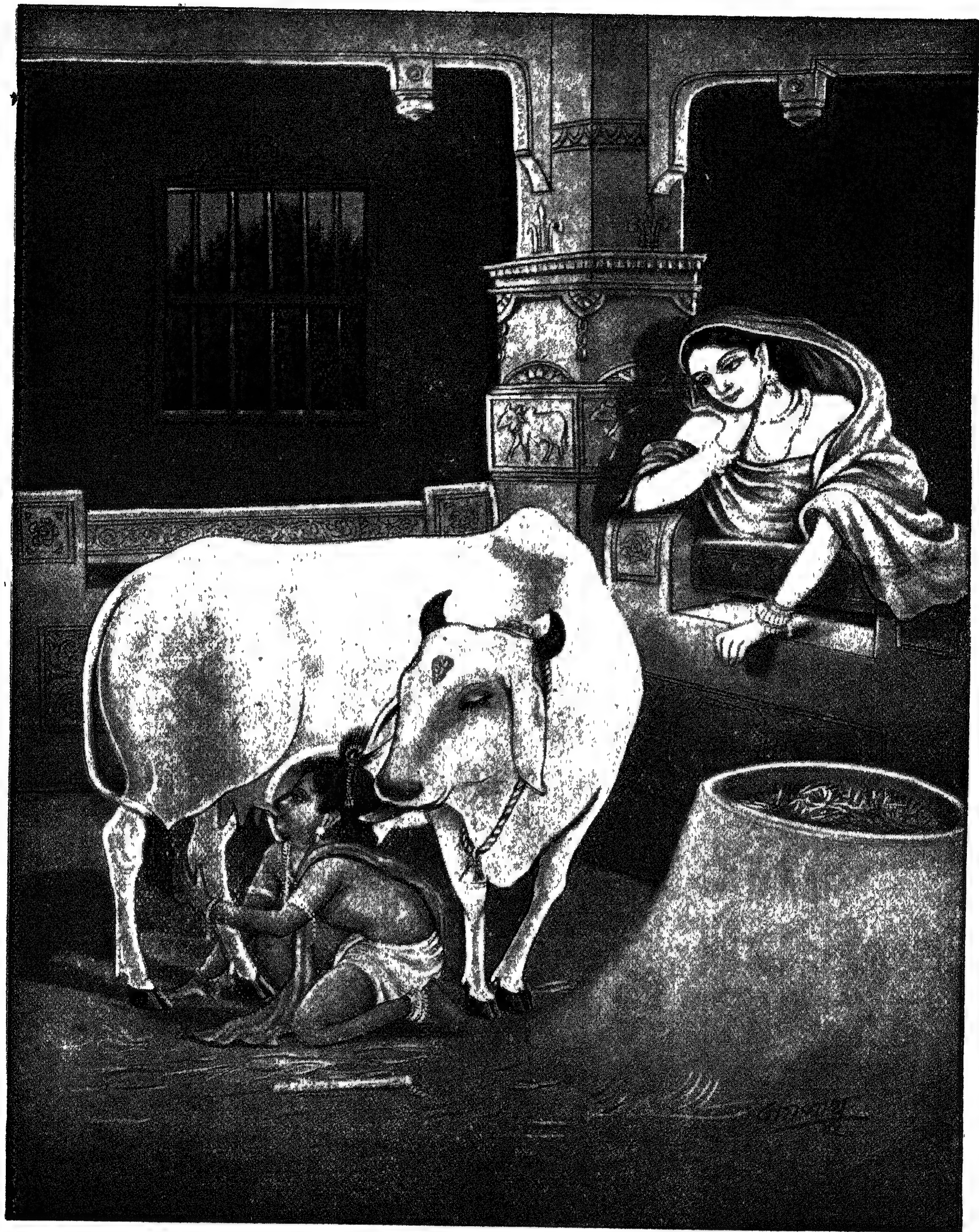
तुम गिरिधारी नँदलाल ! कहाँ हो आओ।
तुम क्रूर कंसके काल ! कहाँ हो आओ॥
ओ द्रुपदसुताकी लाज बचानेवाले !
तुम गौओंके गोपाल ! कहाँ हो आओ॥

(२०)

घट रहीं दिनोंदिन आज तुम्हारी गैयाँ !
कट रहीं दिनोंदिन आज तुम्हारी गैयाँ !!
'तुम कहाँ गये गोविन्द ! बचाओ आकर'
रट रहीं दिनोंदिन आज तुम्हारी गैयाँ !!

दूध और घीकी अवनति हो गयी। उनमें जीवन-तत्त्वों (Vitamins) की कमी आ गयी है। इससे जनताके आरोग्य और कार्यक्षमतामें पर्याप्त क्षति पहुँचेगी।

—कर्नल फ़ारेस्टर, डाइरेक्टर आफ़ हेल्थ, पंजाब



कन्हैयाका गोदुग्ध-प्रेम

खादोंमें पोषण-तत्त्व

(लेखक—श्रीमान् डा० चन्दूलाल सी० शाह, एम्०एस्-सी०, पी-एच्०डी०, ए०आई०सी०, ऐग्रीकल्चरल केमिस्ट, बड़ोदा)

हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकारकी जो खाद काममें लायी जाती हैं, उनमें कौन-कौनसे तत्त्व पाये जाते हैं। किसानोंके लिये उपयोगी होनेके कारण उन्हें यहाँ कोष्ठकमें दिया जाता है।

देशी खाद

नाम	प्रतिशत		
	नाइट्रोजन	फास्फोरिक एसिड	पोटाश
१. गोबर	०. ३२	०. २१	०. १६
२. पशुका मूत्र	०. ८०	०. ०३	०. ९५
३. गोबरकी खाद	०. ७५	०. ८०	१. ००
४. कूड़ा-कचरा मिली खाद	०. ५८	०. ४१	०. १८
५. सफाईके कचरेकी खाद	१. १२	०. ८०	१. ५
६. मल	१. १२	०. ६८	०. ९४
७. बकरीकी लेंड़ी	०. ६५	०. ४६	०. २३
८. बकरीका मूत्र	१. ६८	०. ०३	२. १०
९. मोरीका पानी	०. ०१	...	...
१०. मोरीका कीचड़	०. ७८	०. ३१	०. १२
११. मछलीका चूरा	७. ००	४. ००	१. ००
१२. सूखा खून	१२. ००	...	...
१३. हड्डियोंका चूरा	४. ००	२०. ००	०. २०
१४. हड्डीकी राख	०. ३०	३९. ००	...
१५. घरकी राख	१. ९०	२. ६०	३. ८०
१६. घासकी राख	०. ०५	२. ७०	५. २०
१७. लकड़ीकी राख	०. २०	२. ५०	४. ००
१८. कोयलेकी राख	०. ७३	०. ४५	०. ५३
१९. हरा सन	०. ४६	०. ३२	०. ४१
२०. रेंड़ीकी खली	४. ५०	१. ८०	१. ६०
२१. सीमकी खली	७. ५०	१. ९०	१. १०
२२. तिलकी खली	५. ५०	१. ७५	१. ५०
२३. सरसोंकी खली	५. ००	१. २५	१. ३५
२४. बिनौलेकी खली	५. ००	२. ५०	१. ७५
२५. महुआकी खली	२. ३९	०. ८३	२. ८२
२६. अलसीकी खली	४. ७	१. ७	१. ३
२७. नारियलकी खली	३. ५	१. ५	२. ०
२८. नीमोलीकी खली	५. १	१. ४	१. ०

बिलायती खाद

नाम	प्रतिशत		
	नाइट्रोजन	फास्फोरिक एसिड	पोटाश
१. अमोनियम सल्फट	२०. ६	...	...
२. सोडा नाइट्रेट	१५. ५	...	...
३. पोटाश नाइट्रेट	१३. ६	...	४४. ०
४. केल्शियम साइनेमाइड	१९. ०	...	...
५. सुपर फास्फेट (सिंगल)	...	२०. ०	...
६. ,, ,, (डबल)	...	४०. ०	...
७. इफोस फास्फेट	...	२७. ०	...
८. पोटाश सल्फेट	...	...	४८. ०
९. पोटाश म्युरायेट	...	...	५०. ०
१०. नीसीफोस नं० १	१३. ५	४१. ०	...
११. नीसीफोस नं० २	१७. ५	१७. ५	...
१२. नीसीफोस २३ । १०	१९. २	९. ६	...
१३. अमोफोस ११ । ४६	११. ०	४८. ०	...
१४. अमोफोस २० । २०	१६. ०	२०. ०	...
१५. I. C. I. मिक्सचर (ग्रीन लेबल)	१४. ०	...	...
१६. ,, (रेड लेबल)	१२. ०	...	...
१७. ,, रेड लेबल N. P.	१३. ०	७. ०	...





साँड़का सवाल

भारत ही एक ऐसा अनुपम और अनोखा देश है कि जिसकी संस्कृति और समृद्धि शताब्दियोंसे विदेशियोंको आकर्षित कर रही है। हिंदुस्थानमें क्षात्रबल, हस्तबल (कारीगरी और कामदारी), बुद्धिबल और धनबलका कोई पार नहीं था। आजकी छिन्न-भिन्न और अव्यवस्थित स्थितिमें भी वह संसारके लिये मोहिनी बना हुआ खड़ा है!

यौवनधन, क्षात्रधन, गोधन वगैरह अनेकों प्रकारके धन हिंदुस्थानके भण्डारमें भरे हैं। इनके अपव्ययको यदि रोका जाय और ज्ञान, विज्ञान, विवेक और संयमपूर्वक दूरदर्शितासे इनका उपयोग और विकास किया जाय तो आज जो हिंदुस्थान दुनियामें गरीब-दुखी प्रजाका देश बन गया है, उसके बदले वह श्रीमन्त और सुखी प्रजाका श्रीमन्त और सुखी देश बन जाय।

कृषिप्रधान भारतमें औद्योगिक विकास इतनी दीन स्थितिमें है कि इसके कारण खेतीके ऊपर बोझ बढ़ता ही जा रहा है। फल यह हो रहा है कि खेती कंगाल हालतमें पड़ी है और टूटती जा रही है। इस स्थितिमें तभी सुधार हो सकता है जब गोधनका अपव्यय रोका जाय। गोधनका विकास साँड़के विकासपर अवलम्बित है, इसलिये पहले उसीपर विचार करना है। गायकी अपेक्षा साँड़का महत्त्व सौगुना है। बल्कि आजकी पतितावस्थामें तो हजार या लाखगुना कहिये तो भी अतिशयोक्ति न होगी—ऐसा गोविज्ञान-विशारद एकस्वरसे कह रहे हैं।

महाभारत आदि धर्मग्रन्थोंमें तो साँड़का दान सौ गायके दानके समान श्रेष्ठ और उद्धार करनेवाला बतलाया गया है। आज प्रश्न केवल गायकी रक्षाका ही नहीं, गायके उद्धारका—गायकी सेवाका है। ऐसी स्थितिमें तो वृषभको ही हिंदुस्थानका सच्चा बल समझना चाहिये। इसी नन्दीको हिंदुस्थानके आनन्द-कल्लोलका प्रभवस्थान बनना है, और इसी नन्दीकी पीठपर शिवजीकी—कल्याणकी पुनीत पावन सवारी आर्यावर्त्तके सिरेपर उतरनेवाली है। ये शिवजी साधारण—अकेले शिवजी नहीं होंगे, ये तो साम्बशिव होंगे। शिवजीके साथ भवानी दुर्गा—स्वतन्त्रता देवी भी होंगी। कल्याण और स्वतन्त्रताकी उपासना नन्दी—वृषभके द्वारा—बल और आनन्दके द्वारा ही हमें करनी है।

नन्दीका यह माहात्म्य होनेके कारण ही हमारे यहाँ नीलोत्सर्गके नीलका ब्याहकर गाँवके गोधनके लिये नन्दीका दान करनेकी सुन्दर प्रथा चली आती है। भूखे, भटकू, दुर्बल और लागर साँड़ोंके बदले बलवान्, वीर्यवान्, बढ़िया साँड़ बढ़ें, तभी हिंदुस्थानका इस भारी विनाशसे उद्धार हो सकता है। आइये, हम साँड़के अर्थशास्त्रपर विचार करें।

साँड़का अर्थशास्त्र

यदि हिंदुस्थानमें बैल और गायके बिना चल सकता है, यदि हिंदुस्थान कृष्यन्न और दुग्धान्नको छोड़ दे सकता है, और यदि वह यन्त्रोंसे ही जी सकता है तो यह कहा जा सकेगा कि साँड़के बिना भी उसका काम चल सकेगा! भटकनेवाले, भूखे और निर्बल साँड़ोंसे काम लेनेके कारण ही आज गायोंका ह्रास हो रहा है और बैल निर्बल पैदा हो रहे हैं। साँड़ ही आधा धन—आधा गोधन है (Bull is half the herd), यह बात पूर्णतया सत्य है।

निर्बलके बदले अच्छा साँड़ हो तो वह पूर्वजोंके पूर्वजको तार देता है। अमेरिका वगैरह पश्चिमके देशोंमें लाखोंकी कीमतके साँड़ पशुसृष्टिमें युगपरिवर्तन कर रहे हैं!

मान लीजिये एक साँड़से वार्षिक १५ से १८ बछड़े पैदा होते हैं, जिनमें ७-८ बछड़ियाँ जनमती हैं और उनमेंसे ५ उत्तम गाय निकलती हैं, और उन बहनोंसे प्रतिदिन एक सेर अधिक दूध होता है। २८० दिन दूध दें तो २८०×५ = १४०० सेर = १७५) (दो आने सेरके हिसाबसे) होते हैं।

अच्छे साँड़से गाय-पीछे ३५) वार्षिककी अधिक आमदनी होती है। इस प्रकार छः वर्षमें ६ बियानमें हर एक गाय ३५)×६ = २१०) रुपयेकी अधिक आमदनी देती है। ऐसी ३० गायें ६ बियानमें ६३००) का दूध अधिक देंगी।

इसके अतिरिक्त खराब साँड़की अपेक्षा अच्छे साँड़के बछड़ेकी कीमत ३००) अधिक मिलते हैं यानी छः बर्षमें ६ × ३००) = १८००) रुपये अधिक हुए। इस प्रकार १८००) और ६३००) मिलाकर ८१००) रुपयेका आर्थिक लाभ अच्छे साँड़से हुआ।

ये आँकड़े नागपुर कृषि-कॉलेजके दुग्धालयके हैं। अच्छे साँड़ मिलनेसे कितना लाभ एक ब्रियानमें होता है, यह दिखलाया गया। और साधारण साँड़से पैदा करनेमें कितना अन्तर पड़ता है, यह भी देखिये—

अच्छे साँड़से हुए लाभका जमा-खर्च

जमा	खर्च
८१००) आमनीमें निर्बल साँड़की अपेक्षा अधिक लाभ	५००) साँड़के निर्वाहका अधिक खर्च
	७६००) अच्छे साँड़से लाभ
	८१००)

बढ़िया और घटिया साँड़की तुलना

माता	ब्यानमें दूध सेर	अच्छे साँड़की लड़की (गाय)	दूध	साधारण साड़से पैदा हुई सौतेली बहनें	दूध
चंदी	३३४६	रूमल	३६९५	द्रोपदी	२३८७
रत्ता	३११८	रुखमी	३३४१	सरजी	१५४५
मैना	३०२२	पेठण	३२६३	गीरजी	३१३८
हरणी	२९१५	यमुना	३७९८	बंडी	२९२३
तुलजा	२१९४	चन्द्रभागा	३६५७	भीवरी	२२७७
सक्खू	१२८३	सुभद्रा	१७१६	...	...
गंगा	२६९४	...	...	सरस्वती	२३४२
नर्मदा	२१८७	कीटी	१३१६ (९८ दिन)	त्रिवेणी	१८५१
लक्खी	३८४०	मेरी	४०५०		
सुन्दर	१३७०	इब्लीन	१४४६ (११८ दिन)		
बंडी	२९२३	डोरीस	३७४२		
लंका	१६७६	विक्टोरिया	३८११		

दूसरा उदाहरण—पूसा फार्ममें 'प्रयागी' और 'हिम्मत' नामके दो साँड़ थे। प्रयागीकी ११ लड़कियाँ हुईं, उनमें ९ तो अपनी माताओंसे बढ़ गयीं। 'हिम्मत' कमजोर था, उसकी १० लड़कियोंमें ९ अपनी माताओंसे घट गयीं। प्रयागीका पुत्र ठाकुर तो असाधारण साँड़ निकला और ठाकुरकी पुत्रियोंने तो पहले ही ब्यानमें ५००० रतल दूध दिया। सोचिये, इसका आर्थिक मूल्य कितना अधिक हुआ!

तीसरा उदाहरण—पूना कृषि-कॉलेजके डेयरी-फार्ममें अच्छे साँड़से ११ गायें बरधायी गयीं, दोकी बछड़ियाँ अपनी माताओंसे दूधमें १८५ और ८३० रतल कम हो गयीं और नौ लड़कियाँ अपनी माताओंसे क्रमशः ५, २२३, २३४, ५९३, २०१३, ९६५, ४८००, १३६८ और १४८५ रतल बढ़ गयीं।

चौथा उदाहरण—एक खराब साँड़से १० बछड़ियाँ उत्पन्न हुईं, जिनमें केवल दो ही अपनी माताओंसे ६२ और ४२८ रतल बढ़ीं, और अन्यान्य १६१८, ३०२५, ४५८१, १७९५, १२५३, २१९६ और ३२४८ रतल कम हो गयीं। इसकी कीमतका जरा हिसाब तो लगाइये, कितनी हानि हुई?

अमेरिकामें बढ़िया और घटिया साँड़की उपजमें १६०० डालरका वार्षिक अन्तर देखनेमें आता है। हमें अधिक प्रयोगोंके उदाहरण खोजनेकी ज़रूरत नहीं। यह तो दीपकके समान स्पष्ट है कि साँड़के पीछे लगाया हुआ पैसा और मेहनत कई गुना होकर निकल आता है। यदि देशको जीवित रहना है और पिंजरापोलोंको यशस्वी होना है तो साँड़ पालनेका उत्पादक और उपकारक विभाग सुव्यवस्थित

रीतिसे चलाना चाहिये; क्योंकि साँड़ ही देशका सच्चा धन है, इसका तो विकास होना ही चाहिये ।

लेखकका अपना अनुभव है कि जब वह श्रीकड़ी सर्वविद्यालय हाईस्कूलमें आचार्य था, तब वहाँ इस सुन्दर संस्थाका विभाग एक सुन्दर गोशाला भी थी । वहाँ छारोडी फार्ममेंसे देखनेमें अच्छा न होनेपर भी वैज्ञानिक दृष्टिसे अच्छा आशाप्रद एक साँड़ पहचानका लाभ उठाकर खरीदा गया । इस साँड़के आनेसे पहले गोशालाकी गायें ब्यानमें दो-ढाई-तीन या साढ़े तीन हजार सेर दूध देती थीं, इस अच्छे साँड़के आनेपर ये तीन-साढ़े तीन और पाँच हजार सेरतक चढ़ गयीं ।

पीछे मालूम हुआ कि इस साँड़का बाप जापान गया था, वहाँ वह बढ़िया निकला । इस प्रकार गायके उद्धारमें साँड़ ही पहला और प्रधान साधन है यह समझ लेना चाहिये । राजा, धनी, गोरक्षक और गोपालक इस दिशामें जो कुछ करते हों, उसमें बहुत वेग और लगन बढ़ानेकी ज़रूरत है, तभी सच्ची धनतेरसका उजियाला हो सकेगा । (डा० ह०)



हमारा पिता

... ... वृषभः पिता मे ।
उन्नतस्कन्धः ककुद्मानृतुलाङ्गूलभूषणः ।
महाकटितटस्कन्धो वैदूर्यमणिलोचनः ॥
प्रवालगर्भश्रृङ्गाग्रः सुदीर्घश्रृतुवालधिः ।
नवाष्टदशसंख्यैस्तु तीक्ष्णाग्रैर्दशनैः शुभैः ॥
पृथुकर्णो महास्कन्धः सूक्ष्मरोमचयो भवेत् ।
भूमौ कर्षति लाङ्गूलं पुनश्च स्थूलवालधिः ॥

आज हम इस पिताके बिना अनाथ-से हैं । हमारे पशुधनकी इस अवनत अवस्थाका ५० प्रतिशत कारण वृषभ (नन्दी) का अभाव, २० प्रतिशत भरपेट हरी-घास तथा चारेका अभाव, ५ प्रतिशत उचित देख-भालका अभाव, ५ प्रतिशत निकम्मे पशुओंकी भरती और २० प्रतिशत विज्ञानका अभाव है ।

नन्दीके बिना नन्दिनी कहाँ और नन्दी बिना शिव भी कहाँ ! हमारे राष्ट्रके शिव—कल्याण—का वाहन नन्दी आज है कहाँ, जिससे हमारा शिव हो सके ? और जब नन्दी नहीं तो नन्द—आनन्द—भी कहाँ ?

माता आधा कुटुम्ब, शिक्षक आधी पाठशाला, नेता आधा देश, नन्दी आधा वृन्द (पशुसृष्टि) तथा निष्ठा आधी सफलता है । यदि हम जीवनमें ये बातें सीख लें तो सफलता और समृद्धि हमारे चरणोंमें लोटने लगे ।

युवानमिन्द्रियोपेतं शतेन सहयूथपम् ।
गवेन्द्रं ब्राह्मणेन्द्राय भूरिश्रृङ्गमलङ्कृतम् ॥

सौ-सौ गायोंके वृन्दका वीर्यदाता यूथपति, युवा तथा इन्द्रियोपेत (महान् वीर्यशक्तिसम्पन्न—Verite) साँड़को 'गवेन्द्र' पदसे घोषित किया है । ऐसा गवेन्द्र देना किसे चाहिये ? जैसे-तैसे ब्राह्मणको नहीं वरं 'ब्राह्मणेन्द्र'को, जो महान् गोत्रप्रवर्तक बन सके । ऐसे वृषभके दान—नीलोत्सर्गसे सहस्रों पितरोंका तर्पण (संतोष) होता है । हो क्यों नहीं ? हजारों पितरोंकी मनोकामना अपनी अगली पीढ़ियोंके लिये, अपनी भावी संततिके लिये इसके अतिरिक्त और क्या हो सकती है कि वे उनके किये हुएको निबाहें और उनके द्वारा आरम्भ किये हुए अधूरे कामको पूरा करें ।

रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्राण जाय बरु बचन न जाई ॥

—के अनुसार इक्ष्वाकु, हरिश्चन्द्र, रघु, दिलीप, दशरथ, राम, लव-कुश आदिने अनेकों पीढ़ियोंतक अपने कुल-पिताकी पशूद्धारद्वारा जनोद्धारकी प्रतिज्ञा, प्रतिष्ठा और प्रणालीको कैसे प्राणपणसे निबाहा और बढ़ाया ।

बाणभट्टकी कादम्बरीका उत्तरार्ध उसके पुत्रने लिखकर पूरा किया, कुतुबुद्दीनद्वारा आरम्भ की हुई कुतुब-मीनारको उसके दामाद अल्तमशने पूरा किया । यही तो अति प्राचीन कालसे चली आती हुई आर्य-रीति, नीति और प्रीति है । जबतक जीवनकी यह वृत्ति, कृति तथा स्थिति अरहटकी चरखीके समान निरन्तर चलती रही, तबतक जीवन-कूपमेंसे आर्य-संस्कृतिका पुण्यसलिल निकलता रहा और भारतवर्ष प्रकृतिका भव्य और प्रभुका दिव्य कुञ्ज बना रहा । किन्तु डेढ़-दो-सौ वर्षोंसे इस दशामें बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ, और कालवेगके कारण हम बहुत गहरे गर्तमें जोरोंसे गिर पड़े । अब उत्थानकी बारी आयी है और उठेंगे ।

हमारे देशमें साँड़ नहीं हैं—यह तो हम नहीं कह सकते; बल्कि जितने हमें चाहिये उससे सौ या हजार गुना हैं, किन्तु

उनमें ऐसे साँड़ बहुत थोड़े हैं जिन्हें हम वास्तविक साँड़ कह सकें। उनमेंसे अधिकांश नपुंसक, निर्वीर्य और भटकू जन्तु हैं। 'गवेन्द्र' कहे जानेवाले तो इने-गिने ही हैं। आजकल-का एक गवेन्द्र—सर्वोत्तम साँड़—सौ गायोंका यूथपति नहीं, वरं ५० ही गायोंका हो सकता है। तो भी न्यायानुसार ५० गायोंके समान ही उस अकेलेका पालन-पोषण होना चाहिये और उसी रूपमें उसे भोजन-पानी भी मिलना चाहिये। किन्तु खेदकी बात है कि ५० गायोंके समान तो क्या, उसे सामान्य एक पशुके जितना भी नहीं मिलता। हमारे पूर्वजोंकी सैकड़ों पीढ़ियोंकी साधनापर आज पानी फिर गया! लेखके आरम्भ-में ही बताया जा चुका है कि यदि हम उत्तम साँड़ तैयार करके समाजको नीलोत्सर्ग करें तो हमारे पूर्वज और पितर प्रसन्न एवं संतृप्त होंगे—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। यह तो सीधी-सी बात है कि यदि पिताके कार्यको पुत्र पूरा करे या आगे बढ़ाये तो पिता स्वर्ग या पितृलोकमें प्रसन्न होंगे तथा पुष्प बरसायेंगे। किन्तु यदि पुत्र उसके कियेपर पानी फेर दे तो वे अप्रसन्न होंगे और लंबी साँस छोड़ेंगे। इसमें कौन-सी तर्कातीत बात है? वृषभ आधा वृन्द है, तभी तो शास्त्रकारों-ने एक नन्दीके दानको दस या सौ गायोंके दानके बराबर बताया है।

युगधर्म तो पुकार रहा है कि इस समय गायका दान बंद करके बढ़िया-से-बढ़िया साँड़का दान करो, जिससे पचास-गुना, सौगुना अधिक और शीघ्र पुनरुत्थान हो। इसी प्रकार पितरोंकी पुनरुत्थान-वासना हम पूरी कर सकते हैं। राष्ट्रपिता-का सच्चा श्राद्ध और तर्पण यही है। जिन जातियोंके नर धीर, बीर और शूर होते हैं, उन जातियोंकी नारियोंमें रूप-गुणकी कोई कमी नहीं रहती—यह प्रजनन-शास्त्रका इतिहासप्रसिद्ध सत्य है। जब हमारे यूथपतियोंको हृष्ट-पुष्ट बनाया जायगा, तभी गायोंमें अधिक दूध देनेकी शक्ति, स्नेह और लावण्य उत्पन्न होगा। इसका सुन्दर फल स्थिर, धीर और रुचिर रूपमें उनकी सन्ततिमें दिखायी पड़ेगा।

पश्चिम आज लाख-दो लाख रुपयेतककी कीमतवाले साँड़ तैयार कर रहा है। पश्चिमकी दुग्धोन्नतिकी आधार-शिला है साँड़-विकास। वेदके गोसूक्तों, गृह्यसूत्रोंसे और कौटिल्यके गोऽध्यक्ष प्रकरण आदि साधनोंसे केवल गो-माहात्म्य ही नहीं, वरं गो-विकास-विज्ञान ही दर्शित होता है, जो पश्चिम-के विज्ञानसे एकदम मिलता-जुलता है। इसके तुलनात्मक विवेचनके लिये एक पृथक् लेखकी आवश्यकता है। यहाँ तो हमें केवल यह देखना है कि यदि गो-प्रश्न भारतका प्राण-प्रश्न है तो साँड़-प्रश्न उसका समाधान है। हार्द-का-हार्द और सार-का-सार वृषभोत्सर्ग—वृषभोद्धार है।

पशुप्रश्नका बड़ा महत्त्व है। इसमें गोपति (राष्ट्रपिता) गोपेन्द्र वृषभ सर्वेसर्वा है। आज तो यही हमारा भाग्य-विधाता है। वृषभ-माहात्म्य जाने बिना गो-पूजा निरा पागलपन है, बालूमें विशाल स्वाराज्य-भुवन बनानेके समान है। किन्तु वृषभ-पूजासे पर्वतपर सुदृढ़ स्वाराज्य-भुवन बन सकता है। वृषभोद्धारसे गो-उद्धार होगा। पर बिना वृषभके गो-उद्धार अथवा कोई भी उद्धार न होगा। (डा० ह०)

गोवध बंद करना होगा

"चौबीस करोड़ आदमी गौको पवित्रात्मा मानते हैं। यूरोपियनोंके दिमागमें चाहे यह बात न उतरे, लेकिन अंग्रेज इस भावनाके अस्तित्व और गहराईकी उपेक्षा नहीं कर सकते। गुरुश्रेष्ठ लोकमान्य तिलककी यही भावना थी कि जिसके कारण वे अपने मुसलमान भाइयोंके कोपभाजन होनेको भी तैयार थे। उन्होंने कहा था—'मुझे चाहे मार डालो, पर गौपर हाथ न उठाओ।' यही बात दिल्लीमें कांग्रेसके सभापतिकी हैसियतसे पण्डित मालवीयजीने कही थी। हिंदू-मुसल्मानोंको एक हो जानेके लिये कहते हुए उन्होंने ये मर्मस्पर्शी शब्द कहे थे—'मुझे ले लो, अगर चाहो तो मेरे प्राण ले लो, पर गायको छोड़ दो। उसने आपके एक बालकको भी धक्का नहीं पहुँचाया है।' अधिकांश हिंदुस्थानियोंका जब यह भाव है, तब हिंदुस्थानमें एक गौका भी वध करना कैसे उचित हो सकता है? लेकिन अगर सरकार गोवध बंद न करे तो हमको करना होगा।"

—बम्बईमें मि० बैपूटिष्टका भाषण

मासे अलग पाले हुए बच्चे

(लेखक—श्रीइन्द्रपालसिंहजी, रिसर्च स्कालर—इम्पीरियल डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलौर)

प्रायः गोपालकोंका मत है कि बच्चेको मासे अलग नहीं रख सकते । यदि रक्खें तो उसका स्वास्थ्य और बल माके नीचे दूध पीनेवाले बच्चोंके समान नहीं हो सकता । माके मर जानेपर तो बच्चोंके जीवनकी आशा लोग बिल्कुल ही छोड़ बैठते हैं—वे इस बातका विचार नहीं रखते कि माके न होते हुए भी बच्चा सफलतापूर्वक पाला जा सकता है । विज्ञानकी उन्नति इस ओर भी दृष्टि पहुँचा चुकी है और इस बातको प्रायोगिक विधियोंसे सिद्ध कर दिया है कि यदि बच्चोंका पूरा-पूरा ध्यान रक्खा जाय तो मासे अलग होनेपर भी वे पाले जा सकते हैं; और उनके स्वास्थ्य आदि किसी भी बातपर किसी प्रकारका बुरा प्रभाव नहीं पड़ता । भारतवर्षमें भी बच्चे इस रीतिसे कई स्थानोंमें पाले जाते हैं तथा अन्य देशोंमें जिनमेंसे अमेरिका, इंग्लैंड तथा अन्य यूरोपीय देश प्रमुख हैं, यह तरीका बहुत दिनोंसे चालू है ।

प्रायोगिक पशुओंमें, जिनके दूधकी नाप-तोलका पूरा ब्यौरा रक्खा जाता है, बच्चोंको अलग रखना बहुत ही आवश्यक हो जाता है । इस प्रकार गायके दूध देनेकी शक्तिका अंदाजा भी लग जाता है, तथा बच्चोंकी देख-रेख भी व्यक्तिगतरूपसे अच्छी हो सकती है । बच्चोंके ऊपर किये हुए व्ययका अनुमान भी इस प्रकार ठीक रूपसे हो सकता है और हमें आसानीसे मालूम हो जाता है कि वे कहाँतक आर्थिक रूपसे लाभदायक होते हैं । उनके पालनेमें कुछ आवश्यक बातोंपर यहाँ ध्यान दिया गया है ।

गायको बच्चा देनेसे लगभग एक माह पहलेसे अलग कोठरी या सालमें रक्खा जाता है जहाँपर उसका सब प्रकारसे चारे-पानी आदिके साथ-साथ, और बातोंका भी ध्यान रक्खा जाता है । निरीक्षणके लिये एक आदमी नियुक्त रहता है । बच्चा पैदा होनेसे पहले खाने आदिका विशेष ध्यान रक्खा जाता है । बच्चा देनेसे पहले गायका मुँह एक बोरेके अंदर बंद कर दिया जाता है, जिससे बच्चेपर उसकी दृष्टि ही न पड़े । बोरेको हटानेसे पहले बच्चेको अलग कर दिया जाता है । ऐसा करनेसे गाय दूध आदि दुहनेमें कोई कष्ट नहीं देती और न बच्चेकी ही याद करती है ।

अलग ले जाकर बच्चेको अच्छी जगहपर किसी टाट अथवा भूसेके ऊपर रख दिया जाता है । उसके मुँह तथा नथुनोंको तुरंत साफ करके शरीरको सूखे कपड़े या टाटसे मल दिया जाता है, जिससे वह सूखकर साफ हो जाय । नाभि, जो कि बहुधा बढ़ी हुई होती है, आधी इंच छोड़कर काट दी जाती है । काटे हुए स्थानपर तथा आस-पास ४-५ दिनतक टिंक्चर आयोडीन (Tinctwre Iodine) का लेप करना जरूरी है, नहीं तो, उसके पक जानेका भय रहता है ।

नये बच्चेको पानीसे नहीं धोते । जिस प्रकार उसकी मा उसे चाटकर सुखा देती है, उसी प्रकार सूखी चीजसे मलकर सुखा देते हैं । एक घंटेके बाद जब बच्चा आसानीसे चलने-फिरने लायक हो जाता है तो उसे ½ पौंड कीला (Colostrum) पिला देते हैं । पेटके अंदरकी सफाई करनेके लिये बच्चेको उसकी मा या किसी भी अन्य गायका कीला पिलाना आवश्यक है । इसके अभावमें एक औंस अलसीका तेल रात्रिको ४-५ दिनतक दिया जाता है । ऐसे अवसरपर किसी भी गायका साधारण दूध दिया जा सकता है ।

जन्मके समय सब बच्चोंका वजन लिया जाता है और उनके खानेका अनुमान उसीके अनुसार किया जाता है । वजनके अनुसार नीचे दी हुई दूधकी मात्रा ठीक रहती है—

शरीरका वजन	दिये जानेवाले दूधकी मात्रा
४० पौंडसे कम	५ से ५॥ पौंड
४० से ४५ पौंड	६ से ६॥ पौंड
४५ से ५० पौंड	६॥ से ७ पौंड
५० से ५५ पौंड	७ से ७॥ पौंड
५५ से अधिक	८ पौंड

जन्मके समय बच्चोंका वजन प्रायः इतना ही होता है । किसी एक गायका दूध पिलानेके स्थानमें सब गायोंके मिले हुए दूधमेंसे लेकर पिलाना ठीक रहता है । पिलानेके समय दूधका तापक्रम शरीरके तापक्रमके समान ही रक्खा जाता

है। माँसे अलग पाले जानेवाले बच्चोंमें इस बातका ध्यान रखना आवश्यक है अन्यथा अनेक रोगोंके उठ खड़े होनेकी सम्भावना रहती है। आयुके साथ-साथ दूधकी मात्रा भी प्रति सप्ताह बढ़ायी जाती है। बच्चेके स्वास्थ्य, पाचन-शक्ति आदिको ध्यानमें रखते हुए हर हफ्ते आधा पौंड दूध बढ़ा दिया जाता है। आरम्भमें प्रतिदिन तीन बार दूध दिया जाता है। समय सुविधाके अनुसार नियुक्त कर दिया जाता है और प्रतिदिन उसी समयपर पिलाना जरूरी समझा जाता है। अधिकतर ७॥ बजे सुबह, २॥ बजे दोपहर तथा ८॥ बजे सायंकालका क्रम एक मासतक ठीक रहता है। निर्बल तथा अस्वस्थ बच्चोंके लिये यह क्रम एक महीनेकी जगह डेढ़ महीनेतक रक्खा जाता है। उसके बाद दिनमें दो बार देना पर्याप्त होता है। दूधकी पूरी मात्रा जो पहले तीन बारमें पिलायी जाती थी, अब केवल दो बारमें दे दी जाती है।

छः सप्ताहकी आयुके बाद कुछ सूखा और हरा चारा भी दिया जाने लगता है। दस मासतककी अवस्थाके ४० बच्चोंके लिये ४ मन हरा और १० या १५ मन सूखा चारा काफी होता है। बच्चोंको फर्शमें लगे हुए छल्लोंमें अलग-अलग बाँध देनेसे भूलमें दो बार खिलानेका डर नहीं रहता। इसमें एक बच्चेसे दूसरे बच्चेकी दूरी साढ़े सात फीट रक्खी जाती है, जिससे वे आपसमें एक दूसरेके शरीरको चाटनेका हानिकारक प्रयत्न न कर सकें। ऐसा करनेसे उनके मुँहके अंदर शरीरके बाल आदि चले जाते हैं, जो अन्तमें कष्ट पहुँचाते हैं। बच्चोंका खिलाना-पिलाना अलग-अलग किया जाता है। उनके शरीरके खुजलाने आदिका व्यक्तिगत ध्यान रखना ही उनके भावी स्वास्थ्यकी जड़को जमाना है। गोशालाका भविष्य बहुत दूरतक इसी बातपर निर्भर है।

दूध तथा चारेके साथ-साथ पाव ¼ औंस नमक भी प्रत्येक बच्चेको दिया जाता है। दानेके साथ-साथ एक औंस अलसीका दाना भी दिया जाता है। छोटे बच्चेको, जो अनाज आदि भलीप्रकार नहीं खाते, अलसीका दलिया दिया जाता है। आयुके अनुसार नीचे लिखे क्रमके अनुसार दाना आदिकी मात्रा बढ़ायी जाती है—

आयु (सप्ताह)	साधारण दूध (पौंड)	मक्खन निकाला हुआ दूध (पौंड)	दाना (पौंड)	नमक (औंस)
१	८	...	...	...
३	१०	...	...	...
५	१२	...	आधा	१
८	१२	...	आधा	१
९	८	२	१	१
११	६	४	१	१
१२	४	४	१॥	१
१७	२	६	२	१
१८	२	४	३	१
२०	२	४	३	१
२१	...	४	३	१
२४	...	४	३	१

बच्चोंको उम्रके अनुसार दो जगह बाँट दिया जाता है। (१) दस सप्ताहसे कम उम्रके, (२) दस सप्ताहसे दस मासतककी उम्रवाले। ये दोनों दो स्थानोंमें अलग-अलग रक्खे जाते हैं और खिलाने-पिलानेका प्रबन्ध भी अलग-अलग किया जाता है।

बच्चोंके पालन-पोषणको पूर्णतया सफल बनानेके लिये उनके स्वभाव, शरीर, वजन और पाचनशक्ति आदिका व्यक्तिगत ध्यान रखना आवश्यक है। निरीक्षकको उसीके अनुसार उनके चारे आदिकी मात्रा निर्णय करनी चाहिये। ध्यानपूर्वक प्रबन्ध रखना कष्टसाध्य एवं कठिन अवश्य है। परन्तु अच्छी जातिके बहुमूल्य बच्चोंके लिये यह अधिक नहीं है। बच्चोंके जीवनमें तीन मासकी आयुतक विशेष ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

सींग निकालनेकी प्रथा

आजकल दुग्धालयों (डेयरी-फार्मों) में बछड़ोंके सींग निकाल देनेकी प्रथा हो गयी है। जन्मके एक सप्ताह बाद बच्चेकी सींग निकलनेके स्थानपर बाल आदि काटनेके उपरान्त कास्टिक-पोटाशकी बत्तीको पानीसे गीला करके घिसा जाता है। इसमें अधिक समय नहीं लगता और शीघ्र ही स्थान लाल हो जाता है। अधिक देरतक पोटाश रगड़नेसे खून निकलनेका भय रहता है। सींगके सहारेके स्थानपर पोटाशके हानिकारक प्रभावसे बचानेके लिये

वैसलीन लगा दिया जाता है। लगभग चार दिनमें उस स्थान-पर खुरंट पड़ जाता है, जो बादमें स्वयं ही गिर जाता है। ऐसा करनेसे सींगकी बढ़वार बिल्कुल रुक जाती है और जानवर मुंडा हो जाता है। ठीक समयपर सींग निकालनेसे अधिक कष्ट नहीं होता तथा आपसमें लड़ जानेसे चोट पहुँचनेका भय सदाके लिये चला जाता है।

नीचे लिखी बातोंका बच्चोंके पालनमें विशेष ध्यान रखना चाहिये—

१. खिलाने-पिलानेके पात्रों, बाल्टियों और दूसरे बर्तनोंकी सफाईका खूब ध्यान रखना चाहिये।

२. ताजे दूधको शरीरके तापक्रम तक गरम करना चाहिये। ठंडा दूध हानिकारक होता है। दूध पिलानेके पश्चात् हरेक बच्चेका मुँह साफ कर देना चाहिये और अन्तमें थोड़ा-सा नमक मुँहमें दे देना चाहिये जिससे जमीनको या एक दूसरेको न चाटें।

३. दूध लोहेकी कढ़ाइयोंमें, जो तिपाइयोंपर रक्खी जाती हैं, दिया जाता है। तीन महीनेकी आयुतक दूध अँगुलीसे पिलाया जाता है जिससे नकार आदि जानेका भय नहीं रहता। उसके बाद वे स्वयं पीने लगते हैं।

४. बच्चोंके चाटनेके लिये बाड़ेमें नमकके बड़े-बड़े ढेले रख देने चाहिये।

५. ठंडके दिनोंमें कंबल या टाटकी झूलसे उनकी रक्षा करना जरूरी है।

६. दिनमें दो बार ब्रुश या खुरहरेसे उनको खुजलाना चाहिये। खुले मैदानमें ले जाकर व्यायामके तौरपर उन्हें दौड़ाना चाहिये।

७. उनके बाँधनेके स्थानकी सफाई प्रतिदिन नियमसे होनी चाहिये।

८. रहनेका स्थान खुली हवामें होना चाहिये और जहाँतक हो सके, उसे सूखा रहना चाहिये। धूप और वर्षा आदिसे बचनेके लिये थोड़ा स्थान ढका हुआ भी होना चाहिये।

९. ढाई मासकी आयुतक बच्चोंको मुछीका (muzzle) लगाकर रखना चाहिये, जिससे उन्हें दीवाल आदिपरसे मिट्टी आदिके चाटनेकी बुरी आदत न पड़ सके।

इस प्रकार पाले हुए बछड़े सुन्दर शरीर और स्वास्थ्य-वाले होकर अपनी माके नीचे दूध पीनेवाले बच्चोंसे अच्छे सिद्ध होते हैं। इस तरह नियमपूर्वक बच्चोंका पालन बड़ी-बड़ी गोशालाओं तथा डेयरियोंमें भलीप्रकारसे हो सकता है।

कृत्रिम सन्तति-उत्पादनकी सफल वैज्ञानिक पद्धति

(लेखक—एक विज्ञानका विद्यार्थी)

पश्चिमके रूस, जर्मनी, हालैंड, डेन्मार्क और अमेरिका आदि देशोंमें गौओंके कृत्रिम सन्तति-उत्पादनकी प्रणालीसे आजकल काम लिया जाता है। कहते हैं कि इस पद्धतिमें खर्च कम पड़ता है और लाभ बहुत होता है। इंग्लैंडमें सहकारी फार्म इस कामको करती हैं। इससे तंदुरुस्त, बलवान् और जातिवंत साँड़के एक ही समयके सफल शुक्रसे एक साथ अनेकों गायोंको गाभिन किया जा सकता है। पहले रूसमें इसकी शुरुआत हुई थी और इससे वहाँ थोड़े ही समयमें पशुधनकी बड़ी उन्नति हो गयी।

महाराष्ट्रके रसायन-संशोधक प्रो० मुले, एम्० एस्-सी० महोदयके कथनानुसार भारतमें भी इसका प्रयोग आरम्भ हो गया है। कहा जाता है कि एक सुदृढ़, उन्मत्त और उत्तम साँड़के द्वारा एक ही वर्षमें १५०० उत्तम बछड़े उत्पन्न किये जा सकते हैं। गाय-साँड़के एक बारके संयोगसे एक ही गाय गाभिन होती है, परन्तु इस पद्धतिसे कम-से-कम पचास गायोंको गाभिन किया जाता है। केम्ब्रिजकी गो-संवर्धन-संस्थाके पास एक उत्तम जातिका साँड़ है। उसके रहने, खिलाने-पिलाने और सुलानेकी बहुत सुन्दर व्यवस्था है। इस साँड़के शुक्रद्वारा इस वैज्ञानिक प्रणालीसे आसपासके किसानोंकी गायें निःशुल्क गाभिन बनायी जाती हैं। सिर्फ बारह आना वार्षिक देकर संस्थाका सदस्य बनना पड़ता है। इस संस्थाके संचालक श्रीजोसेफ एड्वर्डज् नामक एक किसान सज्जन हैं, ये स्वयं शोधक भी हैं।

इस कार्यके लिये पाले जानेवाले साँड़के अण्डकोषमेंसे पिचकारीके द्वारा प्रति सप्ताह एक नियत दिनको शुक्र खींचकर निकाला जाता है। शुक्र सफल और नीरोग है या नहीं, इस बातकी सूक्ष्मदर्शक-यन्त्रद्वारा जाँच करनेके बाद उसका उपयोग किया जाता है। ऐसे नीरोग साँड़का एक

सूक्ष्म शुक्रविन्दुतक व्यर्थ नहीं जाने पाता । इस प्रकार निकाले हुए शुक्रको ठंडा करके उसमें अंडेका पीला रस मिलाकर पतला बनाया जाता है और उसे वायुरहित नलीमें भरकर बरफमें रख दिया जाता है । इस शीतल परिस्थितिमें वह वीर्य चार दिनोंतक सन्तति-उत्पादनमें समर्थ और उत्तम फलप्रद रह सकता है । आवश्यकता होनेपर अमेरिका आदि दूर देशोंमें भी भेजा जाता है । इंग्लैंडके गाँवोंमें आसपास बीस मीलतक इस ठंडी नलीको सिखाये हुए कबूतरोंके गलेमें बाँधकर तुरंत पहुँचा दिया जाता है। इस शुक्रको उचित मात्रामें ऋतुमती उत्तम नीरोग गायकी जननेन्द्रियके द्वारा पिचकारीसे उसके गर्भाशयमें पहुँचा दिया जाता है और वह गाभिन हो जाती है ।

इस पद्धतिके समर्थक सज्जनोंका यह कहना है कि इससे उत्तम पशुओंकी संख्या बहुत जल्दी बढ़ायी जा सकती है। उनकी शक्ति और कीमत बढ़ती है । दूध भी बढ़ता है और फलस्वरूप जनताके स्वास्थ्य और जीवनको भी बहुत अधिक लाभ होता है । गौएँ दीर्घ कालतक दूध देनेवाली बनती हैं, उनके बछड़े और बछड़ी सब अच्छी जातिके होते हैं। किसानों और गोशालाओंकी बार-बार उत्तम साँड़ खोजनेकी कठिनाई दूर हो जाती है और नस्लमें संकरता भी नहीं पैदा होती, क्योंकि इस बातका ख्याल पहले ही रक्खा जा सकता है । भारतमें भी इसका सफल प्रयोग होना चाहिये ।

विज्ञानके अप्राकृतिक प्रयोग

वर्तमान साहित्यके पाठक इस बातसे अपरिचित नहीं होंगे कि यूरोपमें कई जगह ऐसे प्रयोग शुरू हुए हैं कि पुरुषके वीर्यको और स्त्रीके रजको उचित मात्रामें ट्यूबमें रक्खा जाय और कृत्रिम साधनोंसे उसे गर्भस्थ बालककी भाँति बढ़ाया जाय । अभी इन प्रयोगोंमें पूरी सफलता तो नहीं मिली है, परन्तु प्रयत्न चालू है । (अवश्य ही गत महायुद्धके कारण पाश्चात्य वैज्ञानिकोंके मस्तिष्क जन-ध्वंसक प्रयोगोंके अन्वेषणमें ही लग गये थे और इससे इस प्रकारके शोधोंके कार्यमें कुछ शिथिलता भी आ गयी थी ।) उनका कहना है कि इससे स्त्रीको न तो गर्भ-धारणका लंबा कष्ट भोगना पड़ेगा और न प्रसवकी पीड़ा ही सहन करनी पड़ेगी । प्रसवका झंझट न रहनेसे प्रसूतिसम्बन्धी रोगोंकी तो कोई आशङ्का ही न रहेगी । रही स्त्री-पुरुषके स्वाभाविक विषय-सुखकी बात, सो कृत्रिम गर्भनिरोधी यन्त्रोंके उपयोगसे उसमें कोई आपत्ति नहीं आवेगी । बल्कि आगे चलकर तो विवाहका झंझट और उत्तरदायित्व भी दूर हो सकता है । ऐसे लोगोंका यह भी कथन है कि इस प्रकार जो सन्तान होगी, उनके पालन-पोषणका दायित्व सरकारपर रहेगा, इससे माता-पिताकी हैसियतसे सन्तानके लालन-पालनकी और पुत्र-पौत्रकी हैसियतसे माता-पिताके भरण-पोषण और सेवा-शुश्रूषाकी कोई जिम्मेवारी नहीं रहेगी । जीवन स्वतन्त्र और स्वेच्छाचालित बन जायगा । यह उन लोगोंके कथनका सार है, जो सारे दायित्वसे छूटकर विषयानन्दका उपभोग करना चाहते हैं !

पर दीर्घदृष्टिसे विचार करनेपर पता लगता है कि ये विचार सर्वथा भ्रामक और अदूरदर्शितापूर्ण हैं और इन विचारोंके अनुसार क्रिया होनेपर मनुष्य दायित्वज्ञानशून्य, सहानुभूतिरहित एक असहाय प्राणी बन जायगा और क्रमशः उसका मनुष्यत्व ही मर जायगा । स्त्रियोंका मातृत्व, माता-पिताका अपत्यस्नेह, पुत्र-पौत्रोंकी मातृ-पितृ-भक्ति और पति-पत्नीका हृदयगत प्रेम पारस्परिक सहृदयता, सेवा और सहानुभूति पैदा करके सभीको कठिन समयमें सहायता पहुँचाता है, जीवनमें सरसता पैदा करता है और कर्तव्य-बोधसे उनके मनुष्यत्वको मरने नहीं देता । पर जबतक घोर विषयानन्द ही जीवनका लक्ष्य है और उसकी पूर्तिके लिये विज्ञानकी सहायता प्राप्त है तबतक मनुष्यमें ऐसी पतनोन्मुखी और पतनके गहरे गर्त्तमें गिरानेवाली निरङ्कुश वासनाएँ जागती ही रहेंगी ।

पशुओंमें कृत्रिम सन्तति-उत्पादन

मनुष्योंकी तरहसे पशुओंमें भी अप्राकृत प्रयोग शुरू हुए हैं । गाय-साँड़के संयोग बिना बछड़े उत्पन्न करनेकी पद्धति इसका नमूना है । इससे अवश्य ही बहुत-से साँड़ोंके पालनके बिना ही सन्तति-उत्पादनका कार्य हो जा सकता है और ऊपरसे देखनेमें एक बार लाभ भी दीख सकता है; परन्तु नैसर्गिक प्रक्रियाके स्थानपर इस कृत्रिम प्रक्रियाका प्रचलन होनेपर प्राकृत-नियमानुसार आगे चलकर इसका बड़ा बुरा परिणाम होगा । पशुओंकी स्वाभाविक संयोग-लालसा नष्ट हो जायगी और वे सन्तानोत्पादनके सर्वथा अनुपयुक्त हो जायँगे । इस बातपर अभी इन वैज्ञानिकोंका ध्यान नहीं

गया है। आशा है कि वे आपात-लाभके साथ ही भविष्यकी इस भीषण बुराईपर भी ध्यान देंगे।

गौसे अलग बछड़ेका पालन

यहाँ पाश्चात्त्य ढंगकी कई गोशालाओं (डेयरी फार्मों) में गायोंसे अलग रखकर बछड़ोंके लालन-पालनकी व्यवस्था है और उसमें उन्हें काफी सफलता भी मिली है। इससे आर्थिक दृष्टिकोणसे वे गाय और बछड़ेकी आर्थिक उत्पादकताका ठीक-ठीक हिसाब रख सकते हैं और उपयोगिताकी दृष्टिसे उनके पालन-पोषणमें यथायोग्य न्यूनाधिकता भी कर सकते हैं। अनुपयोगी पशुओंको हटा भी सकते हैं; परन्तु विचारणीय प्रश्न तो यह है कि ऐसी गायके दूधमें नैसर्गिक मातृ-स्नेह, जो दूधको अमृत बना देता है, कहाँसे आवेगा? बछड़ेके बिना कृत्रिम साधनोंसे पिन्हाई हुई गाय दूधकी 'मशीन' अवश्य होगी, पर वह स्नेहमयी 'गो-माता' कदापि नहीं होगी। मशीनके कृत्रिम दूधसे माताके स्नेहमय दूधमें बड़ा अन्तर होता है। इसको वैज्ञानिक चाहे न मानें, पर यह सत्य तो है ही।

बच्चे नियमित दूध तथा उचित आहारको पाकर पुष्ट हो जायँगे, पर बिना माके बच्चेकी तरहसे वे मातृ-स्नेहसे तो वञ्चित ही रहेंगे! पता नहीं—माताओंकी जिंदगीमें ही उनके दुधमुँहे बच्चोंको मातासे अलग रखनेमें कोई पाप भी है या नहीं? और इसका फल भी होगा या नहीं? (ह०)

बधिया करनेका नया उपाय
(बर्डिजो कैस्ट्रेटर)

हमारे देशका मुख्य आधार है खेती, और खेतीका मुख्य आधार है बैल। साँड़ और पाडे वगैरह खेतीके कामके लिये बैलके समान उपयोगी नहीं होते। यह बात सभी मानते हैं कि बैलके बिना जोत नहीं हो सकता, और इसी कारण बहुत प्राचीनकालसे आजतक अपने देशमें गो-धन ही मुख्य धन समझा जाता है। ये बैल गायोंसे पैदा हुए बछड़ोंको बधिया करके तैयार किये जाते हैं। हमारे देशमें बधिया करनेकी जो पुरानी रीति प्रचलित है वह इतनी क्रूर और घातकी है कि जिसके कारण बहुतेरी जातिके लोग अपने घर पैदा हुए बछड़ेको स्वयं बधिया नहीं करवाते। उसे आधे हिस्सेमें किसीको दे देते हैं या बेच डालते हैं। और अपने उपयोगके लिये बिक्रीका बधिया किया हुआ बछड़ा या बैल खरीद लेते हैं। इसका प्रधान कारण बधिया करनेकी प्रचलित घातकी रीति है, उससे लोगोंका जी दुखता है और वे स्वयं उसे घरपर नहीं पाल सकते।

बधिया करनेकी पुरानी रीति यह है कि बछड़ेके अंडकोषको हँसियासे काट डाला जाता है, और जख्मके लहूको बंद करनेके लिये कोई योग्य दवा-दारू किये बिना ही उसे रहने दिया जाता है जिससे उसके अंदर कीड़े तक पड़ जाते हैं और वह मूक पशु असह्य कष्ट उठाता है। एक दूसरी रीति इससे भी अधिक भयानक है। उसमें बछड़ेके अंडकोषको एक पत्थरपर रखकर दूसरे पत्थरसे कूटते हैं। इससे पशु चिल्लाता है और बहुत ही घबराता है। इस क्रियाके बाद थोड़े ही समयमें इतनी सूजन आ जाती है कि पशु बिल्कुल लाचार हो जाता है और कभी-कभी इस रीतिसे बधिया करनेपर पशु मर भी जाता है।

आजकल नयी-नयी खोज हो रही है, यह सभी जानते हैं। इस विषयमें भी खोज करके उत्तम रीतिसे बधिया करनेकी पद्धति निकाली गयी है और इसके लिये एक सँड़सी बनायी गयी है जिसे 'बर्डिजो कैस्ट्रेटर' के नामसे पुकारते हैं। इस सँड़सीसे साँड़, घोड़े, बकरे, भेड़े, ऊँट और कुत्ते वगैरह जानवर बिना दुःख पाये बधिया बनाये जा सकते हैं। इस रीतिसे बधिया करनेपर नीचे लिखे अनुसार खास फायदे होते हैं—

१. पशुके ऊपर वैसा घातकीपना नहीं होने पाता।
२. न जख्म होता है और न खूनकी एक बूँद गिरती है।
३. बधिया करनेके बाद कोई दवा-दारू नहीं करनी पड़ती।
४. किसी भी ऋतुमें बधिया किया जा सकता है।
५. इस सँड़सीसे अंडकोषके ऊपरकी नसको दो बार दबा देनेसे कुछ ही दिनोंमें अंडकोष सूख जाता है और जानवर बधिया हो जाता है।
६. केवल दो मिनटमें बधिया करनेकी क्रिया पूरी हो जाती है।

यह सत्य है कि शास्त्रोंमें पशुको बधिया करना पाप बताया गया है और पाप है भी, परन्तु 'सर्वारम्भा हि दोषेण' के अनुसार खेतीके लिये बधिया बैलकी अनिवार्य आवश्यकता

है ही। गृहस्थ स्वयं अपने घरमें बधिया नहीं करते-करवाते; परन्तु जब बधिया बैल खरीदते हैं और उसे काममें लाते हैं, तब वे अनुमोदनके द्वारा तो बधिया करवाते ही हैं। ऐसा बधिया उन लोगोंके द्वारा होता है जो बड़े ही क्रूर हैं और क्रूरताभरी पद्धतिसे अंडकोषको काटकर या उन्हें पत्थरसे कूटकर बधिया करते हैं। ऐसी अवस्थामें जिन गृहस्थोंको बधिया बैल खरीदने और काममें लेने पड़ते हैं, वे यदि अपने ही घर इस नयी पद्धतिसे पहली ही साल बछड़ेको बधिया करवा लें, तो न तो बछड़ेको तकलीफ होगी, न घरकी चीज बाहर ही जायगी। बेचनेपर तो वह कसाईके हाथ भी जा सकता है। यह डर भी नहीं रहेगा। इसलिये पशुके मालिकको चाहिये कि वह इस सँडसीसे लाभ उठानेमें न चूके। जो लोग बधिया करनेका पेशा करते हैं, उन्हें भी यह नयी निर्दयताहीन सीधी पद्धति सीख लेनी चाहिये जिससे पशुओंका कष्ट छूटे।

जो बछड़े यों ही दागकर छोड़ दिये जाते हैं, उनके निर्वाहकी कोई व्यवस्था नहीं होती। बेचारे मारे-मारे फिरते हैं, जहाँ जाते हैं, वहीं डंडे पड़ते हैं। भूखके मारे सदा परेशान रहकर बिल्कुल निर्बल हो जाते हैं। वे यदि बैल बन जायँगे तो किसानोंके कामकी चीज होनेसे किसान उन्हें पूरा खानेको देंगे। कम-से-कम वह बधिया होकर भी एक बड़े कष्टसे तो बच जायँगे, चाहे सन्तान न उत्पन्न कर सकें। और असलमें उन निर्बलोंकी सन्तानसे नस्ल बिगड़नेके सिवा और लाभ भी क्या है? (डा० जा०)

'गोबर'

(रच०—साहित्य-व्याकरणाचार्य, साहित्यरत्न, पण्डित श्रीहरगोविन्द शास्त्री)

गोवरमें[1] अति उत्तम गोवर[2], गोवरमें[3] सब देव निवासा।
गोवरसे मन-मन्दिर पूत बँने[4] बिनसै भवसागरत्रासा॥
गोबर गोपय गोदधि गोबरके यव खाकर हो उपवासो[5]।
गोवर[6] ईश्वरके[7] वर आश्चर्य गोवरसे[9] कटता यमपासा॥ १॥
भूप दिलीपहि पुत्र हुआ तब प्राप्त किया जब गोवरको[10]।
नूतन धान्यहि राशिनपै गिरहस्थ रखैं वर गोबरको[11]॥
पूजि मनोरथ पूर्ण करैं सब गौरि गणाधिप गोबरको[12]।
गोवरमें[13] वर[14] वे नर हैं नित ही जे चाहत गोवरको[15]॥ २॥
अस्थि दधीचि दिये तजि प्राण सुरेश्वरके तब गोवरने[16]।
चाटि शरीर सहाय करी शतकोटि[17] बनाकर बृत्र हने॥
गोबरसंघ[18] चरावत हर्षित होत महाप्रभु[19] ग्वाल बने।
उत्तम गोवरको[20] नहिं चाहत हैं जगमें अस कौन जने॥ ३॥

१. भूश्रेष्ठमें। २. गौका वरदान, गोमय (गोबर), उत्तम वाणी या पृथ्वी। ३. श्रेष्ठ गौमें। ४. गौके वरदान या गोमय (गोबर) से मनरूप गृह शुद्ध होता है, (श्लिष्टरूपकालङ्कार)। ५. विभिन्न व्रतोंमें गोमय, गोदुग्ध, गोदधि और गोबरसे निकाला हुआ जौ खानेका शास्त्रीय विधान है (देखिये—'व्रतोद्यापनकौमुदी' और 'कल्याण'का 'व्रतपरिचय' लेख)। ६. गोपति (नन्दी)। ७. शिव। ८. आधार अर्थात् वाहन। ९. श्रेष्ठ गौसे अर्थात् गोदानसे। १०. नन्दिनी नामक गौका वरदान। ११. पश्चिमी बिहार प्रान्तमें नये अन्नोंके ढेरपर किसान लोग गोमयपिण्ड रखते हैं। १२. गोमय (गोबर) की गौरी और गणेशको बनाकर कलश-स्थापनके बाद पूजते हैं। १३. भूश्रेष्ठमें। १४. श्रेष्ठ। १५. श्रेष्ठ गौको या गौके वरदानको। १६. श्रेष्ठ गौने। १७. वज्र। १८. श्रेष्ठ गौओंका झुंड। १९. कृष्ण भगवान्। २०. श्रेष्ठ गौ, वाणी या गौके वरदानको।

चमड़े आदिके व्यापारके लिये भारतीय पशुओंका वध

(लेखक—श्रीमूलजी भाई बी० वराड, बी० ए०, एस्० टी० सी०)

निरामिष भोजन मांसाहारसे कहाँ-तक श्रेष्ठ है ?

'जो मनुष्य मेवे और अन्न, साग-पात, फल-मूल एवं मधुर जलपर निर्वाह करता है वह प्रायः रोग एवं पीड़ासे तथा बहुत-सी कष्टदायक व्याधियोंसे मुक्त रहता है। उसका शरीर स्वस्थ और मस्तिष्क अकुण्ठित रहता है, उसका आत्मा सब प्रकारके कल्याणोंसे पूर्ण रहता है। उसके जीवनमें प्रकृतिकी कठिन परीक्षाओं, दण्डों तथा परुषताका भय नहीं रहता। उसके मनोभाव आत्मा तथा विवेकके अनुकूल होते हैं। इसीलिये वह किसी प्रकारके नैतिक अपराधका अपराधी नहीं होता। तम्बाकू, कहवा, मांस-मदिरा, मिर्च-मसाले और मद्य-आसवका नाम ही उसे कर्ण-कटु प्रतीत होता है; वह समझता है कि इनका व्यवहार आत्माको गिरानेवाला और अनिष्टकर है!'

मांसाहार राष्ट्रोंके लिये अमङ्गलकारक है।

'क्रूरता, पीड़ा और हिंसाको नमस्कार करो; हिंसाकी वृत्ति छोड़ो······हमारे पश्चिमी भाइयोंके दूषित चाल-चलनको भूल जाओ तथा मांसाहारको, जिसने यूरोपको अभिशापित कर रक्खा है, मनसे निकाल दो। तुम्हारे हृदयमें सहानुभूतिका वास हो और तुम सहिष्णुता, श्रम एवं प्रेममें ही शान्तिका अनुभव करो।' (—ए. जे. सी. ल्यूसर्न)

रोग और पीड़ा, दुर्गति और विपत्ति मांसाहारके दुष्परिणाम हैं।

उपर्युक्त पंक्तियाँ स्पष्टरूपसे बतलाती हैं कि मांसाहारियोंको रोग, पीड़ा, कष्ट और आपत्ति ही नहीं सताते, अपितु प्रकृति-देवी भी अन्य अनेकों प्रकारसे उन्हें उनके कुकृत्योंका दण्ड देती है। मांसाहारी व्यक्ति सहज ही धूम्रपान, मद्यपान इत्यादि अनेकों दुर्व्यसनोंका शिकार बन जाता है। इन दुर्व्यसनोंके कारण वह स्वयं तो पतनके गड्ढेमें गिरता ही है, अपने साथियोंको भी नरकमें ले जाता है। परन्तु कविके कथनानुसार मांसाहारने केवल यूरोपको ही अभिशप्त किया हो, ऐसी बात नहीं है; यूरोपवाले जहाँ जाकर बसे हैं और जहाँ उन्होंने मांसाहारका प्रचार किया है तथा प्रोत्साहन दिया है, वे सभी देश अभिशप्त हैं। भारत भी उन अभिशप्त देशोंमेंसे एक है।

विकृत व्यापारी मनोवृत्तिके दूषित प्रभाव और दुष्परिणाम

यूरोप तथा अन्यान्य देशोंको संकटमें डालनेवाले इस मांसाहारका मुख्य परिणाम वह विकृत व्यापारी मनोवृत्ति है, जो यूरोप तथा अन्य देशोंमें मांसाहारके साथ-साथ अत्यन्त बढ़ गयी है। यह क्षुद्र व्यापारी मनोवृत्ति जगत्‌भरके मनुष्योंकी मृदु भावनाओंका किस प्रकार अन्त कर रही है, और दूर तथा निकटके सभी देशोंमें लोभवृत्तिको जन्म देकर इसने मनुष्यको कितना नीचे गिरा दिया है—इसका कुछ अनुमान सर विलियम अर्नशॉ कूपर (Sir William Earnshaw Cooper) की निम्नलिखित पंक्तियोंसे लगाया जा सकता है—

'पशु भी हमारी ही भाँति वेदनाशील होते हैं; वरं जिन पशुओंके सम्बन्धमें हम यहाँ विचार कर रहे हैं वे तो उनके रक्षकोंकी अपेक्षा भी अधिक सदाशय होते हैं। परन्तु उनके अधिकांश पालकोंमें नैतिक औचित्यकी भावना इतनी नष्ट हुई रहती है और उनकी दो-चार रुपये या अधिक-से-अधिक एक-दो पौंड अधिक प्राप्त करनेकी क्षुद्र मनोवृत्ति इतनी निर्लज्जतापूर्ण होती है कि वे बहुधा यह नीच कर्म (पशुवध) करनेमें नहीं हिचकते और इस प्रकार अपने आत्मापर कलङ्कका ऐसा अमिट दाग लगा लेते हैं कि जिसे उन्हें भगवान्‌के सामने बदनामीके टीकेके रूपमें धारण करके जाना पड़ता है!' [देखिये उनकी "The Blood-guiltiness of Christendom' (ईसाई-जगत्‌की हिंसाप्रियता) नामक पुस्तक, पृष्ठ ५२ से ६१ तक]

अंग्रेजीमें एक कहावत है, जिसका आशय यह है कि इतिहासकी पुनरावृत्ति होती है (History repeats itself)। जो बात इंग्लैंडके सम्बन्धमें ऊपर कही गयी है, वही लज्जाजनक इतिहास बुद्ध एवं महावीर स्वामीकी जन्मभूमि इस भारतमें दोहराया जा रहा है—यह बात निम्नलिखित प्रश्नोत्तरोंसे स्पष्ट हो जायगी।

मध्यप्रदेशमें सूखे मांसका व्यापार किस प्रकार प्रारम्भ हुआ और कैसे वहाँ उसने स्थायी रूप धारण कर लिया।

प्रश्न—क्या आप हमें इन बूचड़खानोंके सम्बन्धमें कुछ अधिक परिचय दे सकते हैं, क्योंकि मुझे ज्ञात हुआ है कि ये बूचड़खाने केवल मध्यप्रदेशमें ही पाये जाते हैं!

उत्तर—मैंने इस व्यवसायके सूत्रपातके कारणका पता नहीं लगाया है, परन्तु मेरी धारणासे इसका प्रारम्भ अकालसे हुआ। बहुत-से पशु इसलिये बेचे गये कि किसान लोग कष्टमें थे और कुछ चालाक मुसल्मान ठेकेदारोंने इसे बहुत अच्छा अवसर समझा और पशुओंका नियमित व्यापार प्रारम्भ कर दिया। यह इतना बढ़ा कि वे लोग पशुओंके लिये अच्छी कीमत देने लगे और अब तो यह व्यापार स्थायी हो

गया है। व्यापारकी प्रधान वस्तु चमड़ा नहीं किन्तु सूखा मांस है। मांसको काटकर उसके लंबे-लंबे टुकड़े कर लिये जाते हैं और तब उन्हें सुखाकर लकड़ियोंकी तरहसे उनके गट्ठे बाँध दिये जाते हैं और तब उन्हें सुदूरवर्ती देशोंके लिये जहाजपर चढ़ाये जानेको कलकत्ते भेज दिया जाता है।

प्रश्न—क्या इन बूचड़खानोंके प्रति स्थानीय जनतामें विरोधकी भावना नहीं उत्पन्न हुई ?

उत्तर—विरोधकी भावनाके बदले वहाँकी जनतामें लोभकी वृत्ति जाग्रत् हुई है। मेरी समझसे, आप देखेंगे तो मालूम होगा कि स्थानीय म्युनिसिपल मेम्बरोंमेंसे बहुतोंका इस व्यापारमें हिस्सा है। मेरा विश्वास है कि ब्राह्मण तथा अन्य हिंदू भी इस व्यापारमें सम्मिलित हैं।

(सन् १९१६-१८ में बैठाये गये 'भारतीय औद्योगिक कमीशन'के समक्ष मध्यप्रदेशके कृषि-विभागके डाइरेक्टर श्रीयुत लेफ्टविच (Leftwitch) साहबका मौखिक बयान)

लोभ ऐसा भयानक शत्रु है, जो मनुष्योंके दुर्बल अन्तरात्माकी क्षीण वाणीको भी चुप कर देता है और उनकी समस्त नैतिक आपत्तियोंको रुखाईके साथ हटा देता है। इस प्रकार हिंदू ही नहीं, ब्राह्मणतक सूखे मांसके इस घृणित एवं अधार्मिक व्यापारमें भाग लेनेसे नहीं हिचकते ! परन्तु यह व्यापार आज जिस उन्नत दशामें है, उसे वहाँतक पहुँचानेमें प्रधानतया किसका हाथ रहा ! क्या इसका दोष उन चालाक मुसल्मान ठेकेदारोंपर है जिन्होंने इस व्यापारका सूत्रपात किया ? या वे सिद्धान्तहीन ब्राह्मण तथा अन्य हिंदू इसके जिम्मेवार हैं जिन्होंने इस व्यापारमें भाग लेकर उनके इस नवीन उद्योगको परोक्षरूपसे प्रोत्साहन दिया ? हमारी समझमें हिंदुओंकी पवित्र एवं मृदु भावनाओंको कुचलनेका दायित्व मुख्यरूपसे हमारी सरकारपर है, जिन्होंने सूखे मांसके इस निन्दित व्यापार तथा उसकी सहकारी शाखाओंका विस्तार किया। सरकार इसके लिये कहाँतक दोषभागी है, यह बात निम्न-लिखित बयानसे स्पष्ट हो जायगी, जो यहाँ 'The Indian Humanitarian' नामक पत्रसे उद्धृत किया गया है।

सरकारने सूखे मांसके इस पैशाचिक व्यापारको किस प्रकार प्रोत्साहन दिया ?

'कम्पनी (Messrs Devenport & Co) की विवरण-पत्रिका (Prospectus) से पता लगता है कि वे लोग प्रतिदिन १२०० से १५०० तक पशुओंका वध करेंगे और कम्पनीको अधिक पशुओंका वध करनेकी आवश्यकता पड़नेपर मध्यप्रदेशकी सरकारने उनके लिये एक नया बूचड़खाना बना देनेका वचन दिया है। वधके लिये बाहरसे आनेवाले निरपराध जीवोंको यथास्थान पहुँचानेकी सुविधाके लिये रेलकी लाइन भी खास तौरपर रतोनातक बढ़ा दी जायगी। इसके अतिरिक्त इस निर्दयतापूर्ण व्यापारको करनेवाली कम्पनीके लिये सरकार एक बड़ी टंकी भी बनवा रही है।'

इससे सिद्ध है कि सरकारके प्रोत्साहनसे ही इस नृशंस व्यापारका इतना विशाल रूप हो गया है। व्यापार कितना बढ़ गया है, यह निम्नलिखित पंक्तियोंसे स्पष्ट हो जायगा।

सूखे मांसके इस पैशाचिक व्यापार-ने कितना विशाल रूप धारण किया है ?

सूखे मांसके व्यापारके लिये भी पशुओंकी बहुत बड़ी संख्याका वध होता है। संयुक्तप्रान्त एवं मध्यप्रदेशकी बहुत-सी म्युनिसिपलिटियोंसे इस सम्बन्धमें पूछ-ताछ की गयी थी और वहाँसे यह उत्तर मिला कि सूखे मांसके लिये पशु अधिकतर म्युनिसिपलिटियोंकी सीमाके बाहर मारे जाते हैं। आगरेकी म्युनिसिपलिटीने लिख भेजा था कि वहाँ **अकेले इस व्यापारके लिये प्रतिवर्ष ५५ हजारसे अधिक पशुओंका वध होता है।** संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रदेश एवं बिहारके विभिन्न स्टेशनोंसे बर्माको रवाना करनेके लिये कुल कितना सूखा गो-मांस हवड़ा भेजा जाता है, यह बतलानेके लिये ईस्ट इंडियन रेलवेके एजेंटसे प्रार्थना की गयी थी; परन्तु उन्होंने यह नहीं बतलाया। उपर्युक्त अधिकारीसे जब यह विवरण नहीं मिल सका तब ब्रह्मदेशके 'कस्टम्स' विभागके प्रधान कलक्टरसे प्रार्थना की गयी और उन्होंने यह बतानेकी कृपा की कि पिछले तीन वर्षोंमें भारतके बंदरगाहोंसे **अकेले बर्मामें** ४,८०,०२,९७६ रतल सूखा मांस आया है। म्युनिसिपलिटियोंसे पूछ-ताछ करनेपर यह भी पता लगा है कि एक पशुके मांसकी औसत सुखानेपर १५ से २० रतल (कच्चे मांसका चतुर्थांश) तक बैठती है। इससे यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि इस हिंसक व्यापारके लिये प्रतिवर्ष लगभग **१० लाख** पशुओंका वध होता है।

इस बातको सोचकर बहुत अधिक दुःख होता है कि आगरेकी म्युनिसिपलिटी, जो वहाँके नागरिकोंकी खपतके लिये केवल १० हजार पशुओंका वध करती है, सूखा मांस बाहर भेजनेके लिये इसकी अपेक्षा **पाँचगुनेसे** भी अधिक पशुओंकी हत्या होने देती है। क्या यह निर्दयतापूर्ण लोभकी पराकाष्ठा

नहीं है ? परन्तु उन हृदयहीन मानवोंके पापी पेटकी पूर्तिके लिये, जो अपनी दूषित क्षुधाको शान्त करनेके लिये इतने लालायित रहते हैं, समग्र भारतवर्षमें जिस निर्दयताके साथ अनवरतरूपसे पशु-हत्या की जा रही है, उसकी दर्दभरी कहानी यहीं समाप्त नहीं हो जाती !

यह तो हुई दूर देशोंके असुर-मानवोंकी राक्षसी भूख शान्त करनेके लिये मारे जानेवाले पशुओंकी दुःखभरी कहानी। इससे अधिक दुःख और हृदय-विदारक कथा है भारतकी म्युनिसिपलिटियोंकी सीमामें रहनेवाले असुर-मानवोंके लिये काटे जानेवाले पशुओंकी। इसके लिये भी १० लाखसे कहीं अधिक पशु प्रतिवर्ष काटे जाते हैं। निम्नलिखित पंक्तियोंसे यह बात स्पष्ट हो जाती है—

म्युनिसिपलिटियोंकी सीमाके भीतर रहनेवालोंके लिये ही जानेवाली वार्षिक पशु-बलि।

'म्युनिसिपलिटियोंकी सीमाके भीतर काटे जानेवाले पशुओंकी संख्याका स्वयं म्युनिसिपलिटियोंसे पता लगानेके लिये बम्बईके 'जीव-दया-प्रचारक-सङ्घ'(Humanitarian League) ने भारतकी प्रत्येक म्युनिसिपलिटीके प्रमुख महोदयसे प्रार्थना की थी। ७३१ म्युनिसिपलिटियोंमेंसे ३४६ म्युनिसिपलिटियोंमें प्रतिवर्ष १०,७५,३२६ पशुओंका वध होता है। ३२ म्युनिसिपलिटियोंने काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या नहीं बतायी, यद्यपि उनमें बहुत पशु मारे जाते हैं। ८१ म्युनिसिपलिटियोंने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। शेष २७३ म्युनिसिपलिटियोंमें म्युनिसिपलिटियोंके निरीक्षणमें अथवा उनकी जानकारीमें पशुवध नहीं होता। इससे पता चलता है कि प्रत्येक म्युनिसिपलिटीमें स्वयं म्युनिसिपलिटीकी देख-रेखमें प्रतिवर्ष औसतन ३२०० पशु काटे जाते हैं। जिन म्युनिसिपलिटियोंसे किसी प्रकारकी भी सूचना नहीं मिली है तथा जिन्होंने पशु-वधकी संख्या नहीं बतायी है, उनकी संख्यासे इस संख्या (३२००) को योग करने तथा म्युनिसिपलिटियोंकी सीमामें स्वतन्त्र व्यक्तियोंद्वारा काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या जोड़ देनेपर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतभरमें म्युनिसिपलिटियोंकी सीमामें लगभग २५ लाख पशु काटे जाते हैं। समाचार मिला है कि बहुत-सी म्युनिसिपलिटियोंमें विशेषकर संयुक्तप्रान्तमें, दूध देनेवाले तथा खेतीके उपयोगी पशु बहुत बड़ी संख्यामें काटे जाते हैं। अधिकांश म्युनिसिपलिटियोंमें छोटी उम्रके बछड़े भी इस कत्लसे नहीं बच पाते।······बहुत-सी म्युनिसिपलिटियोंसे प्राप्त हुई सूचनासे पता चलता है कि **छोटी तथा जवान उम्रके पशु भी बेरोक-टोक मारे जाते हैं।**'

पशु-वधकी यह कहानी कितनी दर्दभरी और निन्दनीय है !

(क) 'नोटीफाइड' हल्कोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या

म्युनिसिपलिटियोंके हल्केके अतिरिक्त पंजाब, उत्तर-पश्चिमीय सीमाप्रान्त, बम्बई, संयुक्त-प्रान्त एवं मध्यप्रदेशके 'नोटीफाइड' हल्कोंमें जो कमेटियाँ बनी हुई हैं, उनकी निगरानीमें भी पशु-वध होता है। भारतवर्षमें इस प्रकारकी कमेटियोंकी संख्या कुल मिलाकर २२४ है। इनमेंसे कुछ कमेटियोंसे प्राप्त पशु-वधकी संख्याके आधारपर यह अनुमान किया जा सकता है कि इन हल्कोंमें प्रतिवर्ष कुल ६७,२०० पशु मारे जाते हैं !

ख) तालुकबोर्डोंके प्रबन्धमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या

इसी प्रकार मद्रास प्रान्तके तालुक बोर्डों और पंजाबके जिला बोर्डोंके प्रबन्धमें जिनकी संख्या कुल १२६ है, प्रतिवर्ष कुल ३७८०० पशु काटे जाते हैं।

(ग) यूनियन बोर्डोंके प्रबन्धमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या

इनके अतिरिक्त यूनियन बोर्डों, यूनियन कमेटियों तथा नगरके हल्कों इत्यादि स्थानीय संस्थाओंके प्रबन्धमें भी अनुमानतः प्रतिवर्ष १२५००० पशु कटते हैं।

(घ) देहाती इलाकोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या

उपर्युक्त स्थानीय संस्थाओंके प्रबन्धमें काटे जानेवाले पशुओंके अतिरिक्त देहाती इलाकोंमें स्वतन्त्र व्यक्तियोंद्वारा काटे जानेवाले पशुओंकी औसतन संख्या प्रति जिलेमें २०००० मानी जा सकती है। ब्रिटिश-भारतमें पोलीटिकल एजेंसियों तथा दिल्ली, कुर्ग, अजमेर-मेरवाड़ा आदि छोटे-छोटे प्रान्तोंके जिलोंको छोड़कर कुल ढाई सौ जिले हैं। इस हिसाबसे प्रतिवर्ष देहाती इलाकोंमें स्वतन्त्र व्यक्तियोंद्वारा काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या ५० लाखके लगभग बैठेगी तथा ब्रिटिश-भारतके उपर्युक्त छोटे-छोटे प्रान्तोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या अनुमानतः ६० हजार होनी चाहिये।

(च) फौजी छावनियोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या

इनके अतिरिक्त ब्रिटिश-भारतमें कुल १०६ फौजी छावनियाँ हैं। इन छावनियोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या उपर्युक्त संख्यामें जोड़ देनेसे भारतमें काटे जानेवाले कुल पशुओंकी संख्याका करीब-करीब ठीक अनुमान लगाया जा

सकेगा। इन छावनियोंमें काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या २ लाखसे कम नहीं हो सकती। यह युद्ध-पूर्वका अनुमान है। युद्धके समयकी संख्या जानना कठिन है।

चेचकके टीकेके लिये तथा ईदके दिन कुर्बानीके लिये काटे जानेवाले पशुओंकी संख्या इसमें शामिल नहीं है। इन निमित्तोंसे काटे जानेवाले पशुओंकी संख्याको यदि छोड़ भी दिया जाय तो सूखे मांसके घृणित व्यापारके लिये तथा म्युनिसिपलिटियोंके हल्कों, नोटीफाइड हल्कों, ताल्लुक बोर्डों, यूनियन-बोर्डोंके हल्कों, देहाती इलाकों एवं फौजी छावनियों-में रहनेवाले लोगोंके लिये जितने पशु मारे जाते हैं, उनकी कुल संख्या लगभग १०००००० (एक करोड़) तक पहुँच जाती है।

सन् १९१९-२० में भारतसे बाहर भेजी गयी खालोंकी संख्यासे भी उपर्युक्त अनुमान-की पुष्टि होती है।

सन् १९१९-२० में भारतवर्षसे १,१७,६८,०५५ खालें बाहर भेजी गयी थीं और उतनी ही खालोंकी देशमें भी खपत हुई होगी। इससे हमारे उपर्युक्त अनुमानकी पुष्टि ही नहीं होती, अपितु यह भी प्रकट होता है कि उपर्युक्त अनुमानित संख्या वास्तविक संख्यासे कम ही है, अधिक नहीं। इस बातसे यह अनुमान भी दृढ़ हो जाता है कि **केवल खालके लिये ही पशुओं-का बहुत बड़ी संख्यामें वध होता है।**

ऊपर दिये हुए तथ्यों एवं संख्याओंके लिये कलकत्तेके 'गो-रक्षा-संघ' (Cow Preservation League) की सन् १९२२-२३ तथा १९२३-२४ की रिपोर्टके चौथे पैरेके प्रथम दस अवान्तर भागोंको देखना चाहिये।

ऊपरके अनुमानकी पुष्टिमें सरकारी प्रमाण

गो-रक्षा-संघके द्वारा विचारपूर्वक अनुमान की गयी ये संख्याएँ यथार्थ संख्यासे अधिक नहीं किन्तु कम ही हैं, इस बातकी पुष्टि सरकारी कागजोंसे भी होती है। 'Handbook of Commercial Information for India, 1249' (भारतीय व्यापारसम्बन्धी बातोंकी विवरण-पुस्तिका, १९२४) में निम्नलिखित पंक्तियाँ पायी जाती हैं—

'पशुओंके आँत आदि भीतरी अङ्गोंकी माँग देशमें बहुत कम या नहींके बराबर ही है, परन्तु हिसाब लगानेसे अनुमान किया गया है कि जिस परिमाणमें ये सब चीजें बाहर भेजी जाती हैं, वे १० लाख पशुओंसे अधिककी नहीं हो सकतीं। इधर कच्ची अथवा अधकमायी हुई खालें एक करोड़ या उससे भी अधिक संख्यामें प्रतिवर्ष बाहर भेजी जाती हैं। इस अन्तरका मुख्य कारण यह है कि इस उष्णप्रधान देशमें उन बड़े शहरोंको छोड़कर, जहाँ मांसका व्यापार केवल बूचड़खानोंमें ही केन्द्रित है, पशुओंके भीतरी अङ्गोंकी माँगको बढ़ाना कठिन है। व्यापारी लोग ग्रामीण कसाइयोंसे एक-एक जानवरकी खाल फायदेके साथ संग्रह कर सकते हैं, अथवा प्राकृतिक मौतसे मरे हुए पशुओंकी खालें भी इकट्ठी कर सकते हैं, परन्तु पशु-शरीरमेंसे निकालनेके बाद तुरंत ही इन भीतरी अङ्गोंको यदि साफ नहीं किया जाता तो उनमें बहुत जल्दी खराबी शुरू हो जाती है। यहाँकी जलवायुके कारण भी वर्षके अधिकांश मासोंमें खालों-की अपेक्षा ये भीतरी अङ्ग जल्दी खराब होते हैं। इन सब कारणोंसे इस व्यापारके परिमाणमें अधिक वृद्धिकी सम्भावना नहीं मालूम होती, यद्यपि बिक्रीके तरीकोंमें बहुत कुछ सुधार हो सकता है। (देखिये, पृष्ठ ३२८)। अब वर्षोंसे बम्बई तथा अन्य स्थानोंमें जो निरन्तर पशुहत्या हो रही है, उसकी दर्दभरी एवं हृदयविदारक कहानी सुनिये—

अकेले बम्बई नगरमें काटे जानेवाले पशुओंकी वार्षिक संख्या—

वर्ष	गो-जातिके पशु	भेड़े और बकरे
१९१९ से १९२३ की औसत	७८,७३९	८,१०,००३
१९२४–२५	६३,०८२	७,५८,१८३
१९२७–२८	६३,५६७	आँकड़े अप्राप्य
१९२८–२९	५८,७४०	
१९२९–३०	५४,४०७ (बैलोंको छोड़-कर)	
१९३०–३१	३६,४७७ (बैलोंको छोड़-कर)	
१९३१–३२	४८,५६५	७,४२,०५९
१९३२–३३	४७,०३१	७,२८,६१७
१९३३–३४	५०,०५२	७,७८,०४३
१९३४–३५	५०,३०२	७,८०,१८५
१९३५–३६	५०,८१९	८,०८,०३२
१९३७–३८	६८,६३९	७,३२,४८४
१९३८–३९	६८,१८८	७,५४,२२८
१९३९–४०	७२,९५०	७,८८,२३१
१९४०–४१	८५,२७१	७,९६,२२७

ऊपर दी हुई संख्याओं-पर टिप्पणी।

उपर्युक्त आँकड़ोंसे यह पता लगता है कि सन् १९३० से १९३२ तक, जो कठिन परीक्षा एवं कठिनाईके साल थे, जिन दिनों गाँधीजीका असहयोग-आन्दोलन जोरोंपर था और उसका कोमल

प्रभाव चारों ओरकी जनतापर पड़ा था—मांसाहारकी दूषित प्रवृत्ति कुछ कम हुई थी, किन्तु उसके बादसे वह फिर बढ़ गयी है।

भारतके मुख्य-मुख्य नगरों एवं कस्बोंमें निरन्तर होनेवाले पशु-वधकी करुण कहानीको समाप्त करनेके पूर्व हम नीचे बम्बईसे इतर नगरों एवं कस्बोंमें होनेवाले पशु-वधके वार्षिक आँकड़े दे रहे हैं—

संख्या	नगरका नाम	गो-जातिके पशु	भेड़े और बकरे
१.	कलकत्ता	९०,३१४	२,६२,०७४
२.	शाहजहाँपुर	२५,६५३	......
३.	दिल्ली	२९,५६५	१,९०,७८९
४.	हवड़ा	१३,३४१	१०,२९१
५.	लाहौर	११,४३७	१,९८,९४९
६.	स्यालकोट	६,२५८	२६,४९२
७.	शोलापुर	११,६१५	६८,१६४
८.	मेरठ	९,४५३	१४,४२७
९.	कानपुर	१०,५६३	४३,८९०
१०.	लखनऊ	११,१५७	१,१८,५३०
११.	अहमदाबाद	१४,१२८	८०,२२३
१२.	रंगून	२६,५०९	१,५३,५५८
१३.	कराची	५,३७९	१,५९,७६८
१४.	आकोला	४,१२१	१३,४६२
१५.	बहराइच	४,९०१	८,५८९
१६.	आगरा	१०,५९७	४३,३६३
१७.	गोरखपुर	४,३२२	३६,९२४
१८.	भुसावल	१,९७८	७,१४२
१९.	गोधरा	५,१०१	......
२०.	जबलपुर	६,९४०	११,९७९
२१.	रेवाड़ी	५,०७५	४,६७७
२२.	मथुरा सिटी	५,४५१	८,२०४
२३.	गाजीपुर	२,५६६	४,९६१
२४.	ढाका	९,०६०	२८,८४२
२५.	राजमहेन्द्री	२,९१९	२०,४५०
२६.	बिजगापट्टम	२,०४०	१८,७९३
२७.	भड़ौंच	२,५३२	१५,०४५
२८.	त्रिचनापल्ली	४,२९८	९२,९७७
२९.	सूरत	३,४७६	९२,४५०
३०.	कोन्नूर	२,३८६	९,८९०
३१.	बुरहानपुर	२,४७८	९,५०९
३२.	देरागाज़ीखाँ	२,८७४	५,०३७
३३.	मालेगाँव	२,८८२	......
३४.	नडियाद	१,८०४	२,६५४
३५.	मंगलोर	१,७२४	४,५२१
३६.	मैसूर	३,३३८	५३,२४१
३७.	मल्कापुर	२,७४१	१,८९४
३८.	मुंगेर	१,१९९	१६,३९०
३९.	दोहाद	२,१४४	५,१०९
४०.	धुलिया	१,७५०	११,६४५
४१.	शिकारपुर	१,१९५	३४,४६०
४२.	बेलगाँव	१,६५४	५,९६३

(‘श्रीघाटकोपर सार्वजनिक जीव-दया खाते’ की अपील पृ० १—३)।

उपर्युक्त आँकड़ोंसे प्रकट होनेवाली संगठित एवं व्यापक पशु-हत्याको भारतकी रेलगाड़ियोंने सहायता पहुँचायी है

उपर्युक्त आँकड़ोंसे हम स्वाभाविक ही कुछ दुःखद निष्कर्षोंपर पहुँचते हैं और उनमेंसे कुछका यहाँ उल्लेख किये बिना नहीं रहा जाता, प्रथम तो उपर्युक्त नगरोंमें काटे जानेवाले अभागे जीवोंमेंसे अधिकांश बाहरसे लाये हुए होते हैं। और उन्हें भयङ्कर मृत्युका आलिङ्गन करनेके लिये वध-स्थानोंतक पहुँचानेकी प्रधान साधन होती **हैं रेलगाड़ियाँ।**

यहाँ इसीके साथ यह भी जान रखना चाहिये कि यदि रेलें न होतीं तो सुदूरवर्ती देशोंमें जानेके लिये सूखे मांसके व्यापारका सूत्रपात एवं संगठन असम्भव था। अतः हमारी समझसे भारतके मूक प्राणी अनवरत रूपसे जिन अनेकों अत्याचारोंके शिकार होते रहते हैं, उनका विस्तार करने और उन्हें स्थायी बनानेमें भारतकी रेलगाड़ियोंका कम हाथ नहीं है।

पशुओंका केवल चमड़ेके लिये वध किया जाता है यह बात स्वतःसिद्ध मानी जा सकती है।

महान् दुःखकी बात तो यह है कि केवल ताजा या सूखा मांस खानेवाला मनुष्य ही मूक प्राणियोंपर होनेवाले इन अत्याचारोंको स्थायी बनानेमें सहायता नहीं पहुँचाता, इसमें वे भोले-भाले और निर्दोष प्रतीत होनेवाले भद्र पुरुष और स्कूल-कॉलेजके छात्र भी कम जिम्मेवार नहीं हैं, जो बढ़िया-बढ़िया बूट या जूते पहनकर **बड़े-बड़े शहरोंकी**

सड़कोंपर बड़ी शानसे घूमते फिरते हैं । क्योंकि इस लेखमें ऊपर खालोंके बाहर भेजे जानेका प्रसंगतः उल्लेख करते हुए यह बताया गया है कि केवल खालोंके व्यापारके लिये बड़ी संख्यामें पशु-वध होता है । भारतीय औद्योगिक कमीशन (१९१६ से १८ तक) के द्वारा सरकारकी ओरसे लिपिबद्ध किये हुए निम्नलिखित बयानोंसे पता लगेगा कि हमारा यह कथन किस प्रकार स्वतःसिद्ध सत्यके समान है ।

प्रश्न—आप कहते हैं कि आप अपने यहाँ उपयोगमें आनेवाली खालें कलकत्तेमें ही खरीदते हैं। क्या इस कामको भी आप ही करते हैं ?

(पृष्ठ ८५, कलकत्तेकी राष्ट्रीय चर्मशोधन-शाला (National Tannery) के अध्यक्ष श्रीयुत दासका दिया हुआ मौखिक बयान ।)

उत्तर—कभी-कभी मैं बूचड़खानोंमें जाता हूँ और वहाँ जाकर खालें खरीदता हूँ ।

प्रश्न—तो आप खालें खरीदने तथा उनसे चमड़ा बनाने दोनों ही कामोंमें प्रवीण हैं ?

उत्तर—कलकत्तेमें जीवित अवस्थामें ही पशुओंकी खालें खरीदी जाती हैं । पशुओंको जब बूचड़खानोंमें ले जाया जाता है तब मैं जाकर उन्हें देखता हूँ और उन्हें चुन लेता हूँ और तब उन्हें खरीदता हूँ । अवश्य ही मरे हुए पशुओंकी खालोंको चुनना कठिन होता है ।

'यहाँ मैं यह कह देना चाहता हूँ कि क्रोम नामक बढ़िया चमड़ा तैयार करनेके लिये हमें उत्तम श्रेणीके चमड़ों एवं खालोंकी आवश्यकता होती है, जो अधिकांश बूचड़खानोंसे ही मिलते हैं।······बंगालके क्रोम नामक चमड़ा तैयार करनेवालोंको विभिन्न बूचड़खानोंसे इस प्रकारकी खालें एवं चमड़े उनके आवश्यकतानुसार बराबर मिलते रहनेकी कोई निश्चित व्यवस्था हो सके तो उन्हें बहुत अधिक लाभ होगा ।'

(पृष्ठ ३४२, डा० सर नीलरतन सरकारका लिखित बयान)

'कलकत्तेके आधुनिक चमड़ा कमानेवाले प्रायः सोलहों आने म्युनिसिपलिटीके बूचड़खानोंसे प्राप्त ताजे उधेड़े हुए चमड़ोंको ही व्यवहारमें लाते हैं ।'

(पृष्ठ ७३९, श्रीयुत जे. सी. के. पैटरसनका लिखित बयान)

प्रश्न—आप किस प्रकारकी खालोंका व्यवहार करते हैं–ताजी खालोंका या पुरानी खालोंका ?

(पृष्ठ७६३-७६४, कलकत्ते-की चर्मशोधनशालाके श्रीयुत एम. एस. दास-का मौखिक बयान)

उत्तर–हम ताजी खालोंका ही व्यवहार करते हैं ।

प्रश्न–क्या आपने नमकमें डाली हुई खालोंका व्यवहार करके देखा है ?

उत्तर–हाँ, हम ऐसी खालोंका भी व्यवहार करते हैं ।

प्रश्न–क्या आप उनसे बढ़िया चमड़ा तैयार कर लेते हैं ?

उत्तर–हाँ ।

प्रश्न–ताजी खालोंकी अपेक्षा पुरानी खालोंको कमाना क्या अधिक कठिन नहीं है ?

उत्तर–बूचड़खानोंसे आयी हुई ताजी खालोंसे बढ़िया और मुलायम चमड़ा तैयार होता है । धूपमें पड़ी हुई खालोंको खरीदना बड़ी जोखिमका काम है, क्योंकि उन्हें चूनेमें डालते ही कभी-कभी आधेसे अधिक खालें नष्ट हो जाती हैं ।

दूरीका मोटा एवं अभेद्य पर्दा

ऊपर दिये हुए बयान सभी विचारशील एवं कोमलहृदयके व्यक्तियोंकी आँखें खोल देनेके लिये पर्याप्त हैं । इनसे यह बात निर्विवाद सिद्ध हो जाती है कि **बढ़िया-से-बढ़िया क्रोम चमड़ा, जिसके बने सुन्दर जूते डाक्टर और वकील, कालेजोंके प्रोफेसर और छात्र, हाई-स्कूलोंके अध्यापक और उनके विद्यार्थी, धनी व्यापारी और उनके अमीर ग्राहक तथा दूसरे बहुतसे लोग शौकसे धारण करते हैं, म्युनिसि-पलिटियोंके बूचड़खानोंसे प्राप्त होता है । अतः वे सब लोग, जो इस प्रकारके जूतोंका प्रयोग करते हैं, बूचड़खानोंमें अनवरत रूपसे होनेवाले निर्दयतापूर्ण एवं विचारहीन पशुवधको प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष-रूपसे, जानमें अथवा अनजानमें, स्वेच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक सहायता पहुँचाते हैं और प्रोत्साहन देते हैं** । परन्तु हमारी धारणामें उनमेंसे अधिकांश व्यक्ति इन दीन पशुओंके प्रति हृदयमें इतना प्रेम और दयापूर्ण सम्मानका भाव रखते हैं कि यदि उन्हें इस पशुवधके सम्बन्धमें पूरी बातोंका पता लग जाय और काटे जानेवाले पशुओंके और इन सदाशय व्यक्तियोंके बीचमें पड़ा हुआ व्यवधानका मोटा एवं अभेद्य पर्दा न हो तो उन्हें इस पशु-हत्यामें प्रत्यक्ष रूपसे एवं स्वेच्छापूर्वक योग देनेकी कल्पनासे ही बड़ा दुःख होगा । परन्तु हमारे दुर्भाग्यसे देश और कालके व्यवधानका नाश करनेके लिये वर्तमान युगके पाश्चात्त्य वैज्ञानिकोंद्वारा आविष्कृत यातायातके वेगयुक्त साधनोंने, जहाँतक हम समझते हैं, केवल दूरीका

एक मोटा और अभेद्य पर्दा खड़ा कर दिया है । यदि ऐसा न होता तो उपर्युक्त व्यक्तियोंमेंसे, जिनमेंसे अनेकों बहुत बड़े विद्वान् और बहुज्ञ हिंदू हैं एवं पवित्र तथा उपकारिणी गौको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते हैं, बहुत थोड़े मनुष्य म्युनिसिपलिटियोंकी देख-रेखमें सञ्चालित किसी भी बूचड़खानेमें काटी जानेवाली गौओंकी खालोंसे तैयार किये हुए जूतोंको पहननेके लिये तैयार होते । अतः भारतमें तथा भारतसे बाहर भी बढ़ी हुई बेरोक-टोक पशु-हत्याके लिये यातायातके वेगयुक्त साधनोंद्वारा उत्पादित नवीन परिस्थिति ही हमारी समझसे अधिक जिम्मेवार है । आगे चलकर यह बात और भी स्पष्ट हो जायगी । अतः **हम अपने सभी दयार्द्रहृदय देशवासियोंसे यह अनुरोध करते हैं कि वे काटे हुए पशुओंकी खालसे बने हुए चमड़ेका सर्वथा बहिष्कार कर दें,** चाहे वह भारतमें तैयार किया गया हो या विदेशोंमें; क्योंकि प्रतिवर्ष हमारे देशसे बहुत बड़े परिमाणमें कमायी हुई एवं कच्ची खालें और चमड़े विदेशोंमें भेजे जाते हैं । कच्ची और कमायी हुई खालें और चमड़े प्रतिवर्ष किस बड़े परिमाणमें बाहर भेजे जाते हैं, यह दिखलानेके लिये हम नीचे एक तालिकाके रूपमें सन् १८८१ ई० से खालोंके निर्यातके आँकड़े दे रहे हैं—

(हंड्रेडवेटोंमें)

[एक हंड्रेडवेट लगभग १ मन १५ सेरका होता है]

जिन वर्षोंके वार्षिक निर्यातकी औसत दी गयी है—	कच्ची खालें	कमायी हुई खालें	कच्चे चमड़े	कमाये हुए चमड़े
१८८१—१८८५	६,२६,२५०	८७,९७५	४०,१६७	१,२९,४८६
१८८६—१८९०	६,१७,१९४	९१,७३२	४१,६८८	१,६४,१९७
१८९१—१८९५	५,०८,४०४	९८,८४०	८०,६९६	१,८९,५९१
१८९६—१९००	७,८६,५४४	१,४४,७२४	१,२०,१३९	१,९४,५५३
१९०१—१९०५	८,०२,६९८	१,४४,५८०	२,६६,७२१	१,५९,५४५
१९०६—१९१०	८,६३,४४९	१,८०,७६९	४,८०,६४९	१,४३,००६
१९११—१९१५	९,६७,१४१	१,९०,४००	५,०६,६४२	१,३४,८२६

देखिये, 'भारतीय शस्त्र-सम्बन्धी बोर्ड' (Indian Munitions Board) के चमड़ेके व्यवसायपर निबन्ध, पृष्ठ २ ।

अब हमलोग उन देशोंकी ओर दृष्टिपात करें, जिनमें ये खालें एवं चमड़े भेजे जाते हैं—

सन् १९१३ ई० के निर्यातमें बाहरके विभिन्न देशोंका हिस्सा

(हंड्रेडवेटोंमें)

बाहर भेजनेके स्थान	कच्ची खालोंका परिमाण	प्रतिशत भाग
जर्मनी	३,८८,०००	३५
आस्ट्रिया-हंगरी	२,३८,०००	२१
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	१,५५,०००	१४
इटली	१,०७,०००	१०
स्पेन	४९,०००	५
ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंड	४२,३००	४
हालैंड	४१,०००	४

देखिये "Hand-book of Commercial Information for India" (भारतीय व्यापार-सम्बन्धी ज्ञानकी विवरण-पुस्तिका)

यहाँ प्रसङ्गतः हम यह बतला देना चाहते हैं कि कमायी हुई खालोंका अधिक परिमाण ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंडको ही जाता है। सन् १९१६-१७ में ९९ प्रतिशत और १९१९-२० में ९३ प्रतिशत कमायी हुई खालें ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंडको भेजी गयीं। १९२२-२३ में ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंडमें कमायी हुई खालोंका आयात ५२०० टनसे ९१०० टन हो गया, जो संसारभरके आयातका ९१ प्रतिशत भाग था।

(देखिये 'Hand-book of Commercial Information for India', पृ० २१९)

संसारभरमें व्यवहृत बकरोंके चमड़ेका तृतीयांश भारतसे जाता है

संसारभरमें व्यवहार होनेवाले कच्चे एवं कमाये हुए बकरोंके चमड़ेका तृतीयांश भारतसे जाता है। अमेरिकाके संयुक्त-राष्ट्रोंमें सदासे भारतके कच्चे चमड़ोंका सबसे बड़ा आदर रहा है, क्योंकि भारतवर्षके बाहर बकरोंके चमड़ोंका जितना निर्यात होता है, उसका पौना अकेले अमेरिकामें जाता है। इसके बाद ग्रेट-ब्रिटेन एवं आयर्लैंडका नंबर आता है और फ्रांस, हालैंड, जर्मनी, बेल्जियम आदि अन्य यूरोपीय देशोंमें भी हमारे यहाँके कमाये हुए चमड़े काफी परिमाणमें जाते हैं। (वही पुस्तक, पृष्ठ २२०)

भारतसे बाहर जानेवाले कमाये हुए बकरे और भेड़ोंके चमड़ोंका प्रतिशत विभाग

भारतसे बाहर जानेवाले कमाये हुए बकरों एवं भेड़ोंके चमड़ेका प्रतिशत विभाग निम्नलिखित तालिकासे जाना जा सकता है—

देशोंके नाम	बकरोंका चमड़ा				भेड़ोंका चमड़ा			
	१९१९-२०	१९२०-२१	१९२१-२२	१९२२-२३	१९१९-२०	१९२०-२१	१९२१-२२	१९२२-२३
ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंड	८६.३	९३.०	८९.८	९३.८	६८.२	५५.३	५१.५	५६.४
अमेरिकाके संयुक्तराष्ट्र	११.४	३.५	६.७	५.६	१८.९	७.५	४.७	५.३
जापान	.५	.८	१.२	.१	९.१	२४.१	२९.३	२६.३

अब तो युद्धके बाद यहाँसे अमेरिका बहुत अधिक संख्यामें चमड़ा ले जाना चाहता है।

पूर्वीय भारतकी 'किप' नामक खाल।

उपर्युक्त कच्ची एवं कमायी हुई खालोंके अतिरिक्त **छोटी रासकी गायों, बैलों, साँड़ों और बछड़ोंकी** कुछ अधकमायी हुई खालें भी होती हैं, जिन्हें 'पूर्वीय भारतकी किप' खाल कहते हैं, जो अधिकांश मद्रास और बम्बईकी देशी चर्म-शोधन-शालाओंमें हाथसे कमायी हुई होती हैं। 'पिछले महायुद्धसे पहले (अर्थात् सन् १९१४ के पूर्व), **ये खालें बड़े परिमाणमें ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंडको भेजी जाती रहीं और वहाँ उन्हें और अधिक मुलायम बनाया जाता था।'**

'किप' खालोंको युद्ध-के द्वारा प्रोत्साहन

'जिस क्षण सैनिकोपयोगी बूटोंके लिये ऊपरी चमड़ेके रूपमें इन खालोंकी उपयोगिता समझमें आयी, उसी क्षणसे इन खालोंके निर्यातको प्रोत्साहन देनेके लिये सब प्रकारके प्रयत्न प्रारम्भ हो गये!

अगस्त सन् १९१६ में भारत-सरकारने इस व्यापारकी व्यवस्था अपने हाथमें ले ली और सारा-का-सारा चमड़ा War office **(युद्ध-कार्यालय) में सीधे भेजनेके लिये खरीद लिया।**

······पिछले महायुद्धसे पहले प्रतिवर्ष औसतन

१५ लाख 'किप' अर्थात् बूटोंके ऊपरी भागमें काम आनेके लिये २ करोड़ ७० लाख फीट चमड़ा तैयार होता था। युद्धके दिनोंमें इससे दूने अर्थात् ३० लाख 'किप' तैयार होने लगे। मित्र-सेनाके सैनिकोंके बूटोंमें लगाये जानेवाले ऊपरी चमड़ेका ⅘ भाग भारतीय खालोंसे प्राप्त होता था।

(देखिये "Hand-book of Commercial Information for india 1924" पृष्ठ २१८)

इस युद्धकालमें तो पता नहीं 'किप'की संख्या कितनी अधिक हो गयी होगी; क्योंकि उसके आँकड़े नहीं मिल सके हैं।

सरकारी आवश्यकताएँ ही व्यापारके नियन्त्रण एवं दिशा-परिवर्तनमें कारण हैं।

ऊपरके उद्धरणोंसे स्पष्ट हो जाता है कि सरकारी आवश्यकताएँ किस प्रकार किसी विशिष्ट व्यापारको प्रोत्साहन देती हैं और किस प्रकार उसे एक दिशासे दूसरी दिशामें ले जाती हैं।

निम्नलिखित उद्धरण इस विषयपर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं—

'जितनी चर्म-शोधन-शालाएँ सरकारी नमूनेके अनुसार चमड़ा बना सकती हैं, उन सबमें तैयार होनेवाले सामानपर अब भी सरकारका नियन्त्रण है। खालोंकी व्यापक कमीके कारण उनके यातायातपर नियन्त्रणकी व्यवस्था की गयी है और इस बातका भी प्रबन्ध किया गया है कि जिन चर्म-शोधन-शालाओंपर सरकारका नियन्त्रण है, उनकी आवश्यकताओंकी यथासम्भव पूर्ति होती रहे। खालोंका मूल्य बेहद न बढ़े, इस उद्देश्यसे रक्षिका सेनाके लिये अपेक्षित विभिन्न प्रकारके चमड़ोंका ऊँचे-से-ऊँचा मूल्य निश्चित कर दिया गया है और सारा चमड़ा देशकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये काम आ सके, इसके लिये उनके निर्यातपर कड़ा नियन्त्रण लगाया जा रहा है। **इन्हीं सब कारणोंसे जहाँ सन् १९४२ में वृक्षोंकी छालसे कमाया हुआ चमड़ा २ करोड़ ५३ लाख ८० हजार रतल, और 'क्रोम' चमड़ा १ करोड़ ५१ लाख ८० हजार वर्गफीट तैयार हुआ था, वहाँ सन् १९४३ में अर्थात् एक ही वर्ष बाद, वृक्षोंकी छालसे कमाये हुए चमड़ेका उत्पादन २ करोड़ ९३ लाख ६० हजार रतल और जूतोंके ऊपरी भागमें काम आनेवाला 'क्रोम' चमड़ा १ करोड़ ६४ लाख ६० हजार वर्गफीट हो गया।**' (देखिये "Indian Information" नामक सरकारी पत्रका जुलाई, १९४५ का अङ्क, पृष्ठ ८३)

सन् १९४३ की सरकारी रिपोर्टसे पता चलता है कि कुल २००१०००० गायों तथा ५७१०००० भैंसोंकी खालें तैयार हुईं, जिनमेंसे ५२७०००० गायें और १३३०००० भैंसें बेमौत मारी गयी थीं। यानी गाय-भैंस दोनों मिलाकर ६६००००० की संख्यामें काटी गयीं। इनमें अधिकतर खालके व्यापारके लिये ही काटी जाती हैं। Review of the Tarde of India सन् १९४२-४३के अनुसार सन् १९४१-४२ में ३४००० टन कच्ची खालें और चमड़े विदेशोंमें गये हैं। इसके बादके सालमें निर्यातकी असुविधाओंके कारण कुछ संख्या घटी है। परन्तु बछड़ोंके चमड़ोंका निर्यात तो इस वर्ष भी बढ़ा है! इसका खास ग्राहक अमेरिका था!

इस निबन्धमें ऊपर दिये हुए निर्यातके आँकड़ोंसे पता लगता है कि इंग्लैंड तथा यूरोपके अन्य देशों, अमेरिकाके संयुक्तराष्ट्रों एवं जापानको कच्ची एवं कमाई हुई खालें तथा चमड़े कितने बड़े परिमाणमें यहाँसे भेजे जाते रहे हैं। अब हमें यह देखना है कि यहाँसे बाहर भेजी हुई खालों और चमड़ोंसे कितने विभिन्न प्रकारके मुलायम चमड़े तैयार किये जाते हैं और इन खालों और चमड़ोंसे किस प्रकारकी वस्तुएँ तैयार होती हैं। मुख्य प्रकारके मुलायम चमड़े और उनसे तैयार की जानेवाली चीजोंका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

बैल, बछड़ी, गौ एवं साँड़ोंकी खालें तथा उनसे बनी हुई चीजें

'चमड़ेकी भारी चीजें तैयार करनेमें काम आनेवाली खालोंके तीन विभाग किये जा सकते हैं—(१) बैल और बछड़ियोंकी खालें, (२) गौओंकी खालें, (३) साँड़ोंकी खालें। बैलों और बछड़ियोंकी खालें सबसे अधिक उपयोगी होती हैं, उनसे मजबूत, कड़ा और ठोस चमड़ा तैयार होता है। गौओंकी खालें पतली होती हैं, वे स्वयं रेशेदार किन्तु घन होती हैं और अपने बढ़ाव अथवा विस्तारके कारण मुख्यतया थैलों और 'पोर्टमेंटों' तथा इसी तरहकी दूसरी चीजें बनानेके काममें आती हैं।

(Encyclopaedia Britannica)

दस्तानोंमें मेमनेके चमड़ोंका व्यवहार।

साँड़ोंकी खालें भी रेशेदार होती हैं; वे अधिकांश सस्ती कमरपेटियाँ आदि बनानेके काममें आती हैं, और अधिक मोटी खालोंका लोहे एवं इस्पातके कारखानोंमें प्रयोग होता है। 'तीन महीनेके

मेमनोंकी अपेक्षा निर्जीव पैदा होनेवाले और एक महीनेके अंदरके मेमने अधिक मूल्यवान् होते हैं; बढ़िया-से-बढ़िया दस्ताने (हाथके मोजे) बनानेमें उनका उपयोग किया जाता है; क्योंकि उनका चमड़ा केवल दूधके द्वारा पुष्ट होता है। जब मेमने घास चरने लग जाते हैं तब उनका चमड़ा कठोर हो जाता है।' (Encyclopaedia Britannica)

इसी प्रकार भेड़ोंका 'शेमुवा' और बकरोंका 'मोरक्को' नामक चमड़ा दस्ताने आदिके बनानेके काममें आता है। 'बफ' नामक चमड़ा बैलों अथवा गौओंकी खालसे तैयार किया जाता है।

'क्राउन' नामक चीजें।

कमरपेटियाँ, वृक्षोंमें पानी पहुँचानेकी नलियाँ, सैनिकों-के उपयोगमें आनेवाले पानीके चमड़ेसे बनी हुई थैले इत्यादि विविध वस्तुएँ 'क्राउन' (Crown) नामक चमड़ेसे बनायी जाती हैं। यह चमड़ा इस प्रकार तैयार किया जाता है कि उससे बने हुए थैलेंमें रक्खे जानेवाले पानीका स्वाद नहीं बदलता।

चमड़ेका कतिपय वाद्यों-के अङ्गरूपमें व्यवहार।

जब कि उपर्युक्त वस्तुएँ केवल चमड़ेसे ही बनती हैं, वाद्य आदि कुछ वस्तुएँ, ऐसी भी होती हैं कि चमड़ेका उनके अङ्गरूपमें ही व्यवहार होता है। जिन वाद्योंके बनानेमें चमड़ेकी आवश्यकता होती है, उनके नाम ये हैं 'बैग पाइप' (Bag Pipe), सारंगी, बेला, सितार, विभिन्न आकार-प्रकार एवं परिमाणके ढोल, नगारे एवं मृदङ्ग इत्यादि, हार्मोनियम तथा पियानो आदि। पुस्तकोंकी जिल्द बाँधने तथा कपास लोढ़ने-के डंडे बनानेमें भी चमड़ेका व्यवहार होता है।

मांसके व्यापारकी अन्य शाखाएँ।

सारांश यह कि चमड़ेका व्यवहार मुख्यतया बूट, जूते, चप्पल, काठी एवं घोड़ोंके अन्य अन्य प्रकारके साज, कपास लोढ़नेके डंडे, मशीनोंकी पट्टियाँ और रस्से, थैले, पोर्टमेंट, वृक्षोंमें पानी देनेकी नलियाँ, सैनिकोपयोगी पानीके थैले तथा बन्दूकें एवं अन्य शस्त्रोंकी खोलें तैयार करने, पुस्तकोंकी जिल्द बाँधने एवं वाद्य बनानेमें होता है। चमड़ेकी बनी हुई वस्तुओंकी इस सूचीसे, जो अधिकतर काटे हुए पशुओंकी खालोंसे तैयार की जाती हैं, एक बात निश्चितरूपसे प्रकट होती है कि भारतके बूचड़-खानोंसे विदेशोंमें भेजी जानेवाली खालों एवं चमड़ेके व्यापारकी शाखा-प्रशाखाएँ इतनी विस्तृत एवं बहुसंख्यक हैं कि कभी-कभी अत्यन्त दयार्द्रहृदय एवं नैतिक विचारके हिंदुओंके लिये भी, चाहे उनका गौओं और साँड़ोंके प्रति कितना ही सम्मानका भाव क्यों न हो, काटी हुई गौओं एवं साँड़ोंकी खालसे बनी हुई किसी भी वस्तुका व्यवहार न करना एक प्रकारसे असम्भव-सा हो गया है। इसीलिये हम कहते हैं कि यातायातके वेगयुक्त साधनोंने वास्तवमें दूरीका एक मोटा एवं अभेद्य पर्दा हमारे सामने डाल दिया है। परन्तु यदि कोई हिंदू चमड़ेकी वस्तुओंसे अत्यधिक सावधान रहकर किसी भी काटे हुए पशुकी खाल या चमड़ेकी बनी हुई वस्तुके व्यवहारसे सर्वथा बचा भी रहे, तब भी वह कुछ अन्य प्रकारके धोखोंमें पड़नेसे नहीं बच सकता। हम यह इसलिये कहते हैं कि मांसके व्यापारकी शाखा-प्रशाखाएँ केवल ताजे गोमांस, सूखे मांस एवं चमड़ोंके व्यापारके रूपमें ही विस्तृत नहीं है, परन्तु निम्नलिखित व्यापारोंकी भी उन्हींमें गणना है—

(क) आँतों एवं ताँतोंका व्यापार
(ख) सूखे रक्तका व्यापार
(ग) मोमबत्तियोंका व्यापार
(घ) सींगोंका व्यापार
(ङ) हड्डियोंका व्यापार

उपर्युक्त व्यापारोंका स्वरूप क्या है और किस प्रकार वे चलते हैं, इस विषयपर पर्याप्त प्रकाश डालनेके लिये हम प्रामाणिक ग्रन्थोंसे कुछ उपयुक्त उद्धरण नीचे देते हैं—

(क) आँतों एवं ताँतोंका व्यापार।

'भारतवर्षसे बाहर भेजी जानेवाली आँतों एवं ताँतोंका व्यापार कुछ महत्त्व रखता है, यद्यपि उसे अनेकों कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। 'आँत' और 'ताँत' शब्दोंका व्यवहार एक ही अर्थमें होता है; अन्तर केवल इतना ही है कि सामान्यतया गायों और बैलोंके भीतरी अङ्गोंको आँत कहते हैं, जब कि भेड़ों एवं बकरोंके उन्हीं अङ्गोंको ताँत कहते हैं, यद्यपि कुछ भेड़ोंकी ताँतोंको—उदाहरणतः मोटी पूँछवाले दिल्लीके मेढ़ोंकी ताँतोंको—नमकमें डालकर आँतोंके नामसे भी बेचा जाता है।'

'आँतें बहुधा सीधे बूचड़खानोंसे खरीदी जाती हैं और अविलम्ब पासके मकानोंमें उन्हें साफ किया जाता है। चर्बीको सावधानीसे काटकर अलग कर देनेपर उन्हें उथल दिया जाता है और लकड़ीके टुकड़ेसे रगड़कर अच्छी तरहसे धो दिया जाता है।'

'नीचे दी हुई तालिकामें सन् १९१९-२० के बादसे

कलकत्तेसे विदेशोंमें जानेवाली आँतोंका परिमाण दिया गया है। मार्च सन् १९१७ से पहले आँतोंके पृथक् आँकड़े नहीं रक्खे जाते थे। संसारभरके बाजारमें भारतीय आँतोंको अच्छी ख्याति प्राप्त है, परन्तु पिछले महायुद्धसे पहले वे दक्षिणी रूससे आनेवाली आँतों-जितनी अच्छी नहीं समझी जाती थीं।

(देखिये Hand-book of Commercial Information for India, पृष्ठ ३२८—२९)

सन् १९१९-२० के बादसे कलकत्तेसे बाहर जानेवाली आँतोंका परिमाण—

(हंड्रेडवेटोंमें)

देशका नाम	१९१९–२०	१९२०–२१	१९२१–२२	१९२२–२३
बेल्जियम	...	३३१	५११	२९०
जर्मनी	...	२९	...	९१
ग्रेटब्रिटेन और आयलैंड	९	...	१	...
फ्रांस	४५६	६४७	११९	४०१
स्पेन	३३३	४५८	२७९	५८७
स्वीजरलैंड	...	९८	...	...
अमेरिकाके संयुक्तराष्ट्र	९	...	...	...

(देखिये उपर्युक्त पुस्तक, पृष्ठ ३२९)

(ख) सूखे रक्त आदिका व्यापार।

'कलकत्ता, मद्रास एवं बम्बई आदि बड़े शहरोंमें बूचड़खानोंसे प्राप्त सूखा खून भी पर्याप्त परिमाणमें बाहर भेजा जाता है। इसे अंग्रेजीमें 'Bloodmeal' कहते हैं। सन् १९२२ में लङ्काद्वीपको आठ सौ टन सूखा रक्त रवाना किया गया था। नाइट्रोजन (Nitrogen) के साथ १० से १२ प्रतिशत सूखा रक्त और ८ से १० प्रतिशत हड्डियोंका चूरा (Animal-meal) एवं १२ से १३ प्रतिशत सींगोंका चूरा (Horn-meal) बिकता है।' (उपर्युक्त पुस्तक, पृष्ठ २७८)

(ग) मोमबत्तियोंका व्यापार।

'मोमबत्तियाँ स्टीअरिन (हड्डियोंसे प्राप्त होनेवाले एक द्रव्य) से या स्टीअरिनसे मिश्रित मोमसे रंगूनके समीप सिरयम नामक स्थानमें बनायी जाती थीं।······स्टीअरिनकी मोमबत्तियाँ कलकत्ते, मद्रास, मैसूर एवं बिल्लीमोरा (बड़ौदा राज्य) में भी तैयार होती हैं; परन्तु इनमेंसे किसी भी केन्द्रमें इस व्यवसायकी कोई विशेष उन्नति अबतक नहीं हुई।' (उपर्युक्त पुस्तक, पृष्ठ ३२२)

(घ) सींग तथा उनके उपयोग।

यद्यपि सींगोंके निर्यातके परिमाणको बतलानेवाले आँकड़े हमें नहीं मिले हैं, तथापि यह निश्चित है कि सींग बहुत बड़े परिमाणमें विदेशोंमें भेजे जाते हैं; क्योंकि सींगोंसे दैनिक व्यवहारकी बहुत-सी उपयोगी वस्तुएँ बनायी जा सकती हैं। 'Encyclopaedia Britannica'में लिखा है।

'सींगोंका कंघी, बटन, छड़ियों, छातों एवं चाकुओंके मुट्ठे, पीनेके प्याले, नाना प्रकारके चमचे एवं सुँघनीकी डिब्बियाँ आदि बनानेमें उपयोग होता है। पहले इनका और भी कई कार्योंमें उपयोग होता था, किन्तु अब उन कार्योंमें इनकी आवश्यकता नहीं होती।······'

(ङ) हड्डियोंका व्यापार।

यद्यपि सींग व्यापारिक दृष्टिसे बहुत ही कामकी वस्तु है, किन्तु हड्डियाँ सींगकी अपेक्षा भी कहीं अधिक उपयोगी हैं। नीचे दी हुई बातों एवं आँकड़ोंसे यह स्पष्ट हो जायगा कि हड्डियोंको व्यापारिक दृष्टिसे किस-किस उपयोगमें लिया जाता है और किस परिमाणमें वे भारतवर्षसे बाहर भेजी जाती हैं। निम्नलिखित तालिकामें भारतसे प्रतिवर्ष बाहर जानेवाली हड्डियोंके परिमाण दिये गये हैं—

वर्ष	परिमाण (टनोंमें)	मूल्य (पौंडोंमें)
१९१८-१९	१६,७३४	८४,४०९
१९१९-२०	८३,६९३	५,०२,३४२
१९२०-२१	९९,१४८	६,६७,०३३
१९२१-२२	८९,००५	६,१३,८५०
१९२२-२३	८४,५७१	६,०५,५९०

पहले महायुद्धसे पूर्व मुख्यतया हड्डियाँ बेल्जियम, फ्रांस, ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंड, जापान और जर्मनीको भेजी जाती थीं; परन्तु सन् १९२२-२३ में वे मुख्यतया बेल्जियम एवं लङ्काको ही भेजी गयीं; बेल्जियममें हड्डियोंके कुल निर्यातका २७ प्रतिशत और लङ्कामें २४ प्रतिशत भेजा गया। शेष ४९ प्रतिशतमेंसे अधिकांश हड्डियाँ ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैंड, जर्मनी, अमेरिकाके संयुक्त-राष्ट्र एवं फ्रांसको भेजी गयीं।

हड्डियोंके व्यावसायिक उपयोग।

यहाँ स्वाभाविक ही यह प्रश्न उठ सकता है कि उपर्युक्त देशोंमें इतने बड़े परिमाणमें जो हड्डियाँ भेजी जाती हैं, उनका क्या उपयोग होता है। उन्हें किन-किन कामोंमें लिया जाता है। नीचे इसका प्रामाणिक विवरण दिया जा रहा है।

'मनुष्यकी बढ़ती हुई आविष्कारशक्तिके कारण जीवोंकी हड्डियोंका व्यावसायिक उपयोग इतना बढ़ गया है कि उनमें रहनेवाले तत्त्वोंके किसी भी अंशका व्यापारिक क्षेत्रमें रूपान्तर हुए बिना नहीं रहता।'

(क) हड्डियोंका खाद आदिके रूपमें व्यवहार।

हड्डियोंमें फॉस्फेट्स (एक प्रकारका क्षार), चूना, अमोनिया (एक प्रकारकी गैस), कार्बोनिक नामका अम्ल, चर्बी तथा चेपदार द्रव्य आदि तत्त्व रहते हैं। इनमेंसे प्रथम चारका कृत्रिम खादके रूपमें उपयोग होता है। चर्बी साबुन तथा मोमबत्ती बनानेके काममें आती है और चेपदार तत्त्वोंसे सरेस आदि बनाये जाते हैं।

हड्डियोंकी खादका महत्त्व।

वर्तमान युगमें कृषिमें जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सुधार हुए हैं, खेतोंकी खादके रूपमें हड्डियोंका उपयोग भी उनमेंसे एक है।'''''''''इनमें पृथ्वीको उर्वरा बनानेवाली शक्ति इस कारणसे आती है कि सड़ जानेपर हड्डियोंसे अमोनिया नामक गैस, कार्बोनिक नामक अम्ल, कॉस्फेट्स और चूना आदि प्रचुर परिमाणमें प्राप्त होते हैं। ये सब-के-सब पेड़-पौधोंके पोषण एवं वृद्धिके लिये बड़े आवश्यक हैं। हड्डियोंमें रहनेवाले जैव एवं पार्थिव—दोनों प्रकारके तत्त्व समानरूपसे मूल्यवान् होते हैं।

'हड्डियोंका बारीक चूरा व्यापारिक दृष्टिसे सबसे अधिक मूल्यवान् है।''''''''इंग्लैंडके चेशायर एवं अन्य गोचर इलाकोंमें तथा सुदूरवर्ती पठारी भागोंमें खादके रूपमें जो इनका अधिक आदर हुआ है, उसने ग्रेट-ब्रिटेनमें विदेशी हड्डियोंके आयातको बहुत बढ़ा दिया है। आर्जेंटाइनके लोकतन्त्रराज्य एवं भारतसे ग्रेट-ब्रिटेन एवं आयर्लैंडको सबसे अधिक हड्डियाँ जाती हैं। खेतीके उपयोगमें लाये जानेके पूर्व इन्हें बहुधा इनके अंदर रहनेवाले तेल अथवा चर्बीके लिये उबाला जाता है और इस प्रकार प्राप्त हुए तेल एवं चर्बीको साबुन तथा गाड़ियों एवं छकड़ोंकी धुरियोंमें व्यवहारके लिये तेल आदि बनानेके काममें लिया जाता है।'

(देखिये The New Popular Encyclopaedia Vol. II का पृष्ठ २५०-५१)

(ख) हड्डियोंका कोयला और चीनी साफ करनेकी प्रक्रिया

हड्डियोंके कोयले या हाथीदाँतके कोयलेका चीनी साफ करनेके काममें बहुधा प्रयोग होता है। हड्डियोंका इस रूपमें व्यवहार इसलिये होता है कि विभिन्न प्रकारकी राब आदिका रंग नष्ट करने और इस प्रकार उन्हें साफ करने अथवा सफेद बनानेमें यह अन्य कोयलोंकी अपेक्षा भी अधिक उपयोगी होता है।

हड्डियोंका कोयला बनानेमें उनका वजन करीब आधा रह जाता है। कोयलेको तब खुरदरे बेलनोंसे इस प्रकार पीसा जाता है कि उनकी राख न बन जाय और इस प्रक्रियासे उनके छोटे-छोटे दाने कर दिये जाते हैं। द्रव-पदार्थोंका रंग उड़ा देनेके लिये उन्हें बारीक दानेदार कोयलोंमेंसे होकर चुआया जाता है और इस प्रकार उनके रंगवाले तत्त्व कोयलोंके द्वारा सोख लिये जाते हैं। चीनी साफ करनेमें कोयलोंकी तह कभी-कभी ५० फीट गहरी दी जाती है। उस तहमेंसे कुछ समयतक द्रव पदार्थके बहते रहनेपर कोयले बिल्कुल तर हो जाते हैं और तब उनमें गंदगी और रंगको सोखनेकी शक्ति नष्ट हो जाती है। तब उन्हें फिरसे व्यवहारमें लेनेके लिये उस शक्तिको पुनर्जीवित करना होता

है और इसके लिये कोयलोंको पानी या हाइड्रोक्लोरिक अम्ल-से धोया जाता है, अधिक समयतक हवा एवं नमीमें छोड़ दिया जाता या उन्हें इतना गरमाया जाता है कि वे लाल हो जाते हैं। अन्तिम प्रक्रिया सर्वश्रेष्ठ प्रक्रिया है और प्रायः सदा इसी प्रक्रियाको काममें लाया जाता है और कोयलोंको लोहेके नलोंमें, भट्ठोंमें या घूमते हुए सिलंडरों (Cylinders) में गरम किया जाता है।" (देखिये, The New Popular Encyclopaedia, Vol. II., पृष्ठ २५०)

हड्डियोंके कोयलेके अन्य उपयोग

धातुओंकी परीक्षाके लिये 'क्यूपल' बनानेमें फास्फरिक अम्ल एवं फास्फरसके निर्माणमें भी हड्डियोंके कोयलेका व्यवहार होता है तथा उनसे कई प्रकारकी कृत्रिम खादें भी तैयार की जाती हैं। (देखिये Nelson's Encyclopaedia, Vol. IV. पृष्ठ ९९)।

(ग) हड्डियोंका अलकतरा

हड्डियोंसे कुछ प्रक्रियाओंद्वारा अलकतरेकी तरहका एक द्रव पदार्थ निकाला जाता है, जिसे हड्डियोंका रंग या हड्डियोंका अलकतरा कहते हैं। इस हड्डियोंके अलकतरेका उपयोग काली वार्निश या उसी प्रकारके पदार्थ बनानेमें किया जाता है।

(घ) हड्डियोंसे निकाली हुई चर्बीके उपयोग

हड्डियोंसे प्राप्त हुई चर्बी रंग उड़ा दिये जानेपर बढ़िया साबुनोंका अङ्ग बनकर हमारे सामने आती है। बिना साफ की हुई चर्बीसे तेल निकलता है, जिसे दूसरे तेलोंकी मिलावटके लिये काममें लिया जाता है। 'स्टीअरिन' या ठोस पदार्थ मोमबत्ती बनानेवालोंके काममें आ जाता है।

(ङ) जिलैटिन, सरेस, 'कार्डबोर्ड-साइज' इत्यादि

यद्यपि संसारभरकी हड्डियोंका अधिकांश सरेस और जिलैटिनके कारखानोंमें जाता है, टाँगों तथा रानोंकी हड्डियाँ चर्बी निकाल देने, कुरेदने एवं सुखा देनेके बाद बटन, चाकुओंके मुट्ठे आदि बनानेके काममें आती हैं। (Encyclopaedia Britannica)

जिलैटिनमिश्रित जलका दुबारा साफ करनेके बाद दफ्तीकी घेटियोंके लिये 'साइज' (चिकना बनानेवाला द्रव्य) बनानेमें उपयोग किया जाता है।

(च) जलनेवाली गैसें, जिनका मोटर आदि चलाने अथवा प्रकाश देनेके काममें उपयोग होता है।

हड्डियोंका कोयला बनाने तथा उनसे अलकतरा निकालते समय जलनेवाली गैस उत्पन्न होती है; साफ कर लेनेके बाद इनका बहुधा मोटर आदि चलाने अथवा प्रकाश देनेके काममें व्यवहार होता है। (Encyclopaedia Britannica, Vol. IV., पृष्ठ २०३)

सारांश यह कि व्यापारिक दृष्टिसे हड्डियाँ अत्यन्त मूल्यवान् हैं; क्योंकि बढ़िया साबुन, मोमबत्तियाँ, कृत्रिम खाद तथा धातुओंकी परीक्षाके लिये क्यूपल, जिलैटिन, सरेस, फास्फरस, फास्फरिक अम्ल, हड्डियोंका अलकतरा, दफ्तियोंको चिकना करनेवाला साइज, तेल और वार्निश, चीनीको साफ करनेके लिये या रंगवाले द्रव-पदार्थोंका रंग उड़ा देनेके लिये हड्डियोंका कोयला और बटन तथा चाकुओंके मुट्ठे बनानेमें इनका उपयोग हो सकता है।

जान्तव पदार्थोंके निर्यातको भारतीय रेलोंसे प्राप्त कृत्रिम प्रोत्साहनने भारतभूमिके उर्वरापनको नष्ट कर दिया है

उपर्युक्त पृष्ठोंमें दिये हुए प्रमाणोंसे इस लेखके सन्देह-शील-से-सन्देहशील पाठकोंको भी इस बातपर विश्वास हुए बिना नहीं रह सकता कि रक्त एवं हड्डियाँ; सींग और खुर, खालें और चमड़े, आँतें और ताँतें और सबसे बढ़कर सूखे मांस (जिससे बढ़कर निर्दयतापूर्ण एवं घृणित व्यापारका मनुष्यके द्वारा आजतक आयोजन नहीं हुआ) के निर्यातके प्रति भारतीय रेलोंद्वारा प्राप्त प्रोत्साहनने भारतभूमिके उपजाऊ-पनको बहुत तेजीके साथ नष्ट करनेका उपक्रम किये हैं। इनमेंसे कई पदार्थ, जैसा कि ऊपर विशद रूपसे समझाया गया है, पृथ्वीको उर्वरा करनेका गुण रखते हैं, और इन वस्तुओंके द्वारा इंग्लैंड आदिके अनेकों निकम्मे एवं ऊसर विस्तृत-भूमिखण्ड उपजाऊ बन गये हैं।

यहाँ यह भी बतला देना आवश्यक है कि यहाँसे बाहर जानेवाली खालें और चमड़े भी, जिनका भारतेतर देशोंमें उपयोग होता है, भारतभूमिके उपजाऊपनको नष्ट करनेमें रक्त एवं हड्डियोंकी अपेक्षा कम सहायक नहीं हैं। अतः हम निर्भयतापूर्वक यह कह सकते हैं कि भारतीय रेलोंके साथ-साथ जो हानिकारक व्यापारी मनोवृत्ति हमारे अंदर आ गयी है वह भारतभूमिके उपजाऊपनको नष्ट करनेमें तेजीके साथ सहायक बन रही है; क्योंकि अब यह एक सुप्रामाणिक वैज्ञानिक नियम सिद्ध हो चुका है कि भूमिके उपजाऊपनको पूर्ववत् स्थिर रखनेके लिये यह आवश्यक है कि उसमेंसे जो कुछ भी कच्चा सामान निकाला जाय, वह पुनः पृथ्वीको मिल जाना चाहिये। उसका रूप भले ही बदल जाय। इस प्रकार इस लेखमें ऊपर परिगणित जान्तव पदार्थोंके निर्यातको कृत्रिम प्रोत्साहन देकर भारतीय रेलें भारतवर्षसे प्रतिवर्ष लाखों टन उपजाऊ बनानेवाली सामग्री छीन रही हैं। ऐसी परिस्थितिमें, इसमें क्या आश्चर्य है कि जो भारतीय

फसलोंकी उपज, जैसा कि प्रोफेसर श्रीजदुनाथ सरकारने बताया है, क्रमशः कम होती जा रही है और साथ-ही-साथ खराब भी होती जा रही है। प्राचीनकालमें भारतीय कृषिजीवी, जो सदा ही सुखी और समृद्ध रहते थे, इसका हेतु यही था कि उन दिनों भारतीय भूमिके इन प्राकृतिक साधनोंको छीननेवाले कारण नहीं थे। भगवान् भारतीयोंको वह दृष्टि दें, जिसके द्वारा वे इन दुःखपूर्ण बातोंको समझें और आत्मघाती पाश्चात्त्य व्यापारी मनोवृत्तिका अन्धानुकरण न करें।

इस आत्मघाती व्यापारी मनोवृत्तिसे बचनेका कोई उपाय है कि नहीं ?

यह आत्मघाती व्यापारी मनोवृत्ति पश्चिममें उत्पन्न आधुनिक जडवादका विकृत परिणाम है। इस जडवादने बहुत-सी घृणित वासनाओंको जन्म दिया है और उन वासनाओंके द्वारा इस अविचारपूर्ण एवं कठोर व्यापारी मनोवृत्ति तथा उसके सभी असुन्दर रूपोंका विस्तार हुआ है। इस निन्दनीय व्यापारी मनोवृत्तिकी इतनी शाखा-प्रशाखाएँ हैं और इसका रूप इतना अधिक जटिल हो गया है कि हमलोगोंमेंसे कोई भी, चाहे वह कितना ही घोर प्रयत्न क्यों न करे, इसकी नीच एवं मानवतासे दूर हटानेवाली प्रवृत्तियों एवं वृत्तियोंसे सहजमें बच नहीं सकता। जबतक कि सरकारकी जड़में ऐसे लोग बने हुए हैं, जिनके नामोंकी सहजमें गिनती नहीं हो सकती और जिनके सारे हितका इस प्रकारके व्यापारके सञ्चालनके साथ अच्छेद्य सम्बन्ध है, (और जबतक सरकार दलबंदीके आधारपर जीवित है, जिसमें बहुमतसे सारे निर्णय होते हैं और जिसमें बेईमानी एवं आत्मवञ्चनाके लिये पर्याप्त गुंजाइश है, तबतक ऐसे लोगोंका रहना अनिवार्य है।) तबतक स्वाभाविक ही बहुधा ऐसे लोगोंके हाथोंमें शासनकी बागडोर रहती है, जिनकी मानव-जातिके हितकी व्यापक दृष्टि सत्ता एवं धनके लिये बढ़े हुए लालचके द्वारा धुँधली हो जाती है। यही कारण है आज सरकार योग्य एवं विशाल दृष्टिके लोगोंके हाथोंमें शासनकी बागडोर देनेमें असमर्थ है। परन्तु यदि हम वर्तमान निराशाजनक एवं शोचनीय परिस्थितिको बदलना चाहते हैं तो हमें अपने जीवन एवं अपनी राजनीतिका मार्ग ऐसा बनाना चाहिये जिससे सुयोग्य ईमानदार, देशके दीन-हीन मनुष्य और मूक पशुप्राणियोंके प्रति दयालु, कर्त्तव्यपरायण और उदारदृष्टि-सम्पन्न, त्यागी पुरुष अपने देशके शासनकी बागडोर अपने हाथमें लें और उसके भाग्यका निर्णय करें। हमारी समझसे आत्मघाती पाश्चात्त्य व्यापारी मनोवृत्तिसे बचनेका यही एक उपाय है।

धनकी अधिष्ठात्री देवीको आधुनिक व्यापारी मनोवृत्तिने जो ऊँचा आसन दे रक्खा है, वहाँसे उसे उतार दो।

यह नीच और निर्दय व्यापारी मनोवृत्ति, जो अपने लंबे परिकर-वृन्दके साथ पश्चिमसे आयी है, अब पूर्वीय जगत्को आप्लावित करके उन समस्त बहुमूल्य भावनाओं या सद्गुणोंको, जिन्हें सैकड़ों वर्षोंसे उसने इतने आदरके साथ स्थान दिया है, बहा ले जाने या ग्रस लेनेके लिये तैयार है। यह एक ओर तो धनके देवताको बहुत ऊँचे आसनपर प्रतिष्ठित करती है और दूसरी ओर प्रत्येक मानवोचित, उदार अथवा प्रशस्त भावनाको गौण स्थान देकर बहुत नीचे गिरा देना चाहती है। अतः मनुष्यको मानवतासे बहुत दूर ले जाकर नीचे गिरा देनेवाली इस निन्दनीय व्यापारी मनोवृत्तिने धनके देवताको जिस ऊँचे आसनपर बिठाया है, उसे वहाँसे जबतक हटाया नहीं जायगा, और जबतक मनुष्य अपनी पाशविक मनोवृत्तियों एवं नीच वासनाओंपर वाञ्छनीय नियन्त्रण नहीं कर सकेगा, तबतक दिव्ययुगके दर्शनसे,—जिसकी इस निबन्धके प्रारम्भमें दिये हुए विचारोंके श्रील्यूसर्न-जैसे लोग श्रद्धापूर्वक कामना करते हैं अथवा मनुष्य-जातिको उसकी निम्न अभिसन्धियों एवं मनोविकारोंके दलदलसे उबारनेकी सुदूरवर्ती सम्भावनासे—हमें निराश ही रहना पड़ेगा। परन्तु धनके देवताको उसके उच्च आसनसे उतारने अथवा मनुष्यकी वासनाओंको विशुद्ध करनेका कार्य इतना महान् है कि मानव-जातिके भविष्यका निर्णय एवं नियन्त्रण करनेवाली सर्वोपरि सत्ता भगवान्की सहायता एवं कृपाके बिना इसमें उल्लेख योग्य कोई भी सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती। अतः हम श्रद्धापूर्वक उस सर्वोपरि शक्तिका उन जीव-दयाका कार्य करनेवाले पुरुषोंके उत्साहपूर्ण प्रयत्नोंके लिये आशीर्वाद चाहते हैं, जो इतनी सचाईके साथ इस जगत्को, केवल मनुष्योंके लिये ही नहीं, समस्त जीवोंके रहने योग्य, अधिक उपयुक्त तथा सुखी बनाना चाहते हैं। भगवान् मनुष्य-जातिको उसकी नीच वासनाओं एवं अदम्य मनोविकारोंसे छुड़ाकर परमोच्च भावनाओं और सत्य, अहिंसा, दया और प्रेमके पवित्र पथसे अपनी ओर आकर्षित करें और हमारे स्वार्थरहित साधुस्वभाव पुरुषोंके पुण्य-प्रयत्नोंको सफलता प्रदान करें!

वर्तमान कारखानोंमें पशुओंके चमड़े, चर्बी और हड्डियोंका प्रयोग

(लेखक—श्रीयुत ईश्वरचन्द्र अग्रवाल, एम्० एस्-सी० (आनर्स), चीफ इंडस्ट्रियल केमिस्ट)

प्राचीन समयमें भारतवासी खाने-पहनने इत्यादिकी वस्तुओंके प्रयोगमें धर्म-अधर्म तथा शुद्धि-अशुद्धिका ध्यान रखते थे, किन्तु पश्चिमीय सभ्यताके प्रवेश और प्रचारसे अब यह ध्यान जाता रहा। वस्तु सुन्दर तथा आकर्षक हो, चाहे वह वस्तुतः अपवित्र और धर्मनाशक ही क्यों न हो!

प्राचीन समयमें भारत धर्म तथा शिक्षाके अतिरिक्त कला-कौशल (Industry) में भी संसारमें अद्वितीय था। दूसरे देशवाले यहाँ वस्त्र-निर्माण-कला एवं वायुयान-निर्माणकला (Textile Engineering and Aero-Engineering) सीखने आते थे। उस समय पशु-रक्षा धर्मका एक मुख्य अङ्ग था। किन्तु आश्चर्यकी बात है कि आजकल लोग कहते हैं कि कला-कौशलको बढ़ाने और स्थिर रखनेके लिये पशुओंको मारकर उनका उपयोग करना आवश्यक है।

मुझे वैज्ञानिक अनुसन्धान (Scietnific Research) का काफी अनुभव होनेके कारण पाठकोंको यह बतानेमें बड़ी प्रसन्नता होती है कि अनुसन्धान करनेसे कुछ ऐसी वस्तुओंका पता लग सकता है जो पशुओंकी हड्डी-चर्बी आदिके स्थानकी पूर्ति कर सकती हैं और तब पशुओंको मारनेकी आवश्यकता न रहेगी। हमारी सरकारका यह कर्तव्य है कि वह रसायन-शास्त्रज्ञोंको अनुसन्धान करनेकी आज्ञा तथा सुविधा दे।

१. कपड़े और जूट-मिलोंमें पशु-अवशेषोंका प्रयोग

(क) **चमड़ा**—कपड़ा बुननेके करघों (Looms) तथा अन्य मशीनोंमें पशुओंका चमड़ा लगाया जाता है। लेदर बेल्ट, लेदर लेस, लेदर स्ट्रैप, लेदर पिकर तथा लेदर कोरर आदि ऐसी आवश्यक वस्तुएँ हैं, जिनके बिना मशीनोंका काम नहीं चल सकता।

(ख) **चर्बी**—कपड़ेके ताना-धागोंको माँड़ी देकर मजबूत, मुलायम और भारी किया जाता है। माँड़ीमें ये चीजें मुख्य होती हैं—मैदा (Flour), मांड (Starch), चीना मिट्टी (China Clay), चर्बी (Tallow), मैगनेशियम क्लोराइड (Magnesium Chloride), और जिंक क्लोराइड (Zinc Chloride)।

(ग) **ग्रीज़**—यह मशीनोंको चिकनी रखने (Machine Lubricating) के लिये लगायी जाती है, गौकी चर्बीसे बनती है।

(घ) **ग्ल्यू**—लकड़ी-चमड़ा आदि जोड़ने और माँड़ीके काममें आनेवाला सरेस (Glue) पशुओंकी हड्डी आदिको गलाकर बनाया जाता है।

२. चीनीकी मिलोंमें पशुओंकी हड्डियोंका प्रयोग

पहले गन्नेको मशीनोंद्वारा काटकर रस निकाल लिया जाता है। फिर रसमेंसे प्रोटीन और आर्गेनिक एसिड दूर करनेके लिये रसको चूनेके पानीके साथ उबाला जाता है। तदनन्तर रसमें कार्बन डाइओक्साइड तथा सल्फर डाइओक्साइड गैस दी जाती है। इसके बाद रसको उबालकर चीनीके क्रिस्टल बनाये जाते हैं और मशीनोंद्वारा मोलासेससे अलग कर लिये जाते हैं। इससे चीनी पहले बादामी (Brown) रंगकी बनती है। उसको सफेद करनेके लिये एनिमल चारकोल (Animal charcoal) का उपयोग किया जाता है। इस एनिमल चारकोल (या Bone Black) में ९० प्रतिशत कैल्शियम फास्फेट और १० प्रतिशत एमारफस कार्बन (Amorphous carbon) होता है। यह पशुओंकी हड्डियोंके (Destructive Distllation) से बनता है।

३. अन्य वस्तुओंमें पशुओंका प्रयोग

(क) नहानेके साबुन तथा दाढ़ी बनानेके काममें आनेवाले साबुनोंमें प्रायः चर्बी रहती है। क्रीम, वैसलीन, कॉल्ड-क्रीम, हैजलीन और वाक्स आदि मुँहमें लगानेवाली वस्तुओंमें प्रायः चर्बी मिली रहती है।

(ख) ग्लिसरिन जो अनेक दवाइयों और श्रृङ्गारकी वस्तुओंमें काम आती है, प्रायः चर्बीसे बनती है।

(ग) कई प्रकारके मोमोंमें चर्बी रहती है।

४. ग्रीज़ (Greazes)

मशीनके कलपुरजोंमें तथा साइकिलकी चेन आदिमें जो पीले मलहमकी तरहकी चीज लगायी जाती है, उसे ग्रीज़ कहते हैं। उससे पुरजोंमें चिकनाहट आती है और वे तेजीसे घूमते हैं। कुछ ग्रीजोंको छोड़कर, जिन्हें मिनरल-ग्रीज़ कहते हैं, शेष सब ग्रीज़ोंमें चर्बी (Tallow) का प्रयोग होता है।

(क) गाड़ीके पहियों और इंजनके कल-पुरजोंमें लगनेवाली (Wagon and Locomotive Greaze) ग्रीज़में चर्बी १९॥ भाग, तेल १४ भाग, सोडा ५॥ भाग और पानी ३ भाग रहता है ।

(ख) ग्रेफाइट ग्रीज़ (Graphite Greaze) में प्लम्बगो (Plumbago) १ भाग तथा चर्बी (Tallow) ४ भाग रहती है । यह ग्रीज़ बहुत काम आती है ।

(ग) रस्सीमें लगनेवाली ग्रीज़ (Rope Greaze) में चर्बी २० पौंड, तेल ३० पौंड, पैराफिन २० पौंड, वैसलीन ३० पौंड और राजिन ६० पौंड रहता है ।

(घ) बहुतसे कामोंमें आनेवाली साधारण ग्रीज़ चर्बी (Tallow), खनिज तैल (Mineral Oil) तथा सोडासे बनती है ।

सभी प्रकारके कारखानोंमें कपड़ा, जूट, चीनी, कागज आदिकी मशीनोंमें ग्रीज़का उपयोग होता है ।

गर्भस्थ बछड़ों और मेमनोंके चमड़ेका निर्दयतापूर्ण अमानुषिक व्यापार

पंजाबकी 'दि बोर्ड आफ इकनामिक इन्क्वायरी कमेटी' की रिपोर्टके प्रकाशन नं० ६१ 'टैनिंग इंडस्ट्री इन दि पंजाब' के सातवें अध्यायमें लिखा है—

इतिहास

'पेशावरमें विदेशोंके साथ मेमनों और बकरीके बच्चोंके चमड़ेका व्यापार थोड़ा-बहुत और लुके-छिपे बहुत दिनोंसे होता आ रहा है । सन् १९३२ में इन चमड़ोंकी माँग बहुत बढ़ गयी । फलतः चोरीका पर्दा उठ गया और अब पंजाब तथा उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तमें इसका व्यापार खूब फैल गया है । धीरे-धीरे इस व्यापारका कैन्द्र पेशावरसे हटकर दिल्ली और मुल्तानको चला आया है । इस स्थान-परिवर्तनके तीन कारण बताये जाते हैं । एक तो इस क्षेत्रके प्रमुख व्यापारी यहूदियोंका अफगानिस्तानसे निकाला जाना, दूसरे उत्तर-पश्चिम-सीमाप्रान्तमें इतनी भेड़-बकरियाँ नहीं मिलती थीं, जो बढ़ी हुई माँगको पूरा कर सकतीं, और तीसरे पेशावरका बहुत दूर होना ।

केन्द्रीय बाजार

उत्तरभारतमें मेमनों और बकरीके बच्चोंकी खालोंके केन्द्रीय बाजार आजकल दिल्ली और मुल्तान उसी तरहसे हैं, जैसे कानपुर और कलकत्ता घड़ियाल तथा साँपके चमड़ोंके । कसूर, सियालकोट, अमृतसर और जालंधरमें थोक माल बिकता है और यहाँके व्यवसायी अधिकतर खटिक और कसाई हैं । जयपुर, टोंक रियासत और नवलगढ़—जहाँ सबसे बढ़िया खालें बनती हैं—के निकट होनेके कारण दिल्लीका महत्त्व मुल्तानसे कुछ बढ़ गया है । दिल्लीमें इन चमड़ोंका व्यापार करनेवाली लगभग सोलह कोठियाँ हैं । मार्च सन् १९३७में प्रतिदिन औसतन १५००० खालें आती थीं । जिनमें ८००० के लगभग मेमनोंकी होती थीं । मुल्तानमें दस कोठियाँ हैं । जो जनवरी १९३० में रोज लगभग ८००० मेमनोंकी खालें और ९००० बकरीके बच्चोंकी खालें बाहर भेजती थीं । ये खालें अधिकतर सिंध, नहरी इलाके (कैनाल कालोनीज) और थालसे आती थीं । अक्टूबरसे अप्रैलतक यह व्यवसाय खूब तेज रहता है; क्योंकि अधिकांश मेमने और बकरीके बच्चे इसी समय पैदा होते हैं ।

चमड़े कहाँ जाते हैं ?

मेमनोंकी खालें अधिकतर इंग्लैंडको जाती हैं और वहाँसे अन्य यूरोपीय देशोंको भेजी जाती हैं । बकरीके बच्चोंके चमड़े विशेषतः अमेरिका जाते हैं । इन चमड़ोंकी माँग पूरी करनेमें आजकल भारतवर्ष सबसे आगे है । इसमें भाग लेनेवाले अन्य देश फारस, अफगानिस्तान, अरब, अबीसीनिया और रूस हैं । भारतमें इसके प्रधान खरीदार यहूदीलोग हैं, जिनमें कुछ यूरोपकी कोठियोंके गुमाश्ते हैं । हालमें कुछ भारतीय कोठियोंने विदेशी खरीदारोंसे अपना सीधा सम्बन्ध जोड़ लिया है ।

चमड़े

इन चमड़ोंके प्राप्त करनेकी तीन विधियाँ हैं— (१) गर्भवती माको मारकर उसका भ्रूण निकाल लेते हैं । (२) माको कुछ ऐसी दवाइयाँ खिला देते हैं, जिससे गर्भ गिर जाता है* और (३) नवजात मेमने या बकरीके बच्चेको

* गर्भ गिरानेका काम बहुत छिपाकर किया जाता है । इसलिये उसको आँखोंके सामने देखा नहीं जा सका । फिर भी प्रधान व्यवसायियोंको समझा-बुझाकर इसका वर्णन देनेको राजी किया

मार डालते हैं। इन खालोंका मूल्य दो बातोंपर निर्भर करता है। एक तो रोओंके लहरदार होनेपर, दूसरे इस बातपर कि चमड़ा 'जन्मे हुए बच्चेका' है अथवा 'गर्भस्थ'का। 'जन्मे हुए बच्चेसे' गर्भस्थ मेमनेकी खाल कहीं अधिक नरम और घूमे हुए बालोंवाली होती है। दूसरी ओर 'नये पैदा हुए' बकरीके बच्चेसे 'मरे पैदा हुए' बच्चेका चमड़ा घटिया होता है।

नियन्त्रणकी आवश्यकता

गर्भिणी भेड़ोंको मारना जुर्म करार देनेकी आवश्यकताको तो चमड़ेके व्यापारी लोग भी आसानीसे स्वीकार कर लेते हैं। पर उनका यह कहना है कि गर्भपात करानेसे भेड़ोंकी गर्भधारण-शक्तिको कोई हानि नहीं पहुँचती। बल्कि उनका तो यह दावा है कि मेमनेका दूध छुड़ा देनेसे (मेमनेको स्तनपानका अवसर न देनेसे) भेड़ फिर जल्दी ही रतिकामा हो जाती है और इस प्रकारसे एक वर्षमें साधारण रीतिके विरुद्ध एकके बजाय दो बच्चे देती है। यह कथन बिल्कुल सत्य नहीं मालूम होता, क्योंकि बहुतसे पशु तो इस (गर्भपातके) भयानक व्यवहारसे मर जाते हैं और अत्यधिक संख्यामें बाँझ हो जाते हैं।

अतः इस बातकी आवश्यकता है कि शिकमी चमड़ों (गर्भस्थ बच्चों) का व्यापार अपराध घोषित कर दिया जाय। चूँकि ऐसे चमड़ोंको देखकर ही आसानीसे पहचाना जा सकता है और प्रान्तभरमें इकट्ठा किये हुए मालको बेचकर बाहर निकालनेके लिये उत्तरी भारतमें केवल दो ही मुख्य बाजार हैं, इसलिये इस व्यापारके ऊपर सफल नियन्त्रण प्राप्त करना कठिन नहीं होना चाहिये।

गोसल्ला

मेमनों और बकरीके बच्चोंकी खालोंके समान ही गर्भस्थ गायके बछड़ोंके चमड़ोंका भी व्यापार होता है। बाजारमें इस चमड़ेको 'गोसल्ला' कहते हैं। बाहरकी अत्यधिक माँगके कारण यह व्यापार भी बढ़ता जा रहा है और इससे देशके हितोंपर आघात हो रहा है।

दिल्लीके एक आढ़तियेके गोदाममें बाहर भेजनेके लिये ८०० गोसल्ले देखे गये थे और यह बताया गया कि यह तो एक साधारण-सी बात है। आढ़तियेने तो उसके बारेमें कोई विशेष बात नहीं बतायी, किन्तु इस व्यापारसे अच्छी तरह परिचित जान पड़नेवाले एक बूचड़ने बताया कि सबसे अच्छी गाभिन गायको भी मारकर उसका गोसल्ला, खाल और मांस अलग-अलग बेचना अधिक-अधिक लाभदायक है। निम्नलिखित आँकड़े उसकी सम्मतिके आधार हैं—

ब्यानेपर नित्य आठ सेर दूध देनेवाली गाय, ब्यानेके पहले ५०) में ली जा सकती है, पर मार डालनेपर इससे निम्नलिखित वस्तुएँ प्राप्त होंगी—

१. मांस, जिसका मूल्य होगा लगभग	२५)
२. अवशिष्ट मांस (आमाशय, जिगर, गुर्दे, हृदय, भेजा, जीभ)	२॥)
३. आँतें	॥)
४. सींग और हड्डियाँ	१)
५. चर्बी	८)
६. खाल	८)
७. गोसल्ला	१०)
कुल	५५)

(यह युद्धके पहलेका अनुमान है। अब गायकी कीमत बढ़नेके साथ ही उपर्युक्त चीजोंकी भी बढ़ गयी होगी—सं०)

गर्भिणी गायोंकी हत्या रोकनेके लिये प्रबल प्रयत्न होना चाहिये। यह व्यापार इतना लाभदायक बन गया है कि यदि रोक-थाम नहीं की गयी तो कोई दिन ऐसा आ सकता है जब कि बोझा ढोनेवाले बैलोंकी और दूधकी भयङ्कर कमी हो जायगी।''

यह है पंजाब सरकारके 'डाइरेक्टर आफ इंडस्ट्रीज'के तत्त्वावधानमें जाँच करनेवाली कमेटीकी रिपोर्ट। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि धनके लोभसे भेड़ों और बकरियोंके गर्भस्थ बच्चोंकी नृशंसतापूर्ण हत्याके समान ही **गायोंके गर्भस्थ बच्चोंकी हत्याका घृणित कार्य भी जोरोंसे**

गया। मेमनोंके चमड़ेके लिये भेड़ोंके पालनेवाले व्यवसायी भेड़ोंके गर्भस्थापनके दिनको याद किये रहते हैं। ब्यानेके तीन-चार दिन पहले भेड़को साबुन घुला हुआ गरम पानी पिलाकर उसके पेटको दबाया जाता है और इससे गर्भपात हो जाता है। साबुनकी जगह कुछ लोग गिलहरीकी जातिके 'साना नामक एक जानवरको तेलमें तलकर देते हैं। कभी-कभी गर्भिणी भेड़ दुर्व्यवहारोंसे भयभीत होकर स्वयं ही गर्भको गिरा देती है। गर्भ गिरानेकी क्रियामें यदि उसको भयानक चोट लग जाती है तो मारकर उसका मांस देहातियोंके हाथ बेच दिया जाता है।

चल रहा है । दिल्लीके एक ही आढ़तियेकी दूकानमें ८०० 'गोसल्ले' पाये गये थे । न मालूम दिल्लीमें ऐसे, और इससे भी बड़े-बड़े और कितने आढ़तिये होंगे । तथा इसी तरह अन्यान्य शहरोंमें भी कितने होंगे ! बेचारी मूक भेड़-बकरियों और **गाभिन गायों तथा उनके गर्भस्थ कोमल बच्चोंपर होनेवाला यह भयानक अमानुषिक अत्याचार** मानवमात्रको असह्य हो जाना चाहिये ।

क्या मनुष्यका मनुष्यत्व इस सीमातक मर गया कि इस प्रकारके राक्षसी काण्डोंको देख-सुनकर भी उसका पाषाण-हृदय नहीं पसीजता ? उसे अपने मनुष्यत्वपर शर्म नहीं आती ? हम सरकारसे, सरकारके सहृदय अफसरोंसे, शीघ्र ही नये रूपमें निर्माण होनेवाली धारासभाओंके मानव-सदस्योंसे, आचार्यों और साधु-महात्माओंसे, मानव-हृदय मुसल्मान, ईसाई और पारसी सज्जनोंसे, गौको माता कहनेवाले वैदिक हिंदुओं और जीवदयाके सच्चे हिमायती जैनोंसे एवं मनुष्यमात्रसे अपील करते हैं कि वे सब ओरसे सब प्रकारके उचित उपाय करके शीघ्र-से-शीघ्र इस अत्याचारका अन्त करें । धारासभाओंमें प्रश्न करके सच्ची स्थिति जाननी चाहिये । लेखों तथा व्याख्यानोंद्वारा जनताको इस पापसे परिचित कराना चाहिये । लोकोपकारिणी संस्थाओंको विविध प्रकारके प्रयत्न करने चाहिये और प्रबल आन्दोलन करके सरकारको बाध्य कर देना चाहिये कि जिससे बहुत शीघ्र इस महान् पापका नाम मिट जाय !

सरकारी अखबार 'भारतीय समाचार' १ सितम्बर सन् १९४५ में प्रकाशित हुआ है कि "**इस बातकी सम्भावना है कि बछड़े तथा अन्य छोटे पशुओंके चमड़ेकी माँगमें बहुत अधिक वृद्धि होगी। यह अनुमान किया जाता है कि युद्धके बाद तत्काल ही अमेरिका प्रतिवर्ष ४० लाख चमड़ेकी खपत करने लगेगा।** ......आगामी अनेक वर्षोंमें इन चमड़ोंका घरेलू उपयोग युद्धपूर्वके अनेक वर्षोंकी खपतसे अधिक हो जानेकी सम्भावना है ।......"

पता नहीं, इन खालोंमें गर्भस्थ बछड़ों और मेमनोंकी खालें भी होंगी या नहीं, और होंगी तो कितनी होंगी । पर बढ़िया खालका लोभ गर्भस्थ बच्चोंकी हत्यामें प्रोत्साहन तो देगा ही । अतः इस बढ़नेवाली माँगसे हमें तो डरना ही चाहिये । अतएव अब जरा भी विलम्ब न करके इस विषयमें प्रयत्न शुरू कर देना चाहिये । (इ०)

गो-भुवनकी अष्टाध्यायी

(१) बढ़िया जातिका अधिक चारा उत्पन्न करो ।
(२) घास-चारेके प्रमाणमें ही गौओंको रक्खो ।
(३) प्रत्येक गायकी जन्मपत्री रक्खो ।
(४) रोग-निवारक पद्धतियोंका उपयोग करो ।
(५) दूध और मलाई बढ़िया-से-बढ़िया बनाओ ।
(६) मेहनत-मजदूरी बचानेवाली पद्धतियोंको ग्रहण करो ।
(७) जमीनको सँभालो ।
(८) गोवंशके उत्पादनका क्रम ठीक रक्खो ।

(मिल्क प्लैंट मण्डली ४२)

दुग्ध-दोहन

गायके अतिरिक्त अन्य किसी भी पशुने मनुष्यजातिके पालनमें इतना अधिक भाग नहीं लिया। गायका दूध पोषक आहारके रूपमें जीवनभर लिया जा सकता है। द्रवपदार्थ होनेके कारण लोग दूधको एक प्रकारका पेय मानते हैं, किन्तु ऐसा मानना भूल है, क्योंकि दूध एक पेय ही नहीं, वरं अत्यन्त मूल्यवान् आहार है। प्रत्येक स्तनपायी बच्चेका स्वास्थ्य ठीक रखने एवं उसका ठीक पोषण होनेके लिये, प्रकृति-निर्मित तत्त्वोंमें दूध सर्वश्रेष्ठ है। दूधके बिना काम नहीं चल सकता। अतः परम आवश्यक है कि स्वास्थ्य ठीक रखनेवाले इस दूधमें किसी प्रकारकी बाहरी गंदगी, बुरे कीटाणु या ऐसे तत्त्व न मिलने पावें जो पीनेवालेका अहित करें। दूध दुहना तथा बेचना बहुत स्वच्छ रीतिसे होना चाहिये। उत्तम दूध प्राप्त करनेके लिये कुछ ऐसी बातें हैं, जिनपर ध्यान देना आवश्यक है।

स्वच्छ तथा स्वस्थ गाय

सबसे मुख्य बात तो यह है कि गाय स्वस्थ और साफ-सुथरी हो, इसके लिये गायको गर्मीके दिनोंमें सप्ताहमें एक-दो-बार, वर्षा-ऋतुमें एक बार और जाड़ेमें महीनेमें एक बार (धूपमें) नहलाना चाहिये। रोज उसके शरीरको पोंछ देना चाहिये। उसपर कहीं गोबर या कोई गंदी चीज अथवा धूल न लगी रहे। जब गाय ही स्वस्थ, साफ और प्रसन्न न होगी तो उसका दूध पीनेवाले स्वास्थ्य-लाभ कैसे कर सकेंगे? गाय अच्छी खूराक, अच्छी देख-भाल और सफाईसे स्वस्थ रहती है। उसके थन और चूँचियोंको थोड़े पोटाश-परमेंगनेट मिले हुए पानीसे धोकर कपड़ेसे पोंछ डालना चाहिये। इससे थन नीरोग रहेगा। थन तथा पेटके लंबे बाल काट डालने चाहिये। हाथमें थैली डालकर उससे गायका शरीर साफ करना भी आवश्यक है।



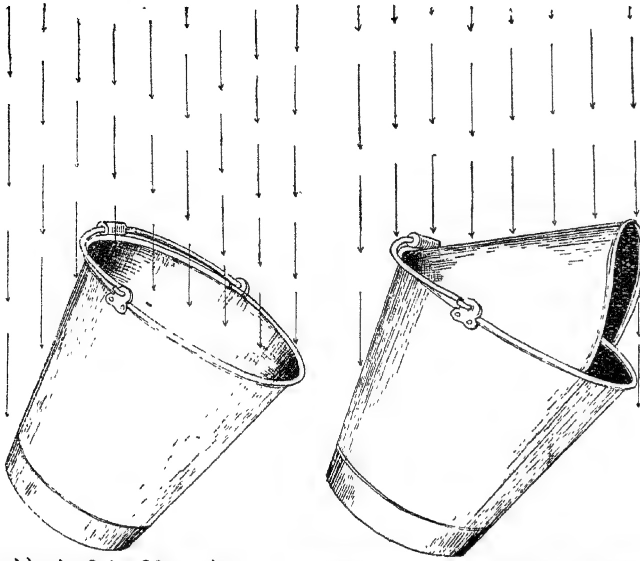
अच्छी जातिकी स्वस्थ और स्नेहमयी गायका दूध अत्यन्त स्वादिष्ट, सारयुक्त, विशुद्ध, सुरक्षित और स्वास्थ्य-प्रद होता है।

स्वच्छ धुले हुए तथा तपाकर साफ किये हुए बर्तन

यह सबसे अधिक ध्यान देनेकी बात है। काम लेनेके बाद शीघ्र ही दूधके सारे बर्तन धो डालने चाहिये। पहले उन्हें धोनेवाला सोडा पड़े हुए ठंडे पानीसे धोकर तब दूसरी बार साफ पानीसे धोना चाहिये। अन्तमें उबलते हुए पानीमें बर्तनोंको डाल दे, फिर भाफके चकलेके ऊपर डालकर उनको ठीकसे तपा ले। इस प्रकार तपानेसे उनमें लगे हुए सब जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। फिर बर्तनोंको औंधा रखना चाहिये, जिससे उनमें धूल आदि न पड़े। धूल न उड़ती हो तो उन्हें धूपमें खुले मुँह रखकर सुखा लेना चाहिये। धूपमें रोगाणुओंके नाश करनेकी अद्भुत शक्ति है।

दुहनेका बर्तन

बटलोई या गडुआमें दूध दुहना ठीक नहीं, क्योंकि इन बर्तनोंको भीतरसे साफ करना कठिन है। प्रायः लोग बालटीमें दुहते हैं, किन्तु यह भी ठीक नहीं, क्योंकि बालटीका चौड़ा मुँह खुला रहनेके कारण उसमें धूल या कीटाणु प्रवेश कर जानेकी पूरी सम्भावना रहती है। इस कामके लिये एक विशेष प्रकारकी गुम्बददार बालटी बरतना ठीक है। इसमें ऊपरसे एक ढक्कन-सा रहता है, जो बगलमें थोड़ा खुला रहता है। उसी खुले भागसे दूधकी धार बालटीमें गिरती है। ऊपरका ढक्कन धूलकण अथवा जीवाणुओंको भीतर प्रवेश नहीं करने देता।



दुहनेके खुले बर्तनमें गर्द गिर रही है

दुहनेके ढक्कन वाले बर्तनमें गर्द नहीं गिर रही है

दूधको दूषित कर देता है। चेचक, मियादी बुखार, हैजा और तपेदिक आदि रोग इसी प्रकार मनुष्योंमें फैलते हैं। अतः आवश्यक है कि दुहनेवालेके कपड़े साफ हों। हो सके तो इस कामके लिये एक जोड़ी कपड़ा बनवाकर अलग रखना चाहिये, जो दुहते समय ही पहने जायँ! दुहनेके पहले दोनों हाथ साबुन या साफ मिट्टी अथवा बालूसे रगड़कर धोकर साफ कपड़ेसे अच्छी तरह पोंछ लेने चाहिये। दूध सूखे हाथोंसे दुहना चाहिये। नख जरूर कटे हुए हों।

दूधकी चलनी

इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेपर भी दूधमें बाल या अत्यन्त सूक्ष्म धूल-कण पड़ सकते हैं, इसलिये इससे बचनेके लिये एक स्वच्छ पतला कपड़ा या इसी कामके लिये विशेषरूपसे बनी हुई चलनी बर्तनपर रखनी चाहिये, जिससे दूध बर्तनमें गिरनेसे पहले छन जाय।

दुहनेवालेकी स्वच्छता

दूधका बनना-बिगड़ना दुहनेवालेकी स्वच्छतापर भी बहुत कुछ निर्भर है। आजकलके दोहक ग्वाले अथवा गूजर स्वास्थ्य-रक्षा एवं सफाईके नियमोंसे सर्वथा अनभिज्ञ रहते हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि पवित्र तथा शीघ्र खराब हो जानेवाले दूधपर उनकी अँगुलियों तथा कपड़ोंकी गंदगीका क्या प्रभाव पड़ता है। इनके कपड़े मैले-कुचैले होते हैं, अँगुलियाँ भी साफ नहीं रहतीं, बड़े-बड़े नखोंमें मैल भरा रहता है तथा हाथोंमें प्रायः सुरती-चूना लगा रहता है। चिलम पीनेवालोंके हाथसे तम्बाखूकी दुर्गन्ध आया करती है। दूध दुहने समय ये लोग पहले दो-एक धाराओंसे अपनी अँगुलियाँ धोते हैं, जिससे गीली हो जानेके कारण दुहनेमें सुगमता हो। इस प्रकार उनकी गंदी अँगुलियोंका धोवन दूधमें पड़ता है और सारे

आस-पासकी सफाई

दूध दुहनेका स्थान भी साफ होना चाहिये। वहाँ मल-मूत्र, कूड़ा-कर्कट तथा सड़ी-गली चीजें नहीं पड़ी रहनी चाहिये। दोहक भी दुहते समय पास ही थूके नहीं। फर्श पक्की हो तो दुहनेके पहले पानीसे धोकर साफ कर देनी चाहिये। दुहते समय गायको ऐसा कोई सूखा चारा नहीं देना चाहिये, जिससे धूल उड़कर दूधमें पड़े। दूध दुहने और उसके व्यवस्थित करनेकी सारी क्रिया एक स्वच्छ कोठरीमें हो तो सबसे अच्छा है, जिसमें हवा और प्रकाश भलीभाँति आ सके। इस कोठरीको इसी कामके लिये अलग रखना चाहिये।

दुहनेकी कला

गाय या भैंसका दुहना उतना सरल नहीं है। इस कामकी विशेष जानकारी होनी चाहिये। यों तो सभी ग्वाले या गोपालक दूध दुह लेते हैं किन्तु उन्हें शुद्ध रीतिसे दुहना नहीं आता। इसमें भी एक कला है। ग्वाले प्रायः थनको चार अँगुलियोंसे पकड़ते हैं और अँगूठेको हथेलीके भीतर मोड़कर चूँचियोंको खींचते हैं। इस प्रकार थनके ऊपरी हिस्सेपर अँगूठेकी गाँठका अधिक तथा असम दबाव और बल पड़ता है, जिससे दूधकी नली थनकी जड़के निकट मोटी हो जाती है। इसके अतिरिक्त, लोग पक्षियोंके परोंकी डंडियाँ अथवा गंदे सरकंडे चूँचियोंके भीतर डालकर लेवेका सत्यानाश कर देते हैं।

दुग्ध-धमनी
Mammary artery

लसिका-ग्रन्थि
Lymphatic gland

Skin चर्म

दुग्ध-शिरा
Mammary vein

दुग्ध-शिरा
Mammary vein

Fat वसा

दुग्ध-कोटर
Alveoli

ग्रन्थिका
Gland-lobule

दुग्ध-कुंडिका
Milk cistern

स्तनास्तर
Walls of the teat

रंध्र-संकोचक स्नायु
Sphincter muscle

दुग्ध-नलिका
Teat canal

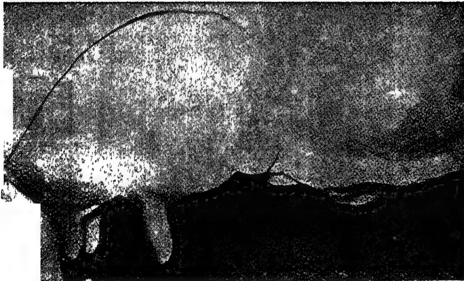
1

Alveolus
Enlarged when laden with milk
दुग्ध-कोटर
दूध भरे रहने पर

2

Alveolus after discharge of milk
दुग्ध-कोटर
दूध निकाल लेने पर

Schematic figure showing section of cow's udder
गो-दुग्धाशयके अंगोंका निदर्शक रेखाचित्र



भलीभाँति परिपुष्ट दुग्ध-शिराएँ।



उत्तम आकार-प्रकारका सुडौल थन।

थनका प्रकार और उसकी शिराएँ।



उत्तम और सुडौल थन जिससे ४० टन दूध निकल चुका है।

ठीक मापकी चूँचियोंका सुडौल और उत्तम थन।

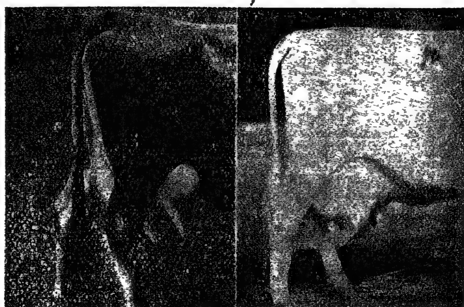


दुधारू गायोंके उत्तम थन, जिनकी दूध उतारनेवाली शिराएँ खूब परिपुष्ट हैं।









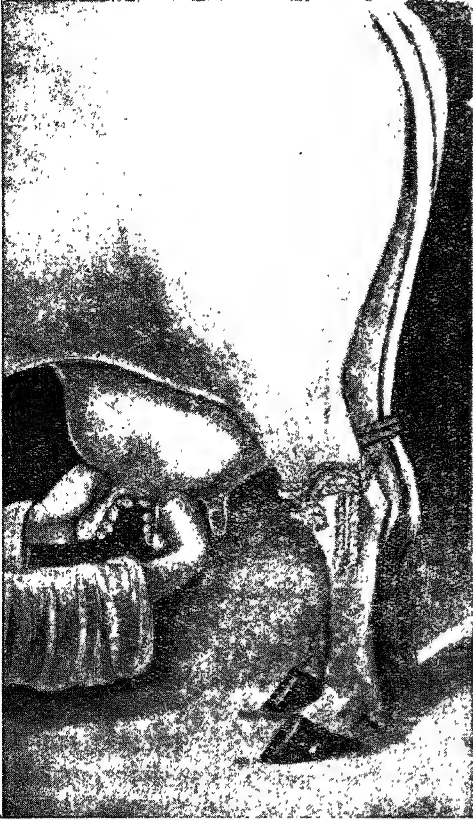
बिल्कुल बेढंगा थन और कुरूप चूँचियाँ।

मांसल और बेडौल थन।



आगेसे दुर्बल थन

झूलता हुआ बेडौल थन



दुहनेका गलत तरीका



दुहनेका सही तरीका

शुद्ध रीतिसे दूध दुहनेके लिये अभ्यासकी आवश्यकता है। दुहनेका कार्य चुपचाप, नरमी और फुर्तीके साथ होना चाहिये, जिससे दुहे जानेवाले पशुको कष्ट न पहुँचे। एक कुशल दोहक एक अनाड़ीकी अपेक्षा अधिक दूध निकाल सकता है और पशु भी प्रसन्नतापूर्वक चुपचाप खड़ा रहकर दुहने दे सकता है। थनोंसे दूधको निचोड़ना चाहिये, न कि थनोंको खींचना चाहिये। थनोंको पूरी मुट्ठीमें पकड़कर दुहना चाहिये और अँगूठेको ऊपर रखना चाहिये। इससे दूधकी नलियोंपर सब जगह समान दबाव पड़ता है। जिन पशुओंकी चूँचियाँ छोटी होती हैं, उनका दूध अँगूठेकी पहली पोर और प्रथम दो अँगुलियोंसे पकड़कर चूँचीकी पूरी लंबाईतक खींचकर निकालना चाहिये। दुहते समय प्रत्येक चूँचीकी प्रथम दो एक धार भूमिपर गिरा देनी चाहिये, जिससे दूधकी नलीमें घुसकर बैठे रहनेवाले कीटाणु निकल जायँ और दूध नष्ट होनेसे बच जाय। थनोंसे अन्तिम बिंदुतक दूध निकाल लेना चाहिये। क्योंकि अन्तिम दूधमें मक्खन बहुत निकलता है और ऐसा करनेसे दूध भी बढ़ सकता है।

प्रतिदिनके दुहनेका समय भी निश्चित रहना चाहिये। ठीक निश्चित समयपर दुहना लाभदायक होता है। दुहनेका समय बदलते रहनेसे दूध बननेमें गड़बड़ी होती है और यदि बराबर ऐसा होता रहे तो दूध घट भी सकता है। नियमित समयपर दुहनेसे पशुओंका ऐसा स्वभाव पड़ जाता है कि लेवा ठीकसे काम करता है। पहली बार और दूसरी बार दुहनेके बीचमें लगभग १२ घंटोंका अन्तर होना चाहिये। जबतक ऐसे कुशल दोहकका प्रबन्ध न हो, तबतक कीमती गाय

खरीदना और उसे अच्छी खूराक खिलाना व्यर्थ एवं निष्फल-सा है ।

पशुके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार

प्रेम और घृणाके भावको पशु-पक्षी भी जान लेते हैं और इसका पूरा प्रभाव उनपर पड़ता है । अतः आवश्यक है कि गाय-भैंसके साथ प्रेमका व्यवहार किया जाय । उनके ऊपर प्रेमसे हाथ फेरना चाहिये और सहलाना चाहिये । इससे वे प्रसन्न होती हैं और अधिक दूध देती हैं, किन्तु मार-पीट करनेसे उनका मन दुखी हो जाता है और स्वभावतः दूध कम निकलता है । यदि पशु दूध दुहते समय उछले-कूदे या लात चलावे तो डंडा मारने या डराने-धमकानेसे काम न चलेगा । उसके साथ प्यार और प्रेम दिखाया जाय तो संभव है उसका बुरा स्वभाव ठीक हो जाय और वह शान्तिपूर्वक दुहा लेनेका स्वभाव ग्रहण कर ले ।

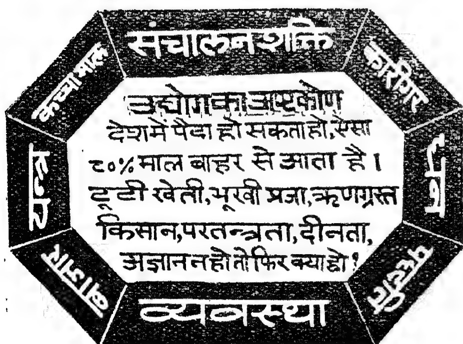
दुहनेसे पहले यह देखना आवश्यक है कि पशु बीमार तो नहीं है, उसका लेवा सूजा तो नहीं है, पशु उसमें पीड़ाका अनुभव तो नहीं करता तथा दूधके रंगमें किसी प्रकारका परिवर्तन तो नहीं है । यदि ऐसी बात हो तो उस दिन दूध न दुहकर या बहुत हलके-हलके हाथों दुहकर पशुस्वामीको सूचना देनी चाहिये, जिससे उपयुक्त पशु-चिकित्सककी सहायता ली जा सके । पूँछ, लेवा तथा चूँची आदि सब साफ और सूखे होने चाहिये । इनपर मैल-कुचैल या गोबर-कीचड़ लगा हो तो भलीभाँति धोकर पोंछ देना चाहिये । प्रायः चूँचियोंपर चीर आ जानेके कारण पशुको कष्ट होता है । इस दशामें हलके लाइसोल (Lysol) के पानीसे उनको धोकर पोंछ लेना चाहिये और फिर थोड़ी-सी कारबोलाइज्ड वैसलीन (Carbolised Vaseline) लगा देनी चाहिये । यदि ये सब न मिल सकें तो थोड़ा मक्खन मल देना चाहिये । तात्पर्य यह कि पशुके दुःख-सुखका ध्यान रखना चाहिये, केवल दूध निकालनेकी ही ओर ध्यान न होना चाहिये ।

दूधको ठंडा करना

दुहनेके बाद ही दूध जितना ठंडा किया जा सके उतना ठंडा कर लेना चाहिये । दूध या तो मशीनमें रखकर ठंडा किया जा सकता है, अथवा पानी भरे हुए कुण्डोंमें रखकर । गहरे कुएँके पानीसे अधिक शीघ्र ठंडा हो सकता है ।

उपर्युक्त रीतियोंका पालन करते हुए यदि दूध निकाला जाय तो वह सर्वोत्तम और अत्यन्त लाभदायक होगा । इस काममें कोई विशेष खर्च भी नहीं है और दुग्ध-व्यवसायी तथा ग्राहकोंको लाभ भी बहुत है । कुछ परिश्रम आवश्य पड़ता है, किन्तु इसके बदलेमें उत्तम दूध और अधिक ग्राहकोंकी प्राप्ति होती है । एवं ग्राहक अधिक मूल्य देकर भी वह दूध लेनेको तैयार रहते हैं ।

जो गृहस्थ स्वयं अपने घरोंमें गाय रखते और अपने हाथों गायकी सेवा करते हैं, उन्हें भी उपर्युक्त बातोंका पूरा ध्यान रखना चाहिये । इससे उनकी गायें बहुत अच्छे स्वभावकी और दीर्घजीवी बनेंगी तथा उनसे बहुत अधिक दूध मिलेगा ।





गोविज्ञानका नवनीत

(लेखक—श्रीआशुकुमार)

गाय और संगीत

कन्हैयाकी मुरली और ग्वालोंका पावा (बाँसरी) संसारमें अति प्राचीन आर्य-संस्कृतिकी स्मरणीय वस्तु हैं। संगीत सौम्य, शान्तिप्रद तथा आह्लादक कला होनेके कारण ज्ञानतन्तुके ऊपर मधुर और शीतल प्रभाव पैदा करता है। इसीलिये वह रोते हुए बालकसे लेकर फणिधर नागतक सबपर एक-सा जादूका असर करता है। कदाचित् औरंगजेब बादशाह-जैसे सूखे दिलके ऊपर प्रभाव न पड़ा हो और इसे नीचा दिखानेके उद्देश्यसे ही उसने जमीनमें दफना दिया हो, फिर भी इसका असर सबपर अपनी-अपनी रसिकताके अनुसार होता ही है। अमेरिका-जैसे देशोंमें विद्यार्थी-गृहोंके कलहतकका समाधान संगीतके द्वारा होता है। किसी प्रकार झगड़ा शुरू हुआ कि संगीतका क्रम चालू हो जाता है। इसके बाद भी यदि कुछ भी झगड़ा बच रहता है तो वह सुनकर मिटा दिया जाता है। अधिकतर तो संगीतकी सुरीली ध्वनिसे ही क्लेश और झगड़े-फसादका वातावरण बदल जाता है और सब सगे भाईसे भी बढ़कर भाई समझकर एक दूसरेको आलिङ्गन करने लगते हैं।

हृदयकी कोमलता

हृदयकी मृदुताके अनुसार संगीतका अधिक असर होता है, और कठोरता—कर्कशताके अनुसार कम होता है। जिसका जैसा ऊर्मितन्त्र—मज्जातन्त्र होता है, असर भी वैसा ही होता है। विज्ञानके द्वारा ऐसा जाना गया है कि संगीतका असर कीट-पतंगसे लेकर मनुष्यतक तथा वनस्पति, पुष्प, जड धातु, पत्थर आदि तकपर पड़ता है। बारीकी और मार्मिकतासे खोजनेपर तो विश्वके तमाम जड-चेतन तत्त्वोंमें तालबद्धता और संगीतकी संगतिकी ही ध्वनि चलती प्रतीत होगी। एक कटोरीमें जल भरा हो और भजनकी धुन चलती हो तो संगीतके द्वारा आन्दोलित वायुसे उस पानीमें ऐसेटिक एसिडका असर आ जाता है। असलमें तारामण्डल, आकाशकी सन्ध्या (Aurora Boreals) और पृथ्वी वगैरह ग्रहमण्डलोंके परिभ्रमणमें तो स्वरोंकी सजावट होती ही है; समाज, व्यापार, राज्य और अर्थनीति आदिका भी अपनी सारेगमके अनुसार अवरोह-आरोहका तालक्रम होता है। जब इस क्रममें बाधा पड़ती है तभी विवाद, विषाद, संघर्ष, खून-खराबी, क्रान्ति और झगड़े-झंझट आ खड़े होते हैं।

प्रत्येक वस्तु और धंधेकी नसको परखना, उसके हृदयको समझना और उसकी हृदय-वीणाके तारको पकड़ना ही उसकी साधना और सफलताकी कुंजी है। अहीर-गड़रियोंकी बाँसरी, किसानोंका उच्चस्वरसे भजन-गान या दोहे-सोरठेकी रंग-रेल ये सभी उनके धंधे, जीवन और वातावरणके रस और स्वरोंके परदे हैं।

गाय-जैसे कोमल, चपल और चौकन्ने प्राणीमें दुग्ध-प्रधान (डेयरी-टाइप), ऊर्मिप्रधान (नर्वस-टेंपरामेंट) प्रकृतिमें रहनेवाले ज्ञानतन्तु सितार तथा वायलिनके तारसे उत्पन्न होनेवाली झनझनाहटके समान तीव्र और वेगवान् होते हैं। दूध देनेकी पेन्हानेवाली (Sympathy) क्रिया संवेदन-तन्तु (Sympathetic nerve) के अधीन होती है, इसलिये यदि गाय प्रसन्न हो या प्रसन्न की जा सके तो उसके दूध भी अधिक आता है तथा उस दूधके स्वाद तथा गुणमें भी अधिक मिठास होता है।

पर यदि इसके विपरीत वह अप्रसन्न हो, चिढ़ी हो, हैरान या दुखी हो तो दूध नहीं देती है, उसे चुरा लेती है और अपनी सहानुभूति ले लेती है। यह बहुतोंके अनुभवकी बात है। पर इसके विपरीत क्या कन्हैयाकी मुरली या गँड़रियोंकी बाँसरी और उनके मधुर मञ्जुल गोप-गीतोंकी उच्च ध्वनिसे गायोंको प्रसन्न नहीं किया जा सकता ? क्या दूधके कटोरेको छलकानेके काममें संगीतका कोई हिस्सा नहीं हो सकता ? होना तो अवश्य चाहिये।

इसका प्रमाण लीजिये—जर्मनी, अमेरिका आदि देशोंमें कितने ही पशु-वैज्ञानिकोंने गोशालामें, खासकर दूध दुहनेके समय संगीत प्रारम्भ करके उसकी स्वर-लहरीसे दूधकी कुल उपजमें छःसे सात भागकी वृद्धि की है। इसके विपरीत, पशुको चिढ़ाकर दूध खो बैठनेके प्रमाण तो घर-घर मिलते हैं। इस प्रकार संगीतका अच्छा और बुरा—भावात्मक और ऋणात्मक (Positive and Negativd) प्रभाव होता देखा जाता है। अपने यहाँ भी प्रयोग करके देखना चाहिये।

गोप-बस्तियाँ

अबतक घासका भाव बिल्कुल मुफ्त-सा नहीं हो जायगा तबतक पशुओंकी भुखमरी रहेगी ही। प्रत्येक पशुको प्रतिदिन कम-से-कम ७॥ सेर सूखा चारा (Dry matter) मिलना ही चाहिये; पर उसकी जगह आज लगभग २॥ सेर औसतन मिल पाता है। अमेरिका-जैसे गो-कृषि और उद्योगशाली देशमें भी चारेका भाव बिल्कुल मुफ्त-सा है। फलस्वरूप भारतसे भी अधिक सस्ता और अधिक अच्छा दूध वहाँ सहज प्राप्य है। हर साल अरबों सेर दूधकी उत्पत्ति होती है; मानो दूधकी नदी ही बह रही हो। इसके विपरीत हमारे भारतमें आज दूधकी नदियाँ तो दूर रहीं, एक छोटा-सा झरना भी बहाना कठिन-सा हो गया है! इसका प्रथम और प्रधान कारण है घास-चारेका भयानक अभाव, और पशुपालकों (ग्वालों और किसानों) की मूर्खताभरी दीन स्थिति। आज इन लोगोंके पास न तो चराईके लिये खेत हैं, न खुले मैदान या कोई चरागाह ही हैं। सारी जमीनपर कब्जा है—कहीं धनियोंका, कहीं जंगल-विभागका, तो कहीं शिकारियोंका! टाल्स्टायने भी अपनी 'सामाजिक अनिष्ट' नामक पुस्तिकामें इसपर बड़ा अच्छा व्यङ्ग्य किया है कि जब पानी, तेज, वायु, आकाश आदि महाभूतोंपर कोई व्यक्तिगत स्वामित्व नहीं प्राप्त किया जा सका तब जमीनपर ही क्यों? इसीसे तरह-तरहकी लूट-रूपी आपदाएँ आ रही हैं। आज यदि देशके धनिक, सरकार आदि कम-से-कम केवल अपने काम न आनेवाली जमीनपरहीसे कब्जा उठा लें और वहाँ गोपालकोंको बसा दें तो गायोंका और गोपोंका सवाल बड़ी आसानी तथा सफाईसे हल हो सकता है।

अमेरिका आदि देशोंमें प्रत्येक छः किसानोंमेंसे पाँच तो गायें रखते ही हैं तथा हर-एकके पास औसतन लगभग १० से ५० तकका गायोंका गोल रहता है। वहाँ गोपालक एवं किसान एक ही होनेके कारण जन-साधारणके लिये कृष्यन्न एवं दुग्धान्नके अलावा गायोंके लिये चारा-दाना भी बहुतायतसे उत्पन्न होता है। इसीसे वहाँके किसानों और ग्वालोंमें कोई झगड़ा नहीं है और न चारेकी जमीनके लिये कोई कठिनाई ही है। भारतमें संमिश्र खेती (Mixed farming) आरम्भ करके हमें कृष्यन्न, दुग्धान्न एवं पशु-पोषण तीनोंका एकत्रीकरण करना है; इससे किसान गोप बन जायगा और गोप किसान; फिर दोनोंमें न कोई फर्क रहेगा और न फसाद ही।

भारतवर्षमें कई जगह ग्वाले लोग अपने पशुओंको चोरीसे या बरजोरीसे दूसरोंके खेतोंमें घुसा देते हैं और उनके पशु खेत उजाड़ देते हैं। यह इसीलिये होता है कि इन बेचारोंके पास न तो चारेके लिये जमीन है, न चारा खरीदनेके लिये पैसे, और न उपजाऊ पशु ही हैं। इनके अभावमें पशुकी हालत गिर जाती है और इसलिये उनको अधिक पशु रखने पड़ते हैं।

कई बार और कई जगह तो खून-खराबियाँ हो जाती हैं, मामले-मुकद्दमे तो लगे ही रहते हैं।

बड़ौदा-राज्यने इसी उद्देश्यसे ग्वालोंके लिये सात-आठ सालसे 'रबारी वसाहतें' (ग्वालोंकी बस्तियाँ) बसानेका काम आरम्भ किया है। राज्यकी ओरसे उन्हें जमीन और चारा तथा खेती उपजानेके लिये भाँति-भाँतिकी सुविधाएँ भी दी जाती हैं। उनके बालकोंको पशु-संवर्धन, कृषिविद्या और साधारण शिक्षा देनेके लिये खास पाठशालाएँ भी खोली गयी हैं। इस प्रयोगसे पशुओं और पशुपालकोंको स्थिरता, शान्ति एवं सुख-समृद्धि प्राप्त होती है।

ऐसी बस्तियोंसे ही संमिश्र खेतीकी नींव भी डाली जा सकती है, इसी तरह धीरे-धीरे नये ढंग और नये रूपरंगसे भारतके पशु और कृषिका प्रश्न भी हल हो जा सकता है। आशा है, अन्य प्रान्तीय सरकारें, रियासतें और संस्थाएँ भी इस मसलेपर ध्यान देकर कार्य आरम्भ कर देंगी; ताकि हमें शीघ्र सफलताकी प्राप्ति हो। फिर आजके किसान और ग्वाले मिलकर श्रीकृष्णचन्द्र और श्रीबलभद्रकी भाँति रह सकेंगे तथा हल और गायके विरोधको मिटाकर दोनों मित्रभावसे एक दूसरेके सहायक हो जायँगे। (डा० जा०)

सर्वथा मान्य कार्यक्रम—गो-उद्धार

(लेखक—श्रीयुत डाह्यालाल हरगोविन्द जानी)

प्रत्येक हिंदुस्थानीके लिये सर्वथा मान्य, बिना मतभेद और पद्धति-भेदके यदि कोई भी महत्त्वका कार्यक्रम है, तो वह गो-उद्धारका है।

राष्ट्रीय हित गो-उद्धारके समान किसी दूसरी चीजसे नहीं हो सकता। उससे खेतीको और कई उद्योग-धंधोंको भी सीधा और प्रभावपूर्ण वेग मिलता है। गो-उद्धारमें खास करके पशुओंकी उत्पादक-शक्तिका प्रश्न सबसे बड़े महत्त्वका है और पशु-उद्योगकी सब शाखाओंमें श्रेष्ठ है। पहले, हमारे पशुओंकी कौन-कौन-सी नस्ल है, उनका क्या महत्त्व और क्या उत्पादक-शक्ति है और उसके सुधारमें किस पालन-नीति और कार्य-पद्धतिसे क्या और कितना लाभ हो सकता है और होनेकी सम्भावना है, यह देखना है। पशुओंकी तीन पीढ़ीमें उनकी उत्पादक-शक्ति बढ़ाकर हम चाहें तो इस पशु-धनको दस वर्षमें १०० अरबतक बढ़ा सकते हैं। फिर आज हमको जो बिना दूधकी गौओंके पीछे ७ अरबका निर्वाह-खर्च उठाना पड़ रहा है, उसका सवाल ही न रहेगा। बल्कि उनकी उत्पादक-शक्ति बढ़ाकर हम उनके निर्वाह और प्रगतिके लिये १० की जगह २० अरब रुपया सालाना खर्च कर सकेंगे। क्योंकि आजके १५ से २५ अरबके बजाय तब वे शायद हमको ५० से ८० अरबतक दे सकेंगी। फिर बच्चे, गरीब और बीमार कोई भी, दुग्धान्नके अभावमें अपोषणसे नहीं मरेंगे, वरं सब हृष्ट, पुष्ट और तुष्ट बन जायँगे।

भारतीय पशुओंकी मुख्य नस्लें

गाय

संख्या	नाम	स्थान	हेतु दूध और वहन (Draft)	वर्षभरमें औसत दुग्ध-परिमाण पौंडमें	वर्षभरमें अधिकाधिक दुग्धपरिमाण पौंडमें
१	सिन्धी	सिन्ध	दोनों	२५००	११४४० (होसुर)
२	मालवी	मध्यभारत	वहन		
३	गीर	काठियावाड़	दोनों, दुग्ध मुख्य	२५००	७००० (बंगलोर)
४	काँकरेज	गुजरात	दोनों, वहन मुख्य	२०००	७००० (छारोडी)
५	कृष्णावेली	दक्षिण महाराष्ट्र	वहन		
६	नेल्लोर (अंगोल)	मद्रास	दूध		
७	कैलान (गावलाव)	मध्यप्रान्त	वहन		
८	दक्षिणी हल्लीकरी	दक्षिण	वहन		
९	मंटगुमरी (साहीवाल)	पंजाब	दूध	२५००	१३३१२ (नई दिल्ली)
१०	हरियाना	पंजाब	दूध		
११	हिसार	हाँसी हिसार और रोहतक	वहन		
१२	थारपर्कर	सिंध	दोनों		१०००० (करनाल)
१३	नागौरी	राजपूताना	दोनों		
१४	कोसी	संयुक्तप्रान्त (मथुरा)	दूध		
१५	कैंवारी	संयुक्तप्रान्त	वहन		
१६	अमृतमहाल	मैसूर	वहन		
१७	धन्नी	पंजाब (पिंडी)	दोनों		
१८	कंगायम्	दक्षिण भारत	वहन		

भैंस

संख्या	नाम	स्थान	हेतु दूध और वहन (Draft)	वर्षभरमें औसत दुग्ध-परिमाण पौंडमें	वर्षभरमें अधिकाधिक दुग्धपरिमाण पौंडमें
१	दिल्ली (मुरा)	पंजाब	दूध	३०००	१२००० (नई दिल्ली)
२	जाफराबादी	काठियावाड़	,,	२५००	
३	सूरती	गुजरात	,,	२०००	
४	धारवाड़ी	दक्षिण	,,	१२५०	

दूधकी अधिक उत्पत्तिमें गायोंमें साहीवाल (मंटगुमरी), सिन्धी, गीर और हिसार; तथा भैंसोंमें दिल्ली (मुरा) और जाफराबादी मुख्य हैं। और दूधके ठोस तत्त्वमें (जिसमें घीका परिमाण अधिक होता है) सिन्धी और गीर गाय और सूरती भैंस आगे हैं। आयरशायर-सिन्धीकी मिश्र-नस्ल सब मिश्र-नस्लोंमें अधिक सफल साबित हुई है (औसतन ४००० पौंड)। और देशी नस्लकी गायोंसे भी इसमें दूध अधिक होता है, पर इसमें घीका परिमाण कम रहता है।

कई सालतक भारतमें मिश्र-नस्लों (हाई ब्रीड्ज-क्रास ब्रीड्ज) की संकर-सृष्टि उपजानेकी मिलिटरी डेयरियों और सरकारी क्षेत्रों इत्यादि संस्थाओंमें खूब जोरोंसे धूम मची रही; परन्तु अन्तमें यह स्वीकार करना ही पड़ा कि मिश्र-नस्लकी औलाद उत्तरोत्तर अवनत होती जाती है और खेती इत्यादि मेहनतके कामोंमें उसके बैल अधिक काम नहीं कर सकते और ऐसी गायें रोग, भुखमरी इत्यादि अनेक मुसीबतोंका सामना भी अच्छी तरह नहीं कर सकतीं। इसीलिये अब यह मोह छूट गया है। फिर भी ये गायें अपने यहाँकी मामूली गायोंसे तीन-चार पीढ़ीतक तो निश्चय ही अधिक दूध देती हैं। इसलिये यदि उनका कुछ स्थान है तो शहरोंमें दूधके लिये है, परन्तु उपर्युक्त प्रतिकूलता तो रहती ही है। इस नीतिसे कोई स्थिर एवं व्यापक परिणाम और लाभ न दिखायी पड़नेसे स्वयं सरकारने भी देशी वंशके सुधारका काम ही हाथमें लिया है और उसी नीतिका पालन कर रही है। सबसे अधिक आनन्दकी बात यह है कि अपनी देशी नस्लोंमें शुद्ध बलवान् साँड़के संयोगसे जो सुधार हुआ है, उसमें मिश्र-नस्लकी अपेक्षा कई अच्छे परिणाम प्रत्येक विषयमें दीख रहे हैं। उसमें न तो किसी तरह रोगका शिकार बननेका डर रहता है और न काममें उतर जाने और दूधमें कमी होनेका ही बल्कि सब दिशाओंमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुधार ही दिखायी देता है। इस रीतिसे सातसे बारह हजार पौंडतक दूध देनेवाली गायें देशी वंशोंमें बन रही हैं और सामान्य तौरपर दूधकी औसतन उपज भी तीन-चार गुना अधिक हो रही है।

खास करके नामी और अच्छे पशुओंके पशु-पत्रक (हर्ड-रजिस्टर) की सरकारी योजनासे कामके खूब जोरोंसे आगे बढ़नेका सुचिह्न दिखायी दे रहा है। इस योजनामें जब देशके नेता भी रस लेने लगेंगे, तब और भी विशेष सुपरिणाम दिखायी पड़ेगा। अभी चार नस्लोंका पशु-पत्रक-दफ्तर शुरू हुआ है—हरियाना (२००० रतल), सिंधी (२५००), साहीवाल (२०००) और मुरा भैंस (३०००)। जो पशु एक सालमें कम-से-कम ऊपर दिखाये अनुसार दूध देता है, उसीकी पशु-पत्रकमें रजिस्ट्री होती है। इससे कई लाभ होते हैं। पश्चिमके देशोंकी पशु-उन्नतिमें पशु-पत्रकसे जो प्रचुर लाभ हुआ है, वह आगे दिखाया जायगा।

'इंडियन फार्मिंग' मासिक पत्रमें पशु-पत्रक (हर्ड रजिस्टर) या प्रगति-पत्रकका परिणाम दिया जाता है। इन आँकड़ोंसे पाठकोंमें आशाका आलोक झलक उठता है, पर खेद यह है कि इस काममें अभी वेग कम है। यदि प्रजा

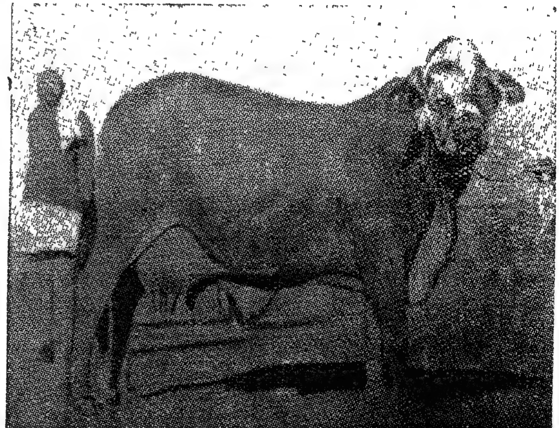
और राष्ट्र इस कामको पूरी दिलचस्पीसे आगे बढ़ायें तो कई गुना अच्छा और अधिक काम तुरंत हो सकता है। आशा है, शीघ्र ही ऐसा होगा। क्योंकि इसके सिवा और कोई राजमार्ग है भी नहीं। इस विषयमें 'नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय' कहे बिना काम नहीं चलता और राष्ट्रके सहकारसे यह पन्थ 'शिवास्ते पन्थानः'का आशीर्वाद प्राप्त कर सकता है।

अन्तमें प्रत्येक नस्लमें कहाँतक पशु-प्रगति हो सकी है, इसकी झाँकी करानेके लिये कुछ परिणाम नीचे लिखे जाते हैं—

मुदनी	(साहीवाल)	फीरोजपुर	फौजी डेयरी	१०००० पौंड
लारुली	,,	नई दिल्ली ३०६ दिनमें	सरकारी पशु फार्म	११०४८ ,,
चन्सूरी	,,	,,	,,	१२३१२ ,,
फीजी	(थारपर्कर)	करनाल	,,	१०००० ,,
शान्ता	गीर	बेंगलोर	इम्पीरियल डेयरी	७००० ,,
काँकरेज				७००० ,,
सिंधी	नं० १३२	(मद्रास सरकारका होसुर क्षेत्र)		११४४८ ,,
सिंधी	,, १४३	,,		१००८१ ,,

निम्नलिखित सिंधी ४८ गायोंका औसतन दुग्धोत्पादन ४००० से ऊपर है-

१००००	से	ऊपरवाली	२
७५००	,,	८००० ,,	३
७०००	,,	७५०० ,,	३
६५००	,,	७००० ,,	२
६०००	,,	६५०० ,,	४
५५००	,,	६००० ,,	२
५०००	,,	५५०० ,,	८
४५००	,,	५००० ,,	१२
४०००	,,	४५०० ,,	१२


मुदनी, फीरोजपुर [गोशाला सोसायटी दरभंगाकी कृपासे]

साहीवाल-वृन्द प्रयोग

चन्द्रिका ८०८१, रामती ८८६३ (१९३२ में)। कमलीने पहले बियानमें ५७५८ पौंड दूध दिया था। (१९३२), पर नयी पद्धतिसे लालगीने ७०१९ और लारुलीने ७६४८ पौंड दूध पहले बियानमें दिया था।

१९२० में साहीवाल गायोंके वृन्द (Herd) मेंसे ४००० के औसतवाली गायोंको निकाल दिया था और १९३२ में ७३ गायका वृन्द बना था, जिसमें ४००० के नीचेवाली ४२ गायें, और ८ गायें ४ से ५ हजार, १७ गायें ५ से ६ हजार, और ६ गायें ६ से ७ हजार पौंड दूध देती थीं। पर ७००० पौंडसे अधिक कोई नहीं देती थी। उसके बाद पद्धतिमें सुधार होनेपर एक साल (१९३३) में आठ हजारके ऊपरकी तीन, ७ से ८ वाली ६, ६ से ७ वाली ११, ५ से ६ वाली १६, ४ से ५ वाली ११ और चार हजारसे नीचेवाली १८ थीं। पर दस-बारह सालके बाद मुदनी, लारुली, चन्सूरी इत्यादि कई गायें १०००० से १२००० तक पहुँच गयी हैं। यह ऊपर दिखाया जा चुका है। फिर भी, जो कुछ हुआ है वही काफी उत्साह और आशाप्रद है। देखिये न—

प्रयोगके प्रारम्भमें	सुधारसे
दैनिक औसत ११.३	१३.३ पौंड दूध
कुल ,, २३९३	४४८९ पौंड
दूध न देनेका समय २२० दिन	१२२ दिन

१९१२ में पूसाके दुग्धक्षेत्रमें साहीवाल गायोंकी दूधकी दैनिक उपज ५·८ पौंड थी। वह बढ़कर १९२६ में १२.२ पौंड हो गयी थी। इसी ढंगसे दूध १३ सालमें ६.४ पौंड अर्थात् २१० प्रतिशत बढ़ा और वार्षिक औसत ४००० पौंड हो गया। विदेशके परिणामोंके साथ तुलना कीजिये—

अमेरिका ४६००, हालैंड ७५८५, स्वीजरलैंड ६९५०, डेन्मार्क ५६६६ और हिंदुस्थान २०० से ५०० !

बिलायतमें गायका दैनिक औसत दुग्ध २० पौंड है। अमेरिकामें १०·२ है और हमारे यहाँ सिर्फ २ पौंड है। वहाँकी गायोंके मक्खनका भी औसत देखिये—

अमेरिका १९० पौंड, हालैंड २५०, डेन्मार्क २२४ और हमारे यहाँ केवल १० से २५ है ! यह सब उदाहरणके तौरपर है। हमारा प्रश्न तो तीन करोड़ गायोंके सुधारका होनेसे यह तो सागरमें सीकरके समान है अथवा कताईकी पहली पूनीके पहले तारके सदृश है।

संक्षेपतः यह दिखाना है कि वहाँकी साधारण गाय जितना औसतन मक्खन देती है, उतना हमारी दुबली गायके दूध होता है। वहाँकी अच्छी गाय जितना मक्खन (१००० से १६०० पौडतक) देती है, उतना हमारी साधारण अच्छी (तृतीय श्रेणीकी) गायके दूध होता है। और वहाँकी गायका जितना औसत दूध है उतना हमारी बढ़िया (द्वितीय श्रेणीकी) गाय दूध देती है। एवं वहाँकी द्वितीय श्रेणीकी गाय जितना दूध देती है, उतना हमारी प्रथम श्रेणीकी बढ़िया-से-बढ़िया गाय दे पाती है। इसमें हमको दो बातें दिखायी पड़ती हैं। एक तो यह कि हम प्रगतिके मार्गपर आ सकते हैं, हमारे लिये आशाको पूर्ण अवकाश है; और दूसरी, यद्यपि हमारे करनेका काम कठिन और बहुत है, पर हम अवश्य ही कर सकेंगे। यह श्रद्धा और भी आशा दिलाती है।

आज अँगुलीके पैरोंपर गिनी जा सकें, इतनी-सी अच्छी गायोंपर हम गर्व नहीं कर सकते। इनी-गिनी गायोंसे सारी नस्ल सुधर गयी, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता; हाँ, इससे सुधारकी रीति और सम्भावना अवश्य प्राप्त होती है। यह भी कोई कम आनन्द और उत्साहकी बात नहीं है।

शुद्ध साँड़ और शुद्ध गायोंसे अधिकतम और शीघ्रतम परिणाम प्राप्त हो सकता है और अपनाने योग्य श्रेष्ठ नीति-रीति भी यही है। परन्तु उनके अभी कम संख्यामें होनेसे एक दूसरी पद्धतिका प्रयोग आजमा सकते हैं। वह यह है कि देशी गायोंकी नस्लका संयोग शुद्ध साँड़से ही कराया जाय। इस ग्रेडिंग—श्रेणी-सुधारकी पद्धतिसे भी पशुओंकी चार-पाँच पीढ़ीतक उत्तरोत्तर अच्छा परिणाम प्राप्त होता रहता है। पशुकी पीढ़ी केवल तीन वर्षकी है और हमारी २०-२५ वर्षकी गिनें, तो उसमें हमें ६ से ८ तक पशुपीढ़ीका लाभ मिल सकता है। इसलिये निराशाकी कोई बात नहीं है और पुरुषार्थको पूरा अवकाश है। हमें लगकर उद्योग करना चाहिये।

गायोंके सुधारके लिये बहुत अधिक शक्यता और सम्भवनीयता (Potentialty) है। उसका विकास करनेपर हम भी राष्ट्रके रूपमें विकसित हो सकते हैं। गो-उद्धारकी यह क्रान्ति प्रथम और परम है, और अपनी साधना और सिद्धि दोनोंसे यह यशोबल दिलाकर हमें सुखी और समृद्ध बनावेगी। राजा और प्रजा, राय और रङ्क तथा हर-एक जाति, धर्म और मतके लिये सर्वमान्य, सर्वसामान्य यही नीति हो सकती है !

गोमूत्र-महिमा

१. रक्तमें गायका यूरिया (मूत्रमें रहनेवाला एक तत्त्व) कृमि-नाशनका काय करता है।
२. यह प्राणी-शरीरके तन्तुओंके लिये हानिकर नहीं है।
३. घावपर यह अविषाक्त पदार्थके रूपमें प्रयुक्त किया जा सकता है।
४. इसके प्रयोगद्वारा, दूसरी प्रकारकी चिकित्साके लिये आवश्यक परिश्रमका कम-से-कम आधा भाग बच जाता है।
५. इससे ठीक होनेकी प्रक्रियामें तनिक भी बाधा नहीं पहुँचती है।
६. तात्कालिक-चिकित्साके रूपमें इसका प्रयोग बहुत ही अपूर्व सिद्ध होगा।
७. यह घावमें पुराने रक्त-संक्रमणसे उत्पन्न होनेवाले पीबको रोकता है। (संगृहीत)

गायें आमदनी बढ़ा सकती हैं

(लेखक—श्रीयुत के० एस्० सूरसिंहजी, बी० ए०, एम्-एस्-सी०, एम्० आर० ए० एस्०)

यद्यपि भारतवर्षमें गाय सबसे पवित्र पशु मानी जाती है, फिर भी दुर्भाग्यवश भारतके पालतू पशुओंमें इसीकी दशा सबसे अधिक गिरी हुई है, इसीकी सबसे कम सँभाल होती है तथा इसीकी सबसे अधिक उपेक्षा की जाती है। भगवान् शिवने, जिनकी करोड़ों भारतीय ईश्वरके रूपमें उपासना करते हैं, अपने वाहनके रूपमें नन्दी नामक वृषभको स्वीकार करके भारतीय जनताको अप्रत्यक्षरूपमें यह पवित्र सन्देश दिया है कि गायके हितके लिये भारतके प्रत्येक गाँवमें गौओं-के प्रत्येक दलके पीछे एक नन्दी-जैसा ही उत्तम जातिका साँड़ रहना चाहिये। प्रायः भारतके प्रत्येक गाँवमें, जहाँ भी शिवमन्दिर होता है, नन्दी-वृषभकी मूर्ति भी भगवान् शङ्कर-जीकी ओर मुँह किये हुए बैठी रहती है। किन्तु वही नन्दी अब, यह मूक विज्ञप्ति करता रहता है कि भारतके लोग कितने नासमझ हैं जो मेरे स्वामीके साधारण सन्देशको भी नहीं समझ रहे हैं!

गौओंके साथ श्रीकृष्ण भगवान्के आजीवन सम्पर्कसे भी इसी प्रकारका पवित्र सन्देश मिलता है। बाल्यावस्थामें श्रीकृष्ण-जी दूध चुराकर पीया करते थे जब कि यशोदाजी गायें दुहनेमें लग जाती थीं। इससे यह संकेत मिलता है कि पोषणके लिये बच्चोंको पुष्कल दूध मिलना चाहिये।

जब कृष्णजी कुछ बड़े हुए तो दूसरे गोपालोंके साथ वे गाय चराने वनमें जाने लगे। वे एक गोपालककी हैसियतसे बहुत कड़ा परिश्रम करते थे। गायें यमुनाजीके किनारे-किनारे चरती थीं और श्रीकृष्ण वृन्दावनके किसी पेड़के नीचे बैठकर वंशी बजाया करते थे; इससे गायें सदा उनके आस-पास रहती थीं। यह गायोंके प्रति श्रीकृष्णके सच्चे एवं प्रगाढ़ प्रेमका सूचक है तथा प्रत्येक भारतीय युवकके लिये पालनीय संदेश है। हम श्रीकृष्णको भगवान् मानकर पूजते हैं, किन्तु फिर भी उनके द्वारा दिये हुए गो-सेवाके पवित्र संदेशका हम सर्वथा निरादर करते हैं!

पवित्र कही जानेवाली गायकी वर्तमान दशासे भारतीय समाजके पापका पता चलता है, क्योंकि भारतीय जनताके सभी वर्ग गायकी सर्वथा उपेक्षा तथा अवज्ञा कर रहे हैं। गायके खिलाने-पिलाने, उसकी नस्ल-वृद्धि तथा उसकी उचित व्यवस्थाकी ओर भारतीयोंका बिल्कुल ध्यान नहीं है। भारतमें गायके प्रति इस पापपूर्ण भावका यह परिणाम हुआ कि राष्ट्रका शारीरिक स्वास्थ्य गिर गया, निम्न कोटिका पोषण मिलने लगा; मनुष्यकी आयुका औसत घट गया, बालमृत्युकी संख्या बढ़ गयी तथा कृषिकी अत्यन्त गिरी हुई और हीन दशा हो गयी!

भारतके लिये यह बड़ी लज्जाकी बात है कि गायकी भलाईके लिये तथा उसके प्रति सच्चा प्रेम फिरसे पानेके लिये उसे पश्चिमका मुँह ताकना पड़ता है, जहाँ आज भारतकी अपेक्षा गायोंपर अधिक ध्यान दिया जाता है, उन्हें अच्छा और पूरा भोजन दिया जाता है तथा उनके लिये सुन्दर व्यवस्था की जाती है!

यूरोप और अमेरिकामें सामान्यतः प्रत्येक मनुष्य गायसे कमाता है, क्योंकि उसे गायके खाने-पीनेका खर्च एवं दूधका दैनिक हिसाब मालूम रहता है। वह गायको उसके दूधके अनुसार ही खिलाता-पिलाता है।

हमारे यहाँकी दूध देनेवाली गायें प्रतिवर्ष लाखों रुपयेका घास-चारा खा जाती हैं। क्या हमने कभी इस बातपर विचार किया है कि अच्छे भोजन और अच्छे साँड़के संयोगसे गायका दूध कितना बढ़ जाता है और इसके फलस्वरूप हमारी आमदनी भी कितनी बढ़ जाती है? फिर भी यदि टोलेमें कुछ भी बेकाम गायें होंगी तो वे वास्तविक आमदनीको अवश्य कम कर देंगी। दूध देनेवाली गाय एक कारखाना है, जो सूखी घास एवं चारेको दूधमें परिणत कर देती है। गायके ही कारण हमारे चारेकी बिक्री होती है।

अपना चारा गायको बेच दीजिये

आपके खेतमें उगनेवाले चारेका अधिक-से-अधिक मूल्य उगाहनेका उपाय यही है कि आप उसे अधिक दूध देनेवाली गायोंको खिलाइये। गाय कड़बी, घास-भूसा और बिनौले आदि खाती है और उनसे ऐसा पदार्थ तैयार करती है, जिसकी बिक्री शीघ्र हो जाती है।

उन्नतिकी बहुत अधिक गुंजाइश

अत्यन्त सावधानीपूर्वक किये गये हिसाबके आधारपर यह कहा जाता है कि भारतवर्षमें एक औसत गाय लगभग ३ हजार रतल दूध वर्षभरमें देती है, किन्तु संसारमें कुछ गायें ऐसी हैं जो वार्षिक ३७ हजार रतलसे भी अधिक दूध देती हैं। अतः भारतकी औसत गायोंके लिये उन्नतिकी काफी गुंजाइश है।

दैनिक दूधका हिसाब रखिये

प्रत्येक गायके दैनिक दूधका हिसाब रखना आवश्यक तथा बहुत सरल है। केवल आध घंटेमें ६ प्रकारके दूधके नमूनोंकी परीक्षा हो सकती है कि किसमें कितना घी निकलेगा।

दूधके तौलनेमें, घास या कड़बीके तौलका अनुमान लगानेमें, तथा बिनौले आदि सत्त्वयुक्त पदार्थोंको तौलनेमें बहुत कम समय लगता है। वह दुग्ध-व्यवसायी, जो अपनी गायोंके दूध आदिका दैनिक हिसाब-किताब रखता है, प्रायः ऐसी ही गायें रक्खेगा जिनसे उसे लाभ हो।

संयुक्त-राष्ट्रान्तर्गत मिचीफैनमें स्थापित प्रथम 'गो-परीक्षा-संघ' (Gow-testing Association) ने पिछले ३५ वर्षोंमें जो क्रमिक उन्नति की है, उसके आँकड़े संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाके कृषि-विभागके पास हैं। पहले साल प्रतिगाय औसतन ५,३५४ रतल दूध देती थी, दसवें वर्ष प्रतिगाय ६,६३७ रतल देने लगी और अब १०,००० रतलसे भी अधिक देती है।

नस्ल-सुधारद्वारा अपना गो-धन सुधारिये

दूध देनेवाली गायोंकी उन्नतिके अनेकों उपायोंमेंसे कुछ निम्नाङ्कित हैं—

(क) कम दूध देनेवाली गायोंको न रखनेसे कुल दूधकी मात्रामें कुछ कमी तो आयेगी, किन्तु दूधका औसत बढ़ जायगा और प्रायः आयमें वृद्धि होगी।

(ख) गायोंको भरपेट और अच्छा भोजन देनेसे दूधका औसत बढ़ेगा, कुल दूधकी मात्रा भी बढ़ेगी और आय भी बढ़ सकती है।

(ग) उत्तम साँड़ोंके उपयोगसे दूधका औसत बढ़ेगा, कुल दूधकी मात्रा बढ़ेगी और निखालिस आयमें भी अवश्य वृद्धि होती है।

यह एक व्यापक सिद्धान्त मान लेना चाहिये कि नस्ल-सुधारसे दूध देनेवाली गायोंमें जो उन्नति होगी, उससे गोपालकके लाभमें वृद्धि होगी तथा दूध लेनेवालोंको भी कम मूल्य देना पड़ेगा। यह एक ऐसा श्रेष्ठ उपाय है जिससे किसी व्यक्तिकी समृद्धिमें कमी लाये बिना ही देश समृद्ध हो सकता है। जिनके पास अधिक दूध देनेवाली उच्च कोटिकी गायें हैं, उनकी संसारके सबसे बड़े उपकारियोंमें गणना होनी चाहिये।

प्रमाणित साँड़ तथा रजिस्ट्री की हुई उच्च कोटिकी गौसे उत्पन्न हुए अच्छी जातिके तथा हृष्ट-पुष्ट साँड़ ही हमारे आदर्श होने चाहिये। डेयरीकी दुधारू-से-दुधारू गायोंको भी बरधानेके लिये ऐसे साँड़ उपयुक्त होंगे। जब इन साँड़ोंसे प्रमाणित बछड़े तथा उच्च कोटिकी बछियाएँ उत्पन्न होंगी, तब इन साँड़ोंका मूल्य और भी अधिक बढ़ जायगा; क्योंकि तब यह निश्चय हो जायगा कि ये अपनी सन्तानोंमें अपने पूर्वजोंके उत्तम गुण भर देंगे।

जहाँतक संभव हो उत्तम, दुधारू और चुनी हुई गायोंका संयोग ऐसे ही साँड़ोंसे कराना चाहिये। डेयरीके लिये गायें भी बहुत सावधानीसे चुनी जानी चाहिये। अच्छे साँड़से अधिक दूध देनेवाली बछियाएँ उत्पन्न होती हैं; और ये बछियाएँ अपनी माताओंसे कहीं अधिक दूध देती हैं। माताएँ चाहे कम दूध देनेवाली ही क्यों न हों, अच्छे साँड़से संयोग करानेपर उनसे दुधारू श्रेणीकी बछियाएँ उत्पन्न होंगी और इनसे तीसरी पीढ़ीमें जो बछियाएँ होंगी वे उच्च कोटिकी दुधारू गायें होंगी।

भारतमें गो-संघों एवं वृषभ-संघोंका निर्माण

अब समय आ गया है कि भारतके प्रत्येक प्रान्त तथा देशी राज्यमें यूरोप और अमेरिकाकी शैलीपर हम स्थानीय गो-संघों एवं वृषभ-संघोंका संघटन करें। प्रत्येक सुव्यवस्थित गो-संघ अथवा वृषभ-संघमें नस्ल-सुधारका ठोस कार्य बुद्धिमानीके साथ किया जा सकता है। ऐसे संघोंकी स्थापनामें लागत कम लगती है और लाभ अधिक होता है।

दुग्ध-व्यवसायियोंको कम दूध देनेवाली गायसे आर्थिक लाभ नहीं होता, किन्तु निम्नकोटिका साँड़ तो उनके लिये उससे भी गया-बीता है, क्योंकि वह डेयरीकी शेष गायोंको शीघ्र ही अपनी कोटिमें ले आता है। प्रत्येक गाँवमें जितने भी ऐसे निम्नकोटिके साँड़ हों उन्हें बधिया कर देना चाहिये।

कृषि-सम्बन्धी जितने उद्योग हैं, उनमें दुग्ध-व्यवसाय ही ऐसा है, जिसमें प्रतिदिनका हिसाब-किताब रखना संभव है; साथ ही कोई ऐसा अन्य कृषि-उद्योग भी नहीं है, जिसमें हिसाब-किताब न रखनेसे सफलतामें बहुत बड़ी बाधा पहुँचती हो।

यदि हम लाभकी दृष्टिसे दुग्ध-व्यवसाय करते हैं तो हमें उसी गायका पालन-पोषण करना चाहिये जो अपने दूधसे अपने चारे-पानीका खर्च निकाल ले और हमें संतोषजनक लाभ भी दे। ऐसी गाय भारतके लिये एक निधि है, क्योंकि वह हमारी कृषिको उच्च तथा उच्चतर भूमिपर ले जायगी।

भगवान् करे नन्दी-वृषभके द्वारा दिया हुआ शङ्करजीका पवित्र संदेश हमारे अन्तरतम प्रदेशमें अङ्कित हो जाय और ईश्वर करे हमारे प्रत्येक गाँवमें नन्दी-जैसे साँड़ोंसे बरधायी जानेवाली गायें हों।

वर्जीनियामें गोपालकोंका उत्सव

(लेखक—'सदाशिव')

यहाँ हमलोग प्रतिवर्ष गोरक्षा-सप्ताह सफलताके साथ मनाते हैं, ऐसे उत्सवोंमें जब समाजकी सब श्रेणियों और विचारधाराओंके लोग योगदान करते हैं; तब बड़ा ही भव्य और मधुर रूप प्राप्त होता है। अमेरिकामें होनेवाले ऐसे ही एक वार्षिकोत्सवका वर्णन हम यहाँ संक्षेपसे करना चाहते हैं।

अमेरिकामें 'वर्जीनिया' नामका एक राज्य है, इसका उत्तरी भाग गोरक्षा, गोसंवर्द्धन, गोपालन तथा गो-दुग्ध-व्यवसायकी दृष्टिसे बड़ा महत्त्व रखता है। हमारे यहाँके उत्सवोंका समय जैसा उत्साहपूर्ण होता है, वैसा ही वर्जीनियावालोंके लिये इस उत्सवका समय होता है; परन्तु ये लोग इस उत्सवकी ओर भी आर्थिक दृष्टिसे ही देखते हैं। अतः इसका स्वरूप भी कुछ दूसरा ही होता है। इस अवसरपर आपसी व्यवहार, गोधनका पालन-पोषण, व्यवसायकी कठिनाइयाँ, तथा सर्वत्र प्रकाशित होनेवाले विज्ञापनोंकी सचाई आदि बातें अच्छी तरह देखी और समझी जा सकती हैं।

ऐसे उत्सवोंको आकर्षक बनानेके लिये कुछ विशेष आयोजन करना पड़ता है। इस उत्सवमें कुल ग्यारह जिलोंके लोग सम्मिलित होते हैं। इनमेंसे किसी गोपसुन्दरीको इस उत्सवकी रानी बनाकर उसे राजसिंहासनपर बिठाया जाता है। रानीका चुनाव सुन्दर-सुन्दर युवतियोंमें सौन्दर्यकी होड़ लगाकर किया जाता है! सन् १९३६ में फेयर फाम्स जिलेकी एक लावण्यवती युवतीको यह सम्मान प्राप्त हुआ था। पंद्रह हजार जनसमूहके सामने वर्जीनियाके गवर्नरने इस रानीको राज्यका समुचित प्रबन्ध करनेकी शपथ दिलायी। अनन्तर उसके मस्तकपर अपने हाथसे राजमुकुट रक्खा और उसके हाथमें राजदण्ड दिया। समस्त जनताने रानीके नामका जय-जयकार किया।

रानीके सिंहासनपर आरूढ़ होनेपर एक सहस्र विद्यार्थियोंने उसके सामने 'गोपाल-जीवन-क्रम'का एक नाटक खेलकर दिखाया। इसमें गोपालकोंके जीवनके प्रत्येक अङ्गपर प्रकाश डाला गया था। प्रातःकाल उठनेपर ग्वाला किस प्रकार गायका दूध बोतलोंमें भर अपने सब ग्राहकोंके पास भेजता है। यह बड़े ही अच्छे ढंगसे दिखाया गया था। नाटकमें नाच-गानकी भरमार थी और नाटक बहुत मनोरञ्जक बनाया गया था। इसके पश्चात् नवयुवतियोंने हालैंड, इटली, हवाई, रूस, स्पेन, फ्रांस और स्काटलैंडकी ग्वालिनोंके विभिन्न वेष-भूषाओंका प्रदर्शन किया। यह कार्यक्रम इतना सफल हुआ कि सभी प्रेक्षकोंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की।

तीसरे पहर जुलूसका आयोजन था। यह विशाल जुलूस लगभग दो मील लंबा था। इसका नाम 'क्षीर-मार्ग' रक्खा गया था। इसमें नाना प्रकारके वाहनों, बैंड-बाजों, पताकाओं और फलकोंका समावेश किया गया था। जनसमूह भी उमड़ पड़ा था। जुलूस वास्तवमें प्रेक्षणीय था। सन्ध्याको यह जुलूस एक पाठशालाके विशाल प्राङ्गणमें पहुँचकर समाप्त हुआ। पश्चात् पाठशालाके सभागृहमें नयी रानीके सम्मानार्थ नृत्यका आयोजन किया गया। इस प्रकार यह चिरस्मरणीय उत्सव समाप्त हुआ।

पर प्रश्न यह होता है कि ऐसे उत्सवोंसे लाभ क्या? उत्तर यह है कि इस उत्सवके कारण ग्यारह जिलोंके समस्त गोदुग्ध-व्यवसायी एक स्थानपर एकत्र हुए। उन्हें परस्पर विचारोंका आदान-प्रदान करनेका अवसर मिला। किनमें क्या कमी है और किनमें क्या विशेषता है, यह प्रत्यक्ष देख पड़ा। कौन कहाँ गलती कर रहा है और कैसे उसका सुधार होगा इसका उसे ज्ञान हुआ। साथ ही वर्जीनियाके दुग्ध-व्यवसायी देश होनेका विज्ञापन भी हो गया। इतना ही क्या कम है? और वास्तवमें वर्जीनियाकी गोशालाओं-जैसी गोशालाएँ अन्यत्र कहीं भी नहीं देख पड़तीं। इसी प्रकार यहाँके-से उत्साही गोपालक, दुधारू गायें और हरे-हरे गोचरक्षेत्र कहीं भी देखनेको नहीं मिलेंगे।

सारे संसारमें अपने ढंगका यह एक ही उत्सव है। यदि इसमें होनेवाले विलास-सम्बन्धी प्रसंगोंको निकालकर और उनकी जगह शुद्ध मनोरञ्जक सदाचार-प्रवर्तक प्रसंगोंको रखकर इस तरहके उत्सवोंका प्रचार अन्यत्र भी किया जाय तो वह बहुत लाभदायक होगा। जहाँ बहुत-सी दुधारू गायें हों और जहाँके गोपालक अपने व्यवसायकी उन्नति किस प्रकार होगी, यह जाननेके इच्छुक हों, वहाँ ऐसे उत्सवोंसे बड़ा लाभ हो सकता है। (गो. ज्ञा. को.)

श्रीनामदेवजीके द्वारा मृत गायको जीवनदान

दक्षिण भारतमें श्रीनामदेवजी बहुत प्रसिद्ध और सिद्ध महात्मा हो गये हैं। एक बार दिल्लीके बादशाहने उन्हें अपनी राजधानीमें बुलाया और एक मरी हुई गायको जीवित करनेको कहा। ऐसा न करनेपर उसने प्राण-दण्डकी भी धमकी दी। श्रीनामदेवजी बराबर यही कहते रहे कि मुझमें कोई शक्ति नहीं, जो राम करते हैं, वही होता है। इस उत्तरसे खीझकर बादशाहने उनके ऊपर एक मतवाला हाथी छोड़ दिया। हाथी वार करता था, किन्तु भगवत्कृपासे वे बच-बच जाते थे। श्रीनामदेवजी प्रेमपूर्वक कीर्तन करने लगे। अन्तमें भक्तवत्सल भगवान्‌को आना ही पड़ा और मरी हुई गायको जीवित करना पड़ा।

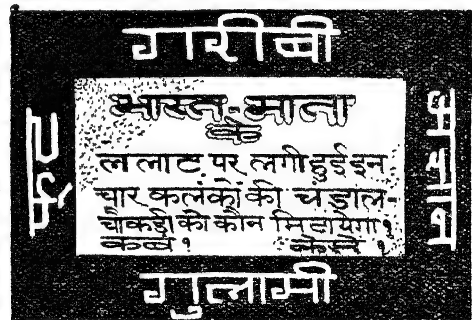
श्रीपांगारकरकृत ग्रन्थ 'मराठी वाङ्मयाचा इतिहास' पृष्ठ ८०५--८०९ में उपर्युक्त वर्णन बड़े विस्तार और प्रमाणसे दिया है। इसके लिये अत्यन्त पुष्ट प्रमाण श्रीनामदेवजीका पद्य ही है, जो इस प्रकार है—

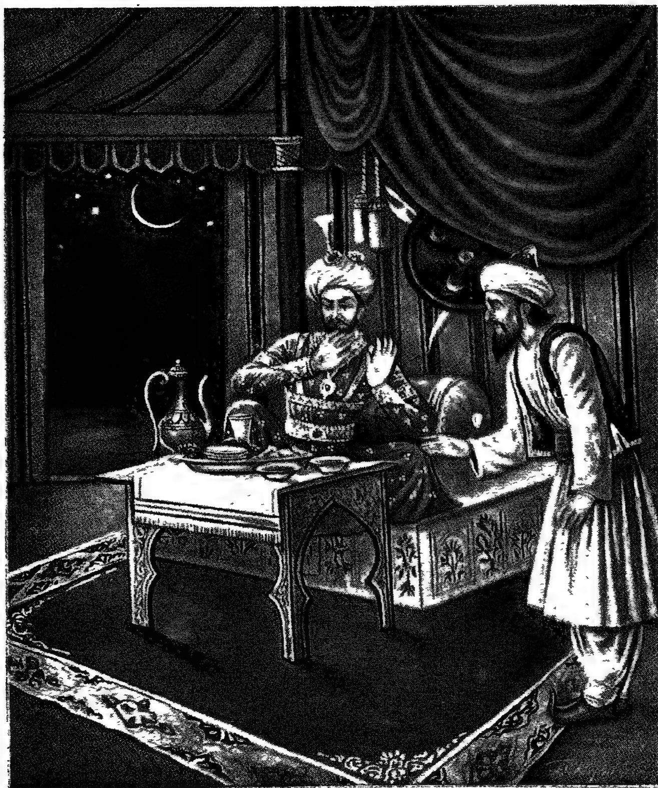
सुलतान पूछै सुनबे नामा। देखौं राम तुमारे कामा ॥
नामा सुलताने बाँधिला। देखौं तेरा हरि बिठुला ॥
बिसमिल गऊ देहु जिवाई। नातर गरदनि मारौं ठाँईं ॥
बादिसाह ऐसी क्यों होई। बिसमिल किया न जीवै कोई॥
मेरा कीया कछू न होई। करिहैं राम होइहै सोई ॥
बादिसाह चढ़ियो अहंकारी। गज हस्ती दीनो चमकारी ॥
रुदनु करै नामे की माई। छोड़ि रामकी न भजहि खुदाई
न हौं तेरा पूँगड़ा न तू मेरी माई। पिंडु पड़ै तो हरिगुन गाई ॥
करै गजिंदु सुंडकी चोट। नामा उबरै हरिकी ओट ॥
काजी मुल्ला करहिं सलामु। इन हिंदू मेरा मलिया मान ॥
बादसाहि बेनती सुनेहु। नामे सेर भरि सोना लेहु ॥
माल लेउँ तौ दोजख परौं। दीन छोड़ि दुनियाकौ भरौं ॥
पाँवहु बेड़ी हाँथहु ताल। नामा गावै गुन गोपाल ॥
गंगा जमन जो उलटी बहै। तौ नामा हरि करता रहै ॥
सात घड़ी जब बीती सुणी। अजहु न आयो त्रिभुवनधणी ॥
पाखंतण बात बजाइला। गरुड़ चढ़े गोबिंद आइला ॥
अपने भगत पर कीं प्रतिपाल। गरुड़ चढ़े आए गोपाल ॥
कहइ त धरणि इकोड़ी करौं। कहहि त लेकर ऊपर धरौं ॥
कहइ त मुई गऊ देउं जियाई। सब कोई देखै पतियाई ॥
नामा प्रणवै सेलमसेलि। गऊ दुहाई बछरा मेलि ॥
दूधहि दुहि जब मटुकी भरी। लै बादिसाहके आगे धरी ॥
बादिसाहु महल महि जाई। औघटकी घट लागी आई ॥
काजी मुल्ला बिनती फरमाई। बखसी हिंदू मैं तेरी गाई ॥
नामा कहै सुनहु बादिसाह। इहौ किछु पतिया मुझै दिखाइ॥
इसु पतियाका इहै परवान। सांचि सीलु चालहु सुलतान ॥
नामदेव सब रह्या समाई। मिलि हिंदु सब नामे पहिं जाई ॥
जौ अबकी बार न जीवै गाइ। त नामदेवका पतिया जाइ ॥
नामेकी कीरति रही संसारि। भगत जना ले उधरया पारि ॥
सकल कलेस निंदक भया खेदु। नामे नाराइन नहीं भेदु ॥

(देखिये 'ग्रन्थसाहब' राग भैरऊ नामदेवजीक घरू २ पृष्ठ ६३० हिंदी)

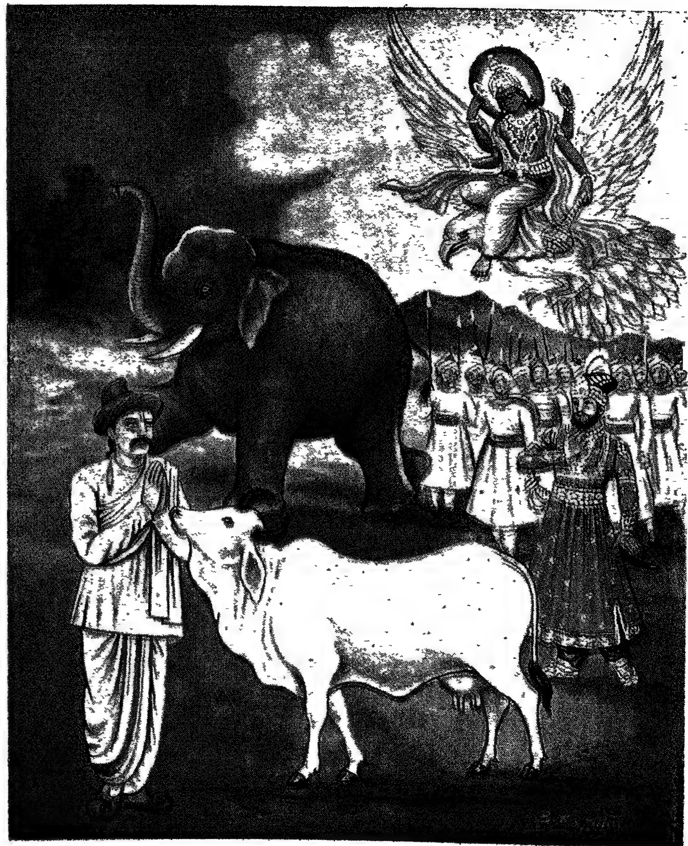
हमारे गोमांसाहारी मुसल्मान भाइयोंको हमारी नहीं, तो कम-से-कम अपने पूज्य काजी-मुल्लाओंकी बात तो माननी ही चाहिये, जिन्होंने कुछ सोच-समझकर और देख-सुनकर ही कहा होगा। 'बखसौं हिंदू मैं तेरी गाई'। (गो. शा. को.)







हुमायूँकी गोमांससे घृणा



नामदेवपर भगवत्कृपा

गो-रक्षाके चौबीस साधन

१. एक-एक गाय घरमें अवश्य-अवश्य रक्खो।

२. भैंसकी जगह गाय पालो।

३. नये अच्छे नन्दी (साँड़) बनाओ और साँड़का ही दान करो।

४. गोदानकी जगह पहले चारे-दानेका दान करो।

५. गोचरभूमि अधिक-से-अधिक छुड़वाओ, खरीदकर गाँवोंको कृष्णार्पण कर दो। यह बड़े पुण्यका कार्य है।

६. मारी हुई गायके चमड़ेकी कोई चीज व्यवहार न करनेकी प्रतिज्ञा कर लो। मरी हुई गायके चमड़ेका सामान व्यवहार करो।

७. नये-नये ढंगका चारा बर्तना आरम्भ करो।

८. दाबघास (साइलेज) बनाओ, चारा कुटाई तथा चारा काटनेके लिये यन्त्रोंसे काम लो।

९. गायोंकी खूब सेवा करो। उन्हें रोज मालिश करो, धोओ, नहलाओ और बीच-बीचमें डुबकी लगवाकर नहलवाते रहो।

१०. गाय और उसके परिवारकी जन्मपत्री और उनकी उन्नतिका हिसाब रक्खो।

११. गायके दूध-घीकी पैदायशको देखकर उसी अनुपातसे चारा-दाना दो।

१२. गोबरको जलाना छोड़ दो। उसके बदलेमें लकड़ी पैदा करो और उसे जलाओ।

१३. गोबर-गोमूत्र, कूड़े-कचरे और घास-चारेकी बची रद्दीसे वैज्ञानिक ढंगपर खाद बनाओ।

१४. मिश्र खेती करो।

१५. पिंजरापोलोंके विविध अङ्गोंका विकास करके उन्हें आदर्श गोलोक बना लो।

१६. गोपरीक्षण और निरीक्षणके लिये संघ कायम करो।

१७. सहकारी-पद्धतिसे दुग्ध व्यवसाय और उसकी रक्षाका कार्य करो।

१८. दुग्धालयकी सहकारिता और बुद्धिमत्ताके साथ वैज्ञानिक ढंगसे व्यवस्था करो।

१९. पूँजीकी सुव्यवस्था करो।

२०. तेलहनको कभी विदेश जाने न दो। तेल भले ही जाय। इससे व्यापारकी तो उन्नति होगी ही, खास करके खलसे पशुओंकी और पृथ्वीकी बड़ी पुष्टि होगी।

२१. गायोंको रोगग्रस्त मत होने दो। सफाई, चिकित्सा तथा अन्य उपायोंसे उन्हें सदा नीरोग रक्खो।

२२. बछड़ोंको बधिया करनेकी क्रूर चाल बंद कर दो। जिनको बधिया करना हो, उन्हें पहले ही वर्ष डाक्टर बोर्डीजोके निकाले हुए चिमटेसे करा लो। इसमें उन्हें कोई कष्ट नहीं होगा।

२३. बैलोंके प्रति भार ढोने और हल जोतनेमें जुल्म न हो, इसका पूरा-पूरा ख्याल रक्खो।

२४. भगवान्‌की कृपा-शक्तिपर विश्वास रखकर विज्ञान, विवेक और श्रद्धाके साथ गोवंशकी उन्नतिके इन कामोंको शुरू करो। इनको चलाते रहो और समुज्ज्वल सफलता प्राप्त करो।



प्रगतिमान् कैसे हुए ?

जिन लोगोंने कुछ नाम कमाया है, जो अत्यन्त बली और वीर हुए हैं, जिनके समाजमें बालमृत्युकी संख्या बहुत घट गयी है, जिन्होंने संसारमें व्यापार-धंधेपर अधिकार किया है, जो साहित्य-संगीत-कलाका आदर करते हैं तथा जो विज्ञान और मानव-बुद्धिकी प्रत्येक दिशामें प्रगतिमान् हैं, वे ऐसे लोग हैं जिन्होंने गायके दूध और दूधके बने पदार्थोंका स्वच्छन्दतासे उपयोग किया है।—डा० ई० बी० मैक्कालम, अमेरिका

व्रजसे गोवध हटाइये

(लेखक—श्रीमहावीरप्रसाद दाधीच बी० ए०, एल्-एल्० बी०, प्रधान मंत्री अ० भा० गौ-महासभा)

मथुरा सप्तपुरियोंमें एक परम पावन पुरी है। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका जन्म इसी व्रजभूमिमें हुआ था, जहाँ उन्होंने बाललीला की थी और स्वयं गोपालन कर मनुष्यमात्रको गौकी महत्ताका उपदेश दिया था। व्रजभूमिके पुण्यधाम गोकुल और गोवर्धन-जैसे गाँवोंके नामकरणसे भी हमें पता चलता है कि इस भूमिमें गायोंकी कितनी महत्ता थी। उस समय व्रजभूमिमें नन्द, महानन्द आदि लाखों गायोंका पालन करते थे और उस समयकी व्रजभूमिमें दूध और दहीकी नदियाँ बहती थीं। भगवान् श्रीकृष्ण स्वयंभगवान् परम पुरुष होते हुए भी अपनेको गोपाल-कृष्ण यानी गौओंका रक्षक और पालक कहलानेमें विशेष प्रसन्न होते थे। गौओंसे उनको कितना प्रेम था इसका उनके निम्नलिखित वचनोंसे पता लगता है—

गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

उसी पवित्र व्रजभूमिमें आज गायोंके अनेक कत्लखाने खुले हुए हैं। यह कितने दुःखकी बात है।

मराठोंकी पराजयके बाद सन् १८०३ में मथुरा अंग्रेजोंके हाथमें आयी, उस समय अंग्रेजी सेनाके सेनापति (कमांडर-इन्-चीफ) लार्ड लेक थे, उन्होंने इस पवित्र व्रजभूमिकी पवित्रताको कायम रखनेके लिये एक फरमान निकाला था, जिसमें कहा गया था कि मथुरा हिंदुओंकी पवित्र भूमि है और गौ उनकी पूजनीय है। इसलिये उसको किसी भी तरहकी हानि व्रजभूमिमें नहीं पहुँचायी जावे। इससे विपरीत करनेवालेको कठोर दण्ड दिया जायगा।

तत्पश्चात् सन् १८५७ की प्रसिद्ध क्रान्तिके समय मथुरा ब्रिटिश-सैन्यका प्रधान सैनिक-स्थान हो गया और उस समय ब्रिटिश सरकारने लार्ड लेकके फरमानकी अवहेलना कर कत्लखाने शुरू कर दिये। उस समयकी जनता गदरके कारण बहुत भयग्रस्त थी इसलिये इसका विरोध न कर सकी। उसका फल यह हुआ कि आज व्रजभूमिमें दस-बारह कत्लखाने हो गये, जिनमेंसे एक कत्लखाना तो भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी जन्मभूमिके बहुत ही समीप है। इन कत्लखानोंको उठानेके लिये कई बार सरकारसे प्रार्थना की गयी, परन्तु कुछ भी परिणाम नहीं निकला।

इन कत्लखानोंको पवित्र व्रजभूमिसे हटानेके लिये छः वर्ष पूर्व कई महानुभावोंने फिरसे प्रयास शुरू किया और इसके फलस्वरूप अखिल भारतवर्षीय गौ-महासभाका अधिवेशन सन् १९३९ में मथुरामें एवं सन् १९४० में नागपुरमें श्रीयुत चिरंजीलालजी लोयलकाके सभापतित्वमें हुआ। इन दोनोंमें निम्नलिखित सज्जनोंकी एक समिति बनायी गयी और उसको अधिकार दिया गया कि वह व्रजभूमिसे कत्लखाने उठानेके लिये विविध उपायोंद्वारा चेष्टा करे।

श्रीयुत चिरंजीलालजी रामचन्द्रजी लोयलका (बम्बई)
लोकनायक एम्०, एस्०, अणे, यवतमाल (सी०पी०, बराड़)
सर गोकुलचंदजी नारंग (पंजाब)
श्रीयुत ए० सी० दत्त (बंगाल)
सर जे० पी० श्रीवास्तव (यू० पी०)
राय बहादुर ए० बी० मुले (ग्वालियर)
श्रीचौंडेजी महाराज (महाराष्ट्र)
राय बहादुर जमनाप्रसादजी (प्रेसीडेंट मथुरा म्युनिसिपलिटी)
श्रीयुत बैजनाथजी बाजोरिया, एम्० एल्० ए० (कलकत्ता)
पं० श्रीदेवनायकाचार्यजी शास्त्री (बनारस)

इस समितिकी ओरसे वायसराय महोदय एवं यू० पी० गवर्नमेंटको अर्जियाँ दी गयीं, किन्तु इतनेहीमें यूरोपीय महायुद्ध छिड़ गया और युद्धकी परिस्थितिसे बाध्य होकर इस कार्यको स्थगित कर देना पड़ा। अब महायुद्ध समाप्त हो गया है और पुनः व्रजभूमिसे कत्लखाना उठानेके लिये प्रयत्न किया जा रहा है। अतः समस्त महानुभावोंसे प्रार्थना की जाती है कि वे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी जन्मभूमि व्रजभूमिसे कत्लखाने उठानेकी पूरी चेष्टा करें।

श्वेत जातिके लोगोंका भाग्य उनकी गायोंके साथ दृढ़ रूपसे संकलित है। दुग्धाभावोंके बिना वे कभी जीवित नहीं रह सकेंगे।

—अमेरिकाके प्रेसीडेंट हर्बर्ट हूवर

गो-वत्सल श्रीगोविन्द

(लेखक—पं० श्रीकृष्णदत्तजी भारद्वाज, एम्० ए०, आचार्य, शास्त्री, साहित्यरत्न)

श्रीभगवान्‌को गौओंसे बड़ा प्रेम है। उनके दिव्यधाममें, गोलोकमें, सुन्दर-सुन्दर गायें हैं—

यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।

(ऋक्‌संहिता १। १५४। ६)

गायोंका दूध भूलोकका अमृत है। इस विश्वकी, सौर ब्रह्माण्डकी, जब भगवान्‌ने उत्पत्ति की, तब वे यहाँ गायोंकी रचना न भूले—

गावो ह जज्ञिरे तस्मात् (ऋक्‌संहिता १०। ९०। १०)

(यजुःसंहिता ३१। ८)

(अथर्वसंहिता १९। ६। २८)

जब वे श्रीकृष्णरूपमें वसुदेवजीके यहाँ पधारे तो उसी समय गोकुल चले गये, जहाँ गायोंकी प्रचुरता थी। कुछ बड़े होनेपर वे अपने गो-कुलको—गो-समुदायको—एक सुन्दर वनमें, वृन्दावनमें, ले गये; जहाँ गायोंको खाने-पीनेकी अत्यन्त सुविधा थी। वहाँ उन्होंने गायोंके बच्चोंको घास चरानेका काम लिया—

वत्सपालौ बभूवतुः (श्रीमद्भा० १०। ११। ३७)

देवराज शक्रने एक बार नन्दजीके समस्त गो-परिवारको सतानेके लिये घोर घनावलीको आज्ञा दी तो मेघ लगे मूसलधार वर्षा करने—

नन्दगोकुलमासारैः पीडयामासुरोजसा।

(श्रीमद्भा० १०। २५। ८)

तब तो सभी वृन्दावन-निवासी बड़े त्रस्त हुए। उनके त्रासको मिटानेके लिये भगवान्‌ने गो-वर्धन पर्वत उठा लिया और उसके नीचे भगवान्‌की प्यारी गायोंने वर्षाके उस सप्ताहको सानन्द व्यतीत किया। इन्द्रका गर्व खर्व हुआ तो उसने क्षमा माँगी। गोलोकसे आयी हुई कामधेनुने अपने दूधसे श्रीकृष्णका अभिषेक किया और कहा—

त्वं नः परमकं दैवं त्वं न इन्द्रो जगत्पते।
इन्द्रं नस्त्वाभिषेक्ष्यामो ब्रह्मणा नोदिता वयम्॥

(श्रीमद्भा० १०। २७। २०-२१)

अर्थात् हे श्रीकृष्ण! तुम ही हमारे (गायोंके) परम दैव हो, इन्द्र हो। तदनन्तर इन्द्रने ऐरावतद्वारा लाये हुए आकाशगङ्गाके जलसे श्रीकृष्णका अभिषेक किया और श्रीकृष्णको 'गोविन्द'की उपाधिसे विभूषित किया—

गोविन्द इति चाभ्यधात्। (श्रीमद्भा० १०। २७। २३)

एक दिन गायें चरनेके लिये वनमें इधर-उधर घूम रही थीं कि वहाँ आग लग गयी। गोपोंपर बड़ा संकट आया। वे भगवान्‌के पास आकर बोले 'रक्षा करो'। भक्त-वत्सल भगवान्‌ने अपनी अचिन्त्य दिव्य शक्तिसे क्षणभरमें ही उस दावानलका पान कर लिया और गायोंका संकट मिटाया—

गाश्च मोचिताः। (श्रीमद्भा० १०। १९। १३)

एक दिन भगवल्लीलावलीसे मुग्ध ब्रह्मदेवने श्रीकृष्णके सखा गोपोंको और उनके गो-वत्सोंको कहीं छिपा दिया तो श्रीकृष्णचन्द्रने स्वयं गो-वत्सोंका रूप धारण कर लिया और गो-वत्सोंकी माता गौओंको दुःख न होने दिया और यह विचित्र रूप एक वर्षतक बनाये रक्खा।

श्रीकृष्णभगवान्‌की इन मधुर लीलाओंसे उनका गो-प्रेम प्रकट है। उनके ये कृत्य मानवमात्रको यह उपदेश और आदेश कर रहे हैं कि गौको प्यार करो, गो-रक्षामें तत्पर रहो, गो-वंशकी वृद्धिसे उदासीन मत रहो।

गायके दूध-दही-घी ही नहीं, अपि तु गोमय और गोमूत्र भी सनातनधर्मियोंके धर्म-कृत्योंमें उपयुक्त हैं। तभी तो भारतवासी श्रीभगवान्‌की अनपायिनी शक्ति भगवती श्रीलक्ष्मीजीसे अन्यान्य धनसम्पत्तिके साथ गायोंके लिये भी प्रार्थना करता है—

गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्।

(श्रीसूक्त १५)

आज भारतका मुख्य प्रश्न है पर्याप्त परिमाणमें दूधका मिलना और गो-वंशको सुधारना।

—कर्नल मैक-कैरिसन

गोवंशकी रक्षा कैसे हो ?

(लेखक—धर्मप्राण पं० श्रीरामचन्द्रजी शर्मा 'वीर')

संसारमें हिंदूजाति ही एक ऐसी जाति है, जो अपने आदर्शोंमें अद्वितीय और अनुपम है। हिंदूजातिके आदर्श वस्तुतः अद्वितीय हैं। समस्त संसारके वैज्ञानिकोंने जो आविष्कार बीसवीं शताब्दीमें किये हैं, उनका अन्वेषण हिंदुओंके पूर्वजोंने लाखों वर्षों पूर्व कर लिया था। किन्तु विज्ञानको विनाशका मार्ग समझकर उन महर्षियोंने कार्यान्वित नहीं किया। विज्ञानको जब-जब विदेशियोंने कार्यान्वित किया तब-तब संसारमें संहार-लीलाएँ हुई और संसारके करोड़ों मनुष्य मृत्युके मुखमें चले गये। यूरोपके दो महासमर इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। विज्ञानके इस युगने मानवको दानव बना दिया है। हिंदुओंपर भी दानवी संस्कृतिका प्रहार हो गया है। यही कारण है कि अब हिंदू अपनी संस्कृतिको दिन-दिन त्यागते जा रहे हैं।

हिंदू-संस्कृतिकी परम पूजनीया गोमाता अब उपेक्षासे देखी जा रही है। जो हिंदू 'गोग्रास' दिये बिना भोजन नहीं किया करते थे, उनके वंशज अब गो-ग्रास शब्दका अर्थ भी नहीं समझते। जिस घरमें गाय नहीं होती थी, उस घरको श्मशानके तुल्य समझा जाता था; किन्तु अब गोमाताका दर्शन दिन-दिन दुर्लभ होता जा रहा है। जिस आर्यजातिके महापुरुष महाराज पृथुने गोवंशके गौरवको परिवर्धित किया, जिस आर्यजातिके भगवान् श्रीरामके पूर्वज सम्राट् दिलीपने गो-रक्षाके हित अपने प्राणोंको अर्पित कर दिया और जिस अग्रजन्मा आर्यजातिके आराध्यदेव भगवान् श्रीकृष्णने अपना समस्त बाल्यकाल गो-सेवामें ही अर्पित किया तथा जिस आर्यजातिके उद्धारक समर्थ स्वामी रामदास गृहस्थ न होकर परिव्राजक होकर भी गौके बिना नहीं रहे, वह आर्य जाति आज हिंदू नामसे विश्व-विख्यात हो गयी है और अपने पुरातन 'आर्य' नामको भूल गयी है। उसी प्रकार अब गो-माताको भी भूल जाय तो आश्चर्य नहीं।

हिंदूजातिके महान् पथ-प्रदर्शक तथा धर्म-रक्षक महात्मा वीर वंदाने गुरुदासपुर पंजाबके निकट एक गौकी हत्याके दण्डमें गो-भक्षकोंके एक ग्रामको ही भस्मीभूत कर दिया था। छत्रपति शिवाजी महाराज तो गो-वंशके परम रक्षक होनेके कारण ही यवन-द्रोही बने थे। किन्तु आजके हिंदू गो-वंशकी उपेक्षा करके विनाशके मार्गपर बढ़ते चले जा रहे हैं।

कहते हैं कि अलाउद्दीन खिलजीके आनेके पूर्व भारतवर्षमें चार अरब दस करोड़ गौ-बैल एवं बछड़े-बछड़ी थे और संवत् सोलह सौ विक्रमाब्दके पूर्व बाबरके भारतमें आनेके समय भी गो-वंशकी संख्या चार अरब बतायी जाती है। किन्तु अब पूरे ४०० वर्षोंके उपरान्त ऋषि-मुनियोंके इस पवित्र देशमें केवल कुछ ही करोड़ गो-वंश बचा है! गौओं और वृषभोंके नष्ट हो जानेसे गोबरके अभावमें पृथ्वीको खाद नहीं मिलती और खादके अभावमें खेतोंकी उर्वराशक्ति नष्ट होकर देशमें अन्नका अभाव हो गया है। भारतवर्षमें जो लाखों मनुष्य अन्नके बिना पैर पीट-पीटकर मर रहे हैं, यह गो-हत्याके ही पापका फल है। गो-वंशके अभिशापसे यदि हमारे देशका निकट भविष्यमें सर्वनाश हो जाय तो आश्चर्य नहीं; क्योंकि भारत-वासियोंने गो-वंशका नाश करवाकर अपने सर्वनाशको स्वयं निमन्त्रण दिया है।

मैं विदेशियों और विधर्मियोंको गो-हत्याके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहता; क्योंकि वे तो हिंदू-धर्म, हिंदू-राष्ट्र एवं गो-माताके नाशक हैं ही। मेरा तो अधिकार हिंदुओंको ही समझानेका है। मानवताको ममत्वकी शिक्षा देनेवाली गोमाता ही है। ममताका साक्षात् दर्शन कोई करना चाहे तो वह वत्सवती धेनुको देख ले, और सहिष्णुता तथा क्षमताका साक्षात्कार करना हो तो हल चलाते हुए बैलोंको देख ले। संसारका कोई भी प्राणी परोपकारमें गो-वंशसे प्रतियोगिता नहीं कर सकता। गौके दुग्धके समान संसारमें कोई भी पदार्थ जीवनप्रद तथा पौष्टिक नहीं है। यूरोपके वैज्ञानिक खाद्य-पदार्थोंमें जिन तत्त्वों (विटामिन, प्रोटीन, स्टोर्च, कैल्शियम, फास्फरस आदि) की आवश्यकता बतलाया करते हैं, वे सब पदार्थ गो-दुग्धमें विद्यमान रहते हैं। गो-दुग्धमें शर्करा भी होती है और लवण भी होता है और अस्थि बनानेवाला पदार्थ कैल्शियम पर्याप्त होता है। यही कारण है कि श्मशानोंमें भी जले हुए दाँतोंको गो-दुग्धसे धोया जाता है। तब वे जले हुए दाँत दुग्धसे सिंचित होते ही दृढ़ हो जाते हैं। फिर उन दाँतोंको गङ्गामें प्रवाहित कर दिया जाता है। जिन बालकोंको भैंसका दुग्ध पिलाया जाता है, वे भैंसके समान ही मोटे हो जाते हैं, किन्तु परिश्रम नहीं कर सकते और न उनमें सहन-शक्ति ही होती है। इसके विपरीत, जिन बालकोंको निरन्तर गो-दुग्ध पिलाया जाता है

वे स्थूल नहीं होते; किन्तु उनके शरीर सुन्दर, सुदृढ़ तथा आकर्षक एवं रोगोंसे मुक्त होते हैं। गो-माताके दूधकी यह विशेषता है कि उसके पीनेसे शरीरकी समस्त धातुएँ (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा तथा वीर्य) आवश्यकतानुसार बनती हैं; किन्तु भैंसके दूधसे मेदकी ही अधिक वृद्धि होती है, जिससे मनुष्य अनावश्यक स्थूल हो जाता है और स्थूल मनुष्यमें सहन-शक्ति नहीं होती। उसके श्वासकी गति तीव्र होनेके कारण उसकी आयु भी गो-दुग्ध पीनेवाले व्यक्तिसे कम होती है। इसके अतिरिक्त गो-दुग्धमें स्वर्णके गुण भी होते हैं। डेढ़ मन गो-दुग्धमें एक माशा स्वर्णका गुण होता है, अठारह मन गोदुग्धमें एक तोला सोनेका गुण मानना चाहिये। इसका अर्थ यह हुआ कि अठारह मन गोदुग्ध पीनेसे शरीरको एक तोला स्वर्णका गुण प्राप्त हो जाता है। इससे शरीरकी कान्ति तथा शक्ति एवं वीर्यकी वृद्धि होती है। स्त्रियोंके लिये तो गोदुग्ध अमृतके ही तुल्य है। गोदुग्धमें जो पीत वर्ण होता है, वह स्वर्णका ही होता है। भैंसके दूधमें स्वर्णके गुण होते ही नहीं।

जिस भारतवर्षके घर-घरमें दूध-दही और घृतके भंडार भरे रहते थे, उसी भारतके बालकोंको अब दुग्धका दर्शन भी दुर्लभ हो गया है। दूधके अभावमें बालकोंकी मृत्यु-संख्या बढ़ गयी है। और स्त्री-पुरुषोंमें भी रोग अधिक बढ़ गये हैं। विलासी, विषयी, कामान्ध पुरुषों और स्त्रियोंको दूध नहीं मिलनेके कारण क्षयरोगकी वृद्धि हो गयी है। गोदुग्धके ही अभावसे पुरुषोंके शरीरमें पराक्रम नहीं रहा और स्त्रियाँ भी सौन्दर्यसे अवकाश लेती जा रही हैं। समस्त हिंदू-राष्ट्र गोदुग्धके बिना जीवित कंकालोंका विराट् प्रदर्शन बन गया है। देशकी दुर्दशाका एक बड़ा कारण निर्बलता है और निर्बलताका कारण गोदुग्धका अभाव है। इस दूधके अभावको दूर तभी किया जा सकता है जब प्रत्येक हिंदू अपने गृहमें गाय और बछड़ोंको पाले। संवत् १६०० वि० में प्रत्येक हिंदूके पास बारह गाय-बैल होते थे; किन्तु अब सं० २००२ वि० में औसतन १५ हिंदुओंके पास एक गाय-बैल दिखायी देता है। भारतवर्ष भगवान् श्रीकृष्णका लीला-धाम है। भगवान् श्रीकृष्ण गोमाताके परमस्नेही थे, किन्तु आज भगवान् श्रीकृष्णकी जन्मभूमि मथुरामें अबाध गौएँ काटी जाती हैं। हिंदुओंके परमपवित्र तीर्थ काशी, प्रयाग और गङ्गा-यमुनाके पवित्र तटपर गो-हत्याके केन्द्र बने हुए हैं। जिस क्रमसे गौएँ प्रतिदिन काटी जा रही हैं, यदि यही क्रम जारी रहा तो कुछ ही वर्षोंमें गो-वंशका सर्वथा नाश हो जायगा और हिंदू-धर्म तथा हिंदू-राष्ट्र विनाशके मार्गपर बढ़ता हुआ नष्ट—निर्मूल हो जायगा।

९५ प्रतिशत लोगोंको प्रायः तो दुग्ध प्राप्त ही नहीं होता, जिन ५ प्रतिशत पूँजीपतियों तथा समर्थ पुरुषोंको दुग्ध प्राप्त होता है, वे दुग्धपान न करके दिन-रातमें अनेकों बार चाय पीते रहते हैं। चायके खेतोंमें सूखे गो-रक्तकी खाद डाली जाती है। इस विषयमें मैं बहुत लिख चुका हूँ। यहाँ इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि 'चाय पीनेवाले लोग जान या अनजानमें गौकी और देशकी बड़ी हानि कर रहे हैं!'

गो-हत्याके कारणोंमें विधर्मियोंका गो-मांस-भक्षण तो प्रधान कारण है ही; किन्तु अन्य कारण भी हैं, जिनमें एक चमड़ेका अनुराग है। चर्मका अनुराग इस समय देशमें अत्यधिक बढ़ गया है। जिस देशके निवासी स्वर्ण और रत्नोंसे शृंगार किया करते थे, उस देशके युवक अब कुण्डल और मणिमालाएँ नहीं पहनकर चर्मकी वस्तुओंसे शृङ्गार करते हैं। चमड़ेकी घड़ी, चमड़ेकी छड़ी और चमड़ेका मनीबैग प्रत्येक अंग्रेजी पढ़े हुए व्यक्तिके पास मिलेगा। अब तो बिना पढ़े लोग भी चमड़ेकी इन वस्तुओंका अधिक व्यवहार करने लग गये हैं। हैंडबैग, सूटकेस तथा बेडिंगकी व्यवस्था सब चमड़ेसे ओतप्रोत रहती है और यात्रा करनेवालोंके पास ये वस्तुएँ अधिक दिखायी देने लगी हैं। सभ्य कहलानेवाले लोग अब लोहेकी पेटियाँ—ट्रंक आदि छोड़ते जा रहे हैं और चमड़ेके सूटकेस अपने घरोंमें भरते जा रहे हैं। इस प्रकार चमड़ेकी वस्तुओंका अधिक प्रचार होनेके कारण गौओं और बैलोंकी हत्याएँ अधिकाधिक की जाने लगी हैं। भारतके अभागे हिंदुओंको चाहिये कि चमड़ेकी वस्तुओंका व्यवहार करके गो-वंशका नाश अब नहीं करावें। पशुओंकी रक्षाके लिये हमें चर्मका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये, केवल मरे हुए पशुओंके चर्मके देशी जूते पहनकर पैरोंकी रक्षा की जा सकती है। गो-वंशकी रक्षाके लिये प्रत्येक हिंदूको निम्नलिखित नियमोंका पालन करना चाहिये।

(१) गो-भक्षक विधर्मियोंके लिये किसी प्रकारकी भी सहायता नहीं दी जाय। उनको कभी एक पैसा भी नहीं दिया जाय। यदि किसी भी गो-भक्षकको कोई पैसा देता है तो वह निश्चय ही गो-हत्यामें सहायता करता है—इस सिद्धान्तका पालन किया जाय।

(२) सभी हिंदू अपने घरमें एक-एक गाय अवश्य पालें और बछड़ोंको सुन्दर बैल बनावें तथा प्रतिज्ञा कर लें कि

हम अपनी गाय तथा बैलोंको अपरिचित व्यक्तियोंके हाथ कभी नहीं बेचेंगे ।

(३) बूढ़ी गौओं तथा बूढ़े बैलोंकी उन्हें सगे माता-पिताके समान समझकर सेवा की जाय ।

(४) प्रत्येक ग्राममें गो-रक्षाके लिये आदर्श हिंदू-संघकी स्थापना की जाय; फिर आदर्श हिंदू-संघ अपने निकटवर्ती ग्रामोंसे गौओं और बैलोंका विक्रय बंद करानेका प्रबल आन्दोलन करे ।

(५) चाय और चर्मका बहिष्कार किया जाय ।

(६) गौओंके दूधको बढ़ानेके लिये साँड़ोंका सुधार तथा चारेका सुधार किया जाय ।

(७) हिंदू-स्त्रियोंको विधर्मियोंसे बातें नहीं करने दिया जाय और गो-भक्षक विधर्मियोंको अपने घरोंमें नहीं आने दिया जाय ।

(८) हिंदू मात्र मांस-भक्षणका सर्वथा त्याग कर दे और पशु-बलि बिल्कुल बंद कर दे ।

(९) गो-हत्याके विरुद्ध देशव्यापी भीषण आन्दोलन किया जाय ।

(१०) गोचरभूमि अधिकाधिक दूरतक प्रत्येक ग्राममें छुड़ायी जाय ।

इस प्रकारसे यदि हिंदू-जनता गो-रक्षाके लिये शीघ्र प्रयत्न नहीं करेगी तो गो-वंशका सर्वनाश ही हो जायगा । यदि हिंदुओंको संसारमें जीवित रहना है तो गो-वंशकी रक्षाके लिये मर-मिटनेको उद्यत हो जावें । गो-वंशका नाश हो जानेपर हिंदू विनाशके मार्गपर अधिक शीघ्रतासे बढ़ते हुए नष्ट—निर्मूल हो जायँगे ।

सिक्ख-सम्प्रदायमें गोरक्षा

(लेखक—राजज्यौ० पं० श्रीमुकुन्दवल्लभजी ज्यौतिषाचार्य)

सिक्ख-सम्प्रदायमें गौ-गरीबकी रक्षा सबसे मुख्य लक्ष्य माना जाता है । श्री १०८ गुरु गोविन्दसिंहजी महाराजने गो-रक्षार्थ श्रीमुखसे प्रभु-प्रार्थनामें कहा है—

यही देह आज्ञा तुर्क को खपाऊँ, गौ घातका दुख जगतसे हटाऊँ ।
आस पूर्ण करो तुम हमारी, मिटे कष्ट गौअन छुटे खेद भारी ॥
(दशमग्रन्थ)

गौका दूध ही परम पवित्र है, ऐसा श्रीगुरु आद-ग्रन्थसाहिबकी निम्नलिखित तुकसे झलकता है—

दूध कटोरे गडूवे पानी, कपरा गाई नामै दुह आनि ॥

आर्यशास्त्रोंकी तरह सिक्खोंके पूज्य धर्मशास्त्री भाई गुरुदासजीने पञ्चगव्यको परम पवित्र और गो-हत्याको महापातक माना है । तद्यथा—

गोबर गोमूत्र पर्म पवित्र भये । (कवित्त २०१)

बामण गाईं बंस घात करारे । (बार २४ पौड़ी १६)

इधर हमारे पूज्यपाद महर्षियोंने तो, आह्निकग्रन्थोंमें, धर्मप्राण पुरुषके लिये प्रातः सबसे पहले श्रद्धापूर्वक मङ्गलमयी गौका दर्शन करना लिखा है । 'गवादि मङ्गलानि पश्येत्' गौ केवल मात्र दर्शनीय वस्तु ही नहीं, वरं यह मनुष्यमात्रकी यथार्थरूपमें माता है । आयुर्वेदमें इसका दूध बुढ़ापेके सब रोगोंको नाश करनेवाला बताया गया है—

जरासमस्तरोगाणां शान्तिकृत्सेविनां सदा ।

और इसके दहीमें सबके दहियोंसे अधिक गुण माने हैं ।

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम् ।

गौका नवनीत (मक्खन) तो बच्चोंके लिये अमृत ही है ।

तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः ॥

गौका घी विशेषकर नेत्रोंका हितकारी, वीर्यवर्द्धक, अग्निदीपक, त्रिदोषनाशक, मेधा, लावण्य, कान्ति, तेज, ओज आदिकी वृद्धि करनेवाला, पवित्र, आयुवर्द्धक रसायन है । आयुर्वेदने तो 'सर्वाज्येषु गुणाधिकम्' अर्थात् सब घृतोंमें अधिक गुणकारी है, ऐसा लिखकर इसे अत्यन्त श्रेष्ठ पृथ्वीका अमृत ही सिद्ध किया है । स्मरणशक्तिहीन विद्यार्थियों और दृष्टिमान्द्यतायुक्त ऐनकधारियोंको इसका सेवनकर चमत्कार देखना चाहिये । यह बात प्रत्यक्षानुभवमें आ चुकी है, कि गो-दुग्ध-मक्खन सेवन करनेवाले बच्चेकी बुद्धि तीव्र और भैंसका घृत-दुग्ध सेवन करनेवाले बच्चेकी बुद्धि उसकी अपेक्षा प्रायः मन्द ही होती है । क्या आप नहीं

जानते, कि गौके दूधसे पले हुए बैल भैंसेकी अपेक्षा कितने श्रमी, सहनशील, चुस्त, चालाक और भारवाही होते हैं? ईश्वरावतार भगवान् श्रीकृष्णने स्वयं गोपाल होकर सब छोटे-बड़ोंको गो-सेवा करनेका आदेश किया है। गो-सेवा करना आर्योंका परम कर्तव्य है, गो-पालन करनेमें सांसारिक बड़प्पनको छोड़कर श्रम करनेमें लज्जा नहीं करनी चाहिये। ईश्वरकृपासे आपके घरमें नौकर भी हों, तो भी गो-सेवा और उसकी देख-रेखका कुछ भाग अपने ऊपर अवश्य लेना चाहिये। यदि आप अपने घरको मङ्गलमय एवं अपने बच्चोंको होनहार, कुशाग्रबुद्धि, विद्वान्, तेजस्वी बनानेके इच्छुक हों, तो कष्ट सहन करके भी गो-पालन अवश्य करें और करावें, इसीमें आपका एवं जगत्का कल्याण है।

राष्ट्रकी जीवित लक्ष्मी गोमाता

(लेखक—श्रीशोभारामजी धेनुसेवक कविरत्न)

गोरक्षाके लिये मैं क्या लिखूँ? सारा जीवन ही तो गोरक्षाके लिये लिखते, बोलते, सोचते और भ्रमण करते बीता है। कितने पत्र निकले, महासभाएँ बनीं, सम्मेलन हुए, गोशालाएँ खुलीं पर उनमेंसे आज एक भी जीवित नहीं। अनेकों लेखक-प्रचारक तैयार किये गये पर थोड़े दिन चलकर सब भाग खड़े हुए। यह कितने बड़े दुःखकी बात है! गोरक्षाका दम भरनेवाले तीस करोड़ हिंदुओंका एक भी ऐसा पत्र नहीं, जिसके जरिये गोरक्षाका नियमित आन्दोलन किया जा सके—गोरक्षाका जीवन-संदेश भारतके कोने-कोने-तक पहुँचाया जा सके। इस प्रचार-युगमें पत्र कितने सहायक होते हैं, इसे कहनेकी आवश्यकता नहीं। आज भारतमें १५०० के लगभग गोशाला नामधारी संस्थाएँ हैं। इनमें दस लाख पशुओंकी रक्षा की जाती है। रक्षा तो क्या विकलाङ्ग पशुओंको यहाँ छोड़ दिया जाता है।

इन गोशालाओंको जिंदा रखनेके लिये इस गरीब देशका दो करोड़ रुपया प्रतिवर्ष बहाया जाता है। इन रक्षित दस लाख पशुओंमेंसे आधेके लगभग प्रतिवर्ष मर जाते हैं। उनके स्थानमें उतने ही नये विकलाङ्ग पशु फिर भर्ती कर लिये जाते हैं। करोड़ों रुपया खर्च करके भी ये न तो दर्शनीय दुग्धशालाएँ बन सकीं, न जमानेकी माँगके अनुसार प्रचारक संस्थाएँ। प्रचारकी परिभाषा तो इनकी समझमें अभीतक नहीं आयी है। गोरक्षाके लिये, विशेषकर इस युद्धकालमें जब कि सैनिकोंको ताजा गोमांस देनेके लिये लाखों गायें काटी जा रही थीं, जनताने इसके विरोधमें आवाज उठायी। प्रान्तीय सरकारोंको पशुवधपर नियन्त्रण रखनेके लिये बाध्य किया, पर गोरक्षाके लिये स्थापित होनेवाली इन गोशालाओंने आन्दोलनमें कोई भी क्रियात्मक सहयोग नहीं दिया। इन पंक्तियों-द्वारा हम गोशालाओंका विरोध नहीं कर रहे हैं। हम चाहते हैं भारतकी ये उपयोगी संस्थाएँ समयके साथ चलना सीखें।

इसी तरह संगठनको लीजिये। गोरक्षाके नामपर अखिल भारतीय कितने संगठन हुए और सब लीन हो गये। जो हैं भी, अपने-अपने दफ्तरोंके भीतर ही उनका कार्यक्षेत्र सीमित रहा है। इन पंक्तियोंके लेखकको खूब याद है। सन् १९१८ में कलकत्तामें कलकत्ता हाईकोर्टके चीफ जस्टिस सर जान वुडरफकी अध्यक्षतामें अखिल भारतीय गोमहासभाका अधिवेशन हुआ था। देशव्यापी प्रचारकी योजना बनायी गयी थी। बड़े राजा-महाराजा इसके संरक्षक थे। लाहौर, दिल्ली, नागपुरमें कांग्रेस अधिवेशनके साथ इनके उत्सव होकर गो-महासभा सो गयी। महात्मा गांधीजीकी प्रेरणासे अहमदाबाद-में गोरक्षामण्डल बना। वह भी खतम। बम्बईके वैष्णव आचार्य पूज्य श्रीगोकुलनाथजीने गोपाल-गोरक्षा-मण्डल खोला। पूज्य महामना मालवीयजीने अखिल भारतीय गोरक्षा-प्रचार-कार्यालयकी स्थापना की। श्रीचौंड़े महाराजने अलग संस्था बनायी, जिसका एक ही जलसा सन् १९३८ में सेठ चिरंजीलाल लोयलकाकी अध्यक्षतामें होकर खतम हो गया। यही उत्थान-पतन प्रान्तीय सम्मेलनोंका हुआ है। आवेशमें आकर महासभा बना डाली। चंद रोजके बाद खेल खतम। स्वर्गीय बा० हासानन्द वर्मा कलकत्ता, पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्री जबलपुर, बा० बृजमोहनलाल वर्मा वकील छिंदवाड़ा (सी० पी०) के बाद चौबीसों घंटोंके लिये सोचने और काम करनेवाला लगनशील व्यक्ति कोई पैदा न हुआ। हाँ, आज गोजीवन चौंड़ेमहाराज वाई, सतारा गोरक्षाके लिये कफनी लगाये अवश्य फिर रहे हैं। कुछ समयसे प्रचारकी ओर भी उनका ध्यान गया है। मथुरा-गोसम्मेलन इन्हींकी प्रेरणाका फल था। अब जरा गोसाहित्यकी ओर देखिये। हमारे प्रातःस्मरणीय ऋषियोंने गौकी विश्वव्यापी महत्तापर जो

विशद साहित्य लिखा है, वह तो अमर रहेगा। इस धर्मविप्लव-कालमें गौपर जो हमारी श्रद्धाभक्ति है, वह उसीके कारण है। आजका गिरा हिंदू भी अपने हाथसे न तो गोवध करेगा, न गोमांस खायगा। धर्महीन ग्रेजुएटोंकी बात जाने दीजिये, आजका एक अपढ़ देहाती भी गोरक्षाके नामपर गर्वसे मरना जानता है। आज भी देहाती ठाकुरोंके सामनेसे कसाई गौएँ नहीं ले जा सकता है। यह सब ऋषिप्रणीत गोसाहित्यका अमिट प्रभाव है। पर वर्तमानमें कोई उत्तम गो-साहित्य नहीं निकला। आज गो-शालाओंका न कोई अपना इतिहास है, न गोरक्षाकी सर्वसम्मत स्कीम है। प्रामाणिक सामग्री तो ढूँढ़े नहीं मिल रही है। इन पंक्तियोंके विनम्र लेखकको गोरक्षाका इतिहास संग्रह करनेके लिये वर्षोंका परिश्रम करना पड़ा था। जिसे बड़ी कठिनतासे गो-रक्षाप्रचार-विभाग, लखनादौन, सी० पी० ने छपवाकर देशके सामने एक स्कीम रक्खी है। आज आवश्यकता इस बातकी है कि गोरक्षाकी सर्वसम्मत स्कीम देशके सामने रक्खी जावे। कार्य करनेके लिये देशव्यापी स्थायी और मजबूत संगठन हो। कम-से-कम एक जोरदार दैनिक पत्र हो। प्रचारक तैयार करनेके लिये गोपाल-विद्यालय खोला जाय। गोशालाओंमें समयोचित सुधार किया जाय। ये संस्थाएँ अपने पैरोंपर खड़ी होने-योग्य बनायी जायँ। जैसा वर्धाका गोसेवा-संघ है। काम थोड़ा हो पर ठोस हो। इसपर विशेष ध्यान रक्खा जाय। गोरक्षाको सफल बनानेके लिये हमें गोवधके कारणोंको जानकर उन्हें दूर करना होगा। जबतक देशमें जीती गायका मूल्य कम और उसके मारनेपर ज्यादा मूल्य मिलता रहेगा तब-तक गोवध होता रहेगा, बराबर होता रहेगा। इसके लिये जिंदी गायोंका मूल्य बढ़ाना होगा और वह बढ़ेगा गायोंके गुणोंमें वृद्धिके साथ। आज यूरोपमें गोवध इसलिये नहीं होता है कि वहाँ एक-एक गाय एक-एक मन दूध रोज देती है। उसका मूल्य हजारों रुपया है। इसे मालिक न तो बेचेगा न कसाई काट सकेगा। यह योजना नस्ल-सुधारपर निर्भर करती है। अगर गौओंको कटनेसे बचाना है तो उनको मूल्यवान् पयस्विनी बनाना होगा। इसके लिये अच्छे नस्लके साँड़ तैयार करने होंगे। याद रहे, दूध साँड़में होता है गाय-में नहीं। दूसरी ओर चमड़ेका व्यवहार—विशेषकर विदेशी कम्पनियोंद्वारा तैयार किया हुआ क्रोमका व्यवहार एकदम त्याग करना और करवाना होगा। बड़े-बड़े श्रीमान् क्रोमके जूते शौकसे पहनते हैं, जो जीती गायका चमड़ा निकालकर तैयार किया जाता है। विदेशी दूध, मक्खन, चाय—ये सब बहिष्कृत कराने होंगे। चायके स्थानमें Drink milk more 'ज्यादा दूध पीयो'के आन्दोलनको जारी करना होगा। उपयोगी पशुवधपर जो कानूनी रोक लगायी गयी है, गोरक्षा-के लिये इसका भी सहारा लेना होगा। गोचरभूमिकी जटिल समस्याको हल करना होगा। तभी राष्ट्रकी जीवित लक्ष्मी गोमाताको हम बचा सकेंगे अन्यथा नहीं। भगवान् करे, भारतमें इस पुण्य श्लोककी फिर भी पुनरावृत्ति हो—

गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

शासन और गो-रक्षा

(लेखक—श्रीमण्डन मिश्र)

धार्मिक दृष्टिसे गौका पद कितना उच्च है, यह कई लेखोंमें दिखलाया गया है। हिंदू-संस्कृतिकी तो वह प्रतीक है। हिंदू नरेशोंने उसकी रक्षाका सदा समुचित प्रबन्ध रक्खा। मुसल्मान शासकोंको भी हिंदुओंके गो-प्रेमका अनुभव हुआ और बाबरने गोरक्षाका ध्यान रखनेके लिये हुमायूँको सलाह दी। दूरदर्शी अकबरने तो इसके लिये व्यावहारिक प्रयत्न किया। शाहआलमने हिंदुओंकी सहानुभूति प्राप्त करनेके लिये गो-वध रोकनेकी घोषणा की।

मुसल्मान रियासतोंके शासकोंने भी कुछ समय पहलेतक इसका बहुत कुछ ध्यान रक्खा और अपनी हिंदू प्रजाका दिल दुखाना उचित न समझा। अंग्रेजोंने भी पहले इसका कुछ ध्यान रक्खा। लार्ड लेकका एक फरमान मिलता है, जिसमें मथुराप्रान्तमें गोवध न करनेकी घोषणा है। हिंदू राज्योंके साथ जो सन्धियाँ हुईं, उन कुछ सन्धियोंमें भी ऐसी शर्तें हैं; परन्तु शासन दृढ़ हो जानेपर अब इसकी कोई परवा नहीं है। वास्तवमें इस समय मुसल्मानोंके शासन-कालसे कई गुना अधिक गो-वध हो रहा है। गोरे सैनिकोंका मुख्य भोजन गोमांस है, उसके लिये प्रतिदिन हजारों गायोंका वध होता है। 'बकरीद'के अवसरपर एक गायकी कुर्बानी रोकनेके लिये हम मुसल्मान भाइयोंसे लड़ बैठते हैं, परन्तु लाखोंकी संख्यामें गोवध हम चुपचाप

सहन कर रहे हैं ! युद्धके समय तो इसका कोई ठिकाना ही न रहा । कितनी गोरी सेनाएँ भारतमें आ डटीं और गोरे युद्धबन्दियोंकी संख्या बहुत बढ़ गयी । फलतः मांसका खर्च पँचगुना हो गया । फौजी खूराकके लिये कितना गोवध होता है, इसके आँकड़े बतलानेमें सुरक्षाके कारणोंका सहारा लेकर सरकार सदा आनाकानी करती है; परन्तु आँकड़ोंके देखनेसे अनुमान हो जाता है कि पिछले दो-तीन वर्षोंमें कई लाख उपयोगी गोधन इन गोरोंकी उदरदरीमें समा गया ! सन् १९४३ में राजपरिषद् (कौंसिल आफ स्टेट) के एक मुसल्मान सदस्यने यह प्रस्ताव रक्खा था कि 'सेनाओंकी उदर-पूर्तिके लिये आस्ट्रेलिया और अमेरिकासे मांस आना चाहिये और पड़ोसी देशोंसे बैल खरीदकर सस्ते दामपर किसानोंको देना चाहिये ।' इस प्रस्तावका कई मुसल्मान सदस्योंने भी समर्थन किया । उत्तरमें 'शिक्षा तथा स्वास्थ्य'सदस्य सर जोगेन्द्रसिंहने कहा कि 'आजकल भारतमें प्रत्येक आदमी-पीछे पाव भर दूधका औसत पड़ता है । यहाँ गोधनकी कमी नहीं है । संसारके गोधनका चौथाई भाग भारतमें है । आवश्यकता है केवल उनके पालन और सन्तानोत्पादनकी ओर अधिक ध्यान देनेकी ।' आँकड़ोंके माया-जालसे जो चाहे समझाया जा सकता है, प्रत्येक आदमी-पीछे प्रतिदिन पावभर दूधकी क्या बात, अधिकांश लोग ऐसे हैं, जिनके पेटमें, प्रतिदिनकी बात दूर रही, महीनेभरमें भी एक तोलातक दूध नहीं जाता । परन्तु इन 'सर' लोगोंके 'सर'में वास्तविक स्थितिके लिये स्थान कहाँ ?

भारतमें सबसे अधिक संख्या हिंदुओंकी है । प्रान्तीय धारासभाओंमें १४९५ सदस्योंमें ७७८ हिंदू हैं । केन्द्रीय व्यवस्थापकसभामें भी उनकी संख्या आधेके लगभग है । परन्तु इतना होनेपर भी गोरक्षाकी ओर उनकी उदासीनता है । यों तो प्रत्येक हिंदू गो-प्रेमी है, पर उसके लिये लगन होना दूसरी बात है । धारासभाओंमें जो हिंदुओंके प्रतिनिधि बनकर गये हैं, उनकी इस ओर उपेक्षा सचमुच शोचनीय है । वास्तवमें अपने संस्कारोंद्वारा वे गो-प्रेमी बने हैं, पर उनके हृदयमें उसके लिये वह श्रद्धा नहीं है, जो प्रत्येक हिंदूके हृदयमें होनी चाहिये । कहा जा सकता है कि 'इन धारासभाओंमें सभीके हितोंका ध्यान रखना है, भारतमें मुसल्मान भी बसते हैं, उनके दिलको दुखाया नहीं जा सकता ।' परन्तु यह एक लचर दलील है । कुर्बानीमें 'गोवध अनिवार्य है', ऐसी बात नहीं है । दूसरे 'कुर्बानी' में वध की जानेवाली गायोंकी संख्या तो नगण्य है । इस सम्बन्धमें समझौतेसे बहुत कुछ काम लिया जा सकता है । कई देशी राज्योंमें गोवधकी मनाही है, वहाँ मुसल्मान हैं ही नहीं—ऐसा नहीं कहा जा सकता, पर तब भी वे असन्तुष्ट नहीं हैं । यदि थोड़ी देरके लिये इस प्रश्नको छोड़ भी देते हैं, तब भी कई ऐसे उपाय हैं, जिनके द्वारा बहुत गोरक्षा हो सकती है । गोधनका संहार देखकर इधर सरकार भी कुछ विचलित हुई और उसे बाध्य होकर गोरक्षाके सम्बन्धमें कुछ आज्ञाएँ निकालनी पड़ी हैं । एक आज्ञाद्वारा दूध देनेवाली या गाभिन गाय और दस वर्षसे कमके बैलके वधको रोका गया । इसके अनुसार बम्बई, मद्रास, युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, उड़ीसा, बिहार, आसाम तथा सिन्धकी प्रान्तीय सरकारोंने भी तीन सालसे कम आयुके सब बछड़े-बछड़ी, तीनसे दस सालतकके कामके योग्य बैल, दुधारू, गाभिन या गाभिन हो सकनेवाली सब उम्रकी गायोंके वधपर प्रतिबन्ध लगाया । परन्तु इन आज्ञाओंका पालन होता है या नहीं, इसको देखता कौन है ? राजनीतिक षड्यन्त्र ढूँढ़ निकालनेमें पुलिस बड़ी तत्पर रहती है, परन्तु ऐसे कार्योंमें उसकी उदासीनता प्रसिद्ध है । कलकत्तेमें सप्ताहमें केवल एक दिन गोवध बंद कर देनेका नियम बना देनेसे हजारों गाय-बैलोंके प्राण बच गये । गोचर-भूमिके सम्बन्धमें भी कई उपयोगी नियम बनाये जा सकते हैं । इस तरह धारासभाएँ यदि चाहें तो गोरक्षामें बहुत कुछ हाथ बटा सकती हैं ।

ब्रिटिश शासक बड़े नीतिनिपुण होते हैं । मौखिक सहानुभूतिकी उनमें कमी नहीं है । भूतपूर्व वाइसराय लार्ड लिन-लिथगो गोप्रेमके लिये बड़े प्रसिद्ध हुए । भारतसे जाते समय आपने अपने एक भाषणमें कहा—'इस महान् कृषि-प्रधान देशमें, जो संसारमें सबसे बड़ी जन-संख्याको खाद्य देता है, बीजारोपणके बाद प्रत्येक उगनेवाला पौधा पशुके द्वारा हल चलाये जानेके कारण उसका ऋणी है । इसके अतिरिक्त शहरोंकी जनताके लिये जो खाद्य उत्पन्न होता है, उसका भी प्रत्येक दाना बैलोंद्वारा ही लाया जाता है । प्रत्येक बालकका स्वास्थ्य, केवल स्वास्थ्य ही नहीं, उसकी बुद्धि भी और इस प्रकार भारतकी करोड़ों जनताकी शारीरिक तथा बौद्धिक उन्नति इस बातपर निर्भर है कि देशके बालकोंके लिये कितना और कैसा दूध मिलता है । सच तो यह है कि पशु वास्तवमें भारतकी आर्थिक व्यवस्थाके और इस देशमें करोड़ों प्राणियोंद्वारा चिरकालसे उन्हें जिस श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा जाता है, उसके ठोस आधार हैं ।' परन्तु उन्हींकी नाकके नीचे दिल्लीमें ही प्रतिदिन १६०० से २००० तक

छोटे-बड़े जानवरोंका वध होता रहा । इनमें अधिकांश दूध देनेवाले पशु थे और लगभग १२ प्रतिशतके पेटमें बच्चे थे। इसका उल्लेख करते हुए 'दिल्लीके बूचड़खाने' की रिपोर्टमें कहा गया था कि 'वध किये जानेवाले ऐसे पशुओं-की संख्या वर्षमें एक लाखतक पहुँच जाती है।' बड़ी-बड़ी गोप्रदर्शनियोंमें दस-पाँच मोटी-ताजी गायें और पाँच-सात हृष्ट-पुष्ट साँड़ देख लेनेसे ही, जैसा कि वाइसराय महोदय किया करते थे, न तो गोरक्षा ही होती है और न 'नस्ल' ही सुधर सकती है ।

शीघ्र ही केन्द्रीय तथा प्रान्तीय धारासभाओंका निर्वाचन होनेवाला है। इन नव निर्वाचित सभाओं-द्वारा ही भारतके भावी 'शासनविधान' बननेकी सम्भावना है। इस बार इन सभाओंमें हमें अपने ऐसे ही प्रतिनिधि भेजने चाहिये, जो धार्मिक विचारके हों और जिनके हृदयमें गौके लिये पूर्ण श्रद्धा हो। बाहरसे प्रबल लोकमत और भीतरसे धारासभाओंका दबाव पड़नेपर ही विदेशी सरकार-की आँखें इस ओर कुछ खुलेंगी। क्या हम आशा करें कि इस बार अपना मत देते समय 'कल्याण' के पाठक इसका पूरा ध्यान रक्खेंगे ?

गायों तथा दूधकी बाबत भारत तथा इंग्लैंडकी अवस्था

इंग्लैंड तथा संसारके अन्य देशोंमें खेती बैलोंसे नहीं, घोड़ोंसे या मशीनोंसे होती है। वहाँके लोगोंका मुख्य आहार मांस होनेके कारण हमारे देशकी तरह उन्हें दूधकी बहुत आवश्यकता नहीं, बैलों तथा दूधका अधिक महत्त्व नहीं, फिर भी उन देशोंमें केवल जनताके स्वास्थ्य तथा शक्तिको दृष्टिमें रखते हुए जन-संख्याके अनुपातसे दूधका अधिक व्यवहार तथा गोवंशको उन्नत करनेके लिये बहुत धन व्यय होता है। भारत तथा इंग्लैंडकी ही अवस्थाको देखें—

	भारतवर्ष	इंग्लैंड
जनसंख्या	४० करोड़	५ करोड़
गोवंश	९ करोड़	१ करोड़
गोवंश तथा दूधकी उन्नतिपर वार्षिक खर्च	६२ लाख रुपये	५ करोड़ रुपये
प्रतिमनुष्य खर्च	ढाई आने	एक रुपया
प्रतिगाय खर्च	ग्यारह आने	पाँच रुपये
प्रतिमनुष्य दूधका खर्च	१$\frac{1}{8}$ छटाँक	२० छटाँक

इंग्लैंडमें कितने ही आदमियोंको मुफ्त अथवा सस्ता (पाँच-छः पैसे सेर) दूध मिलता है। वहाँके हर-एक तीन वर्षतकके बच्चेको साप्ताहिक १४० औंस या नित्य १० छटाँक दूध दिया जाता है। पर हमारे अभागे देशमें दूधकी कोई व्यवस्था नहीं। दूध न मिलनेके कारण लाखों बच्चे अकालमृत्युसे मरते तथा कमजोर हो जाते हैं। दूधका मुफ्त तथा सस्ता मिलना तो कहाँ, सात-आठ आने सेर देनेपर भी शुद्ध दूध नहीं मिलता। लार्ड लिनलिथगो कमीशनने सन् १९२३ में बतलाया कि इंग्लैंडमें पिछले चार वर्षोंमें दूधकी खपत दुगुनी हो गयी पर हमारे यहाँ एक-चौथाई भी नहीं रही।

दूधकी खपत बढ़ानेके लिये इंग्लैंडने सन् १९३७ में 'अधिक दूध पीयो' आन्दोलनपर ही नौ लाख रुपये खर्च किये। अमेरिकामें दूधकी खपत ८४७ पौंड वार्षिकसे १००० पौंड हो गयी।

लेटविया-जैसे केवल बीस लाख जनसंख्याके देशमें १९३० से ३५ तक ही दूध तथा मक्खन आदिकी उत्पत्ति तीस प्रति-शत बढ़ गयी, जब कि जन-संख्या केवल ढाई प्रतिशत ही बढ़ी। डेन्मार्कमें सन् १९०० में दूधकी पैदावार २४,६०००० टन थी, जो १९३४ में ५३,१३,६०० हो गयी। प्रतिगाय दूध देनेकी औसत ४८५० पौंडसे बढ़कर ७०५५ पौंड हो गयी। (सरकारी दूध-रिपोर्टसे)। भारत-सरकारके राशनबंदी सलाहकार श्रीडब्ल्यू एच् किर्वीने २० अक्टूबरको दिल्लीके हार्डिङ्ग पुस्तकालयमें भाषण देते हुए बतलाया कि 'युद्धके इस विकट समयमें भी बेल्जियम, नार्वे, स्वीजरलैंडमें तीन वर्षतकके बच्चोंको प्रति सप्ताह १८४ औंस या नित्य बारह छटाँक तथा स्वीजरलैंडमें कठिन परिश्रम करनेवालोंको नित्य दस छटाँकसे अधिक दूध मिल रहा है।' सरकारी खाल-रिपोर्ट १९४३ के पृष्ठ १७ पर लिखा है, पशुओंकी भलाई तथा नस्ल-सुधार आदिपर भारतवर्षमें दो पैसे प्रतिपशु (गाय-भैंस आदि सबपर) सालाना खर्च होता है पर अमेरिका तथा अन्य देशोंमें प्रतिपशु एक रुपया वार्षिक! (इ. स.)

बिना ताजकी महारानी

महाकवि होमरने युद्ध, वरजिलने आयुध, होरेसने प्रेम, दान्तेने नरक और मिल्टनने स्वर्गका गीत गाया।

परन्तु मुझमें यदि इन सब सिद्ध कवियोंकी सम्मिलित प्रतिभा होती और मेरे हाथमें हजार तारोंका तानपूरा होता तथा सारा संसार श्रोता बनकर सुनता तो मैं अपना हृदय खोलकर गौका गीत गाता, उसके गुण बखानता और उसकी महिमाका गान यावच्चन्द्रदिवाकर अमर कर देता।

यदि मैं मूर्तिकार होता और संगमरमर पत्थरमें टाँकीसे अपने विचार मूर्तिमान् कर सकता तो संसारकी पत्थरकी सब खानें छानकर विमलतम, शुभ्रतम, संगमरमरकी पटिया ढूँढ लाता और चन्द्रज्योत्स्नासे पुलकित, निरभ्र नील आकाशसे मण्डित, किसी मनोहर वनमें निर्मल जलके समीप, पक्षियोंके मधुर गुञ्जारवके बीच, बैठकर अपने प्रेम-धर्मके पवित्र कर्ममें लग जाता। उस शीतल शुभ्र संगमरमरका सारा खुरदरापन अपनी छेनीसे छीलकर उसे इतना कोमल बना लेता कि उसमेंसे मेरे मनकी गौकी मूरत निकल आती। उसके विशाल, करुणामय नेत्र होते, वह अपने उभरे स्तनोंमें भरा हुआ पुष्टिकर पेय पान करानेकी प्रतीक्षामें खड़ी और प्रेमसे उस अमृतके लेनेवालोंको सुख, आरोग्य एवं बलका आशीर्वाद देती हुई देख पड़ती।

गौ बिना ताजकी महारानी है, उसका राज्य सारी समुद्रवसना पृथ्वी है। सेवा उसका विरद है और जो कुछ वह लेती है, उसे सौगुना करके देती है।

यदि आज संसारकी सब गौएँ मर जायँ या ठाठ हो जायँ तो कल ही मानव-जातिपर भयानक सङ्कट आ पड़े। रेलकी सड़कें, बैंक, कपासकी फसल, इन सबके बिना हमलोग मजेमें अपना काम चला सकते हैं; पर गौके बिना मानव-जाति रोग, क्षय और अन्तमें विनाशको प्राप्त होगी। गौका हम वह सम्मान और स्तवन करें जिसके वह योग्य है। मुझे आशा है कि ज्यों-ज्यों हमलोग ज्ञानके क्षेत्रमें आगे बढ़ेंगे, क्रूरता और स्वार्थपरता छोड़ेंगे, त्यों-त्यों उन गौओंकी हत्या करना और उनका मांस खाना भी त्याग देंगे, जो हमें बल देती, सुख पहुँचाती और हमारे बच्चोंके प्राण बचाती हैं।

—श्री मालकम. आर. पेटर्सन. अमेरिका टेनेसी प्रान्तके भूतपूर्व गवर्नर

मानव-उन्नति गोरक्षापर निर्भर है

गाय ही सभ्य मानव-समाजकी धाय है। किसी भी देशकी सभ्यताकी उन्नतिका अनुमान करनेके कई साधन बताये जाते हैं। कहीं लोग पुस्तकोंपरसे ही मानव-सभ्यताकी कल्पना करते हैं, कहीं धर्म-मन्दिरोंको ही प्रधानता दी जाती है तो कहीं बैलोंकी वृद्धि ही इसका मूल आधार बताया जाता है। किन्तु गायद्वारा ही संस्कृतिका अनुमान लगाया जा सकता है। हमारी सभ्यता तो गो-प्रधान सभ्यता ही है (Ours is the cow-milking civilization) जहाँ गो-वंश उन्नत न हो वहाँ श्वेत जातिका गुजर नहीं हो सकता।

हम चाहते हैं कि रूसमें यान्त्रिक हल और गायका विशेष रूपसे प्रचार हो। यदि इन दो विषयोंकी उन्नति करनेमें रूस यश लाभ करे तो रूसको एक स्थायी संस्कृतिके प्रवर्त्तकका पद-गौरव प्राप्त हुए बिना नहीं रह सकता।

दुग्ध-व्यवसाय (Dairy Industry) की उन्नतिके द्वारा हम आनन्द, मेधा-शक्ति और समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। मानव-जीवन और सभ्यताका दूधके साथ एक विशेष प्रकारका सम्बन्ध है।

यूरोपमें दुग्ध-व्यवसायमें अग्रणी देश डेन्मार्क, हालैंड और स्वीजरलैंड हैं। इनमेंसे एक देश राष्ट्रसंघका केन्द्र बना है और दूसरा सब राष्ट्रोंके न्यायालयका मुख्य स्थान है। गो-वंश संस्कृतिका निर्माता है या संस्कृति ही गो-वंश निर्माण करती है, यह विचारका एक विषय हो सकता है, पर मेरे विचारमें दोनों एक साथ ही रहेंगे। ('गोरक्षा')

—श्रीमिलो हेस्टिंग्स

ढोंगियोंसे बचो

रेलगाड़ीकी चार-छः घंटेमें होनेवाली सौ-पचास मीलकी यात्रामें हमें जितने अनाथालयवाले, गोरक्षावाले आदि मिलेंगे, उतने और कहीं न मिलेंगे। वे पैसोंकी पेटी खनखनाते हुए अपने गर्दभघोषसे यात्रियोंके आनन्द, आराम और स्वतन्त्रताका बड़ी निर्दयतासे भंग करते हैं, यदि ईमानदारी और सचाईसे सोचें या खोज करें तो इन सब लोगोंमें ९५ प्रतिशत धूर्त ही मिलेंगे। मेरे घरमें एक बाँड़ी बकरी न हो तो भी मैं गोरक्षाका कार्य कर सकता हूँ और पैसोंकी पेटी लेकर घूम सकता हूँ, क्योंकि मानस-शास्त्रका मैं पूरा जानकार हूँ। दुनिया झुकनेको तैयार है, कोई झुकानेवाला चाहिये। मैंने ऐसे कई गो-सेवकोंके जीवनके पूरे रंग-ढंग देखे हैं और मुझे यह जानकर दुःख होता है कि हमारे भाइयोंकी बुद्धिका इतना दिवाला निकल गया है।

हमारे सौभाग्य या दुर्भाग्यसे देशमें ऐसे झुकानेवालोंकी कमी नहीं है। गोसेवाके नामपर इन ठगोंको देना बिल्कुल मूर्खता है। भारतवर्षकी अवनति ऐसे अन्धदानोंसे भी कम नहीं हुई है। ऐसे धर्मदूतों, ठगों और पाखंडियोंको दान देनेसे न गायका कल्याण होता है, न देनेवालेका और न लेनेवालेका ही। इन मन्दबुद्धिवाले, सबकी बातपर विश्वास कर लेनेवाले भोले भाइयोंको कैसे समझायें कि यह पैसा-दो-पैसा इन लोगोंको देनेकी अपेक्षा यदि इन्हीं पैसोंका दूध, नहीं तो छाछ ही खरीदकर अपने बच्चेको पिलाओगे तो तुम्हारी सच्ची गो-सेवा तथा तुम्हारे भूखे बच्चेके भीतर रहनेवाले नारायणकी सेवा और पूजा होगी और तुम्हारी यह पूजा चित्रगुप्तकी बहीमें जमा होगी।

पाँच पगवाली गाय या दो जीभवाले बैल-जैसे पशुओंको लेकर, गलेमें घड़ी-घंटा लटकाकर और ढोंग-पाखंड बढ़ाकर कसाईके समान कितने ही लोग तिलक-माला और गेरुआसे सजकर निकल पड़ते हैं, और हम अन्धे होकर गायके नामपर उन धूर्त और क्रूर लोगोंको पैसा देते हैं और बदलेमें पाखंड, पाप और बर्बादी बटोरते हैं!

बहुधा लोग ऐसा भी करते हैं कि अपनी ही गाय और थोड़ी-सी घास लेकर राहमें बैठ जाते हैं तथा आने-जानेवालोंसे कहते हैं 'बाबूजी! कुछ पैसोंकी घास इस गायको खिला दीजिये, बेचारी भूखी भटक रही है।' अथवा किसी गायको पकड़कर कहते हैं 'सेठजी! कुछ रुपये देकर इस गायको कसाईके हाथमें जानेसे बचा लीजिये। इस प्रकारके ढोंगियोंसे सदा सावधान रहना चाहिये।

कुछ ऐसे लोग, जो बड़ी अच्छी पोशाक पहने रहते हैं और बड़ी सभ्यतासे बातें करते हैं, रसीदकी किताबें तथा कुछ प्रशंसा-पत्र छपवाकर गोशालाओंके नामसे दूर-दूरके स्थानोंमें घूमते और चंदा जमा किया करते हैं। कई बार ऐसा अनुभव हुआ है कि उनमें अधिकांश पेशेवर ठग होते हैं। कुछ धूर्त लोग गेरुआ पहनकर मंडली बनाकर गो-महिमाके गीत गाते और व्याख्यान देते गाँवों और नगरोंमें घूमा करते हैं और किसी बहुत दूरकी गोशालाका प्रतिनिधि बताकर रुपया माँगा करते हैं। इस बातपर विचार करना और फिर भोली जनताको अच्छी तरहसे समझा देना भी गो-सेवाका एक प्रकार है। (डा० जा०)

बच्चोंका आरोग्य दूधपर निर्भर है

प्रत्येक बालकका आरोग्य—केवल आरोग्य ही नहीं, प्रत्युत बुद्धि—उसके द्वारा पिये हुए दूधके परिमाण और प्रकारपर अधिक अवलम्बित है। भारतके ऐसे करोड़ों बच्चोंके शारीरिक विकासका आधार उनका आरोग्य, उनकी बुद्धि दूधके परिमाण और प्रकारपर निर्भर है।

—लार्ड लिनलिथगो (ए० आई० एस्० एस्०की कमेटी)

यन्त्रोंकी अपेक्षा बैल ही लाभदायक

(लेखक—श्री न० ग आपटे, बी० ए०)

वृष-शक्तिका शास्त्रीय विवेचन

हमारे यहाँ कृषि-सुधारके उद्योगमें शीघ्रता और कम खर्चमें खेती करनेकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस दृष्टिसे स्वभावतः ही हमारा ध्यान ट्रैक्टरों अर्थात् भापसे चलनेवाले यान्त्रिक हलों और अन्य यन्त्रोंकी ओर जाता है। तेलके इंजनसे चलनेवाले ऐसे कई यन्त्र निकले भी हैं और इनसे कुछ लाभ भी हैं। मुख्य लाभ ये ही बतलाये जाते हैं कि यह स्वावलम्बनका मार्ग है और इसमें खर्च भी कम होता है। पर तैल-शक्तिसे जितना ही काम लिया जायगा, वृषशक्ति (बैलोंकी शक्ति) उतनी ही बेकार होगी, यह तो स्पष्ट ही है। इस लेखमें यही दिखलाना है कि तैलशक्तिकी तुलनामें वृषशक्तिका प्रयोग ही अधिक लाभदायक है।

राष्ट्रहित एवं शास्त्रशुद्ध सिद्धान्तोंके आधारपर निर्मित होनेवाले नये यन्त्रोंके विरुद्ध हमें कुछ नहीं लिखना है। परन्तु अभी जो यान्त्रिक उपक्रम हो रहा है, वह अधिकांशमें स्वार्थी और अज्ञानी लोगोंकी ही प्रवृत्ति है। यदि निरपेक्ष लोक-नेताओंके वैज्ञानिक अन्वेषणके फलस्वरूप यन्त्रोंका निर्माण और प्रचलन हो तो बैलोंका ही पक्ष लेकर बैठ रहनेका कोई कारण नहीं है।

सामान्यतः भारतवर्षमें किसी भी जातिका बैल कितने ही कामोंमें आता है और खेतीके काममें तो उसका स्थान बड़े ही महत्त्वका है। खेतपर जो कोई काम जल्द या धीरे-धीरे किया जाता है, वह सारा काम, कच्ची या पक्की सड़कोंपर गाड़ी खींचनेका काम, और खाद देनेका काम, ऐसे सभी काम बैलोंद्वारा होते हैं। अर्थात् किसानके लिये किसानीके हर काम और स्थानमें बैलसे मदद लेना जरूरी है।

खेतीकी दृष्टिसे खेत जोतना तथा खाद देना, ये दो महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। कोई भी यन्त्र ये दोनों काम नहीं कर सकते। कैसी ही पथरीली जमीन हो, बैल खेत जोत सकते हैं। कैसी ही पहाड़ी जमीन हो, बैल ऊपर-नीचे आ-जा सकते हैं। पर पेट्रोलसे चलनेवाले यन्त्रके लिये यह सम्भव नहीं। वही बैल हल चला सकता है, वही बोझ और गाड़ी खींच सकता है, लकड़ी आदि ढोकर एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुँचा सकता है पर हम छोटे-से-छोटा इंजन लें तो वह इतने अनेक प्रकारके काम नहीं कर सकता। एक विशेष बात यह है कि एक नियत शक्तिके इंजनसे आवश्यकता पड़नेपर उस नियत शक्तिसे अधिक काम नहीं लिया जा सकता; पर मौका पड़नेपर बैलोंसे उनकी सामान्य शक्तिसे डेढ़ गुना काम लिया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त बैलसे खाद भी मिलती है। भारतवर्षमें खेतीका सारा दारोमदार खादपर ही है पर किसी यन्त्रसे खाद नहीं मिल सकती। भारतवर्ष उष्ण कटिबन्धके समीपका देश है, अतः यहाँका तापमान ११८ डिग्रीतक बढ़ सकता है। इस उष्णताके कारण जमीनके बहुत-से प्राणिजन्य तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। अतः जिस अनुपातमें बाहरसे इन तत्त्वोंको जमीनमें पहुँचाया जायगा, उसी अनुपातमें फसल भी अच्छी या खराब होगी। कारण, इस प्रकारसे वनस्पतियोंकी वृद्धिके लिये आवश्यक नाइट्रोजन ग्रहण करनेयोग्य रूपमें मिल जाता है। इन प्राणिजन्य तत्त्वोंसे जमीनकी सच्छिद्रता बढ़ती है, जिससे वह उचित परिमाणमें (नमी) एवं वायु भी ग्रहण कर सकती है। नाइट्रोजन (नमी) और हवाके योग्य परिमाणपर ही वनस्पतियोंकी वृद्धि निर्भर है। यदि ये तीन बातें न हों तो कितनी भी खाद डाली जाय, उससे कोई लाभ न होगा। भारतवर्षकी परिस्थितिमें गोबरकी खाद ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। खेतीकी पैदावार भी इसीपर पूर्णतया निर्भर है। कोई भी यन्त्र ऐसी खाद उपलब्ध नहीं करा सकता, यह बात सूर्यप्रकाशके समान स्पष्ट है।

कृषि-विभागने 'ताग' तथा वैसी ही अन्य वनस्पतियोंकी खेती कराकर उनसे खादका काम लेनेका निश्चय किया है। खादकी दृष्टिसे यह तरीका अच्छा है। इससे पर्याप्त मात्रामें अच्छी खाद मिल सकती है। परन्तु इतना ही विचार करनेसे काम न चलेगा। इस पद्धतिके खर्चपर भी विचार करना होगा। खर्चकी दृष्टिसे यह लाभदायक न होगी। क्योंकि इस खादको पैदा करनेके लिये खरीफकी फसलके समयतकके लिये खेत रुका पड़ा रहेगा। इसके अतिरिक्त इस वनस्पतिका उपयोग जानवरोंके लिये चारेके रूपमें नहीं किया जा सकता। 'ताग' की एक फसलके लिये 'निलवा' की फसलके जितना ही खर्च लगता है। यदि उसी खेतमें

तागकी जगह 'निलवा' की खेती की जाय तो उतने ही समयमें दो जानवरोंके लायक सालभरका घास पैदा हो सकता है। ये दो जानवर उसी जमीनमें सालभरतक काम करेंगे और खाया हुआ 'निलवा' खादके रूपमें लौटा देंगे। गोबरमें शरीरकी आँतोंकी क्रियाके कारण बहुत अधिक नाइट्रोजन होता है। जमीनसे निलवेके द्वारा लिया हुआ सारा नाइट्रोजन खादके रूपसे कुछ समृद्ध होकर ही जमीनको वापस मिलता है। क्योंकि काम करते समय चारेके कार्बोहाइड्रेट्स ही खर्च होते हैं, जिनका खादकी दृष्टिसे कोई उपयोग नहीं है। इस प्रकार 'ताग' पैदा करनेमें जो शक्ति बेकार जाती है, उसका उपयोग कर बैल सारे वर्षभर खेतपर काम कर सकता है। अतः 'ताग' के पहले आवश्यक अन्नकी फसल पैदा करना लाभदायक होगा। इससे अधिक अच्छी खाद भी मिल सकती है और बैलकी शक्ति मुनाफेमें मिलती है। 'ताग' की अपेक्षा प्राणिजन्य रासायनिक क्रियाद्वारा तैयार होनेवाली खाद अधिक उपयोगी है। गोबर यान्त्रिक पद्धतिसे तैयार होनेवाली खादकी अपेक्षा अधिक अच्छी खाद है। इन्दौर, पूसा आदि स्थानोंमें विभिन्न प्रकारकी रासायनिक क्रियाओंद्वारा (नमक आदि डालकर) खाद तैयार करनेका प्रयत्न किया गया है। पर कोई भी प्रयोग छोटे पैमानेपर भी काममें लाने योग्य सफल नहीं हुआ है। इस समस्यापर सभी दृष्टियोंसे विचार करनेपर स्पष्ट हो जाता है कि बहुत ही सस्ती और अत्यन्त उपयोगी खाद देनेवाले बैलके समान दूसरा कोई यन्त्र नहीं है। बैल उत्कृष्ट खाद तैयार करता हुआ हरी वनस्पतियोंमेंसे खादकी दृष्टिसे निरर्थक कार्बोहाइड्रेट्सको शक्तिमें परिवर्तित-कर खेतीका काम मुफ्तमें कर देता है। बैलमें यह बहुत ही विचित्र गुण है। अर्थशास्त्रकी किसी भी दृष्टिसे कृषिमें बैलका स्थान कोई भी यन्त्र ग्रहण नहीं कर सकता।

दुग्धाश्रम (Lactarium)

मनुष्यों और विशेषतः बच्चोंके लिये अपनी माका (मानव-) दूध सब दुग्धोंमें सर्वश्रेष्ठ पोषण है। जिन बच्चोंकी माताएँ मर गयी हों, जो जीवित होते हुए भी दूधकी कमी या शरीर रोगयुक्त होनेके कारण, अथवा अपना स्तन-सौन्दर्य नष्ट न हो जाय इस प्रकारकी अमातृत्वोचित-रूप गर्विताव्रुत्तिसे अपने बच्चोंको अपना दूध नहीं पिलाती हों या नहीं पिला सकती हों, उन अभागे बच्चोंके लिये धाय (Wet-Nurse) का दूध अच्छा है! किन्तु धायका विचार खूब सोच-विचारकर करना चाहिये। इसके बदलेमें बकरीके दूधसे भी काम चल सकता है। काली बकरीका दूध विशेष लाभकारी है; क्योंकि काली बकरी अधिक जंगली होनेके कारण, जंगलके घने भागोंमें प्रवेश करके विविध प्रकारकी वनस्पतियाँ खाती रहती है। इसके अतिरिक्त काला रंग होनेके कारण उसके शरीर एवं दूधमें सूर्यकी गर्मी दो-चार अंश (Degree) अधिक रहती है। अतः उसके दूधका पाचक-रस (Ensymes) अधिक सफल होता है एवं बच्चोंको अधिक नीरोगी रख सकता है। उसका दही भी अधिक कोमल होनेके कारण पचनेमें अधिक सरल होता है। यद्यपि बकरीके दूधसे भी गधीका दूध माताके दूधसे अधिक मिलता-जुलता है और दमा, कफ तथा बच्चोंके फेफड़ोंमें बलगम भर जाने आदि प्रसङ्गोंमें खास करके इसका प्रयोग भी किया जाता है, परन्तु फिर भी बकरीके दूध जितना सहज प्राप्य न होनेके कारण इसका प्रचार कम है।

किन्तु मानव-स्त्रीका दूध तो सबसे अच्छा है। चीन, जापान आदि देशोंमें तो गाय, भैंस, बकरी आदिके दूधकी भाँति स्त्रियोंका दूध भी मोल बेचा जाता था। इतना ही नहीं, वहाँके राजमहलों और सरदारोंके यहाँ कुमारियोंका दूध भी निकाला जाता था तथा बेचा जाता था। इससे भी बढ़कर यह बात थी कि कुमारियोंके स्तनोंसे भी दुग्धपान किया जाता था 'एक शाहनशाहके लिये ३०० कुमारियाँ दुग्धपानके लिये थीं।' ऐसा वर्णन एक जर्मन-पुस्तकमें मिलता है। संतति-नियन्त्रणके लिये अपनी पत्नीके स्तनपान करने तकका उल्लेख भी उस पुस्तकमें मिलता है!! इस प्रकारके आसुरी प्रयोग भी वहाँ चलते ही होंगे।

यह तो हुई बिल्कुल जड़वादकी, भोगवादकी एवं विज्ञानके व्यभिचारकी बात! अब मैं जड़वादसे सेवावादकी एक अनोखी बात सुनाता हूँ। स्त्रियोंका दूध आमतौरपर विकनेकी व्यवस्था बुएनोज़ ऐर्समें अर्जेन्टाइनके डा० बेटीनोटीने सन् १९२८ में प्रारम्भ की थी। यह व्यवस्था थी बच्चोंके लिये मानवीय दुग्धके 'दुग्धाश्रम' की। तबसे इन दुग्धाश्रमोंमें कई सुधार एवं विस्तार होते रहे हैं। ये दुग्धाश्रम तो सर्वथा सेवाश्रम ही हैं। वहाँ उन बच्चों-

को—जिनकी माताओंको पर्याप्त मात्रामें अथवा बिल्कुल ही दूध नहीं होता—दूध मिलता है। जो धायें अपने बच्चोंको दूध न पिलाकर पैसोंके लिये अपने दूधको बेच देती थीं, उनके स्थानपर ये दुग्धाश्रम स्थापित हुए हैं। यहाँपर माताएँ अपने बच्चोंको पिलानेके बाद बचे हुए दूधका दान किया करती हैं।

इस प्रकारकी संस्थाएँ म्युनिसिपलिटियोंद्वारा चलायी जाती हैं, और वह भी व्यापारिक ढंगसे नहीं, बल्कि संरक्षण-केन्द्र (Welfare Centre) के रूपमें। इन दुग्धाश्रमोंका उद्देश्य है माताका—(गाय माताका नहीं, माता-गायका)—दूध प्राप्त करना, रखना एवं आवश्यकतावालोंको बाँट देना। जो माताएँ धात्री (Wet-Nurse) नहीं, दात्री (Donors) की हैसियतसे दूध देती हैं, उनके बच्चोंके पालन-पोषण आदिकी सम्पूर्ण व्यवस्था इन दुग्धाश्रम-संस्थाओंद्वारा ही होती है।

जो माताएँ गरीब होती हैं, उनको सहायताके रूपमें एक मिटर (लगभग सवा दो रतल) दूधके लिये २० रुपये (5 Pesos) दिये जाते हैं। डाक्टरके व्यवस्था-पत्र (Prescription) के अनुसार ही दूध बाँटा जाता है तथा खरीदारकी स्थितिके अनुसार उसका मूल्य भी लिया जाता है। गरीबोंको दूध मुफ्त भी दिया जाता है।

(Hausen & Dairy Bulletin June 1937)

जिस प्रकार रक्तकी बैंक (Blood-Bank) होती है, उसी प्रकार यह दूधकी बैंक (Milk-Bank) समझिये! उपर्युक्त वर्णनसे मालूम हुआ कि स्पष्टतया एवं सावधानीसे दुग्धाश्रमोंका सञ्चालन होता है। हमारे धनी-दानी लोगोंको अपने धन एवं दानका उपयोग करनेके लिये इस प्रकारके कई सुन्दर कार्य मिल सकते हैं! (डा० जा०)

भारतका राष्ट्रीय पेय

मधुपेय (मधुपर्क), दूध, लस्सी और पानी

स्वादुरसो मधुपेयो वराय।

(ऋग्वेद ५। ४४। २१)

चीनकी चाय, अरबकी काफी, रूसका वोडगा, ईरानकी शराब और पश्चिमकी दारू इत्यादि उनके राष्ट्रीय पेय कहे जा सकते हैं। भारतवर्षका राष्ट्रीय पेय क्या था अथवा हो सकता है—यह विचारणीय विषय है। प्रत्येक देशका कोई-न-कोई राष्ट्रीय पेय अवश्य होता है। वेद-कालमें तो सोमकी महिमा अपार थी, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि सोम-पानका अधिकार केवल ब्राह्मणोंको ही था।

'सीहण केरूँ दूध होय ते कनक पात्र माँ ठरे।
सोमवल्लरी ब्राह्मणसुतने झरे, बगर बनासीने वमन करावे'॥
—धीरो०

'सिंहनीका दूध केवल स्वर्ण-पात्रमें ही ठहर सकता है। सोमपान केवल ब्राह्मणपुत्र ही कर सकता है, कोई अनधिकारी पीयेगा तो वमन (उल्टी) हो जायगा।'

इन पंक्तियोंसे सोमके महत्त्वका प्रमाण मिलता है। गायको भी यज्ञ-कालमें सोम-पान करानेका उल्लेख वेद साहित्यमें मिलता है। किन्तु आज वह सोमबेल—चन्द्रबेल—कहाँ है? कहते हैं इसकी एक-एक पत्ती चन्द्रमाके साथ दिन-दिन घटती-बढ़ती थी। हमारे धार्मिक साहित्यमें 'मधु' शब्द बहुत आता है। संभव है 'मधु' ही राष्ट्रीय पेय हो। मधु शहद या मधु-जैसी मीठी कोई वस्तु होनी चाहिये।

आर्यसंस्कृतिमें मधुर रसको ऊँचा स्थान दिया गया है। खट्टा, खारा, तीखा, कटु—ये रस तो वातप्रधान राजसिक-तामसिक व्यक्तियोंके लिये अधिक अनुकूल हैं। पित्तप्रकृतिवाले सात्त्विक पुरुषोंके लिये तो मधुर रस ही उत्तम है। यह बात श्रीमद्भगवद्गीतासे और अनुभवसे स्पष्ट है। आयुर्वेदका भी ऐसा ही विधान है—

'देहे पित्तं गेहे वित्तं, चित्तं श्रीकृष्णाम्बुजे'

अर्थात् शरीर पित्तप्रधान हो, घरमें पैसा हो और चित्त श्रीकृष्णके पादपद्मोंमें लगा हो।

पित्तप्रधान शरीर होनेसे सात्त्विक, पुष्टिकारक, रसदार, हृद्य, स्निग्ध, स्थिर आहार ही—जो आयु, बल, सत्त्व, स्वास्थ्य, सुख और प्रीतिको बढ़ानेवाला होता है—अनुकूल पड़ता है। ऐसे भोजनके लिये यह आवश्यक है कि पासमें पैसे हों; परन्तु खाने-पीनेमें ही लगकर जीवन स्वार्थी, जड़वादी (पार्थिव) ही न बन जाय, इसके लिये मन सदा-सर्वदा श्रीकृष्ण-चरण-कमलोंमें लगा रहना चाहिये। कितना उच्च आदर्श चित्रित किया गया है। सचमुच हमारे

जीवन-साफल्यका त्रिकोण था—स्वास्थ्य, सम्पत्ति और श्रीकृष्ण-चरणोंमें रति।

हाँ, तो सर्वप्रथम मधु चाहिये। यह मधु शक्कर, मिश्री, मधु, गुड़, दही, दूध, फल-रस आदिसे प्राप्त होता था। किन्तु कुछ आगे चलकर मधुका अर्थ शराब-दारू भी हो गया था। वह इन्द्रियलोलुप लोगोंका काम था। मद्य, सुरा, मदिरा, वारुणी शब्दोंका मूल अर्थ वस्तुतः शराब नहीं है। उनका अर्थ तो है आकाशसे प्राप्त किया हुआ जल—शुद्ध-विशुद्ध मेघ-जल (Aqua Pura)। वह जल टपकाये हुए परिष्कृत जल (Distilled water) से भी श्रेष्ठ है। इसीलिये तो उसे अमृत भी कहते थे, क्योंकि वह अमृत-लोक अर्थात् देवलोकसे गिरता था। वरुणदेव—सुरका मीठा, ताजा, आरोग्यप्रद रस ही सुरा या वारुणी है। मद्य, मदिरा और मोदक शब्दोंके मूलमें मुद् धातु है, अतः इन शब्दोंसे उस वस्तुका बोध होना चाहिये, जो मोद—आनन्द प्रदान करे, चित्तको प्रसन्न करे। यह सभी जानते हैं कि शराब मोद नहीं देता, वह तो मद, माद, उन्माद या प्रमाद देता है; वह चित्तको बहलाता नहीं वरं बहकाता है। उसमें मोद-प्रमोद कहाँ? बाइबिलमें भी इस आकाशसे गिरते हुए जल-को प्रभुका सर्वोत्तम पेय (Lord's best beer) कहा है।

इसीलिये हमारे यहाँ मीठे-ताजे बरसाती जलको कुंडोंमें रखते थे और अब भी राजपूतानेमें रखते हैं। समुद्र-जैसे पात्रसे आकाश-जितने बड़े डमरूयन्त्र (Distiller) में विशुद्ध हुए जलको रखनेके लिये तालाब-जैसा बड़ा प्याला तो चाहिये ही।

अब तनिक जलकी निरुक्ति भी देख लें। ज=जन्मसे, ल=लयपर्यन्त अर्थात् आदिसे अन्ततक जो उपकारमें लगा रहे, वह है जल। इसमें कितना योगार्थ भरा है। जलके सभी पर्यायोंमें अर्थका ऐसा ही खजाना भरा मिलेगा। यदि आधुनिक विज्ञानकी दृष्टिसे भी देखें तो अधिक मात्रामें पानी पीनेसे भी शराब-जैसा नशा आ जाता है।

हमने देख लिया कि 'मधु' शब्दका अर्थ मधुर (मीठा) ही है और वह अपने गुणोंके कारण अच्छा तथा मनके अनुकूल भी है। यह 'मधु' पदार्थ खास करके गायका दूध है। यदि गायको प्राकृतिक उत्तम चारा आदि मिले तब तो वह और भी—अत्यन्त स्वादिष्ट, मीठा और गुणकारी हो जाता है। यज्ञमें देवोंका, घरमें अतिथिका, कुटुम्बमें गृहवासी बटुकों (बच्चों) का—सबका मधुपान दूध ही है। भारत-जैसे उष्ण-देशमें जलवायु और आवश्यकताकी दृष्टिसे पोषक, सात्त्विक सान्त्वक (शमनीय—Soothing), जीवनीय और रासायनिक पेय दूधके अतिरिक्त और दूसरा क्या हो सकता है? गायको 'अतिथिनी'—'अतिथिग्व' इसीलिये कहा गया है कि अतिथिका पूर्ण सत्कार गो-रससे ही किया जा सकता है। वह स्वयं भी अतिथिकी भाँति ही चरती-फिरती है तथा अतिथिके समान आदर-सत्कारकी भी वह अधिकारिणी है। यही इसका अर्थ है।

मध्यकालमें तो कुछ अघोरपन्थी लोग गोमांस भी खाते-खिलाते थे, किन्तु सामान्य रूपमें वेदशास्त्रोंमें इसका उल्लेख नहीं है। वेदकालमें तो अतिथिका सत्कार अतिथिनी (गाय) के गोरससे ही होता था। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि कामधेनु माताके प्रसादसे ही ससैन्य महाराजाओंका आतिथ्य अनायास ही कर सकते थे। क्योंकि रति, मेधा, स्वाहा, स्वधा, शान्ति, क्षमा, धृति, स्मृति, कीर्ति, दीप्ति, क्रिया, कान्ति, तुष्टि और पुष्टि आदि आतिथ्यको सुसम्पन्न करनेवाली महाशक्तियाँ नित्य ही गौकी परिचर्यामें जो लगी रहती हैं। निरे दूधका उपयोग तो लोग नित्य ही करते हैं। अतिथिके मान-सत्कारके लिये तो कुछ विशेष चाहिये। इसलिये गोरसकी और भी विभिन्न वस्तुएँ पेयाकारमें बनायी जाती थीं और दूधमें भी शक्कर, मिश्री, इलाइची, केशर, बादाम, पिश्ता आदि डालकर या किसी ऐसी ही अन्य विधिसे दूधका सुन्दर मधुपेय बना लेते थे।

दूध, छाछ, लस्सी तथा शीतल जल ही सामान्य रीतिसे अपना राष्ट्रीय पेय हो सकता है। और यदि स्वादिष्ट तथा पौष्टिक पेय चाहिये तो उसे मधुपर्क या मधुपेय बना लेना चाहिये। यह दूध, दही, घी, शक्कर और शहदसे बन सकता है। मलाईके स्थानपर इसका उपयोग उत्तम है। क्योंकि घी-का तत्त्व अधिक होनेसे मलाईमें स्निग्धता, स्वाद और मृदुता तो है, किन्तु उसमें पोषक तत्त्व कम हैं। दूध, दही, घी, शक्कर और शहदके संयोगसे जीवनतत्त्व (विटामिन) की, प्रोटीनकी, शक्करकी, स्निग्धताकी और क्षारकी—सबकी समतोलता आ जाती है। यह है अपनी रस-समीकरण शक्ति। अब भी मधुपर्क या मधुपेय—पञ्चामृत जो भी नाम दें—इसी प्रकार बनाकर काममें लाना चाहिये।

देवमन्दिरोंमें इस पञ्चामृत—मधुपर्कका आचमन लेते समय मेरे मनमें यह विचार आता है कि अधिक प्रिय और पोषक कौन है? पञ्चामृत—मधुपर्क, या इसको दिलानेवाले देवता? अन्तमें यही बात समझमें आती है कि जिसका

स्थूल प्रसाद 'मधुपर्क' है, उसका कृपाप्रसाद तो साक्षात् अमृत ही होगा।

मधुपर्क (पञ्चामृत), दूध, लस्सी और शीतल जल—यह सौम्य और स्वादिष्ट रस-चतुष्टय आर्य-संस्कृतिके महत्त्वका यशश्चिह्न है। इसे हमें अपनाना चाहिये। यह ठीक है कि गरीबीके कारण बहुतसे परिवारोंको आज चायपर ही गुजर करना पड़ता है। इसीलिये तो गो-उद्धारका यह प्रयत्न है। याद रखिये, हमें किसी उत्तेजक पेय (Stimulant) की आवश्यकता नहीं है। उष्णवायुमें ज्ञानतन्तु शीघ्र थक जाते हैं, फिर उत्तेजक पदार्थोंद्वारा और थकावट क्यों पैदा करें? जो शान्तिप्रद (Soothing) हो, वही हमारा पेय हो सकता है, और यह रस-चतुष्टय वैसा ही है। गरम पेयके लिये गरम दूध, राब, दूध-दलिया, खीर और रोहितककी चाय अच्छी है। (डा० जा०)

भारतीय आहारमें दूध तथा दुग्धान्नोंका स्थान

(लेखक—श्रीयुत प्रोफेसर वी० ए० व्यास, एम्० एस्-सी०)

भारतवर्ष एक ऐसा देश है, जहाँ अन्न आहारका सबसे आवश्यक अङ्ग है। जब हम इस बातकी ओर ध्यान देते हैं कि भारत कृषिप्रधान और घना बसा हुआ देश है, जहाँ प्रत्येक व्यक्तिकी औसत आय इतनी कम है कि लोगोंके भोजनका अधिकांश भाग सस्ते पदार्थ—जैसे अन्न, कन्दमूल, मूली-गाजर आदि रहता है, तब उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जाता है। किन्तु हमारा आर्यधर्म 'जीयो और जीने दो' का सिद्धान्त रखते हुए विश्वबन्धुत्वकी भावनासे पूर्ण है। इसलिये धार्मिकताके कारण उसे सस्ते अन्नमय आहारकी ही शरण लेनी पड़ती है।

इस अन्नमय भोजनमें स्टार्चकी ही बहुलता रहती है और कैल्शियम, विटामिन (मुख्यतः ए. सी. और डी.) तथा प्रथम श्रेणीके (जैव) प्रोटीनोंकी कमी रहती है। शरीरमें कैल्शियमकी कमी होनेसे हड्डियोंके ढाँचेको काफी क्षति पहुँचती है, निर्बलता आती है और दाँतोंकी वृद्धिमें रुकावट आती है। विटामिनोंकी कमीसे जीवन-प्रक्रियाके स्वाभाविक व्यापारमें दोष आ जाता है तथा रोगोंका सामना करनेवाली शक्ति क्षीण हो जाती है। जैव प्रोटीनोंकी कमी शरीरके विकासमें बाधा पहुँचाती है। प्रोटीन सजीव मांसतन्तुओंके विकासके आधार हैं; अतः ये आहारके अत्यावश्यक अङ्ग हैं। यदि प्रोटीन उचित मात्रामें न मिलेगा तो शरीरकी स्थिरता, विकास तथा पुनर्निर्माणकी क्रियाएँ जारी न रह सकेंगी। यहाँपर यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिये कि जैव प्रोटीन वानस्पत्य प्रोटीनकी अपेक्षा अधिक सुपाच्य होनेसे श्रेष्ठ हैं; तथा वानस्पत्य प्रोटीनको पूरी तरहसे पचानेके लिये जैव प्रोटीनोंका एक निश्चित मात्रामें शरीरमें पहुँचना आवश्यक है। इससे यह सिद्ध होता है कि हमारा अन्नमय आहार अपूर्ण होनेके कारण हमारे स्वास्थ्यको ठीक नहीं रख सकता, अतः उसमें कुछ अन्य पदार्थोंका समावेश आवश्यक है; और दूधमें कैल्शियम, विटामिन तथा जैव प्रोटीन अधिक मात्रामें हैं, इसलिये दूधका समावेश सर्वश्रेष्ठ होगा। इस प्रकारके भोजनोंको 'रक्षात्मक' भोजन कहा गया है, क्योंकि ये आवश्यक आहारकी कमीसे होनेवाले रोगोंसे हमारी रक्षा करते हैं। इन रक्षात्मक भोजनोंमें दूध, फल तथा हरे साग आदि सम्मिलित हैं। इन सब पदार्थोंमें प्रमुख अनुसन्धानकर्ताओं, जैसे डा० ई० वी० मैक्कालमद्वारा दूध सर्वश्रेष्ठ रक्षात्मक भोजन माना गया है, क्योंकि इसमें सभी खाद्य-तत्त्व विद्यमान हैं। वास्तवमें दूध सर्वोत्तम अकेला भोजन है और ऐसा अन्य अकेला भोजन प्राप्त नहीं हो सकता। **राष्ट्र-संघकी विशेषज्ञ-सम्मतिदात्री सभाके शब्दोंमें केवल दूध ही ऐसा आहार है जो पूर्ण और सम्पन्न आहारके निकट पहुँचा है।** इसमें वे सभी तत्त्व विद्यमान हैं, जो जीवनके विकास और रक्षाके लिये आवश्यक हैं और वे उस रूपमें हैं, जिससे कि शरीर तत्काल उनका उपयोग कर सके। इससे दूधकी लाभप्रदताका पता चलता है और भारतीय आहारकी अपूर्णताको ध्यानमें रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अन्य देशोंकी अपेक्षा भारत दुग्ध तथा दुग्धान्नोंपर अधिक निर्भर करता है। किन्तु दुर्भाग्यवश संसारके अन्य उन्नत देशोंकी अपेक्षा भारतमें दुग्धान्नोंकी खपत बहुत ही कम है। आँकड़ोंसे यह पता चलता है कि भारतमें औसतन प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति दुग्धान्नोंसहित दूधकी खपत ६.६ औंस मानी गयी है। दूसरे देशोंको देखते हुए यह बहुत ही कम है। कनाडामें ५६·८ औंस, न्यूज़ीलैंडमें ५५·६ औंस, ग्रेट-ब्रिटेनमें ४०·७ औंस, डेन्मार्कमें ४०·३ औंस, अमेरिकामें

३५·६ औंस तथा जर्मनीमें ३५ औंसका औसत है । इसके अतिरिक्त भिन्न-भिन्न वर्गके लोगोंके भोजन और आमदनीकी जाँचसे पता चला है कि दूध तथा दुग्धान्नोंकी खपत परिवारकी आमदनीके अनुसार न्यूनाधिक है । अतः देहातमें रहनेवाले अधिकांश परिवारोंमें तथा नगरके मजदूरोंमें खरीदनेकी बहुत कम शक्ति होनेसे या तो वे लोग दूध या दुग्धान्नोंका बिल्कुल उपयोग नहीं करते या ऐसी मात्रामें करते हैं, जो नहींके बराबर है । इसके अतिरिक्त सेनाकी बहुत अधिक माँगके कारण भी स्थिति बहुत गम्भीर हो गयी है । फलस्वरूप गरीब लोगोंका स्वास्थ्य बहुत गिर गया है, तथा सबसे अधिक क्षति बच्चों और दूध पिलानेवाली माताओंको पहुँची है ।

अब हमें यह विचार करनेकी आवश्यकता है कि क्या कुछ अधिक दूधकी व्यवस्था कर देनेसे स्थितिमें कुछ सुधार हो सकता है ? अथवा दूध न मिलनेके कारण निर्बल हुए बच्चों और माताओंके स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकासमें दूध-द्वारा निश्चितरूपसे सुधार किया जा सकता है ? इस सम्बन्धमें किये हुए अनुसन्धानोंसे दूधके विकासोन्मुख करनेवाले गुणोंका पता चला है, विशेषकर स्कूलमें पढ़नेवाले बच्चोंके विषयमें डा० एच० सी० कैरी मैनके कथनानुसार 'लंदन मेडिकल रिसर्च कौंसिल' के परिणामोंसे यह जानकर आश्चर्य होगा कि विकासोन्मुख बालकोंकी क्षुधा-निवृत्तिके लिये जितना आहार पर्याप्त है, उसमें प्रतिदिन १ पिंट (१२ औंस) दूध यदि बढ़ा दिया जाय तो प्रत्येक लड़केके वजनमें औसतन ३·८५ पौंडसे ६·९८ पौंडतक वार्षिक वृद्धि होगी और प्रति बालककी वार्षिक ऊँचाई भी औसतन १·८४ इंचसे २·६३ इंचतक बढ़ेगी । इसी प्रकारके सन्तोषजनक परिणाम स्काटलैंडके बोर्ड आफ हेल्थद्वारा नियुक्त विशेष समितिने प्राप्त किये थे, जो स्काटलैंडके नगरों तथा कस्बोंके स्कूली लड़कोंकी दृष्टिसे दूध तथा निर्घृत दूधके पोषक गुण जाननेके लिये बनायी गयी थी । इन निरीक्षणोंके फलस्वरूप 'पाठशाला दूध' (School-Milk) की योजना काममें लायी गयी, जो अमेरिका और यूरोपभरमें प्रसिद्ध हो गयी । इंग्लैंडमें सन् १९२१ के शिक्षा-विधान (Educational Act) के अनुसार स्कूलमें पढ़नेवाले जो लड़के अधिकारियोंद्वारा दुर्बल समझे जाते हैं, उन्हें स्कूलमें निःशुल्क दूध मिलता है, जिससे कि पढ़ाईका पूरा-पूरा लाभ मिले । इस कानूनके अनुसार ५० लाख प्राथमिक स्कूली लड़कोंमें लगभग ३ लाख ३० हजार अर्थात् ७ प्रतिशत लड़के दूध पाते हैं। यहाँतक कि, अभी हालमें समाप्त होनेवाले यूरोपीय महायुद्धके भोजन-संकटके समयमें भी स्कूली लड़कोंके लिये दूधकी मात्रापर विशेष ध्यान दिया जाता था । यह 'हाउस आफ कामन्स' में किये हुए वाद-विवादसे स्पष्ट हो जाता है । उसमें स्काटलैंडके सेक्रेटरी श्रीटाम जान्स्टनने कहा था कि 'सन् १९३९ से दूधकी कुल खपत ३४ प्रतिशत बढ़ गयी है । स्काटलैंडमें पाठशालाओंकी छात्र-संख्याके ६७ प्रतिशत लोग स्कूलमें दूध पाते थे । इंग्लैंड और वेल्समें तो अनुपात और अधिक था, वहाँ ७८ प्रतिशत लड़के स्कूलमें दूध पाते थे ।'

उपर्युक्त बातोंको देखते हुए भारतकी स्थिति कितनी दयनीय है, जहाँके अधिकांश बच्चे-बच्चियाँ भोजन या पोषक तत्त्वोंके अभावमें बढ़कर दुर्बल पुरुष और स्त्री हो जाते हैं। ऐसी भयजनक स्थितिकी ओर लोगोंको सजग करना चाहिये तथा सामान्यरूपसे रक्षात्मक भोजनकी समस्या और विशेष-रूपसे दूधकी समस्यापर लोगोंका विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहिये । प्रत्येक भारतीय बालकको बिना किसी जाति अथवा धर्मके भेद-भावके अच्छा शुद्ध दूध भोजनके अतिरिक्त मिलना चाहिये । अपर्याप्त भोजन पानेवाला बालक जीवनके आरम्भमें ही डगमगा जाता है, और बाल्यावस्थामें अच्छा और पूर्ण भोजन न मिलनेसे फिर आशा नहीं की जा सकती कि उसका स्वास्थ्य आगे चलकर सुधरेगा । इसके अतिरिक्त अस्वस्थ व्यक्ति कुछ करनेके लिये सजीवता, उत्साह और साहसकी शक्तिसे वञ्चित रह जाता है । ऐसी दशामें यह कोई आश्चर्य-जनक बात नहीं है, कि यदि पूरा तथा अच्छा भोजन न पाने-वाले लोगोंकी जाति संसारके अन्य पर्याप्त भोजन पानेवाले बलवान् राष्ट्रोंकी अपेक्षा पिछड़ी हो ।

विचारशील पाठकोंसे मेरा यह सविनय अनुरोध है कि वे परिस्थितिको ध्यानमें रखते हुए हम भारतीयोंके आहारमें दुग्ध तथा दुग्धान्नोंकी अनिवार्य आवश्यकताकी समस्यापर विचार करें और इस आवश्यकताकी पूर्तिके लिये दूध देनेवाले भारतीय पशुओंकी रक्षा, उनके प्रति दयापूर्ण व्यवहार तथा उनके सुधारसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ उपाय ढूँढ़ निकालें । अन्तमें कुन्नूरकी 'पोषण-अनुसन्धान-प्रयोगशाला' (Nutrition Research Laboratories) के भूतपूर्व डाइरेक्टर श्री सर राबर्ट मैककैरिसन्की निम्नलिखित उक्तिके साथ मैं इसे समाप्त करूँगा ।

'पोषणकी दृष्टिसे भारतवर्षको सबसे बड़ी आवश्यकता इस समय अधिक और शुद्ध दूध उत्पादन करनेकी है, क्योंकि इससे श्रेष्ठ कोई खाद्य पदार्थ नहीं है और न कोई अन्य खाद्य-पदार्थ ऐसा है, जिसपर जनताका स्वास्थ्य अधिक निर्भर करता हो।'

दूधका जादू



दूध एक अत्यन्त अद्भुत अमृत है। इस अमृतका तत्त्व-विश्लेषण (Analysis) कीजिये और कहिये कि दूधमें क्या जादू भरा है एवं इसको उत्पन्न करनेवाली गाय भी जगत्की कितनी विलक्षण जादूगरनी है। इस जादूगरनीके कृपा-प्रसादसे जगत्के पाप, ताप एवं शाप शान्त हो जाते हैं और सर्वत्र सुख, सम्पत्ति, स्वास्थ्य और सत्ताका साम्राज्य छा जाता है। इसीलिये गायको कामधेनु कहा गया है। वह धन, धान्य, पशु, आरोग्य, सम्पत्ति, संतति आदि जो कुछ भी आप चाहें, दे सकती है। यदि आप गौकी शास्त्रीय उपासना सीख लें तो भारतवर्षका बेड़ा पार हो जाय। गायके दूधमें क्या-क्या है इसपर जरा ध्यान दीजिये—

यहाँ बिलायती गायके दूधका विवरण दिया जाता है। यह याद रखना चाहिये कि बिलायती गायके दूधमें घी (Butter Fat) कम होता है और भारतीय गायके दूधमें अधिक। बिलायती गायोंमें भी कुछ-कुछ अन्तर रहता है। इससे सबके दूधका प्रतिशत एक-सा नहीं मिलता। गोदुग्धमें जिन तत्त्वोंका पता लगा है वे निम्नलिखित हैं। इनके अतिरिक्त और भी तत्त्व हैं जिनका अभी पता नहीं लग पाया है।

१. जल—८७·१ प्रतिशत

२. घन-पदार्थ (Milk-Solids)—१२.९ प्रतिशत हैं जो इस प्रकार हैं—

घृत (Butter Fat) ३.६९ प्रतिशत

संख्या	नाम एसिड	
१	ओलिक	Oleic
२	पामीटिक	Palmitic
३	स्टिअरिक	Stearic
४	मीरिस्टिक	Myristic
५	ब्यूटिरिक	Butyric
६	कैप्रोइक	Caproic
७	कैप्रीलिक	Capryllic
८	कैप्रिक	Capric
९	लॉरिक	Lauric
१०	ऐरेकिडिक	Arachidic
११	लिनोलिक	Linoleic

इनमें नं० १-२ की मात्रा बहुत अधिक है।

क्षार (Ash) ०.७५ प्रतिशत

संख्या	नाम	
१	पोटासियम	Potassium
२	सोडियम	Sodium
३	केल्सियम	Calcium
४	मैग्नेसियम	Magnesium
५	जस्ता	Zinc
६	एल्युमीनियम	Aluminium
७	ताम्र	Copper
८	लौह	Iron
९	मैंगेनीज	Manganese
१०	फास्फेट्स	Phosphates
११	क्लोराइड	Chlorides
१२	सल्फेट	Sulphates
१३	साइट्रेट्स	Citrates
१४	कार्बोनेट्स	Carbonates
१५	आयोडिन	Iodine
१६	सिलिका	Silica
१७	फ्लूओरिन.	Fluorine

(तन्तुकर-तत्त्वProtiens) केसीन-एल्ब्यूमन ३.५६ प्र०

संख्या	नाम एमिनो-एसिड	
१	ग्लिसिन	Glycine
२	एलनिन	Alanine
३	वेलिन	Valine
४	ल्युसिन	Leucine
५	फिनिलेलेनिन	Phenylalanine
६	टिरोसिन	Tyrosine
७	सेरिन	Serine
८	सिस्टिन	Cystine
९	प्रोलिन	Proline
१०	हाइड्रोक्सीप्रोलिन	Hydroxyproline
११	ग्लुमेटिक एसिड	Glumatic Acid
१२	हाइड्रोक्सीग्लुमेटिक एसिड	Hydroxyglumatic Acid
१३	एस्पार्टिक एसिड	Aspartic Acid
१४	ट्रिप्टोफेन	Tryptophane
१५	आर्जिनिन	Arginine
१६	हिस्टिडिन	Histidine
१७	लाइसिन	Lysine
१८	मिथिओनिन	Methionine
१९	डोडेकेनोमिनो एसिड	Dodecanomino acid
२०	अमोनिया	Ammonia
२१	फास्फरस	Phosphorus

इनमें नं० ११, ४, १७, १५, ६, ५, ९, १६ अधिक मात्रामें हैं।

दुग्धशर्करा (Lactose) ४.९ प्रतिशत

संख्या	नाम	
१	दुग्धशर्करा	Milk-Sugar
२	द्राक्ष-शर्करा	Glucose (अंशांश)

३ अन्यान्य तत्त्व—पाचकरस (Enzymes)

संख्या	नाम	
१	डायस्टेज	Diastase
२	पेरोक्सीडेज	Peroxidase
३	रिडक्टेज	Reductase
४	लाइपेज	Lipase
५	प्रोटिएज	Protease
६	लैक्टेज	Lactase
७	फास्फाटेज	Phosphatase
८	ओलीनेज	Olienase
९	कैटेलेज	Gatalase

जीवन-तत्त्व (Vitamines)

ए. ए.$_1$ डी. ई. बी$_1$, बी$_2$, बी$_3$ (?), बी$_4$ (?), सी.

वायु

१	कारबन (Co_2)	७६ सी. सी.
२	नाइट्रोजन (N_2)	......
३	आक्सिजन (O_2)	......

इनके अतिरिक्त दूधमें प्रोटिओज (Proteose),लैक्टो-म्युसिन (Lactomucin) और मद्यद्रावक प्रोटीन (Alchohol-Soluble-Proteins) भी अंशांशतः पाये जाते हैं।

दूधमें प्रोटीनरहित नाइट्रोजनवाले पदार्थ

(Non-Protein Nitrogenous Substances)

लैक्टोक्रोम (lactochrome), क्रिएटिन (Creatine), यूरिया (Urea), थियोसावनिक ऐसिड (Thiocyanic-acid), ओरोटिक ऐसिड (Orotic-acid), हाइपोक्सेन्थीन(Hypoxenthine),जैन्थीन(Xanthine, और यूरिक ऐसिड (Uric acid), कोलिन (Choline) ट्राइमेथिलेमिन (Trimethylamine), ट्राइमेथिलेमिन ओक्साइड (Trimethylamine oxide), मेथिल ग्वेनिडिन (Methyl guanidine) और अमोनियाके क्षार (Ammonium salts) अंशांशतः पाये जाते हैं।

फास्फरसवाले पदार्थ

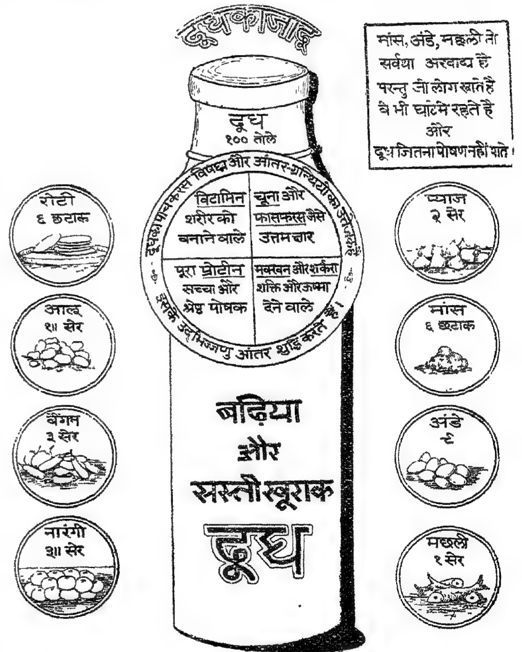
(Phosphorus compounds in Milk)

फ्री फास्फेट (Free Phosphate), फास्फेट केसीनके साथ मिला हुआ (Phosphate loosely bound to casein), लेसिथिन और सिफेलिन (Lacithin and Cephalin), डाइमिनो मोनोफास्फेटाइड (Diamino monophosphatide) तथा तीन अम्ल द्रावक सेन्द्रिय फास्फरस योगिक (Three acid-soluble organic phosphorus compounds) (phosphoric esters) ।

(w. L. Davies. ph. D., D. Sc., F. I. C.)

दूध बहुत ही साधारण द्रव्य दिखायी पड़ता है, परन्तु संसारमें अन्य कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है,जिसमें दूधके समस्त अद्भुत, विरल तथा जटिल तत्त्व विद्यमान हों। दूधके तत्त्वोंकी खास विशेषता यह है कि वे हमारे भोजनके अन्य पदार्थ—आटा, चावल, आलू, फल-फूल, शाक, आदिके दोषको (जहरको) नष्ट करनेमें, इन पदार्थोंको उच्चतर रूपमें पलटनेमें एवं इनको अधिक सुपाच्य और सुपौष्टिक बनाने आदिमें हमारी बहुत सहायता करते हैं और इस प्रकार हमको पालते, पोसते तथा बढ़ाते हैं। जनताके आरोग्य, अभ्युदय एवं विकासके इतिहासमें दुग्धान्नकी विज्ञान-गाथा और पराक्रम-गाथा स्थान-स्थानपर दिखायी पड़ती है, अर्थात् जनताके आरोग्य, उसकी प्रगति एवं उसके विकासमें दुग्धान्नका बहुत हाथ रहा है। दूधमें कम-से-कम ५० पदार्थ सवा सौ-डेढ़ सौ रूपोंमें रहते हैं। यह दूधका जादू है।

इतना सर्वगुणसम्पन्न और सब प्रकारसे परिपूर्ण पौष्टिक और साथ ही बुद्धिमें सात्त्विकता उत्पन्न करनेवाला आहार होनेपर भी यह सबसे सस्ता है। असलमें मांस,अंडा,मछली आदि तो सर्वथा अखाद्य और सब प्रकारसे हानिकर हैं ही। खानेवालोंके लिये भी वे पोषण, स्वाद तथा आरोग्यमें दूध और दूधसे बने पदार्थोंकी समता नहीं कर सकते। यह बात स्वयं मांसाहारी देशोंके प्रसिद्ध डाक्टरोंने प्रयोग तथा अनुभवसे सिद्ध की है। राष्ट्रीय और आर्थिक दृष्टिसे भी गायको मारना सर्वथा अहितकर है। एक एकड़ भूमिसे दुग्धान्न और कृष्यन्नोंद्वारा जितना पोषण मिलता है, मांसके रूपमें उतने पोषणके लिये सोलह एकड़ भूमि चाहिये। नीचे चित्रमें देखिये दूध सबसे बढ़कर खाद्य होनेपर भी सबसे सस्ती चीज है। इसका उपयोग न कर मांसका उपयोग करनेवाले तो सचमुच अभागे ही हैं।



इन अद्भुत दुग्धान्नोंकी जननी गोमाता और उसके स्रष्टा परमपिता परमेश्वरके उपकारोंको स्मरण करनेसे कृतज्ञतावश हमारा सिर उनके चरणोंमें झुक जाता है। गोमाताकी शरण लेकर हम इन हितकर सिद्धान्तोंसे लाभ उठाते रहें—यही हमारी शुभ कामना है (डा० जा०)

दधि-विज्ञान

शरीरके ९५ प्रतिशत रोग आमाशयके विकार (अन्नकोशकी सड़न), गंदगी, रोग-कीटाणु, विषैली वायु और अणुसृष्टिसे उत्पन्न होते हैं। इस अवस्थामें शरीर-रक्षक अणुसृष्टि तथा पोषक-रसों आदिका कुछ वश नहीं चलता, और उपर्युक्त भूतमण्डली अपना अड्डा जमा लेती है। इन सब विपत्तियोंको टालनेकी शक्ति दूध-दहीकी अणुसृष्टिमें है। अन्न-विषको नष्ट करके पोषक-रस बनानेके लिये दूध-छाछके उपयोगका कारण तो गौण है, किन्तु इसका प्रधान हेतु यह है कि दूध-दहीसे उन उत्तम और शक्तिशाली मित्र-अणुओं- (Benigned Microbes) की सृष्टि होती है, जो रोग-कीटाणुओंको नष्ट कर देनेमें समर्थ होते हैं। दूध-दहीमें उत्तम प्रकारके पोषण पदार्थ अधिक मात्रामें हैं, किन्तु वे सब तो नीरोग अवस्थामें काम आते हैं। रोगकी अवस्थामें दूध-दहीके प्रयोगका मुख्य उद्देश्य तो यही है कि शरीरके भीतर स्वस्थ मित्र-अणुओंकी सेना तैयार करके रोगकी शत्रु-अणुसेना (Pathogens) का नाश कर दिया जाय। इस प्रकार दही-छाछसे संग्रहणी, सन्धिवात, अजीर्ण, मन्दाग्नि, पथरी, अतिसार तथा आमातिसार आदि रोग दूर होते हैं।

दूध-दहीमें ये उत्तम स्वास्थ्यप्रद अणु (Bacteria) बहुत बड़ी संख्यामें रहते हैं। पैंतीस बूँद—एक क्यूबिक सेंटीमीटर दूधमें ५ से १० लाख, और छाछमें इसके सौगुने अर्थात् ५से १० करोड़ ऐसे अणु रहते हैं। इनका काम रोगाणुओंको मार भगाना है। जीवाणुओंको खा जानेवाले जीव (Bacteriophages) भी दूध-दहीमें बहुत होते हैं, जो आन्त्रप्रदेश और आमाशयके रोग तथा रोगबीजोंको नष्ट-भ्रष्ट करके शरीरमें ताजगी, प्रसन्नता तथा आरोग्यता ला देते हैं। रोगको होने न दिया जाय और हो जाय तो उसे हटा देनेकी शक्ति हो, इसीका नाम आरोग्यता है।

वस्तुतः ९५ प्रतिशत रोगोंका राजा है—भीतरकी सड़न और आन्तर-विष-संचार (Auto-Intoxication)। अन्य सब रोग तो उसीके अनुयायी हैं अथवा उसीके चिह्नमात्र हैं; या परिवर्तित रूप हैं। डाक्टर कैलोगने 'ऑटो इंटाक्सिकेशन' तथा 'कोलन हाइजीन' नामक पुस्तकोंमें इन सबका विस्तारसे वर्णन किया है।

सारांश यह है कि आरोग्य प्राप्त करने अथवा उसे स्थिर रखनेमें प्रधान महत्त्व दुग्धनिर्मित पदार्थोंकी अणु-सृष्टिका है। जिन लोगोंको दूध मिलता ही नहीं, वे भी यदि स्वस्थ और दीर्घायु पाये जायँ तो समझना चाहिये कि दूध-छाछका कोई-न-कोई रूप उन्हें अवश्य मिलता है, जिसके कारण उनके भीतर उत्तम अणु बनते रहते हैं। डा० मैकूनीकाफका ध्यान बल्गेरियाके निर्धन लोगोंपर गया था। उन्होंने देखा कि ६ करोड़ जनसंख्यावाले जर्मनी देशमें सौ वर्षकी आयु-वाले केवल १०० व्यक्ति हैं और आधे करोड़की जनसंख्यावाले बल्गेरियामें सौ वर्षवाले ५००० व्यक्ति, अर्थात् जर्मनीसे ६०० गुना हैं। इसके कारणकी खोज की गयी तो पता चला कि बल्गेरियावालोंके भोजनमें दही—योगुर्ट (Vogurt)अवश्य रहता है। उसमें जो विशेष प्रकारके अणूद्भिज (बैक्टीरिया—सूक्ष्म कण) होते हैं, उनसे अन्ननलीकी सफाई होकर ताजगी और ताकत आती है, साथ ही आरोग्यता और दीर्घायु भी प्राप्त होती है। बल्गेरिया-निवासियोंके सौभाग्यकी स्मृतिमें उन्होंने अणूद्भिजकी उस जातिका नाम 'बेसिलस बल्गेरिकूस' रक्खा।

सब दूध-दहीमें एक ही प्रकारके तथा एक ही मात्रामें उत्तम अणु नहीं होते; किसीमें एक जातिके होते हैं तो किसीमें दूसरी जातिके और किसीमें अधिक, तो किसीमें कम। इसलिये जो भी दूध-दही-छाछ मिल जाय, उसे आँख मूँदकर पी लेना और यह समझना कि बस, काम चल गया, ठीक नहीं है। उनमें रोगाणु भी प्रवेश कर सकते हैं, अतः सावधानीसे उत्तम अणुओंका अखण्डित आधिक्य स्थिर रखनेकी चेष्टा करनी चाहिये। इसके लिये दूध-दहीकी, उनके बर्तनोंकी तथा वातावरण आदिकी सफाईका पग-पगपर ध्यान रखना पड़ेगा। तभी उनमें जो स्वाद और सुगन्ध, आरोग्य तथा पोषणकी भव्यता भरी पड़ी है, वह मिल सकेगी।

इसीलिये कहते हैं कि दुग्धान्नशास्त्रमें सफाई ही ५० प्रतिशत सफलता है। दूध, दही और छाछमें अणूद्भिजक मूल्य (Bacteriological Value) की जो प्रशंसा होती है वह विशेष रूपसे 'लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया' तथा 'बेसिलस बल्गेरिकूस जातिकी है। उन्हीं अणुओंके कारण दही अच्छा जमता है, और उसमें जीवनरक्षक तत्त्व होता है। दूसरे प्रकारके अणुजीवोंके प्रवेश कर जानेसे दही अधिक खट्टा हो जाता है, पानी अलग हो जाता है, दहीके ऊपरी भागमें

फुदकियाँ पड़ जाती हैं और गन्ध, रंग तथा स्वादमें कुछ विकार उत्पन्न हो जाता है।

दूध दुहते समय उत्तम अणूद्भिजोंकी बहुलता रहती तो है, किन्तु यदि वह बिना तपाया या जमाना घंटोंतक पड़ा रहे तो उसमें हवा, धूल, प्रकाश आदिके कारण हानिकर अणूद्भिजोंकी संख्या बढ़ जाती है। अतः दूध जमाना हो या उसे जो कुछ करना हो, शीघ्र सफाई और ठीक तरीकेसे कर डालना चाहिये। धारोष्ण दूध आदर्श माना जाता है, इसीलिये 'धारोष्णममृतोपमम्' कहा गया है। धारोष्ण दूधमें जामन (Starter) डाल देनेसे बहुत अच्छा और स्वादिष्ट दही जम जाता है, किन्तु इसके लिये बर्तन, वातावरण तथा जामन साफ और बढ़िया होने चाहिये। असलमें हमें उन दो जातियोंके अणूद्भिजों (लेक्टिक ऐसिड बैक्टीरिया और बेसिलस बल्गेरिक्स) के शुद्ध तत्त्वोंको प्राप्त करना है, इसलिये इन दोनोंको अधिक-से-अधिक मौका देना चाहिये। इन दोनोंके अतिरिक्त उत्तम जीवाणुओंमें जो कुछ हैं, उनकी न तो आवश्यकता है और न उनसे कुछ लाभ ही है। दूधको १७०° डिग्री एफ्०-गर्मीतक तेजीके साथ उबाल लो। ऐसा करनेसे दूसरे व्यर्थ जीवाणु, खास करके हानिकर जीवाणु नष्ट हो जायँगे। फिर दूधको ९८° डिग्री एफ्०-तक ठंडा होने दो, तत्पश्चात् उसमें पिछले दिनका साफ-सुथरा दही जामनके रूपमें १ प्रतिशत—जाड़ेके दिनोंमें २ प्रतिशत तक—छोड़ दो।

इस प्रकार दूधको उबालकर हानिकर कीटाणुओंको नष्ट कर देनेके पश्चात् उपर्युक्त प्रकारका जामन डालनेसे उपर्युक्त दो उत्तम अणुओंकी सृष्टि अधिक मात्रामें होती है। जामन और बर्तन अच्छा होगा तो दही बढ़िया जमेगा। दूध और जामनको खूब हिलाकर एकदिल कर देना चाहिये, नहीं तो ऊपरके हिस्सेका दही जम जायगा और नीचेका नहीं जमेगा।

जो दही एक समान जमा हो, पानी न छूटा हो, जिसमें फुदकी-फुदकी न पड़ी हो, बूरून न आ गयी हो, ऊपरके भागमें जो फूल न आया हो, तथा स्वाद और सुगन्धमें खटमिट्ठा हो—वह दही पूरा लाभ करता है। उसकी छाछ तो दूध-दहीसे भी सौगुनी विशेषता (पोषणकी दृष्टिसे नहीं, वरं अणूद्भिजक मूल्य (Bacteriological Value) की दृष्टिसे) रखती है। किन्तु शास्त्रोक्त रीतिसे जमाये हुए दहीकी छाछमें यह विशेषता है, न कि किसी भी दहीकी छाछमें। जब दहीमें खट्टापन ३ प्रतिशतसे अधिक हो जाता है तब उसमें स्वास्थ्य-प्रद अणु-सृष्टि घटने लगती है; 'अधिकस्य अधिकं फलम्' वाला सिद्धान्त इसमें लागू नहीं होता।

काँचके बर्तनमें भी दही अच्छा नहीं जमता; क्योंकि प्रकाशके कारण अणूद्भिज अपना पूरा कार्य नहीं कर पाते, हाँ, यदि बर्तनके ऊपर कपड़ा लपेट दिया जाय तो जम जायगा। अपने यहाँ घी, दूध, दही, छाछ आदिके बर्तन मिट्टीके और काले रंगके होते हैं, यह आदर्श ढंग है; किन्तु त्रुटि यही है कि ये खुले रहते हैं और इनकी सफाई नहीं होती, जिससे पूरे लाभसे हमलोग वञ्चित रह जाते हैं। दही जमानेके लिये द्रव या बुकनीके रूपमें विशेष जामन तैयार किया जाता है। जाड़ेके दिनोंमें जामन अधिक और गर्मीके दिनोंमें कम डालना पड़ता है। इसका कारण यह है कि जाड़े-गर्मीकी अणु-सृष्टिकी गतिमें अन्तर पड़ जाता है। जब जोरोंसे हवा चलती रहती है तब दही अत्यन्त शीघ्र जम जाता है; इसका भी कारण वही है। यदि एक बर्तनमें दूध पूरा भरकर और दूसरेमें आधा भरकर जमावें तो दूध, जामन और ढंग एक होनेपर भी पूरे भरेवाले बर्तनमें दही अच्छा जमेगा। इसका कारण यह है कि अधूरे बर्तनके खाली भागमें वायु अणूद्भिज (Bacteria Organic) भर जाते हैं, जिनका काफी प्रभाव पड़ता है। इन सूक्ष्म बातोंके अन्तरपर भी ध्यान रखना चाहिये।

दहीसे श्रीखण्ड, श्रीखंड बड़ी, केसीन बुकनी, छाछ तथा पनीर आदि बनते हैं, किन्तु ऊपर बताये हुए आन्त्ररोगोंको लाभ पहुँचानेवाले गुण केवल दही और छाछमें ही रहते हैं। दही खटमिट्ठा होना चाहिये। अपनी प्रकृति, ऋतु, गन्ध, खट्टापन आदिको ध्यानमें रखकर दही-छाछ पीनेसे पूर्ण लाभ होता है। जो दूध नहीं पचा सकते या जिन्हें दूध भाता नहीं, उनके लिये दही बड़े कामकी वस्तु है। दहीमें थोड़ी शक्कर डालना अच्छा है। दहीका मट्ठा बनाकर तथा उसमें थोड़ा नमक मिलाकर भी पीया जाता है। संग्रहणी, आन्त्रविष-संचार (Auto-intoxication), आन्त्रक्षय आदि कई रोगोंमें तो यह अमृत-तुल्य है। पानी लगनेके रोगमें भी यह लाभप्रद है। दहीमें जितना अधिक जल डाला जायगा उतना ही उसकी छाछका पोषण-मूल्य घटेगा, तथा जितनी ही देर-तक हवा, प्रकाश, धूप और धूआँ उसमें लगेगा, उतनी ही मात्रामें उसके अनिवार्य सूक्ष्म तत्त्व (Essential Elements) घटेंगे और लाभमें भी कमी आयेगी। 'तक्रं शक्रस्य दुर्लभम्' कहकर जो छाछको इन्द्रके लिये भी दुर्लभ

बताया है, उसको आजकलकी भैंसोंकी गन्धभरी, गंदी, सिरमें चक्कर पैदा करनेवाली तथा खट्टी छाछ—नहीं समझनी चाहिये।

सभी देशोंमें दूधको जमाकर दही बनानेकी भिन्न-भिन्न रीतियाँ हैं अतः उसका स्वाद और प्रभाव भी भिन्न-भिन्न प्रकारका होता है। कई देशोंके दहीमें तो १ प्रतिशत मादक अंश भी उत्पन्न हो जाता है; किन्तु भारतवर्षके दहीमें मद्यका कुछ भी अंश नहीं रहता, वरं स्वास्थ्यप्रद तत्त्व रहते हैं। दही जमानेके विद्यामें 'जमाना' शब्दपर ध्यान देनेसे सब बातें समझमें आ जाती हैं। दूधमें हितकर अणुओंको एकत्र करना (जमाना) ही दही जमाना है। बाजारवाले तो एसिड डालकर दही जमाते हैं। उसमें स्थूल पोषणका लाभ तो मिलता है किन्तु अणूद्भिज्जक मूल्य (Bacteriological Value) उसमें नहीं रहता। मक्खन निकाले हुए दूधका भी दही जमता है, जो बाजारमें मिलता है।

खट्टे दूधका नाम दही नहीं है, दही तो वह है जिसमें उपर्युक्त दो प्रकारके उत्तम और हितकर अणुओंकी सेना रहती है। उत्तम अणुओंसे युक्त इस अम्लित (Acidified) दूधका नाम अपने यहाँ दही है। इसे रूसमें 'कूमिस' (Koumiss) (घोड़ीके दूधसे जमा हुआ दही जिसमें मादक अंश भी रहता है), काकेशश प्रदेशमें 'कैफर' (Kefir), मिश्रमें 'लाहान रायेब' (Lahan Rayeb), आर्मीनियामें 'माटसून' (Matzoon), सार्डीनियामें 'गियोड्डु' (Gioddu), बल्गेरियामें 'योगुर्ट' (Yogurt), नारवेमें 'टाटे' (Tatte), जर्मनीमें 'माया' और सीरियामें 'लेहबन' कहते हैं। परन्तु भारतवर्षका दही इन सभीकी अपेक्षा कहीं निर्दोष है, और साथ ही स्वाद तथा पोषणकी दृष्टिसे भी उत्तम है। दही और घीका निर्माण अपने पूर्वज ऋषि-मुनियोंकी एक बड़ी अद्भुत लोक-वैज्ञानिक खोज है। इसमें आजकलके वैज्ञानिक ज्ञानका समावेश करके हम अपव्ययसे बच सकते तथा आरोग्य और अर्थलाभ दोनों प्राप्त कर सकते हैं।

गाय बियानेके ढाई महीनेतकके दूधका दही भारी (दुष्पाच्य); उसके पश्चात् मध्यम श्रेणीका (स्वाभाविक), तथा छुटानेके समयका हलका होता है। बकरीका दूध बहुत हलका होनेके कारण बच्चों तथा रोगियोंके लिये अच्छा है। दूधको १००° डिग्री गर्मीतक उबालकर जमानेसे दही मृदु और (कोमल), १२०° से १८०° गर्मीतक उबालनेसे कठिन होता है। दूध बहुत गरम करनेसे उसका कुछ-न-कुछ हितकर अंश नष्ट हो जाता है, अतः बहुत गरम करनेका शौक अच्छा नहीं है। सीधी बात यह है कि यदि गाय, दुहाई, बर्तन और जामन—इन चारोंमें पूरी सफाई रहे तो दूधको गरम करनेकी भी आवश्यकता नहीं रहती। धारोष्ण दूध तो स्वयं १००° एफ्से अधिक (शायद १०२°–१०३° डिग्री एफ.तक) गरम होता है। दूधमें ऐसे उद्भिज और पाचक रस रहते हैं जो दो-तीन घंटोंतक दूधको विकृत होनेसे बचाते हैं। प्रकृतिने सब कुछ जुटा दिया है, हम यदि केवल सफाई रक्खें तो सब ठीक है। ईश्वरने मिट्टी बनायी तो मनुष्यने उसकी ईंट बना ली (God made the village, man made the town) इसी कृत्रिमतापर पहुँचनेके लिये हमें अनेकों झंझट करने पड़ते हैं, इसपर भी प्रकृति आरोग्य प्रदान करती है। हम स्वच्छता न रखकर रोगोंको स्वयं बुलाते हैं। दुग्ध-विज्ञानमें इस कृत्रिमतासे बचनेके लिये विशेष सावधानी और स्वच्छताकी आवश्यकता है।

दधि पोषण, स्वाद, सुपाचन, आरोग्यता तथा दीर्घायुके साथ बल भी प्रदान करता है। शुभ शकुनमें दही खिलाया जाता है। यात्रा-गमनके समय दूध नहीं बल्कि दही खाया जाता है। मृत्युके समय भी मुखमें दही डाला जाता है, कदाचित् प्राणी जी जाय। यह अन्तिम उपाय है। (डा० जा०)

बड़े-से-बड़ा पाप

'किसी भी शास्त्रमें पशुओंका मारना नहीं लिखा है। हर-एक बुढ़ापा आनेके बाद या किसी बीमारीसे अपने-आप मर जाता है, उसको वध करनेकी जरूरत नहीं पड़ती। जब कि बड़े-बड़े वैज्ञानिक कीड़े-मकोड़ोंको जन्म नहीं दे सकते, तब उन्हें मार डालनेका उनका दावा कैसा? पहले राक्षस आदमियोंको खाते थे और अब आदमी पशुओंको खाते हैं, जो बड़े-से-बड़ा पाप है, जो होना नहीं चाहिये। मैं समस्त हिंदुओं, मुसलमानों और पारसियोंसे प्रार्थना करता हूँ कि वे ऐसे निरीह प्राणियोंका मारा जाना रोकें और विशेष करके गौओंकी रक्षा तो करनी ही चाहिये।'—मालवीयजीका बम्बईमें दिया हुआ भाषण

सभी प्रकारके दुग्ध और विशेषकर गो-दुग्धके महत्त्वपर कुछ प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थोंकी सम्मति

(लेखक—श्रीयुत पी०के० गोडे०, एम्० ए०)

'क्षीरात्परं नास्ति च जीवनीयम्'

दूधसे बढ़कर कोई जीवन बढ़ानेवाला आहार नहीं है।

(कश्यप-संहिता)

'गव्यं दशगुणं पयः' (गोदुग्धमें दस गुण हैं)।

(चरक-संहिता)

वैदिक आर्योंके लिये बैल या गौएँ (गावः) ही सम्पत्तिका प्रधान साधन थीं। इसीलिये ऋग्वेदसे लेकर सम्पूर्ण परवर्ती साहित्यमें गो-विषयक चर्चा मिलती है। दूधका सद्यः पान किया जाता था, अथवा घी या दहीके रूपमें व्यवहार किया जाता था, या उसे सोमके साथ मिलाकर पीया जाता था या चावल आदिके साथ पका लिया जाता था। गायोंको दिनभरमें तीन बार दुहते थे—सूर्योदयके समय (प्रातर्दोह), दोपहरके पहले (सङ्गव) और सायंकालमें (सायंदोह)*। Vedic Index में गायके विषयमें दी हुई इस प्रकारकी और इससे मिलती-जुलती बातोंसे गो-दुग्ध और अन्य प्रकारके दुग्धोंके औषधीय और आहारोपयोगी गुणोंका वैसा परिचय नहीं प्राप्त होता, जैसा कि हम चरकसंहिता (सूत्रस्थान, अध्याय १, श्लोक १०५, ११३) में पाते हैं। इस प्राचीनतम चिकित्सा-ग्रन्थके दुग्ध-प्रकरणमें आरम्भके ही श्लोक इस प्रकार हैं—

अतः क्षीराणि वक्ष्यन्ते कर्म चैषां गुणाश्च ये ॥१०५॥
अविक्षीरमजाक्षीरं गोक्षीरं माहिषं च यत्।
उष्ट्रीणामथ नागीनां बडवायाः स्त्रियास्तथा ॥१०६॥

यहाँ आठ प्रकारके दुग्धोंका उल्लेख मिलता है।† अन्नपान-विधिके प्रकरणमें (सूत्रस्थान अध्याय २७) चरक कहते हैं—'क्षीरं जीवयति' अर्थात् दूध जीवनदाता है। इस अध्यायके श्लोक २१७-२२४ जो गोरसके विषयमें हैं। और जिनमें गो-दुग्धके गुणोंका वर्णन है, इस प्रकार हैं—

स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छिलम्।
गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः ॥२१७॥

दूधमें दस गुण होते हैं—वह स्वादिष्ट, ठंडा, कोमल चिकना, गाढ़ा, सौम्य (सात्त्विक), लसदार, भारी, बाहरी प्रभावको देरीसे ग्रहण करनेवाला और चित्तको प्रसन्न करनेवाला होता है।

नाना प्रकारके दुग्ध और विशेष करके गोदुग्धके विषयमें चरककी ये तथा अन्य उक्तियाँ यह स्पष्ट रूपसे दिखला देती हैं कि भारतीय आयुर्वेदविज्ञानके प्रारम्भिककालमें भी औषध एवं खाद्यकी दृष्टिसे दुग्धकी महत्ता पहचान ली गयी थी। परन्तु इस विषयपर सर्वोत्तम विवेचन मिलता है, 'कश्यपसंहिता'में जिसका सम्पादन नेपालके राजगुरु पण्डित हेमराजने सन् १९३८ में किया था (निर्णयसागर प्रेस, बम्बई)। यह ग्रन्थ भी बहुत पुराना है और पण्डित हेमराज तो इसे बहुत ही पुरातन बताते हैं। इस ग्रन्थके कल्पस्थानमें 'भोजनकल्प' (पृ० १६८–१७६) नामका एक अध्याय है, जिसमें खाद्य-विज्ञानका वर्णन है। इस कल्पमें दुग्धाहारकी महत्तापर निम्नलिखित श्लोक मिलते हैं—

क्षीरं हि सद्यो बलमादधाति
दृढीकरोत्याशु तथेन्द्रियाणि ॥ ८६ ॥
मेधायुरारोग्यसुखानि धत्ते
रसायनं चापि वदन्ति मुख्यम्।
पुष्टिर्दृढत्वं लभते च गर्भो
वन्ध्या च षण्ढश्च जरश्च सूते ॥ ८७ ॥

सर्वं दुग्धमभिष्यन्दि गव्यं तेभ्यो विशिष्यते।
वाजीभवति दुग्धेन बलं चाप्युपजायते ॥
सञ्जीवनं सम्भवति सर्वं क्षीरमुदाहृतम् ॥

सभी प्रकारके दूध रेचक होते हैं, किन्तु गो-दुग्धका गुण इनसे भिन्न होता है। दूधमें वाजीकरण गुण हैं, वह बलवर्द्धक भी है। ऊपर कहे हुए सभी प्रकारके दूध संजीवनदायक होते हैं।

---

* देखिये कीथ और मैक्डानेल कृत Vedic Index पृ० २३१-२३३ का 'गो' शब्द।

† 'भेलसंहिता' (सम्पादक आशुतोष मुकर्जी, कलकत्ता, १९२१। पृ० २३६ (कल्पस्थान, अध्याय ८) में केवल (१) गोक्षीर, (२) उष्ट्रीक्षीर, (३) अजाक्षीर, (४) आविकाक्षीर और (५) माहिषक्षीरका उल्लेख है। पृष्ठ १७९ पर अजाक्षीरके दस गुण बताये गये हैं। पृष्ठ ४०. (भोजन-विधि) पर गो-दुग्धके विषयमें ऐसा उक्ति मिलती है—

पायुं पयः शोधयतेऽनुलोमं
करोति वातं लघु तन्नराणाम् ।
तस्माच्च सर्वेषु रसायनेषु
रोगस्य चान्ते प्रवदन्ति दुग्धम् ॥ ८८ ॥
क्षीरं सात्म्यं क्षीरमाहुः पवित्रं
क्षीरं मङ्गल्यं क्षीरमायुष्यमुक्तम् ।
क्षीरं वर्ण्यं क्षीरमाहुश्च केश्यं
क्षीरं सन्धानं क्षीरमाहुर्वयस्यम् ॥ ८९ ॥
क्षीरं सर्वेषां देहिनां चानुशेते
क्षीरं पिबन्तं च न रोग एति ।
क्षीरात्परं नान्यदिहास्ति वृष्यं
क्षीरात्परं नास्ति च जीवनीयम् ॥ ९० ॥
शैत्यात् पयो वर्धयतेऽनिलं प्राक्
पित्तात्मनस्तेन भिनत्ति वर्चः ।
ईषच्च शूलं कुरुते गुरुत्वात्
स्नेहाद्विपाके शमयत्युभे द्वे ॥ ९१ ॥
माधुर्यतो वर्धयते शरीरं
प्रसादयत्याशु तथेन्द्रियाणि ।
स्थैर्यं पयः सान्द्रतया करोति
पैच्छिल्यतः शोधयतेऽन्तराणि ॥ ९२ ॥
विष्टभ्यते चापि कषायभावा-
द्वातात्मनस्तेन करोति शूलम् ।
स्नेहाच्च माधुर्यगुणाच्च शूलं
पयो नियच्छत्यनुजीर्यमाणम् ॥ ९३ ॥
स्नेहाद् गुरुत्वात् सकषायशैत्या-
द्विस्रंस्य सद्यो बलमादधाति ।
सस्नेहशैत्यान्मधुरान्वयत्वात्
कफात्मनां वर्धयते कफं च ॥ ९४ ॥
एतद्धितं सात्म्यकषायभावात्
पाकस्य तुष्टिं कुरुते न दोषम् ।
गौरं च वर्णं कुरुते सितत्वात्
स्नेहं च सस्नेहतया करोति ॥ ९५ ॥

ग्रन्थकार आगे फिर कहते हैं—

गावः प्रतिष्ठाः सचराचरस्य ॥ ९९ ॥
तस्माच्चिरव्याधिनिपीडितानां
मूर्च्छांगतानां पततां नराणाम् ।
परायणं क्षीरमुशन्ति वैद्या
निद्रासुखायुर्बलकृत् पयो हि ॥ १०० ॥

इसीलिये जो किसी पुराने रोगसे पीड़ित हों, अथवा जिन्हें मूर्च्छा हो गयी हो, अथवा जिनकी दशा गिरती जा रही हो—ऐसे लोगोंके लिये वैद्यगण दूधको सर्वश्रेष्ठ औषध स्वीकार करते हैं, क्योंकि दूध नींद ले आनेवाला, सुखकारक, आयुवर्द्धक और बलप्रद होता है।

उपर्युक्त श्लोकोंमें दूधके पोषक और रोगनाशक दोनों प्रकारके गुणोंके गीत हमारे पूर्वज २००० वर्ष पहले गा चुके हैं। ऊपरके उद्धरणोंमें नवासीवाँ श्लोक 'क्षीरं सात्म्यं क्षीरमाहुः पवित्रं क्षीरं मङ्गल्यं क्षीरमायुष्यमुक्तम् । क्षीरं वर्ण्यं क्षीरमाहुश्च केश्यं क्षीरं सन्धानं क्षीरमाहुर्वयस्यम् ॥' (दूध आत्माको बल देनेवाला है, यह पवित्र कहा जाता है, दूध मङ्गल करनेवाला है और आयुवर्द्धक बताया गया है। दूध शरीरकी कान्तिको बढ़ानेवाला है, बालोंको बढ़ानेवाला कहा गया है। दूध हड्डियोंको जोड़नेवाला है और यौवन प्रदान करनेवाला बताया जाता है।) भारतवर्षकी किसी गो-रक्षा-समितिका आदर्श वाक्य बन सकता है। ये उक्तियाँ भी कम महत्त्वकी नहीं हैं—'गावः प्रतिष्ठाः सचराचरस्य' (गौएँ ही चराचर विश्वका आधार हैं) और 'क्षीरात्परं नास्ति च जीवनीयम् ।' (दूधसे बढ़कर जीवनदायक पदार्थ और कोई नहीं है)। [इसकी चरकके इस वाक्यसे तुलना कीजिये—'क्षीरं जीवयति' दूध ही जिलाता है] इससे यह स्पष्ट है कि हमारे पूर्वज दूधको केवल सर्वोत्तम रसायनके ही रूपमें नहीं मानते थे, वरं उनकी दृष्टिमें वह साक्षात् जीवनदाता (जीवनीयम्) ही था। दूधके गुणोंपर ये प्राचीन आयुर्वेदज्ञोंके विचार, जैसा कि आधुनिक वैज्ञानिकोंने कृषिशास्त्र, अर्थशास्त्र और औषधशास्त्र-सम्बन्धी खोजोंसे सिद्ध कर दिया है—आज भी उतने ही सत्य हैं, जितने कि उस समय थे। अतः यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं, यदि प्राचीन एवं वैदिक संस्कृतसाहित्यमें गायको श्रद्धाकी दृष्टिसे देखा गया हो, जिसने अन्ततः गोपूजाका रूप धारण कर लिया। पूज्यताकी भावनाने बहुत-सी मानवसंस्थाओंपर परित्राणात्मक और सर्जनात्मक प्रभाव डाला है। २००० वर्षों या उससे भी बहुत अधिक समयसे हिंदू-संस्कृतिमें घुसी हुई गौके सम्बन्धमें पूज्यताकी भावनाने हमारी गो-जाति और कृषिको अबतक गोमांसभक्षियोंके पेटमें जानेसे बचा लिया है, यद्यपि आजकल हमें इस ओरसे विशेष चिन्ता हो गयी है और हम अहिंदू जातियोंके आमिषाहारकी समस्याको हल करनेके लिये देशमें जो एक

व्यवस्थित ढंगसे पशु-हत्या हो रही है उससे अपनी गायोंको बचानेका उपाय सोचने लगे हैं।

दूधकी महत्ताके विषयमें 'काश्यपसंहिता' (भोजन-कल्प) से जो उद्धरण ऊपर दिये गये हैं, उनके अतिरिक्त इस अतिप्राचीन ग्रन्थमें दुग्धके गुणोंके ऊपर एक विशेष अध्याय है, (क्षीरगुणविशेषीय नामक २२वाँ अध्याय। पृष्ठ ३२७-३२८) अभाग्यवश इस अध्यायके पिछले अंशका कुछ भाग खो गया है, क्योंकि सम्पादकने ताड़पत्रपर लिखी हुई काश्यपसंहिताकी जिस मूल प्रतिका उपयोग किया था, उसका २६० वाँ पत्रा गायब था। फिर भी इसका जितना भी अंश कालके विध्वंससे बच गया है, वही दूधकी उस महत्ताको प्रकट कर देगा, जिसे हमारे प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थकारों और चिकित्सकोंने बहुत पहले पहचान लिया था। मैं इस अंशको नीचे उद्धृत करता हूँ, जिससे कि भारतवर्षमें सब ओर सारे गो-प्रेमी और गो-पूजकोंको इसका ज्ञान हो जाय। (पृष्ठ ३२७—)

अथातः क्षीरगुणविशेषीयं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥
इति ह स्माह भगवान् कश्यपः ॥ २ ॥
गोर्महिष्या अजायाश्च नार्या उष्ट्र्या अवेः स्त्रियाः।
तुरङ्ग्या इति चोक्तानि पूर्वमेव पयांसि तु ॥ ३ ॥*
भूयश्च गुणवैशेष्यात् क्षीराण्यष्टौ निबोध मे।
प्रजापतेः पुरेच्छातः प्रजानां प्राणधारणम् ॥ ४ ॥
पञ्चभूतगुणं चापि भूरुहां जन्म कथ्यते।
वनस्पतीनां वृक्षाणां वानस्पत्यगणस्य च ॥ ५ ॥
वीरुधामोषधीनां च गुल्मानामपि जीवक।
विविधानां तृणानां च सस्यानां चैव देहिनाम् ॥ ६ ॥
एवमादिगणो यस्तु भूमेः सार उदाहृतः।
सोमस्य वायुतेजोऽपां बुद्धेश्चेति प्रजापतेः॥
तदाहारगुणोत्पन्नं गवादीनामतः परम्।
यथा सर्वौषधीसारं क्षीरोदे मथितं पुरा॥
सम्भूतममृतं दिव्यममरा येन देवताः।
तथा सर्वौषधीसारं गवादीनां तु कुक्षिषु॥
क्षीरमुत्पाद्यते तस्मात् कारणादमृतोपमम्।
जरायुजानां भूतानां विशेषेण तु जीवनम्॥
क्षीरं सात्म्यं हि बालानां क्षीरं जीवनमुच्यते।
क्षीरं पुष्टिकरं वृद्धिकरं बलविवर्द्धनम्॥
क्षीरमोजस्करं पुंसां क्षीरं प्राणगुणावहम्।
गर्भाधानकरं क्षीरं वन्ध्यानामपि योषिताम्॥
क्षीणानां च कृशानां च शोकिनां राजयक्ष्मिणाम्।
व्यायामश्रमनित्यानां स्त्रीनित्यानां च देहिनाम्॥
संक्षीणरेतसां चापि गर्भस्रावे च दारुणे।
रक्तपित्तामयेऽर्शस्सु मदक्षीणे ज्वरे तथा॥
गर्भशोषे च वातानां क्षीरं परममुच्यते।
सामान्यादिह दुग्धानां पुरा चोक्ता गुणादयः॥
पृथक्त्वेन च वक्ष्यामि गवादीनां विशेषणम्।
तृणगुल्मौषधीनां च अग्राग्रं पय एव हि॥
खादन्ति मधुरप्रायं लवणं च विशेषतः
तत्सारगुणवैशेष्याद्गवां क्षीरं प्रशस्यते॥
मधुरो हि रसः श्रेष्ठो रसानां परिकीर्तितः।
तन्नित्यं वा गवां क्षीरं मधुरं बृंहणं मतम्॥
औषधाग्रातिभक्षत्वाद्विरेचयति तत्पयः।
एतस्मात्कारणादुक्तं गवां क्षीरं रसायनम्॥
एष वैशेषिकगुणो गोक्षीरस्य प्रकीर्त्तितः।

फिर भैंसके दूधके गुणोंका वर्णन इस प्रकार किया गया है—

कृमिकीटपतङ्गैश्च सर्पैरपि तृणाश्रितैः॥
सह नानातृणं हीनं महिष्यो भक्षयन्ति हि।
अवगाहन्ति तोयानि गर्भाणि च विशेषतः॥
एतस्मात्कारणात्तासां क्षीरं कषायशीतलम्।
शीतत्वाद्दुर्जरं स्निग्धं (गुरु) दाहनिबर्हणम्॥
गवां क्षीराचाल्प (गु) णं महिषीणां पयो मतम्।

* हम ऊपर देख चुके हैं कि चरकने अवी (भेड़), अजा (बकरी), गो (गाय), महिषी (भैंस), उष्ट्री (ऊँटनी), नागी (हथिनी), वडवा (घोड़ी) और स्त्री (मानवी) के दूधका उल्लेख किया है। 'काश्यपसंहिता' के उपर्युक्त श्लोकमें गो, महिषी, अजा, नारी, उष्ट्री, अवि, स्त्री और तुरंगीके दूधका उल्लेख किया गया है। चूँकि नारी और स्त्रीका अर्थ एक ही है, अतः मेरे विचारसे श्लोकमें 'नार्याः' को 'नाग्याः' पढ़ना युक्तियुक्त है। तुरङ्गीके स्थानमें चरककी सूचीमें 'वडवा' शब्द आया है। यह अष्टधा वर्गीकरण चरक और काश्यपसंहिता दोनोंमें समान है। इसलिये हम इसको यथार्थ और ग्रन्थोंके रचनाकालका ही मान सकते है।

गायके प्रति हिंदुओंकी श्रद्धाके उद्भवका प्रश्न हल नहीं हो पाया है। भारतवर्षमें गायके प्रति आदरभाव ऐतिहासिक कालमें ही प्रारम्भ हुआ। [Encyclopaedia of Religion and Ethcis (१९११) के पृष्ठ २२४-२२६ में प्रो० जैकोबीका Hindu Cow शीर्षक निबन्ध देखिये]

बकरीके दूधके गुण—

अजानामल्पकायत्वात् कटुतिक्तानिबर्हणात् ॥
अल्पत्वाच्च बलित्वाच्च लघुदोषहरं पयः ।
अल्पत्वात्तद्धनं क्षीरं घनत्वादपि बृंहणम् ॥
शीतं संग्राहि मधुरं बल्यं वातानुलोमनम् ।
महाशयतयाऽश्याम (न) मधुरप्रायसेवनात् ॥
बहुत्वाच्च घनत्वाच्च बल्यं पुष्टिकरं पयः ।
गुरु वृष्यं च निर्दिष्टं मधुरं च विशेषतः ॥

ऊँटनीका दूध—

अल्पाहारतयोष्ट्रीणां प्रियं चालवणं··· ॥

आठ प्रकारके दूधके गुणोंका उपर्युक्त विवेचन, जिसमें औषधीय दृष्टिसे गो-दुग्धको सर्वोत्तम ठहराया गया है, बहुत ज्ञानप्रद है । इसमें प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थकारोंके चिकित्सा-सम्बन्धी अनुभवके आधारपर स्थिर किये हुए विचारोंका बड़ा विशद वर्णन है ।

चरक-संहिता और काश्यप-संहितासे विदा लेकर अब हम सुश्रुत-संहिताकी ओर दृष्टि डालें । यह चरकसंहितासे पीछेका अनुमान किया जाता है । सुश्रुतसंहिता (सूत्रस्थान) के अध्याय ४५ (४७-१०७) में दूध और उससे बने पदार्थों जैसे दही, मट्ठा, मक्खन और घीका विस्तृत विवेचन है । सुश्रुत इस विषयका विवेचन दूधके अष्टधा वर्गीकरणसे प्रारम्भ करते हैं । वह इस प्रकार है—

(पृ० ३६२ फड़के और साठेद्वारा सम्पादित सुश्रुत, भाग १, १९२१, बम्बई)

गव्यमाजं तथा चौष्ट्रमाविकं माहिषं च यत् ।
अश्वायाश्चैव नार्याश्च करेणूनां च यत्पयः ॥ ४७ ॥

जो दूध गाय, बकरी, ऊँटनी, भेड़, भैंस, घोड़ी, स्त्री तथा हथिनीका होता है ।

गायके दूधका वर्णन करते हुए सुश्रुत कहते हैं—

गोक्षीरमनभिष्यन्दि स्निग्धं गुरु रसायनम् ।
रक्तपित्तहरं शीतं मधुरं रसपाकयोः ॥ ५० ॥
जीवनीयं तथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतम् ॥

गायका दूध दस्तको बाँधनेवाला, स्निग्ध (चिकना), भारी, औषधगुण-सम्पन्न, रक्त-पित्तका शमन करनेवाला, शीतल, स्वादु और परिणाममें मधुर, जीवन बढ़ानेवाला और वात-पित्तके विकारोंको नष्ट करनेवाला कहा गया है ।

बकरीके दूधके गुण

गव्यतुल्यगुणं त्वाजं विशेषाच्छोषिणां हितम् ॥ ५१ ॥
दीपनं लघु संग्राहि श्वासकासास्रपित्तनुत् ।
अजानामल्पकायत्वात् कटुतिक्तनिषेवणात् ॥५२॥*
नात्यम्बुपानाद् व्यायामात्सर्वव्याधिहरं पयः ।

बकरीका दूध गुणोंमें गो-दुग्धके समान है । क्षय रोगियोंके लिये विशेषरूपसे हितकारी है । अग्निको दीप्त करनेवाला, हल्का, दस्तको बाँधनेवाला तथा दमा, खाँसी और रक्त-पित्तका नाश करनेवाला है । बकरियोंका शरीर छोटा होता है, वे कड़वा-तीता खाती हैं, जल कम पीती हैं और चलती-फिरती बहुत हैं, इससे उनका दूध सब व्याधियों-को हरनेवाला होता है ।

ऊपरके उद्धरणमें बकरीके दूधमें भी गो-दुग्धके समान ही गुण बताये गये हैं (गव्यतुल्यगुणं त्वाजम्) ।

सुश्रुतके इस कथनका काश्यप-संहिताके उस वाक्यसे विरोध आता है जिसमें गो-दुग्धको बकरीके दूधसे श्रेष्ठ बताया गया है (गवां क्षीरं प्रशस्यते) । श्लोक ५३ से ६४ तक अन्य छः प्रकारके दुग्धोंके गुणोंका वर्णन है ।

क्षीरवर्गमें बताये हुए आठ प्रकारके दुग्धसे बने दहीके गुणोंका वर्णन दधिवर्ग (श्लोक ६५-८३) में दिया है । सुश्रुतके अनुसार गोदुग्धके दहीके गुण ये हैं—

स्निग्धं विपाके मधुरं दीपनं बलवर्धनम् ॥ ६७ ॥
वातापहं पवित्रं च दधि गव्यं रुचिप्रदम् ।

गोदुग्धका दही स्निग्ध, परिणाममें मधुर, पाचनशक्ति बढ़ानेवाला, बलवर्द्धक, वातको हरनेवाला, पवित्र और रुचि-कारक है ।

तक्रवर्ग (श्लोक ८४-९१) में मट्ठेके गुणोंका वर्णन है । श्लोक ९२ से ९५ तक नवनीत वर्ग है, जिसमें मक्खन-का वर्णन है । निम्नलिखित श्लोकमें दधि इत्यादिके रूपमें गोदुग्धकी श्रेष्ठतापर सुश्रुतने भी जोर दिया है ।

विकल्प एष दध्यादिः श्रेष्ठो गव्योऽभिवर्णितः ।
विकल्पानवशिष्टांस्तु क्षीरवीर्यात्समादिशेत् ॥ ९५ ॥

दही आदि दुग्धमय पदार्थ गोदुग्धके ही श्रेष्ठ माने गये हैं । अन्य दुग्धोंके रूपान्तर दुग्धके गुणोंके अनुसार ही समझने चाहिये ।

---

* 'काश्यप-संहिता' से मिलान कीजिये—
अजानामल्पकायत्वात् कटुतिक्तानिबर्हणात् ।



अमृतपानसे ब्रह्माजीके मुखसे फेन निकला, उससे गौएँ उत्पन्न हुईं और गो-दुग्धसे क्षीर-समुद्र बना ।



श्रीशङ्करजीने अपने भक्त वाणासुरको समस्त सम्पत्तियोंकी शिरोमणि बारह गौएँ दीं ।

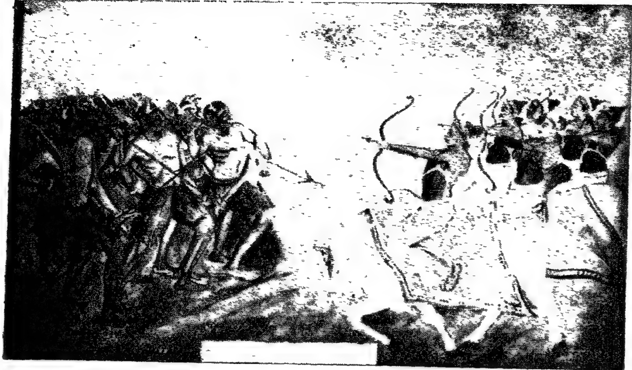


आदम और हौआको स्वर्गसे निकाले जाने-पर एक जोड़ी बैल और एक मुट्ठी गेहूँ मिले ।



प्राचीन मिश्र-निवासियोंद्वारा सुनहरे बछड़ेकी पूजा ।

[दरभंगा गोशाला सोसायटी



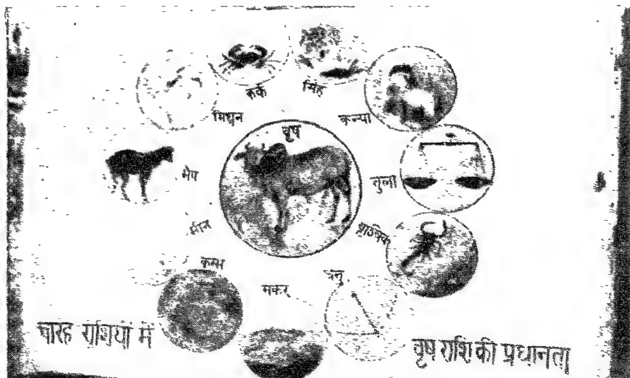
महाराज इक्ष्वाकुके पौत्रोंने वृषभके ककुत्स्थपर चढ़कर युद्ध किया, इससे श्रीरामजीके कुलका नाम काकुत्स्थ पड़ा।



विराट-नगरमें गोरक्षणार्थ कौरवोंके साथ पाण्डवोंका युद्ध।



भगवान् दत्तात्रेय और उनकी प्यारी गाय।



वृषराशिकी प्रधानता

[दरभंगा गोशाला सोसायटी

घृतवर्ग (श्लोक ९६-१०७) में आठों प्रकारके दूधसे बने घीका वर्णन है। गोघृतके गुण इस प्रकार हैं—

विपाके मधुरं शीतं वातपित्तविषापहम्।
चक्षुष्यमग्र्यं बल्यं च गव्यं सर्पिर्गुणोत्तरम्॥ ९७॥

गायका घी परिणाममें मधुर, शीतल, वात, पित्त एवं विषको हरनेवाला, नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेवाला, अग्निको दीप्त करनेवाला, बलवर्द्धक और गुणोंमें श्रेष्ठ है।

इस लेखमें उद्धृत मूल श्लोकोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि गोदुग्ध एवं उससे निर्मित दही, मक्खन, मट्ठा और घी-जैसी वस्तुओंकी श्रेष्ठता इन सर्वप्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें २००० वर्ष पहले स्वीकार कर ली गयी थी। यह आवश्यक है कि दुग्धके अष्टधा वर्गीकरणके विषयमें चरक, सुश्रुत और कश्यपसे पहलेके वर्णनोंका भी खोजकर पता लगाया जाय।

स्वास्थ्यरक्षाका सरल और सर्वमान्य उपाय

(लेखक—सम्पादक महोदय 'गोरक्षण')

'Milk is rich in all the known vitamins. Milk in fact is the only single article of food, that fairly represents a complete diet. Milk is unexcelled for growing children. It has no equal for the promotion of growth as nuitrition.'

Prof. M. J. Rosenau.
Harvard medical school.

'दूध ही एकमात्र पदार्थ है, जो सब पौष्टिक द्रव्योंसे परिपूर्ण है और जिसे हम पूर्ण भोजन कह सकते हैं।...... बढ़ते हुए बच्चोंके लिये उत्तमतामें इससे बढ़कर और कोई चीज नहीं। शरीरको ठीक तरहसे बढ़ाने और पुष्ट करनेमें दूधकी बराबरी करनेवाला कोई दूसरा पदार्थ नहीं है।'

—प्रो० एम्० जे० रोसेनो
(हारवर्ड मेडिकल स्कूल)

'शतायुर्वै पुरुषः' (पुरुषके शतायु होने) की घोषणा करनेवाले भारतवर्षमें लोगोंकी औसत आयु आज २२-२३ वर्ष रह गयी है। इंग्लैंड, अमेरिका आदि देशोंकी औसत आयु ५०—५५ के आगे बढ़ रही है। भारतवर्ष इस समय रोगोंका केन्द्र बन रहा है। एक सालसे कम उम्रवाले बच्चोंकी मृत्युसंख्या कहीं १००० में ५०० तो कहीं ७०० तक बढ़ गयी है !! स्कूल-कालेजोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंमें मुश्किलसे ५ फी सदी पूर्ण स्वस्थ मिलेंगे। राष्ट्रके आधार-स्तम्भस्वरूप भावी प्रजाके इस प्रकार नानाविध रोगोंसे ग्रसित होनेपर राष्ट्रकी उन्नतिका आनन्द कौन लेगा ? देशोन्नतिके सब काम किसके लिये किये जायँ और कौन करे ? इस दुःस्थितिका शीघ्र प्रतीकार होना आवश्यक है।

विभिन्न संस्कृतियोंके संसर्गसे हमलोगोंके आहार-विहारमें जो परिवर्त्तन हो रहा है वह एक हदतक अनिवार्य है; पर इस विषयमें जितनी सावधानी रखनी चाहिये, उतनी हमलोग नहीं रखते, यही दुर्भाग्यकी बात है। अन्यदेशीय लोगोंके गुणोंकी अपेक्षा दोषोंका ही अनुकरण बड़ी फुर्तीसे किया जा रहा है। जिस समय यूरोप और अमेरिकाके शास्त्रज्ञ और शोधक अपने देशवासियोंको मद्य-मांससे हटाकर शाकाहार और गो-दुग्धसेवनकी ओर ले जानेका पूरा प्रयत्न कर रहे हैं, उस समय अनेक हिंदू-नेता मांसभक्षणका पक्ष कर रहे हैं और उसके लिये शास्त्रवचन ढूँढ़ रहे हैं। उधर उन देशोंमें लोगोंके सामने यह प्रश्न है कि अपने यहाँ इतना जो दूध होता है, उसका क्या किया जाय, और हमारे यहाँ यह नौबत आ गयी है कि कुछ दिनोंमें दूध कैसा होता है यह बतलानेके लिये बच्चोंको चूनेका पानी दिखाकर बतलाना होगा कि ऐसा होता है ! हाँ, भैंस और गधीके दूधका प्रचार आजकल कुछ जोरोंसे हो रहा है। चाय और काफी अपना पूरा प्रताप दिखा रही हैं !

गोदुग्धके एक पाश्चात्त्य विशेषज्ञ मिस्टर राल्फ० ए० हेने अपने देशवालोंको उपदेश दे रहे हैं—

'If you want your children to grow into big strong men give them milk and butter three times a day.'

'यदि आप अपनी सन्तानोंको शक्तिशाली और बलवान् बनाना चाहते हैं तो उन्हें गायका दूध और मक्खन रोज तीन बार खानेको दीजिये।'

हमारे यहाँ तीन बारकी कौन कहे, पढ़े-लिखे परिवारोंमें तो; खास करके, दक्षिण और गुजरातमें पचीस बार बच्चोंको चाय पिलायी जाती है और ९०–९५ फी सदी बच्चे तो गर्भावस्थासे ही चायके आदी हो जाते हैं। किसी भी व्यायाम-संस्था, आरोग्य-मन्दिर या शिशु-सप्ताहका उद्घाटन-समारोह चाय-पानके बिना सफल नहीं होता!

जिनके दुर्गुणोंका अनुकरण कर हम दिनोंदिन रसातलकी ओर बढ़ रहे हैं, उन्होंने अपनी आयुवृद्धिके लिये किन-किन उपायोंका अवलम्बन किया है; इसका भी हमें थोड़ा-बहुत ध्यान रखना चाहिये। इससे भविष्यमें हमें क्या करना चाहिये, यह विदित होगा। 'सद्यः शुक्रकरं पयः', 'आयुर्वै घृतम्' (दूध पीते ही तुरंत शुक्र बन जाता है); (घृत ही आयु है) इत्यादि वचनोंसे सहज ही ज्ञात हो जाता है कि भारतवासियोंको बहुत पहलेसे ही दूध-घीकी महिमाका पता था। आर्योंके दीर्घायु होनेका रहस्य भी यही दूध-घृत-सेवन ही था। छान्दोग्य-उपनिषद्में शुद्ध और ताजे गो-घृतको 'तेज' कहा गया है। परन्तु इस प्राचीन वचनको आधुनिक विज्ञानवादके चक्करमें पड़े हुए युवक विशेष महत्त्व नहीं देते। ऐसे युवकोंके लिये इस विज्ञान-युगके प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, शास्त्रज्ञों और उच्चतम अन्वेषकोंके कुछ मत आगे दिये जाते हैं—

'जो व्यक्ति अपने बाल-बच्चोंको दूध मलाई और मक्खन-जैसे आरोग्यवर्धक पदार्थ खानेको नहीं देता; उसे जेलमें बंद रखनेकी जरूरत है।' —मि० राल्फ० ए० हेने

'प्रत्येक बच्चेको प्रतिदिन सवा सेर दूध देना चाहिये।'

—प्रो० रोसेनो

'शताब्दियोंसे कथाओं और उपन्यासोंमें वर्णित यौवनके उद्गमकी खोज मनुष्य कर रहा है; पर उस आदर्श यौवनका निकटतम सान्निध्य रखनेवाला जो पदार्थ अबतक मिल सका है वह गौका दुग्ध-स्तन है।'

—फ्रैंक० ओ० लौडेन

'दूध एक अमूल्य खाद्य पदार्थ है और सभी सम्भव उपायोंसे उसे अधिक-से-अधिक पीनेका यत्न करना चाहिये।'

—बर्नर० मैकफेडन

'राष्ट्रके स्वास्थ्यमें यदि सुधार करना है तो दुग्धपानका और दुग्धसे बनी चीजोंके अधिक-से-अधिक व्यवहारका पर्याप्त प्रचार करना चाहिये।'—डा० एच० डी० के०, डाइरेक्टर आफ 'नेशनल इन्स्टीट्यूट फार रिसर्च इन डेयरिंग' (इंग्लैंड)।

'प्रत्येक बालक-बालिकाको कम-से-कम डेढ़ पाव दूध रोज दिया जाना चाहिये और ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि सोलह वर्षसे कम उम्रवाले प्रत्येक बालक-बालिकाको यह पूर्ण मात्रा प्रतिदिन मिला करे। इसका अधिकांश भाग प्रातःकालके जलपानके साथ ही सेवन किया जाना चाहिये।'

—मिनिस्ट्री आफ हेल्थ एडवाइजरी कमिटी, इंग्लैंड।

'जिनको काफी मात्रामें पौष्टिक पदार्थ खानेको नहीं मिलते ऐसे विद्यार्थियोंको प्रतिदिन गायका दूध देनेसे उनकी स्वास्थ्योन्नति और शारीरिक वृद्धि ठीक प्रकारसे होती है।'

—डब्लू० एम० फ्रेजर, एम०-बी०, सी-एच०बी०, एम०एस्-सी०, डी०पी-एच०, बार-एट-लॉ, असिस्टेंट मेडिकल आफिसर आफ हेल्थ, ब्लैकबर्न।

'विविध प्रकारसे अनुसन्धान और प्रयोग कर यह देखा गया है कि दुग्धाहारसे मनुष्यकी शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ काफी पुष्ट होती हैं, वजन बढ़ता है और शरीर बलवान् होता है।'—जी० ऑडेन०, एम०, ए०, एम० डी०, डी०पी-एच० एफ०आर०सी०पी०, स्कूल मेडिकल आफिसर फार दि सिटी आफ बरमिंघम।

'यदि बच्चोंको काफी मात्रामें दूध दिया जाय तो उनके वजन और ऊँचाईमें पर्याप्त वृद्धि होती है तथा पर्याप्त शारीरिक सुधार होता है। शीतकालमें उनके हाथ-पैर अधिक फटते नहीं।'—एच० सी० कैरी मन, ओ०बी०ई०, एम०डी०, मेडिकल रिसर्च कौंसिल, इंग्लैंड।

इन्हीं डा० कैरी मनने अलग-अलग लड़कोंको अलग-अलग पदार्थ खिलाकर यह देखा कि सिर्फ दूध पीनेवाले लड़कोंमें एक भी लड़का जाड़ेमें बीमार नहीं पड़ा। इसके अतिरिक्त वजन और ऊँचाईमें सबसे अधिक वृद्धि दूध सेवन करनेवाले लड़कोंकी हुई।

खानेको दिया हुआ विशिष्ट पदार्थ	दूध	मक्खन	वाटरक्रेस	वेजिटेबल मार्ग्रेरिन	चीनी	केसीन	शुद्ध भोजन
लड़कोंकी संख्या	४१	२६	२६	१६	२०	३०	६१
एक सालमें बढ़ा हुआ हर लड़केका औसत वजन पौंडमें	६.९८	६.३८	५.४२	५.२१	४.९३	४.०१	३.८५
एक सालमें बढ़ी हुई हर-एक लड़केकी औसत ऊँचाई इंचोंमें	२.६३	२.२२	१.७	१.८४	१.९४	१.७६	१.८४

इस प्रयोगसे यह सिद्ध हुआ कि लड़कोंके शरीरका वजन और ऊँचाई बढ़ानेके लिये गोदुग्ध और उसका मक्खन बहुत ही उपयोगी है। एक जूनियर स्कूलके १३७ लड़कोंमेंसे ९९ लड़कोंको ⅔ पिंट (लगभग १ पाव) हर-एक लड़केको प्रतिदिन देकर और शेष ३८ लड़कोंको न देकर उनके स्वास्थ्यमें क्या अन्तर होता है, यह देखनेके लिये कावेण्ट्रीके मेडिकल हेल्थ अफसरने जो प्रयोग कर देखा; उसका परिणाम नीचे लिखे अनुसार है—

उम्र साल	पेय-पदार्थ	लड़कोंकी संख्या	बढ़ा हुआ औसत वजन पौं०	बढ़ी हुई औसत ऊँ० इंचोंमें
५	दूध पीनेवाले	२२	३.४	१.५
५	दूध न पीनेवाले	५	२.६	१.२
६	दूध पीनेवाले	१८	३.५	१.१
६	दूध न पीनेवाले	९	३.४	१.४
७	दूध पीनेवाले	२५	४.५	१.२
७	दूध न पीनेवाले	९	४.४	१.३
८	दूध पीनेवाले	१५	५.५	१.१
८	दूध न पीनेवाले	८	२.८	१.०
९	दूध पीनेवाले	१९	५.२	१.६
९	दूध न पीनेवाले	७	४.८	१.१

स्काटिश बोर्डकी ओरसे डा० आर, डा० क्रुक रॉक, डा० गेराल्ड, लेफ्टिनेंट डा० सिंपसन, डॉ० चार्लोटी डगलस और डा० जार्डीनने ११५७ विद्यार्थियोंपर ऐसे ही प्रयोग करके देखा; उसमें दूध न पीनेवाले लड़कोंकी अपेक्षा दूध पीनेवाले लड़कोंकी ऊँचाईमें २३.५ प्रतिशत और वजनमें ४५.३७ प्रतिशतकी वृद्धि हुई।

लेनार्कशायरके स्कूलके विद्यार्थियोंपर डा० पीटर मैक-किनले और डाक्टर गेराल्ड लेफ्टिनेंटने भी ऊपर लिखे अनुसार ही प्रयोग कर देखा। उसमें भी दुग्धाहारका परिणाम इसी अनुपातसे देखनेमें आया। ऐसी आम धारणा है कि बड़े लड़कोंकी अपेक्षा छोटे लड़कोंकी वृद्धि दुग्धाहारसे विशेष होती है और लड़कोंकी अपेक्षा लड़कियोंको दुग्धाहारसे विशेष लाभ होता है; पर इन उपर्युक्त डाक्टरोंकी उपर्युक्त धारणा भ्रामक सिद्ध हुई। उन्होंने अनुभव और प्रयोगोंसे यह सिद्ध किया कि चाहे छोटे या बड़े लड़के हों, अथवा लड़के हों या लड़की, दुग्धाहारका लाभ सबको समानरूपसे होता है।

'गौ मनुष्यके लिये अमूल्य रत्न है। इसके दूधसे बल, बुद्धि, आयु बढ़ती है और लोग नीरोग रहते हैं।'

—व्यवस्थापक एस० बी० डेयरी, दिनापुर

दूध—गायका दूध समस्त आरोग्यवर्धक पदार्थोंमें श्रेष्ठ है। ऊपरके वर्णनमें जहाँ कहीं भी दूध या दुग्ध शब्दका प्रयोग हुआ है, वहाँ तात्पर्य गायके दूधसे ही है। भैंसके दूधका बोलबाला केवल भारतमें ही है, अन्यत्र इसको कोई भी नहीं पूछता। भैंसके दूधके सम्बन्धमें पाश्चात्योंकी क्या सम्मति है देखिये—

'अपनी सन्तानका हार्दिक कल्याण चाहनेवाले माता-पिताको अपने लड़के-लड़कियोंको कभी भैंसका दूध न पिलाना चाहिये। भैंसका दूध मनुष्योंके लिये उपयोगी पेय नहीं है। केवल मक्खन या घीके लिये यह उपयोगमें लाया जा सकता है।'—ईसा ट्वीड

भैंसके दूधमें पाचनके लिये आवश्यक शर्कराका प्रमाण कम होता है और पाचन-क्रिया मन्द करनेवाले केसीन और

फैट अधिक मात्रामें होते हैं। इसलिये भैंसका दूध पचानेमें हड्डियोंके अनेक क्षार चूस लिये जाते हैं। फलतः शरीरकी जीवनी-शक्ति और सहन-शक्ति कम हो जाती है। भैंसके दूधके प्रयोगके फलस्वरूप बुद्धि और फुर्तीमें कितनी कमी होती है यह जाननेके लिये किसी प्रयोगशालाकी आवश्यकता नहीं है। किसी भैंसेको देखनेसे ही यह पता लग जाता है।

जिनके आहारमें दूध, विशेषकर गायका दूध पर्याप्त मात्रामें रहता है; उन्हें प्रायः रोग नहीं होते। वे तेजस्वी और बुद्धिमान् होते हैं। ढूँढ़नेसे उदाहरणके लिये ऐसे बहुत-से आदमी अपने यहाँ भी मिल जायँगे। आर्य-वैद्यकके मतानुसार गायका ताजा मक्खन अत्यन्त बल-बुद्धि-वर्धक होता है। अमेरिकन पत्र 'फिजिकल कल्चर'के संपादक और प्रसिद्ध दुग्धाहार-चिकित्सक बर्नार मैक्फेडनका कथन है कि 'इस जगत्‌में मक्खनके समान सर्वगुणसम्पन्न पौष्टिक खाद्य पदार्थ कोई दूसरा नहीं है।'

अन्तमें मि० मैक्फेडनके ही शब्दोंमें जनतासे विनम्र निवेदन है कि—

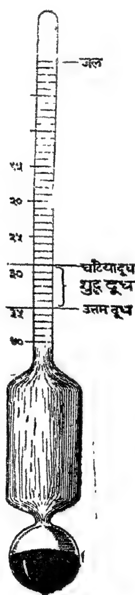
'प्रत्येक स्त्री-पुरुष और बच्चेको कम-से-कम एक सेर गो-दुग्ध प्रतिदिन अवश्य सेवन करना चाहिये।'

प्राचीन और अर्वाचीन शास्त्रज्ञोंकी सम्मतिसे दुग्धाहार ही स्वास्थ्य-रक्षाका सरल और सर्वमान्य उपाय है।

दूध जाँचनेका यन्त्र

लैक्टोमीटर

आज इस विकट परिस्थितिमें जब कि लोगोंकी एक ऐसी हीन मनोवृत्ति बन गयी है कि किसी भी वस्तुको उसके शुद्ध रूपमें नहीं बेचना चाहते, जब कि 'झूठइ लेना झूठइ देना' आदि वाक्य अक्षरशः सत्य सिद्ध हो रहे हैं, मानव-जीवनके विकासके लिये अत्यन्त आवश्यक पेय—दूध-की समस्या बड़ी विकट हो गयी है। आज अपने अत्यन्त विश्वासी व्यक्तिके घरका दूध मोल लेते हुए भी मनमें आशंका बनी रहती है—'इसमें पानी तो नहीं है?' दूधकी इस समस्या-को सुलझानेके लिये आजकल लैक्टोमीटर यन्त्रका सहारा लिया जाता है। किसी समय लोग इसपर काफी विश्वास करते थे। यह यन्त्र सरकारी अफसरोंके पास रहता है। वे अपने इस यन्त्रके केसको बगलमें दबाये हुए बड़ी अकड़के साथ डरावनी सूरतमें हाट-बाजारोंमें जा पहुँचते हैं और इस यन्त्रके द्वारा लोगोंके दूधकी जाँच कर-करके उसको अशुद्ध बताते हुए किसी-के दूधको बहा देते हैं, किसीपर कुछ जुर्माना कर देते हैं तथा किसीसे कुछ ले-लिवाकर उसका पिंड छोड़ते हैं। किसी-किसीके दूधको शुद्ध भी प्रमाणित कर वे अपने यन्त्रकी यथा-र्थता प्रमाणित करनेका प्रयत्न करते हैं। परन्तु वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है; क्योंकि इसके द्वारा दूधकी जो जाँच होती है वह प्रायः भूलभरी होती है।



इसके द्वारा असली दूधमें भी जल साबित हो सकता है और प्रायः होता है; तथा जलमिले दूधको यह यन्त्र असली दूध भी प्रमाणित कर सकता है और प्रायः करता है। दूधकी शुद्धता-अशुद्धताका निर्णय लैक्टोमीटरके चढ़ाव-उतारसे करते हैं, जो प्रधानतः दूधके ठंडे-गर्म होने, वातावरण (Atmosphere) के तापमान, दूधमें वर्तमान स्निग्ध-पदार्थकी मात्रा और मौसमके सर्द-गर्म होने आदि बातोंपर निर्भर है। दूधकी शुद्धता-अशुद्धतासे इसका कोई सम्बन्ध नहीं, जैसा कि नीचेके विवेचनसे ज्ञात होगा।

सर्दी-गर्मीका लैक्टोमीटरपर प्रभाव

यह प्रकृतिका नियम है कि जो वस्तु गर्म होती है उसका आयतन बढ़ता है और वह पतली हो जाती है। सर्दी पाकर वही वस्तु गाढ़ी और भारी हो जाती है। दूध जितना भारी होता है, मशीन उतना ही धक्का लगकर ऊपर उठती है अर्थात् उतना ही कम डूबती है और दूधको अच्छा बतलाती है; और दूध जितना पतला होता है, उतना अधिक वह डूबती

है और जल बतलाती है। अतः गौके थनोंसे तत्काल निकले हुए गर्म दूधमें मशीन डालनेसे उसमें अधिक पानी दिखलायी देगा। थोड़ी देरमें ठंडे हो जानेपर उसी दूधमें वही मशीन बिल्कुल पानी नहीं बतायेगी। इसी प्रकार एक ही प्रकारका दूध शीतकालमें जैसा मालूम होगा, ग्रीष्ममें उसकी अपेक्षा अधिक पानी मिला हुआ जान पड़ेगा।

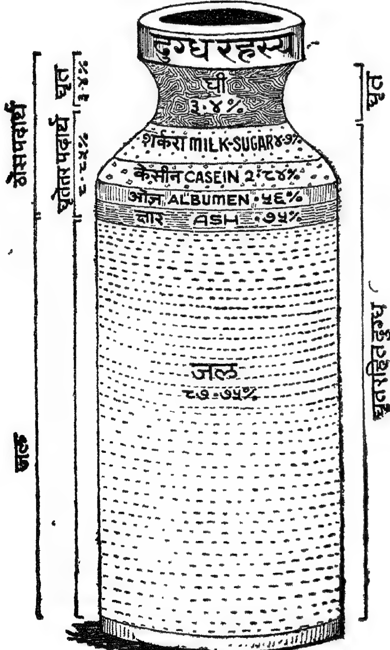
दूधमें वर्तमान स्निग्धपदार्थकी मात्राका लैक्टोमीटरपर प्रभाव

मक्खन-पदार्थ और जलीय अंश इन दोनोंके मिलावटसे दूध उत्पन्न होता है। दूधमें जितना मक्खन अधिक होता है, उतना ही वह हल्का होता है। इसलिये लैक्टोमीटर असली दूधमें लगानेसे उसे पानी मिला हुआ बतलायगा और इसके बिल्कुल विपरीत, मक्खन निकाले हुए दूधको घना या अच्छा अथवा कम पानी मिला बतलायगा। दूधसे मक्खन निकाल लेनेपर वह भारी हो जाता है। **धूर्त ग्वाले ऐसे निर्घृत दूधमें यथासम्भव पानी तथा चीनी मिलाकर उसे शुद्ध कहकर बेचते हैं** और लैक्टोमीटरसे जाँच करनेपर भी वह खूब शुद्ध साबित होता है।

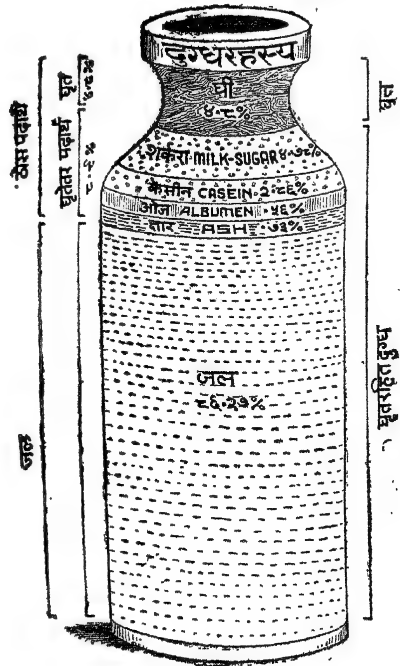
बिलायती और देशी दूध

बिलायती और भारतीय गायें बिल्कुल ही भिन्न-भिन्न जातिकी हैं। बिलायती गायोंके दूधमें प्रतिशत लगभग ३.४ भाग स्नेहपदार्थ होता है, जब कि भारतीय गायोंके दूधमें वह प्रतिशत ४½ से ५ तक होता है। इस कारणसे मशीनकी दृष्टिमें बिलायतीकी अपेक्षा भारतीय दूध हल्का या जलमिला सिद्ध होता है। दूसरे, मशीन बिलायतके ठंडे जलवायुके लिये बनायी हुई होती है। उसमें साधारणतः ६०° डिग्रीके लिये चिह्न लगाया होता है, जो कि हमारे यहाँके शीतकालका तापमान है। हमारे यहाँ गर्मियोंमें तो १०८° डिग्रीतक तापमान हो जाता है। अतः स्वाभाविक ही ग्रीष्मकालकी दोपहरीमें जाँच किया हुआ दूध बिल्कुल खराब साबित होगा अथवा शीतकालके बाद ज्यों-ज्यों गर्मी बढ़ती जायगी त्यों-ही-त्यों दूधमें अधिक पानी साबित होने लगेगा।

बिलायतीगाय



भारतीयगाय



दिनके विभिन्न कालोंमें दूधके स्नेहपदार्थ-की घटा-बढ़ी

प्रत्येक स्थानमें दिन और रातके विभागसे दूधमें मक्खन-का परिमाण भी बढ़ता-घटता है। रातके १२ बजेके दूध-में मक्खन कम होता है, सबेरेसे शामतकके दूधमें मक्खन अधिक होता है एवं सन्ध्यासे आधी राततक उसकी मध्यम अवस्था होती है। बिलायती दूधके स्नेहपदार्थका तारतम्य इस प्रकार पाया गया है—

रातको १२॥ बजे	—	स्नेहपदार्थ	२·५९	प्रतिशत	भाग
प्रातः ५॥ बजे	—	,,	४·७९	,,	,,
सायंकाल ५ बजे	—	,,	४·८८	,,	,,

इसी प्रकार दुहना आरम्भ करनेके समय पहले खूब कम मक्खन मिला हुआ दूध निकलता है और बिल्कुल अन्तमें थनसे जो थोड़ा-सा दूध प्राप्त होता है, वह एकदम मक्खनसे पूर्ण होता है। इसलिये लैक्टोमीटरकी दृष्टिमें सायंकालके एवं अन्तिम दूधकी अपेक्षा प्रातःकालका तथा दुहते समयका पहले-पहलका दूध अधिक घना और श्रेष्ठ ठहरेगा, जब कि वास्तविक बात इसके बिल्कुल विपरीत है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लैक्टोमीटरसे हम किसी यथार्थ तथ्यपर नहीं पहुँच सकते। वह तो हमें सत्यसे एक-दम दूर हटाकर भ्रममें डालता है।

(श्रीसतीशचन्द्रदास गुप्त महोदयके एक लेखके आधारपर)

गव्य पदार्थोंके गुण और रोगनाशके लिये उनका उपयोग

गायका दूध

गायका दूध स्वादिष्ट, रुचिकर, स्निग्ध, बलकारक, अति-पथ्य, कान्तिप्रद; बुद्धि, प्रज्ञा, मेधा, कफ, तुष्टि, पुष्टि, वीर्य और शुक्रको बढ़ानेवाला; आयुको दृढ़ करनेवाला, हृद्य, रसायन, गुरु, पुरुषत्व प्रदान करनेवाला और नमकीन होता है। वात, पित्त, विष, वातरक्त, दाह, रक्तपित्त, अतिसार, उदावर्त, भ्रम, कास, मद, श्वास, मनोव्यथा, जीर्णज्वर, हृद्रोग, पिपासा, उदर, अपस्मार, मूत्रकृच्छ्र, गुल्म, अर्श, प्रवाहिका, पाण्डु, शूल, अम्लपित्त, क्षयरोग, अतिश्रम, विषमाग्नि, गर्भपात योनिरोग और वातरोगका नाश करता है। काली गायका दूध विशेष करके वातका नाश करता है। लाल और चितकबरी गायका दूध विशेषकर पित्तका नाश करता है। पीली गायका दूध वातपित्तका नाश करता है। श्वेत (धौरी) गायका दूध कफकारक होता है। मरे हुए बछड़ेवाली तथा तुरंतके बछड़ेवाली गायका दूध त्रिदोषकारक होता है। बाखड़ी गायका दूध गाढ़ा, बलवर्द्धक, तृप्तिकारक और त्रिदोषनाशक होता है। खली और भुना हुआ दाना खानेवाली गायका दूध कफकारक होता है। बिनौला, घास, पाला, पत्ती आदि खानेवाली गायका दूध सब रोगोंके लिये हितकर है। जवान गायका दूध मधुर, रसायन और त्रिदोषनाशक है। बूढ़ी गायका दूध दुर्बल और गाभिन गायका तीन महीनेके बादका दूध पित्तकारक, खरास लिये हुए मधुर और शोषण करनेवाला होता है। पहली बार ब्यायी हुई गायका दूध निःसार और गुणहीन होता है। नयी ब्यायी हुई गायका दूध रूखा, दाहकारक और रक्तदोषकारक तथा पित्तकारक होता है। ब्यानेके अधिक दिन बाद गायका दूध मधुर, दाहकारक और खट्टा होता है। तुरंतका दुहा हुआ धारोष्ण दूध वृष्य, धातुवर्द्धक, निद्राकारक, कान्तिप्रद, पथ्य, स्वादिष्ट, अग्नि प्रदीप्त करने-वाला, अमृतसदृश और सर्वरोगनाशक होता है। ठंडा दूध (दुहनेके एक पहर बाद) त्रिदोषकारक होता है, गरम पित्तनाशक होता है। उबाले हुए दूधको पीनेसे कफका नाश होता है। और बिना गरम किया हुआ ठंडा दूध बलवर्द्धक, वृष्य, दोषोत्पादक, अपाचक और मलस्तम्भक होता है। प्रातःकाल गायका दूध, शक्कर डालकर पीनेसे हितकारक होता है।

दूधकी मलाई—शीतल, स्निग्ध, वृष्य, बलकारक, शुक्रप्रद, तृप्तिकर, रुचिकर, कफवर्द्धक और धातुवर्द्धक है। तथा पित्त, वायु, रक्तपित्त, दाह और रक्तरोगोंका नाश करती है।

गायके दूधका औषधमें उपयोग

१—**आधाशीशीमें**—गायके दूधका खोआ खाना या गायके दूधमें बादामके टुकड़े डालकर बनायी हुई खीरमें शक्कर डालकर पिलाना चाहिये।

२—**धतूरा अथवा कनेरके विषपर**—पाव भर दूधमें एक तोला शक्कर डालकर पिलाना चाहिये।

३—**संखिया, तूतिया, बछनाग, मुर्दासंख इत्यादिके विषपर**—जबतक उलटी न हो जाय तबतक दूध या दूधमें शक्कर डालकर पिलाना चाहिये।

४-**मैनसिलके विषपर**—दूधमें मधु डालकर तीन दिन पिलाना चाहिये।

५-**कोदोंके विषपर**—ठंडा दूध पिलाना चाहिये।

६-**काँचका चूर्ण**—अन्नके साथ पेटमें चला गया हो तो ऊपरसे दूध पिलाना चाहिये।

७-**गन्धकके विषपर**—दूधमें घी डालकर पिलाना चाहिये।

८-**पुष्टि, बल और वीर्यकी वृद्धिके लिये**—गरम किये हुए दूधमें गायका घी और शक्कर डालकर पिलाना चाहिये। इसके-जैसा पथ्य, तेजोवर्द्धक और बलवर्द्धक प्रयोग दूसरा कोई नहीं है।

९-**जीर्ण ज्वरपर**-दूधमें गायका घी, सोंठ, छुहारा और काली दाख डालकर उसे आगपर उबालकर पिलाना चाहिये।

१०-**मूत्रकृच्छ्र और मधुमेहपर**—दूधमें गुड़ अथवा घी डालकर उसे थोड़ा गरम करके पिलाना, अथवा गरम किया हुआ दूध घीके साथ बराबर शक्कर डालकर पिलाना चाहिये।

११-**आँख उठी हो या जलती हो**—तो गायके दूधमें रूईको भिगोकर और उसके ऊपर फिटकिरीका चूर्ण डालकर आँखके ऊपर पट्टी बाँध देनी चाहिये।

१२-**पुष्टिके लिये**—गायका दूध घी और मधु मिलाकर पिलाना चाहिये।

१३-**पित्त-विकारके ऊपर**—सात तोला दूध लेकर उसमें आधा तोलासे एक तोलातक सोंठ उबालकर खोआ बनावे, उसमें शक्कर डालकर गोली बना ले और रातको सोनेके पहले प्रतिदिन खिलावे। खानेके बाद पानी न पीने दे। इस प्रकार कुछ अधिक दिनोंतक इसका सेवन कराना चाहिये।

१४-**चेचक अथवा छोटीमाता होनेके कारण बालकके शरीरमें आनेवाले ज्वरके ऊपर**—तुरंत दुहे हुए दूध और घीको मिलाकर मिश्री डालकर पिलावे।

१५-**छाती तथा हृदयरोगपर**—दूधमें शुद्ध भिलावेका तेल १० बूँदतक डालकर पिलाना चाहिये।

१६-**रक्तपित्तके ऊपर**—दूधमें पाँचगुना पानी डालकर अच्छी तरह उबाले और सारा पानी जल जानेके बाद दूध पिला दे।

१७-**हड्डी टूटनेपर**—प्रातःकाल बाखड़ी गायका दूध शक्कर डालकर गरम करे। उसमें घी और लाखका चूर्ण डालकर ठंडा होनेपर पिलावे, इससे टूटी हड्डी ठीक हो जाती है।

१८-**कफपर**—गर्म दूधमें मिश्री और काली मिर्चका चूर्ण डालकर पिलाना चाहिये।

१९-**सिरके रक्तज और पित्तज रोगोंपर**—रूईकी मोटी तह करके गायके दूधमें भिगोकर सिरके ऊपर रक्खे, उसके ऊपर पट्टी बाँध दे और बारंबार दूध देता रहे। इस प्रकार सबेरेसे शामतक रक्खे। शामको सिर धोकर मक्खन लगावे—इस प्रकार २-३ दिनोंतक करे।

२०-**प्रवाहिका और रक्त-पित्तादिके ऊपर**—आधा दूध और आधा पानी मिलाकर उबाले, जब पानी जल जाय तो बचे दूधका उपयोग शूल, प्रवाहिका और रक्तपित्तरोगके ऊपर करे।

२१-**पांडुरोग, क्षय और संग्रहणीके ऊपर**—लोहेके बर्तनमें गरम किया हुआ दूध सात दिन पिलाना और पथ्य सेवन कराना चाहिये।

२२-**हिचकीके ऊपर**—औटाया हुआ दूध पिलाना चाहिये।

२३-**मूत्रावरोधसे हुए उदावर्त वायुके ऊपर**—दूध और पानी एक साथ मिलाकर पिलाना चाहिये।

२४-**मेहनत करके थके हुए** मनुष्यको दूध गरम करके पिलावे; इससे थकावट दूर हो जायगी और स्फूर्ति आ जायगी। थकावटके लिये यह अद्वितीय ओषधि है।

२५-**सिरदर्दके ऊपर**—गायके दूधमें सोंठ घिसकर सिरपर उसका लेप करे और ऊपरसे रूई बाँध दे। इस प्रकार सात-आठ घंटेमें भयङ्करसे भी भयङ्कर सिरदर्द दूर हो जाता है।

गायका दही

स्वादिष्ट, बलवर्द्धक, रुचिकर, तेजस्वी, दीपन, पौष्टिक, मीठा, ग्राहक, ठंडा और वातजन्य अर्श (बवासीर) का नाश करनेवाला है। दही मन्द, स्वादिष्ट, स्वाद्वम्ल, (स्वादिष्ट खट्टा), खट्टा और अतिखट्टा—पाँच प्रकारका होता है। मन्द दही भारी, स्वादिष्ट दूधके समान मूत्रकारक, सारक, दाहक और त्रिदोषनाशक है। स्वादिष्ट दही भी भारी, मीठा, वृष्य, पाक कालमें मधुर, अभिष्यन्दकारक, मेद, वायु और कफका नाश करनेवाला, रक्त शुद्ध करनेवाला और पित्तको शमन करनेवाला है। स्वादिष्ट (स्वाद्वम्ल) खट्टा दही भारी,

मीठा, किञ्चित् खट्टा और तुर्श होता है। दूसरे गुण स्वादिष्ट दहीके ही समान हैं। खट्टा दही रक्त, पित्त और कफ बढ़ानेवाला और दीपन है। अत्यन्त खट्टा दही दीपन, गलेमें दाह करनेवाला, रोंगटे खड़ा करनेवाला, रक्तपित्त पैदा करनेवाला और दाँतके लिये हानिकारक है। औंटे हुए दूधका दही शीतल, लघु विष्टम्भकारक, वातकारक, दीपन, मधुर, रुचिकर और थोड़ा पित्तकारक होता है। औंटाकर मलाई निकाले हुए दूधका दही ठंढा, लघुविष्टम्भकारक, वातकारक, ग्राहक, दीपन, मधुर, रुचिकर और थोड़ा पित्तकारक होता है। शक्कर मिला हुआ दही खानेसे पित्त, दाह, तृषा और रक्तदोषका नाश होता है। गुड़ मिला हुआ दही तृप्तिकर, धातुवर्द्धक, गुरु और वातका नाश करनेवाला होता है। दहीका निचोड़ा हुआ पानी बल बढ़ानेवाला, तुर्श, पित्तकारक, सारक, गरम, रुचिकर, खट्टा, लघु, स्रोतशोधक और प्लीहोदर, तृषा, कफकी बवासीर, वायु, विष्टम्भ, पांडुरोग, शूल और श्वासरोगका नाश करनेवाला है। दहीके ऊपरका जल सारक, गुरु और रक्तपित्त, कफ और वीर्यको बढ़ानेवाला और जठराग्निको मन्द करनेवाला तथा वातनाशक है। दूसरे गुण दूध-जैसे ही हैं।

गायके दहीका उपयोग

१-**अजीर्णजनित विषूचिकापर**—गायका दही या छाछ समान भाग पानी डालकर पिलावे।

२-**काँचका चूर्ण अनाजके साथ खाया गया**-हो तो गायका दही पिलावे।

३-**तृष्णा रोगके ऊपर**--पुरानी ईंट साफ धोकर आगमें डाले, खूब लाल हो जाय तबतक गरम करे, फिर उसे गायके दहीमें डाल दे और उस दहीको थोड़ा-थोड़ा खिलावे।

४-**कनेरके विषपर**--गायका दही शक्कर डालकर पिलावे।

५-**सूर्यावर्त (आधाशीशी) रोगपर**—सूर्योदय होनेके पहले दही और भात तीन रोजतक खिलावे।

६-**तृष्णा रोगपर**—गायका मधुर दही १२८ भाग, शक्कर ६४ भाग, घी ५ भाग, मधु ३ भाग, काली मिर्चका चूर्ण २ भाग, सोंठका चूर्ण २ भाग, इलायची २ भाग—ये सब चीजें एक साथ कलई किये हुए बर्तनमें मिलाकर रख दे और उसमेंसे थोड़ा-थोड़ा खिलावे। दूसरा प्रकार यह है कि दहीका तमाम पानी वस्त्रसे छानकर उसमें शक्कर वगैरह सब मसाले डालकर घोलकर पिलावे। इसे श्रीखण्ड कहते हैं। वह तृषा, दाह और पित्त-नाशक तथा मधुर होता है।

७-**सर्पके विषके ऊपर**—दही, मधु और मक्खन—इन तीनोंको तीन-तीन तोले ले तथा पीपल, सोंठ, काली मिर्च, बच और सेंधा नमक समभाग लेकर बारीक चूर्ण बनाकर वस्त्रसे छान ले। यह चूर्ण तीन तोला लेकर बारह तोले मिश्रण तैयार करे। उसमेंसे चार तोले पिलावे। एक मिनटके बाद वमन और विरेचन न हो तो फिर दूसरी बार दे। जरूरत पड़े तो तीसरी बार भी पिलावे। इस प्रकार तीन मात्रा लेनेपर अवश्य ही वमन-विरेचन होकर रोगसे मुक्ति मिलेगी। काष्ठौषधि नयी होनी चाहिये। नयी वनस्पति हो तो शास्त्रकार लिखते हैं कि तक्षक, वासुकी या उससे भी बलवान् सर्पका विष इस ओषधिसे दूर हो जाता है। सर्प काटनेके बाद तुरंत ही दवा देनी चाहिये।

८-**सूजन, व्रणकी तीक्ष्ण पीडा और दाहके ऊपर**--दहीको कपड़ेमें बाँधकर पानी निकालकर उसे दर्दवाली जगहपर बाँधनेसे दर्द दूर होता है, शूल तथा दाह मिट जाता है, निकलता हुआ फोड़ा बैठ जाता है, और निकला हुआ फोड़ा फटकर भर जाता है।

गायका मक्खन

शीतल, धातुवर्द्धक, वृष्य, कान्ति बढ़ानेवाला, ग्राहक, बलप्रद, बालक और वृद्धके लिये ठोस, रुचिकर, मधुर, सुखकारक, आँखकी ज्योति बढ़ानेवाला, पुष्टिकारक, वात, पित्त, कफ, अर्श, क्षय, रक्त-विकार, सर्वाङ्गशूल, थकावट और तन्द्राका नाश करता है।

ठंडा मक्खन—बल बढ़ानेवाला, वीर्यकारक, भारी, कफ करनेवाला, मेदाको बढ़ानेवाला, आँखोंके लिये हितकर, धातुवर्द्धक, अप्रिय, अनभिष्यन्दी तथा दो-तीन दिनोंका हो तो खारा, खट्टा, तीखा और वान्ति, अर्श, कोढ़--इन दोषोंके सिवा नेत्ररोग और दूसरे सब रोगोंका नाश करनेवाला होता है।

गायके मक्खनका उपयोग

(१) **क्षयका नाश करके शक्ति देनेके लिये**—गायका मक्खन, मिश्री, मधु और सोनेका वर्क सबको एकत्र करके खिलावे।

(२) **आँखोंके दाहपर**—मक्खन आँखोंके ऊपर चुपड़ देवे।

(३) **शरीरमें मन्दज्वर हो**—तो मक्खन और (मिश्री) खिलावे।

(४) **शीतला अथवा छोटी माताके कारण लड़कोंके मन्दज्वरके ऊपर**—गायका मक्खन और मिश्री मिलाकर उसमें जीरेका चूर्ण डाले और छोटी सुपारीके बराबर गोली बनाकर रोज सबेरे खिलावे।

(५) **कानमें बहुत जलन होनेपर**—गायका मक्खन थोड़ा गरम करके कानमें डाल दे।

(६) **भिलावा आदि उड़कर आँखमें पड़ गया हो**—तो गायका मक्खन लगा दे। भिलावेके कारण शरीरमें दाह उत्पन्न होता हो तो मक्खन पुष्कल परिमाणमें खिलावे।

(७) **कनेरके विषपर**—गायका मक्खन थोड़ा उष्ण करके खिलावे।

(८) **रक्तातिसारपर**—मक्खनमें मधु और मिश्री डालकर खिलावे।

(९) **अर्श-व्याधिपर**—मक्खन और तिल खिलावे।

गायकी छाछ

जठराग्निको प्रदीप्त करनेवाली और त्रिदोष तथा अर्शका नाश करनेवाली होती है। साधारण छाछ स्वादिष्ट, ग्राही, खट्टी, तुर्श, लघु, गरम, पाकके समय मधुर, तीखी, रूखी, अवृष्य, बलप्रद, तृप्तिकर, हृदयको विकसित करनेवाली, रुचिकारक और शरीरको कृश बनानेवाली होती है। और प्रमेह, मेद, अर्श, पांडु, संग्रहणी, मलस्तम्भ, अतिसार, अरुचि, भगन्दर, उदर, प्लीहा, गुल्म, सूजन, कफ, कोढ़, कृमि, पसीना, घीका अजीर्ण, वायु, त्रिदोष, विषमज्वर और शूलका नाश करती है। छाछ मधुरपाकी होती है, इससे पित्तका कोप नहीं करती। रूखी गर्म और तुर्श होती है, इसलिये कफका नाश करती है। खट्टी और मधुर होती है, इसलिये वातका नाश करती है। मधुर छाछ कफ करनेवाली और वातपित्तनाशक होती है। खट्टी छाछ रक्तपित्त और कृमिका नाश करती है। खट्टी छाछ मीठेके साथ पीनेसे वायुका नाश करती है। मीठी छाछ शक्करके साथ पीनेसे पित्तका नाश होता है। मीठी छाछ नमक, सोंठ, काली मिर्च और पीपलके साथ मिलाकर पीनेसे रूक्षता और कफका नाश करती है। पेटमें वायु हो तो पीपल और नमक डालकर मीठी छाछ पीनेसे वायुका नाश होता है। पित्तके रोगीको शक्कर और काली मिर्च मिलाकर मीठी छाछ दे। मक्खन-वाली छाछ तन्द्रा तथा शरीरमें जड़ता पैदा करनेवाली और भारी होती है। मक्खन निकाली हुई छाछ लघु और पथ्य करनेवाली होती है। घोल (पानी डालकर हिलाया हुआ दहीका मट्ठा) उष्ण और त्रिदोषनाशक होता है।

गायकी छाछका उपयोग

(१) **कफोदरके ऊपर**—त्रिकटु, अजवाइन, जीरा और सैन्धव डालकर छाछ पिलावे। त्रिकटु, सैन्धव, जवखार वगैरह डालकर छाछको सन्निपातोदरमें देना चाहिये। क्षय, दौर्बल्य, मूर्च्छा, भ्रम, दाह तथा रक्तपित्तमें कभी छाछ नहीं पिलानी चाहिये।

(२) **दाहके ऊपर**—गायकी छाछमें कपड़ा भिगोकर उससे रोगीके शरीरका स्पर्श कराता रहे, इससे दाहका नाश हो जाता है।

(३) **संग्रहणी, अतिसार और अर्शके ऊपर**—छाछ पिलावे; इससे शरीरका रक्त शुद्ध होकर रस, बल, पुष्टि और वर्ण सरस होता है तथा वात और कफके दोषोंका शमन होता है। छाछ-कल्प (४० दिनोंतक केवल छाछपर रहे) करानेसे कठिन-से-कठिन संग्रहणी और उदर-रोग मिट जाते हैं।

(४) **कोष्ठबद्धताके ऊपर**—अजवाइन और विड नमक डालकर छाछ पिलावे।

(५) **अर्शके ऊपर**—चित्रमूलकी छाल पीसकर उसके रसको एक बर्तनमें डाले, उसमें गायका दही या छाछ डालकर पिलावे। अथवा सोंठ, मिर्च, विड नमक और छोटी पीपल डालकर गायकी छाछ पिलावे।

(६) **संग्रहणीके ऊपर**—गायकी छाछमें एक तोला सफेद मुसली पीसकर पिलावे और छाछ-भातका पथ्य दे। अथवा गायकी छाछमें सोंठ और छोटी पीपलका चूर्ण डालकर पिलावे। संग्रहणी रोगके लिये छाछ दीपन, ग्राहक और लघु होती है और बहुत ही लाभदायक है।

(७) **मूँगफली खाकर छाछ पी लेनेसे** कोई नुकसान नहीं होता, तथा उससे होनेवाले अजीर्णके लिये भी छाछ लाभदायक होती है।

गायका घी

रस और पाकमें स्वादिष्ट, शीतल, भारी, जठराग्निको

प्रदीप्त करनेवाला, स्निग्ध, सुगन्धित, रसायन, रुचिकर, नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेवाला, कान्तिकारक, वृष्य और मेधा, लावण्य, तेज और बल देनेवाला, आयुप्रद, बुद्धिवर्द्धक, शुक्र-वर्धक, स्वरकारक, हृदय, मनुष्यके लिये हितकारक, और बाल, वृद्ध तथा क्षतक्षीणके लिये ठोस, और अग्निदग्ध व्रण, शस्त्रक्षत, वात, पित्त, कफ, दम, विष और त्रिदोषका नाश करता है। सतत ज्वरके लिये हितकारक और आम ज्वरवालेके लिये विषसमान है। मक्खनमेंसे ताजा निकाला हुआ घी तृप्तिकारक, दुर्बल मनुष्यके लिये हितकारक और भोजनमें स्वादिष्ट होता है। नेत्ररोग, पाण्डु और कमलाके लिये प्रशस्त है। हैजा, अग्निमान्द्य, बाल, वृद्ध, क्षयरोग, आमव्याधि, कफरोग, मदात्यय, कोष्ठबद्धता और ज्वरमें घी कम ही देना चाहिये। पुराना घी तीक्ष्ण, सारक, खट्टा, लघु, तीखा, उष्ण वीर्य, वर्णकारक, छेदक, सुननेकी शक्ति बढ़ानेवाला, अग्निदीपक, ग्राणसंशोधक, व्रणको सुखानेवाला और गुल्म, योनिरोग, मस्तकरोग, नेत्ररोग, कर्णरोग, सूजन, अपस्मार, मद, मूर्च्छा, ज्वर, श्वास, खाँसी, संग्रहणी, अर्श, श्लेष्म, कोढ़, उन्माद, कृमि, विष, अलक्ष्मी और त्रिदोषका नाश करता है। यह वस्तिकर्म और नस्यमें प्रशस्त है। दस वर्षका पुराना घी 'जीर्ण' १०० से १००० वर्षका 'कौम्भ' और ११०० वर्षके ऊपरका 'महाघृत' कहलाता है। यह जितना ही पुराना होता जाता है, उतना ही इसका गुण अधिक बढ़ता जाता है। सौ बार धोया हुआ घी घाव, दाह, मोह और ज्वरका नाश करता है। घीमें दूसरे गुण दूध-जैसे होते हैं।

गायके घीको धोये बिना फोड़े आदि चर्मरोगोंपर लगानेसे जहरके समान असर होता है, वैसे ही धोये हुए घीको खानेसे विषवत् असर होता है। यानी फोड़ेपर धोया हुआ घी लगाना चाहिये, पर धोया हुआ घी कभी खाना नहीं चाहिये। ज्वर, कोष्ठबद्धता, विषूचिका, अरुचि, मन्दाग्नि और मदात्यय रोगमें नया घी अपकारी होता है। पुराना घी यदि एक वर्षसे ऊपरका हो तो मूर्च्छा, मूत्रकृच्छ्र, उन्माद, कर्णशूल नेत्रशूल, शोथ, अर्श, व्रण और योनि-दोष इत्यादि रोगोंमें विशेष हितकारी है।

गायके घीका उपयोग

(१) **आधाशीशीके ऊपर**—गायका अच्छा घी सबेरे-शाम नाकमें डाले, इससे ७ दिनमें आधाशीशी बिल्कुल दूर हो जायगी। अथवा प्रातःकाल सूर्योदयसे पूर्व एक तोला गायका घी और एक तोला मिश्री मिलाकर तीन दिनतक खिलावे तो निश्चय ही आराम होता है।

(२) **नाकसे खून गिरनेपर**—गायका अच्छा घी नाकमें डाले।

(३) **पित्त सिरमें चढ़ जानेपर**—अच्छा घी माथेपर चुपड़ दे, इससे चढ़ा हुआ पित्त तत्काल उतर जाता है।

(४) **हाथ-पैरमें दाह हो**—तो गायका अच्छा घी चुपड़ दे।

(५) **ज्वरके कारण शरीरमें अत्यन्त दाह होता हो**—तो घीको १०० या १००० बार धोकर शरीरपर लेप करे।

(६) **धतूरा अथवा रसकपूरके विषके ऊपर**—गायका घी खूब पिलावे।

(७) **शराबका नशा उतारनेके लिये**—दो तोला घी और दो तोला शक्कर मिलाकर खिलावे।

(८) **गर्भिणीके रक्तस्रावके ऊपर**—१०० बार धोया हुआ घी शरीरपर लेप करे।

(९) **चौथिया ज्वर, उन्माद और अपस्मारपर**—गायका घी, दही, दूध और गोबरका रस इनमें घीको सिद्ध करके पिलावे।

(१०) **जले हुए शरीरपर**—गायके धोये हुए घीका लेप करे।

(११) **सिरदर्दके ऊपर**—गायका दूध और घी इकट्ठा करके अञ्जन करे। इससे नेत्रकी शिराएँ लाल हो जाती हैं और रोग चला जाता है।

(१२) **बालकोंकी छातीमें**—कफ जम गया हो तो गायका पुराना घी छातीपर लगाकर उसे मालिश करे।

(१३) **शरीरमें गर्मी होनेसे रक्त खराब होकर**—शरीरके ऊपर ताँबेके रंगके काले चकत्ते हो जायँ और उनकी गाँठ शरीरके ऊपर निकल आवे तब पहले जोंकसे रक्त निकलवा दे, पीछे पीतलके बर्तनमें गायका घी १० तोला अथवा आधा गाय और आधा बकरीका घी लेकर उसमें पानी डालकर हाथसे खूब फेंटे और वह पानी निकालकर दूसरा पानी डाले। इस प्रकार १०० बार पानीसे धोवे। उसमें २॥ तोला फुलायी हुई फिटकिरीका चूर्ण डालकर घोंटे और उसे एक मिट्टीके बर्तनमें रक्खे। इसे नित्य सोते वक्त गाँठ बने हुए सब स्थानोंपर लेप करनेसे शरीरमें जमी हुई गरमी कम हो जाती है, कुछ ही दिनोंमें शरीरसे दाग मिट जाता

है, रक्त शुद्ध हो जाता है और यह दुष्ट रोग नष्ट हो जाता है ।

(१४) **तृष्णा-रोगके ऊपर**—घी और दूध मिलाकर पिलावे।

(१५) **दाहके ऊपर**—१०० से १००० बार धोये हुए घीको शरीरपर चुपड़े ।

(१६) **हिचकीपर**—गायका घी पिलावे ।

(१७)**सन्निपातज विसर्पके ऊपर**—१०० बार धोये हुए घीका बारंबार लेप करे ।

(१८)**गरमीके ऊपर**—गायके घीमें सीषका भस्म डालकर उसे खरल करके लेप करे ।

(१९) **सर्पके विषके ऊपर**—पहले २० से ४० तोला घी पीवे, उसके पाव घंटे बाद थोड़ा उष्ण जल जितना पी सके उतना पीवे । इससे उलटी और दस्त होकर विषका शमन हो जाता है । जरूरत हो तो दूसरे वक्त भी घी और पानी पिये ।

गोमूत्र

तुर्श, कड़वा, तीखा, लघु, खारा, गरम, तीक्ष्ण, पाचन, अग्निदीपन, भेदक, पित्तकारक,मेधाप्रद, किञ्चित् मधुर, सारक, लेखन और बुद्धिवर्द्धक होता है। और कफ, वायु, कुष्ठ, गुल्म, उदर, पाण्डु, चित्री, शूल, अर्श, कण्डु, दमा, आम, भ्रम, ज्वर, आनाह वायु, खाँसी, मलस्तम्भ, सूजन, मुखरोग, नेत्ररोग, त्वचारोग, स्त्रियोंका अतिसार और मूत्ररोग—इन सबका नाश करता है। सब मूत्रोंकी अपेक्षा गोमूत्रमें अधिक गुण होते हैं।

गोमूत्रका उपयोग

(१) **कफरोगपर**—केवल गोमूत्र पिलावे ।

(२) **रेचनके लिये**—जितनी बार रेचन देना हो, उतनी बार गोमूत्र कपड़ेमें निचोड़कर पिलाना चाहिये ।

(३) **उदररोग और भारपर**—गोमूत्रमें शक्कर और नमक महीन पीसकर समभाग डालकर पिलावे अथवा गोमूत्रमें सेंधा नमक और राईका चूर्ण डालकर पिलाना चाहिये ।

(४) **वराध (बच्चोंके उदररोग) पर**—गोमूत्र दो वक्त लेकर उसमें हल्दी डालकर पिलावे ।

(५) **उदर रोग और बच्चोंके पेटके आफरे या डब्बेपर**—गोमूत्र ४ तोला लेकर उसमें नारियलकी गिरी पैसाभर और खरवत(फल्गु)का सूखा पत्ता पैसाभर घिस करके पिलावे; इससे पेटके सब रोग अलग होकर मलद्वारसे निकल जाते हैं। बालकोंको यह ओषधि $\frac{1}{8}$ और $\frac{1}{4}$ प्रमाणमें दे ।

(६) **पाण्डुरोगपर**—प्रतिदिन सबेरे शक्तिके अनुसार गोमूत्र वस्त्रसे छानकर रोगके न्यूनाधिक जोरके अनुसार २१ या ४२ दिनतक सेवन करावे ।

(७)**कान बहनेपर**—गरम गोमूत्रसे कान धोवे।

(८) **स्त्रियोंके प्रसूतिरोग होनेके**—बाद अथवा किसी कारणसे गर्भाशयमें गाँठ हो गयी हो अथवा शरीरमें सूजन आ गया हो तो गोमूत्र रोज दिनमें दो बार चार-चार तोले पिलावे ।

(९) **जीर्णज्वर, पाण्डु तथा सूजनके ऊपर**—गोमूत्र चिरायतेके फांटमें मिलाकर ७ दिनतक दिनमें दो बार पिलावे ।

(१०)**उदररोगपर**—गोमूत्रका क्षार एक मासा दिनमें दो वक्त घीके साथ दे । इससे पुराना उदररोग भी निश्चयपूर्वक दूर हो जायगा ।

(११) **मूत्रकृच्छ्रके ऊपर**—रोज सबेरे दो तोला, गोमूत्र जलमें मिलाकर पिलाना चाहिये ।

(१२) **आँखोंमें दाह, सुस्ती, कब्जियत और अरुचिके ऊपर**—गोमूत्रमें थोड़ी शक्कर मिलाकर पिलाना चाहिये।

(१३)**सफेद दाग और चकत्तोंके ऊपर**—हरताल पन, बावची तथा मालकांगनी गोमूत्रमें दिनभर भिगोकर पीछे खरल करके बटोरकर छायामें डाल दे । बादको नीबूके रसमें घिसकर लेप करे ।

गोबर

दुर्गन्धनाशक, शोधक, सारक, शोषक, वीर्यवर्द्धक, पोषक, रसयुक्त, कान्तिप्रद और लेपनके लिये स्निग्ध तथा मल वगैरहको दूर करनेवाला होता है ।

गायके गोबरका उपयोग

(१)**मृतगर्भ बाहर निकालनेके लिये**—गोबरका रस ७ तोला गायके दूधमें पिलावे ।

(२) **गुदभ्रंशके लिये**—गोबर गरम करके सेंक करे ।

(३) **पसीना बंद करनेके लिये**—सुखाये हुए गोबर और नमकके पुराने वर्तन,इन दोनोंके चूर्णको शरीरपर लेप करे।

(४) **खुजलीके लिये**—गोबर शरीरमें लगाकर गरम पानीसे स्नान करे।

गायके गोबरकी राख

शोधक, व्रणको दूर करनेवाली, दुर्गन्धिनाशक, धान्य-वर्द्धक, कृमि-कीटनाशक और शीतनिवारक होती है।

गायके गोबरकी राखका उपयोग

(१) **शीतलासे फूट निकले छालोंपर**—राखको कपड़ेसे छानकर उससे भर दे। इसपर यही उपाय मुख्यतः श्रेष्ठ है।

(२) **साधारण व्रणके ऊपर**—घीमें राख मिलाकर लेप करे।

(३) **अन्नको राखमें भरकर**—रखनेसे घुन आदि नहीं पड़ते।

(४) **पेटमें छोटे-छोटे कृमि हुए हों तो**—गोबरकी सफेद राख २ तोला लेकर १० तोला पानीमें मिलाकर पानी कपड़ेसे छान ले। ३ दिनतक सबेरे-शाम इस पानीको पिलावे।

(५) **दाँतकी दुर्गन्धि, जन्तु और मसूड़ेके दर्दपर**—गायके गोबरको जलावे, जब उसका धुआँ निकल जाय तब उसे पानीमें डालकर बुझा ले, फिर कोयला करे। पीछे चूर्ण करके कपड़छान करे, इस मंजनको डिब्बेमें रख दे। रोज इस मंजनसे दाँत साफ करनेसे दाँतके सब रोग नष्ट होते हैं। 'श्रीजीवदया'



दुग्ध-कल्प

(लेखक—प्राकृतिक चिकित्सक श्रीविट्ठलदास मोदी)

कल्पोंमें दुग्ध-कल्पको एक बड़ा स्थान प्राप्त है। कल्पके मानी हैं शरीरको नया बना देना, बदल देना। दुग्ध-कल्पसे यह कार्य जितना निश्चयपूर्वक होता है उतना दूसरे कल्पोंसे नहीं। इसीलिये शास्त्रोंमें दूधकी 'अमृत' संज्ञा है। युधिष्ठिरसे यक्षने जो प्रश्न पूछे उनमें एक था 'अमृतं किम्'? युधिष्ठिरका उत्तर था 'गवामृतम्' और भी कहा है—'विना गोरसं को रसो भोजनानाम्'। सचमुच दूध अमृत है, और कल्पमें जिस विधिसे लिया जाता है उसमें तो प्रत्यक्ष अमृतका ही काम करता है। उसका यह अमृतमय प्रभाव प्रायः सभी रोगोंमें देखनेमें आता है। दूध रक्तको बढ़ाता है, रक्तकी लालीको बढ़ाता है, गतिको भी बढ़ाता है। उसके प्रयोगसे त्वचा निखर आती है, रूखा और सूखापन जाकर त्वचा सतेज, चिकनी और मुलायम हो जाती है, दूधका कल्प आँखोंको साफ करता है, नाखूनोंको सुर्ख, दाँतों और मसूढ़ोंको मजबूत। हृदय और फेफड़े बलशाली हो जाते हैं। बड़ी आँतोंपर तो कल्पका अनिवार्यरूपसे प्रभाव पड़ता है। उनकी मन्दता, ढीलापन, जिससे लोगोंको अक्सर कब्ज बना रहता है, चला जाता है। आँतें नयी होकर अपना काम पूरे तौरसे करने लगती हैं।

दूधके इस सुविस्तृत प्रभावका कारण क्या है? यही कि हमारे शरीरके लिये आवश्यक प्रत्येक पदार्थ इसमें है। वे सब चीजें इसमें हैं कि जिनसे हमारा शरीर बढ़ता, पनपता एवं सुपुष्ट होता है। यही नहीं, इसमें वे औषध-गुण भी हैं, जो विकारको निकालकर रक्तको शुद्ध एवं शरीरकी कमीको पूरा करते हैं।

दूधके तत्त्व

पुष्ट करनेवाले पदार्थोंको लीजिये। दूधकी चीनी इतनी हल्की और सद्यः बलकारक होती है कि वह पचा हुआ भोजन कहलाती है। 'सद्यः प्राणकराणि षट्' इसीलिये तत्काल बल देनेवाली छः चीजोंमें दूधकी भी गिनती है। इसकी चिकनाईके समान सुपाच्य चिकनाई दुनियामें दूसरी नहीं होती। इसका प्रोटीन वीर्यसे मिलता-जुलता है।

रक्तको विकारहीन करने और उसकी कमीकी पूर्ति करनेवाली कौन-सी चीज इसमें नहीं है? दूधका मूत्रल होना सर्वविदित है। यह स्वेदकारक होता है और बड़ी आँतोंके ऐसे कृमियोंका, जिनके कारण अनेक रोग होते हैं, यह विशेष रूपसे संहारक है।

विटामिन और क्षारोंकी तो दूध खान ही है। लोग यह तो जान गये हैं कि हमारे भोजनमें विटामिन और क्षार दोनों चाहिये, पर कितना? इसका उत्तर दूधमें ही मिलता है। अमेरिकाके प्रसिद्ध प्राकृतिक डाक्टर लिंडलार एम०डी०का कहना है कि दूध-सा संतुलित भोजन दूसरा नहीं है। यही एक भोजन है कि जिसमें प्रकृतिने शरीरके लिये सभी तत्त्व जमा कर दिये हैं। अतः दूधको भोजनका मापदण्ड (गज) बनाना चाहिये। ज्यों-ज्यों भोजनसम्बन्धी अनुसन्धान होते जाते हैं, भोजनमें अनेकानेक तत्त्वोंकी आवश्यकता सामने

आती जाती है, त्यों-त्यों यह भी मालूम होता जाता है कि वे सभी तत्त्व दूधमें मौजूद हैं। भोजनसम्बन्धी आजतककी खोजमें दूध सर्वश्रेष्ठ माना जा चुका है।

दुग्ध-कल्प और रोग

दूधसे कौन-कौन रोग जाते हैं इसकी तालिका तो बहुत लंबी होगी। फिर भी ऐसे रोग जिनकी चिकित्सा दुग्ध-कल्पद्वारा सफलतापूर्वक की गयी है, उनमेंसे कुछ नाम ये हैं—हर प्रकारका स्नायुदौर्बल्य एवं इससे सम्बन्धित रोग अर्थात् निद्राभाव, शरीरके किसी अङ्गमें स्नायुसम्बन्धी दर्द, सिर-दर्द, आमाशय एवं आँतोंका कार्यशैथिल्य; आमाशय एवं आँतोंके घाव; अम्लता; आमाशय, आँतों, मूत्राशय अथवा गर्भाशयका स्थानच्युत हो जाना; मुहाँसे; फोड़े-फुंसियाँ; पक्षाघात; त्वचाका खुरदरापन; उकवत, रक्ताभाव; पित्ताधिक्य; श्वास-नलीके रोगः पुराना कब्ज; पुराना अतिसार, आँव; संग्रहणी; दमा; धमनियोंका कड़ापन, बवासीर; आन्त्रपुच्छसम्बन्धी रोग, गठिया; गर्भाशय एवं मासिक-धर्मसम्बन्धी रोग; श्वेत प्रदर; नपुंसकता; यकृत्की खराबी; मूत्राशयमें पथरी पैदा होना; मधुमेह; आरम्भिक यक्ष्मा; अफीम, भाँग, शराब वगैरहकी आदत; रक्तचापकी कमी अथवा आधिक्य।

रोगोंकी इस सूचीपर दृष्टि डालनेसे किसीको भी यह प्रतीत हो जायगा कि दुग्ध-कल्प ऐसी बहुत-सी अवस्थाओंमें काम करता है, जिन्हें रोग कहते हैं, पर वस्तुतः सभी रोग रक्त-सञ्चालनमें किसी-न-किसी प्रकारकी गड़बड़ी पैदा होनेके कारण ही होते हैं, जिसमें कहीं तो रक्त इकट्ठा हो जाता है तो कहीं रक्तका अभाव हो जाता है फिर शरीरसे गंदगी निकल नहीं पाती और वह शरीरके किसी अवयवमें रुककर उसे कमजोर एवं रोगी बनाती है। इस गंदगीका प्रभाव दूसरे अङ्गोंपर भी पड़ता है और शरीर अपनेको शुद्ध रखनेके प्रयासमें इसके कारण थकता जाता है।

यदि रक्त शुद्ध रहे तो चेचक, मियादी बुखार-सी फैलनेवाली बीमारियाँ नहीं लग सकतीं, पर कितनोंका रक्त शुद्ध रहता है! अतः ये बीमारियाँ लगती हैं। इन्हें रोकनेको जो टीका लिया जाता है अथवा इनके दूर करनेके लिये जो दवा दी जाती है उससे रक्तके क्षारोंका समन्वय बिगड़ जाता है। अतः रोग जानेके बाद भी शरीर पहले-जैसा स्वस्थ नहीं हो पाता। इस दशामें भी अनेक रोग होते हैं। इस समय पैदा हुए रोगोंको, शरीरकी इस कमजोर दशाको दूध-सा सुपाच्य, पुष्ट एवं क्षारपूर्ण खाद्य ही सुधार सकता है।

शरीर रोगी एवं कमजोर पैत्रिक रोगोंके कारण हो गया हो अथवा किसी रोगविशेष या दवाके अधिक प्रयोगके कारण; उसे निर्मल, निरोग, सुदृढ, सतेज, सलवण एवं कान्तिमय बनानेमें दूधकी समता करनेवाला इस मृत्युलोकमें अन्य खाद्य अथवा औषध नहीं है।

बहुत ही कम ऐसे रोग हैं जो दूधसे न जाते हों या वशमें न आते हों। स्नायुदौर्बल्य अर्थात् चिन्ता करते रहने, छोटी-छोटी बातोंको बहुत बड़ी समझने, किसी कामको करनेका अपनेमें साहस न पाने, बाधाओंको देखकर घबड़ा जाने, उद्विग्न, भयभीत रहने आदि-जैसे स्नायुसम्बन्धी रोगोंमें दूध रामबाण है। कब्जको, जो प्रत्येक रोगका सरदार होता है, दूध शीघ्र और स्थायी रूपसे मिटाता है।

दुबलेपनकी तो दूध एकमात्र दवा है। इसके छः-सात सप्ताहके कल्पसे ही दससे बीस पौंड और कभी-कभी तो तीस पौंडतक वजन बढ़ना साधारण बात है। जो दुबले हैं और किसी भी तरहसे अपना वजन नहीं बढ़ा पाते वे दुग्धकल्पसे रोग खोनेके साथ-साथ अपना वजन भी आसानीसे बढ़ा सकते हैं। साथ ही दूधकी वजन बढ़ानेकी सुनिश्चित शक्तिके आधारपर लंबा फलाहार या लंबा उपवास भी सहजमें ही किया जा सकता है; जिसकी दुग्धकल्पकी पूर्व पीठिकाकी भाँति प्रायः आवश्यकता हुआ करती है।

जलोदर बहुत भयङ्कर रोग समझा जाता है। इसमें अक्सर वैद्य-डाक्टर रोगीको कम-से-कम पानी पीनेको देना चाहते हैं। पर इस रोगमें भी दुग्ध-कल्प बहुत तेजीसे काम करता है। अक्सर ऐसे रोगीको कल्पके आरम्भिक दिनोंमें जितना वह दूध पीता है उससे दूना पेशाब आता है, जिसकी वजहसे उसका जलोदर शीघ्र जाता है। ऐसे रोगीको मक्खन निकाला हुआ दूध देना ज्यादा अच्छा रहता है।

रक्तचापके न्यूनाधिक्यसे लोग किसी तरह पिंड नहीं छुड़ा पाते और हमेशा लकवा लग जाने अथवा हृदयकी गति रुक जानेके खतरेके कारण चिन्तित रहते हैं। दूध रक्तचापके आधिक्यमें रक्तको शुद्ध कर एवं धमनियों

तथा शिराओंको उचित लचीलापन प्रदान कर रक्त-चाप घटाता है और रक्तचापकी कमीमें रक्तको बढ़ाकर एवं उसके तत्त्वोंकी कमीको पूरा कर रक्त-चाप सम करता है।

दमा जुकामसे पैदा होता है और इस जुकामका प्रभाव नाक, गले, फेफड़ों, आमाशय एवं आँतोंकी श्लैष्मिक कलाओंतकपर पड़ सकता है; फिर विशेष अङ्गके नामके अनुसार रोगका भी नाम पड़ता है। दूधके प्रयोगसे जब नूतन रक्त शरीरमें बनने लगता है तो सारे शरीरकी श्लैष्मिक कलाएँ सशक्त होने लगती हैं एवं अपनेको नीरोग कर पाती हैं। इस प्रकार श्लैष्मिक कलासम्बन्धी दमा हो या कोई अन्य रोग, चार-पाँच सप्ताहका दुग्ध-प्रयोग उन्हें आसानीसे हरता है।

कुछ लोग हमेशा ऊँघते-से रहते हैं, उन्हें सुस्ती घेरे रहती है, सिरदर्द होता रहता है और उनपर घबड़ाहट एवं प्रत्येक कार्यसे विरसताके आक्रमण अक्सर होते रहते हैं। भोजन करनेके बाद उनकी सुस्ती और बढ़ जाती है, उस समय बात कर सकना उनके लिये कठिन हो जाता है, उनकी जिह्वापर हमेशा सफेदी चिपकी रहती है। साँस एवं पसीनेसे बदबू आती है। उनकी इस दशाका कारण पुराना कब्ज होता है, जो बड़ी आँतोंके अन्तिम छोरसे शुरू होकर छोटी आँतोंतकपर प्रभाव जमा लेता है। जिसके कारण जो भोजन किया जाता है, उससे कुछ सामान आमाशय एवं छोटी आँतोंका कुछ भाग ही ले पाता है, शेष भोजनके निकालनेमें शरीर व्यर्थ थकता रहता है। ये सारे लक्षण दुग्ध-कल्पद्वारा दो-तीन दिनके अंदर चले जाते हैं एवं कल्पके अन्ततक तो वे शरीरको स्थायी रूपसे छोड़ जाते हैं।

गठियाके बहुतसे प्रकार हैं और बहुतसे नाम भी। यहाँ उनके विस्तारमें जानेकी जरूरत नहीं, पर किसी तरहका गठिया क्यों न हो, दूध उसे निश्चितरूपसे दूर करता है। दुग्ध-कल्प शुरू होते ही गठियाके प्रायः प्रत्येक रोगीमें गठियाके सारे लक्षण तीव्र हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि दुग्धकल्पमें रक्तका सञ्चालन बढ़ जाता है पर वह तभीतक, जबतक कि रक्त शुद्ध हुआ नहीं रहता। कष्टके बढ़नेपर भी यदि दूध पीना बंद न किया जाय तो दर्द १२ से २४ घंटेके अंदर चला जाता है और फिर पाँच-चार दिन बाद लौटता है, पर इस समय दर्द पहलेसे बहुत हल्का होता है। इस प्रकारके दौरे सारे कल्पमें रोगीपर पाँच-चार होते हैं पर प्रत्येक दौरा पहलेवाले-से हल्का ही होता जाता है।

सूजाक और गर्मीका विष दूर करनेमें कोई ओषधि समर्थ नहीं है। इन रोगोंका प्रभाव रोगीके बच्चोंमें भी देखनेमें आता है। यदि इन रोगोंके विषको कोई भी जला सकता है तो वह है लंबा उपवास। लंबे उपवाससे जब रोगी दुर्बल हो जाता है उस वक्त दुग्धका कल्प रोगीके शरीरमें शुद्ध रक्त उपजानेके साथ-साथ शीघ्र वजन बढ़ाता है। और यदि उपवास इतना लंबा न हुआ कि इन रोगोंका विष पूरा-पूरा चला जाय तो दूध अपने मूत्रल, स्वेदकारक गुणके कारण बचा हुआ कार्य स्वयं पूरा करता है।

दुग्धकल्पद्वारा सुनिश्चितरूपसे लाभ जितना जननेन्द्रियको मिलता है उतना शरीरके किसी अन्य अङ्गको नहीं। दूध स्नायुओंका सर्वश्रेष्ठ भोजनप्रदाता है और स्नायुओं एवं जननेन्द्रियका सम्बन्ध बहुत ही निकटका है। अतः स्नायुओंको शक्ति मिलनेके साथ-साथ जननेन्द्रियकी भी सभी कमजोरियाँ चली जाती हैं।

मट्ठेके कल्पको दुग्ध-कल्पके अन्तर्गत ही समझना चाहिये। बहुतसे रोगोंमें दोनोंका कल्प समान रूपसे गुणकारी है, पर मधुमेह एवं संग्रहणीके रोगीको मट्ठेका ही कल्प कराना चाहिये। मधुमेहके रोगीको दूधकी चीनी नहीं चाहिये, वह दूधके जमनेमें खटाईमें बदल जाती है। संग्रहणीके रोगीकी आँतोंमें कई प्रकारके कृमि पैदा हो जाते हैं। उन्हें इस खटाईके कारण लैक्टिक एसिड बैसिली नामक कृमि नष्ट करके आँतोंको नीरोग कर शरीरको स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। मट्ठा शुरू करानेके पहले जहाँ मधुमेहके रोगीके मूत्रको शर्कराविहीन बनानेके लिये कई दिनोंके उपवासकी जरूरत होती है वहाँ संग्रहणीका रोगी प्रायः पहले दिनसे ही मट्ठा पीना आरम्भ कर सकता है।

यक्ष्माके रोगीके लिये एक विशेष बात ध्यानमें रखनेकी है कि उसके लिये जितना दूध आवश्यक है, उतनी ही धूप, शुद्ध वायु एवं आराम भी। यक्ष्माके रोगी, चाहे यक्ष्माका आक्रमण उनके फेफड़ेपर हुआ हो, चाहे आँतों अथवा हड्डीपर, एवं और भी कई कठिन रोगके रोगी भी चालीस दिनके एक कल्पसे अपने रोगको धो बहानेकी उम्मीद नहीं कर सकते। उन्हें जानना चाहिये कि उन्हें छोटी-मोटी लड़ाई नहीं लड़नी

है, उन्हें तो चलता हुआ एक लंका-संग्राम जीतना है। उनको यदि एक कल्पसे पूरा लाभ न हो तो कुछ दिनतक साधारण भोजन करते रहनेके पश्चात् उन्हें फिर एक कल्प करना चाहिये। उन्हें तो तीन कल्पतक करने पड़ सकते हैं, पर प्रत्येक कल्पमें हालत पहलेसे सुधरती ही जायगी।

रोग बड़ेको हो या बच्चोंको, दुग्धकल्प समान रूपसे सबके लिये उपयोगी है। बच्चे दुग्धकल्प बड़े चावसे करते हैं एवं उन्हें लाभ भी बड़ोंकी बनिस्बत शीघ्र होता है।

यदि गुर्दा अथवा मूत्राशय बुरी तरहसे रोगी हो गये हों तो ऐसे समय दुग्धकल्प करना ठीक नहीं है। दुग्ध-कल्पमें शरीरमें अधिक द्रव लिया जाता है और कमजोर गुर्दे अथवा मूत्राशय उसे उचित रीतिसे बाहर निकालनेमें असमर्थ होते हैं।

शरीरमें कहीं बड़ा ऑपरेशन हुआ हो अथवा कहीं रक्तवाहिनी नलिका फट गयी हो तो उस समय दुग्धकल्प नहीं करना चाहिये।

कुछ ही ऐसे रोग हैं, जिनपर दूधका स्वास्थ्यकर प्रभाव नहीं पड़ता। इनमें मृगी मुख्य है। पर इस रोगमें भी यदि रोगी उपवासद्वारा दुग्धकल्पकी ठीक तैयारी कर सके और दूधकी मात्रा आधी या अधिक-से-अधिक दो तिहाई रक्खे तो उसे भी एक हदतक लाभ होता देखा गया है।

कल्पकी तैयारी

कल्पकी तैयारीके लिये पहली आवश्यक शर्त है दूधके लिये तेज भूख उपजाना, तभी दुग्ध-कल्पके सफल होनेकी आशा की जा सकती है। इसके लिये तीनसे दस दिनतकका उपवास, रसाहार या फलाहार करना चाहिये। यह आरम्भिक शरीर-शुद्धि-करण कई प्रकारके पाजी रोगोंके लिये तो अत्यावश्यक ही है। इनमें जितने ही अधिक दिनोंका उपवास, फलाहार या रसाहार होगा उतना ही उनमें दूधसे अधिक लाभ होगा। रसाहार, फलाहारसे भी करीब-करीब उपवासके समान ही लाभ मिलता है। उपवासकी बिषको निकालनेकी, खासतौरसे इन रोगोंको निकालनेकी शक्ति सुनिश्चित है। उससे पूरा काम लिये बिना दूधके कल्पसे पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता। उपवास करनेपर, केवल पानी पीना चाहिये या पानीमें थोड़ा-थोड़ा संतरा या अनानास-सरीखे फलोंका रस मिलाकर रसाहारमें रोज दिनभरमें सेर सवा सेरतक किसी रसीले फल अथवा तरकारीका रस पीया जा सकता है। तीन दिनका उपवास या पाँच दिनका रसाहार घरपर रहकर आसानीसे किया जा सकता है, पर इससे अधिकके उपवास और रसाहारके लिये किसी विशेषज्ञकी देख-रेखकी जरूरत होती है। लेकिन फलाहार हफ्ते दो हफ्तेका भी हो तो उसके लिये किसी विशेषज्ञकी आवश्यकता नहीं होती। इसमें केवल जाननेकी बात यह है कि फलाहारमें फल दिनमें केवल तीन बार खाये जायँ और इसके लिये संतरा, मौसमी, अनानास, रसभरी, अंगूर, सेव, नासपाती, खरबूजे, पपीता, टमाटर, खीरा और ककड़ी-सरीखे रसीले फल ही चुने जायँ और एक बारमें केवल एक ही प्रकारका फल लिया जाय। इस समय गुनगुने गरम पानीका एनिमा लेना न भूलना चाहिये। यह कल्पकी तैयारीका आवश्यक अङ्ग है। एनिमा लेनेकी विधि यह है—

एनिमा लेनेकी तरकीब बहुत ही सरल है। किसी तख्तेपर या खाटपर लेट जाइये, पैताना सिरहानेसे चार इंच ऊँचा रहे। इसके लिये इस तरहका तख्ता खासतौरसे बनवाया जा सकता है पर पैताना ईंट या किसी चीजकी मददसे ऊँचा कर दिया जा सकता है। जमीनपर लेटकर भी एनिमा लिया जा सकता है। एनिमाका पात्र लेटनेके स्थानसे तीन फीटकी ऊँचाईपर सेर डेढ़ सेर गुनगुना पानी भरकर टाँग दीजिये और चित लेटकर पानी मलद्वारसे जाने दीजिये। पैरोंको सीधा न रखकर जरा उकड़ूँ खींच लेनेसे एनिमा लेनेमें सहूलियत रहेगी। एनिमा लगानेके पहले थोड़ा पानी पहले बाहर निकाल दीजिये ताकि ट्यूबमें यदि हवा हो तो बाहर निकल जाय और जाना जा सके कि पानीका प्रवाह ठीक है। पानी जानेके बाद तीन मिनट रुककर शौच जाना चाहिये। शौच जाते वक्त पानी अपने आप निकलने दिया जाय। उसे निकालनेके लिये जोर न लगाया जाय अन्यथा पानीका प्रवाह नीचे होनेके बजाय ऊपरको हो जायगा और पेट ठीक साफ न हो सकेगा।

पाठक कल्प शुरू करनेके पहले जान लें कि दूध अथवा किसी भी खाद्यके पाचनके लिये ओषजन (Oxygen) की जरूरत होती है। इसलिये रोगीके रहनेका स्थान खुला होना

चाहिये और उसे रातको भी खुली हवादार जगहमें सोना चाहिये।

दूधकी मात्रा

दूधकल्पमें साधारणतः लोग छः-सात सेर दूध पीते हैं, पर हिसाब यह है कि जो जितने फीट लंबा हो उसे उतने ही सेर दूध पीना चाहिये। भूख अधिक होनेपर यह मात्रा सवायेतक बढ़ायी जा सकती है। पर समान लंबाई होनेपर भी स्त्रियाँ पुरुषोंकी बनिस्बत तीन चौथाई ही दूध पी पाती हैं। लड़के-लड़कियोंके लिये भी इसी हिसाबसे समझना चाहिये। पर दूधकी यह मात्रा स्त्री हो या पुरुष—संग्रहणी, आँव, पुराने अग्निमान्द्य, बने रहनेवाले हल्के ज्वरकी अवस्थामें पूरी-पूरी नहीं पहुँच पाती। कुछ लोग मात्रासे आधेतक, पर अधिकतर लोग मात्रासे तीन चौथाईतक पहुँच पाते हैं। इससे घबड़ाना न चाहिये। दूध-मट्ठेका अमृतमय प्रभाव उन्हें भी प्राप्त होगा। हो सकता है कि उनका वजन कल्पमें कम बढ़े, पर रोग जानेपर साधारण भोजनसे उनका वजन शीघ्र पूरा हो जायगा।

दूधको बहुत धीरे-धीरे पीना चाहिये। एक प्याला (चार छटाँक या आठ औंस) दूध पीनेमें पाँच मिनट जरूर लगाने चाहिये। उसे चूस-चूसकर पीना चाहिये, जिसमें मुँहकी काफी लार उसमें मिल जाय।

जिन्होंने तीन-चार दिनका उपवास, रसाहार या आठ-दस दिनका फलाहार किया हो वे पहले दिन दो-दो घंटेपर एक-एक पाव (आठ औंस) दूध पीयें। इससे अधिक लंबा उपवास करनेवालोंको दो-एक दिन केवल फलोंके रसपर रहनेके बाद, और रसाहार करनेवालोंको रसाहारके बाद ही पहले दिन इतने समयके अन्तरपर और इतनी ही मात्रामें दूधमें बराबरका पानी मिलाकर लेना चाहिये। दूसरे दिनसे केवल दूध इसी अन्तरसे लें। तीसरे दिन एक-एक घंटेपर पाव-पावभर दूध लिया जाय। चौथे दिन दूध पचपन-पचपन मिनटपर, और फिर रोज इस समयमें पाँच मिनटकी कमी करते हुए आध-आध घंटेपर दूध इसी (पाव-पावभर) मात्रामें पीने लगें। आध घंटेका क्रम पाँचसे छः सप्ताहतक चलना चाहिये। सात सप्ताह भी चल सकता है पर सातवें सप्ताहमें या कुछ पहले ही लोगोंको दूधसे अरुचि होने लगती है; तब आगे दूध पीना कठिन हो जाता है। इस समय दूधका कल्प समाप्त कर देना चाहिये।

कल्प-समाप्तिके दिन

कल्पके अनुसार ही दोपहरके १-२ बजेतक दूध पीया जाय और फिर शामको पहले दिन संतरे-सरीखा कोई रसीला फल लें, साथमें एक-दो प्याले दूध भी। इच्छा हो तो दोपहरसे शामतकके समयमें भी एक-दो प्याला दूध पीया जा सकता है। प्यास लगनेपर पानी पीयें। कल्पके दिनोंमें भी प्यास लगनेपर पानी जरूर पीना चाहिये। नित्य सबेरे शौच जानेके पहले पानी पीना हमेशा लाभकारी है। दूसरे दिन संतरेके बजाय, सेब-सरीखा कोई ठोस फल लें। तीसरे दिन फलोंके साथ कोई हरी उबली तरकारी, चौथे दिन इनके साथ एक फुलका (चपाती)। फुलका लेनेपर इस समय साथमें दूध नहीं होना चाहिये। चौथे-पाँचवें दिन यही भोजन-क्रम चलाकर छठे दिन साधारण भोजनपर आ जाना चाहिये। जो लोग चाहें और जिन्हें कुछ कमी प्रतीत हो वे दोपहरतक दूध और शामको रोटी-सब्जीके क्रमको इच्छानुसार दो-चार सप्ताह या महीनेतक भी चला सकते हैं। इससे लाभ ही होता है।

साधारण भोजनमें दिनमें तीन बारसे अधिक न खाना चाहिये। बीच-बीचमें यह-वह खाते रहना, मुँह चलाते रहना बुरा है। इससे पाचन-क्रियाको आराम नहीं मिलता और धीरे-धीरे वह बिगड़ती जाती है एवं उसकी शक्ति कम होती जाती है। दुग्ध-कल्प ही वह समय है जब सबेरेसे शामतक खानेकी क्रिया चलती रह सकती है। जब दूध पीया जाता है तब उसमें एक प्रकारका पाचक-रस तैयार हो जाता है। जिसके कारण जब और दूध पेटमें जाता है, तब वह उसे पचानेमें मदद करता है। यह क्रिया दिनभर चलती रहती है और पाचन-शक्तिपर बार-बार पीये गये दूधको पचानेका बहुत थोड़ा भार पड़ता है। इसीलिये दुग्ध-कल्पमें किसी विशेष अवस्थाको छोड़कर कोई भी अन्य खाद्य लेनेकी मनाही है। अतः पेटको भोजन पचानेके बाद उचित आराम मिल जाय, इसके लिये एक बार खानेके बाद पाँच घंटेतक कुछ न खाना चाहिये। इस प्रकार सबेरे, दोपहर, शाम तीन बारसे अधिक न खाना चाहिये। इन तीन भोजनोंमें, अच्छा हो कि सबेरे-शामके दो भोजन अथवा कम-से-कम सबेरेका नाश्ता फल-दूधका जरूर रहे। दोपहर या शामको या दोपहर और शाम दोनों वक्त चोकर-समेत आटेकी रोटी या कन-समेत चावल और हरी तरकारियाँ भरपूर रहें। खीरा, ककड़ी, टमाटर,

गाजर, मूली, पालक, पातगोभी-सी कुछ कच्ची तरकारियाँ भी रह सकती हैं। इनमेंसे दो-तीनको लेकर पतला-पतला काटना चाहिये और कुल मिलाकर एक वयस्कको पावभरकी मात्रामें जरूर खाना चाहिये। कच्ची तरकारियोंमें विटामिन और लवण सुरक्षित रहते हैं, जो हमें रोगसे बचाते हैं।

इस भोजनके साथ थोड़ा मक्खन या घी भी होना चाहिये और भूख बहुत तेज लगती हो तो इसके साथ थोड़ा दूध या दही भी लिया जा सकता है।

दाल वायुकारक एवं बड़ी कठिनाईसे पचनेवाली चीज है। अतः जहाँतक बने दाल नहीं खाना चाहिये। हाँ, मौसममें हरे चने एवं हरी मटरका प्रयोग हो सकता है।

कल्पमें उभाड़

दुग्ध-कल्पमें कभी-कभी कुछ उपद्रव भी खड़े हो जाते हैं। अक्सर मिचली-सी मालूम होती है या दूधसे हल्की-सी अरुचि। इसके लिये कागजी या कोई नीबू बहुत कारगर साबित होता है। मिचली मालूम होनेपर या अरुचि उत्पन्न होनेपर बीच-बीचमें दस-बीस बूँद नीबूका रस चूसते रहना चाहिये।

कुछ लोगोंके मसूढ़े फूल आते हैं। पर यह कष्ट मुँहको साफ रखनेमें आलस्य करनेवालोंको ही होता है। दूध पीना खतम होनेके बाद रोज शामको दातुन कर लेना चाहिये। मसूढ़ोंमें पीड़ा पैदा हो तो पहले गरम, फिर ठंडे पानीसे कुल्ला करना चाहिये। पहले एक मिनट गरम पानीका कुल्ला और फिर इससे आधी देरतक ठंडे पानीका। इस क्रमको तीन-चार बार दोहराना चाहिये।

दूध पीना आरम्भ करनेपर अक्सर स्वप्न-दोषकी शिकायत बढ़ जाती है। इससे घबड़ाना न चाहिये। स्वप्न-दोषसे कुछ हानि जरूर होगी पर दुग्ध-कल्पसे जो शक्ति बढ़ती है उसके सामने वह हानि नगण्य है। इसे कम करनेके लिये दूध पीना सोनेके तीन घंटे पहले समाप्त कर लेना चाहिये। ऐसी हालतमें दूध पीना कुछ सबेरे शुरू किया जा सकता है।

कभी-कभी बदनमें दर्द भी पैदा हो जाता है। यह कुछ घंटों या एक-दो दिनसे ज्यादा नहीं ठहरता। इसके लिये गरम पानीका नहान बहुत लाभदायक है, जिसका वर्णन आगे किया जायगा।

यदि दूध पीते समय ज्वर आ जाय तो दूध पीना बंद करके उपवास करना चाहिये और ज्वर जानेके बाद भी, एहतियातन एक दिन अधिक उपवास करके फिर दूध पीना शुरू करना चाहिये। प्रत्येक तीव्र रोगकी दवा, वह ज्वर हो या और कोई, उपवास ही है। इस वक्त खाकर नहीं, उपवासद्वारा ही रोगके निराकरणमें शरीरकी मदद की जा सकती है।

दुग्ध-कल्पमें कब्ज भी होता है। दूधकी मात्रा पूरी न होनेतक तो यह अधिकतर लोगोंको होता ही है। इसके लिये करीब सेरभर पानीका एनिमा लेते रहना चाहिये। दूधकी मात्रा पूर्ण होनेपर भी कब्ज न जाय तो सबेरे दूध पीना आरम्भ करनेके बीस मिनट पहले आध पाव संतरेका रस पीना चाहिये और फिर बादको दूधकी तीन-चार खूराकोंके दस-दस मिनट बाद प्रत्येक बार एक-एक छटाँक रस लें। इससे कब्ज जायगा। इससे भी काम न चले तो करीब दस बजे और चार बजेके दूधकी दो खूराकोंको छोड़कर उनकी जगह संतरा, सेब, नासपाती, शरीफा, बेल वगैरहमेंसे कोई एक फल पाव-आध पावकी मात्रामें लेना चाहिये। इनकी जगह एक छटाँक किशमिश, अंजीर या मुनक्का भी लिया जा सकता है। सूखे फलोंको इनके वजनके दूने पानीमें दस-बारह घंटेतक भिगोना जरूर चाहिये। फलोंके प्रयोगके बाद भी रोज एनिमा लेनेकी जरूरत हो तो बेखटके लें। दुग्ध-कल्पमें कब्ज रह सकता है, पर इस कल्पका अन्तिम असर यह जरूर होता है कि इससे पुराने-से-पुराना कब्ज भी जाता रहता है। कल्पमें रोज एनिमा लेना पड़े तो पाव-डेढ़ पाव ठंडे पानीका एनिमा लेना काफी होगा। इस पानीको दस मिनट रोकना चाहिये।

कुछ लोगोंको दूध पीते समय पतले दस्त आने लगते हैं। यह अक्सर उन्हें ही आते हैं, जिन्हें किसी-न-किसी प्रकारकी पुरानी संग्रहणी होती है। अन्य लोगोंका दो-तीन दिनतक पेट चलकर बंद हो जाता है; टट्टी बँध जाती है और ठीक होने लगती है। टट्टी लगनेपर दूधकी मात्रा आधी कर देनी चाहिये, इससे अक्सर टट्टी बँध जाती है और फिर दूध धीरे-धीरे बढ़ाया जा सकता है। दूध कम करनेपर भी काम न चले तो साधारणतया दो-ढाई घंटेपर दूधकी एक खूराकके साथ एक खजूर खानेसे टट्टी बंद हो जाती है। यह खजूर धीरे-धीरे चुभलाकर मुँहकी लारके साथ मिलाकर खाना चाहिये। यदि फिर भी कोई सुधार न मालूम हो तो दूधकी जगह मट्ठा लेने लग जाना चाहिये। मट्ठा भी वही लाभ पहुँचावेगा, जो दूध पहुँचाता है। हाँ, उबलनेसे दूधके कुछ तत्त्व जल जाते हैं, उनकी पूर्तिके लिये मट्ठा पीना

समाप्त करनेपर रोज शामको आध पाव संतरेका रस पीना चाहिये या एक कागजी नीबूका रस चूसना चाहिये ।

दूध पीते वक्त प्रायः सभीको अधिक पेशाब होता है। कई रोगी तो प्रत्येक आध घंटेपर पेशाब करने जाते हैं। पेशाबकी यह अधिकता स्वाभाविक है। इससे डरनेकी जरूरत नहीं है कि गुर्दा खराब हो जायगा। दुग्ध-कल्प-द्वारा कइयोंके ऐसे गुर्दे सुधरे हैं, जिनके लिये डाक्टरने ऑपरेशन कराना आवश्यक बताया था।

ऐसे रोगी जिन्हें पहले गंदला, पीला, भारी, बदबूदार पेशाब होता है, उन्हें भी कल्पके दूसरे-तीसरे दिनसे पेशाब साफ होने लगता है और वह हल्का, पीला या करीब-करीब पानीके रंगका-सा बिना किसी बदबूके आने लगता है।

दुग्ध-कल्पमें कई रोगी रातको सोते समय पसीनेसे नहा उठते हैं, जिससे उन्हें अपने कपड़े बदलनेकी जरूरत पड़ जाती है। कई रोगियोंके पसीनेसे, खासतौरसे गठियाके रोगीके पसीनेसे बड़ी बदबू आती है। आरम्भके तीन-चार दिनोंतक ऐसे रोगीका कमरा बूसे भरा रहता है, पर ज्यों-ज्यों दूध शरीरकी गंदगीको निकालता जाता है, बू भी कम होती जाती है।

पसीनेकी अधिकतासे भी डरनेकी जरूरत नहीं है। यह वह पसीना नहीं है जिससे खून पतला पड़ जाता है। दुग्ध-कल्पमें यक्ष्माके रोगीको भी ऐसे पसीनेसे डरनेकी जरूरत नहीं है। कल्पमें जब पाँच-छः सेर दूध पीया जा रहा है तब शरीरमें गया द्रव अन्य मार्गोंपर जोर कम करनेके लिये शरीरसे पसीनेके रूपमें भी निकलनेकी कोशिश करता है।

दुग्ध-कल्प करते समय स्त्रीके रजस्वला होनेपर उन्हें कुछ कष्ट होता है। ऐसी स्त्रियोंको, जिनके मासिकसम्बन्धी कोई गड़बड़ी होती है, यह कष्ट विशेष रूपसे होता है। ऐसी दशामें उनके लिये यह कष्ट सह जाना ही अच्छा है। पर यदि पीड़ा अत्यधिक हो तो वे दूधकी मात्रा आधी या इससे कम करके पीड़ासे तत्काल छुटकारा पा सकती हैं। मासिकका समय समाप्त होनेपर दूधकी मात्रा पूर्ववत् कर लेनी चाहिये।

दूध पीना आरम्भ करनेपर जिनकी नाड़ीकी गति मन्द रहती है, वह बढ़ जाती है। सुस्त हृदय तेजीसे काम करने लगता है। रक्तचाप यदि अधिक हुआ तो कम, और यदि कम हुआ तो अपने उचित चापकी ओर बढ़ने लगता है। यह सब शुभ लक्षण हैं, दुग्ध-कल्पके प्रभावके अन्तर्गत हैं।

मट्ठा बनानेकी विधि

धारोष्ण दूध कच्चा भी जमता है, पर एक उफानका दूध ही जमाना ठीक होगा। दही जमाकर, सेर दही पीछे पाव पानी मिलाकर, मथ लेना चाहिये जिसमें पानी दहीमें पूर्णतया मिल जाय। दहीसे मक्खन निकालनेकी जरूरत प्रत्येक रोगीके लिये नहीं होती। जिन्हें पुरानी संग्रहणी या पुराने आँवका रोग होता है, उन्हें आरम्भमें अवश्य मक्खन निकालकर ही मट्ठा लेना चाहिये और मट्ठेको पतला करनेके लिये पानी भी वे सेरमें पावके बदले बराबरका मिला सकते हैं। पर धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों दस्त बँधता जाय एवं रोगीकी भूख माँगती जाय, त्यों-त्यों पानीकी मात्रा सेर पीछे पावतक लानी चाहिये एवं घी निकालना कम करते जाना चाहिये। पानी कम करना एवं मक्खन निकालना बंद करना—ये दोनों कार्य एक साथ नहीं करना चाहिये। पहले पानी कम किया जाय, फिर मक्खन निकालना बंद किया जाय। ये दोनों काम कई रोगियोंमें पाँच-सात दिनोंमें ही हो जाते हैं, पर कइयोंमें पंद्रह-बीस दिनतक लग जाते हैं। चतुर मनुष्यको रोगीका बलाबल देखकर यह कार्य धैर्यपूर्वक करना चाहिये। जल्दबाजी करनेसे मट्ठेसे भी दस्त लग सकते हैं और उसकी मात्रा और भी कम करनी पड़ सकती है। ऐसा करना पड़ ही जाय तो घबड़ाना न चाहिये। अन्तमें मट्ठेसे निश्चित रूपसे लाभ होगा, ऐसा विश्वास रखना चाहिये।

दूध दो वक्त जमाना चाहिये। रातका जमाया सबेरेसे दोपहरतक और सबेरेका जमाया दोपहरको तैयार हो जाय, जो शामतक चले। अधिक जामन डालने, खट्टा जामन डालने, जिस बर्तनमें दही जमाया जाय उसके मुँहको पतले कपड़ेसे बाँधनेके बाद कंबलसे लपेटकर किसी बंद जगहमें रखने या आलमारीमें बंद करनेसे दही जल्द जम जाता है। तीन-चार घंटेमें ही दही आसानीसे जमा लिया जा सकता है। जाड़ेके दिनोंमें ही विशेष विधियोंकी आवश्यकता पड़ती है। गरमीके दिनोंमें तो दूध सहजमें एवं जल्दी जम जाता है।

दूध या मट्ठा किसी शीशे, कलई किये हुए बर्तन या मिट्टीके बर्तनमें रखना चाहिये। इन बर्तनोंको सोडा या

राखसे रोज अच्छी तरह साफ करते रहना चाहिये। मिट्टीके बर्तनको अच्छी तरह धोकर कड़ी धूपमें तीन-चार घंटे रखने अथवा आगपर थोड़ी देर रखकर अच्छी तरह गरम कर लेनेसे वह साफ हो जाता है।

दूधकी हिफाजत

दूध कच्चा ही पीना चाहिये। इसके लिये अच्छा हो कि गाय सबेरे, दोपहर और शाम तीन बार दुही जाय। पर यह सम्भव न होनेपर दो बारके दूधसे भी काम चल सकता है। शामको जल्द दूध प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिये। जाड़ेमें सबेरेका दुहा दूध शामतक बहुत मजेमें चलता है। गरमीमें भी दूधभरे बर्तनोंको ठंडे पानीसे भरी मिट्टीकी नाद या किसी बर्तनमें रखकर दूधको बिगड़नेसे बचाया जा सकता है। जिस बर्तनमें दूध रक्खा जाय उसका मुँह किसी साफ पतले कपड़ेसे ढक दिया जाय कि हवा आती-जाती रहे। इसपर भी दूध खराब होनेका डर हो तो सबेरे दस-ग्यारह बजेतक कच्चा ही पीया जाय। फिर उबाला हुआ। सबेरे दूध आनेपर दस बजेके बाद उपयोगमें आनेवाले दूधमें सेर पीछे आध पाव पानी मिलाकर उसे एक-दो उफान देकर उतार लिया जाय और ठंडा करके किसी ठंडी जगहमें रख दिया जाय। इसका उपयोग शामको कच्चा दूध आनेके पहलेतक किया जा सकता है। पहले कहे अनुसार गरम किया दूध प्रयोगमें लानेपर आध पाव संतरेका रस या एक कागजी नीबूका रस दिनमें एक बार जरूर लेना चाहिये।

कई बार गरम किया हुआ दूध भी शामतक बिगड़ने लगता है—यह दूध वही होता है जो पूरी तरह उबाला नहीं जाता। बिगड़नेसे बचानेके लिये दूधको उबालनेमें सावधानी रखनी चाहिये। दूध ठंडा करते समय दूधपर आयी मलाई दूधमें मिल जाती है। यदि रखनेपर कुछ मलाई आ जाय तो उस मलाईका उपयोग रोगीके लिये न करना ही अच्छा है। मलाई निकाल देनेसे भूख अधिक लगने लगे तो पाव-आध सेर अधिक दूधका प्रयोग किया जा सकता है।

दूध कैसा हो ?

दुग्ध-कल्पकी सफलता बहुत कुछ दूधपर ही निर्भर करती है। अतः दूधके बारेमें बहुत सजग रहना चाहिये। कल्पके लिये केवल घास-पात खाकर रहनेवाले पशुका दूध अन्न, खली, खूदी खानेवाले पशुकी अपेक्षा ज्यादा लाभकर होता है। इसमें चिकनाई कम होनेके कारण यह हल्का होता है एवं इसमें विटामिन, क्षार और ओषधिगुण अधिक रहते हैं। अतः जहाँतक हो सके पशुको घास-भूसेपर ही रखना चाहिये। गेहूँका चोकर, दालोंकी भूसी और मिलती हो तो गाजर भी पशुको दी जा सकती है।

सभी रोगोंमें गायका दूध सर्वोत्तम है। क्षयके रोगीके लिये बकरीका दूध अधिक लाभकर है। भैंसका दूध बहुत भारी होनेके कारण कल्पके कामका नहीं है। भैंसका दूध लेना ही पड़े तो आधे दूधका क्रीम जरूर निकलवा लेना चाहिये। मट्ठा बनाया जाय तो रोगीकी पाचन-शक्तिको देखते हुए बिलोकर आधे या अधिक या पूरे दहीसे मक्खन पूरा-पूरा निकाल लेना चाहिये। मक्खन निकाला हुआ दूध यदि जमाया जाय तो फिर दहीसे मक्खन निकालनेकी जरूरत नहीं रहेगी। ऐसा दूध बहुत बढ़िया जमता है।

कई लोग ठंडे दूधके बजाय गरम दूध पीना ज्यादा पसंद करते हैं और जाड़ेके दिनोंमें तो प्रायः सभी रोगी दूधकी दो-चार खूराक गरम पीना ही चाहते हैं। दूधकी दो-चार अन्तिम मात्राओंको गरम कर लेना कल्पमें हुए कब्जको हटानेमें कई बार सहायक होता है। पर दूधको सीधे आगपर न रखकर गरम पानीके द्वारा गरम करना उत्तम होगा। एक लोटे या छोटी बटुलीको आधी पानीसे भरकर आगपर रख दिया जाय और जब पानी उबलने लगे तो गिलासमें दूधकी मात्रा डालकर गिलास बटुलीमें रख दिया जाय। दो-तीन मिनटमें दूध गरम हो जायगा। इस रीतिसे दूध खौलाया भी जा सकता है, पर दूध चायकी तरहका गरम नहीं, साधारण गरम ही पीना ठीक होगा। आगकी सिगड़ी या चूल्हा रोगीके कमरेमें न रखकर बाहर रखनेका इंतजाम करना चाहिये।

कल्पमें विश्राम

दुग्ध-कल्पमें पूर्ण विश्राम करना चाहिये। अधिकतर मौन, कम पढ़ना, कम-से-कम चलना। शौच आदिके लिये नजदीक ही इंतजाम रहना चाहिये। दुग्ध-कल्पमें वस्तुतः दूध-पीते बच्चेकी तरह रहना चाहिये। केवल दूध नवजात शिशुका ही भोजन है और उसीकी तरह रहकर दूधसे अधिक लाभकी आशा की जा सकती है। इस तरहके पूरे आरामकी आवश्यकताके पीछे एक बड़ा रहस्य है। शरीरमें एक ही शक्ति है, उसे पढ़नेमें लगायें, चाहे चलनेमें या पचानेमें। उससे एक समयमें एक ही काम अच्छी तरह हो सकता है। क्या आपने देखा नहीं है कि भोजनके बाद तुरंत चलने या

अध्ययन करने बैठनेसे भोजन बड़ी देरमें पचता है, अतः जब दिनभर दूध पीकर पाचनक्रियाको जारी रक्खा जाता है तब सारी शक्ति पाचनमें लगानेके लिये आराम करना बहुत जरूरी है। आराम लेटे-लेटे ही अच्छा होता है। बैठनेमें भी शक्तिका कुछ अपव्यय होता है।

कल्पमें यदि बोलना ही पड़े तो घंटों लगातार बात न की जाय, और पढ़ना ही पड़े तो घंटे-दो-घंटेके अन्तरपर दस-पाँच मिनटके लिये ही पढ़ना बस होगा।

इस तरह आराम करना कठिन नहीं है। जिन्हें आदत पड़ जाती है, वे दूधके दो आहारोंके बीचमें बराबर सोते हैं और दूध पीनेके ठीक समयपर उनकी नींद अपने आप खुल जाती है।

दुग्ध-कल्प समाप्त होनेपर व्यायामका आरम्भ टहलनेसे करना चाहिये, फिर धीरे-धीरे अधिक कठिन कसरतोंकी ओर बढ़ना चाहिये। इस समय श्रमसाध्य कसरतें करना आवश्यक भी है। इनसे दुग्ध-कल्पसे प्राप्त लाभ स्थायी होता है।

पर कसरतसे विमुख रहना सब रोगियोंके लिये एवं रोगकी सब दशाओंमें आवश्यक नहीं है। कल्पके हफ्ते-दो-हफ्ते बीतनेके बाद इच्छा होनेपर रोगी टहलना आरम्भ कर सकते हैं, पर टहलनेकी यह कसरत सबेरे दूध पीना शुरू करनेके पहले समाप्त कर लेनी चाहिये। कई रोगके रोगी और खास तौरसे पाचनसम्बन्धी गड़बड़ीके रोगियोंने कल्पके समय टहलकर कल्पसे लाभ बढ़ा लिया है। ऐसे रोगी धीरे-धीरे प्रातः चार-पाँच मीलतक टहलने लगते हैं और कई तो सात-आठ मील टहलकर भी नहीं अघाते। ज्यों-ज्यों शक्ति बढ़ती जाय त्यों-त्यों टहलना बढ़ानेमें हानि नहीं है।

गरम पानीका नहान

कल्पमें आरामका एक बड़ा साधन गरम पानीका नहान भी है। इसके लिये आदमकद टब*में पहले शरीरतापसे दो डिग्री कम गरम पानीमें लेटना चाहिये और लेटनेपर इसका ताप शरीरतापके समान कर लेना चाहिये। इस पानीमें शुरूमें आध घंटे, फिर नित्य समयमें पाँच-पाँच मिनटकी वृद्धि करते हुए, घंटे भरतक लेट सकते हैं। बीच-बीचमें गरम पानी डालते रहना चाहिये, जिसमें पानीका ताप कम न हो। स्नान समाप्त करनेमें जब पाँच मिनटका समय बाकी रहे तो इतना गरम पानी डाल लेना चाहिये कि पानीका ताप चार-पाँच डिग्री और बढ़ जाय, अर्थात् ९७° फारनहाइटसे शुरू करना चाहिये, पाँच मिनटके अंदर ९८°-९९° कर लेना चाहिये। पर यदि किसीको पानीकी गरमी इतनी बढ़ानेके कारण नहानके बाद सिरमें गरमी या चक्कर-सा प्रतीत हो तो वे सिरको ठंडे पानीसे धो लें एवं जबतक उनका गरम स्नान चलता रहे उस समय सिरपर ठंडे पानीसे भीगी तौलिया रक्खें। एवं बीच-बीचमें उसे ठंडे पानीसे भिगोते रहें। नहानसे निकलकर बदनको पोंछकर कपड़े पहन लें और आराम करें। स्नान लेते समय भी दूध पीयें। बैठनेकी जरूरत नहीं है। दूध टबमें लेटे-लेटे ही पीया जा सकता है।

गरम नहानके अपने निजी लाभ हैं। इससे शरीरके रक्त-संचालनमें समता आती है, प्रत्येक अङ्गको उचित परिमाणमें रक्त पहुँचता है और अङ्ग स्वस्थ एवं सुपुष्ट होते हैं। स्वेद-ग्रन्थियाँ अपना काम तेजीसे करती हैं। त्वचा साफ हो जाती है, थके स्नायुओंको बड़ा आराम मिलता है। वे स्वस्थ और चैतन्य होते हैं। दूध-चिकित्साकी सफलताके श्रेयका एक बड़ा भाग गरम पानीके इस नहानको मिलना चाहिये। पूर्णलाभके लिये इसका इंतजाम करना जरूरी है। जो किसी तरह भी इस स्नानका इंतजाम न कर सकें, वे इस स्नानका अधिकतर लाभ धूपस्नानद्वारा प्राप्त कर सकते हैं। वे सुबह आठ-नौ बजेकी सुहावनी धूपमें १५-२० मिनट खुले बदन लेटें, और फिर ठंडे पानीसे स्नान करें। जाड़ेके दिनोंमें इच्छा होनेपर घंटेभरतक धूपमें रहा जा सकता है। जिस दिन धूप न हो उस दिन गुनगुने गरम पानीसे स्नान भर कर लें।

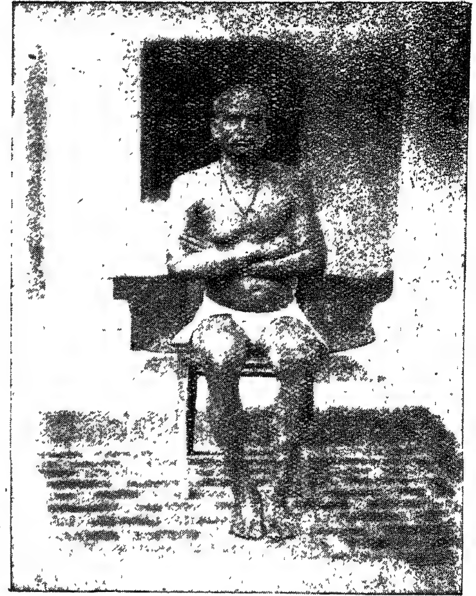
दुग्ध-कल्पके बदलेमें

दुग्ध-कल्पके लिये सात-आठ सप्ताहकी जरूरत होती है, पर कुछ लोग ऐसे हो सकते हैं जो इस तरह कामसे फुरसत न ले सकें। वे दिनमें तीन-चार बारमें इतना दूध पीयें। पर पूरी मात्रा पीना कठिन हो तो आवश्यक मात्राका तीन चौथाई या दो तिहाई पीया जाय। इस प्रकार एक बारमें सेर-डेढ़ सेर दूध पीना होगा। सेर-डेढ़ सेर दूध पीनेमें १०-१५ मिनट लगाने चाहिये, और इसे गरम करके पीना चाहिये। एक साथ इतना ठंडा दूध पीना ठीक नहीं है। दूध शरीरतापके समान गरम होना ही चाहिये, अन्यथा शरीरको उसे पचानेके लिये अपने तापके जितना गरम करनेमें शक्ति खर्च करनी पड़ेगी और दूध देरतक पेटमें पड़ा रहेगा। दूधके इस

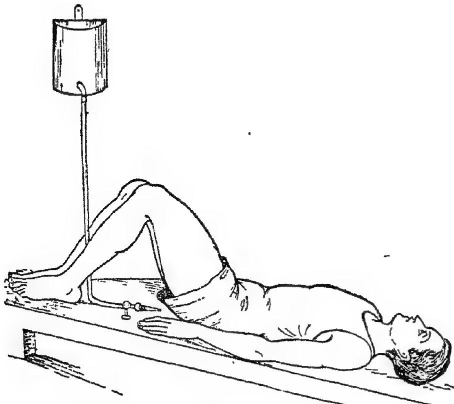
* यह टब तामचीनका बना-बनाया आता है। सीमेंटका बनाया जा सकता है, ईंटकी हौजसे काम चल सकता है।



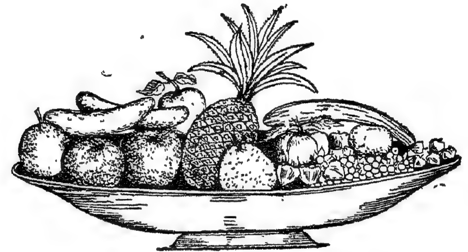
दुग्ध-कल्प शुरू करनेके समय



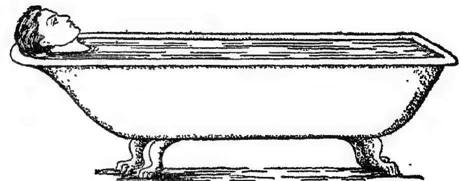
दुग्ध-कल्प पूर्ण होनेके बाद



एनिमा लेनेकी तरकीब [पृष्ठ ४२३

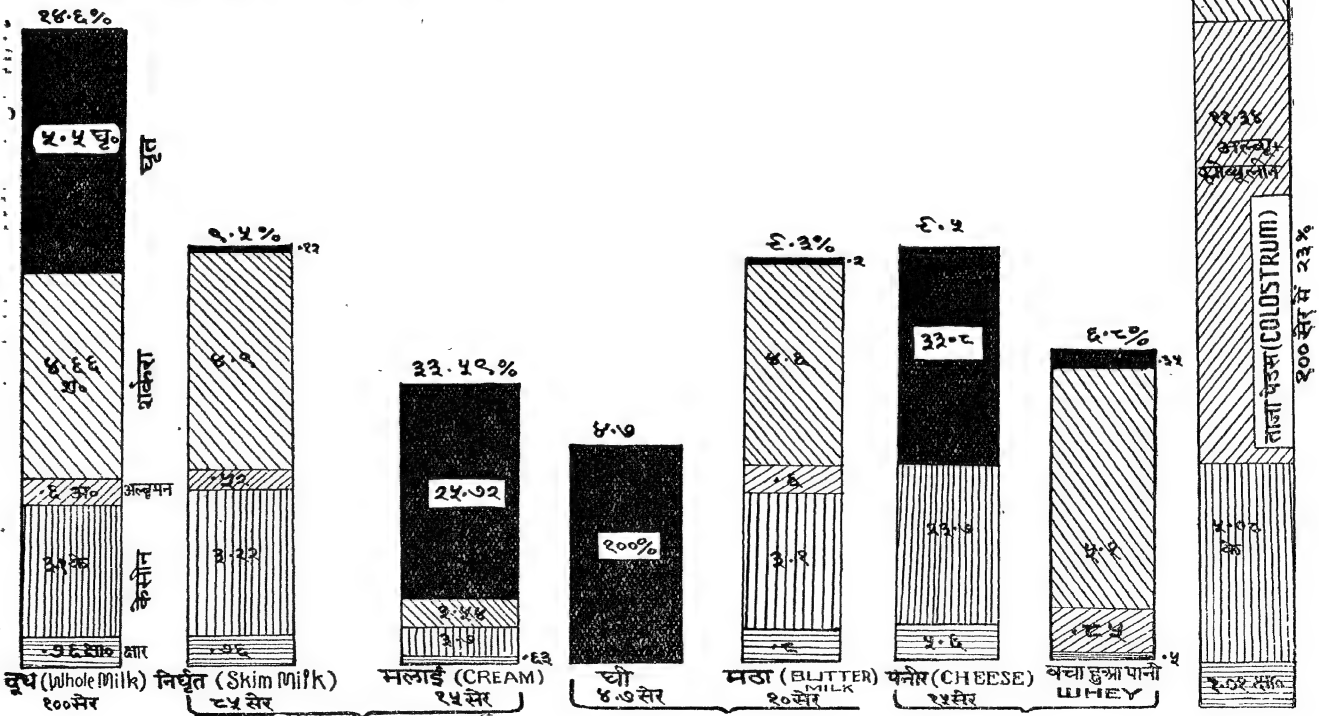


दुग्ध-कल्पकी तैयारीके समय फल
[पृष्ठ ४२३



गरम पानीका नहान [पृष्ठ ४२८

१००सेर दूधसे बने हुए पदार्थों में घन (Solid) तत्त्व



प्रकारके प्रयोगके साथ प्रत्येक बार एक संतरा भी लेना चाहिये। एक दूसरी रीति भी है । इसके अनुसार सबेरे दस-ग्यारह बजे, या दोपहरतक कल्पकी तरह दूध पीना चाहिये और शामको फिर एक बार दूध एवं फलका आहार ग्रहण करना चाहिये। इस विधिमें भी आवश्यकतासे आधा या दो तिहाई ही दूध पीया जा सकेगा। अतः जहाँ कल्प पाँच-छः सप्ताहमें समाप्त हो जाता है, इस विधिमे दूध सात-आठ सप्ताहतक पीनेकी जरूरत होती है।

दुग्ध-कल्पकी यह सरल विधि

स्कूलमें पढ़नेवाले बच्चेकी भी समझमें आनेवाली दुग्ध-कल्पकी इस सरल विधिसे ऐसे-ऐसे भयङ्कर रोग आसानीसे चले जाते हैं; जिनके सामने डाक्टर हार मान लेते हैं, एवं इस विधिसे ऐसे अनगिनत रोगी स्वास्थ्य प्राप्त करनेमें सफल हुए हैं, जो हर तरफसे निराश हो चुके थे एवं जिनका रोग डाक्टर, वैद्य, हकीमोंने असाध्य बताकर उन्हें छोड़ दिया था।

विविध रोगोंके सैकड़ों रोगियोंको कल्प करानेसे—आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरमें—प्राप्त अनुभवके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि मनुष्य-शरीरमें होनेवाले प्रायः सभी जीर्ण रोगोंमें, चाहे उनका सम्बन्ध सारे शरीरसे हो या शरीरके किसी एक अङ्गसे, दुग्ध-कल्प आश्चर्यजनक लाभ करता है।

अक्सर रोगियोंको जब मैंने उन्हें दुग्ध-कल्पकी बात बतायी है तो उन्होंने कहा है कि हमने कभी दूध पीया नहीं; हमें दूधकी गन्धतक अच्छी नहीं लगती; फिर दिनभर दूध पीना तो दूरकी बात है। उनके इस कथनमें ही अक्सर उनके रोगका कारण मिल जाता है और मैंने उन्हें बराबर यही जवाब दिया है कि दुग्ध-कल्पकी इस विधिसे आप दूध अवश्य ग्रहण कर सकेंगे। और जब उनके रोग एवं सुविधाको समझकर उचित रीतिसे उन्हें दूध पिलाया गया है तो दूध-का लाभ उन्हें निश्चितरूपसे मिला है।

दूधसे प्राप्त स्वास्थ्य

दूधसे प्राप्त लाभ स्थायी अवश्य होता है, पर जिन गलतियोंके कारण स्वास्थ्य बिगड़ा था, उन्हींको फिरसे दुहराया जायगा तो स्वास्थ्य फिर बिगड़ेगा। हाँ, हो सकता है कि जिस रोगके लिये दुग्ध-कल्प किया गया था वह रोग न होकर कोई दूसरा रोग हो।



गोमूत्र और गोमयसे रोगनिवारण

गायके मूत्रको गोमूत्र कहते हैं। वैद्यलोग इसका औषधोंमें बहुत उपयोग करते हैं। यह सौम्य और रेचक है। कब्ज हो गया हो, पेट फूल गया हो, डकारें आती हों, मुँह मिचलाता हो, तो तीन तोला स्वच्छ और ताजा गोमूत्र छान-कर आधा माशा नमक मिलाकर पी जाना चाहिये। थोड़ी ही देरमें टट्टी होकर पेट उतर जाता है और आराम मालूम होता है। छोटे बच्चोंका पेट फूलनेपर उन्हें गोमूत्र पिलाया जाता है। उम्रके अनुसार साधारणतः एक वर्षके बच्चे-को एक चम्मच गोमूत्र नमक मिलाकर पिला देना चाहिये। तुरंत पेट उतर जाता है। पेटके कृमियोंको मिटानेके लिये तो गोमूत्रसे बढ़कर कोई दूसरी ओषधि ही नहीं है। दो तोला गोमूत्र चनेके बराबर डीकामालीके साथ मिलाकर प्रातःकाल बच्चेको पिलाया जाय, तो एक सप्ताहमें ही कृमि नष्ट हो जाते हैं। बच्चोंके डब्बे रोगपर भी कुलथीके काढ़ेके साथ गो-मूत्र दिया जाता है। बच्चेकी दो मुट्ठियोंमें जितनी समावे, उतनी कुलथी कूटकर और उसमें बच्चेकी हथेलीके बराबर आकका पत्ता छोड़कर आध सेर पानीमें पकाना चाहिये। जब पानी एक छटाँक रह जाय तब उसे छानकर और उसमें उतना ही गोमूत्र मिलाकर पिलाना चाहिये। तीन दिनमें ही टट्टी-पेशाब साफ होकर पेट उतरने लगता है और सात दिन-में डब्बा रोग अच्छा हो जाता है। (इस रोगमें बच्चेका शरीर फूल जाता है, पेट बढ़ जाता है और नाभि ऊपर आ जाती है)।

पेटकी हर-एक व्याधिपर गोमूत्र रामबाण है। यकृत् या प्लीहा बढ़ गयी हो, तो पाँच तोला गोमूत्र नमक मिलाकर प्रतिदिन पिलानेसे थोड़े ही दिनोंमें आराम मालूम होता है। यकृत् या प्लीहापर गोमूत्रसे सेंक भी किया जाता है। उसकी विधि इस प्रकार है—एक अच्छी ईंट आगमें गरम कर ली जाय। फिर उसपर गोमूत्र छोड़कर गोमूत्रमें भिगोये हुए कपड़ेमें उसे लपेट लिया जाय और उससे नरम-नरम सेंका जाय। इससे यकृत् या प्लीहा घट जाती है। शरीर खुजलाता हो तो कड़वा जीरा गोमूत्रमें पीसकर उसका लेप किया जाय और नीमके पत्ते छोड़कर उबाले हुए पानीसे नहाया जाय। खुजलाहट बंद हो जायगी। गोमूत्रमें बावचीको पीसकर

रातमें कोढ़के सफेद दागोंपर लेप करने और सुबह गोमूत्रसे ही धो डालनेसे कुछ दिनोंमें दाग मिट जाते हैं। पेटके फूलनेपर भी गोमूत्रका सेंक लाभकारी होता है।

यकृत् और प्लीहाके बढ़नेसे उदररोग हो गया हो तो पुनर्नवाके काढ़ेमें आधा गोमूत्र मिलाकर पिलाया जाय, इससे उदररोग अच्छा हो जायगा। इस सम्बन्धमें अक्कलकोटके डाक्टर चाटी अपना अनुभव इस प्रकार बतलाते हैं—'अपनी चालीस वर्षकी नौकरीमें मैंने कितने ही जलोदरके रोगियोंका इलाज किया। उन्हें अंग्रेजी दवाएँ पिलायीं और पेट चीर-कर दो, तीन, चार बार भी पेटका पानी निकाल दिया; परन्तु उनमेंसे अधिकांश रोगियोंकी मृत्यु हो गयी। मैंने सुना और आयुर्वैदिक ग्रन्थोंमें पढ़ा भी था कि इस रोगपर गो-मूत्रका उपयोग बहुत ही लाभकारी होता है, परन्तु मुझे विश्वास नहीं होता था। एक बार एक साधु महात्माने गोमूत्रके गुणोंका बहुत वर्णन करके कहा कि इसका जलोदर-पर बहुत अच्छा उपयोग होता है। तदनुसार चार रोगियों-पर मैंने गोमूत्रका प्रयोग कर देखा। उनमेंसे तीन चंगे हो गये। जो चौथा मर गया, वह मुमूर्षु अवस्थामें ही मेरे पास आया था। जो अच्छे हो गये, उनमेंसे एकका ब्योरा इस प्रकार है—सन् १९१०में जब मैं अक्कलकोट राज्यमें 'चीफ मेडिकल अफसर' था तब मुझे जुन्नर गाँवमें जरूरी कामसे बुलाया गया। वहाँ अप्पण्णा नामक एक तीस वर्षका बढ़ई जलोदरसे आसन्नमरण हो रहा था, उसीका इलाज करना था। रोगी-का सब शरीर फूल गया था। न वह कुछ निगल सकता था, न हिल सकता था, और बड़े कष्टसे साँस लेता था। उसके जीनेकी कोई आशा नहीं बच रही थी। उसे इंजेक्शन देकर शक्तिवर्धक ओषधि खिलायी और पेट चीरकर १६ पौंड पानी निकाल दिया, जिससे वह श्वासोच्छ्वास ठीक तरहसे करने लगा। पंद्रह दिन बाद फिर ऑपरेशन कर १४ पौंड पानी उसके पेटसे निकाला। अब वह अच्छा हो गया और उसके पेटमें फिर पानी जमा नहीं हुआ। पहले दिनसे ही उसे मैं एक नीरोग और बलिष्ठ गायका मूत्र शहदके साथ दिया करता और एक पौंड गोदुग्ध पिलाया करता था। पंद्रह दिन बाद दो पौंड दूध देने लगा। इस इलाजसे एक ही महीनेमें वह चंगा हो गया। मैंने इलाज बंद कर दिया। यद्यपि अब गोमूत्र-सेवनके लिये उससे मैंने नहीं कहा था, तथापि वह बराबर गोमूत्र पीया करता था। उसका विश्वास हो गया था कि गोमूत्रसे ही मेरे प्राण बचे हैं, इस कारण गोमूत्र-सेवनसे वह विरत नहीं हुआ और धीरे-धीरे हट्टा-कट्टा हो गया।

गोमय-माहात्म्य

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वने वने।
तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्॥
तन्मे रोगांश्च शोकांश्च नुद गोमय सर्वदा।

इस मन्त्रसे सिरसे पैरतक गोबर लगाकर स्नान करनेकी श्रावणीकर्ममें विधि है। पञ्चगव्य (दही, दूध, घी, गोमूत्र और गोमय) प्राशन भी श्रावणीमें किया जाता है। आधुनिक शिक्षित लोग इस विधिको घृणित और हेय समझते हैं; परन्तु स्वास्थ्यकी दृष्टिसे पञ्चगव्यका कितना महत्त्व है, इसका उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया है। इस सम्बन्धमें डा० रविप्रताप महाशयने 'विशाल भारत' में एक लेख लिखा था, उसमें आप लिखते हैं—भारतमें अनादिकालसे गोबरका मानवशरीरके लिये ओषधिकी तरह उपयोग किया जा रहा है। परन्तु इस बीसवीं शताब्दीमें यह जानकर इस दिव्यौषधि-का हमने त्याग कर दिया कि यह घृणित, गंदी, आरोग्य-विघातक और दुर्गन्धिमय वस्तु है। यहाँतक कि म्युनिसिपलिटियोंके अधिकारी लोगोंको हुक्म देने लगे हैं कि जमीन गोबरके बदले चूनेसे लीपा करो। आश्चर्यकी बात है कि सहज सुलभ और निसर्गदत्त गोबर-जैसी कृमिनाशक वस्तुको त्यागकर महँगे, कृत्रिम और विदेशी जन्तुनाशक द्रव्योंका हम संग्रह कर रहे हैं।

हिंदूधर्मके प्रायः सभी धार्मिक कार्योंमें गोबरका उपयोग किया जाता है। (गोमयेन प्रदक्षिणमुपलिप्य) इसका कारण भी यही है कि गोबरमें रोगके कीटाणुओंका नाश करनेका गुण विद्यमान है। प्राचीन ऋषि-महर्षि अपनी पर्णकुटियाँ गोबरसे लीपकर स्वच्छ रखते थे। वे वस्तुकी व्यावहारिक उपयोगिता जानकर उसे धार्मिक स्वरूप दे दिया करते थे, जिससे वह समाजमें रूढ़ हो जाय।

इटलीवालोंकी खोज

इटलीके प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० जी० ई० बीगेंडने गोबरके अनेक प्रयोग कर सिद्ध किया है कि ताजे गोबरसे तपेदिक और मलेरियाके जन्तु तुरंत मर जाते हैं। प्रोफेसर महाशयका अनुभव है कि प्राथमिक अवस्थाके जन्तु तो गोबरकी गन्धसे ही मर जाते हैं। गोबरके इस अलौकिक गुणके कारण इटलीके अधिकांश सेनिटोरियमोंमें गोबरका ही

उपयोग करते हैं। इटलीमें अब भी हैजा या अतिसारके रोगीको ताजे पानीमें ताजा गोबर घोलकर पिलाते हैं और जिस तालाबके पानीमें हैजेके जन्तु उत्पन्न हो गये हों, उसमें गोबर डालते हैं। उनका अनुभव है कि इससे हैजेके जन्तु तुरंत मर जाते हैं। गोबरसे फोड़ा-फुंसी, घाव, दंश, चक्कर, लच्चक आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। डा० मैकफर्सनने दो वर्षतक गोबरका संशोधन कर उसका इतिवृत्त 'न्यूयार्क टाइम्स' में छपाया है। उसमें अनेक सिद्धान्त स्थिर कर उन्होंने यह सिद्ध किया है कि गोबरसे बढ़कर जीवाणुनाशक कोई दूसरा उपयुक्त द्रव्य नहीं है। उनका कहना है कि गोबर उसी गायका होना चाहिये, जिसका आहार उत्तम हो और जो नीरोग हो। 'अग्रमग्रं चरन्तीनाम्' इस मन्त्रका भी यही अभिप्राय है।

गाय आरोग्य देवता है

सतपुड़ेके गोंड, भील आदि गोबरका सब कामोंमें उपयोग करते हैं। अपस्मार, चक्कर, मस्तकविकार, मूर्छा आदि रोगोंपर वे गायके दूध या तिलके तेलमें गोबर घोलकर पिलाते और इसीका लेप करते हैं। तेलमें गोबर मिलाकर मालिश करनेसे मज्जातन्तु नीरोग हो जाते हैं। वैद्यलोग क्षयरोगियोंको गायोंके बाड़ेमें सुलानेको कहते हैं। क्योंकि गोमूत्र और गोबरकी गन्धसे क्षयरोगीके शरीरके क्षयजन्तु मर जाते हैं। क्षयरोगीके पलंगको प्रतिदिन गोबर और गोमूत्रके जलसे धो डालना भी लाभदायक होता है। हिंदूलोग गोबर और गोमूत्रसे प्रातःकाल घरके द्वार लीपते हैं। इसका कारण यही है कि दोनों द्रव्य रोगकीट-नाशक हैं। सन् १९३४में मद्रासप्रान्तमें हैजेका प्रकोप हुआ। उस समय जो गोबरके गारोंमें काम करते थे, उनपर हैजेका कोई परिणाम नहीं हुआ। इस अनुभवके अनुसार वहाँ अब वर्षाकालमें सब कामोंमें गोबरका ही उपयोग किया जाता है। वहाँके प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुका है कि आगसे जल जाने या चोटसे घाव होनेपर गोबरके लेपसे अच्छा हो जाता है। खुजली, चकत्ते, ईसब आदि रोग तो गोमूत्र और गोबरके प्रयोगसे बात-की-बातमें अच्छे हो जाते हैं।

सार्वजनिक विषूचिका-प्रतिबन्ध

श्रावणीकर्मके पञ्चगव्य-प्राशनकी विधिमें भी यही उद्देश्य है। आषाढ़-सावनमें नया पानी आ जाता है। इससे हैजेकी सम्भावना होती है। उसीके प्रतिबन्धके लिये पञ्चगव्य-प्राशनका प्रारम्भिक उपचार है। खाद्याखाद्य, पेयापेय, स्पृश्यास्पृश्य आदिका विचार न करनेवाले लोगोंको ही हैजा हो जानेकी अधिक सम्भावना रहती है। इसीलिये धार्मिक प्रक्रियाओं और शुद्धिसंस्कारमें पञ्चगव्य-प्रायश्चित्तका विशेष महत्त्व है।

मद्रासके सुप्रसिद्ध डाक्टर किंग कहते हैं—यह अब प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुका है कि गायके गोबरमें हैजेके जन्तुओं-का संहार करनेकी विचित्र शक्ति है। गायके गोबरका शास्त्रीय रीतिसे पृथक्करण कर, उसका सत्त्व निकालकर उसे जहाँ-जहाँ पानीमें डालकर देखा गया, वहाँकी घनी बस्तीमें भी कहीं हैजा नहीं हुआ। डाक्टरोंने अब सिद्ध कर दिया है कि रोगजन्तु-नाशके लिये गोमयका बहुत ही महत्त्वपूर्ण उपयोग है। [बम्बईके पं० श्रीअप्पा शास्त्री साठेकृत 'घरेलू दवाइयाँ' ग्रन्थसे]

डूबति नैया

खायके घास औ पात सबै
जलपान करैं जहाँ ताल तलैया।
साँझ भये घर आपुहि आवत
कोउ न चाहिय जाहि ढुँढैया॥
है जग देवसरूप गऊ हा!
ताहि सतावत कंस कसैया।
गोवध-टारन यत्न करो, नहिं,
भारतकी अब डूबति नैया॥

(संगृहीत)

दूध तथा घीका बाजार प्राचीन कालसे आजतक

(लेखक—आचार्य श्रीचन्द्रशेखरजी शास्त्री)

गीतामें लिखा है कि खेती, वाणिज्य और गोपालन वैश्योंके स्वाभाविक कर्तव्य हैं। किन्तु आज शहरोंकी बात तो जाने दीजिये, गाँवोंमें भी बहुत कम दरवाजोंपर गौ बँधी हुई देखनेको मिलेगी।

विवाहके समय जो वर-कन्या आपसमें एक दूसरेसे सात-सात वचन माँगते हैं उनमें कन्या कहती है 'घरके घी-दूधपर मेरा अधिकार होगा'। अर्थात् गौओंका दूध निकालना, उसको उबालना या औटाना, उसको कुटुम्बके लोगोंमें बाँटना, उसका दही जमाना, बिलोना, घी निकालना, घीको रखना और घीको घरवालोंको देना यह काम बहूके जिम्मे दिया जाता था। किन्तु आज घरके दरवाजेपर गौ ही नहीं है फिर कहाँ वैश्योंके कर्तव्य और कहाँ स्त्री-पुरुषके वचन। अब तो यह सब बातें लकीर पीटने-जैसी रह गयी हैं।

प्राचीन भारतमें गौ बहुत सस्ती थी और घी भी बेहद सस्ता था। गौका सस्तापन तो इसीसे ज्ञात होता है कि पुराणोंमें अनेकों ऐसे राजाओंका उल्लेख है, जिन्होंने कई-कई लाख गौएँ दानमें ब्राह्मणोंको दीं। यदि उस समय गौओंकी कीमत आजकल-जितनी होती तो उन राजाओंका लाखों गोपुण्य करनेमें पूरा दिवाला निकल जाता। वास्तवमें उस समय गौ बहुत सस्ती थी।

प्राचीन कालमें सर्वत्र गोचरभूमि होनेके कारण गौओंके रखनेमें उनके खानेका न तो खर्चा ही होता था और न उनपर कुछ मेहनत ही पड़ती थी।

आज हम रामराज्यकी प्रशंसा करते हैं, क्योंकि रामराज्यमें कोई भी दुखी न था। सबको जीवनकी आवश्यकताकी वस्तुएँ पर्याप्त परिमाणमें इतनी सस्ती और सुगमतासे मिल जाती थीं कि उस समय भिक्षावृत्ति कोई पेशा नहीं बन सका। रामायण-कालके बाद महाभारत-कालमें भारतीय जीवनका मानदण्ड कुछ विभिन्न प्रकारका हुआ। यद्यपि हमारे पास उस समयके भाव उपस्थित नहीं हैं तो भी तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थाको देखते हुए यह माननेके दृढ़ कारण हैं कि उस समय 'रामराज्य'के मुकाबले चीजें कुछ महँगी हो गयी थीं; किन्तु मौर्य-कालकी अपेक्षा वे पर्याप्त सस्ती थीं।

प्राचीन भावोंका सबसे अधिक अधिकृत वर्णन हमको ईसासे पूर्व चौथी शताब्दीके कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें मिलता है। उस समय ये भाव थे—

चावल	−) मन
तेल	॥) मन
घी	।॥) मन
दाल	−) मन
नमक	)॥ मन
शक्कर	॥=) मन
कपड़ा	−) के पाँच थान

घी एक रुपयेमें एक मन सवा तेरह सेर आता था! हमें तो उस समयके भावोंको पढ़कर आश्चर्य होता है।

यह बात ध्यान देनेकी है कि कौटिल्यके समयमें जीवनका व्यय बहुत सस्ता था। उस समय निर्धन व्यक्तिकी आय ।=) प्रतिमास थी।

महाराजा पृथ्वीराजके समयतक मूल्योंमें अधिक परिवर्तन नहीं हुआ। किन्तु मुस्लिम-सत्ताके भारतमें आनेके साथ-साथ यहाँके सामाजिक जीवनमें बड़ा भारी परिवर्तन हुआ। इस समय गौएँ अधिक मारी जाने लगीं। इससे घी, दूध तथा खेतीसे पैदा होनेवाली वस्तुएँ तेज हो गयीं। यहाँतक कि चौदहवीं शताब्दीमें मुहम्मद तुग़लकके समयमें इब्न-बतूताने अपनी भारतयात्राविषयक पुस्तकमें बंगालमें निम्नलिखित भाव होना लिखा है—

चावल	−)।॥ मन
तिलका तेल	॥≋)॥ मन
घी	१।≋) मन
शक्कर	१।≋) मन
महीन सूती कपड़ा	२)का १५ गज

इस प्रकार कौटिल्य-कालकी अपेक्षा इस समय प्रत्येक वस्तुके दाम कई गुनेतक बढ़ गये थे, केवल चावल सस्ता था, घी इस समय एक रुपयेका २७ सेर साढ़े तेरह छटाँक था, अर्थात् मौर्य-कालकी अपेक्षा उस समय घीका भाव आधा तथा आजकलके भावकी अपेक्षा उस समय घीका भाव २५५ गुना अधिक सस्ता था।

इसके पश्चात् सोलहवीं शताब्दीमें आईने-अकबरीमें खाद्य पदार्थोंके निम्नलिखित भाव अकबर बादशाहके समयके मिलते हैं—

बढ़िया चावल	।।≶) मन
साधारण चावल	॥=) मन
दालें	।॥-)॥ मन
घी	५) मन
नमक	॥) मन
खाँड	५॥≶) मन

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अकबरके समयमें खाने-पीने और दैनिक आवश्यकताकी अन्यान्य वस्तुओंके भाव पर्याप्त मात्रामें चढ़ गये थे, किन्तु उसके अनुपातमें जनताकी आय तदनुसार उनकी क्रय-शक्ति भी बढ़ गयी थी। घीका भाव इस समय एक रुपयेका दस सेर हो गया। अर्थात् इस समय चन्द्रगुप्तके समयकी अपेक्षा घीका भाव साढ़े पाँच गुना बढ़ गया। तब भी वह आजकलके भावकी अपेक्षा ४० गुना अधिक सस्ता था।

औरंगजेबके शासनकालमें जब शाइस्ताखाँ बंगालका सूबेदार नियुक्त होकर आया तो उसने सबसे अधिक ध्यान खाद्य वस्तुओंके चढ़े हुए भावोंको कम करनेकी ओर ही दिया। उसके प्रयत्नके फलस्वरूप बंगालमें चावलका भाव दो आना प्रतिमनतक हो गया। अपनी इस सफलताको चिरस्थायी बनानेके लिये १६८९ में जब शाइस्ताखाँ बंगालसे जाने लगा तो उसने ढाकाके पश्चिममें एक तोरण (मीनार) बनानेकी आज्ञा दी। १७३८ में चावलका भाव सवा मनसे लेकर डेढ़ मन प्रति रुपयेतक रहा। सन् १७२९ में मुर्शिदाबादमें वस्तुओंके भाव निम्नलिखित थे—

बाँसफूल चावल	एक रुपयेका	१ मन	१०	सेर
करकशाली चावल	,, ,,	७ ,,	२०	,,
तेल (बढ़िया)	,, ,,		२१	,,
तेल (साधारण)	,, ,,		२४	,,
घी (बढ़िया)	एक रुपयेका		१०॥	,,

अर्थात् शाइस्ताखाँके प्रयत्नसे घीका भाव अकबरके २०० वर्ष बाद भी आधा सेर और सस्ता हो गया।

किन्तु भारतीय जनताने इन भावोंकी विशेष चिन्ता नहीं की और वह अपनी सन्तानको आनन्दपूर्वक दूध पिलाती रही तथा घी खिलाती रही।

कालक्रमसे मुसल्मानोंका शासन भी समाप्त हुआ और भारतका भाग्य ब्रिटिश ईस्ट-इंडिया कम्पनीके हाथोंमें आया, अंग्रेजोंके आनेसे भारतपर दुहरी मुसीबत आ गयी। ये लोग एक ओर तो गौका मांस अधिक खाते थे, दूसरी ओर उसको सुखाकर विदेश भी भेजते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजी राज्यके आरम्भमें ही सन् १८१० में वस्तुओंके भाव चढ़कर निम्नलिखित हो गये—

मजदूर छोटा	=) दैनिक
मजदूर बड़ा	≶) दैनिक
बढ़ई	६) मासिक
जुलाहे	३) मासिक
बढ़िया चावल	१।) मन
घटिया चावल	१) मन
दाल	१॥) मन
आटा	२) मन
सरसोंका तेल	=) सेर
घी	।≶) सेर
मोटी धोती	।=) प्रति धोती

अर्थात् इस समय घीका भाव एक रुपयेका दो सेर साढे चार छटाँक हो गया। वास्तवमें यह भाव इतना तेज था कि भारतवासी इसके बलपर अपने स्वास्थ्यकी रक्षा नहीं कर सकते थे। अतः अंग्रेजी राज्यके आरम्भसे ही भारतवासियों-का बल घटने लगा, जिससे उनकी जीवन-शक्ति (Vitality) भी कम हो गयी।

यद्यपि अंग्रेजी राज्यके आरम्भमें घी एक रुपयेका सवा दो सेरके लगभग हो गया, किन्तु यह भाव भारतीय नगरों-का था। भारतीय गाँवोंमें और विशेषकर तराई भाबरमें घीका भाव अब भी बहुत सस्ता था। तराई भाबरमें सन् १९१० तक भी जंगलातके नियम कठोर नहीं हुए थे। अतः वहाँ गोटिया, गूजर आदि अनेक गोपालक जातियाँ बहुत बड़े परिमाणमें गौएँ तथा भैंसें रखकर घीका उत्पादन करती थीं। यह हमने अपनी बाल्यावस्थामें स्वयं देखा है कि उनमेंसे एक-एक गोटियेके पास पाँच-पाँच सौ तथा एक सहस्रतक पशु होते थे। यह गोटिये केवल प्रातःकाल ही दो थन निकालते थे। सायंकालका पूरा दूध तथा प्रातः-कालके दो थन वे गौ अथवा भैंसके बच्चेको पिला दिया करते थे। इसी कारण उनके बछड़े भी अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट होते थे और हमारे पशुओंकी नस्ल भी अच्छी थी। उस

समय ये लोग हमलोगोंसे पर्याप्त मात्रामें माल उधार लिया करते थे। अस्तु, उधारका प्रभाव घीके भावपर भी पड़ता था। उस समय घीका साहुकारेका भाव ढाई सेर तथा बाजार भाव एक रुपयेका सवा सेर था।

किन्तु आगे चलकर सन् १९१०के लगभग भारतभरमें जंगलोंकी रक्षाके लिये वे उपाय किये गये कि कहीं भी गोचरभूमिका मिलना सुगम न रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि गोटियों-जैसे घी-दूधके बड़े-बड़े व्यापारियोंको गोचरभूमिके अभावके कारण अपने-अपने पशु कौड़ियोंके मोल बेचने पड़े और घी बराबर तेज होता गया। यहाँतक कि उसका भाव देहातोंमें भी शहरों-जैसा ही हो गया!

यहाँ यह बात और भी बतला देनी चाहिये कि प्राचीन भारतमें घी तो बिकता था; किन्तु दूध नहीं बिकता था। दूध मुसल्मानी कालतक भी कम बिकता था। तराई भाबरके गाँवोंमें तो १९१० तक वे लोग दूध बेचना अपमान समझते थे। माँगनेवालोंको वे एक-एक दो-दो कनस्तर दूध मुफ्त दे देते थे, किन्तु मोलपर वे केवल घी ही देते थे।

पर जबसे गोचरभूमिका अभाव हुआ तबसे दूध भी बिकने लगा। और आजकल तो दूधकी दशा नगरों तथा ग्रामों—दोनोंमें घीके समान हो चली है।

यद्यपि उपर्युक्त भाव पर्याप्त रूपमें तेज थे, किन्तु आजकी परिस्थितिमें वे भी हमारे मनमें आशाका सञ्चार करते हैं। किन्तु उनके साथ जब हम आजकलके भावोंका मिलान करते हैं तो हृदयमें बड़ा खेद होता है। आजकल (दिल्ली) के भाव यह हैं—

खाद्य पदार्थ	सितम्बर१९३९केभाव		जुलाई१९४३केभाव	
चावल	४।।।)	मन	३४)	मन
दाल	५)	,,	२५)	,,
शक्कर	१२।।)	,,	४०)	,,
तेल	२०)	,,	५०)	,,
घी	५०)	,,	१४०)	,,
कोयला पत्थरका	।=)	,,	२)	,,
कोयला लकड़ीका	१।।)	,,	४)	,,
मोटा धोती जोड़ा	२)	जोड़ा	१२)	जोड़ा
दूध	=)	प्रति सेर	।।=)	प्रति सेर

अर्थात् सितम्बर १९३९ में घीका जो भाव एक रुपयेका सवा नौ छटाँक था, वह जुलाई १९४३ में लगभग एक रुपयेका साढ़े तीन छटाँक हो गया। आज सन् १९४५ में युद्ध बंद होनेपर भी भाव प्रायः कम नहीं हुए हैं!

इन बढ़ते हुए भावोंके कारण आज हमको पौष्टिक भोजन मिलना बंद हो गया है। युद्धसे पहलेके =) सेरका दूध आज ।।=) सेर मिलता है और फिर भी यह कहना कठिन है कि वह शुद्ध दूध है। घी तो बाजारोंसे लोप-सा होता जा रहा है। घीमें मिलावट इतनी अधिक हो गयी है कि मिलावटके भयसे सम्पन्न घरवालोंने भी घीका खाना छोड़ दिया है। अस्तु, आज इस महँगीके कारण ही अनेक घरोंमें घी-दूधके दर्शन दुर्लभ हो गये हैं। इसी कारण आज हमारी मृत्युसंख्या भी बढ़ रही है।

इस समय देशमें विदेशी सैनिकोंकी उपस्थितिके कारण गौएँ भी बड़ी भारी संख्यामें मारी जा रही हैं। अतः इस समय जहाँ कि दूध तेज हो रहा है, वहाँ गोवंशके नाशकी सम्भावना भी दिखलायी देने लगी है। अतः इस समय भारतके सम्मुख राजनीतिक, आर्थिक, स्वास्थ्यसम्बन्धी तथा धार्मिक सभी प्रकारका महान् संकट उपस्थित है। देखें, हमारे कर्णधार इस सर्वतोमुखी विनाशसे किस प्रकार भारतकी रक्षा करते हैं!

गाय सुख-समृद्धिकी जननी है

कोई भी जाति या देश गायके बिना उच्च सभ्यता नहीं प्राप्त कर सकी है। पृथ्वीपर सबसे अच्छा पोषण गाय पैदा करती है। घास-पात खाकर आरोग्य-शक्ति और पोषण देनेवाले दुग्धान्न देती है। गाय अपने बच्चों और पालनेवालेके घरके खाने भरके लिये ही नहीं देती, वरं वह इतना दुग्धान्न देती है कि वे लोग स्वयं खाकर बेच भी सकें। गायके बिना खेती स्थिर और समृद्ध नहीं हो सकती और न लोग सुखी तथा स्वस्थ ही हो सकते हैं। जहाँ गाय है और उसकी उचित देख-भाल होती है, वहीं सभ्यता बढ़ती है, पृथ्वी उपजाऊ होती है, घर अच्छे बनते हैं और मनुष्योंका ऋण चुक जाता है।

—राल्फ ए० हेइने

मानव-शरीरका पोषक दूध

(लेखक—डा० नोशीर एन० दस्तूर, एम्० एस्-सी०, पी-एच्० डी०, ए० आई० आई० एस्० सी०)

शरीर-पोषण शास्त्रने विगत २५ वर्षोंमें इतनी द्रुत उन्नति कर ली है कि अब हमलोग यह ठीक-ठीक बतला सकते हैं कि शरीरके संवर्द्धन और पालनके लिये किन-किन द्रव्योंकी किस-किस परिमाणमें आवश्यकता होती है। इस विषयमें हम लोगोंकी जानकारी जितनी बढ़ी है, उतनी ही उसके साथ यह इच्छा भी बलवती होती जा रही है कि सब प्रकारके खाद्य पदार्थोंका वितरण भी सब लोगोंमें अधिक अच्छी तरहसे किया जाना चाहिये। निसर्गमें कोई ऐसा खाद्य पदार्थ नहीं है, जिसे हम स्वयं पूर्ण कह सकें अर्थात् जिसके द्वारा मानव-शरीरके विभिन्न व्यापारोंके लिये आवश्यक सभी द्रव्य प्राप्त हो सकें। इस प्रकारका सर्वोत्तम खाद्य पदार्थ, जिसे हम पूर्णके सबसे अधिक समीप देख पाते हैं, दूध ही है। दूधमें सभी आवश्यक घटक द्रव्य हैं, यद्यपि उनमेंसे कुछ पूर्ण मात्रामें नहीं हैं और उनकी कमी अन्य उपायोंसे पूरी करनी पड़ती है। ऐसे अल्प मात्रावाले द्रव्य मुख्यतः लोहा, ताँबा और कुछ विटामिन हैं। इस प्रकार पोषणके विचारसे, साथ ही आर्थिक दृष्टिसे भी, केवल दूधपर ही मनुष्य नहीं जी सकता। दूध आहारका केवल एक भाग है और शरीरके लिये आवश्यक आहारका अधिक भाग तो अन्य कम खर्चवाले खाद्योंसे पूरा करना पड़ता है। तथापि यह बात अनुभवसे सिद्ध है कि दूध अन्य खाद्य पदार्थोंकी कमी केवल पूरी ही नहीं करता, बल्कि अन्य द्रव्योंका उपयोग करनेकी शरीरकी सामर्थ्य भी बढ़ाता है।

यह सभी जानते हैं कि शरीरसे जितना काम लिया जाता है उसी हिसाबसे उसके लिये अन्नकी भी आवश्यकता होती है। सरदी-गरमीके मानपर भी यह आवश्यकता निर्भर है। जहाँ सरदी-गरमी अधिक नहीं पड़ती, तापमान प्रायः समान रहता है, वहाँ साधारण जीवन बितानेवाले प्रत्येक मनुष्यके लिये राष्ट्रसंघ (League of Nations) की स्वास्थ्य-समितिने प्रतिदिन आहार्य उष्णताका मान २४०० कैलरी निश्चित किया है। इसी हिसाबसे, हिंदुस्थानकी स्थितिका विचार करते हुए, यहाँके लिये यह मान सैंकड़े १० कम करके २१६० कैलरी किया गया है। शारीरिक श्रमके लिये जितना आवश्यक है, उतना अंश इसमें और जोड़ देना चाहिये। हिंदुस्थानके अधिकांश लोग खेतीसे अपना जीवन-निर्वाह करते हैं और खेतीका काम ही सबसे कठिन परिश्रमका होता है। यदि छः घंटेकी मेहनतके लिये प्रति घंटे २०० कैलरीके हिसाबसे और जोड़ा जाय तो कुल ३३६० कैलरीका मान निश्चित होता है। शहरमें रहनेवालोंके लिये यह मान चाहे काम न दे सके; पर किसानोंके लिये जिनकी संख्या सैंकड़े ८५ है, यह मान बहुत कुछ ठीक है। यह जाननेका अवश्य ही कोई साधन नहीं है कि किसानोंको इतनी आहारगत उष्णता मिलती है या नहीं। यहाँ मुख्य विचारणीय बात शरीरके विशेष पोषक द्रव्योंके, विशेषतः प्रोटीन द्रव्योंके मिलनेकी है। राष्ट्र-संघके कमीशनने शरीरके एक किलोग्राम (२·२०५ पौंड) वजनके पीछे एक ग्राम (१५·४३२ ग्रेन) प्रोटीनका मान निश्चित किया है। जितने प्रकारके प्रोटीन मिलते हैं उनमें एक तिहाई पशुओंसे मिलनेवाले होते हैं। प्रोटीनकी आवश्यकता औसत हिसाबसे प्रत्येक भारतवासीके लिये प्रतिदिन ७० ग्राम मानी जा सकती है और इसमें (राष्ट्र-संघके कमीशनकी सिफारिश एक तिहाईकी होनेपर भी) एक चौथाई हिस्सा अर्थात् १८ ग्राम प्रोटीन पशुज होना चाहिये। हिंदुस्थानकी जैसी परिस्थिति है, उसमें अधिकतर लोगोंके लिये पशुज प्रोटीनका एकमात्र साधन दूध है।

हिंदुस्थानमें दूधकी खपत—उपर्युक्त गणनाके आधारपर मोटे हिसाबसे १ से १½ पौंडतक दूधका सेवन प्रत्येक मनुष्यके लिये आवश्यक है। दुर्भाग्यवश, हिंदुस्थानमें कितना दूध होता और कितना खपता है, इसका कोई सही लेखा नहीं मिलता। इसमें बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं। अबतक इस विषयमें जो कुछ जाना जा सका है उससे यह मालूम होता है कि दूध और दूधके पदार्थोंकी खपतका औसत हिसाब प्रतिदिन प्रतिमनुष्य ७ औंस दूध है। भारतीय पशुओंके दूधमें स्नेह (Fat) का अंश (सैंकड़े ५) अन्य देशोंके पशुओंके दूधमें रहनेवाले स्नेहके (सैंकड़े ३·५) अंशसे कहीं अधिक होता है। यदि इस ७ औंस दूधके हिसाबमें सैंकड़े ३·५ स्नेहका हिसाब जोड़ा जाय तो खपतका औसत ७ की जगह १० औंस होता है। पर स्नेहको भी इतना महत्त्व दिया जाय या नहीं, यह विवादास्पद है। हिंदुस्थानके पशुओंके दूधमें, एक स्नेहको छोड़, बाकी सब घटक द्रव्य प्रायः वे ही और उतने ही होते हैं, जो और जितने अन्य देशोंके पशुओंके दूधमें। मनुष्य-शरीरमें यह एक बिलक्षण

क्षमता है कि उसे जो अच्छा या खराब आहार मिलता है, उसे वह एक हदतक अपने अनुकूल बना लेता है; पर इसमें जो कुछ कमी रहती है उसका असर तो अन्तमें समाजके स्वास्थ्यपर पड़ता ही है। इन सब बातोंसे एक बात तो साफ ही सामने आती है कि हिंदुस्थानमें दूधकी उपज और खपत बढ़ानेकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

डेयरी-व्यवसाय जमानेकी आवश्यकता—सौभाग्यवश हिंदुस्थानके लोग बहुत अच्छी तरहसे जानते हैं कि मानव-शरीरके पोषणके लिये दूध और दूधके पदार्थ कितने आवश्यक हैं। अति प्राचीन कालसे भारतवर्षके ऋषि दूधकी उपकारिता बराबर बतलाते आये हैं। अन्य देशोंमें यह बात नहीं थी, पर जब विज्ञानने दूधकी उपकारिता सिद्ध करके दिखा दी, तब तुरंत उन देशोंके लोगोंने उससे लाभ उठाना आरम्भ किया और आज हिंदुस्थान उनके दृष्टान्तसे बहुत कुछ सीख सकता है। अतः अब यह सोचना चाहिये कि हमलोगोंको इस विषयमें क्या-क्या करना होगा। पहला जरूरी काम यह है कि प्रत्येक पशुका पूरा-पूरा हिसाब रक्खें ताकि जो पशु लाभदायक हैं वे ही रक्खे जायँ। यूरोपके अधिकांश देशोंमें इस कार्यका आरम्भ बहुत ही अल्प परिमाणपर हुआ था, कुछ थोड़ेसे किसान ही पहले-पहल ऐसा करने लगे थे। धीरे-धीरे इसका विस्तार हुआ और आज यूरोपके प्रत्येक देशमें इसकी विशिष्ट संस्थाएँ हैं, जो सभी शुद्ध नस्लके पशुओंका पूरा इतिहास और कार्यविवरण रखती हैं। कहीं-कहीं देशकी सरकारने भी यह कार्य अपने हाथमें लिया है। इन देशोंमें दूध देनेवाले पशुओंमेंसे सैंकड़े ८० पशुओंका विवरण लिखा जाता है। हिंदुस्थानमें जिन दूध देनेवाले पशुओंका विवरण रक्खा जाता है, उनकी संख्या कुल सैंकड़े ०·०३ है और वह भी सरकारी फार्मोंमें ही सीमित है। कृषिविषयक अनुसन्धानकी साम्राज्य-समिति (The Imperial Council of Agricultural Research) दूधका विवरण रखनेकी पद्धति चलानेके काममें अग्रसर हुई है और यह आशा की जाती है कि देशके कोने-कोनेमें उसकी इस पद्धतिका अनुकरण लोग करेंगे। किसी समय गाँवके मुखियोंका यह काम था कि वे अपने-अपने गाँवके दूधका पूरा विवरण रखते थे, यही अब उनका मुख्य काम बनाया जाना चाहिये। दूधके उत्पादनके जो आँकड़े अभी मिलते हैं, उनसे इसकी आवश्यकताका पता लगता है। प्रत्येक गौका दूध वर्षभरमें औसत हिसाबसे, कम-से-कम १६५ पौंड और अधिक-से-अधिक १;८२५ पौंड होता है। इतना कम उत्पादन समुचित संगोपनके अभावका ही परिणाम है।

दूसरी मुख्य बात है—अच्छी प्रजा उत्पन्न करना अर्थात् सबसे अच्छी जातिकी गौओंका ही वंश बढ़ाना। विशेषज्ञोंका यह कहना है कि हिंदुस्थानमें सर्वत्र इधर-उधर भटकनेवाले आवारा साँड़ोंसे बड़ी हानि हुई है। यह उन लोगोंका कहना है, जिन्होंने इस विषयकी पूरी जाँच की है, इसलिये इस विषयमें यहाँ कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं। वैज्ञानिक रीतिसे अच्छे साँड़ोंद्वारा गौओंको गाभिन कराना बड़े खर्चका काम होनेसे किसानोंके लिये व्यक्तिशः बहुत ही कठिन है। पर गाँवोंके सहकारी संघोंद्वारा इस विषयमें बहुत कुछ किया जा सकता है। दो-तीन गाँव मिलकर अच्छी नस्लका कोई अच्छा साँड़ रख सकते हैं। आजकलकी-सी स्थितिमें गोवंश-विस्तारका मुख्य उद्देश्य दूधकी वृद्धि करना ही होना चाहिये। देशभरमें चारों ओर गोवंशोत्पादन करानेवाली ऐसी सहकारी संस्थाएँ बननी चाहिये, जो अच्छे-अच्छे साँड़ रक्खें और जो लोग अपनी गौएँ बर्धाना चाहें, वे उन्हें इन्हीं संस्थाओंमें भेजें। पूर्वकालमें हिंदुस्थानसे बहुसंख्यक गाय-बैल दक्षिण-अमेरिका और दक्षिण-अफ्रीका-जैसे दूर देशोंमें भेजे जाते थे। उनसे उन देशोंमें कई अच्छी जातियोंके गोवंश फले-फूले हैं। अपने देशमें भी ऐसा किया जा सकता है।

दूधके अधिक होनेके लिये यह आवश्यक है कि उसकी खपतका साधन उपस्थित हो। अन्य देशोंमें इसके लिये एक उपाय यह किया गया था कि स्कूलोंमें पढ़नेवाले बालकों और कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको बिना मूल्य अथवा अल्प-मूल्यमें दूध दिया जाने लगा। इससे जो दूध बच जाता वह बाजारको मन्दा करनेके लिये बाजारमें न भेजकर उससे मक्खन, घी, मावा आदि पदार्थ बना लिये जाते। हिंदुस्थानमें शहरोंकी लोकसंख्या बहुत कम है; अवश्य ही इन शहरोंसे आसपासके सैंकड़ों देहातोंकी बहुत कुछ आर्थिक सहायता हो सकती है, तथापि दूधकी खपत अधिकाधिक देहातोंमें करानेका काम बहुत जरूरी है। यह कैसे किया जाय, यह बड़े महत्त्वका प्रश्न है, जिसे हल करना होगा। देहातोंमें अभी कितना दूध खपता है, इसका कोई निश्चित ज्ञान आँकड़ोंके रूपमें उपलब्ध नहीं है। पर यह अनुमान बहुत कुछ विश्वसनीय है कि देहातोंमें लगभग सैंकड़े २५ आदमी, जिनमें बच्चे भी शामिल हैं, दूध या

दूधका कोई पदार्थ सेवन नहीं करते । आवश्यकता इस बातकी है कि दूध सबको बराबर मिले । ये लोग जिन्हें दूध नहीं मिलता, प्रायः वे लोग हैं जिनके यहाँ गाय-भैंस न होनेसे दूध होता ही नहीं और जिनकी आर्थिक अवस्था बहुत ही शोचनीय है । हिंदुस्थानभरका हिसाब देखते हुए यह अनुमान होता है कि यहाँ जितना दूध होता है उसका सैंकड़े २७ हिस्सा दूधके रूपमें खपता है और लगभग सैंकड़े ६० का घी बनता है । घीको हम कम-से-कम खरीदारोंकी दृष्टिसे, 'स्नेहपदार्थोंका बादशाह' कह सकते हैं । घी-जैसे जो अन्य रासायनिक पदार्थ हैं,उनकी अपेक्षा घीके अधिक पोषक होनेकी बात आधुनिक विज्ञानसे प्रमाणित नहीं हो सकी है । फिर यह बात भी है कि जब दूध घीकी हालतमें आ जाता है तब उसकी कीमत, दूधकी हालतमें उसे बेचनेसे जो कीमत होती उसके सैंकड़े ५८ अंश ही रह जाती है । इसलिये यह सोचनेकी बात है कि दूध दूधकी ही हालतमें क्यों न अधिकाधिक खपाया जाय, खासकर जब कि वनस्पतियोंसे मिलनेवाले स्नेहपदार्थोंके बहुतसे साधन मौजूद हैं ! इस प्रकार दूधकी जो बचत होगी उसे जनताके उन सैंकड़े २५ मनुष्योंके पास पहुँचाया जा सकता है । पोषणकी दृष्टिसे ऐसा करना बहुत लाभदायक होगा । दूधका व्यवसाय करनेवालोंको इस साधनसे काम लेना चाहिये ।

शहरोंके व्यवसाय-केन्द्रोंका प्रश्न—यहाँतक देहातोंकी ही बातोंका विचार हुआ । अब शहरोंकी ओर देखते हैं तो उनके प्रश्न सर्वथा अन्य प्रकारके हैं । शहरोंके लिये सबसे बड़ा प्रश्न गोष्ठोंका है । व्यापारी बस्तियोंमें पशु रखना बड़े ही खर्चका काम है । इन मूक पशुओंपर अत्याचारोंकी भी कोई हद नहीं है । ऐसी हालतमें जो दूध होता है, स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उसकी गुणकारिता अत्यन्त निम्नकोटिकी होती है । दुर्भाग्यवश अभीतक हिंदुस्थानके बाजारोंमें बिकनेवाले दूधके जीवाणुओंकी समुचित रूपसे परीक्षा ही नहीं हो पायी है, पर जो थोड़ी-सी बातें इस विषयमें मालूम हुई हैं, उनसे प्रश्नकी विशालता ही प्रकट होती है । सबसे बड़ी खराबी शहरोंके गोष्ठोंमें यह होती है कि गौएँ ठाठ होते ही निर्दयतापूर्वक मार डाली जाती हैं । गोवंशका इससे कितना बड़ा ह्रास होता है, यह बात इसीसे जानी जा सकती है कि शहरोंमें लाये जानेवाले ये पशु वे ही होते हैं जो सबसे अच्छे होते हैं । किसी-न-किसी कारणवश अभीतक इस प्रश्नका जो प्रत्येक नागरिकके लिये आद्य महत्त्वका प्रश्न है, कोई समाधान नहीं हुआ है, यद्यपि दूधके व्यवसायमें लगे हुए लोगोंद्वारा इसके लिये बड़े-बड़े प्रयत्न हुए । मुख्य कारण आर्थिक है । शहरोंके गोष्ठोंपर भारी कर लगाकर और ऐसे ही अन्य उपायोंसे शहरके दूधका प्रतियोगी मूल्यपर बेचा जाना असम्भव कर देना चाहिये । इन कर आदिसे जो रुपया मिले उसका उपयोग उन लोगोंको बढ़ावा देनेमें करना चाहिये, जो देहातोंसे दूध ले आते हैं ।

शहरोंमें जिस भावमें दूध बेचा जाता है वह खरीदारोंके आर्थिक मानको देखते हुए बहुत ऊँचा है और कहीं-कहीं अन्य देशोंके भावोंके बराबर है और सो भी उस हालतमें जब कि दूधका कोई शोधन प्रायः नहीं किया जाता और वैसा ही बेचा जाता है । इस दूधमें रासायनिक और स्वास्थ्यप्रद गुण बहुत ही कम होता है ।

उत्तम गुणवाला दूध उत्पादन करनेके लिये जिस देख-भाल और सँभालकी आवश्यकता होती है, वह अपने-अपने घर थोड़ा-थोड़ा दूध उत्पादन करनेवालोंके लिये सदा सम्भव नहीं है । पहली बात यह है कि देहातोंमें डेयरी या दुग्धालयका कोई सुसंघटित उद्योग नहीं किया जाता; जिसके गाय-भैंस लगती है, उसके यहाँ थोड़ा-सा दूध हो जाता है, इतनी ही बात है । इससे सब जगहोंका दूध एक जगह बटोरनेका खर्च बढ़ता है । इस तरह थोड़ा-थोड़ा बटोरने और बेचनेवाले लोगोंका तब यह काम होता है कि दूधके उत्पादकोंकी आर्थिक सहायता करें और उसे आवश्यक सामग्रीसे सुसज्जित करें, पर ऐसा करना उनके लिये भारी जोखिम उठाना है । इससे यही होता है, जैसा कि ऊपर कह आये हैं कि, अशुद्ध और महँगा दूध मिलता है । सहकारी संघटनकी आवश्यकता आजकी ही नहीं, बहुत पहलेसे ही है । सहकारिताके बिना इस देशके डेयरी या दुग्धव्यवसायका भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता ।

आयका मान और दूधकी खपत, दोनोंका परस्पर अति निकट-सम्बन्ध है । इस विषयके पूरे आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं, तथापि जो उपलब्ध हैं, उनसे वही दुरवस्था प्रकट होती है, जो अन्य व्यापक उपायोंसे ज्ञात होती है । दरिद्रताके कारण लोग ऐसे आहार्य पदार्थ सेवन करनेपर विवश होते हैं जिनमें कार्बोहाइड्रेटकी बहुलता और उत्तम कोटिके प्रोटीन, स्नेह पदार्थ, खनिज क्षार और विटामिनोंकी अल्पता है । शहरमें रहनेवालोंके लिये दूधकी बहुत बड़ी आवश्यकता है, पर जबतक गाँवोंमें दूधके व्यवसायकी कोई विधि नहीं बैठती तबतक इस आवश्यकताकी पूर्तिका कोई उपाय नहीं हो

सकता। अन्य देशोंमें स्कूली लड़कोंको विना मूल्य दूध दिलानेकी जो व्यवस्था की गयी वह यहाँ भी करने योग्य है। कुनूर और शिमलामें इसके जो प्रयोग किये गये, उनसे थोड़े ही समयमें बालकोंके स्वास्थ्यमें बहुत अच्छा सुधार हुआ। इसलिये ऐसा करना बहुत अच्छा होगा कि जिन स्थानोंमें लोग दूधसे मक्खन निकाल लेनेवाले यन्त्रोंका अधिकाधिक उपयोग करने लगें, वहाँके इस निर्घृत, परन्तु गुणकारी दूधका इस प्रकार उपयोग किया जाय कि उसे घृतयुक्त पूर्ण दूधमें मिलाकर दूधमें जो स्नेहका अंश होता है वह घटाया जाय। ऐसा करनेसे वही दूध उतना ही और लोगोंको दिया जा सकेगा। यह निर्घृत दूध बहुत पोषक होता है, क्योंकि निर्घृत होनेपर भी उसमें स्नेह तथा स्नेह-घोल विटामिनको छोड़ और सब घटक-द्रव्य विद्यमान रहते हैं। ऐसे दूधकी उपयोगिता जनताको बतलानी चाहिये। आजकल निर्घृत दूध प्रायः केसीन बनानेके काममें आता है और इस तरह तैयार होनेवाला केसीन यद्यपि बहुत नहीं होता, पर प्रायः सारा-का-सारा या तो विदेशोंमें भेजा जाता है या उससे लेई और सरेस बनाया जाता है। यह बहुत ही करुणाजनक बात है कि इतना मूल्यवान् प्रोटीन इस तरह बर्बाद किया जाय। केसीनकी रफ्तनी सालमें ७५०००) की होती है—कौन-सी बड़ी रकम है ! पर इसके विपरीत हिंदुस्थानमें बाहरसे 'इनवैलिड फूड'के नामसे केसीन या सूखे हुए दूधकी बुकनीसे बनी हुई चीजें आती हैं, जो शहरोंमें रहनेवाले लोगोंका शौक पूरा करती हैं। इस आमदकी कीमत ५०००००) होती है। अतः जो केसीन यहाँ तैयार होता है वह यहीं रख लिया जाय तो इससे दोहरा काम बनेगा।

स्वच्छ दूधका उत्पादन—दूधके उत्पादनमें ध्यान देनेकी दूसरी बात है दूधकी स्वच्छता। दूध उत्तम आहार्य पदार्थ होनेसे मनुष्य प्राणियोंकी तरह लाखों जीवाणु उससे अधिक-से-अधिक लाभ उठाना चाहते हैं। दृष्टि या स्पर्शादिके द्वारा नीरोग दूधकी पहचान करना बहुत ही कठिन है। हो सकता है कि दूधमें लाखों ऐसे कीटाणु हों, जो मनुष्यके जीवनके लिये खतरनाक हों, पर आँखको दूध अच्छा लग सकता है। बहुत-से संक्रामक रोग, पता लगा है कि दूधसे उत्पन्न होते हैं, जिसकी कभी किसीको प्रायः आशङ्का नहीं होती। नीरोग दूधके विषयमें अभी इस देशमें कोई अनुसन्धान नहीं हुआ है। अतः कुछ कहना कठिन है। जैसी अस्वास्थ्यकर जगहोंमें अस्वास्थ्यकर रीतिसे शहरोंमें दूध दुहा और बेचा जाता है उसे वे ही लोग जानते हैं, जिन्होंने शहरोंके इन गोष्ठोंको देखा है। दूध खरीदनेवाले लोगोंकी उपेक्षाबुद्धि भी एक हदतक इस गंदी हालतका कारण है। दूधकी स्वच्छताके लिये दुग्धोत्पादन करनेवालोंको कुछ सँभाल रखनी पड़ेगी और ऐसी सँभाल रखनेका, रोज-रोज वही काम करनेमें, हो सकता है कि उनका मन न लगे। पर कोई उपायान्तर नहीं है। खराब दूधको अच्छा दूध बनानेकी अप्रत्यक्ष प्रक्रिया देशके लिये परिणाममें हानिकारक है। हिंदुस्थानमें सर्वत्र यही पद्धति है कि दूध उबाला जाता है, कहीं कम कहीं अधिक; और उबालनेकी इस क्रियासे दूधके उत्तम घटकद्रव्य लगभग सैंकड़े ५ के हिसाबसे नष्ट हो जाते हैं। जो स्नेह-पदार्थ दूध खौलानेसे तेजीके साथ ऊपर आता है तथा जो विकृतरूपसे कड़ाहीमें लग जाता है, वह प्रायः फेंक दिया जाता है। स्नेहकी बर्बादी उपर्युक्त अङ्कसे भी अधिक होती होगी। देशके कुछ हिस्सोंमें दूध दिनभर आगपर रक्खा रहता है और जैसे-जैसे ग्राहक आते हैं, वैसे-वैसे उसीमेंसे दूध निकाल-निकालकर उन्हें दिया जाता है। ग्राहकोंके लिये समाधानका विषय इतना ही है कि इस प्रकार दूधके पोषक गुणका कितना अधिक ह्रास होता है, उसका अभीतक कोई अंदाजा नहीं लगाया गया है। इस प्रत्यक्ष हानिको देखते हुए भी अभीकी इस पद्धतिको रोकना मूर्खताका ही काम होगा, जबतक कि दूधके उत्पादनकी पद्धतिको ही मूलतः बदल न दिया जाय।

हिंदुस्थानमें एक और आम रिवाज यह है कि गौओंको घर-घर ले जाते और सामने दूध दुहनेके साथ-साथ खली आदि खिलाते हैं। ग्राहक शायद यह समझता है कि गौ जो कुछ खा रही है उसका उसी क्षण दूध बनता जा रहा है। पर यह बात किसीसे छिपी नहीं है कि इससे जो धूल उड़ती है उसके साथ कीटाणु अंदर प्रवेश करते हैं। इसी तरह दूध दुहते समय हाथोंको तर करनेका रिवाज भी बहुत ही खराब है। इन सब दुरभ्यासोंका तथा अस्वास्थ्यकर स्थितिमें दूध निकालनेका कारण दूध दुहने-दुहानेवालोंका अज्ञान ही है, इसमें सन्देह नहीं। पर इसके साथ ही यह बात भी एकबारगी भुलायी नहीं जा सकती कि कर्त्तव्यकी अवहेलना भी काफी की जाती है। उदाहरणार्थ दूध और घी बेचनेवाले बड़ी चतुराईसे दुग्ध परीक्षक यन्त्रका कार्य ऐसा उलट-पलट देते हैं कि असलियतका ठीक पता ही न चले। वैज्ञानिक उन्नतिके साथ-साथ

बेईमान व्यापारियोंकी धूर्तता भी कदम-बकदम आगे बढ़ती चलती है। शहरोंमें आम तौरपर दूधके साथ मक्खन निकाले हुए दूधकी बुकनी मिलायी जाती है। थोड़ी सँभाल रखनेसे इस चतुराईका उपयोग बहुत अच्छे कामोंमें कराया जा सकता है। इस विषयमें ग्राहकोंको उत्साह हो तो बहुत कुछ हो सकता है। ग्राहकोंको इतनी परख होनी चाहिये कि दूधका कौन उत्पादक तथा विक्रेता दक्ष है और कौन लापरवाह।

पाश्चात्त्य देशोंमें शुद्ध दूधके उत्पादनकी कठिनाइयाँ दूर करनेका जो प्रयत्न किया गया, उसके सफल होनेमें बहुत समय नहीं लगा। इसके लिये कई तरहके उपाय एक साथ किये गये। उनमेंसे कुछ ये हैं—ऐसे कानून बने कि गोठ साफ रक्खे जायँ, उनमें नीरोग पशु ही रक्खे जायँ और नीरोग मनुष्य ही दूध दुहनेका काम करें। बोनस देनेकी भी एक ऐसी स्कीम है, जिससे बड़ा लाभ हुआ है। स्कीम यही है कि जो किसान दूधके उत्पादनका काम पूरी सावधानीके साथ करेगा उसे इनाम दिया जायगा। स्वच्छ दूधके उत्पादनके काममें प्रतियोगिता करायी जाती है, किसानोंके क्लब और सहकारी संघ बनाये जाते हैं। इन सब उपायोंसे इस विषयकी शिक्षाका प्रचार होता है और नौजवान किसान कामका अच्छा और सही रास्ता पकड़ लेते हैं।

दुग्ध-व्यवसाय और मूल्यनियन्त्रण—पहले यह कहा जा चुका है कि दूधका उत्पादन आर्थिक दृष्टिसे लाभकारी नहीं होता। अन्नसे दूधके बननेकी प्रक्रियामें अन्नका कुछ अंश तो नष्ट हो ही जाता है। यही कारण है कि राष्ट्रकी विषम आर्थिक अवस्थाके कारण बहुतसे देश ऐसी अवस्थामें दूधकी अल्पतासे सन्तुष्ट रहना अच्छा समझते हैं। पर पोषक गुणोंकी दृष्टिसे दूध अत्यन्त आवश्यक है। प्रायः सभी पाश्चात्त्य देशोंमें यह बात देखी जाती है कि देशकी सरकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूपसे दुग्धव्यवसायकी मदद किया करती है। यदि सरकारी मदद न हो तो इन देशोंकी भी वही हालत होगी जो आज हिंदुस्थानकी है। अवश्य ही भिन्न-भिन्न देशोंमें नियन्त्रण और सहायताके प्रकार भिन्न-भिन्न हैं। कुछ देशोंमें तो दूधके व्यवसायका सारा काम स्वयं सरकार ही कर लेती है और कुछ देशोंमें यह काम दूधके उत्पादक, विक्रेता और ग्राहक, इन सबके स्वेच्छापूर्वक सहयोगसे होता है। नियन्त्रणसे होनेवाला सबसे बड़ा लाभ यही है कि दूध और दूधके पदार्थोंका मूल्य स्थिर रहता है। यही वह आधारशिला है जिसपर इन देशोंमें व्यवसायी दुग्धालयोंका सारा ढाँचा खड़ा किया और रक्खा जाता है। अभी या कुछ समय बाद हिंदुस्थानको भी इसी रास्तेपर चलना होगा। दूधके उत्पादकोंको यह आश्वासन मिलना चाहिये कि वे जो परिश्रम करेंगे वह व्यर्थ नहीं जायगा। इस समय इस तरहका कोई आश्वासन उन्हें है या नहीं, इस विषयमें सन्देह है। शहरोंमें प्रतियोगिता बहुत तीव्र होनेके कारण बहुत जल्द ही वह अवस्था उत्पन्न होती है, जिसमें मिलावटके सिवा और कोई उपाय नहीं रहता। इसी प्रकार एक मापसे खरीदने और दूसरे मापसे बेचनेकी हालत भी बहुत ही बुरी है। यह अंदाज लगाना बहुत ही कठिन है कि दूधके उत्पादकको लाभ हो रहा है या नुकसान। पर जो बातें ज्ञात हैं उनसे तथा पद्धतियुक्त डेयरी-फार्मोंमें दूधकी जो लागत बैठती है उसके साथ तुलना करनेसे यही कहना पड़ता है कि दूधके उत्पादकको कोई नुकसान न उठाना पड़े तो गनीमत है। जिस व्यवसायका रूप इतना अनिश्चित है वह उन्नति नहीं कर सकता। फिर भी यह व्यवसाय जो अभी तक जीवित है, इसका कारण केवल हिंदुस्थानकी विशिष्ट परिस्थिति है। मूल्यनियन्त्रणकी जो बात कही जा रही है उससे खरीदार भड़क सकते हैं, क्योंकि दूधके लिये आज जो मूल्य देना पड़ रहा है, वह आप ही बहुत अधिक है। परन्तु प्रायः ऐसा हुआ करता है कि जब कोई काम गलत तौरपर किया जाता है तब सही तौरपर करनेकी हालतमें जो मूल्य देना पड़ता उससे अधिक ही दिया जाता है। उदाहरणार्थ, ग्रेट-ब्रिटेनमें इस समय जो मिल्क मार्केटिंग स्कीम चलायी जा रही है उसके अनुसार दूधकी जो कीमत आती है उसके शतांशसे भी कममें उस स्कीमका खर्च चलता है। वर्तमान संकटकालमें यह व्यवसाय दूधकी माँग पूरी करनेमें सर्वथा असमर्थ रहा है। भविष्यमें ऐसा होना चाहिये कि पानी, रोशनी, सड़क आदिकी तरह ही दूधका व्यवसाय भी राष्ट्र-जीवनार्थ सेवाका आवश्यक अङ्ग माना जाय और तदनुसार ही उसका ढाँचा खड़ा किया जाय।

दुग्ध-व्यवसायमें सहकारिता—पाठकोंको यह देखकर अवश्य ही बहुत आश्चर्य होगा कि दूधके उत्पादक, फुटकर विक्रेता और ग्राहक, इनमें परस्पर सहकारिताका अभाव है। अबतक अधिकांश किसान दूधका व्यवसाय, व्यवसायकी एक गौण शाखाके रूपमें करते हैं। प्रत्येक कुटुम्ब दो-

एक गौओंका पालन किया करे, यह पद्धति तो बहुत अच्छी है, पर इसका यह मतलब नहीं है कि सारा काम नये ढंगसे सुसंघटित करके लोग अपने दूधके पोषक गुणोंका मान ऊँचा न करें या जिन मूक मित्रोंके पालनका भार उनपर रक्खा गया है उनकी स्थिति न सुधारें। अभीकी पद्धति उसी समयके लिये अच्छी थी जब हिंदुस्थानकी बस्ती इतनी घनी नहीं थी और गोचरभूमिकी कोई कमी नहीं थी। पर हिंदुस्थानकी जनसंख्या और पशुसंख्या भी बड़ी तेजीके साथ बढ़ती गयी। और पशुसंख्या इतनी बढ़नेपर भी मनुष्योंकी आवश्यकताओंके हिसाबसे दूधकी वृद्धि नहीं हुई है। पुरानी परिस्थिति अब नहीं रही, नयी-नयी कठिनाइयाँ सामने हैं, पर हमलोग उन कठिनाइयोंको दूर करनेके उपाय ढूँढ निकालनेके बदले केवल उनसे हार मानकर बैठ जाते हैं। अच्छा और निर्दोष दूध उत्पन्न करना इतना कठिन और बड़ा काम है कि किसी एक व्यक्ति या कुटुम्बके किये नहीं हो सकता। इसके लिये सबको सहकारिता करनी होगी। सहकारिताका अर्थ है नियमकी अधीनतामें रहना और काम इस ढंगसे करना कि उसका फल व्यक्तिकी अपेक्षा सारे समाजके लिये उत्तम हो। अन्तमें इससे व्यक्तिका भी लाभ होगा ही, क्योंकि वह भी समाजका ही अङ्ग है। बिना किसी मूल नीतिके अथवा पोषणसम्बन्धी अपनी आवश्यकताओंका बिना कोई ध्यान रक्खे गौओंको गाभिन कराना और जैसे-तैसे दूध बेच देना इत्यादिकी अपेक्षा सहकारी संस्थाएँ कोई ऐसा रास्ता निकाल सकती हैं, जिससे बहुत अच्छी स्थिति हो जाय। ये संस्थाएँ वंशोत्पादनकी नीति निर्धारितकर उसे काममें लानेके साधन निर्माण कर सकती हैं। दूध और दूधके पदार्थ किस मूल्यपर बेचे जायँ, कितना और किस प्रकारका अन्न उपजाया जाय, गाँवके एक-एक बच्चेको कितना दूध दिया जाय—इत्यादि सभी बातें निर्धारित कर सकती हैं। ऐसी सहकारी संस्थाएँ क्रमसे देशव्यापी संघटनका रूप धारण कर सकती हैं। अभी शहरोंमें कहीं-कहीं सहकारी संस्थाएँ हैं। आवश्यकता यह है कि ऐसी संस्थाएँ देहातोंमें बन जायँ। देहातोंके प्रश्न देहातोंकी सहकारी संस्थाएँ ही हल कर सकती हैं। देहातोंमें इन संस्थाओंका संघटन हो चुकनेपर शहरोंके प्रश्नोंको हल करना कठिन न होगा।

कृषिप्रधान देशोंमें सहकारी संस्थाओंके द्वारा जो अनेक उपयोगी कार्य हुए, उनकी ओर भी एक निगाह देख लेना चाहिये। डेन्मार्क, न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलियासे ही, इस महायुद्धके पहले सबसे अधिक मक्खन विदेशोंमें भेजा जाया करता था। संसारके समूचे निर्यातमें इन देशोंसे होनेवाला मक्खनका निर्यात सैंकड़े ६२ होता था। मक्खनके इस उत्पादन-का सैंकड़े ८० से ९० तकका उत्पादन दुग्धव्यवसायी सहकारी संस्थाओंके द्वारा होता था। पनीरके निर्यातकी बात भी ऐसी ही है। नेदरलैंड्समें जितना मक्खन तैयार होता था उसका सैंकड़े ६०। ६५ भाग दुग्धव्यवसायी सहकारी संघोंद्वारा उत्पन्न किया जाता था। लेटवियासे बाहर भेजे जानेवाले मक्खनका सैंकड़े ६० भाग वहाँकी सहकारी संस्थाएँ तैयार करती थीं। फिनलैंडमें तैयार होने और बाहर भेजे जानेवाले मक्खन और पनीरमें सैंकड़े ९२ मक्खन और सैंकड़े ७० पनीर इन्हीं सहकारी संस्थाओंके उद्योगका फल होता था। इसटोनिया और लिथुआनियामें सैंकड़े ८५ से ९० तक इन्हींका हिस्सा होता था। हंगरीसे होनेवाले मक्खनके निर्यातमें इन संस्थाओंका हिस्सा सैंकड़े ५२ होता था।

इस सहकारिताका मुख्य उद्देश्य केवल सहकारी संस्थाओंके सदस्योंको अधिक लाभ दिलाना ही नहीं है। इसके साथ ही दूधके उत्पादकोंको उनके श्रमका समुचित पुरस्कार देकर यह सहकारिता सहकारी संस्थाओंके सदस्योंकी दूध खरीदनेकी क्षमता बढ़ानेमें सहायता करती है और समुचित लोकशिक्षाके द्वारा आवश्यकता और उपयोगिताके अनुरूप अन्न चुन लेने और उपजानेमें उन्हें समर्थ बनाती है। स्वीडनका उदाहरण अनुकरणीय है। यहाँकी स्वीडिश कोआपरेटिव यूनियन नामकी संस्थामें कार्यकर्ताओंका बहुत बड़ा संघ है। उसकी एक प्रयोगशाला है जहाँ पोषणसम्बन्धी बातोंकी खोज बराबर होती रहती है। यूरोपके सभी देशोंमें इन सहकारी संस्थाओंका एक खास काम यह होता है कि उसके सदस्य संस्थाके पास दूधके जो नमूने भेजते हैं, संस्थामें नियुक्त वैज्ञानिक कार्यकर्ता उनका विश्लेषण करते हैं और उन्हें दूधके पोषक गुण बढ़ानेके सम्बन्धमें आवश्यक सूचनाएँ देते हैं।

शहरोंमें भी सहकारी संस्थाएँ बहुत कुछ कर सकती हैं। यूरोपमें कुछ ऐसे विशेष निपुण व्यापारी फर्म हैं, जिनके अपने-अपने फर्म हैं, जो दूध-मक्खन, साग-सब्जी आदि स्वयं उपजाते हैं और अपने यहाँके नौकरोंको लागतपर बेच देते हैं। यदि उनके यहाँकी उपजसे माँग पूरी नहीं होती तो इन चीजोंको वे बाहरसे खरीदकर खरीद-दामपर अपने यहाँके नौकरोंको देते हैं।

इस तरह जो धन बचता है वह इन श्रमजीवियोंके कौटुम्बिक जीवनके लिये आवश्यक अन्य कार्योंमें लगता है। इसके अतिरिक्त इन श्रमजीवियोंकी क्रयशक्ति भी इससे बहुत बढ़ायी जा सकती है। इसी तरह मजदूरोंके लिये उपहार-गृह आदि भी खोले जा सकते हैं। उनके वेतनसे ही कुछ पैसे काटकर उनके लिये कम-से-कम दिनमें एक बारके भोजनका अच्छा प्रबन्ध किया जा सकता है। इससे दूधकी माँग बढ़ेगी, क्योंकि अच्छे भोजनका मतलब ही यह होता है कि अधिक दूध मिले। अमेरिकाके संयुक्त राज्य तथा अन्य देशोंमें, जहाँ कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको बिना मूल्य दूध देनेका प्रबन्ध किया गया है, वहाँ कारखानोंमें पहलेसे अधिक माल तैयार होता है, मजदूर अधिक काम करते हैं। पर इस तरह दूधकी जो अधिक माँग होगी वह तभी पूरी की जा सकेगी जब इसकी स्थायी व्यवस्था हो और दूध पैदा करनेवालोंको लाभका उचित भाग निश्चित रूपसे मिले।

शहरोंमें रहनेवाले मध्यम श्रेणीके लोगोंके सम्बन्धमें एक और प्रश्न है। वह है 'शिक्षितोंको शिक्षा' देनेका प्रश्न। अधिकांश लोग पदार्थोंके पोषक गुणधर्मोंका हाल बहुत ही कम जानते हैं। इसकी जानकारी करा देनेका काम रेडियो, सिनेमा और व्याख्यानोंद्वारा बहुत कुछ कराया जा सकता है। दूध पैदा करनेवालोंकी सहकारी संस्थाओंके साथ-साथ खरीदारोंकी सहकारी संस्थाएँ भी होनी चाहिये। ये संस्थाएँ अपने सदस्योंमें अच्छे प्रकारके भोजनका प्रचलन करा सकती हैं। इसी श्रेणीके लोग कुछ थोड़ा-सा खर्च और भी कर सकते हैं और इस प्रकार वे दूधके गुणका मान ऊँचा करनेमें सहायक हो सकते हैं।

दूधको टिकाऊ बनानेकी विधि

(Pasteurization)

(लेखक—श्रीयुत विज्ञानभिक्षु)

जिस प्रकार दूध लगभग पूर्ण भोजन (Almost-perfect food) है, उसी प्रकार उसमें कुछ दोष भी हैं। उसका सबसे बड़ा दोष है अधिक देर न ठहरना—जल्दी बिगड़ जाना। दूधका कुछ ठीक नहीं कि कब बिगड़ जाय। दूधमें नाना प्रकारके अणुजीव होते हैं, जो घड़ीमें चारगुना और घंटेमें सोलहगुनाके हिसाबसे बढ़ते हैं। गायके थनसे, दुहनेवालेके हाथसे, हवासे, बर्तनसे, धूलसे तथा अन्य अनेक प्रकारसे इनकी सृष्टि होती रहती है। १० बूँद दूधमें ५ लाखसे ५-१० करोड़तक अणुजीव (Microbes), विशेषकर अणूद्भिज-जीवाणु (Bacteria) होते हैं। इनके अतिरिक्त भुकड़ी तथा खमीरा (Mould and Yeast) से उत्पन्न कई जातिके अणुओंकी सृष्टि हो जाती है। फिर भी यदि गाय, बर्तन, दुहनेवाला और आस-पासका वातावरण—इन सबकी साधारण सफाई रहे तो दो-तीन घंटोंतक दूध न तो बिगड़ सकता है, न हानिकर ही बन सकता है। प्रकृतिने स्वयं ही दूधमें इन सब अणुओंका सामना करनेकी योजना कर रक्खी है। उसमें भक्षक अणूद्भिज (Bacteriophages) और पाचकरस (Enzymes) तथा रोगका सामना करनेवाले रक्षक मित्र अणूद्भिज (Friendly or Benigned Bacteria) होते हैं। कुछ निश्चेष्ट या निरुपद्रवी (Inert) अणु भी पैदा हो जाते हैं। दूधके अभद्र अणूद्भिजों (Pathogens) को मार भगानेके लिये इन अनेक अणुओं तथा मित्र अणुओंकी सृष्टिसे प्रकृति-योजनाके चमत्कारका पता लगता है।

अणूद्भिजोंकी संख्यासे घबड़ानेकी आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता तो उनकी जातिको पहचानने और कुछ उपाय करनेकी है। एक दस बूँद दूधमें ५००० अणूद्भिज हों और वे रोगके हों; दूसरे दस बूँद दूधमें ५ करोड़ हों और वे रोगके न हों—ऐसा भी हो सकता है। रोगवाले अधिकांश अणूद्भिज तो पशु, दुहनेवाले, बर्तन, बेचनेवाले, लेनेवाले तथा वातावरणके कारण आ जाते हैं। इसीलिये इन सब बातोंपर विशेष ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि दुग्ध-व्यवसायकी ३५ प्रतिशत सफलता इन अणूद्भिजों-जीवाणुओंकी जाति और संख्यापर निर्भर है।

'धारोष्णममृतोपमम्' कहा है, क्योंकि उसमें अभद्र अणूद्भिजोंकी संख्या कम-से-कम रहती है और मित्र अणूद्भिजोंका अधिक-से-अधिक लाभ मिलता है—यदि

साधारण सफाई रहे तो। इसके अतिरिक्त दूधके भीतर पोषणांश (Nutrients), रक्षकतत्त्व (Protective Elements) जैसे पाचक रस (Enzymes), जीवनतत्त्व (Vitamins) तथा क्षारतत्त्व (Salt) का भी लाभ मिलता है। दो-तीन घंटेतक यदि सावधानीसे सफाई रक्खी जाय तो दूध ठहरा रहेगा, प्रथम श्रेणीका तो नहीं रह जायगा पर दूसरे दर्जेका होगा। कहनेका तात्पर्य यह कि दूधका विनिमय, विनियोग, व्यवहार, व्यवसाय अथवा जो कुछ भी करना हो शीघ्र कर लेना चाहिये।

दूधकी यह शीघ्रविकारिता या विनाशिता उसका गुण भी है और दोष भी। वास्तवमें दूधका निर्माण स्थानीय पदार्थके रूपमें हुआ है न कि व्यापारकी वस्तुके रूपमें। अब भी देहातोंमें कुछ लोग दूधको बेचना पाप समझते हैं। विशेषकर भारतवर्ष-जैसे उष्ण तथा विशाल देशमें दूधकी एक विकट समस्या उपस्थित हो गयी है। पश्चिमके कई ठंडे देशोंमें किन्हीं विशेष ऋतुओंमें तो दूध कई घंटोंतक नहीं बिगड़ता, किन्तु अपने यहाँ गरमी, गरीबी तथा अपनी सामान्य गंदी चालोंके कारण यह लाभ नहीं मिल पाता। वहन-साधनके अभाव तथा कष्टके कारण भी दुग्ध-व्यवसाय सदा संकट और घाटेमें रहता है। ताजे दूधके स्थानीय उपयोगके अतिरिक्त भारतमें घी बनानेकी विधि प्राचीन और अतिवैज्ञानिक है, किन्तु यह पद्धति कुछ अपव्ययात्मक होनेसे और स्थानीय लोगोंमें क्रय-शक्तिका अभाव होनेसे दुग्ध-व्यवसाय घाटेका सौदा बन रहा है। जबतक यह दशा न सुधरेगी तबतक गायकी उत्पादनशक्ति और उपयोगिता कुण्ठित रहेगी तथा गाय इसी गिरी हुई दशामें चूसी जाती रहेगी। दुग्ध-भुवन गायको इस दुर्दशासे भलीभाँति उठा सकता है।

पद्धति-सुधार

(Technological Manipulations)

(१) विज्ञानकी सहायतासे दुग्धान्नोंका अपव्यय घटाना, (Loss Dontrol)।

(२) पैश्च्यूरीकरण (Past urization) द्वारा दूध और दूधसे बने पदार्थोंकी शीघ्रविकारिताको काबूमें लाकर उनका टिकाऊबल बढ़ाना। दवा अथवा बन्ध्यीकरण (Sterilization) द्वारा उन्हें सुरक्षित रखना (Safety)।

(३) दूधका बेखटके रूपान्तर करना—जैसे मलाई, मक्खन, घी, दूधका पाउडर अथवा गाढ़ा दूध (Condensed milk) बनाना।

(४) प्रेषण-पद्धति—स्थलान्तरण (Transportation)। एक स्थानसे दूसरे स्थानतक ले जानेके लिये ऐसे ढंगकी गाड़ियाँ और संदूकें बनवाना, जिनमें रखनेसे दूध ज्यों-का-त्यों बना रहे। (Refrigerating Cars and Cold-storage)।

(५) विक्रय-पद्धति-सुधार—विज्ञानकी सहायतासे दूधको सुरक्षित और नीरोग अवस्थामें ग्राहकोंतक पहुँचाना।

कहनेका तात्पर्य यह है कि दूध दुहनेसे लेकर ग्राहकोंके उपयोगमें लानेतककी सभी क्रिया-प्रक्रियाओंमें विज्ञान अद्भुत सहायता दे सकता है और दे रहा है। एक ओरसे यदि अच्छा चारा और अच्छा साँड़ गायको ऊपर उठाता है तो दूसरी ओर दुग्ध-विज्ञान ऊपर उठी हुई गायको आगे बढ़ाता है। सफल गोविद्यारूपी सिक्केके ये दोनों मुँह-पीठ हैं।

अब यह देखना है कि विज्ञान दुग्धान्नोंको सुरक्षित कैसे रखता है और कैसे उनका टिकाऊ-बल बढ़ाता है। सुरक्षा (Safty) के लिये तो उनको कम-से-कम २१२. डिग्री एफ्. वाष्पबिंदु (Boiling point) तक वाष्प-चाप-यन्त्र (Steam-pressure) में रखकर घंटोंतक उबालना चाहिये। बर्तनोंमें भरते समय वायु प्रवेश न करने पावे, इस प्रकार उन्हें निर्वात (Vacuum-packing) भर देना चाहिये। इस प्रकार बोतल या डिब्बेमें भरा हुआ दूध महीनों या सालभरके बाद भी खोला जायगा तो वैसा ही निकलेगा, बिगड़ेगा नहीं। इसका नाम है वाष्पित-वन्ध्यीकृत दूध (Sterilized milk)। इससे दूधके तमाम अणूद्भिज—अणुजीव, पाचकरस या तो नष्ट हो जाते हैं या वन्ध्य हो जाते हैं, जिससे उनमें विकार-वृद्धि नहीं होती। सब-के-सब नष्टप्राय और स्थगित रूपमें रहते हैं। इससे कई असुविधाएँ जाती तो हैं, परन्तु दूधका कोमल, पोषक और हितकर आरोग्यप्रद तत्त्व नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है—यह स्पष्ट है। स्वाद, पाचकता, रूप, रंग तथा सुगन्ध आदिमें भी कमी आ जाती है।

अतः बुद्ध भगवान्के मध्यमप्रतिपदा-जैसा कोई मध्यम मार्ग (Golden-mean) निकालना चाहिये। फ्रांसके दीनवत्सल जीवाणु-विशारद पैश्च्यूरने यह मध्यम-मार्ग दिखाया था। इसकी सेवाके सम्मानार्थ इस पद्धतिको पैश्च्यूर-पद्धति—

पैश्च्यूरीकरण (Pasteurization) का नाम दिया गया। इस पद्धतिके अनुसार १४०° एफ्० ३० मिनटतक, १४५° एफ्० १५ मिनटतक और १५५° एफ्० ५ मिनटतक दूध इत्यादिको भापके द्वारा गरम किया जाता है। इससे सामान्य रोगबीज (Pathogenic Bacteria) या तो मर जाते हैं या कुण्ठित हो जाते हैं। दूसरे व्यर्थके अणूद्भिजोंसे भी मुक्ति मिलती है। इसके बाद यदि शीघ्र ही दूधको ठंडा कर दिया जाय तो रोगबीज अधिक नष्ट या कुण्ठित होते हैं, अतः दूधको बर्फीली (५५° एफ् तक) पानीकी नलियोंसे बहाते हैं। फिर शीघ्र ही शीतागार या विद्युत्-शीतागार (Cold-storage-room or Refrigerator) अथवा नमक पानीकी कुंडी (ब्राइन-वाटर) में रखते हैं। दूधको बाहर भेजना होता है तो बोतलोंमें भरकर अच्छी तरहसे कागज या धातुका ढक्कन लगा दिया जाता है। और भी दूर भेजना हो तो ठंडा दूध-पीपा (Can) शीत वाहिनियों (Refrigerating-cars) और टंकियोंके द्वारा मीलोंतक पहुँचाया जाता है।

१४०° एफ्०से १४५° एफ्० वाली इस पद्धतिको धारक-पद्धति (Holding-method) कहते हैं। इसमें गरमीपर अङ्कुश रखना समधारणता और समस्ततासे गरम करनेमें कठिनाई होती है। बार-बार बदलना भी पड़ता है और काम बहुत धीरे होता है। विलम्ब लगानेवाली इस पद्धतिसे अधिक लाभदायी अग्निलपक-पद्धति (Flash-method) है, किन्तु सबसे श्रेष्ठ और नवीन पद्धति है उच्चोष्मासद्य शैली (High-Temperature-Short time) इसमें हीट एक्सचेंजर (Heat-exchanger) नामकी छोटी-सी टंकी या चूडियोंमें १७२° एफ्० गरम पानी पीछेकी ओर घूमता है। उसीकी गरमीसे दूध १२से १८ सेकंडमें १६८° एफ्० गरम होकर हैमजल-वाहिनी नलियोंसे बहता हुआ ठंडा होता चला जाता है। इससे दूधके कोमल तत्त्वोंपर बुरा असर कम होता है और थोड़े समयमें अच्छे रूपमें अधिक काम हो जाता है।

यदि दूधको दो घंटेसे अधिक रखना हो, इस बीचमें न बिक सके, विशेषकर यदि दूधको कुछ दूरीपर भेजना हो तथा यदि प्रतिष्ठा और संतोषके साथ दुग्धोद्योगको चलाना हो तो इस पैश्च्यूरीकरण-पद्धतिको अपनानेके अतिरिक्त कोई दूसरा चारा नहीं है। इस पद्धतिसे दूधकी पाचकता और पोषकतामें ताजे दूधसे कोई विशेष अन्तर भी नहीं मालूम होता। कभी-कभी तो अधिक सफाईके कारण परिणाम बहुत ही अच्छा दिखायी पड़ा है। सफल दुग्धालयके लिये इसके अतिरिक्त कोई अन्य सफल उपाय है ही नहीं। इसके लिये वाष्प-यन्त्र (Steam-Boiler), पैश्च्यूरकारक-यन्त्र (Pasteurizer), हैमक (Cooler), हैमक और शीतागारके लिये बर्फ-यन्त्र (Ice-plant) तथा इंजन, पानी, मकान, सफाई, स्वच्छता आदिकी सुविधा होनी चाहिये।

सामुदायिक और सहकारी ढंगसे दो-तीन घंटेमें साधारण सावधानी और स्वच्छतासे दूध यदि किसी मध्यम श्रेणीके भी पैश्च्यूरकारक यन्त्रमें पहुँच जाय तो घंटोंतक टिका रहे और मीलों दूर पहुँचाया जा सके, जिससे दूधका व्यवसाय सफल हो। इस पद्धतिमें विशेष खर्च भी नहीं है। सामान्य रूपसे १ रतल दूधके पैश्च्यूरीकरण-संस्कारमें लगभग पौन पाईसे डेढ़ पाईतक लगती है। नगरोंमें दूधके भावपर ध्यान दें तो पैसे-दो-पैसेका खर्च भी कुछ नहीं है। इससे एक तो गाय और ग्वालेकी रक्षा होती है और उन्हें उत्तेजना मिलती है, दूसरे नगरके धनी-निर्धन सभी लाचारोंको पोषण मिलता है।

एक बात ध्यानमें रखनेकी है कि पैश्च्यूरित दूधको पूर्ण सुरक्षित समझकर लापरवाही नहीं करनी चाहिये। जहाँतक हो सके शीघ्र और स्वच्छतापूर्वक दूधका उपयोग कर लेना चाहिये। खोलनेके समयतक आरोग्यशास्त्रकी बातोंपर दृष्टि रखनी चाहिये।

कर्बुदीकरण (Carbonation)से, जिसमें अङ्गार-वायु दूधमें प्रसारित की जाती है, फिर भी उसमें फेन उठता है और लाभ मिट जाता है, प्राणवायुचाप (Oxygen under-pressure)से, विद्युत्प्रवाह (Electrolyses)से, उपरक्त या अनुरक्त किरणों (Infra-red Rays)से, वायुचापपद्धति (Pressure-changes)से, त्विष-किरणों (Ultra-Violet Rays)से, तीव्र तरङ्गों (Supersonic Waves)से तथा अतिशैत्य पद्धति (Intensive freezing) से दूधको सुरक्षित रखनेकी कई रीतियोंकी परीक्षा की गयी, किन्तु पैश्च्यूरीकरण पद्धतिके समान सस्ती, सरल और सफल अतएव व्यावहारिक व्यापक कोई भी रीति अबतक नहीं दिखायी पड़ी। इस संस्कारसे दुग्ध-व्यवसाय यशस्वी और अर्थ, कार्य तथा पोषणका साधक बन सकता है। इसे बेखटके और बिना हिचक सामान्य रूपसे सहयोगद्वारा उपयोगमें लाइये। भारतवर्षमें इस पैश्च्यूरीकरणका स्थान बहुत ऊँचा है।



सुन्दरताका सुन्दर साधन

शरीर और चेहरेकी सफाई तथा सुन्दरताके लिये अनेकों प्रकारकी वस्तुएँ काममें ली जाती हैं, इसीलिये बाजारमें नाना प्रकारके क्रीम, पाउडर, ब्रिलिएंटाइन, लाइम-जूस, लिपस्टिक आदि रंग-बिरंगी वस्तुएँ मिलती हैं और अखबारोंके पन्ने भी इनके विज्ञापनसे भरे रहते हैं। किन्तु इनमेंसे अधिकांशमें कुछ भी सार नहीं होता। शायद २०-२५ प्रतिशत ही ऐसी वस्तुएँ होंगी, जिनसे धन, सौन्दर्य, स्वास्थ्य या इज्जतकी हानि न होती हो। पर आजकलकी सभ्यता तो स्नानागारकी व्यर्थ शौकीनीकी सभ्यता (Bath-room Civilization) है, जिसे टालस्टायने दानवी सभ्यता (Devilization), एडवर्ड कारपेंटरने रोग (Disease) और मैक्स नार्डुने समाज-स्वीकृत-मिथ्याओंका समूह (Conventionalities) कहा है, तथा कुछ कटाक्षपाती तो और आगे बढ़कर इसे गरमी-सूजाक बुलानेवाली सभ्यता (Syphilization) भी कहनेमें न हिचकेंगे !

हम यहाँ वास्तविक सभ्यता—सभ्य आचरणकी प्रशंसा करना चाहते हैं। पाउडर, पेंट और पेस्टके इस समयमें अच्छे आदर्शों तथा जीवनप्रणालियोंका भी विकाश हो रहा है। मैं उन्हीं आदर्शोंका एक तुच्छ प्रशंसक और पोषक हूँ। सुन्दर वे ही हैं, जो सुन्दर काम करते हैं—यह बात सभीके लिये आदर्शरूप है, विशेषकर पुरुषों और वह भी युवा पुरुषोंके लिये। यदि यह बात ध्यानमें रहे तो आजकल अधिकांश युवकोंमें आनेवाली स्त्रैणता (Femininity) तथा युवतियोंमें आनेवाला मर्दानापन (Masculinity) रुक जाय और वे लोग कई बलाओंसे बच जायँ !

अपने व्यक्तित्व (Personality) अथवा (Individuality) का विकास तो अपने ही वीर्य, शौर्य, धैर्य, स्थैर्यसे तथा अपनी ही शैली, गौरव (शील) और स्वरूपसे होता है। चूल्हेकी साफ राख, तालाबकी महीन मिट्टी, छाछ, आटा (चना, बाजरा या मूँगका) और तेल आदिकी मालिश करनेसे शरीरकी कान्ति बढ़ती है। मैंने ऐसे कई चेहरे देखे हैं, जिनपर खीलों और फुंसियोंकी कोई गणना हीं नहीं हो सकती। विशेषता यह है कि वे जितना ही पेंट-पाउडर लगाते हैं, उतनी ही फुंसियाँ और मुँहासे बढ़ते जाते हैं। उन्होंने फुंसियोंसे पीब निकालकर उसके इंजेक्शन (Auto-serum injection) तक लगवाये, फिर भी मुँहासोंने उनका पिंड न छोड़ा। पेंट-पाउडर या इंजेक्शनके बजाय यदि वे बचे रहते और चेहरेकी स्निग्ध-ग्रन्थियोंसे निकलनेवाले तेलको पोंछकर चेहरा सुखाते और उसमें धूल-मैल आदि न पड़ने देते तो सुगमतासे इस कष्टसे बच जाते। इतना ही नहीं, उनके चेहरेपर एक आकर्षक चमक भी आ जाती। कभी-कभी नारियलका तेल और पानी साँझ-सबेरे चेहरेपर लगानेसे खील और उनकी चपचपाहट सूख जाती है तथा खील समूल निकल जाती है। कितना सस्ता और सरल उपाय है। किन्तु आजकल खर्च किये बिना सन्तोष होता ही नहीं, क्योंकि शरीर-पूजा बढ़ जो रही है। जब मन्दिरोंकी मूर्ति-पूजा घट रही है, तो अपने शरीरकी पूजा बढ़नी ही चाहिये ! नहीं तो विषमता न आ जायगी !!

हमारी इस टीका-टिप्पणीसे यह न समझना चाहिये कि हम बदसूरती या बदकिस्मतीके उपासक हैं। हम तो कहते हैं कि सच्चा सौन्दर्य नैसर्गिक होता है और निसर्गसे ही मिलता है। अच्छे स्वास्थ्यसे बढ़कर और क्या सौन्दर्य हो सकता है ! यदि हृदयमें मलिनता, द्वेष, कपट आदि न हों तो चेहरेपर चमक रहेगी। हम यह कहना चाहते हैं कि चमड़ेका रंग चाहे कैसा ही हो किन्तु तन-मन-हृदयके सौन्दर्यसे जो मुखपर ज्योति आती है, वही सच्ची और टिकाऊ होती है।

शरीरकी स्वच्छता, मनकी सचाई और हृदयकी उदारतासे जो अलौकिक दमक जगमगाती रहती है वही व्यक्तित्व है, सौन्दर्य है और सच्चा ओज है। नाटकके नट-नटियोंके चेहरे आपने कभी दिनमें देखे हैं ? कैसे कुरूप और भद्दे होते हैं। रातमें खेलके समय उनके चेहरोंपर जो सौन्दर्य दीखता है, वह तो नकली (Made-upbeauty) होता है।

गाँधीजीके विषयमें एक वायसरायने कहा था कि गाँधीजी हैं तो बूढ़े, किन्तु उनके चमड़ेमें बड़ी चमक है। उनकी इसी चमकको अपनेमें भी लानेका प्रयत्न कीजिये। उनमें वह चमक, यह ओजस् वीर्यरक्षाके प्रतापसे आया है, और खास रूपमें आया है उनकी आत्मिक प्रसन्नतासे ही। केवल बकरीके दूध और फलोंके रससे ही वह चमक नहीं आयी। इनसे आयी हुई चमक कबतक टिक सकती है ? इतना सब जान लेनेपर भी यदि शरीर-प्रसाधना,

सुशोभनकी जिन्हें आवश्यकता प्रतीत हो, उनके लिये हम कुछ साधन यहाँ बतलायेंगे। काली मिट्टीका व्यवहार करते रहना चाहिये। कभी-कभी गोबर और गोमूत्र शरीरपर लगाते रहनेसे चमड़ेमें ताजगीके साथ ही स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा। साबुनका उपयोग बहुत अधिक नहीं करना चाहिये। कभी-कभी बिना चर्बीकी लगाइये। तेलकी मालिश करानी चाहिये, इससे आरोग्य और सौन्दर्यमें बहुत वृद्धि होती है।

बाजारमें कदाचित् ही कोई अच्छी क्रीम आती हो, अन्यथा सभी क्रीम केवल क्रीमके आकारकी मलहमकी तरह जमी हुई, कूड़ा-करकट ही होती है। रातमें सोते समय यदि दूधकी मलाई (क्रीम), दूध, नहीं तो छाछ ही मुँहपर लगा ली जाय और सबेरे स्नान कर लिया जाय तो बहुत लाभ हो सकता है। इससे भी अधिक आवश्यकता या शौक हो तो उनके लिये—विशेषकर स्त्रियोंके लिये एकदम सस्ता, सुरक्षित और उपयोगी नुस्खा है। दूध, छाछ और खास करके दूधकी थर (मलाई या साढ़ी) अथवा दूधका खमीर लगाओ और उसमें हल्दी, चपटी फिटकरी या बोरिक अथवा फुलाया हुआ सुहागा जरा-सा भिगोकर मुँहपर लगा लो। रातमें मुँहपर रगड़-रगड़कर भीतर पहुँचा देना चाहिये और सबेरे स्नान कर लेना चाहिये। उसके बाद देखिये, कितना टिकाऊ, सस्ता, सुहावना सौन्दर्य चमक उठता है। इससे तड़क-भड़कवाला, अस्थायी, हानिकर और हास्यास्पद नाटकीय सौन्दर्य नहीं उत्पन्न होगा।

विवाहादिके समय, श्राद्धमें तथा श्रावणीके ऋषि-तर्पणके अवसरोंपर पूजनके समय हमलोग सत्यनारायणजी, शङ्करजी या विष्णुजीको दूध-दहीमें नहलाते हैं न! आप भी वैसे ही बन जाइये और गोबर, गोमूत्र आदि लगाइये। यह कारबोलिक साबुनसे भी बढ़िया और लाभदायक होगा। शरीरपर दूध-छाछ पोतिये, हल्दी भी लगाइये। पश्चिममें अभिनेत्रियाँ दूधके टबमें स्नान करती हैं। दूध, दही, छाछ, दूधकी मलाई (साढ़ी), गोमूत्र और गोबरको न भूलिये। सुघड़, स्थिर और सुहावने सौन्दर्यका सस्ता, सर्वोत्तम और सात्त्विक साधन (नुस्खा) यही है। (डा० जा०)



दूधका रिकार्ड हम क्यों रक्खें ?

(लेखक—श्रीसत्येन्द्र नारायण, बी० ए०)

१. गायके दूधकी मात्राके अनुसार ही उसे भोजन देना ठीक होता है। इस तरह इसका रिकार्ड रखनेसे ही गायके चारे तथा साँड़ोंका चुनाव ठीक तरीकेसे हो सकता है। जो किसान या गोपालक दूधका रिकार्ड रखता है, वह संतुलित चारा दे सकता है, जिससे गायको दूध होता रहे।

२. चारा और दूधकी मात्राको तौलते रहनेसे गोपालकको गायके स्वास्थ्यका नित्य पता रहता है। इस तरह बीमारीका पता भी तुरंत चल जाता है।

३. दूधकी मात्रा जाननेसे उसके वंशकी उन्नति की जा सकती है।

४. कोई भी सावधान गोपालक ऐसा साँड़ नहीं खरीदेगा, जिसकी 'मा' के दूधका रिकार्ड, अर्थात् दूध देनेकी मात्राका हिसाब, बढ़िया न हो। दूधकी मात्रामें उस दूधमें मक्खनका अनुपात भी सम्मिलित है।

५. दूधके रिकार्डसे गायोंका मूल्य बढ़ जाता है। जिन गायोंका रिकार्ड अच्छा हो उनका मूल्य २५ से ५० प्रतिशत तक अधिक मिलता है।

६. गोशालाकी तरक्कीके लिये गायोंका रिकार्ड रखना पहला एवं अत्यावश्यक कदम है।

७. रिकार्ड रखनेसे अधिक दूध मिलता है। दूधकी नाप ग्वालेको मदद करती है और उसे गायोंको पूरी तरह दुहनेके लिये बाध्य करती है। हर-एक गाय कितना दूध देती है इसका ज्ञान उसके प्रति दिलचस्पी पैदा करता है।

८. जो लोग जीविकाके लिये गाय पालते हैं उन्हें इस प्रकारके रिकार्डोंसे अनेक प्रकारकी मदद मिलती है और उनकी आमदनी बढ़ती है। (एक अंग्रेजी लेखके आधारपर)

निर्घृत दूध और छाछ

(लेखक—श्रीअरुणशङ्कर)

दूध और निर्घृत दूध (मक्खन निकाले हुए) की तात्त्विक तुलना उनके भीतर विद्यमान ठोस पदार्थोंके आधारपर नीचे लिखे अनुसार है, जिन्होंने कई लाख विश्लेषण किये हैं और जो दुग्ध-रसायन-विज्ञानके विषयमें संसारभरके वैज्ञानिकोंमें सर्वश्रेष्ठ और प्रमाणस्वरूप माने जाते हैं, ऐसे रिकमेंड साहबके विश्लेषण-परिणामको नीचे दिया जाता है—

	दूध	(प्रतिशत)	निर्घृत दूध
घृतांश	.३९		०.१२
केसीन	३.०		३.२२
अल्ब्युमन	०.४		०.४२
दुग्ध-शर्करा	४.७५		४.८८
क्षार	०.७५		०.७८
कुल ठोस तत्त्व	१२.९		९.५२

दूधकी अपेक्षा निर्घृत दूधमें ठोस तत्त्व पौन भाग हैं, किन्तु घृतांशको छोड़कर शेष सब तत्त्व अधिक मात्रामें हैं।

अब हम सच्ची और पूरी तुलनाके लिये निर्घृत दूध और दूधके बराबर ठोस-तत्त्वोंमें निर्घृत दूधकी तुलना करेंगे।

निर्घृत दूधमें दूधका कितना प्रतिशत तत्त्व है ?

(एक समान ठोस पदार्थोंके मापपर)

घृतांश पूरा आधा टका (.४ प्रतिशत) भी नहीं है किन्तु ऊष्मप्रद होनेके सिवा इसका कोई विशेष महत्त्व नहीं है।

निर्घृत दुध विशेषकर रचनाप्रद (Building food) प्रोटीन और क्षारकी दृष्टिसे कितना बढ़िया है—इसे देखना है। शर्कराकी दृष्टिसे तो बढ़कर है ही।

निर्घृत दूधमें पूर्ण दूधकी अपेक्षा केसीन (४.४३) १४७ प्रतिशत, अल्ब्युमन (.५८) १४५ प्रतिशत, शर्करा (५.६६) १४० प्रतिशत और क्षार (१.०५) १४० प्रतिशत अधिक है।

सेरभर दूधके बराबरका लाभ केवल सवा–डेढ़ सेर निर्घृत दूधसे मिल जायगा। निर्घृत दूधके ऊपरका फेनवाला भाग नहीं लेना चाहिये, क्योंकि उसमें वायु (Gas) रहती है। फेन निकालकर लें। नीचेकी टोंटी खोलकर लेना अच्छा है। निर्घृत दूध यदि ताजा न हो तो उसे गरम करके लेना अच्छा है। इससे पता चल जायगा कि निर्घृतका पोषण अनुपात (Nutritive Ratio) १:२.८ है, जब कि दूधका १:४.०से लेकर १:६.० तक है। जिस सघृत दूधकी प्रशंसा हम गला फाड़-फाड़कर कर रहे हैं, उसमें निर्घृत दूधके पोषण (रचनाप्रद पदार्थों) का केवल २१ से ३० प्रतिशत पोषण है। ऊष्माप्रदमें निर्घृत दूध सघृतका ६० प्रतिशत है। यद्यपि ऊष्माप्रदमें निर्घृत और सघृत दूधका सम्बन्ध ३-५ का है किन्तु पोषण-तत्त्वमें (रचनाप्रदमें) इसका ठीक उल्टा ५-३ का सम्बन्ध है।

लोग कहते हैं कि छाछ तो हमारे काम आ ही जाती है, फिर निर्घृत दूधकी क्या आवश्यकता है। इसके लिये इतना बखेड़ा क्यों करें ? इसका उत्तर यह है कि यदि हम मलाईसे मक्खन बनायें तो छाछ पोषण आदिमें निर्घृत दूधके समान ही होगी और यदि छाछ शुद्ध तथा ताजी हो तो निर्घृत दूधसे भी अधिक शान्तिप्रद होगी। उसके अणूद्भिजोंसे आँत-सम्बन्धी रोगोंमें बड़ा लाभ होता है। यह सारी बात सही है। किन्तु न तो हम मलाई बिलोकर मक्खन निकालते हैं और न हमारे दहीमें अच्छे, लाभदायक और मित्र अणूद्भिज ही (Benigned Bacteria) होते हैं, क्योंकि हमारी क्रियाओंमें न सफाई रहती है, न वैज्ञानिक सावधानी। निर्घृत दूधकी बराबरी करनेवाली बिना पानीकी छाछ है। वह आज-कल हमें नसीब कहाँ ! हमारी छाछ जो बनती है, उसमें कम-से-कम १५-२० गुना पानी डाला जाता है। इस हिसाबसे छाछमें निर्घृत दूधके पोषणका ४-५ प्रतिशत पोषण ही मिलेगा।

निर्घृत दूधके साथ आजकलकी छाछकी तुलना करना व्यर्थ तथा भ्रममात्र है। हाँ, यदि निर्घृत दूधका दही जमाकर उससे छाछ निकाली जाय तो वह अच्छी होगी। दहीकी छाछ, मलाईकी छाछ और निर्घृत दूधकी छाछ—इन तीनोंमें यदि बराबर-बराबर पानी मिलाया जाय तो निर्घृत दूधकी छाछमें पोषणांश अधिक रहेगा। घृतांश दहीकी छाछमें अधिक, मलाईकी छाछमें उससे कम और निर्घृत दूधकी छाछमें नहींके बराबर होगा। किन्तु यह भी उसका गुण समझना चाहिये। क्योंकि उसमें अपव्यय कम होनेसे वह पशु तथा पशुपालकोंके लिये लाभदायी है।

निर्घृत दूधकी विशेषताएँ

(लेखक—श्रीयुत 'निराला')

वर्तमान भीषण परिस्थितिमें केवल निर्घृत दूध ही हमें और हमारे पशुओंको भुखमरी और अपोषणसे बचा सकता है। अतः कम-से-कम उस समयतक, जबतक कि हमारे पशुओंकी दशा पूर्णरूपसे फिर न सुधर जाय, हमें निर्घृत दूध-को अपना राष्ट्रीय पेय बनाना चाहिये।



यह अनुमान लगाया जाता है कि भारतवर्षमें दूधका कुल उत्पादन करीब ७५ करोड़ मन है। इसमेंसे कुछ दूध बछड़ोंको पिला देनेके बाद केवल ६२ करोड़ मन बचता है और इसमेंसे भी केवल २७.२ प्रतिशत बिक्री होता है, जब कि कम-से-कम ५० प्रतिशत तो बिकना ही चाहिये। दूध देहातोंमें ही अधिक उत्पन्न होता है, परन्तु वे न तो दूधकी जरूरत समझते हैं, न उनमें क्रय-शक्ति (Purchasing capacity) होती है और रास्ते तथा सवारीके अभावसे न वे बचे हुए दूधको शहरोंमें ही पहुँचा सकते हैं। अतः बचे हुए दूधके लगभग ५८ प्रतिशतका तो घी बना देना पड़ता है, ५ प्रतिशतका खोवा, ५ प्रतिशतका दही, ४ प्रतिशतकी मलाईकी बर्फ (Ice-cream) और ३ प्रतिशतकी मलाई। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि करीब ४५ करोड़ मन दूधकी कोई व्यवस्था नहीं है और इसमेंसे भी करीब २७ करोड़ मन दूधका घी बनाना पड़ता है। दूधका घी निकालना भारतके लिये सदा घाटेका सौदा है; क्योंकि इसमें दूधकी कीमतसे करीब २५ से ४५ प्रतिशततक कम कीमत आती है। कम-से-कम ४० करोड़ मनकी मलाई निकाली जाय और घी किया जाय तो घाटा भी कम होगा और खासकर ३५ करोड़ मन सस्ता निर्घृत दूध भी देशवासियोंको मिल जायगा। यह कोई कम लाभ नहीं है। इससे करीब ५६ प्रतिशत अधिक दूध,—दूध आदिके लिये इधर-उधर भटकते हुए—बच्चों, गरीबों और रोगियोंको मिल जायगा। इसके अतिरिक्त, मध्यम वर्गके लोग, जो क्रय-शक्ति कम होनेसे प्रतिदिन अधिक-से-अधिक ४-६ छटाँक दूध ही मोल ले सकते हैं, निर्घृत दूध सस्ता होनेसे दुगुना खरीद सकेंगे। जबतक उत्तम गायें हमारे यहाँ अधिक संख्यामें न बढ़ जायँ तथा दूध और क्रय-शक्तिकी कमी रहे, तबतक हमारे लिये निर्घृत दूध एक सच्ची सञ्जीवनी है। विशेषतः आजकी दुर्दशा और दुर्व्यवस्थामें, जब कि पोषणका शोषक, कलङ्ककारी और दूषित कलियुग—कलहयुग चल रहा है। इससे दुग्ध-व्यवसायी गोपालों और गौओंका स्वार्थसाधन और कल्याण हो सकता है। यदि खादी और अन्य ग्रामोद्योगोंसे गरीबोंको रोटी मिल सकती है, तो निर्घृत दूधसे तो राष्ट्रके ८-९ अरब रुपयेके गो-प्रश्न—दुग्ध-व्यवसायको बड़ी सहायता और पुष्टि मिल सकती है। प्रत्येक राष्ट्र-प्रेमीको यज्ञकी भावनासे ही शुद्ध दूधके साथ इस निर्घृत दूधका भी व्यवहार आरम्भ कर देना चाहिये। यज्ञकी भावनासे नहीं, तो शौक या कर्तव्यकी भावनासे, या सेवा-भावसे भी आज ऐसा करना कर्तव्य है। निर्घृत दूधकी बात अभी नयी-नयी है, इसीलिये राष्ट्रीय आरोग्य तथा गो-उद्धारकी भावनासे हम इसके उपयोगके लिये देशवासियोंसे प्रार्थना करते हैं। सच्ची बात तो यह है कि निर्घृत दूध शुद्ध दूधसे भी अधिक गाढ़ा होता है; (क्योंकि मलाईके साथ जलका कुछ भाग उसमेंसे निकल जाता है) इसलिये हलवाई लोग इसमें पानी मिलाकर असलीके नामसे बेचते हैं, और हमें कुछ भी पता नहीं लगता। धीरे-धीरे इसका व्यवहार एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें बढ़ भी रहा है, परन्तु अभी प्रत्यक्षरूपमें हम इसका व्यवहार करनेमें हिचकते हैं। जहाँ भोले एवं सीधे मनुष्य रहते हैं, वहाँ बदमाश तथा स्वार्थी अपना उल्लू सीधा किया ही करते हैं। यहाँ भी यही नियम लागू हो रहा है। पर आशा है कि अब हम सचेत होंगे और ठगाईसे बचेंगे तथा अपने भोलेपन और अज्ञानताके कारण जो लाभ स्वार्थी लोगोंको दे रहे हैं, वह सीधा गायको देंगे और इस प्रकार उसकी उन्नति करेंगे। जहाँ शुद्ध दूध नहीं मिल सकता है, वहाँ पोषणकी दृष्टिसे दूसरा नंबर निर्घृत दूधका ही है। मांस, फल-फूल, धान्य-अन्न, घी-छाछ आदि कई वस्तुओंसे यह

निर्घृत दूध अधिक पोषणप्रद और सस्ता है । पर सस्तेपनके कारण किसी वस्तुको क्षुद्र या नगण्य समझना अनुचित है । हवा और पानी तो बहुत सस्ते हैं—मुफ्त-से हैं । पर क्या इसके लिये हम उनकी अवज्ञा—अवगणना कर सकते हैं ? कदापि नहीं, उनके बिना जीवित ही नहीं रह सकते ? ऐसी ही बात निर्घृत दूधके सम्बन्धमें समझनी चाहिये ।

इससे हमारा यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि जिन लोगोंको शुद्ध दूध पर्याप्त परिमाणमें मिलता है, वे उसको छोड़ दें । हाँ, इतना अवश्य है कि वे भी यदि शुद्ध दूधके साथ कुछ निर्घृत दूधका भी व्यवहार करें तो उन्हें लाभ अधिक होगा । गरीबों एवं मध्यम-वर्गके लोगोंको तो निर्घृत दूधको ही काममें लाना चाहिये तथा बाकीके लोगोंको भी अपनी बचतके अनुसार घीके स्थानमें शुद्ध दूधको काममें लाना चाहिये । इससे उन्हें अधिक फायदा होगा । पश्चिमीय देशोंमें तो दूधकी नदियाँ बहती हैं, अतः उन्हें निर्घृत दूधको व्यवहारमें लानेकी आवश्यकता नहीं है । परन्तु फिर भी बच्चों और बीमार लोगोंको कई बार यह दिया जाता है; क्योंकि इससे उन्हें अधिक लाभ होता है । वहाँवाले हमारी तरह मूर्खतावश उसको फेंक नहीं देते हैं; वे तो उसको बछड़ों, मुर्गों, भेड़ों, सूअरों आदि पालतू जानवरोंको पिलाकर बहुत लाभ उठाते हैं ।

वस्तुतः, निर्घृत दूध पोषणकी दृष्टिसे शुद्ध दूधसे भी अधिक गुणकारक है, इतना होते हुए भी हम यह स्वीकार करते हैं कि निर्घृत दूधमें जीवनतत्त्व 'अ' (Vitamin A) की बहुत कमी होती है, क्योंकि वह घृतांशके साथ मलाई (Cream) में चला जाता है। परन्तु घृतांशकी यह कमी उतनी खटकनेवाली चीज नहीं है क्योंकि घृतांशका मूल्य तो खास करके जीवनतत्त्व (Vitamins) की दृष्टिसे ही है, नहीं तो, घृतसे जो शक्ति, ऊष्मा और मेद प्राप्त होते हैं, वे तो किसी भी तैल, गुड़, शक्कर, आलू, चावल, धान्य आदि ऊष्माप्रद (Fire-foods) पदार्थोंसे भी मिल सकते हैं । ये पदार्थ विनिमेय हैं, अतः एकका काम दूसरेसे भी चल जाता है । किन्तु शरीरके लिये जीवनतत्त्व (विटामिन) से भी अधिक आवश्यकता प्रोटीनवाले पदार्थकी है, जिसमें न तो विनिमयता है, और न जिनका ऊष्माप्रद पदार्थों-जैसा सर्वाधिकार समानताका (Democratic) स्वभाव है । वह तो पूरा राज्यतन्त्रात्मक (Aristrocratic) है । उसमें पूर्ण, अर्ध-पूर्ण और क्षति-पूर्ण भेद हैं, परन्तु पूर्णकी सहायता और संरक्षकतासे अन्य दोनोंका भी महत्त्व बढ़ जाता है और वे भी प्रधान गिने जाने लगते हैं ।

प्रत्येक प्राणीके लिये प्रोटीन और वह भी पूर्ण प्रोटीनकी खास आवश्यकता है, क्योंकि वह ऊष्माप्रद तथा रचनाप्रद (Building-food) दोनोंका काम दे सकता है एवं जल और क्षारके कारण वह शरीरकी वृद्धि, विकास और क्षति-पूर्ति (Repairs) भी कर सकता है । ऊष्माप्रद पदार्थ ऐसा नहीं कर सकते । घी, मक्खन और मलाई, अधिकांश रूपमें ऊष्माप्रद होनेके कारण, शुद्ध दूध और निर्घृत दूधका भी काम नहीं कर सकते; वे तो एक तरहसे हवा और पानी हैं ।

अबतक तो हमने 'निर्घृत दूध शुद्ध दूधसे हल्का है' इस प्रचलित दृष्टिकोणको स्वीकार करके चर्चा की है; अब हम यह दिखानेका प्रयत्न करेंगे कि कई दृष्टियोंसे तो यह निर्घृत दूध शुद्ध दूधसे भी बढ़कर है ।

सवा सेर ठोस पदार्थकी क्या कीमत होती है ?

पदार्थ (सवा सेर) (एक क्वार्ट)	फुटकर कीमत	सवा सेर ठोस सूखे सुपाच्य पदार्थके उत्पादनकी कीमत (Cost of 2½ lbs of dry digestible matter
निर्घृत दूध (Separated)	४ आने	२४ आने
दूध (Ordinary) घृतांश ३·२५ प्रतिशत	८ ,,	३२ ,,
दूध प्रमाणित (Certified) ,, ४·० ,,	१५ ,,	५२ ,,
दूध आरोग्यसिद्ध (Sanitary) ,, ३·२५ ,,	१२ ,,	४८ ,,
मलाई (Cream) ,, २० ,,	४० ,,	९५ ,,
मलाईका बर्फ (Ice-cream) १२ ,,	३० ,,	७२ ,,

(अंडे, मांस इत्यादि अभक्ष्य पदार्थोंकी कीमत तो और भी ज्यादा पड़ती है। यहाँ उनकी तालिका अलग-अलग नहीं दी गयी है।)

ऊपरकी तालिकासे यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि (यद्यपि ये आँकड़े अमेरिकाके हैं, परन्तु फिर भी भारतके आँकड़ोंसे बहुत मिलते-जुलते हैं) सब ठोस पदार्थोंमें, जिनमें पोषण-तत्त्व समान मात्रामें है, दुग्धान्न बहुत सस्ते हैं तथा निर्घृत दूध तो सबसे सस्ता पोषण है। इसीलिये तो उसे पानी और प्राणवायुके समान जीवनदान करनेवाला और सस्ता बतलाया गया था।

निर्घृत दूधकी यह एक और विशेषता है कि वह उच्च-कोटिका पोषण है। (मांस सर्वथा अभक्ष्य होनेपर भी) जो लोग मांस खाते हैं, उनके लिये भी निर्घृत दूधका व्यवहार करनेसे डेढ़ रुपयेमें तथा बिना किसी प्रकारकी हिंसा हुए जो पोषण मिल जाता है, वह उतनी कीमतके मांससे नहीं मिलता। दूध समान परिमाणके मांस आदिसे, चारसे दस गुने कम दामोंमें ही अधिक पोषण देता है और उसमें न किसी प्रकारकी हिंसा है, न दुर्गन्ध, न रोग और न गंदगी। निर्घृत दूधसे भारतवर्ष—हिंसा और वह भी दुधारू पशुओंकी हिंसाके घोर पातकसे बच सकता है। इतना ही नहीं, वह उनको मृत्युसे बचाकर आर्थिक पोषण देता है। इससे गायकी महत्ता बढ़ती है और हम भी बिना किसी भयके आगे बढ़ सकते हैं तथा राष्ट्रको भी उन्नत कर सकते हैं।

	घृतांश (प्रतिशत)	पोषण-अनुपात (Nutritive Ratio) प्रोटीन		प्रोटीनसे अतिरिक्त पदार्थ
निर्घृत दूध	·०४	१	:	१·२८
साधारण दूध	२·६७	१	:	२·९०
श्रेष्ठ दूध	४·७२	१	:	४·२७

बच्चों और बछड़ों आदिके लिये दूधमें घृतांश जितना ही कम हो वह उतना ही अधिक अच्छा है। अतः उनके लिये निर्घृत दूध सर्वश्रेष्ठ है। माताके दूधमें घृतांश सबसे कम रहता है और अन्य पदार्थ अधिक रहते हैं। इसलिये माके दूधके अभावमें निर्घृत दूध बच्चोंके लिये अधिक अनुकूल है।

अन्तमें एक बात और ध्यान देनेकी है कि प्राणिज प्रोटीनोंमें दुग्ध-प्रोटीन श्रेष्ठ है और निर्घृत दूध सर्वश्रेष्ठ। इसलिये अधिक-से-अधिक परिमाणमें निर्घृत दूध लेना चाहिये और घीकी पूर्तिके लिये घीके स्थानमें शुद्ध दूधका प्रयोग करना चाहिये। इससे आजकी आर्थिक और पोषण-विषयक

इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्घृत एवं शुद्ध दूध मांस, मछली, अंडा आदिसे अधिक रुचिकर, पोषक, सस्ते, स्वाभाविक और अहिंसक हैं। क्या इतनी विशेषताएँ कुछ कम हैं? जिस प्रकार पानी और प्राणवायु स्वाभाविक, सस्ते अहिंसक आदि हैं, वही बात दूधके विषयमें है। ऊपरकी तालिकासे हमें दो बातें ज्ञात हुईं—प्रथम, दूध उत्तम होनेके साथ-साथ सस्ता है, द्वितीय, दूधमें भी निर्घृत दूध पोषण एवं कीमतकी दृष्टिसे अधिक श्रेष्ठ है।

अब हम यह देखेंगे कि किन कारणोंसे निर्घृत दूध सब प्रकारके दूधोंमें श्रेष्ठ है। ऊष्माप्रद खाद्यका नाम पोषण कभी नहीं है। पोषण तो देहकण तथा शरीरमें रहनेवाली सातों धातुओंकी रचना करनेवाले अङ्ग-वर्धक खाद्य (Building food) को कहते हैं। यह चीज प्रोटीन है जो निर्घृत दूधमें पूर्णरूपसे रहती है।

ऊष्माप्रदताकी दृष्टिसे तो निर्घृत दूध शुद्ध दूधका ६० प्रतिशत है, किन्तु ऊष्माकी यह कमी मस्तिष्कको अधिक शान्ति देनेवाली होती है। यही कारण है कि बीमारों और मानसिक काम करनेवालोंके लिये निर्घृत दूध अधिक हितकर और शान्तिप्रद माना गया है। ऊष्माप्रदताकी कमी यहाँ गुण बन जाती है। अब हम शरीरवर्धक खाद्योंकी पोषणकी दृष्टिसे तुलना करते हैं—

स्नायु बनाम चिकनाई Muscle Versus Fat प्रोटीन		स्नेह	(शरीरपर) क्या प्रभाव होगा
१	:	·८६	मजबूत, फुर्तीला चिकना और खुर्दरा।
१	:	१·६१	कठिन, फुर्तीला और कोमल।
१	:	२·५२	ढीला और दुर्बल।

स्थिति ठीक हो जायगी और इस रीतिसे गायकी उत्पादकता भी बढ़ेगी और वह अधिक पोषण प्राप्त कर सकेगी। इसका फल यह होगा कि धीरे-धीरे शुद्ध दूध अधिक मात्रामें और निर्घृत दूध कम मात्रामें मिलेगा। किन्तु निर्घृत दूधकी पुष्टिदायकताको कभी नहीं भूलना चाहिये। जब शुद्ध दूध अधिक मात्रामें मिलने लगेगा, तब निर्घृत दूध पशुओं और बछड़ोंको पिलानेके काममें या अन्य प्रकारकी पोषणदायक खूराक या दवाइयों—जैसे—दुग्ध-पाउडर, सैंटोजन, लेक्टोजन, खाद्य-कैसीन आदिके काममें आ सकता है, अथवा उड़ीसा और बंगाल-जैसे कम

दूधवाले प्रान्तोंमें भेजा जा सकता है। वहाँकी दशा सुधरनेके बाद वहाँ भी केसीन, लेक्टोजन, औद्योगिक पदार्थ, ऐरलिक-जैसा कपड़ा, रंग, नकली हाथीदाँत, कचकड़ा आदिके बनानेके काममें आ सकता है। केसीनसे तो करोड़ों रुपयोंके रासायनिक पदार्थ बन सकते हैं। किन्तु पहले तो हमें भुखमरीको मिटाना है, यह राष्ट्रका प्रधान प्रश्न है और निर्घृत दूध इसका एक उत्तर है।

अवश्य ही अन्य सब दुग्धान्नोंकी भाँति निर्घृत दूधको भी शुद्ध, स्वच्छरूपमें तथा ताजा-ताजा ही व्यवहार करना चाहिये। निर्घृत दूधका व्यवहार श्रेष्ठ है। उससे दही, छाछ, श्रीखण्ड, खोआ, मिठाई आदि सब कुछ बन सकता है। सभी प्रान्तोंमें इसका प्रयोग होता है किन्तु दुःख तो यह है कि अभीतक हमारे पढ़े-लिखे भाई भी ठगाते रहे हैं, अब तो आप निर्घृत दूध पीकर गायको भरपेट खिलाइये, इससे आपका और गायका दोनोंका कल्याण होगा।

सेपरेटर या घृतांश-विश्लेषिका—निरालिका या निःसारिका

(लेखक—श्रीयुत डाह्यालाल हरगोविन्द जानी)

प्रतिवर्ष २५ करोड़ रुपयेका अधिक घी और ७५ करोड़का निर्घृत दूध इस प्रकार एक अरब रुपयेकी बचत नये ढंगसे घी बनानेमें होती है किन्तु यह धातुकी कामधेनु—सेपरेटर—उस एक अरबको दो अरब बना सकती है, और वह भी पोषणके रूपमें। इस समय इसका सत्कार भी सच्चा गो-पूजन और गो-उद्धार है।

दूध एक विचित्र चञ्चल द्रव होनेके कारण, यदि साफ-सुथरे बर्तनमें ढककर सावधानीसे रक्खा जाय तो भी,तीन-चार घंटेसे अधिक नहीं ठहरता। अतः यह प्रश्न उठता है कि पीने और बेचनेसे दूध बच जाय तो क्या करें? रखनेसे तो बिगड़ जाता है। बहुत समयके अनुभव, अवलोकन और प्रयोगसे यह पता लगा कि दूधके ऊपरी भागका मलाई-तत्त्व या घृततत्त्व टिकाऊ और बढ़िया है। अतः बचे दूधमेंसे मलाईका तत्त्व पंख, लकड़ी अथवा चमचे-जैसी किसी वस्तुसे निकालने (Skimming) की शोध आरम्भ हुई होगी, और खट्टे हो जानेवाले दूधमेंसे अधिक मलाई-तत्त्व निकलता देखकर, दूधको जमाकर दही बनाने और उसको मथकर मक्खन निकालनेकी प्रथाका पता लगा होगा। आगे जाकर मक्खनसे घी बन सका होगा। इस प्रकार दूधसे घीतक पहुँचनेमें बहुत समय लगा होगा। इस दुग्ध-संस्कृति, अथवा घृत-संस्कृति या गोरस-संस्कृतिमें, भारतवर्षका स्थान सबसे ऊँचा और प्राचीन दिखायी पड़ता है।

दूधको छिछले बर्तनमें रखकर (Shallow pan Skimming), गहरे बर्तनमें रखकर (DeepSetting), दूधमें गरम पानी डालकर (Water Dilution), खट्टे दूधको चमड़ेकी मशकमें भरकर और उसको टाँगकर खूब हिला-झुलाकर अथवा लकड़ीकी मथानीसे मथकर मक्खन निकालनेकी भिन्न-भिन्न कई मनोरञ्जक रीतियाँ दिखायी पड़ती हैं। इस विषयमें पहले भारतने खोज की थी तथा दो सौ साल पूर्वतक यह सबसे श्रेष्ठ था। इन पद्धतियोंका प्राथमिक स्वरूप असंस्कृत होनेपर भी, वैज्ञानिक सिद्धान्तपर निर्भर होनेके कारण सैंकड़ों-सहस्रों वर्षोंतक उनसे पोषण, आरोग्य, आयुष्य और बल-बुद्धि प्राप्त करता रहा तथा खूब प्रसिद्ध हुआ।

दो द्रवोंमें जो हलका होता है वह ऊपर, और जो भारी होता है वह नीचे जाता है। दोनोंको अच्छी तरह मिला दिया जाय तो भी थोड़ी देरमें गुरुत्वाकर्षण (Cravitation) के सिद्धान्तसे भारी पदार्थ नीचे चला जायगा। दूधमें जो घृत-तत्त्व है, उसकी विशिष्ट गुरुता (Speicfic Cravity) ·९३ है और दूधकी १.०२४ से १.०३६ तक देखी जाती है। परन्तु साधारणतः यह गुरुता घीका अंश अधिक होनेसे कम, और कम होनेसे अधिक रहती है। यदि दूधसे घीका अंश निकाल दिया जाय तो शेष निर्घृत दूध (Skim-milk or Separated milk) की विशिष्ट गुरुता १.०३७ होगी।

प्रकृतिसे प्राकृतिक ढंग और गतिके अनुसार काम लेनेसे बहुत विलम्ब होता है और काम भी पूरा नहीं होता। किन्तु यदि प्राकृतिक नियमों (Natural laws) को समझकर उनके अनुसार कार्य करें तो शीघ्र, अधिक, अच्छा और प्रभावपूर्ण लाभ मिलता है। सन् १८७४ में जर्मनीमें श्रीलेट (Lefedlt) नामक विज्ञानवेत्ताने विचार किया कि न्यूटनने फलको गिरते देखकर गुरुत्वाकर्षणके नियमका जो पता लगाया था, उस सिद्धान्तके अनुसार दो वस्तुओंमें हलकी

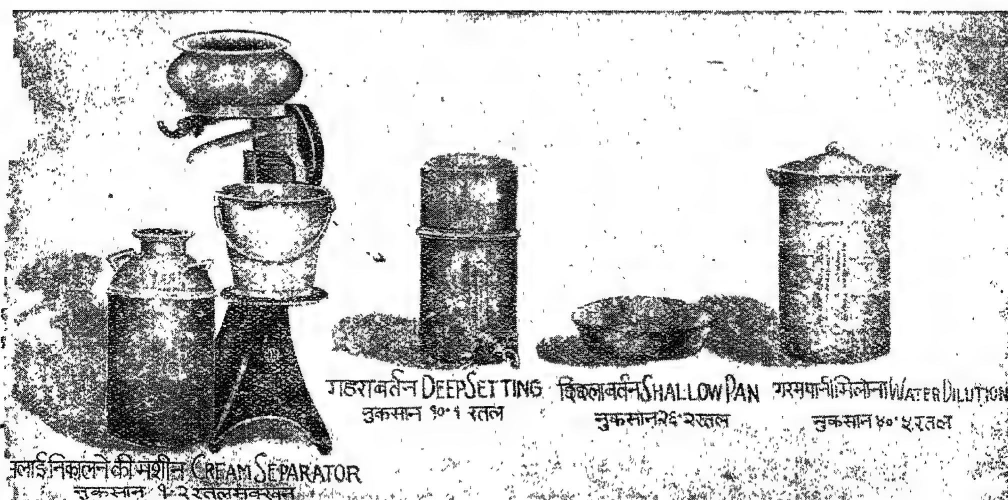
ऊपर और भारी नीचे आ जाती है। किन्तु हम कोई ऐसी पद्धति निकालें, जिससे यह काम बहुत शीघ्र हो जाय। तब उसने देखा कि दो प्रवाही द्रवोंको एक बर्तनमें रखकर खूब जोरसे घुमाया जाय तो हलका भाग ऊँचा उठकर किनारेकी ओर छितरा जाता है अर्थात् गुरुत्व मध्यविन्दु (Centre of Gravity) से हलका भाग मध्यविन्दु कैन्द्र(Centre) से दूर भागता है और भारी भाग केन्द्रके पास जाता है।

इस प्रकार उन्होंने इस कैन्द्रानुसारी (Centripital) और केन्द्रापसारी (Centrifugal) गतिके अवलोकनसे पदार्थोंको शीघ्रतासे घुमानेका यन्त्र बनाया। इसमें उन्होंने गुरुत्वाकर्षणके प्राकृतिक नियममें वेग भर दिया, जिससे घंटोंका काम मिनटोंमें होने लगा। कैन्द्रापसारी यन्त्र बन जानेके बाद सन् १८७८ में स्वीडनके डा० डी० लावलने दूधसे मलाई निकालनेका यन्त्र (Centrifuge) बनाया और उसका नाम आल्फा लावल (Cream-separator) रक्खा। पीछेसे इस यन्त्रमें काफी सुधार होते रहे और इसीके आधारपर कई लोगोंने भाँति-भाँतिके यन्त्र बनाये। तबसे दुग्ध-व्यवसायमें एक भारी क्रान्ति आ गयी—ऐसा समझना चाहिये। तबसे न तो बेकार दूधको फेंकनेकी और न दूधको खट्टा बनानेके लिये छिछले या गहरे बर्तनमें घंटों रखनेकी आवश्यकता रह गयी। पुरानी रीतियोंसे जो घीका अपव्यय होता था, वह भी इस यन्त्रसे बहुत कुछ कम हो गया।

छिछले बर्तनमें दूध रखकर जमानेसे १०० रतल घृत-तत्त्वमेंसे ६ से १० औंसतक अर्थात् '४ से '६ प्रतिशत घीका अपव्यय होता है, गहरे बर्तनमें रखनेसे ३से ५ औंसतक अर्थात् '२ से '३ प्रतिशत, और पानी डालनेकी पद्धतिसे १० से १२ औंसतक घीकी हानि देखी गयी है, किन्तु इस धातुकी धेनु या निरालिका (Separator) यन्त्रसे १०० रतलपर केवल १ से २॥ तोलातक अर्थात् '०१ से '०२ प्रतिशत घीका ही अपव्यय होता है। सोचिये, यदि किसी समृद्धिशाली गाँवमें प्रतिदिन १००० रतल दूधका घी बनाना पड़ता है तो एक वर्षमें ३,६५,००० रतल दूध हुआ, इसमेंसे मक्खन निकाल लेनेपर ३,२०,००० रतल दूध बाकी रह जायगा और इस निर्घृत दूधमें भी लगभग ५ प्रतिशतके हिसाबसे १६,००० रतल घी रहता है। यदि २५ आने प्रति रतल घीका भाव रक्खें तो कितना दाम होगा ?

घीका अपव्यय

	निःसारिका(Separator) पद्धतिसे	गहरे बर्तनवाली पद्धतिसे	छिछले बर्तनवाली पद्धतिसे	गरम पानी डालनेकी पद्धतिसे	दही मथनेकी पद्धतिसे
रतल	६७	५६८	१४७०	२१९५	३२०० से ४००० तक
मूल्य	१०४)	८८८)	२२९६)	३४३०)	५०००) से ६२५०) तक



विभिन्न पद्धतियोंसे एक गायके दूधमें प्रतिवर्ष होनेवाला मक्खनका नुकसान

१६,००० रतल घीका दाम प्रति रतल २५ आनेके भावसे २५०००) हुआ। अतः निःसारिका (Separator) द्वारा निर्घृत दूध निकालकर आधुनिक उत्तम रीतिसे उसका घी निकाला जाय और उसमें अधिक-से-अधिक दुगुना अपव्यय मानें तो भी अन्य रीतियोंसे होनेवाले अपव्ययसे तो बहुत ही कम है। निःसारिका-पद्धतिसे गहरे बर्तनवाली पद्धतिमें ८ गुना, छिछले बर्तनवाली पद्धतिमें २२ गुना, पानी डालनेवाली पद्धतिमें ३५ गुना और दही मथनेवाली पद्धतिमें बहुत अधिक घीका अपव्यय होता है। इस प्रकार एक गाँवमें हजारों रुपयेकी हानि हो जाती है। किन्तु दो या तीन सौ रुपयेमें उत्तम सेपरेटर (Separator machine) मिल जाती है। यों तो ४०) ५०) रुपयेमें भी अच्छी मिल जाती है। किन्तु बहुत बढ़िया मशीन लेनी चाहिये। वह एक महीनेमें अपना मूल्य निकाल देती है। यदि एक आदमी न ले सके तो गाँवभरमें सहयोग करके भी इस मशीनको काममें लाया जाय तो बड़ा लाभ हो। दस-पंद्रह पशुवाले इस मशीनको रक्खें तो एक वर्षमें उनकी रकम निकल आवेगी और फिर मशीन मुफ्तमें रह जायगी।

यद्यपि भारतवर्षमें गहरे बर्तन, छिछले बर्तन या पानी मिलाकर मक्खन-घी बनानेकी जंगली पद्धति नहीं है, यहाँ तो दही जमाकर मथानीसे घी बनाया जाता है, तो भी उसमें १५ से २५ प्रतिशत तक घीका अपव्यय तो हो ही जाता है; ऋतु, दही, मथानी और मथनेवाला—इनके अनुसार अपव्ययकी मात्रा घट-बढ़ भी सकती है। हर गाँव पीछे मथानीकी रीतिसे ४-५ हजार रुपयेका, किन्तु मलाई निकालकर निरालिकासे घी बनानेमें केवल हजार-डेढ़ हजारका ही नुकसान होता है। कितना बड़ा अन्तर है। इसका फल गरीबी और भुखमरीके अतिरिक्त और क्या हो सकता है? यही ४-५ हजार रुपये पशुओंके उत्तम चारे, उत्तम श्रेणीके साँड़, पशुओंकी देख-भाल और बच्चों-रोगियोंको मुफ्त दूध पिलाने आदिमें खर्च किये जा सकते हैं। राजकीय स्वराज्यकी बातको एक ओर रक्खें तो भी गाँवकी पशु-समृद्धि तथा दुग्ध-सम्पत्तिका स्वराज्य तो यह कामधेनु—मजेदार सेंट्रीफ्यूज या सेपरेटर मशीन—ही दिला सकती है। इसके अतिरिक्त गाँवको सालभरमें ३,२०,००० रतल दूधमेंसे २,७२,००० रतल दूध और १५,२०० रतल उत्तम घी मिल जाता है।

	घी (रतलमें)	निर्घृत दूध (रतलमें)	छाछ
निरालिकाद्वारा	१५२००	२,७२,०००	शून्य
मथानीद्वारा	१२,००० से १३,६०० तक	शून्य	?

मथानीके स्थानपर निरालिका-पद्धतिसे आजके भावसे २५००) से ५०००) रुपयेका घी और २७२००) का निर्घृत दूध मिल जाता है। आगे होनेवाली शोधोंसे अधिक लाभ मिलनेकी आशा है, यह हम अलग बतायँगे। हाँ, मथानीसे जो छाछ मिलती है उसका कोई विशेष आर्थिक और पोषक मूल्य नहीं है।

इससे लाखों मन निर्घृत दूधसे, देशके कुल दूधका पौने दो गुना दूध बन जाता है और २० से ४० करोड़ रुपयेतकका अधिक और उत्तम घी मिलता है। सब देशोंने इससे लाभ उठाया है, किन्तु भारतमें अभी बहुत थोड़े लोगोंने इससे लाभ उठाना आरम्भ किया है। अभीतक यह मशीन बड़े नगरोंमें ही है और विशेषकर नफाखोरोंके हाथोंमें। जबतक यह देहातके किसानोंके हाथमें नहीं पहुँच जाती, तबतक यदि सामुदायिक-सहकारी हाथोंमें जाय तो गो-निराशाके कीचड़में फँसा हुआ भारतवर्ष इस कामधेनुकी पूँछ पकड़कर बाहर निकल सकता है।

विशेषकर इस पद्धतिके द्वारा निकाली मलाईसे सीधा घी बना लेनेमें धन, श्रम और पदार्थकी उत्तमतामें बहुत ही बड़ा लाभ होता है। मुँह खोलते ही मिलनेवाली शक्करको कौन छोड़ेगा! यह समझ लीजिये कि लक्ष्मीजी तिलक करनेको आ रही हैं, मुँह मत मोड़िये। यदि इसे गँवा दिया तो फिर आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंडका अधिक शुद्ध, अधिक सुन्दर, अधिक पौष्टिक, अति मीठा और नयनाभिराम घीका डिब्बा आया ही समझिये। आस्ट्रेलियाके गेहूँ, कैलिफोर्नियाके संतरे और जापानके सेवोंको जब हम नहीं रोक सके, तब इस बढ़िया और सस्ती चीजको कौन रोक सकता है। अतः समय रहते चेत जानेमें ही अपना हित और कल्याण है।

वेदमें हलको 'शुना' अर्थात् कल्याण-जैसा मङ्गल और मनोहर नाम दिया गया है। इसी प्रकार इस धातुकी कामधेनुको हम उद्धारिणी नाम भी दे सकते हैं, क्योंकि यह दूधमेंसे मलाईके रूपमें घी-तत्त्वका उद्धरण करती है और इस प्रकार हमारे पशुओंका तथा सारे देशका भी उद्धार करती है।

इस लेखमें हमने उत्साह तथा प्रेमवश सेपरेटरके लिये कई सुन्दर नाम रक्खे हैं। जैसे निःसारिका—यह दूधमेंसे सार भागको निकाल देती है; निरालिका—दूधमेंसे दूध और मलाईको हंसकी भाँति निराला (पृथक्) कर देती

है; घातुकी धेनु—निष्काम ब्राह्मणकी भाँति समस्त गाय-भैंसोंका दूध पीकर फिर विचित्र ढंगसे उत्तम दूध-मलाई देकर धेनुओंका मूल्य बढ़ानेवाली कामधेनु सारे देशकी सवाई बनी रहती है; घृतांश-विश्लेषिका दूधमेंसे केवल मलाई ही नहीं, यदि अकेला घृतका अंश निकालना हो तो भी यह निकाल देती है। यह उसकी अन्तिम उच्चोच्च सेवा है। इस विषयमें अलग लिखा जा सकता है। इसे दुग्धचक्रिका भी कह सकते हैं, क्योंकि जैसे प्रजापति मिट्टीके पिंडको अपने चाकपर लगाकर घुमाते हैं और जैसे खरादी लोग लकड़ीको खरादपर चढ़ाकर घुमाते हैं, उसी प्रकार केन्द्रापसारी सिद्धान्तसे यह दुग्ध-चक्रिका एक मिनटमें ६,००० से १७,००० तक चक्कर लेती है और दूध-घीको अलग कर देती है। इसे केन्द्रापगा (सेंट्रीफ्यूज) और केन्द्रापसारी भी कहा जा सकता है। इन सब नामोंको हम समाजके सामने छोड़ देते हैं, जनता रुचि और अनुभवसे कोई एक चुन लेगी या नया नाम बना लेगी। अभी तो क्रीम-सेपरेटर ही चालू है। किन्तु हमें तो उद्धारिणी या घृतांश-विश्लेषिका अधिक जँचता है, इनमें भी घृतांश-विश्लेषिका बहुत अधिक। जैसे-जैसे इसका विकास होगा, वैसे-वैसे इसका स्वरूप प्रकट होगा। अभी तो हम अपने अल्प अनुभवसे कहते हैं कि यह भारतकी श्रेष्ठ उन्मेषा है।

परन्तु सेपरेटर मशीनका पूरा-पूरा लाभ उठानेके लिये कुछ बातोंका ध्यान रखना आवश्यक है। (१) मशीन अत्यन्त दृढ़ताके साथ कंकरीट पिटी हुई भूमिपर बैठायी हुई हो तथा उसके पेंच, बोलटू इत्यादि अच्छी तरह कसे हुए हों। (२) मशीनकी चाल वही रखनी चाहिये जो कंपनीकी ओरसे उसपर लिखी हुई हो। चाल घटाने-बढ़ानेसे अधिक मलाईका अपव्यय हो जाता है। (३) मशीनकी ऊपरी दूधकी टंकीसे जो दूधकी धार बरतनमें गिरती है, वह भी उचित मोटी रहनी चाहिये, अधिक मोटी धारसे दूध गिरानेपर भी हानिकी आशङ्का रहती है। (४) मशीनको बंद करते ही उसे गरम पानीसे धोना चाहिये और जितनी बार मशीनका प्रयोग किया जाय उतनी ही बार उसके सब पुरजोंको खोलकर अच्छी तरह धो डालना चाहिये। यदि दिनमें कई बार मशीन चलती हो, तो केवल एक बार धोनेसे काम न चलेगा। (५) मलाई निकाले जानेवाले दूधका तापमान, ९०° डिग्री फारनहाइट होना चाहिये, सर्दीके दिनोंमें १००° डिग्री हो सकता है, किन्तु ९० से कम या १०० से अधिक होनेपर मलाईकी क्षति होगी। इन सब बातोंका ध्यान रखनेपर भी २ प्रतिशत मलाईका अपव्यय तो होगा ही, किन्तु इसके बिपरीत चलनेपर निम्नाङ्कित नकशेके अनुसार मलाईका अधिक अपव्यय होगा।



(NORMAL)



अधिक दूध छोड़नेसे | मशीन समतल और स्थिर न होनेसे | मिनटमें २० चक्कर कम चलसे | मिनटमें १० चक्कर कम चालसे

दूध (Whole Milk)

गाय रक्षा करती है

गाय मनुष्यका सर्वश्रेष्ठ हितैषी है। तूफान, ओला, अनावृष्टि या बाढ़ आवे और हमारी फसलोंको नष्ट करके हमारी आशाओंपर पानी फेर दे, किन्तु फिर भी जो बच रहेगा उसीसे गाय हमारे लिये पौष्टिक और जीवन धारण करनेवाला आहार तैयार कर देगी। उन हजारों बच्चोंके लिये तो गाय जीवन ही है, जो दूधरहित वर्तमान नारीत्वकी रेतीपर पड़े हुए हैं।

हम उसकी सिधाई, उसके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिताके लिये उसे प्यार करते हैं। उसकी कृतज्ञतामें कभी कमी नहीं आयी। हमारे ऊपर दुर्भाग्यका हाथ तो होना ही चाहिये, क्योंकि हमलोग सालोंसे अपने कर्तव्यसे गिर गये हैं। हम जानते हैं कि गाय हमारे एक मित्रके रूपमें है, जिससे कभी कोई अपराध नहीं हुआ। जो हमारी पाई-पाई चुका देती है। और घरकी—देशकी रक्षा करती है।

—ई० जी० बेनेट, स्टेट डेयरी कमिश्नर, मिसूरी, अमेरिका

नकली घी और नकली दूध

(लेखक—लाला श्रीहरदेवसहायजी)

नकली चीजको असली कहकर और बढ़ियामें घटिया चीज मिलाकर बढ़ियाके नामपर बेचना प्राचीन कालसे नैतिक अपराध माना जाता है। आजकल तो इसके खिलाफ कानून भी बन गये हैं। नकली चीजोंका प्रभाव जब देशकी आर्थिक और शारीरिक अवस्थापर पड़ता है तो उसका परिणाम बड़ा ही भयङ्कर और घातक होता है। इससे समाजका सारा आर्थिक ढाँचा अस्त-व्यस्त हो जाता है; तथा दुर्बलता और शारीरिक रोगोंके बढ़नेसे देशमें लोग निर्धन, निर्बल और निकम्मे बन जाते हैं।

हमारे देशकी करीब नब्बे प्रतिशत जनसंख्याके जीवनका आधार कृषि है। वाणिज्य, व्यापार, शिल्प और नौकरी-चाकरी आदि भी कृषिपर ही फूलते-फलते हैं। यहाँ संसारके अन्य देशोंकी तरह खेती मशीनों और घोड़ोंसे नहीं, बल्कि बैलोंसे होती है। हल चलानेके सिवा, कुएँमें अरहट चलाने, बोझ ढोने और सवारी पहुँचानेका काम भी बैल ही करते हैं। इसलिये बैलोंकी संख्या और शक्तिको बनाये रखना और बढ़ाना बहुत ही आवश्यक है। बैल गायसे उत्पन्न होते हैं, इसलिये गायकी रक्षा और उन्नतिका प्रश्न बैलोंकी अपेक्षा बढ़कर है। हमें बैलोंके सिवा, अपने शारीरिक स्वास्थ्य और शक्तिको बनाये रखनेके लिये दूध, तथा दूधसे उत्पन्न घी, मक्खन, दही, छाछ आदि चाहिये। हमारे यहाँ खेती और गोपालन, दोनों धंधे किसान करते हैं। गायोंसे उन्हें खेतीके लिये बैल तो मिलते ही हैं साथ ही दूध या दूधसे उत्पन्न घी-दही आदिसे भी तीन अरब रुपयोंसे अधिक आय होती है।

देशके गरम तापमानके कारण दूध अधिक समयतक ठीक नहीं रहता, वह खट्टा हो जाता और बिगड़ जाता है, इसलिये आवश्यक हो जाता है कि घी बनाकर बेचा जाय तथा काममें लाया जाय। सरकारी आँकड़ोंके अनुसार देशमें उत्पन्न होनेवाले ६२९३ लाख मन दूधमेंसे ३५८९ लाख मन यानी ५७ प्रतिशत दूधका घी बनता है। इस प्रकार केवल घीकी बिक्रीसे भारतीय किसानकी वार्षिक आमदनी डेढ़ अरब रुपये होती है। घीके सिवा १६८९ लाख मन दूधसे करीब ८० करोड़ रुपयेकी आमदनी होती है।

निर्धनताके कारण किसान न दूध पी सकता है, न घी ही खा सकता है। उसे मजबूर होकर दूध-घी बेच देना पड़ता है, उसके पास बच जाती है केवल छाछ या लस्सी। यह छाछ ही किसानोंके शारीरिक स्वास्थ्य और शक्तिका आधार है, इसीसे उन्हें विटामिन या पौष्टिक तत्त्व मिलते हैं। छाछके बिना किसानका न तो स्वास्थ्य ठीक रह सकता है, न वैशाख-जेठकी झुलसनेवाली धूप और लूमें वह काम ही कर सकता है। सरकारी दूध-रिपोर्ट १९४१ के अनुसार '६०७५ लाख मन छाछ बनती है और घी बनानेवालेके पास यही एकमात्र बचत है; क्योंकि वह अपनी सारी पैदावार दूध या घीके रूपमें बेच डालता है (पृ० ७०)।' हरिजन लोग यानी गाँवमें रहनेवाले चमार-धानुक आदि तो अपनी रूखी-सूखी रोटी किसानोंके घरसे पायी हुई छाछके साथ ही खाते हैं।

देशके करोड़ों आदमी जो मांस नहीं खाते, उनके स्वास्थ्यका आधार दूध-घी आदि ही हैं। देशकी रक्षाके लिये उन्हीं इलाकोंसे बलवान् और साहसी नौजवान मिलते हैं, जहाँ दूध-घी अधिक खाया जाता है। सिंध, पंजाब, राजपूताना, गुजरात, मध्यप्रान्तकी रियासतें, काठियावाड़, युक्तप्रान्त और बिहारमें देशकी ४२ प्रतिशत जनता बसती है, परन्तु इन प्रान्तोंमें दूधकी पैदावार देशकी कुल दूधकी पैदावारका ७४ प्रतिशत होती है। घीकी उत्पत्ति और बिक्रीसे दूकानदार और किसानका सम्बन्ध बना रहता है, और मंडियोंकी आयको एक बड़ा सहारा मिलता है। घी उत्पन्न करनेके लिये किसान पशुओंको बिनौले आदि खिलाता है, ये उसे दूकानदारसे मिलते हैं और बदलेमें दूकानदार घी खरीदता है। मंडियोंके हजारों दूकानदार बिनौले आदि तथा घीके व्यापारसे लाभ उठाते हैं।

कल-कारखानोंसे हानि

आजकलके कल-कारखाने पश्चिमी सभ्यताकी बड़ी देन हैं। इन कारखानोंको अब देशभक्ति तथा शिल्पोन्नतिके नामपर उन्नत करनेके लिये तरह-तरहकी तजबीजें हो रही हैं। वास्तवमें देशकी आर्थिक-व्यवस्था, भौगोलिक अवस्था, नैतिक उच्चता तथा राजनीतिक स्वतन्त्रताको दृष्टिमें रखते हुए ये बड़े-बड़े कारखाने देशके लिये लाभदायक नहीं, बल्कि हानिकारक

हैं। इन कारखानोंने परिश्रमी, सदाचारी, स्वस्थ और स्वतन्त्र लोगोंको बेकार, बीमार और परतन्त्र तो बनाया ही, साथ ही शराब, व्यभिचारके अड्डे बनाकर उनका नैतिक पतन भी बहुत किया। जिस देशके लोगोंकी आर्थिक और शारीरिक अवस्थाका आधार पशु हों वहाँ किसी भी तरहसे पशुओंको हानि न पहुँचनी चाहिये। परन्तु देशमें शायद ही कोई कारखाना होगा, जो सालमें सौ-दो-सौ पशुओंकी हत्याका कारण न बनता हो। वनस्पति घीके कारखाने तो देशके दुधारू तथा उपयोगी पशुओंके सर्वनाशके कारण हैं ही। जिस प्रकार कपड़ेके कारखानोंने चर्खेके आश्रयसे जीवन बितानेवाली निर्धन, असहाय विधवाओंको निराश्रय करके बेकारी और भूखके विकराल मुँहमें ढकेल दिया, गाँवकी झोपड़ियोंमें स्वतन्त्रतासे जीवन व्यतीत करनेवाले जुलाहोंको चायके बगीचों और कारखानोंके घृणित वायुमण्डलमें जीवन बितानेके लिये मजबूर किया, उसी प्रकार नकली घीके कारखाने किसानोंको निर्धन बना रहे हैं तथा उनके पशुओंको निकम्मा बनाकर कसाईखानोंमें पहुँचानेका कारण बन रहे हैं !!

नकली घी-दूध पशुओंके लिये घातक क्यों ?

मूँगफली, बिनौले तथा सस्ता हो तो मछलीके तेलको भी कास्टिक सोडेसे तेलकी गन्ध उड़ाकर तथा निकल और हाईड्रोजन गैसके द्वारा ठंडा और सफेद करके शुद्ध घीके खरीदारोंको धोखा देनेके लिये Butric acid बट्रिक एसिड —(एक प्रकारका तेजाब) और Synthetic-essence सिन्थेटिक एसेन्स—बनावटी इतर या गन्धके द्वारा उसको घी-जैसा दानेदार और सुगन्धित कर देते हैं। कुछ कारखाने शुद्ध घीमें आसानीसे मिलावट करनेके उद्देश्यसे नकली घीको गायका घी बनानेके लिये पीला, और भैंसका घी बनानेके लिये हल्का हरा या नीला रंग उसमें डाल देते हैं। उसमें चिकनाई विशेष नहीं होती। एक साधारण बुद्धिका आदमी भी यह समझ सकता है कि तेलकी गन्ध उड़ाने, घी-जैसा रंग-दाना और सुगन्ध देनेसे उसमें कोई पौष्टिक तत्त्व पैदा नहीं हो जाता, बल्कि शुद्ध तेलकी अपेक्षा यह नकली घी या बिगाड़ा हुआ तेल स्टिअरिक ग्लेसरिन (Stearic Glycerine) का अधिक भाग रहनेके कारण पचता नहीं, बेकार चला जाता है या स्वास्थ्यको हानि पहुँचाता है। भारतसरकारके विशेषज्ञ डा० राइटने अपनी रिपोर्टके पृष्ठ ३४ पर लिखा है कि 'नकली घी बनानेवालोंका सम्प्रति नब्बे प्रतिशत मिलावटके काममें आता है।' यह नकली घी इस प्रकार या तो शुद्ध घीके रूपमें बिकता है या मिलावटमें काम देता है तथा शुद्ध घीके भावको सस्ता करके किसानोंकी आयको नुकसान पहुँचाता है।

घी तैयार करनेमें किसानोंको दूधकी अपेक्षा कम मूल्य मिलता है। भारतसरकारके विशेषज्ञ डा० राइटके कथनानुसार जब दूधका दाम ५) मन था, उस वक्त घी तैयार करनेमें किसानको केवल २|||) मनके हिसाबसे दूधके दाम मिलते थे। किसान शहरसे दूर रहने तथा छाछकी अपनी आवश्यकताके कारण दूध नहीं बेच सकता, और दूधका बेचना वह बुरा भी समझता है। इसलिये उसे घी तैयार करना पड़ता है। दूध न बेच सकनेके कारण उसे ८० करोड़ रुपये वार्षिक हानि उठानी पड़ती है। वनस्पति घीने शुद्ध घीके मूल्यको कम करके किसानकी इस हानिको और भी बढ़ा दिया है। सरकारी दूध-रिपोर्टके पृ० ११३के लेखके अनुसार १९४०से पूर्व सबसे अधिक शुद्ध घी उत्पन्न करनेवाले पंजाबप्रान्तके सरकारी फार्ममें एक सेर घीका मूल्य एक रुपया साढ़े दस आना पड़ता था, और पंजाबी किसानको शुद्ध घी २६।) प्रतिमन यानी ||=)|| प्रति सेर घाटा उठाकर रुपया सेरके भावसे ही बेचना पड़ता था। एक बड़े धनी कारखानेदारको भी यदि बराबर घाटा हो तो वह कारखाना बंद कर देगा, फिर एक निर्धन किसान कबतक इस घाटेको सहेगा! जब उसे घी बेचनेसे घाटा होगा तो लाचार होकर वह घी पैदा करनेवाले अपने कारखाने यानी पशुको ही बेच देगा, और वह भी कसाईके हाथ! क्योंकि उस घाटेकी चीजको पोसेगा कौन? इस तरह पशुओंका विनाश होनेसे न खेतीके लिये बैल रहेंगे, न दूधके लिये गाय! पशु केवल वही लोग रख सकेंगे, जिनको हानि-लाभकी परवा न होगी। पशुका रखना केवल धर्म या कुत्ते-घोड़ोंकी तरह शौककी बात हो जायगी।

८ जनवरी १९४० के 'हरिजनसेवक'में श्रीपन्नालालके पत्रके उत्तरमें महात्मा गाँधीजी लिखते हैं—'भारतके पशु-धनकी रक्षाका सवाल एक बड़ी और पेंचीदगियोंसे भरी हुई आर्थिक समस्या है। इनमें घीकी मिलावट भी एक पेंचीदगी है, जो सदासे आ रही है। पिछले कुछ वर्षोंसे यह खतरा बढ़ता जा रहा है। इसका कारण देशमें सस्ते वनस्पति तेलका आना है। यह तेल गलतीसे घी इसलिये कहलाता है कि जमा देने और दूसरी रासायनिक क्रियाओंके द्वारा यह घी-जैसा दीखने लगता है।' श्रीपन्नालालका कहना है कि घी-दूधके

व्यापारी और दलाल असली घीमें खूब मिलावट करके किसान या ग्वालेसे सस्ते दरमें बेचते हैं। उनका यह भी कहना है कि यह शरारत बहुत दिनोंतक चलती रही तो किसानोंका इस स्पर्धामें टिकना असम्भव हो जायगा। क्योंकि वनस्पति घी बम्बई और दूसरे स्थानोंमें थोक तैयार किया जा रहा है। आगे चलकर श्रीपन्नालाल कहते हैं और ठीक कहते हैं कि असली घी बाजारसे जाता रहा तो गाड़ी और हल चलानेके लिये बैलोंकी नस्ल सुधारे, और दूध-घीका काम किये बिना खेतीका धंधा असम्भव हो जायगा। इसलिये श्रीपन्नालालने सुझाया है कि मिलावट रोकनेके लिये कठोर उपाय सोचने चाहिये। मैं भी इस प्रस्तावका दिलसे समर्थन करता हूँ, मिलावटके खिलाफ जनताकी ओरसे नियमित आन्दोलन होना चाहिये, और जरूरत हो तो इसके लिये कानून बनाना चाहिये। लार्ड लिनलिथगो साहबने भी कृषि-कमीशन १९२७की रिपोर्टके पृ० २३४ पर शुद्ध घीको एक बड़ा ग्रामीण उद्योग ही नहीं, बल्कि दुग्धालयकी उन्नतिके लिये भी बहुत आवश्यक मानते हुए इसकी रक्षाके लिये लिखा है। पंजाबका हरियाना प्रान्त, जो दूध-घीके लिये प्रसिद्ध है, वहाँ प्रायः अकाल पड़ते रहते हैं। जब शुद्ध घीके साथ कोई स्पर्धा न थी—यहाँके किसान अकालके दिनों शुद्ध घीके द्वारा पशुओंकी रक्षा करते तथा छाछके साथ पुराना सस्ता अन्न खाकर प्राण बचा लेते थे। सन् १८९७—१९०० में यहाँ भयङ्कर अकाल पड़े। सरकार तथा सार्वजनिक संस्थाओंसे पशुओंको कोई सहायता न मिली; फिर भी केवल शुद्ध घीकी बिक्रीसे छः लाखमेंसे चार लाख पशु बच गये। परन्तु १९३८-४० के अकालमें सरकार और जनताद्वारा लाखों रुपयेका चारा तथा अन्य सहूलियतें मिलनेपर भी छः लाखमेंसे चार लाख पशु कम हो गये। क्योंकि शुद्ध घीका परता किसानको अनुमानतः सवा-डेढ़ रुपया सेर पड़ता था और बेचना पड़ता था प्रायः एक रुपया सेर। जो पशु घीके कारण लाभदायक थे, वे ही नकली या वनस्पति घीके प्रसार, मिलावट, सस्ते भाव तथा स्पर्धाके कारण घाटेका सौदा बन गये। किसानोंको जो मूल्य मिला, उसीपर घी बेचनेके लिये वे मजबूर हो गये! संसारमें दूसरे कृषि-प्रधान देश कनाडा तथा दक्षिणी अफ्रिकाकी सरकारोंने पशुओंके लिये घातक समझते हुए नकली घी-जैसी चीजका बनना कानूनद्वारा बंद कर दिया। डेन्मार्कने उसके प्रचार और विज्ञापनमें रुकावट डाल दी। अमेरिकाने तरह-तरहके टैक्स लगाये (वनस्पति घीका समर्थन करनेवाली सरकारी मूँगफलीकी रिपोर्ट पृष्ठ ३००—३०३ के आधारपर)। उन देशोंकी अपेक्षा हमारे देशके लोगोंका अधिक आश्रय कृषिपर होनेके कारण यहाँकी स्थिति और भी विकट हो गयी है!

नकली दूध-घी

दूधमें पानीकी मिलावट होती थी और यह मिलावट जाँचद्वारा पकड़ी जा सकती थी, और स्वास्थ्यके लिये भी अधिक हानिकारक न थी। पर आज तो मशीनोंके प्रतापसे नकली दूध* भी तैयार होने लगा। यह दो प्रकारसे बनता है—(१) मशीनोंके द्वारा मक्खन निकाले हुए दूधके चूर्णको गर्म पानीमें उबालकर दूध तैयार करना, तथा (२) मक्खन निकाले निर्घृत दूधको उसी रूपमें या शुद्ध दूधमें मिलाकर दूधके रूपमें या दही बनाकर बेचना। मक्खन निकाले हुए दूधका चूर्ण प्रायः विदेशोंसे ही आता रहा है। इसका एक औंस चूर्ण एक पौंड पानीके साथ मिलाकर गर्म करनेसे शुद्ध दूध-जैसा बन जाता है और चीनी डालकर पीनेसे शुद्ध दूध-सा मालूम होता है। इस विषयकी सरकारी दूध-रिपोर्ट १९४१ ई० के पृष्ठ ७० पर लिखा है कि—'हमारे देशमें ४६ लाख मन निर्घृत दूध तैयार होता है, यह अपने असली रूपमें बहुत कम बिकता है। यह बहुधा शुद्ध दूधमें मिलाकर या दही बनाकर बेचनेके काम आता है। कभी-कभी इसका खोवा भी बनता है।' इसी रिपोर्टके पृष्ठ २३०-३१ पर लिखा है कि पानी मिला हुआ दूध आसानीसे पकड़ा जा सकता है। लेकिन मक्खन निकाले हुए दूधकी मिलावट पकड़नेका अबतक कोई तरीका नहीं मालूम हुआ है। इस प्रकारकी मिलावटके पकड़नेका तो कोई कानून भी नहीं है। दूधका चूर्ण शुद्ध दूधकी स्पर्धामें सस्ता पड़नेके कारण शुद्ध दूध बेचनेवालोंके लिये बहुत हानिप्रद है। पहले बाहरसे आनेवाले चूर्णपर ३० प्रतिशत टैक्स होनेके कारण यह कम आता था, परन्तु १९३५ ई० में यह टैक्स हटा दिया गया। इसके विपरीत इंग्लैंडमें जहाँ शुद्ध दूधकी उत्पत्ति वहाँकी खपतसे एक तिहाईके करीब है, शुद्ध दूध

* गत महायुद्धके समय दूधकी कमीके कारण सचमुच एक नकली दूध बनाया गया था जिसको 'Lohmanns Vegetable milk' कहते थे। यह सोयाबीन तथा बादामसे बनाया गया था। भूरे रंगका तथा सुगन्धित होता था। इसमें ७ प्रतिशत वानस्पतिक प्रोटीन, २५ प्र० चर्बी और ४२ प्र० शर्करा होती थी। इसका एक चम्मच एक पौंड जलमें मिलानेपर अच्छा दूध-सा बन जाता था।

और लोगोंके स्वास्थ्यकी रक्षाको ध्यानमें रखते हुए १९३६ ई० में विदेशोंसे आनेवाले मक्खन निकाले हुए (निर्धृत) दूधके चूर्णपर जो ९ शिलिंग ६ पेंस टैक्स था, वह १९४३ ई० में बढ़ाकर १९ शिं० २ पेंस यानी दुगुनेसे भी अधिक कर दिया गया। अभागे भारतमें शुद्ध दूध उत्पन्न करनेवालों, पशुओं तथा जनताको हानि पहुँचानेवाले निर्धृत दूध तथा निर्धृत दूधचूर्णके प्रचार और व्यवहारपर कोई रोक तो है ही नहीं; बल्कि इस चूर्णका प्रचार करनेके लिये व्यापारी विज्ञापनबाजीमें लाखों रुपये खर्च किये जा रहे हैं!

इससे शारीरिक हानि और नैतिक पतन

नकली घी तथा नकली दूधसे गायों और गोपालकोंको तो हानि पहुँचती ही है, जनताके स्वास्थ्यके लिये भी ये ठीक नहीं हैं। शुद्ध घी-दूध प्राकृतिक चीजें हैं, हमारे शरीरके लिये जिन पौष्टिक तत्त्वोंकी आवश्यकता है, उन सबको प्रकृतिने इनमें संगृहीत कर रक्खा है, यह शीघ्र पचते और शक्ति प्रदान करते हैं। परन्तु नकली घी-दूधमें शरीरके पोषण करनेवाले तत्त्वोंकी कमी होती है। नकली घी तैयार करनेमें सोडा कास्टिक तथा निकल-जैसी विषैली चीजें काम आती हैं। जिनका कुछ-न-कुछ विषैला प्रभाव उसमें रहता ही है। स्टिअरिक ग्लिसरीनका अधिकांश होनेके कारण नकली वनस्पति घी शरीरकी पाचनक्रियासम्बन्धी भागोंमें घुल-मिल नहीं जाता, बल्कि जैसे-का-तैसा मलद्वारसे निकल जाता है। पंजाब-सरकारके विशेषज्ञ कैप्टन डी० आर० थामस, आई० एम्० एस्०, बम्बई सरकारके कर्नल डा० एफ० पी० मैकी, आई० एम्० एस्० तथा देशके बहुतेरे प्रसिद्ध डाक्टर और वैद्योंने इसे स्वास्थ्यके लिये हानिकर बतलाया है। नकली घीके कारखानेदार तथा दूकानदार स्वयं अपना वनस्पति घी नहीं, बल्कि शुद्ध घी ही खाते और खरीदनेकी कोशिश करते हैं। नकली दूध-घी शुद्ध घी-दूधके खरीदारको धोखा देकर बिकता है और उनके स्वास्थ्यको हानि पहुँचाता है। इसलिये कारखानेदारसे लेकर दूकानदार तथा मिलावट करनेवाले छोटे-मोटे दूकानदार तथा किसानतकके नैतिक अधःपतनका कारण है।

नकली घीके पक्षमें छः बड़ी दलीलें

१. देशमें शुद्ध घीकी उत्पत्ति आवश्यकतासे बहुत ही कम है। इस कमीको पूरा करनेके लिये घी-जैसी किसी दूसरी चीजकी जरूरत है; जो सस्ती हो और जिसे गरीब भी खरीद सकें।

२. शुद्ध घीमें चर्बी आदिकी जो मिलावट होती रही है, वह न हो।

३. नकली घीके तैयार करनेमें काम आनेवाली मूँगफली, बिनौले आदि चीजोंकी माँग बढ़ानेसे किसानोंको लाभ ही पहुँचेगा।

४. नकली घीके कारखानोंसे मजदूरोंको काम मिलता है और बेकारी दूर होती है।

५. संसारके अन्य उन्नत देशोंमें नकली घी-जैसी चीज (मारगरीन) बिकती है, फिर यहाँ नकली घी क्यों न हो?

६. नकली घीसे शुद्ध घीको कोई हानि नहीं।

अब इन दलीलोंपर विचार कीजिये।

१. अपने देशकी अवस्था-व्यवस्थाको सामने रखनेपर वनस्पति घीके पक्षपातियोंकी ये दलीलें निराधार तथा भ्रमपूर्ण प्रतीत होती हैं। यह ठीक है कि देशमें शुद्ध घीकी उत्पत्ति माँगसे बहुत कम है, और दिन-प्रतिदिन और भी कम होती जा रही है; परन्तु इसका एक बड़ा कारण नकली घी भी है। नकली घी सस्ता नहीं, वस्तुतः महँगा और हानिकारक है। यह घीके नामपर बिकता है लेकिन है तेल, और वह भी शुद्ध नहीं बिगड़ा हुआ! स्वास्थ्य और शक्तिकी दृष्टिसे नकली घीकी अपेक्षा शुद्ध तेल कहीं अच्छा होता है। देशकी आधीसे अधिक जनता आज भी तेल खाती है। वह उसके खानेके ढंग और गुण-दोषसे परिचित है। इसलिये वह हानि नहीं पहुँचाता। परन्तु नकली घीके विषयमें उन्हें मालूम ही नहीं, कि उसमें क्या-क्या मिला रहता है। मूँगफलीका तेल आजकल करीब ३२) मन बिकता है, पर नकली घी मिलता है ५०)–६०) मन। इस प्रकार खरीदारको इस नकली चीजके लिये १८)–२०) अधिक देने पड़ते हैं। यदि वह जानता तो इस धोखेसे बचकर तेल ही खरीदता; इससे ये रुपये भी बचते और स्वास्थ्यको भी उतनी हानि नहीं होती, जितनी नकली घीसे होती है। गाँवके गरीब लोग तो घी खरीद नहीं सकते। उनका काम तो छाछसे चलता है, और नकली घी उन्हें छाछसे भी वञ्चित कर रहा है।

२. चर्बी तथा अन्य चीजोंकी मिलावट निःसन्देह अच्छी नहीं। पर पहले चर्बीकी मिलावट बहुत कम होती थी और उसका पकड़ना भी आसान था। नकली घीकी मिलावट तो बहुत बड़े परिमाणमें होती है, और वह पकड़ी भी नहीं जा सकती। धार्मिक दृष्टिसे भी नकली घी दोषपूर्ण है; क्योंकि

मछलीके तेलके सस्ता होनेपर वह उससे भी बनाया जाता है। पहले बनता था, आगे भी बनना सम्भव है।

३. शुद्ध घी पैदा करनेके लिये पशुओंको बिनौला खिलाया जाता है और उसकी खपत नकली घीके कारखानोंकी मूँगफली और बिनौलेकी माँगसे बहुत अधिक होती है। दूसरी बात यह है कि किसानोंको मूँगफली और बिनौलेकी अपेक्षा शुद्ध घी बेचनेसे अधिक रुपया मिलता है और स्वास्थ्यके लिये छाछ ऊपरसे मिल जाती है। इसलिये नकली घीके पक्षपातीकी दलील बड़ी लचर है।

४. पिछले सालतक करीब ३५ लाख मन नकली घी तैयार होता था। इसे तैयार करनेमें कारखानोंमें अधिक-से-अधिक दो हजार मजदूरोंकी आवश्यकता है। पर शुद्ध घीके कामसे करोड़ों इन्हीं-जैसे किसानोंका निर्वाह होता और बिनौला तथा शुद्ध घीके व्यापारसे लाखों दूकानदारों, व्यापारियों और मजदूरोंको काम मिलता है।

५. यह ठीक है कि अन्य देशोंमें नकली घी-(मारगरीन) जैसी चीजोंकी खपत है, परन्तु हमारे देश-जैसे ही कृषि-प्रधान देश कनाडा और दक्षिणी अफ्रीकामें तो इसका बनना कानूनके द्वारा बंद कर दिया गया है। अमेरिकामें इसके विरुद्ध टैक्स लगाये गये और मक्खन-जैसा रूप-रंग बनानेका निषेध कर दिया गया, मारगरीनमें जिन पौष्टिक पदार्थोंकी कमी थी; उनकी पूर्ति करायी गयी, मिलावटको रोकनेके लिये कड़े कानून बनाये गये तथा मिलावटको पकड़नेके लिये सुगम तरीके निकाले गये, और नकली दूधके चूर्णपर टैक्स बढ़ाया गया। अपने देशकी हालतको देखते तो यहाँ नकली घीका बनाना ही रोक देना चाहिये। यदि शुद्ध घीकी कमीके कारण किसी दूसरी स्निग्ध चीजकी आवश्यकता है तो उसके लिये नकली घी नहीं, बल्कि शुद्ध साफ किये गये तेलोंका व्यवहार स्वास्थ्यके लिये ठीक और सस्ता रहेगा।

अर्थशास्त्रके नियमानुसार नकली दूध-घी बाजारसे असली दूध-घीको निकाल रहे हैं। ग्राहक कुछ दिन असली घीका दाम देकर धोखेसे नकली या मिलावटी घी खरीदता है। जब उसे पता लग जाता है कि धोखेमें वह नकली घीके लिये अधिक पैसे दे रहा है, तब वह असली छोड़कर नकली घी सस्तेमें खरीदने लगता है, इस प्रकार असली घीके विषयमें विश्वास उठ जानेके कारण उसकी माँग कम होने लगती है। बंगाल, मद्रास आदि प्रान्तोंमें घानीका शुद्ध तेल काममें आता था। तेलके कारखाने खुलनेसे कुछ दिन घानीके नामपर कारखानेके तेल तथा उसकी मिलावटको लोगोंने खरीदा, पीछे इसकी पोल खुल गयी और लोग घानीके तेलका कोई विश्वास न होनेके कारण कारखानेका तेल ही खरीदने लगे। इससे घानी पेरनेवाले तेली बेकार हो गये। इसी प्रकार जब नकल और मिलावटके कारण शुद्ध घीपरसे विश्वास उठ जायगा तो खरीदार असली घी होनेपर भी सन्देहवश उसे छोड़कर सीधा सस्ता नकली घी ही खरीदेगा, और शुद्ध घीकी माँग बंद हो जायगी। फिर शुद्ध घी उत्पन्न करनेवाले पशुओंको कौन रक्खेगा? तेली और उनकी घानीके समान किसान और उनके पशु भी बेकार हो जायँगे। इससे देशकी शारीरिक, आर्थिक और नैतिक अवस्था बिगड़ेगी और अन्तमें सर्वनाशका कारण बनेगी।

नकली घी-दूधके उत्पादनमें वृद्धि

कृषि-कमीशन, दूध-कमेटी आदिकी रिपोर्टों तथा अन्यान्य बड़े-बड़े विशेषज्ञोंकी सिफारिशपर भी भारतसरकारने नकली घी तथा इसकी मिलावटके विरुद्ध कोई कानून नहीं बनाया। बल्कि इस हानिकारक व्यवसायको उत्तरोत्तर प्रोत्साहन ही दिया जा रहा है। डा० राइटके कथनानुसार सन् १९३७ ई० में यहाँके कारखानोंमें २५ हजार टन या सात लाख मनके करीब नकली घी तैयार होता था। सन् १९४५ ई० के अन्ततक सवा दो लाख टन या साठ लाख मनसे अधिक तैयार होगा। दस वर्षोंके बीच ही नकली घीका उत्पादन आठ गुना बढ़ गया। कितने आश्चर्य तथा दुःखकी बात है कि जिस नकली घीके विरुद्ध लार्ड लिनलिथगोने अपनी १९२७ ई० की रिपोर्टमें लिखा था। उसपर वह सर्वोच्च अधिकारी होते हुए भी कोई साधारण प्रतिबन्ध भी न लगा सके; बल्कि उनकी आँखोंके सामने ही नकली घीका उत्पादन इस कदर बढ़ गया!

अब तो इसका उत्पादन और भी बढ़ाया जा रहा है। इस वर्षके आरम्भमें नकली घीका उत्पादन एक लाख बीस हजार टन था। सरकारी यत्न और प्रोत्साहनसे इस वर्ष सम्भवतः बीस नये कारखाने और खुल रहे हैं, जिनमें एक लाख टन नकली घी तैयार होगा। कहा जाता है कि अगले साल तीस और कारखाने खोले जानेकी तजवीज है। सरकारने नकली दूधके प्रचारको बढ़ानेके लिये उसपर लगे हुए टैक्सको ही हटा दिया है। सरकारी विशेषज्ञोंकी सिफारिशपर

भी न तो शुद्ध भोजन-कानूनको ठीक किया गया और न शुद्ध दूध-घीका उत्पादन ही बढ़ाया गया। यहाँतक कि शुद्ध दूध घीकी उत्पत्ति बढ़ानेके लिये दुधारू पशुओंकी रक्षा और उन्नतिकी भी असाधारण उपेक्षा की गयी !

उपाय क्या ?

१. दुधारू पशुओंकी रक्षा तथा उन्नतिके द्वारा दूध-घीका उत्पादन बढ़ाया जाय।

२. सरसों, तिल आदिके तेल, जो मूँगफलीके तेलके समान स्वास्थ्यके लिये हानिकारक न हों, उनको प्राकृतिक ढंगसे शुद्ध करके तैयार करने और बेचनेका प्रबन्ध हो।

३. नकली दूध-घीके तैयार करने और बेचनेके विरुद्ध जनमत तैयार किया जाय।

४. नकली घी-दूध तैयार करनेवाले कारखाने बंद कराये जायँ। कम-से-कम ऐसे कारखानोंके धर्मभीरु समझदार मालिक—जो नकली घीको वास्तवमें बुरा समझते हैं—अपने कारखानोंमें इसकी जगह शुद्ध साबुन तैयार करें। इससे लाभ तो कम होगा पर नकली घीके कारण देशपर तथा गोजातिपर जो भयानक आघात लग रहा है, वह रुक जायगा। अपवित्र साबुनमें जो गाय इत्यादिकी चर्बी लगती है, वह भी बंद हो जायगी।

५. नकली घीकी सबसे बड़ा समर्थन करनेवाली मूँगफली-सरकारी रिपोर्ट १९४१ में लाभकी दृष्टिसे नीचे लिखे उपाय बतलाये गये थे—

(क) नकली घीकी उत्पत्तिपर कंट्रोल किया जाय, जिससे अधिक उत्पत्ति और आपसी प्रतिस्पर्द्धा कम हो।

(ख) अन्य देशोंके समान यहाँ भी वनस्पति घीपर टैक्स लगाया जाय और वह तेलों और घीको उत्तम बनानेके लिये खर्च किया जाय, जिस प्रकार गन्नेकी खेतीको उन्नत करनेके लिये चीनीपर टैक्स लगाया गया है।

(ग) वनस्पति घीके तैयार करनेवालों और बेचनेवालोंके लिये लायसंस लेना आवश्यक हो। शुद्ध घीके व्यापारीको यह लायसंस नहीं दिया जाय।

(घ) जो हलवाई या दूकानदार वनस्पति घीका प्रयोग करते हैं, वे अपनी दूकानके सामने वनस्पतिका साइनबोर्ड अवश्य लगावें।

(ङ) घी और वनस्पति घीकी मिलावटको अपराध मानकर जुर्माने और कैदकी सजा दी जाय।

(च) वनस्पति घीमें बट्रिक एसिड (Butric-acid) (एक प्रकारका तेजाब) और सिंथेटिक एसेन्स Synthetic essence (बनावटी इत्र या गन्धपदार्थ) का (जो वनस्पतिका रूप शुद्ध घी-जैसा बना देते हैं) मिलाना बंद कर दिया जाय और पौष्टिक तत्त्व मिलानेके लिये प्रोत्साहन दिया जाय। **मिलावटको सहज ही पहचाननेके लिये तिलका तेल मिलाना आवश्यक कर दिया जाय।**

(छ) शुद्ध भोजन-कानूनको कड़ाईसे लागू किया जाय। बारंबार अपराध करनेवालोंको अधिक दण्ड दिया जाय, जिससे दूसरोंके ऊपर प्रभाव पड़े।

यह सरकारकी अपनी तजवीजें थीं। पर दुःख है कि इनपर अबतक कोई अमल नहीं किया गया। यदि इनके अनुसार भी कुछ काम होता तो बड़ा लाभ पहुँचता।

६. मक्खन निकाले हुए निर्घृत दूधके चूर्णका आयात बंद कर दिया जाय।

७. नकली घी तथा मक्खन निकाले हुए दूधके चूर्णका बनाया जाना या आना कानूनद्वारा अग्राह्य कर दिया जाय।

८. देशके समाचार-पत्र इस प्रकारके नकली घी तथा नकली दूधका विज्ञापन न छापें।

गाय मरी तो बचता कौन।
गाय बची तो मरता कौन॥

—रोमांस आफ दि काउ

निर्घृत दूध हानिकर है

(लेखक—श्रीसाराभाई प्रतापराय)

निर्घृत दूधके सेवनको लाभदायक बताते हुए इसके सम्बन्धमें कुछ सज्जन यह कहते हैं कि—

१. निर्घृत दूध पूर्ण घृतयुक्त दूधकी अपेक्षा अधिक लाभकारी आहार्य पदार्थ है ।

२. दूध (पूण घृतयुक्त दूध) से घी निकाल लेनेपर उसके प्रोटीनोंकी पाचनयोग्यता बढ़ जाती है और इससे वह अधिक पोषक पेय बन जाता है ।

३. दूधसे निकाले हुए घीसे हिंदुस्थानकी आय प्रतिवर्ष २५ करोड़ रुपये बढ़ जायगी और यह धन गौकी रक्षामें सहायक होगा ।

४. इस प्रकार निर्घृत दूधका सार्वत्रिक प्रचार गोरक्षाके कार्यका एक प्रधान कारण बनेगा ।

यह कथन कहाँतक ठीक है, इसपर यहाँ विचार किया जाता है ।

१. डाक्टर और सरकारी प्रचारक भी निर्घृत दूधका सेवन एक आपद्धर्मके तौरपर करनेको कहते हैं, किसीने भी इसे सदाके लिये सेवनीय नहीं बतलाया है । मक्खनकी रफ्तनी करनेवाले देश भी इसे पूर्ण दूधके प्रतिनिधि रूपसे व्यवहृत नहीं करते । केवल दातव्य औषधालयों और अनाथालयोंमें, जहाँ बहुत किफायतसे सब काम चलाना पड़ता है, इसका उपयोग किया जाता है; क्योंकि वे पूर्ण घृतयुक्त दूध खरीदनेमें असमर्थ हैं । 'साउथ इंडियन मिशन'के तीन अनाथालयोंमें, जहाँ प्रति अनाथ प्रतिमास ३) खर्च किया जाता था, निर्घृत दूधका सेवन अनाथ बच्चोंको कराया जाता था और कहते हैं कि इससे वे हृष्ट-पुष्ट हुए । यहाँ यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि इन बच्चोंको आहारके साथ नित्य आध औंस मांस भी खिलाया जाता था । ये बच्चे भी वैसे ही थे, जिन्होंने या जिनके माता-पिताओंने कभी जाना ही नहीं कि पोषक खाद्य क्या होता है । हिंदुस्थानमें सन् १९००में जो भयङ्कर अकाल पड़ा, उसमें भूखों मरनेकी नौबत आनेपर लोगोंके पास जहाँ जो थोड़ा-सा ज्वार या अन्य कोई रद्दी-सद्दी आटा बचा रहा, वहाँ लोगोंने उसके साथ नागफनीके फन मिला-मिलाकर अपने पेट भरे और इस प्रकार वे मौतके मुँहसे बचे; पर नागफनी मनुष्य-जातिका आहार तो कभी नहीं बनी । जो लोग नागफनी खाकर जीये, वे रोगका आक्रमण होते ही तुरंत उसके शिकार हो गये । निर्घृत दूधकी उपकारिताका डंका पीटनेवाले लोगोंको यह भी जानना चाहिये कि ब्रिटेनके स्वास्थ्य-विभाग (British Ministry of Health) की ओरसे अभी हालमें इस विषयकी जो जाँच हुई उसका क्या फल हुआ । लंदनके इकानामिस्ट पत्रके ता० ६ जनवरी १९४५ के अङ्कमें यह अवतरण दिया है कि 'बहुत बड़े परिमाणपर जाँच करनेसे यह मालूम हुआ है कि स्कूलोंमें पढ़नेवाले बालकों और कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंका जो युद्धकालीन सामान्य आहार है, उसमें विटामिनकी पुष्टाई मिलानेसे कोई लाभ नहीं होता । डा० आयक्रायडने यह व्यवस्था दी है कि निर्घृत दूध केवल गरीब माताओंके बच्चोंको ही पिलाया जाय और सो भी निर्घृत दूधमें विटामिन 'ए' मिलाकर । इसका न तो सार्वत्रिक प्रचार किया जाय, न सबके लिये सब समय पोषक पदार्थके तौरपर इसका सेवन कराया जाय ।'

निर्घृत दूध 'अधिक लाभकारी आहार्य पदार्थ' कदापि नहीं हो सकता । बच्चोंके लिये, गर्भवती माताओंके लिये तथा दूध पिलानेवाली धात्रियोंके लिये यह वास्तवमें सर्वथा अनुपयुक्त है । इंग्लैंडमें निर्घृत दूधके बंद टिनोंपर इस आशयकी चेतावनीके वाक्य लिखे भी रहते हैं कि 'निर्घृत दूधकी इनके लिये मनाई है ।'

वर्त्तमान संकटमय युद्धकालमें, जब कि देशरक्षक सैनिकादिका काम करनेवालोंको अत्यन्त तेजयुक्त और पूर्ण स्वस्थ रहना चाहिये, इन विभागोंके लोग निर्घृत दूधकी ओर देखतेतक नहीं । उन्हें ताजा घृतयुक्त पूर्ण दूध, पनीर और मक्खन दिया जाता है । और सरकारी डेयरी-फार्म इन विभागोंके पास घृतयुक्त पूर्ण दूध और उसके विशुद्धतम पदार्थ और पोषक द्रव्य ही पहुँचाया करते हैं न कि यह 'अधिक लाभकारी' कहानेवाला निर्घृत दूध । अडनवालाके डेयरी-फार्मको यह हुक्म दिया गया था कि वह सैनिकोंके लिये कैंटीनोंमें पूर्ण दूध पहुँचाया करे, इससे असैनिक जनता घृतयुक्त पूर्ण दूधसे अवश्य ही वञ्चित रही । बम्बई और पूनाके समीपके चार गवर्नमेंट

डेयरी-फार्म सैनिकोंके लिये प्रतिदिन ३५००० मन घृतयुक्त पूर्ण दूध, ३५०० पौंड मक्खन और ५०० पौंड घी बराबर पहुँचाया करते हैं। कभी निर्घृत दूधका एक बूँद या उसके चूर्णकी एक चुटकी भी नहीं।

निर्घृत दूधके प्रचारक एक संकटकालीन स्थितिको स्थायी व्यवस्थाके रूपमें परिणत करना चाहते हैं। इसका परिणाम यह होगा कि, हिंदुस्थानके लोग, जिन्हें पूरा भोजन नहीं मिलता और जिनका ठीक तरहसे पोषण नहीं होता, यह निर्घृत दूध पीकर अपना रहा-सहा आरोग्य, बल और तेज भी खो देंगे !

२. यह कहना कि निर्घृत दूधके प्रोटीन 'अधिक पोषक पेय' बन जाते हैं, मानव-प्रकृतिके गुण-कर्मोंके सम्बन्धमें अपना अज्ञान ही प्रकट करना है। सुप्रसिद्ध शरीरविज्ञानी और जीवविज्ञानी यह बतलाते हैं कि मनुष्यकी शरीर-रचनाके साथ प्रोटीनोंके खप-पचकर मिल जानेके लिये यह आवश्यक है कि प्रोटीन स्नेहयुक्त हों, इनसे जब घृत निकाल लिया जाता है तब शरीरमें स्निग्धताका जो भण्डार है उससे ये घृत खींच लेते हैं और इस तरह जो खजाना किसी विशेष संकटकालमें, किसी आकस्मिक अभावकी अवस्थामें काम देनेके लिये सुरक्षित रक्खा रहना चाहिये, वही खाली हो जाता है !

दूधसे प्रोटीनका वास्तविक पोषक अङ्ग घृत निकाल लेनेपर प्रोटीनकी पाचनयोग्यताका बढ़ जाना तो एक ऐसा अद्भुत आविष्कार है, जिसका शरीरविज्ञानियोंको अभीतक कोई पता नहीं है। जबतक खोज न हो ले और जीव-विज्ञानसे प्रमाणित न हो जाय तबतक तो यह इन महानुभावों-के दिमागका ही आविष्कार समझा जायगा।

३. यह कहना कि, 'अलग किये हुए घीसे हिंदुस्थानकी आय प्रतिवर्ष २५ करोड़ रुपये बढ़ जायगी और यह धन गौकी रक्षामें सहायक होगा', बिल्कुल भूल है। कारण, असलमें ताजा दूध बेचनेसे ही गोपालकोंको अधिक रुपया मिलता है और यह जो नकद रुपया उनके हाथोंमें आता है वही सीधा गौकी रक्षा और उसके पालनमें लगता है। घीसे जो आमदनी होती है, उसे वसूल करनेवाले तो बीचके गुमाश्ते और व्यापारी होते हैं और वह आमदनी गाय-भैंसोंके पालनेवालोंको कभी पूरी नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त घी खानेवाले उच्च श्रेणियोंके लोग होते हैं; और निर्घृत दूधसे यह होता है कि मध्यम श्रेणीके नीचेकी श्रेणियोंके लोग, किसान और उनके बच्चे और चौपाये अपने अति प्रिय मट्ठेसे भी वञ्चित रहते हैं। फिर, यन्त्रसे क्रीम निकालकर जो घी बनता है वह क्रीम—घी, दही बिलोकर निकाले हुए घीकी अपेक्षा ठहरनेमें, सुगन्ध, दाना और घटन सभी बातोंमें बहुत ही घटिया होता है। दहीके घीकी अपेक्षा क्रीम-घीका मूल्य भी कम मिलता है और यह जल्दी खराब भी हो जाता है।

निर्घृत दूधके प्रचारक इस बातको तो मानेंगे कि दूधमेंसे घृत निकाल लेनेके बाद उस निर्घृत दूधमें जो खनिज क्षार कैल्शिएट और फास्फेट रह जाते हैं, वे घृतके अभावमें बेतरह बढ़ते हैं। इम्पीरियल डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलोरके डाइरेक्टर महोदयने अपने मोनोग्राफमें खनिज क्षारोंका परिमाण इस प्रकार दिया है—

गौके पूर्ण दूधमें खनिज क्षारका परिमाण प्रतिशत	०.७
निर्घृत दूधके चूर्णमें ,, ,, ,, ,,	७.९

उन्हें सर्वसाधारणकी जानकारीके लिये यह भी बतला देना चाहिये था कि, खनिज क्षारोंकी इस अतिरिक्ततासे होनेवाली हानिकी पूर्ति, पृथक्-कृत घृतकी अपेक्षासे, किस प्रकार की जाय।

उन्हें सर्वसाधारणको निश्चयपूर्वक यह भी जँचा देना चाहिये, जो घृतयुक्त पूर्ण दूध निसर्गके परस्पर अति समीपवर्त्ती पोषक तत्त्वोंका अत्यन्त संतुलित रस है, उसकी समरसतामें विषमता किसलिये उत्पन्न की जाती है और किसलिये उसका सर्वोत्तम अंश घृत और उसके जीवनोपयोगी घृत-घोल विटामिन 'ए' और 'डी' उससे निकाल लिये जाते हैं।

यह भी बलवानोंके लोभका एक अनर्थकारी प्रकार है जो सर्वसाधारणको निसर्गके दिये हुए सर्वोत्तम पदार्थसे वञ्चित करता और समाज-सुखकी समरसता भङ्ग कर देता है।

निर्घृत दूधके समर्थकोंकी भूल

यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि निर्घृत दूधके समर्थक या तो यह जानते नहीं या जानकर इसकी उपेक्षा करते हैं कि रायल कमीशनने (सन् १९२६ में), डा० डबल्यू आर० राइटने (सन् १९३६ में), और केन्द्रीय-सरकारकी मिल्क-मार्केटिंग रिपोर्टने (सन् १९४४ में) इस विषयकी पूरी जाँचकर हिंदुस्थानमें निर्घृत दुग्धचूर्णके प्रवेश और प्रचारका अत्यन्त तीव्र निषेध किया है। इनको यह जानना

चाहिये था कि युद्धके अति दुस्सह आपत्कालमें भी इंग्लैंडने अपने यहाँ निर्घृत दुग्धचूर्णका आना रोकनेके लिये उसपर 'आयात कर' जो सन् १९३६ में ९ शिलिंग ६ पेंस था, बढ़ाकर सन् १९४३ में १९ शिलिंग २ पेंस कर दिया। (लॉयड्स इम्पोर्ट टैरिफ)। यही नहीं बल्कि ग्रेट-ब्रिटेनने सन् १९४३ के शरद् और ग्रीष्मकालमें अपने यहाँ पूर्ण दूधका बहुत अधिक उत्पादन कराकर उसका प्रचार किया और उसकी लार्ड-सभाने अपना यह निश्चय प्रकट किया कि राष्ट्रके प्रत्येक व्यक्तिको प्रतिदिन एक पिंट (१३⅓ औंस) पूर्ण घृतयुक्त दूध दिया जाय, निर्घृत दूध कोई भी ब्रिटिशर न पीये।

४. 'बुरा भलेको भगा देता है।'—कृषिविषयक रायल कमीशनने अपनी रिपोर्टके २३२ वें पृष्ठके ४ थे पैराग्राफमें जो बात कही है उसे इन प्रचारकोंको ध्यानमें रखना चाहिये था। कमीशनने कहा है—'बुरा भलेको भगा देता है, यह बात रुपयेके बारेमें जितनी सच है उतनी ही दूधके बारेमें भी।' कमीशनने जाँच करके यह जाना है कि निर्घृत दुग्धपिष्ट केवल घृतयुक्त पूर्ण दूधमें मिलानेके ही काम आता है। इस तरह यह निर्घृत दुग्धपिष्ट घृतयुक्त पूर्ण दूधको दूधके बाजारसे भगा ही देगा। पूर्ण दूधके अधिक उत्पादनकी आवश्यकताका इस तरह दम घुट जायगा। यह वह छल होगा जो गौकी रक्षाका भाव नष्ट करेगा और यह काम भी होगा सरकारी कूटनीतिके द्वारा! यह कृषिप्रधान भारतवर्षकी अर्द्धपोषित जनताको धोखा देकर उसे दुःखके महान् गर्त्तमें ढकेल देना है! निर्घृत दुग्धचूर्णके समर्थक इस तरह हिंदुस्थानकी ही सन्तानोंके फलने-फूलनेका रास्ता रोकने और भ्रमसे गोधनके ह्रास करानेका उपक्रम कर रहे हैं। निर्घृत दूध राष्ट्रका सत्यानाश करेगा—इससे राष्ट्रकी शारीरिक और मानसिक शक्ति नष्ट होगी!

जमा हुआ तैल या वनस्पति

(लेखक—चौधरी श्रीमुखत्यारसिंहजी)

किसी तैलको जब साफ और सफेद करके उसमें हाइड्रोजन गैस निकल धातुकी उपस्थितिमें मिलाते हैं तो वह पतला तैल जम जाता है। जितना तैलको पहले साफ किया गया हो उतना ही उसका रंग अधिक सफेद होगा। साधारणतया हाइड्रोजन गैस किसी तैलमें नहीं मिलती, परन्तु किसी Catalyic (उत्प्रेरक) की उपस्थितिमें वह मिल जाती है। तैलको जमानेके इस कार्यके लिये निकल धातु बरतते हैं। क्रिया बड़ी सुगम तथा सीधी-सादी है; परन्तु यह कार्य छोटे पैमानेपर नहीं हो सकता; क्योंकि हाइड्रोजन बनानेके लिये यन्त्र चाहिये तथा तैलको साफ करनेके लिये भी बहुमूल्य यन्त्रों तथा भापकी आवश्यकता होती है।

तैलको जमानेकी क्रिया पश्चिमी देशोंमें बहुत दिनोंसे जारी है। हमारे देशमें पहले-पहल यह वस्तु पश्चिमीय देशोंसे आनी आरम्भ हुई और कुछ लोगोंने इसे घीमें मिलाकर बेचनेका कार्य करना आरम्भ कर दिया। जनताका स्वास्थ्य न बिगड़े, इस दृष्टिसे भारतमें सरकार और लोभी व्यापारी कोई भी मिलावटका यथार्थ विरोध नहीं करते अतः यहाँ मिलावटका कार्य कोई भी कर सकता है। इससे यह कार्य भी यहाँ बढ़ता गया! इसमें लाभ देखकर लोभी व्यवसायियोंने यहाँ भी इसके कारखाने बनाने आरम्भ किये। यद्यपि कारखानेवाले जमे तैलके अनेकों गुण बताते रहे, परन्तु यह वस्तु केवल घीमें मिलानेके ही काम आती रही। १९३७ में जमे तैल बनानेके केवल ५ कारखाने थे जिनमें २५,००० टन अर्थात् ६,७५,००० (पौनेसात लाख मन) के करीब जमा तैल बनता था। २७,००० मन बाहरसे आता था। इस प्रकार उस समय कुल लगभग ७ लाख मनकी खपत जमे तैलकी थी।

डाक्टर राइट साहबको सरकारकी ओरसे विलायतसे बुलाया गया कि वे जाँच करके हमारे दूध-घीके व्यापारपर अपनी सम्मति दें। उन्होंने अपनी रिपोर्टके ३४ वें पृष्ठपर लिखा है—

'कारखानेवालोंकी सम्मति है कि जितना जमा तैल देशमें बनता या बाहरसे आता है, उसका ९० प्रतिशत भाग अर्थात् २३५०० टन घीमें मिलावट करनेके काम आता है।' और केवल १० वाँ भाग तैलके स्थानपर बरता जाता है।

देशमें जबसे मिलानेकी चाल चली, तभीसे इसके विरुद्ध आन्दोलन होता रहा है। खेतीकी जाँचके लिये हमारे वायसराय लार्ड लिनलिथगोके सभापतित्वमें जो रायल कमीशन

बनी उसने भी इसके विरुद्ध लिखा; परन्तु कोई फल नहीं हुआ।

पंजाब वह प्रान्त है जहाँ लोग घी-दूध अधिक खाते हैं। वहाँकी प्रान्तीय सरकारमें अधिकतर किसानोंका हिस्सा है। उन्होंने इस मिलावटके विरुद्ध आवाज उठायी और वहाँ यह कानून पास हो गया कि बिना एक प्रकारका रंग मिलाये कोई भी जमे तैलको न बेच सके। दुर्भाग्यसे, जो रंग इस कामके लिये सोचा गया वह पकनेपर शरीरको हानि पहुँचानेवाला पाया गया। जमे तैलके कारखानोंने सरकारपर इस कानूनके विरुद्ध अभियोग चलाया और पंजाब-सरकारको अपना कानून वापस लेना पड़ा। फिर क्या था। धड़ल्लेसे नये-नये कारखाने बनने लगे और इसके परिणामस्वरूप आज ७ लाख मनके स्थानमें ३० लाख मनके लगभग जमा तैल बनना आरम्भ हो गया है।

हमारी केन्द्रीय सरकारने, जो अपनेको किसानोंका पक्षपाती कहती है, घोषणा की है कि वह जमे तैलके और भी कारखाने बनवाना चाहती है जिनमें २२५००टन अर्थात् ६०७५०००मन जमा तैल बनाया जा सकेगा। इतनी अधिक मात्रा जमे तैलके बन जानेपर तो यह बिल्कुल असम्भव हो जायगा कि मक्खन और घी लोगोंको प्राप्त हो सके। सरकारने जमे तैलके बननेपर कर लगाया है और शायद वह यह समझती है कि जितना तैल अधिक जमाकर बेचा जायगा, उतनी ही अधिक प्राप्ति होगी। हम ऐसे देशमें रहते हैं जहाँके लोग सर्वदा नकल करके रुपया कमाना चाहते हैं। इसी कारण लोगोंका जमे तैलके कारखाने बनानेकी ओर इतना झुकाव है। अबतक मिलावटबाजीके धोखेसे इन कारखानोंने अंधाधुंध रुपया कमाया है। अतः सब लोग यही समझते हैं कि वे भी इसी प्रकार रुपया कमा सकेंगे।

उपर्युक्त इतिहासके लिखनेके पश्चात् हम उपर्युक्त योजनाकी विवेचना करना आवश्यक समझते हैं। पहला प्रश्न तो यह है कि सरकार इस कार्यमें इतना उत्साह क्यों दिखाती है? सरकार इसका उत्तर यह देती है कि देशके लोगोंको खानेके लिये चिकनाईकी आवश्यकता है। घी न तो इतना पैदा हो सकता है जो लोगोंको खानेके लिये पर्याप्त हो और न इतना सस्ता ही है कि उसे साधारण आयका आदमी खरीदकर खा सके। अतः जमे तैलका बनाया जाना आवश्यक है। पर हम समझते हैं सरकारका यह कहना बिल्कुल गलत है। आइये इसकी विवेचना करें।

युद्धसे पूर्व घीका भाव कम-से-कम आठ छटाँक था और उससे कुछ ही वर्षों पूर्व सेरभरका घी बिकता था। जबसे जमे तैलका आविष्कार हुआ है, घीका भाव दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है और आज तो वह चार छटाँकका भी खालिस (विशुद्ध) मिलना असम्भव हो गया है। जिस देशमें सरकारने मिलावटको रोकनेका कोई भी प्रयत्न नहीं किया, वहाँ ऐसा होना सर्वथा सम्भव ही था। यदि यहाँ मिलावटके लिये कड़ी सजा दी जाती, मिलावट करनेवालोंको पकड़नेके लिये ईमानदार आदमी नियुक्त होते तो घीका व्यापार दिनोंदिन बढ़ता और खालिस वस्तु बाजारमें मिल सकती, परन्तु सरकार तो असलमें अमीर लोगोंकी है जो जमे तैलको बेचकर शीघ्र ही धनी बनने और उसे घीमें मिलाकर बिकवानेमें तनिक भी लज्जित नहीं होते! फिर घी सस्ता कैसे हो और खालिस कैसे बिके? आज तो जमा तैल मक्खनमें भी मिलाकर बेचा जाने लगा है। अतः खालिस मक्खन भी मिलना असम्भव होता जाता है!

सरकारके विशेषज्ञ क्या सभी वैज्ञानिक लोग इस बातको मानते हैं कि घीमें अनेकों विटामिन, विशेषकर 'ए' जातिके, पाये जाते हैं। घी सुगमतासे पचता है और शरीरके लिये लाभदायक है। उसके विरुद्ध तैल चाहे जमा हो चाहे बिना जमा, देरमें पचता है, तथा उसमें विटामिन न होनेसे वह घी-जितना लाभदायक भी नहीं होता। आयुर्वेदके जाननेवाले तो यह कहते हैं कि तैल, विशेषकर जमे तैलके खानेसे आँखोंमें अंधापन तथा गलेमें अनेकों रोग हो जाते हैं! शायद किसी देशमें भी भारतवर्षके अतिरिक्त जमे तैल खानेका रिवाज इतना अधिक नहीं हुआ। मनुष्य-शरीरपर उसकी पूर्ण हानि क्या होगी, यह तो हमारे शरीरकी दुर्दशा होनेपर ही ज्ञात होगा। परन्तु जब यह ज्ञात है कि घी शरीरके लिये निश्चित ही लाभदायक है तब हम पूछते हैं, कि सरकारने घीकी वृद्धि करानेमें अबतक क्या प्रयत्न किया है? हिसारके पिछले चारेके दुर्भिक्षमें लाखों मवेशी मर गये, परन्तु सरकारके कानपर जूँतक न रेंगी। बम्बई और कलकत्ते आदि बड़े शहरोंमें दूध देना छूटते ही गाय-भैंस कसाईखाने भेजकर कटवा दी जाती हैं। अनेक बार लोगोंने इसके विरुद्ध आन्दोलन किया; परन्तु सरकारने एक न सुनी। दूर क्यों जायँ, लाखों दुधारू पशु लड़ाईमें मांसके लिये मारे गये और हमारी सरकारने उस समयतक, जबतक कि लोगोंने इसके विरुद्ध आन्दोलन न आरम्भ किया, दुधारू पशुओंकी

इस अबाध हत्याको बंद न किया और आज भी सरकार यह मानती है कि कुछ प्रान्तोंमें दुधारू ढोरोंको मारनेकी प्रथा जारी है। तो क्या सरकारको यह कहते लज्जा नहीं आती कि वह घी पैदा करनेकी विरोधी नहीं है? हम तो समझते हैं, वह विरोधी हो या न हो, उदासीन तो अवश्य है।

पाठक जानते हैं भारतवर्षके लोगोंकी औसत आयु केवल २३ वर्ष रह गयी है। उस देशके निवासी, जो प्रातः-कालकी सन्ध्यामें 'जीवेम शरदः शतम्' का पाठ पढ़ते हैं, जो सौ वर्षकी आयुको जन्मसिद्ध अधिकार समझते रहे हैं; वे सरकारकी उदासीनताके कारण और भोजनसामग्रीमें अंधाधुंध मिलावटकी वजहसे केवल एक चौथाई आयुमें मरने लगे हैं!

अमेरिकामें औसत आयु ५९ वर्ष है। क्या लोगोंकी आयु बढ़ाना और उन्हें नीरोग रखना सरकारका कर्तव्य नहीं है? यदि है तो उसके सम्बन्धमें सरकार क्या कर रही है? वह आटे और अनाजमें मिट्टी मिलने देती है, दूधमें पानी और घीमें तैल। और अब तो इन सबके ऊपर उसने यह निश्चय कर लिया है कि घीमें जमा तैल मिलानेके लिये उसकी उपज सात लाखके स्थानमें साठ लाख कर दी जाय। यह सब करके सरकार हमसे शाबाशी चाहती है कि वह यह सब कुछ हमारे भलेके लिये ही कर रही है!

यदि घी देशमें पर्याप्त मात्रामें पैदा नहीं होता तो उसके लिये दूधके जानवरोंको मारनेसे रोकनेके सिवा क्या उपाय है, घी-दूध-मक्खनमें मिलावट बंद करना और मिलावट करनेवालोंको कारावासका कड़ा दण्ड देना ही उसका इलाज है; परन्तु सरकार यह क्यों करने लगी? इससे तो धनी लोग—जमे तैलके कारखाने बनानेवाले लोग नाराज होते हैं और ऐसा करनेसे सरकारको करकी आय कम हो जाती है। फिर क्यों अपनी आय कम की जाय और क्यों धनियों-को अपना विरोधी बनाया जाय!

यदि घी देशमें कम होनेसे लोगोंको तैल खिलाना सरकार आवश्यक समझती है तो वह तैल खानेका साफ आदेश क्यों नहीं करती? वह जमे हुए तैलको क्यों खिलाना चाहती है? तैलकी अपेक्षा तो जमा तैल बहुत महँगा बिकता है परन्तु ऐसा करनेमें तो धनी कारखानेदारोंको कुछ मिलेगा नहीं। इस बातपर सब सहमत हैं कि द्रव तैल जमे तैलकी अपेक्षा सुगमतासे पचता है और आधी कीमतपर मिलता है तो जमे तैलके कारखाने तो स्पष्ट ही जनताके धन और आरोग्यकी दृष्टिसे सर्वथा हानिकर हैं!

कहा जाता है कि तैल जमकर सफेद तथा सुन्दर हो जाता है। उसमें गन्ध नहीं होती, वही घी-सा लगता है और लोग उसे रुचिसे खाते हैं। परन्तु खानेके लिये तो उसे लाकर पतला ही करना होगा। फिर आधे दामोंपर तैल खानेका उपदेश सरकार क्यों नहीं करती? यदि तैलको निर्गन्ध बनाना है या सफेद करना है तो ये दोनों बातें तो थोड़ी लागतसे भी हो सकती हैं। इसके लिये केवल ऐसे कारखानोंको, जो तैलकी गन्ध और रंगको उड़ा दें, प्रोत्साहित किया जाना चाहिये और जमानेका कार्य रोक देना चाहिये। ऐसा करनेसे कारखानेवालोंको लाभ न होगा और यदि उन्हें लाभ न हुआ तो सरकारी 'कर' भी न आयगा तो इसका स्पष्ट यह अर्थ है कि सरकार घीको मारने और कारखानेवालोंको लाभ पहुँचानेके लिये ही यह योजना कर रही है!

यदि यह बात नहीं है तो क्या सरकार यह करनेको तैयार है कि जमे तैलके कारखानोंके तैलका भाव निश्चित कर दे, जिससे जनताको घीके धोखेसे तैलकी अधिक कीमत न देनी पड़े। भाव निश्चित करनेका काम एक कमेटीके हाथमें रहे और उसमें आधे प्रतिनिधि किसानोंके रहें। साथ ही क्या सरकार उसकी मिलावटको रोकनेके लिये किसी निर्दोष रंगसे रँगने और मिलावट करनेवालोंके लिये कठिन दण्डकी व्यवस्था करनेको भी तैयार है?

पाठकोंको शायद यह ज्ञात नहीं है कि किसानकी आयका बड़ा भाग गाय-भैंसों तथा बैलोंसे ही प्राप्त होता है। मि० ओलवर और मि० राइट—इन दो अंग्रेजी विशेषज्ञोंके अनुसार किसानको पशुधनसे आय इस प्रकार होती है—

खेतीके कार्य करनेसे बैल ६१२ करोड़ रुपयेका काम करते हैं। बोझा ढोनेसे पशु १६१ करोड़ रुपयेकी आय किसानको देते हैं। दूध-घीसे किसानकी आय ८१० करोड़की होती है। प्रतिवर्ष पशुओंसे खाद २७० करोड़की मिलती है तथा अन्य खाल, हड्डी आदिकी आय ५५.५ करोड़ रुपयेकी होती है। इस प्रकार पशुओंसे कुल ६१२+१६१+८१०+२७०+५५.५=१९०८.५ करोड़ रुपया प्रतिवर्ष किसानको मिलता है। सारी खेतीकी पैदावारकी आय केवल २००० करोड़ रुपये १९३६ के भावके अनुसार थी। अर्थात् जितनी खेतीसे पैदावार होती है उतनी ही पशुधन

से किसानको आय होती है । तो क्या ऐसी कोई भी बात जो पशुओंकी आयको हानि पहुँचानेवाली हो, देशको, विशेषकर किसानको हानिकारक नहीं है ? हम जानते हैं कि किसान शहरोंसे दूर रहता है । उसे दूधका घी बनाकर ही बेचना होगा तथा उसे ऐसा करनेमें कम-से-कम छाछ तो पीनेको मिलती रहेगी जो शरीरके लिये बड़ी लाभदायक वस्तु है । घीमें मिलावटका अर्थ है किसानकी छाछको भी उससे छीन लेना । सरकार याद रक्खे कि किसानके मरनेपर देश जीवित नहीं रह सकता अर्थात् जमे तैलको प्रोत्साहित करनेका अर्थ किसानको, प्रकारान्तरसे देशको अधिक-से-अधिक हानि पहुँचाना है !

जमे तैलको घीमें मिलानेसे रोका जाय, यह बात कई बार चलायी जा चुकी है और पंजाबमें तो जमे तैलको बिना रंग मिलाये न बेचनेका कानून भी पास हो चुका था जो हमारे दुर्भाग्यसे बंद करना पड़ा । अभीतक इस विषयमें सरकारने कोई कार्य नहीं किया । यदि मिलावट बंद कर दी जाती तो जमे तैलके नये-नये कारखाने बनानेकी बात ही न चलती । यह कहना गलत है कि कोई रंग तैलको रँगनेवाला नहीं मिलता । खोज करनेपर अनेकों रंग ऐसे मिल सकते हैं जिनको आगपर पकाकर उड़ाया न जा सके, **परन्तु सरकार तो किसी-न-किसी प्रकार समय व्यतीत करना चाहती है । जब वर्षोंसे यह ज्ञात है कि मिलावट दूर करनेके लिये तिलका तैल मिलाया जा सकता है जैसा अन्य देशोंमें किया गया है तो यह घोषणा करनेमें क्यों देर की जाती है ? यदि सरकार वास्तवमें जमे तैलकी मिलावट घीमें बंद करके घीकी वृद्धि करना चाहती है तो उसे तिलका तैल मिलाने तथा मिलावट करनेवालोंको कड़ी सजा देनेका कानून तो पास कर ही देना चाहिये था** और रंगोंकी खोज जारी रखनी चाहिये थी ।

हम जानते हैं किसान गरीब है तथा अनपढ़ है । यही बड़ा कारण है कि उसके लाभकी बात कोई नहीं सोचता; परन्तु हम सरकारको बता देना चाहते हैं कि उसके लगातार किसानको हानि पहुँचानेके कार्य सरकारको हानि पहुँचा देंगे और दूधका व्यापार बंद करके जमे तैलका व्यापार देरतक न चल सकेगा । क्या ही अच्छा हो कि सरकार किसानके प्रति अपना कर्त्तव्य समझे और जमे तैलकी अनुचित सहायता न करके घीकी वृद्धिके लिये प्रयत्न करे जिससे देशमें आरोग्यता तथा सम्पत्तिका संवर्धन और प्रसार हो ।

दो बातें इस सम्बन्धमें और बताकर हम पाठकोंसे विदा चाहते हैं । पहली तो **यह कि इसका जमा तैल नाम न रखकर वनस्पति घी क्यों रक्खा गया ? केवल इसीलिये न कि लोग इसे घी समझें** । जब यह तैलका ही एक रूप है तो इसका नाम ऐसा रक्खा जाना चाहिये जिससे लोग तुरंत यह जान जायँ कि यह तैलसे बना पदार्थ है। अतः हम चाहते हैं आगेसे **इसका नाम जमा तैल रक्खा जाय** । दूसरी बात यह बतानी है कि जो लोग यह कहते हैं कि जमे तैलमें विटामिन मिलाये जाकर उसे घी-जैसा कर दिया जाता है, यह गलत है । जमे तैलमें विटामिन 'ए'—जो घीके विशेष विटामिन हैं-मिलानेसे वे गरम करते ही नष्ट हो जाते हैं, अतः 'ए' विटामिन कृत्रिम रूपसे जमे तैलमें नहीं मिलाये जा सकते । हाँ, यदि मछलीका तैल मिला दें तो यह काम चल सकता है; परन्तु फिर लोग मछलीका तैल ही क्यों न खायें !! इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि शीघ्र-से-शीघ्र जमे तैलको घीमें मिलानेसे और कारखानोंको अंधाधुंध घीके नामपर तैलके अनाप-शनाप दाम लेनेसे रोका जाय । जबतक ऐसा न होगा, देशमें शुद्ध घी प्राप्त न हो सकेगा ।

दम है तबतक दया करो

बुद्धिमान् और भले मनुष्य यदि ६ हजार वर्षोंके भले-बुरेके विचारमें किसी एक सिद्धान्तपर सहमत हैं और क्रमानुक्रमसे अनुभव भी किया है तो वह सिद्धान्त यह है कि भगवान् आलसी और घातकी मनुष्योंको अन्य सबकी अपेक्षा अधिक धिक्कारते हैं और उनकी पहली आज्ञा यह है कि जबतक प्रकाश है तबतक काम करो और दूसरी यह कि जबतक दम है तबतक दया करो ।—रस्किन

वनस्पति घी (जमाये हुए तेल) में पोषणगुण और सुपाच्यताकी कमी

(लेखक—डा० एन्० एन्० गोडबोले, एम्० ए०, बी० एस्-सी०, पी-एच्० डी० (बर्लिन)

पूर्व या पश्चिममें यदि कोई ऐसा देश है, जहाँ जीव-दयाके भावोंका आदर एवं सम्मान ही नहीं होता, बल्कि उन्हें आचरणमें भी लाया जाता है और जहाँ जीवमात्रकी हिंसाको पाप माना जाता है, तो वह एकमात्र भारतवर्ष है। भारतवर्षका निरा शाकाहारी मनुष्य इस बातका एक जीता-जागता नमूना है कि ईश्वरके राज्यमें किसी भी दूसरे जीवकी कम-से-कम उपेक्षा करके किस प्रकार जीवन बिताया जा सकता है। मनुष्यजाति जिस ऊँची-से-ऊँची सभ्यता एवं सुसंस्कृतिका विकास कर सकती है, भारतवर्षका निरामिषभोजी मनुष्य उसका मूर्तिमान् प्रतीक है, अतएव उसकी रक्षा होनी चाहिये।

किसी भी दूसरे प्राणीकी तरह भारतके निरामिषभोजी मनुष्यको भी जीवित रहने और बढ़नेके लिये तीन प्रकारके खाद्य-तत्त्वोंकी आवश्यकता है। भारतवर्षको प्रकृतिकी देनें प्रचुरतासे प्राप्त हैं और ऐसी अवस्थामें हम बाकी संसारके लिये जीवन-निर्वाह किस प्रकार करना चाहिये, इसका एक नमूना रख सकते हैं। हड्डियोंको बनाने और पुष्ट करनेके लिये आवश्यक कैल्शियमके क्षारों, लोहा, फास्फेटों इत्यादि एवं शरीरवृद्धिके लिये आवश्यक विटामिनोंके अतिरिक्त वे तीन प्रकारके भोजन ये हैं—(१) कार्बोहाइड्रेट-वर्ग (Carbohydrates), (२) प्रोटीन-वर्ग (Proteins) तथा (३) वसा-वर्ग अर्थात् चिकनाई (Fats)। शरीरको ठीक रखनेके लिये इन तीनों वस्तुओंको इस हिसाबसे होना चाहिये—प्रोटीन १ भाग, चिकनाई १ भाग और साढ़े पाँचसे छः भागतक कार्बोहाइड्रेट। इनमेंसे प्रोटीन प्राप्त करनेके लिये हमारे पास नाना प्रकारके अनाज हैं। जैसे—दाल, गेहूँ, जौ इत्यादि। और दूध-जैसे बहुमूल्य आहारमें भी अन्य तत्त्वोंके साथ-साथ प्रोटीनकी मात्रा सबसे अधिक होती है। चावल, चीनी, गुड़ इत्यादिके रूपमें हमें कार्बोहाइड्रेट काफी मिल जाता है। पर चिकनाईके लिये हमारे पास दो ही साधन हैं, घी (अर्थात् पानी निकाला हुआ मक्खन) और तिल, नारियल, मूँगफली, सरसों इत्यादिके तेल। वैदिककालसे ही चिकने पदार्थोंको सर्वश्रेष्ठ माना गया है। हमारे शास्त्रोंमें लिखा है—'आयुर्वै घृतम्' (घी ही आयु है)। चार्वाक-दर्शनमें भी, जिसमें 'खाओ, पीओ, मौज करो' के ही सिद्धान्तको सही माना गया है, हमें ये वचन मिलते हैं—

यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥

अर्थात्—

जबतक जीओ सुखसे जीओ, ऋण ले-लेकर भी घी पीओ।
भस्म हो गया यह शरीर जब, होता पुनरागमन कहाँ तब ?॥

हजारों वर्षोंसे भारतवर्षमें लोग घी बनाते और उसका भोजनमें उपयोग करते आ रहे हैं। जिस प्रकार भारतवर्ष घीके महत्त्वको समझता और उसका उपयोग करता रहा है, उस प्रकार संसारका कोई विरला ही देश करता होगा। सच पूछिये तो जापानियोंने दूध और घीका व्यवहार सर्वप्रथम उन भारतीय बौद्धोंसे सीखा जो पाँचवीं शताब्दीमें जापान गये थे। उस देशमें घीको अब भी 'इन्दोनो आबुरा' (भारतीय तेल) कहते हैं।

दुर्भाग्यसे आज वह समय आया है, जब कि भारतमें तेलोंको छोड़कर, जिनका महत्त्व इस दिशामें गौण ही है, भोजनमें चिकनाई प्राप्त करनेका यह महत्त्वपूर्ण साधन—घी इतना दुर्लभ हो गया है कि कदाचित् गाँवोंके अतिरिक्त शुद्ध घीसे मिलती-जुलती-सी चीजें भी मिलनी एक प्रकारसे असम्भव हो गयी हैं। हालहीमें समाप्त हुए दूसरे महायुद्धकी कृपासे गोवधकी संख्या इतनी बढ़ गयी है कि भारतवर्षके सभी बड़े-बड़े शहरोंमें बच्चों एवं बीमारोंके लिये भी, शुद्ध घीकी तो कौन कहे, शुद्ध दूध भी बारह आने सेरसे कम मूल्यमें नहीं मिल सकता, सो भी पर्याप्त मात्रामें नहीं। आज भारतमें प्रत्येक व्यक्तिको सालभरमें औसतन साढ़े चार रतल या प्रतिदिन आधा तोला घी मिलता है, (आँकड़ोंके अनुसार ऐसा कहा जाता है, पर वस्तुतः इतना मिलता नहीं है) जब कि प्रत्येक मनुष्यको प्रतिदिन कम-से-कम पाँच तोला चिकनाई मिलनी चाहिये। औसत वजन, औसत मोटाई, औसत काम तथा औसत गर्मीवाले भारतीयको प्रतिदिन करीब २,००० से २,४०० कैलोरी (गर्मीका सबसे छोटा मान) की आवश्यकता होती है। और इस प्रकार प्रतिदिन प्रत्येक भोजनके साथ ही घी और तेल मिलाकर कम-से-कम दो औंस चिकनाई होनी चाहिये। घीके सम्बन्धमें यह बात स्पष्टरूपसे समझ लेनी चाहिये कि तेलोंकी अपेक्षा घीमें खाद्य-तत्त्व बहुत अधिक हैं। घीमें अत्यन्त आवश्यक विटामिन 'ए' और 'डी' विशेषकर 'ए',

जो शाकाहारी भारतवासीको और कहीं नहीं मिल सकता,होते हैं। एक माशा (Gram—११ ग्रामका एक तोला होता है। अतः एक ग्राम एक माशाके लगभग होता है) घीसे हमें गर्मीकी करीब नौ कैलोरी प्राप्त होती है। जब कि प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेटके एक माशासे चार ही कैलोरी गर्मी प्राप्त होती है। चिकनाईसे शरीरको गर्मी तथा आगे काम आनेवाली चर्बी दोनों मिलती हैं। ध्रुव प्रदेशोंमें रहनेवाले रीछ, सील मछली आदि अपनी चर्बीके सञ्चयके लिये प्रसिद्ध होते हैं और वे अपने जीवनचक्रको चलाये रखनेके लिये आवश्यक गर्मी पैदा करके कई सप्ताहतक उस सञ्चित चर्बीकी गर्मीसे ही प्राण धारण करते हैं। यही बात मानव-शरीरके सम्बन्धमें भी समझनी चाहिये। जब कोई महापुरुष लंबे उपवास करते हैं तब वे इसी सञ्चित चर्बीसे पोषण प्राप्त करते रहते हैं। संसारभरमें यह बात प्रसिद्ध और सर्वसम्मत है कि शरीरमें चर्बीका सञ्चय करनेके लिये मक्खन और घी ही सबसे अच्छे साधन हैं; क्योंकि वे आसानीसे गल जाते हैं और शीघ्र ही शरीरके रसोंमें घुल-मिल जाते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इनमें हमारे शरीरको स्वस्थ रखनेवाले विटामिन भरे रहते हैं। दुर्भाग्यसे आज भारतवर्षमें एक ऐसी अवस्था उत्पन्न हो गयी है, जिसके कारण सारे-के-सारे देशको ग्रस लेनेवाली एक विपत्ति छायी-सी दीख रही है। **बाजारमें शुद्ध घीके बदलेमें वनस्पति नामका एक नकली पदार्थ बिक रहा है। इस पदार्थके लिये 'घी' शब्दका प्रयोग करना वस्तुतः जनताको धोखेमें डालना है।** यह वनस्पति घी प्रतिवर्ष एक लाख टनतक बनने लगा है। और आगामी बारह महीनेमें इस संख्याको तीन लाख टनतक पहुँचा देनेके लिये सरकारकी ओरसे आयोजना हो रही है। जिनमें प्रतिदिन लगभग तीस टन वनस्पति घी तैयार करनेवाले करीब पंद्रह कारखानोंको लाइसेंस (परवाने) भी दिये जा चुके हैं। **गायोंकी रक्षा करने, उनके वधको रोकने, गोचरभूमियोंको बढ़ाने तथा नयी-नयी दुग्धशालाएँ खोलनेके बदले हमारे इस देशमें वनस्पति (नकली) घीके कारखानोंको प्रोत्साहन दिया जा रहा है !!**

यह वनस्पति घी आखिर है क्या वस्तु और कैसे तैयार होता है, साधारण-से-साधारण मनुष्यको इस सम्बन्धमें कुछ जानकारी होनी चाहिये।

वनस्पति घी भारतवर्षमें अधिकतर मूँगफली या बिनौलेके तेल-जैसे तेलोंसे ही तैयार किया जाता है। इन तेलोंको पहले साफ किया जाता है अर्थात् रासायनिकोंकी भाषामें उनके स्वतन्त्र अम्लों (Free acids) को मारकर उनका रंग तथा गन्ध दूर कर दिया जाता है। फिर इन तेलोंको निकल नामक धातुके अत्यन्त बारीक चूरों या उसके कुण्डलित तारोंके सम्पर्कमें लाया जाता है। इस धातुमें यह शक्ति है कि वह अपनेमें बिना कोई परिवर्तन हुए साथमें आनेवाली वस्तुमें रासायनिक परिवर्तन उत्पन्न कर देता है। इस प्रकार इसके द्वारा मूल तेल साफ हो जाता है। मूँगफली या बिनौले, मुख्यतः मूँगफलीके ऐसे स्वच्छ तेलके साथ जलसे मिलनेवाले उज्जन (हाइड्रोजन Hydrogen) नामक गैसका संयोग कराया जाता है। इससे तेलका तरल भाग, जिसको 'तैलिक ग्लिसरीन-योग' (Oleic Glyceride) कहते हैं, उज्जनसे मिलकर 'वासिक ग्लिसरीन-योग' (Stearic Glyceride) बन जाता है, यह स्थूल और दानेदार होता है। इस ढंगसे वह तरल तेल एक स्थूल पदार्थमें बदल जाता है। उल्लिखित रासायनिक क्रिया १५०° से १८०° सेंटीग्रेडपर होती है। तेलको फिर ठंडा होने दिया जाता है। तब वह सफेद और दानेदार बन जाता है और घीकी शकल धारण कर लेता है। इसमें घीकी नकली सुगन्ध और नकली विटामिन, जो एक प्रकारके मछलीके तेल (Shark oil) से बने हुए होते हैं, मिला दिये जाते हैं। भोला-भाला और अपढ़ भारतवासी यह समझकर कि वह घी खा रहा है, अपने मनको सन्तुष्ट कर लेता है! उसे मालूम नहीं कि यह नकली और बनावटी है एवं इसके तथा असली घीके तत्त्वोंमें आकाश-पातालका अन्तर है।

जैसी ऋतु होती है उसी हिसाबसे वनस्पति घी बनानेमें उज्जन (हाइड्रोजन) की मात्रा कम-ज्यादा लगा करती है। गर्मियोंमें तेलको घीकी तरहसे जमा रखनेके लिये और उसके दानेदार दिखायी देनेके लिये उज्जनका मिलान अधिक मात्रामें करना पड़ता है। यह तो वही मसला हुआ कि 'इक तो है ही करू करेला, दूजे नीम चढ़ो।' वनस्पति घीके बनानेका खर्चा तेल और उसके साथमें मिलाये जानेवाले उज्जनके परिमाणपर निर्भर करके घटता-बढ़ता रहता है। आज भारतवर्षमें केवल एक ही कारखानेमें १५० टन घी प्रतिदिन बनता है। और कुल मिलाकर रोज ३०० टन घी तैयार होता है।

उज्जन मिले हुए घीके सम्बन्धमें सबसे मुख्य बात है उसका द्रवण-विन्दु (अर्थात् वह कितनी गर्मीपर पिघलता

है) । भारतवर्षके कारखानोंमें इस बातपर कोई नियम नहीं रक्खा जाता । परन्तु यह बात विचार करने योग्य है । यह सभी समझ सकते हैं कि यदि किसी चिकनाईको गलानेके लिये शरीरकी गर्मी (लगभग ३७° सेंटीग्रेड) से अधिक गर्मीकी आवश्यकता है तो वह शरीरमें नहीं गल सकती। शरीर इसको ग्रहण नहीं कर सकेगा और पेटके कई प्रकारके बहुत-से रसोंके प्रभावको व्यर्थ करते हुए अन्तमें इसको बाहर निकल जाना पड़ेगा । **भारतके अनेक डाक्टरोंका यह अनुभव है कि जबसे वनस्पति घी चला, यहाँ उदरामयका रोग बढ़ गया है और कब्जकी तो आम शिकायत हो गयी है** । शरीरके भीतर होनेवाली क्रियाओं बताते हुए इस बातका कारण आगे बताया जायगा ।

वनस्पति घीको बनानेवाला अपने घीके द्रवण-विन्दुको चारों ओरकी गर्मीसे थोड़ा ऊपर रखता है, नहीं तो, वह घीकी भाँति चिकना, सफेद या दानेदार नहीं दिखायी देगा । यदि ऐसा न किया जाय तो भारतकी मूढ़ जनता उसको स्वीकार नहीं करेगी; क्योंकि जबतक कि वह दानेदार नहीं है, उसकी समझमें घी नहीं, तेल है । यह है अबोध और अपढ़ भारतवासीका तर्क !

वनस्पति घीका द्रवण-विन्दु भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें जाड़े और गर्मीमें अलग-अलग होगा । उदाहरणके लिये पंजाब, राजपूताना और युक्तप्रान्तकी गर्मीको लीजिये, जो १०५° से १२०° फारनहाइटके बीचमें रहती है । सेंटीग्रेडमें यह ४०° से ४९° तक हुई । इसलिये पंजाब या संयुक्तप्रान्तमें उज्जन (हाइड्रोजन) मिले वनस्पति घीको गाढ़े या दानेदार रूपमें स्थिर रखनेके लिये उसके द्रवण-विन्दुको ४०° सें० से ऊपर होना चाहिये, और यह ४८° सें० तक हो सकता है । अब सोचनेकी बात है कि ३७° सें० तापमानवाले मनुष्य-शरीरमें यह कैसे पिघल सकता है ?

यह तो प्रश्नके एक पक्षपर विचार हुआ । अब हमको इसके रासायनिक पक्षको देखना है और वनस्पति घीमें वर्तमान रासायनिक तत्त्वोंपर विचार करना है । साधारण मनुष्य जिसे समझ नहीं सकेंगे, ऐसे अनावश्यक विस्तारोंको छोड़कर निम्न-लिखित रूपमें एक साधारण चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है ।

मूँगफलीके तेलके तत्त्व

आसविक और उच्चतर ग्लिसरीन-योग (Aractic and higher glycerides)	५ प्रतिशत
वासिक[1] और तैलिक[2] ग्लिसरीन-योग (Stearic and palmitic glycerides)	१८ ,,
तैलिक एवं अलसी स्नैहिक ग्लिसरीन-योग (Oleic and Linoleic glycerides)	७७ ,,
	१०० प्रतिशत

वनस्पति घीके तत्त्व

आसविक और उच्चतर ग्लिसरीन योग (Aractic and higher glycerides)	५ प्रतिशत
वासिक और तालिक (मूल) ग्लिसरीन-योग (Stearic and palmitic Original glycerides)	१८ ,,
उज्जनीकरणके पश्चात् वासिक ग्लिसरीन-योग (Stearic glycerides, after hydrogenation)	२९ ,,
उज्जनीकरणके पश्चात् सम-तैलिक ग्लिसरीन-योग(Iso-oleic glycerides, after hydrogenation)	२८ ,,
उज्जनीकरणके पश्चात् बचा हुआ तैलिक अम्ल (Oleic acid, remaining after hydrogenation)	२० ,,
	१०० प्र०

इन सबमें 'तैलिक ग्लिसरीन-योग' ही सबसे मुख्य है । क्योंकि यह निःसन्देहरूपसे सिद्ध हो चुका है कि मानव-शरीरमें स्निग्ध पदार्थोंके पचनेके लिये इन ग्लिसरीन-योगोंकी अत्यन्त आवश्यकता है । दूसरी बात जो उतनी ही अच्छी तरहसे सिद्ध हो चुकी है, यह है, ग्लिसरीन-योगोंके वसाम्लों (Fatty acids) के अणुओंका भार जितना ही कम होगा, शरीरके रस-रक्तके साथ वे उतनी ही आसानीसे एक हो सकेंगे । विटामिन 'ए' और 'डी' के साथ-साथ ये दोनों बातें शुद्ध और सच्चे घीको सारे स्निग्ध पदार्थोंका राजा बना देती हैं । और जिसके पास इसके सिवा शरीर-पुष्टिका अन्य साधन नहीं है, उस कट्टर निरामिषभोजी भारतीयके लिये तो विशेषरूपसे । **यह समझमें नहीं आता कि भारतमें, जहाँ**

१. वसा (Stearin) जन्य
२. ताल (Palm) जन्य

प्रकृतिके साधन और उदारता प्राप्त हैं, हम क्यों प्रकृतिकी देनकी हत्या करके बनावटी और नकली चीजोंके पीछे दौड़ें और विटामिनोंके बजाय मछलीके तेलका व्यवहार करें। उल्टे मार्गपर चलकर वास्तविकताओंके इस देशको विडम्बनाओंसे भरनेका यह प्रयास क्यों ?

बहुधा यह कहा जाता है कि यूरोपमें नकली मक्खन (Margarine) का खूब व्यवहार होता है तो हमलोग भी वैसा ही क्यों न करें ? इस प्रश्नका एक उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। दूसरा वैज्ञानिक उत्तर इस प्रकार है। असली और नकली मक्खन दोनों ही घोल (Emulsion) हैं। अर्थात् ये १६ प्रतिशत जल तथा शेष ८४ प्रतिशतमें वसा (स्नेह) एवं केसीन (Casein) की भाँति घोल बनानेवाली किसी वस्तुके संयोगसे बने रहते हैं। यह ध्यानमें रखना चाहिये कि यूरोपमें भी असली मक्खनको प्रथम स्थान प्राप्त है और नकली मक्खनको दूसरा गिरा हुआ स्थान। नकली मक्खन भी तीन तरहका होता है—मेदिक अर्थात् चर्बीका बना हुआ (Tallow margarine), वनस्पति घीका (Vegetable fat margarine) और तीसरा पकानेके काममें आनेवाला (Baking Margarine)। मेदिक और वनस्पतिके नकली मक्खनसे सामान्यतः निम्नलिखित वस्तुओंका संयोग रहता है—

	मेदिकमें	वनस्पतिमें
मुख्य तत्त्व (मेद) (Premier—tallow)	१० प्रतिशत	२० प्रतिशत
प्रथम श्रेणीका साफ किया हुआ पशु-चर्बीका तेल (Refined first quality oleo oil, *i.e.* liquid fat from animal source)	३० ,,	–
वनस्पति वसा (Neutral Lard)	१५ ,,	–
नारियलके भीतरी गूदेका तेल (Palmkernel oil)	– ,,	५० ,,
नारियलका तेल (Coconut oil)	२० ,,	–
बिनौलेका तेल (Cotton Seed oil)	२५ ,,	२० ,,
मूँगफलीका तेल (Groundnut oil)	– –	१० ,,
	१०० प्रतिशत	१०० प्रतिशत

इनमें मक्खनके मिलावटकी जाँच करनेके लिये १० प्रतिशत तिलका तेल मिला दिया जाता है। इनका १६ प्रतिशत पानी और फटे दूधके साथ तैयार किया हुआ घोल ही नकली मक्खन है।

तीसरे बेकिंग मारगरीनमें निम्नलिखित तत्त्व होते हैं—

नारियलका भीतरी गूदा	१० प्रतिशत
नारियलका तेल	७० ,,
बिनौलेका तेल	२० ,,
	१०० ,,

इस बातको ध्यानसे समझ लेना चाहिये कि यह वनस्पति मारगरीन इस प्रकार बनाया जाता है कि उसका द्रवण-विन्दु ३०-३२° सें० अधिक नहीं होता है। सबसे मुख्य बात यह है कि यह एक घोल (Emulsion) है जिसमें १६ प्रतिशत पानी होता है, और बहुतसे अच्छे-अच्छे गुणोंवाले वनस्पति-तेल होते हैं; वनस्पति वसा तो केवल २० प्रतिशत होती है। इसके अतिरिक्त यह रोटीपर मक्खनकी तरह खाया जाता है, और गर्मीसे पिघलकर फैल जाना इसका एक विशेष स्वाभाविक गुण है। वनस्पति घीके समान जलरहित स्निग्ध पदार्थोंकी अपेक्षा घोल जल्दी पचते हैं। इसलिये जिसमें कोई गुण नहीं है ऐसे जलरहित घीसे नकली मक्खनका प्रयोग तो कहीं अच्छा है। फिर नकली मक्खनको बनानेमें मक्खनकी गन्ध लानेके लिये इसमें फटा दूध मिलाया जाता है और घोल बनाते समय तापमान बहुत कम, (–५°) सें० (हिमांकसे भी नीचे) रक्खा जाता है, और हमारे यहाँ वनस्पति घीके बनानेमें जिसको घोल नहीं, घीके रूपमें ग्रहण किया जाता है, १५०° सें० से १८०° सें० तक तापमान काममें लाया जाता है। फलतः वनस्पति घीके सब विटामिन नष्ट हो जाते हैं, पर वहाँके नकली मक्खन(Margarine)में सुरक्षित रहते हैं इसलिये, अब वहाँके नकली मक्खन और हमारे यहाँके वनस्पति घीके सम्बन्धमें धोखा नहीं रह जाना चाहिये। यूरोपमें असली मक्खन और भारतमें असली घी (क्योंकि यहाँके गरम जल-वायुमें मक्खन बिगड़ जाता है) को ही सब दृष्टियोंसे प्रथम स्थान प्राप्त है।

अब हमको यह देखना चाहिये कि मानवशरीरमें पहुँचनेके बाद भोजन और विशेषकर घी एवं तेलके साथ क्या क्रिया होती है। हमको भोजनके तीन मुख्य प्रकारोंपर विचार करना है—कार्बोहाइड्रेट-वर्ग, प्रोटीन-वर्ग और स्नेह-वर्ग। मनुष्यके जीभके ऊपर भोजनपर पहले लारकी क्रिया होती है, और मुख्यतया कार्बोहाइड्रेट-वर्गके पदार्थ, शर्करा-वर्ग, विशेषकर स्वाद्वी-शर्करा (Glucose) में बदल दिये जाते

हैं। यही कारण है कि जब हमको भूख लगी रहती है और लार अधिक परिमाणमें निकलती है तो भात भी मीठा लगता है। यहाँसे भोजन उदरमें जाता है, जहाँ उदरसे निकले हुए पाचक-रसोंकी सहायतासे पाचन क्रिया प्रारम्भ होती है। यहाँपर फिर कार्बोहाइड्रेटोंको तोड़कर स्वाद्वी-शर्करा और प्रोटीनोंको एक प्रकारके अम्लों (Amino-acids) में परिणत कर दिया जाता है। प्रोटीन-वर्ग नसों और मांसपेशियों इत्यादिकी रचनामें काम आता है। आमाशयके अन्तमें और छोटी आँतोंमें प्रवेश करनेके पहले तेल और घी-जैसे पदार्थोंकी खबर ली जाती है।

यहाँ रुककर यह ध्यानपूर्वक देखना आवश्यक है कि घी-तेलोंकी क्या गति होती है। पित्त और क्लोम रसोंमेंसे कुछ तो क्षारीय और कुछ उदासीन (Neutral) होते हैं। क्षारीयरस तेल और अन्य चिकने पदार्थोंको कुछ-कुछ साबुनके घोल-सा रूप प्रदान करके एक श्वेत घोल तैयार कर देते हैं। इस क्रियासे तेल और घीके कण छोटे-छोटे अंशोंमें विभक्त हो जाते हैं। इस घोलपर फिर लाइपेस (Lipase) जैसे वसा-विश्लेषक किण्वों (Ferments) की क्रिया होती है। और तेल, घी फटकर वसाम्लों और ग्लिसरीनमें परिणत हो जाते हैं और तब छोटी अँतड़ियोंमें भेजे जाते हैं। वहाँसे सीधे हृदयस्थ रक्तमें और यकृत् (जिगर) से होकर जहाँ उनकी आवश्यकता है ऐसे मानव-शरीरके मांस-तन्तुओंमें भेज दिये जाते हैं। मानव-शरीर एक असाधारण ज्ञानपूर्ण यन्त्रालयके समान है। असंख्य रासायनिक भी स्वाद्वी-शर्करा, ऐमिनो-एसिड्स्, वसाम्लों और स्निग्ध पदार्थोंको अङ्ग-प्रत्यङ्गकी आवश्यकतानुसार वहाँ-वहाँ इतनी चतुरता और कुशलतासे नहीं पहुँचा सकते, जैसे कि प्रकृति पहुँचा रही है। अब देखिये, वनस्पति घीका प्रकृतिकी इस कार्य-प्रणालीपर क्या असर पड़ता है। यह अच्छी तरह मालूम है कि आमाशयमें जो घोल बनता है, उसकी प्रकृति खाये हुए तेल-घीके रासायनिक संगठनपर निर्भर करती है। इस दृष्टिकोणसे शुद्ध घीका घोल सबसे सूक्ष्म, और वनस्पति घीका घोल स्थूलतम होता है। घोल बनना पहली क्रिया है। इसके बाद वसा (स्नेह) के विभाजन (उसके कणोंको छोटे-छोटे अंशोंमें विभक्त करना) वाली दूसरी क्रिया भी शुद्ध घीके साथ सबसे आसान, और वनस्पति घीके साथ सबसे कठिन, विशेषकर उस दशामें तो और भी कठिन या एकदम असम्भव होती है जब कि उसका द्रवण-विंदु शरीरके तापमानसे अधिक होता है। अधिकतया विभाजन हो नहीं पाता और घीका एक गाढ़ा घोल बन जाता है, जिसका शरीरकी महीन केशिकाओंमेंसे निकलना कठिन ही है। ऐसा गाढ़ा और सम्भवतः अविभक्त घोल अब छोटी अँतड़ियोंमें जाता है जहाँ कि एक प्रकारके एसिड निकलते हैं और अलग-अलग मनुष्योंकी अलग-अलग पाचनशक्तिके अनुसार प्रोटीन-वर्गका अन्तिम अशेष विभाजन हो जाता है। यहाँ संपूर्ण पाचनक्रिया समाप्त हो जाती है और भोजनरस अँतड़ियोंद्वारा सोख लिया जाकर धमनियोंद्वारा आवश्यकतानुसार शरीरके विभिन्न अङ्गोंमें पहुँचानेके लिये हृदयको भेज दिया जाता है। यहाँ ओषजनीकरण अर्थात् जठराग्निसे गरम होकर शरीरमें शोषित होनेवाली बात उठी जो, (जैसा कि पहले समझाया जा चुका है) तैलिकाम्ल ग्लिसरीन-योगों और कम आणविक भारवाले अम्लोंपर निर्भर करती है; और ये दोनों बातें वनस्पति घीमें नहीं होती। छोटी आँतोंमें जो कुछ गृहीत नहीं होता वह भेज दिया जाता है बड़ी आँतोंमें, जिनका काम है सारे जलीय पदार्थको सोख लेना और तरल वस्तुको स्थूल मलमें परिवर्तित कर देना। यदि, जैसा ऊपर बताया गया है, गाढ़े घोल न तो विभाजित होते हैं न शोषित होते हैं, तो वे इसी रूपमें बड़ी आँतोंमें जाते हैं, और उसकी भीतरी दीवालपर जमा होकर सोखे जानेकी क्रियाको कठिन या प्रायः असम्भव-सा बना देते हैं। फल यह होता है कि तरल भाग बिना पचे बाहर निकलता है और अतिसारको जन्म देता है। यह शरीरमें घट सकनेवाली एक प्रक्रियाका चित्र हुआ।

एक महत्त्वपूर्ण दृष्टिकोण और भी है जिसपर विचार कर लेना आवश्यक है। इसे सबने स्वीकार कर लिया है कि वसा-वर्गका कुछ अंश मानवदेहमें उपभुक्त हो जाता है और कुछको जीवन-क्रियामें मौके-बेमौके सहायता देनेके लिये बचाकर रख छोड़ा जाता है। ऐसा होनेके लिये यह आवश्यक हो जाता है कि खाये जानेवाले घी-तेल और मानवशरीरके वसाके संगठनमें कुछ साम्य हो। जहाँतक इस बातसे सम्बन्ध है यह विदित है कि संसार भरमें मानव-वसाका संगठन निम्नलिखित रूपसे होता है—

मानव-वसाका संगठन द्रवणविन्दु—१४° से २२° सेंटीग्रेड

तैलिक ग्लिसरीन-योग	७० से ८४	प्रतिशत
अन्य ग्लिसरीन-योग	१६	,,
	१००	,,

इससे इस बातका भी साफ पता चल जाता है कि

वनस्पति घी, जिसमें तैलिक ग्लिसरीन-योगका केवल २० प्रतिशत होता है और जो अन्य ग्लिसरीन-योग (जिनमें सम-तैलिक भी शामिल हैं) होते हैं, उन सबका द्रवण-विन्दु ४५° सें० से ऊपर होता है, मानव-वसाके निर्माणमें सहायक नहीं हो सकते। कभी-कभी यह तर्क किया जाता है कि सम्भवतः यकृत् (संपृक्त), वासिक ग्लिसरीन-योगके कुछ अंशको तैलिक ग्लिसरीन-योगमें बदलता रहता होगा। तर्कके लिये यदि इसे सही मान लें (यद्यपि इसे अभी सिद्ध होना है) तो यह प्रश्न उठता है कि मूँगफलीके तेलमें वर्तमान स्वाभाविक तैलिक ग्लिसरीन-योगको क्यों व्यर्थ धनव्यय करके वासिक ग्लिसरीन-योगमें परिवर्त्तित किया जाय और इस संपृक्त वासिक ग्लिसरीन-योगको मूल तैलिक ग्लिसरीन-योगमें बदलनेके लिये जूझनेको बेचारा यकृत् बाध्य किया जाय और पाचक-रसोंको एक अनावश्यक क्रियाके विरुद्ध लड़नेमें व्यय किया जाय ? यह बहुत जबान रोककर कहा जाय तब भी शक्तिका सर्वथा अपव्यय है। कुछ प्रयोगोंमें, जिसमें चूहे वनस्पति घीपर पाले गये थे, दूसरी पीढ़ीमें दुर्बल यकृत्वाले पाये गये, क्योंकि पहली पीढ़ीवाले चूहे वनस्पति घी खाकर रोगी हो चुके थे।

ऐसी भी सूचना दी गयी है कि भारतीय सेनामें पहले शुद्ध घी दिया जाता था। बादमें जब प्रामाणिक शुद्ध घी मिलना कठिन हो गया तो किसी-किसी दिन वनस्पति घी दिया जाने लगा। पाचनपर इस वनस्पति घीके कुप्रभावके कारण इसको भी बंद कर दिया गया। यह पता लगानेकी बात है कि वास्तवमें क्या किया गया।

इसलिये रसायन एवं जीवन-विज्ञानकी दृष्टिसे विचार करनेपर इस बातमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि आजकल बाजारमें बिकनेवाला वनस्पति घी लाभकी अपेक्षा हानि अधिक करता है। इस बातकी आवश्यकता है कि आजकल फैले हुए रोगों और उनके सम्बन्धमें वनस्पति घीके कारनामोंके विषयमें चिकित्सकोंके सत्य अनुभवों तथा सम्मतियोंका संग्रह किया जाय। केवल इस दुराग्रहकी रक्षाके लिये, कि घीके-जैसी दिखायी देनेवाली वस्तु ही ग्रहण की जाय, प्रकृतिके द्वारा दिये हुए शुद्ध तैलिक ग्लिसरीन-योगोंको ४५° सें० से ऊपरके द्रवण-विन्दुवाले सम-तैलिक और वासिक ग्लिसरीन-योगोंमें परिवर्तित कर देना मूर्खता और विडम्बनामात्र है। यह याद रखना चाहिये कि यूरोपमें भी तलनेके कामके लिये केवल सूअरकी चर्बी (Lard) के ही प्रयोगकी सम्मति दी जाती है, मेद (Tallow) की नहीं, क्योंकि शूकरोदर-वसामें मेदसे अधिक तैलिक ग्लिसरीन-योग होते हैं।

भारतवर्षमें वनस्पति घी (का बनाना यदि बंद न हो तो उसके) के प्रयोगके सुधारके सम्बन्धमें तुरंत करनेवाली बातें ये हैं कि वानस्पतिक तेलोंको साफ करके स्वतन्त्राम्लों (Free acids) और गन्धसे मुक्तकर देना चाहिये तथा उसमें रंग दे देना चाहिये। तैलिकाम्लकी अपेक्षा अलसी-स्नैहिकाम्ल (Linoleic acids) के कारण सड़नेकी सम्भावनाको दूर करनेके लिये यथासम्भव कम तापमानपर उज्जन मिला करके अलसी-स्नैहिकाम्लोंको तैलिकाम्लोंमें परिवर्तित कर देना चाहिये और सम-तैलिकोंका बनना कम कर देना चाहिये। यदि ऐसा किया जायगा तो सड़ना बंद होगा और तैलिकाम्लोंकी रक्षा होगी। इससे ऊपर बताये हुए वनस्पति घीके उपद्रव बहुत कुछ दूर हो जायँगे और फिर एक ऐसा खानेवाला तेल प्राप्त होगा जिसका घोल अच्छा बनेगा, जो पचेगा और शरीरद्वारा ग्रहण किया और रस-रक्तमें मिला लिया जायगा। **इसका कोई कारण नहीं कि अबोध और अशिक्षित भारतीयोंको क्यों घीके रूपवाली एक नकली वस्तु दी जाय, जिसका प्रभाव, पीढ़ियोंसे भारतमें व्यवहारमें आनेवाले बिना साफ किये हुए वानस्पतिक तेलोंसे भी खराब होता है।**

नीचेकी सूचीमें सुपाच्यता और सुग्राह्यताकी दृष्टिसे बादमें आनेवाले पदार्थ पहले आये हुए पदार्थोंसे घटकर हैं,—(१) मक्खन, (२) घी, (३) नारियलका तेल, (४) तिलका तेल, कुसुमका तेल और सरसोंका तेल, (५) मूँगफलीका तेल और बिनौलेका तेल, (६) शूकरोदर वसा (Lard), **(७) मेद** (Tallow) **और** (८) **वनस्पति घी।** नंबर ४ और ५ वाले तेल लगभग एक-से ही गुणवाले हैं और उनको स्वच्छ और शुद्ध रूपमें अपनी-अपनी रुचिके अनुसार लेना चाहिये। विटामिन 'ए' और 'डी' के कारण घीको सर्वोच्च स्थान मिला है।

विशेष सूचना—यदि इस विषयमें कुछ और जाननेकी आवश्यकता हो तो यथासम्भव सहायता करनेमें मुझे प्रसन्नता ही होगी।

दूध तथा दूध देनेवाले पशु

(लेखक—श्रीयुत साराभाई प्रतापराय)

(१)

सबसे अधिक पूर्ण भोजन

'मानव-जातिके लिये ज्ञात भोजनोंमें दूध सबसे अधिक पूर्ण भोजन है।'

'अति प्राचीन ज्ञात भोज्य-पदार्थोंमें दूध सबसे अधिक पूर्ण भोजन है।'

(देखिये पृष्ठ १५ और ८०, भारतसरकारकी रिपोर्ट सन् १९४३, मार्केटिंग आफ मिल्क इन इंडिया)

'जो वस्तुएँ हमें प्राप्त हैं, उनमें केवल दूध ही एक ऐसा पदार्थ है, जो सम्पूर्ण भोजनके अधिक निकट पहुँचता है। हमारी जानकारीमें दूसरा कोई ऐसा पदार्थ नहीं है जो अकेला दूधके स्थानमें ग्रहण किया जा सके।'

'मानव-जातिद्वारा आहारके रूपमें गाय तथा अन्य दुधैले पशुओंके दूधका प्रयोग इतना ही प्राचीन है, जितना मानव-जातिका इतिहास। इस दीर्घकालमें दूधके इस रूपमें प्रयोग होनेके कारण इसके मूल्यको बहुत ऊँचा स्थान प्रदान किया गया है।'

(लीग ऑफ नेशन्सकी न्यूट्रिशन रिपोर्ट, १९३७ की सीरीज)

गूढ़ श्रद्धा

अन्तर्राष्ट्रीय विशेषज्ञोंके दूधपर विशेष वैज्ञानिक अनुसन्धानोंद्वारा निकाले हुए अधिक परिणाम अपने भारतीयोंको बतानेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि भारतवासी सुगठित शरीर, सुन्दर स्वास्थ्य एवं शक्तिके लिये दूधके गुणको पहलेसे ही अद्वितीय समझते हैं। प्रतिदिन दूधका उपयोग करनेवाली ग्रामीण एवं पहाड़ी जातियोंके स्वास्थ्य, बल तथा जीवन-शक्तिसे यह सिद्ध है कि दुग्ध-शक्ति रक्षात्मक और पोषक भोजनका एक प्रमुख भाग है।

दूधके द्वारा भावी माता स्वयं अपना पोषण करती है और अपने गर्भस्थ बच्चेको भी जीवन देती है। इसीके द्वारा शिशु पनपता है, बालक बड़ा होता है, नौजवान सुन्दर शरीरका विकास करता है, युवक अपने शरीरके गठनको दृढ़ करता है, रोगी और निर्बल खोये हुए स्वास्थ्यको पुनः प्राप्त करते हैं तथा बूढ़ा स्वस्थ रहकर अधिक दिन जीता है। दूधमें मनुष्योंकी गूढ़ श्रद्धा है।

दूध पीयूष है, जीवनका अक्सीर

मनुष्यके भोजनको दो प्रमुख श्रेणियोंमें बाँटा जा सकता है—

१. वह जो शक्ति उत्पन्न करता है।

२. वह जो पोषक है अथवा स्वास्थ्य और आरोग्यका रक्षक है।

इस श्रेणीमें दूध और दूधकी चीजें, फल और सब्जी तथा अंडे और मांसकी प्रधानता है। पोषक पदार्थोंकी प्रत्येक सूचीमें दूध और डेयरीकी चीजें सबसे पहले आती हैं।

दूध एक अद्भुत द्रव है, जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी १०१ वस्तुएँ उचित मात्राके मिश्रणमें मिली होती हैं, और उन वस्तुओंको लेकर दूधका निर्माण नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि प्रभावोत्पादकताकी दृष्टिसे अन्य कोई भी वस्तु दूधका स्थान नहीं ले सकती। दूधके कुछ पोषक भाग अभीतक पहचाननेमें नहीं आये हैं। इसके ८ प्रोटीनोंमें १९ एमिनो-अम्ल (Amino-acids) हैं। इसके मक्खनमें ११ मेदाम्ल (Fatty-acids), ६ जीवन-सत्त्व (Vitamins), ८ फेनक द्रव्य—पाचक-रस (Enzymes), २५ खनिज (Minerals), १ चीनी (दुग्ध-शर्करा), ४ फास्फरस-सम्बन्धी मिश्र द्रव्य (Phosphorus Compounds) और १४ नत्रजनीय तत्त्व (Nitrogenous Substances) हैं; कुछ अज्ञात अन्य भाग हैं, जिनमें कुछ ऊपर रहनेवाले अंश हैं और कुछ इसके प्राकृतिक जलीय अंशमें घुले हुए रहते हैं।

दूधके प्रोटीनोंका मूल्य बहुत ऊँचे दर्जेका होता है, तथा ये अत्यन्त सुगमतासे पच जाते हैं। इनसे युवककी वृद्धि-सम्बन्धी आवश्यकताएँ सरलतासे पूरी हो जाती हैं और ये तरुणों एवं सब प्रकारके वयःक्रमके मनुष्योंके स्वास्थ्यको बनाये रखनेमें सहायक होते हैं।

दूधका स्नेह (Fat) अत्यन्त ही पाचक और ग्राहक होता है तथा ए. और डी. जीवन-सत्त्वों (Vitamins) का उद्गम होता है। इसमें रहनेवाले चूनेके क्षार (Salts) विशेष सुगम शोषणीय हैं। सारांश यह है कि दूधके जीवन-सत्त्व सबसे अधिक शक्तिशाली होते हैं। इसके पूर्ण प्रोटीन मांसपेशियोंका निर्माण करते हैं, सामर्थ्यको बनाये रखते हैं और शरीरकी खोयी हुई शक्तिको पुनः प्राप्त करनेमें सहायक होते हैं। इसके क्षार अच्छी हड्डियों और दाँतोंका निर्माण करते हैं। इसका पानी द्रवकारक होकर दूसरे खाद्य-पदार्थोंके लोहे और आयडिन (Iodines) को पचानेमें सहायता करता है। दूधके फेनकतत्त्व—पाचकरस(Enzymes) विषों, रोगोत्पादक विषों तथा सड़नेसे उत्पन्न विषोंका प्रतिरोध करते हैं। शरीरके ग्रन्थिमण्डलको, जिसके ऊपर मनुष्यकी शक्ति, उत्साह और रञ्जकता अवलम्बित होती है, दूधके पाचक-रससे बड़ी सहायता मिलती है। ये क्षय और कुष्ठको अच्छा करनेमें बड़े सहायक होते हैं। इसके क्षार-तत्त्व (Alkaline) अम्लपित्त (Hyper-acidity) को निवारण करनेके अतिरिक्त मूत्रकारक होते हैं। इसके सहयोगी कीटाणु आन्त्र-वनस्पति (Intestinal Flora) को उन्नत करते हैं। इसकी प्राणिज-शर्करा एवं दुग्ध-शर्करा खमीर नहीं बनातीं और कष्ट नहीं देतीं। इसके क्षार स्वयं लाभदायक होनेके कारण चर्बी-वाले प्रोटीनोंको पचानेमें बड़ी सहायता करते हैं। यह प्रकृतिदेवीका अत्यन्त आश्चर्यजनक दुग्धद्रव है। दूध कवि-कल्पनाका वास्तविक अमृत है।

दूधके प्रभाव और शक्तिको संसारके सभी देशोंके सभी मनुष्योंने स्वीकार किया है। अपने देशवासियोंके सामने इस सम्बन्धमें अधिक जोर देनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उन्होंने दूध और अमृत दोनोंके लिये एक ही शब्द 'पीयूष—जीवनका अक्सीर' रखकर दूधकी श्रेष्ठता सिद्ध कर दी है।

(२)

सरकारका मूल उत्तरदायित्व

प्रत्येक लोकप्रिय सरकार यह मानती है कि सामाजिक संस्था होनेके कारण उसके कुछ उत्तरदायित्व हैं। वह जनताके लिये अधिक उपयोगी खाद्यका प्रबन्ध करनेमें काफी ध्यान देती है और खाद्य पदार्थोंमें दूधका स्थान सबसे पहला है। अंग्रेज भारतपर शासन करते हैं, अतः यह उन्हींकी जिम्मेदारी है कि वे यहाँके पशुओंकी संख्या बढ़ावें तथा पशुओं एवं दूधके गुणोंमें वृद्धि करें। देखिये, उन्होंने अपने देशके लिये क्या किया?

(देखिये, दि इकनामिस्ट, १० जून सन् १९३९, पृष्ठ ५९४)

पशुओंके धंधेमें सन् १९३२ से १९३८तक सरकारी सहायता	१,८५,९४,५८४ पौंड
,, सन् १९३९ में	४६,२५,००० पौंड
दूधमें सन् १९३२ से १९३८ तक	५६,९६,५६१ पौंड
,, १९३९ में	४,९२,९१० पौंड
'अधिक दूध पीयो'के प्रचारमें सन् १९३९में सरकारने प्रेस और प्रकाशनमें व्यय किया।	६०,००० पौंड
कुल	२,९४,६९,०५५ पौंड

८ वर्षोंमें बहुत ऊँचा टैक्स देनेवाले ब्रिटेनने राष्ट्रके रक्षात्मक खाद्यकी पूर्तिके लिये २,९४,६९,०५५ पौंड अर्थात् ४०,००००००० (चालीस करोड़) रुपये खर्च किये।

इसके अतिरिक्त गर्भिणी स्त्रियों, बच्चेवाली माताओं, शिशुओं, स्कूल जानेवाले बच्चों और उद्योग-धंधोंमें काम करनेवालोंको ब्रिटेनने या तो मुफ्त या सस्ते भावमें दूध दिया, जिसका भाव था प्रतिपेंस ⅓ पिंट (१३ औंससे अधिक)। परिणाम यह हुआ कि ब्रिटिश जवान पहलेकी औसत वृद्धिकी अपेक्षा ऊँचाई और तौलमें बढ़ गये और दूधने कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंकी अनुपस्थिति संख्या घटाकर प्रति-मजदूरके उत्पादनमें वृद्धि कर दी।

अन्यत्र लाखोंके लिये दूध

ब्रिटेनमें इस प्रकार करदाताओंका धन मुख्यतः राष्ट्र-निर्माणके काममें आता है। उत्तरी आयरलैंडमें, सर्वनाशी महायुद्धके भँवरमें पड़े रहने एवं स्वयं युद्धमें लिप्त रहनेपर और मांसकी अधिक माँगके समय भी 'राष्ट्रीय दुग्ध योजना' (National Milk Scheme) के द्वारा दूधकी खपत ६० प्रतिशत बढ़ गयी। क्या भारतके ब्रिटिश शासक कर-दाताओंके धनका दस लाखवाँ भाग भी यहाँकी जनताके शारीरिक विकासमें व्यय करते हैं?

पोषक पदार्थोंके अधिकतम उत्पादनके लिये अन्तर्राष्ट्रीय उद्योग

मई-जून सन् १९४३ में खाद्य और कृषि-सम्बन्धी बातोंपर विचार करनेके लिये हाट स्प्रिंग्ज वर्जिनियामें जो संयुक्त राष्ट्रोंकी कान्फरेंस हुई थी और जिसमें ३८ मित्र राष्ट्रोंके प्रतिनिधि एकत्रित हुए थे तथा जिसका उद्देश्य सारी मानव-जातिके लिये उचित रीतिके भोजनकी व्यवस्था करना था, उसने यह सिफारिश की थी कि प्रत्येक राष्ट्र अपनी नीति ऐसी बनावे, जिससे जीवन-सत्त्व, खनिज तथा प्रोटीनकी प्रचुरता रखनेवाले खाद्य पदार्थोंके उत्पादनमें प्रोत्साहन मिले। इसके लिये दूध, शाक, अंडा, मांस-जैसे परम मूल्यवान् पदार्थोंके उत्पादनको, जिनकी अच्छे पोषणके लिये अत्यधिक मात्रामें आवश्यकता है, प्रोत्साहन देना होगा। अधिक-से-अधिक उत्पादनके लिये पशु-संख्याके विस्तारमें सहायता करनी होगी।

कान्फरेंसकी कार्यवाहीमें भारत-सरकारद्वारा नियुक्त प्रतिनिधियोंने भी भाग लिया और वहाँके प्रस्तावोंपर अपने सम्मतिसूचक हस्ताक्षर किये। उन्होंने पारस्परिक सद्भावनाके वातावरणमें वहाँसे प्रस्थान किया और यह निश्चय किया था कि सभाके निश्चयोंको भारतमें कार्यान्वित किया जाय, किन्तु खेद है कि उनका कोई काम अभी जनताके सामने नहीं आया।

इंग्लैंडको देखिये

ब्रिटिश विचार-धाराके नेताओंने, जिनमें अर्थशास्त्र-विशारद, राष्ट्रीय किसान-संघ (National Farmers Union), राजनीतिज्ञ, अनुदार एवं उदार पक्षके लोग सम्मिलित हैं, कान्फरेंसके निश्चयोंका उत्साहपूर्वक समर्थन और अनुमोदन किया। वहाँके 'इकनामिस्ट' पत्रने समर्थन करते हुए कहा, 'पोषणकी दृष्टिसे ऊँचे मूल्यवाले तथा अधिक व्ययसाध्य खाद्य पदार्थोंको अपने देशमें ही पैदा करना निःसन्देह लाभदायक होगा।' उस समय यही नारा उठ रहा था कि राष्ट्रीय स्वास्थ्यके लिये आवश्यक पोषक खाद्य पदार्थोंका उत्पादन अधिक-से-अधिक बढ़ाया जाय।

१९४३ के अक्टूबर मासके प्रथम सप्ताहमें कृषि-मन्त्री श्रीयुत हडसनने वेल्समें भाषण देते हुए दूधके उत्पादनपर विशेष जोर दिया। उन्होंने कहा कि 'मनुष्यके प्रत्यक्ष उपयोगके लये शक्ति देनेवाले खाद्य पदार्थोंके अधिकाधिक उत्पादनके पश्चात् वर्षोंतक इसीको औरोंकी अपेक्षा प्रमुख स्थान मिलता रहेगा।' ११ सामन्तोंके एक मण्डलने पोषक आहारकी अभिवृद्धिपर बहुत जोर दिया। उन्होंने कहा कि कृषि और राष्ट्रीय स्वास्थ्यके लाभकी दृष्टिसे दुग्धोत्पादन तथा मुर्गी, बतख आदि पक्षियोंको पालनेमें पर्याप्त वृद्धि होनी चाहिये।

उदारदलने भी खाद्य और कृषिपर रिपोर्ट देते हुए अपनी सम्मति प्रकट की है कि दूध, फल, तरकारी, अंडे और पशुओंका उत्पादन—विशेषकर दूधका—बढ़ाया जाय। अनुदारदल तथा राष्ट्रीय किसान-संघकी रिपोर्ट भी इस सुझावका दृढ़ समर्थन करती है कि युद्धोत्तर-कृषि-नीति प्रधानतः पोषणसम्बन्धी नीतिपर अवलम्बित होनी चाहिये।

सब सम्मतियोंका सार यही है कि अधिक उपयोगी तथा रक्षक खाद्य पदार्थोंके उत्पादनमें अधिक वृद्धि करनी चाहिये; क्योंकि उद्योग-धंधोंमें लगी हुई एक बड़ी जन-संख्या दूध और उससे बने हुए अन्य पदार्थोंकी बड़ी भारी माँग सामने रक्खेगी।

सतर्क कनाडा और आस्ट्रेलिया

जागरूक कनाडाने तो अपना काम आरम्भ कर दिया। उसने सन् १९४३में गेहूँ तथा राई पैदा करनेवाले क्षेत्रफलमें कमी कर दी और मक्खनके उत्पादनमें १४ प्रतिशतकी वृद्धि करके उसका उत्पादन ३२ करोड़ ३० लाख पौंड कर दिया तथा चूर्णित दूध (Powdered milk) के उत्पादनमें ४१ प्रतिशतकी वृद्धि करके उसका उत्पादन ५१ करोड़ ६० लाख पौंड कर दिया, क्योंकि उसके पास खपतके बाद अतिरिक्त दूध बहुत बचता है।

कनाडाने खाद्य पदार्थोंका उत्पादन कम करनेका और पशुओंके लिये सूखी घास, ल्यूसर्न, ओट तथा बार्लीके उत्पादनको बढ़ानेका निश्चय किया है। निःसन्देह इन वस्तुओंके उत्पादनमें कनाडाने जो वृद्धि की है, वह पशुओंके खानेके लिये न कि मनुष्योंके लिये, जैसा कि भारतवर्षमें होता है। आस्ट्रेलिया भी इसी पथका अनुसरण कर रहा है।

(३)

भारतकी स्थिति देखिये

अन्तर्राष्ट्रीय और ब्रिटिश कामन वेल्थ (British Common Wealth) के राष्ट्र-निर्माणसम्बन्धी प्रयत्नोंपर यहाँतक प्रकाश डालनेके पश्चात् घरकी ओर मुँह मोड़कर

हम भारतकी स्थितिपर विचार करेंगे । बाहरकी स्थितिका अध्ययन करते समय हमने देख लिया है कि वहाँकी सरकारें जनताके प्रति उत्तरदायी हैं और उनकी माँगकी ओर ध्यान देनेवाली हैं; वे अपनेको सामाजिक संस्थाएँ मानती हुई समाजकी भलाईके लिये कार्य करती हैं । उनका कार्य जनताका हित करना है, अन्यथा वे टिकती ही नहीं । उसी ब्रिटेनके पुत्र भारतमें राज्य करते हैं। उनका दावा है कि उनके सामाजिक आदर्श वैसे ही हैं, किन्तु यहाँकी जनताके जीवनकी प्रारम्भिक आवश्यकताओंकी भी पूर्तिके लिये किसी महत्त्वपूर्ण कार्य करनेका श्रेय उन्हें नहीं दिया जा सकता । उन्हें मालूम है कि उनके अपने घर ब्रिटेनमें क्या हो रहा है और उनके पथ-प्रदर्शनमें उन्होंने अपनी सम्मति भी दी है। कृषि-रायल-कमीशनने सारे भारतमें एक छोरसे दूसरे छोरतक यात्रा करने और दो वर्षके परिश्रमके पश्चात् इन शासकोंके सामने हजारों छपे हुए पृष्ठोंमें ग्रामसुधार एवं कृषि-उन्नतिके सम्बन्धमें अपनी सिफारिशें रक्खीं, किन्तु उसी कमीशनके स्वयं अध्यक्षके सर्वशक्तिसमन्वित और लंबे कालमें भी न तो भारतके खेतोंमें, जो खाद बिना सूख रहे हैं, दो पत्ते अधिक उगे, जिससे कृषिपर ही निर्भर रहनेवाले यहाँके ९० प्रतिशत अतृप्त भारत-सन्तानोंको कुछ सहारा मिलता, न यहाँके पशुओंको पर्याप्त चारा ही मिला, जिससे कि उनकी तथा उनकी नस्लकी उन्नति होती, और न आधा पेट खानेवाले ये पशु दूध तथा मक्खनकी उपजमें वृद्धि ही कर सके !

सरकारका उत्तरदायित्व

रायल-कमीशनकी रिपोर्टके २१ वें अध्यायमें ६७२–७३ पृष्ठोंपर ५८१ वें पैराग्राफमें जो निष्कर्ष निकाला गया है, वह यहाँ उद्धृत करनेयोग्य है—

५८१

(३) 'जीवनको अधिक अच्छा बनानेकी माँगको तभी उत्तेजना मिल सकती है जब ग्रामोंकी सामान्य दशाओंको सुधारनेके लिये सचेत और संगठित उद्योग किया जाय । हमें यह कहनेमें तनिक भी संकोच नहीं होता कि इसका उत्तरदायित्व सरकारपर है ।'

(४) '……हमारा यह भी विचार है कि भारत-सरकार तथा प्रान्तीय सरकारोंने इसके महत्त्वको जैसा चाहिये वैसा नहीं समझा ।'

(७) '……फिर भी हम यह बता देना चाहते हैं कि भारतीय परिस्थितिमें इस सम्बन्धका विशेष और प्रधान उत्तरदायित्व वाइसराय तथा प्रान्तके गवर्नरोंके ऊपर आ गया है; किन्तु इस मामलेमें प्रान्तीय गवर्नरोंका तात्कालिक कर्तव्य तो कहीं बढ़कर है ।'

इंग्लैंड, अमेरिका तथा उपनिवेशोंकी सरकारें अपनी जिम्मेदारियोंको पहचानती हैं और जनताको पूर्णरूपसे संतुष्ट करनेवाले कामोंको करती हैं, जिनमें प्रथम स्थान स्फूर्तिदायक तथा पोषक खाद्य पदार्थोंके प्रबन्ध करनेका रहता है । भारत-सरकार इन सब बातोंसे पूर्ण परिचित है, फिर भी पर्याप्त फसलोंके अभावमें भारत भूखों मर रहा है ! जान-बूझकर अपने उत्तरदायित्वकी यह अवहेलना बहुत ही खेदजनक है ! भारतकी यह दुःखद स्थिति बराबर चालू है—इसका प्रमाण अभी हालकी (जनवरीके उत्तरार्द्धमें) चीनी यात्री श्रीपाऊकी कठोर आलोचना है, जो उन्होंने इंडियन कौंसिल आफ एग्रिकल्चरल रिसर्च (Indian Council of Agricultural Research) के कमरोंमें रक्खे हुए खेतीकी पैदावारके नमूनोंको देखकर की थी । उन्होंने कहा था कि 'ये नमूने देखनेमें तो सुन्दर हैं किन्तु खेतोंमें इनका कोई उपयोग नहीं किया जाता ।'

समझते हुए भी अपना कर्तव्य पालन न करनेका इससे अधिक बुरा उपालम्भ भारतके शासकोंके लिये और क्या हो सकता है ?

बर्मा और मलायाके पतनपर भारतके खाद्य पदार्थोंमें भयङ्कर कमीकी सम्भावना श्रीएमरीने अपनी चतुरतापूर्ण तर्कसे इंग्लैंडकी साधारण सभा (House of Commons) में स्वीकार की थी, किन्तु फिर भी वे बेसुधकी भाँति भारतके खाद्य पदार्थको समुद्रपार जाते हुए देखते रहे और उन्होंने अंगुलीतक न उठायी । यदि वे समयपर उसका विरोध करते तो भूखसे मर जानेवाले भारतके ३० लाख नर-नारियोंका जीवन बच जाता । अधिकारीवर्गकी जो उदासीनतापूर्ण नीति शक्तिप्रद खाद्य-पदार्थोंके सम्बन्धमें है, वही नीति रक्षक खाद्य-पदार्थोंके सम्बन्धमें भी है । अपने देशकी प्रथासे अभिज्ञ होनेके कारण, कि इंग्लैंडके स्कूलोंमें मुफ्त दूध देनेकी योजनाके अनुसार प्रतिदिन चारमेंसे तीन बच्चोंको मुफ्त दूध मिलता है और जिसके फलस्वरूप उनके शारीरिक और मानसिक विकासमें वृद्धि होती है, लार्ड लिन्लिथगोने अपने शासनके प्रारम्भ-कालमें शिमलाके स्कूलोंमें बच्चोंको मुफ्त दूध बाँटनेकी घोषणा की थी । किन्तु ६ महीनोंके भीतर ही इस दयालुताका प्रभाव मिटने लगा और अन्तमें श्रीमान् वाइसराय महोदयने अपना उपहार वापस ले लिया !

नवम्बर सन् ३६ में वाइसराय महोदयने डाक्टर एन० सी० राइटको बुलाया था, जिन्होंने पूरे अन्वेषणके बाद और अपने पूर्व विशेषज्ञोंकी रिपोर्टोंके आधारपर सितम्बर सन् ३७ में यह सिफारिश की थी कि बच्चोंको मुफ्त दूध दिया जाय, क्योंकि दूध पीनेवाले बच्चे तौल तथा ऊँचाई—दोनोंमें दूध न पीनेवालोंकी अपेक्षा निश्चयपूर्वक अधिक उन्नति कर सकते हैं। यह उन्नति प्रत्येक ३ महीनोंमें तौलमें ४ पौंड और ऊँचाईमें १ इंचके हिसाबसे होती है (रिपोर्ट पृष्ठ ५, एपेंडिक्स ४, पृष्ठ १४४, टेबल नं० ४, पृष्ठ १५७); किन्तु वाइसराय महोदयका हृदय-परिवर्तन न हुआ और वे अपने उपहारको पुनः चालू न कर सके। मुफ्त दूध चालू न करनेका कारण चाहे उनकी आन्तरिक कृपणता हो अथवा भारतके होनहार नौनिहालोंको बौना एवं दुर्बल बनाये रखनेकी नीति, किन्तु जो ढंग ग्रहण किया गया था, वह केवल अनुमानका विषय बना रहेगा। निश्चय ही इस उदासीनतासे उनकी सचाई या सच्ची सद्भावना प्रकट नहीं होती। इस प्रकार जान-बूझकर की गयी उपेक्षा भारतकी जनतामें शासकोंके प्रति बढ़ते हुए असन्तोषको नहीं दबा सकती। अपितु इससे इस सन्देहको पोषण मिलता है कि कहीं भूखों मारकर राज्य करनेवाली नीति तो नहीं अपनायी गयी? अन्तिम आलोचना, जो १५ फरवरीको लन्दनमें केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाके विद्वान् सभासद् श्रीपी० जे० ग्रिफिथने की थी, यहाँ देने योग्य है।

शासनकी आलोचना

'इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सुस्ती और इस विषयमें कुछ करनेकी अपनी प्रत्यक्ष अनिच्छा प्रकट करनेके कारण भारत-सरकारके प्रति यूरोपीय और भारतीय दोनोंके हृदयमें आदरभाव बहुत कम हो रहा है।'

आँख खोलनेवाली दूसरी बात 'सतत अकाल'

'न्यू स्टेट्समैन ऐंड नेशन' नामक पत्र अपने २० नवम्बर सन् १९४३ के अङ्कमें पृष्ठ ३२६ पर लिखता है—

'चार वर्षोंसे सभी वस्तुओंका मूल्य निरन्तर बढ़ता जा रहा है, क्रमशः एक दिन ऐसा आयेगा जब अकाल पड़ जायेगा और उससे लाखों मृत्यु होंगी। दिल्लीकी केन्द्रीय सरकार और इंग्लैंडका भारत-दफ्तर अपनी तेजस्वी अकर्मण्यतासे देखता रहता है। जब-जब जनताका हित संकटमें पड़ता है, तब-तब इसका यही रवैया (ढंग) रहता है, किन्तु जब दमनका अवसर आता है तब अंग्रेजोंकी 'मुक्त-व्यापार' की आदत विराम लेने लगती है। सर जार्ज शुस्टरने कहा था कि 'सरकारके पास पर्याप्त शक्ति है किन्तु वह उसका प्रयोग नहीं करना चाहती। इससे उसकी कमजोरी और बुद्धिकी अस्थिरता प्रकट होती है।'

शताब्दियोंकी अकर्मण्यता

यद्यपि लार्ड लिन्लिथगोद्वारा नियुक्त सन् १९२८ के रायल-कमीशनने (अध्याय २१ पृष्ठ ६७३ पैरा दूसरा) इस शताब्दियोंकी अकर्मण्यताकी कटु आलोचना की है तथापि सन् १९४४ में भी यह असाध्य एवं दुःखदायी अकर्मण्यता कपट और घातकतापूर्ण रीतिसे भारत-सरकारकी राजनीतिके रोम-रोममें प्रवेश करती रही।

किन्तु यह सब शक्तिवर्द्धक भोजनके विषयमें है, जिसके लिये हमारे शासकोंने थोड़ी-बहुत आस्था दिखलायी है, परन्तु मूल्यवान् पोषक पदार्थोंकी मात्रा बढ़ाने एवं उनके गुणोंमें सुधार करनेकी ओर उन्होंने बहुत ही कम ध्यान दिया है। हमारी वर्त्तमान समस्या दूध है, जिसमें प्रथम श्रेणीके प्रोटीनोंकी प्रचुरता रहती है। उन भारतवासियोंके लिये, जो शाकाहारी हैं, दूध बहुत ही अमूल्य पदार्थ है। उनके शरीरके लिये अत्यन्त आवश्यक प्राणिज चर्बीका एकमात्र साधन दूध है। प्रोटीनोंको पचानेमें सहायता देनेवाला ब्युटिरिन (Butyrine) तथा अन्य मुलायम स्नेह-पदार्थ दूधमें—विशेषकर गायके दूधमें—पूर्णरूपसे पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त दूध ए. बी. डी. जीवनसत्त्वोंका भी अत्यन्त समृद्ध उद्गम है। दूधमें प्राकृतिक पदार्थोंको कृत्रिम क्रियाके द्वारा संयुक्त करनेका गुण अमूल्य है।

कमी क्यों ?

सन् १९४१ तक भारतवर्षमें २० वर्षोंके भीतर जनसंख्यामें जहाँ २७ प्रतिशत वृद्धि हुई, वहाँ पशुओंमें केवल ५ प्रतिशत ही वृद्धि हुई। इस प्रकार जनसंख्या और पशुसंख्याकी वृद्धिमें समानता नहीं रही और भारतीय पशुओंकी दूध देनेवाली शक्तिका भी ह्रास हुआ। (देखिये M. M. R. पृष्ठ ५०)।

यद्यपि भारतवर्षमें सारे संसारके एक तिहाई और रूसको भी मिलाकर पूरे यूरोपके बराबर पशु हैं, किन्तु दूध यूरोपके पाँचवें भागके बराबर होता है। केवल ६ प्रतिशत पशुसंख्या रखते हुए भी कनाडा भारतकी अपेक्षा २५ प्रतिशत अधिक दूध उत्पन्न करता है। सन् १९३१ की जनगणना तथा

१९३५ की पशुगणनाके आधारपर प्रत्येक मनुष्यके प्रतिदिनके दूध-खर्चका औसत ६ औंस था, किन्तु सन् १९४१ में इस मात्रामें भी १२ प्रतिशतकी कमी होकर ५.८ औंस ही रह गया। यद्यपि गायों और भैंसोंकी संख्यामें क्रमशः ७.८ और ५.५ प्रतिशतकी वृद्धि हुई, किन्तु तो भी दूधमें केवल .२ और २.४ प्रतिशतकी ही वृद्धि रही। इस प्रकार बढ़नेवाली जन-संख्याकी माँगको पूरा करनेके लिये दूधकी बढ़ती बहुत ही कम थी। यहाँतक कि निम्न मध्यमवर्गके लोग भी अधिक दूध नहीं पी सकते; मजदूर तथा निम्न श्रेणीके अभागे लोग तो बिना दूधके जीवन बिता देते हैं।

हीन पोषणसे राष्ट्रीय ह्रास

खनिजतत्त्व एवं जीवन-सत्त्वकी कमीसे होनेवाले रोगोंके कारण भारतकी जनसंख्याका भयङ्कर ह्रास हुआ है। मनुष्योंमें न तो शारीरिक सहन-शक्ति रह गयी और न उनमें इतनी प्राण-शक्ति ही है, जिससे वे कठिन ऋतु-प्रवाह अथवा आकस्मिक महामारीके वेगमें खड़े रह सकें। लिन्लिथगो-रायल-कमीशन अपनी रिपोर्टके ४८१ वें पृष्ठपर पैरा-संख्या ३९६ में डाक्टरी सम्मति उद्धृत करते हुए लिखता है कि प्रतिवर्ष ५०-६० लाख मनुष्य ऐसे रोगोंसे मरते हैं, जो रोके जा सकते हैं। इन्हीं रोगोंके कारण भारतका प्रत्येक मजदूर 'प्रतिवर्ष २ या ३ सप्ताह कामपर नहीं जा पाता। अयोग्य पोषण तथा इन रोगोंके कारण प्रत्येक मनुष्यकी कार्य-क्षमताके ह्रासका औसत २० प्रतिशतसे कम नहीं है। इसके अतिरिक्त मजदूरी करनेके लायक उम्रतक पहुँच सकनेवाले बच्चोंकी औसत अभी लगभग ५० प्रतिशत है, जिसको ८०-९० प्रतिशततक पहुँचा देना बहुत सम्भव है। मेडिकल कान्फरेंसका विश्वास है कि जीवन तथा कार्य-क्षमताको क्षति पहुँचानेवाले इन रोगोंमें प्रत्येक वर्ष भारतके अरबों रुपये नष्ट हो जाते हैं तथा करोड़ों मनुष्योंको इस दुःखमें जो हानियाँ होती हैं और जो खर्च किया जाता है, वह गणनातीत है। यह कितनी भयानक आर्थिकहानि है। यदि सरकार चाहे और अपने उत्तरदायित्वपूर्ण कर्तव्यका निर्वाह करे तो यह हानि रोकी जा सकती है। समयानुकूल रक्षक एवं अवरोधक उपायोंसे केवल सरकार ही इस बर्बादीको रोक सकती है, अन्यथा यह दुःखद कर्तव्यहीनता भयङ्कर राष्ट्रीय ह्रासका कारण बनेगी।

धरती-पशु-मनुष्य—सबके लिये दुर्भिक्ष

रायल-कमीशन एवं विशेषज्ञोंकी कमेटीकी रिपोर्टमें यह बात बहुत जोरोंके साथ कही गयी है कि भारतवर्षमें—

१. खादके बिना धरती सूखती जा रही है।

२. चारेके बिना पशु कमजोर होते जा रहे हैं।

३. रक्षक भोजनकी उचित मात्राकी कमीके कारण मनुष्य निरन्तर अधिकाधिक अपना बल खो रहा है।

इन अभावोंको पूरा करना प्रत्येक सरकारका पहला कर्तव्य है, जैसा कि लार्ड वावेलने नयी दिल्लीमें अपने १७फरवरी १९४४ के वक्तव्यमें कहा था। अपने मूल विषयपर आते हुए बिना किसी विरोधकी आशङ्काके, यह बात फिर-फिर दुहरायी जा सकती है कि अंग्रेज शासकोंने भारतवर्षमें दूधकी वृद्धि अथवा पशुओंकी श्रेयस्कर उन्नतिके लिये किसी प्रकारका ठोस प्रयत्न नहीं किया। इसके विपरीत डा० एन० सी० राइट, डेयरी-विशेषज्ञ आयरशायर-स्काटलैंडकी रिपोर्ट पृष्ठ १६७, टेबल २१के आधारपर यह मालूम होता है कि सन् १९२६ से (सम्भवतः इसके पहलेके आँकड़े उन्हें नहीं मिले थे) लाखों मन निर्घृत दूध—जमे हुए अथवा चूर्ण रूपमें प्रतिवर्ष भारतमें बाहरसे आया है।

यह राजकीय अकर्मण्यता हो सकती है, अथवा यह भी सम्भव है कि विदेशी सम्बन्धोंके पक्षपातके कारण यह आन्तरिक प्रवृत्ति हो। किन्तु यह सत्य है कि भारतवर्ष विदेशोंके फेंके हुए कूड़ेको एकत्रित करनेका स्थान बन गया है और उसके लिये भारतको ऊँचे-से-ऊँचा मूल्य चुकाना पड़ता है, चाहे वह धनके रूपमें हो अथवा अच्छे मालके रूपमें।

(४)

जीवन-सत्त्वों (Vitamins) से रहित निर्घृत दूध

दूधमें स्नेह-पदार्थ घुला-मिला रहता है। इसका स्नेह-पदार्थ अर्थात् मक्खन सबसे अधिक सुपाच्य तथा ग्रहण करने योग्य होता है, और ए. एवं डी. जीवन-सत्त्वोंका स्रोत है। इसके अतिरिक्त मलाईमें भी उत्तमोत्तम और आवश्यक जीवन-सत्त्व होते हैं। मनुष्य-शरीरको स्नेहकी अनिवार्य आवश्यकता पड़ती है और दूध सबसे अधिक काम आनेवाले रूपमें उन्हें प्रदान करता है।

जब दूधमेंसे मलाई या मक्खन निकाल लिया जाता है, तब वह शेष दूध 'निर्घृत दूध' अथवा 'मक्खनरहित दूध' कहलाता है, इसमें जीवन-सत्त्वोंका अभाव रहता है, क्योंकि जीवन-सत्त्व सदा मलाईके साथ रहनेवाले तत्त्व हैं और वे उसीके साथ निकल जाते हैं। विशेषकर जीवन-सत्त्व डी.

अस्थि-क्षय-प्रतिबन्धक होनेके कारण विकासोन्मुख बच्चेके लिये आवश्यक है। इसका शरीर-रचनासम्बन्धी दूसरा कार्य शरीरमें फास्फेट (Phosphates) और चूनेके क्षारोंको प्रवाहित होनेसे सुरक्षित रखना है।

(लीग आफ नेशन्सकी रिपोर्ट, सन् १९३८, पृष्ठ ८९)

ये जीवन-सत्त्व शारीरिक रूप-रेखा, हड्डियों और ढाँचेका निर्माण करते हैं। मक्खनरहित निर्घृत दूधमें होनेवाले क्षारोंमें उष्णोत्पादक शक्तिकी कमी रहती है।

(देखिये श्री एम्० सी० कैरिसन-कुनूरकी 'फूड' नामक पुस्तक)

शुद्ध दूधके रिक्त स्थानकी पूर्तिके लिये निर्घृत दुग्ध-चूर्णका हठात् प्रवेश

सन् १९२६ में—ठीक उसी वर्षमें जब कि लार्ड लिन्लिथगो और उनके सहयोगियोंको भारतकी कृषि तथा ग्राम-अर्थ-नीतिकी जाँच-पड़ताल करके रिपोर्ट देनेके लिये एक रायल-कमीशन सौंपी गयी थी—५,५३,५०० मन जमा हुआ तथा सूखा निर्घृत दुग्ध-चूर्ण भारतवर्षपर लादा गया था और यह आयात उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रामें अभीतक जारी है।

उपमहाद्वीपके समान कृषि-प्रधान भारतवर्षमें निर्घृत दुग्ध-चूर्णके आयातमें उत्तरोत्तर वृद्धि

रायल-कमीशनने पशुओं और दुग्धोत्पादनमें उन्नति करनेके सम्बन्धमें अनेक प्राथमिक प्रस्ताव किये, किन्तु भारतवासियोंको महत्त्वपूर्ण लाभ पहुँचानेके लिये उनमेंसे एकको भी काममें नहीं लाया गया, वरं भारतीयोंके आश्चर्यकी उस समय कोई सीमा न रही, जब कि २२ जून सन् १९३५ को अर्थविभागने अपने ३३ वें आज्ञापत्रके अनुसार निर्घृत-दुग्ध-चूर्णपरसे (२० प्रतिशत ओटावा और ३० प्रतिशत सर्वसाधारण) आयात-कर हटा लिया और इस प्रकार सरकारी आज्ञाद्वारा भारतको लूटनेवाले दुग्ध-चूर्णके आयातमें वृद्धि की। धारा-सभामें प्रश्न पूछनेपर लार्ड लिन्लिथगोकी सरकारने उत्तर दिया कि भारतवर्षको अधिक दूध देने एवं दूधका भाव सस्ता करनेके उद्देश्यसे कर हटाया गया है। किन्तु सबसे अधिक दुःखपूर्ण आश्चर्यकी बात तो यह है कि उन्हीं दिनों इंग्लैंडमें स्वास्थ्यके लिये हानिप्रद होनेके कारण निर्घृत दूध—जो कृत्रिम उपायोंद्वारा टिकाऊ बनाया जाता था—के आयातपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। इसके अतिरिक्त इंग्लैंडने अपने यहाँ बराबर आयात-करको केवल जारी ही नहीं रक्खा, वरं सन् ३६ में लगनेवाले कर ९ शि० ६ पेंसको बढ़ाकर सन् ४३ में ११ शि० २ पेंस कर दिया और फिर सन् ४३ तो भयंकर युद्धका साल था।

बादको डेयरी-विज्ञानमें उन्नति होनेके कारण, निर्घृत दुग्ध-चूर्ण इस प्रकार बनाया जाने लगा जिससे शुद्ध दूधका कुछ तत्त्व उसमें रह जाय और जिन देशोंमें दूधकी कमी है वे ऐसे दूधसे लाभ उठा सकें। फिर भी डा० राइटने भारतवर्षके लिये यही सलाह दी कि 'मैं अनुभव करता हूँ कि देशी दुग्धोत्पादनकी रीतियोंपर ही अधिक जोर दिया जाय……।' (रिपोर्ट पृष्ठ ९८)। भारतवर्षमें निर्घृत दुग्धोत्पादन, उसके लाभ और प्रयोग-सम्बन्धी प्रश्नोंका उत्तर विभिन्न युक्तिपूर्ण कारणोंको दिखाते हुए उन्होंने एक दृढ़ 'नहीं' में दिया है! उन्होंने अपने परिणाम और अपनी सम्मतिस्वरूपमें पृष्ठ १२४ पर लिखा है 'देशी दुग्ध-पदार्थोंके उत्पादनपर सबसे पहले ध्यान केन्द्रित करना चाहिये, पाश्चात्त्य देशोंमें तैयार होनेवाले पदार्थोंपर नहीं। और ऐसे कार्य करने चाहिये जिससे यह विश्वास हो जाय कि ग्रामीण जनताकी खपतभरको दुग्ध तथा दुग्ध-पदार्थोंका ठीक-ठीक प्रबन्ध हो जायगा।'

विपरीत कीटाणुओंसे सावधान

निर्घृत किन्तु ताजा दूध तो फिर भी थोड़ा-बहुत गुण कर सकता है; किन्तु बाहरसे आया हुआ टीनका डिब्बा जैसे ही खोला जाता है वैसे ही हवा पाकर भीतरके दूधमें कीटाणु बड़ी शीघ्रतासे बढ़ने लगते हैं और दूधको खराब कर देते हैं। इसके अतिरिक्त विदेशी निर्घृत दूधसे पुनः निर्मित तरल पदार्थ अधिकतर भारतवर्षके शुद्ध दूधमें मिलाकर बाजारोंमें बेचनेके काम आता है। विश्लेषण करनेपर यह देखा गया है कि ऐसे दूधके प्रत्येक घन सेंटीमीटरमें ३ करोड़ ६० लाख सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। जिस पदार्थमें २ करोड़ सूक्ष्म जीवाणु रहते हैं वह बहुत बुरा होता है। लंदनकी मोरियोंमें १करोड़ १० लाख सूक्ष्म जीवाणु एक घन सेंटीमीटरमें होते हैं। रिपोर्टकी यह सिफारिश है कि म्युनिसिपलिटियोंको पानीकी अपेक्षा दूधकी शुद्धतापर अधिक सतर्क रहना चाहिये। (M. M. R. १९४३ पृष्ठ २५१-२५२)।

विश्वके प्रधान देशोंमें प्रतिमनुष्य प्रतिदिन खपत होनेवाले दूधका औसत इस प्रकार है—

१.	न्यूजीलैंड	५६ औंस
२.	आस्ट्रेलिया	४५ ,,

३.	नार्वे	४३ औंस
४.	डेन्मार्क	४० ,,
५.	इंग्लैंड	३९ ,,
६.	कनाडा	३५ ,,
७.	अमेरिका	३५ ,,
८.	हालैंड	३५ ,,
९.	जर्मनी	३५ ,,
१०.	बेल्जियम	३५ ,,
११.	फ्रांस	३० ,,
१२.	पोलैंड	२२ ,,
१३.	भारतवर्ष	६ ,,

अभागे भारतके लिये केवल ६ औंस ! उसपर भी विशेषता यह है कि भारतवर्ष एक कृषि-प्रधान देश है और संसार-भरके पशुओंका एक तिहाई भाग यहाँ है !

(जर्नल आफ़ दि इंडियन मर्चेंट्स चैंबर, फरवरी सन् १९४४, पृष्ठ २४)

प्रतिषेधात्मक आयात-कर फिरसे लगाया जाय

एम० एम० आर० के सातवें अन्तर-अध्यायमें २५१ पृष्ठ-पर तथा उनकी सिफारिशोंमें यह बात दो बार बड़े जोरोंसे कही गयी है—'इस पदार्थके आयातमें कर उठा लेनेका लाभ स्कूली बच्चों तथा दरिद्र वर्गके लोगोंको दूध पिलानेमें नहीं उठाया जा रहा है, व शुद्ध दूधमें पुनर्निर्मित निर्घृत दूधकी मिलावट करनेमें इसका पूरा लाभ उठाया जा रहा है। अतः यह सिफारिश की जाती है कि इस पदार्थपर कम-से-कम एक रुपया प्रति पौंड प्रतिषेधात्मक आयात-कर लगाया जाय।'

निर्घृत दूध मनुष्यकी तोंदको भले ही बोझल कर दे, किन्तु केवल बोझ न तो जीवन-सत्त्वका स्थान ले सकता है और न उसकी मात्रा पोषणका स्थान ग्रहण कर सकती है। डिब्बेका दूध पेय पदार्थोंको सफेद कर सकता है, किन्तु मनुष्योंकी रक्षा करनेके लिये पोषण नहीं दे सकता। डा० राइटके नकारात्मक कथन एवं एम० एम० आर० की सिफारिशोंके होते हुए भी यह सूचना मिली है कि बंगलोरकी 'इम्पीरियल डेयरी इंस्टीच्यूट मिशन' शुष्क दुग्ध-चूर्णको बनानेमें व्यस्त है। ('टाइम्स' १०-३-४४—शुष्क खाद्य) । आवश्यकतासे अधिक उत्पन्न करनेवाले प्रदेशोंमें निर्घृत दूध तथा दुग्ध-चूर्ण इसलिये बनाये जाते हैं, जिससे खर्चके बाद बच जानेवाला अतिरिक्त दूध काममें लाया जा सके। किन्तु भारतमें अतिरिक्त दूध कौन कहे, आवश्यकताभरको भी नहीं होता, फिर भी न जाने किसके लाभके लिये, अथवा भारतके क्षीणप्राय आर्थिक साधनोंके महान् नाशके लिये इस अनावश्यक गुप्त औषधिका प्रयोग किया जाता है ?

डा० राइटका कहना है कि 'हमें (भारतीयोंको) भारतकी विशेषताओंको ध्यानमें रखते हुए यहाँकी दही, छाछ, लस्सी, मक्खन और घी आदिकी उपजतक ही अपने आपको सीमित रखना चाहिये। ये ही भारतके परम्परागत और लोकप्रिय स्वास्थ्यप्रद पदार्थ हैं। विदेशी पनीर, मलाई अथवा उसके चूर्णका प्रयोग करके अपने भारतीय दुग्ध-पदार्थोंके अस्तित्वको नहीं मिटाना चाहिये। यदि मलाई या निर्घृत दूध अच्छा भी हो, तो भी इनका स्थान प्रथम न होकर दूसरा ही रहेगा। और भारतमें एक स्थानसे दूसरे स्थानतक इन चीजोंका शीघ्र पहुँचना सम्भव ही नहीं है। ऐसी दशामें उनका दुर्गन्धयुक्त हो जाना अनिवार्य है।'

भारतको विदेशी कूड़ेका उपहार

भारतकी सरकारने अपनी शताब्दियोंकी पुरानी लापरवाही-को उपनिवेशों तथा विदेशो सरकारोंसे लाये हुए निर्घृत दुग्ध-चूर्णके उपहारोंसे ढकना चाहा, किन्तु ऐसे कारनामोंसे अपने उत्तरदायित्व एवं कर्तव्यकी उपेक्षाका उसने और भी परदाफाश कर दिया। अब तो भारत इन उदार बननेवाले विदेशियोंकी सचाईका ठीक-ठीक अनुमान लगा सकता है, जो जीवन-सत्त्वोंसे भरी हुई मलाईको अपने बच्चोंके लिये रख लेते हैं और शुद्ध दूधसे बाहर किये गये कूड़ेको काले भारतीयोंके लिये भेजते हैं !

(५)

अधिक धान उपजाओ और पशुओंको समाप्त होने दो !

'अधिक धान उपजाओ' का प्रचार और 'बिना किसी भेद-भावके अपरिमित संख्यामें पशुओंका वध'—दोनों एक-दूसरेका मूलोच्छेदन करनेवाले प्रयत्न थे। केन्द्रीय सरकारको बहुत देरमें इस विरोधका ज्ञान हुआ। युद्धके कारण मांसकी अधिक माँगके फलस्वरूप पशु-वधमें असाधारण वृद्धि-पर विचार करते हुए अगस्त सन् ४२ में 'केन्द्रीय भोजन-सम्मति-दात्री सभा' (Central Food Advisory Council) ने यह सिफारिश की कि देशके पशुधनको नष्ट होनेसे बचानेके लिये काम देनेवाले १० वर्षसे कम उम्रके बैल और दूध देनेवाली तथा गाभिन गायोंका वध बंद कर देना चाहिये।

१८ नवम्बर सन् ४२ को यह आज्ञा जारी हो गयी और उन प्रतिबन्धोंके साथ एक प्रेस-नोटके रूपमें प्रकाशित हो गयी। किन्तु नागरिक और सैनिक दोनों प्रकारके बूचड़-खानोंमेंसे किसीने उस आज्ञाकी परवा न की। जनताकी शिकायतोंपर भी कोई ध्यान नहीं दिया गया। इस आज्ञाको प्रभावोत्पादक रूपमें कार्यान्वित करनेके लिये कौंसिल आफ स्टेटमें एक प्रस्ताव पेश किया गया। शिक्षा, स्वास्थ्य और भूमिविभागके माननीय सदस्यने ६ अगस्त सन् ४३ को एक वक्तव्य दिया, जिसमें उन्होंने कहा कि 'पशु-वधको रोकनेके लिये आदेश निकाल दिये गये हैं।'

सर जोगेन्द्रसिंहके इन आश्वासनोंके होते हुए भी, कि 'उपयोगी पशुओंके वधको रोकनेके लिये आदेश जारी कर दिये गये हैं' डा० राल्फ फिलिप्सने, जो वाशिंगटन बॉरो आफ एनिमल हसबैंड्री (Washington Borough of Animal Husbandry) से भारतीय पशुओंकी समस्याओं-का अध्ययन करनेके लिये बुलाये गये थे, सरकारको दी गयी अगस्त सन् ४४ की अपनी रिपोर्टमें इस बातपर जोर दिया है कि भारत-जैसे निर्धन देशमें, जहाँके किसान छोटे-छोटे भूमिखण्डोंके स्वामी हैं, बड़े परिमाणमें पशुसंख्याको बढ़ाना केवल सरकारद्वारा ही सम्भव है; वास्तवमें यह पढ़कर बड़ा दुःख होता है। उन्होंने इस बातपर भी जोर दिया है कि एक ही बियानके बाद कसाइयोंको सौंप दिये जानेवाले पशुओंका उद्धार होना चाहिये। भारतकी परिस्थितिको देखकर कहना पड़ता है कि सरकारी अफसर ढपोरसंखकी भाँति कहते तो बहुत अधिक हैं, पर करते कुछ नहीं। सर ग्रेगरी कमेटीने, अन्न-नीति-सम्बन्धी रिपोर्ट,—जो ११ सितम्बर सन् ४३ को लिखी गयी थी,—के १२ वें पृष्ठपर यह सिफारिश की है, 'दूध देनेवाले तथा बोझा ढोनेवाले उपयोगी भारतीय पशुओंके नाशको, 'केन्द्रीय भोजन-सम्मतिदात्री-सभा'की सिफारिशोंके अनुसार, दृढ़ निषेधाज्ञाद्वारा रोकना नितान्त आवश्यक है।' आगे चलकर उपसंहारमें उसने फिर कहा है, 'इस विषम परिस्थितिसे हम सबको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये और यह समझना चाहिये कि विगत समयमें भोजन-प्रबन्धके प्रश्नों और पोषण-नीतिकी अनुचित अवहेलना की गयी है।' कुनूरमें दस वर्ष पहलेसे ही 'इंस्टीच्यूशन आफ न्यूट्रिश्नल रिसर्च' (Institution of Nutritional Research) की स्थापनाके होते हुए भी यह सब कुछ हुआ है। इस प्रकारकी अनुपयोगी और निष्फल अस्थायी संस्थाओंपर व्यर्थ रुपया नष्ट करनेके विरुद्ध भारत जो आवाज उठाता है उसकी सच्चाईकी इससे और भी पुष्टि होती है। क्या कोई धारा-सभाके सदस्य प्रश्न उठाकर यह जाननेका प्रयत्न करेंगे कि ये संस्थाएँ किस लाभके लिये स्थापित की गयी हैं?

ये सरकारी सिफारिशें तथा जनताकी आर्द्र पुकारें अन्तमें कुछ सुनी गयीं और कृषि-अर्थ-नीतिको विनाशसे बचानेके लिये कुछ कार्रवाई भी—यद्यपि इसकी गति बहुत मन्द है—की गयी है; परन्तु इस आज्ञामें बहुत त्रुटियाँ रह गयी हैं। यह समझमें नहीं आता कि यह केन्द्रीय आज्ञा सारे भारतवर्षमें एक साथ क्यों नहीं लागू की गयी और डी. आई. आर. (Defence of India Regulations) के इस जमानेमें भी अखिल-भारत-नीतिके रूपमें इसे प्रभावोत्पादक क्यों नहीं बनाया गया?

प्रान्तीय सरकारोंकी गाड़ियाँ सदाकी भाँति धीरे-धीरे चलीं। तीन और प्रान्तोंने इन सिफारिशोंको स्वीकार किया, किन्तु बम्बई पीछे ही रहा। 'भारतीय व्यापारी मण्डल' (Indian merchants' chamber) तथा 'बम्बई जीव-दया-समिति' (Bombay Humanitarian League) के निरन्तर निवेदनोंके पश्चात् अन्तमें बम्बई भी थोड़ा आगे बढ़ा।

बम्बईकी निकृष्ट दशा, सरकारी पराजय

यों तो सारे भारतवर्षकी दशा बिगड़ी हुई थी, किन्तु बम्बईकी दीन दशा और भी गयी बीती थी, क्योंकि शक्ति-दायक और विशेषकर स्वास्थ्यवर्द्धक पदार्थोंकी इस प्रान्तमें बहुत कमी है। इसके अतिरिक्त बम्बईमें दूध देनेवाले पशु बड़ी दूर-दूरके उन प्रान्तोंसे लाये जाते हैं, जिन प्रान्तोंमें उनकी अधिकता होती है।

युद्ध-सम्बन्धी यातायात

एक तो बम्बईमें पोषक पदार्थों एवं दूध देनेवाले पशुओं-की यों ही कमी थी, उसपर यातायातके मन्त्रीने लाने-भेजनेकी कोई व्यवस्था भी नहीं की। भले ही अफसर नागरिक रहा हो, किन्तु नागरिकोंकी अत्यावश्यकताओंकी पूर्तिद्वारा उन्हें सन्तुष्ट करनेके अपने प्रथम उद्देश्यको उसने पूरा नहीं किया। इनके अतिरिक्त युद्ध-स्वामियोंद्वारा पहलेकी अपेक्षा भारतमें अधिक भेजी गयी बड़ी श्वेत-सेनाको ठहरानेमें बम्बईको अधिक हाथ बटाना पड़ा, तथा सैनिकोंकी मांसकी लंबी माँग-को भी पूरा करना पड़ा। अकेले बाँदरा कसाईखानेमें सन् ४१

की अपेक्षा ४२ में १६१०२, और ४२ की अपेक्षा सन् ४३में २६९८८ अधिक पशुओंको अपनी गर्दनें कटानी पड़ीं। किन्तु इस बीचमें जिस गतिसे पशुओंका वध किया गया, उस गतिसे उनके स्थानकी पूर्ति नहीं की गयी! सन् ३९ में ५२६८८ और सन् ४० में लगभग ५४२८० पशु बम्बईमें बाहरसे लाये गये। यह बहुत ही दुःख-प्रद और हतोत्साह करनेवाली बात है कि जनसाधारणकी सुविधाके लिये ही उसका निर्माण होनेपर भी बी. बी. एंड सी. आई. रेलवेने, एक प्रमुख 'विशिष्ट-व्यापार-संघ' (Metropoltan Trade Association) की प्रार्थनाको भी अस्वीकृत करते हुए, जनताके लाभके लिये बम्बईमें लाये गये पशु-संख्याके पूरे आँकड़े नहीं दिये। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि पशु-अभावकी पूर्तिमें एक अन्य बाधा और खड़ी हो गयी; जैसा कि सरकारी रिपोर्टसे प्रकट होता है। वह बाधा यह थी कि पशुकी अधिकतावाले प्रान्तों तथा रियासतोंमें अपनी सीमासे बाहर पशुओंका भेजना निषिद्ध कर दिया गया। परिणामस्वरूप बम्बईमें दूधका भाव एक रुपया सेरतक हो गया और वह भी शुद्ध नहीं बल्कि बाजारू, जिसमें पानी मिला रहनेके कारण कीटाणुओंको पनपनेके लिये यथेष्ट अवसर मिलता है (M. M. R. पृष्ठ १५१-५२)। हमें स्मरण रखना चाहिये कि दूध केवल स्वास्थ्यप्रद और गुणयुक्त पदार्थ ही नहीं है, वरं वह एक ऐसा सहज ही प्रभावित होनेवाला माध्यम भी है, जिसके द्वारा कीटाणुओं-की वृद्धि होती है और जो इस प्रकार अदृश्यरूपसे अनेक प्रकारके रोगोंके फैलनेका कारण बन जाता है।

निराशाजनक बम्बई-मन्त्रणा

अवरोधपूर्ण निरन्तर नैराश्यकी इस अवस्थामें गवर्नरके सलाहकार श्री एच. एफ. नाइट महोदयने अपनी नैराश्य मन्त्रणाद्वारा ९ सितम्बर सन् ४३ को यह आश्वासन देकर कि 'बम्बईमें शुद्ध दूधकी माँगको पूरा करनेके लिये बाहरसे निर्घृत दुग्ध-चूर्णको मँगानेमें सरकारद्वारा पूरा-पूरा उद्योग किया जायगा', जनताके विरोधको दबानेका प्रयत्न किया ('टाइम्स' ३० सितम्बर ४३, पृष्ठ ४)। यह देखते हुए और भी अधिक आश्चर्य होता है कि जब ये शब्द कहे गये थे, तब 'कुनूर-न्यूट्रिशन-रिसर्च'के डाइरेक्टर श्री डा. डबल्यू. आर. आयक्रायड (Dr. W. R. Aykroyd) लगभग एक सप्ताहतक श्रीनाइट महोदयके साथ थे और अवश्य ही उन्होंने शुद्ध दूधके गुण तथा निर्घृत दूधकी कमियोंपर प्रकाश डाला होगा, और सलाहकार महोदयको डा० राइट तथा एम. एम. रिपोर्टके निर्णय भी अवश्य ही मालूम रहे होंगे, किन्तु यह एक नाजुक, आकस्मिक और सार्वजनिक पुकार थी, जिसकी तत्काल सुनवाईकी आवश्यकता थी। ऐसे समयमें भी सरकारने अपनी बुद्धिमानीका परिचय देते हुए एक सरल मार्ग निकाल लिया।

औपनिवेशिक उदारताकी क्षणिक ज्योति

दैवयोगसे विश्व-रेडियोसे विस्तारित उदारताकी पहली झलकके पश्चात् युद्धकालीन बन्धुत्व दिखलानेवाले उपनिवेशों-ने भी मि० नाइटकी चिकनी-चुपड़ी बातोंको नहीं अपनाया। यद्यपि हम यह भी जानते हैं कि कनाडाने, जिसने 'ओटावा-सुविधाओं'के कारण सबसे अधिक लाभ उठाया, सन् ४३ में ४१ प्रतिशतके हिसाबसे वृद्धि करके १ करोड़ ६० लाख पौंड दूध-चूर्णका उत्पादन किया और इसी प्रकार आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंडने अपने डेयरी-पदार्थोंके उत्पादनमें वृद्धि की; और ये सब देश साम्राज्य-रक्षासम्बन्धी पूर्वीय कौंसिल-समूह (Eastern Group Council of Empire Defence) के हमारे साथी भाई हैं।

उनका इस प्रकार अमैत्रीपूर्वक अस्वीकार कर देना हमारे लिये अदृश्यरूपसे लाभदायक सिद्ध हुआ। 'भारतीय-व्यापारी-संघ' तथा 'जीव-दया-समिति'—दोनों संस्थाएँ सचेत थीं। उन्होंने तत्काल ही बड़े प्रबल तर्कोंके साथ सरकारसे निवेदन किया कि दूधवाले पशुओंको अंधाधुंध हत्यासे बचाया जाय। उनके निवेदनकी सुनवाई हुई और कुछ विचार किया गया। कम-से-कम जनताको शुद्ध दूध देनेके लिये सच्चा प्रयत्न किया गया।

कृषि-गवर्नरको सारा श्रेय

हिज एक्सेलेंसी सर जान कोलविल साहबने उनके निवेदनपर तत्काल ध्यान दिया और १९ जनवरी सन् ४४ को उन्होंने उन संस्थाओंको सूचना दी—'हालकी सरकारी आज्ञाके द्वारा उपयोगी गायों तथा बैलोंका वध पहलेसे ही बंद कर दिया गया है। ऐसी आज्ञाएँ भी पहलेसे जारी हैं कि सूखे पशुओंको बम्बईसे बाहर नस्लकी उन्नति करनेवाले स्थानोंमें ले जानेके लिये आर्थिक सहायता दी जायगी और बम्बईमें शुद्ध दूधकी माँगको पूरा करनेके लिये सभी प्रकारके प्रयत्न किये जा रहे हैं।' उपर्युक्त बातमें गाभिन तथा दूध देनेवाली गायों और १० सालसे कम उम्रके बैलोंका वध

रोकनेवाली केन्द्रीय सरकारद्वारा पहलेसे ही निकाली हुई आज्ञाओंको दुहरा दिया गया है। प्रान्तकी कृषि-अर्थनीति तथा पशु-पालनसमस्याके लिये कुछ अंशतक यह अवश्य शुभदायक सिद्ध हुई, किन्तु रोग दूर करनेके लिये यह ओषधि पर्याप्त न थी। उत्तम पशुओंको दीर्घजीवी करना और उनके रिक्त स्थानकी तात्कालिक पूर्ति—ये ही दो ऐसे साधन हैं, जो दूध देनेवाले पशुओं और उनसे उत्पन्न किये जानेवाले पोषक पदार्थोंमें द्विविध कमीको दूर कर सकते हैं।

रिक्त स्थानकी पूर्ति

१. प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकारद्वारा प्रयुक्त 'उपयोगी' और 'कामके योग्य' शब्द अस्पष्ट हैं। इन दोनों शब्दोंकी ठीक, स्पष्ट और क्रियात्मक परिभाषाएँ होनी चाहिये।

२. इस सम्बन्धमें मद्रास फिर भी कुछ ठीक रहा। वहाँ ऐसी आज्ञा निकाली गयी कि जो गायें बच्चा दे सकती हों, उनका वध न किया जाय। उसी प्रकार बम्बईको तथा अन्यान्य प्रान्तोंको भी अपनी परिभाषा विस्तृत कर देनी चाहिये। मद्रास और भी आगे बढ़ गया है। वहाँकी सरकारने अपनी युद्धोत्तर पुनर्निर्माण-योजनामें पशु-समस्याको भी सम्मिलित कर लिया है। सरकारने निश्चय किया है कि वह छोटे बछड़ों और बैलोंको खरीदकर उन्हें पहाड़ियों तथा जंगलोंमें चरनेके लिये छोड़ देगी जिससे वे बलवान् और स्वस्थ हो जायँ।

३. बैलोंकी भाँति ही यदि गायोंके साथ भी १४-१५ वर्षकी आयुकी सीमा बाँध दी जाय, तो यह व्याख्या 'उपयोगी स्पष्ट एवं क्रियात्मक'के अनुरूप व्यवहारतः कामलायक हो जायगी तथा नियम तोड़नेवाले निन्दनीय और उद्दण्ड मनुष्योंको दण्ड दिलानेमें उपयोगी सिद्ध होगी।

४. भारतकी कृषि-अर्थनीति तथा भूमिकी उपजाऊ शक्तिके लिये बैलोंकी उपज-शक्ति ही निर्विवाद और सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य होना चाहिये।

५. बैलों तथा बछड़ोंकी नस्ल बढ़ानेवालेको पहले संरक्षण मिलना चाहिये। बच्चा पैदा कर सकनेवाली गायकी अकाल हत्यासे सन्तानवृद्धि और दुग्धोत्पादनमें रुकावट पड़ती है।

६. मूल्यवान् और रक्षक खाद्य हमारे प्रथम अभीष्ट पदार्थ हैं, इनमें दूधका नम्बर सर्वप्रथम है। अतः गायके साथ-साथ भैंसकी भी, जो अच्छा दूध देनेवाले पशुओंमें प्रधान है, अंधाधुंध हत्यासे रक्षा करना, केवल तर्कपूर्ण ही नहीं, वरं अनिवार्य है, और सरकारको तदनुकूल ऐसी आज्ञा निकालनी चाहिये जो सारे देशमें समानरूपसे लागू हो।

७. सूखे पशुको नस्ल उत्पन्न करनेवाले स्थानोंपर ले जानेमें बम्बई-सरकारका ५) रुपयेतककी सहायताका वचन उपयोगी होनेकी अपेक्षा अधिक दिखावटी है। यह अच्छी तरह मालूम है कि बम्बईकी पशु-समस्याका समाधान प्रभावोत्पादक तभी हो सकता है जब उनके शीघ्र यातायातका सुचारुरूपसे प्रबन्ध किया जाय। पशु और चारा दोनोंके ले आने तथा ले जानेका अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये।

सरकारकी अपनी इस स्वीकृतिके आधारपर, कि सरकारी तौरपर यातायातकी अव्यवस्था है और प्रान्तों तथा रियासतोंके नस्लोत्पादक स्थानोंके बाहर पशुओंके भेजनेकी मनाही है, पशुओंके लाने या वापस भेजनेकी शीघ्रताके सम्बन्धमें सोचा भी नहीं जा सकता। इन कठिनाइयोंके साथ-साथ यह भी जानना चाहिये कि पशु-नस्ल पैदा करनेवाला मूल मालिक बम्बई आता है और अपना पशुधन बेचकर शीघ्र ही घर लौट जाता है। अन्तमें रह जाता है वह मनुष्य जो अनेक बार पशु-परिवर्तन करनेके पश्चात् अपने सूखे पशुओंका मालिक होता है और जो उन्हें बाहर भेजनेवाला भी होता है। बम्बई आकर पशु बेचनेवाले और बम्बईसे सूखे पशु भेजनेवाले—इन दोनोंमें किसी प्रकारका सम्पर्क नहीं रहता, यहाँतक कि दोनों एक-दूसरेसे अपरिचित रहते हैं।

प्रान्तीय सरकारोंके लिये सबसे अच्छा उपाय यह है कि वे नगरोंकी सीमाके समीप ही गोचरभूमि बनवायें। रायल कमीशनने अपनी रिपोर्टके पृष्ठ २३ पैरा २ में यह सलाह दी है, दूधका प्रबन्ध करनेवाली नागरिक योजनाकी सफलताके लिये वहाँ ऐसे भूमिभागका होना आवश्यक है, जहाँ खूब चारा हो अथवा सुगमतासे उत्पन्न किया जा सकता हो। वहाँ यातायातका भी समुचित प्रबन्ध होना चाहिये तथा गायें भी ऐसे उत्तम वर्गकी हों जिनसे दोनों काम सध सकें अर्थात् वे मनुष्योंके लिये दूध भी दें और खेतीके लिये अच्छे बछड़े भी।' नागरिक शासनकर्ताओंके लिये सबसे सुन्दर और क्रियात्मक उपाय यही है कि वे अपनी देख-भालमें नगरोंके आसपास गोचरभूमि रक्खें। रायल कमीशनने यह भी कहा है कि भारतमें पशु-उन्नति तथा अच्छी नस्लवाले पशुओंके बनानेका आवश्यक किन्तु अधिक खर्चवाला काम करदाताओंके ऊपर पड़ना

चाहिये (पृष्ठ २१३ पैरा १८०)। चारेके विषयमें डा० राइटने अध्याय २०, पृष्ठ ७६ में इस बातपर जोर दिया है कि 'दुग्धोत्पादनके लिये सूखा चारा अपेक्षाकृत कम लाभदायक है। यह निश्चितरूपसे कहा जा सकता है कि दूध देनेवाले पशुकी आवश्यक खूराकके लिये मोटे-सूखे चारेपर निर्भर करना व्यर्थ है। इसके लिये उगाया हुआ चारा आवश्यक है।' किन्तु भारतीय सूखी घास-पुआल तथा हरी घास अधिकतर मोटा चारा ही है।

८. पशुओंकी रक्षावाली आज्ञामें दूध देनेवाले सूखे पशुओंके सम्बन्धमें किसी प्रकारके कथनका अभाव एक बहुत बड़ी त्रुटि है। औसतन अपनी आयुके तीसरे वर्षमें दूध देनेवाला पशु सूख जाता है। यदि उस समय हत्यासे उसकी रक्षा नहीं की जाती तो अवश्य ही वह अकाल काल-कवलित हो जाता है। सरकारको, जो अधिक दूध और अच्छे बैल उत्पन्न करनेमें प्रयत्नशील है; चाहिये कि वह ऐसे सूखे हुए पशुओंके लिये उनके सूखे कालतक उपचार आदिका तथा विशेषरूपसे मुफ्त खूराकका प्रबन्ध करे और उनको १४-१५ वर्षकी अवस्थातक वध होनेसे बचाये रक्खे।

रायल कमीशनने अपनी रिपोर्टके पृष्ठ २१, पैरा २ में लिखा है 'उन्नतिकी नीतिके लिये आवश्यक बात······(d) सूखी और सवत्सा गायोंके साथ अच्छा बर्ताव करनेका उद्योग करना है।' आगे चलकर कमीशनने ५ वें पैरेमें इसपर जोर दिया है कि 'पशुओंकी उन्नतिमें दो महत्त्वपूर्ण अङ्ग—उनको खिलाना और उनकी नस्ल सुधारना है।'

कलकत्ते-जैसे बड़े शहरोंमें, विशेषकर समुद्रसे घिरे हुए बम्बई-जैसे स्थानमें चारेकी कमी तथा रखनेके स्थानके अभावके कारण सूखे पशुओंकी परवा प्रायः कम की जाती है, अतः ऐसे पशुओंकी देख-भाल सरकारके जिम्मे होनी चाहिये। सरकारका कर्तव्य है कि उनके सूखेपनके समयमें निकटके स्वास्थ्यप्रद जंगली स्थानोंमें बिना मूल्य अथवा बहुत सस्ते भावपर अपनी देख-भालके अंदर बारी-बारीसे चरानेकी योजनाद्वारा उनके चरनेका प्रबन्ध करे। ऐसा करनेमें जंगलोंसे होनेवाली आमदनीमें आनेवाली अत्यन्त थोड़ी घटी उस अन्तिम लाभके सामने, जो मनुष्य और पशुकी रक्षासे होता है, कुछ भी नहीं है।

बम्बईके लिये आशाकी झलक

सर जान कोलविलने अपने सम्मतिदाताकी निराशावादिताको शीघ्र ही दूर कर दिया और सरकारके इस प्राथमिक कर्तव्यको पूरा करनेमें उन्होंने अपने दृष्टिकोणको विस्तृत किया, किन्तु अभी और बहुत कुछ करना बाकी है। जब कोई काम करना ही है तो उसे शीघ्र और पूर्णरूपेण करना चाहिये!

निरवरोध अकर्मण्यता

रायल कमीशनने अपनी रिपोर्टके पृष्ठ २१८ पैरा १९२ में कहा है कि बम्बईकी सन् १९२३ वाली 'पशु-कमेटी' की सिफारिशोंको सरकारने अगस्त सन् १९२४ में एक प्रस्तावद्वारा स्वीकार कर लिया, किन्तु आर्थिक कठिनाईके कारण इस सम्बन्धमें कोई निश्चित कार्रवाई उस समय नहीं की जा सकी। अब वह कठिनाई दूर हो गयी है। सन् १९३८-३९ से प्रतिवर्ष बम्बई प्रान्त एक अच्छी रकम अर्थनीतिसम्बन्धी उन्नतिके लिये अलग रखता जा रहा है, जो अब १९४५ में ७ करोड़से ऊपर हो ही गयी होगी। इस धनको पशुओंके पालन, रक्षण तथा उन्नतिके महत्त्वपूर्ण कार्यमें लगाया जा सकता है।

२० वर्ष बिता देनेके बाद यह दर्ज किया गया है कि सन् १९३९ में बम्बई सरकारने सन् ३७ की 'पशु-महासभा' (Cattle Conference) तथा 'कृषि एवं पशु-पालन-मण्डल' (Board of Agriculture and Animal Husbandry) की 'पशु-पालन' शाखाकी तीसरी बैठकवाली सिफारिशोंको कार्यान्वित किया था (देखिये १९४० में प्रकाशित उनकी रिपोर्टका पृष्ठ २१४)। हिज एक्सेलेंसीको इस ओर विशेषरूपसे ध्यान देना चाहिये कि 'प्रान्तीय-पशु-चारण-कमेटी' (Provincial Grazing Committee) की सिफारिशोंके अनुसार 'बम्बईमें बाहरसे आनेवाले पशुओंको अङ्कित करनेके लिये एक रजिस्टर रक्खा जाय, जिसमें विशेषरूपसे पशुओंकी उम्र अङ्कित की जाय।' (अध्याय १०, पृष्ठ १९९)। बम्बईमें दूध देनेवाले पशु मुख्यतः रेलद्वारा आते हैं। पशु-रक्षाके लिये शीघ्र ही एक विशेष विभाग स्थापित कर देना चाहिये, जो यह बता सके कि कितने पशु वध किये गये और उनके स्थानमें कितने पशुओंकी वृद्धि हुई।

खोटेकी उपस्थिति खरेका बहिष्कार करा देती है

सन् १९४४ के २५ जनवरीको 'टाइम्स आफ इंडिया'ने बम्बईमें दूधकी स्थितिपर जो सूचना प्रकाशित की है, कि 'पिछले दिनोंमें दुग्ध-चूर्णके आयातसे शहरमें दूधकी कमी पूरी होनेमें काफी सहायता मिली है।' उसका

स्मरण करते हुए यह युक्तिसंगत प्रतीत होता है कि हिज एक्सेलेंसीका ध्यान रायल कमीशन रिपोर्टके पृष्ठ २३२ पैरा ४ में उल्लिखित उन कथनोंके ऊपर दिलाया जाय, जिनमें दुग्ध-प्रबन्धके सम्बन्धमें सुविख्यात श्रीग्रेशम साहबका सिद्धान्त लागू करते हुए बताया गया है कि 'रुपयेकी भाँति दूधके विषयमें भी यह सत्य है कि खोटा अपने प्रभावसे अच्छेको निकाल फेंकता है।' तात्पर्य यह कि दुग्धचूर्णका प्रवेश तथा प्रचार शुद्ध दूधको स्वप्न बना देता है। जिसके अभावकी पूर्ति करनेवाला अन्य कोई भी पदार्थ नहीं है। ईश्वर करे हिज एक्सेलेंसीकी प्रारम्भिक प्रेरणा सदा बनी रहे, जो तत्सम्बन्धी विभागको विद्युत्शक्ति-जैसी उत्तेजना देनेमें समर्थ हो, जिसके फलस्वरूप सच्चा पोषण देनेवाले एवं अति गुणकारी शुद्ध दूधकी प्राप्ति पर्याप्त मात्रामें बम्बई नगरको हो सके और रेडियोद्वारा ब्रिटेनका 'अधिक दूध पीयो' नारा भारतवर्षमें प्रतिध्वनित हो तथा जनताकी नैतिक और शारीरिक शक्तिका निर्माण हो।

शताब्दियोंकी सरकारी अकर्मण्यता दूर करनेके लिये भगीरथ-प्रयत्नकी आवश्यकता है। सच्चे हृदयसे अपने कर्तव्यकी पूर्ति करनेवाले हिज एक्सेलेंसीसे इसकी पूर्ण आशा है कि अच्छा चारा और अच्छी नस्ल—इन दोनों महत्त्वपूर्ण उद्देश्योंकी पूर्ति वे जल्दी ही कर सकेंगे। राज्य एक सामाजिक और व्यवस्थात्मक संस्था है। उसका कार्य 'कर' एकत्रित करनेवाला निर्जीव यन्त्र बनकर केवल बाहरसे आक्रमण करनेवालोंको निकालना और देशमें दमन-चक्रद्वारा कानूनी व्यवस्था तथा शान्ति स्थापित करना ही नहीं है। उसका एक उत्तरदायित्व यह भी है कि वह शासित प्रजाके आर्थिक हितपर ध्यान दे; वास्तवमें यह कार्य रक्षा, कूटनीति तथा दमन आदि सबमें प्रमुख है।

(६)

ऊपरी ठाठ-बाट तो बहुत, पर उपज चना बराबर भी नहीं

सन् १८८०—डा० बुचनन हैमिल्टन (Dr. Buchanan Hamilton) ने यह आवाज उठायी कि भारतकी पशु-संख्यामें ह्रास हो रहा है।

सन् १८८६ या इसके आसपास—सर डब्ल्यू वेडरबर्न, आई. सी. एस. (Sir W. Wedderburn, I. C. S.) ने कहा, हम अपने आपको भारतके ट्रस्टी (थाती सँभालनेवाले) होनेकी डींग मारते हैं, किन्तु उसके पशु-धनकी रक्षाके लिये हमने क्या किया? कुछ भी नहीं, यह स्वीकार करते हुए मुझे लज्जा आती है कि हमने उसके नष्ट होनेमें उल्टी सहायता ही की है।

सन् १९००—डा० हेरोल्ड मान (Dr. Harold Mann) ने कहा है, 'पशुओंकी दुर्बलताके साथ राष्ट्र भी दुर्बल होता जाता है।'

सन् १९०३—लार्ड कर्जन (Lord Curzon) ने अपने राजकीय कागजपत्रमें कहा है, 'पशु-देशकी दृष्टिसे भारत अपना स्थान खो रहा है।'

सन् १९२१—ब्लू बुक (Blue Book) के अनुसार 'प्रत्येक मिनटमें १ गाय भारतसे बाहर भेज दी जाती है और यह हिसाब लगाया गया है कि प्रतिमिनट ५ गायें भारतमें वध कर दी जाती हैं।'

सन् १९२६-२७—लार्ड लिन्लिथगो रायल कमीशनने शिकायतोंको स्वीकार करते हुए कहा, 'गायोंकी उत्पादन-शक्ति कम हो गयी है, और बछड़े नाटे होते जा रहे हैं।'

सन् १९४४—ग्रेगरी कमेटी (Gregory Committee) ने अपनी रिपोर्टके १२८ पृष्ठपर विचार प्रकट किया है कि 'पिछले दिनोंमें भोजन-प्रबन्धके प्रश्न और पोषण-सम्बन्धी नीतिकी अत्यन्त अवहेलना की गयी है।' आगे उसमें यह भी कहा गया है, 'भविष्यपर विचार करते हुए हमें आशा है कि एक 'कृषि-मन्त्रि-मण्डल' तथा पोषक-पदार्थ-विशेषज्ञोंके द्वारा भारतकी खाद्य सामग्रीके प्रबन्धमें पर्याप्त वृद्धि की जायगी और उन पदार्थोंके गुणोंमें भी अच्छी उन्नति होगी।'

पशु-ह्रास—सरकारी उपेक्षा

उपर्युक्त उद्धरण तथा अन्य सरकारी कथन यह प्रमाणित करते हैं कि अतीतमें राज्यने इसकी कोई परवा नहीं की और भविष्यके लिये भी उसके सलाहकार केवल एक शुद्ध आशा मात्र ही प्रकट करते हैं। अनेक वर्षोंसे भारतकी थोड़ी आमदनीका कुछ भाग 'इम्पीरियल कौंसिल आफ एग्रिकल्चर' (Imperial Council of Agriculture) हड़प रही है। राष्ट्रीय-पोषण-नीति निरीक्षण-सम्बन्धी राष्ट्र-संघ (League of Nations) की रिपोर्टसे हमें पता चलता है कि 'इंडियन रिसर्च फंड एशोसियेशन' (Indian Research Fund Association) की अध्यक्षतामें एक 'पोषण-परामर्श-समिति' (Nutrition

Advisory Committee) भारतमें निर्मित की गयी थी (रिपोर्ट सन् १९३७-३८, पृष्ठ ११२)। इसकी ४ खण्डोंवाली रिपोर्टमें भारतवर्षके विषयमें केवल १४ पंक्तियोंमें उल्लेख है। उनमें भी ८ पंक्तियोंका उपयोग सदस्योंकी नामावली और उनके पदाधिकार-वर्णनमें कर लिया गया है। जहाँ पपुआ (Papua) जैसी अत्यन्त छोटी रियासतके उसकी पोषण-स्थितिमें उन्नति तथा कार्य-साफल्य-सम्बन्धी आँकड़ोंका वर्णन है, वहाँ भारतवर्ष किसी विशेष प्रयत्न करनेका कुछ भी दावा नहीं कर सकता। फिर राष्ट्रीय-सौजन्यमें किसी महत्त्वपूर्ण सफलताके सच्चे गौरवकी बात तो अलग रही! यद्यपि राष्ट्र-संघ (League of Nations) जैसी शक्तिहीन एवं विख्यात बातूनी विद्वानोंकी संस्थाको जीवित रखनेके लिये भारतने २ करोड़ रुपयोंसे अधिक दिया और बराबर ९ लाख रुपये प्रतिवर्ष दे रहा है, फिर भी भारतके राष्ट्र-निर्माणमें किसी प्रकारकी सफलताके आँकड़ोंका उल्लेख नहीं किया गया है, क्योंकि भारतमें कोई ऐसा काम ही नहीं किया गया था जिसके विषयमें अभिमानपूर्वक कुछ कह सकें। यहाँके आँकड़े और सूचनाएँ दूसरोंको दी भी नहीं जा सकतीं, क्योंकि भारतके महत्त्वपूर्ण आँकड़ोंके सम्बन्धमें बड़ी ही दुःखपूर्ण उपेक्षा की गयी है!

बड़े दुःखकी बात है कि जब ग्रेगरी कमेटीने पोषण-सम्बन्धी विशेषज्ञोंकी सम्मतिके आधारपर भविष्यकी उन्नतिकी आशा बाँधी, उस समय यह सब कैसे भुला दिया गया कि भारतमें बहुत पहलेसे 'पोषण-खोज-सम्बन्धी-संस्था' (Institution of Nutrition Research) विद्यमान थी और राष्ट्र-संघसे भेजे हुए उस संस्थाके डाइरेक्टर डा० डब्ल्यू. आर. आयक्रायड कुनूरकी ऊँची पहाड़ियोंपर विराजमान होकर लगभग १० वर्षोंसे ठंडी हवाका आनन्द लूट रहे थे! क्या कमेटीको यह ज्ञान नहीं हो सकता था कि इस दीर्घकालमें (ऐसे विशेषज्ञोंके रहते हुए भी) भारतकी जनताके हितमें कोई भी पोषण-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण परिणाम नहीं निकला है? हम केवल इतना ही जानते हैं कि डाइरेक्टर महोदय या तो अपने स्थानसे दिल्लीतक यात्रा करते रहे या वर्जीनिया (अमेरिका) में जाकर 'हाटस्प्रिंग्ज़ कान्फरेन्स (Hotsprings Conference) में सम्मिलित हो गये। संसारके अन्य राष्ट्रोंका अनुकरण करते हुए तथा इतने खर्चीले विशेषज्ञों एवं संस्थाओंके होते हुए भी आज भारतवर्ष पोषक-पदार्थोंमें कोई वृद्धि नहीं कर सका है, और कोई ऐसा कार्य नहीं कर सका जो उसके सम्मानके योग्य हो। यद्यपि स्वयं सर थ्योडोर ग्रेगरी (Sir Theodore Gregory) ५ वर्षोंसे अधिक भारतके सर्वशक्तिसम्पन्न वाइसराय महोदयके अति निकट रहे हैं, तो भी इन्हींकी स्वीकृतिके अनुसार पोषण-सम्बन्धी समस्याओंकी अनुचित अवहेलना की गयी है। इतनेपर भी सर ग्रेगरी अपनी आशाएँ लिये बैठे हैं। भारतवर्ष अनेकों पीढ़ियोंसे जान-बूझकर की गयी सरकारी अवहेलनाओंका अनुभव करता चला आ रहा है और अब उसे यह कटु विश्वास हो गया है कि इस सारहीन आशावाद-में अब और अधिक विश्वास करना मूर्खतासे भी एक हाथ आगे है।

जान-बूझकर की गयी अवहेलनाने हृदय-कूप पाट दिये

इस प्रकार सन् १८०० से १९४४ तक इस ४० करोड़ जनसंख्यावाले कृषिप्रधान देशकी—जिसके अधिकांश लोगोंके रहन-सहनका ढंग खान-पानकी दृष्टिसे बहुत नीचे गिरा हुआ है, जिस देशके मनुष्योंके लिये राज्य किसी प्रकारकी परवा नहीं करता तथा जिनकी शारीरिक एवं मानसिक शक्तिका निर्माण करनेके लिये उचित पोषक-पदार्थ नहीं दिये जाते, भूमि तथा सन्तानका पोषण करनेमें और पशुओंको खिला-पिलाकर अच्छी नस्ल तैयार करनेमें भारतीय सरकारने अपने अत्यन्त आवश्यक प्राथमिक कर्तव्यका पालन नहीं किया है।

राजभक्तिके स्रोत सूख गये

लार्ड वेवलको अबतक इन सब समस्याओंका अध्ययन कर लेना चाहिये था। उन्हें इसका ज्ञान होना चाहिये था कि सर जान शोरके समयसे भारतीय शासन-दण्डका भार ग्रहण करनेवाले तथा उसके भाग्य-निर्माताओंमेंसे कुछ इने-गिने ही होंगे, जिन्होंने सचाई एवं तत्परतापूर्वक प्राथमिक कर्तव्य-पालन तथा राज्यके प्रधान उद्देश्योंकी पूर्ति करनेके कारण भारतीयोंके हृदयमें राजभक्तिका स्रोत उमड़ाया है, किन्तु इसके साथ ही वेवल साहबको यह भी मालूम होना चाहिये कि श्रीहैलेट साहब, मैक्सवेल तथा टोटनहम-सरीखे सरकारी अफसर आरम्भसे ही अबतक अपने अनेक पूर्ववर्ती सहयोगियोंके समान भारतकी सद्वृत्ति तथा कृतज्ञताके हृदय-कूपको सोखते ही चले आ रहे हैं!

क्या विस्काउंट वेवल फिरसे इन हृदयोंपर विजय प्राप्त करनेका प्रयत्न करेंगे ?

हाटस्प्रिंग्ज़ कान्फरेंसके लिये हिज एक्सेलेंसीद्वारा नियुक्त 'इंडियन आई० सी० ए० रिसर्च' (Indian I. C. A. Research) के उपप्रधान सर फीरोज खरेघाट तथा 'न्यूट्रिशन रिसर्च' (Nutrition Research) के डाइरेक्टर डा० डब्ल्यू० आर० आयक्रायड—दोनों सदस्योंने उन सब निर्णीत प्रस्तावोंको, जिनके ऊपर हिज एक्सेलेंसीके आदेशानुसार भारतकी ओरसे इन्होंने हस्ताक्षर किये हैं, विचारार्थ उनके सामने रक्खा होगा······।

कुछ दूसरी बातोंमें एक यह भी है कि हिज एक्सेलेंसी-को 'वास्तविक खपत तथा पोषण-सम्बन्धी आवश्यकताएँ' के ऊपर जो निर्णय हुए हैं, उनकी भी सूचना दी गयी होगी—विशेष रूपसे यह कि एशियाकी १ अरब १४ करोड़ जनसंख्यामेंसे तीन चौथाई लोगोंके रहन-सहनका ढंग जैसा अच्छा चाहिये उससे नीचे गिरा हुआ है, और यह कि पूर्वीय तथा पश्चिमीय मनुष्योंकी पोषण-सम्बन्धी पदार्थों-की आवश्यकतामें कोई मूलभेद नहीं है। इस निष्कर्षके भीतर अवश्य ही भारतके वे ४० करोड़ मनुष्य भी आ जाते हैं, जिनके रहन-सहनका ढंग देशमें अनेक मूल्यवान् भौतिक साधनों तथा विकासोन्मुखी जन शक्तिके होते हुए भी बहुत ही नीचे गिरा हुआ है, अथवा नहींके बराबर है। इससे उस मिथ्याख्यानका, जो शताब्दियोंसे बड़े परिश्रम-द्वारा प्रचारित किया जा रहा है कि पूर्व-निवासियोंके लिये साधारण या नीचे ढंगका रहन-सहन बिल्कुल ठीक है, किन्तु पश्चिम-निवासियोंको सदा ऊँचे ढंगका रहन-सहन रखना चाहिये—भंडाफोड़ हो जाता है। भारतवर्ष प्रकृतिकी ओर-से समृद्ध है, किन्तु दुर्भाग्यसे उसका स्वामी विचारोंमें मस्तिष्कका धनी होनेपर भी हृदयका दरिद्र है !

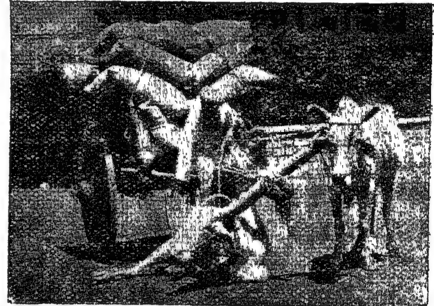
संयुक्त देश-प्रेम और राजभक्तिका गठबन्धन

भारतके वाइसराय महोदयके सामने ब्रिटेनकी नीति भी है, जो संक्षेपमें इस प्रकार है—'इंग्लैंडके लिये सच्ची कृषि-नीतिका निर्माण इस प्रकार होना चाहिये, जिससे धरतीके सुप्रबन्धके लिये आवश्यक परम्परागत तथा कृषियोग्य फसलोंकी उपज कम-से-कम और जातीय स्वास्थ्यके लिये पोषक-पदार्थोंकी अधिक-से-अधिक होना निश्चित हो' और भी यह कि 'सबसे अधिक आवश्यक ऐसी दृढ़ नीति-का होना है, जो उन रक्षक भोज्य-पदार्थोंकी मात्राको अधिक-से-अधिक बढ़ाये, जिनपर सामाजिक तथा आर्थिक कारणोंसे ब्रिटिश कृषि केन्द्रित होनी चाहिये।' ब्रिटेनकी सरकारकी भाँति भारतीय सरकारोंको भी 'अधिक धान उपजाओ'के साथ-साथ 'अधिक दूध पीयो' कहनेकी भी आवश्यकता है। संसारमें एकमत होकर यह बात स्वीकार कर ली गयी है कि राज्यका प्राथमिक उद्देश्य जनताकी सामाजिक रक्षा और आवश्यकताओंकी पूर्ति है और जैसा कि, लार्ड वेवलने धारा-सभाके सामने अपने वक्तव्यमें सूचित किया था, यह कार्य सफलतापूर्वक अपने प्राथमिक कर्तव्यको पूरा करनेसे ही हो सकता है।

(७)

(कोष्ठकोंमें दिये हुए अङ्क 'रायल कमीशन आफ एग्रिकल्चर इन इंडिया' सन् १९२८ की रिपोर्टकी पैरा-संख्या बतलाते हैं।)

मनुष्य-भोजनके लिये उद्योग किन्तु चारेकी उपेक्षा
अच्छा चारा-अच्छी नस्ल



बंगालमें मानव-कृति दुर्भिक्ष, मलावार-कोचीनमें भोजन-की कमीके कारण विनाश, तथा अभावग्रस्त भोजनवाले प्रान्तोंमें समानरूपसे आर्थिक कष्टोंकी दुःखदायी अवस्थासे शिक्षा पाकर भारतके अधिकारियोंके मस्तिष्कमें प्रजाके प्रति अपने सामाजिक उत्तरदायित्वका ज्ञान उत्पन्न हो गया है। उन्होंने कर्मशील बनकर ऊँची आवाजसे यह नारा लगाना आरम्भ कर दिया है कि 'अधिक अन्न उपजाओ।' अन्य प्रान्तोंकी भाँति इस गीतकी टेकको अपनाते हुए बम्बई सरकारने शीघ्र ही सन् १९४४ का 'बाम्बे ग्रोथ आफ फूड क्रॉप्स ऐक्ट' (Bombay Growth of Food Crops Act) पास कर दिया, जिसके अनुसार भूमिपतियों तथा जोतनेवालोंको अपनी दो-तिहाई भूमिमें केवल भोजन-सम्बन्धी फसलें उगानेके लिये बाध्य कर दिया गया। शेष

एक तिहाई भूमिका उपयोग कपास, तमाखू तथा तिलहन आदि धन देनेवाली फसलोंके उगानेमें किया जा सकता है। यद्यपि सरकारी सूचनाओं तथा समाचारपत्रोंने निश्चित रूपसे यह स्वीकार कर लिया है कि दूधका अभाव और उसके मूल्यमें उत्तरोत्तर वृद्धिका कारण पशु-चारेका अभाव है, फिर भी विधानद्वारा ऐसा कोई उद्योग नहीं किया गया, जिससे अधिक भोजन-फसल उपजानेवालेको पशुके लिये आवश्यक फसलोंको भी पैदा करनेके लिये बाध्य किया जा सके। भारतीय बैल और उसकी जन्मदात्री गाय, जो मनुष्यके लिये दूध देने और खेतीके लिये बछड़े पैदा करनेका दोहरा काम करती है, अवश्य ही भारतकी कृषि-वैज्ञानिक-अर्थनीतिके प्रमुख आधार हैं। न तो सन् ४४ के 'फूड क्रॉप्स ऐक्ट' ने और न गर्भान्तरगत 'बाम्बे इरिगेटेड क्रॉप्स रेगुलेशन ऐक्ट(Bombay Irrigated Crops Regulation Act) ने ही यह ध्यान दिया है कि चारेकी फसलोंको अनिवार्य रूपसे उगाना बहुत आवश्यक है। रायल कमीशनकी रिपोर्टके इन उल्लेखोंपर ध्यान देनेसे कि गोचर-भूमियोंको नियमित रूपसे चलानेके विषयपर कृषि-विभागने अभीतक थोड़ा-सा ही ध्यान दिया है, इस वैधानिक अभावको देखकर आश्चर्यसे बुद्धि चकरा जाती है। सन् १९२३ की 'बाम्बे कैटिल् कमिटी' (Bombay Cattle Committee) की रिपोर्टके पश्चात् कुछ ताल्लुकोंमें (१८३) इस बातपर ध्यान दिया गया, किन्तु यह स्पष्ट है कि उसे सुचारु एवं शक्तिशालीरूपमें जारी नहीं रक्खा गया। सन् १९३९ में भी 'बाम्बे एक्सपर्ट कैटिल् कमिटी' (Bombay Expert Cattle Committee) की रिपोर्टमें प्रान्तभरके समस्त भागोंमें दूधवाले पशुओंकी नस्लके सम्बन्धमें न तो विचार ही किया गया और न अनिवार्यरूपसे चारेकी फसलोंको उगानेकी सिफारिश ही की गयी। यद्यपि पृष्ठ २ पैरा ६ में लिखा गया है कि (१) 'गायकी अवहेलना की जाती है और गायके बच्चेकी तो जन्मसे ही अवहेलना होती है। गायकी इस अधोगतिका स्वाभाविक प्रभाव प्रान्तके बोझा ढोनेवाले पशुओंकी अधोगतिपर पड़ रहा है।'

२–रिपोर्टमें आगे चलकर कटुभाषामें अनुपयोगी पशु और दोगले बैलोंके गाँवमें चरनेके बेढंगे तथा अनियन्त्रित शैलीकी शिकायत भी है कि इसके कारण बोझा ढोनेवाले पशुओं तथा दूध देनेवाली गायोंकी नस्लें तीव्रगतिसे अधोगामिनी हो रही हैं।

३–कमेटीने अपनी रिपोर्टमें यह भी कहा है कि कृषक तथा नस्ल उत्पन्न करनेवाले अपने पशुओंके निर्वाहके लिये इन्हीं गोचरभूमियोंपर, जहाँ व्यर्थके पशु भरे रहते हैं, निर्भर करते हैं और इस प्राकृतिक चरीके अभावमें उनके पशु सालमें सात महीने आधापेट खानेसे भूखकी ज्वालामें जलते रहते हैं! यह दुःख और आश्चर्यकी बात है कि समय-समयपर सरकारी कमेटियोंके आँखें खोलनेवाले अपने ही वक्तव्योंके होते हुए तथा अच्छी तरह यह जानते हुए भी कि किसान चारेके सम्बन्धमें अपने पशुओंकी अवहेलना करता है, बम्बई सरकारने सन् १९४४ में कोई ऐसा विधान नहीं बनाया, जिसके द्वारा किसान अपनी भूमिके निश्चित भागमें पोषक चारेकी फसलें पैदा करनेके लिये बाध्य किया जा सके। प्रान्तके सब भागोंमें दूध देनेवाले पशुओंकी उन्नति करनेके लिये विशेषज्ञोंकी कमेटीको भी बम्बई सरकारका निर्देश वैसा ही एकतरफा है, जैसे अन्य सरकारी अपूर्ण निर्देश हुआ करते हैं। यह कमी यह देखते हुए और अधिक खटकनेवाली है कि उसने रायल कमीशन सन् १९२८ के उस कथनपर, जिसमें कहा गया है कि 'नस्लोत्पादनमें तबतक कोई सारपूर्ण उन्नति सम्भव नहीं, जबतक पशुओंको अच्छा और पर्याप्त भोजन न दिया जायगा' (१७९) या तो ध्यान ही नहीं दिया अथवा जान-बूझकर उसे भुला दिया। विशेषज्ञोंकी कमेटी भी यह कहना भूल गयी कि 'अच्छा भोजन देना ही अच्छी नस्ल उत्पन्न करना है।'

भारतीय कृषक—हिसाबमें भूल करनेवाला

भारतमें विधानद्वारा चारेकी खेती क्यों आवश्यक है—इस सम्बन्धमें रायल कमीशन भलीभाँति की हुई खोजके पश्चात् जिन तथ्योंपर पहुँचा है, उनमेंसे कुछका यहाँ उल्लेख करना लाभप्रद होगा, क्योंकि बीस वर्षोंसे अधिकके इस कालमें स्थिति केवल जहाँकी तहाँ ही नहीं है, वरं उससे भी नीचे गिर गयी है। अतः सरकारी विधानद्वारा उसका तात्कालिक सुधार करनेकी आवश्यकता है। किसानकी लोकप्रसिद्ध निरक्षरता और परम्परागत दरिद्रता उसकी दूरदर्शिताकी सीमाको संकुचित कर देती है। किसानका पहला तर्क यही होता है कि जब वह भूमिका लगान और सिंचाईकी फीस देकर कोई फसल पैदा करता है तो ऐसी फसल रुपया या अन्न देनेवाली होनी चाहिये, न कि चारा

देनेवाली तथा वह ऐसी न होनी चाहिये, जो हरी खादके रूपमें जोती जा सके (१८७)।

दरिद्रताके परिणामस्वरूप किसानकी अदूरदर्शितापर जोर देनेकी यहाँ अधिक आवश्यकता नहीं है। बम्बई सरकारने प्रस्तावित 'बाम्बे इरिगेटेड क्रॉप्स रेगुलेशन एक्ट' (Bombay Irrigated Crops Regulation Act) जारी करनेकी सूचनामें स्वयं कहा है कि आबपाशीकी सुविधा मिलने तथा यह जाननेपर भी कि आबपाशी और गैरआबपाशीद्वारा बोयी हुई भूमिमें पैदा होनेवाली धानकी फसलोंमें सौ प्रतिशत तकका अन्तर है, फिर भी किसान उससे लाभ न उठाकर वर्षापर ही अपना दाँव लगाता है। ('टाइम्स आफ इंडिया' २२ जून सन् ४४, पृष्ठ ४)। 'यह अदूरदर्शी खेतिहर काममें आनेवाले अपने पशुओंको चारा देनेके उद्योगमें तत्पर रहता है, किन्तु अपनी गायों और अपने छोटे पशुधनसे यह आशा करता है कि वे अपनी चिन्ता आप कर लेंगे।' (१८५ पृष्ठ २०८)। रायल कमीशनने गायोंकी रक्षाके लिये विशेष अपील की है, क्योंकि उसकी अपेक्षा अन्य कोई भी दूसरा घरेलू पशु नहीं है, जिसके लिये इतना बुरा प्रबन्ध किया जाता हो। जब गाय दूध देना बंद कर देती है, तब शीघ्र ही उसका अतिरिक्त भोजन बंद कर दिया जाता है और वह गोचरभूमिमें स्वयं अपना निर्वाह करनेके लिये छोड़ दी जाती है (१७४)। इसके अतिरिक्त 'गाय एक अभागा प्राणी है। उसे थानपर बहुत कम चारा मिलता है और सर्वसाधारण पशुओंके काममें आनेवाली गोचरभूमियोंमें उदर-निर्वाहके लिये उसे उसके भाग्यपर छोड़ दिया जाता है (१७६)।'

गोचरभूमियोंमें पशुओंकी ठसमठस

'देशके लगभग प्रत्येक भागमें गाँवके समीपकी गोचरभूमियाँ पशुओंसे बुरी तरह लदी हुई हैं।' प्रत्येक गाँव दुर्बल तथा भुखमरे पशुओंसे—अत्यन्त शोचनीय अभागे पशुओंके समूहसे—भरा हुआ है। रायल कमीशनको ऐसे अवसर स्वयं देखनेको मिले हैं (१७६)।' ये उन्हींके कथन हैं और सत्य हैं। भारतकी जली हुई गोचरभूमियोंपर अपना प्राण धारण करनेके लिये प्रत्येक ऋतुमें करोड़ों गायों और जवान पशुओंको जिन कष्टोंका सामना करना पड़ता है, उन्हें देखकर कोई भी पशु-प्रेमी दुखी हुए बिना नहीं रह सकता (१८५)।

अन्तिम सलाह—किसानकी भूमिमें चारेकी फसल

वर्तमान गोचरभूमिमें और अधिक वृद्धिकी सम्भावना नहीं है, अतः ऐसे उद्योग करने चाहिये कि घास उगानेवाली भूमिकी उपज-शक्ति बढ़े (१८१)। रायल कमीशनने पहले ही यह अनुमान कर लिया था कि वर्तमान माँगकी पूर्तिके साधनोंका सारा सम्भव उपयोग कर लेनेपर भी चारेकी कमी बनी रहेगी। इसलिये उसने यही अन्तिम सलाह दी कि 'किसान अपनी निजकी भूमिमें चारेकी खेती करे (१८७)।'

चारेका अत्यल्प क्षेत्रफल

चारेकी फसलोंका सम्पूर्ण क्षेत्रफल ९० लाख एकड़से कम है अर्थात् बोयी जानेवाली भूमिका ३·५ प्रतिशत जब कि मिश्रमें १६·६ प्रतिशत है।

केवल उत्तम प्रकारका चारा ही पोषणप्रद

कुछ समय हुआ बम्बई सरकारने यह सूचित किया था कि उसने घासके मूल्यको नियन्त्रित करनेका प्रबन्ध कर दिया है; किन्तु प्रभावोत्पादक नियन्त्रणके लिये सबसे पहली आवश्यकता यह है कि माँगकी पूर्ति करनेके लिये वस्तुकी पर्याप्त-मात्रा हो। वास्तवमें वस्तु ही कम है तो केवल नियन्त्रण उसकी मात्रा नहीं बढ़ा सकता। इसके अतिरिक्त योजनाहीन और यदा-कदा दी हुई वस्तुएँ स्वादिष्ट नहीं होतीं।

सूखी घास, पुआल और घास बहुत मोटी खूराक है

पश्चिमीय प्रदेशोंमें, जहाँ गोचरभूमियोंकी ओर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है, जिस प्रकारकी सूखी घास होती है, यदि उस दृष्टिसे देखें तो भारतकी सूखी घासको घास कह ही नहीं सकते (१८४)। भारतकी सूखी घास बहुधा खानेमें स्वादिष्ट नहीं होती। आलस्यवश भारतमें पुआल उस समय एकत्रित किया जाता है, जब दाना बिल्कुल पक जाता है, और घास एकदम सूख जानेपर इकट्ठा की जाती है। भूखके कारण भारतके भुखमरे पशु भले ही उसे निगल लें तथा अपनी मन्द थैलियोंके रिक्त स्थानोंकी पूर्ति कर लें, किन्तु साधारणतया न तो ऐसा भोजन पच ही सकता है और न ऐसे मोटे झोटे खानेसे ठीक जुगाली ही हो सकती है। इस प्रकार इन सब चीजोंसे पशुओंको पोषण नहीं मिलता। ऐसे पदार्थोंको खानेसे न तो खानेवालेमें शक्ति ही आ

सकती और न उससे स्वस्थ बछड़े-बछड़ी ही पैदा हो सकते हैं। 'मोटा चारा दूधकी उपजके लिये अपेक्षाकृत मूल्यहीन होता है, उगाया हुआ चारा काफी संतोषप्रद होता है तथा गूदेदार फसलोंसे उगाये गये चारेमें असाधारण गुण होते हैं' (डाक्टर राइट अध्याय १०, पृष्ठ ४३)।

मसाले मिलाइये

रायल कमीशनका कहना है कि इस निम्न कोटिके चारेमें थोड़ा गुड़, नमक या मसाला मिला देना चाहिये (१८६)। किन्तु यह कैसी बेसिर-पैरकी बात है कि यह सलाह उस निर्धन किसानको दी गयी है, जो भूख बढ़ानेमें सहायक ऐसे पदार्थोंका प्रयोग, पशुओंके लिये कौन कहे, स्वयं अपने लिये भी कठिनाईसे कर सकता है। इस बातका स्मरण करके कम दुःख नहीं होता कि सन् १९२८ में लिन्लिथगो साहबने ऐसे निकृष्ट चारेमें गुड़ मिलानेकी सिफारिश की थी, किन्तु स्वयं अपने सर्वशक्तिसम्पन्न ७ सालके शासनमें (१९३६ से ४३ तक) उन्होंने भारतके शीरेको चार आने मनकी अत्यन्त अल्प दरपर ब्रिटेनको शीघ्र भेजनेमें सहायता दी, जिससे वहाँके पशु उसे खाकर मोटे हो सकें ! और यह उस समय हुआ जब वे यह जानते थे कि भारतके पशु कंकाल होते जा रहे हैं और पोषक भोजन न मिलनेसे उनका ह्रास हो रहा है ! आँसू बहानेके लिये भारतका इससे अधिक दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ?

हरे चारेसे दोहरा काम

सब त्रुटियोंकी एक दवा केवल हरा चारा ही है। इससे दोहरा लाभ होता है। इससे पशुओंका पोषण होता है और धरती भी सम्पन्न होती है, जो हरे चारोंके अभावमें भारतके भूखे मनुष्यों और पशुओंके दुर्भाग्यकी सङ्गिनी बनकर अनेक शताब्दियोंसे हीनावस्थाको प्राप्त होती जा रही है। भारतीय खेतोंकी खादके अङ्गोंसे ईंधनका काम लेकर उन्हें नष्ट कर दिया जाता है और अमोनियम सल्फेट (Ammonium Sulphate) तथा सुपर फास्फेटस (Super Phosphates) जैसी कृत्रिम खादको काममें लाने और उसे जुटानेकी बात हिमालयकी चोटियोंपर रहनेवाली विशिष्ट शासन-सत्ता अभातक गम्भीरतासे सोच रही है। गूदेदार चारे, मिश्रकी लाल तिनपतिया (Berseem), रिजका (Alfalfa) तथा गिनी (Guinea) घास कुछ ऐसे चारे हैं, जो दोहरे कल्याणकारी प्रमाणित हुए हैं। कृषि-विभागको तो दो पीढ़ियोंसे अधिकका ज्ञान और अनुभव है, अतः उसे ऐसे अन्य अनेक हरे चारोंकी पूरी जानकारी होनी चाहिये जो दोहरे काममें आते हों। समान वर्गके अन्य चारोंको अधिक गिनानेकी आवश्यकता यहाँ नहीं है।

लाभदायक परिणाम

रायल कमीशनके निर्णय केवल सारहीन उपदेश ही नहीं कहे जा सकते, वे गुड़गाँवा (पंजाब) ख्यातिके एक विद्वान् और भावुक सरकारी अफसर श्री एफ. एल. ब्रेने (Mr. F. L. Brayne) के अनुभूत उपयोगी प्रयोगों और परिणामोंपर अवलम्बित हैं। पंजाबमें कुछ ब्रिटिश यूरोपियन किसान अपने भू-भागका २५ प्रतिशत केवल चारा उगानेके लिये निश्चित कर देते हैं। वे उत्तम डेयरी तथा मांस-व्यवसाय और उच्चकोटिके डेयरी पदार्थोंकी बहुलताका लाभ उठाते हैं।

ज्ञान सत्य किन्तु व्यवहार असत्य

हमारी सरकारको कम-से-कम उस अमूल्य ज्ञानके अस्तित्वको तो जानना ही चाहिये, जो रायल कमीशनद्वारा काफी खर्चके बाद बड़े विस्तारके साथ संगृहीत किया गया है और जो सन् १९२८में बम्बईके गवर्नमेंट सेंट्रल प्रेससे अनेक बड़े भागोंमें प्रकाशित किया गया है। उसे अपने ही द्वारा इस कार्यके लिये निर्मित विशेषज्ञ-कमेटियोंकी सिफारिशोंको भी जानना चाहिये और साथ-ही-साथ डा० नारमन सी० राइट (Dr. Norman C. Wright) सरीखे विदेशी विद्वानोंकी सरकारी रिपोर्टका—जिन्हें इसी विशेष कार्यके लिये बुलाया गया था कि वे कृषि-अर्थनीति और पशु-पालनके सम्बन्धमें अपनी राय दें—ज्ञान होना चाहिये।

दूध देनेवाले पशुओंको पोषक-पदार्थ देने तथा किसानोंकी अपनी भूमिमें चारेकी खेती करनेका प्रतिपादन डा० राइटने अपने १० वें अध्यायमें किया है। इसके अतिरिक्त हमारे अंग्रेज शासक अपने घरमें इन लाभोंका आनन्द उठा भी रहे हैं। वे अच्छी तरह जानते हैं कि किन ठोस वैज्ञानिक योजनाओंने, शताब्दियोंसे उन्नतिशील पश्चिमीय प्रदेशोंमें अन्न और चारेकी खेतीद्वारा, मनुष्य तथा पशु दोनोंको समान लाभ पहुँचाया है और वहाँकी आर्थिक स्थितिको सँभाला है। इस ज्ञानके होते हुए भी यदि वे पोषक पदार्थों एवं चारेकी उपजकी ओर अवहेलनाकी दृष्टिसे देखें, तो क्या वे भारतीयोंके इस बढ़ते हुए निश्चयसे, कि भारतके शासक सत्यका ज्ञान रखते हुए भी यहाँ असत्यका व्यवहार

करते हैं, अपनेको बचा सकेंगे ? क्या अपनी अकर्मण्यतासे ये मनुष्यों तथा पशुओंके पूर्ण शरीर-निर्माणमें, जो एक-दूसरेपर अवलम्बित रहनेवाले हैं, कार्य-दृष्टिसे अविच्छिन्न सूत्रमें बँधे हैं तथा जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें परस्पर एक-दूसरेके सहायक हैं, बाधा नहीं पहुँचा रहे हैं ? मनुष्यके लिये शक्तिदायक तथा रक्षक पदार्थों, एवं पशुओंके लिये पोषक चारेकी वृद्धिमें जबतक साथ-साथ उन्नति नहीं होगी, तबतक सामान्य जनता एवं विशिष्ट वर्गवालों तथा पशुओंके भोजनकी चिर-समस्या हैरान करती ही रहेगी ।

जनताकी आवाज ईश्वरकी आवाज नहीं

संसारके सब देशोंमें केवल भारत ही ऐसा देश है, जहाँकी जनताकी आवाज ईश्वरकी आवाज नहीं समझी जाती । केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें जनताकी आवाजपर ध्यान नहीं देतीं । अतएव अपने शासकोंको प्रतीति दिलाने, सरकारी ध्यान आकर्षित करने तथा कार्यरूपमें उन्हें परिणत करनेके लिये यह आवश्यक है कि वे प्रमाणिक आदेश और निर्देश, जिनकी अवहेलना उन्होंने अभीतक अलग रखकर अथवा ध्यान न देकर की है, उनके सामने उसी प्रकार रह-रहकर रखे जावें, जिस प्रकार मुकदमा सुनते हुए निद्रा-वशीभूत होनेवाले चीनी जजोंके कानोंमें बार-बार फुसफुसानेकी आवश्यकता होती है । उनमेंसे कुछ इस लेखमें दिये गये हैं । एक आवश्यकता तो यह है कि ग्राम-समस्याको, जो अभी भी उनके (केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारोंके) मस्तिष्कमें भलीभाँति पैठ नहीं पायी, सम्पूर्णतः सब दृष्टिकोणोंसे सुलझानेका प्रयत्न किया जाय (रायल कमीशन, पृष्ठ ६७३, पैरा एकका उपसंहार) । 'यदि शताब्दियों-की अकर्मण्यताको पराभूत करना है तो यह आवश्यक है कि तत्सम्बन्धी जो भी साधन सरकारके हस्तगत हैं, उनका प्रयोग ग्राम-सुधारकी समस्याके लिये किया जाय' (पैरा २) । समस्त उद्योगोंको एक सूत्रमें बाँधनेके लिये रायल कमीशन-वालोंने इसपर जोर दिया है कि, 'इस मामलेमें प्रान्तीय गवर्नरोंका तात्कालिक उत्तरदायित्व बहुत अधिक है' (पैरा ४) । अब जनताकी यह आवाज कि चारे और खाद्य-पदार्थोंकी उपजकी व्यवस्था एक ही योजनाकी संरक्षकतामें साथ-साथ होनी चाहिये, पहलेकी अपेक्षा अधिक तीव्र हो गयी है । केवल अच्छा भोजन देनेपर ही अच्छी नस्ल प्राप्त की जा सकती है ।

झटपट कामकी आवश्यकता—कानूनी चारा

हमारा कृषक गवर्नर इन सब बातोंसे अनभिज्ञ नहीं हो सकता । अतः उसे पोषक चारेको कानूनन उगानेका विधान बनाकर जनताकी तात्कालिक और अनिवार्य अपीलका उत्तर देना चाहिये । अन्न तथा चारा दोनोंके लिये एक ही पूर्ण योजना होनी चाहिये और उसका प्रयोग दोनोंपर साथ-साथ किया जाना चाहिये । तत्सम्बन्धी एक ग्रामीण कहावत यहाँ देने योग्य है ।

बिना बैलके होय न खेती, बैल नहीं, बिन गैया ।
चारा बिन गो-बैल-अन्न-पय-बछवा होय न भैया ! ॥

भारतकी कृषि-सम्बन्धी अर्थनीति और पशु-पालनमें वृद्धिके लिये ये सब नितान्त आवश्यक हैं । २ जूनको 'पॉलिसी कमेटी आन एग्रिकल्चर' (Policy Committee on Agriculture)को दिये हुए अपने प्रेरणापूर्ण संदेशमें लार्ड वावेलने कहा है—'भारतको अधिक सम्पत्तिशील, स्वस्थ एवं शिक्षित देश बनानेके लिये उसकी एकमात्र दृढ़ आवश्यकता कृषि-विज्ञानका विकास है ।' इस प्रकार हिज एक्सेलेंसीने ग्रामोद्धारको सबसे ऊँचा स्थान देकर उसे प्राथमिक कर्तव्य माना है । केन्द्रीय-धारा-सभाको सम्बोधित करते हुए वाइसराय महोदयने कहा है कि प्रत्येक सरकारको अपने प्राथमिक कर्तव्योंका पालन अवश्य करना चाहिये । कृषि-विज्ञानकी पूर्ण फल-प्राप्तिके मुख्य उद्गम खाद्य-पदार्थ एवं चारा हैं । अपने-अपने अभावकी पूर्तिका लाभ उठानेके लिये मनुष्य और पशुको साथ-साथ अच्छी तरह रहना आवश्यक है । अतः इनकी संरक्षा सरकारको पहले और मुख्यरूपसे करनी चाहिये ।

(८)

गाय तथा भैंसके दूधकी तुलना

प्रयोगशालामें किये गये प्रयोगोंके निष्कर्ष

प्रयोगशालामें किये गये वैज्ञानिक तथा वास्तविक आहारसम्बन्धी प्रयोगोंके आधारपर यह प्रमाणित हो चुका है कि मनुष्य-शरीरके लिये भैंसकी अपेक्षा गायका दूध निम्न-लिखित दृष्टियोंसे अधिक उत्कृष्ट है—

१. दूधमें सम्पूर्ण प्रोटीन रहनेके कारण यह मनुष्यके लिये अनिवार्य है । भैंसके दूधकी अपेक्षा गायके दूधमें रहने-वाले प्रोटीन कोमल होनेके कारण सुगमतासे पच जानेवाले होते हैं ।

२. प्रोटीनोंको भी पचानेवाली चिकनाई गायके दूधमें पर्याप्त मात्रामें रहती है । इसीलिये बच्चों तथा बीमारोंके लिये

विशेषरूपसे, और प्रौढ़ोंके लिये साधारणरूपसे गायका दूध अधिक लाभदायक है। भैंसके दूधकी चिकनाई एक विशेष मात्रामें और विशेष प्रकारकी होनेके कारण उतनी परिपूर्ण नहीं होती, जितनी गायकी। गायके दूधमें ब्यूटिरिन (Butyrin) तथा दूसरी कोमल चर्बियाँ अधिक मात्रामें रहती हैं। गायका दूध हमारी शरीर-रचनामें सरलतासे घुल जाता है और भैंसके दूधकी अपेक्षा उसमें साबुनीकरण (Saponification—वह प्रक्रिया जिसके द्वारा अलकली और चर्बीका पृथक्करण होता है) कम होता है, इसीलिये विष्ठाके साथ साबुनके रूपमें जाकर नष्ट नहीं हो जाता एवं यकृत्, पित्त और उसके कार्य-व्यापारको नुकसान पहुँचाकर शरीरके क्षारोंका नाश नहीं होने देता। मन्द यकृत्से उत्पन्न आँतसम्बन्धी कष्टोंका कारण कड़ी चर्बी ही है। इसलिये गायके दूधमें रहनेवाले कोमल स्नेहको प्रथम स्थान मिलना चाहिये। गायके दूधमें पाये जानेवाले विटामिन-पदार्थ निश्चय ही भैंसके दूधकी अपेक्षा उच्चकोटिके होते हैं, क्योंकि गोदुग्धमें चिकनाईके द्रव भागोंका—जिनमें विटामिनका केन्द्रीकरण होता है—आधिक्य है।

३. संसारमें विटामिनका सबसे अधिक सम्पन्न स्रोत गायके दूधका स्नेहपदार्थ है। द्रवताके लिये विटामिन 'ए' और गायकी कोमल तथा रंगीन त्वचा होनेसे सूर्यकी किरणों और रंगोंद्वारा होनेवाली प्रक्रियाके लिये विटामिन 'बी' और 'डी' गायके दूधमें भैंसकी अपेक्षा अधिक मात्रामें पाये जाते हैं। अपने एकीकरण गुणके कारण गाय विटामिनोंकी उपज तथा संग्रहमें ऊँचा स्थान ग्रहण कर लेती है।

४. भैंसकी अपेक्षा गायके स्वाभाविक कच्चे दूधमें ऑक्साइड तथा रिडक्टेस आदि (Oxides and Reductase etc.) पाचक-रसों (Enzymes) की प्रचुरता रहती है, जो पाचनमें सहायता देनेके अतिरिक्त दूध पीनेवालोंकी शरीर-रचनामें पाये जानेवाले टाक्सिन्स तथा टोमेन्स (Toxins and Ptomaines) नामक विषैले पदार्थोंको दूर करते हैं। ग्रन्थिसंस्थान, जो मनुष्यकी शक्ति, पौरुष तथा रंगका सञ्चालन करता है, इन दुग्ध-पाचकरसोंसे अधिक सहायता प्राप्त करता है। अतः गायका दूध कुष्ठ एवं क्षय आदि रोगोंको दूर करनेवाला एक निश्चयात्मक तत्त्व है।

५. गायके दूधमें क्षार भी भैंसके दूधकी अपेक्षा अधिक घुल जाने एवं पच जानेवाले रूपमें होते हैं। ये क्षार स्वयं उपयोगी होनेके साथ-साथ चर्बीवाले प्रोटीनोंको पचानेमें सहायता करते हैं।

६. दूधके अच्छे कीटाणु भैंसकी अपेक्षा गायके दूधमें अधिक स्वतन्त्रतासे बढ़ते हैं। इस कथनका प्रमाण यह है कि गायके दूधका दही जल्दी जम जाता है।

७. भैंसके दूधमें उष्णोत्पादक तत्त्व अधिक मात्रामें रहते हैं; जिससे यह गायके दूधकी अपेक्षा शरीरको अधिक गरम कर देता है। गायका दूध शीतलता प्रदान करनेके साथ-ही-साथ पोषक भी होता है। अतः मस्तिष्कसे काम करनेवालोंके लिये इसका मूल्य बहुत अधिक है।

८. जितना पोषण भैंसके एक सेर दूधसे मिलता है, निश्चय ही उतना पोषण गायके एक सेरसे कम दूधमें ही मिल जाता है, इसीलिये गायके दूधकी वास्तविक पौष्टिक शक्ति भैंसके दूधकी अपेक्षा अधिक है।

९. घोलकी दृष्टिसे, गायका दूध अपनी स्वाभाविक अवस्थामें भैंसकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त होता है, क्योंकि स्नेहपदार्थकी गोलियाँ छोटी, असंख्य तथा गुप्तरूपसे प्रोटीनयुक्त होनेके कारण गोदुग्ध-स्नेह एवं प्रोटीनोंको पाचनके लिये सुगम और हलका बना देती हैं। —डी. जानी बी. एजी.

मक्खनकी चिकनाईकी उत्कृष्टता

ग्लिसरिड्स (Glycerids) से निकली हुई तथा नाइट्रोजन एवं फास्फोरससे युक्त लेसिथिन (Lecithin) मस्तिष्क तथा शिराओंमें विशेषरूपसे पायी जाती है। अतः लेसिथिनयुक्त भोज्य पदार्थ,—जैसे सोयाबीन तथा कुछ अन्य गूदेदार फलियाँ आदि,—उन शाकाहारी मनुष्योंके लिये, जो मस्तिष्कका काम करते हैं, लाभदायक होते हैं। इस दृष्टिसे दूध एक मूल्यवान् भोजन है, क्योंकि उसमें वे सब आवश्यक तत्त्व रहते हैं, जो बीमारों एवं प्रौढ़ों—विशेषकर बीमारोंके—लिये आवश्यक हैं।

गायके दूधकी उत्कृष्टता

प्रोफेसर डा० एन. एन. गोडबोले एवं सद्गोपाल गोदुग्धके विषयमें निम्नलिखित परिणामोंपर पहुँचे हैं—

१. कार्बोहाइड्रेट, फैट अल्बुमिनायड, क्षार तथा विटामिनके होनेके कारण दूध—विशेषकर मा, गधी और गायका दूध—प्रौढ़ एवं बच्चोंके लिये आदर्श भोजन है।

२. गाय और भैंस, दोनोंके दूधमें गायका दूध मानुषिक-शरीर-रचनाद्वारा सुगमतासे पच जाता है, इसलिये अधिक पोषक है।

३. ओषधिकी दृष्टिसे भी गाय और बकरीका दूध उत्तम होता है।

गायके घीकी उत्कृष्टता

उपर्युक्त दोनों विद्वान् अपने हस्तगत तत्सम्बन्धी सर्व-सामग्रीके आधारपर गोघृतके विषयमें निम्नाङ्कित परिणामों-पर पहुँचे हैं—

१. गोघृतमें आयडीन (Iodine) रहता है, जब कि भैंसके घीमें ऐसी कोई सामग्री नहीं रहती।

२. दोनोंके घीमें विटामिन 'ए' और 'डी' होते हैं, अन्तर केवल इतना ही है कि गोघृतमें विटामिन 'ए' अधिक होता है और भैंसके घीमें विटामिन 'डी'।

३. गोघृत वसा, सूअरकी चर्बी या वनस्पति घीसे कई गुना श्रेष्ठ है।

४. सम्पूर्ण अंशमें पच जाने तथा घुल जानेकी दृष्टिसे गायका घी भैंसकी अपेक्षा अधिक सम्पन्न होता है। अतः अपेक्षाकृत बच्चों एवं दुर्बलोंके लिये विशेष उपयुक्त होता है।

५. आर्थिक दृष्टिकोणसे गायकी अपेक्षा भैंस अधिक उत्पादनका साधन अवश्य है, किन्तु हमारी सम्मति है कि भारतमें तेलसम्बन्धी प्रयोगोंका प्रसार करना उपयुक्त है, विशेषतया तिल और नारियल आदिके तेलोंका, क्योंकि विटामिनमें दरिद्र होते हुए भी ये घुल जानेवाले पदार्थोंकी मात्रामें अधिक सम्पन्न होते हैं तथा उनके एकाग्रीभूत पदार्थ-तत्त्व (Concentrates) पशुओंके लिये उत्कृष्ट भोजन हैं और दूधको अधिक गुणकारी बनानेवाले हैं।

हाटस्प्रिंग्ज अमेरिका (Hotsprings America) में होनेवाली सन् १९४३ की कान्फरेंसमें जानेवाले भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलद्वारा 'भारतमें रक्षक भोजन-पदार्थ' के सम्बन्धमें तैयार की गयी अन्तिम सूची—

(दस लाख टनके हिसाबसे)

रक्षक भोजन पदार्थ	पूरी मात्रा आवश्यकता	प्राप्य	कमी
शुद्ध दूध	३२.०	६.३	२५.७
फल	६.०	अपर्याप्त	६.०
शाक	१८.०	९.०	९.०
××	××	××	××

इस प्रकार सभी वस्तुओंकी माँग-पूर्तिमें कमी दिखलायी पड़ती है।

(९)

उत्तरदायित्वपूर्ण सरकारका मुख्य लक्ष्य नागरिकोंकी रक्षा

१ सितंबर सन् १९४३ से ३१ मार्च सन् १९४४ तकके समयमें विनाशकारी युद्धके भयानक शीतकालमें भी ब्रिटेनमें दूधका उत्पादन पहलेकी शीत ऋतुकी अपेक्षा ७.५ प्रतिशत अधिक रहा।

शीतकालीन दूधकी वृद्धिकी प्रवृत्तियोंका ज्ञान नीचेकी तालिकासे हो सकता है। ये संख्याएँ द्रव-दूधकी खपतसे सम्बन्ध रखती हैं।

१९३६–३९	(औसत)	१००
१९३९–४०	,,	१०४
१९४१–४२	,,	१२३
१९४२–४३	,,	१३८

शीतकालमें अन्तिम वृद्धिसे पता चलता है कि वास्तविक दूधके उत्पादनमें प्रतिमास ६० लाख गैलनकी अतिरिक्त वृद्धि हुई और भावी वर्षोंमें और अधिक वृद्धिके प्रयत्न किये जा रहे हैं। उत्पादनमें वृद्धि करनेका प्रचार-कार्य 'काउंटी वार एक्जिक्यूटिव कमेटी' (County War Executive Committee) द्वारा व्यवस्थित होता है। ये सुन्दर परिणाम **अच्छी खिलाई और चुने हुए पशुओंको रखनेके कारण हैं।**

४ करोड़ ५० लाख लोगोंके लिये १ अरब ५३ करोड़ ५० लाख गैलन दूध

अब मुख्य लक्ष्य यह है कि प्रतिवर्ष ३५ करोड़ गैलन दूधका अधिक उत्पादन हो। (वर्तमान समयमें १ अरब १८ करोड़ ५० लाख गैलन प्रतिवर्ष होता है) यह नीति केवल युद्धकालके लिये ही नहीं बनायी गयी, वरं राष्ट्रके हितके लिये सरकारने यह दीर्घकालीन योजना बनायी है।

('इकनामिस्ट' २७ मई सन् १९४४)

जनताके लिये दूध

कृषि-मन्त्री श्रीहडसन साहबने १९ मई सन् १९४४ को सभामें बताया, 'हमलोगोंका उद्देश्य केवल अधिक मात्रामें

दूधका उत्पादन करना ही नहीं होना चाहिये वरं दूधके गुणमें भी वृद्धि हो, यह भी हमें देखना चाहिये। ऐसा दूध होना चाहिये जिसपर जनता तथा डाक्टर—दोनोंका पूर्ण विश्वास हो।'

इस प्रकारके दूधकी प्राप्तिके लिये श्रीहडसन साहब पिछली आर्थिक सहायताको पुनः चालू कर रहे हैं, जिससे ट्यूबरकुलिनके इंजेक्शनद्वारा पशुओंकी परीक्षा की जा सके कि उनको क्षयरोग तो नहीं है, दूधकी परीक्षा करनेके एवं तत्सम्बन्धी मन्त्रणा देनेके लिये राष्ट्रीय-सेवा-प्रणालीकी स्थापना कर रहे हैं तथा डेयरी बैलोंकी और नस्लकी उन्नतिके लिये योजना बना रहे हैं। इस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रीका लक्ष्य 'राष्ट्रीय रीतिद्वारा राष्ट्रीय जीवनादर्श स्थापित करना' है।

अपने उत्तरदायित्वको समझनेवाली सरकारें नागरिक जनताके हितके लिये भी उतनी ही सचेष्ट रहती हैं, जितनी कि सब ओरके युद्ध-क्षेत्रमें लड़नेवाले सैनिकोंके पौरुष, शक्ति और मनोबलके लिये वे सचेष्ट रहती हैं।

भगवान् करे, भारतके कृषि-मन्त्री तथा प्रान्तीय सलाहकार इसके द्वारा अपने कर्तव्यकी शिक्षा ग्रहण करें और भारतके करोड़ों मौन कंकालस्वरूप पशुओंके प्रति अपने निश्चित कर्तव्योंका पालन करें। विदेशी निर्वृत दुग्ध-चूर्णका सहारा लेना निश्चय ही कर्तव्यकी ऐसी दुःखप्रद अवहेलना है, जो गम्भीर राष्ट्रीय ह्रासका कारण बन रही है।

अखिल भारतीय विधानकी नितान्त आवश्यकता

सर राल्फ फिलिप (Sir Ralph Phillip) ने अगस्त, सन् १९४४ की अपनी रिपोर्टमें यह बात जोर देकर कही है कि एक ही बियानके बाद जो पशु कसाइयोंको सौंप दिये जाते हैं, उनका उद्धार आवश्यक है। इससे पता चलता है कि सर जोगेन्द्रसिंहने अगस्त, सन् १९४३ में जो यह आदेश दिया था कि 'दस वर्षसे कमकी आयुवाली दूध देती हुई अथवा गाभिन गायें और बैलोंका वध न किया जाय' वह कितना अपूर्ण था।

राष्ट्रीय हितके लिये राष्ट्रीय जीवनादर्श केवल तत्सम्बन्धी अखिल भारतीय कठोर विधानोंद्वारा ही स्थापित हो सकते हैं। अतः भारतीय-महाजन-सभा (Indian Merchants Chamber) ने भोजन-मन्त्रीके द्वारा यह अपील की कि यद्यपि—

उत्तम पशुओंका वध

—भी एक ऐसा विषय है, जिसमें आयके विभागका कोई प्राथमिक कर्तव्य नहीं, फिर भी हम सबके मुख्य लक्ष्यसे इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। कृषि तथा दुग्धोत्पादन और दुग्ध-व्यवस्थाके लिये देशके पशुधनकी रक्षा अत्यावश्यक है। रक्षक भोजनकी तो यों ही बहुत बड़ी कमी है, उसपर भी यदि गाय-भैंसका वध इसी प्रकार अबाधरूपसे चालू रहा तो हीनपोषणके प्रभाव भावी सन्तानोंपर भी अङ्कित हो जायँगे। आजकल भी पशुओंका मूल्य इतना ऊँचा चढ़ गया है कि कृषकोंके लिये आवश्यक पशुओंको प्राप्त करना तथा उनका पालन-पोषण करना कठिन हो रहा है। **सरकारने कुछ विशेष श्रेणीके पशुओंकी रक्षाके लिये निर्देश जारी किये हैं। कई प्रान्तीय सरकारोंने भी एक निश्चित आयुसे कम आयुके पशुओंके वधका निषेध किया है। हमारी कमेटीकी यह धारणा है कि जबतक इन आदेशों और आज्ञाओंके पालन करानेमें कठोरतासे काम न लिया जायगा, तबतक इनसे उद्देश्यकी पूर्ति नहीं होगी। हमारी रायमें सरकारको चाहिये कि कानून विधानद्वारा दूध देनेवाले पशु, १५ वर्षसे कम उम्रके स्वस्थ बैल, दूध देती हुई गाय, गाभिन या बच्चा दे सकनेवाली गाय, सूखे पशु, ऐसी बछियाएँ, जिनसे नस्ल उत्पन्न हो सके, तथा कामलायक बैलोंका वध बंद करा दे और इन आदेशोंका उल्लङ्घन करनेवालेको कानूनी अपराधी ठहराये, अन्यथा ये आज्ञाएँ सम्भवतः केवल पवित्र अभिलाषाएँ ही बनी रहेंगी।**

समस्त राष्ट्रके हितके लिये राष्ट्रीय समस्याओंको एकरूपतासे राष्ट्रीय ढंगद्वारा ही सुलझाना आवश्यक है।

सबसे बड़ा डरपोक या कायर वह है जो लाचार जीवोंके साथ क्रूरताका व्यवहार करता है।

—डान मार्कीस

हिंदुस्थानमें दूधकी खपत

(लेखक—रा० ब० श्रीजे० एन० मानकर)

हिंदुस्थान दुग्धसेवी, शाकाहारी देश होनेसे यहाँके आहारमें, क्या शाकाहारियोंके लिये और क्या मांसाहारियोंके लिये, मुख्य पोषक पदार्थ दूध और दूधके बने पदार्थ हैं। सेवनके प्रकार, देशके विभिन्न भागोंमें दूधकी सुलभता या दुर्लभता, लोगोंके आहार-सम्बन्धी विशेष अभ्यास, तथा लोगोंकी आर्थिक अवस्थाके भेदसे भिन्न-भिन्न प्रकारके हैं। उदाहरणार्थ, जहाँ दूध यथेष्ट मिलता है, लोगोंकी अपनी गाय-भैंसें हैं या लोग दाम खर्चनेवाले हैं वहाँ लोग दूध पीते भी हैं और दूधसे घी भी यथेष्ट निकाला जाता है। मावेसे मिठाइयाँ केवल अमीरोंके लिये थोड़ी-सी बनती हैं।

जिन भागोंमें दूधका उत्पादन सामान्यसे कम होता है वहाँ उन लोगोंको छोड़कर, जो अधिक दाम देकर दूध खरीद सकते हैं, मुख्यतः दूधकी प्रत्यक्ष खपत बच्चोंके लिये ही होती है। गर्भवती माताएँ और दूध पिलानेवाली धात्रियाँ भी मुश्किलसे कभी स्वयं दूध पीती होंगी। घी और लस्सी या छाछ ही उनके मुख्य पोषक पदार्थ होते हैं।

पाश्चात्त्य सभ्यताके साथ उस ढंगके खान पानका भी जो प्रचार बढ़ चला है उससे बहुत-सा दूध चायमें खर्च होने लगा है! दूधकी कमी हिंदुस्थानमें आजकल बढ़ती जाती है और दूध महँगा होता जा रहा है, तथापि दूधका शायद एकमात्र सार्वत्रिक उपयोग चायमें ही हो रहा है। अमीर-गरीब, जवान-बूढ़े, क्या शहरोंमें और क्या देहातोंमें, आजकल चाय और काफीके आदी हो रहे हैं और चाय-काफीका यह उपयोग केवल उत्तेजक पेयके तौरपर ही नहीं बल्कि भूखको मारनेवाले एक कामचलाऊ खूराकके रूपमें भी हो रहा है। कारखानोंकी वृद्धि हो रही है और मजदूर चायके प्याले-पर-प्याले चढ़ाते जाते और उसी बलपर रात-दिन काम करते रहते हैं। किन्हीं-किन्हीं स्थानोंमें, जैसे पंजाब और युक्तप्रदेशमें, जहाँ दूध बहुत होता है और दूध लोगोंका एक अभ्यस्त आहार है, चायका उन स्थानोंकी अपेक्षा बहुत कम रिवाज है, जहाँ दूध बहुत कम होता है। पर इन प्रान्तोंमें भी अब धीरे-धीरे दुग्धपानका स्थान चाय-पान ग्रहण करता जा रहा है।

शहरों और देहातों तथा भारतके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके लोगोंके आहार देखनेसे मालूम होता है कि—

१. जिन देहातोंमें दूध कम होता है वहाँ बच्चोंको छोड़कर और लोग दूध बहुत ही कम पीते हैं। जिनके गाय-भैंसें लगती हैं वे प्रायः घृत ही सेवन करते हैं; लस्सी या छाछका भी आमतौरपर उपयोग होता है। देहातोंमें जहाँ दूध बहुत होता है वहाँ घी और लस्सीके साथ-साथ दूध भी पीया जाता है।

२. शहरोंमें रिवाज दूधकी अल्पता या अधिकता, जलवायु और अधिवासी जनसमाजके भेदसे भिन्न-भिन्न हैं। पर चायके लिये दूधका उपयोग सर्वत्र ही होता है और घी तो नित्यके आहारका एक मुख्य पदार्थ ही है। चावल जहाँका मुख्य आहार है वहाँ दही और छाछ भी आहारके आवश्यक अङ्ग हैं।

३. धनी लोग खास दूध भी सेवन करते हैं और दूधके अन्य पदार्थ भी। किसान और ग्वाले छाछ पीते हैं और ग्वाले खास दूध भी।

४. मक्खन खानेवाले केवल यूरोपियन, ईसाई और वे शिक्षित हिंदुस्थानी हैं जो पाश्चात्त्य ढंगका आहार करते हैं, और घीका सेवन तो हिंदुस्थानमें आमतौरपर सर्वत्र ही होता है।

'मार्केटिंग आफ मिल्क'की रिपोर्टके अनुसार गाय-भैंसों और भेड़-बकरियोंका कुल दूध जो प्राप्त होता है वह लगभग ६२९२·९ लाख मन होता है। उसमेंसे १७६२·१८ लाख मन अर्थात् सैंकड़े २८ खास दूधके रूपमें पीया जाता है। चायके साथ पीया जानेवाला दूध भी इसमें शामिल है; और ३५८९·१४ लाख मन दूध अर्थात् सैंकड़े ५७ घी बनानेके काममें आता है और केवल १०७·५६ मन दूध अर्थात् सैंकड़े १·७ का मक्खन बनता और २३·६२ मन दूध अर्थात् सैंकड़े ०·४ की मलाई बनती है। अतः यह स्पष्ट है कि सबसे अधिक दूध घी तैयार करनेके काममें आता है, पर फिर भी इतनेसे माँग पूरी नहीं होती। घृतका सार्वत्रिक उपयोग करनेवाले लोगोंके आहार-सम्बन्धी अभ्यासका विचार करनेसे यह अत्यन्त आवश्यक मालूम होता है कि प्रत्यक्ष रूपसे दूधके सेवनके लिये तथा घी तैयार करनेके लिये दूधका उत्पादन बढ़ाया जाय।

यह ध्यानमें रहे कि एक पौंड घीके बननेमें २७ पौंड मट्ठा मिलता है। इस हिसाबसे वर्षमें ३५८९·१४ लाख मन दूधसे २२१ लाख मन घी निकालनेमें ५९१७ लाख मन मट्ठा मिल जाता है जिसको देहातोंमें लाखों मनुष्य पीते और लाभ उठाते हैं, क्योंकि घी देहातोंमें ही तैयार होता है और उसे तैयार करनेवाले वे ही लोग हैं जिनका पेशा ही गौएँ पालना है। इस तरह, खपतकी दृष्टिसे, घीके तैयार करनेमें कोई भी उपपदार्थ व्यर्थ नहीं जाता। अब पोषण-शास्त्रके विशेषज्ञ ही यह बतलावें कि घी और मट्ठा या छाछके सेवनसे आहारसम्बन्धी लाभ होता है या हानि? मुझे जो पता चला है वह यह है कि घीका जो कुछ आहार-गत मूल्य है और उसमें जितनी कैलरी उष्णता है वह तो है ही, उसके अतिरिक्त उसमें जो एक खास मक्खनिया अम्ल (Butyric acid) है वह केवल घीमें ही होता है और उसका अन्य कोई प्रतिनिधि-द्रव्य नहीं है।

आर्थिक दृष्टिसे देखें तो २२१ लाख मन घीकी कीमत आजकी १६०) मनकी दरसे ३,५३,६०,००,००० रु० होती है। इसका अधिक भाग उत्पादकोंको मिलता है। अब जिस दूधका इतना घी तैयार होता है उस ३५८९·१४ लाख मन दूधकी कीमत देहातकी वर्तमान अधिक-से-अधिक चार आना सेरकी दरसे लगभग ३,५८,९०,००,००० रू० होती है। इससे यह स्पष्ट है कि देहातोंमें दही बिलोकर दूधसे जो घी निकाला जाता है, उससे उतना ही रुपया गाँवोंमें आ जाता है जितना यन्त्रोंके द्वारा दूधसे मक्खन निकालनेवाले कारखानोंको उस दूधके बेचनेसे मिलता है, और साथ ही दूध और मट्ठा भी घरोंमें बचता है जिसे खा-पीकर घरवाले हृष्ट-पुष्ट होते हैं। यदि देहातके लोग मक्खन निकालनेवाले कारखानोंको दूध बेच दें तो इससे उनका सारा दूध तो चला ही जायगा, साथ ही वे मट्ठेसे भी हाथ धो बैठेंगे। मक्खन तथा निर्घृत दूध बेचकर ये मक्खनवाले कारखाने बहुत रुपया पैदा करते हैं। उदाहरणार्थ, खेड़ा जिलेमें पालसन कम्पनी मक्खनके लिये सब दूध खरीद लेती है, इसका यह परिणाम होता है कि गाँववालोंके पास दूधका एक बूँद भी नहीं बचता और उनके बच्चे दूधके बिना रोते-बिलखते दिखायी देते हैं। निर्घृत दूध यदि बिना मूल्य भी कोई दे तो उसे पीनेमें लोग बड़ा दोष मानते हैं। इस प्रकार यन्त्रोंसे मक्खन निकालनेवाले कारखाने रुपया पैदा करते हैं और गौएँ पालनेवाले देहातोंके लोगोंसे दूध और मट्ठा छिन जाता है!

घी बनानेके काममें आनेवाला समूचा दूध यदि निर्घृत किया जाय—यन्त्रके द्वारा मलाई निकालकर उससे मक्खन निकाला जाय तो इससे केवल मक्खनके व्यापारियोंको ही लाभ होगा और दूधके उत्पादकोंको तो उतना ही मूल्य मिलेगा जितना यन्त्र-मक्खनवाले कारखानोंके कृपण एजेंट उन्हें देंगे; साधारण ग्राहकोंसे जो मूल्य उन्हें मिलेगा उससे वह कम ही होगा। यन्त्रके द्वारा क्रीम निकालकर उससे जब मक्खन निकाला जाता है तब जो निर्घृत दूध बचता है उसका स्कीम मिल्क पाउडर, (निर्घृत दूधका चूर्ण) या केसीन बनाया जाता है अथवा वह शुद्ध दूधमें मिलाकर असली दूधके तौरपर काममें लाया जाता है। इस तरह निर्घृत दूध शुद्ध दूधमें मिलाकर काममें ले आनेका ढंग चलाना शुद्ध दूधके लिये बहुत बुरा है, क्योंकि इससे इस मिलावटी दूधके साथ शुद्ध दूधको मूल्यमें प्रतिद्वन्द्विता करनी पड़ती है, इससे शुद्ध दूधके उत्पादनकी आर्थिक बुनियाद कमजोर हो जाती है और गाय-भैंसोंको पालना फिर लाभजनक नहीं रहता। ऐसी अवस्थामें यही काम रह जाता है कि लोगोंका खान-पान और उनकी आर्थिक स्थिति भी आधुनिक बना दी जाय जिसमें लोग वैज्ञानिक बनकर घी, दूध, दही, मट्ठा, सब छोड़कर पाश्चात्त्य ढंगसे पावरोटीके साथ मक्खन खाया करें। मतलब यह कि यन्त्रसे क्रीम निकालकर उससे मक्खन निकालनेका व्यवसाय जितना ही बढ़ेगा, घी खानेवालों और दूध पीनेवालोंको उतनी ही कठिनाई होगी और दूध-उत्पादक घाटेमें रहेंगे।

निर्घृत दूधका चूर्ण फिरसे दूध निर्माण करनेके काममें आता है, पर ऐसा दूध पूर्ण असली दूधका प्रतिनिधि कदापि नहीं हो सकता, यह बात डाक्टरी प्रमाणोंसे प्रमाणित हो चुकी है। इस पुनर्निर्मित दूधमें जो-जो कमियाँ होती हैं उन्हें पूर्ण करनेके लिये क्रीम या अन्य कोई चिकनाई और विटामिन खरीदनेकी न तो ग्राहकोंमें सामर्थ्य होती है, न उसका विधि-युक्त उपयोग ही वे जानते हैं। ऐसी अवस्थामें इंडियन न्यूट्रीशन एडवाइजरी कमेटीने (जिसके सदस्य १८ बड़े-बड़े डाक्टर, बायोकेमिस्ट और स्वयं डा० डब्ल्यू आर० आयक्रायड समेत खाद्य-विभागोंके सब अध्यक्ष थे) जो चेतावनी दी है वह ध्यान देने योग्य है। कमेटीने कहा है कि, 'सार्वजनिक स्वास्थ्यके उपायके तौरपर संयोगात्मक विटामिनोंके प्रयोगका काम बहुत ही सावधानीके साथ नियन्त्रित स्थितिमें ही होना चाहिये।' इस कथनकी पुष्टिमें

कमेटीने संयुक्त राष्ट्रोंकी खाद्य और कृषि-सम्बन्धी परिषद्का यह मत दिया है कि, 'संयोगात्मक विटामिनोंका सर्वत्र सामान्यरूपसे एक सार्वजनिक कार्यके तौरपर प्रचार करना समुचित नहीं है। संयोगात्मक विटामिनोंकी लागत मामूली बात नहीं है।' इसलिये यदि हिंदुस्थानमें निर्घृत दूध या उसके चूर्णका पुनर्घटित दूध सामान्य रूपसे जनतामें चलाना है तो इसका संचालन और नियन्त्रण कौन करेगा और कौन इसकी कमियोंको दूर करनेके लिये संयोगात्मक विटामिन आदिका खर्च देगा ? इस प्रकार निर्घृत दूधको दूधके तौरपर खपानेका काम आर्थिक दृष्टिसे हानिकारक और स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भयानक है। इसके विपरीत घी निकालनेके बाद जो मट्ठा बच जाता है उसे बहुत लोग स्वास्थ्यप्रद और पोषक जानकर पीते हैं, इससे उनके स्वास्थ्यकी कोई हानि नहीं होती और न उसके लिये कोई दाम ही खर्च करना पड़ता है।

यन्त्रसे क्रीम निकालकर उससे घी तैयार करनेकी अपेक्षा दही बिलोकर उससे घी निकालना अधिक श्रेष्ठ है। सौंधापन, स्वाद और ठहरनेकी शक्ति, इन सभी बातोंमें दधिमन्थनसे निकाला जानेवाला घी उस घीसे कहीं अधिक अच्छा होता है। यह बात श्री सी. एन. दवेने गुजरात प्रान्तके अन्तर्गत आनन्द स्थानके 'मूँगालाल कृषि और पशुपालन विद्यालय'मे जो प्रयोग किये हैं उनसे असन्दिग्ध रूपसे प्रमाणित हो चुकी है। दधि-मन्थनकी क्रिया अधिक सस्ती और सुलभ भी है।

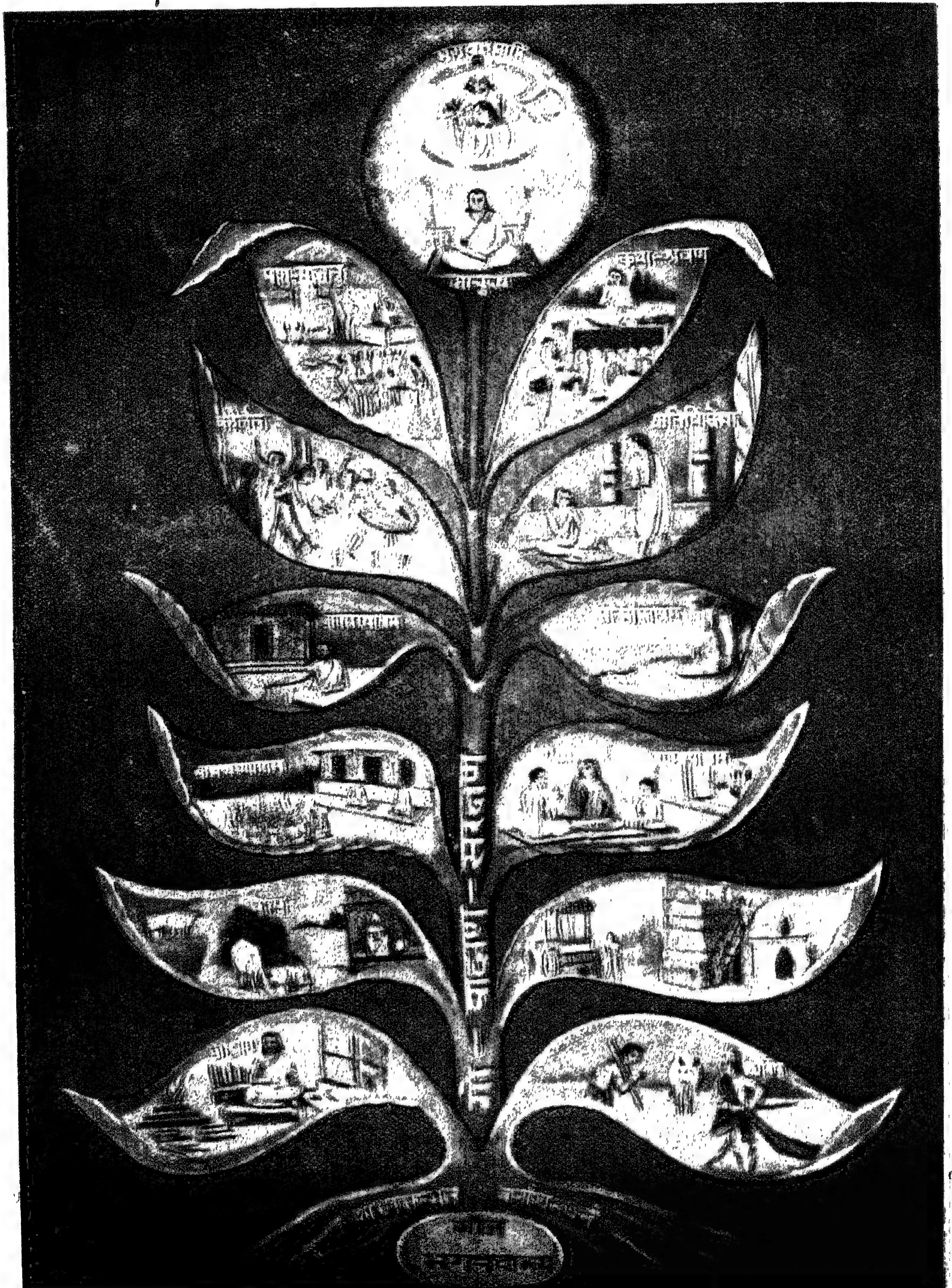
इन सब बातोंके होते हुए भी, यह देखकर आश्चर्य होता है कि, वर्तमान वैज्ञानिक डेयरी-विशेषज्ञ इसी धारणाके पीछे पड़े हुए हैं कि यन्त्रोंसे मक्खन निकालनेका काम डेयरी-धंधेको मालामाल कर देगा। मक्खन निकालनेका यन्त्र देहातोंमें भी बैठानेका प्रयत्न किया जा रहा है। मैं व्यावहारिक दृष्टिसे उन्हें सावधान कर देना चाहता हूँ कि देहातोंमें इन यन्त्रोंको बैठानेका फल गोपालकों और दुग्धोत्पादकोंके लिये बहुत ही बुरा होगा और पूँजीपति तथा बीचके गुमाश्ते इन्हें दोनों तरहसे चूस लेंगे। इससे घी और दूधके उन सर्वसाधारण खरीदारोंको भी बहुत-सी असुविधाएँ भोगनी पड़ेंगी जिनकी संख्या और आवश्यकताएँ मक्खनके खरीदारोंकी अपेक्षा बहुत अधिक हैं। इसलिये हिंदुस्थानके तथा गौके सच्चे हितैषियोंको चाहिये कि वे दधिमन्थनकी क्रियासे विशुद्ध घृत निकालने और उसकी खरीद-बिक्री बढ़ानेका यत्न करें और क्रीम तथा मक्खनका प्रचार करनेके बजाय विशुद्ध पूर्ण दूधकी ही खपतको बढ़ावा दें।

गायसे पुरुषार्थ-चतुष्टयकी सिद्धि

(लेखक—पाण्डेय पं० श्रीरामनारायणदत्तजी शास्त्री)

संस्कृत साहित्यमें पृथ्वी, जल, तेज (सूर्य, चन्द्रमा, किरण), वायु, दिशा, माता, इन्द्रिय और वाणी आदि अनेक अर्थोंमें गोशब्दका प्रयोग देखा जाता है। इनमेंसे कोई भी अर्थ लाक्षणिक नहीं है, सभी गोशब्दके वाच्यार्थ हैं। इन सभी रूपोंमें गोमाता सम्पूर्ण जगत्का कल्याण कर रही है। भगवद्विभूतियोंकी भाँति गौकी विभूतियाँ भी सर्वत्र व्यापक हैं। हम गोमाताके ही अङ्कमें रहते, चलते-फिरते और खेलते हैं। गौसे ही हमें जीवन और जीवन-निर्वाहके साधन प्राप्त होते हैं। गौ ही सुमधुर अन्न, अमृतोपम दूध, शीतल जल और स्वच्छ हवा प्रदान करके हमारे प्राणोंका पोषण तथा शक्ति और स्वास्थ्यका संवर्धन करती है। हमारी आधारशक्ति, प्राण-शक्ति और वाक्-शक्ति सब कुछ गौ ही है। इस महिमामयी गौकी सम्पूर्ण विभूतियोंका वर्णन तथा उनका गौरव-गान हम जीवनभर करते रहें तो भी पार नहीं पा सकते। यहाँ केवल धेनु और धरतीके रूपमें प्रतिष्ठित गोविभूतिकी किञ्चित् महिमापर प्रकाश डाला जायगा।

मूर्खसे लेकर विद्वान् तक सम्पूर्ण जगत्के मानव जो कुछ चाहते हैं तथा जिसकी प्राप्तिके लिये जीवनभर अनेक उपायोंका अवलम्बन एवं अथक परिश्रम करते हैं, उसका नाम है पुरुषार्थ। यह पुरुषार्थ चार विभागोंमें विभक्त है—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। विश्वके अखिल जन-समुदायकी समस्त इच्छाएँ इन्हीं चारोंमें केन्द्रीभूत हैं। अपने-अपने अधिकार और योग्यताके अनुसार कोई इनमेंसे एककी, कोई दोकी, कोई तीनकी, कोई चारोंकी और कोई केवल अन्तिम पुरुषार्थकी अभिलाषा रखते हैं। उक्त पुरुषार्थोंमें दो लौकिक हैं और दो पारमार्थिक। अर्थ और काम लौकिक हैं, तथा धर्म और मोक्ष पारमार्थिक। जिसने क्रमशः लौकिक और पारलौकिक चारों पुरुषार्थोंको हस्तगत किया है, उसीका



भगवदाश्रययुक्त वर्णाश्रमधर्मसे भगवत्प्राप्ति

जीवन सभी दृष्टियोंसे परिपूर्ण माना गया है। जीवनकी इस परिपूर्णताको प्राप्त करनेके लिये गो-सेवा एक प्रधान साधन है। पहले इस बातपर विचार किया जायगा कि गो-सेवासे लौकिक पुरुषार्थोंकी—अर्थ और कामकी प्राप्ति कहाँतक और किस प्रकार सम्भव होती है।

ऊपर यह संकेत किया जा चुका है कि धेनु और धरती एक ही गो-शक्तिकी दो स्थूल विभूतियाँ हैं। अतः इनमें वस्तुतः कोई भेद नहीं है। शास्त्र कहते हैं, गौओंके भीतर सम्पूर्ण देवताओंका वास है; और मानव-जगत् धरतीपर टिका हुआ है, यह बात सबको प्रत्यक्ष है। अतः मानव-लोककी आधारशक्तिका नाम धरा या पृथ्वी है और देवलोककी आधारशक्तिको हम गौ कहते हैं। इसीलिये 'गोलोक' ऊपर है और 'भूलोक' नीचे। परन्तु गोलोकमें भी दिव्य भूमि है और भूलोकमें भी दिव्य शक्ति-सम्पन्न गौएँ हैं। इन दोनोंमें घनिष्ठ साहचर्य है। दोनों ही एक दूसरेको सहयोग प्रदान करती हैं। दूसरे शब्दोंमें हम यह भी कह सकते हैं कि गौएँ ही भूमि हैं और भूमि ही गौएँ। दोनों एक दूसरीके प्राण हैं। परस्परके सख्य और सहयोगसे ही दोनों कार्य-क्षम होती हैं। एकके क्षीण होनेपर दूसरीका क्षय होना अनिवार्य है। यदि दोनोंके सख्य और सहयोगमें कोई बाधा न पड़े, तभी ये स्वयं समुन्नत होकर जगत्के लिये अर्थ और काम प्रस्तुत कर सकती हैं। शास्त्रोंमें भूदेवीको श्रीदेवीकी सहचरी बताया गया है तथा गोदेवीके भीतर भी लक्ष्मीका निवास माना गया है; अतः इनके सेवनसे अर्थ या धन-सम्पत्तिका विस्तार होना स्वाभाविक ही है।

अन्नपर ही जगत्के प्राणियोंका जीवन निर्भर है। वह अन्न गेहूँ, धान, फल-मूल, पत्र-पुष्प, घास-चारा, दूध-दही आदि किसी भी रूपमें क्यों न हो, उसके उत्पादनकी आधार-भूमि गौ ही है। 'गौ' से धेनु और धरती दोनोंकी ओर लक्ष्य है। और इसी व्यापक दृष्टिकोणसे गोधनकी अधिक महिमा गायी गयी है। सब प्रकारके अन्नोंको केवल दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—दुग्धान्न और कृष्यन्न। दूध तथा उससे तैयार होनेवाले खाद्य पदार्थोंका नाम 'दुग्धान्न' है। शेष सब अन्न 'कृष्यन्न'के अन्तर्गत समझे जाते हैं। इन दोनोंका पृथक्-पृथक् मण्डल है। जिस मण्डलसे दुग्धान्नका प्रादुर्भाव होता है, उसका नाम 'पशुचक्र' है तथा 'कृष्यन्न'के उत्पादक मण्डलको 'कृषिचक्र' कह सकते हैं। पशुचक्रकी अधिष्ठात्री देवी धेनु माता हैं और कृषिचक्रकी धरती माता। पशुचक्रसे प्राप्त होनेवाले लाभ गोरक्षापर निर्भर हैं और कृषिचक्रसे होनेवाले लाभ कृषिके विकासपर। ये दोनों चक्र सदा एक दूसरेको शक्ति पहुँचाते हुए विश्वकी सर्वाङ्गीण उन्नतिमें योग देते रहते हैं।

चित्रमें जो 'गोरक्षा' और 'कृषि' नामक दो वृत्त हैं, उनके भीतर ध्यानपूर्वक दृष्टिपात करनेसे पशुचक्र और कृषिचक्रके उपयोग एवं पारस्परिक सहयोगका रहस्य स्पष्ट-रूपसे समझमें आ जायगा। उक्त दोनों चक्र षड्दल कमलके रूपमें अङ्कित किये गये हैं। पहले पशुचक्रके छहों दलोंका विवरण उपस्थित किया जाता है। ऊपरवाले दलमें धेनु मातासे होनेवाले बछड़ेका उपयोग दिखाया गया है। गायका समुचित रूपसे पालन-पोषण होनेपर वह उत्तम बछड़ा पैदा कर सकती है। बछड़ा आगे चलकर यदि बनाया जाय तो उत्तम साँड़ बन सकता है, जिससे गोवंशकी रक्षा और वृद्धि होगी। यदि बछड़ेको बैल बना लिया गया तो वह खेती और वाहनके काम आ सकता है। इस प्रकार खेतीमें सहायक होकर पशु-चक्रके बछड़ेसे कृषिचक्रकी उन्नतिमें योग प्राप्त होता है। दूसरे दलमें पशुओंकी देख-भालका लाभ बताया गया है। पशुओंके आरामसे रहने और पालन आदिकी सुव्यवस्था होनेसे तीन प्रकारके लाभ होंगे एक तो अच्छी दुधारू गायोंके रहनेसे उत्तम दुग्धालयकी स्थापना हो सकती है। देख-भालसे उसमें किसी प्रकारकी गड़बड़का भय नहीं रहता। दूसरे अच्छे बलिष्ठ पशु तैयार होकर खेतीको अच्छे पैमानेपर बढ़ा सकते हैं। तीसरा लाभ यह है कि जो पशु स्वयं अपनी मृत्युसे मरेंगे, उनके चमड़ोंका संग्रह करके एक अहिंसक चर्मालयकी व्यवस्था की जा सकती है। दुग्धालयसे दूधका, खेतीसे अनाजका और चर्मालयसे चमड़ेकी बनी हुई वस्तुओंका व्यापार हो सकता है; जिससे अर्थकी प्राप्ति होगी। तीसरे दलमें खादकी उपयोगिता दिखायी गयी है। पशुओंके गोबर, गोमूत्र और रद्दी घास आदिको एकत्र संग्रह करके उससे अच्छी खाद तैयार की जा सकती है, जो धरतीकी उत्पादनशक्तिको बढ़ाकर और पौधोंके लिये खूराक पहुँचाकर कृषिकी उन्नतिमें योग देगी। चौथे दलमें मृत पशुओंके शरीरके अवशिष्ट भागकी उपयोगिताकी ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। अक्सर लोग मरे हुए पशु चमार आदिको दे डालते या फेंक देते हैं। यह उसका बहुत बड़ा दुरुपयोग है। मृतावशेष हड्डी और मांसको जमीनमें गाड़ देनेसे बहुत अच्छी खाद तैयार हो सकती है, जो खेतीकी उपजको बढाने-

में विशेष सहायक सिद्ध होगी और चमड़ोंका संग्रह करके अहिंसक चमड़े आदिके कारखाने खोले जा सकते हैं, जो आर्थिक उन्नतिके प्रधान साधन हैं। गोरक्षाका व्रत लेनेवाले प्रत्येक विचारशील मनुष्यको ऐसे ही कारखानोंके जूते आदि पहनने चाहिये। पाँचवें दलमें उत्तम बछियासे होनेवाले लाभकी ओर संकेत है। धेनु माताकी दो सन्तानें हैं—बछड़ा और बछिया। इनमें बछड़ेके उपयोगकी चर्चा प्रथम दलके वर्णनमें की जा चुकी है। अब बछियाका उपयोग बताया जाता है। उत्तम बछिया आगे चलकर बहुत अच्छी 'गाय' बन सकती है। वह दुधारू गाय होकर दूध देगी। स्वयं भी बछिया और बछड़ा पैदा करेगी और उसका दिया हुआ बछड़ा बलवान् वाहन होकर जगत्को सदा लाभ पहुँचाता रहेगा। इस प्रकार वह 'काम'का साधन प्रस्तुत करती हुई पशु-चक्रकी उत्तरोत्तर उन्नतिमें लगी रहेगी। छठे दलमें दूधके चमत्कारोंका दिग्दर्शन कराया गया है। वैज्ञानिक अन्वेषक खूब छानबीन करके इस निश्चयपर पहुँचे हैं कि दूधकी जोड़का दूसरा कोई खाद्य पदार्थ संसारमें नहीं है। शरीरको स्वस्थ, सबल और सुपुष्ट बनानेवाले सभी आवश्यक तत्त्व गोदुग्धमें पर्याप्त रूपसे पाये जाते हैं। उसमें ऊँचे दर्जेका विटामिन, स्नेह-पदार्थ, क्षार-पदार्थ और बढ़िया प्रोटीन मौजूद है। ऐसे सुधोपम गुणोंसे युक्त दूध या दूधसे बनने-वाले खाद्य पदार्थोंका सेवन करनेसे जगत्के स्वास्थ्यकी रक्षा हो सकती है। स्वास्थ्य-सुधार कौन नहीं चाहता। इस प्रकार धेनु माता पशुचक्र और कृषिचक्रकी उन्नतिके साथ-साथ मनुष्यके 'अर्थ' और 'काम'रूपी लौकिक पुरुषार्थोंको सिद्ध करती है।

अब कृषिचक्रपर दृष्टिपात कीजिये। इसके भी पूर्ववत् छः दल हैं। ऊपरवाले दलमें, जिसे प्रथम दल समझना चाहिये, धरतीसे उत्पन्न होनेवाले फल-फूल आदिकी उप-योगिता बतायी गयी है। फल-फूल और शाक-आदिमें उपयोगी विटामिनका अंश मौजूद रहता है। उनमें शर्कराकी प्रधानता होती है तथा क्षार-पदार्थकी भी कमी नहीं रहती। इस प्रकार उन्हें बहुत उपयोगी खाद्य माना गया है। ये वनस्पतिसे बनने-वाले खाद्य पदार्थ भी संसारके स्वास्थ्य-सम्पादनमें विशेष सहायक सिद्ध होते हैं; इस रूपमें इनसे 'काम'की सिद्धि होती है। दूसरे दलमें तिलहनके लाभोंका उल्लेख है। धरती माता हमारे लिये जो दूसरी उपयोगी वस्तु उत्पन्न करती है, वह तिलहन है। तिलहनसे तेल तैयार होता है। यह खाने और जलाने-के भी काममें आता है। इससे इत्र और दवा आदि भी बनते हैं। तिलहनमें जो स्निग्धता है, उसे तेलके रूपमें पृथक् कर लिया जाता है और सीठी बच जाती है। सीठीको खली कहते हैं, जो पशुओंके खानेके काम आती है। तेल आदि खाद्य पदार्थ उचित रूपसे उपयोगमें लेनेपर जगत्के स्वास्थ्य-की रक्षा करते हैं। दूसरी ओर तेलसे उद्योग-धंधोंको प्रोत्साहन मिलता है। तेल आदिके कारखाने चलते हैं। इस प्रकार तिलहनसे अर्थ और काम दोनोंकी सिद्धि होती है। साथ ही यह खलीके रूपमें परिणत होकर पशुचक्रकी भी पुष्टि करता है, क्योंकि खली पशुओंका बहुत उत्तम टानिक खाद्य है। खली खादके काम भी आती है। तीसरे दलमें खादकी चर्चा है। धरतीसे तीन प्रकारकी खाद तैयार होती है—नैसर्गिक खाद, नाइट्रोजन खाद और मिश्र खाद। ये तीनों ही खादें धरतीको अधिक उर्वरा बनाती हैं, इसकी उपजाऊ शक्तिको बढ़ाती हैं और इस प्रकार कृषिचक्रकी उन्नतिमें योग देती हैं। चौथे दलमें तन्तुके गुण दिखाये गये हैं। पाट, कपास और सन आदि तन्तुके अन्तर्गत समझे जाते हैं। इनसे पाट-कपड़ेकी बड़ी-बड़ी मिलों और चरखा-करघा आदि गृह-उद्योगोंको प्रश्रय मिलता है, जिससे महान् अर्थलाभकी सम्भावना रहती है। दूसरा फायदा यह है कि पाटसे हरी खाद तैयार होती है, जिससे कृषिचक्रको बल मिलता है। पाँचवें दलमें घास-चारेका उल्लेख है। धरतीमाता जो घास-चारा आदि उत्पन्न करती है, वह गौओं तथा अन्यान्य पशुओंका खास भोजन है। कुछ कालतक तो हरा चारा पशुओंके उपयोगमें आता है; फिर सूखनेपर भूसा, पुआल या सूखे चारेके रूपमें उसका संग्रह किया जाता है, जो सालभर गौओंके उपयोगमें आता है। साइलेज—दाबघाससे भी पशुओंका पोषण होता है। साथ ही घास-चारेसे मिश्र खाद भी तैयार होती है। इस प्रकार ये घास-चारे पशुचक्र और कृषिचक्र दोनोंके समान रूपसे पोषक होते हैं। छठे या अन्तिम दलमें खूराककी चर्चा की गयी है। धरतीसे गेहूँ, धान आदि अनाज, अरहर, चने आदि दालके काम आनेवाले अन्न, साग-तरकारी और ईख आदि उत्पन्न होते हैं, जो मनुष्योंके तो खास भोजन हैं ही, पशु आदिके भी उपयोगमें आते हैं। अतः एक ओर तो ये पशुचक्रकी पुष्टि करते हैं, दूसरी ओर उत्तम भोज्य प्रस्तुत करके मानव-जगत्का स्वास्थ्य सुधारते और सब तरहकी कामनाओंकी सिद्धिमें सहायक होते हैं। तीसरा लाभ यह होता है कि ईखसे गुड़ और चीनीके कारखाने चलते हैं और अन्नकी मंडीमें

अनाजका भी व्यापार होता है; इस प्रकार इन व्यवसायोंसे महान् 'अर्थ' की सिद्धि होती है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि गोदेवी और भूदेवी परस्परकी सहायतासे सुपुष्ट हो प्राणिमात्रके लिये अन्न और धन प्रस्तुत करती हैं। अन्नसे जगत्का स्वास्थ्य, जो सबको अभीष्ट है, सुरक्षित रहता है और धनसे अर्थ-सुलभ 'काम' की भी सिद्धि होती है। अतः गौ हमारे लिये लौकिक पुरुषार्थोंका—अर्थ और कामका अमोघ साधन है, इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता। अब पारमार्थिक पुरुषार्थ—धर्म और मोक्षकी सिद्धिमें गौका कहाँतक हाथ है, इस विषयपर विचार किया जाता है। गोदेवीकी कृपाद्वारा स्वास्थ्य और शक्तिसे सम्पन्न जगत् निष्काम धर्मके अनुष्ठानमें समर्थ होता है और उसके द्वारा परम मोक्ष प्राप्त कर लेता है। इस विषयको कुछ अधिक स्पष्ट करनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। धर्मका प्रधान साधन है स्वस्थ और नीरोग शरीर*—'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।' यहाँ धर्म उपलक्षण-मात्र है। वास्तवमें सभी पुरुषार्थ स्वस्थ शरीरद्वारा ही साध्य हैं। अतः गोमाता जगत्को स्वस्थ बनाकर अप्रत्यक्षरूपसे सभी पुरुषार्थोंके साधनमें योग देती है। उक्त चार पुरुषार्थोंमें धर्मका ही महत्त्व सबसे अधिक है। उसके साधनसे सभी कुछ सध जाते हैं। वही सकामभावसे करनेपर अर्थ और कामका साधक होता है—'धर्मादर्थश्च कामश्च' तथा वही निष्कामभावसे पालित होकर मोक्षकी प्राप्ति कराता है। धनके प्रमुख साधनोंमें कृषि, गोरक्षा और वाणिज्यका ही नाम लिया जाता है। इन तीनोंकी सफलता गोसेवापर ही निर्भर है। आज संसारके सामने सबसे बड़ी समस्या है अन्न और वस्त्रकी। गोदेवीकी उपेक्षासे ही यह जटिल समस्या हमारे सम्मुख उपस्थित हुई है। रूई और अनाज दोनों धरतीसे ही होनेवाली वस्तुएँ हैं; इनकी उत्पत्ति गोपुत्रों—बलिष्ठ बैलोंके ही अधीन है। जिन देशोंमें मशीनोंसे खेती की जाती है, वहाँकी चर्चा हम नहीं करते। भारतवर्षमें तो कितने ही युगोंसे गो-जाति ही अन्न-वस्त्रकी समस्याको हल करती आ रही है। इस मशीनोंके युगमें जब संसारकी व्यापारिक उन्नति बहुत बढ़ी हुई समझी जाती है, सोने-चाँदी सपने हो रहे हैं। किन्तु प्राचीन कालमें जब गोधनकी अधिकता थी, प्रतिदिन लाखों गौओंके सींगों और खुरोंमें सोने-चाँदी मढ़कर उन्हें दान कर दिया जाता था। उस समय धर्ममूलक अर्थका ही बाहुल्य था। कामकी प्राप्तिमें भी धर्मका बहुत बड़ा हाथ है। कामनाएँ दो प्रकारकी हैं—अर्थाधीन और दैवाधीन। बाजारोंमें बिकनेवाली सांसारिक सुख-भोगकी वस्तुएँ ही अर्थसे प्राप्त हो सकती हैं। धन किसीको पुत्र नहीं दे सकता, दैवी प्रकोपसे किसीकी रक्षा नहीं कर सकता। ये सब कामनाएँ धर्मसाध्य हैं। धर्मद्वारा उत्तम प्रारब्धका निर्माण करके अथवा कामनासिद्धिके प्रतिबन्धकोंको हटाकर अभीष्ट कामना प्राप्त की जा सकती है। गो-सेवासे 'अर्थ' और 'धर्म' दोनोंकी प्राप्ति होती है; अतः उसके द्वारा दोनों तरहकी कामनाएँ सिद्ध हो सकती हैं।

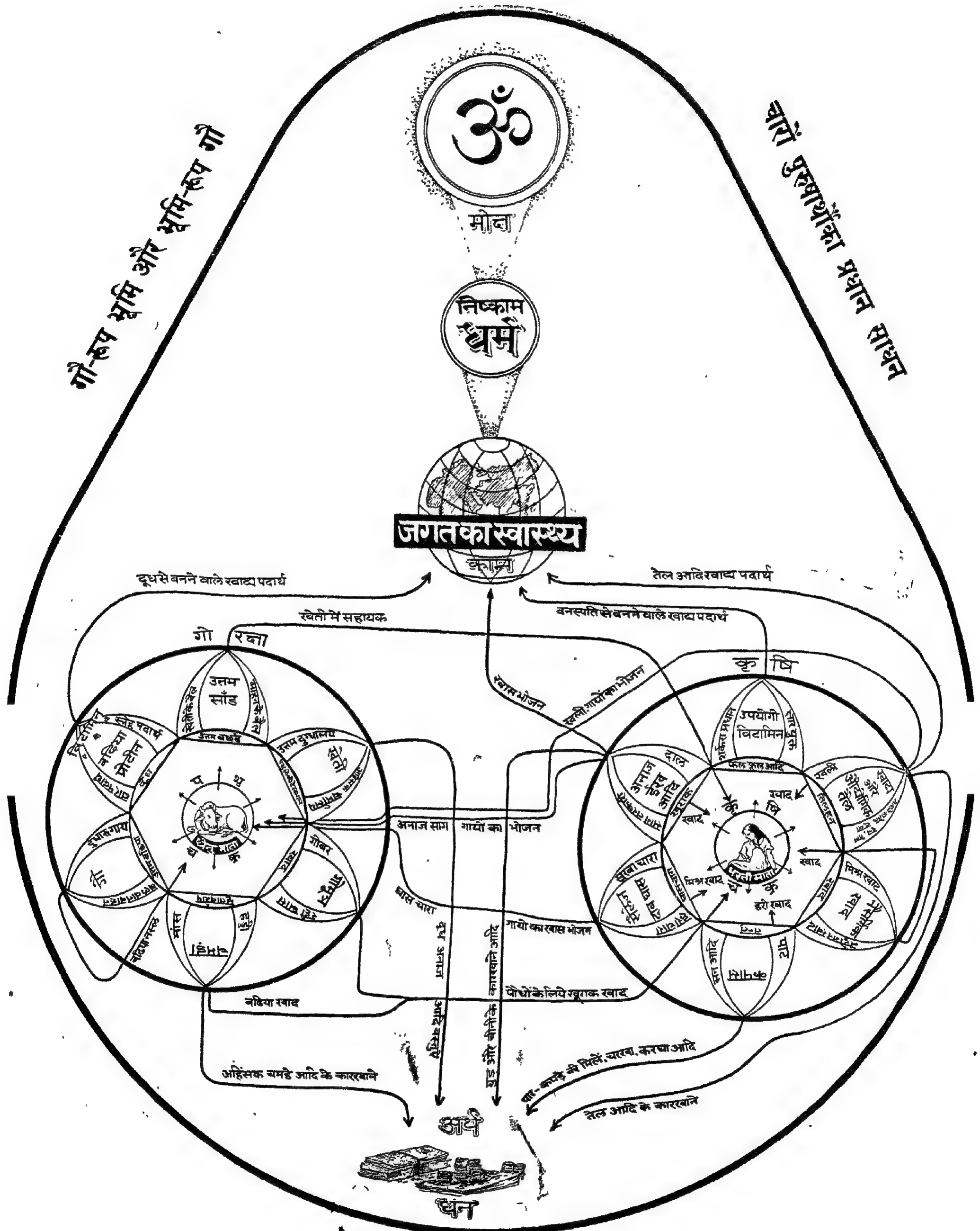
शास्त्रोंमें धर्मका आधिदैविक स्वरूप वृषभ बताया गया है। इस दृष्टिसे गौएँ धर्मकी जननी हैं। भगवान् श्रीकृष्णने तो इन्द्रकी पूजा बंद कराके गो-पूजाका प्रचार किया था, जो अबतक प्रचलित है। उन्होंने स्पष्ट कहा था—'गावोऽस्मद्दैवतं तात' ('गौएँ हमारे लिये देवता हैं)।' जिन्हें भगवान् भी देवता मानें, उनकी महत्ताके विषयमें अधिक क्या कहा जा सकता है। देवपूजासे भी गोपूजाका महत्त्व अधिक है। देवपूजासे किसी एक ही देवताको—जिसकी पूजा की जाती है, उसीको हम प्रसन्न कर सकते हैं; परन्तु गौओंकी सेवा और पूजासे सम्पूर्ण देवताओं तथा साक्षात् भगवान्की भी प्रसन्नता प्राप्त होती है; क्योंकि गौओंके प्रत्येक अवयवमें—रोम-रोममें देवताओंका निवास है। गोसेवाके अनेक प्रकार हैं। गौओंके रहनेके लिये उत्तम स्थानका प्रबन्ध करे, जहाँ सर्दी, गर्मी, आँधी और पानीसे उनकी भलीभाँति रक्षा हो सके। भूमि ऐसी हो, जहाँ वे आरामसे बैठ सकें। उन्हें डाँस-मच्छरोंसे बचानेका भी पूरा ध्यान रक्खे। मौसमके अनुकूल उनके खान-पानकी अच्छी व्यवस्था करे। उनकी प्रत्येक सेवामें स्वार्थको छोड़कर धर्मको ही आगे रक्खे। ऐसा न हो कि दूध कम देनेके कारण उनकी खूराक ही कम कर दी जाय, उन्हें भूखों रखकर कष्ट दिया जाय। ऐसा करना महान् पाप है। उनके घूमने और चरनेकी अच्छी व्यवस्था हो। उन्हें ठीक समयपर घास-भूसा, दाना और पानी मिलते रहें—इस बातकी ओर पूर्ण ध्यान रक्खा जाय। उनके शरीरको सहलावे, प्रतिदिन सबेरे-शाम उन्हें प्रणाम करे। रातमें

* प्रत्यक्ष गो-सेवा तथा गो-सेवा-मूलक (गौ और भूमि तथा उनकी प्रजा समस्त प्राणीकी सेवा बने इस) बुद्धिसे जितने भी कार्य होते हैं, उनसे चित्तशुद्धिरूप मानसिक स्वास्थ्य तथा मनकी सर्वसिद्धिप्रदायिनी एवं परमपुरुषार्थ मोक्षकी ओर ले जानेवाली नीरोगता प्राप्त होती है—यह शास्त्रसिद्ध है।

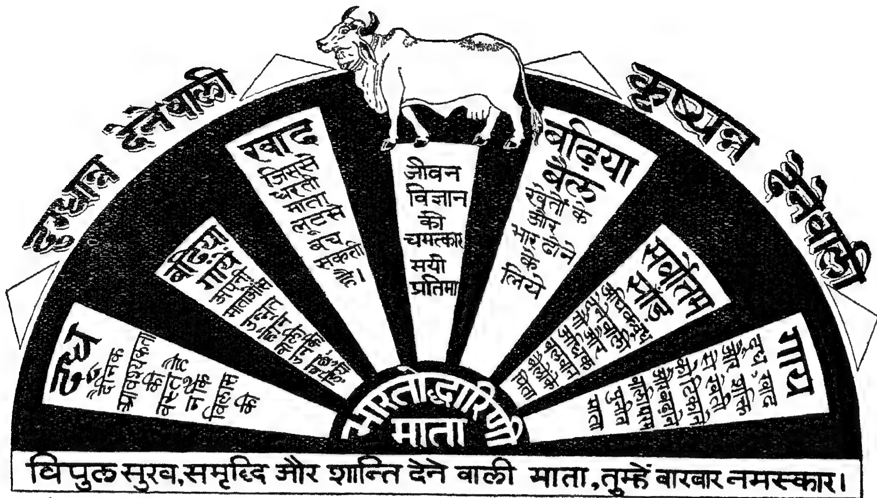
गौओंके ही पास सोये, वहाँ दीपक जलावे। प्रतिदिन रसोई-मेंसे पवित्र अन्न निकालकर उन्हें ग्रास अर्पण करे; देवबुद्धिसे उनकी पूजा करे। उन्हें जूँठी अपवित्र वस्तुएँ खानेको न दे। उनके रहने और खाने-पीनेके स्थानको झाड़-बुहारकर साफ रक्खे। जहाँ गोशाला होती है, गौएँ रहती हैं, वहाँ सभी तीर्थों और देवताओंका वास होता है; अतः उसे देवस्थान समझकर स्वच्छ एवं पवित्र रक्खे। गौओंको लात न दिखावे, कभी उनपर प्रहार न करे। उनकी ओर थूके नहीं। गौओंके स्थानके समीप मल-मूत्र न करे, गंदगी न फेंके। गौओंकी ओर पैर करके न सोये। पुण्यपर्वके दिन फूल-मालासे अलङ्कृत करके गौओंकी पूजा करे। उन्हें इतना न दुहे, जिससे बछड़ेको दूध ही न मिले। इस प्रकार सावधानीके साथ गोसेवा करनेवाला मनुष्य धर्मके उत्तम फलको पाता है।

जो लोग स्वार्थ या लोभके वशीभूत होकर गौओंके कष्टकी ओर ध्यान नहीं देते, वे महापापी हैं। जिनके सहयोग या प्रेरणासे गौएँ कसाइयोंके घर पहुँचती हैं, वे अनन्त कालतक नरकोंके कष्ट भोगते हैं। वे कसाई, जो धर्मान्धताके कारण या मोहवश आजीवन इस क्रूरकर्मके द्वारा जीविका चलाते हैं, उनकी परमात्माके दरबारमें कैसी भयङ्कर दुर्गति होती है—इस बातकी ओर उनका ध्यान नहीं जा रहा है। हिंदू, मुसल्मान, ईसाई—कोई भी क्यों न हो, गौएँ सबकी माता हैं। गौओंसे सबका जीवन चलता है। गौओंका दूध सभी पीते हैं और गौओंकी कमाई सब खाते हैं। इतना होनेपर भी जो गोमाताके पालन और रक्षाकी ओर ध्यान नहीं देते, उलटे उनका वध करके उन्हें उदरस्थ कर लेते हैं, वे राक्षसों तथा पिशाचोंसे भी गये-बीते हैं। उन्हें उस ईश्वरीय कोपका सामना करना पड़ेगा, जिससे बढ़कर भयङ्कर कुछ है ही नहीं। जो लोग फैशनके पुजारी हैं और पैरोंमें मुलायम जूते ही पहनना पसंद करते हैं, उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि उन्हींके कारण आज जूतोंकी फैक्ट्रियोंके लिये अनगिनत बछड़ोंके प्राण इतनी निर्दयताके साथ लिये जाते हैं जिनकी चर्चा करने मात्रसे हृदय काँप उठता है, लेखनी शिथिल हो जाती है; उन्हें इस महापापमें पूरा-पूरा हिस्सा बँटाना पड़ेगा। परलोकमें जब भयानक यमयातना भोगनी पड़ेगी, उस समय यह फैशन उनकी रक्षा नहीं कर सकेगा। अतः गौओंकी सब प्रकारसे सेवा और रक्षा करना ही मनुष्यमात्रका परम कर्तव्य एवं उत्तम धर्म है। वेदों और स्मृतियोंमें गौओंकी बड़ी भारी महिमा गायी गयी है। उनके सेवन और संरक्षण-जनित धर्मकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गो-सेवासे अर्थ और कामकी प्राप्तिके साथ ही परम दुर्लभ धर्मकी भी सिद्धि होती है। वह धर्म यदि निष्कामभावसे युक्त हो तो वही चित्तशुद्धिके द्वारा परम मोक्ष या परमानन्दकी प्राप्ति करा देता है। कोई भी शुभकर्म किया जाय, यदि उसमें आसक्ति, फलेच्छा, अहंता और ममताका अभाव है तो वह गीतोक्त प्रणालीके अनुसार 'कर्मयोग' बन जाता है। तथा उसका अनुष्ठान करनेवाले मनीषी पुरुष जन्म-मृत्युरूपी बन्धनसे मुक्त हो अनामय परम पदको प्राप्त हो जाते हैं—'जन्मबन्ध-विनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम्।' जब सभी शुभकर्मोंकी यह स्थिति है, तब गोसेवाके द्वारा मोक्ष होनेमें क्या सन्देह हो सकता है? गोसेवा वेदशास्त्रानुमोदित सर्वोत्कृष्ट दिव्य कर्म है। साक्षात् भगवान्‌ने भी गौओंकी सेवा तथा आराधना करके उनका महत्त्व बढ़ाया है। उन्होंने उपदेश और आचरण दोनोंके द्वारा गोसेवाका आदर्श हमारे सामने उपस्थित किया है। गोसेवासे भगवदाज्ञाका पालन होता है, अतः गौओंके साथ-साथ भगवान्‌की भी प्रसन्नता प्राप्त होती है। भगवान्‌के प्रसन्न होनेपर मुक्तिकी क्या बिसात है जो न मिले। वह तो गोभक्त तथा भगवद्भक्त पुरुषके चरणोंकी दासी बन जाती है। वास्तवमें गोसेवा स्वभावसे ही भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म है। उसका अनुष्ठान करनेवाला साधक 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।' के अनुसार निश्चय ही भगवान्‌का सान्निध्य प्राप्त करता है। इस प्रकार गोमाता मानव-जगत्‌को पुरुषार्थ-चतुष्टयकी प्राप्ति करानेमें सर्वाग्रगण्य है, यह जानकर सबको सदा उसकी सेवा तथा रक्षामें संलग्न रहना चाहिये।



गायसे पुरुषार्थ-चतुष्टयकी सिद्धि



गवादेश
COW DECALOGUE





गो-उद्धारके लिये दस आदेश

मनु महाराजने जिस प्रकार दस प्रधान धर्म बतलाकर उनके पालन करनेका आदेश (Decalogue) सबको दिया है, वैसे ही यहाँ गो-उद्धारके लिये दस आदेश—गवादेश (Cow-Decalogue) गोविज्ञानशास्त्रके अनुसार बतलाये गये हैं। गायको यदि ये दस बातें मिल जायँ तो आज ही यहाँ गायोंका हरा-भरा मधुर मनोहर नन्दनवन बन जाय।

१. **शुद्धि**—गौके बीजकी शुद्धि। बढ़िया नस्लको खोजकर उसकी पूरी देख-भाल रक्खो। (Strain)

२. **सद्भाव**—गौके लिये ममत्व, प्रेम, सद्व्यवहार, सुख, सन्तोष और शान्तिका पवित्र वातावरण बना दो। (Solace)

३. **स्थिरता**—गौ दूसरे ही ब्यानमें उतर न जाय, बरं वह और उसकी सन्तान बढ़े और कायम रहे—इसका ध्यान रक्खो। (Stability)

४. **सत्त्व**—गौकी दूध देनेकी तथा जीवनकी खास शक्तिको सुधारो और उसको बनाये रक्खो। (Stamina)

५. **समत्वापादन**—गायके दूध-घीका कस, उसके रूप-रङ्ग-संगठन, ब्यान और उत्पादन आदिके सम्बन्धमें एक नियत भूमिका—समस्थितिकी रक्षा करो। (Standardization)

६. **सरस चारा**—बाजरे, मकई आदिके हरे-हरे पौधे, हाथीघास, गिनीघास आदि जातिके बढ़िया चारेकी व्यवस्था करो। (Soilage)

७. **दाबघास**—कोठार, कूप या खाईमें दबाकर घास पकाओ और सूखी मौसिममें गौओंको उसे भी खिलाओ। (Silage)

८. **सत्त्वाहार**—दाना, गुड़, खली, रेंड़, गुँवार आदि पुष्टिकारक खाद्य गौको दो। (Substantials)

९. **स्वाद**—चारे-दानेके साथ उचित परिमाणमें क्षार नमक, सेंधा नमक, आयडीन, पोटाश और चूना आदि दो। (Salts)

१०. **सफाई**—जिससे आरोग्यता और स्वास्थ्यकी रक्षा हो, ऐसा नीरोगी वातावरण और सुख-सुविधावाले सफाईके साधन संग्रह करो और वैसा ही जीवन बनाओ। (Sanitation)

ये दस गो-उद्धारके प्रधान साधन हैं। इस ओर ध्यान दीजिये और गौओंके लिये साक्षात् गोकुल बनाइये। इसीमें जीवन है और इसीमें उद्धार, सफलता और समृद्धि है तथा इसीमें परम पुण्य है। (डा० जा०)

पुनरुत्थानके लिये दस आदेश

१. **स्वाश्रय**—परावलम्बनकी नीति त्याग कर स्वावलम्बी बनो। (Self-Sufficiency)

२. **संयम**—मन और इन्द्रियोंको वशमें रक्खो। किसी भी बातमें उखड़ो, बहको, बहलो मत। (Self-Restraint)

३. **स्वात्मार्पण**—जाति और देशकी भलाईके निमित्त हरेक त्यागके लिये तैयार रहो। (Sacrifice for Community)

४. **ग्राम्य-संयोजन**—ग्राम-सुधार और ग्राम-संगठनकी चेष्टा करो। (Rural Planning)

५. **सेवा-सहयोग**—जन-साधारणकी सेवा और सत्कार्यमें हिस्सा बटानेको सदा तैयार रहो। (Public Spirit Fellowship)

६. **संस्कृति**—राष्ट्रीय, बौद्धिक और परम्परागत संस्कृतिकी रक्षा करो। (National, Rational and Traditional Culture)

७. **सहकारी सदुद्योग**—वास्तविक और ठोस उद्योग-धंधेकी व्यवस्था करो। (Substantial Industry)

८. **बहुगुणित-सहकार**—सब प्रकारसे सबके साथ परस्पर सहयोग करो।

९. **संचय**—मितव्ययिताके द्वारा अर्थका सञ्चय करो। (Thrift)

१०. **प्रौढशिक्षण**—प्रौढ़-शिक्षाकी व्यवस्था करो। (Adult Education)

इन दस आदेशोंका यथायोग्य पालन होनेसे देशवासी अपनी गिरी दशासे पुनः सहज ही उठ सकते हैं। (डा० जा०)

गाय और भैंस

(लेखक—श्रीधर्मलालसिंहजी)

हमारी प्रतिदिनकी बहुत-सी ऐसी क्रियाएँ हैं, जिनसे राष्ट्रकी बड़ी हानि होती है; पर हम उन कुक्रियाओंके अनिष्टकारक फलको जाननेकी तनिक भी चेष्टा नहीं करते। यही बात भैंस-पालनके सम्बन्धमें है। लोग नहीं जानते कि इससे भारतवर्षका कितना और कैसे अपकार हो रहा है। महात्मा गान्धीजीने इस भयंकर क्षतिकी ओर लोगोंका ध्यान तो आकृष्ट किया। परन्तु वे इस आन्दोलनको राजनैतिक उथल-पुथलके सिलसिलेमें विकसित नहीं कर सके। कुत्ता हड्डी चबाता है। उसकी रगड़से उसका मुँह लहूलुहान हो जाता है। लहू स्वादमें नमकीन होता है। मूर्ख कुत्ता समझता है कि यह हड्डीका ही स्वाद है। यही हालत है भारतवासियोंकी भैंस-पालनके सम्बन्धमें। बम्बई-सरकारके पशु विशेषज्ञ स्व. ई. जे. ब्रूएन आई. ए. एस्. ने एक बार अपने एक वक्तव्यमें भैंससे होनेवाली हानिकी ओर जनताका ध्यान आकर्षित किया था—'भैंसका दूध लोग इसलिये अधिक पसंद करते हैं कि उसमें अधिक चिकनाई है। पर भैंसके दूधके प्रति यह अधिक रुचि इस देशके गो-वंशकी वृद्धिपर अपना पूरा प्रभाव डाल रही है।' वस्तुतः जितना नुकसान गो-वंशकी तथा कृषिका भैंसने किया है, कदाचित् ही उतना और किसीने किया हो।

भैंसका पालन किसी भी देशमें नहीं होता और न उसका दूध ही कहींके लोग व्यवहार करते हैं। दक्षिणी चीन, फिलिपाइन द्वीप-पुञ्ज तथा भारतवर्ष ही ऐसे देश हैं, जहाँ भैंस भी पाली जाती है। प्राचीन भारतमें भैंस नहीं थी। वेदोंमें भैंस-पालनका उल्लेख नहीं है। वेदोंने गायकी बड़ी महिमा गायी है। उसको 'अघ्न्या' कहा है। गायोंकी उत्पत्तिके विषयमें वेदोंमें सुन्दर वर्णन है! सृष्टिके निर्माणमें सर्वप्रथम गाय उत्पन्न हुई। इसलिये वेद इसको 'अग्रजा' कहते हैं। गायके पश्चात् मनुष्य आये। गायोंके 'म्हाँ' शब्दके सहारे मनुष्य बोल सके। अतः वेदोंकी टिप्पणीमें श्रीसायणाचार्यने लिखा है कि मनुष्यको गायसे बोली मिली। सबसे पहले ऋग्वेद प्रकट हुआ। उसमें 'गौर्मे माता' कहा गया है, जिसका अर्थ हुआ—'गौ हमारी माता है।' गाय दुहनेवालीको वेदोंमें 'दुहिता' कहा है, जो हमलोगोंकी प्यारी पुत्रीके लिये पर्यायवाचक शब्द है।

वेदोंके समान कुरान, बाइबिल, बौद्ध-पिटक, जैन-ग्रन्थ, सिक्खोंके 'गुरु-ग्रन्थ', जिन्दाअवेस्ता आदिमें भी भैंसके लिये कोई स्थान नहीं है। सिर्फ आदि मिश्र-निवासियोंकी धार्मिक क्रियाका जहाँ वर्णन आया है, वहाँ लिखा है कि वैतरणी नदीको गायकी पूँछ पकड़कर पार जानेवाले हिंदुओंके समान मिश्र-निवासियोंका भी विश्वास था कि मरनेके बाद आत्माको स्वर्गके लिये नील गायकी अथवा भैंसकी पूँछ पकड़कर पार उतरना पड़ता है। बस, धार्मिक ग्रन्थोंमें भैंस-का सिर्फ यही वर्णन आया है।

भैंसकी उत्पत्तिके विषयमें विचित्र दन्त-कथाएँ हैं। कहते हैं कि अत्यन्त प्राचीन कालमें 'नन्दिनी' नामक गायके लिये एक बार वसिष्ठजी और विश्वामित्रजी झगड़ पड़े। विश्वामित्रजी हार गये और उन्होंने रंजमें आकर घोर तपस्या की। फिर तपोबलसे दूसरी सृष्टिकी रचना की। तब 'गाय' से सामना करनेके लिये उन्होंने भैंसका निर्माण किया। तभीसे भैंस भारतमें आयी और शनैः-शनैः उसका विस्तार हुआ। अब तो वह भारतके कोने-कोनेमें छा गयी है और गाँव-गाँवसे गायोंको हटा रही है। बहुत-से गाँव तो गायोंसे एकदम खाली हो गये हैं और वहाँ भैंसें आ गयी हैं। भैंसकी उत्पत्तिके बारेमें दूसरी दन्तकथा भी है। श्रीवालजी गोविन्दजी देसाईने 'गोरक्षा-कल्पतरु' नामक पुस्तकमें इसकी चर्चा की है। उसमें उन्होंने श्रीकाका साहेब कालेलकरके उस पत्रका हवाला दिया है, जिसमें उन्होंने भैंसकी उत्पत्तिके विषयमें दक्षिणमें प्रचलित दन्त-कथाका उल्लेख किया है। वह यों है—

'दक्षिणके गाँवोंकी अधिष्ठात्री देवी—लक्ष्मी पहले जन्ममें ब्राह्मणकी लड़की थी। ब्राह्मणने चारों वेदोंमें निष्णात और सभी प्रकार ब्राह्मण-सा मालूम पड़नेवाले एक आदमीसे उसका विवाह कर दिया। उस लड़कीको पीछे चलकर पता चला कि उसका पति अन्त्यज है। किसी ब्राह्मणके घर झाड़ू देते-देते उसने वेद-मन्त्र सुनकर याद कर लिये थे। सुन्दर और बुद्धिमान् होनेके कारण उसने ब्राह्मणोचित सब कर्म—संस्कार आदि सीख लिये थे और वह बाहरसे अच्छा ब्राह्मण बन गया था। यह जानकर लड़कीको दुःख हुआ और वह सीधी पिताके पास आयी। उसने अपने पितासे पूछा—'यदि कोई मिट्टीका बर्तन अपवित्र हो जाय तो उसे कैसे शुद्ध

करना चाहिये ?' पिताने जवाब दिया—'ऐसा अशुद्ध बर्तन आगमें जलाकर ही शुद्ध किया जा सकता है।' लड़की घर लौट गयी और चिता सजाकर उसमें जल मरी। इस सत्यके प्रतापसे वह दूसरे जन्ममें लक्ष्मी हुई और घर-घर पूजी जाती है और वह ब्राह्मण मरनेपर भैंसा हुआ; इसीलिये लक्ष्मीके आगे भैंसेका बलिदान होता है।'

गायपर महान् संकट आया है। उसका स्थान बड़े जबरदस्तरूपसे भैंस ले रही है। हमारा धर्म बतलाता है कि राष्ट्रके हितके ख्यालसे भैंसका पालन और संवर्द्धन त्याग देना चाहिये। केवल गो-सेवाकी जवाबदेही लेनी चाहिये; क्योंकि उसीमें धर्म-पालन है। भारतवर्ष केवल कृषि-प्रधान देश ही नहीं है बल्कि शाकाहारी भी है। घनी आबादीके कारण अन्य देशोंकी तरह यहाँ मशीनसे खेतीका कार्य सम्भव नहीं है। वर्षाके आधिक्यके कारण घोड़े आदि भी इस कामके लिये उपयुक्त नहीं हैं। उष्णताके कारण भैंससे भी ठीक कार्य नहीं चल सकता। इसलिये अत्यन्त प्राचीन कालसे गो-वंशका ही व्यवहार यहाँके लिये उपादेय सिद्ध हुआ है। गाय भारतके शरीरकी सचमुच रीढ़ तथा किसानीकी कुंजी है।

भारत-सरकार बराबर इस बातकी शिकायत करती है कि भारतवर्षमें पशुओंकी अवस्था दिनोंदिन गिरती जा रही है, फलतः दूध कम होता जाता है और अच्छे बैल नहीं मिलते। सरकार इसका कारण यह बताती है कि दुनियामें जितने पशु हैं, उनके एक तिहाई भारतमें ही हैं। इसलिये इतने अधिक पशुओंके लिये यहाँ उतना पूरा चारा नहीं है, जिससे उनका पूर्ण पालन हो सके। यह बात ठीक है कि भारतवर्षमें जितने पशु हैं, उनका अनुपात संसारके पशुओंकी संख्याका एक तिहाई है। पर मनुष्योंकी संख्यापर विचार करनेसे मालूम होगा कि उसके अनुपातसे यहाँ पशु बहुत कम हैं। सरकार प्रति पाँचवें वर्ष पशु-गणना कराती है। पाँचवीं गणना सन् १९४० में हुई थी। उसके अनुसार समस्त भारतमें गाय और भैंसोंकी संख्या निम्न-प्रकार है। यह भी ध्यान रहे कि इसमें संयुक्त-प्रान्त और उड़ीसाकी संख्या सम्मिलित नहीं है; क्योंकि वहाँ गणना नहीं हो सकी।

गो-वंश		भैंस-वंश	
साँड़-बैल	५,१९,१४,३७१	भैंसा	५१,७४,६८७
गाय	४,४७,९८,७३१	भैंस	१,७५,०६,६४२
बछड़े	३,८०,४४,२७१	पड़वा-पड़िया	१,३०,७९,१८६
योग—	१३,४७,५७,३७३	योग—	३,५७,६०,५१५

ऊपरके आँकड़ोंको ध्यानपूर्वक देखिये। बैल-साँड़ तथा गायकी संख्या देखनेसे मालूम हुआ है कि लगभग ७० लाख गायोंको लोग मारकर खा गये। भैंसा और भैंसकी संख्याका मिलान करनेसे पता लगता है कि लगभग सवा करोड़ भैंसे अधिकांश अपालन और सख्त मेहनतसे घुल-घुलकर मर गये और कुछ मांसके लिये मार डाले गये। भैंसेकी हत्याका कारण वही है, जो यूरोपमें बैलका। बैल यूरोपमें खेती और लादनेके काममें नहीं आते, और भैंसे भारतमें इन कामोंके लिये निकम्मे हैं। भैंसोंकी संख्यामें पूर्व गणनासे वृद्धि हुई है; उस समय १,३१,३७,७७४ भैंसें थीं, जो अब पौने-दो करोड़ हो गयी हैं। पता चला है कि गायें घट रही हैं और भैंसें बढ़ रही हैं। इस अनुपातसे यदि वे घटती-बढ़ती चलीं तो १५-२० वर्षमें गो-वंशका सर्वनाश हो जायगा।

भारतवर्ष गरीब देश है। दूधके लिये और खेतीके लिये अलग-अलग पशु पालनेमें घाटा है। इस घाटेसे बचनेके लिये एक-न-एक दिन गाय और भैंसमें-से किसी एक पशुको चुनना होगा। इसलिये विचारना है कि हमको किस एक पशुको रखना चाहिये, जिससे हमारे दूध और खेती दोनों कार्य मजेमें चल सकें।

बैलके बिना कृषकोंका काम नहीं चल सकता। यह अनुभवसिद्ध है कि उसके स्थानपर भैंसा किसानी और लदनी आदिके काम नहीं कर सकता। इसलिये गायको ही पालना और बढ़ाना अच्छा है; क्योंकि वह भैंससे कम खाती है तथा भैंससे अधिक दिन जीवित रहती है। भैंस गायसे दुगुनेसे भी अधिक खाती है। उसका पड़वा जल्दी मर जाता है। इसलिये यदि हम साढ़े-तीन करोड़ भैंस-वंशको स्वतन्त्र छोड़ दे सकें तो उसका अर्थ हुआ कि हम सात करोड़ गो-वंशके लायक चारा बचा सकेंगे। फिर हमारी गायोंकी दयनीय अवस्था बदलते देर न लगेगी।

गाय और भैंसके गुण-दोषोंका तुलनात्मक विवेचन

गाय

१. गाय आर्य-संस्कृतिकी पोषक, पुण्य-दर्शन तथा दैवी सम्पत्ति है।

२. गायके शरीरपर हाथ फेरनेसे उम्र बढ़ती है एवं तेजस्विता आती है और खूँटेपर बराबर खाती रहे तो वह सौख्य और शान्ति बढ़ाती है।

३. गो-वंश बैलरूपमें मृत्युञ्जय (मृत्युको जीतनेवाले महादेव जी) की सवारी है।

४. गायकी पूँछ पकड़िये, अथाह जल पार करा देगी; इसलिये वह वैतरणी पार करानेवाली है।

५. गायका बछड़ा खेती, लदनी आदिके काम पानी, धूप, जाड़े—सभीमें बहुत कालतक कर सकता है। वह 'बलद' अर्थात् 'बलदाता' कहलाता है।

६. गाय कष्टसहिष्णु जीव है, अतः वह जल्दी बीमार नहीं पड़ती।

भैंस

१. भैंस म्लेच्छ-संस्कृतिकी पोषक, अशुभ-दर्शन तथा आसुरी सम्पत्ति है।

२. भैंसके शरीरपर हाथ फेरनेसे मृत्यु निकट आती है; बराबर खूँटेपर बँधी रहनेसे दरिद्रता और अशान्ति बढ़ाती है। बात भी ठीक है। पहले-पहल उसके पास जाइये, उसकी देहसे एक प्रकारकी तीव्र दुर्गन्ध निकलती हुई मालूम होगी।

३. भैंसा अन्तक—यमराजकी सवारी है।

४. भैंसकी पूँछ पकड़िये, जलमें नीचे बैठ जायगी; इसलिये वह यमपुर ले जानेवाली है।

५. भैंसका पड़वा खेती, लदनी आदिके काममें एकदम निकम्मा है। यदि धूप होती है तो लदनीकी वस्तुओंको लेकर पानीमें बैठ जाता है। भैंसके पानीके जीव होनेके बहुत प्रमाण हैं। रावणके लिये यमराजका भैंसेपर पानी लाने, हेमचन्द्रका पुरुष-चरित्रमें भैंसेपर व्यापार-मण्डलीके लिये पानी ढुवाये जाने आदिका वर्णन हमारे प्राचीन ग्रन्थोंमें मिलता है। पूरा काम लीजिये तो वह साल-छः महीने ही जीता है।

६. भैंस अतितिक्षु और पानीका जानवर है, इसलिये जल्दी-जल्दी बीमार पड़ती है।

सरकारने गो-संवर्द्धनके विचारसे जगह-जगह डेयरी-फार्म खोल रक्खे हैं। वहाँ अधिकांशमें केवल गायें ही (युद्धकी परिस्थितिको छोड़कर) पाली जाती हैं। सरकार भैंस इसलिये नहीं पालती कि उसके सालभरके दूध और पालन-खर्चका दाम जोड़ा जाय तो बड़ा घाटा रहता है। भारत-सरकारने एक क्लब (Club) खोल रक्खा है। उसके रजिस्टरमें उसी गायका नाम दर्ज किया जाता है, जो एक ब्यानमें दस हजार पौंड दूध देती है। लेकिन उसमें भैंसकी भर्तीके लिये सिर्फ सात ही हजार पौंड रक्खा है। इससे सिद्ध हुआ कि सब मिलाकर गाय भैंससे अधिक दूध देती है; क्योंकि चाहे थोड़ा भी दूध दे, पर बहुत कालतक देती रहती है। गाय ९-१० मासमें ब्याती है और उसके सूखे कालका पालन-खर्च भी बहुत कम है। भैंस लगभग एक वर्षमें ब्याती है तथा उसके सूखे कालका पालन-खर्च बहुत अधिक है। गाय दस-ग्यारह मासतक दूध देती है; भैंस छः-सात मासतक ही। भैंस एक-दो मासके बाद अधिकतर एक वक्त दूध देनेवाली हो जाती है, क्योंकि उसके बच्चे बहुत मरते हैं। गाय कम खाती है; भूखे रहनेपर भी कुछ-न-कुछ दूध अवश्य दे देती है। वह तीन-चार बार दुही जा सकती है। ज्यादा बार दुहनेसे उसका दूध बढ़ता है। ब्यायी हुई गायमें भोजन पचानेकी अपूर्व क्षमता होती है।

भैंस गायसे करीब दुगना अधिक खाती है। थोड़ी भी भूखी रहनेपर वह दूध नहीं देती। जब वह दो बार भी कठिनतासे दुही जा सकती है, तो फिर अधिक बार दुहनेकी तो बात ही छोड़िये। ब्यायी हुई भैंसमें अधिक चारा पचानेकी शक्ति नहीं होती, उसे पेट फूलनेकी बीमारीका भय रहता है। गायका गोबर सुन्दर खाद है। लीपनेपर कीड़ेको मारता है एवं हवाको शुद्ध करता है। भैंसका गोबर तमाखूके लिये उपयुक्त खाद है, किसी तमाखू उपजानेवाले गृहस्थसे पूछ लीजिये। वह लीपे जानेपर कोई सुन्दर फल नहीं देता। गायके दूधसे साधारण खनिज पदार्थ शुद्ध किये जाते हैं। संखिया आदिके समान तीव्र जहरको शुद्ध करनेके लिये भैंसका ही दूध ठीक है। गो-मूत्र अमृत-तुल्य अमोघ दवा है। भैंसका मूत्र विष-तुल्य अमोघ जहर है। गायसे गोरोचन-जैसे सुन्दर पदार्थ तथा पञ्चगव्य-जैसे सुमधुर एवं सुपाच्य पेय प्राप्त होते हैं और उनसे यज्ञ, प्रायश्चित्त, प्रक्षालन आदि दिव्य कर्म सम्पन्न होते हैं तथा परम्पराप्राप्त मुक्तितककी भी प्राप्ति हो जाती है। भैंससे उपर्युक्त पदार्थ नहीं प्राप्त होते, उससे तो विपरीत फल मिलते हैं। जातिवन्त (Stud) साँड़से संयोग करानेपर गायके वंशका ही सुधार नहीं होता, उसकी दूध देनेकी शक्ति भी बढ़ जाती है। भैंसके साथ ऐसा प्रयोग करके कई बार देखा गया, उसके दूधमें कुछ भी फर्क नहीं पड़ा। गायमें असमयमें प्रसव कर जानेकी बीमारी बहुत कम होती है, पर भैंसमें यह बीमारी अधिक पायी जाती है। यह भी देखनेमें आया है कि भैंस पानीकी इतनी प्यारी होती है कि वह उसके भीतर ही प्रसव कर डालती

है और उसका बच्चा यों ही मर जाता है। गायका सात मासका बच्चा मनुष्यके बच्चेके समान जीता बच जाता है, परन्तु भैंसका ऐसा बच्चा नहीं बचता। तेज, बल, बुद्धि आदिकी उपमा जहाँ-जहाँ दी गयी है, वहाँ गो-वंशके ही नाम-का व्यवहार किया गया है, यथा 'वृषभस्कन्ध,' 'नरर्षभ' आदि-आदि। क्रोध, अल्हड़पन, बेवकूफी आदिकी उपमा भैंस-वंशसे दी जाती है—जैसे पड़ियाके ताऊ, महिरोसा, भैंसवार आदि। मिथिलाके गाँवोंकी कहावत है—

गायक चरवाह रिमि-झिमि,
भैंसक चरवाह चोर।
बरदक चरवाह बाटा सुअर
साँझे आँखि निपोर॥

अर्थात् गायका चरवाहा हरिनके समान उछलता है, भैंसका चरवाहा चोर है तथा बैलका चरवाहा इतना थकता है कि जल्दी सो जाता है। गायको चरानेमें बुद्धि-विकासकी कुछ विचित्र शक्ति है; तेज, प्रज्ञा, बल आदि सभी गुण इससे प्राप्त होते हैं। इसके अनेक उदाहरण हैं। श्रीकृष्णकी बाल-लीला, नानक, ईसा और बाप्पा रावलका गोचारण आदि परम उल्लेखनीय हैं। दक्षिणमें भी कहावत है—

'गाय गायत्री, महिषी सावित्री, बैल ब्राह्मण, रेडा पापी।' अर्थात् भैंसा पापी है। भैंसके प्रति १०० बच्चोंके पीछे ७५ बच्चे मरते हैं, जब कि गायके केवल २५ ही।

गाय-भैंसके दूधोंका वैज्ञानिक विश्लेषण

गायका दूध मधुर, स्निग्ध, शीतल, वात-पित्त-कफनाशक, फेफड़ेके लिये लाभकारी, क्षयरोगको दूर करनेवाला तथा नल और नाड़ियोंको स्निग्ध करनेवाला है। अस्थिमार्दव (Rickets) से क्षीण होनेवाले बालकके लिये गायका दूध अमृतके समान प्राणवर्द्धक है। जिन बालकोंके नेत्रोंकी ज्योति क्षीण हो गयी है या जो रक्तक्षय या पाण्डुरोगसे पीड़ित हैं, उनके लिये भी यह अत्यन्त उपकारी औषध है। बराबर सेवन करनेसे सभी व्याधियाँ दूर होती हैं, एवं बुढ़ापा जल्दी नहीं आता। धारोष्ण पीनेसे अमृत-तुल्य है, यह दो घंटेमें पचता है; किन्तु भैंसका दूध उपर्युक्त कई रोगोंके लिये तो बिल्कुल निकम्मा है तथा कई रोगोंपर कुछ लाभकारी है भी तो बहुत ही कम मात्रामें। वह मधुर, भारी, गर्म, वीर्यवर्द्धक, चिकना, कफ और वायुकारक, आलस्य पैदा करनेवाला, मन्दाग्निकारक तथा छूतकी व्याधियोंको बुलानेवाला है। धारोष्ण जहर है, नौ घंटेमें पचता है। पीनेसे नींद सताती है। अनिद्रा रोगमें औषधरूपमें दिया जाता है। उसमें बड़ी गर्मी रहती है।

वैज्ञानिक विश्लेषण

	पानी	स्नेह-पदार्थ	शक्कर	प्रोटीन	क्षार
गाय	८६·२७	४·८०	४·७८	३·४२	·७३
माता (मानवीय)	८७·४१	३·७६	६·२९	२·२३	·३१
भैंस	८२·१४	७·४४	४·८१	४·७८	·८३

ऊपरके आँकड़ोंसे आपको पता लगेगा कि गाय और माँके दूधमें बहुत सामञ्जस्य है; इसलिये गायके दूधमें थोड़ा पानी और चीनी मिला देनेसे मनुष्यके बच्चेका पालन मजे-में हो जाता है। क्यों न हो। गाय और माँकी प्रकृतिमें भी तो सामञ्जस्य है। दोनोंके नौ-दस मासमें बच्चा होता है तथा दोनोंके सात मासके बच्चे भी जीते हैं और आठ मासके मर जाते हैं। यही कारण है कि प्राचीन कालमें गो-दुग्ध पान करके ऋषिलोग संसारका कल्याण कर सके थे। सादे जीवन तथा उच्च विचारवाले महर्षियोंकी सन्तान हम आज चटोरपन-के अनन्य भक्त हो रहे हैं। हम शक्तिके लिये भोजन नहीं करते, बल्कि जीभके स्वादके लिये करते हैं।

दूधमें रहनेवाले स्नेह-पदार्थका जो विशेष मूल्य होता है, वह उसके पुष्टिकारक गुणके कारण है। तेल, चर्बी, मक्खन, घी आदि सब पदार्थ शरीरके अंदर जाकर एक-सा ही काम करते हैं। पर मक्खन या घीसे जो अधिक काम होता है, उसका कारण है मक्खन या दूधमें रहनेवाला विटामिन कैरोटिन (Carotine)। सहज पच सकने अथवा शरीरके द्वारा अधिक ग्रहण करने योग्य होनेके कारण घी-मक्खन अन्य स्नेह-पदार्थोंसे श्रेष्ठ नहीं माने जाते; क्योंकि नारियलका तेल घीकी अपेक्षा अधिक आसानीसे पच जाता है। इनकी श्रेष्ठता विटामिन कैरोटिनके ही कारण है, जो तेल-चर्बी आदिमें नहीं है। किन्तु यह नहीं भूलना चाहिये कि विटामिन कैरोटिन केवल गायके ही दूधमें है, भैंसके दूधमें तो नहीं-सा है। गायके दूधके स्नेह-पदार्थमें जहाँ यह २०

यूनिट है, भैंसके दूधके स्नेह-पदार्थमें २ यूनिटसे भी कम है। कैरोटिन ही विटामिनको स्थिर रखता है। यही कारण है कि गायके दूधमें 'ए', 'बी', 'सी', 'डी', 'ई' आदि सभी प्रकारके विटामिन हैं तथा भैंसके दूधमें जो मामूली विटामिन होता है, वह भी कैरोटिनके अभावमें सहज ही नष्ट हो जाता है। गायके दूधको उबालनेपर उसकी मलाईमें जो पीला रंग आता है, वह इस कैरोटिन पदार्थके ही कारण। कई लोगोंका अनुमान है कि यह पीला रंग वैसा ही है, जैसा कि मुर्गीके अंडेमें होता है तथा जिसके लिये आजके नवयुवक विकल हैं। भैंसके दूधमें यह पदार्थ नहीं है; इसलिये उसका नवनीत, मक्खन, घी एकदम सफेद होता है। इस सफेदीको ढकनेके लिये इसमें एक प्रकारका पीला रंग मिलाकर बहुत-से लोग बड़े शहरोंमें इसे गायके घीके नामसे ऊँचे मूल्यपर बेचते हैं।

गायके दूधमें रहनेवाला कैसीन (Casein) जल्दी पचता है। इसमें नाना प्रकारके नमक भी पाये जाते हैं, जिनसे भी पचनेमें सुगमता होती है। कार्बोहाइड्रेट् आदि भी इसमें प्रचुर परिमाणमें विद्यमान हैं।

अंग्रेजीमें एक कहावत है—Cow-milk and honey are the root of beauty (गो-दुग्ध और मधु सौन्दर्यके मूल कारण हैं)। गाय अपनी मुलायम रंग-बिरंगी चमड़ीद्वारा सूर्य-रश्मियोंसे बलवान् प्राण-तत्त्वोंका आकर्षण करके अमृतमय दूध देती है। यही कारण है कि गायके दूध, मक्खन आदि शरीरके विषको बाहर निकालकर उसे सब प्रकारसे स्वस्थ रखते हैं। डाक्टरोंका यह भी अनुभव है कि धारणाशक्तिको तीव्र बनाने तथा उसको टिकाये रखनेमें भी यह बहुत सहायक है। किन्तु ये सब गुण भैंसके दूधमें कहाँ। स्कॉटिश (Scottish) अनाथालयमें इसका प्रयोग करके देखा गया तो भैंसके दूध पीनेवाले बच्चे धड़ाधड़ बीमार पड़ने लगे! पूना 'एग्रिकल्चरल कॉलेज'के अध्यापक राय बहादुर जे० एल० सहस्रबुद्धेने इसका प्रयोग छोटे बच्चोंपर करके देखा था। उनकी रिपोर्टसे पता लगता है कि बच्चे मंदबुद्धि और रोगी होने लगे। गाय और भैंसके दूधका प्रयोग घोड़ीके बच्चोंपर भी करके देखा जा चुका है। जो बच्चे भैंसके दूधपर पले थे, वे सुस्त थे तथा गर्मी नहीं सहन कर सकते थे, और घोड़ोंके स्वाभाविक गुणोंसे रहित थे। डाक्टर एन० एन० गोडबोलेने भी भैंस और गायके दूधकी पूरी-पूरी खोज की है और बतलाया है कि कार्बोहाइड्रेट् आदि वर्तमान होनेके कारण गायकी मलाई ऐसी सुपाच्य और मानव-स्वभावके अनुकूल है कि तुरंत पचकर वीर्य उत्पन्न करती है। इसके विपरीत भैंसके दूधकी मलाईको पचानेके लिये मनुष्यकी अँतड़ियोंको बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। भोजन पचानेके लिये अँतड़ियोंमें नमक है, पर भैंसके दूधको पचानेके लिये वह पर्याप्त नहीं है। फलतः जिस नमकसे हड्डी बनती है, अँतड़ियोंको उसे हठात् भैंसके दूधको पचानेमें खर्च करना पड़ता है। यही कारण है कि छोटे बच्चोंको यह दूध नहीं पचता तथा इसके व्यवहारसे उनका यकृत् (Lever) बेकाम हो जाता है। साथ ही गायके घीमें आयोडीन (Iodine) है, जो भैंसके घीमें नहीं। उसमें विटामिन 'ए' बहुत है। वह जल्दी पचता है, दर्द और बीमारीके काममें आता है। ये सब बातें भैंसके घीमें कहाँ। हमलोग कितने मूर्ख हैं कि बच्चोंको भैंसका दूध पिला-पिलाकर उन्हें मन्दबुद्धि बना रहे हैं।

बहुधा यह प्रश्न उठाया जाता है कि भैंसके दूधमें गायके दूधसे दुगुनी मलाई होती है तथा भारतवर्षके दुग्धोत्पादनमें ५१ प्रतिशत भाग भैंसके दूधका ही है। राजकीय कृषि-अनुसन्धान-संघ (Government Agricultural Research Society) के 'पशु-जनन' (Cattle-Breeding) विभागका पाँचवाँ सम्मेलन सन् १९४२ के नवम्बरमें दिल्लीमें हुआ था। उसमें इन पंक्तियोंके लेखकने बिहार-सरकारकी ओरसे गैर-सरकारी सदस्य मनोनीत होकर भाग लिया था। वहाँ भी गाय और भैंसवाला प्रश्न उपस्थित हुआ। इन पंक्तियोंके लेखककी भैंस-विरोधी युक्तियोंके विरोधमें उड़ीसा सरकारके डिपुटी वेटिरिनरी डाइरेक्टर (Deputy Veterinary Director) डा० कोडाने ये ही बातें कही थीं। मद्रास-सरकारके भेड़-विशेषज्ञ मि० आर० डब्ल्यू० लिटलवुड (Mr. R. W. Littlewood) ने तो यहाँतक कहा था कि गाड़ीमें जब हम आ रहे थे, तब एक आदमीने हमको बतलाया कि देखो भैंस अनाजका 'बीरा' खा रही है। तात्पर्य यह कि वह मोटा, खराब और रद्दी चारा खाती है। गान्धीजीके गो-सेवा-संघके सदस्य सरदार बहादुर सर दातारसिंहने भी दबे जबान भैंसका थोड़ा पक्ष लिया था। उसी प्रकार आसाम और बंगालके सदस्योंने भी। ऊपरकी बातोंपर यदि ठंडे दिलसे विचार किया जाय तो धारणा बिल्कुल गलत निकलेगी। कल्पना कीजिये, एक रुपया खर्च करनेपर एक

लँगड़ा आम मिला और दो रुपये खर्च करनेपर दो खट्टे आम मिले, तो आप ही सोचें कि एक रुपयेवाला सौदा ठीक रहा या दो रुपयेवाला। भैंसके गायके दूधमें आधी मलाई है; पर गायके पालनमें भैंसके पालनसे खर्च भी तो आधेसे कम ही पड़ता है। गायके दूध-घीके गुणोंका चौथाई भाग भी तो इसमें नहीं है। 'स्वर्ण-भस्म' तो अत्यन्त कम मात्रामें खायी जाती है, तो क्या थालीभर दाल-भात उसकी बराबरी कर सकेंगे? भैंसको अलग कर यदि हम चारा बचा सकें तो उससे पलकर हमारी गायें खूब प्रचुर मात्रामें दूध देने लगेंगी और फिरसे पूर्ववत् दूधकी नदियाँ बहने लगेंगी। यूरोपमें गायके प्रतिसेर दूध पीछे जितनी मलाई निकलती है, वह हमारी गायोंकी मलाईके अनुपातसे आधी है। यदि भैंसके बिना उन लोगोंका काम चल सकता है, जो सिर्फ दूधके ही लिये गायें पालते हैं, तो दूध और किसानके लिये हमारा गायको पालना कितना बड़ा महत्त्व रखता है। दूसरी बात यह है कि 'भैंस मोटा-सोटा, रद्दी चारा खाती है।' पर अच्छी फसल चोरी करके चराते हैं—यह वे ही जानते हैं, जो देहातमें रहते हैं। साथ ही, एक भैंसको चरानेके लिये एक विशेष चरवाहेकी आवश्यकता है, लेकिन आठ-दस गायोंके लिये एक ही चरवाहा पर्याप्त है।

एक बात और है, वह है हत्याकी। अनुपयोगी होनेके कारण हम लाखों पड़वोंको मार डालते हैं, क्योंकि वे पानीके जीव होनेके कारण हमारी कृषिके कार्योंके लिये उपयुक्त नहीं हैं। श्रीवालजीने ठीक ही कहा है कि भैंसका घी जो हम खाते हैं, वह पड़वेकी चर्बी खाते हैं, तथा दूध जो पीते हैं, वह पड़वेके आँसू पीते हैं। पड़वेका बलिदान भी हमारे यहाँ पहलेसे इसी अनुपयोगिताके कारण प्रचलित है। जैन-कालके वर्णनमें राजगृहके एक कसाईका उल्लेख है, जो रोज ५०० भैंसे काटता था।

सारांश यह कि यदि हमें गायको बचाना है तथा किसानीकी उन्नति करना है तो हमें चाहिये कि हम धीरे-धीरे भैंसको हटा दें और उसके स्थानमें गायके दूधका ही व्यवहार करें। जबसे हमने गो-दुग्धका व्यवहार कम कर दिया है, तभीसे हमारा पतन होता गया है तथा हम शौर्य-वीर्य आदि गँवाकर गुलाम बन गये हैं। इस प्रकारका आन्दोलन महाराष्ट्र, मध्य-भारत तथा गुजरातमें गान्धीजीके कारण चल रहा है; पर अभीतक वह देश-व्यापी नहीं बन सका है। बिहारमें और विशेषकर तिरहुतमें भैंसका पालन बहुत होता है। बिहारी आन्दोलन करनेमें नाम पाये हुए हैं। कांग्रेस आदिके आन्दोलनमें उनका हाथ सर्वोपरि रहता है। क्या ही अच्छा हो कि इस अनर्थको दूर करनेके लिये यह आन्दोलन नवयुवकोंके प्रयत्नसे बिहार-व्यापी बन जाय!

उपर्युक्त विवेचनको पढ़कर किसीके मनमें यह विचार उत्पन्न हो सकता है—'इस प्रकार तो आप केवल गायकी उन्नति करना चाहते हैं। आपका यह प्रयत्न ऐसा ही है कि एकको डुबोकर दूसरेको उबारना। आपके इस प्रयत्नसे बेचारी भैंसका तो सर्वनाश हो जायगा।' ऐसे विचारोंके उत्तरमें हम स्वयं कुछ न कहकर महात्मा गान्धीजीके शब्द ही यहाँ उद्धृत कर देना अधिक उचित समझते हैं।

'अगर हम गायको बचा सकते हों तो भैंस भी बच जायगी।···मैं यह कहना चाहता हूँ कि आप और हम गायको न बचा सके तो गाय और भैंस दोनोंको नहीं बचा सकेंगे। और दोनोंको साथ-साथ बचानेकी कोशिश करना सम्भव नहीं है। साथ-साथ बचाने जायँगे तो भैंस गायको खा जायगी। इन दोनों जानवरोंमें अभीतक गायकी ज्यादा उपेक्षा की गयी है। इसलिये गायके बढ़ानेपर ही जोर देना चाहिये···।'

'बुद्धि मुझे विश्वास दिलाती है कि अगर मैं गायको बचा लूँ तो गाय और भैंस दोनोंको बचा लूँगा। अगर कोई मुझे विश्वास दिला दे कि गाय तो बच ही नहीं सकती और भैंसकी ही रक्षा होनी चाहिये तो मैं 'भैंस-सेवा-संघ' खोलनेको तैयार हूँ। लेकिन बात तो उलटी ही है। भैंसको विशेष संरक्षणकी जरूरत नहीं, गायको जरूरत है! भैंस और बकरी भी गायकी तरह ही मेरी माता हैं। मगर मैं जानता हूँ कि बेचारी बकरी तो बच ही नहीं सकती और गायको बचानेकी बड़ी जरूरत है और जब हम गायको बचा लेंगे तो भैंसकी रक्षा अपने-आप हो जायगी।'

क्रूरता महान् दुर्गुण है

भाँति-भाँतिकी क्रूरता एक ऐसा धिक्कारपात्र दुर्गुण है, जिसके विरुद्ध भलाईकी सभी शक्तियोंने विद्रोह खड़ा किया है।—सर ऑलिवर लाज



कबीर और गो-वध

(लेखक—पं० श्रीचन्द्रबलीजी पाण्डेय, एम्० ए०)

गो-वधसे कबीर कितने दुखी थे, इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं। 'इस्लाम'—नहीं-नहीं 'तुरुक' की यही बात उनको अति खटकती थी। कबीर इसे धर्म नहीं, स्वार्थ समझते थे। देखिये, किस परितापसे कहते हैं—

तुरकी धरम बहुत हम खोजा, बहु बजगार करै ए बोधा।
गाफिल गरब करैं अधिकाई, स्वारथ अरथि बधैं ए गाई॥
जाकौ दूध धाइ करि पीजै, ता माता कौं बध क्यूँ कीजै।
लहुरैं थकैं दुहि पीया खीरो, ताका अहमक भखै सरीरो॥
बेअकली अकलि न जानहीं, भूले फिरैं ए लोइ।
दिल दरिया दीदार बिन, भिस्त कहाँ थैं होइ॥

(अष्टपदी रमैणी)

कबीरदासने किस भावसे, किस वाणीमें किससे क्या कहा है—इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं। आवश्यकता तो यह जाननेकी है कि कबीर गो-माताके कितने ऋणी हैं और गोभक्षकको कितना मूढ़ समझते हैं। मूढ़ नहीं कृतघ्न! गौका जो उपकार हमपर है, उसे न मानना—उलटा उसके शरीरको चट कर जाना कबीरको नहीं जँचता। उन्हें तो इसमें विवेकका सर्वथा अभाव ही दिखायी देता है। होते-होते यहाँतक हो जाता है कि कबीरको फटकारकर कहना पड़ता है—

जब नहिं होते गाइ कसाई। तब बिसमल्ला किनि फुरमाई॥

(वही)

परन्तु क्या कभी इतनेसे ही किसी कमठ उदारकी तृप्ति हो सकती है? नहीं, निदान उनको इतना और भी खुलकर कहना पड़ता है—

कबीर चाल्या जाइ था, आगैं मिल्या खुदाइ।
मीराँ मुझसौं यौं कह्या, किनि फुरमाई गाइ॥

(कबीर-ग्रन्थावली पृ० ५२)

कबीरके प्रश्नका उत्तर वही दे सकता है जो 'मीराँ' हो। तो भी हमें भी इतना कह देनेमें कोई संकोच नहीं होता कि गो-वध किसी इस्लामका अङ्ग नहीं। कुरान मजीदमें जो गो-बलिकी कथा है, उससे सिद्ध होता है कि यह आज्ञा अल्लाहने भोजनके लिये नहीं दी थी। उसने तो यह कहा था कि यदि हत्यारेका पता लगाना है तो ऐसी दिव्य गौकी बलि दो और उसके एक टुकड़ेसे उक्त शवको मार दो। इससे वह आप ही उठ पड़ेगा और अपने हत्यारेका पता बता देगा। अल्लाहने ऐसा क्यों कहा, इसे अल्लाह ही जान सकता है; तथापि इसके आधारपर दृढ़तासे यही कहा जा सकता है कि यह गो-वधका विधान नहीं, प्रत्युत किसी हत्यारेको ढूँढ़ निकालनेका उपाय है। यहाँ इतना और भी स्पष्ट रहे कि अल्लाहने जहाँ उक्त गौका लक्षण बताया है, वहाँ इतना और भी स्पष्ट कर दिया है कि 'वह गाय न तो इतनी सधाई हुई हो कि जमीन जोते और न खेती सींचे, भली-चंगी एक रंगकी—उसमें कोई धब्बा तक न हो।' (सूरत बकर, आयत ७१)

स्मरण रहे, वह गाय ऐसी न हो कि उससे खेती-बारीका काम होता हो। तो क्या अल्लाहका यह आदेश यों ही भुलाया जा सकता है? उससे कबीरकी वाणीका तुक नहीं बिठाया जा सकता? पेट-पूर्तिके लिये गायका वध करना किस कुरानमें आया है? यही तो कबीर जानना चाहते हैं। नहीं, कबीर तो और भी आगे बढ़ते और बड़े ढंगसे पूछ जाते हैं—

हम गोरू, तुम ग्वार गुसाईं, जनम-जनम रखवारे।
कबहु न पार उतार चरावहु कैसे खसम हमारे?

(क० ग्रं० पृ० ३३०)

हम भला, इसका उत्तर क्या दे सकते हैं; पर हम जानते इतना अवश्य हैं कि कबीर 'ग्वार' कृपासे 'पार' हो गये और सिखा गये हमें 'गोपाल' का गो-पालन।

गायकी उपस्थितिसे उपद्रव-शान्ति

एक गृहस्थ लालाजीके घरके आँगनमें रातको मल-मूत्रकी वर्षा हुआ करती थी। इससे वे बहुत दुखी थे। रोकनेके लिये अनेकों प्रयत्न किये, परन्तु सब निष्फल हुए। आखिर एक महात्माने आँगनमें गाय बाँधनेकी सलाह दी। रातको आँगनमें गाय बाँधी गयी और उसी दिनसे मल-मूत्रका गिरना बंद हो गया। लालाजीकी श्रद्धा गायपर अत्यधिक बढ़ गयी और वे परम गो-रक्षक हो गये।

—श्रीरामवतीदेवी शुक्ला

भारतका घृत-व्यवसाय

(लेखक—डा० नोशीर एन० दस्तूर, एम्० एस्-सी०, पी-एच्० डी०, ए० आई० आई० एस्-सी०)

घीके रूपमें दूधको सुरक्षित रखनेकी परिपाटी भारतमें अतिप्राचीन कालसे चली आयी है। यद्यपि देशमें प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयेका घी तैयार होता है, जो प्रायः सब-का-सब छोटे-मोटे किसानोंके घरपर ही बनता है। घीको जो इतना अधिक महत्त्व दिया जाता है, उसका कारण यही प्रतीत होता है कि गाँवोंके संगठनमें इसका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसमें कोई ऐसे अन्तर्निहित तत्त्व हों, जिनसे शरीरको बहुत अधिक पोषण मिलता हो या जिनके कारण उसका औषधके रूपमें व्यवहार किया जा सकता हो—ऐसी बात नहीं मालूम देती। घीको हमारे यहाँ एक माङ्गलिक द्रव्य माना जाता है और संस्कृत-साहित्यमें तो ऐसे वचन भी मिलते हैं कि घीका दान करनेवाले दाताके पाप नष्ट हो जाते हैं, इत्यादि। भारतीय आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें घीको सब प्रकारके स्नेहयुक्त खाद्योंमें सर्वश्रेष्ठ ही नहीं माना गया है, अपितु सर्वोत्तम रसायन भी स्वीकार किया गया है। आधुनिक ज्ञान-सम्पन्न लोगोंको ये सब वचन कुछ अतिरञ्जित-से प्रतीत होते हैं। हाँ, उनका कोई लाक्षणिक अर्थ हो तो दूसरी बात है।

घी बनानेकी जो विधियाँ पीढ़ियोंसे चली आती हैं, वे ही इस समय भी प्रचलित हैं। भारतमें जितना दूध होता है, उसका करीब ६० प्रतिशत घी बनानेके काममें आता है। प्रायः सब-का-सब घी गाँवोंसे ही व्यापारियों एवं आढ़तियोंके द्वारा बाजारमें आता है। यद्यपि हमारे यहाँ प्रतिवर्ष करीब सवा दो करोड़ मन घी बिक्रीके लिये बाजारमें आता है, इस व्यवसायको आधुनिक अर्थमें हम उद्योग नहीं कह सकते; क्योंकि आधुनिक उद्योगोंमें कच्चा माल तैयार करनेसे लेकर तैयार मालको पैक करने तककी सारी क्रियाओंपर पूरा नियन्त्रण रहता है। वास्तवमें हमारे आधुनिक घृत-व्यवसायमें सबसे बड़ी त्रुटि समुचित व्यवस्थाके अभावकी ही है। अबतक घीके विषयमें सरकारने स्वाभाविक ही संरक्षण-नीति बरती है; यही कारण है कि इस व्यवसायको लोग फुरसतका काम समझकर करते हैं। परन्तु भोजन-विज्ञानने वर्तमान युगमें जैसी उन्नति की है, उसे देखते हुए केवल सरकारकी संरक्षण-नीतिपर भरोसा करके निश्चिन्त बैठे रहना निरापद नहीं है। हमारे देशमें ही वानस्पत्य-पदार्थोंके साथ घीकी घोर प्रतिद्वन्द्विता चल रही है और घृत-व्यवसायकी जो शोचनीय स्थिति आज है; वह यदि बनी रही तो कुछ ही दिनों बाद जनता घीके लिये और-और देशोंका मुँह ताकने लगेगी। कुछ ही दिनोंसे आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंडके कारखानोंमें सूखे मक्खन (Dry Butter) के नामसे घी तैयार किया जा रहा है। युद्धकी विशेष परिस्थितिके कारण स्नेहयुक्त पदार्थोंकी अधिक माँग हो जानेसे उसकी पूर्तिके लिये ही यह व्यवस्था की गयी है। अभीतक भारतीय सेनाके अतिरिक्त अन्य लोगोंके व्यवहारके लिये यह घी बाजारमें नहीं आया है। परन्तु युद्ध समाप्त होनेके पश्चात् भारतमें इस मालकी सबसे अधिक माँग हो सकती है, क्योंकि वहाँ यह पदार्थ बड़े ही आदर्श ढंगसे तैयार किया जा रहा है। कम-से-कम यह तो प्रत्यक्ष ही है कि भारतवर्षमें काफी दूध नहीं होता और घी-जैसे अत्यन्त पोषक पदार्थको बाहरसे मँगानेमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं हो सकती; यदि हो सकती है तो केवल यही कि वह विदेशी वस्तु होगी।

घीके उत्पादनपर किसी प्रकारका नियन्त्रण न होनेके कारण बाजारमें जो माल आता है, वह एक ही श्रेणीका नहीं होता। इस वैषम्यके कई कारण बताये जाते हैं। परन्तु घीके उत्पादनका नियन्त्रण करनेमें यदि हम अपने वैज्ञानिक ज्ञानका थोड़ा-सा उपयोग करें तो घी खानेवालोंको बारहों महीने एक ही श्रेणीका माल सहजमें ही दिया जा सकता है। घीके तारतम्यका एक प्रधान कारण यह है कि भिन्न-भिन्न ऋतुओंमें हमारे पशुओंको भिन्न-भिन्न प्रकारका चारा दिया जाता है। उनके आहारमें विवेकपूर्वक समता ले आनेसे इस वैषम्यको आसानीसे दूर किया जा सकता है। घीमें दूसरी त्रुटि उसके टिकाऊपनको लेकर है। ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतुमें तैयार किया हुआ घी उतना टिकाऊ नहीं होता। इसके लिये यह आवश्यक है कि देहातकी गृहिणियाँ कीटाणु-विज्ञान एवं रसायनशास्त्रके प्राथमिक नियमोंका पालन करें। शीतकालमें जिस दोषसे बहुत कम क्षतिकी सम्भावना होती है अथवा कोई बिगाड़ नहीं होता, थोड़ी-सी असावधानीसे गर्मी तथा बरसातमें वही दोष बढ़ सकता है। हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि भारतवर्षमें हमलोगोंको थोड़े-थोड़े रूपमें घी बनाना बंद कर देना चाहिये। यह एक घातक स्वप्न होगा और अपने यहाँ आदर्श स्थिति लानेके लिये हमें कम-से-कम

१०० वर्षतक प्रतीक्षा करनी होगी। वर्तमान साधनों एवं ग्राम्य समवाय-समितियोंका उपयोग करनेसे अच्छा घी तैयार करनेमें खासी प्रगति हो सकती है। गाँवोंमें अच्छा घी तैयार करनेके लिये निम्नलिखित पद्धतिको व्यवहारमें लाना चाहिये—जिस दूधसे घी निकाला जाय, उसे उबालना अवश्य चाहिये और फिर उसे ठंडा करके जब उसकी गर्मी शरीर-तापके समान हो जाय, उसमें स्वच्छ जामन मिला दिया जाय। अच्छे दहीकी पहचान यह है कि वह गाढ़ा और चिकना हो, उसने पानी बिल्कुल न छोड़ा हो या बहुत कम छोड़ा हो और उसमें गैस-कृत छिद्र बिल्कुल न हों। अच्छा जामन देनेपर दही भी अच्छा जमेगा। जिस बर्तनमें दूध जमाया जाय, उसे पहले मलमलके पतले कपड़ेसे ढक दिया जाय और तब उसपर ढक्कन दे दिया जाय। दूध डालनेके पहले बर्तनको मिट्टी तथा नारियलकी जटीसे अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिये और तब उसे एक बार गरम जलसे और दुबारा ठंडे जलसे अच्छी तरह खँगार लेना चाहिये। इसके बाद उसे घाममें या अग्निके पास इस तरह रख देना चाहिये कि जिससे गर्मी सीधी बर्तनके भीतर पड़े। दही मथनेके लिये मिट्टीके बर्तन या कलईदार धातुके बर्तन सबसे अधिक उपयोगी होते हैं। मथनेका कार्य धूपमें बैठकर अथवा ऐसी जगह जहाँ धूल उड़ रही हो, नहीं करना चाहिये। एक बारमें जितना मक्खन निकले, उसे साफ पानीसे कम-से-कम एक बार अवश्य धो लेना चाहिये, जिससे कि उसमें छाछका अंश कम-से-कम रह जाय। सर्वोत्तम बात तो यह है कि मक्खनको टिघलाकर तुरंत ही उसका घी बना लिया जाय। यदि ऐसा न हो सके तो अधिक-से-अधिक दो या तीन दिनका मक्खन जमा किया जा सकता है। इस प्रकार जमा किये हुए मक्खनको ठंडे पानीमें डुबाकर रखना चाहिये और उस पानीको दिन-रातमें कम-से-कम एक बार बदल देना चाहिये। मक्खनको मिट्टी, अलुमिनियम या कलईदार पीतलके बर्तनमें उसका मुँह बंद करके रखना चाहिये। जब काफी मक्खन इकट्ठा हो जाय, तब उसमेंसे छाछ और कैसीनका सारा अंश जला देनेके लिये उसे टिघला देना चाहिये; किन्तु इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि घीका अंश न जलने पावे। पहले कच्चा घी बनाकर और पीछे कुछ दिनोंके बाद उससे पक्का घी तैयार करनेकी प्रथाको प्रोत्साहन नहीं देना चाहिये। जहाँतक सम्भव हो, शुद्ध घृतांश निकालनेके उद्देश्यसे ही घी बनाना चाहिये। इस प्रकार तैयार किये हुए घीको स्वच्छ मलमलसे छानकर चीनीमिट्टी, अलुमिनियम या गहरी कलई किये हुए अन्य किसी सामान्य धातुके बहुत साफ बर्तनोंमें रख देना चाहिये। बर्तनमें हवाके प्रवेशके लिये जितना कम अवकाश रहे, उतना ही अच्छा है और उसे मजबूतीसे बंद करके किसी ठंडी जगहमें रख देना चाहिये, जहाँ प्रकाश न पहुँचे।

ऊपर बतायी हुई प्रक्रिया वही है, जो हमारे गाँवोंमें प्रचलित है; केवल थोड़ी-सी प्रारम्भिक चेतावनियाँ अधिक दे दी गयी हैं। इन चेतावनियोंको ठीक तरहसे समझनेके लिये घीकी खराबी अथवा उसमें सड़न पैदा होनेके कुछ मुख्य कारणोंपर विचार करना उपयोगी होगा, जो घी बनानेकी आधुनिक प्रणालीमें प्रायः विद्यमान रहते हैं। इन कारणोंको निम्नलिखित छः विभागोंमें बाँटा जा सकता है—(१) जीवाणु और किण्व, (२) धातु, (३) जलीय अंश, (४) ओषजन (Oxygen) वायु, (५) ऊष्मा और (६) प्रकाश।

उपर्युक्त कारणोंको महत्त्वके तारतम्यसे आगे-पीछे रक्खा गया हो, ऐसी बात नहीं है। घी बनाते समय इसी क्रमसे इन कारणोंके सामने आनेकी सम्भावना रहती है। बहुधा ऐसा होता है कि इन कारणोंमेंसे व्यवहारमें केवल एक या दो ही कारण काम करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ धातुएँ ऐसी हैं, जो घीके साथ घुलती नहीं, परन्तु उनके संसर्गसे घीके बिगड़ जानेकी सम्भावना रहती है। अतः जहाँतक हो सके, घी बनानेमें अधिक-से-अधिक सावधानी बरतनी चाहिये। सड़न एक ऐसा अजीब विकार है, जो एक बार शुरू हो जानेपर रुकता नहीं; क्योंकि घीमें सड़नका प्रतीकार करनेकी जो स्वाभाविक क्षमता होती है, उसे बहुधा यह नष्ट कर देती है। सड़े हुए घीको साफ कर लेनेपर भी शीघ्र ही उसमें दुबारा सड़न पैदा हो जायगी।

गाँवोंमें कभी-कभी कच्चे दूधसे ही मक्खन निकाला जाता है या दूधको मिट्टीके बर्तनोंमें गरम करके उसी प्रकारके दूसरे बर्तनोंमें जमा दिया जाता है। उबालनेसे दूधमें रहनेवाले अवाञ्छनीय जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। यह बात बारंबार सिद्ध हो चुकी है कि कच्चे दूधसे बनाये हुए घीकी अपेक्षा उबाले हुए दूधसे बढ़िया घी तैयार होता है। सूक्ष्म छिद्रयुक्त मिट्टीके बर्तनोंमें जीवाणुओंके प्रवेशकी सम्भावना रहती है और इन बर्तनोंको साफ करनेका यथेष्ट ध्यान न रक्खा जाय तो उनमें रक्खे जानेवाले दूध एवं दहीमें भी अवाञ्छनीय कीटाणु प्रवेश कर जाते हैं। कुछ विशेष

प्रकारके जीवाणुओंमें (उदाहरणार्थ—*Oidium, Lactis. Cladosporium, Butyri* तथा *Pseudomonas* अथवा *Achromobacter* इत्यादि जातियोंके वे जीवाणु, जो स्नेहयुक्त पदार्थोंको सड़ा देते हैं) घीके सम्मिलित अम्लोंको स्वतन्त्र स्नेहयुक्त अम्लोंमें विभाजित कर देनेकी क्षमता होती है। किण्वोंकी कभी-कभी यह परोक्ष क्रिया होती है कि उनसे स्नेह-विश्लेषक किण्व उत्पन्न होते हैं; जो अन्ततोगत्वा घीपर आक्रमण करते हैं। अतएव जामनके लिये उत्तम दही काममें लेनेका विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, गाँवोंमें अच्छे दहीकी पहचानका एक सीधा उपाय यह है कि जो दही जामनके काममें लाया जाय, वह चिकना और गाढ़ा होना चाहिये।

इस प्रकार जमाये हुए दहीको मिट्टीके या बिना कलई किये हुए पीतलके बर्तनोंमें बिलोया जाता है। पीतलमें ताँबेका अंश होता है और उसका कुछ भाग छाछकी खटाईके संसर्गसे उसमें संक्रान्त हो जाता है। ताँबेमें अन्य धातुओंकी अपेक्षा मोर्चा बहुत जल्दी लगता है और मक्खन या घी यदि पीतलके बर्तनमें रक्खा जाय तो उसमें रहनेवाले ताँबेके संसर्गसे उस मक्खन या घीमें बहुत जल्दी खटाई और सड़न पैदा हो जायगी। यदि दही बिलोनेका कार्य खुली हवामें किया जायगा तो मक्खनमें धूलके कण मिल जानेकी सम्भावना रहेगी और उनके साथ अवाञ्छनीय जीवाणु मक्खनमें प्रवेश कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त प्रकाश भी मोर्चा लगनेमें बहुत अधिक सहायक है और उससे घीमें बहुत जल्दी खराबी आने लगती है। यदि मक्खनको ठीक तरहसे धोया न जायगा तो उसमें रहे हुए छाछके अंशसे जीवाणुओंकी वृद्धिमें बहुत सहायता मिलेगी। मक्खनका यदि सञ्चय करना हो तो उसे किसी ऐसी ठंडी जगहमें रखना चाहिये, जहाँ प्रकाश बहुत कम आता हो। अधिक गर्मीसे घीका टिकाऊपन बहुत कम हो जाता है।

मक्खनको बहुधा टिघलाकर कच्चा घी बनाते हैं। इस कच्चे घीमें छाछका पर्याप्त अंश रहता है और उसे प्रधानतया किरासिनके रद्दी टीनोंमें या मिट्टीके बर्तनोंमें रक्खा जाता है। बहुधा इन टीनोंमें भीतर मोर्चा लगा रहता है और उनमें कच्चा घी रखनेसे वे और भी मुरचा जाते हैं। ताँबेकी तरह लोहा भी घीके साथ मिलकर उसे खराब कर देता है। फिर टीनोंको समुचित रीतिसे बंद नहीं किया जाता। उनमें या तो चिथड़ोंकी डाट दे दी जाती है, या उन्हें सूखे केलेके पत्तोंसे ढक दिया जाता है और इस प्रकार घीपर वायुमण्डल एवं ओषजनका निर्बाध प्रभाव पड़ने दिया जाता है। प्रायोगिक परिणामोंसे पता चला है कि मिट्टीके बर्तन घी रखनेके लिये बहुत उपयुक्त भी नहीं होते, क्योंकि सूक्ष्म छिद्र रहनेके कारण उनमें वायु निर्बाध रूपसे आ-जा सकती है और इस प्रकार घीके सड़ जानेकी अधिक सम्भावना रहती है।

यहाँ अब घी बेचनेवालोंका प्रश्न आता है। ये लोग एक गाँवसे दूसरे गाँवमें जाकर कच्चा घी इकट्ठा करते हैं। ये लोग भी प्रायः मोर्चा लगे हुए टीनोंमें ही घी इकठा करते हैं, जो ठीक तरहसे बंद नहीं किये जाते। इस प्रकार वह कच्चा घी गाँवोंसे शहरोंमें आता है और रास्तेमें उसपर धूल पड़ती है और प्रकाश भी पड़ता है। यह घी शहरके व्यापारियोंके पास कई दिनोंतक पड़ा रहता है। बाजारमें यदि उसकी माँग कम होती है तो वह अधिक दिनोंतक पड़ा रहता है और अधिक माँग होनेपर वह जल्दी ही बिक जाता है। भिन्न-भिन्न स्थानोंसे एकत्र किये हुए घीको मिलानेके लिये कच्चे घीके टीनोंको एक साथ गरम करनेके उद्देश्यसे आगके चारों ओर रख दिया जाता है और उस घीको टिघलानेके लिये बीचमें उसे लोहेके डंडेसे चलाया जाता है। घीके टिघल जानेपर टीनोंको एक गड्ढेपर रक्खी हुई कड़ाही या चौकोर टंकीमें रिता दिया जाता है। इस कड़ाही या टंकीको एक ओर नवाकर रक्खा जाता है और पेंदेसे करीब छः इंच ऊपर उसमें एक टोंटी लगी रहती है। ये कड़ाहियाँ या टंकियाँ भी लोहेकी ही होती हैं। दिनभरका काम हो जानेपर इन्हें शायद ही कभी मला जाता है। केवल पुराने बोरोंसे पोंछ भर दिया जाता है। ऐसी दशामें उनमेंसे अधिकांश बर्तनोंमें कीट और मोर्चेकी एक मोटी परत जमी रहती है। टीनोंको गरम करने तथा रितानेकी क्रिया भी बहुधा खुली जगहमें की जाती है और इस प्रकार यदि घीपर सीधी धूप नहीं भी पड़ती तो कम-से-कम फैला हुआ प्रकाश तो काफी तेज पड़ता ही है। घी जब निथर जाता है, तब उसे बरते हुए ऐसे टीनोंमें भर दिया जाता है, जो कम-से-कम एक या दो बार गरम पानीसे धोये हुए रहते हैं। यह घी अब बिक्रीके लिये तैयार हो जाता है। कुछ व्यापारी अधिक-से-अधिक घी प्राप्त करनेके लिये, छाननेके बाद बचे हुए छाछ-मिश्रित घीको धूपमें रख देते हैं और वह जब निथर जाता है, तब उस निथरे हुए अंशको भी छाने हुए घीमें मिला

दिया जाता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्रकाशसे घीके खराब होनेमें बहुत अधिक सहायता मिलती है और एक बार घीको प्रकाशमें रख देनेसे उसमें खराबीकी क्रिया शीघ्र प्रारम्भ हो जाती है। बाजारमें आनेवाले अधिकांश घीमें स्नेहयुक्त अम्ल प्रचुर मात्रामें रहते हैं। खुरजेके 'एग'-मार्केके घीमें ढाई प्रतिशत Oleic नामका अम्ल रहता है (वनस्पति-घीमें यह '२ प्रतिशत रहता है)। किन्तु आदर्श यह होनेपर भी बहुतसे नमूनोंमें उक्त अम्लकी मात्रा इससे अधिक ही होती है। घीमें स्नेहयुक्त अम्लोंकी निर्बाध उत्पत्तिके प्रधान कारण उसमें रहनेवाला जलीय अंश, किण्व एवं जीवाणुओंकी क्रिया है और कच्चा घी बनानेकी प्रथा यदि कम हो जाय और घीको स्वच्छ वर्तनोंमें रक्खा जाय तो अम्लोंकी उत्पत्तिको सहजमें ही रोका जा सकता है।

ऊपर जो बातें कही गयी हैं, वे केवल आलोचनाकी दृष्टिसे नहीं, अपितु हमारी भावी उन्नतिके लिये प्रथम प्रयत्नके रूपमें कही गयी हैं। हमारी रायमें पहला प्रयत्न तो यह होना चाहिये कि हमारे गाँवोंमें घी बनानेकी प्रचलित देहाती पद्धतिको बदलकर उसके स्थानमें विश्लेषक यन्त्र (Separator) के द्वारा घी निकालनेका प्रचार होना चाहिये। किसी समय यह आवश्यक समझा जाता था कि पहले क्रीमसे मक्खन बनाया जाय और तब उसे घीके रूपमें तैयार किया जाय। अब पश्चिमी अफ्रिकामें, जहाँ व्यापारी ढंगसे इस प्रक्रियाको काममें लाया जाता है, यह बात भली-भाँति सिद्ध हो चुकी है कि क्रीमको गरम करके उसमेंसे सीधे घी निकाला जा सकता है। क्रीम या मक्खनको तपानेका कार्य व्यक्तिगत परिवारोंद्वारा न होकर गाँवोंकी समवाय-समितियोंद्वारा होना चाहिये। इस प्रक्रियाके द्वारा २४ घंटेके अंदर दूधसे घी बनाया जा सकता है। मक्खन निकाला हुआ दूध, जिसमें घीकी अपेक्षा पोषक गुण अधिक होते हैं, मुफ्तमें बच रहता है। आरम्भमें कच्चा घी बनानेकी प्रथा सर्वथा बंद कर देनी चाहिये और घी रखनेके लिये सदा नये टीन, अलुमिनियमके डिब्बे अथवा चीनीमिट्टीके भाँड़ोंका व्यवहार होना चाहिये। गाँवोंकी समवाय-समितियोंसे घी शहरके व्यापारियोंके पास सीधा जा सकता है और वे लोग थोड़ी-थोड़ी मात्रामें आये हुए घीको अन्तिम बार पैक करनेके लिये मिला लिया करेंगे। आहार-सम्बन्धी नियमोंकी दृष्टिसे यह आवश्यक है कि इस प्रकार अलग-अलग स्थानोंसे आये हुए घीको किसी उपयुक्त मकानमें प्रारम्भिक स्वास्थ्य-विज्ञानके नियमोंका पालन करते हुए गहरी कलई किये हुए बर्तनोंमें मिलाना चाहिये।

हमारे घृत-व्यवसायमें सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि हमारे घीके व्यापारी उसकी अपेक्षा सस्ते स्नेहयुक्त पदार्थोंके साथ मुकाबला करनेकी व्यर्थ चेष्टा करते हैं। इस चेष्टाके कारण उनके प्रति ग्राहकोंका विश्वास उठ गया है और वे घीकी उत्तमताकी ओर बहुत कम ध्यान देने लगे हैं। आर्थिक दृष्टिसे घी विविध प्रकारके तेलों अथवा वानस्पत्य पदार्थोंके साथ मुकाबला नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त साधारण समयोंमें भारतमें पर्याप्त दूध अथवा घी नहीं होता। ऐसी दशामें वे ही लोग, जिन्हें वानस्पत्य पदार्थ नहीं रुचते और जो महँगे भावपर घी खरीदना चाहेंगे, उसे खरीदेंगे। अबतक जितनी वैज्ञानिक खोजें हो चुकी हैं, उनसे यही सूचित होता है कि घृतेतर जितने भी स्नेहयुक्त पदार्थ हैं, जो उतने ही तापमानसे पिघलते हैं, उनकी अपेक्षा घीमें कोई अधिक पोषक गुण नहीं हैं। हाँ, यदि उसे आदर्श ढंगसे तैयार किया जाय तो उसमें विटामिन इमें प्रचुरतासे मिल सकता है; परन्तु घी बनानेकी आधुनिक प्रक्रियाको देखते हुए हम कह सकते हैं कि हमारे बाजारोंमें जिस प्रकारका घी बिक्रीके लिये आता है, उसमेंसे २० प्रतिशत घी शायद ऐसा होगा, जिसमें कुछ विटामिन हो। बहुधा बाजारमें २-३ प्रकारके घी मिलते हैं, जिनके भावोंमें अन्तर होता है। इसका अर्थ यही है कि बाजारू घीमें प्रायः मिलावट होती ही है। जबतक ग्राहकोंको यह खातिरी न हो जाय कि जो घी वे खरीदते हैं, वह असली घी है, तबतक उनसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वे तेज भावपर उस मालको खरीदेंगे। अतः घीके लिये भविष्यमें कानूनके द्वारा आदर्श स्थिर करते समय इस बातपर भी ध्यान रखना चाहिये और प्रामाणिक घीके लिये विटामिन 'ए' की कोई न्यूनतम मात्रा निश्चित हो जानी चाहिये और सड़ा घी न बेचा जाय, इसके लिये कोई पाबंदी भी लगा देनी चाहिये। घीका व्यवसाय करनेवालोंको आधुनिक विज्ञानकी पद्धतियोंसे सहायता लेनी चाहिये। यदि वे अपनी स्वीकृत वार्षिक आयका हजारवाँ अंश भी अनुसन्धानके कार्यमें लगायें तो ५ या १० वर्षोंमें प्रचुर व्याजसहित उनकी यह रकम वसूल हो जायगी। ऐसा करनेसे व्यवसायियोंके प्रति जनताका विश्वास बढ़ेगा। आज घीको पैक करनेके लिये घीके व्यवसायी अन्य व्यवसायियोंके द्वारा परित्यक्त टीनोंतकको काममें लेते हैं। देशके एक मुख्य व्यवसायके

लिये यह लज्जा एवं खेदकी बात है। ग्राहकोंमें अपनी साख जमानेके लिये बिक्रीके योग्य घीको अलग-अलग नामोंके नये टीनोंमें बंद करके रखना चाहिये। घीके व्यापारसे सम्बन्ध रखनेवाला दूसरा जटिल प्रश्न मिलावटका है। यह प्रश्न इतना बड़ा है कि व्यवसायियोंके सहयोगके बिना कानूनके द्वारा, चाहे वह कितना ही सुन्दर क्यों न हो, हल नहीं हो सकता। घीके व्यवसायको सस्ते स्नेहयुक्त पदार्थोंके साथ प्रतियोगितासे किसी प्रकारका भय नहीं है; आवश्यकता केवल इस बातकी है कि जो लोग इस व्यवसायको प्रोत्साहन देना चाहते हैं, उन्हें सदाके लिये इस बातका पूरा विश्वास हो जाना चाहिये कि उन्हें सच्चा घी मिलेगा। इस समय घीके व्यवसायमें जो अव्यवस्था देखनेमें आती है, उसका कोई बाहरी कारण नहीं है। वर्तमान युद्धके कारण घीके व्यवसायियों-ने बहुत रुपया कमाया है और आधुनिक विज्ञानकी सहायतासे समूचे व्यवसायको सुदृढ़ भित्तिपर पुनः संगठित किया जा सकता है।

नीचे, घीके निर्माणके सम्बन्धमें कुछ विधि-निषेधात्मक निर्देश दिये जाते हैं, जो घी बनानेवालोंके लिये उपयोगी सिद्ध होंगे—

१. कच्चे दूधसे घी न बनाइये।

२. दूध, मक्खन या घी रखनेके लिये गंदे बर्तनोंका व्यवहार मत कीजिये।

३. जामनके लिये स्वच्छ दहीका प्रयोग कीजिये।

४. छाछका अंश निकाल देनेके लिये मक्खनको पानीसे अवश्य धोइये।

५. कच्चा घी न बनाइये। घीको बर्तनोंमें संग्रह करनेके पूर्व उसका सारा जलीय अंश निकाल दीजिये।

६. घीको नये टीनों, चीनीमिट्टीके भाँडों अथवा अलुमिनियमके बर्तनोंमें रखिये।

७. घीको लोहेकी कड़ाहियोंमें गरम न कीजिये।

८. घीको प्रकाशमें न रखिये।

९. घीको बर्तनोंमें रखते समय उनमें हवाके लिये मार्ग भरसक न छोड़िये।

१०. जहाँतक हो सके, क्रीमसे सीधे घी बनाना सीखिये।

११. घीमें मिलावट मत कीजिये। आधुनिक प्रक्रियाओंसे मिलावटका सहज ही पता लगाया जा सकता है। मिलावटसे आपको परिणाममें घाटा ही रहेगा।

१२. घीका भाव अनावश्यकरूपसे मंदा मत कीजिये। आपसमें समझौता करके उसे उचित मूल्यपर बेचिये।

१३. इस बातको सदा स्मरण रखिये कि विज्ञानकी थोड़ी-सी सहायतासे आपकी बहुत-सी कठिनाइयाँ दूर हो सकती हैं। विज्ञान सबकी सेवा करनेके लिये प्रस्तुत है।

गोमाता

मैं गौकी प्रशंसा करूँगा; किन्तु यों ही साधारण दृष्टिसे नहीं, वरं इसलिये कि वह इसकी अधि-कारिणी है और ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। मैं गायको भगवत्-सृष्टिके चर प्राणि-समाजमें एक ऊँचे आदरणीय स्थानपर खड़ी देखना चाहूँगा। गायसे बढ़कर अन्य कोई भी पशु मनुष्यका मित्र नहीं है और न गाय-ऐसा कोई मधुर स्वभाववाला है। अपने दीप्त, शान्त और ध्यानमग्न नेत्रोंसे संसारको देखनेवाली गायके सौम्य रूपमें सचमुच देवत्व भरा है। उसमें एक महानता और भव्यता है, जो ग्रामदेवताके उपयुक्त है। उसमें शत-प्रतिशत मातृत्व है और उसका मनुष्य-जातिसे यही माताका सम्बन्ध है।

मैं यह नहीं मानता कि गाय एक उदास, अबोध और व्यक्तित्वशून्य प्राणी है; किन्तु ऐसा न मानने-वाले किसी संशययुक्त मनुष्यको यह मनाना भी मेरे लिये कठिन है। जबतक मनुष्य अपने पशु-मित्रोंके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार न करेगा तबतक वह उनकी अत्यन्त प्रिय तथा मनोरम विशेषताओंके विषयमें सदा अँधेरेमें ही रहेगा।

—श्रीवाल्टर ए० डामर ('अवर डम्ब एनिमल्स,' अमेरिका)

मक्खनके व्यवसायकी कुछ मनोरञ्जक और रहस्यमयी बातें

(१) विशुद्ध मक्खनमें सब जातियोंके जीवनसत्त्व होते हैं, पर मिश्रित या मिलावटी मक्खनमें उनका अंश बहुत ही कम होता है। (२) मक्खनमें मिलावटका परिमाण दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है। (३) मिलावटी मक्खन सस्ता मिलता है, पर उसे लेनेवाला ठगा जाता है; उसमें सत्त्वांश कम होनेसे अन्ततोगत्वा वह महँगा ही पड़ता है। (४) मक्खनकी जगह मारगरीन (Margarine)—वनस्पतिजनित तेल और पशुओंकी चर्बीसे तैयार किया जानेवाला पदार्थ बाजारोंमें बिकता है। वह मक्खन-जैसा ही दीखता है, पर उसमें मक्खनके गुण-धर्म नहीं होते। (५) मक्खनके जितना ही सत्त्व इस पदार्थसे लेना चाहें तो इसे मक्खनसे कई गुना अधिक खाना पड़ेगा, इस तरह मक्खनसे महँगा ही पड़ा। (६) बम्बईके व्यापारी तो शुद्ध मारगरीन भी नहीं खाते। (७) मक्खनमें स्निग्ध अंश बहुत होनेसे कितनोंको डर लगता है कि इससे कहीं शरीर मोटा न हो जाय, पर ऐसा समझना भूल है। मोटाई मक्खनसे नहीं, बल्कि उसके साथ खाये जानेवाले पैष्टी (Starchy) पदार्थोंसे आती है। (८) मलाईमें दो घटक अंश—स्निग्धांश और तक्रांश होते हैं। एक इंच लंबे टुकड़ेमें ४४००० स्निग्धके कण होते हैं। (९) पहले बहुत-सा मक्खन एक साथ तैयार नहीं हो सकता था। अब १००० पौंड एक साथ तैयार किया जा सकता है। (१०) आजकल सफेद मक्खनकी अपेक्षा सुनहले रंगके मक्खनपर लोग अधिक झुकने लगे हैं। (११) हिंदुस्थानके मक्खनमें जलांश बहुत होता है, इससे उसका वजन बहुत हो जाता है। अमेरिका प्रभृति देशोंमें मक्खनमें यदि सौमें सोलह हिस्सेसे अधिक जल हुआ तो वह मिलावटी मक्खनके कानूनकी पकड़में आता है। (१२) मक्खनके लिये स्वच्छताकी बहुत आवश्यकता होती है। पर व्यवसायी इधर ध्यान नहीं देते। (१३) उबलता हुआ पानी, ब्रश, कीटाणुनाशक द्रव्य इत्यादि आरोग्य-साधनोंसे बहुत थोड़े ही दुग्धालय काम लेते हैं। (१४) बम्बईके कुछ छोटे दुग्धालयोंमें यह हाल है कि जिस कोठरीमें मक्खन तैयार किया जाता है, उसीमें नौकर लोग सोया करते हैं, वहीं भोजन करते और उस स्थानको हर तरहसे गंदा करते हैं; इससे मक्खनमें विषैले कीटाणु प्रवेश करनेसे क्यों बाज आयेंगे। (१५) मक्खन डिब्बोंमें रखकर बेचा जाता है; पर उन डिब्बोंपर मक्खनका जो वजन लिखा रहता है, उतना मक्खन उन डिब्बोंमें नहीं होता, कुछ-न-कुछ कम ही रहता है। (१६) बहुतसे दुग्धालयोंमें जापानी तेल (Hardened Edible Oil) मक्खनमें मिलाते हैं। यह तेल मछलियोंसे निकाला जाता है। (१७) कई स्थानोंमें वनस्पतिवाला तेल मिलाते हैं; पर इसमें परता नहीं पड़ता। (१८) सन् १९३२ में २४२ टन जापानी तेल हिंदुस्थानमें आया, १९३३ में उसकी आमद ३२२॥ टन हुई। (१९) ४० पौंड—२० सेर तेल गरम करके उसमें १ सेर विशुद्ध मक्खन मिलाया जाता है। फिर इसे मट्ठेमें या जलमें डालकर मथा जाता है, जबतक वह एक रंग न हो जाय। इतने समयमें यह मक्खीका तेल सौमें २०, २५ हिस्सा पानी सोख लेता है और इस तरह २५ सेर मिलावटी मक्खन हाथ लगता है। इस काममें १०) खर्च होता है। इतना ही विशुद्ध मक्खन कोई तैयार करना चाहे तो ४०) खर्च पड़ जायँगे। (२०) उपयुक्त रीतिसे मिलावटी मक्खन बेचकर प्रतिवर्ष १४ लाख रुपया व्यापारी लोग कमाते हैं। (२१) एक दिनमें हमलोग अपने आहारसे जितनी पुष्टि प्राप्त करते हैं और जो अपने शरीरके लिये आवश्यक होती है, उतनी पुष्टि केवल आधा पाव शुद्ध मक्खन खानेसे मिल सकती है। (२२) दक्षिण अमेरिकामें कुछ ऐसे लोग हैं, जो मक्खनको धन समझते हैं, उसे जमीनमें गाड़कर रखते और उसके चतुर्दिक् वृक्ष लगाते हैं। उनकी यह धारणा है कि मक्खन जितने दिन अधिक रक्खा रहे, उतना ही अधिक अच्छा होता है। (गो. ज्ञा. को.)

दुग्ध-शाला या डेयरी-फार्म

देशमें पहलेसे ही पश्चिमीय ढंगपर कुछ सरकारी तथा निजी डेयरी-फार्म चल रहे हैं। इन दिनों तो दूध-घीकी कमी होनेके कारण स्थान-स्थानपर ऐसे डेयरी-फार्म खोले जा रहे हैं या खोलनेकी योजनाएँ बन रही हैं। इनका प्रधान उद्देश्य है—दूध, मक्खन आदिकी बिक्रीद्वारा तुरंत अधिक-से-अधिक धन कमाना। कितने ही पश्चिमीय सभ्यता एवं शिक्षाके उपासक तथा उनके पीछे चलनेवाले भोले-भाले लोग देशमें होनेवाली गायों-बैलों तथा दूध-घीकी कमीको दूर करने एवं गो-वंशको उन्नत करनेका साधन भी इन्हीं डेयरी-फार्मोंको मानते हैं, इनका समर्थन करते हैं तथा इनको जारी करनेका विचार और प्रबन्ध करते हैं। पर वास्तवमें, हमारे देशकी धार्मिक, आर्थिक, शारीरिक एवं सामाजिक अवस्थाको दृष्टिमें रखते हुए ये पश्चिमीय ढंगपर चलनेवाले डेयरी-फार्म ठीक नहीं हैं; ये गो-वंशकी उन्नतिके लिये उपयोगी नहीं हैं और न ये चलानेवालोंके लिये ही स्थायीरूपसे लाभदायक हैं।

इन दिनों देशमें तीन प्रकारके डेयरी-फार्म हैं—प्रथम, फौजी डेयरी-फार्म, जो गाय भैंस रखकर फौजियोंके लिये दूध-मक्खन आदिका प्रबन्ध करते हैं; द्वितीय, निजी-डेयरी-फार्म, जो जनताको दूध-मक्खन आदि बेचनेके लिये पशु रखते हैं; तृतीय, डेयरीवाले वे लोग, जो स्वयं पशु नहीं रखते, पर आस-पासके पशु-पालकोंसे दूध मोल लेकर दूधके रूपमें या दूधसे मक्खन-क्रीम आदि निकालकर स्वयं बेचते हैं या पशु-पालकको वापिस दे देते हैं। जहाँतक पशुओंकी उन्नतिका प्रश्न है, तीसरे प्रकारके डेयरीवालोंका तो पशुओंसे कोई सम्बन्ध ही नहीं; फौजी और निजी डेयरी-फार्मोंमें भी तभीतक गाय-भैंसें रक्खी जाती हैं, जबतक चारे तथा देख-रेख आदिका खर्च कम रहे और दूधकी आय अधिक हो। जब दूध कम हो जाता है या पशु बीमार हो जाता है या दूधकी अपेक्षा चारे-दानेका भाव बढ़ जाता है, तो पशु बेच दिया जाता है। दूधसे सूखे हुए ऐसे पशुको प्रायः कसाई ही खरीदते हैं। ऐसे पशुको बेचकर डेयरीवाले फिर दूसरा खरीद लेते हैं। इसी प्रकार यह क्रम लगातार चलता रहता है और पशुओंका निरन्तर ह्रास होता जाता है। डेयरीवाले प्रायः अधिक दूध देनेवाली गाय-भैंसें ही खरीदते हैं। वही जब दूध देना कम या बंद करती है तो प्रायः नष्ट कर दी जाती है, जिसका नस्ल-सुधारपर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। अच्छी नस्ल न रहनेके कारण डेयरीवालोंको स्थायी लाभ भी नहीं रहता। बार-बार पशु खरीदनेमें भी कष्ट होता है तथा पशुके अच्छे-बुरे होनेका भी कोई निश्चय नहीं होता। इसलिये डेयरी चलानेमें निश्चितरूपसे लाभ होगा, यह बात नहीं है। देशमें डेयरी-फार्म खुलते हैं, पर घाटेके कारण या तो बंद हो जाते हैं या हानि उठाकर ही चलाये जाते हैं। सरकारी दुग्ध-रिपोर्ट, सन् १९४२ के पृष्ठ १३० पर डेयरी-फार्मोंका वर्णन करते हुए लिखा है—'देशमें पचहत्तर या अस्सी डेयरी-फार्म हैं, जिनमेंसे ६८ के लगभग फौजी या सरकारी हैं तथा शेष जनताके लिये हैं। जो डेयरियाँ लोग खोलते हैं, वे प्रायः घरमें ही चलती हैं।'

यह सरकारी विशेषज्ञोंका मत है। जनताके लिये भी ये डेयरियाँ अच्छी नहीं। अच्छे पशु फौजी और निजी पशु रखनेवाली डेयरियोंके द्वारा खतम हो जानेका तो नुकसान है ही। इन डेयरी-फार्मोंद्वारा मक्खन-क्रीम आदि निकालने-पर जो निर्घृत दूध बचता है, वह सघृत दूधमें मिलाकर या उसकी दही, मिठाई आदि चीजें शुद्ध दूधकी चीजोंके नामसे बिकती हैं, जिससे खरीदनेवालोंको तो बड़ा धोखा होता ही है तथा हानि उठानी पड़ती ही है, साथ ही शुद्ध दूध बेचनेवाले ईमानदार गो-पालकोंको भी प्रतिस्पर्धा (Competition) के कारण पूरे दाम नहीं मिलते। वे बेचारे पशु रखना छोड़ देते हैं या दूधमें मिलावट करने-को मजबूर हो जाते हैं। यह सिद्ध है कि पश्चिमीय ढंगके इन डेयरी-फार्मोंसे गो-वंशका नाश होता है; डेयरी चलानेवालोंका निश्चित तथा स्थायी लाभ नहीं होता, जनता और पशु-पालकोंको भी हानि ही उठानी पड़ती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि ये डेयरी-फार्म सफल नहीं हो सकते तो जनताको निश्चितरूपसे दूध, मक्खन आदि कैसे और कहाँसे मिले? देशकी तीन-चौथाईसे अधिक जनता तो गाँवोंमें रहती है तथा पशु रखती है। उसे दूध खरीदनेकी आवश्यकता नहीं। यदि आवश्यकता होती है तो वहींसे मिल जाता है। शहरोंमें रहनेवालोंके लिये दूधकी आवश्यकता अवश्य है। वे प्रायः निकट गाँवके पशु-पालकोंसे या नगरकी डेयरियोंसे दूध खरीदते हैं; पर उन्हें जितने दूधकी आवश्यकता होती है; उतना नहीं मिलता तथा जो मिलता है वह भी शुद्ध तथा अच्छा नहीं होता। अतः कुछ-न-कुछ व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये। प्राचीन समयमें कई-कई हजार गायें रखनेवाली गोशालाएँ थीं तथा नस्लकी उन्नति करनेके साधन थे; पर दूध बेचनेवाली डेयरियोंका वर्णन कहीं नहीं मिलता, प्रत्युत दूधका बेचना

या उसका व्यापार करना तो एक बुरा काम समझा जाता था। कितने ही गाँवोंमें तो आज भी दूधका बेचना अच्छा नहीं समझा जाता और वहाँ प्रायः लोग दूध नहीं बेचते। सौ वर्ष पहले शहरोंमें रहनेवाले प्रायः लोग दूध-घीके लिये अपने पशु रखते थे तथा उनकी देख-रेख करते थे। जो लोग गायें नहीं रख सकते थे, उन्हें शहरके ग्वालोंसे ही अच्छा, शुद्ध तथा सस्ता दूध मिल जाता था। उस समय आजकलके डेयरी-फार्मोंकी आवश्यकता नहीं थी। पर आजकी स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। पश्चिमीय सभ्यतासे उत्पन्न आलस्य एवं अन्य परिस्थितियोंसे मजबूर होकर प्रायः शहरवाले स्वयं पशु नहीं रखते या नहीं रख सकते। अतः उन्हें शुद्ध दूध मिले, इसके लिये किसी-न-किसी साधनकी अत्यन्त आवश्यकता है। किन्तु साधन ऐसा होना चाहिये, जिससे गो-वंशकी अवनति न होकर उसकी उन्नति होवे, लोगोंको शुद्ध दूध मिल सके तथा जिससे परिणाममें आर्थिक दृष्टिसे भी लाभ हो। हाँ, एक साधन है—दूधकी उत्पत्तिके साथ-साथ नस्लकी उन्नति करनेका कार्य (Dairying and Breeding) किया जाये। इस योजनाको सफल बनानेके लिये अच्छी नस्लकी दुधारू गायें तथा अधिक दूध देनेवाली नस्लके साँड़ रक्खे जाने चाहिये। नस्ल-सुधारको दृष्टिमें रखते हुए ये गाएँ एवं साँड़ उसी इलाकेसे खरीदे जायँ, जहाँ कार्य करना है। भारत-सरकारके विशेषज्ञ डा० राइट (Dr. Wright) ने भी इसी सिद्धान्तको माना है। इन गायोंके बछड़े एवं बछड़ियोंको पश्चिमीय प्रथाके अनुसार जन्मते ही मातासे अलग न करें, प्रत्युत अच्छी नस्ल बनानेके लिये उन्हें थनोंसे ही पर्याप्त तथा आवश्यक दूध पिलाया जाय। बछड़े-बछड़ियोंको थनोंसे ही आवश्यक दूध न पिलाना तथा सब-का-सब या अधिकांश निकाल लेना न्यायके विरुद्ध तो है ही, नस्ल-सुधारपर भी कुठाराघात है। जो लोग बछड़े-बछड़ियोंको हड्डी (Bone) या अन्य प्रकारके खाद्य पदार्थ देनेकी तजवीज करते हैं, उनका मार्ग ठीक नहीं है। यह सर्वसिद्ध है कि दूध सर्वोत्तम खाद्य पदार्थ है; वह भी उनकी अपनी माताओंका तथा थनोंसे ही निकला हुआ हो तो बछड़े-बछड़ियोंकी उन्नतिके लिये सबसे अधिक लाभदायक, पौष्टिक पदार्थ है। बड़े होनेपर भी इन बछड़े-बछड़ियोंकी पूरी देख-रेख तथा चारे-दानेकी उचित व्यवस्था की जानी चाहिये। गायोंका संयोग अच्छी दूध देनेवाली अच्छी नस्लके साँड़से ही कराया जाय, दूसरी नस्लके साँड़से नहीं। इस प्रकार संयोग करानेपर आगामी बछड़ीके सवाया, उसकी सन्तानके ड्योढ़ा तथा चौथी पीढ़ीमें अनुमानतः दुगुना दूध हो जायगा। गायके चारे-दानेपर कुछ ही अधिक खर्च होगा, पर दूधकी आय बहुत बढ़ जायगी, जिसके कारण आरम्भमें ६-७ वर्षतक तो कुछ घाटा रहेगा पर इसके उपरान्त तीन वर्षतक बराबर तथा ठीक देख-रेख रखने और गायोंमें कोई बीमारी न आनेसे आरम्भकार्यसे दस वर्ष बाद यह नस्ल-सुधार एवं दुग्ध-उत्पादनका कार्य एक लाभदायक व्यापार हो जायगा। दूधसे तो आय हो ही जायगी, अच्छे साँड़ोंके भी मुँहमाँगे दाम मिलेंगे। संसारके जिन देशोंमें आज डेयरी-फार्म या दुग्ध-शाला लाभदायक व्यापार बना हुआ है, उसका मुख्य कारण केवल दुग्ध-शाला नहीं, किन्तु अधिक दूध देनेवाली गायोंकी नस्ल तैयार करना है। हमारे अभागे देशमें केवल शारीरिक शक्ति तथा स्वास्थ्यके लिये दूध ही नहीं, लोगोंके जीवनके बड़े आधार खेतीके लिये भी बैलोंकी आवश्यकता है। पिछले डेढ़ सौ वर्षोंमें अर्थात् अंग्रेजी राज्यकालमें गोवंशका सब प्रकारसे ह्रास ही हुआ है। मि. वि. स्मिथ (Mr. William Smith), कर्नल मेटसन (Colonel Metson), 'गवर्नमेंट मिल्क रिपोर्ट' तथा अन्य सरकारी विशेषज्ञोंने पहलेकी अपेक्षा गोवंशका ह्रास होने तथा गायोंकी दूध देनेकी शक्ति कम होनेकी बात कही है। अधिक दूध प्राप्त करनेकी दृष्टिसे गायोंके साथ अथवा केवल भैंसोंका रखना लाभदायक नहीं, हानिकारक है। संसारभरमें दूध-मक्खन आदिके लिये गायें ही रक्खी जाती हैं, भैंस नहीं। नस्ल-सुधारमें भैंस उतनी उन्नति नहीं कर सकती जितनी गाय। गायके बछड़े और बछड़ियों—दोनोंसे लाभ पहुँचता है, परन्तु भैंसके पड़वे हल आदिके लिये अधिक उपयोगी न होनेके कारण प्रायः मारे ही जाते हैं। भैंस थोड़ी भी भूखी रह जाय तो दूध नहीं देती, कष्ट सहन नहीं कर सकती। पर गायमें यह बात नहीं। वह उचित चारा-दाना देनेपर अधिक तथा कम देनेपर भी कुछ कम दूध देती है। साधारण अकालके समय गाय किसी घासकी जड़ें, पत्ते तथा अन्य ऐसे-वैसे चारे, पत्ते, झाड़ियाँ खाकर भी जीवित रहनेका प्रयत्न करती है तथा प्रायः जीवित भी रहती है। वह लगातार अकाल पड़नेपर कोई भी चारा न मिलनेपर ही शरीर छोड़ती है। किन्तु भैंस चारा तो क्या, यदि पानीकी भी कुछ कमी हो जाय तो सहन नहीं कर सकती। जनताके स्थायी लाभ, गोवंशकी उन्नति, धार्मिक भाव, आर्थिक अवस्था आदिको दृष्टिमें रखते हुए तात्कालिक लाभको छोड़कर दुग्ध-शालाके साथ-साथ नस्ल-सुधारका कार्य करना ही आवश्यक तथा सामयिक है। (ह० स०)



गोदुर्दशाके कारण

आज भारतमें जो गायकी दुर्दशा हो रही है, उसके प्रधान कारण सोलह हैं - १. कसाईखाने, २. कसाई, ३. गोचर-भूमिका अभाव, ४. अकाल, ५. चिकित्साका अभाव, ६. दुर्बल असहाय साँड़, ७. खादके उचित संग्रहका अभाव, ८. वनस्पति घी (जमे हुए तेल) के कारखाने, ९. चमड़ेका विदेश जाना, १०. मोटर-यन्त्रादि, ११. किसानोंकी गरीबी, १२. गंदगी और अव्यवस्था, १३. पशुओंकी निकासी, १४. चमड़ेका शौक, १५. पिंजरापोल-गोशालाओंमें अव्यवस्था और १६. दुर्बल असहाय गौ। इनमेंसे प्रायः सभी विषयोंपर 'गो-अङ्क'में जहाँ-तहाँ लेख छपे हैं। यहाँ केवल कसाईखाने, गोचरभूमिका अभाव, अकाल, चिकित्साका अभाव और किसानकी गरीबी—इन विषयोंपर कुछ लिखा जा रहा है।

कसाईखाने और कसाई

भारतवर्षमें सब मिलाकर छोटे-बड़े सरकारी, गैर-सरकारी तथा सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत कितने बूचड़खाने हैं और इस समय उनमें कितनी गौएँ कट रही हैं—इसका पूरा पता तो नहीं लग सका है। इस महायुद्धके बहुत पहले कलकत्ता हाईकोर्टके जज सर जॉन वुडरफ महोदयने बतलाया था कि 'साठ लाखतक गौ और बैल तो केवल मांसके लिये मारे जाते हैं। चमड़े तथा सूखे मांसके लिये जो गाय-बैल मारे जाते हैं, उनके आँकड़ोंका अभी पूरा पता नहीं लगा है। मालूम होता है हिंदुस्थानमें लगभग एक करोड़ गाय-बैल प्रतिवर्ष मारे जाते होंगे।' इन मारे जानेवाले पशुओंमें दूध देनेवाली जवान गायें, गाभिन गायें और अच्छी जातिके बैल भी होते हैं। इस हिसाबसे प्रतिमिनट सब मिलाकर १९ से अधिक गाय-बैल आदि मारे जाते थे। युद्धकालमें इनकी संख्या कहाँतक पहुँची होगी सो भगवान् जानें।

चमड़ेकी सरकारी रिपोर्टके अनुसार कसाईखानोंमें सन् १९४२ में ५२७०००० गौएँ काटी गयी थीं। दरभंगा गोशाला-सोसाइटीके सञ्चालक श्रीधर्मलालसिंहजीका हिसाब है कि कुल मिलाकर एक करोड़ बाईस लाख गौएँ वर्षभरमें काटी जाती हैं। इसका मतलब यह हुआ कि **भारतवर्षमें प्रतिदिन लगभग ३४००० और प्रतिमिनट लगभग २३-२४ गोमाताओंके गलेपर निर्दय छुरी फिरती है**। कितना भीषण हत्याकाण्ड है! जिस देशमें एक-एक गायकी रक्षाके लिये बड़े-बड़े नरपतियोंके जीवन बलि हो जाते थे और उनके शस्त्रोंकी गर्जनासे राक्षस काँप उठते थे, आज उसी देशमें गोरक्तकी नदी बह रही है! मुसल्मानोंकी मस्जिदके समीप हिंदुओंकी आरतीका बाजा बजाने देनेमें तो सरकारकी धार्मिक तटस्थता भंग हो जाती है। पर हिंदुओंकी छातीपर—उनके मथुरा, गया-जैसे पवित्रतम तीर्थोंके वक्षःस्थलपर गायोंके अबाध हत्याकाण्डसे उसकी धार्मिक तटस्थता भंग नहीं होती। कैसी विडम्बना है!

यहाँ जो बड़े पशु काटे जाते हैं और जिनकी खालें बाहर भेजी जाती हैं, उनमें गायोंकी संख्या ही अधिक होती है। सरकारकी 'Review of the Tarde of india १९४२-४३' (भारतीय व्यापारकी समालोचना) के पृष्ठ २९ में लिखा है कि सन् १९३८-३९ में जो कच्चा चमड़ा बाहर भेजा गया था, उसमें ८२.५ प्रतिशत गायों (गौ, बैल, साँड़ और बछड़ों) का था। इससे स्पष्ट सिद्ध है कि गौओं-का वध बहुत बड़ी संख्यामें होता है। प्रबल आन्दोलन तथा अन्यान्य उपाय करके ऐसे उपाय कराने चाहिये जिसमें यह भयानक हत्याकाण्ड शीघ्र बंद हो।

गोचरभूमिका अभाव

भारतका क्षेत्रफल १५७१९६४ वर्गमील अर्थात् ११६२९१९००० एकड़ भूमि है। सन् १९२२-२३ के आँकड़ों-के अनुसार इसमेंसे कुल २८६६५१७०५ एकड़ जमीन (ब्रिटिश भारत और देशी राज्योंकी मिलाकर) खेतीके काममें आती है। शेष ८७६२६७२७५ एकड़ जमीनमें आबादी (नगर-गाँव) सड़क, रेल, नदी, तालाब आदि हैं। ६३२५४७११ एकड़ ऊसर भूमि तथा १०३५७२१३८ एकड़ जंगल हैं। विशेषज्ञोंका मत है कि चारेके लिये ६४ (या ९०) लाख एकड़-से अधिक जमीन नहीं है। ११६ करोड़ एकड़ जमीनमें केवल ६४ लाख एकड़ चारेकी जमीन कितनी कम है। कुछ देशी राज्यों-को तथा ब्रिटिशराज्यकी थोड़ी-सी छुट-पुट जमीनको छोड़कर गोचरभूमि तो प्रायः बिल्कुल ही नहीं है। खेतीके लिये अयोग्य भूमिमें जो कुछ चारा अपने-आप चौमासेके पानीसे हो जाता है बस, उसीपर पशुओंको निर्भर रहना पड़ता है। असलमें चारा उपजाया ही नहीं जाता। पंजाबमें ६ प्रतिशत और युक्तप्रान्तमें ३॥ प्रतिशत चारा उपजता है। अन्य प्रान्तोंमें तो वह सर्वथा नगण्य है। प्रति वर्गमीलमें औसत २२६ पशु चरते हैं और प्रतिपशुके पीछे लगभग २ एकड़ औसत जमीन पड़ती है। पाँच प्रान्तोंका हिसाब देखा गया तो पता लगा—गौने

दस करोड़ पशुओंमेंसे केवल ८५ लाख पशु चरते हैं। (देखिये विवरणपत्र संख्या १८-१९-२०) प्रतिपशु लगभग २॥ सेरसे अधिक चारा (हरा-सूखा मिलाकर औसतन) कठिनतासे मिलता है। इधर युद्धकी माँगसे तो और भी कठिनाई हो गयी है। चारेकी दर अन्नकी दरके बराबर हो गयी है! बेचारी भूखी गाय पेटकी ज्वालासे किसी खेतमें घुस जाती है तो उसपर डंडोंकी मार पड़ती है और काँजी-हाउसमें क्रूर कर्मचारियोंके पास पहुँचकर और वहाँ नीलाममें चढ़कर कसाईखाने पहुँच जाती है! गोचरभूमि अलग होती तो यह दुर्दशा कदापि नहीं हो पाती। हमारे यहाँ शास्त्रकार प्रत्येक गाँव और नगरके पीछे गोचरभूमि छोड़नेकी अनिवार्य आज्ञा देते हैं; परन्तु उसपर न तो धनीलोग ध्यान देते हैं और न सरकार ही। बल्कि इधर तरह-तरहके कारखानोंके बढ़नेसे रहे-सहे जंगल तथा चारेकी ऊसर जमीन भी रुकी जा रही है। गौओंकी ओर किसीका ध्यान ही नहीं है। बंगाल-सरीखे प्रान्तमें तो नामको भी गोचरभूमि नहीं पायी जाती।

भारतका तो यह हाल है, उधर पाश्चात्त्य देशोंकी हालत देखिये। ग्रेटब्रिटेनमें कुल ७,६५,००,००० एकड़ भूमि है। उसमें ४,६०,००,००० एकड़ खेतीबारीके काममें आती है। पहाड़ों और आबादीको छोड़कर २,३०,००,००० एकड़ जमीन स्थायी 'गोचरभूमि'के रूपमें छोड़ी हुई है। जर्मनीमें ९१ प्रतिशत भूमि उपजाऊ है। ६,५१,९९,५३० एकड़ जमीनमें खेती होती है और २,१३,९७,३०० एकड़ 'गोचर-भूमि' है। न्यू जीलैंडमें कुल ६,७०,४०,६४० एकड़ जमीन है, जिसमें २, ८०, ००,००० एकड़ जमीनमें खेती होती है। २,७२,००,००० एकड़ जमीन 'गोचरभूमि' है। इसी प्रकार अन्यान्य देशोंमें पर्याप्त गोचरभूमि है। अमेरिकामें सन् १९१९ में १,०५,५०,००,००० एकड़ गोचरभूमि थी, जो कुल जमीनका ५५ प्रतिशत है। यह गोचरभूमि अब कुछ घटी है। फिर भी ६० करोड़ एकड़ गोचरभूमि तो वहाँ रक्खी ही जायगी! वहाँ खास तौरपर उम्दा घास-चारा अलग उपजाया जाता है। सन् १९१९ में चालीस लाख एकड़ जमीनमें दाबघास (Silage) के लिये और डेढ़ करोड़ एकड़में चारेके लिये खेती की गयी थी। अकेले विस्कॉन्सिन (Wisconsin) स्टेटमें एक लाखसे ऊपर दाबघासके कोठे (Silo) बने थे। वहाँ प्रत्येक किसान खेतका अमुक हिस्सा गोचरके लिये अवश्य छोड़ता है। हमारे यहाँ 'गोचरभूमि' छुड़वानेके लिये घोर प्रयत्न और विशाल आन्दोलनकी आवश्यकता है।

सन् १९४० की पशुगणनाके अनुसार भारतवर्षमें कुल मिलाकर १३,७६,५०,८७० गोवंशकी (साँड़-बैल= ५१६५१५९२, गौ=५९९९०२७१ और बछड़े-बछड़ी= २६००९००७) संख्या थी, और ४४२५७५०४ भैंस-वंशकी (भैंसे=५१७४६८७, भैंस=२६००३६३१ और पाड़ा-पाड़ी= १३०७९१८६)। इनके अतिरिक्त घोड़े, खच्चर, बकरी, ऊँट, गदहे आदि भी घास चरनेवाले पशु हैं। परन्तु बकरी तथा ऊँटोंको पेड़ोंकी पत्तियाँ तथा गदहोंको गलियोंके कूड़े-कचरेपर निर्वाह करनेवाले मान लिया जाय तो भी कम-से-कम घोड़े-खच्चरोंकी संख्या तो जोड़नी ही होगी। इस प्रकार कुल मिलाकर लगभग १९ करोड़ पशुओंके लिये चारे-की आवश्यकता है। अच्छी खूराक मिलने तथा अच्छी सार-सँभाल होनेसे पशु पुष्ट होंगे तथा उनकी संख्या भी बढ़ेगी। ऐसी हालतमें पहलेसे ही उनके खाद्यके लिये पर्याप्त जमीनकी व्यवस्था हो जायगी तो आगे चलकर कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ेगा। जहाँ वैज्ञानिक-पद्धतिसे ऊँची जातिका पर्याप्त घास-चारा उत्पन्न किया जाता है, वहाँ तो तीन पशु-ओंके लिये २-२। एकड़ जमीन भी काफी हो सकती है; परन्तु यहाँ जबतक वैसी स्थिति नहीं हो जाती, तबतक एक पशुके लिये कम-से-कम २-२। एकड़ जमीनकी आवश्यकता है। फिर यहाँ तो पशुओंकी संख्या बढ़नेकी बड़ी गुंजाइश है, इसलिये भी जमीन अधिक चाहिये। इस दृष्टिसे लगभग ४० करोड़ एकड़ जमीन गोचरभूमिके रूपमें छोड़ी जाय, तब इन पशुओंकी रक्षा हो। इतनी जमीन मिल जाय और सावधानीके साथ उसमें अच्छे-अच्छे चारेकी—जैसे मकई, मटर, गँवार, अरहर, सेम, जई, जिनोरा, बाजरा, धान, सामा, दूब, चीना, गिनी, काउन, क्लोवर्न, लूसर्न, मेडिक, सूदन घास, एग्रेटीश, एरनथेरम तथा फास्टुकैरुब्रा आदि बिलायती घास, गाजर, मूली, कसावा आदिकी खेती की जाय और गायोंको उचितरूपसे नियमपूर्वक ये चीजें खिलायी जायँ तो गौएँ अपने-आप पुष्ट होकर अधिक दूध-घी देंगी और उनसे सारा घाटा भरकर वह पर्याप्त नफेकी चीज हो जायगी। इसके लिये भरपूर प्रयत्न होना चाहिये।

अकाल

भारतीयोंके मन्दभाग्यवश सरकारी नीति तथा अन्यान्य कारणोंसे भारतमें अकाल प्रायः ही पड़ते हैं। और वे भारतीय

किसानों और पशुओंके लिये साक्षात् कालरूप ही होते हैं। यहाँ अकालमें जितने मनुष्य और पशु मरते हैं, उतने किसी देशमें नहीं मरते। भारतका भाग्य तो इतना मन्द है कि यहाँ प्रकृतिके द्वारा प्रचुर अन्न दिये जानेपर भी अकाल पड़ जाता है और लाखों प्राणी बुरी तरहसे उसमें पिस जाते हैं। दो वर्ष पहले बंगालमें जो बीसों लाख नर-नारी मर गये—वह कुछ ऐसा ही मनुष्यनिर्मित भयङ्कर अकाल था! प्राकृतिक अकाल तो स्वाभाविक ही भयङ्कर होता है। घास, चारे और जलके अभावसे रँभा-रँभाकर लाखों पशु मौतके घाट उतर जाते हैं और भूखके मारे उनकी प्रकृति तथा जीवनी शक्ति इतनी नष्ट हो जाती है कि वर्षोंतक वे पनप नहीं पाते। इतनेमें दूसरा अकाल आ जाता है! अकालोंसे पशुओंकी बड़ी दुर्गति होती है।

चिकित्साका अभाव

गौओंके स्वास्थ्यकी ओरसे प्रायः सभी लापरवाह रहते हैं। जबतक रोग न हो, तभीतक खैरियत है। रोग होनेपर न दवा-दारू होती है और न सेवा-शुश्रूषा। प्रकृतिकी कृपासे पशु स्वस्थ हो गया तो ठीक है, नहीं तो उसके प्राण चले जाते हैं। प्राचीनकालमें लोग घरेलू दवा जानते थे और यथायोग्य उपचार करते थे। नल, सहदेव आदि राजवंशके लोग पशु-चिकित्साके विशेषज्ञ थे। पुराणोंमें गोचिकित्साका वर्णन आता है। आजकल न तो कोई जाननेवाले हैं, न सरकार ही पूरा ध्यान देती है। संक्रामक रोगोंसे पशुओंकी बड़ी संख्यामें मृत्यु होती है। भारत सरकार पशुओंकी नस्ल तथा भलाईपर केवल दो पैसे प्रतिपशु खर्च करती है। (देखिये विवरणपत्र संख्या २२), पशुचिकित्सापर औसत तीन पैसे खर्च होते हैं (देखिये विवरणपत्र संख्या २१)। इस ओर जनता और सरकारको विशेष ध्यान देना चाहिये।

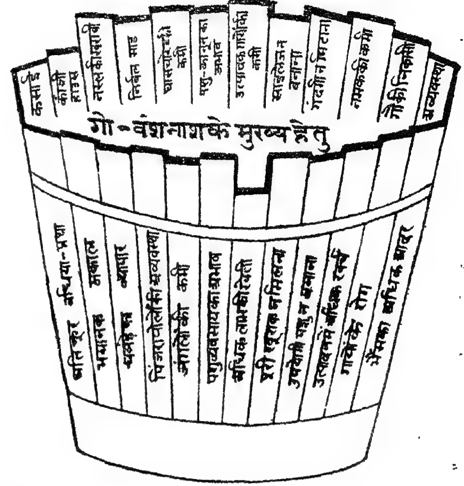
किसानोंकी गरीबी

भारतीय किसानकी बड़ी बुरी दशा है। उसकी अवनतिके मुख्य २६ कारण उपर्युक्त टबमें दिखलाये गये हैं। मानो उसका जीवन इन सब शत्रुओंसे भर या घिर गया है। यहाँ इनपर विस्तृत विचार करनेका अवसर नहीं है। परन्तु किसानके साथ गायका अच्छेद्य सम्बन्ध है; किसानकी उन्नतिमें गायकी उन्नति और गायकी उन्नतिमें किसानकी उन्नति संनिहित है। किसानका अज्ञान और उसकी गरीबी—ये दो ऐसे कारण हैं, जिनके कारण गाय अत्यन्त दुखी है। 'इंडियन बैंकिंग इन्क्वायरी कमेटी, सन् १९२९-३० की जाँचके अनुसार भारतके किसानोंपर उस समय ८ अरब ६३ करोड़ रुपयेका ऋण था, जो प्रतिवर्ष ३०-४० करोड़के हिसाबसे बढ़ता जाता था। वतमान युद्ध-में किसानकी आर्थिक दशा कुछ सुधरी है; पर यह सुधार ऐसा नहीं है, जिससे किसानको समृद्ध माना जाय। किसान गाँवमें रहता है। गाँवकी दशा सुधरनेसे ही किसानकी दशा सुधर सकती है। गाँवोंकी दशाके सुधारके लिये निम्नलिखित कमलके अनुसार १६ साधनोंकी आवश्यकता है। ये हैं—पुराने कर्जसे छुटकारा, सस्ता व्याज, यथासाध्य सहकार, ग्रामपञ्चायत, ग्राम-संगठन, किश्तकी पद्धति, ग्रामनेतृत्व, अखण्डभूमि, वाहनकी सुविधा, लाभप्रद खेती, लंबी मुद्दतका कर्ज, प्रौढ़ शिक्षा, उत्तम कृषिसंघ, सह-उद्योग, जमीनपर कर्ज देनेवाली कोठियाँ और सहकृषि। ये ग्राम-सुधारकी १६ कलाएँ हैं।

किसानकी अवनतिके मुख्य हेतु

भारतीय ग्रामविकासकी सोलह कलाएँ

गोदुर्दशाके उपर्युक्त १६ हेतुओंका विस्तृतरूप हैं निम्न लिखित टबमें दिखाये हुए २६ हेतु । इन्हींके कारण गो-वंशका नाश हो रहा है । वे ये हैं—कसाई, काँजीहाउस, (दूसरे रूपमें कसाईखाने), नस्लकी खराबी, निर्बल साँड़, घास-चारेकी कमी, पशुरक्षण-कानूनका अभाव, उत्पादक गायोंकी कमी, साइलेज-पद्धतिका अभाव, गंदगी, खाद्यमें नमककी कमी, गौकी निकासी, अव्यवस्था, क्रूर बधियाप्रथा, भयानक अकाल, चमड़ेका व्यापार, पिंजरापोलोंकी अव्यवस्था, जंगलोंकी कमी, दुग्धव्यवसायका अभाव, धनकी लालसासे बढ़नेवाली तमाखू आदिकी खेती, पूरे खाद्यकी कमी, उपयोगी पशुओंके निर्माणमें कमी, उत्पादनमें अधिक खर्च, गायोंके रोग और भैंसका अधिक आदर । स्थान-संकोचसे यहाँ इनका विस्तृत विवेचन नहीं किया जा रहा है ।



निर्दयताएँ

भारतवर्षमें गो-जातिके साथ अनेकों प्रकारसे निर्दयताका व्यवहार हो रहा है । इनमें ये बारह मुख्य हैं—

१. लोभवश कसाईके हाथ गाय बेचना। यह बड़ा ही नीच कर्म है और इसमें निर्दयता भरी है ।

२. गायोंके अङ्गपर अङ्ग जोड़कर उन्हें अधिक अङ्गवाली बनाकर लोगोंको ठगना और गायोंको कष्ट देना ।

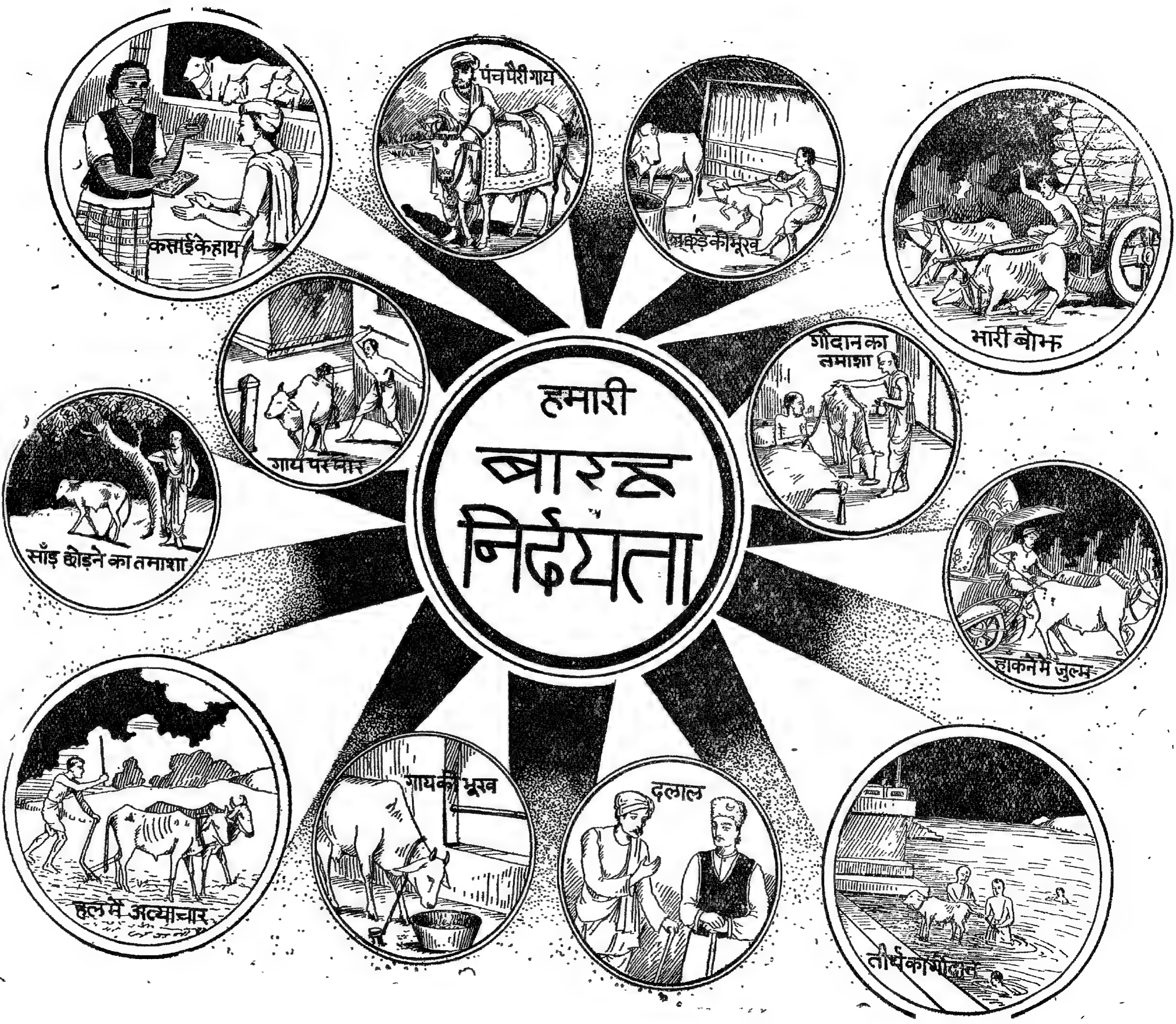
कुछ नीच प्रकृतिके स्वार्थीलोग बड़े-बड़े शहरोंमें, तीर्थोंमें, मेलोंके अवसरपर ऐसी गाय या बैलको लिये फिरते हैं, जिसके पुट्ठे या कमरमें पाँचवाँ पैर लटका करता है, या जीभकी शकलकी कोई चीज होती है। ये लोग मुसल्मान होते हैं और हिंदू-साधुओंके वेशमें घूमा करते हैं। गायको खूब सजाकर रखते हैं और घंटी बजा-बजाकर भोले-भाले नर-नारियोंको 'पाँच पैरकी गोमाताकी पूजा कीजिये' 'महादेवजीके नन्दियोंके दर्शन कीजिये' आदि कह-कहकर ठगते हैं। गाय या बैल जब छोटी उम्रके होते हैं, तभी किसी मरे जानवरकी या दूसरे जानवरको मारकर उसकी टाँग या अन्य कोई अङ्ग काट लेते हैं, और उसे उस गाय या बैलके शरीरपर केश काटकर सी देते हैं । कुछ दिनोंमें मांस बढ़ जाता है और नये केश जम जाते हैं, तब वह सिलाई नहीं दीखती। जिस पशुकी टाँग काटकर मारते हैं, उसको तो महान् कष्ट होता ही है; पर जिसके शरीरपर नया अङ्ग जोड़कर सीते हैं, उसको भी कम कष्ट नहीं होता । पर बेचारे मूक पशु किससे कहें ? ये लोग वस्तुतः पेशेवर ठग होते हैं और होते हैं बड़े ही निर्दयी । इन लोगोंको पैसा देना बहुत बड़ी भूल है !

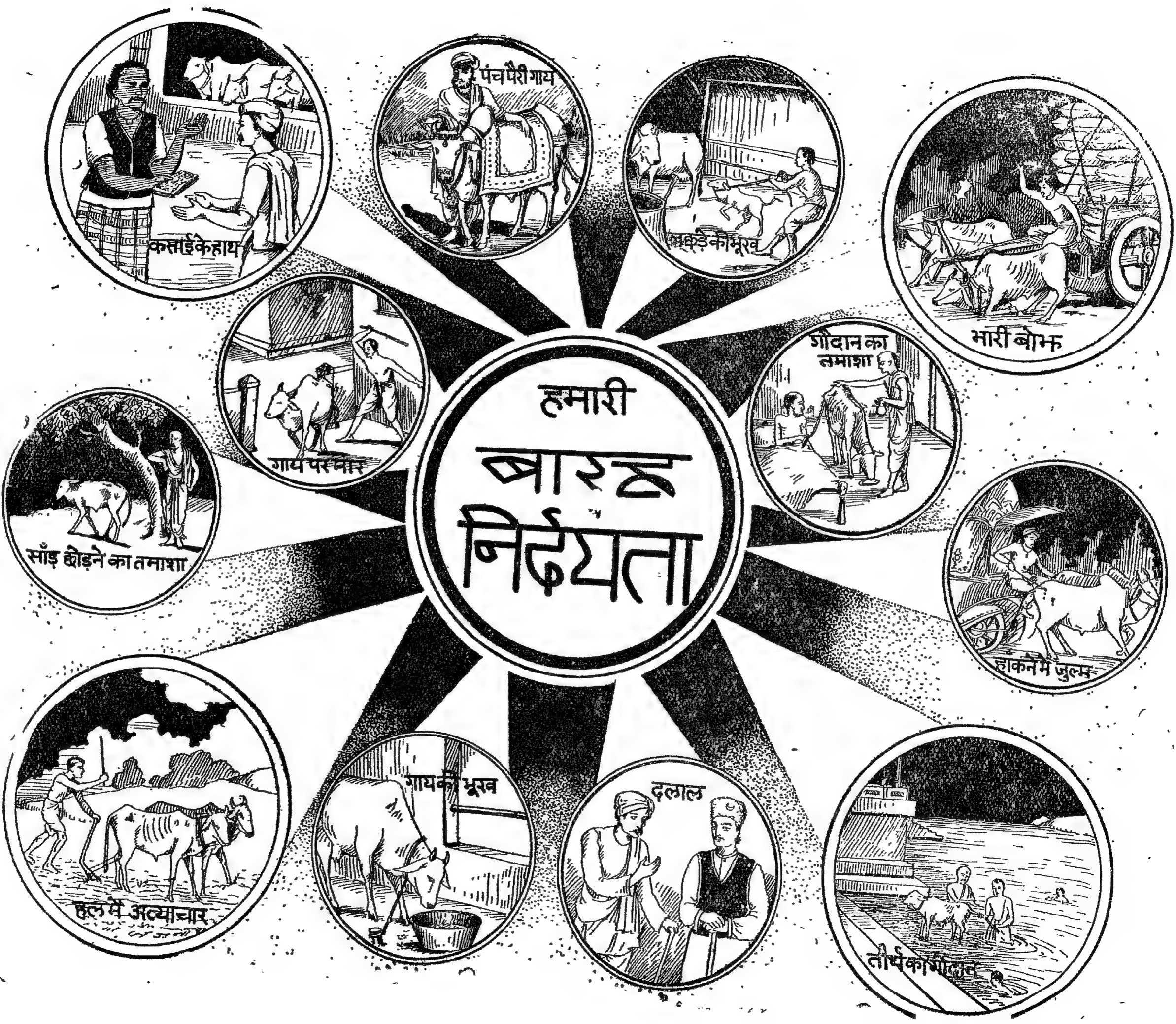
३. बछड़े-बछड़ियोंको उनके पोषणके लायक उचित मात्रामें दूध न देना ।

४. गाड़ियोंमें इतना बोझ लादना कि बैल चल ही न सकें । फिर ऊपरसे उनको बुरी तरहसे मारना । यह दर्दनाक नजारा शहरोंकी बड़ी-बड़ी सड़कोंपर आप नित्य ही देख सकते हैं ।

५. बैलोंको हाँकते समय उन्हें बुरी तरह मारना । किसी-किसी प्रान्तमें तो इतनी निर्दयता होती है कि रथ या गाड़ीके बैलोंको जिस डंडेसे हाँकते हैं, उसकी अगली नोकपर तीखी धारवाली लोहेकी नुकीली अरी लगी रहती है, जिसकी चोटसे उनके खून बहने लगता है । मर्मस्थलमें चोट लग जाती है तो पशु मर भी जाते हैं ।

६. तीर्थोंमें पण्डे लोग पौष-माघके भयानक जाड़ेमें भी छोटी-छोटी नाताकत गरीब बछड़ियोंको जलमें खड़ी रखते


हमारी
बारह
निर्दयता
कसाई के हाथ
पंचपैरी गाय
भारी बोझ
गाय पर मार
गोदान का तमाशा
साँड़ छोड़ने का तमाशा
हाँकने में जुल्म
हल में अत्याचार
गाय की भूख
दलाल
तीर्थ का गोदान


हमारी
बारह
निर्दयता
कसाई के हाथ
पंचपैरी गाय
कड़े की भूख
भारी बोझ
गाय पर मार
गोदान का
तमाशा
साँड़ छोड़ने का तमाशा
हाँकने में जुल्म
हल में अत्याचार
गाय की भूख
दलाल
तीर्थ का गोदान

हैं, और यात्रीलोगोंको उनकी पूँछ पकड़ाकर कुछ पैसे लेकर गोदानका सङ्कल्प करा देते हैं। न यात्रियोंके पास गौ होती है और न गोदान ! पंडे पैसोंके लालचसे ऐसा निर्दय काण्ड करते हैं। बछड़ी घंटोंतक सरदीसे काँपती हुई जलमें खड़ी रहती है। अबोध यात्री वैतरणी तरनेके धोखे इस निर्दय कार्यमें सहायता करते हैं !

७. गायोंको कसाइयोंके हाथ बिकवानेके लिये दलाली करना।

गाय, बैल, बछड़े आदिको कसाईखाने पहुँचानेके लिये बहुत-से दलाल होते हैं। आजकल तो इनकी संख्या बहुत बढ़ गयी है। इनमें मुसल्मान तो होते ही हैं, निम्न जातिके हिंदू भी लोभवश ऐसा घृणित काम करनेमें नहीं हिचकते। ये लोग तरह-तरहसे गायोंका नाश करवाते हैं—कस्टमवालोंसे, पुलिससे तथा चरवाहोंसे मिलकर पशुओंकी चोरी करवाते हैं। 'बड़े ही धर्मनिष्ठ जमींदारके घर पशु जायँगे' ऐसा विश्वास दिलाकर तथा पैसोंका अधिक लालच देकर मालिकोंसे अथवा गोशालाओंसे पशुओंको खरीद लेते हैं। इसके अतिरिक्त ये लोग चमड़ेके व्यापारियोंसे ऊँचे दामपर निश्चित समयके अंदर निश्चित संख्यामें गौओंका चमड़ा देनेका कंट्राक्ट करके उनसे पेशगी रुपये ले लेते हैं। फिर कसाई और चमारोंसे मिलवाकर उनके द्वारा घासमें और चारे-दानेमें जहर मिलवाकर चुपचाप मौकेसे गौओंको खिला देते हैं; या उन जहरीली चीजोंको ऐसी जगह बिखेर देते हैं, जहाँ गौएँ चरती हैं। गौओंके शरीरपर कोई घाव होता है तो उसमें विष लगा देते हैं। चरवाहोंसे मिलकर छुरी, तेज भाले आदिमें जहर लगाकर गायोंके शरीरमें चुभो देते हैं। ऐसी चीजें खिला देते हैं, जिनसे पशुओंमें छूतकी बीमारी फैल जाती है। छूतकी बीमारीसे मरे हुए पशुओंकी अँतड़ी-मांस आदिको गायोंके चरनेके स्थानोंमें डाल देते हैं। इस प्रकार कई तरहसे गायोंका नाश करते हैं। इसीसे पुलिस-विभागमें यह शिक्षा दी जाया करती है कि जहाँ गौओंमें छूतकी बीमारी फैली हो या गौएँ अधिक संख्यामें मर रही हों, वहाँ देखना चाहिये कि आसपासमें कौन लोग ठहरे हुए हैं। ये लोग तरह-तरहके वेषोंमें आया करते हैं। ये बड़े ही क्रूरहृदय और घोर स्वार्थी लोग होते हैं। गोवंश-नाशके कारणोंमें इनका अस्तित्व भी एक प्रधान कारण है।

८. गायको भरपेट चारा-दाना खानेको न देना। इसपर बहुत लेख छपे हैं।

९. हलमें कमजोर या बेमेल बैलोंको जोतकर उनपर डंडे चलाना। शास्त्रोंमें तो दो बैलोंसे हल जोतना ही पाप बतलाया गया है; फिर यदि वे कमजोर या बेमेल हों और ऊपरसे मारे जाते हों, तब तो ऐसा करनेवाले प्रत्यक्ष ही निर्दयताका भयानक पाप करते हैं।

१०. कुछ भी व्यवस्था किये बिना बछड़ेको दागकर असहाय छोड़ देना, और ऐसे वृषोत्सर्गसे स्वर्ग-प्राप्तिकी कामना करना।

११. अपनी और परायी गायोंको बुरी तरहसे मारना। परायी गायके खेतके पास आते ही किसान, और सरकारी काँजीहाउसोंमें सरकारकी सुव्यवस्थासे भूखों मरती हुई गायोंको वहाँके रक्षक जिस निर्दयतासे मारते हैं, उसे देखा नहीं जाता !

१२. निकम्मी और कमजोर गौका दान करना। निकम्मी गौ जिसको दान की जाती है, वह उसे जो कुछ पैसे मिलते हैं, उन्हींपर बेच देता है और निकम्मी होनेके कारण वह किसी रूपमें कसाईके हाथ पहुँच जाती है। कई जगह तो लोग गोशालाओंको रुपये-दो-रुपये देकर भाड़ेपर गौ ले आते हैं और दानका तमाशा पूरा हो जाता है।

जननीसे भी बढ़कर गोमाता

जननी जनकर दूध पिलाती केवल साल-छमाही भर।
गोमाता पय-सुधा पिलाकर रक्षा करती जीवनभर॥

—गुरुदियालीमलजी सिंगला सुनामी

गोवधके कारण और उसको बंद करनेके कुछ उपाय

जिस देशके लोगोंके जीवनका प्रधान सहारा खेती हो, जहाँ प्रायः बैलोंसे ही खेती होती हो, निरामिषभोजी होनेके कारण जहाँके करोड़ों मनुष्योंके स्वास्थ्य एवं शक्तिका आधार दूध ही हो, जहाँ तीन चौथाई जन-संख्या गो-रक्षाको परम पुण्य, तथा गोवधको सबसे बड़ा पाप मानती हो, उस देशमें गोवध क्यों और कबसे प्रारम्भ हुआ ? हिंदुओंके अभ्युदय-कालमें गोवध नहीं होता था; 'अहिंसा परमो धर्मः' माननेवाले बौद्धों एवं जैनोंके समयमें तो गोवधका प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। मुसल्मानोंके राज्य-कालमें गो-हत्या होती थी, पर वर्षभरमें दो-चार हजार ही। कितने ही मुसल्मान बादशाहोंके समयमें तो एक भी गाय नहीं मारी गयी। वर्तमान कालमें भारतीय पशुओंकी खालें बाहर भेजनेसे ही गोवध प्रारम्भ हुआ। सन् १६४४ में डचों (हालैंड-वासियों) ने सर्वप्रथम खालें बाहर भेजना आरम्भ किया। सन् १८३० में एक लाख खालें कलकत्तेसे अमेरिका तथा इंग्लैंड भेजी गयीं। सन् १८५० में खालोंका व्यापार बढ़ा। इस वर्ष अकेले बंगालसे ही ४४ लाख खालें बाहर भेजी गयीं। 'गवर्नमेंट हाइड्स रिपोर्ट' १९४३ के पृष्ठ ५० पर लिखा है—'आज भारत संसारको गायोंकी हल्की खालें देनेवाला सबसे बड़ा देश है। सभी प्रकारकी खालें देनेवाला तो यही एक देश है। देशमें वार्षिक दो करोड़ गायकी तथा सत्तावन लाख भैंसकी खालें तैयार होती हैं, जिनमेंसे एक करोड़से अधिक बाहर विदेशोंको जाती हैं। अंग्रेजी राज्यमें खर्च होनेवाले चमड़ेका एक तिहाई भाग भारत देता है।' गोवधका मुख्य तथा बड़ा कारण है—बाहर विदेशोंमें तथा देशमें बढ़ी हुई चमड़े, मांस, चर्बी, खून, हड्डी इत्यादिकी माँग। जिस देशके लोग चमड़ेका जूता पहनना भी अच्छा नहीं समझते थे, खड़ाऊँ तथा मूँजके बने हुए जूते पहनते थे तथा जहाँपर अन्य कार्योंमें भी चमड़ेका व्यवहार करना बुरा समझा जाता था, आज उसी देशके लोग चमड़ेको सिरपर धारण करने तथा भोजनके समय हाथमें बाँधनेमें भी लज्जाका अनुभव नहीं करते ! गायके ही नहीं, बछड़ेकी खाल (Calf-leather) के बूट पहनना तो एक बड़ाईका विषय हो गया है तथा पाँच-सात जोड़ी बढ़िया चमड़ेके जूते रखना तो एक साधारण बात बन गयी है ! कपड़े रखनेके बक्स भी चमड़ेके रखने लगे हैं; घड़ीके फीते, चश्मेके घर, घड़ीकी चेन और छोटे-बड़े बटुओंमें लाखों मन चमड़ा खर्च होता है तथा यह हजारों मूक पशुओंकी हत्याका कारण बना हुआ है। बढ़िया मोटरों और गद्देदार कुर्सियों, कोचों आदिके लिये भी चमड़ेकी काफी माँग है। यह चमड़ा वृक्षोंके नहीं लगता, न पृथ्वीसे उत्पन्न होता है और न आकाशसे ही बरसता है; यह मूक पशुओं—विशेषकर गायोंकी हत्या करके ही तैयार किया जाता है। दि बोर्ड आफ इकानामिक इन्क्वायरी, पंजाबके प्रकाशन नं० ६१ (Tanning Industry in the Punjab) के पृष्ठ ६५ पर **'मुलायम चमड़ा प्राप्त करनेके लिये गाभिन गायोंकी हत्या करके गर्भस्थ बछड़ोंकी खालें तैयार करनेका वर्णन है; इन खालोंको 'गोसल्ला' कहते हैं। इससे अधिक नृशंसता तथा दानवता और क्या होगी ?'**

चर्बी कपड़ेके कारखानोंमें माँड़ी लगानेके काम तो आती ही है, इससे ग्रीज (Grease), साबुन, मोमबत्ती तथा ग्लिसरीन भी बनायी जाती हैं। चर्बीके हिस्सेसे सरेस जातिके पदार्थ बनते हैं, उनसे जिलेटिन (Galatine), और 'ग्लू' (Glue) तैयार किये जाते हैं। दवाकी गोलियाँ आपसमें चिपक न जायँ और स्वादरहित हों, इसलिये जिलेटिनका व्यवहार किया जाता है और 'ग्लू' जोड़ने तथा कागज-लिफाफे आदि चिपकानेके काममें आता है तथा उससे छापेखानेमें रोलर भरे जाते हैं। हड्डियाँ खादमें काम आती हैं। हड्डियोंको शोध करके कैल्शियम फास्फेट निकाला जाता है, जो चीनी साफ करनेके काम आता है। हड्डीका कोयला बड़ा रंगनाशक है। पशुओंके पाँवोंको पकाकर उनमेंसे तेल निकाला जाता है, जो घड़ियों और दूसरे यन्त्रोंमें लगाया जाता है। गायकी आँतें पनीर बनानेके काममें आती हैं और उनसे पेपसिन (Pepsin) नामक दवा तैयार की जाती है।

'गो-रक्षा-कल्पतरु' पुस्तकके (जिसकी भूमिका महात्मा गाँधीजीने लिखी है) पृष्ठ १५ में बताया है कि लोहूको पकाकर उसकी बुकनी तैयार की जाती है, जो आसाममें चाय-काफीके खेतोंमें खादके रूपमें काम आती है तथा जो बचती है, वह विदेशोंको भेज दी जाती है। सन् १९२२ में २२४०० मन बुकनी सिलोन भेजी गयी थी। यह यूरोपमें भी जाती है; वहाँ इससे अल्ब्यूमन, खादके पदार्थ एवं पोटाशियम साइनाइड (जो फिल्ममें काम आता है) तैयार

किये जाते हैं। इसी पुस्तकके पृष्ठ ३९ पर लिखा है— 'प्यूरी नामक पीला रंग बनानेके लिये गड़रिये लोग गायको केवल आमके पत्ते खिलाकर रखते हैं, दूसरी और कोई वस्तु खाने या पीनेतकको नहीं देते। और उस गायका मूत्र बाजारमें खूब दाम लेकर बेचते हैं। बेचारी गाय भूखसे तड़पकर मर जाती है। इस बातको सुनकर अवश्य ही कल्पना हो सकती है कि हिंदुस्थानके मनुष्य मनुष्य नहीं, बल्कि मनुष्यदेहधारी राक्षस ही हैं।'

कुछ ही वर्ष पूर्व जिन चीजोंसे गोवधका साधारण सम्बन्ध भी होता था, उनका व्यवहार तथा व्यापार करनेको चित्त नहीं चाहता था; समाजका भी डर था। पर आज तो पश्चिमीय सभ्यता तथा कल-कारखानोंके प्रभाव और प्रचारके कारण नित्य व्यवहारमें आनेवाली प्रायः चीजें गोवधसे ही प्राप्त होती हैं। मुसल्मान और ईसाई तथा वे लोग ही नहीं, जिनके यहाँ धार्मिक दृष्टिसे गोवध वर्जित नहीं है, गायके शरीरमें तैंतीस करोड़ देवताओंका निवास तथा गायको वैतरणी नदीसे पार करनेका साधन माननेवाले हिंदू भी **आज लोभ, शौकीनी, सङ्गदोष और मूर्खतासे चमड़े, चर्बी आदिकी बनी चीजोंका व्यापार तथा व्यवहार बड़ी शानसे करते हैं। चमड़ेके बड़े-बड़े कारखाने, मांस-मेद्-मज्जा तथा जैविक ग्लैंड्सका अबाध व्यवहार करनेवाले केमिकल-वर्क्स (दवा बनानेके कारखाने), हड्डी, चमड़ा, सप्लाई करनेकी ठेकेदारी आदि कार्य धनके लोभसे आज वे लोग कर रहे हैं, जिनके पूर्वज इन वस्तुओंके स्पर्शसे नहाते थे !! और जिसके सन्देहसे सन् १८५७-जैसी बहुत बड़ी क्रान्ति हो गयी थी।** चमड़े-चर्बी आदिकी बढ़ती हुई इस माँगके कारण जीवित गायसे मारी हुई गायका मूल्य अधिक मिलने लगा है। और इस प्रकार अधिक लाभदायक होनेके कारण गायकी हत्या भी बढ़ रही है। अन्य देशोंमें भी चमड़े आदिके लिये गोवध होता है, पर संसारके किसी भी सभ्य देशमें हमारे देशकी तरह दुधारू तथा हल जोतनेवाले एवं कामके योग्य लाभदायक पशु नहीं मारे जाते। 'Indian Government Hides Report' (इंडियन गवर्नमेंट हाइड्स रिपोर्ट) १९४३ के पृष्ठ ७ पर अपनी मौत मरी हुई तथा मारी गयी गायोंका प्रान्तवार हिसाब दिया है। इसके अनुसार सालाना ५२ लाख ७० हजार गायें कसाईखानोंमें मारी जाती हैं तथा १४७ लाख ४० हजार अपनी मौत मरती हैं। सबसे अधिक गोवध बंगालमें होता है। मद्रास तथा ट्रावन्कोर रियासतमें भी अधिक गोवध होता है। उत्तर भारतकी अधिकांश रियासतोंमें गो-वध करना अपराध है। सरकारने उन्हीं गायोंकी संख्या दी है, जिनकी खालोंके अङ्क महसूल आदिके द्वारा मिले हैं; पर जिन गायोंका वध घरोंमें होता है तथा जिनका चमड़ा वहीं काममें आ जाता है, वे इस संख्यामें शामिल नहीं हैं। **अनुमान है कि भारतमें एक करोड़के करीब गायोंका वध होता है।**

गो-वध कैसे बंद हो ?

सरकारका कर्त्तव्य था कि देशकी भौगोलिक तथा आर्थिक अवस्थाको, तथा यहाँके लोगोंके शारीरिक स्वास्थ्यकी आवश्यकताको दृष्टिमें रखते हुए यहाँ गोवध न होने देती, जिस प्रकार अकबर, हुमायूँ, बाबर इत्यादि मुसल्मान बादशाहोंने हिंदुओंके धार्मिक विचारोंको देखकर गो-वध न होने दिया था। अंग्रेजी सरकार भी वैसा ही करती; पर दुःख है कि सरकारके प्रभावसे पनपनेवाली पश्चिमीय सभ्यता तथा कल-कारखानोंने गोवध रोकनेके लिये नहीं, गोवधको बढ़ानेके लिये ही प्रोत्साहन दिया है ! अब जब गो-वधके कारण देशमें घी-दूधकी अत्यन्त कमी हो गयी है, खेतीके लिये पर्याप्त बैल भी नहीं रहे हैं, तब भारत-सरकारकी आज्ञासे पंजाब तथा सीमान्त-प्रदेशकी सरकारोंको छोड़कर देशकी शेष ९ प्रान्तीय सरकारोंने 'भारत-रक्षा-कानून'के अनुसार पशुवधपर कानूनी प्रतिबन्ध लगाये हैं। पर यह सब स्थायी नहीं, अस्थायी ही है। इन सरकारोंने केवल कानून ही बनाये हैं, अबतक अच्छी तरह कार्य नहीं किया है और न गोवधमें कोई विशेष कमी ही हुई है। सरकारने तो लापरवाही की ही है, जनताने भी इस कानूनसे लाभ उठानेका कोई उपाय नहीं किया !

यदि वास्तवमें हम गो-वधको बंद कराना चाहते हैं तो केवल सरकारके भरोसेपर न रहें। सरकार गोवध बंद करनेके लिये जो कानून-कायदे बनावे, उनसे लाभ उठावें; जहाँ कानून न बना हो, वहाँ बनवानेका प्रयत्न करें एवं देश-भरमें वैध तरीकों तथा कानूनद्वारा गोवध बंद करानेके लिये निम्नलिखित बातें सम्मुख रखकर संगठित रूपसे कार्य करें—

१. सरकारने 'भारत-रक्षा-कानून' द्वारा गोवध-पर जो पाबंदी लगायी है, उसे स्थायी कानूनके रूपमें बनवानेका प्रयत्न किया जाय। जबतक स्थायी कानून न

बने, बने हुए कानूनका प्रचार किया जाय तथा जहाँ-जहाँ गैरकानूनी तरीकोंसे गोवध होता हो; वहाँ सरकार तथा अधिकारियोंका ध्यान उस ओर आकर्षित किया जाय।

२. जिन प्रान्तीय सरकारोंने अबतक गोवधपर प्रतिबन्ध नहीं लगाया है; वहाँ कोशिश करके लगवाया जाय।

३. लोकमत तैयार करके प्रबल आन्दोलन किया जाय और चेष्टा की जाय कि चमड़ेके लिये गाय न मारी जाय, मांसके लिये गाय न मारी जाय, सूखे मांसका व्यापार न हो और गायोंको फूँका देना अपराध माना जाय। यद्यपि इनमें पहली तीन बातें कठिन हैं, फिर भी चेष्टा करनेपर सब कुछ सम्भव है। गोहत्याके कारणोंमेंसे



गोरी फौजोंके लिये मांसकी आवश्यकता तथा सूखे मांस, खून, चमड़े और हड्डीका व्यापार प्रधान कारण हैं। ये व्यापार बंद हों या कम हों, इसके लिये धार्मिक और कानूनी दोनों ही प्रकारके प्रतिबन्ध लगाये जानेकी आवश्यकता है।



४. चमड़ा, चर्बी, लोहू, हड्डी इत्यादि जिन-जिन चीजोंके लिये गौएँ मारी जाती हैं तथा जिन कार्यों, कारखानों, मोटरों आदिमें ये चीजें काम आती हैं, उनकी पूरी-पूरी जाँच करवाकर जनताको बतलाया जाय। जो कारखानेवाले गो-हत्यासे बनी हुई चीजोंका व्यवहार करते हैं, उनसे उन चीजोंको व्यवहारमें न लानेकी प्रार्थना की जाय।

५. कारखानेवाले इन चीजोंके स्थानपर किसी अन्य वस्तुका पता लगाकर उसीका व्यवहार करें।

६. अपनी मौत मरी हुई गायोंके चमड़े, हड्डी आदिका व्यापार तथा व्यवहार बढ़ाया जाय।

७. जिन कारखानोंके कपड़ोंमें गायकी चर्बी या सरेस काम आता है तथा जिन चीनीके कारखानोंमें गन्नेके रसको साफ करनेमें गायकी हड्डीसे निकाली हुई कैल्शियम फास्फेट काममें ली जाती है, उन कारखानोंके बने हुए कपड़ों तथा चीनीको व्यवहारमें नहीं लाना चाहिये। इसी प्रकार गोवधसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य कारखानोंकी चीजोंका भी व्यवहार नहीं किया जाना चाहिये।

८. लोग बूचड़खानोंमें मारी हुई गायोंके चमड़े इत्यादिसे बनी हुई चीजें—जूते, बक्स, हैंडबैग, बटुवे, कमरपट्टे, घड़ीके फीते, चश्मेके घर तथा इसी प्रकारकी अन्य चीजोंका व्यवहार न करनेकी शपथ ले लें।

९. वनस्पति या नकली घी, मक्खन निकाले हुए दूधके चूर्णसे बना हुआ नकली दूध तथा अन्य ऐसी चीजोंका, जो गोवधको बढ़ाती हैं, व्यापार एवं व्यवहार न किया जाय!

१०. मारी हुई गायसे जीवित गायका मूल्य बढ़ानेके लिये अधिक दूध देनेवाली तथा अच्छे बैल पैदा करनेवाली गायोंकी नस्लको उन्नत किया जाय।

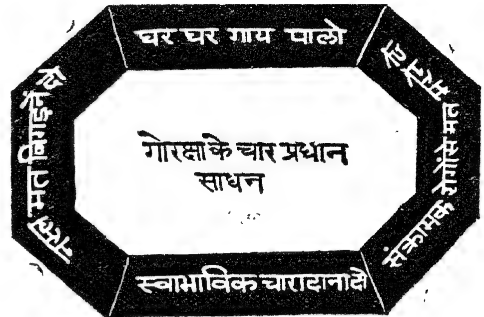
११. धार्मिक, आर्थिक, शारीरिक तथा देशकी भौगोलिक अवस्था एवं सामाजिक व्यवस्थाको सम्मुख रखकर देशके लोगोंमें पुस्तकों, पत्रों, भजन-मण्डलियों आदिके द्वारा प्रचार किया जाय।

१२. देशके समाचार-पत्र तथा प्रचारक चमड़ेके सामान, दवाइयों या अन्य चीजों, जिनके लिये गायें

मारी जाती हैं तथा वनस्पति घी, मक्खन निकाले हुए दूधके पाउडर एवं ऐसी अन्य वस्तुओंके विरुद्ध, जिनके प्रभावसे गो-वंशको हानि पहुँचती है, खूब डटकर प्रचार करें, कम-से-कम इनके विज्ञापन न लें और समर्थन न करें।

१३. नस्लसुधार, संक्रामक रोगोंके आक्रमणसे रक्षा, भरपेट चारा-दाना और व्यक्तिगतरूपसे घर-घर गौका पालन—इन चार बातोंका विशेषरूपसे प्रचार करें।

(ह० स०)



गोवधपर कानूनी प्रतिबन्ध

भारतमें इधर बढ़े हुए गोवधके कारण जब देशमें दूध तथा बैलोंकी अधिक कमी हुई, तब गत ९ नवम्बर १९४३ को भारत-सरकारकी केन्द्रीय परामर्श-दातृ-समितिने प्रान्तीय सरकारोंको दुधारू तथा गाभिन गायों तथा १० सालतकके कामके योग्य बैलोंके वधपर रुकावट करनेके लिये लिखा। प्रायः प्रान्तीय सरकारोंने उस आज्ञाकी उपेक्षा करके उसे कानूनी रूप नहीं दिया, साधारण आज्ञा-पत्र मात्र जारी कर दिये। २६ जुलाई सन् १९४४ को भारत-सरकारने पुनः निम्नलिखित आज्ञा-पत्र निकाला—'**भारत-सरकारने देशके पशुधनको—विशेषतया कामके योग्य पशु (बैल आदि), दुधारू और गाभिन गायों और बछड़े-बछड़ियोंको बचाने या रखनेके उद्देश्यसे फौजी अधिकारियोंने जो तरीका स्वीकार किया है, उसे दृष्टिमें रखते हुए हर सप्ताह बिना मांसके दिन नियत करने तथा साधारण जनताके लिये गो-वधपर प्रतिबन्ध लगानेके लिये प्रान्तीय सरकारोंसे प्रचार-पत्रद्वारा सिफारिश की। फौजी अधिकारियोंने—**

(१) तीन वर्षके बछड़े-बछड़ियाँ (Cattle below three years of age),

(२) तीनसे दस वर्षतकके काममें आनेवाले या कामके योग्य बैल तथा साँड़ (Male cattle between 3 and 10 years of age which are used or likely to be used as working cattle),

(३) तीनसे दस वर्षतककी सब गायें, जो दूध देनेके योग्य हों तथा जो नस्लके कामकी भी हों, और सब गायें जो गाभिन हों या दूध देती हों (All cows between 3 and 10 years of age which are capable of producing milk and all cows which are pregnant or in milk) **—इन सबके वधपर तथा वधके लिये बेचनेपर प्रतिबन्ध लगाना स्वीकार कर लिया है।**

कोई भी सिविल वेटेरिनरी अधिकारी किसी भी विशेष पशुके वधपर, जो फौजी बूचड़खानेमें हो, वहाँ जाकर आपत्ति कर सकता है। फौजी अधिकारी एक ऐसी कमेटीद्वारा, जिसमें फौजी तथा सिविल प्रतिनिधि शामिल हों, पशुओंका कम-से-कम मूल्य नियत करेंगे।

'भारत-सरकारने सब प्रान्तीय सरकारोंको इस मामलेमें जल्दी कार्यवाही करनेके लिये ऐसे आज्ञा-पत्र जारी करने या जो आज्ञा-पत्र पहलेसे जारी हों, उन्हें इस तरह सुधार देनेको लिखा है।'

'यह निश्चित है कि जन-साधारणकी खरीदके लिये मद्रास, बम्बई, यू. पी., सी. पी., बिहार और आसाममें पशुवधपर कुछ प्रतिबन्ध पहलेसे ही लगे हुए हैं। बंगाल और आसाममें सप्ताहमें कुछ बिना मांसके दिन नियत हैं।'

यह है भारत-सरकारका आज्ञा-पत्र, जो नं० २४। १४। ४४ ता० २६।७।४४ को जारी हुआ तथा केन्द्रीय असेम्बलीकी कार्यवाही रिपोर्ट भाग ४ नं० ५ के पृ० ३२४ पर ७ नवम्बर सन् १९४४ को प्रकाशित हुआ था।

भारत-सरकारके नवम्बर सन् १९४३ के तथा उपर्युक्त आज्ञा-पत्रके अनुसार संयुक्तप्रदेशकी सरकारने ९$\frac{१}{१}\frac{२}{४३}$ को, बिहार-सरकारने ९$\frac{}{४}\frac{}{४}$ को, मद्रासने ९$\frac{१}{४}\frac{}{४}$ को, मध्यप्रदेशने २६$\frac{१}{४}\frac{०}{४}$ को, उड़ीसाने १७$\frac{}{४}\frac{५}{४}$ को, बम्बईने २१$\frac{१}{४}\frac{०}{४}$ को, सिंधने ४$\frac{१}{४}\frac{२}{४}$ को, आसामने ३१$\frac{}{४}\frac{५}{४}$ को तथा बंगालने ३$\frac{}{४}\frac{३}{८}$ को 'भारत-रक्षा-कानून'की धारा ८१ उपधारा (२) के अनुसार भारत-सरकारद्वारा आज्ञा दिये हुए पशुओंका वध अपराध मानते हुए तीन सालतक कैद, जुर्माना तथा पशु-जब्ततक दण्ड देनेके नोटिफिकेशन जारी किये हैं। ये नोटिफिकेशन उन प्रान्तोंके सरकारी गजटोंमें उन्हीं दिनों प्रकाशित हुए तथा अब इन सरकारोंके मन्त्रियों और पशु-विभाग (Veterinary Department) के डाइरेक्टरोंसे मिल सकते हैं। पंजाब तथा सीमान्त-प्रदेशकी प्रान्तीय सरकारोंने बार-बार ध्यान दिलानेपर भी भारत-सरकारकी इस आज्ञाको कार्यरूपमें परिणत नहीं किया है। इन दोनों सरकारोंने अपने प्रान्तके पशु-धनको बचानेके प्रति उपेक्षा करके लोगोंको बड़ी हानि पहुँचायी है।

दीपक तले अँधेरा

भारत-सरकारकी राजधानी दिल्ली है। फौजोंका भी यहाँ बड़ा अड्डा है। जन-साधारणके लिये भी बहुत पशुवध होता है। दुःख है कि दिल्ली प्रान्तमें भारत-सरकारकी इस आज्ञाका कोई प्रभाव नहीं। दिल्लीके चीफ-कमिश्नरके आज्ञा-पत्र नं. २ (८१) ४४ एल. एस. जी. ता० २५-४-४४ द्वारा केवल दिल्ली शहरकी म्यूनिसिपल कमेटीकी सीमामें पशुवध-पर कमेटीके उपनियम नं० ९ में सुधार किया गया है। भारतसरकारकी इस आज्ञाके जारी होनेके बाद १ सितम्बर १९४४ को ४३२ गायें फौजियोंको मांस देनेके लिये दिल्ली जाती हुई गुड़गावाँकी सीमापर 'पंजाब प्रान्तके बाहर बिना आज्ञा पशु न जा सके' इस कानूनके अनुसार गुड़गावाँ जिलेकी पुलिसके द्वारा पकड़ी गयीं। सरकारी पशु-डाक्टरकी गवाहीके अनुसार इनमेंसे ३ गायें बछड़ोंसहित दूध देनेवाली, १६ बिना बछड़ोंके दूध देनेवाली, १३२ गाभिन, १२६ बछड़ियाँ नस्लके कामकी तथा शेष १५५ गायें दूधसे सूखी हुई थीं, पर नस्लके कामकी थीं। यदि वास्तवमें भारत-सरकार अपनी आज्ञाको लागू करना चाहती या उसकी आज्ञा लागू होती तो ये गायें मारनेके लिये नहीं ले जायी जातीं। नीचेकी अदालतने इस मुकदमेमें ३-९-४४ को गाय ले जानेवाले १६ आदमियोंको दो-दो सालकी कैदकी सजा दी तथा गायें जब्त कर लीं। परन्तु अपीलमें डिस्ट्रिक्ट-जज, हिसारने फौजियोंको मांस देनेके लिये गायोंके ले जानेका समर्थन किया और अपराधियोंको छोड़ दिया। जजके निर्णयकी ओर सरकारका ध्यान दिलाया गया, पर कोई सुनवायी नहीं हुई। विद्वान् जजके फैसलेके अन्तिम भागका कुछ अंश पाठकोंकी जानकारीके लिये नीचे उद्धृत किया जाता है—

'फौजके लिये रँगरूट देनेमें पंजाबका स्थान सर्वोपरि है। उसे इन रँगरूटोंके लिये खाद्य-सामग्री भी देनी चाहिये। दिल्ली भारतका सबसे छोटा प्रान्त है। गुड़गावाँ जिला दिल्ली छावनीके सबसे निकट होने तथा दिल्लीके लिये खाद्य-सामग्री देनेके कारण सबसे अधिक कमाता है। पब्लिक प्रोसेक्यूटर (सरकारी वकील) ने कहा है कि गोवध करना बुरा है। पर मेरे विचारसे यह कहना बिल्कुल ठीक होगा कि हिज मैजेस्टीकी ब्रिटिश फौजोंका प्रधान भोजन प्रायः गो-मांस ही है। अतः पब्लिक प्रोसेक्यूटरका उपर्युक्त तर्क कम-से-कम आजकलके असाधारण समयमें अमाननीय है। यह सोचना कि ये तमाम पशु फौजके अधिकारमें आ जाते और तुरंत वध कर दिये जाते, अनुचित है। इस अभियोगसे फौजी लोग बहुत-से पशुओंसे वञ्चित रह गये, जो उनके खानेके लिये ही थे। सम्भवतया हिज मैजेस्टीके बहुत-से फौजी सिपाहियोंको अपने भोजनके इस भागके बिना ही कई दिनोंतक काम चलाना पड़ा होगा। यह कितनी दुःखद बात है। पी. डब्ल्यू. १ के बयानसे यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इन बेचारे कुलियोंने उन्हें बता दिया था कि वे इन पशुओंको फौजी अधिकारियोंको देनेके लिये दिल्ली-छावनी ले जा रहे थे। बेचारे ये कुली (या ले जानेवाले) यह नहीं सोच सके कि मामूली वेतन लेकर गायोंको सिपाहियोंके खाद्यके लिये फौजी अधिकारियोंके पास पहुँचाना एक अपराध है, और उसके बदले उन्हें इतना कड़ा दण्ड मिलेगा। इस अभियोगसे युद्ध-प्रयत्नोंपर जो बुरा प्रभाव पड़ सकता था, उसे याद करते हुए दुःख होता है। यदि छावनीके या फौजी विभागके अत्यधिक कार्यभारसे दबे हुए क्लर्कको यह मालूम होता कि नियमानुसार परमिट लेना आवश्यक ही है तो यह अशुभ घटना नहीं होती। यह मानते हुए कि नियमानुसार यह अपराध है, मेरी रायमें उपर्युक्त परिस्थितियोंको देखते हुए उनके लिये दण्ड बहुत हल्का होना चाहिये। अपील करनेवाले अभियुक्त पहलेसे ही दो महीनोंसे जेलमें हैं। अतः मैं उन्हें जो अपराध दिया गया है,

उसका समर्थन करता हूँ; किन्तु उनके दण्डकी अवधि कम करके उतनी ही कर दी जाती है, जितनी कि वे अबतक भोग चुके हैं।'

'अपीलकर्ताके वकीलने जिस दूसरे प्रश्नको हाथमें लिया, वह है—जब्तीकी आज्ञाके ऊपर। उन्होंने इस बातपर जोर दिया है कि जब्तीके प्रश्नपर नियम ८१ का उप-नियम ४ अर्थात् 'यदि आज्ञामें सम्पत्तिके जब्त कर लेनेका विधान है तो जिसके कारण अपराध हुआ है, उस वस्तुको जब्त कर लिया जा सकता है।' लागू होता है, ए. आई. आर. १९४४ बम्बई २४७में यह विधान दिया हुआ है कि जहाँ दी हुई आज्ञामें जब्तीकी आज्ञा नहीं है, वहाँ सामान्य विधान अर्थात् धारा ५१७ सी-आर. पी. सी. की शरण लेना अनुमोदित नहीं है। १९४४ के 'बम्बई ला रिपोर्टर' ५२९ में प्रकाशित बम्बई हाईकोर्टके 'फुल बेंच जज्मेंट (Full Bench Judgment) में भी वही बात दुहरायी गयी है। वहाँ यह स्वीकार किया गया है कि व्यवस्थाविधानमें बिना विशिष्ट आज्ञाके जब्ती नहीं की जा सकती। 'यदि आज्ञामें ऐसा विधान हो' ये शब्द अदालतके सी-आर. पी. सी. की धारा ५१७ के सामान्य विधानोंके अंदर जब्तीकी आज्ञा देनेके अधिकारको सीमित कर देते हैं। विद्वान् पब्लिक प्रोसेक्यूटरके इस तर्कको भी कि अपने दण्डदायक और समाप्तिकारक विधानोंके साथ सी-आर. पी. सी. की धारा ५१७ इस मामलेमें लगती है, यह काट देता है। मेरे विचारमें धारा ५१७ इस मामलेमें बिल्कुल नहीं लगती। अतः यह बिल्कुल स्पष्ट है कि पशुओंकी जब्तीकी आज्ञा नितान्त अविधानपूर्ण है और बड़ी खींचतान करके भी किसी नियम या युक्तिद्वारा इसका समर्थन नहीं हो सकता। अतःअपीलकर्ताको जब्त किये हुए पशुओंको बैजबाबू (या जो भी उनका मालिक हो) के पास ले जानेके लिये वापिस पानेका अधिकार है और मैं तदनुसार आज्ञा प्रदान करता हूँ।''

आज्ञा सुनायी गयी— हस्ताक्षर—लायक अली,
गुड़गावाँ सेशन्स जज, हिसार
ता. २८ अक्टूबर, १९४४

इसपर टीका-टिप्पणी व्यर्थ है। हिज मैजेस्टीकी ब्रिटिश फौजोंके भोजनके लिये गायें कटनी ही चाहिये; फिर चाहे वे गाभिन हों, दूध देनेवाली हों, अच्छी नस्लकी हों और बिना परमिटके ही प्रान्तसे बाहर जा रही हों! कानूनकी रक्षाके लिये अपराधियोंको दो मासका दण्ड पर्याप्त है और गायोंकी जब्ती ही विधानसे कानूनी नहीं ठहरती। ब्रिटिश फौजोंके दुःखसे दुखी लायक डिस्ट्रिक्ट जज श्रीलायक अली महोदयका फैसला अवश्य ही तारीफके लायक है!!

अब भी गुंजाइश है

यह ठीक है कि 'भारत-रक्षा-कानून' द्वारा सरकारने राजनैतिक आन्दोलनको दबानेका जैसा प्रयत्न किया, वैसा ही या उससे भी कम प्रयत्न वध होनेवाले पशुओंकी देख-रेखके लिये करती तो लाखों उपयोगी पशु बच जाते। सरकारको तो क्या कहें; अंग्रेजी सरकार गो-वध बंद करनेका विशेष प्रयत्न करे यह सम्भव नहीं है। पर सरकारने किसी कारण वफादारी दिखानेके लिये जो प्रतिबन्ध लगाये हैं, उनसे तो लाभ उठाया जा सकता था तथा इसके लिये अब भी गुंजाइश है। बम्बईकी 'जीव-दया-मण्डली' तथा अन्य ऐसी ही संस्थाओंके प्रयत्नोंसे बम्बईमें मारे जानेवाले पशुओंकी संख्या आधी रह गयी है। इसी प्रकार अन्य प्रान्तोंमें भी जनता इधर ध्यान देती, गैरकानूनी गो-वधकी ओर अधिकारियोंका ध्यान आकर्षित किया जाता, उन प्रान्तोंमें चलनेवाले पत्र, गो-रक्षक तथा अन्य सभा-सोसाइटियाँ आन्दोलन करतीं तो हजारों गायों एवं उपयोगी पशुओंके प्राण बच जाते। अब भी समय है। जो हो चुका, उससे शिक्षा लेकर समय न खोवें, अपनेसे जो हो सके, करें तथा जो भी कानून-कायदे हों, उनसे उचित लाभ उठानेके लिये निम्नलिखित उपायोंपर ध्यान दें—

१. पंजाब तथा सीमान्त प्रदेशमें भारत-सरकारकी आज्ञा लागू करानेका प्रयत्न किया जाय। इसके लिये आन्दोलन हो।

२. जिन प्रान्तोंमें 'पशु-वध-कानून' लागू है, वहाँ वध होनेवाले पशुओंकी देख-रेखका प्रबन्ध किया जाय। जहाँ गैर-कानूनी वध होता हो, उसकी ओर पशु-अधिकारियोंका ध्यान आकर्षित किया जाय। इस प्रकार सँभाल करनेसे सरकारी अधिकारी कुछ सचेत होंगे तथा गो-वधमें कुछ-न-कुछ कमी अवश्य होगी।

३. यह 'पशु-वध-प्रतिबन्ध' नियम स्थायी नहीं है। 'भारत-रक्षा-कानून', जिसके आधारपर यह नियम बना है, युद्धके कारण लागू किया गया है। जब भी 'भारत-रक्षा-कानून' समाप्त होगा, यह प्रतिबन्ध भी लागू न रहेगा।

अतः कोशिश करके गोवध रोकनेके लिये कोई स्थायी कानून बनवानेकी पूरी-पूरी चेष्टा की जानी चाहिये। सरकारने पहले कभी भी गोवधपर प्रतिबन्ध लगानेके सिद्धान्तको नहीं माना था; पर अब चाहे कागजी कानून ही क्यों न हो, यह सिद्धान्त मान लिया गया। अतः इस सिद्धान्त-को स्थायीरूपसे कार्यान्वित करा देना अत्यन्त आवश्यक है।

४. जिस-जिस प्रान्तमें गो-रक्षासम्बन्धी जो-जो कानून-कायदे बने हैं, उनका समाचारपत्रों तथा विज्ञापनों-द्वारा जनतामें प्रचार किया जाय। गो-सेवा एवं गो-रक्षासे सम्बन्ध रखनेवाली सभा-सोसाइटियाँ इन कानूनोंको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये प्रयत्न करें। उचित हो तो इस कामके लिये अलग संस्था स्थापित की जाय। (ह. स.)

गौओं तथा साँड़-बैलोंके शुभाशुभ लक्षण

(१)

(वायुपुराणसे)

[मनु-मत्स्य-संवाद]

सुलक्षणा गायके लक्षण

मत्स्यभगवान्ने महाराजा मनुसे कहा—"सबसे पहली बात तो यह है कि गौ सुशील—सीधी हो। उसका कोई भी अङ्ग विकृत न हो, वह दुर्बल न हो तथा उसे कोई रोग भी नहीं होना चाहिये। उसका बछड़ा जीता हो, चमड़ी, खुर और सींग चिकने हों, देखनेमें सुन्दर एवं सौम्य हो, आकारमें न बहुत बड़ी हो न छोटी और उद्धत स्वभावकी न हो। उसके पीछेका भाग चौड़ा हो। ओठ कोमल, सटे हुए और लाल रंगके हों तथा गर्दन भी लाल रंगकी हो, जीभ काली न हो किन्तु लंबी, चिकनी एवं ललाई लिये हुए हो और नेत्रोंसे आँसू न बहते हों। खुर सटे हुए और मजबूत हों, नेत्र रंगमें मधुके समान अथवा पानीके बुदबुदोंके समान अथवा लाल और चिकने हों, उनकी पुतली भी लाल रंगकी हो। सात अथवा चौदह दाँत हों, तालू श्याम रंगका हो तथा दोनों पार्श्व एवं रान सुन्दर हों। छाती, पीठ, मस्तक, दोनों ओरका पेट तथा कूल्हे—ये छः अङ्ग ऊँचे उभरे हुए हों। दोनों कान, दोनों नेत्र तथा ललाट—ये पाँच अङ्ग समान एवं चौड़े हों तथा पूँछ, ललरी (गलकम्बल), दोनों रान, मस्तक, गर्दन तथा चार थन—ये दस स्थान लंबे हों। ये सब लक्षण जिस गौमें हों, उसे 'सुलक्षणा' समझना चाहिये।

साँड़ोंके लक्षण

"उनके कंधे एवं थूहा ऊँचा, पूँछ एवं ललरी सीधी, कटि-प्रदेश एवं कंधे चौड़े, नेत्रोंका रंग वैदूर्यमणिके सदृश, सींगोंकी नोक नयी कोंपलोंके भीतरी भागके समान चिकनी, पूँछ लंबी एवं मोटी तथा नेत्र मल्लिकाकुसुमके समान हों। दाँत तीखे तथा संख्यामें नौ या अठारह हों, छोड़नेके लिये इन्हीं लक्षणोंवाले साँड़को चुनना चाहिये। ऐसे साँड़को घर-में रखनेसे भी धन-धान्यकी वृद्धि होती है। जिसका रंग सफेद, लाल, काला, गोरा (पीला) अथवा गुलाबी हो, अथवा जिसकी पीठ ताँबेके रंगकी हो, जो कई रंगोंका हो, जिसके कान बड़े, कंधे ऊँचे, रोयें चिकने और आँखें लाल हों अथवा जिसका रंग पीला, पेट सफेद और बगलें काले रंगकी हों—ब्राह्मणके लिये इस प्रकारका साँड़ छोड़ना प्रशस्त माना गया है। क्षत्रियके लिये लाल रंगका, वैश्यके लिये सुनहरी रंगका तथा शूद्रके लिये काले रंगका साँड़ छोड़ना उत्तम कहा गया है। जिसके सींग भौंहोंकी ओर मुड़े हुए तथा लंबे हों—ऐसा साँड़ सभी वर्णोंके लिये उपयुक्त है एवं सर्वार्थ-साधक माना गया है।

जिसके चारों पैर बिल्लीके रंगके, शेष अङ्ग कपिल अथवा सफेद रंगके हों और जिसके नेत्र मणियोंकी भाँति चमकीले हों, ऐसे साँड़को प्रशंसनीय कहा गया है। जिसका रंग पीला अथवा तीतरके समान हो और जिसके चारों पैर अथवा दो पैर सफेद रंगके हों, उसे करट जातिका साँड़ कहते हैं। जिसका मुँह कानोंतक सफेद हो और शेष रंग लाल हो, उसे 'नन्दीमुख' कहते हैं। जिसका पेट एवं पीठ सफेद रंगकी हो, उसकी 'समुद्र' संज्ञा कही गयी है। ऐसे साँड़के रखनेसे वंशकी वृद्धि होती है। जिसका रंग मल्लिका-कुसुमके समान अथवा चितकबरा हो, उसे 'धन्य' कहा गया है और जिसके शरीरपर कमलकी आकृतिके धब्बे हों, उसे 'भाग्यवर्धक' माना गया है। इसके विपरीत जिसके तालू, ओठ एवं मुँह काले रंगके हों, सींग एवं खुर खुरदरे हों, रंग अस्पष्ट एवं कद छोटा हो, देखनेमें बाघ अथवा सिंहके समान हो, जिसका रंग कौए, गीध अथवा चूहेका-सा हो, जिसकी वृद्धि रुक गयी हो, जो काना अथवा खोड़ा हो, जिसकी दृष्टि भेंड़ी हो,

जिसके पैर बराबर न पड़ते हों अथवा सफेद रंगके हों और जिसके नेत्र घूमते हों, ऐसे साँड़को न तो घरमें ही रखना चाहिये और न छोड़ना चाहिये।

छोड़ने अथवा घरमें रखने योग्य साँड़ोंके लक्षण एक बार फिर कहता हूँ। जिनके सींग सथिये (स्वस्तिक) के आकारके, शब्द मेघके समान गम्भीर, तथा कद बहुत ऊँचा हो, जिनकी चाल मतवाले हाथीके समान हो तथा छाती चौड़ी, आकार विशाल तथा बल एवं पराक्रम महान् हों, जिनका मस्तक, दोनों कान, ललाट, पूँछ, चारों टाँगें, दोनों नेत्र तथा दोनों पार्श्व काले रंगके हों और शेष शरीर सफेद रंगका हो, अथवा शेष शरीर काला होनेपर ये सब अङ्ग सफेद रंगके हों, उस साँड़को श्रेष्ठ माना गया है। जिसका आगेका भाग उभरा हुआ हो, पूँछ पृथ्वीतक लटकती हुई तथा मोटी हो, वह 'नीलवृष' श्रेष्ठ माना गया है। जिसके शरीरपर शक्ति (सेल), ध्वजा एवं पताकाके चिह्न हों, वह साँड़ विचित्र सिद्धि एवं विजय देनेवाला होता है। जो साँड़ रोके जानेपर दाहिनी ओर घूम जाते हैं, जिनका मस्तक एवं गर्दन ऊँचे होते हैं, वे साँड़ धन्य एवं यूथको बढ़ानेवाले होते हैं। जिसके सींगोंके अग्रभाग तथा नेत्र लाल रंगके और शेष शरीर सफेद रंगका हो, तथा जिसके खुर नयी-नयी कोपलोंके समान चिकने हों, उससे बढ़कर श्रेष्ठ कोई भी साँड़ नहीं माना जाता। जिस साँड़की टाँगें, मुँह और पूँछ सफेद रंगके हों और शेष शरीर लाखके रंगका हो, उसे 'नीलवृष' कहते हैं। ऐसे साँड़को ही छोड़नेके योग्य कहा गया है। ऐसे 'नीलवृष' का उत्सर्ग करनेसे पितरोंकी तृप्ति होती है। इस प्रकारके लक्षणोंसे युक्त साँड़को, चाहे वह घरका जन्मा हुआ हो अथवा मोल लिया हुआ हो, छोड़कर मनुष्य कदापि मृत्युकी चिन्ता न करे। उसका मोक्ष निश्चित है।

(२)

(श्रीवराहमिहिरकृत 'बृहत्संहिता'से)

[पराशर-बृहद्रथ-संवाद]

गायोंके शुभाशुभ लक्षण

मुनि पराशरने बृहद्रथसे कहा—जिनकी आँखोंमें पानी आता हो, तथा कीचड़ जमा रहता हो, तथा जिनकी आँखें रूखी और चूहेकी-सी हों, जिनके सींग हिलनेवाले, कनपटी चिपटी और रंग गदहेका-सा मटमैला हो, जिनके दस, सात या चार दाँत हों, मस्तक और मुँह लंबे हों, पीठ झुकी हुई, गर्दन ओछी और मोटी, डमरूके समान (दोनों ओर मोटा और बीचमें पतला) मध्य-भाग, खुर फैले हुए, जीभ काली और अधिक लंबी, घुट्टे अत्यन्त पतले अथवा अत्यन्त मोटे, डील ऊँचा एवं शरीर दुर्बल हो तथा जिनका कोई अङ्ग अधिक अथवा न्यून हो, वे गायें शुभ नहीं होतीं।

बैलोंके शुभाशुभ लक्षण

इसी प्रकार जिस बैलके अण्डकोष स्थूल और अत्यन्त लंबे हों, पिछली टाँगोंके समीपका पेट बहुत-सी नसोंसे भरा हो, छाती पतली और कनपटी नसोंसे भरी हुई हो, जो तीन स्थानोंसे मूत्र त्यागता हो, जिसकी आँखें बिलावकी-सी हों, रंग भूरा हो, और जो करट जातिका हो, वह शुभदायक नहीं होता, किन्तु ब्राह्मणोंके लिये लाभदायक होता है। जिसके ओठ, तालू और जीभ काले रंगके हों और जो चलते समय जोर-जोरसे साँस लेता हो, ऐसा बैल अपने झुंडके लिये घातक होता है। जिसका गोबर, मस्तककी हड्डी और सींग मोटे हों, पेट सफेद रंगका और शेष शरीर कृष्णसार मृगके रंगका हो, वह बैल अपने टोलेका नाश करनेवाला होता है। ऐसा बैल चाहे घरमें ही पैदा क्यों न हुआ हो, उसका त्याग कर देना चाहिये। जिसके शरीरपर काली बुँदकियाँ हों और रंग खाकी अथवा हल्का लाल हो, बिलावके-से नेत्र हों, वह बैल दानमें मिला हुआ होनेपर भी ब्राह्मणके लिये अशुभ होता है। जो बैल हल अथवा गाड़ीमें जोते जानेपर कीचड़से निकालनेके समान पैरोंको उठाते हैं, जिनकी गर्दन पतली और नेत्र भयभीत होते हैं और जो छोटी रासके होते हैं, वे पीठपर बोझा नहीं उठा सकते।

शुभ लक्षण

जिन बैलोंके ओठ कोमल, सटे हुए और ताँबेके समान लाल रंगके होते हैं, पुट्ठे कृश और जीभ ताँबेके समान लाल होती हैं, जिनके कान पतले, छोटे और ऊँचे होते हैं, जिनका पेट सुन्दर और पिंडलियाँ उभरी हुई होती हैं, खुर कुछ-कुछ लाल और मिले हुए, छाती चौड़ी तथा डील (थूहा) ऊँचा होता है, चमड़ी चिकनी और रोएँ सुन्दर और छोटे होते हैं तथा सींग लाल और पतले होते हैं, जिनकी पूँछ पतली और लंबी होती है, आँखोंके कोये लाल होते हैं तथा जो चलते समय जोर-जोरसे साँस लेते हैं, जिनके कंधे सिंहके-से और गलेसे लगी हुई चमड़ी (गलकम्बल) पतली और छोटी होती है, उस जातिके बैलोंको 'सुगत' कहते हैं, और वे पूजनीय—प्रशस्त होते हैं। जिनके बायें भागमें वामावर्त (बायीं ओर घूमनेवाले चक्र) और

दाहिने भागमें दक्षिणावर्त तथा शरीरपर हिरनकी-सी धारियाँ हों, जिनके दाहिने भागमें वैदूर्यमणि एवं मल्लिकाके पुष्पके चिह्न हों, नेत्र और शरीर स्थूल हों, और खुर फैले हुए न हों, वे सभी बैल प्रशस्त एवं भार ढोनेमें समर्थ होते हैं। जिसके थुथनेमें बल पड़े हों, मुँह बिलावका-सा हो और दक्षिण भाग सफेद रंगका हो, बाकी शरीर कमल, कुमुद अथवा लाखके रंगका हो, जिसकी पूँछ सुन्दर और चाल घोड़ेके समान तेज हो, जिसके अण्डकोष लंबे, पेट मेढ़ेके समान, और कमर तथा छाती पतली हो, उस बैलको भार ढोने तथा लंबी यात्रा करनेमें समर्थ और वेगमें घोड़ेके समान जानना चाहिये। जिसका रंग सफेद, आँखें पीली अथवा लाल, सींग ताँबेके रंगके और मुख बड़ा हो, वह 'हंस' जातिका बैल शुभदायक एवं अपने झुंडको बढ़ानेवाला कहा गया है। जिसकी पूँछ जमीनतक लटकी हुई हो, जिसकी कमर ताँबेके रंगकी और नेत्र लाल हों, जिसका डील ऊँचा हो और रंग चितकबरा हो, ऐसा बैल अपने स्वामीको शीघ्र ही लक्ष्मीवान् बना देता है। अथवा जिसका एक पैर सफेद रंगका हो और बाकी शरीर चाहे जिस रंगका हो, वह बैल भी शुभफल-दायक होता है। यदि नितान्त शुभदायक बैल न मिले तो शुभ एवं अशुभ दोनों लक्षणोंवाला बैल भी लिया जा सकता है।

गायोंके संकेतसे भावी शुभाशुभ फल जाना जा सकता है

बृहत्संहितामें कहा गया है कि गायें अत्यन्त दीन-सी हो रही हों तो राजाका अमङ्गल होता है। खुरोंसे जमीन कोड़ती हों तो रोग, आँखोंमें आँसू भरे हों तो मृत्यु, और बार-बार बिना कारण डकारती हों तो गोपालकको चोरका भय होता है। रातके समय गाय बिना कारण शब्द करे तो भय होता है। परन्तु बैलके शब्द करनेपर मङ्गल हुआ करता है। गायोंको छोटी मक्खियाँ या छोटे-छोटे कुत्ते छेड़ते हों तो जल्दी वर्षा होती है। जंगलसे घर लौटती हुई दूसरी गायोंके साथ रँभाती हुई प्रवेश करे तो गायोंकी संख्या बढ़ेगी, ऐसा समझना चाहिये। गायोंके अङ्गोंमें गीलापन और रोमाञ्च होनेपर धन और हर्षकी वृद्धि होती है।

उत्तम गोजातिके लक्षण

अच्छी गौ

शरीरकी बनावट—शरीरका आकार बड़ा, मस्तक छोटा, कपाल चौड़ा, चमड़ी पतली, पूँछ लंबी, पतली और चञ्चल, सींगोंका अगला भाग पीछेकी ओर झुका हुआ, पैर छोटे, जाँघें चौड़ी, छाती गहरी और चौड़ी, गर्दन पतली और लंबी, कान बड़े, पिछले पैर बहुत अलग-अलग, जिनमेंसे थन पीछेकी ओर बाहर निकल रहा हो, ऊस घड़े-जैसा, थन-की चारों चूँचियाँ एक-सी और बड़ी-बड़ी, चूँचियाँ दूर-दूर, आँखें चमकीली, शरीर चिकना और चमकीला, तथा बाल नरम रेशम-से।

स्वभाव—बड़ा मृदु, बहुत शान्त, दृष्टिमें मातृस्नेह, राग-द्वेषरहित, अपरिचित मनुष्यसे भी प्रेम, बच्चोंके द्वारा चिढ़ाने और छेड़नेपर भी क्रोध न होना, उत्तेजनारहित, परिवारके लोगोंसे पारिवारिक प्रेम, कभी न चौंकना और खान-पानमें संयम।

दूध—बड़े थनमें दूध भरा हो, दूधकी शिराएँ मोटी हों, एक ही बारके पेन्हानेमें पूरा दूध उतर जाय, दुहनेके समय बड़े वेगसे दूध निकले, दुहते समय बर्तनमें दूधकी धारका शब्द होता हो, मोटी धार हो, पिछले पैरोंको बाँधे बिना ही दुहने दे, किसीसे भी दुहा ले, दिनभरमें कई बार दुहने दे और प्रत्येक बार प्रेम तथा शान्तिसे दूध दे।

रंग—लाल गौमें पचानेकी शक्ति अधिक होती है तथा उसका दूध मीठा और अधिक मात्रामें होता है। काली गौका दूध बहुत नीरोग और परिमाणमें भी अधिक होता है। कपिला गौ नीरोग, बलवान् और अधिक दूध देती है तथा उसमें मक्खनका भाग अधिक होता है; धूसर रंगकी गौ बहुत दूध दिया करती है।

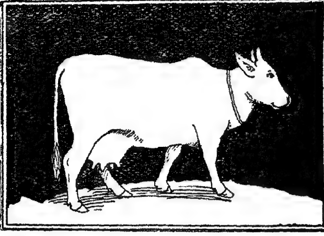
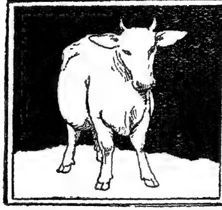
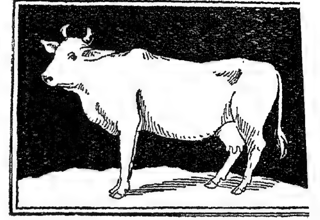
अच्छा साँड़

कपाल चौड़ा, सिर छोटा, गर्दन भारी, पीठ लंबी, टाँगें मजबूत, शरीर गठीला और चुस्त, आँखें शान्त, पूँछ पतली और लंबी, पूँछके अग्रभागपर बालोंका गुच्छा, चालमें गम्भीरता, सिर उठाकर चुस्तीसे चलना। सबसे अच्छा साँड़ वह होता है, जो बहुत अधिक दूध देनेवाली गौका पुत्र हो।

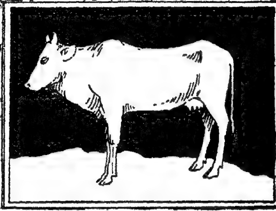
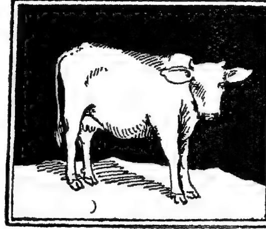
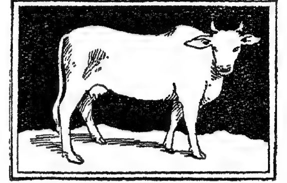
अच्छा बछड़ा

कपाल चौड़ा, आँखें चमकीली और दूर-दूर, नाक छोटी और ऊपरकी तरफ झुकी हुई, पेट लंबा, वक्षःस्थल

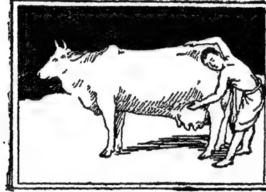
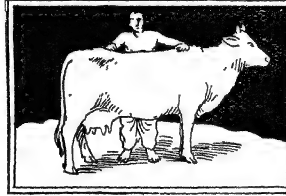
नं० १-२-३

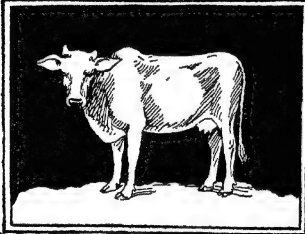
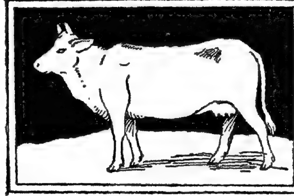
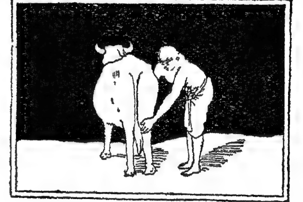
नं० ४-५-६

नं० ७-८-९


नं० १०-११-१२

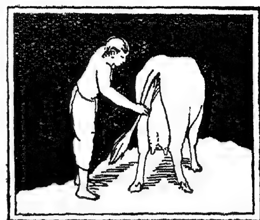




१-अच्छी गाय—लंबा शरीर, कूल्हे चौड़े, बढ़िया थन ।
२-अच्छी गाय—चौड़ी छाती, पैर बराबर तथा काफी फासलेपर ।
३-अच्छी गाय—सिर, गर्दन साफ-सुथरे, आँखें चमकीली, कटिभाग गहरा, पिछले पुट्ठे चौड़े, थन बड़े ।
४-खराब गाय—छोटा शरीर, सटे कूल्हे, सूखे थन, धँसी आँखें ।
५-खराब गाय—हृदय और सीना संकीर्ण, अगले पैर सटे हुए, झुकी गर्दन ।
६-खराब गाय—ढालू नितम्ब, कूल्हे आगेकी ओर पतले, अगले-पिछले पैरोंको निकट रखकर खड़ा होना ।
७-अच्छी गाय—मजबूत संगठन, पूरा भोजन समाने लायक बड़ा पेट ।
८-अच्छी गाय—कंधोंसे लेकर पूँछतक सीधी और लंबी पीठ ।
९-अच्छी गाय—पिछले पैरोंमें परस्पर बहुत दूरी, इससे चौड़े थनोंको बड़ा आराम मिलता है ।
१०-खराब गाय—मध्य भाग सँकड़ा, चेहरेपर मुर्दनी, सूखे थन ।
११-खराब गाय—निकला हुआ पेट, सूखे थन ।
१२-खराब गाय—सटी हुई रानें, इससे अच्छे थन नहीं बन पाते ।

नं० १-२-३



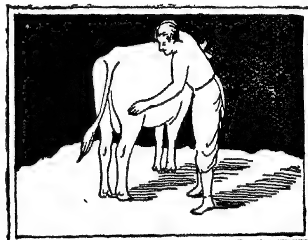




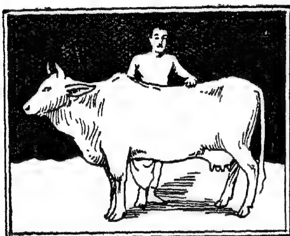
नं० ४-५-६

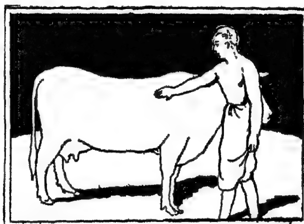






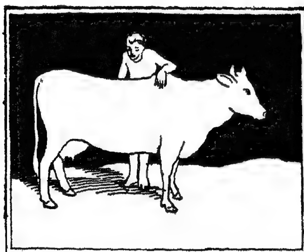
नं० ७-८-९

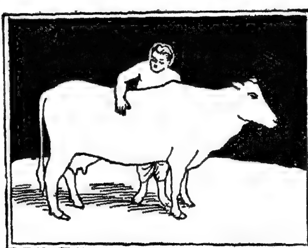






नं० १०-११-१२







अच्छी गाय—१-कूल्हेका स्थान खूब चौड़ा है। २-कूल्होंकी अन्तिम हड्डीका स्थान खूब चौड़ा। ३-चौड़ी रानें—जिनमें थन समा जाय।

खराब गाय—४-कूल्हेका स्थान खूब सँकड़ा है। ५-कूल्होंकी निकली हुई हड्डी तथा कम चौड़ी। ६-मिली हुई रानें—थन बन ही नहीं पाता।

अच्छी गाय—७-पीठ कंधोंतक सीधी तथा लंबी। ८-नितम्बके ऊपरका भाग सीधा, कमरसे पूँछतक काफी लंबाई। ९-चौड़ा सीना, विशाल उदर, पुष्ट पँसलियाँ।

खराब गाय—१०-हृदयके पास मोटाई, मध्यभागकी पँसली कम फैली हुई। ११-बहुत नजदीक-नजदीक पँसलियाँ। १२-सँकड़ा सीना, छोटा-सा पेट।

गोल, मुखसे लेकर गलकम्बल (ललरी) तकका चमड़ा ढीला, गर्दन छोटी, पूँछ लंबी, कान सुहावने, स्वभावमें गम्भीरता, मृदुता और तेजस्विता।

अच्छी बछड़ी

गर्दन लंबी, आँखें चौड़ी, कान लंबे, थन बड़ा और लंबा, चमड़ा खूब पतला, शरीरके रोम रेशम-से नरम, सामनेका अङ्ग पिछले अङ्गकी अपेक्षा कुछ ऊँचा और स्थूल, पूँछ लंबी और पूँछके अगले सिरेपर बालोंका गुच्छा, स्वभाव मधुर, शान्त और मिलनसार।

दुधारू गौकी परीक्षा

(लेखक—मन्त्री, गोपालसङ्घ, शोलापुर)

हमलोगोंमेंसे बहुतोंको इसका अनुभव हुआ होगा कि गौ रखनेकी इच्छा होनेपर भी अच्छी गौ न मिलनेसे जैसी-तैसी गौ रखकर पीछे कष्ट ही होता है और यही कहना पड़ता है कि बाज आये इस झगड़ेसे। पर ऐसा इसीलिये होता है कि हम गौ खरीदते समय यह देख नहीं लेते कि गौ दुधारू है या नहीं। इस विषयकी कोई जानकारी ही नहीं होती। ग्वाले जानते हैं, परखते हैं, पर खुलकर सब भेद नहीं बतलाते। इसलिये जरूरी है कि हमलोग इसकी आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लें। जानकार लोगोंने दुधारू गौकी पहचानोंका संग्रह किया है। विशेषज्ञोंको अवश्य इसमें कोई नया विशेष ज्ञान नहीं मिलेगा, पर सर्वसाधारणके लिये ये पहचानें उपयोगी होंगी, इसलिये यहाँ दी जाती हैं।

गौकी बगलमें खड़े होकर देखना

गौकी बगलमें खड़े होकर देखनेसे पहले उसका आकार देख पड़ेगा। कंधोंसे लेकर पूँछतक उसकी लंबाई काफी होनी चाहिये। पीठ लचकी हुई न हो, मेरुदण्ड ऊपर उठा हुआ हो और उसके मनके अलग-अलग दिखायी दें। पेटका घेरा जितना ही बड़ा होगा, उतना ही वह अधिक खानेवाली होगी और उतना ही दूध भी अधिक देगी। यह ध्यानमें रहे कि कम खाकर अधिक दूध देनेवाली गौकी सृष्टि अभीतक नहीं हुई है। पेटकी पसलियाँ जब उठी हुई और फैली हुई होती हैं, तब पेटमें चारा-पानीके लिये अधिक अवकाश होता है। दूध देनेवाली गौके शरीरपर मांस अधिक नहीं होता, क्योंकि वह जो कुछ खाती है, उससे दूध ही अधिक निर्माण होता है। हाँ, गाभिन होनेपर पौष्टिक पदार्थ खानेको मिलें तो वह अवश्य ही पुष्ट होती है। गौके बदनपर हाथ फेरकर देख लेना चाहिये। यदि खाल मुलायम और पतली हो तो यह अच्छा लक्षण है; यदि खाल मोटी हो तो यह समझना चाहिये कि रक्ताभिसरण ठीक नहीं हो रहा है। और रोएँ घने हों तो समझना चाहिये कि इसकी परवरिश ठीक तरहसे नहीं हो रही है और इसका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है।

पीठके पीछे खड़े होकर देखना

पीठके पीछे खड़े होकर गौकी ओर देखनेसे पेटका भराव देख पड़ता है। पुट्ठों और नितम्बोंकी चौड़ाई सामने आ जाती है। पुट्ठोंका चौड़ा होना यह सूचित करता है कि गर्भाशयमें अर्भकका पोषण ठीक तरहसे होता है। गौके थनका पिछला भाग और चूँचियाँ भी यहाँसे देख पड़ते हैं। गौकी जाँघें भरी हुई और दोनों जाँघोंके बीच काफी अन्तर होना चाहिये जिसमें थनके समानेके लिये पूरा अवकाश हो।

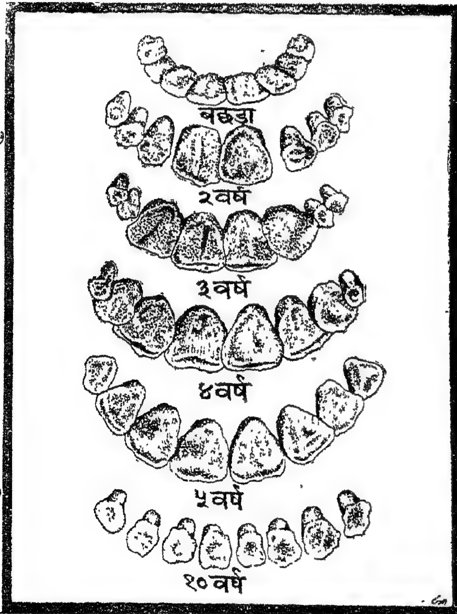
पेटके नीचेसे देखना

गौके पेटपर 'दूधवाली शिरा' होती है। यह थनकी ओर रक्त पहुँचानेवाली रक्तवाहिनी है। यह जितनी लंबी और बड़ी होगी, थन उतना ही अधिक पोसा जायगा और उतना ही उसमें दूध उत्पन्न होगा। इसीलिये इस रक्तवाहिनीको दूधवाली शिरा कहते हैं। यह पेटके नीचे जितनी ही स्पष्ट देख पड़े और थनके ऊपरकी नसें भी जितनी स्पष्ट लक्षित हों, उतना ही यह समझना चाहिये कि गौ दुधारू है। थनका अगला भाग भी यहींसे देख लेना चाहिये। थन बड़ा और पेटके बराबरमें हो। लटक आया हुआ या मांसल न हो और उसपरकी नसें साफ देख पड़ें। आगे और पीछे दोनों ओर थन पेटसे सटा हुआ हो। चारों चूँचियाँ बराबर फासलेपर और एक-सी बढ़ी और भरी हुई हों। बहुत पतली चूँचियोंसे, जो अँगुलियोंमें भी न आयें, दूध भी कितना निकलेगा। अन्य सब लक्षणोंकी अपेक्षा थन और चूँचियोंकी परखमें ही अधिक ध्यान देना चाहिये।

गौके सामने खड़े होकर देखना

सामनेसे गौका मुँह देख पड़ता है। उसका जबड़ा और

नथुने चौड़े हों, आँखें पानीदार हों। गौ सीधी है या नहीं, यह उसका मुँह देखनेसे पता चलता है। दाँतोंसे उसकी उम्रका अनुमान होता है। गायके नीचेवाले जबड़ेमें ८ (दूधिया) दाँत होते हैं। दो वर्ष बाद बीचके दो (दूधिया) दाँत गिर जाते और उनके स्थानमें दो बड़े (स्थायी) दाँत निकलते हैं। इस तरह हर साल दो-दो बड़े दाँत निकलते और पाँच वर्षमें आठों बड़े (स्थायी) दाँत पूरे हो जाते हैं। पाँच-छः वर्षके बाद ज्यों-ज्यों गौ ढलने लगती है, त्यों-त्यों उसके दाँत भी घिसते जाते हैं और खूँटी-सरीखे होने लगते हैं। गायके ऊपरके जबड़ेमें दाँत नहीं होते। इन नीचेके दाँतोंसे घास-चारा काटकर वह पेटमें उतारती है और पीछे दोनों जबड़ोंके किनारेकी मजबूत दाढ़ोंसे चबाकर (जुगाली करके) निगल जाती है।



गौके कानोंमें यदि कुछ पीली-सी चमक दिखायी दे तो समझना चाहिये कि गौ दुधारू है और उसके दूधमें मक्खनका अंश अधिक है। गौका गलकम्बल पतला होना चाहिये; इससे यथेष्ट वायु अंदर खींचनेमें उसे सुविधा होती है और वह नीरोग रहती है। पेटका घेरा भी सामनेसे देख पड़ता है। पिछले पैरोंकी तरह अगले पैर भी दूर-दूर हों।

पीठपरसे देखना

पीठपरसे नीचे देखनेसे भी पेटका आकार और पुट्ठे दीख पड़ते हैं। पुट्ठा एकदम उतारदार न हो। यदि दुहती गाय खरीदी जाय तो बिना अन्तर दिये तीन-चार बार स्वयं दूध निकालकर देख लेना चाहिये। दूध निकालते समय पात्रमें धार गिरनेका जो शब्द होता है, उसके द्वारा भी गाय दुधारू है या नहीं, इसकी परीक्षा होती है। थनमें यदि दूध अधिक होगा तो पात्रमें धारके गिरते समय जोरसे शब्द होगा। यदि दूध अधिक न हुआ तो धार पतली होगी और शब्द भी धीमा ही होगा। पाश्चात्त्य पद्धतिसे गौकी परीक्षा करनेकी एक और रीति है।

१. पीठपरसे देखनेपर गायका शरीर गलेसे पीछेकी ओर दोनों तरफ चौड़ा होता चला गया हो तो यह लक्षण अच्छा है। ऐसी गायके उदर तथा पाकाशयका पूर्ण विकास हुआ समझा जाता है। वह भरपूर खा सकती है और पचा भी सकती है।

२. बगलसे देखनेपर गायके गलेसे पूँछतकका भाग चढ़ता और गलकम्बलसे थनतकका भाग उतरता हुआ चला गया हो। ऐसी गायका थन बड़ा होता है और उसमें दूध भी भरपूर होता है। उसी प्रकार गर्भाशयमें गर्भके विकासके लिये पर्याप्त स्थान मिल जाता है और उससे बच्चा बलिष्ठ होता है।

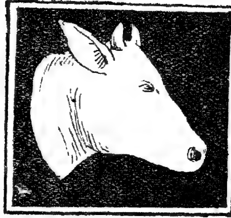
३. सामनेसे देखनेपर दोनों तरफ गौका शरीर ऊपरसे नीचेकी ओर चौड़ा होता हुआ देख पड़े। इससे गौके फुफ्फुस और हृदय पूर्ण विकसित तथा बलिष्ठ हुए समझना चाहिये।

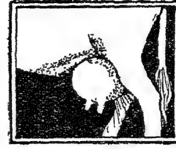
सारांश यह कि ऊपरसे, बगलसे अथवा सामनेसे किसी ओरसे भी देखनेपर गौका शरीर सब ओरसे तिहरे पच्चर (Triple Wedge) की तरह (एक ओरसे दूसरी ओर बारीक होता हुआ) दिखायी देना चाहिये। उसका यह आकार जितना पूर्ण होगा, उतनी ही वह अधिक दुधारू होगी।

(गो० शा० को०)

नं० १-२







खराब थन



अच्छा थन

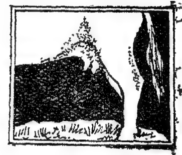
नं० ३-४







अच्छा थन



खराब थन

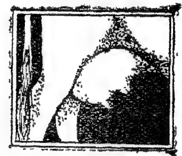
नं० ५-६







अच्छा थन



खराब थन

नं० ७-८







अच्छा थन



खराब थन

१-अच्छा सिर—चौड़ी आँखें, चेहरा सुडौल, चौड़ी नाक, **बड़े नथुने**—जिनसे साँस लेनेमें सुभीता हो, बड़ा मुँह—**जिससे** सहूलियतसे खा सके ।

२-खराब सिर—धँसी आँखें, पतला चेहरा, नुकीली नाक, छोटे नथुने, छोटा मुँह, कमजोर जबड़ा ।

३-अच्छा सिर—बड़े नथुने, इनसे फेफड़ोंमें आक्सीजन पहुँचती है, पर्याप्त चारा खानेके लिये मजबूत जबड़ा।

४-खराब सिर—भद्दा बछड़ेका-सा मुँह । ऐसी गाय दूध बहुत कम देती है ।

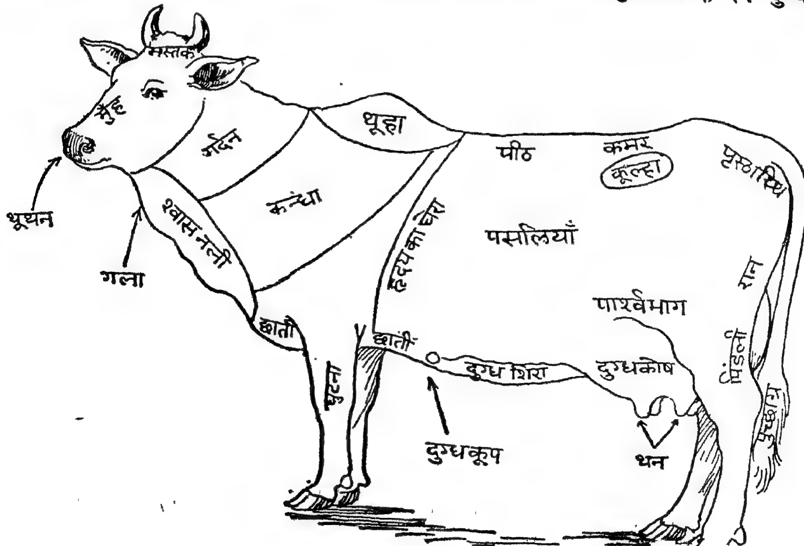
५-अच्छा सिर—पतली गर्दन, सुडौल चेहरा, चमकीली आँखें ।

६-खराब सिर—मोटी गर्दन, भारी चमड़ा, बोझल शरीर, धँसी आँखें ।

७-अच्छा सिर—सिर साफ, थोड़ा पतला और मुँहकी ओर झुका हुआ-सा ।

८-खराब सिर—मोटी गर्दन, भारी चमड़ा ।

१–थूथुन, २–नथुना, ३–जबड़ा, ४–आँखोंके बीचका भाग, ५–ललाट, ६–चाँद (खोपड़ीका मध्यभाग), ७–गला, ८–गलकम्बल, ९–गर्दन, १०–थूहा, ११–कंधा, १२–छातीका अगला भाग, १३–छाती, १४–हृदयका घेरा, १५–कंधोंके नीचेका भाग, १६–कमर, १७–पुट्ठा, १८–कूल्हा, १९–पूँछकी जोड़, २०–पीठकी हड्डियाँ, २१–पीठ और स्तनके बीचका भाग, २२–रान, २३–थनका पिछला जोड़, २४–थनका पिछला भाग, २५–पुच्छाग्र, २६–घुटना, २७–घुटनें और जाँघके बीचका स्थान, २८–कोख, २९–थनका अगला भाग, ३०–दुग्धशिराएँ, ३१–दुग्धकूप ।



गायसे भगवत्प्राप्ति

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम् ।

श्रीमद्भागवत (२।३।१०) में एक श्लोक आता है—

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ॥

'उदार बुद्धिवाला पुरुष निष्काम हो या समस्त भोगोंका इच्छुक, अथवा वह मोक्षकी ही अभिलाषा रखनेवाला क्यों न हो; उसे तीव्र भक्तियोगके द्वारा केवल परम पुरुष भगवान् वासुदेवकी आराधना करनी चाहिये।'

यही बात गौओंके लिये भी कही जा सकती है। स्वार्थ या परमार्थ—कोई भी ऐसी वस्तु नहीं, जो गोदेवीकी कृपासे सुलभ न हो सके। संसारमें कौन ऐसा विवेकशील प्राणी होगा, जो भगवान्‌को पानेके लिये लालायित न हो। युग-युगसे, जन्म-जन्मान्तरोंसे जीव अपने बिछुड़े हुए प्रियतम परमात्मासे मिलनेके लिये न जाने कहाँ-कहाँ भटकता है, कितने-कितने साधन करता है। किन्तु अबतक बहुतोंको सफलता नहीं मिली। साधनका ठीक-ठीक ज्ञान न होनेसे लक्ष्यकी प्राप्तिमें विलम्ब होना स्वाभाविक ही है। भगवत्प्राप्तिके अन्यतम साधनोंमेंसे गौकी सेवा भी एक ऐसा ही साधन है, जिससे भगवान् शीघ्र ही सुलभ हो जाते हैं। भगवान् हमारे इष्टदेव हैं, परन्तु ये गौएँ उनकी भी इष्टदेवी हैं। वे इन्हींकी सेवाके लिये गोपाल-शिरोमणि बनकर इस भूतलपर अवतीर्ण होते हैं। भगवान् भी जिनके सेवक हैं, उनकी सेवासे भगवत्प्राप्तिमें क्या संदेह हो सकता है। जैसे गङ्गाजीके तटपर रहकर भी कोई प्यासों मरे और पानीके लिये दर-दर भटकता फिरे, वही दशा हमारी है। हम घरमें कामधेनुके होते हुए भी उसकी सेवासे मुँह मोड़ते और स्वार्थ एवं परमार्थ दोनोंसे वञ्चित रह जाते हैं।

गोमाता किस प्रकार हमें भगवान्‌के निकट पहुँचाती है, यह थोड़ा-सा विचार करनेपर ही सबकी समझमें आ सकता है। उदाहरणके लिये किसी भी गायको सामने रखिये; वह दो प्रकारकी संतानोंको जन्म देती है—बछड़ा और बछिया। पहले बछड़ेकी उपयोगितापर विचार कीजिये। बछड़ा हृष्ट-पुष्ट होनेपर एक अच्छा साँड़ या उत्तम बैल बन सकता है। साँड़से दो लाभ होंगे। एक तो धर्मशास्त्रीय विधिके अनुसार वृषोत्सर्ग करनेसे वह हमारे पितरोंका उद्धार करेगा और दूसरे उससे गोवंशकी वृद्धि होगी। पितरोंका उद्धार और गोवंशकी वृद्धि—ये दोनों ही पुण्यकार्य हैं; अतः इनसे धर्मका सम्पादन होगा। यदि बछड़ेको बैल बना लिया जाय तो उससे भी अनेक लाभ हो सकते हैं। एक तो वह वाहनके काम आता है, छकड़ों और बैलगाड़ियोंको खींचता है तथा पीठपर भी बोझ ढोता है। इससे अन्न आदि वस्तुओंके व्यापारमें सहायता पहुँचेगी। व्यापारसे सम्पत्ति बढ़ेगी और उससे लोकमें सुख मिलेगा। इस प्रकार आनुषङ्गिक रूपसे 'अर्थ' और 'काम'की भी सिद्धि होती रहेगी। सम्पत्ति होनेपर हम वैदिक विधानके अनुसार यज्ञ कर सकते हैं तथा देश, काल और पात्रके अनुरूप यथेष्ट दान करनेमें भी समर्थ हो सकते हैं। यज्ञ और दान भी धर्मके ही अङ्ग हैं। यह बैलके द्वारा प्राप्त होनेवाले एक लाभकी शाखा हुई।

अब दूसरे लाभकी परम्परापर दृष्टिपात कीजिये। उत्तम बैल होनेसे अच्छी खेती हो सकती है। खेतीसे पर्याप्त अन्नकी प्राप्ति होगी। फिर अन्नसे भी कई प्रकारके लाभ हो सकते हैं। एक तो उससे हमारा जीवन-निर्वाह होगा। हम स्वस्थ और सबल बनेंगे। स्वास्थ्य ठीक रहनेपर मनुष्य उत्तम पुत्र उत्पन्न कर सकता है, जो श्राद्ध और तर्पण करके पितरोंका उद्धार करे और इस प्रकार धर्मके सम्पादनमें कारण बने। अन्नसे दूसरा लाभ यह है कि हम स्वयं भी उसके द्वारा श्राद्ध करेंगे। उस श्राद्धसे पितरोंका उद्धार होनेके साथ ही हमें भी धर्मकी प्राप्ति होगी। तीसरा लाभ यह है कि अन्नके व्यापारसे प्रचुर धनराशिका उपार्जन किया जा सकता है। वह धन लौकिक सुखका साधन तो बनेगा ही; यज्ञ एवं दानमें लगाये जानेपर धर्मवृद्धिका भी कारण हो सकता है। इस प्रकार यहाँ गायकी एक संतान—केवल बछड़ेद्वारा होनेवाले लाभोंका दिग्दर्शन कराया गया।

गायकी दूसरी संतान है—बछिया। उसका समुचितरूपसे पालन करनेपर आगे चलकर वह भी एक अच्छी गाय बन सकती है। गायसे दो प्रकारके लाभ होते हैं—लौकिक और पारलौकिक। पारलौकिक लाभ होता है उसके दानसे। शास्त्रोक्त रीतिसे गौका दान करके मनुष्य अत्यन्त भयङ्कर वैतरणी नदीको सहज ही पार कर सकते हैं। यदि दूसरोंके लिये गोदान किया गया तो वे भी वैतरणीपार तो होंगे ही, उनके उद्धाररूप पुण्यकर्मसे हम भी धर्मके भागी हो सकते हैं। लौकिक लाभ भी आगे

गायसे भगवत्प्राप्ति

गावः प्रतिष्ठा भूतानां गावः स्वस्त्ययनं परम् ।

श्रीमद्भागवत (२।३।१०) में एक श्लोक आता है—

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ॥

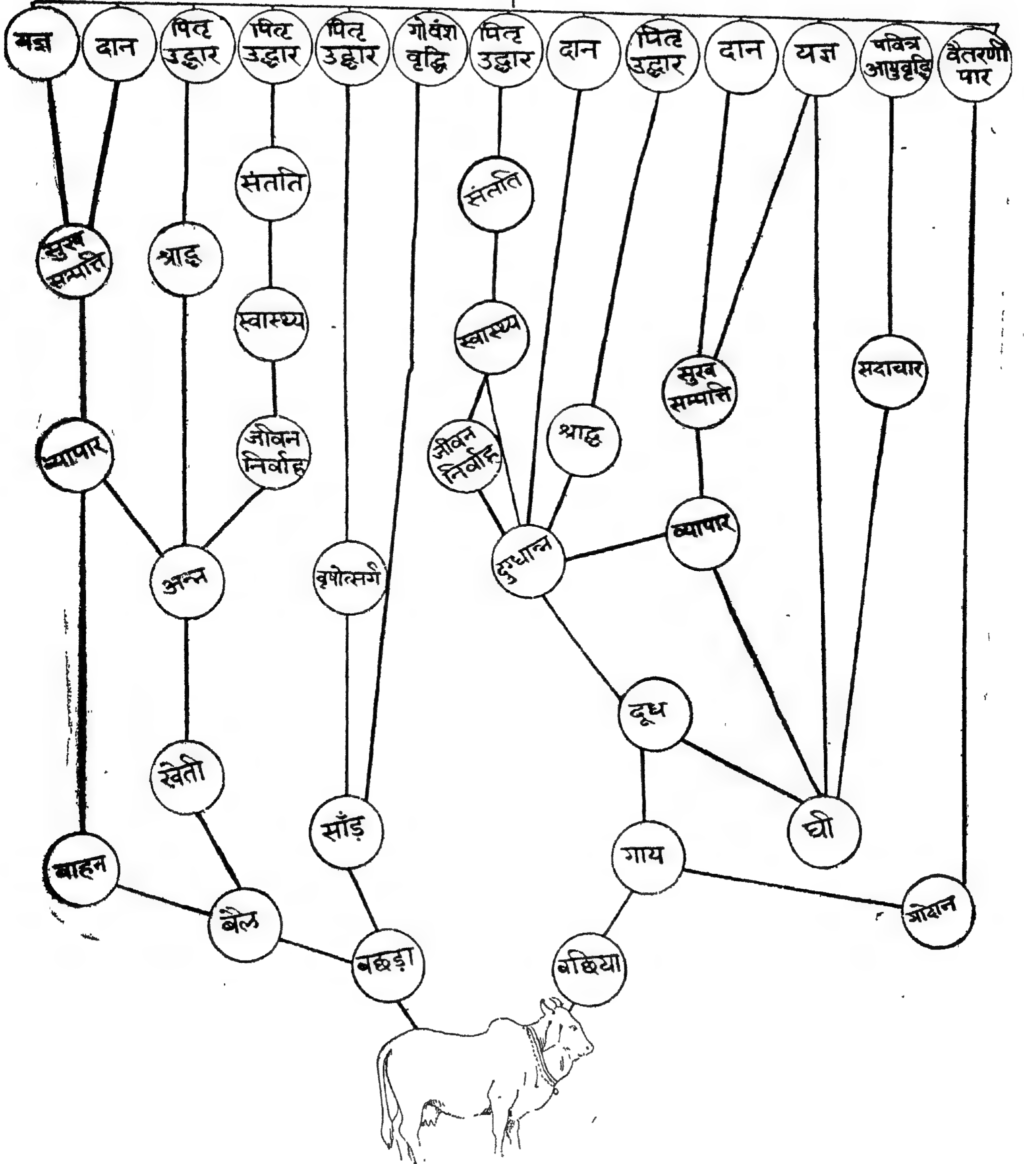
'उदार बुद्धिवाला पुरुष निष्काम हो या समस्त भोगोंका इच्छुक, अथवा वह मोक्षकी ही अभिलाषा रखनेवाला क्यों न हो; उसे तीव्र भक्तियोगके द्वारा केवल परम पुरुष भगवान् वासुदेवकी आराधना करनी चाहिये ।'

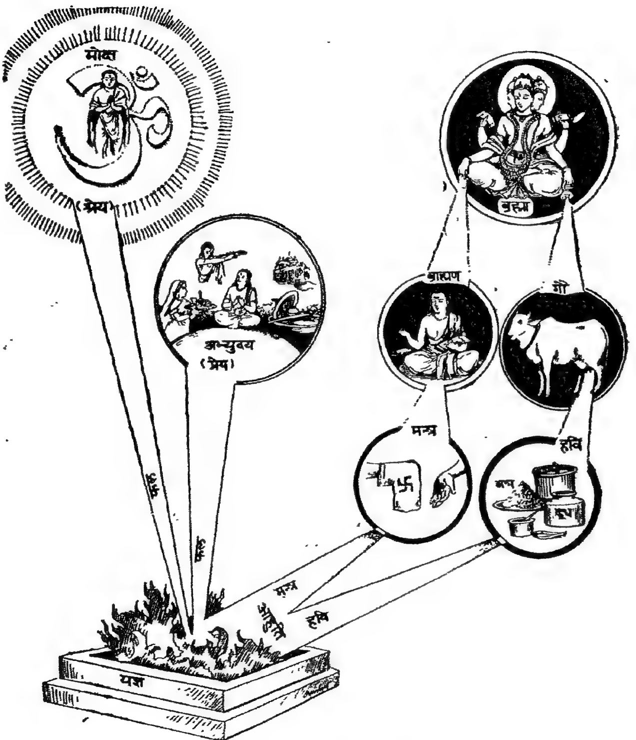
यही बात गौओंके लिये भी कही जा सकती है । स्वार्थ या परमार्थ—कोई भी ऐसी वस्तु नहीं, जो गोदेवीकी कृपासे सुलभ न हो सके । संसारमें कौन ऐसा विवेकशील प्राणी होगा, जो भगवान्‌को पानेके लिये लालायित न हो । युग-युगसे, जन्म-जन्मान्तरोंसे जीव अपने बिछुड़े हुए प्रियतम परमात्मासे मिलनेके लिये न जाने कहाँ-कहाँ भटकता है, कितने-कितने साधन करता है । किन्तु अबतक बहुतोंको सफलता नहीं मिली । साधनका ठीक-ठीक ज्ञान न होनेसे लक्ष्यकी प्राप्तिमें विलम्ब होना स्वाभाविक ही है । भगवत्प्राप्तिके अन्यतम साधनोंमेंसे गौकी सेवा भी एक ऐसा ही साधन है, जिससे भगवान् शीघ्र ही सुलभ हो जाते हैं । भगवान् हमारे इष्टदेव हैं, परन्तु ये गौएँ उनकी भी इष्टदेवी हैं । वे इन्हींकी सेवाके लिये गोपाल-शिरोमणि बनकर इस भूतलपर अवतीर्ण होते हैं । भगवान् भी जिनके सेवक हैं, उनकी सेवासे भगवत्प्राप्तिमें क्या संदेह हो सकता है । जैसे गङ्गाजीके तटपर रहकर भी कोई प्यासों मरे और पानीके लिये दर-दर भटकता फिरे, वही दशा हमारी है । हम घरमें कामधेनुके होते हुए भी उसकी सेवासे मुँह मोड़ते और स्वार्थ एवं परमार्थ दोनोंसे वञ्चित रह जाते हैं ।

गोमाता किस प्रकार हमें भगवान्‌के निकट पहुँचाती है, यह थोड़ा-सा विचार करनेपर ही सबकी समझमें आ सकता है । उदाहरणके लिये किसी भी गायको सामने रखिये; वह दो प्रकारकी संतानोंको जन्म देती है—बछड़ा और बछिया । पहले बछड़ेकी उपयोगितापर विचार कीजिये । बछड़ा हृष्ट-पुष्ट होनेपर एक अच्छा साँड़ या उत्तम बैल बन सकता है । साँड़से दो लाभ होंगे । एक तो धर्मशास्त्रीय विधिके अनुसार वृषोत्सर्ग करनेसे वह हमारे पितरोंका उद्धार करेगा और दूसरे उससे गोवंशकी वृद्धि होगी । पितरोंका उद्धार और गोवंशकी वृद्धि—ये दोनों ही पुण्यकार्य हैं; अतः इनसे धर्मका सम्पादन होगा । यदि बछड़ेको बैल बना लिया जाय तो उससे भी अनेक लाभ हो सकते हैं । एक तो वह वाहनके काम आता है, छकड़ों और बैलगाड़ियोंको खींचता है तथा पीठपर भी बोझ ढोता है । इससे अन्न आदि वस्तुओंके व्यापारमें सहायता पहुँचेगी । व्यापारसे सम्पत्ति बढ़ेगी और उससे लोकमें सुख मिलेगा । इस प्रकार आनुषङ्गिक रूपसे 'अर्थ' और 'काम'की भी सिद्धि होती रहेगी । सम्पत्ति होनेपर हम वैदिक विधानके अनुसार यज्ञ कर सकते हैं तथा देश, काल और पात्रके अनुरूप यथेष्ट दान करनेमें भी समर्थ हो सकते हैं । यज्ञ और दान भी धर्मके ही अङ्ग हैं । यह बैलके द्वारा प्राप्त होनेवाले एक लाभकी शाखा हुई ।

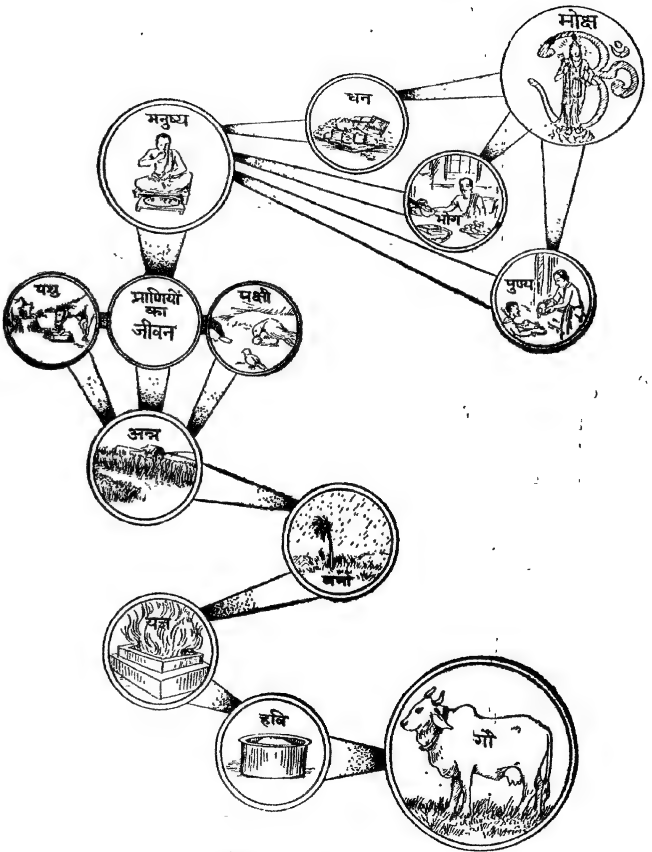
अब दूसरे लाभकी परम्परापर दृष्टिपात कीजिये । उत्तम बैल होनेसे अच्छी खेती हो सकती है । खेतीसे पर्याप्त अन्नकी प्राप्ति होगी । फिर अन्नसे भी कई प्रकारके लाभ हो सकते हैं । एक तो उससे हमारा जीवन-निर्वाह होगा । हम स्वस्थ और सबल बनेंगे । स्वास्थ्य ठीक रहनेपर मनुष्य उत्तम पुत्र उत्पन्न कर सकता है, जो श्राद्ध और तर्पण करके पितरोंका उद्धार करे और इस प्रकार धर्मके सम्पादनमें कारण बने । अन्नसे दूसरा लाभ यह है कि हम स्वयं भी उसके द्वारा श्राद्ध करेंगे । उस श्राद्धसे पितरोंका उद्धार होनेके साथ ही हमें भी धर्मकी प्राप्ति होगी । तीसरा लाभ यह है कि अन्नके व्यापारसे प्रचुर धनराशिका उपार्जन किया जा सकता है । वह धन लौकिक सुखका साधन तो बनेगा ही; यज्ञ एवं दानमें लगाये जानेपर धर्मवृद्धिका भी कारण हो सकता है । इस प्रकार यहाँ गायकी एक संतान—केवल बछड़ेद्वारा होनेवाले लाभोंका दिग्दर्शन कराया गया ।

गायकी दूसरी संतान है—बछिया । उसका समुचितरूपसे पालन करनेपर आगे चलकर वह भी एक अच्छी गाय बन सकती है । गायसे दो प्रकारके लाभ होते हैं—लौकिक और पारलौकिक । पारलौकिक लाभ होता है उसके दानसे । शास्त्रोक्त रीतिसे गौका दान करके मनुष्य अत्यन्त भयङ्कर वैतरणी नदीको सहज ही पार कर सकते हैं । यदि दूसरोंके लिये गोदान किया गया तो वे भी वैतरणीपार तो होंगे ही, उनके उद्धाररूप पुण्यकर्मसे हम भी धर्मके भागी हो सकते हैं । लौकिक लाभ भी आगे


भगवत्प्राप्ति
भगवच्छरणागति
धर्म-सम्पादन
यज्ञ
दान
पितृ उद्धार
पितृ उद्धार
पितृ उद्धार
गोवंश वृद्धि
पितृ उद्धार
दान
पितृ उद्धार
दान
यज्ञ
पवित्र आयुवृद्धि
वैतरणी पार
संतति
संतति
सुख सम्पत्ति
श्राद्ध
स्वास्थ्य
स्वास्थ्य
सुख सम्पत्ति
सदाचार
व्यापार
जीवन निर्वाह
जीवन निर्वाह
श्राद्ध
व्यापार
अन्न
वृषोत्सर्ग
दुधान्न
दूध
खेती
साँड़
घी
गाय
वाहन
बैल
गोदान
बछड़ा
बछिया



गौसे प्रेय और श्रेयकी प्राप्ति



गौसे मोक्षकी प्राप्ति

चलकर पारलौकिक लाभमें परिणत हो जाता है । गाय घरपर रहेगी तो हमारे लिये दूध देगी—यह लौकिक लाभ है । उस दूधका दो प्रकारसे उपयोग हो सकता है—एक तो दही जमाकर या दूधसे ही घी बना लिया जाय अथवा दूधके द्वारा ही नाना प्रकारके खाद्य पदार्थ—दुग्धान्न तैयार कराये जायँ । घी और दुग्धान्न दोनों ही मानव-जीवनके लिये अत्यन्त उपयोगी वस्तुएँ हैं । घी परम पवित्र एवं सात्त्विक वस्तु है । इसके सेवनसे शरीर और मन दोनों शुद्ध होंगे । फिर शुद्ध विचारसे सदाचारकी वृद्धि होगी और सदाचारसे अन्तःकरणकी पवित्रताके साथ-ही-साथ आयुकी भी वृद्धि होगी । इस तरहके शुद्ध, सात्त्विक एवं सदाचारपूर्ण जीवनमें सदा अधिकाधिक धर्मका सम्पादन होता रहेगा । घीके द्वारा यज्ञ करके भी हम धर्मोपार्जन कर सकते हैं । तीसरा लाभ है व्यापार । घीका व्यापार करके सुख-सम्पत्तिका उपार्जन होगा, उससे फिर यज्ञ और दान होंगे और उन दोनोंसे पूर्ववत् धर्मकी वृद्धि होती रहेगी ।

घीकी ही भाँति दुग्धान्नसे भी व्यापार, धनोपार्जन, यज्ञ, दान और धर्म-प्राप्तिकी परम्परा सुस्थिर रह सकती है । वह श्राद्धमें भी उपयोगी है । श्राद्धसे पितरोंका उद्धार और उससे धर्मका सम्पादन भी होगा ही । दुग्धान्नका दान भी धर्मके एक अङ्गकी पुष्टि कर सकता है । जीवन-निर्वाहमें भी दुग्धान्नका बहुत बड़ा उपयोग है । स्वास्थ्य-सम्पादन तो उसकी खास विशेषता है ही । स्वस्थ शरीरसे योग्य संतानका उत्पादन और उसके द्वारा पितरोंके उद्धाररूपी धर्मका पालन भी अवश्यम्भावी है । इस तरह गाय अनेक शाखाओं तथा परम्पराओंसे हमें अर्थ और कामकी प्राप्ति करानेके साथ ही धर्मके सम्पादनमें भी अत्यधिक सहायता पहुँचाती है । निष्काम धर्मके प्रभावसे मनुष्यमें भगवच्छरणागतिकी योग्यता आती है । वह—

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥

—इस भगवदाज्ञाके अनुसार अपने समस्त धर्म-कर्म भगवान्‌को भेंट करके स्वयं भी उनके चरणोंमें समर्पित हो जाता है । पूर्णरूपसे शरणागत हो जानेपर भक्तको भगवान्‌की प्राप्तिमें तनिक भी विलम्ब नहीं होता । इस प्रकार गोमाता सम्पूर्ण जगत्‌के मानवोंको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे भगवान्‌के निकट पहुँचनेमें सहायता करती रहती है । गौके समान मनुष्यमात्रकी सच्ची हितकारिणी दूसरी कोई नहीं है; अतः हम सब लोगोंको तन, मन, धनसे गोमाताकी सेवा और रक्षामें तत्पर रहना चाहिये । (रा० ना० श०)

गौसे प्रेय और श्रेयकी प्राप्ति

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः ।

आधुनिक जगत्‌में लौकिक सुखोंपर लात मारकर केवल परमार्थके पथपर विचरण करनेवाले मनुष्य विरले ही हैं । अधिकांश लोगोंकी महत्त्वाकाङ्क्षा और प्रयत्न सांसारिक सुख-सुविधाओंतक ही सीमित हैं । जिनके मनमें श्रेयके प्रति महत्त्व-बुद्धि है, वे भी प्रेयको छोड़ना नहीं चाहते । प्रेय और श्रेय दोनोंको हस्तगत करना चाहते हैं । उनके मनमें लोक और परलोक दोनोंके लाभ उठानेकी इच्छा है । वे 'भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव' कर देनेवाला उपाय ढूँढ़ते हैं । क्या ऐसा होना सम्भव है ? क्या ऐसा कोई साधन है, जिससे स्वार्थ और परमार्थ दोनों सधें ? प्रेय और श्रेय—भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त हो सकें ? उत्तरमें निवेदन है—हाँ, ऐसा होनेके लिये दो साधन हैं—**भगवान्‌का भजन और गौओंकी सेवा ।** गौओंसे प्रेय और श्रेयकी प्राप्तिमें किस प्रकार सहायता मिलती है, यही यहाँ विचारणीय विषय है ।

श्रीमद्भगवद्गीतामें बतलाया है, लोकपितामह ब्रह्माजीने जब आदिकालमें समस्त प्रजाओंको उत्पन्न किया तब उनके सामने यज्ञका आदर्श रक्खा और कहा—इसके द्वारा तुम सब लोग अपनी-अपनी उन्नति करो । यह तुम्हें अभीष्ट कामनाओं—मनोवाञ्छित भोगोंको देनेवाला होगा । इससे तुम्हें 'इष्ट काम' अर्थात् प्रेयकी प्राप्ति होगी—'अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ।' इतना ही नहीं, तुमलोग इस यज्ञके द्वारा देवताओंकी उन्नति करो और देवता भी तुम्हें उन्नत अवस्थामें पहुँचावें । इस प्रकार स्वार्थ छोड़कर एक-दूसरेकी उन्नतिके लिये प्रयत्न करते हुए तुम सब लोग परम श्रेय (मोक्ष) को प्राप्त होओगे—

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ।

इस प्रकार यज्ञको प्रेय और श्रेय दोनोंकी प्राप्तिका साधन बताया गया है । यज्ञके दो स्वरूप हैं—एक तो भगवत्-प्रीत्यर्थ किये जानेवाले सभी कर्मोंको यज्ञ कहते हैं और दूसरा

वेदोक्त विधिके अनुसार किया जानेवाला यजनरूप कर्म भी यज्ञ कहलाता है। यहाँ 'यज्ञ' शब्दसे दोनों ही प्रकारके कर्म अभीष्ट हैं। गोमाताकी सहायतासे हम दोनों ही प्रकारके यज्ञ करनेमें सफल हो प्रेय और श्रेयके अधिकारी बन सकते हैं।

ब्राह्मण और गौ दोनों ब्रह्माजीकी सन्तान हैं। ब्रह्माजीकी सन्तति होनेसे ही उनकी 'ब्राह्मण' संज्ञा हुई है। इसी प्रकार गौएँ भी ब्रह्माजीकी ही पुत्री हैं। इसीलिये शास्त्रोंमें 'नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च' कहकर उनकी वन्दना की गयी है। इन दोनोंके सहयोगसे वैदिक यज्ञकी सिद्धि होती है। ब्राह्मणोंमें वेदमन्त्र प्रतिष्ठित हैं और गौओंमें हविष्यकी स्थिति है।*

यहाँ 'गौ' कहनेसे गोमाताका ग्रहण तो होता ही है, धरती माताका भी ग्रहण होता है। ये दोनों ही गोशब्दके वाच्यार्थ हैं। इसके सिवा धरती भी ब्रह्माजीकी ही पुत्री है और इसका आधिदैविक रूप भी गौ ही है। राजा पृथुने गोरूपमें ही पृथ्वीका दोहन किया था। असुरभावापन्न राजाओंके भारसे पीड़ित होकर पृथ्वीने गोरूपसे ही भगवान्‌को पुकारा था और महाराज परीक्षित्‌ने दिग्विजयके समय गोरूपमें ही पृथ्वीका दर्शन किया था। वस्तुतः धेनु और धरतीमें कोई भेद नहीं है। इन दोनों रूपोंमें प्रतिष्ठित हुई गौसे हविष्य (हवनीय पदार्थ) की उत्पत्ति होती है। धेनुसे दूध और धरतीसे अन्न होता है। ये दोनों हवि हैं। अन्नका संस्कार करके नाना भाँतिके हवनोपयोगी पदार्थ तैयार किये जाते हैं। इसी प्रकार दूधसे भी दही, घी आदि अनेक प्रकारके हविष्य बनते हैं। ब्राह्मणोंद्वारा उच्चारित वेदमन्त्रसे गौके द्वारा प्रस्तुत किये हुए हवनीय पदार्थोंकी जो अग्निमें आहुति दी जाती है, उससे भाँति-भाँतिके विभिन्न यज्ञ सम्पन्न होते हैं। इस यज्ञरूप धर्मके दो फल हैं—अभ्युदय और निःश्रेयस। दूसरे शब्दोंमें प्रेय और श्रेय। गीता तो इसका समर्थन करती ही है, वैशेषिक दर्शनमें भी धर्मके ये ही दो फल माने गये हैं। इन्हींमें अन्य सारे फलोंका समावेश हो जाता है। इन्हीं दो फलोंके आधारपर धर्मकी परिभाषा निश्चित की गयी है—'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।' अभ्युदय अथवा प्रेय लौकिक सुखका नाम है। इसमें राज्य, धन, स्त्री, पुत्र, गृह, परिवार, दास, दासी, शय्या, वाहन तथा वस्त्राभूषण आदि सभी वस्तुओंका अन्तर्भाव है। निःश्रेयस या श्रेय भगवत्प्राप्ति और मोक्षके ही नामान्तर हैं। यही मानव-जीवनका चरम एवं परम पुरुषार्थ है। इसे पाकर फिर और कुछ पाना शेष नहीं रहता। (रा० ना० शा०)

गौसे मोक्षकी सिद्धि

परमात्माकी सृष्टिमें गौ एक अद्भुत प्राणी है। कालके प्रभावसे संसारकी प्रायः सभी वस्तुओंका अलौकिक प्रभाव लुप्त-सा हो गया है, किन्तु गोमाताका दिव्य प्रभाव आज भी अक्षुण्ण है। गो-सेवासे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—सभी पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं। शास्त्र तो इसका समर्थन करते ही हैं, अनुभवसे भी इस बातकी सत्यता प्रमाणित हो चुकी है। शास्त्रोंमें कल्पवृक्ष, चिन्तामणि तथा कामधेनु—इन तीनोंको अखिल कामनाओंका दाता माना गया है। इनमें भी कामधेनुका महत्त्व सबसे अधिक है। कल्पवृक्ष कोई एक ही वृक्ष है, सभी वृक्ष कल्पवृक्ष नहीं हो सकते और न सब प्रकारकी मणियोंमें ही चिन्तामणिका गुण आ सकता है। परन्तु गौएँ सभी कामधेनु हैं। कामधेनुकी सन्तानें भी कामधेनु ही हैं। किसी भी गौकी भक्तिपूर्वक सेवा की जाय, वह अपने भक्तकी समस्त कामनाएँ पूर्ण कर सकती है। राजा दिलीपने नन्दिनीकी सेवासे ही अभीष्ट मनोरथ प्राप्त किया था। आज भी कितने ही सद्‌गृहस्थ गो-सेवासे सब तरहका लाभ उठा चुके और उठा रहे हैं। कल्पवृक्ष और चिन्तामणि यद्यपि कामनापूरक माने गये हैं, तथापि वे मोक्ष या भगवत्प्राप्ति नहीं करा सकते। उनसे केवल लौकिक कामनाओंकी ही पूर्ति हो सकती है। इतनेपर भी वे सबको सुलभ नहीं हैं। किन्तु गौएँ घर-घर सुलभ हैं। इनसे केवल लौकिक कामनाकी ही नहीं, समस्त पुरुषार्थोंकी—मोक्ष एवं भगवान् तककी प्राप्ति होती है। इसीलिये भगवान्‌ने इन कामधेनुओंको अपनी दिव्य विभूतियोंमें परिगणित किया है—'धेनूनामस्मि कामधुक्।' 'दूध देनेवाले समस्त पशुओंमें मैं कामधेनु हूँ।'

गौओंसे धर्म, अर्थ और कामकी प्राप्ति होती है—यह बात लोगोंकी समझमें कुछ-कुछ आने लगी है। किन्तु इनसे मोक्षकी प्राप्ति भी सम्भव है, इसकी ओर अभी सर्वसाधारणका

* ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधाकृतम्। एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति॥

ध्यान प्रायः नहीं गया है। इन पङ्क्तियोंमें इसीपर विचार किया जाता है। महाभारतमें कहा है—'गावो यज्ञस्य हि फलं गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः।' अर्थात् 'गौएँ ही यज्ञका फल देनेवाली हैं और उन्हींमें यज्ञकी प्रतिष्ठा है।' यह बात सर्वथा सत्य है। हविष्यकी आहुति देनेसे ही यज्ञकी सिद्धि होती है। परन्तु यह हविष्य आता कहाँसे है? वह गौओंकी ही देन है। गोमाता ही दूध, घी आदि उत्पन्न करके तथा अपने पुत्रों—बैलोंद्वारा अन्नका उत्पादन कराकर हविष्य प्रस्तुत करती है। हविष्य धारण करनेके कारण ही गौको 'हविर्धानी' भी कहते हैं। यज्ञोंका मूलभूत हविष्य ही जब गौओंके भीतर प्रतिष्ठित है तो उन्हें यज्ञोंकी प्रतिष्ठा कहना उचित ही है। गौसे हविष्य और हविष्यकी आहुतिसे यज्ञकी सिद्धि होती है। यज्ञसे क्या होता है? इसका उत्तर हमें गीतामें मिलता है—'यज्ञाद् भवति पर्जन्यः।' यज्ञसे वृष्टि करनेवाले मेघकी उत्पत्ति होती है। जब मेघ अच्छी वर्षा करता है तो अन्नकी—घास-चारे, फल-फूल, धान-गेहूँ आदिकी विशेष उपज होती है। गीता भी यही कहती है—'पर्जन्यादन्नसंभवः।' वही अन्न समस्त भूतोंका आधार है। पशु, पक्षी और मनुष्य आदि समस्त प्राणी उसीसे जीवन-निर्वाह करते हैं—'अन्नाद् भवन्ति भूतानि।' मनुस्मृति (३। ७६) में भी इसी बातका समर्थन किया गया है।*

इस तरह अन्नदानके द्वारा समस्त प्राणियोंका पोषण करती हुई गोमाता मनुष्यको स्वस्थ, सबल एवं कर्मानुष्ठानमें समर्थ बनाती है। फिर मनुष्य न्यायानुकूल प्रयत्न एवं परिश्रम करके धन और भोग-सामग्रीका सञ्चय करता है। इतना ही नहीं, वह अपने स्वस्थ शरीरसे व्रत, तपस्या, तीर्थ-सेवन, दान तथा परोपकार आदि नाना प्रकारके धर्मोंका अनुष्ठान करके महान् पुण्य-राशिका भी सञ्चय कर लेता है। तदनन्तर अपने कमाये हुए धनको जब वह भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये दीन, दुखी, रोगी और अनाथोंकी सेवामें लगाता है, भगवत्प्रीत्यर्थ उसका दान करता है तो उसके उस निष्काम धर्मका अक्षय फल मोक्ष उसे अवश्य सुलभ होता है। भोग-सामग्रीको भी यदि वह भगवान्‌की सेवामें निवेदन करके प्रसादरूपमें ग्रहण करता है तो वह भी उसके लिये मुक्तिका साधन बन जाती है। धर्मानुष्ठानद्वारा सञ्चित पुण्यका भी यदि उसने निष्काम भावसे संग्रह किया है तो 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः' के अनुसार उसके द्वारा मोक्ष मिलनेमें कोई संदेह ही नहीं है। निम्नाङ्कित श्लोकोंमें मोक्षके इसी क्रमका प्रतिपादन किया गया है—

गोभ्यो हविः प्रजायेत यज्ञसिद्धिस्ततोऽनिशम्।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यः पर्जन्यादन्नसंभवः॥
अन्नाज्जीवन्ति लोकेऽस्मिन् पशुपक्षिनरादयः।
ततः स्वास्थ्यबलोपेतो मानवः कर्मतत्परः॥
धनं भोगांश्च पुण्यं च समुपार्जयते सदा।
तैरभ्यर्च्य हरिं साक्षाद् ध्रुवं मोक्षमुपाश्नुते॥

(रा० ना० शा०)

गोसेवासे यमयातना छूट गयी

(लेखक—श्रीभिक्षु गौरीशङ्करजी)

एक मनुष्यने जीवनभर पाप ही किये थे। एक दिन उसने रास्तेमें जाते देखा कि एक घायल गाय पड़ी है और उसके शरीरमें सड़ा घाव है, दुर्गन्ध आ रही है और कीड़े पड़ गये हैं। उसे गायपर दया आ गयी। उसने एक अँगुलीसे गायके कीड़े निकाले और उसी अँगुलीसे रोज घावपर मलहम लगाने लगा। धीरे-धीरे घाव मिट गया। दुर्गन्ध जाती रही। गाय स्वस्थ होकर चलने-फिरने लगी। मरनेके बाद उस मनुष्यको यमपुरीमें ले जाया गया। वह अपने दुष्कर्मोंका स्मरण करके दुखी हो रहा था और भूख-प्याससे पीड़ित था। यमराजने पता लगाया तो उसके जीवनमें सब पाप-ही-पाप थे। एक सत्कर्म था—अँगुलीसे गायके कीड़े निकाले थे और घावपर दवा लगायी थी। यमराजने सन्तुष्ट होकर अँगुली चूसनेको कहा। आदेश पाते ही उसने मुँहमें अँगुली लेकर चूसना शुरू किया। अँगुलीसे रसभरी अमृतमयी दुग्ध-धारा निकली और वह उसका पान करके क्षुधा-पिपासाकी पीड़ाके साथ ही तमाम पापोंसे मुक्त हो गया।

* अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥

गोभक्त रामसिंह

[कहानी]

(लेखक—मुखिया श्रीविद्यासागर)

(१)

सबलगढ़ तहसीलके फाटकपर रहीम सिपाही बैठा था। तबतक भीतरसे रामसिंह सिपाही एक रोटी और उसीपर कुछ खीर रक्खे बाहर निकला।

रहीम—कहो रामसिंह ! यह रोटी और खीर कहाँ लिये जा रहे हो ?

रामसिंह—यह 'अग्रासन' है।

रहीम—इसके क्या मानी ?

रामसिंह—हमलोग जब रोटी बनाते हैं, तब पहली रोटी 'गोमाता' के लिये ही बनाते हैं। उसको 'अग्रासन' कहा जाता है।

रहीम—तुम रोटी खा चुके ?

रामसिंह—पहले गोमाताको खिला दूँगा तब कहीं मैं चौकेमें पैर रक्खूँगा।

रहीम—तुम गायको माता मानते हो ?

रामसिंह—माता ! माता ही नहीं—जगन्माता ! तुम्हारे मुसल्मान-धर्ममें भी कहा है कि यह पृथ्वी गायके सींगपर रक्खी है।

रहीम—तुम्हारा इष्टदेव कौन है ? तुम किसकी पूजा करते हो ?

रामसिंह—मेरी इष्टदेवी गाय है। मैं गायकी ही पूजा करता हूँ। बैतरनीकी नाव वही है।

रहीम—आज तुम्हारी गो-भक्ति देखी जायगी।

रामसिंह—कैसे ?

रहीम—तुम जानते हो कि आज ईद है ?

रामसिंह—जानता हूँ। फिर ?

रहीम—यह जानते हो कि इस समय तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार, दीवान और कई सिपाही मुसल्मान हैं ?

रामसिंह—यह भी जानता हूँ। फिर ?

रहीम—इस तहसीलके अहातेमें ही थाना भी है—यह मालूम है ?

रामसिंह—मालूम है। फिर ?

रहीम—तहसील और थानेके बीचमें जो आँगन है, उसीमें गोकुशी की जायगी।

रामसिंह—किस समय ?

रहीम—रातके बारह बजे।

रामसिंह—ग्यारह बजेसे मेरा पहरा है।

रहीम—तब तो तुम अपनी आँखोंसे, अपनी गोमाताको जबह होते देखोगे।

रामसिंह—यह बात सब अहलकारोंने पास कर दी है कि तहसीलमें गोकुशी हो !

रहीम—जी हाँ, ठाकुर साहब ! सब अफसर मुसल्मान हैं। यह बात तय हो चुकी है।

रामसिंह—मेरे सामने गोकुशी हो, यह बात असम्भव है, नामुमकिन है रहीम !

रहीम—मैं खुद अपने हाथसे गायके गलेपर छुरी चलाऊँगा।

रामसिंह—मगर सिरपर कफन बाँधकर आना।

रहीम—देखूँगा कि तुम क्या करते हो।

(२)

रातके ग्यारह बजे रामसिंह सिपाही, वरदी पहनकर और हाथमें भरी हुई दुनाली लेकर, खजानेका पहरा देने लगा। वहाँपर बारह बंदूकें और भी रक्खी थीं। पाँच गारदके सिपाहियोंकी और सात थानेके सिपाहियोंकी। सभी भरी हुई थीं और दुनाली थीं।

आधा घंटे बाद, एक जवान और सुन्दर गायको लेकर, रहीम आया। उसने आँगनके एक खूँटेपर गाय बाँध दी और छुरीकी धार देखने लगा।

आँगनभरमें कुर्सियाँ बिछायी गयीं। तहसीलदार, नायब तहसीलदार, थानेदार और दीवानजी आकर उन कुर्सियोंपर बैठ गये। शहरके कुछ धनी, मानी, रईस मुसल्मान भी आकर बैठ गये। सब लोग चौदहकी संख्यामें थे। सात मुसल्मान सिपाही पीछे खड़े थे। एक मौलवीने उठकर जबहकी दुआ पढ़ी। छुरी लेकर रहीम आगे बढ़ा।

(३)

रामसिंह—खबरदार रहीम ! खबरदार !

रहीम—क्या बकते हो ?

रामसिंह—चनेके धोखे मिर्च मत चबाना।

रहीम—चुप रहो।

रामसिंह—तहसीलदार साहब ! यह तहसील केवल मुसल्मानोंकी तहसील नहीं है। इस तहसीलमें हिंदूलोगोंका भी साझा है।

तहसीलदार—इसका मतलब ?

रामसिंह—मतलब यह कि तहसीलके भीतर गोकुशी नहीं हो सकती।

तहसीलदार—मेरा हुक्म है।

रामसिंह—आपका हुक्म कोई चीज नहीं। कलक्टरका हुक्म दिखलाइये।

तहसीलदार—अपनी तहसीलका मैं ही कलक्टर हूँ। तहसील सबलगढ़का मैं जार्ज पंचम हूँ। समझे ?

रामसिंह—चाहे आप साक्षात् खुदा ही क्यों न हों, पर मेरे सामने ऐसा हरगिज नहीं होगा।

थानेदार—होगा, होगा और बीच खेत होगा। हथियार रख दो और निकल जाओ तहसीलसे बाहर।

रामसिंह—मेरा हथियार कौन छीन सकता है ?

थानेदार—मैं !

रामसिंह—आइये ! छीनिये आकर !

दीवान—क्या तुम्हारी आफत आ गयी है रामसिंह ! अपने अफसरसे, ऐसी नाज़ायज गुफ्तगू ?

रामसिंह—अफसर ? किस बेवकूफने इनको अफसर बनाया ? पबलिकका दिल दुखाना अफसरका काम नहीं है।

थानेदार—रहीम ! अपना काम करो। काफिरको बकने दो।

रहीमने गायके पास जाकर ज्यों ही छुरा ऊँचा किया, त्यों ही रामसिंहने दनूसे गोली चला दी। रहीम मरकर गिर पड़ा।

थानेदार—पकड़ो ! पकड़ो !

रामसिंहने दूसरी गोली, थानेदारकी छातीपर रसीद की। हाय कहकर थानेदार भी वहीं ढेर हो गये !

तहसीलदार उठकर भागने लगे। रामसिंहने खाली बन्दूक वहीं डाल दी और लपककर दूसरी भरी दुनाली उठा ली।

रामसिंह—कहाँ चले जार्ज पंचम ! जरा अपनी कलक्टरीकी चाशनी तो चख लो !

इतना कहकर रामसिंहने घोड़ा दबाया। तहसीलदारकी खोपड़ीमें गोली लगी और वे वहीं ढेर हो गये।

इसके बाद भगदड़ शुरू हुई। मगर रामसिंहको विराम कहाँ ? तड़ातड़ गोली चल रही थी। निशाना अचूक था। ग्यारह आदमी जानसे मारे गये।

इसके बाद रामसिंहने गोमाताके चरण छुए और रस्सी खोल दी, वह बाहर भाग गयी। तब रामसिंहने एक गोली अपनी छातीमें मार ली और मरकर वहीं गिर पड़े!

सबेरा हुआ। सारा समाचार शहरमें फैल गया। हिंदू पबलिकने रामसिंहकी अरथी बनायी। एक सेठजीने लाशपर पाँच सौ रुपयेका दुशाला डाल दिया। चार साधुओंने लाशमें कंधा लगाया। शहरके हलवाइयोंने बताशे जमा किये। सराफोंने पैसे और रेजगारी इकट्ठी की। माली लोगोंने फूल इकट्ठे किये। जब लाश चली तो आगे-आगे वही कुर्बानीवाली गाय सजाकर चलायी गयी। पीछे शङ्ख, घंटा और घड़ियालका नाद होने लगा। रास्तेमें फूल, बताशे, पैसा और रेजगारी बरसायी जाने लगी। विराट जुलूस निकाला गया। कई-एक सहृदय मुसल्मान और ईसाई सज्जन भी साथ थे।

श्मशानमें जब लाश उतारी गयी, तब मुहम्मदअली सौदागरने लाशपर गुलाबके फूल चढ़ाकर कहा—'हजरत मुहम्मद साहबने कुरान-शरीफमें लिखा है कि उन जानवरोंको हरगिज न मारा जाय, जो पबलिकको आराम पहुँचाते हैं। बादशाह अकबर और बादशाह जहाँगीरने, कानून बनाकर गोकुशी बंद कर दी थी। अफसोस है कि हमारे तअस्सुबी मुसल्मान, सिर्फ हिंदू भाइयोंका दिल दुखानेकी गरजसे गोकुशी करते हैं। मैं उनपर लानत भेजता हूँ।'

पादरी यँग साहब ईसाई थे। उन्होंने कहा—'सरकार अगर गोकुशी कराती होती तो बिलायतमें खूब गोकुशी की जाती। मगर वहाँ इसका नामोनिशानतक नहीं है। बिलायतके सभी अंग्रेज किसान गायोंको पालते हैं। अफसोस है कि सिर्फ चमड़ेके व्यापारने गोकुशीका बुरा काम जारी कर रक्खा है। भाई रामसिंहकी बहादुरीकी मैं तारीफ करता हूँ। आप साहबानसे प्रार्थना करता हूँ कि ठाकुर रामसिंहके बाल-बच्चोंके वास्ते कुछ चंदा किया जाय।' उसी समय पंद्रह हजारका चंदा लिखा गया। उसमें मुहम्मदअलीने तीन हजार और पादरी साहबने एक हजार रुपये दिये।

यह घटना अक्षरशः सत्य है। केवल नाम बदल दिये गये हैं।

हिंदू-मुसल्मानोंकी गौ

[कहानी]

(लेखक—श्रीविट्ठल कृष्ण नेरूरकर, बी० ए०, एस्०, टी० सी०)

डाक्टरने तबीयतका हाल पूछा। उन्होंने अब्दुल्लासे केवल यह कहा कि लड़केको उसकी माका दूध छुड़ाकर गौका दूध पिलाना चाहिये।

'लेकिन उसकी······।'

'उसकी इतनी चिन्ता नहीं है। पर सच बात तो यह है कि क्षय हो जानेका···। समझ गये न? दवा चलने दो। यदि उससे लाभ हुआ तो अभी वर्षों जी सकती है। इस रोगकी अचूक और रामबाण दवा आजतक किसीने निकाली ही नहीं। सब बातोंका खूब अच्छी तरह ध्यान रखकर दवा देनी चाहिये। यही अपना काम है। क्या समझे?'

डाक्टर सूचनाएँ और औषध देकर चले गये।

अब्दुल्ला बहुत ही चिन्तित हुआ। वह दोनों हाथोंपर सिर रखकर बैठ गया। कारण यह था कि उसके घरमें गौ नहीं थी।

'तुम इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो? घरमें गौ नहीं है, इसीलिये न? लेकिन पड़ोसमें मनोहरजी तो हैं न? उनकी गौ ब्यानेको थी। अगर ब्यायी होगी तो वे हमें दूध देनेमें नाहीं नहीं करेंगे। बड़े भले आदमी हैं।'

'हाँ खदीजा! यह तो ठीक है, पर एक बार हमारे खेतमें उनका बैल घुस आया था। मैंने गुस्सेमें आकर उसे बेतरह मारा था। इसपर मुझसे और उनसे गाली-गलौज भी हुआ। तभीसे हमारी-उनकी बोलचाल बंद है। अब मैं उनके पास किस मुँहसे जाऊँ?'

'पर अब तो जानपर नौबत आयी है। यदि मेरे लिये दूधकी आवश्यकता होती तो मैं न कहती। पर यह पहला बच्चा ठहरा। इसे तो किसी तरह जिलाना ही होगा। अभी तो यह पूरे बाईस दिनोंका भी नहीं हुआ। अगर तुम उनके पास जाकर यह सारा हाल कहोगे तो वे इन्कार नहीं करेंगे। इसका मुझे पूरा विश्वास है। तुम अपने इस बच्चेकी खातिर ही उनके पास जाओ, जाओ न।'

खदीजाका यह आग्रह भला अब्दुल्ला किस तरह टाल सकता था? खदीजाको रोगने आ घेरा था, उसके घर पहले-पहल लड़का हुआ था, इसलिये वह मान-अपमान सबका विचार छोड़ मनोहरजीके घर गया।

मनोहरजी सचमुच बहुत उदार-स्वभावके मनुष्य थे। अब्दुल्लाने बहुत ही लज्जित भावसे उनसे सारा हाल कहा, और अपनी अड़चन उन्हें बतलायी। अब भला मनोहरजी-जैसे उदार गृहस्थ कैसे इन्कार कर सकते थे?

मनोहरजीने कहा—'अब्दुल्ला! अगर तुम अपने छोटे बच्चेके लिये मेरा सारा दूध ले लो तो भी हर्ज नहीं, पर तुम्हारा लड़का जी जाय। तुम खदीजाको धीरज दो और दोनोंकी देख-भाल करो। जाओ।'

मनोहरजीकी ये बातें अब्दुल्लाके कलेजेको पार कर गयीं। वह उनकी उदारता देखकर थोड़ी देरतक तो अपने मनमें बहुत लज्जित हुआ। पर उसके मनमें फिर कुछ खीझ हुई। उसने सोचा—'हैं! क्या मैं अपने दुश्मनका एहसान लूँ? अगर मनोहरजीने दूध देनेसे इन्कार कर दिया होता तो कितना अच्छा होता, तब तो मैं मनोहरजीकी निर्दयताका कितना बढ़-चढ़कर बखान करता और खदीजाका जी भर देता। पर नहीं, ऐसा तो हो नहीं पाया। हाय!'

अब्दुल्लाके मनमें इसी प्रकारके विचार उठने लगे। उसके पास इतने रुपये नहीं थे कि वह एक गौ खरीद सकता। उस गाँवमें मुसल्मानोंके भी दो-तीन घर थे। पर उनमेंसे भी किसीके यहाँ दुधारू गौ नहीं थी। हाँ, और भी कई ऐसे हिंदू थे, जिनके यहाँ दूध होता था, पर भैंसका; गौका दूध किसीके यहाँ नहीं होता था। जिनके यहाँ गौएँ थीं भी, उनके यहाँ दूध नहीं होता था। या तो बछिया थीं और या ठाठ। अब्दुल्ला लाचार हो गया। एक विचार उसके मनमें आया। किसी महाजनसे



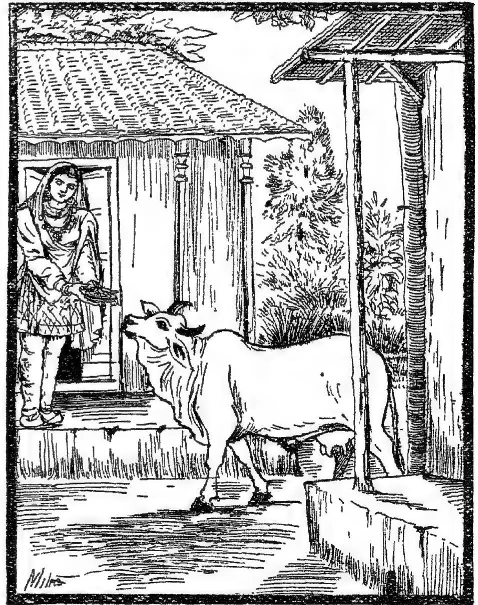
कुछ रुपये उधार लेकर एक दुधारू गौ खरीद लूँ। मनमें यह विचार उठते ही वह प्रसन्न हुआ। लेकिन अभी बाजार लगनेमें पाँच दिन बाकी थे। तबतक क्या बच्चा बिना दूधके रहेगा और फिर खदीजाके लिये भी दवाके साथ गौका ही दूध चाहिये था। बेचारा बिल्कुल लाचार था। अगर पाँच दिनतक मनोहरजीसे ही दूध लेना पड़ा तो फिर बराबर लेनेमें क्या हर्ज है ?

महीनेभरमें खदीजाकी तबीयत कुछ सँभलने लगी। वह उठकर घरमें चलने-फिरने लगी। फिर भी कमजोरी बहुत थी। पर गरीब घरोंमें ऐसे ही चला करता है। ज्यों ही मनोहरजीकी गौ सन्ध्याको आकर उसके दरवाजेपर खड़ी होती त्यों ही खदीजा उसे कुछ हरा चारा खिलाती। घरमें अगर कुछ रोटी या भात बचा हुआ होता तो वह भी देती। कभी-कभी उसे कुछ सानी-पानी भी दे देती। आखिर उस बच्चेकी जान भी तो उसी गौके दूधसे बची थी।

अब्दुल्ला और खदीजाका लड़का रहमत अब आठ महीनेका हो गया था। अब उसे गौ बहुत अच्छी मालूम होने लगी। जब वह गौ खदीजा और रहमतको इतनी प्यारी लगती थी तब वह अब्दुल्लाको प्यारी लगे बिना कैसे रह सकती थी ? अब उसके पहलेवाले विचार बदल गये। अब वह मनोहरजीके साथ उसी प्रकारका प्रेमपूर्ण व्यवहार करने लगा, जैसा एक भले पड़ोसीको करना चाहिये।

जिस गौका दूध रहमतको मिला करता था वह गाभिन हुई। अब उसका दूध मिलना बंद हो गया। पर उन्हीं दिनों मनोहरजीकी दूसरी बछिया ब्यायी। वह बछिया उसी गौकी थी।

डाक्टरने कह रक्खा था कि रहमतको जितने दिनोंतक मिल सकें, बराबर गौका दूध ही देना चाहिये। और यदि डाक्टरने न भी कहा होता तो भी अब्दुल्ला और खदीजा स्वयं ही उसे जहाँतक हो सकता, गौका दूध देते, क्योंकि गौके दूधपर उन लोगोंका बहुत अधिक विश्वास हो गया था।



ज्यों ही गौ अपने बछड़ेके साथ दरवाजेपर आकर खड़ी होती, त्यों ही खदीजा रोटी लेकर उसके पास जा पहुँचती और अपने हाथसे उसे खिलाती। और गौ भी जब जाने लगती तब खदीजा और रहमतको चाटती हुई जाती।

अब रहमत आठ वर्षका हो गया था। एक दिन

जब वह स्कूलसे लौट रहा था, उसे मनोहरजीके घरमें बहुत भीड़ दिखायी दी। साथ ही उसे गौके रँभानेकी भी आवाज सुनायी पड़ी। मनोहरपर कुछ लोग बिगड़ रहे थे और मनोहर उन लोगोंकी मिन्नत-खुशामद कर रहे थे।

रहमतने भीड़में घुसकर देखा तो दो-तीन आदमी दोनों गौओंके गलेमें पगहा बाँधकर उन्हें खींचकर बाहर ले जाना चाहते थे। गौएँ जोर-जोरसे चिल्ला रही थीं और मनोहरजीको रुलाई आ रही थी। ये वे ही दोनों गौएँ थीं जो रहमतको बहुत प्यारी थीं।

महाजनोंका कर्ज चुकानेके लिये मनोहरजीके पास रुपये नहीं थे। फसल अभी कटी नहीं थी। इधर दो वर्षसे पानी ही नहीं बरसा, इसलिये घरमें भी अनाजका एक दाना नहीं था। वे जैसे-तैसे अपना और बाल-बच्चोंका पेट पालते थे। घरमें जो कुछ माल-असबाब, कपड़ा-लत्ता था वह पहले ही कुछ और महाजनोंका कर्ज चुकानेमें निकल गया था। अब रह गये केवल मनुष्य, वे ही अपनेको दास कहकर बिकनेको तैयार हों तो......। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं था।

बालक रहमतकी समझमें और तो कुछ आया नहीं, बस, इतनी ही बात उसकी समझमें आयी कि मनोहरजी-पर और उनकी दोनों गौओंपर संकट आया है। वह दौड़ा हुआ अपने घर पहुँचा। अब्दुल्ला उस समय घरमें नहीं था। खदीजा घरके काम-धंधोंमें लगी थी। जब उसने देखा कि रहमत रोता हुआ आ रहा है, तब वह बेचैन हो गयी।

लड़का रो रहा था। उसकी बातसे खदीजाने इतना तो समझ लिया कि भारी विपद् है। इसके बाद मा-बेटा दोनों दौड़े हुए मनोहरजीके आँगनमें जा पहुँचे। उनकी जिन दोनों गौओंने पारी-पारीसे रहमतको दूध पिलाकर इतना बड़ा किया था, आज उनके चले जानेकी बारी आयी थी। उन्हीं गौओंने रहमतको आठ-दस वर्षका किया था। रहमतके लिये वे गौएँ दाई क्या बल्कि मासे भी बढ़कर थीं। उन्होंने खदीजापर बहुत अधिक उपकार किया था। उन्हींके दूधसे रहमत पला था। उन गौओंने खदीजाके हाथसे घास खायी थी। दोनों गौओंकी आँखोंसे पानी बह रहा था। उनके छोटे-छोटे बछड़े पगहा तोड़कर गौओंके पास दौड़ जानेको छटपटा रहे थे। खदीजाका स्त्री-हृदय द्रवित हुआ। उसे उन बछड़ोंकी जगह अपना रहमत ही दिखायी देने लगा, और रहमतकी जगह वे दीन बछड़े दिखायी देने लगे। खदीजा और रहमतको देखते ही दोनों गौएँ उनकी ओर दौड़ीं। ऐसा जान पड़ता था कि उन दोनों गूँगे पशुओंको इस बातका ज्ञान हो गया था कि हमारा मालिक इस समय हमारी रक्षा करनेमें असमर्थ हो रहा है।

अदालतका अमीन और महाजन दोनों पास ही बैठे हुए मजेमें तमाखू पी रहे थे और रह-रहकर अपने आदमियोंको दोनों गौएँ खींच ले चलनेका इशारा कर रहे



थे। खदीजाने बिजलीकी तरह कड़ककर कहा—'लो ये मेरे गहने ले जाओ। और गौओंको छोड़ दो। कम-ज्यादाका हिसाब बादमें होता रहेगा। जाओ, यहाँसे अपना मुँह काला करो!'

इतना कहकर उसने गौओंके गेरावपर हाथ डाला और चट उन्हें ले जाकर उनकी जगहपर बाँध दिया।

अपने कानों और हाथोंके गहने उतारकर उसने महाजनके सुपुर्द कर दिये थे। उस समय वह क्रोधमें इतनी भर रही थी कि किसीकी हिम्मत ही न होती थी कि आँख उठाकर कोई उसकी तरफ भरपूर निगाहसे देखता।

वह बोली—'जबतक मैं जीती हूँ, तबतक मैं मनोहरजी-की गौओंपर किसीको हाथ नहीं रखने दूँगी।'

यह बात उसने घर जाते समय कुछ गरजकर कही थी। इसके बाद उसने कुछ धीमी, पर ऐसी आवाजसे कहा, जिसमें सब लोग सुन सकें—'बेटा रहमत! तुम भी हमेशा ऐसा ही करना।'

रहमत भी बोला—'हाँ, मा! मैं भी ऐसा ही करूँगा।'

यद्यपि माके गहने उतर जाना रहमतको बुरा लगा था, पर फिर भी उस समय उसे आनन्द ही हो रहा था।

मनोहरजीपरसे आपत्ति तो टल गयी, पर वे जन्मभरके लिये खदीजाके ऋणी हो गये। जब अब्दुल्ला लौटकर घर आ रहा था, तब मनोहरजीने रास्तेमेंसे ही उसे बुलाकर उससे सारा हाल कह सुनाया और तब कहा—'अब्दुल्ला भाई! आज खदीजाने हमारी यह आफत टालकर मानो हमारे घरभरके लोगोंको सदाके लिये मोल ले लिया। हम महाजनके ऋणसे तो छूट गये, पर सदाके लिये तुम्हारे ऋणी हो गये!'

अब्दुल्लाको जिस दिन पहले-पहल मनोहरजीके यहाँ दूध लानेके लिये जाना पड़ा था, उस दिनके अपने विचार स्मरण हो आये। आज उसने अपने आपको धन्य समझा। आज उसने उस उपकारका बदला उपकारसे चुका दिया था। अब उलटे मनोहरजी ही अपने-आपको बोझसे दबा हुआ समझ रहे थे।

रास्तेमें ही उसको मनोहरजीके घरका सारा हाल मालूम हो गया था और वह उसीके सम्बन्धकी बातें सोच रहा था। बकरीदका त्यौहार पास आ गया था, इसलिये कुर्बानीके वास्ते गौएँ ढूँढ़नेके लिये कसाई लोग गाँवोंमें घूम रहे थे। ऐसा जान पड़ता था कि दस रुपयेकी गौके दाम उस समय चालीस रुपयेतक मिल जायँगे। महाजनने मनोहरजीकी गौओंपर नजर रखकर ही यह जाल बिछाया था। अब मनोहरजीकी तरफ उसके पंद्रह-बीस रुपयेसे ज्यादे नहीं निकलते थे। पर मनोहरजी उस समय इतनी छोटी रकम भी नहीं चुका सकते थे। उन्होंने अपनी एक गौ निकाल देनेके बारेमें अब्दुल्लासे जिक्र किया। पर अब्दुल्ला कोई उत्तर नहीं दे सकता था। उसके सामने एक ओर तो अपने धर्म-का प्रश्न था और दूसरी ओर यह आपसका और घरू प्रश्न था। भला खदीजाके सामने इसका जिक्र करनेकी उसकी



क्या मजाल थी? वह मनोहरजीकी गौ बिकवानेकी बात उससे कैसे कह सकता था? वह इसी चिन्तामें डूबा हुआ अपने घर आ रहा था। मनोहरजीने उससे यह भी कह दिया था कि यदि इस समय तुम रुपयोंका बन्दोबस्त कर दो तो मैं आगे चलकर तुम्हारे रुपये लौटा दूँगा।

पर उसी दिन खदीजा फिर बीमार पड़ी। उसकी बीमारी दिन-पर-दिन बढ़ने लगी। डाक्टरने कहा था कि ऐसी कोई बात इससे न की जाय जिससे इसके दिलपर धक्का लगे।

× × ×

अन्तसमय पास आया जानकर खदीजाने रहमतको अपने कलेजेसे लगा लिया। अब्दुल्ला उसके सिरकी तरफ और मनोहर उसके पैताने बैठे हुए थे।

खदीजाने कहा—'देखो, बेटा रहमत! मनोहरजीकी गौओंको सदा चण्डालोंके हाथसे बचाना। ऐसा न हो कि कोई चण्डाल उन्हें ले जाय, और मनोहरजीका भी कोई अपकार न होने देना। बताओ तुम इन सबका ध्यान रक्खोगे न?'

खदीजाका दम निकल गया। पर वह इन दोनों

कुटुम्बोंको जीवनभरके लिये ही नहीं, बल्कि वंशपरम्पराके लिये मिलाकर एक कर गयी। और उन दोनों कुटुम्बोंको एकमें मिलानेवाली थी गौ।

पर सती खदीजा! जो बात तूने मनोहरजीकी गौओंके सम्बन्धमें कही थी, वही बात समस्त हिंदुओंके ही नहीं बल्कि अखिल मानव-जातिके यहाँ बँधी हुई गौओंके सम्बन्धमें क्यों नहीं कही ? कदाचित् शिक्षाके अभावके कारण तेरी वह मातृवत्सल दृष्टि उतनी व्यापक नहीं हो पायी थी! (गो० शा० को०)

कामधेनु

[कहानी]

(लेखक—श्री 'चक्र')

आसपास कोई करीरकी लता भी नहीं है। हरिताभ तमाल दूर खड़े प्रहरी-से प्रतीत होते हैं। कदम्ब-पुष्पोंका पराग यहाँ वायु यदा-कदा ही पहुँचा पाता है। नालोंने चारों ओर प्राकृतिक खाई खोद दी है और दक्षिण पद-प्रान्तमें सूर्यसुता उछलती-कूदती हँसती-सी इस एकाकी नीमके वृक्षको देखती जाती हैं। खूब सघन है यह। खंडहरके बाहर यह अकेला इस प्रकार खड़ा है जैसे कह रहा हो 'मैं स्वयं पूर्ण हूँ। मुझे किसीकी अपेक्षा नहीं।'

मैं अक्रूरसे और आगे निकल आया हूँ। वृन्दावनकी सीमा पीछे छूट चुकी है। पता नहीं क्यों आज दुपहरीमें ही घूमनेकी धुन सवार हुई। बस्तीसे एक बजे लौट आया। कुटियामें बैठा-बैठा करता क्या। लिखनेमें जी नहीं लगा। इधर टहलने और मौलसिरीके पुष्प चुनने आकर दूर निकल आया हूँ।

खंडहर कोई पुरानी धर्मशाला होगी। व्रजमें इस प्रकार मार्गसे दूर जहाँ-तहाँ धर्मशालाओंका पाया जाना साधारण बात है। श्रद्धालुओंने इस आशासे कभी इन्हें बनवाया होगा कि कभी इनमें एकान्तप्रिय हरिभक्त निवास करेंगे।

एक दुग्धोज्ज्वल हृष्ट-पुष्ट गौ उस नीमके नीचे बैठी पागुर कर रही थी। सुखसे उसके नेत्र अधमुँदे हो रहे थे। कभी-कभी पूँछ थोड़ी हिल उठती थी। वैसे उसके शरीरपर एक भी मक्खी नहीं थी, जिसे वह उड़ाना चाहे।

मैं उस गौको देखकर आकर्षित हुए बिना न रहा। समीप जाकर बैठ गया। उसने भी एक बार नेत्र खोले, मेरी ओर देखा और फिर मेरे कंधेपर मुख रखकर इस प्रकार नेत्र बंद कर लिये मानो मुझे बहुत पहलेसे जानती हो। धीरे-धीरे मैं उसके गलेके निचले भागको सहलाने लगा था।

'खुदाके लिये…।' मैंने मुख फेरा। पीछे खंडहरके द्वारपर लंबी रजतवर्ण दाढ़ी तथा श्वेत दीर्घ केशवाले एक तेजस्वी वृद्ध चिथड़े लपेटे खड़े थे। वे कुछ कहते-कहते रुक गये थे। मैंने गौका मुख धीरेसे कंधेसे हटाया। वह इस प्रकार देखने लगी जैसे मेरा उठना उसे रुचिकर नहीं हुआ।

मैंने निकट जाकर वृद्धको अभिवादन किया। उन्होंने मेरी ओर देखा। भीतरतक देख लेनेवाली थी वह दृष्टि। मुझे विवशतः नेत्र झुका लेने पड़े।

संकेत पाकर उनके पीछे खंडहरमें गया। उस टूटे ढेरका वर्णन करके समय नष्ट नहीं करूँगा। चहारदीवारीके भीतर एक कमरेकी आधी छत शेष थी। उसीके नीचे एक चीनी मिट्टीकी कलईका टीनका प्याला और तसला पड़ा था। एक फटा-सा टाटका टुकड़ा था। मुझे वही टुकड़ा बैठनेको उन्होंने दिया, लेकिन बैठे हम दोनों भूमिपर ही।

[२]

'वेल मि० ह्यूमैन, तुम्हें इन पुस्तकोंसे क्या कभी भी छुट्टी नहीं मिलती ?'

'ओह, डाक्टर!' उठकर उस अमेरिकनने महेन्द्रबाबूसे हाथ मिलाया। 'मैं आज बड़ी उलझनमें पड़ गया हूँ। अच्छा, पहले चाय तो पी लो। खानसामा, दो कप चाय!'

ढेरों पुस्तकें बिखरी पड़ी थीं। कुछ अंग्रेजीकी थीं, कुछ संस्कृतकी तथा कुछ अन्य भाषाओंकी। मेजके एक खाली कोनेपर खानसामाने चायके प्याले रख दिये।

'आप तो प्रसिद्ध पशु-विशेषज्ञ हैं!' ह्यूमैनने चाय पीते-पीते कहा 'भारतीय गौकी नस्ल तो बेहद गिर गयी है। यद्यपि वह यहींका पशु है।'

'मैंने प्रारम्भमें ही कहा था' डाक्टरने वैसे ही कहा

'आपको यहाँ कुछ नहीं मिलेगा । अमेरिकन गायोंकी यहाँसे तुलना नहीं की जा सकती ।'

ह्यूमैन एक अमेरिकन पशु-विशेषज्ञ हैं और गायोंकी नस्ल सुधारनेके सम्बन्धमें अनेक देशोंमें भ्रमण कर चुके हैं। उनका कहना है कि गाय भारतीय पशु है और किसी-न-किसी प्रकार यहींसे संसारमें फैला है। इसी विश्वासके आधारपर वे भारतमें अन्वेषण करने आये हैं। एक भारतीय विशेषज्ञसे उन्होंने परिचय भी कर लिया है।

'लेकिन प्रारम्भमें यहाँकी नस्ल ऐसी नहीं थी।' ह्यूमैन गम्भीर हो गये 'अच्छा, तुम्हारी किताबोंमें यह कामधेनु शब्द बार-बार आया है। इसे तुम जानते हो ?' उनके नेत्र डाक्टरके मुखपर स्थिर हो गये।

'ओह !' डाक्टर हँस पड़े 'तो यह है आपकी उलझन ! आप पुरानी कहानियोंके चक्करमें पड़ गये हैं। इनमें कोई तथ्य नहीं है।' आधुनिक विचारोंके कारण महेन्द्र ऐसी बातोंपर ध्यान देना व्यर्थ समझते थे।

'मैं इसे ऐसा नहीं समझता' वह अमेरिकन विशेषज्ञ डाक्टरकी उपेक्षासे तनिक भी प्रभावित नहीं हुआ। उसका मुख और गम्भीर हो गया। चायका प्याला मेजपर रखकर वह सीधा बैठ गया। 'कामधेनुका शब्दार्थ तो हुआ चाहे जब और जितनी बार इच्छा हो उतनी बार दुही जा सकनेवाली। लेकिन किताबोंमें तो दूसरा ही कुछ लिखा है।'

'आपका संस्कृत ज्ञान प्रशंसनीय है।' डाक्टरको इस अमेरिकनपर हँसी आ रही थी। वह क्यों मूर्खतापूर्ण बातोंपर विश्वास करने जा रहा है। 'फिर भी मैं आपको इन गपोड़ोंमें अपना अमूल्य समय नष्ट करनेकी सलाह नहीं दूँगा।'

'मैं प्रयोग करूँगा।' उसे पक्की धुन थी। 'मैं ठीक तरहसे तुम्हारी किताबोंका अक्षर-अक्षर पालन करके प्रयोग करूँगा। मुझे एक अच्छी गाय ला दो। ऐसी गाय जो चाहे जब दुही जा सके और देखो, वह कपिला हो—बस !'

बिना उत्तरकी प्रतीक्षा किये वह मेजसे उठ खड़ा हुआ। डाक्टरने देख लिया कि कुछ कहना व्यर्थ होगा। ह्यूमैनके इच्छानुसार गाय ढूँढ़नेका वचन देकर उन्होंने हाथ मिलाया। उनके पीठ फेरते-फेरते वह अपनी पुस्तकोंके ढेरके बीच बैठ चुका था।

[२]

'आप तो मुसल्मान हैं' मैंने वृद्ध महात्मासे पूछा 'आपके धर्ममें तो कुर्बानी···।'

'उस पाक परवरदिगारके लिये माफ करो' बड़ी व्याकुलतासे उन्होंने मुझे रोका। 'किसीको कोई हक नहीं कि कुरानशरीफको बदनाम करे और हजरत साहबपर ऐसा दोष मढ़े।'

'मैं तो आम मुसल्मानोंकी धारणाकी बात कह रहा था।' मुझे खेद था कि मैंने एक वृद्ध फकीरको कष्ट पहुँचाया है। उनके नेत्र भर आये थे और मुख तमतमा-सा आया था 'मेरा इरादा कतई खराब नहीं था।' मैंने क्षमा माँगी।

'तुम ठीक ही कहते थे' उनके स्वरोंमें ग्लानि थी। 'मैं किसीको गाली नहीं दूँगा। लोग गुमराह हो गये हैं। कह नहीं सकता कि वे कैसे ठीक रास्तेपर आवेंगे।' मस्तक झुकाकर वे सोचने लगे। किसी गम्भीर चिन्तामें पड़ गये दीखते थे।

'क्या आप कुरानकी शिक्षाके सम्बन्धमें कुछ कहेंगे।' मैंने प्रसंग बदलनेके लिये ही कहा था। वैसे कोई उत्सुकता मुझमें थी नहीं।

'मैं तो एक अनपढ़ खानसामा हूँ।' उन्होंने कहा 'मैंने कुरानशरीफपर श्रद्धा करना सीखा है। उसे पढ़ सकूँ ऐसी लियाकत नहीं। फिर भी मैं विश्वास करता हूँ कि वह एक खुदाई किताब है और उसमें कोई खराब बात नहीं।'

'आपने सुना तो होगा ही।' मुझे इस अनोखे श्रद्धालुके प्रति कुतूहल हो रहा था।

'उसके लिये मुझे वक्त कहाँ है।' वे सीधे शब्दोंमें कह रहे थे 'मैं इस अपनी कामधेनुसे छुट्टी ही कब पाता हूँ।' उन्होंने नीमके नीचेकी ओर संकेत किया।

'आपका मतलब शायद उस गायसे है।' मैं उसे अबतक भूल गया था। अब ध्यानमें आया कि वह इन्हींकी गाय है और उसका शरीर इस बातका साक्षी है कि वृद्ध उसकी कितनी सेवा करते हैं।

'हाँ उसी गायसे। जिसके पास तुम अभी बैठे थे।' उन्होंने उल्लाससे कहा 'मैंने समझा था कि कोई उसे छेड़ रहा है, इसीसे पुकारा था। लेकिन तुरंत ही मुझे अपनी भूल मालूम भी हो गयी थी।' जैसे वे क्षमा माँग रहे हों।

'मैं हिंदू हूँ। गौको हम देवस्वरूप तथा पूजनीय मानते हैं।' मैं यों ही कह चला था 'उसे छेड़ने या सतानेकी कल्पना हमारे सम्बन्धमें करना हमारे साथ अन्याय है।'

'तुम अपनी बात कर सकते हो' उन वृद्धने कहा 'यहीं घरोंमें बाँधकर गायको चारा-पानीसे तरसानेवाले हिंदू कम नहीं हैं। दूधकी आखिरी बूँदतक दुहकर गायके बच्चेको तड़प-तड़पकर मरनेके लिये छोड़नेवाले ग्वाले भी हिंदू हैं और मंडीमें अनाजकी ओर मुख बढ़ाते ही यमराजकी भाँति डंडा मारनेवाले दूकानदार तो शायद पूरे अहिंसक हिंदू हैं।' उनके स्वरमें घृणा थी।

'हम उसका दण्ड भी पा रहे हैं।' मैंने मस्तक झुकाकर स्वीकार किया 'गायोंके मूक अश्रु अभिशाप बनकर हिंदूजातिको लग गये हैं और वह अपना कर्मफल भोग रही है।' मुझे गहरा धक्का लगा था।

'अरे नहीं' जैसे मेरे अन्तःकष्टको उन्होंने देख लिया हो 'यह पाप तो आज दुनियाके कुल आदमी ही कर रहे हैं और दयाको छोड़कर वे खूँख्वार बन गये हैं।' इस एकान्तमें भी उन्हें सम्भवतः विश्वकी परिस्थितिका कुछ आभास मिल जाता था।

'आपको यह गाय कहाँ मिल गयी।' इस खंडहर-निवासीके पास खरीदनेके लिये मूल्य तो होनेसे रहा। प्रसङ्ग भी नीरस हो गया था। मैंने उसे बदलना ठीक समझा। यह मैं लक्षित कर चुका था कि अपनी गायकी चर्चासे वे बहुत उल्लसित हो उठते हैं।

'बड़ी लंबी कहानी है।' एक दीर्घ श्वास लेकर वे चुप हो गये। पता नहीं क्यों उनके नेत्रोंसे अश्रु टपकने लगे थे।

[४]

ह्यूमैनको गाय मिल गयी और उसे पाते ही उन्होंने अपना प्रयोग प्रारम्भ किया। एक-दो दिनमें ही उन्हें पता लग गया कि आगरे-जैसे बड़े शहरमें रहकर वे प्रयोग नहीं कर सकते। पंद्रह मील दूर यमुनाकिनारे उन्होंने एक ढाकका जंगल खरीद लिया। वहीं एक छोटा बँगला बनवा लिया और उस गायको लेकर आ गये।

सिञ्चित जंगल घाससे भर जाना ही था। चारों ओर काँटेदार तार लगा दिये गये थे। बँगलेपर साहब, खानसामा, गाय और उसकी बछड़ीको छोड़कर कोई प्राणी नहीं रहता था।

पहले ही दिन खानसामाको आश्चर्य हुआ जब साहब एक छोटी लकड़ीमें रूमाल बाँधकर सबेरे गाय चराने निकले। 'यह मेजको झाड़नेके लिये तो ठीक था, पर गाय चरानेके लिये...। फिर साहब एक चरवाहा क्यों नहीं रख लेते?' बेचारा खानसामा चुप रहा। वह जानता था कि उसका साहब झक्की है।

दो महीनोंसे ह्यूमैन अपनेको तैयार कर रहे थे। अनेक उलट-फेर उन्होंने अपने भोजन तथा रहन-सहनमें किये थे। चाय वे छोड़ चुके थे और धूपमें टहलनेका अभ्यास भी कर चले थे।

घिरे हुए जंगलमें साहब अपने झाड़नसे गायके ऊपर बैठनेवाले मक्खी-मच्छर उड़ाते हुए उसके पीछे-पीछे घूमते रहे। कहीं रोकनेकी आवश्यकता नहीं थी। बड़ी नालियोंमें स्वच्छ जल भरा था। दोपहरको खानसामा आदेशके अनुसार वहीं भोजन दे गया। पहले दिन भूमिपर बैठकर साहबने भोजन किया।

पतलून छूट गयी। उससे पृथ्वीपर बैठनेमें अड़चन होती थी। हाफ पाइंट और हाफ कमीज बस! हैट धूपसे बचानेको चाहिये ही। काँटा चम्मच छोड़कर उन्होंने हाथसे भोजन करना प्रारम्भ किया। खानसामा शहर जावे तो रोटी पहुँचावे कौन? केक, बिस्कुटके बदले टिक्कर ठोंके जाने लगे।

'साहब क्या पागल हो गया है।' खानसामा कभी-कभी सोचता, वह सुबह गायके पैर धोकर वह गंदा पानी मुँहमें डालता है। हिंदुओंकी तरह फूल, रोलीसे उसकी पूजा करता है। शामको गायके पास घीका चिराग रातभरके लिये जलाता है। जैसे गाय कोई बच्चा है जो अँधेरेमें डर जायगी। रातको चटाई डालकर वहीं जमीनपर सो रहता है।' दिनभर अकेले रहते-रहते वह ऊब जाता था।

'साहब बहुत भला है। भले वह आधा पागल हो।' कभी-कभी खानसामा सोचता। 'मैं जैसी रोटी बनाता हूँ, वैसी खा लेता है। गायके पास तो झाड़ू खुद देता है। कमरेमें भी झाड़ू न दिया हो तो अपने आप देने लगता है। कभी डाँटता नहीं। तनख्वाह ठीक पहलीको दे देता है। खुदा उसका पागलपन दूर करे।' खानसामाको निश्चय हो गया था कि साहबके दिमागमें जरूर कुछ खराबी है।

'आखिर यह गाय है किसलिये।' सच पूछिये तो गायने खानसामाको अच्छी उलझनमें डाल दिया था। 'दूध उसकी बछड़ी पीती है। साहब कभी उसे दुहता नहीं और दुहकर करे भी क्या; उसने तो दूध पीना ही छोड़ दिया है। जरूर इस गायपर कोई जिंद सवार है और उसीने साहबको पागल

बना दिया है ।' कई बार साहबकी आँख बचाकर वह कलमा पढ़कर गायपर फूँक मार चुका है ।

'आज मैं देखूँगा कि जंगलमें साहब दिनभर क्या करता है।' लगभग छः महीने बाद उसने एक दिन निश्चय किया और उस दिन साहबको रोटी देकर बँगले नहीं लौटा । झाड़ियोंमें छिप रहा वह ।

'मदर, मैं क्या निराश ही होऊँगा ।' खानसामा टूटी-फूटी अंग्रेजी समझ लेता था । गाय आरामसे एक घने ढाकके नीचे बैठी थी। उसकी बछड़ी इधर-उधर फुदक रही थी और साहब उसके सामने घुटनोंके बल बैठा हुआ था । उसने हाथ जोड़ रक्खे थे और बेतरह रो रहा था ।

खानसामा चीख पड़ा । यह क्या ? गाय आदमी-जैसी साफ अंग्रेजी बोल रही है । वह भयके मारे बेहोश हो गया। पता नहीं कबतक वह वैसे ही पड़ा रहा । जब उसकी आँखें खुलीं तो वह बँगलेमें पलंगपर लिटाया हुआ था और उसका साहब सामने खड़ा मुस्करा रहा था ।

[५]

'फिर कभी दर्शन करूँगा' मैं उठ खड़ा हुआ । चार बज गये थे और मैं कुटियासे डेढ़ मील दूर था । जाड़ोंमें अँधेरा भी तो जल्दी होता है ।' दिन छिपनेतक पहुँच जानेका विचार था । अन्ततः अपने गोपालके पास दीपक भी तो जलाना है ।

'दूध तो पीते जाओ !' वे वृद्ध उठ खड़े हुए । बाहर एक नन्हा-सा ढाक था । कुल पाँच-सात पत्ते होंगे उसमें । एक बड़ा-सा पत्ता उन्होंने तोड़ लिया और मेरे उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना दोना मेरे हाथमें धर दिया ।

गाय नीमके नीचे खड़ी हो गयी थी । 'तुम थनोंके पास बैठ भर जाओ ।' वे गायके सामने घुटने टेककर बैठ चुके थे । 'अम्मा, अपने घर ये मेहमान आये हैं ।' मैं आश्चर्यचकित रह गया । गायके चारों थनोंसे दूधकी धारा बहने लगी थी ।

'बस' एक दोना पीकर मैंने कहा ।

'उहुँ, दूध खराब मत करो ।' वे पीछे खड़े हँस रहे थे । 'अब यह तुम्हारे बसकी बात नहीं । दूध गिरे, वहाँतक चुपचाप पीते जाओ ।'

मुझे कहने दीजिये कि सचमुच मैं ऊपरसे 'ना' कह रहा था । उतना स्वादिष्ट दूध जीवनमें फिर मिलेगा, ऐसी आशा नहीं । बराबर दोना भरता और पीता रहा । नीचे भूमिमें दूधका कीचड़ हो गया । गलेतक भरकर पीया होगा, तब कहीं थनोंसे उसकी धारा रुकी ।

'सचमुच कामधेनु पायी है आपने ।' उठकर मुख पोंछते हुए मैंने कहा । हाथ यमुनाजीमें धोनेका विचार कर लिया था ।

'यह मेरे साहबकी कामधेनुकी बछड़ी है ।' उन्होंने बताया 'इसने कभी कोई बच्चा नहीं दिया ।'

'कामधेनु तो केवल दूध ही नहीं देती ।' मैंने उत्सुकता-वश पूछा ।

'मुझ फकीरको इस पेटके गड्ढेको भरनेके अलावा और चाहिये भी क्या ।' वे गद्‌गद हो रहे थे । 'फिर मुझमें उतनी श्रद्धा कहाँ है ! मैं वैसी सेवा कहाँ कर पाता हूँ ।' उनके नेत्रोंने कपोलोंको भिगो दिया था ।

'वह तो साहब ही थे' थोड़ी देर रुककर वे बोले 'उन्हें कामधेनुने खुदाका जलवा तक दिखाया और वह खुद उन्हें लेकर उस मालिकके दरबारमें चली गयी ।' बहुत पूछकर भी मैं इस अन्तिम वाक्यका मतलब नहीं समझ सका । उन्होंने मुझे 'देर होती है, जाओ ।' कहकर बिदा कर दिया ।

× × × ×

मैं जब कुटियासे बाहर प्रातः बैठता हूँ तो शामको भिगोये चनोंका जो मेरे गोपालको भोग लग चुका होता है— भाग लेने मयूरोंका झुंड आ जाता है । कई छोटे बछड़े आ जाते हैं और यदा-कदा एक दो गायें भी ।

आज प्रातः मयूर आ गये हैं । वे तीनों पर फैलाकर नाच रहे हैं । ये पाँचों बछड़े प्रायः रोज आते हैं । बड़े नटखट हैं । सारा चबूतरा कूदकर खोद डालते हैं । आज तो कपिला आयी है और नीचे खड़ी हुंकारसे चने माँगती है शायद ।

सहसा कल शामकी बातें स्मरण हो आयीं । 'ये इतने रूपोंमें साक्षात् धर्म मुझे वंदित किये हैं और वे कामधेनु पुकार रही हैं ।' मैंने सब चने गायके सम्मुख चबूतरेपर डाल दिये और नीचे जाकर उसकी चरण-रज मस्तकसे लगा ली !



हमारी 'भूरी माता'

(एक सत्य घटना)

(लेखक—श्रीयुत जगन्नाथ 'चित्रकार')

लगभग बीस वर्ष पहलेकी बात है। मेरी आयु १०-१२ वर्षकी थी, किन्तु मुझे इस घटनाका अक्षर-अक्षर याद है। हमारे घरमें 'भूरी' नामकी एक गाय थी। गाय सांसारिक पशु ही नहीं है, मनुष्योंका उपकार करनेके लिये आयी हुई दैवी आत्मा है—यह बात 'भूरी' सिद्ध कर रही थी। उसकी दिन-चर्या यह थी, सबेरे बड़ी अच्छी तरह दूध दुहाकर बाहर निकल जाती थी। न हमें उसे चारा-पानी देना पड़ता था, न चरानेके लिये भेजना पड़ता था। दिनभर, पता नहीं, कहाँ रहती थी, क्या खाती थी, क्या पीती थी—हमलोग यह न जान पाते थे। सन्ध्याको फिर समयपर आ जाती थी और बड़े प्रेमसे पूरा दूध दुहा लेती थी। रातमें उसे बाँधनेका भी झंझट नहीं करना पड़ता था। घरके सामने ही वह कभी बैठी रहती और कभी टहला करती। सीधी इतनी थी कि हम बच्चे उसका थन मुँहमें भरकर माताके दूधके समान दूध चूसते थे, वह चुपचाप खड़ी रहती थी, कभी उसने इस डरसे पैर भी नहीं हिलाया कि किसी बच्चेको लग न जाय। ऐसी गायको क्या कहें, आप ही सोचिये। मुझे तो आज भी जब कभी उसकी याद आ जाती है, आँखें भर आती हैं।

उन दिनों पिताजीसे और एक पड़ोसीसे मुकद्दमेबाजी चल रही थी। हमारे पड़ोसी इस मिजाजके थे कि मौकेपर पा जाते तो हम बच्चोंको भी पिटवानेसे बाज न आते। इसी-लिये हमें बाहर निकलकर घूमने-फिरनेकी आज्ञा नहीं थी। हम भाइयोंमेंसे सबसे बड़े १६-१७ वर्षके थे। हमलोग घरके भीतर ही खेला करते। हमारे घरके पिछले भागमें थोड़ी-सी जमीन पड़ी थी। उसकी चहारदिवारी कुछ नीची थी। उस जमीनमें प्रायः कुछ साग-भाजी बो दी जाती थी। उन दिनों उसमें बंडा (अरवीकी एक जाति) बोया हुआ था। उसके पत्ते बहुत बड़े-बड़े थे। इतने बड़े कि एक पत्तेके नीचे एक आदमी आसानीसे अपनेको छिपा सकता था।

एक दिनकी बात है कि पिताजी घरपर नहीं थे। रातमें ४-५ चोर चहारदिवारी फाँदकर पिछवाड़े आ गये। संयोगसे उसी समय हमारी मा हाथमें जलती हुई ढेबरी लिये हुए उधर ही लघुशंकाको गयीं। माको देखते ही चोर पत्तोंमें छिपने लगे। कई पत्तोंके हिलने और शब्दसे माको कुछ संदेह हुआ। वे उल्टे पैरों लौट आयीं और हमलोगोंको जगाया। हम सभी जगे तो, पर करते क्या। बच्चे बच्चे थे। चोरोंका नाम सुनते ही उल्टा डर मालूम होने लगा। इतना साहस कहाँ कि डंडा लेकर जायँ और चोरोंका सामना करें। यद्यपि अब यह बात समझमें आयी कि यदि उस समय सभी भाई हाथमें कुछ लेकर उधर जाते और हल्ला करते तो चोर अवश्य भाग जाते, क्योंकि चोरका जी कितना, परन्तु उस समय डरनेके अतिरिक्त कुछ न सूझा। हमलोगोंको यही संदेह हुआ कि पिताजीको घरमें न जानकर पड़ोसीने ही तंग करनेके लिये आदमी भेजे हैं, हो सकता है यह बात न रही हो, पर हमें यही जान पड़ा।

माने जब हमलोगोंको इस तरह डरते देखा तो उन्होंने कहा, डरो नहीं। उन्हें एक उपाय सूझा। वे बाहर गयीं। द्वार खोलकर देखा तो 'भूरी' बैठी पागुर कर रही थी। उन्होंने उसे आवाज दी, वह भीतर चली आयी। मा घरके सब द्वार खोलती हुई और उसे पुकारती हुई पिछवाड़े ले गयीं। हमलोग भी पीछे-पीछे थे। माने खेतकी ओर इशारा करके कहा—'भूरी !' मा कुछ आगे बढ़ीं, भूरी भी बढ़ी। अब फिर कई पत्ते जोरसे हिलने लगे। 'भूरी' सब कुछ ताड़ गयी। वह खेतमें पिल पड़ी। जिसको पाया उसीकी पूजा की सींग और लातसे। वे लोग इधर-उधर भागने लगे!



'भूरी' दौड़-दौड़कर सबको मार रही थी। वे लोग अब छिपे न रह सके। 'भूरी' ढूँढ़-ढूँढ़कर मार रही थी। जिसके एक लात लगती वही 'अरे बाप, अरे माई' चिल्लाने लगता। वे सब रो-रोकर कहने लगे—'माता! गैयाको बुला लो, हमें अपनी करनीका फल मिल गया। अब हम कभी इस घरमें न घुसेंगे।' जब उन लोगोंने बहुत रोया-गिड़गिड़ाया तो मा

भी तो आखिर मा थी, उन्हें दया आ गयी। उन्होंने 'भूरी'को पुकारा! 'भूरी' मैया पीछे हटकर हमलोगोंके पास आ गयी, किन्तु क्रोधके कारण फिर भी उसके नथुने बोल रहे थे। उस समय वह चण्डी बनी हुई थी। बार-बार सींग उछाल-उछालकर संकेत करती थी कि आप रोकिये मत, इन दुष्टोंको मारने दीजिये।

माने चोरोंसे कहा, 'तुमलोग जैसे आये हो, वैसे ही जल्दीसे चले जाओ और फिर कभी यहाँ न आना।' वे धरती छू-छूकर प्रणाम करने लगे और चहारदिवारी फाँदकर भाग गये।

हमलोगोंने बहुत देरतक 'भूरी'के बदनपर हाथ फेरा। उसकी ललरी सुहलायी, तब वह कहीं शान्त हुई। थोड़ी देर बाद वह फिर बाहर चली गयी और हमलोग 'भूरी' माताके गुण गाते-गाते सो गये!

गोमाताका मानव-जातिको दान

[एक संवाद]

(लेखक—डा० सी. सी. शाह, एम्. एस्-सी., पी-एच्. डी., ए. आर. आई. सी.)

एक शरीरतत्त्व-विशारद ऋषिने भोजनकी आवश्यकताओं-का ध्यान करते हुए यह देखा कि समुचित पोषणके लिये किञ्चित् जान्तव प्रोटीनका होना जरूरी है। उन्होंने यह चाहा कि बिना किसी जीवकी हिंसा किये यह चीज मिल जाय। गोमाताने बड़ी प्रसन्नतासे इसमें सहयोग-दान किया।

ऋषि—माता! इस शरीरकी जीवन-रक्षाके लिये थोड़ा-सा जान्तव प्रोटीन चाहिये। बिना किसी जन्तुको मारे यह कैसे मिले? अहिंसा-धर्मका पालन करना है, इसलिये मैं किसीको मार तो नहीं सकता; भले ही यह शरीर नष्ट हो जाय, यदि जान्तव प्रोटीनके बिना यह न रह सकता हो।

गोमाता—निराश मत हो। मैं अपने बच्चोंके लिये जो दूध निर्माण करती हूँ, उसमें प्रोटीन रक्खा है। इस दूधमेंसे थोड़ा-सा तुम ले लो तो तुम्हारे जीनेके लिये जितना प्रोटीन जरूरी है, मिल जायगा।

ऋषि—माता! मैं तुम्हारा बहुत ऋणी हूँ। मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि इस कृपाके लिये मैं तुम्हारी और तुम्हारे बच्चोंकी रक्षा करूँगा। मैं तुम्हारे बच्चोंको भूखों न मरने दूँगा। मैं तुम्हारे पुत्रोंको परिश्रमसे कमा खानेके लिये काम दूँगा।

गोमाता—मैं तुम्हें खूब दूध दूँगी, तुम और तुम्हारे बच्चे जितना चाहो, पीयो। जो दूध बच जाय, उसका दही जमा लो।

ऋषि—माता! तुम धन्य हो। मैं अपने सब मन्दिरोंमें तुम्हारे पुत्रकी प्रतिमा रखाऊँगा।

गोमाता—अँतड़ियोंकी बीमारीमें मेरे दूधका दही बहुत उपकार करेगा। इसे मथनेसे मक्खन और घी निकलेगा, जिनसे आरोग्यकी रक्षा होगी और शरीरका पोषण होगा।

ऋषि—माता! तुम कितनी दयालु हो! कितनी उदार हो! मैं तुम्हारी पूजा करूँगा।

गोमाता—दही मथनेके बाद जो मट्ठा बचता है, उसमें भी प्रोटीन और दुग्धशर्करा तथा स्वास्थ्यसाधक क्षार, कैल्शियम और फास्फेट बचे रहते हैं। अपने सब बच्चोंको मट्ठा पिलाओ।

ऋषि—माता! तुम्हारे बड़े उपकार हैं। मैं तुम्हारे लिये पिंजरापोल खोलूँगा और तुम जब बूढ़ी और लाचार हो जाओगी, तब भी तुम्हें वहाँ रखकर खिलाऊँगा।

गोमाता—तुम्हें एक गुप्त बात बता दूँ? मेरे दूधसे विटामिन भी निकलते हैं। पर विटामिनोंको निकाल मत लो, बल्कि दूध ही अधिकाधिक पीते चलो। दूध पूर्ण आहार है।

ऋषि—माता! विटामिन तो बहुत प्रकारके होते हैं। दूधमें कितने प्रकारके हैं?

गोमाता—दूधमें कैरोटीन रहता है; उससे तुम्हारे शरीर-को विटामिन ए, विटामिन बी/१, विटामिन बी/६, विटामिन सी, विटामिन डी, रिबोफ्लेविन, निकोटिनिक एसिड, पैंटोथेनिक एसिड, बायोटिन और इनोसिटोल मिलेंगे।

ऋषि—माता! माता! तुम्हारी दया अपार है। मैं प्रति-दिन तुम्हारी पूजा करूँगा।

गोमाता—यदि तुम मेरे दूधके साथ-साथ गेहूँ, चावल आदि अन्न खाओगे तो इन अन्नोंके प्रोटीन लघुपाक हो जायँगे। यह मेरा तुम्हें वरदान है।

ऋषि—माता ! मैं तुम्हारे दूध और घीको तो पवित्र समझता ही हूँ, अब तुम्हारे मल-मूत्रको भी पवित्र समझूँगा ।

गोमाता—मल-मूत्र तुम्हारे खेतोंके कीमती खाद बनेंगे ।

ऋषि—माता ! तुम्हारे उपकारोंके बोझसे मैं दबा जा रहा हूँ । अब तुम यहीं रहो ।

गोमाता—मल-मूत्रमें ठीक तरहसे साग-पात मिलानेसे तुम्हारे खेतोंके लिये उसकी बहुत अच्छी खाद बनेगी ।

ऋषि—माता ! मैं अपने खेतोंमेंसे कुछ अच्छे खेत तुम्हारे ही चरनेके लिये रख छोड़ूँगा, वे तुम्हारे गोचर ही रहेंगे ।

गोमाता—मेरी देह छूटनेके बाद तुम मेरा चमड़ा कमा सकोगे और मेरी हड्डियोंसे तरह-तरहकी चीजें बना सकोगे । मेरी हड्डियोंका चूरा भी खेतोंमें छिटकनेसे खेत उपजाऊ बन सकते हैं ।

ऋषि—माता ! माता ! मुझे बचाओ ! मैं यह काम तो नहीं कर सकता ।

गोमाता—ऋषि ! आखिरी बात सुनो । मेरा मांस भी बहुत स्वादिष्ट है, तुमलोगोंमेंसे बहुतेरे उसे खानेकी इच्छा कर सकते हैं । मेरा मांस बहुत पोषक भी है । पर ऋषि ! क्या तुम उसके लिये मेरी हत्या होने दोगे ? (गोमाताके नेत्रोंसे अश्रु गिरने लगते हैं ।)

ऋषि (सिसकते हुए उत्तर देते हैं)—माता ! माता ! मैं अपने प्राण देकर भी तुम्हारी रक्षा करूँगा, केवल नाम-मात्रकी तुम्हारी पूजा नहीं ।

गौ और उसकी रक्षाके उपाय

(लेखक—प्रो० सत्येन्द्रनाथ सेन, एम्० ए०)

यह कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं कि पशुओंमें सबसे उपयोगी गौ है । इसमें किसीका भी मतभेद नहीं, बल्कि गौकी उपयोगिताके विषयमें कुछ कहना सूर्यको दीपक दिखाना ही समझा जायगा । गौका दूध केवल हिंदूसमाजके खान-पानमें ही नहीं, बल्कि अन्य समाजोंके भी खान-पानमें एक अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है । चरकने अपनी संहितामें कहा है कि खान-पानके जीवनीय अर्थात् जीवन बढ़ानेवाले पदार्थोंमें सबसे श्रेष्ठ दूध है—

प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम् ।

कठिन और विशेषतः श्लेष्मायुक्त ज्वरकी हालतको छोड़ प्रायः अन्य सब बीमारियोंमें गौका दूध गुण करता है । अधिकांश बीमारियाँ कोष्ठबद्धतासे होती हैं । पर्याप्त मात्रामें दूधका सेवन करनेसे कोष्ठबद्धता नहीं रहती और शरीर नीरोग हो जाता है । मांस भी पोषक है, पर उसमें अनेक दोष हैं, उससे कोष्ठबद्ध होता और अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं । पर दूधमें ऐसे गुण हैं जो रोगोंको पास आने ही नहीं देते । यही एक ऐसी चीज है जो हमें अपने आरोग्यके लिये जो-जो कुछ आवश्यक है सब दे देती है ।

आर्थिक दृष्टिसे भी गौसे अनेक लाभ हैं । गोबर बहुत कीमती खाद, निर्दोष ईंधन और रोगसंक्रमणका सर्वोत्तम प्रतिरोधक है । गोमूत्र महौषध है, ऐहिक और पारमार्थिक दोनों । गायके चमड़ेने कितनोंको मालामाल कर दिया है और उसकी हड्डियोंसे भी व्यापारी बहुत पैसा कमाते हैं । तात्पर्य, गौ समृद्धिका उद्गमस्थान है । महाभारतमें इसके अनेकानेक गुणोंका कई अध्यायोंमें वर्णन किया गया है ।

दूधसे बननेवाली मिठाइयाँ असंख्य हैं । वे सब दिव्य खाद्य हैं । शास्त्रविहित कर्मोंमें घृतका होना तो अनिवार्य ही है । इसके असंख्य गुणोंका कोई कहाँतक बखान करे ? किसीने ठीक ही कहा है—

जिये कौन जब मरती गाय ?
मरे कौन जब जीती गाय ?

कृषि और रथवाहनादि कार्योंमें बैलका भी बड़ा काम है ।

उत्पाद्य शस्यानि तृणं चरन्ति
तदेव भूयः पुनरुद्वहन्ति ।
न भारखिन्नाः प्रवदन्ति किञ्चि-
दसौ वृषैर्जीवति जीवलोकः ॥

'बैल अन्न उत्पन्न करते और तृण खाकर रहते हैं, फिर उस अन्नको ढोते हैं, उस भारसे कभी खिन्न होकर कोई बात नहीं कहते, यह सारा जीवलोक बैलोंके ही बलपर जीता है ।'

गौ अहिंसाकी मूर्ति है, और सबका एक-सा उपकार

करती है। तब भी लोग उसका नाना कारणोंसे वध करते-कराते हैं। इस 'गोहत्या'के बंद करनेका क्या उपाय है, इसपर हम यहाँ कुछ विचार करेंगे।

(क) अहिंदू सैनिकोंको मांस खिलानेके लिये गौओंकी अबाध हत्या की जाती है। इतनी गौएँ मारी जाती हैं कि सोचनेसे हृदय काँप जाता है। जबतक गोमांस खानेवाले लोग हैं तबतक इस हत्याका सर्वथा रुकना तो बहुत कठिन है। यदि विदेशोंसे ही गोमांस मँगाया जाया करे, तो भी क्या लाभ हुआ? गौ तो गौ ही है चाहे वह दुनियामें कहीं भी हो। सबकी वही एक गो-जाति है जिसे हिंदू पूजते हैं। यूरोपमें भी यदि कोई कसाई उसे मार-मारकर क्रूरताके साथ कसाईखानेमें ले जाय तो वह दृश्य भी उतना ही करुण और हृदयद्रावक होगा जितना कि वह हिंदुस्थानमें है। उसकी आह आस्ट्रेलियामें भी उतनी ही हृदयविदारक है जितनी कि भारतवर्षमें। यह सब अपने पापोंका ही फल जानकर हमें सहना होगा, हमारे उन पापोंके कारण ही इन पापी दिनोंमें हमारा यहाँ जन्म हुआ! जो हो, यह अनाचार गौकी वयस्—अवस्था आदिपर कुछ रोक लगाकर बहुत कुछ घटाया जा सकता है। हिंदुस्थानके कई स्थानोंमें तथा अन्यत्र भी ऐसे प्रयत्न हो रहे हैं। यही काम जोरोंके साथ बढ़ाना होगा, इसके लिये महान् आन्दोलन करना होगा।

(ख) मुसल्मानोंके धार्मिक तथा अन्य त्योहारोंपर, विशेषतः ईदपर गौकी कुर्बानी होती है। धार्मिक अनुष्ठानोंमें भी कुरानकी आज्ञासे गौकी कुर्बानी कोई फर्ज (कर्त्तव्य) नहीं है। कुछ मुसल्मान बादशाहोंने अपने समयमें गो-हत्या या तो बंद कर दी थी या उसपर कुछ रोक ही लगा दी थी। अभी उस दिनकी बात है कि अफगानिस्थानके अमीर हबीबुल्लाखाँने हिंदुस्थान आनेपर अपने स्वागतार्थ गोहत्या न करनेके लिये मुसल्मानोंसे आग्रहपूर्वक कहा और मुसल्मानोंने उनकी बात मानकर उनका आदर किया। बीस-तीस वर्ष पहलेतक बंगालमें गौकी कुर्बानीका कहीं कोई नाम भी न सुनायी देता था। इधर कुछ वर्षोंसे ही सुनायी देने लगा है जबसे हिंदू-मुसल्मानोंमें कुछ तनातनी-सी बनी रहती है। इस तनातनीका भेद किसीसे छिपा नहीं है। परन्तु इस्लाममें ऐसे निर्दोष, पवित्र और परम उपकारी जीवको बलि चढ़ानेकी कोई आज्ञा नहीं है, इसलिये यह आशा होती है कि यदि हमलोग दिल खोलकर अपने मुसल्मान भाइयोंसे मिलें और अखिल जगदाधार श्रीगोविन्दको पुकारें तो कहने-सुननेसे कुछ उपाय बन सकता है।

बंगालमें हमलोगोंका यह सामान्य अनुभव है कि देहातोंके मुसल्मान प्रायः भलेमानस होते हैं। मौलवियोंको बहुत मानते हैं, वे ही उनके नेता हैं। खुराफात करनेवाले नेता ही होते हैं। इसके लिये हमें यह कहना होगा कि जहाँ जो उदारचेता और प्रभावशाली मुसल्मान हैं (जैसे मुर्शिदाबादके नवाब बहादुर, मैमनसिंगके सर अब्दुल हलीम गजनवी आदि) उनसे मिलना होगा और सब बातें सप्रमाण उन्हें समझानी होंगी। उनकी समझमें आ गयीं तो वे मदद कर सकते हैं। उन्हींका यह काम होगा कि अपने-अपने इलाकेके मुसल्मानोंको संयत रक्खें। बंगालके मुसल्मानोंमें इस उपायका कारगर होना असंभव नहीं मालूम होता। कुछ ऐसे लोगोंकी कमेटी बने जो अपनी सचाई और सदाचारके लिये सर्वमान्य हों, और एक फंड जमा किया जाय और प्रचारकार्य आरम्भ हो।

(ग) अन्य प्रान्तोंमें भी ऐसे ही प्रयत्न हों। आजकल कलकत्ता, लाहौर-जैसे बड़े शहरोंमें गौ रखना बहुत ही कठिन काम हो गया है। गौएँ दूध देना, कुछ समयके लिये ही सही, जब बंद कर देती हैं तब उनमेंसे अधिकांश कसाइयोंके हाथोंमें पड़ती हैं। इसके लिये जगह-जगह पिंजरापोलोंका होना जरूरी है। ये पिंजरापोल ऐसी गौओंको रक्खें, इसके लिये उचित खर्च ले लें और गौ बियानेपर जिसकी हो उसे लौटा दिया करें। यदि ये गौएँ इस तरह बचा ली जायँगी तो कसाईखानोंके लिये बूढ़ी और ठाठ गौएँ ही रह जायँगी। इन्हें बचानेके लिये तो पिंजरापोल हैं ही। इस उपायसे गौओंकी हत्या बहुत कम हो जायगी।

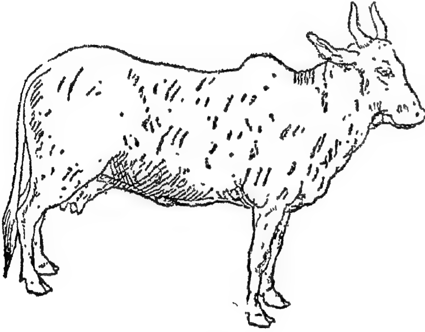
गोरक्षाके सम्बन्धमें और भी कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपाय ये हैं—

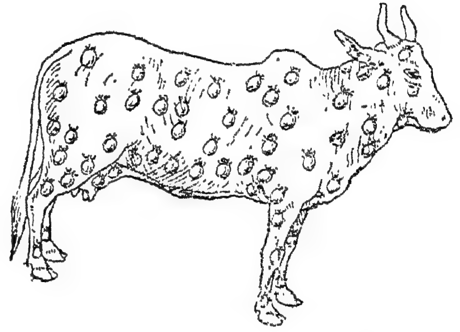
१. कानूनकी मदद लेकर सर्वत्र गोचरभूमि छुड़वाना।
२. गौ-चिकित्साकी अपने देशकी पद्धतिको फिरसे चलाना; पाश्चात्त्य पद्धतिसे अपनी पद्धति अधिक उपयोगी है, पाश्चात्त्य पद्धतिमें केवल आडम्बर है।

किलनीका उपद्रव

हमारे अधीन रहनेवाले गाय-बैल-जैसे मूक पशुओंके प्रति अँठई (किलनी), लीख, जूँ, मक्खी, मच्छड़, चींचड़, डाँस-जैसे जन्तुओंका जो उपद्रव होता है, वह कँपा देनेवाला और बड़ा ही त्रासदायक है। ये पशुओंका लहू चूसनेके उपरान्त भारी दाह और पीड़ा पैदा करते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि बहुत बार तो नाना प्रकारके घातक रोगोंको फैलानेमें भी ये निमित्त और वाहनरूप बनते हैं।

खूबी तो यह है कि हमारे पशुओंको ये दुःख ऐसे अभ्यस्त हो गये हैं कि कितने रोग तो अब उनको होते ही नहीं, पश्चिमके पशुको तो एकाध अँठईने काटा कि उसे अँठई-ज्वर (टिक फिवर) चढ़ जाता है और वे मर जाते हैं। पर हमारे यहाँ तो पशुओंके बदनपर हजारों अँठई चुलबुलाती रहती हैं, तथापि उनसे मृत्युकी बात सुननेमें नहीं आती। इसका कारण यह है कि इस जहरसे पशुओंकी अनेक पीढ़ियाँ मरते-मरते अन्तमें धीरे-धीरे यह जहर कोठे पच गया है। अतएव इस विषसे मानो निर्मुक्ति (Immunity) मिल गयी है। तथापि इसके द्वारा मृत्युसे कुछ कम, पर भयानक पीड़ा तो पशुको होती ही है—इस बातको तो भूलना नहीं चाहिये।





प्रयोगोंद्वारा पशु-वैज्ञानिकोंको ज्ञात हुआ है कि गायके ऊपर अँठई आदि न हो, तो पूरा दूध मिलता है। थोड़ी अँठई हो तो १६.४ प्रतिशत दूध कम हो जाता है। परन्तु यदि अँठई आदिका उपद्रव अधिक हो तो ३२.८ प्रतिशत यानी लगभग तीसरा भाग दूध खोना पड़ता है। यह हानि क्या अत्यन्त निर्दय और दुःखद नहीं है ? तथापि यह निर्दय और लज्जाजनक दृश्य हिंदुस्थानमें घर-घर प्रतिवर्ष और प्रतिदिन आँखोंके सामने होता रहता है।

दयाकी विडम्बना तो यह है कि हमारे जीवदयाके धामरूपी कितने ही बिना सँभालके पिंजरापोलोंमें तो जन्तुओंका उपद्रव और भी अधिक देखनेमें आता है। इसे देखनेवालोंको कदाचित् यह शङ्का हो कि यह संस्था उन पशुओंके लिये है या इन जन्तुओंके लिये ? इस स्थितिमें शीघ्र सुधार होना चाहिये। (डा० जा०)

पहेली

भोली-भाली प्यारी-प्यारी। सुमधुर पयदायी सुखकारी।
सुतन देखि नित लेत बलैया। क्या सुत, मैया? नहिं मा गैया॥

—रामाधार पाण्डेय

पशुओंका आहार

(लेखक—श्री एम० कृष्ण शास्त्री बी० ए०, आई० डी० डी०, एसोशि० आई० डी० आर० आई०)

संक्षिप्त विवरण

खाद्यविचार—खाद्योंके घटक द्रव्य—खाद्योंका पशुओंद्वारा उपयोग—खूराक नियत करनेका प्रकार—घास-भूसा और खली-दाना खिलानेके सम्बन्धमें कुछ उपयोगी सूचनाएँ।

प्राणिमात्रके जीवन-चक्रको गति देनेवाली सबसे बड़ी प्रेरणाशक्ति उसकी अपनी खाद्य खानेकी सहज प्रवृत्ति है। कोई भी पशु जो बल अर्जन करता या जो कुछ उत्पादन करता है वह सब उसी घास-चारे और दाना-पानीसे पैदा होता है जिसे वह खाकर हजम करता है। वह स्वयं कुछ भी निर्माण नहीं करता, बल्कि वनस्पतियाँ और पौधे, भूमि और वायुके उपादानोंसे जो कार्बनयुक्त पदार्थ उत्पन्न करते हैं, उन्हींको ग्रहणकर उन्हें उनके श्रेष्ठतर रूपोंमें बदल देता है। भापसे चलनेवाले उस इंजनकी उपमा उसे दी जा सकती है जो अपनी सारी शक्ति अपने अंदरकी भट्ठीमें जलनेवाले कोयलेसे पाता है। बिना ईंधनके जैसे इंजन चल नहीं सकता, वैसे ही पशु भी बिना खाये कुछ काम नहीं कर सकता।

इधर कुछ वर्षोंमें पालित पशुओंको खिलाने और पोसनेके विषयमें शास्त्रज्ञानकी बहुत वृद्धि हुई है। पशु-पालनमें खर्चका प्रधान विषय पशुओंका आहार है। आहार-सम्बन्धी व्यय तीन तरहसे परिमित किया जा सकता है—

१. पशुओंको वही आहार देना चाहिये जिससे उनका स्वास्थ्य बना रहे, वे हिसाबसे बढ़ें और उत्पादन करें।

२. आहार उतना ही देना चाहिये कि जिससे कम-से-कम खर्चमें उनसे अधिक-से-अधिक लाभ उठाया जा सके।

३. खर्च कम करना चाहिये, ऐसा ही आहार उन्हें देना चाहिये जो पोषक हो, पर पोषक पदार्थोंमें जिसका मूल्य अन्य पदार्थोंसे कम हो।

पशुओंको खिलानेका सही तरीका वही हो सकता है जो पश्वाहार-शास्त्रसम्मत हो और पशुविशेषकी खूराकसम्बन्धी आवश्यकताको ठीक-ठीक जानकर नियत किया गया हो।

पश्वाहारके घटक-द्रव्योंके छः मुख्य भाग हैं—(१) पानी, (२) प्रोटीन, (३) कार्बोहाइड्रेट्, (४) स्नेहपदार्थ (चर्बी), (५) खनिज द्रव्य और (६) विटामिन। सब

आहार्य पदार्थोंमें जल, आरगनिक और खनिज द्रव्य होते हैं। आरगनिक द्रव्योंके घटक हैं—प्रोटीन, स्नेहपदार्थ (चर्बी), कच्चे तन्तु और घुलनेवाले कार्बोहाइड्रेट्। पशुओंके पोषणमें इन सबका महत्त्वपूर्ण कार्यभाग होता है।

जल

सब आहार्य पदार्थोंमें जल होता है। सूखी घास और अनाजमें भी दस हिस्सोंमें एक हिस्सा जल होता है और हरी घासमें चार हिस्सोंमें तीन हिस्से। साधारणतः सभी खाद्य-पदार्थोंमें पाँच हिस्सोंमें चार हिस्से जल होता है। जो गौ अच्छा दूध देती है उसे ठाठ गौकी अपेक्षा अधिक जलकी आवश्यकता होती है। पशु-शरीरमें खून और नसोंका एक मुख्य घटक पानी ही होता है। पानी ही शरीरके अंदर घुलनेवाले उत्तम पोषक द्रव्यों और विटामिनोंका वाहक बनकर पोषक पदार्थोंको पचा लेता और निःसार भागको शरीरसे बाहर निकाल देता है। पशुओंके पीनेके लिये यथेष्ट जल और खानेके लिये रसयुक्त आहार होना चाहिये।

प्रोटीन

शरीरकी वृद्धि, नस-नाड़ियोंकी दुरुस्ती, पुट्ठोंकी उत्पत्ति, दूध, अंडे, ऊन, मांस, पाँख आदिके उगने-उपजनेके लिये प्रोटीनकी आवश्यकता होती है। प्रोटीनको रक्त और रक्त-वाहिनी नसोंका घटक कहा है। आहारमें यह बहुत ही मूल्यवान् द्रव्य है और बड़ी कठिनतासे मिलता है। बिनौले, मूँगफली, अलसीकी खली, गुँवार और अन्य तिलहनोंकी खली, चोकर, लोबिया, नाना प्रकारकी फलियाँ, रिजका और हरी घासोंमें प्रोटीनकी बहुलता होती है। दूध आदिके प्रोटीन अन्नादिके प्रोटीनोंसे अधिक गुणकारी होते हैं। यही कारण है कि मुर्गियोंको साग-सब्जीके साथ जब निर्घृत दूध पिलाया जाता है तब वे अंडे भी खूब देती हैं। पशुओंके लिये ४ से ८ हिस्से कार्बोहाइड्रेट्के साथ लगभग **एक हिस्सा** प्रोटीन आवश्यक होता है।

कार्बोहाइड्रेट्

पौधोंका अधिक भाग शर्करा, माँड़, लासा और सेल्युलोस (पौधोंके बिना गूदेके डंठलों) तथा कच्चे तन्तुओंका बना होता है। इन्हींको कार्बोहाइड्रेट् कहते हैं। इनमेंसे कुछ पानीमें

घुल जाते हैं, अन्य नहीं घुलते। जब पौधे और तृण नये होते हैं तब सेल्युलोस अधिक जल्दी पचनेवाला होता है।

घुलनेवाले कार्बोहाइड्रेट्के मुख्य अङ्ग माँड़ और चीनी हैं। इनसे पशुके शरीरमें गरमी, शक्ति और स्निग्धता पैदा होती है। प्रायः सब प्रकारके अन्न, भूसा और चारा इसी कक्षामें आते हैं। पशु छोटे-छोटे पौधोंके कच्चे तन्तु खाकर पचा लेते हैं, ज्यों-ज्यों ये तन्तु काष्ठ बनते हैं, त्यों-त्यों उनकी पचनयोग्यता कम होती जाती है।

स्नेहपदार्थ (चर्बी)

इसकी बनावट प्रायः माँड़ और चीनी-जैसी ही होती है। पर कार्बोहाइड्रेट् जातिके किसी द्रव्यकी अपेक्षा इसकी पोषण-शक्ति अधिक घनीभूत होती है और खाद्यके नाते इसका मूल्य भी अधिक होता है। चर्बीमात्र ऐसे पोषक गुण बढ़ाती है जिससे शक्ति बढ़े और शरीर या दूधमें स्निग्धता उत्पन्न हो। पचनयोग्य स्निग्धताशक्ति बढ़ानेमें पचनयोग्य प्रोटीनों और कार्बोहाइड्रेटोंकी अपेक्षा २$\frac{1}{४}$ गुना अधिक काम करती है। बिनौले या मूँगफलीकी खली, गुँवार-जैसे पदार्थ जिनमें चर्बी बहुत होती है, यदि जानवरोंको खिलाये जायँ तो उनसे अस्थायीरूपसे उनकी मक्खनरूप स्निग्धता बढ़ जायगी। पशुओंको दिये जानेवाले खली-दानेमें चर्बीका अंश सैकड़े ४ से कम न होना चाहिये।

खनिज द्रव्य

खनिज द्रव्य शरीरकी वृद्धि, हड्डियोंकी बनावट, सींग, खुर और बालोंके लिये आवश्यक होते हैं। गौ जो दूध देती है उसके साथ बहुत-से खनिज द्रव्य निकल जाते हैं और गर्भस्थ बच्चेके पोषणमें भी इनका बहुत खर्च होता है, इसलिये यह आवश्यक है कि खनिज द्रव्य यथेष्ट मात्रामें खिलाये जायँ। मामूली नमक और चूना जैसे खनिज पदार्थ खूराकके साथ देने चाहिये। पशुके अस्थि-पिञ्जरके जो खनिज भाग हैं, उनमें तीनमें दो हिस्से केल्शियम (चूनेकी मूल धातु) है। जो गौ ४००० पौंड दूध देती हो, उसके लिये वर्षमें ३० पौंड खनिज द्रव्य आहारमें आवश्यक हैं।

विटामिन

उपर्युक्त पदार्थोंके अतिरिक्त विटामिन भी ऐसे पदार्थ हैं जिनकी जीवनके लिये बहुत आवश्यकता होती है। बच्चे जब गर्भमें होते हैं तब, और जन्म होनेके बाद भी उनकी तृप्तिके लिये विटामिन आवश्यक हैं। बच्चे जब कुछ बड़े हो जाते हैं तब उनके स्वास्थ्य और शक्तिके लिये, और जब उनकी बाढ़ पूरी हो चुकती है तब उनके द्वारा ठीक तरहसे काम होनेके लिये, विटामिनोंकी आवश्यकता होती है। जो पौधे बढ़ रहे हों उनमें, और हरी-हरी घासमें विटामिनकी बहुलता होती है। पशुओंके लिये इसी कारण बड़े-बड़े चरागाहोंकी आवश्यकता है। घास और अन्य आहार्य पदार्थ बहुत कड़ी धूपमें रहनेपर विटामिन खो देते हैं। जिन पशुओंको दाना दिया जाता है, तथा जिन्हें नैसर्गिक चारा और तरह-तरहके घास-भूसा यथेष्ट-रूपसे नहीं मिलते, उन्हें विटामिनवाले पदार्थोंका दिया जाना बहुत ही आवश्यक है।

पशुओंके खाद्य पदार्थोंमें जिन अन्य गुणोंका होना आवश्यक है, वे गुण हैं——सुस्वादुता, विपुलता, सरसता और टटकापन। सूखा भूसा और चारा-जैसे खाद्योंमें पचनयोग्यता और पोषणशक्ति बहुत कम होती है। पशु न तो उन्हें अधिक खा सकते हैं, न खाकर अच्छा फल दे सकते हैं। यदि उनके साथ अन्न, खली, चोकर आदि पौष्टिक पदार्थ (Concentrates) मिलाकर दिये जायँ तो इससे उनका आहार पुष्टिकर या समृद्ध बन जाय। घास-भूसा आदि तो आहारको केवल विपुल बनानेके लिये आवश्यक होते हैं।

खाद्योंका उपयोग पशु कैसे करते हैं ?

इंजनमें कोयला-पानी देनेके समान ही पशुओंको चारा-पानी देना है। इंजनमें उत्पन्न होनेवाली शक्ति तेजके रूपसे बाहर निकल पड़ती है, अंदरके संघर्षमें भी कुछ खर्च होती है, और कुछ अनुत्पादक कामोंमें भी लगती है। इस तरह इंजनकी शक्तिका ह्रास होता है। इसी प्रकार पशुओंको जो खाद्य खिलाया जाता है, उससे उत्पन्न होनेवाली शक्तिका जो ह्रास होता है, उसका भी विचार रखना पड़ता है। खाद्यका अंशतः अपचन, पशुके शरीरको गरम रखना, चर्वण, पाचन, श्वासोच्छ्वास, अन्न-जलकी खोजमें इधर-उधर जाना-आना, शरीरकी रोज-रोजकी दुरुस्ती और रद्दोबदल, इन सब कामोंमें खाद्यसे उत्पन्न शक्तिका व्यय हो चुकनेके बाद पशुमें जो शक्ति बच रहती है वही हमलोगोंको उनसे दूध आदि पाने, या उनसे काम करानेके लिये मिलती है। खाद्यके इसी अंशको पशुकी खूराकका उत्पादक भाग कहते हैं। पाचनक्रियाके साथ खूराकका जो भाग घुलनेवाला बन जाता है, वही शरीरका पोषण करनेके काम आता है।

अच्छी-से-अच्छी मशीनकी अपेक्षा पालतू जानवर अधिक कार्यनिपुण होता है। पशु जो कुछ खाता है उसका

एक-पञ्चमांश तो बदला दे ही देता है और भापसे चलनेवाला इंजन जितनी ईंधन-शक्ति खा जाता है उसका केवल एक दशमांश ही बदलेमें देता है ।

खाद्यका उपयोग कैसे किया जाता है, इसे समझनेके लिये किसी डेयरीकी गौका उदाहरण सामने रखकर देखना चाहिये । गौ खाद्यका उपयोग तीन कामोंमें करती है— शरीरका रक्षण, दूधका उत्पादन और शरीरके वजनकी वृद्धि । किस काममें कौन जानवर अपने खाये हुए खाद्यका उपयोग करता है, यह बात उसकी आनुवंशिक क्षमता तथा उसे मिलनेवाले पोषक द्रव्योंकी मात्रापर बहुत कुछ निर्भर है । पशु जो खूराक लेता है, उसके दो भाग किये जा सकते हैं—एक शरीर-रक्षणवाला भाग, और दूसरा उत्पादन-भाग । खूराकका उत्पादन-भाग ही वह लाभ है जो पशुको पालकर प्राप्त किया जाता है ।

समुचित प्रकारके खाद्य खिलानेसे यह प्रयत्न सफल होता है । अपना शरीर बना रखनेके लिये पशु जितना खाद्य खाता है, उसे लोग साधारणतः जितना समझते हैं उससे बहुत अधिक होता है । पशुका कद, उसकी प्रकृति और जिस अवस्थामें वह रक्खा जाता है वह अवस्था, इन सबके अनुसार पशुके शरीर-रक्षणका खर्च अल्प या अधिक होता है । जिन पशुओंको शीत और आँधी-पानीका सामना करना पड़ता है और जिनका रहनेका स्थान सुखप्रद नहीं है, उनके शरीर-रक्षणके लिये अधिक खाद्यकी आवश्यकता होती है । जिन पशुओंको खानेके लिये सूखी घास और भूसा ही मिला करता है, जिनमें बहुत ही कम पोषकशक्ति होती है, उनकी चर्वण और पाचन-क्रियाओंमें शक्तिका बहुत अधिक व्यय होता है, खाद्यके पोषक द्रव्य इसीमें अधिक लग जाते हैं और इस तरह शरीर-रक्षणका खर्च, अच्छा खाद्य खिलानेसे जो खर्च पड़ता, उससे अधिक पड़ जाता है ।

दूध देनेवाली गौ शरीर-रक्षणके काममें अपनी खूराकका सैंकड़े ४०से ६५ भागतक लगा देती है । प्रत्येक गौका यह हिसाब स्थिर रहता है, अतः यदि उसे कम खूराक दी जायगी तो दूध-उत्पादनके लिये उसके पास कुछ न रह जायगा । जो गौ दुग्धव्यवसायके काम आ रही है वह अपने शरीरगत द्रव्योंसे दूध पैदा कर देगी । पर उतना ही उसका वजन घट जायगा ।

खूराकका विनियोग

डेयरीकी गौ, अर्थात् जो दुग्ध-व्यवसायके काममें लायी जा रही है, जो कुछ खाती है उससे दूध पैदा करती है, इसलिये उसे अच्छी तरह खिलाना चाहिये; जो खाद्य वह खाती है उससे उसका दूध अधिक मूल्यवान् होता है । भेड़ोंको जो कुछ खिलाया जाता है उससे ऊन पैदा होता है । और बैल जो कुछ खाता है उससे उसमें काम करनेकी ताकत आती है ।

शरीरनिर्वाह | दुग्धोत्पादन

शरीरनिर्वाह | दुग्धोत्पादन (सीमित)

शरीरनिर्वाह | दुग्धोत्पादन | वजन वृद्धि

ऊपरके परिमाण रेखाचित्रमें जैसा कि दिखलाया है, मितव्ययितायुक्त पूरी खूराकसे पशुको शरीर-रक्षण और दुग्ध-उत्पादन अथवा श्रमरूप उत्पादनके लिये यथावश्यक पोषक द्रव्य मिल जाते हैं, पर उनसे उनका वजन नहीं बढ़ता । बहुत कम खूराक देनेसे उत्पादन और आय सीमित होती है । बहुत अधिक खूराक देनेसे पशुका वजन बढ़ जाता है ।

हलमें जोते जानेवाले बैलका जो कार्य है उसके उत्पादनके लिये आवश्यक खाद्य उसी प्रकारका है । शारीरिक श्रमके द्वारा शरीरमें आक्सिजनके साथ मिले हुए पोषक द्रव्योंकी पोषक शक्ति बढ़ जाती है । ऐसे श्रम-कार्यके लिये जिस प्रकारके पोषक द्रव्य आवश्यक होते हैं वह प्रकार दुग्धोत्पादनके आवश्यक पोषक द्रव्योंके प्रकारसे बहुत भिन्न है ।

हमारे यहाँके किसानोंके लिये तो अपने पशुओंको सुधारनेका शायद यही पाठ काम देगा कि पशुओंको खूब खिलाओ । लाभदायक उत्पादनके लिये किस तरह पशुओंको खूब खिलाना चाहिये, यह सीख लेना कुछ कठिन नहीं है ।

पशुओंकी खूराक कैसे नियत की जाय ?

पशुओंके खिलानेके सम्बन्धमें सोचनेकी मुख्य बात यही है कि उनके लिये कम-से-कम खर्चमें यथावश्यक खाद्य कैसे नियत किये जायँ । भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें भिन्न-भिन्न प्रकार-के पशुओंकी आवश्यकताओंके अनुसार खूराक नियत करनेके कुछ मान सुनिश्चित हैं । खाद्यका मान वह नकशा है जो यह बतलाता है कि किस वजनके, कितना दूध देनेवाले, किस

पशुको नित्य कितना प्रोटीन और कुल कितने पचनयोग्य पोषक द्रव्य मिलने चाहिये। पचनयोग्य प्रोटीन और पचनयोग्य कार्बोहाइड्रेट्-जैसे पदार्थके बीच जो परस्पर-प्रमाण होता है उसीको पोषक प्रमाण कहते हैं।

जिस बँधी हुई खूराकसे इतने पोषक-द्रव्य अपने उचित प्रमाणके साथ पशुको मिल जाते हैं, जितनेसे उसकी आवश्यकताकी पूर्ति हो, उसे समतोल खूराक या राशन कहते हैं।

खाद्य खिलानेके सम्बन्धमें सामान्य सूचनाएँ

वे सब सूखे पदार्थ (भूसा-चारा आदि) खिलाने चाहिये जिन्हें पशु बिना कुछ छोड़े खा जायँ। इस खाद्यमें कुछ अंश फली, सेम, दूब, लोबिया आदिका भी होना चाहिये। शरीरके प्रत्येक सौ पौंड वजनके पीछे १॥ से २ पौंडतक सूखी घास खिलानी चाहिये।

दूध देनेवाली गौको दो या तीन पौंड दूधके पीछे एक पौंड खली या दाना, चोकर या चूरी खिलाना चाहिये।

पशुओंको खिलाये जानेवाले खाद्योंके सामान्यतः दो विभाग किये जाते हैं—घास-भूसा (Roughages) और खली-दाना (Concentrates)। घास-भूसेमे तन्तु-भाग और शुष्क द्रव्य अधिक होता है। चरी, खर, भूसा, जोला, कडबी, रागी घास, काटा, दबायी हुई हरी घास, रिजका, दूब आदि पहले प्रकारमें शामिल हैं। खली-दानेमें तन्तुभाग बहुत कम होता है। पौधोंके बीज और इन बीजोंको पीसने या इनसे तेल निकालनेके बाद जो कुछ बच रहता है वह इसमें शामिल है। खली, मूँगफली, अलसी, बिनौले, गुँवार आदि तथा गेहूँका चोकर, चावल और चनेकी भूसी आदि इस दूसरे प्रकारमें आते हैं।

चारा—उपजाऊ भूमिपर उगी हुई घास ही पशुओंका नैसर्गिक खाद्य है। हरी घासमें जो विटामिन होता है वह अन्य किसी भी खाद्यके विटामिनसे श्रेष्ठ होता है। हिंदुस्थानमें और अन्य देशोंमें भी जब गौओंको अच्छी और यथेष्ट हरी घास खानेको मिलती है, तब वे दूध भी बहुत देती हैं। सालमें कुछ महीने ही घास अच्छी और बहुत होती है, पीछे इसकी पोषण-शक्ति घटती जाती है।

चारेमें खर्च अधिक नहीं लगता, पर इसमें खनिज द्रव्य और कैरोटिन (गाजर आदिके पौधोंमें रहनेवाला लाल रवादार पदार्थ) बहुत होता है।

घासकी फसलें—ये हरी घासकी वे फसलें हैं जो बोयी और काटकर पशुओंको खिलायी जाती हैं, इनमें पशुओंको चराया नहीं जाता। सदा उगनेवाली घासें इस श्रेणीमें आती हैं। घासकी फसल लगानेकी यह पद्धति डेन्मार्कमें प्रचलित है। वहाँ गौएँ चरते समय छोड़ नहीं दी जातीं बल्कि पगहेसे बराबर बँधी रहती हैं। घासकी फसलकी इस पद्धतिसे चरागाहोंमें होनेवाली घासकी अपेक्षा तिगुनीसे पचगुनीतक अधिक घास होती है। इस पद्धतिसे होनेवाले लाभ ये हैं—(१) जमीनकी बचत होती है, (२) पशु अधिक अच्छी हालतमें रक्खे जाते हैं, और (३) खाद और घेरा डालनेकी आवश्यकता नहीं होती। पर यह काम बड़े खर्चका है और सँभाल भी बहुत रखनी पड़ती है।

दाब-घास (Silage)—यह वह घास है जो नमीकी हालतमें इस तरह दबाकर रक्खी जाती है कि उसमें हवाका प्रवेश न हो। इस अवस्थामें 'कार्बोहाइड्रेट्' द्रव्योंमे जो खमीर उठता है उससे कई प्रकारके अम्ल पैदा होते हैं और उनके कारण, यह दाब-घास जिस असली घासका परिवर्त्तित रूप है; बहुत कुछ स्वाद, बनावट और गुणमें उसीके अनुरूप होती है। इधर कुछ वर्षोंसे हिंदुस्थानमें दाब-घासकी कदर होने लगी है, क्योंकि अनुसन्धानसे यह पता लगा है—इसमें कैरोटीनका अंश बहुत होता है। अब ऐसे भी उपाय निकाले गये हैं जिनसे चरी, काटा-कोयर भी इसी तरह दबाकर रक्खे जा सकते हैं और वे दाब-घास-जैसे ही अच्छे खाद्य बन सकते हैं। गड्ढा खोदकर उसमें घासको दबा रखनेका तरीका सुविधाजनक और थोड़े खर्चका काम है, चाहे यह घास थोड़े समयके लिये रक्खी जाय या बहुत समयके लिये। पशुओंके जीवन-सुधारके लिये यह आवश्यक है—हमारे यहाँके किसान इस पद्धतिको अधिक अच्छी तरहसे समझें और काममें लावें।

एक फुट लंबे और ऊपर ८ फीट तथा नीचे ७ फीट चौड़े और ८ फीट गहरे गड्ढेमें एक टन हरी घास रह सकती है और उसकी ६में ५ हिस्से दाब-घास बन सकती है। एक साधारण किसानके लिये, जिसके ४—६ गाय-बैल हों, जितनी दाब-घासका होना गरमीके मौसिममें अपने पशुओंके खिलानेके लिये जरूरी है, उतनी १० फीट लंबे गड्ढेमें अट सकती है।

चरी-घास—पशुओंके लिये चरी-घासका होना बहुत जरूरी है। अच्छी चरी वही है जो जल्दी काटी जाय और जिसका हरा रंग बना रहे। जो चरी ऐसी उपजाऊ भूमिमें उगी हो, जिसमें चूना और फासफरस पर्याप्त

मात्रामें हों और जो बहारपर आते ही या उससे भी पहले ही काटकर सावधानीसे रक्खी जाय, वह बहुत ही श्रेष्ठ खाद्य है । दालोंके पौधोंकी चरीमें प्रोटीन और कैल्शियम बहुत होता है और सूखनेपर इनकी पत्तियाँ झड़ने लगती हैं। दालकी फसलें बारी-बारीसे बोयी जायँ अथवा चारेके साथ ही उगायी जायँ तो उससे नाइट्रोजन मिल जाता है; अच्छे हरे चारेके लिये तथा जमीनको भी अधिक उपजाऊ बनानेके लिये चना, लोबिया आदि उगाना भी किसानके लिये अनिवार्य रूपसे आवश्यक है।

घास-भूसेके सामान्य गुण और उन्हें खिलानेकी आवश्यकताका दिग्दर्शन ऊपर किया जा चुका । अब दाने और उनसे उत्पन्न होनेवाले अन्य पदार्थोंका विचार किया जा सकता है। दानोंमें प्रोटीन, तन्तु और खनिज द्रव्योंका भाग घास-भूसेकी अपेक्षा कम होता है और कार्बोहाइड्रेट्का भाग अधिक होता है। दालोंके बीजोंमें मक्का, ज्वार, गेहूँ, चावल आदिके दानोंकी अपेक्षा पौष्टिकगुण अधिक घनीभूत होता है; खली, जो तेल निकाल लेनेपर रह जाती है, अधिक पौष्टिक होती है। मध्यम प्रोटीनकी श्रेणीके सब खाद्य वे ही हैं जो गेहूँ आदिके पीसनेपर निकल आते हैं। जैसे चोकर, भूसी आदि। ये कद बढ़ाते और खनिज द्रव्य देते हैं। सब प्रकारकी दालें घनीभूत खाद्य हैं, उन्हें माँड़वाले खाद्योंके साथ उचित मात्रामें मिलाकर ही देना चाहिये। पालतू पशुओंकी अवस्था आदि देखकर तदनुसार उन्हें घास-भूसेके साथ कम या अधिक खली या दाना देना चाहिये।

सबसे बड़ा दोष अपने यहाँ यही है कि पशुओंको आवश्यकतासे बहुत कम खिलाया जाता है। उनकी उत्पादनशक्ति बढ़ानेके लिये यह आवश्यक है कि हम उन्हें भरपेट खिलावें, यदि हम उनसे अच्छा फल चाहते हों। अच्छी जातिकी गौओंसे लाभ उठानेका और कोई तरीका नहीं है, सिवा इसके कि उन्हें खिलानेकी हम पूरी सँभाल रक्खें और स होकर उन्हें समयपर खिलावें; क्योंकि बछड़ेके ि गौका प्यार ही उसे दूध देनेके लिये प्रेरित करता यदि हमें वह प्यार प्राप्त हो तो वह हमें अधिक देना चाहेगी।

गायको खूराक हिसाबसे देनी चाहिये

गौ जो कुछ खाती है, उसमेंसे ४० से ६० भाग तो उसके शरीरनिर्वाहमें लग जाता है। शेष बचे हुए खाद्यसे वह दूध बनाकर देती है। अतएव ठीक-ठीक खानेको दिया जाता है तो शरीरनिर्वाह भी ठीक होता है और दूध भी पूरा मिलता है। आवश्यकतासे कम खूराक दी जाती है तो शरीरकी शक्ति क्षीण होती है और दूध भी कम मिलता है। अतः पूरी खूराक देनी चाहिये। परन्तु आवश्यकतासे बहुत अधिक खूराक भी नहीं देनी चाहिये । उससे गौका मोटापन बढ़ जाता है, शरीर भद्दा दीखने लगता है और किसी-किसी गौकी दुग्धोत्पादनकी शक्ति भी घट जाती है। हाँ, यह अवश्य है कि सब गौएँ अपनी खूराकका उपयोग समानरूपसे नहीं करतीं । कोई अपनी खूराकका अपेक्षाकृत अधिक भाग अपने शरीर-निर्वाहमें लगाती और अल्पभागसे दूध पैदा करती हैं, तो कोई अपेक्षाकृत अल्पभागसे अपना निर्वाह करती और अधिक दूध देती हैं। कभी-कभी एक ही जातिकी एक ही कदकी दो गौओंके बीच भी यह अन्तर देखा जाता है। बिलायतमें होलस्टीन जातिकी एक ही कदकी दो गौओंको एक-सी हालतमें रखकर देखा गया। दोनोंमें यह अ देख पड़ा कि एकने सालमें ३०० पौंड घी दिया ः दूसरीने १५० पौंड। दोनोंकी खूराकोंमें अन्तर इतना था कि ३०० पौंड घी देनेवाली गौकी खूराक १५० पौंडवालीसे सवाया थी, पर पहलीका उत्पादन दूसरीसे दूना रहा।

दूध-घीके लाभकी दृष्टिसे अथवा व्यवसायकी आर्थिक दृष्टिसे बड़े कदकी गौएँ छोटे कदकी गौओंसे अधिक लाभदायक होती हों, यह कोई जरूरी बात नहीं है। गौ जितनी बड़ी होगी उसकी खूराक भी स्वभावतः ही प्रायः उतनी ही अधिक होगी, पर अधिक खूराकका उतना ही अधिक उपयोग दूध-घीके उत्पादनमें हो, यह निश्चित नहीं है। होलस्टीन जातिकी गौ बड़े कदकी होती है, जर्सी जातिकी छोटे कदकी। दोनों जातियोंकी एक-एक दुग्धवती गौको साथ-साथ रखकर देखा गया। होलस्टीन जातिकी बड़ी गौने (जिसका वजन १२१९ पौंड था) एक वर्षमें ११,९८६ पौंड दूध, और ४०७ पौंड घी दिया और जर्सी जातिकी छोटी

गौने (जिसका वजन ९५० पौंड था) ६,०३३ पौंड दूध और ३६७ पौंड घी। इससे यह जाहिर है कि होलस्टीन गौने जो घी दिया, उसके लिये उसे प्रति पौंड जितनी खूराक दी गयी उससे कम खूराकमें जर्सी गौने उतना ही घी दिया। और होलस्टीन गौकी अपेक्षा जर्सी गौके दूधमें स्निग्धताकी मात्रा भी अधिक रही।

गायके द्वारा घास-चारेका उपयोग

निर्वाहमें | दूधमें | भद्दापन — अधिक खूराकसे चर्बी बनी

निर्वाहमें | दूधमें — हिसाब की खूराकसे केवल दूध बना।

निर्वाहमें | दूधमें — सवाई खूराकसे एक गायने ३००रतल सालाना घी दिया

निर्वाहमें | दूधमें — पूरी खूराकसे दूसरीने केवल १५०रतल दिया

निर्वाहमें | दूधमें — छोटी जरसी गाय

निर्वाहमें | दूधमें — बड़ी हाल्स्टीन गाय

} छोटीने थोड़ी खूराकमें अनुपातसे बड़ीके बराबर दूध-घी दिया।

निर्वाहमें | दूधमें — ४६९ रतल घी

निर्वाहमें | दूधमें — १६९ रतल घी

} दोनोंके अपने निर्वाहकी खूराक प्रायः बराबर थी।

जर्सी जातिकी दो गौएँ, एक ही साँड़से पैदा, प्रायः समवयस्का एक ही जगह एक साथ एक-सी हालतमें रक्खी गयीं। इनमेंसे एक गौने वर्षमें ८५२२ पौंड दूध और ४६९ पौंड घी दिया, और दूसरी गौने ३१८८ पौंड दूध और १६९ पौंड घी दिया। गौ नं० १ की खूराक आलोच्य वर्षमें कुल १८७७१ पौंड रही और गौ नं० २ की १०७९५ पौंड। पर इस खूराकका जो अंश शरीर-निर्वाहमें लगा, वह दोनोंका प्रायः समान था (गौ नं० १ की खूराकमेंसे ७२२४ पौंड और गौ नं० २ की खूराकसे ६४२५ पौंड)। अर्थात् दूधके उत्पादनमें नं० १ की खूराकका बहुत अधिक अंश लगा और नं० २ का बहुत कम। नं० १ की कुल खूराकमेंसे सैंकड़े ३५ शरीर-निर्वाहमें लगा, बाकी सैंकड़े ६५ का दूध बना, और नं० २ की कुल खूराकमेंसे सैंकड़े ५५ शरीर-निर्वाहमें लगा और बाकी सैंकड़े ४५ का ही दूध बना। अतः नं० १ की खूराक अधिक होनेपर भी वह नं० २ की अपेक्षा अधिक लाभदायक रही। दूध देनेकी जो सहज सुखप्रवृत्ति नं० १ में थी वह नं० २ में नहीं थी।

अनन्त गुणमयी गोमाता

होती दया जिसपर तुम्हारी मोक्षपद पाता वही।
अति हीन ही वह क्यों न हो ऊँचा गिना जाता वही॥
गुणगान तेरा क्या करूँ महिमा अनन्त अपार है।
माता! तुम्हींसे सर्वदा पालित सकल संसार है॥

—कृष्णकुमारी

गायके गाभिन होनेसे लेकर ब्यानेतककी मुख्य-मुख्य बातें

(लेखक—श्रीगिरीशचन्द्र चक्रवर्ती)

ऋतुमती गायके लक्षण

गर्भधारण करनेका समय उपस्थित होनेपर अधिकांश गायोंमें उच्चस्वरसे चिल्लाना, बार-बार मल-मूत्र त्याग करना, पूँछको बार-बार हिलाना, खाना-पीना छोड़ देना, दूध देना बंद कर देना, मूत्रद्वारका लाल हो जाना और उससे सफेद तरल स्राव निकलने लगना, पासमें आयी हुई किसी दूसरी गायपर चढ़नेकी चेष्टा करना, पैरोंसे मिट्टी खोदना, और पगहा (वह रस्सी जिससे गाय बाँधी जाती है) तुड़ानेकी चेष्टा करना आदि लक्षण दिखायी पड़ते हैं। यह अवस्था केवल कुछ घंटोंके लिये होती है। कुछ गायें ऐसे अवसरोंपर बार-बार पूँछ हिलाने तथा मल-मूत्र त्याग करनेके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकारकी अशान्ति नहीं दिखातीं। इसी समय गायका साँड़से संयोग कराना चाहिये। यूरोपके विशेषज्ञोंने परीक्षाद्वारा निश्चय किया है कि ऋतुमती होनेके साथ ही साँड़से संयोग करा देनेसे बछड़ी और एक या दो दिन बाद संयोग करानेसे बछड़ा पैदा होता है।

गर्भधारण करनेकी उम्र

बछड़ियोंके पालन-पोषणपर ही उनकी गर्भधारण करनेकी क्षमता निर्भर करती है। प्रचुर पुष्टिकारक आहार देनेसे १८ महीनेकी बछड़ी भी गर्भधारण कर लेती है, तथा भूखसे पीड़ित दुर्बल बछड़ी ४ वर्षतक ऋतुमती नहीं होती। साधारणतः हमारे यहाँकी बछड़ियाँ प्रायः २। वर्षकी उम्रमें गर्भधारण करती हैं। अधिकांश गायें १५-१६ वर्षकी अवस्थामें बच्चे देना बंद कर देती हैं, परन्तु यदि उनका ठीक ढंगसे पालन-पोषण होता रहे तो वे बड़ी अवस्थाके कारण दाँतोंके बिल्कुल क्षय हो जानेपर भी २५ वर्षकी उम्रतक बच्चे दे सकती हैं। इंग्लैंडकी जर्सी और गर्नसी जातिकी बछड़ियाँ २ वर्षके भीतर ही प्रसव करते देखी गयी हैं।

गर्भधारण

ऋतुमती गायको गर्भधारण करानेके लिये साँड़के साथ किसी ऐसे स्थानमें छोड़ देना चाहिये, जिसमें वे स्वेच्छा और अपनी प्रवृत्तिके अनुसार संयुक्त हो सकें। कोई-कोई गाय और विशेषकर पहले-पहल ऋतुमती होनेवाली बछड़ी साँड़के समीप जानेमें डरती है। ऐसी अवस्थामें गाय या बछियाको दो खूँटियोंके बीचमें बाँध देना चाहिये। इसपर भी यदि वह जमीनमें बैठ जाय तो उसकी दोनों बगलोंमें दो बाँस डालकर उसे खड़ा रखना चाहिये, परन्तु इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि इससे उसे किसी प्रकारकी तकलीफ न हो। जहाँ पानी हो, वहाँ तो सबसे सुविधाजनक उपाय यह है कि उसे घुटनेभर पानीमें खड़ी करके वहीं उससे साँड़का संयोग करा देना चाहिये। प्रसवके पश्चात् तीन महीने बाद उसे पुनः साँड़से संयोग कराना चाहिये। कई गायें तो प्रसवके ४ से ७ महीने बादतक गर्भवती होती हैं। प्रसवके बाद एक-डेढ़ महीनेमें ही यदि गाय ऋतुमती हो जाय तो उसका साँड़से संयोग नहीं कराना चाहिये; क्योंकि उस समयतक उसका गर्भाधार बिल्कुल शिथिल रहता है और वह गर्भधारण करनेमें असमर्थ होती है। ऐसी अवस्थामें उसे नहलाकर तथा ठंडी चीजें खिला-पिलाकर शान्त कर देना चाहिये। इस समयके बाद यदि वह किसी समय ऋतुमती हो तो उसे साँड़के पास जानेसे नहीं रोकना चाहिये; क्योंकि ऐसा करनेसे वह बाँझ हो जा सकती है या उसे मृतवत्सा रोग हो सकता है।

गर्भका लक्षण और काल

गर्भधारण करनेपर गायें कुछ उज्ज्वल हो जाती हैं और उनकी जननेन्द्रियसे एक प्रकारका पीताभ स्राव जारी हो जाता है। कुछ महीनोंके बाद गायके शरीरका भारीपन देखकर ही उसके गर्भवती होनेका अनुमान किया जा सकता है। चार-पाँच महीने बाद तो गायकी दाहिनी बगलमें अँगुलीसे दबाने या हाथकी पाँचों अँगुलियोंसे गायके पार्श्व और थनोंको स्पर्श करनेसे ही बच्चेका अस्तित्व अनुभव किया जा सकता है। कुछ गायें गर्भधारण करनेके बाद भी, तथा कुछ तो सात महीने बादतक भी ऋतुमती गायकी तरह चिल्लाती हैं और अस्थिर होकर दूसरी गायोंपर चढ़नेकी चेष्टा करती हैं। ऐसे अवसरोंपर खूब सतर्कतासे काम लेना चाहिये, क्योंकि यदि ऐसी अवस्थामें (जब कि उसे गर्भ है) उसका साँड़के साथ संयोग हो जायगा तो निश्चय ही उसका गर्भपात हो जायगा तथा वह बीमार हो जायगी। हमारे यहाँकी गायें साधारणतः गर्भधारणके दिनसे २७० से २८० दिनोंमें बियाती हैं तथा कोई-कोई २९० से २९५ दिन भी ले लेती हैं, औसत २८२ दिन माने जाते हैं। जो गायें ठीक तीसरे महीने साँड़ोंसे संयुक्त होती हैं, वे हर तेरहवें महीने बियाती हैं (गायोंके बियानके बीचका समय

जितना ही कम हो—उतना ही उससे लाभ अधिक है और उतनी ही वह अच्छी गाय समझी जाती है)।

गर्भधारणके समय कैसी खूराक देनी चाहिये

गर्भधारण करनेके पूर्वसे ही गायको स्वास्थ्यकर, पुष्टिदायक एवं उत्तम भोजन देना चाहिये; क्योंकि गायके स्वास्थ्यपर ही बच्चेकी उत्कर्षता निर्भर करती है। पर इतना अवश्य ध्यान रहे कि पुष्टिकर भोजनसे शरीरमें चर्बी बढ़ती है। अतः यदि वह अत्यधिक मात्रामें गर्भवती गायको दिया जायगा तो उसके पेटमें बहुत अधिक चर्बी बढ़ जायगी, जिसके कारण गर्भाशय सङ्कुचित हो जायगा तथा परिणामस्वरूप बच्चा छोटा उत्पन्न होगा। और इससे किसी भी समय गर्भपात होनेकी भी सम्भावना हो जाती है।

अनुलोम-विलोम-संयोगका फलाफल

प्रजननकार्य कतिपय प्राकृतिक नियमोंके आधारपर होता है। माता-पिताके गुण, स्वास्थ्य, आकृति, स्वभाव, रंग आदिके अनुरूप ही प्रायः सन्तान उत्पन्न होती है। यह नियम मनुष्य-जाति-पर जितना लागू होता है, उतना ही गो-वंशपर भी। साधारणतः बछड़ीमें पिताके, और बछड़ेमें माताके गुण-अवगुण आ जाते हैं। कभी-कभी बच्चा पिता-माताका रूप-रंग न पाकर किसी और ही रंग-रूपका हो जाता है। कई बार तो वह अपनी मातामही या उससे भी एक-दो पीढ़ी पूर्वके सम्बन्धियोंसे मिलता-जुलता होता है। वस्तुतः माता-पिताके गुण ही पुत्रमें आते हैं। जिस साँड़की माता अधिक दूध देनेवाली होती है, उससे उत्पन्न बछड़ा अच्छा होता है और गाय भी अधिक दूध देने लगती है। अतः अच्छेके साथ अच्छेका संयोग करानेसे बहुत थोड़े दिनोंमें गायोंकी विशेष उन्नति हो सकती है। पाश्चात्त्य विद्वानोंने भिन्न-भिन्न श्रेणियोंके पशुओंका संयोग करवाकर उनके फलाफलके विषयमें जो अनुसन्धान किया है, उसे पाठकोंकी जानकारीके लिये नीचे दिया जाता है—

१. निकृष्ट गाय और उत्कृष्ट साँड़—कम दूध देनेवाली निकृष्ट गायके साथ यदि उस साँड़का संयोग कराया जाय कि जिसकी माता अधिक दूध देनेवाली थी तो उसका बछड़ा भी पिताकी भाँति श्रेष्ठ होता है और उसकी मा वह गाय भी अधिक दूध देने लगती है; क्योंकि यह प्रकृतिका नियम है कि बच्चेके लिये जितना उपयुक्त आहार आवश्यक होता है, प्रकृति उसकी माताके थनोंमें उतना ही दूध पैदा कर देती है। अतः उत्कृष्ट बच्चेके उपयुक्त आहारके लिये प्रकृति स्वतः ही माताके थनोंमें अधिक दूध उत्पन्न कर देगी, और इस प्रकार गाय अधिक दूध देना प्रारम्भ कर देगी। और यदि यों लगातार निकृष्ट गायका उत्कृष्ट साँड़के साथ संयोग कराया जाता रहेगा तो वह गाय उत्कृष्ट गायमें परिणत हो जायगी। और उससे उत्पन्न होनेवाले बछड़े-बछड़ी उससे भी उत्कृष्ट, पुष्ट, तेजस्वी और विशेष उत्पादक होंगे। गो-वंशकी उन्नतिका यह एक सीधा एवं प्रधान साधन है।

२. उत्कृष्ट गाय और निकृष्ट साँड़—इस प्रकारके संयोगसे उत्पन्न बच्चा माता-पिता दोनोंसे अपकृष्ट होता है। निकृष्ट बच्चेके लिये कम आहारकी आवश्यकता होती है। अतः प्रकृति उसकी माके थनोंमें कम दूध पैदा करती है और इस प्रकार गो-वंशका ह्रास होता है। किसी बढ़िया गायका दो-तीन बार खराब साँड़से संयोग करानेके बाद फिर उसे किसी अच्छे साँड़से संयुक्त करानेपर भी उससे अच्छी सन्तान पैदा नहीं होती।

३. निकृष्ट गाय और निकृष्ट साँड़—इस प्रकारके संयोगसे हानि-ही-हानि है, लाभकी कोई आशा नहीं।

४. उत्कृष्ट गाय और उत्कृष्ट साँड़—यह संयोग सर्वश्रेष्ठ है, पर ऐसा जोड़ा मिलना कठिन है। इस प्रकारके संयोगसे बहुत थोड़े दिनोंमें अत्यन्त आश्चर्यजनक फल प्राप्त होता है। गो-वंशकी सर्वाङ्गीण और स्थायी उन्नति होती है। विशेषतः किसी संक्रामक रोगकी सम्भावना नहीं होती। ऐसे संयोगके लिये ग्वालोंको अवश्य ही अपना निजी साँड़ पालना चाहिये, जैसा कि इंग्लैंडमें अधिकांश ग्वाले करते हैं।

यह विशेष ध्यान देनेकी बात है कि पिता और कन्या; माता और पुत्र, भाई और बहनमें संयोग कराना अवैध है, चाहे वे उत्कृष्ट श्रेणीके ही पशु हों। क्योंकि ऐसा होनेसे बच्चे हीनवीर्य और दुर्बल होते हैं, और वे क्रमशः गो-वंशकी अवनति करते हैं। यही प्रकृतिका नियम है। अच्छे जलवायु और अच्छे भोजनके अनुसार भी नया बच्चा अच्छा हो सकता है। बच्चे ही गो-वंशकी उन्नतिके प्रधान हेतु हैं। अतः उनकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

गर्भवती गाय

गर्भावस्थामें गायोंकी प्रकृति बड़ी मृदु हो जाती है। अतः इस अवस्थामें बड़ी सतर्कतासे उनकी रक्षा करनी चाहिये। उनके सहजमें ही गर्भपात होनेकी सम्भावना रहती है। किसी कारणवश जोरसे उछलने, किसी दूसरे पशुसे लड़ाई करने,

जोरसे दौड़ने, किसी कारणसे साँड़से पुनः संयुक्त हो जाने, खली आदि किसी उत्तेजक पदार्थके खाने आदि कारणोंसे प्रायः गर्भपात हो जाता है। गर्भपात होनेपर बच्चेको चुपचाप गोशालासे दूर ले जाकर गाड़ देना चाहिये; क्योंकि गर्भपातकी बीमारी कभी-कभी गायोंमें संक्रामक हो जाती है। एक बार गर्भपात हो जानेपर पुनः-पुनः उसकी आशङ्का रहती है। अतः जबतक कुछ दिन बीत न जायँ, उन्हें दुबारा साँड़से संयुक्त नहीं होने देना चाहिये तथा पुनः गर्भिणी होनेपर विशेष सतर्कता रखनी चाहिये। गर्भवती गायोंको एक स्थानपर बाँधकर उत्तम पौष्टिक खाद्य खिलानेसे उनके गर्भाधारमें चर्बी बढ़ जाती है और बच्चा दुर्बल, छोटा अथवा मरा हुआ पैदा होता है। इसलिये उनसे प्रतिदिन हल्का-सा परिश्रमका काम लेना चाहिये या उन्हें कुछ व्यायाम कराना चाहिये। गर्भके समय गायोंको निरापद स्थानमें नहला-धुलाकर साफ-सुथरी रखना चाहिये।

आसन्नप्रसवा गायकी परिचर्या

जब गायके ब्यानेका समय बिल्कुल निकट आ जाता है तो उसकी स्थितिमें बहुत परिवर्तन हो जाता है। उसका पाछा भारी हो जाता है, पाकस्थली छातीकी ओर झुक जाती है तथा मूत्रस्थान और गुह्यद्वारमें अनवरत उत्तेजना दिखायी देती है। वह बार-बार मल-मूत्र त्याग करने तथा पूँछ हिलाने लगती है। प्रसवद्वार प्रशस्त होकर कुछ फूल जाता है। पीताभ स्राव, जो गाभिन होनेके समयसे प्रारम्भ हुआ था, निकलना बंद हो जाता है। गायका थन बड़ा हो जाता है तथा कभी-कभी दूधसे भर जाता है। दुग्धवाही शिराएँ मोटी और विस्तृत हो जाती हैं। ऐसे समय गायको बिल्कुल सूखे एवं ठंडसे रहित स्थानमें रखना चाहिये और उसे नहलाना नहीं चाहिये; क्योंकि सर्दी लग जानेसे विशेष क्षति होनेकी सम्भावना होती है। यदि थन खूब बड़ा हो जाय और दुग्धवाहिनी शिराएँ अत्यन्त फूल जायँ तो प्रतिदिन दोनों समय दूध निकाल देना चाहिये; अन्यथा दूधके थनमें जम जानेसे गायको पीड़ा होती है और ज्वर भी आ जाता है। इसका बुरा प्रभाव बच्चे और गाय दोनोंपर पड़ता है। बहुत-सी गायोंकी तो इसके कारण एक-दो चूँची भी नष्ट हो जाती हैं और कुछ तो मर ही जाती हैं।

प्रसवके कुछ घंटों पूर्व प्रसव-वेदनासे गायकी आँखें उज्ज्वल हो जाती हैं और वह टकटकी बाँधकर एक ओर देखने लगती है। ज्यों-ज्यों प्रसवका समय समीप आता है, वह अशान्त होकर उठना-बैठना आरम्भ कर देती है और उसके सारे शरीरमें अशान्तिके लक्षण प्रकट हो जाते हैं। ऐसी अवस्थामें गायको गोशालामें शान्त भावसे रख देना चाहिये। मैदानमें चरने देना तो प्रसवके कई दिन पूर्वसे ही बंद कर देना चाहिये; क्योंकि बीहड़ स्थानमें प्रसव हो जानेसे गाय और बच्चे दोनोंको दुर्घटनाकी आशङ्का रहती है। गोशालाके आँगनपर सूखा पुआल बिछा देना चाहिये। गायके पिछले अङ्गोंपर तथा उसके मूत्रद्वारपर नारियलका तेल ढाल देना चाहिये। इससे प्रसवमें सुविधा होती है। इसके बाद उसे बाँसकी पत्ती या कच्ची घास खानेको देनी चाहिये। चरवाहेको गायकी आँखें बचाकर बैठना चाहिये और निरन्तर उसे देखते रहना चाहिये। सामने रहनेसे गाय घास खाना छोड़ देती है।

प्रसव-क्रिया आरम्भ होते ही पहले-पहल जल बहने लगता है। उस समय गाय लेटी हुई रहती है और थोड़ी देर बाद साधारणतः बायीं करवट हो जाती है। इसी समय बच्चेके अगले दो पैर प्रसवद्वारपर दिखायी देते हैं। इस समय उसे बड़ी भयङ्कर पीड़ा होती है। कुछ मिनट बाद पैरोंके घुटनोंसे सटा हुआ बच्चेका सिर दिखायी पड़ता है और तत्काल ही बच्चेका पिछला हिस्सा भी बाहर आ जाता है। यह प्रसवकी प्राकृतिक क्रिया है। यदि बच्चेका एक पैर पहले निकल जाय या अगला और पिछला पैर पहले निकलने लगे तो उस समय तुरंत योग्य चिकित्सकसे सहायता लेनी चाहिये।

भयानक शीतकालमें जब गाय ब्याये तो उसे, और विशेषतः बच्चेको तुरंत आग जलाकर सेंकना चाहिये। उससे बच्चा बड़ी आसानीसे दृढ़ हो जाता है। प्रसव-पीड़ा आरम्भ होनेपर फिर कम हो जाय और प्रसवमें देर होने लगे तो गायकी शक्तिके अनुसार उसे २० से ८० ग्रेनतक कुनैन या दौना (द्रोण) और चित्रककी जड़ एक-एक छटाँक पानीके साथ पीसकर अथवा पावभर मट्ठेके साथ डेढ़ छटाँक झोल खिलानेसे प्रसवकार्य शीघ्र हो जाता है। प्रसव-पीड़ा यदि आठ-दस दिनतक जारी रहे, तो गायको गुड़ और भूसीके साथ तीसीका तेल खिलानेसे या एप्सम साल्ट (Epsom Salt) देनेसे शीघ्र प्रसव हो जाता है। यह कुछ लोगोंका अनुभव है कि यदि गायको कष्ट हो रहा हो और बच्चा ठीक स्थितिमें होनेपर भी बाहर न आता हो तो २॥ तोला निर्वंसी पानीमें घोटकर जरा गर्म करके पिला देनेसे बच्चा फौरन बाहर आ जाता है।

प्रसवके बाद गायकी जेर(Placenta)का गिरना और उसकी परिचर्या

जेरका गिरना प्रसवका एक प्रधान अङ्ग है। कुछ लोगोंके विचारसे तो जबतक जेर नहीं गिर जाती, तबतक प्रसव-क्रिया अधूरी ही रहती है। अतः गोपालकको इसकी ओर विशेष ध्यान रखना चाहिये। जेर साधारणतः चार-पाँच घंटोंमें गिर जाती है। यदि न गिरे तो निम्नलिखित उपायोंमेंसे अपने सुविधानुसार कोई उपाय काममें लाना चाहिये—

१. कुछ गरम पानी, एक पाव गुड़, एक पाव अदरख या सोंठ और एक छटाँक कच्ची हल्दी पीसकर आटेके साथ मिलाकर ६ घंटेके भीतर क्रमशः दो बार देना।

२. बाँसके पत्ते डेढ़ पाव और खारी नमक एक पाव पानीमें उबालकर पिलाना।

३. शालि धानकी जड़ एक छटाँक और मट्ठा आध पाव मिलाकर खिलाना।

४. कुकुरौंधेकी पत्ती खिलाना।

५. गुड़ आध सेर, बेलकी गिरी आध सेर, सोंठ १ तोला और अजवायन एक तोला जलमें उबालकर पिलाना।

६. होमियोपैथिक दवा पल्सेटिल्ला १x(Pulsatilla 1x) की दस बूँदें पानीके साथ पिलाना। यदि यह ओषधि बारह घंटेमें कोई लाभ न करे तो सिकेली १x. (Secale 1x) अथवा पल्सेटिल्ला मदरटिंचर (Pulsatilla)की ८-१० बूँदें पानीके साथ एक बार देना।

जेरको हाथसे निकालनेकी तरकीब

यदि उपर्युक्त उपायोंसे भी जेर न गिरे तो उसे हाथसे निकालनेकी कोशिश करनी चाहिये। ऐसा करते समय पहले नाखून काट लें। फिर सावधानीपूर्वक कोहनीतक हाथ धोकर १ छटाँक मीठे तेलमें ३ माशे नीमका तेल या एक माशा कपूर मिला लें और उससे हाथ भलीभाँति चुपड़कर धीरे-धीरे गायकी योनिमें हाथ डालकर बहुत होशियारीसे जेरको जहाँ-जहाँसे चिपकी हुई हो, वहाँ-वहाँसे हटाकर निकाल लें। इसके बाद गायको दोनों समय करीब १॥ सेर पानीमें नीमके पत्ते उबालकर या फिनाइल या पोटाशियम परमैंगनेट (Potassium Permanganate) मिलाकर पाँच-सात दिनतक डूश करते रहें। इसके बाद दो-तीन दिनतक नीचे लिखा सड़ाव या पल्सेटिल्ला नामक होमियोपैथिक दवा देनी चाहिये—

गूलर कच्चा	आधा सेर
राई	आध पाव
सरसोंका तेल	एक पाव
नमक	आध पाव
छाछ	तीन सेर

गूलर और सरसोंकी खलको कूट लें। राई और नमकको पीस लें। सबको छाछमें मिलाकर किसी गरम जगहमें रख दें। एक-दो दिन बराबर धूपमें ढकी रहने दें, जिससे चीजें सड़ जायँगी। तब आध सेर रोज नालसे पिला दें।

जेर गिरनेके बाद भी गोपालकके देख-रेख करनेकी आवश्यकता है। क्योंकि प्रसवके बाद गायें अपने शरीरका पिछला अंश चाटकर साफ करती हैं; इसलिये ज्यों ही जेर गिरती है, वे उसे खा डालती हैं। जेर खा जानेसे गायोंको रक्तामाशय (Dysentery) आदि कठिन बीमारियाँ हो जाती हैं। अतः जेरको गिरते ही उसे तुरंत उठाकर बाहर फेंक देना चाहिये या गड्ढा खोदकर गाड़ देना चाहिये। यदि गाय जेर खा जाय तो उसे ५० पानकी पत्तियाँ या उनका रस निकालकर खिलाना चाहिये अथवा तुलसीके पत्तोंका रस मधुके साथ देना चाहिये।

प्रसवके बाद गायका प्रसवद्वार और शरीरका पिछला अंश गरम पानीसे धोकर उसपर सरसोंका तेल और कपूर कई दिनतक लगाना चाहिये। बच्चेकी नाभिको भी इसी प्रकार साफ करना चाहिये। प्रसवके बाद गायको सर्दी लगनेकी बहुत आशङ्का रहती है।

विशेषतः अधिक दूध देनेवाली गायें बड़ी मृदु प्रकृतिकी होती हैं। उनके दुग्धाधार (Udder)में बड़ी जल्दी सर्दी बैठ जाती है, जिससे उनका थन कड़ा हो जाता है और दूध जम जाता है। अतः प्रसवके बाद गायोंको यथासाध्य गरम रखना चाहिये। उनके शरीरपर एक गरम कम्बल डाल देना चाहिये तथा एक सप्ताहतक गरम पानी पिलाना चाहिये, ठंढे जलका उपयोग नहीं करना चाहिये।

प्रसवके बाद गौको शीघ्र ही उसके वजनके अनुसार तीन पाव गुड़, १ छटाँक अजवायन, १ तोला सोंठ और १ छटाँक मेथी डेढ़ सेर पानीमें खूब उबालकर खिलानी चाहिये। इसके चार-पाँच घंटेके बाद गायको उड़दकी दाल और चावलकी खिचड़ी खिलानी चाहिये। राजपूतानेमें

उबाला हुआ बाजरा खिलाते हैं। प्रसवके बाद एक सप्ताह-तक खली आदि गरम चीजें नहीं देनी चाहिये; क्योंकि इनसे गायके थनोंमें पीड़ा होनेकी सम्भावना है। इस अवस्थामें उसे पहले तीन दिन सूखी मुलायम घास, बारीक सूखी जुआरकी पूली, सूखी जईका चारा या अन्य कोई सूखा शीघ्र पचनेवाला चारा देना चाहिये। उपर्युक्त आउटी दोनों समय, बच्चेको दूध पिलानेके बाद जो दूध निकले उसमें मिलाकर पिला देनी चाहिये। तीन दिनके बाद शीघ्र पचनेवाला चारा और दोनों समय निम्नलिखित दलिया खिलाना चाहिये—

६ छटाँकसे आठ छटाँकतक	गुड़
तीनपाव	गेहूँ या बाजरा या चोकड़
आधी छटाँक	अजवायन
आधा तोला	सोंठ

इन चीजोंको अंदाजका पानी मिलाकर खूब उबालना चाहिये तथा बच्चेके पीनेके बाद बचे हुए दूधको निकालकर और उसमें मिलाकर खिला देना चाहिये। इसे कम-से-कम दो-तीन दिन अवश्य देना चाहिये और हो सके तो ७ दिन-तक दें। पाँच दिनके बाद धीरे-धीरे दाना आदि भी थोड़ा-थोड़ा दिया जा सकता है। परन्तु मात्राको धीरे-धीरे बढ़ाते हुए २१ दिनसे पूरे परिमाणमें देना आरम्भ कर देना चाहिये। इसी प्रकार १५ दिनके बाद साधारण गायको दिया जानेवाला चारा देना प्रारम्भ कर देना चाहिये।

प्रसव हो जानेपर गायका दूध दुहकर फेंक देना चाहिये; क्योंकि यह पीबकी भाँति होता है और बच्चेको पिलानेसे रोग उत्पन्न हो जाता है। प्रसवके बाद तीन दिनतक बच्चेके दूध पी लेनेपर दिनमें तीन बार दुहना चाहिये, पर दुहनेके एक घंटे पूर्वसे ही बच्चेको अलग रखना चाहिये। दुहते समय थनोंमें दूध नहीं छोड़ना चाहिये। प्रसवके सात दिन बादसे एक महीनेतक दूध केवल बच्चेको ही पीने देना चाहिये; क्योंकि उसमें मक्खन-का भाग बहुत रहता है। गायके थनोंसे यदि आसानीसे दूध न निकले तो विघवा नामक घाससे अथवा अन्य किसी उपाय-से चूँचियोंके छिद्रोंको साफ कर देना चाहिये। 'गोधन'

गायकी खूराक

(लेखक—श्रीयुत परमेश्वरीप्रसादजी गुप्त, बी० एस्-सी०, आई० डी० डी०)

गोपालनमें गौओंकी खूराक और उसके खिलाने-पिलाने-का ढंग तथा परिमाण जानना बहुत जरूरी है। यहाँ खूराक किस प्रकार खिलायी-पिलायी जानी चाहिये और क्या परिमाण होना चाहिये, इसपर कुछ विचार प्रकट किये जाते हैं—

१. खूराक कैसे खिलायी-पिलायी जाय ?

(क) जहाँतक हो, थोड़ी-थोड़ी कई बार करके नियत समयपर खिलानी-पिलानी चाहिये।

(ख) खूराकमें कूड़ा-कचरा, मिट्टी-कंकड़, गली हुई और बदबूदार कोई चीज न हो। यह हमेशा लाभप्रद है कि आप अपने पशुओंको ताजी चीजें खिलावें।

(ग) मुलायम हरा चारा, छोटी बारीक हरी और सूखी घास, भूसा इत्यादि ज्यों-का-त्यों साबित भी खिलाया जा सकता है; परन्तु दूसरे चारेकी कुट्टी (छोटे-छोटे आध इंचसे पौन इंचतकके टुकड़े) काटकर खिलानी चाहिये। इससे पशु सुविधासे चारा चबा लेता है और उसको पचानेमें भी मदद मिलती है तथा चारा भी कम-से-कम बर्बाद होता है।

(घ) इसी प्रकार दाना-खलके भी छोटे-छोटे टुकड़े, उनको चक्कीमें दलकर, तैयार कर लेने चाहिये। १२ घंटेसे २४ घंटेतक मौसम, तथा दाना-खलकी किसके अनुसार भले प्रकार पानीमें भिगोकर और देनेके समय उसको हाथसे खूब फेंट या मथकर (छोटे बच्चोंके अलावा सबको) देना चाहिये ताकि पशु उसको सहूलियतसे पचा सके। कुछ चीजें तो बड़ी सख्त होती हैं। उन्हें उबालकर अर्थात् पानीमें पकाकर देना चाहिये।

(ङ) जब कभी केवल सूखा चारा ही खिलाना हो तो उसको बारीक काटकर उसमें भिगोया हुआ खल-दाना मिलाकर खिलानेसे लाभप्रद होता है। इस प्रकार पशु सख्त चारेको भी खा लेता है।

२. पशुके रहन-सहनकी कुछ बातें

पशुको केवल कम-से-कम कीमतकी और उसके आवश्यकतानुसार उपयुक्त पेटभर खूराक ठीक तरीकेसे खिला देनेसे ही काम पूरा नहीं हो जाता; बल्कि पूरी सफलता इस बातपर निर्भर करती है कि पशु वह खूराक खाकर हमको

कितना लाभ पहुँचाता है। यह बात पशुकी खूराकके अलावा उसके रहन-सहनके ढंगपर भी निर्भर करती है। इसके लिये नीचे लिखी बातें अमलमें लानी चाहिये—

(क) रोज बराबर नियत समयपर कम-से-कम दो बार, और यदि हो सके तो तीन या चार बार खूराक दी जाय और काम भी जहाँतक हो नियत समयपर ही लिया जाय।

(ख) पशुओंके सामने हमेशा नमकका एक बड़ा डला रखिये, ताकि वे जब चाहें तभी उसको चाट सकें।

(ग) कम-से-कम दो बार ताजा और साफ पानी, जो कुएँके ताजे पानीसे न तो अधिक ठंडा और न अधिक गरम हो, भरपेट पिलाइये।

(घ) दूध देनेवाली गायोंको कम-से-कम ब्यानेके डेढ़ मास पहले धीरे-धीरे दूधसे अवश्य सुखा देना चाहिये।

(ङ) गायको ब्यानेके कम से-कम डेढ़ महीने पहलेसे दस रोज पूर्वतक ऐसी पौष्टिक खूराक दीजिये, जो शीघ्र पचनेवाली हो।

ब्यानेके बाद गायमें दूधका जोर बढ़ जाना स्वाभाविक है। उस समय उसको उसके हाजमेका खयाल करते हुए कुछ दिनोंतक दूधकी उत्पत्तिके अनुपातसे पूरी खूराक नहीं दी जा सकती। अतः इस समय दूधका स्रोत पूरी तौरसे कायम रखनेके लिये, ब्यानेसे पहले, गर्भके दिनोंमें खिलायी गयी वह खूराक, जो मुटापेके रूपमें परिणत होकर जमा रहती है, काम आती है। इसलिये उसको ब्यानेके पहले शीघ्र पचनेवाली पौष्टिक खूराक खिलाकर काफी मोटा-ताजा कर देना चाहिये।

(च) गायको, ब्यानेके सात रोज पहले एक बार तथा दुबारा तीन रोज पहले अंदाजन ४ छटाँकसे ६ छटाँकतक, उसके वजनके अनुसार, खानेका तेल अवश्य नाल या बोतलसे पिला देना चाहिये, ताकि ब्यानेके समय उसका पेट साफ रहे।

(छ) ब्यानेके बाद एकदम अधिक बाँटा अर्थात् खल-दाना नहीं खिलाना चाहिये। धीरे-धीरे बढ़ाकर २१ दिनके बाद दूधके लिये पूरी खूराक देनी चाहिये। पहले तीन दिन सूखी घास, बारीक सूखी जुआरकी पूली, सूखी जईका चारा या अन्य सूखा शीघ्र पचनेवाला तीसरे या चौथे दर्जेका चारा देना चाहिये। इसके अतिरिक्त उसे ये चीजें दीजिये—**गुड़ (जानवरके वजनके अनुसार)—आध सेरसे तीन पावतक, अजवायन—एक छटाँक, सोंठ (मौसम और जानवरके वजनके अनुसार) आधासे एक तोला, और मेथी—एक छटाँक,** १॥ सेर पानीमें खूब उबालकर अर्थात् आउटी बनाकर एक बार सबेरे दूध दुहनेके बाद जो दूध निकले, वह सब उसमें मिलाकर खिला दें। दुबारा उतनी ही आउटी बनाकर शामको दूध दुहनेपर जो दूध निकले, वह सब मिलाकर खिला देना चाहिये। तीन दिनके बाद शीघ्र पचनेवाला चारा और दोनों समय यह दलिया खिलाना चाहिये—**गुड़ डेढ़ पावसे आध सेर, गेहूँ या बाजरेका दलिया अथवा चोकर—आध सेरसे एक सेर, और अजवायन—दो तोलेसे पाँच तोला,** अंदाजका पानी मिलाकर इन सबको खूब उबालिये। जब सीजकर मुलायम हो जाय तब ठंडा करके दूध दुहनेके बाद जो दूध बचे, उसे उसमें मिलाकर खिला देना चाहिये। यह दलिया कम-से-कम दो-तीन दिनोंतक तो अवश्य खिलाइये। हो सके तो सात दिनतक खिलाइये। पाँच दिनके बाद धीरे-धीरे दाना इत्यादि भी थोड़ा-थोड़ा दिया जा सकता है।

पाँचवें दिन दोनों समय	आधा सेर चोकर
छठे ,, ,, ,,	तीन पाव ,,
सातवें ,, ,, ,,	एक सेर ,,

आठवें दिनके बाद एक सेर चोकर और थोड़ा अन्य दाना, तथा फिर जो भी खल-दाना गायोंको दिया जाता है, आरम्भ कर देना चाहिये। और २१ दिनतक धीरे-धीरे बढ़ाकर पूरी मिकदारमें देना चाहिये। इसी प्रकार १५ दिनके बाद चारा भी, जो साधारण गायोंको दिया जाता है, देना आरम्भ कर देना चाहिये।

(ज) रहनेका स्थान एकदम बंद नहीं होना चाहिये। उसमें रोशनदान तथा हवाके आने-जानेका रास्ता बराबर रहना चाहिये। काफी साफ, ताजी हवा और सूर्यका प्रकाश मिलना चाहिये।

(झ) पशुको सख्त सर्दी, गर्मी और वर्षासे हमेशा बचाइये और खयाल रखिये कि उसे मक्खी, मच्छर और कीड़े न सतायें।

(ञ) पशुको साफ-सुथरा और आरामसे रखनेके लिये उसको प्रतिदिन खरहरे अथवा मूँजके ब्रश या टाटके टुकड़ेसे साफ करना चाहिये। उसके बैठनेका स्थान बिल्कुल साफ-सुथरा रहना चाहिये। कच्चे स्थानकी गीली मिट्टी रोज निकालकर उसकी जगह सूखी मिट्टी अवश्य डालते रहना

चाहिये और पक्के स्थानपर रद्दी घास इत्यादिका बिछावन कर देना चाहिये और उसे रोज बदलते रहना चाहिये ।

(ट) बीमार पशुको, जहाँतक हो सके, फौरन अच्छे पशुसे अलग साफ-सुथरी और बिल्कुल बंद न हो, ऐसी जगहमें रखना चाहिये । बीमारीकी हालतमें कब्ज करनेवाला तथा देरमें पचनेवाला चारा-दाना बंद करके शीघ्र पचनेवाली चीजें देनी चाहिये । हरा चारा चौथाई हिस्सेसे ज्यादा नहीं देना चाहिये । हो सके तो, गाय ब्यानेपर जो चारा देते हैं, वह देना चाहिये तथा चोकरका दलिया या चावलकी काँजी या माँड देनी चाहिये । बीमारीसे अच्छा हो जानेपर धीरे-धीरे थोड़ा चोकर या गेहूँ अथवा जईका दलिया पकाकर देना चाहिये और फिर अच्छा होनेके दो-चार दिन बाद धीरे-धीरे रोजकी खूराक आरम्भ करके पूरी खूराक देनी शुरू कर देनी चाहिये ।

(ठ) याद रखिये कि आप जानवरोंके साथ जितना प्रेमका व्यवहार करेंगे और जितना उनको ऐसी स्थितिमें रक्खेंगे जिससे उन्हें किसी प्रकारका दुःख और घबराहट न हो, उतना ही अधिक वे खूराकको उपयोगी कार्यमें बदल सकेंगे ।

हर एक प्रकारके पशुओंको उनके आवश्यकतानुसार कौन-कौन चीजें और कितनी मात्रामें खिलानी चाहिये, इसके लिये आगे दिये हुए चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें, आठवें, नवें और दसवें विवरण-पत्रको देखिये और अपने अलग-अलग जानवरोंकी आवश्यकताका खयाल रखते हुए उनको अपने घर, गाँव या प्रान्तमें मिलनेवाली चीजोंमेंसे जो अधिक-से-अधिक उपयोगी और कम-से-कम कीमतकी हो, उसे खिलाइये और उनसे अधिक-से-अधिक लाभ उठाइये ।

उपर्युक्त प्रत्येक विवरण-पत्रके अन्तमें उदाहरण दिये हुए हैं । इनसे जानवरके लिये आवश्यक चारा-दाना किस प्रकार निश्चित करना चाहिये, यह स्पष्ट हो जायगा । प्रत्येक पाठकको इन उदाहरणोंको खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहिये और इनके अलावा चार-पाँच अपने उदाहरण लेकर उनके लिये आवश्यक चारा-दाना, उन चीजोंमेंसे जो उनके यहाँ मिलती हैं, निश्चय करना चाहिये, ताकि वे इससे भली-प्रकार परिचित हो जायँ । यदि किसी पाठकको इसके समझनेमें कोई कठिनाई मालूम दे, तो वह अपनी कठिनाई लेखकको लिखकर भेज सकते हैं । लेखक उसे सहर्ष दूर करनेका प्रयत्न करेगा ।

प्रथम विवरण-पत्र

हरे चारेकी सूची

पहली श्रेणीके बहुत अधिक प्रोटीनवाले चारे

संख्या	चारेका नाम	मिकदार, वजन या तौल जिससे अधिक नहीं खिलाना चाहिये ।	अन्य कोई बात
१	किसारी या चपरा मटर	१०–१५ सेर	बहुत बादी करता है ।
२	रिजका	१०–१२ सेर	बहुत गरम होता है, गायको ५ सेरसे ज्यादा नहीं देना चाहिये ।
३	सरसों और तरा	२०–२५ सेर सरसों, ५ सेर तरा	सरसों दूधके जानवरोंको अधिक लाभप्रद है । तरामें झल बहुत होती है । तरा ज्यादा नहीं खिलाना चाहिये ।
४	मेथी	१० सेर	गरम होती है, दूधकी गायको ४–५ सेरसे ज्यादा नहीं देनी चाहिये ।
५	मटर (किराव)	१०–१५ सेर	कब्ज और बहुत बादी करता है ।
६	उड़द	१०–१२ सेर	कब्ज और बहुत बादी करता है ।
७	सेंजी	१०–१५ सेर	अच्छा चारा है । सेंजी और जई मिलाना बहुत अच्छा है ।
८	बरसीम	२५–३० सेर	इससे अच्छा दूसरा चारा नहीं होता ।
९	मोठ	१५–२० सेर	बहुत गरम है । ६–७ सेरसे ज्यादा नहीं देना चाहिये ।
१०	लोबिया	१५–२० सेर	बादी और कब्ज करनेवाला होता है ।
११	मूँग	१५–२० सेर	” ” ”

१२ चना	१०–१२ सेर	दूधकी गायको १० सेरसे ज्यादा नहीं देना चाहिये; ज्यादा खिलानेसे पेट फूल जाता है ।
१३ गुँवार	१५–२० सेर	गरम होता है, कब्ज करता है, दूधकी गायोंको ६–७ सेरसे ज्यादा नहीं देना चाहिये ।

दूसरी और तीसरी श्रेणीके साधारण प्रोटीनवाले चारे

१ गाजरके पत्ते	८–१० सेर	ज्यादा खिलानेसे पेट फूल जाता है ।
२ अच्छी जातिकी मिली हुई घासें या खालिस दूब घास	पेट भरकर	बहुत अच्छा चारा है ।
३ गेहूँ	,,	,,
४ द्विदल और शरद् ऋतुके अनाजका मिलवाँ चारा	,,	,,
५ जौ	,,	बाल या भुट्टा निकलनेसे पहले ही खिलाना चाहिये ।
६ जई	,,	बरसीमसे उतरकर सबमें अच्छा चारा है ।

चौथी श्रेणीके बहुत कम प्रोटीनवाले चारे

१ रागी	१०–१५ सेर	ज्यादा खिलानेसे पेट फूल जाता है ।
२ मक्का और द्विदल जातिका मिलवाँ चारा	पेट भरकर	बहुत अच्छा चारा है ।
३ गाजर	१० सेर	बारीक काटकर खिलानी चाहिये ।
४ जईकी सानीका साइलेज	१५–२० सेर	बहुत अच्छा चारा है ।
५ घटिया जातिकी मिली हुई घास	,,	यह खयाल रखना चाहिये कि मिट्टी और नुकसान देनेवाली घास इसमें न हो ।
६ जुवार और द्विदल जातिका मिलवाँ चारा	,,	बहुत अच्छा चारा है ।
७ गिनी घास	पेट भरकर	,, ,,
८ मक्का	,,	बहुत अच्छा चारा है । तभीतक खिलाना चाहिये जबतक कि भुट्टे दुधिया हालतमें हों । इसे बारीक कुट्टी काटकर खिलाना चाहिये ।
९ जुवार	,,	भुट्टे निकलनेके बाद ही खिलानी चाहिये, पहले खिलाना खतरनाक है । बहुत ऊँची और मोटी जातिकी जुवार अच्छी नहीं होती । कुट्टी काटकर खिलानी चाहिये ।
१० नेपियर या हाथी घास	,,	खासा अच्छा चारा है । पक जानेपर सख्त और खराब हो जाती है, इसलिये कच्ची हालतमें ही खिलानी चाहिये ।
११ बाजरा	,,	भुट्टे दुधिया हालतमें हों तभीतक खिलाना चाहिये । पक जानेपर खराब हो जाता है । कुट्टी काटकर खिलाना चाहिये ।
१२ जुवारका साइलेज (अचार)	१५–२० सेर	बहुत अच्छा चारा होता है ।
१३ मक्काका चारा जिसमेंसे भुट्टा निकाल लिया गया हो	,,	यह चारा घटिया होता है । इसको बारीक कुट्टी काटकर खिलाना चाहिये ।
१४ शकरकंद	५ सेर	बहुत गरम होती है, थोड़ी तादादमें छोटे-छोटे टुकड़े करके खिलानी चाहिये ।
१५ ईख	१० सेर	निकम्मा चारा है । इसके ऊपरका हिस्सा ही प्रायः खिलाते हैं ।

द्वितीय विवरण-पत्र

सूखे चारेकी सूची

पहली श्रेणीके बहुत ज्यादा प्रोटीनवाले चारे

संख्या	चारेका नाम	मिकदार, वजन या तौल जिससे अधिक नहीं खिलाना चाहिये	अन्य कोई बात
१	रिजका	५ सेर	कब्ज और गरमी करता है।
२	बरसीम	८ सेर	बहुत अच्छा चारा है।
३	पाला	५ सेर	कब्ज करता है और गरम है।
४	द्विदल जातिका बहुत बढ़िया चारा (लोबिया, मटर, खिसारी, मसूर, उड़द, मूँग, अरहर इत्यादि)	५ सेर	कब्ज और बादी करता है।

दूसरी श्रेणीके अधिक प्रोटीनवाले चारे

१	सुखायी हुई केवल दूब घास	पेट भरकर	बहुत अच्छा चारा है।
२	सूखी गिनी घास, जिसमें फल न आया हो	,,	खासा अच्छा चारा है।
३	सूखी जई जिसमें अनाज न पड़ा हो	,,	बहुत अच्छा चारा है।

तीसरी श्रेणीके साधारण प्रोटीनवाले चारे

१	अच्छी जातिकी मिली हुई घास	पेट भरकर	बहुत अच्छा चारा है।
२	जुवार जिसमें अनाज न पड़ा हो	,,	बहुत अच्छा चारा है, परन्तु थोड़ा कब्ज करती है। कुट्टी काटकर खिलानी चाहिये।
३	मक्का, जिसमें अनाज न पड़ा हो	५ सेर	बहुत अच्छा चारा नहीं समझा जाता। कब्ज करती है। कुट्टी काटकर खिलानी चाहिये।
४	द्विदल जातिका बहुत बढ़िया भूसा (चना, गुँवार, कुलथी इत्यादिका)	५ सेर	कब्ज और बादी करता है। दूधकी गायोंको इससे आधा खिलाना चाहिये।

चौथी श्रेणीके बहुत कम प्रोटीनवाले चारे

१	जुवारकी कड़बी, जिसके भुट्टे तोड़ लिये गये हों	पेट भरकर	साधारण चारा है। कब्ज करती है। कुट्टी काटकर खिलानी चाहिये।
२	जईका भूसा	,,	कब्ज करता है, अच्छा चारा है।
३	जौका भूसा	,,	अच्छा चारा है, परन्तु कब्ज करता है।
४	बाजरेकी कड़बी या रागीका भूसा	,,	बहुत कब्ज करता है, घटिया चारा समझा जाता है।
५	गेहूँका भूसा	,,	,, ,,
६	सूखी मक्का, जिसमेंसे भुट्टा निकाल लिया गया हो	,,	बहुत रद्दी चारा समझा जाता है, कब्ज करता है।
७	चावल या धानका भूसा (पुआल)	,,	घटिया चारा समझा जाता है।
८	घटिया जातिकी मिली हुई सूखी घास	,,	कब्ज करती है, रेत-मिट्टी झाड़कर निकाल देनी चाहिये।

तृतीय विवरण-पत्र

खली और दाना

पहली श्रेणीके बहुत अधिक प्रोटीनवाले खल और दाने

संख्या	दानेका नाम	मिकदार, वजन या तौल जिससे अधिक नहीं खिलाना चाहिये	अन्य कोई बात
१	मूँगफलीकी खल	२-२॥ सेर	कब्ज और बादी करती है तथा गरम होती है। छोटे-छोटे टुकड़े करके भिगोकर खिलानी चाहिये।
२	तिलकी खल	२-२॥ सेर	गरमी और कब्ज करती है, छोटे-छोटे टुकड़े करके या भिगोकर खिलानी चाहिये।
३	बिनौलेके गूदेकी खली	२-२॥ सेर	कब्ज और गरमी करती है। हमेशा भिगोकर खिलानी चाहिये। बिनौलेके मुकाबले बिनौलेकी खल खिलाना अच्छा है।
४	सरसों और तरेकी खली	१॥-२ सेर	इसमें झल बहुत होती है। वर्षाऋतुमें नहीं खिलानी चाहिये। थोड़ी ठंडी होती है।

दूसरी श्रेणीके अधिक प्रोटीनवाले खली और दाने

संख्या	दानेका नाम	मिकदार	अन्य कोई बात
१	तीसी या अलसी	२-२॥ सेर	ताजा खिलानी चाहिये। मक्खनके स्वादको बिगाड़नेवाली होती है। दस्तावर होती है।
२	तोरियाकी खल	१॥-२ सेर	इसमें झल बहुत होती है। वर्षाऋतुमें नहीं खिलानी चाहिये। थोड़ी ठंडी होती है।
३	गुँवारका दाना	३ सेर	गरमी और कब्ज करनेवाला है। बारीक पिसा हुआ उबालकर या खूब भिगोकर, मथकर खिलाना चाहिये।
४	किसारी या चपरा या काली मटरका दाना	१-१॥ सेर	बहुत बादी और कब्ज करनेवाला है।
५	अरहरका दाना	२-२॥ सेर	गरम होता है, दूधके लिये अच्छा समझा जाता है।
६	उड़दका दाना	१-१। सेर	कब्ज और बादी करनेवाला है। थोड़ी तादादमें ही खिलाना चाहिये। ठंडा होता है।
७	लोबियाका दाना	१-१॥ सेर	गरम, बहुत बादी और कब्ज करनेवाला है।
८	मटरका दाना	१-१॥ सेर	बहुत कब्ज और बादी करनेवाला है।
९	मसूरका दाना	१-१॥ सेर	बहुत गरमी और बहुत बादी करनेवाला होता है।
१०	मोठका दाना	२ सेर	गरम, लेकिन शीघ्र पचनेवाला होता है।
११	साबत बिनौलेकी खल	१॥-२ सेर	खूब भिगोकर खिलानी चाहिये।
१२	नारियल या खोपरेकी खली	१ सेर	हमेशा ताजी खिलानी चाहिये, बहुत कब्ज और गरमी करनेवाली होती है। मक्खनके स्वादको बिगाड़ती है।

तीसरी श्रेणीके साधारण प्रोटीनवाले खली और दाने

संख्या	दानेका नाम	मिकदार	अन्य कोई बात
१	चनेका दाना	४-५ सेर	थोड़ा कब्ज करता है, परन्तु बहुत बढ़िया दाना है।
२	बिनौला (कॉंकड़े)	३-४ सेर	यदि सम्भव हो तो टुकड़े करके, भिगोकर दिया जाय। उबालकर देना अति उत्तम है, अन्यथा खूब भिगोकर देना चाहिये।

३	द्विदल या दालोंकी जाति—जैसे चना इत्यादिकी बढ़िया चूनी या चूरी	५-६ सेर	थोड़ी कब्ज करती है, परन्तु उत्तम है।
४	चोकर	५-६ सेर	थोड़ा दस्तावर होता है, पशुओंके लिये अति उत्तम खूराक है। हरेक पशुकी खूराकमें इसका कुछ-न-कुछ हिस्सा अवश्य होना चाहिये।

चौथी श्रेणीके बहुत कम प्रोटीनवाले खली और दाने

१	द्विदल या दाल-जातिकी दूसरे दर्जेकी चूनी या चूरी	४-५ सेर	इसमें कूड़ा-कचरा नहीं होना चाहिये, अच्छा दाना है।
२	जौका दाना	४-५ सेर	जरा ठंडा होता है, परन्तु उत्तम दाना होता है।
३	गेहूँका दाना	४-५ सेर	पशुओंके लिये बहुत उत्तम दाना है।
४	जुवारका दाना	२-३ सेर	बहुत कब्ज करनेवाला होता है।
५	जईका दाना	४-५ सेर	पशुओंके लिये बहुत उत्तम दाना है।
६	मकाका दाना या दलिया	२-२॥ सेर	कब्ज और बादी करता है, हमेशा बहुत बारीक करके भिगोकर या उबालकर देना चाहिये।
७	बाजराका दाना या दलिया	१-२ सेर	कब्ज करता है, गरम है। इसको उबालकर दलियेके रूपमें देना चाहिये।
८	रागीका दाना	१-१॥ सेर	बहुत कब्ज और बादी करता है।
९	चावलकी भूसी या किनक	१ सेर	ताजा खिलानी चाहिये, यह स्वादको बिगाड़नेवाली होती है और निकम्मी चीज है।
१०	चने, अरहर इत्यादि दालकी चीजोंका फोलर	१-२ सेर	ताजा खिलाना चाहिये, कब्ज करता है।
११	शीरा (चीनी बनानेमें निकलता है)	१-२ सेर	कटे हुए चारेमें मिला देनेसे सब चारा स्वादिष्ट हो जाता है। बहुत गरम होता है। कारखानोंके मुकाबलेमें हाथसे चीनी बनानेमें जो शीरा निकलता है, वह अपेक्षाकृत अच्छा होता है।
१२	गुड़	१ सेर	अलग भी खिला सकते हैं और चारे-दानेमें मिलाकर भी खिला सकते हैं। गरम बहुत होता है।

सूचना १—चावलकी भूसी, शीरा तथा गुड़ कोई हमेशाके खिलानेकी चीज नहीं हैं। ये तो कभी-कभी या अन्य कोई चीज नहीं मिलती हो तब खिलाने चाहिये। जब कभी फोलर और चावलकी भूसी खिलानी हो तो चौथी श्रेणीके हिसाबसे जितना खिलाना हो, उससे दुगुना वजन खिलाना चाहिये।

सूचना २—पहली और दूसरी श्रेणीके खल-दानेके बदले नीचे लिखे अनुसार अन्य चीजें दी जा सकती हैं—

पहली श्रेणीके १ सेर खल-दानेके बदले—१॥ सेर दूसरी श्रेणीका खल-दाना, या ४ सेर पहली श्रेणीका सूखा चारा, या १२ सेर पहली श्रेणीका हरा चारा, या १३ सेर दूसरी श्रेणीका हरा चारा।

दूसरी श्रेणीके १ सेर खल-दानेके बदले—॥≥ पहली श्रेणीका खल-दाना, या २॥ सेर पहली श्रेणीका सूखा चारा, या ८ सेर पहली श्रेणीका हरा चारा, या ९ सेर दूसरी श्रेणीका हरा चारा।

चतुर्थ विवरण-पत्र

जानवरोंके कद या वजनके अनुसार पोषक खूराक नीचे लिखे अनुसार दी जानी चाहिये--

१	२	३	४	५	६
बड़े कदके जानवरको	पूरे कदके जानवरको	मामूली कदके जानवरको जिसका वजन	छोटे कदके जानवरको	बहुत छोटे कदके जानवरोंको	दूधके बच्चेको
जिसका वजन करीब १००० या ११०० पौंड या १२-१३ मन हो।	जिसका वजन करीब ८००-९०० पौंड या १०-११ मन हो।	६००-७०० पौंड या ७-८ मन हो।	जिसका वजन ४००-५०० पौंड या ५-६मन हो।	जिनका वजन २००-३०० पौंड या २॥-४ मन हो।	जिसका वजन १००-२०० पौंड या १-२॥ मन हो।
१२-१३ सेर सूखा या ५० सेर हरा चारा	१०-११ सेर सूखा या ४०-४५ सेर हरा चारा	८-९ सेर सूखा या ३२-४० सेर हरा चारा	५-६ सेर सूखा या २०-२५ सेर हरा चारा	४ सेर सूखा या १६ सेर हरा चारा	२॥-३ सेर सूखा या १०-१२ सेर हरा चारा

सूचना--ऊपर हरे चारेका वजन औसतमें सूखेसे चौगुनेके हिसाबसे दिया है। यदि हरा चारा कच्चा और अधिक पानीवाला हो तो उपर्युक्त वजनसे सवाया लेना चाहिये, और पका हुआ तथा कम पानीवाला हो तो पौवा वजन देना चाहिये।

सूखे चारेके मुकाबलेमें साइलेज, आधी पकी हुई हरी जुवार और जईका वजन तीनगुना, और हरी घास, हरी मक्का, हरी कच्ची जुवार, फली हुई मटर, हरी जई, मोठ, उड़द, लोबिया इत्यादिके हरे चारेका वजन चारगुना तथा कच्ची मोठ, मटर, किसारी, बरसीम, रिजका, मेथी, कच्ची जई इत्यादिका पाँचगुना वजन समझना चाहिये।

नीचे लिखा चारा-दाना पूरे कदके १०-११ मन वजनके जानवरको दीजिये, और बड़े या छोटे कदवालोंको उनके बड़े या छोटे कद या वजनके अनुसार ज्यादा या कम दीजिये—

जई, जुवार, मक्काका बढ़िया सूखा चारा, जिसमें अनाज न पड़ा हो और बहुत बढ़िया सुखायी हुई घास	जई, जुवार, रागी, बाजरा और मामूली घासका सूखा चारा	जौ, गेहूँ, धान (चावल) का भूसा या पुआल और घटिया सूखी घास	जई, जुवार, मक्का, गिनी घास, बाजराका हरा चारा, जो न बिल्कुल कच्चा हो न पका हुआ हो, और हरी मिलवाँ घास
१. केवल उपर्युक्त चारा, पूरक--६ छटाँक खल	केवल उपर्युक्त चारा, पूरक--१२ छटाँक खल	केवल उपर्युक्त चारा, पूरक--१६ छटाँक खल	पेटभर केवल उपर्युक्त चारा, पूरक--कुछ नहीं
२. दो हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--कुछ नहीं	२ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--कुछ नहीं	२ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--२ छटाँक खल	१ से ५ सेरतक पहली श्रेणीका सूखा चारा और बाकीका पेटभर उपर्युक्त हरा चारा, पूरक--कुछ नहीं
३. दो हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--४ छटाँक खल	२ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--८ छटाँक खल	२ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी श्रेणीका सूखा चारा, पूरक--१२ छटाँक खल	१ से ५ सेरतक दूसरी श्रेणीका सूखा चारा और बाकीका पेटभर उपर्युक्त हरा चारा, पूरक--कुछ नहीं

४. एक हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका हरा चारा, पूरक—कुछ नहीं	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका हरा चारा, पूरक—२ छटाँक खल	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, पहली श्रेणीका हरा चारा, पूरक—६ छटाँक खल	५ सेर तीसरी श्रेणीका सूखा चारा और बाकीका पेटभर उपर्युक्त हरा चारा, पूरक—२ छटाँक खल
५. एक हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी और तीसरी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—कुछ नहीं	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी और तीसरी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—४ छटाँक खल	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, दूसरी और तीसरी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—८ छटाँक खल	५ सेर चौथी श्रेणीका सूखा चारा और बाकी-का पेटभर उपर्युक्त हरा चारा, पूरक—६ छटाँक खल
६. एक हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, चौथी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—४ छटाँक खल	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, चौथी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—१० छटाँक खल	१ हिस्सा उपर्युक्त चारा १ ,, चौथी श्रेणीका हरा चारा, पूरक—१४ छटाँक खल	पेटभर केवल दूसरी और तीसरी श्रेणीका सूखा चारा, पूरक—६ छटाँक खल

सूचना १—खल जहाँतक हो तिल या मूँगफलीकी दी जाय, अन्यथा पहली श्रेणीकी कोई भी खल दे सकते हैं। १ सेर खलके बदले १॥ सेर गुँवार या दूसरी श्रेणीके दाना-खलमेंसे कोई चीज दे सकते हैं। यदि चनेका दाना देना हो तो खलसे दुगुना देना चाहिये।

सूचना २—जहाँतक सम्भव हो चारा हरा और सूखा दोनों तरहका मिलाकर दिया जाय। दूसरी श्रेणीपर साधारण सूखे चारेके साथ पहली या दूसरी श्रेणीका सूखा चारा मिलाकर देना चाहिये। मजबूरी हालतमें कोई भी चारा दिया जा सकता है।

सूचना ३—जब कभी उत्पादक खूराक अधिक तादादमें दी जाती है, तो उतना ही चारेका वजन कम हो जाता है। उसको पूरा करनेके लिये नीचे लिखे हिसाबसे अधिक खल-दाना दे देना चाहिये।

	पहली श्रेणीका खल-दाना	दूसरी श्रेणीका खल-दाना
१ सेर पहली श्रेणीके सूखे चारेके बदले	४ छटाँक	६ छटाँक
१ सेर दूसरी ,, ,, ,, ,,	२ ,,	३ ,,
१ सेर तीसरी ,, ,, ,, ,,	२ ,,	३ ,,
१ सेर चौथी ,, ,, ,, ,,	१ ,,	१॥ ,,
४ सेर पहली श्रेणीके हरे ,, ,,	५ ,,	७॥ ,,
४ सेर दूसरी ,, ,, ,, ,,	४ ,,	६ ,,
४ सेर तीसरी ,, ,, ,, ,,	३ ,,	४॥ ,,
४ सेर चौथी ,, ,, ,, ,,	२ ,,	३ ,,

उदाहरण

प्रश्न—एक बैल या गायको, जिसका वजन करीब ९ मन (७२० पौंड या रतल) है, पोषणमात्रके लिये क्या और कितनी खूराक देनी चाहिये? हमारे पास गेहूँका भूसा, जुवारकी कुट्टी, हरी मोठ, बढ़िया हरी घास, तिलकी खल, सरसोंकी खल, चनेका दाना इत्यादि चीजें हैं।

उत्तर—कुल खूराकका वजन विवरणपत्र ४ कोष्ठक ३ के अनुसार ९ सेर अर्थात् १८ पौंडके करीब होना चाहिये।

१. पहली तजवीज—गेहूँके भूसेके चारेके साथ विवरणपत्र ४ कोष्ठक ३ और तजवीज पाँचवींके अनुसार—

१ हिस्सा गेहूँका भूसा करीब		६॥ सेर
१ हिस्सा दूसरी श्रेणीके हरे चारोंमेंसे अच्छी जातिकी घास ६॥ सेर	सूखा वजन	ऽ१॥=
पूरक तिलकी खल, क्योंकि तिलकी खल सरसोंकी खलसे सस्ती थी		८ छ०
या चनेका दाना—यह तिलकी खलसे करीब आधी कीमतका था		१ सेर
वजन कुल सूखी सामग्री		८॥ सेर खलके साथ ९ सेर चनेके दानेके साथ

२. दूसरी तजवीज—जुवारकी कुट्टीके चारेके साथ विवरणपत्र ४के कोष्ठक २ और तजवीज चौथीके अनुसार—

१ हिस्सा जुवारकी कुट्टी करीब		७॥ सेर
१ हिस्सा हरी मोठ पहली श्रेणीके हरे चारोंमेंसे ७॥ सेर (क्योंकि कच्ची होनेके कारण इसमें पानीका हिस्सा ज्यादा था)	सूखा वजन	१॥ सेर
पूरक सरसोंकी खल (यहाँ सरसोंकी खल सबसे सस्ती थी)		२ छ०
वजन कुल सूखी सामग्री		९ सेर

पञ्चम विवरण-पत्र

बढ़नेवाले जानवरोंको पोषक खूराकके अलावा उनकी अवस्थाके अनुसार बढ़नेके लिये नीचे लिखी खूराक और देनी चाहिये—

	खालिस दूध	मक्खन निकाला हुआ दूध	खल-दाना
१ मासतक	४ सेर	...	...
१ माससे २ मासतक	३॥ सेर	१ सेर	४ छ०
२ माससे ३॥ मासतक	२॥ सेर	२ सेर	८ छ०
३॥ माससे ५ ,,	२ सेर	२ सेर	१ सेर
५ माससे ६ ,,	१ सेर	१ सेर	१। सेर
६ ,, १२ ,,	...	...	१॥ सेर
१२ ,, २ वर्षतक	...	...	१ सेर
२ वर्षसे जबतक वे काम करने या दूध देने लगें	...	...	१॥ सेर

देखनेमें उपर्युक्त खूराक, खासकर खल-दाना प्रचलित रिवाजसे अधिक मालूम देता है; परन्तु वह शीघ्र तथा पूरी बढ़ोतरीके लिये अत्यावश्यक है। बढ़िया चारा खिलानेसे या अच्छी चरागाहमें खूब चरानेसे काफी कम खल-दानेसे भी काम चल सकता है। यदि मक्खन निकला हुआ दूध न हो, तो उससे आधी तादादमें खालिस दूध दिया जा सकता है। मक्खन निकला हुआ दूध दिया जाता हो, उस समय और एक वर्षसे ऊपरके जानवरोंको दाना-खल नीचे लिखे किसी एक समूह या एकसे अधिक समूहोंकी मिलावटके अनुसार दीजिये—

१. { १ हिस्सा दूसरी श्रेणीका दाना-खल
१ ,, तीसरी ,, ,,
१ ,, चौथी ,, ,, }

२. { १ हिस्सा पहली श्रेणीका दाना खल
२ ,, तीसरी ,, ,,
३ ,, चौथी ,, ,, }

खासकर मक्खन निकले हुए दूधके साथ नीचे लिखे दाने-खल अच्छे साबित हुए हैं—

१.	२.
१ हिस्सा चोकर गेहूँका	१ हिस्सा खल तिल, मूँगफली इत्यादिकी
१ ,, जईका दाना	२ ,, चोकर गेहूँका
१ ,, अलसी (तीसी) पिसी हुई	३ ,, जई, जौ, गेहूँ इत्यादि

जिन बच्चोंको मक्खन निकला हुआ दूध नहीं दिया जाता हो, उन्हें गायको दूधकी उत्पत्तिके लिये दाना-खल जिन समूहोंके अनुसार देते हैं, उनमेंसे किसी समूह नं० १, २, ३ और ५ के अनुसार दाना-खल दीजिये। (देखिये विवरण-पत्र ६)

सूचना—१ माससे लेकर २॥ वर्षतकके बच्चोंको जहाँतक हो, साइलेज (अचार) नहीं देना चाहिये। उनको बहुत बढ़िया सूखी घास, जिसमें रेत-मिट्टी न हो, सूखा रिजका, बरसीम, मटर, जईका सूखा चारा, जुवारकी बारीक कुट्टी या पत्तोंका चारा और थोड़ा हरा रिजका, बरसीम या अन्य द्विदल जातिका शीघ्र पचनेवाला हरा चारा और हरी घास खिलानी चाहिये।

उदाहरण

प्रश्न—दो वर्षका एक बछड़ा या बछड़ी जिसका वजन करीब ६ मन या ५०० रतल है, उसको क्या खूराक देनी चाहिये ? हमारे पास मामूली सूखी घास, जुवारकी कुट्टी, हरी जई और चनेका दाना, गेहूँका चोकर, तिलकी खल और जौका दाना इत्यादि चीजें हैं।

उत्तर—(१) कुल खूराकका वजन चतुर्थ विवरण-पत्र कोष्ठक ४ के अनुसार ५-६ सेर अर्थात् १०-१२ पौंडके करीब होना चाहिये।

(२) तजवीज—पोषणमात्रके लिये चतुर्थ विवरण-पत्र कोष्ठक ३ तजवीज पाँचवींके अनुसार।

१ हिस्सा मामूली सूखी घास करीब ३॥ सेर

(क्योंकि बच्चेके लिये जुवारकी कुट्टीसे घास अच्छी रहेगी और सस्ती भी)

१ हिस्सा हरी जई ३॥ सेर, जिसका सूखा वजन १४छ०

पूरक तिलकी खल २छ०

(हिसाब लगानेसे सबसे सस्ती यही थी)

बढ़ोतरीके लिये पञ्चम विवरण-पत्रके अनुसार दूध-उत्पत्तिके दाना-खलके समूह दोके मुताबिक १॥ सेर दाना-खल देना चाहिये—

१ हिस्सा खल तिलकी	६ छटाँक	१॥ सेर
१ ,, चोकर गेहूँका	६ छटाँक	
२ ,, जौका दाना	१२ छटाँक	

कुल वजन सूखी सामग्री ६ सेर

सूचना—हमने चनेका दाना नहीं रक्खा, क्योंकि यह दाना-खलके मुकाबले महँगा पड़ता था।

षष्ठ विवरण-पत्र

दूध देनेवाले जानवरोंको पोषक खूराकके अलावा दूध उत्पन्न करनेके लिये प्रति तीन सेर गायके दूधके लिये और सवा दो सेर भैंसके दूधके लिये १ सेर दाना-खल नीचे लिखे किसी समूहकी मिलावटके अनुसार या एक समूहको दूसरे समूहमें जोड़कर सुविधा और सस्तेपनका खयाल रखते हुए दीजिये—

१.	१ हिस्सा पहली श्रेणीका दाना-खल	
	३ ,, दूसरी ,, ,,	
	४ ,, चौथी ,, ,,	
२.	१ ,, पहली ,, ,,	
	१ ,, तीसरी ,, ,,	
	२ ,, चौथी ,, ,,	
३.	१ ,, पहली ,, ,,	
	४ ,, तीसरी ,, ,,	
४.	१ ,, पहली ,, ,,	
	२ ,, चौथी ,, ,,	
५.	१ ,, दूसरी ,, ,,	
	२ ,, तीसरी ,, ,,	
६.	३ ,, दूसरी ,, ,,	
	२ ,, चौथी ,, ,,	

सूचना १—हिसाब लगानेमें उस दूधको जोड़ना न भूलिये, जो गाय या भैंसका बच्चा सीधे थनोंसे पी लेता है।

सूचना २—फोलर, चावलकी भूसी, शीरा इत्यादि जब चौथी श्रेणीका दाना-खल करके दें, तब उसके साथ उसके वजनका $\frac{1}{6}$ हिस्सा पहली श्रेणीका और $\frac{1}{3}$ हिस्सा दूसरी श्रेणीका दाना-खल हिसाबसे अतिरिक्त दीजिये।

सूचना ३—जब गाय या भैंसको करीब तमाम चारा चौथी श्रेणीके चारेमेंसे दिया जा रहा हो, उस समय खल-दाना समूह ३ या ५ के अनुसार देनेसे अच्छा होगा।

सूचना ४—अधिक दूध देनेवाले जानवरोंको प्रायः उनके वजनके हिसाबसे प्रतिमन १ सेर सूखी सामग्रीसे ज्यादा ही खूराक दी जाती है। उनके खूराक पचानेके साधन खासकर अच्छे होते हैं। इसलिये ज्यादा दूध देनेवाले जानवरोंको १ छटाँकसे ४ छटाँक प्रतिमन उनके वजनके अनुसार आवश्यकतानुसार अधिक सामग्री देनी चाहिये।

उदाहरण

प्रश्न—एक गाय जिसका वजन १०-११ मन अर्थात् ८००-९०० पौंड है, वह कुल ८ सेर दूध मय उस दूधके जो अपने बच्चेको पिलाती है, देती है। उसको क्या खूराक देनी चाहिये? हमारे पास जुवारकी कुट्टी, हरी मोठ, बरसीम, मूँगफलीकी खल, गुँवारका दाना, गेहूँका चोकर और जौका दाना है।

उत्तर—कुल खूराकका वजन करीब १२ सेर अर्थात् २४ पौंड चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक दूसरेके अनुसार तथा षष्ठ विवरण-पत्रकी अन्तिम सूचना ४ के अनुसार होना चाहिये।

तजवीज—**पोषणमात्रके लिये**—चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक दूसरेकी तजवीज चौथीके अनुसार जुवारकी कुट्टीके साथ नीचे लिखी खूराक देनी चाहिये—

१ हिस्सा जुवारकी कुट्टी करीब बरसीम	७॥ सेर
१ ,, पहली श्रेणीके हरे चारेमेंसे बरसीम	७॥ सेर
जिसका सूखा वजन	१॥ सेर

(क्योंकि बरसीम दूधके जानवरोंके लिये मोठसे अच्छा होता है)

पूरक मूँगफलीकी खल	२ छ०

उत्पादक खूराक—षष्ठ विवरण-पत्र ६ के समूह दूसरेके अनुसार ऽ२॥≈ अर्थात् ४३ छ० देनी चाहिये—

१ हिस्सा पहली श्रेणीमेंसे मूँगफलीकी खल	११ छ०	२॥। सेर
१ ,, तीसरी ,, ,, गेहूँका चोकर	११ छ०	
२ ,, चौथी ,, ,, जौका दाना	२२ छ०	
कुल वजन सूखी सामग्री		११॥।= सेर

सूचना—हमने गुँवारका दाना इसलिये नहीं दिया कि यह दाना-खलमें सबसे ज्यादा देरमें पचनेवाला था और मूँगफलीकी खलके मुकाबलेमें महँगा भी पड़ता था।

सप्तम विवरण-पत्र

गाभिन गायको उसके पोषणमात्रके लिये तथा दूध देनेके लिये या अन्य किसी कारणसे जो खूराक दी जाती है, उसके अलावा उसको गर्भ पालनेके लिये पाँच मासका गर्भ हो जानेके बाद १२ छ० दूधकी गायोंको जो दाना-खल दिया जाता है, उसमेंसे दीजिये और ७ मासका गर्भ हो जानेके पश्चात् १ सेर गेहूँका चोकर या अन्य शीघ्र पचनेवाला तीसरी श्रेणीका दाना-खल अतिरिक्त देना चाहिये अर्थात् ७ मासके बाद कुल १॥। सेर दाना-खल सिर्फ गर्भपुष्टिके लिये देना चाहिये।

उदाहरण

प्रश्न—एक आठ महीनेकी गाभिन गाय है, जिसका वजन ८५० पौंड अर्थात् १०॥ मनके करीब है, अब दूध नहीं दे रही है; उसको क्या खूराक देनी चाहिये? हमारे पास गेहूँका भूसा, हरी जई, तिलकी खल, चोकर, गुँवार, जौ तथा चना है।

उत्तर—कुल खूराकका वजन चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक ४ के अनुसार १०-११ सेर होना चाहिये।

पोषणमात्रके लिये—चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक ३ तजवीज पाँचवींके अनुसार—

१ हिस्सा गेहूँका भूसा	६॥ सेर
१ हिस्सा हरी जई ६॥ सेर, जिसका सूखा वजन	१॥=सेर
पूरक—तिलकी खल	८ छ०

गर्भपोषणके लिये—सप्तम विवरण-पत्रके अनुसार दाना-खल नीचे लिखे अनुसार देना चाहिये— १॥। सेर

दूधकी गायोंको जो दाना-खल दिया जाता है, उसमेंसे षष्ठ विवरण-पत्रके समूह १ के अनुसार—

१ हिस्सा पहली श्रेणीमेंसे तिलकी खल	१॥ छ०	१२ छ०
३ ,, दूसरी ,, गुँवारका दाना	४॥ छ०	
४ ,, चौथी ,, जौका दाना	६ छ०	
और गेहूँका चोकर		१ सेर
कुल वजन सूखी सामग्री		१०।= सेर

सूचना—चना महँगा था इसलिये नहीं दिया।

अष्टम विवरण-पत्र

पहली बार ब्यायी या गाभिन बहड़ी (बछड़ी) को उसके वजनके अनुसार पोषक तथा दूध देनेके अनुसार दूधके लिये, या गाभिन हो तो गर्भकी बढ़ोतरीके लिये, जो खूराक दी

-जाती है, उसके अलावा इस अवस्थामें उसकी बढ़ोतरीके लिये उसको आध सेर तिल, सरसों, मूँगफली या बिनौलेमेंसे कोई भी खल अथवा १२ छटाँक चोकर या चनेका या दूसरी और तीसरी श्रेणीके दानेमेंसे शीघ्र पचनेवाली कोई भी चीज अवश्य दीजिये ।

उदाहरण

प्रश्न—पहली बार ब्यायी हुई बहड़ी जिसका वजन ७०० पौंड है और जो ६ सेर दूध देती है, उसको क्या खूराक देनी चाहिये ? हमारे पास हरी बरसीमका चारा, जुवारकी कुट्टी, तिलकी खल, चना, जौ तथा गुँवार है ।

उत्तर—कुल खूराकका वजन चतुर्थ विवरण-पत्रके ४ कोष्ठक ३ के अनुसार ८-९ सेर होना चाहिये—

पोषणमात्रके लिये—विवरण-पत्र ४ कोष्ठक ४ की तजवीज ४ के अनुसार—

१ हिस्सा जुवारकी कुट्टी	५ सेर
१ ,, हरी बरसीम ५ सेर, जिसका सूखा वजन	१ सेर
पूरक—तिलकी खल	२ छ०

दूध-उत्पत्तिके लिये—षष्ठ विवरण-पत्रके समूह २ के अनुसार ६ सेर दूधके लिये नीचे लिखा २ सेर खल-दाना देना चाहिये—

१ हिस्सा पहली श्रेणीमेंसे तिलकी खल ८ छ०	२ सेर
१ ,, तीसरी ,, ,, चनेका दाना ८ छ०	
२ ,, चौथी ,, ,, जौका दाना १६ छ०	

सूचना—बहुत गरमीका मौसम था । गुँवार बहुत गर्म होती है, इसलिये नहीं दी ।

बहड़ियोंके लिये विशेष खूराक—अष्टम विवरण-पत्रके अनुसार उनकी बढ़ोतरीके लिये खास खूराक—

चनेका दाना १२ छ०

कुल वजन सूखी सामग्रीका ८ सेर १४ छटाँक

नवम विवरण-पत्र

साँड़ (Stub Bnlls) को उनके वजनके अनुसार पोषक खूराकके अलावा, मामूली कामके लिये अर्थात् एक मासमें औसतन २–४ गाय गाभिन करे तो १$\frac{3}{4}$ सेर और इससे ज्यादा काम करनेके लिये अर्थात् औसतन ५–६ गाय गाभिन करे तो २$\frac{1}{2}$ सेर प्रतिदिन दूधके लिये जिन समूहोंमेंसे दाना-खल देते हैं, उनमेंसे नं० १, २, ५, ६ के किसीमेंसे दीजिये ।

उदाहरण

प्रश्न—एक साँड़ जिसका वजन ११००पौंड अर्थात् १३॥। मन है और जो ४–५ गाय प्रतिमास गाभिन करता है, उसको क्या खूराक देनी चाहिये ? हमारे पास गुँवार, चना, चोकर, जौ तथा सरसोंकी खल और बाजरेकी पूली (सूखा चारा), और हरा गुँवार, मोठ इत्यादिका चारा है ।

उत्तर—कुल खूराकका वजन चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक १ के अनुसार १३ सेर होना चाहिये ।

पोषणमात्रके लिये—चतुर्थ विवरण-पत्र कोष्ठक २ की तजवीज ४ के अनुसार—

१ हिस्सा बाजरेकी कुट्टी	८ सेर
१ ,, हरा गुँवार या मोठका चारा ८ सेर, सूखा वजन	२ सेर
पूरक चतुर्थ विवरण-पत्रके अनुसार करीब८०० पौंडके जानवरके लिये ६ छटाँक चाहिये, इससे बड़े ११०० पौंड वजनवालेके लिये करीब	८ छ०

साँड़ोंको कामके लिये—नवम विवरण-पत्रके अनुसार जो साँड़ ४-५ गाय प्रतिमास गाभिन करता है, उसे दूधके लिये जो खल-दाना दिया जाता है, उसमेंसे ५ और ६ समूहके जोड़के अनुसार २$\frac{1}{2}$ सेर दाना-खल देना चाहिये—

४ हिस्सा दूसरी श्रेणीमेंसे गुँवारका दाना २० छ०	२॥ सेर
२ ,, तीसरी ,, ,, चोकर ,, १० ,,	
२ ,, चौथी ,, ,, जौ ,, १० ,,	

सूचना—इसमें सरसोंकी खल इसलिये नहीं दी, कि साँड़ोंको जहाँतक हो तेलवाली चीजें कम देनी चाहिये । परन्तु उपर्युक्त खूराकमें करीब-करीब सब चीजें कब्ज करनेवाली हैं; इसलिये यदि उपर्युक्त खूराक देनेसे साँड़को कब्ज रहे तो हरा गुँवारका चारा न देकर उसकी जगह भी मोठका चारा देना चाहिये । फिर भी कब्ज रहे तो उपर्युक्त दाना-खलके बदले नीचे लिखा दाना-खल देना चाहिये—

समूह ५के अनुसार—

१ हिस्सा दूसरी श्रेणीमेंसे गुँवारका दाना १४ छ०	२॥ सेर
२ ,, तीसरी ,, चोकर २६ ,,	
कुल सूखी सामग्रीका वजन	१३ सेर

दशम विवरण-पत्र

काम करनेवाले जानवरोंको अर्थात् बैलोंको उनके

वजनके अनुसार पोषक खूराकके अलावा उनके कामके बदले नीचे लिखे अनुसार और दाना-खल दीजिये—

	प्रतिदिन प्रति बैल सख्त (करीब ९ घंटे) कामके लिये	प्रतिदिन प्रति बैल औसत दर्जेके (करीब ६ घंटे) कामके लिये	प्रतिदिन प्रति बैल मामूली (करीब ३ घंटे) कामके लिये
१. उन बैलोंको, जिनकी एक जोड़ी एक एकड़ जमीन प्रतिदिन ८–९ घंटेमें भली प्रकार देशी हलसे जोत देती हों—	३ सेर	२ सेर	१ सेर
२. उन बैलोंको, जिनकी एक जोड़ी २/३ एकड़ जमीन प्रतिदिन ८–९ घंटेमें भली प्रकार देशी हलसे जोत देती हों	२॥ सेर	१। सेर	१२ छटाँक
३. उन बैलोंको, जिनकी एक जोड़ी १/३ एकड़ जमीन प्रतिदिन ८–९ घंटेमें भली प्रकार देशी हलसे जोत देती हों	१८ छटाँक	१२ छटाँक	६ छटाँक

उपर्युक्त हिसाबसे दाना-खल नीचे लिखे किसी समूहकी मिलावटके अनुसार या एक समूहको दूसरे समूहमें जोड़कर सुविधा और सस्तेपनका खयाल रखते हुए दीजिये—

१. { १ हिस्सा चौथी श्रेणीका दाना-खल
    १ ,, तीसरी ,, ,,

२. { २ से ३ हिस्सा चौथी ,, ,,
    १ ,, दूसरी ,, ,,

३. { ४ से ५ ,, चौथी ,, ,,
    १ ,, पहली ,, ,,

उदाहरण

प्रश्न—बैलोंकी १ जोड़ी, जो करीब ३/४ एकड़ जमीन भली प्रकार जोत सकती है, ५-६ घंटे पूरी ताकतसे रोज काम करती है, उसके एक बैलको क्या खूराक देनी चाहिये, जिसका वजन करीब १२ मन है? हमारे पास हरी जुवार, गेहूँका भूसा, सरसोंकी खल, गुँवारका दाना तथा जौका दाना है।

उत्तर—चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक १ के अनुसार कुल वजन खूराकका १२ सेर प्रतिबैल होना चाहिये।

पोषणमात्रके लिये—चतुर्थ विवरण-पत्रके कोष्ठक चौथेकी तजवीज पाँचवींके अनुसार हरी जुवार और गेहूँके भूसेके साथ नीचे लिखी चीजें देनी चाहिये—

गेहूँका भूसा	५ सेर
हरी जुवार करीब १५ सेर, जिसका सूखा वजन	५ सेर
पूरक—खल सरसों	६ छ०

काम करनेके लिये खूराक—दशम विवरण-पत्रके कोष्ठक दूसरेकी तजवीज दूसरी और समूह दूसरेके अनुसार १॥ सेर दाना-खल चाहिये—

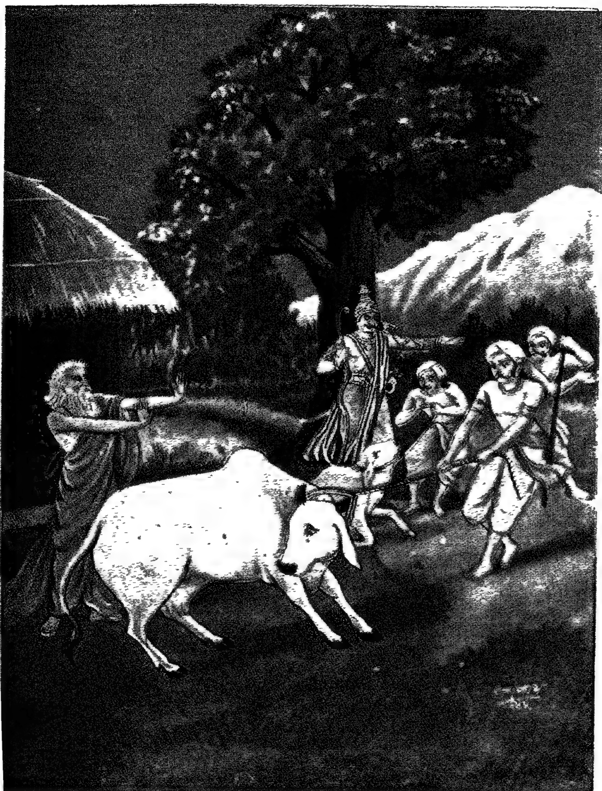
२ हिस्सा चौथी श्रेणीमेंसे जौका दाना	१ सेर
१ ,, दूसरी ,, गुँवारका दाना	१/२ सेर
कुल वजन सूखी सामग्री	११ सेर १४ छटाँक

एकादश विवरण-पत्र
भारतवर्षकी अनेक जातियोंके जानवरोंका अंदाजन वजन*

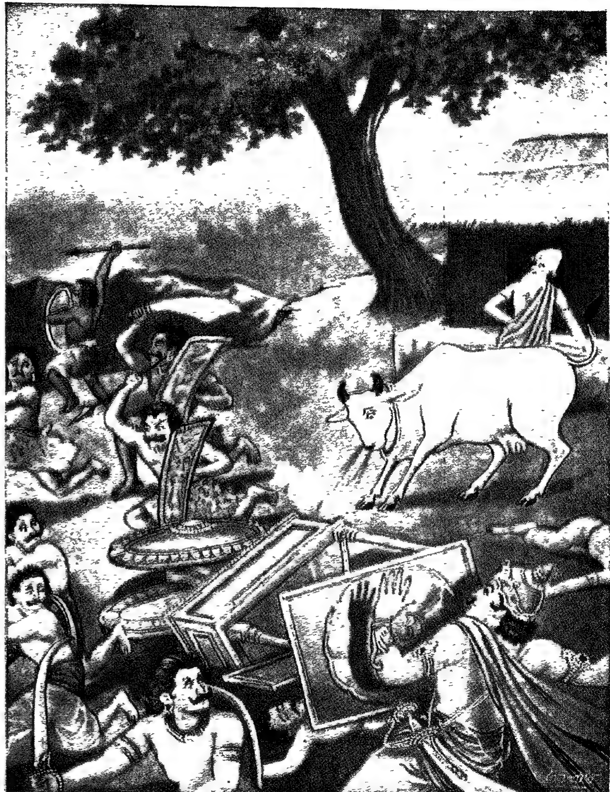
(क) बँगला, आसामी, उत्तरी-पूर्वी, बिहारी, कुछ उत्तरी भारतवर्षकी छोटी गायोंका औसत वजन प्रतिगाय ५०० पौंडसे ६०० पौंड (६ मनसे ७॥ मनतक) होता है।

(ख) मद्रासकी कंगायम, सिंधी, पूर्वी युक्तप्रान्तकी, दक्षिणी पश्चिमी बिहारकी, शाहाबादी, थार्पारकर, धन्नी पंजाबकी, डाँगी सूबे बम्बईकी, दक्षिणी हैदराबादी हल्लीकर, तथा सी० पी० की गावलाव जातिकी गायोंका औसत वजन प्रति-गाय ६०० पौंडसे ७००पौंडतक यानी ७॥ मनसे ९ मनतक होता है।

* बिना तौले वजन जाननेकी रीति यह है कि पशुके जहाँसे पूँछ निकलती है, वहाँ एक उभरी हुई हड्डी होती है। छातीके पास अगले पैरोंके सबसे ऊपरके हिस्सेके पास भी एक उभरी हुई हड्डी होती है। पहली हड्डीसे दूसरी हड्डीतककी लंबाई इंचोंमें नाप लो और छातीके शरीरकी मोटाई, जैसे दरजी कुर्तेका नाप लेते समय नापता है, वैसे इंचोंमें नाप लो। पहले नापी हुई लंबाईको मोटाईसे गुणा कर लो। जो गुणनफल आवे, उसको बड़ा जानवर हो तो ९। इंचसे, बीचका हो तो ८॥ से और बहुत छोटा हो तो ८ से भाग कर दो। जो भागफल आयेगा, वह उसका अंदाजन वजन सेरोंमें होगा। उसमें ४० का भाग देकर मन बना लो या दोसे गुणा करके पौंड बना लो।



सहस्रार्जुनद्वारा महर्षि जमदग्निकी गौका हरण



विश्वामित्रद्वारा महर्षि वशिष्ठकी होमधेनुका हरण

[पृष्ठ २८०

(ग) हरियाना, साहीवाल या मंटगुमरी, कोसी, मैसूर, उत्तरी-पूर्वी राजपूताना, नागोर तथा मध्यप्रदेशकी मालवी जातिकी गायोंका औसत वजन प्रतिगाय ७०० पौंडसे ८०० पौंडतक यानी ९ से १० मनतक होता है।

(घ) गीर (काठियावाड़ी), काँकरेज, हिसार, अंगोल इत्यादि जातिकी गायोंका औसत वजन प्रतिगाय ८०० पौंडसे ९५० पौंडतक यानी १० मनसे १२ मनतक होता है।

उपर्युक्त वजन गायोंका है। आमतौरसे बैलोंका वजन गायोंके मुकाबिलेमें १०० से १२५ पौंड (१। मनसे १॥ मन) और साँड़ोंका वजन १०० से १५० पौंड (१। मनसे २ मन) अधिक होता है।

गो-चिकित्सा पुण्य है

भारत-जैसे निर्धन, परतन्त्र एवं पिछड़े हुए देशमें, जहाँ लाखों-करोड़ों मनुष्योंके स्वास्थ्यकी किसीको चिन्ता नहीं, मूक पशुओंकी चिकित्साके विषयमें सोचना कुछ व्यक्तियोंकी दृष्टिमें एक हास्यजनक बात होगी। किन्तु विचार करके देखें तो बात ऐसी नहीं है। पशुओंके स्वास्थ्यपर ही मनुष्योंका स्वास्थ्य निर्भर करता है, जैसा कि इस अङ्कके अन्य लेखोंसे ज्ञात होगा। कुछ लोग तो ऐसे हैं, जो पशुओंके स्वास्थ्यको उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हैं; परन्तु अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जो आकाङ्क्षा रहनेपर भी पशुओंके बीमार होनेपर या किसी दूसरे समय उन्हें कौन-सी दवा अथवा पथ्य देना चाहिये, किन-किन कारणोंसे उनमें भाँति-भाँतिके रोग आते हैं और किस प्रकार वे पूर्ण स्वस्थ रह सकते हैं—यह नहीं जान सकते। गो-चिकित्साका विषय तो एक तरहसे घृण्य-सा हो रहा है; गो-वैद्य कहनेसे चिकित्सकको ग्लानि होती है। प्राचीन भारतमें तो पालकाप्य-जैसे महर्षि तथा ऋतुपर्ण, नल एवं नकुल-जैसे महाराज गो-चिकित्सक एवं पशु-चिकित्सक थे। अग्नि और गरुड़पुराण, बृहत्संहिता एवं सुश्रुतके चिकित्सा-ग्रन्थोंमें गो-चिकित्सापर बहुत कुछ लिखा गया है।

परन्तु आजकी स्थिति बड़ी विकट है। कुछ भोले धर्मभीरु भाइयोंकी तो यह धारणा हो गयी है कि देवी-तुल्य गो-माताके शरीरमें अस्त्र-प्रयोग करना सबसे बड़ा पाप है। वैसे चाहे वह सड़-गलकर तड़फती रहे और अपने इस भौतिक शरीरको छोड़ भी दे। दूसरे, यह भी एक भय है कि ओषधि करते हुए यदि दुर्भाग्यवश यथायोग्य ओषधि न दी जा सके और कुचिकित्साके कारण गायके प्राण चले जायँ तो चिकित्सकको गो-हत्याका महान् पाप लगेगा। तीसरे, गो-चिकित्साद्वारा अर्थ उपार्जन करना पाप है; पर बिना कुछ लिये चिकित्सा करनेको न तो समय है और न मन ही। इन्हीं भ्रान्त, शास्त्र-असम्मत एवं घातक धारणाओंके पीछे पड़कर कोई भी भला मनुष्य गो-चिकित्साके क्षेत्रमें प्रवेश नहीं करता, अतएव गो-चिकित्साका यत्किञ्चित् भार मूर्खोंके हाथमें पड़ा हुआ है। उपर्युक्त विषयोंपर पूर्णरूपसे विचार करनेपर ज्ञात होता है कि गो-चिकित्साके विषयमें लोगोंमें फैली हुई यह धारणा न तो शास्त्रसम्मत है न नीतिसम्मत, और न यह बुद्धिवादकी दृष्टिसे ही ठीक है। भला जरा सोचें तो सही—जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त ही नहीं, मृत्युके पश्चात् भी हमारी सब प्रकारसे सेवा करनेवाली माता गौके बीमार होनेपर या आहत होनेपर उसकी चिकित्सा करना पापकी श्रेणीमें गिना जायगा कि महान् पुण्यमें? हमारे विचारसे तो ऐसी गायोंकी चिकित्सा, सेवा एवं शुश्रूषा करनेसे पाप होना तो दूर रहा, कर्त्ताके जन्म-जन्मान्तरके अनेकों पाप नष्ट हो जाते हैं।

आपस्तम्ब और संवर्त आदि स्मृतियोंके वचनोंसे यह बात और भी पुष्ट हो जाती है कि उपकारकी दृष्टिसे गो-चिकित्सा करते समय यदि कुछ हानि भी हो जाय तो उसमें भली नीयतसे काम करनेवालेको कोई अपराध नहीं लगता—

यन्त्रणे गोचिकित्सार्थे मूढगर्भविमोचने।
यत्ने कृते विपत्तिश्चेत् प्रायश्चित्तं न विद्यते॥

(आपस्तम्ब० १। ३१-३२)

औषधं स्नेहमाहारं ददद् गोब्राह्मणेषु च।
दीयमाने विपत्तिः स्यात् पुण्यमेव न पातकम्॥

(संवर्त० श्लो० १३८)

अर्थात् यत्नपूर्वक गो-चिकित्सा करने अथवा गर्भसे मरा हुआ बच्चा निकालनेमें यदि गायपर कोई विपत्ति भी आ जाय तो प्रायश्चित्त करनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि गौ और ब्राह्मणको उनके लाभके लिये कोई औषध, तैल, आहार आदि दिया जाय और उससे उनपर कोई विपत्ति आ जाय तो भी पाप नहीं होता, वरं पुण्य ही होता है।

शास्त्रोंके वचनोंसे ज्ञात होता है कि पाप और पुण्य मनुष्यकी भावनापर निर्भर है। हम गुस्सेमें आकर किसीके शरीरपर साधारण-सी चोट लगा देते हैं तो पाप हो जाता है; किन्तु डाक्टर लोग बड़े-बड़े ऑपरेशन कर डालते हैं और कइयोंके अङ्ग भी काट डालते हैं, फिर भी वे पुण्यात्मा समझे जाते हैं; इसका कारण यही है कि हमारा कृत्य हिंसा, द्वेष एवं परपीडनकी भावनासे भरा होता है और डाक्टरका काम देखनेमें अत्यन्त दोषपूर्ण होते हुए भी प्रेम, उपकार एवं हितकी पवित्र भावनासे प्रेरित है। वस्तुतः क्रियाका महत्त्व भावनाके सामने बिल्कुल गौण है। बस, गो-चिकित्साके विषयमें हमें इस सिद्धान्तको सामने रखकर बिना किसी प्रकारके संकोचके कार्य करना चाहिये। जिस प्रकार मनुष्यकी डाक्टरी चिकित्सामें काटना, चीरना आदि आवश्यक होनेके कारण किसीको उसमें घृणा नहीं है और सभी तरहके लोग निःसंकोच भावसे यह कार्य करते हैं, उसी प्रकार गो-चिकित्साके विषयमें सभी तरहके सुयोग्य पुरुषोंको पूरे उत्साहके साथ भाग लेना चाहिये। ऐसा करनेसे ही हम अपने कर्तव्यका पालन कर सकेंगे।

पशुओंके रोग, उनके लक्षण और चिकित्सा

पशुओंको भी रोग उतना ही कष्ट देते हैं, जितना कि मनुष्योंको। अन्तर इतना ही है कि हम मनुष्य विवेक-साधन तथा उपायोंद्वारा किसी सीमातक रोग दूर करके कष्टका निवारण कर लेते हैं; किन्तु बेचारे मूक, असहाय, विवश तथा केवल पूँछ हिलानेतकका उपाय कर सकनेवाले पशु रोग-ग्रसित होकर कष्टोंको सहते रहते हैं। पर मनुष्य-जातिकी शोभा इसमें नहीं है। जिसने अपनी बुद्धि तथा सामर्थ्यका उपयोग अपने ही लिये किया, उसने क्या किया? मनुष्यका यह कर्तव्य है कि परिवारके प्राणीके समान एक ही घरमें रहनेवाले अपने पशुओंके भी दुःखको दूर करनेके लिये कुछ उठा न रक्खे। सोचा जाय तो ऐसा करनेमें वह पशुओंके ऊपर कोई एहसान नहीं करेगा, यह उसका धर्म है; क्योंकि मनुष्यने ही तो उन्हें प्रकृतिकी गोदीसे छीनकर अपने कामके लिये अपने घरमें बाँध रक्खा है। जंगली पशुओंकी दवा करने कौन जाता है? प्रकृति माता स्वयं उनकी देख-भाल करती है। अतः यदि मनुष्य प्रकृति मातासे माँगकर लाये हुए पशुओंके दुःख-सुखकी परवा नहीं करता तो यह उसकी कृतघ्नता है। और वह प्रकृतिदेवीका कोप-भाजन बनकर दण्डका भागी होगा।

हमारे शास्त्रोंमें कहा हुआ है कि जबतक रोगी, भयभीत, चकित, बाघ अथवा चोर आदिसे संतायी हुई, ऊँचे स्थानसे गिरी हुई, दलदलमें फँसी हुई, सर्दी-गर्मीसे पीड़ित तथा अन्य किसी प्रकारसे दुःखित गौका उद्धार न कर ले, तबतक आर्यसन्तान कोई दूसरा कार्य न करे। यथा—

> आतुरां मार्गशस्तां वा चौरव्याघ्रादिभिर्भयैः।
> पतितां पङ्कलग्नां वा सर्वोपायैर्विमोचयेत्॥
> ऊष्मे वर्षति शीते वा मारुते वाति वा भृशम्।
> न कुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वा तु शक्तितः॥

तात्पर्य यह कि जिस प्रकार अपने किसी घरवालेको खाँसी-बुखार हो जानेपर हम वैद्यके पास दौड़ने लगते हैं, उसी प्रकार अपने पालित पशुओंके रोगोंको दूर करनेके लिये भी हमें सचेष्ट होना चाहिये।

पशुओंकी रोगावस्थामें पशुशालाका प्रबन्ध

किसी पशुके रोग-ग्रस्त हो जानेपर उसे पशुशालासे हटाकर किसी अलग स्थानमें रखना चाहिये। इस प्रकार दूसरे नीरोग पशुओंकी रक्षा होगी। यदि छूतकी बीमारी न हो, तो भी रोगी पशुको अलग हटा देना ही ठीक है; क्योंकि प्रेम, द्वेष तथा सहानुभूतिका भाव पशुओंमें भी होता है। जब अन्य पशु अपने किसी साथीको दुखी या उदास देखेंगे तो वे भी उदास होकर खाना-पीना छोड़ सकते हैं। रोगी पशुका दाना-पानी दूसरे पशुओंके दाना-पानीमें न मिलने पाये।

रोगी पशुकी देख-भाल

रोगी पशुकी देख-भाल बड़ी सावधानीसे करनी चाहिये। उसको ऐसे स्थानपर रखना चाहिये, जहाँ हवा और प्रकाश अच्छी तरह आये-जाये; किन्तु पशुके ऊपर न हवाका झोंका सीधा लगे, न तो धूप लगे। मक्खी-मच्छड़ोंसे बचानेके लिये गूगल, गन्धककी धूप या साधारण धुआँ कर देना चाहिये। पशुको दवा आदि पिलाते समय उसके साथ बहुत जबर्दस्ती करके उसे अधिक कष्ट न दिया जाय। यदि पशु एक दिनसे अधिक एक करवट पड़ा रहे तो उसे करवट बदलानेकी चेष्टा करनी चाहिये। रोगकी पहचान या निदान जल्दबाजीमें

नहीं, वरं ठीकसे किसी चतुर व्यक्ति या चिकित्सकसे कराना चाहिये। अच्छे हो जानेपर उसे अन्य पशुओंके साथ मिलानेमें बहुत जल्दी करना ठीक नहीं। कोई तेज या जहरीली दवा लगानी हो तो ध्यान रखना चाहिये कि इधर-उधर न लग जाय। मालिकको नौकरोंपर ही भरोसा न करके दिनमें दो-एक बार स्वयं देखना चाहिये।

रोग होनेके सामान्य कारण

१. चारा-दाना आवश्यकतासे कम मिलना, २. खूराकमें आवश्यक पौष्टिक तत्त्वोंका मेल न होना, ३. सड़ा-गला दाना-चारा खाना तथा गंदा पानी पीना, ४. गंदे स्थान, अधिक सर्दी-गर्मी और वर्षासे बचनेका प्रबन्ध न होना तथा ५. छूतकी बीमारियोंसे स्वस्थ पशुओंको बचानेके विषयमें गोपालककी अनभिज्ञता।

रोगी पशुके लक्षण

१. दूध कम देना या न देना, २. उदास रहना, ३. झुंडसे अलग रहनेकी इच्छा, ४. चारे-दानेका त्याग, ५. जुगाली न करना, ६. गोबर न करना या पतला करना, ७. बार-बार उठना-बैठना, ८. आँखोंका लाल हो जाना, ९. जल्दी-जल्दी साँस लेना, १०. मुख सूखना और ११. मुख और नाकसे पानी गिरना।

स्वस्थ गाय, बैल और भैंसका तापमान प्रायः १०१° से १०४° तक होता है, नाड़ीकी गति प्रतिमिनट ४५ से ५० बारतक है और साँस प्रतिमिनटमें १०-१२ बार आती है। इससे विपरीत हो तो पशुको रोगी समझना चाहिये।

दवाकी मात्रा

रोगी पशुओंके लिये आगे जो दवाओंकी मात्रा लिखी है, वह पूरे प्रौढ़ पशुके लिये है, जिसका वजन १० मनके लगभग हो। अवस्था तथा वजनके अनुसार इस मात्रामें अन्तर पड़ेगा।

जन्मसे १ मासतक	१/१६	मात्रा
२ माससे ४ ,,	१/८	,,
४ ,, ६ ,,	१/४	,,
६ ,, १२ ,,	१/३ या १/२	,,
१ सालसे २ सालतक	१/२ या ३/४	,,
२ सालसे ऊपर	पूरी मात्रा	

एक रोगकी कई-कई दवाइयाँ आगे दी गयी हैं, उनमेंसे कोई एक करनी चाहिये। एक लाभ न करे तो दूसरीका प्रयोग करना चाहिये।

छोटे बच्चोंके रोग और उनकी चिकित्सा

मनुष्यके बच्चोंकी भाँति गाय-भैंसके बच्चे भी मिट्टी चाटनेमें बड़े हातिम होते हैं। कभी-कभी वे इतनी मिट्टी चाट जाते हैं कि वह उनके पेटमें सड़ जाती है और कीड़े पड़ जाते हैं। कीड़े पड़ते ही बच्चा निर्बल होकर प्रायः मर जाता है। पहली रोक तो यह है कि बच्चोंके मुँहमें मुसका (जाली) चढ़ा दे, जिससे वे मिट्टी न चाट सकें, और यदि कीड़े पड़ गये हों तो आधी छटाँक कबीला पीसकर आध पाव दहीमें मिलाकर देनेसे लाभ होता है।

कभी-कभी बच्चोंके पेटमें दूध जम जाता है, जिससे पाचनशक्ति मारी जाती है। इस रोगमें मट्ठा एक पाव, सरसोंका तेल आध पाव तथा नमक आधी छटाँक मिलाकर बच्चेको पिलाना चाहिये। इसमें एक छटाँक अमकलीको पानीमें भिगोकर और आध पाव सरसोंके तेलमें मिलाकर देना भी लाभकारी है।

यदि सड़ा-गला दाना-चारा खा लेनेसे अथवा गर्म और गंदा पानी पी लेनेसे बच्चेको पेचिश हो गयी हो और गोबरके साथ खून आता हो, तो आध पाव लिसोढ़ाके पत्तोंको पानीमें पीस-छानकर पिलाना चाहिये अथवा आधी छटाँक ईसबगोल एक छटाँक आँवलेके पानीमें देनेसे बहुत लाभ होता है।

जब बच्चेको खाँसी हो जाय तो केलेके सूखे पत्तोंकी राख बना ले और एक पैसेसे दो पैसे भरतक इस राखको आधी छटाँक घीमें मिलाकर एक पाव कच्चे दूधके साथ बच्चेको पिलाना चाहिये।

मूत्रके साथ खून आनेपर कलमी शोरा चौथाई छटाँक-से आधी छटाँकतक एक पाव कच्चे दूध और इतने ही पानीके साथ पिला देना चाहिये।

पेटमें दर्द हो तो चौथाईसे आधी छटाँकतक पीनेकी तमाखू पानीमें घोल-छानकर पिलाना ठीक है।

खुजलीकी भयङ्कर बीमारी भी बच्चोंको प्रायः हो जाती है। इसके लिये निम्नलिखित पाँच प्रकारकी दवाइयाँ हैं—

१. छटाँक लहसुनको आध पाव चने या जौके आटेमें मिलाकर पाँच दिनतक खिलाये।

२. सूखे नीमके पत्तोंका चूरा नमकमें डालकर चने या जौके आटेके साथ मिलाकर देना चाहिये ।

३. मसूरकी दाल तथा सुपारी, दोनोंको जलाकर इनकी राखको नीमके तेलमें डालकर शरीरमें लेप करे ।

४. पीली सरसोंको कपड़े धोनेवाले साबुनमें मिलाकर शरीरमें लेप कर दे और ४-६ घंटे पीछे फिनाइलके पानीसे नहला देना चाहिये ।

५. एक पाव कड़वे तेलमें एक छटाँक गन्धक मिलाकर रख ले और शरीरपर लेप करता रहे ।

यदि बच्चेके मसूढ़े फूल गये हों और उनमें घाव हो गये हों तो उन्हें मासे अलग करके नीचे लिखी दवा करनी चाहिये—

एक पाव घी और एक छटाँक एप्सम साल्ट मिलाकर पिलाना चाहिये । घी न मिल सके तो कोई दूसरी जुलाबकी दवा दे देनी चाहिये । बच्चेके मुँहको फिटकिरीके पानीसे भली-भाँति दिनमें चार बार धोना चाहिये ।

छूतके रोग

रोग साधारणतः ३ प्रकारके होते हैं—१. छूतवाले, २. बिना छूतवाले साधारण और ३. शरीरके ऊपरके साधारण रोग ।

छूतवाले रोग बड़े भयङ्कर और बड़ी जल्दी फैलनेवाले होते हैं । इनसे अपने पशुओंकी सदा रक्षा करते रहना चाहिये । इन रोगोंसे पशुओंको बचानेके लिये नीचे लिखे उपाय करने चाहिये ।

१. जिस इलाकेमें छूतकी बीमारी हो गयी हो वहाँ अपने पशु न जाने दे, न वहाँके पशु अपने गाँवमें आने दे । २. अपने पशुओंकी देख-भाल ठीकसे करे तथा उन्हें सड़ा-गला चारा-दाना न खिलावे । ३. जहाँ सब पशु पानी पीते हों उस तालाब या नदीमें पानी न पिलाकर अपने पशुओंको कुएँसे पानी खींचकर पिलावे । ४. बीमारीवाले इलाकेकी खाल या चमड़ा न लावे । ५. छूतकी बीमारीसे मरे हुए पशुकी खाल नहीं निकालना चाहिये, उसको यों ही गाड़ देना चाहिये । ६. पशु-डाक्टरसे अपने पशुओंको टीका लगवा ले ।

१. माता (Rinderpest)

इसके कई नाम हैं, पर इसके मुख्य लक्षण हैं—आँखोंसे पानी और मुँहसे लार गिरना, शरीर काँपना, कमरका टेढ़ी हो जाना, मुँहमें छाले पड़ना और अत्यन्त बदबूदार पतला गोबर होना और उसमें कुछ खून आना ।

इसकी सर्वश्रेष्ठ दवा टीका लगवाना है । अच्छे जानवरोंको 'गोट वीरस या सीरम साइमल्टेनियस मेथड' (Goat virus or Serum simultaneous method) से रिंडरपेस्टका टीका लगवा देनेपर फिर जन्मभर यह बीमारी नहीं आती । रोग हो गया हो तो उसकी दवाइयाँ ये हैं—

१. रातको मिट्टीके बर्तनमें एक पाव आँवला भिगोकर सबेरे छान ले; फिर उस पानीमें एक पाव दही, एक छटाँक ईसबगोल और आध पाव शक्कर डालकर दिनमें दो बार खिलावे । आँवला न मिले तो धनियाका पानी काममें लावे ।

२. कत्था आधी छटाँक, सोंठ आधी छटाँक, अफीम २ आने भर, खड़ियामिट्टी १ छटाँक, देशी शराब १ छटाँक—इन सबको आधा सेर अलसीके माँड़में मिलाकर दिनमें दो बार पिलावे ।

३. बाँमी घासके बीज १ सेर बारीक पिसवाकर रख ले और आधा पाव सबेरे तथा आधा पाव शामको दही या मट्ठाके साथ देनेसे बड़ा लाभ होता है ।

४. १ औंस कपूर और २ औंस कलमी शोराको १ पाव देशी शराबमें मिलाकर पिलाना चाहिये । रोगी पशुको मुलायम चारा और चावलका माँड़ आदि खानेको देना चाहिये ।

२. जहरी बुखार अथवा गड़ी वा सूत (Anthrax)

यह रोग रक्तके विकारसे होता है । पशुको बेचैनी होती है, आँखें बाहर निकली पड़ती हैं, ज्वर बहुत हो जाता है और गोबर काले रक्तसे सना हुआ होता है । यह रोग होनेपर पशुचिकित्सकको शीघ्र बुलाना चाहिये और तबतक नीचे लिखी दवाओंमेंसे कोई पिलानी चाहिये—

१. तारपीनका तेल आधी छटाँक ।

२. फिनाइल आधी छटाँक ।

३. अलसीका तेल आधी छटाँक ।

४. गरम पानी आध सेर ।

३. गलघोंटू (Haemorrhagic Septicaemia)

यह रोग क्या है मानो मृत्युकी सूचना है । इससे गलेमें

सूजन हो जाती है और पशुका गला घुटने लगता है। प्रायः यह आश्विनके महीनेमें होता है। यह रोग रक्त दोषसे होता है। नाक-मुँहसे लार टपकती है। मुँहमें दुर्गन्ध और जीभपर घाव हो जाता है। गोबर-मूत्र बंद हो जाता है। इसकी दो-तीन दवाइयाँ हैं, सम्भव है लाभ कर जायँ।

१. दो सेर घी, १ सेर एप्सम साल्ट, १ पाव काली मिर्च और १ पाव काला जीरा मिलाकर पिला दे।
२. जमालगोटेका तेल ३० बूँद, मीठा तेल ५ छटाँक और अलसीका तेल ५ छटाँक पिलावे तथा फिटकिरीके पानीसे मुँह धोवे।
३. सूजनकी जगह गर्म लोहेसे दाग दे और बादको २ छटाँक देशी शराब, आधी छटाँक सोंठ और आधी छटाँक काली मिर्च मिलाकर पिलाना चाहिये।
४. गन्धकका चूर्ण २ तोले तथा सोंठका चूर्ण १ तोला आध सेर भातके या तीसीके* माँड़के साथ मिलाकर खिलाना चाहिये। इससे दस्त होकर रोग मिट जाता है।

४. फेफड़ेका बुखार या छूतका निमोनिया
(Contagious Pleuro-Pneumonia)

यह रोग रोगी पशुसे छू जाने, उसके फोड़ा-फुंसीकी मवाद लगने या उसके मुँहके सामने साँस लेनेसे होता है। इससे फेफड़ेपर असर होता है। पशुकी भूख कम हो जाती है, दूध घट जाता है, हल्का ज्वर सदा बना रहता है। धीरे-धीरे पशु अशक्त होकर पैर पीटने लगता है।

बुखारकी दवा ही इसमें देनी चाहिये। नीम, सफेदा, मरुआके पत्ते या तारपीनका तेल पानीमें डालकर उबालिये और उसकी भापमें पशुको साँस लेने दीजिये। १ हिस्सा तारपीनका तेल १० हिस्सा तिलके तेलमें मिलाकर छातीपर मालिश करनी चाहिये।

ऐसे रोगी पशुका दूध नहीं पीना चाहिये; बहुत लाचारी हो तो खूब उबाल लेना चाहिये।

५. खुर तथा मुँहका पकना
(Foot and Mouth disease)

इस रोगमें पशुके मुँह तथा खुरमें घाव हो जाते हैं, जिससे पशु चारा-पानी छोड़ देता है और निर्बल हो जाता है। यह रोग हवाके द्वारा भी फैलता है। एक पशुको होते ही बहुतोंको हो जाता है।

१. अमकली आधा पाव, कटेली पीलीका फूल १ छटाँक— इन दोनोंको औटाकर काढ़ा बनाकर पिलावे।
२. पुराना गुड़ १ सेर तथा सौंफ १ पाव १ सेर पानीमें औटाकर पिलावे।
३. आधा सेर एप्सम साल्ट गर्म पानीमें डालकर पिलाना चाहिये।

उपर्युक्त दस्तावर दवाइयाँ पेट साफ करनेके लिये हैं। इसके बाद और दवा भी करनी चाहिये—

१. आँवलेके पानी, बबूलकी छाल उबाले हुए पानी, फिटकिरी या सुहागेके पानी अथवा तूतियाके पानीसे मुँह और पैर धोवे। आँवलेका पानी पिलावे। नीमका तेल या कोलतार पैरोंके घावपर लगावे।
२. खड़ियामिट्टी २ छटाँक, कोयला आधी छटाँक, फिटकिरी आधी छटाँक, तूतिया (नीलाथोथा) चौथाई छटाँक—इनके चूरनको घावपर भुरभुराना चाहिये।
३. कपूर, तारपीनका तेल, नीलाथोथा और पत्थरका कोयला मिलाकर घावपर लगाना चाहिये।
४. बेरके पत्तोंको उबालकर उस जलसे खुरोंको धोना चाहिये। खानेके लिये सूखी घास, चोकर या सहज पचनेवाली चीज देनी चाहिये।

६. छूतसे गर्भ गिरना (Contagious Abortion)

समयसे पहले ही गाय-भैंसोंका बच्चा फेंक देना साधारण बात है, किन्तु यह भयानक रोग है। आगे चलकर यह अन्य पशुओंमें भी फैल जाता है। तेज भागनेसे, छलाँग मारनेसे, मर्मस्थलपर चोट लग जानेसे, तोपके शब्दसे तथा किसी विषैली चीजके खानेसे गर्भपात हो जाता है।

सबसे पहले, गिरे हुए बच्चेको अलग कर देना चाहिये। मरा बच्चा हो तो दूर गड्ढेमें दबवा देना चाहिये। गरम पानीमें पोटास, फिनाइल अथवा नीमके पत्ते डालकर पशुके गर्भ-स्थानको पिचकारीद्वारा धो देना चाहिये। ८ बूँद कार्बोलिक एसिड गरम पानीमें डालकर पशुको पिलाना चाहिये। पीनेको गरम पानी दीजिये। पशुको १ महीनेतक साँड़के पास न जाने दीजिये। गर्भपातके साथ पशुने जेर न फेंका हो तो निम्नलिखित दवाओंसे उसे अवश्य निकालनेका प्रयत्न करना चाहिये—

१. पुराना गुड़ या साफ शीरा २ सेर, अजवाइन २ छटाँक,

* पाँच सेर जलमें डेढ़ पाव तीसी डालकर नरम आँचसे घंटा भर उबाले। उबालते समय बराबर हिलाते रहना चाहिये, नहीं तो जल जायगी। फिर पतले कपड़ेसे छान ले। बस, यही तीसीका माँड़ है।

सोंठ २ छटाँक, पीपल १ छटाँक और पीपलामूल आधी छटाँक—सबका काढ़ा बनाकर गर्मीमें केवल रातको और सर्दीमें दो बार देना चाहिये ।

२. जंगली तरोई १ पाव, नमक आधा पाव, अजवाइन आधा पाव तथा गरम पानी आधा सेर दिनमें दो बार देना उपयोगी माना गया है ।

३. एक सेर मिश्रीके टुकड़े-टुकड़े करके गायको खिला दे, इसके पीछे बहुत-सा पानी पिलानेसे जेर अवश्य निकल जाता है ।

४. दो सेर छिलके सहित धान खिलानेसे भी जेर गिर जाता है ।

५. दो सेर तिल खिलाना भी लाभदायक है ।

७. खूनी पेशाब (Red Water)

यह रोग भी कीटाणुओंद्वारा खूनमें विकार पैदा होनेसे होता है । बीमार पशुको काटकर मच्छर जब अच्छे पशुको काटता है, तब उसे भी हो जाता है । पशुको तेज बुखार हो जाता है, आँखें पीली पड़ जाती हैं और पेशाबमें खून आता है ।

इस रोगमें एक नीली दवाका—जिसे 'ट्रिपनब्लू' (Tryqan Blue) कहते हैं—इंजेक्शन दिया जाता है । नीचे लिखी दवासे भी लाभ होता है—

भातके माँड़के साथ डेढ़ छटाँक गुड़ और एक छटाँक देशी शराब मिलाकर पिलाना चाहिये ।

८. दूधका ज्वर (Milk-Fever)

इस रोगमें पशुकी आँखें चढ़ जाती हैं, वह खड़ा नहीं रह सकता, पैर पेटके नीचे सिकोड़ लेता है और सिर एक ओर मोड़ लेता है । गर्दन सीधी करनेपर फिर वैसा ही कर लेता है । थन सूज जाते हैं और पशु घबराता है ।

रसकपूरकी उड़दके बराबर डली हरे केलेको चीरकर उसके बीचमें रख दे और पशुको खिला दे । थोड़े कपूरयुक्त या सादे तेलकी मालिश करनी चाहिये ।

९. माता या चेचक (Cow-Pox)

यह रोग मनुष्योंकी भाँति पशुओंके लिये उतना कष्टप्रद नहीं है; फिर भी सावधान रहना चाहिये, क्योंकि रोग रोग ही है । इस रोगमें शरीरमें दर्द होता है, गाय सोना चाहती है कुछ खाती नहीं, उसे निगलनेमें कष्ट होता है । कभी-कभी पेशाब और गोबर रुक जाता है । थन या शरीरपर छोटी-छोटी फुंसियाँ निकलती हैं और १०-१५ दिन बाद सूख जाती हैं । ऐसे पशुको अलग रखकर उसको खाना-पानी देना या दुहना सफाईके साथ करना चाहिये । पशुको कोई जुलाबकी दवा या १ सेर एप्सम साल्ट गरम पानीमें मिलाकर पिला देना चाहिये । ऐसी गायका दूध निकालकर फेंक देना चाहिये या खूब उबालकर दही-घी बनाकर काममें लाना चाहिये।

माता पकनेसे ही पहले सेमल रूईके बीज खिला देनेसे बड़ा लाभ होता है । पहले दिन तीन बारमें ५० (२५, १८, ७), दूसरे दिन दो बारमें २५ (१५, १०) और तीसरे दिन एक बार केवल १० । बहुत कमजोर पशु हो या छोटी उम्र हो तो कम खिलाना चाहिये ।

१०. गजचर्म (Mange)

यह एक प्रकारकी भयङ्कर खुजली है जो पहले थुई और पूँछपर होती है, फिर धीरे-धीरे सारे शरीरमें फैल जाती है । पशु खुजलाते-खुजलाते घाव कर लेता है, चमड़ी मोटी पड़ जाती है ।

जहाँपर खांज हो, वहाँके बाल काटकर गरम पानी और साबुनसे साफ कर देना चाहिये, फिर गोबर और सरसोंका तेल मिलाकर तथा पशुको धूपमें खड़ा करके १०-१५ मिनट-तक मालिश करनी चाहिये । मालिशका तेल इस प्रकार बना ले तो और भी अच्छा है । गन्धक १ भाग, घी या तिल-का तेल ८ भाग और नीमका तेल चौथाई भाग । गन्धकको महीन पीसकर सब चीजें मिला लीजिये और आगमें भलीभाँति गरम करके मालिश कीजिये । खानेकी दवा भी देनेसे जल्दी लाभ होगा ।

खानेका नमक १ छटाँक, महीन पिसी हुई गन्धक आधा तोला आध सेर पानीमें घोलकर पिला देना चाहिये या रोटीमें रखकर खिला देना चाहिये ।

खुजली और दाद भी ऐसे ही रोग हैं, पर गजचर्मसे कम भयङ्कर हैं । इनकी भी दवा प्रायः वही है ।

११. कीड़ोंके दुंबल या मनिया फूटना (Warble Flies)

जिन पशुओंको खरहरा नहीं होता या मल-मलकर जो नहलाये नहीं जाते, उनको यह रोग हो जाता है । वर्षाके अन्तमें इस रोगके कीड़े शरीरपर आ जाते हैं और गर्मीके आरम्भमें अच्छी तरह बढ़ जाते हैं । इस रोगसे पशुको कोई विशेष कष्ट तो नहीं होता, किन्तु उसकी खाल रद्दी हो जाती है । अतः इस रोगसे पशुकी रक्षा करनी चाहिये ।

चूने और तमाखूके गर्म पानीसे पहले पीड़ित स्थानको धो देना चाहिये, फिर २॥ सेर पानीमें एक छटाँक ताजा

चूना मिलाकर उसमें एक पाव महीन पिसी हुई तमाखू खूब मिलाकर घोल लेना चाहिये। २४ घंटे रखनेके बाद पतले कपड़ेसे छान लेना चाहिये, और तब चूना पोतनेवाली मूँजकी कूँची बनाकर उससे यह दवा अच्छी तरह उस स्थान-पर लगानी चाहिये। ध्यान रखना चाहिये कि दवा छेदोंसे भीतर पहुँच जाय। यह दवा तैयार न हो तो नीमका तेल लगा देना चाहिये। २ तोला खारी नमक और आधा तोला गन्धक एक पाव गुनगुने पानीमें घोलकर पशुको एक सप्ताह-तक पिलाना चाहिये। कब्ज करनेवाली खूराक कम देनी चाहिये।

१२. जूँ (Lice)

यह रोग भी स्पर्शमात्रसे एक पशुसे दूसरे पशुको लग जाता है, किन्तु यह उतना हानिकारक नहीं होता। यह प्रायः बच्चोंको होता है। १ भाग तमाखू और २ भाग हाथ-मुँह धोनेका साबुन ४० भाग पानीमें डालकर उबाल लें, फिर ठंढा हो जानेपर १ भाग मिट्टीका तेल मिलाकर मालिश करें।

१३. किलनी (Ticks) लग जाना

थन, पूँछ, कान तथा अन्य स्थानोंमें किलनी चिपट जानेसे पशुको बड़ा कष्ट होता है और उसका दूध कम हो जाता है। पशुओंको किलनियोंके कष्टसे बचाना आवश्यक है।

१. एक भाग नील, २ भाग गन्धक या वैसलीन या कड़ुवा तेल ८ भाग मिलाकर लगानेसे किलनी मर जाती है।
२. नमक ४ भाग, मिट्टीका तेल १ भाग और कड़ुवा तेल ४ भाग मिलाकर लगानेसे भी किलनियोंका नाश होता है।

बिना छूतके साधारण रोग

यद्यपि बिना छूतके रोग उतने भयङ्कर नहीं होते जितने कि छूतवाले, फिर भी इनमेंसे कोई-कोई ऐसा हो जाता है, जो आगे चलकर बढ़ जाता है और पशुको उससे बचाना कठिन हो जाता है। रोगके समय दवाकी अपेक्षा पशुके रहन-सहन तथा खाने-पीनेकी सुन्दर व्यवस्था होनी चाहिये। दवा तो केवल रोगको थामने अथवा पशुको असली हालतमें जल्दी लानेमें सहायकमात्र है, वास्तवमें उचित देखभालसे ही अधिकांश रोग नष्ट हो जाते हैं। पशुके रहनेका स्थान साफ रखना, उसे हल्का, सहजमें पच जानेवाला और स्वादिष्ट भोजन तथा कुएँका स्वच्छ जल पीनेको देना एवं उसे अलग रखकर अधिक सर्दी-गर्मीसे बचाना ही उसकी देखभाल करना है। यह जानवर है, इसका रोग यों ही अच्छा हो जायगा—ऐसा न सोचकर उसके रोगकी उचित चिकित्सा करनी चाहिये।

१. अपच

कभी सर्दी-गर्मी लगनेसे या कम-ज्यादा खा लेनेसे पशुको अपच हो जाता है। ऐसी दशामें पशु पूरा खाना नहीं खाता, ठीकसे जुगाली नहीं करता और सुस्त रहता है।

खारा नमक आध सेर और २ तोला सोंठको कूट-पीस-कर आध सेर गुनगुने पानीमें घोलकर पिला देना चाहिये। इससे दस्त होने लगेंगे। दस्त न हो तो आधी खूराक फिर देनी चाहिये।

दस्त होनेके अगले दिनसे सोंठ १ तोला, राई १ तोला, अजवाइन २ तोला, सेंधा या साँभर नमक १। तोला कूट-पीसकर पावभर गरम पानीके साथ कुछ दिनतक सुबह पिलाना चाहिये। यह दवा पिलानेके २ घंटे बादतक पशुको पानी नहीं पिलाना चाहिये।

२. अफरा या पेट फूलना

यह रोग अधिक चरनेसे या बहुत चारा-दाना खा जानेसे होता है। पशुका पेट फूलकर ढोलकी तरह हो जाता है। बायीं ओर सूजन हो जाती है। इसमें नीचे लिखी कोई दवा पिलानी चाहिये।

१. देशी शराब १ बोतल।
२. आध सेर एप्सम साल्ट या १ सेर नमक सरसों या रेंड़ीके तेलमें मिलाकर।
३. आमका अचार आध पाव और उसका तेल आध पाव।
४. गाजरकी काँजी १ सेर।
५. आध पाव राई पीसकर गरम पानीके साथ।
६. सोंठ १ छटाँक, हींग ४ माशे, काला नमक १ छटाँक, लाहौरी नमक १ छटाँक, सोंचल नमक १ छटाँक—सबको पीसकर गरम पानीके साथ।

३. पेटमें कीड़े पड़ जाना (Tape Worms)

कभी-कभी पशुओंके पेटमें केंचुए (कीड़े) पड़ जाते हैं, जिससे वह दुर्बल हो जाता है। ये कीड़े गोबरके साथ निकलते हैं। गोबरमें कीड़े दीख पड़ें तो दवा करनी चाहिये।

१. सुपारीका चूर्ण ४ तोला १ सेर दूधमें मिलाकर दिनमें दो बार ३ दिनतक दीजिये।

२. आधी छटाँक तारपीनका तेल और आध सेर अलसीका तेल हर आठवें दिन महीने भरतक पिलाइये ।

४. पेचिश या आँव पड़ना (Dysentery)

जब पशु बार-बार रक्त तथा आँव मिला हुआ गोबर करे, तब समझना चाहिये कि उसे पेचिशका रोग हो गया है ।

पहले आधा सेर एप्सम साल्ट गरम पानीके साथ दे या सरसों, रेंड़ी, अलसी और तिलमेंसे कोई आध सेर तेल १ छटाँक सौंफके साथ पिला दे; फिर १ छटाँक बेलगिरी और १ छटाँक ईसबगोलके छिलकेको एक सेर चावलके माँड़में मिलाकर पिलाना चाहिये या सूखा आँवला २ तोला, सोंठ १ तोला और शक्कर या बताशा २ तोला आध सेर पानीमें पीस-छानकर दे । अथवा जस्ता =) भर, खड़ी मिट्टीका चूर्ण २॥ तोले और अफीम ।) भर भातके गाढ़े माँड़के साथ दिनमें दो बार दे । बछड़े-बछड़ीके लिये खड़िया मिट्टी १। तोला, अफीम =) भर और रेवाचीनी ॥।) भर चूर्ण करके तीसीके माँड़के साथ देना चाहिये ।

५. पेट चलना या दस्त लगना (Diarrhoea)

इस रोगवाला पशु पतला गोबर करता है । यह अजीर्णका चिह्न है । जल्दी दवा न करनेसे रोग बढ़कर पशु मर जाता है ।

१. आधी छटाँक पिसा हुआ काला नमक और १ तोला हीरा कसीस मिलाकर जौके आटेमें चार दिनतक देना गुणकारी है ।

२. सौंफ १ तोला, अजवाइन १ तोला, इलायची बड़ी १ तोला तथा चिरायता ३ तोला कूटकर आध सेर जौके आटेमें चार दिनतक खिलावे ।

३. चार आने भर पिसा हुआ नीलाथोथा आध सेर गरम पानीमें घोलकर पिलाना चाहिये ।

४. एक छटाँक सूखा या हरा बेलका गूदा तथा खड़ियामिट्टी १। तोला आध सेर गौके मट्ठेमें मिलाकर सबेरे-शाम पिलावे ।

५. कत्था आधी छटाँक, ईसबगोल १ छटाँक, खड़ियामिट्टी १ छटाँक, अफीम २ माशा, बेलगिरी १ छटाँक और रसौत दो माशे—इन सबको कूट-पीसकर दिनमें दो बार देना चाहिये ।

६. पलासका गोंद १। तोला, चिरायता पौन तोला, खड़ियामिट्टी ।=) भर, अफीम –) भर भातके माँड़के साथ खिलाना चाहिये ।

६. गलेमें कुछ अटकना (Throat-Choking)

कभी कभी कोई कड़ी या गोल चीज पशुके गलेमें अटक जाती है, जिससे पशु खाना-पीना छोड़ देता है । उसका गला घुटने लगता है । यदि शीघ्र ही अटकी हुई चीज निकालनेका प्रयत्न न किया गया तो पशुकी मृत्यु हो जाती है ।

पहले मुँहमें हाथ डालकर चीज बाहर निकालनेकी चेष्टा करनी चाहिये; बाहर न निकले तो लंबी पतली और चिकनी लकड़ीसे धक्का देकर उसे भीतर ठेल देना चाहिये । गलेमें वैसलीन या तेलकी मालिश करे और आधा सेर कड़ुवा तेल पशुको पिला दे या थोड़े तिलके तेलमें थोड़ा सुहागा मिलाकर पिला देना चाहिये ।

७. पित्ती उछलना

मनुष्योंकी भाँति पशुओंको भी कभी-कभी पित्ती उछल आती है । शरीरमें बड़े-बड़े चकत्ते पड़ जाते हैं और खाज आती है । ऐसे पशुको जुलाबकी दवाई देकर कम्बल या झूल उढ़ा देना चाहिये, फिर कोई एक दवा पिलानी चाहिये ।

१. आध पाव गेरू और आध पाव शहद पाव भर गरम पानीके साथ पिलावे ।

२. नीमके पत्ते ३ तोला, अडूसा (बासा) के पत्ते ३ तोला, शीशमके पत्ते ३ तोला । सबको आध सेर पानीमें उबाल ले; जब डेढ़ पाव रह जाय तब ठंढा करके पिला दे ।

८. खाँसी (Bronchitis)

पशुओंके समस्त रोगोंमें यह बहुत बुरा रोग है । इस रोगके अधिक बढ़ जानेसे गाभिन पशु कभी-कभी बच्चा फेंक देता है । इस रोगकी चिकित्सा तुरंत करनी चाहिये ।

१. नौसादर, सोंठ तथा अजवाइन एक-एक तोला लेकर पावभर गरम पानीके साथ पिलाने चाहिये ।

२. एक छटाँक नमककी डली लेकर कुछ आकके पत्तोंमें लपेटकर रातमें भून लीजिये । सबेरे नमकको पावभर गरम पानीके साथ लगातार ३ दिनतक पिलाइये ।

३. एक छटाँक सूखे अनारके छिलकेको पीसकर एक छटाँक मक्खनके साथ खिलाइये ।

४. केलेके सूखे पत्तोंकी राख २ तोला, मक्खन ४ तोला तथा कच्चा दूध १० तोला ३ दिनतक दीजिये।

५. आध सेर अलसीके तेलके साथ १ तोला तारपीनका तेल पिलाना भी लाभदायक है।

६. कपूर ६ माशा, कलमी शोरा १ तोला, अजवाइन २ तोला, सोंठ २ तोला, नौसादर १ तोला, अलसी पिसी हुई १ छटाँक—इन सबको कूट-पीसकर गुड़के साथ दिनमें तीन बार खिलाना चाहिये।

९. निमोनिया (Pneumonia)

बहुधा यह रोग शीतकालमें होता है। सर्दी लग जानेसे पशुको ज्वर आ जाता है। नाकसे पानी बहता है और खाँसी भी कुछ-कुछ आने लगती है। पशुको गरम स्थानमें रखना चाहिये और पीठपर कम्बल या झूल डाल देना चाहिये। ओषधियाँ नीचे लिखी हैं—

१. सोंठ २ छटाँक, अजवाइन २ छटाँक तथा चायकी पत्ती आधी छटाँक, मेथी २ छटाँक तथा गुड़ या शीरा आध सेर औटाकर दिनमें २ बार पिलाना चाहिये।

२. आध सेर पिसा हुआ नमक और १ छटाँक अजवाइन लेकर दो बलवान् पुरुषोंसे मालिश करा दें।

३. कपूर ४ माशा तथा लहसुन १ पाव—दोनोंको मिलाकर खिला दीजिये।

४. खानेको प्याज दे और उसका पानी निकालकर तथा नमक डालकर पिलावे।

५. आध सेर अलसी और १ सेर चावल दोनोंको उबालकर गरम पानीमें मिलाकर खिलावे।

१०. पेशाबमें खून आना

बीमारी, चोट लगने या अधिक गर्मीसे यह रोग हो जाता है। इस रोगमें बबूलके पत्ते ४ छटाँक और हल्दी २ तोला भंगकी तरह पीसकर सुबह-शाम पिलावे अथवा आध सेर दूधमें बारीक पिसी हुई फिटकिरी १ तोला मिलाकर कई दिनतक पिलावे।

११. पेशाब न होना

यह रोग पुट्ठेकी कमजोरी या पथरी हो जानेसे होता है। सूखा चारा खिलाने और कम पानी पिलानेके कारण भी हो जाता है। इसमें शोरा १ तोला, धनिया २ तोला और

कपूर ३ माशा घोट-पीसकर ठंढे पानीमें घोलकर पिलाना चाहिये। नीमके पत्ते उबालकर और नमक मिलाकर मूतनेके स्थानपर लगाइये।

१२. पेशाब टपकते रहना

यह रोग भी प्रायः पथरी हो जानेसे होता है, अतः पशुओंके डाक्टरसे आपरेशनद्वारा पथरी निकलवा डालनी चाहिये। दवा नीचे लिखी है—

१. मक्काकी बाल २ छटाँक तथा काली मिर्च १ तोला पीसकर सबेरे-शाम पिलाइये।

२. मक्काकी बाल न मिलें तो खरबूजेके छिलके १ पाव १ तोला काली मिर्चके साथ पीसकर पिलाइये।

१३. फोतोंका सूजना

कभी चोटसे, कभी बादीसे या कभी इस रोगके कीटाणुओंसे फोते सूज जाते हैं। पशुको बड़ा कष्ट होता है, वह पिछले पैर फैलाकर चलता है।

१. गीले कपड़ेसे बार-बार ठंडा पानी फोतोंपर डालकर ठंडक पहुँचाइये।

२. हल्दी, चूना, फिटकिरी, कड़ुवा तेल—सबको बारीक पीसकर गरम कर लें और फोतोंपर सुहाता हुआ लेप करें।

३. इमलीके पत्ते और नमक पीसकर गरम कर लें और फोतोंपर लगावें।

खानेकी दवा यह है—

२ माशा कपूर और १ तोला कलमी शोरा १ छटाँक शराबमें घोलकर पावभर पानीके साथ पिलाइये।

यदि बादीसे सूज गये हों तो रेंड़ीका तेल ३ छटाँक और त्रिफलाका पानी पावभर मिलाकर पिलाइये तथा तमाखूके पत्ते गरम करके बाँधिये।

१४. मिरगी (Apoplexy)

यह रोग प्रायः बच्चोंको होता है या किसी कारणसे मिरकी ओर रक्तका बहाव हो जानेसे बड़े पशुको भी हो जाता है। पशु सहसा काँपने लगता है, गिर जाता है, नेत्र लाल हो जाते हैं।

रोगीको दिनमें चार बार ठंडे जलसे स्नान कराना चाहिये। दवाएँ नीचे लिखी हैं—

१. बबूल और बेरके आध-आध पाव कोमल पत्ते पीसकर आध सेर ठंढे पानीमें पिलाइये।

२. ढाकके बीज १ तोला, अनारकी छाल १ तोला, सौंफ १ तोला, अमलतास १ तोला—इन सबको आध सेर पानीमें पकावे; जब पानी पावभर रह जाय तब गुनगुना पानी पिला देना चाहिये । इसके बाद मीठा सरसों या अलसीका आध सेर तेल तथा आधी छटाँक तारपीनका तेल पिलावे । बेहोशीकी दशामें रीठेका छिलका पीसकर सुँघावे या कंडेकी राखमें आकका दूध मिलाकर सुँघावे ।

१५. ज्वर (Fever)

खाने-पीनेकी गड़बड़ीसे, मौसम बदलनेसे या मच्छर काटनेसे पशुको ज्वर हो जाता है ।

१. आठ औंस एप्सम साल्टमें ४ माशा कुनैन मिलाकर गरम पानीमें घोल ले; फिर ४ माशा कपूर और ८ माशा शोरा मिलाकर दिनमें ३ बार पिलावे ।

२. गोमा घासके फूल १ छटाँक और काली मिर्च १ तोला आध सेर पानीमें गरम करके पिलावे ।

३. शोरा १। तोला, नमक २॥ तोला तथा चिरायता २॥ तोला आध पाव राब या गुड़में मिलाकर खिला दीजिये ।

१६. बिलु या सफेद झागवाला कीड़ा

घासमें एक प्रकारका कीड़ा होता है, जिसको खा जानेसे पशुका शरीर अकड़ जाता है, हाथ-पैर न हिलाकर वह चुपचाप पड़ा रहता है । ऐसी दशामें उसे आरामसे पड़े रहने देना चाहिये । उसके ऊपर कम्बल डालकर ऊपर छाया भी कर देनी चाहिये ।

१. एक सेर प्याज खिलाकर थोड़ी देरके लिये उसका मुँह बाँध दीजिये ।

२. आध पाव सज्जी पानीमें घोलकर पिलाइये ।

३. एक तोला पिसी हुई काली मिर्च पावभर घीमें मिलाकर और गरम करके पिला दीजिये ।

१७. ताव या घामड़ा (Sunstroke)

कड़ी गरमीमें लू लगनेसे या धूपमें अधिक समयतक काम करनेसे यह रोग हो जाता है । पशु छाया या पानीमें बार-बार बैठता है, कम खाता है और दुबला होता जाता है ।

१. कच्चे आमका पना सबेरे-शाम पिलाइये ।

२. पावभर सफेद तिल रातको भिगो दीजिये और सबेरे पीसकर सात दिनतक पिलाइये ।

३. शीतकालमें यह रोग हुआ हो तो पुरानी मूँज १ पाव काटकर उसे १ सेर गुड़में डालकर अच्छी तरह औटाना चाहिये और दिनमें दो बार ४ दिनतक देना चाहिये या पशुकी पूँछमें थोड़ा नश्तर लगाकर २ रत्ती अफीम भर दे और पट्टी बाँध दे ।

४. यदि ग्रीष्म-ऋतु हो तो आध सेर मसूरकी दाल उबालकर और ४ तोला नमक डालकर ४ दिनतक खिलावे ।

५. शीशम, लिसोड़ा और बबूल—तीनोंकी आध-आध पाव पत्तियाँ लेकर २४ घंटे पानीमें पड़ी रहने दे, फिर निकालकर आध पाव सूखे आँवले और एक पाव कच्ची खाँड़ डालकर पिला दे ।

६. पशुकी साँस चलती हो तो थोड़ी-सी कपास कड़ुवे तेलमें भिगोकर खिलाना लाभदायक है ।

१८. विष खा जाना (Poisoning)

कभी-कभी कोई पशु चारेके साथ कोई घोर विषैला कीड़ा खा जाता है या कोई दुष्ट मनुष्य विष खिला देता है । ऐसी दशामें नीचे लिखी दवाइयाँ करनी चाहिये—

१. डेढ़ सेर घीमें १ सेर एप्सम साल्ट मिलाकर पिलाना चाहिये ।

२. कोई जुलाबकी दवा दे देनी चाहिये ।

३. एक सेर गरम दूधमें आधी छटाँक तारपीनका तेल अच्छी तरह मिलाकर पिलाइये और फिर केलेकी जड़का रस १ पाव तथा १ तोला कपूर मिलाकर पिलाना चाहिये ।

१९. चरीद्वारा विष खा जाना (Corn-Stalk)

वर्षाके दिनोंमें जब पानी पड़ना बंद हो जाता है और चरी छोटी हो जाती है, तब उसमें एक प्रकारका विष उत्पन्न हो जाता है । वही चरी खा लेनेसे पशुको विष चढ़ जाता है और वह तत्काल गिर पड़ता है । दाँत-जीभ काले पड़ जाते हैं ।

पशुको शीघ्र किसी तालाब या नदीमें डाल दे । यह सम्भव न हो तो उसके ऊपर खूब पानी छोड़े । गीली जगहसे कीचड़ लेकर सारे शरीरपर पोत दे । जुलाबकी कोई ओषधि दे ।

१. आध सेर सज्जी २ सेर पानीमें घोलकर पिलावे ।

२. एक सेर कड़वा तेल पिलावे या एक सेर चूल्हेकी(लकड़ीकी) राख पानीमें घोलकर पिलावे ।

३. आध सेर घी और दो सेर दूध पिलावे या आध पाव कत्था १ सेर ठंडे पानीमें घोलकर पिलावे ।

४. काली मिर्च १ तोला, हींग १ तोला, सोंठ १ तोला, अजवाइन १ तोला, काला नमक २ तोला—सबको महीन पीसकर आध सेर गुनगुने पानीमें मिलाकर पिलाना चाहिये ।

२०. लकवा (Paralysis)

इस रोगमें पशुका आधा या सारा अङ्ग निर्जीव हो जाता है । उस स्थानपर सुई चुभोनेसे दर्द नहीं होता ।

१. आधी बोतल शराबमें १ छटाँक सोंठ और आधा औंस कपूर मिलाकर प्रतिदिन देना चाहिये ।

२. शरीरको गरम रखना और लकवा मारे हुए अङ्गपर कपूर और मीठे तेलकी मालिश करना ।

३. कुचला ४ माशा, सोंठ ६ माशा, हीरा कसीस ६ माशा, नमक आधी छटाँक—सबको कूट-पीसकर आध सेर गरम पानीमें घोलकर पिलाइये ।

४. आधी छटाँक सरसों पीसकर पानीमें लेप बना लीजिये और लकवेके स्थानपर लगाइये ।

५. अदरख २ तोला, शराब ५ तोला तथा भुनी हींग ६ माशा दो-दो घंटे बाद देना चाहिये ।

२१. गठिया या जोड़का दर्द (Rheumatism)

सर्दीसे वर्षामें भीगनेसे या रक्त-विकारसे यह रोग हो जाता है । पैरोंके जोड़ोंपर सूजन आ जाती है ।

१. दो सेर सूखी या ३ सेर हरी गोमाबूटी (मलडोडा)-को कतरकर ५ सेर पानीमें औटावे, १ सेर रह जानेपर बूटी निकालकर फेंक दे । दो छटाँक पिसी हुई काली मिर्च और १ पाव काला नमक डालकर ७-८ दिनतक पिलावे ।

२. एक सेर कड़ुई तरोई ५ सेर पानीमें उबाले; जब पानी १ सेर रह जाय, तब उसे छानकर आध पाव काली मिर्च तथा पावभर काला नमक डालकर दो भाग कर ले और सबेरे-शाम पिलावे ।

३. एक सेर पिसी हुई मेथीमें आध सेर गुड़ और १ छटाँक अजवाइन मिलाकर १५ दिनतक खिलावे ।

४. दो घुँघची (सोना तौलनेवाली रत्ती) पीसकर आध सेर गुड़में ४ दिनतक खिलाना चाहिये ।

५. एक तोला कपूर, १ छटाँक तारपीनका तेल तथा १ पाव तिलके तेलको खूब मिलाकर मालिश करना चाहिये ।

६. एक पाव लहसुन कुचलकर आध सेर तिलके तेलमें पकावे और फिर तेल छानकर मालिश करे ।

२२. प्रसूतका ज्वर

यह रोग प्रसूतके दुःख-दर्दसे, बच्चेकी उतरी हुई झिल्ली भीतर रहकर सड़ जानेसे अथवा ब्याते समय ग्वालेके मैले-कुचैले हाथ लगकर नाखूनोंका विष चढ़नेसे हो जाता है ।

पहले घी मिली हुई कोई दस्तावर दवा देनी चाहिये, फिर थोड़ी ग्लिसरीन और जरा-सा कार्बोलिक एसिड पानीमें डालकर पिलाना चाहिये ।

सोंठ, अलसी तथा काली मिर्च एक-एक तोला एवं नौसादर आधा तोला कूट-पीसकर १ पाव गुड़में खिलाइये ।

पीनेके लिये १ तोला कलमी शोरा मिलाकर गुनगुना पानी दीजिये ।

२३. थन सूजना (Udder Inflammation)

कभी-कभी बच्चेके जोरसे मुँह मार देनेसे, दूसरे पशुके सींग मार देनेसे या दूधका अत्यधिक जोर होनेपर थन सूजकर कड़े हो जाते हैं ।

१. एक छटाँक कलमी शोरा आध सेर गरम पानीमें मिलाकर तीन दिनतक पिलाना चाहिये ।

२. नीमके पत्तोंके उबले हुए पानीमें सेंक करनेके बाद गेरू और अजवाइन पानीमें मिलाकर पकावे और फिर लेप कर दे ।

२४. योनिमें कीड़े पड़ना

नीमके पत्ते पानीमें उबालकर उसमें पिचकारीद्वारा धोइये, फिर तारपीनका तेल और मीठा तेल मिलाकर रूईके फाहे डुबोकर चिमटीसे अंदर कर दीजिये । इस प्रकार सबेरे शाम कई दिनोंतक दवा लगानी चाहिये ।

२५. बच्चेदानीका बाहर निकलना

बुढ़ापे या कमजोरीके कारण या जेर गिराते समय जोर लगानेके कारण बच्चादानी बाहर निकल आती है । जब ऐसा अवसर आवे, तब उसको फिटकिरीके पानीसे अच्छी तरह धोकर भीतर दबा दे और उस स्थानपर एक मुसका चढ़ा दे ।

१. आध पाव फिटकिरी पानीमें घोलकर पशुको पिलावे ।

२. एक पाव सूखा कतीरा गोंद सबेरे-शाम खिलाकर आधी छटाँक रसौत २ सेर पानीमें घोलकर पिलावे ।

३. आधा तोला सोंठ और १ तोला काली मिर्च पावभर गरम

घीमें मिलाकर ३-४ दिनतक पिलावे। बच्चेदानीको भीतर करके पशुको ऐसा खड़ा करे कि पिछला भाग ऊँचा रहे।

२६. साड्ढू रोग (Garget or Mammitis)

दूधवाले पशुओंके लिये यह बहुत बुरा रोग है। इसमें थन सूज जाते हैं। पशु थनोंमें हाथ नहीं लगाने देता। यह रोग कुसमयपर या बार-बार दूध निकालनेसे, थनोंमें चोट लगनेसे, गोबर करते समय पिछले पुट्ठोंपर लाठी मारनेसे, दुहते समय थन जोरसे खींचनेसे या धानका छिलका खा जानेसे होता है।

१. रेंड़ीका तेल गरम करके थनोंपर मले।

२. पोस्ताके १ डोडेको तथा नीमके पत्तोंको सेरभर पानीमें डालकर भापसे सेंक करे।

३. आध सेर दही और पावभर मीठा तेल ३ दिनतक शामको देना चाहिये।

४. आध सेर सहजनकी पत्ती घोट-छानकर आधी छटाँक काली मिर्च और १ छटाँक नमक मिलाकर ३ दिनतक देना चाहिये।

५. आध सेर घी, १ छटाँक काली मिर्च और आध पाव नीबूका रस ३ दिनतक पिलावे।

६. जाड़ेकी ऋतु हो तो नमक, तेल और अजवाइन डालकर काँसीके बर्तनसे पुट्ठेपर मालिश करे।

७. बीमारी अधिक बढ़ गयी हो तो १ सेर घी, १ सेर गुड़ या शीरा, आध सेर काला जीरा तथा आध सेर काली मिर्च डालकर पिलाना चाहिये।

८. दूध निकालकर फेंक देना चाहिये। पीब पड़ गयी हो तो चिरवाना ठीक है।

२७. मुँहसड़ी या अँगियारी

यह भी थनोंका रोग है और इसके भी वे ही कारण हैं, जो साड्ढू रोगके हैं। थनके सोतके ऊपर एक छोटी पीली-सी पपड़ी जम जाती है और फिर फुंसीकी तरह हो जाती है।

१. रेंडीके तेलमें थोड़ा नमक डालकर गर्म करे और दिनमें ४-५ बार मालिश करे।

२. नीमके पत्ते गरम करके भापसे सेंके।

३. एक सेर पानीमें १ पाव कत्था घोल-छानकर पिलाना चाहिये।

२८. चन्द्री

यह बहुत बुरा और हानिकारक रोग है। पहले थनके ऊपर छोटी-सी एक गिल्टी होती है, फिर थन सूजकर उसमें पीब पड़ जाती है। गिल्टी फूटकर थनमें छेद हो जाय तो नीचे लिखी दवाइयाँ भर देनी चाहिये—

१. आकका दूध, साँपकी केंचुल और लहसुन—इनको बराबर पीसकर घावके ऊपर लगा दे और सावधानीसे पट्टी बाँध दे।

२. नीमकी कोंपलोंको पीसकर एक टिकिया बनावे, उसे गायके घीमें लाल करे। फिर टिकिया फेंककर उस घीको घावमें दिनमें ४-५ बार लगावे।

२९. थनका मारा जाना (Blind Teats)

थनकी किसी बीमारीसे थन मारा जाता है और दूध नहीं निकलता। यह रोग है तो असाध्य, किन्तु सम्भव है नीचे लिखी दवाइयाँ लाभ कर जायँ।

जब थन मारी हुई गाय गाभिन हो जाये, तब १ पाव सरसोंका तेल प्रत्येक शुक्लपक्षकी दूजको बच्चा देनेतक बराबर देते रहना चाहिये। बच्चा देनेके कुछ घंटे पहले आधी छटाँक हींग चने या जौकी रोटीमें खिला दे।

यदि किसी पशुका थन जल्दी ही दो-चार दिनसे बंद हुआ हो तो आध पाव काली जीरी और आध पाव काली मिर्च पीसकर आध सेर गरम पानीमें मिलाकर दिनमें दो बार ३ दिनतक देना चाहिये। अथवा ४-५ कागजी नीबुओंका रस १ पाव घीमें मिलाकर दोनों समय दीजिये।

३०. थनोंका कट जाना (Sore Teats)

दूध पीते समय बच्चेका दाँत लगनेसे या ऊपरी चोट लगनेसे थनपर घाव हो जाता है, इसकी दवा शीघ्र कर लेनी चाहिये।

१. तवा गर्म करके थनके नीचे रक्खे और दूधकी धार छोड़े। उसके भापसे लाभ होगा।

२. थोड़ा मक्खन या घी लेकर पिसी हुई हल्दी और थोड़ा नमक डालकर दूध दुहनेके पीछे घावके ऊपर लगा दे।

३१. बच्चा देनेके पीछे दूध न उतरना या थोड़ा उतरना

गाभिन होनेपर कोई-कोई लोग पशुको दुहना एकदम बंद कर देते हैं, जिससे थनोंमें दूध सूख जाता है और रोग हो जाता है। धीरे-धीरे दूध सुखाना चाहिये।

१. गरम घी और नमकसे थनों और हवानेपर मालिश करना चाहिये और दूध थोड़ा बहुत अवश्य निकालना चाहिये।

२. दिनमें एक बार हवानेपर बरांडी शराब मलना गुणकारी है।

३. एक सेर सनके बीजका आटा १ सेर शीरेमें मिलाकर ३ भाग करे और दिनमें ३ बार आठ रोजतक दे तो पूरा दूध उतर आता है।

४. गायका दूध २ सेर, गुड़ या शीरा १ सेर, गेहूँका दलिया १ सेर, मोटा चावल १ सेर—इन सबको २ सेर पानीमें औटाकर आधा सबेरे और आधा शामको देनेसे अच्छी जातिके पशुका दूध अवश्य बढ़ जाता है।

३२. बाँझपन (Barrenness)

पैदा होते ही पूरा दूध न पानेपर, अच्छी खूराक न मिलनेपर, समयपर साँड़ न मिलनेपर या जुड़वा बच्चोंमेंसे एक नर तथा एक मादा होनेपर उस मादाको प्रायः बाँझपनका रोग होता है।

१. आधी छटाँक फास्फेट सोडा गरम पानीमें डालकर योनिको बराबर धोते रहना।

२. किसी निपुण चिकित्सकसे गर्भाशयका मुँह खुलवा देना।

३. गायको बराबर साँड़के साथ रखना।

४. दो सेर सनके हरे पत्ते रोज खिलाना।

५. एक सेर सनके बीजका आटा आध सेर गुड़में मिलाकर १५ दिनतक खिलाना।

६. सात छुहारोंकी गुठली बासी जौकी रोटीमें रखकर सात दिनतक खिलाना।

७. दो सेर अङ्कुर निकले हुए गेहूँ या जौ १५ दिनतक खिलाना।

८. ढाई पाव मेथी महीन पीसकर पानीमें लुगदी बनाकर ३-४ दिनतक सबेरे देना।

३३. गायका बार-बार गर्भस्राव होना

यह रोग गरम खूराक या गायकी गर्भधारणकी शक्ति कम हो जानेसे होता है। गर्म दूर करनेके लिये गायको ठंडी खूराक देनी चाहिये। एक बार गाभिन होते ही पावभर घीमें आधा तोला पिसी हुई काली मिर्च मिलाकर दीजिये। इसके बाद नीचेकी दवा दें।

१. गाभिन होनेके बाद दो सेर लिसोढ़ेके हरे पत्ते खिला दीजिये। जिस दिन गाभिन हो, उस दिन खाना न दीजिये और दें तो कम तथा ठंडा।

२. गाभिन होनेके २-१ दिन पहले अङ्कुर निकले हुए ४ सेर गेहूँ या जौ खिला दीजिये। इसे ४-५ दिनतक खिलाइये।

३. पावभर सफेद तिल रातमें भिगो दें, सबेरे घोट-पीसकर गाभिन होनेके दिन और २ दिन बादतक पिला दें। सर्दीके दिनोंमें इसे नहीं देना चाहिये।

३४. सर्पका काटना

सर्पके काटनेका विश्वास हो जानेपर ५ भाग परमंगनेट पोटाश ९५ भाग पानीमें मिलाकर काटी जगहके भीतर पिचकारीसे भर दे और काटी जगहके ऊपर रस्सीसे कसकर बाँध दे।

३५. कुत्तेका काटना

पशुको कुत्तेके काटनेसे जो घाव हो जाय, उसको कास्टिक पोटाशसे जला देना चाहिये। यह दवा न मिले तो लाल मिर्चके बीज घावमें भर देना चाहिये।

शरीरके ऊपरके साधारण रोग

पशु परस्पर लड़ते-भिड़ते रहते हैं, जिससे उनके किसी अङ्गपर चोट आ जाती है। चोट आदि न लगनेपर भी कभी-कभी आँख, कान आदिमें कोई विकार हो जाता है। रक्तके विकारसे भी कहींपर सूजन हो जाती है। इन सब रोगोंको साधारण समझकर उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। इनको अच्छा कर डालना ही ठीक है—नहीं तो आगे चलकर पशु-को भारी कष्ट हो सकता है।

१. सूजन और दर्द

चोट, सर्दी, गर्मी या रक्तके विकारसे शरीरके किसी भागपर सूजन आ जाती है। चोटकी सूजन हो तो नीमके पत्ते उबालकर उस पानीसे सेंकना चाहिये। फिर सुहागा तवेपर फुलाकर तिल, घी, वैसलीन या मक्खनके साथ सूजनकी जगहपर चुपड़ देना चाहिये।

यदि रक्त-विकारसे सूजन हो गयी हो तो नीमके पत्ते उबालकर सेंके। फिर १ तोला गेरू २ तोला मकोयके रसमें मिलाकर लेप कर दे या हल्दी-चूना मिलाकर लेप करे।

भीतरके किसी भागमें दर्द हो तो पंद्रह मिनटसे आधे घंटेतक फ्लानेल या कम्बलको गरम जलमें डुबाकर निचोड़कर उसका सेंक करना चाहिये। फिर सूखे कपड़ेसे भलीभाँति

पोंछकर सरसोंका तेल ४ भाग और तारपीनका तेल २ भाग खूब मिलाकर मालिश करना चाहिये ।

२. रसौली और मस्सा

कई बार खालके नीचेसे गेंद-सी बनकर सूजती या बढ़ती चली जाती है या काले-काले मस्से निकल आते हैं। इनसे पशुको किसी प्रकारका कष्ट तो नहीं होता, पर उसकी खाल बिगड़ जाती है; इससे इनको हटाना चाहिये ।

रसौलीमें सूजनकी भाँति सेंक करना चाहिये । इससे न दबे तो ३ हिस्सा पानी और १ हिस्सा कच्चे पपीतेका दूध मिलाकर रख लीजिये और रूईके फाहेसे दिनमें कई बार लगाइये ।

मस्सेपर नाइट्रिक एसिड, पपीतेके दूधमें मिला हुआ पानी या चूना-सज्जीमें थोड़ा पानी डालकर दिनमें कई बार लगाइये । चूना-सज्जी किसी काँचके बर्तनमें या सीपियामें रक्खें।

३. फोड़ा-फुंसी और घाव (Abscess)

किसी पशुको फोड़ा हो जाय तो उसे अच्छी तरह पक जाने दीजिये । फिर चीरकर उसकी पीब निकाल देना चाहिये। इसके बाद नीमके पत्तोंको पानीमें उबालकर उस पानीसे घावको धोइये और नीमका तेल लगा दीजिये अथवा सरसोंका तेल, तारपीनका तेल और कपूर एक-एक छटाँक लेकर और उसमें चौथाई छटाँक फिनाइल डालकर घावपर लगाते रहिये । अथवा पत्थरका कोयला, खड़ियामिट्टी, फिटकिरी और नीलाथोथा —चारोंको बराबर लेकर उनका चूर्ण करके लगाइये । घाव बड़ा हो तो नीमका तेल और मोम मिलाकर लगाना चाहिये ।

घावको कभी खुला नहीं छोड़ना चाहिये, नहीं तो स्याई नामकी मक्खी उसपर बैठती है और घावमें कीड़े पड़ जाते हैं । यदि कीड़े पड़ गये हों तो आड़ू या मरुएके पत्तोंको पीसकर उसकी टिकिया घावपर रख दीजिये और मुल्तानी मिट्टीसे घावके ऊपर लीप दीजिये, जिससे घावको हवा न लगे । ऐसा करनेसे कीड़े मर जायँगे, तब पीछे घावको अच्छा कर लीजिये । गहरे घावमें कपूर एक भाग, तारपीनका तेल ।) भाग और तीसीका तेल ४ भाग खूब मिलाकर लगाने चाहिये ।

४. हड्डी-पसलीकी चोट

बहुधा लड़ने-भिड़नेसे हड्डीमें चोट पहुँच जाती है या हड्डी टूट जाती है । हड्डी टूट गयी हो या उतर गयी हो तो किसी जानकारसे या पशुओंके डाक्टरसे उसे ठीक कराना चाहिये । किसी जानकार आदमीके मिलनेके पहले नीचे लिखी दवाइयाँ करे ।

१. पीपलकी हरी छाल ५ सेर पानीमें उबाले; जब पानी २ सेर रह जाय तो चोटपर सेंक करे ।
२. भेड़के दूधमें पीली कटेरियाँ औटावे और चोटकी जगहपर सेंक करे तथा लेप कर दे ।
३. एक छटाँक फिटकिरी, आधी छटाँक हल्दी तथा १ सेर दूध पशुको तुरंत पिला देना चाहिये ।

५. खुरमें कील-काँटोंका चुभना

यदि खुरमें कील-काँटा या कोई नुकीली चीज चुभ गयी हो, तो उसे निकालकर कपूर और तारपीन मिले हुए तिलके तेलमें रूईका फाहा भिगोकर सावधानीसे भीतर कर देना चाहिये और आस-पास भी तेल चुपड़ देना चाहिये । दो-चार रोज करनेसे आराम हो जायगा ।

६. सींग टूटना या सड़ना

लड़ने-भिड़नेसे या लाठीकी चोटसे सींग टूट जाते हैं। सींग दो प्रकारसे टूटते हैं—एक तो जड़से निकल जाते हैं, दूसरे सींगके ऊपरका केवल खोल निकल जाता है ।

जड़से टूटनेपर छोटी बेरीके पत्ते पीसकर घावमें भर दीजिये और ऊपरसे कपड़ा बाँधकर नीमका तेल डालते रहिये । यदि खोल उतर गया हो तो उड़दकी पीठीमें आदमीके सिरके बाल सानकर सींगके ऊपर थोप दीजिये और कपड़ा बाँधकर नीमका तेल डालते रहिये । अथवा मुल्तानी मिट्टीको सींगपर लपेटकर ऊपरसे बाल लपेट दे या सीमेंट अथवा चूना घावमें भर कपड़ा बाँध दे और नीमका तेल डालता रहे ।

सींग टूटनेसे घाव सड़ गया हो या कीड़े पड़ गये हों तो नीमके पानीसे धोकर तारपीनके तेलमें रूईका फाहा दिनमें दो-तीन बार रखना चाहिये ।

७. कानमें मवाद पड़ना या घाव होना

कानमें घाव हो गया हो तो उसे नीमके पानीसे धोकर १ हिस्सा कपूर, १ हिस्सा सुहागा (भुना हुआ), और २० हिस्सा सरसोंका तेल मिलाकर घावपर लगाना चाहिये । अथवा आकका तेल घावपर लगाकर २-४ बूँदें कानमें भी छोड़ दें।

८. आँखका रोग (Sore Eyes)

आँखका रोग बहुधा किसी जंगली जड़ी-बूटीके लगनेसे या लड़ने-भिड़नेसे होता है । आँखके रोगमें आँखोंसे पानी और कीचड़ बहता है ।

१. फिटकिरी पीसकर पानीमें घोल-छान ले और इससे आँख धोवे ।

२. नमक और सहजनके पत्ते रातमें भिगो दे । सबेरे घोट-छानकर उस पानीसे धोवे ।

३. सहजनके बीजको रगड़कर पानीमें डाले और आँख धोवे । कुछ दिन रोशनीसे बचावे ।

९. बैलका कंधा आना या फार लगना

कंधा आ जानेपर नमक मिले गरम पानीसे सेंक करना चाहिये ।

हल जोतते समय बैलके उछलनेसे यदि फार लग जाय तो घावपर तुरंत मूत्र लगा देना चाहिये । ३-४ दिन करनेसे अच्छा हो जायगा ।

१०. आगसे जल जाना

पशुके जल जानेपर तुरंत चूना या चूनेके पानीको वैसलीनमें मिलाकर लगाना चाहिये । १०० बार फेंटा हुआ गायका घी भी बहुत लाभ करता है । चूनेके पानीमें तिल, रेंड़ी या नारियलका तेल मिलाकर फेंटनेसे एक मलहम बन जायगा, उसके लगानेसे भी अच्छा होता है ।

११. बावनी अर्थात् पूँछका घाव

पहले पूँछकी चौंरीके बाल खुजलीसे उड़ते हैं और धीरे-धीरे घाव होकर पूँछ गलने लगती है ।

१. सल्फ्यूरिक एसिडको चौड़े मुँहकी बोतलमें भरकर घाव-वाले सिरेको ५ मिनटतक उसमें डाले रहे और फिर कपड़ा बाँध दे ।

२. खौलते हुए कड़ुवे तेलसे घाववाली जगहको दाग दे । दोनों काम सावधानीसे होने चाहिये । पशुको बाँध दे तो अच्छा है, जिससे वह हिल-डुल न सके ।

१२. बधिया करना (Castration)

बैलोंको बधिया करनेका देशी ढंग ठीक नहीं, उससे पशुको बड़ी पीड़ा होती है । पासके किसी पशु-अस्पतालमें जाकर बधिया करवाना चाहिये ।

बधिया होनेके २-३ दिन बादतक पशुको आध सेर गायका घी पिलाना चाहिये । कड़ुवे तेल अथवा घीको गरम करके उसमें नीमके पत्ते या कार्बोलिक एसिड डालकर घावपर लगाता रहे । घावपर मक्खी नहीं बैठने देना चाहिये ।

ओषधियाँ

नीचे लिखी हुई ओषधियाँ या वस्तुएँ गोशालामें बराबर रहनी चाहिये । उनके टीन, बोतल, डिब्बे या बर्तन अच्छी तरह बंद हों । सबपर उनके नामका कागज चिपका हो और सब ओषधियोंका एक रजिस्टर अलग हो ।

१. अजवाइन, २. अरनीके पत्ते, ३. अलसी, ४. अलसीका तेल, ५. अफीम, ६. सूखे अनारके छिलके, ७. आमकी सूखी खटाई, ८. आदमीके सिरके बाल, ९. आमका अचार, १०. आकका पत्ता, ११. आकका दूध, १२. आकका फूल, १३. आड़ूके पत्ते, १४. आँवलेके पत्ते, १५. आटा चना, १६. आटा गेहूँ, १७. आटा जौ, १८. आँवले सूखे, १९. इमामदस्ता, २०. अमलतासकी फली, २१. इलायची बड़ी, २२. इलायची छोटी, २३. ईसबगोल, २४. उड़दकी दाल, २५. एलुआ (मुसब्बर), २६. एप्सम साल्ट, २७. कपूर, २८. कबीला, २९. कलमी शोरा, ३०. कटेलीके फूल, ३१. कत्था, ३२. कच्ची खाँड, ३३. कड़ई तरोई, ३४. कपास, ३५. काला जीरा, ३६. काला नमक, ३७. काली मिर्च, ३८. काँजी गाजरकी, ३९. कार्बोलिक एसिड, ४०. कीकर (बबूल) की छाल, ४१. कुचला, ४२. कुनैन, ४३. कंचल (जंगली फल), ४४. केलेके पत्ते, ४५. कोयला, ४६. केलेके पत्तोंकी राख, ४७. खड़ियामिट्टी, ४८. गूगल, ४९. गोमाबूटी (मलडोडा), ५०. गायका घी, ५१. गायका दही, ५२. गायका मट्ठा, ५३. गायका मक्खन, ५४. गन्धक, ५५. गंदा बिरोजा, ५६. गेरू, ५७. ग्लिसरीन, ५८. गाजनी (मुल्तानी मिट्टी), ५९. गुड़, ६०. चरम, ६१. चिरायता, ६२. चूना, ६३. छोटी बेरीकी जड़, ६४. छोटी बेरीके पत्ते, ६५. जमालगोटा, ६६. जमालगोटेका तेल, ६७. जुवारका दलिया, ६८. तारपीनका तेल, ६९. तूतिया (नीलाथोथा), ७०. तिल, ७१. देशी शराब, ७२. दूधवाली भेड़, ७३. धनिया, ७४. धान, ७५. नाइट्रिक एसिड, ७६. नीमके पत्ते, ७७. नीमका तेल, ७८. नील, ७९. नमक, ८०. नौसादर, ८१. नींबूका रस, ८२. परमैंगनेट पोटाश, ८३. प्याज, ८४. पीनेकी तमाखू, ८५. पीली कटेलीका फल, ८६. पीपलकी छाल, ८७. पीपर मधाँ, ८८. पुराना गुड़, ८९. पुरानी मूँज, ९०. पोस्ताके डोंडे, ९१. फारमलीन, ९२. फिटकिरी, ९३. बेरीके पत्ते, ९४. बेलगिरी, ९५. बरांडी शराब, ९६. बाँसी घासका दाना, ९७. भाँग, ९८. मरुएके पत्ते, ९९. मसूरकी दाल, १००.

मीठा तेल, १०१. मिश्री, १०२. मैदा, १०३. मोम, १०४. मुसका, १०५. राई, १०६. रेंड़के पत्ते, १०७. रेंड़ीका तेल, १०८. लहसुन. १०९. लाल मिर्च, ११०. लिसोड़ेके पत्ते, १११. लोहेका तवा, ११२. सफेद रुई, ११३. सत्तू जौ, ११४. सरसोंका तेल, ११५. सज्जी, ११६. साँपकी केंचुल, ११७. साबुन, ११८. सिरका, ११९. सँहजनकी पत्ती, १२०. सँहजनकी छाल, १२१. सँहजनके बीज, १२२. सुहागा, १२३. सुपारी, १२४. सौंफ, १२५. पोटाश कास्टिक, १२६. बाँसकी नाल, १२७. बेलके पत्ते, १२८. सनके बीज, १२९. सोंठ, १३०. सीमेंट, १३१. सोडा फास्फेट, १३२. सोडा कास्टिक, १३३. शीरा पुराना, १३४. शक्कर, १३५. शराबका सत, १३६. शहद, १३७. हींग हीरा, १३८. हल्दी, १३९. हीरा कसीस, १४०. मिट्टीका तेल, १४१. अदरक, १४२. छुहारे, १४३. मेथी, १४४. सफेद तिल, १४५. इमलीके पत्ते, १४६. मेंहदीके पत्ते, १४७. तमाखू, १४८. गूलर ।

पशु-रोगोंकी होमियोपैथिक चिकित्सा

माता (Rinderpest)

रोगका पहला लक्षण प्रकट होनेपर प्रारम्भमें एकोनाइट नैप (Aconite Nap) और आर्सेनिक अल्बम् (Arsenic Alb) इन दोनों दवाओंकी बारी-बारीसे ३-३ घंटेके अन्तर १०-१० बूँदें देनी चाहिये। जब फुंसियाँ निकल आवें, तब ऐंटिम टार्ट (Antim Tart) तीन-तीन घंटे बाद सेवन कराना चाहिये । गोटियोंके दब जानेपर कपूरका सत (Spirit Camphor) १० से २० बूँदतक १०-१५ मिनटके अन्तरपर पिलाना चाहिये । दानोंके दब जानेपर यदि खुजली हो तो सल्फर (Sulphur) देना चाहिये ।

शोथ-ज्वर

रोगकी प्रथमावस्थामें पंद्रह-पंद्रह मिनटपर बारी-बारीसे कास्टिकम् १x (Causticum 1x) और एकोनाइट नैप १x (Aconite Nap. 1x) आठ बूँदोंतक देना चाहिये । यदि एक या डेढ़ घंटेमें कोई लाभ न देखा जाय तो आठ बूँदोंतक बारी-बारीसे बेलाडोना १x (Belladona 1x) और एकोनाइट नैप १x या आर्सेनिक अल्बम् १x देना चाहिये ।

यदि आक्रमण पिछले पैरोंकी ओर हो तो बारी-बारीसे आर्सेनिक अल्बम् १x और ब्रायोनिया १x (Bryonia Alb. 1x) को आधे-आधे घंटेके अन्तरसे दिया जा सकता है ।

गलफूला

बेलाडोना और मर्क्यूरियस-प्रोटो आयोडेटस (Mercuriousproto Iodatus)—इनको बारी-बारीसे, पाँचसे दस बूँदतक, दो-दो घंटेके बाद देना चाहिये ।

यदि इन दवाओंसे विशेष उपकार होता न दिखायी पड़े तो बैप्टीशिया (Baptisia) और आर्सेनिक अल्बम्-को दो-दो घंटेके बाद बारी-बारीसे देना चाहिये ।

गलेमें कोई चीज अटकना (Choking)

साइलीसिया १००० (Silicea 1000) का व्यवहार करनेसे गलेमें अटका हुआ काँटा—कील इत्यादि बाहर निकल पड़ता है ।

पेट फूलना

रोगके लक्षण प्रकट होते ही ४० बूँद कपूरका सत एक गिलास पानीमें पंद्रह-पंद्रह मिनटके अन्तरसे दो बार पिलाना चाहिये ।

तीसरी पाकस्थलीका फूल उठना

पंद्रह-पंद्रह मिनटके बाद १ सेर गर्म पानीके साथ एक या आधा पाव एप्सम साल्ट (Epsom Salt) देना चाहिये । इसके आधे घंटे बाद बारी-बारीसे नक्सवामिका १x (Nux Vom. 1x) और बेलाडोना १x एक-एक घंटेके अन्तरसे देनेसे विशेष लाभ होता है ।

फेफड़ेके रोग (Pleurisy)

यदि नाड़ी तेज और कठोर चल रही हो, श्वास-प्रश्वासकी क्रिया भी कम हो, पशु कातर और व्याकुल दिखायी पड़े, काँखें-मुँह बाये रहे, मुँह सूखा और गरम हो और शरीर बार-बार काँपे तो एकोनाइट १x की आठ-आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके अन्तरसे देनी चाहिये ।

यदि थोड़ी-थोड़ी ऐसी कष्टदायक खाँसी हो, जिसे पशु दबानेकी चेष्टा करता हो, साँस भी कम और कष्टसे आती हो, पंजरके पासके हाड़ोंको अँगुलीसे दबानेसे दर्द हो, छातीमें

व्यथा हो और पशु केवल एक ही स्थानपर निश्चलभावसे खड़ा रहता हो तो तीन-तीन घंटे बाद ब्रायोनिया १x की आठ बूँदें पानीके साथ देनेसे विशेष लाभ होता है ।

यदि सायँ-सायँ शब्दके साथ श्वासकष्ट अधिक हो, श्वासोंकी संख्या भी कम हो, खाँसी हो, गलनलीमें कफ भरा हो, नाड़ी तेज, पर पतली हो, कँपकँपी आती हो, शरीर सूखा और गरम हो और अत्यन्त दुर्बलता हो तो ऐमोनियम् कास्टिकम् १x (Ammonium Causticum 1x) की आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके बाद देनी चाहिये ।

यदि श्वासकष्ट हो, नाड़ी क्षीण, पर तेज हो, दाँत कड़कड़ाते हों, शरीर ठंडा हो, पसीना आता हो, थोड़ी-थोड़ी देर बाद खाँसी आ जाती हो, मल पतला आता हो और अत्यन्त दुर्बलता हो, तो तीन-तीन घंटेपर आर्सेनिक १x की आठ बूँदें देनी चाहिये ।

यदि श्वासकष्ट हो, छातीमें तकलीफ हो, पंजरके हाड़ोंमें दर्द हो, पशु छटपटाता हो, थोड़ी-थोड़ी देर बाद ही खाँसी आती हो, कफ अधिक परिमाणमें निकलता हो और उसके साथ कभी-कभी खूनके फुटके भी आते हों, तो फास्फोरस १x (Phosphorus 1x) की आठ बूँदें उक्त रीतिसे देनी चाहिये ।

जब रोग दूर होकर आरोग्यके लक्षण दिखायी देने लगें, तब सल्फर ६ (Sulphur 6) की आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके बाद देनी चाहिये ।

खूरोंका पक जाना

रोग प्रकट होते ही आर्सेनिक अल्बम् १x की आठ बूँदें पानीमें मिलाकर तीन-तीन घंटे बाद देनी चाहिये ।

रोगके विशेषरूपसे देख पड़नेपर आर्सेनिक और बेलाडोनाकी आठ-आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके अन्तरसे एकके बाद एक देनी आवश्यक है ।

गायके फोड़े

एकोनाइट १x और आर्सेनिक १x की आठ-आठ बूँदें पानीके साथ चार-चार घंटेके बाद पिलानी चाहिये ।

दुग्धाधारके विशेष फूल उठनेपर आर्सेनिकके बदले बेलाडोना १x की आठ बूँदें देनी चाहिये ।

प्लेग

इग्नेशिया ३० (Ignatia 30) या बैडियागा १x (Badiaga 1x) तीन-तीन घंटेके अन्तरसे देना चाहिये ।

ज्वर

एकोनाइटकी आठ बूँदें ज्वरकी प्रथमावस्थामें पिलानेसे विशेष उपकार होता है ।

खाँसी

प्रातःकाल एकोनाइट नैप १x और सायंकालको नक्स्-वामिका ६ से ८ बूँदतक देनेसे पशुकी खाँसी शीघ्र आराम हो जाती है । कृमिजनित खाँसीके रोगमें सिना २०० की चार या छः बूँदें पिलानी चाहिये ।

सर्दी-खाँसी

एकोनाइट १x और ब्रायोनिया १x की ८-८ बूँदें तीन-तीन घंटेके अन्तरसे देनी चाहिये । इससे सर्दी, खाँसी और ज्वर आराम होता है ।

यदि आँखोंकी पलकें फूली हों, आँख, मुँह और नाकसे पानी गिरता हो, तो एकोनाइट १x और आर्सेनिक १x की आठ-आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके अन्तरसे देनी चाहिये ।

यदि पानी अधिक गिरता हो तो मर्क्यूरियस सोल १x या मर्क्यूरियस आयोडाइड १x एकोनाइटके साथ एकके बाद एक करके उक्त रीतिसे ही देना चाहिये ।

उदरामय (पतले दस्त)

आर्सेनिक अल्बम् १x की आठ बूँदें साफ जलमें मिलाकर दो-दो घंटेके बाद देनेसे विशेष उपकार होता है ।

पेटमें दर्द होनेपर और गोबरके साथ खून निकलने-पर मर्क्यूरियस कोर १x की ४ बूँदें दो-दो घंटेके बाद देनी चाहिये ।

आँव (Dysentery)

मर्क्यूरियस १xकी ५ बूँदें दो-दो घंटेके बाद देनी चाहिये । यदि दस्त अधिक परिमाणमें हों तो आर्सेनिक अल्बम् १x और मर्क्यूरियस १x दोनोंको बारी-बारीसे देना चाहिये ।

रक्तस्राव

एकोनाइट १x या ब्रायोनिया १x या नक्सवामिका-की आठ-आठ बूँदें दो-दो घंटे बाद दी जा सकती हैं ।

वात-रोग

एकोनाइट १x और रसटक्स् १x (RhusTox. 1x)

की ८-१० बूँदें तीन-तीन घंटेपर बारी-बारीसे देनी चाहिये। इस रोगमें ब्रायोनिया भी लाभदायक है।

पक्षाघात—लकवा

बारी-बारीसे एकोनाइट १x और नक्सवामिका १x की ८-१० बूँदें तीन-तीन घंटे बाद देनेसे उपकार होता है।

मिरगी

दौरा आनेके दो-चार दिन पहलेसे बेलाडोना और नक्स्वामिका १x को ८-८ बूँदें एक प्रातःकाल और दूसरी सायंकाल पिलानी चाहिये।

संन्यास

उत्तापजनित पीड़ा होनेपर बेलाडोना १x और एकोनाइट नैप १x की आठ-आठ बूँदें एकके बाद एक आध-आध घंटेपर देनी चाहिये और जब फायदा होने लगे, तब दो-दो घंटेपर देनी चाहिये।

शूलवेदना

रुबिनीका कैम्फर (कर्पूर-सत) ३० से ४० बूँदतक एक-एक या दो-दो घंटे बाद देना चाहिये और एक या दो घंटे बाद बेलाडोना १x और नक्स्वामिका १x की आठ-आठ बूँदें एकके बाद एक देनी चाहिये।

दुग्धज्वर

एकोनाइट १x और बेलाडोना १x की चार-चार बूँदें एकके बाद एक हर घंटेमें दो बार देनी चाहिये।

यदि इससे फायदा न हो तो आर्सेनिक अल्बम् १x और ऐंटिमोनियम कास्टिकम् १x को बारी-बारीसे आध-आध घंटेपर देना चाहिये।

इससे भी फायदा न हो तो नक्स्वामिका १x और ब्रायोनिया १x दो-दो घंटे बाद देना चाहिये।

दुग्धाधार (थन) का फूल उठना

एकोनाइट १x और ब्रायोनिया १x की आठ-आठ बूँदें तीन-तीन घंटे बाद देनी चाहिये। यदि सूजन अधिक हो तो बेलाडोना तीन-तीन घंटेके बाद देना चाहिये।

प्रमेह

कैन्थराइड्स् १x (Cantharides 1x) की आठ बूँदें तीन-तीन घंटेके अन्तरसे प्रयोग करनी चाहिये।

रोमोंकी विवर्णता और लोमहीनता

एकोनाइट १x और आर्सेनिक अल्बम् १x और सल्फर १x—इन सबकी आठ-आठ बूँदें लेकर बारी-बारीसे पानीके साथ ८-१० दिनतक पिलानी चाहिये।

बछड़ोंकी क्षीणता

नक्स्वामिका १x की ४ बूँदें पानीमें मिलाकर दो-दो घंटे बाद पिलानी चाहिये।

मुख और जीभके रोग

नक्स्वामिका १x की ६ बूँदें पिलानी चाहिये।

दाँतोंके मसूढ़ोंका फूलना

नक्स्वामिका १x की आठ बूँदें पानीके साथ सबेरे-शाम देनी चाहिये।

अत्यन्त रक्तस्राव

यदि खून काला और दुर्गन्धयुक्त हो तो सिकेल १x (Secale 1x) की आठ बूँदें प्रति घंटेमें देनी चाहिये। रक्त लाल हो तो सैबाइना १x (Sabina 1x) की आठ बूँदें प्रति घंटेमें देनी चाहिये।

बल-रक्षाके लिये बीच-बीचमें चाइना १x (China 1x) की आठ बूँदें पानीके साथ पिलाते रहनेसे विशेष उपकार होता है।

गर्भाशयकी स्थानभ्रष्टता

आर्निका मदर टिंक्चर (Arnica) या बेलाडोना मदर टिंक्चर (Belladona) घंटे-घंटेपर देना चाहिये।

गर्भस्राव

यदि यह पता चले कि पेटमें बच्चा मर गया है, तो पल्साटिल्ला १xकी आठ बूँदें पानीके साथ घंटे-घंटेपर देनी चाहिये।

यदि पेटका बच्चा जीवित हो तो कमरपर शीतल पानीकी धार छोड़नी चाहिये और सिकेल १x की आठ-आठ बूँदें पंद्रह-पंद्रह मिनटके बाद देनी चाहिये।

गर्भपात हो जानेके बाद भी सिकेल १x की आठ-आठ बूँदें पंद्रह-पंद्रह मिनटपर देनी चाहिये।

यदि लाल रंगका रक्त निकले तो सैबाइना १x की आठ-आठ बूँदें पंद्रह-पंद्रह मिनट बाद देनी चाहिये।

यदि किसी प्रकारकी चोट लगनेसे गर्भपात हो, तब आर्निका मांट १x (Arnica mont 1x) की आठ-आठ बूँदें उपर्युक्त ढंगसे देनी चाहिये।

दीर्घकालव्यापी प्रसववेदना

जेल्सीमियम् १x (Gelsemium 1x) की दस बूँदें आध-आध घंटेपर देनी चाहिये ।

फूल गिरनेमें विलंब होनेपर

पल्साटिल्ला १x की दस बूँदें पानीके साथ मिलाकर देनी चाहिये । यदि बारह घंटेतक इससे कोई लाभ न हो तो एक बार सिकैलकी ८-१० बूँदें पानीके साथ देनी चाहिये ।

मस्तिष्कका फूलना और प्रदाह

एकोनाइट नैप १x और बेलाडोना १x की आठ-दस बूँदें, एकके बाद एक, दो-दो घंटेके अन्तरसे देनी चाहिये ।

आर्निका १x और जेल्सीमियम् १x इसी प्रकारसे देनेसे विशेष उपकार होता है ।

सींगका टूट जाना

एकोनाइट १x और आर्निका १x की छः बूँदें, एकके बाद एक, चार-चार घंटेके अन्तरसे पिलानी चाहिये ।

पाँवमें घाव होना

आठ बूँद साइलीसिया १x का प्रयोग करना चाहिये ।

फोड़ा-फुंसी

बेलाडोना १x की ५ बूँदें थोड़ेसे पानीमें मिलाकर सबेरे-शाम पिलानी चाहिये ।

खुजला-खसरा

सल्फर १x की आठ-आठ बूँदें नित्य प्रातःकाल और सायंकालके समय देनी चाहिये ।

पागुर बंद होना

नित्य दो बार एकोनाइट नैप १x की आठ बूँदें देनेसे लाभ होता है ।

चोट लगना

प्रातःकाल आर्निका १x की आठ बूँदें पानीके साथ देनी चाहिये और चोटको आर्निका-लोशनसे धोना चाहिये ।

मोच आना

आर्निका-लोशनसे उस स्थानको भिगोये रखकर आर्निका १x की ६-६ बूँदें देनी चाहिये ।

आँखोंका फूलना

प्रातःकाल एकोनाइट १x और सायंकालको बेलाडोना १x की आठ बूँदें देनी चाहिये ।

पेटमें कीड़ा (कृमिरोग)

एक सप्ताहतक सबेरे सिना २०० और शामको सल्फर १०० देना चाहिये ।

गोरक्षाके दस साधन

(लेखिका—श्रीजगतावलि सूद)

१. बूचड़खानोंको हर तरहके उचित उपाय करके बंद करवाना चाहिये ।
२. गौओंकी उत्तम वंश-वृद्धिके उपाय करने चाहिये ।
३. गौओंके लिये पर्याप्त चारे-दानेकी व्यवस्था होनी चाहिये ।
४. घासके लहलहाते मैदान गौओंके लिये सर्वत्र खुले होने चाहिये ।
५. प्रत्येक सद्गृहस्थको अपने घरमें गौ अवश्य रखनी चाहिये और उसका प्रेमके साथ पालन करना चाहिये ।
६. कोई भी हानिकारक वस्तु गौओंको कभी नहीं खिलानी चाहिये ।
७. बैलोंके काम और चारे-दानेपर विशेष ध्यान रखना चाहिये ।
८. गौओंकी तंदुरुस्ती और स्वच्छतापर विशेष ध्यान देना चाहिये ।
९. उत्सवोंपर गौओंका विशेष पूजन होना चाहिये ।
१०. गो-जातिके लिये हृदयमें अगाध प्रेम होना चाहिये ।

थन-प्रदाह

(लेखक—डा० श्रीनिज़ामुद्दीन जी. वी. आई. सी.)

कई बार गायों आदिके थन फूल उठते हैं। गरम और कड़े हो जाते हैं एवं उनमें पीड़ा होने लगती है। थनोंमें होनेवाले इस प्रदाहको बोलचालकी भाषामें थनेला कहते हैं। भारतवर्षमें यह गायों तथा भैंसोंका सर्वसाधारण रोग है।

एक बारमें यह एक या एकसे अधिक थनोंमें हो सकता है। यह एक बड़ा भयङ्कर रोग है और इससे पशु-पालकोंको बड़ी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

इस रोगके दो प्रधान कारण हैं—१. बाहरी चोट आदि लग जाना, तथा २. किसी संक्रामक रोगके कीटाणुओंका शरीरमें प्रवेश। बाहरी चोट कई प्रकारसे लग सकती है—जैसे किसी प्रकारके आघातसे, पशुओंके रहनेके स्थानके खुरदरेपनसे अथवा थनके पैरसे कुचल जानेसे। संक्रामक कीटाणु प्रायः दुहनेवालेके हाथोंसे या किसी अन्य अप्रत्यक्ष कारणसे दुग्ध-नलिकामें होकर दुग्धकोषमें प्रवेश कर जाते हैं। गायोंके रहनेके स्थानका दलदला होना, दुहनेकी अनुचित पद्धति, अनियमित अन्तरसे दूध निकालना तथा ब्यानेके कुछ दिन पूर्व दुग्धकोषका अधिक प्रसार आदि इस रोगके निमित्त कारण माने जा सकते हैं।

रोगके लक्षण—रोगकी उग्रता, स्थिति एवं शरीरगत विकारोंके अनुसार पशुके शरीरमें हमें दो प्रकारके लक्षण दिखायी पड़ सकते हैं—तीव्र और कम तीव्र अथवा स्थायी। कुछ भी हो, इसके व्यापक लक्षण ये हैं—थनका गरम हो जाना, सूजन, हाथ आदि किसी वस्तुका स्पर्श होनेपर पीड़ा होना, थनका लाल हो जाना, शरीरके तापमानका बढ़ जाना, भूख न लगना एवं दूधका बंद हो जाना। जिस थन-विशेषमें यह रोग होता है, उसकी ग्रन्थि सख्त हो जाती है तथा दूधका रंग परिवर्तित हो जाता है एवं गाढ़े होनेके कारण वह जम भी जाता है।

उपचार—रेचकद्वारा पशुका पेट साफ करके चिकित्सा प्रारम्भ करनी चाहिये। पशुको खानेके लिये हल्का एवं सुपाच्य भोजन—घास, चावलका आल तथा गेहूँकी भूसी देनी चाहिये। गायको दिनमें कई बार दुहना चाहिये तथा रोगसे ग्रस्त थनका दूध सबसे पीछे निकालना चाहिये। दुग्धकोषको सेंककर उसपर 'ऐंटीफ्लोजिस्टीन' का लेप कर देना चाहिये तथा अन्तमें ऐसी पट्टी बाँध देनी चाहिये, जिससे स्तनकोष अपने स्थानपर रहे। रोगकी स्थिति जटिल हो जानेपर पशु-चिकित्सकसे सहायता लेनी चाहिये।

रोगसे बचनेके उपाय—१. जिन गायोंका थन-प्रदाह बहुत बढ़ गया हो, उन्हें हटा देना चाहिये, तथा जिनके यह रोग साधारण-सा हो, उनको नीरोग पशुओंसे पृथक् कर देना चाहिये।

२. जिस स्थानमें रोगीली गायें रहती हों, उसको क्लोटिन मिले हुए चूनेसे शुद्ध कर लेना चाहिये।

३. नयी मोल ली हुई गायोंकी किसी योग्य पशु-चिकित्सकद्वारा जाँच करवा लेनी चाहिये कि कहीं उनके थन-प्रदाहका रोग तो नहीं है।

४. पशुओंके रहनेका स्थान उचित ढंगसे बनाना चाहिये तथा उसके फर्शपर ऐसी चीजें बिछानी चाहिये, जिससे गायोंके थनोंको किसी प्रकारकी चोट न पहुँचे।

५. दूध देनेवाली गायोंके दुग्धकोषको रोगाणुनाशक (पोटेशियम परमैंगनेट लोशन) से धोते रहना चाहिये तथा इस लोशनको बीच-बीचमें बदलते रहना चाहिये।

६. दुहनेवाला दुहनेके पूर्व अपने हाथोंको भी उसी लोशनसे धो ले।

७. शुरू-शुरूका दूध अलग बर्तनमें रखना चाहिये।

८. रोगीली गायोंको सबसे पीछे दुहना चाहिये।

गोमाताका आर्थिक महत्त्व

(एक बँगला लोकोक्ति)

सब धन धान, आर धन गाइ। टाका कौड़ी किछु किछु, आर धन सब छाइ॥

प्रे०—श्रीसूरजमल गङ्घानी

प्रत्येक तहसीलमें गोसेवा-सङ्घकी स्थापना कीजिये

(लेखक—पं० श्रीदयाशङ्करजी दूबे, एम्० ए०, एल्-एल्० बी०)

भारतमें दूधकी भयङ्कर कमी

आजकल भारतमें दूधकी बहुत अधिक कमी है। भारतकी जनसंख्या करीब ४० करोड़ है, इसलिये प्रतिव्यक्ति केवल २४ सेर दूध प्रतिवर्ष या करीब एक छटाँक दूध प्रतिदिन पीनेको मिल पाता है। भारतसरकारके विशेषज्ञोंका मत है कि प्रत्येक व्यक्ति और बालकको अपना स्वास्थ्य ठीक बनाये रखनेके लिये कम-से-कम एक पाव दूध प्रतिदिन मिलना चाहिये, परन्तु औसतके हिसाबसे मिलता है केवल एक छटाँक। कई व्यक्ति एक पावसे अधिक भी पा जाते हैं, इसलिये करोड़ों व्यक्तियोंको प्रतिदिन एक छटाँक दूध भी नसीब नहीं हो पाता और छोटे-छोटे बच्चोंको दूधके अभावमें अपना स्वास्थ्य खो देना पड़ता है और उस समय ही अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देनी पड़ती है। अमेरिका और यूरोपके देशोंमें जहाँ प्रतिमनुष्यको प्रतिदिन करीब दो सेर दूध मिलता है, वहाँ भारतमें एक छटाँक भी न मिलना भारतकी दूधकी भयंकर कमीको सिद्ध करता है। इस अभावकी पूर्ति हम भारतमें दूधकी उपजको बढ़ाकर ही कर सकते हैं। हमको ऐसा प्रयत्न करना चाहिये, जिससे दस वर्षोंके अंदर दूधकी उपज चौगुनी हो जाय। तभी भारतवासियोंको प्रतिदिन प्रतिमनुष्यको एक पाव दूध मिल सकेगा।

गोशालाओंकी आवश्यकता

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि भारतमें दूधकी उपज कैसे बढ़ायी जाय। भारतमें पशुओंकी—विशेषकर गाय और भैंसोंकी संख्या अन्य देशोंकी तुलनामें कम नहीं है, परन्तु अच्छी नस्लकी गायोंकी संख्या बहुत ही कम है। अधिकांश गायें तो ऐसी हैं, जो अपने मालिकपर आर्थिक दृष्टिसे भाररूप हैं। नगरोंमें जो गाय पाँच सेर प्रतिदिनसे कम दूध देती है, और ग्रामोंमें जो गाय प्रतिदिन दो सेरसे कम दूध देती है, उससे उसके खानेका खर्च नहीं निकलता और उसके रखनेसे आर्थिक हानि होती है। भारतमें अधिकांश गायें ऐसी हैं, जो प्रतिदिन दो सेरसे कम दूध देती हैं। इनको घास, भूसी, खली इत्यादि भी पर्याप्त परिमाणमें नहीं मिल पाता, जिससे इनकी दशा दिन-पर-दिन खराब होती जाती है। इन गायोंकी संतान भी इसी प्रकार कम दूध देनेवाली होती है।

इसके लिये महात्मा गांधीने जो सबसे सुन्दर और सरल तरीका बतलाया है, वह है सामुदायिक पद्धतिसे पशुपालन करना अर्थात् प्रत्येक गाँवमें सहयोग समिति स्थापित कर गोशालाका चलाना। यदि गाँवके सब व्यक्ति मिलकर एक गोशाला स्थापित करके सब पशुओंको एक साथ एक स्थानमें रखकर पालन करनेकी व्यवस्था कर लें तो उससे नीचे लिखे अनुसार विशेष लाभ होंगे—

१. किसानको अपने घरमें पशु नहीं रखने पड़ेंगे। आजकल तो जिस घरमें किसान रहता है, उसीमें उसके सारे मवेशी भी रहते हैं। इससे गंदगी रहती है और हवा बिगड़ती है, यह दूर हो जायगी।

२. जब पशुओंकी संख्या बहुत बढ़ जाती है, तब जगहकी कमीके कारण किसान बछड़ोंको बेच डालता है और भैंस तथा उसके पाड़ोंको मरनेके लिये छोड़ देता है, यह बंद हो जायगा।

३. पशुओंकी बीमारीके समय इलाज सुलभ हो जायगा। व्यक्तिगतरूपसे पशुओंका इलाज कराना बहुत कठिन होता है।

४. गाँवके सब पशुओंके लिये एक अच्छा साँड़ रखना सरल हो जायगा। प्रत्येक किसान साँड़ नहीं रख सकता।

५. सामूहिकरूपसे गोचर-भूमि और घास इत्यादिका प्रबन्ध करना आसान हो जायगा।

६. सामूहिकरूपसे दूध और उसके पदार्थ बेचनेमें सुविधा होगी, दूधमें पानी मिलाना बंद हो जायगा और गाँववालोंको अच्छा दूध, दही, घी काफी परिमाणमें मिलने लगेगा।

७. किसान निकम्मे पशुओंकी आर्थिक हानिके बोझसे बच जायँगे।

इस गोशालामें अधिकांश गायें ऐसी होंगी, जो प्रतिदिन दो सेरसे कम दूध देती हैं या जो वृद्ध या निकम्मी हो गयी हैं। इससे गोशालाको प्रतिवर्ष हानि होगी। इस हानिसे बचनेके लिये प्रत्येक गोशालामें अच्छी नस्लकी गाय भी काफी संख्यामें रखना अत्यन्त आवश्यक है। यदि प्रत्येक गाँवकी गोशालामें कम-से-कम पाँच अच्छी नस्लकी गाय

रखनेका प्रबन्ध किया जाय तो निकम्मे पशुओंके होनेपर भी गोशाला अपने पैरोंपर खड़ी रह सकती है। इन गायोंको खरीदनेके लिये जो पूँजीकी आवश्यकता होगी, वह या तो गाँवके व्यक्तियोंसे चंदेके रूपमें या सरकारी बैंकोंसे कर्जके रूपमें प्राप्त करनेकी व्यवस्था की जानी चाहिये। आजकल जो गोशालाएँ और पिंजरापोल चल रहे हैं, उनमेंसे अधिकांश स्वावलम्बी नहीं हैं, उनसे हानि हो रही है और वे गोशालाके सदस्योंपर भाररूप हो रही हैं; इसीलिये उनका कार्य भी अच्छी तरहसे नहीं चल पाता। वे अच्छी नस्लकी गायोंको रखनेका प्रयत्न नहीं करतीं। यदि प्रत्येक गोशालामें काफी संख्यामें अच्छी नस्लकी गायें रखनेकी व्यवस्था की जाय तो मुझे विश्वास है कि गोशालाएँ स्वावलम्बी हो जायँगी, दूधका परिमाण बढ़नेसे उसकी कमीकी पूर्ति होगी और अच्छी नस्लके बैलोंकी संख्या बढ़नेसे खेतीमें भी लाभ होगा।

गोसेवा-सङ्घकी स्थापना

मेरा सुझाव यह है कि भारतके प्रत्येक तहसीलमें गोसेवा-सङ्घकी स्थापना की जाय और इस सङ्घका मुख्य कर्तव्य यह हो कि वह दस वर्षके अंदर तहसीलके प्रत्येक गाँवमें ऐसी गोशाला स्थापित कर दे, जिसमें साधारण और वृद्ध गाय-बैलोंके साथ-ही-साथ अच्छी नस्लकी गायों और बैलोंके रखनेकी उचित व्यवस्था हो। प्रत्येक तहसीलमें करीब पाँच-छः सौ ग्राम रहते हैं। यदि एक वर्षमें प्रत्येक तहसीलमें ५०—६० गोशालाएँ खोल दी जायँ तो दस वर्षमें भारतके सम्पूर्ण ग्रामोंमें गोशालाएँ स्थापित हो जायँ, अच्छी नस्लकी गायोंकी संख्या खूब बढ़ जाय, देशमें दूधकी कमी न रहे और अच्छे बैलोंके अधिक संख्यामें प्राप्त होनेसे खेतीमें भी सुधार हो जाय। यदि प्रत्येक सङ्घको एक अच्छा कार्यकर्ता मिल जाय तो वर्षभरमें ५०-६० गोशालाएँ खोलना बहुत कठिन काम नहीं है। गोशालाको चलानेकी व्यवस्था तो ग्रामवासियोंको ही करनी होगी। उसकी देख-रेखकी जिम्मेदारी गोसेवा-सङ्घको करनी होगी। वर्धामें अखिल-भारतवर्षीय गोसेवासङ्घकी स्थापना हो चुकी है। प्रत्येक तहसीलमें जो गोसेवासङ्घ स्थापित हो, उसे अखिल-भारतवर्षीय गोसेवासङ्घसे सम्बन्धित हो जाना चाहिये। आशा है, प्रत्येक तहसीलके उत्साही देशप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अपनी तहसीलमें गोसेवासङ्घ स्थापित करनेका पूर्ण प्रयत्न करेंगे।

कब्रस्तान

(लेखक—श्रीमदनमोहनजी विद्याधर)

दुनियामें—खास करके भारतवर्षमें वैराग्यकी बात तो बहुत होती है, परन्तु सच्चा वैराग्य बहुत कम लोगोंमें होता है। सच्चा वैराग्य हो जाय तो यह भगवान्‌का छोटा रूप 'मानव' भगवान्‌की तरह ही निष्कामभावसे परोपकार-रत रहे! इस विश्वमें सुख-शान्ति छा जावे, विषमता भग जावे और गरीबी-अमीरीका भाव मिट जावे।

पर ऐसा वैराग्य तो बहुत कम दृष्टिगोचर होता है। इसके दो और नमूने हैं, जो प्रायः प्रतिदिन हमारे अनुभवमें आते हैं। पहला ··· शिशु-प्रसव। शुभ वेला है। स्वर्गके देवोंने एक अपने प्रतिनिधिको अपनी सब शक्ति देकर भेजा है। 'माता' क्रन्दन कर रही है, तड़प रही है, कराहती है, इधर-उधर डोलती है, चिल्लाती है, सोचती है—अब जो हुआ, सो हुआ। अब आगे ··· शपथ खायी ··· जो कभी पास भी गयी। समय गुजरा और ज्यों-ज्यों बच्चा प्रकाशमें आता गया, त्यों-त्यों यह वैराग्य अपनी दुम दबाकर कहीं अँधेरी कोठरीमें जा छिपा। इसको प्रसव-वैराग्य कहते हैं।

दूसरा विदाका दिन है। वह बड़ा हुआ। ··· सबको छोड़ चलने लगा। महान् क्रन्दन मच रहा है। ··· सब श्मशान-की तरफ जा रहे हैं। सभीका ख्याल है, हमें खाकमें मिल जाना है। भला वही है, जो फूलकी तरह सुगन्ध छोड़े, बकरे-की तरह मार्गको बदबूदार न बनावे। यह संसार असार है, इसमें सभी स्त्री-पुरुष—प्राणिमात्र चलते नजर आते हैं।

चेतोहरा युवतयः सुहृदोऽनुकूलाः
सद्बान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः।
वल्गन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गाः
सम्मीलने नयनयोर्नहि किञ्चिदस्ति॥

—भोजप्रबन्ध

जिस पौधेको इतने चावसे लगाया था, वही मुरझाने

लगा। 'किसकी बनी रही है, किसकी बनी रहेगी?' 'मान्धाता क गतस्त्रिलोकविजयी?' इस तरहके न जाने कितने वैराग्यके भाव हृदय-सरमें बरसातमें मेढकोंकी तरह इस समय शोर मचाने लगते हैं। उस समय मनुष्य एक विचित्र प्रकारकी शान्तिका अनुभव करता है। उस समय मनुष्यके मनकी दशा बड़ी शुद्ध—पवित्र-सी हो जाती है। होता क्या है? शरत्-कालीन बादलोंकी तरह ये भाव थोड़ी देरतक छाये रहते हैं और समय फिर उसी शानसे अकड़कर निकल जाता है।

वही रफ्तार बेढंगी—जो पहिले थी, सो अब भी है।

× × × ×

हमारे घरमें भी एक ऐसा ही मौका एक बार आ गया। दुनियामें दिमाग—सिर (में बालों) के कभी-कभी एकदम सफेद हो जानेकी तरह—इस प्रकारके शोकजनक समयमें एकदम साफ (सफेद-सा) हो जाता है। पर अफसोस यह कि बाल फिर कभी काले नहीं होते, पर यह (दिमाग) तो फिर वैसे ही काला पड़ जाता है। बर्तनपर कलई भी कुछ दिन ज्यादा चलती है, परन्तु यह 'श्मशान-वैराग्य' का सत्त्वभाव बहुत कम समय चलता है।

···दिल बड़ा दुखी था। एक अत्यन्त प्रिय-बन्धु हमसे सदाके लिये दूर हो गया था। उसके आनेपर हमने स्वागत किया था, अब उसीके चलनेपर करुण-क्रन्दन कर रहे थे। हमने उसपर अपनी सारी दुनिया टिका रक्खी थी। पर···

हमारा दिल टूट गया और चीनकी दीवारसे भी दृढ़ संयम (और वैराग्य) की दीवार हमने कल्पित कर ली।··· सबके साथ हम भी श्मशान गये।···वापस आये तो अपनेको थका पाया। सब इधर-उधर बिखर गये थे। मैं आराम-कुर्सीपर धीरेसे लेट गया, सिरको एक तरफ सहारा दिया और आँखें बंद कर लीं।···दिव्यदृष्टि खुल गयी।

× × × ×

'···अकस्मात् श्मशान सामने आ गया।···शहरसे दूर, एक एकान्त कोनेमें। दिनमें भी भयका स्थान।···सामने चिताएँ धधक रही थीं,···मुर्दे गड़े पड़े थे।···एक तरफ देखा, जिस नीरोने रोम जलवाया था, वह खुद मानो अपनी जलायी आगमें समा रहा था। जिन्होंने अपने विरोधियोंको जीते-जी गड़वाया था, वे गाड़े जा रहे थे। जिन्होंने अपने विपक्षियोंको आधा भूमिमें गाड़ कुत्तोंसे नुचवाया था, उनके शवोंपर कुत्ते-चीलें झपट रहे थे।···मौतसे कोई छूटता नजर नहीं आता था। बच्चेकी मौतके समय लुकमानने आह भरके कहा—मेरे पास बीमारीकी दवा है, मौतकी नहीं।···'

उस कमरेमें चारों तरफ मेरे मित्रों, सम्बन्धियोंका समूह था, जो आरामसे पड़े सो रहे थे।···रातका समय था।

अचानक एक तरफसे डकरानेकी आवाज आयी। मैंने साफ-साफ सुना, यह बकरीकी आवाज आ रही थी। उसने कहा—

'पण्डितजी! क्या तुम्हें हमारी भी सुध है?'

'क्या बात है? हुआ क्या?' मैंने आश्चर्यसे पूछा।

'मुझे वह दिन याद है, जब मैं अपनी माके स्तनसे थूथी मार-मारकर दूध पिया करती थी···फिर जब मैं दूध देने लायक हो गयी, तब मैंने 'पूँजीपतियों' की तरह उसे आने-वाले दिनोंके कष्टकी कल्पना करके जमा करके नहीं रक्खा। मैंने अपने मेमनोंको कठिनताके दिनोंमें भी किसी दूसरेके पास न भेजा। और न जाने कितने मासूम बच्चोंको—जिनकी माता गरीब हिंदू-देशमें पहले ही मर जाती है—दूध देकर पालन-पोषण किया! [नाश हो इस पाश्चात्त्य सभ्यताका, जिसमें आजाद देशोंमें बच्चे गिराये जाते हैं, गुलाम देशोंमें जच्चाएँ मरती हैं—उनका ध्यान नहीं]'···

मुझे ऐसा मालूम पड़ा, जैसे किसीने मेरे हृदयमें धक्का मार दिया हो।···

'···एक दिन मैंने देखा कि मुझे खूब खिलाया जा रहा है। मैंने समझा शायद मेरे भाग जग गये! अरे हाय! जब कसाई छुरी लेकर उस दिन आया, मेरे कान खड़े हो गये, चीख निकल गयी। मानव कितना निर्दय है, अकृतज्ञ है। अपने दिलके टुकड़ोंको थोड़ा दूध देकर भी जो उसके बच्चोंको दूध देकर पालता है, वह उसीकी गर्दनपर छुरी फेरता है।'

मेरी आँखें तर हो गयीं और इस निर्दयतापूर्ण व्यवहारके प्रति मेरे मनमें एक क्षोभकी लहर दौड़ गयी। मैं अभी सोचने-में मस्त ही था कि—पहले डकारनेवालेने फिर डकारा।

एकदम 'कुकड़ूकूँ! कुकड़ूकूँ!! कुकड़ूकूँ!!!' की साफ आवाज कानोंमें पड़ी। वह मुर्गी थी।

''अजी ओ महाराज! तुम सोनेका अण्डा प्रतिदिन देने-वाली हमारी जातिकी 'हीरोइन' की बात तो शायद नहीं भूले होओगे, जिसे कि 'दयाधर्मके अवतार' मानवने सारेकी लालच-में—एकदम बटोरनेकी नीयतसे—मार डाला था? यह हमारा प्रथम बलिदान है। क्या इससे ऊँचे बलिदानको कभी तुमने सुना है? इस 'खून' का बदला हम न लेंगी, न चाहेंगी; पर

न्याय होगा, बच न सकोगे, जवाब देना पड़ेगा। 'आस्ट्रियाके राजकुमार' की हत्या होनेपर तुमने लाखोंको प्रथम महायुद्धके बहाने रक्तसरिताकी बाढ़में बहा दिया। पर हम सच्ची ईसा-वतार हैं, जो प्रतिदिन अब भी अंडा दिये जा रही हैं। प्रतिहिंसा ईसा और बुद्धके चेलोंका धर्म है, हमारा नहीं।' मैं चुप···। ताना बड़ा तीव्र था। पर इसमें बहुत कुछ सत्य था। यूरोप और जापानमें आज खूनकी वर्षा इसकी प्रत्यक्ष साक्षी है।

'एक-एक अंडा रोज देती हैं; फिर एक दिन आता है, जब हमारा शोरवा बना लिया जाता है। जो देता है खिलाता है, उसीका गला धर दबाना कहाँकी मानवता है। कौन-सा न्याय है। हाँ! हाँ!! यह तो शायद मानव-स्वभाव ही है।···जो भारत 'सोनेकी चिड़िया' हीरे-मोती देती रही, उसकी गर्दन भी दबी हुई है न? क्यों टाँग पसारे क्या सोचते हो?'

मैंने कहा—'हम खिलाते नहीं क्या?'

'मारनेको ही तो खिलाते हो न?' मेरे मुखपर मानो थप्पड़ लग गया हो! क्या जवाब देता? गौतम महर्षिका सारा न्यायदर्शन भयभीत-सा कहीं कोनेमें लुढ़क गया। मैं अच्छा तार्किक समझा जाता हूँ, पर सारी शेखी उतरती-सी प्रतीत हुई।

इतनेमें पास पड़े भाईने करवट बदली और फिर डकारा। चीं-चीं करती चिड़िया बोली—'तुम सच कहना; हमने तुम्हारा क्या नुकसान किया? क्या किसीकी जान ली है? तुम्हारे हाथसे रोटी छीन ले जानेवाले कौएका तो कोई शिकार नहीं करता; पर हमारे पीछे···।' मुझे अपमान मालूम हुआ। एक नादान चिड़िया और हमें ताने मार रही है!

'तो क्या हम दाना नहीं डालते? हमारे दानोंपर पलकर भी?' चिड़ियाने कहा—'भूलते हो। इस अभिमानमें न रहो कि तुम दाना न डालो तो हम जीना बंद कर देंगी। बेवकूफ मुर्गा समझता है—शायद मैं न कुड़कुड़ाऊँ तो सूरजका उदय ही न हो। ऐ भोले इंसान, हम तो तुम्हारे खेतोंमें न जाने कितनी खाद डालती हैं; छोटे-छोटे कीड़ोंको खाकर तुम्हारे खेतोंकी रक्षा करती हैं। एक तरफ तो तुम एक संचालक-शक्तिमें विश्वास रखते हो, जो सबका पालन-पोषण करनेवाली है और दूसरी तरफ हमें खिलानेका अभिमान!···'

मानो मेरे मुखपर किसीने ब्रेक लगा दिया हो!

इतनेमें मछली कहती जान पड़ी—'ऐ परोपकारी जीव! मेरी भी सुनो। मैंने क्या तुम्हारे कुएँ और तालाबका पानी पीकर तुम्हें प्यासा मारा है? और तो और, मैंने ही तो मानव-जातिको आदर्श ब्रह्मचारी राजर्षि भीष्मका अनोखा उपहार दिया है। ···नदीके पानीको निर्दोष बनानेका कार्य करती हूँ। जो मगर-मच्छ आदि मानवका नुकसान पहुँचाते हैं, उनसे तो मानव भय खाता है और हम निर्बलोंपर जाल डालता है, काँटे बिछाता है। वाह क्या बहादुरी! हम तो तुम्हारी फसल-तक पहुँचती भी नहीं। जब कोई मृतदेह बहा दी जाती है, तब हम खा लेती हैं; क्योंकि तुम उसे निकम्मा समझकर फेंक देते हो।' मैंने करवट ली तो फिर कोई डकारा। यह शूकर था। घूँ! घूँ!! घूमा। मैंने कहा—'रही-सही इज्जत तुम भी बचे-खुचे ताने मारकर उतार लो।' 'औरतों और मर्दोंकी इज्जत उतारनेके फनमें तो तुम्हीं उस्ताद हो। द्रौपदीका चीर उतारने हम नहीं आये थे। एक नगर जीतने-पर वहाँकी अबोध अबलाओंका सतीत्वभङ्ग हम नहीं करते। ···खैर, इस बातको यहीं छोड़ो।······'

'हम म्युनिसिपलिटियोंके 'आनरेरी भंगी' हैं, जो···।' मेरे सामने दक्षिण देशके शहरोंका बीभत्स चित्र आ गया। प्रातःकाल होते-न-होते गलियोंमें बच्चे······। मैं उस 'निष्काम कर्मसेवी' के सामने सचमुच श्रद्धावनत हो गया।

'तुम हमें भी नहीं छोड़ते। तुम्हारा दिया खाते नहीं, तुम्हारे पाले पलते नहीं। तुम्हारेसे बिना किसी प्रतिफलकी आकाङ्क्षा किये तुम्हारा उपकार करते हैं। कुत्तों, गौओं, घोड़ोंको बाँधनेके लिये तो अच्छी जगह चाहिये; उसमें शायद कुछ खर्चा भी हो। घरके बच्चोंने शायद कभी दुलत्तीकी झाड़ और सींगोंकी मार भी खायी हो। पर हम तो कभी उस तरफ जाते ही नहीं। हमने कभी किसीको डराया भी नहीं। जो बन्दर दाँत दिखाता है, उसको तो दाने भी तुम डाल देते हो। और हम······'

मेरे मनमें इस सबसे तिरस्कृत प्राणीके प्रति गौरवबुद्धिका उदय हुआ। मैंने सोचा संसारकी कोई भी वस्तु निष्कारण नहीं है। पशु हमसे अधिक परोपकारी हैं। वे पारिश्रमिक भी तो नहीं चाहते।

''तुम बिल्लियोंको तो पालते हो, यहाँतक कि माताकी बहिन 'मौसी' भी कहते हो। परन्तु इस बातको याद रखना कि दूधकी कढ़ाई साफ वही करती है। अंग्रेजोंका जरा आतिथ्य किया और हिंदुस्थान साफ करके रख दिया।···''

मुझे अपनी बेबसीपर बड़ी लज्जा आयी। उसका कहना सोलहों आने सच था।

'हमने क्या अपराध किया? हमारा कतल क्यों?'

मैंने जरूर कुछ कहना चाहा, पर कह न सका। इतनेमें एक मुसल्मान भाईने बड़ी शान्तिसे डकार ली। मुझे ऐसा ज्ञात हुआ मानो गौ देवीकी पुकार हो।

बड़ी कारुणिक, दर्दभरी'''ऐ धर्मके ठेकेदार! कुछ मेरी भी सुन लो।'''' मैंने चिल्लाकर कहा, 'हे जगन्मातः! अब और लज्जित न करो, मैं सब समझ गया हूँ।' मैं उसके कष्ट सुननेमें भी अपनेको असमर्थ पाता था। इनको किस प्रकार धीरे-धीरे नष्ट करके 'भारतीय जाति' का समूलोन्मूलन पाश्चात्त्य सभ्यताने किया, वह किसीसे भी छिपा नहीं। पहले इस देशमें गोदुग्ध न जाने कितने अधिक परिमाणमें मिलता था। भैंसका दूध दही, मक्खनके काममें आता था। फिर धीरे-धीरे गौओंको विदेश पहुँचाना प्रारम्भ हुआ और इस देशमें भैंसके दूधका प्रचार हुआ। धीरे-धीरे बुद्धि क्षय और साहस नष्ट हो गया; क्योंकि इनका दूध आलस्यकारी होता है। इसपर 'घी' कम हो गया तो वनस्पति घीका प्रारम्भ हुआ। फिर इस भैंसकी नस्ल भी जब कम होनी शुरू हुई, तब 'टी, काफी' (Tea, Coffee) दूधके स्थानपर धरना जमाकर बैठ गये और घीके स्थानपर 'डाल्डा'। जहाँ देखो, नकलीपन। दुनियाँमें कालोंका राज्य सब क्षेत्रोंसे उठ, गोरोंका प्रभुत्व हो चुका है; यहाँतक कि (काली) चुट्ट बीड़ीका स्थान भी (शानदार सफेद) सिगरेटने ले लिया है। पर इस क्षेत्रमें (गोरे) दूधके स्थानपर (काले पदार्थ) टी-काफीका प्रभुत्व होना एक चमत्कारकी बात ही है। यह है भयानक हृदयद्रावक दृश्य। किस तरहसे हमारे सामनेसे 'गौ' को दूर कर दिया गया। इसलिये मैंने उसकी कारुणिक कथा सुननेसे ही इन्कार कर दिया।

मैं कुछ दुखित-सा हो गया था, मन बैठ गया था। फिर धीरे-धीरे खरगोश, बटेर, तीतर—सबने अपनी-अपनी कही। मैं चुपचाप सहानुभूतिपूर्ण हृदयसे उन सबकी दर्दभरी पुकार सुनता रहा।

मैंने अपनेको सँभाला भी नहीं था कि एकदम चीं-चीं-की ध्वनिने मुझे फिर बेचैन कर दिया। कहने लगे—'हम वे हैं, जिन्हें तुम्हारे चाचाने मुख भी बाहर निकालने न दिया, बीचमें ही भूनकर कच्चा खा गये'''

मेरी बोलती बंद हो गयी। मानवकी निर्दयताका नंगा चित्र सामने खिंच गया। अधखिली कलियाँ भी नहीं छोड़ता! मैंने देखा, चारों तरफसे आवाजें आने लगी हैं, शोर मचने लगा है। उस पेटमें मुझे एक दूसरा ही कब्रस्तान नज़र आया, जिसपर कोई भी आँसूके फूल चढ़ानेवाला नहीं था। मैंने साफ सुना—'जिन कम्यूनिस्टोंने समानता, भ्रातृभाव और स्वतन्त्रताका ठेका लिया है, उनके राज्यमें तो हमारे मांसको बड़ी शानसे कानूनका नाम लेकर सैनिकोंके भोजनार्थ बाँटा जाता है। धन्य हैं मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण, जिन्होंने पहले-पहल हमारी पुकार सुनी। धन्यभाग हैं पुण्यात्मा स्वामी दयानन्द, जिन्होंने इस कलिकालमें भी हमारी फिर सुध ली। हमारा इन सबको नमस्कार हो।'

मैंने कहा—'भाई! हम तुम्हें स्वतन्त्र नहीं चरने देते, दबाते हैं। इसीलिये कि तुम आपसमें लड़ न मरो। बलवान् निर्बलको दबाकर भूखों मार देगा, इसीलिये नियन्त्रणमें रखते हैं।' पशुओंने कहा—'भोले हिंदुस्थानी! तुम्हें भी क्या पशु समझनेके कारण ही पराधीनता और नियन्त्रणमें रक्खा जाता है?'''

मेरे तो दिलमें मानो किसीने तेज बर्छी मार दी हो। काटो तो बदनमें खून नहीं।

'''तुम्हीं हमें परस्पर मिलकर नहीं रहने देते। मेढ़ों-को तुम लड़वाते हो। बैल, तीतर, बटेर, मुर्गे अपने तमाशेके लिये तुम लड़वाते हो। तुम्हीं यह पाठ सिखाते हो''''''।'

'ऐसी कौन-सी बात है, जिसमें हमने तुम्हारी मदद न की हो। तुम्हारी उन्नतिका मूल हम पशु-पक्षी हैं। हम तुम्हारी मदद नहीं चाहते। अपने कियेका बदला भी नहीं चाहते। हमें अपनी दशापर छोड़ दो, अपनी-अपनी भुगत लेंगे। जो देना ही चाहते हो तो फिर हमारे खूनसे हाथ न रँगो। यह धब्बा मिटेगा नहीं।'''

'''तुम एक बैलको अच्छा खिलाकर मोटा करते हो, ताकि वह एक प्रदर्शनीमें तुम्हारा नाम उज्ज्वल करे। उस बेचारेने कभी इस बातकी चाह भी नहीं की कि अखबारोंमें उसका नाम निकले। बाजारोंमें उसकी जय बोली जावे।'

'''अपने यशकी कामना और रोटी कमानेकी नीयतसे ही तुम सर्कसमें शेरको बिजलीके कोड़ेसे सीधा करते हो। घोड़ोंका नाच विवाह-शादियोंमें चाबुककी मारके नीचे कराया जाता है।' '''निष्कामभावके पाठका ठेका तो तुमने लिया है, पर करनेका आदर्श हम रखते हैं।'''

इस कब्रस्तानने मुझे चौंका दिया। वह मांसाहारियोंका पेट है, जिसमें इन सब परोपकारी जीवोंकी समाधियाँ हैं। ढेर-के-ढेर पशु-पक्षी इस कब्रस्तानमें गड़े पड़े हैं। आज अचानक उनके दर्शन हो गये। मेरी आँखें खुल गयीं।

श्रीगोपालनाममाला*

[छप्पय]

(१)

गोकुलमङ्गल गोकुलेश गोलोकमहेश्वर ।
गोरसयाचक गोधनदायक गोहृदयेश्वर ॥
गोप्रत्यङ्गविराजमान गोव्रजसम्मानद ।
गोतन्वाश्रितशोभमान[१] गोसुखनिधानपद[२] ॥
गोप्रेमास्पद गोसुखसुखी गोपुलकावलिकरणकर[३] ।
गोहृदयसकलभावज्ञवर[४] गोहितवृन्दाविपिनचर ॥

(२)

गोतर्णकसंतारण गोधनगुणगणगायक ।
गोकुलसेवक गोसेवकगोलोकप्रदायक ॥
गोभयभञ्जन गोहितकृतनिर्विषयमुनाजल ।
गोधनरञ्जन गोसुखार्थवननर्तनचञ्चल ॥
गोवृन्दपुरन्दर[५] गोस्वजन गोसुन्दरमन्दिरशयन ।
गोचारकबालगुरुत्वप्रद[६] गोचरवनहितप्रेमघन ॥

(३)

गोवियोगपरितापित गोहितगोपरूपधर ।
गोपरवश गोदुग्धपानपर गोविमुग्धकर ॥
गोरक्षक गोवंशविनाशकवंशविनाशक ।
गोहृत्कमलविकासक गोकुलकीर्तिप्रकाशक ॥
गोरोमरोमहर्षितकरण गोष्ठाङ्गणभूषणचरण ।
गोधूलिधूसरितकचरुचिर गोलोचनशीतलकरण ॥

(४)

गोकल्पितनवमृदुलनाम[७] गोकुलसर्वस्वद ।
गोप्रियदर्शन गोव्रजपूजकपरमगतिप्रद ॥
गोरसार्थगोपीगृहनर्तन गोधनवर्धन ।
गोपावन गोवंशविमर्दनकंसविमर्दन ॥
गोवत्सरूपधरमोदप्रद[१] गोचारकरसिकेन्द्रकर[२] ।
गोव्रजजीवनपीयूषदृक्[३] गोसुखनवनववेषधर ॥

(५)

गोवत्सल गोवत्सललसित गोभाग्यविधाता ।
गोवल्लभ गोवृन्दवेणुगीतामृतदाता ॥
गोव्रजदोहनप्रमुदित गोधनधन्यधन्यकर ।
गोकुलमोहन गोमण्डलमध्यस्थमनोहर ॥
गोनित्यनवीनानन्दप्रद गोहितार्थगिरिवरधरण ।
गोसदनाङ्गणरिङ्गणरुचिर[४] गोगणसर्वोत्तमशरण ॥

(६)

गोव्रजवत्सचकोरचन्द्र गोनन्दन गोपति ।
गोवन्दन गोवृन्दवन्द्य गोविन्द*गोष्ठरति[५] ॥
गोधनमुदप्रदमधुरहूति[६] गोकुलसकलार्थद ।
गोव्रजवैभव गोवदान्यवैकुण्ठधामप्रद[७] ॥
गोकष्टदुष्टविनष्टकर गोकुलकण्टकशकटहर ।
गोवृन्दविकटसंकटशमन गोचारणपटुलकुटधर[८] ॥

(७)

गोसुतमृत्युविमोचन[९] गोपदरेणुविमण्डित ।
गोरसरुचिकरभोजन गोपरिपोषणपण्डित[१०] ॥
गोप्राणाधिक गोकुलबल गोपालकबालक[११] ।
गोकुलवाञ्छाकल्पवृक्ष गोपालकपालक[१२] ॥
गोहितकृतरविजातटचरित गोसमूहचारणरसिक ।
गोमधुरपयोधरपानपटु गोकदम्बपर कारुणिक[१३] ॥

---

* अप्रकाशित 'श्रीभगवन्नामकोश' के आधारपर लिखित । १. गौके श्रीविग्रहका अवलम्बन करके खड़े हुए शोभित होनेवाले । २. जिनके चरणारविन्द गौओंके लिये परम सुखदायक हैं । ३. जिनके हस्तारविन्दका स्पर्श गौओंकी पुलकावलीका हेतु है । ४. गौओंके हृद्गत समस्त भावोंको जाननेवालोंमें श्रेष्ठ । ५. धेनुगणरूप देवताओंके इन्द्र । ६. धेनु चरानेवाले बालकोंको गौरव और (उनसे नृत्यादिकी शिक्षा लेकर) गुरुपद प्रदान करनेवाले । ७. गौओंके नवीन-नवीन सुकोमल नामोंकी रचना करनेवाले ।

१. बछड़ोंका रूप धारण कर (एक वर्षपर्यन्त) गौओंको परमसुख देनेवाले । २. गौ चरानेवाले ग्वालबालोंको रसिकशिरोमणि बनानेवाले । ३. जिनकी अमृतवर्षिणी दृष्टिने गो-वृन्दको जीवन-दान दिया है । ४. गोष्ठाङ्गणमें घुटनोंके बल चलते हुए सुन्दर लगनेवाले । * गौओंके इन्द्र और गौओंको प्राप्त करके चरानेवाले । ५. गोशालाओंमें प्रीति रखनेवाले । ६. जिनकी मधुर टेर धेनु-वृन्दको आनन्दित करनेवाली है । ७. गो-दान करनेवालोंको वैकुण्ठवास देनेवाले । ८. जो गौओंको चरानेमें चतुर है, ऐसे लकुटको धारण करनेवाले । ९. अघासुरके मुखमें प्रविष्ट बछड़ोंको बचानेवाले । १०. गौओंको हृष्ट-पुष्ट बनानेमें अत्यन्त दक्ष । ११. नन्दलाल । १२. गौओंकी पालना करनेवालोंके बालक । १३. गोसमूहपर परम करुणा करनेवाले ।

(८)

गोनवनीतप्रवीणचोर गोसुतसहचारी ।
गोसुखराधासंयुतनवलनिकुञ्जविहारी[1] ॥
गोकुलानुगति[2] गोहितमति गोवंशपरमगति ।
गोपालित गोवत्सपाल गोपाल गोष्ठपति ॥
गोहितदावानलपानकर गोरसबलहृतसबलखल[3] ।
गोनयनमधुव्रतमुखकमल गोसमस्तसुकृतैकफल ॥

—शिवकुमार केडिया 'कुमार'

गायको पीछे मारो, पहले मेरा काम तमाम कर दो

मेरा व्यक्तिगत विश्वास है कि ऐसा कोई प्रश्न नहीं है, जिसका अन्तमें धर्मसे सम्बन्ध न हो। जो व्यक्ति पशुओंके प्रति दयाका बर्ताव करते हैं, वे मनुष्य अपनी दयाकी मात्रातक प्रकृत धार्मिक हैं। जो मनुष्य सर्वसाधारणकी भलाईके लिये परस्पर सहयोग करते हैं या ईमानदारीके साथ सेवा करते हैं, वे भी धार्मिक हैं। एकमात्र अर्थनीति ही यथेष्ट प्रेरणा या आदर्श नहीं है। निदान अर्थनीतिपर निर्भर करनेसे ही काम नहीं चल सकता।

सभी जातियाँ–चाहे वे हिंदू हों या मुसलमान या ईसाई—जिस विषयपर हमलोग विचार करना चाहते हैं, उसके साथ कम या ज्यादा सम्बन्ध रखती हैं। ···सभीके लिये गौ दूध, मक्खन और घीकी खान है। और देशोंकी तरह इस देशमें भी दूध बच्चोंका खाद्य है। अधिक उम्रके अधिकांश मनुष्य दूध, घी और मक्खन खाते हैं। चायके साथ भी, जिसकी खपत दिनों-दिन बढ़ रही है, बहुत दूध पीया जाता है। दूसरी बात यह है कि भारतमें सभी जातियोंके मनुष्य मिठाइयाँ बनानेमें भी बहुत दूध बरतते हैं। इस देशके सभी मनुष्य बैलोंसे हल जोतते हैं, घोड़ोंसे नहीं।

कुछ वर्ष पहले एक विदेशी प्रोफेसर मेरे एक हिंदुस्थानी मित्रके साथ घूम रहे थे। उस समय छोटे, टूटे और बाँके सींगोंवाले दुबले-पतले कुछ पशुओंको रास्तेमें चरते हुए देखकर प्रोफेसर साहबने कहा—देखो, यह देश इतना गिर चुका है कि यहाँकी गायोंके सींग भी नहीं आते। यह सम्मति सचमुच युक्तिपूर्ण है। जिस देशकी गो-जाति उत्तम है, वह देश धन-धान्यसे परिपूर्ण है।

आजकल कुछ हिंदुस्थानी घरानोंमें स्त्रियोंने प्राच्यभाव और रीतियाँ त्यागकर गायोंकी सेवा करना छोड़ दिया है। इनकी माताएँ और दादियाँ गायोंकी सेवा करती थीं, परन्तु ये अब मेरे ख्यालमें अपनेको मेमसाहिबा समझने लगी हैं और अपने नौकरोंपर गोसेवाका भार छोड़ देती हैं। गो-सेवा-जैसे कामोंको ये अपने योग्य नहीं समझती हैं। इसका नतीजा सम्भवतः यह हुआ है कि गफलत, बुरा बर्ताव और कुछ अंशमें भूखों मरनेका दृश्य दिखायी दे रहा है।

उच्चकुलकी उस मुसलमान महिलाका उदाहरण क्या ही उत्तम है, जिसके लड़केने अंग्रेज कलेक्टरके कहनेसे विना दूधकी गायोंको बेकार समझकर उन्हें बेचना और मारना चाहा था। किन्तु माताने लड़केको जवाब दिया था कि "गायको पीछे मारो, पहले मेरा ही काम तमाम कर दो।"

—१९१७ ई० में अखिल भारतीय गोमहासभाके सभापति-पदसे दी हुई कलकत्ता हाईकोर्टके माननीय विचारपति सर जॉन वुडरफकी वक्तृतासे।

१. गौओंको असीम आनन्द देनेके लिये श्रीराधा-युक्त होकर नवलनिकुञ्जोंमें विहार करनेवाले। २. गोधनके पीछे-पीछे चलनेवाले। ३. गोरसमय भोजनके प्रभावसे बलवान् राक्षसोंका संहार करनेवाले।

सरकारी पशु-शालाओंकी विवरण-पत्रिका

प्रान्त एवं शाला	क्षेत्र (एकड़में)	नस्ल	गायें	साँड़	बछड़े	बछड़ियाँ	दूध देनेकी एक अवधिमें पशुओंके दुग्धोत्पादनका औसत	
भारत-सरकार								
(अ) १. इम्पीरियल एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्स्टीट्यूट नयी दिल्ली	४००	साहीवाल	९६	१४	१०५	८०	५,९८२	
२. इम्पीरियल एग्रिकल्चरल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, करनाल	२१००	थार्परकर	९८	१९	१०३	९०	...	
(आ) इम्पीरियल वेटेरिनरी रिसर्च इन्स्टीट्यूट ईजतनगर	...	हरियाना	३४	२	२३	३५	...	
(इ) इम्पीरियल डेयरी रिसर्च इन्स्टीट्यूट	२१२	सिंधी	११८	१२	२६	७१	३३७१	
		गीर	४५	६	१८	५४	३०५८	
		मुरा भैंस	२७	३	८	२२	४५३२	
मद्रास								
१. होसुर	१६६०	कंगायम्	१८७	४	११३	१४१	...	
		सिंधी	१०२	४	६०	८५	...	
		हल्लीकर	६९	२	७३	५९	...	
		मुरा भैंस	...	...	५१	...	...	
२. गुंटूर	२३३	अंगोल	४९	१४	४०	३९	३२१४	
		मुरा भैंस	९	५	४	७	४७३०	
बम्बई								
१. बंकापुर	२४९	अमृतमहाल	३०	२	६३		गायें नहीं दुही गयीं	
		गीर	१६	२	२०		२०८५+बछड़ों-द्वारा पिया गया दूध	
२. टेगुर	३७०	नीमाड़ी	१६	३	३१		१४००	दो थनोंका दूध, दो थन बछड़ोंके लिये
		डाँगी	१३	२	२९		१२००	
३. कांदीवली (सहायताप्राप्त)	...	गीर	७९	५	७४		२९००+बछड़ों-द्वारा पिया गया दूध	
४. मुलंद (सहायताप्राप्त)	...	गीर	६३	४	९८		२९२०+बछड़ों-द्वारा पिया गया दूध	
५. छारोड़ी	२२७९	काँकरेज	१३३	१२	२१७		४१४७	किसी विशेष पशुक
							२४१९	पशुओंका औसत
६. आनंद	...	काँकरेज	४७	४	६५		२२२६	
७. जलगाँव	...	नीमाड़ी	५०	४	९६		१५००	दो थनोंसे
८. पूर्वी खानदेश	...	नीमाड़ी	३५	२	५६		६४६	एक बार केवल सुबह दुहे जानेपर

९. एग्रिकल्चरल कालेज डेयरी, पूना	...	सिंधी	४०	६	१२	१९	२४२३	
		गीर	३	१	२	२	...	
		काँकरेज	१	...	१	...	...	
बंगाल								
१. ढाका	३	हरियाना	२३	२	१३	२३	...	
		हरियाना(ग्रेडेड)	२१	...	१६	२४	...	
		भैंस	१७	१	१५	१०	...	
संयुक्तप्रान्त								
१. हेमपुर	७३४८	खेरीगढ़*	३२२	८२	१४२	१२४	...	*इन्हें केवल ढोने-के लिये ही पाला जाता है, दूधके लिये नहीं !
		पवाँर	३७५	११३	१३८	१३९	...	
		मुरा	...	६	...	...	...	
२. भरारी	२२४१	हरियाना	१२६	४५	५८	९०	...	
			९३	१	६२	५६	...	
		मुरा	८०	२०	२०	२५	...	
			७३	३	१३	११	...	
३. मँझरा	५९१	साहीवाल	१३३	६८	३९	२८	...	
पंजाब								
१. लायलपुर (डेयरी)	३६	साहीवाल	१८	३	२	२७	...	
		नीली	६	२	...	९	...	
२. रावलपिंडी	...	धन्नी	८	१	१३		...	
३. हिसार	३८८२९	हिसार हरियाना	२२१२	३१	२८७५		...	
४. सरकारद्वारा सहायताप्राप्त								
(अ) जहाँगीराबाद	४१८९	साहीवाल	...	...	...		...	
(आ) अल्लाहदाद	४०५६	साहीवाल	...	...	...		...	
(इ) मंटगुमरी	४८५	साहीवाल	...	...	...		...	
		नीली एवं रावी भैंस	...	...	...		...	
(ई) कादिराबाद	१०११	हिसार	...	...	...		...	
(उ) बहादुरनगर	३०४९	रावी तथा नीली भैंस	...	...	...		...	
(ऊ) शेरगढ़	५४६२	साहीवाल	...	...	...		...	
बिहार								
१. पूसा	७४२	हाँसी-हिसार	२२	५	१४	३३	...	
२. सेपाया	३७९	मुरा भैंस	२७	१०	२१	१८	...	
३. काँके	३७०	साहीवाल	५२	५	८२		...	
		थार्परकर	२८	३	४४		...	
४. पटना	६५०	थार्परकर	१७६	२२	१२६	१३५	...	
मध्यप्रान्त								
१ तेलनखेड़ी	१२०	साहीवाल	३२	२	३४	३८	...	
		मुरा भैंस	४	१	८	१२	...	
		नागपुरी भैंस	१४	१	१	...	...	

२. बोड	२०९०	(मिश्रित)	...	...	...	...	...
३. पकड़िया	२०१४	...	...	...	...	...	...
४. गढ़ी	१६२७	गावलाव मुरा (संकर)	...	...	...	...	...
५. देवल	३६१४	मालवी मुरा भैंस	...	...	...	...	...
६. धार	२००	...	...	...	...	...	...
आसाम							
१. अपर शिलांग फार्म	५२२	आयरशायर (संकर)	६	...	...	...	७६८५
		फ्रीजियन (संकर)	१६	३	५	४३	७५४६
२. कानापारा	२०८	सिंधी	६	४	८	३	१४८९
		सिंधी (संकर)	२८	१०	३५	२८	१५५८
३. सिलहट	२२८	सिंधी	१४	२	७	१८	४२८०
		सिंधी (संकर)	१६	...	१९	२४	२७६५
		भैंसें	९	१	६	६	२०२५
		फ्रीजियन (संकर)	२	...	...	...	४६०८
४. जोड़ाहाट		थार्परकर	२०	२	१३	१९	१५९०
उ० प० सीमान्त प्रदेश							
१. इस्लामिया कालेज	...	साहीवाल	३	१	२	४	...
		नीली भैंस	२१	४	२	४	...
		स्थानीय भैंस	३१	...	२	२	...
सिंध							
१. विलिंग्डन फार्म, मलीर	८००	लाल सिंधी	७५	५०	७०	६७	...
२. मीरपुर खास	१९२	थरी	३७	११	१९	१२	...
३. सहरंद	...	थरी	२४	१	७	१७	...
		कुंडी भैंस	११	१	३	५	...
४. दादू	२१२	भगनारी	...	१	२२	...	...
५. डोकरी	...	भगनारी	४६	२	४७	४९	...
		कुंडी भैंस	३	२	...	९	...
उड़ीसा							
१. कटक	१५०	हरियाना	२६	१	२३		...
२. आँगुल	...	हरियाना	५	२	२८		...

गाय माता है

'मैं मानता हूँ कि मुझे गायके प्रति दयाका बर्ताव करना चाहिये। क्योंकि वह भी माता है।'

—एफ्. डब्लू, होर्ड

अन्यान्य डेयरी-फार्मोंकी सूची

फौजी डेयरियाँ

सीमान्त सर्कल

१. बन्नू, २. रजमक, ३. देरा इस्माइल खाँ-बाना, ४. पेशावर चेराट, ५. नौशेरा, ६. कोहाट, ७. मत्सोनाबाद, ८. मर्दान, ९. रावलपिंडी, १०. क्वेटा, ११. सरगोधा, १२. रुक।

उत्तरी सर्कल

१. रावलपिंडी, २. स्यालकोट, ३. लाहौर छावनी, ४. फीरोजपुर, ५. जालंधर, ६. अम्बाला, ७. डलहौजी, ८. कसौ ', ९. डगशाई, १०. सरगोधा, ११. बंगाली, १२. शादीपुर, १३. रुक, १४. मुल्तान, १५. क्वेटा, १६. मत्सोनाबाद, १७. बोवली।

मध्य सर्कल

१. आगरा, २. इलाहाबाद, ३. कानपुर, ४. झाँसी, ५. देहरादून(कालसी), ६. लखनऊ, ७. मेरठ, ८. अम्बाला, ९. बरेली, १०. डगशाई, ११. कसौली १२. मेरठ।

दक्षिणी सर्कल

१. जबलपुर, २. मह्व, ३. देवलाली, ४. किरकी, ५. बेलगाँव, ६. सिकंदराबाद, ७. अहमदनगर।

देशी राज्योंकी एवं व्यक्तिगत डेयरियाँ

देशी राज्य

१. गवर्नमेंट सेंट्रल फार्म ओल्लुकारा (कोचीन)
२. कैटल ब्रीडिंग स्टेशन, अजामपुर जिला कोडूर (मैसूर)
३. पैलेस डेयरी फार्म (त्रिवेन्द्रम्)
४. गवर्नमेंट कैटल फार्म (बड़ौदा)
५. गवर्नमेंट कैटल ब्रीडिंग फार्म, हिंगोली (हैदराबाद)
६. गवर्नमेंट कैटल ब्रीडिंग फार्म, हिमायतसागर(हैदराबाद)

व्यक्तिगत

१. इलाहाबाद एग्रिकल्चरल इन्स्टीट्यूट, इलाहाबाद
२. बम्बई गोरक्षक मण्डली कैटल ब्रीडिंग फार्म कांदीवळी, बम्बई
३. गोशाला डेयरी फार्म, जूकु, कानपुर
४. एड्वर्ड केवन्टर लिमिटेड, तारादेवी शिमला
५. एड्वर्ड केवन् टर लिमिटेड, नयी दिल्ली
६. मंटगुमरी डेयरी फार्म, मंटगुमरी
७. जहाँगीराबाद फार्म, मुल्तान (जिला)
८. अल्लाहदाद कैटल फार्म, मुल्तान (जिला)
९. एस्टेट डेयरी फार्म, मेलेचावल, तिन्नेवेली
१०. पट्टाजगड़ आफ पलायाकोट्टाई, पलायाकोट्टाई (दक्षिण भारत)
११. कराची पिंजरापोल, कराची
१२. दिल्ली कैटल ब्रीडिंग फार्म दिल्ली
१३. दिल्ली पिंजरापोल, दिल्ली
१४. वायसरायज बॉडिगार्ड, नयी दिल्ली
१५. गवर्नमेंट हाउस डेयरी फार्म, गनेशखिंड, पूना
१६. दयालबाग डेयरी फार्म, आगरा
१७. बिरला डेयरी फार्म, पिलानी (जयपुर)
१८. कलकत्ता पिंजरापोल, कलकत्ता

भारतकी गोरक्षक-संस्थाएँ

(१) जीव-दया-मंडली, बंबई, (२) गोरक्षण मंडल, बंबई, (३) गो-ग्रास-भिक्षा-संस्था, बंबई, (४) बंबई पिंजरापोल, बंबई, (५) अखिल भारतीय गोपाल गोरक्षक मण्डल बंबई, (६) श्रीगोवर्धनसंस्था, वाई, सतारा, पूना, बंबई, (७) घाटकोपर सार्वजनिक जीवदयाखाता, घाटकोपर, (८) पशु निर्दयता निवारक समिति (दि सोसायटी फार दि प्रेवेन्शन आफ क्रूएल्टी टु एनिमल्स) मद्रास, (९) दक्षिणभारत जीव-दया-मंडली (साउथ इंडियन ह्यूमेनिटेरियन लीग), (१०) गो-सेवा संघ, सेवाग्राम (वर्धा), (११) अखिल भारतीय गोरक्षा मंडल, काशी, (१२) पिंजरापोल सोसायटी कलकत्ता, (१३) गोशाला सोसायटी, कानपुर, (१४) गोशाला सोसायटी दरभंगा, (१५) अखिल भारतीय पशु-कष्ट-निवारिणी समिति, कारोल बाग दिल्ली, (१६) गोवंश रक्षिणी सभा, हिस्सार, (१७) पशुरक्षक समिति, आगरा।

गायका शास्त्रीय एवं व्यावहारिक महत्त्व

(लेखक—पं० श्रीदीनानाथजी शर्मा, शास्त्री, सारस्वत, विद्याभूषण, विद्यावागीश, विद्यानिधि)

'कल्याण'के पाठकोंके समक्ष यह प्रश्न उदित होता होगा कि हिंदू-धर्ममें तैंतीस करोड़ देवता माने गये हैं, उनकी पूजा किस तरह हो ! यदि प्रत्येक देवकी षोडशोपचार पूजा करनी पड़े तो आजकलकी महँगीमें बहुत असुविधा उपस्थित हो। तब उनकी पूजा किस प्रकार की जाय ?

इसपर यह याद रखना चाहिये कि रुचिवैचित्र्यसे सबका इष्टदेव कोई एक ही हुआ करता है। उपासक उसी अपने इष्टदेवमें अन्य सबको व्याप्त मानकर उसकी पूजा करता है, तथा अन्य देवताओंमें भी अपने इष्टदेवको व्यापक मानकर उनकी पूजा करता है। इससे न तो कोई असुविधा उपस्थित होती है और न किसी अन्य देवताके प्रति घृणाभाव या पारस्परिक कलह ही उत्पन्न होता है।

अथवा कोई सभी देवताओंकी एक साथ पूजा करना चाहे, उसे भी कोई असुविधा नहीं हो सकती। उसके लिये सबसे उत्तम उपाय गोपूजन है। गायमें सभी देवताओंका निवास माना गया है। पुराणोंमें तो यह विषय स्पष्ट है ही, वेदमें भी इस बातपर प्रकाश डाला गया है।

अथर्ववेद ९ । १२ । ७ में गायके रोम-रोममें देवताओंका निवास माना गया है।

वेदने तो यहाँतक कहा है—'एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम्' (अथर्ववेद-शौनकसंहिता ९ । ७; १ । २५)। यहाँपर गायके रूपको सारे ब्रह्माण्डका रूप दे दिया गया है। इससे बढ़कर गायका और क्या महत्त्व हो सकता है। तब गोपूजनसे केवल देवपूजन ही नहीं, अपितु समस्त ब्रह्माण्डका पूजन प्रतिफलित हुआ।

पुराणोंने इसी वैदिक सूक्तका विस्तृत भाष्य कर दिया है। इसीलिये ही बृहत्पराशरस्मृतिके—'शृङ्गमूले स्थितो ब्रह्मा शृङ्गमध्ये तु केशवः' (३। ३२)'सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः'(३।३३-३४-३५-३६)—इ पद्योंमें गायको 'सर्वदेवमयी' माना है। गोपथब्राह्मण (अथर्ववेद) में भी 'वैश्वदेवी वै गौः, यद् गां ददाति विश्वेषामेतद् देवानां तेन प्रियं धाम उपैति' (२ । ३ । १९)—यहाँपर गायको 'वैश्वदेवी' कहकर उसमें सब देवताओंका निवास माना गया है, तथा गायके दानसे देवलोककी प्राप्ति बतायी गयी है।

यजुर्वेद-शतपथब्राह्मणमें 'महाँस्त्वेव गोर्महिमा'(३।३।३।१)—यहाँपर गायकी बड़ी महिमा बतायी गयी है। शुक्लयजुर्वेद-वाजसनेयिसंहितामें 'गोस्तु मात्रा न विद्यते' (२३।४८)कहकर वही बात पुष्ट की गयी है। 'सर्वान् कामान् यमराज्ये वशा प्रददुषे दुहे।' (अथर्ववेद-शौनकसंहिता) के इस १२।४।३६ मन्त्रमें गोदानकर्ताकी यमलोकमें मनोरथ-पूर्ति दिखलायी गयी है। 'अनुपूर्ववत्सां धेनुमनड्वाहमुपबर्हणम्। वासो हिरण्यं दत्त्वा ते यन्ति दिवमुत्तमाम्' (अथर्व० शौ० सं० ९ । ५ । २९)—यहाँपर भी सवत्सा गायके दानसे स्वर्गलोककी प्राप्ति कही गयी है। 'यां ते धेनुं निपृणामि यमु ते क्षीर ओदनम् तेना जनस्यासो भर्ता योत्रासद् अजीवनः' (अथर्व० १८।२। ३०)—अथर्ववेदका यह सूक्त मृतक-कर्ममें विनियुक्त है। उक्त मन्त्रमें मृतकके उद्देश्यसे गोदान तथा खीरका विधान किया गया है। 'अयं ते गोपतिस्तं जुषस्व स्वर्गे लोकमधिरोहयैनम्।' (अथर्व० ८।३।४)—इससे भी मृतकको गाय स्वर्ग पहुँचाती है, यह बात सूचित होती है; इससे वैतरणी पार कराना भी सूचित होता है।

'ऋषिसहस्रमेकां कपिलामेकैकशः सहस्रकृत्वो दत्त्वा तया ते सहस्रदक्षिणाः सम्पन्नाः'—महाभाष्यके प्रत्याहाराह्निकके इस वचनसे कपिला गायके दानका विशिष्ट महत्त्व सूचित होता है। 'गां धापयन्तीं धयन्तीं परशस्यं वा चरन्तीं परस्मै न कस्मैचिदाचक्षीत' (२४।९२)—सुश्रुतसंहिताके चिकित्सास्थानके इस वचनसे, 'गां धयन्तीं परस्मै नाचक्षीत, न चैनां वारयेद्' (९।३)—गौतम-धर्मसूत्रके इस वचनसे,तथा'न वारयेद् गां धयन्तीं न चाचक्षीत कस्यचित्' (४।५९)— मनुस्मृतिके एवं 'न चाचक्षीत धयन्तीं गाम्' (१।६।१४०)—याज्ञवल्क्य-स्मृतिके इस वचनसे तथा वैखानस धर्मप्रश्नके 'परक्षेत्रे चरन्तीं गां धयन्तं वत्सं च न वारयेत्, नैवाचक्षीत' (३।२।१५) से गायका यह महत्त्व सूचित होता है कि दूसरेके खेतमें चर रही हुई गायकी सूचना खेतके स्वामीको भी न दी जाय।

गायकी व्यावहारिक महत्ता तो प्रसिद्ध है ही। इस ओर ध्यान न होनेसे घृत, दुग्ध हमारे सामनेसे अलक्षित होते जा रहे हैं। भगवान् श्रीकृष्णने भी स्वयं गोपालनसे हमें शिक्षा दी है कि गायका पालन, पूजन, सम्मान सीखो। गायके तिरस्कारके विरोधमें अपने प्राणोंकी बाजी लगा दो। तुमसे गाय

छीननेवाला ब्रह्मा भी आ जाय, तो उसे वह पाठ पढ़ाओ कि फिर तुम्हारे पैरों आ पड़े। कोई दैत्य छिपकर तुम्हारी गौएँ तुमसे छीन ले, तो उसका वध करनेमें भी पीछे न रहो।

प्रकरणवश इस प्रश्नपर भी विचार किया जाता है कि मृत्यु हो जानेपर गाय चमारको सौंप दी जाय या गाड़ दी जाय या उसे जला दिया जाय अथवा उसका जलप्रवाह किया जाय। यदि चमारको दी जाय, तो उससे गायका मूल्य लेकर गोशालामें लगा दिया जाय या नहीं? पूर्वकालमें हिंदूलोग गोचर्मको उपयोगमें लाते थे या नहीं; यदि नहीं तो फिर विवाहकी समाप्तिमें वधूको 'आनुडुह चर्म'पर बैठाना क्या आशय रखता है? वेदमें 'गोभिः सन्नद्धो असि' इत्यादि मन्त्रोंमें गोचर्म-वर्णन क्या सिद्ध करता है? कौटिलीय अर्थशास्त्रमें भी चर्मका व्यवहार आता है।

इस प्रश्नपर दो दृष्टिकोण उपस्थित किये जाते हैं—एक नैतिक दृष्टिकोण, दूसरा धार्मिक। धार्मिक दृष्टिकोणवाले कहते हैं कि हम अपनी माताके मरनेपर उसके शरीरको किसी भी मूल्यपर दूसरेको देना पसंद नहीं करते; तब गोमाताके ही मरनेपर उसे चमारको क्यों दे दिया जाय? हमारे प्रान्तमें चमार प्रायः मुसल्मान हैं। पशुओंका शास्त्रीय संस्कार मिलता ही नहीं; तब उसका गाड़ना ही ठीक है।

कई कहते हैं कि गाड़नेपर भी चमार, जो प्रायः यहाँ मुसल्मान हैं, उसको निकाल लिया करते हैं; तब गाड़नेके स्थानपर उसका जलप्रवाह कर दिया जाय। परन्तु यह भी ठीक नहीं। तब उसके परमाणु स्नान करते हुए हिंदुओंके मुखद्वारा भीतर जा सकते हैं। इधर जलसे भी चमार गौओंको निकाल लेते हैं। जलाना भी उसका ठीक नहीं; क्योंकि एक तो लकड़ियोंका खर्च बहुत बढ़ेगा, दूसरे शास्त्रमें पशुके संस्कारका उल्लेख नहीं। इसलिये उसका गाड़ना ही ठीक है; साथ ही नमक आदि डाल देना चाहिये, जिससे वह निकालने योग्य न रहे।

नैतिक दृष्टिकोणवालोंका यह कथन है कि आजका युग चमड़ेका युग हो गया है। अब इस युगसे चमड़ा हट नहीं सकता। गायके चमड़ेसे बनाये गये जूते या बूटोंको कौन नहीं पहनता? कारखाने या छापाखाने किसने नहीं खोल रक्खे, जिनमें चमड़ेके पट्टे अपेक्षित होते हैं। इसी चमड़ेके लिये गोहत्या होती है; उसकी हत्याको रोकनेका एक यह भी उपाय है कि मृत गाय चमारको दे दी जाय। मातृत्वका सम्बन्ध जीवित गायके साथ रखना चाहिये, मरी हुईके साथ नहीं। जो मूल्य इसका मिले, उसे अपने काममें न लगाकर गोशालाके काममें खर्च करना चाहिये। महाभारतमें गौओंके लिये कहा है—'पयसा हविषा दध्ना शकृता चाथ चर्मणा। अस्थिभिश्चोपकुर्वन्ति शृङ्गैर्वालैश्च भारत ॥'

पहले भी हिंदू-जातिमें गोचर्मका व्यवहार था; इसीलिये विवाहान्तमें 'आनुडुह' चर्मपर वधूके उपवेशनका वर्णन आता है। वाल्मीकिरामायणके सुन्दरकाण्डमें 'आर्षभाणि च चर्माणि'—वृषभ-चर्मका वर्णन आता है; परन्तु अब तो लोकविकुष्ट होनेसे गोचर्मका व्यवहार नहीं होता। इसलिये याज्ञवल्क्यस्मृति तथा मनुस्मृतिमें भी 'अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्ममप्याचरेन्न तु' 'धर्मं चाप्यसुखोदर्कं लोकविक्रुष्टमेव च। परित्यजेत्''''''(४। १७६) यह कहकर निषेध कर दिया गया है।

परन्तु धार्मिक दृष्टिकोण रखनेवालोंका यह कथन है कि यदि हम चमारोंको गो-शव देनेकी आज्ञा दे देंगे या उसकी घोषणा कर देंगे, तो ऐसा हो जानेपर क्रमशः शृङ्खलाभङ्ग हो जायगा। जैसे कई लोकहितैषी जनोंने पहले अक्षतयोनि बालविधवाओंका विवाह चालू कर दिया था, तब कुछ समयके बाद अक्षतयोनि युवती विधवाओंका, फिर क्षतयोनि विधवाओंका, फिर आजकल तो संतानवाली विधवाओंका भी विवाह हो रहा है, वैसी बात यहाँ भी घटित होगी।

मृत गौओंको चमारोंको दे देनेकी आज्ञा हो जानेपर पहले हिंदू चमारोंको बिना मूल्य लिये, फिर मूल्य लेकर, गौएँ देनेकी प्रथा चल जायगी। फिर उनकी अपेक्षा मुसल्मान चमारोंसे अधिक धन मिलनेपर लोग उन्हें देने लग जायँगे। तब मूल्य लेना शुरू हो जानेपर कई दिनोंतक तो लोग वह रकम गोशालाओंमें देते रहेंगे। फिर क्रमशः लोग उसे अपने काममें लगाने लग जायँगे। इस प्रकार उससे घृणा हट जानेपर हमारी जातिमें भी चमड़ेका व्यापार चल पड़ेगा। फिर तो मर रही हुई गायको भी लोग भविष्यकी अपनी असुविधाओंसे बचनेके लिये अधिक धनके लोभसे मुसल्मान चमारोंको देने लग पड़ेंगे, और प्रसिद्ध यह कर देंगे कि हमने मरनेपर ही दिया था। इस प्रकार हो जानेपर क्रमशः हमारी गायसे पूज्यदृष्टि भी हट जायगी।

विवाहान्तमें प्रयुक्त 'अनुगुप्ते आगारे आनुडुहे आर्षभे रोहिते उत्तरलोम्नि चर्मणि उपवेशयति' इस वाक्यका धार्मिक दृष्टिकोणसे यह अर्थ होगा—'अनड्वान् वृषभः प्रोक्तस्त्व-

नड्वान् मुख्य आलये। नारीयुक् प्रज्वलद्दीपमनुडुत् कौतुकं गृहम्'—इस रन्तिकोषके वचनसे 'अनुडुत् कौतुकागारम्, तत्र भवे' अर्थात् कौतुकागारमें स्थित 'आर्षभे ऋषिभिः श्रेष्ठतया स्वीकृते'ऋषिसम्मत,'रोहिते चर्मणि'मृगचर्मपर वधूको बैठाये। यदि यह अर्थ स्वीकार न किया जाय, और अनुडुह् शब्दका अर्थ बैल किया जाय, तब 'आनुडुहे आर्षभे'में पुनरुक्ति होगी; क्योंकि अनुडुह् तथा ऋषभ दोनों शब्द बैलके वाचक हैं।

अथवा 'आनुडुहे' अनुडुह्-शब्दवाच्य आसन्नदेशे। श्रीतारानाथ तर्कवाचस्पतिप्रणीत 'वाचस्पत्य' नामक महाकोषके 'अनुडुह् आसन्नदेशादौ' इस वचनके अनुसार मण्डपासन्नदेश अर्थात् कौतुकागारका ही आशय निकलेगा।

कहींपर 'गोचर्मणि' ऐसा भी पाठ है, वहाँपर 'गोचर्म'—यह पारिभाषिक शब्द है। याज्ञवल्क्यस्मृतिकी टीका मिताक्षरामें गोचर्मका लक्षण यों किया है—'दशहस्तेन दण्डेन त्रिंशद्दण्डनिवर्तनम्। दश तान्येव गोचर्म।' गृहसंग्रहमें भी कहा है—'ऋषभैकशतं यत्र गवां तिष्ठति संवृतम्। बालवत्सप्रसूतानां गोचर्म इति संविदुः।' पद्मचन्द्रकोषमें भी गोचर्मन्का अर्थ 'पृथ्वीका परिमाण (माप) १०० गज लंबा ३ गजके निकट चौड़ा' यह किया है। इस प्रकार गोचर्मका अर्थ ऐसा स्थलविशेष हुआ, जहाँपर एक सौ बैल समा सकें।

यह अर्थ यहाँ संगत भी बैठता है; क्योंकि—'आनुडुहे चर्मणि उपवेशयति' विवाहपद्धतिके इस स्थलमें ही कहा है—'इह गावो निषीदन्तु इह अश्वा इह पूरुषाः' अर्थात् यहाँपर गाय, घोड़े, पुरुष बैठें। गोचर्मका अर्थ बैलका चमड़ा होनेपर गाय, घोड़े, पुरुष वहाँपर सब नहीं समा सकते। इस कारण वहाँ पूर्वोक्त परिमाणवाली भूमि ही हो सकती है। 'रोहिते' के स्थानपर 'लोहिते' पाठ होनेपर सूर्यकी प्रथम किरणसे प्रकाशित भूभाग—यह अर्थ होगा।

चर्मयुक्त रथोंका भी वर्णन यदि वेदमें आता है तो वह कोई विधिवाक्य नहीं; और वहाँपर गव्य चर्म लेना आवश्यक भी नहीं है, क्योंकि वहाँपर गो-शब्दका अर्थ चर्मसामान्य है। तो वहाँपर भैंसका चमड़ा भी लिया जा सकता है। या कोई चाण्डाल आदि वैसा रथ भी बनाये, तो यह सबके लिये विधि नहीं हो सकती। कौटिलीय अर्थशास्त्रादिमें भी चर्मका वर्णन समझना चाहिये, न कि गोचर्मका। अथवा हो भी तो वह अर्थशास्त्र है, धर्मशास्त्र नहीं। वहाँ राजनीति है, धर्मनीति नहीं। इस प्रकार पाठकोंके सामने हमने दोनों दृष्टिकोण रख दिये हैं। तथापि हमें प्रधानता धार्मिक दृष्टिकोणकी रखनी चाहिये।

हिंकृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसाभ्यागात्। दुहामश्विभ्यां पयो अघ्न्या इयं सा वर्द्धतां महते सौभगाय॥

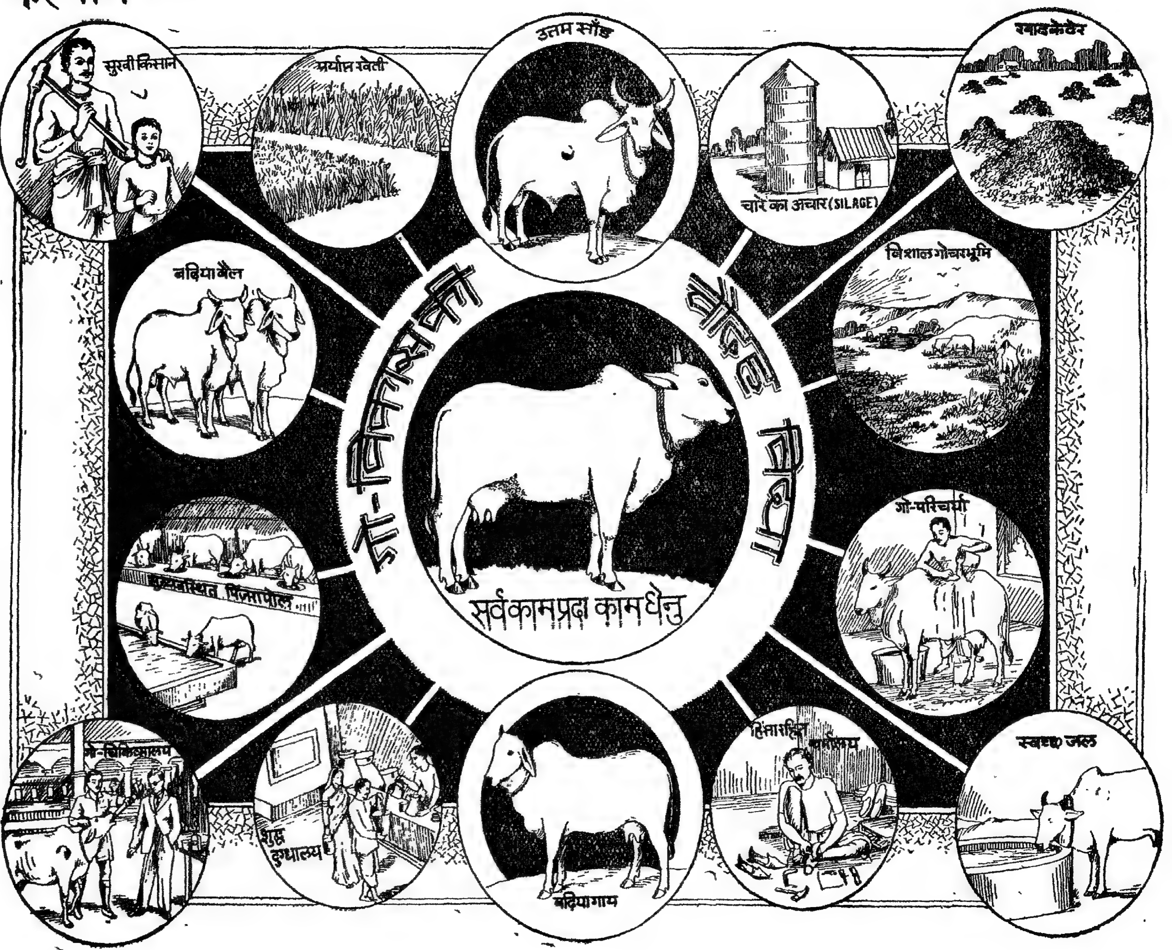
(ऋ० १। १६४। २७; अथर्व० ९। १०। ५)

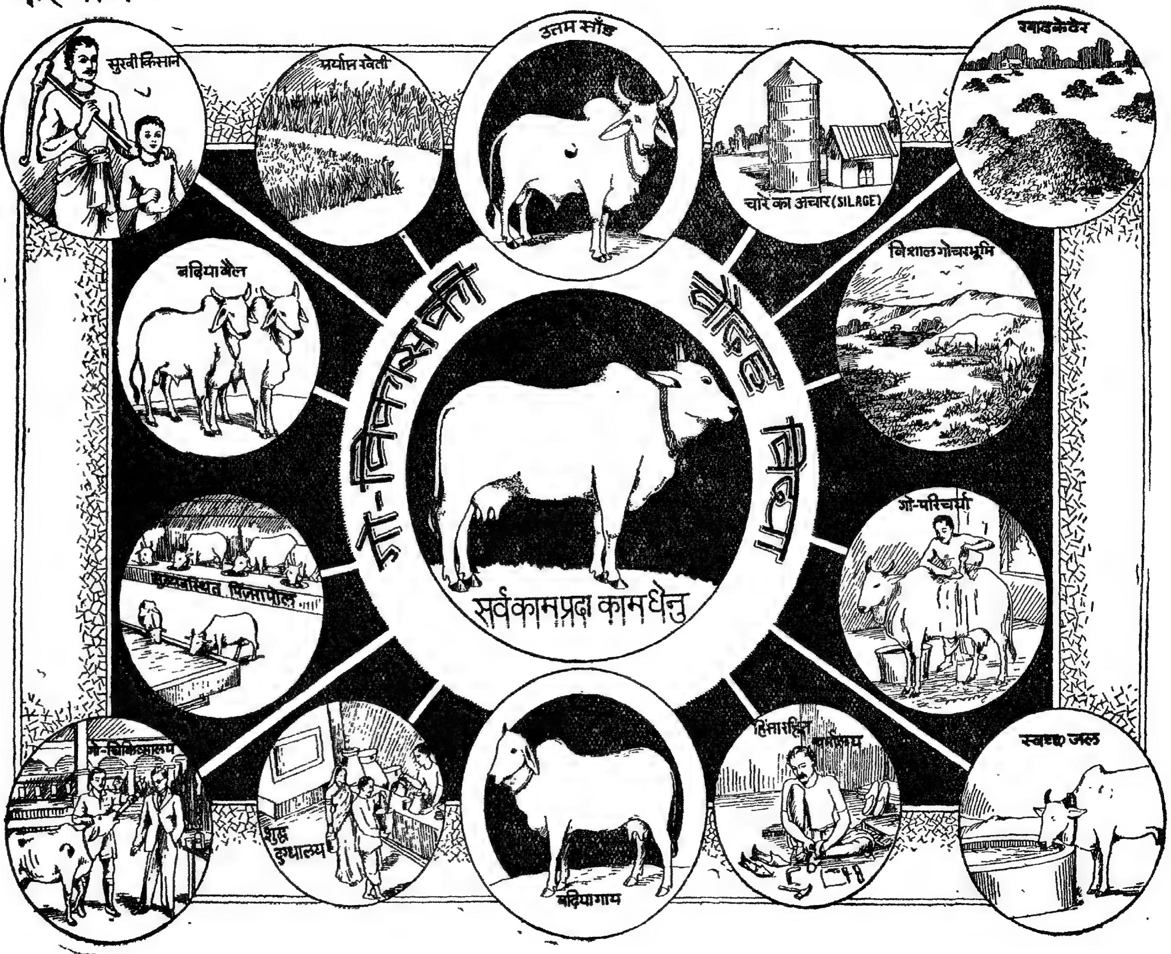
यह गायका वर्णन करनेवाला मन्त्र है। इसके पूर्वार्धका आदिम वर्ण 'हिं' और उत्तरार्धका आदिम वर्ण 'दु' है। गोभक्त हिंदूजातिने यही 'हिंदु' अपना नाम स्वीकार कर लिया है। जैसे एक वेदसे 'अ', दूसरेसे 'उ', तीसरेसे 'म्' अक्षर लेकर 'ओम्' बनाया गया है, (देखिये इसपर मनुस्मृति २। ७६) वैसे ही वेदके गो-वर्णन-परक एक ही मन्त्रके पूर्वार्ध-उत्तरार्धका आदिम वर्ण लेकर 'हिंदु' यह हमारा नाम वैदिककालसे चला आ रहा है। उसी हिंदुधर्मके प्रसिद्ध पत्र 'कल्याण' ने भी इसीलिये 'गो' अङ्कका विशिष्टाङ्क रक्खा है। तब हिंदूजातिको इस गायकी सब तरहसे रक्षा करनी उचित है। शम्।

गो-गुहार!

मातु समान अपान बिसारि सदा दधि-दूधकी धार धरी है।
हाय गरीब अबोलन पै असि काढ़ि कसाइन काट करी है॥
दीन दहारत आरत ह्वै, तऊ "प्रेम" अवाज न कान परी है।
कोसत भारतवासिन कौं, तबहीं तौ इतै यह गाज गिरी है॥

—प्रेमनारायण त्रिपाठी 'प्रेम'


सर्वकामप्रदा कामधेनु
सुखी किसान
पर्याप्त खेती
उत्तम साँड़
चारे का अचार (SILAGE)
बढ़िया बैल
विशाल गोचरभूमि
गो-परिचर्या
शुद्ध दुग्धालय
बढ़िया गाय
स्वच्छ जल


गो-विषयकी
विद्या
सर्वकामप्रदा कामधेनु
सुखी किसान
पर्याप्त खेती
उत्तम साँड़
चारे का अचार (SILAGE)
विशाल गोचरभूमि
बढ़िया बैल
गो-परिचर्या
सुव्यवस्थित पिंजरापोल
गो-चिकित्सालय
शुद्ध दुग्धालय
बढ़िया गाय
हिंसारहित
स्वच्छ जल

गोरक्षापर कुछ स्फुट विचार

'गो-अङ्क' में बड़े-बड़े अनुभवी विद्वानोंके लेख प्रकाशित हो रहे हैं। मेरा कोई अधिकार नहीं कि मैं इस विषयमें अपनी ओरसे कुछ लिखूँ। परन्तु कुछ विषय इसमें ऐसे आ गये हैं, जिनपर मत प्रकट करनेके लिये मुझे बाध्य होना पड़ा है। इसीलिये मैं नम्रताके साथ निम्नलिखित विषयोंपर अपने विचार प्रकट करनेका साहस करता हूँ। इन विषयोंमें मेरा निजी विशेष अनुभव नहीं है। मित्रोंके अनुरोध तथा कर्तव्यकी प्रेरणासे ही अपनी समझमें जो बात उचित जँची, वह लिखी जा रही है। आशा है, विज्ञ पाठकगण विचार करेंगे और अनुचित विचारोंके लिये सावधान करनेकी कृपा भी करेंगे।

यूरोपका गोप्रेम

यूरोपमें गोपालन और गो-संवर्धनका जो महत्त्वपूर्ण कार्य हो रहा है, वह बहुत ही सराहनीय है एवं उसकी ओर हमारे सुशिक्षित तथा देशकी उन्नतिके सच्चे प्रयासी पुरुषोंका आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। और उससे हमें यथायोग्य लाभ भी उठाना चाहिये। परन्तु एक बातपर विचार करनेकी बड़ी आवश्यकता है; वह है—गौके सम्बन्धमें पाश्चात्त्यों और भारतीयोंके दृष्टिकोणका भेद। पाश्चात्त्य जगत्में गोपालन होता है, विशुद्ध आर्थिक दृष्टिसे। इससे वहाँ उन गायोंकी संख्या बढ़ ही नहीं सकती, जो दूध न देती हों, या जो कम देती हों। ऐसी गायें तुरंत मार दी जाती हैं और उनका मांस लोगोंकी उदर-दरी भरनेमें लग जाता है। इसलिये वहाँ निकम्मी तथा दूध न देनेवाली गायोंका प्रश्न ही नहीं उठता। भारतमें गोपालनका उद्देश्य अर्थसम्मत होनेके साथ ही मुख्यतः धार्मिक है। हमारे गोपालन और गोसेवनका उद्देश्य केवल इहलौकिक ही नहीं, उससे परलोकका भी सम्बन्ध है। गौ अर्थकरी हो तो सर्वथा उत्तम है ही, परन्तु अर्थकरी न होनेकी दशामें भी वह हमारे लिये पूजनीया माता ही है और उसका भरण-पोषण और सेवन-संरक्षण करना हमारा परम कर्तव्य है। पाश्चात्त्य जगत्की **गोसेवा** वस्तुतः **अर्थ-सेवा** है और उनका **गौमें प्रेम नहीं है, अर्थमें प्रेम** है। असलमें वह प्रेम है ही नहीं, **काम** है। इसका यह अर्थ नहीं कि वे गौसे प्यार नहीं करते—बहुत करते हैं, अज्ञान और दरिद्र भारतीय पशुपालकोंसे कहीं अधिक करते हैं; परन्तु करते हैं—शुद्ध अर्थ-दृष्टिसे। यदि अर्थ-दृष्टिसे गोपालन हानिकर हो तो वे उसे छोड़ देंगे। यह सर्वजनविदित है कि जो गौ वहाँ आर्थिक दृष्टिसे उपयोगी नहीं होती, उसको कोई भी गोशाला (Dairy) नहीं रखती। और इसी आर्थिक दृष्टिको सामने रखकर वहाँ सारे कार्य—गौ खरीदनेसे लेकर गौके मरनेपर उसके मृतावशेष शरीरके पदार्थोंके बेचने तथा काममें लानेतक—, किये जाते हैं। यह दृष्टिकोणका महान् अन्तर है। भारतीय जिस पवित्र दृष्टिसे गौको देखता है, वह उसका अनादिकालीन सांस्कृतिक स्वभाव है और उसकी रक्षा होनी ही चाहिये। तभी हिंदू-संस्कृति बचेगी। गाय हर हालतमें भारतीयके लिये पूजनीय और सेवनीय है तथा रहेगी।

इससे यह नहीं समझना चाहिये कि गौकी आर्थिक दृष्टिसे उपेक्षा की जानी उचित है। वर्तमान अर्थप्रधान जड़युगमें अर्थकी अवहेलनासे काम नहीं चलेगा। अतएव अपनी संस्कृतिके अनुरूप गोरक्षा और गोपालनकी दृष्टिको सुरक्षित रखते हुए ही आर्थिक दृष्टिसे भी गौको उपयोगी बनाना चाहिये। सफाई, स्वच्छता, संक्रामक रोगोंके आक्रमणसे बचाना, रोगपीड़ित गायोंकी उचित चिकित्सा करना, उनकी नस्लको न बिगड़ने देकर उत्तरोत्तर सुधारना, अच्छा पूरा चारा-दाना देकर तथा प्रेमका बर्ताव करके उनका दूध बढ़ाना, चमड़ेका उपयोग करनेवालोंके लिये केवल उनके मृतावशेष चमड़ेका ही उपयोग करना, उनके गोबर-गोमूत्रका एक भी कण व्यर्थ न जाने देकर उसकी खाद बनाना, उनके जन्म-पत्र रखना; वे जल्दी-जल्दी ब्यायें, अपने ब्यानमें अधिक-से-अधिक दिनोंतक अधिक-से-अधिक दूध दे सकें, उनके दूधमें मक्खन अधिक हो, उनका स्वास्थ्य न बिगड़े और वे दीर्घजीवी हों—इन सब बातोंकी आवश्यकतानुसार वर्तमान वैज्ञानिक सहायतासे व्यवस्था करना; चारे-दानेकी सस्ती व्यवस्था हो, दाबघास (Silage) तैयार हों, गोचरभूमियाँ अधिक हों, इन सबके लिये सब प्रकारसे पूरा प्रयत्न करना; और अपनी मौतसे मरनेतक गौ ऐसी दशामें आवे ही नहीं, जब कि वह अपना खर्च अपने द्वारा किसी रूपमें न दे दे—इसका प्रयत्न करना, तथा ऐसे ही अन्यान्य साधनोंका भी उपयोग करना जिससे आर्थिक दृष्टिसे गौका महत्त्व बढ़े, अत्यन्त आवश्यक है और इस ओर प्रत्येक भारतीयका ध्यान अवश्य ही आकर्षित होना चाहिये।

विशेषज्ञोंका मत है कि यदि हमारी गौओंको पर्याप्त तथा अच्छा चारा-दाना नियमित मिले, नस्लमें सुधार हो, सुव्यवस्था हो, उन्हें अवनत होनेसे, और रोगोंके आक्रमणसे बचाया जाय, तो आज जो दूध होता है, उससे दूना दूध हो सकता है और फिर गायें दीर्घकालतक स्वस्थ और दुधारू होकर जी सकती हैं। हमारी गायोंमें यूरोपकी गायोंकी अपेक्षा विकास-शक्ति ज्यादा है।

परन्तु गौकी वर्तमान स्थितिमें प्रधान कारण है, भारतकी गरीबी और परतन्त्रता। गरीब भूखे गृहस्थकी गाय भरी-पूरी कहाँसे होगी? गरीबी न हो, भरपूर अनाज और चरागाह हों तो पशु-पालनमें भारतीय कभी पीछे न रहें। आज जो बातें वैज्ञानिक दृष्टिसे कही जाती हैं, पशुपालनकी हमारी पुरानी रीतिमें प्रायः वे ही बातें स्वाभाविक थीं। हमारी परिस्थितिने हमें मजबूर कर दिया कि हमको अपना स्वभाव छोड़ना पड़ा और परिणामस्वरूप हमारी गायके साथ ही हम भी दुखी हो गये!*

एक बात और है। विदेशी चालाक शासकोंने विभिन्न आकर्षक हेतुओंसे हमारे अंदर एक 'मानसिक दासता' उत्पन्न कर दी है और उसके फलस्वरूप हम आज विदेशी शासनसे मुक्त होनेकी चेष्टा करते हुए भी विदेशी भावोंकी गुलामीसे छूटना पसंद नहीं करते। दशा यहाँतक हो गयी है कि कभी शारीरिक या आर्थिक स्वतन्त्रता मिल भी जायगी, तो भी हमारे मनोंपर तो उन्हींका अखण्ड राज्य रहेगा। मनकी परतन्त्रतासे हम नहीं छूट सकेंगे। हमारी इस 'मानसिक गुलामी' के कारण ही हम अपनी सब बातोंको हेय, नगण्य और उनकी प्रत्येक बातको उपादेय और आदर्श मानते हैं और सभी बातोंमें उनके मुँहकी ओर ताकते हैं। इसीसे हम उनकी अर्थप्रधान डेयरी पद्धतिपर मुग्ध होकर उसे सीखनेके लिये प्रचुर धन, समय, शक्ति और बुद्धिका व्यय करके अपने शिक्षार्थियोंको अमेरिका और इंग्लैंड भेजते हैं। ऐसा न करके यदि हम अपनी शक्तिको घरकी भूली-बिसरी पद्धतियोंकी खोजमें लगावें और उनका समुचित प्रयोग करें तो बड़ी सुगमताके साथ बहुत कम खर्चमें आश्चर्यजनक आदर्शरूपमें अपनी गायोंकी दशा सुधार सकते हैं। पर इस माया-जालसे मुक्ति हो तब न! अभी तो मुक्तिके नामपर बन्धन ही मजबूत होता जा रहा है।

गोवध बंद होना ही चाहिये

गायको कसाईके हाथसे बचानेकी बड़ी आवश्यकता है।

कहना न होगा कि गोवध दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इसमें प्रधान कारण है—चमड़े, हड्डी, सूखे मांस और रक्त तथा आँत-ताँत आदिका व्यापार और गोरी सेनाके लिये गोमांसकी अनिवार्य और बेहद माँग! चमड़ेकी रफ्तनी बढ़ती जा रही है। सन् १९१३-१४ में जहाँ २९ लाख खालें गयी थीं, वहाँ सन् ३८-३९ में ४८ लाख खालें गयीं (मार्केटिंग आफ हाइड्स रिपोर्ट पृष्ठ ४०)। इसी रिपोर्टमें आगरा, बंगलोर, बरेली, बम्बई, कलकत्ता, ढाका, दिल्ली, जबलपुर, कराची, लाहौर, मद्रास, पेशावर और पूना—इन बड़े शहरोंके कसाईखानोंमें काटी जानेवाली गाय-भैंसोंकी संख्याका विवरण देते हुए लिखा है कि सन् १९३२-३३ में जितने पशु मारे गये थे, सन् १९३७-३८ में उनकी संख्यामें २१. २ प्रतिशतकी वृद्धि हो गयी। यह युद्धपूर्वका वर्णन है। सन् १९४२ में ६६ लाख गाय-भैंसें सरकारी रिपोर्टके अनुसार काटी गयी थीं। युद्धकालमें जहाँ जहाजोंकी कमीके कारण चमड़े आदिकी रफ्तनी घटी, वहाँ फौजोंके लिये गोमांसकी आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गयी। और उसके लिये दूध देनेवाली गाभिन गायों और बछड़ियोंका भी अबाध वध हुआ, जो करोड़से भी ऊपर पहुँच गया!! ऐसा विशेषज्ञोंका अनुमान है। अन्यत्र प्रकाशित हिसारके जज साहेब श्रीलायक अली महोदयके उस विचित्र फैसलेको देखिये जिसमें उन्होंने बिना परमिटके बेकानूनी तौरपर उपयोगी गायों और बछड़ियोंको फौजके लिये ले जानेवाले अपराधियोंको छोड़ते हुए फौजोंके लिये गोमांसकी आवश्यकताका बड़ी ही दर्दभरी भाषामें वर्णन किया है! यह उदाहरण एक दाने चावलसे पके भातको परखनेकी तरह पर्याप्त है। इस अबाध गोवधको बंद करानेके लिये लोकमतको जाग्रत् करके प्रबल आन्दोलन करनेकी आवश्यकता है। यह आन्दोलन केवल हिंदुओंका ही नहीं रहना चाहिये। मुसलमान, ईसाई तथा अन्य मतावलम्बी सज्जनोंमें भी सहृदयता तथा प्रेमसे इस बातका प्रचार करना चाहिये कि गौ देशके प्रत्येक मनुष्यके लिये आवश्यक है और गौके न रहनेसे हिंदू-मुसलमान सभीको समान रूपसे कष्ट होगा, जिससे वे भी इस आन्दोलनमें शामिल हों तथा सरकारको कानून बनाकर गोवध रोकनेके लिये बाध्य कर दें।

हिंदुओंमें इस बातका खूब प्रचार हो जाना चाहिये कि एक भी गाय **कसाईके हाथ जाय नहीं**। गाय न मिलेगी, तो कसाईखाने आप ही बंद हो जायँगे। जबतक हिंदू गाय बेचते-बिकाते हैं, तभीतक कसाईखाने चलते हैं!

जिन पशु-मेलोंमें कसाइयोंको गायें मिलती हैं, उन मेलोंको

* हमें सूचना मिली है कि गोजातिके विनाशको रोकने और गोजातिकी उन्नतिके उपाय सोचनेके लिये आगराके प्रसिद्ध सेठ श्रीअचलसिंहजी महोदयके उद्योगसे आगामी २४, २५, २६ दिसम्बर सन् १९४५ को आगरामें अखिल-भारतीय 'पशु-रक्षा-सम्मेलन' होनेवाला है। इसके लिये राधास्वामी सत्संग-सभाके रा० सा० श्रीगुरुचरणदासजी मेहता महोदयके सभापतित्वमें एक सुदृढ़ स्वागतसमिति भी बन गयी है। गोप्रेमी तथा अपना और देशका हित चाहनेवाले व्यक्तियोंको सम्मेलनकी वास्तविक क्रियात्मक सफलताके लिये यथायोग्य सहायता करनी चाहिये।

या उनमें गो-विक्रयको कानूनन चेष्टा करके बंद कराना चाहिये। लोकमत जाग्रत् करने, जनताको प्रभावपूर्ण रीतिसे समझाने तथा सरकारको बार-बार सुझानेसे ऐसा होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

युक्तप्रान्तके बलिया जिलेमें गङ्गातटपर एक मेला होता है, उसमें हजारों गायें प्रतिवर्ष कसाइयोंके हाथ जाती थीं। श्रीराघवप्रसादजी नामक एक गो-भक्त सज्जनके विशेष उद्योग और उसीमें लग जानेसे वहाँ गौका बिकना कतई बंद हो गया। ऐसा और जगह भी हो सकता है। यह प्रयत्न भी होना चाहिये कि मेलोंमें बिकनेके लिये गौएँ आवें ही नहीं।

सरकारने इधर भारत-रक्षा-कानूनके अनुसार उपयोगी गायोंके मारनेपर कुछ प्रतिबन्ध लगाये हैं। परन्तु वे अस्थायी हैं। भरपूर चेष्टा करके धारासभाओंमें नये बिल लाकर उन्हें उचित और आवश्यक संशोधनके साथ स्थायी कानून बनवा लेना चाहिये और प्रत्येक प्रान्तमें उनपर ठीक-ठीक अमल होता है या नहीं, इसकी ओर गो-सेवकों तथा गो-रक्षिणी संस्थाओंको एवं म्युनिसिपलिटीके सदस्योंको विशेषरूपसे नजर रखनी चाहिये। ऐसा पता लगा है कि इस समय प्रतिबन्धोंके रहते हुए भी प्रतिबन्धके विरुद्ध गायोंकी हत्या होती है। इसमें हमारी अवहेलना और गो-हत्यारोंका स्वार्थ ही प्रधान कारण है।

जबतक स्थायी कानून न बनें, तबतक भारतके सभी प्रान्तोंमें वर्तमान कानूनके लागू करानेकी और उसपर पूरा-पूरा अमल हो—इसकी सार्वजनिक समितियों, गो-रक्षासंस्थाओं तथा जिम्मेवार पुरुषोंको व्यवस्था करनी चाहिये। वर्तमान भारत-रक्षा-कानूनकी धारा ८१ के अनुसार—बम्बई, मद्रास, बिहार, युक्तप्रान्त, उड़ीसा, आसाम, बंगाल और सिंधमें एक वर्षसे तीन वर्षतकके बछड़े-बछड़ी, पाडे-पाडी, तीनसे दस वर्षतकके काममें आनेलायक बैल, गाभिन होने तथा काम देने लायक गाय, और सभी आयुकी दुधारू और गाभिन गाय (कुछ प्रान्तोंमें दो वर्षतककी मादा भेड़ बकरी भी) वध नहीं की जा सकती। इनका वध करना, वधमें सहायता पहुँचाना और वधके लिये ले जाना अपराध माना जाता है और इस अपराधके लिये तीन सालतककी सख्त कैद और पशु जब्त करनेकी सजा नियत की गयी है। पंजाब तथा सीमाप्रान्तमें भी यह कानून लागू कराना चाहिये और जिन प्रान्तोंमें लागू है, उनमें निम्नलिखित दो काम करने चाहिये। ऐसा किया जायगा तो बहुत-से दुधारू उत्तम पशुओंके प्राण बच जायँगे और चेष्टा करनेवाले पुण्यके भागी होंगे।

(क) जहाँ किसी कसाईखानेमें इस कानूनके विरुद्ध पशु मारे जाते हों, वहाँके इससे सम्बन्धित महकमेके स्थानीय अधिकारियोंको सूचना देनी चाहिये और समाचारपत्रोंमें घटना ठीक सत्यरूपमें जरूर प्रकाशित करानी चाहिये।

(ख) सभा करके इसका शान्तिपूर्ण विरोध करना चाहिये। और सरकारके ऊँचे अधिकारियोंका भी इसकी तरफ ध्यान आकर्षित करना चाहिये।

स्थायीरूपसे कानून बनानेके लिये जगह-जगह सभाएँ करके लगातार वायसराय महोदयके पास आवेदनपत्र-पर-आवेदनपत्र भेजने चाहिये। विभिन्न भाषाओंके समाचार-पत्रोंमें लगातार लेख निकालने चाहिये। गोहित-सम्बन्धी स्वतन्त्र समाचार-पत्र भी निकलना चाहिये और लोगोंको आवश्यकता पड़नेपर गो-वध बंद करानेके लिये आवश्यक त्यागके लिये भी तैयार रहना चाहिये।*

पिंजरापोल-पद्धति भी रहे और नयी गोशालाएँ भी बनें

पाश्चात्त्य जगत्‌की गोशाला (Dairy) आदर्श है और उसकी बड़ी प्रशंसा है, जो उनकी व्यवस्था, उत्पादन-क्षमता और अर्थोपार्जनकी दृष्टिसे सर्वथा उचित है और हमें उससे अवश्य बहुत कुछ सीखकर तदनुसार करना भी चाहिये। उन गोशालाओंमें पलनेवाली गौएँ सुखपूर्वक रहती हैं—उनके स्वास्थ्य, सफाई, खान-पान, आराम और पोषणका बहुत अधिक तथा उपयुक्त ख्याल रक्खा जाता है—यह भी सत्य है। और हमें भी अपनी गायोंको यथासंभव उसी प्रकारसे सुखी रखना चाहिये। परन्तु वे गोशालाएँ वस्तुतः हैं कपड़े तथा चीनी बनानेवाली मिलों—कारखानोंके सदृश दुग्धोत्पादनके कारखाने! उनमें गौके प्रति पूज्यभाव नहीं है—अर्थ तथा

---

* खेदकी बात है कि हिंदीमें गोरक्षा-सम्बन्धी समाचारपत्रोंकी बहुत ही कमी है। दिल्लीसे पं० देवरत्नजी शुक्ल 'गोहितैषी' पत्र निकालते थे। आजकल 'गरोठ' (इन्दौर स्टेट) से श्रीफतेसिंहजी आर्यने 'गोरक्षक' नामक एक सुन्दर साप्ताहिक पत्र निकालना शुरू किया है। ऐसे पत्रोंके प्रभावशाली पुरुषोंके संचालनमें प्रकाशित होनेकी बड़ी आवश्यकता है। श्रीफतेसिंहजीके सराहनीय कार्यके लिये हम उन्हें बधाई देते हैं।

स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उनका पालन-पोषण होता है। हमारे पिंजरापोल-गोशालाओंके संस्थापकोंकी दृष्टिमें तथा इस प्रकारकी संस्थाओंके निर्माणके मूलमें एक पवित्र निःस्वार्थ प्रेम तथा दयाका भाव है। वहाँ आपको प्रत्येक गोशालामें हट्टी-कट्टी मजबूत दुधारू सुन्दर सुहावनी गायें देख पड़ेंगी और उनको देखकर चित्त प्रसन्न हो जायगा। पर बीमार,लूली-लँगड़ी गायोंको खिलाने-पिलानेवाली संस्था और उनमें ऐसी अपंग गायोंकी सेवा होती हुई आप कम देख पावेंगे। वास्तवमें हमारी संस्थाएँ दुग्धोत्पादनके उद्देश्यसे खोली जानेवाली गोशाला (Dairy farms) की दृष्टिसे बनी ही नहीं हैं। इनका तो पवित्र उद्देश्य ही है—अपंग गायोंकी रक्षा करना, उनकी सेवा-शुश्रूषा करना और उनके मरनेके कालतक उनके पर्याप्त खान-पान तथा आरामयुक्त निवासकी पूरी व्यवस्था कर देना। आजकी कुछ गोशाला और पिंजरापोलोंमें यदि व्यवस्था ठीक नहीं है तो उनमें व्यवस्थाका सुधार करना चाहिये, न कि उन्हें 'विकलाङ्ग पशुओंके कारखाने' 'मूर्खतापूर्ण दानके निदर्शन', 'देशका भार बढ़ानेवाले जानवरोंके गोलघर' कहकर उनके प्रति दुर्भाव पैदा करना, अपंग पशुओंके प्रति उपेक्षा उत्पन्न करना और उन्हें असहाय मरने देने अथवा उनकी देख-रेख किये बिना ही उन्हें अकाल मृत्युके मुखमें ढकेलनेकी चेष्टा करना! बड़े दुःखके साथ बड़ी गम्भीर मुख-मुद्रा बनाकर कहा जाता है कि 'इन पिंजरापोलोंके पशुओंको पालनेमें देशके करोड़ों रुपयोंका कितना बुरी तरहसे अपव्यय हो रहा है।' ऐसा कहनेवाले पुरुषोंको जानना चाहिये कि लोग शौकीनीमें तथा पतनके गहरे गड्ढोंमें गिरानेवाले पदार्थोंके उपयोगमें कितने पैसे खर्च कर देते हैं; फिर यदि अंधे, काने, लूले, लँगड़े और बूढ़े माता-पिता तथा अपंग बच्चोंके-जैसे बूढ़े गाय-बैल तथा बछड़े-बछड़ियोंके पीछे कुछ पैसे खर्च हो जाते हैं तो इसमें इतना दुःख क्यों होना चाहिये। यह तो वस्तुतः धनका सद्व्यय है। फिर खर्च ही कितना होता है। श्रीयुत राइट महोदयने अपनी रिपोर्टकी ४४ वीं टेबलमें भारतवर्षके प्रधान सात शहरोंकी जनसंख्या देते हुए वहाँके पिंजरापोलोंके वार्षिक व्ययका हिसाब लगाकर बताया है कि प्रतिमनुष्य वार्षिक लगभग पौने चार आने अर्थात् मासिक पौने चार पाई पड़ती है। (देखिये Wright's Report पृष्ठ १८२)। यदि इनमें छोटे गाँवोंकी कम खर्चवाली शेष गोशालाओंको जोड़ दिया जाय तो प्रति मनुष्य मासिक दो पाई भी नहीं पड़ेगी!

अतएव धर्मादे तथा लागपर चलनेवाली ऐसी गोशालाओंको भूतदयाके पवित्र उद्देश्यसे अपने गोरक्षण-कार्यसे कभी हटना नहीं चाहिये। उन्हें घाटा सहकर ही अपना सेवा-कार्य चलाना चाहिये। हाँ, वे एक सूत्रमें बँधकर संगठित हो जायँ तो बड़ा अच्छा है। अवश्य ही इनमें जो समर्थ संस्थाएँ हैं, उन्हें अपना डेयरी-विभाग अलग खोलना और उसमें पर्याप्त पूँजी लगाकर गोसंवर्धन-कार्य भी करना चाहिये। डेयरीके ढंगकी अलग गोशालाएँ बनें, उनके लिये तो कोई बात ही नहीं है। पर यह नहीं होना चाहिये कि केवल डेयरी-ढंगकी गोशालाओंकी ओर ही हमारी पूरी दृष्टि और पूरी शक्ति लग जाय, और बूढ़ी अपंग गोमाताको निराधार छोड़नेका पाप होने लगे! पश्चिमके गुण लेने चाहिये, पर उनके गुणोंकी चकाचौंधमें पड़कर अपने पैतृक गुणोंका मूलोच्छेद नहीं कर डालना चाहिये। आजकल पिंजरापोलोंके प्रति बुद्धिमान् तथा नेता माने जानेवाले पुरुषोंकी कुछ ऐसी ही दुर्भावना होने लगी है और प्रकारान्तरसे वे अपंग गायोंको भाररूप समझकर उनका हट जाना अच्छा मानने लगे हैं! इसीलिये इतना लिखा गया है। (हम तो यहाँ पशुओंके पिंजरापोल उठाना चाहते हैं और पाश्चात्त्य देशोंमें मनुष्योंके पिंजरापोल बनानेकी बात सोची जा रही है! कुछ ही दिनों पूर्व सुसभ्य अमेरिकामें ऐसा प्रस्ताव आया था कि कामकाजमें अशक्त बेकार मनुष्योंकी जिम्मेवारी पार्लामेंटको ले लेनी चाहिये। अर्थात् उनकी संतानपर उनके पालनका भार कतई नहीं रहना चाहिये। यदि सरकार भार ले ले और विभिन्न स्थानोंमें रखकर उन्हें खाने-पीनेको दे तो यह मनुष्योंके पिंजरापोल ही तो बने!)

मेरी समझसे पिंजरापोल-पद्धतिकी, उसमें उनके उद्देश्यके अनुकूल आवश्यक सुधार करके, रक्षा करनी चाहिये, और ऐसी गोशालाएँ (Dairy farms) अलग या सुविधा हो तो इनके स्वतन्त्र विभागके रूपमें खोलनी चाहिये, जिनमें हट्टी-कट्टी, सुन्दर, सुहावनी मजबूत दुधारू गायें हों और जो उत्तरोत्तर गायोंकी सर्वाङ्गीण उन्नतिमें सहायक हों।

निर्घृत (Skimmed) और सघृत (Whole) दूध

निर्घृत (Skimmed) दूधके पक्ष और विपक्षमें गो अङ्कमें अच्छे-अच्छे विशेषज्ञोंके लेख छपे हैं। मेरी धारणामें दोनों ही पक्षोंके लोग ईमानदार तथा सच्चे हैं तथा दोनोंने ही अपनी-अपनी समझके अनुसार मनुष्य तथा गोजातिके कल्याणके लिये ही मत प्रकट किये हैं। निर्घृत दूधके

समर्थकोंने भी यह कहीं नहीं कहा है कि जहाँ पूरा असली दूध मिलता हो, वहाँ निर्घृत दूध पीना चाहिये। वहाँ तो उन्होंने पशुओंको, तथा जो घृतयुक्त दूध नहीं पचा सकते, ऐसे बच्चों और बीमारोंको निर्घृत दूध पिलानेकी सलाह दी है। निर्घृत दूधके विरोधियोंने भी यह नहीं कहा है कि निर्घृत दूधमें प्रोटीन आदि देह-निर्माण करनेवाले तत्त्व नहीं होते। विवादास्पद प्रश्न दो हैं—१. निर्घृत दूधमें स्नेहभाग निकाल दिये जानेके कारण वह विटामिन-शून्य हो जाता है, इसलिये वह स्वास्थ्यके लिये हानिकर है या नहीं? २. इसके द्वारा मनुष्यका और गोजातिका लाभ होता है या नहीं?

इस विषयमें अपनी परिमित बुद्धिसे जो कुछ समझमें आता है, वह यह है—

१. सघृत पूरा दूध मिलनेकी अवस्थामें तो निर्घृत दूध नहीं ही पीना चाहिये।

२. निर्घृत दूधमें प्रोटीन तथा क्षार पदार्थ अधिक होनेके कारण वह स्वास्थ्यके लिये हानिकर कदापि नहीं है। हाँ, स्नेहभाग न होनेपर विटामिनोंसे जो लाभ होता, वह इससे नहीं हो सकता। इसलिये जिनको असली दूध नहीं मिलता, उनके लिये निर्घृत दूध पीना लाभदायक है और आवश्यक भी है। पूरा विटामिन न मिलनेपर भी वे लोग स्नेहभागका कुछ अंश तेल खाकर प्राप्त कर सकते हैं, और प्रोटीन आदि तो उन्हें निर्घृत दूधमें पूरे मिल ही जाते हैं।

३. यह भी ठीक हो सकता है कि सेपरेटर मशीनकी अपेक्षा दही मथकर मक्खन निकालनेकी क्रियामें मक्खनका अंश छाछमें कुछ अधिक रह जाता हो, और इससे घीके मूल्यमें कुछ पैसे कम मिलते हों। ऐसी हालतमें यदि गोपालन करनेवाले लोग दही न बिलोकर मशीनके द्वारा मलाई निकालकर घी बनावें तो उन्हें कुछ घी अधिक मिल सकता है और उसके फलस्वरूप कुछ पैसे भी; परन्तु इसमें उन्हें छाछके बदले निर्घृत दूध मिलेगा। वह दूध यदि सारा-का-सारा छाछकी जगह घरमें या अड़ोस-पड़ोसमें बरत लिया जाय, तब तो ठीक ही है; परन्तु निर्घृत दूध बननेपर क्या ऐसा हो सकेगा?

यह सिद्ध हो चुका है कि निर्घृत दूध असली दूधकी अपेक्षा गाढ़ा होता है, क्योंकि मलाईके साथ पानीका अंश भी निकल जाता है। और यह भी होता ही है कि ग्वाले लोग निर्घृत गाढ़े दूधमें पानी मिलाकर उसे असली दूध-सा पतला बनाकर बेचते हैं; इससे उनको पैसे ज्यादा मिलते हैं। लोग धोखेमें पड़कर उसे असलीके भरोसे ले लेते हैं। छाछ न तो बिकती है और छाछ बेचनेमें ग्वालेको शरम भी मालूम होती है। छाछके बदले निर्घृत दूध बनेगा तो उसका परिणाम यह होगा कि गरीबीके कारण लोभवश ग्वाला—जैसे आजतक घरमें अपने और बच्चोंके लिये घी नहीं रखता, सब बेच डालता है—वैसे ही निर्घृत दूध भी सम्भव हुआ तो जल मिलाकर, नहीं तो ऐसे ही बेचनेकी चेष्टा करेगा। आप कहेंगे कि वह बिकेगा कैसे, तो इसका उत्तर यह है कि दूधकी बुकनी बनानेके व्यापारी लोग गाँवोंमें केन्द्र बनाकर अपना व्यापार खोल लेंगे और उनका निर्घृत दूध खरीद लेंगे। छाछ यों नहीं बिकती। परिणाम यह होगा कि ग्वालेके घरमें कुछ पैसे तो ज्यादा आवेंगे, जो किसी-न-किसी शहरी शौकमें उड़ जायँगे और घरके बच्चोंको तथा गाँवके गरीबोंको, हरिजनोंको जो छाछ मिलती, उससे वे वञ्चित हो जायँगे। गरीबोंके घरोंमें छाछ ही एक ऐसी वस्तु है, जिससे साग-तरकारीका, कढ़ी-राबड़ी बनाकर व्यञ्जनका काम चलता है और छाछ गाँवभरमें बाँटी जाती है। छाछ गाँवका और गरीबका बहुत बड़ा सहारा है। माना, छाछमें मक्खनका अंश अधिक रहता है; पर वह जाता तो है घरवालोंके, बच्चोंके तथा गरीब भाई-बहनोंके पेटमें ही न! फिर उसका अपव्यय कैसे हुआ? असलमें यही तो सद्व्यय है।

स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी छाछमें निर्घृत दूधकी अपेक्षा पौष्टिक तत्त्व कम नहीं है। कहा जाता है छाछमें पानी अधिक मिला देनेसे उसके वे तत्त्व मारे जाते हैं। माना, ऐसा ही होता है; परन्तु पानी मिली हुई छाछ भी लोगोंको मिल तो जाती है न। निर्घृत दूध तो पैसेके लोभसे मिलेगा ही नहीं! फिर निर्घृत दूधमें भी पानी मिलानेसे कौन रोकेगा। इसलिये मेरी समझसे **सेपरेटरसे मलाई निकालकर घी बनानेकी अपेक्षा गरीब भारतवासियोंके शरीर-पोषणके लिये मथकर घी निकालना ही अच्छा है।**

फिर विशेषज्ञ लोगोंका यह भी कहना है कि सेपरेटरसे निकाले हुए घीकी अपेक्षा दही बिलोकर निकाला हुआ घी क्वालिटीमें भी बढ़िया होता है। खानेपर भी ऐसा ही अनुभव होता है। इसलिये भी वही प्रणाली अच्छी मालूम होती है।

४. तथापि यह सत्य है कि इस समय ऐसा सहज सम्भव नहीं है कि मलाई निकालकर घी बनाना बिल्कुल बंद हो जाय। बल्कि इसका प्रचार बढ़ रहा है। गुजरात तथा बिहारमें तो यह काम खूब ही चल रहा है। इसलिये जो निर्घृत दूध पीना चाहें, वे पीवें; पर सघृत असली दूध पीना चाहनेवालोंके साथ धोखा न हो। कानूनसे निर्घृत दूधमें पानी मिलाना बंद हो जाय। और निर्घृत दूध निर्घृत दूधके रूपमें ही बेचा जाय। जिनको दूध नहीं मिलता, वे निर्घृत दूध पीवें तो उनको न पीनेकी अपेक्षा लाभ ही है। एक अच्छे निष्पक्ष विशेषज्ञ सज्जनका मत है कि निर्घृत दूधमें ५० प्रतिशत तो दूधके गुण रहते ही हैं। परन्तु इसको प्रोत्साहन देकर दही बिलोकर घी निकालनेकी पुरानी घरकी पारिवारिक पद्धतिको मिटानेकी कोशिश कभी नहीं करनी चाहिये। उसमें कहीं सफाई-सँभाल न रखने आदिका दोष आ गया हो तो उसे निकाल देना चाहिये। और वह दोष तो उस प्रणालीका नहीं है, वह तो हमारी आदत या भूल है, जो सेपरेटरवाली पद्धतिमें भी रह सकती है। यह अन्यत्र दिखाया गया है कि सेपरेटर मशीनका भी यथायोग्य उपयोग न होनेपर उसमें भी घीका अधिक अपव्यय हो सकता है और वह बीस-तीस प्रतिशततक हो जाता है।

हाँ, विदेशी निर्घृत चूर्णका उपयोग किसी भी तरह नहीं करना चाहिये।

वनस्पति-घी

जमाये हुए तेल (वनस्पति-घी) के विरोधमें कई लेख 'गो अङ्क'में छप रहे हैं और हमलोगोंका भी यह मत है कि इससे देशकी तथा गोवंशकी हानि हो रही है। हमारे अपने कई मित्रों और सम्बन्धियोंके इसके कारखाने हैं, परन्तु सत्यके अनुरोधसे अपना मत प्रकट करना ही पड़ता है और ऐसा ही होना भी चाहिये। यह कहा जाता है कि देशमें घीका अभाव है, अतः लोगोंकी आवश्यकतापूर्तिके लिये ये कारखाने खोले जा रहे हैं; परन्तु यह कथन वैसा ही है, जैसे अंग्रेज कहते हैं कि हम हिंदुस्थानकी भलाईके लिये यहाँ राज्य कर रहे हैं, या कोई ठग यह कहे कि हम किसीके धनकी अच्छी सँभाल करनेके लिये उसे फुसलाकर उसके पाससे ले रहे हैं। छातीपर हाथ रखकर सोचनेसे यह प्रत्यक्ष दीखेगा कि वनस्पतिके कारखाने धन कमाने—केवल धन कमानेके लिये ही बने हैं। धन कमाना बुरी बात नहीं है, बशर्ते कि वह दूसरोंके लिये हानिकर न हो, उसमें अन्याय न हो। सभी जानते हैं और सरकारी रिपोर्ट भी है कि वनस्पति (जमा हुआ तेल) अधिकांश मिलावटमें बरता जाता है और शुद्ध घीके रूपमें बिकता है। इसी कारण उससे पैसे अधिक मिलते हैं। पैसा कमानेकी इच्छा मिलावटको प्रोत्साहन देती या मिलावट चाहती ही है। इसीलिये तो तेलको जमाकर दानेदार बनाया जाता और उसे गाय और भैंसके घीके-से रंगका बनानेकी कोशिश की जाती है। बस, यही बुरी बात है।

यह सच है कि भारतवर्षमें इस समय घी नहीं है—इसका कारण भारतकी गरीबी तथा परतन्त्रता है और उससे प्रसूत फौजी माँगका पूरा करना है। गहरी दृष्टिसे देखनेपर यह बात स्पष्ट दीख पड़ती है। हजारों अच्छी गायें-भैंसें मिलिटरी डेयरियोंमें चली गयीं। लाखों गायें गोरोंके पापी पेटोंमें समा गयीं, और जहाँ जो शुद्ध घी मिला, सेनाके लिये संग्रह करनेकी चेष्टा की गयी! तब अच्छा घी कैसे मिले।

अंग्रेजीसाम्राज्यके पहले तो यह सवाल ही नहीं था। पर्याप्त गोचरभूमि थी। चारे-दानेकी कोई कमी नहीं थी। खेतीमें इतना अन्न और चारा होता था कि गृहस्थ स्वयं खाकर अपने पशुओंको भी खूब खिला सकता था। खेतोंमें पशु रहते थे, इससे उनकी खाद खेतोंको स्वाभाविक मिलती थी। हाथसे काम करनेकी आदत थी, इससे सभी कुछ सस्ता पड़ता था। गायपर कोई भी खर्च नहीं था। गाय भार नहीं, आशीर्वाद थी। नस्ल गाँवोंमें अपने-आप ठीक रहती थी। गोधन ही परमधन होनेसे उनकी सार-सँभाल पूरी होती थी। चिकित्साके घरू नुस्खे याद थे, जिनसे गायें बीमार नहीं रह पाती थीं। गायोंका अच्छे खाद्यसे पोषण होता था और सेवा-शुश्रूषासे वे रोगसे नित्य निर्मुक्त रहती थीं। संतान अच्छी होती थी, दूध बेशुमार होता था। इससे सारा परिवार दूध-दही पी सकता था। वरं दूध-दही बाँटा जाता था। बढ़िया छाछके लिये खुला दरवाजा था, कोई भी ले जाय। यह सब मुफ्तमें होता था। नफेमें बच जाता था—गौका घी। उसे आवश्यकतानुसार गृहस्थ बेचते थे। पर बाध्य नहीं थे। घीकी इतनी बहुतायत थी कि घी दुहारोंसे परसा जाता था, चमचियोंसे नहीं!

यह दशा बदली, तभी आज यह कहना पड़ता है कि-

गृहस्थोंको ५७-५८ प्रतिशत घी बनाना पड़ता है, और इस काममें वे घाटेमें रहते हैं। दूधसे जितनी कीमत आती है, उतनी घीसे नहीं आती। उस जमानेमें दूधकी तो कोई कीमत ही नहीं थी, दूध बेचना तो पाप समझा जाता था। 'दूध-पूत' कौन बेचे? 'दूध-पूत' की शपथ दिलवायी जाती थी। पानी माँगनेपर दूध मिलता था। पर आज तो वह स्थिति स्वप्न हो गयी है। इसीसे वनस्पति घीके कारखानेवालोंको और उनकी पोषक सरकारको यह कहनेका मौका मिला है कि देशकी घीकी आवश्यकताको पूरी करनेके लिये ऐसा किया जा रहा है।

इस दशामें—जहाँतक मेरा ख्याल है—ये कारखाने बंद होने तो बहुत कठिन हैं—देशवासी आन्दोलन करके सरकारसे इतना करा दें, या कारखानेवाले, धर्मके विचारसे जितना कर सकते हों, स्वयं ही कर लें तो बहुत अच्छा है।

१. शरीरकी गर्मीसे अधिक गर्मी देकर जमाना पड़ता हो और उससे लोगोंके स्वास्थ्यपर बुरा प्रभाव पड़ता हो—जैसा कि डा० एन्० एन्० गोडबोले महोदयने अन्यत्र एक लेखमें दिखाया है—तो उसमें अवश्य सुधार होना चाहिये।
२. इसमें ऐसा रंग दे देना चाहिये जो हानिकर तो न हो, परन्तु जिसके कारण घीमें मिलावट न हो सके।
३. विटामिनके लिये यदि (Shark-oil) मछलीके तेल-जैसी चीज दी जाती हो तो वह कदापि नहीं दी जानी चाहिये।
४. मिलावट करनेवालोंको कड़ी सजा होनी चाहिये।
५. इसका नाम 'घी' न रखकर जमा हुआ तेल रखना चाहिये।

मेरी तो देशवासियोंसे यह प्रार्थना है कि जबतक स्वास्थ्य-हानि, अपवित्रता और हिंसाका तथा इससे होनेवाली गोवंशकी हानिका कुछ भी सन्देह है तबतक इसे कोई खावे ही नहीं। घी न मिले तो शुद्ध तेल खाना अच्छा है, घीके नामपर बिगाड़ा हुआ तेल खानेमें (और यदि उसमें विटामिनके नामपर मछलीका तेल मिलाया हो तो) धर्म, अर्थ, स्वास्थ्य सभीकी हानि है!

बधिया-प्रथा

एक प्रश्न आया है कि बछड़ोंको बधिया किया जाय या नहीं। मेरे पास काठियावाड़, गुजरात तथा युक्तप्रान्तके कुछ संभ्रान्त सज्जनोंके कई पत्र आये हैं, जिनमें इस विषयपर गो-अङ्कमें प्रकाश डालनेके लिये लिखा है। उनका कहना है कि भारतमें खेतीके बैलोंकी जरूरत है ही, और खेती आजकल बधिया बैलोंसे ही होती है फिर घरके बछड़ोंको उन्हें दूसरोंसे बधिया करवानेके लिये बेचें, और बधिया किये बैलोंको अधिक पैसे देकर खरीदें, यह कहाँतक उचित है? प्रश्न विचारणीय है। शास्त्रानुसार **नपुंसक** बनाना सर्वथा पाप है। और पाप पाप ही रहेगा। कम-ज्यादाका विचार किया जा सकता है। हिंसा कृत, कारित, अनुमोदित—तीन प्रकारसे होती है। लोग बधिया नहीं करते, परन्तु बधिया करानेकी आवश्यकता समझते हैं और बधिया करनेके लिये जान-बूझकर भी बछड़ेको बेचते हैं तो प्रकारान्तरसे दूसरोंसे करवाते या अनुमोदन तो करते ही हैं। ऐसी अवस्थामें उनपर भी पापकी जिम्मेवारी तो आती ही है। अवश्य ही यह सत्य है कि वे ऐसा मजबूर होकर ही करते हैं। ऐसी अवस्थामें या तो शास्त्रज्ञ और विशेषज्ञोंके द्वारा निर्णय कराकर, यदि सम्भव हो तो, बधिया-प्रथा बिल्कुल उठाकर बिना बधिया कराये ही खेती करनी चाहिये। पुराने ग्रन्थोंमें, जहाँतक देखा गया है, कहीं बधिया करानेकी बात नहीं मिली। यदि ऐसा सम्भव न हो तो बड़े पापसे छोटा पाप अच्छा, इस नीतिसे पाप होते हुए भी जिनको बधिया बैलकी जरूरत है, उन्हें पुरानी क्रूर पद्धतिसे बधिया न कराकर बोर्डिजो साहेबकी सहज पद्धतिसे बधिया कराना चाहिये।

इनके अतिरिक्त कुछ बातें और भी हैं, जिनपर खासतौरसे कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। विज्ञ पाठकगण धृष्टताके लिये क्षमा करें। —हनुमानप्रसाद पोद्दार

गौ देवी है

'गाय हमारे दुग्ध-भुवनकी देवी है। वह भूखोंको खिलाती है, नंगोंको पहनाती है और बीमारोंको अच्छा करती है। उसकी ज्योति चिरन्तन है।'

—सम्पादक 'होर्ड्स डेरीमैन' अमेरिका

गायका दूध बढ़ानेके उपाय

१. प्रतिदिन हरी ताजी घास पेटभर खिलाना।

२. दूध दुहकर उसीको पिला देना।

३. गुड़ एक भाग और जौ तीन भाग एक साथ पकाकर रोज खिलाना।

४. गोभी और पत्ता-गोभीकी पत्तियाँ खिलाना।

५. पपीतेके कच्चे फल और पपीतेकी पत्ती पीसकर गुड़ मिलाकर खिलाना।

६. सनके फूल, महुआके फूल, घास और गुड़ जलमें उबालकर खिलाना।

७. ऊखकी गँड़ेरी या ऊखका रस निकाल लेनेपर बचा हुआ कूचा खिलाना।

८. तीसीकी खल और उबाला हुआ मटर खिलाना।

९. किसारीकी दालके साथ गेहूँ उबालकर खिलाना।

१०. गुँवार खूब पकाकर या रातभर जलमें भिगोकर खिलाना।

११. गुड़ और काँजी मिलाकर खिलाना।

१२. घी, मैदा और गुड़ मिलाकर पकाकर खिलाना। इससे खूब दूध बढ़ता है।

१३. बीजवाले केलेको चावलके साथ उबालकर खिलाना।

१४. पके या कच्चे बेलको उबालकर खिलाना।

१५. पलास और सेमलके फूल खिलाना।

१६. प्रसवके तीसरे दिन उड़दका दलिया आधा सेर, नमक एक छटाँक, हल्दी आधी छटाँक और पीपलका चूर्ण एक छटाँक—इन सब चीजोंको मिलाकर पानीमें पका लेना चाहिये और फिर उसमें पावभर गुड़ मिलाकर कुछ गरम-गरम ही सन्ध्याके समय गायको खिलाना चाहिये। इससे दूध बहुत बढ़ता है।

१७. गिलोयकी पत्ती और उसकी बेल खिलानेसे भी दूध बहुत बढ़ता है।

१८. जीरा १० भाग, नमक १० भाग, सौंफ १० भाग, लौंग ५ भाग, सफेद चन्दन २ भाग, फिटकिरी १ भाग और नाइट्रेट आफ पोटाशियम १ भाग—इन सब चीजोंको कूटकर रक्खे और सुबह-शाम दोनों वक्त एक-एक मुट्ठी गायके दानेके साथ मिला दे तो खूब दूध बढ़ता है।

१९. बाँसकी पत्ती आधी छटाँक उबालकर उसमें थोड़ी-सी अजवाइन और गुड़ मिलाकर खिलानेसे दूध बढ़ता है।

२०. प्रसवके बाद दूध बंद होकर यदि थन कड़ा हो जाय तो रेड़ीके पत्तोंसे सेक करना चाहिये।

२१. गायके दूध बढ़नेका सर्वोत्तम तरीका यह है कि गायको उसी साँड़से बर्धाया जाय जिसकी मा बहुत ज्यादा दूध देनेवाली रही हो।

वंशीधरसे !

(रचयिता—श्रीनारायणदास चतुर्वेदी)

वंशीधर ! वंशीवट बीच निज वंशी आप
कहिये बजाने फिर कब जुट जायँगे ?
सार्थक 'गोपाल' नाम कब कीजियेगा नाथ ?
गो-विघातकोंके दल कब लुट जायँगे ?
होगी धर्म-स्थापना 'नरायण' बताओ कब ?
दीन जन कब दीनतासे छुट जायँगे ?
आँखें खोल निद्रा छोड़ साहसके साथ जरा,
सोते हुए भारतीय कब उठ जायँगे ?

गोरक्षाके निमित्त कूकोंका बलिदान

(लेखक—संत श्रीनिधानसिंहजी आलिम)

गोरक्षा सिक्खधर्मका एक प्रधान अङ्ग है । गुरुओंके इतिहाससे यह मत भलीभाँति प्रकट हो जाता है कि उनके अवतार धारण करनेका प्रयोजन गौ, गरीब और भक्तोंकी रक्षा था । पंजाबके सम्राट् महाराजा रणजीतसिंहने सिक्ख-धर्मके प्रकाशमें पंजाबमें गोहत्याको राजाज्ञासे बंद करा दिया था । आपने गवर्नर जनरल ऑकलैंड और काबुलके अमीर शाहशुजा-के साथ १६ जून १८३८ ई० में जो संधि की थी, उसकी दसवीं शर्त्त यह थी कि इन दोनों सरकारोंकी फौजोंको जब कभी पंजाबकी भूमिसे होकर जाना पड़े, वे पंजाबकी सीमाके भीतर गोवध नहीं कर सकेंगी ।

इसके अतिरिक्त महाराजा साहबने अपने यूरोपियन अफसरों—जनरल सी. वेण्टोरा और जनरल सी. एलार्डसे यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि वे गोमांस नहीं खायँगे ।

मुदकीकी लड़ाईके बाद पंजाबमें कौन्सिल आफ रीजेन्सी (Council of Regency)का राज्य था।कौन्सिलके रेजिडेन्ट सर जॉन लरेंसने २४ मार्च सन् १८४७ को एक आज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किया था; जिसका आशय यह था कि अमृतसर शहरमें गोवध नहीं किया जायगा । उस आज्ञापत्रके निम्नलिखित वाक्य-को एक ताम्रपत्र (Copper plate) पर खुदवाकर उसे दरबार साहबके प्रवेशद्वारपर लटका दिया गया था—

'Kine are not to be killed at Amritsar,' यानी अमृतसरमें गोवध नहीं किया जायगा ।

(२)

२४ मार्च सन् १८४९ को अंग्रेजोंने पंजाबको अंग्रेजी राज्यमें मिला लिया । इसके सिर्फ नौ ही दिन बाद यानी दूसरी अप्रैलको ईस्ट इंडिया कम्पनीकी राज्यप्रबन्धक कमेटी (Board of Administration)ने यह आज्ञा निकाली कि अब गोहत्याके कानूनको बदल दिया जाय । अतएव इस आदेशके अनुसार ५ मई सन् १८४९ को वायसरायने यह घोषणा कर दी कि 'भविष्यमें किसीको भी अपने किसी कार्यसे अपने पड़ोसीकी उन प्रथाओंमें बाधा डालनेकी अनुमति नहीं होगी, जिसके लिये उसके धर्ममें आज्ञा दी गयी है ।' कम्पनी-की राज्य-प्रबन्धक कमेटीने यह भी कह दिया कि 'जिस प्रति-बन्धको पहले लागू किया गया था, वह केवल सिक्खराज्यके सम्मानकी दृष्टिसे था । अब सरकारी आज्ञा हो गयी कि प्रत्येक शहरके बाहर जानवरोंके वध करनेवाले गोहत्यारों (बूचड़ों) के लिये एक जगह निश्चित की जाय ।'

पंजाबपर ब्रिटिश-अधिकार होते ही सरकारकी उपर्युक्त कार्रवाइयोंसे हिंदू-सिक्ख जनताके हृदयपर बहुत बुरी चोट लगी, जिसका तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि हिंदू-मुस्लिम-वैमनस्यकी जड़ जम गयी ।

जहाँतक अमृतसर शहरका सम्बन्ध है, वहाँ एक कसाई-खाना खोल दिया गया और गोमांसको बाजारमें ले जाकर बेचनेकी अनुमति मिल गयी ।

अमृतसरमें हिंदू और सिक्खोंकी ओरसे प्रबल आन्दोलन आरम्भ हो गया और कसाईखाना खुलने तथा गोमांस बेचनेकी अनुमति दी जानेके समयसे १८७१ ई० के बीच अमृतसरमें कई बार हिंदू-मुस्लिम दंगे हुए । अतएव २२ मई १८७१ को अमृतसरकी म्युनिसिपल कमेटीकी बैठकमें इस प्रश्नपर बड़ा वाद-विवाद हुआ कि 'जनताके आन्दोलनको रोकनेके उद्देश्यसे आगामी वर्षके लिये कसाईखानोंका लाइसेन्स रद्द कर दिया जाय या जारी रक्खा जाय । इस बैठकमें अमृतसर कमिश्नरीके कमिश्नर मि० डब्ल्यू० डेविसने कसाईखाना चालू रखनेके पक्षमें एक जोरदार व्याख्यान दिया । हिंदू तथा सिक्ख-सदस्योंने इसका घोर विरोध किया, परन्तु बहुमतसे यह प्रस्ताव स्वीकृत किया गया कि कसाईखाना चालू रक्खा जाय ।

(३)

जब १८४९ ई० से लेकर १८७१ ई० तककी सारी चेष्टाएँ, जो कसाईखाना हटानेके उद्देश्यसे की गयी थीं, निष्फल गयीं, तब श्रीसतगुरु रामसिंहजीके कुछ कूके या नामधारी सिक्खोंने यह निश्चय किया कि गोहत्याका यह कलङ्क गुरुकी नगरीसे तबतक दूर नहीं किया जा सकता, जबतक कि अपने शीश बलिदान न किये जायँ । कानूनी और शान्तिमय साधन उनकी दृष्टिमें सब-के-सब व्यर्थ हो चुके थे । अतएव उन्होंने १५ जून १८७१ की अँधेरी रातके लगभग ११ बजे कसाइयों (गोहत्यारों) पर आक्रमण कर दिया और जितने पकड़में आये, उन्हें मार डाला, तथा वध करनेके लिये बाँधी गयी सैकड़ों गौओंको मुक्त करके स्वयं भाग गये ।

पुलिसने उनके बदले अमृतसरके कुछ प्रतिष्ठित हिंदू और श्रीनिहंगसिंहको संदेहमें गिरफ्तार कर लिया । और उन-

पर इतना अत्याचार किया कि उन निरपराधोंने यह स्वीकार कर लिया कि १५ जूनकी रातको गोहत्यारोंका वध उन्होंने ही किया था। अतएव अपराध स्वीकार करनेपर अदालतने उन्हें सख्त सजा दे दी।

उधर श्रीभैणी साहब श्रीसतगुरु रामसिंहजीके हेड क्वाटरमें एक भारी दीवान (सत्सङ्ग) हो रहा था। अमृतसरमें कसाइयों-की हत्या करनेवाले नामधारी सिक्ख भी उस सभामें मौजूद थे। श्रीसतगुरुजीको अमृतसरकी घटनाके विषयमें यह मालूम हो चुका था कि यह काम उन्हींके कुछ सिक्खोंने किया है। अतएव आपने उन्हें आज्ञा दी कि वे शीघ्र-से-शीघ्र अमृतसर पहुँचकर अपने दोषको स्वीकार कर लें, जिससे उनकी जगहमें पकड़े गये निर्दोष आदमी छूट जायँ।

सतगुरुकी आज्ञा सिरपर रखकर नामधारी सिक्ख अमृतसर पहुँचे। और जब उन्होंने अफसरोंके सामने अपने अपराध स्वीकार करते हुए यह कहा कि '१५ जूनकी रातको अमृतसरमें जो लोग मारे गये थे, उनके मारनेवाले हम हैं' तो उनके आश्चर्यकी कोई सीमा न रही। पहले तो उनकी इस बातपर विश्वास न किया गया; परन्तु जब उन्होंने सारी घटना-का वर्णन करते हुए हथियार तक बरामद करा दिये, तब उन्हें गिरफ्तार किया गया। परिणामस्वरूप जो निर्दोष सज्जन पुलिस-के झूठे अभियोगके आधारपर अदालतसे सजा पा चुके थे, वे छोड़ दिये गये।

(४)

नामधारी वीरोंका मुकदमा—इन नामधारी या कूके वीरोंके विरुद्ध मेजर डब्ल्यू. जी. डेविस, सेशन जज और कमिश्नर अमृतसरकी अदालतमें २८, २९ और ३० अगस्त सन् १८७१ को मुकदमेको सुनवायी होती रही और ३१ अगस्त-को फैसला सुनाया गया।

फैसला

फाँसीकी सजा—

१. बाबा लहणासिंह अमृतसर।

२. ,, फतहसिंह ,,

३. ,, हाकिमसिंह पटवारी, मौजा मूड़े, जि० अमृतसर।

४. बीहलासिंह, नारली, जि० लाहौर।

काले पानीकी सजा—

१. लहणासिंह वल्द मुसद्दासिंह।

२. बुलाकासिंहका पुत्र लहनासिंह।

३. लालसिंह सिपाही।

(१) अड़बंगसिंह, (२) मेहरसिंह और (३) झंडा-सिंह—इन तीनोंको फरार घोषित किया गया।

फौजदारी कानूनकी दफा ३९८ के अनुसार सेशन्स जजने अपना फैसला तसदीकके लिये लाहौर चीफकोर्टमें भेज दिया, जिसकी तसदीक जस्टिस जे. कैम्पबेलने ९ सितम्बर १८७१ ई० को और जस्टिस सी. आर. लिंडसेने ११ सितम्बर १८७१ ई० को की। अतएव कूका-दलके ये चार प्राणोत्सर्ग करनेवाले सिपाही अमृतसरमें हँसते-हँसते और सत श्री अकालकी जय-जयकार करते हुए शहीद हो गये, और दूसरे तीन अंडमन टापूमें भेज दिये गये। देश और गोमाताकी रक्षा और सेवाके उद्देश्यसे कूके वीरोंका यह उज्ज्वल बलिदान भारतवर्ष-जैसी ऋषि-भूमि और गोभक्तोंके देशमें विशेष माहात्म्य रखता है।

(५)

क्या उनका मिशन असफल रहा?—कुछ भाई यह कह सकते हैं कि अमृतसरके कूके शहीद अपने मिशनमें इस कारण असफल रहे कि उनके प्राण बलिदान करनेपर भी विवादग्रस्त कसाईखाना बंद नहीं किया गया; लेकिन मैं यह नहीं मानता। क्योंकि जिस उद्देश्यको सामने रखकर उन शूरवीर कूकेसिक्खों-ने अपनी इच्छासे अपने बलिदान दिये, वह गुरुकी नगरी अमृतसर और देशभरके शहरोंको गोहत्याका अखाड़ा बननेसे रोकनेका पावन मिशन था, जिसका, बिना किसी मत-मतान्तरके भेदके, सारे हिंदुस्थानकी भलाईका लक्ष्य था।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यह उन कूके शहीदों-के बलिदानका ही फल है कि १८७१ ई० के बाद आजतक अमृतसर शहरकी सीमाके भीतर दूसरा कसाईखाना खोलनेके लिये लाइसेन्स देनेका साहस नहीं किया जा सका। इसलिये यह बात सहज ही समझमें आ सकती है कि यदि ये ७ नाम-धारी सिक्ख उस समय अपने शीश बलिदान न करते तो उस समयकी गोवधकी चलनके अनुसार न जाने अमृतसर और पंजाबके दूसरे शहरोंमें आजतक और कितने कसाईखाने खोल दिये गये होते। और अबतक उनमें कितनी करोड़ गौएँ कतल हो चुकी होतीं। अतएव उनका मिशन सफल रहा।

इसके बाद रायकोट जिला लुधियानामें और मलेर-कोटला-में बहुत ही भयङ्कर घटनाएँ हुईं, जिनका विवरण पीछे कभी दिया जायगा। उनके फलस्वरूप ४९ नामधारियोंको तोपसे, एकको तलवारसे और १६ को फिर तोपसे शहीद कर दिया गया। सतगुरु श्रीरामसिंहजीको उनके सूबेदारोंके साथ सन् १८१८ के तीसरे रेगुलेशनके द्वारा निर्वासित कर दिया गया और शेष आन्दोलनपर प्रतिबन्ध लगा दिये गये, और श्रीभैणी साहब गुरु-मन्दिरके सामने पुलिसकी चौकी लगा दी गयी। ये सारे प्रतिबन्ध १८७२ ई० से लेकर १९२० ई० तक रहे। और पुलिसकी चौकी १९२३ ई० तक रही।

गोरक्षा कैसे हो ?

(लेखक—श्रीयुत हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, एम्० ए०, एल्० टी०, साहित्यरत्न)

भारतवर्षके लिये ईश्वरीय देनमें गौका अपना विशिष्ट स्थान है। गौसे अधिक उपयोगी पशु सृष्टिमें दूसरा नहीं मिलता। सनातनसे ऋषि-मुनि इसका गुणगान करते आये हैं। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण 'गोपाल' थे, उन्होंने अपना तन-मन माखन और मलाई देनेवाली गौओंकी सेवामें लगाया और भली प्रकार उनकी रक्षा की।

हिंदू-धर्ममें ऐसी कोई बात नहीं, जिसकी प्रत्यक्ष उपादेयता न हो। गौ भारतवासियोंको सदा सब परिस्थितियोंमें वह अनिर्वचनीय सुख देती है, जो उन्हें अन्यथा अलभ्य है। इसी हेतु आर्य-जातिके धार्मिक ग्रन्थोंमें गौका समुचित आभार प्रदर्शित किया गया है। गौके बिना हिंदू-जीवन नीरस है। अटूट श्रद्धाके स्वरूप हिंदुओंने इसे 'गोमाता' कहा है। भली प्रकार लालन-पालन करनेवाली अपनी सरला माताकी रक्षा करना प्रत्येक हिंदूका कर्तव्य बन गया है।

आज जब धार्मिक विश्वास उठ रहा है, और जन-समुदायकी प्रवृत्ति विवेचनाकी ओर उन्मुख है, तब यदि उस अज्ञात वैतरणीसे पार करनेकी गौकी आनन्ददायिनी शक्तिपर आस्था न हो तो कोई अचरजकी बात नहीं; गौका सबसे बड़ा विरोधी भी उसकी उपादेयताको स्वीकार करके संसार वैतरणीसे त्राण दिलानेकी उसकी अमोघ शक्तिपर थोड़ा-बहुत विश्वास लाता है। जिसने गोधनको अपना धन मानकर गौकी सेवामें अपना समय व्यतीत करनेका व्रत लिया है, उसे खानेके लिये इतना जुट जाता है कि वह किसीका मुखापेक्षी नहीं होता, और इस प्रकार अनेक छल-कपटसे दूर रहता है।

जब देशमें मुसल्मानोंकी धाक जम गयी, तब उन्होंने हिंदुओंको सामूहिक रूपमें गौ और ब्राह्मणका अनन्य भक्त देखकर हिंदुओंकी इस उपास्य निधिका यथाशक्ति तिरस्कार किया; क्योंकि इनकी धार्मिक कट्टरता अपनी उस सीमापर पहुँच चुकी थी, जहाँ पहुँचकर वह दूसरे धर्मोंको कुछ गिनती ही नहीं। धर्मपर यह आघात हिंदू-हृदयोंको असह्य हो उठा, और वे गोरक्षाके लिये मर मिटने लगे। किन्तु विजेताके इस अत्याचारको ये विजित इस प्रकार रोक सकनेमें असमर्थ हुए। देशके उस नैराश्य-कालमें लोगोंका ध्यान भगवान्के दया-दाक्षिण्यकी ओर जाना अवश्यम्भावी था। अनेक महात्माओंने अवतीर्ण होकर भगवान्को अपनी पुकार सुनानेके लिये हिंदू-जनताको उत्साहित किया। भक्तिका यह प्रवाह क्रमशः ऐसा विस्तृत होता गया कि उसकी लपेटमें देशमें बसनेवाले सहृदय मुसल्मानोंकी भी एक अच्छी संख्या आ गयी।

देखते-देखते यहाँ गौके और भी सबल और कुशल शत्रु आ जमे। गो-मांसके लिये लालायित रहनेवाले यूरोपके निवासियोंकी यहाँ अच्छी उदर-पूर्ति होने लगी; साथ ही गो-चर्मके व्यवसायसे ये व्यापारी लाभान्वित हुए। यद्यपि इन्होंने गोवध अपने हिंसक रूपमें आरम्भ कर दिया, तथापि इन्होंने गौकी उपादेयताको प्रत्यक्ष समझा! उत्तम जातिके भारतीय गाय-बैलोंको समेट उपनिवेशोंमें अन्न और दूधकी सुविधाएँ उपस्थित करनेकी नीति भी निर्धारित हो गयी। वास्तवमें विदेशमें सोने और चाँदीके टुकड़े चले जानेसे भारतमें निर्धनताका ताण्डव इतने भयंकर रूपमें नहीं दिखायी दिया है, जितना दूधकी नदियाँ बहानेकी शक्ति रखनेवाले गोधनके अपहरणकी इस नीतिसे!

हिंदुओंका जीवन दूध और अन्नपर ही अवलम्बित है। जबसे गाय-बैल निष्ठुरतापूर्वक भारतीयोंसे अपहृत किये जाने लगे हैं, तबसे देश-सन्तानके पालनकी चिन्ता भी बढ़ गयी है, जिसे समुन्नत बनाना प्रत्येक सरकारका मुख्य कर्तव्य है। आज जब अमेरिका, डेन्मार्क, ग्रेट-ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया आदि अपने-अपने गोधनकी उन्नतिमें कटिबद्ध हैं और दूधका भंडार बढ़ानेके लिये प्रयत्नशील हैं, तब भारतीय सरकार ही अपने कर्तव्यमें अपूर्ण रह जाती है। बात यह है कि गोरे और कालोंके हित परस्परविरोधी हैं, और काले बच्चोंके लिये गोरे बच्चोंके हितकी उपेक्षा करना सरकारको अभीष्ट नहीं।

देशकी इस दीनावस्थामें शुद्ध दुग्धके अभावमें भारत-सन्तान शक्तिहीन ही रहती है। गो-दुग्ध एक अनुपम पौष्टिक है; आयुर्वेद और विज्ञान दोनोंने गौके दूधका महत्त्व पूर्णतः स्वीकार किया है। जब गौका दूध श्रेष्ठ दूध है, तब भैंसका दूध पिलाकर बच्चोंके प्रति अन्याय करना अशोभन है। पर आज तो जिन्हें भैंसका ही दूध मिल जाता है, वे सचमुच भाग्यवान् हैं—दूधके अभावमें तड़पनेवाले बच्चोंकी संख्या ही इधर बढ़ रही है।

ब्रिटिश-शासनके पूर्व भारतमें गोचर-भूमिकी कमी न थी,

और तब गौ पालनेवाले गृहस्थोंकी संख्या भी अधिक थी। किन्तु ब्रिटिश-शासन-सत्तामें राजस्व-कर और चमड़ेकी नीतिसे लोग गोचर-भूमिमें खेती करनेके लिये विवश हुए और इस प्रकार गोचर-भूमिका लोप होने लगा। मुसल्मानो सत्ताका वह अनिश्चित और दोषपूर्ण राजस्व भारतके लिये फिर भी सुखका विषय था।

आज भारतवर्षमें पशुओंके साथ जो अत्याचार होता है, वह संसारके किसी भागमें नहीं दिखायी देता। भोजनकी उचित व्यवस्था न होनेके कारण गायोंका कागज-कपड़े चबाना तो एक साधारण-सी बात है; किन्तु जिनका दुग्ध अपने शुद्ध रूपमें अमृतके समान है, वे गायें विष्ठामें मुँह डालनेके लिये भी तो विवश होती हैं। कलियुगमें गौके लिये यह शाप बताया जाता है, किन्तु आज तो समस्त भारतवर्ष पराधीनता-के कठिन जालमें आबद्ध होकर शापग्रस्त है।

७५ प्रतिशत गायें आज तपेदिककी रोगिणी होती हैं। उनके दूधमें रोगके कीटाणुओंकी ही प्रचुरता रहती है, और वह आज लाभके बदले हानि ही अधिक पहुँचाता है। परन्तु अभी भी गोवंश इतना नष्ट-भ्रष्ट नहीं हुआ, जिसकी ओरसे निराश हो जाना पड़े। अब भी देशमें वे उत्तम नस्लें मौजूद हैं, जिन्हें प्रतिवर्ष सहस्रोंकी संख्यामें लोग बाहर ले जाते हैं।

मुसल्मानोंपर गोवधका दोष लगाना साधारण-सी बात है। किन्तु जितना गोवध वर्तमान शासन-कालमें होता है, उतना मुस्लिम शासन-कालमें कदापि न था; आज भी गो-भक्षक मुसल्मानोंकी संख्या अधिक नहीं। वास्तवमें अंग्रेज ही मुसल्मानोंको गोवधके लिये आश्वासन देते हैं, और भली प्रकार अपना काम बनाते हैं। गोमांस वैज्ञानिक दृष्टिसे कोई अच्छा न होते हुए भी गोरोंका भोजन है और मुसल्मानोंको गोवध करनेमें आपत्ति नहीं; दूसरे, गोवधसे हिंदुओं और मुसल्मानोंमें साम्प्रदायिक वैमनस्य बढ़ता है, जिसका परिणाम भारतको सदैव पराधीन बनाये रखना है। पारस्परिक वैमनस्य-की अग्निको शान्त करना और उसे चेता देना अंग्रेजोंने भली प्रकार सीखा है। हर्षका विषय है कि मुसल्मान भी वस्तुस्थितिको समझकर गोरक्षामें हिंदुओंका हाथ बटाना सीख रहे हैं।

गोवधमें अंग्रेजों और मुसल्मानोंका दोष प्रधान रूपमें होते हुए भी हिंदू इससे बेदाग नहीं रहते, क्योंकि उनमें भी तो गोरक्षाका पक्का भाव नहीं। प्रसिद्ध विद्वान् पं० श्रीराम-शर्माने ठीक ही कहा है—'गायकी कुर्बानीपर हिंदू इसलिये बिगड़ पड़ते हैं कि उनके दिलोंको दुखाया जाता है; नहीं तो, कसाईखानोंमें प्रतिदिन हजारोंकी संख्यामें गायें कटती हैं, और कोई हिंदू वहाँ लड़ने-झगड़ने नहीं जाता।' शोकका विषय है कि कुछ हिंदू धनाढ्य गोवधसे पैसा कमा रहे हैं। मशीनके इस युगमें जब कि चमड़ेका व्यवहार बढ़ रहा है, शौकीन लोगोंके बढ़िया जूते और हैंडबेग और गाँववालोंके पुर (चरस) के लिये बहुत अधिक गो-चर्म खप जाता है। यह बढ़िया चमड़ा वध किये जानेवाले गोवंशका होता है, प्राकृतिक मौतसे मरे गाय-बैलोंका नहीं।

निर्धनताकी व्याधिपर लोगोंका ऐसा वश नहीं। किसानों-को अपना कर्ज चुकानेके लिये अपना पशु-धन बेचना पड़ता है; यही सूखे-सड़े गाय-बैल सस्ते दामोंमें बिककर छावनियोंमें भोजन पहुँचाते हैं। लूले-लँगड़े पशुओंको कसाईके हाथ न बेचकर गोशालामें भेज देना जनताके ज्ञानकी चरम सीमा है; गो-वर्द्धनके लिये उसने बहुत ही कम ध्यान दिया है। सरकार-ने इधर पशु-उन्नतिकी ओर कुछ ध्यान दिया है। डेयरीकी शिक्षा देनेके लिये मि० विलियम स्मिथ और डाक्टर सैम हिग्गिनबाटमने बंगलोर और नैनीमें कृषि-कालेज खोलकर देशका कुछ उपकार किया है। प्रतिवर्ष सैकड़ों सिंधी पशुओं-का विदेशमें जाना रोकनेकी इच्छासे कराचीमें भाषण देते हुए लॉर्ड विलिंग्डनने कहा था—'मैं मानता हूँ कि पशु-प्रजनकोंको अच्छे पशुओंसे बाहर बहुत अच्छी रकम मिल सकती है; परन्तु तब भी कराचीवासियो! तुमको शुद्ध जातिके पशुओंको देशमें ही रखना चाहिये।'-लॉर्ड लिनलिथगो भी पशुओंके प्रजननकी ओर तत्पर हुए थे, किन्तु सरकारके प्रयत्नोंमें एक अपूर्णता ही दृष्टिगत होती है।

गोरक्षाके लिये पहले देशकी गरीबीको दूर करना होगा। लगानमें कमी हो जानेसे भारतवासी और उनके गोधनको अच्छा सहारा मिल सकता है; इस प्रकार चरागाहोंके लिये काफी गोचर-भूमिका प्रश्न भी हल हो सकता है। भारतवासियों-का यह धर्म है कि वे गोवधके लिये गोवंशका व्यवसाय नहीं करें, तथापि **गाय-बैलोंका कसाइयोंके हाथों कटना और विदेशियोंके हाथों उनका बिकना जबतक न्यायालयसे दण्डित नहीं होता, तबतक गोरक्षा नहीं सिद्ध होती।** योग्य प्रजनन और डेयरीकी शिक्षाके लिये भी विशेष प्रोत्साहन आवश्यक है।

कार्य करनेकी क्षमता रखते हुए भी सरकार यह सब

करेगी इसमें सन्देहके लिये पर्याप्त स्थान है। लाला लाजपतराय-ने इसीलिये तो कहा था—'जबतक स्वराज्य नहीं मिल जायगा, तबतक गोरक्षाका प्रश्न हल नहीं हो सकता।' सचमुच जब देशके राष्ट्रीय जीवनमें एक नयी धारा प्रवाहित होने लगेगी, तभी देशका यथेष्ट हित-साधन हो सकता है। लालाजीने अन्यत्र सारगर्भित शब्दोंमें कहा है—'जो सरकार सालमें लाखों गौओंकी कत्ल करती है, उस सरकारसे सम्बन्ध छोड़ो, हिंदू बनो; हिंदू भगवान्‌को 'सरकार' कहते हैं। भगवान्‌को अपनी पुकार सुनाओ, वह सुनेगा—वह अवश्य ध्यान देता है।'

गो-गोपाल

(लेखक—पं० श्रीराजमङ्गलनाथजी त्रिपाठी एम्० ए०, एल्-एल्० बी०)

इस वैज्ञानिक युगमें घोर अवैज्ञानिक मतिभ्रम फैला हुआ है। तभी तो नास्तिकता, हिंसा, स्वार्थलोलुपता आदि अवगुणोंको अधिकाधिक प्रश्रय मिल रहा है। मानवता पथभ्रष्ट हो गयी है। मनुष्यका मस्तिष्क और शरीर दोनों विकृत-से प्रतीत हो रहे हैं। यही कारण है कि विज्ञानके अन्धभक्त प्रायः धर्मके नामसे चिढ़ते हैं और 'विज्ञानका नाम सुनकर धर्मके पैर उखड़ जाते हैं, ऐसा कहते हुए भी सुने जाते हैं। परन्तु यह तो धर्मका उपहास करनेवालोंका असंगत प्रलाप है। इस धर्मप्राण भारतभूमिमें इस प्रकारकी उक्तिका उच्चार और व्यवहार दोनों ही अनुचित है। किन्तु, इसमें सन्देह नहीं कि धर्मको प्राण माननेवाली आर्यजातिके कतिपय आचार-विचार भी दम्भ ही प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ, गोभक्ति। परस्पर अभिवादनमें 'जै गोपाल' हरिकीर्तनमें 'गोपाल जय जय'की ध्वनि हमलोग खूब करते हैं। पर, गोपालकी, परम प्रेयसी गोमाताकी रक्षा तथा सुधारके लिये कुछ वास्तविक कार्य हमसे नहीं बन पड़ता। इसे दम्भ ही तो कहा जायगा। वस्तुतः—

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा
लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति,
धर्मेण पापमपनुदन्ति, धर्मे
सर्वं प्रतिष्ठितं, तस्माद्धर्मं परमं वदन्ति ॥

यह उपनिषद्वाक्य सर्वथा वैज्ञानिक है। इसीलिये प्राचीन ऋषियोंने धर्मकी सुदृढ़ आधार-शिलापर ही सनातन आर्यजातिकी नींव डाली थी। घोर अन्धकारपूर्ण संसार-सागरमें मार्ग निश्चित करनेके लिये धर्मका प्रकाशगृह ही सहायक है और रहेगा।

सत्याधारस्तपस्तैलं दया वर्तिः क्षमा शिखा।
अन्धकारे प्रवेष्टव्ये दीपो यत्नेन धार्यताम् ॥

भारतवासीकी यह उक्ति कितनी रहस्यपूर्ण है। किन्तु हाय! हिंदूजातिका यह धर्मदीप अद्यावधि निर्वाणोन्मुख प्रतीत हो रहा है। उसके आधारमें ही घुन लगा है। तैल, वर्ति और शिखाकी तो कथा ही अलग है। गोजातिका भीषण ह्रास और उसकी रक्षाके प्रति गोभक्तोंकी किंकर्तव्य-विमूढता यही तो प्रकट कर रही है।

वस्तुतः गोशब्दमें सम्पूर्ण आर्यसंस्कृतिका इतिहास अन्तर्हित है। परन्तु इस रहस्यको समझनेके लिये हमारा मस्तिष्क कहाँ समर्थ है? शरीर और मनको पुष्ट करनेके लिये गोदुग्ध-रसायन तो भारतीयोंके लिये दुर्लभ हो गया। गोदुग्धकी महत्ताका प्रतिपादन करनेवाला आयुर्विज्ञान कहता है—

गव्यं पवित्रं च रसायनं च पथ्यं च हृद्यं बलबुद्धिदं स्यात्।
आयुःप्रदं रक्तविकारहारि त्रिदोषहृद्रोगविषापहं स्यात् ॥

इत्यादि धर्मशास्त्रोंमें गोदान, गोपालन, गोपय, गोमय, गोमूत्रादिकी महिमा भरी पड़ी है।

श्रुतिवाक्योंका पाठ भी हम नित्य किया ही करते हैं। फिर भी दशा यह है कि प्रायः गोदर्शन मिलना भी कठिन हो गया है। भगवान् स्वयं गोपाल बन सकते हैं; वे गोपालनमें, गोचारण, गोरक्षणमें आनन्द-निमग्न हो सकते हैं। परन्तु, हमारी निष्क्रियताके सामने यह सब कहानी है।

तो अब प्रश्न यह है कि किया क्या जाय? किस मार्गका अनुसरण किया जाय! श्रद्धान्वितोंका मार्ग-प्रदर्शन तो धर्म-दीप ही कर सकता है। इसलिये धर्मका उपहास न किया जाय; उसका दम्भ न रचा जाय। धर्म विज्ञानका शत्रु नहीं, मित्र है, पोषक है। धर्मका आधार सत्य है और सत्यके बिना विज्ञानकी भी स्थिति कहाँ है! अस्तु, रक्षाका दूसरा उपाय नहीं है, 'धर्मो रक्षति रक्षितः।'

महाभारत-कालमें शरीर तथा मस्तिष्कके पोषणके लिये और अध्यात्म-तत्त्वके विकासके लिये गो-दुग्ध और गीतामृतकी वर्षा करनेवाले स्वयं गोपालनन्दन थे—

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥

परन्तु आज कैसे निर्वाह हो ? गोवंशके उद्धारके बिना भारतधर्मकी सभ्यता और संस्कृतिकी रक्षा कठिन है । इस महान् धर्मकी रक्षाके लिये हमें गोभक्तिका क्रियात्मक व्रत लेना पड़ेगा; गोपालका आदर्श स्थापित करना पड़ेगा । अनन्यशरणागतिका आश्रय लेना पड़ेगा । फिर तो भगवान् किसी-न-किसी रूपमें अवतरित होंगे ही । अन्यथा उनके बिना हमारे योगक्षेमका भार कौन लेगा; गोदुग्ध और गीतामृतका पान कौन करायेगा । स्वान्तःसुखाय रामकथाकी रचना करनेवाले तुलसीकी सरल वाणी प्रभु-भक्तोंको क्या विस्मृत होनेवाली है !

जब जब होइ धर्मकी हानी । बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी । सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा । हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥

यह बहुत बड़ा अवलम्ब है । आवश्यकता है पूण विश्वासके साथ सक्रिय निमित्तमात्र बननेकी । गोरक्षाकी आड़में पेटपालनकी क्रिया तो अन्धी गोभक्ति है । प्रभुचरणमें जब हम शुद्ध भावसे आत्मनिवेदन करेंगे तो मार्ग निकल ही आयेगा । भगवान्का स्वभाव ही जो ऐसा है—

रहति न प्रभु चित चूक किएकी । करत सुरति सय बार हिएकी ॥

गीताका अमृतज्ञान भी तो 'मामनुस्मर युध्य च' का ही उपदेश देता है । भगवान् कहते हैं—

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

अर्थात् ज्ञान, भक्ति, कर्म सबकी उपलब्धि मत्परायण होनेसे हो जायगी !

तुम्हारी गायें

दीख रहा परिवर्तन कैसा, गो-कुलमें गोविन्द !
नहीं दीख पड़ते नँदनन्दन ! वे गोपोंके वृन्द !!
धौरी, धूसरि, श्यामा, भामा, लै मुरलीमें नाम ।
नहीं टेरते अब तुम उन गौओंको हे घनश्याम ! ॥
कर पर धर गो-वर्धन, जिनको तुमने किया सनाथ ।
आज वही असहाय रो रहीं होकर निपट अनाथ ॥
जिन्हें पाल गो-पाल कहाये, करी सदा ही प्रीत ।
उनका क्रन्दन सुन चुप बैठे, यह कैसी अनरीत ? ॥
विविध भाँति हो रहे आज उनपर अति अत्याचार ।
मूक, जोहती बाट तुम्हारी, अब तो लो अवतार ॥
बिना तुम्हारी कृपा न होगा गौओंका कल्यान ।
सुमधुर वंशी-नाद श्रवनको खड़े किये हैं कान ॥
सूना गोकुल बिना तुम्हारे, यमुना-तट नँदलाल ।
बिकल खोजतीं तुम्हें, तुम्हारी गायें हे गोपाल ! ॥

—सरस्वती भटनागर

गोरक्षाका सर्वोत्तम साधन—भगवत्प्रार्थना

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जगजाल॥

गोसाधुदेवताविप्रवेदानां रक्षणाय वै।
तनुं धत्ते हरिः साक्षाद् भगवानात्मलीलया॥

'गो-अङ्क'में गौकी दुर्दशा और इस दुर्दशासे गौको उबारनेके साधनोंपर विशिष्ट विद्वानों और सूक्ष्मदर्शी विशेषज्ञोंके द्वारा भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणसे बहुत विचार किया गया है। और अपने-अपने स्थानमें वे सभी विचार महत्त्वपूर्ण हैं और उनसे यथायोग्य लाभ उठानेकी बड़ी आवश्यकता है। आशा है कि गो-प्रेमी तथा देशप्रेमी पुरुष भलीभाँति मनन करके उनको यथायोग्य काममें लावेंगे। एक साधन और भी है, और वह लेखककी अल्प मतिमें सर्वशिरोमणि है। **वह है—भगवान्‌से कातर प्रार्थना। जब-जब पृथ्वीपर संकट आया (पृथ्वीपर संकट आनेका अर्थ ही है—गो-ब्राह्मणपर संकट आना) तभी तब ऋषि-देवताओंने गोरूपधारिणी या गोरूपा पृथ्वीके पीछे-पीछे जाकर भगवान्‌से करुण प्रार्थना की, भगवान्‌को पुकारा और फलतः उनका संकट टला। भगवान् अवतीर्ण हुए। 'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।'**

भगवान्‌की कृपा और भगवान्‌के बलसे असम्भव भी सम्भव हो जाता है। जर्मनीके वीर हिटलरने योजना बनायी थी कि सन् १९३९ में ही इंग्लैंडको जीत लिया जायगा। जापानकी भी तैयारी कम नहीं थी। परन्तु भगवान्‌को उनका विजयी होना स्वीकार नहीं था। लाखों सुसज्जित सैन्य तथा अपार सामग्री तैयार रहते भी वे दोनों हार गये। और ऐसे हारे कि जीतनेवाले देशोंने भी उनकी ऐसी हारकी कल्पना नहीं की थी। वैसे ही विजयी लोग भी अब विजयगर्वमें मतवाले होकर यह समझते हैं कि हमने अपने बल-कौशलसे विजय पायी है और वर्तमान राक्षसी आणविक बमने तो उनके इस गर्वको हजारों गुना बढ़ा दिया है एवं इस गर्वमें भरकर ही वे आज पराजित राष्ट्रोंका बहुत बुरी तरहसे सर्वनाश करनेपर तुले हुए हैं। पर कौन कह सकता है कि भगवान्‌के विधानसे अगले बीस-पचीस वर्षोंमें क्या होगा। भगवान् गर्वहारी हैं। हिटलर वीर होते हुए भी हार गया, खास करके इसीलिये कि उसमें अत्यन्त गर्व बढ़ गया था। जापानमें भी गर्वकी कमी नहीं थी। अब इन विजयी राष्ट्रोंमें तो उन सबका सारा गर्व इकट्ठा होकर आ गया है। पता नहीं, इनके लिये भगवान्‌के विधानने क्या रच रक्खा है। यह तो भविष्य ही बतावेगा। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि पराजितोंके प्रति सद्व्यवहार करनेसे ही वैरका नाश होता है और जगत्‌में सुख-शान्ति सुप्रतिष्ठित होती है। असहाय परिस्थितिमें पड़ा हुआ मनुष्य बुरे बर्तावसे दब जाता है, पर उसके मनका परिवर्तन नहीं होता; वरं उसमें तो और भी जोरसे आग लगती है और वह अंदर-ही-अंदर फैलती है एवं मौका पाते ही जन्म-जन्मान्तरतक भयानक रूपमें भड़कती रहती है। पर यह बात कौन समझावे और कौन समझे? भगवान्‌के अनिवार्य विधानकी व्यवस्था ही समय आनेपर इस तत्त्वको समझाती है और फिर बाध्य होकर समझना भी पड़ता है।

मनुष्यके हृदयकी कालिमाने विज्ञानका दुरुपयोग कराया और आणविक बमकी सृष्टि की। एक हीरोशिमा नगरके ढाई लाख नर-नारियोंमेंसे दो लाख चौवालीस हजार एक ही घंटेमें जल-भुनकर खाक हो गये। इसपर सुसभ्य अमेरिकाको बड़ा गर्व है! जहरीली गैस तैयार करनेवाले राष्ट्र तो बर्बर थे, पर सुसंस्कृत अमेरिका आणविक बम बरसाकर भी सुसंस्कृत और निर्दोष है! सफलताका समय है न? इस सम्बन्धमें डा० महेन्द्रनाथ सरकारने बहुत ही ठीक लिखा है कि 'विज्ञानकी शक्तिका अपव्यवहार करके सभ्यताकी गति इतनी तेज हो चली है कि उसकी यह क्रम-वर्धमान शक्ति उसे कहाँ ले जायगी, इसपर विचार करनेसे भी क्लेश होता है। मनुष्यको इस यान्त्रिकसभ्यताने पिष्ट किया है—पीसा है, पुष्ट नहीं किया। अभी जो पुष्टि दीखती है, वह भी यथार्थमें पुष्टि नहीं है। यह मनुष्यकी नीच सत्ताकी शक्तिको जगाकर, उसे क्रमशः उसकी तेजोमय स्वच्छ दृष्टिसे उतारकर तमिस्राके गम्भीर गहनमें ले जा रही है···। मनुष्य मानो क्रमशः अपनी चेतनाके दीप्त और उद्‌बुद्ध प्रकाशसे स्तिमित अचेतनमें उतरकर प्राणशक्तिकी उद्दाम तथा कुटिल शक्तिकी ओर दौड़ रहा है। आणविक बमकी प्रस्तुत प्रणालीके अंदर, अणुके तनुत्यागके भीतर चाहे जितना गोपनीय तथ्य भरा हो, उसमें जो प्रेरणा है, उसकी उत्पत्ति तमसाच्छन्न हृदयसे है; और उसकी गति है ध्वंसकी ओर······' इसपर टीका-टिप्पणी व्यर्थ है।

असलमें इन देशोंकी विजय हुई है भगवान्‌के विधान-

से । और वह विधान ही सर्वशक्तिमान् है । विधान बनता है—भगवदिच्छासे, परन्तु उस इच्छाके मूलमें रहते हैं हमारे कर्म । सम्भव है इन देशोंमें ऐसे पुण्यकर्मा पुरुष हों, जिनका पुण्य-बल बढ़ा हुआ था और उन देशोंमें पुण्यके बलसे बलवान् इतने पुरुष न हों । रूस-जैसे अनीश्वरवादी देशमें भी छिपे पुण्यात्मा हो सकते हैं । कौन जानता है कहाँ कैसे कर्मवाले पुरुषोंकी अधिकता है । हमारा तो ऐसा विश्वास है कि भारतपर आता हुआ संकट टला, इसके मूलमें भी भगवान्का मंगल विधान ही काम करता रहा है । **अतएव सबसे अधिक आवश्यक है—'भगवान्के मंगलमय विधानकी मंगलमय व्यवस्थाके नीचे आना, अपनेको भगवान्के कल्याणमय चरणोंमें पूर्णतया समर्पित कर देना । इसमें प्रधान साधन है हृदयकी सच्ची, अनन्य, करुण प्रार्थना । गौकी रक्षाके लिये भी सबसे बढ़कर यही साधन है । जिनका इसमें विश्वास है, उनको चाहिये वे श्रद्धापूर्वक नित्य भगवान्से कातर प्रार्थना किया करें । यदि प्रार्थना सत्य होगी और हृदयसे होगी तो ऐसे संयोग अपने-आप बनेंगे जिनसे गोरक्षाका मार्ग सुगम हो जायगा ।** (ह०)

गोरक्षा क्यों आवश्यक है ?

(लेखक—मौलाना काबिल साहेब, प्रेसीडेंट हिंदू-मुस्लिम-गोरक्षा-सभा)

मैं बहुधा शान्तिके साथ ठोस काम करनेका आदी हूँ और कभी-कभी तो ख्याति और प्रकाशनको हानिकारक समझता हूँ; क्योंकि पिछले दस सालके मेरे अनुभव बताते हैं कि दुर्भाग्यसे अभी हमारे देश-निवासियोंमें इतनी उदार-दृष्टि नहीं हो सकी है कि वे ऐसे सामाजिक कामोंके लाभोंपर धार्मिक और साम्प्रदायिक जोशसे दूर रहकर ठंडे दिलसे विचार कर सकें । स्वयं मुझपर बाजे-बाजे प्रान्तोंमें गोरक्षाके कामके कारण तरह-तरहके दोष लगाये जाते हैं और मेरे कतिपय मुसल्मान मित्र यहाँतक कहनेसे भी नहीं चूके हैं कि इसमें अवश्य कोई-न-कोई मेरा कुछ स्वार्थ है ।

इस मौकेपर मैं अपने हिंदू-मुस्लिम मित्रोंको धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता, जो मुझे इखलाकी मदद देते रहे हैं । इनमें बाबू लाडलीप्रसाद एम्० ए० एडवोकेट इटावा, सेठ मोहनलाल 'शफक' हापुड़, सेक्रेटरी साहब गोरक्षिणी सभा (रजिस्टर्ड) लुधियाना, बाबू सुगनचन्द्र 'रोशन' बी० ए०, एल्-एल्०बी०, पानीपत, मौलाना अब्दुल अव्वल फाजिल देवबंद, मौलाना मुहम्मद अजीम, दिल्ली, बाबू चन्दूलाल नैन वकील, देहली इत्यादि ।

हमारे बान्धव, जो सामाजिक जीवनपर केवल धार्मिक दृष्टिकोणसे देखते हैं, उन्हें चाहिये कि वे इस प्रश्नके आर्थिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय (National), तथा जीवन-निर्वाहके पहलूपर भी ध्यान दिया करें । इससे कौन इनकार कर सकता है कि विज्ञान (Science)के वर्त्तमान जमानेमें हमारे देशकी अधिकांश जनता कृषिपर जीवन-निर्वाहके लिये निर्भर है, जिसके लिये गाय रीढ़की हड्डी (Back-done) के समान है । इसके अतिरिक्त इस देशमें सुशिक्षित माताओंकी त्रुटि है, जिसके कारण बहुत-से शिशुओंका पालन-पोषण केवल गायके दुग्धपर ही होता है । कहना न होगा कि डाक्टरी खोज (Mebical research) से यह साबित हो चुका है कि बच्चोंके लिये माताके दूधके पश्चात् गायका ही दूध हितकर तथा पौष्टिक है, जो सहजमें ही तथा कम व्ययपर मिल सकता है । हिंदुस्थानके भूतपूर्व वायसराय लार्ड लिनलिथगोने भी इसी कारण भारतमें पदार्पण करते ही गोरक्षाकी तरफ लोगोंका ध्यान आकर्षित किया था ।

हमारे सामाजिक और राजनीतिक जीवनमें भी गोरक्षाके कामसे बहुत भारी परिवर्तन तथा उन्नति हो सकती है । देशकी स्वतन्त्रता, उन्नति, खुशहाली और इतमीनानके लिये यहाँकी दोनों प्रधान जातियों (हिंदू-मुस्लिम) का मेल और समझौता अत्यन्त आवश्यक है । बाबर, हुमायूँ, अकबर, शाहजहाँ इत्यादि मुसल्मान बादशाह इस बातको भलीभाँति समझते थे । इसी कारण उन्होंने गो-रक्षाका प्रयत्न किया था और गो-वध बंद करवा दिया था । हिंदू-मुस्लिम त्यौहारोंमें एकता उत्पन्न कर दी थी । आज वे सब बातें विलीन हो गयी हैं । भारत-माताके सुपुत्रोंकी हैसियतसे क्या हम सबका यह धर्म (Duty)नहीं है कि हम उन अच्छे दिनोंको वापस लायें और झगड़ेके वास्तविक कारण (गो-हत्या) को दूर करके बिछुड़े हुए भाइयोंको फिर गले मिला दें ! हिंदू-

मुस्लिमको एक प्लेटफार्मपर लानेके लिये गोरक्षासे बढ़कर और कोई उपाय नहीं है ।

मुसल्मान मित्रोंसे मैं यह कहूँगा कि कुरानशरीफमें, जो खुदाका कलाम है, कहीं भी गायके मांस-भक्षणका हुक्म नहीं है। पैगम्बरे-इस्लाम हजरत मोहम्मद साहबने सल्लमने फरमाया है—'गायका दूध गिजा है, इसका घी दवा है और इसका मांस आजार (बीमारी) है।' —हदीसशरीफ

क्या इन स्पष्ट हिदायतोंके बाद भी कोई संदेह रह जाता है? आज भी हजारों मुसल्मान सूफी ऐसे हैं, जो गायका मांस छूते भी नहीं हैं ।

अन्तमें मैं अपने हिंदू-मित्रोंको सलाह देता हूँ कि वे आल इंडिया हिंदू-मुस्लिम-गोरक्षा-सभा (सहादरा दिल्ली) की इस कार्यमें सहानुभूति दिखायें और सब पुरुष-स्त्रियाँ विशेषतः विद्यार्थीगण सभाएँ बनाकर जलसे करें और सभाके डेलीगेट्सको बुलाकर व्याख्यान तथा प्रचार करवायें। जो मुसल्मान भाई प्रसन्नतासे इस कार्यमें हाथ बटायें, उनका उचित सम्मान करें और उन लोगोंको धार्मिक तौरपर (Religiously) न छेड़ा जाय। कोई बुरा-भला भी कहें तो नम्रतासे सब सहन करें। हिदायतें सभाके दफ्तरसे मिल सकती हैं।*

भारत-सरकारका कर्तव्य

(लेखक—पं० श्रीदामोदरजी उपाध्याय, वैद्य)

गीता साफ-साफ कहती है कि सुख-चैनसे जीना है तो खेती करो, गोरक्षा करो, व्यापार करो। इन तीनोंका आपसमें गहरा सम्बन्ध है। यह ठीक है कि हिंदू धर्मभावनासे भी गोरक्षा करना धर्म समझते हैं; परन्तु हिंदू कानूनकी सबसे बड़ी पुस्तक गीता तो, आर्थिक दृष्टिसे ही, गोरक्षाको उत्तम बतलाती है ।

दूसरे धर्मवाले लोग गोरक्षाके खिलाफ क्यों चलते हैं? क्या वे भारतमें रहनेवाले गैर-हिंदू भारतभूमिमें उत्पन्न घी, दूध, गेहूँ और चावल नहीं खाते? जो गैर-हिंदू भारतके दाना-पानीसे पल रहे हैं और आगे होनेवाली अपनी संतानोंको भी यहींकी आबहवामें रखना चाहते हैं, वे सच्चे भारतभक्त बनें! भारतमें रहकर जो गोरक्षामें हाथ नहीं बँटाते, वे वस्तुतः प्रथम श्रेणीके कृतघ्न तथा भारतद्रोही हैं। भारतीय राष्ट्रकी उन्नति शुद्ध दूध-घीपर ही निर्भर है, मांस खाकर यहाँके निवासी बुद्धिमान्-बलवान् नहीं बन सकते। गोरक्षाके विरोधमें जो लोग आज भी अपनी राय बनाये रहेंगे, वे निश्चय ही पीछे रह जायँगे ।

एक समय था जब भारतमें गोरक्षाकी लहर आयी थी; आज भी कभी-कभी गोरक्षाकी बात सुनायी देती है। वास्तवमें सच्ची बात तो यह है कि हर-एक देशकी यथार्थ उन्नति तभी होती है, जब उस देशकी सरकार निश्छल होकर, ईमानदारीसे काम करती है। भाषणसे, लेखसे तो इतना ही होता है कि जनतामें प्रचार हो। ठोस कार्य तो तभी होता है, जब सरकार कानून (नियम) बनाये और उसको कागजसे बाहर निकालकर व्यवहारमें चालू कर दे। कोई भी सरकार हो, उसे बातोंसे भुलावा देनेकी आदत छोड़ देनी चाहिये । जनताको बातोंमें उलझाकर धोखा देनेसे बहुत-सी बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं ।

भारत-सरकारने गोरक्षाके लिये आजतक क्या ठोस कार्य किया? गोचरभूमि छोड़नेके लिये किस तरहका कानून बनाया? और उस कानूनका व्यवहारमें कितना पालन हुआ? गोरक्षाके लिये व्यवहारतः किन-किन बातोंपर प्रकाश डाला गया? इन बातोंका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं है। संसारमें बड़े वेगसे परिवर्तन हो रहा है, उस परिवर्तनसे भारत परे नहीं रह सकता।

भारत-हितका दम भरनेवाली सरकार—मजदूर सरकार लंदनमें बनी है; उसीके अनुसार भारतमें भी सम्भव है नयी सरकारका निर्माण हो। ऐसी दशामें हम बहुत ही जोरके साथ

* यद्यपि मौलाना साहेब श्रीकाबिल महोदयसे और उनकी 'हिंदू-मुस्लिम-गोरक्षा-सभासे' हमलोगोंका परिचय नहीं है, इसलिये कुछ विशेष कहनेमें हमलोग असमर्थ हैं, परन्तु मौलाना साहेब और उनके साथी हिंदू-मुस्लिम महानुभावोंके इस कार्यसे हमें बड़ी प्रसन्नता हुई है। इस लेखमें प्रकाशित उनके विचार बहुत ही सुन्दर हैं। यदि सचमुच इन्हीं विचारोंके अनुरूप हिंदू-मुसल्मान भाई काम करें तो गोरक्षामें बहुत-कुछ सहायता मिल सकती है। —सम्पादक

स्पष्ट शब्दोंमें कहनेके लिये बाध्य हैं कि भारतमें जो सरकार बनेगी, उसके सदस्य तभी देश-भक्त, सच्चे और ईमानदार साबित होंगे, जब कि वे यहाँके बच्चोंके लिये तथा प्रत्येक मनुष्यके लिये मक्खन, रोटीका सुप्रबन्ध करेंगे।

भारतकी वह सरकार कृतघ्न और निकम्मी साबित होगी, जो राष्ट्रके मुख्य अङ्ग गोरक्षाकी समस्याको भुला देगी। भारतवासियोंको भूखों मारनेवाली सरकारकी दरकार कभी नहीं है, यह ध्यान देनेकी बात है।

गोपाष्टमी

अखिल-भारतवर्षीय गो-दिवस

गौका माहात्म्य एवं महत्त्व बहुत कुछ लिखा जा चुका है; तथा यह भी बतानेकी आवश्यकता नहीं कि भगवान् श्रीकृष्णका अतिप्रिय 'गोविन्द' नाम गायोंकी रक्षा करनेके कारण ही पड़ा। कार्तिक शुक्ल प्रतिपदासे लेकर सप्तमीतक गो-गोप-गोपियोंकी रक्षाके लिये श्रीकृष्ण गोवर्धनपर्वतको धारण किये रहे। आठवें दिन इन्द्रकी आँख खुली और वे अहंकाररहित होकर भगवान् श्रीकृष्णकी शरणमें आये, कामधेनुने भगवान्‌का अभिषेक किया और उसी दिन भगवान्‌का गोविन्द नाम पड़ा।

उसी समयसे कार्तिक शुक्ल अष्टमीको गोपाष्टमीका उत्सव मनाया जाने लगा, जो अबतक चला आता है। भारतवर्षके प्रायः सभी भागोंमें यह उत्सव मनाया जाता है, विशेषकर गोशालाओं तथा पिंजरापोलोंके लिये यह बड़े महत्त्वका उत्सव है। गोशालाओंमें तो गोपाष्टमीके दिन एक मेला ही लग जाता है। खाने-पीनेकी दूकानें आ जाती हैं। बड़ी भीड़ होती है। मेलेमें घूमनेके अतिरिक्त लोग गौओंके दर्शन करते हैं, उनको कुछ खिलाते हैं और गोशालाकी संस्थाको कुछ दान करते हैं। यह तो होना ही चाहिये; किन्तु इतना ही काफी नहीं है, कुछ और भी करना होगा। जिन गो-गोपोंकी यह अष्टमी मनायी जाती है, उनकी क्या दुर्दशा है एवं उनका हित किस प्रकार हो सकता है—इसपर गम्भीरतासे विचार करना होगा और तदनुसार कार्य करना होगा। गोपाष्टमी केवल किसी एक गाँवका या गोशालाओंका ही उत्सव नहीं होना चाहिये, वरं गाँव-गाँव और घर-घर यह उत्सव बड़े समारोहसे मनाया जाना चाहिये। आवश्यकता इस बातकी है कि यह उत्सव **अखिल-भारतवर्षीय गो-दिवसका रूप धारण कर ले।**

गोपाष्टमीके दिन क्या-क्या करें ?

गोपाष्टमीके मनानेका सुन्दर ढंग और उस दिन किये जानेवाले कार्य नीचे लिखे अनुसार हों तो उत्तम है—

१. गायोंको नहला-धुलाकर स्वच्छ करना और उन्हें भाँति-भाँतिसे सजाना, २. गायोंके रहनेके स्थानकी भलीभाँति सफाई करना, ३. गाय और ग्वालोंकी विधिवत् पूजा करना और स्वादिष्ट भोजनसे उन्हें सन्तुष्ट करना, ४. गोशाला और पिंजरापोलोंमें यथाशक्य दान देना, ५. गाँव-गाँव और नगर-नगरमें सभाएँ हों, जिनमें गो-सम्बन्धी इन बातोंपर विचार हो—

(क) देशमें सर्वत्र गो-हत्याका निवारण कैसे हो सकता है ?

(ख) गायोंकी वर्तमान स्थितिमें, उनकी नस्लमें और दुग्धोत्पादनमें किन साधनोंसे सुधार हो सकता है ?

(ग) गोबर और गोमूत्रका अधिक-से-अधिक खादके रूपमें उपयोग कैसे किया जा सकता है ?

(घ) गोपालकोंको आवश्यक सुविधाएँ कैसे मिल सकती हैं?

६. उस दिन लोगोंको ठीक-ठीक समझाकर और उनके भावोंको जाग्रत् कर यह प्रतिज्ञा करनी-करानी चाहिये—

(क) हम उस आदमीके हाथ गौ कभी नहीं बेचेंगे, जिसपर यह संदेह हो कि वह घरमें गौका पालन न कर सीधे कसाईको या कसाईके हाथमें दे देनेवाले किसीको बेच देगा।

(ख) हम उन चमड़े, चर्बी तथा हड्डी आदिका अपने लिये व्यवहार और व्यापार कदापि नहीं करेंगे, जिनके कारण गायोंकी हत्या होती है।

(ग) वनस्पति-तैल (नकली घी) का व्यवहार नहीं करेंगे।

७. जहाँ अच्छे साँड़ न हों, वहाँ अच्छे साँड़ोंकी व्यवस्थापर विचार करना, ८. जहाँ उत्तम साँड़ हों, वहाँ उनके भरपूर चारे-दाने और संरक्षणका प्रबन्ध करना, ९. स्थानीय गाय, बैल, बछिया और बछड़ोंकी संख्याका पता लगाकर लिखना, १०. सुविधा हो तो अच्छी-से-अच्छी गाय रखनेवालोंको पुरस्कार देना, ११. गायें स्वस्थ और सबल कैसे रहें तथा उन्हें संक्रामक रोगोंसे कैसे बचाया जा सकता है—यह

समझना-समझाना, १२. अगली गोपाष्टमीतकके लिये गो-वंशकी उन्नतिका कार्यक्रम बनाना, १३. गतवर्ष गो-वंशकी उन्नतिके लिये क्या किया गया—इसकी जाँच करना, १४. गोशालाओंको यथाशक्ति दान देना, १५. ऐसे अवसरोंपर सहृदय मुसल्मान और ईसाई आदि सज्जनोंको भी बुलाया जाय और बड़े प्रेम तथा सम्मानका व्यवहार किया जाय, जिससे वे भी इसे सार्वजनिक मेला समझें और सभामें गौके आर्थिक महत्त्वको जानकर गोरक्षाके पक्षपाती बनें। हो सके तो मैजिक लालटेन आदिकी व्यवस्था करके उपर्युक्त सब बातें समझानी चाहिये।

इस प्रकार उस दिनका सारा समय गो-चर्चामें ही लगाना चाहिये। ऐसा करनेसे ही गोवंशकी सच्ची उन्नति हो सकेगी, जिसपर हमारी उन्नति सोलहों आने निर्भर है।

संसार-पशु-दिवस

हमलोगोंको यह जानकर अपने कर्तव्यका ज्ञान तथा उत्साह होना चाहिये कि विदेशोंमें पशुरक्षण और पशु कष्ट-निवारणके लिये ऐसे 'पशु-दिवस' मनाये जाते हैं और उनमें बड़े उत्साहसे दयालु पुरुष योग देकर पशुओंके कष्ट-निवारणके साधनोंपर विचार करते हैं।

गत ४ अक्टूबरको ऐसिसीके महात्मा सेंट फ्रांसिसके नामपर 'संसार-पशु-दिवस' (World day for Animals) मनाया गया था। उस दिनके कार्यक्रममें तीन बातें प्रधान रक्खी गयी थीं—१. खेल, व्यापार, मनोरञ्जन और तथाकथित विज्ञानके लिये पशुओंके साथ किये जानेवाले अनुचित व्यवहारपर विचार, २. ऐसे दुर्व्यवहारको शीघ्र-से-शीघ्र मिटानेके उपायोंपर विचार और ३. दुःखतापपीड़ित पशुओंकी ओरसे कार्य करनेके लिये उत्साह पैदा करना।

वहाँ यह कहा गया कि 'संसार-पशु-दिवस' तभी सारे संसारमें मनाया जाना सम्भव है, जब कि जनमतके नेतृगणोंकी वाणी उन वाणीहीन मूक पशुओंकी वाणी बन जाय।*

गोमाता

(लेखक—श्रीकामतासिंहजी 'धर्मभूषण')

माता! आज वसुन्धरा पापके भारसे प्रकम्पित हो रही है, तेरे दुःखसे भरे आर्त्तनादसे हम प्राणियोंका जीवन इस जगत्में भाररूप हो गया है। पाप-पाखण्ड अत्याचार-दुराचारका साम्राज्य हो चला है। तेरे सात्त्विक जीवनपर कुठाराघात होनेसे हमलोगोंका जीवन धार्मिक, राजनीतिक तथा सामाजिक पथसे च्युत होकर भ्रष्ट हो गया! तेरी सेवा तथा रक्षाका सर्वप्रथम उपाय है—नन्दनन्दन आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र भगवान्से प्रार्थना करना। हमारे इष्टदेव भगवान् दीन-दुःखियोंकी पुकार सदा सुनते आये हैं। पृथ्वीरूपमें तेरी पुकार सुनकर ही तो भगवान्ने गोपाल-कुल, गोकुलमें अवतार ग्रहण किया था। और अपनी प्रेमा-भक्तिरूप सेवाका भाव गोप-गोपिकाओंमें प्रकट कर श्रीवृन्दावन-धामको पवित्र किया था।

प्रिय भारतीयो! भारतका मूलधन गोमाता ही हमारा सर्वस्व है, यही हमारी पुरातन सनातन सम्पत्ति है। इसीसे सारे जगत्की सम्पत्तिका प्रादुर्भाव हुआ और आज इसीका आधार लेकर सारे प्राणी जीवनक्षेत्रमें अपने-अपने मनोभावानुसार सुख-ऐश्वर्य और सौन्दर्यको प्राप्त हो रहे हैं। पर आज इस मूल सुखदायक कल्पवृक्षपर कुठाराघात हो रहा है और हम सब मोहमयी निद्रामें पड़े पथच्युत हो अकर्मण्य हो रहे हैं! हमारे शास्त्रोंमें गोरक्षाका महत्त्व और आदर्श बहुत ऊँचा है, अतः इसकी मर्यादाका उल्लङ्घन करना उचित नहीं। धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टिसे ही नहीं, राजनीतिक दृष्टिसे भी गौका विशेष महत्त्व है। अतः हम सबका परम कर्तव्य है कि हम तन-मन-धनसे पूरी शक्ति लगाकर गोमाताकी सेवा करें।

अखिल भारतीय धर्मसंघके महान् अधिवेशनोंमें सम्मिलित होनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था और गो-रक्षाका भी एक प्रधान विषय उसमें रक्खा गया था। मुझे हर्ष है कि वर्तमान भारतवर्षमें 'धर्मसङ्घ' का जो महान् कार्य हो रहा है उससे समस्त विश्वका कल्याण होगा। अन्तमें हमारा साग्रह अनुरोध है कि इस संकल्पसे कि 'धर्मकी जय हो, अधर्मका नाश हो, प्राणियोंमें सद्भावना हो, विश्वका कल्याण हो,' तथा संकल्पानुसार कार्यसे हम गोमाताकी यथाशक्ति रक्षा करें।

---

* जिन सज्जनोंको इस विषयके साहित्यसे रुचि हो, वे "The World League for the Protection of Animals", 42 Aberdeen Road, London 5 से पत्रव्यवहार कर सकते हैं और वहाँसे World day for Animals (संसार-पशु-दिवस) की योजनासम्बन्धी पुस्तक मँगा सकते हैं।

भारतमें गौकी स्थिति

(लेखक—श्रीहनुमंत एस. ताड़पत्रीकर)

हमारे दैनिक जीवनमें गायका जो महत्त्व है, वह सर्वविदित है। गाय मनुष्यके प्रत्येक कार्यक्षेत्रमें उपयोगी है, परन्तु हमारे देशमें आज उसकी क्या दशा है! प्राचीन समयमें ऋषिलोग गायका वास्तविक पूजन किया करते थे न कि आजकलकी पद्धतिके अनुसार। आजकल हम पुष्पों, मालाओं आदिसे उसका पूजन तो करते हैं, परन्तु उसके उचित पालन-पोषणकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते। प्राचीन कालमें भारतीय जनता सम्यक्रीतिसे गायका पालन-पोषण तथा अन्य व्यवस्था किया करती थी तथा गाय भी दूध आदिके रूपमें उसे अधिक-से-अधिक लाभ पहुँचाती थी। वस्तुतः किसी देशकी समृद्धिके लिये गौओं और उनसे उत्पन्न विविध प्रकारके पदार्थोंकी प्रचुर परिमाणमें आवश्यकता होती है।

प्राचीन कालमें, जब भारतीय गायोंका पालन-पोषण तथा व्यवस्था बड़ी सावधानीसे किया करते थे, गायें भी उन्हें अबकी अपेक्षा अधिक दूध देती थीं। उस समय भारतीय समृद्धिके उच्चतम शिखरपर पहुँच गये थे। परन्तु आज कुछ दूसरी ही अवस्था हो गयी है। संसारके किसी भी अन्य देशमें गो-जातिके पशुओंकी संख्या हमारे यहाँसे अधिक नहीं है, परन्तु दूध और उपयोगिताके विषयमें यहाँ सबसे बुरी हालत है। हम गायका पूजन करते हैं एवं गो-मूत्र और गोबरका उपयोग भी करते हैं, परन्तु दूधके परिमाणपर, जो इन दोनों वस्तुओंसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, कुछ भी ध्यान नहीं देते। इसके विपरीत पश्चिमवाले पुष्पों आदिसे तो गायका पूजन नहीं करते, वे तो उसे खानेके लिये उत्तमोत्तम भोजन देनेके रूपमें ही उसका पूजन करते हैं। इसका परिणाम प्रत्यक्ष है। हमें पहले-पहल गायके भोजनकी ओर ध्यान देना चाहिये।

हमें यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि पशु-संख्याकी दृष्टिसे समस्त संसारमें भारतका प्रथम स्थान है। इसके अतिरिक्त भारतीय गौओंके दूधमें चिकनाईका भाग बहुत अधिक होता है। किन्तु हमें केवल एक बातपर ध्यान देना चाहिये, वह है—हमारी गायोंका नस्ल-सुधार। यह सुधार इतनी उच्च कोटिका होना चाहिये कि कद, वजन, दुग्ध-उत्पादन, आयु एवं सुगठित शरीरकी दृष्टिसे संसारके किसी भी देशकी गायें, हमारी गायोंकी तुलना न कर सकें। इस प्रकार ध्यान देनेसे वह सर्वाङ्गीण उन्नतिकी आदर्श बन जायगी तथा अन्य राष्ट्र भी उसका अनुकरण करनेकी चेष्टा करेंगे।

ऐसा सुधार कई प्रकारसे किया जा सकता है। हमें सबसे पहले गायके खिलाने-पिलानेपर उचित ध्यान देना चाहिये। बहुत वर्षोंसे इन बातोंकी उपेक्षा की गयी है। अब हमें इस त्रुटिका अनुभव करके उचित सुधार करना चाहिये। इसी प्रकार गायके रहनेकी व्यवस्थापर भी उचित ध्यान देना चाहिये तथा जब कभी वह किसी रोगसे आक्रान्त हो जाय, तब औषध आदिसे उसकी अच्छी प्रकार सेवा-शुश्रूषा होनी चाहिये। गायोंके चरनेके लिये कुछ गोचरभूमि छोड़ देनी चाहिये तथा विशेषरूपसे वह उन्हींके लिये सुरक्षित रहनी चाहिये। मानवोपयोगी पदार्थोंकी अधिक खेती होनेके कारण गोचर-भूमियोंका आजकल दिन-प्रति-दिन ह्रास होता जा रहा है। अन्तिम एवं सर्वोत्तम आवश्यक सुधार है—गायोंको बधानेकी नियमित व्यवस्था। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि गाय भारतीय कृषिका प्रधान आधार है। हमें योग्य बैलोंकी आवश्यकता है, जो कृषिके प्रमुख अङ्ग हैं तथा जो आज भी इस सभ्य जगत्में यातायातके साधन बने हुए हैं।

अब हम क्रमशः इन विषयोंपर संक्षेपसे विचार करेंगे। पानीके विषयमें यह कहना है कि गायको प्रतिदिन दो या तीन बार पानी पिलाना चाहिये। पानी बिल्कुल स्वच्छ और साफ होना चाहिये, जिससे किसी रोगके कीटाणु उसके शरीरमें न जा सकें। इसी प्रकार उसे इच्छानुसार पानी पीने देना चाहिये, न कि एक निश्चित परिमाणमें। इस सम्बन्धमें यह सर्वदा उचित है कि यदि सम्भव हो, तो गायको पानी पिलानेके लिये नदी या नालेपर ले जाना चाहिये। इससे उसे कुछ व्यायाम भी हो जायगा। यदि हम नदीमें स्नान करनेकी आदत डाल लें तो गायको पानी पिलानेका कार्य तो हमारे (दोनों समयके) स्नानके साथ-साथ हो सकता है। बंद कमरेमें, जहाँ सूर्यकी किरणें नहीं पहुँच सकतीं, स्नान करनेकी अपेक्षा खुले पानीमें स्नान करना अधिक अच्छा है।

गायोंको भरपेट खिलाना चाहिये। खूराकका परिमाण तथा उसे खिलानेके ढंग भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारके होते हैं। किन्तु दूध देनेवाली

गायोंको हरा चारा खिलाना सर्वथा उचित है। ऐसा माना जाता है कि हरा चारा खिलानेसे दूध स्वादिष्ट होता है। बरसातके दिनोंमें, जब कि हरी घास प्रचुर मात्रामें होती है, ४० से ५० रतल हरे चारेके साथ ८ से १० रतल सूखा चारा मिलाकर आसानीसे खिलाया जा सकता है। हरा चारा प्रति बार २०—२५ रतलके हिसाबसे दिनमें दो बार खिलाना चाहिये। यदि अधिक चारा मिल सके, तो दुहते समय भी कुछ और देना चाहिये। बाकीके समयमें सूखा चारा नाँदमें रक्खा रहना चाहिये। स्थानीय प्रथा एवं चारेकी दुर्लभता एवं सुलभताके अनुसार सूखे और हरे चारेके अनुपातमें परिवर्तन किया जा सकता है। हरे चारेमें कैल्शियम और फॉस्फरसकी कमी होती है; अतः सार पदार्थोंके—जैसे गेहूँ-चावलकी भूसी, मूँगफलीकी खली या इसी प्रकारकी अन्य खली, जो पशुओंके लिये अहितकर न हो तथा जो बाजारमें प्राप्त हो सके—अतिरिक्त परिमाणद्वारा उनकी पूर्ति कर देनी चाहिये। छुटाये हुए पशुओंको बिनौले नहीं देने चाहिये। दूध देनेवाले तथा छुटाये हुए पशुओंको दले हुए बिनौले एवं कुलथी आधे औंस नमकके साथ खिलानी चाहिये।

इन सब चीजोंको मिलाकर एक मिश्रण तैयार किया जाता है, जो बहुधा दुहते समय पशुओंको खिलाया जाता है। पशुओंके कद तथा उनके दुग्धोत्पादनके परिमाणके अनुसार चारेकी मात्रा घटायी-बढ़ायी जाती रहती है। सामान्यतः, १० रतल दूध देनेवाले पशुको ४ रतल उपर्युक्त मिश्रण देना चाहिये। लेकिन किसी भी दशामें, चाहे पशु कितना भी दूध दे, उसे उपर्युक्त मिश्रण ३ रतलसे कम तो देना ही नहीं चाहिये। बरसातको छोड़कर शेष सभी महीनोंमें सेंधा नमक नाँदमें बराबर रक्खा रहना चाहिये। गाभिन पशुओंको दला हुआ तथा न पच सकने योग्य दाना—बिनौला, कुलथी आदि नहीं देना चाहिये। उन्हें तो हल्का, स्वादिष्ट एवं पुष्टिकर दाना देना चाहिये, जो परिमाणमें ३ रतलसे अधिक कमी नहीं होना चाहिये। तथा सामान्यतः उसमें चोकर तथा किसी तिलहनकी खली और हरे एवं सूखे चारेका मिश्रण होना चाहिये। इस प्रकारका चारा प्रसवपूर्वके २-३ महीनोंमें अथवा जिन दिनों गर्भ काफी बढ़ जाता है, देना चाहिये। नये ब्याये हुए पशुओंको २ रतल बाजरा और दो-दो मुट्ठी अलीव, शेपू एवं मेथीको अच्छी प्रकार पकाकर तथा ५ रतल चोकर १ रतल गुड़ एवं १ नारियलके साथ मिलाकर खिलाना चाहिये। कुछ स्वादिष्ट हरे चारोंके अतिरिक्त अन्य कोई चीज पंद्रह दिनोंतक नहीं देनी चाहिये। इस अवधिके बाद धीरे-धीरे उसे सामान्य भोजनपर ले आना चाहिये।

बछड़ोंको अपने शरीरके वजनका $\frac{1}{10}$ या ३ रतल दूध पिलाना चाहिये अथवा माके स्तन पीनेके लिये छोड़ देना चाहिये। यदि उन्हें माका थन छुड़ा दिया गया हो तो पिलाते समय दूधका तापमान १०१° होना चाहिये तथा ५ महीनेतक प्रतिसप्ताह १ औंस रेंड़ीका तेल देना चाहिये। चार-छः सप्ताहके बादसे बछड़ेको केवल निर्धृत दूधपर रखना चाहिये। प्राप्य होनेपर तो निर्धृत दूध दिया जाय नहीं तो, स्वादिष्ट हरा चारा एवं किसी भी अनाजका चोकर दें।

गायोंके भोजनके सम्बन्धमें विचार करनेके पश्चात् अब हम उसके रहनेके स्थानके विषयमें विचार करेंगे। आजकल तो बम्बई-जैसे बड़े शहरोंमें मनुष्योंके रहनेके लिये भी मकान आदिकी समस्या बहुत जटिल हो गयी है; फिर हमारी गायें तो इस कठिनाईका पिछले कई वर्षोंसे सामना कर रही हैं। प्रायः वे किसी पेड़की छायामें या मकानके पास बाँध दी जाती हैं। ऐसी अवस्थामें उन्हें गरमीके दिनोंकी झुलसानेवाली धूप तथा सर्दीमें शरीरको बेध डालनेवाली ठंडी हवाको सहन करना पड़ता है। यद्यपि उन्हें हमारी तरह आधुनिक साज-सामानसे सुसज्जित बँगलों या महलोंकी आवश्यकता नहीं है, तथापि इन मूक पशुओंके लिये अच्छी प्रकार बनाया हुआ एक छप्पर तो होना ही चाहिये। गायों तथा दूसरे पालतू पशुओंके लिये एक छप्पर खास तौरसे निर्धारित रहना चाहिये। यह किसानके अपने घरसे कुछ दूरपर होना चाहिये तथा ऐसा बना हुआ होना चाहिये कि प्रत्येक प्रकारकी हवा, गरमी और सर्दीसे पशुओंकी पूर्ण रक्षा कर सके। हवाके अच्छी तरह आने-जानेके लिये एक दरवाजे तथा रोशनदानोंके अतिरिक्त छप्पर सब ओरसे बंद होना चाहिये। यह आवश्यक नहीं है कि छप्पर ईंट-चूनेका बनाया जाय, टीनोंका बना हुआ एक साधारण छप्पर काफी है। फर्शको खूब कुटाई करके उसे समतल बना देना चाहिये तथा उसपर चिकनी मिट्टी पोत देनी चाहिये। गोमूत्रके लिये एक नाली तथा उससे मिला हुआ एक गड्ढा बना देना चाहिये, जिससे नालीमेंसे होकर मूत्र गड्ढेमें इकट्ठा हो जाय। इससे गोमूत्रके रूपमें उत्तम खाद इकट्ठी करनेमें सहायता मिलती है। गड्ढेको एक सप्ताह या १५ दिनसे साफ करते रहना चाहिये।

कभी-कभी गायोंको कुछ रोग हो जाते हैं, जो यदि उचित ध्यान दिया जाय तो ठीक हो सकते हैं। परन्तु उपेक्षा करनेसे या तो हमें स्वयं पशुसे ही हाथ धोना पड़ता है या उसका कोई अङ्ग बेकार हो जाता है। यदि पशुके चलनेमें कोई दोष

मालूम दे या वह ठीक ढंगसे चारा आदि न खाये, जैसा कि बुखारमें बहुधा होता है, तो उसे तुरंत पशु-चिकित्सालयमें ले जाना चाहिये तथा उसकी चिकित्सा करानी चाहिये। जब गाय गाभिन हो तो उसे १५ दिनसे या कम-से-कम महीनेमें एक बार पशुचिकित्सकको अवश्य दिखाते रहना चाहिये।

बढ़ती हुई जन-संख्या एवं अन्नकी अधिक माँगके कारण घासवाले मैदानोंका बहुत ह्रास हो रहा है। इसका जितना जल्दी हो सके, प्रबन्ध होना चाहिये। गाँवके पासमें एक गोचरभूमि होनी चाहिये, जो केवल गायोंके लिये हो तथा जिसमें भेड़-बकरी आदिको न चरने दिया जाय। भूमिको समतल बनाकर उसके चारों ओर इस प्रकार बाड़ लगा देनी चाहिये कि उसके ३-४ टुकड़े हो जायँ। प्रत्येक टुकड़ेमें गायोंको वर्षके कुछ ही महीनोंतक चरने दिया जाय। घास उत्तम कोटिकी होनी चाहिये तथा प्रति तीन या चार वर्षके बाद उसे पुनः बोना चाहिये। इस भूमिके सारे काँटे, झाड़ियाँ एवं पेड़ काट डालने चाहिये।

गोवंशकी उन्नतिका अन्तिम एवं सर्वोत्तम साधन है—नस्लका सुधार। गायोंसे वैज्ञानिक नियमोंके आधारपर सन्तानोत्पत्ति करवानी चाहिये। जाने हुए कुलकी उत्तम गायों एवं साँड़ोंको चुनकर उन्हींका संयोग करवाना चाहिये। अच्छी नस्ल पैदा करनेके कई ढंग हैं, जिनमेंसे कुछ ये हैं—जिस नस्लकी गाय हो, उसका उसी नस्लके उत्तम साँड़से संयोग कराया जाय। इस प्रणालीमें एक ही प्रकारके रक्तका संयोग होता है। उचित ढंगसे पशुओंको छाँटकर उपर्युक्त रीतिसे उनका संयोग करानेसे नस्ल-सुधार शीघ्र-से-शीघ्र एवं सर्वापेक्षा निश्चितरूपसे होता है।

यदि उपर्युक्त प्रक्रियाएँ संभव न हों तो हम विभिन्न वंशोंके पशुओंका सांकर्य तो बड़ी आसानीसे करा सकते हैं। इस प्रणालीमें एक जातिकी छँटी हुई गायका दूसरी जातिके उत्तम साँड़से संयोग कराया जाता है। इस प्रक्रियासे दो जातियोंके दो उत्तम गुणोंका एक ही जातिमें समावेश हो जाता है। यदि सिंधी एवं काँकरेज जातिके पशुओंका संयोग कराया जाय तो उससे जो संतान उत्पन्न होगी, उसमें सिंधी जातिका दुधारूपन तथा काँकरेज जातिकी वहनशक्ति दोनों वर्तमान रहेंगी। यदि संयोग-वश परिणाम विपरीत निकले तो उस पशुकी आगे परीक्षाके कार्यमें उपेक्षा कर देनी चाहिये। इस प्रणालीका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण खच्चर है, जो घोड़े एवं गधेके संयोगसे उत्पन्न होता है।

अन्तिम प्रक्रिया है—निम्न जातिकी गायका उच्च जातिके साँड़से संयोग कराना। आजकल बम्बई-सरकार पुरस्कार-प्राप्त साँड़ वितरण करके इस प्रथाका श्रीगणेश कर रही है। इस प्रथाका सूत्रपात इस सिद्धान्तके आधारपर हुआ है कि बछड़ेमें ५० प्रतिशत बापके तथा ५० प्रतिशत माके गुण आते हैं। इस प्रणालीमें एक उत्तम वंशका श्रेष्ठ साँड़ छाँट लिया जाता है और जिन गायोंकी नस्ल सुधारनी हो उन्हें उससे बर्धाया जाता है। परीक्षा करनेपर ऐसा ज्ञात हुआ है कि आनेवाली प्रत्येक पीढ़ीमें साँड़के उत्तम गुण उत्तरोत्तर अधिक परिमाणमें उतरते रहते हैं। निम्नलिखित तालिकासे ज्ञात हो जायगा कि किस प्रकार (एक पीढ़ीके बाद दूसरी पीढ़ीमें) गायके गुणोंके ह्रासके साथ-साथ साँड़का रक्त, जो उत्तम कोटिका है, बढ़ता जाता है—

पीढ़ीकी संख्या	रक्तकी शुद्धताका प्रतिशत अंश	सुधारका प्रतिशत परिणाम
१	५०	५०
२	७५	२५
३	८७.५	१२.५
४	९३.७५	६.२५
५	९६.८७	३.१३
६	९८.४४	१.५६
७	९९.२२	०.७८

आठवीं या नवीं पीढ़ीकी संतानमें ठीक वही गुण उतर आयेंगे, जो साँड़में थे। जब इस ढंगको अपनाया जाय तो साँड़का चुनाव बड़ी सावधानीसे करना चाहिये। इस प्रणालीसे यह सिद्ध हो जाता है कि संतानमें ५० प्रतिशत गुण अपने पिताके आते हैं।

यहाँतक हमने संक्षेपमें अपनी गायोंके सुधारके कई साधन बताये हैं। इनके अतिरिक्त और भी बहुत-से साधन हैं, परन्तु वे इस छोटे-से निबन्धकी सीमाके बाहर हैं। गायके महत्त्वको हमने इतिहाससे भी सीखा है एवं अनुभव किया है। ग्रीस और रोमकी सभ्यताएँ तभी अपने उच्चतम शिखरपर थीं, जब कि वहाँ गायोंका बहुत ध्यान रक्खा जाता था। हमारे देशमें भी वसिष्ठजीकी कामधेनुका विश्वामित्रजीपर क्रोध करना सर्वविदित है। महान् सम्राट् शिवाजीने प्रथम गायोंकी रक्षा करके ही भारतवर्षको मुगलोंके हाथसे उबारा था। आजकल भी श्रीवालचन्द-हीराचन्द-जैसे महान् मार्गप्रदर्शकोंने, उद्योगोंके भिन्न-भिन्न क्षेत्रोंकी उन्नतिके साथ गायोंकी उन्नतिका भी बीड़ा उठाया है तथा विभिन्न स्थानोंपर नयी पशुशालाएँ स्थापित की हैं। इन उदाहरणोंसे भी हम जान सकते हैं कि व्यक्ति, राष्ट्र अथवा सभ्यताकी उन्नतिका गायके साथ कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है।

भारतमें गो-संवर्धन कैसे हो ?

(लेखक—पंजाबके एक नस्ल-सुधारके अनुभवी महानुभाव)

पशुओंके सम्बन्धमें जो आँकड़े प्राप्त हैं, उनसे मालूम होता है कि संसारके कुल पशुओंकी संख्या ६९ करोड़ है, जिनमेंसे २१ करोड़ ५० लाख पालतू पशु अकेले हिंदुस्थानमें हैं। हिंदुस्थान ही पशुओंके सम्बन्धमें सबसे बड़ा देश है। हिंदुस्थानमें पशुओंके सम्बन्धका जो व्यवसाय होता है, उससे उत्पन्न होनेवाले पदार्थोंमें दूध और दूधके पदार्थ लगभग ३ अरब रुपयेकी कीमतके होते हैं। ब्रिटिश-साम्राज्यमें चमड़ेकी सबसे अधिक रफ्तनी हिंदुस्थानसे होती है। लगभग ४० करोड़ रुपयोंका चमड़ा हर साल यहाँसे बाहर भेजा जाता है। गोबर आदिकी जो खाद खेतोंकी उपज बढ़ानेके लिये खेतोंमें डाली जाती है, उसकी कीमतका ठीक अंदाजा करना बहुत कठिन है; फिर भी मोटे तौरपर यह कहा जा सकता है कि यह खाद लगभग ३ अरब रुपयोंकी होती होगी। फिर ये पशु खेतीका तथा अन्य विविध प्रकारका जो और काम करते हैं, उसकी कीमत ५ अरब रुपयोंके लगभग मानी जा सकती है।

पशुओंके व्यवसायका यह चित्र सामने रखनेसे पता लगता है कि हिंदुस्थान पशु-धनसे निसर्गतः कितना समृद्ध है और इस व्यवसायमें लगे हुए लोगोंको इस व्यवसायके किसी भी अङ्गकी किञ्चित् वृद्धिसे ही राष्ट्रका धन बढ़ानेका कितना महान् अवसर प्राप्त है। हिंदुस्थानमें अभी पशुओंकी अवस्था संतोषजनक नहीं है, इससे कार्य करनेकी गुंजाइश और भी सुस्पष्ट हो जाती है।

हमारे यहाँके पशुओंकी अभी जो दुरवस्था है और उससे तत्सम्बन्धी व्यवसायोंकी भी जो दुर्गति हो रही है, उसके अनेक कारण हैं। मुख्य-मुख्य कारण हैं—जनतामें शिक्षाका अभाव, हमारा आर्थिक ढाँचा और प्रतिकूल जलवायु। इनके साथ ही एक कारण यह भी है कि हिंदुस्थान बहुत बड़ा देश है, जो भिन्न-भिन्न प्रकारके भू-भागोंमें बँटा हुआ है, और आबादी भी बहुत घनी है; इससे सुधारका कोई भी सुसंघटित प्रयत्न करना अन्य देशोंकी अपेक्षा यहाँ अधिक कठिन होता है। डेन्मार्क, हॉलैंड एवं ग्रेटब्रिटेन-जैसे छोटे-छोटे देशोंने (जिनकी आबादी भी कम है) पशु-व्यवसाय और दुग्ध-व्यवसायमें जो विशेष उन्नति की, उसका कारण यही है कि साधनोंकी विशेषता न होनेपर भी उनका संघटन अच्छा था। ये और ऐसे ही अन्य देश इस विषयमें निश्चय ही बहुत उन्नतिशील हैं। हिंदुस्थानमें साधन तो बहुत हैं, पर संघटन कुछ नहीं। पशु-सुधारके मार्गमें हमारे सामने बहुत-सी व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। देश बहुत बड़ा है, मनुष्य-संख्या और पशु-संख्या दोनों ही बहुत बड़ी हैं, शिक्षाका अभाव है, भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके लोगोंकी परखनेकी विभिन्न रीतियाँ और भिन्न-भिन्न आवश्यकताएँ हैं, पशुओंके नीरोग संवर्द्धनमें बाधक जलवायुके अनेक अनिष्ट भेद-प्रभेद हैं, अन्नादिकी कमी है, छोटे-छोटे खेत हैं, जिनके कारण पशु-पालन तथा मिश्र खेतीकी कोई सुविधा नहीं रहती, मालके लिये बाजारकी सुविधा नहीं मिलती; इन तथा ऐसे ही अन्य कारणोंसे इस व्यवसायकी कुछ ठोस उन्नति होनी असम्भवप्राय हो गयी है।

इससे यह स्पष्ट है कि हिंदुस्थानके पशुओंके वास्तविक सुधारका कोई प्रयत्न करना हो तो उसके लिये अभीका सारा ढाँचा ही बदल देना होगा। उदाहरणार्थ, नस्लके सुधारका प्रयत्न ठीक ढंगसे करना होगा। इस विषयके जो विवरण प्राप्त हैं, उनसे यह मालूम होता है कि हिंदुस्थानकी गौओंके लिये अभी जितने साँड़ोंका होना जरूरी है, वर्तमान साँड़ोंकी संख्या उस संख्याका एक शतांश ही बैठती है। यह भी निश्चितरूपसे नहीं कहा जा सकता कि ये सभी साँड़ अच्छे हैं। नस्लके सम्बन्धमें हिंदुस्थानके सामने जो काम है, वह है अच्छे नस्लकी गौ और अच्छे साँड़ अधिक-से-अधिक संख्यामें और शीघ्र-से-शीघ्र पैदा करना। और दूसरा काम है अभी जो थोड़े-से साँड़ हैं उनका कृत्रिम उपायसे साँड़का शुक्र लेकर गौमें उसका आधान करनेकी रीतिके द्वारा, अधिक-से-अधिक उपयोग करना।

नस्लके सुधारकी किसी भी स्कीमको चलानेके लिये उन साँड़ोंको बधिया करना आवश्यक है, जो अच्छी वंशवृद्धिके कामलायक नहीं हैं। यह काम सरकारी नियन्त्रणमें बहुत व्यापक और सुसंघटित रूपसे होना चाहिये, तभी इसमें सफलता मिल सकती है।

पशुओंका प्रबन्ध भी विशेषतः भारतके कठोर जलवायुमें, उतने ही महत्त्वका विषय है। यह बात प्रसिद्ध है कि भारतके अधिकांश पशुओंको—चाहे वे दूध देनेवाले हों या वाहनोपयोगी—बहुत कम खूराक दी जाती है और जो कुछ

उन्हें खानेको दिया जाता है, उससे उन्हें पोषण बहुत कम मिलता है। अतः हमारे पशुओंकी वृद्धिकी गति मंद होती है, उन्हें जवानी देरसे आती है और दूध देनेवाले पशुओंके बिसुकनेका काल लंबा होता है। अतः पशुओंको दी जानेवाली घास तथा विशेष सत्त्वयुक्त आहारोंके परिमाण एवं प्रकारमें उन्नति करनेका प्रयत्न होना चाहिये। गोचर-भूमियोंमें पर्याप्त सुधार एवं विस्तारकी आवश्यकता है और उचित व्यवस्थाके साथ उन्हें पशुओंके लिये खुला छोड़ देना चाहिये। हमारे पशुओंको दिये जानेवाले आहारोंमें प्रोटीनोंकी विशेष कमी बतायी जाती है। अतः आजकल दिये जानेवाले खाद्योंके स्थानमें प्रोटीनयुक्त बढ़िया आहार दिये जाने चाहिये। व्यवस्थाके सीगेमें हमें अपने पशुओंके लिये उपयुक्त वासगृहोंका भी प्रबन्ध करना होगा, जो उन्हें गर्मी तथा सर्दीके कष्टोंसे त्राण दे सके।

हमारे पशुओंके नस्ल-सुधारके प्रयत्नके साथ-साथ उनके शरीरकी रचना तथा उपयोगितामें वैषम्यकी सम्भावना है। अपने पशुओंके सुधारके लिये ऊँची जातिके पशुओंके साथ उनका संयोग करानेमें हमें इस बातका ध्यान रखना होगा; साथ ही उनकी भारतमें फैले हुए संक्रामक एवं अन्य प्रकारके रोगोंसे भी रक्षा करनी होगी।

ऊपर संकेत किये हुए उपायोंसे भारतीय पशुओंकी उन्नतिका कोई सहज मार्ग नहीं मिल जाता। जैसा कि ऊपर बताया गया है, यह निर्विवाद है कि उन्नतिकी योजनाके अन्तर्गत उपाय चाहे कैसे ही हों, वे सफल तभी हो सकते हैं, जब कि उनके पीछे एक सुदृढ़ आर्थिक भित्ति हो और उत्तम संघटन हो। साथ ही ये योजनाएँ ऐसी होनी चाहिये, जो भारतके विभिन्न भागोंकी स्थानीय परिस्थितिके अनुकूल हों।

इस विषयमें और एक बात बतानी आवश्यक है। भारतीय पशु-व्यवसायमें उन्नति एवं विस्तारकी जितनी सम्भावनाएँ हैं, उनके साथ-साथ भारतको विशेषज्ञ एवं साधारण दोनों प्रकारके कार्यकर्ताओंकी भी आवश्यकता है। इस क्षेत्रमें हमारी खास समस्याएँ हैं। इनके साथ अपने-अपने इलाकोंमें उपयुक्त विशेषज्ञ कार्यकर्त्ताओंको मुकाबला करना होगा। अन्य देशोंमें वर्षोंके प्रायोगिक अनुभवोंसे आविष्कार किये हुए उपायोंको भारतमें आँख मूँदकर नहीं बरता जा सकता। अधिक-से-अधिक वे हमारे लिये मार्ग-दर्शकका काम दे सकते हैं।

गोरक्षाके लिये भगवान्से प्रार्थना करो

(लेखक—भक्त श्रीरामशरणदासजी)

गोरक्षा प्रत्येक भारतीयका धर्म है। गौ माता है और सबकी माता है। उसकी रक्षा करना सभीका परम कर्तव्य है। चाहे भूखों मरना पड़े, परन्तु कसाईके हाथ गौ कभी नहीं बेचनी चाहिये। याद रखिये—गोमाता ही हमें इस लोक और परलोकमें पार लगानेवाली है। शास्त्रानुसार आचरण करते हुए, किसीके भी बहकावेमें न आकर हमें गोरक्षक बनना चाहिये। गोरक्षाके लिये, धर्मरक्षाके लिये करुणावरुणालय प्रभुसे प्रार्थना करनी चाहिये। वे प्रभु ही हम दीनोंकी सुधि लेंगे। राक्षसोंके ध्वंसके लिये हमारे भगवान् शङ्करजीके हाथमें त्रिशूल है, भगवान् श्रीकृष्णके हाथमें सुदर्शन है, भगवान् श्रीरामके हाथमें धनुष है, भगवती श्रीदुर्गाजीके हाथोंमें कृपाण है, श्रीपरशुरामजीके हाथमें फरसा है और महावीर श्रीहनुमान्जीके हाथमें गदा है। यदि हम सबने मिलकर सच्चे हृदयसे भगवान्से करुण प्रार्थना की होती तो अबतक राक्षसोंका सफाया हो चुका होता। अब भी हमें श्रद्धापूर्वक कातर-प्रार्थना करनी चाहिये—गायोंकी रक्षा हो जायगी, देश स्वतन्त्र होगा, धर्मकी रक्षा होगी, देश ऋषि-मुनियोंकी खान बन जायगा। पवित्र यज्ञ-धूमसे आकाश व्याप्त हो जायगा और सनातनधर्मका झंडा पुनः पहलेकी भाँति सर्वत्र फहरायेगा। सब लोग रोकर भगवान्से प्रार्थना कीजिये। हे प्रभो! हमारे धर्मकी, गायोंकी और देशकी रक्षा करो। राक्षसी भावोंका विनाश करो और दीनजनोंको अपनी सुखद शरण प्रदान करके कृतार्थ करो। गोपालकृष्ण! शीघ्र पुकार सुनो। **टेर सुनो व्रजराज-दुलारे।**

शहरोंके अत्याचार

शहरोंमें पशुओंको बुरी तरह रक्खा जाता है, यह तो सब जानते ही हैं; उनके प्रति बहुत बड़ी-बड़ी निर्दयताका व्यवहार भी किया जाता है। इसके कुछ नमूने नीचे लिखे वक्तव्योंमें देखिये, और सोचिये इन्हें तुरंत बंद करनेके लिये क्या किया जा सकता है। यह भी याद रखिये कि इन जुल्म करनेवालोंमें अधिकांश हिंदू ही हैं।

फूँका देनेकी अति क्रूर प्रथा

१. अखिल-भारतीय आरोग्य-रक्षण-सभा (All India Sanitary Conference) लखनऊके तीसरे अधिवेशनके सामने-व्याख्यान देते हुए, लाहौरके हेल्थ अफसर डा० नेवेल (Dr. Newell) ने कहा था—'बहुत-सी गंदी क्रियाओंका प्रचार है, और मलिनतम क्रियाओंमेंसे एक यह है कि पशुकी पूँछको उसके गुदाद्वारमें इस विचारसे घुसेड़ दिया जाता है कि इससे दुग्ध-ग्रन्थिपर दबाव पड़ेगा और अधिक मात्रामें दूध स्रवित होगा। मैंने एक युवकको इस प्रकार गुदामें पूँछ डालकर, बिना हाथ धोये ही दुहनेके लिये प्रस्तुत होते देखा है।'

२. कलकत्तेकी 'पशुओंके प्रति क्रूरता-निवारण-सभा' (Society for the Prevention of Cruelty to Animals) के डिप्टी-सुपरिंटेंडेंट बाबू एम्० सी० मित्रने कलकत्तेके ग्वालोंद्वारा की जानेवाली फूँका क्रियाके विषयमें लिखा था—'जैसा इस शब्दसे ही प्रकट होता है, फूँकाका अर्थ है—गायके योनि-मार्गमें हवा फूँकना या बाँसकी नलीद्वारा उसमें नमक मिला हुआ पानी छोड़ना इसीसे मिलती-जुलती क्रिया भैंसोंके साथ भी की जाती है। उसकी योनिमें पशुकी पूँछ, मनुष्य अपना हाथ, अथवा चार इंच मोटी और अठारह इंच लंबी पुआलकी एक कूँची डाल देते हैं। दोनों ही क्रियाएँ न्यूनाधिक रूपमें क्रूरतापूर्ण और पशुको बन्ध्या बना देनेवाली हैं। फूँका देते समय पशुकी दशा देखनेपर किसीको जरा भी संदेह नहीं रह जाता कि इससे पशुको बड़ी ही यन्त्रणा होती है। १. पशु बड़े करुण स्वरसे कराहने लगता है, २. उसकी पीठ टेढ़ी हो जाती है, ३. आँखें बाहर निकल आती हैं मानो बड़ी पीड़ा हो रही हो, ४. उसे कँपकँपी होने लगती है, ५. ऐसा पशु अपनी पूँछके पास किसीके आते ही भड़क उठता है।

बछड़ेकी अनुपस्थितिमें (क्योंकि बछड़े तो छोटी ही अवस्थामें नाममात्रकी कीमतपर कसाइयोंको बेच दिये जाते हैं) गायसे दूध निकालने और जो दूध वह अपने बछड़ेके लिये स्वाभाविक रूपसे रोक लेती है, उसको भी निकाल लेनेके लिये अक्सर फूँका दिया जाता है। कई बार फूँका देनेसे कुछ समयके लिये दूधकी मात्रा कुछ बढ़ भी जाती है।

कलकत्ते और उसके पास-पड़ोसमें करीब ३०० पशु-बाड़े हैं, जिनमें लगभग १०,००० गायें रहती हैं। इनमेंसे नित्य ५,००० गायोंको फूँकाका शिकार होना पड़ता है।

बछड़ोंकी उपेक्षा और उन्हें कलपा-कलपाकर मारना

१. श्रीयुत डब्लू रीव्ज (W. Reeves) जरनल ऑफ डेयरिंग ऐंड डेयरी-फार्मिंग इन इंडिया'की, जिसका प्रकाशन अब बंद हो गया है, संख्या ५ भाग ४ में प्रकाशित अपने एक लेखमें लिखते हैं—'पालन-पोषणके खर्चसे छुट्टी पानेके लिये बछड़ोंका विनाश करना एक अत्यन्त पैशाचिक कर्म है, जिसको देशके अधिकांश ग्वाले करते हैं। बम्बईमें सार्वजनिक गोशालाओंसे मरे हुए बछड़ोंको बैलगाड़ियोंमें लाद-लादकर दूर हटाया जाता है, और यह वहाँका नित्यका दृश्य है। बहुमूल्य पशुओंका इस प्रकार स्वच्छन्द विनाश भारतके लिये खतरेकी चीज है तथा उसके लिये एक कलङ्कस्वरूप है। इस प्रकारका कार्य संसारके किसी भी सभ्य देशमें सहन नहीं किया जा सकता।'

२. रॉयल ऐग्रीकल्चरल सोसाइटी, इंग्लैंडके परामर्शदाता केमिष्ट भारतके प्रसिद्ध यात्री डा० वोएल्कर (Dr. Voelcker) लिखते हैं—'गुजरातमें बछड़ोंको दूधसे वञ्चित रखकर भूखों मारा जाता है। अन्य प्रदेशोंमें उनको हिंसक पशुओंका शिकार होनेके लिये जंगलोंमें छोड़ दिया जाता है। बंगालमें उनको बहुधा जंगलोंमें बाँध दिया जाता है और उन्हें किसी प्रकारका भोजन नहीं दिया जाता; वे तो भूखों मरनेके लिये अथवा किसी हिंसक पशुकी क्षुधा-शान्तिके लिये ही छोड़ दिये जाते हैं।'

पड़वोंपर अत्याचार

श्रीयुत ए० कैरुथ अपनी पुस्तक 'मद्रासके डेयरी व्यवसायकी जाँच' (Survey of the Madras-

Dairy Trade) में लिखते हैं—'भैंसके पड़वे बेकारकी झंझट समझे जाते हैं और उनको वस्तुतः भूखों मार दिया जाता है। चार-पाँच महीनेके पड़वोंका शरीर उनके जन्मकालके शरीरसे बहुत ही कम बड़ा होता है अर्थात् चार-पाँच महीनेकी अवधिमें उनकी कोई खास वृद्धि नहीं होती, वे नवजात पड़वेके समान ही होते हैं। इस नगरमें निःसन्देह पड़वेकी ही सब पशुओंसे अधिक उपेक्षा की जाती है। यह सर्वविदित है कि पड़वे धूप सहन नहीं कर सकते, पर फिर भी वे प्रायः गोशालाके सबसे अधिक धूपवाले स्थानमें बाँधे जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जवान पड़वोंको मार डालनेके लिये इन उपायोंको काममें लाना दुग्ध-व्यवसायियोंका एक नियम ही हो गया है।'

गोज्ञानकोशका महत्त्वपूर्ण कार्य

गोजीवन श्रीचौंडेजी महाराजकी श्रीगोवर्धन-संस्था चालीस सालसे बड़े आदर्शरूपमें गोरक्षण, गोपालन और गो-संवर्धनका महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। श्रीचौंडेजी महाराज संत हैं और उन्होंने भगवान्का आश्रय लेकर जो कुछ कार्य किया है, वह अपूर्व है। उनकी गोवर्धन-संस्थाने मुख्यरूपसे गोप्राण-दानका कार्य किया। इस कार्यमें उसने नाना प्रकारकी योजनाएँ कीं, प्रचार किया, गव्यपदार्थोंसे नयी-नयी चीजें बनायीं, अपने सौजन्यसे मुसल्मानोंके भी चित्तको आकर्षित किया, गोरक्षण-सम्बन्धी संस्थाओंके संघटनका प्रयास किया, कई जगह उपयोगी गोशालाओंकी स्थापना की और गोमहिमाका प्रसार किया। ये सब होते हुए भी एक चीजकी कमी श्रीचौंडेजी महाराजको खटक रही थी, वह थी गो-साहित्यका अभाव। इसलिये उन्होंने एक बृहत् 'गोज्ञानकोश' निर्माणकी योजना की।

भगवान्की कृपासे उसका कार्य-सम्पादन हो रहा है। उसमें पौर्वात्य और पाश्चात्य लोगोंने प्राचीन तथा अर्वाचीन कालमें पारमार्थिक और आर्थिक दृष्टिकोणसे गोधनका कैसे संरक्षण और संवर्धन किया, अब कैसे कर रहे हैं, क्या करना चाहिये, गोचर-भूमिका क्षेत्र कैसे बढ़ाया जाय, वैज्ञानिक दृष्टिसे गौ और गोदुग्धका क्या महत्त्व है, गौ और गौके शरीरसे उत्पन्न पदार्थोंका कैसा सदुपयोग और दुरुपयोग हुआ तथा हो रहा है—इन सारी बातोंकी जानकारी वेद, पुराण, इतिहास, अन्यान्य भारतीय और पश्चिमीय साहित्य आदिसे संगृहीत करके प्रकाशित की जायगी। लगभग ५००० पृष्ठ होंगे। इसके तीन खण्ड होंगे—प्राचीन, मध्य और अर्वाचीन। तीनों खण्डोंका सम्पादन हो रहा है। इस कार्यके लिये 'गोज्ञानकोश-मण्डल' की पृथक् स्थापना हो चुकी है। देशके प्रायः सभी आचार्योंने और नेताओंने आशीर्वाद दिया है। आशा है यह महान् कार्य शीघ्र ही सुसम्पन्न होगा। 'कल्याण'के इस 'गो-अङ्क'में भी कोशकी कितनी ही सामग्रीका उपयोग हुआ है। इसके लिये हमलोग 'कोश-मण्डल' के कृतज्ञ हैं। कोशके सम्बन्धमें विशेष जानकारी प्राप्त करनी हो तो 'गोज्ञान-कोश-मण्डल', गोवर्धन-संस्था, पोष्ट वाई (Wai), (पूना), से पत्र-व्यवहार करना चाहिये।

तीर्थोंमें भीषण गोहत्या

'गोरक्षा-सभा' इन्दौरके उपदेशक श्रीभगवतीशरणजी त्रिपाठी लिखते हैं कि उन्होंने भारतसम्राट्, स्टेट सेक्रेटरी तथा वाइसराय महोदयके पास आवेदनपत्र भेजकर विजयोत्सवके उपलक्ष्यमें गोहत्या कतई बंद करनेकी प्रार्थना की है; उसमें हिंदुओंके तीर्थोंमें जो गोवध होता है, उसे तुरंत रोकनेके लिये विनती की गयी है। वे लिखते हैं—'श्रीमथुरामें ४१९५, अयोध्यामें ३०१०, प्रयागराज (इलाहाबाद) में १४९११, कटक (जगन्नाथपुरीके समीप)में ६०००, गयामें १५०७३, हजारीबाग (जैनियोंके तीर्थ) में ६४९११ और नासिक (पञ्चवटी) में ८०९० गायें काटी जाती हैं।' इनके ये आँकड़े कहाँतक ठीक हैं, इसका पूरा पता नहीं है; परन्तु तीर्थोंमें जहाँ भी गोहत्या होती है, वहीं हिंदूधर्मपर सचमुच भीषण आघात होता है। सरकारकी तटस्थता-नीतिके अनुसार भी हिंदूतीर्थोंमें 'गोवध' का निषेध होना ही चाहिये। हिंदूमात्रका कर्तव्य है कि तीर्थोंमें गोहत्या बंद करानेके लिये वे हर तरहकी पूरी चेष्टा करें।

गोरससे बननेवाले कुछ पदार्थ

(लेखिका—सौ० प्रभावती राजाराम ठाकूर)

१. पेउस (या पीयूष)-गायके ब्यानेपर पहले दो दिनके दूधको पेउस कहते हैं । दो सेर पेउसमें दो सेर शुद्ध दूध, एक सेर चीनी, दो तोला छोटी इलायचीकी बुकनी और आधा तोला केशर मिलाकर चम्मचसे अच्छी तरह चला देना चाहिये । आगेकी कृति सब जानते हैं ।

२. मलाई—चार सेर दूधको चूल्हेपर चढ़ा देना चाहिये । गरम होकर जब उसपर गाढ़ी मलाई जम जाय, तब उसे उतारकर थालीमें रख लेना चाहिये । उसमें आधा सेर दूध, एक पाव चीनी, आधा तोला इलायची, दुअन्नीभर केशर, दस तोला बिहीदाना और दस तोला बादामकी मींगी मिलाकर करछुलसे घोट देना चाहिये ।

३. बसौंदी—चार सेर दूधको कलईके बर्तनमें आगपर चढ़ाकर इस प्रकार आधा जला देना चाहिये, जिससे मलाई न पड़े । फिर उसमें आध सेर चीनी, १ तोला इलायची, पाव तोला केशर और इच्छानुसार बादाम, पिस्ता, बिहीदाना आदि मिलाकर उसे ठंढा कर देना चाहिये ।

४. खीर—चार सेर दूध कलईके बरतनमें रखकर चूल्हे-पर औटावे । जब दूध तीन सेर रह जाय, तब पावभर महीन चावलको घीमें भूँजकर उसका ढीला भात बनावे और उस दूधमें मिला दे । ऊपरसे १ सेर चीनी, आध पाव बादाम, एक पाव बिहीदाना, १ तोला इलायची और पाव तोला केशर भी उसमें छोड़ दे ।

५. सेवईंकी खीर—एक पाव सेवईंको ४ तोला घीमें भूँज ले और सवा सेर दूधको औटाकर एक सेर कर ले । दूधको औटाते समय उसमें भूँजी हुई सेवईं मिला दे । फिर १ पाव चीनी, पाव तोला इलायची और दुअन्नीभर केशर छोड़कर खीरको तपावे और करछुलसे चलावे । फेनी आदि-की खीर भी इसी तरह बनती है ।

६. मलाईकी पूड़ी—कलईके बर्तनमें ५ सेर दूधको मंदी आँचमें तपावे । जब मोटी साढ़ी आ जाय, तब युक्तिसे उसे थालमें उल्टी उतार ले और उसपर आधा सेर चीनी और आधा तोला इलायची पीसकर फैला दे । फिर इच्छानुसार मोड़ ले या चाकूसे काट ले ।

७. पेड़ा—चार सेर दूधको औटाकर एक सेर बना ले । उसमें एक सेर चीनी, एक तोला इलायची और पाव तोला केशर मिलाकर दूधको चूल्हेपर चढ़ाकर इतना घोटे कि, उसकी गोली बन जाय, फिर उसीके पेड़े बना लिये जायँ ।

८. खोवेके लड्डू—एक सेर सूजी पावभर घीमें अच्छी तरह भूँज ले । उसमें एक सेर खोवा मिला दे । एक सेर चीनी-की चाशनी बनाकर उसमें एक तोला इलायची और दुअन्नी-भर केशर मिलाकर उसी चाशनीमें वह सूजी और खोवा डाल दे और लड्डू बना ले ।

९. खोवेके मोदक—एक सेर खोवा, एक सेर चीनी, एक तोला इलायची और पाव तोला केशर मिलाकर लौंदा बना ले । एक सेर सूजीमें दस तोला घी मिलाकर दूधमें सान ले । उसी आटेकी पूड़ी बेलकर समोसेकी तरह उसमें उपर्युक्त थोड़ा-थोड़ा लौंदा भरकर घीमें तल ले ।

१०. खोवेकी रोटी और कचौड़ी—एक सेर सूजी, आध सेर आटा और दस तोला घी मिलाकर पानीमें सान ले और मोदकके लौंदेकी तरह लौंदा बनाकर कचौड़ीकी तरह लौंदा भरकर रोटी बना ले और तवेपर सेंक ले या घीमें तल ले । तली रोटी कचौड़ी बन जायगी ।

११. दूधकी बरफी—एक सेर दूधमें कद्दूकससे छीलकर एक कच्चा नारियल मिला दे । फिर उसमें आध पाव चीनी, पाव तोला केशर और आधा तोला इलायची छोड़कर कलईके बर्तनमें आँचपर चढ़ाकर घोटे । जब मिश्रण गाढ़ा हो जाय, तब घी लगी थालीमें उँड़ेल दे और जम जानेपर बरफीकी बट्टियाँ चाकूसे काट ले ।

१२. मसालेका दूध—दो सेर दूध औटाकर पौने दो सेर जब रह जाय, तब उसमें एक पाव चीनी, आधा तोला इलायची, दुअन्नीभर केशर और बादाम, पिस्ता, चिरौंजी (सब मिलाकर दस तोला) तथा एक जायफल (दूधमें घिस-कर) मिला दे और फिर दूधको गरम कर ठंडा कर ले । दूध उफनकर बह न जाय, इसका ध्यान रहे ।

१३. दहीका मालपूआ—डेढ़ कटोरी दही, एक कटोरी सूजी, आधी कटोरी चीनी और पाँच तोला घीका मिश्रण कर दो घंटे बाद गहरे तवेमें पाँच तोला घी छोड़कर थोड़ा-थोड़ा उक्त मिश्रण ऐसे छोड़े, जिससे वह रोटीकी तरह फैल जाय । उसपर ढक्कन रख देवे । एक ओरसे सिंक जानेपर उलटकर दूसरी ओर सेंक ले । मालपूआ तैयार !

१४. खोवेकी बरफी–चार सेर दूधको औटाकर एक सेर खोवा बना लिया जाय। उसमें आध सेर चीनी, पाव तोला केशर और पावभर बादामके टुकड़े मिलाकर चूल्हेपर चढ़ाया जाय। गाढ़ा हो जानेपर घी लगे थालमें उँड़ेलकर जम जानेपर बरफी काट ली जाय।

१५. श्रीखण्ड–दो सेर दूध गरम कर मलाईसमेत जमा दिया जाय। दूसरे दिन जमीनपर गोहरीकी राख बिछाकर उसपर दोहरा कपड़ा डाल दिया जाय और उसीपर वह दही उँड़ेल दिया जाय, जिससे पानी सोख लिया जायगा और चक्का दही बन जायगा। उसमें एक पाव चीनी मिलाकर तारकी चलनी या मोटे कपड़ेसे छान लिया जाय। केशर, इलायची और जायफल ऊपरसे मिला दिया जाय।

१६. श्रीखण्डकी बरफी–श्रीखण्डकी तरह चक्का दही तैयारकर और उसमें अंदाजसे चीनी मिलाकर कलईके बर्तनमें मंदी आँचपर रखकर घोटना चाहिये। लौंदा हो जानेपर उसमें आधा तोला इलायची, पाव तोला केशर और पावभर मिश्री मिला देनी चाहिये। दस मिनट बाद घी लगे थालमें उँड़ेलकर ठंडा होनेपर चाकूसे बरफी काट लेनी चाहिये।

१७. केक–एक सेर घीमें भूँजी हुई सूजी और एक सेर चीनी एक सेर दहीमें मिलाकर आधे घंटे बाद उसीमें आधा तोला इलायची, पाव तोला केशर और आध पाव बादामकी मींगी मिला दे। फिर कलईकी रकाबीमें आधा इंच मोटा स्तर उस मसालेका लगा दे और दूसरी रकाबीसे उस रकाबीको ढाँककर मंदी आँचपर रख दे। ऊपर दो-चार अँगारे भी रख दे। दस मिनटमें केक तैयार हो जायगी।

१८. दहीकी मीठी पकौड़ी–एक कटोरी दही, एक कटोरी सूजी और एक कटोरी चीनीका मिश्रण कर दो घंटे रख दिया जाय और फिर घीमें पकौड़ी उतार ली जाय।

१९. मट्ठा–मलाईसहित पाँच सेर दहीको बहुत देरतक मथानीसे मथे। फिर उसमें चार तोला नमक, पाँच तोला अदरक, दो तोला गोल मिर्च, दो तोला हींग, दो तोला हरी धनियाँ मिलावे और फिर मथकर पाँच तोला घीमें एक तोला जीरेकी छौंकार दे दे।

२०. दही बड़ा–चना, उड़द और अरहरकी एक-एक पाव दाल और दो तोला सूखी धनियाँ एकत्र कर मोटी दर डाले और उसमें एक तोला जीरा, आधा तोला गोल मिर्च और एक माशा हींग मिलाकर रातभर भिगो रक्खे। दूसरे दिन दो तोला नमक, थोड़ी हरी धनियाँ और एक चम्मच हल्दी उसमें मिलाकर पकौड़ीकी तरह तेलमें तलकर दहीमें छोड़ दे।

२१. पीयूष–दहीका गारा हुआ दो सेर पानी लेकर उसमें आध पाव चीनी, एक तोला इलायची और पाँच तोला गुलाबजल मिलाकर घोट देना चाहिये। पीयूष बन जायगा।

२२. अमरूदका रायता–एक पाव दहीमें दो पके अमरूद महीन काटकर मिलावे और उसमें आधा चम्मच नमक, एक चम्मच चीनी, थोड़ी राईकी बुकनी, थोड़ी हींग और दो हरी मिर्चके टुकड़े छोड़कर सान ले। इसी तरह ककड़ी, केला, अनरस आदिका भी रायता बनाया जा सकता है।

२३. बैंगनका भरता–आधा सेर बड़ा बैंगन मीठा तेल लगाकर भूँज ले और ठंडा होनेपर उसका छिलका तथा डंठल उतारकर उसमें तीन पाव दही, एक चम्मच चीनी, डेढ़ तोला गोल मिर्च और एक तोला नमक डालकर मींज डाले। फिर दो तोला घीमें राई-हींगकी छौंकार दे दे। इसी तरह कोंहड़ा, तरोई, नेनुआ, अरुई, पपीता आदिका भी भरता बनता है। कोई-कोई राईके साथ गरी भी पीसकर मिला देते हैं।

२४. दहीके कचालू–एक सेर दहीमें एक चम्मच लाल मिर्च, एक चम्मच नमक, एक चम्मच चीनी और एक तोला हरी धनियाँ मिलाकर रख ले। एक पाव आलू उबालकर कतर लिये जायँ और दो तोला घीमें राई, हींग तथा हल्दीकी छौंकार दे दी जाय। जब आलू लाल हो जाय, तब वह तैयार दही उसमें मिलाकर फिर एक उबाल दे दी जाय।

२५. चमन दही–दो सेर दूधको गरम कर डेढ़ सेर बना लिया जाय। ठंडा होनेपर दस तोला चीनी और डेढ़ तोला दही मिलाकर जमा दिया जाय। जिस बर्तनमें जमाया जाय, उसके मुँहपर ताजे दस गुलाबके फूल रख दिये जायँ। दूसरे दिन फूल हटाकर चमन दही काममें लाया जाय।

२६. छौंकारका दही–एक सेर मीठे दहीमें दो रत्ती भूनी हींग, पौन तोला नमक और आधा तोला हरी धनियाँ मिलाकर एक तोला घीमें राई, जीरा और हल्दीकी छौंकार देकर बिलो ले।

२७. कढ़ी–मलाईसहित जमाये हुए दो सेर दूधका मट्ठा बनाकर उसमें एक तोला अदरक, एक तोला गोल मिर्च, एक तोला हरी धनियाँ, दो तोला नमक, एक तोला

चीनी और दो तोला बेसन मिलाकर दो तोला घीमें राई, हींग और हल्दीकी छौंकार देकर चलाता रहे। दो उबाल आनेपर कढ़ी तैयार!

२८. **मकरन्द कचौड़ी**—सूजीमें घीका मोयन देकर और बेकिंग पाउडर, सोडा, चीनी और नमक मिलाकर अच्छी तरह गूँथ देना चाहिये और कचौड़ीकी तरह गायके दूधका खोवा भरकर घीमें छान लेना चाहिये। यह मीठी कचौड़ी होगी। इसी तरह नमकीन भी बनायी जा सकती है।

२९. **छेनेका रस्सा**—फिटकिरीसे दूधको फाड़कर छेना बन जानेपर पीढ़ेपर मोटा फैलाकर सुखा लिया जाय और उसकी बट्टियाँ काट ली जायँ। हरी धनियाँ और मसाला पीसकर रस्सा बनाया जाय और नमक-मिर्चकी छौंकार देकर उसमें खुरची हुई गरीका पानी डाला जाय और फिर छेनेकी बट्टियाँ घीमें तलकर उसमें छोड़ दी जायँ।

३०. **रसगुल्ला**—आधा सेर छेनेमें आध पाव सूजी अच्छी तरह माँड ली जाय। फिर उसकी गोलियाँ बनाकर पानीमें उबालकर आध सेर चीनीकी चाशनीमें छोड़ दी जाय। केशर और इलायची भी मिला दी जाय। यह बंगाली मिठाई है।

३१. **गुलाबजामुन**—आध सेर खोवेमें आध पाव मैदा मिलाकर छोटी-छोटी गोलियाँ बनाकर घीमें तल ली जायँ और इलायची, केशर मिली हुई एक सेर चीनीकी चाशनीमें छोड़ दी जायँ।

३२. **लौकीका हलुआ**—एक सेर दूधमें एक पाव लौकी कसकर मिलाकर उसीमें केशर, इलायची और आध पाव चीनी छोड़कर औटाया जाय। लौंदा बन जायगा। वही लौकीका हलुआ है।

३३. **घाटला**—एक सेर दूधमें थोड़ा चावलका आटा, आध पाव चीनी, कसी हुई गरी, इलायची और कतरा हुआ थोड़ा चिंचेडा मिलाकर चूल्हेपर रखकर पका लिया जाय।

३४. **पेउसकी तरकारी**—पेउसकी बट्टियाँ बनाते समय उसमें गुड़ या चीनी न मिलायी जाय। सादी बट्टियोंको छौंकार देकर नमक-मिर्च लगा दी जाय। तरकारी बन जायगी।

३५. **आइसक्रीम**—दस सेर दूध थोड़ा औटाकर उसमें एकडेढ़ सेर चीनी, थोड़ी केशर और इलायची मिलाकर ठंडा हो जानेपर आइसक्रीमकी मशीनके बर्तनमें भर देना चाहिये। बर्तनको गरम पानीसे अच्छी तरह धो डालना चाहिये। बर्तनके चारों ओर बर्फके टुकड़े भरकर थोड़ा नमक छोड़ देना चाहिये। दस-पंद्रह मिनट मशीन चलानेपर जब वह भारी जान पड़े, तब पंखा खोलकर फिर मशीन चलानी चाहिये। थोड़ी देरमें क्रीम तैयार हो जायगी।

३६. **टिकाऊ दूध**—गरम पानी जब कुनकुना हो जाय, तब उसमें दूधभरी बोतलें रख दी जायँ और मंदी आँचपर चढ़ा दी जायँ। जब पानी उबलने लगे, तब बोतलोंमें काग लगा दिये जायँ। पाँच मिनटके बाद बोतलें उतारकर सील बंद कर दी जायँ। यह दूध छः महीनेतक नहीं बिगड़ता।

३७. **मिल्कशुगर**—दूधकी चीनीको मिल्कशुगर कहते हैं। यह होमियोपैथिक और बायोकेमिक दवाइयोंके काम आती है। मीठी और करकरी होती है। दहीको औटाकर जो शेष रह जाता है, वही मिल्कशुगर है।

३८. **कंडेंस्ड मिल्क**—एक बर्तनमें पानी चूल्हेपर चढ़ा दिया जाय और उससे छोटा बर्तन उसमें रखकर उसमें दूध भरकर बराबर चलाया जाय। बिना मलाई पड़े इस तरह भापमें औटकर जब वह बसौंदीकी तरह गाढ़ा हो जाय, तब चीनी मिलाकर आगपर ही घोटा जाय और फिर सील-बंद डिब्बोंमें भरकर रख दिया जाय।

इनके सिवा कई तरहकी खीर—जैसे लौकीकी, आमकी, साबूदानेकी, मेवेकी और आलूकी बनती है। खोवेसे कलाकंद, पेठा, दिलखुशाल, पंचधारीके लड्डू, केसरिया पेड़ा, सेवके लड्डू, मनोहर, मगदके लड्डू; दहीसे दहीकी बरफी, खरबूजेकी बरफी, दहीका मनोहर, दहीकी जलेबी, लड्डू, सरपुरिया आदि अनेकों चीजें और बनती हैं।

श्राद्धका फल

जिस व्यक्तिके पास श्राद्धके लिये कुछ भी न हो वह यदि पितरोंका ध्यान करके गोमाताको श्रद्धापूर्वक घास खिला दे तो उसको श्राद्धका फल मिल जाता है। 'तृणानि वा गवे दद्यात्' (निर्णयसिंधु)।—काशीप्रसाद मिश्र वेदाचार्य

फटे दूधसे बननेवाले पदार्थ

दूधमें पानीके अतिरिक्त मक्खन, केसीन (छेना) और दुग्ध-शर्करा—ये तीन मुख्य द्रव्य होते हैं । दूधके शर्करावाले अंशसे बैक्टीरिया (Bacteria) के जीवाणुओंकी नैसर्गिक वृद्धि होती है । उससे दुग्धाम्ल (Lactic Acid) पैदा होता है और दूध फट जाता है । यदि गौको दिया हुआ चारा अच्छा न हो, उसमें अम्ल हो गया हो, थन साफ न हों, दुहनेवालेके हाथ और बर्तन साफ न हों, बासी और ताजा दूध मिला दिया जाय, कई जगहोंका दूध एक साथ मिला दिया जाय, अथवा हवामें बहुत अधिक गरमी हो तो दूध फट जाता है ।

बड़ी-बड़ी डेयरियोंमें मशीनके द्वारा दूधमेंसे मलाई या मक्खन पूरा निकाल लिया जाता है, ऐसे दूधको निर्घृत दूध (Skimmed milk) कहते हैं । ऐसे दूधसे केसीन (Casein) और दुग्ध-शर्करा (Milk-Sugar) निकाल सकते हैं । केसीन पानीमें न घुलनेवाली (Insoluble) चीज है । नकली हाथीदाँत, लेक—कालर्स, सरेस आदि तैयार करनेमें केसीनका बहुत अच्छा उपयोग होता है । रेलवेके डिब्बोंके लिये तथा हवाई जहाजके पंखे और प्लाईवुडके तख्ते बनानेमें इसका सरेस काम देता है । पुस्तकोंकी जिल्दबंदीमें कपड़ेके नीचे यह सरेस लगाया जाता है । खेलनेके ताश और आर्टपेपरमें चमक लानेके लिये भी इसका उपयोग किया जाता है ।

केसीन (Casein)

सौ तोले निर्घृत दूधमें दो तोले सल्फ्यूरिक एसिड (जिसमें एक भाग एसिड और २० भाग पानी हो) डालकर दूध गरम किया जाता है । उससे दूधका छेना-पानी अलग-अलग हो जाता है । इसे छान लेनेपर छेना चलनीमें रहता और दूधकी शर्कराका पानी नीचे गिर जाता है । इस छेनेको गरम पानीमें धो लेनेपर उसमें जरा-सा भी मक्खन नहीं रह जाता । इस धोये हुए छेनेको सुखाकर उसकी बुकनी बनाकर डिब्बेमें रख लेनी चाहिये । वही केसीन है ।

दुग्ध-शर्करा (Milk Sugar)

दूधमें डाले हुए एसिडको नष्ट करनेके लिये एक तोला खड़िया-बुकनी उसमें डाल देते हैं । इससे गैस निकलती है और चूनेका अंश एसिडसे मिलकर उसका प्लास्टर बनकर नीचे जम जाता है । इसे पैरिसका प्लास्टर (Plaster of Paris) कहते हैं । ऊपरका पानी औटानेसे काली-काली-सी चीनी तैयार होती है । दूधकी इस चीनीको गरम करके पिघलाकर औटानेसे चीनीका रंग पीला-सा हो जाता है । इस प्रकार पाँच-छः बार चीनीको साफ करनेके बाद सफेद चीनी निकल आती है ।

जो दूध अभी-अभी फटा हो, उससे अनेक खाद्य पदार्थ तैयार किये जा सकते हैं । फटा हुआ दूध दो-तीन दिन यों ही पड़ा रह जाय तो सड़नकी गन्ध आने लगती है, तब वह किसी कामका नहीं रहता ।

बादाम-केक

दो कप गेहूँका आटा छाना हुआ ले । उसमें एक चम्मच नमक, पाव चम्मच खानेका सोडा (Soda-bi-carb) और थोड़ा घी या मक्खन और चीनी डालकर मिला ले । तब उसमें फटा दूध डालकर इस मिश्रणको अच्छी तरह सान ले । फिर पतली-सी कटोरियोंमें भीतरसे घी लगाकर आधी-आधी कटोरी यह सना हुआ मिश्रण डाल दे । आइल पेपरसे काम लिया जा सकता है । तब बादाम, पिस्ता आदिके टुकड़े काट-काटकर और बिहीदाना वगैरह डाले । अनन्तर चूल्हेपर तवा रक्खे, उसपर महीन बालू फैला दे और बालूपर एक पन्ना रखकर इन कटोरियोंको रक्खे और उन्हें ढाँक दे । थोड़ी देरमें मिश्रण अच्छी तरह फूल आयेगा । उसे चाकूसे निकाल ले । ये केक बन गये । खानेमें बहुत स्वादिष्ट होते हैं ।

बंगाली मिठाई

दूधको फिटकिरीकी डलीसे चलाकर या टार्टारिक—साइट्रिक एसिड (दस सेर दूधमें आधा तोला एसिडके हिसाबसे) डालकर दूध गरम करनेसे फट जाता है । कलकत्तेमें फटे हुए दूधके गोले बिकते हैं । इसे वहाँ 'छेना' कहते हैं । उसीसे रसगुल्ला, छेनाबड़ा, चमचम, सरतोया, खीरमोहन, छानामुंडी, गुलाबजामुन, चन्द्रआता, गोलासंदेश, रसमुंडी, पाँतुआ आदि अनेक प्रकारकी मिठाइयाँ बनती हैं ।

पनीर

पनीरको अंग्रेजीमें चीज (Cheese) कहते हैं। कौटिल्यके समयमें भी भारतवर्षमें एक ऐसी चीज बनती थी, परन्तु वह शुद्ध और अहिंसायुक्त होती थी। वर्तमान पनीर पाश्चात्त्य जगत्की वस्तु है। अवश्य ही भारतवर्षमें आजकल बाबूलोग इसे शौकसे खाया करते हैं। पनीर शुद्ध भी बन सकती है। विलायतमें तथा उसीकी देखा-देखी भारतमें भी दो-एक जगह पनीर बनायी जाती है। उसका तरीका यह है—कच्चे दूधको एक बर्तनमें रखकर उसमें नमक लपेटी हुई गायकी आँत (Rennet) डुबो दी जाती है। इससे दूधमें विकार उत्पन्न होकर वह तुरंत जम जाता है। इस दहीको कपड़ेमें बाँधकर किसी ऊँची जगहपर लटका देते हैं, जिससे टपक-टपककर उसका सारा जल निकल जाता है। इसके बाद उसे नमकके साथ किसी बर्तनमें रख देते हैं, जिससे रहा-सहा पानी भी अलग हो जाता है। इसके बाद उसे फिर कपड़ेमें बाँधकर उसपर भारी वस्तु रखकर उसका जल बिल्कुल निकाल दिया जाता है। यों जल निकालनेके बाद उसे बर्तनमें रखकर कई दिनोंतक छाया और हवामें सुखाते हैं। यूरोपमें पनीर खूब चलती है। वहाँ यह शुद्ध दूधकी भी बनती है और मलाई निकाले हुए निर्घृत (Skimmed) दूधकी भी। कहीं-कहीं शुद्ध दूधमें ऊपरसे और मलाई मिलाकर भी बनाते हैं। कोई-कोई मारगरीनकी भी बनाता है। इसके बनानेमें दो-तीन सप्ताहसे लेकर चार-पाँच सप्ताहतक लग जाते हैं। इसमें शराबके समान एक विचित्र गन्ध पैदा हो जाती है। इसे वे लोग बहुत ही पुष्टिकर खाद्य मानते हैं। इसका यूरोपमें बहुत बड़ा व्यापार है।

बंगालमें गौकी आँतसे परहेज रखनेवाले लोग बकरीकी आँत डालते हैं। यह शुद्ध दहीका बन सकता है, और कुछ लोग वैसा बनाते भी हैं। शुद्धताका तथा गौकी आँतका परहेज रखनेवाले लोगोंको बाजारसे खरीदकर पनीर (Cheese) कभी नहीं खानी चाहिये।

खयाल रखिये

१. गायों, बैलोंके थानको साफ रक्खो। गोबर हाथों-हाथ उठा लो। कहीं मच्छर, मक्खी तथा और कीड़े गायोंको न सताने पावें। उनके शरीरको धो-पोंछकर साफ रक्खो।

२. गायों, बैलोंको नियमितरूपसे पूरा घास-चारा दो, उन्हें कभी आधे पेट मत रक्खो। बेचारा भूखा पशु दुर्बल होकर तुम्हें शाप देगा और तुम उसे बेकाम समझ लोगे। अन्तमें वह या तो मर जायगा या मरनेको किसी भी रूपमें कसाईखाने पहुँच जायगा।

३. गाय-बैलोंको पूरा पानी पिलाओ। खयाल रक्खो, कहीं वे प्यासे न रह जायँ। जलकी कमीसे दूध घट जाता है और गरमी तथा अपचके कारण बहुत-सी बीमारियाँ हो जाती हैं।

४. गाय-बैल बीमार हो जायँ तो तुरंत इलाज करो, जरा भी लापरवाही मत करो, छूतकी बीमारीसे सदा बचाते रहो। बीमार पशु बेचारे कुछ कह नहीं पाते और घुल-घुलकर बेमौत मर जाते हैं।

५. बछड़ोंको उनके पीने लायक पूरा दूध पीने दो, बछड़े भूखे रहेंगे तो बहुत कमजोर होंगे और उनसे सारी नस्ल बिगड़ जायगी। गोजातिका सारा दारोमदार बछड़ोंपर ही है।

६. गाय-बैलोंके पास कुत्तोंको कभी मत आने दो। कुत्तोंसे उन्हें बड़ी चिढ़ है। कुत्तोंको देखनेसे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता है और स्वभावमें विकृति आती है।

७. बैलगाड़ियोंपर बहुत ज्यादे बोझा मत लादो। ऐसा देखा जाता है कि अत्यधिक बोझसे बैल चल नहीं सकते। चक्के कीचड़में धँस जाते हैं और गाड़ीवान बड़ी बुरी तरहसे उन्हें मारता है। बेचारे मूक पशु क्या करें! यह बहुत बड़ा अन्याय है।

८. छोटे-बड़े बेमेल बैलोंको एक गाड़ीमें एक साथ मत जोड़ो। छोटा बैल बड़े बैलकी बराबरी नहीं कर सकता और उसे बड़ी पीड़ा होती है। गाड़ी तो ठीक चलती ही नहीं।

९. हलमें भूलकर भी कभी गायको मत जोतो। गायको हलमें जोतनेसे वह सर्वथा बेकाम हो जाती है।

१०. गाय-बैलोंको कभी मारो मत। प्रेमसे तथा सद्व्यवहारसे वे जैसा वशमें होकर काम करते हैं, वैसा मारनेसे नहीं करते। मारनेकी आदत होनेपर कभी गुस्सेमें ऐसी चोट भी लग जाती है, जिससे पशु मर जाता है। किसी-किसी प्रान्तमें तो इतनी निर्दयता करते हैं कि रथ या गाड़ीके बैलोंको जिस डंडेसे हाँकते हैं, उसमें तीखी धार-वाली लोहेकी अरी रहती है। जिसकी चोटसे उनके खून बहने लगता है। मर्मस्थानमें लग जाती है तो वे मर भी जाते हैं।

११. गायों-बैलोंको सर्वदा बाँधकर मत रक्खो। उन्हें घूमने-फिरनेका पूरा अवकाश दो, जिसमें उनका खाया हुआ पच जाय और उचित व्यायाम भी हो जाय।

१२. दूधसे टल जानेपर भी गायका दाना बिल्कुल बंद मत करो। उसे परिमाणसे कुछ कम भले ही कर दो। बिल्कुल बंद करनेसे गाय कमजोर पड़ जाती है और उसके गर्भको अच्छा पोषण नहीं मिलता तथा ब्यानेके बाद गायका दूध भी घट जाता है। ब्यानेके कुछ दिनों पहले तो दाना बढ़ा ही देना चाहिये।

गोसेवाके फल

(प्रेषक—वैद्यपञ्चानन के० के० श्रीनिवासाचार्य)

(सच्ची घटनाएँ)

(१)

जीवनदान

सं० १९९१का आषाढ़ मास था। नोहर (बीकानेर) से लगभग डेढ़ मील डालूराम महर्षिका जोहड़ (तालाब) है। पंद्रह दिन पहले कुछ वर्षा हुई थी, जिसका कुछ कीचड़ अवशेष था। एक प्यासी गौ जलकी इच्छासे जोहड़में घुसी, परन्तु कीचड़में घुटनोंतक डूब गयी। गौ वृद्धा तो थी ही, निकलनेके प्रयासमें बेहद थक भी गयी। खड़ा रहना दूभर हो गया। बैठकर कीचड़में धँस गयी।

सूर्य छिप चला था, जलशून्य जलाशयके पास भला कौन आता। कीचमें धँसी गौ मृत्युक्षणकी प्रतीक्षामें थी। अर्द्धरात्रिमें एक हल्की-सी वृष्टिसे वह क्षुद्र जलाशय भर गया। गौकी दशा अत्यन्त दयनीय हो चुकी थी। जलके बाहर उसके सिर्फ सींग और ऊर्ध्वमुख आधे कान दिखायी पड़ते थे। प्रातः रुघा सुनारने खेतसे लौटकर यह समाचार डूँगरमल तिवाड़ीसे कहा। बस ! कहनेभरकी देर थी। यह युवक फौरन तैयार हो गया और तुड़ी, रस्सी, बाँस और कुछ आदमी साथ लेकर शीघ्र ही घटनास्थलपर पहुँचा। नालोंके द्वारा अब भी जोहड़में जल आ रहा था—साथ ही गौकी दशा भी गिर रही थी। गो-प्रेमी युवक इसे देख न सका, फौरन ही कपड़े उतार अपने साथियोंसहित कूद पड़ा और बात-की-बातमें बाँसोंपर गौको बाहर निकाल लाया। गौ खड़ी रहने एवं चलने-फिरनेमें सर्वथा असमर्थ थी। तुड़ी दी गयी। फिर छकड़ेमें डालकर उसे स्थानीय गोशालामें भिजवाया गया। १५ दिनतक बराबर उसकी निगरानी रक्खी गयी। गौ चंगी हो गयी। पर दो मास बाद वह पशुसम्बन्धी रोगसे मर गयी।

इसी वर्ष फा० शु० ९ को डूँगरमल सरदारशहरके पास देवातसर गया और लौटते वक्त अपने मामा हेतरामके पास चूरू उतर गया। १२ को उसे १०५° ज्वर हो गया, साथमें वायुका प्रचण्ड कोप भी था। उसने अपने मामासे घरवालोंको सूचना देनेके लिये कहा भी, पर उन्होंने परवा न की। इधर उसके बड़े भाईके मनमें खलबली मची कि देवातसरसे लौटनेका समाचार तो मिल चुका; फिर क्या कारण है कि डूँगर अभीतक नहीं पहुँचा। हितैषी चित्त बहुधा अशुभ-चिन्तक होता है, आखिर भ्रातृ-प्रेममें व्याकुल होकर ये गाड़ीपर चल पड़े। रास्तेमें चूरू इसलिये उतर गये कि मामासे शायद डूँगरका पता मिल जाय। डूँगर वहाँ रोगशय्यापर मिला। वैद्य विद्याधरजी मँडावेवालेको दिखलाया, भयंकर सन्निपात और डबल न्यूमोनिया कायम किया। बड़ी तत्परतासे चिकित्सा आरम्भ हुई। सेवा-शुश्रूषामें कोर-कसर न थी, परन्तु रोगीकी दशा प्रतिपल गिरती जा रही थी। चै० कृ० ६ को वैद्यजीने खुले शब्दोंमें कह दिया—आजकी रात खतरनाक है, सचेष्ट रहकर दवा देते रहें।

रोगीके भाई बद्रीनारायणके धैर्यका पुल टूट चुका था। रोगीकी दशा स्पष्ट थी—शरीर बर्फके समान शीतल था, हृदयमें थोड़ी धड़कन शेष थी, काम खत्म-सा था। बेचारा बद्रीनारायण परिवारशून्य धर्मशालाकी कोठरीमें म्रियमाण भाईके गले लग-लगकर बेहाल हो रहा था। दो-तीन दिनसे कुछ खाया नहीं

था। आँखें फूल गयी थीं, गला छिल गया था, शरीर टूट रहा था; कहीं चैन न था। डूँगरमल तो बेचारा अनन्त शयनकी तरफ बढ़ रहा था; उसे क्या पता कि उसका भाई बिलख-बिलखकर करुण विलाप कर रहा है!

ब्राह्ममुहूर्त्त है। स्वप्न नहीं, जंजाल नहीं। डूँगरमलको प्रत्यक्ष दिखायी दिया कि वही गौ, जिसको नव मास पूर्व उसने जोहड़के कीचसे निकाला था, खड़ी हुई कह रही है—'डूँगर! एक दिन तुमने मुझको उबारा था, आज मैं तुम्हें उबार रही हूँ। अब तुम्हारा रोग समाप्त हो गया है—तुम्हारे शरीरको अब कोई खतरा नहीं है।' गौ अदृश्य हो गयी। डूँगरको भी ज्ञान-सञ्चार हो गया। उसे मालूम हुआ कि उसका भाई उसके लिये बेहाल हो रहा है। परन्तु इन्द्रियाँ जड हो गयी थीं। ज्ञानेन्द्रियों अथवा कर्मेन्द्रियोंसे किसी भी तरह अपने भाईको सान्त्वना देनेमें वह असमर्थ था। कुछ देर बाद उसने आँखें खोलीं और इशारोंसे समझाना शुरू किया। यथा-कथञ्चित् अपना मनोगत भाव कह डाला। प्रातः वैद्यजी आ गये थे। अपने रोगीके इस अवस्थामें मिलनेकी उन्हें बिल्कुल आशा न थी। रात्रिका वृत्तान्त उनसे भी कहा! वे आस्तिक विचारके मनुष्य थे, बात जँच गयी। रोगीका रोग तो नष्ट हो ही चुका था, पथ्य-प्रदानमें दो-तीन दिन लगे; फिर दोनों नोहर लौट आये।

(२)
जल-परिवर्तन

सं० १९८०के लगभग सेठ सादीरामजी पचीसिया कलकत्ते-से अपने घर नोहरको सिरसा स्टेशनसे आते हुए फेफाना गाँवमें ठहरे। पाँच सौ घरोंकी बस्ती तथा चारों तरफ छोटे-छोटे गाँवोंकी आबादी देखकर इनके हृदयमें इच्छा हुई कि यहाँ एक कुआँ चला दिया जाय और प्याऊ लगा दी जाय। उन्होंने अपना विचार ग्रामके गण्य-मान्य व्यक्तियोंको बुलाकर प्रकट किया। लगभग सभीने स्वीकृति दे दी। परन्तु एक बुड्ढेने सभीको सम्बोधित करते हुए कहा—'देखो! इतना बड़ा गाँव है; गाँव भूखा भी नहीं, दोनों फसलें होती हैं। दूसरे किसी धर्मका व्यवहार भी नहीं है; सिर्फ यही एक तरीका है कि कुआँ चला देते हैं। सो इसे भी तुम अपने हाथसे खो रहे हो। विचार लो, गाँवपर कुएँका ज्यादा भार नहीं है।' बुड्ढेकी बात लोगोंके जँच गयी। इधरसे सादीरामजीने पूछा तो बुड्ढेने कहा, 'सेठ साहिब! कुआँ तो गाँव ही चलायेगा। गाँवको गो-सेवामें पूर्ण विश्वास हो चुका है। देखिये गतवर्षकी बात है—लालखाँकी ढाणीवाले कुएँपर 'गोल' की गायें एक दिनके अन्तरसे पानी पिया करती थीं। एक दिन लालखाँकी ढाणीवाले कुएँके संचालकोंने गायोंको तब पानी पीनेसे मना किया जब कि गायें तीसरे दिन तीन कोस चलकर जल पीनेके लिये आ गयी थीं। ग्वालेने बहुत कहा कि 'सिर्फ आज-आज आपलोग गायोंको पानी पी लेने दें, क्योंकि ये तीन दिनकी प्यासी हैं। और फिर पास कहीं मीठा पानी भी नहीं, जहाँ इनको पिला सकूँ। आप कृपा करके सिर्फ एक दिनके लिये आज्ञा फरमायें।' परन्तु जाटका हृदय नहीं पसीजा, 'ना' कहकर 'हाँ' कहना वह नहीं जानता था। बहुत मिन्नतें करनेके बाद भी जब कोई लाभ न हुआ, तब म्लानमुख गायोंको विषण्णवदन ग्वालेने वापस हाँक लिया। तीन कोस जाकर देईदास गाँवपर उन-को पानी पिलाया। इस गाँवका पानी बहुत खराब था, जो अब दूधके समान हो गया है। और अभागे लालखाँकी ढाणीवाले कुएँका जल तो इतना बिगड़ा कि हाथ धोने लायक भी नहीं रह गया।

(३)
संरक्षण

सेठ सादीरामजी पचीसियेके एक नौकर था, नाम था उसका साँवल। वह कहा करता कि मेरा परदादा जोधपुर स्टेटसे उठकर नोहर (बीकानेर) तहसीलके गाँव बिडवराणा-में बस गया। एक दिन उसको खेत जाते वक्त घायल गौ पड़ी मिली। पैरके अत्यधिक घायल होनेसे वह चलनेमें असमर्थ थी। साँवलके परदादाने विचार किया कि गौ तीन-चार दिनकी प्यासी होगी; वह शीघ्र ही ऊँटपर गाँवसे चौधड़ ले आया, साथ कुछ चूरी भी। गौ दो घड़े पानी पी गयी और चूरी भी खा गयी। खेतसे दो-चार पूले भी उसने गायके आगे तोड़कर डाल दिये। उसका यह क्रम तबतक बराबर चलता रहा, जबतक गौ अपने आप उठकर अन्य स्थानको न चली गयी।

साँवलका परदादा कुई खोदनेमें बड़ा चतुर था। बिडवराणेमें वह कुई खोदता था। बीकानेरी कुईमें ६०-७० हाथ नीचे जल रहता है। बालूकी भूमिमें कुई खोदना मौतके मुँहमें हाथ डालना होता है, क्योंकि कुईके ऊपरसे ढह जानेकी आशङ्का बनी ही रहती है। इस वक्त ऐसा ही हुआ। जल निकलनेवाला ही था कि कुई ढह गयी।

साँवलका परदादा वृद्ध तो था ही—सबसे बड़ी बात यह थी कि वह बहुत गरीब था। भला! ऐसे आदमीके इस प्रकार मरणपर भी किसीको क्यों दुःख होता। गाँवके मुखियाने

घरवालोंको समझा दिया कि 'वह तो अब खत्म हो चुका— हजारों मन मिट्टी उसपर गिर पड़ी। अब यदि उसकी लाशके लिये यत्न किया भी जाय तो औरोंके मरनेका खतरा है। क्योंकि भूमि चारों तरफसे चल पड़ी है, अब तो सन्तोष-में ही सार है, उसकी यों ही मौत थी।'

साँवलका परदादा दरिद्र तो था ही, गाँवके काममें वह योग देता था। अतः गाँववालोंने मिलकर उसके द्वादशाहपर 'मीठे चावल' का विचार इसलिये किया कि कहीं साँवल-का परदादा भूत न हो जाय।

मीठे चावलोंके लिये पवित्र जल लानेको एक कुएँमें डोल डाला गया। यह कुआँ उपर्युक्त कूईकी खुदाईके २०-२५ हाथकी दूरीपर ही था, डोल अंदर जाते ही अटक गया। देखा तो एक काली आकृति डोलको पकड़े हुए है। पूछनेपर उसने बताया कि मैं साँवलका परदादा हूँ। बस, फिर क्या था, धैर्यधारियोंके भी छक्के छूट गये। सभी पानी भरनेवाले सिरपर पैर रखकर भागे। गाँवमें आकर उन्होंने साँवलके परदादाके भूत होनेका हाल खूब नमक-मिर्च लगाकर कहा, सभी दंग रह गये। सभीने यही अनुमान किया बेचारा अकालमृत्युसे मरा है; उसकी यह हालत न होगी तो और क्या होगी।

गाँवोंमें कुछ साहसी भी होते हैं, उन्होंने कहा कि हम कुएँमें जाकर देखेंगे कि मामला क्या है। बात जँच गयी। दो दिलेर लठ लेकर उतर पड़े। कुछ फासला रहा तो उससे पूछा कि 'तू भूत कैसे हो गया और तेरा छुटकारा कैसे हो।' उसने कहा 'तुम अंधे हो जो मुझे भूत कह रहे हो? मैं साक्षात् साँवलका परदादा हूँ। तुम मुझे पहचानते नहीं, क्या भूत ऐसा ही होता है।' बात ठीक मालूम हुई। कम्बलमें लपेटकर उसे कुएँसे बाहर निकाला गया। दूसरे दिन उसने अपनी मौत-कहानी यों सुनायी—

'आपने तो मुझे मरा समझ ही लिया था, पर मैं श्रीगोमाताकी दयासे बच आया हूँ।'

कूई ढहकर मेरे सिरसे दो-तीन हाथ ऊपर रुक गयी। मैं थोथमें खड़ा था। सोचा इससे मर जाता तो अच्छा होता। प्रारब्धका खेल। मैं किंकर्तव्यविमूढ हो रहा था कि मुझे भूख लगी। मैंने देखा कि वही गौ, जिसकी आर्त्तदशामें मैंने सेवा की थी, खड़ी है, और अपना थन मेरे मुखसे लगा रही है। मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा। भूख थी, खूब डटकर दूध पिया। अब गौ एक तरफ भीतमें सींग मारकर सङ्केत करने लगी, पर मेरी समझमें नहीं आया। आखिर खड़े होकर मैंने देखा कि गौका सङ्केत एक साहीके बिलकी तरफ है। यह बिल कूईसे कुएँतक मिला था, हवा भी कुछ-कुछ आती थी। खुदाईके औजार सब मौजूद थे ही, मैंने खोदना शुरू किया। जब भूख लगती, गौ आ जाती; थकता तो सो जाता। रात-दिनका कुछ पता न था। इस प्रकार आज गोमाताकी कृपासे मैं आपके सम्मुख हूँ। यह मेरा नवजीवन है—पुनर्जन्म है।'*

गौका जन्मपत्र

प्रत्येक गोशाला—चाहे वह गोशाला सार्वजनिक हो, व्यापारिक संस्था हो या व्यक्तिगत—के व्यवस्थापकको चाहिये कि वह गोशालाकी प्रत्येक गायके जन्म तथा दूध आदिका विवरणपत्र (रजिस्टर) रक्खे। उसमें नीचे लिखे खाने तथा उनमें पूरा ब्योरा होना चाहिये—

(१) क्रमसंख्या, (२) गौका नाम, (३) नस्लका नाम, (४) जन्मतिथि, (५) रंग और हुलिया, (६) माता-पिताके नाम और नस्ल, (७) मा कितना दूध देती थी, (८) कितने दिनोंतक दूध दिया, (९) कितने दिनोंतक सूखी रही, (१०) कब गाभिन हुई, (११) किस साँड़से गाभिन हुई, उसका तथा उसकी नस्लका नाम।

इसी प्रकार आवश्यक परिवर्तन-परिवर्धनके साथ बछड़े, बछड़ी तथा गाय, साँड़ोंका विवरणपत्र रखना चाहिये।

इस रजिस्टरसे यह पता रहेगा कि कौन पशु किस नस्लका है, कितनी आयुका है, कितना दूध कबतक देता है, गाय ब्यानमें कितना समय लेती है। हुलिया रहनेसे खो जानेपर पता लगाना सहज होता है। गाय ब्यानेके बाद उसका पुनः गाभिन होनेका काल डेढ़से लेकर तीन महीनेके बीचमें होता है। गाभिन होनेमें ज्यादा देर करनेवाले पशु आर्थिक दृष्टिसे हानिकर समझे जाते हैं।

* ये तीनों वृत्त मुझे वयोवृद्ध सेठ सादीरामजी पचीसियासे प्राप्त हुए थे। स्वतन्त्र खोज करनेपर भी ये सत्य साबित हुए।

गो-साहित्य

संसारकी प्रायः सभी उन्नत भाषाओंमें गो-साहित्य-सम्बन्धी थोड़ी-बहुत पुस्तकें उपलब्ध हैं । वास्तवमें यह विषय ही ऐसा है । गायके बिना जीवन अधूरा और समाज अपूर्ण है, फिर इसपर विद्वान् विचारकोंकी लेखनी क्यों न उठती ? जिस भाषामें गो-साहित्य नहीं है, वह भाषा अभागिनी और अविकसित है । यद्यपि इस अङ्कमें गो-सम्बन्धी प्रायः सभी ज्ञातव्य बातें देनेकी हमने यथाशक्ति चेष्टा की है, फिर भी इन सीमित पृष्ठोंमें सब बातें आ ही गयी हैं—यह नहीं कहा जा सकता । गो-सम्बन्धी अन्य बातोंको जाने दीजिये; यदि केवल गो-महिमाका कोई वर्णन लिखने लगे तो कदाचित् आजके कंट्रोलका कागज समाप्त हो जाय और वह वर्णन पूरा न हो । अतः प्रेमी पाठकोंकी तत्सम्बन्धी जानकारीके लिये हम हिंदी, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी आदि भाषाओंमें लिखी हुई कुछ पुस्तकोंकी सूची नीचे देते हैं । संस्कृत भाषाके काव्य, साहित्य, इतिहास, पुराण आदि सभी ग्रन्थोंमें गो-सम्बन्धी बातें भरी पड़ी हैं । शायद ही संस्कृतका कोई ऐसा ग्रन्थ हो, जिसमें गायकी चर्चा न आयी हो । ऐसी दशामें संस्कृतके ग्रन्थोंकी सूची देना सम्भव नहीं है; क्योंकि जिस किसी भी ग्रन्थको पाठक उठा लेंगे, उसीमें उन्हें कुछ-न-कुछ गो-सम्बन्धी बात मिलेगी । गायके पवित्र, सर्वोच्च और मातृत्वपूर्ण स्वरूपका रहस्योद्घाटन संस्कृत-साहित्यसे ही हुआ है । जो सज्जन इस ओर विशेष रुचि रखते हों, वे इन पुस्तकोंके अध्ययनसे लाभ उठा सकते हैं । यह बात भी नहीं है कि जितनी पुस्तकोंके नाम हमने दिये हैं, बस, उतनी ही पुस्तकें हैं । इनके अतिरिक्त और भी बहुत-सी पुस्तकें इस विषयपर होंगी; किन्तु इस थोड़े-से समयमें हमें जितनी पुस्तकोंके नाम मिल सके हैं, उनको हमने दे दिया है । सम्भव है, किसी पुस्तकके प्रकाशनके नाम-पते आदिमें कोई भूल हो; आशा है, मालूम होनेपर पाठकगण उसे सुधार लेंगे ।

हिन्दी

जीवदयामंडली, १४९ सराफ बाजार, बम्बई द्वारा प्रकाशित पुस्तकें—

१. खतरेकी घंटी, २. अभयदानपत्रिका, ३. गायोंपर गोलीका प्रहार, ४. भयङ्कर रोग, ५. मांसाहारमें होनेवाले भयङ्कर दर्द, ६. गोवधके भीषण आँकड़े ।

जीवरक्षा-ज्ञान-प्रचारक-मंडली, हैदराबाद-द्वारा प्रकाशित—

७. पुत्रबलि या पशुबलि, ८. गो-संताप-कल्पना, अहिंसा-संगीत-रत्नावली, १०. जीवरक्षा भजनावली, मंडलीकी रूप-रेखा ।

श्रीवेङ्कटेश्वर-स्टीम प्रेस, बम्बई, द्वारा प्रकाशित

१२. पशु-चिकित्सा, १३. [illegible], १४. [illegible] गोभक्तोंकी गोभक्तिका परिणाम ।

गो-सेवकप्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित—

१५. प्लेग क्या है ?, १६. वर्तमान हिंदुधर्म, दयानन्द-मुहम्मदी, लेखक- श्रीजगन्नारायण शर्मा, होली क्या थी, क्या हो गयी ?, १९. गो-पुकार, २०. गो-प्रताप, २१. पांच [illegible] गौ, २२. [illegible] ।

गो-हितकारी कार्यालय, मथुराद्वारा प्रकाशित

२३. गोरक्षा-प्रचारका मूलमंत्र, २४. [illegible] दुःख, २५. गोरक्षा भजनसंग्रह, २६. गोरक्षा प्रार्थना, २७. गो-सेवक पण्डित श्रीजगन्नारायणजीका जीवन चरित्र, २८. गो-पुकार चालीसा, २९. हिंदू और गाय ।

श्रीपरमेश्वरीप्रसादजी गुप्तद्वारा लिखित और सस्ता साहित्य-मंडल, नई दिल्लीसे प्रकाशित

३०. पशुओंका इलाज, मूल्य ॥।), ३१. चारा-दाना, ३२. बारहों मास हरा चारा, ३३. चारेकी फसलोंका हेर फेर, ३४. चारेकी फसलोंका चार्ट ।

श्रीभगवानदासजी वर्माद्वारा लिखित

३५. गो-पूजा, ३६. [illegible], मूल्य १) प्रकाश साहित्य-सदन, अबोहर (पंजाब), ३७. गो-पालन, मूल्य १॥ पता—भगवानदास स्ट्रीट, लाहौर ।

पं० गंगाप्रसादजी अग्निहोत्रीद्वारा लिखित

३८. गोरक्षाके लिये आपकी आंखें कब खुलेंगी ! ३९, ४०. भारतके किसानोंकी उन्नति और उनकी दशा, ४१. गायोंका पालन और उनसे लाभ ।

श्रीद्वारकाप्रसादजी गुप्तद्वारा लिखित—

४२. गो-परिपालन, [illegible] साहित्य-सदन [illegible], ४३. गो-दुग्ध ही अमृत है, प्र०—माधुरी पुस्तकालय [illegible] । ४४. पशु-चिकित्सा, प्र०—[illegible], बम्बई-भूषण-प्रेस, मथुरा, ४५. गोकुल गाथा, [illegible]—।

श्रीअभिराम शर्मा, ४६. सचित्र (बृहद्) पशु-चिकित्सा, संग्रहकर्ता-बालमुकुन्द श्रीकृष्णलालजी, ४७. तिब्बे हैवानात—पशु-चिकित्सा, ले०—श्रीमाधवराव सिंधिया, ४८. जानवरोंकी साधारण बीमारियोंकी पहचान, ४९. किसानोपकार, प्र०—कृषिविभाग, संयुक्तप्रान्त, प्रतापगढ़ (अवध), ५०. मुल्क हिंदके मवेशीकी मुहलिक बीमारियोंकी किताब, प्र०—सुपरिंटेंडेंट गवर्नमेंट प्रेस, संयुक्तप्रदेश, इलाहाबाद, ५१. बिहारमें पालित पशुओंकी उन्नति, ले०—श्री डी० आर० सेठी, डाइरेक्टर ऑफ एग्रीकल्चर, बिहार, ५२. बछड़ोंकी हिफाजतका उपाय, प्र०—सेक्रेटरी बिहार एस० पी० सी० ए०, ५३. गोशालाओंका संचालन किस प्रकार हो और गौका व्यावहारिक रूप, प्र०—वाणिज्य प्रेस, पटना, ५४. गोपूजा, प्र०—मिलिटरी डेयरी फार्म, लाहौर छावनी, ५५. गो-माहात्म्य, प्र०—नारायणप्रेस, डिबरूगढ़ (आसाम), ५६. पशु-वैद्यक-शास्त्र, प्र०—अहमदाबाद यूनाइटेड प्रिंटिंग एँड जनरल एजेंसी कम्पनी, ५७. बाबा धनपतरायका विचार—गोरक्षाका एक ही अद्वितीय व्यावहारिक उपाय, प्र०—अभ्युदय प्रेस प्रयाग, ५८. सुरभीसंताप, प्र०—ज्ञानसागर प्रेस, श्रीकृष्णगंज बम्बई, ५९. गोरक्षा-कल्पतरु, प्र०—गो-सेवा-संघ, साबरमती, ६०. गोरक्षा, प्र०—दरभंगा, गोशाला-सोसाइटी, दरभंगा, ६१. दूध ही अमृत है, प्र०—छात्रहितकारी पुस्तकमाला दारागंज, प्रयाग, ६२. हमारी गायें, ले०—श्रीराम शर्मा, प्र०—विशाल भारत बुकडिपो १९५। १ हरिसन रोड कलकत्ता, ६३. भारतवर्षीय गोशालाओंकी नामावली, प्र०—हसानन्द वर्मा, बड़ा बाजार कलकत्ता, ६४. भारतमें दूध देनेवाले पशुओंकी रक्षा, ६५. खाद, ले०—श्रीमुख्तारसिंह वकील, प्र०—हिंदी पुस्तक एजेंसी, १२६ हरिसन रोड, कलकत्ता, ६६. गोपालन-शास्त्र, ले०—श्रीगिरीशचन्द जोशी, प्र०—हिंदी-पुस्तक-एजेंसी, १२६ हरिसन रोड, कलकत्ता, ६७. गोग्रासका गुच्छ, प्र०—गोग्रास-भिक्षा-संस्था, गिरगाँव रोड, बम्बई, ६८. अभयदान, ले०—श्री जे० एन्० मानकर, ६९. गोजीवन, ले०—श्रीप्रभासचन्द वन्दोपाध्याय, प्र०—गोजीवन-कार्यालय, पो० महानाद, हुगली, ७०. गोरक्षा, ले०—पं० श्रीअशर्फी शुक्ल, प्र०—प्रकाशन विभाग, जिला हिंदू सभा, भागलपुर, ७१. सुरभि-संकीर्तन, प्र०—गोशाला सोसाइटी कानपुर, ७२. गोरक्षा, ले०—श्रीविचारानन्दजी सरस्वती देहरादून, ७३. गोरक्षा नाटक, ले०—श्रीदुर्गाप्रसादजी गुप्त, ७४. पशुचिकित्सा, ले०—श्रीराधेप्रसाद वर्मा, ७५. अनुभूत पशु-चिकित्सा, ले०—श्रीकुँवर सुरेन्द्रसिंह 'इन्द्र', ७६. गोवर्धन-पद्यावली, ७७. गोपालन-शिक्षा, ले०—श्रीगदाधरप्रसाद मिश्र; ७८. किसान, ७९. गो-माहात्म्य-चन्द्रिका, ८०. सच्ची गोरक्षा, ले०—श्रीशोभारामजी 'धेनुसेवक', पो०—लखनादौन, सिवनी (सी० पी०), ८१. गोवर्धनशतक, ८२. पञ्चगव्य-चिकित्सा, ले०—श्रीअच्छेलालजी, ८३. गाय ही क्यों ? ले०—श्रीहरदेवसहायजी, प्र०-गोवंश-रक्षिणी सभा हिसार (पंजाब), मू०≡), ८४. गो-करुणानिधि, ले०—स्वामी श्रीदयानन्दजी सरस्वती, प्र०—वैदिकयन्त्रालय अजमेर, मू० ≡), ८५. किसानोंकी कामधेनु, प्र०—गंगापुस्तकमाला-कार्यालय अमीनाबाद पार्क लखनऊ, ८६. पशु-बलिदान, प्र०—पशुबलि-निरोध-समिति कलकत्ता, ८७. गोरक्षा, ले०—वैष्णव साधु श्रीनन्दरामदास, जमोला, प्र०—श्रीगुलाबचन्द कोठारी, जमोला, ८८. गोमेधसूक्त, ले०—पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, प्र० स्वाध्याय मण्डल, औंध (सतारा), ८९. वेद और पशुयज्ञ, ले०—पं० विश्वनाथजी गुरुकुल कांगड़ी, ९०. मांस-मीमांसा, ले०—प्रो० विन्ध्यनाथजी विद्यालङ्कार, ९१. वैदिक पशु-यज्ञ-मीमांसा, ले०—प्रो० विन्ध्यनाथजी विद्यालङ्कार, ९२. गोभक्ति-प्रकाश भजन, ले०—श्रीनटवरलाल चतुर्वेदी, प्र०—गोहितकारी कार्यालय (मथुरा), ९३. भारत-कष्टनिवारक महौषधि ग्रन्थ, ले०—पं० श्रीरामरक्षपालजी शर्मा, नजफगढ़ (दिल्ली), ९४. भारतीय गोधन, ले०—श्रीगिरीशचन्द्र चक्रवर्ती बी० ए० किशोरगंज (मैमनसिंह), ९५. दुग्ध-चिकित्सा—हिंदी-ग्रन्थरत्नाकर-कार्यालय, हीराबाग, (बम्बई), ९६. गोपालन (इंडियन प्रेस, इलाहाबाद)।

पत्र-पत्रिकाओंके वे अङ्क, जिनमें गो-सम्बन्धी बातें हैं—

१. 'यादव' फरवरी १९३१.

२. 'कामधेनु' फरवरी १९३६ से अगस्त १९३७ तक।

३. 'भक्ति' वैशाख, कार्तिक, माघ, फाल्गुन सं० १९८७, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद १९८८ एवं 'गवाङ्क' आश्विन पूर्णिमा सं० १९८७, श्रीभगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

४. 'किसान' जून सन् १९३३, जून-दिसंबर सन् १९३४ एवं सितंबर १९३५।

५. 'जीवदया और गोपालन' चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद सं० १९९१ एवं महोत्सव-अङ्क सन् १९३४।

६. 'गोरक्षण' मई सन् १९३६, ६२७-२९ सदाशिव पेठ पूना।

७. 'गोरक्षण साहित्य' मासिक, सरस्वतीप्रेस काशी।

८. 'गो-ग्रास' फरवरी सन् १९३५, मार्च, अगस्त, अक्टूबर १९३६, एवं मई, सितंबर १९३७, १४९ सराफ बाजार बम्बई नं० २।

९. 'सेवक' सितंबर, अक्टूबर, दिसंबर सन् १९२९ एवं जुलाई १९३० सेवक कार्यालय, १ सरकार लेन कलकत्ता।

१०. 'गृहस्थ' जुलाई सन् १९३७ एवं 'फूँका अङ्क' तथा 'गवाङ्क' १९३६ लक्ष्मीप्रेस, प्रयाग।

११. 'भारतगोहितैषी' साप्ताहिक पत्र, सम्पादक—भारत-गोहितैषी, दिल्ली।

गोशालाओं एवं सभा-सम्मेलनोंके भाषण

१. भारतवर्षीय गो-महासभाके सभी वार्षिक अभिभाषण।

२. बंग-बिहार-गोशाला-सम्मेलन तृतीय अधिवेशन, मुँगेरके सभापति श्रीमान् गिद्धौराधीशका अभिभाषण २-४-१९२६।

३. श्रीबंग-बिहार-गोशाला-सम्मेलनके आय-व्ययका विवरण, सं० १९८०-८२।

४. अखिल-भारतीय गोशाला-सम्मेलन, प्रथम अधिवेशन, प्रयागके सभापति श्रीमान् राजा रघुनन्दनप्रसाद सिंह एम्०एल्० ए० मुँगेरका भाषण, ५. अखिल-भारतीय षष्ठ गो-महासम्मेलनके अधिवेशनका संक्षिप्त विवरण, प्र०—अ० भा० गो-पालक संघ, बम्बई नं० ४, ६. गो-साहित्य-सम्मेलन, दरभंगाके सभापति पं० श्रीअयोध्यासिंहजी उपाध्यायका भाषण, ७. बिहारप्रान्तीय प्रथम गोरक्षण-सम्मेलनके शुभ अवसरपर पं० रामअनुग्रह शर्मा व्यासका भाषण सं० १९९१, ८. पं० दीनदयालजी व्यास बाबाका गोरक्षापर भाषण, ९. प्रसिद्धपत्रक नं० ६, पुरवणी—मुसल्मान, ईसाई और पारसी आदि अहिंदुओंसे नम्र प्रार्थना —प० द० के० पर्वते, सम्पादक 'गोरक्षण'।

प्रान्तीय तथा स्थानीय सरकारोंद्वारा प्रकाशित बुलेटिन एवं पर्चे

१. उड़ीसामें मवेशीकी उन्नति और चारेकी फसलकी खेती, कृषिविभाग, बिहार, बुलेटिन नं० ११९२८, २. बिहार और उड़ीसाके सिविल वेटेरिनरी डिपार्टमेंटके डाइरेक्टर श्री डी० कुइनलैन आई० वी० एस्० द्वारा प्रकाशित पर्चे, पर्चा नं० १ और २ सन् १९१४ तथा पर्चा नं० १ सन् १९१५ ई०, ३. बिहार पशुचिकित्सा-विभागका एक छोटा लेख, ४. मवेशियोंको टीका लगानेके विषयमें पुरी और दरभंगाके पण्डितोंकी सम्मति, सन् १९१३, प्र०—सरकार बिहार और उड़ीसा सरिश्ते खेती, ५. बुलेटिन नं० ७, प्र०—टहलराम गिरधारीदास सामन्त, ७३ नागदेवी स्ट्रीट, बम्बई नं० ३।

मराठीकी पुस्तकें

श्रीगोवर्धन-संस्था-पुस्तकमाला ६२९ सदाशिव पेठ पूना नं० २ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें—श्रीधेनुदास डोलेद्वारा लिखित १. धेनुकथा-संग्रह भाग १ और २, मूल्य प्रत्येकका १), २. दुधाचा द्रोण मू० ।), ३. गाईचें मोल, मू० ।), ४. धेनुबोध मू०)॥, ५. धेनु-सत्यनारायण, मू० ।), ६. श्रीचौंडेमहाराज-चरित्र, ले०—श्रीधेनुदास डोले और अनंतदास रामदासी, मू० १), ७. माझी भवली, ले०—श्रीधेनुदास डोले और अनन्तदास रामदासी, मू० =), ८. घर-गुती दूध दुभतें, ले०—मा० लक्ष्मीबाई वैद्य, मू० ।), ९. खरें गोरक्षण, मू० ॥), १०. गोरक्षणांची समग्र माहिती, मू० ।)।

गो-ग्रास-भिक्षा-संस्था, गिरगाँव बम्बईद्वारा प्रकाशित—

११. जनावरांचे रोगावरील देशी अनुभविक उपाय, मू० –), १२. मुठीची कोठी अथवा गो-ग्रास-भिक्षा-संस्था बम्बईकी कार्यपद्धति।

श्रीजीवदया-मण्डली बम्बईद्वारा प्रकाशित—

१३. हिंदुस्थानातील भयंकर कत्तल, १४. जनावरांचे रोगांवरील झाडपाल्याचे उपाय।

फुटकर

१५. शाला सोडल्यावर, ले०—पु० पा० गोखले, ककराड़, १६. गोसेवाहीच खरी की माया, प्र०—श्रीगोवर्धन प्रेस, खेतवाडी नवमी गली, बम्बई ४, १७. उद्यमका विशेषाङ्क 'पशुअङ्क' प्र०—'उद्यम' नागपुर, १८. जनावरांची जोपासना भाग १ और २, ले० स० पी० पालंदे मूल्य ॥=) और १), १९. दुधाची उपयुक्तता, मू० =) प्र०—कल्पतरु छापाखाना, शोलापुर, २०. कामधेनुचिकित्सा, प्र०—सजीवन कैमिकल वर्क्स गोकलपुरा, आगरा, २१. पशु-चिकित्सा, प्र०—लक्ष्मी-व्यङ्कटेश प्रेस, कल्याण, २२. गोसेवासंघ माहिती पत्रक, प्र०—गोपुरी (सेवाग्राम) वर्धा, २३. गोपति सम्प्रदाय, ले०—डा० स० का० आपटे ६०७ दक्षिण कसबा, शोलापुर, मूल्य ॥), २४. दुग्ध-व्यवसाय व जनावरांची जोपासना, ले०—स० रा० पालंदे बी० एजी०, सरकारी डेयरी, मियागाम (गुजरात) मूल्य १), २५. गाई-

चेंच दूधकाँ वापरावें, ले०—शं० ग० नवाथे, २९१ नारायण पेठ, पूना, मूल्य।-), २६. गुरांनां होणारे अपघात व त्यावर तात्कालिक उपाय, ले०—डा० पी. बी. माली, सरकारी वेटेरिनरी दवाखाना, नासिक मूल्य =)॥, इसी लेखककी दूसरी पुस्तक २७. पशुरोगचिकित्सा, मूल्य १॥), २८. दुग्धाहार-चिकित्सा-शिक्षक मू० १) ज्ञानमित्र कचेरी, ४८३ शनिवार पेठ, पूना, २९. गाईचें पालन व त्यापासून लाभ—वि० श्री० देशपांडे, कामधेनु दुग्धालय शोलापुर, ३०. जनावरांची पैदास आणि जोपासना—डा० नारायण कृष्ण बार्शीकर, वेटेरिनरी दवाखाना, नगर।

गुजरातीकी पुस्तकें

१. घास चारा अने ढोर सुधारणा, २. खातरोनी माहिती, ले०—सोभाभाई किशाभाई पटेल, सुणाव(गुजरात), ३. हिंद मां भयंकर कत्तल, ४. गोसेवा, ले०—महात्मा गांधी, प्र०—नवजीवन-कार्यालय, अहमदाबाद, मू०।-), वहींसे प्रकाशित ५. गोरक्षा-कल्पतरु, ले०—श्रीवालजी गोविंदजी देसाई मू०।-), ६. गाय-भैंस उछेरवानी रीत, प्र० दुलेराम छोटालाल अंजारिया, तंत्री 'खेतीवाड़ीविज्ञान' लींबड़ी, काठियावाड़, मू० २), ७. गायनुं पालन, ले०—मणिभाई पटेल, प्र०—नवजीवन कार्यालय अहमदाबाद मू।=), ८. पापा पगली, ले०—श्रीडाह्याभाई जानी, प्र०—विशावदर गोशाला, काठियावाड़, ९. दूधनो शहरनो सवाल, ले०—डा० हरिप्रसाद मेहता, प्र०—गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, मू० =), वहींसे प्रकाशित १०. दूधनुं विज्ञान, ले०—श्री प्रो० नरसिंहदास मू०।-), ११. गोपालन, प्र०—कृषि-गोरक्षाधिकारी, बड़ौदाराज्य, मू०।-)।

English Books

Books published by the Bombay Humanitarian League, 149, Shroff Bazar, Bombay:—

(1) Romance of the Cow—by D. H. Jani, B. Ag. Price Rs. 5/-/-. (2) Cattle Problem in British India, by M. B. Barad. Price -/8/-. (3) Cattle Problem in British India, by M. M Shah. (4) Improvement in Indian Live-stock, by R. B. Jayantilal N. Mankar. (5) Animal Sacrifice and Commandments of God. (6) The Vision of India. (7) Food and Character, by Samuel Hopgood Hast. (8) Christianity and Vegetarian in India, by the same author. (9) League's Silver Jubilee 1934. (10) Diet and Health. (11) Humane orders in Indian States. (12) Humane Publications. (13) Milk and Milch Cattle, by Sarabhai Prataprai. (14) Important Questions Answered by R. B. J. N. Mankar. (15) Improvement of Cattle, by Miss Georgianna Kendall.

The Hoard's Dairyman, Fort Atkinson (Wisconsin) U. S. A. Publications:—

(16) How to treat Common Ailments of Farm Animals ? (17) How Book. (18) Feed Book. (19) Its Fortnightly Magazine. (20) The Problem of Calf-Raising. (21) Better Dairy Herds through Breeding. (22) The Life of W. D. Hoard. (23) Hoard's Dairyman.

Bombay Government (Agri. Dept.) Publications:—

(24) Leaflets on the Purpose of Pure Breed Nos. 9, 10, 11, 15, 16; on Silage Nos. 16, 20; on Malignant Sore Throat and Haemorrhagic Septicaemia No. 1 of 1915 and No. 3 of 1931 and a leaflet on Co-operative Cattle-Breeding Societies and Dairies.

Leaflets and Bulletins of other Provincial Governments:—

(25) Some Diseases of the Cattle in India—Govt. of India Central Publication. (26) General Administration Report of the Military Dairy-Farms—Simla, Government of India Press. (27) Report of the Cattle Supply and Improvement Committee—The Commissioner's Printing Press, Karachi.

(28) Judging Dairy Cattle—University of Wisconsin, U. S. A. (29) British Friesian Journal—British Friesian Cattle Society, 11, Southampton Road, London W. C. 1. (30) Ration for Live-stock—

Ministry of Agriculture and Fisheries, London. (31) Dairy Statistics—United States Deptt. of Agriculture, Washington U. S. A. (32) Improvement of Cattle in India—All-India Cow Conference Association, 10, Old Post Office Street, Calcutta. (33) About Milk—The National Milk Publicity Council, 33 Garden Square, London, W. C. I. (34) General Information of National Humane Work—The Ontorio Society for Prevention of Cruelty to Animals, 11-23 Street, Toronto, U. S. A. (35) Proceedings of National Dairy Congress (1923), Washington—Govt. Printing Office, Washington U. S. A. (36) Catalogue of the Second All-India Cattle-Show (1939)—Offset Art Press, New Delhi. (37) Milk and Milk-Products—Industry Book Depot, Keshab Bhawan, Shambazar, Calcutta. (38) Notes on Milk—H. K. Lewis & Co. Ltd., London. (39) The National Milk Supply—United Dairies Laboratory Deptt., 31 St. Petersburgh Place, London W. 2. (40) More Milk, More Money—Washburn Crasby Company, Minneapolis, Kansas City, U. S. A.

Books of Imperial Council of Agricultural Research, Delhi:—

(41) "The Indian Journal of Veterinary Science and Animal Husbandry." (42) Milk Records of Cattle in Approved Dairy-Farms in India—Compiled by K. P. R. Kartha, B. A., Technical Assistant. (43) Journal of the Central Bureau for Animal Husbandry and Dairying in India. (44) Indian Farming Vol. 1 of 1940. (45) Journal of Indian Farming and Cattle-Breeding. (46) Further Investigation of Indian Cattle. (47) Development of Agriculture and Animal Husbandry in India.

(48) "Agriculture and Live-stock in India" (bi-monthly). (49) "The Indian Journal of Agricultural Science" (bi-monthly). (50) Scientific Monographs of the Imperial Council of Agricultural Research, Nos. 1 to 11. (51) Miscellaneous bulletins of the Imperial Council of Agricultural Research, Nos. 1 to 28. (52) Annual Report of the Imperial Council of Agricultural Research 1929-30, 1930-31, 1931-32, 1932-33, 1933-34, 1934-35, 1935-36, 1936-37, 1937-38. (53) A Review of Agricultural Operations in India up to 1933. (54) Agriculture and Animal Husbandry in India 1933-34, 1934-35, 1936. ICAR 13-1-35, Part II—Animal Husbandry. (55) Proceedings of the Board of Agriculture and Animal Husbandry 1933, 1935 and 1936. (56) A Description of the Imperial Institute of Veterinary Research, Muktesar; and its sub-station, the Imperial Veterinary Serum Institute, Izatnagar—by F. Ware, F. R. C. V. S. (57) Report on the Development of the Cattle and Dairy Industries of India—By Norman C. Wright. (58) Report on a Village Enquiry regarding Cattle and the Production and Consumption of Milk in Seven Breeding Tracts of India. Price Rs. 3/8/0. (59) Report on the Marketing of Milk in India and Burma, Marketing Series No. 23, Price Rs. 1/4/-. (60) Report on the Marketing of Hides in India and Burma, Marketing Series No. 36, Price Rs. 1/4/-. (61) Review of the Trade of India in 1942-43. Price Rs. 3/14/-.

(62) Protection of Animals—by Franz Wagner, Leipzig (Germany). (63) Dairy Science. (64) Rural India—Bombay. (65) National Humane Review. (66) Indian Farmer—Agricultural Institute, Allahabad. (67) Magazines of all the Agricultural Colleges. (68) Report of the Royal Commission on Agriculture—Supdt. Govt. Press, Delhi. (69) Memoirs of the Indian Council of Agricultural Research, Delhi, Nos. 25, 27, etc. (70) A Brief Report of

the Third Cow-Protection Week, 1930—Gorakshan Karyalay, Poona. (71) Be Prepared for the Cow-Protection Week—the same Publishers. (72) Leaflet No. 1 of 1914 on Rinderpest—D. Inimlam I. C. V. D., Supdt. Civil Veterinary Deptt. (73) Butter—California Dairy Council, San Francisco. (74) Report read at the Third Annual Cow-Show Fair, Sargodha—Kundon Lal Gossain, B. A., LL. B, Hony. Secretary. (75) The Vegetarian and Fruitarian—Vegetarian and Fruitarian, Leeviston, Idaho. (76) Our Dumb Animals—46, Central Street, Norwood. (77) Catalogue of Modern Dairy Appliances and Supplies—R. N. Mihra & Co., Dinapore Cantt. (78) The Treatment of Calves—Bihar S. P. C. A. (79) Welcome Address to Ghulam Hussain Hidayatullah on the Occasion of Thana District Agricultural and Cattle show—by Brijlal Narshilal Shah. (80) Cow-Protection in Mysore. (81) The Scheme of Baba Dhanpatrai for the effectual Protection of Cows. (82) Presidential Address of the Honourable Sir Santidas Asukaran J. P. 1941; All-India Conference for Prevention of Adulteration of Milk, Butter and Ghee. (83) Islam and Cow-Protection—Prani Daya Gyan Pracharak Sangh, Hyderabad. (84) Milk-Supply to Bombay—Nagindas and Maniklal, Sukhadwalla Building, Revelin Street, Fort, Bombay. (85) The Cow Question in India—The Christian Literature Society, Madras. (86) The Coming Revival of Spiritual Religion—By Sidney H. Beard. (87) Cow-Keeping in India—M/S. Thacker Spink & Co., Booksellers, Calcutta. (88) The Madras Agricultural Journal—Agricultural Research Institute, Coimbatore (South India). (89) Micormick-Dairying Milkers, by International Harvester Camp, Chicago. (90) Bacteria Control of Dairy-Farms. (91) A Talk to Boys and Girls on Kindness to Animals .(92) 80 Pictures on Farm Experiences. (93) Facts and Figures about the Royal Society for Prevention of Cruelty to Animals. (94) Good Rich Farm Service, Silver Town. (95) First Aid to Dairy Cows. (96) Human Diet and Education—by Sidney H. Beard. (97) Ten Reasons why the use of Flesh Food should be abandoned by all. (98) Cow—the Mother of Prosperity—by M. P. Kedar, I. D. D. (99) The Indian Veterinary Journal—P. Srinivas Rao G. M. V. C., Veterinary Surgeon, Madras. (100) The Standard Medical Guide of India 1935. (101) 'Diet and Health' July, Dec.' 36 June, Aug., Sep.' 37, Jan., Feb.' 38.

Books Published by the Deptt. of Agriculture, Bihar and Orissa:—

(102) Cattle Improvement and Cultivation of Fodder Crops in Orissa. (103) A Note on the Cattle Question in Bihar and Orissa.

(104) Veterinary Science and Public Health—by O. F. M. Holmes, M. A., Maclin. (105) The Indian National Demand—Secretary, All Parties' Conference and Convention. (106) The Proceedings of the All Parties' National Convention—(the same Publisher). (107) A Review on the Condition of Cattle in India—The All-India Cow-Conference Association, Calcutta. (108) Human Slaughter. (109) How to help Animals. (110) Note of a Sermon. (111) To Protect Animals from Cruelty. (112) Wisconsin Bull Book—Wisconsin Dairying Association. (113) Practical Feeding for Profit. (114) The Cattle Specialist—By Dr. David Roberts. (115) Agriculture and Live-stock in India. (116) Veterinary Materia Medica—by Winslow. (117) The Animal Year Book. (118) Veterinary Homoeopathy—By Humdoll. (119) Dairy Cattle Feeding and Management—by

Larson and Patney. (120) The Pocket Manual of Homoeopathic Veterinary Medicine. (121) Butter and Cheese—by G. Sutherland Thomson. (122) The Testimony of Science in favour of National and Human Diet. (123) Methods of Live-stock Improvement. (124) The Toiler and his Food—By Sir William. (125) Testing Milk and Its Methods. (126) Vegetarian Diet—by Ramdaslal, T. N. Foria. (127) The Dairy. (128) Animal Life. (129) New Spray and Pasturer. (130) New Power for a new age. (131) Our 90 years of Threshing. (132) The C. P. Sanitary Milk System. (133) The Condition of Cattle in India—By Nilanand Chatterji, M. A., B. L. (134) Blizzard, Hay-Chopper & Ensilage-Cutter. (135) Definition and Characteristics of Seven Breeds of Cattle of All-India Importance. (136) A Brief Survey of some of the important Breeds of cattle in India. (137) Nutritive valves of Indian cattle foods and feeding of Animals. (138) Standard Separator. (139) Cattle Breeding and Dairying—Industry Book Depot, Calcutta. (140) Art of Healing, by Prof. J. C. Ghose. (141) Simple treatment for Pack Animals—By H. Francis K. Hosali. (142) Facts about slaughtering. (143) The Natural Production of Vitamin D Milk, by the Simple Methods of feeding irradiated Yeast. (144) Is Flesh-Eating Morally defensible ?—By Sidney H. Beard. (145) A Note on the Milk Supply of Bangalore—Deptt. of Agriculture, Mysore State. (146) The Pusa Pedigree Dairy Herd in North Bihar—Government Printing B. & O. (147) All Parties' Convention, 1958. (148) Karachi Pinjrapole 1935-38. (149) Feeding and Milking of Cow—by A. C. Agarwal. (150) A Leaflet on Ensilage. (151) The Care and Management of Dairy Herds. (152) Butter fat or Ghee. (153) Protective Food. (154) Important Facts for Cow-Protection. (155) Food and Milk. (156) The Problem of India's Ghee Supply—By J. A. Hon. Duke. (157) Cow-Protection in India in 2 Parts—South India Humanitarian League—Price Rs. 10/- and 7/-. (158) Laboratory Manual of Milk-Production—By Prof. A. C. Agarwal and Prof. S. D. Ahmad—Price Rs. 12/-/- —Publisher Messrs. Gulab Chand Kapoor, Anarkali, Lahore. (159) Milk and Milk-Products—By W. L. Davies—Price 8/9/. (160) The Chemistry of Milk—By W. L. Davies, Price 24/8/-. (161) The Chemistry of Milk—By Richmond. (192) Manual of Dairy-Farming—By B. K. Dhare, Macmillan & Co. (163) Dairy Cattle and Milk Production—By Eckles and Palmer—Rs. 14/6/-. (164) Milk and Milk-Products—By Combs and Masui. (165) Modern Methods of testing Milk and Milk Products-By Van Slyke (166) Butter Industry—By O. Hunziker. (167) Milk Powder—By D. Hunziker. (168) Dairy Bacteriology—By Chalmer. (169) Dairy Bacteriology—By Hammer. (170) Dairy Bacteriology—By Chown. (171) Dairy Technology—By Larson and White. (172) Dairy-Farming in India—By Midhar & Bodhan—Publisher, Supdt. Govt. Printing, Calcutta. (173) Gospel and the Plough, Sam Higginbottam, Agricultural Institute, Allahabad. (174) Dairying History of the World—By Patel: Price Rs. 15/-. (175) 'Industry'-Special Cattle Number, Calcutta. (176) Kalyana-Kalpataru, Special Cow Number, Gorakhpur. (177) National Geographical Society, America. (178) Milk, the Most Perfect Food—Price Rs. 3/- By Godbole and Sadgopal, B. H. U. (179) Ghee—By the same authors, Price Rs. 3/-. (180) Feeds and Feeding, By Henry and Morrison. Price Rs. 25/-. (181) Butter-Making—By Larson and Patney.

(182) Feeding of Animals—By Jordan. (183) Monograph on Milk—Price Rs. 15/-. (184) Principles of Dairying—By Judkin. (185) Productive Dairying—By Ross. (186) Cow in India—By Satish Chandra Dasgupta, Publisher Khadi Pratishthan, Calcutta. Price 1st part Rs. 10/- and 2nd part Rs. 7/-. (187) 'The Newer Knowledge of Nutrition' 4th edition (Macmillan)—By McCollum E. V. and N. Simmonds. (188) 'Food' By Sir Robert McCarriyon. (189) 'Diet and the Teeth'—part 3. The Effect of Diet on Dental Structure and Disease in Man. Ref. Med. Res. Council Special Report Series No. 191 By Mallanby M. (190) 'Feeding the Family' 3rd edition by Rose M. S. (Macmillan). (191) 'Foundations of Nutrition' Revised Edition (Macmillan), By Rose M. S. (192) 'Chemistry of Food and Nutrition', 5th edition (Macmillan) By Sherman H. C. (193) 'Food products' 3rd edition (Macmillan), By Sherman H. C. (194) 'New Light on the Significance of Protective Foods'—Am. Pub. Health Assoc. Year Book 1230-31—By the Committee of Nutritional Problems. (195) 'The Most nearly Perfect Food' The Story of Milk; by Crumbine J & J. A. Tobrey (Williams & Wilkins). (196) 'The Problem of Nutrition' by League of Nations, 1936. (197) 'Milk Plant' Monthly, Feb. 1937, quoted in the 'Report on the Marketing of Milk in India and Burma' page 62. (198) 'Diet Surveys' By Dr. W. R. Aykroyd (1940). (199) Diet for boys during the School Age—Special Report Series No. 105, Medical Research Council, London—By H. C. Carrymann. (200) 'The School Boy'—A Study of his Nutrition, Physical Development and Health—By Friend G. E. (Heffer & Sons). (201) 'Milk Composition and Growth of School Children', J. Am. Med. Assoc. By M. C. Kinay P. L. & Leighton G. (202) 'Conclusions and Recommendations' of the Report on the Marketing of Milk in India and Burma, page 285. (203) 'Growth of School Milk Scheme'—'The Milk Industry' Monthly, April 1944, Price 5/-. (204) The Book of Dairy—Fleischmann. (205) Variations in the Composition of Milk—Tocher. (206) Text-Book of Milk Hygiene—Ernest. (207) Milk Industry—Davies. (208) Testing Milk and its Products—Farrington and Woll. (209) Rep. Dep. Comm. Milk and Cream Regs.—Monier Williams. (210) Fundamentals of Dairy Science—Rogers, Reinhold—publ. New York. (211) Nutrition of Farm Animals—Cornevin, Macmillan, New York. (212) Milk Dealer—Sommer. (213) The Technical Control of Dairy-Products—Majonnier and Troy. (214) Milk Production and Control—White House Conference N. York. (215) Milk and Nutrition—I Reading, 1936. (216) Lectures on Nutrition—Evans. (217) Proceedings of World's Dairy Congress 1923—Sommer. (218) *Ibid.* 1928—Elsdon and Stubbs. (219) *Ibid.* 1934—WAAL. (220) F. Dairy Science—Perlman. (221) *Ibid*—Roadhouse & Henderson. (222) *Ibid*—Guthrie & Sharp. (223) F. Dairy Res.—Briggs. (224) *Ibid*—Hiscox and Christian. (225) *Idid*—Wright. (226) *Ibid*—Jones. (227) F. Nutrition—Peterson & Skinner. (228) *Ibid*—Whittier, Cary & Ellis. (229) Science of Dairying—Penlington. Rs. 4/-. (230) Cow: The Mother of Prosperity. By Ralph A. Hayne. Rs. 1/8/-. (231) Cow-Keeping in India.—Isa Tweed—Thacker, Spink and Co., Calcutta. (232) Skim-Milk Make-Believe Milk: The Doctors' Defence—An Illusion.—Sarabhai Prataprai. (233) Tanning Industry in the Punjab. Report of the Board of conomic Inquiry. Punjab. 1939. Price Re. 1/-.

गौ मेरी मा है

(लेखक—श्रीशेख फ़खरुद्दीन शाह उर्फ़ गऊ प्यारा शाह)

खुदाने जब दुनिया पैदा की, उस वक्त उसने सब जानदारोंके दिलमें मुहब्बत भी भर दी। मगर उस मुहब्बतके साथ-साथ इन्सान और हैवानमें बेवकूफी और खुदगरजी भी मौजूद थी। यही वजह है कि इन्सान और हैवान आपसमें नाइत्तिफाकी करने लगे और एक दूसरेकी जानके गाहक बन गये। हैवानकी बात तो जाने दीजिये, उसे तो खुदाने कमअक्ल और कूढ़मग्ज बनाया। मगर इन्सान तो आकिल है मगर यह रफ्ता-रफ्ता हैवानसे भी बदतर हो रहा है। शेर जब शिकार करता है तो सिर्फ अपनी भूख मिटानेके लिये। खुदाने उसकी गिजा वैसी ही बना दी है। इसीलिये वह खूँख्वार जानवर अपना पेट पालनेके लिये जानवरोंका शिकार करता है। मगर इन्सान! खुदा इनपर करम करे, ये तो बिला वजह गूँगे और निहायत सीधे जानवरोंको मार डालते हैं। वह भी किसलिये? शौकके लिये। ऐसे लोग सिर्फ खूँख्वार जानवार ही कहला सकते हैं।

एक बात और भी ताज्जुबअंगेज है। ये बहादुर इन्सान शेरका सामना नहीं करते, चीतेपर निशाना नहीं लगाते, बल्कि खुदाकी कुदरतके खुशनुमा करिश्मों—खूबसूरत परिंदों या बेजबान हरिनोंको वक्तसे पहले मिटा डालते हैं। खुदा कभी उनपर रहम नहीं करता, जो उसके बंदोंको तकलीफ पहुँचाता है।

मुझे यह देखकर रंज होता है कि मेरे भाई अहले-इस्लाम इस मसलेपर गौर नहीं करते। वे यह खयाल नहीं करते कि गेहूँ, चना, मटर, तरकारी, दूध, दही, घी वगैरह—इतनी न्यामतें खुदाने बख्शी हैं कि अगर इन्सान सिर्फ एक अनाज एक रोजके हिसाबसे खाये तो भी अपनी उम्रभरमें खुदाके पैदा किये हुए अनाजोंका खातमा न होगा।

मैं जिस मसलेपर गौर करनेके लिये मजमून बाँध रहा हूँ, अब उसपर सीधे पहुँच जाना चाहिये।

सारा जहाँ अपनी मासे मुहब्बत करता है। वह मुहब्बत कितनी पाक और मजबूत होती है। माकी इज्जत और जान बचानेके लिये न जाने कितने सुर्खरू बेटोंने अपनी जान कुर्बान कर दी है। मगर यह कुर्बानी क्यों होती है? इसकी वजह सिर्फ यही नहीं है कि मा अपने बच्चेको नौ माह अपने पेटमें रखती है। या पैदा होनेके बाद उसकी देख-रेख करती है। बल्कि इसलिये कि मा खून देती है, जिस्म देती है, ताकत देती है। जब कभी कोई नामर्दीका काम करता था तो उसकी मा गुस्सेसे बोलती थी, तूने मेरा दूध शर्मा दिया। मगर आज सैकड़ों-लाखोंकी तादादमें ऐसे नौजवान मिलेंगे, जिन्होंने माका दूध तो शर्मा ही दिया है बल्कि उससे भी दो कदम आगे बढ़ गये हैं। वे अपनी माका खून पीनेपर उतारू हो गये हैं!!

मैं छोटा था, तभीसे मेरे अब्बाने मेरे लिये एक गाय ला रक्खी थी; क्योंकि मेरी माका इंतकाल हो चुका था। मेरी नयी मा गाय मुझसे उतना ही प्यार करती थी, जितनी सगी मा। वह दूध देती थी, मैं पी लेता था। मैं जब कभी उसके पास बैठता, वह मुहब्बतसे मेरे हाथ, पैर, कमर और सिर चाटा करती थी। मैं उसे पुचकारा करता था, वह बड़ी प्यारभरी निगाहसे मुँह उठाकर मेरी ओर देखा करती थी। मैं दिनभर उसीके पैरोंमें लोटता था, मगर मजाल कि उसने मुझे कभी तकलीफ दी हो। एकदफा एक मुहल्लेका कुत्ता पागल हो गया था। मैं अपनी गायके साथ बाहर धूप खा रहा था। इतनेमें शोर हुआ। 'बचो, अब्दुल! पागल कुत्ता आया।' मैं सकपका गया, डर गया और रोने लगा। कुत्ता मेरी ओर झपटा, मगर मेरी मा गायने मुझे बचा लिया। अपने पैने सींगोंसे उसने उस कुत्तेको अधमरा कर डाला और फिर आकर मुझे चाटने लगी। उस दिन मैंने गायमें माका नज्जारा देखा। उस रोजसे मेरी गाय मेरी मा बन गयी। उसके पाँच वर्ष बाद वह गाय बीमार पड़ी। न जाने क्या हो गया था। मैंने बहुत दौड़-धूप की: मगर कुछ न हो सका। मेरी मा इस दुनियासे कूच कर गयी, मगर आखिरी साँसमें भी वह मेरी गोदमें सिर रक्खे, मेरी तरफ प्यार और दर्दकी निगाहसे देखती हुई आखिरी बार मेरे मुँहको चाटकर खत्म हो गयी! मैं उससे लिपट-लिपटकर रोया, खूब रोया! मैंने उस रोज अपनी माको खो दिया! हमलोग गौ पालते हैं खुदगर्जीके लिये, दूधके लिये। मगर यही सच्ची मुहब्बत नहीं है। अगर दिलसे गायकी मुहब्बत की जाय तो दुनियाभरके ऐशोआराम घरमें भर जायँगे। उस दिनसे ही मुझे गायमें एतकाद (श्रद्धा) हो गया और मैं जहाँ जाता हूँ, वहाँ हिंदू-मुसल्मान सबको गायकी मुहब्बतका सबक सिखाता हूँ। हिंदुस्थान अगर फिरसे वाकई सोनेकी चिड़िया, इल्मोहुनरका खजाना बनना चाहता है तो उसे गायकी

हिफाजत करनी ही होगी। क्या हिंदू क्या मुसलमान, हरएक हिंदुस्थानीका फर्ज है कि गौ अम्मासे मुहब्बत करे। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि जो एक गौकी परवरिश सच्चे दिलसे एतकादके साथ करेगा, उसे खुदा दुनियाभरकी नियामत बख्शेंगे।

दुनियामें और भी बहुत-से जानवर हैं; मगर जो सिफ्त गायमें है, वह किसीमें नहीं। बिलायती डाक्टरोंने भी यह फैसला दिया है कि गायके दूधके बराबर इन्सानकी कोई गिजा नहीं है। गायके दूधसे दही, मक्खन और घी तो मिलता ही है; साथ ही दिल और जिगरकी बीमारीवालोंके लिये गायका दूध निहायत मुफीद है। हमारे मुल्क हिंदुस्थानमें जबतक गायकी कद्र हुई, तबतक हमारे खेतोंमें-से सोनेके बाल पैदा हुए। जबसे हमलोगोंने गौके फवायदको महसूस करना छोड़ा, तभीसे हम गैरोंके मकरूज (ऋणी) और गरीब हो गये।

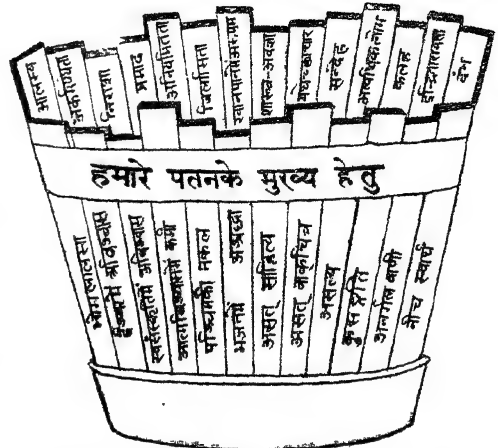
मैं फिर जोरके साथ हर हिंदू और मुसल्मानसे इस्तद्वा (प्रार्थना) करता हूँ कि खुदाका करम पानेके लिये, खुशोखुर्रम रहनेके लिये और आपसमें मुहब्बत और दोस्ती रखनेके लिये यह सबका फर्ज है कि इस मेरी मा गायकी हिफाजत करें। खुदा बरकत करेगा।

मनुष्य-जीवनका परम लक्ष्य

मनुष्य-जन्मका चरम और परम लक्ष्य, एकमात्र लक्ष्य है—भगवत्प्राप्ति। हिंदू सभ्यताने इसी लक्ष्यको सामने रखकर समाज और समाजधर्मका निर्माण किया है। वर्णधर्म, आश्रम-धर्म, साधारणधर्म और विशेषधर्म—सभीका एकमात्र लक्ष्य यही है। इन धर्मोंका यथायोग्य पूर्ण पालन होनेसे समाजमें सुख-समृद्धिकी वृद्धि होती है। प्रत्येक व्यक्ति इहलौकिक पवित्र (सर्वहितकारिणी) उन्नतिके पथपर आगे बढ़ता हुआ सुख-शान्तिसे जीवन-यापन करता है और ऐसा करता हुआ वह वस्तुतः अपने चरम लक्ष्य भगवत्प्राप्तिकी ओर अग्रसर होता रहता है। भगवत्प्राप्तिका लक्ष्य स्थिर रहनेसे जीवन-की प्रत्येक चेष्टामें भगवान्‌का पवित्र आश्रय रहता है और भगवत्कृपामें विश्वास दृढ़ होता है। यह ईश्वर-विश्वास ही जीवनकी समस्त सफलताओंका मूल है। ईश्वर-विश्वास है तो सब कुछ है, नहीं तो कुछ नहीं। हमलोग आज गोमाताकी रक्षा चाहते हैं। पर चाहते हैं, केवल लौकिक साधनोंसे। इसीसे कर नहीं पाते। पृथ्वीरूपा गोमाता अथवा गोरूपा पृथ्वीमाता जब विश्वास करके भगवान्‌को पुकारती है, और विश्वके समस्त ऋषि, मुनि, देवता उसमें साथ देते हैं, तभी साधुओंके परित्राण, दुष्कृतोंके—असुर-राक्षसोंके विनाश और धर्मके संस्थापनके लिये भगवान् प्रकट होते हैं एवं तभी सबके सब प्रकारके दुःखोंका नाश होता है। आज यदि गोमाताको बचाना है तो हमें चाहिये कि हम अपने लौकिक साधनोंका आधार बनावें ईश्वर-विश्वासको, और उसीके बल-पर प्रयत्न करें। ईश्वर-विश्वासकी सहकारिणी प्रधानतः पंद्रह साधनाएँ और होती हैं, जिनका सहयोग मिल जानेपर जीवन पवित्र, जीवनका प्रत्येक कार्य पवित्र और स्वाभाविक ही प्राणिमात्रके लिये कल्याणकारक होता है और मनुष्य आगे बढ़ता हुआ इस लोकमें स्वयं सुखी होता तथा सबको सुखी करता हुआ अन्तमें जीवनके चरम लक्ष्य भगवान्‌को पा लेता है। 'ईश्वर-विश्वास' के साथ रहनेवाले वे पंद्रह सद्गुण हैं—उच्च आकाङ्क्षा (भगवत्प्राप्तिकी अनन्य इच्छा), सदाचार, संयम, सत्सङ्ग, न्याय, श्रद्धा, दया, प्रेम, तप, सत्य, सेवा, अहिंसा, निर्भयता, दृढ़ता और आत्मबल। हमलोगोंको चाहिये कि जीवनमें इन अचूक साधनोंको अपनावें, फिर अपने-आप ही जीव-जगत्‌के दुःख मिट जायँगे।



असलमें भगवत्प्राप्तिके लक्ष्यसे ही सारे कर्म होने चाहिये। फिर वे कर्म यदि सत्कर्म हों, तो कहना ही क्या है। सोना और सुगन्ध दोनों हैं। गोरक्षा, धर्मसेवा, लोकसेवा, प्राणिसेवा, देशसेवा, कुटुम्बसेवा आदि सभी धर्म हैं और सेव्य हैं; परन्तु ये होने चाहिये भगवत्प्राप्तिके साधन—भगवत्प्राप्तिके माध्यम ! इनमेंसे होते हुए हमें भगवान्‌के पास पहुँचना है। इनके सम्पादनका एकमात्र अर्थ होना चाहिये—भगवत्सेवा। यह भाव जाग्रत् रहता है, तभी इन सत्कर्मोंका सत्स्वरूप बना रहता है। जहाँ यह भाव नष्ट हुआ वहीं इन्हींके द्वारा अधर्मका सम्पादन, पापका पोषण और संग्रहण होने लगता है। गो-ब्राह्मण, लोक-देश, प्राणी-कुटुम्ब आदिकी सेवाको ही यदि परम लक्ष्य मान लें तथा भगवान् एवं भगवान्‌के आदेशरूप शास्त्रोंको न मानें तो फिर परमार्थ-दृष्टिके स्थानमें केवल अर्थदृष्टि हो जानेके कारण तुरंत ही काम, क्रोध, लोभ, हिंसा, अभिमान, ममत्व, आसक्ति आदि सब दोष आ जुटेंगे और सहज ही सत्‌को असत् बना देंगे। फिर गौ, ब्राह्मण, लोक, देश, जीव-जगत् और कुटुम्बकी सेवा हम तभी करेंगे, जब उनसे हमें कोई आर्थिक या भौतिक लाभ होगा ! अन्यथा सहज ही इन सबका त्याग कर देंगे, वरं स्वार्थके लिये इन सबकी बलि चढ़ानेमें भी नहीं हिचकेंगे ! अतएव इन स्वरूपतः सत्कर्मोंके सम्पादनमें भी यदि भगवद्विमुखता होती हो तो समझ लेना चाहिये कि हम लक्ष्यभ्रष्ट हो रहे हैं। असलमें गोरक्षा, देश-सेवा, लोक-सेवा, करनी है भगवान्‌के लिये—भगवान्‌को भुलानेके लिये नहीं। भगवान्‌को न भुलाकर करेंगे तो गोरक्षा, देशोन्नति, लोकसंग्रह, परिवारकी उन्नति, व्यक्तिगत अभ्युदय—सभी कुछ होगा। बहुत सुन्दर होगा। भगवान्‌को भूल जायँगे तो सफलता तो होगी ही नहीं, कलह-क्लेश और पाप-ताप बढ़ जायँगे; और फिर बुद्धिके विपरीत हो जानेपर उन कलह-क्लेश और पाप-तापमें ही हमारी सद्‌बुद्धि हो जायगी। अतएव उपर्युक्त सोलह साधनोंके द्वारा निरन्तर भगवान्‌की ओर चित्तकी वृत्तिका प्रवाह बहाते रहना चाहिये। ये सोलह साधन ही जीवन-विकासकी सोलह कलाएँ हैं। इन्हींमें निहित है सच्ची सफलता और इन्हींमें है परम कल्याण !



इनके विपरीत निम्नलिखित २६ दुर्गुण ऐसे हैं, जो ऊपर दिखाये हुए जीवनरूपी टबमें सब ओर छा जानेपर जीवनको सर्वथा अपवित्र, राक्षसी, पर-पीड़न-परायण और पाप-तापमय बनाकर अन्तमें नरकोंकी प्राप्ति कराते हैं। अतएव बड़ी सावधानीके साथ इन दोषोंको जीवनमेंसे एक-एक करके तुरंत निकाल देना चाहिये और उपर्युक्त सत् साधनोंका संग्रह और आश्रय करना चाहिये। ये दोष हैं—ईश्वरमें अविश्वास, अपनी संस्कृतिमें अविश्वास, आत्मविश्वासमें कमी, यूरोपकी नकल और उनके दोषोंका ग्रहण, भजनमें अश्रद्धा, भगवान् और सद्विचारोंमें अश्रद्धा तथा भोगलालसाको बढ़ाकर परहिंसा-परधन-परस्त्री और परापवादमें प्रीति करानेवाले भोगमय असत् साहित्यका अध्ययन, धर्म और सद्विचारोंको मिटानेवाले सिनेमा, असत्य व्यवहार और असत्य भाषण, कुसङ्गति, काम, क्रोध, लोभ और हिंसासे भरी असंयमपूर्ण अनर्गल वाणी, नीच स्वार्थ (दूसरोंके बुरेकी परवा न करके या उनका बुरा करके लाभ उठानेकी चेष्टा), आलस्य, अकर्मण्यता, निराशा, प्रमाद, अनियमितता, विलासिता (शौकीनी), खान-पानमें असंयम (भक्ष्याभक्ष्यका कुछ भी विचार न करके अभक्ष्य-भक्षण करना), शास्त्रकी अवज्ञा (शास्त्रोंको न मानकर मनमाना आचरण करना), यथेच्छाचार, संदेह (भगवान्, शास्त्र, साधुता, दैवीसम्पत्ति, भगवत्प्राप्ति और शुद्ध आचरणमें अविश्वास), अत्यधिक लोभ (जिसके कारण हिंसा, अधर्म, असत्य, अन्याय, परपीड़ा और परस्वापहरणका कुछ भी ख्याल न करके लोग धनके लिये पागल हो जाते हैं), कलह, इन्द्रियारामता, दम्भ (लोगोंको ठगनेके लिये ऊपरसे अपनेको अच्छा दिखलाना—अच्छा बनना नहीं) और अदम्य भोग-लालसा (विषयभोगको ही जीवनका लक्ष्य मानकर उसीकी प्राप्तिमें लगा रहना)।

गोसेवा परम पवित्र कर्तव्य

(श्रीयुक्त बाबू जुगलकिशोरजी बिड़लाका संदेश)

गोरक्षाको हिंदू (आर्य) धर्म परम पवित्र कर्तव्य मानता है । आर्य-धर्मके अन्तर्गत जितने भी सम्प्रदाय—सनातनी, सिख, बौद्ध, जैन और आर्य-समाजी आदि हैं, इस सम्बन्धमें एकमत हैं । उनके प्रवर्तक आचार्य गुरुओंने गोरक्षाके लिये विशेष आदेश दिये हैं । भगवान् बुद्धने तो गौको माताकी उपमा दी थी । यद्यपि भारतके बाहर चीन, जापान आदि बौद्धदेशोंके अधिकांश लोगोंमें समयके प्रभावसे आजकल वैसी भावना नहीं पायी जाती, तथापि धार्मिक आदर्श तो उनका भी वही है । यही कारण था कि सन् १८७४ तक जापानमें गोहिंसाको बड़ा अपराध माना जाता था और राजकीय कानूनसे गोहिंसा करनेवालेको कड़ी सजा मिलती थी । चीनके बौद्धमन्दिरोंके पुजारी तथा साधुलोग अब भी किसी पशु-पक्षीका मांस नहीं खाते । भारतके हिंदुओंकी गोरक्षाकी भावना तो अब भी वैसी ही प्रबल है । किन्तु पराधीनता और कुछ अन्य कारणोंसे गोरक्षा करनेमें वे समर्थ नहीं हैं । इसलिये जबतक हिंदुओंकी शक्ति, संख्याबल और योग्यता न बढ़े, तबतक सच्ची गोरक्षा यहाँ भी सम्भव नहीं । तथापि गोरक्षा तथा धर्मके नियमोंका पालन करना मनुष्यमात्रका कर्तव्य है । आर्यधर्मके उच्च सिद्धान्त, जो सत्यकी पराकाष्ठाको प्रकट करते हैं, सद्गुण और सदाचारके अचल और दृढ़ पायोंपर खड़े हैं । वे किसी एक जाति और देशकी सम्पत्ति नहीं हैं । मनुष्यमात्रके लिये ही वे धारण करने योग्य हैं । वे मनुष्यताका आदर्श दिखा रहे हैं । किन्तु खेदकी बात है कि वर्तमान समयका संसार केवल भौतिकवादके ही पीछे पागल हो रहा है । यूरोप-अमेरिकाके विद्वान् इस बातको मानते और जानते हुए भी कि गायका दूध-मक्खन आदि ही शारीरिक और मानसिक उन्नतिके लिये उत्तम वस्तु है, गोमांस बड़े चावसे खाते हैं । माना कि वे गोपालन भी करते हैं, परन्तु वहाँ गोहिंसाकी भी कोई सीमा नहीं । वहाँ अन्नका भी बाहुल्य है । अन्नकी उपज तो अमेरिकामें इतनी अधिक होती है कि कभी-कभी वे मकई तथा जौको ईंधनके भी काममें लेने लगते हैं । वर्तमान समयके विज्ञानके द्वारा वहाँके विद्वान् वनस्पति-जातीय वस्तुओंमेंसे भी मांस-जैसी वस्तु बना लेते हैं ।

कोयला, घास या लकड़ीके बुरादे आदिसे भी बनावटी अन्न, वस्त्र, चमड़ा, चीनी आदि-जैसी अनेक वस्तुएँ वहाँ बनायी गयी हैं । फिर भी उनके लिये यह कितनी कृतघ्नता, खेद और लज्जाकी बात है कि वे गौ-जैसे उपकारी पशुको मारते और खाते हैं !! यद्यपि वे आर्थिक स्वार्थवश इसका समर्थन भी करते हैं !! यों तो अफ्रीकाकी एक जंगली जातिके लोग आर्थिक स्वार्थोंकी आड़में अपने बूढ़े माँ-बापतकको मारकर खा जाते हैं, पर क्या यह मनुष्यत्व है ? अमेरिका एक सम्पन्न देश है; वह अपनी सभ्यताके लिये विशेष अभिमान रखता है, न्यायकी बड़ी-बड़ी डींगें भी हाँकता है । किन्तु अभीतक संसारके सामने कोई भी वैसी बात दृष्टि-गोचर नहीं हुई । वह धन-सम्पत्ति, विद्या-बुद्धि, सामर्थ्य-शक्ति किस कामकी जिसका संसारकी भलाईके बदले बुराईमें उपयोग हो । इस देशमें भी ऐसे लोग हैं, जो गायकी कुर्बानी करनेकी जिद्द धर्मके नामपर करते हैं । हम उनसे तथा यूरोप, अमेरिकाके लोगोंसे भी यह निवेदन करना चाहते हैं कि वे अपने अन्तःकरणसे पूछें कि गाय-जैसा सर्वश्रेष्ठ और उपकारी पशु, जो मनुष्य-जातिका इतना अधिक उपकार करता हो, कृतज्ञता और मनुष्यताकी दृष्टिसे रक्षाका पात्र है या नहीं । यदि वे लोग उसकी रक्षा न भी करें तो कम-से-कम उसे मारकर खा जाना तो घोर अपराध या पाप ही है, ऐसा तो विवेक-बुद्धिको मानना ही पड़ेगा । हमलोगोंका यह कर्तव्य है कि प्रचारके द्वारा इस सम्बन्धमें उन लोगोंको उनके कर्तव्यका भी ज्ञान करावें ।

प्रार्थना

परम प्रसिद्ध अष्टसिद्धि-नवनिद्धि-खानि, 'सोम' सुखदानि देह-नरक-निकंदिनी ।
सेब्य सुरबृंद की, मही की महामान्य मूर्ति, युग-युग आप अवतरित स्वच्छंदिनी ।
पूजित पुरुष पुरुषोत्तम पुराण की त्यों, नीरधि-निवासिनी पवित्र जगबंदिनी ।
बार-बार बंदि श्रीपदारबिंद पूजनीय, कोटिशः प्रणाम अम्ब कामधेनुनंदिनी ॥

—दुःखभंजन शास्त्री 'सोम'

गोसेवाका महत्त्वपूर्ण प्रश्न

(डा० श्रीकैलाशनाथजी काटजू एम्० ए०, एल्-एल्० डी० का संदेश)

भारतवर्षमें गौकी महिमा क्या वर्णन की जाय। हमारे शास्त्र इससे भरे हुए हैं। गाय माताके समान मानी जाती है और वास्तवमें वह माता ही है। करोड़ों बच्चे गायका दूध पीकर जीवन प्राप्त करते और हृष्ट-पुष्ट होते हैं। हमारी खेती-बारी सब गौके आधारपर है। संक्षेपतः हमारी सारी आर्थिक सभ्यता गौपर बनी हुई है। धार्मिक दृष्टिसे भी गोदानका बहुत बड़ा महत्त्व है। परन्तु यह कहना भी ठीक होगा कि गौकी दुर्दशा भी भारतवर्षसे अधिक कहीं नहीं है। भारतकी गायें अधिकतर दुबली-पतली और कमजोर होती हैं, नस्ल भी खराब होती जा रही है। पंजाब और संयुक्तप्रान्तके पश्चिमी जिलोंमें तो दशा कुछ अच्छी भी है, परन्तु पूर्वमें तो बहुत ही शोचनीय है।

इस ओर जनसंख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गयी। मनुष्यने अपना पेट पालनेके लिये सारी धरतीमें हल चला दिया। पशुओंके लिये कोई चरागाह नहीं है। परिणामतः गायको चरनेके लिये घास नहीं मिलती, दूध नहीं होता और गरीबीके कारण दुखी किसान गायकी कुछ सेवा या रक्षा नहीं कर सकते। यूरोप, अमेरिकाकी गायोंको देखकर हर्ष होता है। बड़े डील-डौलकी, मजबूत, हृष्ट-पुष्ट, मन-मनभर दूध देनेवाली होती हैं। वहाँके लोग जिस गायको जीवित रखना चाहते हैं, उसकी ऐसी सेवा करते हैं, उसके खान-पान और स्वास्थ्य आदिका ऐसा ध्यान रखते हैं कि मैं क्या वर्णन करूँ। जहाँ गौ माता मानी जाय, वहाँ उसकी दुर्दशा हो और जहाँ गो-हत्या पाप न समझी जाय, वहाँ उसकी ऐसी रक्षा और सेवा! यह बात विचारणीय है।

अभी हालमें प्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० सतीशचन्द्र दास गुप्तने 'भारतवर्षकी गाय' नामक एक बड़ी पुस्तक लिखी है। उसमें इस विषयका प्रत्येक दृष्टिकोणसे विस्तारपूर्वक वर्णन है। मुझे भी अभी हालमें ही कानपुरकी मारवाड़ी गोशालामें जानेका अवसर मिला था। बड़े-बड़े शहरोंमें यह समस्या एक भयानक रूप धारण करती जाती है। कानपुरकी जन-संख्या ८ लाख हो गयी है। दूधकी तो चारों तरफसे बहुत माँग, किन्तु गोरक्षाका कोई प्रबन्ध नहीं। शहरमें गायका पालना बहुत कठिन। जो गृहस्थ गाय पालते हैं, वे रातको उसे शहरकी सड़कों और गलियोंमें छोड़ देते हैं। अब बताइये कि इस तरह गायका पालन-पोषण कैसे हो सकता है। इसके अतिरिक्त हमारे भारतमें गाय और भैंसका बड़ा मुकाबला है। पच्छिमी देशोंमें गायका ही दूध पीते हैं, परन्तु भारतमें तो अधिकतर भैंसका दूध काममें लाया जाता है और रुचि भी उसी ओर है। यह नहीं जानते कि गायका दूध मनुष्यके लिये जितना अधिक लाभप्रद और उपयोगी है, उतना ही भैंसका दूध हानिकारक है।

जो योजना गोसेवाकी बनायी जाय, उसमें इस गाय-भैंसकी समस्यापर विशेष रूपसे विचार करना पड़ेगा। इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं कि गायकी नस्ल सुधारनी है। अच्छी जातिके साँड़ोंका हमको प्रबन्ध करना अनिवार्य है। प्रत्येक गाँवमें कानूनद्वारा गायके लिये गोचरभूमि अलग निकालनी होगी। यह तो सब करना ही है; परन्तु जो मौलिक बात है, वह हमारे देशकी दरिद्रता और बढ़ती हुई आबादी है। हम जब अपने शास्त्रों और प्राचीन ग्रन्थोंका अध्ययन करते हैं तथा उस समय भारतमें जो आनन्दमङ्गल था, दूध-घीकी जो नदियाँ बहती थीं, उसको स्मरण करते हैं, तब उसके साथ यह नहीं भूलना चाहिये कि उस समय भी भारत तो इतना ही विशाल था, परन्तु जनसंख्या दस-पाँच करोड़से अधिक नहीं थी। बड़े-बड़े नगर थोड़े ही थे; गाँव थे और हर गाँवके अंदर हजारों बीघा जमीन काश्त और चरागाहमें शामिल होती थी। मनुष्य और पशु दोनोंके लिये ही खाने-पीनेकी कोई कमी नहीं थी और सबसे उत्तम यह कि राज्य अपना था, भारतका धन भारतमें ही रहता था। उस समय इतनी सम्पन्नता और सामर्थ्य थी कि दूध न देनेवाली; बूढ़ी और ठाठ गायोंकी भी देख-भाल, पालन-पोषण और सेवा-शुश्रूषा हो सकती थी तथा लोग करते थे। अब आबादी चौगुनी-पँचगुनी हो गयी, भारतकी सम्पत्ति एक सागर-धाराकी भाँति देशके बाहर बही जा रही है। हमारे यहाँके घरेलू उद्योग-धंधे सब नष्ट हो गये और उसके साथ-साथ बड़े-बड़े शहर और नगर बन गये हैं। हिंदुओं और विशेषकर किसानोंमें इतनी सामर्थ्य नहीं रह गयी कि बूढ़ी या दूध न देनेवाली गायोंकी रक्षा कर सकें। वे उनको काटते तो नहीं, किन्तु काटनेवालोंके हाथ बेचनेमें कोई लज्जा या संकोच नहीं करते। दोनों अवस्थाओंमें वस्तुतः कोई अन्तर नहीं, अन्तिम परिणाम तो दोनोंका एक ही है।

इस देशमें प्रतिवर्ष लाखों और करोड़ों ऐसी गायें कट जाती हैं, जिनसे वर्षोंतक बच्चे उत्पन्न हो सकते हैं। परन्तु हमारी शक्तिहीनता तो इतनी बढ़ गयी है कि एकके बाद दूसरा बच्चा देनेतकके मध्यकालमें दूध न दे सकनेके कारण उनका रख सकना एक बड़ा भार हो जाता है। हम गायको माता मानते हैं। गोरक्षाके नामपर प्रतिवर्ष कई स्थानोंपर हिंदू-मुस्लिम बलवे हो जाते हैं। परन्तु इसके साथ-साथ हिंदू ही हर साल लाखों गायोंको बेच देते हैं, यह जानते हुए भी कि उनके इस कार्यसे बेचारी गोमाताकी क्या दशा होगी।

यह समस्या वास्तवमें कोई सरल प्रश्न नहीं है। एक ही प्रकारसे यह प्रश्न हल नहीं हो सकता। देहातोंमें गोचरभूमि, गायकी रक्षा और चिकित्सासे लेकर शहरोंमें दूध कैसे पहुँचाया जाय और बाँटा जाय—इन सब बातोंपर हमको दृष्टि डालनी होगी और इसके साथ-साथ यह भी विचार करना होगा कि बूढ़े, लूले-लँगड़े पशुओंके साथ क्या बर्ताव किया जाय, उनको कैसे और कहाँ रक्खा जाय। जिस मनुष्यको खानेको नहीं मिलता, उससे यह आशा रखना कि वह अपनी बूढ़ी गायकी सेवा करेगा, बिल्कुल निराधार है। मेरे विचारसे गोरक्षाके लिये हमको कठोर नियम और विधान बनाने पड़ेंगे। सन् १९३९ ई० में घीका प्रश्न संयुक्तप्रान्तीय मन्त्रिमण्डलके समक्ष उपस्थित हुआ था। उस समय तो यह विचार था कि शुद्ध घी उद्योगकी रक्षाके लिये कानूनद्वारा जहाँ-जहाँ घी अधिक बनता हो, वहाँ-वहाँ वनस्पति घीकी बिक्रीका निषेध कर दिया जावे! हमें शहरोंके बाहर बड़े-बड़े पिंजरापोल और गोशालाएँ सरकारकी ओरसे बनानी पड़ेंगी और वहाँसे सहयोग-समितियों (कोऑपरेटिव सोसाइटियों) द्वारा शहरोंमें दूध भेजनेकी व्यवस्था करनी होगी। इसके साथ-साथ इस खोजकी बड़ी आवश्यकता है कि नस्लकी कैसे उन्नति की जाय। पश्चिमकी गाय पूर्वमें नहीं रह सकती और यदि रहे भी तो उसकी बछियाकी नस्ल बिगड़ जाती है। पूर्वी गायोंके लिये किस नस्ल और जातिके साँड़ अच्छे और उपयुक्त होंगे, इस विषयमें भी बड़ी खोजकी आवश्यकता है।

अब हम सबको आशा है कि भारतमें हमारा स्वतन्त्र राज्य होगा। उचित होगा कि स्वतन्त्र भारतके प्रत्येक प्रान्तमें एक विशेष विभाग गोरक्षाके नामसे हो और उसका दायित्व एक बड़े जानकार जिम्मेदार अफसरको दिया जाय। इस गोरक्षा-विभागद्वारा गोसेवा और सहायताके निमित्त अच्छे-अच्छे प्रकारके कानून और आदेश निकाले जायँ। सभी बातोंका ध्यान रक्खा जाय। परन्तु मेरे विचारमें इसका विशेष प्रबन्ध करना पड़ेगा कि जो गाय दूध न देती हो और उसका मालिक उसकी रक्षा किसी कारण न कर सकता हो, उसकी बिक्री या तो सरकारी फार्ममें की जाय अथवा परमिटद्वारा दूसरे लोगोंके हाथ। किन्तु ऐसी गायोंकी भी हत्या करना बड़ा अपराध माना जाय। संक्षेपमें कहना यह है कि गोसेवाका प्रश्न भारतनिवासियोंके जीवन और उन्नतिके लिये एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है और इसपर सम्पूर्ण रूपसे ही हमको विचार करना चाहिये।

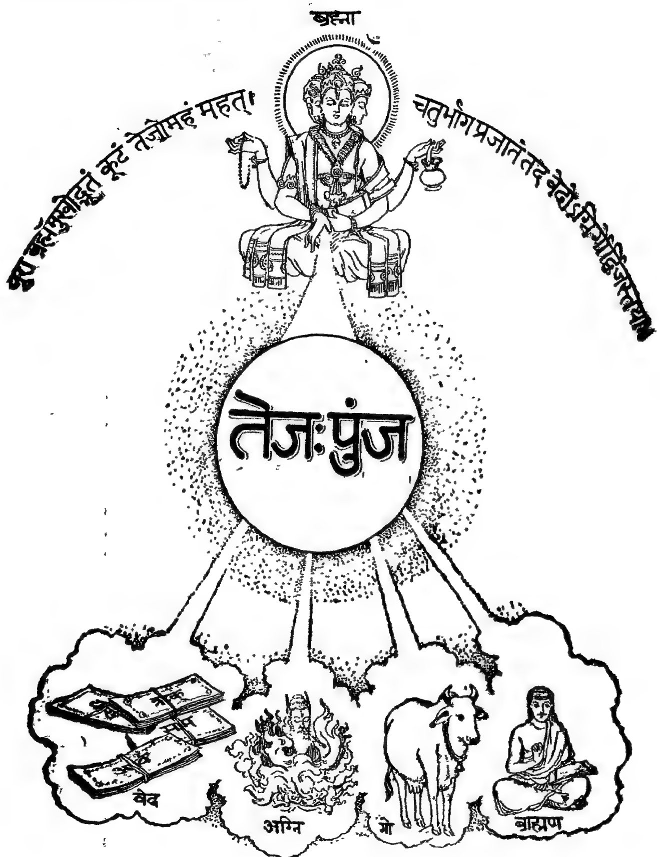
जीवन-मरणका प्रश्न

(राव बहादुर श्रीजयन्तीलाल एन्. मानकर, मन्त्री बम्बई-जीवदया-मण्डलीका संदेश)

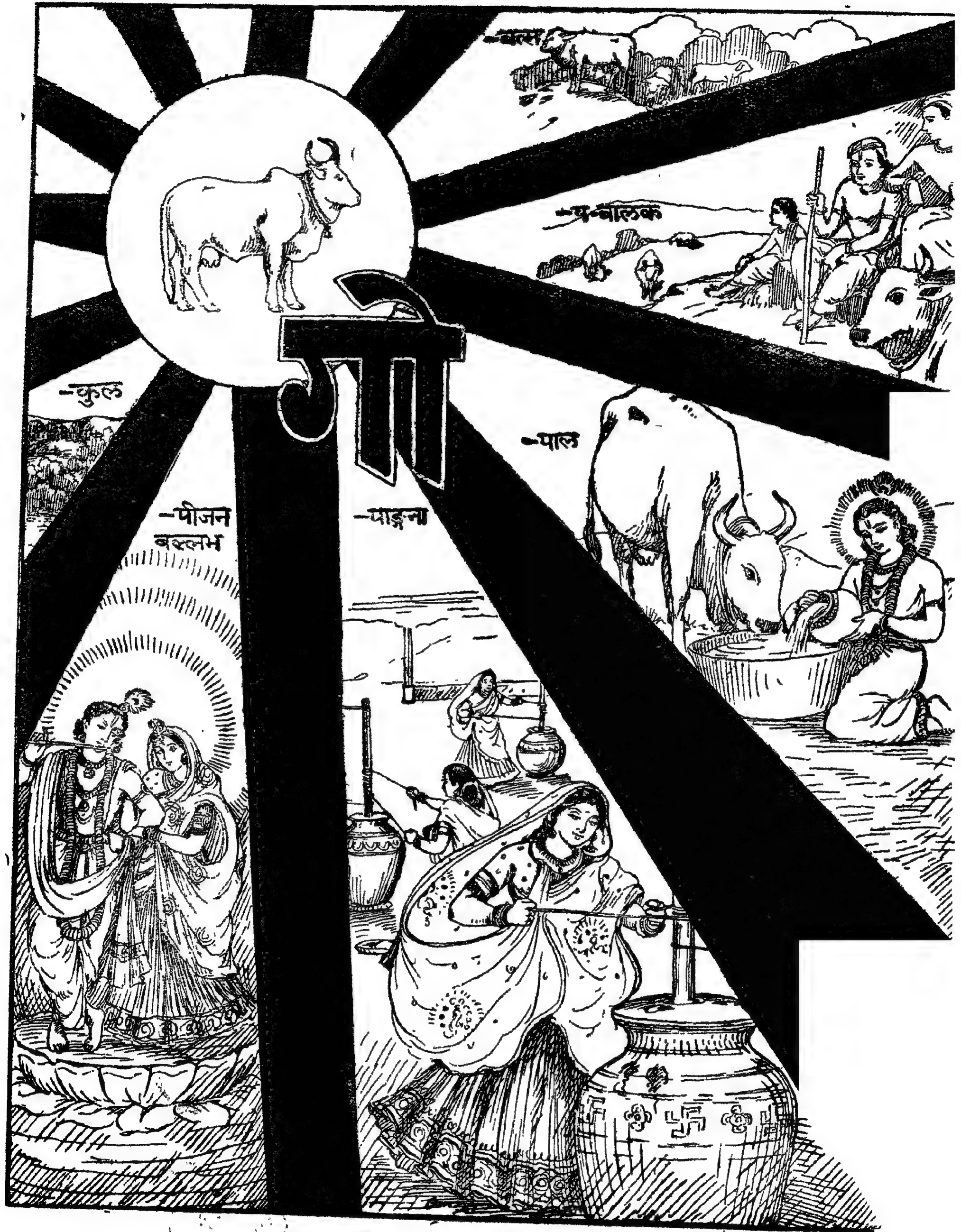
'कल्याण-कल्पतरु' का गो-विषयक बहुत ही उपयोगी विशेषाङ्क आपने निकाला था, इसके लिये आपको बधाई। आपका यह अङ्क गोमाताके आध्यात्मिक और आर्थिक महत्त्वके सम्बन्धमें जानने योग्य बातोंसे परिपूर्ण है। इसने आपके कितने ही पाठकोंको बड़ी स्फूर्ति दी है और इससे गौके कार्यमें बड़ी सहायता मिली है।

अब 'कल्याण' का भी 'गो-अङ्क' निकलनेसे आपके सहस्रों सम्मान्य भारतीय पाठकोंमें गौके महत्त्व, गौकी वर्तमान दुर्दशा तथा उसके इस दुरवस्थासे उद्धारके उपायोंका प्रचार होगा और सबकी सक्रिय सहानुभूति प्राप्त होगी।

यह बड़े दुःख और क्लेशकी बात है कि जबसे इस देशमें यूरोपियन जातियोंका पदार्पण हुआ है, तबसे उनके गोमांसाहारके लिये गो-हत्याकी वृद्धि होती रही है और जबसे ब्रिटिश राष्ट्र इस देशका मालिक बन बैठा है, तबसे गो-हत्याको बराबर प्रोत्साहन ही मिलता जा रहा है। भारतीय राष्ट्रने भी इसकी एक प्रकारसे उपेक्षा ही की है। राष्ट्र जब जाग उठा और उसने आर्थिक और राजनीतिक स्वाधीनताके प्रयत्नोंकी एक प्रकारसे पराकाष्ठा आरम्भ की, तब भी उसने गोरक्षाके लिये वैसा कोई प्राणपणयुक्त प्रयत्न नहीं किया। इसीसे आज भारतीय राष्ट्रको गो-माताके सम्बन्धमें अपनी अक्षम्य


ब्रह्मा
तेजोमहं महत्।
चतुर्भाग प्रजातं तद् वेदोऽग्निर्गोद्विजस्तथा॥
तेजःपुंज
वेद
अग्नि
गो
ब्राह्मण


गावो विश्वस्य मातरः


-वत्स
गो
-कुल
-पाल
-पीजन
वल्लभ
-पाङ्गना

उपेक्षाका भीषण कुफल भोगना पड़ रहा है। हाल यहाँतक बेहाल हो चुका है कि एक तरफ तो देशको आर्थिक और राजनीतिक रूपसे स्वावलम्बी बनानेके प्रयत्न हो रहे हैं और दूसरी तरफ गरीब बच्चोंको—देशकी भावी पीढ़ीको भी शुद्ध दूध पीनेको नहीं मिल रहा है, उन्हें विदेशोंसे आनेवाले दुग्धचूर्णपर निर्वाह करना पड़ रहा है और बेचारे खेतिहरोंकी खेतीके काममें पशुओंके बदले अपने आपको जोतना पड़ रहा है। देशके मुख्य पोषक आहार और कृषि तथा भार-वहनके साधन, दोनों ही बातोंमें देश सर्वथा कंगाल और परमुखापेक्षी बन रहा है।

ऐसी अवस्थामें यह अत्यन्त आवश्यक है कि जो लोग अपने देशके भक्त हैं और जो लोग इस देशमें रहना चाहते हैं, वे ऐसा उपाय करें कि गौओंकी तथा गोवंशके अन्य पशुओंकी पूर्ण रक्षा हो, इनके सुधारके लिये सार्वत्रिक और सार्वजनीन प्रयत्न करें, कोई बात उठा न रक्खें, जिनमें जितनी सामर्थ्य हो, जितनी दातृत्व-शक्ति हो, इस कार्यमें लगा दें और राष्ट्रके उद्धार-कार्यमें इसी राष्ट्र-कार्यको अग्रस्थान दें; क्योंकि यह सबके ही जीवन-मरणका प्रश्न है—चाहे कोई ब्राह्मण हो या वैश्य, हिंदू हो या मुसल्मान, अंग्रेज हो या पारसी।

यह तो स्पष्ट ही कह देना होगा कि हिंदुस्थान गो-मांसाहारके निमित्त होनेवाली गो-हत्या जरा भी बर्दाश्त नहीं कर सकता। यहाँकी विशिष्ट आर्थिक व्यवस्था ही ऐसी है। दोनोंमेंसे एकका लोभ छोड़ना होगा। यदि देशको दूध, अन्न, साग, सब्जी, कृषि-पशु और खादके लिये स्वाधीन—स्वावलम्बी रहना है, जिनके लिये यहाँकी आर्थिक व्यवस्थाके अनुसार हमें अपने पशुधनपर ही निर्भर करना पड़ता है, तो मांसाहारके लिये एक गौकी हत्या भी बर्दाश्त नहीं की जा सकती!

देश इस परिस्थितिको अच्छी तरह समझ ले और गौकी रक्षा और सुधारमें इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये आवश्यक सम्पूर्ण साधनोंके साथ प्रवृत्त हो और सच्ची उन्नति, सुख-समृद्धि और शान्ति लाभ करे।

मुझे विश्वास है कि 'कल्याण' का 'गो-अङ्क' गो-विषयक सम्पूर्ण सत्य भारतवासियोंके हृदयप्रान्ततक पहुँचा देगा और उससे सबका मङ्गल होगा।

संक्षिप्त गोकोश

१. **गो**—गौ, पृथ्वी, इन्द्रिय, किरण, प्रकाश, बिजली, यन्त्र, हीरा, स्वर्ग, चन्द्र, सूर्य, दिशा, वाणी, जल, माता, गङ्गा, गायत्री, नदी, स्वर्ग, वज्र, नौका अङ्क, रोम।

२. **गोअग्र**—गोसमूह, गायका अग्रभाग।

३. **गोअर्घ**—एक गायका मूल्य।

४. **गोइँठा**—गोबरके कंडे।

५. **गोइनका**—मारवाड़ी अग्रवालोंकी एक जाति।

६. **गोकण्ट**—गोखरूका पेड़।

७. **गोकण्टक**—गोखरूका पेड़।

८. **गोकन्या**—कामधेनु।

९. **गोकर्ण**—गौके पेटसे उत्पन्न, भक्तराज गोकर्ण, साँप, बछेरा, खच्चर, दक्षिणका एक प्रधान शिव-क्षेत्र, बित्ता, एक मुनिका नाम, शिवका एक गण।

१०. **गोकर्णेश्वर**—गोकर्णक्षेत्रमें स्थित शिवजीका एक नाम।

११. **गोकर**—सूर्य।

१२. **गोकील**—मूसल, हल।

१३. **गोकृत**—गोबर।

१४. **गोकृष्णा**—अश्वगन्धा।

१५. **गोकुल**—एक जैन ग्रन्थकार, मथुराके समीप भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाभूमि, गोशाला, गोसमूह।

१६. **गोकुलिक**—पङ्कमें गिरी हुई गायकी उपेक्षा करनेवाला।

१७. **गोखा**—गवाक्ष, झरोखा।

१८. **गोग्रन्थि**—गोशाला।

१९. **गोग्रास**—भोजनसे पहले गायके लिये निकाला हुआ अन्न।

२०. **गोघात**—गोवध।

२१. **गोघृत**—गायका घी।

२२. **गोघ्न**—गोहत्यारा।

२३. **गोचन्दन**—सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका चन्दन।

२४. **गोचर**—जमीनपर रहनेवाला, चरागाह, इन्द्रियोंका विषय।

२५. **गोचरभूमि**—गौओंके निःशुल्क चरनेकी भूमि।

२६. **गोच्छगल**—गोबर।

२७. **गोछाल**—गोरखमुंडी।

२८. **गोचर्म**—गौका चमड़ा, २१०० हाथकी लंबाई और इतनी ही चौड़ाईका एक नाप।
२९. **गोचरी**—भिक्षावृत्ति।
३०. **गोचारक**—गौओंको चरानेवाला।
३१. **गोचारण**—गौको चराना।
३२. **गोचारिक**—गौके पीछे-पीछे चलनेवाला, तपस्वी।
३३. **गोजल**—गौका मूत्र।
३४. **गोजिह्विका**—लताविशेष, अधोमुखा, गोभीका पेड़।
३५. **गोणी**—एक पात्रविशेष, एक प्रकारका माप।
३६. **गोतम**—एक ऋषि।
३७. **गोतीर्थ**—गौका मल।
३८. **गोदान**—गौका दान।
३९. **गोद्रव**—गोमूत्र।
४०. **गोदारण**—हल, जमीन खोदनेकी कुदाल।
४१. **गोदावरी**—दक्षिण भारतकी एक प्रसिद्ध नदी।
४२. **गोदुह्**—गौ दुहनेवाला।
४३. **गोदोह**—गायका दूध, गायका दुहना, गाय दुहनेमें जितना समय लगे।
४४. **गोदोहन**—गाय दुहना, गाय दुहनेका समय।
४५. **गोधन**—गोसमूह।
४६. **गोधा**—साँड़, गोह।
४७. **गोधूम**—गेहूँ।
४८. **गोधूलि**—गौकी चरण-रज, संध्यासमय।
४९. **गोप**—ग्वाला, अहीर।
५०. **गोपति**—शंकर, विष्णु, इन्द्र, वृषभ, ग्वाला।
५१. **गोपथ**—अथर्ववेदका एक ब्राह्मणग्रन्थ।
५२. **गोपद, गोष्पद**—पृथ्वीपर पड़ा हुआ गायके खुरका चिह्न, गौका पैर।
५३. **गोपबालक**—भगवान् श्रीकृष्णके साथी ग्वालबाल।
५४. **गोपाङ्गना**—गोपीजनवल्लभ श्रीकृष्णचन्द्रके लिये अपना सर्वस्व अर्पण करनेवाली गोप-कन्याएँ, गोप-वधुएँ।
५५. **गोपाल**—गौओंके पालन करनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण।
५६. **गोपालतापनी उपनिषद्**—१०८ उपनिषदोंमें एक।
५७. **गोपालन**—गायका पालना।
५८. **गोपाष्टमी**—कार्तिकशुक्ला अष्टमी, जिस दिन गायोंका उत्सव मनाया जाता है।
५९. **गोपीजनवल्लभ**—गोपाङ्गनाओंके परमप्रेमास्पद सच्चिदानन्दघन, आनन्दचिन्मय-रससुधासारसमुद्र नन्दनन्दन श्रीकृष्ण।
६०. **गोपी**—ग्वालिन, भगवान् श्रीकृष्णकी प्रेयसी गोपाङ्गनाएँ।
६१. **गोपीथ**—वह सरोवर, जहाँ गौएँ जल पीती हैं।
६२. **गोपुच्छ**—गायकी पूँछ।
६३. **गोपुर**—स्वर्ग, दक्षिण भारतके मन्दिरोंका प्रधान द्वार।
६४. **गोपुत्र**—बछड़ा, सूर्यपुत्र, कर्ण।
६५. **गोपुरीष**—गोबर।
६६. **गोप्रकाण्ड**—श्रेष्ठ बैल या साँड़।
६७. **गोप्रवेश**—गौओंका वनसे घर लौटना, संध्या, गोधूलिवेला।
६८. **गोबर**—गौका मल।
६९. **गोमण्डल**—गायोंका समूह, पृथ्वीमण्डल, किरणें।
७०. **गोमती**—युक्तप्रान्तकी एक नदीका नाम।
७१. **गोमय**—गोबर।
७२. **गोमुखी**—राढ़देशस्थ एक नदी; कपड़ेकी गोमुखाकार थैली, जिसमें जपके समय माला एवं हाथको डाल लेते हैं।
७३. **गोमूत्र**—गौका मूत्र।
७४. **गोमूत्रिका**—गोमूत्रसे उत्पन्न होनेवाली एक लता।
७५. **गोभल**—एक ऋषिका नाम, अग्रवालोंका एक गोत्र।
७६. **गोयुग्म**—गो-युगल, एक जोड़ा गौ।
७७. **गोरखनाथ**—एक महासिद्ध पुरुष।
७८. **गोरखपुर**—एक नगरविशेष, जहाँ श्रीगोरखनाथजीकी प्राचीन तपोभूमि है तथा गीता-प्रेस है।
७९. **गोरज**—गौके खुरोंसे उड़ी हुई गर्द या धूल।
८०. **गोरस**—दूध, दही, छाछ आदि; इन्द्रियसुख।
८१. **गोरक्षा**—गोपालन।
८२. **गोरोचन**—पीले रंगका एक सुगन्धित द्रव।
८३. **गोलोक**—भगवान् श्रीकृष्णका सर्वोपरि स्थित नित्य चिन्मय धाम।
८४. **गोवंश**—गौओंकी नस्ल, गोजाति।
८५. **गोवर्धन**—व्रजभूमिका प्रसिद्ध पर्वत, जिसे भगवान् श्रीकृष्णने सात दिनतक उठा रक्खा था; गायोंको बढ़ाना।
८६. **गोवत्स**—गौओंके बछड़े।
८७. **गोवध**—गोहिंसा।
८८. **गोविन्द**—भगवान् श्रीकृष्णका एक प्रसिद्ध नाम, जो उन्हें गोरक्षासे ही प्राप्त हुआ था।
८९. **गोष्ठ**—गायोंके रहनेका स्थान, व्रज।

९०. **गोशाला**—गौओंके रहनेका स्थान ।
९१. **गोस्वामी**—वैष्णव आचार्यों एवं साधुओंकी एक उपाधि; जितेन्द्रिय ।
९२. **गोसूक्त**—वेदोंका वह भाग, जिसमें गौओंकी प्रशंसा है ।
९३. **गोस्तन**—फूलका गुच्छा, गायका स्तन ।
९४. **गोस्तनी**—मुनक्का ।
९५. **गोसेवा**—गो-परिचर्या ।
९६. **गो-संवर्धन**—गायका पालन-पोषण ।
९७. **गोहरा**—कंडा, उपला ।
९८. **गोहत्या**—गोवध ।
९९. **गोहित**—बेलका पेड़, विष्णु, गोहितकारक ।
१००. **गोत्र**—वंश,कुल,पर्वत (जो पृथ्वी तथा गौओंको त्राण दे)
१०१. **गोत्रभिद्**—इन्द्र ।
१०२. **गोत्रसुता**—पार्वती ।
१०३. **गवय**—गाय-सरीखी पशुजाति ।
१०४. **गव्य-पञ्चक**—पञ्चगव्य (दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र) ।
१०५. **गवाक्ष**—वातायन, झरोखा, छोटी खिड़की ।

गो-स्तवनम्

(रचयिता—पं० श्रीगौरीशङ्करजी द्विवेदी, साहित्यरत्न)

अवतारो गवां श्रेष्ठः सर्वेषु भुवि जन्तुषु ।
यतस्तासां विकारोऽपि ह्युपकाराय जायते ॥ १ ॥
गच्छन्त्यः संस्थिताः सुप्ताः शकृन्मूत्रकृतोऽपि वा ।
गावः पुनन्ति लोकांस्त्रीनतो देवत्वमागताः ॥ २ ॥
शुभ्राः पीतास्तथा श्यामाश्चित्रा वै लोहितास्तथा ।
कुर्वते नृहृदि स्थानं गावः प्रकृतिशोभनाः ॥ ३ ॥
लोकेऽमृतं यथा क्षीरं गोमयं पावनं परम् ।
आयुर्घृतं तथा चैव मूत्रं रोगविनाशनम् ॥ ४ ॥
अपूर्वं पञ्चगव्यं च तीर्थं कल्मषनाशनम् ।
एषा परम्परा भव्या दुर्लभा सुरभिं विना ॥ ५ ॥
प्रत्यक्षदेवता गावो गावो वै लोकमातरः ।
तस्मादर्च्यतमा एता रक्षणीयाः प्रयत्नतः ॥ ६ ॥
गोदानं च परं दानं गोधनं च परं धनम् ।
गोभक्तिः परमा सिद्धिर्गोसेवा परमा गतिः ॥ ७ ॥
गावो यत्र हि पूज्यन्ते पाल्यन्ते चैव यत्नतः ।
गोपालो भगवांस्तत्र मुदा वसति नित्यशः ॥ ८ ॥
गावो मे पुरतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
गावो मे सर्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥ ९ ॥
गां विना न हि मे शान्तिर्भवेदिह परत्र च ।
इति संचिन्त्य भगवान् गोलोकमधितिष्ठति ॥१०॥
अस्ति गोसदृशं नैव त्रिषु लोकेषु किंचन ।
यद्वशे भगवान् विष्णुः पश्चाद्धावति नित्यशः ॥११॥
गोमातस्त्वं हि धन्यासि धन्यं च तव जीवनम् ।
धन्याश्च ते नरा लोके त्वत्सेवाव्रतिनश्च ये ॥१२॥

क्षमा-प्रार्थना

गतवर्ष 'कल्याण'में लगातार पद्मपुराणका प्रकाशन हुआ था; इससे कुछ ग्राहकोंने यह सूचना दी कि पूरे वर्षमें एक ही ग्रन्थका प्रकाशन रुचिकर नहीं होता, विभिन्न विषयोंपर पृथक् पृथक् लेख आने चाहिये। यद्यपि पद्मपुराणमें अनेकों और बहुत ही उपयोगी विषयोंपर प्राचीन भिन्न-भिन्न महापुरुषोंके विचार बड़ी ही रोचक रीतिसे इतिहाससहित उल्लिखित हैं और उनके पढ़नेसे पाठकोंको बहुत लाभ हुआ होगा, परन्तु इस बार यही सोचा गया कि सालभरतक एक ही ग्रन्थ न निकालकर विशेषाङ्क किसी एक खास विषयका निकाला जाय और अगले अङ्कोंमें विविध विषय रहें। तदनुसार देश और धर्म-संरक्षणकी वर्तमान आवश्यकताको देखकर 'गो-अङ्क' प्रकाशित करनेका विचार हुआ, और वह इस रूपमें कृपालु पाठकोंकी सेवामें उपस्थित है। गोरक्षा और गो-संवर्धनका प्रश्न इस समय बहुत ही महत्त्वका है। इस प्रश्नपर विविध रूपसे इसमें विचार किया गया है। आशा है उनपर पाठक विचार करेंगे। गोरक्षाके लिये वर्तमानमें निम्नलिखित कार्य होने चाहिये—

१. गौकी महत्ताका प्रचार, २. गोवध बंद करानेकी चेष्टा, ३. मारी हुई गायके चमड़ेका बहिष्कार, ४. मारी हुई गायोंके शरीरकी चीजोंके व्यापारोंको रोकना, ५. गोपालन और गोविज्ञानकी शिक्षाका प्रचार, ६. कसाईके हाथ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्षरूपमें गाय बिल्कुल न बेची जाय—इसकी व्यवस्था करना, ७. मांस-भक्षणके दोषोंका प्रचार करके मांस-भक्षणमें लोगोंकी अरुचि तथा घृणा पैदा करना, ८. अच्छे साँड़ोंकी तथा अच्छे साँड़ोंके द्वारा गायोंके बढ़ानेकी व्यवस्था करना, ९. किसानोंमें जागृति पैदा करना जिससे वे गौका महत्त्व समझें, १०. सरकारसे और व्यक्तिगत रूपमें जगह-जगह चरागाह छुड़वाना, ११. गायोंके स्वास्थ्य, सफाई तथा चिकित्साकी उचित व्यवस्था करना, १२. नस्ल-सुधारकी व्यवस्था, १३. मुसल्मानों और हिंदुओंमें प्रेम पैदा करना। मुसल्मान महानुभावोंके लिखे हुए गोरक्षासम्बन्धी लेखों और विचारोंको उर्दूमें छपवाकर सहृदय मुसल्मान सज्जनोंके द्वारा बँटवाना तथा मुसल्मान अखबारोंमें गोरक्षापर जोरदार लेख निकलवाना, १४. पिंजरापोल-पद्धतिकी रक्षा करते हुए उनमें आवश्यक सुधार करना, १५. गोहत्याके प्रतिबन्धक कानून बनवानेकी चेष्टा करना, १६. वर्तमान प्रतिबन्धक कानूनोंके अनुसार गायोंकी रक्षा हो, इसकी व्यवस्था करना, १७. पुस्तिका, ट्रैक्ट स्लाइड्स् और कीर्तन तथा उपदेश आदिके द्वारा गोमहत्ता, गोपालन-शिक्षा और गोविज्ञानका प्रचार करना, १८. गोवध रोकनेके लिये नियमित आन्दोलन करना और बार-बार सरकारके पास आवेदनपत्र भेजना, १९. धारासभाओंके सदस्योंके द्वारा गोरक्षाके लिये प्रयत्न करना-करवाना, २०. गायोंको पर्याप्त चारा-दाना मिले इसकी व्यवस्था करना, २१. गोबर और गोमूत्रका खादके रूपमें अधिक-से-अधिक उपयोग कराना और २२. इन सब प्रयत्नोंके द्वारा जीवित गौका मूल्य बढ़ा देना, जिसमें केवल धर्मकी दृष्टिसे नहीं, प्रत्यक्ष लाभकी दृष्टिसे गौ रखनेको मनुष्यका जी ललचावे! ऐसी ही और भी बहुत-सी बातें हैं, जो 'गो-अङ्क'में बहुत जगह आयी हैं; वे अमलमें आवें, इसके लिये प्रयत्न करना चाहिये। 'गो-अङ्क' कैसा हुआ है—इसपर आपलोग ही विचार करें। इसमें जो कुछ अच्छापन है, वह तो विद्वान् लेखकोंका है। जो त्रुटियाँ और दोष हैं, उसके लिये हमलोग जिम्मेवार हैं।

अब हमें उन लेखकोंसे और कवियोंसे हाथ जोड़कर क्षमा माँगनी है, जिनके लेख 'गो-अङ्क'में नहीं छप सके हैं। सरकारी नियन्त्रणके कारण 'गो-अङ्क'में चित्रोंसमेत कुल मिलाकर ७६० पृष्ठ ही दिये जा सकते हैं, जो दिये गये हैं। लेख इतने आये और अब भी आ रहे हैं कि सबका प्रकाशन किया जाय तो इससे तिगुना-चौगुना कलेवर चाहिये। कई लेख स्वतन्त्र विषयोंके भी नहीं छप पाये हैं; परन्तु अधिकांश लेख ऐसे हैं जिनमें उन्हीं विषयोंपर विचार हुआ है, जिनका उल्लेख उसी रूपमें कई लेखोंमें हो चुका है। यद्यपि 'गो-अङ्क'में पुनरुक्ति जगह-जगह मिलेगी, परन्तु सब लेखोंके प्रकाशनका प्रयास तो—यद्यपि वैसा सम्भव ही नहीं था—पुनरुक्तियोंके संग्रहका ही प्रयास होता। यह सत्य होनेपर भी इतने लेखोंके प्रकाशित न होनेमें एकमात्र कारण स्थानका अभाव है। इसे हम इच्छा रहनेपर भी किसी प्रकार बढ़ा नहीं सके, और सैकड़ों लेख अमुद्रित रह गये। जिन महानुभावोंने समय और शक्ति लगाकर लेख लिखनेकी कृपा की, उन्होंने अवश्य ही छपनेके लिये ही लेख लिखा था, कृपापूर्वक छपनेके लिये भेजा भी, और हम उसे नहीं छाप सके। इसके लिये हम बड़े ही संकोचमें पड़े हुए हैं और कृपालु लेखकोंसे हाथ जोड़कर क्षमा-प्रार्थना करते हैं। उन लेखकोंसे भी हम करबद्ध क्षमा चाहते हैं, जिनके लेखोंको पूरा न छापकर स्थान-संकोचसे अधूरा या

* क्षमा-प्रार्थना *

उनका कुछ ही अंश छापा गया है। आशा है, लेखक महानुभाव हमारी विवशताकी परिस्थिति समझकर हमें क्षमा करेंगे।

कई सम्मान्य महानुभावोंके लेख और संदेश बहुत देरसे मिले, इसलिये उनको उनके योग्य स्थानपर नहीं छापा जा सका; इसके लिये हमें खेद है और हम उन सज्जनोंसे क्षमा चाहते हैं।

इस अङ्कके सम्पादनमें हमें भारत-सरकारके शिक्षा, स्वास्थ्य और भूमि-सदस्य माननीय सर जोगेन्द्रसिंहजी और भारत-सरकारके पशु-सदुपयोग-परामर्श-दाता, सरदार बहादुर सर दातारसिंहजी महोदयने आवश्यक सामग्री तथा उसे छापनेकी आज्ञा देकर बड़ी कृपा की है। इसके लिये हम उनके बड़े ही कृतज्ञ हैं। इनके अतिरिक्त गो-जीवन पूज्य श्रीचौंडेजी महाराज, श्रीचौंडेजी महाराजके साथी कार्य-कर्ता श्रीअनन्तदास रामदासी तथा गोज्ञान-कोशके सम्पादक अन्यान्य विद्वान्, बम्बई जीव-दयामण्डलीके माननीय मन्त्री राव बहादुर श्रीजयन्तीलालजी मानकर, श्रीडाह्या-लाल हरगोविन्द जानी महोदय, गोवंश-रक्षिणी सभाके सञ्चालक हिसारके लाला हरदेवसहायजी, प्रसिद्ध रासायनिक, और 'काउ-इन-इंडिया'के विद्वान् लेखक खादी प्रतिष्ठानके श्रीसतीशचन्द्र दासगुप्त महोदय, दरभंगा-गोशाला-सोसाइटीके श्रीधर्मलालसिंहजी और पं० श्रीझाबरमल्लजी शर्मा तथा कुछ अन्य सरकारी और गैरसरकारी बान्धवोंने परामर्श, सामग्री-संग्रह और लेखचयनमें हमारी जो बहुमूल्य सहायता की है, उसके लिये हम उनके बड़े ऋणी हैं। इनकी इतनी सहायता न मिलती तो यह अङ्क इस रूपमें शायद नहीं निकल सकता। इनके अतिरिक्त हम अपने उन समस्त लेखक महानुभावोंके तो कृतज्ञ हैं ही, जिनके अनुभव, ज्ञान और उसको लिपिबद्ध करके भेजनेके कारण ही हम यह अङ्क निकाल सके हैं। हम युक्तप्रान्तके गवर्नर महोदयके भी बड़े कृतज्ञ हैं, जिन्होंने तुरंत ही अपना संदेश भजनेकी कृपा की।

इस अङ्कके सम्पादनमें जिन-जिन ग्रन्थोंसे सहायता ली गयी है, उन ग्रन्थोंके सम्मान्य लेखक महोदयोंके भी हम कृतज्ञ हैं।

भारतसरकारकी इम्पीरियल कौंसिल आफ ऐग्रिकल्चरल रिसर्चके भी हम कृतज्ञ हैं, जिन्होंने गो-अङ्कमें प्रकाश सामग्री और उसका उपयोग करनेकी आज्ञा दी।

गो-अङ्कमें जो आँकड़े छपे हैं, वे अधिकांश सरव रिपोर्टोंसे अथवा भारत-सरकारके द्वारा कृपापूर्वक हुए वर्णनोंसे लिये गये हैं, यद्यपि यह नहीं कहा जा सक कि इसमें जो संख्या बतायी गयी है—वह सर्वथा ठीक है; क्योंकि पशुगणना आदिके ढंग अभीतक ठीक हैं नहीं। इस साल १९४५ में भी पशुगणना हुई है, पर वह अभी असम्पूर्ण है; इसलिये पशु-संख्याके आँकड़े १९४० के ही दिये गये हैं। सामग्री-संग्रहमें यथासाध्य प्रय करनेमें कमी नहीं रक्खी गयी है; तथापि हम जिस प्रकार चीज तैयार करना चाहते थे, हमारा विश्वास है कि वैसी नहीं पायी है। इससे यद्यपि हमें संतोष नहीं है, तथापि कुछ संग्रह हुआ है, इसका यदि वास्तविक उपयोग हो तो हम अपना बड़ा सौभाग्य मानेंगे।

अन्तमें हमलोग अपने सहयोगी और साथी पूज्य पं श्रीलक्ष्मण नारायणजी गर्दे, पं० श्रीरामनारायणदत्त पाण्डेय शास्त्री और सम्पादन-विभागके अन्यान्य मित्रों भी अभिनन्दन करते हैं, जिन्होंने लेखचयन, अनुवा प्रूफ-संशोधन आदि कार्योंमें लगातार हमारा हा बँटाया है और कार्यको सुसम्पन्न करनेमें कुछ भी उठ नहीं रक्खा।

अन्तमें यह निवेदन है कि 'कल्याण' संचालकोंकी मतिमें गोरक्षाका प्रश्न शुद्ध धार्मिक प्रश्न है और इसका अध्यात्मसे गहरा सम्बन्ध है; और इसीलि 'कल्याण' जैसे आध्यात्मिक पत्रका यह विशेषाङ्क निकाल गया है। इसमें जिन वैज्ञानिक और आर्थिक प्रश्नोंपर विचा किया गया है, वह भी इसी बुद्धिसे किया गया है कि जिस गोरक्षा हो और गोरक्षाके द्वारा भारतीय अध्यात्मके उत्क और प्रसारमें सहायता मिले।

विनीत—

हनुमानप्रसाद पोद्दार
चिम्मनलाल गोस्वामी
सम्पादक

गाय और दूधके भयानक आँकड़े

इस समय भारतवर्षमें गोजाति और भैंसजातिके कुल मिलाकर १८१९०८३७४ पशु हैं। भेड़-बकरी इससे अलग हैं और गाय, भैंस, बकरी—सबका मिलाकर कुल ७४४६९०००० मन दूध होता है, जिसमेंसे ११५४००००० मन उनके बच्चे पी जाते हैं। शेष ६२९२९१००० मन दूध बचता है (देखिये विवरणपत्र संख्या ४-५), जो प्रत्येक भारतवासीके पीछे प्रतिदिन लगभग ६॥ औंस अर्थात् सवा तीन छटाँक पड़ता है (देखिये विवरणपत्र संख्या १०)। यह हिसाब सन् १९४१—४२ का है। ऐसा दृढ़तापूर्वक माना जाता है कि तबसे अबतक गोवधकी प्रचुरता और सेनाकी दूधकी माँग पूरी करनेके लिये अच्छी गायों और भैंसोंको मिलिटरी फार्मोंमें इकट्ठा कर लेनेके कारण जनसाधारणके लिये दूधकी औसत बहुत घट गयी है। इस समय प्रतिमनुष्य कुल मिलाकर औसत एक या डेढ़ औंससे अधिक दूध नहीं पड़ता (देखिये विवरणपत्र संख्या १८)। इसमें पीनेका दूध भी आ गया और घी, मक्खन, दही आदिके रूपमें बदला हुआ दूध भी आ गया। इसीमें अधिक दूध पीनेवाले शहर भी आ गये। तेईस बड़े शहरोंकी जाँच करनेपर पता चला था कि उनमें मनुष्य पीछे कुल दूध १२.६ औंस (पीनेका दूध ३.७ औंस और दूधसे बने हुए पदार्थोंके रूपमें दूध ८.९ औंस) पड़ता है (देखिये विवरणपत्र संख्या ९)। फिर प्रतिदिन सेर-दो-सेर दूध पी जानेवाले धनी और समर्थ लोग भी इसीमें शामिल हैं। सब हिसाब लगानेपर पता लगेगा कि गाँवोंके और गरीबोंके लिये दूध प्रायः बचता ही नहीं।

दूध-घीके इस भयानक अभावसे और नकली घी तथा नकली दूधके व्यवहारसे लोगोंका स्वास्थ्य बहुत गिर गया है। जीवनीशक्ति (Vitality) बहुत बुरी तरहसे घट रही है। बच्चोंकी मृत्युसंख्या बढ़ रही है (देखिये विवरण-पत्र संख्या १८)। इधर नौजवान भी बड़ी संख्यामें मरे जा रहे हैं। टायफाइड (म्यादी बुखार) तथा राजयक्ष्मा (टी. बी.)—जैसे रोग आगकी तरह फैल रहे हैं। एक अनुभवी सिविलसर्जन महोदयने उस दिन कहा था कि यदि देशमें खाद्य पदार्थोंकी यही हालत रही तो पाँच-सात सालमें ही देशके ६०-७० प्रतिशत नर-नारी राजयक्ष्माके शिकार हो जायँगे *। यह बहुत ही चिन्ताका विषय है। आवश्यकता है शुद्ध और पोषक आहारकी, और उसमें गोदुग्ध प्रधान है। अतएव नस्ल-सुधार, चरागाहकी व्यवस्था और पशुओंको पर्याप्त घास-दाना मिलनेका प्रबन्ध करके देशमें दूध बढ़ाना चाहिये। सरकार और जनता—सभीको इस ओर ध्यान देना चाहिये। यूरोपमें प्रतिमनुष्य औसतन ३८ औंस (लगभग सवा सेर) दूध मिलता है (देखिये विवरणपत्र संख्या १०-११) और भारतवर्षमें सवा छटाँकमें भी दो हिस्से करने पड़ते हैं। बच्चोंके शरीर-संगठन और शरीर-संवर्धनके लिये तो दूधकी अत्यन्त आवश्यकता है।

दूधके इस अभावमें कारण है—दुधारू पशुओंकी कमी! यों तो ४९०००००० गायें दूध देनेवाली मानी जाती हैं, परन्तु औसतमें सब समय वास्तवमें दूध देती हैं लगभग १५२००००० गायें ही (देखिये विवरणपत्र-संख्या १-५)। दूसरा कारण है—गायोंमें दुग्धोत्पादन-क्षमताकी कमी। हालैंड और डेन्मार्कमें, जहाँ प्रतिवर्गमील वार्षिक क्रमशः २७ और २२ मन दूध होता है, वहाँ भारतके पंजाब-सरीखे दुधारू प्रान्तमें लगभग ८-९ मन दूध ही होता है (देखिये विवरणपत्र संख्या ८)। दुग्धोत्पादन-क्षमताके न होनेमें कारण हैं—अच्छे चारे-दानेका अभाव, गोचरभूमिकी कमी और बीमारी तथा देख-रेखका अभाव। पशुओंके चारेकी अलग खेती तो भारतमें नगण्य-सी होती है। गोचरभूमि भी नहींके बराबर ही समझिये (देखिये विवरणपत्र संख्या १८)। बीमार पशुओंकी चिकित्सा नहीं होती। गोपालक तो अज्ञानवश नहीं करते, और सरकारको अपना शासनदण्ड चलानेके कामसे फुरसत नहीं मिलती। भारतके ९ प्रधान प्रान्तोंमें डा० राइटकी रिपोर्टके अनुसार लगभग ९०००० पशुओंके पीछे एक पशुचिकित्सक है—जिसमें बंगालमें १३५०००, युक्तप्रान्तमें १४१००० और बिहारमें १४२००० पशुओंके पीछे एक है। देख-रेखकी भी ऐसी ही बात है। हमारी सरकार प्रतिपशु दो पैसा खर्च करती है (देखिये विवरणपत्र संख्या २१-२२)।

सबसे बढ़कर कारण है—गायोंकी अबाध हत्या! सरकारी रिपोर्टके अनुसार सन् १९४० में ५२७०००० गोजातिके पशु काटे गये थे। विशेषज्ञोंकी रायमें प्रतिवर्ष लगभग १ से १। करोड़ अर्थात् प्रतिमिनट लगभग १९ से २४ गोजातिके पशु काटे जाते हैं। कितना भीषण संहार है! प्रत्येक भारतीयको यथायोग्य और यथाशक्ति इन कारणोंके दूर करनेके लिये चेष्टा करनी चाहिये। (ह०)

---

* लखनऊमें ७१.९ प्रतिशत लोगोंमें टी० बी० के कीटाणु पाये गये हैं, ऐसा डा० ए० जी० फरीदीने लिखा है। (देखिये अमृत-बाजार पत्रिका २६। १०। ४५)।

भारतके पशुधनकी संख्या सन् १९४०

(पशुगणना, सन् १९४० के आधारपर संकलित)

(विवरण-पत्र-संख्या १)

पशुओंके नाम	ब्रिटिश भारत	देशी राज्य	कुल जोड़
साँड़	२५,४९,४६२	१०,६५,४५२	३६,१४,९१४
बैल	३,२३,६२,६८८	१,५६,७३,९९०	४,८०,३६,६७८
गायें	२,८९,०९,३६९	१,५८,८९,३६२	४,४७,९८,७३१
दूध देनेवाली गायें (वर्तमानमें)	१,००,१९,५९१	५१,७१,९४९	१,५१,९१,५४०
बछड़े-बछड़ियाँ	१,१८,१७,९८२	१,४१,९१,०२५	२,६०,०९,००७
कुल पशु (गो-जाति)	**८,५६,५९,०९२**	**५,१९,९१,७७८**	**१३,७६,५०,८७०**
भैंसे	३८,०४,३११	१३,७०,३७६	५१,७४,६८७
भैंस	१,०७,४५,६५९	६७,६०,९८३	१,७५,०६,६४२
दूध देनेवाली भैंसें	५२,६३,१०६	३२,३३,८८३	८४,९६,९८९
पाड़े (बछिया और पाड़े)	७८,६५,५२३	५२,१३,६६३	१,३०,७९,१८६
कुल पशु (भैंस-जाति)	**२,७६,७८,५९९**	**१,६५,७८,९०५**	**४,४२,५७,५०४**
गौ एवं भैंसजातिके कुल पशु	**११,३३,३७,६९१**	**६,८५,७०,६८३**	**१८,१९,०८,३७४**

(भारत-सरकारकी कृपासे प्राप्त)

भारतके पशुधनकी संख्या सन् १९३५ (हजारमें)

(विवरण-पत्र-संख्या २)

	भैंस	गाय-बैल	बकरी-भेड़	अन्य पशु	कुल जोड़
संयुक्तप्रान्त (कुमायूँको छोड़कर)	९२९३	२३१७७	१०००२	८१८	४३२९०
मद्रास	६८१७	१७७९०	१८७००	२०३	४३५१०
पंजाब	६०४८	९७९२	८५८९	१३९८	२५८२७
मध्यप्रान्त	२१९४	११६५०	२१९३	१८५	१६२२२
बम्बई	२५१३	७४४८	३७९०	२००	१३९५१
योग—	**२६८६५**	**६९८५७**	**४३२७४**	**२८०४**	**१४२८००**
शेष ब्रिटिश भारत	४७६८	४२१४७	१५१११	५३९	६२५६५
भारतीय रियासतें ६६%	१२३५१	४२०२२	३३७५२	१७९०	८९९१५
सम्पूर्ण भारतका योग	**४३९८४**	**१५४०२६**	**९२१३७**	**५१३३**	**२९५२८०**

('काउ इन इंडिया' पृष्ठ ४४४)

इसके अनुसार सन् १९३५ में कुल गो-जातिके पशुओंकी संख्या १५४०२६००० थी और सरकारी पशुगणनाकी रिपोर्ट (देखिये विवरण-पत्र संख्या १) के अनुसार सन् १९४० में कुल मिलाकर १३७६५०८७० गौओंकी संख्या है। इस **हिसाबसे इस बीचमें लगभग १६३७५००० गौएँ घट गयी हैं !**

संसारभरका वार्षिक दुग्धोत्पादन

(विवरण-पत्र-संख्या ३)

देशका नाम	गायोंकी लगभग संख्या (लाखमें)	वार्षिक दुग्धोत्पादन (लाख मनमें)	कुल उत्पादनका प्रतिशत	एक गायका लगभग उत्पादन (पौंडमें)
यूरोप				
आस्ट्रिया	१२.०९	६८०.६६	१.२२	४६२९
बेल्जियम	९.८३	८२३.८४	१.४८	६८८९
जेकोस्लोवाकिया	२४.३७	१२०२.७०	२.१६	४०६०
डेन्मार्क	१६.१०	१३७०.६८	२.४६	७००५
इंग्लैंड एवं वेल्स	२६.३२	१७८४.२१	३.२०	५५७६
एस्टोनिया	४.४६	२१७.९०	०.३९	४०२०
फिन्लैंड	१२.९८	६६३.०५	१.१९	४२००
फ्रांस	८०.८०	३७०७.५७	६.६६	३७७५
जर्मनी	१०२.४७	६६०६.४१	११.८६	५३०५
यूनान	२.००	२३.६४	०.०४	९७०
हंगरी	८.९८	४४५.०८	०.८०	४०७६
आयर	१३.४८	७५०.१२	१.३५	४५७६
इटली	२३.८८	१०१४.९९	१.८२	३४९६
लैटविया	८.८०	४२०.९५	०.७६	३९३६
लिथुआनिया	७.६५	११३.७४	०.२०	१२२३
लक्जेम्बर्ग	०.५६	३८.५२	०.०७	५६२०
नेदरलैंड्स	१४.७५	१३५५.३४	२.४३	७५५९
पोलैंड	६५.५३	२४०५.७४	४.३२	३०२१
स्कॉट्लैंड	४.२४	२७७.८१	०.५०	५३८६
स्वेडेन	१९.२१	८०१.०२	१.४४	३४३१
स्वीज़रलैंड	८.७९	६९४.२३	१.२५	६४९८
नार्वे	८.०७	३६५.४८	०.६६	३७२३
उत्तरी आयर्लैंड	२.४९	१३६.३८	०.२४	४४९२
समूचे यूरोपमें	**४७७.८५**	**२५९००.०६**	**४६.५**	**४४६०**
सोवियट रूस	२०१.४७	५७१४.८७	१०.३	२३३४
अमेरिका—				
अर्जेन्टाइना	२८.२४	३३३.५०	०.६	९७१
कनाडा	३८.८५	१५०८.५६	२.७	३१९५
चिली	३.३०	५९.६८	०.१	१४८८
संयुक्तराष्ट्र, अमेरिका	२४९.९१	१२५३२.३३	२२.५	४१२६
युरुगी	२७.९१	९१.८३	०.२	२७१
[illegible]	**३४८.२१**	**१४५२५.९०**	**२६.१**	**३४३२**

देशका नाम	गायोंकी लगभग संख्या (लाखमें)	वार्षिक दुग्ध-उत्पादन (लाख मनमें)	कुल उत्पादनका प्रतिशत	एक गायका लगभग उत्पादन
अफ्रीका—				
अल्जीरिया	४.७६	३७.२३	०.०७	६४३
मिश्र	३.८१	१२३.४४	०.२३	२६६३
अफ्रीकाका कुल योग	**८.५७**	**१६०.६७**	**०.३**	**१५४२**
एशिया—				
जापान	१.०५	७४.७४	०.१	५८५७
टर्की	२३.०१	६२२.४५	१.१	२२२५
एशियाका कुल योग (भारतको छोड़कर)	**२४.०६**	**६९७.१९**	**१.२**	**२३८४**
भारत—				
(अ) गायें	४५५	२८९१	५.२	५२५
(आ) भैंसें	२०३	३१२७	५.६	१२७०
भारतका कुल योग	**६५८**	**६०१८**	**१०.८**	**७५३**
बर्मा—				
(अ) गायें	१०	४८	०.०८	३८१
(आ) भैंसें	२	१३	०.०२	४८८
बर्माका कुल योग	**१२**	**६१**	**०.१**	**४१८**
आस्ट्रेलिया	३२.९२	१३८५.३७	२.५	३४६३
न्यू जीलैंड	१९.५१	१२१३.५८	२.२	५११८
कुल योग	**१७८२.५९**	**५५६७६.६४**	**(१००)**	**२५७०**

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ २९७-९८

भारतके कुल दुग्धोत्पादनका संक्षिप्त विवरण

(विवरण-पत्र-संख्या ४)

	गाय	भैंस	भेड़-बकरी	कुल जोड़
दुधारू पशु (लाखमें)	४९०	२१४	९८	८०२
कुल पशुओंका प्रतिशत	६१	२६.८	१२.२	(१००)
प्रतिपशु वार्षिक दुग्धोत्पादन (पौंडमें)	४८६.७	१२२९.२	१६१.८	...
दूधका कुल वार्षिक उत्पादन (लाख मनमें)	२८९७.९	३२०२.८	१९२.२	६२९२.९
कुल उत्पादनका प्रतिशत	४६.०	५०.९	३.१	(१००)
बछड़ों, पाड़ों और मेमनोंद्वारा पिया गया दूध (लाख मनमें)	७६३	३३२	५९	११५४
कुल दूधका उत्पादन (लाख मनमें)	**३६६०.९**	**३५३४.८**	**२५१.२**	**७४४६.९**

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४२

ब्रिटिश भारत और देशी राज्योंमें दूध देनेवाले पशुओंकी संख्या एवं वार्षिक दुग्ध-परिमाण

(विवरण-पत्र-संख्या ५)

	गाय				भैंस				बकरी				कुल	
	नस्लसुधार या दुग्धोत्पादनके लिये रक्खी हुई ३ सालकी गाय (लाख)	प्रति गायका वार्षिक लगभग उत्पादन (पौंडमें)	दूधका वार्षिक उत्पादन (लाख मन)	कुल गो-दुग्धका औसत	नस्लसुधार या दुग्धोत्पादनके लिये रक्खी हुई ३ सालकी भैंस (लाख)	प्रति भैंसका वार्षिक लगभग उत्पादन (पौंडमें)	दूधका वार्षिक उत्पादन (लाख मन)	कुल भैंसके दूधका औसत	दूध देनेवाली बकरियाँ (लाख)	प्रति बकरीका लगभग वार्षिक उत्पादन (पौंडमें)	दूधका वार्षिक उत्पादन (लाख मन)	कुल बकरीके दूधका औसत	सारे प्रदेशका कुल उत्पादन (लाख मन)	भारतके कुल उत्पादनका औसत
काश्मीर राज्य	७·३	२८०	२४·९	०·८६	३·६	५७०	२४·९	०·७८	१·१८	९०	१·२९	०·६७	५१·०९	०·८१
उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त	२·१	१२००	३०·६	१·०६	१·६	१६२०	३१·९	१·००	१·१२	३६५	४·९७	२·५१	६७·४७	१·०७
,, एजेंसी तथा कबीलोंवाला प्रदेश	१·६	७३०	१४·६	०·५०	१·३	९००	१४·०	०·४४	०·८८	२००	३·२०	१·६६	३१·८०	०·५१
ब्रिटिश बिलोचिस्तान	०·६	१०००	७·७	०·२७	०·०४	९००	०·४	०·०१	१·२८	३००	४·६७	२·४३	१२·७७	०·२०
बिलोचिस्तान राज्य	०·७	१३००	११·०	०·३८	०·०१	१८००	०·३	०·०१	१·५३	३००	५·५८	२·९०	१६·८८	०·२७
पंजाबप्रान्त	२२·३	१४४५	३९१·९	१३·५३	२८·९	२३२०	८१४·९	२५·४५	७·००	४४०	३७·४३	१९·४७	१२४४·२३	१९·७७
पटियाला राज्य	१·८	९९०	२१.७	०·७५	१·९	२१३५	५०·४	१·५७	२·२२	२५०	६·७५	३·५१	७८·८५	१·२५
पंजाबकी रियासतें (पटियाला और खैरपुर राज्य छोड़कर)	७·४	९००	८१·०	२·८०	३·९	१२००	५६·४	१·७६	२·५२	२००	६·१३	३·११	१४३·५३	२·२८
देहलीप्रान्त	०·३	१२७०	३·९	०·१३	०·३	२०००	६·७	०·२१	०·१३	११०	०·१७	०·०९	१०·७७	०·१७
राजपूतानाप्रान्त	३८·२	७३०	३३९·२	११·७१	१९·१३	९००	२०९·३	६·५३	१४·६२	१००	१७·७७	९·२५	५६६·२७	९·००
मध्यभारतीय रियासतें	१६·६	७३०	१४७·३	५·०८	६·३	१०००	७६·६	२·३९	१·८४	१००	२·२४	१·१७	२२६·१४	३·५९
सिंधप्रान्त	७·१	१३१५	११३·३	३·९०	३·८	२३२०	१०५·८	३·३०	५·६०	२३५	१५·९९	८·३२	२३५·०९	३.७४
खैरपुर राज्य	०·७	१२००	१०·४	०·३६	०·४	१५००	६·८	०·२१	०·२८	२००	०·६८	०·३५	१७·८८	०·२८

पश्चिम भारतकी रियासतें	४·३	१०००·	५२·३	१·८१	३·१	२५००	११८·१	३·६१	१·८४	२००	४·४७	२·३३	१७४·८७	२·७८
गुजरातकी एजेन्सीवाला प्रदेश	१·९	६००	१३·९	०·४८	१·१	१०००	१३·७	०·४३	०·५०	२००	१·२२	०·६३	२८·८२	०·४६
बड़ौदाराज्य	१·६	३४५	६·८	०·२३	३·६	१८१०	७१·२	२·४७	०·४२	१३०	०·६६	०·३४	८६·६६	१·३८
बम्बईप्रान्त	१९·७	१४०	३३·६	१·१६	१३·०	८४०	१३३·०	४·१५	५·७०	११५	७·९७	४·१५	१७४·५७	२·७७
दक्खिनी रियासतें	२·४	३००	८·८	०·३०	२·१	८००	२०·६	०·६४	०·७८	११५	१·०९	०·५७	३०·४९	०·४९
मैसूरराज्य	१४·४	२४०	४२·१	१·४५	५·४	५१०	३८·७	१·२१	३·४४	१८०	७·५३	३·९२	८८·३३	१·४०
कूर्ग	०·४	२००	०·९	०·०३	०·०१	५००	०·५	०·०१	नगण्य	१८०	नगण्य	नगण्य	१·४०	०·०२
कोचीनराज्य	०·८	४८०	४·४	०·१५	०·१	८००	१·१	०·०३	०·१३	२१०	०·३३	०·१७	५·८३	०·०९
ट्रावनकोरराज्य	३·९	४१०	१९·६	०·६८	०·२	९१०	२·२	०·०७	०·०४	९५	०·०५	०·०३	२१·८५	०·३५
मद्रासकी रियासतें (ट्रावनकोर एवं कोचीनको छोड़कर)	०·६	४००	३·१	०·११	०·२	८००	२·४	०·०७	०·१३	१८०	०·२८	०·१५	५·७८	०·०९
मद्रासप्रान्त	५०·०	४५०	२७३·४	९·४४	२८·७	८००	२७९·०	८·७१	७·१७	१८०	१५·६९	८·१६	५६८·०९	९·०३
हैदराबाद राज्य	२६·०	१३०	४१·१	१·४२	१३·०	८२५	१३०·४	४·०७	८·९३	५०	५·४३	२·८२	१७६·९३	२·८१
मध्यप्रान्त	३४·६	६५	२७·३	०·९४	८·९	५४५	५८·८	१·८४	२·४०	११०	३·२१	१·६७	८९·३१	१·४२
पूर्वी रियासतें	१७·९	६५	१४·१	०·४९	२·४	५४५	१५·९	०·५०	०·३४	११०	०·४५	०·२३	३०·४५	०·४८
बुंदेलखण्ड एजेंसीवाला प्रदेश	६·६	६५	५·२	०·१८	२·१	४४५	११·४	०·३६	०·०९	११०	०·१२	०·०६	१६·७२	०·२७
युक्तप्रान्त (सन् १९३५ ई०)	५७·३	६२५	४३५·३	१५·०२	४०·६	१२४०	६११·९	१९·११	१६·११	१२५	२४·६०	१२·८०	१०७१·८०	१७·०३
युक्तप्रान्तीय रियासतें	१·८	६२५	१३·७	०·४७	१·४	१२४०	२१·१	०·६६	०·३४	१२५	०·५२	०·२७	३५·३२	०·५६
बिहारप्रान्त	२८·८	६२०	२१६·१	७·४६	११·०	१६५०	२२०·६	६·८९	०·८८	३४०	३·६४	१·८९	४४०·३४	७·००
उड़ीसाप्रान्त	१४·८	३५०	६३·०	२·१७	१·४	७५०	१२·८	०·४०	०·०८	२००	०·१९	०·१०	७५·९९	१·२१
बंगालप्रान्त	७४·८	४२०	३८१·६	१३·१७	२·०	९६०	२३·४	०·७३	७·८६	८०	७·६४	३·९८	४१२·६४	६·५६
बंगालकी रियासतें	२·६	४२०	१३·५	०·४७	०·३	९६०	३·०	०·०९	०·२६	८०	०·२५	०·१३	१६·७५	०·२७
आसाम	१७·२	१४०	२९·२	१·००	१·६	३१५	६·३	०·२०	नगण्य	८०	नगण्य	नगण्य	३५·५०	०·५६
आसामकी रियासतें	०·८	१४०	१·४	०·०४	०·०१	३१५	०·३	०·०१	नगण्य	८०	नगण्य	नगण्य	१·७०	०·०३
सम्पूर्ण भारतमें	४८९·९	४८६·७	२८९७·९	(१००)	२१४·३६	१२२१·२	३२०२·८	(१००)	१७·७२	१६१·८	१९२·२१	(१००)	६२९२·९१	(१००)
बर्मा	१०·४	३८०·०	४८·३७	...	२·२	४९०	१३·१४	...	०·३	६००	२·१८	...	६३·६९	...

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४२

ब्रिटिश भारत और देशी राज्योंमें दूध और दूधसे बने पदार्थ तथा उनका उपयोग (लाख मनोंमें)

(विवरण-पत्र-संख्या ६)

	वार्षिक उत्पादन	दूधके रूपमें व्यवहृत		घीके रूपमें परिणत		खोवेके रूपमें परिणत		दहीके रूपमें परिणत		मक्खनके रूपमें परिणत		क्रीमके रूपमें परिणत		आइस क्रीमके रूपमें परिणत		अन्य दुग्धान्नोंके रूपमें व्यवहृत		वस्तुओंके रूपमें परिणत दूधका कुल योग	
		परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रतिशत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत	परिमाण	प्रति-शत
काश्मीर	५१.०९	२६·०६	५१·०	१७·०६	३३·४	०·३१	०·६	७·२०	१४·१	०·१०	०.२	नगण्य	...	नगण्य	...	०·३६	०·७	२५·०३	४९·०
उ.प.सी.प्रा.	६७·४७	२९·७५	४४·१	२६·३१	३९·०	०·७५	१·१	६·७५	१०·०	०·५४	०.८	नगण्य	...	नगण्य	...	३·३७	५·०	३७·७२	५५·९
पंजाब	१२४४·२३	२६७·५१	२१·५	९५८·०५	७७·०	४·९८	०·४	१३·६९	१·१	घीमें सम्मिलित		नगण्य	...	नगण्य	...	...	...	९७६·७२	७८·५
देहली	१०·७७	६·६०	६१·३	२·०१	१८·७	०·८०	७·४	०·६७	६·२	०·३०	२·८	०·२६	२·४	०·०१	०·१	०·१२	१·१	४·१७	३८·७
सिंध	२३५.०९	७९·९३	३४·०	८२.२८	३५·०	२१·१६	९·०	३२·९२	१४·०	९·४०	४·०	४·७०	२·०	४·७०	२·०	नगण्य	...	१५५·१६	६६·०
बड़ौदा	८६·६६	३७·९६	४३·८	४०·५६	४६·८	३·२१	३·७	३·९८	४·६	०·०९	०·१	०·८६	१·०	नगण्य	...	नगण्य	...	४८·७०	५६.२
बम्बई	१७४·५७	६६·६९	३८·२	९३·७४	५३·७	२·०९	१·२	नगण्य	...	९·९५	५·७	नगण्य	...	१·०५	०·६	१·०५	०·६	१०७·८८	६१·८
मैसूर	८८·३३	१७·७५	२०·१	३२·१६	३६·४	२.५६	२·९	१६·७८	१९.०	१९·०८	२१·६	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	७०·५८	७९·९
कोचीन	५·८३	२·९१	५०·०	२·६८	४५·९	०·२४	४·१	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	२·९२	५०·०
ट्रावनकोर	२१·८५	७·५८	३४·७	१२·१३	५५·५	नगण्य	...	२·१४	९·८	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	१४·२७	६५·३
मद्रास	५६८·०९	१७७·८१	३१·३	३२१·७७	५६·६४	०·५७	०·१	६६·४७	११·७	१·१४	०·२	०·३३	नगण्य	नगण्य	...	नगण्य	...	३९०·२८	६८·७
हैदराबाद	१७६·९३	५०·४२	२८·५	११०·४०	६२·४	२·६५	१·५	९·०२	५·१	२·३०	१·३	नगण्य	...	०·८९	०·५	१·२५	०·७	१२६·५१	७१·५
मध्यप्रान्त	८९·३१	३४·९२	३९·१	४४·५१	४९·९	३·७४	४·२	३·५७	४·०	१·७९	२·०	०·०६	नगण्य	०·३६	०·४	०·३६	०·४	५४·३९	६०·९
युक्तप्रान्त	१०७१·८०	२०७·९१	१९·४	५०३·७४	४७·०	१२४·३३	११·६	७५·०३	७·०	३२·१५	३·०	१०·७२	१·०	१०·७२	१·०	१०७·१८	१०·०	८६३·८७	८०·६
बिहार	४४०·३४	८३·२२	१८·९	३३८·६१	७६·९	८·३६	१·९	६·६०	१·५	३·०७	०·७	०·०४	नगण्य	०·०८	नगण्य	०·३६	नगण्य	३५७·१२	८१·१
उड़ीसा	७५·९९	१४·३६	१८·९	५८·४४	७६·९	१·४४	१·९	१·१४	१·५	०·५३	०·७	नगण्य	...	नगण्य	...	०·०८	०·१	६१·६३	८१·१
बंगाल	४१२·६४	२५०·१०	६०·६	१२९·९१	३१·५	२१·०४	५·१	८·२५	२·०	२·४८	०·६	०·०७	नगण्य	०·०६	नगण्य	०·८३	०·२	१६२·६४	३९·४
आसाम	३५·५०	२०·१३	५६·७	८·९५	२५·२	२·८४	८·०	१·९२	५·४	१·६६	४·७	नगण्य	...	नगण्य	...	नगण्य	...	१५·३७	४३·३
अन्य प्रदेश	१४३६·४२	३८०·६५	२६·५	८०५·८३	५६·१	११०·६०	७·७	७१·८२	५·०	२२·९८	१·६	४·३१	०·३	५.७५	०·४	३४·४८	२·४	१०५५·७७	७३·५
सं० भारत	६२९२·११	१७६२·१८	२८·०	३५८९·१४	५७·०४	३११·६७	४·९६	३२७·९५	५·२१	१०७·५६	१·७१	२१·३५	०.३४	२३·६२	०·३७	१४९·४४	२·३७	४५३०·७३	७२·०

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४२,

भारतमें दूधके व्यवहारका संक्षिप्त विवरण

(विवरण-पत्र-संख्या ७)

	वार्षिक परिमाण (लाख मनमें)	कुल उत्पादनका प्रतिशत	दूधके बने पदार्थोंके कुल परिमाणका प्रतिशत
दूधके रूपमें व्यवहृत	१७६२.१८	२८.०	... ...
घीके रूपमें परिणत	३५८९.१४	५७.०	७९.२
खोवेके रूपमें ,,	३११.६७	५.०	६.९
दहीके रूपमें ,,	३२७.९५	५.२	७.२
मक्खनके रूपमें ,,	१०७.५६	१.७	२.४
क्रीमके रूपमें ,,	२१.३५	०.३	०.५
आइस क्रीमके रूपमें परिणत	२३.६२	०.४	०.५
अन्य दुग्धान्नोंके रूपमें ,,	१४९.४४	२.४	३.३
जोड़—	६२९२.९१	(१००)	(१००)

भारतके कुछ जिलों तथा हालैंड एवं डेन्मार्कके दुग्धोत्पादनका परिमाण

(विवरण-पत्र-संख्या ८)

	क्षेत्रफल (वर्गमीलमें)	प्रतिवर्गमील		
		दुधारू पशुओंकी संख्या	दूधका दैनिक उत्पादन	जन-संख्या
			मन – सेर	
अमृतसर जिला	१,५९३	११७	७ – २८	७०१
गुरदासपुर ,,	१,८८९	१३३	६ – २७	५१३
लाहौर ,,	२,६८२	६१	५ – १२	५१४
अलीगढ़ ,,	१,९४७	१०७	५ – ३	६०२
खैरा ,,	१,६२०	९५	४ – २०	४५७
गया ,,	४,७१४	८२	४ – ६	५०६
मेहसाना ,, (बड़ौदा राज्य)	३,०६८	९५	४ – ३	३२९
सम्पूर्ण भारतका औसत	**१५,७१,९६४**	**४२**	**१ – ३**	**२१५**
हालैंड	१३,५२२	१०९	२७ – १८	६३९
डेन्मार्क	१६,५७५	९७	२२ – २६	२२६

यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त दोनों विदेशोंमें हमारे देशके तथाकथित 'दुग्धोत्पादनके जिलों'से प्रतिवर्गमील दूधका उत्पादन बहुत ही अधिक है। सम्पूर्ण भारतकी तुलनामें हालैंड एवं डेन्मार्कमें प्रति वर्गमील क्रमशः करीब २५ और २० गुना अधिक दूध उत्पन्न होता है। —होर्ड्स डेयरीमैन मार्च २५, १९३७

(मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ १२५)

भारतके नगरोंमें प्रतिमनुष्य दूध और दुग्धान्नोंकी खपत

(विवरण-पत्र-संख्या ९)

नगरोंके नाम	नगरमें प्रतिदिनके दुग्ध-उत्पादनका परिमाण (मनमें)	प्रतिदिन आसपासकी बस्तियोंसे आनेवाले दूधका परिमाण (मनमें)	प्रतिदिन होनेवाले घीके रूपमें दूधकी खपत (मनमें)	प्रतिदिन अन्य दुग्धान्नोंके रूपमें व्यवहृत दूधकी खपत (मनमें)	प्रतिदिनकी दूधकी खपतका कुल योग (मनमें)	प्रतिमनुष्यके हिसाबसे दैनिक खपत		
						दूध (औंस)	दुग्धान्नोंके रूपमें दूध (औंस)	योग (औंस)
१ पेशावर	१५०	१५०	५९२	२००	१०९२	४·५	११·९	१६·४
२ लाहौर	५९४	६१३	३२८०	५००	४९८७	४·०	१२·४	१६·४
३ दिल्ली	३२५	१२००	५४४०	१४०	७१०५	४·९	१७·८	२२·७
४ कराँची	४२०	९८०	२१००	६००	४१००	६·१	११·९	१८·०
५ हैदराबाद (सिंध)	२९४	१२६	८५१	१८०	१४५१	५·८	१४·१	१९·९
६ सक्कर	१७५	३५	४४१	९०	७४१	४·०	१०·१	१४·१
७ शिकारपुर	३५०	७०	५७७	१८०	११७७	८·८	१६·०	२४·८
८ लखनऊ	५८५	११४	२४२८	५०३	३६३०	३·४	१४·०	१७·४
९ कानपुर	५०१	११०	१८८४	४३०	२९२५	३·३	१२·५	१५·८
१० आगरा	४७८	५४	२२००	५५०	३२८२	३·०	१५·८	१८·८
११ पटना	१०७	४२१	४४२	२५८	१२२८	३·८	५·०	८·८
१२ कटक	२०	१५	१६०	६	२०१	०·६	२·९	३·५
१३ कलकत्ता	१७२७	१७२७	३१२८	२३२७	८९०९	३·८	६·०	९·८
१४ ढाका	५४	२८८	३११	२५९	९१२	३·०	५·०	८·०
१५ शिलांग	५०	१५	१६०	१५	२४०	२·१	५·८	७·९
१६ बम्बई	२५००	१२५०	८८००	१६१५	१४१६५	४·३	११·३	१५·६
१७ पूना	६२५	२००	१८००	९५	२७२०	४·२	९·८	१४·०
१८ नागपुर	२६६	९१	४०९	२३४	१०००	२·२	३·९	६·१
१९ हैदराबाद (दक्खिन)	७३३	१५४	१४९०	१७७	२५५४	२·५	४·७	७·२
२० बंगलोर	२२०	१०२	३९३	८०	७९५	२·५	३·६	६·१
२१ मद्रास	९७२	२४३	२४००	७३	३६८८	२·३	४·६	६·९
२२ मदुरा	३४१	९८	७७५	२८	१२४२	२·९	५·३	८·२
२३ त्रिचनापल्ली	२४३	४९	४७५	३७	८०४	२·६	४·५	७·१
उपर्युक्त नगरोंका औसत	...	...	...	...	...	३·७	८·९	१२·६

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ २९९

विभिन्न देशोंमें प्रतिमनुष्य दूध और दुग्धान्नोंकी खपत

(विवरण-पत्र-संख्या १०)

देशका नाम	दूध एवं मलाईके रूपमें व्यवहृत		मक्खनके रूपमें परिणत दूध		पनीरके रूपमें परिणत दूध		व्यवहृत दूधका कुल योग	
	वार्षिक परिमाण (पौंडमें)	व्यवहृत कुल दूधका प्रतिशत	वार्षिक परिमाण (पौंडमें)	व्यवहृत कुल दूधका प्रतिशत	वार्षिक परिमाण (पौंडमें)	व्यवहृत कुल दूधका प्रतिशत	वार्षिक परिमाण (पौंडमें)	दैनिक उत्पादन का परिमाण (औंसमें)
आस्ट्रिया	३०१	७०·०	८७	२०·२	४२	९·८	४३०	१८·८
आस्ट्रेलिया	२२०	२१·७	७५२	७४·२	४२	४·१	१,०१४	४४·४
बेल्जियम	१७४	२३·१	५१५	६८·५	६३	८·४	७५२	३३·०
कनाडा	५१०	३९·४	७४७	५७·७	३८	२·९	१,२९५	५६·८
जेकोस्लोवाकिया	३२०	५३·२	२२९	३८·१	५२	८·७	६०१	२६·३
डेन्मार्क	३६२	३९·४	४३४	४७·२	१२३	१३·४	९१९	४०·३
फिन्लैंड	८३९	८१·१	१८१	१७·५	१५	१·४	१,०३५	४५·४
फ्रांस	२३१	३३·३	३२५	४६·८	१३८	१९·९	६९४	३०·४
जर्मनी	२३१	२९·०	४२८	५३·६	१३९	१७·४	७९८	३५·०
ग्रेट ब्रिटेन	२५०	२६·९	५७९	६२·४	१००	१०·७	९२९	४०·७
इटली	६६	२८·६	५०	२१·६	११५	४९·८	२३१	१०·१
नेदरलैंड्स	४२७	४२·३	४१७	४१·४	१६४	१६·३	१,००८	४४·२
न्यू जीलैंड	२८२	२२·२	८९६	७०·७	९०	७·१	१,२६८	५५·६
नार्वे	५६०	५८·८	२८२	२९·६	११०	११·६	९५२	४१·७
स्वीजरलैंड	५८०	५१·७	३४४	३०·७	१९८	१७·६	१,१२२	४९·२
संयुक्तराष्ट्र, अमेरिका	३९०	४८·१	३८५	४७·५	३६	४·४	८११	३५·६
उपर्युक्त १६ देशोंका औसत	**३५९**	**४१·४**	**४१६**	**४८·०**	**९२**	**१०·६**	**८६६**	**३८·०**
भारतवर्ष	...	...	...	...	...	...	...	**६·६***

* विलायती दूधमें घीका भाग ३·८ प्रतिशत होता है और भारतके दूधमें लगभग ५ प्रतिशत होता है। विलायती दूधके घीके हिसाबसे जोड़कर लोग प्रतिमनुष्य औसत १०·४ बतलाते हैं। पर यह क्लिष्टकल्पना मात्र है।

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ ६२

विभिन्न देशोंका वार्षिक एवं दैनिक दुग्धोत्पादन तथा प्रतिमनुष्य दैनिक खर्च
(विवरण-पत्र-संख्या ११)

देशका नाम	दुधारू पशुओंकी संख्या (दस लाखमें)	प्रतिपशु दूधका उत्पादन (गैलनमें)	सन् १९३०–३४ में दूधका उत्पादन (दस लाख गैलनमें)	जन-संख्या (हजारमें)	प्रतिमनुष्य पीछे दैनिक उत्पादन (औंसमें)	प्रतिमनुष्य पीछे दैनिक खर्च (औंसमें)*
फिन्लैंड	१.२	५१६.७	६२०	३,६६६	७४	६३
स्वेडेन	२.०	४९०.०	९८०	६,२३३	६९	६१
न्यू जीलैंड	१.९	४५७.९	८७०	१,५५९	२४४	५६
स्वीजरलैंड	०.९	६७४.४	६०७	४,०६६	६५	४९
आस्ट्रेलिया	२.४	४३७.१	१,०४९	६,६३०	६९	४५
नॉर्वे	०.७	४१४.३	२९०	२,८१४	४५	४३
डेन्मार्क	१.६	७५०.०	१,२००	३,५५१	१४८	४०
ग्रेट ब्रिटेन	३.४	४३३.५	१,४७४	४५,२६६	१४	३९
जेकोस्लोवाकिया	२.५	४८०.०	१,२००	१४,७३०	३६	३६
संयुक्तराष्ट्र,अमेरिका	२५.१	४१३.५	१०,३८०	१,२२,७७५	३७	३५
कनाडा	३.९	४०५.१	१,५८०	१०,३७७	६६	३५
नेदरलैंड्स	१.४	६९२.८	९७०	७,९३५	५४	३५
बेल्जियम	१.०	६५१.०	६५१	८,०९२	३५	३५
जर्मनी	१०.१	५०४.५	५,०९६	६६,०३०	३४	३५
आस्ट्रिया	१.२	४५४.२	५४५	६,७६०	३५	३०
फ्रांस	८.७	३६२.१	३,१५०	४१,८३५	३३	३०
पोलैंड	४.९	४०६.१	१,९९०	३१,९४८	२७	२२
इटली	३.६	२९१.७	१,०५०	४१,१७७	११	१०
रुमानिया	२.०	१९१.०	३८२	१९,०३५	९	९
भारत	**६६.४**	**९६.४**	**६,४००**	**३,५२,८३८**	**८**	**७**

* इसमें और मिल्क मार्केटिंग रिपोर्टके दैनिक औसतमें जाँचके समयके अन्तरके कारण कुछ अन्तर दिखायी पड़ेगा। (देखिये विवरण-पत्र-सं० १०)। पर किसी भी रिपोर्टको देखें, अन्य देशोंके दुग्धोत्पादनसे भारतका मुकाबला तो हो ही नहीं सकता।

विभिन्न प्रान्तोंमें प्रतिमनुष्य दुग्धान्नोंकी (दूधसहित) दैनिक खपत
(विवरण-पत्र-संख्या १२)

प्रान्त या रियासतका नाम	प्रतिमनुष्य दैनिक खपत (औंसमें)
काश्मीर रियासत	४·५
सीमान्त प्रदेश	१०·२
पंजाब	१९·७
दिल्ली प्रान्त	७·८
राजपूताना	१५·६
मध्यप्रदेश	१·८
सिंध	२२·०
बम्बई-प्रेजीडेंसी	३·३
मैसूर रियासत	३·६
मद्रास-प्रेजीडेंसी	३·६
हैदराबाद रियासत	३·६
मध्य भारत	११·६
संयुक्त प्रान्त	७·८
बिहार	६·१
उड़ीसा	२·५
बंगाल	२·९
आसाम	१·२
सम्पूर्ण भारत	६·६
बर्मा	१·८*

* बाहरसे आये हुए, गाढ़े किये हुए एवं सुरक्षित रक्खे हुए दूधसहित।

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ ५

भारतीय स्कूली बच्चोंके बढ़ावपर अतिरिक्त दूधका प्रभाव

(विवरण-पत्र-संख्या १३)

स्थान एवं पिलाये गये दूधका परिमाण (प्रतिबालक)	लड़कोंका (तीन माहका औसत बढ़ाव)				लड़कियोंका (तीन माहका औसत बढ़ाव)			
	ऊँचाई (इंचोंमें)		वजन (पौंडमें)		ऊँचाई (इंचोंमें)		वजन (पौंडमें)	
	अतिरिक्त दूध मिलनेपर	अतिरिक्त दूध न मिलनेपर	अतिरिक्त दूध मिलनेपर	अतिरिक्त दूध न मिलनेपर	अतिरिक्त दूध मिलनेपर	अतिरिक्त दूध न मिलनेपर	अतिरिक्त दूध मिलनेपर	अतिरिक्त दूध न मिलनेपर
शिमला (१ पौ.)	३·८४	१·६	०·६७	०·४९	४·५४	०·९२	०·४	०·०६
नयीदिल्ली (१ पौ.)	३·७६	२·०२	०·६३	०·४३	६·७६	१·५०	०·५६	०·२४
नयीदिल्ली (½ पौ.)	३·६२	२·६३	०·६३	०·५३	५·७२	१·४२	०·४६	०·४१
नयीदिल्ली (१ पौ. निर्घृत दूध)	२·७९	२·०३	०·५३	०·४५	२·१०	०·१३	०·५२	०·१५
दक्षिणी भारतका एक स्कूल (१ औंस निर्घृत दूधका पाउडर ८ औंस दूधके रूपमें)	४·७७	२·१३	०·६१	०·३५	४·८०	०·८०	०·८०	०·५६

—मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४१, पृष्ठ ७५

स्कूली बच्चोंके बढ़ावपर दूधका प्रभाव

(विवरण-पत्र-संख्या १४)

श्रेणी (विभाग)	दूध मिलनेपर — ३ महीनेके बढ़ावका औसत				दूध न मिलनेपर — ३ महीनेके बढ़ावका औसत			
	लड़के		लड़कियाँ		लड़के		लड़कियाँ	
	वजन (पौंडमें)	ऊँचाई (इंचमें)	वजन (पौंडमें)	ऊँचाई (इंचमें)	वजन (पौंडमें)	ऊँचाई (इंचमें)	वजन (पौंडमें)	ऊँचाई (इंचमें)
प्रथम	३·९२	०·८०	५·३५	०·७८	१·६०	०·६०	१·१	०·१८
द्वितीय	३·९०	०·७०	४·३३	०·३८	१·५६	०·४६	१·१	कुछ नहीं
तृतीय	३·७०	०·५३	३·००	०·१९	१·९०	०·४२	१·०	०·०७
चतुर्थ	...	...	५·५०	०·२९	...	...	०·५	कुछ नहीं
औसत	**३·८४**	**०·६७**	**४·५४**	**०·४१**	**१·६**	**०·४९**	**०·९२**	**०·०६**

—डा० राइटकी रिपोर्ट, पृष्ठ १५७

मरने और मारी जानेवाली गायोंकी संख्या और उनकी खालोंका विवरण

(विवरण-पत्र-संख्या १५)

प्रान्त	वार्षिक पैदावार (खालोंकी)		योग	भारतवर्ष-की खालों-का प्रतिशत	गायोंकी संख्या (सन् १९३५ में)	गायोंकी संख्यापर खालोंका प्रतिशत
	मृत्युसे	वधसे				
काश्मीर	१,८०,०००	...	१,८०,०००	०·९	१६,७०,०००	१०·८
सीमान्तप्रदेश (एजेंसी तथा कबीलोंके प्रदेश-सहित)	...	२,४०,०००	२,४०,०००	१·२	१५,३०,०००	१५·७
पंजाब	५,२०,०००	२,६०,०००	७,८०,०००	३·९	९७,९०,०००	८.०
पंजाबकी रियासतें	१,६०,०००	...	१,६०,०००	०·८	३४,२०,०००	४.७
राजपूतानेकी रियासतें	६,६०,०००	...	६,६०,०००	३·३	१,५०,३०,०००	४·४
मध्यभारतकी रियासतें	२,८०,०००	...	२,८०,०००	१·४	४२,९०,०००	६·५
सिंध	१,५०,०००	२०,०००	१,७०,०००	०·८	२०,८०,०००	८·२
काठियावाड़, गुजरात, बड़ौदा	२,८०,०००	...	२,८०,०००	१·४	३४,९०,०००	८·०
बम्बई प्रान्त व रियासतें	७,२०,०००	१,७०,०००	८,९०,०००	४·५	८४,८०,०००	१०·५
मैसूर	६०,०००	२,८०,०००	३,४०,०००	१·७	४१,९०,०००	८·१
ट्रावनकोर स्टेट	५०,०००	१,५०,०००	२,००,००	१·०	१०,७०,०००	१८·७
मद्रासप्रान्त	३०,१०,०००	८,५०,०००	३८,६०,०००	१९·३	१,७७,९०,०००	२१·७
हैदराबाद रियासत	११,५०,०००	१,७०,०००	१३,२०,०००	६·६	९९,२०,०००	१३.३
मध्यप्रदेश	१२,२०,०००	७०,०००	१२,९०,०००	६·४	१,१६,५०,०००	११·१
पूर्वी एवं मध्यभारतकी रियासतें	४,७०,०००	...	४,७०,०००	२·४	४५,९०,०००	१०·२
संयुक्तप्रान्त (रियासतोंसहित)	११,२०,०००	४,८०,०००	१६,००,०००	८·०	२,३७,७०,०००	६·७
बिहार	१२,४०,०००	४,१०,०००	१६,५०,०००	८·२	१,३७,४०,०००	१२·०
उड़ीसा	४,००,०००	१,३०,०००	५,३०,०००	२·७	४४,८०,०००	११·८
बंगाल	२४,९०,०००	१८,३०,०००	४३,२०,०००	२१·६	२,५८,३०,०००	१६·७
आसाम	३,८०,०००	५०,०००	४,३०,०००	२·१	५४,५०,०००	७·९
अन्य प्रदेश	२,००,०००	१,६०,०००	३,६०,०००	१·८	३७,३०,०००	९·७
कुल योग	**१,४७,४०,०००**	**५२,७०,०००**	**२,००,१०,०००**	**(१००)**	**१७,५९,९०,०००**	**११·४**

—हाइड्स मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४३, पृष्ठ ७

मरने और मारी जानेवाली भैंसोंकी संख्या और उनकी खालोंका विवरण

(विवरण-पत्र-संख्या १६)

प्रान्त	वार्षिक पैदावार		योग	भारतवर्ष-की खालों-का प्रतिशत	भैंसोंकी संख्या (सन् १९३५ में)	भैंसोंकी संख्यापर खालोंका प्रतिशत
	मृत्युसे	वधसे				
सीमान्त प्रदेश (एजेंसी तथा कबीलोंके प्रदेश-सहित)	...	१,८०,०००	१,८०,०००	३·१	५,७०,०००	३१.६
पंजाब	३,३०,०००	१,६०,०००	४,९०,०००	८·६	६०,५०,०००	८·१
राजपूताना	१,९०,०००	...	१,९०,०००	३·३	४२,४०,०००	४·५
मध्यभारतकी रियासतें	७०,०००	...	७०,०००	१·२	१०,७०,०००	६·५
सिंध	४०,०००	...	४०,०००	०·७	५,५०,०००	७·३
काठियावाड़, गुजरात, बड़ौदा	१,३०,०००	...	१,३०,०००	२·४	१५,७०,०००	८·३
बम्बई (रियासतोंसहित)	२,३०,०००	४०,०००	२,७०,०००	४·७	२९,१०,०००	९·३
मैसूर	२०,०००	६०,०००	८०,०००	१·४	९,४०,०००	८·५
मद्रास प्रान्त	११,८०,०००	३,३०,०००	१५,१०,०००	२६·४	५४,३०,०००	२७·८
हैदराबाद	२,२०,०००	...	२,२०,०००	३·९	३०,९०,०००	७·१
मध्यप्रदेश	६,२०,०००	२०,०००	६,४०,०००	११·३	२१,९०,०००	२९·२
मध्यप्रदेशकी तथा पूर्वी रियासतें	३,००,०००	...	३,००,०००	५·२	११,८०,०००	२५·४
संयुक्त प्रान्त (रियासतोंसहित)	३,७०,०००	१,९०,०००	५,६०,०००	९·८	९५,३०,०००	५·९
बिहार	३,२०,०००	२,००,०००	५,२०,०००	९·१	३५,५०,०००	१४·६
उड़ीसा	४०,०००	२०,०००	६०,०००	१·०	३,८०,०००	१५.८
बंगाल	१,२०,०००	५०,०००	१,७०,०००	३·०	९,९०,०००	१७·२
आसाम	४०,०००	...	४०,०००	०·७	५,३०,०००	७·५
अन्य	१,६०,०००	८०,०००	२,४०,०००	४·२	२७,८०,०००	८·६
कुल योग	४३,८०,०००	१३,३०,०००	५७,१०,०००	(१००)	४,७५,५०,०००	१२·०

—हाइड्स मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४३, पृष्ठ ९

मरने और मारी जानेवाली गायों एवं भैंसोंकी संख्या तथा उनकी खालोंका संक्षिप्त विवरण

(विवरण-पत्र-संख्या १७)

नाम पशु	वार्षिक पैदावार (खालोंकी)		योग	भारतवर्षकी खालों-का प्रतिशत	पशुओंकी संख्या	पशुओंकी संख्यापर खालोंका प्रतिशत
	मृत्युसे	वधसे				
गाय	१,४७,४०,०००	५२,७०,०००	२,००,१०,०००	७८	१७,६०,००,०००	११·४
प्रतिशत	७३	२७	(१००)	...	...	...
भैंस	४३,८०,०००	१३,३०,०००	५७,१०,०००	२२	४,७५,००,०००	१२·०
प्रतिशत	७७	२३	(१००)	...	...	...
कुल योग	१,९१,२०,०००	६६,००,०००	२,५७,२०,०००	(१००)	२२,३५,००,०००	११·१५
प्रतिशत	७४	२६	(१००)	(१००)	...	...

गोचरभूमि, बालमृत्यु, औसत आयु और दूध-मक्खनकी खपत
चार पश्चिमीय देशोंसे तुलना
(विवरण-पत्र-संख्या १८)

देशका नाम	गोचरभूमि कुल भूमिके अनुपातसे	बालमृत्यु (प्रतिहजार)	औसत आयु	दूध आदमी पीछे प्रतिदिन	मक्खन आदमी पीछे वार्षिक (पौंडमें)
इंग्लैंड	३१ प्रतिशत	१७२	५३	आधा सेर	१२.
न्यू जीलैंड	४० ,,	३२	५८	तीन पाव	२७
डेन्मार्क	३३ ,,	१३६	५६	आधा सेर	आँकड़े अप्राप्त
अमेरिका	१६ ,,	अप्राप्त	५९	तीन पाव	१७
भारतवर्ष	**१८२ वाँ भाग**	**२६१**	**२३**	**सेरका २७वाँ भाग**	**२**

प्रति वर्गमील पीछे चरनेवाले पशुओंकी संख्या
(विवरण-पत्र-संख्या १९)

प्रान्त	पशुओंके चरनेके लिये छोड़े गये जंगलोंका स्क्वायर मील परिमाण	जंगलोंमें चरनेवाले पशुओंकी संख्या (हजारमें)					प्रति वर्गमील पीछे चरनेवाले पशुओंकी संख्या एवं प्रतिपशुके लिये भूमि (एकड़में)	
		भैंस	गाय-बैल	बकरी-भेड़	अन्य पशु	योग	पशु-संख्या	भूमि (एकड़में)
संयुक्तप्रान्त	४०००	१४६	८८३	२५०	१०	१२८९	३२२	२
मद्रास	१४०००	१०८	१३७०	७३२	...	२२१०	१५८	४
पंजाब	४७००	२४७	८६६	१५५७	५६	२७२६	५८०	१·१
मध्यप्रान्त	१७०००	३१२	२५००	३००	५	३११७	१८३	३·५
बम्बई	१२४००	३५३	१५१४	५४२	१७	२४२६	१९५	३·२५
योग	**५२१००**	**११६६**	**७१३३**	**३३८१**	**८८**	**११७६८**	**२२६**	**२·८ (औसत)**

—'काउ इन इंडिया' पृष्ठ ४४४

जंगलोंमें चरनेवाले पशुओंकी संख्या
(विवरण-पत्र-संख्या २०)

	युक्तप्रान्त	मद्रास	पंजाब	मध्यप्रान्त	बंबई	कुल
चरनेवाले पशु लाखमें	१०	१५	१०	३०	२०	८५
कुल पशु ,,	३२५	२४५	१६०	१४०	१००	९७०

विभिन्न प्रान्तोंमें प्रत्येक पशुचिकित्सक पीछे पशुओंकी संख्या तथा प्रतिपशुका खर्च

(विवरण-पत्र-संख्या २१)

प्रान्त	प्रति पशु-चिकित्सक पीछे पशु-संख्या	प्रतिपशु पीछे चिकित्सा एवं सुधार-सम्बन्धी खर्च (पाइयोंमें)
सीमान्तप्रदेश	२९५००	२३·८
पंजाब	३६०००	१६·३
बम्बई	६५५००	९·१
मध्यप्रदेश	८१५००	६.७
मद्रास	८२५००	८·४
आसाम	९६५००	८·२
बंगाल	१३५०००	४·१
संयुक्तप्रान्त	१४१०००	३·३
बिहार	१४२०००	५·१

—डा. राइट्की रिपोर्ट, टेबिल ४३, पृष्ठ १८२

स्पर्शाक्रामक रोगोंकी प्रगति और उनका नियन्त्रण

(विवरण-पत्र-संख्या २२)

सन्	स्पर्शाक्रामक रोगोंसे मृत्यु-संख्या	प्रतिषेधक टीकाकी संख्या
१९२८–२९	३७००००	१९०००००
१९२९–३०	४२००००	२०३००००
१९३०–३१	३२००००	१५१००००
१९३१–३२	२७००००	१५८००००
१९३२–३३	३०००००	१७३००००
१९३३–३४	२९००००	२२३००००
१९३४–३५	२२००००	२४४००००
१९३५–३६	२३००००	३१४००००
१९३६–३७	२८००००	४४४००००
१९३७–३८	२४००००	४८५००००

लगभग पंद्रह-बीस वर्षोंसे सिविल वेटेरिनरी (पशुचिकित्सा) विभागकी स्थापना हुई है। १९३६-३७ में प्रान्तीय एवं भारतीय सरकार तथा रियासतोंका खर्च ८२ लाख था, जब कि १९३०-३१ में सारे भारतमें ११३२ पशु-अस्पताल तथा १९३७-३८ में १३३५ थे। इसका यह मतलब है कि १८०००० पशुओंपर एक अस्पताल है।

इसी सालमें ६५ लाख पशुओंको दवा दी गयी या ३ प्रतिशत पशुओंको डाक्टरी सहायता मिली। अबतक केवल ३ प्रतिशतको बीमारी रोकनेका टीका लगा है। भारतसरकार पशुओंकी नस्ल तथा भलाईपर केवल दो पैसे प्रति-पशु खर्च करती है, जब कि अमेरिका आदि अन्य देशोंमें एक रुपया प्रतिपशु खर्च किया जाता है।

—हाइड्स मार्केटिंग रिपोर्ट सन् १९४३, पृष्ठ १६

डेयरी-फार्म

यदि डेयरीकी परिभाषा यह मान लें कि उसके नीचे कुछ जमीन, यथोचित इमारत, एक डेयरी तथा ७५ दूध देनेवाले पशु हों तो यह कहा जाता है कि सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऐसी संस्थाएँ ७५-८० से अधिक नहीं हैं। इनमेंसे सिर्फ एक दर्जनके करीब व्यक्तिगत अधिकारमें हैं और बाकी तमाम सरकारी डेयरियाँ हैं, जो सैनिक एवं असैनिक विभागों तथा देशी रियासतोंके अधिकारमें हैं। अतः ऐसी डेयरियोंकी संख्या, जो अपने आवश्यकतानुसार चारा स्वयं उत्पन्न करती हैं तथा जिनके पास फार्ममें उत्पादित दूधका उपयोग करनेके लिये अपना स्वतन्त्र प्रबन्ध है, देशके आकारको देखते हुए बहुत ही कम है।

× × × ×

भारतमें सबसे बड़ी डेयरियाँ 'फौजी डेयरीफार्म' हैं, जिनकी संख्या करीब ४५ है। इनमेंसे कुछ डेयरियोंमें तो ४५० तक पशु हैं, जो प्रधानतः भारतमें रहनेवाले अंग्रेज सिपाहियों तथा फौजी अस्पतालोंके लिये नियमित रूपसे प्रचुर एवं पर्याप्त मात्रामें दूध, मक्खन एवं मलाई देनेके लिये पाले जाते हैं।* असैनिक विभागके अधिकारमें जो डेयरियाँ हैं, वे अव्यापारिक हैं; क्योंकि उनमें कुछ तो शिक्षण-संस्थाएँ हैं तथा कुछ गाँवोंमें भेजनेके लिये प्रजननोपयोगी साँड़ तैयार करनेके फार्म हैं। कुछ रियासतोंमें ऐसे फार्म राजमहलोंकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिये अथवा नस्ल-सुधारके लिये ही हैं, वे पैसा कमानेके लिये नहीं हैं।

कलकत्ता, बम्बई-जैसे शहरोंमें एक-एक आदमीके द्वारा १०० तक दूध देनेवाली गायें रक्खी जाती हैं; परन्तु ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं। उनके पास न तो चारा उत्पन्न करनेके लिये कोई जोतने योग्य भूमि है और न उनके पास कोई स्थायी गोशाला ही है। खरीदे हुए चारेसे पशुओंका निर्वाह किया जाता है तथा दूधको थोक और इसी प्रकारके अन्य विक्रेताओंको बेच दिया जाता है। उनको 'डेयरी-फार्म' नहीं कहा जा सकता, वे तो देहाती उत्पादकोंके अधिकारमें रहनेवाली 'दुधारू-पशुशालाएँ' मात्र हैं। किन्तु बड़े शहरोंको अधिक परिमाणमें दूध सप्लाई करनेके कारण संसारके बहुत-से देशोंमें बहुत बड़ी-बड़ी डेयरियाँ स्थापित हो गयी हैं। उदाहरणरूपमें 'यूनाइटेड डेयरीज लिमिटेड, लंदन'† प्रतिदिन ३०,००० मनसे अधिक दूधका व्यवसाय करती है; उसके पास ७ करोड़ रुपयेकी 'प्राप्त-पूँजी' (Subscribed Capital) है। इसमें देशके विभिन्न भागोंमें करीब १२ हजार स्त्री-पुरुष काम करते हैं तथा इसकी ओरसे लंदनमें ६०० से अधिक दूकानें, कारखाने तथा गोदामें हैं और इसकी इंग्लैंडभरमें १०० से ऊपर फैक्टरियाँ, क्रीम निकालनेके कारखाने आदि हैं। इससे प्रतिदिन १० लाख ग्राहकोंको दूध तथा दूधसे बनी हुई चीजें प्राप्त होती हैं तथा यह जाननेके लिये कि जो दूध वे देते हैं, उसमें ठीक गुण हैं कि नहीं, प्रतिवर्ष ६ लाख बार उसकी जाँच की जाती है।‡ 'शेफील्ड फार्म्स कम्पनी' न्यूयार्क प्रतिदिन ४२,३०० मन दूधका व्यवसाय करती है। सन् १९३६ में इस कम्पनीमें २२·६ लाख रुपयोंसे ऊपर विशुद्ध लाभ (Net Profit) हुआ था। अस्तु,

आजकल भारतवर्षमें डेयरियोंकी संख्या अधिक नहीं है, किन्तु इनकी प्रगति वृद्धिकी ओर है। एक सामान्य डेयरी प्रतिदिन करीब ८—१० मन दूधका व्यवसाय करती है। किन्तु बम्बईकी एक-दो डेयरियाँ प्रतिदिन १०० मन दूधका व्यवसाय करती हैं।—(मिल्क मार्केटिंग रिपोर्ट पृष्ठ १२७-१३०-३२)

---

* अब तो इनमें पशुसंख्या बहुत ही बढ़ गयी है और दूध-घी बहुत ही अधिक मात्रामें होता है। बम्बई प्रान्तकी चार डेयरियोंमें ही आजकल प्रतिदिन ३५००० मन दूध तथा ३५०० पौंड मक्खन होता है। लड़ाईके पहले इनमें ३५०० मन दूध होता था। इस अनुपातसे पता नहीं, अन्यान्य फौजी डेयरियोंमें इस समय कितने पशु होंगे। इसीसे नागरिकोंके लिये इस समय दूध-घीकी तंगी आ गयी है।

† दि यूनाइटेड डेयरीज लिमिटेड, लंदनद्वारा प्रकाशित पुस्तिकाके आधारपर।

‡ मिल्क प्लांट मासिक (Milk Plant Monthly) फरवरी, १९३७ के आधारपर।

कल्याणके नियम

उद्देश्य—भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, धर्म और सदाचार-समन्वित लेखोंद्वारा जनताको कल्याणके पथपर पहुँचानेका प्रयत्न करना इसका उद्देश्य है।

नियम

(१) भगवद्भक्ति, भक्तचरित, ज्ञान, वैराग्यादि ईश्वर-परक, कल्याणमार्गमें सहायक, अध्यात्मविषयक, व्यक्तिगत आक्षेपरहित लेखोंके अतिरिक्त अन्य विषयोंके लेख भेजनेका कोई सज्जन कष्ट न करें। लेखोंको घटाने-बढ़ाने और छापने अथवा न छापनेका अधिकार सम्पादकको है। अमुद्रित लेख बिना माँगे लौटाये नहीं जाते। **लेखोंमें प्रकाशित मतके लिये सम्पादक उत्तरदाता नहीं हैं।**

(२) इसका डाकव्यय और विशेषाङ्कसहित अग्रिम वार्षिक मूल्य भारतवर्षमें ५≈) और भारतवर्षसे बाहरके लिये ७।।=) (११½ शिलिंग) नियत है। **बिना अग्रिम मूल्य प्राप्त हुए पत्र प्रायः नहीं भेजा जाता।**

(३) 'कल्याण'का नया वर्ष अक्टूबरसे आरम्भ होकर सितम्बरमें समाप्त होता है, अतः ग्राहक अक्टूबरसे ही बनाये जाते हैं। वर्षके किसी भी महीनेमें ग्राहक बनाये जा सकते हैं। किन्तु अक्टूबरके अङ्कके बाद निकले हुए तबतकके सब अङ्क उन्हें लेने होंगे। 'कल्याण' के बीचके किसी अङ्कसे ग्राहक नहीं बनाये जाते; छः या तीन महीनेके लिये भी ग्राहक नहीं बनाये जाते।

(४) इसमें व्यवसायियोंके विज्ञापन किसी भी दरमें प्रकाशित नहीं किये जाते।

(५) कार्यालयसे 'कल्याण' दो-तीन बार जाँच करके प्रत्येक ग्राहकके नामसे भेजा जाता है। यदि किसी मासका अङ्क समयपर न पहुँचे तो अपने डाकघरसे लिखा-पढ़ी करनी चाहिये। वहाँसे जो उत्तर मिले, वह हमें भेज देना चाहिये। डाकघरका जवाब शिकायती पत्रके साथ न आनेसे दूसरी प्रति बिना मूल्य मिलनेमें अड़चन हो सकती है।

(६) पता बदलनेकी सूचना कम-से-कम १५ दिन पहले कार्यालयमें पहुँच जानी चाहिये। **लिखते समय ग्राहकसंख्या, पुराना और नया नाम-पता साफ-साफ लिखना चाहिये।** महीने-दो-महीनोंके लिये बदलवाना हो, तो अपने पोस्टमास्टरको ही लिखकर प्रबन्ध कर लेना चाहिये। पता बदलनेकी सूचना न मिलनेपर अङ्क पुराने पतेसे चले जानेकी अवस्थामें दूसरी प्रति बिना मूल्य न भेजी जा सकेगी।

(७) अक्टूबरसे बननेवाले ग्राहकोंको रंग-बिरंगे चित्रों-वाला अक्टूबरका अङ्क (चालू वर्षका विशेषाङ्क) दिया जायगा। विशेषाङ्क ही अक्टूबरका तथा वर्षका पहला अङ्क होगा। फिर सितम्बरतक महीने-महीने नये अङ्क मिला करेंगे।

(८) चार आना एक संख्याका मूल्य मिलनेपर नमूना भेजा जाता है। ग्राहक बननेपर वह अङ्क न लें तो ।) बाद दिया जा सकता है।

आवश्यक सूचनाएँ

(९) 'कल्याण'में किसी प्रकारका कमीशन या 'कल्याण'की किसीको एजेन्सी देनेका नियम नहीं है।

(१०) पुराने अङ्क, फाइलें तथा विशेषाङ्क कम या रियायती मूल्यमें नहीं दिये जाते।

(११) ग्राहकोंको अपना नाम-पता स्पष्ट लिखनेके साथ-साथ ग्राहक-संख्या अवश्य लिखनी चाहिये।

(१२) पत्रके उत्तरके लिये जवाबी कार्ड या टिकट भेजना आवश्यक है।

(१३) ग्राहकोंको चंदा मनीआर्डरद्वारा भेजना चाहिये।

(१४) प्रेस-विभाग और कल्याण-विभागको अलग-अलग समझकर अलग-अलग पत्र-व्यवहार करना और रुपया आदि भेजना चाहिये। 'कल्याण'के साथ पुस्तकें और चित्र नहीं भेजे जा सकते। प्रेससे १) से कमकी वी० पी० प्रायः नहीं भेजी जाती।

(१५) चालू वर्षके विशेषाङ्कके बदले पिछले वर्षोंके विशेषाङ्क नहीं दिये जाते।

(१६) मनीआर्डरके कूपनपर रुपयोंकी तादाद, रुपये भेजनेका मतलब, ग्राहक-नम्बर, पूरा पता आदि सब बातें साफ-साफ लिखनी चाहिये।

(१७) प्रबन्ध-सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होनेकी सूचना, मनीआर्डर आदि व्यवस्थापक "कल्याण" गोरखपुरके नामसे और सम्पादकसे सम्बन्ध रखनेवाले पत्रादि सम्पादक "कल्याण" गोरखपुरके नामसे भेजने चाहिये।

(१८) स्वयं आकर ले जाने या एक साथ एकसे अधिक अङ्क रजिस्ट्रीसे या रेलसे मँगानेवालोंसे चंदा कुछ कम नहीं लिया जाता।

व्यवस्थापक—कल्याण, गोरखपुर

Regd. No. A. 175.

श्रीहरिः

गोमाताकी आरती

आरति श्रीगैया-मैयाकी ।
आरति-हरनि विश्व-धैयाकी ॥
अर्थ-काम-सद्धर्म-प्रदायिनि ,
अविचल अमल मुक्तिपद दायिनि ।
सुर-मानव सौभाग्य-विधायिनि ,
प्यारी पूज्य नंद-छैयाकी ॥ आ०

अखिल विश्व प्रतिपालिनि माता ,
मधुर अमिय दुग्धान्न प्रदाता ।
रोग-शोक-संकट परित्राता ,
भवसागर हित दृढ़ नैयाकी ॥ आ०

आयु-ओज-आरोग्य-विकासिनि ,
दुःख-दैन्य-दारिद्र्य-विनाशिनि ।
सुषमा-सौख्य-समृद्धि-प्रकाशिनि ,
विमल विवेक-बुद्धि दैयाकी ॥ आ०

सेवक हो चाहे दुखदायी ,
सम पय-सुधा पियावति माई ।
शत्रु मित्र सबको सुखदायी ,
स्नेह-स्वभाव विश्व-जैयाकी ॥ आ०

श्रीहरिः



कल्याण



गो-अंक-परिशिष्टांक

वर्ष २०

अङ्क २

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥
जयति शिवा-शिव जानकि-राम । जय रघुनन्दन जय सियाराम ॥
रघुपति राघव राजा राम । पतितपावन सीताराम ॥
जय जय दुर्गा जय मा तारा । जय गणेश जय शुभ-आगारा ॥

वार्षिक मूल्य
भारतमें ५≡)
विदेशमें ७॥≡)
(११½ शिलिङ्ग)

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय । सत् चित् आनँद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय । जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट जय जगत्पते । गौरीपति जय रमापते ॥

साधारण प्रति
भारतमें ।)
विदेशमें ।≡)
(८ पेंस)

Edited by H. P. Poddar and C. L. Goswami, M. A., Shastri.
Printed and Published by Ghanshyamdas Jalan at the Gita Press, Gorakhpur, U. P. (India)

श्रीहरिः

कल्याण, नवम्बर सन् १९४५ की

विषय-सूची

विवरण-पत्र-सूची

चित्र-सूची

गोशालाके सञ्चालकोंसे विनीत प्रार्थना

इस अङ्कमें अन्यत्र गोशाला और पिंजरापोलोंकी सूची प्रकाशित है । इसका अधिकांश भाग भारत-सरकारके पशु-सदुंपयोग-परामर्शदाता सरदार बहादुर श्रीदातारसिंहजी-की कृपासे और बम्बई प्रान्तकी नामावली 'बम्बई-जीव-दया-मण्डली'के मन्त्री श्री जे० एन्० मानकर महोदयकी कृपासे मिली है । हम इसके लिये उनके कृतज्ञ हैं । जहाँतक अनुमान है—सूची अधूरी है और सबके नामों तथा स्थानोंके नामोंके ठीक होनेमें भी सन्देह है । नामोंके अतिरिक्त और कोई ब्यौरा तो है ही नहीं । हम भारतकी समस्त गोशाला और पिंजरापोलोंकी एक सर्वाङ्गीण पूरी सूची बनाना चाहते हैं । अतएव गोशालाओं और पिंजरापोलोंके सञ्चालक महोदयोंसे हमारी विनीत प्रार्थना है कि वे निम्नलिखित प्रश्नोंका उत्तर लिखकर भेजनेकी तुरंत कृपा करें । सब प्रश्नोंका उत्तर न लिख सकें तो जितने अधिक-से-अधिक प्रश्नोंका लिख सकें, कृपया अवश्य लिखें—

प्रश्न—

१. गोशाला या पिंजरापोलका नाम ।

२. स्थान, डाकखाने, रेलवेस्टेशन, जिले और प्रान्तका नाम ।

३. स्थापनाकी तारीख क्या है ?

४. संस्था सार्वजनिक है या व्यक्तिगत ?

५. कोई सञ्चालक कमेटी है या नहीं ?

६. है तो उसके वर्तमान पदाधिकारी और सदस्य कौन-कौन हैं ? तथा प्रधान सञ्चालक कौन हैं ?

७. संस्था रजिस्टर्ड है या नहीं ?

८. संस्थाका स्थायी कोष कितना है ?

९. वार्षिक आय कितनी है और किस-किस जरियेसे है ?

१०. वार्षिक खर्च कितना और किस-किस मदमें है ?

११. गाय, बैल, साँड़, बछड़े, बछड़ी कितने-कितने हैं ?

१२. स्वस्थ पशु कितने हैं ?

१३. किस नस्लके कितने और कौन-कौन पशु हैं ?

१४. घास-चारेका कितना स्टाक है ?

१५. खेती होती है या नहीं, होती है तो किस चीजकी और कितनी जमीनमें ?

१६. चारेकी खेती होती है या नहीं ?

१७. खेतीके लिये कितने बैल हैं ?

१८. अलग चरागाह–गोचरभूमि कितनी है ?

१९. साइलेज बनाते हैं या नहीं ?

२०. गायोंको क्या-क्या घास-चारा दिया जाता है ?

२१. ठाठ गायें गोशालामें ही रक्खी जाती हैं या दूसरी जगह भेजी जाती हैं ?

२२. दूध देनेवाली कितनी गायें हैं ?

२३. प्रतिदिन कितना दूध होता है और प्रति गायका औसत दूध कितना है ?

२४. दूध किस भाव बेचा जाता है और दूधसे वार्षिक कितनी आमदनी है ?

२५. जलका क्या प्रबन्ध है ?

२६. पशुओंको अधिक बीमारी कौन-सी होती है ?

२७. पशुचिकित्साका क्या प्रबन्ध है ?

२८. आपके स्थानसे निकटतम पशुचिकित्सालय कहाँ है ?

२९. साँड़ किस-किस नस्लके कितने हैं ?

३०. गोबर-गोमूत्रकी खाद बनती है या नहीं ?

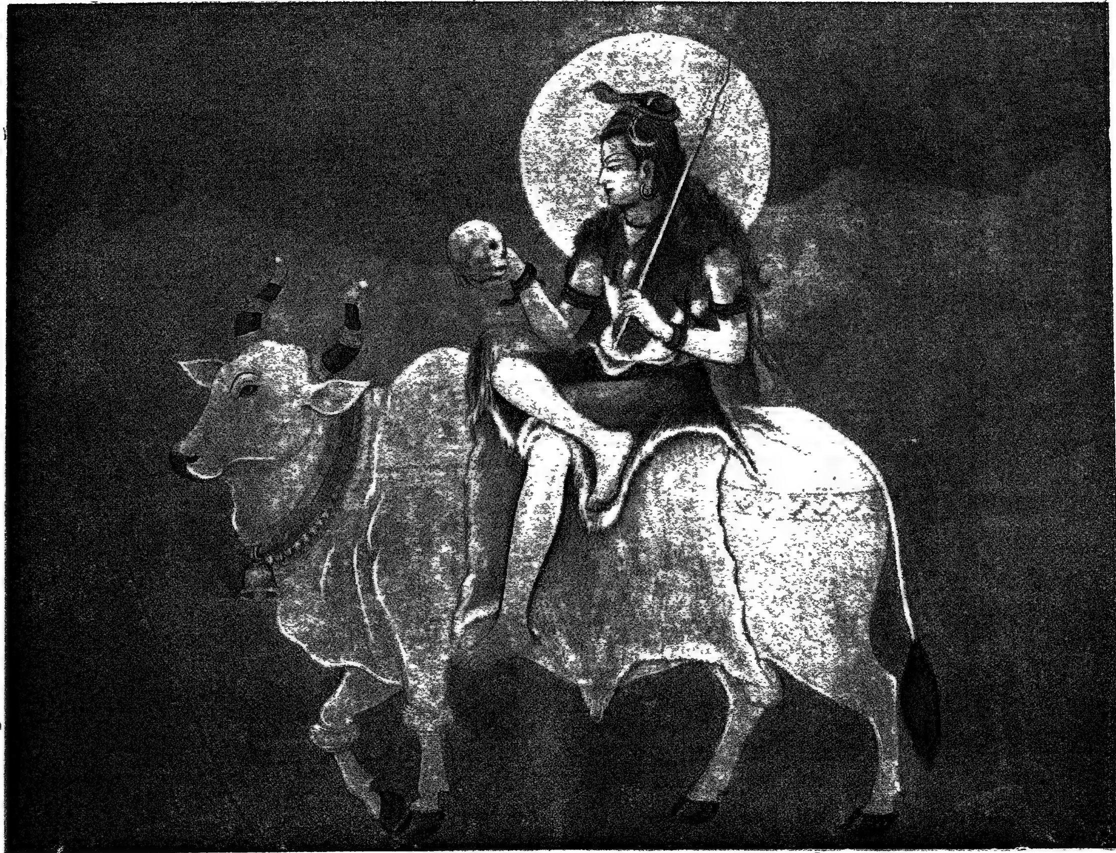
३१. प्रधान कार्यकर्ता अवैतनिक हैं या वैतनिक ?

सम्पादक—
'कल्याण' गोरखपुर

गीता-डायरी सन् १९४६ की नहीं छपेगी

गतवर्षकी तरह इस साल भी छपाईकी कठिनाईके कारण गीता-डायरी १९४६ की नहीं छपेगी । कृपया कोई सज्जन आर्डर देनेका कष्ट न करें ।

व्यवस्थापक—**गीताप्रेस, गोरखपुर**



वृषभवाहन भगवान् शङ्कर

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

वर्ष २० } गोरखपुर, सौर कार्तिक २००२, नवम्बर १९४५ { संख्या २ पूर्ण संख्या २३०

गो-तिरस्कारका परिणाम

दंड के भाजन कोउ बनौ जनि पूजन-भाजन धेनु निरादरि ।
गोदधिभाजन आदरनीय हन्यौ अबिचार मैं बालपनो करि ॥
क्रोधित मातु के आगे प्रकंपित भागे फिरे भयभीत भए हरि ।
बिस्व के नायक मुक्तिप्रदायक दंडबिधायक बाँधे गए धरि ॥

—शिवकुमार केडिया 'कुमार'

गोरक्षा शिवधर्म है

(काशी-श्रीजगद्गुरुविश्वाराध्य-ज्ञानसिंहासनाधीश्वर श्री १०८ जगद्गुरु वीरभद्र शिवाचार्य महास्वामी महाराज)

गोपतिवाहन श्रीशिवजीके गोप्रेमके बारेमें अधिक लिखना नहीं है, शिवजी गोरक्षाको आत्मधर्म ही मानते हैं। 'शिवस्य तत्त्वं शिव एव वेत्ति नन्दी च विष्णुर्नगजा कुमारः'—इस प्रमाणके अनुसार शिवधर्मवेत्ताओंमें नन्दीका प्रमुख स्थान है; नन्दी भी ईश्वरसे अभिन्न माने जाते हैं, तभी तो 'नन्दीश्वर' शब्द प्रचलित हुआ है। मन्दिरोंमें शिवलिङ्ग-मूर्ति (ज्योतिर्गोलाकार) की प्रतिष्ठा प्रसिद्ध ही है, उस जगह सर्वत्र शिवके अग्रभागमें पहले नन्दीका और पीछे शङ्करका दर्शन करना होता है—'वृषस्य वृषणं स्पृष्ट्वा शङ्करस्यावलोकनम्'। नन्दी स्वयं धर्मस्वरूपी होनेके कारण उनका यह सम्मान स्वाभाविक है। मन्दिरोंमें भारतीयोंको कैसी सुन्दर शिक्षा मिलती है! एक वृत्तान्त शैवोंमें बहुत प्रसिद्ध है—

सृष्टिके आरम्भकालमें नन्दी शिवाज्ञानुसार भूतलपर मानवोंको ऐसा उपदेश देनेके लिये आये कि 'प्रतिदिन अभ्यङ्ग-स्नानादि कर ईश्वरार्चन अवश्य करें और पंद्रह दिनोंमें एक बार भोजन करें।' किन्तु नन्दीसे भूल हो गयी, उन्होंने 'प्रतिदिन खाने और पंद्रह दिनमें एक बार अभ्यङ्ग न करने'की बात लोगोंको बतायी। नन्दीने लौटकर जब कैलासमें यह समाचार दिया, तब शिवजीने महारुद्र होकर उन्हें फटकारा और इस अपराधके प्रायश्चित्तमें नन्दीको यह आज्ञा दी कि 'तुमको अपनी नन्दिनी गौके साथ भूलोकमें अवतार लेना होगा और गो-संतति बढ़ाकर, खेती-बारीद्वारा मानवोंको खिला पिलाकर उनका संरक्षण करना होगा।' बस, उसी समयसे नन्दा (नन्दिनी) अपने नन्दीके साथ भूलोकवासिनी हो गयी।

कथाका तात्पर्य तो स्पष्ट है, मानवोंका पालन-पोषण-भार गो-संततिपर है यानी गो-माताका अवतार मानवोंके कल्याणनिमित्त हुआ है। मूल रहस्य तो यह है कि गो-संतति विश्वके माता-पिता हैं, इनमें महादेवके प्रतिनिधि नन्दी और महाविष्णुकी प्रतिनिधि गौ है; इस तरह शिव और शक्ति ऐक्यरूपसे जगत्का सञ्चालन करते हैं। प्राचीन मानवोंके लिये यह कोई रहस्य नहीं था, किन्तु सर्वसाधारण ज्ञान था। इसी कारण गौका उतना आदर और महत्त्व रहा; कहीं गोधनका अनिष्ट देख पड़ता तो प्राणोंकी बाजी लगाकर उसे दूर कर दिया जाता था। आज भी अपने देशमें गोभक्तोंकी संख्या थोड़ी-बहुत है ही; किन्तु गोरक्षणका सार्वभौम नहीं तो भारतव्यापी संघटित उद्यमरूपसे कार्य होना चाहिये। गोपालनसे महापुण्य मिलता है और स्वकुलका उद्धार भी होता है, इसमें कोई संदेह नहीं। यह अदृष्ट फल है, किन्तु गोपालनसे स्वार्थ भी बहुत कुछ सिद्ध होता है—कम-से-कम इस दृष्टिसे भी गो-संतति-वर्धन बड़ा महत्त्व रखता है।

आधुनिक पाश्चात्त्य शिक्षित लोग अपनेको सर्वोत्तम सभ्य समझते हैं और अणुस्फोट (ऐटम बम)-जैसे महापदार्थको पाकर फूले नहीं समाते; किन्तु दूध, दही, मलाई, मक्खन, मट्ठा-जैसे अमृतको गौओंके सिवा अपने रासायनिक पाण्डित्यसे ये लोग पा नहीं सकते। इतनी भारी हार खाकर भी ये गोभक्षण-जैसे अपवित्र, अर्थशास्त्रविरुद्ध और युक्तिहीन कर्म करते हैं—यह कम आश्चर्यकी बात नहीं है। शाकाहारकी ओरसे इन शिक्षित लोगोंका उदासीन होना आत्मवञ्चनाके सिवा और कुछ नहीं है।

शिवभक्तके लिये गौ प्राण है। वीरशैवसम्प्रदाय (शिवलिङ्गधारी) की सारी जनसंख्या (साठ लाख) केवल शाकाहारी, अहिंसक और गोधनप्रेमी है; इस सम्प्रदायके सभी वर्णोंका शाकाहारी होना एक असाधारण बात है, इसमें एक महत्त्वपूर्ण धार्मिक कारण भी है।

भूति, रुद्राक्ष, मन्त्र, गुरु, लिङ्ग, जङ्गम, पादतीर्थ और प्रसाद—ये आठ वीरशैवोंके आवरण हैं। प्रथम आवरण जो भूति है, वह विभूति, भसित, भस्म, क्षार और रक्षा नामसे पाँच प्रकारकी है। इन पाँच प्रकारके भस्मोंकी उत्पत्ति नन्दा, भद्रा, सुरभि, सुशीला और सुमना नामक पाँच प्रकारकी गौओंसे मानी गयी है; और इन पवित्र पाँच गौओंकी उत्पत्ति शिवजीके सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष एवं ईशान नामक पाँच मुखोंसे मानी जाती है—

नन्दा भद्रा च सुरभिः सुशीला सुमनास्तथा।
पञ्च गावो विभोर्जाताः सद्योजातादिवक्त्रतः॥

(सिद्धान्तशिखामणि ७। ४६)

वीरशैवसम्प्रदायके आदिप्रवर्तक श्रीरेणुक, दारुक, एकोराम, पण्डिताराध्य और विश्वाराध्य नामक पञ्चाचार्योंकी आदिम उत्पत्तिका भी शिवजीके उन्हीं पाँच मुखोंसे होना ये मानते हैं, जहाँसे गोदेवीका उद्गम हुआ है। इसी हेतु इस समाजमें गोभक्तिका उज्ज्वल प्रकाश विद्यमान है। कर्णाटक प्रान्तके हर एक ग्राममें नन्दिमन्दिर (बसवनगुडि) का दर्शन आप

पायेंगे और इनके किसी शुभ कार्यमें नन्दिध्वज (नन्दिकोल)-का उत्सव भी देखनेको मिलेगा। प्राचीन शैव राजाओंकी शिबिकाओंपर नन्दीकी छाप तो प्रसिद्ध है; जमीनके सीमा-प्रस्तरों और विवाह-निमन्त्रणपत्रोंपर भी लिङ्ग-नन्दिमुद्राओंको छापना ये लोग भूलते नहीं। इन दृढ शिवभक्तोंके लिये गो-संतति पूजनीय विभूति और महान् ऐश्वर्य है। 'हम गौओंके लिये हैं और गौ हमारे हितके निमित्त हैं; जिधर गौ रहेगी, उधर हम रहेंगे'—

गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम्।

इस महामन्त्रकी भावना सत्य और विज्ञानमूलक है। गोमय-गोमूत्रसे और गोष्ठकी हवासे भी अद्भुत कल्याण होता है, फिर कृषि-वाणिज्यादिमें गौकी उपकारिता और दानादि गौकी महत्ताका क्या कहना। मानवोंके समस्त हित गोमूल हैं। अतः गोरक्षा शिवधर्म ही है।

गोपालन आदि वैश्योंके मुख्य धर्म होनेपर भी सभ वर्णोंके लिये हितकर हैं। आज विश्वमें अर्थशास्त्रावलम्बः विशेष देख पड़ता है, इस दृष्टिसे भी गोधन-वर्धन सर्वमानव कर्तव्य अवश्य होना चाहिये; क्योंकि गोसंख्याका क्षय संसारका प्रलय है और गो-संततिका अधिकोदय विश्वका अभ्युदय है—

गोशालास्तु प्रतिग्रामे गोभक्ताः स्युः समे जनाः।
गावो यतः श्रियो मूलं पुण्यस्वास्थ्यसुखप्रदाः॥

गोरक्षा

(श्रीश्री १०८ श्रीस्वामी विशुद्धानन्दजी परिव्राजक महाराज)

गोरक्षा मानव-समाजका परम धर्म है। आज मानव-समाजकी असफलताका मूल कारण है—स्वधर्मसे आस्था हट जाना। धार्मिक भावनासे ही विश्वमें सामञ्जस्य—अभ्युदय फैल सकता है। जबतक अपने पूर्वजोंकी धर्मनिष्ठतापर पूर्ण विश्वास रहा, तबतक भारतके धर्मवीरोंको कभी भी धर्ममें असफल न होना पड़ा। आज भी पूर्वऋषियोंकी समाधिसम्भूत अमृतमय वाणीपर पूर्ण निष्ठा रखनेकी अपेक्षा है। मेरे नवयुवक आस्तिक भ्राताओ! विशेषरूपसे गोरक्षाके लिये कटिबद्ध हो जाओ और जगह-जगह गोशालाओंका आयोजन करो। तथा प्रत्येक गृहस्थ भाई (हिंदूमात्र) को एक-एक गौ पालनेका दृढ़ नियम बना लेना चाहिये। पूर्वमें महाराज दिलीप-जैसे गोरक्षक होते आये हैं। भगवान् गोपालनन्दन श्रीकृष्ण तथा मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम-जैसे अवतार गोरक्षाके लिये ही हुए। गोस्वामीजी महाराजने रामचरितमानसमें स्पष्ट ही लिखा है कि गो-ब्राह्मण और सुर-संतकी रक्षाके लिये भगवान् अवतार लेते हैं—

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

समय-समयपर ऐसे भीषण अवसरोंपर महान् पुरुष भी गोरक्षार्थ अवतीर्ण होते रहे हैं। हमारे ऋषियोंने गोरक्षाको कितना महत्त्व दिया है, इसका स्पष्टीकरण रामायण बालकाण्डमें है; जब अघ बहुत बढ़ा, तब पृथ्वी गोरूप धारण करके भगवान् ब्रह्माके पास गयी—

सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका। सँग गोतनु धारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका॥

पृथ्वी जानती थी कि गोतनुकी प्रार्थनापर ब्रह्मासे लेकर देव-मनुष्य सभी विचार करके उसके कष्ट-निवारणार्थ अपने प्राणोंतकको न्योछावर करनेके लिये प्रस्तुत हो जायँगे। और ऐसा ही हुआ भी, भगवान्को गोरूपधारी पृथ्वीकी प्रार्थना सुनकर अवतार लेना पड़ा। हिंसाकी हद भी गोहिंसातक ही है। जब रावणने देखा कि भगवान् राम अब शीघ्र नहीं मिलेंगे, तब उसने अपने सेवकोंको यही आज्ञा दी—

जहँ जहँ बिप्र धेनु सुर पावहु। नगर गाँव पुर आगि लगावहु॥
द्विज भोजन मख होम सराधा। सब कै जाइ करौ तुम्ह बाधा॥

राक्षस जानते थे कि जबतक यज्ञ-हवन-ब्राह्मणभोजन होते रहेंगे, तबतक हमारी दाल नहीं गलेगी; इसलिये उन्होंने यज्ञ-हवन-द्विजभोजन आदिको नष्ट करनेका प्रयत्न सोचा। और ये सब दूध-घी आदिसे ही सम्पन्न होते हैं, इससे इन धार्मिक कृत्योंके उद्गमस्थान गायको ही नष्ट कर देना चाहिये। वही नीति आज भी भारतवर्षमें बर्ती जा रही है। यज्ञ-हवनादि कितने कामकी चीजें हैं, इस बातको समझनेकी आज सबसे बड़ी आवश्यकता भारतमें है। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने श्रीमद्भगवद्गीतामें वर्णन किया है—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः । अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥

'प्रजापति ब्रह्माने कल्पके आदिमें यज्ञसहित प्रजाको रचकर कहा कि इस यज्ञद्वारा तुमलोग वृद्धिको प्राप्त होओ और यज्ञ तुमलोगोंकी इच्छित कामनाओंको देनेवाला होवे ।

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः । परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥

'तथा तुमलोग इस यज्ञद्वारा देवताओंकी उन्नति करो और देवता तुमलोगोंकी उन्नति करें; इस प्रकार आपसमें कर्तव्य समझकर उन्नति करते हुए परम कल्याण (मोक्ष) को प्राप्त होओगे ।'

इस लक्ष्यकी पुष्टिके लिये शुक्ल यजुर्वेदकी माध्यन्दिन शाखासे तीन मन्त्र उद्धृत किये जाते हैं—

ततो व्विराडजायत व्विराजो अधिपूरुषः । स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् । पशूँस्ताँश्चक्रे व्वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्च ये ॥६॥

······तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः । गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥ ८ ॥

'उस आदिपुरुषसे विराट् देह उत्पन्न हुआ और उस देहके ऊपर उसी देहको अधिष्ठित करनेवाला पुरुष—उसका अभिमानी एक पुरुष उत्पन्न हुआ । वह तिर्यक्-मनुष्यादिसे बढ़कर उत्पन्न हुआ । पश्चात् उस पुरुषने पृथ्वी तथा पार्थिव शरीरोंकी सृष्टि की । [जीवोंकी सृष्टिके बाद उस विराट् पुरुषने जीवोंके कर्म (यज्ञ) को उत्पन्न किया] और उस यज्ञसे दधिमिश्र आज्य उत्पन्न हुआ । फिर उसने वायुमें उड़नेवाले तथा जंगलों एवं गाँवोंमें रहनेवाले जीव उत्पन्न किये । उस यज्ञसे अश्वादि ऊपर-नीचे दोनों ओर दाँतवाले जीव तथा बकरी-भेड़ आदि उत्पन्न हुए ।'

उपर्युक्त मन्त्रोंसे यह सिद्ध हुआ कि बिना गवादिके यज्ञादि सफल नहीं हो सकते, और बिना यज्ञके मनुष्य (प्राणिमात्र) को अभ्युदय-निःश्रेयसकी प्राप्ति भी नहीं हो सकती । अथवा गोरक्षाके विषयमें सबसे प्रधान कर्तव्य विद्वान् साधु पुरुषोंका है और उनसे मेरी विनम्र प्रार्थना भी यही है कि वे अपने शारीरिक और बौद्धिक बलसे जनसमूहमें वैदिक-परम्परा-प्रतिपादित गोरक्षाकी लगन उत्पन्न करें । आज चालीस करोड़ जनसमाज एक सूत्र (धर्म) में बद्ध होकर गोरक्षा करनेमें सफल हो सकता है । पहले तो वैदिक धर्मप्रचारक नहीं मिलते, मिलनेपर भी आपसमें संघटन नहीं हो पाता, संघटन होनेपर भी केवल भाषणों एवं प्रस्तावोंके पास करानेभरसे कुछ लाभ नहीं होता । एक जगह कहा है—

न शास्त्रपाठमात्रेण कारणं न च तत्कथा । क्रियैव कारणं सिद्धेः सत्यमेतन्न संशयः ॥

भारतवीरो ! अज्ञान (आलस्य-व्यसनों) की निद्रासे जागो तथा उठकर गोरक्षाके लिये कटिबद्ध हो जाओ । जैसे अँधेरी रात्रिमें प्रकाशकी अपेक्षासे दीपक जलाना ही पड़ता है—

निसि गृहमध्य दीप की बातन तम निबृत्त नहिं होई ।

—वैसे ही केवल गोरक्षा कहनेमात्रसे कुछ काम न चलेगा । जैसे माता-पितादि गुरुजनोंका वध होने देना घोर पाप है, साध्वी सती पतिव्रता पत्नीका पतिव्रत बिगड़ने देना और उसकी रक्षा न करना महान् पाप है, वैसे ही गोवधसे अधिक पाप हिंदूधर्ममें नहीं माना गया । बहुत-से व्यक्तियोंका कहना है—इस गोवधसे कोई विशेष हानि नहीं; ईश्वर जब जैसा करता है, ठीक ही है । उनका कहना युक्तिसंगत नहीं । जैसे चूहेकी ताकमें बिल्ली बैठी हो और चूहा आँख बंदकर कहे—बिल्ली मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती अथवा बिल्ली तीन कालमें भी नहीं हुई, ये सब मनोभावनाएँ व्यर्थ ही हैं । बिल्लीजनित भय तभी दूर होगा, जब शीघ्र ही प्रयत्न सोचकर उसे क्रियारूपमें लाया जायगा । गोरक्षा प्राणिमात्रका परम कर्तव्य ही नहीं, जीवनका ध्येय होना चाहिये ।

तू सिंह-शावक हिंद-बालक, छोड़ अपनी भीरुता । पूर्वजोंके तुल्य जगमें अब दिखा दे वीरता ॥ १ ॥
वीर्यमें ही वीरता है, वीर्य धारण अब करो । पूज्य गोपर प्राण-संकट, दुःख उसका तुम हरो ॥ २ ॥
प्राण धारण कर रही है बाट तुमरी जो रही । हाय तो भी हिंद-जनता विषय-सुखमें सो रही ॥ ३ ॥
घोर निद्रा छोड़ करके जग उठो अब एकदम । आर्यपुत्रो ! शीघ्रतासे अब बढ़ाओ निज कदम ॥ ४ ॥
दासतासे मृत्यु अच्छी, दीनताको फेंक दो । राज्य अपना आत्मबलसे प्राप्त कर दिखलाय दो ॥ ५ ॥
वीर्यमें ही वीरता है, बाहुबल है, राज्य है । आत्मबलमें मुक्तता है, और मारग त्याज्य है ॥ ६ ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

श्रीकृष्णलीलाके उपकरणोंमें गाय

[गो-अङ्क पृष्ठ ९६ से आगे]

(४)

अब दूसरे दिनसे राम-श्यामकी वत्स-चारण-लीला नियमितरूपसे प्रतिदिन ही होने लगी। पर जननीके आदेशसे वे दूर नहीं जाते थे—

अविदूरे व्रजभुवः सह गोपालदारकैः।
चारयामासतुर्वत्सान् नानाक्रीडापरिच्छदौ॥
(श्रीमद्भा० १०। ११। ३८)

इसी वत्सचारणको निमित्त बनाकर भगवान् व्रजराजनन्दनने वत्सासुरका उद्धार किया; बछड़ोंको जल पिलाने जाकर बकासुरको अपने परमधाममें पहुँचाया; वत्सचारणमें ही संलग्न रहकर अघासुर-मोक्षलीला संपन्न की; तथा श्यामसुन्दरकी परम मनोहारिणी ब्रह्म-मोहन-लीला भी इसी वत्सचारणके प्रसङ्गसे ही हुई। इस भुवन-पावनी लीला-मन्दाकिनीसे जगत्को पवित्र करनेके उद्देश्यसे ही मानो सर्वलोकैकपाल व्रजराजनन्दन अपने अग्रज दाऊके साथ वत्सपालका वेष स्वीकार कर वत्सचारण करते हुए वृन्दावनमें घूमते हैं।

तौ वत्सपालकौ भूत्वा सर्वलोकैकपालकौ।
सप्रातराशौ गोवत्सांश्चारयन्तौ विचेरतुः॥
(श्रीमद्भा० १०। ११। ४५)

(५)

व्रजराजनन्दन अब वत्सपालसे गोपाल बन गये हैं। पौगण्डमण्डित श्रीअङ्गोंसे एक अभिनव सौन्दर्य झरता रहता है; अग्रज राम एवं सखाओंके साथ गायें चराते हुए वृन्दावनमें घूमते रहते हैं; वृन्दावनकी भूमि उनके चारु चरणतलोंका स्पर्श पाकर कृतार्थ हो रही है--

ततश्च पौगण्डवयःश्रितौ व्रजे
बभूवतुस्तौ पशुपालसम्मतौ।
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदै-
र्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः॥
(श्रीमद्भा० १०। १५। १)

प्रतिदिन यशोदा एवं रोहिणी अपने वात्सल्यपूर्ण हृदयका समस्त प्यार लेकर राम-श्यामका श्रृङ्गार करतीं; नवनीत एवं विविध मिष्टान्नोंका कलेवा करातीं, कुछ छींकोंमें भर देतीं; तथा राम-श्याम गायोंको लेकर वनमें चराने जाते। वनमें सखाओंके साथ विविध क्रीड़ा करते। कभी मदमत्त मधुकरोंका अनुकरण करते हुए गाते, कभी कलहंसोंका कमनीय कूजन सुनकर उसी तरहकी ध्वनि करते, कभी मयूरोंका मनोहर नृत्य देखकर उन्हींकी तरह नाचने लगते। इधर व्रजराजनन्दन तो इन विविध लीलाओंमें मस्त रहते, उधर गायें चरती हुई वनमें दूर चली जातीं। तब खेल छोड़कर श्यामसुन्दर अपने अग्रज एवं सखाओंको सूचना देते, कदम्बपर चढ़कर गायोंका नाम ले-लेकर पुकारते तथा पीताम्बर फहरा-फहराकर उन्हें अपनी ओर बुलाते--

टेरत ऊँची टेर गुपाल।
दूर जात गैया, भैया हो! सब मिल घेरो ग्वाल॥
लै लै नाम धूमरी धौरी मुरली मधुर रसाल।
चढ़ि कदंब चहुँ दिसि तें हेरत अंबुज नयन बिसाल॥
सुनत सब्द सुरभी समुहानी उलट पिछोड़ी चाल।
चत्रभुज प्रभु पीतांबर फेर्‍यो गोबर्धनधर लाल॥



इस प्रकारकी अनेकों मनोहारिणी लीलाध्वनियोंसे

श्रीगोवर्द्धनके समीपवर्ती वनप्रान्त, सरित्, तड़ाग आदि सभी निनादित होते रहते। जिस समय मनमोहन श्यामसुन्दर अपनी बाँसुरीमें स्वर भरते, उस समय तो समस्त वृन्दावन ही एक अनिर्वचनीय रस-सुधा-धारासे प्लावित हो उठता, वनवासी चर-अचर प्राणी उसमें बह जाते।

दिनभर व्रजबालकोंको सुख देकर वनसे गोष्ठ लौटनेकी तैयारी होती। सभी ग्वाल अपनी-अपनी गायें इकट्ठी करते। श्यामसुन्दर भी दूर चरती हुई गायोंको बुलाते—

गोबिंद गिरि चढ़ि टेरत गाय।
गाँग बुलाई धूमरि धौरी, टेरत बेनु बजाय॥
स्रवन नाद सुनि मुख तृन धरि सब चितईं सीस उठाय।
प्रेम बिवस ह्वै हूँक मार चहुँ दिसि ते उलटीं धाय॥
चत्रभुज प्रभु पटपीत लिये कर आनँद उर न समाय।
पोंछत रेनु धेनु के मुख तें गिरि गोबर्द्धन राय॥

पिशङ्गि मणिकस्तनि प्रणतशृङ्गि पिङ्गेक्षणे
मृदङ्गमुखि धूमले शबलि हंसि वंशीप्रिये।
इति स्वसुरभीकुलं मुहुरुदीर्णहीहीध्वनि-
र्विदूरगतमाह्वयन् हरति हन्त चित्तं हरिः॥
(उज्ज्वलनीलमणि)

गायें एकत्र हो जातीं तो उनसे अनेकों लाड़ लड़ाते। फिर सभी गोष्ठकी ओर गायें हाँककर चल पड़ते। उस समय श्यामसुन्दरकी शोभा देखते ही बनती। सुन्दर अलकावली गोधूलि-कणोंसे मण्डित रहती, उनमें मयूरपिच्छ एवं वन-प्रसून बँधे रहते, चितवनमें असीम सौन्दर्य भरा होता, अधरोंपर मधुर मुसकान खेलती रहती, स्वयं बाँसुरी बजाते होते एवं सखा-मण्डली उनकी गुणावली गाती रहती। गायोंकी पंक्तियोंसे श्यामसुन्दर घिरे रहते।

यूथ-की-यूथ व्रजाङ्गनाएँ अपने कोटि-कोटि-प्राणप्रतिम प्रियतमको देखनेके लिये एकत्र हो जातीं। उनकी आकुल-दृष्टि गायोंके बीचसे उड़कर श्यामसुन्दरके पास जा पहुँचती। अश्रु-जल-पूरित नयनोंसे कोई व्रजाङ्गना जब नहीं देख पाती, तब दूसरी संकेत करती।

वे देखो आवत हैं गिरिधारी।
कछुक गाय आगें अरु पाछें, सोभित संग सखा री॥

श्यामसुन्दरको देखकर समस्त दिनका उनके विरहानलमें जलता हुआ व्रजाङ्गनाओंका संतप्त हृदय शीतल हो जाता।

यह लीलाक्रम प्रतिदिन चलता, पर प्रतिदिन ही एक नये रंगमें ढल जाता। उसीके साथ भूभार-हरणका कार्य भी आनुषङ्गिकरूपसे होता जाता। पहले कालिय-उद्धार हुआ। विषदूषित जल-पानसे मृत गौओं एवं ग्वाल-सखाओंको अपनी अमृतवर्षिणी दृष्टिसे देखकर व्रजराजनन्दनने जीवन-दान दिया। फिर कालिय-दमनके उद्देश्यसे स्वयं कालियह्रदमें कूद पड़े। लीला-रस-मत्त व्रजराज-नन्दनको न पहचानकर कालियने उन्हें अपने फणोंमें बाँध लिया। अपने प्राणधनकी यह आकस्मिक दशा देखकर सखा एवं गायें रो पड़ीं। इतना ही नहीं, समस्त व्रजमण्डल एकत्र होकर कालियह्रदमें कूदकर प्राण देनेको प्रस्तुत हो गया। श्रीकृष्णकी अनन्त कृपाशक्तिके लिये यह असह्य था। दृश्य बदला, और दूसरे ही क्षण कालियके फणको व्रजराजनन्दनने चूर-चूर कर डाला। नागपत्नियोंके अनुनय-विनयसे नागने जीवन-दान पाया तथा आज्ञा हुई—'नाग! यहाँसे चले जाओ; यह नदी हमारी गायोंकी, हमारे जनोंकी क्रीडास्थली होगी।'

अग्रज बलरामके द्वारा धेनुकासुर एवं प्रलम्बासुरका उद्धार हुआ। दो बार कंसप्रेरित आसुरी माया श्यामसुन्दर एवं उनके प्रिय व्रजको भस्म करनेके उद्देश्यसे दावानलके रूपमें प्रकट हुई। स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दन उसी बालोचित लीला-रसका आस्वाद लेते-लेते उस लपलप करती दावाग्निको पी गये। ऐसे अद्भुत कृत्योंके समय व्रजराज-नन्दनके श्रीअङ्गोंमें तदनुरूप कार्यके लिये किसी विशाल विकराल रूपका आविर्भाव होता रहा हो, ऐसी बात बिल्कुल नहीं थी। उनका तो सर्वदा वही मधुर मनोहर नव-जलधर-श्यामल अङ्ग, अरुण अधर, कर-पल्लवोंमें वही हरिद्वेणु—सब कुछ ज्यों-का-त्यों बना रहता। ऐसी लीलाओंका समापन करके भी सन्ध्या-समय वे गायोंको बटोरकर, अपने वदनारविन्दपर उसी स्वभावसुलभ प्रसन्नता, उसी आनन्दमयी शान्तिको लिये, वेणुछिद्रोंसे मधुधाराकी वर्षा करते हुए व्रजमें लौटते—

गाः संनिवर्त्य सायाह्ने सहरामो जनार्दनः।
वेणुं विरणयन् गोष्ठमगाद्गोपैरभिष्टुतः॥
(श्रीमद्भा० १०। १९। १५)

इस तरह गो-चारण-लीलाका आनन्द लेते हुए व्रजराज-नन्दनको अब दो वर्ष, दस महीनोंसे कुछ अधिक हो गये। पञ्चम वर्षकी कार्तिक शुक्ला अष्टमीको यह गो-चारण-लीला आरम्भ हुई थी। अब इस बार उनके अष्टम वर्षकी शरद्-ऋतु आयी। सप्तम वर्षके प्रारम्भमें ही गो-चारण-परायण व्रजराजनन्दन श्रीकृष्णके पौगण्डवयःश्रित श्यामल अङ्गोंके

अन्तरालसे कैशोर मानो झाँक-सा रहा था तथा उन्हें देख-देखकर व्रज-युवतियोंके हृदयमें अनुरागका अङ्कुर उत्पन्न होने लगा था। इस अष्टम शरद्ने तो मानो स्पष्ट आह्वान किया एवं आमन्त्रण पाकर व्रजराजनन्दनके नव-नीरद श्रीअङ्गोंपर कैशोरने अपनी अनादिसिद्ध सत्ताकी घोषणा करना प्रारम्भ कर दिया—

वयसो विविधत्वेऽपि सर्वभक्तिरसाश्रयः।
धर्मः कैशोर एवात्र नित्यनानाविलासवान्॥

(भक्तिरसामृतसिन्धु)

स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्ति भी आगेकी लीला प्रकाशन करनेको उद्यत थी; वयस्क व्रजदेवियोंको वात्सल्यरसकी आनन्दधारामें डुबोकर अब उसे माधुर्य-रसकी मन्दाकिनीसे व्रज-सुन्दरियोंको आप्लावित करना था। अतः लीलाशक्तिने भी व्रजराजनन्दनके श्रीअङ्गों-पर उभरते हुए कैशोरका स्वागत ही किया। इसीलिये आज जब शारदीय श्रृङ्गारसे सजे हुए वृन्दावनमें गोचारण-लीला-रसमें निमग्न श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दनकी वंशी बजी—

कुसुमितवनराजिशुष्मिभृङ्गद्विज-
कुलघुष्टसरःसरिन्महीध्रम्।
मधुपतिरवगाह्य चारयन् गाः
सहपशुपालबलश्चुकूज वेणुम्॥

(श्रीमद्भा० १०। २१। २)

'उस वनके सरोवर, नदियाँ और पर्वत—सब-के-सब सुन्दर-सुन्दर पुष्पोंसे परिपूर्ण हरी-हरी वृक्षपङ्क्तियोंसे शोभायमान हो रहे थे। मतवाले भौंरे स्थान-स्थानपर गुनगुना रहे थे और तरह-तरहके पक्षी झुंड-के-झुंड अलग-अलग कलरव कर रहे थे। भगवान् श्रीकृष्णने बलरामजी और ग्वालबालों-के साथ उसके भीतर घुसकर गौओंको चराते हुए अपनी बाँसुरीपर बड़ी ही मधुर तान छेड़ी।'

तब व्रजयुवतियाँ क्षणभरमें ही कुछ-से-कुछ हो गयीं। उनके हृदयका अनुराग-सिन्धु उमड़ पड़ा तथा उसकी उत्ताल तरङ्गोंमें उनके शरीर, इन्द्रियाँ, मन, प्राण—सभी बह चले। एककी नहीं, सबकी यही दशा थी। सभी एक ही धारामें डूबती-उतराती अपने प्रियतम श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दनकी ओर बहती जा रही थीं। लीलाशक्तिकी प्रेरणासे एक गोपीका स्थूलशरीर दूसरीके स्थूलशरीरसे जा सटा, दूसरीका तीसरीके शरीरसे, तीसरीका चौथीसे; इस तरह रस-धारामें बहती हुई व्रज-सुन्दरियोंकी एक गोष्ठी बन गयी। सामने स्वजनों एवं आर्यपथका विशाल पर्वत खड़ा था। प्रेम-रस-पीयूषकी प्रबल धाराके प्रचण्ड वेगसे उसकी भी जड़ हिल गयी। पर एक बार तो उसने उनके शरीरको रोक ही लिया। उनके शरीर उस पर्वतको अभी पार न कर सके। अवश्य ही यह प्रतिरोध भी पर्वतके टूटनेके लिये ही हुआ था। जो हो, उनका शरीर ही रुक सका; उनकी रसमय मन-प्राण-इन्द्रियाँ तो विरह-तापसे वाष्प बन उड़कर कभीकी श्यामसुन्दरके पास पहुँच गयीं और श्यामसुन्दरका मधुर स्पर्श पाकर निहाल होने लगीं। उनके शरीर व्रजमें थे। शेष सब कुछ था अपने जीवनधन श्याम-सुन्दरके पास। लीलाशक्तिकी इच्छासे ही उनके स्थूलशरीर एवं व्रजराजनन्दनमें रमे हुए मन-प्राण आदिमें सूक्ष्म तन्तु (Silver chord) का-सा सम्बन्ध अवशिष्ट था। इसीके सहारे मानो उनके मन-इन्द्रिय-प्राणोंकी अनुभूति इस स्थूलशरीरमें प्रतिध्वनित होने लगी।

एक व्रजयुवतीके मुखसे यह प्रतिध्वनि सुन पड़ी—'सखियो! नेत्रोंका बस चरम फल यही है कि वनमें गायों-को ले जाते हुए श्यामसुन्दर व्रजराजनन्दन एवं गौरसुन्दर बलरामके मुखारविन्दका मधुपान कर लें।'

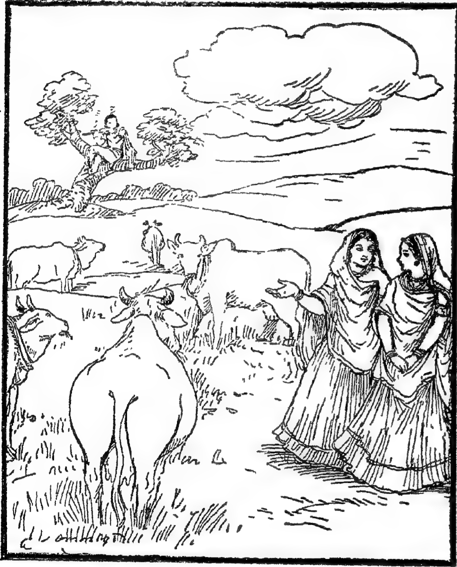
कोई प्रतिध्वनि ऐसी थी—'देख सखी! वनमें गाय चराने आकर राम-श्याम कैसी क्रीड़ा कर रहे हैं। आम्र-पल्लव, मयूर-पिच्छ, पुष्प-गुच्छ एवं कमलोंकी मालासे श्रृङ्गार किये हुए दोनों कितना सुन्दर गा रहे हैं।' कुछ गोपियोंके मुखसे सुन पड़ रहा था—'बहिनो! देखो, गायों-को बुलानेके लिये हमारे हृदयधन वंशी बजा रहे हैं। ओह! पता नहीं इस वंशीने कौन-सी कठोर तपस्या की है, जिस-के फलस्वरूप यह निरङ्कुश होकर निरन्तर हमारे गोविन्दकी अधर-सुधाका पान कर रही है; यह अधर-सुधा तो हमलोगोंकी ही वस्तु थी।'

वीणाकी झनकारकी तरह कुछ प्रतिध्वनियाँ थीं—'सखियो! वहाँ देखो, गायोंको चराते हुए व्रजराजनन्दन आगे बढ़ रहे हैं; उनके चरणोंके स्पर्शसे वृन्दावनकी भूमि निहाल हो रही है। पृथ्वीदेवीने वृन्दावनको अनन्त कालसे अपने हृदयपर धारण कर रक्खा है। आज वृन्दावनने भी उसका पूरा प्रतिदान दे दिया।

कुछके मुखोंमें ये प्रतिशब्द थे—'हरिनियो! तुमलोग धन्य हो। अयाचित अनन्त असीम आनन्द तुम्हें प्राप्त हो

गया। श्यामसुन्दर तो वनमें गाय चराने आये थे; पर इसी निमित्तसे तुमलोग अपने पतियोंके साथ रसभरी चितवनके पुष्पोंसे उनकी पूजा करके निहाल हो गयीं। हम अभागिनी इतने निकटसे प्रियतमको कहाँ देख पाती हैं!'

कुछ गोपियोंके कण्ठसे असीम सुन्दर। स्वर्गीय संगीतको भी तुच्छ कर देनेवाली स्वर-लहरी ध्वनित हो रही थी— 'बहिन! इन गायोंको धन्य है। देखो, प्यारे श्यामसुन्दर श्रीकृष्णकी अधर-सुधा वंशीके छिद्रोंसे शब्द बनकर झर रही है, और ये गायें घास चरना भूलकर अपने कर्ण-पुटोंसे उस पीयूषका पान कर रही हैं।



आह! इन बछड़ोंकी दशा तो देखो, मातृस्तनोंका दूध मुखमें ज्यों-का-त्यों लिये ये निस्तब्ध खड़े हैं। दूधको कण्ठके नीचे उतारना भूल गये हैं। क्यों न हो! इन गायोंकी, बछड़ोंकी आँखोंकी राह प्रियतम श्यामसुन्दर इनके हृदयमें जो जा पहुँचे हैं, उनके आलिङ्गनका सुख जो इन्हें प्राप्त हो रहा है। देखो, बहिन! इनकी आँखोंमें आँसू छल-छल कर रहे हैं—

गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीत-
पीयूषमुत्तभितकर्णपुटैः पिबन्त्यः।
शावाः स्नुतस्तनपयःकवला स्म तस्थु-
र्गोविन्दमात्मनि दृशाश्रुकलाः स्पृशन्त्यः॥
(श्रीमद्भा० १०। २१। १३)

(६)

आम्रकी सुशीतल छायामें स्फटिकनिर्मित वेदीपर पूर्वाभिमुख बैठे श्यामसुन्दर कुछ सोच रहे हैं। घुँघराली कुन्तलराशि कंधोंपर झूल रही है। कुछ क्षण पहले वंशीके छिद्रोंका अँगुलियोंसे मृदु-मृदु स्पर्श करते हुए एक अभिनव-रागिनी-का संचार कर रहे थे, जिसके मधुर संस्पर्शसे आम्रशाखा, आम्रपल्लवोंसे मधु झरने लगा था। पक्षी अपने कलरवको रोककर नीरव हो गये थे, आँखें बंद किये वंशीनादका पीयूष पान कर रहे थे। पर हठात् व्रजराजनन्दन रुक-से गये थे, अन्यमनस्क-से होकर कुछ विचारने लगे। मानो अपने निराविल प्रेमानन्दके दानमें आत्मविस्मृत हुए व्रजराजनन्दनके सामने उनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्तिने भावी कार्यक्रमका चित्रपट ला रक्खा—

'देव! उधर भी दृष्टि हो, कल होनेवाले इन्द्रयागकी तैयारी प्रारम्भ होने जा रही है। अब इन्द्रका गर्वहरण आवश्यक है। उनपर कृपा करनी ही है।' इसी विचारमें श्यामसुन्दर संलग्न हो गये। इधर सचमुच उसी समय नन्दरायकी आज्ञासे नगारे बज उठे तथा सबको इन्द्रयागके प्रबन्धके लिये आदेश सुना दिया गया।

श्यामसुन्दर उठ खड़े हुए। उनके अरुणिम अधरोंपर मन्द-मन्द मुसकान थी। एक बार गिरिराजकी ओर अपनी दृष्टि डालकर वे गोशालाकी ओर चल पड़े। नन्दरानी अपने लालको ढूँढ़ती फिर रही थीं, गोशालाकी ओर जाते हुए व्रजराजनन्दनको देखकर वात्सल्यभरे स्वरमें पुकारने लगीं—'मेरे नीलमणि! ओ नीलमणि!'

नीलमणि रुक गये। माने आकर उन्हें उठाकर हृदयसे लगा लिया, फिर मुखचुम्बन किया और सिर सूँघने लगीं। कुछ क्षणों बाद गद्गद कण्ठसे बोलीं— 'नीलमणि! बेटा! आज दीपावली है, मैं दीपोंको थालमें सजाने जा रही हूँ; तू बाबासे आज्ञा लेकर दीप जला दे।'

कहत यशोदा सुनि मनमोहन अपने तात कि अग्या लेहु।
बारौ दीपक बहुत काढ़िके करि उजियारो अपनो गेहु॥

पर नीलमणिके तो प्राण मानो गायोंमें बस रहे थे। नीलमणिने माके आँचलसे अपना मुख पोंछते हुए कहा—

हँस ब्रजनाथ कहत माता सों धौरी धेनु सिंगारौं जाय।
परमानंददासकौ ठाकुर जेहि भावत हैं निसिदिन गाय॥

आनन्दमें निमग्न मा तो दीप सजाने घरकी ओर, और

प्रेमवितरणमें प्रमत्त व्रजराजनन्दन गौओंको सजाने खिरककी ओर चल पड़े। गायोंका शृङ्गार हुआ—

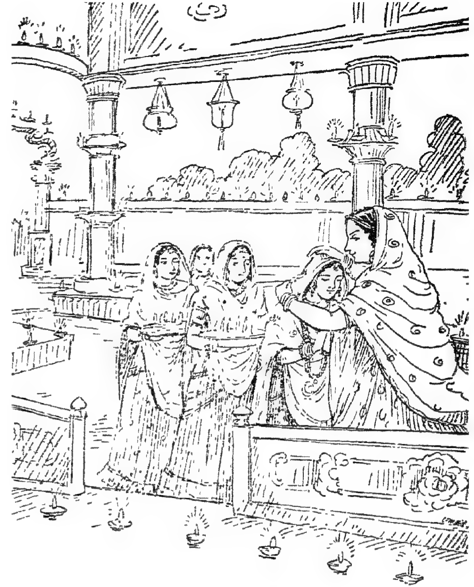
स्याम खरिक के द्वार करावत गायन कौ सिंगार।
नाना भाँति सींग मंडित किए ग्रीवा मेले हार॥
घंटा कंठ मोतिन की पटियाँ पीठिन को आछे औढार।
किंकिनि नूपुर चरन बिराजत बाजत बाजत चलत सुढार॥

सूर्य अस्ताचलकी ओर जा रहे थे। संध्याकालीन अरुण रश्मियोंसे गायोंके आभूषण चम-चम करने लगे; व्रजेन्द्र-नन्दन बालोचित प्रसन्नतासे भरते जा रहे थे। धौरी, धूमरी, कजरी, पीरी आदिकी शोभा ही मानो इस समय उनके हृदयकी सबसे प्यारी चीज थी। नन्दरानी कुछ देर दीपक सजातीं, तथा फिर दासीको सौंपकर अपने नीलमणिका गोशृङ्गार देखने खिरककी ओर आ जातीं; फिर दीपक सजाने जातीं, फिर लौट आतीं। अन्य व्रजाङ्गनाएँ अपने-अपने प्रासादके गवाक्षरन्ध्रोंसे नन्दनन्दनकी यह लीला देख रही हैं। उनके घर भी दीपावलीका उत्सव है, दीप सजाना परमावश्यक है; पर दीपकी थाली उनके हाथोंमें ही पड़ी रह गयी, प्रस्तरप्रतिमा-सी निश्चल खड़ी रहकर वे श्यामसुन्दरको देखती ही रह गयीं। कब संध्या हुई, यह भी कितनोंने नहीं जाना; उनके नेत्रोंके सामने तो श्यामसुन्दर गायोंका शृङ्गार ही कर रहे थे। अभी भी उजेला ही था। अस्तु,

संध्या होते ही दीपोंकी पंक्तियोंसे सारा व्रज जगमग हो उठा। व्रजाङ्गनाओंने सुन्दर शृङ्गार किया, वे स्वर्ण-थालोंमें दीपक सजाकर नन्दगृहमें आयीं। व्रजराजनन्दन श्रीकृष्ण-रससारस्वरूपा वृषभानुनन्दिनी श्रीराधाजी भी सखियोंके साथ पधारीं—

गोपिजन जूथ सँग जोरी कुँअर किशोरि, साज सिंगार उर उदित प्रेमावली।
कर कनक थाल भर दीप संजोय सब चलीं गृह नंद के द्वार संभ्रावली॥

नन्दरानीने वृषभानुनन्दिनीको हृदयसे लगा लिया। कपोलोंका चुम्बन करती हुई नन्दरानीने कहा—लाडिली! विधाताने तुझको एवं मेरे नीलमणिको समान कौशलसे रचा है; तुझे देखते ही मुझे नीलमणिकी स्मृति हो आती है। सच, बेटी! तेरा एवं नीलमणिका मुख सर्वथा एक-जैसा है, तू तो मेरी ही लाडिली है; नीलमणिकी तरह तुझे देखते ही मेरा हृदय शीतल हो जाता है।



न सुतासि कीर्तिदायाः किन्तु ममैवेति तथ्यमाख्यामि
प्राणिमि वीक्ष्य मुखं ते कृष्णस्येवेति किं त्रपसे॥*
(उज्ज्वलनीलमणि)

आज वृषभानुनन्दिनीके स्पर्शसे देखते-देखते मैया यशोदाकी एक विचित्र दशा हो गयी। उन्हें दीखता था, मानो लाडिलीके अणु-अणुमें मेरा नीलमणि भरा है, उन्हें अनुभूति हो रही थी कि नीलमणिको ही बाहुपाशमें लेकर बैठी हूँ। मैयाकी आँखोंसे अश्रुधारा बह चली, और उससे लाडिलीका सिर भीगने लगा। अभिनन्दपत्नीकी चेष्टासे कहीं जाकर मैयाको बाह्यज्ञान हुआ; मैया निर्णय कर सकीं कि यह कीर्तिदा रानीकी लाडिली राधा है, नीलमणि तो गोशालाकी ओर गया है।

मैयाने बहुत-से मेवे मँगवाये; लाडिलीका आँचल भरने लगीं। आँचल भर जानेपर बहुत-से मिष्टान्न मँगवाये; पासमें ही श्रीकृष्णका पीताम्बर पड़ा था। नीलमणिके लिये प्रतिदिन

* मैं तुझसे सच कहती हूँ—तू कीर्तिदा देवीकी बेटी नहीं, मेरी ही लाडिली है। मैं जैसे कन्हैयाका चन्द्रमुख निहारकर जीती हूँ, वैसे ही तेरा भी मुखड़ा देखकर जीती हूँ। फिर तू लजाती क्यों है।

मैया नूतन पीताम्बर निकालती थीं, कभी-कभी एक ही दिनमें दो-तीन बार पीताम्बर बदला जाता था। नीलमणि दो घड़ी ओढ़कर फेंक देते थे। मैया नया निकालकर पुनः कंधोंपर डालती थी। आज कुछ ही देर पहले पीताम्बर कंधोंपरसे फेंककर नीलमणि भागे थे, मैयाने नया निकालकर दासीके हाथ ओढ़ाने भेजा था। वही पहला पीताम्बर वहाँ पड़ा था; मैयाने उसीमें विविध मिष्टान्न बाँधकर लाडिलीकी अञ्जलिमें रख दिया। फिर एक मणिजटित मुद्रिका मँगाकर कहा—'लाडिली! मैंने अपने नीलमणिके लिये यह मुद्रिका बनवायी थी, आज मैंने उसे पहनाया था; पर सम्भवतः कुछ बड़ी बन गयी है, उसने कुछ ही देर बाद निकालकर फेंक दिया। तेरी अँगुली तो देखूँ बेटी!' यह कहकर लाडिलीकी अनामिकामें मैयाने मुद्रिका डाल दी। मुद्रिका ठीक आ गयी, मानो लाडिलीके नापकी ही बनी हो। मैयाके आनन्दका पार नहीं; पर लाडिलीके सारे अङ्गोंमें कम्पन हो रहा है, प्रस्वेद-कण ललाट एवं कपोलोंपर झल-झल कर रहे हैं।

यशोदा मैया लाडिलीके दाहिने कंधेपर हाथ रक्खे, नीलमणिको ढूँढ़ने चलीं। नीलमणि खिरकके द्वारपर प्रज्वलित दीपोंकी पंक्ति सजा रहे थे। गायें एवं बछड़े हुमड़-हुमड़कर द्वारके पास आ रहे थे; ग्वाले बहुत चेष्टा करते, पर वे गायें एक नहीं सुन रही हैं। वे तो अपने प्राणधन श्यामसुन्दरका दीपदान देखने आयी हैं और उनका आवाहन पाकर आयी हैं; भला, किसीके रोकनेसे वे कैसे रुकतीं। अतः द्वारके पास गायोंकी अपार भीड़ एकत्र हो गयी। आश्चर्य यह था कि भीतर इतनी उछल-कूद करनेपर भी द्वारके पास आयीं तो वे शान्त हो गयीं; दीप-पंक्तियोंको किसी गाय या बछड़ेने नष्ट नहीं किया।

मैयाने पुकारा—नीलमणि! और नीलमणिने भी सिर घुमाकर देखा। नीलमणिके मुखारविन्दसे अनन्त असीम सौन्दर्यका स्रोत झर रहा है। मैयाने एक बार नीलमणिकी ओर देखा, फिर लाडिलीकी ओर; फिर आँखें मूँद लीं। नीलमणिके नेत्र भी अपने-आप बंद हो गये; लाडिलीकी आँखें भी न जाने कब बंद हो गयी थीं। मैयाके पीछे-पीछे यूथ-की-यूथ व्रजाङ्गनाएँ दौड़ी आयी हैं, सभी अपलक नेत्रोंसे यह सुन्दर दृश्य देख रही हैं। पर गायें जोर-जोरसे हम्बारव करने लगीं।



कुछ क्षण बाद मैया, लाडिली एवं व्रजाङ्गनाओंको व्रजराजनन्दनने घूम-घूमकर गायोंका शृङ्गार दिखाया। व्रजाङ्गनाएँ मन-ही-मन गायोंके भाग्यकी सराहना कर रही हैं। गायोंका शृङ्गार देखने कुछ देरके लिये स्वयं नन्दरायजी भी आये। पर नीलमणिकी मङ्गलकामनासे ही आज वे इन्द्रयागकी व्यवस्थामें संलग्न हैं; इसलिये कुछ क्षण ही ठहरकर, नीलमणिको हृदयसे लगाकर, सिर सूँघकर लौट गये। व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दर अपने पिताको लौटते देखकर कुछ सोचते हुए-से मुसकराने लगे।

अतिशय उमंगसे व्रजगोपोंने दीपावलीका उत्सव मनाया। आज समस्त व्रजमें जागरण है, सर्वत्र बाजे बज रहे हैं। पर व्रजरानी अपने नीलमणिको दुग्धधौत उज्ज्वल सुकोमलतम शय्यापर लिटाकर सुलानेकी चेष्टा कर रही हैं। नीलमणि आज ७ वर्ष २ महीने ७ दिनके थे, पर वात्सल्यरससाररूपा व्रजरानीके लिये दुधमुँहे शिशु-जैसे ही थे। प्रतिदिनकी तरह मैया आज भी कहानी सुनाकर, गीत गाकर, थपकी देकर सुलानेका प्रयास कर रही हैं; पर श्यामसुन्दरकी आँखोंमें आज नींद नहीं। रात्रि डेढ़ पहरसे अधिक बीत चुकी है। नन्दभवनके तोरणद्वारके पास वन्दिजन गा रहे हैं—

जयति व्रजपुर सकल खोरि गोकुल अखिल
तरनितनया निकट दिव्य दीपावली।
जयति नवकुंजवर द्रुम लता पत्र प्रति
मानो फूलीं नवल कनक चंपावली॥
जयति गोविंद गोवृंद चित्रित करे,
मुदित उमड़ी फिरै ग्वाल-गोपावली।
जयति व्रज ईस के चरित लख थकित सिव,
मोहे बिधि, लज्जित सुरलोक-भूपावली॥

जब रात्रि एक पहर अवशिष्ट रही, तब कहीं व्रजराजनन्दन सोये। फिर भी बीच-बीचमें चौंक-से पड़ते थे, मानो कुछ स्वप्न देख रहे हों। नन्दरानी चिन्तित थीं, कहीं मेरे नीलमणिको किसीकी नजर तो नहीं लग गयी। मैया दृष्टिदोषनिवारणके उद्देश्यसे धौरी गायको लानेके लिये कहने गयीं। व्रजराजनन्दन स्वप्नावेशमें बोल रहे थे—'लाडिली! मेरी धौरीका श्रृङ्गार देखो।' उसी समय धौरी शयनागारमें पहुँची। माताने धौरीकी पूँछका अपने नीलमणिके अङ्गोंसे स्पर्श कराया, फिर उसे अपने लालके चारों ओर तीन बार घुमाया। धौरी प्रेममें विह्वल-सी हुई स्तब्ध-शान्त खड़ी रहकर यशोदाके नीलमणिकी शोभा निहार रही है और श्यामसुन्दर स्वप्नमें ही कह रहे हैं—'अहा! आज मेरी धौरी कितनी सुन्दर दीखती है।'

(७)

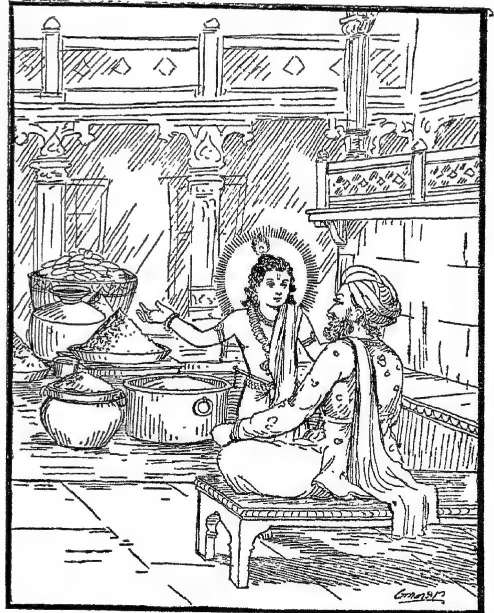
कार्तिक शुक्ला प्रतिपदाका प्रभात है। स्वयं भगवान् व्रजराजनन्दनकी अचिन्त्य लीलामहाशक्तिने आज वृन्दावनके रङ्गमञ्चको एक नये साजसे सजा दिया तथा सर्वथा अभूतपूर्व दृश्य प्रारम्भ हुआ। शारदीय मन्द समीरके झोंकोंसे तरु-किसलय कम्पित हो रहे हैं, तरुशाखाओंपर बैठे हुए पक्षियोंके मधुर कलरवसे वन निनादित हो रहा है। मानो वनकी अधिष्ठात्री वृन्दादेवी किसलय-संचालन तथा पक्षिकलरवके मिससे नृत्य करती हुई गा रही हैं, नये दृश्यका मङ्गलाचरण कर रही हैं। अचानक पट-परिवर्तन हुआ और दृश्य सामने आ गया।

स्तूपाकार यज्ञ-सम्भारके निकट खेलते हुए राम-श्याम दोनों आ पहुँचे। चपल नन्दनन्दन एवं बलरामने कुछ वस्तुएँ उठाकर देखना चाहा कि ये क्या हैं। पर जननीने हाथ बढ़ाकर दोनोंको पकड़ लिया और बोलीं—'मेरे लाल! आज यज्ञ है, यह देवान्न है। तेरे बाबा एवं ब्राह्मण इस अन्नसे यज्ञ करेंगे। तू खेलकर आ रहा है, तुझे इनका स्पर्श नहीं करना चाहिये।' व्रजराजनन्दन स्थिर खड़े होकर आश्चर्यचकित नयनोंसे द्रव्यसंभारकी ओर देखने लगे। पर अब व्रजराजके लिये द्रव्यसम्भारमें मनोयोग देना कठिन हो गया। प्राणोंमें एक विद्युत्-सी दौड़ उठी—एक बार अपने लालको हृदय लगाकर उसे प्यार कर लूँ, आह कैसी भोली चितवनसे वह मेरी ओर देख रहा है!

नन्दराय मानो खिंचे हुए-से द्रव्यस्तूपोंके बीचसे निकल आये। निकट आकर राम-श्यामको गोद लेकर उन्होंने छातीसे लगा लिया। नन्दरायके बाहुपाशोंमें बँधे दोनों भाइयोंके नेत्र खिल उठे। एक क्षणके लिये बंकिम दृष्टिसे परस्पर दोनों भाइयोंने एक दूसरेको देखा, मानो कुछ संकेत-सा कर रहे हों। फिर दूसरे ही क्षण अनन्त मधुधाराकी वर्षा-सी करते हुए व्रजराजनन्दनने पूछा—'बाबा! आज क्या है, किसका यज्ञ है, यज्ञ कैसे होता है, उसका क्या फल होता है? तुम्हें तो किसी बातकी त्रुटि नहीं, तुम यज्ञ किसलिये करते हो?' एक साथ ही नन्दके प्राणधनने प्रश्नोंकी झड़ी लगा दी—

कथ्यतां मे पितः कोऽयं संभ्रमो व उपागतः।
किं फलं कस्य चोद्देशः केन वा साध्यते मखः॥

(श्रीमद्भा० १०।२४।३)



नन्दरायने मन-ही-मन एक बार इन्द्रको नमस्कार किया फिर, 'मेरे लाल! यह वर्षाधिदेव भगवान् इन्द्रका यज्ञ है।

यह कहकर वे अपने प्राणधनको यज्ञकी कर्तव्यता बताने लगे। व्रजराजनन्दन दोनों हाथोंसे अपने बाबाके बायें कंधेको पकड़े हुए गोदमें चढ़े-चढ़े ही सुन रहे थे। नन्दरायने बात समाप्त ही की थी कि चटपट व्रजराजनन्दन बोल उठे—'बाबा! रात मैंने एक स्वप्न देखा है—

आज एक सपनें कोउ आयो। संख चक्र भुज चारि बनायो॥
मोसों यह कहि कहि समुझायो। यह पूजा किन्ह तुम्हहि सिखायो॥
सूर स्याम कहि प्रगट सुनायो। गिरि गोबर्द्धन देव बतायो॥

× × × ×

यह तब कहन लगे दिवराई। इंद्रहि पूजें कौन बड़ाई॥
कोटि इंद्र हम छन में मारें। छन ही में पुनि कोटि सँवारें॥
जाके पूजें फल तुम पावहु। ता देवहि तुम भोग लगावहु॥
तुम आगे वह भोजन खैहै। मुख माँगे फल तुमको दैहै॥

व्रजराजनन्दनका स्वप्न सुनकर सभी गोप चकित हो उठे। सभी अपना-अपना अनुमान लगाने लगे। हठात् श्यामसुन्दरका मुख एक अनिर्वचनीय तेजसे उद्दीप्त हो उठा, उनके मुखसे अनर्गल शास्त्र-वचन निकलने लगे; सबका सारांश था—इन्द्रयागके स्थानपर गो-यज्ञ, ब्राह्मण-यज्ञ, गोवर्द्धन-यज्ञ करो! नीलमणिको इस प्रकार परम विद्वान्‌की तरह तर्क-समन्वित युक्तियोंसे इन्द्रयागका खण्डन करते देखकर सब-के-सब आश्चर्यमें पड़ गये। सन्नन्दने अनुभव किया—'एक नील तेजःपुञ्ज यशोदाके नीलमणिके चारों ओर छिटका हुआ है।' अतः परस्परके परामर्शसे यह निष्कर्ष निकला कि साक्षात् आदिपुरुष नारायणने ही नीलमणिके मुखसे ऐसी आज्ञा दी है। जिस नारायणने अबतक व्रजके प्राणधन नीलमणिकी अनेक विपत्तियोंसे रक्षा की, उनकी आज्ञा ही सर्वमान्य है।' इसी निश्चयके अनुसार उसी क्षण इन्द्रयागका प्रयत्न गोवर्द्धन-यागके रूपमें परिणत हो गया। गिरिराजके चरणतलमें समस्त व्रज एकत्र होने लगा। दो घड़ियोंमें ही पर्वतराजका चरणप्रान्त अनन्त गो-गोप एवं गोपाङ्गनाओंसे परिपूर्ण हो गया।

यथासमय स्वस्त्ययनपूर्वक गिरिराजकी विधिवत् पूजा आरम्भ हुई। अन्न, व्यञ्जन आदि स्तूपाकार सजा दिये गये। व्रजराजनन्दनके परामर्शसे सभी गोप एकचित्त होकर प्रत्यक्ष प्रकट होनेकी आशासे गिरिराजकी उपासनामें—

बिनती करत सकल अहीर।
कलस भरि भरि ग्वाल लै लै सिखर डारत छीर॥
चल्यो बहि चहुँ पास ते पय सुरसरी जल ढारि।
बसन भूषन लै चढ़ाए भीर अति नर-नारि॥
मूँदि लोचन भोग अरप्यो प्रेम सों रुचि भारि।
सबनि देख्यो प्रकट मूरति सहस भुजा पसारि॥
रुचि सहित गिरि सबनि आगे करनि लै लै खाय।
नंदसुत महिमा अगोचर सूर क्योंकर गाय॥

गिरिराजने सचमुच सबके भोगको प्रत्यक्ष प्रकट हो स्वीकार किया, सबका मनोरथ पूर्ण किया। मेघगम्भीर शब्द में नन्दराय और नन्दरानीसे गिरिराजने वर माँगनेका आदे दिया। श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हुए नन्दरायने कहा—



कहत नंद सब तुमही दीनो, माँगत हौं हरि की कुसलाई।
और नन्दरानी बोलीं—
सदा तुम्हारी सेवा करिहौं, और देव नहीं करौं पुजाई।
सूर स्यामको नीके राखौ कहति महरि ये हलधर भाई॥
गिरिराज 'एवमस्तु' कहकर बोले—

और कछू माँगहु नँद मोसों।
जो चाहौ सो देहुँ तुरत ही कहत सबै गोपन सों॥
बल मोहन दोऊ सुत तेरे कुसल सदा ये रैहें।
बाढ़ें सुरभी बच्छ घनेरै चर तृन बहुत अघैहें॥
इन के कहें करी मम पूजा, अब तुम सब घर जाहु।
भोग प्रसाद लेहु कछु मेरो, गोप सबै मिलि खाहु॥

श्रीगोवर्द्धनका प्रत्यक्ष दर्शन गोपोंके लिये असाधारण बात हुई; सबको दृढ़ विश्वास हो गया कि वास्तवमें श्रीआदि-पुरुष नारायणकी इच्छा ही व्रजराजनन्दनमें अभिव्यक्त हुई

थी। लीलाशक्तिकी इच्छासे गोप यह तो नहीं ही समझ पाये कि यशोदाके नीलमणि ही स्वयं आदिपुरुष पुरुषोत्तम भगवान् हैं। इस ज्ञानकी आवश्यकता भी नहीं थी; क्योंकि वैसा होनेपर तो मधुर लीलारस-सिन्धुमें निमग्न व्रजगोपोंकी रसानुभूति विच्छिन्न हो जाती। जो हो, अब गोवर्द्धनयागके अनन्तर श्रीकृष्णकी प्रिय गायोंका सत्कार आरम्भ हुआ—

ततश्च सर्वोऽपि विस्रब्धः परमप्रेमभाजन-गोसभाजनमारब्धवान्। (श्रीगोपालचम्पू)

गायोंका श्रृङ्गार तो सात पहर पूर्वसे होने लगा था—विशेषतः व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दरकी गायोंकी वेश-भूषा तो आज देखने ही योग्य थी। सबके सींग सोनेसे मढ़ दिये गये थे; इन स्वर्णिम श्रृङ्गोंसे उनका सौन्दर्य शतगुणित हो गया था; उज्ज्वल रजतपत्रोंसे मढ़े हुए खुर चमक रहे थे; प्रत्येकके गलेमें मणिमुक्तानिर्मित हार लटक रहे थे; सबको किङ्किणी पहना दी गयी थी; वे घूम रही थीं तथा किङ्किणी-का झन-झन शब्द गिरिराजके वन-प्रान्तरमें गूँज रहा था—

स्वर्णनिर्मितविषाणसुरूपा
रूप्यसंवृतखुरा धृतहाराः।
किङ्किणीप्रकरझङ्कृतियुक्ता
नैचिकीनिचितयो रुचिमाञ्चन्॥
(श्रीगोपालचम्पू)



इन गायोंकी भी पूजा की गयी। सुकोमल तृणाङ्कुर एवं विविध पक्वान्न भोजनके लिये दिये गये; इनके बछड़े आज इनके पास ही छोड़ दिये गये। उनके आनन्दकी सीमा न थी। भोजन करती हुई ये गायें स्नेहवश क्षण-क्षणमें श्रीकृष्णकी ओर सिर उठा-उठाकर देख लेती थीं। श्रीकृष्ण दीख जाते तो पुनः चरने लग जातीं। पर यदि नहीं दीखते तो ग्रास लेना स्थगित कर देतीं। जैसे किसी प्रियवियोगमें उपरामता आती है, भोगोंकी ओर दृष्टि नहीं जाती, वैसे ही श्रीकृष्ण ज्यों ही आँखोंसे ओझल हुए कि ये गायें भोजन आदि सब छोड़कर व्याकुल हो जातीं तथा हम्बारवके रूपमें आर्तनाद करने लगतीं—

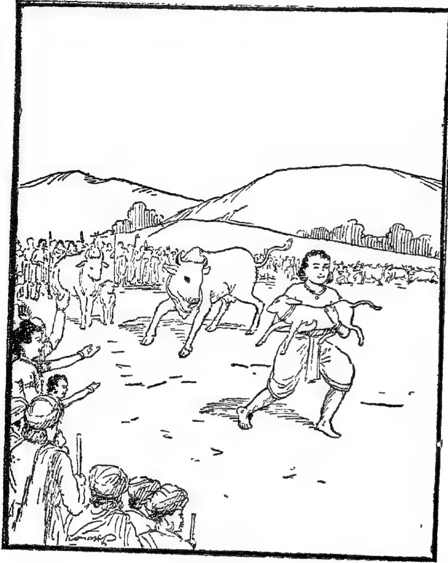
लब्धार्चाश्चारुवेषैः शबलितवपुषः प्राप्तभोगावलीका
वत्सैः पृक्ताः प्रमोदं पृथुतरमभजन् धेनवः सत्यमेव।
किन्तु श्रीकृष्णदृष्टिप्रमदवलयिता यर्हि तर्ह्येव नो चेत्
केचिद्यद्धन्नजन्ते मधुरविधुरतः संस्कृतं घाडवादि॥
(श्रीगोपालचम्पू)

कुछ गोपोंकी गायोंने उनके हाथसे चारा-दाना नहीं लिया, तब वे व्रजराजनन्दनके पास दौड़े आये और बोले—बेटा नीलमणि! इस चारेको तू तनिक अपने हाथसे छू दे; तेरे हस्तकमलोंकी सुगन्धका संधान पाकर वे गायें अतिशय प्रीतियुक्त होकर चारा खाने लग जाती हैं—

गोपा ऊचुः कृष्ण गोग्रासमेतं हस्ताम्भोजस्पृष्टमीषत्कुरुष्व।
तत्सौगन्ध्यप्राससंधानमेनं गावः सुष्ठुप्रीतितः स्वादयन्ते॥
(श्रीगोपालचम्पू)

इस प्रकार गायोंकी तृप्ति सम्पादन करनेके बाद गायोंका कौतुक आरम्भ हुआ। अनादि परम्परासे नन्दव्रजमें यह गो-सम्भ्रमका कौतुक होता आया है। इस वर्ष भी आरम्भ हुआ। व्रजराजनन्दन श्यामसुन्दर एवं अग्रज बलरामका संकेत पाकर उनके सखा गायोंको विविध चेष्टाओंसे बिझुका देते और गायें पूँछ उठाकर कूदती-फाँदती हुई नृत्य करने लगतीं—

कूकें देत जात कानन पर ऊँची टेरन नाम सुनावत।
सुंदर पीत पिछोरी लेके मुख पर फेर सबन बिझुकावत॥
काहू कौ बछरा काहू को ले ले आगे आन दिखावत।
पूँछ उठाय सुधि है भाजत आप हँसत और सबन हँसावत॥
फिर चुचुकार सूधि कर भाजत बछरन अपने हाथ मिसावत।
श्रीबिट्ठल गिरिधर बलदाऊ इहि बिधि अपनी गाय खिलावत॥



एक ओर राजा वृषभानु गायोंको खेला रहे थे, दूसरी ओर अन्य गोपोंकी मण्डली थी; बीचमें थे यशोदाके नीलमणि। उमंगमें भरकर अब नीलमणि स्वयं गायोंको बिझुका रहे थे—

आप गुपाल कूक मारत हैं गोसुत कों भर कोरी।
धों धों करत लकुट कर लीने मुख पर फेर पिछोरी॥

धौरी प्रतीक्षामें थी कि कब मेरे प्राणधन श्यामसुन्दर आकर मुझे खेलाते हैं; इतनेमें श्यामसुन्दर आ गये, धौरीकी उत्कण्ठाका क्या कहना—

खेलन कों धौरी अकुलानी।
ठाढ़ मेल सनमुख आतुर ह्वै नंदनँदन की सुन मृदु बानी॥

धौरी आनन्दातिरेकसे नाच उठी—

बड़ेरे गोप चकित भए देखत ऐसी कबहुँ न सुनी कहानी।
नाचत गाय भई नौतम ब्रज बरसों बरस कुसरु यह जानी॥

धौरीको खेलते देखकर मानो धूमरिको ईर्ष्या हुई; उसने निश्चय कर लिया कि प्रथम स्थान आजके खेलमें मेरा होगा। हुंकार करती हुई श्यामसुन्दरके सामने आयी; मानो प्रणयरोषसे भरकर श्यामसुन्दरको उपालम्भ दे रही थी कि आज मेरी पुचकारमें इतना विलम्ब क्यों। व्रजराज-नन्दन हँस पड़े; धूमरिको खेलाने लगे। सचमुच धूमरिने सबको मात कर दिया—

सब गायन में धूमरि खेली।
स्रवन पूँछ उचकाय सूधि ह्वै ग्वाल भगावत फिरत अकेली॥

धूमरिको सँभालना कठिन हो गया। किसीका साहस नहीं था कि धूमरिको स्पर्श करे। अतः व्रजराजनन्दन हँसते हुए आगे बढ़े—

पकरि लई गोपाल आप ही कंठ बनावत सेली।
चुंबत मुख आँको भर भेटी टेर कहत लाओ गुर भेली॥

इस खेलमें आज सबने यह एक आश्चर्य अनुभव किया कि गायोंके समक्षसे जब श्रीकृष्ण हट जाते थे, तभी गायोंको अपने बछड़ोंकी स्मृति होती थी और बछड़ोंको दूर हटानेपर वे व्यग्र होतीं। अन्यथा श्रीकृष्णके सामने रहनेपर तो वे मानो सर्वथा श्रीकृष्णमय ही हो जातीं, उन्हें और कुछ भी ज्ञान नहीं रहता था। यह उनकी प्रत्येक चेष्टासे स्पष्ट हो रहा था—

यदा मुदा याति हरिः परोक्षतां
गवां तदा ता निजवत्सकुक्षितः।
व्यग्रीभवन्ति स्म यदा समक्षतां
यात्येष यान्ति स्म तदा तदात्मताम्॥

(श्रीगोपालचम्पू)

समय अधिक हो गया था। गायें खेलमें उन्मत्त हो गयी थीं। नन्दकी आज्ञासे गोपोंने उन्हें एकत्र करनेकी अथक चेष्टा की, पर सब व्यर्थ। व्रजराज चिन्तित हो उठे। यशोदाके नीलमणिने पिताके चिन्तित मुखकी ओर देखा; फिर होठोंपर मुरली रखकर उसमें सुर भरने लगे। एक क्षणमें गोवर्द्धनका समस्त वनप्रान्तर मुरलीरवसे झङ्कृत हो उठा। व्रजाङ्गनाओंके नेत्र बंद हो गये, सभी बाह्यज्ञानशून्य हो गयीं तथा अपार गोराशि जहाँ जैसे थी, स्थिर शान्त खड़ी हो गयी—

गोवर्द्धनाचलमहस्य युतादियूथ-
गोरोधनाय पशुपा न हि तत्र शेकुः।
फूत्कारकेलिकलया मुरली मुरारे-
रासीदलं यदसकौ गुणकोटिकल्पा॥

(श्रीगोपालचम्पू)

गोप इस बार जब गायोंको पकड़ने चले, तब प्रतीत हुआ मानो गायोंके मनःप्राण किसी दूसरे राज्यमें हैं, उनके शरीरको कोई कहीं भी खींच ले जाय। गोपोंने बिना परिश्रम गायोंको एकत्र कर लिया।

इसके बाद ब्राह्मणभोजन आदि अन्य समारोह सम्पन्न करके व्रजराजने गोवर्द्धनकी परिक्रमाका आदेश दिया।

आगे-आगे गोपंक्ति, उनके पीछे राम-श्याम, फिर ब्राह्मण, फिर नन्द-यशोदा आदि, उनके पीछे परिजन, फिर अन्य गुरुजनपत्नियाँ, फिर व्रजाङ्गनाओंका यूथ, व्रजाङ्गनाओंके पीछे दासियाँ, उनके पीछे व्रजके अन्य प्रमुख व्यक्ति तथा अन्तमें अपार जनता—इस क्रमसे गिरिराजकी परिक्रमा प्रारम्भ हुई। व्रजाङ्गनाओंके नेत्रोंमें तो प्रियतम श्यामसुन्दर छाये हुए थे। उन्हें पथ नहीं दीख रहा है, पथके स्थानपर प्राणधन श्यामसुन्दरकी लीला दीख रही है; उन्हींमें तन्मय हुई लीला गाती हुई वे चल रही हैं। परिक्रमा आरम्भ होकर समाप्त भी हो गयी, सभी व्रजकी ओर लौट रहे हैं; पर व्रजाङ्गनाएँ उसी तरह स्वर-में-स्वर मिलाकर लीला गाती हुई चल रही हैं—

गिरिपूजेयं विहिता केन ? अरचि शक्रपदमभयं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? पूतनिका सा निहिता येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? तृणावर्ततनुदलनं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? यमलार्जुनतरुमुदकलि येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? वत्सवकासुरहननं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? व्योमाघासुरमरणं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? कालियदमनं कलितं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? खरप्रलम्बकशमनं येन ॥
गिरिपूजेयं विहिता केन ? दवयुग्मं परिपीतं येन ॥

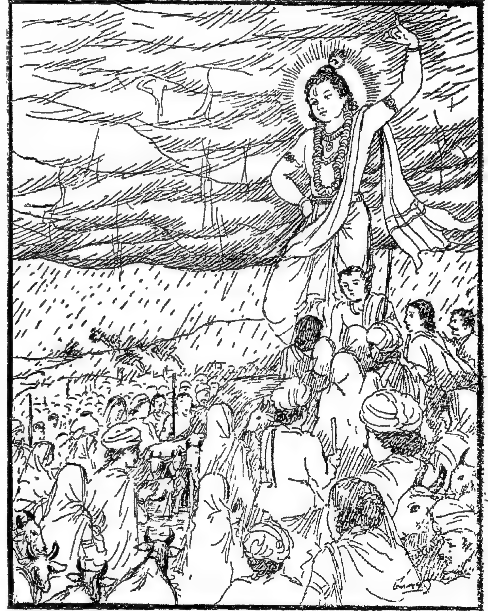
(श्रीगोपालचम्पू)

'यह गोवर्द्धन-पूजा किसने की ? जिसने इन्द्रलोकको भयशून्य बनाया, जिसने उस पूतनाका वध किया, तृणावर्त-का मर्दन किया, जोड़वाँ अर्जुनके वृक्षोंको जड़से उखाड़ दिया, व्योमासुर और अघासुरका वध किया, कालियनागका दमन किया, धेनुकासुर एवं प्रलम्बासुरका विनाश किया और दो बार दावाग्निका पान किया, उसीने यह पूजा की है।'

(८)

अञ्जलि बाँधे देवराज खड़े हैं। कमलयोनि भी गम्भीर चिन्तामें निमग्न हैं। देवराजके मुखपर अतिशय क्लान्ति है। सारा गर्व चूर-चूर हो गया है। सोचा था—समस्त व्रजको क्षणभरमें बहा दूँगा, व्रजका चिह्नतक अवशिष्ट नहीं रहेगा; इस मर्त्य श्रीकृष्णके साथ ही नन्द, नन्दके परिवार, नन्दके अगणित बन्धु-बान्धव, असीम गोराशि—सभी जलके अतल तलमें सदाके लिये विलीन हो जायँगे। मेरे स्थानपर अपनी पूजा करानेवाला यह गोवर्द्धनपर्वत भी चूर्ण-विचूर्ण होकर अनन्त जलराशिके प्रवाहमें कहाँ-से-कहाँ बह जायगा। जगत् देखेगा, मेरी अवज्ञाका क्या परिणाम होता है। पर सुरराजका यह गर्व धूलिमें मिल गया। सांवर्तक मेघ श्रीहत होकर व्रजसे लौटे।

शुक्ला तृतीयाको वर्षा आरम्भ हुई थी। पहले सांवर्तकने भी सोचा था—सागरकी उत्ताल तरङ्गोंकी-सी जलराशिमें बस, व्रज समाप्त होने जा रहा है। व्रजवासियोंके करुण नादका यह अन्तिम क्षण है। पर देखते-ही-देखते श्याम तमालकी-सी अङ्गकान्तिका एक बालक आया, मानो खेलने जा रहा हो। इसी तरहसे उसने सहज ही हाथ बढ़ाया और दूसरे ही क्षण विशाल गोवर्द्धनपर्वत भूमिसे विच्छिन्न होकर आकाशमें जा उठा। सांवर्तकोंने झाँककर देखा, उसके नीचे वही तमाल-श्यामल बालक खड़ा-खड़ा हँस रहा है। उसकी एक भुजा



ऊपरको उठी है, तथा उसकी कनिष्ठिकापर पर्वतराज छत्राकपुष्पकी तरह टिका है। बालक पुकार रहा है—'ओ बाबा, री मैया, री ग्वालिनो, यहाँ, इसके भीतर आओ; यह देखो, गिरिराज हमारे हाथके ऊपर उठ गये हैं। सभी इनके नीचे चले आओ। सभी गायोंको हाँक लाओ, डरो मत; गिरिराजने तुम्हारी रक्षाके लिये ही भूमिगर्त बना डाला है। जितने दिन वर्षा हो, इसमें सुखसे रहो। मेरे हाथसे पर्वतके गिरनेकी किञ्चित् भी आशङ्का मत करो।' बालकका आवाहन पाकर देखते-ही-देखते समस्त व्रजवासी, समस्त गोराशि,

सम्पूर्ण व्रज ही उस गिरिगर्तमें जा घुसा; बाहर केवल निर्जन वनमात्र बच रहा, जिसपर मूसलाधार वृष्टि हो रही है। सांवर्तकगण चाहते थे कि एक बार फिर झाँककर देखें, गिरिगर्तके अन्तर्देशकी अवस्थाका परिचय प्राप्त करें। पर उनकी आँखोंके सामने एक अँधेरा-सा छा गया। उनके अङ्गोंसे अनवरत-संचारित विद्युत्-रश्मि भी उन्हें प्रकाश न दे सकी। वे अब कुछ भी नहीं देख सके। हाँ, गिरिगर्तमें प्रविष्ट होते समय व्रजवासियोंका आनन्दकोलाहल उन्हें स्पष्ट सुन पड़ रहा था; व्रजवासी झाँककर भीतर देखते थे तथा आनन्दमें भरकर अपने साथियोंको उस विशाल गर्तका अनुभव सुनाते थे। वह ध्वनि उनके कानोंमें पड़ रही थी—

सुविन्यस्तनिःश्रेणिलब्धप्रवेशं
मणिश्रेणिविद्योतमानप्रदेशम्।
गृहस्येव रत्नाङ्गभित्तिप्रकारं
तदूर्ध्वं च तत्तुल्यशोभाप्रचारम्॥
सुखस्पर्शमण्याचितक्षोणिभागं
समस्तावकाशादिसंधाविभागम्।
यथापेक्षविभ्राजितस्वच्छनीरं
सुखाकारिघर्म्मच्छिनीचैःसमीरम्॥
करे स्वस्य वामे तु वामे वसन्तं
गिरिं लीलयाऽऽस्पृश्य सन्तं हसन्तम्।
तदीयान्तरुद्यन्महाकुट्टिमस्थं
हरिं हारिरूपादिभिः प्रागवस्थम्॥
दधद्वेणुमानम्रहस्तप्रधानं
कदाचिन्मुदा सख्युरंसे दधानम्॥

(श्रीगोपालचम्पू)

'अहा! गिरिराजके अन्तर्देशमें जानेके लिये सुन्दर सीढ़ियाँ निर्मित हैं, समस्त अन्तर्देश मणिसमूहोंसे जगमग-जगमग कर रहा है; सुन्दर गृहके रत्नमय आँगन, भित्ति आदिके समान ही गिरिराजके आवासके रत्नमय आँगन एवं भित्तिकी रचना है; गृहके ऊर्ध्वभाग छत-प्रकोष्ठ आदि भी वैसी ही शोभाका प्रदर्शन कर रहे हैं; इसका तलदेश सुकोमल मणि-संयुक्त है; सबको स्थान देनेके योग्य यथोचित विभाग बने हुए हैं; जितनी आवश्यकता हो, उतनी मात्रामें यहाँ चम-चम करता हुआ स्वच्छ जल बह रहा है; सुखकर तनुतापहारी मन्द समीर प्रवाहित हो रहा है। ऐसे आवासवाले गिरिराजको व्रजराजनन्दन लीलासे अपने बायें हाथपर लिये, उसे किञ्चिन्मात्र ही स्पर्श करते हुए, हँसते हुए अन्तर्देशकी एक विशाल वेदीपर खड़े हैं; उनका मनोहर रूप, परिधान आदि सब कुछ ज्यों-का-त्यों वैसा ही है; वयस भी वही है; उनका दक्षिण हस्तकमल नीचेकी ओर लटक रहा है, उसमें वे वंशी धारण किये हुए हैं; कभी प्रसन्न होकर दाहिने हाथको सखाके कंधेपर रख देते हैं।'

इसे सुनकर ही सांवर्तक मेघोंका सारा उत्साह टूट चुका था। पर उन्हें तो अपने स्वामीका आदेश पालन करना था; अतः वे अपनी सारी शक्ति लगाकर सात दिनोंतक अनवरत जलधारा बरसाते ही रहे। प्रतिक्षण उनकी शक्ति क्षीण हो रही थी; नवमीकी रात्रि आते-आते वे सर्वथा सामर्थ्यहीन हो गये, व्रजके एक क्षुद्र अंशका भी नाश न कर सके। ऐरावतपर आसीन सुरराजका मुख म्लान हो गया। शक्ति समाप्त हो चुकी थी; मेघोंको निवारण करते हुए स्वर्ग लौट आये; किसीको मुख दिखानेकी इच्छा न होती थी। पर एक बड़ा लाभ हुआ—देवराजको। मदका आवरण हटते ही व्रजराजनन्दनका स्वरूप उनके हृदयके दर्पणमें चमक उठा—ओह! जिसे मैं 'मर्त्य कृष्ण' कह रहा था, वह ईश्वरोंका भी परम महेश्वर है; उसकी इच्छासे ही मैं सुरराज बना हुआ हूँ, वह चाहे तो मैं इसी क्षण नरक-कीट बन जाऊँ और नरक-कीट मेरे आसनको सुशोभित करे। सुरराज पश्चात्तापकी ज्वालामें जलने लगे। सुरगुरु बृहस्पतिका आश्रय लिया। बृहस्पतिके परामर्शसे वे पितामह ब्रह्माके पास आये। उनसे समस्त अपराध निवेदन कर इसका निदान पानेकी आशासे अञ्जलि बाँधे खड़े रहे।

कमलयोनिने सोच-विचारके उपरान्त परामर्श दिया—

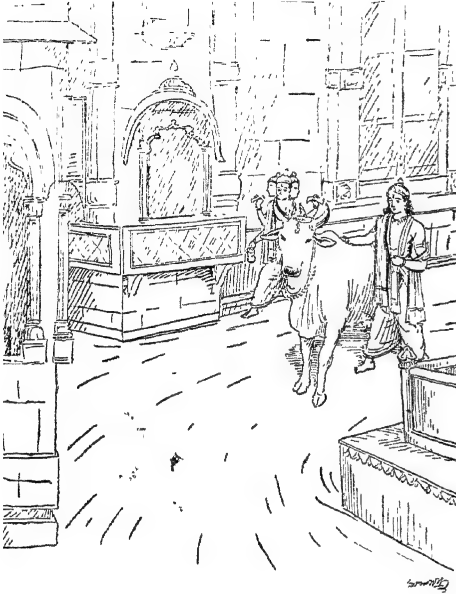
गवां कण्डूयनं कुर्याद् गोग्रासं गोप्रदक्षिणाम्।
नित्यं गोषु प्रसन्नासु गोपालोऽपि प्रसीदतीति······॥
क्षमापनाय कातरस्त्वं तज्जातिमातरं सुरभीमेव भजस्व।

(श्रीगोपालचम्पू)

गोपालके भक्त गौतम आदि ऋषियोंके ये वचन हैं—'गायोंको खाज आनेपर उनकी खाज करनी चाहिये, गोग्रासका दान करना चाहिये, गोप्रदक्षिणा करनी चाहिये। जिनपर गायें सदा प्रसन्न रहती हैं, उनपर गोपाल भी प्रसन्न होते हैं। सुरराज! अपराध क्षमा करानेके लिये तुम व्याकुल हो; तुम्हारे लिये यही पथ है कि तुम गोजातिकी माता सुरभिका आश्रय ग्रहण करो।'

श्रीकृष्णकी अवज्ञा करनेवाले सुरराजको देखकर सुरभि खिन्न हो उठी। पर बारंबार अनुनय-विनय करनेपर

ब्रह्माकी अनुमतिसे इन्द्रके साथ चल पड़ी। उस दिन कार्तिक शुक्ला एकादशी थी। पुण्य वृन्दावनकी भूमिपर



आकर इन्द्रको साथ लिये सुरभि उचित अवसरकी प्रतीक्षा करने लगी।

व्रजराजनन्दन वनमें गाय चराने आये। पुरन्दरके अन्तर्हृदयकी व्याकुलता व्रजराजनन्दनके रसमय निर्मल हृदयमें प्रतिबिम्बित हो गयी थी। उन्हें एकान्त अवसर देनेके लिये ही उन्होंने आज अग्रजको साथ नहीं लिया, सखाओंको भी किसी प्रसङ्गसे अलग भेज दिया। एकाकी गोवर्द्धनकी रत्नशिलापर विराजमान हैं। सुरराज आकर चरणोंमें दण्डवत् गिर पड़े। नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बह चली, वाणीसे अपने-आप स्तुति निकल पड़ी। स्तुति करते-करते व्रजेन्द्रनन्दनके हस्तारविन्दका मधुरातिमधुर स्पर्श प्राप्त हुआ; देवराज निहाल हो गये, निर्भय हो गये। सुरभि अन्तरिक्षमें छिपी हुई देख रही थी, ठीक उसी समय आ पहुँची। सुरभि प्रणाम करने जा रही थी; पर उसके पूर्व ही व्रजराज-नन्दन अञ्जलि बाँधे हुए उठ खड़े हुए तथा बोले 'मा! कैसे आयी?' सुरभि बोली—

एते मदन्वया धन्या गोत्वं त्वां सेवितुं गताः।
अहं तु नेदृक्पुण्या यन्नोचरस्त्वं च नागता॥
(श्रीगोपालचम्पू)

'व्रजराजनन्दन! ये मेरे वंशज धन्य हैं, जो तुम्हारी सेवाके लिये गौ बन गये। पर मैं ऐसी पुण्यवती नहीं थी, क्योंकि गौ होकर भी तुम्हारे नयनोंके सामने नहीं आयी।'

—कहते-कहते सुरभिके हृदयमें व्रजराजनन्दनका अनन्त असीम ऐश्वर्य जाग उठा, सुरभि स्तुति करने लगी—



'श्रीकृष्ण! इन्द्रके कोपसे हमलोग सचमुच नष्ट ही हो चले थे, पर तुम लोकनाथने हमारी रक्षा की। तुम्हीं हमारे परमदेव हो; आजसे तुम्हीं गोवंश, ब्राह्मण एवं देवोंके अभ्युदयके लिये हमारे इन्द्र बनो—

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वसम्भव।
भवता लोकनाथेन सनाथा वयमच्युत॥
त्वं नः परमकं दैवं त्वं न इन्द्रो जगत्पते।
भवाय भव गोविप्रदेवानां ये च साधवः॥
(श्रीमद्भा० १०। २७। १९-२०)

उत्तरोत्तर भावसे आविष्ट होकर सुरभिने फिर कहा—

व्रजमहेन्द्रकुलचन्द्र! तुम्हारे चरणस्पर्शसे यहाँके तीर्थ सार्थक हो गये। तुम्हारे दुग्धपानसे यहाँकी गायें धन्य हो गयीं; पर स्वर्गीय गङ्गाका स्रोत एवं दूधसे भरे मेरे थन, दोनों व्यर्थ ही रहे। मेरे आराध्यदेव! उनकी सार्थकताके लिये ही मेरे मनमें स्वर्मन्दाकिनीकी धारासे एवं अपने

थनकी दुग्धधारासे तुम्हारे अभिषेककी लालसा जाग उठी है; आज्ञा दे दो, हमारे इन्द्र !'

व्रजराजनन्दनके अधरोंपर एक पवित्र मनोहर मुसकान खेलने लगी; यह मुसकान ही संकेत था—'यथेष्टमनुष्ठीयताम्', जैसी इच्छा हो वैसे करो । दूसरे ही क्षण देववाद्य बज उठे; गन्धर्व, अप्सरा, सुराङ्गनाएँ गान करती हुई नृत्य करने लगीं; ऋषि स्तोत्रपाठ करने लगे; ब्रह्मा-रुद्रकी जय-जय ध्वनिसे आकाश प्रकम्पित होने लगा; एक ओर उत्फुल्ल ऐरावत स्वर्मन्दाकिनी-जलसे पूरित घट अनवरत अपनी सूँडोंमें उठा-उठाकर देवराजके हाथोंमें देने लगा; दूसरी ओर सुरभि अपने थनोंसे दूध बरसाने लगी; जलधारा एवं दुग्धधारा एक ही साथ झर-झर करती हुई व्रजराजनन्दनपर गिरने लगी, उनका अभिषेक होने लगा ।

अभिषेकके अनन्तर व्रजराजनन्दन 'गोविन्द' नामसे अभिहित हुए । आकाशसे देवताओंने पुष्प-वृष्टि की । अन्तमें पुष्पाञ्जलिके रूपमें इन्द्र, ब्रह्मा आदिने छत्र, चामर, विविध अलङ्कार, लीलाकमल आदि समर्पण किये । व्रजराजनन्दनके मुखपर वही मुसकान थी । हाँ, उनके सखा दूरसे देख रहे थे, आश्चर्यमें भरकर सोच रहे थे—यह क्या कौतुक है !

इन्द्रादि देवताओंने परिक्रमा कर विदा ली । सखा आये; देवार्पित छत्र, चामर, आभूषणोंसे खेलने लगे । परस्पर सबने शृङ्गार किया । संध्या होनेको आ रही थी; अतः सभी गायें बटोरकर घरकी ओर चल पड़े । श्रीदामा पूछ रहा था—दादा ! वे चार मुख, पाँच मुख, सहस्र आँखोंवाले कौन थे ? व्रजराजनन्दन हँसते जा रहे थे ।

आकाशमें नृत्य, वाद्य, गीत सुनकर नन्द-यशोदा आदि सभी चकित हो गये थे । नन्दरानीने व्रजराजको अपने नीलमणिके पास भेजा; यशोदाके वात्सल्यपूर्ण हृदयमें क्षण-क्षणमें यह भय जाग उठता था—पता नहीं नीलमणिपर कोई विपत्ति तो नहीं आ रही है ।

व्रजराजने आकर श्यामसुन्दरको हृदयसे लगा लिया । पूछा—बेटा ! आज आकाशमें बाजे क्यों बज रहे थे, कोई नयी बात हुई क्या ? श्यामसुन्दर मुसकराकर चुप हो गये । नन्दरायने श्रीदामासे पूछा—'तू बता, बेटा ! आज क्या हुआ है ?' पर श्रीदामाने कहा—'बाबा, मैं गायें बटोरने दूर चला गया था; फिर पीछे आकर देखा तो······।' बीचमें ही मधुमङ्गल बोल पड़ा—'व्रजराज ! आज बड़ा कौतुक हुआ ।



एक गाय आयी, मनुष्यकी तरह बहुत देरतक कन्हैयासे बात करती रही; एक हजार आँखोंवाला एक आदमी आया, उसने कन्हैयाको दण्डवत् प्रणाम किया; एक बहुत ही बड़ा उजला हाथी था, वह बार-बार घड़ोंमें जल भर-भरकर सूँड़से उसको दे रहा था; एक पाँच मुखोंका और एक चार मुखोंका—दो पुरुष और आये, वे कन्हैयाकी स्तुति गा रहे थे तथा सब मिलकर तुम्हारे नीलमणिपर जलकी धारा गिरा रहे थे—

गौरेका गिरमातनोदथ पुमानन्यः सहस्रेक्षणो-
ऽनंसीत् कोऽपि करी सितः स्वरुदकांन्याहृत्य शश्वद्ददौ ।
कौचित् पञ्चचतुर्मुखाङ्कवलितौ स्तोत्रप्रथाञ्चक्रतु-
स्ते चान्ये च महामहेन सिषिचुर्गोपेश ! पुत्रं तव ॥

(श्रीगोपालचम्पू)

व्रजनरेश आश्चर्यमें डूबे हुए मधुमङ्गलकी बात सुन रहे हैं । मन-ही-मन सोच रहे हैं—मेरे नीलमणिपर मेरे कुलदेव नारायणकी अपार कृपा है; वे नारायण ही समय-समयपर मेरे लालमें आविष्ट हो जाते हैं, देवताओंने उन्हींकी अभ्यर्थना की होगी । सोचते हुए नन्दराय नीलमणिके मधुर-मनोहर मुखकी ओर देखने लगे । नीलमणिने अमृतमय कण्ठसे कहा—'बाबा, घर चलो, मैया चिन्ता करती होगी ।' इन शब्दोंमें एक विलक्षण मोहिनी शक्ति थी, व्रजराज देवताओंकी

बात सर्वथा भूल गये। वात्सल्य-रस-सागरमें डूबते-उतराते हुए नीलमणिका हाथ पकड़े व्रजकी ओर चल पड़े; अपार गोराशि व्रजराजनन्दनको चारों ओरसे घेरे चल रही थी। व्रजके वन्दिजन गा रहे थे—

आगे गाय पाछे गाय, इत गाय उत गाय,
गोबिंद कों गायन में बसिबोई भावै।
गायन के संग धावै, गायन में सचु पावै,
गायन की खुररेनु अंग लपटावै॥
गायन सों ब्रज छायो, बैकुंठ बिसरायो,
गायन के हेत कर गिरि लै उठावै।
छीतस्वामी गिरधारी बिट्ठलेसबपुधारी
ग्वारिया को भेस धरें गायन में आवै॥

हिंदुओंका मानबिन्दु—गौ

(नागपुरके गोरक्षण-सप्ताहमें आनरेबल श्रीबापूजी अणेका भाषण)

गौके विषयमें अब किस भाषामें क्या कहा जाय ? स्मरणार्थ एक प्रसङ्गकी बात कहता हूँ। रेलगाड़ीसे यात्रा करते हुए रास्तेमें एक अंग्रेज सज्जनने मुझसे पूछा, 'हिंदू संस्कृतिका क्या लक्षण है ? हिंदुओंका प्रतीक क्या है ?' मैंने उत्तर दिया, 'संस्कृतिके लक्षणके सम्बन्धमें तो मैं विशेष कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि उसके विषयमें अनेक मतभेद हो सकते हैं। पर हिंदुओंका प्रतीक एक गौ ही है और वह भेदातीत है। गौकी स्तुति करके बड़े-बड़े मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंने अपनेको धन्य माना है। यजुर्वेदमें वर्णन है कि हमारी गौएँ 'पयस्विनी', 'ओजस्विनी', 'प्रजावती' होनी चाहिये। यज्ञिय पदार्थ गौओंसे मिला करें, इसके लिये यज्ञकर्ता यजमान बहुत-सी गौएँ पाला करते थे। यज्ञोंमें गौकी बड़ी महिमा होनेसे प्रत्येक द्विजातिके घर सहज ही गोपालन हुआ करता था। विवाहके साथ समागत अग्नि प्रत्येक द्विजपरिवारमें सेव्य था। द्विज उसकी सेवा करता था और इससे गोपालन हो जाता था। ऐसी अनेक बातोंसे हिंदूधर्ममें गौका स्थान अटल है। यदि यह स्थान टल जाय तो ऊपर खड़ा भव्यभवन भहराकर नीचे गिर पड़े। गौके सम्बन्धमें हमलोगोंकी इन भावनाओंका कारण गौकी आत्यन्तिक उपयोगिता है। ये परम्परागत भावनाएँ तलवारकी धारकी तरह तीक्ष्ण हैं। इन्हें कुंद न होने देना चाहिये। श्रावणीके मन्त्रोंमें 'अग्रमग्रं चरन्तीनाम्' वर्णन बिल्कुल यथार्थ है। 'गोमयं कायशोधनम्' (गोबर देहको शुद्ध करनेवाला है), इसमें कोई संदेह नहीं। पञ्चगव्यकी उपकारिता आधुनिक डाक्टरोंको भी जँच गयी है। कितने ही डाक्टरोंने मुझसे ऐसी बातें कही हैं। कुवेलामें उत्पन्न होनेवाले बच्चेको, अनिष्ट ग्रहोंकी शान्तिके लिये, सूपमें रखकर गौके सामने रखते हैं। अर्थात् घरमें गौके रहनेसे अनिष्ट न रहेगा। नवजात शिशुको गौ सूँघ लेती है तो उसके सब दोषोंका परिहार हो जाता है। इन बातोंमें तथ्य भरा हुआ है। पूर्वकालमें राजाओंका वैभव उनके रत्नोंकी अपेक्षा उनके गोधनसे ही जाना जाता था। यज्ञोंकी बड़ाई उनमें होनेवाले गोदानसे ही होती थी। अधिक-से-अधिक गौएँ दान करनेकी ओर सबकी प्रवृत्ति होनेसे गोवंशको लोग अमूल्य निधि ही मानते थे। पूर्वकालके राजाओंके बड़ी-बड़ी गोशालाएँ होती थीं और उनके होनेका उन्हें अभिमान था। महाभारतकालमें भी राजा और राजवंशीय लोग गोधनकी बड़ी सँभाल करते थे। पाण्डवोंके वनवासकालमें उन्हें नीचा दिखाने और हतप्रभ करनेकी गरजसे चले हुए कौरवोंने भी अपने गोधनकी ही जाँच-पड़ताल करनेका बहाना बनाया था। इतिहाससे यह पता लगता है कि पहले गोधनकी जाँच-पड़ताल और गणना हुआ करती थी और गौओंकी रक्षा और पालनके समुचित उपाय किये जाते थे। हमारे यहाँ ऐसे भी राजा हुए हैं, जो गोरक्षाके लिये अपने प्राणतक होमनेको तैयार थे।

अभी जो गोधनका ह्रास हो रहा है, उससे हमारे समाजमें बालमृत्युओंकी संख्या बेतरह बढ़ रही है। हमलोगोंके खान-पानमें दिन-दिन गव्य पदार्थोंका अभाव ही होता जा रहा है। म्युनिसिपलिटियोंका यह कर्तव्य है कि वे बालमृत्युको रोकनेका काम अपने हाथमें लें और पूरा प्रयत्न करें। महाभारतके युद्धका मूल कारण यही हुआ कि एक ब्राह्मण-बालकको पीनेके लिये गौका दूध नहीं मिला। बालकके लिये उसके घर यदि गौ नहीं है तो राजाका यह कर्तव्य है कि वह उसे गौ दान करे, यही पहलेका नियम था। दुर्भाग्यवश, वे दिन गये ! अब हमलोग यदि अपने नवयुवक संतानोंसे बुद्धिमत्ता, तेजस्विता और शक्तिमत्ताके कार्य कराना चाहते हैं तो हमें उनके लिये पहले गोदुग्धपानका समुचित

प्रबन्ध करना ही होगा। मुझे यह विश्वास है कि हम सब लोग यदि कटिबद्ध हो जायँ तो गोहत्या बंद हो सकती है। गोसप्ताहका उद्देश्य भी यही है। कौंसिलोंद्वारा जितना कुछ कराया जा सकता है, करा लेना चाहिये। नागपुरकी ११८ डिग्रीकी गरमीमें बालमृत्युओंकी संख्या प्रतिदिन दो सौसे अधिक होती है। उसी नागपुरमें शीत देशसे आनेवाले अंग्रेजोंके समाजमें नागपुरकी गर्मीसे क्या एक भी बालमृत्यु प्रतिदिन होनेकी शिकायत किसीने सुनी है? ऐसी प्रतिकूल अवस्थामें भी एक भी बालमृत्यु न होनेका कारण क्या है? इसका उत्तर है, भरपूर दूध। हमारे यहाँ बच्चेको न माँका दूध मिलता है न गौका। सब ओर गोदुग्धका प्रचार होना चाहिये। गोसप्ताह वर्षमें एक बार वर्षश्राद्ध करके निश्चिन्त हो जानेके समान न होना चाहिये। द्रोणाचार्यका इस प्रकार वर्णन है कि उनके आगे चारों वेद रहते थे और पीछे धनुषबाण—'अग्रतश्चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः'। गोदुग्धका ही यह प्रभाव है। बुद्धि और शक्ति गोदुग्धसे ही प्राप्य है। मेरा आपलोगोंसे आग्रहपूर्वक यह अनुरोध है कि आपलोग अभीसे उस प्रयत्नमें लगें। प्रचारकार्यका यह मुख्य अङ्ग है। जिस राष्ट्रका कोई मानबिन्दु (Point of honour) होता है, वही अपने उद्धारकी आशा कर सकता है। सर वैलेंटाइन शिरोलने स्वर्गीय लोकमान्य तिलकको 'हिंदुस्थानके राष्ट्रीय आन्दोलनका जन्मदाता' (Father of Indian Unrest) कहा था। और लोकमान्यने भी यथार्थमें क्या किया? चिढ़ उत्पन्न कर दी। आपका जो मानबिन्दु गौ है, उसकी भक्ति बढ़ाइये; गोविषयक भावनाकी अमूल्य निधिको न गँवाइये। इसे गँवाना सर्वस्वसे हाथ धो बैठना है। इस मानबिन्दुकी रक्षाका जतन कीजिये। अपने यहाँ बच्चोंको पालनेमें ही गौकी स्तुति सुननेका सौभाग्य प्राप्त होता है। गौका स्मरण हमें बचपनमें ही हमारी मा करा देती है। सचमुच ही गौके नामसे कितनी उच्च भावना हमलोगोंके हृदयोंको पवित्र किये रहती है! हमलोगोंकी मा-बहनें गौओंकी पूजा करती हैं! देखकर कोई-कोई हँसते भी हैं! पर हँसनेवालोंका यह ज्ञान नहीं, अज्ञान है! स्वयं पूजा न करना और पूजा करनेवाली स्त्रियोंको हँसना कौन-सा ज्ञान है। गौ देवता है, इस भावनाकी रक्षा स्त्रियाँ कर रही हैं—यह बड़े अभिमानकी बात है। हर किसीको अपने घर गौ पालनी चाहिये। इस विषयमें जनताकी उदासीनता देखकर दुःख होता है; ऐसी उदासीनतासे गोरक्षाका धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक उद्योग कैसे सफल हो? आपकी पारिवारिक कठिनाइयाँ बहुत-सी हो सकती हैं, पर उनके रहते हुए गौको घरमें रखकर पालना अनिवार्य कर्तव्य होना चाहिये। मेरा बार-बार सबसे यही कहना है कि 'गौ पालो'। ऐसा प्रबन्ध करोकि हर मुहल्लेमें कम-से-कम सौ, पचास गौएँ हो जायँ और गोरक्षाके अनुकूल कानूनसे जो स्वत्व प्राप्त हो चुके हैं, उनका पूरा उपयोग हो और गोरक्षा तथा गो-संवर्द्धनका काम दिन-दिन आगे बढ़ता चले।



गो-सेवाका फल

बनारसमें खोजवा बाजारसे पश्चिमकी ओर एक गरीब ब्राह्मण रहता था, उसके पास न तो पैसा था और न उसके कोई पुत्र ही था। एक महात्माने बताया कि 'तुम गो-सेवा करो तो सब कुछ ठीक हो जायगा।' उसने मन लगाकर गो-सेवा की। फलस्वरूप उसके सारे दुःख दूर हो गये। अब उसके कई पुत्र-पौत्र हैं। कई मकान हैं। कहते हैं कि कोई यदि अपनी बूढ़ी गाय उनके पुत्रोंके पालनेके लिये देना चाहते हैं तो वे ले लेते हैं। चाहनेपर बदलेमें बछिया भी दे देते हैं, इस शर्तपर कि वह बेचेगा नहीं। ब्राह्मण देवता नित्य गोमूत्रसे स्नान करते थे और उसे गङ्गाजलके समान मानते थे।

—काशीप्रसाद मिश्र वेदाचार्य



गो-ब्राह्मण और जगच्चक्र

(लेखक—श्रीवीरजाकान्त चौधुरी देवशर्मा)

ॐ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

(विष्णुपुराण १ । १९ । ३५)

गो-ब्राह्मणका कल्याण करनेवाले, जगत्‌के लिये मङ्गल-स्वरूप ब्रह्मण्यदेव श्रीगोविन्दको नमस्कार, श्रीकृष्णको नमस्कार !

भक्तराज प्रह्लादकृत यह स्तुति आज जगत्पति श्रीहरिका प्रणाममन्त्र बन गयी है । स्वयं महाप्रभु श्रीश्रीचैतन्यदेवने इस मन्त्रका गान करके श्रीपुरीधाममें श्रीजगन्नाथदेवके रथके आगे नृत्य किया था । इस मन्त्रमें यह बतलाया गया है कि नारायण गो-ब्राह्मण और जगत्‌के लिये मङ्गलमय हैं ।

इस विषयको समझनेके लिये हमें जगच्चक्रकी आलोचना करनी पड़ेगी । श्रीभगवान् गीतामें कहते हैं—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥
इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥
यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥
एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥

(३ । १०—१६)

"प्रजापति ब्रह्माने सृष्टिके आदिमें पुराकालमें प्रजा-समूहकी यज्ञके साथ सृष्टि करके कहा था, 'तुम इस यज्ञके द्वारा उन्नति (वृद्धि) प्राप्त करो अर्थात् भोग्य और काम्य द्रव्यका सम्पादन करो । यह तुमलोगोंकी कामनाकी यथेष्ट पूर्ति करे । यज्ञके द्वारा देवताओंका चिन्तन होनेपर वे देवता तुम्हारा चिन्तन करेंगे । मनुष्य और देवता परस्पर एक-दूसरेका चिन्तन करके परम कल्याणको प्राप्त करेंगे । यज्ञके द्वारा भावित होकर देवगण समस्त भोगोंको प्रदान करेंगे ।' उनके दिये हुए भोगोंको उन्हें प्रदान न करके जो भोग करता है, वह चोर ही है । जो साधु पुरुष यज्ञका अवशिष्ट भोग करते हैं, उनकी सब पापोंसे मुक्ति हो जाती है । पर जो केवल अपने ही लिये पकाते हैं, वे पापीलोग पाप ही भोजन करते हैं ।

"सारे भूत अन्नसे उत्पन्न होते हैं, मेघसे अन्न उत्पन्न होता है । यज्ञसे मेघ तथा कर्मसे यज्ञकी उत्पत्ति होती है । कर्म वेदसे उत्पन्न होता है और वेद अक्षर (परमेश्वर) से उत्पन्न हुआ है । अतएव सर्वव्यापी वेद सर्वदा ही यज्ञमें प्रतिष्ठित है ।

"इस प्रकारसे प्रवर्तित चक्रका जो अनुवर्तन नहीं करता, वह पापायु तथा इन्द्रियाराम है । हे पार्थ ! वह व्यर्थ ही जीवन धारण करता है ।"

पहले बीज है या फल ? इस प्रश्नका उत्तर भगवान् ही जानें । बीजसे वृक्ष, वृक्षसे फल, फलसे बीज; बीजसे फिर वृक्ष, फल और बीज । इसी प्रकारसे चिरंतन संसारचक्र और जगच्चक्र चलता है ।

ॐकाररूपी परब्रह्मसे निःश्वसित वेद है । वेदसे कर्मकाण्ड प्रवर्तित होता है । उस कर्मकाण्डसे वर्णाश्रमोंके आचार और यज्ञका प्रवर्त्तन होता है । यज्ञ करनेसे देवतागण संतुष्ट होते हैं, और संतुष्ट होकर मेघोंसे वृष्टिपात* करते हैं । वृष्टिसे शस्य-फल प्रभृति अर्थात् मनुष्य और जीवमात्रका भोजन उत्पन्न होता है । उसी अन्नसे समस्त जीवोंकी सृष्टि और पोषण होता है । मनुष्य पुनः वेद और वैदिक शास्त्रोंसे (ब्राह्मणोंकी सहायतासे) कर्म क्या है, यह जानकर वर्णाश्रम-के आचार-व्यवहारका पालन करता है और यज्ञ करता है । यज्ञसे देवता संतुष्ट होते हैं, और देवोंके संतुष्ट होनेसे वृष्टि होती है; फिर अन्न होता है । यही जगच्चक्र है । मनु महाराज कहते हैं—

---

* यह शङ्का उठ सकती है कि जिन देशोंमें यज्ञ नहीं होते, वहाँ भी तो वृष्टि होती है । इसका उत्तर यह है कि वहाँ वृष्टि होनेका कारण यह है कि प्रकृतिका महायज्ञ चलता ही रहता है इसके अतिरिक्त पूर्वकालमें जो यज्ञ हुए हैं, उन्हींके फलस्वरूप आज भी वृष्टि होती है ।

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते ।
आदित्याज्जायते वृष्टिः वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः ॥
(मनु० ३ । ११८)

ऊर्ध्ववर्षी मानव अधोवर्षी देवताओंको तृप्त करते हैं ।* जो लोग यज्ञके द्वारा ऊर्ध्वलोकमें देवताओंके लिये भोग्य द्रव्योंका सम्पादन करते हैं, देवगण उनके यज्ञसे तुष्ट और पुष्ट होकर मनुष्यके लिये जो इष्ट है, काम्य है तथा अन्न है, उसे प्रदान करते हैं । अन्नसे सब जीवोंकी उत्पत्ति और परिपोषण होता है ।

जगत्में मनुष्यलोक ही कर्मभूमि है—

कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ (गीता १५ । २)

मनुष्य-जीवनको छोड़कर और किसी जन्ममें जीव कर्म नहीं कर सकता । दूसरे सारे जन्मोंमें उसे अपने कृतकर्मोंके फलस्वरूप दुःख या सुख भोगना पड़ता है ।

मृत्युलोकमें मनुष्यके अतिरिक्त दूसरे जीवोंको कोई स्वाधीनता नहीं होती । वे सभी संसारचक्रके अनुसार चलकर प्रारब्ध-भोग करते हैं । दूसरे प्राणियोंके आहार, निद्रा, भय आदि प्रकृतिके द्वारा ही संचालित होते हैं । इनका कभी व्यभिचार (अपवाद) नहीं होता । कभी-कभी मनुष्यके संस्पर्श तथा शिक्षाके कारण निश्चय ही उनमें कुछ व्यतिक्रम या व्यभिचार (अपवाद) देखनेमें आता है ।

परन्तु इस कर्मभूमिमें मनुष्यको ही इच्छानुसार चलनेकी स्वाधीनता भगवान्ने दी है । भारी कर्तव्यका भार भी मनुष्यके ऊपर है, अतएव उसके लिये विशेष सुयोग और सुविधा भी है ।

गीतामें भगवान्ने सुस्पष्ट आदेश दिया है कि मनुष्यको जगच्चक्रका अनुसरण करना ही होगा । केवल अपने सुख-स्वाच्छन्द्यके लिये ही नहीं, बल्कि ब्रह्मासे लेकर स्तम्बपर्यन्त सब जीवोंकी—स्थावर, जङ्गम, तिर्यक्, भूत, प्रेत, पिशाच, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, किंनर, पितृलोक और देवलोकके सब भूतोंकी रक्षा, तृप्ति और वृद्धिके लिये धर्माराम होकर जगच्चक्रका अनुसरण करना मनुष्यका आवश्यक कर्तव्य है ।

जो लोग वेद और वैदिक शास्त्रोक्त कर्मोंको करते हुए वर्णाश्रम-धर्मके अनुसार चलकर इस स्वाधीनता और सुयोगका सुव्यवहार—सदुपयोग करते हैं, उनके शरीर, मन और वाणी क्रमशः छन्द (ताल) के समान स्पन्दित होते हैं । क्रमशः वे लोग मुक्ति प्राप्त करते हैं । यज्ञ जगच्चक्रमें रहते हुए मुक्तिका मार्ग तो है ही, जगच्चक्रसे मुक्तिका भी मार्ग है ।

परन्तु मनुष्योंमें जो लोग यज्ञ करना नहीं जानते, अथवा जानकर भी करते नहीं, उन्हें दुःख भोगना पड़ता है । जो मनुष्य इस स्वाधीनताका दुरुपयोग करते हैं, वे व्यभिचारी हैं । वे विकृतच्छन्द (बेताल) में चलकर पाप बढ़ाते हैं । वे जगत्के छन्द (ताल) के अनुसार नहीं चलते, अतएव उन्हें बारंबार जन्म-जरा-मृत्युका भोग करना पड़ता है ।

जो मनुष्य देवऋण-पितृऋण प्रभृतिका परिशोध नहीं करते, पञ्चमहायज्ञ आदि नहीं करते, जो विषयासक्त होकर समस्त प्राप्त भोग्य पदार्थोंका केवल अपने ही भोग करते हैं, वे इन्द्रियाराम हैं, उनका जीवन व्यर्थ है । उनका जीवित रहना मच्छर-मक्खी आदिकी भाँति विडम्बनामात्र है । जो इस जगच्चक्रका अनुसरण नहीं करते, जो इसके चलानेमें सहायक* नहीं होते, उनका जीवन पापमय है ।

भगवान्ने गीतामें अन्यत्र कहा है—

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ॥
(४ । ३०)

अमृतं यज्ञशेषं स्यात् ।
(महा० शान्ति० २४२ । १२)

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥
(गीता ४ । २३)

'यज्ञसे अवशिष्ट विहित अमृतभोजन करके यज्ञोंके ज्ञाता ज्ञानके द्वारा नित्य ब्रह्मको प्राप्त होते हैं । यज्ञावशेष ही अमृत है ।

'जो लोग आसक्तिसे रहित हैं, राग-द्वेषसे मुक्त हैं, जिनका चित्त आत्मज्ञानमें अवस्थित है तथा जो यज्ञके लिये कर्मोंका आचरण करते हैं, ऐसे पुरुषोंके समस्त कर्म (कर्मोंके संस्कार-पर्यन्त) लोप हो जाते हैं ।'

---

* अधो हि वर्षमस्माकं नरा ऊर्ध्वं प्रवर्षिणः ।
(महा० शान्ति० ५९ । २३)

* यो वै न देवान्न पितॄन्न मर्त्यान् हविषार्चति ।
अनर्थकं धनं तत्र प्राहुर्धर्मविदो जनाः ॥
(महा० शान्ति० १३६ । ५)

विष्णुपुराणमें भी इस जगच्चक्र और स्वधर्माचरणके द्वारा मुक्ति होनेकी बात कही गयी है—

यज्ञनिष्पत्तये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार वै ।
चातुर्वर्ण्यं महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम् ॥
यज्ञैराप्यायिता देवा वृष्ट्युत्सर्गेण वै प्रजाः ।
आप्याययन्ते धर्मज्ञ यज्ञाः कल्याणहेतवः ॥
निष्पाद्यन्ते नरैस्तैस्तु स्वधर्माभिरतैः सदा ।
विशुद्धाचरणोपेतैः सद्भिः सन्मार्गगामिभिः ॥
स्वर्गापवर्गौ मानुष्यात् प्राप्नुवन्ति नरा मुने ।
यच्चाभिरुचितं स्थानं तद् यान्ति मनुजा द्विज ॥

(१ । ६ । ७–१०)

'हे महाभाग ! यज्ञकी निष्पत्तिके लिये ही ब्रह्माने इस उत्तम यज्ञ-साधन चातुर्वर्ण्यकी सृष्टि की है । हे धर्मज्ञ ! देवता यज्ञके द्वारा तृप्त होते हैं और सारी प्रजा वृष्टिके दानसे तृप्त होती है । यज्ञोंके समूह कल्याणके लिये हैं । स्वधर्ममें रत रहनेवाले विशुद्ध आचरणसे युक्त सन्मार्गपर चलनेवाले संतजनोंके द्वारा यज्ञ निष्पन्न होता है । हे मुने ! यज्ञसे मनुष्य स्वर्ग और अपवर्गको प्राप्त होते हैं । हे द्विज ! मनुष्य यज्ञके कारण अपनी कामनाके अनुसार लोकोंको गमन करते हैं ।'

मनुष्य-जीवनका चरम उद्देश्य जन्म-मृत्युरूप संसार-चक्रसे मुक्ति प्राप्त करना है । मुक्तिका उपाय क्या है ?

'यावत् साधनसमाप्तिं शरीरधारणं चावश्यं कार्यम् । न्यायोपार्जितधनेन महायज्ञादिकं कृत्वा तच्छिष्टाशनेनैव शरीर-धारणं कार्यम् ।' 'आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः, सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः ।'— (छान्दोग्य०)

'जबतक साधनाकी समाप्तिके साथ आत्मज्ञानकी प्राप्ति और मुक्ति नहीं होती है, तबतक साधना करनी होगी तथा इसी साधनाके लिये शरीरधारण भी करना होगा । स्वधर्म अर्थात् अपने-अपने वर्णाश्रमोचित आचारके द्वारा प्राप्त किया हुआ धन ही न्यायोपार्जित धन है । उसी न्यायसे प्राप्त धनके द्वारा महायज्ञादि करके यज्ञशेष भोजन (वा भोग) करके शरीर-यात्राका निर्वाह करना होगा । इससे चित्तशुद्धि होगी और निष्कामभावसे कर्म करते रहनेसे पाप-पुण्य कुछ भी न होगा । सत्त्वशुद्धि होनेसे ध्रुवा स्मृति होगी, परमेश्वरको छोड़कर एक क्षणके लिये भी विषयोंमें अनुराग नहीं होगा ।'

स्वधर्ममें रहकर जो कुछ किया जाता है, वही विष्णुकी आराधनाके लिये होता है, और उससे बन्धन नहीं होता । श्रीभगवान्‌ने यज्ञकी प्रशंसामें कहा है—

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥

(गीता ३ । ९)

'यज्ञो वै विष्णुः' इति श्रुतेः । 'न्यायोपार्जितद्रव्यसिद्धेन विष्णुमाराध्य तच्छेषेण देहयात्रां कुर्वन् न बध्यस इत्यर्थः ।

श्रीभगवान्‌ने भागवतमें उद्धवसे कहा है—

स्वधर्मस्थो यजन् यज्ञैरनाशीःकाम उद्धव ।
न याति स्वर्गनरकौ यद्यन्यन्न समाचरेत् ॥

(११ । २० । १०)

एवं मुक्तसङ्गेन यज्ञार्थतया कर्मणि क्रियमाणे यज्ञादिभिः कर्मभिराराधितः परमपुरुषोऽस्यानादिकालप्रवृत्त-कर्मवासनामुच्छिद्याव्याकुलात्मावलोकनं ददातीत्यर्थः ।

अतएव मुक्ति पानेके लिये जगच्चक्रके अनुसरणमें स्वधर्ममें स्थित रहकर निष्कामभावसे श्रीविष्णुके प्रीत्यर्थ यज्ञादि शास्त्रोक्त कर्मोंके द्वारा परमात्माकी आराधना करनी होगी । वे इस अनादि कर्मवासनाको नष्ट करके पूर्ण आत्म-ज्ञान प्रदान करेंगे ।

फलतः यज्ञाचरण मनुष्यको इहलोकमें अभ्युदय और परलोकमें निःश्रेयस-प्राप्ति—दोनोंके लिये अत्यन्त आवश्यक है । इसके अतिरिक्त यह जगच्चक्रमें सहायक तथा ब्रह्मासे लेकर स्तम्बपर्यन्त जगत्‌के सब जीवोंको पोषण और तृप्ति प्रदान करनेवाला है ।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥
एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥

(गीता १८ । ५-६)

भगवान्‌ने यह स्पष्ट कह दिया है कि यज्ञ अवश्यकर्तव्य हैं, इनका कभी भी त्याग करना उचित नहीं । दान और तपस्याको भी साधारणतः यज्ञके ही अन्तर्गत लिया जा सकता है ।

गो-ब्राह्मणके हितमें जगत्-हित कैसे ?

प्रणाममन्त्रमें कहा गया है कि श्रीकृष्ण ब्रह्मण्यदेव और गोविन्द हैं । फिर वे गो-ब्राह्मणके लिये कल्याण करनेवाले और जगत्‌के लिये मङ्गलमय हैं । गो-ब्राह्मणके मङ्गलमें ही संसारका मङ्गल क्यों है तथा यही भगवत्स्वरूप क्यों है, इसका उत्तर

यही है कि गो-ब्राह्मणकी सहायताके बिना यज्ञकार्य नहीं होता तथा फलतः जगच्चक्र नहीं चल सकता।

यज्ञ कई प्रकारके होते हैं—'एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे।' परन्तु जिस यज्ञमें देवताओंके उद्देश्यसे अग्निके मुखमें होम किया जाता है, वही साधारण और प्रधान यज्ञ है। होम गोघृतके बिना नहीं होता, गौके सिवा अन्य किसी जीवके दूधसे तैयार किये हुए हविसे यज्ञ नहीं किया जाता, करनेपर वह देवताओंको ग्राह्य नहीं होता।

अतएव गोघृत यज्ञके लिये अनिवार्य सामग्री है, तथा गौएँ जगच्चक्रका एक मूल अङ्गविशेष हैं। गोवंशकी अवनति या लोप होनेसे जगत्का ध्वंस अनिवार्य है।*

अङ्गान्येतानि यज्ञस्य यज्ञो मूलमिति श्रुतिः।
आज्येन पयसा दध्ना शकृताऽऽमिक्षया त्वचा।
वालैः श्रृङ्गेण पादेन सम्भवत्येकगौर्मखम्॥
(महा० शान्ति० २६७। २७-२८)

यज्ञ लोकप्रतिष्ठाके मूल कारण हैं, ऐसा वेद कहते हैं। जो श्रद्धावान् और समर्थ हैं वे घृत, दुग्ध और दधिके द्वारा यज्ञका अनुष्ठान करते हैं। और जो असमर्थ हैं वे गोमय, दही, चर्म एवं गोपुच्छ तथा गोश्रृङ्गके द्वारा प्रक्षालित जल तथा गोपादके रजके द्वारा यज्ञका निर्वाह करते हैं। इस प्रकार एकमात्र धेनु ही समर्थ और असमर्थ दोनोंके ही यज्ञानुष्ठानमें सम्यक् सहायता प्रदान करती है।

अन्नं हि परमं गावो देवानां परमं हविः।
स्वाहाकारवषट्कारौ गोषु नित्यं प्रतिष्ठितौ॥
.... ।
गावो भविष्यं भूतं च गोषु यज्ञाः प्रतिष्ठिताः॥
सायं प्रातश्च सततं होमकाले महाद्युते।
गावो ददति वै हौम्यमृषिभ्यः पुरुषर्षभ॥
(महा० अनु० ७८। ७-८-९)

'गौएँ परम अन्न हैं, देवताओंकी परम हवि हैं। स्वाहाकार और वषट्कार नित्य गौओंमें ही प्रतिष्ठित रहते हैं। गौएँ भूत और भविष्य हैं। सारे यज्ञ गौओंमें ही प्रतिष्ठित हैं। हे महाद्युते पुरुषर्षभ! गौएँ सर्वदा प्रभात और सायंकालमें होमके समय ऋषियोंको हौम्य (हविः प्रभृति) दान करती हैं।'

मातृस्तनपानके द्वारा तो मानवशिशुका पोषण केवल एक-ही-दो-वर्ष होता है। परन्तु गोदुग्धका व्यवहार और इसकी उपकारिता जीवनपर्यन्त है। गोदुग्ध और गोघृत विशुद्ध सात्त्विक आहार हैं। और ये भोगी, योगी और रोगी—सबके लिये समानरूपसे उपकारी हैं।

इसके सिवा गोजाति अनेकों देशोंमें, विशेषतः भारतमें चिरंतनकालसे कृषिकार्यमें मनुष्यकी सहायता करके अन्न-उत्पादनमें योग दे रही है। गोमय श्रेष्ठ खाद है और राँधनेके कामके लिये सुलभ ईंधन है।

अतएव क्या देवताकी प्रसन्नता, और क्या मनुष्यके जीवन-धारण और अन्नसंस्थान—सर्वत्र गोजातिसे ही जगच्चक्रका परिचालन होता है। हविके द्वारा यज्ञ और देवताकी तुष्टि और वृष्टि होती है। वृष्टिके पड़ते ही खेतमें गौकी सहायतासे कर्षण और अन्नोत्पादन होता है। गोमाताके दुग्धसे शिशु, युवा और वृद्धका पोषण तथा जीवनधारण होता है। क्या देव, क्या मनुष्य—सारा जगत् गौके द्वारा ही पुष्ट होता है।

इसीलिये गौके हितमें जगत्का हित है। और इसीलिये गोजातिका मङ्गल उस मङ्गलमयका ही एक रूप है।

यज्ञाङ्गं कथिता गावो यज्ञ एव च वासव।
एताभिश्च विना यज्ञो न वर्तेत कथञ्चन॥
धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥
पयो दधि घृतं चैव पुण्याश्चैताः सुराधिप।
वहन्ति विविधान् भारान् क्षुत्तृषापरिपीडिताः॥
(महा० अनु० ८३। १७—२०)

'हे इन्द्र! गौएँ यज्ञ और यज्ञाङ्गके नामसे कही गयी हैं। गौके बिना किसी प्रकार भी यज्ञ नहीं हो सकता। गौएँ दुग्ध और घृतके द्वारा प्रजाओंका धारण करती हैं। इनके पुत्र कृषियोगकी उपासना करते हैं। तथा धान्य और नाना प्रकारके बीजोंको उपजाते हैं। उससे सारे यज्ञ तथा सब प्रकारके हव्य-कव्य होते हैं। दूध, दही और घी भी होता है। हे सुरनाथ! गौएँ पुण्यशरीर हैं। ये क्षुधा-तृषासे अत्यन्त पीड़ित होते हुए भी नाना प्रकारके भारको वहन करती हैं।'

मातरः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः।
मङ्गलायतनं देव्यस्तस्मात् पूज्याः सदैव हि॥
(महा० अनु० ७९। ७-८)

* हविषां परिणामोऽयं यदेतदखिलं जगत्।
(विष्णुपुराण १। १३। २५)
यह अखिल जगत् हविका ही परिणाम है।

गौएँ सब भूतोंके लिये मातृस्वरूपा हैं। ये देवियाँ सब सुखोंको प्रदान करनेवाली तथा मङ्गलायतन हैं, अतएव सर्वदा ही पूज्या हैं।

दूसरी ओर, ब्राह्मण धर्मकोषका रक्षक है। वह मन्त्रद्रष्टा और वेदज्ञ है। ब्राह्मण वेदसे धर्म सीखकर उसकी रक्षा, पोषण और प्रसार करता है। ब्राह्मणके बिना यजन-याजन-कर्म नहीं होते। देव और मानवके संयोग-सेतुमें यही पुरोहित है। कर्मकाण्ड और वेदमूलक धर्मका यही ज्ञाता है; व्याख्याता, कर्ता और रक्षक है। एक शब्दमें ब्राह्मण जगच्चक्रका अत्यन्त प्रधान अङ्ग है।

ब्राह्मणप्रभवो यज्ञो ब्राह्मणार्पण एव च।
अनुयज्ञं जगत्सर्वं यज्ञश्चानु जगत्सदा॥
(महा० शान्ति० २६७। ३४)

ब्राह्मण और वेद यज्ञके आदिकारण हैं। यज्ञिय द्रव्य-समूह ब्राह्मणको अर्पण करने योग्य हैं। जगत्से यज्ञ और यज्ञसे जगत्की रक्षा होती है। ब्राह्मण मनुष्यको वर्णाश्रमधर्मके मार्गपर शास्त्रके अनुसार चलाते हैं, तथा अपनी तपस्या और धर्मके द्वारा जगत्का कल्याण-साधन करते हैं। वे स्वयं मोक्ष-पथके पथिक हैं, और उनकी सहायतासे मानव-जाति इहलोकमें अभ्युदय और परलोकमें निःश्रेयस प्राप्त करती है।

फलतः गो-ब्राह्मण यज्ञ और जगच्चक्रके मूलस्वरूप हैं। दोनों ही जगत्के, सब भूतोंके मङ्गलकारक हैं। एक ही वस्तुके दो रूप हैं।

स्मृति कहती है—

ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधाकृतम्।
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति॥

ब्राह्मण और गौएँ एक ही वंशके दो भाग हैं। अन्तर इतना ही है कि एकमें मन्त्रसमूह है और दूसरेमें हवि।

महाभारतके अनुशासनपर्वमें महर्षि च्यवन और नहुषके उपाख्यानमें गोमाहात्म्य सुन्दररूपमें वर्णित हुआ है। समुद्रके साथ सारी पृथ्वी या साम्राज्य महर्षिका मूल्य नहीं बन सका, किन्तु एकमात्र गाय उनको क्रय करनेके लिये मूल्यरूप बन गयी।

अनर्घेया महाराज द्विजा वर्णेषु चोत्तमाः।
गावश्च पुरुषव्याघ्र गोर्मूल्यं परिकल्प्यताम्॥
(महा० अनु० ५१। २२)

गो-ब्राह्मण एक ही परमपदको प्राप्त होते हैं, अतएव गो-ब्राह्मण एक ही हैं।

ब्राह्मणैः सहिता यान्ति यस्मात् पारमकं पदम्।
एकं गोब्राह्मणं तस्मात् प्रवदन्ति मनीषिणः॥
(मनु० ६६। ४१)

अन्यत्र भी गोब्राह्मणमें समान मान्यताका उल्लेख हुआ है—

त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट आलभेत कदाचन।
अग्निं गां ब्राह्मणं चैव तथा ह्यायुर्न विद्यते॥
(महा० अनु० १०४। ६२-६३)

मनु कहते हैं—

न स्पृशेत् पाणिनोच्छिष्टो विप्रो गोब्राह्मणानलान्।
(४। १४२)

पुनश्च—

पन्था देयो ब्राह्मणाय गोभ्यो राजभ्य एव च॥
(महा० अनु० १०४। २५)

गोकुलस्य तृषार्त्तस्य जलार्थे वसुधाधिप।
उत्पादयति यो विघ्नं तं विद्याद्ब्रह्मघातिनम्॥
(महा० अनु० २४। ७)

प्यासी हुई गौओंके मार्गमें जो विघ्न डालता है, वह ब्रह्महत्यारा है। गौ, ब्राह्मण जगत्के मङ्गलकी चेष्टा करते हैं; इसलिये जगत्को भी चाहिये कि उनकी मन, वाणीसे कभी हिंसा न करे।

न जातु ब्राह्मणो वाच्यो यदवाच्यं शचीपते।
मनसा गोषु न द्रुह्येद् गोवृत्तिर्गोऽनुकम्पकः॥
(महा० अनु० ७३। २२)

ब्राह्मण स्वयं अपनी रक्षा कर सकता है, परन्तु गौओंके लिये यह सम्भव नहीं है। गोरक्षाका इहलौकिक फल सुस्पष्ट है और पारलौकिक फल भी है।

ब्राह्मण और गौ इस जगच्चक्रके संचालनमें आधा-आधा अंश ग्रहण करते हैं। जीवोंके संस्कार, वेद और शास्त्रपाठ, कर्म एवं यज्ञपर्यन्त ब्राह्मणकी सहायताकी आवश्यकता होती है। फिर यज्ञ, वृष्टि, अन्न, जीव—इस भागमें गौकी सहायताके बिना आहुति, कर्षण, अन्न-उत्पादन और पोषण नहीं होता। वेदज्ञ ब्राह्मण होमधेनुकी हवि यज्ञमें आहुति देकर स्वर्ग, मृत्युलोक—यहाँतक कि समस्त जगत्को यज्ञसूत्रमें बाँधते और जोड़ते हैं।

गो-ब्राह्मणके हितमें इसी कारण जगत्का हित है। यज्ञपुरुष श्रीभगवान् ब्रह्मण्यदेव और गोविन्द हैं। वे ब्राह्मणोंके रक्षक और ब्रह्मतेजके वर्द्धक हैं। वे गोपाल और गौओंके रक्षक हैं। इसी कारण वे गोविन्द कहलाते हैं।

स त्वां कृष्णाभिषेक्ष्यामि गवां वाक्यप्रचोदितः।
उपेन्द्रत्वे गवामिन्द्रो गोविन्दस्त्वं भविष्यसि॥

(विष्णुपुराण ५। १२। १२)

'हे कृष्ण! इस समय मैं गौओंकी प्रेरणासे अपनेको उपेन्द्र-रूपमें परिवर्तित करूँगा। आप गौओंके इन्द्र हैं। अतएव आपका 'गोविन्द' नाम होगा।'

अहं किलेन्द्रो देवानां त्वं गवामिन्द्रतां गतः।
गोविन्द इति लोकास्त्वां स्तोष्यन्ति भुवि शाश्वतम्॥

(हरिवंश-विष्णुपर्व १९। ४५)

'हे कृष्ण! मैं जिस प्रकार देवताओंका इन्द्र हूँ, आप भी उसी प्रकार गौओंके इन्द्रत्वको प्राप्त हुए। जगत्में चिरकालतक लोग आपकी गोविन्द नामसे स्तुति करेंगे।'

तं ब्राह्मणा ब्रह्ममन्त्रैः स्तुवन्ति
तस्मै हविरध्वर्यवः कल्पयन्ति।
स चैव गामुद्धाराग्र्यकर्मा
विक्षोभ्य दैत्यानुरगान् दानवांश्च।
तं घोषार्थे गीर्भिरिन्द्राः स्तुवन्ति
स चापीशो भारतैकः पशूनाम्॥

(महा० अनु० १५८। १६—१८)

'युधिष्ठिर! ब्राह्मण ब्रह्ममन्त्रद्वारा श्रीकृष्णका ही स्तवन करते हैं। यज्ञमें अध्वर्युलोग इन्हींके लिये हविर्भाग-की कल्पना करते हैं। उन्होंने दैत्य, नाग और दानवोंको निर्मूल करके गो (पृथ्वी) का उद्धार किया था। इन्द्रादि देवगण गोवर्धनोद्धरणके समय उनकी स्तुति करते हैं। वे गौ आदि पशुओंके अधिपति हैं।'

आज भारतकी दुर्दशाके दिनोंमें गो-ब्राह्मण दोनों ही अनादृत हैं, उपेक्षित हैं, रुग्ण हैं और शीर्ण हैं। यज्ञकर्म लुप्तप्राय हैं। अन्याय और अधर्मके द्वारा अर्थोपार्जन करनेमें लोगोंको लज्जा भी नहीं आती। और वह अर्थ भी केवल अपने भोग, व्यापार और इन्द्रियचरितार्थतामें ही व्यय होता है।

श्रीभगवान्का प्रणाममन्त्र मङ्गलात्मक है, यह ध्यानमें रखकर सबको अपने कर्तव्यका पालन करना चाहिये। गो-ब्राह्मण*की उन्नतिसे ही भारतकी तथा समस्त जगत्की उन्नति होगी। इसलिये यथासम्भव चेष्टा करनी ही होगी।

गोसाधुदेवताविप्रवेदानां रक्षणाय वै।
तनुं धत्ते हरिः साक्षाद् भगवानात्मलीलया॥

(गर्गसंहिता १। १२)

ब्रह्मण्यदेव श्रीगोविन्दके श्रीचरणोंमें कातर निवेदन है कि वे पुनः लीलावतार धारण करके गौ, ब्राह्मण, साधु और वेदोंका उद्धार करें।

सोनेकी खान

मेरा मानना है कि यदि तुम अपने पशुओंका मूत्र नियमानुसार समय-समयपर सूखी मिट्टी बिछाकर संग्रह करो और उसे खोदकर खेतोंमें डालो तो तुम्हारी खेतीको सहजमें ही बिना किसी खर्चके गोबर-जितना नाइट्रोजन मिल सकेगा; मैंने अपने दौरेमें देखा है कि जितनी जगहमें चारसे छः गाय-बैल बाँधे जाते हैं उतनी जगहमें छःसे आठ इंचतक गहरी जमीन, मूत्रके थरसे और अमोनियाँके क्षारसे इतनी अधिक भरी होती है कि यदि उसे खोदकर उसका खेतोंमें खादके रूपमें उपयोग किया जाय तो समझो कि सोनेकी खान ही हाथ लग गयी, इतना अधिक अन्न उपजेगा। एक बार अंदाज करते समय मैंने हिसाब लगाया था कि पशु बाँधनेकी जगहमें पशुके पैरोंके नीचेकी मिट्टीमें उसके मालिकको बीससे पचीस मन अमोनियम सल्फेट मिल सके, इतनी खाद बिना बर्ती हुई मिल जाती है। इस मूत्र-मिट्टीका पद्धतिके अनुसार उपयोग करना—यही सच्ची सोनेकी खान है।

—आर० जी० ऐलेन महोदय

* कुछ लोग पाश्चात्त्य देशोंसे गौ लाकर गोवंशकी उन्नतिके स्थानमें वर्णसंकर गो-जाति उत्पन्न करते हैं। पाश्चात्त्य गो-जातिके पशु वस्तुतः 'गो' नहीं हैं, 'गवय' विशेष हैं। दोनोंके दाँतोंके उगने तथा स्वभाव आदिमें बहुत अन्तर होता है।

'भारतके दूध देनेवाले पशुओंका बड़े वेगसे ह्रास हो रहा है ।' इन पशुओंमें भी सबसे अधिक उपेक्षित और सबसे अधिक ह्रासग्रस्त गौ है ।

यह बात पूर्वके अनेक ऐतिहासिक वर्णनोंको देखनेसे स्पष्ट ही सामने आ जाती है । यहाँ कुछ थोड़े-से ही अवतरण देते हैं । आईने-अकबरीमें लिखा है कि 'गाय एक दिनमें २० क्वार्ट (१ क्वार्ट=२ पौंड) दूध देती थी और ठाठ गौएँ घोड़ोंसे भी तेज जाती थीं ।' पिछले ६० वर्षोंमें पशुधनका इतना ह्रास हो गया कि दुग्धान्नों और पशुओंका दाम बहुत ही अधिक चढ़ गया है । कलकत्तेकी अखिल भारतीय गो-सभाके द्वारा वायसरायके पास जो प्रार्थना-पत्र भेजा गया था, उसमें कहा गया है कि 'पिछले ६० वर्षोंमें अन्नोंका भाव पाँचसे सातगुना तक चढ़ा है और दूधका चालीसगुना हो चुका है ।' बम्बईकी गो-नस्ल-सुधार-समितिके अनुसार, भारतमें आज अन्य देशोंकी अपेक्षा दूध २ से ६ गुनातक अधिक महँगा है, और फिर भी भारतवर्षको कृषिप्रधान देश कहा जाता है । एक कृषिप्रधान देशके लिये, जिसके पास संसारके पशु-धनका एक तिहाई भाग हो, यह बड़ी लज्जाकी बात है कि दुग्ध और दुग्धान्नोंको वह बाहरसे मँगावे और बाहरसे आये हुए सुखाये दूधपर निर्भर रहे !

दूधके मूल्यकी तरह पशुओंका मूल्य भी लगातार चढ़ता ही गया है । आईने-अकबरीके अनुसार अकबरके समयमें एक दिनमें २० क्वार्ट दूध देनेवाली गाय १०) की बिका करती थी । केवल २५ वर्ष पहले ऐसी गायोंका मूल्य १५०) था; पर अब उनका ५००) में भी मिलना कठिन है । शिवदत्तजीके कथनानुसार सालमे औसत २८०० पौंड दूध देनेवाली अच्छी मंटगुमरी गौ सन् १९०३ में ७०) में ली जा सकती थी, पर अब वह ५००) में भी नहीं मिल सकती । निम्नलिखित तालिकामें दूध देनेवाले पशुओंके मूल्यकी उत्तरोत्तर वृद्धिकी झाँकी मिल सकती है—

पिछले ४० वर्षोंमें दूध देनेवाले पशुओंके मूल्यमें उत्तरोत्तर वृद्धि (शिवदत्तजीके लेखानुसार)

संख्या	वर्ष	२८०० पौंड दूध देनेवाली मंटगुमरी नस्लकी गौका मूल्य	३५०० पौंड दूध देनेवाली मुरा नस्लकी भैंसका मूल्य	विशेष सूचना
१	१९०३	७०)	८०)	
२	१९०५	८५)	...	
३	१९०८	१००)	११०)	
४	१९०९	९८)	१००)	अकालका साल
५	१९१४	१२०)	१४०)	पहले महायुद्धका काल
६	१९१९	२००)	२५०)	
७	१९२१	२२०)	३२५)	
८	१९४५	५००)	७००)	व्यक्तिगत रूपसे प्राप्त सूचना

उक्त तालिकासे यह स्पष्ट होता है कि १९०३ से १९२१ तक १८ वर्षके भीतर गायोंका दाम तिगुना और भैंसोंका चौगुना बढ़ गया; और उसके बादके २४ वर्षोंमें क्रमशः सतगुना और दसगुना हो गया । मूल्य-वृद्धिका यही रुख सारे भारतवर्षमें सभी जातियों और नस्लोंके पशुओंके सम्बन्धमें देखा जाता है । पिछले २-३ वर्षोंमें कामलायक बैलोंके दाममें और भी अधिक वृद्धि हो गयी है । इससे अन्नोत्पादनका खर्च बहुत बढ़ गया है और इसीसे 'अधिक अन्न उपजाओ' का आन्दोलन जहाँ-का-तहाँ रुका रह गया । उपेक्षाके कारण भारतवर्षमें गौकी उत्पादिका-शक्ति किस बुरी तरहसे घटी है, इसका लेखा निम्नलिखित दूसरी तालिकामें देखिये—

'भारतके दूध देनेवाले पशुओंका बड़े वेगसे ह्रास हो रहा है।' इन पशुओंमें भी सबसे अधिक उपेक्षित और सबसे अधिक ह्रासग्रस्त गौ है।

यह बात पूर्वके अनेक ऐतिहासिक वर्णनोंको देखनेसे स्पष्ट ही सामने आ जाती है। यहाँ कुछ थोड़े-से ही अवतरण देते हैं। आईने-अकबरीमें लिखा है कि 'गाय एक दिनमें २० क्वार्ट (१ क्वार्ट=२ पौंड) दूध देती थी और ठाठ गौएँ घोड़ोंसे भी तेज जाती थीं।' पिछले ६० वर्षोंमें पशुधनका इतना ह्रास हो गया कि दुग्धान्नों और पशुओंका दाम बहुत ही अधिक चढ़ गया है। कलकत्तेकी अखिल भारतीय गो-सभाके द्वारा वायसरायके पास जो प्रार्थना-पत्र भेजा गया था, उसमें कहा गया है कि 'पिछले ६० वर्षोंमें अन्नोंका भाव पाँचसे सातगुना तक चढ़ा है और दूधका चालीसगुना हो चुका है।' बम्बईकी गो-नस्ल-सुधार-समितिके अनुसार, भारतमें आज अन्य देशोंकी अपेक्षा दूध २ से ६ गुनातक अधिक महँगा है, और फिर भी भारतवर्षको कृषिप्रधान देश कहा जाता है। एक कृषिप्रधान देशके लिये, जिसके पास संसारके पशु-धनका एक तिहाई भाग हो, यह बड़ी लज्जाकी बात है कि दुग्ध और दुग्धान्नोंको वह बाहरसे मँगावे और बाहरसे आये हुए सुखाये दूधपर निर्भर रहे!

दूधके मूल्यकी तरह पशुओंका मूल्य भी लगातार चढ़ता ही गया है। आईने-अकबरीके अनुसार अकबरके समयमें एक दिनमें २० क्वार्ट दूध देनेवाली गाय १०) की बिका करती थी। केवल २५ वर्ष पहले ऐसी गायोंका मूल्य १५०) था; पर अब उनका ५००) में भी मिलना कठिन है। शिवदत्तजीके कथनानुसार सालमें औसत २८०० पौंड दूध देनेवाली अच्छी मंटगुमरी गौ सन् १९०३ में ७०) में ली जा सकती थी, पर अब वह ५००) में भी नहीं मिल सकती। निम्नलिखित तालिकामें दूध देनेवाले पशुओंके मूल्यकी उत्तरोत्तर वृद्धिकी झाँकी मिल सकती है—

पिछले ४० वर्षोंमें दूध देनेवाले पशुओंके मूल्यमें उत्तरोत्तर वृद्धि (शिवदत्तजीके लेखानुसार)

संख्या	वर्ष	२८०० पौंड दूध देनेवाली मंटगुमरी नस्लकी गौका मूल्य	३५०० पौंड दूध देनेवाली मुरा नस्लकी भैंसका मूल्य	विशेष सूचना
१	१९०३	७०)	८०)	
२	१९०५	८५)	...	
३	१९०८	१००)	११०)	
४	१९०९	९८)	१००)	अकालका साल
५	१९१४	१२०)	१४०)	} पहले महायुद्धका काल
६	१९१९	२००)	२५०)	
७	१९२१	२२०)	३२५)	
८	१९४५	५००)	७००)	व्यक्तिगत रूपसे प्राप्त सूचना

उक्त तालिकासे यह स्पष्ट होता है कि १९०३ से १९२१ तक १८ वर्षके भीतर गायोंका दाम तिगुना और भैंसोंका चौगुना बढ़ गया; और उसके बादके २४ वर्षोंमें क्रमशः सतगुना और दसगुना हो गया। मूल्य-वृद्धिका यही रुख सारे भारतवर्षमें सभी जातियों और नस्लोंके पशुओंके सम्बन्धमें देखा जाता है। पिछले २-३ वर्षोंमें कामलायक बैलोंके दाममें और भी अधिक वृद्धि हो गयी है। इससे अन्नोत्पादनका खर्च बहुत बढ़ गया है और इसीसे 'अधिक अन्न उपजाओ' का आन्दोलन जहाँ-का-तहाँ रुका रह गया। उपेक्षाके कारण भारतवर्षमें गौकी उत्पादिका-शक्ति किस बुरी तरहसे घटी है, इसका लेखा निम्नलिखित दूसरी तालिकामें देखिये—

भारतवर्षमें भिन्न-भिन्न फसलों और गौओंका औसत उत्पादन तथा उनकी अन्य देशोंसे तुलना

संख्या	देशका नाम	प्रति एकड़ उत्पादन, पौंडमें			प्रति गौ औसत दुग्धोत्पादन, पौंडमें
		गेहूँ	चावल	कपास	
१	अर्जेंटाइना	७८०	...	१५१	९७१
२	सूडान	...	...	२७७	...
३	ब्रेजील	...	...	१५४	...
४	कनाडा	९७२	...	...	३१९५
५	चीन	...	१४००	...	...
६	डेन्मार्क	...	...	...	७००५
७	ईजिप्ट (मिश्र)	...	२२००	५३१	२६६३
८	जर्मनी	२२००	...	...	५३०५
९	जापान	...	२३००	...	५८५७
१०	इटली	१३५०	३०००	...	३४६९
११	पेरू	...	...	५०८	...
१२	सोवियट-यूनियन	६३६	...	३२२	२३३४
१३	अमेरिकाका संयुक्तराष्ट्र	८४६	१४५०	२६४	४१२६
१४	यूरोप	११४६	...	...	४४६०
१५	एशिया (भारतके अतिरिक्त)	...	...	...	२३८४
१६	अमेरिका	...	...	...	३४३२
१७	आस्ट्रेलिया	...	...	...	३४६३
१८	न्यू जीलैंड	...	...	...	५११८
कुल		७९३०	१०३५०	२२०७	५३७८२
औसत		११३३	२०७०	३१५	३८४१
भारतवर्ष		६३६	७२८	८९	५२५
अन्तर		—४९७	—१३४२	—२२६	—३३१६
दूसरे देशोंके औसतके अनुपातमें भारतवर्षका प्रतिशत औसत		५६%	३५%	२८%	१४%

इस तालिकासे यह स्पष्ट हो जाता है कि दूसरे देशोंके मिलानमें भारतवर्षमें फसलका औसत उत्पादन जहाँ ४०% है, वहाँ गायोंके दूधका औसत कुल १४% है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि भारतवर्षकी गायें संसारकी गायोंमें दूध देनेके हिसाबसे सबसे गयी-बीती हैं और हम उसकी उतनी भी देख-भाल नहीं करते, जितनी फसलोंकी करते हैं। परन्तु यह तो हमारी अदूरदर्शिता है और यह है सर्वथा आत्मघातिनी नीति।

इसका अवश्यम्भावी परिणाम यह होगा कि कुछ ही दिनोंमें

हमारी कृषिका सारा आर्थिक ढाँचा नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा; क्योंकि भारतवर्षका समस्त आर्थिक ढाँचा गौपर अवलम्बित है। एकमात्र गौ ही हमारे इस कृषिप्रधान देशकी सारी आवश्यकताओंको पूरा कर सकती है और उसके सिवा हमारे जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्तिका अन्य कोई साधन है भी नहीं। उदाहरणार्थ, १. उससे हमें हल चलानेको बैल मिलते हैं, २. दूध, दही, मक्खन आदिसे हमें नकद पैसे मिलते हैं और ३. उसके गोबर और मूत्रसे खादकी सर्वोत्तम सामग्री प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त गौके जीते-जी तथा मरनेके बाद भी उससे हमें अनेकानेक उपयोगी पदार्थ प्राप्त होते हैं; परन्तु हम उनका विस्तारसे यहाँ विवरण नहीं देंगे, क्योंकि इस लेखका विषय मुख्यतः कृषिसे संबद्ध है।

डेन्मार्कमें एक गौ ७००० पौंड दूध देती है, हिंदुस्थानकी गौ लगभग ५०० पौंड देती है; अर्थात् डेन्मार्ककी गौकी उत्पादनशक्ति १४ गुना अधिक है। परन्तु डेन्मार्क और अन्य देशोंकी गौओंके दूधमें जो वृद्धि हुई है, वह सौ-पचास वर्षोंके ही उद्योगका फल है। आजसे ६० वर्ष पहले जर्मनीमें गौओंकी दुग्धोत्पादन-शक्ति हिंदुस्थानी गौओंकी उत्पादन-शक्तिके बराबर थी। पर इन सौ-पचास वर्षोंके अंदर वहाँकी गौओंका दूध औसत हिसाबसे प्रति गौ ६००० पौंड होने लगा है। केवल दूध देनेके काममें ही हिंदुस्थानकी गौ पीछे हो, यह बात नहीं; बल्कि संतानोत्पादनमें भी वह अन्य देशोंकी गौओंके मुकाबले घटकर है। अन्य प्रगतिशील देशोंमें यह देखा जाता है कि गौके दो ब्यानोंके बीच १२ से १५ महीनोंतकका अन्तर रहता है और जीवनभरमें औसत हिसाबसे प्रत्येक गौ ८-१० बच्चे देती है; पर हिंदुस्थानमें दो ब्यानोंके बीच १८ से ३० महीनोंतक समय बीत जाता है और जीवन-भरमें एक गौ ४ से ८ तक बच्चे देती है।

हिंदुस्थान और अन्य देशोंके बीच गौओंके दुग्धोत्पादन और संतानोत्पादनकी शक्तियोंके सम्बन्धमें यह जो भीषण वैषम्य है, इसका कारण यह नहीं कि हिंदुस्थानकी गौओंकी जातिमें ही कुछ हीनता या न्यूनता है, बल्कि इसका कारण उन सब लोगोंका निर्दयतापूर्ण उपेक्षाभाव है, जिनके ऊपर गौओंके पालनादिके सम्बन्धमें किसी प्रकारका उत्तरदायित्व है। सरकारी फार्मोंमें जो पशु रक्खे जाते और जिनकी नस्ल सुधारनेका प्रयत्न किया जाता है, उनके विवरणसे यह मालूम होता है कि विगत २० वर्षोंमें इनकी दूध देनेकी शक्तिमें प्रतिशत दो सौके हिसाबसे वृद्धि हुई है और यह अनुमान किया जाता है कि भारतीय गौओंकी दुग्धोत्पादन-शक्ति वैज्ञानिक पशुपालन-पद्धतिके द्वारा नीचे दी हुई हदतक बढ़ायी जा सकती है—

१. सानी-पानीमें सुधार करके—	प्रतिशत ३०
२. नस्लमें सुधारके द्वारा—	,, ,, १५
३. सुप्रबन्धके द्वारा—	,, ,, १५
४. रोग-प्रतिबन्धके द्वारा—	,, ,, १५
	प्रतिशत ७५

अतः यह स्पष्ट है कि हिंदुस्थानमें गोवंशका सुधार किया जा सकता है। अबतक उसका जो ह्रास होता रहा है, उसका कारण केवल उपेक्षा है। कृषिके लिये गौ सर्वथा आवश्यक है, और इसलिये यदि गोवंशका सुधार करना है तो विशिष्ट और एकनिष्ठ प्रयत्नोंमें लगना होगा। गौका तथा उसके साथ सभी पालनीय पशुओंका हित अन्य उद्योग-धंधोंके स्वार्थोंपर न्योछावर नहीं किया जा सकता, न उनका गौण अङ्ग बनाया जा सकता है। भारतके पालतू पशुओंकी दशा हमलोगोंकी उपेक्षासे अत्यन्त हीन-दीन हो चुकी है; और यदि यही आत्मघातिनी नीति आगे भी बनी रही तो देशके राष्ट्रीय कल्याण-साधनमें बहुत बड़ा प्रतिबन्ध उपस्थित होगा।

गौके साथ आये दिन तीन प्रकारसे अन्याय होता रहता है—१. उसके वंश-सुधारका कोई पूरा प्रयत्न नहीं होता, २. उसकी बहुत बड़ी संख्यामें बेहिसाब हत्या होती रहती है और ३. उसकी प्रतिद्वन्द्वी भैंसकी उसकी अपेक्षा अधिक अच्छी तरहसे रखवाली की जाती है।

कृषकके लिये भैंस या अन्य किसी भी पशुकी अपेक्षा गौ जो अधिक आवश्यक है, उसमें उसकी वह त्रिविध उपकारिता कारण है जिसका निर्देश इस लेखमें पहले किया जा चुका है।

हिंदुस्थानमें अनाजकी फसलें जो इतनी घटिया होती हैं, इसके अनेक कारण हैं; पर एक कारण गौके दुग्धोत्पादन और संतानोत्पादनकी अल्पता भी है, जो हमलोगोंकी उपेक्षाका फल है। यह अन्य कारणोंसे कम महत्त्वका कारण नहीं है—यह बात भूमि, मनुष्य और पशुके बीच जैसा जीवन-सम्बन्ध है उसे देखनेसे स्पष्ट हो जायगी—१. भारतीय गौकी शारीरिक दुर्बलता और प्रजोत्पादन-सामर्थ्यकी कमी तथा उसकी उपेक्षाके कारण (अ) बछड़े कम पैदा होते हैं, (आ) और उनका आरोग्य तथा शरीरका बनाव

बहुत अच्छा नहीं होता, (इ) इससे बहुत कम बछड़े बड़े होनेतक जीते हैं; परिणाम यह होता है कि (अ) जमीन जोतनेके लिये बैल कम मिलते हैं, (आ) वे अधिक काम नहीं कर सकते, (इ) फलतः जमीन अच्छी तरहसे जोती नहीं जाती और इससे जमीनकी फसल पैदा करनेकी ताकत घट जाती है; २. किसानोंके पास पशुओंकी कमी और उनकी घटिया खूराक होनेसे (अ) खाद पूरी नहीं मिलती, इससे (आ) जमीनका उपजाऊपन घटता है और फसल भी घटिया होती है। ३. गौओं तथा दूध देनेवाले अन्य पशुओंकी एक तो कमी और दूसरे उनकी हालत भी अच्छी न होनेसे (अ) दूध कम होता है और कृषकको वैसा खाद्य नहीं मिलता, जिससे वह अपना आरोग्य और दृढ़ता बनाये रह सके। फलतः मृत्युसंख्याका परिमाण बढ़ता और दीर्घायुता तथा उद्योगसामर्थ्यका ह्रास होता है। इस तरह भूमिको मनुष्यसे जो श्रम और निगाह मिलनी चाहिये; उससे भूमि वञ्चित रह जाती है, पैदावारके घटनेमें एक कारण यह भी होता है। ४. दूध और बछड़ोंकी कमीके कारण किसानके पास कोई ऐसी चीज नहीं रहती, जिसे बेचकर वह कुछ और आमदनी भी कर सके।

केवल फसलसे क्या देहातके और क्या शहरके लोगोंकी सब आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो सकतीं। देहातके लिये कुछ और उद्योग भी होना चाहिये और शहरवालोंको आरोग्यरक्षक बलवर्द्धक खाद्यके बराबर मिलते रहनेकी पूरी व्यवस्था भी होनी चाहिये। पशुपालन और उनकी वंशवृद्धि-जैसा कोई सहकारी धंधा उनके लिये नहीं रहा। यह धंधा अवश्य ही ऐसा है कि फसल उपजानेके नित्यके कामके साथ इसका जीवनगत अतिघनिष्ट सम्बन्ध है। इस धंधेसे बारहों मास किसानकी दैनिक आय बन सकती है। इससे उसकी तथा शहरवालोंकी भी दैनिक आहार-सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूरी हो सकती हैं और फसल उपजानेके काममें आवश्यक साधन-सामग्री भी जुट सकती है। इस धंधेके लिये उसे न तो कोई नया साज-सामान जोड़ना पड़ता है, न पूँजी ही लगानी पड़ती है।

किसानोंको वर्षमें एक या दो बार रुपयेके दर्शन होते हैं, जब अनाजकी फसल कटकर बाजार पहुँचती है। दूध और दूधके पदार्थ ऐसी चीजें हैं, जो बारहों मास होती और बेची जा सकती हैं; इस तरह किसानोंके हाथोंमें रुपया बराबर रह सकता है।

पर यह काम तभी बन सकता है; जब दूध देनेवाले पशुओंका सुधार किया जाय, उन्हें अच्छी तरहसे अच्छा खाना खिलाया जाय और डेयरियोंका अच्छा संघटन हो। आवश्यकता इस बातकी है कि अनाजकी फसल और पशुओंका पालन दोनों ही दृष्टियोंसे खेतीका काम किया जाय और आय-व्ययमें दोनों ही हेतुओंपर समान दृष्टि रहे। अभी बिल्कुल बेहिसाब काम हो रहा है, इस ढंगका अन्त हो जाना चाहिये। विशेष और एकनिष्ठ प्रयत्न करने होंगे और पशु-पालनकी उन्नतिके लिये ऐसे संघटन बनाने होंगे, जो प्रस्तुत विषयकी खोजका काम करते रहें और दक्षताके साथ उन्नति-साधन करें। पशु-पालन-व्यवसाय अन्य किसी व्यवसायके लिये त्यागा न जाय, न किसी व्यवसायके अधीन किया जाय; क्योंकि इस व्यवसायका अपना खास वैज्ञानिक और आर्थिक ध्येय है और इस तरह यह अन्य व्यवसायोंमें केवल सहायक ही नहीं, बल्कि इसका अपना स्वतःसिद्ध महत्त्व भी है।

इन बातोंके विरुद्ध एक दलील यह पेश की जा सकती है कि जमीन जोतने आदिका काम यन्त्रोंद्वारा भी तो कराया जा सकता है। आजकी दुनियामें अवश्य ही यन्त्राविष्कारोंकी कोई कमी नहीं है और कृषिको यन्त्रसाध्य बनाया जा सकता है। पर यहाँ इसके होनेमें अभी बहुत देर है, क्योंकि जबतक यहाँका सारा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढाँचा ही जड़से बदल न दिया जायगा, तबतक इसकी कोई सम्भावना नहीं। फिर, कृषिकर्मको यन्त्रसाध्य बना देनेसे यान्त्रिक चालनशक्ति तो हमें मिलेगी, पर जमीनकी उपज-शक्तिको बना रखनेके लिये खाद कहाँसे लायेंगे। कृत्रिम या रासायनिक खाद निर्माण करनेके लिये कारखाने खोलनेकी बात तुरंत होठोंपर आती है। पर यह भी भ्रम है। कारण, जबतक प्रकृतिपर हमारा इतना अधिकार नहीं हो जाता कि हम सब जगह ठीक समयपर समरूपसे यथावश्यक वर्षा करा सकें या जबतक कम गहरे और बहते हुए जलके जितने भी साधन हैं, सबका उपयोग कर सब जगह पानी न पहुँचा सकें, तबतक रासायनिक खादोंका उपयोग कदापि सर्वत्र नहीं हो सकता।

यह मान लें कि प्रकृतिपर आपका बस हो गया या सर्वत्र आपने कुएँ खनवा दिये और बिजलीसे पानी चढ़ानेकी व्यवस्था कर ली और चारों ओर नहरें काट-काटकर खेतोंमें पानी भी पहुँचा दिया, तो भी, वे दूध, घी, मक्खन आदि

कहाँसे आवेंगे, जो लोगोंकी आयु, आरोग्य और बलकी रक्षाके लिये अत्यन्त आवश्यक हैं ? क्या उनका काम वनस्पति-घी करेगा ? या दूधके बदले, कृत्रिमतासे प्राप्त दूधके घटक-द्रव्योंको मिलाकर दूधका कृत्रिम प्रतिनिधि-पदार्थ तैयार कर उसका प्रचार किया जायगा ? अभी, विशेषतः हिंदुस्थानमें विज्ञानकी जहाँतक गति है, वहाँतक तो ऐसे कोई प्रतिनिधि-पदार्थ नहीं बने हैं जो दूधका काम दे सकें। अतः हिंदुस्थानके लिये गौका होना अत्यन्त आवश्यक है । उसके बिना हिंदुस्थानको खाद्य नहीं मिल सकता। हिंदुस्थानीय कृषिकी जो तीन मुख्य आवश्यकताएँ हैं, उनको पूरा करनेवाली एक-मात्र गौ है; अन्य कोई पशु यह काम नहीं कर सकता। दूधके लिये भैंस भी भले ही आवश्यक हो, पर वह गौका काम नहीं दे सकती ।

(अ) यन्त्र बनाम बैल

जमीन जोतने, बोझ ढोने, गाड़ी खींचने आदि कामोंके लिये बैलोंका होना आवश्यक है । सड़कोंके अभावमें मोटरोंकी उपयोगिता बहुत सीमित है। यन्त्रोंके द्वारा कृषिकर्मके होनेके लिये ये चार चीजें जरूरी हैं—१. आरम्भमें ही बहुत बड़ी पूँजी लगाना, २. यन्त्र चलाने तथा जरूरत पड़नेपर यन्त्रको दुरुस्त करनेका यान्त्रिक कौशल, ३. ईंधनका काम देनेवाले तेलोंका तथा यन्त्रोंके अलग-अलग पुर्जोंका यथावश्यकरूपसे बराबर मिल सकना और ४. खेतीके लिये बड़े-बड़े खेतोंका चक होना ।

क्या ये सब बातें हिंदुस्थानमें अभी मौजूद हैं ? हिंदुस्थानके जो किसान इतने दरिद्र हैं कि अपने देशी हलोंकी भी मरम्मत कराकर उन्हें दुरुस्त नहीं रख सकते, वे बड़े-बड़े यन्त्र खरीदने, रखने और चलानेका खर्च कहाँसे लायेंगे ? उनमें वह कौशल भी कहाँ है, जो स्वयं यन्त्र चला सकें या वह सामर्थ्य कहाँ है जो यान्त्रिकोंको नौकर रखकर उनसे काम ले सकें ? वे कारखाने कहाँ हैं, जहाँ इन यन्त्रोंकी मरम्मत हो सके या गाँवोंमें अथवा गाँवोंके आस-पास वैसी दूकाने कहाँ हैं, जहाँसे यन्त्रोंके लिये आवश्यक तेल आदि मिल सकें ? उनके पास इतना रुपया भी कहाँ आता है जो वे ये सब चीजें खरीद सकें ? फिर, सबसे बड़ी बात यह कि ये छोटे-छोटे खेत बड़े-बड़े खेतोंके बड़े-बड़े चक कैसे बनें ? यन्त्रोंसे कृषि करनेका मतलब तो यही है कि सैकड़ों एकड़ जमीन एक साथ जोती जाय, अन्यथा यन्त्रोंसे जोतना न तो सुलभ है न लाभप्रद ही। हिंदुस्थानमें औसत हिसाबसे प्रत्येक किसानके पास पाँच एकड़से अधिक जमीन नहीं है और ये पाँच एकड़ भी कई खेतोंमें बटे हुए हैं। तब यन्त्रोंसे कैसे काम लिया जायगा ।

ऐसी अवस्थामें तीन ही उपाय हो सकते हैं—या तो १. सब यन्त्र सरकारी हों और सरकार ही उन्हें चलावे, या २. कोआपरेटिव सोसाइटियाँ यह काम करें, अथवा ३. रूसमें जिस प्रकार सबकी खेती एक साथ होती है, उस प्रकारसे यहाँ भी समष्टि कृषि-पद्धति चलायी जाय ।

यह अन्तिम उपाय हिंदुस्थानके सोविएट शासन-पद्धति स्वीकार करनेपर ही अर्थात् अभीका सारा आर्थिक और राजनीतिक ढाँचा जड़-मूलसे बदलनेपर ही हो सकता है। नं० २ का उपाय विफल हो चुका है और इस ढंगसे काम भी बहुत टेढ़ा हो जाता है। रहा नं० १, उसकी अभी बहुत कालतक कोई आशा नहीं की जा सकती और न उससे कोई वैसा लाभ ही हो सकता है। इस उपायके करनेमें एक प्रकारकी जबरदस्ती और कृषिको एक हदतक सरकारके अधीन करना है, चाहे किसानोंका मालिकाना हक इससे मारा न जाय।

इन बातोंसे यह स्पष्ट होगा कि कृषियन्त्र अभी बहुत कालतक बैलोंका काम नहीं दे सकते ।

(आ) खाद—रासायनिक बनाम गोबर आदि

रासायनिक खादोंके लिये पानी पर्याप्त होना चाहिये और वह समयपर नियतरूपसे मिलना चाहिये । यह तभी हो सकता है, जब आबपाशीकी सब सुविधाएँ मौजूद हों। वर्षाकालकी अनिश्चित स्थितिके भरोसे रहनेवाली और वर्षाके जलसे सींची जानेवाली फसलोंको रासायनिक खादोंसे कोई लाभ नहीं पहुँच सकता । यदि ठीक समयपर वर्षा न हुई तो इन खादोंसे फसलोंको नुकसान ही पहुँचनेका डर रहता है । गोबरसे इस प्रकारका कोई भय नहीं रहता, उससे जमीनको हर हालतमें लाभ ही पहुँचता है । जमीनकी भौतिक और रासायनिक बनावटमें गोबरकी खाद सब प्रकारसे अनुकूल ही पड़ती है ।

(इ) नैसर्गिक दुग्धपदार्थ बनाम कृत्रिम दुग्धपदार्थ

आयु, आरोग्य और बलकी रक्षा करनेवाले खाद्यके नाते गौके दूधकी बराबरी कर सकनेवाला और कोई पदार्थ नहीं है । भैंसके दूधसे भी यह अधिक श्रेष्ठ और अनुकूल है; कृत्रिम पदार्थों और वनस्पति-घीसे इसकी तुलना करना केवल समय नष्ट करना है ।

यह सभी जानते हैं कि पंजाब-जैसे प्रान्तोंमें जहाँ गौएँ और दूध देनेवाले पशु विशेषरूपसे और अच्छी-अच्छी जातियोंके रक्खे जाते हैं, वहाँके किसानोंका रहन-सहन, शारीरिक आरोग्य और डील-डौल तथा आर्थिक स्थिति हिंदुस्थानके उन प्रान्तोंके लोगोंकी अपेक्षा अधिक अच्छी है, जहाँ गौओं तथा अन्य पशुओंकी हालत अच्छी नहीं है।

अन्तमें आग्रहके साथ यही कहना है कि गौ एक अत्युत्तम निधि और भारतीय कृषिका जीवनधन है; अन्य कोई वस्तु ऐसी नहीं, जो इसका स्थान ग्रहण कर सके। भारतीय कृषिकी उन्नति गौके सुधारपर ही निर्भर है। गौकी उपेक्षा करना कृषिको नष्ट करना है।

पशुपालनके प्रति उपेक्षाकी वर्तमान नीति आत्मघातिनी है। इसे छोड़ पशुओंके साथ सदय न्यायपूर्ण व्यवहार होना चाहिये।

गोमाताके हृदय-उद्गार

(लेखक—पं० श्रीचन्द्रशेखरजी पाण्डेय एम्० ए०, बी० टी०)

लोग मुझे माता कहते हैं।
अन्य देशोंमें तो कुछ विद्वान् व्यक्ति ही उपयोगकी दृष्टिसे मुझे माता कहते हैं, किन्तु भारतवर्षमें तो मैं गोमाताके नामसे प्रसिद्ध हूँ।
भारतवासी मुझमें तैंतीस करोड़ देवताओंका वास मानते हैं।
किन्तु धन्य हो भारतवासी पुत्रो!
मुझे कहाँ-से-कहाँ घसीट लाये।
तुम्हारे पूर्वजोंने मुझे किसी उच्च आसनपर बिठाया था, मेरा कैसा आदर-सत्कार करते थे।
महाराज दिलीप मेरी रक्षाके लिये अपने प्राणतक देनेको तैयार हो गये थे। उन्हींकी सन्तान तुम हो।
मुझे क्या और कितना खिलाते हो, मैं ही जानती हूँ।
मेरे हृदयका टुकड़ा, मेरा लाल कठिनाईसे चार घूँट दूध भी नहीं पीने पाता कि उसे निर्दयतापूर्वक खींच लिया जाता है!
वह बेचारा तृषित आँखोंसे मेरी ओर देखता है।
वत्स-स्नेहवश दूध टपकानेवाले मेरे स्तनोंकी ओर बढ़ता है।
किन्तु मुझे माता कहनेवाले उस बेचारेकी गर्दनसे बँधी हुई रस्सीको जोरोंसे खींचते हैं, मैं चुपचाप देखती रह जाती हूँ।
आँखोंमें आँसू लानेके सिवा और कर ही क्या सकती हूँ?
फिर भी मेरे बछड़ेकी आशा नहीं टूटती।
वह सतृष्ण आँखोंसे कभी दुहनेवालेको, कभी बर्तनको, कभी मुझको और कभी बर्तनमें छर्र-छर्र गिरती हुई दूधकी धारको देखता है।
किन्तु आह!
तुम मुझे इस प्रकार दुहते हो कि दूधकी एक बूँद भी शेष नहीं रहने पाती।
मेरे स्तनोंमें पीड़ा होने लगती है,
मैं सिसकती हूँ, पर तुम अपना काम किये ही जाते हो।
जब बहुत कसके दबानेपर भी दूधकी बूँद नहीं निकलती, तब मेरा लाल छोड़ा जाता है।
वह बड़ी प्रसन्नता और आशासे दौड़ता है,
दर्द करते हुए मेरे स्तनोंको वह भी मुँहसे दबाता है, पर पाता क्या है?
उस समय मेरे हृदयपर क्या बीतती होगी, जरा सोचो!
मैं रोकर अपने लालसे कहती हूँ—
बेटा! अब दूध कहाँ।
दूध तो मुझे माता कहनेवाले लुटेरे ले गये।
मेरे भारतवासी सपूतो!
तुमसे कौन-कौन-सा रोना रोऊँ।
बच्चा छोटा हो या बड़ा, माताका स्नेह सदा एक-सा रहता है!
मेरे बड़े लड़कोंकी तुम क्या दुर्दशा करते हो, यह वे ही जानते हैं।
खानेके लिये बेचारोंको सूखा भूसा और पानी डाल देते हो; पर जब गाड़ीपर माल लादने लगते हो तो समझते हो तुमने उन्हें दूध-घी खिलाकर पाला है।
बेचारे खींच नहीं पाते,
अपनी हड्डी-हड्डीका बल लगा देते हैं।
जरा भी रुके तो डंडे पड़ते हैं।
उनका कोई वश नहीं चलता।
घुटने टेक-टेककर जोर लगाते हैं, और तुम्हारी गाड़ी खींच ही ले जाते हैं।
यह देखकर मेरा कलेजा टूक-टूक हो जाता है।

मेरे हृदयकी पीड़ाको माता ही समझ सकती है।
मेरे कष्टोंकी इतनेसे ही इतिश्री नहीं हो जाती।
तुममेंसे मेरे कुछ सपूत तो ऐसे उदार हैं कि जब मैं दूध देना बंद कर देती हूँ, तब वे मुझे भारस्वरूप समझकर कसाइयोंको सौंप देते हैं!
मैं लाचार होकर अपने भाग्यपर रोती हुई और अपने पुत्रोंका भला मनाती हुई चुपचाप चली जाती हूँ।
ये तो धनके लालचमें या पालन करनेमें असमर्थ होनेसे ऐसा करते हैं;
किन्तु उन पुत्रोंको क्या कहूँ, जो अपनी जीभको नहीं रोक सकते और नाना प्रकारके व्यञ्जन होते हुए भी मेरा मांस खाते हैं!!
हाय! इसपर भी जब वे कभी सभा-सोसाइटीमें कुछ बोलनेको खड़े होंगे तो मुझे माता कहेंगे।
मेरा मांस तो अन्य देशवाले बड़े चावसे और प्रायः घर-घरमें खाते हैं।
भारतमें बहुत कम ऐसे मिलेंगे।
फिर भी जितना दुःख मुझे भारतवासियोंके खानेसे होता है, उतना दूसरे देशवासियोंके खानेसे नहीं होता।
बात यह है कि जिससे अच्छे बर्तावकी आशा नहीं है, जो स्वभावसे दुष्ट है और जो अपनेसे कोई सम्बन्ध नहीं मानता, वह यदि दुर्व्यवहार करता है तो उतने दुःखकी बात नहीं होती, जितने दुःखकी बात तब होती है जब कि अपनेको जो माता कहता हो, जिससे अच्छे व्यवहार-की आशा हो, वह अपने साथ दुर्व्यवहार करे।
मेरे भारतीय पुत्रो!
तुममें इतना महान् परिवर्तन हो जायगा, इसकी मुझे आशा नहीं थी।
और तो और, कुछ भारतीय ही ऐसा कहते हैं कि जो गाय-बैल अनुपयोगी हो गये हों, उन्हें गोली मार दो।
क्या कहूँ ऐसे अबोध बच्चोंको?
भला, उनसे कहो कि उनकी वृद्धा माता, जिनसे कोई काम नहीं हो सकता और उनके वृद्ध पिता, जो सिवा खानेके एक पैसा नहीं कमा सकते, उनको कोई गोलीसे मारे तो वे मारने देंगे?
किन्तु मेरे कहनेसे क्या होता है।
मैं चिल्लाकर रह जाऊँगी और मुझे माता कहनेवाले विदेशी सभ्यतासे प्रभावित होकर एक दिन यह भी कर डालेंगे।
मुलायम-से-मुलायम चमकदार क्रोम-लेदरका पंप पहनने-वाले मेरे शौकीन पुत्रो!
जरा हृदयपर हाथ रखकर सोचो,
तुम्हारे जूतेमें इतनी चमक और इतनी मुलायमियत कहाँसे आयी?
आह! याद करती हूँ तो रोआँ-रोआँ काँप जाता है।
मेरी आँखोंके सामने मेरे चार-चार, छः-छः महीनेके लाल मशीनपर जीते खड़े किये गये और उनका चमड़ा निकाल लिया गया!
मेरा चमड़ा तो इस तरह निकाला ही जाता है, किन्तु अधिक शौकीन बाबुओंके लिये छोटे-से-छोटे जीते बच्चेका चमड़ा निकाला जाता है।
अभी क्या हुआ है, अभी तो पश्चिमीय सभ्यताका प्रयोगमात्र हुआ है।
फिर तो भाँति-भाँतिकी मशीनें आवेंगी,
मशीनसे मेरा दूध निकाला जायगा। भले ही दूधके साथ मेरा रक्त निकल आवे!
मशीन ही खेत जोतेगी,
तब मेरे बच्चोंका काम केवल दूसरोंकी भूख शान्त करना ही रह जायगा।
यह सब वहाँ होगा, जहाँ मैं माता मानी जाती हूँ,
जहाँ मेरी पूजा होती थी,
जहाँ मेरी सेवामें बड़े-बड़े नरेश पैदल नंगे पाँव वन-वन घूमते थे,
जहाँ नरेश क्या, स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण मेरी सेवा करते थे, मेरी पूजा करते थे और मेरे दुःख-सुखसे दुखी-सुखी होते थे!
समयकी बात है, और क्या कहूँ!
तुम भले ही कुपुत्र हो जाओ, पर मैं कुमाता नहीं हो सकती; क्योंकि मैं माता हूँ।
मैं सदा तुम्हारा भला चाहूँगी।
मेरे अबोध बच्चो!
अब भी समय है, कुछ बिगड़ा नहीं।
मेरी दशा सुधारो,
मेरी ओर ध्यान दो,
मेरी दशापर दया करो,
केवल पैसोंकी ओर न देखो।
मेरा अपना सम्बन्ध सोचो—
मैं तुम्हारी दुखी माता हूँ,

तुम मेरे भूले हुए प्यारे पुत्र हो ।
पश्चिमीय सभ्यताकी चकाचौंधमें मत पड़ो ।
मेरे हृदयसे लगकर मुझे सुखी और संतुष्ट करो,
विश्वास करो—मैं तुम्हें फिर उन्नतिके शिखरपर पहुँचा दूँगी;
तुम्हारा खोया हुआ मान, गौरव, प्रतिष्ठा और तुम्हारी कीर्ति फिरसे प्राप्त करा दूँगी ।
कुपुत्रके प्रति भी माका क्या भाव रहता है, यह अपनी मातासे पूछो ।
तुम मुझे प्रेमसे एक बार 'मा' कहकर पुकारो,
सत्य समझो मेरे आशीर्वादमात्रसे तुम्हारा कल्याण हो जायगा ।
कुछ भी हो, तुम मेरे पुत्र हो,
मैं तुम्हारी मा हूँ !



गोदुग्धकी सर्वश्रेष्ठता और उसका मूल कारण

(लेखक—श्रीमाधवशरणजी एम्०ए०, एल्-एल्० बी०)

भारतमें वैदिक कालसे ही गोजाति और गोदुग्धकी महत्ताका गुण गाया जा रहा है । हमारे दिव्यदृष्टिसम्पन्न ऋषियोंने अखिल मानवजातिका अशेष कल्याण करनेवाली गोमाताके गुणोंको प्राचीन कालमें ही पहचान लिया था । उन्होंने उसको 'कल्याणी', 'इन्द्राणी' और 'पावनी'—जैसे नाम दिये हैं । हमें वेदोंमें जगह-जगह गौके सम्बन्धमें प्रार्थनाएँ मिलती हैं । ऋग्वेदकी यह गोस्तुति देखिये—

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वय उच्यते सभासु ॥

'गायो ! तुम कृश और जर्जर शरीरको भी सुदृढ़ कर देती हो । जिनका रूप बिगड़ गया है, उनको सुन्दर बना देती हो । अपने शुभ शब्दसे मेरे घरको पवित्र करो । हमारी सभाओंमें तुम्हारी ही महान् कीर्तिका गान होता है ।'

गायें केवल आश्रममें रहनेवाले ऋषियों और तपस्वियोंके ही आदरकी पात्र नहीं थीं । उस समय गोधन ही तो मुख्य धन था । बड़े-बड़े राजे-महाराजे लाखोंकी संख्यामें गायें रखते थे और उनकी देख-भाल और रक्षाका स्वयं बड़ा ध्यान रखते थे । महाराज दिलीपकी गो-सेवा तो प्रसिद्ध ही है । बृहदारण्यकोपनिषद्में एक कथा आती है कि ब्रह्मवेत्ताओंकी सभामें सर्वश्रेष्ठ उतरनेपर राजा जनकने याज्ञवल्क्यको १००० गायें पुरस्कारमें दीं । सर्वश्रेष्ठ विद्वान्को राजा जनक-जैसे धर्मात्मा सर्वश्रेष्ठ वस्तु ही पुरस्कारमें देंगे । सचमुच ही गायोंको उस समय लोग सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति समझते थे । महाभारतके अनुसार राजा विराटके पास हजारों गायें थीं । उन्हें कौरवोंके हर ले जानेपर राजकुमार और बादमें स्वयं राजा उनकी रक्षाके लिये गये । हम सबके परम प्रिय गोपीजन-वल्लभ भगवान् गोपालनन्दनको इस धराधामपर खींच लानेवाले नन्दराजके पास तो एक करोड़ गायें थीं । और श्रीहरिने उन गायोंकी स्वयं अपने हाथों सेवा करके गोसेवाके आदर्शको सर्वोच्च स्थानपर चढ़ा दिया । गीतामें उन्होंने वर्णधर्मकी व्याख्या करते हुए वैश्योंका धर्म बताया है—'कृषि-गौरक्ष्यवाणिज्यम् ।' यहाँ ध्यान देनेकी बात है कि 'गौरक्ष्य' को भगवान्ने कृषि और वाणिज्यके बीचमें रक्खा है । देहली-दीपकन्यायसे यह दोनोंको प्रकाशित कर रहा है । अर्थात् कृषि और वाणिज्य दोनों 'गौरक्ष्य' से ही प्राणान्वित होते हैं ।

तथागत बुद्धने तो गायोंको माता, पिता और भ्राता—सभी कुछ बना डाला है ।

यथा माता पिता भाता अञ्ञे वापि च ञातका ।
गावो नो परमा मित्ता यासु जायन्ति ओसधा ॥

'जिस प्रकार मा, बाप, भाई और दूसरे सगे अपने मित्र हैं, उसी प्रकार गाय हमारी परम मित्र है, जिससे मृत-संजीवनी ओषधियाँ निकलती हैं ।'

आजकल भी संसारके सर्वश्रेष्ठ महापुरुष महात्मा गाँधीजीने गायके विषयमें जितना कुछ कहा और लिखा है, उन सबका संग्रह किया जाय तो एक छोटी-मोटी गोस्तोत्र-रत्नावली बन जाय । और अब तो पाश्चात्त्य विद्वान् भी गोदुग्धकी महत्ताको समझने लगे हैं । अमेरिकाके डाक्टर ई० वी० मैकॉलम कहते हैं—

'जिस राष्ट्रने सफलता प्राप्त की है, जो महान्, सुदृढ़ और शक्तिशाली हुआ है, जिसके बच्चोंकी मृत्यु-संख्या घटी है, जिसका व्यापार संसारमें फैला है, जो कला, साहित्य और संगीतका गुण पहचान सका है और जो विज्ञान एवं प्रत्येक बौद्धिक

क्षेत्रमें आगे बढ़ा है, वह सदा उन्हीं लोगोंसे बना है जिन्होंने स्वच्छन्द होकर गोदुग्ध और तन्निर्मित पदार्थोंका सेवन किया है।'*

गोदुग्धमें ये सब गुण आये कहाँसे ? आधुनिक रसायन-विज्ञान और आहार-विज्ञान इसका कई प्रकारसे अनेक नयी-नयी बातें बताकर उत्तर देगा। गोदुग्धमें शरीररक्षा और स्वास्थ्यस्थितिके लिये आवश्यक कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, चीनी और विभिन्न प्रकारके खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। खाद्यौज (Vitamins) तो लगभग सभी इसमें होते हैं। और भी कितनी वस्तुएँ इसमें मिलती हैं, जिनका पृथक्-पृथक् वर्णन इस छोटेसे लेखमें असम्भव है। यहाँ तो मुझे इसके केवल दो अनिश्रुत गुणोंका ही उल्लेख करना है।

माताके दूधके समान मनुष्यके लिये सर्वश्रेष्ठ, स्वास्थ्यप्रद और सात्त्विक पेय गायका ही दूध है। अपने शिशुओंको स्तनद्वारा दूध पिलानेवाले जीवधारियोंको स्तनपायी (Mammals) कहते हैं। इस वर्गकी स्त्री जातिके शरीर-स्थानमें गर्भस्थितिके बादसे दूध बनने लगता है। यह दूध शरीरमें कैसे बनता है, इस बातका निश्चित पता अभीतक वैज्ञानिकोंको नहीं लगा है। परन्तु जितने दिनोंतक एक स्त्री गर्भ धारण किये रहती है, लगभग उतने ही दिनोंतक गाय भी गर्भधारणके पश्चात् प्रसव करती है। इस प्रकारसे जितना समय प्रकृति मानवीकी देहमें दुग्ध तैयार करनेमें लेती है, उतना ही समय गायके शरीरमें भी लगाती है। बहुत सम्भव है गोदुग्धको नारीके दुग्धके समान गुणसम्पन्न बनानेमें यह बात भी सहायक हो।

पर सबसे बड़ा गुण गायके दूधमें आता है उसके वात्सल्यसे। गायका अपत्य-स्नेह बहुत प्रबल होता है। वह उसको खूब चूमती-चाटती और बड़ा प्यार करती है। उससे अलग होनेपर उसको अपार दुःख होता है। वनमें चरने जाती है, तब भी उसका मन अपने बच्चेपर ही टँगा रहता है। दूसरे पशुओंमें यह बात नहीं होती। अपने बच्चेके मर जानेपर गायको इतना शोक पहुँचता है कि वह बहुधा तीन-चार दिनोंतक कुछ खाती-पीती नहीं।

संस्कृतका 'वात्सल्य' शब्द ही वत्स (गो-संतति)से बना है। गायका अपत्य-स्नेह ही समस्त प्राणियोंके अपत्यस्नेहका द्योतक बन गया है। उसका 'वात्सल्य' आदर्श जो ठहरा। भावनाके पारखी कवियोंने गायके इस स्नेहको प्रसिद्ध कर दिया है। जहाँ कहीं भी संतानके प्रति माताके स्नेहको दिखाना हुआ है, वहीं हमारे कवियोंने गायकी ही उपमा पकड़ी है।

जब भगवान् राम वन जाने लगे तो माता कौसल्या भी बछड़ेके पीछे दुबली गौके समान उनके साथ जानेके लिये कह रही हैं—

अथापि किं जीवितमद्य मे वृथा
त्वया विना चन्द्रनिभाननप्रभ।
अनुव्रजिष्यामि वनं त्वयैव गौः
सुदुर्बला वत्समिवाभिकाङ्क्षया॥*
(वा० रा० २। २०। ५४)

यहाँ 'सुदुर्बला' शब्द और भी महत्त्वका है। 'वत्साभिकाङ्क्षा' से 'सुदुर्बला' गाय भी उसके पीछे-पीछे वैभवपूर्ण सदनको छोड़कर वनको चली जाती है। मनुष्योंके बीच यह व्यवहार साधारण लगेगा, पर पशु-जातिके बीच तो असाधारण है।

इसी प्रकार जब भगवान् वनसे अयोध्या लौटे, उस समय माताएँ जिस प्रेमसे उनकी ओर दौड़ीं, उसका वर्णन गोस्वामी तुलसीदासजी गायकी ही उपमाके सहारे करते हैं—

कौसल्यादि मातु सब धाई। निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई॥

श्रीमद्भागवतमें भी श्रीकृष्णको तृणावर्तके उड़ा ले जानेपर माता यशोदाकी जो दशा हुई, उसका वर्णन करते हुए श्रीशुकदेवजी कहते हैं—

इति खरपवनचक्रपांसुवर्षे
सुतपदवीमबलाविलक्ष्य माता।
अतिकरुणमनुस्मरन्त्यशोचद्
भुवि पतिता मृतवत्सका यथा गौः॥†
(१०। ७। २४)

*The people who have achieved, who have become large, strong and vigorous people,—who have reduced their infant mortality, who have the trades in the world, who have appreciation for art, literature and music, who are progressive in science and in every activity of human intellect, are the people who have used liberal amounts of Cow-milk and its products. —Dr. E. V. MacCollum of America

* हे चन्द्रमुख राम! तुम्हारे बिना अब मेरा जीवन व्यर्थ है। बछड़ेकी प्रीतिसे दुर्बल गायके समान मैं तुम्हारे पीछे-पीछे वनको चलूँगी।

† प्रचण्ड आँधी और धूलकी वर्षामें बालक श्रीकृष्णको न देखकर जिसका बछड़ा मर गया हो, उस गायकी तरह पछताती और शोक करती हुई अबला यशोदा पृथ्वीपर गिरकर रोने-बिलखने लगीं।

गायका यह प्रबल प्रेम ही उसके दुग्धको अमृत बना देता है। मा जिस भावना, जिस स्नेह, जिस शुभ कामनासे अपने बच्चेको दूध पिलाती है, वह सब गोदुग्धमें वर्तमान रहता है; क्योंकि स्तनदान करते समय और वैसे भी गायमें अपने बच्चेके प्रति ये भावनाएँ भरी रहती हैं। इन भावोंका दूधपर बड़ा प्रभाव पड़ता है। आजकल पाश्चात्त्य देशोंमें जन्मते ही गायसे बछड़ेको अलग कर देनेकी जो प्रथा चल पड़ी है, वह दूधके इन नैसर्गिक गुणोंकी हत्या कर देती है, इस प्रक्रियासे गायें पयः-प्रदा माताएँ न रहकर दुग्धोत्पादक मशीनें बन जाती हैं।

आजकल मेस्मरिज़्मकी चिकित्सा-प्रणालीद्वारा कोरे जलमें स्वास्थ्य अथवा रोगापहरणकी भावना भरकर रोगीको पिला दिया जाता है, और रोग छूट जाता है। फिर माके शरीरमें महीनोंसे तैयार होते हुए दूधमें उसकी सच्ची भावनाओंका क्या असर होगा, यह सोचना कठिन नहीं है। माके क्रुद्ध होने या डर जानेपर उसका दूध बिगड़ जाता है यह बात तो बहुतोंके देखनेमें आयी होगी। ऐसा दूध पीकर कितने बच्चे बीमार भी पड़ जाते हैं। जिस प्रकार दुर्भावनाओंसे दूध बिगड़ता है, उसी प्रकार सद्भावनाओंसे उसके गुणोंकी वृद्धि भी होती है।

माके चरित्र और आहारका भी उसके दूधपर बहुत प्रभाव पड़ता है। माके सात्त्विक विचार दूधमें उतर आते हैं और संततिको भी वैसे ही बनानेमें सहायक होते हैं। उल्टे स्वभाववाली माका दूध भी विषम होगा। गायके चरित्रके विषयमें कुछ कहना तो नानाके आगे मामाके लड़कपनकी बात बतानेके समान होगा। प्राणीमात्रमें गायसे सीधा कदाचित् और कोई पशु न मिले। उसके अपने बच्चेको (जिसको वह इतना प्यार करती है) हटाकर गोपबालक उसके थनमें मुँह लगाकर दूध पी लिया करते हैं, पर वह कुछ नहीं बोलती।

किन्तु गायको केवल सीधी और भोली ही समझकर यह डर न हो जाना चाहिये कि उसके दूधपर अवलम्बित रहनेवाले बुद्धू बन जायँगे। वह बड़ी समझदार और बुद्धिमती भी होती है। वैज्ञानिकोंने पशुओंकी बुद्धिकी जाँच की है और इस परीक्षामें गायको बहुत ऊँचा स्थान मिला है।

आहारका दूधपर प्रभाव तो जिनके घरमें बच्चे होंगे, वे सभी जानते होंगे। जबतक बच्चा दूध पीता रहता है, माके लिये खट्टा-तीता या विकारी वस्तुओंके खानेका निषेध रहता है। जहाँ माने कोई गड़बड़ वस्तु खायी कि बच्चा रोगी हुआ। गायका मुख्य आहार जितना सात्त्विक, सहज और सुलभ होता है, कदाचित् ही किसी प्राणीका होता हो। आयुर्वेदके अनुसार प्रातःकाल ताजी घासपर केवल चलनेसे ही आँखोंकी ज्योति बढ़ती है। गायके आहारमें फिर कितनी शक्ति सन्निहित है, इसका अनुमान सहजमें ही किया जा सकता है।

खेद है कि इतनी सुलभ वस्तु भी हम आज अपने पशुओंको नहीं दे पा रहे हैं। वे भूखों मर रही हैं और उनको मजबूर होकर निकृष्ट वस्तुओंको खाना पड़ता है। फलतः उनके दूधका गुण भी घटता जा रहा है।

हमको अब आँखें खोलनी चाहिये और अपनी, अपने समाज एवं देशकी रक्षा करनेके उद्देश्यसे गाय और उसके चरागाहोंकी रक्षाके लिये कटिबद्ध होकर अविलम्ब क्रियाशील बनना चाहिये। बल्कि गायकी रक्षाके लिये हृदयका रक्त भी बहाना पड़े तो कोई बात नहीं।

कसाईके हाथ गाय बेचनेसे सर्वनाश

(लेखक—श्रीहरप्रसादजी गुप्ता)

एक गाँवमें एक धनी वैश्य घराना था। वह धन-धान्यसे सम्पन्न था और कुटुम्बमें '७०-७५' आदमी थे। उनके घरमें गौएँ भी थीं। उनमें एक ऐसी गाय थी जो चरनेको खोलनेके समय और दुहनेको उठाते समय बहुत तंग करती थी। घरके लोगोंने उसे कसाईके हाथ बेच देनेका निश्चय किया। एक दिन गाँवमें कसाई आया और उन लोगोंने उसके हाथ गाय बेच दी। कसाई जब गायको खोलने गया, तब रस्सी खोलते ही वह खड़ी हो गयी और कसाईके आगे-आगे चल दी। गाँवके लोगोंने बहुत रोका—कहा कि 'लालाजी! गौको वापस ले लो। यह साक्षात् लक्ष्मी है। इसे कसाईके साथ मत जाने दो।' परन्तु उन लोगोंने बात नहीं मानी। गायको कसाई ले गया और वह काट डाली गयी।

रातको स्वप्नमें वैश्यने देखा मानो गोमाता शाप दे रही है—'तूने मेरी वास्तविकता नहीं समझकर मुझे निर्दय कसाईके हाथों बेच दिया अतएव अब शीघ्र ही तेरा सर्वनाश हो जायगा।'

कहना न होगा कि इसके कुछ ही दिनों बाद बड़े जोरकी बाढ़ आयी और उसमें उनका तमाम अनाज बह गया। लोगोंके गिरवी रक्खे हुए जेवर और बर्तन खत्तीमें थे, वे सब-के-सब बह गये। इसके बाद ही प्लेगका प्रकोप हुआ और सात-आठ दिनोंमें ही स्त्री, पुरुष, बच्चे, मिलाकर घरके ६० आदमी बेमौत मर गये। इस तरह हरी-भरी धन-धान्यसम्पन्न गृहस्थी गोमाताके शापसे कुछ ही दिनोंमें उजड़ गयी। जो अबतक भी नहीं सँभल सकी है।—(सच्ची घटना)

दुग्ध एवं पोषण

(लेखक—श्री टी. एम. पाल और सी. पी. अनन्तकृष्णन्, इम्पीरियल डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलोर)

भोजन उन थोड़ी-सी वस्तुओंमेंसे है, जो प्राणधारणके लिये बिल्कुल अनिवार्य है। क्रम-विकासकी अवस्थामें अपनी आपेक्षिक स्थितिके अनुसार प्रत्येक प्राणीका दृष्टिकोण इस विषयमें भिन्न-भिन्न रहता है। निम्नवर्गके बहुत-से प्राणी सदा भोजन जुटानेमें ही लगे रहते हैं; किन्तु ज्यों-ज्यों हम विकासकी ओर जाते हैं, त्यों-त्यों देखते हैं कि इस ओर कम ध्यान दिया जाता है तथा अधिक ध्यान अन्य बातोंपर ही होता है। इसी कारणसे इस पृथ्वीतलके सर्वश्रेष्ठ जीव मनुष्यमें भोजनके प्रति स्वाभाविक रूपसे ही दार्शनिक उपेक्षा पायी जाती है। ऐसा होते हुए भी, स्वादिष्ट एवं पोषक भोजन हमेशासे जीवनके प्रत्येक स्तरमें मानव-जातिके अधिकांश व्यक्तियोंके लिये बड़े अनुरागका विषय रहा है।

मनुष्य-जातिद्वारा भोजनरूपमें व्यवहृत विभिन्न प्रकारकी बहुत-सी वस्तुओंमें शायद दूध ही सबसे अधिक लोकप्रिय है। अनादिकालसे ही दूध संसारके सब देशोंमें किसी-न-किसी रूपमें भोज्य वस्तुकी तरह व्यवहार किया जाता रहा है। इसके अतिरिक्त शायद यही एक ऐसा भोज्य-पदार्थ है जिसके प्रति राष्ट्रीय, जातीय एवं धार्मिक दृष्टिसे कोई मतभेद नहीं पाया जाता। वस्तुतः केवल यही एक ऐसा भोज्य-पदार्थ है, जो सब कालोंमें तथा सब वर्गोंमें समान भावसे प्रिय रहा है। इससे यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि अत्यन्त प्राचीन कालमें भी दूधका आपेक्षिक खाद्य-गुण ज्ञात था। किन्तु दूधके वास्तविक पोषक गुणकी खोज उन्नीसवीं शताब्दीके अन्तिम वर्षोंमें हुई है तथा उसके बादके अध्ययनसे प्रारम्भिक अनुसंधानकी और भी पुष्टि हो गयी है। पश्चिमके बहुत-से वैज्ञानिक क्षेत्रमें उन्नत देशोंमें इस 'नवीनतर पोषणसम्बन्धी ज्ञान' से बहुत लाभ उठाया जा रहा है। परन्तु विज्ञान व्यवहारसे बहुत आगे बढ़ जाता है, अर्थात् वैज्ञानिक सिद्धान्त पूर्णरूपसे व्यवहारमें नहीं लाये जा सकते और यह बात भारत-जैसे पिछड़े हुए देशमें और भी विशेषरूपसे पायी जाती है। वास्तवमें इसी कमीके कारण ही हमारी बहुत-सी आर्थिक एवं सामाजिक प्रमुख समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

सामान्यतः खाद्यपदार्थोंको हम दो वर्गोंमें विभाजित कर सकते हैं—१. शक्ति प्रदान करनेवाले तथा २. रक्षक। अन्न तथा इसी प्रकारके अन्य खाद्यपदार्थ, जो बहुत-से देशोंके प्रमुख भोजन हैं, प्रथम वर्गके हैं; और दुग्धान्न, शाक-पात एवं फल आदि दूसरे वर्गमें आते हैं। हमारे भोजनमें शक्ति प्रदान करनेवाले पदार्थोंका ही आधिक्य रहता है। जैसा कि इनके नामसे ही प्रकट होता है, ये पदार्थ शरीरके विभिन्न व्यापारोंके लिये एवं काम करनेके लिये आवश्यक शक्ति प्रदान करते हैं। रक्षक-पदार्थोंका उपयोग विटामिन एवं खनिज पदार्थ-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें ही है। यद्यपि इनकी बहुत थोड़े परिमाणमें आवश्यकता होती है, फिर भी शरीर-यन्त्रके सम्यक् चालनके लिये ये अत्यन्त अनिवार्य हैं। शरीरको यदि मशीनकी उपमा दें तो संवर्धक पदार्थोंकी तुलना यन्त्रमें दिये जानेवाले स्नेह-पदार्थसे तथा जीवनी-शक्ति प्रदान करनेवाले पदार्थोंकी ईंधनसे की जा सकती है। यद्यपि यन्त्र-व्यापारकी सम्पूर्ण शक्ति ईंधनसे ही प्राप्त होती है, तो भी उचित स्नेह-पदार्थके बिना यन्त्र ठीक गतिसे नहीं चल सकता। किन्तु फिर भी यदि इस स्नेह-पदार्थके बिना ही, जिसका प्रत्यक्ष कोई महत्त्व नहीं मालूम होता, जबर्दस्ती यन्त्रको चलाया जाय तो कुछ समय बाद उसके प्रधान अवयव घिस जाते हैं और तब प्रचुरतासे ईंधन दिये जानेपर भी यन्त्रकी गति रुक जाती है। शक्ति प्रदान करनेवाले पदार्थोंसे प्रधानतः पोषणके पारिमाणिक अङ्गकी, तथा रक्षक पदार्थोंसे उसके गुणात्मक अङ्गकी पूर्ति होती है। दोनों समानरूपसे आवश्यक हैं, किन्तु इस बातका पता पीछे लगा है।

रक्षक पदार्थोंमें सबसे मुख्य दूध ही है। इस बातसे कि भिन्न-भिन्न प्रकारके स्तनपायी शिशु विभिन्न अवधितक केवल दूधपर निर्वाह करते हैं, दूधकी खाद्यरूपमें सर्वगुणसम्पन्नता अच्छी प्रकार सिद्ध हो जाती है। छोटे बच्चोंके लिये तो यह करीब-करीब पूर्ण भोजन है तथा दूसरोंके लिये भी यह सबसे अधिक पूर्ण भोजन है। बस, इन्हीं कारणोंसे दूधको पोषण-दृष्टिसे इतना ऊँचा महत्त्व दिया जाता है। वस्तुतः दूधके पोषक गुणोंकी खोजके आधारपर ही पोषण-विज्ञानका निर्माण हुआ है। शुद्ध मिश्रित भोजनमें थोड़ेसे परिमाणमें मिलाये हुए दूधके वृद्धिकारक

गुणोंसे ही, जिनकी हाप्किंस (Hopkins), आस्बर्न (Osborne) एवं मेंडल (Mendel) ने खोज की थी, विटामिन और पोषणके रसायन-शास्त्रका सूत्रपात हुआ था। पीछे इस विषयको अन्य लोगोंने आगे बढ़ाया और दूधमें वर्तमान विभिन्न विटामिनोंको ढूँढ़ निकाला तथा उनको विभिन्न स्वतन्त्र साधनोंसे पृथक् कर लिया। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इनमेंसे बहुत से विटामिनोंका रासायनिक प्रयोगशालाओंमें संश्लेषण हो चुका है और वे बहुत सस्ते दामोंमें जनता एवं चिकित्सकोंको मिल सकते हैं। पोषणके इस नवीनतर ज्ञानने भोजन एवं पोषणके पुराने कट्टर विचारोंमें पूर्ण परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। दूधका मनुष्यके स्वास्थ्यमें प्रमुख भाग होनेके कारण केवल इसके उत्पादन, सँभाल, संरक्षण एवं वितरणके सुन्दर ढंग ढूँढ़नेमें ही नहीं, अपितु सभी दृष्टियोंसे इसके खाद्यमहत्त्वको जाननेके लिये बहुत बड़े परिमाणमें धन और समय व्यय किया गया है। किन्तु आज भी एक साधारण ज्ञानवाले सामान्य व्यक्तिको, बच्चों एवं बूढ़ोंके पोषणके लिये समानरूपसे अत्यन्त आवश्यक दूधके पोषक-गुणका सम्यग् ज्ञान नहीं है।

दूधमें विद्यमान सामान्य पदार्थ

स्नेह-पदार्थ दूधका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अङ्ग है। विभिन्न प्रकारके पशुओंके दूधमें इसका तारतम्य दूधमें रहनेवाले अन्य सब पदार्थोंसे अधिक है। कई पशुओंके दूधमें अधिक स्नेह रहता है, और कइयोंके कम—जैसे भैंसके दूधमें गायके दूधकी अपेक्षा अधिक स्नेह-पदार्थ पाया जाता है। एक ही जातिके पशुओंमें भी किसी नस्लके पशुओंके दूधमें अधिक प्रतिशत स्नेह-पदार्थ पाया जाता है। उदाहरणके रूपमें भारतीय गायोंके दूधमें यूरोपीय गायोंके दूधसे अधिक स्नेह-पदार्थ विद्यमान रहता है। कई अन्य बातोंका भी स्नेह-पदार्थके प्रतिशतपर प्रभाव पड़ता है। अधिक दूध देनेवाली गायके दूधमें कम दूध देनेवाली गायके दूधसे कम स्नेह-पदार्थ रहता है। इसी प्रकार प्रातःकालका दूध सायंकालके दूधसे कम स्नेहवाला होता है। दुहते समय जो पहले-पहल दूध निकलता है उसकी अपेक्षा जो अन्तमें निकलता है, उसमें अधिक स्नेह-पदार्थ रहता है। ब्यानके अन्तिम दिनोंमें भी (जब गाय बिसुकनेवाली होती है) दूधके स्नेह-पदार्थका प्रतिशत बढ़ जाता है। दूधके दूसरे प्रधान अवयव प्रोटीन एवं शर्करा हैं। स्नेह-पदार्थकी अपेक्षा विभिन्न प्रकारके दुग्धोंमें इनका तारतम्य कम है और न्यूनाधिक मात्रामें ये सभी सामान्य दुग्धोंमें पाये जाते हैं। गायके दूधका औसतन निर्माण इस प्रकार होता है—स्नेह-पदार्थ ४.५ प्रतिशत, प्रोटीन ३.४ से ३.८ प्रतिशत तक, शर्करा ४.८ प्रतिशत, क्षार ०.७ प्रतिशत तथा जल करीब ८७ प्रतिशत। गाय और भैंसके दुग्धोंमें प्रधान अन्तर यही है कि भैंसके दूधमें गायके दूधसे अधिक स्नेह-पदार्थ रहता है।

दूधका ऊष्मा-शक्तिप्रद गुण

दूधमें अधिक तरी होनेके कारण इसमें ऊष्मा-शक्ति बहुत कम मात्रामें होती है। वस्तुतः दूध ऊष्मा-शक्ति प्रदान करनेवाले खाद्य-पदार्थोंमें कदापि स्थान नहीं पाता। एक पौंड दूधसे ३१० कैलरी ऊष्मा-शक्ति प्राप्त होती है, जब कि इतने परिमाणके चावल या गेहूँसे १६०० कैलरी मिलती है। एक पूरे जवान मनुष्यको कम-से-कम २४०० कैलरी ऊष्मा-शक्ति प्रतिदिन चाहिये। यदि सम्पूर्ण ऊष्मा-शक्ति निरे दूधसे ही प्राप्त की जाय तो हमें प्रतिदिन ८ पौंड (४ सेर) दूध लेना पड़ेगा, जो असम्भव-सा है। किन्तु दूधमें विद्यमान कई पदार्थोंमें, जैसे स्नेह और शर्करामें, ऊष्मा-शक्तिका परिमाण अधिक रहता है। स्नेह-पदार्थ यद्यपि दूधमें केवल ४ प्रतिशत ही रहता है, किन्तु उसका ऊष्मा-शक्तिप्रदानकार गुण इतना अधिक है कि दूधकी सम्पूर्ण ऊष्मा-शक्तिका ५० प्रतिशत इसमें रहता है और ३० प्रतिशत शर्करासे प्राप्त होता है तथा बाकीका प्रोटीनसे। यही कारण है कि कई दुग्धान्नों—जैसे मक्खन, दुग्धचूर्ण (Milk Powder) आदिमें ऊष्मा-शक्तिप्रदानकारक गुण बहुत अधिक रहता है। कुछ भी हो, यह प्रत्यक्ष है कि दूधमें (दूधरूपमें ही, दुग्धान्नोंके रूपमें नहीं) ऊष्मा-शक्तिप्रदानकारक गुण कम मात्रामें रहता है और इसीलिये वह ऊष्मा-शक्ति प्रदान करनेवाले पदार्थोंमें कदापि स्थान नहीं पा सकता।

दुग्धका स्नेह-पदार्थ

गायके दूधमें करीब चार प्रतिशत स्नेह-पदार्थ रहता है और भैंसके दूधमें ६ प्रतिशत। गायके दूधमें यह स्नेह-पदार्थ छोटी-छोटी कणिकाओंके रूपमें रहता है, जिनका आकार एवं विभाजन गायकी नस्ल तथा दूध गायके ब्यानेके कितने दिन बादका है—इन दो बातोंपर निर्भर करता है। दूध ही एक ऐसा खाद्य-पदार्थ है, जिसका स्नेह उसके (दूधके) साथ एकीभूत अवस्थामें रहता है और इसी कारणसे यह पृथक् रूपसे लिये गये स्नेह-पदार्थोंकी अपेक्षा अधिक आसानीसे पच जाता है। पोषणकी दृष्टिसे दूधका स्नेह-

पदार्थ अपनी विशेष बनावटके कारण अन्य स्नेह-पदार्थोंसे अधिक उत्तम है। दूधके स्नेह-पदार्थमें हल्के कणवाले स्नैहिक-अम्ल रहते हैं, जो जल्दी घुल-मिल जानेवाले होते हैं। यह बात अन्य अधिकांश स्नेह-पदार्थोंमें नहीं पायी जाती। किन्तु दूधके स्नेह-पदार्थका पोषण-महत्त्व खास इसी बातसे नहीं है। इसमें विटामिन 'ए', 'डी' और 'ई' विद्यमान हैं, जो अन्य स्नेह-पदार्थों एवं तेलोंमें नहीं होते। विटामिनोंमें भी विटामिन 'ए', जो मानव-शरीरकी उचित वृद्धि एवं स्वास्थ्यका प्रधान हेतु है, इसमें सबसे अधिक मात्रामें रहता है और ऐसे बहुत थोड़े तेल हैं, जिनमें इससे अधिक मात्रामें यह विटामिन पाया जाता हो। अधिकांश साधारण तेलोंमें और स्नेह-पदार्थोंमें तो यह विटामिन बिल्कुल ही नहीं होता। दूधके स्नेह-पदार्थमें यद्यपि विटामिन 'डी' और 'ई' (अपेक्षाकृत कुछ) कम मात्रामें पाये जाते हैं, परन्तु मानव-शरीरके कुशल-क्षेममें इनका इतना हाथ है कि इनकी छोटी-से-छोटी मात्राका रहना भी महत्त्वपूर्ण है। विटामिन 'डी' का मुख्य सम्बन्ध उचित विकास एवं हड्डी तथा दाँतोंके निर्माणसे है और 'ई' का सफल प्रजननसे। बच्चोंकी विकासोन्मुख अवस्थामें, जब कि वे पूर्णतया दूधपर ही पाले जाते हैं, दूधके साथ उन्हें कोई ऐसा तेल देना चाहिये जिसमें विटामिन 'डी' अधिक हो, क्योंकि अकेले दूधसे आवश्यक परिमाणमें विटामिन 'डी' नहीं मिलता। बच्चोंको पर्याप्त दूध देनेसे उनका उचित विकास निश्चित है और अनेक छूतकी बीमारियोंसे भी उनकी रक्षा होगी।

प्रोटीन

दूधमें प्रोटीनका औसत लगभग ३.४ प्रतिशत है, जिसमें २.५ से ३ प्रतिशत तक तो केसीन रहती है—जो दूधका विशेष अङ्ग है, और एल्ब्यूमन तथा ग्लोबूलिन, जिनसे दुग्ध-प्रोटीनका शेष भाग बनता है, अन्य जैव द्रवमें भी पाये जाते हैं। आवश्यक विकास तथा शरीरको बनाये रखनेके लिये भोजनमें उस तत्त्वकी पर्याप्त मात्रा रहनी आवश्यक है, जिसको रासायनिक 'ऐमिनो-एसिड्स' कहते हैं और जो मांस-तन्तुओंका निर्माण एवं उनकी अभाव-पूर्ति करता है। इस प्रकारके २० अम्लक्षारोंका ज्ञान रासायनिकोंको है, जिनमेंसे ५ तो मांस-तन्तुओंकी वृद्धिके लिये निश्चयरूपसे आवश्यक बतलाये गये हैं। किसी भी प्रोटीन-का जीवनसम्बन्धी मूल्य दो बातोंसे आँका जाता है—एक तो यह कि उसमें किस प्रकारके ऐमिनो-एसिड्स हैं और दूसरे यह कि वे कितनी मात्रामें हैं। एल्ब्यूमन और केसीन दोनोंमें ऐसे ऐमिनो-एसिड्स निस्सन्देह पर्याप्त मात्रामें विद्यमान हैं, जो उचित विकास और तन्तुओंके पुनर्निर्माणके लिये आवश्यक माने गये हैं। कहनेका तात्पर्य यह है कि एल्ब्यूमन और केसीन दोनों जीवनकी दृष्टिसे पूर्ण प्रोटीन हैं। अतः जब हम वानस्पत्य या जैव प्रोटीनोंसे दुग्ध-प्रोटीनकी तुलना करते हैं, तब इसका जीवनसम्बन्धी मूल्य बहुत ऊँचा हो जाता है। इस बातका महत्त्व विशेषकर उन शाकाहारियोंके लिये स्पष्ट हो जाता है, जो दूधसे प्राप्त किये हुए प्रोटीनके अतिरिक्त और किसी प्रकारका जैव प्रोटीन नहीं ग्रहण करते। एक बात और है, वह यह कि अन्न या शाकके प्रोटीनोंके साथ-साथ जब दुग्ध-प्रोटीन लिया जाता है, तब उनका जीवनसम्बन्धी मूल्य बहुत अधिक बढ़ जाता है। मानव-पोषणके सम्बन्धमें यह भी एक महत्त्वपूर्ण बात है। उत्पादनकी लागतकी दृष्टिसे भी हमारा बहुमूल्य निरपेक्ष आहार—दूध देनेवाली डेयरीकी गाय ही जैव प्रोटीन प्राप्त करनेका अत्यन्त सस्ता साधन है।

दुग्ध-शर्करा

दूधमें शर्करा साधारणतया ४.८ प्रतिशत रहती है, किन्तु दूधके शक्तिदायक गुणका ३० प्रतिशत इसीमें मिलता है। शक्ति-निर्माणका मुख्य साधन होनेके कारण शर्कराका सदा मिलते रहना शरीरके लिये आवश्यक है। जो भोजन हमलोग करते हैं, उसमें इस विशेष शर्करा-का अंश बहुत कम रहता है। किन्तु सामान्यतः यह शर्करा माँड़युक्त पदार्थके पाचनसे, ईखसे या दूधकी चीनीसे प्राप्त होती है। अधिक माँड़ (Starch) वाले पदार्थोंकी तुलना-में दुग्ध-शर्कराका उतना सबल साधन नहीं है, किन्तु दुग्ध-शर्करा पुष्टिकर भोजनके रासायनिक परिवर्तनमें विभिन्न प्रकारसे सहायता पहुँचाती है। आँतोंमें जो जीवाणुहीन किण्व (Enzymes) की शर्करा विद्यमान रहती है वह इस दुग्ध-शर्कराको इस प्रकार तोड़ देती है कि शरीरकी संचालन-प्रक्रियामें उसका अधिक-से-अधिक उपयोग हो सके, जिससे कि प्रौढ मनुष्योंकी आँतमें सड़न रोकनेवाले जीवाणुओंकी वृद्धिके लिये वह एक अनुकूल माध्यम बन जाय तथा कैल्शियम और फास्फोरसको पचानेकी शक्ति बढ़ानेमें सहायक हो।

खनिज तत्त्व

ऐसे ग्यारह अजैव या क्षार-प्रोटीनके तत्त्वोंका पत

चला है, जो मध्यम श्रेणीके पोषणके लिये आवश्यक हैं। वे हैं—कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम, पोटैशियम, मैगनीशियम, आयोडीन, क्लोरीन, गन्धक, लोह, ताँबा और मैंगेनीज—ये सारे तत्त्व दूधमें रहते हैं।

कैल्शियम प्राप्त करनेका दूध एक सर्वोत्तम साधन है, तथा दाँत और हड्डीका निर्माण करनेवाले इस तत्त्वकी यथोचित मात्राको दुग्धान्नोंके अतिरिक्त अन्य साधनोंसे पाना प्रायः असम्भव ही है। विकासोन्मुख शिशु तथा परिश्रमी मनुष्यके लिये क्रमशः ०·८ और १·० ग्रैम कैल्शियमकी आवश्यकता है, और यह मात्रा २ पौंड दूधसे मिल सकती है। यह बात भी अच्छी तरह जानी जा चुकी है कि कैल्शियमका अभाव 'गुप्त क्षुधाओं'मेंसे एक महत्त्वपूर्ण क्षुधा है और यह एक ऐसा तत्त्व है, जिसका अभाव औसत दर्जेके भोजनमें शायद सबसे अधिक पाया जाता है। कैल्शियम प्राप्त करनेका अत्यन्त सुसाध्य उपाय है—आहारमें दूधकी मात्रा बढ़ाना। साग-पात-द्वारा प्राप्त किये हुए कैल्शियमकी अपेक्षा दूधका कैल्शियम बहुत शीघ्र पच जानेवाला होता है। गेहूँमें दूधका तिहाई और मानवी-दूधमें गो-दुग्धका चौथाई कैल्शियम होता है।

कैल्शियमके बाद महत्त्वपूर्ण खनिज तत्त्वोंमें फास्फोरस-का स्थान है। केसीनको छोड़कर ऐसे बहुत कम प्रोटीन हैं, जिनमें फास्फोरस मिला हो। अजैव फास्फोरस, लाइपिंस (Lipins) के साथ मिला हुआ फास्फोरस, जैव एस्टर्स (Esters) तथा प्रोटीन दूधमें पाये जाते हैं। दूधमें विद्यमान कैल्शियम एवं पोटैशियमका मैगनीशियम तथा सोडियमके साथ अनुपात अधिकांश वही है, जो कि मानव-शरीरके मांसतन्तुओंमें पाया जाता है और इसीलिये उनका महत्त्व है। बहुधा यह कहकर दूधकी आलोचना की जाती है कि इसमें लौहतत्त्व बहुत कम है और वास्तवमें बात है भी ऐसी ही। यदि केवल दूधपर रहा जाय तो शरीरके लिये आवश्यक लौहतत्त्वकी मात्रा नहीं प्राप्त हो सकती, जबतक कि किसी अन्य साधनसे उसकी पूर्ति न की जाय। किन्तु फिर भी दूधमें जितना लौहतत्त्व है, उतना तो मिल ही जाता है। किसी भी दशामें यह अभाव उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है। माका दूध पीनेवाले बच्चोंके पित्ताशयमें बहुत-सा लौहतत्त्व तो यों ही एकत्र हो जायगा और उसके बाद इस अभावकी पूर्ति अन्य साधनोंद्वारा बड़ी सुगमतासे की जा सकती है।

अन्य सहायक खाद्य-तत्त्व (विटामिन)

यद्यपि यह ठीक है कि कुछ साग-तरकारियाँ कैरोटीनके रूपमें विटामिन 'ए' के अत्युत्तम साधन हैं, तथापि विटामिन 'ए' के साधनकी दृष्टिसे दूधका महत्त्व बहुत अधिक, जब हम यह देखते हैं कि अधिक दूधका उपयोग अन्य खाद्यतत्त्वोंकी प्राप्तिके लिये होता है, और इन तत्त्वोंकी प्राप्तिका सबसे सस्ता साधन दूध ही है, बढ़ जाता है। अतः अन्य खाद्य-तत्त्वोंकी प्राप्तिके लिये पर्याप्त मात्रामें पीये हुए दूधसे अनायास ही जो विटामिन 'ए' हमें मिल जाता है, उसे अतिरिक्त प्राप्ति या लाभ समझना चाहिये। शिशु या छोटे बच्चे, जिनके दैनिक भोजनका अधिकांश भाग दूध ही रहता है, विटामिन 'ए' के आवश्यक परिमाणका ३० से ५० प्रतिशत भाग दूधसे ही प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार विटामिन 'ए' के साधन रूपमें भी दूधका बहुत बड़ा महत्त्व है।

दूधसे प्राप्त होनेवाले दूसरे विटामिन हैं—'बी'१ और 'बी'२। जहाँतक हम समझते हैं, मनुष्य 'बी' वर्गके किसी भी विटामिनका कृत्रिमरूपसे निर्माण नहीं कर सकता। अतः उसकी प्राप्ति भोजनद्वारा ही हो सकती है। ये विटामिन पौधों और जीवोंके मांस-तन्तुओंमें रहते हैं और शायद आँतके मित्रजीवाणुओं-द्वारा भी उत्पन्न होते हैं। इतना होनेपर भी भारतके कुछ भागोंमें विटामिन 'बी' के अभावके कारण होनेवाली बीमारियाँ बेरी-बेरी और पेलाग्रा बहुत पायी जाती हैं। यह बात ठीक है कि दूधमें ये दो विटामिन 'बी'१ और 'बी'२ अधिक नहीं होते; गायके दूधमें मानवी दूधसे विटामिन डेढ़गुनी मात्रामें होते हैं और खमीरकी शक्तिका ५० वाँ भाग होता है। आमिषभोजी तो इन विटामिनोंको किन्हीं अन्य साधनोंसे भी प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु शाकाहारियोंके लिये तो दूध ही इनका सबसे सस्ता साधन है।

फल और तरकारियोंकी अपेक्षा दूधमें विटामिन 'सी' बहुत कम होता है, अतः केवल दूधपर रहनेवाले बच्चोंको ऊपरसे संतरेका रस पिलाना चाहिये। विटामिन 'डी' भी दुग्ध-स्नेहमें मिला हुआ बहुत थोड़ी मात्रामें रहता है। अतः ऐसी दशामें भी तेल-जैसी कुछ ऐसी वस्तुएँ बच्चोंको पिलानी चाहिये, जिनमें विटामिन 'डी' का आधिक्य हो। शरीरमें अधिक विटामिन 'डी' के प्रवेशसे दाँतों और हड्डियोंका निर्माण तथा यथोचित विकास निश्चित रहता है और इस कारण बच्चे अस्थि-क्षयकारक रोग तथा दाँत सड़ानेवाले रोगसे बचे रहते हैं। दूधमें यह महत्त्वपूर्ण विटामिन 'डी' बहुत कम है,

अतः गायको रासायनिक प्रक्रियाद्वारा उत्तेजित घास खिलाकर अथवा स्वयं दूधको उत्तेजित करके दूधके विटामिन 'डी' को बढ़ानेके प्रयत्न आजकल हो रहे हैं। दूधमें विटामिन 'ई' भी बहुत कम मात्रामें होता है और थोड़ा-बहुत जो होता है, वह विटामिन 'ए' और 'डी' की भाँति दुग्ध-स्नेहमें ही मिला रहता है।

दूधके पोषण-सिद्धान्तोंका इतना वर्णन हमने कर दिया; किन्तु ऐसा लगता है कि अभी बहुत कुछ स्पष्ट करना शेष है। हमें आशा है कि इस विषयमें बहुत आकर्षक और महत्त्वपूर्ण विचार भविष्यमें प्रकट होंगे। विज्ञानकी व्याख्या अथवा उदाहरणोंकी ओर दृष्टि किये बिना भी हमें पूरा-पूरा विश्वास है कि मनुष्य-जीवनकी प्रत्येक अवस्थामें, विशेषकर जब वह शैशवमें विकासोन्मुख रहता है या जब वह रोगी रहता है अथवा रोगसे शीघ्र ही उठा हुआ होता है, दूध एक बहुमूल्य खाद्य-पदार्थ है। गर्भिणी या संतानवती माताओंके लिये भरपूर दूधकी आवश्यकता है। अधिक-से-अधिक दूधकी आवश्यकताको जानते हुए ऐसे साधनों और उपायोंको ढूँढ़नेका प्रयत्न करना हमारा धर्म है, जिनसे सस्ते भावमें और सुगमताके साथ लोगोंको दूध मिल सके। इससे हमारी बहुत-सी सामाजिक एवं आर्थिक गुत्थियाँ सुलझ जायँगी—जैसे दुष्पोषण, शिशु एवं माताओंकी मृत्यु तथा असमय ही समाप्त हो जानेवाला छोटा जीवन।

आह्वान

आओ मोहन! आओ मोहन! प्रेमसुधा बरसाओ मोहन!
घूम घूमकर पीछे पीछे
वन-वन जिन्हें चराते थे तुम।
नीली, पीली, धौरी, श्यामा,
कहकर जिन्हें बुलाते थे तुम।
वे प्राणोंसे प्यारी गैयाँ पुकारती हैं, आओ मोहन।
जिन बछड़ोंको गोद उठाकर
सदा मोदसे रहे खेलाते।
चुम्बन करते कभी प्रेमसे
कभी जिन्हें तुम थे सहलाते।
मूक भावसे वे कहते हैं अब न अधिक तरसाओ मोहन।
हाय! हाय! असहाय हुई ये
कटतीं आज तुम्हारी गैयाँ।
कहाँ गये गोपाल! तुम्हें ही
रटतीं आज तुम्हारी गैयाँ।
खाओ तरस, दरस दो आओ, आकर इन्हें बचाओ मोहन।
आओ मोहन! आओ मोहन! प्रेमसुधा बरसाओ मोहन।

—शिवनाथ दुबे

गोभक्तिके फल

(सच्ची घटनाएँ)

(१)

कोल्हापुर राज्य और ब्रिटिश राज्यकी बीच सीमापर धुंदकी नामक एक छोटा-सा गाँव है। गाँवके देवालयमें एक गौ रहा करती थी। लगभग १०० वर्ष पहलेकी घटना है। कुछ कसाई कोल्हापुर राज्यमें गौएँ खरीदकर अंग्रेजी राज्यमें ले जाते हुए इस गाँवके जंगलमें पहुँचे, उनके साथकी गौओंमें कुछ बछियाएँ भी थीं। इन्हें क्या पता जो हमें जीवनके उस पार उतारा जा रहा है! पर इतना तो वे समझती थीं कि किन्हीं कठोर हाथोंने हमें बाँधा है। इस बन्धनको तुड़ाकर वे निकल भागना चाहती थीं। उनकी पीठपर कसाइयोंके डंडे पड़ रहे थे। फिर भी वे बन्धन तुड़ाकर भागनेका प्रयत्न कर ही रही थीं। उनमेंसे एक किसी तरह, वहाँसे निकल भागी और सीधे गाँवके मुखियाके घरमें घुस गयी। कसाईके नौकर उसके पीछे लगे थे, पर वह उनके हाथ न आयी।

कसाइयों और गौओंका यह रंग-ढंग देखकर गाँवके चरवाहोंने बाकी गौओंको भी भगा दिया। तब कसाइयों और चरवाहोंमें बहुत कहा-सुनी हुई। शरणागतको भला हिंदू होकर वे कैसे छोड़ सकते थे ! हिंदू-धर्मकी तो यह एक मुख्य बात है—

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि॥

एक तो शरणागत, दूसरे गोमाता, जिसके लिये पूर्वके लोगोंने अपने प्राणतक न्योछावर किये! ऐसे सुदृढ़ परम्परागत संस्कार जिनके हैं, वे ग्वाले-गड़रिये भला उस गौको कैसे छोड़ देते! बड़ी हुज्जत हुई, हाँ-नहीं करते-करते बात उस बछियाकी कीमतपर आयी। कसाई ५०) रुपया देनेको तैयार हुए पर उसी बछियाके लिये। आखिर पिनलकोडका अगुआ डंडाकोड चल पड़ा। एक तरफ ये तीन-चार कसाई और दूसरी तरफ गाँवके सब लोग! कसाइयोंके मिजाज ठंडे हुए, तब उन्होंने सरकार-दरबारका रास्ता लिया। उन्हें अंग्रेजी हुकूमतका बल था और जिस मुखिया-के यहाँ वह गौ स्वयं आ गयी थी उसे धर्मकी एकताका बल था। दोनोंकी भिड़न्त हुई। पोलिटिकल एजेंटने महाराजको लिखा और महाराजने मुखियाको तलब किया। तब गाँवके सब लोग बछियाको संग लेकर महाराजके पास गये। बछियाको महाराजके सामने करके सारा हाल कह सुनाया और बोले, 'आप गो-ब्राह्मणप्रतिपालक हैं, इसे हमलोग आप-के हवाले करते हैं, आप चाहे इसे कसाइयोंके हाथमें दें, अंग्रेज सरकारको दे डालें या गाँवको दे दें। आप ही इसके विधाता हैं।' महाराजने गाँववालोंका कहना सुन-समझ लिया, गौ गाँववालोंको ही सौंप दी और यह आज्ञा की कि, 'करवीर (कोल्हापुर) राज्यमें कसाई रोजगार न करें।'

हिंदू-धर्मकी दृष्टिसे इसमें कोई नयी बात तो नहीं हुई। पर इसके आगेकी घटना हृदयको बेधनेवाली है। गाँववालोंने यह गौ गाँवके शिवालयमें श्रीशङ्करजीको अर्पण कर दी। तबसे मृत्यु होनेतक वह गौ उसी शिवालयमें थी, कभी किसीके खेतमें नहीं गयी, किसी पशुसे लड़ी नहीं, कभी ऋतुमती भी नहीं हुई तो फिर गाभिन कहाँसे होती? पर जिस दिन श्रीशिवार्पित हुई, उस दिनसे अपने जीवनके अन्तिम दिनतक शिवजीके पञ्चामृतके लिये प्रतिदिन आधा सेर दूध दिया करती थी।

(२)

सतारा जिलेके कराड़ तालुकेमें कासार सिरंबा नामक एक ग्राम है। यहाँके रहनेवाले गोविन्ददास महाराज महान् गोभक्त थे। उनकी गोभक्तिकी कथा अतिशय हृदयस्पर्शी है। इनके मठमें इनके बैठने और सोनेके स्थानको छोड़ बाकी सब जगह गौओंके गोठोंसे ही भरी हुई थी। इन गौ-बछड़ोंकी सेवा करनेमें ही इनका सारा दिन बीतता था। एक बार इनकी कुछ गौएँ खो गयीं। इन्होंने तहसीलदारकी कचहरीमें दरख्वास्त दी और यों टहलते-टहलते पासके बेलबड़ बाजारमें चले गये तो खोयी हुई गौओंमेंसे कई इन्हें कसाइयोंके हाथोंमें दीख पड़ीं। इन्होंने पुलिसमें इत्तिला दी। कसाइयोंने कुछ सबूत पेश किये यह दिखानेके लिये कि गौएँ हमारी हैं। इनसे पूछा गया, आपके पास कोई सबूत? इन्होंने जवाब दिया, 'मेरी गौएँ ही मेरा सबूत हैं! वे ही मेरी गवाही देंगी।' यह सुनकर बहुत लोग हँस पड़े।

गौओंने गवाही दी!

जो बोल नहीं सकती, वह गवाही कैसे दे सकती है? पर श्रद्धा-भक्तिके लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। जड़

पाषाणकी मूर्ति यदि भोग पा सकती है तो विश्वजननी गोमाता अपने भक्तकी ओरसे गवाही क्यों नहीं दे सकती? तहसीलदारने जब पूछा कि, आपकी तरफसे कौन गवाह हैं तो गोविन्ददासजीने गौओंकी तरफ अँगुलीसे इशारा किया। तहसीलदारने कहा, 'आप गौओंकी तरफ इशारा करते हैं, पर ये गौएँ आपकी हैं, इसका सबूत क्या है?' गोविन्ददासजीने उत्तर दिया, 'सबूत? जगत्की सब गौएँ हम तपस्वी ब्राह्मणोंकी हैं। आप चाहें तो शास्त्रोंको देख सकते हैं।' तहसीलदारने कहा, 'यह सबूत तो द्वापरयुगका है, आज इससे कोई मतलब नहीं हासिल हो सकता। ये गौएँ आपकी हैं तो कोई रसीद-पुरजा या और कोई कागज आपके पास ऐसा है जो आप सबूतमें दाखिल कर सकें?' गोविन्ददासजीने कहा, 'कागज-वागज मेरे पास कुछ नहीं है। ये गोमाताएँ ही मेरी गवाह हैं। मैं इन्हें बुलाता हूँ, ये यदि मेरे पास आ जायँ और अपना प्यार दिखा दें तो आप मानेंगे या नहीं।'

तहसीलदार तथा प्रतिपक्षी लोग जब राजी हुए तब गोविन्ददासजीने गौओंको पुकारा, 'गङ्गा, गोदा, यमुना, कृष्णा, सावित्री, मेरी माता, आओ, आओ, मेरी माता, आओ!' इस तरह पुकारते हुए ज्यों ही उन्होंने उन गौओंको अपने पास आनेके लिये हाथसे इशारा किया, त्यों ही सब गौएँ अपने बन्धन तुड़ाकर उनके पास दौड़ी गयीं और उनका बदन चाटने लगीं। सब लोग और कसाई भी देखकर दंग रह गये और गौएँ गोविन्ददासजीके पीछे-पीछे मठके अंदर अपने गोठोंमें आ गयीं। बेलवड़के बाजारकी तरफ तबसे गोविन्ददासजीकी विशेष दृष्टि हो गयी।

'हा मेरी कपिली!'

आश्विन कृष्ण १० शाके १८३९ (ता० १०-१०-१७) का दिन था। गोविन्ददासजी खोयी हुई गौओंको देखने बेलवड़ बाजारमें पहुँचे। देखते-देखते एक गौके सामने ठहर गये और समीप ही खड़े कुछ गोसेवकोंसे कहने लगे, 'देखो, यही तो मेरी कपिली (कपिला) है। अब कैसे क्या हो? इस तरह कितनी गौएँ लापता हो जाती होंगी। कोई सुध लेनेवाला नहीं रहा। यह देखो, मेरी धौरी! वह वहाँ मेरी कबरी भी है! हरे! हरे! भगवन्! आप कबतक मेरी परीक्षा करेंगे? इतने हिंदुओंके जीवित रहते गौओंकी गर्दनोंपर छुरी चले? ये क्या हिंदू हैं? पर मैं इन्हें क्या कहूँ? मैं स्वयं क्या हूँ? मैं हिंदू, हिंदुओंमें भी ब्राह्मण हूँ! मेरे देखते यह सब हो रहा है और मैं जी रहा हूँ! धिक्कार है ऐसे जीनेको! गोपाल कृष्ण! अब इस जीवनको समाप्त करनेमें क्यों देर लगा रहे हो? हा! मेरी कपिली!' ऐसे ही दुःखोद्गार उनके मुखसे निकल रहे थे और वे इधर-से-उधर चक्कर लगा रहे थे। सैकड़ों बार उन्होंने कपिलाका नाम लिया। जो लोग वहाँ जमा थे वे कोई भी अब उन्हें नहीं दिखायी देते थे। उनके सामने सब ओर कपिली, धौरी, कबरीकी ही मूर्तियाँ खड़ी थीं। उनकी दृष्टि उन्हींकी ओर लग गयी। उनकी देह जड़ हो गयी, एक जगह स्थिर हो गये, एक बार आकाशकी ओर देखा और फिर अपनी गौओंकी ओर देखा, हाथ जोड़कर प्रणाम किया, उपस्थित गोसेवकोंको प्रणाम किया। भगवान् गोपाल कृष्णको एक बार पुकारा और 'हा! मेरी कपिली' कहते हुए धड़ामसे धरतीपर गिर पड़े। यह देखकर लोग इधर-उधर भागने लगे और आठ-दस गौएँ बन्धन तुड़ाकर उनके पास आ गयीं और उनका बदन चाटने लगीं। पर वे अब कहाँ थे? गौ और गोपालका ध्यान करते हुए वे इहलोकसे चले गये। सिरंबा गाँवमें गोविन्ददासजीका अन्त्यसंस्कार हुआ और बेलवड़में उनका स्मारक-मन्दिर बना है।

(३)

सन् १८९६में महाराष्ट्र और कर्णाटकमें भयङ्कर अकाल पड़ा। गरीब-गुरबा और गाय-बैल तथा अन्य पशु भूखों मरने लगे। बीजापुरकी तरफके 'लमाण' जातिके कुछ लोग पेट भरनेके लिये कोल्हापुर-राज्यके चिंचली गाँवमें आकर रहने लगे। उनके साथ बहुत-से गाय-बैल भी थे। ये लोग नाममात्र मूल्य लेकर अपनी गौओं और बैलोंको बेचने लगे। कसाइयोंके लिये तो यह मौका ही था। चार आनेसे लेकर बारह आनेतकमें गाय-बैल बिके और कसाई उन्हें डंडे मारते हुए ले जाने लगे।

गाय-बैल एक तो भूखे थे, दूसरे उनपर डंडोंकी मार पड़ने लगी। उनसे एक पग भी चला नहीं जाता था। रास्तेमें हनुमान्जीका एक मन्दिर मिला। इन गाय-बैलोंमेंसे एक गौ शायद हनुमान्जीको अपना रक्षक जान झुंडमेंसे निकलकर हनुमान्जीके सामने जाकर बैठ गयी। कसाइयोंने उसे मार-मारकर उठाना चाहा; पर वह नहीं उठी। उसपर इतनी मार पड़ी कि साठ-सत्तर जखम हो गये और उनमेंसे रक्त बहने लगा, नेत्रोंसे आँसुओंकी धारा चल ही रही थी। अतिदीन होकर वह चारों ओर ताक रही थी कि कोई माईका लाल आकर छुड़ायेगा। गाँवके एक रईस सुलतान वालगौड़ा

पाटिल वहाँ आये तो उनसे यह हाल देखा न गया। उन्होंने कसाइयोंको बहुत समझाया, पर उनके निर्दय हृदय न पसीजे। तब पाटिल गाँवके लोगोंको बुला लाये। गाँवके लोगोंने सब गौओंको असली खरीदसे अधिक मूल्य देकर छुड़ा लिया। पर उस बैठी हुई गौको खरीदनेके लिये कोई तैयार न हुआ। तब पाटिलने स्वयं उसे बारह आनेमें खरीद लिया।

'गोमाता! अब उठो' पाटिलके यह कहते ही वह उठकर खड़ी हो गयी। सब लोग आश्चर्य करने लगे। आठ-दस दिन दवा-दारू करनेपर वह गौ अच्छी हो गयी। जिस दिन वह गौ पाटिलके यहाँ आयी, उस दिनसे पाटिलका भाग्य खुला, उनके घर लक्ष्मी रमने लगीं।

पाटिलकी यह विभववृद्धि कुछ ईर्ष्यालु प्रकृतिके लोगोंसे न सही गयी। एक वर्षके अंदर ही 'गौ चोरी की है' इस अभियोग-पर पाटिलके नाम गिरफ्तारीका वारंट निकला। घरके सब लोग रोने लगे; गौ भी रँभाने लगी। पर पाटिल कुछ नहीं बोले। गौ जब्त की गयी; पर उसे ले जानेका किसीको साहस नहीं हुआ; क्योंकि वह गुस्सेसे भरी हुई, सींग आगेको किये हुए बड़ी तीखी दृष्टिसे देख रही थी। ऐसा मालूम होता था कि दस-बीस आदमी भी उसे पकड़नेके लिये एक साथ उसके पास जाते तो वह सबको लिटा देती। पर इसके आगे और भी तो उपाय उनके लिये थे ही। वे गौको डंडोंसे मारने लगे। पाटिलसे यह नहीं सहा गया और उन्होंने गौको छोड़ दिया। सरकारी आदमी उसे मारते हुए महाल रायबागमें ले गये और वहाँ उसे कसकर बाँध रक्खा। गौने खाना-पीना छोड़ दिया और वैसे ही, बिना कुछ खाये-पीये, आठ दिन जहाँ-की-तहाँ खड़ी रही। यह देखकर मैजिस्ट्रेटको दया आयी और उन्होंने गौ अभियुक्त (सुलतान पाटिल)के ही हवाले कर देनेका हुक्म दिया।

अभियोग झूठा था। अभियोग रचनेवाले कुछ हिंदू ही थे और उनमें कुछ ब्राह्मण भी शामिल थे। पासके ही एक गाँवका महार इस कामके लिये खड़ा किया गया था। उसीको फरियादी बनाकर उसके द्वारा यह मामला दायर कराया गया था। पुलिस इंसपेक्टरने पाटिलसे सबूत माँगा तो उन्होंने सब सच्चा हाल उन्हें सुना दिया और कहा कि मेरे पास और कोई सबूत नहीं है। पुलिस इंसपेक्टरने सच्चे-झूठेकी पूरी जाँच करायी। फरियादी महार उस गौको जिस पासके एक गाँवके महारसे खरीदी बतलाता था, उस गाँवमें यह गौ छोड़ दी गयी; पर वह गौ न तो उस बेचनेवाले महारके घर गयी, न फरियादी महारके घर, बल्कि वहाँसे छः मीलके फासलेपर चिंचली गाँवके इन सुलतान पाटिलके घर सीधी चली आयी। अन्तमें सत्यकी विजय होती ही है। सरकारी हुक्मसे सम्मान-के साथ वह गौ पाटिलके घर पहुँचायी गयी; गौको और सब-को बड़ा आनन्द हुआ।

इस गौने पाटिलको चार बछड़े और तीन बछियाएँ दीं। वह स्वयं रोज तीन सेर दूध अन्ततक दिया करती थी। मृत्युके दिन वह गौ रोजकी तरह चरने गयी और चरते-चरते एका-एक नीचे बैठ गयी और स्वर्गको सिधार गयी। पाटिलने उसकी स्मृतिमें एक समाधि-मन्दिर बनाया है। उस गौके वंशका अच्छा विस्तार हुआ है। पाटिल इन बछिया-बछड़ोंको इस शर्तपर लोगोंको देते हैं कि कोई इन्हें बेचे नहीं। इस प्रकार पाटिलकी गोभक्तिका फल सबको मिल रहा है। (गो. ज्ञा. को.)

गोबरसे प्रार्थना

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां रसं वने। तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्।
यन्मे रोगांश्च शोकांश्च पापं मे हर गोमय!॥

वनमें अनेकों ओषधियोंके रसको चरनेवाली वृषभपत्नी (गायों) के पवित्र और कायाकी शुद्धि करने-वाले हे गोबर! तू मेरे रोग, शोक और पापोंका नाश कर।

हमारी गायोंकी समस्या

(लेखक—श्रीमुरलीधरजी दिनोदिया, बी०ए०, एल्-एल्० बी०)

तू वह मख़लूक़ है, ख़िल्क़तमें नहीं जिसका गुनाह ।
ली है क़ालिबमें तेरे रूहे-मुहब्बतने पनाह ॥
तेरी सूरतसे अयाँ होती है इन्सानकी चाह ।
रसभरी आँख समाई हुई अमृतमें निगाह ॥
नक़्शा है दिल पै मेरे मोहनी सूरत तेरी ।
खूब दुनियाके शिवालेमें है मूरत तेरी ॥
इस हलावतसे जो दावाए-सखुन गोई है ।
दूधसे तेरे लड़कपनमें ज़बाँ धोई है ॥

—स्व० ब्रजनारायण 'चकबस्त'

यह तो नहीं कहा जा सकता कि पशुओंको पालतू बनाकर उनसे सवारी, ढुलाई, हल चलानेका काम लेना एवं उनका दूध निकालकर पीना मानव-जातिने कब सीखा। संसारके प्राचीनतम उपलब्ध साहित्य वेदमें भी इसका उल्लेख पाया जाता है। निस्सन्देह अति प्राचीन कालमें ही मानव-जातिने यह आविष्कार कर लिया था और इसी आविष्कारके सहारे मानवजाति सभ्यताकी दौड़में लंबे कदम रखती बढ़ी चली आयी है। सभ्यताके विकासके इतिहासमें पशुओं, विशेषतया गायका स्थान बहुत आगे है।

यों तो सभी पशु मनुष्यके लिये उपयोगी हैं; पर गायकी उपयोगिता अनेकों दृष्टियोंसे सर्वोपरि है। वर्तमान कालमें पृथ्वीके सभी सभ्य देशोंमें गाय विद्यमान है। और सभीने गो-भक्षकोंतकने, गायके सर्वोपरि महत्त्वको स्वीकार किया है। लेकिन भारतवर्षकी अपनी विशेषता यह है कि यहाँ गायको अज्ञातकालसे धार्मिक दृष्टिकोणसे देखा गया है। भारतवर्षका यह दृष्टिकोण उसकी 'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्' की भावनाके अनुरूप ही है। दृष्टिकोणकी यह विश्वकल्याणी व्यापकता अन्यत्र दुर्लभ है। समस्त हिंदू-साहित्य गो-महिमासे ओतप्रोत है।

किसी जमानेमें मुद्राके अभावमें वस्तु-विनिमय होता था और शायद गायसे मुद्राकी इकाईके तौरपर भी कभी काम लिया गया हो। लेकिन हमारे आजके कृषिप्रधान देशमें, जहाँ हलमें बैलोंको जोता जाता है, गाय-बैल सचमुच किसानोंका धन है। सूरदासके व्रजमें 'गोधनकी सौं' खायी जाती थी। आजके व्रजका हमें पता नहीं, हमारे हरियानामें आज भी गाय-बैलको धन कहा जाता है और किसान-लोगोंमें गाय-बैलकी सौं—शपथकी प्रथा भी पायी जाती है। वाच्यार्थमें दूधकी नदियाँ तो शायद ही कभी बहीं हों, परन्तु हमारे हरियानेमें घी-दूधकी प्रचुरता थी और खूब थी। एक वृद्धने, जो गाँवभरमें आयुमें सबसे बड़ा है, हमें बतलाया कि वह अनाज तो कम खाता था, घी-दूध ही अधिक खाता था। तब अतिथिका घर-घर दूधसे सत्कार किया जाता था। प्रसूता एक जापेमें इतना घी खा लेती थी कि अब तो उतना दूध भी जच्चाओंको प्राप्त नहीं होता। दूध बेचना नीच काम समझा जाता था। किसान कहते थे कि दूध बेचा, ऐसा पूत बेचा। हमारी अपनी यादमें कितनी बातें बदल गयी हैं। श्राद्धके दिनोंमें गाँवमें दूध मोल नहीं मिलता था, मुफ्त मिल जाता था। आज उसी हरियानेमें छाछ भी बिकती है! हमने पहले-पहल सुना तो विश्वास ही न हुआ कि छाछ बिकती है; पर सचाई जानकर आश्चर्य एवं दुःख हुआ। वृद्धाएँ आज भी बहुओंको असीसती हैं, 'दूधों नहाओ, पूतों फलो, बूढ़ सुहागिन होओ' और इस असीसमें पुराने दिनोंकी एक झलक है।

कहा जाता है कि हरियाना नाम पड़नेका यह कारण है कि यहाँ जंगल बहुत थे और खूब घास होती थी। बात कुछ ठीक-सी लगती है। आज पशुओंको दिनमें और रातको (जिसे 'पसर' कहा जाता है) जंगलमें चराने ले जाया जाता है। लड़के-लड़कियों, वृद्धों एवं युवकोंसे भी यह काम लिया जाता है और उन्हें हमारी बोलीमें 'पाळी' कहा जाता है। यह सब होते हुए भी सब कुछ बदला हुआ-सा लगता है। दूर नहीं, स्वयं हमारी यादमें १० सेर दूध देनेवाली गाय साधारणतया होती थी, जो आज १०-२० गाँवोंमें खोजनेपर शायद मिले। बैल कैसे सुन्दर, सुडौल, ऊँचे, लंबे, भारी, तगड़े और तेज चलनेवाले होते थे और कितना भार वहन कर सकते थे! किसानलोग उन्हें डोरों, बाजों, आभूषणोंसे सजाकर और रास हाथमें थामकर गर्वसे छाती चौड़ी करके चलते थे तो पड़ोसीको भी आकाङ्क्षा होती थी कि मैं भी इसी तरह गर्वसे चलूँ। साँड़ोंकी बात ही क्या, उनकी चराईका समूचे गाँवकी तरफसे सम्मान्य अतिथिकी तरह सुप्रबन्ध होता था, जो

कहीं-कहीं अब भी पाया जाता है। और गायोंका अनुपम सौन्दर्य देखकर तो उन्हें माता कहना ही पड़ता था। लेकिन आजके ये मरघिल्ले पशु ! कहते हैं बुन्देलखण्ड और बंगालकी गायें पावभर, आध सेर दूध देती हैं। सुनकर आश्चर्य होता है। लेकिन हरियानेकी नस्लका ह्रास क्या इससे अधिक शोचनीय नहीं है ? लोग कहते हैं—कहाँ तो रुपयेका मन, डेढ़ मन, अनाज बिकता था और कहाँ आज रुपयेकी १० सेर कड़बी और १५ सेर न्यार (चनेका भूसा) बिकता है। लेकिन किसी जमानेमें जहाँ रुपयेका मन, डेढ़ मन घी बिकता था (दूधका तो भाव ही क्या होगा !), वहाँ आज घीको तोलोंसे तोलनेकी नौबत आ पहुँची है। पशु-विशेषज्ञ बतलाते हैं कि हमारे ये मरघिल्ले पशु भारस्वरूप हैं तथा किसानोंके आर्थिक उत्थानमें भारी रोड़े हैं। यह ठीक हो सकता है। पर उसी हिसाबसे जाँचनेपर हम आजके भारतीय मनुष्य भी तो मरघिल्ले ठहरते हैं। क्या विशेषज्ञ कृपाकर बतलावेंगे कि हम मनुष्य किसकी उन्नतिमें बाधक हैं ? वास्तवमें तो समूचे भारतीय राष्ट्रका व्यापक ह्रास हुआ है। श्री डी० एच० जानीका कथन यथार्थ है कि मनुष्य तथा गाय दोनोंका उत्थान एक साथ होता है एवं पतन भी एक साथ होता है। जहाँ गोभक्षक देशोंने अपने यहाँ गायकी नस्लको सब तरहसे उन्नत किया है, वहाँ हम गो-पूजकोंने उसका ह्रास होने देकर अपने-आपको भी पतनके गहरे गड्ढेमें गिरा दिया है ! 'किमाश्चर्यमतः परम् ।'

लेकिन हमारे देशके शुभचिन्तकोंका ध्यान इधर न गया हो, सो बात नहीं है। स्वा० दयानन्द सरस्वती शायद प्रथम भारतीय थे, जिन्होंने इस बातको अनुभव किया और उनकी 'गो-करुणानिधि' निस्सन्देह आधुनिक भारतीय भाषाओंमें गो-साहित्यकी सर्वप्रथम पुस्तक है। उनके आन्दोलनके पश्चात् देशमें गोशालाओंकी स्थापना होने लगी। राव बहादुर जे० एन० मानकर महोदयके कथनानुसार वर्तमान समयमें भारतभरमें १५०० से अधिक गोशालाएँ एवं पिंजरापोल तथा २०० के लगभग अन्य सेवा-संस्थाएँ हैं जो पशुओंकी सुख-सुविधाके कार्योंमें प्रवृत्त हैं। इन गोशालाओंकी विविध मदोंसे वार्षिक आय करोड़ों रुपयेतक पहुँचती होगी। लेकिन इन गोशालाओंसे राष्ट्रीय समस्याओंका समाधान बहुत ही कम हुआ है !

भारतके मुस्लिम शासक गो-भक्षक थे; पर गो-वंशका ह्रास मुस्लिम-शासनकालमें भी इतना न हुआ था जितना ब्रिटिश शासनकालमें हुआ है। जहाँ यूरोपके छोटे-छोटे राष्ट्र प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयेके दुग्धजात पदार्थ बेचते हैं, वहाँ हमारा यह महान् राष्ट्र आज लाखों रुपयेके दुग्धजात पदार्थ विदेशोंसे प्रतिवर्ष खरीदता है और स्वयं खाल, मांस, रुधिर, चर्बीकी बिक्रीमें आगे बढ़ा हुआ है। हमारे शासकोंके देशमें 'अधिक दूध पिओ' आन्दोलन सरकारकी ओरसे चलाया जाता है और यहाँ जच्चा-बच्चों और बीमारोंके लिये भी दूध अप्राप्य है ! ब्रिटिश साम्राज्यके द्वितीय नगर कलकत्तामें 'फूँका' की जिस जघन्य अमानुषिक प्रणालीसे काम लिया जाता है वह शायद संसारके अन्य किसी देशमें न पायी जायगी ! इस युद्धमें पशु-धनका भयङ्कर विनाश हुआ है। सरकारने लोकहितैषियोंकी प्रार्थनापर एक ढीली-ढाली घोषणा निकाल दी थी। उस कागजी घोषणापर भी अमल कहाँतक हुआ यह बात अलग रही। हमारे इलाकेमें गाय, बैल, भैंस आदिकी कीमत पहलेसे आठगुनीतक चढ़ गयी। जन-सेवकोंने किसानोंको समझाया और गाँवोंमें पंचायतें भी हुईं कि लोभमें पशुओंको हाथसे न निकाला जाय। लेकिन चाँदीकी दरियाकी बाढ़को कहाँतक रोका जा सकता है ?

हमारा हिसार जिला दुर्भिक्षोंका घर कहलाता है। हालके अकालोंमें चारेके अभावसे हमारे पशु-धनकी अपार क्षति हुई। लोगोंने गाएँ १) ॥) में बेचीं, मुफ्त पकड़ा दीं एवं यों ही छोड़ दीं कि कहीं जायँ, जिनमेंसे अधिकतर कसाइयोंके हाथ लगीं। बैलोंके अभावमें कितनी ही स्त्रियों और पुरुषोंने हलमें जुतकर खेती की। हमारे इलाकेसे चुनी हुई हालकी ब्यायी हुई बढ़िया गाय-भैंसें मुँह-माँगे मोलपर खरीदकर मुसल्मान लोग (इन्हें 'व्यापारी' कहा जाता है) कलकत्ता-बम्बई भेजते हैं जो सूखनेपर (दूध देना बंद होनेपर) बच्चेसमेत वहीं छुरीके घाट उतार दी जाती हैं। यह 'व्यापार' जाने कबसे जारी है और व्यापारी लोगोंकी खुशहालीको देखकर इस 'व्यापार' की उन्नतिका अंदाजा लगाया जा सकता है। इस 'व्यापार' के कारण गाय-भैंसोंकी नस्ल मिटती जा रही है। उपदेशकों-भजनीकोंके प्रचारसे प्रभावित होकर बहुत-से हिंदू मुसल्मानको गाय नहीं बेचते; लेकिन व्यापारी लोग हिंदू वेषमें भी आ जाते हैं और हिंदू दलालोंसे भी काम लेते हैं। गो-सेवक इस विषयमें कबसे प्रयत्नशील हैं; पर केन्द्रीय और पंजाब सरकार, जो अपनेको

जमींदारों (किसानों) की सरकार बतलाती है, के कानोंपर जूँतक नहीं रेंगी। ये सरकारें अपना कर्तव्य समझकर इधर प्रवृत्त हों तो स्थायी हल निकालना कुछ कठिन न होगा।

भारतमें गो-वंशके ह्रासके प्रत्यक्ष एवं परोक्ष अनेक कारण गिनाये जा सकते हैं और उनके निराकरणके उपाय भी समय-समयपर सुझाये जाते रहे हैं। लेकिन हमारे दीर्घ-कालीन प्रयत्नोंके बाअजूद परिस्थिति सुधरनेकी बजाय बिगड़ती ही गयी है।

परिस्थितिका तकाजा है कि फिरसे इस विषयपर अखिल राष्ट्रीय समस्याके तौरपर गम्भीर चिन्तन करें। जरूरत है कि गोसेवक कार्यकर्त्ता, विशेषज्ञ विद्वान् एवं इस विषयमें दिलचस्पी रखनेवाले सज्जन देशके कोने-कोनेसे आकर इकट्ठे हों और विचार-विनिमयके द्वारा सारे देशके लिये गो-वंशकी समुन्नतिकी योजना स्थिर करें। वास्तवमें तो राष्ट्रीय सरकार ही इस समस्यापर राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे विचार कर सकती है, और वही योजनाको सफल बना सकती है। पर राष्ट्रीय सरकार जब कभी बने, तबतक इस प्रश्नको टालना सर्वथा अयुक्त होगा। क्योंकि तबतक बहुत काम तथा अनुभव हो चुका होगा। योजनाके निर्माणमें और उसे कार्यरूपमें परिणत करनेमें केन्द्रीय सरकार, प्रान्तीय सरकारों तथा रियासतोंका सहयोग भी लिया जाना चाहिये। हमें इस प्रश्नपर व्यावहारिक दृष्टिसे विचार करना पड़ेगा, निरी भावुकतासे स्थायी सफलता मिलनी असम्भव है। जबतक गो-भक्षक रहेंगे--और वे रहेंगे ही, गो-वध होगा ही। मुसल्मान आदि अहिंदुओंको गो-वर्द्धन-कार्यमें साथ लेना ही चाहिये और उन्हें साथ देना पड़ेगा; क्योंकि जन-कल्याणमें उनका भी कल्याण है और राष्ट्रके आर्थिक तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रश्नोंसे उनके भी हितोंका लगाव है। इसलिये वे अलग कैसे रह सकते हैं। लेकिन उनको यह दृष्टि मिले, तब न। यह दृष्टि मिलेगी जरूर, देर हो सकती है।

लेकिन इससे भी जरूरी एक और काम है। तमाम गोशालाओंका केन्द्रीयकरण पहला कदम है। ये तमाम विश्रृङ्खलित गोशालाएँ एक केन्द्रीय संघटनके मातहत पारस्परिक सहयोगके आधारपर संचालित हों तो बहुत काम हो सकता है। कार्यकर्त्ताओंकी सिखलाई (Training), गो-साहित्यका प्रकाशन एवं वैज्ञानिक छान-बीन--इन तीनों महत्त्वपूर्ण कार्योंको केन्द्रीय संघटनके तत्त्वावधानमें आसानीसे शुरू किया जा सकता है तथा विशेषज्ञोंकी सेवाओंका सदुपयोग किया जा सकता है। केन्द्रीय, प्रान्तीय एवं रियासती सरकारों-का सहयोग-सहायता तथा कानूनका सहारा प्राप्त करनेमें भी इससे बहुत सुविधा रहेगी। जहाँतक हमें ज्ञात हुआ है, बम्बई-के गोसेवक कार्यकर्त्ता व्यावहारिक योजनाओंके आधारपर अच्छा काम कर रहे हैं। उनकी कार्यप्रणालीसे अन्यान्य कार्यकर्त्ताओंको अभिज्ञ करवाया जाय, जिससे उनके अनुभवों-से और-और जगहोंमें यथापरिस्थिति लाभ उठाया जा सके।

पंजाब-सरकारका ध्यान हम विशेषतया इधर दिलाते हैं। इस प्रान्तमें बड़े उद्योग-धंधे नहीं हैं और यहाँ उपयुक्त क्षेत्र भी है। नये चुनावोंके फलस्वरूप बननेवाली पंजाबकी सरकार देहाती, शहरी, जमींदार-गैरजमींदार, हिंदू, मुसल्मान—समस्त पंजाबियोंके कल्याणके लिये गो-वंश-वर्द्धनके कार्यमें प्रवृत्त होकर जहाँ पंजाबीपनको नष्ट होनेसे बचा सकती है वहाँ अन्य प्रान्तोंके लिये एक आदर्श पेश कर सकती है।

युद्धोत्तर पुनर्निर्माणमें सड़कों तथा रेलोंका जाल बिछाये जानेकी बातें सुनी जाती हैं। जोतोंका एकीकरण, सहयोग-सिद्धान्तपर खेती करना आदिसे खेतीकी मशीनों-का चलन भी हमारे देशमें हो सकता है। इन बातोंसे बैलोंकी उपयोगिता कम हो जानेकी सम्भावना है। लेकिन ये दूरकी बातें हैं। और यन्त्रीकरण हो जानेपर भी हमारे देशमें इनकी उपयोगिता बनी ही रहेगी। जो हो, गो-दुग्ध इस भूतल-का अमृत है। जच्चा-बच्चा, स्त्री-पुरुष, आबाल-वृद्ध, हिंदू-मुसल्मानके लिये इसकी उपयोगितासे कौन इन्कार कर सकता है। वैज्ञानिकोंने 'असल' की 'नकल' करनेमें कमाल किया है, घीको भी नहीं छोड़ा। घास-फूस खाकर अमृत प्रदान करनेवाली लोहेकी गाय बना सकने या दूधकी नकल कर सकनेमें जबतक ये वैज्ञानिक समर्थ नहीं हो जाते, तबतक गायका भविष्य न केवल भारतवर्षमें, वरं अखिल भूमण्डलपर सुरक्षित, महान् और समुज्ज्वल है। टेनेसी (अमेरिका) के भूतपूर्व गवर्नर माल्कम आर० पैटर्सन महोदयका कथन, जो हमारे ऋषियोंके प्रवचन-सा है, हमारी इस आशावादिताका प्रमाण है। उक्त कथनका सारांश देनेका लोभ-संवरण नहीं किया जा सकता—

'गौ मुकुटहीन साम्राज्ञी है और समस्त भूतल उसका साम्राज्य है। वह जितना लेती है, उससे सदैव अधिक देती है। हम रेलों, बैंकों और रूईकी फसलके बिना अच्छी तरह रह सकते हैं; लेकिन गायके बिना तो हम अन्तमें विनाशको ही प्राप्त होंगे। मुझे आशा है कि जब हमारे ज्ञानकी वृद्धि होगी और हम निर्दय एवं स्वार्थी न रहेंगे, तब हम गायोंका वध करना और उन्हें खाना त्याग देंगे।'

भारतवर्षके पिंजरापोलों और गोशालाओंकी तालिका

(भारतवर्षमें लगभग तीन हजार गोशाला-पिंजरापोलोंके होनेका सरकारी अनुमान है। हमारी समझसे इसमें शायद अतिशयोक्ति है। सरदार बहादुर सर दातारसिंहजीने कृपापूर्वक निम्नलिखित सूची भेजनेकी उदारता की है, (यद्यपि यह अव्यवस्थित और कहीं-कहीं नाम-स्थानकी दृष्टिसे भूलभरी भी मालूम होती है।) इसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं। अभी वे पूरी सूची तैयार नहीं कर सके हैं।——सम्पादक)

पंजाब

१. अबोहर मंडी (फीरोजपुर), २. अम्बाला छावनी, ३. अहमदगढ़ (लुधियाना), ४. अगरोहा (हिसार), ५. अलावलपुर (गुड़गावाँ), ६. अब्दुल्लापुर (गुजराँवाला), ७. अम्बाला, ८. अमृतसर, ९. अजनाला (अमृतसर), १०. बेरी (रोहतक), ११. बहदपुर (काँगड़ा), १२. बंगा नावनशहर (जलंधर), १३. बयिराबाद (गुजराँवाला), १४. बटाला (गुरदासपुर), १५. बबिआर (अम्बाला), १६. भिवानीसंघ (हिसार), १७. भिवानी गोपाल-गोरस (हिसार), १८. चुनियान (लाहौर), १९. दहूबाला (हिसार), २०. देघोट (गुड़गावाँ), २१. दसुआह (होशियारपुर), २२. दत्ता—शाला डेयरी (हिसार), २३. फर्रुखनगर (गुड़गावाँ), २४. फीरोजपुर, २५. फाजिलका (फीरोजपुर), २६. गुड़गावाँ, २७. गीदड़बाह (फीरोजपुर), २८. हिसार, २९. हाँसी (हिसार), ३०. होशियारपुर, ३१. इस्माइलाबाद (करनाल), ३२. जंडियाला (अमृतसर), ३३. जलंधर, ३४. जरनवाला (लायलपुर), ३५. जगराँव (लुधियाना), ३६. जगाधरी (अम्बाला), ३७. झेलम, ३८. जैजों (होशियारपुर), ३९. झंग, ४०. करनाल, ४१. कैथल (करनाल), ४२. कसूर (लाहौर), ४३. कादराबाद फलिया (मुल्तान), ४४. कीरतपुर (होशियारपुर), ४५. लाहौर, ४६. लुधियाना, ४७. लायलपुर, ४८. मुल्तान, ४९. मच्छीवाड़ा (लुधियाना), ५०. मुक्तसर (फीरोजपुर), ५१. मूली (काँगड़ा), ५२. नयागाँव कसूर (लाहौर), ५३. नरुसुई (गुड़गावाँ), ५४. नरवहा (गुड़गावाँ), ५५. पानीपत (करनाल), ५६. पहाड़ी (गुड़गावाँ), ५७. रोहतक हरियाना, ५८. रोहतक व्यायामशाला, ५९. रेवाड़ी (गुड़गावाँ), ६०. रावलपिंडी, ६१. राजकोट (लुधियाना), ६२. रूपड़ (अम्बाला), ६३. सिरसा (हिसार), ६४. संगला (लायलपुर), ६५. संतोषगढ़ (होशियारपुर), ६६. सियानपुर लोरा (काँगड़ा), ६७. तलाजा (करनाल), ६८. जीरा (फीरोजपुर), ६९. सरगोधा, ७०. कोट निक्का पिंडी भट्ठिआन (गुजराँवाला)।

संयुक्त-प्रान्त

१. अजितमाल (इटावा), २. अलीगढ़, ३. अलीगढ़-पञ्चायती, ४. अड़ैल (इलाहाबाद), ५. अछनेरा (आगरा), ६. अम्बाला (सहारनपुर), ७. अलीगंज (एटा), ८. अकबरपुर (कानपुर), ९. अमरोहा (अलीगढ़), १०. अलीपुर (मुजफ्फरगढ़), ११. आवागढ़ (एटा), १२. अयोध्या (फैजाबाद), १३. आगरा, १४. आनन्दपुर (मेरठ), १५. इलाहाबाद, १६. अमेमजा (इटावा), १७. बनारस, १८. बस्ती, १९. बिलग्राम (बाँदा), २०. वृन्दावन (मथुरा), २१. बाँदा. २२. बरहज (गोरखपुर), २३. बलिया, २४. बैराना (इलाहाबाद), २५. बिसानो (अलीगढ़), २६. बैकुंठपुर बाबा बिहारीजीका (गोरखपुर), २७. बैबर (फर्रुखाबाद), २८. बक्सर (मेरठ), २९. बेढ़ (गोरखपुर), ३० बेरारी (इटावा), ३१. भरथना (इटावा), ३२. भादन (आगरा), ३३. भरौली (बस्ती), ३४. बेगमाबाद (मेरठ), ३५. बरसूलीं (अलीगढ़), ३६. बिलासी (बदायूँ), ३७. बनसूली (मेरठ), ३८. बुढ़ाना (मुजफ्फरनगर), ३९. बरेली, ४०. भटनी (अलीगढ़), ४१. भगवाननगर (हरदोई), ४२. भगमाधियानी (मथुरा), ४३. बाराबंकी, ४४. बक्सर (नवाबगंज), ४५. बदायूँ, ४६. बावली (मेरठ), ४७. भरोतिया (बस्ती), ४८. बल्लार—गोकुल (मथुरा), ४९. बेराडी (इटावा), ५०. बुलंदशहर, ५१. चँदौसी (मुरादाबाद), ५२. चाँदपुर (बिजनौर), ५३. चिपरामन (फर्रुखाबाद, ५४. छपरा, ५५. चौरी (गोरखपुर), ५६. चिरगाँव (झाँसी), ५७. कानपुर, ५८. डिबाई (बुलंदशहर), ५९. डिडवरगंज (इटावा), ६०. डालमऊ (रायबरेली), ६१. दनकौर (बुलंदशहर), ६२. घनस्वा (झाँसी), ६३. देहरादून, ६४. देवबंद (सहारनपुर), ६५. देवरिया (गोरखपुर), ६६. इटावा, ६७. एटा, ६८. एचना (अलीगढ़), ६९. इर्वाह (इटावा), ७०. एरच (झाँसी), ७१. गढ़मुक्तेश्वर (मेरठ), ७२. गोतम (अलीगढ़), ७३. गाजियाबाद (मेरठ), ७४. गोलाबाजार (गोरखपुर), ७५. गंगेसरी

(मुरादाबाद), ७६. गोकुल (मथुरा), ७७. गोरखपुर, ७८. गाजीपुर, ७९. गढ़ीपारसोली (मथुरा), ८०. गोपालगढ़ (इटावा), ८१. गणेशपुर (बस्ती), ८२. गूलपुर (इलाहाबाद), ८३. गायघाट (बनारस), ८४. गाजीपुर (कानपुर), ८५. हँसवा (फतेहपुर), ८६. हरद्वार (सहारनपुर), ८७. हापुड़ (मेरठ), ८८. हरदोई, ८९. हरदुआ (अलीगढ़), ९०. हाथरस, ९१. हरदुआगंज (अलीगढ़), ९२. हमीरपुर, ९३. हसवा (फतेहपुर), ९४. होलीपुर (आगरा), ९५. हरनौत (अलीगढ़), ९६. हस्तिनापुर (मेरठ), ९७. हरछना (बुलंदशहर), ९८. जटाई (मुजफ्फरनगर), ९९. जैगड़ा (आगरा) १००. जौनपुर, १०१. जंगलकठार (बस्ती), १०२. जलेसर (एटा), १०३. जुही (कानपुर), १०४. जरार (आगरा), १०५. झारनवारी (मथुरा), १०६, झाँसी, १०७. झड़ीबिल्खी (अलीगढ़), १०८. कायमगंज (फर्रुखाबाद), १०९. कासगंज (एटा), ११०. कादिरगंज(एटा), १११. कवरारी (उन्नाव), ११२. कालाकाँकर (प्रतापगढ़), ११३. कछलाघाट (बदायूँ), ११४. कपसर (मेरठ), ११५. कर्णवास (बुलंदशहर), ११६. कमालगंज (फर्रुखाबाद), ११७. कोरियासी (मथुरा), ११८. कन्नौज (फर्रुखाबाद), ११९. काशीपुर (नैनीताल), १२०. कप्तानगंज (गोरखपुर), १२१. कुहनेरा (मेरठ), १२२, खुरजा (बुलंदशहर), १२३. खागा स्टेशन (इलाहाबाद), १२४. कालपी (झाँसी), १२५. कैउँच (झाँसी), १२६. कचेहरी (कन्नौज), १२७. खड्डा (अलीगढ़), १२८. खतौली (मेरठ), १२९. खैर (अलीगढ़), १३०. कीडगंज (इलाहाबाद), १३१. लालढाँक (बिजनौर), १३२. लीसामऊ (कानपुर), १३३. लियो (इटावा), १३४. लखनऊ (अवध गोशाला-समिति), १३५.लखीमपुर खीरी, १३६. मोहाली (प्रतापगढ़), १३७. मंडी डिप्टीगंज (बुलंदशहर), १३८. मथुरा, १३९. मिर्जापुर, १४०. महोबा (हमीरपुर), १४१. मेरठ, १४२. मवाना (मेरठ), १४३. मेनागपुर (सहारनपुर), १४४. मुरादाबाद, १४५. महलवाला (मेरठ), १४६. मेंहदावल (बस्ती), १४७. महाराजगंज (गोरखपुर), १४८. मेंहुआ (कानपुर), १४९. मोतीकटरा (आगरा), १५०. मरिहा (जौनपुर), १५१. महाराजपुर (मेरठ), १५२. मोहनाल बाजार (बस्ती), १५३. नयागाँव छावनी (बुंदेलखंड), १५४. निनौहरा (कानपुर), १५५. नन्दपुर (मेरठ), १५६. नीमसार (सीतापुर), १५७. नजीबाबाद (बिजनौर), १५८. नवाबगंज (गोंडा), १५९. नगीना (बिजनौर), १६०. नहाटी (अलीगढ़), १६१.नारायणगंज (इटावा) १६२.नीजाबाद(बिजनौर), १६३. उरई (झाँसी), १६४. औरैया (इटावा), १६५. परसोतीगढ़ी (मथुरा), १६६. पिपराइचबाजार (गोरखपुर), १६७. पीलीभीत, १६८. पटियाली (एटा), १६९. पाली (इटावा), १७०. पँचरा (बनारस), १७१. पोखरायाँ (कानपुर), १७२. परखेउना (गोरखपुर), १७३. प्रतापगढ़, १७४. पाकीपुरा (आगरा), १७५. पिपरा (बस्ती), १७६. पयकालीबाड़ा पौहारीजीका (गोरखपुर), १७७. पीनाहट (आगरा), १७८. पनवाड़ा (मेरठ), १७९. फीरोजाबाद (आगरा), १८०. फूलपुर (कानपुर), १८१. पेशावरस्टेट (अलीगढ़), १८२. ऋषिकेश (देहरादून), १८३. साकोई (बुलंदशहर), १८४. सम्भल (मुरादाबाद), १८५. सिकंदरपुर (फतेहगढ़), १८६. शामली (मुजफ्फरनगर), १८७. शाहजादपुर (इलाहाबाद), १८८. सौंख (मथुरा), १८९ शाहजहाँपुर, १९०. सरानी (अलीगढ़), १९१. सुरारियर (मथुरा), १९२. शाहबाद (हरदोई), १९३. सहारनपुर १९४. शक्तिपुर (बस्ती), १९५. सीकरी फतेहपुर (आगरा), १९६. शंकरपुर (बस्ती), १९७. सीतापुर, १९८. सोरोंघाट (एटा), १९९. सकूराबाद (मैनपुरी), २०० सहसबन (हरदोई), २०१. सिकन्दराराउ (एटा), २०२ सतईकी कुटी (मुरादाबाद), २०३. सैथाकलाँ (जौनपुर), २०४. सिकरौरा (हमीरपुर), २०५. शाहगंज (जौनपुर), २०६. सीसामऊ (कानपुर), २०७. टीकमपुर सचनी (अलीगढ़), २०८. तनकपुर मंडी (नैनीताल), २०९. तुलसीपुर (गोंडा), २१०. तारीनथ (फर्रुखाबाद), २११. उद्धवकुण्ड (मथुरा), २१२. उन्नाव, २१३. ऊआँली (सहारनपुर), २१४. फतेहपुर, २१५. करनैलगंज (गोंडा), २१६. करवीमण्डी (बाँदा), २१७. अमेठी (सुल्तानपुर), २१८. चुनार (मिर्जापुर), २१९. कैराना (मुजफ्फरनगर) ।

बम्बई, काठियावाड़ एवं गुजरात

(अ) गोशाला—

१. श्रीभारतवर्षीय गोपाल गोरक्षक-मण्डल, बम्बई, २. श्रीगोग्रास-भिक्षा-संस्था, बम्बई, ३. (अ) बम्बई गो-

रक्षकमण्डली, ३. (आ) गो-रक्षक-मण्डली, मूलजी जेठा मार्केट, बम्बई, ४. गो-रक्षा-लीग, बम्बई, ५. गोग्रास गो-जीव-दान-मण्डल, बम्बई, ६. श्रीगोवर्द्धन-संस्था बम्बई, ७. नत्थूलालजी चैरिटी-ट्रस्ट गोशाला, बम्बई, ८. डोम्बिवली लोकमान्य गोशाला, बम्बई, ९. गोधड़ा, १०. दोहद, ११. बड़ौदा, १२. उपलेटा (काठियावाड़), १३. खम्भालिया (काठियावाड़), १४. बगसरा (कंकावाव), १५. जडिया (काठियावाड़), १६. कुंडला (काठियावाड़), १७. मूली (काठियावाड़), १८. अटकोट (काठियावाड़) १९. बाबरा (काठियावाड़), २०. धराफा (काठियावाड़), २१.श्रीद्वारकापुरी (काठियावाड़), २२.मंडवा (काठियावाड़), २३. सलाया (काठियावाड़), २४.खडबा (काठियावाड़), २५. श्रीगोवर्धन-संस्था, वाई (सतारा), २६. सङ्गमनेर, २७.धुलिया, २८.येवला, २९.गो-जीवदान कमेटी, वेतलपेठ, पूना, ३०.पंढर-पुर, ३१. श्रीगोवर्द्धन-संस्था, पूना, ३२. लाटूर ३३. बारामती, ३४. निपानी; ३५.बगलकोट, ३६.शिवयोगमन्दिर, ३७.कैरूर, ३८. मन्दिर गोशाला, डाकोर, ३९. धामनगर, (काठियावाड़), ४०.हलवाद (काठियावाड़), ४१.कराड़ (सतारा), ४२.लोनन्द (काठियावाड़), ४३. सतारा, ४४. जभखंडी (संस्थान), ४५. बार्शी (शोलापुर), ४६. मुलुंद, ४७. कल्याण, ४८. चलाला (काठियावाड़), ४९. करभाले (शोलापुर), ५०. हल्याल (कारवार), ५१. बरौली स्टेशन (बम्बई) ।

(आ) पिंजरापोल—

१. श्रीबम्बई पिंजरापोल, २. श्रीपशु-रक्षक-मण्डली, बम्बई, ३. सार्वजनिक जीव-दया खाता, घाटकोपर, ४. अहमदाबाद, ५. धोलका (काठियावाड़), ६. धंधूका, ७. घोघा (काठियावाड़), ८. सानन्द, ९. मण्डल, १०. खम्भात, ११. बोरसद, १२. डाकोर, १३. मऊधा (कैरा), १४. कैरा, १५. नड़ियाद, १६. जूनागढ़, १७. राजकोट, १८. भड़ौच, १९. सूरत, २०. मेहसाना, २१. विसनगर, २२. ध्राँगध्रा (काठियावाड़), २३. पाटन, २४. बीजापुर, २५. सिद्धपुर, २६. पालनपुर, २७. वीरमगाम, २८. पाटड़ी (वीरमगाम तालुका), २९. भावनगर (काठियावाड़) ३०. विसावदर (काठियावाड़), ३१. धोराजी (काठियावाड़), ३२. जामनगर (काठियावाड़), ३३. गोंडल (काठियावाड़), ३४. जेतपुर (काठियावाड़), ३५. कुटिआना (काठियावाड़), ३६. लिंबड़ी (काठियावाड़), ३७. माँगरोल (काठियावाड़), ३८. महुवा (काठियावाड़), ३९. मोरवी (काठियावाड़), ४०. पालीताना (काठियावाड़), ४१. वेरावल (काठियावाड़), ४२. वढ़वान (काठियावाड़), ४३. भायावदर (काठियावाड़), ४४. बोटाड (काठियावाड़), ४५. चूडा (काठियावाड़), ४६. तालजा (काठियावाड़), ४७. धरोल (काठियावाड़), ४८. गोधड़ा (काठियावाड़), ४९. हलवाद (काठियावाड़), ५०. जस्दान (काठियावाड़), ५१. जाफराबाद, ५२. लाठी (काठियावाड़), ५३. सिहोर (काठियावाड़), ५४. बाँकानेर (काठियावाड़), ५५. बिल्खा (काठियावाड़), ५६. चीतल (काठियावाड़), ५७. लखतर (काठियावाड़), ५८. मेंदरदा (काठियावाड़), ५९. सायला (काठियावाड़), ६०. वाला (काठियावाड़), ६१. अमरेली (काठियावाड़), ६२. आरामदा (काठियावाड़), ६३. बखराल (काठियावाड़), ६४. बालम्भा (काठियावाड़), ६५. बेट (काठियावाड़), ६६.भन्वाद (काठियावाड़), ६७. दामनगर (काठियावाड़), ६८. देदन (काठियावाड़), ६९. धारी (काठियावाड़), ७०. ढासा (काठियावाड़), ७१. डूँगर (काठियावाड़), ७२. जाम जोधपुर (काठियावाड़), ७३. कौंध (काठियावाड़), ७४. कंकावाव (काठियावाड़), ७५. मलिया (काठियावाड़), ७६.पनेली (काठियावाड़), ७७.प्रभासपाटन (काठियावाड़), ७८.राज-सीतापुर, ७९. सोनगड (काठियावाड़), ८०.बरवाल (काठियावाड़), ८१. कलावद (काठियावाड़), ८२. केशोद (काठियावाड़), ८३. कराची (काठियावाड़), ८४. टट्टा (काठियावाड़), ८५. परली (सतारा), ८६. कुंड (सतारा), ८७. तासगाँव (सतारा), ८८. लोनंद (सतारा), ८९. अहमदनगर, ९०.जलगाँव, ९१. चालीसगाँव, ९२. नन्दुरबार, ९३. नवपुर, ९४. नासिक, ९५. मालेगाँव, ९६. शोलापुर, ९७. बीजापुर, ९८. घोडनदी, ९९. गुलेदगड्ड (बदामी), १००. हुबली, १०१. गड़ाग, १०२. नवेल, १०३. भोर, १०४. साँगली, १०५. कोल्हापुर, १०६. माँडवी, १०७. भुज (कच्छ), १०८. अंजार (कच्छ), १०९. मूँदड़ा (कच्छ), ११०. राधनपुर (गुजरात), १११. पूना, ११२. माँडवी (कच्छ), ११३. डभोई (बड़ौदा), ११४. पोरबंदर (काठियावाड़), ११५. संगोला (शोलापुर), ११६. वड-नगर (बड़ौदा), ११७. वरवाला (काठियावाड़), ११८. भरनबार, ११९. बघेलियन सिटी, १२०. बखरेला (ध्राँगध्रा स्टेट), १२१. धानली, १२२. जरिजाबंदर (काठियावाड़), १२३. जामकंडोरना (काठियावाड़), १२४. लरधार (काठियावाड़), १२५. मोरैल (काठियावाड़), १२६. धनराजी (ध्राँगध्रा स्टेट),

१२७. इचारच (बड़ौदा स्टेट), १२८. खेतड़ वाई (सतारा), १२९. शंकेश्वर (बेलगाँव), १३०. डाकोर (खोडदादपुर), डाकोर।

मध्य-प्रदेश

१. आकोला (बरार), २. अमरावती, ३. आर्वी (वर्धा), ४. अंजनगाँव सुरजी ताल्लुका (अमरावती), ५. विजयराघोगढ़ (जबलपुर), ६. भंडारा, ७. बगलकटा (बिलासपुर), ८. भाटापाड़ा, ९. चालीसगाँव (खानदेश), १०. छिंदवाड़ा, ११. चोला (छिंदवाड़ा), १२. चाँदा, १३. धूलिया (खानदेश), १४. धमतरी, १५. गणेशपुर, १६. गढ़ा (जबलपुर), १७. गोंडा, १८. गिरमा, १९. गोंदिया (नागपुर), २०. होशंगाबाद, २१. हींगनघाट, २२. इच्छापुर (नीमाड़), २३. जबलपुर, २४. जलगाँव (खानदेश), २५. कटरा (सागर), २६. कटोल, २७. कटनी, २८. बाँदा, २९. खाँमगाँव (बरार), ३०. लखनादौन (सिवनी), ३१. नागपुर-धनतोली, ३२. नरसिंहपुर (नागपुर), ३३. मुरवाड़ा कटनी (जबलपुर), ३४. मुताई (बेतूल), ३५. नकोरदर (खानदेश), ३६. राजगढ़ (बिलासपुर), ३७. राजनाँदगाँव स्टेट (रायपुर), ३८. रायपुर (होशंगाबाद), ३९. सामलपुर (रायपुर), ४०. वर्धा, ४१. यवतमाल (अमरावती), ४२. वरोरा, ४३. तुमसर (भंडारा), ४४. तिरोरा, ४५. बालोद, ४६. बिलासपुर, ४७. चरपा (बिलासपुर), ४८. सिलेरा (सागर), ४९. इटारसी (होशंगाबाद), ५०. हरदा, ५१. पाटोला, ५२. खंडवा, ५३. बुढ़ानपुर, ५४. बनोसा (अमरावती), ५५. धामनगाँव, ५६. मोरसी (अमरावती), ५७. पंढरकवड़ा (यवतमाल), ५८. पुसाद (यवतमाल), ५९. वून, ६०. उमरखेड (यवतमाल), ६१. खेरकेड (आकोला), ६२. अकोलवी बालापुर, ६३. मुर्तिजापुर (आकोला), ६४. करंजा (आकोला), ६५. रिसोड (आकोला), ६६. बुलोलेक (बरार), ६७. चिखली (बरार), ६८. काले (बुल्डाना), ६९. मलकापुर, ७०. नंदूरा, ७१. लोनार (बुल्डाना), ७२. देउलगाँव राजा, ७३. शेगाँव (बुल्डाना)।

बंगाल

१. कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी, २. बरिया (बर्दवान), ३. दूधरा (मुर्शिदाबाद), ४. दार्जलिङ्ग, ५. रानीगंज, ६. रामकुमार रक्षित लेन (कलकत्ता), ७. लिलुआ (कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी), ८. ताहिरपुर (रानीगंज) ९. रामपुर डेयरी फार्म, १०. पञ्चानन तल्ला लेन, हवड़ा, ११. तालकरघर रोड, हवड़ा, १२. म्युनिसिपल मार्केट, हवड़ा, १३. लिलुआ—(अ) मारवाड़ी गो-रस कंपनी, (आ) फ्रेंड्स डेयरी फार्म, (इ) दि शर्मा डेयरी फार्म, (ई) दि रेलवे डेयरी फार्म, १४. रंगपुर डेयरी फार्म, लोकनाथ चटर्जी लेन, शिवपुर।

मद्रास

१. कोयम्बीपुर (मद्रास), २. मद्रास।

विहार और उड़ीसा

१. आरा, २. बिहार, ३. बेगूसराय (मुंगेर), ४. भागलपुर, ५. बगहा बाजार (चम्पारन), ६. बरगाम (चम्पारन), ७. चैबासा, ८. चतुरबाजार (हजारीबाग), ९. कोलगाँव (भागलपुर), १०. चौकुलिया, ११. दलसिंहसराय (दरभंगा), १२. दरभंगा, १३. देवघर, १४. गया, १५. गोगरी जमालपुर (मुंगेर), १६. हजारीबाग, १७. हाजीपुर (मुजफ्फरपुर), १८. इस्लामपुर (पटना), १९. झल्दा, पुरलिया (मानभूम), २०. झरिया (मानभूम), २१. खगड़िया (मुंगेर), २२. किशनगंज, २३. कटिहार, २४. केंडुली (मुंजफ्फरपुर), २५. कम्तुल डेयरी फार्म (दरभंगा), २६. लक्खीसराय, २७. मधुबनी (पुरनिया), २८. मुंगेर, २९. मुजफ्फरपुर, ३०. मोतिहारी, ३१. मिराजगंज (हजारीबाग), ३२. मेहसी (चम्पारन), ३३. मधुबनी (दरभंगा), ३४. मोहम्मदपुर (छपरा), ३५. नौगछिया (भागलपुर), ३६. पटना, ३७- पुरलिया (मानभूम), ३८. पंचम्बा (हजारीबाग), ३९. रक्सौल, ४०. रसड़ा (दरभंगा), ४१. पुरी श्रीजगन्नाथ, ४२. राँची (छोटानागपुर), ४३. राजगिर (पटना), ४४. ससराम (आरा), ४५. सिवान, ४६. सिगिया, ४७. समस्तीपुर (दरभंगा), ४८. सारन (छपरा), ४९. सिलाव (पटना), कटक।

सिंध

१. अलिअरकोटैंटो (हैदराबाद), २. अदमाकनंटो (हैदराबाद), ३. हैदराबाद, ४. हाला (हैदराबाद), ५. जल्लन (हैदराबाद), ६. जैकोबाबाद (हैदराबाद), ७. कम्बर (लरकाना), ८. खैरपुर (सक्खर), ९. खानपुर (हैदराबाद), १०. कराची, ११. कंधकोट, १२. लरकाना, १३. मीरपुर (हैदराबाद), १४. मेहर (हैदराबाद), १५. नगरथला, १६. रोहड़ी (सक्खर), १७. रावदेसी,

१८. शिवदरीकुँवर (लरकाना), १९. सक्खर, २०. शिकारपुर, २१. टाँडोमुहमदखान (हैदराबाद), २२. टट्टा ।

दिल्ली

१. नजफगढ़ (दिल्ली), २. सोनपत (दिल्ली), ३. दिल्ली पिंजरापोल ।

हैदराबाद रियासत

१. हैदराबाद ।

मैसूर रियासत

१. बंगलोर ।

सीमान्त-प्रदेश

१. नौशेरा (पेशावर), २. पेशावर, ३. कोहाट, ४. मर्दान, ५. देरा इस्माइल खाँ ।

बलोचिस्तान

१. थाडर ।

मध्य-भारत

१. इंदौर, २. मऊ छावनी (इंदौर), ३. रतलाम, ४. सनावद (इंदौर), ५. अनूपशहर (ग्वालियर), ६. उज्जैन (ग्वालियर), ७. कोसरपुरा (ग्वालियर), ८. शाहजहाँपुर (ग्वालियर), ९. खाचरोद (मालवा), १०. बड़ानगर स्टेशन (मालवा), ११. रोहरच (मालवा), १२. जावरा, १३. तल्ल (जावरा), १४. टीकमगढ़ (ओड़छा), १५. जैथारी (रीवाँ रियासत), १६. छतरपुर, १७. सिमथर ।

राजपूताना

(अ) अजमेर मेरवाड़ा—

१. अजमेर, २. ब्यावर, ३. नसीराबाद, ४. कैकड़ी, ५. पुष्कर, ६. किशनवास ।

(आ) रियासतें—

जयपुर—१. जयपुर, २. लक्ष्मणगढ़, ३. मँडावा, ४. चौसा, ५. रामगढ़, ६. फतेहपुर, ७. नवलगढ़ ।

जोधपुर—१. जोधपुर, २. डीडवाना, ३. नावाँ, ४. रिसालपुर, ५. लाडनूँ, ६. खारची ।

बीकानेर—१. बीकानेर गोशाला, २. बीकानेर पिंजरापोल, ३. रतनगढ़, ४. चूरू, ५. सुजानगढ़, ६. सरदारशहर, ७. सादुलपुर, ८. हनुमानगढ़, ९. नोहर, १०. रेनी (तारानगर), ११. डूँगरगढ़, १२. भीनासर ।

जैसलमेर—१. जैसलमेर, २. बाड़मेर ।

भरतपुर—१. भरतपुर, २. बैरभुसावर, ३. बयाना, ४. कामबन, ५. खेलरी, ६. पहाड़ी, ७. रूपवास, ८. श्रीगढ़ी ।

अलवर—१. अलवर २. राजगढ़, ३. बटोटरा, ४. रामगढ़ ।

धौलपुर—१. धौलपुर ।

पंजाबकी रियासतें

पटियाला—१. पटियाला, २. धूड़ी, ३. बरनाला, ४. भादुल, ५. भटिंडा, ६. मनसा, ७. धेलीबली ।

नाभा—१. नाभा, २. भावल भोजाकी, ३. जंतूल ।

भावलपुर—१. अहमदपुर, २. अहमदपुर लंबा ।

फरीदकोट—१. कोटकपूरा ।

कपूरथला—१. कपूरथला, २. फगवाड़ा ।

जींद—१. जींद, २. दादरी चर्खी, ३. सोतिया ।

मंडी—१. मंडी ।

गो-उपेक्षा

जिस गो चर भूपर गौ चरके पय-धार-सुधा बरसाती थी,
उस गौ-बसुधाकी छातीपर विष-बाग उगाया जाता है ।
तम्बाकू, मिर्च, अफीम आदिकी खेती व्यर्थ बढ़ा करके,
रसके बदले रसखान रसास विष उपजाया जाता है ॥
सड़कों, शहरों, रेलों, बँगलों, करू, खानों, मीरू, मकानोंने,
ली घेर धरा गोचरा धेनु-कुल जहाँ चराया जाता है ।
गौ मुखसे ग्रास-अन्न छीना, बछड़ोंको छीर नहीं छोड़ा,
ले प्राण, उतारा चाम, काट तन, मांस पकाया जाता है ॥
कलि-काल करों, दुष्कालोंसे मरती अकाल दुख मारी है,
तृण अन्न बिना भूखी गौसे अब मलतक खाया जाता है ।
कुत्ते, बिल्ली, घोड़े पलते दधि-दूध-मलाई खा-खाकर,
घर पाल बिचारी गायोंको भूखी डकराया जाता है ॥

—कुँवर फूलसिंह राष्ट्रवर 'प्रेम'

श्रीरामचरितमानसमें गौका स्थान

(लेखक—श्रीमहेश्वरप्रसादजी)

'मानस'को क्या कहें, कुछ समझमें नहीं आता। वह इतना अगाध, अथाह, अपार, अनन्त और अगम है कि उसका कहीं पता ही नहीं चलता। सभी लोग उसमें अपनी-अपनी लग्गी फेंक आते हैं, पर सिवा नौकारोहणके उन्हें आधिपत्य प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिलता। कुछ लोग तो किनारेसे ही अपनी डोंगी घुमा लाते हैं; कुछ लोग बीचसे; और जो कुछ लोग पार जाते भी हैं, वे लोग भी 'मानस'के क्षेत्रके प्रति अपनी धारणा यों ही रख छोड़ते हैं। यदि 'सूरसागर'की लहरें होतीं तो सम्भव था कम लोग उसमें जानेका दुस्साहस करते; किन्तु यही सौभाग्यकी बात है कि 'मानस'का वातावरण ही बिल्कुल शान्त है, प्रकृति शान्त है, लहरें शान्त हैं। रुचिकी बात है—जो ही जाय, उसका स्वागत करनेके लिये 'मानस' प्रशान्त है। मूर्ख, पण्डित, रंक, राजा, ज्ञानी, विज्ञानी, नर, नारी, बालक, वृद्ध या युवा—कोई भी जाय, सबके लिये 'मानस'का द्वार समान रूपसे खुला है। 'मानस'की यही विशेषता है कि वह अपने समीप जानेवालेको खाली हाथ नहीं लौटने देता, समानरूपसे सबका सत्कार करता है। काव्य-रसिकों एवं रामभक्तोंकी तो बात ही छोड़ दीजिये, नीतिज्ञ, उपदेशक, व्याख्यानदाता, नेता, कलाकार, ज्ञानी, आचारी—इन सभीको 'मानस' कृतकृत्य करके भेजता है। इनके अतिरिक्त कामी, चोर, लालची, क्रोधी, लबार, द्वेषी, कुटिल आदि जितने भी दुष्ट या असंत कहे जानेवाले व्यक्ति हैं, उन सबके लिये भी उद्धारका काफी सामान 'मानस'में किसी-न-किसी रूपमें वर्तमान है। चर्चा सबकी है, विश्लेषण सबका है। कोई ऐसी चीज नहीं, कोई ऐसी वस्तु नहीं, कोई ऐसा पदार्थ नहीं, जिसका 'मानस'में अभाव हो। सभी विषयोंका विशद चित्रण 'मानस'में हुआ है। अतः जिस अनुभूतिको जानना हो, जिस बातको ढूँढ़ना हो, जिस विषयको खोजना हो 'मानस' देखिये, एकमात्र 'मानस'। श्रीगुरुजीके समस्त जीवनका अनुभव-अनुमान, अध्ययन-अनुभूति, विद्या-बुद्धि एवं कला-कौशलका 'मानस' साक्षात् संश्लिष्ट रूप है। अन्ततः हमारे लिये 'मानस' कल्पवृक्षकी तरह विशाल, चिन्तामणिकी तरह भव्य तथा कामधेनुकी तरह सौम्य है।

प्रधानरूपसे 'मानस'में भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका ही सुयश वर्णित है। भगवान् श्रीरामचन्द्रजी मनुष्यके रूपमें उसमें आये हैं। पर वास्तवमें वे सच्चिदानन्दघन भगवान् परात्पर पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर हैं। हाँ, यह प्रश्न अलग है कि भगवान्ने मनुष्यका ही अवतार क्यों लिया। इस सम्बन्धमें अनेक निवेदन हैं और अनेक कारण हैं। पर सबसे विशेष और सबसे बलिष्ठ कारण यह है कि पृथ्वीपर अत्याचार इतना बढ़ गया था कि पृथ्वीके लिये उस भारका सहन करना असह्य हो उठा था। पृथ्वीके इस दुःखको यद्यपि सभी देवगण, सभी संतजन स्वीकार कर रहे थे, किन्तु किसीके वशकी बात नहीं थी। अतएव यही तै हुआ कि सभी लोग मिलकर भगवान्से प्रार्थना करें। अब पृथ्वीके सामने यह समस्या उपस्थित हुई कि वह किस रूपमें अपनी प्रार्थना प्रभुको सुनावे। सदासे गौका स्वरूप बहुत ही दयनीय समझा जाता है। बस क्या था, पृथ्वी चट—

धेनु रूप धरि हृदयँ बिचारी। गई तहाँ जहँ सुर मुनि झारी॥

प्रार्थना शुरू हुई और वह शीघ्र ही सुन भी ली गयी। लेकिन इधर 'मानस'में उसी समयसे जो गौका विशिष्ट स्वरूप प्रतिष्ठित हुआ, वह अन्ततक लगातार प्रतिष्ठित ही रहा। उसके महत्त्वमें कहीं भी कमी नहीं आयी। वास्तवमें बात यह है कि 'सुरधेनु' तो पशु है नहीं; गौके शरीरमें सरलता, सहृदयता, सरसता, क्षमाशीलता आदि अनेक सद्गुणोंका सदा निवास रहता है। जब कोई गौपर अत्याचार करता है, तब वह भगवान्से देखा नहीं जाता; और यह ध्रुव सत्य है कि जब-जब विश्वमें अशान्ति फैलती है, अत्याचार बढ़ता है, तब गौ बहुत ही पीड़ित होती है। जैसे देवगण, संतजन तथा भले लोग उस कष्टका सामना करते हैं, उसी प्रकार हमारी गौ भी उस दुःसह दुःखको सहनेके लिये सबसे आगे प्रस्तुत रहती है। इसीसे भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके अवतारके विषयमें जहाँ 'मानस'में कई कारण बताये गये हैं वहाँ एक कारण गौकी रक्षा भी कहा गया है। आज यदि हम किसी भी 'मानस'के पाठकसे रामावतारके कारण पूछते हैं तो वह शीघ्र ही कह देता है—

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

गौका व्यक्तित्व मामूली नहीं है। अपने विशिष्ट व्यक्तित्व-के बलपर ही गौ उस पंक्तिमें बैठी हुई है जिसमें ब्राह्मण, देवता और संत हैं। गौको मानना ब्राह्मण, देवता और संतको मानना है। गौ, ब्राह्मण, देवता और संत—ये चारों एक हैं; स्वभाव और शीलमें, गुण और उपकारमें इन चारोंका ही स्थान सर्वभावेन एक है। हमें तो ऐसा लगता है कि जो कुछ जाग्रत्‌में ब्राह्मणत्व है, जो कुछ स्वप्नमें देवत्व है, या जो कुछ तुरीयमें साधुता है, उसीकी व्यक्त तथा स्थूल मूर्ति श्रीमती गौ है। ब्राह्मणकी शालीनता, देवताका आशीर्वाद और संतका स्वभाव हमें केवल गौमें एक ही साथ प्राप्त हैं। यदि आप गौकी सेवा कर रहे हैं तो ब्राह्मण, देवता और संतकी सेवा अपने-आप हो रही है। यह गौका ही प्रताप है कि जिस पृथ्वीका विशेष कारण लेकर रामावतार बताया जाता है, उस पृथ्वीके नामका आभास भी उक्त पदमें नहीं दिया गया है; क्योंकि पृथ्वी गौसे अलग कोई विशेष चीज नहीं। पृथ्वी और गौ एक ही वस्तुके दो पृथक् नाम हैं। पृथ्वीको जब जरूरत पड़ती है, उसे गौका रूप धारण करना पड़ता है। बिना गौका रूप धारण किये पृथ्वीकी न कोई भलाई ही है और न उसका उद्धार ही हो सकता है। गौके विशिष्ट एवं सौम्य रूपमें पृथ्वी-जैसी गम्भीर, अनन्त तथा अचल वस्तु प्रविष्ट कर गयी है। पर इससे यह नहीं समझना चाहिये कि 'मानस'में अब दूसरी जगह भी गौकी उपस्थितिमें रामावतारके कारणोंके लिये पृथ्वीका नाम ही नहीं आया है। आया है, 'मानस'की दूसरी ही जगहका तो प्रसङ्ग है—

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल॥

इसे देखकर कोई काव्य-मर्मज्ञ कहे कि 'अनुप्रास'के लोभसे 'भूमि'का नाम आ गया है तो वह उसका गम्भीर पाण्डित्य न होगा। कविको आवश्यकता और स्थान दोनों देखने पड़ते हैं। यदि आवश्यकता नहीं है तो व्यर्थ स्थान भरनेसे क्या लाभ। यदि स्थान नहीं है तो फिर आवश्यकताकी ही चीज बलात् क्यों घुसेड़ी जायगी। श्रीगुरुजी महाराज पूर्ण भक्तके साथ-साथ पूर्ण कवि भी थे। उनके एक-एक वाक्य, एक-एक शब्द किम्बहुना एक-एक अक्षर नपे-तुले यथास्थान अवस्थित हैं; उसमें भी उनके 'मानस'की पंक्तियाँ तो बस, मन्त्रसदृश हैं जिन्हें हमें केवल कण्ठस्थ कर लेना है। पहले दोहेमें 'बिप्र धेनु सुर संत हित' रामावतार बताया गया था और प्रस्तुत दोहेमें 'भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित' रामावतार बताया जाता है। यहाँ विप्रके स्थानपर भूसुर, धेनुके स्थान-पर सुरभि, सुरके स्थानपर सुर तथा संतके स्थानपर भक्त हैं। अधिकमें आयी है बेचारी भूमि, जो स्थान और आवश्यकता पाकर गौसे पृथक् हो गयी है। एक स्थानपर तो रामावतारके कारण 'मानस' इस प्रकार रखता है—

निज इच्छा प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।

'सुर महि गो द्विज लागि'में अब भक्त और संत—इनमेंसे कोई नाम नहीं आया है। इसे लेकर भक्त या संतकी ओरसे कोई बगावत करनेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि उन्हीं लोगोंके लिये दोहेकी दूसरी पंक्तिमें लिखा है—'सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि।' किसी भी दिशामें विचारसे काम लेना चाहिये। गोका अर्थ पृथ्वी भी होता है। जैसे—'गो द्विज धेनु देव हितकारी।' अतः जब 'सुर महि गो द्विज लागि'में 'महि' लिखा है तब 'गो' का अर्थ पृथ्वी मानना ठीक न होगा और उसी प्रकार जब 'गो' द्विज धेनु देव हितकारी'में 'धेनु' लिखा है तब 'गो' का अर्थ गौ मानना कैसे ठीक होगा। और, हमारे लिये तो यही परम आनन्दकी बात है कि रामावतारके विशेष कारणोंमेंसे कभी पृथ्वी छूट जाती है, कभी संत या भक्त भी छूट जाते हैं, किन्तु महान् गौ कभी नहीं छूटती। गौका उल्लेख हर समय, हर अवस्थामें बना ही रहता है। यहाँतक कि परशुरामजीकी वन्दना—'जय सुर बिप्र धेनु हितकारी'में तो सुर, बिप्र, धेनु ही रह जाते हैं। पृथ्वी और भक्त या संत दोनों वहाँ छूट जाते हैं। वस्तुतः देवता और ब्राह्मणके साथ भगवान् श्रीरामचन्द्रजी गौके ही हितकारी हैं। गौपरसे उनकी दृष्टि एक क्षणके लिये भी नहीं हटती। यही कारण है कि जब पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर सम्पूर्ण कलाओंसे यहाँ प्रकट हुए, तब अन्ततः उनका नाम 'गोपाल' ही पड़ा। गोपाल नामके सामने उनके सभी नाम—भूपाल, सुरपाल, भक्तपाल, द्विजपाल विलीन हो गये। उस समय उनके सामने न भूमि ही रही, न भक्त ही रहे और न रहे ब्राह्मण या देवता ही। रह गयी सिर्फ गौ। गौको उन्होंने वन-वन चराया, अपने हाथों झाड़ा-पोंछा तथा भाँति-भाँतिसे स्वयं उसकी सेवा की। फिर गोपाल भगवान्‌ने गौके गोरसको लेकर महारासकी अनेक कलित क्रीड़ाओंको सुप्रतिष्ठित किया। और अन्तमें जब वही गोरस उनके शरीरमें खिला, तब महाभारतमें अठारह अक्षौहिणी सेनाका स्वतः संहार हो गया। गौकी यही महिमा है। यहाँतक कि भक्त कहलानेके लिये भी गौकी ही सेवा

अनिवार्य है । 'मानस'के वाल्मीकि स्वयं भगवान् श्रीरामचन्द्रजीसे कह रहे हैं—

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं। बिप्र धेनु हित संकट सहहीं॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका॥

यहाँतक तो गौके अलौकिक महत्त्व हुए। अब कुछ लौकिक महत्त्व भी देखिये। दान और दहेज दो वस्तु हैं। दान धर्मके भावसे देनेकी क्रियाका नाम है और दहेज उपहारके भावसे देनेकी क्रियाका नाम है। एकमें धर्मकी प्रधानता है तथा दूसरेमें स्नेहजनित उल्लासकी। लेकिन दोनोंमें स्वत्वका परिवर्तन अवश्य हो जाता है। लोकमें इन दोनोंकी व्यवस्था अनादिकालसे है और अनन्तकालतक रहेगी। रह गयी देखनेकी यह बात कि जो दान दिया जाता है वह दहेज दिया जा सकता है कि नहीं। दान और दहेज दोनोंमें हम एक ही वस्तुको सदासे पाते हैं। वैसे तो दान या दहेजका कोई ओर-छोर नहीं है। फिर भी दान या दहेजमें जो विशेष महत्त्वप्रद वस्तु है वह है गौ। गौका दान महादान-सा और गौका दहेज महादहेज-सा समझा जाता है। 'मानस'में रामके जन्मोपरान्त दशरथजीने और-और वस्तुओंके साथ गौका भी महादान किया है। यथा—

(क) हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह।
(ख) गज रथ तुरग हेम गो हीरा। दीन्हें नृप नानाबिधि चीरा॥

लोकमें गौका मूल्य नहीं निर्धारित किया जा सकता। वह अमूल्य वस्तु है। बहुमूल्य वस्त्र या भूषण, हीरा या मणि, हाथी या घोड़ा, अथवा रथ या सुवर्ण सबकी कीमत लगायी जा सकती है, पर गौकी ओर देखकर उसकी कीमत लगानेकी हिम्मत नहीं होती। अतः सुवर्ण, रथ, घोड़ा, हाथी, वस्त्र, मणि या हीरेको उसकी तुलनामें रखना उसका अपमान-सा लगता है। यह दूसरी बात है कि दुनियाँकी उक्त वस्तुएँ बहुत ही कीमती हैं और उन्हें ही ऐश्वर्य कहा भी जाता है तो वैभवकी नगरीमें उसका सत्कार होना आवश्यक ही है और उन्हें किसीको दान देना मानो अपने उच्च आदर्शको ही प्रदर्शित करना है। पर इसके साथ यदि गौका दान दे दिया जाता है तो मानो दान पूर्ण हो जाता है और फिर कुछ देनेकी आवश्यकता नहीं रह जाती। विश्वामित्रकी राम-याचनापर दशरथजीने 'मागहु भूमि धेनु धन कोसा' द्वारा अपने पूर्ण दानका ही आदर्श भाव दिखाया था। दाताको उसी प्रकारसे मिलता भी है। जिन दशरथजीने पूर्ण दान किया था उन दशरथजीको जनकजीने पूर्ण दहेज दे दिया था। गौके साथ अन्यान्य वस्तुओंका भी निरीक्षण कीजिये—

कंबल बसन बिचित्र पटोरे। भाँति भाँति बहु मोल न थोरे॥
गज रथ तुरग दास अरु दासीं। धेनु अलंकृत कामदुहा सीं॥

अपने रूप-गुणों तथा स्वभावके कारण गौ हमारे लिये परम माङ्गलिक वस्तु भी हो गयी है। मङ्गल मनानेके लिये गौका दर्शन अमोघ होता है। इस विभागके आचार्य मङ्गल-मूर्ति गणेशजी माने जाते हैं और हैं। तो भी उनके सहायक और भी बहुतसे पदार्थ हैं। जिनका दर्शन शुभका लक्षण है। इस प्रकार जितनी भी वस्तुएँ—माङ्गलिक वस्तुएँ हैं, उन सबमें गौ अग्रगण्य है। यदि यात्राके समय आप 'सुरभी सनमुख सिसुहि पिआवा' देख लेते हैं तो समझिये कि आपकी यात्रा अत्यधिक सफल तथा सुफल होगी। दशरथजीकी बरात-यात्राके समय 'मानस'में इसका अधिकाधिक पुष्टिकरण एवं स्पष्टीकरण हुआ है! प्रसंग यह है—

चारा चाषु बाम दिसि लेई। मनहुँ सकल मंगल कहि देई॥
दाहिन काग सुखेत सुहावा। नकुल दरसु सब काहू पावा॥
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बर नारी॥
लोवा फिरि फिरि दरसु देखावा। सुरभी सनमुख सिसुहि पिआवा॥
मृगमाला फिरि दाहिनि आई। मंगल गन जनु दीन्हि देखाई॥
छेमकरी कह छेम बिसेषी। स्यामा बाम सुतरु पर देखी॥
सनमुख आयउ दधि अरु मीना। कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना॥

तनिक यहाँके माङ्गलिक द्रव्योंपर ध्यान दीजिये। नील-कण्ठ पक्षी बायीं ओर, कौआ सुन्दर खेतमें दाहिनी ओर, नेवला, शीतल मन्द सुगन्धित वायु, सुहागिनी स्त्रियाँ भरे हुए घड़े तथा गोदमें बालक लिये, लोमड़ी, अपने बछड़ेको दूध पिलाती हुई गौ, हरिनोंकी टोली, सफेद सिरवाली चील, श्यामा बायीं ओर सुन्दर पेड़पर, दही, मछली और दो विद्वान् ब्राह्मण हाथमें पुस्तक लिये हुए—सभी दृश्य मानो एक-से-एक बढ़कर हैं। इनमें किसे कम और किसे अधिक कहा जाय। पर इतना तो अवश्य है कि खड़ी गौ जो अपने बछड़ेको दूध पिला रही है वह इधर-उधर न होकर ठीक सामने है। उसका लक्ष्य सबके अतिरिक्त अधिक पक्का है। शान्त, कोमल, त्याग, सादगी एवं सौन्दर्यका एक मोहक चित्र आँखोंके सामने चला आता है। इस मातृस्वरूपके सामने गोदमें बालक लिये हुई स्त्रियाँ बिसर जाती हैं और

बिसर जाता है उनका भरा हुआ घड़ा भी, जब हम गौके थनका दर्शन कर लेते हैं। दही कृत्रिम मालूम होने लगता है उस गौके दूधके सामने, और मछलीको वार दिया जा सकता है गौकी आँखोंपर। हरिनोंकी टोलीका उत्तर देनेके लिये गौका एक बछड़ा ही काफी दीखता है और नेवला तथा लोमड़ीकी चुलबुलाहट समझानेके लिये गौकी पूँछ अधिक उपयुक्त मालूम होती है। हाथमें पुस्तक लिये हुए दो विप्र गौके वदनपर, और नीलकण्ठ, कौआ, चील तथा श्यामाको गौके चारों खुरोंपर हम आसानीसे चढ़ा सकते हैं। सचमुच जब गौ बछड़ेका संयोग लेकर चलती है तो उसके रोम-रोमकी कीमत अनमोल हो जाती है। भक्तिका माध्यम-मार्ग गौ और बछड़ेको ही लेकर प्रतिष्ठित है। इस अवस्थामें भक्त और भगवान् दोनोंकी जिस प्रकार पूरी विकलता रहती है उसी प्रकार गौ और बछड़ेकी भी। जितना बछड़ा दूध पीनेके लिये उत्सुक रहता है उतना ही गौ दूध पिलानेके लिये बेचैन रहती है। परस्परकी इस तड़पनको भागवतकारने इस प्रकार दिया है—

अजातपक्षा इव मातरं खगाः स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा मनोऽरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम्॥

गौकी प्रचुरता और उसकी सर्वप्रियता हमारे यहाँ इतनी रही है कि गौके नामसे दिन-रातका संयोग कर दिया गया है। दिन और रातका वह संयोग-स्थल है शाम। शामको हमारी सभी गौएँ जंगलोंसे; वनोंसे या खेतोंसे चरकर लौटती थीं। वे झुंड-की-झुंड गौएँ जिधर जाती थीं उधर उनके पैरोंसे उड़कर धूलके बहुत-से कण आकाशको चल पड़ते थे। सन्ध्याके समय जब कि सूर्य अस्ताचलको प्रस्थान करते हैं, ये धूलि-कण बड़े ही सुहावने दीखते थे। चूँकी गौकी धूलसे इस बेलामें रौनक आती थी इसलिये इस बेलाका नाम ही गोधूलि रख दिया गया था। तभीसे आजतक गोधूलिकी सुन्दर बेला हमारे बीच चली आ रही है। क्या आपने इस सुन्दर बेलाका कभी आनन्द नहीं लिया है? यदि लिया है तो आपकी ऐसी इच्छा नहीं हुई है कि आप भी अपने निवासस्थानपर चले जायँ और अपने कुटुम्बमें मिलकर इस अनुपम बेलाके आनन्दका उपभोग करें। मिलनके, संयोगके, मङ्गलकार्य करनेके लिये गोधूलिसे बढ़कर दूसरी कौन-सी बेला हो सकती है? धनुष टूटनेके पश्चात् श्रीराम और सीताका विवाह दिन या रातके किसी हिस्सेमें न हुआ। वसिष्ठ-से ज्ञानी और शतानन्द-से विचारक यों ही बैठे हुए थे और उस बेलाकी प्रतीक्षा कर रहे थे जिसे कहते हैं गोधूलि।

धेनु धूरि बेला बिमल सकल सुमंगल मूल।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल॥

शपथ मनुष्य उसीकी खाता है, जो उसकी प्रिय वस्तु होती है और जिसे वह प्राणोंसे बढ़कर मानता है ताकि लोग उसपर विश्वास कर सकें। गौके प्रति हमारी काफी श्रद्धा रही है। उसे हमने प्राणके समान प्यारा माना है। अतः जब हमपर कोई विकट समस्या आती है तो अपनी सफाई देनेके लिये हम गौकी शपथ भी खा लिया करते हैं। भरतजी ननिहाल गये हुए थे कि इधर राम वन चले गये और दशरथ मर गये। और, यह सब हुआ भरतकी माता कैकेयीकी करनीसे। भरतजी जब श्रीअयोध्याजी आये तो अपनी सफाई देनेके लिये, लोग यह न समझ लें कि कैकेयीकी करनीमें भरतका भी मत था, लगे विकट-से-विकट शपथ खाने। उन सब शपथोंसे तो हमारा मतलब नहीं है। मतलब है केवल गौसे। गौकी शपथ भी छोड़ दीजिये। गौका निवास-स्थान अर्थात् गोशाला जलाने तकका महान् पाप मनुष्यको लगता है। अतः भरतजी 'मानस' में शपथ खाते हैं—

जे अघ मातु पिता सुत मारें। गाइ गोठ महिसुर पुर जारें॥
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें। मीत महीपति माहुर दीन्हें॥
जे पातक उपपातक अहहीं। करम बचन मनभव कबि कहहीं॥
ते पातक मोहि होहुँ बिधाता। जौं यहु होइ मोर मत माता॥

हमारा गो-प्रेम इसीसे समझ लीजिये कि हम गोशाला नहीं जलाते। यदि गोशाला हम जलाते हैं तो माता, पिता और पुत्रको मारते हैं या ब्राह्मणोंका नगर जलाते हैं। इतना ही तक नहीं, यदि हम गोशाला जलाते हैं तो स्त्री और बालककी हत्या करते हैं या मित्र और राजाको जहर देते हैं। भाव यह कि यदि गोशालामें गौ रही और जल गयी तब तो उपर्युक्त सभी पाप, सम्भव ही नहीं, वरं सार्थक हैं। इसके विपरीत, यदि गोशालामें गौ नहीं भी रही और हम गोशालामें आग लगा दें तो उस स्थानके न होनेसे जो दुःख गौको होगा वह भी उक्त पापोंको बुलानेके लिये हमारे लिये कम न होगा। गौकी थोड़ी देरकी तकलीफ भी हमारे लिये पापका पहाड़ बन जाती है। धर्मके और पुण्यके नाते नहीं, बल्कि स्वार्थके नाते यदि हम गौको देखते हैं तो भी

वह हमारे सामने एक परम आदर्शके रूपमें आती है। उसके पञ्चगव्यके पदार्थ (दूध, दही, घी, गोबर और मूत्र) तो हमारे जीवनभर समझने और समझानेकी वस्तुएँ हैं। ऐसी गौको भूलमें भी, स्वप्नमें भी तकलीफ न होनी चाहिये, नहीं तो, प्रभुको दुःख होगा। भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने अवतार लेकर गौओंको जरूर सुख दिया था और पूर्ण सुख दिया था। यह बात कब मालूम हुई जब रामराज्य हुआ और 'मानस' का अन्त हुआ। सुखके मारे उस समय—

मन भावतो धेनु पय स्रवहीं।

कलकत्तेका उद्धार

[कहानी]

(लेखक—श्रीहरदेवसहायजी)

(कलकत्तेके अत्याचारको मिटानेके लिये एक सफल योजनाकी कल्पना)

(१)

भगवान् श्रीकृष्णके क्रीड़ा-स्थल वृन्दावन, गोकुल एवं मथुराकी यात्रा, व्रजभूमिकी परिक्रमा, प्रयागमें त्रिवेणीके संगमपर स्नान, अक्षयवट तथा भारद्वाज-आश्रमके दर्शन, विश्वनाथकी नगरी काशीजीमें देवोंके देव—महादेवपर एक सहस्र राम-बिल्व-पत्र चढ़ा, भगवती अन्नपूर्णाके प्रति भक्ति प्रकट कर एवं गयाकी प्रेतशिलापर पिण्ड-दान दे हरियानाके रहनेवाले पं० यज्ञदत्त, ठा० मोहनसिंह, चौ० धनीराम जेलर तथा सेठ रामधन जगन्नाथपुरीकी यात्रा करनेके लिये कलकत्ते पहुँचे। हवड़ा स्टेशनपर उनके गाँवके रहनेवाले तथा गायोंके व्यापारके साझी अब्दुल्ला तेली और सलीम शेखने उन सबका स्वागत किया तथा ग्वाल-टोलेमें ले जाकर एक मन्दिरमें उनके ठहरनेका प्रबन्ध कर दिया। सर्वप्रथम सब मित्रोंने भागीरथीमें स्नान किया तथा कालीघाटपर जाकर कालीमाईके दर्शन किये। सेठ रामधनका इन गायोंके व्यापारपर रुपया लगता, हरियानेसे गायोंको भेजनेका काम पण्डितजी, ठाकुर साहेब एवं चौधरीजी करते, तथा तेली और शेख कलकत्तेमें ग्वालोंको नकद या किश्तोंपर गायें बेचते। सबका बराबर-बराबर भाग था। 'यह देश हरियाना, यहाँ दूध-दहीका खाना' कहावतके अनुसार जो हरियाना सम्पूर्ण भारतवर्षमें दूध-दही एवं घीकी अधिकताके लिये प्रसिद्ध था, जहाँके बैल हरियाने ही नहीं, पंजाब तथा गङ्गा-यमुनाके प्रदेशकी खेतीके आधार थे, जहाँ सौ वर्ष पहले ही अतिथियोंको पानीकी जगह दूध पिलाया जाता था तथा दूधका बेचना जहाँ पाप समझा जाता था, आज उसी हरियानेमें गायोंकी कमी होनेके कारण, दूधकी तो कौन कहे, पर्याप्त छाछ भी नहीं मिलती, बैलोंकी कमी होनेके कारण किसानोंने हलोंमें भैंसेको ही नहीं जोता तथा उनके जूएके नीचे स्वयं ही नहीं लगे, अपनी स्त्री तथा बच्चोंतकको उसमें जोत दिया और उनकी सहायतासे खेती की !

गायोंकी इस कमीको देखकर पं० ईश्वरदत्त शास्त्री, चौ० धर्मसिंह, ठा० गोविन्दसिंह और उनके साथियोंने हरियानेके गाँव-गाँवमें जाकर गोरक्षा तथा बिना तसल्लीके ग्राहकोंको गाय न बेचनेका प्रचार किया। उन्होंने कलकत्तेमें गायोंपर होनेवाले अत्याचारोंका हाल भी बतलाया। कहीं-कहीं लोगोंने पंचायतें करके हर किसीको गाय न बेचनेका निर्णय भी किया, पर पं० यज्ञदत्त, सेठ रामधन, चौ० धनीराम आदिने गाय बेचनेवालोंको बताया कि 'जो गाय हम कलकत्ते ले जा रहे हैं, उनकी बुरी हालत नहीं होगी। करोड़पति सेठोंके दरवाजेपर बँधेंगी और दूध-जलेबी खायेंगी। पं० ईश्वरदत्त और उनके साथी स्वयं सस्ती गाय खरीदना चाहते हैं। इसलिये वे यह झूठा प्रचार कर रहे हैं। उनकी बात मत सुनो। हम भी तो हिंदू हैं, गायकी पूजा करते हैं तथा गोशालाओंको इन प्रचार करनेवालोंसे अधिक दान देते हैं।' लोगोंको रुपयेका लोभ तो था ही। उन्होंने झट पंचायतोंके निर्णयको तोड़ दिया और नोटोंकी लालचसे वे जो भी ग्राहक अधिक दाम देता, चाहे वह कोई भी हो, उसीको गाय बेचने लगे। पं० ईश्वरदत्त, सेठ रामधन और ठा० मोहनसिंहमें कई बार, कलकत्तामें गायोंकी क्या-क्या बुरी दशा होती है, इस विषयपर बातचीत हुई। पं० ईश्वरदत्तने ठा० मोहनसिंहको 'गो-रक्षा-कल्पतरु' पुस्तक तथा स्व० श्रीहासानन्दके प्रचार-पत्र, जिनमें कलकत्तेके

पापका वर्णन था, पढ़ाये। पर लोभ एवं साथियोंके समर्थनके कारण उन्होंने यह व्यापार नहीं छोड़ा।

(२)

देवताओंके दर्शन एवं तीर्थोंके स्नानसे पं० यज्ञदत्त तथा उनके साथियोंके चित्तमें कुछ-कुछ सद्भावना उत्पन्न हुई। ठा० मोहनसिंहने कलकत्तेकी गायोंकी वास्तविक अवस्थाको देखनेपर जोर दिया। हिसाब-किताब करनेके बाद अब्दुल्लाको साथ लेकर सब मित्र गायोंको देखने चले। ग्वाल-टोलेमें जाकर देखा—गायें अधिक, पर बछड़े बहुत ही कम हैं। मरे हुए बछड़ोंकी खालोंमें भूसा भरकर तथा उनपर दूध छिड़ककर गायोंके आगे खड़ा करते हैं। गायें उन्हें चाटकर दूध उतार रही हैं। निकट आनेपर देखा कि गायोंके मूत्र करनेके स्थानमें फूँकाद्वारा खारा पानी डाला जा रहा है तथा किसी गायके इस स्थानमें पूँछ, किसीके हाथ एवं अधिकके इस मर्मस्थानमें घासका छोटा पूला डालकर फुलाया जा रहा है! गाय कष्टके मारे डकार रही है, उसके सारे शरीरमें कम्प चढ़ गया है तथा आँखें फटी जा रही हैं। गायोंकी इस अतिशोचनीय दशाको देखकर पं० यज्ञदत्त और उनके साथियोंको बड़ा दुःख हुआ। ठा० मोहनसिंहकी आँखोंमें तो आँसू ही आ गये। पं० यज्ञदत्तके पूछनेपर अब्दुल्लाने बतलाया कि 'इस तरहसे फूँका देनेपर गाय अधिक दूध देती है। यदि गायके फूँका न लगे तो गाय कम दूध देगी। इस फूँकेके कारण ही हमें अधिक मूल्य मिलता है और व्यापारमें लाभ रहता है।'

दूसरे रास्तेसे डेरेपर लौटते हुए सब साथी एक ऐसे स्थानपर आये, जहाँ दूधसे सूखी हुई गायोंका सौदा हो रहा था। ग्राहक लोग गायकी नस्ल, दूध आदिपर कुछ भी ध्यान न देकर केवल उनके शरीरके तौल एवं चमड़ेका अनुमान करके मोल आँक रहे थे। पं० यज्ञदत्तके पूछनेपर बतलाया गया कि यहाँ जो गायें रहती हैं वे यहाँकी जलवायु, चारा तथा बुरी व्यवस्थाके कारण फिर गाभिन नहीं होतीं, अतः वे बेच दी जाती हैं। ये ग्राहक कसाईखानोंके प्रबन्धकर्त्ता हैं, यहाँ नित्य आते हैं और इस प्रकारकी गायें खरीदकर ले जाते हैं। अच्छी नस्ल होनेके कारण इन गायोंकी खालोंसे बढ़िया 'क्रोम' चमड़ा तैयार होता है तथा मांस-चर्बी आदिके भी अधिक दाम मिलते हैं। ऐसी गायोंकी इन कसाईखानोंमें बड़ी माँग है। पं० यज्ञदत्त तथा उनके साथियोंने जब ये बातें सुनीं एवं इन गायोंमें पिछले साल अपनी भेजी हुई पाँच गायोंको देखा, जिनमेंसे एक तो ठा० मोहनसिंहके घर जन्मी हुई भी थी, तब सबको बड़ा कष्ट हुआ और आँखोंके आगे अँधेरी छा गयी। अब्दुल्लासे कहकर उस दिन वे गायें न बेचने दीं। सब साथी डेरेपर लौटे; शामको किसीने भोजन न किया। रातको गायोंके प्रति किये हुए अपने-अपने पापोंका तथा उनके लिये प्रायश्चित्त करनेका विचार होने लगा। सबने मिलकर यह निश्चय किया कि जबतक प्रायश्चित्त करनेका निर्णय न होगा, अन्न-जल ग्रहण न करेंगे। तार देकर पं० ईश्वरदत्तको बुलाया गया। सबने उनसे क्षमा माँगी तथा अपने पापोंके लिये प्रायश्चित्त पूछा।

पं० ईश्वरदत्तने कहा—'आपलोगोंने हरियानेकी हजारों गायोंका बुरी तरह संहार करवाया है। इसका कोई प्रायश्चित्त नहीं। घोर रौरवनरकके दुःख भोगने पड़ेंगे। इस संकटसे बचनेका एक ही उपाय है—सच्चे हृदयसे भगवान्‌की प्रार्थना करो तथा नरकोंके कष्टोंको सहन करने या कम करनेके लिये अपना सर्वस्व गायोंकी सेवा एवं रक्षामें लगा दो। भगवान्‌की दया तथा गायोंकी सेवा ही आपलोगोंका उद्धार करेगी।'

अब्दुल्लाने कहा—'पण्डितजी! हम अकेले ही इस गो-हत्याके पापके भागी नहीं। इसके भागी कलकत्तेके दूधके व्यापारी, दूकानदार तथा **सबसे अधिक वे लोग हैं, जिन्हें दूध देने या पिलानेके लिये ये गायें यहाँ लायी जाती हैं**। यहाँ कलकत्तेमें तो, सम्भव है, कोई भी इस पापसे नहीं बचा है। बताइये, क्या वे लोग, जो अपने कारखानोंमें इन गायोंके चमड़े-चर्बी आदिका व्यवहार करते हैं तथा इन्हीं गायोंसे तैयार हुए 'क्रोम' चमड़ेके जूते, पेटियाँ, पट्टियाँ आदि बनाते एवं खरीदते हैं, चमड़े, हड्डीके कारखानोंके शेयरों (Shares) का व्यापार करते-कराते हैं, गाभिन गायके गर्भस्थ बछड़ेकी नर्म खालके बटवे, घड़ीके फीते और बछड़ोंकी खालों (Calf-leather) के जूते बनाते, बेचते एवं व्यवहार करते हैं, इस पापके जिम्मेवार नहीं हैं? यहाँके ही नहीं, देशभरके कितने ही तिलकधारी पण्डित, करोड़पति सेठ, धर्म तथा देशकी भलाईके ठेकेदार बड़े-बड़े नेता आदि भी किसी-न-किसी रूपमें गोहत्याके लिये जिम्मेवार हैं। **यदि ये लोग इस प्रकार दुर्गति की हुई गायोंका दूध न खरीदें, मारी हुई गायोंका चमड़ा-चर्बी इत्यादि न खरीदें तो गायें मारी ही न जायँ या बहुत कम**। यदि आपलोग 'क्रोम' चमड़े या बढ़िया चर्बी आदिके लिये गाय मारनेके कारखानोंमें जीवित गायोंका वध देखें तो, सम्भव है,

वहीं बेहोश होकर गिर पड़ें ! मैं मुसल्मान हूँ; हमारी धर्म-पुस्तकोंमें भी इतनी बुरी तरहसे गोवध करनेकी आज्ञा नहीं। गायोंको लाने-बेचनेका यह सब काम अच्छा नहीं, पर क्या करें ? रोटीका प्रश्न है ।'

पं० ईश्वरदत्तने अब्दुल्लाको समझाते हुए कहा—भैया ! क्या जो लोग गायोंका व्यापार नहीं करते, उन्हें रोटी नहीं मिलती ? रोटी तो भगवान् देते हैं। देखिये, मशीनोंने अब ऐसी चीजें बना दी हैं, जिनके कारण गायोंके शुद्ध दूध-घीकी जरूरत ही नहीं रहेगी। जब तुम स्वयं इसे बुरा काम समझते हो, अन्य लोगोंके लिये नहीं, अपने लिये ठीक-ठीक विचार करो तथा इसे छोड़ दो। अपने सब व्यापारी भाइयोंको भी समझा दो।'

पं० ईश्वरदत्तकी बातोंका अब्दुल्लापर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने कहा—'जो प्रायश्चित्त पं० यज्ञदत्त तथा अन्य सब साथी करेंगे, हम दोनों भी वही करेंगे, हम दोनों इनसे अलग न रहेंगे।'

पं० ईश्वरदत्तसे सलाह कर पं० यज्ञदत्त तथा उनके सब साथियोंने प्रतिज्ञा की कि 'हमारे पास जो रुपया, पैसा तथा जेवर है, वह सब गोसेवापर लगायेंगे। जीवनका सारा समय गोसेवाके लिये देंगे।' अब्दुल्ला भी बार-बार यही प्रतिज्ञा दुहरा रहा था। उसने तजवीज की कि सर्वप्रथम 'ग्वाल-टोले' में सब ग्वालोंकी पंचायत की जाय।

(३)

दूसरे दिन 'ग्वाल-टोले'के चौकमें सब ग्वाले एवं व्यापारी इकट्ठे हुए। पं० ईश्वरदत्त उनका ध्यान देशमें होनेवाली दूध, घी तथा अच्छी गायोंकी कमीकी ओर दिलाते हुए बोले—'यदि आपलोग इस व्यापारमें गोवंशकी उन्नतिको मुख्य न रक्खेंगे, गायोंको रखने, दूध निकालने तथा बछड़े उत्पन्न करने आदि कार्योंका अच्छे ढंगपर सुधार न करेंगे, तो कुछ ही दिनोंमें अथवा कुछ ही महीनोंमें आपका यह काम बंद हो जायगा। विदेशी मशीनोंने मक्खन निकाले हुए दूधका चूर्ण तैयार कर दिया है। यह पहले तो कुछ महँगा था पर अब सरकारने उसका प्रचार एवं व्यवहार बढ़ानेके लिये उसपर लगनेवाले महसूलको हटा दिया है। अब सस्ता होनेके कारण वह बड़े परिमाणमें आ रहा है। यह चूर्ण पानीमें गर्म करनेसे **दूध-जैसा** बन जाता है। चीनी मिलानेपर तो दूधका-सा ही स्वाद देता है ! आपके दूधसे यह सस्ता पड़ता है। जिस प्रकार तेलके कारखानोंने घानियों तथा तेलियोंको, कपड़ेके कारखानोंने जुलाहों और कातनेवाली स्त्रियोंको बेकार बना दिया, उसी तरह जब प्रचुर मात्रामें यह दुग्ध-चूर्ण बाजारमें आवेगा, बिकेगा, तब आपके दूधकी माँग भी कम हो जायगी। सम्भव है, बिल्कुल न रहे। यदि आपलोगोंने यहाँ आयी हुई गायोंको बचानेका कोई मार्ग न निकाला तो हम अपनी सारी शक्ति यहाँ गायोंका लाना बंद करानेमें लगा देंगे। कोई ऐसा मार्ग निकालिये, जिससे आपकी गायोंका, जिनके सहारे आपने तथा आपके पूर्वजोंने जीवन व्यतीत किया, कष्ट दूर हो एवं उनका वध बंद हो तथा आपका भी गुजारा चलता रहे।'

पं० ईश्वरदत्तकी बातोंको सबने शान्त-चित्तसे सुना। शमीउल्ला, अमीर अली तथा वालिदहुसेनने, जो बहुत पुराने ग्वाले थे, पण्डितजीके वक्तव्यका समर्थन करते हुए कहा—'पण्डितजी ! आपकी सब बातें ठीक हैं, पर सब कुछ जानते हुए भी हम कोई अमली काम नहीं कर सकते। हमारे पास जीवन-निर्वाहका कोई साधन नहीं। इस कामके लिये लाखों रुपये यहाँके सेठोंसे लिये हुए हैं, वह कैसे पूरा करें। जब भी आप कोई ऐसा तरीका निकाल देंगे, जिससे गुजारे तथा कर्जेका प्रबन्ध हो सके, तो आप जैसा कहेंगे, किया जायगा।'

सभामें कुछ व्यापारियों तथा ग्वालोंने शमीउल्ला आदिके वक्तव्यका विरोध करते हुए कहा—'पण्डितजी ! आप-जैसे बहुत प्रचारक आते हैं। जिनका अपना पेट भरा हुआ होता है, वे हमारे पेटकी ओर नहीं देखते। आपलोगोंने अपने इलाकेमेंसे यहाँ गायें लानेवालोंको गायें न बेचनेका पूरा प्रयत्न किया, सरकारसे मिलकर गायें प्रान्तसे बाहर ले जाना अपराध करार दिलाकर हमारे कितने ही साथियोंको जेल भिजवाया। आपसे जो हो सका, किया, पर हम तो बड़े-बड़े लोगों तथा पुलिसवालोंको प्रसन्न करके यहाँ गायें लाये ही और जबतक शक्ति होगी, लावेंगे ही। हमें जिसमें लाभ होगा, गायोंके साथ हम वैसा ही सलूक करेंगे। आप हमें क्या समझाते हैं ? हम तो परिश्रम करके कमाते हैं, परन्तु आप-जैसे लोगोंकी दृष्टिमें पापी हैं। जाकर समझाइये अपने उन हिंदू भाइयोंको, जो लाखों-करोड़ों रुपये होते हुए तथा गायों-पर होनेवाले सब अत्याचारोंको जानते हुए भी तीन-चार रुपये सैंकड़ा मासिक व्याजके लालचसे हमें रुपये देते हैं ! समझाइये उन बड़े कहलानेवाले लोगोंको, जो चमड़ेके बड़े-

बड़े कारखाने चलाते हैं, और जिनकी माँग पूरी करनेके लिये ही कसाईखानोंमें गायें काटी जाती हैं, उनके शेयर (Shares) खरीदते-बेचते हैं, चीनी, कपड़े, जूट आदिके कारखानोंमें मारी हुई गायोंके चमड़े, चर्बी, हड्डी आदि काममें लाते हैं तथा घरोंमें सैकड़ों मन चमड़ेके जूते-बक्स आदि रखते हैं! यदि वे आपकी बात मान लेंगे, तो हम भी विचार करेंगे, नहीं तो यह गाड़ी इसी तरह चलेगी। आप-जैसे कितने ही आये और चले गये तथा चले जायँगे।'

बिना किसी निश्चयके सभा समाप्त हुई। पं० ईश्वरदत्त, पं० यज्ञदत्त, सेठ रामधन आदि सब साथी कलकत्तेके समाचार-पत्रोंके सम्पादकों, सार्वजनिक नेताओं, कारखानोंके मालिकों, और बड़े-बड़े व्यापारियों इत्यादिकी सेवामें गये। बहुतोंने तो समयाभावका बहाना करके ही टाल दिया, मिले भी नहीं। किसीने कहा, यह काम पार नहीं पड़ेगा, किसीने कुछ धनकी सहायता देनेके लिये कहा। स्वामी भावानन्द, पं० राधेश्याम, ठा० प्रतापसिंह, सेठ आसाराम, श्रीशशिशेखर बनर्जी, श्रीअरुणचन्द्र राय इत्यादि कुछ सज्जनोंने अपने पूरे-पूरे सहयोगका वचन दिया। रविवारको 'श्रद्धानन्द-पार्क'में सभा करनेका निश्चय हुआ।

रविवारके दिन सभा हुई, पर उपस्थिति पूरे सौसे भी कम थी। कुछ लोग सभाका रूप देखकर तथा कुछ लोगोंको वहाँ बैठे हुए देखकर उधर आये, किन्तु जब मालूम हुआ कि यह गोरक्षाकी सभा है, तो दूरसे ही चले गये। सभा हुई, कुछ प्रस्ताव भी पास किये गये, पर न तो समाचार-पत्रोंने इसको कुछ महत्त्व दिया और न जनताने ही इसकी कुछ परवा की। पं० ईश्वरदत्त, उनके सब साथियों तथा कलकत्तेके गो-प्रेमियोंको गायोंके प्रति लोगोंकी ऐसी उपेक्षा देखकर बड़ा दुःख हुआ। दूसरे दिन सबेरे सब साथी भावानन्दजीके स्थानपर इकट्ठे हुए। सर्वसम्मतिसे सर्वप्रथम हरियानेमें गायोंका कलकत्ते आना बंद करनेके लिये पूरी शक्तिसे आन्दोलन करने तथा कलकत्तेमें गायोंपर होनेवाले अत्याचारोंका प्रचार करने, एवं गायोंका उद्धार कैसे हो, इसकी जाँच करनेका निश्चय हुआ। प्रचार करनेके लिये गायोंपर होनेवाली 'फूँका' क्रिया, मरे हुए बछड़ोंमें भूसा भरकर दूध निकालने, गायोंको कसाइयोंके हाथ बेचने इत्यादिके असली फोटो लेकर उनके 'स्लाइड्स् (Slides) तैयार कराये गये और उनके प्रदर्शनके लिये 'मैजिक-लैंटर्न' (Magic-lantern) खरीदी गयी। कलकत्तेके अखबार-वालोंको मासिक कुछ रुपये देकर इसका प्रचार करनेके लिये प्रति-सप्ताह एक कालम प्रकाशित करनेकी तजवीज की गयी।

(४)

पं० ईश्वरदत्त तथा उनके हरियानेके साथियोंने सर्वप्रथम रामह्रद तीर्थपर कार्तिक-स्नानके पर्वपर एक सम्मेलन करनेका निश्चय किया। सम्मेलनको सफल बनानेके लिये उनके हरियानेके रहनेवाले साथियोंने गाँव-गाँवमें जाकर इसकी सूचना दी। रामह्रद तीर्थ जींद रियासतमें है। जींद रियासतमें गोवध तो हो ही नहीं सकता, गायोंको रियासतसे बाहर ले जाना भी अपराध है। अतः वायुमण्डल पहलेसे ही तैयार था। पर्वके दो दिन पहले पं० ईश्वरदत्त तथा उनके सब साथी रामह्रद पहुँच गये। जींद तथा पटियाला रियासतके ही नहीं, करनाल, रोहतक तथा हिसार जिलेतकके हजारों स्त्री-पुरुष स्नान करने तथा बड़ी संख्यामें गो-सम्मेलनमें सम्मिलित होनेके लिये आये। कार्तिक शुक्ला चतुर्दशीको तीर्थमें स्नान तथा देव-दर्शन करनेके बाद जिलेके प्रसिद्ध गो-भक्त स्वामी ओंकारानन्दजीकी अध्यक्षतामें सम्मेलनकी कार्रवाई आरम्भ हुई। गायोंके महत्त्व तथा रक्षापर हरियानेके प्रसिद्ध भजनीकोंके भजन होनेके पश्चात् पं० ईश्वर-दत्तने अपने प्रभावशाली तथा मार्मिक भाषणमें कलकत्तेमें अपनी आँखों देखी हुई गायोंकी दुर्दशा एवं विनाशका जिक्र करते हुए गायोंके प्राण बचानेकी अपील की। गायोंपर होनेवाले अत्याचार तथा कसाइयोंके हाथ उनको बेचनेकी दुःखद बात सुनकर सब लोग रो पड़े, सारी सभामें कुहराम-सा मच गया!

पं० ईश्वरदत्तने पुनः लोगोंसे कहा—'इस प्रकार रोने और धैर्य छोड़नेसे काम न चलेगा। हिम्मत करो और गायोंके प्राण बचानेका प्रयत्न करो। यह कोशिश हो कि एक भी गाय हरियानेसे बाहर न जा सके। इसी रामह्रद-तीर्थपर गायकी रक्षाके लिये सहस्रार्जुनके हाथसे मारे जाने-वाले महर्षि जमदग्निकी हत्याका बदला लेकर परशुरामजीने पितृ-तर्पण किया था। हम भी आज इसी पवित्र तीर्थपर गायोंके प्राण बचानेकी प्रतिज्ञा करें; गाँव-गाँवमें जाकर पंचायतें करवावें तथा बिना निश्चय किये ग्राहकोंको गाय न बेचनेका निर्णय करवावें। पंजाब-सरकारपर जोर डालकर हरियानेकी गायों तथा बछड़ोंका इस इलाकेसे बाहर ले जाना अपराध घोषित करवाया जाय एवं जो गायोंको ले जानेका प्रयत्न करें उन्हें सख्त दण्ड दिलवाया जाय।'

सैकड़ों आदमियोंने गाँव-गाँवमें जाकर पंचायतें करानेकी प्रतिज्ञा की। पंजाब-सरकारके प्रधान-प्रधान मन्त्रियोंकी सेवामें डेपूटेशन ले जानेका भी निर्णय हुआ। जींद, पटियाला एवं नाभा रियासतोंने तो पहलेसे ही गायोंको बाहर ले जानेपर पाबंदी लगा रक्खी थी। अंग्रेजी इलाकेके हिसार, रोहतक, गुड़गावाँ तथा करनाल जिलोंके लिये भी हल्का-सा प्रभावहीन कानून था। पर प्रतिदिन कितनी ही गायें यमुनाकी तराई तथा पलवलके निकटसे ले जायी जाकर गाजियाबाद, कोसी इत्यादि स्टेशनोंसे कलकत्ते, मद्रास आदि बड़े-बड़े शहरोंको भेजी जा रही थीं। पं० ईश्वरदत्त तथा उनके साथियोंने कलकत्ते तथा अन्य बड़े शहरोंमें गायोंपर होनेवाले अत्याचारोंका चित्रोंसहित वर्णन करके, लाखोंकी संख्यामें हाथ-पर्चे छपवाकर गाँव-गाँवमें पहुँचा दिये, स्वयं जहाँ-तहाँ जाकर पंचायतें करवायीं। चारों जिलेमें १५ मुख्य स्थानोंपर बड़े-बड़े गो-सम्मेलन हुए। इन सम्मेलनोंमें बिना जाने-पहचाने मनुष्योंके हाथ गायें तथा दो सालतकके बछड़े न बेचने, वनस्पति घीको न बेचने-खरीदने, अपाहिज तथा बूढ़े साँड़ोंका गोशालाओंद्वारा प्रबन्ध कराने, अच्छी नस्लके बढ़िया साँड़ोंको छोड़ने, पंजाब-सरकारसे पाँच सालतकके गाय और बछड़े बाहर ले जाना कानूनद्वारा अपराध करार दिलवाने, अच्छी नस्लकी गायोंको ५०) रुपयेतक सालाना वजीफा देने, गुँवार-ज्वार आदि चारेकी फसलोंका लगान आधा कराने, गोचर-भूमि छोड़ने और उसका लगान बिल्कुल न लेने और सड़कों-नहरों आदिके निकट पशु मुफ्त चरानेकी आज्ञा प्राप्त करने आदि-आदि विषयोंपर विचार होकर प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

इलाकेके लोगोंका प्रतिनिधि-मण्डल (Deputation) पंजाबके मन्त्रियोंसे मिला। इन मन्त्रियोंके सम्मुख कलकत्तेमें गायोंपर होनेवाले अत्याचारोंके चित्र रक्खे गये तथा उन्हें वहाँकी दुर्दशाका ज्ञान कराया गया। मन्त्रियोंको अपनी खुफिया-पुलिसद्वारा पहलेसे ही आन्दोलनका हाल तथा उसका प्रभाव मालूम था। उन्होंने प्रतिनिधिमण्डलकी बातें ध्यानसे सुनीं तथा उनकी सब माँगें स्वीकार करते हुए, गायों तथा बछड़ोंको दो सालके लिये कतई न ले जाने तथा आगे विशेष अवस्थामें पशु-विभागके उच्च अधिकारी तथा प्रतिनिधिमण्डलद्वारा चुने हुए दो सभासदोंकी सम्मतिसे प्रान्तसे बाहर ले जानेके लिये कानूनी पाबंदी लगा दी तथा पुलिसको सख्तीसे कार्रवाई करनेको लिखा गया। हरियानेकी अच्छी गायोंके लिये प्रस्तावोंके अनुसार वार्षिक-वृत्ति निश्चित कर दी, ज्वार-गुँवार आदि चारेकी फसलोंका लगान आधा कर दिया, सड़कों आदिके किनारेकी भूमिमें गाय चरानेपर रुकावट हटा दी और गोवंशकी उन्नति-सम्बन्धी अन्य कार्योंमें सहायता करनेका भी वचन दिया।

गायोंके भाग्यसे इस वर्ष हरियानेमें अच्छी वर्षा हुई। घास, चारा, अन्न आदि तीन-चार सालके गुजारे लायक हो गया। गाँव-गाँवमें गोवंशकी उन्नतिके लिये स्पर्धा चल पड़ी। हर एक गाँववाले अपने-अपने गाँवमें अधिक दूध देनेवाली गायोंकी संख्या तथा दूध देनेकी शक्ति बढ़ानेमें लग गये। साँड़ोंके लिये अच्छे-से-अच्छे बछड़े खरीदे गये, घर-घरमें 'देई-गायें' रक्खी जाने लगीं। दूधकी वृद्धि हुई; बालकों, जवानों तथा बूढ़ोंके शरीरोंमें शक्ति तथा मुरझाये मुखोंपर तेज आ गया। जिस हरियानेके लोगोंकी दुर्दशा हो गयी थी, वही हरियाना गोवंशकी उन्नति तथा रक्षाके कारण डेढ़ वर्ष पहले-जैसा असली हरियाना बन गया।

(५)

पं० ईश्वरदत्तके साथियोंने अन्य इलाकोंमें, जहाँसे कलकत्तेको दुधारू पशु आते थे, प्रचारका काम किया। सब स्थानोंसे कलकत्तेमें पशुओंका आना बिल्कुल बंद हो गया। स्वामी भावानन्द तथा कलकत्तेके अन्य गोसेवक भी चुप न बैठे। उन्होंने भी श्रीदेवेन्द्रनाथ चक्रवर्तीकी प्रधानतामें एक स्थायी संस्था बनाकर बंगाल और विशेषकर कलकत्तेके लिये काम आरम्भ किया। कामके लिये धनकी सहायता बड़े-बड़े सेठोंने ही नहीं दी, कोठियोंके जमादारों, मिलोंके कुलियों तथा साधारण मजदूरोंतकने भी सहायता दी। कार्यकर्त्ताओंमें भी अधिक संख्या ऐसे लोगोंकी ही थी। सर्वप्रथम इस संस्थाने कलकत्तेमें गायोंपर होनेवाले अत्याचारों, बंगालके पशुओं तथा भिन्न-भिन्न प्रकारकी खेतियोंसे उत्पन्न होनेवाले दूध, अन्न आदिके उत्पादन, दूधकी आवश्यकता, दूधकी मिलावट, नकली घी तथा निर्घृत दूधके चूर्णसे तैयार किये हुए दूधके नुकसान, चमड़े, जूट, कपड़े, चीनी आदिके कारखानों तथा चायके बगीचोंके लिये होनेवाली गो-हत्या आदि-आदिका सच्चा एवं सजीव वर्णन करके बड़े-बड़े 'पोस्टरों' हाथ-पर्चों तथा 'मैजिक लैंटर्न'से चित्रोंद्वारा लोगोंका ध्यान इधर आकर्षित किया। गोवंशकी उन्नति करते हुए सब लोगोंके लिये दूधका प्रबन्ध कैसे हो, चारेका उत्पादन कैसे बढ़ाया जाय, चमड़े, चीनी, कपड़े इत्यादिके कारखानोंमें काम आनेवाली चीजोंके लिये कहाँतक तथा कैसे-कैसे

गो-हत्या होती है और वह कैसे बंद हो, दूसरी वैसी चीजें कैसे बनें, नकली दूध तथा नकली घीका गो-वंशके ह्राससे क्या सम्बन्ध है—इत्यादि बातोंपर विचार करनेके लिये डा० सुरेन्द्रनाथ चौधरी, एम्०एस्-सी०, पी-एच्० डी० के सभापतित्वमें विशेषज्ञोंकी एक विशेष कमेटी नियुक्त की गयी। कमेटीने लगातार चार सप्ताहतक सब स्थितियों, अङ्कों और व्यवस्थाओंको देखकर तथा अनुभवी सज्जनोंकी गवाही लेकर रिपोर्ट लिखी। रिपोर्टका सार यह था—

'लोगोंको आवश्यक दूध मिले, यह कलकत्ता और बंगालकी ही नहीं, सारे देशकी एक प्रधान समस्या है। हम केवल बंगालकी समस्याको लेते हैं, वह भी इसलिये कि कलकत्तेके प्रश्नका अलग हल नहीं हो सकता। हमारे प्रान्तमें अनुमानतः ६ करोड़ जनताके लिये वार्षिक तीन करोड़ मन दूध उत्पन्न होता है, जब कि मिलना चाहिये पचास करोड़ मन। कलकत्तेकी २५ लाख जन-संख्याको नित्य तीस हजार मन दूध मिलना चाहिये, पर मिलता है पाँच हजार मन और वह भी शुद्ध नहीं। सरकारी जाँचके अनुसार ६० प्रतिशत मिलावटी दूध मिलता है। दिन-प्रति-दिन दूधका उत्पादन कम होना तथा मिलावट बढ़ती जा रही है। शीघ्र तो नहीं, पर यदि ठीक ढंगसे तथा सबके सहयोगसे काम हो तो दस सालमें दूधकी कमी पूरी हो सकती है। इसके लिये सबसे पहले जूट, चाय एवं तमाखूकी, जो प्रायः विदेश जाते हैं, यहाँके लिये आवश्यक नहीं, खेती ३४ लाख एकड़से आधी करके १७ लाख एकड़में ही की जाय। शेष १७ लाख एकड़में चारे विशेषतया उड़द, मूँग, अरहर आदि दालों और अन्य ऐसी फसलों, जिनसे चारा ही नहीं, अन्न भी मिले, की खेती करायी जावे। आजकल चारेकी खेती केवल एक लाख एकड़में होती है। उसे बढ़ाकर १८ लाख एकड़ कर दी जाय। चारा-दाल उत्पन्न करनेवाले किसानोंके लगानको आधा करके उन्हें प्रोत्साहन दिया जाय। इस खेतीमें यदि उन्हें जूट इत्यादिकी अपेक्षा कुछ हानि रहे तो उसे भी सरकार पूरा करे। चारेके वृक्ष लगाये जायँ। कलकत्ता नगरके लोगोंको निकटके गाँवोंसे दूध मिले। अधिक दूध उत्पन्न करनेके लिये बोरे-हैसियनके पाँच बड़े कारखानोंको उठाकर गाय रखनेके लिये डेयरी-फार्म तथा नस्ल-सुधार-फार्म बनाये जायँ। 'गवर्नमेंट हाइड्स रिपोर्ट', १९४२ के अनुसार बंगालमें देशभरकी गायोंकी केवल १४ प्रतिशत गायें हैं पर गोवध होता है ३१ प्रतिशत। **भारतवर्षभरमें सबसे अधिक गोवध बंगालमें होता है।** गोवध बिल्कुल बंद हो जाय; चमड़े, हड्डी, लोहू, चर्बी आदिका काम करनेवाले कारखाने एकदम उठा दिये जायँ; नकली घी या वनस्पति-घीके कारखानेवाले लोगोंको धोखा देनेके लिये तेलमें घी-जैसी गन्ध तथा उस-जैसा रूप न दें, उसे शुद्ध साफ तेलके रूपमें ही बेचें या साबुनके लिये चिकना पदार्थ तैयार करें, जिससे साबुनमें लगनेवाली गायोंकी चर्बीसे भी रक्षा होगी; चीनी, कपड़े, जूट इत्यादिके कारखाने गोवधसे तैयार किये गये चमड़े, चर्बी, हड्डी इत्यादिको काममें न लावें, अपने विशेषज्ञोंद्वारा इनके स्थानपर कोई अहिंसक चीजें तैयार करवा लें; दूध-घीकी मिलावट करनेवाले तथा निर्घृत दूधके चूर्णसे तैयार किये हुए दूधको बेचनेवालोंको कड़ा दण्ड दिया जाय; जो लोग दस हजार रुपये इन्कमटैक्स या पाँच हजार रुपये लगान देते हैं, उनपर गो-वंश-सुधारके नाम एक आना रुपया टैक्स लगाया जाय; बाहर विदेशोंमें जानेवाली चाय तथा जूटसे बनी चीजोंपर भी इतना ही महसूल हो; अधिक तथा शुद्ध दूध उत्पादन करनेके लिये प्रान्तभरमें सहयोग समितियाँ (Co-operative Societies) स्थापित करके गाय रखने तथा नस्ल तैयार करनेवाले किसानों तथा गोपालकोंको विशेष सहायता तथा गो-पालनकी शिक्षा दी जाय; गोशालाओंमें एवं पिंजरापोलोंको गोचरभूमि, जल तथा धनकी सहायता देकर गो-वंशकी उन्नतिके लिये उत्साह दिलाया जाय; धानका पुआल किस तरह गायोंके लिये पौष्टिक बनाया जाय, इसके लिये विशेष तजुरबा करके लोगोंको बताया जाय, और बाहरसे लायी हुई गायें बंगालकी भूमिमें पनप सकें इसका अनुभव कराया जाय इत्यादि-इत्यादि।'

कुछ मांस खानेवालोंके पत्रोंको छोड़कर बंगालके शेष सब पत्रोंने तथा जनताने इस रिपोर्टका समर्थन किया।

बंगालकी नयी सरकार भविष्यमें पहले जैसी भुखमरी न होने देने तथा जनताके स्वास्थ्यके लिये आवश्यक भोजनका प्रबन्ध करनेकी जिम्मेवारी लेकर बनी थी। उसके मन्त्रियों तथा सभासदोंने जनतासे यह प्रतिज्ञा करके पर्चियाँ ली थीं। उन्होंने चौधरी-कमेटीकी रिपोर्टको बड़े ध्यानसे पढ़ा, पर उनमेंसे कुछ प्रभावशाली मेम्बर अपने व्यक्तिगत स्वार्थ तथा जूट, चमड़े आदिके कारखानेवालोंके दबावके कारण वास्तविक कार्य करते हुए हिचक गये। वे दुविधामें पड़ गये।

(६)

पं० ईश्वरदत्त तथा उनके साथी हरियाने तथा दूसरे इलाकोंमें प्रचारका काम पूरा करके कलकत्ते पहुँचे। हवड़ा स्टेशनपर हजारों लोगोंने उनका स्वागत किया। कलकत्तेमें बाहरसे गाय न आनेके कारण दूधकी समस्या बड़ी विकट हो गयी। बंगाल-सरकारने पंजाब-सरकारको हरियानेसे गायें भेजनेको लिखा। आज्ञा-पत्र प्राप्त करनेके लिये विशेष प्रतिनिधि भी भेजा, परन्तु सफलता न हुई। पं० ईश्वरदत्त, स्वामी भावानन्द, श्रीदेवेन्द्रनाथ चक्रवर्ती तथा उनके सब साथियोंने रिपोर्टको सम्मुख रखकर बंगालभरका दौरा किया और जनमत तैयार किया। स्थान-स्थानपर सभाएँ करके सरकारको उसकी सूचना दी। सरकारके कान खुल तो चुके ही थे, हरियानेसे गाय न आनेके कारण दिन-दिन दूधकी समस्या भी जटिल होती जा रही थी। बंगालके जनमतके प्रवाहमें कारखानेवालोंकी अन्यायपूर्ण तरफदारी तथा व्यक्तिगत स्वार्थ भी बह गया। बंगालकी सरकार 'चौधरी-रिपोर्ट' की सिफारिशोंको मानने तथा उनपर पूरी तरह अमल करनेके लिये मजबूर हुई। उसने चक्रवर्ती तथा चौधरी-कमेटीसे सहयोग प्राप्तकर गो-वंशकी उन्नति तथा दूध-उत्पादन बढ़ानेके लिये दस वर्षका कार्यक्रम बनाकर कार्य प्रारम्भ कर दिया। गो-वध बंद हो गया, चमड़े इत्यादिके कारखाने उठ गये, चीनी, कपड़े आदिके कारखानोंमें मारी हुई गायोंके चमड़े-चर्बी इत्यादिके स्थानमें अन्य चीजें बन गयीं। मारी हुई नहीं, अपनी मौत मरी हुई गायोंके चमड़े, कनवास (Canvas) इत्यादिके जूते तथा अन्य सामान बनने लगे। पं० चक्रवर्ती तथा उनके सब साथियोंने, बंगालके बड़े-बूढ़े किसानों तथा गो-पालकोंने और खेती एवं पशु-पालनसे सम्बन्ध रखनेवाले पशु-विशेषज्ञोंने मिलकर बंगालके अलग-अलग इलाकोंमें, जहाँ जैसी स्थिति थी, उसके अनुसार किसान और गो-पालकोंके हितको मुख्य रखकर, गो-पालन, चारे तथा अन्नकी खेतीका प्रबन्ध किया। सरकारी जंगल पशुओंके चरनेके लिये खुल गये। बड़े-बड़े धनाढ्य तथा पश्चिमीय सभ्यताके रंगमें रँगे हुए विशेष, जो पहले स्वार्थवश गो-घातक कारखानोंके पक्षमें थे, गोपालनको एक लाभदायक धंधा बनानेके प्रयत्नमें लग गये। दो वर्ष तो कार्यारम्भ करनेमें ही लग गये, तीसरे वर्ष दूधकी पैदावार ही नहीं, किसानों, गोपालकों आदिकी आय भी बढ़ी। ऐसे चारे और दालें उत्पन्न होने लगीं, जिनसे गायोंको बहुत लाभ पहुँचा। स्थानीय गायें ही अधिक दूध देने लगीं। अब यह निश्चय हो गया कि हरियाना अथवा अन्य किसी प्रान्तकी अच्छी नस्लकी गायोंको हानि न पहुँचेगी। नस्लकी उन्नतिके लिये हरियानेसे एक सीमित संख्यामें गायें और साँड़ोंके लिये बछड़े लानेका प्रबन्ध किया गया। बंगालकी गायोंकी नस्लमें सुधार हुआ। गायोंकी संख्या ही नहीं बढ़ी, उनकी दूध देनेकी शक्ति भी बढ़ गयी। दस वर्ष पहले बंगालमें गायके दूधका वार्षिक उत्पादन ४५० पौंड था, जो बढ़कर ८०० पौंड हो गया। दूधके उत्पादनमें वृद्धि होनेसे दूध-घीके भाव भी इतने महँगे न रहे। एक साधारण मजदूर भी अब दूध खरीदने लगा। दूध तो बढ़ा ही, साथ-साथ दालों तथा तरह-तरहके अन्नकी पैदावार बढ़नेसे बंगाल अन्नके लिये पराश्रयी न रहा, स्वावलम्बी बन गया! सदाके लिये भुखमरीका अन्त हो गया। शुद्ध दूध तथा पर्याप्त एवं शुद्ध अपनी भूमिका अन्न मिलनेके कारण बंगालके लोगोंमें नया जीवन आ गया। आसाम तथा उड़ीसाकी स्थिति भी बंगाल-जैसी थी। वहाँकी सरकारों तथा लोगोंने भी बंगालकी नकल की। वहाँ भी दूध, घी, अन्न आदिका उत्पादन बढ़ा। कलकत्तेके साथ आसाम तथा उड़ीसाके लोगोंको भी लाभ पहुँचा। कलकत्तेके लोगोंका उद्धार हुआ, सब गो-हत्याके पापसे बच गये! शुद्ध दूध-घी सस्ते भावमें मिलने लगा। शारीरिक स्वास्थ्य तथा शक्ति बढ़ी, और हृदयमें शुद्ध भावना उत्पन्न हुई। शुद्ध भावनासे शुभकर्मोंकी वृद्धि हुई और फलस्वरूप सभी ओर सुख छा गया।



Regd. No. A. 175.

श्रीहरिः

गोपालकी आवनी

(१)

गो-रज राजत साँवर अंग ।
देख सखी बन ते ब्रज आवत गोबिंद गोधन संग ॥
अंबुजबदन नयनजुग खंजन क्रीडत अपने रंग ।
कुंचित केस सुदेस मनों अलि सोभित अंग प्रसंग ॥
कबहुँक बेनु बजावत कर धर नाना तान तरंग ।
चत्रभुज प्रभु गिरिधर नागर पर वारौं कोटि अनंग ॥

(२)

बन ते आवत गावत गौरी ।
हाथ लकुटिया गायन पाछे ढोटा जसुमति कौ री ॥
मुरली अधर धरे नँदनंदन मानो लगी ठगौरी ।
याही तें कुलकान हरी है ओढ़े पीत पछौरी ॥
ब्रजबधु चढ़ी अटारिन देखत रूप निरख भइ बौरी ।
नंददास जिन हरिमुख निरख्यो तिनको भाग्य बड़ौ री ॥